हिन्दी विश्वकोष

सप्तदश भाग

मर्य्यादासागर—कलचुरी वंशीय एक राजा, महाराजाधिराज सोडदेवके वंशधर।

मर्य्यादासिन्धु (सं० त्रि०) मर्य्यादासागर, विशेषरूपसे सम्मानित।

मर्य्यादाहानि (सं० पु०) मर्य्यादाया हानिः। मर्य्यादाकी हानि, सम्भ्रमकी हानि।

मर्य्यादिन (सं० त्रि०) १ सीमायुक्त, सीमावान्। २ अङ्कगत।

मर्य्यादो (सं० त्रि०) मर्य्यादिन् देखो।

मर्री (हिं० स्त्री०) वह भूमि जो कर्ज लेनेवालेने सूदके वदलेमें महाजनको दी हो।

मर्ष (सं० पु०) मृष् घञ्। क्षान्ति।

मर्षण (सं० क्ली०) मृष-ल्युट। १ क्षमा, माफी। २ घर्षण, रगड़।

"न चाप्यधर्मे न सुहृद्विभेदने परस्वहारे परदारमर्षणे।
कदर्थभावे च रमेन्मनः सदा नृणां सदाख्यानमिदं विजानताम्॥"

(भारत ३ २१३।२६)

(त्रि०) ३ मर्षक, रोकने या हटानेवाला। ४ नाशक, ध्वंसक।

मर्षणीय (सं० त्रि०) मृष-अनीयर्। मर्षनार्ह, क्षमा करनेके योग्य।

मर्षित (सं० त्रि०) मृष क्त। १ क्षमायुक्त। २ क्षान्तिविशिष्ट।

"तत्राहामर्षितो भीमस्तस्य श्रेयान् वधः स्मृतः।
न भर्त्तुर्नात्मनश्चार्थे योऽहन् सुतान् शिशून् वृथा॥"

(भागवत १।७।५१)

भावे क्त। (क्ली०) ४ मर्षण, क्षमा।

मर्षितवत् (सं० त्रि०) मृष क्तवतु। क्षान्त।

मर्षिन् (सं० त्रि०) मृष-णिनि। मर्षयुक्त।

मर्षीका (सं० स्त्री०) छन्दोभेद।

मरहठा—महाराष्ट्र देखो।

मलंग (फा० पु०) १ एक प्रकारके मुसलमान साधु। ये मदार शाहके अनुयायी होते हैं और सिरके बाल बढ़ाते तथा नंगे सिर और नंगे पैर अकेले भीख मांगते फिरते हैं। २ एक प्रकारका बड़ा बगला जो स्वच्छ सफेद रंगका होता है। यह भारतवर्ष और वरमामें पाया जाता है। यह प्रायः एकान्तमें और अकेला रहता है।

मलंगा (हिं० पु०) मलंग देखो।

मल (सं० क्ली०) मृज्यते शोध्यते मृज-(मृजेष्टिलोपश्च। उण् १।१०६) इति अलच् टिलोपश्च, यद्वा मलते धारयति व्याध्यादि दौर्गन्ध्यमिति मल-अच्। १ पाप।

२ विष्ठा, पुरीष। ३ किट्ट, मैल। अमरटीकामें भरतने लिखा है,—पाप किल्विषं, विट् विष्ठा, किट्टं, कलङ्को, मयूरादि स्वेदादिच एषु मलः।'

"वसा शुक्रमसृङ्मज्जा मूत्र विट् कर्णविण्नखाः।
श्लेष्माश्रुदूषिका स्वेदो द्वादशैते नृणां मलाः॥" (भरत)

मनुष्यमात्रमें बारह प्रकारके मल हैं यथा,—वसा, शुक्र, असृक्, मज्जा, मूत्र, विष्ठा, कानका मैल, नख, कफ, आंसू, शरीरका मल और पसीना। ४ कपूर, कपूर। ५ वातपित्त कफ।

"सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः।
तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधाहितसेवनम्॥"
(निदान)

मल शब्दका अर्थ वायु, पित्त और कफ ही समझा जाता है। वायु, पित्त और कफके बिगड़नेसे सब तरहके रोग उत्पन्न होते हैं।

पारिभाषिक मल—

"क्षत्रियस्य मलं भैक्ष्यं ब्राह्मणस्याव्रतं मलम्।
मलं पृथिव्या वाहीकाः स्त्रीणां मदश्रियो मलम्॥"
(भारत ८।४५।२३)

क्षत्रियोंका मल भीख मांगना है। ब्राह्मणोका मल अव्रत रहना अर्थात् अधर्माचरणमें रत रहना है। पृथ्वीका मल वाहीक और स्त्रियोंका रूपगर्व ही मल है।

६ दूषण, विकार। ७ शुद्धतानाशक पदार्थ। ८ दोष, बुराई। ९ हीरेका एक दोष। १० प्रकृति, दोष। ११ जैनशास्त्रानुसार आत्माश्रित दुष्ट भाव। यह पांच प्रकारका माना गया है—मिथ्या ज्ञान, अधर्म, सक्ति, हेतु और च्युति।

मल (हिं० पु०) फीलवानोंका एक साङ्केतिक शब्द जो हाथियोंको उठानेके लिये कहा जाता है।

मलक (सं० पु०) मध्यदेशीय जनपदभेद।
(मार्कपु० ५७।३३)

मलकना (हिं० क्रि०) १ हिलना, डोलना। २ इतराना, इठलाना।

मलकरन (हिं० पु०) बरतन पर नकाशी करनेवालोंका एक औजार। इससे खोदने पर दोहरी लकीर बनती है।

मलकर्षण (सं० त्रि०) मल या विकारको साफ करना॥

मलकाछ (हिं० पु०) ठाकुरोंके शृङ्गारके लिये एक प्रकारकी कछनी। इसमें तीन झब्बे लगे रहते हैं।

मलकानगिरि—१ मान्द्राजके विशाखपत्तन जिलेकी तहसील। भूपरिमाण २३६६ वर्गमील और जनसंख्या ३५ हजारसे ऊपर है। इसमें एक शहर और ५६६ ग्राम लगते हैं। इस तहसीलके अन्तर्गत अनन्तपल्ली और मलकानगिरिमें पत्थरका एक प्राचीन दुर्ग है।

२ उक्त तहसीलके अन्तर्गत एक नगर। स्थानीय दुर्ग यहांकी प्राचीन समृद्धिका परिचायक है।

मलकाना (हिं० क्रि०) १ हिलाना, डोलाना। जैसे आंख मलकाना। २ बना बना कर बातें करना।

मलकापुर—मद्रास प्रेसिडेन्सीमें कृष्णा जिलान्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह नन्दी ग्रामसे १७ मील उत्तर पश्चिम कोने पर मुनियारु नदीके किनारे बसा है। यहां एक मन्दिरका भग्नावशेष दिखाई देता है। इसके चारों ओर चहारदीवारी दी गई है। इस मन्दिरकी प्रतिमूर्त्ति टूटी फूटी नजर आती है। यहांके अधिवासी इस स्थानको जैनालपाडु नामसे पुकारते हैं। ध्वंसावशेषोंकी आलोचना करनेसे मालूम होता है, कि सम्भवतः पहले इस ग्राममें बौद्धोंका अधिकार था। इसके बाद शैवोंने इस पर अधिकार जमाया। ध्वंसावशेषोंमें गणेशकी विशाल मूर्त्ति उल्लेखनीय है।

मलकापुर—कृष्णा जिलेके अन्तर्गत एक पुराना ग्राम। यह बेजावाडुसे चार कोस उत्तर-पश्चिमके कोने पर है। वहांकी एक मसजिदसे एक शिलालेख निकला है, उससे पता लगता है, कि कोण्डापल्लिके पहाड़ी दुर्गको जीतनेवाला मशानदय अलीकुदूपन मलकुने सन् १५३५ ई०में यहां एक सराय बनवाई थी।

मलकापुर—१ बरारके बुल्दाना जिलेका तालुक। यह अक्षा० २०° ३३´ से २१° २´ उ० तथा देशा० ७६° ३६´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ७६२ वर्गमील है। इस तालुकमें मलकापुर और नान्दुरा नामक दो शहर और २८८ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २०° ५३´ उ० तथा देशा० ७६° १५´ पू० पूर्णानदीकी शाखा नलगङ्गाके किनारे अवस्थित है। यह बम्बईसे ३०८ मील

और नागपुरसे २१३ मील दूर पड़ता है। जनसंख्या १५ हजारके लगभग है। कहते हैं, कि करीब पौने पांच सौ वर्ष हुए, खान्देशके फारुकाके कुमारने इस नगरको बसाया। पीछे इन्होंने अपनी कन्या मलिकाके नाम पर इसका नाम रखा। १७६१ ई०में पेशवा रघुनाथ रावकी सेनाने नगरमें लूट-पाट आरम्भ कर दिया। अनन्तर तालुकदारने साठ हजार रुपये दे कर उनसे अपना पिंड छुड़ाया था। १९वीं सदीके आरम्भमें यहां तालुकदार राजपूतों और मुसलमानोंमें बड़ी मार काट हुई थी। शहरमें काजीके घरके सामने जो मसजिद है, कहते हैं कि वह शहरसे भी पहलेकी बनी है।

मलकूट—दक्षिण भारतके कन्याकुमारीके निकट एक प्रदेश। चीन परिव्राजक यूएनचुवङ्ग काञ्चीपुरीसे ५०० मील दक्षिण आ कर यहां पहुंचे थे। मलकूटप्रदेशके दक्षिण-पश्चिम कोने पर मलय पर्वत विराजमान है। इसी पर्वत पर 'मलयागिरि' चन्दन बहुतायतसे मिलता है। चीनभाषामें मलकूट मलयकूटके नामसे विख्यात है। इस प्रदेशके दक्षिणमें समुद्र, उत्तरमें द्राविड़ राज्य, पूर्वमें तञ्जोर, मदुरा और पश्चिममें कोयम्बटोर, कोचीन और त्रिवांकुर अवस्थित है।

मलयकूटकी राजधानी कहां थी, यह निश्चित रूपसे नहीं बता सकता। कुछ लोगोंका अनुमान है, कि टेलेमीके समय प्राचीन मदुरा नगरमें मलयकूटको राजधानी थी, अथवा कुइल नगरमें थी। सिवा इनके चरित्रपुर बन्दरको भी इसकी राजधानी मानते हैं।

लङ्काद्वीप जाने पर यहां ही जहाज पर चढ़ना होता था। आबुरिहान् और रसीदुद्दीनने कहा है, कि 'मलय' और 'कुन्तल' नामक प्रदेश भारतके दक्षिणमें अवस्थित थे। इन्हीं दोनों स्थानोंको एकमें मिला दिया गया और इसका नाम मलयकूट हुआ है। इससे प्रमाणित होता है, कि 'मलय' पाण्ड्य नामसे और 'कुन्तल' त्रिवांकुर (त्रावनकोर) नामसे अभिहित हुआ है।

मलकोष्ठक (सं० पु०) राजपुरुषभेद। (राजतर० ८।५१९)

मलक्का—मलय उपद्वीपका एक नगर जो समुद्रके किनारे अवस्थित है। मलक्का जिलेकी लम्बाई ४० मील और चौड़ाई २५ मील है। भूपरिमाण १००० वर्गमील है। मलय इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि मलक्का नामक एक प्रकारके वृक्षसे मलक्काका नामकरण हुआ है। मलक्का जिलेके बीचका कुछ अंश पर्वतमालासे पूर्ण है।

गोआके अलावा मलक्काके पूर्वमें कहीं भी यूरोपवासियोंने उपनिवेश नहीं बसाया। उस समय वाणिज्य बन्दरोंमें यही स्थान प्रसिद्ध गिना जाता था। १५११ ई०में पुर्त्तगीजोंने महम्मदशाहसे मलक्का ग्रहण किया। १३० वर्ष तक यहाँ पुर्त्तगीजोंका निर्विघ्न अधिकार रहा। पीछे यह ओलन्दाजोंके हाथ लगा। ओलन्दाजोंके ७४ वर्ष शासन करने पर अंगरेजोंने इस पर दखल जमाया। शासनके आरम्भमें ही अंगरेजोंने पहले पुर्त्तगीजोंका बहुमूल्य दुर्ग नष्ट कर डाला। १८१८ ई०में मलक्का फिरसे ओलन्दाजोंके हाथ आया। किन्तु अंगरेजोंसे उन्होंने बेनकेलुन और सुमात्राके अन्यान्य निवेश ले कर मलक्काको लौटा दिया। १८२५ ई०में जो सन्धि हुई उसमें यह स्थिर हुआ, कि द्वीपपुञ्जमें विषुवरेखाका दक्षिणस्थ स्थान ओलन्दाजोंके और उत्तरस्थ स्थान अंगरेजोंके अधिकारमें रहेगा।

यहांके खनिज पदार्थोंमें टीन सर्वप्रधान है। हजारों चीनवासी टीनकी खानमें काम करके अपना गुजारा चलाते हैं। विलायतमें जिस दरसे टीन मिलता है यहां उससे आधा कम है। मलक्का नगरके समीप ६ गरम सोते हैं। इन सोतोंका पानी १३७ डिग्री गरम रहता है।

मलक्काप्रणाली—मलय उपद्वीप और सुमात्राके मध्यवर्त्ती जलपथ। बङ्गोपसागरसे भारतीय द्वीपपुञ्ज आनेमें इसी जल प्रणाली हो कर आना होता है। इसके उत्तरमें सिङ्गापुर द्वीप है। मलक्का प्रणालीका सोत उतना तेज तो नहीं है पर दूरसे इसकी आवाज सुनी जाती है। रातको अज्ञ व्यक्तिके लिये यह शब्द विशेष भयका कारण है। तरङ्गें प्रबल वेगमें आ कर जहाजमें टक्कर लगाती हैं। कभी कभी छोटी नावें इसके वेगको सहन न कर सकती और समुद्रमें डूब जाती है। इसकी लम्बाई ५०० मील और चौड़ाई कहीं कहीं ३० से ३८० मील तक भी

है। इसके पश्चिममें पिनाङ्ग तथा पूर्वमें सिङ्गापुर आदि छोटे छोटे द्वीप हैं। एशिया महादेशके पूर्व और पश्चिम-में जो राज्य पड़ते हैं उनका जलपथ वाणिज्य इसी प्रणालीसे होता है। यहां चोर वालू और सैकड़ों छोटे छोटे द्वीप इधर उधर विक्षिप्त रहनेसे वाणिज्य पोतको कभी कभी जाने आनेमें बड़ी असुविधा होती थी। अभी बृटिश गवर्मेण्टकी चेष्टासे वह शिकायत दूर हो गई है। १५०३ ई०में चोलन वासो लुडोभिको वार्थेमा नामक किसी व्यक्तिने नदीका मुहाना जान कर इस प्रणालीमें प्रवेश किया था। पाश्चात्य वणिक उसके बादसे ही इस राह हो कर आने जाने लगे हैं।

मलखंभ (हिं० पु०) मलखम देखो।

मलखम (हिं० पु०) १ लकड़ीका बना हुआ एक प्रकारका खंभा। इस पर कसरत करनेवाले बड़ी तेजीसे चढ़ और उतर कर कसरत करते हैं। मलखम तीन प्रकारका होता है, गड़ा मलखम, लटका मलखम और वेतका मलखम। गड़ा मलखम मुगदरके आकारका खंभा होता है। इसकी ऊँचाई चार पांच हाथसे कम नहीं होती। लटका हुआ वा लटकौआं मलखम छत्त या किसी और धरनके सहारे ऊपरसे अधोमुख लटका रहता है। जब इस खंभेकी जगह धरन आदिमें वेंत लटकाया जाता है तब इसे वेंतका मलखम कहते हैं। इस पर कसरत करनेवाले अपने हाथमें वेंतको पकड़ कर अनेक मुद्राओंसे कसरत करते हैं। मलखमकी कसरत भारतवर्षकी एक प्राचीन मल्ल नामक क्षत्रिय जातिकी निकाली हुई है। इसी मल्ल जातिकी निकाली हुई कुश्तीको मल्लयुद्ध भी कहते हैं। मलखम पर चढ़ने उतरनेका नाम 'पकड़' है। मलखम करनेसे मनुष्यमें फुरती आती है और पैरकी रानें मज-बूत होती हैं।

२ पत्थर वा लकड़ीके पुरानी चालके कोल्हूमें लकड़ी का एक खूंटा। यह खूंटा कातर वा पाटमें कोल्हूसे दूसरी छोर पर गाड़ा जाता है। इसमें ढेंकेसी रस्सी बांधी जाती है। इसका दूसरा नाम मरखम भी है। ३ वह कसरत जो मलखम पर वा उसके सहारेसे की जाय।

मलखाना (हिं० पु०) १ महोबेके राजा परमालके भतीजेका नाम। २ पश्चिमी संयुक्तप्रान्तमें बसनेवाले एक प्रकार-के राजपूत। ये लोग मुसलमानी अमलमें मुसलमान बना लिये गये थे। इन लोगोंका आचार-विचार अब तक भी हिन्दू-सरीखा है।

मलखानो (हिं० स्त्री०) एक ऊंचा और सीधा पतला खंभा। इस पर वेंतसे मलखमकी कसरत की जाती है। मलखम देखो।

मलग (सं० पु०) रजक, धोबी।

मलगजा (हिं० पु०) वेसनमें लपेट कर तेल या घीमें छाने हुए वैंगनके पतले टुकड़े।

मलगिरि (हिं० पु०) १ एक प्रकारका हलका कत्थई रंग। यह रंग रंगनेके लिये कपड़ा पहले हड़के हलके काढ़ेमें और फिर कसीसके पानीमें डुबोते हैं और फिर उसे एक रंगमें जिसमें कत्था, चूना, मेंहदीकी पत्ती और चंदनका चूरा पीस कर घोला रहता है और छैल-छबीला, नागरमोथा, कपूर कचरी, नख, पांजर, बिरमी, सुगंध बाला, सुगन्ध कोकल, बालछड़, जरांकुस, बुढ़ना, सुगन्ध मैलो, लौंग, इलायची, केसर और कस्तूरीका चूर्ण मिला रहता है, डाल कर पहर भर उबालते हैं। उतारने पर उसे दिन रात उसीमें पड़ा रहने देते हैं। दूसरे दिन कपड़ेको उसमेंसे निकाल कर निचोड़ लेते हैं तथा बर्तनके रंगको छान कर उसमें हिनाका इतर मिला उसमें फिर उस कपड़ेको डुबा कर सुखाते हैं। पर आज कल प्रायः रंगरेज मलगिरी रंग रंगनेमें कपड़े को कत्थे और चूनेके रंगमें रंगते हैं, फिर उसे कसीस-के पानीमें डुबा देते हैं। इसके बाद रंगे हुए कपड़े को आहार दे कर निचोड़ते और सुखाते हैं तथा अन्तमें उस पर हिनाका इतर मल देते हैं। (वि०) २ मलगिरि रंगका।

मलघन (हिं० पु०) एक प्रकारका कचनार। यह लता रूपमें होता है और हिमालयकी तराई, मध्य भारत और टेनासरमके जंगलोंमें पाया जाता है। इसकी छाल मलू कहलाती है तथा इस पर रंग अच्छा चढ़ता है और कूटने पर ऊनकी तरह चमकदार हो जाती है। इसे ऊनमें मिला कर तागा काता जाता है जिससे ऊनी कपड़े बुने जाते हैं। यह छाल ऐसी साफ होती है, कि

ऊनमें मिलाने पर इसकी मिलावट बहुत कम पहचानी जाती है।

मलङ्ग—सुन्दरवनवासी नमक बनानेवाली एक जाति। समुद्रतीरवर्त्ती सुन्दरवनकी जमीन साधारणतः दो भागों में विभक्त है,—मधुर अर्थात् जोतने लायक जमीन और लवणयुक्त अर्थात् खारी जमीन। खारी जमीनमें जब समुद्रका जल आ कर चला जाता है, तब ये लोग ऊपरकी मट्टीको संग्रह कर उससे नमक तैयार करते हैं। कार्त्तिकसे वैशाख मास तक नमकका कारबार चलता है। पीछे ये लोग खेतीमें लग जाते हैं। जो जैसा परिश्रम करता उसे वैसा ही वेतन भी मिलता है। इन्हें अपनी अपनी जमीनका थोडा कर देना पडता है।

मलङ्गी (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी मछली।

मलघ्न (सं० पु०) मलं हन्तीति हन-टक्। १ शाल्मली कंद, सेमलका मुसला। २ कचनारका एक भेद, मलघन। (त्रि०) ३ मलनाशक।

मलघ्नी (सं० स्त्री०) मलघ्न-स्त्रियां ङीप्। नागदमनी, नागदौना।

मलज (सं० क्ली०) मलाज्जायते इति जन-ड। १ पूय, पीव। (त्रि०) २ मलोद्भव, मलसे उत्पन्न।

मलज्वर (सं० पु०) अमृत सागरके अनुसार एक प्रकारका ज्वर जो मलके रुकनेके कारण होता है। इससे रोगीके पेटमें शूल और सिरमें दर्द होता है, मुंह सूखा रहता है, जलन होती है, भ्रम होता है और कभी कभी मूर्च्छा भी आती है।

मलझन (हिं० पु०) एक प्रकारकी बेल जो बागोंमें लगाई जाती है।

मलट (अं० पु०) १ लकड़ीका हथौड़ा जिससे खूंटे आदि गाड़े जाते हैं। २ काठका वह हथौड़ा जिससे छापनेके पहले सीसेके अक्षर ठोंक कर बैठाए और बराबर किये जाते हैं।

मलत्व (सं० क्ली) मलस्य भावः तल टाप्। मलता, मलका भाव वा धर्म।

मलद (सं० पु०) १ वाल्मीकीय रामायणके अनुसार एक प्रदेशका नाम। यह कालिन्दी और महानन्दाके संगम पर अवस्थित है। आज कल यह मालदा या मालदह कहलाता है। मेगास्थनिजने इसे Malindai शब्दमें उल्लेख किया था। कहते हैं, कि ताड़का यहीं पर रहती थी। इसे मल्लभूमि भी कहते हैं। २ उस देशके रहनेवाले मनुष्य। (स्त्री०) ३ रुद्राश्वकी कन्या। इसका दूसरा नाम मलन्दा भी था।

मलदिग्धाङ्ग (सं० त्रि०) मलेन दिग्धं अङ्गं यस्य। मलयुक्त देह।

मलदूषित (सं० त्रि०) मलेन दूषितं। मलिन, मैला।

मलद्राविन् (सं० पु०) मलं विष्ठां द्रावयति चालयतीति द्रु-णिच् णिनि। जयपाल, जमालगोटा।

मलद्रावी (सं० पु०) मलद्राविन् देखो।

मलद्वार (सं० पु०) १ शरीरकी वे इन्द्रियां जिनसे मल निकलते हैं। २ पाखानेका स्थान, गुदा।

मलधातु (सं० पु०) शरीरका बाधारहित भाव।

मलधात्री (सं० स्त्री०) वह धाय जो बच्चोंका मल-मूत्र धोने पर नियुक्त हो।

मलधारिन् (सं० पु०) एक प्रकारके जैन-साधु जो शरीरमें मल लगाए रहते हैं। ये मलको धोते और शुद्ध नहीं करते।

मलधारिनर चन्द्रसूरि—एक जैनकवि।

मलधारि नरेन्द्रसूरि—जैन-सूरिभेद। आपकी गिनती तोष कविमें थी।

मलधारी (सं० पु०) मलधारिन् देखो।

मलन (सं० क्ली०) मल्यते मर्द्यन्ते इति मल-ल्युट्। १ मर्दन, मीजना। २ पोतना, लगाना। मलते धारयति तृप्तितापौ मल धृतौ ल्यु। ३ पटवास, तंबू।

मलना (हिं० क्रि०) १ हाथ अथवा किसी और पदार्थसे किसी तल पर उसे साफ, मुलायम या अच्छा करनेके लिये रगडना। २ मरोड़ना, ऐंठना। ३ किसी तरल पदार्थ वा चूर्ण आदिको किसी तल पर रख कर हाथसे रगडना, मालिश करना। ४ हाथसे बार बार रगडना या दबाना। ५ किसी पदार्थको टुकड़े टुकड़े या चूर्ण करनेके लिये हाथसे रगड़ना या दबाना, मीजना।

मलनी (हिं० स्त्री०) कलजनके आकारका बांसका एक टुकडा। यह आठ दस अंगुल लम्बा, दो अंगुल चौड़ा सुडोल और चिकना होता है। इससे मल कर कुम्हार सुराहियां आदि चिकनी करते हैं।

मलपङ्किन् (सं० त्रि०) १ मलयुक्त, मैला। २ पङ्कलिप्त, कीचड़ में सना हुआ।

मलपङ्की (सं० त्रि०) मलपङ्किन देखो।

मलपाक (सं० पु०) दोषपाक।

मलपू (सं० स्त्री०) मलात् पापात् पुनातीति पू क्विप्। १ कोकोडु,स्वरिका, कठूमर। २ वाकुचि, सोमराज।

मलप्रालदेश (सं० पु०) एक देशका नाम।

मलवा (हिं० पु०) १ कूड़ा कर्कट, कतवार। २ एक प्रकारकी उगाही वा वेहरी जो गांवमें पट्टीदारोंसे दौरेके हाकिमों आदिके खर्चके लिये वसूल की जाती है। ३ टूट या गिराई हुई इमारतकी ईंटें, पत्थर और चूना आदि।

मलबार—मान्द्राज प्रेसिडेन्सीमें वृटिश राज्यका एक जिला। यह अक्षा० १०° १६' से १२° १८' उ० तथा देशा० ७५° १४' से ७६° ५२' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर-दक्षिण कनाड़ा, पूर्वमें कुर्ग, मैसूरराज्य, नीलगिरि और कोयम्बतूर जिला, दक्षिणमें कोचीनराज्य और पश्चिममें अरबसागर है। भूपरिमाण ५७१५ वर्ग-मील है। कालीकट इस जिलेका सदर है।

मलयालम् (मलवार) देशका प्राचीन नाम चेर और केरल है। यही नाम पुराण ग्रन्थोंमें भी मिलता है। आज-कलके यूनानियोंके मली (*Mali*) शब्द पर वर्त्तमान मल-वार नामका उल्लेख मालूम होता है। किन्तु मलवार नाम अरबियोंका रखा हुआ है। केरल और चेर देखो।

लोसंन साहबका कहना है, कि 'वार' प्रत्यय संस्कृतके 'वाड़' शब्दसे उत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है प्रदेश। विशप केलडेल साहबका कहना है कि फारसीसे 'वार'की उत्पत्ति है। जो हो, 'मलवार' शब्द 'धारवार' 'मारवार' शब्दके समान मालूम होता है; अर्थात् प्रदेश या समुद्र-तीरवर्त्ती स्थानबोधक है।

सन् १७९२ ई०में श्रीरङ्गपत्तन-सन्धिके समय मल-वार इष्ट इण्डिया कम्पनीके हाथ आया और यह बम्बईमें मिला लिया गया। १७९६ ई०में ४ अध्यक्षोंके हाथमें शासनकी वागडोर दी गई थी। पीछे सन् १८०० ई०में दो अध्यक्षोंका पद उड़ा दिया गया। इसके बदलेमें प्रत्येक विभागमें एक एक कलकृर नियुक्त किये गये। इसके बाद दूसरे वर्ष मलवार माद्रासमें मला लिया गया।

सन् १८०३ ई०में तेलीचेरी और कालिकट ये दो जिले स्थापित किये गये। पीछे इन दोनोंको तोड़ कर अब उत्तर-मलवार और दक्षिण-मलवार नामसे दो जिला कायम किया गया है।

दक्षिण-भारतमें यह जिला समुद्रके किनारे दक्षिण-पूर्व १४५ मील तक फैला हुआ है। उत्तरकी ओर २५ मील और दक्षिण ७० मील तक फैला है। इसके उत्तर-दक्षिण प्रान्तमें एक द्वीप और छिल्ली पहाड़ है। सिवा इसके पश्चिम घाट पर्वत समुद्रके किनारेसे समानान्तर-भावसे फैला हुआ है। पालघाट-खाद इसका देखने योग्य स्थान है। यह गड्ढा २५ मील तक फैलता हुआ पश्चिम घाट तक चला गया है। इसके पीछे पर्वत स्तूपा कार शून्यभावसे दिखाई देता है। नीलगिरि और अन-मलय पहाड़ इस गड्ढेकी बगलमें अवस्थित है। इसके भीतरसे मलय वायु कोयम्बतोरमें प्रवाहित होती है। सिवा इसके मैसूर, कुर्ग, कोचीन आदि स्थानोंके निकट कितने ही छोटे छोटे पहाड़ी पथ हैं।

मलवारमें बहुतेरी नदियां हैं, इनमें विल्वपत्तन, धर्म-पत्तन, कोटा, माही, कदलवन्दी आदि प्रधान नदियां हैं। तनुर और त्रिचूर नामकी दो स्वच्छ जलवाली झीलें हैं। ये झीलें मलवारकी सुन्दरता तथा उर्वराशक्ति बढ़ा रही है। नदियोंकी अधिकतासे जलीय व्यवसायकी भी अधिकता है। चावल, मिर्च, मसाला, काठ आदि यहांकी प्रधान चीजें हैं शीशम और अन्यान्य बड़े, बड़े, काठ नदीके स्रोतमें बहा लाये जाते हैं। यहां मछवाहे बहुत रहते हैं मछलियोंको पकड़नेके लिये उनको किसी तरहका कर नहीं देना पड़ता। प्रतिवर्ष यहांसे १७०००० रुपये मूल्य-की मछलियां लङ्काद्वीपमें भेजी जाती हैं। मलवारके जलाशय-स्थान जैसे विस्तृत हैं, वन्यस्थान भी वैसे ही सुविस्तृत हैं। यहां हाथी, भैंस, हरिण, व्याघ्र आदि हिंस्र जन्तु भी दिखाई देते हैं।

मलवारके प्राचीन इतिहाससे त्रावनकोर राज्यका बड़ा सम्बन्ध है। इन दोनों स्थानकी बोलचाल, मनुष्य, कानून, चालन, रहन सहन एक ही तरहकी है। यदि पार्थक्य है तो केवल यही है, कि दो शासनकर्त्ता इन दो स्थानोंका शासन करते हैं। इतिहाससे मालूम

होता है, कि चेरके अन्तिम राजा चेरुमान मुसलमान होनेके लिये स्वयं मक्का गये थे। इन्होंने कव राज्यका शासन किया था, इसमें मतभेद है। किन्तु अव मालूम हुआ, कि अरव सागरके किनारे सफहाई नामक स्थानमें उनकी कब्र है। इस कब्रमें लिखा है, कि वे ८२७ ई० सन्‌में मक्का गये थे और इन्होंने ८३१में परलोक प्रयाण किया। इसके वाद मलवार कई छोटे छोटे राजाओंके हाथ आया। इनमें उत्तरमें कोलत्तिरी या चेराकल और दक्षिण में जमोरिन सामरीराज प्रसिद्ध है। इनसे और कोचीन राज्यसे पहले पहल पुर्त्तगालियोंका सम्बन्ध हुआ।

सन्‌ १४६८ ई०में भास्कोडिगामा मलवारमें आ उप स्थित हुआ। इसके वादके शासनकर्त्ताने कोचीन, कालि कट और कनानूर पर अधिकार जमाया। सन्‌ १६५६ ई०में हालेण्डवालेने पुर्त्तगीजोंसे प्रतिद्वन्द्विता करनेके लिये अपने व्यवसायका विस्तार किया। इन्होंने पहले कनानूर पर अधिकार कर पीछे कोचीन शहर और दुर्ग पर भी अधि- कार जमा लिया और तङ्गचेरी अधिकार कर सन्‌ १७१७ ई०में चेत्‌राई द्वीपको भी अपने राज्यमें मिला लिया। किन्तु इसके वाद ही इनको क्षमताका ह्रास होने लगा। इन्होंने कनानूरको इस राज्यके वंशजोंके हाथ बेच डाला। क्रमशः कोचीन्‌ चेत्‌राई आदि स्थान भी इनके हाथसे निकल गये। फ्रान्सीसी दलने सन्‌ १७२० ई०में सवसे पहले माहीमें अपना उपनिवेश कायम किया। सन्‌ १७५२ ई०में कालिकट और १७५४ में डिल्ली पहाड इनके अधि कारमें आ गया। सन्‌ १७६५ ई०में अङ्गरेजोंने हालेण्ड वालोंसे कोचीन राज्य छीन लिया। अंग्रेजोंके साथ फ्रान्सीसियोंका वड़ा संघर्ष हुआ। इससे वाणिज्यकी वड़ी हानि हुई। अङ्गरेजोंने सन्‌ १६६४ ई०में कालि- कट, सन्‌ १६८३ ई०में तेलीचेरीमें और १७१४ ई०में अञ्जेङ्गो और चेतराई आदि स्थानोंको अपने अधिकारमें कर लिया।

प्रायः एक सौ वर्ष तक मरहट्टे जलीय डाकू मलवार उपकूलके वन्दरों तथा नगरोंको लूट पाट किया करते रहे। पीछे अंगरेजोंने इनको पराजित कर इन प्रदेशोंमें शान्ति स्थापित की। अंग्रेज तथा फ्रान्सीसियोंकी लड़ाई खतम होते ही टीपू सुलतानने यहां आ कर धर्म प्रचार और नरहत्या काण्ड करने लगा। इसके लिये भयानक विद्रोह उपस्थित हुआ। पीछे अंग्रेजोंने उसके साथ युद्ध किया। निराश्रय राज्यओंने अंग्रेजों- का आश्रय लिया। फिर क्या वात थी, साराका सारा मलावार अंग्रेजोंके हाथ आ गया। वम्बई गवर्मेण्टने जो कमीशन नियुक्त किया था उसे देशी राजाओंके राज्यमें दे दिया। इस तरह एक शान्तिका साम्राज्य छा गया। किन्तु वीच वीचमें मोपले आ आ कर तङ्ग करने लगे। टीपू सुलतानने फिर अपने साथियों- के साथ मञ्जरी और वाइसन नामक स्थानों पर कब्जा कर लिया, किन्तु अन्तमें वहांसे वह खदेड दिया गया।

अरवी-औरस तथा मलवारी-रमणीके गर्भसे जो सन्तान उत्पन्न होती है, वह मोपला कहलाती है। इनका कुछ भी पुराना इतिहास नहीं मिलता। केवल तहफत उल-मुजाउद्दीन नामक एक मुसलमानी ग्रन्थमें इन सवोंका कुछ उल्लेख पाया जाता है। इस ग्रन्थमें चेरुमानके मक्का जाने तथा उनके मुसलमान होने और उनकी कब्रके वारेमें वहुतेरी वातें विशेष रूपसे लिखी हुई हैं। सिवा इसके मसजिदोंके भी वर्णन आया है। मोपले और नायरोंमें सदासे झगडा फसाद होता आता था। नायर जाति अत्यन्त धर्मशील और न्यायपरायण है। धर्मान्ध मूर्ख मोपले सदा इनको घृणाकी दृष्टिसे देखा करते थे और समय समय अत्याचार तथा प्राणनाश भी किया करते थे। नायरोंकी विवाहप्रथा वहुत ही कौतूहलपूर्ण है। यहां पहले एक स्त्री वहुत मर्द रख सकती थी। किन्तु यह कुप्रथा उठ गई है।

एक आदिपुरुषसे जो कन्या सन्तान जन्म लेती, वे सव एकत्र रहती थीं। जहां वे रहती थीं, उस वासगृह को 'तारवद' कहते हैं। इनमें वहुभर्त्ता-विवाह प्रचलित रहने पर भी दो मर्द एक स्त्रीसे विवाह नहीं कर सकता था। दक्षिणके मलवारमें साधारणतः स्त्रियां स्वामीके घर रहती हैं सही; किन्तु राजा और अमीरोंकी स्त्रियां कभी भी 'तारवद' परित्याग कर जा नहीं सकतीं।

पहली शताब्दीमें सेवलिनसे एक मिशनरी-दलने मल- वारमें आ कर एक गिरजा वनवाया। यहां चार तरहके ईसाई दिखाई देते हैं। यथा—जाकोवाइटस् (२)

सिरियन-प्रथावलम्वी रोमनकैथिक, (३) लैटिन-प्रथावलम्वी रोमन कैथलिक और (४) प्रोटेष्टएट। कनानूर, कालिकट और कोचीनमें तीन धर्म्मशालायें हैं।

मलवारमें खेतीवारीकी अधिक उन्नति दिखाई देती है। सन् १८८३-८४ ई०की रिपोर्टसे मालूम होता है, कि यहां ६३८०२६ एकड जमीन वोई गई थी और उस समय २८५७३६२ एकड़ जमीन जोतने लायक थी। उक्त वर्ष १८१७१६० रु० राजस्व वसूल हुआ था। यहां जो चीजें पैदा होती हैं, उनमें चावल, चना, काफी, चाय, मिर्च, दारुचीनी, सुपारी, नारियल आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। यहां नारियलके वहुतेरे वगीचे हैं। प्रतिवर्ष दो करोड़ मूल्यका नारियल पैदा होता है। सन् १७६७ ई०में कनानूर और तेल्लीचेरीके वीच खेतीका काम शुरू किया गया। हालमें यहां चायकी खेती भी होने लगी है और प्रचुर परिमाणमें चाय और काफी तय्यार हो रही है। मलवारमें अत्यन्त वृष्टि या अनावृष्टि आदि दैव दुर्विपाक नहीं देखा जाता। इसलिये यहां दुर्भिक्ष नहीं होता है।

यहां कपडे, ईंट, टाली भी वनता है। सिवा इनके पालघाटका मोटा कपड़ा और चटाई तारीफ करने योग्य होती है। कालिकटके तय्यारी 'कालिको' वस्त्र अव दिखाई नहीं देता। वेपुरमें केमविस और पालीघाटमें रेशम उत्पन्न करनेकी तय्यारी हो रही है।

जैसा जैसा समय आया, उस उस तरहसे यहांका राजस्व वसूल होता गया। तम्वाकूका व्यवसाय सरकारका इजारा हो गया था। मिर्च पर महसूल लगाया जाता था। सिवा इसके इलायची तथा सोने पर भी सरकारका पूर्ण अधिकार था। किन्तु अव यह सव उठ गया है। सन् १८८२ ई०में सारे जिलेका राजस्व २८२७३२० रुपया निर्द्धारित हुआ। यह सव जमीनके ऊपर वसूल होता है।

मलवारमें २ जजी, ३ सव-जजी, १८ मुनसफी अदालत हैं। १ डिष्ट्रिक् मैजिष्ट्रेट और असिष्टेण्ट मैजिष्ट्रेट, ४ डेपुटी मैजिष्ट्रेट, ३२ सवडिपटी और ५ वेञ्च मैजिष्ट्रेट रहते हैं।

यहां अच्छी वृष्टि हुआ करती है। यहांकी वायु आर्द्र और वैशाख महीनेमें दक्षिण-पश्चिम कोनसे मलयवायु प्रवाहित हो कर आकाशको मेघाच्छन्न करती है। यह नातिशीतोष्ण और स्वास्थ्यकर स्थान है।

मलभुज (सं० पु०) मलं भुङ्क्ते इति भुज-क्विप्। १ काक, कौवा। (त्रि०) २ मलखानेवाला। जैसे—कीड़ा, सूअर आदि।

मलभेदिनी (सं० स्त्री०) मलं भिनत्तीति भिद् णिनि, स्त्रियां ङीप्। १ कटुका, कुटकी। (क्ली०) २ रौप्य, चांदी।

मलमल (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पतला कपड़ा जो वहुत वारीक सूतसे वुना जाता है। प्राचीन कालमें यह कपड़ा भारतवर्षमें, विशेषकर वंगाल तथा विहारमें वुना जाता था और वहींसे भिन्न भिन्न देशोंमें जाता था। अव तक ढाके और मुर्शिदावादमें अच्छी मलमल वनती है।

मलमला (हिं० पु०) कुलफेका साग।

मलमलाना (हिं० क्रि०) १ वार वार स्पर्श करना, लगातार छुलाना। २ वार वार खोलना और ढकना। जैसे—पलक मलमलाना। ३ पुनः पुनः आलिंगन करना।

मलमल्लक (सं० क्ली०) कौपीन।

मलमा (हिं० पु०) मलवा देखो।

मलमास (सं० पु०) 'मलः मलिनश्चासौ मासश्चेति कर्मधारयः। अधिक मास। पर्याय—मलिम्लुच, अधिमास, असंक्रान्तमास, नपुंसक। इसका लक्षण,—'रविसंक्रान्तभावविशिष्ट चान्द्रमासत्वं मलमासत्वं।" (शास्त्रविवेक टीका-श्रीकृष्ण तर्कालङ्कार)

मलमासतत्त्वमें मलमासका विस्तृत अर्थ लिखा गया है। यहां उसका वहुत संक्षिप्त विवरण लिखा जाता है।

"द्वादश मासाः सवत्सरः क्वचित् त्रयोदश मासाः सवत्सरः।"

वारह मासका एक वर्ष होता है। कभी कभी तेरह महीनेका भी वर्ष होता है। मास शब्दका प्रकृत अर्थ चन्द्रमास है, सौर मास नहीं। वारह चान्द्रमासोंका एक चन्द्र वर्ष होता है। शास्त्रमें इसी भीति पर मलमासका अस्तित्व है। मलमास होनेसे ही तेरह महीनेका वर्ष होता है।

"अमावस्याद्वय यत्र रविसङ्क्रान्तिवर्जितम्।
मलमासः स विज्ञेयो विष्णुः स्वपिति कर्कटे॥"

(मलमासतत्त्व)

दो अमावस्याका शेष क्षण यदि एक सौर मासमें पड जाता है, तो मलमास होता है। मलमास होने पर दो चान्द्रमास होता है, इनमें पहला मल वा मलिम्लुच और दूसरा शुद्ध। दो चान्द्रमास होनेका तात्पर्य यह, कि शुक्लपक्षीय प्रतिपदका पूर्वक्षण अर्थात् पूर्व अमावस्याका शेष समय जिस सौरमासमें पड़ेगा, वह शुक्लपक्षीय प्रतिपदसे अमावस्या पर्यन्त तीस तिथि-रूप मास है। यह मास सौरमास कहलाता है। जैसे, सौर वैशाखमासमें एक अमावस्याका शेष होनेसे परवर्त्ती शुक्लपक्षीय प्रतिपद्से अमावस्या तकका मास मुख्य चान्द्र वैशाख होगा। मलमासका विषय स्थिर करनेमें पहले मास कितने प्रकारके हैं, उनके लक्षण क्या हैं, इत्यादि विषय जानना आवश्यक है। मास चार प्रकारका है—सौरमास, चान्द्रमास, नक्षत्रमास और सावनमास। चान्द्रमासके हिसाबसे मलमास होता है, इसीसे चान्द्रमासका विषय जानना जरूरी है।

तिथिघटित मास ही चान्द्रमास है। चान्द्रमास दो प्रकारका है,—मुख्यचान्द्र और गौणचान्द्र। शुक्लपक्षकी प्रतिपद्से अमावस्या पर्यन्त इन तीस तिथियोंमें जो चांद्र मास होगा उसे मुख्यचान्द्र और कृष्णपक्षकी प्रतिपद्से पूर्णिमा पर्यन्त मासको गौणचान्द्र कहते हैं। कर्मविशेषमें कहीं मुख्यचान्द्र और कहीं गौणचान्द्र लिया जाता है।

मास शब्द देखो।

दो शुक्लपक्षीय प्रतिपदका पूर्वक्षण अर्थात् दो अमावस्याका शेष समय एक सौरमासमें पड़नेसे पूर्वोक्त साधारण लक्षणानुसार दोनों मासका एक ही नाम होता है। शुक्लपक्षीय प्रतिपदसे अमावस्या पर्यन्त तीस तिथि-स्वरूप मास एक नहीं, दो है। इनमेंसे पहला मल और दूसरा शुद्ध है। इसीसे तेरह महीनेका वर्ष होता है। कर्मयोग्य कालनिर्णयके लिये ही ऐसा नाम पडा है।

आषाढ मासकी शुक्लपक्षीय पञ्चमीमें मनसा-पूजा करनी होती है। आषाढ़मासमें यदि दो शुक्लपक्षीय पञ्चमी पडे, तो किस शुक्लपक्षकी पञ्चमीमें पूजा होगी, इस प्रकार संशय होता है। आषाढ़मासकी पूर्णिमामें यदि किसीके पिताकी मृत-तिथि पडे, तो किस पूर्णिमामें वह पितृश्राद्ध करेगा, इत्यादि संदेहको दूर करनेके लिये ही मलमास परिभाषा है।

"इन्द्राग्नी यत्र हूयेते मासादिः स प्रकीर्त्तितः।
अग्नीषोमौ स्मृतौ मध्ये समाप्तौ पितृसोमकौ॥
तमतिक्रम्य तु रविर्यदागच्छेत् कथञ्चन।
आद्यो मलिम्लुचो ज्ञेयो द्वितीयः प्रकृतः स्मृतः॥
तस्मिंस्तु प्रकृते मासि कुर्यात् श्राद्ध यथाविधि॥"

(लघु हारीत)

शुक्लपक्षीय प्रतिपदसे अमावस्या पर्यन्त जिस मासमें रविका संक्रमण नहीं होता, वह मास पहलेकी तरह दो होता है। पहला मलिम्लुच और दूसरा शुद्ध मास। शुद्ध मासमें ही श्राद्धादि करने होंगे। आश्वलायन ब्राह्मणमें लिखा है,—"अर्द्धमासा वै अधस्तात् सन्तोऽकमायन्तु मासाश्च स्याम इति ते द्वादशाहं क्रतुमुपायन् त्रयोदशं ब्राह्मणं कृत्वा तस्मिन् मृष्टोदतिष्ठन् तन्मासोऽनायतन इतरामनुपजीवति।"

अर्थात् अर्द्धमासको सकल मास करनेके लिये तेरह अर्थात् मलमासको ब्राह्मण बना कर द्वादशाहसाध्य यज्ञ करना चाहिये। इससे वे (यज्ञ करनेवाले) उस मलमासमें अपने पापोंको विसर्जन कर अभिलषित फल पाते हैं।

मलमासके कोई नियम नहीं है। चैत्रमास आदिकी तरह मलमास अमुक मासके बाद और अमुक मासके पहले पडेगा, ऐसा कोई नियम नहीं है। मलमास अन्य मासका अवलम्बन करके ही रहता है।

शास्त्रमें कहा है, कि सभी मासोंका पाप इस मलमासमें जमा होता है। इसलिये मलमासमें कोई धर्म-कर्म करना नहीं चाहिये। किन्तु नित्यकर्म और कुछ नैमित्तिक-कर्म जो मलमासमें कर्त्तव्य है उसे तो इस मासमें करना ही होगा, नहीं करनेसे काम चलता नहीं।

दिवा और रात्रिका परिमाण ६० दण्ड और तिथिका मान औसतसे ५८ दण्ड है। अतएव औसतसे ३०

दिनमें ३१ तिथि पडती है, इस प्रकार १२ महीनेमें १२ तिथि बढ़ जाती है। इस हिसाबसे ढाई वर्षमें ३० तिथि बढ़ गई। अब देखो, वैशाख, ज्येष्ठ इत्यादि क्रमसे ढाई वर्षके बाद जो चान्द्रकार्त्तिकमास होगा, उससे सौर-कार्त्तिकमासका ३० दिन अन्तर रहेगा। पांच वर्षके बाद देखा जाता है, कि सौर और चान्द्रमासमें ६० दिनका अन्तर हो गया है। इस प्रकार कभी सौर-आश्विन मासमें भी चन्द्रवैशाखमास हो सकता है। ऐसा होनेसे मासका जो साधारण लक्षण है उसमें व्यतिक्रम देखा जाता है। ३० तिथि बढ़नेसे ही मलमास होगा। मलमास होने पर एक ही नामके दो चान्द्रमास होते हैं। उसमे फिर ३० दिनसे अधिकका अन्तर नहीं हो सकता। हम लोगोकी चान्द्रमासमें होनेवाली जितनी क्रियाएं हैं, वे कमसे कम ३० दिनके भीतर ही होंगी। चाहे मुख्यचान्द्र-आश्विनका कार्य सौर आश्विनमे हो चाहे सौर कार्त्तिकमें, इसका कोई ठीक नहीं।

हर तीसरे वर्षमें मलमास हुआ करता है। पहले जो ढाई वर्षकी बात कही गई है, वह प्रायिक अभिप्रायसे। फाल्गुनसे कार्त्तिक तक दशों महीने मलमास हो सकता है। माघमासमे मलमास हो भी सकता है, पर पौषमासमें कभी भी नहीं।

मलमास हर तीसरे वर्षमें होता है, यह पहले ही कहा जा चुका है। परन्तु अन्धुक भट्ट ६५५ शकमे ऐसा देख कर लिख गये हैं, कि अमावस्यामें तुलासंक्रान्ति, (सौर कार्त्तिकमासका आरम्भ), उसके बाद अमावस्याके दूसरे दिन अर्थात् शुक्लपक्षीय प्रतिपदमें वृश्चिकसंक्रान्ति (सौर अग्रहायण मासका आरम्भ), इसके बाद अमावस्याको धनुःसंक्रान्ति (सौर पौषमासका आरम्भ) हुई है। इसमें कार्त्तिक मासमें मलमासके सभी लक्षण आये हैं। इसके बाद भी फिर वैशाख मासमें मलमास हुआ है। अब प्रश्न होता है, कि एक वर्षमें दो मलमास किस प्रकार हुआ? इसके उत्तरमें शास्त्र कहते हैं, कि ऐसा हो नहीं सकता। एक वर्षमें दो मलमासका होना कभी भी संभव नहीं। इस हिसावसे मलमासकी तीन प्रकारकी परिभाषा शास्त्रमें लिखी है, यथा—भानुलङ्घित, क्षय और मलमास। उक्त स्थान पर कार्त्तिक मास भानुलङ्घित, अगहन क्षय और वैशाख मल है।

भानुलङ्घित तथा मलमासके लक्षण एक-से हैं। फर्क इतना ही है, कि मलमासमें मासकी वृद्धि होती है, भानुलङ्घितमें नहीं होती। पर हां, यहां पर एक नियम है, वह यह है, कि वैशाख प्रभृति छः मासोंमेंसे किसी मासमें यदि मलमास देखा जाय, तो वैशाख आदिके मध्य ही मलमास होगा। आश्विन और वैशाखमें यदि मलमासके लक्षण दिखाई दें, तो वैशाख मास ही मलमास होगा, आश्विन मास नहीं। आश्विन मास भानुलङ्घित होगा।

जिस वर्षमे एक मलमास और एक भानुलङ्घित मास होता है उस वर्षमें एक क्षय मास भी हुआ करता है। जिस सौरमासके मध्य एक अमावस्याका भी अन्त्यक्षण पाया जाता है, वही क्षयमास है। कार्त्तिक, अग्रहायण और पौषको छोड़ कर अन्य मासमें क्षयमास नहीं होता।

मलमास, भानुलङ्घित मास और क्षयमास ये तीनों ही विवाहादि कार्यमें अनुपयुक्त हैं। परन्तु मलमासमें वार्षिक श्राद्ध, तिथिविशेषविहित देवपूजा आदि कार्य भी नहीं होते, भानुलङ्घित और क्षयमासमें होते हैं।

मुख्यकालानुष्ठेय प्रेतश्राद्ध, गर्भाधान, पुंसवनादि अन्न प्राशनान्त-संस्कार तथा समस्त संस्कारान्त वृद्धिश्राद्ध, मघा-त्रयोदशीश्राद्ध, शान्तिस्वस्त्ययन, मलमासमृतव्यक्तिका वार्षिक श्राद्ध, ये सब कार्य मलमासमें किये जा सकते हैं। एतद्भिन्न नैमित्तिक और काम्यकर्म मात्र ही मलमासमें निषिद्ध है।

'प्रायशो न शुभः सौम्यो ज्यैष्ठश्चाषाढ़कस्तथा।
मध्यमो चैत्रवैशाखावधिकोऽन्यः सुभिक्षकृत्॥'

(मलमासतत्त्व)

वैशाख, ज्यैष्ठ और आषाढ़ मास मलमास होनेसे प्रायः अशुभ होता है। चैत्र और वैशाख मास मध्यम है। बाकी महीनोंमे मलमास होनेसे सुभिक्ष होता है।

मलय (सं० पु०) मलते धरति चन्दनादिकमिति मल (वलिमलितनिभ्यः कयन्। उण् ४।६६) इति कयन् १ स्वनाम ख्यात पर्वत। पर्याय—आषाढ़, दक्षिणाचल, चन्दनाद्रि,

मलयाचल। यह पश्चिमी घाटका वह भाग है जहां चन्दन बहुत उत्पन्न होता है। पुराणोंमें इसे सात कुल पर्वतोंमें गिनाया गया है। मलयगिरि देखो।

"महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः।
विन्ध्यश्च पारिपात्रश्च सप्तैवात्र कुलाचलाः॥"

(मार्कण्डेयपु० ५७।१०)

२ मलाबारदेश। ३ मलयदेशके रहनेवाले मनुष्य। ४ एक उपद्वीपका नाम। ५ सफेद चन्दन। ६ नन्दन-वन। ७ गरुडके एक पुत्रका नाम। ८ शैलाङ्ग, पहाडका एक प्रदेश। ९ ऋषभदेवके एक पुत्रका नाम। १० आराम। ११ छप्पयके एक भेदका नाम। इसमें २५ गुरु, ९८ लघु, कुल १२३ वर्ण या १४८ मात्राएं होती हैं।

मलय शब्द पवन, समीर, वायु आदि शब्दोंके आदि-में समस्त हो कर सुगंधित और 'दक्षिणी वायु'का अर्थ देता है।

मलय—१ मलय उपद्वीपवासी जातिविशेष। ये लोग मलयभाषामें बोलचाल करते हैं। मदागास्करवासी 'होवा' जातिके साथ इनकी आकृति बहुत कुछ मिलती जुलती है। पेस्कल साहबने लिखा है, कि मरिलम् और बोर्वोके आविष्कार-कालमें मदागास्करमें मलय जातिका वास देखा गया था। शब्दतत्त्वविद् क्रोफोर्डने उक्त द्वीपको प्रचलित भाषामें मलयभाषागत शब्दका प्रयोग देखा है। पतद्भिन्न अपरापर पुरातत्त्वविदोंका विवरण पढ़नेसे मालूम होता है, कि मलयजाति एक समय सुदूर मदागास्कर द्वीपमें भी रहती थी।

मलय उपद्वीप और उसके पश्चिमके द्वीपोंमें मलय जातिका वास देखा जाता है। ये लोग बहुत शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त हैं। इनकी कथित मलय भाषामें भी बहुत पृथक्ता देखी जाती है। प्रोफेसर ए एच. कीन् मलयजाति और मलयभाषाकी विस्तृत तालिका दे गये हैं।

जातितत्त्वविदोंने शरीरका रंग देख कर इस विस्तीर्ण मलयजातिको दो प्रधान शाखामें विभक्त किया है। इन-मेंसे पहली श्रेणीका रंग तामड़ा तथा बाल पतले होते हैं। दूसरी श्रेणीकी आकृति बिलकुल निग्रो जाति-सी है।

ऐसी समानताको देख कर बहुतेरे इन्हें भी निग्रो जातिमें शामिल करते हैं। अन्दामन द्वीपसे प्रशान्त महासागर तकके अधिवासिगण यद्यपि निग्रो वा निग्रिटो कहलाते हैं, तो भी उनके मध्य क्रमसे कम बारह थोक देखे जाते हैं। इनमेंसे किसी श्रेणीका कद बहुत छोटा अर्थात् ५ फुटसे भी कम है। फिर किसी किसीका शरीर ६ फुटसे भी ऊंचा देखा जाता है।

मि० पेस्कलने मलयजातिके लोगोंको मोङ्गलीय जातिमें शामिल किया है। मरिज वैगनरने पेस्कलके मतका अनुसरण करते हुए लिखा है, कि मलय और मोङ्गलीय जातिकी खोपडी, शरीर-गठन और रंग तथा अङ्ग प्रत्यङ्ग बिलकुल एक-सा है। और तो क्या, वे यदि एक तरहका पहनावा पहनें तो कौन मलय है और कौन मोङ्गलीय, इसका पता लगाना कठिन हो जाता है।

न्युगिनीवासी मलय जातिकी एक शाखाका नाम 'पापुयान' है। वालिस साहबका विश्वास है, कि पापुयान और मलयजातिके बीच कोई घनिष्ठता वा निकट सम्बन्ध नहीं है।

सुमात्राद्वीपके मध्यवर्त्ती मेनाङ्गकाबूका समतल-क्षेत्र ही मलयजातिका आदि वासस्थान था। वहांसे वे लोग धीरे धीरे विभिन्न देशोंमें फैल गये।

पहले मलय-उपद्वीप और बोर्नियो द्वीपमें आदिम असभ्य-जातिका वास था। मलयगणोंने यहां आ कर निर्विवाद अपना आधिपत्य जमाया। अधिवासिगण उन्हें लाख चेष्टा करने पर भी भगा न सके। धीरे धीरे वहां मलय-जातिकी जड़ मजबूत होती गई। अब उन्होंने दूरवर्त्ती देशोंको भी जितनेकी कामनासे कदम बढ़ाया। किन्तु वहां क्षमताशाली सुसभ्य जातिके रहनेसे उनकी गोटी जमने न पाई। केवल उन सब स्थानोंमें उपनिवेश बसा कर वे रहने लगे थे। मलय-उपद्वीपके सभी अधि-वासी मलय जातिके हैं। अलावा इसके थोड़े से पहाड़ी निग्रो भी यहां रहते हैं। मलयजातिका वास बहुतायतसे होनेके कारण इस स्थानका मलय उपद्वीप नाम पड़ा है।

प्राचीन मलय राज्योंके राज्योपाख्यानसे जाना जाता है, कि पालेमबङ्ग नामक स्थानमें मलयजातिका आदि वासस्थान था। जातीय उन्नतिके साथ साथ उन्होंने

जन्मभूमिका परित्याग कर विभिन्न स्थानोमें एक एक छोटा राज्य वसाया। उन सव सम्प्रदायके अधिनायक राजा कहलाते थे। इस प्रकार अन्य स्थानमें उपनिवेश वसाने पर भी उनके राजवंश-प्रसङ्गके अनेक ऐतिहासिक आख्यान पाये जाते हैं। उक्त ग्रन्थसे मालूम होता है, कि यवद्वीपके साथ पालेमवङ्गका बहुत पहलेसे संस्रव था। अलावा इसके मजपहित द्वारा पालेमवाङ्ग जीते जानेसे बहुत पहले यवद्वीपवासीने जो पालेमवङ्ग जीता और वहां उपनिवेश वसाया था, उसका भी उल्लेख उक्त ग्रन्थमें देखा जाता है। मेनाङ्कवाबू, मलका आदि मलय-राज्यके राजवंशधरगण अपनेको पालेमवङ्ग-राजवंशसे उत्पन्न वतलाते हैं। आदिवासभूमि पालेमवङ्गमे रहनेके कारण ही प्राचीन मलयजातिने भारतीय हिन्दू और यवद्वीपवासीका आचार-व्यवहार सीखा था। यहां तक, कि उस प्राचीन युगमें मलय लोगोंने अपनी भाषामें भी संस्कृत और कवि भाषाके अनेक उपादान संग्रह कर लिये थे। उसी समयसे उन्होंने भारतीय राजतन्त्रके अनुकरण पर राज्यशासनप्रणालीको संगठित कर सुमात्राद्वीपमें एक धर्म और कर्मराज्य संस्थापन किया था।

मलयजातिके मध्य ४ प्रधान और कुछ अपेक्षाकृत छोटे छोटे थोक देखनेमें आते हैं। एतद्भिन्न दूसरी दूसरी श्रेणियां 'असभ्य' नामसे मशहूर है। प्रधान ४ के नाम हैं विशुद्ध 'मलय', 'यव' वासी, 'वुगि' और 'तगल'। इनमेंसे विशुद्ध मलयगण मलय-उपद्वीप, सुमात्रा और वोर्नियो द्वीपमें रहते हैं। मलय इनकी भाषा है। इनमे अरवी वर्णमाला विशेषरूपसे प्रचलित है। ये सभी मुसलमान-धर्मावलम्वी हैं। यववासी मलयजातिका वासस्थान यवद्वीप, सुमात्राका कुछ अंश, मदुरा, वाली और लम्वकका कुछ अंश है। यववासिगण भी मुसलमान-धर्मावलम्वी हैं, किन्तु वाली और लम्वकवासी मलय सवके सब हिन्दू हैं। कवि और यवनभाषा इनके मध्य प्रचलित है, किन्तु सभी देशी वर्णमालामे लिखना पढ़ना सीखते हैं। वूगी-जातिका वासस्थान सेलिविस द्वीप है। ये लोग वूगी और माकासर भाषामे वोलचाल करते हैं। ये सभी मुसलमानधर्मावलम्वी हैं। तगल जातिका वासस्थान फिलिपाइन द्वीपपुञ्ज है। इनमेंसे अधिकांश ईसाधर्मके माननेवाले हैं। तगल इनकी मातृ भाषा है, किन्तु स्पेनीय भाषा भी काममें लाते हैं।

वट्टकवासी असभ्य मलयजाति, सुमात्रावासी विभिन्न मलयजाति, वोर्नियो द्वीपके यक्ष (यक्ष) मलय-उपद्वीपके जकुल और उत्तर सेलिविसके सुलु, वौरू आदि द्वीपवासी अनार्य मलयजाति समझी जाती है।

पहले कहा जा चुका है, कि आकृतिमें मोङ्गलीय जातिके साथ मलय जातिकी विशेष सदृशता है। केवल आकृतिमें ही नहीं, प्रकृतिमें भी यथेष्ट सदृशता देखी जाती है। इन दोनों जातियोंकी रीतिनीति और आचार-व्यवहार सभी समान हैं। मलयगणोंके शरीरका रंग ललाई लिये मटमैला है। शिरके वाल काले और खड़े होते हैं। ये लोग मूंछ रखते है, दाढ़ी विलकुल मुंडवा लेते। शरीरका कद यूरोपवासियोंसे छोटा होता है। देह हृष्टपुष्ट होती है, पर गठन उतना सुन्दर नहीं है। अन्यान्य अङ्ग-प्रत्यङ्गके साथ तुलनामें हाथ पांव छोटे, छाती चौड़ी, मत्था गोल, ललाट चौडा, मुखमण्डल लम्व, होठ मोटे, आखें वडी वडी, कान खूव वडे और वेढंगे, दांत वड़े वड़े और सफेद होते हैं। १५ वर्षकी उमर तक इनके वाल वच्चे देखनेमें खराव नहीं, पर उससे ऊपर वढ़नेसे वे कुरूप दिखाई देते हैं। युवतियां दो एक वच्चे जननेके वाद ही कच्ची उमरमें वृद्धा सी दिखाई देती हैं।

मलयजाति स्वभावतः लज्जाशील है, किन्तु उतनी धैर्यशील नहीं। अनेक समय ये लोग आपसमें लडाई झगडा किया करते है। इनका मनोगत भाव वाहरी चेहरे वा हावभावसे नहीं जाना जा सकता। ये लोग वड़े धीरभावसे दूसरेके साथ वातचीत और आहार व्यवहार करते हैं। वालकगण प्रवीणके सामने कभी भी चञ्चलता नहीं दिखलाते। उच्च श्रेणीकी मलयजाति वहुत भद्र हैं। गर्वित और असद्व्यवहारके प्रति क्रुद्ध हो कर उन्हें उचित दण्ड देते हैं। किन्तु इनके प्रति यदि सद्व्यवहार किया जाय, तो ये उदारता और दया दिखलाते है। ये वृद्ध पिता, माता और वडोंका यथायोग्य सम्मान करते हैं।

मलयजातिके अधिकांश लोग मुसलमानी-धर्ममें दीक्षित हुए हैं। सबसे पहले द्वीपपुञ्जकी एकिनिस जातिने १२०६ ई०में मुसलमानी धर्म ग्रहण किया। पीछे मलक्काकी मलयजातिने १२७६ ई०में, मलक्कावासीने १४७८ ई०में और सेलिविसवासीने १४९५ ई०में उक्त धर्मको अपनाया। ये लोग जबरदस्ती मुसलमान नहीं बनाये गये हैं। अरबदेशीय वणिकोंने तथा अन्यान्य मुसलमान धर्म-प्रचारकोंने मलयजातिके साथ हेलमेल कर अपनी बुद्धिमत्ता और सभ्यतासे इन लोगोंके चितको आकर्षण कर लिया था। धीरे धीरे उन लोगोंके मध्य आपसमें आदानप्रदान होने लगा। इस प्रकार नाना कारणोंसे मलयजातिने स्वेच्छासे महम्मदका उपदेश अपनाया। मलय उपद्वीपके अधिवासियोंमें कोई कोई आज भी मूर्त्तिपूजा करते देखे जाते हैं। यवद्वीपकी पहाडी जाति हिन्दूधर्मावलम्बी हैं, यह पहले ही कहा जा चुका है। इन लोगोंमें भी बहुतसे कुसंस्कार प्रचलित हैं। ये लोग वृक्ष, नदी, वायु आदिको भी देवता समझ कर पूजते हैं।

मलय लोगोंमें कोई देशीय साहित्य देखनेमें नहीं आता। पारस्य, अरब, श्याम आदि देशीय ग्रन्थादिको ये लोग पढ़ते हैं। इनलोगोंके मध्य केवल 'ह्यातुया' नामक एक उपन्यासका प्रचार देखा जाता है।

मलय लोगोंके मध्य प्रचलित प्रथा,—यूरोपवासिगण सादर सम्भाषणके समय एक दूसरेका मुख चूमते हैं, मलयगण आपसमें नाक मलते हैं। अधिकांश लोग जूआ खेलना पसन्द करते हैं। मुर्गियोंको लड़ाई इनके मध्य एक विशेष आमोदकी जिंस है। सुमात्रावासियों के मध्य गेंदका खेल प्रचलित है। मलयवासिगण अतिशय सङ्गीतप्रिय हैं। देशी वाद्ययन्त्रके मध्य लड़ाई के डंकेको छोड़ कर और कुछ भी नहीं है। इन लोगोंमें 'म्योंदं' नामक नाटक खेलते देखा जाता है।

ये लोग अपने हाथसे तरह तरहके हथियार बनाते हैं। तलवार, बर्छा, कमान आदि युद्धास्त्रको काममें लाते हैं।

मलयवासीका परिच्छद।—स्त्रीपुरुष दोनों ही 'सारो' नामक पोशाक पहनते हैं। इस सारोका घेरा ४ फुट और लंबाई ६ फुट होती है तथा यह कमरसे पैर तक लटका रहता है। जब ये घरमें रहते हैं, तब एकमात्र सारोको ही काममें लाते हैं। घरसे बाहर निकलनेके समय मलुआर (पाजामा) पहन लेते हैं। शिङ्गापुरी, सलुआ, चीन मलुआ आदि अनेक किस्मके पाजामे प्रचलित हैं। अलावा इसके बाजू अर्थात् जाकेट मलय-परिच्छदका एक प्रधान अङ्ग है। जो मक्का-तीर्थ जाते हैं वे सभी पगडी पहन लेते हैं।

मलय—द्वीपपुञ्ज, (*Malay Archipelago*) मलक्का प्रणालीके पूर्ववर्त्ती द्वीपसमूह। वङ्गोपसागरस्थ तेनसेरिम तीरवर्त्ती मारगुई द्वीपपुञ्ज भी कभी कभी इसी नामसे पुकारा जाता है।

मलय—तेनसेरिमके दक्षिण प्रान्तसे ले कर विषुवरेखा तक कमसे कम ५०० मील विस्तृत एक देशभाग। इसका परिसर ५० मीलसे १५० मील और भूपरिमाण ८३००० वर्गमील है। जङ्गलमय पर्वतमाला इसके मध्य भागसे होती हुई बहुत दूर तक चली गई है।

वर्त्तमान समयमें मलय-उपद्वीपका अधिकांश स्थान श्याम और अंगरेजोंके अधिकारमें है। इष्टइण्डिया कम्पनीने १७७५ ई०में पेनां, १७९८ ई०में वेलेस्ली प्रदेश, १८२३ ई०में शिङ्गापुर और १८२४ ई०में मलक्काको दखल किया। ये सब स्थान १८६७ ई० तक उक्त कम्पनीके ही दखलमें रहे। पीछे यह अंगरेजोंके कर्तृत्वाधीन एक शासनकर्त्ताके हाथ सौंपा गया। उस समय इसका नाम हुआ 'ष्ट्रेट सेटलमेण्ट'।

मलयके अधिकांश स्थानोंमें मलयजातिका वास है। इसके अतिरिक्त सोमा, यकुन आदि जातिका भी वास देखा जाता है। इनकी नाक चिपटी, होंठ मोटे और बाल छोटे तथा घुंघराले होते हैं। यहां राइयत अथवा ओरङ्गलौत् नामक समुद्रवासी एक श्रेणीके लोग रहते हैं। ये लोग अकसर मछली खा कर अपना गुजारा चलाते हैं। ये नितान्त दुर्दान्त, असहिष्णु, सङ्गीतप्रिय और शिल्पकार्यमें निपुण हैं।

केदा, पेराक, सेलङ्गोर, नेग्री-सेम्बिलर और शुङ्गाई उजाङ्ग नामक राज्य उपद्वीपके मध्यवर्त्ती हैं। केदा राज्य लां नदीसे कियान् नदी तक विस्तृत है। केदाके

राजाने २००००) रु० वार्षिक कर निरूपित करके पेना अंगरेजोंके हाथ बेंच डाला। उक्त राजस्व अभी उनके उत्तराधिकारीको दिया जाता है।

पेराक अक्षा० ४° और देशा० ६° के मध्य विस्तृत है। सोनेकी खानके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है। यहां-की प्रायः सभी नदियोंमें सोना मिलता है। उपद्वीपस्थ सभी राज्योंमें पेराक बड़ा है। खनिज द्रव्योंके मध्य टीन बहुतायतसे मिलता है।

सलङ्गोर राज्य अक्षा० २° ३४′ उ० और देशा० ३° ४२′ पू०के मध्य पड़ता है। समुद्रसे यह स्थान प्रायः १२० मील विस्तृत है। पहले यहांकी नदियां जल-दस्युगणोंको आश्रय देती थीं।

शुङ्गाई उजोङ्गका क्षेत्रफल ७००० वर्गमील है। मलय-जातिने यहांकी आदिम असभ्य जातियोंको भगा कर अपना आधिपत्य जमाया है। यहां टीन काफी मिलता है। सोना और नीलकान्तमणि भी पाई जाती है।

मलयकेतु (सं० पु०) मुद्राराक्षस वर्णित एक नायक, पर्वतकका पुत्र।

मलयगन्धिनी (सं० स्त्री०) मलयस्य गन्धः अस्त्यस्याः मलयगन्ध-इनि स्त्रियां ङीप्। उमाकी एक सखीका नाम।

मलयगिरि—पाल लहरा प्रदेशके अन्तर्गत एक पर्वत। इस-का प्राकृतिक सौन्दर्य बहुत मनोरम है। यह समुद्रपृष्ठसे प्रायः ३८९५ फुट ऊंचा है।

मलयगिरि (सं० पु०) पुराण-प्रसिद्ध सात कुलाचलोंमेंसे एक। इसका दूसरा नाम मलयाचल भी है। यहां चन्दन अधिक और उत्तम होता है। यह पश्चिमी घाट-का वह भाग है जो मैसूरके दक्षिण और त्रावङ्कोरके पूर्वमें है। कोई कोई नीलगिरि पर्वतको भी मलयाचल कहते हैं। सूर्यदेवके उत्तरायणमें पदार्पण करने पर जब उत्तरीय भारत मलय-वायुके बहनेसे आनन्दको प्राप्त होता है उस समय हम लोग कहते हैं, कि दक्षिण-वायु मलय-गिरिसे बहती आ रही है। किम्वदन्ती है, कि निम्ब अथवा अमरूदके पेड़में मलय-वायु लगनेसे वह चन्दन-वृक्षमें परिणत हो जाता है। वैज्ञानिक मतसे यह दक्षिण-पूर्व मौनसून वायुमात्र है। वायु देखो।

२ मलयगिरिमें उत्पन्न चन्दन। ३ हिमालय पर्वतका वह देश जहां कामरूप और आसाम है।

मलयगिरि—एक प्रसिद्ध जैन-टीकाकार, उपदेश-पदके रच-यिता हरिभद्रके शिष्य। शब्दानुशासन और उसकी वृत्ति, नन्द्यध्ययनटीका, कर्मप्रकृतिवृत्ति, राजप्रश्नोयोपाङ्गवृत्ति आदि ग्रन्थ इनके बनाये हुए मिलते हैं।

मलयगिरि (हिं० पु०) कामरूप, आसाम और दार्जिलिङ्ग-में होनेवाला एक पेड़। यह दारचीनीकी जाति-का बहुत ऊंचा पेड़ होता है। इसकी छाल दो अंगुलसे चार पांच अंगुल मोटी और लकड़ी भारी, पोलापन लिये सफेद रंगकी होती है। छाल और लकड़ी दोनों-से अच्छी गन्ध आती है। लकड़ी बहुत मजबूत होती है और साफ करने पर चमकदार निकलती है। इसमें दीमक आदि कीड़े नहीं लगते। यह मेज, कुरसी, संदूक, इमारत आदि बनानेके काममें आती है। इसका बीज वसन्त ऋतुमें बोया जाता है।

मलयज (सं० पु० क्ली०) मलयात् जायते जन-ड। १ चन्दन। २ राहु। ३ मलयदेश-जातवायु। ४ रक्तचन्दन। ५ श्रीखण्डचन्दन। (त्रि०) ६ मलयजातमात्र, जो मलय पहाड़ पर होता हो।

मलयज—एक प्राचीन कवि।

मलयजरजस् (सं० क्ली०) मलयजस्य रजः। चन्दनका चूर्ण।

मलयतपना (सं० स्त्री०) भल्लातकवृक्ष।

मलयदेश (सं० पु०) देशभेद।

मलयद्रुम (सं० पु०) १ मदनवृक्ष, मैनो नामक पेड़। २ चन्दन।

मलयध्वज (सं० पु०) राजभेद।

"उपयेमे वीर्यपणां वैदर्भीं मलयध्वजः।"

(भागवत ४।२८।२९)

मलयपवन (सं० पु०) मलयोद्भव वायु, दक्षिण दिशाकी वायु। वसन्तके प्रारम्भमें ही इस वायुका बहना आरंभ होता है। दक्षिणस्थ नीलगिरिके चन्दनादि वृक्षकी सुगन्ध लेती हुई बहता है, इसीसे इसको मलय-पवन कहते हैं। नीलगिरिका दूसरा नाम मलयपर्वत है। कोई कोई पश्चिम घाट पर्वतको भी मलयाचल कहते हैं।

मलयपर्वत (सं० पु०) मलयाचल, कुलपर्वत।

मलयप्रभ (सं० पु०) राजभेद।

मलयप्रभसूरि—एक जैनसूरि। इन्होंने मानतुङ्गसूरिकृत सिद्धजयन्तकी टीका लिखी है। उक्त टीका १२६० विक्रम संवत्में रची गई थी।

मलयभूभृत् (सं० पु०) मलयपर्वत।

मलयभूमि (स० स्त्री०) हिमालय-पर्वतस्थ स्थानभेद, हिमालयके एक प्रदेशका नाम।

मलयराज—एक प्राचीन कवि।

मलयवाट (सं० पु०) मलयानिल, मलय पर्वतकी ओरसे आनेवाली वायु।

मलयवासिनी (सं० स्त्री०) दुर्गा। (हरिवंश १०।२४५)

मलया (सं० स्त्री०) मल कयन्-टाप्। १ त्रिवृता, निसोथ। २ सोमराजी। ३ वकुची।

मलयागिरी (सं० पु०) मलयगिरि देखो।

मलयाचल—बम्बई प्रदेशके सह्याद्रि-पर्वतका एक अंश। स्कन्दपुराणके मलयाचल-खण्डमें यहांके देवतीर्थादिका विषय सविस्तार लिखा है।

मलयाचल (सं० पु०) मलयश्चासावचलश्चेति। मलय पर्वत।

"पुन्नागनागकरवीरकृतोपकारे
तस्मिन् गृहे कमलरेणुवरो शयीत्।
यत्राहतानिलविकम्पितपुष्पदाम्नि
हेमन्तविन्ध्यहिमवन्मलयाचलानाम्॥"
(सुश्रुत उत्तरत० ४७ अ०)

मलयाद्रि (सं० पु०) मलयपर्वत।

मलयानन्दसरस्वती—एक विख्यात पण्डित। आप शङ्कराचार्यके मतपोषक थे और आचार्यरूपमें उक्त मतका प्रचार कर गये हैं।

मलयानिल (सं० पु०) मलयस्य अनिलः। १ वसन्तकालीन वायु, वसन्तकालकी हवा। पर्याय—वासन्त।

"स एव सुरभिः कालः स एव मलयानिलः।
सैवेयमबला किन्तु मनोऽन्यदिव दृश्यते॥"
(साहित्यदर्पण ३।१२६)

२ सुगन्धित वायु। ३ मलयपर्वतकी ओरसे आनेवाली वायु, दक्षिणकी वायु।

मलयालम—भारतवर्षके दक्षिण पश्चिममें अवस्थित एक प्रदेश। यह चन्द्रगिरिसे कुमारिका अन्तरीप तक विस्तृत है। इसे केरल भी कहते हैं। केरल देखो।

हिन्दूशास्त्रमें लिखा है, कि परशुरामने समुद्रसे इस स्थानका उद्धार किया था। पीछे भिन्न भिन्न समयमें भिन्न भिन्न राजाने इस पर अधिकार जमाया। कालीकटके अधिपति, कानपुरकी बेगम, त्रिवाङ्कोरके राजा, पुर्त्तगीज, ओलन्दाज, फरासी और टीपू सुलतान,—ये सब क्रमशः केरलके अधिश्वर हुए थे। वर्त्तमान समयमें यह एक एकमात्र वृटिश-गवर्मेण्टके अधीन है। मलयालमके प्रायः सभी स्थान पर्वतमालासे परिपूर्ण है। बीच बीचमें उपत्यका भी देखी जाती है। तामिल भाषामें मलय शब्दका अर्थ पर्वत और अलम शब्दका अर्थ उपत्यका है। इसी कारण इसका तामिल नाम 'मलयालम्' हुआ है। इसे केरल भी कहते हैं। केरल नामकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता, पर कोई कोई 'केरम' अर्थात् नारिकेल (नारियल) शब्दसे केरल नामकी उत्पत्ति बतलाते हैं। फिर किसी किसीका कहना है, कि केरल नामक यहां एक प्रबल राजा राज्य करते थे। शायद उन्हींके नामानुसार इस प्रदेशका नाम केरल रखा गया होगा।

यहांके प्रधान अधिवासी नायर जातिके है। ये लोग मलयाल-शूद्र नामसे भी प्रसिद्ध हैं। मलयालम इनकी भाषा है। किन्तु तामिल भाषाका भी प्रचार देखा जाता है। भारतके अन्यान्य प्रदेशोंसे भी आर्य और अनार्य जातिके नाना सम्प्रदाय इस स्थानमें आ कर बस गये हैं। ये लोग साधारणतः कनाडी, गुजराती, हिन्दुस्तानी आदिमें बोलचाल करते हैं एतद्भिन्न यहां मापिल्ला नाम एक श्रेणीका मुसलमान भी रहता है। अरबदेशसे जिन सब मुसलमानोंने पहले मलबारमें उपनिवेश बसाया था, उन्हींके औरस और मलबारी रमणीके गर्भसे जो सन्तान उत्पन्न हुई वही 'मापिल्ला' कहलाई। मा का अर्थ माता और पिल्ला का अर्थ पुत्र है, अतः मापिल्ल का अर्थ मा का पुत्र होता है।

मापिल्ला जाति बहुत बलिष्ठ और साहसी है।

मलयालि—दाक्षिणात्यवासी एक पहाडी जाति। खेतीबारी और पशुपालन ही इनकी एकमात्र उपजीविका है। बहुतेरे शेवारय पहाडके उपत्यकास्थित ग्रामोंमें रहते हैं। सुना जाता है, कि ये लोग १३वीं सदीमें काञ्चीपुरसे यहां

आ कर बस गये हैं। ये सबके सब हिन्दूधर्मावलम्बी हैं और तामिल भाषा बोलते हैं।

मलयाली (हिं० पु०) १ मलबार देशका, मलाबार देशसम्बन्धी। २ मलाबार देशमें उत्पन्न। (स्त्री०) ३ मलाबार देशकी भाषा।

मलयू (सं० स्त्री०) मलपू-पृषोदरादित्वात् पस्य यत्वं। मलपू, कठूमर।

मलयेन्दुसूरि—एक जैन सूरि। इन्होंने महेन्द्रसूरि-विरचित मन्त्रराज नामक ग्रन्थकी टीका और यन्त्रराजरचना नामक ग्रन्थ लिखे हैं।

मलयोद्भव (सं० क्ली०) मलयः उद्भव उत्पत्तिकारणं यस्य। चन्दन।

मलर (सं० पु०) बौद्धमतानुसार अति ऊद्ध्र्व संख्या।

मलरुचि (सं० त्रि०) दूषित रुचिका, पापी।

मलरोधक (सं० त्रि०) जो मलको रोके, कब्जियत करनेवाला।

मलरोधन (सं० क्ली०) विष्टम्भ, कब्जियत।

मलवदेश (सं० पु०) मालवदेश। मालव देखो।

मलवत् (सं० त्रि०) मल अस्त्यर्थे मतुप्, मस्य व। मलयुक्त।

मलवद्वासस् (सं० त्रि०) मलवद्वासो यस्य। १ मलिनवस्त्रविशिष्ट, मैला कपड़ावाला। २ ऋतुमती स्त्री, रजस्वला नारी।

मलवल्ली—बम्बईप्रदेशका एक ग्राम। यहां प्राचीरवेष्टित एक मिट्टीका दुर्ग था। जिस समय अंगरेजों और टीपू सुलतानसे युद्ध चल रहा था उस समय यहा टीपूकी सेना रहती थी।

मलवर्त्तिका—प्राच्य जनपदभेद। भिन्न भिन्न पुराणमें इसका भिन्न भिन्न नाम देखा जाता है, यथा—बलवन्तिका, मानवर्त्तिका, नवदन्तिका आदि।

मलवा (हिं० पु०) बरमामें होनेवाला हावरको जातिका एक पेड़। यह बहुत ऊंचा नहीं होता। इसकी लकड़ी चिकनी और नारंगी रंगकी होती है और मेज, कुर्सी आदि बनानेके काममें आता है।

मलवाना (हिं० क्रि०) मलनेका प्रेरणार्थक रूप, मलनेका काम दूसरेसे कराना।

मलवासिक—दक्षिण-भारतके अन्तर्गत एक प्राचीन जनपद। यह वर्त्तमान कटलाई नामक स्थानके पास है।

मलवाहिन् (सं० त्रि०) मल-वह-णिनि। मलवहनकारी, मैला ढोनेवाला।

मलविनाशिनी (सं० स्त्री०) मलं विनाशयतीति विनश णिच् णिनि स्त्रियां ङीप्। १ शङ्खपुष्पी। २ क्षार।

मलविशोधन (सं० क्ली०) १ मलपरिष्कारकरण, मैल साफ करना। २ स्वर्ण आदिकी खाद देना।

मलविसर्जन (सं० क्ली०) मलस्य विसर्ज्जनं। मलत्याग, पाखाना फिरना।

मलवेग (सं० पु०) अतीसार।

मलशुद्धि (सं० स्त्री०) मलशोधन, पेट साफ करना।

मलशैत्य (सं० क्ली०) श्लेष्मज रोग।

मलसा (हिं० पु०) घी रखनेका कुप्पा।

मलसी (हिं० स्त्री०) मिट्टीका वर्त्तन जिसमें प्रायः मुसलमान खाना पकाते हैं।

मलसूत (अ० पु०) भारी बोझ उठा कर गाड़ी या नाव आदि पर लादनेका यन्त्र, दमकला।

मलहन (सं० स्त्री०) रुद्राश्वकी कन्या।

मलहन्ता (सं० पु०) मलहन्तृ देखो।

मलहन्तृ (सं० पु०) मलं हन्तीति हन तृच्। शाल्मलीकन्द, सेमलका मूसल।

मलहम (अ० पु०) ओषधियोंके योगसे बना हुआ चिकना चपकोला लेप जो घाव, फोड़े आदि पर लगाया जाता है, मरहम।

मलहर (सं० पु०) जैपालवृक्ष, जमालका पेड़।

मलहा (सं० स्त्री०) हरिवंशके अनुसार राजा रौद्राश्वकी कन्याका नाम।

मलहारक (सं० त्रि०) १ पापहारक, पाप हरनेवाला।

"अरक्षितार राजानं बलिषड्भागहारिणम्।
तमाहुः सर्वलोकस्य समग्रमलहारकम्॥" (मनु ८।३०८)

२ मेहतर, भंगी।

मला (सं० स्त्री०) मल-अच्-टाप्। १ भूम्यामलकी, भुइं आंवला। २ आम्रहरिद्रा, आंबाकी हलदी। ३ नाभिनाला, नाभिकी नाड़ी। ४ चमड़ा। ५ चमड़ेसे बना हुआ पदार्थ। ६ कसकुट। ७ बिच्छूका डंक।

मलाई (हिं० स्त्री०) १ दूधकी साढ़ी। इसके बनानेकी रीति इस प्रकार है:—जब दूध धीमी आंचसे गाढ़ा हो जाता है तब उसके सार भागकी एक हलकी तह जमती जाती है। यही तह बार बार जमनेसे मोटी हो जाती है, इसीको मलाई कहते हैं। यह मुलायम और चिकनाईसे भरी होती है। जमाए जाने पर इसी मलाईको मथ कर मसका निकाला जाता है।

२ सार तत्त्व, रस। ३ एक रंगका नाम जो बहुत हलका बादामी होता है। ४ मलनेकी क्रिया या भाव। ५ मलनेकी मजदूरी।

मलाकर्षिन् (सं० पु०) मलं विष्ठां आकर्षति स्थानात् स्थानान्तरं नयति आ-कृष-णिनि। भंगी, मेहतर।

मलाकर्षी (सं० पु०) मलाकर्षिन देखो।

मलाका (सं० स्त्री०) मलेन मनोमालिन्येन अकति कुटिलं गच्छतीति अक-अच्, स्त्रियां टाप्। १ कामिनी-स्त्री। २ वेश्या। ३ हस्तिनी, हथिनी। ४ दूती।

मलाख्यकिट्ट (सं० क्ली०) मल।

मलाजातक (सं० पु०) गंधमार्जार, गंधबिलाव।

मलाट (हिं० पु०) एक प्रकारका मोटा घटिया कागज। यह प्रायः खाकी रंगका होता है और कागजोंके बंडल बांधने या इसी प्रकारके और कामोंमें आता है।

मलाधिक्य (सं० क्ली०) श्लेष्मज रोग। इस रोगमें बहुत दस्त होता है।

मलान (हिं० वि०) म्लान देखो।

मलानि (हिं० स्त्री०) म्लानि देखो।

मलापकलण (सं० क्ली०) १ पापमोचन। २ मल साफ करना।

मलापह (सं० त्रि०) १ मलनाशक, मल दूर करनेवाला। २ पापनाशक।

मलापहा (सं० स्त्री०, मलं अपहन्तीति अप-हन-ड स्त्रियां टाप्। १ एक नदी। २ कुलथीका अंजन। ३ वनकुलथी।

मलाबार (सं० पु०) भारतके दक्षिणी प्रान्तका देश। मलबार देखो।

मलाभ (सं० त्रि०) कुत्सित, कदर्य।

मलामत (अ० स्त्री०) १ लानत, दुतकार। २ किसी पदार्थमेंका निकृष्ट या खराब अंश।

मलामती (फा० वि०) १ जो मलामत करनेयोग्य हो, दुतकारने या फटकारने योग्य। २ घृणित, जघन्य।

मलायन (सं० क्ली०) मलद्वार, गुदा।

मलार (हिं० पु०) संगीत-शास्त्रानुसार एक रागका नाम। मल्लार देखो।

मलारि (सं० पु०) मलस्य अरिर्नाशको रेचकत्वात्। क्षार।

मलारी (हिं० स्त्री०) वसन्तरागकी एक रागिनीका नाम। मल्लारी देखो।

मलाल (अ० पु०) १ दुःख, रंज। २ उदासीनता, उदासी।

मलावरोध (सं० पु०) मलविष्टम्भ।

मलावह (सं० क्ली०) मलं आवहतीति आ-वह-अच्। मनुके अनुसार पापोंकी एक कोटि। इसमें कृमि-कीटों और पक्षियोंकी हत्या, मद्यके साथ एक पात्रमें लाये हुए पदार्थोंको खाना, फल, ईंधन और फूलकी चोरी और अधैर्य सम्मिलित हैं।

"कृमिकीटवयो हत्यामद्यानुगतभोजनम्।
फलैधः कुसुमस्तेयमधैर्यञ्च मलावहम्॥" (मनु० ११।७१)

मलाशय (सं० पु०) उदर, मलस्थान।

मलि (सं० स्त्री०) १ अधिकार। २ अधीनता।

मलिक (अ० पु०) १ राजा। २ अधीश्वर। ३ मुसल-मानोंकी एक जातिका नाम। इस जातिके लोग मध्यम श्रेणीके माने जाते हैं और खेती-बारी करके अपना गुजारा चलाते हैं। ४ किन्नरों और कथकोंके एक वर्ग-की उपाधि।

मलिका (अ० स्त्री०) १ रानी। २ अधीश्वरी। ३ मल्लिका देखो।

मलित (हिं० पु०) एक प्रकारकी छोटी कूंची। इससे सुनार नक्काशीके गहनोंको साफ करते हैं।

मलिन (सं० क्ली०) मलते धारयतीति मल (बहुलमन्य-त्रापि। उण्. २।४९) इति इनच्, यद्वा (जोत्स्ना तमिस्रेति। पा ५।२।११४) इत्यत्र मलशब्दादिनजीमसचौ प्रत्ययौ निपात्येते इति काशिकोक्त्या इनच्। १ मलयुक्त वस्तु, मैली चीजें। २ एक प्रकारके साधु जो मैला कुचैला कपड़ा पहनते हैं, पाशुपत। ३ मट्ठा। ४ टङ्कण, सोहागा। ५ दोष, पाप। ६ कृष्णागुरुकाष्ठ, काला अगर। ७ सद्यः-प्रसूत-गोदुग्ध, गौका ताजा दूध। ८ हंस। ९ दूत्ता,

मूठ। १० रत्नोंकी चमक और रंगका फीका तथा धुंधला होना। रत्नोंके लिये यह एक दोष समझा जाता है।

(त्रि०) ११ मलयुक्त, मैला। १२ दूषित, खराब। १३ जिसका रंग खराब हो गया हो, मटमैला। १४ पापात्मा, पापी। १५ धीमा, फीका। १६ विषण्ण, मलिन, उदासीन।

मलिनता (सं० स्त्री०) मलिन होनेका भाव, मैलापन।

मलिनत्व (सं० क्ली०) मलिनस्य भावः त्व। मलिनता, मालिन्य।

मलिनमुख (सं० पु०) मलिनं मुखं अग्रभागो यस्य। १ अग्नि, आग। २ गो-लांगुल, बैलकी पूंछ। ३ प्रेत। (त्रि०) मलिनं दूषितं मुखं यस्य। ४ क्रूर। ५ खल। ६ म्लानवदन, जिसका मुंह उदास हो।

मलिना (सं० स्त्री०) मलिन-टाप्। १ रजस्वला स्त्री। २ शर्करा, लाल खांड़। ३ वृहती, छोटी भटकटैया।

मलिनाई (हिं० स्त्री०) मलिनता, मैलापन।

मलिनाम्बु (सं० क्ली०) मलिनं कृष्णवर्णं अम्बु। १ मसी, स्याही। २ मलिन जल, गदला पानी।

मलिनास्य (सं० त्रि०) मलिनं दूषितं आस्यं यस्य। १ खल, दुष्ट। २ म्लान वदन, जिसका मुंह उदास हो।

मलिनिमन् (सं० त्रि०) मलिन-इमनिच्। १ अतिशय मलिन, बहुत मैला। २ मलिनता, मैलापन।

मलिनी (सं० स्त्री०) मलमस्या अस्तीति मल-इनि स्त्रियां ङीप्। १ रजस्वला स्त्री। २ म्लान, संकुचिता।

मलिनीकरण (सं० क्ली०) अमलिन मलिनं करणं अभूत-तद्भावे च्विः ततो दीर्घः। १ निर्मल वस्तुको मैला करना। २ पापोंकी एक कोटिका नाम।

मलिम्लुच (सं० पु०) मली सन् म्लोचतीति म्लुच् गत्यां क। १ मलमास। जिस समय रवि दर्शान्तमासको अतिक्रम कर (दो अमावस्या जिस मासमें पड़ी है) मासान्तरमे राश्यन्तर संयोगको प्राप्त होते हैं उसे मलिम्लुच वा मलमास कहते हैं। इन दोनों मासोंमें पहला मास अशुद्ध और दूसरा शुद्ध मास है। मलमास देखो।

२ अग्नि, आग। ३ चौर, चोर। ४ वायु, हवा। ५ पञ्चयज्ञ न करनेवाला पुरुष।

मलिया (हिं० स्त्री०) १ मिट्टीके एक बरतनका नाम। इसका मुंह तंग होता है। इसमें घी, दूध, दही आदि पदार्थ रखे जाते हैं। २ गोटीके खेलमें वह त्रिकोण चक्र जो चौकके दोनों ओर बीचमें बना रहता है। इस खेलका नाम अठारह गोटी है। दो आदमी मिल कर यह खेल खेलते हैं। प्रत्येक पक्षमें अठारह गोटियां होती हैं। इनमें छः गोटियां मलियामें और बाकी बारह ढाई पंक्तियोंमें रखी जाती हैं। सिर्फ बीचका विंदु खाली रहता है। गोटियां एक विंदुसे दूसरे विंदु तक लकीरोंके मार्गसे चलती हैं। जब एक गोटी दूसरी गोटीको पार करती है, तब वह पहली गोटी मानों मर जाती है। दोनों ओरकी सब गोटियां जब मलियासे चौकमें निकल आती हैं, तब यदि किसी पक्षवाला 'मलियामेट' शब्द कह दे, तो दोनों ओरकी मलिया मिटा दी जाती है और फिर गोटियां चौकमें ही रहती हैं। परन्तु यदि कोई मलियामेट न कहे तो गोटियां बराबर मलियामें आती जाती रहती हैं। २ चक्कर, घेरा।

मलियामेट (हिं० पु०) सत्तानाश, तहस नहस।

मलिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन मलिनं मल-इष्ठन्। १ अतिशय मलिन, बहुत अधिक मैला कुचैला।

मलिस (हिं० स्त्री०) सुनारोंका एक। औजार इसका आकार छेनी-सा होता है और इससे हंसुलीकी गिरह वा घुंड़ियाँ उभारी जाती हैं।

मलीदा (फा० पु०) १ चूरमा। २ एक प्रकारका ऊनी वस्त्र। यह बहुत मुलायम और गरम होता है। यह बुने जानेके बाद मल कर गफ और मुलायम बनाया जाता है। काश्मीर और पंजाबमें यह अधिकतासे तैयार होता है और वहींसे दूर दूर देशोंमें भेजा जाता है।

मलीन (हिं० वि०) १ मैला, अस्वच्छ। २ उदास।

मलीनता (हिं० स्त्री०) मलिनता देखो।

मलीमस (सं० क्ली०) मलमस्यास्तीति मल (ज्योत्स्नातमिस्रेति। पा ५।२।११४) इति ईमसच् प्रत्ययेन निपातितः। १ लौह, लोहा। २ पुष्पकासीस, पीले रंगका कसीस। ३ पाप, दोष। (त्रि०) ४ मलिन, मैला। ५ कृष्णवर्ण, काला। ६ मलयुक्त, पापी।

मलीयस् (सं० स्त्री०) अतिशयेन मलिनः मल ईयसुन्। अत्यन्त मलिन, बहुत अधिक मैला कुचैला।

मलुक (हिं० स्त्री०) १ उदर, पेट। २ एक प्रकारका पशु।

मलू (हिं० स्त्री०) १ मलघन नामक कचनारकी छाल। यह बहुत दृढ़ होती है और रंगने पर कूट कर उनमें मिलाई जाती है। २ मलघन नामक वृक्ष।

मलूक (सं० पु०) १ एक प्रकारका कीड़ा। २ एक प्रकारका पक्षी। ३ बौद्ध शास्त्रानुसार एक संख्यास्थान। ४ अमलूक देखो।

मलूक (हिं० वि०) सुन्दर, मनोहर।

मलूकदास—कडामानिकपुरके रहनेवाले एक भाषाके कवि। १८८५ सम्वत्में इनका जन्म हुआ था। इनकी कविता बहुत ललित होती थी।

मलेक्ष (हिं० पु०) म्लेच्छ देखो।

मलेच्छ (हिं० पु०) म्लेच्छ देखो।

मलेरिया (अं० पु०) वर्षाऋतुमें फैलनेवाला एक किस्मका ज्वर। पहले डाक्टरोंका विश्वास था, कि वस्तुओंके सडने या किसी अन्य कारणसे वायुमें विष फैलता है। इसीसे विषसे सविराम अर्थात् अंतरिया, तिजरा, चौथियो आदि ज्वर, जो मलेरियाके अन्तर्गत हैं, फैलते हैं। परन्तु अब उन लोगोंने यह स्थिर किया है, कि मच्छडोंके काटनेसे मलेरियाका विष मनुष्योंके रक्तमें पहुंचता है। इसीसे सविराम ज्वरका रोग उत्पन्न होता है।

मलैसीजो—जयपुरके प्राचीन राजा। इनके पिताका नाम था पजोनी। महाराज पजोनीने कन्नोजके स्वयम्वरके समय पृथ्वीराजको ओरसे युद्ध किया था। पजोनी और मलैसी ये दोनों उस युद्धमें शामिल थे। पीछे मलैसीजो आंवेरकी गद्दीके अधीश्वर हुए।

मलोला (अ० पु०) १ मानसिक व्यथा, दुःख। २ वह इच्छा जो उमड उमड कर मानसिक व्याकुलता उत्पन्न करे, अरमान।

मल्ल—देशभेद, मल्लजातिको वासभूमि। महाभारतके भीष्मपर्वमें इस प्राचीन जनपदका उल्लेख देखनेमें आता है। यह सुप्राचीन मल्लराज्य अभी मालभूमि कहलाता है। कोई कोई विराटराज्यको मल्लराज्य बतलाते हैं।

मल्ल—एक प्राचीन जातिका नाम। इस जातिके लोग द्वन्द्वयुद्धमें बडे निपुण होते थे, इसीलिये द्वन्द्वयुद्धका नाम मल्लयुद्ध और कुश्ती लड़नेवालेका नाम मल्ल पड़ गया है। महाभारतमें मल्लजाति, उनके राजा और देशका उल्लेख आया है। भारतवर्षके बहुतसे स्थानोंमें अर्थात् मूलतान (मल्ल-स्थान), मालव, मालभूमि आदिमें (मल्ल) मल्ल शब्द विकृत रूपमें मिलता है। त्रिपिटकसे कुशनगरमें मल्लोंके राज्यका होना पाया जाता है। मनुस्मृतिमें मल्लोंकी लिछिवी आदिके साथ संस्कारच्युत वा व्रात्य क्षत्रिय लिखा है। परन्तु मल्ल आदि क्षत्रिय जातियां बौद्ध मतावलम्बी हो गई थीं। त्रिपिटकमें इसका उल्लेख स्थान स्थान पर मिलता है। इससे साफ साफ मालूम होता है, कि ये लोग ब्राह्मणोंके अधिकारसे बाहर और व्रात्य थे और शायद इसीलिये स्मृतियोंमें इन्हें व्रात्य कहा गया है। नेपाल और बांकुडा जिलेके विष्णुपुर राज्यमें एक समय ऐसे महावीर्यशाली मल्लराजाओंका अच्छा प्रादुर्भाव था। मथुरापति कंसकी सभामें भी सैकड़ों मल्ल रहते थे। भगवान् श्रीकृष्णने मथुरा आ कर इन देशविख्यात मल्लगणोंका बल चूर चूर कर दिया था।

नेपाल, विष्णुपुर और मल्लयुद्ध देखो।

मल्ल—हिन्दीके प्रसिद्ध कवि। ये खोंची असोचरवालेके यहां रहते थे। इनकी तोष कविकी श्रेणीमें गिनती की गई है। इनकी कविता बड़ी ललित होती थी, उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं।

> आजु महादीननको सूखि गो दयाको सिन्धु
> आजु ही गरीबनको सब गथ लूटि गो।
> आजु दुजराजनको सकल अकाज भयो
> आजु महराजनको धीरजहु छूटि गो॥
> मल्ल कहै आजु सब मगन अनाथ भये
> आजु ही अनाथनको करम सो फूटि गो
> भूप भगवन्त सुरधामको पयान कियो
> आजु कविगनको कलप तरु टूटि गो॥

मल्ल (सं० पु०) मल्लते धरति बलमिति मल्ल-अच्। १ बाहुयोधी, पहलवान। २ पात्र, बरतन। ३ कपोल, गाल। ४ मत्स्यभेद, एक प्रकारकी मछली। ५ दीप। ६ वर्णसङ्कर जातिविशेष। मनुके मतसे यह जाति व्रात्य क्षत्रिय और सवर्णा स्त्रीसे उत्पन्न हुई है।

"झल्लो मल्लश्च राजन्यात् व्रात्यान्निच्छिविरेव च।
नटश्च करणश्चैव खसो द्रविड एव च॥"

(मनु १०।२२)

'क्षत्रियाद्व्रात्यात् सवर्णायां झल्लमल्लनिच्छिविनटकरण-खसद्रविडाख्या जायन्ते' (कुल्लूक)

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें लेट पिता और तीवर मातासे इस जातिकी उत्पत्ति लिखा है। पराशरके मतानुसार तन्तुवायु माता और कुन्दकार पितासे इस जातिकी उत्पत्ति है।

७ देशभेद। (भारत विराटप० १ अ०)

मल्लक—एक प्राचीन कवि।

मल्लक—विन्ध्यपर्वतके आस पास बसनेवाली एक प्राचीन जाति। (महाभारत भीष्म० ६।४३)

मल्लक (सं० पु०) मल्ल-इव-मल्ल-कन्, दृढ़त्वादस्य तथात्वं, यद्वा मल्ल धारणे ण्वुल्। १ दन्त, दांत। २ ब्राह्मणविशेष।

"विलोक्य वै कल्यहतो वद्धौ तो स्वामिनी तथा।
कृष्यति धेनुस्तस्थौ द्विजन्मा मल्लकाभिधः॥"

(राजतर० ८।२३३०)

(पु० स्त्री०) मल्लते धारयति प्रदीपमिति मल्ल-ण्वुल्। ४ नारियलके छिलकेका बना हुआ पात्र। ५ दीपाधार, दीवट, चिरागदान। ६ प्रदीप, दीया। ७ बरतन, पात्र। ८ डब्बे या सपुटका पल्ला। ९ मल्लिका, एक प्रकारका बेला।

मल्लकसेन (मल्लनारायण)—कूचविहारके एक राजा। मुगल-बादशाह अकबरशाहके ये समसामयिक थे। इन्होंने मुगलसेनापति खानज़हानसे हार खा कर दिल्लीश्वरको ५४ हाथी और राजकर में टंमे दिये थे।

मल्लकूट—प्राचीन ग्रामविशेष। (श्रीहर्ष ३९ अ०)

मल्लक्रीड़ा (सं० स्त्री०) मल्लानां क्रीड़ा। मल्लयुद्ध, कुश्ती।

मल्लखंभ (हिं० पु०) मलखम देखो।

मल्लखण्ड (सं० पु०) गुड, शक्कर।

मल्लघटी (सं० स्त्री०) १ नृत्यका एक क्रिया। २ नाट्य-रंगविशेष।

मल्लचन्द्र—एक प्राचीन राजा।

मल्लज (सं० क्ली०) मल्ले तदाख्य देशे जायते इति जन-ड। मरिच, काली मिर्च।

मल्लजीघोड़पडे—एक महाराष्ट्र-सरदार।

मल्लजी भोंसले (मालोजी)—परम प्रसिद्ध महाराष्ट्र-केशरी शिवाजीके पितामह। इनके पिता बाबाजी भोंसले 'पटेल' गिरीमें नियुक्त थे। दौलताबादके निकट वेरुल (इलोरा) नामक इनका आदिस्थान है।

उम्र बढ़नेके साथ साथ उनकी बुद्धि भी बढ़ने लगी। पिता पुत्रकी ऐसी परिमार्जित बुद्धि तथा कार्यकुशलता देख कर उनको बहुत मानते थे। इसके बाद फलतनके देशमुख जगपाल राव नायक निम्बलकरकी बहन दीपा बाईके साथ आपका विवाह हुआ। यहांसे आपके जीवन में नये भावका सञ्चार होने लगा। इस समयसे यह अन्त समय तक कार्यक्षेत्रमें विचरते रहे। सन् १५७७ ई०में अपनी २५ वर्षकी उम्रमें मूर्त्तजा निजामशाहके घुड़सवार सेनाके अध्यक्ष-पद पर नियुक्त हुए।

आप एक कट्टर हिन्दू थे। बहुत दिनों तक जब सन्तान आदि नहीं हुई, तब पुत्रप्राप्तिके लिये महादेव तथा कुलदेवीकी आराधना करने लगे। अन्तमें अहमदनगर-वासी शाह शरीफ नामक एक मुसलमान फकीर उनके पुत्रके लिये खुदासे 'दुआ' करने लगा। इस पर दीपाबाई गर्भवती हुईं। सन् १५९८ ई०मे इस गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इस पुत्रप्राप्ति पर आनन्दका ठिकाना न रहा। मल्लजीने उस मुसलमान फकीरको इज्जत करनेके लिये अपने इस नवजात शिशुका नाम उस फकीरके नाम पर शाह रखा।

इस समय मल्लजी 'शिलेदार' पद पर नियुक्त हुए और राजकार्यमें बहुत उद्योग करने लगे। धीरे धीरे इनके सम्मान तथा ऐश्वर्यकी वृद्धि होने लगी। उनके प्रतिपालक यादवराव इस समृद्धिको देख इनसे ईर्षा करने लगे।

सन् १५९९ ई०में होलीके समय अपने पांच वर्षके बालकको ले कर निमन्त्रण पा कर यादवरावके घर गये। यादवराव शाहजीके रूपलावण्य पर मुग्ध हो चुके थे। उन्होंने दर्शक-मण्डलीके समक्ष सुलक्षण-सम्पन्न शाहजीकी बगलमें अपनी सुशोभना कन्याको

बैठा कर कहा था, 'पुत्रि ! क्या तुम इस लड़केको पति स्वीकार करना चाहती हो ?' प्रश्न क्या था ? यह उनका अपनी पुत्रीका विवाह-प्रस्ताव था। मल्लजीने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। किन्तु अन्तमें यादवरावने इनकार कर दिया।

जो हो, इस पर भी यह निरुद्यत नहीं हुए। किन्तु उन्होंने अपने पुत्रका विवाह उक्त रावकी पुत्रीके साथ करनेका निश्चय कर लिया था। इस समय निज़ामशाहीके सम्बन्धसे इनको अत्यन्त धन-सम्पत्ति हाथ लग गई। उनकी मनमें यह भाव उत्पन्न हुआ, कि कहीं लोग मुझ पर सन्देह न करने लगें, इससे अपने धन-सम्पत्तिको ले कर घर चले आये। वहां आ कर इन्होंने प्रचारित किया, कि भगवतीने मुझे यह धन दिया है। मल्लजी इस धनसे कुएं तालाव खुदवाने लगे, मन्दिर वनवाने लगे। इन्होंने धार्मिक कार्यों में वहुत धन खर्च किया। इतने कार्यों में उलझे रहने पर भी यह अपने उद्देश पथसे विचलित नहीं हुए। अपने पुत्रका विवाह और घुड़सवार-सेनाकी वृद्धि इनका उद्देश्य था।

निज़ामशाहीके जैसा ऋणग्रस्त राज्यमें किसी अर्थवानका ही प्राधान्य रहना चाहिये। अतएव पांचहजारी घुड़सवार-सैन्यका अध्यक्ष-पद और राजाकी उपाधि प्राप्त करनेमें इनको अधिक प्रयास न करना पड़ा। धीरे धीरे इन्हें सवनेरी, चाकन, पूना, सूवा आदि जिलोंमे जागीर मिल गई और इन जिलोके अध्यक्ष भी नियुक्त हुए। सुलतानकी सिफारिससे यादवरावको अपनी पुत्रीका विवाह मल्लजीके पुत्र शाहजीसे करने पर राजी होना पड़ा। सन् १६०४ ई०में स्वयं सुलतानने अपनी उपस्थितिमें यह विवाह-कार्य सम्पन्न कराया। मल्लजी जो धनागार छोड़ गये थे, उसीसे शिवाजीने अपने समयमें इतना राज्यविस्तार किया था। शिवाजी देखो।

मल्लट—मेवारराज्यके गुहिलवंशीय एक राजा।

मल्लणगुब्बि—वीरशैवामृतपुराण नामक ग्रन्थके प्रणेता।

मल्लतरु (सं० पु०) पियालवृक्ष, चिरौंजीका पेड़।

मल्लताल (सं० पु०) सङ्गीत शास्त्रानुसार एक तालका नाम। इसमे पहले चार लघु और फिर दो द्रुतमात्राएं होती है। यह तालके मुख्य आठ भेदोंमेंसे एक माना जाता है।

मल्लतूर्य (सं० क्ली०) मल्लैर्वाद्यमानं तूर्यं मल्लाय तूर्यमिति वा। वाद्यविशेष, लडाईका डंका। पर्याय—महास्वन।

मल्लदेव (सं० पु०) कालज्ञान नामक वैद्यकग्रन्थके रचयिता।

मल्लदेव—१ दाक्षिणात्यके चेरराज्यके एक राजा।

२ एक प्राचीन हिन्दू-राजा, उमङ्गाधिपति राजा अभयदेवके पुत्र। ये चन्द्रवंशीय राजा थे।

मल्लदेव—मल्लप्रकाश नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता। एतद्भिन्न कालज्ञान और तृतीयज्वराष्टक नामक दो खण्ड-ग्रन्थ इनके वनाये हुए मिलते हैं।

मल्लद्वादशी (सं० स्त्री०) व्रतविशेष।

मल्लनाग (सं० पु०) नागो हस्तीव मल्लः, पूर्वनिपातः। १ कामसूत्रके प्रणेता वात्स्यायन मुनि। मल्लो वलीयान् नागः। २ अभ्रमातङ्ग, इन्द्रके हाथीका नाम। मल्लो-नाग इव। ३ लेखदार, चिट्ठीरसां। ४ कामशास्त्रविशेष।

मल्लपुर (सं० क्ली०) नगरभेद, मल्लपुर।

मल्लपुर—मान्द्राजप्रदेशके उत्तर-सरकारके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यहांके देवतीर्थादिका सविशेष परिचय ब्रह्माण्डपुराणान्तर्गत मल्लापुर-माहात्म्यमें दिया गया है।

मल्लभट्ट—१ एक प्राचीन वैयाकरण। मल्लिनाथने नैषधचरितमें इनका मत उद्धृत किया है। भट्टमल्ल देखो।

२ आनन्दलहरी-टीकाके प्रणेता।

मल्लभू (सं० स्त्री०) मल्लाना भूर्भूमिः। मल्लभूमि, कुश्ती लडनेकी जगह, अखाडा।

मल्लभूपत्ति—दाक्षिणात्यके एक राजा, प्रोलन नायकके पुत्र। १०१७ शताब्दीमें उत्कीर्ण शिलालिपिमें इनकी दानशीलताका परिचय देखा जाता है।

मल्लभूम—वङ्गालके बांकुड़ा जिलेके विष्णुपुरराज। एक समय यह स्थान विष्णुपुरके मल्लराजाओंके अधिकारमें था। विष्णुपुर देखो।

मल्लभूमि (सं० स्त्री०) मल्लना भूमिः स्थानं। मल्ल क्रीड़ा स्थान, अखाड़ा। पर्याय—अक्षवाट, रङ्गभूमि, रणस्थली मल्लभू, अक्षपाट। (जटाधर) २ मलद नामक देश।

"अयः पात्रे पायः पानं शालपत्रे च भोजनम्।
शयनं तालपत्रे च मल्लभूमेरियं गतिः॥" (उद्भट)

मल्लमल्ल—उदार-राघव और अव्ययसंग्रहनिघण्टुके प्रणेता। ये शाकल्यपदाङ्कितके रचयिता माधवसुधिके पुत्र थे।

मल्लमाररराज—दाक्षिणात्यके एक राजा। इनके आज्ञानुसार जगन्नाथप्रसादने एक हिन्दूमन्दिरमे वृत्ति दान की थी।

मल्लय—कृष्णाजिलेके नरशरवपेट्ट ग्रामसे ११ मील दक्षिणमें अवस्थित एक ग्राम। यहां एक प्राचीन विष्णुमन्दिरमें एक बहुत पुरानी शिलालिपि देखी जाती है।

मल्लयात्रा (सं० स्त्री०) मल्लानां यात्रा। मल्लोंको युद्धयात्रा। इसका पर्याय माल्लवी है।

मल्लयार्य—दैवज्ञविलासके रचयिता।

मल्लयुद्ध (सं० क्ली०) मल्लानां युद्धं ६-तत्। मल्लोंका आपसी युद्ध। मल्ल पहलवानोंका एक नाम है। इनकी जो कुश्ती होती है, उसीको मल्लयुद्ध कहते हैं। इसका पर्याय नियुद्ध और बाहुयुद्ध है।

पहलेके (पहलवान) मल्ल लोग राजभवनोंमे आ कर तरह तरहकी कौशलपूर्ण कुश्ती या मल्लयुद्ध दिखाते थे। राजपरिवार तथा दर्शकवृन्द बड़े चावसे इनके कुश्तीके दांव पेचको देखा करते थे। जोड़ तोड़के पहलवान आपसमें कुछ कलाकी शल्य दिखा कर भी एक दूसरेको पछाड़ नही सकता था। यदि हीन बल हो तो एक दूसरेका प्राण ले लेता था।

महाभारतके विराट पर्वमें लिखा है,—युधिष्ठिर आदि पांच पाण्डव जब विराट राजाके यहां अज्ञातवास कर रहे थे तब इन लोगोंने अपना नाम बदल बदल कर बताया था। इस तरह भीमने वृकोदर नामसे पाचक (रसोइया)के वेशमें अपना परिचय दे कर रन्धन-शालाका भार ग्रहण किया था। पीछे विराटको मालूम हुआ, कि भीमसेन मल्लयुद्धमें भी कुशल है। कुछ दिनोंके बाद किसी पर्वके उपलक्षमे एक पहलवानने विराटभवनमें आ कर ललकारा। उसके साथ युद्ध करनेके लिये एक पहलवानकी जरूरत हुई। उन्होंने देखा, कि इससे युद्ध करनेके लिये पाचक रूपधारी वृकोदर ही उपयुक्त हैं। इससे उन्होने आज्ञा दी, कि भीम तुम इसके साथ मल्लयुद्ध करो। भीमको डर हुआ, कि युद्ध करने पर मेरा गुप्तवेश प्रकट न हो जाये। इस डरसे इच्छा न रहने पर भी उन्होंने किसी तरह बड़े कष्टसे राजाज्ञाका पालन किया। जब यह दोनों वीर अखाड़ेमें उतरे, तो उनको कुश्तीका कलाकौशल देखनेके लिये लोगोंने चारों ओरसे अखाड़ेको घेर लिया। जीमूत मल्ल असीम बलविक्रम सम्पन्न था। उसकी वहां बड़ी ख्याति थी, जब दोनों पहलवान लंगोटा कस कर मैदानमे उतरे तो दर्शक मण्डली हर्षोत्साहसे पुलकित हो उठी। राजाको प्रणाम कर दोनों अपने अपने दांव पेंच दिखाने लगे। कभी कोई हाथसे कभी पैरसे दांव पेंच दिखाते थे। एक जब वार करता तो दूसरा उसको काट कर अपना वार कर लेता था। इस तरह कई तरहकी काट छांट होने लगी। कभी कोई किसीको लातसे ही प्रहार करता या कभी कोई मुष्टिप्रहारसे दूसरेको हीनबल करनेकी चेष्टा करता। एक दूसरेको खींचता और चाहता, कि मैं इसे दे पटकूं। इस तरह बहुत देर तक कलाकौशलपूर्ण भीषण फिर भी कौतूहलपूर्ण युद्ध होनेके बाद जीमूत भीमके हाथसे मारा गया। वृकोदरने अपने हाथोंसे उसको आकाशमे उठा सौ बार घुमा कर उसका प्राणहरण किया था। स्वयं राजा तथा अन्यान्य दर्शकवृन्द सुप्रसिद्ध जीमूत पहलवानके विनाशसे हर्षोत्फुल्ल हो भीमको धन्यवाद देने लगे। (महाभारत विराटपर्व १२ अ०)

इस मल्लयुद्धमें बहुतेरे दांव पेंच सीखनेकी आवश्यकता होती है। इन सब दांव पेचोंको जब तक नहीं जानता, तब तक वह मल्लयुद्धमें पारदर्शी नहीं कहा जा सकता।

श्रीमद्भागवतके दशमस्कन्धमें लिखा है, कि कंसकी फौजमें चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल और तोशल नामके पांच महापराक्रमशील पहलवान् थे। कंस अपने कल बल छलसे या किसी तरह गुप्तरूपसे जब कृष्ण-बलरामको मार न सका, तो उसने स्थिर किया, कि कृष्ण बलरामको यहां बुलवा कर इन पांच वीरोंको ललकार उनका प्राण विनष्ट करायेंगे। उस समय कंसकी आज्ञासे एक बड़े मैदानमें अखाड़ा बना। उसके इर्द गिर्द दर्शक वृन्दोंके लिये अच्छे अच्छे और सुन्दर सुन्दर मञ्च बनाये गये। पुष्पमाला तथा वन्दन वार ध्वजा पताकाओंसे वह अखाड़ा सजाया गया। कंसने वह मल्लयुद्ध देखनेके लिये दूर दूर देशोंके अपने सगे सम्बन्धियोंको भी

आमन्त्रित किया था। यथासमय वहां सभी एकत्र हुए और मल्लयुद्धकी प्रतीक्षा करने लगे। कृष्ण बलराम भी कंसदूत अक्रूर द्वारा निमन्त्रित हो कर कंसके घर आये। साथ ही नन्द तथा अन्यान्य श्रेष्ठ गोप भी राजा द्वारा आमन्त्रित हो कर मथुरामें पधारे। राजकर्मचारी तथा सामन्त राजोंके साथ स्वयं कंस अन्यान्य सरदार-के साथ उस अखाड़ेके निकट बने सुरम्य मञ्चमें विराजमान हुआ।

यथासमय मल्लभेरी बज उठी। अखाड़ेके रण-दुन्दुभिको श्रवण कर पहलवानोंका हृदय वीररसके उमङ्ग-में सराबोर हुआ। सुन्दर वेश-भूषासे सुसज्जित वीर बड़े उत्साहसे अखाड़ेमें उतर आये। इसी समय कृष्णबल-राम भी मल्लदुन्दुभि सुन कर युद्ध देखनेके लिये तुरंत वहां आ उपस्थित हुए। दुष्ट कंसने इन दो भाइयोंको मार डालनेके लिये उनके पथमें-ही एक हस्तीको नियुक्त किया था। इन दोनों भाइयोंने उस हस्तीका प्राणसंहार कर उसके दोनों दांतको दोनों भाई अपने अपने कन्धे पर धर कर उस अखाड़ेके पास आये। उस समय दर्शक-मण्डली उन वीरोंसे दृष्टि हटा इन दो भाइयोंके रूप-लावण्यकी अपूर्व छटा देखने लगी। इसका वर्णन श्री-मद्भागवतमें सुन्दरतासे किया गया है। उसका एक श्लोक इस प्रकार है,—

> "मल्लानामशनिर्नृणां नरवरः स्त्रीणां स्मरो मूर्त्तिमान्
> गोपानां स्वजनोऽसतां क्षितिभुजां शास्ता स्वपित्रोः शिशुः
> मृत्युर्भोजपतेर्विराडविदुषां तत्त्वं परं योगिनां।
> वृष्णीनां परदेवतेति विदितो रङ्गं गतः साग्रजः॥"

(भागवत १०।४३।१७)

कृष्ण बलराम दर्शक हो कर वहां आये थे। किन्तु कंसकी साजिशसे उनको उस मल्लयुद्धमें उन वीरोंके साथ अखाड़ेमें उतरना पड़ा। युद्धका बाजा बजा। वीरोंका हृदय प्रफुल्लित तथा कायरोंका हृदय सिहर उठा। मल्लयोद्धाओंके हुंकारसे मेदिनी कांप उठी। दर्शकमण्डली गौरसे उस समयका दृश्य देखने लगी। पहले पहल चाणूरके साथ कृष्णका और मुष्टिकके साथ बलरामकी कुश्ती आरम्भ हुई। हाथ हाथसे, पैर पैरसे, छाती मुक्केसे परस्पर प्रतिघात होने लगे। विविध दांव पेंच आपसमें होने लगे। कोई किसीको पटकता कोई किसीको खींचता तथा कोई किसीको लात मुक्का थप्पड़ जमाता आदि एक दूसरेको पराजित करने पर तुला हुआ था। कुछ समय तक युद्ध करनेके बाद या यों कहिये, कि कृष्ण बलरामने उन मल्लोंको खेल खेला कर एक एक करके मार डाला। और तो क्या, कंस तथा उसके भाइयोंको भी कृष्णबलराम द्वारा प्राण विसर्जन करने पड़े थे। वे सब विचारे इसी उपलक्षमें अपने प्रिय-प्राण गंवा दिये।

महाभारतमें लिखा है,—युधिष्ठिरने जब राजसूय यज्ञ करनेका सङ्कल्प किया, तब इस कार्यमें प्रधान बाधक मगधके राजा जरासन्धको मार डालनेका विचार हुआ। इस उद्देश्यसे श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुन वहांसे मगध-के लिये रवाना हुए। इनका उस समय ब्राह्मणवेश था। कौशलपूर्वक जरासन्धके नगरमें घुस कर उसको युद्धके लिये ललकारा। पहले जरासन्धने भीमके साथ बाहुयुद्ध आरम्भ किया। यद्यपि जरासन्धने उस दिन उप-वास किया था, तथापि वह ललकारको सहन न कर सका। कार्त्तिक कृष्ण त्रयोदशीके दिन उपवास रह कर उसने दिन रात भीमके साथ युद्ध किया। यद्यपि जरासन्ध घोर युद्धमे थक गया था, तथापि कृष्णकी उत्तेजनामें आ कर फिर युद्ध आरम्भ हुआ। अन्तमें जरासन्धको भीमने इसी युद्धमें मार डाला। इस युद्धमें किसीने भी अस्त्र शस्त्र नहीं लिया था, इसलिये यह युद्ध मल्लयुद्धमें परि-गणित हुआ। जरासन्धकी मृत्युके बाद उसके सभी कैदखानेसे बहुतेरे कैदी राजा मुक्त हो गये।

प्राचीन पुराण ग्रन्थोंमें भी मल्लयुद्धके और कितने ही वर्णन पाये जाते हैं। पहले जमानेमें मल्लयुद्ध एक प्रधान युद्ध माना जाता था। इस समय भी भारतवर्षके कई प्रदेशोंमें मल्लयुद्ध हुआ करता है। सिवा भारतके अमे-रिका, यूरोप, एशियाके अन्यान्य देशोंमें भी यह युद्ध होता है।

यूरोपके प्राचीन समृद्धशाली रोमराज्यमें भी इस मल्लयुद्ध या कुश्तीका बड़ा आदर था। वहांके 'कलो-सियमा' नामक प्रसिद्ध नाट्यघरमें नाना प्रकारके ऐसी क्रीड़ायें दिखाई जा चुकी हैं। इसके सिवा कितने ही

थियेटरोंमें भी युद्ध-क्रीड़ा दिखाई जाती है। रोम देखो।

सुदूर इंग्लैण्डमें भी मल्लयुद्धका अभाव न था और न इस समय है। वहां विवाहके समय प्रणय-प्रतिद्वन्द्वी युगल नायक परस्पर मल्लयुद्ध कर एक दूसरेको पराजित करता था और प्रणयिनीका प्रियपात्र तथा प्रेमास्पद बनता था। इस तरहके युद्धको अंग्रेजीमें 'डुयेल' युद्ध कहते हैं। इंग्लैण्डके फ्रान्सविजेता विलियम कङ्करने अपने शासनकालमें रणपरीक्षा तथा द्वन्द्वयुद्ध (Trial by battle or duel) नामसे एक स्वतन्त्र कानून बनाया था।

फिर यह बात भी सुनाई देती है, कि सिकन्दरने भी भारतमें आ कर पुरुराजके साथ मल्लयुद्धमें प्रवृत्त हुआ था।

मल्लरमड़ी—दक्षिण कनाड़ा जिलेका एक ग्राम। यह उपिनाढ्ढ़ीसे १२ मील उत्तर-पूर्व पड़ता है। यहांसे १॥ मील दक्षिण धर्मस्थल मन्दिर है। कहते हैं, कि यह मन्दिर ७५० वर्षका पुराना है। मन्दिरमें जो लिङ्ग स्थापित है वह मङ्गलूरके मध्यवर्त्ती कदिरी मन्दिरसे लाया गया था।

मल्लराज—रसरत्नदीपिका नामक अलङ्कारग्रन्थके प्रणेता।

मल्लराजवंश—विष्णुपुर और नेपालके प्राचीन राजवंश। नेपाल और विष्णुपुर शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

मल्लराष्ट्र (सं० क्ली०) मल्लराज्य। यह माही और नर्मदा नदीके मुहाने पर अवस्थित है। पाश्चात्य भौगोलिक टलेमीने '*Maleo*' शब्दमे इसका उल्लेख किया है।

मल्लवरम्—कृष्णाजिलेके अन्तर्गत एक ग्राम। यह तमरीकोटसे ४ मील उत्तरमें अवस्थित है। यहां ६ राक्षसके कीर्त्तिचिह्न और २ प्रस्तरस्तम्भ वर्त्तमान हैं। इस ग्रामके निकटवर्त्ती किसी मैदानके मिट्टिके स्तूपसे दो सफेद मर्मरकी मूर्त्तियां पाई गई हैं। इनमेंसे एक सप्तस्कन्ध नागमूर्त्ति है जो चारों ओर अनुचरोंसे घिरी है।

मल्लवरम्—उत्तर अर्काड़ जिलेका एक ग्राम। यह तिरुपतिसे उत्तर १० मील पूर्वमें तथा तिरुपति रेल आफिससे ४ मील उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। इस ग्रामके उत्तर-पूर्वांशमें दो शिलालिपि देखी जाती हैं।

मल्लवास्तु (सं० क्ली०) स्थानभेद।

मल्लवाह (सं० पु०) १ ताम्रवर्णका तृणविशेष, तामड़ें रंगकी एक घास। २ पलिवाहतृण, लाल रंगकी एक घास।

मल्लविद्या (सं० स्त्री०) मल्लयुद्धकी विद्या, कुश्तीकी विद्या।

मल्लवेन—वाल-मल्लवेन-सिद्धान्त नामक ज्योतिःशास्त्रके प्रणेता।

मल्लशाला (सं० स्त्री०) मल्लोंका क्रीड़ा-स्थान, अखाड़ा।

मल्लसेन—एक जैन-पण्डित। ये जनसाधारणमें हस्तिमल्लसेन नामसे परिचित थे। उनकी यह हस्ती उपाधि शायद उनके अगाध पाण्डित्य और स्थूलदेहकी परिचायक थी। उनके बनाये हुए अर्जुनराजनाटक, उदयनराजकाव्य, भरतराजनाटक, मेघेश्वर नाटक, मैथिलीपरिणय नाटक आदि काव्य और नाटक आज भी प्रचलित देखे जाते हैं।

मल्ला (सं० स्त्री०) मल्लते धारयति विलासादिकमिति मल्ल धारणे अच्-स्त्रियाँ टाप्। १ नारी, स्त्री। २ मल्लिका, चमेली। ३ पत्रवल्ली, एक लताका नाम। ४ लोठनराजपत्नी। (राजतर० ८।१६१७)

मल्ला (हिं० पु०) १ जुलाहोंके हत्था नामक औजारका ऊपरी भाग। इसे पकड़ कर मल्ला चलाया जाता है।

मल्लानकग्राम (सं० पु०) प्राचीन ग्रामभेद।

मल्लापुर (सं० क्ली०) नगरभेद।

मल्लार (सं० पु०) मल्लं ऋच्छति प्राप्नोतीति ऋ-अण्। सङ्गीतशास्त्रानुसार एक रागका नाम। कुछ आचार्य इसे छः प्रधान रागोंके अन्तर्भूत मानते हैं, पर दूसरे इसके बदले हिंडोला या मेघरागको स्थान देते हैं। इसकी पांच रागिनियां हैं, यथा—वेलावली, पूरवी, कानड़ा, माधवी, कोड़ा और केदारिका। यह राग वर्षा ऋतुमें गाया जाता है।

"वेलावती पूरवी च कानडा माधवी तथा।
कोड़ा केदारिका चैव मल्लारस्य प्रिया इमाः॥"

गानेका समय—
"मेघमल्लाररागस्य गानं वर्षासु सर्वदा।"
(सङ्गीत दामो०)

यह सम्पूर्ण जातिका राग है और इसके गानेकी

ऋतु वर्षा और समय रातका दूसरा पहर है। इसका रंग श्याम, आकृति भयानक गलेमें सांपकी माला पहने, फूलोंके आभूषण धारण किये सस्त्रीक बतलाया गया है।

"शङ्खावदात पलित दधान प्रलम्बकर्णः कुमुदेन्दुवर्णः।
कौपीनवासाः सविहारचारी मल्लाररागः शुचिशान्तमूर्त्तिः॥"

सङ्गीतदर्पणके रागाध्यायमें लिखा है, कि यह राग षड़्रागोंमें चौथा है।

"भैरवः पञ्चमो नाटो मल्लारो गौडमालवः।
देशाख्यश्चेते षड़्रागाः प्रोच्यते लोकविश्रुताः॥"

मेघमल्लारिका, मालकौशिक, पटमञ्जरी और आशावरी ये सब राग मल्लारसंश्रय हैं।

"मेघमल्लारिका मालकौशिकः पटमञ्जरी।
आशावरीति विज्ञेया रागामल्लारसंश्रया॥" (रागार्णव)

इस रागका स्थान विन्ध्याचल, वस्त्र केलेका पत्ता और मुकुट केलेकी कलिका कही जाती है। इसका अस्त्र धनुष, कटारी और छुरा बतलाया गया है।

मल्लारि (सं० स्त्री०) १ रागिणीभेद। कोई इसे वसन्तराग की और कोई मेघरागकी पत्नी बतलाते हैं। (पु०) २ कृष्ण। ३ महादेव। ४ ग्रहलाघवके एक टीकाकार।

मल्लारि—१ वृत्तमुक्तावली और वृत्तमुक्तावली तरल नामक दो ग्रन्थोंके प्रणेता।

२ दिवाकर दैवज्ञके पुत्र। ये भी पिता जैसे विख्यात ज्योतिर्विद् थे। इनकी बनाई हुई गणेशकृत ग्रहलाघवकी टीकाका आज भी लोकसमाजमें आदर है।

मल्लारी (सं० स्त्री०) मल्लार ङीप्। वसन्तरागकी रागिणी।

'आन्दोलिता च देशाख्या लोला प्रथममञ्जरी।
मल्लारी चेति रागिण्यो वसन्तस्य सदानुगाः॥"

(सङ्गीतदामो०)

हलायुधने इसे मेघरागकी रागिनी और ओड़व जातिकी माना है। इसका स्वरग्राम—ध, नि, रि, ग, म, ध है।

इसका ध्यान—

"गौरी कृशा कोकिलकण्ठनादा गीतच्छलेनात्मपतिं स्मरन्ती।
आदाय वीणा मलिना रुदन्ती मल्लारिका यौवनदूनचित्ता॥"

(सङ्गीतदर्पण)

मल्लार्जुन (सं० पु०) राजभेद।

मल्लासुर—असुरभेद। इसने देवादिदेव महादेवके साथ घोर संग्राम किया था। मल्लारि माहात्म्यमे विस्तृत विवरण देखो।

मल्लासुर (सं० पु०) असुरभेद। श्रीकृष्णने इसका वध किया था, इसीसे इसका मल्लारि नाम हुआ है।

मल्लासोमयाजिन्—जीवन्मुक्ति-कल्याण नामक ग्रन्थके प्रणेता।

मल्लाह (अ० पु०) एक अन्त्यज जाति। ये लोग नाव चला कर और मछलियां मार कर अपना गुजारा चलाते हैं। धीवर देखो।

मल्लाही (फा० वि०) १ मल्लाह-सम्बन्धी, मल्लाहका। (वि०) २ मल्लाहका काम या पद।

मल्लि (सं० पु०) मल्लते धारयति विज्ञानमिति मल्ल (सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११७) इति इन्। १ जैन शास्त्रानुसार चौबीस जिनोंमें उन्नीसवें जिनका नाम। इन्हें मल्लनाथ कहते हैं। जैन शब्दमे विस्तृत विवरण देखो।

(स्त्री०) २ मल्लिका।

मल्लि—वर्त्तमान बालजाति। पुराणमें यह मालव नामसे विख्यात है। अलेकसन्दरके समय यह जाति 'मल्लि' कहलाती थी।

मल्लि—एक तीर्थका नाम।

मल्लिक (सं० पु०) मल्यते धार्यते ऽसौ मल्ल इन् स्वार्थे कन्। १ मलिन च चुचरणयुक्त हंस, जिसके पैर और चोंच काली होती हैं। २ जमींदारोंकी एक उपाधि। ३ जोलाहोंकी लड़की। ४ माघका महीना। 'मलिक' देखो।

मल्लिका (सं० स्त्री०) मल्लिरेवेति-मल्लि स्वार्थे कन्, स्त्रियां टाप। यद्वा मल्लिहंस इव शुक्लत्वात् मल्लि-इवार्थे कन्। एक प्रकारका बेला जिसे मोतिया कहते हैं। संस्कृत पर्याय—तृणशून्य, भूपदी, शीतभीरु, तृणशून्या, शीतभीरु, भद्रवल्ली, गौरी, वनभद्रिका, प्रिया, सौम्या, नारीष्टा, गिरिजा, सिता, मल्ली, मदयन्ती, चंद्रिका, मोदिनी। गुण—कटु, तिक्त, चक्षुष्मान्, मुखपाक, कुष्ठ, विस्फोटक, कण्डूति, विष, व्रणनाशक, कफनाशक, उष्ण, वृष्य, वातपित्त, असृक्‌व्याधि और अरुचिनाशक।

वामनपुराणमे इस पुष्पकी उत्पत्तिका वर्णन इस प्रकार किया है—कामदेव जब महादेवका ध्यानभङ्ग करने आये तब वे उनकी नयनाग्निसे भस्म हो गये। भस्म होते समय उनके हाथसे धनुष पृथ्वी पर गिर पडा और पांच भागोंमे बंट गया। इसी धनुषकी मूठसे मल्लिका आदि अनेक प्रकारके पुष्पवृक्षोंकी उत्पत्ति हुई।

(वामनपुराण ६ अ०)

यह पुष्प जूही जातिका तथा सफेद होता है। आकृति और गन्धके अनुसार इसके भी मल्लिका, काटमल्लिका, वेलमल्लिका आदि भेद देखे जाते हैं। अन्यान्य फूलोंके जैसा इससे भी इतर तैयार होता है। २ एक प्रकारकी मछली। ३ एक प्रकार मिट्टीका वर्त्तन। ४ खुमुखी वृत्तिका एक नाम। ५ यूथिका, जूही। ६ मङ्गल्या अगुरु, एक प्रकार का अगुरु जिसमें चमेलीकी-सी गंध होती है। ७ वच। ८ लक्ष्मणाकन्द। ९ आठ अक्षरोंका एक वर्णिक छंद। इसके प्रत्येक चरणमे रगण, जगण और अन्तमें एक गुरु और लघु होता है।

मल्लिकाक्ष (सं० पु०) मल्लिका पुष्पमिव अक्षिणी यस्येति (अक्ष्णोऽदर्शनात्। पा ५।४।७६) इति अच्। १ मलिन चञ्चुचरणयुक्त हंस, एक प्रकारका हंस जिसके पैर और चोंच काली होती है। २ एक प्रकारका घोड़ा जिसकी आंख पर सफेद धब्बे होते हैं। ३ घोड़ेकी आख परके सफेद धब्बे। ४ एक प्रकारका हंस जिसके पैर और चोंच धूसर तथा लाल होती है। (त्रि०) ५ सफेद आंख-वाला, कंजा।

मल्लिकाक्षि (सं० स्त्री०) श्वेतविन्दु चक्षुःयुक्त अश्व, एक प्रकारका घोड़ा जिसकी आंख पर सफेद धब्बे होते हैं।

मल्लिकाख्या (सं० स्त्री०) मल्लिकेति आख्या यस्याः। त्रिपुर-मालीपुष्प, एक प्रकारकी मल्लिका। पर्याय—मोहिनी, वटपत्रा, मोहना।

मल्लिकागन्ध (सं० क्ली०) मल्लिकाया इव गन्धो यस्य। मङ्गलागुरु।

मल्लिकाच्छदन (सं० क्ली०) आंखका वह परदा जो रोशनी-से आंख ठंढी रखनेके लिये लगाया जाता है।

मल्लिकापुष्प (सं० पु०) मल्लिकाया पुष्पमिव पुष्पं यस्य। १ कुटजवृक्ष, कुरैया। २ करुणवृक्ष, मीठा नीबूका गाछ। (क्ली०) ३ स्वनामख्यात मल्लिकापुष्प, वेलेका फूल।

मल्लिकामोद (सं० पु०) तालके साठ मुख्य भेदोंमेंसे एक भेदका नाम। इसमें चार विराम होते हैं।

मल्लिकार्जुन (सं० क्ली०) श्रीशैलस्थित शिवलिङ्ग।

मल्लिकार्जुन—मान्द्राज प्रदेशके सालेम जिलेका एक बडा ग्राम। यह होसुसे वीस मील दूर पड़ता है। यहांका प्राचीन दुर्ग खंडहरमें पड़ा है। स्थानीय प्राचीन शिव-मन्दिरमें बहुत सी शिलालिपियां खोदी हुई हैं पर सभी अस्पष्ट हैं। निकटवर्त्ती पर्वत शृङ्ग पर मोटे अक्षरोंमे लिखी हुई एक शिलालिपि तथा सूर्य, चन्द्र और नन्दी आदिकी प्रतिमूर्त्ति अङ्कित शिलाफलक देखे जाते हैं।

मल्लिकार्जुन—एक प्रधान हिन्दू राजा। मल्लोर जिलान्तर्गत कोचवलकोट नगरमे उनकी राजधानी थी। उक्त गांवमे एक पुराना दुर्ग है। कहते हैं, कि मल्लिकार्जुन गणपतिके पुत्र गजपति महाराजने इस दुर्गका निर्माण किया है।

मल्लिकार्जुन—विजयनगरके एक राजा। मदुरा और त्रिचिनापल्ली जिलेमें जो शिलालेख मिला है उससे ज्ञात होता है, कि उन्होंने कई एक गांव देव सेवाके लिये दान किये थे। विजयनगर देखो।

मल्लिकार्जु (सं० क्ली०) हिमालय पर्वत पर स्थित एक शिवलिङ्ग।

मल्लिकार्जुनयोगीन्द्र—गद्यवल्लरी नामक ग्रन्थके प्रणेता। ये शंकराचार्यका धर्म प्रचार करनेके लिये आचार्यके पद पर अधिष्ठित हुए थे।

मल्लिकार्जुनशृङ्ग (सं० क्ली०) स्थानभेद।

मल्लिगन्धि (सं० क्ली०) मल्लेरिव गन्धो यस्य (उप-मानाच। ५।४।१३७) इति इकारादेशः। अगुरु, अगर।

मल्लिगांव—खान्देशके अन्तर्गत एक नगर। नारुशङ्कर नामके एक महाराष्ट्र सर्दारने यहांका दुर्ग बनाया, उनके अधीन यहां अरबीसेना रहती थी। १८१८ ई०में यहांकी सेनाओंने आत्मरक्षामें असमर्थ हो कर अंगरेजोंको दुर्ग सौंप दिया।

मल्लितीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थभेद।

मल्लिदेव—चोलवंशीय एक राजा। ११६८ ई०की एक शिलालिपिमे इनका नाम मिलता है।

मल्लिनाथ—१ एक प्रसिद्ध टीकाकार। इनका असल नाम कोलाचल मल्लिनाथ था। लेकिन लोग इन्हें पेड्डुभट्ट कहा करते थे। पेड्डु भट्ट नामसे मालूम होता है, कि ये दाक्षिणात्यके रहनेवाले थे। ये व्याकरण, काव्य, अलङ्कार, छन्द, अभिधान, नीति, ज्योतिष, स्मृति, दर्शन, वेद, उपनिषद आदि सभी शास्त्रोंमें पारदर्शी थे। आज कल भी लोग इनके नामको दोहाई देते हैं। जब कभी कोई विचित्र छटामय विषय देखनेमें आता है, तब शिक्षित व्यक्ति कहा करते हैं, कि यह मालूम होता है, मानो मल्लिनाथकी टीका हो।

अमरपदपारिजात नामक अमरकोषटीका, उदारकाव्य, एकावलीटीकातरल, किरातार्जुनीय ग्रन्थकी घण्टापथ नामक टीका, कुमारसम्भवकी सञ्जीवनीटीका, तार्किक रक्षाटीका, जीवातु नामक नैषधीय टीका, सञ्जीवनी नाम्नी मेघदूत और रघुवंश टीका, रघुवीरचरित और सर्वङ्कषा नाम्नी मेघदूत और रघुवंश टीका, रघुवीरचित और सर्वङ्कषा नाम्नी शिशुपालवधटीका प्रभृति इनके बनाये हुए काव्य, महाकाव्य और खण्डकाव्यकी टीका मिलती है।

२ एक प्राचीन हिन्दूराजा। ३ कल्पतरु और वैद्यरत्नमालाके प्रणेता। ४ शब्देन्दुशेखर और लघुशब्देन्दुशेखर नामक ग्रन्थकी टीकाके प्रणेता। ५ एक जैन तीर्थङ्कर। मल्लिनाथपुराणमें इनका विषय आया है।

जैन शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

मल्लिनी (सं० स्त्री०) अतिमुक्तक पुष्पवृक्ष, माधवीलता।

मल्लिपत्र (सं० क्ली०) मल्लेः पत्रमिव पत्रं यस्य। छत्रक, खुमी।

मल्लिवार (सं० क्ली०) स्थानभेद, मलवार देश।

मल्लिराव होलकर—मल्हारराव होलकरके पौत्र। ये पितामहकी मृत्युके बाद सिंहासन पर बैठे सही, पर अधिक दिन तक राज्यसुखका भोग न कर सके। उनके मरने पर राजमाता अहल्याबाईके साथ दीवान गङ्गाधर यशोवन्तका विवाद खड़ा हुआ।

मल्ली (सं० स्त्री०) मल्लि कृदिकारादिति पक्षे ङीप्। १ मल्लिका। २ सुन्दरी वृत्तिका एक नाम।

मल्लीकर (सं० त्रि०) अमल्लमपि आत्मानं मल्लमिव करोतीति कृ-अच्। चौर, चोरी करनेवाला।

मल्लीनगर—प्राचीन नगरभेद।

मल्लु (सं० पु०) मल्लुते भयं धारयतीति मल्लु-बाहुलकात् उ। १ भालुक, भालू। २ बंदर।

मल्लूर (सं० पु०) मण्डूर, लौहकिट्ट, लौहमल।

मल्लेश्वर—गोदावरी जिलेके अन्तर्गत एक ग्राम। यह तनकूसे ५ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। रेड्डीवंशीय राजाओंके शासनकालमें (१३१८ से १४२७ ई०) यहां एक पुरानी वेदीके ऊपर मन्दिर बनाया गया है। मन्दिरमें एक शिलालिपि उत्कीर्ण देखी जाती है।

मल्लोत—हिमालयश्रेणीके लवणशैल पर अवस्थित एक प्राचीन नगर। रावलपिण्डी माणिक्यालको घूम कर इस नगरमें आना होता है। प्रत्नतत्त्वविद् डा० कनिंहम इसे चीन-परिव्राजक यूएनचुवङ्ग वर्णित सिंहपुरकी राजधानी बतला गये हैं।

कलार काहरसे ४॥ कोस दक्षिण-पूर्व तथा केतस नामक स्थानसे ६ मील पश्चिम एक गिरिशृङ्ग पर मल्लोत नामक दुर्ग मौजूद है। कहते हैं, कि मल्लुराज नामक किसी जञ्जुहा-सरदारने इस दुर्गको बनवाया था। किन्तु किस समय यहा जञ्जुहा जातिकी प्रधानता थी सो ठीक ठीक मालूम नहीं। गजनीपति महमूदने जब भारतवर्ष पर चढ़ाई की उस समय जञ्जुहाजातिने इसलाम धर्म अवलम्बन किया था। अतएव महमूदसे पहले मल्लूके राजत्व और मल्लोत नगरकी श्रीवृद्धिकी कल्पना की जा सकती है।

प्रायः आठ सदी तक विधर्मी मुसलमान राजाओंके हाथमें पड़ कर मल्लोत नगरने अपनी श्रीवृद्धि खो दी। आज भी यहा हिन्दू प्रधानताके निदर्शन-स्वरूप एक देवमन्दिरका ध्वंसावशेष दृष्टिगोचर होता है। उसका गठनकार्य्य काश्मीरदेशीय मन्दिरादिके शिल्पकार्य जैसा दिखाई देता है। मन्दिरमें जो प्रतिमूर्त्ति हैं उन्हें देखनेसे मालूम होता है, कि एक समय यहा ब्राह्मण्यधर्मकी प्रधानता थी। कहते हैं, कि पहले उक्त मन्दिरमें महादेवकी मूर्त्ति भी विराजती थीं। चीन-परिव्राजक यूएनचुवङ्ग एक स्तूपका उल्लेख कर गये हैं।

मल्व (सं० पु०) शत्रु, दुश्मन।

मल्ह (सं० क्लो०) गो स्तन, गायका थन।

मल्हण (सं० पु०) १ दामोदरके पुत्र। २ कविभेद।

मल्हन—च्यवन ऋषिके गोत्रमें उत्पन्न छिन्दवंशके एक राजा। इनके पिताका नाम वैरवर्मन था। राजा मल्हनने चुलुकीश्वरवंशीय अनहिलदेवीको व्याहा था। इनके पुत्रका नाम था मल्ल। पिता जैसे वे भी औदार्यादि सद्गुणोसे भूषित थे।

मल्हनी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी नाव। इसका अगला भाग अधिक चौड़ा होता है।

मल्हराना (हिं० क्रि०) चुमकारना, पुचकारना। नई गौओंको दुहते समय वे बहुत उछलती कूदती और लात चलाती हैं। इसके लिये दुहनेवाले उन्हें चुमकारते पुचकारते हैं जिससे वे शान्त हो और दुहने दें। इसीलिये मल्ह शब्दसे, जिसका अर्थ गोस्तन है, मल्हराना, मल्हाना, मल्हारना आदि क्रियाएं चुपकारनेके अर्थमें बनी हैं।

मल्हाना (हिं० क्रि०) चुमकारना, पुचकारना।

मल्हार (हिं० पु०) मल्लार देखो।

मल्हारना (हिं० क्रि०) मल्हाना देखो।

मल्हारराव गायकवाड—बड़ौदाके एक राजा। ये १८७० ई०की २६वीं नवम्बरको अपने भाई खण्डेरावकी मृत्युके बाद पितृसिंहासन पर बैठे। इस समय उनकी अवस्था ४२ वर्षकी थी। पिताका नाम था,—महाराज क्षीरोदराव गायकवाड़ सेनखासखेल शमशेर बहादुर जी, सो, एस, आई। वे द्वितीय गायकवाड़ मीलाजीसे पांच पीढ़ी नीचे थे।

राज-दीवानके कार्यमें अकर्मण्यता देख कर अंगरेज कर्मचारी सर-सेमूर फिट्सजिरालडने राजा खण्डेरावसे उनकी पदच्युतिके लिये अनुरोध किया। राजाके उनकी बात स्वीकार नहीं करने पर दोनोंमें विवाद खड़ा हो गया। आखिरकार दोनोमे युद्ध चलने लगा। युद्धमें खण्डेराव मारे गये। इस समय मल्हार राव कारारुद्ध थे। राजा खण्डेरावको भाई मल्हार पर संदेह हो गया था, इसी कारण वे कैद कर लिये गये थे। बृटिश-सरकारने उन्हींको राजवंशका उत्तराधिकारी बनाना चाहा, इस कारण उन्हें कैदसे छुड़ा कर राजसिंहासन पर बिठाया।

मल्हारराव होलकर—एक महाराष्ट्र सरदार। ये अपने बाहुबलसे होलकर राजवंशके प्रतिष्ठाता हो कर महाराष्ट्र-नेतृसमाजमें अच्छी सुख्याति कमा गये हैं। होलग्राममें रहनेके कारण उनकी वंशोपाधि 'होलकर' हुई थी। इनके पिता उक्त ग्राममें सामान्य चौगुल (पटेलके सहकारी)-का काम करते थे। महाराष्ट्रीय धांगड वा राखाल (शूद्र) इनकी जाति थी।

महाराष्ट्र पेशवा १म बाजीरावके शासनकालमें मल्हारजी सिलेदार-पद पर नियुक्त हुए। इस पद पर रह कर यह एक अश्वारोहि-सेनादलकी रक्षा करते थे। धीरे धीरे उनका शौर्यवीर्य चारों ओर फैलने लगा। बाजीराव उन्हें एक उपयुक्त सरदार जान कर उत्तरीय देशोंको जीतनेके लिये सेनापति-पद पर वरण किया। १७२६ ई०में इन्होंने मालवके सूबेदार गिरिवर बहादुरको रणक्षेत्रमे मार डाला। अनन्तर आगरेके निकटवर्त्ती देशोंको जीत कर इन्होंने महाराष्ट्र-गौरव बढ़ाया था। इसके बादसे ही ये राजाके प्रेमभाजन बन गये थे। दिनों दिन पदोन्नति होनेसे दरबारमें इनका अच्छा चलने लगा। इसी समय ये सरदेशमुखी और चौथ वसूल करनेके लिये नियुक्त हुए। १७३३ ई०में पेशवाने इनके कार्यसे प्रसन्न हो कर इन्हें इन्दोर प्रदेशका जागीरदार बनाया। १७३५ ई०में इन्होंने अपनेसे उच्च दरजेके कर्मचारी कान्तजी कदम्बके कहने पर निजाम राज्यमें चौथ संग्रह करनेके लिये उपद्रव शुरू कर दिया। १७४८ ई०में इन्होंने निजामके सेनापति सफदरजङ्गको दलबल समेत यमपुर भेज दिया।

१७५० ई०में इस कार्यके पारितोषिक स्वरूप इन्हें मालव-राज्यका कुछ अंश जागीरमें मिला। १७६१ ई०की जगद्विख्यात पानीपतकी लड़ाईमें ये महाराष्ट्र-वाहिनी के साथ गये थे। १७६८ ई०में इनकी मृत्यु हुई। इससे पहले ही उनके पुत्र खण्डेरावका देहान्त हो चुका था। इस कारण पुत्रवधू अहल्याबाईने अपने पुत्र मलिरावको श्वशुरके सिंहासन पर अभिषिक्त किया और आप उसकी अभिभाविका हो कर राजकार्य चलाने लगी। अब मलिराव अकाल ही कराल कालके शिकार बने। अब उत्तराधिकारी ले कर अहल्याबाई और दीवान गङ्गाधर

यशोवन्तमें विवाद खड़ा हुआ। आखिर अहल्याबाईने उनकी बात न मान कर तुकाजी होल्कर नामक मल्हारराबके एक प्रिय सिलेदारको राजसिंहासनका उत्तराधिकारी बनाया। अब राजसिंहासनका मूल होलकरराजवंशसे निकल कर स्वतन्त्र घरमें जा लगा। तुकोजीके काशीराव, मलहारराव, यशोवन्त और इतोजी नामक चार पुत्र थे।

होलकर-राजवंश।

१ मलहारराव होल्कर।
२ मल्लिराव।
३ तुकोजी होल्कर।
४ काशीराव।
५ यशोवन्त।
६ मल्हारराव २य।
७ हरिराव होल्कर।

मलहारराव होलकर—इन्दोरराज तुकाजी होलकरके पुत्र। १७६७ ई०में दौलतराव सिन्धियाके साथ युद्धमें इनका देहान्त हुआ।

मलहार राव होलकर २य—इन्दोरके एक राजा, राजा यशोवन्त राव होलकरके पुत्र। १८११ ई०में पिता यशोवन्तको मृत्युके बाद ये इन्दोरराजसिंहासन पर अधिरूढ हुए। महदीपुरका युद्ध शेष होने पर बृटिश-सरकारके साथ १८१८ ई०में इनकी एक सन्धि हुई। १८३४ ई०में ये परलोकको सिधारे। पीछे उनके दत्तक पुत्र मार्त्तण्ड राव राजसिंहासन पर बैठे। किन्तु हरिराव होलकरने षड़यन्त्र करके उन्हें गद्दीसे उतार दिया। हरिहररावके बाद खण्डेराव इन्दोरके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। उनके कोई पुत सन्तान न रहनेसे इष्ट-इण्डिया कम्पनीने मुलकरजी रावको सिंहासन पर बिठाया।

मवक्किल (अ० पु०) १ अपनी ओरसे वकील या प्रतिनिधि करनेवाला पुरुष, मुकदमेमें अपनी ओरसे कचहरी वा न्यायालयमें काम करनेके लिये अधिकारी प्रतिनिधि नियत करनेवाला पुरुष। २ किसीको अपना काम सुपुर्द करनेवाला, असामी।

मवर (सं० पु०) बौद्ध-मतानुसार एक बहुत बड़ी संख्या।

मवरिखा (अ० वि०) लिखित, लिखा हुआ।

मवाजिब (अ० पु०) नियमित मात्रामें नियमित समय पर मिलनेवाला पदार्थ।

मवाजी (अ० वि०) अनुमान किया हुआ। इस शब्दका प्रयोग रुपये और गांवके अंशोंका द्योतन करनेके लिये होता है।

मवाद (अ० पु०) १ सामग्री, सामान। २ पूय, पीब। ३ दुर्ग, किला। ४ दुर्गके प्राकार पर उगा हुआ पेड़।

मवासी (हिं० स्त्री०) १ छोटा गढ़, गढ़ी। (पु०) २ गढ़पति, किलेदार। ३ प्रधान, मुखिया।

मवित (सं० त्रि०) मव-कर्मणि-क्त। बद्ध, बंधा हुआ।

मवेशी (अ० पु०) पशु, ढोर।

मवेशीखाना (फा० पु०) मवेशी रखनेका बाड़ा।

मश (सं० पु०) १ गुन् गुन् शब्द। २ क्रोध। ३ मच्छड़।

मशक (सं० पु०) मशति ध्वनतीति मश-अच्, संज्ञायां कन्। १ कीटविशेष, मच्छड। पर्याय—वज्रतुण्ड, सूच्यास्य, सूक्ष्ममक्षिक, रात्रिजागरद। मशक निवारक धूप यह है,—

"त्रिफलार्जुन पुष्पाणि भल्लातक शिरीषकम्।
लाक्षा सर्जरसश्चैव विडङ्गं चैव गुग्गुलः।
एतैर्धूपैर्मक्षिकाना मशकाना विनाशनम्॥"

(गरुड़पुराण १८१ अ०)

त्रिफला, अर्जुनपुष्प, भल्लातक, शिरीष, लाक्षा, सर्जरस, विडङ्ग और गुग्गुल इन सब द्रव्योंको एकत्र कर धूप देनेसे कीट और मशकका उपद्रव शान्त होता है। सुश्रुतके मतसे मशक पांच प्रकारका है—सामुद्र, परिमण्डल, हस्तिमशक, कृष्ण और पार्वतीय। इनके काटनेसे शरीरमें खुजली होती है और दाने पड़ जाते हैं। पहाडी मशकके काटनेसे काटे हुए स्थानमें प्राणनाशक कीटके काटने सा लक्षण दिखाई देता है।

साधारणतः मशक दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं, डांस (Gnat) और डांस जातिका कीडाविशेष। इनके सिर्फ एक डंक होता है। उसी डंकसे अन्यान्य प्राणियोंको काटते है। मशकके काटनेसे बहुत पीडा होती है। इसका कारण यह है, कि वे डंकसे जहरकी गांठसे जहर निकाल कर चुभे हुए स्थानमें प्रवेश कराते है।

बहुतसे ऐसे भी कीड़े हैं जिनको गिनती डांसकी श्रेणीमें की गई है और वे मशक कहलाते हैं। अमेरिका महादेशके सिमुलियम (Simulium) श्रेणीभुक्त एक प्रकारका मशक है। मैककार्ट साहबने लिखा है, कि इन मशकोंकी आंखें गोल और डैने चौड़े होते हैं। मस्तक परके केशर जो बारह स्थानोंमें देखे जाते हैं, गोल हैं।

ये सब मशक घासकी पत्तियोंका रस चूस कर जीवन धारण करते हैं। किन्तु मौका पा कर डांसकी तरह प्राणीका रक्त भी चूसते हैं। ये छोटी प्राणी हमेशा हवामें इधर उधर उड़ते दिखाई देते हैं। भ्रमणकालमें सामनेके पैरमें बल दे कर आगे बढ़ते हैं।

किसी अमेरिकावासी पण्डितने मशकके सम्बन्धमे जो लिखा है, वह इस प्रकार है--नर मशकोंके साथ मादाका कुछ पार्थक्य देखा जाता है। नर मशककी देह मादासे छोटी और गहरा लाल होता है। इनके मस्तक पर केशर होते हैं। मनुष्यका रक्त और पत्तोंका रस चूसनेके लिये डंक रहते हुए भी ये भीरु-स्वभावके हैं। कभी कभी ये मनुष्यके घरमें घुस कर उन्हें काटते हैं, पर रोशनीसे दूर भागते हैं। पाखाना आदि मैले कुचैले स्थानमें तथा जलसिक्त अथवा जलाभूमिमें ये रहना पसन्द करते हैं। मादा मशक बहुत साहसी होती है। यहा तक, कि जिस कोठरीमे रोशनी जलती है, वहां घुस कर लोगोंको काटती है। ग्रीष्म और शरत्कालमें इनका अधिक प्रादुर्भाव देखा जाता है।

नर मशकके छोटे मस्तक पर अर्द्धचन्द्राकार दो आंखें शोभती हैं। इनके दो पुट प्रायः जुड़े रहते हैं। जोड़ स्थान पर सुन्दर केशर दिखाई देता है। नर और मादा मशकका केशर लम्बाईमे समान रहता है। नर-मशकका केशर १·७५ मिलिमिटर लम्बा और १४ डंकका होता है। इनमें १२ छोटे छोटे और समान लम्बाईके तथा बाकी २ कुछ बड़े होते हैं। मादा मशकके सिर्फ १३ डंक होते हैं। इन सभी डंकोंकी लम्बाई समान रहती है। नर और मादा दोनों जातिके मशकका केशर हमेशा हिलता रहता है।

पुटका बाहरी और भीतरी स्थान एक प्रकारके मैले तरल पदार्थसे परिपूर्ण है। इसके भीतर बहुत छोटे छोटे अंडे सरीखे पदार्थ हैं। ये पदार्थ उच्च श्रेणीके देहस्थित मेदके जैसा कार्य करते हैं। मादा-मशकका गठन भी नर जैसा है, पर इनका पुट (Capsule) कुछ छोटा होता है। नर और मादा मशककी सूंडमें कोई विशेष विभिन्नता नहीं दिखाई देती, किन्तु दोनोंके पैरकी संख्या समान होने पर भी बहुत विभिन्नता है। नर-मशकके पैर छोटे होते हैं; किन्तु नरका पैर २·७३ मिलिमिटर लम्बा और डंक २·१३ मिलिमिटर दीर्घ तथा अगला हिस्सा ऊपरकी ओर झुका रहता है।

मशकके श्रवणेन्द्रिय सम्बन्धमें जीवतत्त्वविदोंके मध्य मतभेद देखा जाता है। इनका मस्तक जैसा छोटा और उसके ऊपर जो अङ्ग प्रत्यङ्ग दिखाई देता है, उसमें श्रवणोपयोगी अंगका रहना सम्भव नहीं है। अतएव यह निश्चय है, कि किसी अन्य इन्द्रिय द्वारा इनको श्रवण क्रिया सम्पन्न होती होगी। मस्तक पर दो पुटोंकी अवस्थिति देख कर यह सहजमें अनुमान किया जाता है, कि ईश्वरने इन्हें श्रवणेन्द्रिय कार्य निभानेके लिये वह अङ्ग दिया है। एतद्भिन्न इस अङ्गकी शिरा, धमनी इत्यादिका विशेषरूपसे पर्यवेक्षण करनेसे मालूम होता है, कि सचमुच इसीसे श्रवणेन्द्रियकी क्रिया सम्पन्न होती है।

नर-मशकको श्रवणशक्ति मादासे अधिक है। उसका कारण यह है, कि प्रकृतिके नियमानुसार पुरुष ही सभी जगह स्त्रीका अनुसन्धान किया करते हैं। अतएव सुपरिक्षाके लिये तमसाच्छन्न निशाकालमें मादा-मशकको तलाश करनेके लिये भन् भन् शब्दश्रवणके सिवा और कोई उपाय नहीं है। मालूम होता है, इसीलिये उस सर्वज्ञ विधाताने इन्हें ऐसी सुननेकी शक्ति दी है। रात्रिकालमें नर-मशकको सहजमें पकड़ नहीं सकते, इससे स्पष्ट प्रमाणित होता है, कि इन्हें श्रवण शक्ति अधिक है।

गौर कर देखनेसे मालूम होता है, कि मादा-मशक अपने केशरोंसे स्पर्श-ज्ञान लाभ करती है। कारण, इनके पैर बहुत छोटे छोटे, केशर सूड डंकके समान लंबे और हमेशा हिलते डोलते रहते हैं किन्तु नर मशकका स्पर्श-कार्य उनके बड़े बड़े पैरोंसे ही होता है। मशकके उड़नेके

समयजो भन् भन् शब्द होता है, वह उनके मुखका शब्द नहीं है। घने डैनोंके चलनेसे ही ऐसा शब्द निकलता है।

वर्त्तमान वैज्ञानिक मशकके काटनेसे ही मलेरिया ज्वरकी उत्पत्ति बतलाते हैं।

२ महाभारतके अनुसार शक द्वीपमें क्षत्रियोंका एक एक निवासस्थान। ३ गार्ग्य गोत्रमें उत्पन्न एक आचार्यका नाम। यह एक कल्पसूत्रके रचयिता थे। ४ मसा नामक चर्म रोग। मनुष्यके शरीर पर कहीं कहीं काले रंगका उभरा हुआ मांसका छोटा दाना दिखाई देता है, उसीको मशक कहते हैं। यह पीडा नहीं देता और सदाके लिये रह जाता है। (सुश्रुत निदानस्था० १३ अ०)

"अवेदन स्थिरश्चैव यत्तु गात्रे प्रदृश्यते।
माषवत् कृष्णमुत्पन्न मलिन मशक दिशेत्॥" (भावप्र०)

मशकरोग होने पर शस्त्र द्वारा उसे काट डालना चाहिये। पीछे उस काटे हुए स्थानको क्षार वा अग्निसे जला देना उचित है। ऐसा करनेसे यह रोग आरोग्य हो जाता है।

"चर्मकीलं जतुमणिं मशकांस्तिलकालकान्।
उत्कृत्य शस्त्रेण दहेत् क्षाराग्निभ्यामशेषतः॥"
(भावप्र०)

मशकके स्थान पर लहसुनको पीस कर लगा देनेसे बहुत जल्द चंगा हो जाता है।

"लशुनानान्तु चूर्णस्य घर्षो मशकनाशनः।"
(गरुडपु० १७५ अ०)

मशक (फा० स्त्री०) चमड़ेका बना हुआ थैला। इसमें पानी भर कर एक स्थानसे दूसरे पर ले जाते हैं।

मशककुटी (सं० स्त्री०) मशक सन्ताड़नार्थ चामरभेद, मच्छड़ हांकनेकी चौरी।

मशकजम्भन (सं० क्ली०) मशक-विताड़न, मच्छड़ हांकना।

मशकवरण (सं० क्ली०) मच्छड़ हांकनेकी चौरी।

मशकहरी (सं० स्त्री०) मशकं हरतीति हृ (हरतेरनुद्यमनेऽच्। पा ३।२।९) इति अच्। मशकनिवारक प्रावरण-विशेष, मसहरी। पर्याय—चतुष्की।

मशकावती (सं० स्त्री०) १ नदीभेद। २ सागरभेद।

मशकिन् (सं० पु०) मशकाः सन्त्यस्यामिति मशक इनि। उदुम्बरवृक्ष, गूलर।

मशक्कत (अ० स्त्री०) १ श्रम, मेहनत। २ वह परिश्रम जो जेलखानेके कैदियोंको करना पड़ता है।

मशखत (सं० पु०) मशक नामक रोग।

मशगूल (अ० वि०) प्रवृत्त, काममें लगा हुआ।

मशच्छद (सं० पु०) गुल्मभेद, एक प्रकारकी लता।

मशरू (अ० पु०) एक प्रकारका धारीदार कपड़ा। यह रेशम और सूतसे बुना जाता है। मुसलमान स्त्री-पुरुष इसका पायजामा बना कर पहनते हैं। यह अधिकतर बनारसमें बनता है।

मशविरा (अ० वि०) परामर्श, सलाह।

मशहरी (सं० स्त्री०) मशक-हरी, मसहरी।

मशहूर (अ० वि०) प्रसिद्ध, विख्यात।

मशान (हिं० पु०) वह स्थान जहां मुरदा जलाया जाता है, मरघट।

मशान—बङ्गदेशमें प्रवाहित गण्डकनदीकी एक शाखा। यह सोमेश्वर पर्वतसे निकल कर चम्पारन जिला होती हुई सोमेश्वर दुर्ग तक चली गई है। वहां दूणनदीके जलसे इसका आयतन बहुत बड़ा हो गया है। इस नदीके जलसे गृहस्थ लोग अपना अपना खेत पटाते हैं। नदी खूब चौड़ी है। वर्षाऋतुके सिवा अन्य ऋतुमें इसमें जल नहीं रहता।

मशाल (अ० पु०) एक प्रकारकी मोटी बत्ती। इसके नीचे पकड़नेके लिये काठका एक दस्ता लगा रहता है। इसे हाथमें ले कर प्रकाशके लिये जलाते हैं। यह बत्ती-की बनाई जाती है और चार पांच अंगुलके व्यासकी तथा दो ढाई हाथ लंबी होती है। जलते रहनेके लिये इसके मुंह पर बार बार तेलकी धार डाली जाती है।

मशालची (फा० पु०) मशाल दिखानेवाला, मशाल जला कर हाथमें ले कर दिखलानेवाला।

मशीखत (अ० स्त्री०) शेखी, घमंड।

मशीन (अं० स्त्री०) किसी प्रकारका यन्त्र जिसकी सहायतासे कोई चीज तैयार की जाय।

मशीर (अ० पु०) मशवरा देनेवाला, सलाह देनेवाला।

मशुन् (सं० पु०) कुक्कुर, कुत्ता।

मशूरी—युक्तप्रदेशके देहरादून जिलेके अन्तर्गत एक पहाड़ी नगर। यह अक्षा० ३०´ २७´ उ० तथा देशा ७८´ ५´ पू०के मध्य अवस्थित है। हिमालयके एक प्रदेश पर अवस्थित होनेके कारण इसका प्राकृतिक सौन्दर्य बहुत मनोरम है। यहांकी जनसंख्या साढ़े छः हजारके करीब है। हिन्दूकी संख्या सबसे ज्यादा है। इसके पास ही लन्दोरा नामक स्थानमें सेना रहती है। समुद्रपृष्ठसे शहरकी ऊंचाई ७४३३ फुट है। यह स्थान बड़ा ही स्वास्थ्यकर है। ग्रीष्मकालमे दूर दूर स्थानके लोग स्वास्थ्यलाभकी आशासे यहां आते हैं। यहां ईसाइयों-का गिरजा, पांच विद्यालय और साधारण पुस्तकालय है। सरकारी उद्भिज्ज्योद्यान (Botanical garden) यहांकी म्युनिसिपलिटीकी देखरेखमें है। शहरमे एक अस्पताल भी है।

मशोब्रा—पञ्जावके कोथी राज्यके अन्तर्गत एक पर्वत और उसके नीचेमें अवस्थित एक बड़ा ग्राम। यह अक्षा० ३१´ ८´ उ० तथा देशा० ७७´ ७´ पू०के मध्य विस्तृत है। सिमलासे यह स्थान थोडी ही दूर पड़ता है। सामान्य ग्राम होने पर भी यहां ग्रीष्मकालमे सिमलासे अनेक दर्शकमण्डली आती हैं।

मश्क (अ० पु०) किसी कामको अच्छी तरह करनेका अभ्यास।

मश्शाक (अ० वि०) जिसे कोई काम करनेका खूब अभ्यास हो, अभ्यस्त।

मष (हि० पु०) मस देखो

मषराण (सं० क्ली०) स्थानभेद।

मषि (सं० स्त्री०) १ काजल। २ सुरमा। ३ स्याही।

मषिकूपी (सं० स्त्री०) मषेः कूप-इव मषिकूप अल्पार्थे ङीप्। मस्याधार, दावात।

मषिधान (सं० क्ली०) धीयतेऽस्मिन्निति धा अधिकरणे ल्युट्, मषेर्धानः स्थानं। मस्याधार, दावात।

मषिपण्य (सं० पु०) लेखक, लिखनेका काम करनेवाला।

मषिप्रसू (सं० स्त्री०) १ दावात। २ कलम।

मषिमणि (सं० स्त्री०) दावात।

मषी (हि० स्त्री०) मषि देखो।

मषीलेख्यदल (सं० पु०) मषीभिर्लेख्यं लेखनयोग्यं दलं यस्य। श्रीताल वृक्ष।

मष्ट (हिं० वि०) १ संस्कारशून्य, जो भूल गया हो। २ उदासीन, मौन।

मष्णार (सं० क्ली०) तीर्थभेद, ऐतरेय ब्राह्मणके अनुसार एक प्राचीन तीर्थका नाम।

मसक (सं० पु०) मस्यते परिमीयतेऽसौ मस कर्मणि घ, अल्पार्थे कन्। क्षुद्ररोगविशेष। मशक देखो।

मसक (हिं० पु०) १ मसा, मच्छड। (स्त्री०) २ मशक देखो।

मसकना (हिं० क्रि०) १ खिंचाव या दबावमे डाल कर कपड़ेको इस प्रकार फाड़ना कि बुनावटके सब तन्तु टूट कर अलग हो जायं। २ किसी चीजको इस प्रकार दवाना कि वह बीचमेंसे फट जाय या उसमें दरार पड़ जाय। ३ जोरसे दवाना, जोरसे मलना। ४ किसी पदार्थका दवाव या खिंचाव आदिके कारण बीचमेंसे फट जाना। ५ चिन्तित होना, दुःखके कारण धंसना।

मसकरा (हि० पु०) मसखरा देखो।

मसकला (अ० पु०) १ सिकलीगरोंका एक औजार। यह हंसियेके आकारका होता है। इसमें काठका एक दस्ता लगा रहता है। इससे रगड़नेसे धातुओं पर चमक आ जाती है। इससे तलवारें आदि भी साफ की जाती हैं।

मसकली (हि० स्त्री०) मसकला देखो।

मसखरा (अ० पु०) १ बहुत हंसी मजाक करनेवाला, हंसोड़। २ विदूषक, नक्काल।

मसखरापन (अ० पु०) दिल्लगी, ठठोली।

मसखरी (फा० स्त्री०) दिल्लगी, हंसी।

मसखवा (हि० पु०) मांसाहारी, वह जो मांस खाता हो।

मसजिद (फा० स्त्री०) (जुम्मा या जामा मसजिद) मुसलमान जिस घरमें खुदाकी इवादत किया करते हैं, उसको मस-जिद कहते हैं। इस मसजिदमें सभी तरहके इसलाम धर्म-के माननेवाले नमाज पढ़ने जाते हैं। जैसे हिन्दुओंका शिवालय या ठाकुरवाड़ी या ईसाइयोंका गिरजा है, वैसे ही मुसलमानोंका यह मसजिद है। महम्मदके चलाये इस इसलाम मजहवमे कर्मकाण्डकी कोई तित्तिमा न

रहनेके कारण कोई बड़े मन्दिर बनवानेकी जरूरत नहीं जान पड़ी। इसलिये पहले पहल छोटी सी एक कोठरीके रूपमें मसजिदकी नींव डाली गई। क्रमशः मुसलमानोंकी जैसे जैसे ताकत बढ़ती गई और जैसे जैसे धनबलसे बलवान होते गये, वैसे वैसे ये बड़ी बड़ी इमारतों, मकबरों और मसजिदोंको बनाने लगे। धीरे धीरे इनका हौसला बढ़ता गया। फिर क्या था, बड़ी बड़ी आलीशान इमारत तथा बड़े बड़े मकबरे, नवाबी महल, बादशाही महल बन गये। साथ साथ अपने राज्यका भी विस्तार करते गये। जब इसलाम बादशाहत पश्चिम यूरोपके स्पेन और अफ्रिकाके बर्बर राज्य तथा पूर्वमें भारत और भारत-महासागरके द्वीपपुञ्ज तक फैल गई थी, तब उन इसलामी विजेताओंके अपूर्व उत्साहसे कई स्थानोंमें गैर मुसलीमोंके लेहूके प्यासे इन मुसलमानोंकी कीर्त्ति-ध्वजा मसजिदके रूपमें बदल गई थी। भारतीय पठान, मुगल, तुर्क और सरासेन वगैरह मुसलमान सुलतान और बादशाह जिन मसजिदोंको बना कर अपनी कीर्त्ति स्थापित कर गये हैं, वे आज संसारमें अतुल ऐश्वर्य्यसम्पन्न मुसलमानोंके धर्मोन्मादकताका परिचय दे रही हैं। विजापुरकी जुम्मामसजिद तथा आगरेकी मोती-मसजिद इसलामी मजहबकी अतुलनीय कीर्त्ति हैं।

आम तौर पर खुदाकी इबादत करनेके लिये या धर्मसेवा करनेके लिये मसजिदमें जो स्थान नियत रहते हैं, उनकी फिहरिस्त नीचे दी जाती है।

इसके बाहर आगन या शहन रहता है। इसके चारों ओर चहार-दीवारी (लीवान) रहती है। इस घिरी हुई जगहके ठीक बीचमें 'मीड़या' नामक स्थान रहता है। इसलाम मजहबका माननेवाला हरेक आदमी नमाज पढ़नेसे पहले यहा खुदाके लिये शीरनी चढ़ाते हैं। मसजिदका जो अंश मक्काकी ओर रहता है, वह पक्का बनता है। यानी उसमें छत अवश्य रहती है उसको 'मकसूर' कहते हैं। इस गृहका नीचला हिस्सा आंगनसे लगा नहीं रहता, बलिक एक चहारदीवारीसे अलग कर दिया रहता है। इसी घरमें सभी मुसलमान आ कर नमाज पढ़ते हैं। इस घरके भीतर ठीक बीचमें एक मेहराब या किवला मक्काकी ओर बनाया जाता है। इसके निकट ही बगलमें एक उच्च चबूतरा रहता है, इसको 'मिम्बार' कहते हैं। इसके सामने ही और कुछ उच्च एक पटा हुआ स्थान रहता है। कभी कभी इमाम (धर्मयाजक) यहां ही बैठ कर भूतप्रेत शैतानको छुड़ानेके लिये दुआया तावीज दिया करता है। इसके बगलमें बने आसनों पर बैठ कर मुल्ला और मौलवी मुसलमानोंको कुरान सुनाया करते हैं।

महम्मदके मदीनेसे भागनेके बाद पचास वर्षों तक भी मसजिदके ऊपर कोई (चूड़ागृह) कोठरी बनानेका नियम नहीं था। इसके बाद एक कोठरी बनाई जाने लगी। इसी समयसे मसजिदके साथ साथ ऐसी एक या अधिक कोठरिया बनती हैं। यह कोठरी क्या छत पर जानेके लिये एक सीढ़ी परकी छत भी कही जा सकती है। इसकी ऊपरवाली सीढ़ी पर खड़े हो कर 'मुयज्जीन' बड़े जोरोंसे आम लोगोंको अजान दिया करता है। अजानका अर्थ है, नमाज पढ़नेके वक्तकी सूचना। यह आवाज सुन कर मुसलमान जान जाते हैं, कि नमाजका समय हो गया और मसजिदमें जा कर नमाज पढ़ते हैं। चौबीस घण्टेमें सात बार 'अजान' देनेका नियम है, दिनमें पांच बार और रातको दो बार। आम तौर पर दोनों आंखके अन्धे ही इस काममें मोकर्रर किये जाते हैं, क्योंकि आंखवाला व्यक्ति छत पर चढ़ कर कुलकामिनियोंको बुरी दृष्टिसे देख सकता है।

प्रायः सभी मसजिदोंके खर्च धर्मप्राण मुसलमान ही दिया करते हैं। कितने ही लोग धन-दौलत और कितने ही लोग जमीन जायदाद मसजिदके नामसे लिख देते हैं, जिसकी आयसे इसका खर्चा चलता रहता है। इस धन-दौलत या जमीन जायदादका निरीक्षण करनेवाला एक नाजिर मुकर्रर रहता है। इमाम या अन्य दूसरे नौकरके रखने और जवाब देनेका अखत्यार नाजिरको ही रहता है।

बड़ी बड़ी मसजिदोंमें दो इमाम मुकर्रर किये जाते हैं। ये प्रति शुक्रवारको इसलामधर्मके प्रचार करनेके लिये व्याख्यान दिया करते हैं। जो हरेक शुक्रवारको

धर्मप्रचारके लिये व्याख्यान देते हैं, वह खतीब और मिदरान या किबलाके पास खड़े हो कर जो कुरान पढ़ते हैं, वह रातिब कहे जाते हैं। रातिबको आम लोगोंके साथ नमाज पढ़ना पड़ता है। दूसरे भी उन्हींका अनुकरण कर नमाज पढ़ा करते हैं।

इमाम लोग धर्मयाजकका काम नहीं करते। वे लोग अपना स्वतन्त्र कोई काम करते हैं। पढावनी कर या किसी दुकानकी रखवारी कर वे अपनी जीविका चलाते हैं। सामान्यदोष देखने पर भी नाजिर उनको हटा देते हैं। हटाते ही उनका खिताब 'इमाम' भी छिन जाता है। सिवा इनके मस्जिदमें नौकर चाकर या दाइयां भी मुकर्रर होती हैं।

मुसलमानिनें घरमें रह कर ईश्वरकी उपासना किया करती हैं। किन्तु इस समय किसी किसी मसजिदमें अब स्त्रियोंके लिये भी स्थान बन गया है। यह सब स्थान चिक या किसी तरहके परदेसे घिरा रहता है। इसमें रह कर यदि मुसलमानिनें ईश्वरकी उपासना करें, तो दूसरा कोई पुरुष उनको देख नहीं सकता। मिस्रकी राजधानी कायरोमें 'सिट्टजनान' मसजिदमें और जेरुसलमकी अक्सा मसजिदमें मुसलमानिनोंके वास्ते ऐसे स्थान बनाये गये है।

तुर्क और हानिफ सम्प्रदायके मुसलमान जिस मसजिदमें नमाज पढ़ते हैं, उनके लिये उनमें वजू करनेके लिये एक जलकल या जलकुण्ड रहता है। इसी जलकुण्डमें लोग हाथ मुंह धोया करते तथा पाक होते हैं। इसीलिये जहां जलकल नहीं है या जलकल होने पर भी हमेशा जल मौजूद नही रहता वहां एक मट्टीका बहबच्चा बनाते हैं और उसको ऊपरसे ढक देते हैं। इसीसे बहबच्चे से लोग वजू किया करते है। सुन्नी मुसलमान ऐसे जलसे वजू करनेमें कुछ भेद नहीं मानते।

पहले हम कह आये हैं, कि मुसलमान राज्य विस्तारके साथ साथ मसजिदोंका भी प्रचार बढ़ता गया। व्यवसाय और साम्राज्य विस्तारकी आयसे मुसलमान राजे विपुल धन खर्च कर मसजिद बना गये हैं। उन्होंने इन मसजिदोंको शाही महलकी तरह सुन्दर बनानेमें जरा भी त्रुटी नहीं की है। एक एक मसजिदकी सुनहली रुपहली या मर्मर पत्थरोंकी बनावटको देख उस समयके भारतीय शिल्प तथा कलाकौशलका अपूर्व परिचय मिलता है। उनके प्रत्येक जोड, खिलान, प्रत्येक द्वार-खिड़कियां, दीवार, और तो क्या,—भीतरकी लकड़ीके बने नक्काशीदार किवाड, पर्दे तथा छतके नीचेके चन्दोवेका कारुकार्य कलाविद्याका परिचय स्थल कहनेमें भी कोई अत्युक्ति नही होगी। खिडकीके नक्काशी काम और चांदीके पत्तरोंसे मढ़े चिरागदान जो एक दिन उत्कर्षता पाते हुए सर्वसाधारणमे प्रचारित थे आज वे शिल्पकार्यकी अवनतिके कारण लोप होते जाते हैं। जो कठोर कालके प्रबल प्रवाहसे रक्षित हो आज भी मौजूद है, वह स्पर्द्धाके साथ प्राचीन भारतीय शिल्पकी आज भी मर्य्यादा रक्षा करते हैं।

किसी किसी मसजिदमें हाथकी लिखी पोथियां आज भी रखी दिखाई देती हैं। मोरक्को राज्यके येफनगरकी करुबिन मसजिदमे कुरान आदि बहुतेरे मुसलमानी मजहबके ग्रन्थ सोने वा रूपेके नक्से और मखमलोंसे विभूषित दिखाई देते हैं। इन ग्रन्थोंमें एक विख्यात दार्शनिक आरिष्टटल रचित प्रकृतिके इतिहास वा तवारिख (Natural History) और एवेरों आदि विख्यात टीकाकारोंके और बहुतेरे ग्रन्थ पाये जाते हैं। कुछ ग्रन्थ १०वीं शताब्दीसे भी पुराने हैं।

महम्मदकी जन्मभूमि मक्काके पूर्व और पश्चिमके देशोंमें इसलाम धर्मका प्रचार होने पर वहां समय समय पर मसजिद बनाई गई। किन्तु दुःखकी बात है, कि वास्तुविद्याकी प्रणालीसे काम न लिया गया। हिन्दूमन्दिर या ईसाईमन्दिर अपने एक ही नियमसे बनाये जाते हैं, चाहे, वे जहां बनाये जायें। किन्तु मुसलमानोंकी मसजिदमें वैसा कोई नियम दिखाई नहीं देता। देशविदेशमें विशेष कर भारतके विभिन्न स्थानोंमें मुसलमानोंकी मसजिदें तरह तरहकी बनी हैं। इसका कारण यह है, कि नङ्गी तलवारवाले मुसलमानोंने जब जिस देशको जीता था, उस देशके देव या धर्ममंदिरोंको तोड़ कर उन्हींके ईंट पत्थरोंसे मसजिद बनाई थी। कभी कभी तो मन्दिरोंका कुछ अंश ही परिवर्त्तन कर उन विजेताओंके कीर्त्तिस्तम्भ मसजिद रूपमें परिणत कर

दिया गया। आज वही मसजिद महम्मदी धर्मके विस्तारका साक्ष्य प्रदान कर रही है। कही कहीं तो अट्टालिकाओंके बीचमें पड कर और गठन-प्रणालीको न जाननेके कारण ही मसजिदें साधारण मसजिदोंसे भिन्न रूपमें वनी हैं। इन्ही कारणोंसे कायरो नगरकी गृहसंलग्न मसजिद और भारतवर्ष तथा यूरोपीय तुर्कोंकी प्राचोनतम ध्वस्त कीर्त्तियोंके उपदानोंसे वनी मसजिदें एक स्वतन्त्र तरहकी हैं। सिवा इसके जिन देशोंमे मुसलमानोंको कीर्त्तिध्वंसका मौका नही मिला है, उन देशोंमे जो मसजिदें वनी हैं, वे ठीक मक्काकी मसजिदोंकी तरह वनी हैं। भारतसे कर्दोवा और स्तीरियासे मिस्र तक अरवी तरीकेसे वनी अनेक मसजिदें दिखलाई देती हैं। मरुभूमिका इन देशमें रहनेसे महम्मदके चेले शिल्पका काम जानते नहो थे, इसीसे अरवकी मसजिदें मामूली तौर पर वनाई गई। किन्तु जव उन्होंने कई देशोंको जीत लिया और जव यूनान, रोम और पुराने भारत साम्राज्यके कला-कौशलका नमूना देखा, तवसे उन्होंने ईर्षान्वित हो कर मसजिद वनानेकी परिपाटीको वदल दिया। मुगल वादशाहोंके अधिकारमे भारतीय मसजिदें वास्तुशिल्पकी चरमोत्कर्षता पा चुकी थीं। जेरुसलम और दमस्ककी मसजिदोंके कांचके 'मेजेक' पूर्वी शिल्पके नमूने हैं। इसीसे ये प्रत्नतत्त्व-विभागके आदरकी वस्तु हैं। किन्तु कुछ लोग इन्हें वाइजेण्टियम्‌वासी खृष्टानोंके शिल्पका नमूना वतलाते हैं।

मक्का और मदीनेकी सरल प्रणालीके अनुसार मुसलमानी राज्योंमे पहले जो मसजिदें वनाई गई थी, उनकी फिहरिस्त नीचे दी जाती है।

(१) कायरोकी पुरानी अमर मसजिद—यह ६४२ ई०में वनी थी। सातवीं सदीके अन्तिम समयमें इसकी मरम्मत हुई और कुछ वढ़ाई गई।

(२) टिउनिस राज्य कैरावान सिदि उक्वा मसजिद—यह सातवी सदीके अन्तिम समयमें वनी थी।

(३) अलजिरियाके विसक्राके निकटकी सिदि उक्वा मसजिद—६८४ ई०में वनी थी।

(४) मोरक्को राज्य-फेजनगरकी एद्रिस मसजिद—आठवी सदीके अन्तिम समयमे वनी थी।

(५) दमस्ककी मशहूर मसजिद—७०८ ई०में वनी। यहां ३६५-४०८ ई०मे थियोदोसियस् द्वारा खृष्टानोंकी एक धर्मशाला वनाई गई। इसके वाद ६३६ ई०में दमस्कनगर पर अरवोंका अधिकार हो गया। उस समयसे ७०८ ई० तक यह धर्मशाला खृष्टानों और मुसलमानोंके व्यवहारमें थी। इसी वर्ष खलीफा वलीदने इसको तोडवा कर मसजिद वनवा ली।

(६) कडेसिरकी मशहूर मसजिद—इसका काम ७८४ ई०में खलीफा अवदुल रहमान द्वारा आरम्भ हुआ, और ७६४ ई०में उसके पुत्र द्वारा सम्पन्न हुआ था। इस समय इसका कुछ अंश खृष्टानोंके गिरजेके रूपमें परिणत हुआ है।

(७) मिस्रकी राजधानी कायरो नगरकी अहमद ईव्न तुलुनकी मसजिद। यह ८७९ ई०में वनी थी।

(८) कायरो नगरको उल-अजहर मसजिद—सन् ९७० ई०मे वनाई गई थी। यहांके मुसलमान धर्मगुरुका खिताव है शेख-उल-अजहर। यह एक हजार रुपया महीना पाता है। यहां छात्रोंको कुरान, धर्मशास्त्र, न्याय, दर्शन, काव्य, अलङ्कार, हकीमी आदिकी शिक्षायें मिलती हैं।

(९) पुरानी दिल्लीकी वडी मसजिद—यह सन् ११९६ ई०मे वनी थी।

ऊपर लिखी हुई सभी मसजिदें प्रायः एक कायदेसे वनाई गई हैं। सिवा इनके मुसलमानी रियासतोंमे और भी वहुतेरी मसजिदें दिखाई देती हैं। इनमें,—जेरुसलमकी हराम उल-शरीफा, कुव्वत-उल-शक्रा, उल-अक्सा आदि उल्लेखनीय हैं।

अफ्रिका महादेशमे इस श्रेणीकी मसजिदोंमें कायरोंकी मसजिदें सवसे वडी और शिल्पसौन्दर्यसे भरपूर हैं। इनमें (१) सन् १३५६—५९ ई०में वनी थी, सुलतान हसनकी मसजिद कहलाती है। (२) सन् १३२० ई०में वनाई गई। इसको सुलतान कलाउनने वनाया था और यह मूरी स्थानमें कलाउन मसजिदके नामसे मशहूर है। (३) इब्राहिम आगा मसजिद। (४) सन् १३९९ ई०में सुलतान वर्कुक और खलीफोंके नामके वने मकवरे। (५) कैरवानका अवदुल्ला वदीवका मकवरा। (६)

सन् १४६६ ई०में सुलतान काइतवका मकवरा। (७) अलजीरिया नगरकी १०वीं सदीकी वनी मसजिदें कब्रों-की प्रतिष्ठाके लिये वनी थीं।

स्पेन राज्यके कार्डोवा समीपकी जहराकी मसजिद सन् ६४१ ई०में वनी थी। यह उस समयकी कारुकार्य खचित है। सिवा इसके उस राज्यकी टोलाडोर क्रष्ट-डी ला-लज आदि कई मसजिदें इस समयके गिरजोंके रूपमें परिणत हो गई है।

फारस राज्यके हारुन-उल-रसीदके राज्यमें जो सब खूबसूरत तथा नक्काशीके कामसे पूर्ण मसजिदें वनी थो, उनमे एक भी इस समय मौजूद नहीं। अर्जे रुम, ताव्रिज और इस्पाहन नगरको वनी मसजिदें प्राचोन शिल्पकी अंशतः रक्षा कर रही हैं। सन् १५८५-१६२६ ई०में शाह आव्वास प्रथमकी वनाई 'मसजिदशाह' नामकी मसजिद फारसके शिल्पोन्नतिको पराकाष्ठाको परिचय दे रही है। सुलतान हुसेनकी सन् १७३० ई०को मसजिदमें पुराने कलाकौशलके वहुतेरे नमूने पाये जाते हैं।

भारतवर्षमें मुसलमानोंने हजारों वर्षके राजत्वमें जो मसजिदें वनाई हैं, वे सभी शिल्प सौन्दर्यसे परि-पूर्ण तथा आलीशान हैं। विधर्मी मुसलमानोंने भारत-में आ कर जिन सव प्राचीनतम हिन्दू, जैन, वौद्ध मन्दिरोंको तोड़ा था, उन्होंकी ईंट और उन्हींके सामानों-से मसजिदें वनाई गई थीं। हिन्दुओंके देवमन्दिरोंको तोड़ना, अपवित्र करना मुसलमानोंका मुख्य उद्देश्य था। कहते हैं, कि प्राचोन दिल्लीकी वड़ी मसजिद जिस समय वनी थी, उस समय गुलाम-वंशने २७ हिन्दू मन्दिरोंको तोड़ कर उनके शिल्पसमन्वित उपकरणोंसे ही वनाई थी। आज भी इस मसजिदमें हिन्दू और मुसलमानके तस्वीरोंका अपूर्व समावेश दिखाई देता है। अजमेरको १३वीं सदीकी मसजिद भी इसी तरह हिंदूमन्दिरके सामानोंसे वनाई गई थी। सिवा इसके अहमदावाद, माण्डु, मालदह, विजापुर, फतेहपुर आदि स्थानोंका वहुतेरा मसजिदें हिन्दूमन्दिरोंके सामानोंसे वनाई गई हैं। इनकी आलोचना करने पर एक एक मस-जिद्के सम्बन्धमे एक एक पोथा लिखा जा सकता है।

१७वीं सदीमें फ्लोरेन्स पत्थरकी वड़ी आमदनी हुई। इसीके साथ साथ वहांके भास्कर (Mosaic worker) यहां आने लगे। मुगल वादशाह उस समय भारतमें राज्य करते थे। उन्होंने ही इस सुन्दर और चिकने पत्थरसे वहुत धन खर्च कर आगरेका जगत्-विख्यात ताजमहल और मोती मसजिद वनाई थी। इन सवोंको यह कीर्त्ति अवश्य ही इस समय अतुलनीय मालूम होती है। ताजमहल देखो।

काश्मीरकी राजधानी श्रीनगरमें शाह हमदनकी वनाई एक लकड़ीकी मसजिद है। इसके खम्भे देवदारु-वृक्षके और नक्काशी काम किये हुए हैं।

मसजिदकुण्ड—वङ्गालके यशोहर (जैसोर) जिलेमे एक स्थानका नाम। यहां एक पुरानी मसजिद थी। यह टूटी फूटी रहने पर भी इसके ६ गुम्वज, चार कोनों पर चार शिखर और स्तम्भ-छत आज भी मौजूद हैं। वहु-तेरे साठ गुम्वजके वनानेवाले खानजहानको ही इसके वनानेवाला समझते हैं। यह स्थान कपोताक्ष तीरवर्त्ती चांदखालीसे ३ कोस दक्षिण है। यह अक्षा० २२° २८' ४४" उ० तथा देशा० ८६° १६' ३०" पूर्वके मध्य अव-स्थित है। सुन्दरवनको साफ कर खेती करनेके समय यह मसजिद पाई गई थी। इस मसजिदमें यहांके लोग शिरनी चढ़ाया करते हैं।

मसरा—कलकत्तेके दक्षिणमे अवस्थित एक ग्राम। यह वालीगंज और गड़ियानगरके वीचमे वसा हुआ है। यहां प्रति वर्ष पूसके महीनेमे मुसलमान-साधु माणिक पीरके उद्देशसे तीन दिन तक एक मेला लगता है। आसपासके हिन्दू और मुसलमान मेलेके समय माणिक पीरको पूजा करते हैं।

मसड़ी (अ० स्त्री०) कन्द।

मसड़ो (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पक्षी।

मसती (हिं० पु०) हाथी।

मसनंद (हिं० स्त्री०) मसनद देखो।

मसन (सं० क्ली०) मस्यते इति मस-ल्युट्। सोमराजी वृक्ष।

मसन (हिं० पु०) एक प्रकारका टकुआ। इससे ऊनके कई तागे एक साथ मिला कर वटे जाते हैं।

मसनद (अ० स्त्री०) १ बड़ा तकिया, गाव तकिया । २ तकिया लगानेकी जगह । ३ अमीरोंके बैठनेकी गद्दी ।

मसनदनशीन (अ० पु०) मसनद पर बैठनेवाला अमीर।

मसना (हिं० क्रि०) १ मसलना । २ गूंधना ।

मसरफ (अ० पु०) व्यवहारमें आना, काममें आना ।

मसरा (सं० स्त्री०) मस-बाहुलकात् अरच् स्त्रियां टाप् । मसूर, मसुरी ।

मसरूका (अ० वि०) चोरी किया हुआ, चुराया हुआ ।

मसरूफ (अ० वि०) काममें लगा हुआ, काम करता हुआ ।

मसल (अ० स्त्री०) लोकोक्ति, कहावत ।

मसलन् (अ० वि०) मिसालके तौर पर उदाहरणके रूपमें ।

मसलना (हिं० क्रि०) १ हाथसे दबाते हुए रगड़ना, मलना । २ आटा गूंधना । ३ जोरसे दबाना ।

मसलहत (अ० स्त्री०) ऐसी गुप्त युक्ति अथवा छिपी हुई भलाई जो सहसा ऊपरसे देखनेसे जानी न जा सके

मसला (अ० पु०) लोकोक्ति, कहावत ।

मसलिन—जगत् प्रसिद्ध सूक्ष्म (बारीक) और मुलायम सूती वस्त्रका नाम। यह आजकलके मखमल कपड़ेसे भी अधिक मुलायम और कोमल होता है। अंग्रेज वणिक् मद्रास प्रेसिडेन्सीके मछलीपट्टम वन्दरसे यह कपड़ा पहले खरीद कर इंग्लैण्ड ले जाते थे। उनका विश्वास था, कि मछली या मसली अथवा अपभ्रंश मसलिच शब्दसे इस वस्त्रके नामकी उत्पत्ति हुई। कुछ लोगोंका कहना है, कि इस वस्त्रका तुर्क सुलतान बहुत उपयोग करते थे। इस वस्त्रकी बड़ी अच्छी पगड़ी होती थी। जब सतगांवमें बङ्गालके वाणिज्यका प्रभाव था, तब तुर्क मुसलमान वणिक् ढाकेसे मलमल तुर्क राजधानी मोसल नगरमें ले जाते थे। इसके बाद कालक्रमसे ढाकाका यह व्यवसाय कम हो गया। फलतः वहांके शौकीन तुर्क इसको स्वयं तय्यार करने लगे और उसका नाम मोसलसे मस्लीन हुआ।

१९वीं सदीमें पहले एकमात्र भारतसे ही मस्लीनकी रफ्तनी यूरोपमें हुआ करती थी। इसके बाद पैसली मैनचेष्टर ग्लासगोकी मिलोंमें तय्यार होने लगा। सन् १८५१ ई०में इंगलैण्ड, स्काटलैण्ड और आयरलैण्डमें भी मस्लीनका कारवार आरम्भ हुआ। इस काममें इन देशोंको अपनी बालिकाओं और स्त्रियोंको उनके सूत तैयार करनेके पारिश्रमिक स्वरूप ६० लाख रुपया देना पड़ा था।

पूर्वभारतमें जो मस्लीन तय्यार होता था, उसका सूता विलायती सूतेसे दृढ़ होने पर भी टिकाऊ नहीं होता था। क्योंकि ताजा कपाससे जो सूता बनता था वह विलायती सूतेसे हीन होता था। भारतीय वस्त्रकी सर्वोच्च ख्याति केवल यहांके तांतियोंके यत्न और कार्यकुशलता-से हुई है, ऐसा कह सकते हैं। यह विद्या आज भी इनके हाथमें है। इधर महात्मा गांधीजीके उद्योगसे भारतवर्षमें इन दो चार वर्षोंमें जिस तरह चर्खे और कर्घेका प्रचार हुआ है, उसे देख कर एक बार फिर वह दिन याद आने लगा है। इस समय हाथसे कते सूतेसे हाथसे बुने खद्दरका जोरोंसे प्रचार चल रहा है।

भारतके विभिन्न स्थानोंमें तथा खास ढाकेमें तांती इस मस्लीनको बनाते थे। यह इतना बारीक था, कि रातको यदि पसार दिया जाता, यदि शीतसे भीज जाता, तो जहां पसारा गया था, वहां मालूम नहीं होता कि कोई कपड़ा है। किसी अंग्रेज कविने इस वस्त्रको वायुका जाल कह कर कल्पना की है।

मसवई (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका बबूलका गोंद। यह पहले मसोवा द्वीपसे आता था, इसीसे इसका यह नाम पड़ा। अभी यह अदनसे आता है।

मसवारा (हिं० पु०) प्रसूताका वह स्नान जो प्रसवके उपरान्त एक मास समाप्त होने पर होता है।

मसवासी (हिं० पु०) १ वह साधु आदि जो एक मास-से अधिक किसी स्थानमें न रहें। २ एक महीनेसे अधिक किसी पुरुषके पास न रहनेवाली स्त्री, गणिका।

मसविदा (अ० पु०) १ वह लेख जो पहली बार काट छांटके लिये तैयार किया गया हो और अभी साफ करनेको बाकी हो, मसौदा। २ युक्ति, उपाय।

मसहरी (हिं० स्त्री०) १ पलंगके ऊपर और चारों ओर लटकाया जानेवाला जालीदार कपड़ा। इसका उपयोग मच्छड़ों आदिसे बचनेके लिये होता है। २ ऐसा पलंग

जिसके चारों पायों पर इस प्रकारका जालीदार कपडा लटकानेके लिये चार ऊंची लकड़ियां या छड़ लगे हों।

मसहार (हिं० पु०) मांसाहारी, मांस खानेवाला।

मसहूर (अ० वि०) मशहूर देखो।

मसा (हिं० पु०) १ शरीर पर कहीं कही काले रंगका उभरा हुआ मांसका छोटा दाना। यह वैद्यकके अनुसार एक प्रकारका चर्मरोग माना जाता है। यह प्रायः सरसों अथवा मूंगके आकारसे ले कर वैर तकके आकारका होता है। यह शरीरमें अपने होनेके स्थानके विचारसे अशुभ अथवा शुभ माना जाता है। मशक देखो। २ ववासीर रोगमें मांसके दाने जो गुदाके मुंह पर या भीतर होते हैं। इनमें वहुत पीड़ा होती है और कभी कभी इनमेंसे खून भी वहता है। ३ मच्छड़।

मसाउनडिही—युक्तप्रदेशके गाजीपुर जिलान्तर्गत एक प्राचीन वडा ग्राम। यह गाजीपुर शहरसे १२ कोस पश्चिम गङ्गाके उत्तरी किनारे अवस्थित है। यह नगर अभी श्रीभ्रष्ट और जनसाधारणसे परित्यक्त होने पर भी प्राचीन कीर्त्तियां स्तूपाकारमें परिणत हैं। वह स्तूप १५००×१००० फुट है। इसके अन्तर्गत एक टूटे फूटे मन्दिरमें प्रतिमूर्त्ति दिखाई देती है। उस प्रतिमूर्त्तिमें जो शिलालिपि है उससे इस स्थानका प्राचीन नाम 'क्रोलु लेन्द्रपुर' जाना गया है।

अलावा इसके वुधपुर और जोहरगञ्जके समीप (मसाउन डिहोसे आध कोस दक्षिण) वंजुलाचन नामक स्थानके ध्वंसावशेषसे बौद्धयुगकी कुछ मुद्राएं और मौर्य अक्षरमालाके उत्पत्तिविषयक उपकरणादि पाये गये हैं। यहांसे दक्षिण-पूर्व गङ्गाके किनारे खेया नामक उच्चभूमि पर कुछ हिन्दू देवदेवियोंकी मूर्त्ति इधर उधर पड़ी नजर आती हैं। इस स्थानका प्राचीन नाम धनपुर है। यहां मौर्य अक्षरमें लिखित राजा धनदेवकी ताम्रमुद्रा पाई गई है।

मसान (हिं० पु०) १ वह स्थान जहां मुरदे जलाए जाते हों, मरघट। २ भूत पिशाच आदि। ३ रणभूमि, रणक्षेत्र।

मसाना (अ० पु०) पेटमेंकी वह थैली जिसमें पेशाव जमा रहता है। मूत्राशय देखो।

मसानी (हिं० स्त्री०) श्मशानमें रहनेवाली पिशाचिनी, डाकिनी इत्यादि।

मसार (सं० पु०) मस भावे क्विप्, मसं परिमाणं ऋच्छतीति ऋ उण्। इन्द्रनील मणि, नीलम।

मसार—विहार और उड़ीसाके शाहावाद जिलान्तर्गत एक वड़ा ग्राम। यह अक्षा० २५° ३३´ उ० तथा देशा० ८४° ३५´ पू०के मध्य आरासे ६ मील पश्चिम इष्ट-इण्डिया रेलवेसे दक्षिणमें अवस्थित है। जनसंख्या तीन हजारसे ऊपर है। चीनपरिव्राजक यूएनचुवङ्ग इस स्थानको देख गये हैं। उनके भ्रमण-वृत्तान्तमें इस स्थानको मोहोशोलो (महासार) लिखा है और गङ्गातीरवर्त्ती वतलाया गया है। किन्तु वर्त्तमान समयमें गङ्गा यहांसे ६ मील दूर हट गई है। पहले इस स्थान हो कर जो गङ्गानदी वहती थी उसका प्राचीन खात आज भी मौजूद है। यहांके पार्श्वनाथके मन्दिरमें ७ शिलालेख उत्कीर्ण हैं। उन्हें पढ़नेसे मालूम होता है, कि मसारका असल नाम 'महासार' है। इस स्थानका प्राचीन नाम शोणितपुर है। इसी शोणितपुरमें वाणासुर रहता था। यहीं पर ऊषादेवीके साथ श्रीकृष्णके पौत्र अनिरुद्धका विवाह हुआ। यहांके जैनमन्दिरमें वहुत सी हिन्दू-देवदेवियोंकी प्रतिमूर्त्ति और १३८६ ई०में खोदी हुई शिलालिपि पाई गई हैं। इस ग्रामसे पश्चिम जो ईंटेका स्तूप है उसमेंसे वहुत सी बौद्धमूर्त्तियां निकली हैं। वह स्तूप चेरुराजवंशकी कीर्त्ति माना जाता है। इसके अलावा यहां वहुत-सी स्वच्छसलिला पुष्करिणी हैं। यहांके ध्वंसावशेषसे एक प्रकाण्ड मूर्त्ति पाई गई है। वह मूर्त्ति अभी आरानगरके सरकारी उद्यानमें रखी हुई है।

मसारक (सं० पु०) मसार-स्वार्थे कन्। इन्द्रनील मणि।

मसाल (अ० स्त्री०) मशाल देखो।

मसालची (फा० पु०) मशालची देखो।

मसालदुम्मा (हिं० पु०) एक प्रकारका पक्षी। इसकी दुम विलकुल काली रहती है।

मसाला (हिं० पु०) १ किसी पदार्थको प्रस्तुत करनेके लिये आवश्यक सामग्री। २ आतिशवाजी। ३ तैल,

तल। ४ साधन। ५ ओषधियों अथवा रासायनिक द्रव्योंका योग या समूह।

मसाली (अ० स्त्री०) रस्सी, डोरी।

मसालेका तेल (हिं० पु०) एक प्रकारका सुगन्धित तेल। यह साधारण तिलके तेलमें कपूरकचरी, बालछड़ आदि सुगन्धित द्रव्य मिला कर बनाया जाता है।

मसालेदार (अ० वि०) जिसमें किसी प्रकारका मसाला लगा या मिला हो।

मसिंदर (अ० पु०) जहाजमेंका वह बहुत बड़ा रस्सा जो चरखी या दौड़में लपेटा रहता है और जिसकी सहायतासे जहाजका गिराया हुआ लंगर उठाया जाता है।

मसि (सं० पु० स्त्री०) मस्यते परिणमते इति मस् (सर्वधातुभ्यः इन्। उण् ४।११७) १ लिखनेकी स्याही, रोशनाई। पर्याय—मसिजल, पत्राञ्जन, मेला, कालि, अञ्जन, मसी, रञ्जनी, मलिनाम्बु, मशी। २ निगुँडीका फल। ३ काजल। ४ कालिख।

मसिक (सं० पु०) सर्पविवर, सांपका विल।

मसिका (सं० स्त्री०) शेफालिका, निगुंडी। इसका दूसरा रूप 'मलिका' भी देखा जाता है।

मसिकूपी (सं० स्त्री०) मस्याधार, दावात।

मसिजल (सं० क्ली०) लिखनेकी स्याही।

मसिदानी (हिं० स्त्री०) मसिपात्र, दावात।

मसिधान (सं० क्ली०) मसेर्धानं आधारः। मस्याधार, दावात।

मसिधानी (सं० स्त्री०) मसेर्धानी। मस्याधार, दावात। पर्याय—मसिमणि, मेलान्धु, वर्णकूपिका, मेलानन्दा, मेलाम्बु, मसिधान, मसिकूपी, मसिकूपिका।

मसिन (सं० क्ली०) मस्यते परिमीयते गणनयेति मस् (बहुलमन्यत्रापि। उण् २।४९) इति इनच्। सपिण्डक।

मसिपण्य (सं० पु०) मसिः कालिपण्य मस्य। लेखक, लिखनेका काम करनेवाला।

मसिपथ (सं० पु०) लेखनी, कलम।

मसिपाल (सं० पु०) दावात।

मसिप्रसू (सं० स्त्री०) मसिं पकर्षेण सूते उद्गिरतीति प्र सू क्विप्। १ मस्याधार, दावात। २ लेखनी, कलम।

मसिबंदा (हिं० पु०) मसिविंदु।

मसिमणि (सं० स्त्री०) मस्याधारो मणिरिवेति। मस्याधार, दावात।

मसिमुख (सं० त्रि०) जिसके मुंहमें स्याही लगी हो, काले मुंहवाला।

मसियाना (हिं० क्रि०) पूरा हो जाना, भलीभांति भर जाना।

मसिवर्द्धन (सं० क्ली०) मसिं वर्द्धयतीति वृध्-णिच्-ल्यु। रसगन्ध।

मसिविन्दु (सं० पु०) काजलका बुंदा। यह नजरसे बचनेके लिये बच्चोंको लगाया जाता है। इसका दूसरा नाम दिठौना भी है।

मसिल (हिं० पु०) मैनसिल देखो।

मसी (सं० स्त्री०) मसिकृदिकारादिति ङीष्। काली, स्याही।

मसीका (हिं० पु०) १ आठ रत्तीका मान, माशा। २ चवन्नी।

मसीजल (सं० क्ली०) मस्याजलं, राहोः शिर इतिवत् अभेदे षष्ठी। मसी, स्याही।

मसीजीविन् (सं० त्रि०) मसी जीव-णिनि। जो स्याही-से जीविका निर्वाह करता हो।

मसीधानी (सं० स्त्री०) मस्याः धानी पात्रं।। मस्याधार, दावात।

मसीना (सं० स्त्री०) मस् (बहुलमन्यत्रापि। उण् २।४९) इति इनच्, पृषोदरादित्वाद्दीर्घं स्त्रियां टाप्। स्वनाम-ख्यात शस्यविशेष, तीसी।

मसीह (अ० पु०) ईसाइयोंके धर्मगुरु हजरत ईसाका एक नाम।

मसीहा कैरानवी—एक मुसलमान कवि। इसका असल नाम सादुल्ला था। सम्राट् अकबर शाहकी सभामें रह कर इन्होंने अयोध्याधिपति रामचन्द्रकी पत्नी सीतादेवी-का उपाख्यान एक काव्यमें लिखा था।

मसुर (सं० पु०) मस्यते परिमीयतेऽसौ-मस् (मसेरुच्। उण् १।४४) इति उरन्। मसूर, मसुरी। मसूर देखो

मसुरा (सं० स्त्री०) मस्यति पण्यत्वेन परिणमत्यस्या-

विति मस्-उरन् स्त्रियां टाप्। १ वेश्या, रंडी। २ व्रीहि-भेद, मसुरी नामका अनाज। मसूर देखो।

मसूद खाँ—मालवके एक मुसलमान राजा, सुलतान होसेनके पुत्र। १४३५ ई०मे सुलतानके वजीर मालिक मोघीके लड़के महम्मद खाँने प्रथम युवराज गजनी खाँको विष खिला कर मार डाला और शासनभार अपने हाथ लिया। यह संवाद पा कर युवराज मसूद खां मालवसे भागे और गुजरातके राजा अह्मदकी शरणमें पहुंचे। तदनुसार सुलतान अह्मदने मसूद खांका पक्ष ले कर मालवाकी ओर युद्ध-यात्रा कर दी। शारङ्गपुर पहुंच कर उन्होंने महम्मद खांके विरुद्ध कुछ विश्वस्त और बहु-दर्शी कर्मचारीके अधीन एक दल सेना भेजी। खां जहान (मालिक मोघी)-ने यह संवाद पा कर बड़ी तेजीसे मान्दु-दुर्गमे आश्रय लिया। गुजरातके राजा भी इसी समय वहां जा धमके। कुछ दिन दुर्गमे अवरुद्ध रह कर वे शत्रुसेनाका आक्रमण व्यर्थ करने लगे। इसके वाद दोनों पक्षकी सेनामें मुठभेड़ हो गई। अह्मदशाहने अपने लड़के महम्मद खांकी अधिनायकतामे पांच हजार घुड़सवार सेना भेज कर शारङ्गपुरको दखल किया।

महम्मद खांने जब देखा कि दुर्गमें रहनेसे कोई फल नहीं, तब वे तारापुर-फाटकसे निकल कर शारङ्गपुरकी ओर चल दिये। राहमें मालिक हाजीने उन्हें रोकनेकी चेष्टा की पर अकृतकार्य हो वे वहांसे भागे।

गुजरातके राजा सुलतान अह्मदने मसूद खांको फिर-से मालव राजसिंहासन पर विठानेका वचन दिया था, पर वचन पूरा होनेके पहले ही मसूद इस लोकसे चल वसे।

मसूद (अमीर सुलतान)—गजनीके सम्राट् सुलतान महमूदके वड़े लड़के। सुलतान महमूदने छोटे लड़के महम्मदको वहुत प्यार करते थे, इस कारण उन्होंने मह-म्मदको ही अपनी सम्पत्तिका उत्तराधिकारी वनाना चाहा। किन्तु वड़ा लड़का मसूद पीछे कहीं महम्मदको न सतावे, इस आशङ्कासे उन्होंने एक दिन मसूदको बुला कर पूछा, 'मसूद! तुम अपने भाई महम्मदके साथ भविष्यमें कौन वरताव करोगे?' मसूदने निडर हो कर उत्तर दिया, 'आपने अपने भाईके साथ जैसा वरताव किया है, मैं भी ठीक वैसा ही करूंगा।' सचमुच सुलतानने कभी भी अपने भाईके साथ अच्छा वरताव नहीं किया था। मसूदके मुंहसे ऐसा मुंहतोड़ जवाव सुन कर सुलतानने समझ लिया, कि अगर ये दोनों भाई एक जगह रहेंगे तो निश्चय ही आपसमे मर मिटेंगे, अतः दोनोंको दो जगह रखना ही अच्छा है। अतः उन्होंने इराक जीत कर मसूदको वहांका शासनकर्त्ता वनाया और भविष्यमें महमदके साथ विवाद करनेसे मना कर दिया। पिताकी वार वार मनाही सुन कर मसूदने उत्तर दिया, 'यदि महम्मद मुझे उतनी सम्पत्ति जितनी न्यायसे होनी चाहिये दे दे, तो मैं कभी भी उसके विरुद्ध हथियार नहीं उठाऊंगा।' मसूदका ऐसा कठोर वचन सुन कर महम्मदने समझ लिया, कि गजनीका राजसिंहासन पानेकी आशा अब तक भी मसूदके हृदय-से दूर नही हुई है। इस ऊहापोहमें पड़ कर सुलतान इराकका परित्याग कर पुनः गजनी आए। किन्तु यहा आ कर वे अधिक दिन तक राज-कार्य करने न पाये, थोड़े ही दिनोंके वाद उनकी मृत्यु हुई।

सुलतानकी मृत्युके वाद उनके इच्छानुसार महम्मद राज तख्त पर वैठे। मसूदने यह संवाद पाते ही खोरासनकी ओर कदम वढ़ाया और वहां पहुंच कर छोटे भाई महम्मदके पास एक पत्र लिख भेजा जिसका आशय यों था, 'मैं सिर्फ पितृदत्त इराक राज्य पा कर संतुष्ट नही हूं, मेरे आदेशानुसार मेरे नाम पर ही खत्वा पाठ कराना।' महम्मद इस पर राजी नहीं हुए। वस फिर क्या था, दोनोंमें लड़ाईकी तैयारी होनी लगी। राजहितैषियोंके शान्तिस्थापनकी लाख चेष्टा करने पर भी कोई फल नहीं निकला। महम्मद युसुफविन सवक्त-गिनको सेनापति वना कर रणक्षेत्रमें उतरे। ४२१ हिजरी-में नगीनावादमें रहते समय सवक्तगिन और अमीर अली खुशावन्दने वागी हो कर मसूदका साथ दिया और महम्मद पर चढ़ाई करके उसे कैद कर लिया। इस काम-के लिये पारितोषिक पानेकी आशासे दोनों ही मसूदके पास गये। किन्तु फल उल्टा हो गया। विश्वासघातकों-को आश्रय देना अनुचित समझ कर मसूदने अली खुशा-वन्दको कैद किया और सवक्तगिनको मरवा डाला।

इसके बाद वे बेरोकटोक नगीनाबादसे गजनो पहुंचे।

गजनीके सिंहासन पर बैठ कर सुलतान मसूदने अपने भाई महम्मदकी आखें निकलवा डालीं। किन्तु वे विशेष दया और न्यायपरताके साथ प्रजापालन करते थे। उनके शासनकालमें राज्य भरमें जगह जगह मसजिद, विद्यालय और पान्थनिवास खोले गये थे। वे हर साल भारतवासी विधर्मी हिन्दुओंके विरुद्ध युद्धयात्रा करते थे। इस प्रकार एक बार भारत आक्रमणके बाद जब वे स्वराज्यको लौट रहे थे, तब राहमें नस्तीगिन, अली खुशावन्द और युसुम विन वक्तगिनके पुत्रोंने उन्हें पकड़ कर महम्मदके पास हाजिर किया। महम्मदने मसूदको कैद कर मार डाला। मसूदने सिर्फ १२ वर्ष राज्य किया था।

मसूदके बुद्धि-कौशल और पराक्रमके विषयमें एक अलौकिक उपाख्यान सुननेमें आता है। कहते हैं, कि एक दिन सुलतान महमूदने किरमाणके राजाके पास कुछ मूल्यवान वस्तु भेंटमें भेजी। किरमाणकी खरिश नामक मरुभूमिमें एक डकैतोंका एक बदमाश दल रहता था। उस दलमें ८० आदमी थे। निराश्रय पथिकोंके प्रति अत्याचार करना और उनके द्रव्यादि लूटना ही उनका एकमात्र व्यवसाय था। सुलतानके दूतको मूल्यवान उपहार लिये जाते देख वे अपने लोभको रोक न सके। दूतके साथ जितने सिपाही जाते थे प्रायः बहुतोंको मार कर उन्होंने उनका सर्वस्व लूट लिया और वहांसे वे भागे। जो दो एक बच गये थे उन्होंने सुलतानके पास जा कर इसकी खबर दी। सुलतान यह खबर पा कर बड़े विस्मित हुए। इसी समय मसूद हीरटसे लौटे थे। किन्तु जब वे पिताके पास गये तो पिताने जरा भी उसका सम्भाषण नहीं किया। इस पर मसूद उनके चरणोंमें गिर पड़े, और अपराधका कारण पूछने लगे। पिताने कहा, 'मसूद! तुम्हारे जैसे पुत्र रहते राज्यमें डकैतोंकी नादिरशाही चल रही है, आश्चर्य है!' मसूद बोले, 'पिताजी! मैं हीरटमें रहता था, इसी समय खरिश-मरुभूमिमें डकैती हुई, इसमें मेरा अपराध क्या?' सुलतानने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया और कहा, 'अगर तुम डकैतोंको मृत अथवा जीवित जिस किसी अवस्थामें हो, मेरे पास हाजिर करो, तभी मैं तुम्हारा मुंह देखूंगा, इस बीचमें नहीं।' अनन्तर मसूद दो सौ घुड़सवार सेना ले कर डकैतोंकी तलाशमें निकले। उन लोगोंके दुर्गके समीप जानेसे उन्हें मालूम हुआ, कि डकैत लोग उनके आनेकी खबर सुन कर अभी तुरत भाग गये हैं। अब मसूदने अपने ५० अनुचरोंको हुकुम दिया कि 'तुम लोग अपने अपने हथियारको जीनमें छिपा रखो और मुसाफिरके वेशमें चल चलो, रास्तेमें यदि उन डकैतोंसे मुलाकात हो जाय, तो किसी प्रकार कौशलसे उन्हें रोक रखना।' इतना कह कर मसूदने उन पचासोंको विदा किया और आप बाकी डेढ़ सौ सेनाके साथ उनके पीछे पीछे जाने लगे। डकैतोंको जब उन पचासों पर निगाह पड़ी, तब वे एकाएक उन पर टूट पड़े। दोनों पक्षमें युद्ध चलने लगा। इसी समय मसूद भी वहां जा धमके। सभी डकैत पकड़े गये, एक भी भागने नहीं पाया। उनमेंसे सिर्फ ४०को मसूदने बांध छान कर सुलतानके पास भेजा था, शेष सभी मार डाले गये थे।

मसूद २य अलाउद्दिन, सुलतान)—गजनीके सम्राट्। इनके पिताका नाम इब्राहिम था। १०६१ ई०में गजनीनगरमें मसूदका जन्म हुआ। १७ वर्ष तक न्यायपरताके साथ प्रजापालन करके १११५ ई०में ये परलोकको सिधारे। सुलतान सञ्जरकी बहिनके साथ इनका विवाह हुआ था।

सुलतान मसूद दयालु और उदार प्रकृतिके मनुष्य थे। धार्मिकता और न्यायपरताने उनकी राजशक्तिको अलंकृत कर दिया था।

मसूद (मालिक)—गुजरातके बादशाह बहादुरखांके मित्र। जब बहादुर खां महमूद नगर पहुंचे, तब मालिक मसूद और अन्याय सामन्तोंने उनका साथ दिया था। वे सभा इमादु उल मुल्कके भयसे स्वदेशका परित्याग कर छिप कर अपना समय बिताते थे। अभी उन्होंने जब सुना कि बहादुर खां इमादु-उल मुल्कको परास्त करने आये हैं, तब मसूदने बहादुरखांका पक्ष लिया था।

मसूद ३य (सुलतान)—गजनीके एक सुलतान। इनका

असल नाम आला उद्दौला था। पिताकी मृत्युके बाद मसूद १६ वर्ष राज्य करके ११११४ ई०में परलोकको सिधारे।

मसूद (सिपा-सलार)—गजनीके एक मुसलमान साधु। ये इसलाम-धर्मकी प्रतिष्ठा करनेमें प्राणत्याग करके सर्व-साधारणके पूज्य हो गये हैं। उत्तर-पश्चिम भारतके वहराइच जिलेमें इनका समाधि-मन्दिर विद्यमान है। यह मुसलमानोंके निकट एक पवित्र तीर्थ समझा जाता है। भारत वर्षके पठान और मुगल-बादशाह यहां आ कर समाधिके ऊपर बहुमूल्य वस्तु चढ़ाते थे। सुलतान फिरोजशाह १३१४ ई०में मसूदका कब्रिस्तान देखने आये थे।

अवदर रहमान चिस्तीके बनाये हुए 'मीरट-इ-मसूदी' ग्रन्थमें इनकी जीवनी लिखी गई है। उक्त ग्रन्थ पढ़नेसे मालूम होता है, कि धर्मात्मा मसूद सुलतान सवुक्‌गीन-के अधीन नौकरी करते थे। कुछ दिन बाद वे धर्मराज्यके कर्मचारी हुए। गजनीपति सुलतान महमूदके आदेशा-नुसार सेनापति सलार शाह मुजाफर खांको सहायतामें भारतवर्ष आये। उनको स्त्री सितारमुखुल्ला भी उनके साथ आई थी। अजमीर नगरमें (४०५ हिजरी) सितार-मुखुल्लाके गर्भसे सलार मसूदका जन्म हुआ। बालक मसूदका सौन्दर्य और शरीरका लक्षणादि देख कर सबों-ने अनुमान किया था; कि यह भविष्यमें एक असाधारण प्रतिभाशाली पुरुष होगा।

सुलतान महमूद बालक मसूदको मनोहर मूर्त्ति देख कर बड़े प्रसन्न हुए थे। यहां तक कि उन्होंने मूल्यवान् कपडे और रत्न अलङ्कारादि भी जन्मोत्सवमें वितरण किये थे। जब मसूदकी उमर ४ वर्ष ४ मास ४ दिनकी हुई, तब वह मीर सैयद इब्राहिमके पास पढ़ने भेजा गया। मसूदकी ऐसी अस्वाभाविक धीशक्ति थी, कि ६ वर्षकी उमरमें ही उसने सब विद्या सीख ली। अनन्तर १०वें वर्षमें वे अपना सारा समय ईश्वरकी आराधनामें विताने लगे। धीरे धीरे वे सभी विषयोंमें सुदक्ष हो गये। उनका चरित्र बिलकुल निर्मल था, कलङ्क लेशमात्र भी न था। पाप उनकी देहको छूने नहीं पाया था। उनकी पवित्र आत्मा सदा ईश्वरके ध्यानमे निमग्न रहती थी।

१२ वर्षकी उमरमें मसूदने रावलके अधीश्वर सातु-गानको हराया और सपरिवार कैद किया। सुलतान महमूदके सोमनाथ-आक्रमण कालमें सलार मसूद भी वहां गये थे। उन्होंने मन्दिरकी अनेक देवदेवीकी मूर्त्तियोंको तोड फोड़ कर स्वधर्ममें विशेष आस्था दिख-लाई थी।

इस प्रकार मसूद धीरे धीरे मह्‌मूदके प्रियभाजन हो गये। यह देख कर उनके वजीर ख्वाजा हसान मैमन्दीके हृदयमें हिंसानल प्रज्वलित हो उठा। वे अपने कर्त्तव्य कार्यमें उदासीनता दिखलाने लगे जिससे राज्य भरमें अशान्ति फैल गई। महमूदने जब देखा कि वजीरको संतुष्ट रखे बिना राजकार्य सुचारुरूपसे चलना मुश्किल है, तब उन्होंने सलार मसूदको यहांसे हटा देना ही अच्छा समझा। तदनुसार सलार मसूदको कुछ दिनके लिये पिताके पास रहनेकी आज्ञा हुई। वहासे विदा होते समय वे बड़े दुःखित थे किन्तु सुलतानका प्रेम उनके प्रति अक्षुण्ण था।

सेनापति सलार शाह यह खबर पाते ही काबुल नगरसे स्त्री समेत मसूदके शिविरमें उपस्थित हुए। मसूदको देखते ही उनकी आखें डबडबा आईं और उन्हें अपने साथ रहनेका अनुरोध किया, किन्तु मसूद राजी न हुए। उन्होंने सुदक्ष सेना और कुछ पारिषद्‌को साथ ले भारतवर्षको और कदम बढ़ाया। सिन्धुनदीके किनारे पहुंच कर मसूदने अपने सहचरोंमेसे २ अमीरको ५० हजार घुड़सवार सेना ले कर सिन्धुनदीके दूसरे पारके देश जीतनेका हुकुम दिया। तदनुसार दोनों अमीर सिन्धुनदी पार कर गये और वहांके राजा अर्जुन-रायके प्रासादको ध्वंस कर पांच लाख स्वर्णमुद्राके साथ मसूदके समीप हाजिर हुए। अनन्तर मसूद दलबल समेत सिन्धुनदी पार कर उसीके किनारे छावनी डाल कर रहने लगे। यहां उनका अधिकांश समय आखेटमें व्यतीत होता था।

इसके बाद वे मूलतान नगर पहुंचे। यह नगर मह मूदके आक्रमणसे मलियामेट हो गया था। किन्तु इसके पहले ही उक्त नगरके अधिपति राय अर्जुन और अनङ्ग पाल मसूदके निकट दूत भेज चुके थे। दूतने आ कर

मसूदसे कहा, 'महाशय ! क्या दूसरेका राज्य नष्ट करना आप जैसा धर्मशील व्यक्तिके लिये उचित है ? इसके लिये आपको अन्तमें पश्चात्ताप करना होगा।' मसूदने उत्तर दिया, 'सभी ईश्वरका राज्य है, वे जिस पर प्रसन्न रहते हैं उसीको राज्यका अधिकारी बनाते हैं। विधर्मी काफिरोंको मुसलमानी धर्ममें दीक्षित करना हमारा एकान्त कर्त्तव्य है। यदि वे मुसलमानी-धर्म माननेको राजी नहीं, तो निश्चय ही उन्हें यमपुरका द्वार देखना होगा।' इतना कह कर उन्होंने मूल्यवान् वस्त्रादि पारितोषिक दे दूतोंको विदा किया।

दूतोंके विदा होते न होते मसूदने मीर हुसेन अरब, अमीर वाजिद् जाफर, अमीर तर्कान, अमीर नाकी, अमीर फिरोज और मराव मलक अह्मदको बहुसंख्यक अश्वारोही सेनाके साथ अनङ्गपाल पर चढ़ाई करने भेजा। अनङ्गपाल अपनी सेना, जो बिलकुल तैयार थी, ले कर रणक्षेत्रमें उतर पड़े। तीन घंटे तक दोनोंमें तुमुल संग्राम चलता रहा। धर्मयोद्धाओंमेंसे बहुतेरे यमपुरको सिधारे। असंख्य हिन्दू इस युद्धमें मारे गये। आखिर अनङ्गपालने कोई उपाय न देख आत्मसमर्पण किया।

यहांसे मसूदने दिल्लीकी यात्रा कर दी। इस समय दिल्लीके सिंहासन पर राय महीपाल अधिरूढ़ थे। उनके पास युद्धोपयोगी हाथी और काफी सेना थी। इस कारण वे निर्भय हो कर मसूदके आगमनकी प्रतीक्षा करते थे। प्रबल प्रतापशाली मसूदकी सेना जब दिल्ली पहुंची तब महीपाल उन्हें रोकनेको चेष्टा करने लगे। दोनों पक्षकी सेना दूर दूरमें रहती थी सही, पर युवक वीरपुरुषगण प्रति दिन मल्लयुद्ध चलाने लगे। इस तरह एक महीना बीत गया। मसूद भयभीत हो कर खुदाको याद करने लगे। इसी बीच उन्हें खबर मिली कि गजनीसे पांच अमीर दलबल समेत उनकी सहायतामें आ रहे हैं। महीपाल शत्रुसेनाकी वृद्धि देख हताश हो पड़े। अब दोनों पक्षकी सेनामें पुनः युद्ध चलने लगा। मसूदको सरीफ उल मुलकके साथ बातचीत करते देख महीपालके पुत्र गोपालने उन्हें ऐसी गदा जमायी कि उनके दो दांत टूट गये। भीषण आघात पा कर भी मसूद रणक्षेत्र नहीं छोड़ा, वरन् और भी दूने उत्साहसे रणक्षेत्रमें घूम घूम कर अपनी सेनाको उत्साहित करने लगे। आजका युद्ध बंद हो गया। दूसरे दिन फिर सवेरेसे युद्ध शुरू हुआ, दोनों पक्षकी असंख्य सेना यमपुर जाने लगी। महीपाल और श्रीपाल विशेष पराक्रम दिखा कर मृत्युमुखमें पतित हुए। दिल्लीका सिंहासन मसूदके हाथ लगा।

दिल्लीको जीत कर मसूद मीरट गये। मीरटके राजाने उनके बलविक्रमकी बात सुन कर पहले ही अधीनता स्वीकार कर ली थी। मसूद सन्तुष्ट हो उन्हें स्वराज्यमें प्रतिष्ठित करके कान्यकुब्जकी ओर बढ़े। इसके पहले सुलतान महमूदने जब राय जयपालको कान्यकुब्जके सिंहासन परसे उतार दिया, तब सलार मसूदने ही उन्हें फिरसे बिठाया था। इस कारण मसूदका आगमन सुन कर जयपालने नाना प्रकारके उपढ़ौकन भेज उनकी अभ्यर्थना की। इसके बाद जयपालसे मिल कर मसूद छत्रकी ओर रवाना हुए।

छत्र इस समय भारतवर्षके मध्य एक उन्नतिशील नगर था तथा हिन्दुओंका एक पवित्र स्थान समझा जाता था। मसूद यहां पर छावनी डाल कर चारों ओर सेना भेजने लगे। सलार शैफुद्दीन और मियान् राजब बहराइच जीतनेको गये। वहां उन्होंने जब देखा कि खानेको कोई चीज नहीं मिलती, जिससे दलबल समेत रहना बिलकुल असम्भव है, तब मसूदको इसकी खबर दी। मसूद यह खबर पा कर वहांके जमींदारोंको कृषिकार्यमें उन्नति करनेके लिये उत्साहित करने लगे। इसके लिये उन्होंने स्थानीय प्रजाको फसलका दाम पेशगी दे दिया था।

अनन्तर मसूदने सुलतानुस-सलातीन और मीर बखतियारको दक्षिण भारतवर्ष भेजा। जाते समय कह दिया था, कि ईश्वर तुम लोगोंकी रक्षा करेंगे। यदि कोई काफिर इस्लामधर्म ग्रहण करे, तो उस पर दया दिखलाना, नहीं तो तलवारसे उनका शिर काट डालना।

एक दिन माणिकपुर और काराके राजाने बहुमूल्य उपढ़ौकनके साथ कुछ दूत मसूदके निकट भेजे। दूतोंने मसूदको भेंट देकर निवेदन किया कि 'वंशपरम्परासे हम लोग

इस राज्यका उपभोग करते आ रहे हैं। यहां एक भी मुसलमानका वास नहीं है। माकिदनपति आलेकसन्दरने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था सही, पर वे भी गङ्गा पार न कर केदारके साथ संधि करके ही स्वदेश लौट गये। सुलतान महमूद भी कान्यकुब्ज तक आ कर ही लौट गये थे। किन्तु आप लोग अन्यायपूर्वक इस राज्यको जीतनेके लिये प्रस्तुत हुए हैं, आप जैसे महात्माके लिये यह सचमुच एक निन्दनीय कार्य है। अतएव निवेदन है, कि आप अपने सम्मानकी रक्षा करते हुए स्वेच्छासे देश लौट जायं, नहीं तो भारी मुश्किलमें पड़ जायंगे।' यह सुन कर मसूद आग बबूले हो गये और होंठोंको चबाते हुए बोले, 'तुम दूत हो, इसी लिये तुम्हारी जान बच गई। यदि कोई दूसरा यह खबर ले कर मेरे पास आया होता, तो कब उसे यमपुर भेज दिया रहता। जावो, अपने राजासे बोलो, कि उनका देश उसी सर्वशक्तिमान् ईश्वरका राज्य है। वे जिसे चाहेंगे उसीको अधिकारी बनायंगे। मैं केवल देशभ्रमण करने नहीं आया हूं, वरन् इस राज्यको जीत कर विधर्मी काफिरोंको समूल उखाड़ने आया हूं।' दूतोंने लौट कर अपने राजासे कुल वृत्तान्त कह सुनाया। दूतके मुखसे मसूदकी तेजस्विताकी बात सुन कर हिन्दूराजगण डर गये। उस समय एक नाई भी वहां खड़ा था। उसने हाथ जोड़ कर राजासे कहा, 'यदि मुझे आज्ञा मिले, तो मैं इस कार्यका प्रतिविधान कर सकता हूं।' राजासे आज्ञा पाते ही उस नाईने विष खिलाकर मसूदका काम तमाम किया। इस समय मसूदकी उमर सिर्फ दश वर्षकी थी। इसी उमरमें भगवान्ने उन्हें विचित्र प्रकारके अस्वाभाविक गुणोंसे भूषित किया था।

मसूद (हुसेन मिर्जा)—इब्राहिम हुसेन मिर्जाका छोटा भाई। हुसेन कुली खांने जब नगरकोटमें घेरा डाला, तब उन्होंने सुना, कि मिर्जागण दलबलके साथ उनका मुकाबला करने आ रहे हैं। अब उन्होंने मिर्जागणोंकी गति रोकनेके लिये हिन्दुओंसे मेल कर लिया और उनसे सहायता मांगी। हुसेन कुली खांकी सेनाने एकाएक मिर्जाकी सेना पर आक्रमण कर दिया। कुछ काल तक दोनोंमें युद्ध चलता रहा। आखिर मसदका घोड़ा एक गड्ढेमें गिर पड़ा जिससे वे पकड़ गये कैदखानेमें ही हुसेन मसूदकी मृत्यु हुई।

मसूदा—राजपूतानेके अजमीर जिलान्तर्गत एक नगर और उसी नामके परगनेका सदर। यह अक्षा० २६° ५' उ० तथा देशा० ७४° ३२' पू०के मध्य अजमीर शहरसे २९ मील दूरमें अवस्थित है। यह स्थान इस्तिमरारदारकी आवासभूमि है। शहरमें एक दातव्य औषधालय मौजूद है।

मसूदी—एक मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने ९१५ ई०में भारत, सिंहल और चीन-उपकूलवर्ती नाना स्थानोंमें परिभ्रमण कर एक विस्तृत उपाख्यान लिखा है। इनके बनाये हुए मादन उल-जवाहिर, अखबार उजजमान, किताव-उल औषख आदि ग्रन्थोंका प्रत्नतत्त्वविदोंके निकट विशेष आदर है। उक्त ग्रन्थ २० भागोंमें बटे हैं।

मिस्रदेशकी अति अद्भुत कीर्त्ति पिरामीडका वर्णन करते समय इन्होंने लिखा है, कि उसके भीतर किसी एक कमरेमें १ हजार दीनारकी प्राचीन स्वर्णमुद्रा थी। एतद्भिन्न उस ग्रन्थमें मिस्रके मुसलमान राजा यजिदविन अबदुल्लाके शासनकालमें स्थापित और भी बहुतसी प्राचीन कीर्त्तियोंका उल्लेख है। ९५६ ई०में मसूदीका देहान्त हुआ।

मसूम अलीशाह, मीर—विख्यात सुफी-मतके प्रवर्त्तक। ये दाक्षिणात्यवासी सैयद अली रजाके शिष्य थे। दक्षिण-भारतमें गुरुके निकट पाठ समाप्त करके इन्होंने धर्मतत्त्वकी आलोचनामें विशेष ध्यान दिया। धीरे धीरे वह एक धर्माचार्य कहलाने लगे।

करीम खांके शासनकालमें वे भारतवर्षका परित्याग कर सिराज आये। यहां उनकी वक्तृता सुन कर थोड़े ही दिनोंके अन्दर ३० हजार आदमी उनके मतावलम्बी हो गये। यह देख कर वहांके कट्टर धर्मयाजकोंने राजा करीम खांसे जा कहा, कि उक्त महात्मा यदि नगरसे जल्द न निकाले जांयगे, तो नगरमें अशान्ति फैलनेकी सम्भावना है। महात्माकी अद्भुत क्षमता देख कर सभी स्तम्भित हो गये थे, किन्तु उनकी शत्रुसंख्या दिन-पर-दिन बढ़ती ही जाती थी।

मसूम इस समय इसपाहन नगरमें जा कर रहने लगे। करीमकी मृत्युके बाद उन्होंने फिरसे अपने प्रधान शिष्य फयाज अलीको अपना धर्म प्रचार करनेके लिये राजधानी भेजा। थोड़े ही समयके मध्य फयाज यमपुर सिधारे। अब नूर अली शाह नामक एक युवक उस कार्यमें नियुक्त हुए। उदारता और दयालुताके कारण लोग इनकी अच्छी खातिर करते थे।

मीर मसूमके शिष्योंको आज भी बढ़ते देख इस्पाहनके धर्मयाजकोंने राजा अलीमर्दन खांसे जा कहा, 'महाराज! यह नव्य सम्प्रदाय हम लोगोंके सुप्राचीन विशुद्ध महम्मदीय-धर्मके विरोधी हैं। यह सुफीसम्प्रदाय शीघ्र ही राज्यमें महान् अनिष्ट उपस्थित करेगा। अतएव निवेदन है, कि आप इसका मूलोत्पाटन करके इसलाम-धर्मका प्रचार कराइये, इसीमें राज्यकी उन्नति है।' पुरोहित सम्प्रदायके बहकानेसे राजाने विरोधी सम्प्रदायमें जितने लोग थे उनकी दाढ़ी मूंछ और नाक काट डालनेका हुकुम दिया। इससे उद्धत सेनाओंने राज्यमें महा अनिष्टपातकी सम्भावना देख, दोनों पक्षके लोगोंकी नाक और दाढ़ी मूंछ काट डाली।

इसके बाद मसूम अली और नूरअली शाह पारस्यका परित्याग कर नाना स्थानोंमे पर्यटन करते हुए किरमाण शाहमे पहुंचे। यहां उनका प्रियतम शिष्य मुस्ताक अली मारा गया, नूरअली कैद किया गया और आप भी इबादत करते समय वहांके अधिवासियोंसे मारे गये।

इस प्रकार शत्रुओंसे उत्पीड़ित हो कर भी सुफीसम्प्रदायने अपना अभीष्ट पथ नहीं छोड़ा, वरन् आगे बढ़ता ही गया। दिन पर दिन सुफी सम्प्रदायकी वृद्धि देख कर वहाके सभी लोग संदेह करने लगे। फलतः नूर अली शिष्योंके साथ राज्यसे निकाला गया। उस समय उसके करीब ६० हजार शिष्य हो चुके थे। १७०० ई०के जून मासमें मुसलनगरमें विषप्रयोगसे उसकी मृत्यु हुई।

मसूम खाँ—सम्राट् अकबरशाहका जौनपुरका एक शासनकर्त्ता। यह १५७० ई०में उक्त नगरमें यमुनाके किनारे एक अट्टालिका बनवा गये हैं।

मसूम खाँ फरंखुदी—सम्राट् अकबरशाहका अनुगृहीत एक राजद्रोही। पिता मुइन उद्दीन अहम्मद फरखुदीकी मृत्युके बाद यह हाजिरीके काम पर भर्त्ती हुआ। सम्राट्की इस पर बड़ी कृपा रहती थी, इस कारण गाजीपुर-प्रदेश इसको जागीरमें मिला। सम्राट्का प्रेमभाजन हो कर भी यह उनके विरुद्ध कार्रवाई करता था। टोडरमलके साथ विहार प्रदेशमें आनेसे उसका मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ। कुछ समय बाद सम्राट्का भाई मिर्जा महम्मद हाकिम जब पञ्जाब पर चढाई करने तैयार हुआ, तब सम्राट् खुदसे उसका दमन करनेके लिये वहा गये। इस सुअवसरमें मसूमने तरसन खांको परास्त कर जौनपुरसे निकाल दिया। अकबर शाह मसूमको बचपनसे ही प्यार करते थे। इस कारण राजद्रोहिताके लिये कोई विशेष दण्ड न दिया, केवल जौनपुरके बदलेमें अयोध्याप्रदेश प्रदान किया। यहां भी वह अपना दल पुष्ट करनेसे बाज नहीं आया। राजा बीरबर और शाह कुली महरमके बार बार निषेध करने पर भी जब उसने नहीं माना तब शाहबाजखा दलबलके साथ उसे उचित दण्ड देनेके रवाना हुआ।

शाहबाजसे हार खा कर मसूमने नगरमें आश्रय लिया, किन्तु उसके सहयोगी राजद्रोही नेताओंके भाग जानेसे वह किंकर्त्तव्य विमूढ हो गया। पीछे वह भी अपने बाल-बच्चेको वहीं पर छोड़ कर भागा। राहमें किसी जमींदारने उसका सर्वस्व लूट लिया। इसके बाद मकसुद नामक अपने एक मित्रसे कुछ धन पा कर उसने फिर बहराइच, महम्मदाबाद, जौनपुर आदि स्थानोंमें लूट पाट आरम्भ कर दिया। जौनपुरमें जागीरदारोंने इसे बहुत सताया था। आखिर उसने आजिज कोकाकी शरण ली। कुछ दिन बाद आजिज कोका उसे बादशाहके समीप ले गये। इस प्रकार नाना दोषोंसे दोषी और अत्याचारी होने पर भी अकबर शाहने उसके कुल अपराध माफ कर दिये। केवल यही नहीं, भविष्यमें सुखसे रहनेके लिये उसे चम्पारनके अन्तर्गत मिसी परगना भी जागीरमे मिला।

यहा आ कर भी उसका स्वभाव नहीं बदला। फिरसे उसको विद्रोहिताचरण करते देख आजिज उसे दण्ड

देनेके लिये चले। यह संवाद पा कर मसूम वहुत डर गया और माफी मांगने लगा। पीछे वह आजिजके साथ राजदरवारमे हाजिर हुआ।

१५८२ ई०में मसूमने आगरा तक धावा किया। इस वार भी वादशाहकी माताके अनुरोधसे उसे रिहाई मिली; किन्तु यह कष्टमय जीवन उसे अधिक दिन वहन नहीं करना पड़ा। एक दिन शामको दरवारसे घर लौट रहा था, इसी समय राहमे किसी गुप्तचरने इसे मार डाला। वहुतोंका कहना है, कि वादशाहने ही गुप्त घातकसे इसका शिर कटवाया था।

मसूम (मीर)—एक मुसलमान ऐतिहासिक और कवि। इनके पूर्वपुरुष वुखरावासी तिमिजवंशके थे। जन्मभूमिका परित्याग कर वे कन्धारमे आ वसे। सुलतान महमूद इनके पिता मीर सैयद सफाईको वहुत मानते थे, इस कारण सुलतानके कहने पर वे भक्करमें आ कर वस गये। यहीं पर मीर मसूमका जन्म हुआ था।

पिताकी मृत्युके वाद मसूमने किङ्गुवासी मुल्ला महम्मदके निकट लिखना पढ़ना सीखा। धीरे धीरे इनकी सुख्याति फैलने लगी। कुछ दिन वाद इन्होंने गुजरातके दीवान ख्वाजा निजाम उद्दीन अहमदसे कार्यभार ग्रहण किया। इस समय इन्होंने निजामको तवकत्-इ-अकवरी नामक ग्रन्थ वनानेमें मदद पहुंचाई थी। क्रमशः निजामके साथ पीर मसूमकी गाढ़ी मित्रता हो गई। वे मसूमको अपने साथ वहांके शासनकर्त्ता खां तथा अकवर वादशाहके निकट ले गये। गुणग्राही सम्राट्ने उन्हें पहले २५० सेनाका नायक वनाया। पीछे १०१२ हिजरीमें इरानके राजा शाह अव्वासके समीप दूत रूपमे भेजे गये। यहां उनकी वड़ी खातिर हुई थी।

अकवरनामा ग्रन्थ पढ़नेसे मालूम होता है, कि उन्होंने गुजरात, मैसाना और कच्छयुद्धमें अपने वलवीर्यका विशेष परिचय दिया था। १०१५ हिजरीमें इरानसे लौटने पर जहांगीरने इन्हें भक्करके अधीन और १ हजारी सेनानायक-पद पर नियुक्त किया। वहीं उनकी मृत्यु हुई।

कविता-शक्तिके लिये उन्हें नासिकी उपाधि मिली थी। उनके वनाये हुए दीवान्, मादन उलफकर नामक मसनवि तारीख-इ सिन्धु नामक इतिहास और मुफ्रिदत्त इ-मसूमी नामक हकीमी ग्रन्थ मिलते हैं। अलावा इसके खामसा, हुश्न और नीज तथा परिसुरत आदि उत्कृष्ट काव्य इन्हींके वनाये हुए हैं। फतेपुरके सलीम-चिस्तीके मन्दिरमें आज भी उनकी रचित श्लोकावली प्रस्तरफलकमें उत्कीर्ण है।

यह धामिक और दयालु थे। भक्करवासीकी भलाईके लिये वहुतसे जलस्तम्भ, सराय और अट्टालिका वनवा गये हैं। अलावा इसके इन्होंने अपने जीवनकालमें दीन दुःखियोंको भी आर्थिक सहायतासे संतुष्ट किया था।

मसूमावेगम—सम्राट् वावरकी कन्या और सम्राट् हुमायूंकी वहन। खोरासनके अधिपति महम्मद जमान मिर्जासे इसका विवाह हुआ था।

मसूर (स० पु० स्त्री०) मस्यते परिमीयतेऽसौ मस् (मसेरूरन्। उण् ५।३) व्रीहिभेद, मसुरी नामका अनाज। संस्कृत पर्याय—मङ्गल्यक, मसूर, व्रीहिकाञ्चन, मसूरा, मसुरा, रागदालि, मङ्गल्य, पृथुवीजक, शूर, कल्याणवीज, गुड़वीज, मसूरक, मङ्गल्या, मसूरका। (भावप्र०)

यह अन्न द्विदल और चिपटा तथा रंग मटमैला होता है। प्रायः इसकी दाल वनती है। दाल गुलावी रंगकी और अरहरकी दालसे कुछ छोटी और पतली होती है। पकाने पर रंग अरहरकी दालकी-सी हो जाता है। यह दाल वहुत हो पुष्टिकारक समझी जाती है इसकी सूखी पत्तियां और डंठल चारेके काममें आते हैं। वैद्यकमें इसे मधुर शीतल, संग्राहक, कफ और पित्तका नाशक तथा ज्वरको दूर करनेवाला माना है। द्विजोंमें कुछ लोग इसको दाल नही खाते। पुराणोंमें रविवारकेदिन इसका खाना निषिद्ध कहा गया है। विधवाओंके लिये इसका खाना नितान्त वर्जित किया गया है।

मसूरक (सं० पु०) मसूर-इव प्रतिकृतिरिति मसूर क, संज्ञायां कन् वा। उपाधानविशेष, गोल तकिया। पर्याय—चतुर, चातुर, अंगेऊ, चक्रगण्डु। (शब्दरत्ना०)

इस शब्दका क्लीवलिङ्गमें भी प्रयोग देखा जाता है।

मसूरकर्ण (सं० पु०) ऋषिभेद।

मसूरघृत (सं० क्ली०) ग्रहणी रोगमे घृतौषधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर, मसूरका काढ़ा ४ सेर, वेलसोंठ

१ सेर, इन्हें घीमें पकाना होगा। इस घीका सेवन करनेसे ग्रहणी रोग अति शीघ्र दूर होता है। (चक्रदत्त)

मसूरयूष (सं० पु० क्ली०) मसूरका बना हुआ काढ़ा या जूस। इसका गुण संग्राही, वृहण, स्वादु और प्रमेह-नाशक माना है।

मसूरविदला (सं० स्त्री०) मसूरस्येव विशिष्टं दलमस्याः स्त्रियां टाप्। १ कृष्ण त्रिवृत, कालो निसोथ। २ श्यामलता। ३ आम्रातक वृक्ष, अमड़ा। ४ मेषशृङ्गी मेढ़ासिंगी।

मसूरसूप (सं० पु०) भर्जित मसूर-कृत यूष, भुनी हुई मसुरीका जूस। इसका गुण संग्राही, शीतल, मधुर, लघु, कफ, पित्त और रक्त दोषनाशक तथा विषमज्वर-नाशक माना गया है।

मसूरसंघाराम (सं० पु०) बौद्ध संघारामभेद।

मसूरा (सं० स्त्री०) मस्यति परिणमतीति मस् ऊरन् स्त्रियां टाप्। १ वेश्या, रंडी। २ मसूरकी दाल। ३ मसूरकी बनी हुई बरी। ४ मेषशृङ्गी, मेढ़ासिंगी। ५ त्रिवृत, निसोथ।

मसूरा (हिं० पु०) मसूड़ा देखो।

मसूराभा (सं० स्त्री०) मसूरिका रोग।

मसूरिका (सं० स्त्री०) मसूरेव मसूरा-कन् स्त्रियां टाप् अत इत्वं। १ कुट्टनी, कुटनी। २ शीतला माता, चेचक (The Small-pox) पर्याय—पापरोग, रक्तवटी, मसूरी। (शब्दरत्नावली)

इसका निदान इस तरह है,—

"कट्वम्ल लवणक्षारविरुद्धाध्यशनाशनैः।
दुष्ट निष्पावशाकाद्यैः प्रदुष्टपवनोदकैः॥
क्रूरग्रहेक्षणाच्चापि देशे दोष समुद्भवाः।
जनयन्ति शरीरेऽस्मिन् दुष्टरक्तेन सगताः॥
मसूराकृति सस्थानाः पीडका सा मसूरिका॥" (भावप्र०)

कटु, अम्ल, लवण और क्षारद्रव्यका सेवन, विरुद्ध-भोजन, अध्यशन, दूषित अन्न, वायु और जलसेवन तथा क्रूरग्रहकी अशुभ दृष्टि द्वारा वातादि त्रिदोषका कुपित हो जाना और दुष्ट रक्तके साथ संसृष्ट हो कर देहमें मसूरको तरह निकल कर पीडा उत्पन्न करता है। इसी रोगको मसूरिका रोग कहते हैं।

इस रोगके पूर्व लक्षण ये हैं,—मसूरिका या शीतला होनेसे पहले ज्वर होता तथा देहमें खुजलाहट होती, शरीरमें वेदना हो जाती, चमडेकी सूजन, विवर्णता और आंखें लाल हो जाती हैं। यह रोग वातपित्तादि भेदसे कई प्रकारका होता है।

वायुजनित शीतलाके लक्षण इस तरह हैं,—वायुके दोषसे होनेवाले शीतला रोगके फोड़े काले या लाल होते हैं। ये रुक्ष, अत्यन्त वेदनायुक्त, कठोर और देरसे पकता है। रोगीकी सन्धि, अस्थि और पर्वोंमें अधिक वेदना होती है, खांसी हो जाती है, कम्प होने लगता है, ग्लानि या भ्रम, तालू, जिह्वा, कण्ठका सूखना और पिपासाका लगना, भोजनमें अरुचि होना आदि।

पित्तजनित शीतलाके लक्षण इस तरह हैं,—इसके फोड़े लाल, पीले या अरुणवर्णके होते है। इन फोड़ोंमें जलन और भयानक पीड़ा होती है, और ये शीघ्र पक जाते हैं। इससे रोगीका मलभेद, शरीरमें वेदना, जलन, पिपासा, अरुचि, मुखपाक, आंखें लाल हो जातीं और ज्वरका वेग बढ़ जाता है।

रक्त दूषित होनेसे जो मसूरिका या शीतला होती है, उसके लक्षण—पित्तजनित हो जानेवाले लक्षणोंकी तरह इसके भी लक्षण दिखाई देते हैं।

कफके दूषित होनेसे जो मसूरिका या शीतला रोग होता है, उसके लक्षण,—इसके फोड़े सादे रंगके होते हैं, अत्यन्त मुलायम, मोटा, खाज और सामान्य वेदना होती है। ऐसे रोगीका शरीर भारी हो जाता है, शिरमें पीड़ा होती है। कै होनेकी इच्छा, अरुचि, अधिक सोना, तन्द्रा और आलस्य हुआ करती है।

सान्निपातिक मसूरिकाके लक्षण—त्रिदोषजनित मसूरिकाके फोड़े नीले रंगके और बहुत ही पीड़ादायक होते हैं। इसका बीचला भाग नीचा हो कर फिर उठता है और देरसे पकता तथा मवाद देता है।

सप्तधातुओंके मसूरियोंमें रस धातुकी मसूरिकाके लक्षण,—इसके फोडोंसे पानी निकलता और ये बुदबुदाकारके होते हैं। इसको पनीसहामाता भी कहते है। यह विशेष भयका रोग नही है।

रक्तगत मसूरिकामें फोड़े लोहितवर्णके होते हैं।

यह तुरत ही पक जाते हैं. इसका चमड़ा पतला होता तथा फूटने पर लेहू निकलने लगता है। यह रोग सहज-साध्य है; किन्तु रक्त दूषित होने पर कष्टसाध्य हो जाता है।

मांसगत मसूरिकाके फोडे कड़े और चिकने होते हैं। यह देरसे पकता है। इसका रोगी सदा पिपासित, खुजलाहट, जलन, शारीरिक वेदनासे बेचैन रहता है।

महागत मसूरिकाके फोडे मोटे और चिकने होते हैं। इसमें वेदना अधिक रहती है। जरा उठा हुआ और मण्डलाकार रहता है। इसमें रोगी अत्यन्त ज्वर, मोह, ग्लानि और सन्तापमें चूर रहता है। इस रोगके रोगी कदाचित ही बचते हैं।

अस्थिमज्जागत मसूरिका रोगके फोडे, छोटे छोटे जैसा शरीर है उसी रंगके, सूखे और चिपटे होते हैं। यह जरा ऊपर उठा हुआ रहता है और इसके रोगी अत्यन्त मोह, वेदना, ग्लानि और मर्मस्थानकी वेदना अनुभव करते हैं। इस रोगमें शीघ्र ही प्राण नष्ट हुआ करता है।

शुक्रगत या वीर्यगत मसूरिका रोगके फोडे, चिकने और मुलायम तथा इनमें बड़े जोरका दर्द होता है। रोगीके मोह, जलन, वेदना, ग्लानि, उन्मत्तता आदि लक्षण प्रकाशित करने पर समझना चाहिये कि यह रोग असाध्य हो गया है। किसी तरह इसके नीरोग होनेकी प्रत्याशा नहीं करनी चाहिये।

उक्त सप्तधातुगत मसूरिका या शीतला रोग दोषके संस्रवसे हुआ करता है। इसे अच्छी तरह पहचान कर इसका प्रतिकार करना चाहिये।

चर्मज मसूरिका रोगके रोगीका कण्ठ रुद्ध होने लगता, अरुचि, तन्द्रा, प्रलाप और ग्लानि मालूम होती है। यह रोग अतीव कष्टसाध्य है।

रोमान्तिका मसूरिकाके रोगीको पहले ज्वर आता है। पीछे रोमकूप सदृश छोटी छोटी फुंसियां निकल आती हैं। इसे मोतीझरा कहते हैं। इसमें रोगीको खांसी और अरुचि उत्पन्न होती है। यह सुखसाध्य और आप ही आप आराम हो जाता है।

रक्तगत, रसगत, पित्तज, कफज और रक्तपित्तजनित मसूरिका सुखसाध्य हुआ करती है। इस तरहकी मसूरिका बिना दवादारु किये ही आराम हो जाती है। वायुजनित, पैत्तिक और वात-कफजनित मसूरिका बड़ी ही कष्टसाध्य है। इसका लक्षण दिखाई देने पर बड़े यत्नसे इसकी चिकित्सा करनी चाहिये।

सान्निपातिक मसूरिका सांघातिक होती है। इसके फोडे दोषभेदसे मूंगेके रंगके या जामुनके रंगके होते हैं। कभी तो यह लौहजालकी तरह काले वर्णके और कभी 'अतसी' फलकी तरह दिखाई देते हैं। दोषभेदसे यह और कई रंगके होते हैं। जिन लोगोंको मसूरिका रोगसे पीड़ित होने पर खांसी, हिचकी, मेह, अत्यन्त ज्वर, वृथा प्रलाप, ग्लानि, मूर्च्छा, पिपासा, दाह, निद्राधिक्य और कण्ठमें घड़घड़ शब्दका होना, जोरोंसे सांस निकलना तथा नाक, मुंह, आंखसे खून बहना आदि लक्षण दिखाई दे, उनका रोग बिलकुल असाध्य हो गया, ऐसा समझना चाहिये। डाक्टर वैद्यको भी ऐसा रोगी नहीं लेना चाहिये।

मसूरिका रोगसे ग्रसित रोगी जब पिपासित हो कर नाकसे जोरसे सांस छोड़ता है, उसे वात दोषाभिभूत समझना चाहिये। इसकी शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है। इस रोगमें शोथकी बीमारी होने पर यह रोग असाध्य हो जाता है।

फिर कुछ मसूरिका शीघ्र दब जाती हैं और कुछ बड़े यत्न करने पर दबती हैं। फिर कुछ तो यत्न करने पर भी प्रशमित नहीं होतीं।

मसूरिकाकी चिकित्सा।

मसूरिका होनेके साथ साथ श्वेत चन्दनके क्वाथके साथ हिञ्चा शाकका रस पान करना चाहिये। केवल इस रसका ही सेवन करनेसे उपकार हुआ करता है। दशमूली, रास्ना, आंवला, खसखसकी जड़, दुरालभा, गुरुचि, धनिया, मोथा, आदि एक साथ कूट कर क्वाथ बना लेना चाहिये। इसके सेवनसे वातजनित मसूरिका आराम हो जाती है। फोड़ों पर मजीठ, बट, पाकड़, शिरीष और गूलरकी छालोंको एकत्र कर पीस कर लेप करनेसे बहुत फायदा होता है। फोडे जब पकने लगें, तब गुरुचि, मुलेठी, ईखका

मूल और दाड़िम गुड़के साथ देने पर वायु प्रकुपित नहीं होती और जल्द पक जाते हैं। इस रोगमें शाली मूंग, मसूर, मीठी चीज और जरा सेंधा नमक सेवन किया जा सकता है।

पित्तजनित मसूरिका रोगमें पहले परवल मूलका क्वाथ और ऊखके मूलका रस प्रयोग करना चाहिये। नीम पित्तपापड़ा, आकनादि, परवलका पत्ता, श्वेतचन्दन, रक्त चन्दन, खसखसका मूल, कटकी, आंवला, अड़ूस और दुरालभा ये सब चीजें इकट्ठी कर क्वाथ बनाना चाहिये। ठण्डा होने पर इसमें जरा चीनी छींट कर उपयुक्त मात्रा से सेवन करने पर पित्तजनित मसूरिका दाह ज्वर आदि शीघ्र विदूरित होते हैं। रक्तजनित मसूरिकामें रक्त मोक्षण करनेसे शीघ्र उपकार होता दिखाई देता है। अड़ूस, मोथा, चिरैता, त्रिफला, इन्द्रयव और नीम आदिके क्वाथमें मधु डाल कर सेवन करनेसे बहुत जल्द उपकार होता है।

शिरीष और गूलरकी छाल, खदिर और नीमकी पत्ती पीस कर लेप करनेसे पित्तजनित मसूरिका नष्ट होती है। नीम, पित्तपापड़ा, आकनादि, परवलका पत्ता, कटकी, श्वेतचन्दन, रक्तचन्दन, खसखसका मूल, आमलकी, अड़ूस और दुरालभा इसके क्वाथमें चीनी मिला कर खानेसे सब तरहकी मसूरिका, उससे पैदा होनेवाला ज्वर नष्ट होता है और भीतरकी छिपी मसूरिका भी बाहर आ जाती हैं।

काञ्चन छालके क्वाथमें स्वर्णमाक्षिकाचूर्ण डाल कर खानेसे मसूरिका रोग प्रशमित होता है। मुखमें, कण्ठमें व्रण या फोड़ा निकल आने पर आंवला और मुलेठीके क्वाथमें मधु मिला कर आंखको सींचना चाहिये। मुलेठी, त्रिफला, सूर्यामुखी, दारुहरिद्रा, दारुचीनी, नील कमल, खसखसका मूल, लोध और मंजीठा इसका प्रलेप देने और नेत्रोंमें सींचनेसे आंखोंकी मसूरिका नष्ट हो जाती है और फिर उत्पन्न नहीं होती। बहुवार वृक्षकी छालका प्रलेप देनेसे भी नेत्रोंकी मसूरिका नष्ट होती है। क्लेदयुक्त मसूरिका पञ्चवल्कलचूर्ण या भस्म अथवा गोमय चूर्ण द्वारा आच्छादित करनी चाहिये। करैलेकी पत्तीके रसमें हल्दीका चूर्ण छींट कर पान करनेसे रोमान्तिक या मोती भरेका ज्वर, विसर्प और फोड़े नीरोग होते हैं।

मसूरीरोगको वैद्यकमें शीतला रोग कहते हैं। शीतलादेवीके कूपित न होने पर ऐसा रोग नहीं होता, हिन्दुओंका ऐसा ही विश्वास है। मालूम होता है, कि इसीसे इसका नाम शीतला रोग पड़ गया है।

> "देव्या शीतलयाक्रान्ता मसूर्य्येव हि शीतला।
> ज्वराय च यथा भूताधिष्ठितो विषमज्वरः॥
> सा च सप्तविधा ख्याता तासां भेदं प्रचक्ष्महे॥"
>
> (भावप्रकाश)

देवी शीतलाक्रान्त मसूरी रोगको ही शीतला रोग कहते हैं। जिस तरह भूत प्रेतोंकी वजह व्यक्ति ज्वर आदिसे पीड़ित हो जाते हैं उसी तरह शीतलाक्रान्त हो कर मसूरिकासे लोग पीड़ित हुआ करते हैं। शीतला सात प्रकारकी हैं। पहले ज्वर हो कर बड़े बड़े फोड़े उठ आते हैं। यह एक सप्ताहमें निकलते, दूसरे सप्ताहमें पूर्ण होते और तीसरे सप्ताहमें सूख कर विलुप्त हो जाते हैं। इनमें जो फूटते और बहते हैं उनके लिये वनगोंइठाकी भस्मका चूर्ण लगाना चाहिये। मक्षिकासे बचानेके लिये नीमकी पत्तीका प्रयोग करना चाहिये। पद्मकी नालका भी प्रयोग किया जा सकता है। यदि इसे ज्वर आ जाय, तो ठण्डा जल पीनेको देना चाहिये, कभी भी गरम जलका व्यवहार न करे। स्थान खूब साफ सुथरा, मनोरम और जहां आदमियोंकी भीड़ न हो ऐसे ही स्थानमें रोगीको रखना चाहिये। अपवित्र आदमीको रोगीके निकट जाने न देना चाहिये। इस रोगकी चिकित्सा करनेके लिये वैद्य बहुत कम दिखाई देते हैं। कोई कोई मनुष्य ही इस काममें समर्थ होते हैं।

जो लोग नीम, बहेराका बीज अथवा हल्दी, शीतल जलमें पीस कर पीया करते हैं, उनको यह रोग कभी होता ही नहीं। मोचरसमें चन्दन घिस कर या अड़ूस रसमें मधु मिला कर मुलेठीको पीस कर पीनेसे भी यह रोग नहीं होता। शीतला होनेके साथ ही आयली पत्रका रस अनुपानके साथ सेवन करना चाहिये और शीतलादेवीका कवच पहनना उचित है। उस घरके चारों ओर नीमकी पत्तियां लटका देनी या बांध देनी

चाहिये। इस घरमें जूठी फूटी चीज कभी आने न देनी चाहिये। फोड़ोंमें दाह होने पर सूखे गोवरका चूर्ण देना चाहिये। चन्दन, अड़ूस, मोथा, गुरुचि, द्राक्षा इनका शीतल जल पीनेसे शीतला-ज्वर रुक जाता है। जप, होम, दान, स्वस्त्ययन और गो-ब्राह्मण, शिव तथा दुर्गाकी पूजासे शीतला रोग निवारित होता है। रोगीके निकट शुद्धाचारी ब्राह्मणके शीतलाष्टक पाठसे बड़ा उपकार होता है।

शीतला रोगका प्रभेद—कोद्रवा नामक शीतला वायु और कफसे कोद्रव (कोदों)को तरहकी होती है। कुछ लोग कहते हैं, कि यह पक जाता है, किन्तु वास्तवमें ऐसा नहीं होता। जलशूकद्रवा नामक शीतला होनेसे शरीर छेदनेकी तरहका दर्द होता है। यह रोग सात दिन या बारह दिनके बाद विना दवा किये प्रशमित हो जाता है। विशेष औषधोपचार करनेकी आवश्यकता होने पर खदिराष्टकके क्वाथसे बहुत ही उपकार होता है।

उष्मा द्वारा सफेद सरसोंके दानेकी भांति फिर भी खुजलाहटके साथ जो फोड़े होते हैं, उसको पनीरुहा कहते हैं। यह सात दिनके बाद आप ही आप सूख जाते हैं।

जिस शीतला रोगमें पीली सरसोंकी तरह दाने निकलते हैं उसे सर्षपिका कहते हैं। इस रोगमें अभ्यङ्ग निषेध है। कुछ उष्मासे सफेद सरसोंके आकारका एक शीतला रोग होता है। यह प्रायः बालकोंको ही हुआ करता है। यह सहज सूख जाता है। जिस शीतला रोगमें फोड़े ज्वर हो कर दर्दके साथ लोहितवर्णके निकलते हैं, उसको षष्ठी शीतला कहते हैं। मगधमें इसको दाम कहते हैं। इस रोगमें तीन दिन ज्वर रहता है।

जिस शीतलामें सब फोड़े फैल कर एकमें मिल जाते हैं, उसको चर्मजा कहते हैं। युक्तप्रदेशमें यह चरमगोटी नामसे प्रसिद्ध है।

सात तरहका यह रोग होता है और यथाविधान शीतलादेवीकी पूजा करनेसे ही आराम होता है।

कुछ शीतला रोग जल्द ही अच्छे हो जाते हैं और कुछ देरसे। कुछ ऐसे हैं, जो यत्न करने पर भी आरोग्य नहीं होता।

यह सब शीतला रोग होने पर दैव पर ही भरोसा कर रहना ठीक है। विशुद्धाचारी ब्राह्मणसे शीतला-स्तोत्र पाठ कराना चाहिये। रोगीको भक्तिके साथ सुनना चाहिये। इससे ही मसूरिका (शीतला) रोग नीरोग होता है। शीतलास्तव इस तरह है। यथा,—

स्कन्द उवाच।

"भगवन् देवदेवेश शीतलायाः स्तवं शुभम्।
वक्तुमर्हस्यशेषेण विस्फोटकभयापहम्॥"

ईश्वर उवाच।

"नमामि शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बरीम्।
मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालंकृत मस्तकाम्॥
वन्देऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम्।
यामासाद्य निवर्त्तेत विस्फोटकभय महत्॥
शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीड़ितः।
विस्फोटकभयं घोर क्षिप्रं तस्य प्रणश्यति॥
यस्त्वामुदकमध्येतु धृत्वा संपूजयेन्नरः।
विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते॥
शीतले ज्वरदग्धस्य पूतिगन्धगतस्य च।
प्रनष्टचक्षुषः पुस्त्वामाहु र्जीवितौषधम्॥
शीतले तनुजान् रोगान् नृणां हरसि दुस्तरान्।
विस्फोटकविशीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी॥
गलगण्डग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम्।
त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले, यान्ति ते क्षयम्॥
न मन्त्रो नौषधं किञ्चित् पापरोगस्य विद्यते।
त्वमेका शीतले धात्री नान्यां पश्यामि देवताम्॥
मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्य संस्थिताम्।
यस्त्वां विचिन्तयेद्देवीं तस्य मृत्युर्न जायते॥
श्रोतव्यं पठितव्यञ्च नरैर्भक्तिसमन्वितैः।
उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत्॥
शीतलाष्टकमेतद्धि न देयं यस्य कस्यचित्।
दातव्यं हि सदा तस्मै भक्तिश्रद्धान्वितो हि यः॥"

इति श्रीस्कन्दपुराणे काशीखण्डे शीतलाष्टकस्तोत्रं समाप्तम्।
(भावप्रकाश मसूरिकारोगाधि०)

भक्तिपूर्वक यह स्तवपाठ ही शीतलाका एकमात्र औषधि है। शीतलारोग न होने पावे, इसके लिये टीका भी लगाई जाती है। गोस्तनज तथा नरगात्रज शीतलाके मवादसे ही यह टीका दी जाती है।

"धेनुस्तन्यमसूरिका नराणाञ्च मसूरिका।
तज्जलं बाहुमूलाच शस्त्रान्तेन गृहीतवान्॥
बाहुमूले च शस्त्राणि रक्तोत्पत्तिकराणि च।
तज्जल रक्तमिलितं स्फोटकज्वरसम्भवम्॥"

(धन्वन्तरिकृत शाक्तेय ग्रन्थ)

गोके स्तनमें और मनुष्यके हाथमें जो शीतला निकल आती हैं, उनके मवादको किसी नोकदार अस्त्रके अग्र भाग पर उठा लेना होगा। पीछे जिसको टीका देनी होगी, उसको बाहुके मूलमें छोटा छेद कर यह मवाद उसके रक्तमें मिला देना होगा। पीछे उसको ज्वर तथा शीतला निकल आयेगी। यह आप ही आप नीरोग हो जाता है। फिर इस समय बड़ी पवित्रताके साथ रहना पड़ता है। किसी तरहके अछूतको स्पर्श नहीं करना चाहिये। ऐसा होनेसे रोग बढ़ सकता है।

३ मसहरी यानी मच्छरोंसे त्राण पानेकी सामग्री।

"दंशाश्च मशकाश्चैव वर्षाकाले निवारयेत्।
मसुरिकाभिः प्रावृत्य मञ्चशायिनमच्युतम्॥"

(पद्मपुराण क्रियायोगसार १२ अ०) इस रोगका विस्तृत विवरण वसन्त शब्दमें देखो।

मसूरिकापीड़िका (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी माता या चेचक। इसमें मसूरकी दालके बराबर छोटे छोटे दाने निकलते हैं।

मसूरी (सं० स्त्री०) मसूर-स्त्रियां ङीप्। १ मसूरिका, माता, चेचक। २ त्रिवृत्, निसोथ। ३ रक्त त्रिवृत्, लाल निसोथ।

मसूरी (हिं० पु०) सिमले, सिक्कम और भूटान आदिमें मिलनेवाला एक वृक्ष। यह कदमें छोटा होता है और प्रतिवर्ष शिशिर ऋतुमें इसके पत्ते झड़ जाते हैं। इसको लकड़ी सफेद, बढ़िया और बहुत मजबूत होती है। इससे सन्दूक तथा सजावटके अनेक प्रकारके सामान बनाए जाते हैं।

मसूल (अ० पु०) महसूल देखो।

मसूला (हिं० पु०) एक प्रकारकी पतली लम्बी नाव।

मसूस (हिं० स्त्री०) मन मसोसनेका भाव, कलपना।

मसूसन (हिं० स्त्री०) आन्तरिक व्यथा, मन मसूसनेका भाव।

मसूसना (हिं० क्रि०) १ बल देना, ऐंठना। २ निचोड़ना, बल देना। ३ किसी मनोवेगका रोकना, जब्त करना। ४ मन ही मन रंज करना, कुढ़ना।

मसृण (सं० त्रि०) मसृणेति दीप्यते इति ऋणु दीप्तौ इगुपधेति क, पृषोदरादित्वात् साधुः। जो रूखा या कड़ा न हो, चिकना और मुलायम।

मसृणा (सं० स्त्री०) मसृण-स्त्रियां टाप्। उमा, अलसी।

मसोढ़ा (हिं० पु०) १ सोना चांदी आदि गलानेकी घरिया। २ मसूढ़ा देखो।

मसोसना (हिं० क्रि०) मसूसना देखो।

मसौदा (अ० पु०) १ काट छांट करने, दोहराने और साफ करनेके उद्देशसे पहली बार लिखा हुआ लेख, मसविदा। २ उपाय, युक्ति।

मसौदेबाज (अ० पु०) १ वह जो अच्छा उपाय निकालता हो, अच्छी युक्ति सोचनेवाला। २ धूर्त्त, चालाक।

मस्कट—अरबदेशके समुद्रतीरवर्त्ती एक बन्दर। यह अक्षा० २३° ४८′ उ० तथा देशा० ५८° ४०′ पू०के मध्य अवस्थित है। दक्षिण और पश्चिममें ऊंची भूमि तथा पूर्वमें एक द्वीप रहनेसे यह बन्दर बहुत निरापद है। वाणिज्यपोत निरापदसे इसके उत्तरसे भीतर प्रवेश कर सकता है। नगरके चारों कोनमें चार दुर्ग हैं। शहरमे जितने मकान हैं, वे सभी एक तलके हैं; सिर्फ पुर्त्तगालोंके बड़े बड़े पत्थरके मकान दिखाई देते हैं। ये सब मकान पारस्य सागरकी रेतीली जमीन पर बने हुए हैं। नगरका जल एक बड़े नालेसे निकलता है। बन्दरमें बड़े बड़े जहाजोंके लंगर डालनेके लिये काफी जगह है।

यह नगर अरबवालोंके व्यवसाय-वाणिज्यका एक प्रधान स्थान है। यहांसे भारतवर्ष, सुमात्रा, मलयउपद्वीप, लोहितसागर, अफ्रिका आदि देशोंके साथ वाणिज्य चलता है। अंगरेज और फरासी सौदागर पारस्य-उपसागरमें वाणिज्य करते समय इसी बंदरसे माल खरीद कर ले जाते थे। अलावा इसके पारस्यदेशके तथा अरबदेशके अन्यान्य बन्दरोंके साथ यहाका जोरों वाणिज्य चलता है।

यहां बादाम, पिस्ता, गोंद, हींग, गंधक, सोरा आदि पण्यद्रव्य ही प्रधान है। इसके अतिरिक्त कहवा, नारियलके तेल, मोम, मोटे रेशम, नील, चीनी, दारचीनी, मुक्ता, गैंड़के सींग, मिर्च आदिकी नाना स्थानमे रफ्तनी होती है। नगरके आस पासके स्थान उपजाऊ नहीं हैं। किन्तु साग सब्जी फल मूल आदि बाजारमें बहुतायतसे बिकने आते हैं। गाय, भैंस और मुर्गी सस्ते दरमें बिकती हैं। दूसरे दूसरे स्थानसे जो सब माल इस बन्दरमें आता है उस पर सैकडे, पीछे चार या पांच रुपया महसूल लगता है। किन्तु यहांसे जो सब माल दूर दूर देशोंमें भेजा जाता है, उस पर किसी प्रकारका महसूल नहीं है। मस्कटसे ३ मील पश्चिम मात्रा नामक एक बड़ा शहर है। दोनों शहरोंमें जाने आनेकी सुविधाके लिये एक चौड़ी सड़क बनाई गई है।

पुर्त्तगीज जब भारतवर्ष व्यापार करने आये, उससे पहले मस्कटकी वाणिज्य-ख्याति सुदूर यूरोपमें फैली हुई थी। पुर्त्तगीजोंके उक्त बन्दर दखल करनेके बाद यहांका वाणिज्य व्यवसाय दिन पर दिन बढ़ने लगा। यहां तक कि यह नगर पूर्वी भूभागोंके मध्य एक बड़ा बन्दर समझा जाने लगा। पहले यह स्थान आरमुज (Ormuz) के शासनाधीन था। पीछे १५०७ ई० पुर्त्तगीजदलपति आलबुकार्कके हाथ आया। १६४८ ई० तक पुर्त्तगीजोंके ही अधिकारमे रहा। इस समय शहरमें धर्म-मन्दिर, विद्यालय इत्यादि बडे, बड़े मकान बनाये गये जिससे इसकी शोभा और भी बढ़ चली। अनन्तर पुर्त्तगीजोंने यहांके पण्यद्रव्य पर ज्यादा महसूल लगा दिया तथा अधिवासियोंके प्रति बुरी तरह पेश आने लगे। इसका फल यह हुआ, कि वे सबके सब विद्रोही हो गये। इस विद्रोहने ऐसा भयङ्कर रूप धारण किया, कि पुर्त्तगीजोंको बोरा बँधना ले कर वहांसे भागना पड़ा।

मस्कटके अधिवासी अरब जातिके हैं। ये लोग जहाज तथा कमान और बन्दूक चलानेमें बडे, सिद्धहस्त हैं। पुर्त्तगीजोंके यहांसे चले जाने पर वे लोग इतने प्रतापशाली हो उठे, कि भारतवर्षमें जितने यूरोपीय राजे थे, सभी भय खाने लगे। १७०७ ई०में उन्हें पेगूके राजासे जहाज बनानेकी आज्ञा मिली। बस फिर क्या था, उन्होंने मलवारके किनारे जितने देश थे एक एक कर सबों पर आक्रमण कर दिया। पारस्यवासियोंके साथ उनका लगातार युद्ध चलने लगा। १९वीं सदीके शुरूमें इन्होंने चोरी डकैती करना छोड़ दिया और अपने अपने बन्दरमें वाणिज्य-व्यवसायमें मन लगाया। वर्त्तमान समयमे इस नगरकी विशेष समृद्धि देखी जाती है।

अरबके दक्षिण पूर्ववर्त्ती सभी स्थान तथा अफ्रिकाके डेलगाडो अन्तरीपसे गार्डफ्यु अन्तरीप तक सभी उपकूलवर्त्ती राज्य मस्कटके इमामके शासनाधीन हैं। इसके सिवा मफिया, जञ्जिवार, रेम्बा, सकोट्रा आदि द्वीप भी उनके दखलमें थे। इमामकी राज्यशासनप्रणाली स्वेच्छाचार-दोषयुक्त होने पर भी प्रजाके प्रति कोई विशेष अत्याचारका प्रमाण नहीं मिलता। कोई भी विदेशीय लोग गहरी रातको शहरमें बेधड़क आ जा सकता है, दिनरात सड़क पर माल पड़ता रहता है, पर किसीका मजाल नहीं कि उसे छूवे। यहांकी नौसेना निकटवर्त्ती सभी राजाओंकी सेनासे श्रेष्ठ है।

मस्कट—मस्कट देशमें होनेवाला एक प्रकारका अनार। यह अफगानी बेदानेसे बहुत खराब होता है। बाहरी आकृतिमें कोई पृथकता नहीं रहने पर भी स्वादमें बहुत फर्क है। वणिकगण इसीको बेदाना बतला कर भोले भाले लोगोंको ठगते हैं।

मस्कर (सं० पु०) मस्कते गच्छत्यनेनेति मस्क-बाहुलकादरः यद्वा (मस्करमस्करिणौ वेणुपरिव्राजकयोः। पा ६।१।१५४) इति सुट् निपात्यते इति काशिका। १ वंश, खानदान। २ रन्ध्रवंश। ३ गति। ४ ज्ञान।

मस्कर—प्राचीन मौखरी वा मौखरी प्रदेशका एक नाम।

मस्करा—युक्तप्रदेशके हमीरपुर जिलान्तर्गत एक तहसील और उसका सदर। यह हमीरपुरसे १६॥ कोस दक्षिणपश्चिममें अवस्थित है। महेशखेरा नामसे वर्त्तमान नाम निकला है। आज भी यहां महेशका भग्न-मन्दिरस्तूप मौजूद है।

मस्करा (अ० पु०) मसखरा देखो।

मस्करी (सं० पु०) मस्कते इतस्ततो गच्छत्यनेनेति मस्कबाहुलकादरः, मस्करो दण्डः सोऽस्त्यस्येति मस्कर इनि,

यद्वा मा कर्त्तुं कर्म निषेद्धुं शीलमस्य (मस्करमस्करिणौ वेणुपरिव्राजकयोः। पा ३।१।१५४) इति इनि निपात्यते। १ वह जो चौथे आश्रममें हो। २ भिक्षु। ३ चन्द्रमा।

मस्करी (अ० स्त्री०) मसखरी देखो।

मस्करी—गौतमसूत्रका एक टीकाकार।

मस्खरा (अ० पु०) मसखरा देखो।

मस्जिद (फा० स्त्री०) मसजिद देखो।

मस्त (सं० क्ली०) मस्यते परिमीयते मस् परिमाणे क। मस्तक, सिर।

मस्त (फा० वि०) १ जो नशे आदिके कारण मत्त हो, मतवाला। २ जिसे किसोको चिन्ता या परवाह न होती हो, सदा प्रसन्न और निश्चिन्त रहनेवाला। ३ अभिमानी, घमण्डी। ४ मदपूर्ण, जिसमें मद हो। ५ जो अपनी पूरी जवानी पर आनेके कारण आपेसे बाहर हो रहा हो, यौवनमदसे भरा हुआ। ६ परम प्रसन्न, आनन्दित।

मस्तक (सं० पु० क्ली०) मस्यते परिमीयते मस् (इस्यशिभ्या तकन्। उण् ३।१४८) इत्यत्र 'बाहुल्यात् मस्यतेरपि तकन्' इत्युज्ज्वल दत्तोक्त्या तकन्। १ प्रधानाङ्ग, सिर। पर्याय—उत्तमाङ्ग, शिरस, शीर्ष, मुण्ड, शिर, वराङ्गक, पुण्ड्र, मौलि, कपाल, केशभू, मस्त।

(राजनिघण्टु)

तन्त्रके मतानुसार मस्तकमें सहस्रदल पद्म हैं। इसी पद्मकी कर्णिकामें परमात्मा अवस्थित हैं।

"छत्राकारैः शिरोभिस्तु नृपा निम्नशिरा धनी।
चिपिटैश्च पितुर्म्मृत्युर्गवाढ्याः परिमण्डलैः॥
घटमूर्द्धा पापरुचिर्धनादेःऽपरि वर्ज्जितः॥"

(गरुडपुराण ६६ अ०)

मस्तक छत्ताकार होनेसे धनी, चिपटा होनेसे पिताकी मृत्यु और गोधनसम्पन्न तथा घटाकार होनेसे पापी और धनहोन होता है।

२ अग्रभाग, अगला हिस्सा। ३ उच्च स्थान।

मस्तक—मनुष्य तथा अन्यान्य प्राणीके मुखमण्डल समाश्रित शिरोभाग अथवा मूलजीवदेहको आश्रय किये हुए केशमण्डित ग्रीवासंलग्न जो देहभाग ऊपर रहता है उसीको मस्तक कहते हैं। इसो मस्तकमें सुननेकी इन्द्रिय आंख, सूंघनेकी इन्द्रिय नाक, चखनेकी इन्द्रिय जीभ, होंठ, तालु, कपोल, कपाल आदि देहके अंश अवस्थित हैं।

मस्तिष्क ही मस्तकका उपादान है। मस्तिष्क नहीं रहनेसे आंख, कान आदि अङ्गप्रत्यङ्गका कार्य नहीं चल सकता। और तो क्या, समस्त शरीर ही निश्चेष्ट हो जाता है। इसीलिये किसी किसी शास्त्रकारने मस्तिष्कको ही ज्ञानका आधार बतलाया है। आंख जो देखती है, कान जो सुनता है, जीभ जो स्वाद लेती है, मुख जो खाता है, दांत जो चबाता है, गला जो निगलता हैं सभी काम मस्तिष्क द्वारा सम्पन्न होता है। यदि मस्तिष्क न होतो तो यह सब काम होने नहीं पाता। मस्तकमें मस्तिष्क रहनेसे हो जोवको सभो इन्द्रियां अपने अपने काममें आपे आप लग जाती हैं।

सुश्रुतादि वैद्यक ग्रन्थमें मस्तकके उपादानभूत अङ्गप्रत्यङ्गादिका विषय इस प्रकार लिखा है,—मस्तकांशमें प्रधानतः तीन प्रकारकी अस्थि देखी जाती हैं, कपाल, रुचक और तरुण। कपाल नामक अस्थि गण्ड, तालु, शङ्ख और मस्तकमें; रुचक दन्तमें और तरुण चक्षुकर्णादिमें मौजूद हैं। भिन्न भिन्न स्थानमें ये सब हड्डियां भिन्न भिन्न संख्यामें दिखाई देती हैं; जैसे—दोनों हनूमें २, दण्डमें ३२, नाकमें ३, तालुमें १, गालमें २, कानमें २, शङ्ख (रग)में २ और मस्तकमें ६। ये सब यथाक्रम सन्धिबन्धनमें आवद्ध हैं। जैसे—दन्तमूलमें ३२, नाकमें १, नेत्रमण्डलमें २, दोनों गण्डमें २, दोनों कानमें २, दोनों शङ्खमें २, दोनों हनुसन्धिमें २, दोनों भौंहके ऊपर दोनों बगलमें २, मस्तकके कपालखण्डमें ५ और मूर्द्धदेशमें सिर्फ एक सन्धि है। मस्तक और कपालकी अस्थिको तुन्निसेवनी कहते हैं। अलावा इसके मूर्द्धदेशमें कुल ३४ स्नायु हैं तथा हनुदेशमें ८, तालुदेशमें २, जिह्वामें १, ओष्ठमें २, नाकमें २, आंखमें २, गण्डमें ४, कानमें २, ललाटमें ४ और मस्तकमें १ पेशी हैं। कृकाटिका, विधुर, फणा, अपाङ्ग, आवर्त्त, शङ्ख, उत्क्षेप, स्थपनी, सीमन्त, शृङ्गाटक, अधिपति आदि मर्म तथा ५६ शिरा स्कन्धसन्धि और मस्तकके मध्यदेशमें अवस्थित हैं।

एलोपैथिक मतानुसार वर्त्तमान शरीरतत्त्वों का इस विषयमें यद्यपि एक मत नहीं है, तथापि उतनी पृथक्ता भी नहीं देखी जाती। वे लोग भी नृकरोटी (Cranium) और मुखमण्डलके समस्त फलको मस्तक कहते हैं। मस्तकके ऊपरी भागमें चमड़ेसे ढकी हुई जो करोटी वा कपाल नामक अस्थि तथा Dura mater नामक छोटी मातृका है, वह सामान्य कारण पा कर ही उत्तेजनाको प्राप्त होती है। इन सब के साथ मस्तिष्कका संयोग रहनेसे जीवदेह शीघ्र ही विकृत हो जाती है। इन्द्रलुप्त, काउर, संन्यास, मृगी, उन्माद आदि रोग मस्तिष्कके विगड़नेसे ही होते हैं। लगातार धूपमें घूमने तथा शरीरके भीतरी कीड़े से मस्तकमें जो रोग उत्पन्न होता है, अंगरेजीमें उसे *Injuries of the head* कहते हैं।

मस्तिष्क और शिरोरोग देखो।

मस्तकज्वर (सं० पु०) शिरोव्यथा, सिरमें दर्द।

मस्तकस्नेह (सं० पु०) मस्तकस्य स्नेहः। मस्तकका स्नेह, मस्तकके अन्दरका गूदा।

मस्तकाख्य (सं० पु०) मस्तकमिति आख्या यस्य। वृक्षका सिरा, पेड़का ऊपरी भाग।

मस्तगढ़—पञ्जावके वशहर राज्यके अन्तर्गत एक दुर्ग। यह अक्षा० ३१° २०´ उ० तथा देशा० ७७° ३६´ पू०के मध्य मरालकि-काण्ड पर्वतके उत्तर ऊँचे शृङ्ग पर अवस्थित है। वशहरके गुरखाओंके अधिकारभुक्त होने पर यह दुर्ग भी उनके हाथ लगा था। यह समुद्रपृष्ठसे प्रायः ६ हजार फुट ऊंचा है।

मस्तगी (अ० स्त्री०) एक प्रकारका बढ़िया गोंद। यह एक प्रकारकी सदाबहार झाड़ीके तनोंको पाछ कर निकाला जाता है। उक्त झाड़ी भूमध्यसागरके आस पासके प्रदेशोंमें पाई जाती है। यह गोंद वार्निशमें मिलाया जाता है और ओषधिके रूपमें भी काम आता है। दांतोंके अनेक रोगमें यह बहुत उपकारी होता है। इससे दांतोंका हिलना, पीड़ा, दुर्गन्ध आदि दूर होती है। अलावा इसके और भी कई रोगोंमें इसका व्यवहार किया जाता है।

मस्तदारु (सं० क्ली०) मस्तं मस्तकमिव उच्चं दारु। देवदारु।

मस्तमूलक (सं० क्ली०) मूलमेव मूल स्वार्थे कन्, मस्तस्य मूलकः। मस्तकका मूल, गरदन।

मस्तरी (हिं० स्त्री०) धातु गलानेकी भट्ठी।

मस्ताइदखां (महम्मद शाकी) सुलतान बहादुर शाहके वजीर इनातुल्ला खांका मुंशी। इन्होंने 'म-असिरी आलम गिरी नामका ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थमें आलमगीर अर्थात् औरङ्गजेवके शासनकालकी घटनाएं संक्षेपमें वर्णन की गई हैं। १० वर्ष तक बादशाहके साथ रह कर इन्होंने अपनी आंखोंसे अनेक विषय पर्यवेक्षण किये थे। औरङ्गजेवके उत्साहसे ही इन्होंने पुस्तक लिखनेमें हाथ लगाया था। उनकी मृत्युके तीन वर्ष बाद वह पुस्तक समाप्त हुई थी।

औरङ्गजेवके दाक्षिणात्यविजयका यथायथ वर्णन उक्त ग्रन्थमें रहने पर भी लेखक महाशयने सत्यका अपलाप करके बादशाहको जो सब विपद् झेलनी पड़ी थी उसका बिलकुल उल्लेख नहीं किया है। उसका कारण यह है, कि औरङ्गजेवने अपने शासनकालके १० वर्ष बादकी राज्यसम्बन्धीय कोई घटना तथा अपना जीवन-इतिहास लिखनेसे ग्रन्थकारोंको मना कर दिया था। किन्तु मस्ताइद खांने निषेध रहने पर भी दाक्षिणात्यविजयका वर्णन करना छोड़ा नहीं।

मस्ताजाव खा—एक मुसलमान-कवि। ये नवाव मस्ताजाव खां बहादुर नामसे मशहूर थे। इनके पिताका नाम था हाकिम रहमत्। इन्होंने 'गुलिस्तानी रहमत्' नामक ग्रन्थ लिखा। उक्त ग्रन्थमें इन्होंने अपने पिताका जीवनचरित और रोहिलवासी अफगानोंका इतिहास वर्णन किया है।

मस्ताना (फा० वि०) १ मस्तोंकासा, मस्तोंकी तरहका। २ मस्त, मत्त। (क्रि०) ३ मस्ती पर आना, मत्त होना।

मस्ति (सं० स्त्री०) मस क्तिन्। परिमाण।

मस्तिक (हिं० पु०) मस्तिष्क देखो।

मस्तिकी (अ० स्त्री०) मस्तगी देखो।

मस्तिष्क (सं० क्ली०) मस्तं मस्तकं इष्यति स्वाधारत्वेन प्राप्नोति इष गतौ क, पृषोदरादित्वात् साधुः। मस्तकभव घृताकार स्नेहपदार्थ, मगज, दिमाग। पर्याय—गोर्द, गोद, मस्तकस्नेह, मस्तुलुङ्ग। (हेम)

"यदम शीर्षण्यं मस्तिष्काजिह्वाया वि वृहामि ते।"

(ऋक् १०।१६३।१)

मस्तकके अभ्यन्तरका स्नेहवत् पदार्थ मस्तिष्क है। प्रचलित शब्दोंमें इसको ही मस्तिष्कका घी, मगज या दिमाग कहतेहैं। हम लोग जो नित्य आहार करते हैं, पाकस्थलीमेंपरिपक्व हो कर उसका कुछ अंश रस बन जाता है। क्रमसे यह रस शुक्र और रक्तके रूपमें परिणत हो जाता है और शरीरको पुष्ट करता है। यह वीर्य ऊर्द्ध्वगामी हो कर अंतडियों द्वारा मस्तिष्कमें जाता है और मनुष्यकी स्मृति और धृतिशक्तिको बढाता है। किन्तु अनियमित वीर्यक्षय होनेसे शरीरकी वल हानि और मस्तिष्कके शक्तियोंका ह्रास होते देखा जाता है। इसीसे साधु पुरुष तथा संन्यासियोंकी धृतिशक्तिकी वृद्धि तथा चञ्चल स्वभाववाले युवकोंके मैथुनादि दोषसे उक्त शक्तिका ह्रास होता दिखाई देता है।

मेरुदण्ड और उससे लगी मोटी शिराका मस्तिष्कसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। यही शुक्र या वीर्यप्रवाही शिरा कहलाती है। इसीसे मस्तिष्ककी सभी पीड़ायें या खराबियां मेरुदण्डकी समाश्रिता कही जाती हैं। मस्तिष्क और मेरुदण्डकी पीडाओं और खराबियोंको मालूम करनेसे पहले कई नामोंको जान लेना आवश्यक है। मस्तिष्कमें अस्वच्छन्दता या परवशता उत्पन्न होने पर क्रमानुसार भारीपन, (Heaviness) स्पन्दन (Throbbing), उत्ताप (Heat) चक्कर (vertigo) मेरुदण्डकी जलन (Burning) और खिंचाव (Tightness) मालूम होने लगता है।

मस्तिष्ककी क्रियामें खराबी उत्पन्न होनेसे या कोई परिवर्त्तन होनेसे नींदका न आना (*Insomnia*), प्रलाप यानी अकारण वक वक बोलना (Delirium), निद्रावेश (Stupor) और जडता (Coma) आदि दुर्लक्षण दिखाई देने लगता है। सिवा इसके इसकी पीडासे कई इन्द्रियोंकी भी विकलता उठ खड़ी होती है। जैसे आंखोंसे अग्निशिखा (Flashes)-का निकलना, आंखोंके सामने विविध वस्तुका आना जाना (*Muscae Volitantes*) दिखाई देना, कानोंके भीतर कई तरहके शब्दों (*Tinnitus Aurium*) का सुनाई देना, जिह्वाके आस्वादमें अन्तर, स्पर्श शक्तिकी वृद्धि (Hyperaesthesia) और कमी (Anaesthesia) और झिनझिनी (*Numbness*), सुड़सुड (Tickling) चुनचुनाना, (Itching), चींटी रेंगनेकी तरहका (Formication), स्पर्शानुभव, छेदनेकी तरहकी यन्त्रणा (*Pricking*) आदि स्पर्शशक्तिका व्यतिक्रम (*Paraesthesia*) दिखाई देता है। सिवा इसके मांसपेशियोंकी गतिविधिमें और भी कई तरहके परिवर्त्तन दिखाई देते हैं,—(१) सामान्य स्पन्दन (Twitching या Subsultus Tendinum), (२) कम्पन (Tremor), (३) दृढ़ता (Regidity), (४) आक्षेप (Spasms), (५) गुरुतर आक्षेप (Convulsions) और (६) अवशाङ्ग (*Paralysis*)। इन सब स्नायविक पीड़ाओंमें बिजलीकी चिकित्सा विशेष उपकारी है। जहां मांसपेशी अवश हो गई हो, वहां विरामयुक्त स्रोत (*Magneto-electric*) और कमी रहने पर अविरामस्रोत (*Voltaic*) की व्यवस्था की जा सकती है। अविरामस्रोत द्वारा क्षययुक्त पेशीकी पुष्टि होती है। स्नायुमण्डल और पेशियोंकी पीड़ा शान्त करनेके लिये जिन औषधियोंका प्रयोग किया जाता है, वे नीचे लिखी जाती हैं।

(१) मस्तिष्कको उत्तेजना देनेवाली औषधियां—मदिरा, अफीम, इत्थर, क्लोरोफारम, चरस, काफी कोको, वेलेडोना, ताम्रकूट, अङ्गवर्पण, हाउसाइमस, कपूर और बिजलीका स्रोत आदि।

(२) मस्तिष्ककी अवसादक औषधि,—अफीम, मर्फिया, क्लोराल हाइड्रास, विउहिल क्लोरल, मदिरा, इत्थर, क्लोरोफारम, चरस, वेलेडोना, एट्रोपिया, हप, लेटिउस, हाउसाइमस, सल्फोलेन, व्रमिडिया आदि।

(३) स्नायुशूलमें—जेलसिमियम, फेनाजोन् और एग्ज़ल जाइन अवसादक होनेसे व्यवहृत होता है। मज्जाकी पीड़ामें ष्ट्रीकनिया और नक्सभमिका उत्तेजकरूपमें और व्रमाइडस, क्लोराल हाइड्रस, हाइड्रासिएनिक् एसिड, कपूर, नाइट्रेट् आफ एमाइल, अफीम, मर्फिया, कैलेवरविन, कोनायम, नाइकोटाइन् और कूरा आदि भी अवसादक कही जाती हैं।

(४) स्नायुके बल देनेवाली औषधियां,—आर्सेनिक, फसफरस, हाइपोफस्फाइटस्, क्वीनाइन, नक्सभमिका, ष्ट्रीकनिया, सलफेट, भेलिरियनेट आफ कपर, क्लोराइड आफ वेरियम और गोल्ड।

(५) मेन्थल, थाइमल, क्लोराल हाइड्रास, कैम्फर मिक्सचर, कोकेन, इथर-स्प्रे, क्लोरोफारम्, अफीम, बेलेडोनिया और एकोनाइटका लिनिमेण्ट, पीड़ास्थानका क्षणिक अवसादक और चिकना करनेवाला तथा उत्तापसंस्पर्श, घर्षण, मर्द्दन और जलधारा आदि स्थान उत्तेजक कहे जाते हैं।

(६) एमोनिया, कार्ब्वनेट आफ हाइड्रास एमोनिया, ब्रमाइडस्, स्प्रीट, इथर, क्लोरोफारम्, हाइड्रेसियानिक एसिड पिपरमेण्ट, लेवेण्डर, केजुपटी और स आदि तेल, मेन्थल, कर्पूर, हिङ्गु, एमोनायक्स, गैलवेनम्, भालिरियेम्, कस्तूरी, अफीम, मर्फिया, चरस, बेलेडोना, एट्रोपिया, केलेवारविन, लोबिलिया, ष्ट्रामोनियम आदि आक्षेप-निवारक हैं।

मस्तिष्क रक्ताधिक्य, जलन, आघात अथवा उसमें पतला और दूषित रक्तका सञ्चालन, स्नायुशूल रोग, पाकस्थली, अंतड़ी, यकृत (तिल्ली) या जरायुकी विविध पीड़ा, मलेरिया जनित अथवा अन्यान्य ज्वर बुखारों और अनिद्रा, शिथिल स्वभाव, मनस्ताप, मानसिक और शारीरिक अत्यधिक परिश्रम, थकावट या काफी अफीमके व्यवहार और निरन्तर मदिरा पीने आदिके कारण मस्तिष्कमें पीड़ा मालूम होने लगती है इसे शिरःपीड़ा या शिरका दर्द (Headache या Cephalalgia) कहते हैं।

रक्तकी अधिकता या कमीसे होनेवाली मस्तिष्ककी किसी तरहकी पीड़ामें अथवा अजीर्ण या पित्ताधिक्यके कारण होनेवाला शिरदर्दके कारणके अनुसार इन रोगोंको यथाक्रम काञ्जेषिव, एनिमिक्, नार्वस, डिप्पटिक और विलियम हेडेक कहते हैं।

मस्तिष्ककी पीड़ा क्षणिक, दीर्घकालस्थायी, फड़कन, कनकनाना, शूल (छेदनेकी तरह दर्द) उत्ताप और भारीपन आदि भावविशिष्ट होती रहती है। काफी, प्रकाश, शब्द और खाद्यविशेषके व्यवहारके कारण इसका वृद्धि और कमी होती रहती है। कभी-कभी यह पीड़ा एक ही बगल या कभी दोनों बगल होती है। एक ही बगल होनेवाली पीड़ाको अधकपारी और दोनों बगल होनेवाली पीड़ाको शिरःपीड़ा कहते हैं। शिरकी पीड़ा कभी कभी एक स्थानिक भी होती है, जिसमें शिरके एक ही जगहमें दर्द होता है।

शिरका घूमना या मेनियर्सडिजिज—स्पर्श, दर्शन, श्रवण और सेरिवेलमकी क्रिया सुन्दरतासे न होनेसे ही यह रोग उत्पन्न हुआ है, ऐसा समझना चाहिये। मस्तिष्ककी पीड़ा—मादकता सेवन, मानसिक परिश्रम, मलेरिया ज्वर, मूत्रनालीको पीड़ा और मस्तिष्क क्षीण होनेसे यह पीड़ा उत्पन्न होनेकी सम्भावना रहती है।

मस्तिष्ककी सभी पीड़ाओंमें गर्भ और उदर पीड़ाजनित प्रत्यावर्त्तनिक व्याधियोंमें बेलेडोना द्वारा शरीर विषाक्त रहनेसे और यूरिमिया, डायबिटिस जण्डिस् और डिलिरियम् ट्रिमेन्स आदि रोगमें मस्तिष्कके विकारके कारण प्रलाप (अनट सनटका बोलना वकवक करना) आ उपस्थित होता है। यह प्रलाप कभी तेज (Furious) कभी धीमता (low muttering) होता है। इससे रोगी कभी ज़ोरोंसे कभी अस्पष्टतापूर्वक असङ्गत बातें बकता रहता है। साथ ही होंठ और जीभकी फड़कन भी देखी जाती है। सामान्य भ्रमसे क्रमशः बोल-चालका बन्द हो जाना या अस्पष्टता आ जाती है। रोगीके बीच बीचमें ज्ञानकी बात कहने पर भी शय्यासे उठ जानेवाली इच्छा स्वतः प्रबल रहती है। संन्यास, युरेमिया और बहुमूत्र रोगमें मस्तिष्कमें रक्तकी अधिकता और रक्तकी कमी होनेसे मदिरा, अफीम, बेलेडोना, प्रुसिक एसिड, क्लोरोफारम् या कार्बोनिक अक्साइड द्वारा शरीर विषाक्त होने पर और आभ्यन्तरिक किसी यन्त्रके टूट-फूट जानेसे या मूर्च्छा, मनस्ताप आतपाघात या वज्राघात लगनेसे क्षीण मस्तिष्क रोगीको वाह्य वस्तुका ज्ञान, स्पर्श, वाक्योच्चारण और गमनागमन शक्तिका लोप हो जाता है। इसको Stupor या Coma कहते हैं।

शिथिलस्वभावसम्पन्न व्यक्तियोंके मादकता द्रव्यके व्यवहार करनेके बाद शीतलता, और उत्ताप, अति

भोजन, शरीरमें रक्तकी अधिकता या कमीका होना, दूषित वायुका सेवन, एलवुमिनिउरिया और जण्डिस (न्यावा) रोग, विकारयुक्त ज्वर और अमुक अवस्थामें सोना, आदि कारणोंसे मस्तिष्ककी खराबी हो जाती है। इस कारणसे निद्राकर्षण (Somnolence) रोग और ज्वर-में, पागलपनमें, चाय वा काफी पीनेके बाद डिलिरियम् ट्रिमेन्स, धनुष्टङ्कारमें, जलातङ्कमें, मेनिञ्जाइटिस पीड़ामें और गर्भावस्थामें स्वभावतः ही अनिद्रा (Insomnia) रोग आ उपस्थित होता है। मस्तिष्ककी उष्णता, रक्ताधिक्य, और रक्तशून्यता इसका एकमात्र कारण है।

कुछ रोगी स्वप्नावस्थामें विविध स्थलोंका परि-भ्रमण कर आश्चर्यजनक कार्य किया करते हैं। किन्तु निद्रा भङ्ग होने पर उनको उस स्वप्नदृष्ट अद्भुत कर्मोंका ज़रा भी स्मरण नहीं रहता। यौवनकालमें अत्यधिक भोजन, अधिक मनस्ताप और अत्यधिक पठनपाठनसे मस्तिष्क एक प्रकारसे विकृत हो जाता है। इसको Somnam-bulism कहते हैं।

मस्तिष्कमें किसी तरहकी चोट लगने या दूषित रक्तके सञ्चालनसे पेशीका सङ्कोचन या आक्षेप उपस्थित होता है। इस तरह वारम्वार आक्षेप होते रहनेसे सांस लेने या मस्तिष्कके रक्तसञ्चालनमें रुकावटें होती हैं। कभी कभी तो इससे अवशता और दर्शन, घ्राण, श्रवण, वाक्योच्चारण और स्मरणशक्तिकी हीनता उपलब्ध होती देखी गई है।

मानसिक शक्तिका ह्रास अथवा जिह्वा आदि वागे-न्द्रिय पेशियोंकी हीनताके कारण जड़ता उत्पन्न होने पर एफेसिया (Aphasia) नामक रोग उत्पन्न हो जाता है। शरीरके दक्षिण पार्श्वमें 'हेमिप्लिजिया' या 'प्यारा-लिटिक ष्ट्रोक' होने पर प्रायः ही एफेसिया वर्त्तमान रहता है। मस्तिष्कके वाम 'कर्णपाली' (Lobe)के अग्र-भागमें (जो अंश लेफ्ट मिड्ल अथर द्वारा परिपोषित होता है) कोई अदल बदल होनेसे यह लक्षण दिखाई देता है।

ऐफिमिया (Aphamia) या वाक्यका लोप—साधारण तौर पर कर्पोरा ष्ट्रायेटमके नीचे तक कोई परि-वर्त्तन होने पर वाक्यरोध होनेकी सम्भावना रहती है। इससे रोगी कभी कभी वाक्शक्ति खो भी देता है। मृगी या संन्यास रोगके बाद इस रोगका उत्पन्न होना दिखाई देता है। स्मरणशक्तिका ह्रास (Amnesia) होने पर रोगी एक बातके बदले दूसरी बात कह देता है, कभी कभी व्यक्ति या स्थानविशेषका नाम भूल जाता है। किसी लिखावटको देख कर भले ही कुछ लिख लेता है; किन्तु उसने क्या लिखा, उसका उसे स्मरण नहीं रहता।

मानसिक प्रकृतिकी इस तरहकी विलक्षणतासे स्थलविशेषमें एक ही समय अवशता और बुद्धिशक्तिका ह्रास हो जाता है। इसके बाद स्मरणशक्तिका ह्रास इसके उपरान्त डिमेन्सिया (जड़ता)का लक्षण दिखाई देता है। पहले जिह्वा ही अवसन्न होने लगती है। दोनों कनिनिकायें असमान रूपसे फैली रहती हैं। कभी कभी उसमें अपाङ्गदृष्टि (Squinting) और अक्षि-पुटपात (Ptosis) विद्यमान रहता है। इस समय रोगीके चलने फिरनेकी शक्ति नहीं रह जाती। वह ऐसा भाव प्रकट करता है, जिससे मालूम होता है, कि इसको चलने फिरनेकी शक्ति है हो नहीं। चलते समय उसके पांव मतवालेकी तरह इधर उधर पड़ते हैं। स्थिरतासे उसका पैर नहीं जमता। रोगवृद्धिके साथ साथ वाक् और चलने फिरनेकी शक्तिकी कमी, बुद्धिवृत्तिका ह्रास, सङ्कोचक पेशियोंकी अवशता, कनिसनका फैलाव, हाथ और पैरमें प्रत्यावर्त्तनिक स्पन्दन होता है। अन्तमें रोगीका मुखमण्डल आकुञ्चित, म्लान और निराश्रय भावापन्न हो उठता है। मस्तकका उत्ताप स्वाभाविक-से अधिक, फिर भी, शरीरके तापकी कमी बोध होती है। इसको क्षिप्तावस्थाकी अवसन्नता (General paralysis of the insane) कहते हैं।

मस्तिष्क और मज्जाकी वैधानिक पीड़ानिवन्धनसे हेमिप्लिजिया रोगकी उत्पत्ति होती है। अन्यान्य रोगों-में मस्तिष्क क्रियाके भावान्तरसे भी यह रोग हो जाता है। मृगी, कोरिया, हिष्ट्रिरिया और उपदंश रोग भी इस पीड़ाके कारण हैं।

मस्तिष्कके शुभ्रविधानकी कोमलता, उसमें सामान्य रूपसे शोणितपिण्ड उत्पन्न होनेसे पीड़ाके आरम्भित

समयमें रोगीका ज्ञान नष्ट नहीं होता, किन्तु अधिक रक्त गिरनेसे रोगी मूर्च्छित हो जाता है। इस रोगमें कभी कभी आक्षेप, अवशता, वाकशक्तिकी हीनता, स्मरणशक्तिका ह्रास आदि लक्षणादि दिखाई देने लगते हैं।

मस्तिष्ककी दाहिनी बगलमें रक्तस्राव होनेसे वाम पार्श्व अवश हो जाता है और मस्तक तथा दोनों आंखें दक्षिण ओर खिंची रहती है। मस्तिष्क अथवा उसके मेनेञ्जिसमें अधिक रक्तस्राव होनेसे हाथ पैरकी अवशताके साथ दृढ़ता भी आ उपस्थित होती है। मस्तिष्ककी कोमलताके कारण हेमिप्लिजिया हाथ पैरकी शिथिलता देखी जाती है।

सिवा इसके स्पर्शशक्तिकी हीनता (Anaesthesis) स्पर्शशक्तिकी अधिकता (Hyperaesthesia), शिरःशूल (Tic-douloureux), अर्द्ध शिरःशूल (Hemicrania), मृगीरोग (Epilepsy, Epilepsia mitior और Epilepsia Gravior) और हिष्टिरिया (Hystiria) हिष्टेरिकेल फिट् (Hysterical fits) आदि रोगोंमें मस्तिष्कक्रियाका खराबीके कारण आक्षेप आदि भी उत्पन्न होते रहते हैं। तत्तद्रोग शब्दमें देखो।

ग्रीष्मप्रधान देशोंमें मनुष्यमात्रको ही मस्तिष्कके प्रदाह (Phrenitis या Inflammation of the brain) रोगसे पीड़ित होना पड़ता है। कामी, अनवरत लिखने पढ़नेके काममें रत रहनेवाले अथवा स्नायविक दुर्बलतासे पीड़ित व्यक्ति अर्थात् जिनकी स्नायुमण्डली स्वभावतः उत्तेजित हो उठती है इस तरहकी अवस्थावाला व्यक्ति इस रोगसे छुटकारा नहीं पा सकते। वृथा रात्रिजागरण अथवा रात रात भरका पढ़ना, अत्यधिक मदिरापान, क्रोध, दुःख और चिन्ता, बवासीरसे खूनका गिरना और रमणियोंके नियमित आर्त्तस्रावनिरोध आदि कारणोंसे भी यह रोग उत्पन्न हो सकता है। मूर्खतावश खुले स्थानोंमें धूपके समय सो रहने पर कभी कभी प्रलापके साथ मस्तकका प्रदाह आ उपस्थित होता है। सिवा इसके मस्तकमें जोरोंसे चोट लगने पर बाहरी घावसे भी भीतरी प्रदाहकी उत्पत्ति हो जाती है।

मस्तिष्कमें यथार्थ प्रदाह आनेसे पहले सबसे प्रथम शिरमें दर्द, लाल नेत्र तथा मुख पर लालिमाकी छटा तथा स्वल्पनिद्रा तथा अनिद्रा, शरीरके चमड़ेका सूखना, मलकी रुकावट, मूत्रकृच्छ, नाकसे कुछ कुछ रक्तका गिरना, कर्णछिद्रमें सदा सङ्गीत ध्वनिका सुनाई देना और स्पर्शशक्तिकी अधिकता आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

जब प्रदाहका विकाश होता है तब समूचा अङ्ग-प्रत्यङ्ग प्रबल दाहज्वरकी तरह जलता रहता है। नाड़ीकी गति धीरे धीरे क्षीण और दृढ़ तथा वैषम्यभावापन्न होती है। किन्तु जब दृढ़मातृका (dura mater) और कोमल मातृका (Pia mater) आक्रान्त होती है, तब रोगी पूर्वकी तरह द्रुतगामी शब्दोंका अनुभव करता रहता है। उसके रगकी शिरायें फड़कती रहती हैं, प्यास न लगने पर जीभ सूखी रहती है और यह पीली हो जाती है। उसके चित्तमें पहले जिन वस्तुओं तथा घटनाविशेषकी छाया अङ्कित रहती है, मन सदा उसी ओरको दौड़ता है। साथ ही साथ असम्बन्ध वाक्यालापका सिलसिला जारी हो जाता है या वाक्यशक्तिशून्यता आ जाती है। इसके बाद ही रोगी क्रमशः खराब अवस्थाको प्राप्त होता है और शय्या त्याग कर उठ भागनेका यत्न करता है।

ऐसी अवस्थामें यदि कण्डार (Tendons) घन घन कर नाचते हों, तो रोगीका रोग असाध्य हो जाता है। इसके बाद मूत्ररोध यानी पेशावका न होना, निन्द्का न आना, दांतका बजना और आक्षेपका लक्षण दिखाई देने पर अथवा इस प्रदाहके फुस फुसमें और गलेमें आने पर रोगको असाध्य समझना चाहिये। किन्तु यदि पसीना निकलना, नाक और बवासीरसे खूनका गिरना, रमणीके आर्त्तवक्षरण या अधिक पेशाब होनेसे प्रदाहके उपशम हो जानेकी अधिक सम्भावना रहती है।

यह रोग जल्द ही सांघातिक हो जाता है, इससे बहुत जल्द इसके प्रतिकारका उपाय करना चाहिये। लापरवाई तथा चिकित्साकी गड़बड़ीसे यह रोग पहले उन्मादका रूप धारण करता है। कभी कभी तो रोगी

जीवन भरके लिये निर्बोध और वाक्यशून्य हो जाता है। इन दोनों तरहके रोगोंके प्रतिकारके लिये मस्तिष्कके रक्ताधिक्यको कम करना चाहिये, जिससे मस्तिष्कमें अधिक रक्तका सञ्चार न होने पावे।

ऐसा करनेके लिये रोगीको सर्वदा निश्चेष्ट और शान्तभावसे निर्ज्जन स्थानमें रखना कर्त्तव्य है। क्योंकि अधिक लोगोंके साथ रहनेसे शब्दोंके आघातप्रतिघातसे चिन्तास्रोतके व्याघात या इन्द्रिय आदिकी उत्तेजनासे रोगके वढ जानेका भय रहता है। रोगीके घरमें अधिक प्रकाशका रहना भी उचित नही। ऐसे रोगियोंके लिये कुछ अन्धकारयुक्त तथा नातिशीतोष्ण स्थान ही विशेष लाभप्रद है। किन्तु यदि मनके मुताविक रोगीको मित्र मिल जाये, तो उसके मधुर प्रेमालापसे रोगीकी मानसिक दुर्वलताका वहुत कुछ लाघव हो सकता है। विलकुल अन्धकारपूर्ण स्थानमें अधिक समय तक रहनेसे रोगी पर विषादोन्मत्तता (Melancholia)-का आक्रमण होता है।

रोगीकी इच्छाके विपरीत कोई काम करना उचित नहीं। यदि कभी रोगी किसी असम्भव विषयकी अवतारणा करे अथवा किसी दुष्प्राप्य या वहुमूल्य वस्तुकी प्राप्तिकी कामना करे, तो उसे छलपूर्वक वातोंमें भुलवा कर तोषामोदसे उसके मनको सन्तुष्ट कर देना चाहिये। क्योंकि उसके मतकी विपरीतता होनेसे उसके प्रदाहकी वृद्धि और मस्तिष्ककी विकृति वढ़ जायेगी। इससे खराव फल उपस्थित हो सकता है। मूल वात है, कि जिसको वह प्यार करे, फिर उसके शरीरके स्वास्थ्यके लिये विशेष हानिकर भी न हो और मधुर गीत, दिलचस्प किस्से, जो चित्त संयत कर मानसिक चिन्ताको प्रशमित कर सके, ऐसे ही विषयोंमें उसको संलग्न रहना चाहिये।

डाक्टर वुअरहेडका कहना है, कि किसी जलपूर्ण पात्रमें वुन्द-वुन्द करके जल टपकावे और उसकी संख्या गिननेके लिये रोगीको कहे। ऐसा करनेसे रोगीके चित्तकी एकाग्रता वंधनेसे वहुतेरे स्थलमें सुफल होता देखा गया है। इस तरह निम्न मधुरसुरलहरोंमें रोगीके चित्त लगा सकने पर रोगीको नींद भी आ सकती है।

ऐसी अवस्थामें रोगीको हलका पथ्य देना ही उत्तम है। क्योंकि गुरुपाक भोजन देनेसे पाचनक्रियामें गड़वड़ी होती है जिससे मस्तिष्क फिर विकृत हो सकता है। नीवूका रस, सिंहाड़ा, पके फल, अंगूर आदि सुशीतल फल और जलवारली या इमली और वारली पका कर खानेको देना चाहिये। लघु भोजन मात्र ही विशेष फलप्रद है।

इस रोगमें नाकसे खून वहना, शिरश्छेद (फस्त खोलवाना) और रगमें जोंक लगा कर रक्त चुसवानेके सिवा और कोई लाभप्रद औषधि दिखाई नहीं देती। शिरा और धमनियोंसे निरन्तर रक्तका गिरना असम्भव है। इससे नाकसे खून गिरना ही उत्तम है। नाकके छिद्रोंमें कुछ घास पात ठूंस देनेसे ही धीरे धीरे रक्त वहने लगता है। रोगीको माथेमें जहां विशेष दर्द हो रहा है, उस जगहमें जोंक लगा दिया जाये, तो उससे वड़ा उपकार होता है।

यदि उसको ववासीर हो, तो उससे निरन्तर खून वहते रहनेसे भी लाभ होता है। यदि हो सके, तो उस स्थानमें जोंक लगा दे। यदि ववासीरका मशा भीतरकी ओर हो, तो औषधि द्वारा वत्तीका प्रयोग करना अथवा मधु मुसव्वर या घृतकुमारी और सैन्धव लवण मिला कर लेप करना चाहिये। इसी तरह यदि रोगी स्त्री हो और उसका रजःस्राव वन्द हो गया हो, तो रजःस्राव करानेका यथाविधि यत्न करना चाहिये।

रोगीको कभी कपड़ेसे ढक कर मत रखना, ऐसा यत्न करना चाहिये, कि रोगी ठण्डी और ताजी हवामें सांस छोड़ और ले सके और अपने मस्तिष्कको शीतल रख सके। शिर मुड़वा कर उसमें सिनीगार और गुलावका जल मलना चाहिये, इस उष्ण जलसे पैर धोते रहना चाहिये। क्योंकि, इससे मस्तिष्कका प्रदाह कम होता है। उसी तरह रोटी और दूधकी पुलटिस देनी चाहिये। यदि रोग इससे भी शान्त न हो, तो गरदनमें और मस्तकमें क्लिवर देना कर्त्तव्य है।

मस्ती (फा० स्त्री०) १ मत्तता, मतवालापन। २ भोगकी प्रवल कामना, प्रसङ्गकी उत्कट इच्छा। ३ वह स्राव जो कुछ विशिष्ट वृक्षों अथवा पत्थरों आदिमेंसे विशेष

अवसरों पर होता है। ४ वह स्राव जो कुछ विशिष्ट पशुओंके मस्तक, कान, आंख आदिके पाससे कुछ खास अवसरों पर, विशेषतः उनके मस्त होने समय होता है।

मस्तु (सं० क्ली०) मस्यति परिणमतीति मस् (सित-निगमिमसिसच्य विधाञ् क्रुशिभ्यस्तुन्। उण् १।७०) इति तुन्। १ दधिभवमण्ड, दहीका पानी। जितना दही हो उससे दूना जल डाल कर मथना चाहिये। इसीका नाम मस्तु है। इसे मट्ठा भी कह सकते हैं। इसका गुण उष्ण और अम्ल, रुचिकर, पित्तवर्द्धक, श्रमनाशक बलकर, तृष्णा, उदरी, प्लीहा और अर्शनाशक, श्रोतः-शुद्धिकर, कफ और वायुनाशक, विष्टम्भ, शूल, पाण्डु, श्वास, विकार और गुल्मरोगमें विशेष उपकारी तथा लघु माना गया है। २ छेनेका पानी।

मस्तुलुङ्ग (सं० पु०) मस्तु इव लिङ्गं सादृश्यमस्य, पृषो-दरादित्वात् इकारस्य उकारः। मस्तिष्क, मगज।

मस्तुलुङ्गक (सं० पु०) मस्तुलुङ्ग-स्वार्थे कन्। मस्तिष्क, मगज।

मस्तूरी (हिं० स्त्री०) धातु गलानेकी भट्ठी।

मस्तूल (पुर्त० पु०) बड़ी नावों आदिके बीचमें खड़ा गाड़ा जानेवाला वह बड़ा लट्ठा या शहतीर जिसमें पाल बांधते हैं।

मस्नद्-आला-आदिल खां—इस्लाम शाहका एक सभा-सद्। कुछ दिन बाद यह अकबर बादशाहके कर्मचारी-पद पर नियुक्त हुआ। ९६० हिजरीमें नगरकोटमें जब घेरा डाला गया, उस समय यह होसेन कुली खां जहान्-के अधीन वहां गया था। तवकत् पढ़नेसे मालूम होता है, कि यह २ हजारी सेनानायक था।

मस्सा (हिं० पु०) मसा देखो।

महँक (हिं० स्त्री०) महक देखो।

महँकना (हिं० क्रि०) महकना देखो।

महगा (हिं० वि०) अधिक मूल्य पर विकनेवाला, जिसकी कीमत साधारण वा उचितको अपेक्षा अधिक हो।

महँगाई (हिं० स्त्री०) महँगी देखो।

महँगी (हिं० स्त्री०) १ महँगे होनेका भाव, महँगापन। २ महँगे होनेकी अवस्था। ३ दुर्भिक्ष, अकाल।

महँड़ा (हिं० स्त्री०) भुने हुए चने।

महंत (हिं० पु०) १ साधु मण्डली या मठका अधिष्ठाता, साधुओंका मुखिया। (वि०) २ श्रेष्ठ, प्रधान।

महंती (हिं० स्त्री०) १ महंतका भाव। २ महंतका पद।

महँदी (हिं० स्त्री०) मेंहदी देखो।

मह (सं० पु०) महाते पूज्यतेऽस्मिन्निति मह-(पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण। पा ३।३।११८) इति घ, यद्वा मह-अच् (उण् ४।१८८) १ उत्सव। महते पूज्यते इति। २ तेज। ३ यज्ञ। ४ महिष, भैंस। (त्रि०) ५ महत्, बड़ा। ६ अति, बहुत।

महक (सं० पु०) १ महत् व्यक्ति, श्रेष्ठ पुरुष। २ कच्छप, कछुवा। ३ विष्णु।

महक (हिं० स्त्री०) गंध, बू।

महकदार (हिं० वि०) जिसमें महक हो, महकनेवाला।

महकना (हिं० क्रि०) गंध देना, बास देना।

महकमा (अ० पु०) किसी विशिष्ट कार्यके लिये अलग किया हुआ विभाग, सरिश्ता।

महकाली (हिं० स्त्री०) पार्वती।

महकीला (हिं० वि०) सुगंधित, महकदार।

महक्क (सं० पु०) महः कायति प्रकाशयतीति महस् कै क, पृषोदरादित्वात् साधुः। बहुल आमोद, हदसे ज्यादा खुशी।

महचक्र (हिं० पु०) सूर्य।

महज (अ० वि०) १ शुद्ध, खालिस। २ केवल, मात्र।

महजरनाम (अ० पु०) हत्या अथवा हत्यारेके संबंधका साक्षीपत्र, हिंसा विषयक साक्षीपत्र।

महजित—मसजिद देखो।

महण (हिं० पु०) समुद्र।

महत् (सं० त्रि०) महाते पूज्यतेऽसौ इति मह (वर्त्तमाने पृषद्वृहन्महज्जगच्छतृवच्च। उण् २।८४) इति अति निपा-त्यते। १ वृहत्, बड़ा। पर्याय—विशङ्कट, पृथु, वृहत्, विशाल, पृथुल, वड्, ऊरु, विपुल, पुल, विस्तीर्ण।

वैदिक पर्याय—व्रध्न, ऋष्व, वृहत्, उक्षित, तवस, तविष, महिष, अह्व, ऋभुक्षा, उक्षा, विहायस्, यह्व, ववक्षिथ, विवक्षसे, अम्भृण, माहिण, गभीर, ककुह, रभस, व्राधन, विरप्शी, अद्भुत, वंहिष्ठ, वर्हिषत्।

(पु०) २ प्रकृतिका पहला विकार। सत्त्व, रज और तमो गुणकी समानावस्थाका नाम प्रकृति है। जब प्रकृतिका विकार उपस्थित होता है, तब उक्त तीनों गुण विरूप हो जाते हैं और उसीसे महत्की उत्पत्ति है। इसी महत्से स्थावरजङ्गमात्मक जगत्की उत्पत्ति हुई है।

महतत्त्व शब्द देखो।

शङ्खादि शब्दके पहले महत् शब्दका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

"शङ्खे तैले तथा मासे वैद्ये ज्योतिषिके द्विजे।
यात्राया पथि निद्राया महच्छब्दो न दीयते ॥"

(भट्टि १।४ श्लोक टीका० भरत)

शङ्ख, तैल, मांस, वैद्य, ज्योतिषिक, द्विज, यात्रा, पथ और निद्रा इन सब शब्दोंके पहले महत् शब्दका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

३ राज्य। ४ ब्रह्म। एकमात्र ब्रह्म ही महत् शब्दके अभिधेय हैं।

"श्रुतेन श्रोत्रियो भवति तपसा विन्दते महत्।"

(भारत ३।३१२।४४)

५ उदक, जल।

महत (हिं० पु०) महतत्त्व देखो।

महतवान (हिं० पु०) करघेमें पीछेकी ओर लगी हुई खूंटी। इसमें तानेको पीछेकी ओर कस कर खींचे रहनेवाली डोरी लपेट कर वरतलेमें बांधी जाती है। इसे हथेला भी कहते हैं।

महता (हिं० पु०) १ सरदार, गांवका मुखिया। २ लेखक, मुंशी।

महताव (फा० स्त्री०) १ चांदनी, चन्द्रिका। २ एक प्रकारकी आतिशबाजी। महताबी देखो। ३ जहाज पर रातके समय संकेतके लिये होनेवाली एक प्रकारकी नीली रोशनी। यह रोशनी काठकी एक नलीमें कुछ मसाले भर कर जलाई जाती है। (पु०) ४ चन्द्रमा, चांद। ५ एक प्रकारका जंगली कौवा, महालत।

महताव—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने सवत् १८००में नखशिख नामक ग्रन्थ लिखा। ये साधारण श्रेणीके कवि थे। इन्होंने हिन्दू-पतिकी प्रशसा की है जिनके यहाँ दास कवि थे। इन्होंने उन्हें राजाके स्थान पर बादशाह लिख दिया है।

महताव बाग—यमुनाके किनारे एक सुरम्य उद्यान। मुगल बादशाह शाहजहान्ने यहां पर एक बड़ा मकान बनाया था। उनकी इच्छा थी, कि मृत्युके बाद उनकी देह यही पर दफनाई जाय। किन्तु ऐसा नही हुआ। क्योंकि उनके लड़के आलमगीर उस मकानकी बेशकीमती चीजें दूसरी जगह उठा ले गये थे। इसका खण्डहर आज भी देखनेमें आता है।

महतावी (फा० स्त्री०) १ मोमबत्तीके आकारकी बनी हुई एक प्रकारकी आतिशबाजी। यह मोटे कागजमें बारूद, गंधक आदि मसाले लपेट कर बनाई जाती है। इसके जलनेसे बहुत तेज रोशनी होती है। रोशनी सफेद, लाल, नीली, पीली आदि कई तरहकी होती है। २ एक प्रकारका बड़ा नीबू, चकोतरा। ३ किसी बड़े प्रासादके आगे अथवा बागके बीचमें बना हुआ गोल या चौकोर ऊंचा चबूतरा। इस चबूतरे पर लोग रातके समय बैठ कर चांदनीका आनन्द लूटते हैं।

महतारी (हिं० स्त्री०) माता, मां।

महतिक्रान्ता (सं० स्त्री०) बृहती, छोटी कटाई।

महती (सं० स्त्री०) महत्-ङीष्। १ वल्लकीभेद, एक प्रकारकी वीणा। २ नारदकी वीणाका नाम। ३ बृहती, कँटाई। ४ वार्त्ताकी, बनभंटा। ५ कुशद्वीपस्थ नदीविशेष, कुशद्वीपकी एक नदीका नाम जो पारिपात्र पर्वतसे निकली है। ६ महत्व, महिमा। ७ वैश्योंकी एक जाति। ८ वह हिचकी जिससे मर्मस्थान पीड़ित हो और देहमें कंप हो। ९ योनिका बहुत फैल जाना। यह एक रोग माना जाता है।

महतीद्वादशी (सं० स्त्री०) महतीति ख्याता। द्वादशी, श्रावणद्वादशी।

"मासि भाद्रपदे शुक्ले द्वादशी श्रवणान्विता।
महतीद्वादशी ज्ञेया उपवासे महाफला ॥"

(गरुडपु० १४१ अ०)

भाद्रमासकी शुक्ला द्वादशीके दिन यदि श्रवणा नक्षत्र पड़े, तो उसी दिनका नाम महती द्वादशी है। यह द्वादशी बहुत पुण्यजनक है। इस दिन स्नान दान उपवास आदि पुण्यकर्म अनन्त फलदायक हैं।

महतो (हिं० पु०) १ कुछ गयावाल पंडोंकी एक उपाधि।

२ कहार। ३ जुलाहोंका एक खूंटा। यह भांजके आगे गड़ा रहता है और इसमें भांजकी डोरी फँसाई रहती है।

महत्कथ (सं० त्रि०) १ जो मीठी मीठी बातें करके बड़े, आदमियोंको प्रसन्न करता हो, खुशामदी। २ जिसकी बोलीमें बड़प्पन है।

महत्क्षेत्र (सं० त्रि०) १ विस्तीर्ण क्षेत्रविशिष्ट। (क्ली०) २ विपुलक्षेत्र।

महत्तत्त्व (सं० क्ली०) महच्च तत् तत्त्वञ्चेति। १ सांख्योक्त चतुर्विंशति तत्त्वके अन्तर्गत द्वितीय तत्त्व, सांख्यके अनुसार चौबीस तत्त्वोंमेंसे दूसरा तत्त्व, बुद्धि तत्त्व।

प्रकृतिका प्रथम विकाश महत्तत्त्व है। दर्शनशास्त्रमें इसका विषय जो लिखा है वह यों है—इस महत् सृष्टिके प्रारम्भमें असंसारी और अशरीरी आत्माके सान्निध्य-वशतः प्रकृतिके मध्य प्रथम प्रस्फुरण होता है। रजोगुण-से सृष्टि, सत्त्वगुणसे पालन और तमोगुणसे संहार हुआ करता है। इससे यह समझा गया, कि पहले सभी गुणों-के साम्यभङ्गसे रजोगुणने सत्त्वगुणको प्रकाश किया था। इसी कारण सत्त्वगुण सबसे पहले महत्तत्त्व आकारमें प्रादुर्भूत हुआ था। महत्तत्त्वको जाननेके लिये वर्त्तमान प्राणिसमूहकी बुद्धिके बीजस्थान पर विचार करना होगा। इससे मालूम होगा, कि सभी विशेष विशेष बुद्धिका विकाशस्थान अन्तःकरण है। फिर यह भी देखा जायगा, कि प्रत्येक अन्तःकरण हरिहर-मूर्त्तिकी तरह द्विमूर्त्तिमें मौजूद है। उनमेंसे एक मूर्त्ति वा परिणाम का नाम 'मनन' और 'अध्यवसाय' तथा दूसरी मूर्त्तिका नाम 'अभिमान' और 'अहं' है। मैं, मैं हूं, वस्तु, वस्तु है, मेरा, मेरे करने योग्य इत्यादि प्रकारके निश्चया-त्मक विकाशको अध्यवसाय और ज्ञानशक्ति कहते हैं। यह ज्ञानशक्ति सहजातस्वरूपमें जीवकी अन्त रात्मामें हमेशा मौजूद रहती है। ज्ञानशक्तिके समूह-का नाम ही महान् है। महान् और पूर्णज्ञान दोनों एक है। पूर्णज्ञानशक्ति ही सांख्योक्त महतत्त्व और बुद्धितत्त्व कहलाता है।

जो महान् पुरुष इस महान् बुद्धितत्त्वमें पूर्णरूपसे प्रतिबिम्बित होते हैं वही महापुरुष सांख्योक्त ईश्वर अर्थात् सृष्टिकर्त्ता तथा पुराणादि शास्त्रके हिरण्यगर्भ, ब्रह्मा, कार्यब्रह्म वा ईश्वर हैं। भूलोक, द्युलोक, अन्त-रीक्षलोक, चन्द्रलोक, सूर्यलोक, ग्रहलोक, नक्षत्रलोक, ब्रह्मलोक आदि सभी लोकोंके सभी पदार्थ इन महा-पुरुषके अधीन हैं। यह महत्तत्त्व नामक व्यापक बुद्धि हमारे ज्ञानमें, तुम्हारे ज्ञानमें, उसके ज्ञानमें, चन्द्रलोकके मनुष्योंके ज्ञानमें, सूर्यलोकके मनुष्योंके ज्ञानमें, पशु और पक्षीके ज्ञानमें मौजूद है। हम लोग जिस प्रकार इस हाथ पैरवाले शरीरके ऊपर 'मेरा' यह अभिमान डाले हुए हैं, उसी प्रकार हिरण्यगर्भ वा ईश्वर भी सम्पूर्ण महत्तत्त्वके ऊपर मैं और मेरा यह अभिमान निक्षेप किये हुए हैं। जिस प्रकार हम लोगोंको अपने अपने शरीर पर अधिकार है, उसी प्रकार समस्त महत्तत्त्वके ऊपर हिरण्य गर्भका अधिकार है। हम लोग अपने अपने हाथ पांव-को जिधर चाहें हिला डुला सकते हैं उसी प्रकार हिरण्यगर्भ भी अपने इच्छानुसार समस्त अन्तःकरण-को फैलाते हैं।

कपिलने यद्यपि इसका सविस्तार वर्णन नहीं किया है, तथापि अन्यान्य ग्रन्थोंमें इसका विस्तृत विवरण देखा जाता है। कपिलने केवल "महादाख्य' आद्य कार्यं तन्मनः" (सांख्यसू० १।७१) इस सूत्रमें मह-तत्त्व शब्द समझाया है। प्रकृतिका जो आद्य कार्य है, प्रथम विकाश वा प्रथम परिणाम है उसीको महत्तत्त्व कहते हैं। वही मन अर्थात् मननवृत्तिक अन्तःकरण है। यहां पर मनन शब्दका अर्थ है निश्चय। अन्तः-करण वा बुद्धिके जिस अंशमें निश्चयरूप वृत्ति उत्पन्न होती है, उसी अंशका नाम महान् और महत्तत्त्व है। वृत्ति शब्दसे अर्थ परिणामका बोध होता है, इसी-लिये वह वृत्ति है।

इसे जाननेके लिये क्षण क्षणमें उत्पन्न होनेवाली विषयवासनामें लिप्त बुद्धिकी अवगाह खण्ड खण्ड विषयराशिका परित्याग कर निरवच्छिन्न केवल विशुद्ध बुद्धि ही महत्तत्त्व है, ऐसा समझना होगा। पहले केवल चिदात्मा पुरुष थे और कुछ भी न था। अतएव प्रकृतिके प्रथम विकाशमें अर्थात् महत्तत्त्व नामक बुद्धिमें चिदात्माकी अनुरञ्जनाके सिवा अन्य पदार्थकी अनुरञ्जना

नहीं थी और न उसका परिच्छेद ही था। इसलिये वह अवच्छिन्न थी। पीछे प्रकृतिसे जितने मोटे पतले विकार उत्पन्न हुए उतनी ही वह विषयपरिच्छिन्न और मलिन होती गई। प्रकृतिका प्रथम विकार वा प्रथम स्फूर्त्ति ही जगद्बीज वा महान् है। इसका सांकेतिक नाम महत्तत्त्व है। सृष्टिको प्रारम्भ और महत्तत्त्वकी उत्पत्ति दोनों समान हैं। ज्ञेय नहीं होनेसे ज्ञानका आविर्भाव होना ही महत्तत्त्वका दूसरा लक्षण है। ज्ञेयके नहीं रहनेसे ज्ञानका विकाश होना, यह विषय किस प्रकार अनुभव करना होगा, महर्षि मनुने उसे अच्छी तरह समझा दिया है। यथा—

"आसीदिदं तमोभूतमप्रज्ञातमलक्षणम्।
अप्रतर्क्यमविज्ञेयं प्रसुप्तमिव सर्वतः॥
ततः स्वयम्भूर्भगवान् व्यक्तो व्यञ्जयन्निदम्।
महाभूतादिवृत्तौजाः प्रादुरासीत्तमोनुदः॥"

(मनु १ अ०)

यह जगत् प्रकृतिलीन था। प्रकृतिलीन रहना ही लय और प्रलय है। वह अवस्था अज्ञात, अलक्ष्य और अप्रतर्क्य थी अर्थात् उस समय प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द ये सब प्रमाण नहीं थे तथा प्रमाणका विषय प्रमेय पदार्थ भी नहीं था। वह अवस्था प्रायः महासुषुप्तिके सदृश थी।

जिस प्रकार हम लोगोंकी गाढ़ी नींद टूटने पर आंख खुलते न खुलते अज्ञान दूर हो जाता और ज्ञानका उदय होता है, उसी प्रकार नितान्त दुर्लक्ष्य प्रलयरूप जगत्की निद्रा भङ्ग होने पर प्रकृतिगर्भमें सूक्ष्म जगत्के अभिव्यञ्जक (अंकुर स्वरूप) अन्धकारको नष्ट करनेवाले सृष्टिकर्त्ता भगवान् स्वयम्प्रभ हिरण्यगर्भ वा महत्तत्त्वका आविर्भाव हुआ था। ज्यों ही जगत्की निद्रा भङ्ग हुई त्यों ही महान् विकाश उदय हुआ, सूक्ष्म जगत् उसके शरीरमें अङ्कित हो गया। मनुकी इस उक्तिसे महत्तत्त्वका थोड़ा बहुत भाव समझमें आता है। महत्तत्त्व, हिरण्यगर्भ और ब्रह्म ये सभी समान हैं।

महत्तत्त्वसे अहंतत्त्वकी उत्पत्ति हुई है। पूर्वोक्त प्रथम परिणामके अर्थात् 'मैं हूं' इत्यादि सहजात निश्चयात्मिका वृत्तिके एक देशमें जो 'अहंवृत्ति' संलग्न है, वही साख्यका अहंतत्त्व है। यह अहंवृत्ति जिससे वा जिसके परिणामसे उदय होता है वही अहंतत्त्व कहलाता है। यह अहंतत्त्व प्रत्येक आत्मामें मौजूद है। यह अहं एक गणनामें व्यष्टि और समस्त गणनामें समष्टि है। अहं, अभिमान और अहंतत्त्व सभी एक हैं। केवल नाममें फर्क है।

महतत्त्व और अहंतत्त्वमें प्रभेद यह है, कि महत्तत्त्वका मैं अलक्ष्योत्पन्न और अहंतत्त्वका मैं लक्ष्योत्पन्न है। पहले कह आये हैं, कि प्रकृतिका प्रथम परिणाम महत्तत्त्व है। महत्तत्त्वसे अहंतत्त्व तथा अहंतत्त्वसे एकादश इन्द्रियां और पञ्चतन्मात्रकी उत्पत्ति हुई है। प्रकृतिके ऐसे विरूप परिणामसे ही जगत्की सृष्टि होती है। जब दूसरी बार प्रकृतिका स्वरूपपरिणाम उपस्थित होता है, तब जगत्का लय होता है। तत्त्व जिस प्रकार प्रादुर्भूत होता है, लय होनेके समय भी उसी प्रकार लीन हुआ करता है। एकादश इन्द्रिय और पञ्चतन्मात्र अहंतत्त्वमें, अहं महत्तत्त्वमें तथा सबसे अन्तमें महत् प्रकृतिमें लीन होता है। (साख्यद०)

विष्णुपुराणमें लिखा है,—प्रलयकालमें गुणसाम्य अर्थात् सत्त्व, रजः और तमोगुणको निष्क्रिय अवस्था होती है। पीछे जब सृष्टिकाल उपस्थित होता है, तब परमेश्वर अपने इच्छानुसार परिणामी और अपरिणामी प्रकृति और पुरुषमें प्रविष्ट हो कर उन्हें क्षोभित अर्थात् सृष्टि करनेमें उन्मुख करते हैं। इसके बाद पुरुषाधिष्ठित गुणसाम्यसे गुणव्यञ्जन अर्थात् महत्तत्त्व उत्पन्न हुआ। यह महत्तत्त्व तीन प्रकारका है, सात्त्विक, राजस और तामस। बीज जिस प्रकार त्वक् द्वारा आवृत है उसी प्रकार पूर्वोक्त गुणसाम्य (प्रधान तत्त्व) से यह महत्तत्व आवृत है अर्थात् प्रधानतत्त्व महत्तत्त्वका व्यापक है। पीछे महत्तत्त्वसे अहंतत्वकी उत्पत्ति और क्रमशः इसी प्रकार सृष्टि हुआ करती है। (विष्णुपु० १।२ अ०)

२ कुछ तान्त्रिकोंके अनुसार संसारके सात तत्त्वोंमेंसे सबसे अधिक सूक्ष्म तत्व। ३ जीवात्मा।

महत्तम (सं० त्रि०) सबसे अधिक बड़ा वा श्रेष्ठ।

महत्तर (सं० पु० स्त्री०) अयमनयोरतिशयेन महान् महत्-तरप्। १ शूद्र। २ सम्मानार्ह उपाधिविशेष। (त्रि०) ३ अतिशय महत्, दो पदार्थोंमेंसे बड़ा या श्रेष्ठ।

महत्तमपद (सं० पु०) श्रेष्ठपद, अच्छा ओहदा।

महत्त्व (सं० क्ली०) महतो भावः त्व। महतका भाव या धर्म, वड़प्पन। नैयायिकोंके मतानुसार द्रव्यके प्रत्यक्ष-विषयमें समवाय-सम्बन्धमें महत्व ही एकमात्र कारण है "महत्त्वं षड़् विधे हेतुरिन्द्रिय करण मतम्।" (भाषापरि०) २ श्रेष्ठता, उत्तमता। ३ प्रकर्ष, अधिकता।

महदवी—मुसलमानोंका धर्म-सम्प्रदायविशेष। सम्राट् अकवर शाहके शासनकालमें इस सम्प्रदायके नेता इस्लाम शाह और फैजीके पिता शेख मुवारक विशेषरूपसे निगृहीत हुए थे।

महदावास (सं० पु०) वृहद् अट्टालिका, वड़ा मकान।

महदाशा (सं० स्त्री०) महती चासौ आशा चेति कर्मधा०। उच्चाशा, ऊंची आकांक्षा।

महदाश्रय (सं० पु०) महतां आश्रयः। महतका आश्रय, वड़े लोगोंकी शरण लेना।

महदी अलीखां—अयोध्याके राजा नसिरुद्दीन हैदरका प्रधान मन्त्री। फतेगढ़के समीप खोदागञ्जमें कालीनदी-के ऊपर जो हिंडोलेके जैसा लोहेका पूल है उसे इन्होंने ही वनवाया था। कहते हैं, कि वह पुल वनानेमें सत्तर हजार रुपया और सात वर्षसे अधिक समय लगा था। १८३२ ई०में महदी अलीखां अपने पदसे हटा दिया गया। किन्तु महम्मद अली शाह जव तख्त पर वैठे तव फिरसे इसने अपना पद प्राप्त किया। १८३७ ई०में इसका देहान्त हुआ।

महदी इमाम—मुसलमानोंके एक इमाम। इनका असल नाम काशिम महम्मद था। मुसलमान लोग वारह इमामकी वड़ी भक्ति करते हैं। इन वारह इमामोंमें महदी ग्यारहवें थे। महदी इमाम ग्यारहवें असकरीके पुत्र थे। ८६६ ई०की २६वीं जुलाईको वागदादके मध्यवर्त्ती शर्मणराई नामक स्थानमें इनका जन्म हुआ था। सिया-सम्प्रदायभुक्त मुसलमानोंका कहना है, कि १० वर्षकी उमरमें यह एक जलाशयमें घुसे और फिर कभी नहीं निकले। इनकी माताने अपनी आंखोंसे यह घटना देखी थी। उनका विश्वास है, कि वे आज भी जीते जागते हैं। वे यह भी कहते हैं, कि अभी महदी इमाम किसी गुप्त स्थानमें छिपे हैं। समय अपने पर इलियाके साथ एकत्र हो कर ईसाइयोंके पुनरभ्युदयके समय विधर्मी काफिरोंको मुसलमानी धर्ममें दीक्षित करनेके लिये उपस्थित होंगे।

महदी काशिम खाँ—सम्राट् अकवर शाहका एक चार हजारी सेनानायक। यह पहले सम्राट् वावरके ३य पुत्र असकरीके अधीन काम करता था। हुमायूंके पारस्य देशसे लौटते समय महदीने उनका साथ दिया था। अकवर जव राजतख्त पर वैठे तवसे मसूदीको सेनानायक वनाया गया। तवकत् पढ़नेसे मालूम होता है, कि यह उस समय पांच हजारी सेनानायक था।

९७३ हिजरीमें अकवर वादशाहके आदेशानुसार इसने खान जमान और अवदुल मजिद आसफ खांका दमन करनेके लिये गढ़ा (जव्वलपुर)-की ओर यात्रा कर दी। किन्तु वहांकी शोचनीय अवस्थाको देख कर यह निराश हो गया और मक्काको चल दिया। मक्कासे पारस्य और कन्धार होता हुआ यह सम्राट्के शासन-कालके १३वें वर्षमें रणस्तम्भगढ़ पहुंचा। यह संवाद पा कर वादशाह अकवरने रणस्तम्भमें घेरा डाला। काशिम खांने वचावका कोई उपाय न देख आत्मसमर्पण किया और वादशाहके पैरों पर गिर कर प्राण-भिक्षा मांगी। कहते हैं, कि इसने वादशाहको वहुतसे सुन्दर सुन्दर फारसके घोड़े नगरमें भेजे थे।

आखिर वादशाहने उसके कुल अपराध माफ किये और उसे फिरसे सेनानायक वना कर अपने गौरवकी रक्षा की। केवल यही नहीं, लखनऊ प्रदेश भी उसे जागीरमें मिला।

महदी काशिमने लाहोर नगरमें वाग-इ-महदी काशिम खा नामक एक वगीचा लगा कर अपना शेष जीवन विताया था। १००१ हिजरीमें इसकी मृत्यु हुई।

महदी खाँ (मिर्जा)—नादिरशाहका विश्वस्त सचिव। यह मुंशी उल्-मुमालिक नामसे प्रसिद्ध था। 'तारीख-इ-नादिरी' और 'तारीख जहान् कुशा' नामक ग्रन्थ इसके वनाये हुए मिलते हैं। तारीख-इ-नादिरीका दूसरा नाम है 'नादिरनामा' अर्थात् नादिर शाहका इतिहास। सर विलियम जोन्सने उक्त ग्रन्थका फारसी भाषामें अनुवाद किया था।

महदी ख्वाजा—सम्राट् बाबरशाहका जमाई। बाबरके मरने पर यह कुछ दिन तक राजतख्त पर बैठा था।

महदी मिर्जा—एक मुसलमान ऐतिहासिक। इसके बनाये हुए 'माजमुआ मिर्जा महदी' ग्रन्थमें तैमूरवंशीय राजाओं की यशःकीर्त्ति गाई गई है। सम्राट् बाबर शाहके पितामहसे (१४२३ ई०में) ले कर सम्राट् बहादुर शाहके जीवन काल तकका हाल इस पुस्तकमें लिखा है।

महद्द (अ० वि०) जिसकी हद बंधी हो, सीमाबद्ध।

महदेश्वर (हिं० पु०) बैलोंकी एक जाति जो मैसूरमें पाई जाती है। इस जातिके बैल बहुत हृष्टपुष्ट और बलवान होते हैं।

महद्गत (सं० त्रि०) साधुजनाश्रित, जिसने श्रेष्ठ पुरुषका आश्रय लिया हो।

महद्गुण (सं० त्रि०) महत् गुणं यस्य। १ महागुणविशिष्ट। २ महतका गुण। ३ अतिशय गुण।

महद्धिक (सं० पु०) जैनियोंके एक देवताका नाम।

महद्बिल (सं० क्ली०) आकाश, शून्य।

महद्भय (सं० क्ली०) १ अतिशय भय, बहुत डर। २ अत्यन्ताभाव। ३ महत् व्यक्तिसे भय, बड़ोंका डर।

महद्भू (सं० स्त्री०) महद् भवतीति भू-क्विप्। बड़ा होना।

महद्युमन् (सं० क्ली०) १ सूर्य। २ तीर्थविशेष।

महद्वत् (सं० त्रि०) महत्-मतुप् मस्य व। महद्युक्त।

महद्वारुणी (सं० स्त्री०) महेन्द्रवारुणी लता।

महद्व्यतिक्रम (सं० पु०) महाश्चासौ व्यतिक्रमश्चेति। अतिशय व्यत्यय, बहुत उलट फेर।

महन् (सं० क्ली०) प्रभूत, अनेक।

महना (हिं० क्रि०) १ दही या मट्ठा आदि मथना, बिलोना। (पु०) २ मथानी, रई।

महनिया (हिं० पु०) मथनेवाला, वह जो मथता हो।

महनीय (सं० त्रि०) मह-अनीयर। पूजनीय, पूजन करने योग्य।

महनु (हिं० पु०) विनाशक, मथन करनेवाला।

महन्दिपहाड़—बङ्गालका एक छोटा पहाड़।

महफिल (अ० स्त्री०) १ सभा, मजलिस। २ नृत्य गीत होनेका स्थान, नाच गान होनेकी जगह।

महफूज (अ० वि०) सुरक्षित, जिसकी हिफाजत की गई हो।

महबूब (अ० पु०) वह जिससे प्रेम किया जाय, जिससे दिल लगाया जाय।

महबूब—उर्दूके एक कवि। इनका जन्म १७६१ सम्वत्में हुआ था। इनका कोई ग्रन्थ देखनेमें नहीं आया, पर छन्द बहुत देखे गये है। इनकी कविता अनुप्रासको लिए हुए जोरदार होती थी और वह पूर्णतया प्रशंसनीय है। इनकी गिनती तोषकी श्रेणीमें की गई है।

महबूबा (अ० स्त्री०) वह स्त्री जिससे प्रेम किया जाय, प्रेमिका, माशूका।

महमद—महम्मद देखो।

महमदी—मुहम्मदका मतानुयायी, मुसलमान।

महमन्द—पश्चिम सीमान्तवासी अफगान-जातिविशेष।

महमबेगम—शेख अहमद जामकी पोती। यह अकबर बादशाहको व्याही गई थी। महमबेगमके ही गर्भसे हुमायूं पैदा हुआ। यह दिल्ली-दुर्गके समीप 'दिनपना' नामक एक मसजिद बनवा गई है। शिलालिपि पढ़नेसे मालूम होता है, कि यह १५६१ ई०में जीवित थी।

महमह (हिं० क्रि० वि०) सुगन्धिके साथ, खुशबूके साथ।

महमहण (हिं० पु०) विष्णु।

महमहा (हिं० वि०) सुगंधित, खुशबूदार।

महमहाना (हिं० क्रि०) सुगंधि देना, गमकना।

महमान (फा० पु०) मेहमान देखो।

महमानी (फा० स्त्री०) मेहमानी देखो।

महमाय (हिं० स्त्री०) पार्वती।

महमूदी (फा० स्त्री०) १ सल्लमकी तरहका एक मोटा देशी कपड़ा। (पु०) २ एक प्रकारका पुराना छोटा सिक्का।

महमेज (फा० स्त्री) एक प्रकारकी लोहेकी नाल। यह जूतेमें पीछेकी ओर एंड़ीके पास लगाई जाती है। इसकी सहायतासे घोड़ेके सवार उसे चलानेके लिये एड़ लगाते हैं।

महम्मद—(आबुल कासिम इब्न अबदुल्ला), अरबके प्रसिद्ध इस्लाम धर्मप्रवर्त्तक। इनका जन्म १०वीं नवम्बर ५७०-में हुआ था। परन्तु कोई कोई २२वीं अप्रेल ५७१ ई०-में बताते हैं। जो कुछ हो, इनका मक्कासे मदीना भागना (हिजरी प्रारम्भ ६२२ ई०) तथा पैगम्बर प्रसिद्धि

(करीब ६१० ई०) इन दोनोंकी आलोचना की जाय, तो निःसन्देह उनका जन्मकाल ५७० ई०में ही निरूपण किया जायेगा। कुरानमें लिखा है, कि उसी समय येमनके हवसी-शासक इब्राहिमने मक्का पर आक्रमण किया था। इसी आक्रमण-कालमें अरववालोंने पहले पहल हाथीको देखा था तथा वे लोग वसन्तरोगके शिकार बने थे।

महापुरुषोंका जन्म अलौकिक दैवघटनायुक्त होता है, यह स्वतः सिद्ध है। महम्मदके जन्ममें भी ठोक यही बात थी। मुसलमान ग्रन्थकार परसियाके मग-पुरोहितोंका चिर-रक्षित पवित्र अग्नि-निर्वापण तथा संपूर्ण अरवमें उज्ज्वल आलोक विस्तार आदि भौतिक व्यापारोंकी सृष्टि करनेसे जरा भी वाज नहीं आये हैं। इस्लाम धर्म-प्रवर्त्तक महम्मदका जन्मकाल अलौकिक घटनाओंसे रंग डाला गया है। यह कार्य महम्मदके भक्त मुसलमानोंके सिवा दूसरेका नहीं है। हम लोगोंमें ऐसी शक्ति नहीं, कि अवतार या आदर्श पुरुषोंके गुण दोषका विचार कर सकें, पर सम्भव तथा असम्भव घटनाऐं जनसाधारणके लिये विवेचनीय हैं। प्रकृत-जीवनीको आश्रय कर महम्मदकी विशद जीवनीकी कीर्त्ति-गाथा लिखनेके लिये वाध्य हुए हैं।

महम्मदका जन्म ईसाजन्मसे लगभग ५०० वर्ष पीछे अरव देशके मक्का नगरमें हुआ था। यह स्थान ईसाकी जन्मभूमि पालेस्तिनके समीप ही है। अरववाले उस समय महम्मदको ईश्वरका अवतार समझते थे। ईसा और महम्मद-अवतारके मध्यकालीन समय और स्थान पर अगर विचार किया जाय, तो यही अनुमान होगा, कि अरववाले उस समय उच्छृङ्खल थे; अथवा पारसिक तथा ईसाधर्मसे प्रेरित होनेके कारण उनका धार्मिक विचार मिश्रित था। महम्मदने अरववालोंके इसी मत-विरोधके कारण एक पृथक् मत चलानेका बीड़ा उठाया था।

महम्मदसे पहले अरव का जातीय इतिहास अन्धकारमय ही समझना चाहिये। अरववालोंमें उस समय एक भी अभ्युदयका चिह्न नहीं देखा जाता है। अतएव महम्मदका जन्म और युवाकालसे ही अरवके जातीय इतिहासका द्वार खुल गया है। इतिहासके इस प्रारम्भिक कालमें समग्र अरव उपद्वीप एक स्वाधीन राज्य था। ६ठी शताब्दीके प्रारम्भमें यहां किण्डाइत राजाओंने मध्य अरवकी कुछ उन्नतशील जातियोंका संगठन किया और एक जातीय साम्राज्य स्थापित करना चाहा। यह विषय अरव इतिहासमें यद्यपि उल्लेखनीय नहीं है फिर भी प्रस्तावनारूपमें इसे स्थान देना अनुपयुक्त न होगा। अरवका प्रकृत इतिहास इस्लामधर्म स्थापनके साथ ही साथ आरम्भ हुआ है।

किण्डाइतवंशके अवसान पर अरवमें फिर शासन विशृंखल आरम्भ हुआ। इसी समय नेजद तथा हिजाजके भ्रमणशील निवासियोंने मौका पा कर मध्य अरव पर अपना आधिपत्य जमाया, पर इस समृद्धिका भोग उनके भागमें अधिक दिन तक न बदा था। पारस्य राजके अधीनस्थ हीरा और अनवरके लखमिद वंशीय सामन्तगणोंने अरवमें धीरे धीरे पारस्यराज्य विस्तार करना आरम्भ कर दिया था तथा ग्रीकवालोंने गस्सानिदवंशीयको अरवका शासनभार पहले हीसे दे रखा था। इस प्रकार दो वैदेशिक शक्तियोंके एकत्र होनेसे संघर्ष उपस्थित हुआ। पारस्य राजाओंने ईसाइयोंको मार भगानेकी कोशिश की। ६ठी शताब्दीके अन्तमें तो नेजदसे ले कर येमेन पर्यन्त पारसियोंकी शक्ति अक्षुण्ण हो गई। परन्तु इस्लामधर्म तथा अरव-साम्राज्यका अभ्युदय निकेतन प्राचीन हिजाज, पश्चिममें नेजद प्रदेश ग्रीक, पारसिक, गससानिद तथा लखमिद आदि राजाओंके हाथ नहीं लगे। वे पूर्वपुरुषाओंकी तरह स्वाधीनता सुखका भोग कर रहे थे। महम्मदको जन्मभूमि मक्कामें कावा नामक एक प्रसिद्ध मन्दिरके आसपास रहनेवाली अन्यान्य जातियोंके साथ वानुकानन जातिने एक उपनिवेश बसाया। फिर जुल-उल-हिज्जकी पूर्णिमामें मक्का, अरफा और कोजा नगरीमें वार्षिकोत्सवके समय लोगोंकी भीड़ होने लगी जिससे एक महामेला संघटन हो गया। कहते हैं कि इस मेलेमें सिरिया येमेन आदि देशी वस्तुओंका वाणिज्य प्रचार हो जानेसे मक्काकी ख्याति तथा वृद्धि जनसमाजमें फैल गई।

इस वाणिज्य-व्यापारमें कोराइस् (किनान जातिकी

एक शाखा) जातिने काफी धन कमाया और उसकी तूती तमाम बोलने लगी। मुसलमान कुलरवि महम्मद-का उदय इसी जातिके वानु हासेनके वंशमें हुआ था। महम्मदके पिता अवदुल्ला अपने धनी मानी समाजमें अग्रगण्य थे। जनसाधारण उन्हें अरव जातिके प्रसिद्ध आदिपुरुष इस्माइलका वंशधर जान कर खूब सत्कार करते थे।

कोराइसोंने उत्तरोत्तर अर्थ-वृद्धि कर पार्श्ववर्त्ती राज्योंमें अपनी धाक जमा ली। फिर शिक्षित तथा उन्नत समाजके संसर्गसे उन सबोंकी बुद्धि भी विशेष परिमार्जित हो गई। अरवके प्राचीन एवम् प्रसिद्ध उपासना-भवन 'कावा' वहुत दिनों तक हासेमवंशके अधीन सुरक्षित रहा। महम्मदके पूर्व पुरुषाओंने इस मन्दिरका याजकताका-कार्य पूर्ण प्रभाव-से परिचालित किया था।

महम्मदके पिता अवदुल्ला पुत्र-जन्मके पहले ही पर-लोकवासी हो चुके थे, इस कारण पुत्रमुख-दर्शनकी जो उनकी उत्कृष्ट आकाङ्क्षा थी, सो पूरी न होने पाई। इधर महम्मदकी माता अमीना भी पति-वियोगसे दो वर्ष वाद ही परलोक सिधारी। अव इस मातृ पितृहीन वालक महम्मदका पोषण-भार इनके वृद्ध पितामह कावा-के पुरोहितके हाथ सौंपा गया। पीछे पुरोहितके मरने पर इनके चचा आवुतालिव आवदल इनकी देखभाल करने लगे। वाल्यकालमें महम्मद भेंडी चराते और मरु-देश जा कर वनजामुन तोड लाते थे। इसके सिवाय इनके वाल्यकालका और कुछ हाल मालूम नही होता। इस समय इन्होंने दीन-दुखियोंके साथ भ्रमण कर दारिद्र्य कष्टका अच्छा अनुभव किया था।

परवर्त्तीकालमें इन्हें अपने चचाके साथ सिरिया, दमस्कस, वोगदाद तथा वोसरा आदि देशोंमें वाणिज्य-व्यवसायके लिये कई वार जाना पडा था। युवाकाल-में इन्हें युद्ध करनेकी भी इच्छा हुई थी। उस समय व्यापारियों तथा तीर्थयात्रियोंको दस्युसम्प्रदाय बुरी तरह सताता था। इसलिये अभिभावक चचाके आज्ञा नुसार २० वर्षकी उमरमें ये दलवल सहित उसका दमन करनेको चल पड़े। इस सम्प्रदायका मूलो-च्छेदन करनेके लिये उन्होंने इधर उधर भ्रमण भी किया। उन लोगोंके साथ युद्धविग्रहादिमें लिप्त रहनेके कारण इनका यौवनकाल युद्धवासनासे प्रेरित हो उठा था। इनकी यह उद्दाम वीरत्वप्रभा इनके भविष्य धर्म-ज्ञानको पुष्ट करती थी।

युवाकाल इस प्रकार रणरङ्गसे रञ्जित होने पर भी ये कभी कभी एकान्तमें बैठे दिखाई देते थे। इनका हृदय निष्ठुरताके उपादानभूत मूर्त्तिपूजा तथा वृथा कर्म-काण्डके आडम्बरसे खिन्न हो जाता था। फिर भी इन्हें पितृपितामह-अनुष्ठित क्रियाकलापमे लीन होना ही पड़ता था। एक दिन कावा मन्दिरके निर्माणकालमें इन्हें भी प्रसिद्ध कृष्ण प्रस्तर उठाना पडा था। यही सव देख सुन कर प्राचीन धर्ममें इनको अविश्वास होने लगा। अतएव इस प्रचलित धर्मको सुधारनेके लिये ये चिन्तित हो उठे।

वासरा प्रस्थानकालमें एक दिन वहांके नेष्टोरिय-मठा ध्यक्ष वोहिवाके साथ महम्मदका वार्त्तालाप हुआ था। इस वृद्ध धर्मयाजकने इनकी धर्माभिव्यक्ति और वाक्या-भाससे यह भली तरह समझ लिया, कि आगे चल कर यह युवक एक महापुरुष होगा। तदनुसार उस वृद्धने युवक-के अभिभावकसे भेंट की और कहा, "महाशय! एक समयमें यह वालक श्रेष्ठ पुरुष होगा, अतएव यत्नके साथ आप यहूदियोंके हाथसे इसे वचावें'।

पचीस वर्षकी अवस्थामें महम्मद अपने अभिभावकके आज्ञानुसार खदिजा नाम्नी एक धनी विधवा रमणीके घर गये और उसका विषयकर्म जांचने लगे। पीछे इस रमणीकी ऐश्वर्यवृद्धिके लिये इन्होंने वाणिज्य-व्यापारमे ध्यान दिया। इस कारण उन्हें देश-विदेशोंमें भी भ्रमण करना पड़ा था। ईसाकी लीलाभूमि पालेस्तिन तथा समृद्धशाली प्राचीन सिरिया नगर भी उन्होंने इसी भ्रमण-कालमें देखा। यहां पूर्वतन धर्मयाजकोंकी प्रतिमूर्त्ति, हिजरकी पार्वत्यगुहा और मरासागर आदि नैसर्गिक चित्रसमूहको देख ये इस प्रकार भावमे विभोर हो गये मानो किसी ऐसी शक्तिसे अनुप्राणित होने पर हृदय आलोड़ित हो उठा हो। ईसा-अवतारकी अलौकिक लीला तथा सिरियाके धर्मविस्तारका स्मरण कर

महम्मद बेसुध हो गये थे। पर उपरोक्त स्मृतियोंने इनके भग्न हृदय-तरुवरको फिरसे पल्लवित कर दिया।

महम्मद अपने पर एक बड़ा बोझ ले कर स्वदेश लौटे। यहां आ कर इन्होंने यौवनसुलभ प्रणयासक्त हो खदिजाका पाणिग्रहण किया। यद्यपि विधवा खदिजा अपने पतिसे कुछ बड़ी थी फिर भी विवाहका फल सुखमय ही हुआ।

खदिजाके सहवाससे महम्मद सुखी तो थे, पर केन्द्रीभूत धर्मलालसा उनके हृदयसे क्षणमात्र भी दूर न होती थी। विवाहोपरान्त करीब १५ वर्ष तक ये धर्मोन्नतिका चिन्तन एवं पर्वतके खोहमे आ आ कर सर्वदा चित्तसंयमकी चेष्टा किया करते थे। इस समय कार्यवशात् उन्हें फिर सिरिया तथा दक्षिण-अरब जाना पड़ा। विदेशयात्रामें इन्हें जो कुछ सामयिक बातें मालूम हुईं उनसे ये भलीभांति समझ गये, कि वहांके लोग मूर्त्तिपूजन-धर्मके विशेष पक्षपाती नहीं हैं। अगर मैं अपना मत प्रकट करूं तो धर्मपरिवर्त्तन वाले अनेकों मनुष्य मेरा अनुसरण कर सकते हैं। इसी उद्देश्य सिद्धिके निमित्त इन्होंने कई ज्ञानी यहूदियों तथा ईसाइयोंसे बातचीत की जिनमे अबदुल्ला इब्न सालूम तथा वराकके नाम उल्लेखनीय हैं। वराक इनके सालेके लड़के थे। इन्होंने मूर्त्तिपूजन धर्मसे विरक्त हो कर पहले यहूदीधर्म और पीछे ईसाधर्मको स्वीकार किया था। विभिन्न धर्मावलम्बियोंके सहवाससे महम्मद अच्छी तरह समझ सके, कि अरबमे एक नवीन धर्म स्थापन करना बहुत जरूरी है।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि जबसे खदीजाके साथ महम्मदका विवाह हुआ, तबसे इनके हृदयमें धर्मसुधारकी भावना जग उठी। यह भावना भिन्न भिन्न मनुष्योंके वार्त्तालापसे बलवती होती गई तथा इसने मक्कामदीना एवं तारेफवासियोंके हृदयमें क्रान्ति उत्पन्न कर दी। महम्मदके अभ्युत्थानसे पहले मक्कावाले भी अन्यान्य देशवालोंकी तरह मूर्त्तिपूजक थे। बहुतेरे अपनी इच्छाके विरुद्ध पितृपुरुषाचरित पार्वणोत्सवमें योगदान करते थे। उस समय अरबवाले अनेक देवताओंकी उपासना नहीं करते, एकमात्र अल्ला हीको वे लोग सर्वजगत् नियन्ता और परमपिता समझते थे। सौगन्ध लेनेके समय, विपत्ति पड़ने पर तथा दीक्षित होनेके समयमें वे लोग अल्ला हीका नाम लेते थे। दस्तावेजों पर "बिसमिक अल्लाहुम्मा" नामकी मोहर लगाते थे। निम्नतन देवताओंकी उपासना निश्चित समयको छोड़ और कभी भी नहीं करते, यहां तक कि नाम भी नहीं लेते थे। पूजा आदिमें विशेष भक्ति न रहने परभी पुण्याहके भोजनोत्सवमें उन लोगोंका एक महासम्मिलन बैठता था। इस सम्मिलनके पुण्यदिवसमें शत्रु, मित्र सभी एकत्रित होते और पारस्परिक मनोमालिन्य हटा कर आपसमें एक दूसरेको आलिङ्गन करते थे।

देवताओंमे अभक्ति होनेके कारण अरबवालोंका धर्मभाव दूर होता गया। पूर्वतन मद्यपान, पशुहिंसा, द्यूतक्रीड़ा, अवैध प्रेम, प्रतिहिंसा, आत्मकलह तथा दस्युप्रवृत्ति आदि व्यापार अरबवालोंका अङ्गभूषण हो गया था। यहां तक कि, इन लोगोंके काव्य भी अश्लील शब्दोंसे भरे रहते थे। अरबकी ऐसी उच्छृङ्खल अवस्थामें संस्कृत धर्मपरिवर्त्तन आवश्यक होने पर भी इस जातीय अभावकी ओर किसीका ध्यान नहीं जाता था। केवल तायेफ्‌के ओमय् इब्न आविल् सलत्, मक्काके जेद इब्न उमर, मदीनाके आबू कायेस इबल् आवि अनस् तथा आबू अमीर नामक महात्माओंने मूर्त्तिपूजन-मतके विरोधी हो कर किसी नये मतका अनुसरण करना चाहा था। किन्तु इनलोगोंकी भी चेष्टा यहीं तक रही, चिरप्रचलित धर्म मिटा देनेकी इच्छा किसीने भी नहीं की। पापसे मुक्त होनेके लिये इन लोगोंने ब्रह्मचर्यव्रतका अवलम्बन किया था।

ये लोग हानिफ् नामसे विख्यात रहने पर भी किसी विशेष मतके अवलम्बी न थे। यही कारण था, कि ये किसी स्वतन्त्र सम्प्रदायको स्थापना न कर सके। जनसाधारणके साथ शिष्ट वार्त्तालाप करने पर भी समाजसे इन लोगोंका कोई घनिष्ठ सम्बन्ध न था। सभी अपनी अपनी आत्मोन्नत्तिमें हो लगे रहते थे। जातीय उन्नतिकी ओर किसीका भी ध्यान नहीं जाता था। इसीलिये इन लोगोंका मत प्रचार न हो सका। मदीनामें केवल हनीफीकी ही संख्या बढ़ी चढ़ी थी।

हनफियोंके देवताकी बहुत्वकल्पना स्वीकार करते हुए भी उन्होंने अल्लाको ही एकमात्र ईश्वर मान लिया था। देवशक्तियोंकी यह एकत्वकल्पना उनकी प्रज्ञाका फल नहीं, वल्कि संस्कारका फल था। यही मत आगे चल कर महम्मदीय-इस्लामधर्मके नामसे विख्यात हुआ।

इस ज्ञानमार्गका अवलम्बन उन लोगोंने तर्क, मीमांसा अथवा युक्तिसे नहीं, वल्कि अपने अपने विवेक-बलसे ब्रह्मचारी हो समस्त सांसारिक कामनाओंको तिलांजली देते हुए किया था। लोगोंने इसे मूर्त्ति-पूजा विरोधी मार्ग समझते हुए भी पापप्रक्षालन आदि कार्यों के लिये उपयोगी जान कर स्वीकार कर लिया था।

इस प्रकार वाइविलमें लिखे हुए इब्राहिमका धर्ममत (Ideas of Law and Gospel) फिरसे जनसाधारणमें फैल गया, तथा धीरे धीरे सब कोई प्राचीन धर्मसे नवीन धर्ममें आने लगे।

धर्मान्तरप्रयासी महम्मद भी इसी समय अपने साला वरका-इवन-नौफलके साथ आ कर हानिफ दलमें मिल गये। यह धर्म इन्हें हृदयानुकूल मालूम हुआ। अतएव उन्होंने उस विश्वव्यापी सर्वज्ञ जगदीश्वरको प्रणाम किया तथा अपने हृदयकी गूढ़ व्यथा सुनाते हुए कर्त्तव्य पथ पर दृढ़ रखनेकी प्रार्थना की।

इसके वाद वृद्ध जैद-इब्न अमरके पथका अवलम्बन कर महम्मद अपना समय निर्ज्जन हीराशैलशृङ्ग पर योगसाधनमें विताने लगे। इस प्रकार वर्षों भगवद् भजन करनेके वाद इनका योग सिद्ध हुआ। हनिफी-मत इनके हृदयमें दखल जमाये हुए था। अब कभी तो ये मानसिक उत्तेजनाके समय ईश्वरके दर्शन करते और कभी ईश्वरके प्रेममें तल्लीन हो जाते थे। इस प्रकार उनका हृदय सुगभीर ईश्वर-प्रेममें डूब गया।

इस प्रकार चौवीसवें वर्षमें ईश्वरकी कृपासे महम्मद पैगम्बरके नामसे विख्यात हुए। अब ये साधारण योगीकी तरह गिरिगुहामें छिपे नहीं रहते, वल्कि जन-समाजमें सत्यधर्म अर्थात् इस्लाम (मुक्ति)-धर्मका प्रचार करनेके लिये वाहर निकल पड़े। वाइविल-वर्णित ईसाई महात्माओंने पवित्र धर्मप्रचारके लिये जिस प्रकार आत्मजीवन उत्सर्ग कर दिया था, इस्लामधर्म-प्रवर्त्तक महम्मदने भी ठीक उसी प्रकार अपनी अभीष्ट वस्तुको जनसाधारणमें वितरण करनेके लिये कमर कसी। महम्मद को इस नये धर्मका प्रचार करनेमें और भी दो तरहसे सहायता मिल गई। एक तो यह है, कि हनिफीगण उस समय अपने नये धर्मकी प्रतिष्ठाके लिये एक पैगम्बरकी तलाशमें थे, दूसरे यहूदियोंके मनमें मूसाके आविर्भाव-की आशा लगी थी। दोनों मतावलम्बियोंने भिन्न भिन्न भावसे इसी एक महम्मदकी शरण ली। हनफियोंने इनके वचनको ईश्वरप्रोक्त और अनाभिज्ञ यहूदियोंने उसे मूसाका वचन समझा। इस प्रकार यह दोनों विभिन्न सम्प्रदाय महम्मदीय धर्मदीक्षा लेनेके वाद क्रमशः एक धर्मावलम्बी हो एक ही जातिमें मिल गये।

महम्मदीय धर्ममत प्रचार होनेके पहलेकी महम्मदके योगसाधन तथा मुक्तिलाभके सम्बन्धमें एक अलौकिक घटना इस प्रकार सुनी जाती है—हीराशृङ्ग पर जिस समय महम्मद चित्तवृत्ति निरोध कर कृच्छ्रातिकृच्छ्र योग-साधन कर रहे थे, उसी समय रमजान मासकी एक गहर रातको स्वर्गीय दूत जिब्राइल (Gabrial) इनके पास आया। महम्मद उस समय सोये हुए थे। दूतने अपने पाससे एक रेशमी पत्र निकाल कर इनके सामने रख दिया। देवलिपि पढ़नेकी क्षमता उन्हें न रहने पर भी दूतने उन्हें दुवारा पढने कहा। इस प्रकार मूसा, यीशु आदिकी नाईं पहले उसी दूतसे महम्मदको ज्ञान प्राप्त हुआ और तभीसे ये पैगम्बर समझे जाने लगे।

४० वर्षकी अवस्थामें महम्मदने ज्ञानवितरण करने-के लिये फिर भी जनसमाजमें प्रवेश किया। सबसे पहले उन्होंने अपने परिवारको ही दीक्षित किया। इनकी प्रियतमा पत्नी खदीजा, वरका, आवुवकर तथा चचेरे भाई आली वेन् आवि तालेव आदिने इनके ईश्वरानु-मोदित वाक्य पर लट्टू हो कर इन्हें अल्लाका दूत समझा।

इसके वाद प्रायः तीन वर्ष तक पूर्वप्रचलित मूर्त्ति-पूजक मत-वालों तथा नवीन मत-वालोंके बीच घोर तर्क-वितर्क चलता रहा। एक दिन महम्मदने हासमवंशीय गणमान्य सज्जनोंको अपने यहां निमन्त्रित किया और

कहा, "मैंने जो जिब्राइल-प्रोक्त मोक्षप्राप्तिके परम रत्न प्राप्त किये हैं उन्हें आप लोगोंके बीच वितरण करना चाहता हूं, इसीलिये आप लोग यहां बुलाये गये हैं। आप लोग मूर्त्तिपूजा छोड़ कर एकमात्र जगत्पिताकी ही उपासना करें। बहुदेवता-भक्तिको वृथा आडम्बर अनावश्यक है।' महम्मदकी इस एकेश्वरवादिताको न समझ सकनेके कारण लोगोंने इन्हें नास्तिक समझ कर टाल दिया। यहा तक कि इनके वृद्ध एवं ज्ञानी चचा आबु तालिबने भी इनसे यह पागलपनी छोड़नेके लिये अनुरोध किया। किन्तु उनके विवेकी एवं ज्ञानी पुत्र अलीने पिताके समक्ष ही महम्मदको प्रणाम कर इनका शिष्यत्व स्वीकार कर लिया और इनके धर्मप्रचारक होनेकी प्रतिज्ञा की।

महम्मदको इस प्रकार भिन्नमतके प्रचारमें कटिबद्ध देख कर आत्मीयगणोंने भी इनके चचाकी तरह लगती बातोंसे उनका तिरस्कार करना शुरू किया। इस प्रकारके दुर्वाक्योंसे वे व्याकुल हो गये और क्रोधित हो कर सिंहकी तरह गरज उठे, "यदि सूर्य दाहिने हाथ पर और चन्द्रमा बायें हाथ पर आ कर उदय हों, तो भी मैं पथभ्रष्ट नहीं हो सकता।"

गुरुजनोंसे इस प्रकार भर्त्सित तथा लांछित होने पर महम्मदने मक्काके प्रत्येक प्रधान नगरमें और भी उत्तेजित हो कर अपना धर्म प्रचार करना आरम्भ कर दिया। इनकी वक्तृताका प्रधान उद्देश्य था मूर्त्तिपूजाके ढोंगकी असारता तथा एकेश्वरवादकी सत्यता सिद्ध करना। कभी कभी ये काबा मन्दिरके दरवाजे पर कुरानके वचन लिख देते थे। विख्यात अरबी कवि लेबिस् इनकी इस अमानुषिक ज्ञान प्रतिभा पर मुग्ध हो कर इनका शिष्य तथा इस्लाम धर्म प्रचार करनेको तैयार हो गया था।

महम्मद जैसे नीतिविशारदके उपदेश तथा वाग्मिता पर मुग्ध हो बहुतेरे इनके मतके पक्षपाती तो हो गये, पर उन्होंने अपना चिरपोषित मूर्त्तिपूजन-मत नहीं छोड़ा। महम्मदका नवीन धर्ममत प्रकृत है या नहीं, इसकी परीक्षा करनेके लिये वे लोग इनसे कोई अलौकिक क्रिया दिखानेका अनुरोध करने लगे। इस पर महम्मदने कहा था, "सुनो! मैं किसी अनैसर्गिक कार्य द्वारा अपने सत्य धर्मका अपलाप नहीं करना चाहता। मेरे सत्यधर्मका प्रचार सत्यपथसे ही होगा। वृथा आडम्बरसे धर्मका ह्रास होता है इसे निश्चय जानो।' महम्मदने अपने जीवनमें एक बार एक अलौकिक क्रिया दिखलाई थी। उस क्रियाको इनके शिष्योंने अति रञ्जित कर जनसाधारणमें प्रकट किया था। कहते हैं, कि महम्मद एक दिन रातको मक्कासे जेरूजेलम् गये और वहांसे स्वर्गपुरीका दर्शन करके रातको ही मक्का लौट आये। वे गर्दभाकृति बोरक (विद्युत) पर चढ़ कर स्वर्ग गये थे। किन्तु कुरानमें इसे स्वप्नमाया बतलाया है।

इसी समय आबु ओबिदा, महम्मदके मामा हामजा, ओसमान, ओमार आदि संभ्रान्त मक्कावासियोंने आबुबकरकी प्ररोचना पर महम्मदीय मतका अवलम्बन किया था। खदीजाके मरने पर महम्मदने आबूकी कन्या आमेसाका पाणिग्रहण किया। आबूने अपना सारा समय जमाई महम्मदके इस्लाम धर्मका प्रचार करनेमें बिताया था।

मक्कामें कुछ लोगोंके महम्मदीय धर्मावलम्बी होने पर भी दश वर्षके भीतर वहां इस्लामधर्मकी जड़ जमने न पाई। कोरेशवंशीय मक्कावासी यदि हसेमवंशावतंस महम्मद तथा उनके शिष्योंके विरुद्ध खड़े न होते, तो महम्मदीय इस्लामधर्मका कभी भी अरबमें प्रचार नहीं हो सकता था।

मूर्त्तिपूजकोंने महम्मदके शिष्यों पर ऐसा घोर अत्याचार करना आरम्भ कर दिया कि वे लोग दलके दल अबिसीनीया आदि देशोंमें आत्मरक्षार्थ भाग गये। इस प्रकार दोनों पक्षके साम्प्रदायिकने धीरे धीरे भीषण आकार धारण किया जिससे वहां राष्ट्रविप्लवके चिह्न दिखाई देने लगे। मूर्त्तिपूजकोंने महम्मदका काम तमाम करनेका इरादा किया। इन लोगोंका यह षड़यन्त्र चारों ओर व्याप्त हो गया, मक्का नगरमें सनसनी फैल गई। मूर्त्तिपूजकों और इस्लाम धर्मावलम्बियोंमें तुमुल संग्राम छिड़ गया। महम्मद मक्कासे यएव् नगर भागे। इन्हीं के नामानुसार इस नगरका नाम 'मदीना' वा 'मदिनात् अलनबि' पड़ा। ६२२ ई०की १५वीं जुलाईको महम्मद मक्कासे मदीना

आये थे। उसी दिनसे मुसलमानोंका हिजरी संवत् गिना जाता है।

पहले ही लिख आये हैं, कि हनिफियोंकी संख्या मक्काकी अपेक्षा मदीनामें ही अधिक थी। पहलेसे ही इन लोगोंके हृदयमें इस्लामका बीज अंकुरित था। ये लोग महम्मदको बुलानेके लिये अपना आदमी भी मक्का भेज चुके थे। अभी महम्मदको स्वयं उपस्थित देख इनके आनन्दका पारावार न रहा। झुंडके झुंड लोग आ कर इनके शिष्य होने लगे। सबोंने एक स्वरसे प्रतिज्ञा की कि महम्मदके शत्रुओंको समूल ध्वंस करना ही हमारा एक मात्र कर्त्तव्य है और तभी हम लोग उनके सच्चे शिष्य हो सकते हैं।

इसके अनुसार मदीनावासियोंने महासमारोहसे अग्रसर हो कर महम्मदको बुलाया और राजकीय तथा धर्मसम्बन्धीय सभी कार्य उन पर सौंपा। उन लोगोंने इस नये मतका जनसाधारणमें प्रचार करनेके लिये महम्मदसे विशेष अनुरोध किया। मदीनावासी इस्लाम धर्मप्रचारके लिये हथियार उठानेसे भी वाज नहीं आये थे।

मदीनावालोंके इस प्रकार आग्रह तथा अकांक्षासे महम्मदका हृदय उच्च अभिलाषाओंसे भर गया। अब इन्हें मालूम हो गया, कि मेरा यह सनातन धर्म अति शीघ्र उच्चासन लाभ करेगा। इसके लिये वे काफिरोंसे युद्ध कर मोक्षधर्मका प्रचार करनेकी युक्ति ढूंढ़ने लगे। बाल्यकालकी युद्ध लालसा आज इनकी सहायक हुई। ये नंगी तलवार ले कर सदलबल विधर्मियोंमे धर्मस्थापन करने निकल पड़े तथा 'एक हाथमें खड्ग और दूसरेमें कुरान' इनके धर्मका मूल मंत्र हुआ। जब तक अरब तथा इसके आस पास प्रदेशवालोंने महम्मदको ईश्वरप्रेरित व्यक्ति और अल्लाको ही एकमात्र ईश्वर न मान लिया तब तक इन लोगोंकी तलवार नंगी ही रही।

महम्मदके शिष्योंने कई छोटे छोटे युद्धों तथा लूटपाटमें सफलता दिखा कर स्पर्द्धा प्राप्त की। अनन्तर मूर्त्तिपूजक कोरेसीदलके नेता आवुसेफियानके साथ हासेमवंशीय महम्मदके अनुयायियोंकी तीन बड़ी बड़ी लड़ाइयां हुई थीं। आवू तालेवकी मृत्युके बाद मक्काकी बागडोर फिर महम्मदके हाथ लगी। हासेमवंशके चिरशत्रु आवूसाफियानेने सिरिया जानेवाले वणिकोंको महम्मदके लुटेरे दस्यु संप्रदायसे बचानेके लिये एक हजार सेना भेजी। महम्मदके अनुयायी मदीनासे दश कोस वेदारकी उपत्यकामें लूटनेके उद्देशसे छिपे थे। आवूसाफियाकी सेनाओंने यहां आते ही शत्रुदल पर आक्रमण कर दिया। परन्तु सिर्फ सौ मुसलमानोंने प्रायः हजारसे ऊपर कोरेसाइतोंको परास्त कर नाकोदम कर दिया था।

आवूसफियाने इस अपमानजनक सम्वादको पाते ही प्रतिहिंसाके लिये तीन हजार सेना इकट्ठी की और मदीनाकी ओर कदम बढ़ाया। मदीनाके समीप अहोद पर्वत पर दोनों दलमें मुठभेड़ हुई। महम्मदीय रक्तसे पहाडी प्रदेश तराबोर हो गया। कोराइस दलकी जीत तो हुई पर वे लोग अधिक दिन तक निश्चिन्त न रह सके। मुसलीमगण फिर भी उत्साहित हो कर रणक्षेत्रमें उतरे। इस बार आवूसेफियाने मदीनामें घेरा डाला. परन्तु अलीने वीरोचित साहससे उन्हें मार भगाया। मुसलमानोंके बार बार भीषण आक्रमणसे मूर्त्तिपूजकोंको महती क्षति हुई थी। आखिर वे सन्धि करनेको वाध्य हुए। दोनों पक्षकी सम्मत्तिसे दश वर्षके लिये अरबमें शान्ति-स्थापित की गई।

महम्मद इस समय कोनोकाव, कोराइध, नादिर और खैवर प्रभृति निरीह यहूदी जातियोंको पराजित कर इस्लामधर्ममे दीक्षित करने लगे। उनके नगर तथा दुर्ग लूटे गये। अनेक प्रकारकी यातनाएं दे दे कर इन सब यहूदियोंके नगर और दुर्गको अधिकारमें कर लिया गया। जिन्होंने स्वेच्छासे इस्लाम धर्म ग्रहण किया, केवल वे ही भयानक अत्याचारसे वच सके। स्वधर्म त्याग पाप है, ऐसा समझ जिन लोगोंने परधर्म ग्रहण करनेमें अनिच्छा दिखलाई, वे निर्वासित हो कर अन्तमें बुरी तरह मुसलमानोंके शिकार बने।

६२८ ई०में खैवरयुद्धमें महम्मदने अति निष्ठुरताका परिचय दिया और किनान-आबि-अल् हकाइक तथा होहय राजको पराजित और निहत कर हकाइककी पत्नी सफियाबिन होहयके साथ विवाह कर लिया। इस समय जेनाव नामकी एक खैवर रमनीने इनको विष खिला

दिया। विषकी ज्वाला महम्मदके हृदयमें आजीवन जलती रही थी। खैबरको विजयकर महम्मदने फदक्, वदी अल-कोरा आदि यहूदी उपनिवेशों पर अधिकार जमाया।

पूर्वोक्त बद्र, ओहद और फोसिर युद्धके बाद कोराइसोंके साथ हौदेविय नगरमें जो सन्धि हुई थी, उसीसे इस्लाम धर्मको प्रतिष्ठा तथा मुसलमानोंके प्रभावका अनुमान हो जाता है। सन्धिके पश्चात् दोनों दलोंने शिर उठाया। परन्तु प्रतिहिंसारूपी वह्नि दिन पर दिन प्रज्वलित होती गई। ६२६ ई०में उमरात-अल्-कड़ा उत्सवके अवसर पर दो सहस्र सेनाओंके साथ महम्मद मक्का आये। मक्कावालोंने हथियारसे उनका स्वागत किया। फलतः मुसलमानोंके साथ कोराइसोंका घोर विरोध खड़ा हुआ। इस द्वेषवशतः कोराइसने महम्मदके भक्त अनुचर खोजायाको मार डाला।

खोजाहतोंने यह संवाद महम्मदसे जा कहा। महम्मद मक्कावालोंको दण्ड देनेके लिये चल पडे। इनके आगमनसे मक्कावाले भयभीत हो गये। उन्होंने फिरसे आबु सोफियानको शान्ति-रक्षाके लिये महम्मदके पास भेजा। बहुत अनुनय विनय करने पर भी महम्मदका हृदय न पिघला। ६३० ई० (रहमान हि० ८)-में महम्मदने १० हजार सेनाओंके साथ मक्कावालोंको दण्ड देनेके लिये यात्रा कर दी। राहमें सैकड़ों आदमी इनके साथी हो गये। इस वृहत् सेनाके आगमन-सम्वादसे हो तायेफवालोंने विना युद्धके आत्म समर्पण किया। आबुसोफियानकी प्रवंचनासे मक्का नगर भी शीघ्र ही महम्मदके हाथ आया। इन्होंने अपने अधीनस्थ कर्मचारियोंको हुकुम दिया, 'मक्कामें कोई भी रक्तपात न करे, प्राचीन काबा मन्दिर पर आघात होने न पावे और सभी इस्लामधर्मको ग्रहण कर पूर्व प्रथानुसार धर्म कर्मका पालन करे। केवल काबा मन्दिरके अभ्यन्तर तथा आस पास जो सब देवमूर्त्तियां हैं उन्होंको ध्वंस करना होगा। इस्लामधर्ममें मूर्त्तिपूजाका चिह्नमात्र भी रहने न पावे। प्रत्येक गृहस्थके कुलदेवताका मूर्त्ति और मक्काके बाहरवाले देवतोओंको ध्वंस करना होगा।'

महम्मदके आज्ञानुसार कार्य होने लगा। बातकी बातमें मक्काका प्राचीन सौन्दर्य जाता रहा और नयी शोभासे, नये भावसे मक्का नगरमें धर्मसम्बन्धीय क्रियाकलाप परिचालित होने लगा। जो सिया और जेरुजेलमके लिये जैसा संस्कार किया गया था महम्मदने मक्काके लिये भी वैसा ही किया।

मक्कामें इस्लाम धर्मकी प्रतिष्ठाके साथ साथ महम्मदने काबा मन्दिरके प्राचीन उत्सवादिके भी संस्कार किये। ६०२ ई०में दुल-अल हिज्जके भोजनोत्सवमें इन्होंने स्वयं भाग लिया और बड़े समारोहके साथ इसका सम्पादन किया। इस समय इन्होंने इब्राहिमकी चलाई प्रथामें बहुत कुछ परिवर्त्तन किया और मलमास गणनाकी प्राचीन प्रथाको उठा कर चन्द्रमासके हिसावसे वर्षकी गणना करके नई पंजिका चलाई।

मक्काविजयके पश्चात् कोराइस जातियोंके साथ साथ और भी कितनी ही भ्रमणशील जातियोंने मुसलमानोंको अधीनता स्वीकार कर ली। केवल ताइफवासी तकीफों तथा हवाजिन जातियोंने ही उद्धत मुसलमानोंके साथ युद्ध करनेका निश्चय किया। मक्का और ताइफके मध्य औटास नगरमें इन लोगोंने छावनी डाली। हेनाइनको उपत्यकामें दोनों दलमें भीषण युद्ध हुआ। प्रथम युद्धमें महम्मद-सेना तथा खुद महम्मदको भी बहुत तकलीफ उठानी पड़ी थी। यह देख कर खाजराजोंने प्रबल वेगसे शत्रुसेना पर आक्रमण कर दिया। थोड़े ही समयमें हवाजियोंने रणमें पीठ दिखाई। अब महम्मदने स्वयं उनका पीछा किया और ताइफ नगर तक खदेड़ा। चौदह दिन तक ताइफ नगरको घेरे रहने पर भी जब महम्मदका अधिकार वहां जमने न पाया, तब वे पुनः जीरानाको लौट आये। युद्धमें जो कुछ धन हाथ लगा, उसे महम्मदने वेदौइन जाति तथा मक्काके सम्भ्रान्त लोगोंमें बांट दिया। जिन लोगोंके लेहू और बलसे महम्मदने विजयपताका फहराई थी, उन्हें कुछ भी न मिला। जो हो, महम्मदके इस प्रकारके कार्यसे मक्काके गणमाण्य तथा दुर्द्धर्ष वेदौइन जाति वशीभूत हो गई थी।

कोराइस जातिको अवनतिके साथ साथ इस्लाम धर्मका पूर्ण अभ्युदय हुआ। महम्मदने मक्काको इस्लाम धर्मका जेरुजेलम बनानेकी चेष्टा की। यद्यपि मूर्त्तिपूजन-धर्म और महाभोज आदि कई आचारोंको लोप न

करके भी ये इब्राहिमका नाम मिटा ही देना चाहते थे, फिर भी अपने सनातन इस्लामधर्ममें मूर्त्तिपूजनका प्रश्रय देनेसे ये जरा भी संकुचित न हुए। धर्मके सिवा और भी अन्यान्य विषयोंको धर्मसे स्थान दे ये कोराइस सर्दारोंको अपने काबूमें करनेके लिये अग्रसर हुए।

कोराइसोंको अपने हाथमें लानेके लिये महम्मदने सरदार आबु सोफियानको मक्काके दक्षिण एक विस्तृत प्रदेशका शासन भार सौंपा। इतना ही नहीं, उन्होंने यहां भी कहा था, कि जो सब कोराइस इस्लामधर्मके पक्षपाती होंगे तथा उसकी उन्नत्तिके लिये जीवन उत्सर्ग करेंगे वे ही मेरे कृपापात्र होंगे। महम्मदके इस वाक्य तथा उदारतासे कोराइसोंने इस्लामधर्मको स्वीकार कर लिया।

मक्कावालोंके ऊपर महम्मदकी ऐसी उदारता देख मदीनाके लोग बड़े दुःखित हुए। उन लोगोंने महम्मदसे कहा, 'हम लोगोंने भी अब पैगम्बरके कार्यमें आत्मोत्सर्ग कर दिया है, अतः हम लोग भी इस कार्यके लिये पुरस्कार पाने योग्य हैं। अपने प्रधान सहायकों तथा धर्मरक्षकोंके मुंहसे इस प्रकार हृदयग्राही वचन सुन कर महम्मदका हृदय पिघल आया और वे बोले, "तुम लोगोंने इस भयानक समयमें मेरी सहायता कर परमात्माकी आज्ञाका पालन किया है। यह और कुछ नहीं, केवल उन्हींकी कृपाका फल है। अन्तिम दिन तुम लोग उनसे अवश्य पुरस्कार पाओगे। मेरे साथ रह कर जो तुम लोगोंने ईश्वरके कार्य किये, इसके लिये मैं भी आजीवन तुम सबोंके साथ रहनेकी प्रतिज्ञा करता हूं। आजसे इस्लामधर्मका केन्द्र (मदीरात-अल् इस्लाम) तथा मेरा वासस्थान मदीना ही हुआ।" महम्मदकी इस सहृदयतासे गद्गद् हो मदीनावाले प्रेमाश्रु बहाने लगे और ईश्वरानुगृहीत इस व्यक्तिके सुख तथा दुःखमें भागी होनेका संकल्प किया। इस प्रकार अपनेको कोराइसोंकी अपेक्षा अधिक अनुगृहीत समझते हुए वे लोग वहांसे विदा हुए।

जीरानाका लूटका माल जो उन्होंने लोगोंके बीच बांटा था, उसीसे बहुतेरे महम्मदके दलमें मिल गये थे। इधर मक्कावालोंके प्रति महम्मदका अधिक प्रेम देख खजिरोंको महम्मदके प्रति द्वेष हो गया। महम्मदने मूर्त्तिपूजन प्रथाका लोप कर एकेश्वरवाद इस्लामधर्मकी स्थापना तो की, पर सांसारिक सुखलालसा उनके हृदयसे दूर न हो सकी। धर्मप्रवर्त्तक हो कर भी इस प्रकार धनऐश्वर्यकी आशा करना महम्मद जैसे ज्ञानी व्यक्तियोंके लिये उचित न था। इसी सुखलालसाने इनकी मृत्युके बाद इस्लामधर्मको कलङ्कित कर दिया था।

धर्मराज्यकी भित्ति दृढ़ करनेके लिये महम्मदने कर्मराज्यकी स्थापना की थी। आबु सोफियानको राज्यदान, अपने उमियदवंशमें राजशक्तिका आरोप तथा कोराइस जातिको इस्लामधर्म-रक्षाका भार दे कर इनने जो पक्षपात दिखाया इससे खारोजियाका द्वेष सहज हीमें प्रज्वलित हो सकता था। उनकी कार्यवलि उनके प्रवर्त्तित धर्मानुकूल बिलकुल न थी। अतएव यह स्पष्ट है, कि इस्लामधर्मके लिये जिस पवित्र जीवनकी आवश्यकता थी वह राज्यापहारी गर्वित इस महम्मदमें नाममात्र भी न था।

मक्का-विजयके बाद संपूर्ण अरब इस्लामधर्ममें दीक्षित हो गया। केवल नजरानवासी ईसाइयों, यहूदियनवासी मगीयों तथा यहूदियोंने ही इस धर्मको स्वीकार नहीं किया। पहले ही कह आये हैं कि होनाइन युद्धके बाद हवाजीनोंने इस्लामधर्म स्वीकार किया था। इस बार वे लोग महम्मदके शिष्य हो कर ताइफवासी तकीफों का दमन करनेके लिये आगे बढ़े। आखिर तकीफोंने आत्मरक्षामें असमर्थ हो कर महम्मदकी शरण ली।

ताईफ दूतोंने महम्मदके पास आ निवेदन किया कि हमारे देशवासी मूर्त्तिपूजाके घोर अन्धकारमें निमग्न हैं। ऐसे निर्बोध दुष्ट संप्रदायको अगर मदिरापान तथा अललाटदेवीकी पूजादि असत् क्रिया करने न दी जायगी तो वे सहजमें मनको प्रबोध नहीं दे सकते और तब नये धर्ममें इन लोगोंका लाना असम्भव हो जायेगा।"

इस पर महम्मदने गुस्सेमें आ कर उत्तर दिया, "विश्वस्त व्यक्तिमात्रको ही मद्यपानादि व्यसनक्रियाका अवश्य परित्याग करना होगा। वे मूर्त्तिपूजनकी तिलांजली दे कर एकमात्र भगवान्‌में आत्मसमर्पण करेंगे।

दिनमें पांच बार भगवान्‌का भजन करना होगा। जो नमाज नहीं पढ़ सकते उन्हें मोतद्दिनकी तरह अजान देना होगा। सब किसीको कुरानके अनुसार धर्म कर्मका पालन करना होगा। तब तकिफोंके लिये इतना किया जा सकता है, कि वे लोग अपने रब्बा मन्दिरकी अल्-लातदेवीकी मूर्त्ति स्वयं न तोड़ दूसरोंसे तोड़वा सकते हैं।"

इसके बाद दूतगण स्वदेश लौटे। वहां पहले उन्होंने रब्बादेवीके मन्दिरमें प्रविष्ट हो कर म्लानमुखसे कपड़े द्वारा अपना मुंह ढंक लिया और सारी बातें देशवासियोंसे कह सुनाईं। सर्वसम्मतिसे महम्मदके विरुद्ध युद्ध कराना ही स्थिर हुआ। परन्तु वे लोग महम्मदकी सेनाका प्रचण्ड प्रताप अच्छी तरह जानते थे, इसलिये उनके विरुद्ध युद्ध ठाननेका साहस न हुआ। पीछे जातीय सभाकी सलाहसे उन लोगोंने फिरसे सन्धि स्थापनका प्रस्ताव महम्मदके निकट पेश किया और यह भी कहला भेजा कि ताईफवासी इस्लाम धर्म स्वीकार करेंगे, परन्तु रब्बा मन्दिरको महम्मदकी सेना अथवा दूत ही आ कर ध्वंस कर जाये।

इतने दिनोंके बाद महम्मदकी धर्मयात्रा सफल हुई। अरबके परतन्त्र राजाओंने अब ग्रीस तथा पारसकी अधीनता त्याग कर महम्मदकी शरण ली; तात्पर्य यह कि महम्मद अब अरबके एकच्छत्र राजा हो गये। अपने जीवनके शेषकाल (अर्थात् ६४२ ई०)-में ये धर्मराज्य फैलानेकी इच्छासे ग्रीसके साथ युद्ध करनेको तैयार हो गये। हौदेवियाके युद्धमें जयलाभ करनेके बादसे इनकी बड़ी ख्याति हो गई थी। अतएव इस समय झुण्डके झुण्ड लोग इनके अनुयायी हो गये जिससे इनके बलकी वृद्धि होने लगी। प्रायः सभी महम्मदीय अनुचरोंने अपने दीक्षादाताका अनुसरण अस्त्र शस्त्रसे सुसज्जित हो कर किया था।

महम्मदने अपनी इस विशाल शक्तिका अनुभव कर आस पासके राजाओंको इस्लामधर्ममें दीक्षित होनेके लिये दूत भेजे। बेलका (प्राचीन मोआब) प्रदेशमें भी एक दूत भेजा गया था, पर वह मार डाला गया। महम्मदको इसकी खबर लगते ही उन्होंने दल बलके साथ वहांके अरबों पर चढ़ाई कर दी। बेलका पर ग्रीसका अधिकार था, इसलिये ग्रीस और महम्मदीय सेनाके साथ ६१६ ई०में युद्ध हो गया। मूतानगरमें मुसलमानोंकी सेना हार खा कर भागी, किन्तु खालिदकी वीरतासे उन्हें विशेष मुसीबतें न उठानी पड़ी थी। दूसरे वर्ष महम्मदने तीस हजार सेनाओंके साथ ग्रीष्म ऋतुमें ग्रीकोंके विरुद्ध युद्धयात्रा कर दी। ताबुक पद्दोम् सीमान्त तक पहुंचने पर जब महम्मदने देखा कि ग्रीसवाले लड़नेको तैयार नहीं तब वे क्षुब्ध हो कर स्वदेश लौटे। परन्तु इनकी यात्रा निष्फल न गई। लौटती बार इन्होंने अनेकों उत्तरीय अरबके ईसाइयों तथा यहूदियोंको इस्लामधर्ममें दीक्षित किया। ६३१ ई०के मार्च मासमें अन्तिम तीर्थयात्रासे लौट कर महम्मद ग्रीक जातिके साथ फिरसे युद्धकी तैयारी करने लगे। परन्तु इस बारकी तैयारी करते करते इनकी जीवनलीला (८वीं जून ६३२ ई०) समाप्त हो गई।

महम्मद एक महापुरुष तो अवश्य थे, पर उनका जीवन अनेक कलङ्कोंसे कलुषित था। कुरानमें तो इन्होंने चारसे अधिक ब्याह निषेध किया है, परन्तु दुःख है, कि स्वयं आप ही इस साधुवादका अपलाप कर गये हैं। कोई कोई ऐतिहासिक कहते हैं, कि महम्मदने पन्द्रह विवाह किये थे। इनमेंसे कुछ स्त्रियोंको तो पत्न्याधिकार भी प्राप्त न हो सका था। इनकी बारह स्त्रियोंके नाम नीचे दिये गये हैं।

महम्मदकी स्त्रियां।

	नाम	ई० सन्
१।	खुदिया (खयालिदकी कन्या, ६५ वर्षकी अवस्थामें देहान्त हुआ)	६१६
२।	शुदा (जमा खांकी कन्या)	६७४
३।	आयेशा (आबु बकरकी कन्या)	६७७
४।	हाफ्सा (उमद्-खत्ताकी कन्या)	६६५
५।	उमूशाल्मा (आबु उम्मयकी कन्या, यह महम्मदकी अन्यान्य स्त्रियोंसे अधिक दिन तक जीवित रही)	६७६

	नाम	ई०सन्
६।	उमहाबिबा (आबु सोफियानकी कन्या)	६६४
७।	जैनब (महम्मदके नौकर. जैयदकी विधवा स्त्री)	६४१
८।	जैनब (खुज़ीमाकी कन्या)	६४१
९।	मैमुना (हरितकी कन्या)	६७१
१०।	जवारिया (हरितकी कन्या)	६७०, ५ मास
११।	सफिया (होयर बिन् अख्तारकी कन्या)	६७०
१२।	मरिया कोप्तो (इजिप्टदेशकी कन्या, इसके गर्भसे इब्राहिम का जन्म हुआ)	६४७

अनेक भक्तसुधियोंने महम्मदके इस बहुविवाहका समर्थन करते हुए कहाहै, कि देवदूतगण साधारण मनुष्यों की तरह पार्थिव नियमोंके वशीभूत नहीं हैं। अतएव महम्मद अवतारी पुरुष थे।

जगत्‌के इतिहासमें असामान्य प्रभुता प्राप्त करनेवाले महम्मदकी जीवनीको आलोचना करनेसे मालूम होता है, कि एकमात्र सांसारिक व्यापारको छोड़ और कोई भी दोष इनमें न था। अरबके एकच्छत्र राजा हो कर भी इन्होंने साधुजीवनके अनुष्ठित ब्रह्मचर्यको सभी कठिनताओंका अवलम्बन किया था। खान, पान और वेशभूषा किसी विषयमें उनकी स्पृहा न थी। पर हां, धनरत्नादि पार्थिव ऐश्वर्यमे उनको कुछ कुछ आसक्ति देखी जाती थी। वे अपने जीवनके उद्देश्यानुकूल उपासनाके कठिन नियमोंका पालन कर गये हैं। एकमात्र नरलोकको मुक्तिके लिये ही वे पैगम्बर हो कर धराधाम पर उतरे थे, ऐसी उनकी उक्ति थी। मदीनावालोंको पैगम्बरका महत्व यदि वे न दिखलाते तो कभी भी उनके इस्लामधर्मका प्रचार नहीं हो सकता था। साधारण पुरुषकी तरह स्त्रियोंको भी इन्होंने अपने धर्मव्रतकी अधिकारिणी बनानेसे न छोड़ा। इसके लिये परवर्त्ती मुसलमान-सम्प्रदायने इनकी तीव्र निंदा की है। महम्मदने अपनेको कभी भी ईश्वरप्रेरित व्यक्ति न बतलाया। ये अपने कार्यसे ही देवदूत कहलाये। परन्तु मुसलमानोंके पवित्र ग्रन्थ कुरानने ही महम्मदकी प्रतिभाको बहुत कुछ मेघाच्छन्न कर दिया है। इनके चलाये इस्लामधर्ममें प्रकृत धर्मत्त्वकी गभीरता न रहने पर भी सामाजिक प्रतिपत्तियोंकी पूर्ण शक्ति विराजती है।

इनके कर्मजीवनका सूत्रपात मदीनामें और उसकी परिपुष्टि तथा अवसान मक्कामें हुआ था। इन दोनों स्थानोंकी कार्यपरम्परा ऐतिहासिकोंका आलोच्य विषय होने पर भी उनकी धर्मप्रतिष्ठाके सम्बन्धमें कोई इष्टसाधक विषय नहीं है। कुरानमें जिन सब नियमोंको वे ईश्वरकी अभिव्यक्ति बतला गये हैं वे सब नियम सर्वसाधारणके निकट विवादास्पद हैं। प्रतिहिंसा और प्रवञ्चनाने जो कलङ्ककालिमा इनके जीवन पर पोती है वह मिट नहीं सकती।

नख्लाके युद्धमें भीषण नर-हत्या तथा फोसिरके युद्धमें छः सौ निरपराध यहुदियोंके प्राणविनाशने महम्मदके जीवनको सदाके लिये कलङ्कित कर दिया है। पर वे एक प्रभूत प्रतिभाशाली पुरुष थे, इसमें सन्देह नहीं। केवल अपनी आकाङ्क्षाको पूर्ण करनेके लिये ही वे ऐसे ऐसे कठोर कर्म कर गये हैं।

विस्तृत विवरण कुरान और मुसलमान शब्दमें देखो।

महम्मद १म—तुरुष्कके एक सुल्तान, सुल्तान वायजिद्के पुत्र। बयाजिदकी मृत्युके बाद इनके पुत्रोंमें विरोध खड़ा हुआ जिससे ११ वर्ष तक तुर्कमें अराजकता फैली रही। पीछे १४१२ ई०में महम्मद पिताकी गद्दी पर बैठे। ये बड़े साहसी थे। इन्होंने अपने बाहुबलसे कोपादोकिया, सर्भिया, वालान्त्रिया राज्यको जीता था। कन्स्टैन्टनोपल्‌के सम्राट् मानुयल पालि उलोगसे मित्रता होने पर इन्होंने अपने राज्यके कई प्रदेश उन्हें भेंटमें दिये थे। सन् १४१२ ई०को ४१ वर्षकी अवस्थामें एड्रिया-नोपल् नगरमें इनका देहावसान हुआ। इनके पुत्र २य मुराद राजसिंहासनके अधिकारी हुए।

महम्मद २य—तुर्क जातिके एक सम्राट। इनने अपने बल और पराक्रमसे 'महत्'की उपाधि पाई थी। १४५१ ई०में पिता (२य मुराद)के मरने पर ये राजगद्दी पर बैठे और पुत्रसे भी बढ़ कर प्रजाका पालन करने लगे। जो भी हो, खेदका विषय यह है, कि ये गद्दी पर

बैठते ही युद्धमें उलझ गये। कोनस्टैन्टी नोपलमें घेरा डालनेके समय इन्हें ग्रीकसे लड़ना पड़ा और १४५३ ई०में नगर पर इनका अधिकार हो गया।

कोनस्टैन्टी नोपलके अधःपतनके बाद महम्मदके प्रयत्न तथा सुशासनसे वहांके दार्शनिक तथा विज्ञ मनुष्योंने पाश्चात्य साहित्यमें बहुत उन्नति की। दो तुर्क साम्राज्य, बारह मिस्र राज्य तथा दो सौ नगरों पर अधिकार कर लेनेके बाद ये ग्रेट ऐन्ड प्राउड सिगनरकी उपाधिसे विभूषित हुए। यह उपाधि इनके वंशधरोंने भी कुछ काल तक गौरवके साथ वहन की थी।

इसके बाद इटली जीतनेके लिये महम्मद युद्धकी तैयारीमें लगे। किन्तु दैवदुर्विपाकसे शूलरोगसे पीड़ित हो ये १४८१ ई०में यमपुरको सिधारे।

यह ईसा-धर्मके कट्टर विरोधी थे। ईसा-धर्मका मूलोच्छेद करनेके लिये इन्होंने ईसाइयोंको अनेक बार सताया था। ईसाइयोंको इस्लाम-धर्ममें लाना ही इनके अत्याचारका प्रधान उद्देश्य था। इसीलिये इन्होंने ८० हजार ईसाई नर-नारियोंको यमपुर भेजा था। ये अत्यन्त साहसी, बलवान्, तीक्ष्ण बुद्धिवाले और भाग्यवान् पुरुष थे। सद्गुणोंका समावेश रहने पर भी इनकी कठोरता, निष्ठुरता तथा अविश्वासने इनके जीवनको कलुषित बना दिया था।

महम्मद ३य—तुर्कके एक सम्राट्। पिता (३य मुराद) के मरने पर १५६५में ये कोन्स्टैन्ट नोपलकी गद्दी पर बैठे। राजगद्दी पर बैठते ही इन्होंने अपने १६ भाइयों-का काम तमाम कर तथा १० गर्भवती विमाताओंको जलमें डुबा कर अपना राज्य निष्कंटक बना लिया। जर्मनके कैसर द्वितीय वड़लफासके विरुद्ध इन्होंने युद्ध-यात्रा की थी। हङ्गरी जीतनेके लिये यह दो लाख सेना ले कर अग्रसर हुए थे। इस युद्धमें वहांके सम्राट्के भाई मैकिस मिलनने बड़ी वीरतासे इनका सामना किया था। युद्धमें विजय प्राप्त न करने पर भी महम्मदीय सेनाने हाङ्गेरी सेनाओंको बुरी तरह घायल किया।

हङ्गेरीसे लौट कर महम्मद ऐश्वर्य सुखमें मत्त हो गये। ये अपना अधिक समय अन्तःपुरमें रानियोंके साथ क्रीड़ा-कौतुकमें ही बिताया करते थे। १६०४ ई०में हैजेकी बीमारीसे इनकी मृत्यु हुई। मुगल सम्राट् औरङ्गजेबने जिस दोर्दण्ड प्रतापसे भारतवर्षमें इस्लाम-धर्मका प्रचार किया था ठीक उसी प्रकार ये बड़े साहससे प्राच्य जगत्में इस्लाम धर्मकी पताका फहराने में बद्धपरिकर हुए थे।

महम्मद ४र्थ—इब्राहिमके पुत्र, तुर्कोके एक सम्राट्। ये १६४६ ई०में कोनस्टैन्टी नोपलकी गद्दी पर बैठे। इस्लामधर्म प्रचार तथा मुसलमान राज्य-विस्तारके लिये इन्होंने भिनसीय जातिके विरुद्ध युद्ध-यात्रा की थी। दो लाख सेनाओंको युद्धमें मार कर काण्डिया पर इन्होंने अधिकार कर लिया तथा पोलैण्ड पर चढ़ाई कर दी। युद्धमें इनकी विजय तो हुई, पर वहां महम्मदीय शासन स्थापित न कर सके। दूसरे वर्ष पोलैण्डके राजा सोवेस्किने चोयेजिमके युद्धमें इन्हें हराया और अपना राज्य लौटा लिया। १६८१ ई०में ये राज्यच्युत कर कारागारमें डाल दिये गये। वहीं पर १६९१ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद—एक मुसलमान टीकाकार। इसका प्रचलित नाम था बरान उस-शारियत। ये हिजरीकी ७वीं सदीमें वर्त्तमान थे। इनका लिखा हुआ 'वकाया' नामक ग्रन्थ देखनेमें आता है। वह ग्रन्थ 'हिदाया' नामक ग्रन्थकी प्रस्तावनास्वरूप है। उवैद-उल्ला बिन मशाउदकी 'शैर-उल-वकाय' नामक टीकाने मूलग्रन्थको मात कर दिया है। शेषोक्त ग्रन्थ-में मूलश्लोक और इसकी विशद व्याख्या तथा दृष्टान्त दिया गया है। इसके सिवाय 'वकाय'की और भी अनेक टीकाएं हैं।

महम्मद—कन्दहारके एक राजा। ये खिलजी जातिके अफगान थे। १७१५में अपने पिता मीर वसके मरनेके बाद ये राज्याधिकारी हुए। १७१५में उन्होंने इश्पाहन नगरमें घेरा डाला और परसियाके राजा सुलतान हुसैन शुफीको हराया। इतना ही नहीं, परसियाके राजाने प्रधान प्रधान कर्मचारियोंके साथ अश्रुपूर्ण नेत्रों-से इन्हें आत्मसमर्पण किया तथा अपना राजमुकुट पहनाया था। इस घटनाके दो वर्ष बाद महम्मदने सफियाके बन्दी युवराजोंको प्राणदण्ड दिया। कुल ३९ राजवंशीय पुरुष विजेताके हाथसे यमपुर सिधारे। इन

निहत राजपुत्रोंमें कोई भरी जवानीमें और कोई चढ़ती जवानीमें थे। कहा जाता है, कि महम्मदने उन्मत्त हो उस रातमें अपना मांस नोंच नोंच कर खाया था। इसी अवस्थामें १७२५ ई०को इनका देहान्त हुआ। इनकी मृत्युके पहले सुलतान हुसैनका पुत्र तहमास्प मिर्जा, जिसने इस्पाहनसे भाग कर आत्मरक्षा की थी, इस सुअवसरमें महम्मदके राज्य पर चढ़ाई करनेका आयोजन करने लगा। यह देख कर सभी डर गये और उन्होंने महम्मदके भतीजे अशरफको राजा बनानेका विचार किया। अशरफके सम्बन्धमें किसीका कहना है, कि इसने १७२५ ई०में महम्मदको मार कर राज्य-सिंहासन पर अधिकार किया था।

महम्मद अकबर—मुगल-सम्राट् अकबर शाहका एक नाम। अकबर देखो।

महम्मद अकबर—सम्राट् औरङ्गजेब आलमगीरका छोटा लड़का। इसने पिताके विरुद्ध हथियार उठाया था। आखिर यह जान ले कर परसियाको भागा। यहां १११५ हिजरीमें इसकी मृत्यु हुई।

महम्मद अकबर—एक मुसलमान ग्रंथकार, कुलवर्गाके महम्मद गेसू दराजका पुत्र। इसने आकायेद अकबरी' नामक एक धर्मतत्त्व ग्रन्थ पारसी भाषामें लिखा था।

महम्मद अल् महदी—वर्बरराज्यके प्रथम खलीफा वा राजा। ९०८ ई०में ये राजतख्त पर बैठे। आलि और फतिमाके पुत्र होसेनके वंशधर होनेके कारण मुसलमान समाजमें इनकी अच्छी खातिर थी। इनके वंशधरोंने मिस्र देशको फतह किया था। ९३३में इनकी मृत्यु हुई। पीछे इनके लड़केने कायम बियामर अल्लाने ९४५ ई० तक राज्य किया था।

महम्मद अवद्—एक फारसी ग्रन्थकार। यह इमि असास् उल इस्लाम और किला सुनातफ वा जमायत नामक दो महम्मदीय स्मृतिग्रन्थ लिख गये हैं।

महम्मद आजिम—एक मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने हैदर मालिकके बनाये हुए 'काश्मीर इतिहास'की परवर्त्ती घटनाके आधार पर एक इतिहास लिखा है। इस इतिहासमें इन्होंने मुगल सम्राट् आलमगीरकी भूरि प्रशंसा की है।

महम्मद आदिल् शाह—दाक्षिणात्यके बीजापुर राज्यके एक राजा, २य इब्राहिम आदिलशाहके पुत्र। १६२६ ई०में ये पितृ सिंहासन पर बैठे। इनके राजत्वकालमें दिल्लीके मुगल-सम्राट् शाहजहांने दक्षिण देश पर आक्रमण किया। अहमद नगर मुगलोंके अधिकारमें आ जानेसे इन्हें अपना राज्य लूट जानेका भय हुआ। अतः इन्होंने निजाम शाहकी सहायता ले कर मुगलोंके विरुद्ध अस्त्र उठाया। मुगल-सम्राट्के विरुद्ध ये कई बार युद्धके लिये तैयार हुए थे, परन्तु हर बार इनकी महती क्षति हुई थी। इतना ही नहीं, एक बार तो इन्हें क्षतिपूर्त्तिके लिये प्रचुर धन भी देना पड़ा था।

१६३८ ई०में मुगलोंने फिर भी दक्षिण पर चढ़ाई कर दी। बीजापुर तीनों ओरसे घिर जानेके कारण वहांके राजा अपनी रक्षा बिलकुल न कर सके। दुर्द्दान्त मुगल सेनाओंने राजधानी तथा नगरको बुरी तरह उजाड़ डाला दौलताबाद आदि गिरिदुर्ग तथा राजधानी और निजाम राज्यका अधिकांश स्थान मुगलोंके अधिकारमें आये देख महम्मदने मुगल सम्राट्की शरण ली तथा थैली दे कर उनसे छुटकारा पाया।

यथार्थमें विजापुरके यही अन्तिम राजा थे। इन्होंने अपने नाम पर मुद्रा भी चलाई थी। इसके परवर्त्ती राजगण नाममात्रके राजा थे।

महम्मदके राज्यकालके अन्तमें प्रधान सामन्तराज शाहजी भोंसलेके पुत्र शिवाजीने छल, बल और कौशलसे विजापुरमें अपनी धाक जमाई। इनके अभ्युदयके साथ ही विजापुरकी शक्ति ह्रास होने लगी। १६५६ ई०के नवम्बरमासमें महम्मदकी मृत्यु हुई। बीजापुरके 'गोलगुम्बज' नामक मकबरेमें ये दफनाये गये। पीछे इनका लड़का अली आदिलशाह राज त्ख्त पर बैठा। आदिलशाह-वंश और बीजापुर देखो।

महम्मद अफजल—मदीनात-उल औलिया नामक ग्रन्थके रचयिता। ग्रन्थकारने अपने ग्रन्थमें जगत्की सृष्टिसे ले कर इस्लामधर्मके प्रवर्त्तक महम्मदके पूर्ववर्त्ती पैगम्बरोंका इतिहास लिपिबद्ध किया है।

महम्मद अफजल (शेख)—एक मुसलमान कवि। गाजीपुर निवासी परीजादा शेख अबदुर रहीमका पुत्र। अपने गुरु कालपी निवासी मीर सैयद महम्मदकी आज्ञासे ये

इलाहाबाद (प्रयाग)-में रहने लगे। वहां पारसी तथा अरबी भाषामें लड़कोंको शिक्षा देनेके लिये इन्होंने एक पाठशाला खोली। इनकी बनायी हुई अनेक पुस्तकें मिलती हैं। कविताशक्तिके लिये इन्हें अफजलकी उपाधि मिली थी। १६२८ ई०में ये परलोकवासी हुए।

महम्मद अनसर—एक मुसलमान जीवनी लेखक। इन्होंने १४४५ ई०में गुजरातके विख्यात सुफी शेख अहमद खट्टर की जीवनीके आधार पर 'मलफूजात शेख अहमद ग्यशवि' नामक ग्रन्थ लिखा। आज भी गुजरातमें उक्त सुफी-साधकका मकबरा मौजूद है।

महम्मद अमीन—अह्मदनगरके एक मुसलमान ऐतिहासिक, दौलत महम्मद अल् हुसैनी अल् वालखीके पुत्र। इन्होंने नवाब सिपाहदार खांके आश्रयमें 'आनफा उल् अखवार' नामक एक इतिहास लिखा। १०३६ हिजरीमें ग्रन्थ समाप्त होनेके कारण ही इन्होंने अपने ग्रन्थका यह नाम रखा। ग्रन्थके शेषमें नवाबकी बहुत तारीफ की गई है।

महम्मद अमीन—एक मुसलमान कवि। सम्राट् आलमगीरकी युद्धविजय और दक्षिणप्रदेशके सौन्दर्य पर जो कविताएं इन्होंने लिखी थी, उन्हींको संग्रह कर 'असरार उल मयानी' नामसे प्रकाश किया। नगरोंके वर्णनमें ये मुगल अधिकारके पहलेका सौन्दर्य ही वर्णन कर गये हैं। अतएव इस ग्रन्थको 'भारतीय उद्यानका प्राचीन सौन्दर्य' कहना अनुपयुक्त न होगा। क्योंकि, मुगलोंके अत्याचारसे बहुतों नगर मलियामेट हो गये थे। इसके सिवा 'हकीयत इलम् इलाही' नामक एक और धर्मतत्त्व ग्रन्थ इनकी बनाई हुई मिलती है।

महम्मद अमीन खाँ—एक मुगल सेनापति, महम्मद सैयद मीरजुमलाका लड़का। यह सम्राट् शाहजहां तथा आलमगीरके अधीन पांच हजारी सेनाओंका सेनापति था। गुजरातप्रदेशके अहमदाबादमें १६८२ ई०को इसकी मृत्यु हुई।

महम्मद अमीन खाँ—एक मुगल-सचिव, निजाम उलमूल्क आसफजाका भाई मीर बहा उद्दीनका लड़का। सम्राट् औरङ्गजेबके राजत्वकालमें यह अपनी जन्मभूमिका परित्याग कर भारतवर्ष आया और बादशाहके अधीन नौकरी करने लगा। विचक्षण तथा कूटबुद्धि देख कर सम्राट्ने इसे अपना प्रधान परामर्शदाता बनाया। पीछे सैयद हुसैन अली खाँकी मृत्यु और अपने भाई सैयद अबदुल्ला खाँके कारारोधके बाद सम्राट्ने इन्हें वजीरका पद दिया और इतिमद उद्दौला इनकी पदवी रही। किन्तु दूसरे ही साल ये रोगग्रस्त हो करालकालके शिकार बने।

महम्मद अमीन राज़ी—हफ्त आ़लम नामक जीवनी कोषके रचयिता। सम्राट् अकबरकी अमलदारीमें १५९४ ई०में ग्रन्थकी रचना शेष हुई। इस ग्रन्थमें यह नातिशीतोष्ण मण्डलस्थ सात ऋतुओंका वर्णन, प्रधान प्रधान नगरोंका विवरण तथा तत्कालीन प्रतिभाशाली व्यक्तियों और कवियोंकी जिवनी लिख गये हैं।

महम्मद अमीर खां—'मैलूद नादरी' नामक उर्दू ग्रंथके प्रणेता। आगरेमें इनका जन्म हुआ था। अब्दुल कादिर गिलानी नामक एक मुसलमान साधुकी जीवनीके अधार पर १८४७ ई०में इन्होंने उक्त ग्रन्थ समाप्त किया।

महम्मद अला उद्दीन् बिन् शेख अली अल् हिस्काफी—फतवादुर अस मुख्तार नामक आईन-ग्रन्थके रचयिता। यह ग्रंथ 'तनवीर-उस-अबसार' नामक ग्रंथकी टीका है। इसके सिवा इसमें और भी कितने ही मुकदमोंका हाल लिखा हुआ है।

महम्मद अली खां—(अनसारी) तारीख-इ-मुजफरी और बहरुल मव्वाज नामक इतिहासके प्रणेता। यह हाजीपुर तथा तिरहुतकी फौजदारी अदालतके दारोगा थे।

महम्मद अली खां—एक रोहिला सरदार। रायपुरके रोहिला सरदार फैज उल्ला खांका बड़ा लड़का। यह १७९४ ई०में अपनी पितृसम्पत्तिका अधिकारी हुआ। परन्तु थोड़े ही समयमें इसके भाई गुलाम महम्मदने इन्हें कैद कर गुप्तभावसे मार डाला। अंग्रेज सरकारने राजाके नाबालिग पुत्र अह्मद खांका पक्ष ले, गुलाम महम्मदको विठुरमें कैद किया और कलकत्ता भेज दिया। १८९७ ई०में ये मक्का-यात्राके बहानेसे दक्षिणमें टीपू सुलतानसे मिले और वहांसे काबुलको भाग गये। यहां जमान शाहकी सहायतासे इन्होंने भारतवर्ष पर चढ़ाई करनेकी चेष्टा की। अह्मद अली खांकी मृत्युके बाद १८५० ई०में सैयद

खां तथा ई० १८५५ में यूसुफ अली खांने रामपुरके मसनद पर धावा किया।

महम्मद अली खां—कर्नाटकके एक नवाब, अनवरुद्दीन खांके पुत्र। पिताके मरने पर नवाब नासिरजङ्ग तथा अंग्रेजोंकी सहायतासे १७५० ई०में ये राजसिंहासन पर बैठे। १७९५ ई०में इनका देहान्त हुआ।

महम्मद अली बिन हमीद—'तारीख इ हिन्द व-सिन्ध' वा 'चाच नामा' नामक इतिहासके लेखक।

महम्मद अली खा—टोंकका एक नवाब, पिण्डारी-सरदार अमीर खांका पुत्र। पिताके मरने पर १८३४ ई०में यह गद्दी पर बैठा। परन्तु लावाके हत्याकाण्डमें भाग लेनेसे अंग्रेज-सरकारने इसे गद्दीसे उतार दिया। १८७० ई०में इसका पुत्र इब्राहिम अलीखां वृटिश सरकारके राजनैतिक विभागसे नवाब बनाया गया।

महम्मद अली मीर—मीरट-उस-सफा नामक ग्रंथ-प्रणेता इनका वासस्थान बुर्हानपुरमें था।

महम्मद अली मिरजा—आगरेके एक मुसलमान कवि। इनकी काव्य रचनाशक्तिसे इन्हें 'माहिर' की उपाधि मिली थी। इनके पिता हिन्दू थे। मिर्जा जाफर मुअम्माई नामक एक भांडके यहां इनके पिता नौकरी करते थे। भांडके एक भी सन्तान न थी, इस कारण उसने अपने इसी हिन्दू नौकरके पुत्रको मुसलमानी धर्ममें दीक्षित कर अपनी सारी सम्पत्तिका उत्तराधिकारी बनाया। इस धर्मत्यागी बालक महम्मदने जाफरकी संरक्षतामें उच्च शिक्षा प्राप्त की। मिर्जा जाफरकी मृत्युके बाद महम्मद दनेशानन्द खांके आश्रयमें रहने लगे। दनेशानन्दके मरने पर कर्मजीवनसे अवसर पा कर ये निर्जन स्थानमें अपना समय विताने लगे। इसी समय १६७८ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

ये उच्च श्रेणीके एक कवि थे। इनके बनाये अनेक काव्य ग्रंथोंमें 'गुल इ औरङ्ग' काव्य विशेष प्रशंसनीय है। इस काव्यमें इन्होंने सम्राट् औरङ्गजेबका राज्याभिषेक बड़ी सुन्दरतासे वर्णन किया है।

महम्मद अली शाह—अयोध्याके एक नवाब। ये नवाब नासिरुद्दौला नामसे प्रसिद्ध थे। इनके पिताका नाम था नवाब सयादत अली खां सुलेमान जा नासिर उद्दीनके मरनेके बाद १८३१ ई०में अंगरेज राजने इन्हें लखनऊकी गद्दी पर बिठाया। राजगद्दी पर बैठते ही उन्होंने अपना नाम 'अबुल फते मोइनुद्दीन सुलतान जमान महम्मद अली शाह' रखा। १८४२ ई०में पांच वर्ष राज्य करनेके बाद लखनऊ नगरमें इनकी मृत्यु हुई। बादमें इनका लड़का सूर्यं जा आमजाद अली शाह गद्दी पर बैठा।

महम्मद अब्दुल बाकी—'मआ सीर-इ-रहीमी' नामक इतिहासके प्रणेता।

महम्मद अबुल कासिम—बागदादके एक प्रसिद्ध भौगोलिक इन्होंने ९४३ ई०में अपनी जन्मभूमिका त्याग कर अफ्रिका परसिया तथा पश्चिम भारतमें भ्रमण कर एक ग्रन्थ लिखा था।

महम्मद इस्लाम—'फहतुन नाजिरीन नामक इतिहासके प्रणेता, महम्मद हफिजूल अन्सारीका लड़का। इसने १७७० ई०में अपनी पुस्तक समाप्त की।

महम्म इ-बख्तियार—बङ्गालके सर्वप्रथम मुसलमान शासक इनका असल नाम था 'मालिक उल गाजी इख्तियारुद्दीन महम्मद इ बख्तियार।' ये खिलिजी जातिके थे। इतिहासकारोंने इन्हे इनके पिता (महम्मद बख्तियार खिलजी) के नामसे परिचित कर बड़े भ्रममें डाल दिया है। ये विद्या, बुद्धि, सहिष्णुता, साहस, वीर्य तथा उदारता आदि सद्गुणोंसे विभूषित थे।

जन्मभूमिका त्याग कर ये गजनी राजाके दरबारमें नौकरीके लिये आये। पर यहां उपयुक्त वेतन न मिलनेसे हिन्दुस्तानको चल दिये। दिल्ली-राजदरबारमें भी जब इनकी इच्छा पूरी न हुई तब ये बदौन चले गये। वहां शासक सिपाहसलार हिजाबरुद्दीन हसन इ-आदिरके दरबारमें उपयुक्त वेतन पर नौकरी करने लगे।

इनके चचा महम्मद-इ-महमूदने पृथ्वीराजके साथ युद्धमें अच्छी ख्याति पाई थी। इस वीरताके कारण उन्हें कटमण्डी जागीर पुरस्कारमें मिली थी। आगे चल कर उस सम्पत्तिके उत्तराधिकारी महम्मद-इ-बख्तियार ही हुए।

कुछ दिनोंके बाद इन्होंने अयोध्याकी ओर प्रस्थान किया तथा भोगपत्, भीवली (भैली), मुङ्गेर और

विहार प्रदेशको जीता। इस समय इनके सद्गुणों तथा इनकी सेनाओंकी सुदक्षताका समाचार सुल्तान कुतुबुद्दीनके कानोंमें पहुंचा। सुल्तान कुतुबुद्दीनने वख्तियारका राजोचित सम्मान किया दिल्लीश्वरसे इस प्रकार अपनेको सम्मानित हुए देख वख्तियारने विहारकी राजधानी लूटी। इस समय अनेक निरीह ब्राह्मण विजेता मुसलमानके हाथसे सताये गये और यमपुर सिधारे थे।

विहार लूट कर महम्मदको जो कुछ धन हाथ लगा उसे उन्होंने कुतुबुद्दीनको भेंट किया। सुलतानने उनकी इस प्रभुभक्तिसे प्रसन्न हो उन्हें फिरसे राजपरिच्छदादि दे कर सम्मानित किया था। इसके बाद वख्तियारने विहारकी यात्रा की।

इस समय वङ्गालमें सेनवंशीय राजा लक्ष्मणसेन राज्य करते थे। लक्ष्मणावती वा गौड़नगरमें उनकी राजधानी थी। वृद्ध राजा मुसलमानोंके ऐसे अमानुषिक अत्याचारसे बड़े मर्माहत हो गये। पीछे फिर कहीं ब्रह्महत्या न हो, यह डर उन्हें सदैव बना रहा। कामरूप, वङ्ग, लक्ष्मणावती और विहार प्रदेशमें मुसलमानोंके अत्याचार-भयसे कांपने लगा।

मुसलमानी-इतिहास पढ़नेसे ज्ञात होता है, कि नदियामें राजा लक्ष्मणसेनकी राजधानी थी। इतिहासकारोंके हिसावसे अगर इनका राजत्वकाल ८० वर्ष लिया जाय तो इनके जन्मकाल तथा सेन वंशधरोंके शासनकालमें वहुत फर्क पड जाता है। इसी भ्रमको दूर करनेके लिये किसी किसीने राजा लक्ष्मणसेनको आजन्म राजा अर्थात् सूतिकागृहसे ही राजा मान लिया है। जो हो, यथार्थमें इन्होंने अस्सी वर्षकी अवस्था तक राज्य किया था।

राजा लक्ष्मणसेनने वख्तियारके वङ्गाल आनेको खबर सुन कर ज्योतिषियोंसे युद्धका फलाफल पूछा। ज्योतिषियोंने कहा कि, 'भविष्यमें तुर्क ही यहांके राजा होंगे।' अन्तमें बहुत वादविवादके वाद यही निश्चय हुआ, कि बिना लड़ाईके वङ्गाल तुर्कोंको समर्पण करना ही अच्छा है।' अब वहांके ब्राह्मण तथा अपरापर हिन्दू जातियोंने कामरूप, जगन्नाथ और वङ्गालके अन्यान्य हिस्सोंमें भाग कर आश्रय लिया। किन्तु वृद्ध लक्ष्मणसेन ऐसा करना बिलकुल नहीं चाहते थे।

दूसरे वर्ष वख्तियारने फिरसे विहारको लूट कर नदिया नगरकी ओर कदम बढ़ाया। नगरवासि इन्हें आततायी बिलकुल न समझ सके। ये छद्मवेशी अश्वव्यवसायी वन कर केवल अठारह मनुष्योंके साथ नगरमें घुसे थे। अवशिष्ट सेना पास हीमें कहीं छिप रही थी।

अश्व-विक्रयके वहाने ये लोग राजप्रासादमें उपस्थित हुए। इस समय मध्याह्नकालमें सव कोई भोजन करनेमें व्यस्त थे। स्वयं राजा भी भोजन कर रहे थे। राजाने मुसलमानोंका इस प्रकार हठात् आक्रमण स्वप्नमें भी नहीं सोचा था। निरीह द्वारपालक आततायी मुसलमानोंके हाथसे यमपुर सिधारे। राजप्रासादमें वातकी वातमें कुहराम मच गया, यवनोंसे छू जानेके भयसे राजा अन्तःपुरके रास्ते वाहर निकल गये। कोई कोई कहते हैं, कि वृद्ध लक्ष्मणसेन जगन्नाथधाम और उनके वंशधरगण विक्रमपुर भाग गये थे। चन्द्रद्वीप राजवंश देखो।

महम्मद वख्तियारकी सेनाने क्रमशः नगरको घेर लिया। लक्ष्मणावतीमें उन्होंने अपनी राजधानी बसाई। इनके नाम पर यहां खुतवा पाठ तथा सिक्का चलने लगा। इनके यत्नसे क्रमशः मसजिद तथा विद्यालयकी भी स्थापना हुई।

कई वर्ष वाद इन्होंने कोच तथा मेच जातिको हराया। पीछे तुर्किस्तान तथा चीनको जीत कर नेपाल होते हुए ये फिर लक्ष्मणावती लौटे। 'तरकात् इ-नासिरी' पढ़नेसे मालूम होता है, कि इन्होंने भूटान, वङ्गाल आदि स्थानोंको जीत समुद्र तीर तक धावा मारा था। अन्तमें कामरूप पर आक्रमण करनेके समय इन्हें वहुत कष्ट झेलना पड़ा था। इस समय खुद महम्मद तथा बहुतसी सेनाने नदीमें डूब कर प्राण गंवाई।

वङ्गदेश देखो।

महम्मद इमाद—(फकि किर्मानी ख्वाजा) एक मुसलमान हाकिम और कवि। सिराजराज शाहशुजाके राज्यकाल (१३७१ ई०) में ये विद्यमान थे। इन्होंने मिस्वा-उल-हिदायत, मुनिस-उल-आब्रार, मसनवि-कतियत, महब्बत नामा, मेनात नामा तथा पञ्ज गञ्जप्रभृति काव्य लिखे थे। कविवर इलाही और दौलतशाहके लिखे अनुसार १३७१ ई०में इनकी मृत्यु हुई। किन्तु अपरापर लेखोंसे

इनका मृत्युकाल १३११ ई०में निश्चित होता है। जन्म-भूमि किरमानमें ही उनका मकवरा बना था।

महम्मद इमाम—एक मुसलमान मुफती। ये खलीफा हारूं रसीदकी अमलदारीमें मौजूद थे। इनका प्रकृत नाम था आबू अवदुल्ला महम्मद बिन् हुसैन अल सैवानी। इराक अरवके अन्तर्गत वैसित नगरमें ६३१ ई०को इनका जन्म हुआ था। इन्होंने पहले हनिफा और पीछे आबू युसुफसे शिक्षा पाई थी। अपने अध्यापक इमाम आबू युसुफकी टिप्पनियोंको संग्रह कर इन्होंने अपने ग्रन्थमें जोड दिया। कहते हैं, कि इन्होंने ९९९ ग्रंथ लिखे थे। उनमें 'जामि-उल-कवीर', 'जामि-उस-सघीर', 'मवसूत फी फूरू इल हानिफिया', 'जियादत फी फुरु इल हानिफिया', 'सियार-उल कवीर वल् सघीर' आदि छः ग्रंथ मुसलमान समाजमें जाहिर उल रिवायत नामसे प्रसिद्ध और विशेष आदरणीय हैं। खुरसान राज्यकी राजधानी राई (राय) नगरमें ८०२ ई०को इनकी मृत्यु हुई। परन्तु कोई कोई इनका मृत्यु-स्थान वागदाद वतलाते हैं।

महम्मद इस्माइल बुखारी—सखा उल बुखारी नामक ग्रन्थके प्रणेता। इनका असल नामक था आवा अवदुल विन इस्माइल आल बुखारी। बुखारा नगरमें जन्म तथा वास होनेके कारण इनका नाम अल बुखारी पड़ा। आईन व्यवसायी होनेके कारण महम्मद इस्माइल नामसे मशहूर हुए। इनका उपरोक्त ग्रंथ मुसलमान समाजमें दूसरा कुरान ही समझा जाता है। ८७० ई०में बुखारा नगरमें इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद इस्माइल (मौलवी)—निरात उल मुस्ताफिस् नामक ग्रंथके प्रणेता। मुसलमानोंके भिन्न सम्प्रदाय प्रवर्त्तक केरोली निवासी सैयद महम्मद मतकी व्याख्या कर इन्होंने अपनी पुस्तक रची है।

महम्मद इसहक—सियार उल नवि व-आथाढ़ साहब नामक ग्रन्थके प्रणेता।

महम्मद इख्तियार (मालिक)—सुल्तान महम्मद विगाड़ाके एक मित्र। सुल्तानने गद्दी पर बैठ कर इसे पांच हजारीका नायक बनाया। एक दिन यह अहमदावादसे मथीपुर जा रहा था। राहमें दो पहर हो गया, इसलिये नमाज पढ़नेके लिये एक मुल्लाकी मसजिदमें घुसा। मुल्लाके साथ वातचीत करते करते इनकी सांसारिक वासनायें जाती रहीं। अतएव धन रत्नका त्याग कर यह सुल्तानके पास गया और अपनी विरागविषयक वासना उनसे कह सुनाई। पहले तो सुल्तान इसे पागल समझ कर चिकित्सा करने लगे। पीछे जब मालूम हुआ, सच-मुच विराग-वासनाने इसके हृदयमें स्थान कर लिया है, तब कोई उपाय न देख छोड दिया।

अनन्तर महम्मद भी अपनी पत्नीके साथ उसी मुल्लाके पास गये और उनके चरणोंमें गिर कर सेवा करने लगे। मुल्लाके यत्न तथा शिक्षासे मालिककी मानसिक वृत्तियां दिन पर दिन परिस्फुट होने लगीं। धीरे धीरे उनकी साधुताका परिचय चारों ओर फैल गया। ऐसा कहा जाता है, कि अमरुमवासी घासिया जातिके किसी एक व्यक्तिने इन्हें मार डाला था। सौराष्ट्र नगरमें उनका मकवरा आज भी मौजूद है। दाक्षिणात्य-वासी सैकड़ों मनुष्य इस मकवरेको देखने आते हैं।

महम्मद इब्न आलामूर—यूरोपके स्पेन राज्यान्तर्गत ग्रानडा प्रदेशके एक मूर (मुसलमान) राजा। इन्होंने आल्हाम्ब्राका विख्यात दुर्ग तथा राजप्रासाद निर्माण किया था। उपरोक्त दुर्गके एक शिलाफलक पर इनका नाम आबु अवदुल्ला लिखा हुआ है। ११९५ ई०में अर्जना नगरके वनिनसरके सम्भ्रान्तवंशमें इनका जन्म हुआ था। बड़े होने पर ये अर्जना तथा जायना नगरके शासक नियुक्त हुए। इस समय इन्होंने दाक्षिणात्यमें अपनी दया और न्यायपरता आदि गुणोंसे सर्वसाधारणको मोहित कर लिया था। इब्न हुदायतकी मृत्युके बाद स्पेनीय मूर राज्यमें शासनविशृङ्खलता आरम्भ हुई। इसी सुअवसरमें महम्मदने कई देशों पर अधिकार कर लिया था। यही नहीं, कितने ही देशके अधिवासी इनकी उपस्थिति मात्रसे आत्मसमर्पण करनेसे वाध्य हुए थे।

इनके शासनकालमें स्पेन उन्नतिकी चरमसीमा पर पहुंच गया था। सबसे पहले इन्होंने अपने नाम पर सिक्का चलाया। १३वीं सदीमें इन्होंने आल्हाम्ब्रा दुर्ग बनानेमें हाथ लगाया। ७९ वर्षकी उमरमें भी उनकी बुद्धि भ्रष्ट नहीं हुई थी। इस समय भी ये घोड़े पर चढ़

कर सैन्य संचालन करते थे। दुःख है, कि आल्हामरा दुर्गका निर्माण ये शेष न कर सके। उनकी मृत्युके बाद परवर्त्ती मूरराज युसुफ अबुल हाजीने इसे समाप्त किया।

महम्मद इब्न मशाउद—एक मुसलमान कवि। इनका बनाया हुआ ग्रन्थ 'जिनात-उत-जमान' देखनेमें आता है।

महम्मद करीम—मुगल-सम्राट् बहादुर शाहके पौत्र तथा युवराज आजिम उस्सानके पुत्र। १७१२ ई०में इनके चचा सम्राट् जहांदार शाहने इनका काम तमाम किया।

महम्मद काज़ीम (मिर्जा)—एक मुसलमान ऐतिहासिक, सम्राट् आलमगीरके मुंशी, मिर्जा महम्मद अमीनके पुत्र। इनने 'आलमगीर-नामा' अपनी पुस्तकमें सम्राट् आलमगीरके राजत्वकालके दश वर्षका हाल वर्णन किया है। १६८९ ई०में उक्त ग्रन्थ समाप्त कर इन्होंने दिल्लीश्वरको भेंट किया। इस पर सम्राट्ने उन्हें तथा और दूसरे दूसरे ऐतिहासिकोंको अपनी जीवनी लिखनेसे मना कर दिया। इस ग्रन्थके सिवा उन्होंने महम्मद शाहनामा, रोजनामा और अखवरहसनिया नामक तीन ग्रन्थोंकी भी रचना की थी।

महम्मद काला—गुजरातके प्रसिद्ध सुलतान महम्मद बिगाड़ाके पुत्र। इनकी माताका नाम रानी रूपमञ्जरी था। अह्मदाबादके माणिकचकमें अभी भी रानी रूपमञ्जरीका मकबरा मौजूद है।

महम्मद कासिम—'फरहङ्ग सूरुरी' नामक पारसी अभिधानके प्रणेता। इनके पिताका नाम प्रसिद्ध कवि हाजी महम्मद सुरूरी काशनी था। इन्होंने १४९९ ई०में उक्त ग्रन्थ समाप्त कर परसियाके राजा शाह अब्बास बहादुर खांके करकमलोंमें समर्पण किया।

महम्मद कासिम—सिन्धप्रदेशके एक मुसलमान शासनकर्त्ता। ये नासिरुद्दीन कब्बच वा फत्ता नामसे प्रसिद्ध थे। सिन्धमें इनके शासनकालका प्रकृत इतिहास नहीं मिलता। जनसाधारणके यादगारके लिये यहां सिन्धप्रदेशके प्राचीन मुसलमानोंके शासनकालकी घटनाएं खूलसेत-उल हिकायत, हाजनामा तथा हाजी महम्मदके इतिहाससे उद्धृत की गई है।

इराकके राजा खलीफा अबदुल मालिकके पुत्र बलीदके राज्यकालमें बासराके राजा हिजाज बिन् युसुफने ७०६ ई०में मेक्रोन जीतनेके लिये महम्मद हुसेनको दलबलके साथ भेजा। मेक्रोन पर अधिकार कर वहांको बलूची जातियोंको इस्लामधर्ममें लानेके बाद इन्होंने फिरसे अपने सेनापति बुधमिनको देवल राज्य (वर्त्तमान ठट्ठप्रदेश) पर अधिकार करने भेजा। हिन्दूराजाने युद्धमें बुधमिनको मार डाला, परन्तु तब भी हिजाज हताश न हुए और फिरसे लड़ाईकी तैयारी करने लगे। तदनुसार ७१२ ई०में उनके भाई बकैल तकफीके पुत्र इमाद उद्दीन महम्मद बिन कासिमने छः हजार सेनाओंके साथ देवल पर चढ़ाई कर दी। युद्धमें देवलका राजा दाहिर मारा गया और राज्य मुसलमानोंके हाथ लगा।

महम्मद बिन कासिमके बाद सिन्धप्रदेशके शासक हुए अनसारीके वंशधर। अनन्तर लगभग ५ सौ वर्ष तक सुमारके राजोंने यहांका शासन किया। सुमारुवंशका अधःपतन होने पर सुमनावंशीय 'जाम' उपाधिधारी क्षत्रियोंने सिन्धुप्रदेशकी बागडोर अपने हाथ ली। इसी समय गोरी, गजनी तथा दिल्लीके पठानोंने सिन्ध पर आक्रमण किया। इस प्रकार एकके बाद एक मुसलमानोंके आक्रमणसे सिन्धुराज्य उजाड़-सा हो गया। मुसलमानोंने सिन्धके सिवाय और भी कई देशोंको जीता और उन स्थानोंका शासन करनेके लिये शासक नियुक्त कर दिया। इन शासकोंमें महम्मद कासिम भी एक थे।

ये तुर्क जातिके तथा शाह बुद्दीन महम्मदगोरीके क्रीतदास थे। उपरोक्त गोरीराजकी आज्ञासे १२०३ ई०में ये उच्च (वा मुलतान)-प्रदेशके शासक नियुक्त हुए। इन्होंने दिल्लीके पठान-राजप्रतिनिधि सुलतान कुतुबुद्दीन आइबककी कन्यासे विवाह किया था। १२१० ई०में श्वसुरके मरने पर इन्होंने अपने बाहुबलसे सिन्धके कई प्रदेशों पर अधिकार जमाया। इस प्रकार सुमनाराजवंशकी शक्ति चूर चूर कर महम्मद काशिम धीरे धीरे स्पर्द्धित हो उठे। अन्तमें दिल्लीके पठान राजवंशकी अधीनता तोड़ कर इन्होंने अपनेको एक स्वतन्त्र राजा घोषित कर दिया।

धीरे धीरे सिन्ध, मुलतान, कोरम तथा सरस्वती

पर्यन्त इनका राज्य फैल गया। धन और जनकी भी इन्हें कमी न थी। स्वयं गजनीपति ताज उद्दीन अलयुदने इन पर दो वार चढ़ाई की, किन्तु दोनों ही वार हार खा कर उन्हें लौटना पड़ा था। १२२५ ई०मे दिल्लीके राजा शमसुद्दीन अल्तमसने इन पर चढ़ाई करनेके लिये ससैन्य कदम वढ़ाया। महम्मद इस सम्वादको सुनते ही वहु-मूल्य रत्न तथा स्त्री पुत्र साथ ले नावसे भाग गये। दैव संयोगसे नाव डूव गई जिससे सवोंको अपने जीवनसे हाथ धोना पड़ा था।

महम्मद कासिम खां (वदाकूसानी)—एक मुसलमान कवि। यह मुगल-वादशाह अकवर तथा हुमायूंके शासनकालमें उनके अधीन नौकरी करते थे। इन्होंने जोसेफ तथा पोतिफाकी प्रेम काहिनी स्वरचित युसुफ जैलेखा नामक काव्यमें वर्णन की है। १५७१ ई०में आगरानगरमें इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद कासिम खां (मीर)—वङ्गेश्वर मिर्जाफरके जमाई। सिराजुद्दौला जव भगवानगोलाकी ओर भाग रहे थे उस समय इन्होंने उन पर चढ़ाई कर दी और उनको प्रियतमा स्त्री लुत्फ उन्निसाके अलङ्कारादि छीन कर नौ दो ग्यारह हुए। मीरकासिम देखो।

महम्द कासिम खां—निशापुरके एक धनाढ्य जमींदार। उजवक जातिके आक्रमणकालमें ये अपनी जन्मभूमिका त्याग कर भारतवर्ष आये। यहां वैराम खांके अधीन सेनानायकके पद पर नियुक्त हुए। सिकन्दर शूरके विरुद्ध युद्धमें इन्होंने अच्छी ख्याति पाई थी। पीछे तैमूर-के साथ जो युद्ध हुआ उसमें ये खान जमानके अधीन 'हरावल' वन कर गये थे। इसके कुछ समय वाद अर्थात् सम्राट् अकवरके राजत्वकालके प्रथम वर्षमें इन्होंने मेवाडराज राणा उदयसिंहके शत्रु हाजी खांके विरुद्ध युद्ध-यात्रा कर दी। मुगल विद्वेषी शेर खांके सेना-पति वीरवर हाजी खांने उक्त राणाको परास्त कर नगर तथा अजमेर पर अधिकार कर लिया। मुगलसेना जव हाजी खांको दमन करने गई तव ये जान ले कर गुजरात भागे। इसी समय महम्मद कासिमने नगर तथा अज-मेरको जीत कर मुगल साम्राज्यमें मिला लिया।

वादशाहके शासनकालके पांचवें वर्षमें ये वैरामका पक्ष छोड़ कर चागताई सामन्तोंके दलमें मिल गये। पीछे शमसुद्दीन आत्गाके पक्षमे रह कर इन्होंने वैराम खांको परास्त किया। इस युद्धजयके पारितोषिकस्वरूप इन्हें मूलतान प्रदेश जागीरमें मिला।

अनन्तर कासिम मालवान्तर्गत शारङ्गपुर गये। यहां अकवरसे इनको भेंट हुई। अव दोनों मिल कर अवदुल्ला खा उजवकको कैद करने चल दिये। इसके कुछ दिन ही वाद शाहपुरमें इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद कासिम खाँ (मीर अतिश)—एक मुगल सेना-पति। सम्राट शाहजहांके राजत्वकालमे ये सेनाध्यक्ष, तोपखानेके दारोगा और कोटाल पद पर नियुक्त थे। वाह्लिक तथा आन्धखुंदके युद्धमें इन्होंने अपनी वीरता दिखा कर मुतानिद खां और आखता वेगीकी उपाधि पाई थी। युवराज औरङ्गजेवकी कन्दहार चढ़ाई करने-में ये चार हजार पदातिक और ढाई हजार अश्वारोही सेनाके अध्यक्ष वनाये गये थे। पीछे इन्होंने श्रीनगर राजके सान्तुर दुर्गको जीत कर तहस नहस कर डाला। युवराज दाराशिकोहने इन्हें ५ हजार अश्वारोहियों तथा ५००० पदातिकोंका अध्यक्ष वनाया था। इसके वाद इन्होंने गुजरातका शासक-पद और एक लाख रु० भी पारितोषिकमें पाया। ये औरङ्गजेवके विरुद्ध दारा-सिकोहकी ओरसे समगड युद्धमें लड़े थे। परन्तु अन्त-में औरङ्गजेवसे हार खा कर माफी मांगनी पडी थी। औरङ्गजेवने इन्हें मथुराका शासक वना कर भेजा। पर राहमें इनके भाईसे ही इनका प्राणनाश हुआ।

महम्मद कासिम (मीर)—एक मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने नादिर शाहके भारत आक्रमण कर 'इव्रातनामा' नामसे एक इतिहास लिखा।

महम्मद कासिम (सैयद)—'ऐजान-कौसियो नामक उर्दू ग्रंथके प्रणेता। वागदादवासी विख्यात मुसलमान-साधु अब्दुल कादिर जिलानीके सम्वन्धमें ही यह ग्रंथ लिखा गया है। दानापुरमें १८५५ ई०को उन्होंने उक्त ग्रंथ समाप्त किया था।

महम्मद कुली खा—इलाहावादके एक मुसलमान शासक, अयोध्याके नवाव सफदरजङ्गके भाई मिर्जा महसीनके पुत्र। १७५९ में इन्होंने युवराज अलि गौहर (पीछे

सम्राट् शाह आलम)के पिता २य आलमगीरसे बङ्गाल, विहार और उड़ीसाकी दीवानी पाई थी। इस समय इन्हें युवराजके साथ पटना दखल करनेके लिये जाना पड़ा। पटना पहुंचते ही कुली खांने नगरको घेर लिया। कुछ दिन घेरे रहनेके बाद इन्हें मालूम हुआ, कि इनके चचेरे भाई सुजाउद्दौलाने विश्वासघातकतासे इलाहाबाद पर आक्रमण कर दिया है। इस पर कुली खां १७६१ ई०में पटनासे लौटे और सीधे इलाहाबादको चल दिये। सुजा उद्दौलाने इन्हें जलालाबादके दुर्गमें कैद कर मार डाला।

महम्मद कुली कुतुबशाह (२य)—गोलकुण्डाके एक मुसलमान शासक। अपने पिता इब्राहिम कुतुबशाहके मरने पर ये १५८१ ई०में बारह वर्षकी अवस्थामें गद्दी पर बैठे। गद्दी पर बैठते ही इन्होंने विजापुरके आदिलशाहीवंशसे युद्ध ठान दिया। युद्धमें इनकी हार हुई। आखिर विजापुरके राजाको अपनी बहन दे कर मेल कर लिया। यह घटना १५८७ ई०में घटी थी।

गोलकुण्डाका जलवायु स्वास्थ्य अनुकूल न होनेके कारण वहांसे दस कोस दूर अपनी वीरवधू भाग्यमतीके नाम पर भाग्यनगर बसाया। पीछे उसे छोड़ ये हैदराबादमें रहने लगे।

परसियाके राजा शाह अब्बासने अपने पुत्रका विवाह कुलीकुतुबकी कन्यासे किया। ऐसे सम्भ्रान्त राजवंशमें कन्या दे कर इन्होने सचमुच अपनेको सम्मानित समझा था।

दक्षिणप्रदेशके ये कुतुबशाही राजवंशके चतुर्थ सुलतान थे। शासनकार्यमें इनकी असाधारण क्षमता थी। इसके सिवाय और भी कितने सद्‌गुणोंसे ये अलंकृत थे। इनके ३१वें वर्षके शासनकालमे तात्कालिक साहित्यकी विशेष उन्नति हुई थी। स्वयं सुलतानने 'कुलियत कुतुबशाह' नामक एक सुवृहत् ग्रंथकी रचना की। हिन्दी, दक्षिणी तथा पारसी भाषामें लिखी हुई अनेकों अमृतमयी विविध विषयिणी कविता इस ग्रंथके कलेवरको बढ़ाती है। १६१२ ई०मे इनकी मृत्यु हुई। बादमे इनके भाई महम्मद कुतुबशाह राजतख्त पर बैठे। कुतुबशाही राजवंश देखो।

महम्मद कुतुबशाह—गोलकुण्डाके कुतुबशाहीवंशके ५म सुलतान। कुतुबशाहीवंश देखो।

महम्मद कुली खां—सम्राट् अकबर शाहके एक तुर्कजातीय सेनापति। ये पहले बङ्गालके मुगल सेनानायक थे। बङ्गाल-सिपाही-विद्रोहके समय इन्होंने सिपाहियोंका साथ दिया था। थोड़े ही दिनोंमें इन्हें बलवायियोंका साथ छोड़ अकबरकी शरण लेनी पड़ी। कई बार इन्होंने काश्मीर राज्य पर चढ़ाई की थी। भोटराज अलीरायको इन्होंने ही हराया था।

महम्मद कुली बाई—एक मुगल सेनापति। बादशाह अकबरकी अमलदारीमें इन्होने मालवा, तंकरोई और भद्रकके युद्धमें अपनी दक्षताका परिचय दिया था।

महम्मद खारिजमी (मौलाना)—खारिजमके एक कवि।

महम्मद खलील उल्ला खां—एक मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने गजनीपति महम्मदकी आज्ञासे अमीर हमजाकी जीवनी लिखी थी।

महम्मद खां—एक मुसलमान इतिहासकार, अब्दुल खां फिरोजके पुत्र। 'मशोर कुतुबशाही' तथा तारीख-जमा-उल हिन्दके यही प्रणेता थे। ३० वर्षकी अवस्थामें यह २य कुली कुतुबशाहके अधीन नौकरी करते थे। बादशाहके मृत्युकाल अर्थात् १६१३ ई०में यह जीवित थे।

महम्मद खां—बिजनौरके नवाब, याबित खांके प्रपौत्र। १८५१ ई०में ये विद्रोही हो गये थे।

महम्मद खा गक्कर (खोथर)—एक गक्कर सरदार। सुलतान अङ्गम खांके पुत्र। ये विशेष युद्धकुशल थे।

महम्मद खां अशीरी—गुर्जरपति सुलतान बहादुर शाहका भांजा, खानदेशके राजा आदिल खां फरुखीका पुत्र। १५२७—२८मे इन्होंने गावेली दुर्गाधिप इमाद उल मुलक पर आक्रमण किया तथा सुलतान बहादुर शाहसे शत्रुको दण्ड देनेके लिये अनुरोध किया। इस समय पत्र द्वारा इमाद उल-मुलकने पत्थर मण्डित दुर्ग घेरे जानेकी खबर लिख भेजी। इस पर सुलतानने नन्दावाड़में शत्रुदलका सामना किया। सुलतानने अपने भांजे महम्मद खांके साथ गलना-दुर्गकी ओर प्रस्थान किया तथा आगे चल कर दौलताबादमे छावनी डाली।

बहादुर शाहका सैन्य-बल देख कर दुर्गस्थ निजाम

उलमुल्कको सेना भयभीत हो गई और निकटवर्त्ती पहाड़ोंमें जा छिपी। गुजराती सेनाओंको यह मालूम होने पर उन्होंने फौरन पहाड़को चारों ओरसे घेर लिया तथा बड़ी निर्दयतासे उन्हें मार डाला। इस युद्धमें दक्षिणी सैन्यदलको विशेष क्षति हुई थी।

अनन्तर सन्धि होनेके बाद भी निजाम उल-मुल्कने सन्धि-नियमोंको तोड़ दिया। इस पर १५२८ ई०में महम्मद खांने अपने मामाके साथ दक्षिणदेशकी ओर यात्रा कर दी। इस समय दोनों दलके दुर्गके पास पहुंचने पर वहांके राजा बागलाना बाहरजी सुल्तानका स्वागत करनेके लिये आगे बढ़े। पीछे उन्होंने सुलतान और उनके भांजे महम्मद खांको अपनी दो बहन समर्पण कर उनसे मेल कर लिया।

इसके बाद अपने मामाके साथ ये बुर्हानपुर-युद्धमें मालवा तथा माण्डुदुर्ग विजय करनेको चल पड़े। १५३२ ई०में इन्होंने सुल्तानसे छुट्टी ली। सुल्तानने इन्हें महम्मदशाहकी उपाधिसे भूषित किया था।

महम्मद खां तलपुर (मीर)—सिन्धुप्रदेशके एक राज्यच्युत अमीर। ये तलपुरके मीरवंशीय एक अन्तिम विख्यात राजा थे। सिन्धविजयके बाद अंग्रेजोंने इन्हें नजरबन्द किया। बम्बईप्रदेशकी व्यवस्थापिका सभाके सदस्य हो कर इन्होंने कई अच्छे अच्छे काम किये। १८७० ई०में हैदराबादमें इनकी मृत्यु हुई। इस समय इनकी अवस्था ६० वर्षकी थी।

महम्मद खा धारी—सम्राट् अकबर शाहके एक सभासद तथा प्रसिद्ध गायक।

महम्मद खा नियाजी—एक मुगल-सेनापति। सम्राट् अकबरने इन्हें ५०० सेनाओंका नायक बनाया। परन्तु जहांगीरके समयमें ये 'दो हजारी' पद तक पहुंच गये थे इनने शाहराज खाके साथ बङ्गाल पर चढ़ाई कर दी और ब्रह्मपुल युद्धमें अपनी वीरताका अच्छा परिचय दिया। शाहबाजने इन्हें काम पर नियुक्त रखनेके लिये प्रति वर्ष १ लाख रु० देनेका वचन दिया था। पश्चात् खानखानाके साथ इन्होंने ठट्टयुद्धमें मिर्जा जानी वेगको मार कर युद्धमें विजय प्राप्त की थी।

खानखानाने इनको वीरता तथा प्रतिभा पर मुग्ध हो कर इन्हें अपना मित्र बना लिया। जहांगीरने दाक्षिणात्य-विजयके समय इन्हें अपना प्रधान सेनानायक बनाया था। खर्किके युद्धमें मालिक अम्बरको हरा कर ये सम्राट्के विशेष प्रियपात्र हो गये थे। वृद्ध होने पर भी इन्होंने युद्धसे मुंह नहीं मोड़ा। १००७ ई०में ये सदाके लिये चल बसे।

यह एक साधुचेता व्यक्ति थे। दीन दुःखियोंके ऊपर इनकी विशेष कृपा रहती थी। रात और दिनमें ये केवल ४ ही काम करते थे, दिनमें धर्म कर्म। कुरान पाठ और भोजन तथा रातमें निद्रा यापन। इसके सिवा और किसी भी कामकी ओर इनका ध्यान नहीं था। दिनमें जब तक ये 'वुजू' उपहार न दे लेते तब तक अन्नग्रहण नहीं करते थे। धर्मात्मा साधुकी तरह जीवन विताते देख लोग इन्हें फकीर कहा करते थे। दरिद्रकी सेवा करना तो इनका जीवन व्रत ही था।

दक्षिण-प्रदेशकी यात्रामें इन्हें अधिक काल उधर ही विताना पड़ेगा इसलिये वर्द्धा जिलान्तर्गत आष्टि विभाग इन्हें बादशाहकी ओरसे जागीरस्वरूप मिला। इन्होंने वहां अपना वासभवन बनवाया और अनेकों प्रासाद, मसजिद तथा उद्यानवाटिकाओंसे नगरका सौन्दर्य बढ़ा दिया। अभी यह स्थान जनशून्य और उजाड़-सा हो गया है।

इनकी मृत्यु इसी आष्टि नगरमें हुई। पहले इनके मकबरेमें बहुतेरे मुसलमान नमाज पढ़ने जाया करते थे। इनको मृत्युके बाद शाहजहांने इनके लड़के अहमद खांको ढाई हजारीके पद पर नियुक्त किया।

महम्मद खा (मीर)—पंजाबके मुसलमान शासक। ये सम्राट् अकबर तथा हुमायूंके अनुग्रहसे बहुत दिनों तक पंजाबके शासक रहे। १५७५ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

अपने शासनकालमें ये पारसी तथा तुर्की भाषामें दो 'दीवान' लिख गये हैं। इनकी जन्मभूमि गजनीमें थी, इस कारण लोग इन्हें गजनी कवि कहा करते थे। 'बुर्हान उल् इमान् नामा' नामक सुफी सम्प्रदायका ग्रंथ इन्हीका बनाया हुआ है। ये खां कलानके नामसे भी मशहूर थे।

महम्मद खां बङ्गस (नवाब)—एक रोहिला-सरदार, फर्रुखा-

बादके बङ्गस नवाबवंशके प्रतिष्ठाता। सर्वसाधारण इन्हें गजनफार जङ्ग कहा करते थे। सम्राट् महम्मद शाहके राज्यकाल (१७३० ई०)में ये मालवाके शासक नियुक्त हुए। परन्तु महाराष्ट्रोंके साथ प्रतिपक्षता करनेमें असमर्थ होनेके कारण इन्हें १७३२ ई०में इलाहाबाद भेज दिया गया। १७३३ ई०में बुन्देल जातिका दमन करनेके लिये इन्होंने ससैन्य राजा छत्रशाल पर धावा मारा। पेशवा बाजीरावने इस समय अपनी महाराष्ट्रीय सेना छत्रशालकी सहायतामें भेजी। महम्मद पहले तो कई छोटे छोटे युद्धोंमें विजयी हुए पर अन्तमें हिन्दुओंकी सम्मलित सेनाओंसे हार खा जैतगढ़ दुर्गमें जा छिपे। राजा छत्रशालने दुर्गको भी घेर लिया और कई दिनों तक गोला बरसाते रहे। नवाबके लड़के कायम जङ्गने अफगान सेनाओंकी सहायतासे पिताको बचाया।

महम्मद खांकी कमजोरी देख कर मुगल सचिवने रोगीके बहानेसे उन्हें पदच्युत कर दिया तथा उनके स्थान पर उनके पुत्र कायमजङ्गको नियुक्त किया।

महम्मद खां शेवानी—रूस सीमान्तवासी एक तातार-वीर, चंगेज खांके पुत्र शेवानोके वंशधर। ये शाही बेग खां उजवकके नामसे भी मशहूर थे। इन्होंने अपने बाहुबलसे आक्सस नदीके दूसरे किनारे अवस्थित सभी स्थान, यहां तक कि खुरासान तथा १५०५ ई०में हीरट पर भी अधिकार कर लिया था। तैमुरवंशकी प्रधान शाखाके वंशधर भी रणभूमिमें इनके हाथसे यमपुर सिधारे थे। पापके इस प्रायश्चितस्वरूप १५१० ई०मे १म शाह इसमाइलके हाथसे पराजित हुए और मार डाले गये। उक्त शाहराजने उनकी खोपड़ीको शराब पीनेका प्याला बनाया था।

महम्मद खां सुलतान—दिल्लीके राजा गयासुद्दीन बलबनके ज्येष्ठ पुत्र। ये महम्मद कायान वा खां साहिद नामसे भी प्रसिद्ध थे। पिताके आज्ञानुसार पहले सीमान्त प्रदेश (मुल्तान, लाहोर, दीपालपुर प्रभृति स्थानों)के शासक नियुक्त हुए। ये बड़े विद्योत्साही पुरुष थे तथा काव्यमें भी इनका विशेष अनुराग था। इन्होंने स्वयं २० हजार सुमधुर और शोभावर्णनविषयक कविता संग्रह की थी। इनके आश्रयमें रह कर प्रसिद्ध कवि खुशरू तथा ख्वाजा हसनने काव्यमें विशेष उन्नति की थी।

पारस्याधिपति अर्घुन खांके कन्दहार निवासी बलवन तैमुर खां चंगेजीने इसी समय २० सहस्र अश्वारोही सेनाओंके साथ भारतवर्ष पर चढ़ाई कर दी। दीपालपुर और लाहोर लूट जानेके बाद वे लोग जब मुल्तानकी ओर अग्रसर हुए तब महम्मद खां भी दलबलके साथ लाहोरके सम्मुखस्थ इरावतीके किनारे जा धमके। दोनों दलमें विपुल संग्राम छिड़ गया। महम्मद खां पराजित और निहत हुए। इनकी बाकी सेना भी जान ले कर भागी। भागी हुई सेनामें अमीर खुशरू भी एक थे। उन्होंने अपने ग्रन्थ 'खिजिर खानी' में इस विपद् घटनाका बहुत विशद रूपसे वर्णन किया है।

महम्मद खांर तांड़ो—बंबई प्रेसिडेन्सीके हैदराबाद जिलान्तर्गत एक उपविभाग। यह अक्षा० २४° १४' से २५° १६' उ० तथा देशा० ६८° १९' से ६९° २२' पू०के मध्य विस्तृत है। क्षेत्रफल ३१७७ वर्गमील है। सारा उपविभाग गुनि, वदोन, तांड़ोबाग तथा डेरा महब्बत नामक ४ तालुक तथा २७ तप्पाओंमें विभक्त है।

इस जिलेकी भूमि प्रायः सर्वत्र समतल है। जहां तहां उपवनाकार जङ्गलके होनेसे इस स्थानकी शोभा अपूर्व दिखाई पड़ती है। यहां बहुतसे खाल हैं, इसलिये जलका बिलकुल अभाव नहीं है। यहांकी मिट्टी साधारणतया ५ भागोंमे विभक्त की जा सकती है। यथा—१ उर्वरा, २ पंकिल, ३ बलुई, ४ रेतीली और ५ खारी मिट्टी।

उपरोक्त अधिकांश स्थानोंमें खेतोबारी होती है। नहर आदिके होनेसे कृषिकार्यकी विशेष उन्नति है। वदीन तालुकान्तर्गत लुथार दुर्ग यहांकी प्राचीन स्मृति है। मीर गुलाम अलीके राजत्वकालमें पीर महम्मदने पठानोंके आक्रमणसे देशवासियोंकी रक्षाके लिये ही इसे बनवाया था। मीर गुलाम अलीने इसका एक अंश नष्ट कर डाला था। पीछे वह मिट्टीसे मरम्मत किया गया।

२ उक्त उपविभागका प्रधान नगर। यह गुनि नहरके दक्षिण तट पर अक्षा० २५° २८' उत्तर तथा देशा० ६१° ५५' पू०के मध्य विस्तृत है। विचार सदरके अवस्थित

होनेसे यह नगर समृद्धिशाली दिखाई देता है। नहर तथा पक्की सड़कसे आस पासके नगरमें स्थानीय वाणिज्य-द्रव्यकी आमदनी और रफ्तनी होती है।

मीर महम्मद खां तलपुर शाहवानीने मीर फते अली खांके राजत्वकालके ८वें वर्षमें इस नगरको बसाया था। मीर महम्मदको इसके चारों ओरके प्रदेश जागीरमें मिले थे। विसूचिकाके प्रादुर्भावसे यह नगर जनशून्य हो गया था। १८१३ ई०में मीर महम्मदकी मृत्यु हुई। मीर करमखां और गुलाम खांने यथाक्रमसे यहांका शासन किया। जिस समय अंग्रेजोंने सिन्ध पर अधिकार किया था उसी समय १८४३ ई०में मीर गुलामकी मृत्यु हुई। उनके पौत्र अल्ला बक्स मीरके पद पर अभिषिक्त हुए।

महम्मद खां लङ्गा—सुल्तानके चतुर्थ राजा, युवराज फिरोदके पुत्र। १५०२ ई०में अपने पितामह हुसन खां लङ्गाके मरने पर महम्मद खां लङ्गा राज्याधिकारी हुए। इन्होंने २३ वर्ष तक राज्य किया था। सम्राट् बाबरने महम्मदकी मृत्युसे कुछ पहले १५२४ ई०में पञ्जाबको जीत कर दिल्लीकी चढ़ाई कर दी थी। वहां पहुंच कर उन्होंने ठट्टके शासनकर्त्ता हुसैन अर्घुनको कहला भेजा, कि मुल्तानका युद्ध-भार आजसे तुम्हारे ही ऊपर सौंपा जाता है। तदनुसार हुसैन अर्घुन भी काफी सेनाके साथ सिन्धु नदी पार कर मुल्तान पहुंचे। परन्तु इसके पहले ही महम्मद खांका स्वर्गवास हो चुका था। अनंतर उनके लड़के २य हुसेन लङ्गाके तख्त पर बैठे।

महम्मद खां सरफुद्दीन ओगलू तकल—हीरटके एक मुसलमान शासक। इन्होंने हुमायूंको पलायनकालमें विशेष सहायता दी थी।

महम्मद खुदावन्द (सुल्तान)—परसियाके राजा १म शाह तहमास्पके ज्येष्ठ पुत्र। इतिहासमें ये सुल्तान सिकन्दर शाह नामसे विख्यात हैं। १५३१ ई०में इनका जन्म हुआ। १५६६ ई०में अपने भाई द्वितीय शाह इस्लामके मरने पर ये परसियाके सिंहासन पर बैठे। इन्हें कम सूझता था इसलिये इनका बड़ा लड़का हेमजा मिर्जा पिताका प्रतिनिधि हो कर राजकार्य चलाने लगा।

पिताकी मृत्युके बाद राज्यमें विश्रृङ्खलता उपस्थित हुई। इसी समय किसी गुप्तचरने इनका काम तमाम किया। इसके बाद खुरासेनके सरदारोंने हेमजाके द्वितीय पुत्र अब्बासको १७६८ ई०में परसियाके राजसिंहासन पर बिठाया।

महम्मद खुदावन्द (सुल्तान)—परसियाके एक राजा। ये चंगेज खांके वंशधर अर्घुन खांके पुत्र थे। १३०४ ई०में अपने भाई सुल्तान गजा खांके मरने पर ये परसियाके राजा हुए।

ये विशेष न्यायपरायण थे। परसियाके राजाओंमें सबसे पहले इन्होंने ही अलीके चलाये हुए मतका अनुसरण किया था। सर्वसाधारणको उक्त मतमें अपनी प्रगाढ़ भक्ति दिखानेके लिये इन्होंने अपने नामसे जो सिक्का चलाया उस पर द्वादश इमामका नाम अङ्कित रहता था। इन्होंने मिड़िया राज्यान्तर्गत सुल्तानिया नगरीकी प्रतिष्ठा कर वहां अपनी राजधानी बसाई। इनकी मृतदेह इसी नगरके दफनाई गई थी। मकबरेके गुम्बजका व्यासके गुम्बज ४१ फुट है।

महम्मदगढ़—१ मध्य भारतवर्षमें भूपाल एजेन्सीके अन्तर्गत एक सामन्त राज्य। यह विदिशा तथा रोहितगढ़के बीचमें अवस्थित है। क्षेत्रफल २३ वर्गमील है।

यह स्थान पहले कुर्वाई राज्यके अधीन था। कुर्वाईके नवाब महम्मद दलील खांके मरने पर यह राज्य इनके दो लड़कोंके बीच बंट गया। छोटे लड़के आसानके भागमें महम्मदपुर और बरसौदा नामक स्थान पड़ा। आसानके मरने पर उनका लड़का बसौदाका और महम्मद खां महम्मदगढ़का अधिकारी हुआ। १८१६ ई०में सिगड़के राजाने इसका कुछ अंश छीन कर अपने राज्यमें मिला लिया। परन्तु अंगरेज-राजने बीचमें पड़ कर उसे फिर लौटा दिया। यहांके नवाब पठानजातिके अफगान हैं। राजाकी उपाधि नवाब है।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २३°३८´ उ० तथा देशा० ७८° १२´ पू०के मध्य विस्तृत है। यहां अफीम तथा अन्यान्य अनाजोंका जोरों कारबार चलता है।

महम्मद गयासुद्दीन—लखनऊ नगरके एक प्रसिद्ध आभिधानिक। इन्होंने १४ वर्ष कठिन परिश्रम करके १८२६ ई०में एक बड़ा कोष तैयार किया। इसके सिवा इन्होंने 'मिफताह उल् कुनुज', 'सार सिकन्दरानामा' तथा

'नवशाबाग' और वहार प्रभृति अनेक काव्य लिखे तथा काशीदासकृत महाभारतका फारसीमें अनुवाद किया है। लखनऊ जिलान्तर्गत मुस्तफाबाद वा रामपुरमें इनका जन्म हुआ था।

महम्मद ग़ज़ाली (इमाम)—एक प्रसिद्ध मुसलमान धर्माचार्य तथा हाकिम। ये आबू हमीद महम्मद जैन उद्दीन-अल-तुषी तथा हज्जत उल इस्लामके नामसे प्रसिद्ध थे। इन्होंने धर्म, आयुर्वेद तथा विज्ञान सम्बन्धीय अनेक उत्कृष्ट ग्रंथ लिखे हैं। उनमें 'किमि ए-सयादत, 'याकुत-उल-तावीव' वा 'तफसीर जवाहिर उल कुरान', 'आका एद ग़ज़ाली', 'अहिया-उल उलुम' तथा 'तुइफत-उल-फिलसफा' आदि ग्रन्थ प्रधान है। १०५८ ई०में तूष प्रदेशके ग़ज़ाली नामक ग्राममें जन्म होनेके कारण इनका नाम ग़ज़ाली पड़ा। ११११ ई०में इनकी मृत्यु हुई। इन्होंने अरबी और फारसी भाषामें कुल ९९ ग्रंथ लिखे हैं।

महम्मद घेसु दराज (सैयद)—दक्षिण प्रदेशके कुलवर्गा राज्यान्तर्गत दौलताबाद नगरवासी एक मुसलमान साधु। ये दिल्ली निवासी शेख चिरागुद्दीनके शिष्य थे। इनका जन्म १३२१ ई०को दिल्लीमें हुआ था। इनका असल नाम सदरुद्दीन हुस्सैनी था, पर पीछे ये घेसु दराजके नामसे ही विख्यात हुए।

वाह्मनी सुल्तानोंके शासनकालमें ये कुलवर्गा आये। युवराज अहमद शाह इनके व्याख्यानसे प्रसन्न हो इनका शिष्य बन गये। उन्होंने साधुके रहनेके लिये एक मसजिद बनवा दी।

१४२२ ई०में अहम्मद शाह गद्दी पर बैठे। इस समय साधुका गुण तमाम फैल गया। राजासे ले कर दीन दुःखी तक सभी इनके धर्मोपदेशका पालन करने लगे। धीरे धीरे जनसाधारणकी इन पर ऐसी प्रगाढ़ भक्ति हो गई, कि समस्त दाक्षिणात्य-वासी अति भक्ति और सम्मानसे इनकी पूजा करने लगे। अहम्मद शाहके राज्यारम्भके कुछ समय बाद ही इनकी मृत्यु हुई। मृतदेह हसनाबाद (कुलवर्गा)में दफनाई गई थी। आज भी सैकड़ों मनुष्य इनके मकवरेमें आ कर इबादत करते हैं।

घेसुदराजका मकवरा दक्षिण प्रदेशमें देखने लायक चीज है। वाह्मनी सुल्तान तथा और भी कितने स्थानीय राजाओंने इस मकवरेके खर्च वर्चके लिये काफी धन दे दिया है। उन लोगोंके वंशधर भी सेवाइतरूपमें नियुक्त रह कर मकवरेके संस्कारादिमें धन खर्च कर उसकी सार्थकता दिखलाते हैं।

घेसुदराज सुफी-संप्रदायके कर्त्तव्याकर्त्तव्यका निरूपण कर 'वतुद-उल-अशीकीन' नामसे एक धर्मग्रन्थ तथा 'असमार उल अक्षर' नामसे पारसी भाषामें एक हितोपदेश ग्रन्थ लिख गये हैं।

महम्मद गोरी (घोरी)—घोर वा घूरराज्यमें जन्म होने तथा वहांकी प्रचलित भाषामें महम्मद वा अहम्मद नामसे विख्यात होनेके कारण ऐतिहासिकोंने इनका महम्मद-गोरी नाम रखा। इनका प्रकृत नाम था मालिक शाहबुद्दीन। इन्हें मुइज़ुद्दीनकी उपाधि भी मिली थी।

मिनहाजके 'तवकात इ नासिरी' नामक ग्रंथमें इनका जीवनचरित जो लिखा है, वह इस प्रकार है,—

सुलतान गयासुद्दीन और मुइज़ुद्दीन दो भाई थे। वञ्जोरवंशमें उनका जन्म हुआ था। उनके पिताका नाम शमसवानी, पितामहका बहाउद्दीन समा और प्रपितामहका नाम महरान था। इनकी माताका नाम किदानी मालिक वदरुद्दीनकी कन्या थी। माता प्यारसे गयासुद्दीनको 'हवसी' तथा मुइज़ुद्दीनको 'जानगी' नामसे पुकारती थी।

सुल्तान अलाउद्दीन हुसैनने फिरोजककी गद्दी पर बैठते ही गयास और मुइज़को वजरिस्तानके दुर्गमें कैद रखा। अलाउद्दीनके बाद सुलतान सैफुद्दीन राजा हुए। इन्होंने दोनों भाईको कारावाससे मुक्त कर पूर्ण स्वाधीनता प्रदान की। गयासुद्दीन फिरोजकके दरबारमें सैफुद्दीनका प्रियपात्र हो कर रहने लगा और मुइज़ुद्दीन अपने चचा मालिक फखरुद्दीनके पास चला आया।

सैफुद्दीनके मरने पर अमीर उमरावोंने मिल कर गयासुद्दीनको ही गद्दी पर बिठाया। पहले इनका नाम शमसुद्दीन था, पर राजा होनेके बाद ये 'सुलतान गयासुद्दीन कहलाये।

भाईके राजा होनेका संवाद सुन कर मुइज्जुद्दीन चचासे आज्ञा ले फ़िरोजकसे रवाना हुए। गयासुद्दीनने पहले इन्हें 'सर-इ-जान्दार' अर्थात् प्रधान राजचिह्नवाहकका पद दिया और पीछे इस्तिया तथा कजुरान प्रदेशका शासक बनाया। गयासने घोरमें अपनी राजधानी बसाई। आबुल अब्बास आदि कई संभ्रान्त व्यक्तियोंने इसका घोर विरोध किया, पर गयासने अब्बासका शिर काट कर दो टुकड़े कर डाला। कहते हैं, कि उसी समयसे गयासकी समृद्धि और राजसीमा बढ़ने लगी। गयासने अपने भाईको गरमशिरके सर्वप्रधान और समृद्धशाली तिगिनाबाद नगरका भार सौंपा।

मालिक फखरुद्दीन अपने भतीजेकी समृद्धि पर जलने लगे। अतः उन्होंने अपनेको ही प्रकृत उत्तराधिकारी घोषित करना स्थिर किया। घोरके अनेक अमीरोंने इन्हें इस कार्यमें साथ दिया। अब फखरुद्दीनने अपने भतीजोंके विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी। इसी सुअवसरमें मालिक ताजउद्दीन यलदूज़ फ़िरोजक पर अधिकार करनेके लिये ससैन्य रवाना हुए। जरोके क्षेत्रमें दोनों दलमें मुठभेड़ हुई। यलदुजने समझा था, कि 'घोर-सेनाओंको विध्वंस करनेकी मुझमें पूरी शक्ति तो जरूर है, पर जय विजय ईश्वराधीन है, अतः मैं कर ही क्या सकता।' अकस्मात् एक घोरी वीरने इन पर ऐसा अस्त्र चलाया, कि इनका शरीर खंड खंड हो गया। अतएव घोरी-राजकी विजय-पताका फहराई।

दूसरे दिन घोरराज-शत्रु वालखके शासनकर्त्ताका मुण्ड भी दो टुकड़े करके ईर्षापरायण चचाके पास भेज दिया गया। फखर-उद्दीन भागनेकी चेष्टा कर ही रहे थे, कि एकाएक गयासुद्दीन और मुइज्जुद्दीनने ससैन्य उन्हें चारों ओरसे घेर लिया। अब तो वे जालमें फँस गये, भाग कैसे सकते थे। दोनों भाइयोंने शिविरमें ला कर अत्यन्त आदरके साथ उन्हें सिंहासन पर बिठाया और आनुगत्य प्रकाशस्वरूप मेखला स्पर्श करके दोनों भाई पास हीमें खड़े हो गये। फखरुद्दीन लाजसे मर गये और उठ कर बोले, "तुम लोग क्यों इस प्रकार मेरी दुर्गति करते हो।" किन्तु दोनों भाइयोंने यथोचित सम्मान कर उनका संदेह दूर किया और आदरपूर्वक बामियान भेज दिया। पीछे गयासुद्दीनने हीरट, परसिया, किवार और वधलार आदि अनेक स्थानों पर अधिकार जमाया। इसी समय सुलतान अला उद्दीन हुसैनकी कन्याके साथ गयासका विवाह हुआ। अब महम्मद गोरी इनकी नाकके बाल हो गये।

कुछ दिनोंके बाद गज-जातिय अमीरोंने अपने कौशलसे गोरी सेनाको परास्त किया। पीछे महम्मद गोरी स्वयं दलबलके साथ उतरे और वे भी परास्त हुए। गया सुद्दीन यह समाचार पाते ही गज-जातिको ध्वंस करनेमें तैयार हो गये। ५६९ हिजरीमें इन्होंने अपनी विजय-पताका फहराई।

गजनी पर अधिकार कर लेनेके बाद गयासुद्दीनने महम्मदगोरीको वहांका राजा बनाया। अब उन्होंने अपना नाम 'सुलतान-उल-आजम् मुइज-उद-दुनियां अब्बूल मुजफर महम्मद' रखा। हिजरी ५७०में इन्होंने संपूर्ण गजनी प्रदेश तथा गरदेज पर अधिकार किया। दूसरे साल करामितके हाथसे मुल्तान छीन लिया और हिजरी ५७४ में भारत पर अधिकार करनेकी इच्छा प्रकट की।

फिरिस्तामें लिखा है—शाहबुद्दीन 'उच्चा' पर अधिकार करने आये। उच्चाराजने दुर्गमें आश्रय लिया। इस पर सुलतान दुर्गके पास ही छावनी डाल कर दुर्ग जीतनेका उपाय ढूंढ़ने लगे। उन्होंने देखा कि सम्मुख समरसे फललाभकी संभावना नहीं है। इसी समय उन्हें मालूम हुआ, कि राजा रानीके वशीभूत हैं। गोरीराजने रानीको कहला भेजा, अगर रानी नगर छोड़ कर बाहर चली आवे तो मैं उनसे विवाह करूं और उन्हें विश्वकी रानी बना दूं। रानी, चाहे भयसे हो अथवा गजनीपतिके विजय-विश्वाससे, इस प्रस्तावको स्वीकार कर नगरसे बाहर चली आई। दुष्टा रानीसे ही उच्चाराजका प्राणान्त हुआ। राज्य मुसलमानोंके हाथ लगा। रानी और राजकुमारी इस्लामधर्ममें दीक्षित हुई। किन्तु शाहबुद्दीनने रानीसे विवाह नहीं किया। इसके लिये रानीको बहुत दुःख हुआ और थोड़े ही दिनोंके बाद रानी और राजकुमारी दोनों इस लोकसे चल बसीं।

मिनहाजने लिखा है—मुल्तान और उच्चा पर

अधिकार करनेके बाद सुलतान नहरवाला (अन-हलवाड़पत्तन) पर चढ़ाई करने गये। वहांके राजा युवक भीमदेवने बहुसंख्यक निषादी तथा अन्यान्य सेनाओंको साथ ले उनका सामना किया। मुसलमान लोग हार खा कर भागे। हिजरी ६७८में सुलतानने नष्ट गौरव पुनः पानेकी चेष्टा की, पर आशा पूरी न हुई।

दूसरे साल सुलतानने पुर्षोर (पुरुषपुर वा पेशावर) पर अधिकार किया। इसके दो वर्ष बाद वे लाहोर जीतनेके लिये अग्रसर हुए। इसी समय महम्मदी साम्राज्यके गौरव-रवि अस्ताचलचूड़ावलम्बी खुशरू मालिकने अपने पुत्र और एक बहुमूल्य हाथी भेज कर सुल्तानका अधीनता स्वीकार कर ली।

हिजरी ५७४में सुल्तान देवल तथा आसपासके स्थानोंको जीत कर विपुल धनके साथ स्वदेश लौटे।

हिजरी ५७१में इन्होंने फिरसे लाहोरकी यात्रा कर दी। राहमें जितने देश पड़े सबोंको वे लूटते गये। लौटती बारमें इन्होंने सियालकोट-दुर्ग-संस्कारका प्रबन्ध कर दिया।

सुलतानने फिरसे जो लाहोर प्रदेश पर अधिकार किया उसका कारण जम्बु राजाओंके इतिहासमें इस प्रकार लिखा है :—विक्रमाब्द ११५८में चक्रदेव पैत्रिक-सिंहासन जम्बुका अधिकारी हुआ। इनके राजत्वकालके मध्यवर्त्ती ५५५ हिजरीमें महम्मद-गजनीके वंशधर मालिक खुशरू गजनीको छोड़ लाहनोर चले आये। जम्बु-राजाओंको इस गोरीवंशसे सदा विद्वेष रहा करता था, पर ये लोग कुछ कर नही सकते थे। खुशरूने क्रमशः सम्पूर्ण पञ्जावप्रान्तको अपने दखलमें कर लिया। मङ्गलानवासी खोखर जाति जम्बुराज्यकी प्रजा होने पर भी खुशरूके उत्साहसे जम्बूराजकी अधीनता अस्वीकार कर दी। इस समय सुलतान मुइज्जुद्दीन गोरी गजनी जीत कर अपना राज्य फैला रहा था। राजा चक्रदेवने अपने छोटे भाई रामदेवको बहुमूल्य भेंटके साथ सुल्तानके पास भेजा। रामदेवने वहां जा कर राज्यकी अवस्था उन्हें कह सुनाई और यह भी सूचित किया, कि आपके लाहनोर जानेसे ही यह प्रदेश सहजमें हाथ आ जायगा। सुल्तानने जम्बु-प्रतिनिधिको यथेष्ट सम्मान किया। दूसरे वर्ष प्रतिनिधिके कथनानुसार वे लाहनोर गये और उसे अपने दखलमें कर लिया। किन्तु जब उन्होंने देखा, कि वहांके लोग सहजमें वशीभूत होनेको नहीं है, तब आस पासके प्रदेशोंको वे लूटने और ध्वंस करने लग गये।

सुल्तानके वापिस आने पर खुशरूने खोखरजाति की सहायतासे पुनः सियालकोट-दुर्गको घेर लिया। किन्तु चक्रदेव दुर्गवासियोंकी सहायतामें थे, इस कारण मालिकका अधिकार वहां जमने न पाया। इसके कुछ ही दिन बाद वृद्ध राजा चक्रदेवका देहान्त हुआ। इस समय उनकी उमर ८० वर्षसे ऊपर थी। पीछे विक्रम सम्वत् १२२१में इनके पुत्र विजयदेव सिंहासन पर बैठे। इसी वर्ष सुलतान सिन्धु नद पार कर पञ्चनद आये। विहात नदीके किनारे राजकुमार नृसिंहदेवसे उनकी भेंट हुई। सुलतान राजकुमारके साथ वहांसे लाहनोरकी ओर चल दिये। इस बार वहां इनका अधिकार जम गया। नरसिंह सुलतानसे उपयुक्त खिलअत पा कर स्वदेश लौटे। खुशरू मालिक बन्दी हो कर गजनी लाये गये। हिजरी ५८१में गरजिस्तानके बलरवान दुर्गमें उनकी हत्या की गई।

तबकात-इ नासिरी (सामयिक इतिहास)-में लिखा है, कि उपरोक्त घटनाके बाद ही सुल्तान बहुतसे सैन्य सामन्तोंके साथ तबरहिन्द (भाटिन्दा)-दुर्गको विजय करने गये थे। बदौनीके अनुसार उक्त दुर्गमें ही जयपाल-की राजधानी थी।

मिनहाज ने लिखा है, कि सुल्तानने उक्त दुर्ग जीत कर मालिक जिया उद्दीनको वहांका अध्यक्ष बनाया। दुर्गकी रक्षामें तुलाजातीय १२०० अश्वारोही नियुक्त किये गये। सुल्तान गजनी देश लौट जानेकी इच्छा कर रहे थे, कि इसी समय इन्होंने सुना कि पृथ्वीराज ससैन्य दुर्ग पर अधिकार करने आ रहे हैं। भारतवर्षके प्रायः सभी हिन्दू राजाओंने इसमें योग दिया था। सुल्तानने भी तिरौई क्षेत्रमें पृथ्वीराजका सामना किया।

विशेष विवरण पृथ्वीराज शब्दमें देखो।

युद्धमें सुल्तानकी हार हुई। यहां तक कि शत्रुके तीर-से घायल हो कर वे घोड़े परसे गिर रहे थे, इसी समय

एक खालज वीर उन्हें अपने कन्धे पर चढ़ा कर भीषण युद्ध क्षेत्रसे ले भागा जिससे उनकी जान बच गई।

मुसलमानी सेना रणस्थलमें सुलतानको न देख व्याकुल हो गई। पीछे रणस्थलमें पीठ दिखा कर जब वे भाग रही थी, तो राहमें उस वीर युवकके कंधे पर सुलतानको देख उन्हें जानमें जान आई। सुलतान ससैन्य गजनी लौटे। इसका बदला चुकानेके लिये सुलतानने फिर भी दूसरे वर्ष भारतवर्षमें प्रवेश किया। इस बार इनके साथ एक लाख बीस हजार मुसलमान घुडसवार थे। यहां आने पर जम्बूराज नृसिंहदेव और जयपाल भी इनके साथ मिल गये। सुलतानने तबरहिन्द दुर्ग जीत कर तिरौरीमें छावनी डाली। तिरौरी रणक्षेत्रमें घमसान लडाई छिड़ी। इस लडाईमें हिन्दुओंके भाग्यने किस प्रकार पलटा खाया, वह पृथ्वीराज शब्दमें सविस्तार लिखा जा चुका है। यहां पुनरुल्लेख निष्प्रयोजन है।

पृथ्वीराजकी पराजयके बाद अजमेर, हांसी, सरस्वती आदि समग्र शिवालिक प्रदेश सुलतानके हाथ लगे। कुतुबुद्दिन ऐवकको उन स्थानोंका शासक बना कर सुलतान गजनी लौटे। कुतुबकी चेष्टासे थोडे ही दिनोंमें कन्नौज, ग्वालियर, वाराणसी, बदाऊं, अनहलवाड़ आदि स्थानोंने गजनीपतिकी अधीनता स्वीकार की थी।

अनन्तर घूर वा घोरपति गयासुद्दीन महम्मदका हीरटमें देहान्त हुआ। इस समय मुइज्जुद्दीन खुरासनकी प्रान्त सीमामें तुस और सराके निकट रहते थे। बडे भाईका मृत्यु-संवाद पा कर वह फौरन वहांसे हीरटको चल दिये। अन्त्येष्टिक्रिया करनेके बाद उन्होंने अपने चचेरे भाई गयासुद्दीन महम्मदको फरा, इसफिजार प्रदेश और बस्ता नगर तथा सुलतान गयासुद्दीनके जमाई मालिक जिया उद्दीनको घोर, गारम्सिरप्रदेश, फिरोजकका सिंहासन तथा दावरराज्य एवम् अपने भांजे मालिक नासिरुद्दीनको हीरट प्रदेश अर्पण किया। इसके बाद इन्होंने घोरके कुछ अमीर और मालिकको ले कर हिजरी ६०१में खारिजम प्रदेशकी ओर युद्धयात्रा कर दी। खारिजम्-पतिने शत्रुकी गतिको रोकना चाहा लेकिन जब उन्होंने देखा सुलतानकी प्रचण्ड सेनाके सामने उनकी सेना क्षण भर भी ठहर नही सकती तब वे निराश हो अपनी राजधानी लौटे। इधर सुलतान भी नगरद्वार आ धमके, पर विजय प्राप्त न कर सके। नगर निवासियोंने अइहून नदीसे एक नहर पूर्वकी ओर काट निकाली थी। इसीसे घोरके अनेक अमीर पकड़े और मारे गये। इधर रसद भी घट गई थी जिससे सुलतानको लाचारवश वालख लौट जाना पडा। आन्दखुदमें पहुंच कर जब सुलतान शामको नमाज पढ़ रहे थे इसी समय तुर्किस्तानके अमीर उन पर यकायक टूट पड़े किन्तु सुलतानकी सेनापतिने बड़ी वीरतासे शत्रुओंको मार भगाया। सेनापतिने उनका पीछा भी करना चाहा था, पर सुलतानने यह कहते ही मना कर दिया, कि भगवान्की इच्छा अवश्य पूरी होगी। मैं विधर्मियोंके सम्मुख जाऊंगा और धर्मराज्य अवश्य स्थापन करूंगा। सेनापति तदनुसार सदलबल जुजरवानकी ओर चल दिये। पथश्रमसे आक्रान्त तथा दुर्बल बहुत सी सेनाने सुलतानको छोड़ कर चली गई। दूसरे दिन जो कुछ बच गई, उसे ही ले कर सुलतानने अपनी राह ली। इस समय बहुत सी विधर्मी सेनाने आ कर सुलतानको घेर लिया। अब सुलतानके क्रीतदासोंने उनसे कहा, कि हम लोगोंके पास बहुत थोड़ी-सी सेना रह गई, इस कारण युद्धक्षेत्रसे भाग जाना ही हम लोगोंके हकमें अच्छा होगा। परन्तु सुलतानने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। विधर्मी मुगलसेनाके सामने मुट्ठी भर मुसलमानीसेना कब तक ठहर सकती थी, एक एक कर यमपुर जाने लगी। सुलतान भी मुगल सेनाके तीव्र शराघातसे जर्जर हो गये। इस समय तुर्क क्रुतदास अगर इन्हें आन्दखुद दुर्गमें उठा न ले जाते तो इस बार इनकी जान बचने न पाती।

दूसरे दिन अमरकन्दके सुलतान ओसमान और तुर्किस्तानके 'मालिकगण इनकी सहायतामें आये। विधर्मियोंने उपरोक्त सहायकोंको देख कर घरकी राह ली। सुलतान भी गजनीको लौटे। वे तुर्किस्तान जा कर जिससे तीन वर्ष युद्ध चला सकें, उसका आयोजन करने लगे।

इस समय कुछ दुर्वृत्त खोखर तथा लाहोर और

जुधशैल-निवासी पहाड़ी जाति वागी हो गई। विद्रोह दमन करनेके लिये सुलतानको फिर एक वार भारत वर्ष आ कर कुरानके मतानुसार धर्मयुद्ध करना पड़ा। विद्रोहियोंको उचित सजा मिली।

हिजरी ६०२में सुलतान लौटनेकी तैयारी करने लगे, पर लौट न पाये। विश्राम-स्थानमें एक मुलाहिदा (विधर्मी)-के शिष्यने इनको जान ले ली।

(तवकात्-इ-नासिरी)

तारीख-इ-अलफिर' के मतानुसार खोखर (गक्कर) जातिने ही इन्हें मार कर वदला चुकाया था।

इधर अवुल फजल तथा जम्बू-इतिहास लेखकका कहना है, कि यद्यपि गोरी राजाकी मृत्यु तवकात् इ-अकवरी तथा फिरिस्ताके अनुसार खोखर जातिके हाथसे ही हुई, पर वंशपरम्परागत भाटोंकी कहानीसे ऐसा मालूम नहीं होता। कहानीसे मालूम होता है, कि जव पृथ्वीराज वन्दी वना कर गजनी लाये गये, तव चांद कवि भी उनसे मिलने वहां आया था। चांद धीरे धीरे मुइज्जुद्दीनका विश्वासपात्र हो गया। एक दिन वातचीतमें चांदने मुइज्जुद्दीनसे कहा, कि पृथ्वीराज तीर चलानेमें वड़े सिद्धहस्त हैं, इसकी परीक्षा यदि चाहें, तो आप कर सकते हैं। सुलतानको भी यह देखनेकी वड़ी लालसा हुई। पृथ्वीराजने सुलतान पर निशाना करके ऐसा वाण चलाया, कि उनके प्राण-पखेरू उड़ गये। आखिर चाँद और पृथ्वीराज दोनों ही मुसलमानोंके हाथसे यमपुर सिधारे।

जो हो, शेषोक्त प्रवाद ठीक नहीं जंचता। मिनहाज महम्मद गोरीवंशके समसामयिक थे। इन्होंने सुल्तानके साथियोंसे ही सुन कर इनकी जीवनी लिखी है। अतएव मिनहाज-लिखित तवकात्-इ-नासिरको ही प्रामाणिक एवं प्रकृत समझना चाहिये।

महम्मद घौषजिलानी (हजरत शेख)—प्रसिद्ध मुसलमान साधु। मुलतान जिलेके उच्चा नगरमे इनका मक़वरा मौजूद है। यह मकवरा गिलानी जातिका एक पवित्र तीर्थ-स्थान समझा जाता है। महम्मद वागदाद-निवासी प्रसिद्ध साधु शेख अब्दुल क़ादिर ,जिलानी वागदादीके वंशधर थे। १३६४ ई०में अपनी जन्मभूमिको छोड़ कर ये उच्चा नगर चले आये। दाउदके पुत्रोंने इनका शिष्यत्व ग्रहण किया था।

महम्मद घौष (शेख)—ग्वालियरके एक प्रसिद्ध साधु। इनका प्रकृत नाम था हमी उद्दीन। फकीरी धर्मग्रहण करनेके वाद ये गौष उल-आलम कहलाने लगे। ऐसा कहा जाता है, कि ये वारह वर्ष तक चुनार पर्वतकी गुहामें ब्रह्मचारी हो कर ईश्वरके ध्यानमें मग्न थे। इस समय सिर्फ जंगली फलमूल ही इनका जीवनाधार था। योगसिद्ध हो जाने पर ये अपने घर लौटे। ये वाक्सिद्ध थे, जो जिसको कहते थे वह उसे अवश्य मिल जाता था। आसपासके राजाओंकी भी इनमे अटूट श्रद्धा था। वहुतोंने इन्हें जीवन रक्षार्थ भूमि भी दे दी थी। इनके दर्शनके लिये हिन्दू और मुसलमानोंकी सर्वदा भीड़ लगी रहती थी।

अनन्तर ये ग्वालियर गये और सर्वसाधारणको इस्लामधर्ममें लाने तथा ज्ञान वितरण करनेकी कोशिश करने लगे। इनकी भूसम्पत्तिसे ही इनका कुल खर्च वर्च चलता था। ये गुजरातके प्रसिद्ध संन्यासी वाजी उद्दीनके गुरू थे। १५६२ ई०में ये परलोकवासी हुए।

इन्होंने 'जवाहिर उलखमसा' 'गुलजार अव्रार' आदि कई ग्रंथ लिखे। सैयद फजल उल्ला कृत मुनकिव घौसिया में इनकी जीवनी विशदरूपसे लिखी गई है।

महम्मद घौष खां (सराजुद्दौला)—कर्णाटकके एक नवाव। इन्होने अपनी कविता शक्तिके कारण 'आदिम'की उपाधि पाई थी। १८४२ ई०में इन्होंने तजकिरा शुभ-वतान नामक ग्रंथमें दाक्षिणात्यके प्राचीन कवियोंकी जीवनी सग्रह की थी।

महम्मद घौष (जारिन)—चहार-दरवेश नामक पारस्य उपन्यासके प्रणेता। वीजापुरमें इनका जन्म हुआ था। लखनऊके नवाव आसिफुद्दौलाके शासनकालमें ये जीवित थे।

महम्मदजान—वङ्गालके नवाव, मुर्शिदकुली खांके नायक फौजदार। ये कटवा (मुर्शिदगंज) मौजाके प्रथम थानेदार वा नायव फौजदार नियुक्त हुए थे। पूर्व-नवावके प्रिय पात्र होनेसे मुर्शिदाकुली भी इन्हें वहुत चाहते थे। ये नृशंस स्वभावके थे। इनका दण्डविधान देख कर

मनुष्यमात्रका हृदय विदीर्ण हो जाता था। कहते हैं, कि डाकुओंको पकड़ पकड़ कर वे उनका शरीर दो टुकड़ोंमें चीर देते और तब राह परके वृक्षमें लटका देते थे। इस कठोर-कर्मके लिये लोग इन्हें कुड़ालिया कहा करते थे। डाकुओंकी हत्याके लिये इनके साथ कुठारधारी घातक घूमा करता था। ऐसे कठोर अत्याचारसे वहां डाकुओं-का नाम निशान भी न रह गया।

एक बार मुर्शिदकुलीके प्रतिनिधि हो कर इन्होंने पावनाके सूबेदार फरुखशियरके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। राजशाहीमें जब उदयनारायणके षड्यन्त्रका हाल मालूम हुआ, तब इन्होंने तथा लहरीमल्लने नवाब मुर्शिद कुली खाँकी आज्ञासे राजशाहीकी ओर यात्रा कर दी। उदयनारायणने अपनी हार अवश्यम्भावी जान कर आत्म हत्या कर डाली।

महम्मद जानि—असर-अहादी नामक ग्रन्थके प्रणेता। इस ग्रंथमें इस्लाम धर्म प्रवर्त्तक महमद तथा द्वादश इमामकी विस्तृत जीवनी लिखी है।

महम्मद तकी (इमाम)—अलीके वंशमें उत्पन्न प्रसिद्ध ९वें इमाम। ये ८वें इमाम अली मुसी रजाके पुत्र थे और महम्मद अल जवादके नामसे मशहूर थे।

इनका जन्म ८११ ई०में हुआ था। खलीफा ममूनकी कन्या उम्म उल फज्लको इन्होंने ब्याहा था। ८३५ ई०में विषप्रयोगसे इनका देहान्त हुआ। बागदाद नगर-में इनके पितामह इमाम मुशो काजमकी कब्रके पास ही इनकी मृतदेह दफनाई गई थी।

महम्मद तकि (मीर)—एक प्रसिद्ध मुसलमान कवि। यह फारसी तथा उर्दूमें अनेक ग्रन्थ लिख गये हैं। अकबराबादमें इनका जन्म हुआ था इसीलिये ये हिन्दु-स्तानी कविके नामसे प्रसिद्ध थे। कवित्व-शक्तिके कारण इन्हें मीरकी उपाधि मिली। ये मुगल सम्राट् शाह आलमके विशेष प्रियपात्र थे। इस कारण इन्हें सपरि-वार दिल्लीमें ही रहना पड़ता था। इनके लिखे छः दीवान और एक तजकिरा (कवितामाला) सर्वसाधारणके निकट विशेष आदरणीय हैं। १८१० ई०में लखनऊ नगर-में इनकी मृत्यु हुई। इनके पुत्र फैज अली भी कवि थे।

महम्मद तकी खा—वङ्गालके नवाब मीर कासिमके अधीनस्थ एक सेनापति। ये ताब्रिज नगरसे हो कर वङ्गाल आये। यहां इनकी कार्यदक्षता तथा साहस देख कर नवाब विशेष आकृष्ट हो गये थे। यहां तक, कि इन्हें नवाबने वीरभूमका फौजदार बना कर वहांके राजस्व संग्रहका भार भी सौंप दिया था।

वीरभूमके युद्धमें नवाबने देशी सेनाओंकी अक-र्मण्यता देख तकी खांको एक दल उपयुक्त सेना संगठन करने कहा। तदनुसार तकी खां प्राणपणसे मालिक के काममें उत्साह और सहानुभूति दिखलाते हुए थोड़े ही समयके अन्दर नवाबके श्रद्धाभाजन हो गये थे।

इतिहास पाठकमात्रको ही यह मालूम होगा कि मीर कासम तथा अंग्रेज व्यापारियोंके बीच उस समय कैसा मनोमालिन्य चल रहा था। अंग्रेजोंको मार भगाने लिये ही इन्होंने एक षड़यन्त्र रचा। युद्ध अवश्यम्भावी जान कर इन्होंने सेनापति गुर्गिन खांको सलाहसे जगत सेठ दोनों भाई महतावराय तथा राजा स्वरूपचंदको कैद करनेकी इच्छा की। तदनुसार इन्होंने अपने वीरभूमके फौजदार महमद तकीखांको दलबलके साथ मुर्शिदाबाद जाने और दोनो सेठ भाइयोंको बन्दी कर मुंगेर भेज देनेका हुकुम दिया। खाने आज्ञा पाते ही मुर्शिदाबादको प्रस्थान किया और दोनों सेठोंके मकानको घेर लिया। इन्होंने छल-पूर्वक सेठ भाइयोंसे कहा, 'तुम लोगोंको नवाबके आज्ञा-नुसार मुंगेरमें रहना होगा। नवाबकी तुम लोगों पर जुलम करनेकी बिलकुल इच्छा नहीं है।' तकीखाकी बातमें पड़ वे दोनों मुंगेर जा कर रहने लगे। किन्तु इसके पहले ही राजा रामकृष्ण, राजवल्लभ तथा राजा कृष्णचंद्र प्रभृति स्थानीय प्रभावशाली व्यक्तियोंको कैदमें देख कर दोनों सेठोंको तकिखांका गूढ़ रहस्य समझनेमें देर न लगी। अब उन्हें समुचित सुखसे रख कर नवाब अपने उद्देश्यकी पूर्त्तिमें लग गये।

कुछ दिनोंके बाद अंग्रेज और मीरकासिमसे युद्ध छिड़ा। मुसलमानी सेनाओं तथा सेनापतियोंकी परि-चालन-विशृङ्खलतासे पटनामें नवाब बुरी तरह परास्त हुए। वहांसे भाग कर मुसलमानी सेना भागीरथी पार कर पलासीके दक्षिण महब्बत तकी खांके शिविरमें

पहुंची। तकी खांने इन भागो हुई सेनाको इसलिये आश्रय न दिया, कि कहीं शिक्षित दल भी पीछे इसी प्रकार कर्त्तव्यसे विमुख न हो जाय। किन्तु इसका फल अच्छा नहीं हुआ, दोनोंमें मनमुटाव चलने लगा। भागी हुई सेना बहुत दूरमें,छावनी डाल कर रहने लगी।

१७६४ ई०की १६वीं जुलाईको सारी अंग्रेजी सेनाने तकी खांके अन्यान्य दलोंकी परवाह न करते हुए आगे कदम बढ़ाया। मुसलमानकी ओरसे भी नायकके उत्साह पर अश्वारोहियों तथा गोलन्दाजोंने अदम्य उत्साहसे विपक्षी पर आक्रमण कर दिया। सेनापति स्वयं युद्धमें उपस्थित हो सेनाओंकी परिचालना करने लगे। अंग्रेजोंके लगातार गोला बरसाने पर भी मुसलमानी सेना डटी रही इसी समय हठात् अंगरेजोंकी सेनामें विश्रृङ्खलता दिखाई दी। किन्तु तकी खांका घोड़ा मर गया था और उनका एक पांव भी गोलीसे घायल हो गया था। फिर भी उन्होंने इसकी परवाह न की और अच्छे अच्छे अश्वारोही सेनादलको ले कर अंगरेजों पर धावा बोल दिया। इनका स्कन्ध देश घायल हो जाने पर भी अपनी सेनाको भयभीत होनेसे बचानेके लिये क्षतस्थानको वस्त्रसे ढक लिया और दूने उत्साहसे रणक्षेत्रमें कूद पड़े। उन्होंने समझ रखा था, कि इस बार अंगरेजोंको हटा देनेसे वे फिर कभी नहीं लड़ सकते, पर इनके भाग्यने पलटा खाया। दक्षिण भागमें छिपी हुई अंगरेजी सेनाओंने एकाएक गोली बरसाना आरम्भ कर दिया जिससे बहुत-सी मुसलमानी सेना यमपुर सिधारी। तकी खां भी एक गोलीके आघातसे यमपुर सिधारे। जो कुछ सेना बच गई वह भी जान ले कर भागी।

महम्मद् ताहिर (इनायत खां)—एक मुसलमान कवि, जाफर खांके पुत्र। इन्होंने सम्राट् शाहजहांकी जीवनीको ले कर 'शाहजहांनामा' नामसे एक ग्रन्थ लिखा। इनकी कविता उच्च श्रेणीकी होती थी और इसीलिये इन्हें 'आसन'की उपाधि मिली थी। इन्होंने अन्यान्य ग्रंथोंके सिवा 'दीवान' और 'मसनवि'की भी रचना की थी। १६६६ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद् ताहिर (नाशिराबादी)—तजकिरा महम्मद ताहिर नामक जीवनी-लेखक। ये परसियाके राजा १म अब्बासके राजत्वकालमें जीवित थे।

महम्मद् पार्शा (खोजा)—युवराज अलाउद्दीनके समसामयिक एक कवि। १४७७ ई०में इनका देहावसान हुआ।

महम्मदपुर—विहारके सारन जिलान्तर्गत एक ग्राम। यहां धान आदिकी खेतीवारी अच्छी होती है।

महम्मदपुर—पटना जिलान्तर्गत एक नगर। यह स्थान अक्षा० २५° ३०´ उ० तथा देशा० ८५° ४६´ पू०के मध्य अवस्थित है।

महम्मदपुर—बङ्गालके यशोहर जिलान्तर्गत एक बड़ा ग्राम। यह मधुमती नदीके दाहिने किनारे अवस्थित है। एक समय यह स्थान अत्यन्त समृद्धिशाली था। १८३६ ई०में ज्वरके प्रकोपसे यह जनशून्य-सा हो गया। इसका वर्त्तमान नाम मासूदपुर है।

ऐसा कहा जाता है, कि भूषणाके विख्यात भूम्याधिकारी राजा सीताराम रायने १८वीं सदीमें इस नगरको बसाया था। आज भी उनके बनाये हुए दुर्गका ध्वंसावशेष, प्राचीन मन्दिर और जलाशय आदिका निदर्शन देखनेमें आता है। सीताराम राय देखो।

महम्मदपुर—अवध-प्रदेशके बारावांकी जिलान्तर्गत एक परगना।

महम्मदपुर—अवध-प्रदेशके फैजावाद जिलान्तर्गत एक नगर।

महम्मद फिकरी—अकवर शाहके एक सभासद। रुवाई कविता लिखनेके कारण इनकी ख्याति फैल गई थी। ये हिलातवासी एक तांतीके लड़के थे।

महम्मद मग्रावी (शेख)—एक मुसलमान कवि। इनका प्रकृत नाम महम्मद शीरोन था। ये कट्टर सुफी मतावलम्बी थे। इसी कारण कमल खुजान्दीके साथ इनकी विशेष घनिष्टता हो गई थी। १४१६ ई०में ताब्रिज नगरमें इनकी मृत्यु हुई और शूरखाव नगरमें मकबरा तय्यार किया गया। साधारण मुसलमान इन्हें एक साधु समझते थे। इनकी लिखी 'कसायद मग्रावि' नामक एक दीवान तथा और भी बहुत-सी पुस्तकें हैं।

महम्मद मसूम नामी (अमीर)—सम्राट् अकवरके एक सम्भ्रान्त सभासद। इनका जन्मस्थान भकर था। इन्होंने

युसुफ जेलेखाके आधार पर, हुसम-व नाज, लैला मजनूके आधार पर परिसुरत तथा मखजन-उल-आसार, हफ्तपैकार और सिकन्दरनामाके आधार पर १० हजार श्लोकोंमें एक मसनविकी रचना की। इसके सिवा इनके बनाये हुए दो 'दीवान' तथा दो 'शाकि-नामा' ग्रन्थ भी मिलते हैं। एक समय यह एक हजार साथियोंके साथ परसियाके राजा अब्बासके दरवारमें उपस्थित हुए थे।

महम्मद महसीन-(मुल्ला)—काशानवासी एक कवि। इन्हों ने तफसीर सूफी नामक एक ग्रन्थ लिखा था।

महम्मद महसीन—पैलानीके एक विद्रोही तहसीलदार। इन्होंने इमदाद अलीके साथ १८५७ ई०के गदरमें भाग लिया था। इसी कारण अंग्रेजोंने इन्हें पकड़ा तथा दूसरे वर्ष बान्दा नगरमें फांसी दे दी।

महम्मद महसीन-(हाजी)—हुगलीके एक विख्यात मुसलमान फकीर। प्रभूत सम्पत्तिके अधिकारी होने पर भी ये विषयवासनासे परे थे। इनका स्वजातीय दीन दुःखियोंके साथ प्रेम तथा निस्वार्थ दान देख कर लोग इन्हें श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। इनके सम-सामयिक हुगलीके विख्यात धनी नवाब खां जहानखां इनकी ख्यातिके सामने फोके पड़ गये थे।

हाजी महम्मदका जन्म जिस संभ्रान्त मुसलमानवंशमें हुआ था उसकी वंश-व्याख्या इस प्रकार है :—

आगा फजल उल्ला नामक एक धनी पारसी १८वीं सदीमें व्यापार करनेके लिये भारतवर्ष आये। इनके पुत्र हाजी फैजुल्ला हुगली तथा मुर्शिदाबादमें अपना वाणिज्य फैला कर बड़े प्रतिभाशाली हो उठे थे, किन्तु कालचक्रसे इनका धन नष्ट हो गया और अन्तमें ये दरिद्र हो गये। अतएव इन्हें हुगलीमें ही आ कर रहना पड़ा था। इसी समय एक धनशालिनी रमणीके साथ इनका प्रेम हो गया।

वह रमनी किस वंशकी थी और किस प्रकार हुगलीमें आ कर रहने लगी, यह बतला देना यहां पर आवश्यक है। इस्पाहन नगरके प्रसिद्ध मताहारवंशमें मताहार नामक एक प्रसिद्ध धार्मिक आगाने जन्म लिया था। वे औरङ्गजेब बादशाहके यहां कोषाध्यक्ष थे। बादशाहके ऐसे विश्वासी थे कि कोषकी चाभी भी उन्हींके पास रहती थी और सपरिवार दिल्लीके राज-प्रासादमें उन्हें रहनेका हुकुम मिला था।

कालक्रमसे वे पत्नीके अभिप्रायानुसार मुहर्रमका ताजिया बनानेके लिये बादशाहसे आज्ञा ले हुगलीमें ही आ कर रहने लगे। औरङ्गजेबने इन्हें यशोहर, चितपुर आदि और भी गांव जागीरमें दिये।* मुगल-साम्राज्यकी समृद्धिका त्याग कर इन्होंने हुगलीमें एक इमामवाड़ा बनानेका निश्चय किया। तदनुसार जाफर पम्बा नामक एक रुईके सौदागरसे वर्त्तमान इमामबाड़ेकी जमीन उन्होंने खरीद की। पहले वहां जाफरकी कोठी और आनरो बीबीका इमामबाडा था। ११०८ ई०में कुल असबाबके साथ आगाने उस मकानको खरीद लिया और नाजिरगाजि हुसैनके नाम पर एक इमामबाड़ा बनवाया। अभी भी यहां इमाम हुसैनकी पूजा होती है।

आगा मताहारने अपना शेष जीवन सुखसे नहीं बिताया। अपने जीवनकालमें ही उन्होंने एक तावीज अपनी प्यारी लड़की मन्नूजानको दे कर कहा था, कि इसे मेरे मरनेके पहले न खोलना। आगाकी मृत्युके बाद लड़कीने तावीजको खोला। तावीजमें एक दानपत्र था जिसमें लिखा था—"मेरी कन्या मन्नूजान ही मेरे मरनेके बाद सारी सम्पत्तिकी उत्तराधिकारिणी होगी।" आगाकी पत्नीने यह दानपत्र देख कर हाजी फैजुल्लासे सगाई कर ली। इसी दम्पतीसे महम्मद महसीनका जन्म हुआ। कोई कोई कहते हैं, कि इनका जन्मस्थान मुर्शिदाबाद था। पिताकी मृत्युके बाद इनकी माताने हुगलीमें आ कर मताहारसे सगाई की थी।

फिर यह भी सुना जाता है, कि १७३२ ई०में इनका जन्म हुआ था। युवाकालमें इन्होंने सिभोजी नामक एक मौलवीके निकट शिक्षा पाई थी। मौलवीसे देशभ्रमणका वृत्तान्त सुन कर इन्हें भी देश पर्यटनकी इच्छा हुई। मुर्शिदाबादमें कुछ दिन रहनेके बाद ये परसिया तथा अरब गये। अरबी और फारसी भाषामें इनकी

* कोई कोई कहते हैं, कि आगा मताहर काशीराजके यहां नौकरी करते थे। पुरस्कारस्वरूप इन्होंने यशोहर आदि जमींदारी पाई थी। इस मतान्तरका निर्णय करना भी कठिन है।

विशेष व्युत्पत्ति थी। बड़े होने पर ये भारतवर्ष, अरब, तुर्किस्तान, मिस्र तथा दक्षिण परसियाके गांव गांवमें घूम घूम कर विभिन्न जातियों तथा धर्मावलम्बियोंके साथ मिले थे।

इसी समय मन्नूजान खानमका स्वामी परलोकवासी हुआ। मन्नूजानके विशेष अनुरोध करने पर महम्मदको घर लौटना पड़ा। उनके हुगली पहुंचने पर मन्नूने अपनी सारी सम्पत्ति उन्हें दे दी।

अब महम्मद मुहसिन सर्वसाधारणकी दृष्टिमें आये। दरिद्रको अन्नदान उनके जीवनका महाव्रत था। बड़े बड़े अक्षरोंमें जो दानपत्र लिखा है उससे अनुमान होता है, कि सरकारी खजाना दे कर जो कुछ बचता उसे वे दरिद्रोंके बीच बांट देते थे।

महम्मद मिर्ज़ा—एक संसार-विरागी युवराज। ये अमीर तैमूरके पौत्र तथा मीरन शाहके पुत्र थे। संसारसे विरक्त हो ये अपने भाई समरकन्दाधिपति सलिल उल्ला खांके साथ रहने लगे। १४०८ ई०में मिर्जा शाहरुकने समरकन्द पर अधिकार कर जब अपने पुत्र मिर्जा उलध वेगको वहांका अधिकारी बनाया, तब युवराज मिर्जा महम्मदने अपना शेष जीवन उन्हींकी अधीनतामें बिताया था। १४४१ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद मुकिम—तबकात-इ-अकबरी वा तारीख निजामी नामक भारत-इतिहासके लेखक। १५९३ ई०मे इन्होंने उक्त ग्रंथ समाप्त कर अकबर बादशाहको समर्पण किया। इनका प्रकृत नाम ख्वाजा निजाम उद्दीन अहमद था। ये हीरटवासी ख्वाजा महम्मद मुकिमके पुत्र थे। इनके पिताने मुगल बादशाह बाबर शाहके अधीन दीवानका काम करके अच्छा नाम कमाया था। बाबर शाहकी मृत्युके बाद ये अहमदाबादके अधिपति मिर्जा असकरीके वजीर हुए थे। कुछ समय इन्होंने अकबर शाहके अधीन भी काम किया था।

इनके पुत्र महम्मद अकबरशाहके यहां गुजरातका बक्सी हुआ था। इसी पद पर रह कर १५९४ ई०में उसका देहान्त हुआ। लाहोर नगरमें इरावतीके किनारे मकबरा तय्यार किया गया।

महम्मद मुजफ्फर—फार-राज्यके मुजफ्फरी राजवंशके प्रतिष्ठाता। इनका प्रकृत नाम मुवारिज उद्दीन था। ये परसियाके राजा सुल्तान आबु सैयद खांके अधीन एक उच्च पद पर नियुक्त हुए थे। १३३५ ई०में उक्त राजाके मरने पर जब राज्यमें विशृङ्खलता आरम्भ हुई तब इन्होंने येजदको अधिकार किया। १३५३ ई०में शाह शेख आबु-इजाकसे इन्होंने सिराज छीन लिया। पीछे इजाकको भी मार कर ये फार राज्यके अधीश्वर बन बैठे। १५५६ ई०में इनके लड़के शाह सुजाने इनसे विद्रोह कर इनकी आखें निकाल लीं और आप सिराज-सिंहासन पर बैठ गये। १३५४ ई०मे मुजफ्फरकी मृत्यु हुई। १ मुवारिज उद्दीन महम्मद मुजफ्फर, २ शाह सुजा, ३ शाह अहमद, ४ सुल्तान अहमद, ५ शाह मनसुर, ६ शाह आहिया, ७ शाह जैन उल् आबिद्दीन इन सातोंने ७७ वर्ष तक प्रबल प्रतापसे फार राज्यका शासन किया था। परवर्त्ती दो राजाओंके कुछ महीने राज्य करने पर फार राज्य किसी दूसरे राजाके हाथ चला गया।

महम्मद (मुल्ला)—"शामस-वाजिग" तथा हबसी-फरिद्-फिशारा-उलफयेद नामक ग्रन्थके लेखक। इनका जन्म-स्थान जौनपुर था। ये महम्मद फरुकोके पुत्र थे। १५६२ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद रजा—असरकात अल्‌विया तथा इन्तिखार-उल-अहकाम नामक अरबी धर्म-शास्त्रके प्रणेता।

महम्मद रफिया वायेज—इस्पाहनवासी एक धर्मप्रचारक। ये मिर्जा साथब और ताहिर वहिदके समसामयिक थे। इनके लिखे हुए फारसी भाषामें एक दीवान तथा उल-जनान नामक एक धर्मग्रन्थ मिलते हैं। इसके सिवा शाह अब्बास तथा तुरानके राजा एलान खांका युद्ध वर्णन कर इन्होंने एक दूसरा काव्य भी लिखा है।

महम्मद रफिउद्दीन (मुहाजिस)—दाक्षिणात्यवासी एक मुसलमान कवि। ये पहले सम्राट् अकबरके यहां सेना-नायकका काम करते थे। १५९२ ई०में इनका दीवान ग्रंथ समाप्त हुआ। सम्राट्ने इनकी कवितासे प्रसन्न हो इन्हें यथेष्ट पुरस्कार दिया था।

महम्मद रेज़ा खां—बङ्गालके एक नायब सूबेदार। नवाब जाफर अली खांके मरने पर इनका पुत्र नजिमुद्दौला

जब नवाब हुआ तब अंग्रेजोंने रेजा खांको मुर्शिदाबादका प्रधान सचिव बनाया। १७७२ ई०में कौंसिलके विचारानुसार रेजा खां कैद कर कलकत्ता लाये गये। इसके चार वर्ष बाद विचार विभागमें विशृङ्खलता उपस्थित होनेसे वारेन हेष्टिंग्सने इन्हें फिरसे उक्त पद प्रदान किया था।

महम्मद लारी (मुल्ला)—तालिफ मुल्ला महम्मद लारी नामक ग्रंथके प्रणेता।

महम्मद लाद—'मुयिद उल् फजला' नामक अभिधानके प्रणेता।

महम्मद वकि (ख्वाजा)—एक मुसलमान साधु। दिल्लीमें कदम-रसूलके पास इनका मकबरा मौजूद है। १६०३ ई०में ये परलोकवासी हुए।

महम्मद वक्स—नौरतन (नवरत्न) नामक उर्दू काव्यके प्रणेता। हि० १२३० ई०में लखनऊपति गाजि उद्दीन हैदरके समयमें इन्होंने यह ग्रंथ समाप्त किया। इसके सिवाय 'गुलसन नौवहार' तथा 'चारचमल' नामक दो और भी किताबें इनकी लिखी हुई हैं। कविता शक्तिके कारण इन्हें 'महमूद'-को उपाधि मिली थी।

महम्मद वकिर—इस्पाहन नगरके एक प्रधान धर्मयाजक। (शेख-उल-इस्लाम), महम्मद तकिके पुत्र। देवतत्त्व, नीति, स्मृतिशास्त्र तथा साहित्य सम्बन्धमें आप जैसे किसी भी ज्ञानवान् पण्डितने परसिया राज्यमें जन्म नहीं लिया था। धर्मावलम्बियोंके धर्मतत्त्वकी मीमांसामें आप अद्वितीय थे।

इनका उज्ज्वल यश संपूर्ण परसिया राज्यमें विस्तृत था। स्वयं शाह सुलेमान इनके ज्ञानसे मोहित हो कर इन्हें अपनी कन्या देनेको प्रस्तुत हुए थे। परन्तु ये तो सांसारिक वासनाओंसे विरक्त थे अतएव शाहकी इच्छा पूरी न हो सकी। इनके बनाये हुए 'हक्क-उल्ल-यकीन' सियासंप्रदायकी एक उत्कृष्ट धर्मशास्त्र है। उसमें विभिन्न मतोंका खण्डन विचारपूर्वक किया गया है। इसके सिवाय वहर-उल-अनवर आदि अनेकों उत्कृष्ट ग्रन्थ इनके लिखे हुए मिलते हैं। इनकी मृत्यु १६६८ ई०में हुई।

महम्मद वकिर दमद (मीर)—आष्ट्राबादवासी एक विख्यात पंडित, सैयद हमू दमड़ीके पुत्र। इन्होंने परसियाकी राज-कन्यासे विवाह कर 'दमड़' उपाधि पाई थी। इस्पाहन नगरमें इन्होंने कई ग्रंथ लिखे, जिनमें 'उफक-उल-मुवीन' तथा 'सारा मुख्तसर'-की टीका प्रधान है। १६३० ई०में इनका देहान्त हुआ।

महम्मद वकिर (इमाम) अलीवंशके ५म इमाम, इमाम जैन उल आवेदिनके पुत्र। ६७६ ई०में इनका जन्म और ७३१ ई०में मरण हुआ। मदीनामें इनको दफनाया गया था।

महम्मद बिन अब्दुल अजीज—साहिद-वमानि नामक प्रसिद्ध-तुर्की ग्रंथके प्रणेता। १६१२ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद बिन अब्दुल रहमान—कूफा नगरवासी एक प्रसिद्ध हाकिम और काजी। ७३५ ई०में ये परलोकवासी हुए।

महम्मद बिन आबु बकर—इस्लामधर्म-प्रवर्त्तक, महम्मदके साला तथा प्रथम खलीफा आबू बकरके पुत्र। खलीफा अलीने इन्हें मिस्र देशका शासक नियुक्त किया। सामान्तराज अमरु इब्न उल आशके साथ जो युद्ध हुआ था उसमें इन्हें परास्त और कैद कर राजा १म मुयानियरके समीप लाया गया। राजासे प्राणदण्डकी आज्ञा मिलने पर इनका शरीर गदहेके चमड़ेसे ढंक कर जला दिया गया।

महम्मद बिन अहमद—'तर्जुमा फतुह' नामक अरबी ग्रंथके प्रणेता। ११९९ ई०में इन्होंने एक अरबी ग्रन्थसे महम्मदका गृह-विच्छेद, अरबजातिका पराभव, महम्मदकी अवनति तथा आबु बकरकी खलीफापद प्राप्तिसे ले कर कर्वाला युद्धमें हुसेनकी मृत्युका हाल तर्जुमा किया है।

महम्मद बिन आली—आबनाई उल जनान नामक अरबी ग्रंथके प्रणेता। यह ग्रंथ इस्लाम धर्मप्रवर्त्तक महम्मद तथा उनके परिषदोंके वर्णनसे भरा है।

महम्मद बिन अमूरु (अत तिमीमी)—प्रधान प्रधान सियाके जीवनी रचयिता।

महम्मद बिन इसा तिर्मिजी—जमातिर्मिजी नामक ग्रंथके प्रणेता। ये अल बुखारीके शिष्य थे। ८९२ ई०में इनका परलोक वास हुआ।

महम्मद बिन-ईसस—'रिसाला अल मुआजम फी आशा आर अल आजम' नामक ग्रंथके प्रणेता।

महम्मद बिन इब्राहिम (सद्र सिराजो कपि उल कुजात)—उल् हिपात नामक ग्रंथके टीकाकार। ये मुल्ला सद्रके नामसे भी प्रसिद्ध थे।

महम्मद बिन इद्रिस (इमाम)—एक मुसलमान-ग्रंथकार। ये इस्लामधर्मके तृतीय सम्प्रदायके अधिष्ठाता थे। इन्होंने प्रवादमाला संग्रह कर एक पुस्तक लिखी थी।

महम्मद बिन इजाक उल नादिम—किताब उल फिरिस्त नामक एक सुप्राचीन अरबी ग्रंथके प्रणेता। ९८१ ई०में यह ग्रंथ लिखा गया था। इस ग्रंथमें अलिफ-लयला वा 'एक हजार एक रजनी' नामक अरबी उपन्यासोंका उल्लेख है।

महम्मद बिन कासिम—एक प्रसिद्ध सिन्धु-विजेता। खलीफा प्रथम वालीदके भाई तथा हिजाज बिन युसुफके जमाई। इन्होंने ७११ ई०में उक्त खलीफाकी आज्ञासे सिन्ध पर ससैन्य चढ़ाई की थी। पहले इन्होने देवलवन्दर (या मनोरा वा ठट्ट) पहुंच कर नारायणकी आर कदम बढ़ाया था। यहांके शासनकर्त्ताको छलसे वशीभूत कर इन्होंने शेवान (शिवस्थान) दुर्गको जीता। इसके बाद वे नारायणकोट आये और वहांसे सिंधुनद पार कर ७१२ ई०में हिन्दूराज दाहिर पर इन्होंने धावा बोल दिया। रावलदुर्गमें राजा दाहिरकी मृत्यु होनेके पश्चात् उनके आत्मीय स्वजनोंको मुसलमानोंने कैद कर लिया। केवल दाहिरके पुत्र जयसिंहने काश्मीर भाग कर अपनी जान बचाई थी। पीछे कासिमने ब्राह्मणावाद पर अधिकार कर आलोर दुर्ग जीतना चाहा।

७१३ ई०में इन्होंने आलोर विजय कर दाहिरकी दो कन्याओंको दमस्कस भेज दिया। खलीफा सुलेमानने दोनोंको अन्तःपुरमें रखा। एक दिन खलीफाने उन्हें अपने कमरेमें बुलाया और उनकी रूप लावण्यता पर मोहित हो उनकी इच्छा पूरी करनेको कहा। इस पर कन्याओंने उत्तर दिया, "कासिमने पहले हम लोगोंका धर्म नष्ट कर आपके पास भेजा है। अतः हम लोग आप शाहजादेके उपयुक्त नहीं रहीं।" खलीफा यह सुनते ही आग बबूले हो गये और तुरन्त अपने नौकरोंको हुकुम दिया, कि जाओ, आज ही कासिमको ताजे गौके चमड़ेसे लपेट कर अच्छी तरह सिलाई कर दो। खलीफाकी आज्ञा फौरन तामिल की गई। तीन दिन असह्य यन्त्रणा भोग कर कासिमके प्राण निकले।

कासिमकी मृतदेह जब खलीफाके सामने लाई गई, तब दोनों कन्याओंने प्रकृत घटना तथा कासिमकी निर्दोषिता कह सुनाई। इस पर खलीफाके क्रोधका पारावार न रहा। उन्होंने अपने अनुचरसे राजबालाओंके केश घोड़ेकी पूंछमें बांध कर घुड़दौड़ करनेका हुकुम दिया। इस प्रकार रास्तेकी रगड और खुरको ठोकरसे दोनोंका प्राणवायु उड़ गई। पीछे मृतदेह नदीमें फेंकी गई और कासिमका शरीर दमस्कसमें ला कर दफनाया गया।

महम्मद बिन करम उद्दीन—वहर उल फजाएल नामक पारसी अभिधानके प्रणेता।

महम्मद बिन खवन्द शाह (बिन महमूद)—एक विख्यात मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने 'रौजत उल सफा' नामक महम्मदीय कहानी पारसी भाषामें लिखी थी। ये सर्वसाधारणमें मीर खवन्द, अमीर खां वा मीर खोन्दके नामसे विख्यात थे। इनका जन्म १४३३ ई०में मावरुन्नहर नगरमें हुआ था। पिताका नाम था सैयद बुर्हान उद्दीन खवंदशाह। पिताकी मृत्युके बाद हीरटके राजा सुलतान हुसैन मिर्जाके प्रधान मंत्री अमीर अली शेरके साथ इनका परिचय हुआ। इन्हींके यत्न, दया तथा उत्साहसे महम्मदने अपना इतिहास-ग्रन्थ समाप्त किया। १४९८ ई०मे बहुत दिनों तक रोग भुगत कर बालख नगरमें इनकी मृत्यु हुई। इतिहासके छः अंश तक लिख कर ये शय्याशायी हुए थे। पीछे इनके लड़के खोन्दा मीरने १५२३में ७वां भाग शेष किया। महम्मदीय इतिहासमें इस इतिहासको ऊंचा स्थान दिया गया है।

महम्मद बिन ताहिर २य—खुरासनके ताहिरी जातीय अन्तिम राजा। ८७४ ई०के युद्धमें याकुब बिन लाइसने इन्हें पकड़ कर कैद कर लिया। तभीसे खुरासनराज्य याकुबके हाथमें रहा।

महम्मद बिन तुनिश (अलबुखारि)—अबदुल्लानामा नामक कास्पीय सागरोपकूलवर्त्ती उजबक-तातार जातिके इतिहास-प्रणेता। यह ग्रंथ इन्होंने निजामुद्दीन

कोकलतसको समर्पण किया था। इस ग्रंथमें १४६४ ई०में शाहवेग खांको अकससके आस पासके देशों पर चढ़ाई, तैमुरवंशकी पराजय तथा सम्राट् अकवरके समसामयिक अवदुल्लाका इतिहास आदिका विस्तृत विवरण किया गया है।

महम्मद विन फराज—एक मुसलमान धूर्त्त साधु। यह अपनेको कब्रसे निकला हुआ मूसा वतलाया करता था। एक दिन खलीफा मुल्याकिलने इसे इस तरह पिटवाया कि जान निकल गई।

महम्मद विन महमूद (अलइस्करूसो)—'फजल्-अ-अ- इस्रूसी' नामक ग्रंथके प्रणेता। वाणिज्य व्यापारके लिये यह ग्रंथ विशेष उपयोगी है।

महम्मद विन मूसा—अलजरर वल् मुकाविला नामक वीजगणितके प्रणेता।

महम्मद विन मूर्त्तजा—'मुफती' नामक सिया-संप्रदायके धर्मशास्त्र-रचयिता।

महम्मद विन याकुव (अलकुलिनी)—काफी नामक एक अरवी ग्रंथके प्रणेता। यह काफी-सियासंप्रदायके लिये विशेष आदरणीय है।

महम्मद विन याकुव (फिरोजावादी)—एक प्रसिद्ध आभिधानिक। इन्होंने 'कमूल-उल् लुघाट् वहर उल्-मुहित' नामक ग्रंथ लिखा था। इस ग्रंथमें अरवी साहित्य समुद्रका इन्होंने मन्थन किया है। इनकी विद्या-वुद्धि देख कर भाषाविद् मात्र मोहित हो जाते हैं। यह ग्रंथ अरवके राजा विन अव्वासको उत्सर्ग किया गया था। १४७४ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद विन याकुव (अल कलिनी अवराजि)—जमा-उल काफीके प्रणेता। यह गल्पग्रंथ रच कर इन्होंने 'रईस उल मुहद्दिसीन'की उपाधि पाई थी। यह ग्रंथ तीस भागोंमें विभक्त है। इसको समाप्त करनेमें प्रायः वीस वर्ष लगे थे। इस ग्रंथके अतिरिक्त और भी अनेकों ग्रंथ इनसे वनाये हुए पाये जाते हैं। ९३९ ई०में वागदाद नगरमें इनकी मृत्यु हुई थी।

महम्मद विन युसुफ—होरटवासी एक हाकिम। इन्होंने अरवी भाषामें 'उल जवाहिर' नामक एक अभिधान लिखा था। वस्तुतः यह ग्रंथ शिल्प तथा विज्ञान विषयक एक विस्तृत कोष-ग्रंथ है।

महम्मद विन युसुफ—तारिखी-हिन्द नामक इतिहासके प्रणेता। ये दिल्लीवासी ख्वाजा हसनके समसामयिक थे।

महम्मद विन हुसेन—'वदार उल हिदाया' नामक अरवी आईन ग्रन्थके प्रणेता। इसके अतिरिक्त इन्होंने पारसी तथा अरवी-मिश्रित भाषामें हयात उल फयाद नामक ग्रंथ भी लिखा है। १५८५ ई०में इनका देहान्त हुआ।

महम्मद वुखारी (सैयद)—एक मुसलमान साधु। सम्राट् शाहजहांके समयमें इनकी विशेष प्रतिष्ठा थी। ताजगंज-रोजाके पश्चिम द्वार पर इनका मकवरा मौजूद है।

महम्मद-इ वुखारी (सेख)—मुगल-सम्राट् अकवरके एक सेनापति। मिर्जा अजीजकी ओरसे इन्होंने गुजरातमें युद्ध किया। पत्तनके युद्धमें ये दलवल समेत निहत हुए। सम्राट् अकवरने इनको विज्ञता तथा विश्वासिता पर प्रसन्न हो इन्हें भरण पोषणके लिये अजमेरमें एक तुजुल और शेख मुइन-इ-फिस्तीके समाधि-मन्दिरका खादिम वनाया था।

महम्मद इ वेग—मीरनका एक अनुरक्त दुराचारी। इस दुरात्माका पालन पोषण यद्यपि अलवर्दीकी महिषीने ही किया था, फिर भी यह वङ्गेश्वर सिराजुद्दौलाके हत्या-काण्डमें लिप्त था। यह नर-पिशाच तेज तलवार-को हाथमें लिये सिराजके कारागृहमें घुसा और उसका सर उतार लिया।

महम्मद वेग खां (हाजी)—अवधप्रदेशके एक सहकारी शासनकर्त्ता। यह 'माशीर तालिवी'के प्रणेता मिर्जा आवू तालिव खाके पिता थे। इस्पाहनके समीप अव्वासावाद-में इनका जन्म हुआ था। यह तुर्क-वंशोद्भव थे।

परसियाके राजा नादिर शाहके अत्यचारसे पीड़ित हो हाजी जन्मभूमिको छोड़ कर भारतवर्ष आये। इनके गुण-का परिचय पा कर गुणग्राही नवाव अवुल मनसूर खांने इन्हें आश्रय दिया। १७५० ई०में अवधके सहकारी शासक राजा लवण रायके मरने पर नवावके भतीजे महम्मद कुली खां इस पद पर नियुक्त हुए। इस समय नवावकी आज्ञासे हाजी साहव उनके प्रधान सहायक हो कर गये थे। सुजा उद्दौलाके विद्रोहसे जव महम्मद कुली मारे गये, तव ये जान ले कर मुर्शिदावाद भागे। वहीं पर १७६९ ई०को इनका परलोकवास हुआ।

महम्मद शफिया—मेर-उल-वदीयात् नामक इतिहासके प्रणेता। दिल्ली नगरमें इनका हुआ था। इनके इतिहासमे मुगल-सम्राट् अकवरसे ले कर नादिर शाह तक भारतवर्षमें जो सब घटनाएं घटी उनका सविस्तार वर्णन है। मुगल-सम्राट् महम्मद शाहके राजत्वकाल में किसी सम्भ्रान्त उमरावके कहनेसे यह ग्रंथ लिखा गया था।

महम्मद शरफ—वङ्गालके एक मुसलमान काज़ी। ये अपने पाण्डित्य, धर्मज्ञान, साधुताके लिये विख्यात थे। सम्राट् औरङ्गजेवने इनके सद्गुणोंका परिचय पा कर इन्हें काज़ी वनाया। मुर्शीद कुली खां अपने विचार कार्यमे हमेशा इनसे सलाह लिया करते थे।

एक समय किसी मुसलमान फकीरने चूनाखालीके जमींदार वृन्दावनसे भिक्षा मांगी। वृन्दावन फकीरके व्यवहार पर वहुत गुस्साया और उसे दरवाजे परसे निकाल दिया। वादमे वह वृन्दावनके घरके सामने ही कुछ ईंटोंसे एक दीवार वना कर उसीको मसजिद समझने लगा। अव वह लोगोंसे उस मसजिदमें आ कर नमाज पढ़नेका अनुरोध करता फिरता था। जब कभी वृन्दावन घरसे निकलता, उसी समय वह बड़े जोरोंसे अजान देता था।

इस पर वृन्दावन बड़े विगड़े। उन्होंने उस दीवारको तोड फोड़ कर फकीरको वहांसे मार भगाया। इस पर फकीरने मुर्शीदकुलीके पास नालिश की। सभाधिष्ठित प्रधान काजी शरफने वृन्दावनको प्राणदण्डकी आज्ञा दी। किन्तु कुली खांकी प्राणदण्ड देनेकी विलकुल इच्छा न थी। उन्होने काजीसे वहुत अनुनय विनय किया कि प्राणदण्ड छोड कर कोई दूसरा दण्ड उसे मिलना चाहिये। इस पर धर्मावतार काजीने कहा, कि अपराधीके प्राण निकलनेमें जितना समय लगेगा, केवल उतनेही समयकी अपेक्षा की जा सकती है। पर दूसरा दण्ड नहीं मिल सकता।

कुली खांके सव यत्न निष्फल हुए। सुलतान अजीमुस्सानने भी वादशाहसे वृन्दावनकी जान वकसीस मांगी; पर काजीने तो पहले ही वृन्दावनके प्राण तीरसे ले लिये थे। अजीमुस्सानने यह हत्या-संवाद औरङ्गजेवके पास लिख भेजा और यह भी जताया कि काज़ीने क्षिप्त हो कर वृन्दावनको मार डाला है। वादशाहने उस पत्र पर अपने हाथसे 'काजी शरफ खुदाकी तरफ' ऐसा लिख कर भेज दिया।

औरङ्गजेवके मरने पर काजीने नौकरी छोड दी। कुली खांके लाख प्रार्थना करने पर भी उन्होंने नहीं माना।

महम्मद शारीफ हुकानी—'आयनक एदिल' नामक रसमय काव्यके प्रणेता। यह ग्रंथ १६८५ ई०में समाप्त हुआ था।

महम्मद शरीफ (ख्वाजा)—पारसियाके राजा १म शाह तहमास्प सफाविरके मंत्री। १५३८ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद शाकि—एक मुसलमान ऐतिहासिक।

मुस्ताइद खा देखो।

महम्मद शाला (शेख)—'विहार-चमन' नामक ग्रन्थके प्रणेता।

महम्मद शाला (मीरकाशफी) एक मुसलमान कवि। ये सम्राट् जहांगीर और शाहजहांके यहां पाले पोसे गये थे। इनका वनाया हुआ मजमुआ राज नामक तर्जिवंद ग्रंथ १६२१ ई०में समाप्त हुआ। १६५० ई०को आगरेमें इनकी मृत्यु और कब्र हुई।

महम्मदशाला कम्बु—अमलशाला नामक ग्रंथके प्रणेता।

महम्मद शाला (मिर्जा)—ताव्रिजवासी एक उमराव। १५६२ ई०में पारसिया छोड कर ये भारतवर्ष आये। इन्हों दिल्लीमे सम्राट् अकवरसे भेंट की। सम्राट्ने इनको सम्मानरक्षाके लिये पहले इन्हें मनसवके पद पर पीछे गुजरातके शासक पद पर नियुक्त किया। इस समय महम्मदने सिपाहीदार खांकी उपाधि प्राप्त की। १५६६ ई०में युवराज मुरादके मरने पर युवराज दानियलने निजामसे अहमद नगरका अधिकार प्राप्त किया तथा सिपाहीदार खांको वहांका शासनकर्त्ता वनाया।

महम्मद शाला (मिर्जा)—'लताएफ खयाव' नामक ग्रंथके प्रणेता। इस ग्रंथमें उन्होंने पूर्ववर्त्ती महाकवियोंकी अच्छी अच्छी कवितायें संग्रह की हैं।

महम्मद शाह—दिल्लीके एक मुसलमान वादशाह। ये

खिजिर खांके पौत्र तथा फरीद उद्दीनके पुत्र थे। १४३४ ई०में अपने चचा मुबारकको हत्या कर ये सिंहासन पर बैठे। बारह वर्ष राज्य करनेके बाद १४४६ ई० में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मदशाह—गुजरातके एक राजा। १४४३ ई०में अपने पिताके मरने पर ये सिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। इनकी स्त्रीने विष खिला कर इन्हें १४५१ ई०में मार डाला।

महम्मद शाह—मालवाधिपति होसङ्ग शाहके पुत्र। १४३४ ई०में ये अपने पिताको गद्दी पर बैठे। नौ माससे बाद इनके मंत्री मालिक मुघिशके पुत्र महम्मदने इन्हें विष खिला कर मार डाला और आप महम्मद शाह खिलजीके नामसे राज्य करने लगे।

महम्मद शाह—परसियाके एक राजा, अब्बास मिर्जाके पुत्र तथा फथ् आबुशाहके पौत्र। १६३४ ई०में ये सिंहासन पर बैठे और १८४७ ई०में परलोकवासी हुए।

महम्मद शाह (आदिल वा आदिली)—१म शूरवंशीय एक अफगान वीर। ये शेरशाहके भाई और निजाम खां शूरके पुत्र थे। इनका प्रकृत नाम मुबारिज खां था। १५५४ ई०में सलीम शाहके नाबालिग पुत्र फिरोजको राज्य-च्युत तथा मार कर यह महम्मद शाह आदिलके नामसे राजतख्त पर बैठा।

महम्मद स्वयं मूर्ख था, इसीलिये विद्वानोंका संसर्ग बिलकुल नहीं चाहता था। मूर्खोंकी हो राजदरबारमें चलती थी। उनमें सभी मुसलमान थे, सिर्फ एक हिन्दू था। यह हिन्दू था सही पर बहुत दुराचारी था। सलीम शाह इसे बाजारका अध्यक्ष बना गये थे। अब महम्मद ने इसीको राज्यका सर्वेसर्वा बनाया। धीरे धीरे हिन्दू-क्षमता बढ़ने लगो। इस पर अफगान कर्मचारी जलने लगे और महम्मदके कट्टर दुश्मन हो गये। अन्तमें उन्हों-ने राजाके जमाई इब्राहिम शूरको १५५५ ई०में गद्दी पर बिठाया।

महम्मद बचावका कोई रास्ता न देख चुनार भाग गये। १५५६ ई०में बङ्गालके राजा बहादुर शाहके साथ यह मुङ्गेर-युद्धमें गया था और वहीं मर गया। इसने केवल ११ मास राज्य किया था।

महम्मद शाह (सैयद)—जमा-उल-दस्तुर नामक आईन ग्रंथके प्रणेता, पाण्डुआके सैयद [illegible] पुत्र। १८०० ई०में इन्होंने अपना ग्रंथ समाप्त किया।

महम्मद शाह—तैमुर शाहके पुत्र और अहमद शाह अब्दालीके पौत्र। इन्होंने दोस्त महम्मद द्वारा काबुलसे भगाये जाने पर हीरट पर अधिकार किया। कुछ दिन राज्य करने पर १८२९ ई०में ये परलोकवासी हुए। पीछे इनका पुत्र कामरान सिंहासन पर बैठा।

महम्मद शाह (बाह्मनी १म)—दक्षिण प्रदेशके बाह्मनीवंशके ५म सुलतान, सुलतान अलाउद्दोन हुसैनके कनिष्ठ पुत्र। १३७८ ई०में अपने भाई दाऊदको मार कर ये कुलबर्गा नगरकी राजगद्दी पर बैठे। प्रायः बोस वर्ष राज्य कर इन्हों-ने १३९७ ई०में ज्वररोगसे प्राणत्याग किया। पीछे इनके पुत्र गयासुद्दोन राजगद्दी पर आसीन हुए। ये साहित्य-प्रेमी थे और साहित्यकी उन्नतिमें हमेशा लगे रहते थे। इनको पद्यसे विशेष प्रेम था और आप भी अच्छे अच्छे पद्य बनाते थे। इनके साहित्यिक प्रेमसे अरब और परसियाके अनेकों कवि इनके पास आया करते थे। विचारपति मीर फैज्जुला अंजूने एक दिन एक छोटीसी कविता राजाको पढ़ सुनाई। राजाने प्रेमसे गद्गद् हो एक सहस्र स्वर्ण मुद्रा दे उन्हें विदा किया। इनके शासन-कालमें विख्यात कविवर हाफिजने दक्षिण प्रदेश आनेकी इच्छा प्रकट की, पर कालचक्रसे यह लालसा उनकी पूरी न होने पाई।

महम्मदशाह (२य)—बाह्मनीवंशीय १३वें सुलतान, हुमायूं शाहके पुत्र। १४६३ ई०में अपने भाई निजाम शाहके मरने पर ये पिताकी गद्दी पर बैठे। इस समय इनकी उमर सिर्फ नौ वर्षकी थी। अतः रानी माताके आज्ञानुसार ख्वाजा जहान और ख्वाजा महमूद गवान राज्यकार्यकी पर्यालोचन करने लगे। इन्होंने बोस वर्ष राज्य कर १४८२ ई०में परलोककी यात्रा की।

महम्मद शाहने सुदीर्घ काल तक राज्य तो किया, पर इनके राज्यकालमें आत्मकलह, विवाद विसंवाद, तथा बाह्मनीवंशका गौरव रविका म्लान होता भी सुनाई देता है। जो जो राजा इनके पूर्व पुरुषोंको कर दिया करते थे अभी वे स्वाधीन हो गये। इनके बाद इनके पुत्र सुलतान (२य) महमूद शाह सिंहासन पर बैठे।

महम्मद शाह (१म)—गुजरातके एक अधिपति इनका प्रकृत नाम बेकार थे। ये महम्मद शाहके पुत्र एवम् कुतुबुद्दीन वा कुतुब शाहके भाई थे। अपने चचा दाऊद शाहके मरने पर १४५६ ई०में ये गुजरातके सिंहासन पर बैठे। १४८७ ई०मे अह्मदाबादके चारों ओर इन्होंने दीवार तथा बुर्ज बनवाया। नगरको सुरक्षित कर फाटकके ऊपर एक शिला पर इन्होंने इस प्रकार लिखवा दिया था, "इसके अन्दर रहनेवाले व्यक्तिको किसी भी विपत्तिको आशंका नहीं है।" दक्षिणप्रदेश जीतनेके लिये दो बार इन्होंने यात्रा की थी। ५५ वर्ष राज्य कर यह १५११ ई०में परलोकवासी हुए। अह्मदाबादके समीप मरक्रिज नामक स्थानमें इनका मकवरा बनाया गया। पीछे इनका २य पुत्र मुजफ्फर शाह सिंहासन पर बैठा।

महम्मद शाह (२य)—गुजरातके एक मुसलमान राजा। इनका नाम नासिर खां था। ये २य मुजफ्फर शाहके तृतीय पुत्र थे। अपने ज्येष्ठ भाई सिकन्दर शाहको मार कर १५२६ ई०में ये गद्दी पर बैठे। इन्होंने केवल तीन मास राज्य किया था। इनके भाई बहादुर शाहने जौनपुरसे लौट कर इन्हें गद्दी परसे उतार दिया और आप गद्दी पर बैठे। १५२७ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद शाह (३य)—गुजरातके एक राजा, बहादुर शाहके भाई और लतीफखांके पुत्र। १७३७ ई०मे मीरन महम्मद शाहके मरने पर ये सिंहासनाधिकारी हुए। पुर्त्तगीज लोग समुद्रतीरवासी मुसलमानों पर प्रायः आक्रमण किया करते थे। अतएव १७४० ई०में इन्होंने सूरतदुर्गका निमाण किया। १५५३ ई०मे राजाके अपने धर्मोपदेशकने दौलत नामक एक व्यक्तिसे इन्हें सुप्तावस्थामे मरवा डाला। इन्होंने १८ वर्ष राज्य किया था। इसी साल दिल्लीके राजा सलीम शाह तथा अहमदाबादके सुलतान निजाम शाहकी मृत्यु हुई थी। उक्त घटना आज भी मुसलमानसम्प्रदायमें "जवाल खुशरोयल" अर्थात् 'राजसंहार' नामसे मशहूर है। इनके बाद २य अह्मद शाह सिंहासन पर बैठे।

महम्मद शाह (२य)—मालवाके एक सुलतान, नासिरुद्दीनके तृतीय पुत्र। महम्मद शाह अपने पिताके मरने पर १५११ ई०मे गद्दी पर बैठे। १५३१ ई०में गुजरातके राजा बहादुर शाहने मालव राज्य पर अधिकार कर महम्मद और उनके सात पुत्रोंको कैद किया और अपने कारागारमें रखा। अन्तमें चम्पारन-दुर्ग भेजते समय राहमें उनकी मृत्यु हो गई। यह मृत्यु स्वाभाविक कारणसे हुई वा किसी गुप्तघातकसे, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। पीछे मालवदेश गुजरात-राजाके हाथ लगा। बहादुर शाहके बाद कादिर खां तथा शूजा खांने क्रमानुसार मालवाका शासन किया। शुजाके बाद इनके पुत्र बहादुर १५६० ई० तक राज्य करते रहे। इसी समय सम्राट् अकबरने पूर्णरूपसे मालवा पर अधिकार कर लिया।

महम्मद शाह—दिल्लीका एक बादशाह, औरङ्गजेबका पोता और जहानसाहका लड़का। इसका यथार्थ नाम, महम्मद रोशन अखतर है। जहानदार शाहको मृत्युके बाद बालक रोशन अखतर अपनी वालिदा माता मरिया मुकानियोंके साथ दिल्लीके किलेमें ही रहता था। बाल्यकालमें ही यह अपनी गुण-गरिमासे सभीके प्रियपात्र बन गये।

रफी उद्दौलाने कुल तीन महीने दो दिन ही राज्य कर अपनी इहलीला समाप्त की। उस समय अबदुल्ला और हुसेन ये दोनों सैयद भ्राता मुगलराज्यके मालिक थे। सैयद अबदुल्लाने शीघ्र ही महम्मदको बुलानेके लिये आदमी भेजा। १५वीं जिलकदा सन् ११३१ हिजरीमें (१७२६ ई०मे १८ वर्षकी उम्रमें) महम्मदने सिंहासन-लाभ किया। 'अबदुल मुजफ्फर नासिरुद्दीन महम्मद शाह बादशाहे-गाजी' नामसे सिक्का तय्यार होने लगे।

इस बादशाहको मां बुद्धिमती तथा राजकार्यमें बड़ी दक्ष थी। उसको आज्ञासे यह स्थिर हुआ, कि फरुखसियरके राज्यच्युत होनेके बादसे महम्मद शाहके सिंहासन लाभकी तारीख गिनी जायेगी। बादशाहकी माताके लिये १५ हजारकी वृत्ति नियत हुई।

सैयद अब्दुल्लाके नौकर ही पूर्ववत्, राजकार्य चलाने लगे। न कोई निकाला गया और न कोई भर्त्ती ही किया गया। और तो क्या बादशाहके देह-रक्षक भी अब्दुल्लाके ही नौकर थे। सैयदकी आज्ञाके बिना बादशाह कोई काम नहीं कर सकता था।

मीरजुमला प्रधान जज बना और सैयदके प्रियपात्र रतनचन्द दीवानी, माल महकमा और प्रवन्ध आदि कार्योंमें प्रधान हुआ। शहर आदिकी नियुक्ति भी रतनचन्दके हाथ ही थी। और तो क्या उसकी मोहरके विना कोई कुछ काम करता न था।

छवीलाराम उस समय इलाहावादका सूवेदार था। यह सैयदका प्राधान्य स्वीकार नहीं करता था। इससे सैयदने उसके विरुद्ध फौजोंको भेजा था। अचानक छवीलारामकी मृत्यु हो गई। इसके वाद उसका भतीजा छवीलारामका उत्तराधिकारी बना। इसका नाम गिरिधर था। यह गिरिधर वादशाहके विरुद्ध सैन्ययोजनाकरने लगा। यह समाचार पा कर सैयद भाई महम्मद शाहको फतेपुरसे आगरा लाये। सैयदोंने यमुनामें पुल बांध कर इलाहावाद पर आक्रमण करनेका आयोजन किया।

गिरिधरको जब यह समाचार विदित हुआ तब उसने सैयदोंके पास आदमी भेज कर सुलह कर लेनी चाही। सैयदोंने उसको अयोध्याकी सूवेदारी तथा 'वहादुरी' का खिताब देना चाहा, किन्तु गिरिधरको उनकी वात पर विश्वास नहीं हुआ। गिरिधर युद्धकी तैयारी करने लगा। इलाहावादके किलेको उसने मजबूत बनाया। इसकी यह हालत देख कर अन्य जमींन्दारोंने उत्तेजित हो राज्यकर देना बन्द कर दिया। सैयदोंको बड़ी चिंता हुई। स्थिर हुआ, कि वादशाहकी ओरसे अभयदान मिलने पर गिरिधरको किला समर्पण करनेमें कोई उज्र नहीं होगा। वादशाह दिल्लीको लौट गया। किन्तु तुरन्त यह सुना, कि गिरिधर अपनी प्रतिज्ञा पर अटल नहीं। इस समय वादशाहने इलाहावादके लिये फिर प्रस्थान किया। गिरिधरने यह सुन कर वादशाहको कहला भेजा, कि रतनचन्दको भेज कर यदि झगड़ा निवटायें, तो मैं राजी हूं। इसके अनुसार सैयदोंने रतनचन्दको ही भेजा और इन्होंने आ कर यह झगड़ा तय किया।

रतनचन्दने इलाहावाद पहुंच गिरिधरसे यह प्रतिज्ञा की, कि हम तुम्हारा कुछ भी अनिष्ट नहीं करेंगे। ऐसे ही गिरिधरने भी राजभक्तिकी प्रतिज्ञा की। इसके वाद उसे अयोध्याकी सूवेदारीके सिवा कई फौजदारियां भी मिलीं। तुरन्त ही गिरिधरने अयोध्याके लिये प्रस्थान किया। महम्मद शाहके राज्यके शुरूमें गिरिधरका विद्रोह और उसके साथ सन्धि ही प्रधान घटना है।

उधर सैयदोंके प्रभावसे वादशाहको वड़ा कष्ट होने लगा। वादशाह केवल उन दोनों सैयदोंके हाथकी कठपुतली वना था। वादशाह होने पर भी वह सैयदोंका गुलाम जैसा था। वादशाहकी माता जो एक विदुषी रमणी थी अपने पुत्रको सैयदोंके चंगुलसे निकालनेके लिये सदा चिन्तित रहने लगी। ये माता और पुत्र दोनोंने इतिमाद उद्दौलाकी मारफत निजाम उल मुल्कको कहला भेजा, कि मैं नाममात्रको वादशाह हूं। राजकार्यसे मेरा कोई ताल्लुक नहीं। केवल शुक्रवारी जुम्माका नमाज पढ़ लिया करता हूं। निजाम खान्दान मुगल साम्राज्यका सदासे हित-चिन्तक रहा। इससे वादशाहको यह आशा थी, कि वह मेरा जरूर उद्धार करेगा।

निजाम-उल मुल्कको यह मालूम हो गया, कि सैयद अपने इस चाल चलनसे धर्मराज्य तथा मुगलशासनको डुवा देना चाहते हैं। देर न कर वह आगरेके लिये रवाना हो गया। दक्षिणकी राहमें उसे जो नगर मिलते गये उन पर कब्जा कर अपनी ताकत वढ़ाता गया।

निजाम-उल-मुल्कके इस कार्य तथा उसकी वढ़ती हुई ताकतको देख कर सैयद दोनों भाई वड़े चिन्तित हुए। उन्होंने स्थिर किया, कि वड़ा अवदुल्ला खां दिल्लीमें रहेगा और हुसेन अली वादशाहको ले कर निजाम-उल-मुल्कको शक्तिको नष्ट करनेके लिये दक्षिणकी ओर जाये। इस यात्राके लिये अत्यधिक फौजोंको जरूरत थी, चेष्टा करने पर भी सैयद सैनिक भर्त्ती न कर सके। केवल किसी तरह ५० हजार सैनिक पकड़ कर हुसैन दक्षिणकी ओर दौड़ा।

इस समय हुसैनके मार डालनेकी साजिश चल रही थी। इतमादुद्दौला, महम्मद और स्यादत खां इस साजिशके मुखिया थे। हुसेन फौजोंके साथ फतेहपुरसे तोरा नामक स्थानमें पहुंचे। इतमादुद्दौला वीमारीका वहाना कर वादशाहके खेमेसे बाहर चला गया। वादशाह अपने सोनेवाले कमरेमें चले गये और हुसेन भी शाही खेमेसे निकल अपने खेमेमें सोनेके लिये जा रहा था। दरवाजे पर जो आया, तो देखा, कि हैदर खां कुछ कहना

चाहता है. खड़ा हो कर हैदरकी वात सुनने लगा। हैदरने इतमादुद्दौलाकी कितनी शिकायतें कर एक दरखास्त हुसेनके हाथमें दी। इस दरखास्तको ले कर हुसेन अली पढ़ने लगा, इस समय हुसेनके देह-रक्षक भी अलग दूर खड़े थे। मौका देख कर हैदर खांने हुसेन पर आक्रमण कर दिया। इसीकी तलवारकी चोट खानेसे ही इसका प्राणान्त हो गया।

हुसेनका भांजा नुरूल्ला भी साथ ही था। नुरूल्लाकी तलवारसे हैदरका खातमा हुआ। इस समय चारों ओर अशान्ति मच गई। मुगल सैयदोंकी सैन्य पर गोली और तीर वरसाने लगे। यह दारुण समाचार पा कर हुसेनका भतीजा इज्जत खां तुरन्त ही अपने हाथी पर चढ़ पांच सौ घुड़सवारोंके साथ वादशाहके खेमेकी ओर बढ़ा।

वादशाहको खतरेमें समझ स्यादत खां इतमादुद्दौलाकी सलाहसे वादशाहके पास पहुंचा। स्यादतको वादशाहकी माताने वादशाहके पास जानेसे रोका, किन्तु स्यादत रुका नहीं और उसने वादशाहके पास पहुंच उसे वाहर ला कर एतमादुद्दौलाके हाथी पर वैठाया। विश्वासी और प्रभुभक्तकी तरह एतमादुद्दौला वादशाहकी रक्षा करने लगा। वडे सैयद पक्षकी फौजोंने इज्जत खांकी अधीनतामें मुगलों पर आक्रमण किया। वादशाहकी ओरसे भी प्रत्याक्रमण होने लगा। मुगल सैन्य और सैयद सैन्यके वीच कुछ देर तक लड़ाई होती रही। गोलीकी चोट खा कर इज्जत खां मर गया। इसके वाद उसकी फौजें भी भाग खड़ी हुई। महम्मद शाहकी जय हुई।

वादशाह अपने खेमेमें लौट आये। एतमादुद्दौलाने उदारता पूर्वक रतनचन्दको बुला भेजा। राहमें कितने ही मुगलोंसे वे वच कर पहुंचे। एतमादुद्दौलाने प्राणदण्ड न दे कर उसे कैद कर लिया। राय शिरोमणि दास नामका एक कायस्थ अपना शिर मुण्डन कर संन्यासी वन कर मुगलोसे वचा। यह सैयदोंका नायव था।

एतमादुद्दौलाको आठ हजारी मनसवदारी, आठ हजारी दुआस्य और वजीर-पद मिला। जिस जिसने वादशाहका साथ दिया था, उसको उसको वेतन वृद्धि हुई।

सैयद अवदुल्ला अपने भाईके मरनेकी खवर पा कर वड़ा दुःखित हुआ। दिल्लीके अमीर उमरावोंको हाथमें कर वादशाहके विरुद्ध अस्त्र उठानेका दृढ निश्चय किया। उधर हुसेन अलीके मरने पर दिल्लीके जमींदारोंने अवदुल्लाके विरुद्ध सर उठाया। वे सैयदोंको जो कुछ चीजें पाते, वह लूट लेते थे। खैर, इससे अवदुल हुसेन दवनेवाला आदमी न था। उसने तुरन्त ही दिल्लीके सूवेदार नजिमुद्दीन खांको खवर भेजी, कि वहुत जल्द सेना तय्यार करो। नजिमुद्दीन खांने राजकार्य चलानेके लिये व्यवस्था ठीक करनेके लिये अवुल हुसेनके आदमियोंको जहान्दार शाहके पुत्रोंके पास भेज दिया। किन्तु उन सवोंने सैयदकी वातोंका जरा भी ख्याल न किया। अन्तमें रफी-उस शानके पुत्र सुलतान इब्राहिमने वादशाह होने और सैयदोंकी रक्षा करनेका भार लेना स्वीकार किया। सन् ११३२ हिजरी (सन् १७२० ई०)में ९वीं जिलहज्जको सुलतान इब्राहिम अवुल फतेह, जहीरुद्दीन महम्मद इब्राहिम नामसे दिल्लीके तख्त पर बैठा। इसके दो दिन वाद सैयद अवदुला हुसैनको अमीरकुमार और आठ हजारी मनसवदारी, नजिमुद्दीन खांको दूसरा वख्शी, सलावत खांको तीसरा वख्शी और वैराम खांको चौथा वख्शी वनाया। कैदखानेमें जो और अमीर सड़ते थे, वे सव छोड़ दिये गये। तथा नये वादशाहके हुक्म ऊंचे ओहदों पर फिर वहाल किये गये। ८०) मासिक वेतन पर घुड़सवार सैनिक भर्त्ती होने लगे। वहुतेरे सैनिक भर्त्ती करनेके लिये चालीस पचास हजार रुपया पेशगी तौर पर भी वांटा गया।

उधर महम्मद शाहकी भी इन सव वातोंकी खवर लग चुकी थी। उन्होंने अपनी फौजोंको ले कर दिल्लीकी ओर वढ़ना शुरू किया। सैयद अव्दुल हुसैनकी फौजोंको कितने ही सिपाही वादशाह महम्मद शाहकी फौजोंमें भर्त्ती हो गये थे। किन्तु उन्होंने जव देखा, कि सैयद फिर अपनी फौज ले महम्मद शाह पर चढ़ाई करने आ रहा है। तव वे-सव दलके दल महम्मद शाहकी फौजोंसे निकल दिल्ली पहुंच सैयदकी फौजमें मिल गये।

१२वीं महर्रमको अवदुल हुसैनने अपनी फौजोंके

साथ हुसैनपुरमें पहुंच अपना खेमा गाड़ दिया। वहांसे कुल तीन कोस पर महम्मद शाह मौजूद था। इस समय गिनने पर बादशाहकी फौजसे सैयद अबदुल हुसैनकी फौज दूनीसे भी अधिक थी। अबदुल हुसैनको जीतकी बड़ी आशा थी। किन्तु सदा सत्यकी ही जय होती है। अबदुलकी ओर फौज अधिक होने पर भी व्यवस्था ठीक न थी; किसी अच्छे सिपहसालारकी जरूरत थी। सभी सेनापति अपने अपने दल ले कर एक ही साथ युद्ध करने लगे।

बादशाह महम्मद शाह अपने हाथी पर सवार हो रणक्षेत्रमें सिपाहियोंको ललकारने लगा। लड़ाईके शुरूमें बादशाहके हुकुमसे रतनचन्दका सर धड़से अलग कर दिया गया और हाथीके पैरोंके नीचे फेंक दिया गया। यह महम्मद शाहके लिये युद्धका मङ्गलाचरण हुआ, लड़ाई छिड़ गई। दोनों ओरसे गोलों और तोपोंकी वर्षा होने लगी। आकाश धुआं और तीरोंसे समाच्छन्न हो गया, घनघोर लड़ाई होने लगी। यह देख कितने ही अच्छे अच्छे सिपाही भाग खड़े हुए। सैयद पक्षकी फौजें जाति-गौरवकी रक्षाके लिये प्राणपणसे युद्ध करने लगी, सारा दिन युद्ध हुआ। अन्तमें सैयदोंकी फौजोंको जीत हो ही चुकी थी, कि अचानक बादशाह महम्मद शाहकी फौजके कुछ बहादुरोंने सैयद अबदुल हुसैनकी तोप पर कब्जा कर लिया। अबदुल हुसैनकी आशा निराशामें परिणत हुई। हुसैनने भूख प्याससे व्यथित हो कर रात जाग कर ही बिताई। दूसरे दिन दोनों ओरकी फौजें बड़े उत्साहके साथ युद्ध करने लगी। आज भी महम्मद शाह बड़े उत्साहसे अपने बहादुर सिपाहियोंको ललकार रहा था। इस तरहकी लड़ाई बहुत दिनों तक चली।

अन्तमें सैयद अबदुल हुसैन हार गया और बादशाह महम्मद शाहका कैदी बना। बादशाह दिल्लीमें आये और अपने बहादुर सिपाहियोंको इनाम इकराम दे कर खिलयत बखशी। निजाम उल-मुल्क दक्षिणसे बुलाये गये। वही बड़े वजीर बनाये गये। इसने साम्राज्यके सुशासनके लिये माल महकमाके नये-नये नियम बनाये, किन्तु उसके कुछ विरोधियोंकी बुरी सलाहमें पड़ कर बादशाहने कबूल नहीं किया।

सम्राट्की उम्र कम थी। वैसे ही उनका संग-साथी भी था। कितने ही निकम्मे और अवारे आदमी उनके साथी बन गये थे। बादशाह उन्हींकी खुशामदमें भूले रहते थे और प्रजाके हितकर कार्योंमें उनका दिल नहीं लगता था। केवल आमोद-प्रमोद और विषयवासनामें चित्त लगाये रहते थे। कभी कभी तो अपनी वेश्याके कहनेसे अन्याय करनेमें जरा भी हिचकते न थे। जब तक सैयदोंके अधीन थे, तब तक प्रजाके हितकी वार्त्ता सुनते और उसके अनुसार कार्य करनेकी चेष्टा करते थे, किन्तु अब वह समय चला गया। अब वह स्वतन्त्र हो गया है। अब उसके ऊपर कोई नहीं। ऐसा किसका मजाल है, कि दिल्लीके बादशाह महम्मदके कार्यमें बाधा डाले। उसका हृदय उदार होने पर भी प्रजाके हितकी चिन्ता करनेका समय उसको मिलता ही नहीं था। क्योंकि आमोद-प्रमोदसे उसको फुरसत ही नहीं मिलती थी।

राजसिंहासन पर प्रतिष्ठित होनेके ठीक पांच वर्ष बाद अजमेरके राजा अजितसिंहने अधीनता स्वीकार कर ली।

६ठें वर्षमें निजाम उल-मुल्क बादशाहके व्यवहारसे असन्तुष्ट हो कर चला गया और दक्षिणमें जा कर मुबारिज-उल मुल्कको मार कर दाक्षिणात्यका शासन करने लगा। ७वें वर्ष रोहिलोंका दमन तथा १०वें वर्षमें बुन्देला छत्रशालके दमनके लिये अस्सी सहस्र घुड़सवारोंके साथ महम्मद खांका जाना, १२वें वर्षमें महाराष्ट्रनायक बाजीराव द्वारा मालवाके सूबेदार राजा गिरिधरकी पराजय और छत्रशालका साथ देना। १४वें वर्षमें सवाई जयसिंहका मालवाकी सूबेदारी, पाना १७वें और १८वें वर्षमें महाराष्ट्रों द्वारा अत्याचारकी वृद्धि तथा उनका जयपुर, उदयपुर, मारवाड़ आदि राज्योंमें लूटपाट मचाना तथा इनके साथ मुगलसैन्यका कभी कभी खण्ड खण्ड युद्ध हो जाता था।

पेशवा और महाराष्ट्र देखो।

इसके बाद महाराष्ट्रोंके प्रभावसे दिल्लीका साम्राज्य

तहस नहस होना चाहता था। सन् १७३६ ई०में बाजीरावने गुजरात और मालवा छोड़ देनेकी सनद भेज देनेके लिये लिखा। इच्छा रहते हुए भी बादशाह मन्त्रियोंके कहनेसे पेशवाकी आकांक्षा पूर्ण न कर सका। किन्तु मन्त्रियोंके परामर्शसे दाक्षिणात्यके राजकरमें २) रुपया सैकड़ा कर वसूल कर लेनेकी आज्ञा दी। दिल्ली दरबार (बादशाह)का विश्वास था, कि दाक्षिणात्यकी आयसे चौथके अलावा २) सैकड़ाके हिसाबसे वसूल करनेसे ही निजाम उल-मुल्कके साथ पेशवाका युद्ध अनिवार्य हो जायगा अथवा निजाम-उल-मुल्कको दिल्लीका सहायता लेनी पड़ेगी। किन्तु बाजीराव भी बादशाहकी बात पर राजी न हुआ। अन्तमें बादशाह मराठोंको मालवासे निकाल भगानेका आयोजन करने लगे। खां दौरान् और कमार-उद्दीन खां नामक दो सेनापति बाजीरावके विरुद्ध भेजे गये। इसी समय अयोध्याके सूबेदार स्यादत खां होलकरको पराजित कर मथुरा आ कर खां दौरान्के साथ मिल गया। इधर बाजीराव पेशवा मौका देख एक दिनमें २० क्रोस चल कर तुरन्त दिल्ली पहुंचे। इस समय शाही फौज दिल्ली छोड़ कर चली गई थी, फिर भी बादशाहने आठ हजार सिपाहियोंको मुजफ्फर खांके अधीन करके बाजीरावका सामना करनेके लिये भेजा ; किन्तु इनका हारना भी अनिवार्य्य था। बाजीराव पेशवाकी उस विशाल वाहिनीके सामने यह कब तक ठहर सकते थे। इस समय खां दौरानको मालवाकी आशा छोड़नी पड़ी तथा बाजीरावको युद्धकी क्षतिका १३ लाख रुपया देना पड़ा।

बादशाहको यह पहला ही समय था, कि बाजीरावके सम्मुख पराजित होनी पड़ी। बादशाहने तुरन्त ही निजाम उल-मुल्कको बुला भेजा। निजाम दाक्षिणात्यसे दिल्ली पहुंचे; किन्तु यह वृद्ध हो गये थे। इससे उनको सेनापति न बना दूसरे दूसरे कई सेनापति उन्हींकी सलाहसे मालवाकी ओर भेजे गये। सन् १७३७ ई०में निजाम-उल-मुल्कने कई सेनापतियों और विशाल वाहिनियोंको साथ ले युद्धके लिये यात्रा की। बाजीरावने यह खबर पाते ही सितारासे ८० हजार घुड़सवार सैनिकोंको ले भूपालके समीप शाही फौजोंका मुकाबला किया। इस समय पेशवा बड़े बहादुर गिने जाते थे। शाही फौजको हार माननी पड़ी। सन् १७३८ ई०की ११वीं फरवरीको दारा सरायमें निजाम-उल-मुल्कको बाध्य हो कर सुलह करनी पड़ी।

दिल्लीके बादशाह महम्मद शाहको महाराष्ट्र-सरकारको युद्धके क्षति स्वरूप ५० लाख रुपया देना पड़ा। सिवा इसके बाजीरावको मालवा और नर्मदा तथा चम्बलके बीचकी भूमि भी मिली। महम्मद शाहको मराठोंसे कुछ छुटकारा मिला। किन्तु अधिक दिन बितने भी न पाया, कि बादशाह एक नई बलामें फंसे। सन् १७३८में ही नवम्बरके महीनेमें सिन्धुनद पार फारसका राजा नादिर शाह करनौलमें आ पहुंचा। सन् १७३९ ई०में उसने मुगल सैन्य पर आक्रमण कर दिया। उसके विपुल पराक्रमके आगे शाहीसैन्यको दबना पड़ा। फलतः बादशाहकी गहरी हार हुई। महम्मद शाहने नादिरके सामने वशता स्वीकार कर ली। पीछे वे नादिरके खेमेमें लाये गये। किन्तु नादिरने शाहकी उचित इज्जत नहीं की। इसके बाद उसकी फौजोंने कितने अत्याचार किये, जिसका आज भी कहावत 'नादिर शाही' विख्यात है। इस नादिर शाहीके कत्ले आममें कितने मुगलों और सहस्र सहस्र नागरिकोंको प्राणविसर्जन करना पड़ा था। नादिर कितना धन दौलत ले गया, उसको शुमार नहीं। इसका विशेष विवरण 'नादिर शाह' शब्दमें लिखा गया है। नादिरशाह देखो।

नवम्बरसे १४ मई तक नादिर भारतमें लूट-पाट मचाता रहा। १५वीं मईको जिस राहसे नादिर भारतमें आया था, उसी राहसे फारसको लौट गया। जाते जाते वह दिल्लीको इस तरह तहस नहस कर गया, कि उसके सुधारमें कई वर्ष लग गये थे।

इस समय बाजीराव पेशवा मुगलोंके साम्राज्यको जड़से उखाड़ फेंकनेकी गरजसे राजपूताना और बुन्देलखण्डके राजाओंसे मिल कर युद्धकी तय्यारी करने लगे। किन्तु उनका उद्देश्य सफल होनेसे पहले ही कालने उन्हें कवलित कर लिया। बाजीरावके बाद उनके सुयोग्य पुत्र बालाजी राव पेशवा हुए। पेशवा देखो।

बालाजीराव भी पिताकी तरह सम्राट्से मालाकवा

दावा किया। किन्तु सम्राट् इधर-उधर करने लगे। इस बङ्गालमें 'वर्गी'का झगड़ा चल रहा था।

इधर बादशाहको एक नई विपद्की सूचना मिली। नादिर शाहकी मृत्युके बाद अहम्मद खा अवदाली अफगानका नेतृत्व ग्रहण कर भारत-विजय करनेके लिये चला। सन् १७४७ ई०में वह पञ्जाबमें आया, वहां मुगल सूबेदारने अफगान अवदालीका साथ दिया। लाहोर और मूलतान पर अफगानियोंका अधिकार हो गया।

बादशाहने १२ हजार फौजोंके साथ अपने शाहजादा अह्मदको भेजा। अह्मदने सरहिन्दमें पहुंच अपनी छावनी डाल दी। यहां सन् १७४८ ई०में अफगानियोंके साथ घोर युद्ध हुआ। मार्चका महोना था, अफगानियोंने शाहजादाको चारों ओरसे घेर लिया। किन्तु शाहजादाने अपने कौशलसे अफगानियोंको ऐसी मार मारी, कि उनको भागना ही पड़ा। इस लडाईमें अफगानियोंको कही गहरी क्षति हुई थी। इसी समय महम्मद शाह कठिन रोगसे पीडित हुए। सन् १७४८ ई०के अप्रिल महीनेमें सरहिन्दकी जीतके ठीक एक वर्ष बाद २८ वर्ष तक साम्राज्यका सुखभोग कर उसने इहलीला संवरण कर ली। उसका ज्येष्ठ पुत्र अहमद शाह ही बादशाह हुआ।

महम्मद शाह तुगलक (१म तुगलक)—दिल्लीके पठानवंशका एक राजा, सुलतान गयासुद्दीन तुगलक शाहका पुत्र। इसका यथार्थ नाम है, मालिक फखरुद्दीन जूनान। सन् १३२५ ई०में यह तुगलकाबादमें अपने पैतृक सिंहासन पर बैठा और "सुलतानुल मुजाहिद अबुल फथ महम्मद शाह इब्न तुगलक शाह" नामसे विख्यात हुआ।

तख्तनशीनीके ४० दिन बाद यह दिल्ली राजधानीमें आ कर पहलेके सुलतानके सिंहासन पर बैठा। पुराने राजमहलमें वह रहने लगा। इसने लड़कपनमें कुछ शिक्षा प्राप्त कर ली थी। साहित्य, इतिहास, विज्ञान.दर्शनादिमें भी पूरा दखल देता था। सिवा इसके यह एक अच्छा सायर भी था। इसके यहा जो दार्शनिक या विद्वान् आता था, वह उससे अपनेको हार मान कर जाता था और उसकी विद्वताकी प्रशंसा करता था। उसकी हाथकी लिखावट भी इतनी सुन्दर थी, कि जो देखता उसे तारीफ करनी ही पड़ती थी। इसने नये अक्षरोंका आविष्कार किया था। उसके उत्साहसे उस समय सब तरहकी विद्याओंकी उन्नति हुई थी।

वह पुत्रकी तरह प्रजाका पालन करता था, उसके सामने हिन्दू और मुसलमान दोनों बराबर थे। दार्शनिकतामें उसका अक्षुण्ण विश्वास था। तर्क और मीमांसामें जो युक्तियुक्त होता था, उसी पर वह ध्यान देता था। क्रमशः उसका हृदय कठोर बन गया। वह इसलामधर्ममें लिखे दया और विनयका पक्षपाती नहीं था। वह जानता था, कि यह सब असङ्गत है। इसी कारणसे सद्विचारवाले मुसलमान उसकी दृष्टिमें पड़ कर शारीरिक दण्ड पा जाते थे, कभी कभी कत्ल करा देनेमें भी वह हिचकता नहीं था। वह विचारवान् था। इससे किसीका भी जो दोष देखता, वह विना दण्ड दिये नहीं छोड़ता था। अपने अधीनके सैयद, सूफी, कमलान्दार, क्लर्क या सिपाही सभी दण्डित होते थे। किसी पर भी असङ्गत दया नहीं करता था। और तो क्या, उसकी अमलदारीमें ऐसा कोई हप्ता नहो बीतता था, कि उसका दरवाजा मुसलमानोंके खूनसे तरबतर न हुआ हो।

उसने २७ वर्ष तक इसी तरहका शासन किया था। इस अवधिमें उसके अत्याचारकी बहुतेरी कहानी सुनाई देती हैं। एक समय हुक्म न माननेके कुसूरमें अपने सेनापतिका जीता खाल खिंचवा लेनेका हुक्म दे दिया था। विद्यादि नाना गुणोंसे विभूषित होने पर भी तथा एक साधुचेता मुसलमान, फिर राजा हो कर भी उसके इस जुल्मकी कहानीने उसे बदनाम कर दिया। उसके चरित्र पर विचार करनेसे मालूम होता है, कि अधिक दार्शनिक ग्रन्थोंके पढ़नेसे उसका दिमाग खराब हो गया था। दूसरेकी तकलीफ देख उसको जरा भी दया नहीं आती थी। पर वह महा विद्वान् था इसमें संशय नहीं।

इस तरहका अत्याचार तथा कठोर शासन करते हुए भी उसने गुरुप्रदेश, तिरहुत, गुजरात, मालवा, चटगांव आदि प्रदेशों पर अपना कब्जा जमा रखा था। किन्तु अन्तमें उसकी विद्वत्ता तथा गुण गरिमा ही उसके जीवननाशका कारण बनी। अन्तिम समयमें

यह अपनी बुद्धिको ही उच्च समझने लगा। नीचे लिखी पांच बातें ही पठान वंशके मूलोच्छेदका कारण हुई।

पहला। उसने गङ्गा और यमुनाके बीचवाले स्थानोंमें अधिक लगान बैठाया था। प्रजा कर देनेमें असमर्थ हो वनमें भाग गई थी। खेतीवारी कुछ भी कोई जोती नहीं गई। गल्लेकी कहतने लाखों मनुष्योंको मार डाला। कितने ही राज्यको छोड़ कर भाग गये। सुलतानने इसका प्रधान दोषी प्रजापक्षको समझ जो जङ्गलमें भाग गये उनको चारों ओरसे घेर वन्यपशुओं-की तरह मार डाला। इस बार अत्यधिक लोगोंका विनाश हुआ। देशमें एक तरहसे विप्लव खड़ा हो गया। पठान-साम्राज्य ही नवल हो गया था। इससे राजकरमें बहुत कमी हो गई थी।

दूसरा—एक बार देवगिरि देखनेके लिये वह आया था और यहांकी सुरम्य प्राकृतिक सुन्दरताको देख कर विमोहित हो उठा था। मन ही मन वह अपनी राज-धानीको वहां उठा लानेकी कल्पना करने लगा। इस कल्पनाके अनुसार देवगिरिका नाम दौलतावाद रख कर वहां दिल्लीके प्रत्येक आदमीको बसनेका हुकम जारी किया। हुक्म हुआ, कि जो आदमी राजाका हुकम नहीं मानेगा, उसको कतल कर दिया जायगा। जानके डरसे सभी आदमी वहां जाने लगे। अमीर उमराव गाड़ियों, छकड़ों और टांगों पर चढ़ कर दौलतावादको जाने लगे, लेकिन गरीब बेचारे पैदल भूख-प्यासके मारे तंग हो कर भी पैदल जाने लगे। इनमें राहमें ही भूख और प्यासकी यन्त्रणासे व्याकुल हो कितने ही आदमी मर गये। जो देवगिरिमें पहुंचे भी थे वे वहां खाने पीने-का कोई समान न रहनेके कारण भूखों हो मरने लगे। सुलतानकी मूर्खतासे कितनी ही प्रजाके प्राण गये। सुलतानने दौलतावाद बसानेके लिये प्रवल प्रयत्न किया और इसके लिये बहुत धन खर्च भी किया, किन्तु उसकी इच्छा पूरी न हुई। क्योंकि उसने देखा, कि उन थोड़े-से मुसलमानोंको ले कर बहु-संख्यक हिन्दुओंके बीच रहना उचित नहीं, खतरा है। वहां उसका प्राधान्य रह नहीं सकता था। इसलिये गये हुये आदमियोंके साथ वह फिर दिल्ली लौट आया। धनजन पूर्ण दिल्ली-नगरी सुलतानकी मूर्खताके कारण सूनसान तथा मकान आदि बेमरम्मत हो गये। सुलतानने अन्यान्य जगहोंसे कारीगरोंको बुला कर दिल्लीकी मरम्मत करानेकी चेष्टा की, किन्तु उसकी यह चेष्टा कार्यरूपमें परिणत न हो सकी। जो कारीगर सुलतानके भयसे दिल्लीमें आये थे, उनमें भी कई मर गये और कई बड़े भाग्यसे घर लौटे।

तीसरी बातको पूरी करनेकी चेष्टा करनेमें उसने अपना खजाना ही खाली कर दिया। सोने चांदीके सिक्कोंके बजाय तांबेके सिक्केका प्रचलन भी उसके राज्य नष्ट होनेका कारण हुआ। वाणिज्य-व्यवसायमें तांबेका सिक्का चलानेसे प्रजापक्ष लाभान्वित और राज-पक्ष क्षतिग्रस्त होने लगा। अन्तमें अपनी क्षति देख उसने हुक्म दिया कि, जिसके पास जितना तांबेका सिक्का हो वह सरकारमें दाखिल करे। तुगलकाबादमें तांबेके सिक्कोंका ढेर लग गया। पर्वतोपम ताम्रखण्ड वहां एकत्र हो गया। इसके बदले राजकीय खजानेसे सोने चांदीके सिक्के प्रजापक्षको दे दिये गये। इससे राजकीय खजाना शून्य और हिन्दू अर्थवान् बन गये। मुसलमान दानों-दानोंके लिये मरने लगे। इससे तुगलकसे सभी मुसलमान रंज रहने लगे।

चौथी बात यह हुई, कि एकाएक उसके हृदयमें चीन फतह करनेकी इच्छा उत्पन्न हो गई। इसकी लड़ाईकी तय्यारीमें महम्मद मुट्ठी खोल कर धन खर्च करने लगा। सैन्यसंग्रह करनेके लिये भी उसने बहुत धन खर्च किया। इससे प्रायः राजकोष शून्य-सा हो गया। उस समय तुगलककी मूर्खतासे कितनोंने ही नफा उठाया। कुछ फौजें तय्यार हुई और चीनको फतह करनेके लिये भेज दी गई। सिपाही आसामकी राहसे जङ्गल और पर्वत पार कर चीन जाने लगे, किंतु वहांके हिन्दुओंके भुजबलसे सारी फौजें मारी गई। कुल दश घुड़सवार सिपाही किसी तरह जान बचा कर यह दुःसंवाद देनेके लिये तुगलकके पास पहुंचे।

पहले ही कह आये हैं, कि, तुगलकके इन सब कामोंसे वहांके मुसलमान बहुत रुष्ट हो गये थे। अमीर उमरा या जागीरदारोंकी भी उसके प्रति रही

सहा श्रद्धा हटने लगी। जब सुलतान देवगिरिमें था तब भी सुलतानके सूबेदार बहराम खां बागी हुए। सुलतानके यह सुन कर क्रोधका ठिकाना न रहा। दौलताबादसे सुलतान दिल्ली आया और फौजोंके साथ मूलतानके लिये रवाना हुआ। सुलतानने वहां जा कर लड़ाईमें बहरामको हरा दिया। तुगलकका सर उड़ा दिया गया। उसका सर बादशाहके चरणोंमें डाला गया, किन्तु इससे भी सुलतान सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसने बहरामके कितने ही सिपाहियोंको भी मार डाला।

इसके बाद सुलतान दो वर्ष तक दिल्लीमें ही रह गया। इससे बाध्य हो कर अमीर उमरावोंको भी वहां रह जाना पड़ा। किन्तु उनके कुटुम्बके लोग दौलताबाद हो में रह गये। ऐसे समय लगानके बोझसे दबे बहुतेरे हिन्दुओंने गल्लोंमें आग लगा और मवेशियोंको बन्धनमुक्त कर देश और घर द्वार छोड़ कर जङ्गलकी राह ली। सुलतान प्रजाका ऐसा भाव देख शिकार खेलनेके बहाना कर जङ्गलमें भगे सभी हिन्दुओंको पशुओंकी तरह मार डाला। बारणके किलेमें प्रतिष्ठित हिन्दुओंको फांसी पर लटका दिया गया।

इधर बङ्गालमें सुवर्ण ग्रामके शासक बहराम खांके मरनेके बाद फकरा नामका एक आदमी बागी हो गया। सुलतानकी फौज इसके साथ मिल गई। फल यह हुआ, कि लखनौतीके नबाब कादिर खां सकुटुम्ब मार डाले गये और बागियोंने लखनौतीका खजाना लूट लिया और लखनौती, सद्गांव तथा सोनारगांव पर भी कब्जा कर लिया। यह खबर पा कर सुलतान क्रोधसे अधीर हो उठा। कन्नौजसे डालमऊ तक सब जगहोंके गांव नगरोंको सुलतान उजाड़ने लगा। सुलतानके इस जुल्मसे प्रजाने जंगलका आश्रय लिया। बेरहम सुलतानने जंगलमें जा करके प्रजाका प्राणनाश किया।

जिस समय सुलतान कनौज आदि देशोंमें इस तरहका दिल दहलानेवाला जुल्म कर रहा था, उस समय 'माबर'में सैयद हुसेन बागी हो गया और बादशाह बन बैठा। सुलतानने माबर आक्रमण किया। हुसेनका पुत्र इब्राहिम और परिवारके लोग सुलतानके हाथ कैद हुए।

दिल्लीसे रवाना होते समय उसको देशमें कहत दिखाई दी। गल्लेका भाव दिनों दिन बढ़ रहा था। यह देख देवगिरिमें जा कर अपने तहसीलदारोंको लगान वसूल करनेका हुक्म दिया। महाराष्ट्रमें लगान वसूल करनेमें बड़ा जुल्म हुआ था। और तो क्या, प्रजाने लगान देनेमें असक्त हो कर आत्महत्या कर लेनेकी चेष्टा की थी। डाकुओंके लूटपाटसे राज्यमें हाहाकार मचा हुआ था।

इसके बाद वह अहमद अयाजको दिल्लीमें रख तैलङ्ग पर आक्रमण करनेके लिये गया। अरङ्गलमें जब वह आया, तब उसकी फौजमें हैजा हो गया। इससे बहुतेरे सिपाही और अमीर उमरा भी मर गये। इस पर विपक्षियोंने उस पर आक्रमण कर दिया, किन्तु अन्तमें सुलतानकी ही जीत रही। वह नायक वजीर मालिक अबुलको तैलङ्गका राजा बना अपने दौलताबादके लिये रवाना हुआ। वहां कई दिनों तक बीमार रह कर उसने दिल्ली जानेको इच्छा प्रकट की। इसके लिये नसरत खां साहब सुलतानीको बिदा कर कत्लु खांको उसने महाराष्ट्रका भार अर्पण कर दिया। दूसरी यात्राके समय वहां गये हुए उमरावोंको दिल्ली लौट जानेका हुक्म दिया। तीन दल उसके पीछे पीछे दिल्ली चले। थोड़ेसे आदमी दौलताबाद या देवगिरिमें अपने स्त्री पुत्रके साथ रह गये।

सुलतान धारानगरी और मालवा होते हुए दिल्ली पहुंचा। राहमें उसने देखा, कि दुर्भिक्षसे प्रजा पीड़ित हो रही है। राज्य भरमें अशान्तिकी लहर लहरा रही है।

दिल्लीमें आ कर उसने देखा, कि वहांके अधिवासि हजार अंशमें एक अंश भी जीवित नहीं। अकालके कारण कितने ही आदमी मृत्युमुखमे पतित हुए हैं, कितने ही लोग प्राण भयसे भाग गये हैं। अब सुलतान राजकोषसे रुपया दे कर खेतीबारी करनेका उद्योग करने लगा, किन्तु उसकी चेष्टा विफल हुई। वृष्टिके नहीं होनेसे बीज अंकुरित ही नहीं हुए यदि हुए भी तो पौधे सूख गये। अनाहार तथा शारीरिक परिश्रमसे दुर्बल हो कर बाकी प्रजा भी मरने लगी।

सुलतानको खेतीके कामोंमें फँसा देख मूलतानका शाह अफगान वागी हो गया और नायव विहजादको मार कर मुलतान पर अधिकार कर लिया। सुलतान शाहुको दण्ड देनेके लिये चलनेको तय्यार था, ऐसे समय उसकी मां मखुदमा-ए-जहां मर गई। माताके मरनेके शोकसे सन्तप्त हो कर भी शत्रुके प्रतिहिंसाको भूल न सका। फिर तुरत ही सदलवल वह मूलतान के लिये अग्रसर हुआ। शाहुने आत्मसमर्पण किया और अफगान भाग कर अपना प्राण बचाया।

यहांसे सुलतान अग्रोहा और सन्नाम होता हुआ दिल्ली लौटने लगा। उस समय भी दुर्भिक्षका प्रवल प्रकोप था। सुलतान राजव्ययसे कुएं आदि खोदवा कर भी खेतीवारीमें कुछ उन्नति कर न सका। इधर प्रजा राजाके अत्याचारसे किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गई थी। विलकुल निश्चेष्ट हो रही थी। सुलतान वारम्वार आज्ञा दे कर भी उन सवोंको कार्य में प्रवृत्त न करा सका। इसके वाद सभीको राजदण्ड भोग करना पड़ा।

इसके वाद सुलतान सन्नाम और सामनाके विद्रोह-का दमन करनेके लिये गया। उसने विद्रोहियोंके किलों को नष्ट कर उन्हें कैद कर लिया। कैदी दिल्ली लाये गये। इस समय सामनाके अधिवासियोंने इसलाम-धर्म कवूल कर लिया था और उमराओंके यहां आ कर काम करने लगे।

जिस समय सामनामें यह काण्ड हो रहा था उस समय दाक्षिणात्यमें अरङ्गल-राज्यमें कन्हाई नामका एक हिन्दू वागी हो उठा। उसने वहांके नायव वजीर मालिक मकवूलको मार भगाया और अपने राजा वन बैठा। इस समय कन्हाई नायकके भ्राताने सुलतानके कम्बाला प्रदेश पर भी अधिकार कर लिया। इस तरह देवगिरि तथा गुजरातको छोड़ कर प्रायः सव प्रदेशों पर कन्हाई-का कब्जा हो गया। सुलतान यह देख कर वड़ा दुःखी हुआ। इस समय और भी वह प्रजाके साथ कठोरताका व्यवहार करने लगा। इधर दुर्भिक्षके कारण प्रजा जर्जर हो रही थी। सुलतान प्राणपणसे चेष्टा करके भी खेतीवारीमें सफलता नहीं प्राप्त कर सका। यह सव गड़वड़ी देख कर ही उसका मस्तिष्क ऐसा खराव हो गया कि उसका अव राजकार्यमें चित्त ही नहीं लगता था।

अन्तमें दिल्लीवासियोंको नगरकी चहारदीवारीसे वाहर जा कर आत्मरक्षा करनेका हुक्म दिया था। इस पर प्रजा दलके दल वहांसे निकल दूसरी जगहमें चली गई। स्वयं सुलतान अमीर उमराओंके साथ पटयाली और कम्पिल्य पार कर खोर नगर (प्राचीन नाम स्वर्ग द्वार)-में आ कर रहने लगे। यहां आ कर उसने काड़ा और अयोध्याका गल्ला कम कीमतमें खरीदा। पीछे उसके ही अनुगृहीत नौकर अयोध्या और जफरावादके शासक आइन-उल-मुलकने सुलतानको राजी करनेके लिये स्वर्गद्वारोमें और दिल्लीमें वहुत अन्न और रुपया नजरमें भेजे। सुलतान इस कामसे उस पर वड़ा ही खुश हुआ और उसको कतलुग खांके पद पर वैठाना चाहा। क्योंकि कतलुग खां देवगिरि दौलतावादकी मालगुजारी-की वहुतेरी रकमोंको चट कर जाता था।

सुलतानने अपने कृतसंकल्पको वात आइन-उल-मुलकको लिख भेजा। आइन उल-मुलकने अपने भाइयों-के साथ सलाह कर स्थिर किया, "मालूम होता है, कि इस प्रदेशमें गल्लेकी अधिकता देख सुलतानको ईर्षा हो गई है। इससे उसका उद्देश्य है, कि किसी तरह अयोध्या दखल कर ले। इसीलिये मुझको वह देवगिरि भेज रहा है। फिर यदि मैं यह प्रदेश छोड़ कर देव-गिरि गया तो मेरे परिवारके लोगोंको वह यहांसे निकाल देगा और इससे मुझे घोर कष्ट होगा। इसकी निवृत्तिके लिये किसी उत्तम मार्गका आश्रय लेना होगा।" इसी सोच विचारमें देर हो गई।

देर होते देख सुलतानको क्रोध हो आया। उसने हुक्म दिया कि "अयोध्याके अधिवासी दिल्ली आवें और दिल्लीके अधिवासी वहां जाय। ऐसा न करने-वाले व्यक्ति विशेष दण्डसे दण्डित होगा।" आइन-उल-मुलकको पहलेसे ही उसके अत्याचारकी वात मालूम थी इससे वह समझ गया, कि केवल मुझे ही कष्ट देनेके लिये सुलतानने ऐसी आज्ञा निकाली है। इससे उसकी सुलतानके प्रति जो मानमर्यादा थी वह जाती रही। अव वह भी अपनी रक्षाके लिये वागी हो गया।

स्वर्गद्वारीमें रहते समय काड़ा नगरका निजाम विद्रोही हुआ। आइन-उल-मुल्क उस समय सुलतानके पक्षमें थे। उल-मुल्कने उसे कैद कर उसका जीता खाल कढ़वा कर दिल्ली भेजा था। इसके बाद विदरके राजा नसरत खांने राजतहविलको अपने मदमें खर्च कर दिया। इससे सुलतानके कठोर दण्डका भागी होना पड़ता, इसीलिये वह भी बागी हो गया। फिर विदरके किले पर घेरा पड़ा और वह पकड़ा जा कर दिल्ली भेजा गया। इसके छुटकारेके बाद कुलवर्गाके जफर खांके भतीजा आली शाह बागी हो गया। यह सुलतानकी कृपासे तहसीलदारके पद पर नियुक्त था। यहां फौजोंकी गड़बड़ी देख वह कुलवर्गाके सरदारको और विदरके नायबको मार कर स्वयं वहांका राजा बन गया। सुलतानने इसका दमन करनेके लिये कत् लुग खांको भेजा। अन्तमें आली शाह पकड़ा जा कर दिल्ली भेजा गया।

पहले ही कहा गया है, कि आइन-उल-मुल्क अपनी रक्षाके लिये बागी हो गया। यह अपनी फौजको बढ़ाने लगा। इसी समय सुलतानका प्रियपात्र मालिक सुलतानके भयसे स्वर्गद्वारीमें अपने परिवार और फौजों-साथ आ कर रहने लगा। किन्तु फिर शीघ्र ही उसको यह चिन्ता हुई, कि कहीं सुलतान पकड़ कर हम लोगोंकी जान ले ले तो कोई आश्चर्य नहीं, उसका यह तो काम ही है। इस भयसे आइन उल-मुल्कके साथ मिल जानेके लिये एक दिन रातको ही अपनी फौजोंके साथ ले आइन उल-मुल्कके यहां पहुंचा। अब आइन-उल-मुल्कका बल और साहस और भी बढ़ गया।

इन दोनोंने नदी पार कर सुलतानकी फौजों पर आक्रमण किया। सुलतानकी फौजको यह बात मालूम न थी। फल यह हुआ, कि सुलतानी फौज सतर्क हो कर युद्ध करने लगी। अन्तमें मालिक अपने भाईके साथ मारा गया और आइन-उल-मुल्क गिरफ्तार हुआ। कितने ही सिपाहियोंने सुलतानके अत्याचारके भयसे नदीमें कूद कर अपना प्राण विसर्जन किया। सुलतानने आइनको माफी दे कर किसी उच्च पद पर नियुक्त किया।

इसके बाद सुलतान बहराइचको चले। यहां सिपह सालार मसाउदके मकबरा पर बड़ी श्रद्धासे शिरनी चढ़ाई। फिर वह दिल्ली आया। यहां उसको यह धुन समाई, कि अब्बासवंशीय खलीफासे राजसनद मंगाये बिना इसे कल नहीं। उस समय उसकी धारणा हो गई, कि अब्बास-वंशधर खलीफासे बिना सनद पाये कोई मुसलमान बादशाह यथार्थ बादशाह नहीं कहला सकता इसके अनुसार वजीरोंसे सलाह कर मिस्र राज्य आदमी भेजा गया। उसने सिक्केमें अपने नामके साथ खलीफा का नाम खुदवा कर तोषामोदकी पराकाष्ठा दिखाई थी।

सन् १३४३ ई०में मिस्रसे हाजी सैयद सर्शरी खलीफाकी ओरसे सनद और सुलतानके लिये सम्मानार्ह पोशाक ले कर आया। इसके बाद सुलतानने भी खलीफा का सम्मान बढ़ा कर हाजी राजब-वकोईको मिस्र भेजा था। सुलतानके इस तरह अधीनता स्वीकार करने पर खलीफाने 'खलीफाका मददगार'की खिलअत दी थी।

स्वर्गद्वारीसे दिल्ली लौट आने पर उसने एक बार फिर खेतीके काममें चित्त लगाया। इसके बाद देशके मुगलों पर अधिकार करनेके लिये कटिबद्ध हुआ। इन दोनों कामोंमें सुलतानने बहुत धन खर्च किया था। खजाना बिलकुल खाली हो गया। अब वह खजानेको भर्त्ती करनेका उपाय खोजने लगा। साथ ही फौजोंकी बड़ी उन्नति की। दुष्टोंके दमनके लिये उसने कई तरहके आईन कानून बनाये। फिर उसके अत्याचारसे प्रजा बागी हो गई। इससे सुलतानका बड़ा नुकसान हुआ।

देवगिरिके शासक कतलुग खां राजकर वसूल कर बदफैलीमें फूंक रहा था। यह देख कर सुलतानने उसको वहांसे हटा अजीज हीमर नामक एक छोटी जातिको समूचा मालवाका शासक बना कर भेजा। सुलतानने कुतलुग खांके छोटे भाई मौलाना निजामुद्दीनको भड़ौंचसे बुला कर देवगिरिका तहसीलदार बनाया। अविवेकी निजाम तथा नीचकुलके अजीजके शासनसे प्रजा अत्यन्त दुःखी हुई। इससे राज्यमें फिर असन्तोषका राज्य दिखाई दिया। धारा नगरीमें अजीजने विद्रोही अमीरोंको पकड़वा कर कत्ल

कर दिया था, फिर भी सुलतानने उसको इनाम वकसीस दे कर उसका और भी मन बढ़ाया। उस समयका ऐतिहासिक जीया उद्दीन वरणी सुलतानके इस कामसे बड़ा दुःखित हुआ था।

अजीजके जुल्मको न सह सकनेके कारण वहांके अमीर गुजरातकी ओर भाग निकले। इस समय गुजरातके नायव वजीर मकवूल सुलतानको नजर देनेके लिये कितने ही मणि माणिक्य ले कर दिल्ली जा रहा था। मौका पा कर अमीरोंने भी वजीर मकवूलको जुल्मके बदलेमें लूट लिया। मकवूल हार गया और उसकी धन सम्पति अमीरोंके हाथ लगी। अमीर बहुतेरे घोड़े, हाथी और धन भण्डारको हस्तगत कर काम्वे (खम्बात)की ओर आगे बढ़े। उनका इतना मन वल बढ़ गया, कि वह भी वागी हो गये। इन लोगोंने भी अर्थवलसे अपना वल बढ़ा लिया था। इन अमीरोंने वगावत करना शुरू किया। सन् १३४५ ई०में यह खवर सुलतानको मिली। तुरन्त ही सुलतान गुजरातकी ओर चले।

दिल्ली राजधानीमें सुलतान फिरोज, मालिक कवीर और अहृद आयाजको प्रतिनिधि वना रख सुलतानपुरकी ओर आगे बढ़ा। वहां जा कर सुलतानने सुना, कि वागियोंका वल मिटानेके लिये विना शाही हुक्मके ही अजीज हीमर आया था और यहां वागी अमीरोंके हाथोंसे वह मारा गया है।

सुलतान इस वलवेका वदला देनेके लिये गुजरातकी ओर दौड़ा। नहरवाला (अन हिलवाड)में पहुंच उसने शेख मुइज्जुद्दीनको कई एक सिपाहियोंके साथ नगरकी ओर भेजा और आप वड़ौदा पर आक्रमण करनेके लिये आबू पहाड़की ओर गया। यहां आ कर वागी अमीरोंको दण्ड देनेके लिये उसने एक फौज भेजी। पठान फौजके सामने वह खड़ा न रह सका और देवगिरीकी ओर भागा।

सुलतानने भागी हुई फौजोंके पीछे नायव वजीर-ए ममालिक मालिक मकवूलको उनकी खोज करनेके लिये भेजा। मकवूल जब नर्मदाके तीर पर पहुंचा, तो वागियोंके साथ घोरतर एक खण्ड युद्ध हो गया। इस युद्धमें वागी दलकी हार हुई। उसकी चीजें (अस्त्र शस्त्र) मकवूलके हाथ लगीं। इस युद्धमें जो अमीर पकड़े गये, उनको सुलतानने कत्ल कर दिया। फिर भी कई अमीर हिन्दुओंका आश्रय पा कर वच गये थे।

कई दिनों तक वहां रह कर सुलतानने वाकी लगानको वसूल कर लिया। लगान देनेमें जिसने "ना नू" किया उसको दण्ड मिला। मकवूलके साथ जिन्होंने छेड़ छाड़ की थी, वे भी कैदखानेमें भर दिये गये।

इसके वाद सुलतानने भागे हुए देवगिरीके अमीरोंको दण्ड देनेके लिये पिसार थानेश्वरी और मजदुल मुल्कको भेजा। इधर उसने स्वयं पत्र भेज कर वहांके हाकिम मौलाना निजामुद्दीनको लिख भेजा, कि वहुत जल्द १५ सौ घुड़सवारोंके साथ वहांके अमीरोंको मेरे पास भेजो। सुलतानके आज्ञानुसार वहांके अमीर दो वड़े उमराओं की देख रेख तथा घुड़सवारोंके साथ भेजे गये। एकाएक उनके मनमें सुलतानके जुल्मकी वात याद आई। राहमें ही अपनी रक्षाके लिये उन सबोंने तलवार उठा ली। तुरन्त दो उमरा मार डाले गये। इसके वाद उन सबोंने देवगिरि पर आक्रमण कर निमाजको कैद कर लिया। थानेश्वरी और मजुद-उल-मुल्क पकड़े गये और मार डाले गये। धारागिरिके किलेको उन्होंने लूटा और अपने दलमेंके प्रधान अफगान मलको देवगिरिके तख्त पर वैठाया। इस समय सुलतानके वहुतेरे वागी इधर आ कर मिल गये थे। अमीर मालिक याकने धन दे कर सवको सन्तुष्ट किया था।

सुलतान यह खवर पा कर देवगिरिमें पहुंचा। वागी अमीरोंकी हार हुई। अमीरोंके सरदार मल अफगान, हसन गांगू और विदरके वागी अपने अपने अधिकृत स्थानमें चले गये। सुलतानने इमादुल मुल्क आदि वागी और कैदी अमीरोंको कुलवर्गेमें भेज दिया। जो सुलतानके यहांसे भागा था, वह दण्डित हुआ।

सुलतानने इस तरह महाराष्ट्र देशकी वगावतको दूर कर दिया सही, किन्तु तुरन्त ही गुजरातके तघी नामक एक चमारने वगावत कर दी। इसने मालिक मुजफर

नामक एक राजकर्मचारीको मार डाला। शेख मुइज्जुद्दीन कैद कर लिया गया। फिर खम्वातको लूटा और किले पर कब्जा कर लिया। सुलतानको देवगिरिमें ही इसकी खबर लग गई। देवगिरिके शासनकी कोई सुव्यवस्था न कर वह दलवल वहांसे चल दिया। और तो क्या, वहां एक भी शाही फौज रखो न गई।

सुलताननें भडौंच आ कर नर्मदाके किनारे छावनी डाल दी। उसने और उसके सेनापति मालिक युसुफ बघ्राने दोनों ओरसे वलचाइयों पर चढाई कर दी। वलवाइयोंका सरदार चमार तघी खम्वात, नहरवाला, अशावल और काड़ा होते हुए करनौल पहुंचा। सुलतान भी उसके पीछे पीछे दौड़ा जा रहा था। नहरवालाके निकट दोनों दलोंमें एक खण्ड युद्ध हो गया। तघी वहांसे काण्डवराही, करनूल और ठट्ट होता हुआ दम्भोलमें आ पहुंचा। यहां उसको आश्रय मिला। जिस समय तघीके पीछे पीछे सुलतान दौड रहा था, उस समय देवगिरीको खाली देख हसन गांगूने चढ़ाई कर दी। वहां लड़ाईमें इमादुल मुल्क मारा गया। शाही फौजें भाग खड़ी हुईं। धारानगरीमें जो वागी थे, वह भी हसन गांगूकी फौजमें आ मिले।

जिस समय यह घटना हुई उस समय सुलतान नहरवालामें था। उसने अहमद आजिजको देवगिरि भेजना चाहा, किन्तु अलाउद्दीनकी फौज अधिक जान आजिज वहा न गया। अतः देवगिरि सदाके लिये अलाउद्दीन हसन गांगूके अधिकारमे आ गया।

देवगिरि हाथसे निकल जानेसे सुलतानको वडा दुःख हुआ, किन्तु कोई उपाय न था। करनाल और कांगडाके किलेको जीतना तथा गुजरातमें शान्ति स्थापित करना ही उसका एकान्त उद्देश्य था। सुलतान करनाल किलेके सामने आया। वहांके अधिकारियोंने आत्मसमर्पण कर दिया। तघी सुलतानकी अधिक सेना देख कर जाम राजाओंकी शरणमें पहुंचा। सुलतान करनाल और कांगड़ा पर कब्जा कर जाम राजाओंकी ओर झुका। राहमें ही सुलतान वीमार हो गया। इसी समय दिल्लीमें मालिक वीरकी मृत्यु हो गई। सुलतानको इससे और भो दुःख हुआ। उसने राजकार्य संभालनेके लिये अहमद अयाज और मालिक मकवूलको दिल्ली भेज दिया। इधर सुलतानको वीमार सुन कर जगह जगहके लोग उसे देखने आ गये। कोण्डालमें आदमियोंका ठट्ट जमा हो गया।

सुलतान अच्छा हुआ और फिर लडाईकी तय्यारी करने लगा। सिन्धुनद पार करनेके लिये देवलपुर, मुलतान, उच्छ, शिविस्थान आदिसे नावें मगाई गईं। वागो तघीको शरण देनेवाले सुमराधिपतिको वशमें करना उसका उद्देश्य था। इसी समय फरगनाके अमीर अलतुन बहादुरके भेजे पांच हजार सवार आ कर सुलतानकी फौजमें मिल गये।

इतनी फौजोंको ले कर सुलतान आगे बढ़ा, यहां मुहर्रमके लिये उसने फाका किया था। दूसरे दिन खाना खानेके वाद तवियत खराव हो गई। दिनों दिन उसकी वीमारी वढ़ती गई। १३५० ई०में उसको मौतने आ घेरा। सिन्धुनदीके तीर पर अपनी इहलीला संवरण कर ली।

महम्मद शाह तुगलक (२य)—दिल्लीका एक सुलतान, फिरोज शाह तुगलकका पुत्र। सन् १३५० ई०में इसका जन्म हुआ। इसका यथार्थ नाम नासिरुद्दीन था। सन् १३८७ ई०में पिताके जीते जी यह दिल्लीके तख्त पर बैठा। इसका ऐसा व्यवहार देख अमीर उमराओंको अच्छा न लगा। फल यह हुआ कि यह तख्तसे उतार दिया गया। इसके वाद नगरकोटमें जा कर रहने लगा। यहां इसने अपना वल वढाया और वहुतेरी फौजोंको ले कर दिल्ली पर चढ़ाई कर दी और उसे कब्जा कर लिया। अब फिर एक वार यह तख्त पर वैठा। सन् १३९४ ई०में तीन वर्ष ७ मास राज्य करनेके वाद इहलोकसे विदा हुआ। जलेश्वरका गिरिदुर्ग इसीका वनवाया हुआ था।

इसकी मृत्युके वाद सन् १३९४ ई०में इसका पुत्र हुमायूं शाह अलाउद्दीन सिकन्दर शाह नाम रख कर दिल्लीके तख्त पर वैठा। केवलमात्र ४५ दिन राज्य करनेके वाद अला उद्दीनकी मृत्यु हो गई। इसके उपरान्त इसका भाई महमूद शाह तुगलक १० वर्षकी उम्रमें दिल्लीके तख्त पर वैठा। सुलतान नावालिग था। यह देख पुरानी शत्रुतावश मौका पा कर दिल्लीके निकटके अमीर उमरा या जमींदार वागी हो कर आजाद हो गये।

इसी समय अमीर तैमूरने भी हिन्दुस्तान पर आक्रमण किया था।

कुछ इतिहासकारोंने इसको सुलतान महमूद शाहके नामसे भी लिखा है। इसके बारेमें जीवनीके लेखकोंने चचा और भतीजेकी जीवनी एक साथ लिख कर भ्रममें डाल दिया है।

फिरिश्ताकी रायसे सन् १३९९ ई०में और सराफुद्दीन येजदीकी रायसे सन् १३९८ ई०में सुलतान महम्मदकी अमलदारीमें तैमूर भारतमें आया। महम्मद शाह हार कर गुजरात चला गया। तैमूर दिल्लीके तख्त पर बैठा। कुछ ही दिनके बाद तैमूर दिल्लीसे बहुत धन-दौलत ले कर फारस लौटा। इसके फारस चले जानेके बाद फिरोज शाहके पौत्र नसरत खां दिल्ली नगरी पर अधिकार कर 'नसरत शाह'-के नामसे तख्त पर बैठा। इसके बाद १४०० ई०में इकबाल खां बादशाह हुआ। इसके उपरान्त सन् १४०५ ई०में कन्नौजसे आ कर महम्मद शाह फिर दिल्लीका तख्त पर बैठा। नासिरुद्दीन दूसरी बार दिल्लीका बादशाह हुआ सही, किन्तु पहले जो आजाद हो चुके थे, उन लोगोंने मंजूर नहीं किया। सन् १४१३ ई०में महम्मद शाह तुगलक मर गया। अब दौलत खां लोदीने दिल्लीके शाही तख्त पर अधिकार कर लिया। यहां होसे दिल्लीसे तुर्कों का राज्य उठ गया।

महम्मद शाह पूरबी—फिरोज शाहका पुत्र। पिताके मरने पर यह १४६४ ई०में राजतख्त पर बैठा। एक वर्ष कुछ महीने राज्य करनेके बाद सिद्धिबदर नामक एक व्यक्तिने इसकी हत्या कर सिंहासनको दखल किया। १४६५ ई०में बदरने 'मुजफ्फर शाह'-की उपाधि पाई।

महम्मद शाह शर्कि सुल्तान—जौनपुरका एक राजा, इब्राहिम शाह शर्किका बेटा। पिता सुलतान इब्राहिम शाह शर्किके मरने पर यह १४४० ई०में जौनपुरके सिंहासन पर बैठा। १७ वर्ष राज्य करनेके बाद १४५७ ई०में इसकी मृत्यु हुई। पीछे उसका बड़ा भाई विखान खां 'महम्मद शाह शर्कि'-की उपाधि धारण कर पितृराज्यका अधिकारी हुआ।

महम्मद शाही—बङ्गालके अन्तर्गत एक भूसम्पत्ति। नवाब मुर्शिदकुली खांके समय यह चाकला भूषणा कहलाता था। सीताराम रायके उच्छेदके बाद नलदी आदि उत्कृष्ट परगने राजशाही जमींदारीमें मिला लिये गये थे।

महम्मद शेख—जामि जहान नामा और नफस रहमाणी तथा चिहालरिसाला नामक धर्मग्रन्थके प्रणेता।

महम्मद सदर उद्दीन—तुर्क जातिके सर्वप्रथम कवि। यह अरबी और पारसी भाषामें कुछ ग्रंथ लिख गये हैं। १२७० ई०में इनकी मृत्यु हुई।

महम्मद सुफि (मुल्ला)—एक प्राचीन कवि। सुफी साम्प्रदायिक मत पर इनका विशेष विश्वास था। अह्मदनगरवासी सैयद जलाल इ बुखारी इनका शिष्य था। इनकी बनाई हुई शाकिनामाकी श्लोकावली बहुत मनोरम है।

महम्मद सुलतान (१म)—कोन्सटैण्टिनोपलका एक बादशाह। इसके पिताका नाम मुस्ताफा (२य) और चचाका नाम अहमद (३य) था। १७३० ई०में यह चचाके राज्यका अधिकारी बना। इसका बलविक्रम देख कर सबोंने समझ रखा था, कि ये खोये हुए राज्योंका पुनरुद्धार करेगा। किन्तु नादिर शाहके साथ इसकी जो लड़ाई हुई उसमें यह जर्जिया और अरमेनिया छोड़ने को बाध्य हुआ। १७५४ ई०में यह परलोकको सिधारा। पीछे इसका भाई ३य ओसमान राजतख्त पर बैठा।

महम्मद सुलतान (२य)—कोन्सटैण्टिनोपलका बादशाह। इसके पिताका नाम अबदुल हमीद (अह्मद ४थ) था। १७८५ ई०में इसका जन्म हुआ। १८०८ ई०में ३य सलीम और ४र्थ मुस्ताफा नामक इसके दो चचा जब राजतख्त परसे उतार दिये गये, तब यही राजतख्त पर बैठा। ओसमान (१म) इस वंशका आदिपुरुष था। यह ओसमानसे १८ पीढ़ी नीचे तथा उल्लिखित वंशका तीसवां राजा था।

१८३९ ई०में इसका देहान्त हुआ। पीछे उसका लड़का अबदुल मजीद तुरुष्कके सिंहासन पर बैठा। महम्मदके शासनकालमें बहुत-सी घटनायें उल्लेख करने लायक हैं। १८२१ ई०म ग्रीसवालोंने जब तुरुष्कके बादशाहकी अधीनता अस्वीकार कर दी, तब दोनोंमें

विपुल संग्राम छिड गया। आखिर ग्रीसवालोंने अपने-को स्वाधीन बतलाते हुए घोषणा कर दी। १८२८ ई०में रूसीके साथ युद्ध उपस्थित हुआ। इस युद्धमें मह म्मदकी सेना बुरी तरह परास्त हुई थी। अब रूसराज दलबलके साथ कोन्सटैन्टिनोपलकी ओर बढ़ा, तुर्कोंने अपने राज्यका कुछ अंश दे कर मेल कर लिया। परन्तु यूरोपके अन्यान्य राजाओंने उन्हें वहांसे मार भगाया।

महम्मद सुस्तारी—हाकुल यकीन नामक धर्मग्रन्थके प्रणेता। सुस्तार नगरमें इसका जन्म हुआ था। उक्त ग्रन्थका पारसियोंके निकट बहुत आदर है।

महम्मद सैयद—'तहफत उल-मजलिस' नामक ग्रन्थके प्रणेता। आप शेख अह्मद खाटूके समसामयिक थे।

महम्मद हकीम (मिर्जा)—हुमायूं बादशाहका लडका और अकबर बादशाहका वैमात्र भाई। १५५४ ई०को काबुल नगरमें इसका जन्म हुआ। अकबरने इसे काबुल-का शासक बना दिया था, परन्तु इस पर भी यह संतुष्ट न था। आखिर इसने बागी हो कर १५६६ और १५८१ ई०में दो बार पञ्जाब पर चढाई कर दी। उसे दण्ड देनेके लिये खुद बादशाह अकबर पंजाब गये। मुगल सेनाके सामनेवह कब तक ठहर सकता था, जान ले कर भागा। १५८५ ई०को काबुल नगरमें ही इसकी मृत्यु हुई। पीछे राजा भगवान दास और उनके लडके मानसिंहने कुछ समय तक काबुलका शासन किया था।

महम्मद हसन—दिल्लीवासी एक कवि। आप अकबर बादशाहके शासनकालमें १६०४ ई०को महम्मद और उनकी बेगमोंका विवरण तथा मुसलमान महापुरुषोंकी जीवनी लिख कर कवित्व-शक्तिका अच्छा परिचय दे गये हैं।

महम्मद हसन बुरहान—कुरहान इ-काटा नामक पारसी अभिधानके प्रणेता। १६५१ ई०को इन्होंने उक्त ग्रन्थकी रचना कर हैदराबादके निजाम अबदुल्ला कुतुब शाहके नामसे उत्सर्ग किया।

महम्मद हादी—बादशाह जहांगीरका प्रतिपालित एक सम्भ्रान्त उमराव। इसने तुजक जहांगिरी नामक प्रसिद्ध इतिहासके शेष अंशको समाप्त किया था। इसका पहला अंश स्वयं बादशाह जहांगीरने और बिचला अंश मतमिद खांने लिखा था।

महम्मद हानीफ—अलीका तीसरा लड़का। फतीमाके गर्भसे उत्पन्न हसन और हुसैनका वैमात्र भाई होनेके कारण इसे इमामका पद नहीं मिला किन्तु हुसैनके मरने पर वहु तोंने इसीको खलीफा वा इमाम समझ रखा था। इसका दूसरा नाम था महम्मद बिनाली। ८१ हिजरीमें इसकी मृत्यु हुई।

महम्मद हासिम (काफी खां)—एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक। इन्होंने तारीख काफी खान् और मुन्तखब-उल-लुबाब नामक दो भारतवर्षके इतिहास-ग्रन्थ लिखे हैं। बाद-शाह आलमगीरकी अमलदारी शेष होने पर ये दिल्ली नगरमें रह कर मुगलराज्यका इतिहास लिखने लगे। उक्त ग्रन्थमें १५१९ ई०को बाबरशाहके आक्रमणसे ले कर बादशाह महम्मद शाहके राज्यरोपण तककी घटनाओं-का वर्णन है।

महम्मद हुसेन—आकायद हुसेन नामक धर्मग्रन्थके प्रणेता।

महम्मद हुसेन (मिर्जा)—तैमूरराजवंशोद्भव महम्मद सुलतान मिर्जाका लडका। यह अपने भाइयोंसे मिल कर बादशाह अकबरके विरुद्ध खड़ा हो गया था। इस पर बादशाह बड़े बिगड़े और उन सबोंको शम्भलपुर दुर्गमें कैद किया। पीछे षड्यन्त्र करके वे सबके सब वहांसे भागे और चम्पानेर, सूरत तथा भरोंच पर अधि-कार कर बैठे। बादशाह उन्हें दण्ड देनेके लिये चल पड़े। कर्णालके समीप माहेन्द्री नदीके किनारे अपने भाई इब्राहिमका पराभव सुन कर हुसैन दाक्षिणात्यको भागा। पीछे वहांसे फिर लौट कर उसने गुजरात और आस पासके स्थानोंको अधिकार कर लिया। नौरङ्ग खांकी अधीनस्थ मुगलसेनाने खम्बामें उसे परास्त किया। अनन्तर वह बख्तियार उल-मुल्कके साथ मिल गया। प्रतिहिंसापरायण अकबरके हाथसे वह कब तक बच सकता था। रायसिंह नामक एक हिन्दूने उस-का काम तमाम किया।

महम्मद हुसेन (शेख)—अरबदेशीय एक मुसलमान कवि। काव्यशास्त्रमें विशेष व्युत्पत्ति होनेके कारण इन्हें 'शहरत'-की उपाधि मिली थी। सिराज नगरमें इन्होंने लिखना पढ़ना सीखा था। अच्छी तरह तालिम पानेके बाद ये

वर्ष आये। यहां युवराज आजिमशाहने इन्हें राजहकीमके पद पर नियुक्त किया। असामान्य पाण्डित्य पर प्रसन्न हो कर बादशाह फरुखसियरने इसे हकीम उलमुल्ककी उपाधि दी थी।

महम्मदशाहकी अमलदारीमें ये मक्काको गये थे। वह से लौट कर दिल्ली नगरमे इनकी मृत्यु हुई। इनका बनाया हुआ ५००० श्लोकोंका एक दीवान ग्रन्थ मिलता है।

महम्मद हुसेन (लसकर खां) सम्राट् अकबर शाहका एक सभासद्। यह मीर बख्शी और अमीर आर्ज-पद पर नियुक्त था। १५६७ ई०मे मुजफ्फर खांके बहकानेसे इसको पदच्युति हुई। एक दिन नशेमें चूर हो कर यह बादशाहकी सभामे पहुंचा और सभासदोंको गाली गलौज देने लगा। इस अपराध पर अकबरने इसे घोडे की पूछमे बंधवा कर अच्छी सजा दी और पीछे कारागारमे कैद रखा। इसके बाद यह बङ्गीय सेनादलका अधिनायक बनाया गया। तकराई युद्धमें आहत हो कर उड़ीष्यामें इसकी मृत्यु हुई। इस समय यह २ हजारी मनसबदार था।

महम्मदाबाद—१ युक्तप्रदेशके आजमगढ जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ४८' से २६° ८' उ० तथा देशा० ८३° ११' से ८३° ४०' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४२७ वर्गमील और जनसंख्या तीन लाखसे ऊपर है। इसमें माऊ, मुबारकपुर और महम्मदपुर नामक तीन शहर और ६७१ ग्राम लगते हैं। तोंस और छोटी सरयूके सिवाय यहां और भी बहुतसे जलाशय हैं।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यय अक्षा० २६° २' उ० तथा देशा० ८३° २४' पू०के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या प्रायः ८७७५ है। यह शहर बहुत पुराना मालूम होता है। कहते हैं, कि १५वीं सदीके आरम्भमें इस पर मुसलमानोंने दखल जमाया था। यहां एक अस्पताल, एक तहसीली, एक मुंशिफी और पुलिस-स्टेशन है। अलावा इसके यहां दो स्कूल भी है।

महम्मदाबाद—युक्तप्रदेशके गाजीपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ३१' से २५° ५४' उ० तथा देशा० ८३° ३६' से ८३° ५८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण दो लाखसे ऊपर है। इसमें २ शहर और ६६४ ग्राम लगते हैं। तहसीलके उत्तर धान और ईखकी अच्छी फसल लगती है।

२ उक्त तहसीलका सदर। यह अक्षा० २५° ३७' उ० तथा देशा० ८३° ४७' पू० गाजीपुरसे बक्सर जानेके रास्ते पर अवस्थित है। जनसंख्या ७२७० है। यहां एक अस्पताल, एक मुंशिफी और दो स्कूल हैं।

महम्मदी—१ युक्तप्रदेशके खेरी जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २७° ४१' से २८° १०' उ० तथा देशा० ८०° २' से ८०° ३६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६५१ वर्गमील और जनसंख्या ढाई लाखसे ऊपर है। इसमें महम्मदी नामक एक शहर और ६०७ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तहसीलका एक सदर। यह अक्षा० २७° ५८' उ० तथा देशा० ८०° १४' पू०के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या ६२७८ है। १७वीं सदीके शेषमें बरबारके सैयदोंने इसे दखल किया था। मुगल-साम्राज्यकी अवनतिके समय वे लोग स्वाधीनभावसे राजकार्य चलाते थे। इनका कोई पूर्वपुरुष हरदोई राज्यके सोमवंशीय राजपूतराजसे परास्त हुआ था। पीछे सैयदोंने उन्हें हरा कर इस्लामधर्ममें दीक्षित किया और एक दासीकन्याके साथ उनका विवाह करा दिया। धर्मत्यागी वह राजपूत आखिर अपने प्रतिपालकके वंशधरकी कुल सम्पत्तिका अधिकारी बन बैठा। १७६३ ई० तक वे इस सम्पत्तिका भोग करते रहे। पीछे १८५७ के गदरमें भाग जानेके कारण उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली गई।

महयाय्य (सं० पु०) पूजा, अर्चना।

महय्य (सं० त्रि०) पूजनीय, सम्मान करने लायक।

महर (हिं० पु०) १ एक आदरसूचक शब्द जो व्रजमें बोला जाता है। इसका व्यवहार विशेषतः जमींदारों और वैश्यों आदिके संबंधमें होता है। २ एक प्रकारकी चिड़िया। ३ महरा देखो। (वि०) ४ सुगंधित, महमहा।

महरबान (फा० पु०) मेहरबान देखो।

महरम (अ० पु०) १ मुसलमानोंमें किसी कन्या या स्त्रीके लिये उसका कोई ऐसा बहुत पासका संबंधी जिसके

साथ उसका विवाह न हो सकता हो। २ रहस्यसे परिचित, भेदका जाननेवाला। (स्त्री०) ३ अंगिया। ४ अंगियाकी कटोरी।

महरा (हिं० पु०) १ कहार। २ श्वसुरके लिये आदर सूचक शब्द। (वि०) ३ श्रेष्ठ, बड़ा।

महराई (हिं० स्त्री०) श्रेष्ठता, प्रधानता।

महराज (हिं० पु०) महाराज देखो।

महराजा (हिं० पु०) महाराज देखो।

महराण (हिं० पु०) समुद्र।

महराना (हिं० पु०) १ महरोंके रहनेका स्थान, महरोंके रहनेकी जगह। २ महाराणा देखो।

महराव (हिं० स्त्री०) मेहराब देखो।

महरि (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारका आदरसूचक शब्द। इसका व्यवहार व्रजमें प्रतिष्ठित स्त्रियोंके संबंधमें होता है। २ ग्वालिन नामक पक्षी, दहिंगल। ३ गृहस्वामिनी, मालकिन।

महरी (हिं० स्त्री०) ग्वालिन नामक पक्षी, दहिंगल।

महरू (हिं० पु०) १ चंडू पीनेकी नली। २ एक प्रकार का वृक्ष।

महरूम (अ० वि०) वंचित, जिसे प्राप्त न हो।

महरेटा (हिं० पु०) १ महरका बेटा, महरका लड़का। २ श्रीकृष्ण।

महरेटी (हिं० स्त्री०) वृषभानु महरकी लड़की, श्रीराधिका।

महरेणु (सं० क्ली०) देशभेद।

महर्घता (सं० स्त्री०) महंगे होनेका भाव, महंगी।

महर्त्विज् (सं० पु०) १ ऋत्विक्भेद। यज्ञमें अध्वर्यु, ब्रह्मन, होता और उद्गाता ये चारों महर्त्विज् कहलाते हैं।

महर्द्धि (सं० त्रि०) १ विपुल धनशाली, बहुत धनवान्। (स्त्री०) २ प्रचुर धन, बहुत उन्नति।

महर्द्धिक (सं० त्रि०) १ विपुल धनशाली, बहुत धनी। २ दैवशक्तिसम्पन्न।

महर्द्धिप्राप्त (सं० पु०) १ गारुड़देशके राजा। (त्रि०) २ विपुल वित्तसम्पत्तिशाली, बहुत धनी।

महर्द्धिमत् (सं० त्रि०) दैवशक्ति द्वारा धनशाली।

महर्ल्लोक (सं० पु०) महश्चासौ लोकश्चेति कर्मधारयः। पुराणानुसार भू, भुवः आदि चौदह लोकोंमेंसे एक। १४ लोकोंमेंसे ७ ऊर्द्ध्वलोक और ७ अधोलोक हैं। महर्ल्लोक इन ऊर्द्ध्वलोकोंमेंसे चौथा है।

"भूर्भुवस्वर्महश्चैव जनश्च तप एव च।
सत्यलोकश्च सप्तैते लोकास्तु परिकीर्त्तिताः॥"
(अग्निपुराण)

कल्पवासी सभी लोक इस लोकमें अवस्थान करते हैं
"चतुर्थे तु महर्ल्लोके तिष्ठन्ते कल्पवासिनः।" (देवीपु०)

महर्षभ (सं० पु०) महांश्चासौ ऋषभश्चेति कर्मधा०। १ वृहत् षण्ड, बड़ा सांढ़। (त्रि०) २ अति श्रेष्ठ।

महर्षभी (सं० स्त्री०) महती चासौ ऋषभा चेति कर्मधा०। कपिकच्छु, कौंछ।

महर्षि (सं० पु०) १ बहुत बड़ा और श्रेष्ठ ऋषि, ऋषीश्वर। २ एक राग। यह भैरवके आठ पुत्रोंमेंसे एक माना जाता है।

महर्षिका (सं० स्त्री०) शुक्लकण्टकारी, सफेद भटकटैया।

महल (अ० पु०) प्रासाद, बहुत बड़ा और बढ़िया मकान जिसमें राजा वा रईस रहते हैं।

महलसरा (हिं० स्त्री०) अन्तःपुर, रनिवास।

महलाठ (हिं० पु०) एक प्रकारका पक्षी। इसकी दुम लंबी, ठोर काली, छाती खैरी, पीठ खाकी रंगकी और पैर काले होते हैं।

महली पटैला (हिं० पु०) एक प्रकारकी बड़ी नाव। इस पर केवल लकड़ी या पत्थर आदि लादा जाता है।

महल्ल (सं० पु०) १ वृद्धलोक, बूढ़ा मनुष्य। २ खोजा।

महल्लक (सं० पु०) महतः स्त्रीरक्षादिरूपान् विपुलान् भारान् लाति गृह्णाति ला (आतोऽनुप सर्गे कः। पा ३।२।३) इति कः ततः स्वार्थे कन्, यद्वा महान्तं चरित्रगुणं लकात आस्वादयतीति लक-आस्वादने अच्। अन्तःपुररक्षक, खोजा। पर्याय—सौविदल्ल, कञ्चुकी, स्थापत्य, सौविद, विदाङ्क, सौविदल्लक, अन्तर्वंशिक।

महल्ला (अ० पु०) शहरका कोई विभाग या टुकड़ा जिसमें बहुतसे मकान आदि हों।

महल्लिक (सं० पु०) महान्तं चारित्रगुणं लिखतीवेति महत् लिख-क पृषोदरादित्वात् साधुः। अन्तःपुररक्षक, खोजा।

महस् (सं० क्ली०) मह्यते पूज्यतेऽनेनेति मह (अत्यविच मितमिनमीति। उण् ३।११७) इति असच्। १ ज्ञान। २ प्रकार।

महस (सं० क्ली०) मह्यते पूज्यतेऽस्मिन्निति मह (सर्व-धातुभ्योऽसुन्। उण् ४।१८८) इति असुन्। १ उत्सव। २ तेज। ३ यज्ञ। ४ आनन्द, खुशी। ५ उदक, जल। (त्रि०) ६ पूज्यमान, आदरणीय। ७ महत्, बड़ा।

महसिल (अ० पु०) तहसील वसूल करनेवाला, उगाहने-वाला।

महसीर (हिं० स्त्री०) एक प्रकारको मछली। महासीर देखो।

महसूल (अ० पु०) १ वह धन जो राजा या कोई अधि-कारी किसी विशेष कार्यके लिये ले, कर। २ भाड़ा, किराया। ३ मालगुजारी, लगान।

महसोन (सं० पु०) एक व्यक्तिका नाम।

महस्वत् (सं० त्रि०) महस् मतुप्। १ आनन्दवर्द्धक। २ महत्, बड़ा। ३ ज्योतिविशिष्ट। (पु०) ४ राजभेद।

महा (सं० स्त्री०) मह्यते पूज्यते इति मह-घ-स्त्रियां टाप्। १ गोपवल्ली। २ स्त्रीगावि, गाय। ३ (त्रि०) अत्यन्त, बहुत अधिक। ४ सर्वश्रेष्ठ, सबसे बढ़ कर। बहुत बड़ा, भारी। ब्राह्मण, पात्र यात्रा, प्रस्थान, तैल और मांस इन शब्दोंमें 'महा' शब्द लगानेसे इन शब्दोंके अर्थ कुत्सित हो जाते हैं।

महाअरंभ (हिं० वि०) बहुत शोर, बहुत हलचल।

महाअहि (सं० पु०) शेषनाग।

महाई (हिं० स्त्री०) १ मथनेका काम। २ नीलको मथाई, नीलके रंगको मथनेका काम। ३ मथनेका भाव। ४ मथनेकी मजदूरी।

महाउत (हिं० पु०) महावत देखो।

महाउर (हिं० स्त्री०) महावर देखो।

महाकङ्कर (सं० पु०) बौद्धोंके अनुसार एक बहुत बड़ी संख्या।

महाकच्छ (सं० पु०) महान् विपुलः कच्छो जलप्रायो देशोऽस्य। १ समुद्र। २ वरुण। ३ पर्वत। ४ जन-पदभेद, एक प्राचीन देशका नाम।

महाकटभी (सं० स्त्री०) श्वेत कटभीवृक्ष।

महाकण्टकिनी (सं० स्त्री०) महती चासौ कण्टकिनी चेति कर्मधा०। विश्वसारक, एक प्रकारका सीज।

महाकण्टा (सं० स्त्री०) शेवन्तीवृक्ष, गुलाब।

महाकथहचक्र (सं० क्ली०) चक्रभेद। तन्त्रसारमें इस चक्रका विवरण लिखा है। मन्त्र लेते समय इस चक्रसे मन्त्रका उद्धार कर लेना होता है।

मन्त्र और अकथह चक्र देखो।

महाकदम्ब (सं० पु०) केलिकदम्ब।

महाकनकतैल (सं० क्ली०) शिरके एक रोगका तेल। प्रस्तुत प्रणाली—कटुतैल ४ सेर, धतूरेकी पत्तियोंका रस ४ सेर, पुनर्णवाका रस ४ सेर, थहरके पत्तोंका रस ४ सेर, दशमूलका काढ़ा ४ सेर, पालिधाका रस ४ सेर, वरुण छालका रस ४ सेर; चूर्णके लिये सोंठ मरिच, सैन्धव, पुनर्णवा, कर्कटशृङ्गी, पीपर और गज-पीपर प्रत्येक ४ तोला। तेल बनानेकी प्रणालीसे इस तेलका पाक करना होता है। इससे शिरका दर्द और शोथ जाता रहता है।

महाकन्द (सं० पु०) महांश्चासौ कन्दश्चेति। १ रसो-नक। २ मूलक। ३ चाणक्यमूलक। ४ लाल लहसुन। ५ प्याज।

महाकन्य (सं० पु०) ऋषिभेद, एक प्रवरकार ऋषिका नाम।

महाकपाल (सं० पु०) १ राक्षसभेद, एक दानवका नाम। २ शिवानुचरभेद, शिवके एक अनुचरका नाम।

महाकपि (सं० पु०) १ राजभेद। २ शिवके एक अनु-चरका नाम। ३ एक बोधिसत्त्वका नाम।

महाकपित्थ (सं० पु०) महांश्चासौ कपित्थश्चेति। बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़।

महाकपिल पञ्चरात्र—एक प्राचीन धर्मग्रन्थ। स्मार्त्त रघु-नन्दन और विट्ठल दीक्षितने इसका मत उद्धृत किया है।

महाकपोत (सं० पु०) दर्वीकर सर्पविशेष, सुश्रुतके अनु-सार २६ प्रकारके बहुत ही विषधर सर्पोंमेंसे एक प्रकार-का सांप।

महाकपोल (सं० पु०) शिवानुचरभेद, शिवके एक अनु-चरका नाम।

महाकम्बु (सं० पु०) महान् कम्बु ग्रीवा यस्य। शिव,

महाकर (सं० पु०) १ वृहत् हस्त, लंबा हाथ। २ अधिक खजाना, ज्यादा लगान। ३ बुद्धभेद, एक बोधिसत्त्व-का नाम। (त्रि०) ४ वृहत् हस्तयुक्त, जिसके बडे बडे हाथ हों। ५ महारश्मि।

महाकरञ्ज (सं० पु०) महांश्चासौ करञ्जश्चेति। करञ्ज-विशेष। इसका व्यवहार औषधके रूपमें होता है। वैद्यकमें इसे तीक्ष्ण, उष्ण, कटु तथा विष, कंडु, कुष्ठ, व्रण और त्वचाके दोषोंका नाशक माना गया है। संस्कृत पर्याय—षड्ग्रन्था, हस्तिचारिणी, उदकीर्ण, विषघ्नो, काकघ्नी, मदहस्तिनी, शारङ्गेष्टा, मधुमती, रसायनी, हस्तिरोहणक, हस्तिकरञ्जक, सुमनस्, काक-भाण्डी, मधुमत्ता।

महाकरभ (सं०पु०) बौद्धोंके अनुसार एक वहुत वडी संख्या।

महाकरम्भ (सं० पु०) एक प्रकारका पत्रविष।

महाकरुण (सं० त्रि०) महती करुणा यस्य। बहुत दयालु।

महाकरुण पुण्डरीक (सं० क्ली०) बौद्धसूत्र-ग्रन्थभेद।

महाकरुणाचन्द्रि (सं० पु०) बोधिसत्त्वभेद।

महाकर्कारु (सं० पु०) गुल्मभेद, एक प्रकारकी लता।

महाकर्ण (सं० पु०) १ शिव, महादेव। २ नागभेद, एक नागका नाम। (त्रि०) ३ वृहत् कर्णयुक्त, जिसके वडे वडे कान हों।

महाकर्णा (सं० स्त्री०) कार्त्तिकेयकी एक मातृका नाम।

महाकर्णिकार (सं० पु०) महांश्चासौ कर्णिकारश्चेति। आरग्वध वृक्ष, अमलतास।

महाकर्म (सं० क्ली०) १ वृहत् कर्म, वडा काम। (पु०) २ विष्णु। (त्रि०) महत् कर्म यस्य। ३ महत् कर्मयुक्त।

महाकला (सं० स्त्री०) अमा नामक कला। इस दिन पितृकर्म प्रशस्त है।

महाकलोप (सं० पु०) कोई विशेष मतानुसारी सम्प्रदाय-भेद।

महाकल्प (सं० पु०) १ समयभेद, पुराणानुसार उतना समय जितनेमें एक ब्रह्माकी आयु पूरी होती है। २ शिव, महादेव। कल्प देखो।

महाकल्पतरु नाथ—एक जैन अर्हत्।

महाकल्याणगुड (सं० पु०) गुडौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—पीपर, पिपरामूल, गजपीपर, धनिया, विडङ्ग, यमानी, मरिच, त्रिफला, वनयमानी, नीलीवृक्ष, जीरा, सैन्धव, शाम्भर लवण, सामुद्र लवण, सौवर्चल, विट् लवण, दारुचीनी, तेजपत्र, छोटी इलायची, काला जीरा, निशोथ ८ पल, गुड़ १२॥ सेर, तिलका तेल ८ पल, आँवलेका रस ८ पल, कुल मिला कर तीन प्रस्थ होना चाहिये। पीछे यथाविधान धीमी आंचमें पाक करे। इसकी माला पञ्चडुमर फलके समान वतलाई गई है। कोई कोई आंवले वा बेरके बराबर भी इसकी माला बतलाते हैं। चिकित्सकको चाहिये, कि वे रोगीके बलावलके अनुसार माला स्थिर कर दें। नियमपूर्वक इस औषधका सेवन करनेसे सब प्रकारके ग्रहणीरोग, बीस प्रकारके प्रमेह, उरोघात, प्रतिघात, दुर्वलता, अग्नि-मान्द्य तथा सब प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं। विशेषतः शरीरकी कान्ति, मति और बलवृद्धि, पाण्डुरोग, रक्तपित्त और मलरुद्धता नष्ट होती है। धातुक्षीण, वृद्ध स्त्रीप्रसङ्ग द्वारा क्षीण, क्षयरोगी और वन्ध्या स्त्रीके लिये यह विशेष लाभदायक है। ग्रहणी रोगमें तो इसे रामवाण ही सम-झना चाहिये। (भावप्र० ग्रहणीरोगाधि०)

महाकल्याणघृत (सं० क्ली०) घृतौषध विशेष। प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर, शतमूलीका रस १६ सेर, दूध १६ सेर, चूर्णके लिये जीरा, श्वेत वहेडा, मजीठ, असगंध, हल्दी, काकोली, क्षीरकाकोली, मुलेठी, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, और देवदारु प्रत्येक वस्तु ८ तोला। घृत-पाकके नियमानुसार इसका पाक करना होगा। दाहा धिकारमें यह घृत अति उत्कृष्ट माना गया है। (रसेन्द्र)

महाकवि (सं० पु०) महाकाव्यके प्रणेता। जो महा-काव्यका प्रणयन कर यशस्वी हो गये हैं, वे ही महाकवि नामसे प्रसिद्ध हैं। वाल्मीकि, कालिदास, माघ, भारवि, श्रीहर्ष आदि महाकवि कहलाते हैं।

महाकात्यायन (सं० पु०) गौतमबुद्धके एक शिष्यका नाम।

महाकान्त (सं० पु०) १ शिव। (त्रि०) २ अतीव रमणीय, वहुत सुन्दर।

महाकान्ता (सं० स्त्री०) पृथ्वी।

महाकान्तार—प्राचीन जनपदभेद। महाराज समुद्रगुप्तने यहांके अधिपति व्याघ्रराजको परास्त किया था।

महाकाय (सं० पु०) महान् कायोऽस्य। १ नन्दी, शिवका द्वारपाल। २ हस्ती, हाथी। महान् कायः शरीरमिति। ३ वृहत् शरीर। (त्रि०) ४ वृहत् शरीर-विशिष्ट, बडा शरीरवाला।

महाकाया (सं० स्त्री०) कुमारानुचर मातृविशेष।

महाकार (सं० त्रि०) १ सुवृहत्, बहुत बड़ा। २ वृहदाकार, बड़ा कदवाला।

महाकारण (सं० पु०) सर्व कर्मका नियन्ता वा कारण भूत परमेश्वर।

महाकार्त्तिकी (सं० स्त्री०) महती चासौ कार्त्तिकी चेति। रोहिणी नक्षत्रयुक्त कार्त्तिकी पूर्णिमा।

"प्राजापत्य यदा ऋक्ष तथैतस्या नराधिपः।
सा महाकार्त्तिकी प्रोक्ता देवानामपि दुर्लभा॥"
(पद्मपु० २।३ अ०)

कार्त्तिकी पूर्णिमाके दिन रोहिनी नक्षत्रका योग होनेसे महाकार्त्तिकी होती है। यह दिन देवताओंके लिये भी दुर्लभ है। इस दिन स्नान दानादि करनेसे अक्षय पुण्य होता है।

महाकाल (सं० पु०) महांश्चासौ कालश्चेति कर्मधा०। १ विष्णुस्वरूप अखण्ड दण्डायमान काल। जैसे,—

"कालो घटवान् महाकालत्वात्" (सिद्धान्तलक्षण)

२ महादेव। सर्वभूतका कलन अर्थात् संहार करते हैं, इससे इनका नाम महाकाल है।

"कलनात् सर्वभूताना महाकालः प्रकीर्त्तितः।
महाकालस्य कलनात् त्वमाद्या कालिका परा॥"
(महानिर्वाण ४।३१)

३ प्रमथगणविशेष। (मेदिनी) ४ उज्जयिनीस्थित शिवलिङ्गभेद। कथासरितसागरमें लिखा है,—उज्जयिनी नगर पृथ्वीका भूषण है। यहांका सुधाधवलित सौध्यसौधावली सौन्दर्य गर्वसे मानो इन्द्रकी अमरावतीका परिहास कर रही है। और तो क्या,—भगवान् कैलाशनाथ कैलाशको भूल कर स्वयं यहां महाकालके रूपमें विराज रहे हैं।

"अस्तीहोज्जयिनी नाम नगरी भूषणं भुवः।
हसन्तीव सुधा धौतैः प्रासादैरमरावतीम्॥
यस्या वसति विश्वेशो महाकालवपुः स्वयम्।
शिथिलीकृतकैलासनिवासव्यसनो वपुः॥"
(कथासरित्सा० ११।३१-३२)

प्राचीन नाटक आदि पुस्तकोंमें भी उज्जयिनीके शिवलिङ्गका उल्लेख मिलता है। महाकवि कालिदासने अपने मेघदूतमें प्रियाविरह विधुर यक्ष द्वारा अपनी पत्नीका समाचार लानेके लिये मेघको अलकापुरी भेजते समय उज्जयिनीके इन महाकाल शिवको प्रणाम करके जानेको कहा है।

काव्य नाटकादि ग्रन्थोंमें इस शिवलिङ्ग मूर्त्तिको महाकाल, महाकालनाथ, महाकाल निकेतन, महाकाल वपु आदि विविध नामोंसे सम्बोधन किया गया है।

उज्जयिनी देखो।

महाकवि भवभूतिने अपने उत्तर रामचरित नाटकको प्रस्तावनामें कालप्रियनाथके नामसे सम्भवतः इन्हीं महाकालका परिचय दिया है,—"अथ खलु भगवतं कालप्रियनाथस्य यात्रायामार्य मिश्रान् विज्ञापयामः।"
(उत्तररामचरित १म अङ्क)

उज्जयिनी नगरीमें शिप्राके पूर्व ओर पिशाच मुक्तेश्वरघाटके पूर्व दक्षिणमें इन महाकालका प्रकाण्ड मन्दिर विराजमान है। ५ महाभारतोक्त तीर्थविशेष। इस तीर्थमें पहुंच संयतभावसे रह कर कोटितीर्थ स्पर्श करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है।

"महाकाल ततो गच्छेत् नियतो नियताशनः।
कोटीतीर्थमुपस्पृश्य हयमेधफल लभेत्॥"
(महाभारत ३।८२।४७)

६ लताविशेष। इसका पर्याय—उरुकाल, किम्पाक, काकमर्दक काकमर्द, देवदालिका, दाला, दलिका, जलङ्ग, घोषकाकृति।

"अन्तर्मलिनदेहे न वहिराह्लादकारिणा।
महाकालफलेनैव कः खलेन वञ्चितः॥" (उद्भट)

७ शिवपुत्रभेद। उनकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कालिकापुराणमें लिखा है,—देवोंने शङ्करके वीर्यधारणके लिये अग्निको आज्ञा दी। अग्नि तैयार हुए, यथासमय

शिववीर्य अग्निमें डाला गया। किन्तु डालते समय इसके दो विन्दु अग्निके वाहर पर्वत पर गिर गये। इन्हीं दो विन्दुओंसे शङ्करके दो पुत्र उत्पन्न हुए। ब्रह्माने एकका महाकाल और दूसरेका भृङ्गी नाम रखा। भृङ्गी और महाकाल दोनों ही काले रंगके थे। भगवान् शङ्कर इन दोनोंका रक्षणावेक्षण करते रहे।

एक दिन किसी एक निभृत स्थानमें शङ्कर शङ्करीके साथ क्रीडा कर रहे थे। भृङ्गी और महाकपाल उस गुप्त स्थान पर पहरा देते थे। सम्भोगके वाद शङ्करी जव वाहर निकलीं, तव उक्त दोनों भाई की निगाह उन पर पड गई। इस पर शङ्करीने लज्जाके मारे शिर झुका लिया। भृङ्गी और महाकाल भी माताको उस अवस्थामें देख कर वहुत लजा गये। ऐसे निभृत समयमें किसीको भी ऐसा अधिकार न था कि शङ्करीको देखें। अतएव शङ्करी पहले तो वहुत लज्जित हुई, पर पीछे उन दोनों पर वहुत विगडी। उनका क्रोध देख कर दोनों भाई वहुत डर गये। शङ्करीने उन्हें उसी समय शाप दिया। उस शापसे भृङ्गी और महाकालने मनुष्य योनिमें जन्म लिया और उनका मुख वन्दर-सा हो गया।

भृङ्गी और महाकालकी मानुषी माताका नाम तारावती था। तारावती रूपवती थीं। एक दिन वह किसी उच्च सौधशिखर पर खडी थी मानो वासन्ती प्रतिमा भूतलमें अवतीर्ण हुई हो। शङ्कर शङ्करीके साथ गगन मार्गसे जा रहे थे। इस समय शङ्करने तारावतीको देखा। उन्होंने शङ्करीसे कहा, 'प्रिये! यह मानुषी मूर्त्ति तुम्हारे महाकाल और भृङ्गीकी माता तारावतीकी है। मैं तुम्हारे सिवा किसीको भी अपना अङ्कशायिनी वनाना नही चाहता। अतएव तुम तारावतीके शरीरमें प्रवेश करो जिससे मैं फिर भृङ्गी और महाकालको उत्पन्न करूं।' भवकी वातको भवानीने स्वीकार कर लिया और तारावतीके शरीरमें प्रवेश किया। शिवके संसर्गसे तारावती गर्भवती हुई। यथासमय भृङ्गी और महाकाल फिर उत्पन्न हुए, किन्तु उनका वानरत्व नही गया। यानी दोनोंका वन्दरका-सा ही मुंह रह गया।

कालिकापुराणमें लिखा है—महाकाल और भृङ्गीने मर्त्यमें आ कर वैताल भैरव नामसे जन्म लिया। महादेवने स्नेहवशतः महाकालको अपने भक्त वलिसुत वाणरूपमें उत्पन्न किया।

कालिकादेवीकी पूजा करनेके वाद दाहिनी ओर इसमहाकालकी पूजा करनी पडती है। इनके तीन नेत्र, आकृति धूम्रवर्ण, दोनों हाथोंमें दण्ड और खट्वाङ्ग, मुख दंष्ट्रान्वित, भयङ्कर और कटि व्याघ्रचर्मसे आवृत है। देहाकृति स्थूल (मोटा) है। वदनका वस्त्र लाल है। केश ऊपरको उठे हुए हैं। गलेमें मुण्डमाला है। कपाल जटासे भरा हुआ है और चन्द्रखण्डकी तरह धक-धक चमकता है। इन महाकालका ध्यान—

"महाकाल यजेद्देव्या दक्षिणे धूम्रवर्णक।
विभ्रत दण्डखट्वाङ्गौ दंष्ट्राभिमुखं शिशुं॥
व्याघ्रचर्मावृतकटिं तुन्दिल रक्तवासस।
त्रिनेत्रमुर्द्ध्वकेशञ्च मुण्डमालाविभूषितम्।
जटाभारलसच्चन्द्रखण्डमुग्र ज्वलन्निभं॥"

कुमारीकल्पमें महाकालका मन्त्र इस तरह लिखा है,—"हुं क्षौं कां रां लां वां क्रों महाकाल भैरव सर्वविघ्नान् नाशय नाशय ह्रीं फट स्वाहा।"

मन्त्रोच्चारण पूर्वक पाद्यादि द्वारा महाकालकी पूजा सम्पन्न करनेके वाद मूलमन्त्रसे देवीको तीन वार तर्पण करे। पीछे पञ्चोपचारसे उनकी पूजा करनी होती है।

कालीतन्त्रमें लिखा है—मन्त्रसे महाकालकी पूजा करनेके वाद देवीकी पूजा करनी चाहिये।

"महाकाल यजेद् यत्नात् पश्चाद्देवीं प्रपूजयेत्।"

(कालीतन्त्र)

तन्त्रसारमें महाकालके मन्त्रोद्धारके वारेमें इस तरह लिखा है,—

"कवच क्षौं समुद्धृत्य या रा लावाश्च क्रान्ततः।
महाकाल भैरवेति सर्वविघ्नान्नाशयेति च॥
नाशयेति पुनः प्रोच्य माया लक्ष्मीं समुद्धरेत्।
फट् स्वाहया समायुक्तो मन्त्रः सर्वार्थसाधकः॥"

(तन्त्रसार)

महाकालके इस तरह मन्त्र जापसे सर्वसिद्धि लाभ

होती है। किसी तरह दुःखरोग, आपद् विपद् आ पड़ने पर यह तन्त्रोक्त महाकाल-मन्त्र विधिपूर्वक जपनेसे उसकी शान्ति होती है।

३ शिवानुचर भेद। ४ आचार्यभेद। ५ गुल्मभेद। ६ आम्रवृक्षभेद।

महाकालवेय (सं० पु०) सम्प्रदायभेद।

महाकाली (सं० स्त्री०) महाकाल पत्न्यर्थे स्त्रियां ङीप्। महाकालकी पत्नी। इसके पांच मुख और आठ भुजाएं मानी जाती हैं। देवीभागवतमें लिखा है, कि यह देवी पराशक्तिकी तामसीशक्ति है।

"तस्यान्तु सात्त्विकी शक्ति राजसी तामसी तथा।
महालक्ष्मीः सरस्वती महाकालीति ताः स्त्रियः॥"
(देवीभा० १।२।२०)

२ दुर्गाकी एक मूर्त्तिका नाम। ३ शक्तिकी एक अनुचरीका नाम। ४ जैन मतानुसार षोड़श विद्या-देवीके अन्तर्गत एक। यह अवसर्पिणीके पांचवें अर्हत-की देवी हैं।

महाकालेय (सं० क्ली०) सामभेद।

महाकालेश्वर (सं० पु०) उज्जयिनीस्थ शिवलिङ्गभेद।

महाकालेश्वर रस (सं० पु०) रसौषधविशेष। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—लोहा, दस्ता, तांवा, अवरक, पारा, गंधक, सोनामक्खी, हिंगुल, विष, जायफल, लवङ्ग, दारचीनी, इलायची, नागेश्वररस, धतूरेका वीज और जयपालका वीज प्रत्येक १ तोला, मरिच ३ तोला इन्हें भांगकी पत्तीके रसमें २१ वार भावना दे कर १ रत्तीकी गोली बनावे। अनुपान अदरकका रस माना गया है। बच्चों और बूढ़ोंके लिये आध रत्तीकी मात्रा बतलाई गई है। इसका सेवन करनेसे खांसी, दमा और गलेका रोग जाता रहता है। (भैषज्यरत्ना० कासाधिका०)

महाकालोप (सं० पु०) सम्प्रदायविशेष।

महाकाव्य (सं० क्ली०) महच्च तत् काव्यञ्चेति कर्मधा०। काव्यशास्त्रविशेष। पर्याय—सर्गवन्ध।

रसात्मक वाक्यका नाम काव्य है। श्रुति पुष्ट्यादि दोष देहकी विकृति खञ्जत्वादिकी तरह इस काव्यका अप-कर्ष साधक है। फिर माधुर्यादि गुण, गौड़ी, पाञ्चाली आदि रीति तथा अनुप्रास, उपमा प्रभृति शब्द और अर्थालङ्कार शब्द भी इसका उत्कर्ष विधायक है।

"काव्यं रसात्मकं वाक्यं दोषास्तस्यापकर्षकाः।
उत्कर्षहेतवः प्रोक्ता गुणालङ्काररीतयः।"
(साहित्यदर्पण १।५)

रसगङ्गाधरके मतसे आनन्दविशेषजनक जो वाक्य है, वही काव्य है।

"आनन्दविशेष-जनकवाक्य काव्यम्॥" (रसगङ्गाधर)

कौस्तुभके म से—

"कवि वाङ् निर्मित काव्यं।
सा च मनोहर-चमत्कारिणी रचना॥"

अर्थात् जो कविकी कवित्वपूर्ण वातोंमें रचा हुआ मनोहर, फिर भी चमत्कारपूर्ण होता है, उसी रचनाको काव्य कहते हैं।

उक्त लक्षणान्वित काव्य दो प्रकारका है, दृश्य-काव्य और श्रव्यकाव्य। जो काव्य केवल अभिनयके उपयोगी हैं, उन सबको दृश्य और जो केवल श्रवण करनेके उपयोगी हैं, वे श्रव्यकाव्य हैं।

फिर यह श्रव्यकाव्य भी दो तरहका है। कितने ही खण्डकाव्य और कितने ही महाकाव्य हैं। इस समय महाकाव्यके सम्बन्धमें कुछ कहेंगे। महाकाव्य क्या है और वह किस तरह रचा जायेगा तथा इसकी किस विषय पर रचना होगी?

जो सब काव्य एक एक सर्गसे ग्रंथित है और अल-ङ्कार शास्त्रानुसार जिनके सारे अवयव संगठित हैं, वही महाकाव्य कहलानेके योग्य हैं।

साहित्यदर्पणके मतसे महाकाव्य सर्ग द्वारा ग्रथित या आवद्ध होगा। किन्तु इस सर्गका बहुत छोटा या बहुत बड़ा होना दोषावह है। इसकी संख्या आठसे कम न हो सकेगी। वरं आठसे भी अधिक सर्ग द्वारा महाकाव्यका विभाग करना उचित है। कविके इच्छा-नुसार सर्गके अन्तर्गत कविताओंकी किसी एक छन्दमें रचना कर अन्तमें वृत्तान्तकी योजना करनी चाहिये। सर्गोंमें कोई सर्ग अधिकांश नाना तरहके छन्दों या वृत्तोंमें विरचित देखा जाता है। प्रत्येक सर्गके अन्तमें भावी सर्गमें जो वर्णन किया जायेगा, उसका आभास रहना ही चाहिये।

महाकाव्यमें शृङ्गार, वीर अथवा शान्त इन्हीं तीनों

रसोंमें एक रस अङ्गी रहेगो। सिवा इसके हास्य, करुण, वीभत्स आदि रस इसमें अङ्गरूपसे वर्णित होंगे। किसी ऐतिहासिक घटना अथवा दूसरे किसी साधुकी चरित रचनामें इसका प्रणयन-कार्य निर्वाह करना होता है। इससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार वर्गों का आवश्यकतानुसार समावेश करना चाहिये। फिर इसमें एक सर्ग में इसके प्रतिपाद्य विषय-की वर्णना होगी। इसमें नाटकोक्त सन्धि अर्थात् मुखादि पञ्चकका प्रयोग करना होता है।

महाकाव्यके आदिमें नमस्कार, आशीर्वाद अथवा वस्तुनिर्देश रहना चाहिये। कहीं कहीं दुष्टोंकी निन्दा और साधुजनका गुणकीर्त्तन भी दिखाई देता है। महा काव्यके वर्णन करनेका विषय बहुत है। इनमें निम्न लिखित साधारणतः विशेष आवश्यक हैं। यथा,—सन्ध्या सूर्य, चन्द्र, प्रदोष, रात्रि, पथ, दिवस, प्रातःकाल और मध्याह्नकाल, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, सागर, सम्भोग, विप्रलम्भ, मुनि, स्वर्ग, पुरी, यज्ञ, युद्ध, प्रयाण, विवाह, मन्त्रणा और पुत्रोत्पत्ति आदि। सिवा इसके जल केलि और मधुपान आदि भी इसके वर्णनीय विषय हैं।

जो काव्य रचना करते हैं, उनके नामानुसार अथवा जिस घटना पर काव्य रचा जाता हो, उस घटना अथवा काव्यका नायक अथवा कोई दूसरे नामसे महाकाव्यका नामकरण करना होगा। कविके नाम—माघ, भारवि आदि। घटना और वृत्तान्तका नाम—कुमारसम्भव आदि। नायकके नाम—रघुवंश आदि। अन्य नाम यथा भट्टि इत्यादि। किन्तु काव्यके अन्तर्गत सर्गों के नाम रखनेमें उपादेय कथाओंके आधार पर रखना चाहिये।

महाकाव्यका नायक देव अथवा धीरोदात्त गुणसम्पन्न सद्वंशजात कोई क्षत्रिय होना चाहिये। धीरोदात्त कौन है? जो हर्ष और शोकके वशीभूत नहीं होते, जिनका गर्व विनयकी आडमें है, जो प्रतिज्ञा पालनमें तत्पर रहते हों, जो आत्मश्लाघा नहीं करते, जो क्षमाशील गम्भीर स्वभावके हैं वे ही व्यक्ति धीरोदात्त कहे जा सकते हैं। यथा,—युधिष्ठिर, राम आदि।

महाकाश (सं० पु०) १ एक पर्वतका नाम। (त्रि०) २ महादीप्तियुक्त, बहुत चमक दमकवाला।

महाकाशी (सं० स्त्री०) मतङ्गोंका देवताभेद।

महाकाश्यप (सं० पु०) गौतम बुद्धके एक शिष्यका नाम।

महाकीटपर्वत (सं० पु०) गन्धमादनके अन्तर्भुक्त एक पर्वतका नाम।

महाकुक्कुटमांसतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, काढ़े के लिये उड़द ४ सेर, दशमूल ६। सेर, विजबंदका मूल २५ पल, केतकी मूल २५ पल, मुर्गेका मांस ३० पल, झाटीका मूल २५ पल, पाकार्थ जल १२८ सेर, शेष ३२ सेर। चूर्णके लिये जीवकादि अष्टवर्ग, पिपरामूल, मुलेठी, कुट, उड़द, अल-कुशीका बीज, अंडीका मूल, सोयां, विट, सैन्धव और शाम्भर लवण, पीपर, असगंध, गुलञ्च, अजवायन, इन्द्र जौ, शतमूली, कचूर, सोंठ, मोथा, पुनर्णवा, हरिद्रा, दारु-हरिद्रा, कटाई और भटकटैया प्रत्येक दो तोला। पीछे तैलपाकके विधानानुसार इसका पाक करे। इस तेलकी मालिश करनेसे पक्षाघात श्रवणशक्ति और दृष्टिशक्तिकी अल्पता, हस्तकम्प, शिरःकम्प, वधिरता, कर्णनाद, दण्डा-पतानक, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, सूतिकारोग, अन्त्रवृद्धि और वातरक्त आदि नाना प्रकारकी पीड़ायें बहुत जल्द आरोग्य होती हैं।

महाकुण्ड (सं० पु०) शिवानुचरभेद, शिवके एक अनु-चरका नाम।

महाकुमार (सं० पु०) युवराज, शाहजादा।

महाकुमुदा (सं० स्त्री०) महती चासौ कुमुदा चेति कर्मधा०। काश्मरी, गंभारी।

महाकुम्भी (सं० स्त्री०) महती चासौ कुम्भी चेति। काय-फल।

महाकुल (सं० त्रि०) महत् कुलं वंशोऽस्य। १ उत्तम-कुलजात, वह जो बहुत उत्तम कुलमें उत्पन्न हुआ हो। पर्याय—कुलीन, आर्य, सभ्य, सज्जन, साधु, कुल्य, अभिजात, कौलेयक, जात्य, माहाकुल, कौलेय, कौलेयक, कुलज, साधुज, कुलश्रेष्ठ।

(क्ली०) २ उत्तम कुल, उत्तमवंश।

महाकुलीन (सं० क्ली०) महाकुलस्य अपत्यं महाकुल (महाकुलादञ् खञौ। पा ४।१।१४१) इति पक्षे ख। महाकुल, उत्तम वंश।

महाकुष्ठ (सं० क्ली०) महच्च तत् कुष्ठञ्चेति। कुष्ठके अठारह भेदोंमेंसे वह जिसमें हाथ पैरकी उंगलियां गल कर गिर जाती हैं। कपाल, उदुम्बर, मण्डल, सिध्म काकणक, पुण्डरीक और ऋक्षजिह्व ये सात महाकुष्ठ हैं।

कापालकुष्ठका लक्षण—चमड़के ऊपर खपड़ेकी तरह कुछ काला और कुछ लाल, रूखा, कर्कश तथा तकलीफ देनेवाला चिह्न दिखाई देनेसे उसे कापालकुष्ठ कहते हैं। इस रोगको असाध्य समझना चाहिये।

औदुम्बर—जो कुष्ठ गूलरके जैसा लाल होता है। जिसमें जलन और खुजलाहट मालूम होती है तथा जिसके ऊपरके रोएं तामड़े रंगके दिखाई देते हैं, उसका नाम औदुम्बर है।

मण्डल—जो कुष्ठ कुछ सफेदी लिये लाल होता है, चिकनाहट मालूम होती है तथा जो मण्डलाकारमें निकल कर एक दूसरेसे मिल जाते हैं उसे मण्डलकुष्ठ कहते हैं।

सिध्म—जिस कुष्ठका चमड़ा कद्दूके फूलके जैसा सफेद और तामड़े रंगका होता है तथा घिसने पर जिससे धूलीके जैसा निकलता है उसका नाम सिध्म-कुष्ठ है। यह रोग प्रायः वक्षस्थलमें हुआ करता है।

काकणक—जिस कोढ़का रंग घुंघची फलके जैसा गहरा लाल और दोनों बगल काला अथवा बीचमें काला और दोनों बगल लाल होता है तथा जो बहुत कष्ट देता है अथवा पक जाता है उसे काकणक कुष्ठ कहते हैं। यह कोढ़ त्रिदोषके बिगड़नेसे उत्पन्न होता है।

पुण्डरीक—जिस कुष्ठका चित्ता लाल कमलके पत्ते-के जैसा सफेदी लिये लाल होता है, उसे पुण्डरीक-कुष्ठ कहते हैं।

ऋक्षजिह्व—जो कुष्ठ तक्षककी जीभके जैसा कर्कश, तकलीफ देनेवाला तथा किनारेमें लाल और काला होता है, उसे ऋक्षजिह्व कहते हैं। यही सात प्रकारका महा-कुष्ठ है। (भावप्र०) विशेष विवरण कुष्ठरोग शब्दमें देखो। कुष्ठरोग दुश्चिकित्स्य है, इसमें महाकुष्ठको एक तरह-से असाध्य कहा जा सकता है। यह रोग महापातकसे उत्पन्न होता है। जिसे यह रोग होता है उसे पहले शास्त्रानुसार प्रायश्चित्त करके ब्रह्मचर्य अवलम्बन करते हुए रोगकी चिकित्सा करनी चाहिये। दैव द्वारा ही यदि यह रोग आरोग्य हो जाय तो बहुत अच्छा, नहीं तो चिकित्सासे आरोग्यता पानेकी कम आशा। यदि किसी-की इस रोगसे मृत्यु हो जाय, तो उसका प्रायश्चित्त करके दाहादि करना होगा। यदि कोई बिना प्रायश्चित्त के उसका दाहादि संस्कार करे, तो लाश ढोनेवाले सबोंको प्रायश्चित्त लेना होगा।

महाकूट (सं० पु०) पुराणानुसार एक देशका नाम।

महाकूटेश्वर—शिलालिपि वर्णित एक प्राचीन नगर।

महाकूप (सं० पु०) महांश्चासौ कूपश्चेति। बृहत् कूप, बड़ा कुआं। इसका पर्याय अरघट्ट है।

महाकूर्म (सं० पु०) नरपतिभेद, एक राजाका नाम।

महाकूल (सं० त्रि०) ऊंचा किनारावाला।

महाकृच्छ्र (सं० क्ली०) १ कृच्छ्रातिकृच्छ्र। २ विष्णुका एक नाम। (भारत शान्तिप०)

महाकृत्यापरिमल (सं० पु०) मन्त्रविशेष।

महाकृष्ण (सं० पु०) १ दर्वीकर सर्पविशेष, सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका बहुत जहरीला सांप। २ मूषिक विशेष, एक प्रकारका चूहा।

महाकृष्णा (सं० स्त्री०) कृष्ण अपराजिता।

महाकेतु (सं० त्रि०) १ दीर्घ पताकायुक्त, जिसमें लंबी पताका फहराती हो। (पु०) २ शिव, महादेव।

महाकेश (सं० त्रि०) १ सुबृहत् केशशाली, जिसके बड़े बड़े, बाल हों। (पु०) २ शिव, महादेव।

महाकेशरी (सं० स्त्री०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—सोना, दस्ता, लोहा, पारा, मुक्ता, दारचीनी, छोटी इलां-यची, तेजपत्र और नागकेशर इनका बराबर बराबर भाग ले कर अच्छी तरह चूर्ण करे। पीछे उसे उतने ही घृत-कुमारीके रसमें घोंट कर दो माशेकी गोली बनावे। इसका सेवन करनेसे तीन दिनमें शुक्रमेह और पुराना मधुमेह नष्ट होता है। इसका पथ्य दूध और अन्न है। (रसेन्द्रसारस० सोमरोगाधि०)

महाकोट—एक प्राचीन नगर।

महाकोश (सं० पु०) १ सुवृहत् कोशयुक्त । (Scrotum) २ शिव ।

महाकोशफला (सं० स्त्री०) महान् कोशः फले यस्याः । देवदाली लता, घघर बेल ।

महाकोशा (सं० स्त्री०) १ एक नदीका नाम । २ मतङ्गजोंका देवताविशेष ।

महाकोशातकी (सं० स्त्री०) महती चासौ कोशातकी चेति । हस्तिघोषा, नतुआं, घीआ-तरोई नामकी तरकारी । यह स्निग्ध, रक्त, पित्त और वायुदोषनाशक मानी गई है ।

महाकौषीतक (सं० क्ली०) आश्वलायनगृह्यसूत्रोक्त वैदिक ग्रन्थविशेष ।

महाकौष्ठील (सं० पु०) गौतम बुद्धके एक शिष्यका नाम ।

महाक्रतु (सं० पु०) बहुत बडा यज्ञ । जैसे—राजसूय, अश्वमेध आदि ।

महाक्रम (सं० त्रि०) विष्णुका एक नाम ।

महाक्रोध (सं० त्रि०) १ मूर्त्तिमान् क्रोधके जैसा । (पु०) २ शिव, धूर्ज्जटी ।

महाक्लीतन (सं० पु०) शालपर्णी ।

महाक्लीतनिका (सं० स्त्री०) शालपर्णी ।

महाक्ष (सं० पु०) १ महादेव । २ विष्णु ।
(भारत १३।१४६।५१)

महाक्षत्रप (सं० पु०) १ श्रेष्ठ क्षत्रप । २ राजाओंकी एक उपाधि । क्षत्रप-राजवंश देखो ।

महाक्षपणक—काश्मीरके रहनेवाले एक पण्डित । आप अनेकार्थध्वनि मञ्जरी और एकाक्षरकोष नामक दो अभिधान लिख गये हैं ।

महाक्षार (सं० पु०) तेजस्कर क्षारविशेष ।

महाक्षीर (सं० पु०) इक्षुवृक्ष, ईख ।

महाक्षेत्र—कालिकापुराण-वर्णित एक तीर्थका नाम । यह सुमदना नदीके पूर्व और ब्रह्मक्षेत्र तीर्थके पश्चिममें अवस्थित है । यहां आदित्य नामक भैरवकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित है । देवमन्दिरके पूरब लिसोता नामक नदी तथा कपोत और करुण नामक दो कुण्ड हैं । दोनों कुण्डमें स्नान कर निकटवर्त्ती विभ्राट पर्वत पर सूर्यकी पूजा करनेसे अशेष पुण्य प्राप्त होता है और अन्तमें सूर्य लोककी प्राप्ति होती है । (कालिकापु०)

महाक्षोभ्य (सं० पु० बौद्धोंके अनुसार एक बहुत बडी संख्या ।

महाखदिरघृत (सं० क्ली०) घृतौषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—घी १६ सेर ; काढ़ेके लिये खैरकी छाल ५०० पल, शीशमके पेडकी छाल १०० पल, असनकी छाल १०० पल, करञ्जकी छाल, नीमकी छाल, बेंतकी छाल क्षेत्रपर्पटी, कूटजकी छाल, अडूसकी छाल, विडङ्ग, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, अमलतास, गुलञ्च, त्रिफला और निसोथ प्रत्येक ५० पल, जल ६४० सेर, शेष ८० सेर, चूर्णके लिये अतीस, अमलतास, कटकी, अकवनका मूल, मोथा, खसखसका मूल, त्रिफला, परवलका पत्ता, नीमकी छाल, पित्तपापडा, दुरालभा, लाल चन्दन, पीपर, गजपीपर, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, वच, गोपालककर्कटी,- शतमूली, श्यामालता, अनन्तमूल, इन्द्रजौ, अडूसकी छाल, मूर्वाका मूल, गुलञ्च, चिरायता, मुलेठी और गूलर प्रत्येम द्रव्य एक पल । पीछे घृतपाकके नियमानुसार इस घृतका पाक करे । इसके सेवनसे कुष्ठरोग आरोग्य होता है ।
(चरकचिकित्सा ७ अ०)

महाखर्व (सं० पु०) एक बहुत बड़ी संख्या जो सौ खर्वकी होती है ।

महाखल्वल (सं० पु०) सम्प्रदायभेद ।

महाखात (सं० त्रि०) १ विस्तृत खातयुक्त, बहुत लंबा चौड़ा गड्ढा । (क्ली०) २ सुप्राचीन खातादि, पुराने जमानेके गड्ढे ।

महाख्यात (सं० त्रि०) विख्यात, मशहूर ।

महाग (सं० त्रि०) महान् उच्चगतिर्यस्य । उन्नत, समृद्ध ।

महागङ्गा (सं० स्त्री०) नदीभेद, महाभारतके अनुसार एक नदीका नाम ।

महागज (सं० पु०) दिग्गज ।

महागण (सं० पु०) १ महासमुद्र । २ लोकसङ्घ, लोगोंका समूह । ३ अतिथिपुंज, अभ्यागतोंका समूह ।

महागणपति (सं० पु०) १ गणेशका एक नाम । २ शिवके एक अनुचरका नाम ।

महागणेश (सं० पु०) गणेशका एक नाम ।

महागति (सं० स्त्री०) १ उत्कृष्ट गति, जाने योग्य पथ। २ महापथ, बड़ा रास्ता। (स्त्री०) ३ बौद्धमतसे अत्यन्त छोटी संख्या।

महागद (सं० पु०) महांश्चासौ गदश्चेति। १ ज्वर। २ महारोग। वातव्याधि, प्रमेह, कुष्ठ, अर्श, भगन्दर, अश्मरी, मूढगर्भ और उदरी ये आठ महागद माने गये हैं। ये सभी दुःस्साध्य रोग हैं। ३ औषधविशेष, निसोथ, गुलञ्च, मुलेठी, रक्ता, लवणवर्ग, सोंठ, पिप्पली और मरिच इन्हें अच्छी तरह पीस कर मधुके साथ गोशृङ्गमें रखे। इस अगदका पान, अञ्जन, अभ्यङ्ग, और नस्यमें व्यवहार करनेसे विषदोष जाता रहता है। (त्रि०) महती गदा अस्य। ४ महागदाविशिष्ट, जिसके पास बहुत भारी गदा हो।

महागदमहीरुह (सं० पु०) वृक्षभेद, एक प्रकारका पेड़।

महागन्ध (सं० पु०) महा गन्धोऽस्य। १ कूटजवृक्ष। २ जलवेतस, जलबेंत। ३ हरिचन्दन। ४ बोल, एक प्रकारका सुगंधित गोंद। (त्रि०) ५ गन्धयुक्त, खुशबूदार।

महागन्धक (सं० क्ली०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—पारा २ तोला और गन्धक २ तोला इन्हें एक साथ पीस कर काजल बनावे। पीछे उसे जलमें घोल कर गाढ़ा करे और तब लोहेके बरतनमें रख कर धीमी आंच पर चढ़ावे। जब थोड़ा गरम हो जाय, तब उसमें जायफल, जायित्री, लवङ्ग और नीमकी पत्ती प्रत्येक दो तोला डाल कर अच्छी तरह घोंटे। इसके बाद उसे एक घोंघेमें रख कर दूसरे घोंघेसे ढक दे और ऊपरसे मिट्टीका लेप चढ़ावे। अनन्तर उसे गोंइठेकी आंचमें पकावे। जब कुछ लाल हो जाय, तब अच्छी तरह परिष्कार कर लेवे। इसकी माला ६ रत्ती है। रोगकी अवस्थाके अनुसार अनुपान बतलाया गया है। इसका सेवन करनेसे ग्रहणी, अतीसार, सूतिकारोग तथा ज्वर आदि विविध पीड़ाओंकी शान्ति होती है। (भैषज्यरत्नावली ग्रहणीरोगाधिका०)

महागन्धा (सं० स्त्री०) महान् गन्धो यस्या स्त्रियां टाप्। १ नागवला। २ केविका पुष्प, केवड़ा। ३ चामुण्डाका एक नाम।

महागय (सं० त्रि०) महद्देवता कर्त्तृक गेय वा यज्ञगृहयुक्त।

महागर्त्त (सं० पु०) विष्णु।

महागर्भ (सं० पु०) १ शिव। २ महोदर। ३ दानवभेद।

महागल (सं० त्रि०) दीर्घग्रीवयुक्त, जिसकी गरदन ऊंट या बगुलेकी सी लंबी हो।

महागव (सं० पु०) महांश्चासौ गौश्चेति (गोरतद्धितलुकि। पा ५।४।९२) इति समासान्तटच्, गोसदृशत्वादस्य तथात्वं। गवय, गायके जैसा वह पशु जिसके गलेमें झालर न हो। गवय देखो।

महागिरि (सं० पु०) १ बड़ा पहाड़। २ कुबेरके आठ पुत्रोंमेंसे एक। यह पिताके शिवपूजनके लिये सूंघ कर कमलपुष्प लाया था। इसी दोष पर कुबेरने इसे शाप दिया जिससे यह कंसका भाई हुआ। पीछे यह कृष्णके हाथसे मारा गया था।

महागीत (सं० पु०) शिव।

महागुण (सं० त्रि०) १ उत्तमगुणविशिष्ट, जिसमें अच्छे अच्छे गुण हों। (पु०) २ श्रेष्ठगुण। ३ आचार्यभेद।

महागुद (सं० पु०) एक प्रकारके कीड़े, जो कफसे उत्पन्न होते हैं।

महागुनी (हिं० पु०) महोगनी देखो।

महागुरु (सं० पु०) महांश्चासौ गुरुश्चेति। अतिगुरु। पुरुषके पिता, माता तथा आचार्य; अविवाहिता कन्याके पिता, माता और विवाहिता कन्याके स्वामी ही एकमात्र महागुरु हैं।

महागुरुके निपात अर्थात् महागुरुके मरने पर अक्षारलवणभोजन और अङ्गास्पर्श, इन दोनों विषयोंमें अशौचका गुरुत्व होता है। अर्थात् किसीको स्पर्श न करे और न नमकीन वस्तु ही खावे। आचार्य महागुरुका यदि देहान्त हो, तो तीन दिन अशौच मानना होता है, इस कारण पूर्वोक्त विधान आचार्यसम्बन्धमें नहीं है। पिता, माता और दत्ता कन्याके स्वामिसम्बन्धमें ही पूर्वोक्त नियम लागू है।

"त्रयः पुरुषस्यातिगुरवो भवन्ति, माता पिता आचार्यश्चेति, इति विष्णुसूत्रं" पत्युर्महागुरुत्वमाह—

"नातो विशिष्टं पश्यामि वान्धवं वै कुलस्त्रियाः।
पतिर्बन्धुर्गतिर्भर्त्ता दैवतं गुरुरेव च॥"

शातातपः—"गुरुरग्निर्द्विजातीना वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः।
पतिरेको गुरुः स्त्रीणा सर्वत्राभ्यागतो गुरुः॥"
एक पदेन दत्तस्त्रीणां पितृमातृव्यावृत्तिः। सपिण्डमरणं प्रकृत्य-आश्वलायनः—त्रिरात्रं अक्षारलवणान्नाशिनः स्युर्द्वादशरात्रं महागुरुषु। आचार्यश्च—
उपनीय ददद्वेदमाचार्यः स उदाहृतः। इति याज्ञवल्क्योक्तः तन्मरणे त्रिरात्राशौचत्वेन नैतादृङ् नियमः।"
(शुद्धितत्त्व)

महागुरुके मरने पर एक वर्ष तक कालाशौच होता है। सपिण्डीकरण होने पर यह अशौच जाता रहता है। यदि एक वर्षमें सपिण्डीकरण न हो, तो जब तक सपिण्डकरण नहीं होगा, तब तक अशौच रहेगा। यदि किसीका एक वर्षमें अपकर्ष सपिण्डीकरण हो, तो सपिण्डीकरणके बाद ही कालाशौच दूर होगा। 'यावत् पूर्णो न वत्सरः' इस शास्त्रोक्त वाक्य द्वारा यह जाना जाता है, कि एक ही वष विहित काल है, इसीसे वर्ष कहा गया है। विशेष विधानानुसार जब सपिण्डीकरण होगा, तभी अशौच जायेगा। महागुरुनिपातमें किसी काम्यकर्मका अनुष्ठान नहीं करना चाहिये। अलावा इसके आर्त्विज्य अर्थात् ऋत्विकका कार्य, पौरोहित्य, ब्रह्मचर्य, अन्य व्यक्तिका श्राद्ध, पराम्नभोजन, गन्ध, माल्य, मैथुन, तीर्थयात्रा, विवाह, अध्यापन, तर्पण, शिवपूजा, ब्रह्मयज्ञ, श्राद्ध और दैवकार्य इन सब कर्मोंका अनुष्ठान विशेष निषिद्ध है।

"महागुरुनिपाते च काम्यं किञ्चिन्न चाचरेत्।
आर्त्विज्यं ब्रह्मचर्यञ्च यावत् पूर्णो न वत्सरः॥
अन्यश्राद्धं परान्नञ्च गन्ध माल्यञ्च मैथुनं।
वर्ज्येद् गुरुपाते च यावत् पूर्णो न वत्सरः॥
तीर्थयात्रा विवाहञ्चाध्यापनं तर्पणन्तथा।
संवत्सरं न कुर्वीत महागुरुनिपातने।
अपिच—विशेषतः शिवपूजा प्रभृतपितृको द्विजः।
यावद् वत्सरपर्यन्त मनसापि न चाचरेत्॥
महागुरुनिपाते तु काम्यं किञ्चिन्न चाचरेत्॥
महागुरुनिपाते तु काम्यं किञ्चिन्न चाचरेत्।
आर्त्विज्यं ब्रह्मयज्ञञ्च श्राद्धं देवयुतञ्च यत्॥"
(शुद्धितत्त्व)

महागुल्मा (सं० स्त्री०) महान् गुल्मो यस्याः। सोमवल्ली, सोम लता।

महागुहा (सं० स्त्री०) महती गुहा यस्याः। पृश्निपर्णी, पिठवन।

महागृष्टि (सं० स्त्री०) उच्च ककुदयुक्ता गाभी, वह गाय जिसके ऊंचा कुब्बड़ हो।

महागोधूम (सं० पु०) महांश्चासौ गोधूमश्चेति। वृहद् गोधूम, वडे दानेका गेहूं।

"गोधूमः सुमनोऽपि स्यात्त्रिविधः स च कीर्त्तितः।
महागोधूम इत्याख्यः पश्चाद्देशात् समागतः॥" (भावप्र०)

गोधूमका दूसरा नाम सुमन है। गेहूं तीन प्रकारका होता है। बड़े बड़े दानेवाले गेहूंको महागोधूम कहते हैं। यह मधुर रस, शीतवीर्य, वातघ्न, पित्तनाशक, गुरु, कफजनक, शुक्रवर्द्धक, बलकारक, स्निग्ध, भग्नसन्धानकारक, सारक, ओजोगुणवर्द्धक, शरीरका उपचयकारक, वर्णप्रसादक, रुचिजनक और शरीरका स्थिरतासम्पादक माना गया है। इसमें जो कफजनक गुण बतलाया गया है, वह सिर्फ नये गेहूंमें, पुरानेमें नहीं।
(भावप्र०) गोधूम देखो।

महागोपा (सं० स्त्री०) शारीवा, अनन्तमूल।

महागौरी (सं० स्त्री०) १ नदीभेद, पुराणानुसार एक नदी जो विन्ध्य पर्वतसे निकली है।

"करतोया महागौरी दुर्गा चान्तःशिरा तथा।
विन्ध्यपादप्रसूतास्ता नद्यः पुण्यजलाः शुभाः॥"
(मार्कण्डेयपु० ५६।२५)

२ दुर्गा।

महाग्रन्थिक (सं० पु०) वह औषध जिसके सेवनसे रोग निश्चित रूपसे रुक जाय और बढ़ने न पावे। २ शतग्रन्थियुक्त कीटभेद, वह कीड़ा जिसमें सौ गांठ हों।

महाग्रह (सं० पु०) राहु।

महाग्राम (सं० पु०) १ महाजनसङ्घ, श्रेष्ठ पुरुषोंका समूह। २ काश्मीरका एक ग्राम। ३ सिंहलद्वीपकी प्रधान राजधानी।

महाग्रीव (सं० पु०) महती दीर्घा ग्रीवा कन्धरा यस्य। १ उष्ट्र, ऊंट। २ शिव, महादेव। ३ शिवके एक अनुचरका नाम। ४ पुराणानुसार एक देशका नाम।

५ उस देशके अधिवासी। (त्रि०) ५ वृहद्ग्रीवायुक्त, लम्बी गरदनवाला।

महाग्रीविन् (सं० पु०) उष्ट्र, ऊंट।

महाघट (सं० पु०) जलपात्रविशेष, पानी रखनेका एक बरतन।

महाघस (सं० पु०) भोजनपटु शिवानुचरभेद।

महाघास (सं० पु०) महतो देशस्य महत्या भूमेर्वा घासः महद् देश वा। महतीभूमिकी घास।

महाघूर्णा (सं० पु०) महती घूर्णा शरीरभ्रमणं यस्याः। सुरा, शराव। महती चासौ घूर्णा चेति। अतिशय भ्रमि, बहुत भ्रमण करनेवाला।

महाघृत (सं० क्ली०) १११ वर्षका पुराना घी जो बहुत गुणकारी माना जाता है। वैद्यकमें इसे कफनाशक, बलकारक और मेधाजनक माना गया है।

"पेयं महाघृतं भूतैः कफघ्नं पवनाधिकैः।
बल्यं पवित्रं मेध्यञ्च विशेषात्तिमिरापहम्।
सर्वभूतहरञ्चैव घृतमेतत् प्रशस्यते ॥"
(सुश्रुतसू० ४५ अ०)

महाघोर (सं० त्रि०) महांश्चासौ घोरश्चेति। अतिशय भयानक, बहुत डरावना।

"यमद्वारे महाघोरे तप्ता वैतरणी नदी।
ताञ्च तर्त्तुं ददाम्येना कृष्णां वैतरणीञ्च गाम् ॥"

महाघोष (सं० क्ली०) महान् घोषः कोलाहलो यस्मिन्। १ हट्ट, हाट। २ अतिशय घोषणा, भारी शब्द। (त्रि०) ३ वृहच्छब्दयुक्त।

महाघोषस्वरराज (सं० पु०) बोधिसत्त्वभेद।

महाघोषा (सं० स्त्री०) महाघोष-टाप्। १ कर्कटशृङ्गी, काकड़ासिंगी।

महाघोषानुगा (सं० पु०) तन्त्रोक्त देवताविशेष।

महाघोषेश्वर (सं० पु०) यक्षराजभेद।

महाङ्ग (सं० पु०) महान्ति दीर्घाणि अङ्गान्यस्य। १ उष्ट्र, ऊंट। २ गोक्षुरक, गोखरू। ३ रक्तचित्रक, लाल चिता। (त्रि०) ४ वृहदवयुक्त, बड़ा अंगवाला।

महाचक्र (सं० क्ली०) १ वृहत् चक्र, बड़ा चक्र। २ भवचक्र। ३ दानवभेद।

महाचक्रप्रवेशज्ञानमुद्रा (सं० स्त्री०) मुद्राविशेष।

महाचक्रवल (सं० पु०) बौद्धोंके अनुसार एक पर्वतका नाम।

महाचक्रवर्त्तिता (सं० स्त्री०) ससागरा धराका अधीश्वरत्व, राजचक्रवर्त्तीका काम।

महाचक्रवर्त्ती (सं० पु०) बहुत बड़ा चक्रवर्त्ती राजा, सम्राट्।

महाचक्रवाड (सं० पु०) पर्वतभेद, एक पहाडका नाम।

महाचक्री (सं० पु०) १ कुचक्री, वह जो षड़यन्त्र रचनेमें बहुत प्रवीण हो। २ विष्णु।

महाचञ्चु (सं० स्त्री०) महती चञ्चुरग्रं यस्याः। शाकविशेष, चेंचु नामक साग। पर्याय—वृहच्चञ्चु, विषारि, सुचञ्चुका, स्थूलचञ्चु, दीर्घपत्री, दिव्यगंधा। गुण—कटु, उष्ण, कषाय, मलशोधन, गुल्म, शूल, उदर, अर्श और विषनाशक तथा रसायन। (पु०) २ वृहच्चञ्चुयुक्त पक्षी, लंबी चोंचवाली चिड़िया।

महाचण्ड (सं० पु०) महांश्चासौ चण्डश्चेति। १ यमभृत्य, यमके दूत। २ शिवके एक अनुचरका नाम। (त्रि०) ३ प्रचण्ड, भयानक।

महाचण्डा (सं० स्त्री०) चामुण्डाका एक नाम।

महाचतुरक (सं० पु०) चतुर चूड़ामणि।

महाचन्दनादि तैल (सं० क्ली०) यक्ष्मादि कासरोगका एक प्रकारका तेल। प्रस्तुत प्रणाली—तिल तैल १६ सेर, काढ़ेके लिये रक्तचन्दन, शालपर्णी, चकवंड, भटकटैया, कटाई, गोखरू, मूंग, उड़द, भूमिकुष्माण्ड, असगंध, आंवला, शिरीषकी छाल, पद्मकाष्ठ, खसखसकी जड़, सरलकाष्ठ, नागेश्वर, मूर्वामूल, प्रियंगु, उत्पल, वाला, बिजबंद, पद्ममूल, अमलतास, पद्मनाल, शालूक, कुल मिला कर ५० पल, सफेद बिजबंद ५० पल, पाकार्थ जल ६४ सेर, शेष १६ सेर; बकरीका दूध, शतमूलीका रस, लाक्षारस, कांजी और दहीका पानी प्रत्येक १६ सेर तथा-हरिण, बकरे और सियारका मांस प्रत्येक ८ सेर; प्रत्येकका पाकार्थ जल ६४ सेर, शेष १६ सेर (काढ़ा अलग अलग होगा); चूर्णके लिये श्वेतचन्दन, अगुरु, काकला, नखी, शैलज, नागेश्वर, तेजपत्र, दारचीनी, मृणाल, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, श्यामालता, अनन्तमूल, रक्त कमल, तगरपादुका, कुट, त्रिफला, परूष-

फल, मूर्वामूल, नालुक, देवदारु, सरलकाष्ठ, पद्मकाष्ठ, खसखसकी जड, धवका फूल, बेलसोंठ, रसाञ्जन, मोथा, शिलारस, वाला, मजीठ, लोध, सौंफ, जीवन्ती, प्रियंगु, कपूर, इलायची, कुंकुम, पद्मकेशर, रास्ना, जैत्री, सोंठ और धनियां प्रत्येक ४ तोला। इसके बाद (वातरोगोक्त) महासुगन्धित (लक्ष्मीविलास) तेलके गन्धद्रव्य द्वारा यथानियम इस तेलका पाक करे। पाक हो जाने पर उसे उतार कर कपड़ेसे छान ले। बादमें ऊपरसे कुछ कुंकुम, मृगनाभी और कपूर डाल दे। यह तेल वात और पित्तहर, वृष्य और धातुपुष्टिकर माना गया है। राजयक्ष्मा, रक्तपित्त और धातु दुर्बलतासे उत्पन्न रोगोंमें इस तेलकी मालिश करनेसे बहुत उपकार होता है।

महाचपला (सं० स्त्री०) आर्या छन्द। इसके दोनों दलोंमें चपला छन्दके लक्षण होते हैं।

महाचमु (सं० स्त्री०) सेनादल, वाहिनी, फौज।

महाचम्पा (सं० स्त्री०) जनपदभेद, एक देशका नाम।

महाचर्या (सं० स्त्री०) बोधिसत्त्वका अवलम्बनीय जीवन-पथ।

महाचल (सं० पु०) महान् अचलः। महापर्वत, बड़ा पहाड़।

महाचार्य (सं० पु०) १ आचार्योत्तम। २ शिव। ३ अद्वैत-विद्याविजय और चण्डमारुतके प्रणेता।

महाचित्ता (सं० स्त्री०) एक अप्सराका नाम।

महाचित्रपाटल (सं० क्ली०) गुल्मभेद।

महाचीन—१ चीनसाम्राज्यका अंशविशेष। २ उस देशका रहनेवाला।

महाचुंचु (सं० पु०) वृहच्चुंचु क्षुप, बड़ी चिनियारी।

महाचुन्द (सं० पु०) बौद्ध संन्यासिभेद।

महाचूडा (सं० स्त्री०) स्कन्दकी एक मातृकाका नाम।

महाचूत (सं० पु०) महाराजाम्रवृक्ष।

महाचैतसघृत (सं० स्त्री०) घृतौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—काढ़ेके लिये शणबीज, निसोथका मूल, रेंड़ीका मूल, दशमूल, रास्ना, पीपर और सोहिजनका मूल प्रत्येक २ पल, पाकार्थ जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, चूर्णके लिये भूमिकुष्माण्ड, मुलेठी, मेद, महामेद, काकोली, क्षीरकाकोली, चीनी खजूरका रस, दाख, शतमूली, ताडका रस, गोखरू और स्वल्प चैतसघृतोक्त ग्वाल ककड़ीका मूल, त्रिफला, रेणुक, देवदारु, एलवालुक, शालपर्णी, तगरपादुका, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, श्यामलता, अनन्तमूल, प्रियंगु, नीलोत्पल, इलायची, मजीठ, दन्तीमूल, अनारका बीज, नागेश्वर, तालिशपत्र, वृहती, मालतीका नवपुष्प, विडङ्ग, पिठवन, कुट, रक्तचन्दन और पद्मकाष्ठ इन २८ वस्तुओंका चूर १ सेर। यथानियम घृतपाक करना होगा। इससे सभी प्रकारका अपस्मार और उन्माद रोग नष्ट होता है। यह खांसी दमाको दूर करनेवाला तथा शुक्रवर्द्धक माना गया है। प्रतिदिन २ तोला करके शक्कड और कुछ गरम पानीके साथ सेवन करनेसे बहुत उपकार होता है।

महाच्छद (सं० पु०) महान् छदः पत्रमस्य। १ देवताड़ वृक्ष। २ वृहत् पत्र, हाथीकंद।

महाच्छाय (सं० पु०) महती छायाऽस्य। १ वटवृक्ष, वटका पेड़। (त्रि०) २ वृहच्छायायुक्त।

महाच्छिद्रा (सं० स्त्री०) महाच्छिद्र मस्याः। १ महामेदा। (त्रि०) २ वृहच्छिद्रयुक्त, बड़ा छिद्रावाला। (क्ली०) ३ कायप्रत्यङ्गरूप नवद्वार, शरीरका नवद्वार।

महाज (सं० पु०) महांश्चासौ अजश्चेति। १ वृहच्छाग, बड़ा बकरा। (त्रि०) महतो जायते इति महत् जन कर्त्तरि ड पृषोदरादित्वात् साधु। २ महाकुलोद्भव, जिसका उच्च कुलमें जन्म हो।

महाजटा (सं० स्त्री०) महती जटाऽस्याः। १ रुद्रजटा। २ वृहत् जटा, बड़ी जटा।

महाजत्रु (सं० पु०) शिव, महादेव।

महाजन (सं० पु०) महांश्चासौश्चेति। १ साधु।

"वेदा विभिन्नाः स्मृतयो विभिन्ना नासौ मुनिर्यस्य मतं नभिन्नं।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः स पन्थाः॥"

(भारत ३।३१२।११२)

२ धार्मिक, वेद वाक्यमें श्रद्धालु और ख्यातापन्न व्यक्ति। ३ मन्वादि। ४ धनी, व्यक्ति दौलतमंद। ५ उत्तमर्ण, रुपये पैसेका लेन देन करनेवाला व्यक्ति। ६ बनिया।

महाजनी (हिं स्त्री०) १ रुपयेके लेन देनका व्यवसाय, हुंडी पुरजेका काम। २ एक प्रकारकी लिपि जिसमें मात्राएं आदि नहीं लगाई जाती। यह लिपि महाजनोंके

यहां वही खाता लिखनेमें काम आती है। इसे मुड़िया भी कहते हैं।

महाजनीय (सं० त्रि०) वाणिज्योपयोगी, महाजन-सम्पर्कीय।

महाजम्बीर (सं० पु०) वृहज्जम्बीर वृक्ष, कमला नींबू।

महाजम्बु (सं० स्त्री०) महतो चासौ जम्बुश्चेति। वृहज्जम्बु, बड़ा जामुन।

महाजम्बू (सं० स्त्री०) महती चासौ जम्बुश्चेति। वृहज्जम्बू, बड़े जामुनका गाछ। संस्कृत पर्याय—राजजम्बू, स्वर्णमाता, महाफला, पिकप्रिया, कोकिलेष्टा, महालीला, वृहत्फला। इसका गुण उष्ण, मधुररस, कषाय, श्रमनाशक, आस्यजड़तानाशक, स्वरकर, विष्टम्भी, शोषशमन, भ्रम और अतीसारवर्द्धक, श्वास, कफ तथा कासनाशक माना गया हैं। (राजनि०)

महाजम्भ (सं० पु०) शिवके एक अनुचरका नाम।

महाजय (सं० पु०) १ नागभेद। (त्रि०) २ जयशील, जयी। (स्त्री०) ३ दुर्गा।

महाजयराज—मध्यभारतका एक सामन्तराज।

महाजल (सं० पु०) समुद्र।

महाजव (सं० पु०) महान् जवो वेगो यस्य। १ गवय, नील गाय। २ शिकारी मृग। (त्रि०) ३ अतिवेगयुक्त, वेगवाला। (भागवत ७।८।२५)

महाजवा (सं० स्त्री०) १ एक नदीका नाम। २ कुमारकी अनुचरी एक मातृकाका नाम।

महाजाति (सं० स्त्री०) महती जाति-रसग्र इति यद्वा महती जातिरिव तदाकृतित्वात्। १ वासन्तीपुष्पलता। महती जातिरिति। २ श्रेष्ठवर्ण।

महाजातीय (सं० त्रि०) महत् (प्रकारवचनजातीयर। पा ५।३।६९) ततः (आन् महतः समानाधिकरणजातीययोः। पा ६।३।४६) इति महत आकारादेश। महत् प्रकार, बहुत किस्मका।

महाजानु (सं० पु०) १ महाभारतके अनुसार ब्राह्मण-भेद। २ शिवके एक अनुचरका नाम।

महाजाबाल (सं० क्ली०) एक उपनिषद्का नाम।

महाजाली (सं० स्त्री०) जालयति आच्छादयतीति जाल आच्छादने पचाद्यच्, स्त्रियां ङीष्, महांश्चासौ जालश्चेति स अस्या अस्ति अर्श आद्यच्, ततः ङीष्। १ पीतवर्ण घोषा, पीली सौंफ। २ आवर्त्तकी लता। ३ राजकोशातकी, घोया तरोई।

महाजिह्व (सं० पु०) १ महादेव। २ एक दैत्यका नाम।

महाज्ञान (सं० क्ली०) परम ज्ञान।

महाज्ञानगीता (सं० स्त्री०) तन्त्रोक्त देवताभेद।

महाज्ञानयुता (सं० स्त्री०) मनसादेवीका नामान्तर।

महाज्ञानी (सं० त्रि०) १ साधु। २ भविष्यद्वक्ता, भविष्यकी बातोंको जाननेवाला। (पु०) ३ शिव।

महाज्यैष्ठी (सं० स्त्री०) महती चासौ ज्यैष्ठी चेति। पूर्णिमाभेद। नक्षत्र विशेषादियुक्त ज्येष्ठकी पूर्णिमा तिथिमें विशेष विशेष नक्षत्रका योग होनेसे महाज्यैष्ठी होती है। तिथितत्त्वमें यह महाज्यैष्ठी ५ प्रकारकी बतलाई गई है। जैसे—

१। "ऐन्द्रे गुरु शशीचैव प्राजापत्ये रविस्तथा।
पूर्णिमा गुरुवारेण महाज्यैष्ठी प्रकीर्त्तिता।
ऐन्द्रे ज्येष्ठाया प्राजापत्ये रोहिण्या।" (तिथित०)

यदि ज्येष्ठ मासकी पूर्णिमा तिथिको ज्येष्ठा नक्षत्रमें वृहस्पति वा चन्द्र तथा रोहिणी नक्षत्रमें रवि रहें तथा उस दिन यदि वृहस्पतिवार पड़े, अथवा नहीं भी पड़े तो भी महाज्यैष्ठी होगी। "विना गुरुवारेणापि"

२। 'ऐन्द्रे गुरु शशीचैव प्राजापत्ये रवि स्तथा।
पूर्णिमा ज्यैष्ठमासस्य महाज्यैष्ठी प्रकीर्त्तिता।"

अनुराधा नक्षत्रमें यदि वृहस्पतिवार वा चन्द्र रहे और रोहिणी नक्षत्रमें रविके रहते रहते यदि ज्यैष्ठी पूर्णिमा पड़ जाय तो भी महाज्यैष्ठी होगी। इसमें वृहस्पतिवारको आवश्यकता नहीं।

३। "ऐन्द्रे मैत्रे यदा जीवस्तत् पञ्चदशके रविः।
पूर्णिमा शत्रु चन्द्र या महाज्यैष्ठी प्रकीर्त्तिता॥" (तिथित०)

ज्येष्ठा और अनुराधा नक्षत्रमें वृहस्पति और उससे पन्द्रहवें नक्षत्रमें यदि रवि रहे तथा इन्द्रदैवत नक्षत्रमें चन्द्रमाके रहनेसे यदि ज्येष्ठपूर्णिमा हो, तो उसे महाज्यैष्ठी कहते हैं।

४। "ऐन्द्रर्क्षे त्वथवा मैत्रे गुरुचन्द्रौ यदा स्थितौ।
पूर्णिमा ज्यैष्ठमासस्य महाज्यैष्ठी प्रकीर्त्तिता॥"
(तिथितत्त्व)

ऐन्द्र नक्षत्र अथवा अनुराधा नक्षत्रमें गुरु और चन्द्र-के रहनेसे उस दिन यदि ज्येष्ठ मासकी पूर्णिमा हो, तो महाज्यैष्ठी होगी।

५। "ज्यैष्ठे सवत्सरे चैव ज्यैष्ठमासस्य पूर्णिमा।
ज्येष्ठाभेन समायुक्ता महाज्यैष्ठी प्रकीर्त्तिता॥"
(तिथितत्त्व)

जिस वर्ष षष्टि संवत्सरके मध्य ज्यैष्ठी पूर्णिमामें ज्येष्ठानक्षत्र पड़े, तो उसे भी महाज्यैष्ठी कहते हैं।

यह महाज्यैष्ठी अतिशय पुण्यजनक है। इस दिन तीर्थादिमें स्नान दानादि करनेसे अशेष पुण्य प्राप्त होता है।

विशेषतः इस दिन भगवान् पुरुषोत्तमके दर्शन करनेसे विष्णुलोककी प्राप्ति होती है तथा गङ्गास्नान करनेसे मोक्षलाभ होता है।

"महाज्यैष्ठ्यान्तु यः पश्येत् पुरुषः पुरुषोत्तमम्।
विष्णुलोकमवाप्नोति मोक्ष गङ्गाम्बुमज्जनात्॥"
(तिथितत्त्व)

महाज्योतिष्मती (सं० स्त्री०) महती चासौ ज्योतिष्मती चेति। स्वनामख्यात लता, बड़ी मालकंगनी। संस्कृत पर्याय—तेजोवती, बहुरसा, कनकप्रभा, तीक्ष्णा, सुवर्ण-नकुली, लवणी, अग्निदीप्ता, तेजस्विनी, सुरलता, अग्नि फला, अग्निगर्भा, कङ्गनी, शैलसुता, सुतैला, सुवेगा, वायसी, तीव्रा, काकाण्डी, वायसादनी, गीलना, श्रोलता, सौम्या, ब्राह्मी, लवणकिंशुका, पारावतपदी, पीता, पीत-तैला, यशस्विनी, मेध्या, मेधावती और धीरा। इसका गुण—तिक्ततर, रुक्ष, कुछ कटु, वातकफनाशक, दाह-प्रद, दीपन, मेधा और प्रज्ञाकारक। (राजनिघण्टु)

महाज्योतिः (सं० पु०) १ शिव, महादेव। (त्रि०) २ ज्योतिर्विशिष्ट।

महाज्वराङ्कुश (सं० पु०) विषम ज्वराधिकारमें रसौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—शोधित पारा ॥· तोला, शोधित विष ॥· तोला, शोधित गन्धक ॥· तोला, शोधित धतूरेका बीज १॥ तोला, स्वर्णजीवन्ती ६ तोला इन सब द्रव्योंको एकत्र भलीभांति चूर कर २ रत्तीकी गोली बनावे। इसका अनुपान बिजौरे नीबूका बीज और अद-रकका रस है। इस औषधका सेवन करनेसे त्रिदोष-ज्वर, एक दिनमें, दो दिनमें, तीन दिनमे और चार दिनमें आनेवाला विषमज्वर तीव जीर्णज्वर जाता रहता है। (भावप्र० ज्वराधिकार)

दूसरा तरीका—पारा, गन्धक, तावा, हिंगुल, हरि-ताल, लोहा, दस्ता, सोनामाखी, मैनसिल, अबरक, गेरू-मट्टी, सोहागा और दन्तिबीज इन सब द्रव्योंको एक साथ चूर्ण करे। पीछे तुलसीपत्रका रस, चितापत्र-रस, सिद्धिपत्ररस और इमलीकी पत्तियोंका रस, इन सब रसोंमें उसे तीन वार भावना दे कर पीछे छायामे सुखा ले। इसकी मात्रा चनेके बराबर बतलाई गई है। चिकित्सकको दोषका बलावल देख कर अनुपान स्थिर करना चाहिये। इसका सेवन करनेसे नाना प्रकारके ज्वर अतिशीघ्र दूर होते हैं। (भैषज्यरत्ना० ज्वराधि०)

महाज्वाल (सं० पु०) महती ज्वाला शिखा अस्य। १ होमाग्नि, हवनकी अग्नि। २ नरकविशेष।

"स्नुषा सुताञ्चापि गत्वा महाज्वाले निपात्यते॥"
(विष्णुपुराण २।६।१२)

जो लोग अपनी पुत्रवधू या कन्याके साथ गमन करते हैं वे इस भयङ्कर ज्वालाविशिष्ट नरकमें पतित होते हैं। ३ महादेव।

महाज्वाला (सं० स्त्री०) महती ज्वाला दीप्तिरस्याः। १ जैनियोंकी एक विद्यादेवीका नाम। २ महती ज्वाला। ३ बृहदग्निशिखा, वह अग्नि जिसमे खूब ज्वाला हो।

महाञ्जि (सं० त्रि०) महदञ्जि यस्य। बृहत् पुण्ड्रयुक्त।

महाटवि (सं० पु० स्त्री०) १ देशभेद। २ उस देशके रहनेवाले मनुष्य।

महाड़—१ वम्बईके कोलावा जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १७° ५१´ से १८° १६´ उ० तथा देशा० ७३° १७´ से ७३° ४५´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४५६ वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें महाड़ नामक एक शहर और २४६ ग्राम लगते हैं। यहां-का अधिकांश स्थान पहाड़ी उपत्यका और वनविभाग-से परिपूर्ण है। एकमात्र महावलेश्वर गिरिश्रृङ्गकी शोभा लोगोंके मनको मोहती है। सावित्री नामकी नदी यहांसे निकल कर खेती-वारीमें बहुत लाभ पहुं-चाती है।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १८° ५' उ० तथा देशा० ७३° २१' पू०के मध्य सावित्री नदीके दाहिने किनारे अवस्थित हैं। अलीवागसे इसकी दूरी ५३ मोल है। जनसंख्या आठ हजारके लगभग है। नगरसे एक कोस उत्तर-पश्चिम पालका विख्यात बौद्ध-गुहामन्दिर अवस्थित है। प्रत्नतत्त्वविद्गण इसे ११वीं शताब्दीका बतलाते हैं। पुर्त्तगीज-प्रवर दि-कैन्ट्रो १५३८ ई०में इस स्थानकी वाणिज्य-वृद्धिका उल्लेख कर गये हैं। महाराष्ट्र-राजधानी रायगढ़के समीप रहनेसे इस नगरमें सभी समय महाराष्ट्र सरदार आते जाते थे। १७७१ ई०में यह नगर दुर्गादिसे परिशोभित और धनजनसे पूर्ण था। १७९६ ई०में यहां नानाफड़नवीस, बाजीराव और अङ्गरेजकी जो सन्धि हुई, उसके अनुसार बाजीरावको पेशवा-पद और नाना फड़नवीसको मन्त्रीका पद मिला था। १८०२ ई०में होलकरने जब पूना पर धावा मारा, तब पेशवाने इसी नगरमें आ कर आत्मरक्षा की थी। १८१८ ई०में यह नगर अंगरेजोंके दखलमें आया।

यहां समुद्रोपकूल-वाणिज्यका कारवार पूर्ववत् जारी है। मलवार, गोआ, कोङ्कण और बम्बईके वाणिज्य द्रव्य समुद्रके रास्तेसे सावित्रीके मुहानेमें आते हैं। आमदनी द्रव्योंमें अधिकांश पहाड़ी रास्तेसे दक्षिण भारतमें भी भेजा जाता है। महाबलेश्वर जानेके लिये यहांसे एक अच्छी सड़क दौड़ गई है। शहरमें १८६६ ई०को म्युनिस्पलिटी जारी हुई है। यहां एक अस्पताल, सब-जजका इजलास, एक मिडिल स्कूल तथा चार और भी दूसरे दूसरे स्कूल हैं।

महाड़कर—एक प्राचीन टीकाकार।

महाढ्य (सं० पु०) महान् आढ्यः शोभासम्पन्नः। १ कदम्ब। (त्रि०) २ अतिशय धनयुक्त, धनी।

महातङ्क (सं० पु०) १ मदात्यय रोग। २ महाव्याधि।

महातत्त्व (सं० क्ली०) ज्ञानतत्त्व, सांख्योक्त द्वितीय तत्त्व। महत्तत्त्व देखो।

महातत्त्वा (सं० स्त्री०) दुर्गादेवीकी एक अनुचरीका नाम।

महातपःसप्तमी (सं० स्त्री०) एक प्रकारका उत्सव। महातप्तकृच्छ्र देखो।

महातपन (सं० पु०) नरकभेद।

महातपश्चित (सं० क्ली०) सत्रभेद।

महातपस् (सं० त्रि०) १ घोर तपस्याकारी, कड़ी तपस्या करनेवाला। २ विष्णु। ३ एक मुनिका नाम। ४ सह्याद्रि-वर्णित एक राजा।

महातप्तकृच्छ्र (सं० स्त्री०) एक व्रत। इसमें तीन दिन तक गरम दूध, गरम घी या गरम जल पी कर चौथे दिन उपवास किया जाता है।

महातमःप्रभा (सं० स्त्री०) महती तमसां प्रभा प्रकाशोऽस्यां। नरकविशेष। यह नरक घोर तमसाच्छन्न है।

"घनोदधिघनवाततनुवातनभःस्थिताः।
रत्नशर्करावालुका पङ्कधूमतमःप्रभाः।
महातमःप्रभा चेत्यधोऽधो नरकभूमयः॥" (हेम)

महातमस् (सं० क्ली०) अविद्या। अविद्यासे ही तामिस्र, अन्धतामिस्र, महातमः आदि होता है।

"सोऽनुविष्टो भगवता यः शेते सलिलाशये।
लोकसंस्था यथापूर्वं निर्म्ममे संस्थया स्वया॥
ससर्ज्ज छायया विद्या पञ्चपर्वाणमग्रतः।
तामिस्रमन्धतामिस्रं तमो मोहो महातमः॥"
(भाग० ३।२०।१९)

विशेष विवरण महात्म्य शब्दमें देखो।

महातरु (सं० पु०) महांश्चासौ तरुश्चेति। १ स्नुही वृक्ष, मनसाका पेड़। २ वृहद्वृक्ष, बड़ा पेड़।

महातल (सं० क्ली०) महच्च तत् तलश्चेति। पाताल-विशेष, चौदह भुवनोंमेंसे पृथ्वीके नीचेका भुवन वा तल।

"अतलं वितलञ्चैव नितलञ्च तलातलम्।
महातलञ्च सुतलं सप्तमञ्च रसातलम्॥" (शब्दमाला)
"पातालमेतस्य हि पादमूलं पठन्ति पार्ष्णिप्रपदे रसातलम्।
महातलं विश्वसृजोऽथ गुल्फौ तलातलं वै पुरुषस्य जङ्घे॥"
(भागवत २।१।२६) पाताल देखो।

महातपश्चित (सं० क्ली०) सत्रभेद।

महातारा (सं० स्त्री०) तारयति संसारादिति तृ-णिच्-अच्, स्त्रियां टाप्, ततः महती चासौ तारा चेति कर्मधा०। बौद्धोंकी एक देवीका नाम। पर्याय—तारा, महाश्री, ओंकारा, स्वाहा, श्री, मनोरमा, तारिणी, जया,

अनन्ता, शिवा, लोकेश्वरा, आत्मजा, खदूरवासिनी, भद्रा, वैश्या, नीलसरस्वती, शङ्खिनी, वसुधारा, धनंददा, त्रिलोचना, लोचना। (हेम)

महातालकेश्वर (सं० पु०) कुष्ठरोगकी एक औषध। प्रस्तुत प्रणाली—बांसके पत्ते और हरितालको चूर्ण कर कोंहड़े के जलमें तथा घृतकुमारीके रसमें तीन बार भावना दे। पीछे कांजी, खट्टे दही और पुनर्णवाके रसमें तीन दिन मल कर खड़ीके समान बना ले। इसके बाद एक हाड़ीमें पलाशकी राख भर दे और हरतालको राखमें रख कर हाड़ीका मुंह ढकनसे ढक दे। पीछे उसे अच्छी तरह लीप पोत कर ३२ पहर तक पाक करे। अनन्तर हरताल १ भाग, शोधित ताम्र २ भाग इन्हें खलमें पीस वालुकयन्त्रमें नियमानुसार इस औषधको पकावे। चिकित्सकको रोगकी अवस्था और शरीरका बलाबल देख कर मात्रा और अनुपान स्थिर करना चाहिये। इसके सेवनसे अठारह प्रकारके कुष्ठ, विसर्प आदि रोग अति शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। (भैषज्यरत्ना० कुष्ठचि०)

महाताली (सं० स्त्री०) महान् अनेकः तालः यत्र स्त्रियां ङीप्। आवर्त्तकी लता।

महातिक्त (सं० पु०) महानतिशयस्तिक्तरसो यत्र। १ महानिम्ब, बकायन। २ अतिशय तिक्त रसयुक्त, जो खूब तीता हो। ३ किराततिक्तक, चिरायता। (स्त्री०) ४ यवतिक्त लता, शंखिनी नामकी लता। ५ पाठा, पाढ़ नामकी लता। ६ कन्दर्पसारतैल।

महातिक्तकघृत (सं० क्ली०) कुष्ठरोगकी एक प्रकारकी औषध। प्रस्तुत प्रणाली—सप्तपर्ण, आरग्वध, अतिविषा, कटुकी, गुलंच, त्रिफला, पटोल, नीबू, पर्पटिक, दुरालभा, मोथा, चन्दन, त्रायमाणा, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा, उपकुल्या, विशाला, मूर्वा, शतावर, श्यामलता, इन्द्रजौ, अडूस, वच, मुलेठी, भूनिम्ब और गृष्टिका, समान भाग ले कर चूर्ण करे। उस चूर्णसे चौगुना घी, घीसे दूना आंवलेका रस और रससे चौगुना जल एकत्र मिला कर घृतपाकके नियमानुसार पाक करे। इसके सेवनसे कुष्ठ, विषमज्वर, रक्तपित्त, उन्माद, अपस्मार, गुल्म, पोड़का, गलगण्ड, गण्डमाला, श्लीपद, पाण्डुरोग, विसर्प आदि रोग बहुत जल्द जाते रहते हैं। कुष्ठरोगमें यह बहुत उपकारी है। (सुश्रुत चिकित्सि कुष्ठचि० ७ अ०)

महातिक्ता (सं० स्त्री०) महती गुरुतरा तिक्ता। १ यवतिक्ता, शंखिनी नामकी लता। २ पाठा, पाढ़।

महातिटिभ (सं० पु०) बौद्धके मतसे बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महातिथि (सं० पु०) षष्ठी तिथिभेद।

महातीक्ष्ण (सं० त्रि०) १ अत्यन्त तीक्ष्ण वा तेज। २ बहुत कड़वा या झालदार।

महातीक्ष्णा (सं० स्त्री०) भल्लातक वृक्ष, भिलावां।

महातीर्थ—प्राचीन तीर्थ विशेष। वर्त्तमान समयमें यह महेतो नामसे विख्यात है।

महातुम्बी (सं० स्त्री०) महालाबु, बड़ा कद्दू।

महातुष्टिज्ञानमुद्रा (सं० स्त्री०) मुद्राभेद।

महातेजस् (सं० क्ली०) महदतिशयं तेजोऽस्य। १ पारद, पारा। (पु०) २ कार्त्तिकेय। ३ अग्नि। ४ महादेव। (त्रि०) ५ अतिशय तेजस्वी, बड़ा प्रतापवान्।

"स्वारोचिषश्चोत्तमिश्च तामसो रैवतस्तथा।
चाक्षुषश्च महातेजा विवस्वत् सुत एव च॥" (मनु १।६२)

६ सह्याद्रिखण्ड वर्णित दो राजाका नाम।

महातेजोगर्भ (सं० पु०) तपस्याका एक भेद।

महातैल (सं० पु०) तैलविशेष।

महातोद्य (सं० क्ली०) गभीर निनादकारी वृहत् आनाहयन्त्र।

महात्मन् (सं० त्रि०) महानात्मा स्वभावो यस्य। १ उत्तम स्वभावयुक्त, जिसकी आत्मा या आशय बहुत उच्च हों। पर्याय—महेच्छ, उद्भट, उदार, उदात्त, उदीर्ण, महाशय, महानस्। (पु०) २ परमात्मा।

"युगपत्तु प्रलीयन्ते यदा तस्मिन् महात्मनि।
तदाय सर्वभूतात्मा सुखं स्वपिति निर्वृतः॥" (मनु १।५४)

३ महत्तत्त्व।

"मनः पृथिव्या तामद्भिस्तेजसापोऽनिलेन तत्।
खे वायु धारयंस्तच्च भूतादौ त महात्मनि॥"
(भागवत ६।७।२५)

४ पितरोंका एक गण। ५ महादेव, शिव। ६ बहुत बड़ा साधु, संन्यासी या विरक्त। ७ दुष्ट, पाजी।

महात्यय (सं० पु०) १ घोर विपद्। २ महानाश वा ध्वंस।

महात्याग (सं० पु०) १ वदान्यता, वदनियत। २ दान। ३ निस्पृहता।

महात्यागमय (सं० त्रि०) वैराग्ययुक्त, सर्वत्यागी।

महात्यागिन् (सं० त्रि०) १ त्यागशील, जिन्होंने संसार-से माया ममता आदि एकदम छोड दिया है।। २ शिव।

महात्यागी (सं० त्रि०) महात्यागिन् देखो।

महात्रिककुद् (सं० पु०) स्तोमभेद।

महात्रिपुरसुन्दरीकवच (सं० क्ली०) मन्त्रयुक्त धारणो-विशेष।

महात्रिफला (सं० स्त्री०) बहेडा, आंवला और हड़ इन तीनोंका समूह।

महात्रिफलाद्यघृत (सं० क्ली०) नेत्ररोगकी घृतौषध-विशेष। प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर; काढ़े के लिये त्रिफला और अड़ूसका रस ४ सेर अथवा अड़ूसका मूल २ सेर; जल १६ सेर, शेष ४ सेर, भृङ्गराजरस ४ सेर, शतमूलीका रस ४ सेर, बकरीका दूध ४ सेर, गुलञ्च रस ४ सेर अथवा पहलेके जैसा उनका काढा ४ सेर ले कर पुनः पुनः उनके साथ पाक करे। पीछे उसमें पीपर, चीनी, द्राक्षा, त्रिफला, नीलोत्पल, मुलेठी, छीर-ककोली, गाम्भारीकी छाल और कण्टकारी कुल मिला कर १ सेर ऊपरसे डाल दे। इसका सेवन करनेसे अद्दृष्टि आदि नेत्ररोग नष्ट होते हैं।

महात्रिशूल (सं० क्ली०) त्रिशूलविशेष।

महादंष्ट्र (सं० त्रि०) वृहत् दन्तयुक्त, जिसके बड़े बड़े दांत हों। (पु०) २ राक्षसभेद। ३ विद्याधर।

महादण्ड (सं० पु०) महान् दण्डस्ताड़नसाधनमस्य। १ यमदूतभेद। महान् दण्डः। २ यमके हाथका बड़ा दण्ड।

'यस्माज्जानन् स मन्दात्मा मामसौ नोपसर्पति।
तस्मात्तस्मै महादण्डो धार्य्यः स्यादिति मे मतिः॥"
(भारत ५।१६४।३७)

महादण्डधारी (सं० पु०) यमराज।

महादन्त (सं० पु०) महांश्चासौ दन्तश्चेति। १ गज-दन्त, हाथी-दांत। पर्याय—ईशादण्ड। २ वृहद्दण्ड-माल, बड़ा डंडा। ३ महादेव।

महादन्ता (सं० स्त्री०) नागबला, नागबेल।

महादशमूलतैल (सं० क्ली०) शिरोरोगका एक तैल। प्रस्तुत प्रणाली—कटुतैल १६ सेर; काढ़े के लिये दश-मूल १२॥ सेर, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, बिजौरेका रस १६ सेर, अदरकका रस १६ सेर, धतूरेका रस १६ सेर, चूर्णके लिये पीपर, गुलञ्च, दारुहरिद्रा, सोयां, पुनर्णवा, सोहिजनकी छाल, पिप्पलिका, कटकी, करंज-बीज, कृष्णजीरा, सफेद सरसों, वच, सोंठ, पीपर, चिता-मूल, कचर, देवदारु, विजवंद, रास्ना, हुरहुर, कायफल, संभालूका पत्ता, चई, गेरुमट्टी, पिपरामूल, शुष्कमूला, यमानी, जीरा, कुट, वनयमानी और विड़ङ्क मूल प्रत्येक १ पल। इन सब द्रव्योंको तेलमें पका कर पीछे रोगके अनुसार उसका प्रयोग करना होगा। इसका सेवन करनेसे कफ, खासी और शिरका दर्द जाता रहता है। यह प्रत्यक्ष फल देनेवाला तेल है।
(भैषज्य० शिरोरोग०)

महादाडिम्बाद्यघृत (सं० क्ली०) प्रमेहरोगनाशक घृतौ-षधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर; काढ़े के लिये अनारका बीज २ सेर, जल १६ सेर, शेष ४ सेर, यव-तण्डुल २ सेर, जल १६ सेर शेष ४ सेर, शतमूलीका रस ४ सेर, गायका दूध ४ सेर, चूर्णके लिये दाख, पिंडखजूर, त्रिफला, रेणुक, जीवक, ऋषभक, काकली, क्षीरकाकली, मेद, महामेद, ऋद्धि, वृद्धि, देवदारु, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मजीठ, कुट, इलायची, भूमिकुष्माण्ड, बिज-बंद, शिलाजतु, दारचीनी, खसखसकी जड़ और काला अबरक प्रत्येकका चूर्ण ३ तोला। घृत पाकके नियमा-नुसार इस घृतका भी पाक करना होगा। रोगके तार-तम्यानुसार मात्रा स्थिर करनी होगी। इसका सेवन करनेसे श्लेष्मज और सन्निपातज बीस प्रकारके प्रमेह जाते रहते हैं। (भैषज्य० प्रमेहाधिका०)

महादान (सं० क्ली०) महच्च तद्दानश्चेति कर्मधा०। तुलापुरुषादि सोलह प्रकारका दान। हेमाद्रिके दान-खण्डमें इस महादानका विस्तृत विवरण लिखा है। सोलह प्रकारके दान ये सब हैं—

"आद्यन्तु सर्वदानानां तुलापुरुषसंज्ञितम्।
हिरण्यगर्भदानञ्च ब्रह्माण्डः तदनन्तरम्॥

कल्पपाददानञ्च गोसहस्रन्तु पञ्चमम्।
हिरण्यकामधेनुश्च हिरण्याश्वस्तथैव च॥
पञ्चलाङ्गलकं तद्वद्धरादानन्तथैव च।
हिरण्याश्वरथस्तद्वद्धेमहस्तिरथस्तथा॥
द्वादश विष्णुचक्रञ्च ततः कल्पलतात्मकम्।
सप्तसागरदानञ्च रत्नधेनुस्तथैव च।
महाभूतघटस्तद्वत् षोडशः परिकीर्त्तितः॥"

(मलमासतत्त्वधृत मत्स्यपुराण)

सोलह महादानोंमें तुलापुरुष दान पहला है, इसके बाद २ हिरण्यगर्भ, ३ ब्रह्माण्डदान, ४ कल्पपादपदान, ५ गोसहस्रदान, ६ हिरण्यकामधेनु, ७ हिरण्याश्व, ८ पञ्च लाङ्गलक, ९ धरादान, १० हिरण्याश्वरथ, ११ हेमहस्ति-रथ, १२ विष्णुचक्र, १३ कल्पलता, १४ सप्तसागरदान, १५ रत्नधेनु और १६ महाभूतघटदान। यही सोलह दान महादान हैं।

जो उक्त सोलह प्रकारके महादान करते हैं, उन्हें अन्तमें अनन्त स्वर्गकी प्राप्ति होती है।

कूर्मपुराणके मतसे महादान दश प्रकारका है। जैसे,—

"कनकाश्वतिला गावो दासीरथ महीगृहाः।
कन्या च कपिला धेनुर्महादानानि वै दश॥"

१ सोना, २ सोनेका घोडा, ३ तिल, ४ गो, ५ दासी, ६ रथ, ७ मही, ८ गृह, ९ कन्या और १० कपिला धेनु। ये दश दान भी महादान कहे गये हैं।

२ वह दान जो ग्रहण आदिके समय डोम, चमार आदि छोटी जातियोंको दिया जाता है।

महादानपुर—मद्रास प्रदेशके त्रिचनापल्ली जिलान्तर्गत एक नगर। यहां जैन और शैव-कीर्त्तिका ध्वंसावशेष देखनेमें आता है।

महादारु (सं० क्ली०) महत् दारु यस्य। १ देवदारु। महत् दारु। २ बृहत्काष्ठ।

महादिकटभी (सं० स्त्री०) श्वेतकिणिही-लता।

महादिवाकीर्त्य (सं० क्ली०) सामभेद।

महादित्य (सं० पु०) मौखरिवंशके एक राजा।

महादीर्घ (सं० पु०) सरल देवदारु।

महादुग्धा (सं० स्त्री०) वनस्पतिभेद।

महादुन्दु (सं० पु०) रणवाद्यविशेष, लड़ाईका डंका।

महादुर्ग (सं० क्ली०) १ महाविपद। २ जो अत्यन्त कष्टसे भी पूरा न हो सके।

महादुर्गलोक (सं० पु० देवलोकविशेष।

महादूत (सं० पु०) यमदूत।

महादूषक (सं० पु०) सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका धान।

महादृति (सं० पु० चमड़ेकी थैली।

महादेव (सं० पु०) महांश्चासौ देवश्चेति कर्मधा० अथवा महतां देवादीनां देवः ६-तत्। शिव। यह अष्टमूर्त्तिके अन्तर्गत सोममूर्त्ति हैं। यथा—"महादेवाय सोममूर्त्तये नमः।"

ब्रह्मादि देवताओं और महामान्य ब्रह्मवादी मुनियोंके भी जो देव हैं, उन्हींका नाम महादेव है। महती मूल-प्रकृति देवी जगत्‌में पूजी जाती हैं, किन्तु ये उनसे भी अधिक पूजनीय हैं, इसीसे इनका महादेव नाम पड़ा है।

"ब्रह्मादीनां सुराणाञ्च मुनीनां ब्रह्मवादिनां
तेषाञ्च महतां देवो महादेवः प्रकीर्त्तितः।
महती पूजिता विश्वे मूलप्रकृतिरीश्वरी
तस्या देवः पूजितश्च महादेवः स च स्मृतः॥"

महादेवके पांच मुख हैं। पांच मुख होनेका कारण ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें इस प्रकार लिखा है,—पूर्व समयमें विष्णुने अति मनोरम किशोररूप धारण किया। ब्रह्मा अनन्त आदि अनेक मुखवाले देवताओंने बहुत देर तक उस मनोहर रूपको टक लगा कर देखा और उनका स्तव किया। परन्तु एक मुख और दो नेत्रवाले शिव उन्हें देख कर तृप्त न हुए। अतः उन्होंने सोचा, कि यदि उनके भी अनेक नेत्र और मुख होते, तो वे भी उस मनोहरमूर्त्ति-को देख कर तृप्त हो सकते थे। बस फिर क्या था, इस वासनाके उदय होते ही उनके और भी चार मुख निकल आये। प्रत्येक मुखमें तीन तीन नेत्र थे। अब उनके पांच मुख और पन्द्रह नेत्र हो गये। इसी समयसे इनका पञ्चवक्त्र और त्रिलोचन नाम पड़ा।

महादेव परब्रह्मस्वरूप हैं। उनके वे तीन नेत्र सत्त्व, रज और तम गुणोंसे युक्त हैं। उनके सात्त्विक नेत्रसे सात्त्विकोंका, राजससे राजसोंका और तामससे तामसोंका

पालन होता है। पीछे इस विश्व ब्रह्माण्ड पर जब प्रलय उपस्थित होता है, तब उन्हींके ललाट-फलकस्थ तृतीय तामस नेत्रसे क्रोधाग्नि निकल कर समस्त विश्वसंसार-को दग्ध करता है।

महादेव सतीकी भस्मको शरीरमें लगाते और प्रेम-वशसे उनकी अस्थिमाला गलेमें पहनते हैं। आत्माराम हो कर ये एक वर्ष तक सतीकी शवदेहको कंधे पर चढ़ा रोते हुए पागलकी तरह सभी स्थानोंमें घुमे थे। उसी समयसे वे अपने अंगमें विभूति लगाते हैं। महादेवका प्रधान अस्त्र त्रिशूल है और उनके धनुषका नाम पिनाक है। इनके एक दूसरे प्रसिद्ध अस्त्रका नाम पाशुपत है। महादेवने प्रसन्न हो कर यही अस्त्र अर्जुनको दिया था। त्रिपुरका विनाश करके वे त्रिपुरारि नामसे प्रसिद्ध हुए। समुद्रमन्थनमें उत्पन्न विष पीनेके कारण उनका नीलकण्ठ नाम पड़ा। परशुरामने महादेवसे अस्त्रविद्या सीखी थी। महादेव सदा योगमग्न रहते, इसी कारण वे दिगम्बर हैं। सिर पर जटा है, गिरिकन्दर उनको बहुत प्रिय है। चन्दन, कीचड़, ढेला और सोना उनके लिये समान है। एक दिन गरुडसे भय खा कर कुछ सर्पोंने महादेवकी शरण ली। महादेवने उन्हें अभयदान दे कर अपने अंगमें आश्रय दिया। तभीसे उनका अल-ङ्कार नाग है। इस विश्वसंसारके आधार पर भगवान् भूतभावनको वहन करनेकी क्षमता और किसीमें भी नहीं है, इस कारण स्वयं विष्णु उनके वाहनरूपमें वृषभ हो कर विराजते हैं। वे सभी भोग सुखों पर लात मार कर प्रसन्न वदनसे श्मशानमें वास करते हैं।

शिव देखो। (ब्रह्मवैवर्त्त)

महादेव—१ अद्भुतदर्पण नामक नाटकके प्रणेता। २ बुधमनोहरा नामक मुग्धबोधटीकाके रचयिता। इन्होंने स्वयंप्रकाश तीर्थके निकट विद्या सीखी थी। ३ अव्यय-कोष नामक व्याकरणाभिधानके प्रणेता। उक्त ग्रन्थमें इन्होंने सिद्धान्त कौमुदी और तत्त्वबोधिनीका मतानु-सरण किया है। ४ आश्वलायनश्रौतसूत्रव्याख्याके रचयिता। ५ मल्लभट्टकृत उदारराघव ग्रन्थके टीकाकार। कादम्बरीटीकाके प्रणेता। ८ चन्द्रलोक नामक अलङ्कार और रसोदधि नामक रसतरङ्गिणी टीकाके रचयिता। तिथिनिर्णय, तिथिरत्न और निर्णयसिद्धान्त नामक तीन ग्रन्थके प्रणेता। ९ धर्मतत्त्वसंग्रहके रचयिता। १० निबन्धसर्वस्वके प्रणेता। ११ महारसायनविधि नामक वैद्यकग्रन्थके रचयिता। १२ यजमानवैजयन्तीके प्रणेता। १३ योगसूत्रटीका और हठयोग प्रदीपिका-टीकाके प्रण-यनकर्त्ता। १४ राजसिंह-सुधासिन्धु नामक काव्यके रचयिता। ग्रन्थकारने अपने प्रतिपालक राजसिंहके नामानुसार ग्रन्थका नाम रखा है। १५ सन्तानदीपिका नामक ज्योतिःशास्त्रके रचयिता। १६ सुबोधिनी नामक ग्रन्थके प्रणेता। १७ स्वात्मप्रबोधके रचयिता। १८ होराप्रदीपके रचयिता। १९ एक ज्योतिषी। इनके पिता-का नाम काह्नजित था। इन्होंने कुञ्जप्रदीप, महादेवी, मुहूर्त्तप्रदीप, मुहूर्त्तसिद्धि, मेघमाला और सारसंग्रह नामक कई ज्योतिर्ग्रन्थ लिखे हैं। १६६१ ई०में इन्होंने स्वरचित मुहूर्त्तप्रदीपकी एक टीका रची थी। २० धुन्धुकके पुत्र। इन्होंने दुर्गसिंहकृत कातन्त्रवृत्तिकी शब्दसिद्धि नामक एक टिप्पनी लिखी है। २१ नारायणके पुत्र। इन्होंने काम्येष्टिप्रयोगहिरण्यक नामक ग्रन्थकी रचना की। २२ लुनिगके पुत्र। १२६४ ई०में इन्होंने श्रीपतिकृत ज्योतिष-रत्नमालाकी एक टीका प्रणयन की। २३ सोमनाथके पुत्र। इन्होंने उज्ज्वल हिरण्यकेशिसूत्रटीका, प्रयोगवैज-यन्ती नामक हिरण्यकेशिकल्पसूत्रटीका, श्रौतचन्द्रिका और हिरण्यकेशिसूत्रप्रयोगरत्न नामक कुछ टीका लिखी हैं। ये सोमयाजी उपाधिसे भूषित थे।

महादेव—औरङ्गलके काकतीय वंशीय एक राजा, गणपति के पिता।

महादेव—बेडमेले और पलिगारके एक दण्डनायक (शासनकर्त्ता)। ये पश्चिम चालुक्यराज ३य सोमेश्वरके सामन्त थे।

महादेव—आसामप्रदेशके गारो पार्वतीय जिलेके दक्षिण पूर्व में प्रवाहित एक नदी। नदीगर्भमें कोयलेकी खान पाई गई है।

महादेव उग्रसार्वभौम—देवगिरिके यादववंशीय एक राजा, जैत्रपालके पुत्र। अपने भाई कृष्णके बाद ये सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। इन्होंने १२६०से १२७२ ई० तक राज्य किया। शिलालिपि पढ़नेसे मालूम होता है, कि

इन्होंने कोङ्कणराज सोमेश्वरको परास्त कर कोङ्कणराज्य जीता था। अलावा इसके इन्होंने कर्णाट-राज और गुर्जरपति वीशलदेवके विरुद्ध युद्धयात्रा की थी। तैलिङ्ग की काकतीयवंशकी वीरनारी महाराणी रुद्रमा इनकी समसामयिक थी।

चतुर्वर्गचिन्तामणिके प्रणेता हेमाद्रि इनके श्री-करणाधिप और मन्त्रणादाता थे।

महादेवकवीशाचार्यसरस्वती—दानकेलिकौमुदीके रचयिता।

महादेवकोलि—सह्याद्रि-उपत्यकावासी निम्नश्रेणीकी जातिविशेष। पूनासे थूसा पर्यन्त विस्तीर्ण माविल, खोडा, नाहिर, दङ्ग आदि उपत्यकामें इनका वास देखा जाता है। ये कुल २४ थोकोंमें विभक्त हैं, फिर प्रत्येक थोकमें स्वतन्त्र श्रेणीविभाग है। अपने अपने थोकमें आदान प्रदान नहीं चलता। ग्राम्य और पालित गो तथा सूअरको छोड कर ये लोग अन्यान्य जन्तुका मांस खाते हैं।

महादेवजोसी—अश्लेषा-शान्तिविधानके रचयिता।

महादेवतीर्थ—एक योगी, श्रीकण्ठतीर्थके गुरु।

महादेवद्विवेदिन्—एक विख्यात टीकाकार। इन्होंने कात्यायन श्रौतसूत्रकी टीका, श्रौतपद्धति, याज्ञिकदेवकृत कात्यायनस्रौतसूत्रपद्धतिकी टीका और त्रिकण्डिकासूत्र विवरण नामक ग्रन्थ लिखे हैं।

महादेव दीक्षित—बौधायनसोमप्रयोगके प्रणेता।

महादेव दैवज्ञ—गोलनिर्णयके रचयिता।

महादेव पण्डित—१ हरिवंशोद्योतकके रचयिता। २ हिक्मतप्रकाश और हिक्मतप्रदीप नामक ग्रन्थके प्रणेता। ३ रसपद्धति नामक वैद्यकग्रन्थकी टीकाके रचयिता।

महादेव पहाड—मध्यप्रदेशके होसङ्गाबाद जिलान्तर्गत एक गिरिश्रेणी। सतपुरा गिरिमालाके मूलांशसे निकल कर इसका स्वतन्त्र नाम हो गया है। पुर्णभद्रा और शोणभद्रा नामकी दो नदियां पर्वतको घेरे हुई हैं। इस स्थानका प्राकृतिक सौन्दर्य उतना खराब नहीं है। पाचमडीका स्वास्थ्यवास प्रायः हजार फुटसे ऊंचे शृङ्ग पर बसा हुआ है।

महादेव पुण्यस्तम्भकर—एक विख्यात नैयायिक, मुकुन्दके पुत्र और श्रीकण्ठ दीक्षितके शिष्य। इन्होंने न्यायकौस्तुभ नामक चिन्तामणिके प्रत्यक्षखण्डका विवरण लिखा है। आलावा इसके भवानन्दी-प्रकाश, सर्वोपकारिणी भवानन्दी टीका, लौगाक्षी भास्कर कृत पदार्थप्रकाशका पदार्थ-प्रकाशभाष्य और मितभाषिणी नामक न्यायवृत्ति रची है।

महादेवमणि (सं० पु०) महामेधा।

महादेवपोखरा—नेपालका एक गिरिशृङ्ग।

महादेवभट्ट दिनकर—एक विख्यात नैयायिक, बालकृष्णके पुत्र और नीलकण्ठके शिष्य। इन्होंने अपने पितासे सहायता ले कर न्यायसिद्धान्तमुक्तावलिप्रकाश वा दिनकरी (टीका)-की रचना की है।

महादेव भट्ट पट्टवर्द्धन—१ कवीन्द्र-चन्द्रोदयोद्धृत एक कवि।

महादेव-मङ्गलम्—१ उत्तर अर्काट जिलेका एक प्राचीन ग्राम। यह पोलुर तालुक सदरसे ३॥० कोस पूर्वमें अवस्थित है। यहां पाण्ड्य और चोल राजाओंका बनाया हुआ कुछ प्राचीन मन्दिर विद्यमान हैं।

२ उक्त तालुकसे ४॥० कोस दक्षिण-पश्चिममें अवस्थित एक बड़ा ग्राम।

महादेवरस—वनवासिराज-विज्जलके अधीनस्थ एक सामन्त।

महादेव वाजपेयी—सुबोधिनी नामक बौधायन-कल्पसूत्र-भाष्यके प्रणेता। इन्होंने भवस्वामीका मतानुसरण कर उक्त ग्रन्थ लिखा है। त्र्यम्बकाध्वर-यज्ञमें ये अध्वर्यु थे।

महादेव वादीन्द्र—रससार-गुणकिरणावली-टीकाके रचयिता, शङ्करके शिष्य।

महादेवविट्ठ—गिरनारके एक हिन्दू राजा, कालजितके पुत्र। आप कालनिर्णयसिद्धान्तके प्रणेता रघुरामके प्रतिपालक थे।

महादेव विद्यावागीश—आनन्द-लहरीटीका और नैषधचरित टीकाके प्रणेता।

महादेववेदान्तवागीश—विपरीत प्रत्यङ्गिरस्तोत्रके प्रणेता।

महादेव वेदान्तिन—निजविनोद नामक टीकाके रचयिता।

महादेवशर्मा—अद्भुतसारके प्रणेता।

महादेवशास्त्री—१ उन्मत्त-राघव नाटकके रचयिता। २ तत्त्वमानस-स्तोत्रके प्रणेता।

महादेव सरस्वती वेदान्तिन्—स्वयम्प्रकाशानन्द सरस्वतीके शिष्य। इन्होंने तत्त्वचन्द्रिका, तत्त्वानुसन्धान और उसकी टीका, सांख्य सूत्रवृत्ति, सांख्यप्रवचन-वृत्तिसार और १६९४ ई०में विष्णुसहस्रनामकी टीका लिखी है।

महादेव सर्वज्ञवादीन्द्र—एक विख्यात पण्डित, न्यायसार-विचारके प्रणेता राघव-भट्टके गुरु। ये शायद १२५० ई०में विद्यमान थे।

महादेव हरिवंश—बृहज्जातक प्रकाशके रचयिता। इन्होंने १५२१ ई०में राजा रामभद्रकी सभामें विद्यमान रह कर उक्त ग्रन्थ लिखा था।

महादेवानन्द—अद्वैतचिन्ता-कौस्तुभके प्रणेता।

महादेवाश्रम—१ एक योगी, तर्कदीपिकाके प्रणेता विश्वनाथाश्रमके गुरु।

२ सांख्यकारिकावृत्तिके प्रणेता।

महादेवी (सं० स्त्री०) महादेवस्य पत्नीति, पत्न्यर्थे ङीष् यद्वा महती चासौ देवि। १ दुर्गा। इनके नामकी व्युत्पत्ति—

"पूज्यते या सुरैः सर्वैर्महाश्चैव प्रमाणतः।
धातुर्महेति पूजायां महादेवी ततः स्मृताः॥" (देवीपुराण)

मह धातुका अर्थ पूजा है, सभी देवगण इनकी पूजा करते हैं इसलिये इनका नाम महादेवी पड़ा है।

२ राजाकी प्रधान पत्नी या पटरानीकी एक पदवी जो हिन्दू कालमें प्रचलित थी।

महादेवीत्व (सं० क्ली०) राजाकी पटरानीका कर्म या भाव।

महादेवीय (सं० त्रि०) महादेव सम्पर्कीय, महादेवरचित।

महादेवेन्द्र सरस्वती—परमामृतके रचयिता। इन्होंने प्रज्ञानेन्द्रसे विद्याशिक्षा प्राप्त की थी।

महादैत्य (सं० पु०) महांश्चासौ दैत्यश्चेति। १ भौत्य मन्वन्तरके एक दैत्यका नाम। (गरुडपु० ७८ अ०)

२ द्वितीय चन्द्रगुप्तके पितामह एक राजा।

महादैर्घतमस (सं० क्ली०) सामभेद।

महाद्भुत (सं० त्रि०) अत्यद्भुत, अचरज।

महाद्युति (सं० त्रि०) १ उज्ज्वल आलोक, चमकीली रोशनी। २ चन्द्र-मण्डलके जैसा अत्यन्त उज्ज्वल ज्योतिःप्रकाश।

महाद्योत (सं० स्त्री०) तान्त्रिकोंकी एक देवीका नाम।

महाद्रावक (सं० पु०) द्रावयी रोगानिति द्रु-णिच्-ण्वुल्, महांश्चासौ द्रावकश्चेति। औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—अडूस, चितामूल, अपाङ्ग, इमलीकी छाल, कुम्हड़ेका डंठल, सीजका मल, तालजटा, पुनर्णवा और बेंत इसको भस्मको कागजी नीबूके रसमें मिला कर छान ले। पीछे उसे कड़ी धूपमें सुखने दे। अनन्तर यह सूखा हुआ क्षार २ पल, फिटकरी १ पल, निशादल २ पल, सैन्धव ४ तोला, सोहागा २ तोला, हीराकस १ तोला, मुद्राशङ्ख १ तोला, समुद्रफेन १ तोला, इन सब द्रव्योंके चूर्णको वकयन्त्रमें चुआ कर अरक तय्यार करे। इसीका नाम महाद्रावक है। इसके द्वारा रसादिका जारण होता है। इस अरकका चार पांच बुंद जलमें डाल कर सेवन करनेसे यकृत, प्लीहा और गुल्मादि नाना प्रकारके रोग नष्ट होते हैं। (भैषज्यरत्नावली)

दूसरा तरीका—शुद्ध स्वर्णमाक्षिक, सैन्धव, रसाञ्जन, समुद्रफेन, सज्जीमिट्टी और सम्भलक्षार, प्रत्येक १ तोला, सोहागा ७ तोला, निशादल और फिटकरी प्रत्येक ३॥ तोला, यवक्षार १४ तोला, कसीस, पुष्पकसीस, धातुकसीस कुल १४ तोला, इनके चूर्णको वकयन्त्रमें चुआ लेनेसे महाद्रावक बनता है। यह प्लीहा और यकृद्रोगमें बहुत लाभदायक है।

महाद्रावकरस (सं० पु०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—यवक्षार २ भाग, फिटकरी ३ भाग, इसे गायके बछड़ेके मूतमें पीस कर सुखा ले। पीछे किसी सीसेके बने बरतनमें चिथड़े और मिट्टीका प्रलेप दे कर उसमें उक्त चूर्णको रख छोड़े। अब उस बरतनको सीसेके बने किसी दूसरे बरतनपर औंधे मुंह बैठा कर दोनोंके मुखमें लेप लगा दे। नीचेकी हांडीके पेंदेमें एक छेद और नीचे गड्ढा रहेगा। गड्ढेमें एक और बरतन रखना जरूरी है। अब सबसे ऊपरवाले बरतनके पेंदे पर आग डाल दे। आगकी गरमीसे बरतनमें जो द्रव्य है वह गलने लगेगा और उसका रस टपक कर गड्ढेमें रखे हुए बरतनमें गिरेगा। अनन्तर उस रसमें लवङ्ग चूर्ण वा जारित ताम्र मिला कर १ रत्तीकी गोली बनावे। इस औषधका सेवन करनेसे प्लीहा और यकृद् द्रवीभूत हो

जाता है। प्लीहा और यकृद्रोगमें यह एक उत्कृष्ट औषध है। श्वित्र और दद्रु आदि रोगोंमें इसका स्थानिक प्रयोग भी किया जाता है। किन्तु इसमे आगकी तरह जलन होती है। अतएव इसमें दधिका प्रलेप देना उत्तम है।

महाद्रुम (सं॰ पु॰) महांश्चासौ द्रुमश्चेति। १ अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़। २ वृहद्वृक्ष, बड़ा पेड़। ३ ताल वृक्ष, ताड़का गाछ। ४ मधुक वृक्ष, महुएका पेड़। ५ शाकद्वीपपति भव्यके सप्तम पुत्रका नाम। (मार्कण्डेयपु॰ ५३।२१) ६ वर्षभेद। (लिङ्गपु॰ ४६।२९)

महाद्रोण (सं॰ पु॰) १ शिव, महादेव। २ सुमेरु पर्वत

महाद्रोणा (सं॰ स्त्री॰) महती चासौ-द्रोणा चेति द्रोणपुष्पी।

महाद्वीप (सं॰ पु॰) पृथ्वीका वह बड़ा भाग जो चारों ओर नैसर्गिक सीमाओंसे घिरा हुआ हो और जिसमें अनेक देश हों और अनेक जातियां वास करती हों। जैसे—एशिया, अफ्रिका।

महाधन (सं॰ त्रि॰) १ बहुमूल्य, बेशकिमती। २ बहुत धनी, दौलतमन्द। (पु॰) ३ स्वर्ण, सोना। ४ कृषि, खेती। ५ धूप, सुगंध धूप।

महाधातु (सं॰ पु॰) सुवर्ण, सोना।

महाधिपति (सं॰ पु॰) तान्त्रिकोंके एक देवताका नाम।

महाधी (सं॰ त्रि॰) १ महाज्ञानी। २ विशिष्ट बुद्धि-सम्पन्न, ज्ञानवान्।

महाधीर (सं॰ पु॰) सह्याद्रिवर्णित दो राजा।

महाधृति (सं॰ पु॰) राजपुत्रभेद।

(भागवत ९।१३।१६)

महाध्वनि (सं॰ पु॰) १ पुराणानुसार एक दानवका नाम। २ बड़े जोरका शब्द।

महाध्वनिक (सं॰ पु॰) अध्वनि गच्छतीति अध्वन्-ठक्, महांश्चासौ आध्वनिकश्चेति। पुण्यार्थ हिमालयावधि महापथ गमन द्वारा सम्पादित मृत्यु; वह जो पुण्यकार्यके लिये हिमालयमें गया हो और वहीं मर गया हो। "भृग्वग्निजलसंग्रामदेशान्तरस्थसन्न्यासान शनाशनिमहाध्वनिकाना-मुदकक्रिया कार्या सद्यःशौचं भवतीति" (शुद्धितत्त्व) इनकी मृत्यु होने पर उदकक्रिया तथा सद्यःशौच होता है।

महाध्वर (सं॰ पु॰) श्रेष्ठ यज्ञ।

महान् (सं॰ त्रि॰)-१ बहुत बड़ा, विशाल। २ वराहमदन वृक्ष। ३ उष्ट्र, ऊंट। ४ एक प्रकारका शालिधान।

महाधात्री (सं॰ स्त्री॰) आमलकी वृक्ष।

महानक (सं॰ पु॰) आनद्धयन्त्रविशेष, प्राचीनकाल का एक प्रकारका बाजा जिस पर चमड़ा मढ़ा होता था।

महानख (सं॰ पु॰) १ दीर्घनख, बड़ा नाखून। २ शिव, महादेव।

महानगर (सं॰ क्ली॰) १ बड़ा नगर। २ नगरभेद।

महानग्न (सं॰ त्रि॰) १ सब प्रकारसे उलङ्ग, एकदम नङ्गा। २ अनाच्छादित, जिसके शरीर पर कपड़ा न हो। ३ प्रणयी, प्रेम करनेवाला। ४ उपपति, स्त्री का यार। (पु॰) ५ प्राचीनकालका एक कर्मचारी जो बहुत ऊंचे पद पर होता था।

महानग्नी (सं॰ स्त्री॰) गृहकर्त्री, घर पर काम काज करने वाली स्त्री वा दासी।

महानट (सं॰ पु॰) महांश्चासौ नटः नर्त्तकश्चेति, उद्धत-नर्त्तकत्वादस्य तथात्वं। शिव, महादेव।

महानद (सं॰ पु॰) १ नदविशेष। (मार्कपु॰ ५७।२१) २ तीर्थविशेष। (वृहन्नील॰ २१।२३)

महानदी (सं॰ स्त्री॰) महती चासौ नदी चेति। पुरुषो-त्तमक्षेत्रके अन्तर्गत कटकके उत्तरमें प्रवाहित एक नदी। इसका दूसरा नाम चित्रोत्पला है। चित्रोत्पला नाम-की एक दूसरी भी नदी कटक जिलेमे बहती है। यह महानदी विन्ध्यपर्वतसे निकली है। इसमें स्नान करनेसे सभी पाप जाते रहते हैं।

"नदी तत्र महापुण्या विन्ध्यपादविनिर्गता।
चित्रोत्पलेति विख्याता सर्वपापहरा शुभा॥"

(पुरुषोत्तमतत्त्व)

२ गङ्गा।

"अम्बुजमम्बुनि जातं जातु न जायते अम्बुजादम्बु।
मुरहर तव विपरीतं पादाम्बुजान्महानदी जाता॥"

(उद्भट)

महानदी—मध्यप्रदेश और उड़ीसाके सामन्तराज्य हो कर प्रवाहित एक नदी। यह रायपुर जिलेके अक्षा॰ २०° १' उ॰ तथा देशा॰ ८२° पू॰से निकल कर ५२० मीलका रास्ता तै करके बङ्गोपसागरमें गिरी है।

रायगढ़से २५ मील दक्षिण छत्तीसगढ़की पहाड़ी अधित्यका भूमि होती हुई यह शिहोवा ग्रामके समीप चली गई है। वहां इसका आकार बहुत छोटा है। शिवनारायणके समीप शिवनाद, जोङ्क और हासद्रु नामक तीन शाखाएं इससे मिलती ६। इसलिये यहां पर महानदीका आकार कुछ वड़ा हो गया है। इसके वाद मलहार नगरको पार कर यह मान्द और केलू नदीमे मिल गई है। पद्मपुरके समीप पर्वतमालामे टक्कर खा कर इसकी धारा प्रखर हो गई है। यहां पर नाव द्वारा नदी पार करना खतरनाक है। जहां यह इवा नामक नदीसे मिली है, वहां इसकी गति दूनी हो गई है। वादमे पहाड़ी प्रदेश होती हुई यह सम्बलपुरके दक्षिण शोणपुरके समीप तेल नामक नदीमे मिलती हैं।

अनन्तर महानदी वक्रगतिसें पहाड़ी देशको पार कर ढोलपुर होती हुई उड़ीसाके सामन्त राज्योंमें वह गई है। यहां ऊंचे स्थानसे गिरनेके कारण इसकी गति इतनी तेज है, कि नाव द्वारा नदी पार करनेका साहस नहो होता। आस पासके पहाड़ी प्रदेश और वनविभागने महानदीको और भी भयावह बना दिया है।

इस प्रकार मध्यप्रदेशसे क्रमशः पूर्वकी ओर आ कर ७ मील पश्चिम नराज नामक स्थानके समीप गिरिकन्दरको भेद करती हुई चली गई है। यहां इसका आकार कुछ वड़ा हो गया है। वादमे यह कटक जिला होती हुई विभिन्न शाखा प्रशाखामे फलस पेएटके निकट बङ्गोपसागरमें गिरती है।

महानदीके मुहानेकी जो सब वड़ी वड़ी नदियां इसके कलेवरको बढ़ाती हैं उनमे कटजुरी, जोतदार, पाइका विरूपा और चितरतला प्रधान हैं। अलावा इसके कोआखाई, वड़ी और छोटी देवी, केलो, ब्राह्मणी और नून नामक शाखा नदियां उल्लेख करने योग्य है। फिर केन्द्रोपाड़ा, गोवरी, पटामुण्डी, तालदण्डा, माछगांव, हाइलेभल आदि नहर भी वाणिज्यकी सुविधाके लिये काटी गई हैं। १८५८ ई०में कप्तान थारिसने इसको जलगतिका पता लगा कर लिखा है, कि नराजकन्दरसे प्रति सेकेण्डमें १८००००० घनफुट जल गिरता है।

२ दशपल्ला सामन्तराज्यके अन्तर्गत एक छोटी नदी। यह मान्द्राज प्रदेशके गञ्जाम जिलान्तर्गत आस्का नगरके समीप ऋषिकुल्या नदीसे मिलती है। रासेलकोण्डा और गुमसर नगर इसके किनारे अवस्थित हैं।

महानदी (छोटी)—मध्यप्रदेशके मण्डला जिलेसे निकली हुई एक नदी। जब्बलपुर और रेंवाके सीमान्तसे होती हुई यह ५० कोसका रास्ता तै करके शोणनदीमे गिरती है। नदीके दोनों किनारे शालके वन हैं। देवगिरिके समीप एक कोयलेकी खान और एक गरम सोता देखनेमें आता है।

महानन (सं० पु०) १ वृहत् मुख, वड़ा मुंह। २ श्रेष्ठ वा सुन्दर मुख।

महानन्द (सं० पु०) महान् आनन्दो ऽत्र। १ मुक्ति, मोक्ष। संसारदुःखमोचन ही आनन्दकी शेष सीमा है इसलिये महानन्दका अर्थ मुक्ति हुआ। महान् आनन्दः कर्मधा०। २ अतिशय आह्लाद। ३ मगध देशका एक प्रतापी राजा। इसके डरसे सिकंदर आगे न बढ़ कर पंजाब हीसे अपने देश लौट गया था। ४ दश अंगुलकी मुरली। इस वाद्यके देवता ब्रह्मा माने गये हैं।

महानन्द—१ नक्षत्रेष्टि प्रयोगके रचयिता। २ विश्वनाथके पुत्र। इन्होंने 'वासिष्ठि शान्ति' नामक ग्रंथकी रचना की।

महानन्दधीर—काव्यकलाप चम्पूके रचयिता।

महानन्दा (सं० स्त्री०) महान् आनन्दोऽस्याः। १ सुरा, शराब। २ माघ शुक्लानवमी।

"माघमासस्य या शुक्ला नवमी लोकपूजिता।
महानन्देति सा प्रोक्ता सदानन्दकरी नृनाम्।
स्नानं दानं जपो होमो देवार्च्चनं मुपोषणम्।
सर्वं तदक्षय प्रोक्तं यदस्यां क्रियते नरैः॥" (तिथितत्त्व)

चान्द्र माघ मासकी शुक्ला नवमीका नाम महानन्दा है। यह तिथि मानवोंको आनन्द देनेवाली है। इस तिथिमे स्नान, दान, जप, होम, देवपूजा और उपवास आदि जो कुछ सदनुष्ठान किया जाता है, वह अक्षय होता है। इस तिथिमे जिस किसी पापकर्मका अनुष्ठान किया जायगा वह भी अक्षय होता है। अतएव इस दिन पापानुष्ठान कभी भी नहीं करना चाहिये।

महानन्दा—बङ्गालमें प्रवाहित एक नदी। यह दार्जिलिङ्ग

जिलेमें महालदिराम नामक हिमालय पहाड़से निकल कर जलपाईगोडी और दार्जिलिङ्ग जिलेके मध्य होती हुई सिलिगुड़ीके समीप नववलासन नदीमें मिली है। इसके वाद तितलिया ग्राम तक आ कर दङ्क, पीतानु, नागर, मेछी और कङ्काई आदि नदियोंके साथ मिल गई है। कलियागञ्ज, हल्दीवाड़ी, कृष्णगञ्ज और वरसोई ये चार प्रधान हाट महानन्दाके किनारे अवस्थित हैं।

पूर्णिया जिलेमें आ कर इसकी गति टेढ़ी हो गई है और इसी टेढ़ी गतिसे यह मालदह जिले तक आई है। यहां पर टाङ्गन, पुनर्भवा और कालिन्दी नदी इससे मिलती है। वर्षाऋतुको छोड़ कर और सभी ऋतुओंमें इसका जल सूख जाता है।

अन्तमें यह नदी मालदह जिलेके दक्षिण और राजशाही जिलेके गोदागाड़ी थानाके उत्तर पद्मासे मिलती है। पहले यह नदी पूर्णिया नगर हो कर बहती थी, पर अभी वह गति परिवर्त्तित हो कर पश्चिमामुखी हो गई है।

महानन्दि (सं० क्ली०) आ सम्यक् नन्दतीति आनन्द (सर्व धातुभ्य इन्। उण् ४।११७) इति इन्। १ नन्दिवर्द्धन-राजपुत्र। रघुनन्दनने शुद्धितत्त्वमें सोच विचार कर स्थिर किया है, कि कलिमें महानन्दि तक क्षत्रिय राजा राज्य करेंगे। वाद उनके शूद्र राजा होगा*। किन्तु यह मत सर्ववादिसम्मत नहीं है, कारण आज भी भारतके नाना स्थानोंमें क्षत्रियवंश विद्यमान हैं।

२ अजातशत्रुके एक पुत्रका नाम।

महानय (सं० पु०) उष्ट्र, ऊंट।

महानरक (सं० क्ली०) महान् अतिशय यातनाः दो नरक। बहुत कष्ट देनेवाला नरक। नरक देखो।

"तामिस्रमन्धतामिस्रं महारौरवरौरवौ।
नरकं कालसूत्रञ्च महानरकमेव च॥" (मनु ४।८८)

महानल (सं० क्ली०) महांश्चासौ नलश्चेति। १ देवनल, नरकट। महांश्चासौ अनलश्चेति। २ वृहदग्नि, भयानक आग। ३ तीर्थभेद। (तृ० नील० २१) ४ पारद, पारा।

महानवमी (सं० स्त्री०) महतीचासौ नवमीचेति। चान्द्र-आश्विनकी शुक्ला नवमी।

"प्रावृट्काले विशेषेण आश्विने ह्यष्टमीयुतः।
महाशब्दो नवम्यान्तु लोके ख्यातिं गमिष्यति॥"
(तिथितत्त्व)

आश्विन मासकी शुक्ला अष्टमी और नवमी तिथिको महाष्टमी और महानवमी कहते हैं। इसका दूसरा नाम दुर्गानवमी भी है। इस तिथिमें दुर्गातन्त्र मन्त्र द्वारा देवी भगवती दुर्गाका पूजन और उन्हें वलि चढ़ाई जाती है। यह तिथि देवीको अतिशय प्रिय है।

"दुर्गातन्त्रेण मन्त्रेण कुर्य्युर्दुर्गा महोत्सवम्।
महानवम्या शारदि वलिदानं नृपादयः॥" (तिथितत्त्व)

महानवमीके दिन सभीको दुर्गापूजा अवश्य करनी चाहिये। जो नवम्यादि कल्प और प्रतिपदादि कल्पानुसार दुर्गापूजा कर सकते हैं, वे इस तिथिमें विविधोपचारसे पूजा करें। परन्तु जो असमर्थ हैं उन्हें कमसे कम पुष्प और विल्वपत्र द्वारा भी देवीपूजा करनी चाहिये। पूजा करनी ही होगी, यही शास्त्रकी व्यवस्था है। महानवमीके दिन पूजा होनेसे उसको महानवमीकल्प कहते हैं। यह तिथि जिस दिन घटिका व्यापिनी होगी, उसी दिन महानवमी पूजा करनी चाहिये। घटिका शब्दका अर्थ है मुहूर्त्त अर्थात् जिस दिन मुहूर्त्तकाल होगा उसी दिन पूजा होगी, उसके पहले दिन नहीं।

"यस्त्वेकस्या महाष्टम्या नवम्या वाथ साधकः।
पूजयेद्वरदा देवीं सर्वकाम फलप्रदाम्॥
अतोपवासस्नानादौ घटि कैका यदा भवेत्।
तामेव तिथिमाश्रित्य कुर्यात् कर्मपयतन्द्रितः॥
अत्र घटिका पदं मुहूर्त्तपर" (तिथितत्त्व)

दुर्गापूजा देखो।

* चत्वारिंशं तथा भाव्यो राजा वै नन्दिवर्द्धनः।
चत्वारिंशत्त्रयश्चैव महानन्दिर्भविष्यति॥
महानन्दिसुतश्चापि शूद्रायां कलिकांशजः।
उत्पत्स्यते महापद्मः सर्वक्षत्रान्तको नृपः॥
ततः प्रभृति राजानो भविष्याः शूद्रयोनयः।
(मत्स्यपु० २४६ अ०)

अपि महानन्दिसुतः शूद्रागर्भोद्भवो ऽतिलुब्धो महापद्मनन्दः परशुराम इवापरोऽखिलक्षत्रियान्तकारी भविता ततः प्रभृति शूद्रा भूपाला भविष्यन्ति। तेन महानन्दिपर्य्यन्तं क्षत्रिय आसीत्।
(शुद्धितत्त्व)

महानस (सं० क्ली०) महच्च तत् शानश्चेति ("अनोऽस्मायःसरसां जातिसंज्ञयोः। पा ५।४।९४) इति संज्ञायां टच्। रन्धनगृह, पाकशाला, रसोईघर। सुश्रुतमें महानसका विषय इस प्रकार लिखा है—प्रशस्त दिशामें और प्रशस्त स्थानमें रन्धनशाला बनानी चाहिये। उसमें हवा आने जाने तथा धुआं निकलनेके लिये दो चार झरोखे भी अवश्य होने चाहिये। रन्धनपात्र साफ सुथरा होना चाहिये। जहां तक हो सके, अपने ही आदमीको रसोई बनानेमें नियुक्त करें। आहार हो प्राणियोंकी स्थितिका मूल है। अतः राजाको उचित है, कि वे पाकशालामें कुलीन, धार्मिक, स्निग्ध, सर्वदा कार्यतत्पर, निर्लोभ, सरल, कृतज्ञ, प्रियदर्शन; क्रोध, कार्कश्य, मात्सर्य, मत्तता और आलस्यवर्जित, जितेन्द्रिय, क्षमाशील आदि सद्गुणयुक्त व्यक्तिको नियुक्त करें। महानसकी परिचर्या करनेवालोंमें भी शुचि, दयाशील, दक्ष, विनीत, प्रियदर्शन और पवित्र, नख और केशहीन, स्नान, दृढ़, संयमी आदि गुण रहने चाहिये। (सुश्रुत कल्पस्था १ अ०)

पाकराजेश्वरमें लिखा है—घरके अग्निकोणमें पाकशाला बनावे। उसमें झरोखे, चूल्हे आदि अवश्य रहें। मिट्टीके बरतनको अच्छी तरह साफ कर उसमें पाक करे। यों तो प्रायः सभी धातुके बरतनमें पाक किया जा सकता है, पर मिट्टीका बरतन ही पाकके लिये श्रेष्ठ बतलाया गया है। मिट्टीके बरतन यदि न हो, तो लोहेके बरतनमें पाक कर सकते हैं। लोहेके बरतनमें पकाया हुआ अन्न खानेसे चक्षुरोग और अर्श विकार जाता रहता है। कांसेके बरतनमेंका पाक हितकर, ताम्रपात्रका अम्लपित्तवर्द्धक तथा सुवर्ण और रौप्यपात्रका पाक श्रेष्ठ गुणयुक्त और सकलदोषनाशक है।

महानसाध्यक्ष (सं० पु०) महानसस्य अध्यक्षः। रसवत्यधिकारी पुरुष, रन्धनशालाका अध्यक्ष जिसे रसोइया कहते हैं।

महानसिकावोढ़ (सं० पु०) राजशालाधिकृत पुरुष, रसोइया।

महानाग (सं० पु०) सुरपुन्नाग वृक्ष।

महानाटक (सं० क्ली०) महच्च तत् नाटकञ्चेति। १ नाटकविशेष। इसका लक्षण—

"एतदेव यदा सर्वैः पताकास्थान कैर्युतम्।
अङ्कैश्च दशभिर्धीरा महानाटकमूचिरे॥
एतदेव नाटक यथा बालरामायणं॥" (साहित्यद०)

नाटकके लक्षणोंसे युक्त दश अंकोंवाले नाटकको महानाटक कहते हैं।

२ स्वनामख्यात हनूमद्रचित रामचरितग्रन्थविशेष। यह ग्रन्थ अति सुललित है।

"एष श्रीलहनूमता विरचिते श्रीमन् महानाटके
वीरश्रीयुतरामचन्द्रचरिते प्रत्युद्धृते विक्रमैः।
मिश्र श्रीमधुसूदनेन कविना सन्दर्भ सज्जीकृते
स्वर्गारोहननामकोऽत्र नवमो यातोऽङ्क एवेत्यसौ॥"

(महानाटकका शेष श्लोक)

महानाड़ी (सं० स्त्री०) महती चासौ नाड़ी चेति। कण्डरा, मोटी नस।

महानाद (सं० पु०) महान् नादोऽस्य। १ हस्ती, हाथी। २ वर्षुक मेघ, बरसनेवाला बादल। महांश्चासौ नादश्चेति। ३ महाशब्द। ४ सिंह। ५ कर्ण, कान। ६ उष्ट्र, ऊंट। ७ शङ्ख। ८ काहलवाद्य, बड़ा ढोल। ९ महादेव, शिव। (त्रि०) १० महाशब्दयुक्त।

"तत्कालमेव प्रतिम महोरगनिषेवितम्।
अभिगम्य महानाद तीर्थनैव महोदधिम्॥"

(रामा० ४।४०।३९)

महानाद—त्रिवेणीसे चार कोस पश्चिममें स्थित एक गण्ड ग्राम। यहां जटेश्वर शिव और वशिष्ठगङ्गा नामकी एक पुण्यसलिला पुष्करिणी है। जनसाधारण इस कुण्डकी गङ्गाके समान भक्ति करते हैं। वशिष्ठगङ्गा और शिवस्थापनादिके विषयमें यहां एक उपाख्यान इस प्रकार प्रचलित है,—एक समय इस गांवमें एक दक्षिणावर्त्त शंख गिरा। हवा लगनेसे उससे एक बड़ा शब्द हुआ जो देवताओंके कान तक पहुंच गया। शब्द सुन कर देवगण वहां आ पहुंचे और जटेश्वर शिव तथा वशिष्ठगङ्गाकी प्रतिष्ठा की। उसी महानादसे इस गांवका महानाद नाम पड़ा। यहां योगियोंकी कुछ कुटियां भी देखी जाती हैं। बौद्धोंके समय यहां अनेक बौद्धश्रमण रहते थे। आज भी यहां धर्मठाकुरका 'जात' होता है।

महानानात्व (सं० क्ली०) यज्ञ प्रक्रियाका प्रकरणभेद।

महानाभ (सं० पु०) १ हिरण्याक्षके एक पुत्रका नाम। २ दानवभेद। ३ एक प्रकारका मन्त्र जिससे शत्रुके फेंके हुए शस्त्र व्यर्थ जाते हैं।

महानामन् (सं० पु०) १ शाक्यमुनिके एक आत्मीयका नाम। २ महावंशके रचयिता एक प्रसिद्ध बौद्ध।

महानाम्निक (सं० त्रि०) महानाम्नी परिशिष्ट सम्बन्धीय।

महानाम्नी (सं० स्त्री०) सामवेद परिशिष्टभेद।

महानाम्नीव्रत (सं० क्ली०) वेदोक्त व्रतविशेष।

महानाराचरस (सं० पु०) पारा, ताम्र, गन्धक, जयपाल और त्रिफला प्रत्येक एक तोला, कटकी तीनों प्रकारका क्षार प्रत्येक आध तोला, इन्हें एक साथ मिला कर गोली बनावे। गोलीका परिमाण दोषके वलावलके अनुसार स्थिर करना होगा। अनुपान गरम जल है। इसका सेवन करनेसे गुल्म और ज्वर अति शीघ्र दूर होता है।

दूसरा तरीका—पारा, सोहागा और मरिच प्रत्येक एक भाग, गन्धक, पीपर, सोंठ प्रत्येक २ भाग कुल मिला कर जितना हो उतना ही छिलका रहित दन्तीवीज मिला कर २ रत्तीको गोली बनावे। यह सिद्ध विरेचक है। इसका सेवन करनेसे गुल्मादिरोग अति शीघ्र आरोग्य होते हैं। (रसेन्द्रसारस० गुल्मादि)

महानारायण (सं० पु०) विष्णु।

महानारायणतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, काढ़े के लिये शतमूली, शालपर्णी, पिठवन, कचूर, वच, रेंड़ीका मूल, कण्टकारीका मूल, नाटाकरञ्जका मूल, प्रत्येक १० पल, पाकार्थ जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, गायका दूध और बकरीका दूध ८ सेर करके, शतमूलीका रस ४ सेर, चूर्णके लिये पुनर्णवा, वच इलायची, जटामांस, शालपर्णी, विजवन्द, असगंध सैन्धव और रास्ना प्रत्येक ४ तोला तैलपाकके नियमानुसार इस तेलका पाक करना होगा। इस तेलकी मालिश करनेसे मनुष्य, घोड़े और हाथीके सभी प्रकारके वात, हृच्छूल, पार्श्वशूल, गण्डमाला, वातरक्त, हनुग्रह, कमला, पाण्डु और अश्मरी आदि विविध रोग दूर होते हैं। (भैषज्यरत्ना वातव्याधिरोगाधि०)

महानारायणोपनिषत् (सं० स्त्री०) उपनिषद्भेद।

महानास (सं० पु०) १ शिव, महादेव। २ वृहत्नासायुक्त, बड़ी नाकवाला।

महानिद्र (सं० त्रि०) गाढ़निद्राभिभूत, जो गाढ़ी नींदमें हो।

महानिद्रा (सं० स्त्री०) महती सुदीर्घा चासौ निद्रा चेति। मरण, मौत।

महानिधान (सं० पु०) बुभुक्षित धातुभेदी पारा जिसे "बावन तोला पाव रत्ती" भी कहते हैं।

महानिनाद (सं० पु०) नागभेद।

महानिमित्त (सं० क्ली०) महत् कारण।

महानिम्ब (सं० पु०) महांश्चासौ निम्बश्चेति। निम्बवृक्षविशेष, वकायन। संस्कृत पर्याय—कैटर्य, पवनेष्ट, पर्वत। गुण—ग्राही, कषाय, अम्ल, शीतल, रुक्ष, तिक्त, कफ, पित्त, भ्रम, छर्दि, कुष्ठ, हृल्लास, रक्तदोष, प्रमेह, श्वास, गुल्म, अर्श तथा मूषिकविषनाशक। (भावप्र०)

महानियम (सं० पु०) विष्णु।

महानियुत (सं० क्ली०) बौद्ध मतसे एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महानिरय (सं० पु०) एक नरकका नाम।

महानिरष्ट (सं० पु०) कोषहीन वृष, दामडा।

महानिर्वाण (सं० क्ली०) १ परिनिर्वाण जिसके अधिकारी केवल अर्हत् या बुद्धगण माने जाते हैं। २ आधुनिक तन्त्रभेद।

महानिशा (सं० स्त्री०) महती घोरा निशा। निशामध्यभाग, दो पहर रात। पर्याय—निशार्द्ध, निशीथ। स्मृतिशास्त्रके मतसे डेढ पहरके बाद और दो पहर तकके समयको महानिशा कहते हैं।

"महानिशातु विज्ञेया मध्यमं प्रहरद्वयम्।
तत्र स्नानं न कुर्वीत काम्य नैमित्तिकादृते॥"

(तिथितत्त्व)

मध्यम दो पहरका नाम महानिशा है। काम्य और नैमित्तिक कार्यको छोड़ कर इस महानिशिमें स्नान नही करना चाहिये। इस समय कोई वस्तु खाना भी मना है, खानेसे ब्रह्महत्याका पाप लगता है। महानिशिमें पारण भी निषिद्ध है।

देवलके मतसे—रातके दो पहरके बाद शेष दण्ड तथा तृतीय प्रहरका प्रथम दण्ड, ये दोनों ही दण्डकाल महानिशा है। "महानिशा रात्रिमध्यमदण्डद्वयात्मिका सा द्वितीयप्रहरशेषदण्ड तृतीयप्रहरप्रथमदण्डरूपा।

"महानिशा द्वे घटिके कोटि सूर्यसमप्रभः।" इति देवलोक्ता महानिशा" (तिथितत्त्व)

माघमासकी कृष्ण चतुर्दशीके महानिशाकालमें भगवान् महादेव कोटि सूर्यकी तरह प्रभायुक्त शिवलिङ्ग रूपमें प्रकट हुए थे।

"माघकृष्ण-चतुर्दश्यामादिदेवो महानिशि।
शिवलिङ्गतयोद्भूतः कोटिसूर्यसमप्रभः॥" (तिथितत्त्व)

तान्त्रिकोंके मतसे प्रथम प्रहरके बाद तृतीय पहर तकका समय महानिशा है। किन्तु एक पहरके बाद यदि दो घंटा बीत जाय, तो उसे अतिनिशा कहते हैं। यह महानिशाकाल तान्त्रिकोंके जप और पूजा करनेका उपयुक्त समय है। इस महानिशाकालमें ही कालीको पूजा होती है।

"गते तु प्रथमे यामे तृतीयप्रहरावधि।
महानिशायां जप्तव्यं रात्रिशेषे जपेन्नतु॥
आपच—निशा तु परमेशानि सूर्ये चास्तमुपागते।
प्रहरे च गते रात्रौ घटिके द्वे परे च ये॥
महानिशा समाख्याता ततश्चातिमहानिशा।
अर्द्धरात्रे गते देवि पशुभावेन पूजयेत्।
दशदण्डे तु या पूजा तत् सर्वं भक्षय भवेत्॥"
(तन्त्रसा, गुप्तसाधनत० ६ अ०)

महानिशीथ (सं० पु०) जैन-सम्प्रदायभेद।

महानीच (सं० पु०) महानतिशयः नीचः। १ रजक, धोबी। (त्रि०) २ अतिशय हीनवर्ण, घोर काले रंगका।

महानीबू (हिं० पु०) विजौरा नीबू।

महानीम (हिं० स्त्री०) १ बकायन। २ तुनका पेड़।

महानील (सं० पु०) महान् नीलः नीलवर्णः। १ भृङ्गराज पक्षी। २ नागविशेष। ३ मणिविशेष, एक प्रकारका नीलम जो सिंहल द्वीपमें होता है। इसका लक्षण—

"यस्तु वर्णास्य भयस्त्वात् क्षीरे शतगुणो स्थितः।
नीलता तनुयात् सर्व महानीलः स उच्यते॥"
(गरुड़ पुराण ७२ अ०)

इसे नीलकान्तमणि भी कहते हैं। जिस नीलमणिको दूधमें रखनेसे दूध नीला हो जाता है उसे महानील कहते हैं।

४ एक प्रकारका गुग्गुल। ५ एक प्रकारका साप। ६ एकपर्वतका नाम जो मेरु पर्वतके पास माना जाता है।

महानीलकण्ठरस (सं० पु०) रसौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिमि मछलीके पित्तमें भावित सीसक १ तोला सोना १ तोला, रससिन्दूर १६ तोला, अबरक २४ तोला, इन सब द्रव्योंको एकत्र कर घृतकुमारी, ब्राह्मीशाक, संभालू, कचूर, मुण्डिरी, शतमूली, गुड़ची, तालमखाना, तालमूली, वृद्धदारक और चिता इनकी भावना दे। पीछे उसमें त्रिकटु, मोथा, चिता, इलायची, लवङ्ग और जातिफल प्रत्येकका चूर्ण ८ तोला डाल कर २ रत्तीकी गोली बनावे। इसके सेवनसे विवधवातरोग, ४० प्रकारके पित्तरोग तथा अन्यान्य सभी रोग विनष्ट हो कर रति शक्ति बढ़ती है। यथेष्ट आहार मिलने पर कन्दर्पके समान रूपवान्, मेधावी और भीमके समान विक्रम पुत्र उत्पन्न होता है। इस तेलके सेवनसे बांझपन दूर हो जाता है। औषध सेवनके बाद २१ दिन तक मैथुन कर्म नहीं करना चाहिये। (रसेन्द्रसारस०)

महानीलतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल १६ सेर, बहेड़ेका रस ६४ सेर, आमलकीका रस ६४ सेर, चूर्णके लिये घोषालताका मूल, काली भंटीका मूल, तुलसी पत्र, कृष्णशणका फल, भीमराज, काकमाची, मुलेठी और देवदारु प्रत्येक १० पल, पीपर, त्रिफला, रसाञ्जन, प्रपौण्डरीक, मञ्जीठ, लोध, काला अगर, नील कमल, आम्रकेशी, कृष्णमर्दन, मृणाल, रक्तचन्दन, नीलकाष्ठ, भल्लातक, हीराकसीस, मल्लिकापुष्प, सोमराजी, अशनकी छाल, शस्त्र, मदनकी छाल, चितामूल, अर्जुनपुष्प, गाम्भारीपुष्प, आम्रफल और जायफल, प्रत्येक ५ पल। तैलपाकके विधानानुसार पाक करना होगा। अथवा सभी रस जब तक सूख न जाय, तब तक घाममें छोड़ देना होगा। यह तैल पीने, नस लेने और सिर पर लगानेसे सभी प्रकारका शिरोरोग और बालोंका असमयमें पकना दूर होता है तथा चक्षुके तेज और आयुकी वृद्धि होती है। (भैषज्यरत्नावलीशिरोरोगाधिकार)

महानीला (सं० स्त्री०) महती चासौ नीला नालवर्णा चेति । महाजम्बु, बडा आमुन ।

महानीली (सं० स्त्री०) नील (नीलादोषधौ । पा ४।१।४२) इति वार्त्तिकोक्त्या ङीष् ; ततः महती चासौ नीला चेति । १ नीली अपराजिता । पर्याय—अमरा, जनि-नीलिका, तुत्था, श्रीफलिका, मेला, केशार्हा, मत्स्य-पत्रिका । गुण—गुणाढ्य, रङ्गश्रेष्ठ, सुवर्णदायक । २ नीली अपराजिताका पेड़ । ३ बडे, जामुनका वृक्ष ।

महानीलोत्पल (सं० पु०) इन्द्रनील मणि ।

महानुभाव (सं० त्रि०) महान् अनुभावो माहात्म्यं यस्य । महाशय, कोई बड़ा और आदरणीय व्यक्ति ।

"सुकृती पुण्यवान् धन्यो धर्मी च धर्मवानपि ।
महाशयो महेच्छः स्यान्महानुभाव इत्यपि ॥"
(शब्दरत्नाकर)

महानुभावता (सं० स्त्री०) महानुभाव होनेका भाव, बडप्पन ।

महानुराग (सं० त्रि०) ऐकान्तिक प्रेम वा आसक्ति ।

महानुशंसव (सं० त्रि०) अत्यधिक स्वच्छन्दता वा सुयोगसम्पन्न ।

महानृत्य (सं० पु०) महान् नृत्यः यस्य । १ शिव, महा-देव । २ अतिशय नृत्य, खूब नाच । (त्रि०) ३ अति-शय नृत्ययुक्त, खूब नाचनेवाला ।

महानेत्र (सं० त्रि०) १ प्रशस्त चक्षयुक्त, सुन्दर नेत्र-वाला । (पु०) २ शिव ।

महानेमि (सं० पु०) काक, कौआ ।

महान्तक (सं० पु०) १ मृत्यु । २ शिव ।

महान्धकार (सं० पु०) १ अविद्यारूप अन्धकार । २ घोर अन्धकार ।

महान्ध्र (सं० पु०) १ एक देशका नाम । २ उस देशका रहनेवाला मनुष्य ।

महान्धक (सं० पु०) विदेहके एक राजा ।

महान्याय (सं० पु०) १ मुख्य नियम । २ श्रेष्ठ विधि, अच्छा तरीका ।

महान्वय (सं० त्रि०) सम्भ्रान्तवंशसम्भूत, जिसका उच्च कुलमें जन्म हुआ हो ।

महापक्ष (सं० पु०) १ एक प्रकारका राजहंस ।

महापक्षी (सं० स्त्री०) १ पेचक, उल्लू । २ गरुड । (त्रि०) ३ वृहत् परिवार वा बहु-सङ्गीयुक्त, जिसके बहुत परिवार वा बहुत दोस्त हों ।

महापगा (सं० स्त्री०) नदीभेद ।

महापङ्क (सं० क्ली०) महच्च तत् पङ्कश्चेति । अतिशय पंक, गहरा कीचड़ ।

महापङ्क्ति (सं० स्त्री०) वैदिक छन्दोभेद ।

महापञ्चमल (सं० क्ली०) पञ्चानां विल्वादि मलानां समाहारः, ततः महञ्च तत् पञ्चमलञ्चेति । वृहत् पञ्च-मल ; बेल, अरनी, सोनापाढ़ा, काश्मरी और पाटला इन पांचों वृक्षोंकी जड़ोंका समह । इसका व्यवहार वैद्यकमें होता है ।

महापञ्चविष (सं० क्ली०) पञ्चानां विषाणां समाहारः ततः महञ्च तत् पञ्चविषञ्चेति । वृहद्विषपञ्चक; शृङ्गी, कालकूट, मुस्तक, वाछनाग और शङ्खकर्णी इन पांचों विषोंका समह ।

महापञ्चाङ्गुल (सं० पु०) रक्तैरण्डवृक्ष, लाल अंडीका पेड़ ।

महापण्डित (सं० पु०) दार्शनिक वा नैयायिक पण्डित चड़ामणि ।

महापत्र (सं० पु०) १ वृहत् पत्रयुक्त गुल्मभेद । २ शाकवृक्ष, सागून ।

महापत्रा (सं० स्त्री०) महान्ति पत्राण्यस्याः १ महाजम्बु, बड़ा जामुन । २ नागवला । (त्रि०) ३ वृहत् पत्रयुक्त, जिसमें बड़े बड़े पत्ते हों ।

महापथ (सं० पु०) महांश्चासौ पन्थाश्चेति (आन्महत इति । पा ६।३।४६) इति महत आकारादेशः (ऋक्पूरब्धूः-पथामानक्षे । पा ५।४।७४) इति समासान्तोऽकारः । १ प्रधान पथ, बहुत लम्बा और चौड़ा रास्ता । पर्याय—घण्टापथ, संसरण, श्रीपथ, राजवर्त्म, उपनिष्क्रमण, उप-निष्कर । २ मृत्युपथ, परलोकका मार्ग । ३ सुषुम्ना नाड़ी ।

"सुषुम्ना शून्यपदवी ब्रह्मरन्ध्रं महापथः ।
श्मशान शाम्भवी मध्य मार्कश्चेत्येक वाचकाः ॥"
(हठयोगदीपिका० ३।४)

४ शिव, महादेव । ५ याज्ञवल्क्यस्मृतिके अनुसार

२१ नरकोंमेंसे १६वां नरक जिसे ब्रह्मरन्ध्र नरक कहते हैं। ६ हिमालयके एक तीर्थका नाम।

महापथगम (सं० पु०) महापथस्य महापथे वा गमः गमनं। मरण, देहान्त।

महापथिक (सं० पु०) महाप्रस्थानकारी, वह जो मरनेके उद्देश्यसे हिमालय पर्वत पर जाय।

महापद (सं० पु०) महाव्रज।

महापदपङ्क्ति (सं० स्त्री०) वैदिक छन्दोभेद।

(ऋक्प्राति० १६।२६)

महापद्म (सं० पु०) महत् पद्मं तादृशं चिह्नं शिरसि यस्य। १ आठ नागोंमेंसे एक नागका नाम। पर्याय—अतिशुक्ल, दशविन्दुक मस्तक। मनसा पूजाके समय इस नागकी पूजा करनी होती है। २ फनवाली जातिके अन्तर्गत एक प्रकारका सांप। ३ कुवेरकी नौ निधियोंमेंसे एक निधि, पद्मिनी विद्याकी आठ निधियोंमेंसे एक।

"यस्या वत्से! प्रभावेन विद्यायास्ता ग्रहाण मे।
पद्मिनी नाम विद्येयं महापद्माभिपूजिता॥"

(मार्क०पु० ६४।१५)

४ महाभारत-कालके एक नगरका नाम जो गङ्गाके किनारे पर था। ५ एक प्रकारका दैत्य (हरिवंश २३२।३) ६ दिक्करीभेद, आठ दिग्गजोंमेंसे एक दिग्गज जो दक्षिण दिशामें स्थित है। ७ सौ पद्मकी संख्या। ८ शुक्लपद्म, सफेद कमल। ९ नरकभेद। १० जैन मतसे नागोंके अधिकृत निधिविशेष। ११ नन्द राजाका एक नाम। (विष्णुपुराण) १२ नन्द राजाके एक पुत्रका नाम। १३ कुवेरके अनुचर एक किन्नरका नाम। १४ हाथीकी एक जाति।

महापद्मकघृत (सं० स्त्री०) विस्फोटकरोगका घृतविशेष।

महापद्मपति (सं० पु०) नन्दराजका एक नाम।

महापद्मविसर्प (सं० पु०) वालविसर्परोग।

महापद्मसरस् (सं० क्ली०) काश्मीरका एक ह्रद। इसका वर्तमान नाम उल्लर है।

महापद्मसलिल (सं० क्ली०) काश्मीर देशके उल्लर नामका ह्रद।

महापद्मनन्दि—महानन्दिके औरस और शूद्राणीके गर्भसे उत्पन्न एक कुमारका नाम।

महापद्य (सं० पु०) महाकाव्य।

महापद्यषट्क—कालिदास-कृत भोजराजकी गुणवर्णन-सूचक षट्श्लोकात्मक कविताविशेष।

महापन्थक (सं० पु०) बौद्धशिष्यभेद।

महापनस (सं० पु०) सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका सांप।

महापराक्रम (सं० त्रि०) महावीर्यवान्, बड़ा साहसी।

महापराह्ण (सं० पु०) अपराह्णका शेष समय।

महापरिनिर्व्वाण (सं० क्ली०) निर्व्वाणविशेष, महामोक्ष।

महापर्ण (सं० पु०) १ ब्रह्मराक्षस। २ एक प्रकारका शालवृक्ष।

महापवित्र (सं० त्रि०) १ अत्यन्त पवित्र। (पु०) २ विष्णु।

महापशु (सं० पु०) गाय आदि पशु।

महापाकजानि—सूर्यारुणशतकके प्रणेता, जगन्नाथ पण्डितके शिष्य।

महापाटल (सं० पु०) एक प्रकारका पेड़।

महापात (सं० पु०) तीरका दूरमें गिरना।

महापातक (सं० क्ली०) महदतिशयितं पातकं। पापविशेष। यह पाप पांच प्रकारका है। यथा—ब्रह्महत्या, सुरापान, स्तेय, गुरुपत्नी-गमन और इन सब पापचारियोंके साथ संसर्ग।

"ब्रह्महत्या सुरापान स्तेय गुर्वङ्गनागमः।
महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह॥"

(मनु ११।५४)

जो ऊपर लिखे महापातक करते हैं, उन्हें नरकको गति होती है। नरकभोगके बाद वे कठिन रोगसे ग्रस्त होते हैं। इस प्रकारके रोग वे सात जन्म तक भोगते हैं। पीछे इस महापातककी शान्ति होती है।

"महापातकजं चिह्नं सप्तजन्मसु जायते।
बाधते व्याधिरूपेण तस्य कृच्छ्रादिभिः समः॥"

(शातातपीय कर्मवि०)

महापातकज चिह्न सात जन्म तक विद्यमान रहता है तथा यह पातक व्याधिरूपमें पीड़ा देता है। तप्तकृच्छ्रादि चान्द्रायणका अनुष्ठान करनेसे इसकी शान्ति होती है। तुला, मकर और मेष अर्थात् कार्त्तिक, वैशाख और माघ

मासमें प्रातःस्नान कर हविष्यभोजन और ब्रह्मचर्यका अनुष्ठान करनेसे भी महापातक विनष्ट होता है।

"तुलामकरमेषेषु प्रातःस्नानं विधीयते।
हविष्यं ब्रह्मचर्यञ्च महापातकनाशनम्॥"

(मलमासतत्त्व)

पुराणमें लिखा है,—'कृष्ण कृष्ण' यह मङ्गलमय नाम जिसके मुखसे हमेशा निकलता है, उसके सभी पाप दूर होते हैं।

"कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य वाचि प्रवर्त्तते।
भस्मीभवति राजेन्द्र महापातककोटयः॥" (पुराण)

रोग मात्र ही पाप ज है। विना पापके रोग हो नहीं सकता। महापातकज रोगका विषय इस प्रकार लिखा है—

"पूर्वजन्मकृतं पापं नरकस्य परिक्षये।
बाधतेव्याधिरूपेण तस्य कृच्छ्रादिभिः समः॥
कुष्ठन्तु राजयक्ष्मा च प्रमेहो ग्रहणी तथा।
मूत्रकृच्छ्राश्मरीकासा अतीसारभगन्दरौ॥
दुष्टव्रणं गण्डमाला पक्षाघातोऽक्षिनाशनं।
इत्येवमादयो रोगा महापातोद्भवाः स्मृताः॥"

पूर्वजन्मका किया हुआ पाप नरकभोगके बाद व्याधिरूपमें पीड़ा देता है। मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, कास, अतीसार, भगन्दर, दुष्टव्रण, गण्डमाला, पक्षाघात और अक्षिनाशन, ये सब रोग महापातकके फलसे उत्पन्न होते हैं। अर्थात् महापातक करनेसे उक्त रोग मनुष्यके शरीरमें पैदा होते हैं। धर्मशास्त्रानुसार पहले इस रोगका प्रायश्चित्त और पीछे चिकित्सा करनी चाहिये।

महापातकिन् (सं० त्रि०) महापातकमस्त्यस्येति महापातक इनि। पञ्च प्रकार महापातक युक्त, पांच तरहका महापाप करनेवाला।

महापातकी मात्र ही पतित हैं, इस कारण मरने पर इनकी दाहादि क्रिया नहीं होगी। यहां तक कि इनकी मृत्यु पर अश्रुपात तक भी करना निषिद्ध है। महापातकीके श्राद्धादि कुछ भी नहीं होंगे। यदि कोई मोहवशतः अग्निकार्य, अशौच-ग्रहण और श्राद्धादि कार्य करे, तो उसे भी प्रायश्चित्त करना होगा।

"महापातकिनो ये च पतितास्ते प्रकीर्त्तिताः
पतितानां न दाहः स्यान्नान्त्येष्टिर्नास्थिसञ्चयः॥
न चाश्रुपातः पिण्डो वा कार्यं श्राद्धादिकं क्वचित्।
एतानि पतितानान्तु यः करोति विमोहितः।
तप्तकृच्छ्रद्वयेनैव तस्य शुद्धि र्न चान्यथा॥"

इसमें विशेषता यह है, कि यदि उस महापातकीने अपने पापका प्रायश्चित्त कर लिया हो, तो उसके दाह, अशौच और श्राद्धादि सब कुछ होंगे। यदि मरनेके पहले प्रायश्चित्त न किया गया हो, तो मरनेके बाद करके दाहादि करना चाहिये। यही शास्त्रकी व्यवस्था है।

पारिभाषिक महापातकी।—

"पितरं मातरं भार्यां गुरुपत्नीं गुरुं परम्।
यो न पुष्णाति कापट्यात् स महापातकी शिव॥"

(ब्रह्मवैवर्त्तपु० गणपतिख० ४४ अ०)

पिता, माता, भार्या, गुरुपत्नी और गुरु इनका भरणपोषण जो व्यक्ति नहीं करते वे महापातकी हैं।

अन्यविध—

"कृतप्राणप्रतिष्ठाञ्च नीचैर्यो प्रतिमां द्विजः।
दुर्गां न प्रणमेद्यत्तु स महापातकी स्मृतः॥"

(देवीपु० व्यासनारायणस०)

नीच द्वारा प्रतिष्ठित देव-प्रतिमा और भगवती दुर्गाको जो प्रणाम करते हैं वे भी महापातकी हैं।

"जातिभेदो न कर्त्तव्यः प्रसादे परमात्मनः।
योऽशुद्धबुद्धिं कुरुते स महापातकी भवेत्॥"

(महानि० ३।९२)

परमात्माके प्रसादमें जातपातका विचार नहीं करना चाहिये, करनेसे महापातक होता है।

महापातकी (सं० त्रि०) वह जिसने महापातक किया हो। विशेष विवरण महापातकिन् शब्दमें देखो।

महापात्र (सं पु०) १ प्रधान मंत्री। २ महाब्राह्मण वा कट्टहा ब्राह्मण जो मृतक कर्मका दान लेता है। ३ एक विख्यात गायक। ये अकबर बादशाहके दूतका रूप धारण कर उड़िष्याधिपति मुकुन्ददेवकी सभामें गये थे।

महापाद (सं० त्रि०) १ बृहत् पदयुक्त, ऊंचा ओहदावाला। (पु०) २ शिव, महादेव।

महापाप (सं० क्ली०) महच्च तत् पापञ्चेति। महापातक।

"महापापेषु सर्वं स्यात् तदर्द्धं स्तूपपातकं ।
दद्यात् पापेषु षष्ठांश ज्ञात्वा व्याधवलावलम् ॥"
(मलमासत०)

महापाप्मन् (सं० त्रि०) अतिशय पापात्मा, घोर पापी।

महापारणिक (सं० पु०) बुद्धशिष्यभेद।

महापारुषक (सं० पु०) वृक्षभेद।

महापारेवत (सं० क्ली०) महच्च तत् पारेवतञ्चेति। फलवृक्षविशेष, बड़ी खजूरका पेड़। पर्याय—स्वर्णपारेवत, साम्राणिज, खारिक, रक्तरैवतक, वृहत्पारेवत; द्वीपज, द्वीपखर्जूर। इसका गुण मधुर, वलकारक, पुष्टिवर्द्धक, वृष्य, मूर्च्छा और भ्रमनाशक माना गया है।
(राजनि०)

महापार्श्व (सं० पु०) १ दानवभेद। २ राक्षसभेद।

महापाल (सं० पु०) राजपुत्रभेद।

महापाश (सं० पु०) महान् पाशोऽस्य। १ यमदूतविशेष। (वृहद्धर्मपु० ५६ अ०) महांश्चासौ पाशश्चेति। २ वृहत् पाश, बड़ा जाल।

महापाशुपत (सं० पु०) १ वकुल, मौलसिरी। (वैद्यकनि०) २ पशुपतिके उपासक शैवसम्प्रदायविशेष। स्कन्दपुराणमें लिखा है, कि शिवभक्तमात्र ही महापाशुपत कहलाते हैं।

"हरेर्ब्भावयोर्भेद न करोति महामतिः।
शिवभक्तः स विज्ञेयो महापाशुपतश्च सः॥"
(स्कन्दपु०)

किन्तु वामनपुराणमें मतभेद देखा जाता है। वह इस प्रकार है—

आद्यं शैवं परिख्यातमन्यत् पाशुपत मुने।
तृतीयं कालवदन चतुर्थं च कपालिन॥
शैवश्चासीत् स्वयं शक्तिर्वशिष्ठस्य प्रियः सुतः।
तस्य शिष्यो बभूवाथ गोपायन इति श्रुतः॥
महापाशुपतश्चासीद्भरद्वाजो तपोधनः।
तस्य शिष्योऽप्यभूद्राजा ऋषभः सोमकेश्वरः॥
कालस्यो भगवानासीदापस्तम्बस्तपोधनः।
तस्य शिष्यो वको वैश्या नाम्ना क्राथेश्वरो मुने॥
महाव्रती च धनदस्तस्य शिष्यश्च वीर्यवान्।
ऊर्णोदर इति ख्यातो जात्या शूद्रो महातपाः॥"

उक्त मतभेदको प्रमाणित करनेके लिये वशिष्ठादि भी उक्त मतके विशिष्ट उपासक माने गये हैं।

महापाशुपतव्रत (सं० क्ली०) शिवव्रतविशेष।

महापासक (सं० पु०) पसति वाधते निराकरोति परकालेश्वरादिकमिति, पस-ण्वुल्, ततः महांश्चासौ पासकश्चेति। बौद्धभिक्षुक। पर्याय—चेलुक, श्रामणेर, प्रव्रजित, गोमीन, महोपासक।

महापिचुमर्द (सं० पु०) पर्वतनिम्ब, वकायन।

महापिण्डतैल (सं० क्ली०) वातरक्ताधिकारोक्त तैलौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—कटुतैल ४ सेर, काढ़े के लिये गुलञ्च, सोमराजी, गन्ध-भादुल प्रत्येक १२॥० सेर, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर। क्वाथ पृथक् पृथक् होगा, दूध १६ सेर। चूर्णके लिये शिलारस, धूना, सम्हालू, त्रिफला, भंग, कटाई, दन्तीमूल, कंकोला, पुनर्णवा, चितामूल, पिपरामूल, कुट, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, चन्दन, रक्तचन्दन, करञ्ज, श्वेतसर्षप सोमराजी वीज, चाकुन्दका वीज, अड़ूसकी छाल, नीमकी छाल, पटोलपत्र, अलकुशीका वीज, असगंध और सरलकाष्ठ, प्रत्येक २ तोला। यथानियम इस तेलकी मालिश करनेसे वातरक्त और कुष्ठादि विविध प्रकारकी पीड़ा दूर होती है।

महापिण्डीतक (सं० पु०) पिण्डी तनोतीति तन-ड, संज्ञार्थे कन्, ततः महांश्चासौ पिण्डीतकश्चेति, पिण्डाकारफलत्वादस्य तथात्वं। कृष्णवर्ण महामदनवृक्ष, मैनाका पेड़। पर्याय—वाराह। गुण—श्रेष्ठ, कटु, और तिक्तरस, कफ, हृद्रोग और आमाशयरोगनाशक।
(राजनि०)

महापिण्डीतरु (सं० पु०) महांश्चासौ पिण्डीतरुश्चेति। वृक्षविशेष, बड़े मैनेका पेड़। पर्याय—श्वेत पिण्डीतरु, करहाट, क्षर, शल्यकोषतरु, शर, पिण्डी तरु। इसका गुण—कषाय, उष्ण, त्रिदोषनाशक, चर्मरोग और रक्तदोषनाशक माना गया है। (राजनि०)

महापितृयज्ञ (सं० पु०) प्राचीनकालका एक प्रकारका श्राद्ध या पितृयज्ञ जो शाकमेधमें दूसरे दिन होता था।

महापित्तान्तकरस (सं० पु०) रसौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—जैत्री, जायफल, जटामासी, तालीश, माक्षिक, लोहा, अबरक और मैनसिल प्रत्येक बराबर बराबर भाग।

कुल मिला कर जितना हो उतनी चांदीकी भस्म मिला कर जलके साथ दो रत्तीकी गोली बनावे। अनु-पान रोगीके बलाबलके अनुसार स्थिर करना होगा। इसके सेवनसे पित्तरोग, शूल, अम्लपित्त, पाण्डु, हली-मक, अर्श, भ्रम, वमन और क्षिप्तरोग नष्ट होता है।

(रसेन्द्रसारस० बालरक्तरोगाधि०)

महापीठ (सं० क्ली०) सती-अङ्गके प्रसिद्ध इक्कावन पीठ। पीठ देखो।

महापीलु (सं० क्ली०) पीलति प्रतिष्टमते विषपित्तादिक-मिति पील (मृगय्वादयश्च। उण् १।३८) इति कु, ततो महान् पीलुरिति कर्मधा०। एक प्रकारका पीलु वृक्ष। पर्याय—बृहत्पीलु, महाफल, राजपीलु, महावृक्ष, मधु-पीलु। इसके फलका गुण—मधुर, वृष्य, विषनाशक, पित्तप्रशमन, रुचिकर, आमनाशक और प्रदीपक।

महापीलुपति (सं० पु०) इन्द्र।

महापुंस (सं० पु०) महात्मा।

महापुट (सं० क्ली०) औषध पकानेका एक पुट। भाव-प्रकाशमें महापुटपाकका विषय इस प्रकार लिखा है—दो हाथ लंबा, चौड़ा और गहरा तथा चौकोन एक गड्ढा बनावे। उसमें एक हजार वनगोंइठे सजा कर रखे। पीछे मट्टीके एक बरतनमें औषध भर कर अच्छी तरह उसका मुंह बंद कर दे और तब उसे गड्ढेमें रखे हुए गोंइठेके ऊपर रख छोड़े। इसके बाद और भी पांच सौ वनगोंइठे उसमें डाल कर आग बाल दे। इसी-को महापुट कहते हैं। (भावप्र०)

महापुण्य (सं० पु०) १ पवित्र, पुण्यमय। २ एक बोधि-सत्त्वका नाम।

महापुण्या (सं० स्त्री०) एक नदीका नाम।

महापुत्र (सं० पु०) पौत्र, पोता।

महापुमान् (सं० पु०) पर्वतभेद। (भारत भीष्मपर्व)

महापुर (सं० क्ली०) १ वह नगर जो दुर्ग आदिसे भली भांति रक्षित हो। २ तीर्थविशेष। इस तीर्थमें स्नान करनेसे मुक्ति होती है। (भारत १३ पर्व)

महापुराण (सं० क्ली०) महच्च तत् पुराणञ्चेति। विशेष लक्षणयुक्त व्यास प्रणीत अठारह संख्यामें विभक्त पुराणविशेष। विशेष विवरण पुराण शब्दमें देखो।

महापुरी (सं० स्त्री०) राजधानी।

महापुरुष (सं० पु०) महांश्चासौ पुरुषश्चेति। १ श्रेष्ठ नर, महात्मा (योगी ऋषि आदि)। बृहत्संहितामें लिखा है, कि स्वक्षेत्र, उच्चगृह अथवा केन्द्रमें मङ्गलादि पञ्चग्रहके रहनेसे पांच प्रकारके महापुरुष जन्म लेते हैं।

(बृ० स० ६९ अ०)

२ नारायण, भगवान।

"ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं
तीर्थास्पदं शिवविरिञ्चिनुतं शरण्यम्।
भृत्यार्त्तिहं प्रणतपालभवाब्धिपोतं
वन्दे महापुरुष! ते चरणारविन्दम्॥" (आह्निकतत्त्व)

३ महामेदा। ४ दुष्ट, पाजी।

महापुरुषदन्ता (सं० स्त्री०) महापुरुषस्य दन्ता इव मूलानि-यस्याः। शतमूली।

महापुरुषदन्तिका (सं० स्त्री०) महापुरुषदन्ता स्वार्थे कन् स्त्रियां टाप् अत इत्वं। १ महाशतावरी। २ मेदा।

महापुरुषविद्या (सं० स्त्री०) मंत्रविशेष।

महापुरुषीय—वैष्णव सम्प्रदायविशेष। शङ्करदेव नामक किसी महापुरुषसे प्रवर्त्तित होनेके कारण इसका नाम महापुरुषीय सम्प्रदाय हुआ है। १३७० शकमें आसाम प्रदेशके अन्तर्गत अलीपोखरी नामक ग्राममें शिरोमणि-भूयां-कुसुमवर नामक एक कायस्थके घर शङ्करदेवका जन्म हुआ। सुना जाता है कि उनके पिताका पूर्व निवास युक्तप्रदेशमें था। पिताकी देख रेखमें शङ्करने बचपनसे ही संस्कृत शास्त्रादिमें विशेष व्युत्पत्ति लाभ की थी। पीछे वे तीर्थको निकले। काशी, उत्कल, मथुरा, वृन्दा-वन आदि स्थानोंमें परिभ्रमण करते हुए नवद्वीप पहुंचे। यहां उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभुसे वैष्णवधर्ममें दीक्षा प्राप्त की। हरिनामग्रहण उनका मूलमंत्र हुआ था। अनन्तर घर लौट कर आसाम प्रदेशमें वे वैष्णवधर्मका प्रचार करने लगे। आज भी उस प्रदेशके कितने भद्र मनुष्य उनके चलाये धर्ममतका अनुसरण कर चलते हैं।

शङ्करदेव जातिभेद नहीं मानते थे, सभीको हरि-नाम मंत्रमें दीक्षा देते थे। एक समय उन्होंने एक मुसल-मानको भी 'जय हरिनाम' मंत्र दे कर अपना शिष्य बनाया था। बलाई नामक एक मिकिर और गोवर्द्धन

नामक एक नागा जातिको भी उन्होंने अपने धर्ममें दीक्षा दी थी।

कूचविहारके बहुतसे लोग इनके धर्ममतके अनुयायी थे। उनके प्रधान शिष्यका नाम था माधवदेव। महापुरुषीय शूद्र महन्त भी ब्राह्मणको मन्त्र दे सकता है।

शङ्करदेवके दो प्रधान सत्र वा अखाड़े हैं। एक नौगांव जिलेके बड़दोवा ग्राममें और दूसरा गौहाटी जिलेके बडपेटा ग्राममें। दोनों सत्रोंमें हरिकीर्त्तन आदि करनेके बड़े बड़े घर हैं। प्रतिदिन प्रातःकाल, मध्यकाल, अपराह्न और रात्रिकालमें सैकड़ों आदमी मिल कर नामकोर्त्तन करते हैं। वहां वीचमें वीचमें साम्प्रदायिक तथा वैष्णवोंका पवित्र श्रीमद्भागवत ग्रंथ भी पढ़ा जाता है।

इस सम्प्रदायमे जो संसारत्यागी हैं वे केवलिया भक्त कहलाते हैं। बड़पेटा सत्रमे कमसे कम डेढ़ सौ केवलिया भक्त रहते हैं। वे लोग प्रतिदिन चार वार करके हरिकीर्त्तन करते हैं। इस सत्रमे स्त्रियां भी हैं। कीर्त्तनादिके समय वे पुरुषोंके साथ नही मिलतीं, अलग रह कर ही गाती बजाती हैं। इस सत्रमें शङ्करदेव तथा उनके प्रियतम शिष्य माधवका समाधि मन्दिर विद्यमान है। एक एक सत्रमें एक एक खण्ड पत्थर पर शङ्करदेवका चरणचिह्न अंकित देखा जाता है। शङ्करदेव नाम घोषा नामक ग्रंथ लिख गये हैं। कोई कोई कहते हैं, कि उक्त ग्रन्थ अधूरा छोड़ कर ही वे परलोकवासी हुए थे। पीछे उनके शिष्य माधवदेवने उसे शेष किया था।

महापुष्प (सं० पु०) १ कुन्दवृक्ष। २ कृष्णमुद्ग, काला मूंग। ३ रक्त काञ्चन, लाल कनेर। ४ लवणवृक्ष, अमलोनी नामकी घास। ५ सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका कीड़ा। (त्रि०) महापुष्पविशिष्ट।

महापुष्पा (सं० स्त्री०) महत् प्रशस्तं पुष्पमस्याः। १ अपराजिता। २ महाकोशातकी, घीआ-तरोई।

महापूजा (सं० स्त्री०) दुर्गाकी वह पूजा जो आश्विनके नवरात्रमें होती है।

"शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी।
तस्मिन् पक्षे विशेषेण पुरश्चरणतत्परः॥"
(शाक्तानन्दतरङ्गिणी)

महापूत (सं० त्रि०) अति पवित्र।

महापूर्ण (सं० त्रि०) १ सम्पूर्ण, पूरा। (पु०) २ गारुड़ोंके एक अधिपतिका नाम।

महापृष्ठ (सं० पु०) महत् विपुलं पृष्ठं यस्य। १ उष्ट्र, ऊंट। २ बृहत् पृष्ठ, चौड़ी पीठ। ३ ऋग्वेदके एक अनुवाकका नाम जो अश्वमेध यज्ञके सम्बन्धमें है।

महापैङ्ग्य (सं० क्ली०) आश्वलायन-गृह्यसूत्रोक्त वैदिकग्रन्थविशेष।

महापैशाचिकघृत (सं० क्ली०) घृतौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर; चूर्णके लिये जटामांसी, हरीतकी, भूतकेशी, स्थलपद्म, अलकुशीका बीज, वच, जयिन्ती, काकोली, कटकी, छोटी इलायची, वाराहीकन्द, सौंफ, सोयां, गुग्गुल, अपराजिता, आमलकी, रास्ना, गन्धरास्ना और शालपर्णी कुल मिला कर एक सेर; पाकार्थ जल १६ सेर। पीछे घृतपाकके विधानानुसार इसका पाक करना होगा। इस घृतको पीनेसे उन्माद और अपस्मरादि नाना रोग नष्ट होते हैं तथा बुद्धि और स्मृति भी प्रखर होती है। (भैषज्यरत्ना० उन्मादाधिका०)

महापैठीनसि (सं० पु०) एक प्राचीन स्मृतिकार।

महापोटगल (सं० पु०) शरतृणविशेष, नरकट।

महाप्रकाश (सं० पु०) अवतार आदिका आविर्भाव वा विकाश।

महाप्रकृति (सं० स्त्री०) महती श्रेष्ठा प्रकृतिर्जगन्मूलकारणं। भगवती दुर्गा। ये ही सृष्टिका मूल कारण मानी जाती हैं।

"चितिश्चैतन्यभावाद्वा चेतना वा चितिः स्मृता।
महत् व्याप्य स्थिता सर्वं महा वा प्रकृतर्मता॥"
(देवीपुराण ४५ अ०)

महाप्रजापति (सं० पु०) विष्णु।

महाप्रजापती—शाक्यमुनिकी चाची, गौतमी। इन्होंने शाक्यसिंहका लालनपालन किया था।

महाप्रज्ञापारमितासूत्र (सं० क्ली०) बौद्धोंके एक ग्रन्थका नाम।

महाप्रणाद (सं० पु०) चक्रवर्त्तीभेद।

महाप्रताप (सं० त्रि०) अतिशय प्रभावयुक्त, अत्यन्त प्रभावशाली।

महाप्रतिभान (सं० पु०) बोधिसत्त्वभेद।

महाप्रतिहार (सं० पु०) उच्चपदस्थ रक्षिविशेष, प्राचीन-कालका एक उच्च कर्मचारी जो प्रतिहारों अथवा नगर या प्रासादकी रक्षा करनेवाले चौकीदारोंका प्रधान होता था।

महाप्रदान (सं० क्ली०) वृहत् दान।

महाप्रपञ्च (सं० पु०) परिदृश्यमान जगत्प्रपञ्च।

महाप्रभ (सं० त्रि०) महती प्रभा यस्येति। अतिशय दीप्ति-युक्त, जिसमें बहुत चमकदमक हो।

"ततश्चक्रं महाघोर सहस्रार महाप्रभम्।"

(हरिव० भविष्यप० २६।१२)

महाप्रभा (सं० स्त्री०) महती चासौ प्रभा चेति। १ महती दीप्ति, बहुत चमक दमक। २ वर्त्तिकालोक, वत्तीकी रोशनी। ३ पुराणानुसार एक नदीका नाम।

महाप्रभाव (सं० पु०) अत्यधिक वीर्यशाली, बड़ा बल-वान्।

महाप्रभु (सं० पु०) महांश्चासौ प्रभुश्चेति। १ परमेश्वर। २ चैतन्य।

"वन्देऽनन्ताद्भुतैश्वर्यं श्रीचैतन्यं महाप्रभुम्।
नीचोऽपि यत्प्रसादात् स्यात् सदाचारप्रवर्त्तकः॥"

(हरिभक्तिवि० ३ वि०)

३ राजा। ४ संन्यासी वा साधु। ५ इन्द्र। ६ शिव। ७ विष्णु। ८ वल्लभाचार्य जीकी एक आदर सूचक पदवी।

महाप्रलय (सं० पु०) महांश्चासौ प्रलयो जगतामवसा नश्चेति। त्रिलोकनाश। पर्याय—संहार।

कालिकापुराणमें इस प्रलयका विषय इस प्रकार लिखा है,—मन्वन्तर शब्दका अर्थ मनुका अधिकार काल है। एक एक मनु जितने दिन तक प्रजापालन करते हैं उतने दिनका नाम मन्वन्तर है। इकहत्तर दैवयुगका एक एक मन्वन्तर होता है। चौदह मन्वन्तरका एक कल्प और वही कल्प विधाताका एक दिन है। ब्रह्माका एक दिन बीतने पर जगत्में बहुत भारी प्रलय उपस्थित होता है। इस समय महामाया योगनिद्रा ब्रह्माका आश्रय लेती हैं। वह लोकपितामह ब्रह्मा भी अमिततेजा विष्णुके नाभि-कमलमें प्रविष्ट हो कर सुखसे सो जाते हैं। अनन्तर विष्णु स्वयं त्रैलोक्यसंहर्त्ता रुद्ररूपी हो कर पहलेकी तरह समस्त भुवनमण्डलको विनष्ट करने लगते हैं। जब वे वायु और वह्निकी सहायतासे त्रिलोकदाह करनेमें प्रवृत्त होते हैं, तब कृशानुतापसे व्याकुल हो कर महर्लोकवासिगण जनलोक चले जाते हैं। अनन्तर रुद्र प्रलयकालीन जलद-जाल द्वारा महावृष्टि करके ध्रुवलोक पर्यन्तव्यापी उत्तुङ्ग तरङ्गाकुल जलराशिसे भुवनमण्डलको परिपूर्ण कर देते हैं। पीछे वे त्रैलोक्यको अपने उदरमें रख कर नाग-पर्यङ्क पर सो जाते हैं। जब कालानलसे समस्त भुवन दग्ध हो जाते तथा त्रैलोक्यग्राससे परितृप्त परमेश्वर योगनिद्राके वशीभूत होते हैं, तब अनन्त पृथिवीको छोड़ कर उनके समीप चले जाते हैं। अब पृथिवी आधार-रहित हो क्षण भरमें कूर्मपृष्ठ पर गिर कर खण्ड खण्ड हो जाती है। तब कूर्म अपने पैरोंसे ब्रह्माण्डके नीचे जलके ऊपर बहती हुई पृथ्वीको अपनी पीठ पर उठा लेते हैं। पृथिवी ब्रह्माण्ड खण्ड पर गिर कर चूर चूर हो जायेगी, इस भयसे कूर्मरूपी नारायण उसे अपने ऊपर रख लेते हैं। पृथिवी जब चञ्चल जलराशिके संसर्गसे डगमगाने लगती है, तब कूर्म उसे थामनेके लिये बहुतों ब्रह्माण्ड फैला देते हैं।

अनन्तर क्षीरोदसमुद्रमें जहां नारायण लक्ष्मीके साथ सो रहे हैं वहां अनन्त पहुंच कर उन त्रैलोक्य-ग्रासतृप्त परमेश्वरको अपने मध्यमफणसे धारण करते हैं। उनका पूर्व फण पद्माकारमें भगवान्को ऊपरसे ढके रहता है तथा दक्षिण फण उनका उपादान (तकिया), उत्तरफण पादोपधान (पैरका तकिया) और पश्चिम फण तालवृन्त (पंखा) हो कर रहता है। इस फणसे अनन्त उनको पंखा करते हैं। इस प्रकार अनन्त अपनी देहको विष्णु-की शय्या बना देते हैं। उस समय नारायणके नाभि-कमलमें ब्रह्मा और जठरके भीतर त्रैलोक्य विराजित रहते हैं। इसीका नाम महाप्रलय है।

(कालिकापु० २७ अ०) प्रलय शब्द देखो।

महाप्रवृद्ध (सं० पुं०) वर्द्धित आयतन।

महाप्रसाद (सं० पु०) महांश्चासौ प्रसादश्चेति। १ विष्णुका नैवेद्य आदि।

"पादोदकञ्च निर्माल्यं नैवेद्यञ्च विशेषतः।
महाप्रसाद इत्युक्त्वा ग्राह्यं विष्णोः प्रयत्नतः॥"
(एकादशीत०)

विष्णुके पादोदक, निर्माल्य और नैवद्यको महाप्रसाद कहते हैं।

२ जगन्नाथजीका चढ़ा हुआ भात। ३ अतिशय प्रसन्नता। महान् प्रसादोऽस्य। ४ शिव। ५ मांस। ६ अखाद्य पदार्थ।

महाप्रसूत (सं० पु०) एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महाप्रस्थान (सं० क्ली०) प्रस्थीयतेऽस्मिन्निति प्र-स्था-ल्युट्। महत् प्रस्थानं, महापथः तत्र गमन। १ महापथ-गमन, शरीर त्यागनेकी इच्छासे हिमालयकी ओर जाना। कलियुगमें यह निषिद्ध वतलाया गया है। किसीको मरनेकी इच्छा होते हुए महाप्रस्थान नहीं करना चाहिये। मोहवशतः यदि कोई ऐसा करे, तो उसे प्रायश्चित्त करना होगा।

"समुद्रयात्रास्वीकारः कमण्डलुविधारणम्।
द्विजानामसवर्णासु कन्यासूपयमस्तथा॥
देवरेण सुतोत्पत्तिर्मधुपर्के पशोर्वधः।
मांसादनं तथा श्राद्धे वानप्रस्थाश्रमस्तथा।
दत्तायाश्चैव कन्यायाः पुनर्दानं वरस्य च।
दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं नरमेधाश्वमेधकौ।
महाप्रस्थानगमनं गोमेधश्च तथा मखं।
इमान् धर्मान् कलियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः॥"
(उद्वाहतत्त्व)

२ मरण, मौत।

महाप्रस्थानिक (सं० त्रि०) १ महाप्रस्थान-सम्बन्धीय। २ महाभारतका १७वां पर्व।

महाप्राज्ञ (सं० पु०) अतिशय ज्ञानी, बड़ा ज्ञानवान्।

महाप्राण (सं० पु०) महान्तो दीर्घकालस्थायिनः प्राणा यस्य। १ द्रोणकाक, काला कौआ। २ वर्णविशेष। ख, घ, छ, झ, ठ, ढ़, थ, ध, फ, भ, श, ष, स और ह ये सब वर्ण महाप्राण हैं। "वर्गाणां प्रथमतृतीयपञ्चमाः प्रथम तृतीययमौ य र ल वा श्चाल्पप्राणाः अन्ये महाप्राणाः" (सिद्धान्तकौ०)। (त्रि०) ३ महावल, बड़ा ताकतवर।

महाप्रीतिवेगसंभवमुद्रा (सं० स्त्री०) मुद्रा-विशेष।

महाप्रीतिहर्षा (सं० स्त्री०) तान्त्रिकोंके मतानुसार एक देवताका नाम।

महाफणक (सं० पु०) नागभेद।

महाफल (सं० पु०) महत् पूजादौ प्रशस्तं पूज्यं वा फलमस्य। १ विल्ववृक्ष, बेलका पेड। २ नारिकेल वृक्ष, नारियलका गाछ। ३ तालवृक्ष, ताड़का पेड़। ४ पीलू वृक्ष, एक फलदार पेड़का नाम। महच्च तत्फलञ्चेति। (क्ली०) ५ वृहत् फल।

"श्रोत्रियायैव देयानि हव्यकव्यानि दातृभिः।
अर्हत्तमाय विप्राय तस्मै दत्तं महाफलम्॥"
(मनु ३।१२८)

महाफला (सं० स्त्री०) १ इन्द्रवारुणी। २ राजजम्बु, बड़ा जामुन। ३ कटुतुम्बी, छोटा कडुवा कद्दू। ४ महाकोशातकी, घीआ तरोई। ५ मधुर मातुलङ्ग, कमलानीबू। ६ बनवीजपूरक। ७ नीली, नीलका पौधा। ८ नागबला, गुलसकरी।

महाफेज खां—गुजरातके अधिपति सुलतान महमूद विगाड़ाके अधीनस्थ अहादावाद प्रदेशके एक फौजदार। इनका प्रकृत नाम जमाल-उद्दीन-शिलादार था। सुलतान २य मुजफ्फर और बहादुर शाहके राज्यकालमें इन्होंने विशेष प्रतिष्ठा पाई थी।

महाफेजखाना—मुसलमानोंकी कचहरीका एक घर। यहां पूर्ववर्त्ती मुकदमेकी नत्थी रहती है।

महाफेणा (सं० स्त्री०) महती फेणा। हिंडीर, समुद्रफेन। २ काटल नामकी मछलीका कांटा।

महावनिज (सं० पु०) श्रेष्ठ व्यवसायी, बड़ा तिजारती।

महाबन्ध (सं० पु०) योगप्रकरणसे हाथ पांवका बांधना।

महाबन्ध्या (सं० स्त्री०) चिरवन्ध्या रमणी, बांझ स्त्री।

महावभ्रु (सं० पु०) खोहमें रहनेवाला एक प्रकारका जानवर।

महावर्वरिका (सं० स्त्री०) भार्गी, वरंगी।

महावल (सं० क्ली०) महदतिशयितं बलं सामर्थ्यमस्मात् महत् बलमस्येति वा। १ सीसक, सीसा। (पु०) २ बुद्ध। ३ पितरोंके एक गणका नाम।

"महान् महात्मा महितो महिमावान् महाबलः।
गणाः पञ्च तथैवैते पितॄणां पापनाशनाः॥"
(मार्कण्डेयपु० ६।४६)

४ वायु। ५ तामस और रौच्य मन्वन्तरके इन्द्रका नाम। ६ शिवके एक अनुचरका नाम। ७ नागभेद। ८ वंश। ६ तम्बाकूका पौधा। १० धामिनका पेड़। (त्रि०) ११ वलीयान, अत्यन्त वलवान्।

महावल—१ एक जैन राजा। २ एक कवि। शाश्वतकृत कोषके अन्तिम भागमें इनका नाम आया है।

महावलशाक्य (सं० पु०) एक राजाका नाम।

महावला (सं० स्त्री०) १ वलाभेद, पीली सहदेइया। पर्याय—ऋष्यप्रोक्ता, अतिवला, पीतपुष्पी। २ पेटका, पेटारी। ३ पिप्पली, पीपल। ४ नीली वृक्ष, नीलका पौधा। ५ धामनवृक्ष, धौंका पेड़। ६ कार्त्तिकेयकी एक मातृकाका नाम। ७ एक वहुत वड़ी संख्याका नाम। ८ शिवलिङ्गभेद।

महावलाक्ष (सं० क्ली०) एक वहुत वड़ी संख्याका नाम।

महावलातैल (सं० क्ली०) तैलौषध विशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, विजवन्दके मूलका क्काथ ३ सेर, मिलित दशमूलका क्काथ ३२ सेर, जौ, कुलसोंठ और कुलथी उड़दका काढ़ा मिला कर ३२ सेर, दूध ३२ सेर; चूर्णके लिये जीवक, ऋषभक, मेद, महामेद, कंकोली, क्षीरकंकोली, मूंग, कलाय, जीवन्ती, मुलेठी, सैन्धव, अगुरु, श्वेत धूना, सरलकाष्ठ, देवदारु, मजीठ, लाल चन्दन, कुट, इलायची, पीला चन्दन, जटामांसी, शैलज, तेजपत्न, तगरपादुका, अनन्तमूल, वच, शतमूली, असगंध और पुनर्णवा कुल मिला कर १ सेर। इन सव द्रव्योंमें तैलपाकके विधानानुसार यह पाक करना होगा। इस तैलकी मालिश करनेसे सभी प्रकारके वातरोग नष्ट होते हैं। (भैषज्यरत्ना० वातव्याधिरोगाधिकार)

महावलादि (सं० पु० पाचन विशेष। प्रस्तुत प्रणाली—गोपवल्लीका मूल १ तोला, सोंठ १ तोला, इन दोनोंको ३२ तोले जलमें डाल कर लकड़ीकी आंचसे सिद्ध करे। जव जल ८ तोला रह जाय, तव उसे उतार ले। इसीका नाम महावलादि पाचन है। दो वा तीन दिन इस पाचनका सेवन करनेसे शीत, कम्प, दाह और विषम ज्वर नष्ट होते हैं। (भैषज्यरत्ना० ज्वराधिकार)

महावलि (सं० पु०) १ दैत्यपति वलि। २ आकाश। ३ मन। ४ गुफा। ५ जलपात्र।

महावलिन् (सं० त्रि०) अतिशय वलशाली, वहुत वड़ा ताकतवर।

महावलिपुर—मन्द्राज प्रदेशके चेङ्गलपट जिलान्तर्गत एक अति प्राचीन ग्राम। यह अक्षा० १२° ३६′ ५५″ उ० तथा देशा० ८०° १३′ ५५″ पू० मन्द्राज शहरसे ३२ मील दक्षिण और चेङ्गलपटसे १५ मील दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। स्थानीय लोग इसे महावल्लिपुर, मावल्लिपुर, मामल्लपुर और मल्लपुर भी कहा करते हैं। अंगरेजोंने इसका The Seven Pagodas नाम रखा है। यहां श्रीकृष्णरथ, धर्मराज वा धर्मरथ, भीमरथ, अर्जुनरथ और द्रौपदीरथ इन पांच नामोंके पांच वड़े वड़े पत्थरके महल हैं। वे सव महल सिर्फ एक वड़े खंभे पर टिके हुए हैं। अलावा इसके समुद्रके किनारे विष्णु और शिवके दो मन्दिर पृथक् पृथक् हैं। इन्हीं सात नामोंसे अंगरेजोंने इसका The Seven Pagodas वा सात मन्दिर नाम रखा है।

दक्षिण भारतमें यही सव रथादि सर्वप्रधान तथा देखने लायक हैं। प्रत्नतत्त्वविद्मात्नको ही कमसे कम एक वार यह स्थान अवश्य देख आना चाहिये। यहां देखने तथा आलोचना करनेके अनेक पदार्थ हैं।

यहांके प्रत्नतत्त्व साधारणतः तीन भागोंमें विभक्त हो सकते हैं:—१ला ग्रामके दक्षिणमें अवस्थित ५ रथ; २रा ग्रामके पश्चिममें विस्तृत गुफा और एकस्तम्भगठित मूर्त्ति प्रभृति, ३रा समुद्रतीरस्थ विष्णु और शिवमन्दिर। इनमें शेषोक्त मन्दिर समुद्रगर्भशायी हो गया है।

यहांके भास्कर और शिल्प-नैपुण्यमें कृष्णमण्डप सर्वश्रेष्ठ और मनोरम है। इस मण्डपमें श्रीकृष्णका गोवर्द्धन धारण और इन्द्रके क्रोधसे व्रजस्थ गो और गोपियां जो व्याकुल हो गई थी उनके चित्र वड़े ठिकानेसे खींचे गये हैं। श्रीकृष्णके निकट गायें अपने वछड़ेको दूध पिला रही हैं। दाहिनी वगलमें एक जीवन्त वृषकी मूर्त्ति खड़ी है, देखनेसे ही चमत्कृत होना पड़ता है। ऐसी सजीव मूर्त्ति और कहीं भी देखनेमें नहीं आती। अंगरेज दर्शक 'श्रीकृष्णकी जगह इन्द्रको और इन्द्रके क्रोधकी जगह वलके प्रति मरुद्गणोंके क्रोधका उल्लेख कर वड़े भ्रममें पड़ गये हैं।

कृष्णमण्डपसे थोड़ी दूर उत्तर अर्जुनका 'तपो-

मण्डप' है। यह तपोमण्डप ६६ फुट लंबे और ४३ फुट ऊंचे एक बड़े पत्थरका बना हुआ है। इसका भास्कर-कार्य देखने लायक है। भारतवर्षमें ऐसा कहीं भी नजर नहीं आता। स्थापत्य और शिल्पविद् फार्गुसन्‌साहबने इसकी गठन देख कर लिखा है, कि यहांके स्थापत्यमें नाना प्रकारका प्रभाव दिखाई देता है। इसकी यदि सम्यक् आलोचना की जाय, तो भारतीय देवतत्त्वका एक अभिनव अध्याय बन सकता है। ठीक किस समय यह पुराकीर्त्ति सम्पन्न हुई है, इसका पता लगाना कठिन है। पर हां, इतना जरूर कह सकते हैं, कि १०वीं शताब्दीसे दो एक वर्ष पहले इसका निर्माणकार्य शेष हुआ है। रास्तेके किनारे पत्थरके सतके निकट एक दल वानरकी मूर्त्ति है। पत्थर पर वानरका स्वभावोचित क्या ही चमत्कार हावभाव खींचा गया है। इसके समीप दक्षिण ओर जहां बहुत-सी गुहा खोदित हैं, उसीके मध्य ध्यानस्थ विराट् पुरुषकी मूर्त्ति मौजूद है। मूर्त्तिकी लम्बाई डेढ़ हजार फुटसे कम नहीं होगी। ऐसी बड़ी ध्यानस्थ मूर्त्तिको भारतवर्षमें किसीने भी नहीं देखा होगा। इससे बहुतेरे दैत्यपति वलिकी मूर्त्ति और कोई जैनकीर्त्ति समझते हैं।

इस विराट् मूर्त्तिके समीप १४-१५ गुहा और मन्दिर हैं। प्रत्येक गुहा एक एक ऋषिका आश्रम समझी जाती है। इसमें कारीगरी और आधुनिक शिल्प-नैपुण्यका अभाव नहीं है।

फार्गुसन साहबने लिखा है, कि यहांका समुद्रतीर-वर्त्ती पञ्चरथ ही सर्वप्राचीन और पुराकीर्त्तिका ज्वलन्त निदर्शन है। इस पञ्च रथमें एक रथ शेष चारसे बहुत दूरमें है। उसके चारों ओर शैलमाला है, उसीको लोग अर्जुनका रथ कहते हैं। इस अर्जुन रथको छोड़ कर बाकी चार रथ उत्तर दक्षिणकी ओर पास ही पास इस भावमें खड़े हैं मानो एक बड़े पत्थर वा पहाड़को काट कर वे तय्यार किये गये हों। उत्तर ओरवाला पहला रथ उतना बड़ा नहीं है। वह एक पर्णशाला मात्र है। इसका बाहरी घेरा ११ वर्गफुट और ऊंचाई १६ फुट है। यह सम्पूर्ण होने पर भी इसके बीचमें सिंहासन वा कोई देवमूर्त्ति नहीं है। उसके दक्षिणांशमें उसीके जैसा एक दूसरा रथ दिखाई देता है। उसकी लम्बाई १६ फुट, चौडाई ११ फुट और ऊंचाई २० फुट है। तीसरे रथका आकार भिन्न प्रकारका है। इसकी लम्बाई ४२ फुट, चौड़ाई २० फुट और ऊंचाई २५ फुट है। इसके बाहरी भागमें अच्छी कारीगरी है किन्तु भीतरी भागमें एक जगह ऐसा है मानो किसी दैव-दुर्घटनासे समस्त अंश पूरा नहीं होने पाया। भूमिकम्पसे अथवा किसी और कारणसे वह फट गया है। अन्तिम रथ देखनेमें बड़ा ही कौतुकप्रद है। यह २७ फुट लंबा, २५ फुट चौड़ा और ३४ फुट ऊंचा है। इसके बाहरी भागमें यथेष्ट स्थापत्य मौजूद है, किंतु भीतरी भागमें उतनी कारीगरी नहीं है। किसी किसीका अनुमान है, कि ऊपरी भाग शेष हो जाने पर पीछे कहीं वह फट न जाय, इस भयसे किसीको भी भीतर जा कर काम करनेका साहस नहीं हुआ।

उक्त चारों रथमे कुछ दूर अर्जुनरथ अवस्थित है। इस रथकी बनावट उन चारोंसे कुछ और तरहकी है। यह रथ सत या गोपुर किस भावमें बनाया गया है ठीक ठीक नहीं कह सकते। कोई कोई समझते हैं, कि वे सभी रथ बौद्धोंके विहारके ढंग पर बने हुए हैं।

उक्त अपूर्व रथोंके स्थापयिता कौन है? उसका आज तक भी पता नहीं चला है। इन सब रथोंसे छठीं या ७वीं सदीके अक्षरोंमें खोदित शिलालिपि आविष्कृत तो हुई है पर उसमें रथनिर्माताका कोई परिचय नहीं है। अभी प्रवाद है, कि कुरुम्बरोंने वे सब रथ बनवाये है। वे लोग पहले बौद्ध वा जैन धर्मावलम्बी थे। पीछे चालुक्य राजाओंके प्रभावसे शैव वा वैष्णवधर्म-ग्रहण करनेको वाध्य हुए। इतिहासकारोंका अनुमान है, कि चालुक्य राजाओंके यत्नसे तथा उक्त कुरुम्बगणोंके हाथसे वे सब रथ बनाये गये हैं। कोई कोई कहते हैं, कि कुरुम्ब लोग पहले जिस ढंगसे अपना अपना घर बनाते थे, उसी ढंग पर उक्त रथ बनाये गये हैं। नीलगिरिके पहाड़ी आज भी जिस ढंगसे घर बनाते हैं, भीमरथ ठीक उसी ढंग पर बना हुआ है। द्रौपदीरथ देखनेसे ही मालूम होता है, कि दक्षिण भारतमें जिस प्रकार आटचाला बनाई जाती है उसी प्रकार इसकी भी

बनावट है। दाक्षिणात्यमें आज भी जिस तरीकेसे देवालय बनाया जाता है, अर्जुन और धर्मराजरथ भी उसी तरह बने हुए हैं। जो कुछ भी हो, वे सब कीर्त्तियां हजार वर्ष पहलेकी बनी हुई हैं इसमें संदेह नहीं।

पहले ही लिख आये हैं, कि उक्त रथको छोड़ कर यहां और भी कितनी खोदित गुहा हैं। वे सब गुहा उत्तर भारतीय गुहा-मन्दिर जैसे कारुकार्यविशिष्ट तो नहीं हैं पर उतने खराब भी नहीं हैं। वे सब शायद ६ठी शताब्दीके बने होंगे।

बलिराजकी महामूर्त्तिके समीप उसके अनुचर वामनपद्मराजकी मूर्त्ति, उसकी स्त्रियोंकी मूर्त्ति, चार वीर, पांच संन्यासी तथा गुहामन्दिरके मध्य ऋषिमूर्त्ति विराजित हैं। उसके चारों ओर सिंह, बाघ, चीता, हरिण आदिकी मूर्त्तियां भी शोभा देती हैं।

यहांकी शैलमालाके मध्यभागमें बुद्ध और उनके शिष्योंकी मूर्त्ति है। पास होमें नागराज वासुकी और सर्पच्छत्र भी दिखाई देता है। दाहिनी ओर कुछ राजाओं, रानियों, गरुड और तरह तरहके पशुपक्षियोंकी मूर्त्ति मौजूद है।

बुद्ध और उनके शिष्यकी मूर्त्तिके समीप कुछ हाथी और सुगठित मूर्त्ति नजर आती हैं। इन सब मूर्त्तियोंमें कारीगरने अपनी कारीगरी अच्छी तरह दिखलाई है। फार्गुसन साहबका कहना है, कि यहांके मन्दिरादि ११वीं सदीके और खोदित गुहा उससे भी कुछ बादकी बनी होगी।

यहांका समुद्रतीरवर्त्ती शिवमन्दिर अभी समुद्रगर्भशायी होने पर भी वराहस्वामीका मन्दिर आज भी प्राचीन कीर्त्तिकी घोषणा करता है। इस मन्दिरमें शिवलिङ्ग और नारायणकी मूर्त्ति एकमें जुड़ी हुई है। महाबलिपुरसे रोमक, चीन, पारस्य आदि स्थानोंके प्राचीन सिक्के निकाले गये हैं। यहांसे एक कोस उत्तर शालुवांकुप्पं नामक ग्राम है। वहां भी कुछ गुहा, शिलालिपि और स्थापत्यके निदर्शन मौजूद हैं।

महावली (सं० त्रि०) महाबलिन देखो।

महाबलेश्वर (सं० क्ली०) शिवलिङ्गभेद, गोकर्णशलिङ्ग।

महाबलेश्वर—बम्बई प्रदेशमें सतारा जिलेके जौली उपविभागान्तर्गत एक स्वास्थ्यनिवास। यह अक्षा० १७° ५६´ उ० और देशा० ७३° ४०´ पू० पश्चिमघाट पर्वतकी महाबलेश्वर शाखाके ऊपर अवस्थित है।

पश्चिमघाट पर्वतसे इसकी ऊंचाई ४७०० फुट है। यह स्थान जनसाधारणके लिये विशेष प्रीतिकर है। गिरिशृङ्गकी निर्मल निर्झरिणीकी सलिलराशि, प्रशान्त प्रकृतिकी अपूर्व सुन्दरता और सान्ध्य विहारोपयोगी प्रशस्त मैदान वा पथ इस स्थानकी रमणीयताको बढ़ाता है। यहां बैलगाड़ी आने जानेका चौड़ा रास्ता भी बनाया गया है। इस कारण जो कमजोर दुर्बल व्यक्ति यहां स्वास्थ्यलाभकी आशासे आते हैं, उन्हें किसी प्रकारका कष्ट नहीं होता। बम्बईसे ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे-लाइन पूना तक आई है। यहांसे मुसाफिर घोड़े गाड़ीकी सवारीसे उक्त स्थानमें जाते हैं। जब देखा गया, कि इतनी दूरसे सवारी द्वारा जानेमें दुर्बल रोगियोंको कष्ट होता है, तब सावित्री नदीके मुहानेसे ले कर दासगाँव तक हवाई जहाज आने जानेका रास्ता निकाला गया है। दासगांवसे समतल क्षेत्र और घाटश्रेणी पार कर ३५ मीलका रास्ता तै करनेसे महाबलेश्वर जाया जाता है।

१८२८ ई०में बम्बई प्रदेशके शासनकर्त्ता सर जान मैकमने सताराके राजाको कुछ दे कर यह स्वास्थ्य-प्रद गिरिप्रदेश खरीदा था। आज भी मैकम पेट नामक ग्राम उनकी स्मृतिकी घोषणा करता है। इस स्थानकी ऊंचाई थाना जिलेके मैथरेन (२४६० फीट)से अधिक रहनेके कारण यहांका आदर दिन पर दिन बढ़ता ही जाता है। वर्षाकालमें यहां अधिक वर्षा होती है, इस कारण उस समय बहुत कम लोग आते हैं। वसन्त और शरत्कालमें यह विशेष स्वास्थ्यप्रद और सौन्दर्यपूर्ण रहता है। इस समय बम्बई गवर्मेण्टके प्रधान प्रधान राजकर्मचारी इस शैलावासमें आ कर राजकार्यकी पर्यालोचना करते हैं।

म्युनिसपलिटीके अधीन रह कर इस नगरने काफी उन्नति की है। यहां गिरजा, पाठागार, औषधालय, होटल और बहुतसे समितिगृह हैं। १८६४ ई०में यहांका विख्यात फ्रेरीहाल और पाठागार स्थापित हुआ। इसके अलावा अङ्गरेजोंके रहने लायक सौसे ऊपर बंगले बनाये गये हैं।

महाबलेश्वर वर्त्तमान कालमे एक प्रधान शैवतीर्थ समझा जाता है। स्कन्दपुराणमे सह्याद्रिखण्डके महाबलेश्वरमाहात्म्यमें, कृष्ण माहात्म्यमें और पद्मपुराणीय कार्त्तिक-महात्म्यमें इस स्थानका माहात्म्य सविस्तार लिखा है।

महाबलेश्वर-माहात्म्यमें लिखा है,—

पाद्मकल्पमें महाबल और अतिबल नामक दो बलिष्ठ दैत्य रहते थे। उनके उपद्रवसे पृथिवी थर्रा गई थी। हरिहर ब्रह्मादि सभी देवगण मिल कर उनका वध करने आये। दोनों दलमें घनघोर युद्ध चला। आखिर विष्णुके हाथसे अतिबल मारा गया। भाईको मरा देख महाबलने अत्यन्त क्रुद्ध हो घमसान मायायुद्ध ठान दिया। देवताओंने बचावका कोई रास्ता न देख महामायाकी शरण ली। महामायाने देवताओंकी रक्षाके लिये महाबलको मोहित किया। अब महाबलने देवताओंको सम्बोधन कर कहा, 'देवगण! मैं तुम लोगोंसे संतुष्ट हो गया। जो इच्छा हो वर मांगो।' 'हम लोगोंके हाथसे तुम्हारी मृत्यु हो, यही हम लोग चाहते हैं' देवताओंने कहा। इस पर दैत्य राजी हो गया और बोला, 'शिव! इस सह्याद्रिके ऊपर आपको मेरे नामसे लिङ्गरूपमें रहना होगा। यहां आपके मस्तकसे पञ्चगङ्गाकी उत्पत्ति होगी। विष्णु! आप भी मेरे भाईके नामसे लिङ्गरूप धारण करें। पद्मयोनि! आप मेरी सेनाके नामसे कोटिश नाम धारण कर इस क्षेत्रमें विराजें। वेद और वेदगण भी यहां रह कर लोगोंके भोग और मोक्षदायक बनें। बृहस्पतिके कन्याराशिमें जानेसे जो व्यक्ति इस तीर्थमें आयेगा, उसका दारिद्र्य दुःख रहने नहीं पायेगा।' पीछे महाबलके प्रार्थनानुसार महाबलेश्वर, अतिबलेश्वर और कोटीश्वर ये तीन लिङ्ग आविर्भूत हुए।

ब्रह्माने निकटवर्त्ती ब्रह्मारण्यमे आ कर यज्ञमण्डप बनाया और देव ऋषि आदिको बुला कर एक महायज्ञका अनुष्ठान किया। उस यज्ञके प्रभावसे कृष्णा, वेणी ककुद्मती गायत्री और सावित्री इस पञ्चगङ्गाकी उत्पत्ति हुई। इस पञ्चगङ्गाके सङ्गममे स्नान करनेसे सभी पाप जाते रहते हैं।

पहली तीन नदी पूर्वसमुद्रमें और शेषोक्त दो पश्चिम समुद्रमें गिरती हैं। अलावा इसके लोगोंको मुक्ति देनेवाले और भी ८ तीर्थ उत्पन्न हुए। इन आठ तीर्थोंके नाम हैं ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु, चक्र, हंस, आरण्य, मलापह और शिवमुक्तिप्रद।

यहां पर कोई स्वतन्त्र लिङ्गमूर्त्ति नहीं है। पर्वतके जिस जिस अंश हो कर धारा निकली है, वह वह अंश लिङ्ग माना गया है। यहा पर आधुनिक कालमें एक बड़ा मन्दिर बनाया गया है।

वर्त्तमानकालमे महाराष्ट्रोंके निकट यह एक प्रधान तीर्थ समझे जाने पर भी किसी प्राचीन पुराणमें और तो क्या, ज्योतिर्लिङ्ग समूहमें भी इस महाबलेश्वरका उल्लेख नहीं है। शिवाजी और उनके वंशधरगण मन्दिर-संस्कार और देवसेवाके लिये काफी जमीन दे गये हैं। उसी समयसे इस स्थानका माहात्म्य प्रचारित हुआ है।

महाबाध (सं० त्रि०) अत्यन्त व्यथा वा यन्त्रणादायक।

महाबार्हत (सं० त्रि०) महाबृहती-सम्बन्धीय।

महाबाहु (सं० त्रि०) महान्तौ बाहू यस्य। १ दीर्घ बाहु, लम्बी भुजावाला। २ बली, बलवान्। (पु०) ३ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। ४ विष्णु। ५ दानवभेद।

महाबीज (सं०-पु०) १ उत्पत्तिका प्रधान कारण। २ मूलबीज। ३ शिव। ४ पारद, पारा।

महाबीज्य (सं० क्ली०) वस्तिदेश, पेड़ू।

महाबुद्ध (सं० पु०) एक प्रकारके बुद्ध। ये साधारण बुद्धोंसे श्रेष्ठ माने जाते हैं।

महाबुद्धि (सं० त्रि०) १ अतिशय बुद्धिमान्, जिसकी बुद्धि बड़ी तीव्र हो। (पु०) २ राक्षसभेद।

महाबुध्न (सं० त्रि०) विस्तृत तलयुक्त, जिसका तल चौड़ा हो।

महाबृहती (सं० स्त्री०) १ एक वैदिक छन्द। यह तीन पादका होता है और इसके प्रत्येक पादमें १२ वर्ण होते हैं। २ गुल्मभेद।

महाबोधि (सं० पु०) बुध्यते सर्वं जानातीति बुध-(सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११७) इति इन्, महांश्चासौ बोधिश्चेति। बुद्धदेव।

महाबोधिसङ्घाराम (सं० पु०) बौद्ध-सङ्घारामभेद। बोधगया देखो।

महाबोध्यङ्गवती (सं० स्त्री०) तन्त्रोक्त देवताभेद ।

महाब्रह्मन् (सं० पु०) परम ब्रह्म ।

महाब्राह्मण (सं० पु०) महानतिशयनिन्दितः ब्राह्मणः । १ निन्दित ब्राह्मण, निकृष्ट ब्राह्मण । २ वह ब्राह्मण जो मृतक कृत्यका दान लेता हो, कट्टहा । साधारणतः लोकमें ऐसा ब्राह्मण निन्दित माना जाता है ।

महाभट (सं० पु०) महाश्चासौ भटश्चेति । अतिशय शूरवीर, बड़ा भारी योद्धा ।

"तदोजसा दैत्यमहाभटार्पितं चकासदन्तःख उदीर्णदीधिति ॥"

(भागवत ३।१९अ०)

महाभक्तपाकवटी (सं० स्त्री०) वटिकौषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—सोनामाखी, पारा, गंधक, हरताल, मैनसिल, अबरक, कान्तलौह (कांतसार), निसोथ, दन्तीमूल, मोथा, चीता, सोंठ, पीपर, मरिच, हरीतकी, अमानी, काला जीरा, हींग, कटुकी, सैन्धवलवण, जायफल और यवक्षार, प्रत्येक २ तोला इन्हें अच्छी तरह चूर कर एक साथ मिलावे । पीछे अदरक, सम्हालू, सूर्यावर्त्त, ज्योतिष्मती, प्रत्येकके रसमें सात सात बार भावना दे कर एक रत्तीकी गोली बनावे । इसका अनुपान लवङ्गचूर्ण है । आमरोग, चिराग्निमान्द्य, कोष्ठबद्ध, शोथ, उदरी रोग, अजीर्ण, शूल और त्रिदोषज्वरमें यह औषध बहुत लाभदायक है । (रसेन्द्रसारस० अजीर्णाधि०)

महाभद्र (सं० पु०) १ पर्वतभेद । २ मेरु पर्वतके उत्तर एक सरोवरका नाम ।

'अरुणोदं सरः पूर्वं मानसं दक्षिणे तथा ।
शीतोदं पश्चिमे मेरोर्महाभद्रं तथोत्तरे ॥"

(मार्कं०पु० ५५।३)

महाभद्रा (सं० स्त्री०) महद् भद्रं मङ्गलं यस्याः टाप् । १ गङ्गा । २ काश्मरी ।

महाभय (सं० क्ली०) १ अतिशय भय, बड़ा भारी डर । (पु०) २ महाभारतके अनुसार अधर्मके एक पुत्रका नाम । जो निर्ऋतिके गर्भसे उत्पन्न हुआ था ।

महाभया (सं० स्त्री०) पुराणानुसार एक नदीका नाम ।

महाभरी (सं० स्त्री०) वचविशेष, महाभरी वच । यह कफनाशक मानी गई है ।

महाभल्लातकगुड़ (सं० क्ली०) औषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—नीमकी छाल, श्यामालता, अतीस, कटुकी, वला, डमर, त्रिफला, मोथा, पित्तपापड़ा, अनन्तमूल, वच, खैरकी लकड़ी, लाल चन्दन, अकवन, सोंठ, कचूर, वरड्डी अड़ूसके मूलकी छाल, चिरायता, गुड़ूचीके मूलकी छाल, विद्धडक, गोपालककर्कटीका मूल, मुरगामूल, विडङ्ग, इन्द्रजौ, विष, चितामूल, हस्तिकर्ण, पलासकी छाल, गुलञ्च, घोड़नीमकी छाल, परवलका पत्ता, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, पीपर, अमलतासके फलकी मज्जा, कलियाकी लता, ओल, चीनाघास, मजीठ, चाकुन्दका बीज, तालमूली, प्रियंगु, कटफल, शरपुङ्ख, शिरीषकी छाल प्रत्येक दो पल, पाकार्थ जल ६४ सेर, शेष ८ सेर, भल्लातक ३ हजार, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर दोनों प्रकारके काढ़ेको अच्छी तरह छान कर एक साथ मिला दे । पीछे उसमें पुराना गुड़ १२॥० सेर और १ हजार भल्लातककी मज्जा दे कर पाक करे । इसके बाद त्रिकटु, त्रिफला, मोथा, सैन्धव और यमानी, प्रत्येक एक पल ; दारचीनी, तेजपत्र, इलायची और नागेश्वर प्रत्येक दो तोला, इन्हें अच्छी तरह चूर्ण कर उक्त काढ़ेमें डाल दे । अनन्तर गुड़पाकके विधानानुसार पाक करके उसे एक घीके बरतनमें रखे । इसका अनुपान गुलञ्चका क्वाथ और दूध तथा पथ्य उष्ण अन्न है । चिकित्सकको रोगीका बलाबल देख कर मात्रा स्थिर करनी चाहिये । इस गुड़का सेवन करनेसे सभी प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त, उदावर्त्त, अर्श, पाण्डु आदि विविध रोग अति शीघ्र आरोग्य होते हैं । कुष्ठाधिकारमें यह एक अत्युत्तम औषध मानी गई है । (भैषज्यरत्ना० कुष्ठाधि०)

महाभाग (सं० त्रि०) महान् भागः यस्य । १ बड़ा भाग्यवान्, किस्मतवर । (पु०) २ बड़ा भाग्य, किस्मत ।

महाभागवत (सं० पु०) १ परम वैष्णव । २ उपपुराणभेद, महाभागवतपुराण । भागवत देखो । ३ बारह महाभक्त अर्थात् मनु, सनकादि, नारद, जनक, कपिल, ब्रह्मा, बलि, भीष्म, प्रह्लाद, शुकदेव, धर्मराज और शम्भु । ४ २६ मात्राओंके छन्दोंकी संज्ञा ।

महाभागा (सं० स्त्री०) दाक्षायिणीका एक नाम ।

महाभागिन् (सं० त्रि०) सौभाग्यशाली, किस्मतवर ।

महाभागी (सं० त्रि०) महाभागिन् देखो।

महाभाग्य (सं० क्ली०) महच्च तत् भाग्यञ्चेति। प्रबल भाग्य, शुभादृष्ट।

महाभार (सं० पु०) महान् भारः। अतिशय भार, भारी बोझा

महाभारत (सं० क्ली०) महत् भारतं, यद्वा महान्तं भारं तनोतीति महाभार तन ड। व्यासप्रणीत इतिहासशास्त्र। इसकी नाम-निरुक्ति इस प्रकार है :—

"एकतश्चतुरो वेदा भारतञ्चैतदेकतः।
पुरा किल सुरैः सर्वैः समस्य तुलया धृतम्॥
चतुर्भ्यः सरहस्येभ्यो वेदेभ्योऽभ्यधिक यदा।
तदा प्रभृति लोकेऽस्मिन् महाभारतमुच्यते।
महत्त्वाद् भारतत्वाच्च महाभारतमुच्यते॥"

(भारत-आ० प० १ अध्याय)

प्राचीन समयमें देवताओंने सम्मिलित हो कर एक ओर चारों वेद और दूसरी ओर इस महाभारतको तराजूके पलड़ों पर रखा था। वजनमें यह महाभारत ही अधिक हुआ उसी समयसे इसका नाम महाभारत पड़ा। यह महत्त्व और गुरुत्वमें वेदकी अपेक्षा बढ़ा चढ़ा है। सुतरां इसी महत्त्व और गुरुत्वके कारण ही इसका नाम महाभारत हुआ।

पर्वाध्याय।

प्रचलित महाभारतकी अनुक्रमणिकाके अनुसार महाभारत प्रधानतः अठारह पर्वों में समाप्त हुआ है। इन पर्वोंमें १०० पर्वाध्याय हैं। जैसे,—

१ पहला अनुक्रमणिका पर्व, २ पर्व-संग्रहपर्व, ३ पौष्यपर्व, पौलोम पर्व, ५ आस्तीक पर्व, ६ आदिवंशावतरणपर्व, ७ विचित्र सम्भव पर्व, ८ जतुगृह दाहपर्व, ९ हिड़िम्ब पर्व, १० वकवध पर्व, ११ चैत्ररथ पर्व, १२ पाञ्चालीका स्वयंवर पर्व, १३ क्षत्रिययुद्धमें जयलाभ पूर्वक पाण्डवोंका वैवाहिक पर्व, १४ विदुरागमन पर्व, १५ राज्यलाभ पर्व, १६ अर्जुनवनवास पर्व, १७ सुभद्राहरण पर्व, १८ यौतुकाहरण पर्व, १९ खाण्डवदाह पर्व, २० सभाक्रियापर्व, २१ मन्त्रणा पर्व, २२ जरासन्धवध पर्व, २३ दिग्विजय पर्व, २४ राजसूयिकपर्व, २५ अर्घ्याभिहरण पर्व, २६ शिशुपालवध पर्व, २७ द्यूत पर्व, २८ अनुद्यूत पर्व, २९ अरण्ययात्रा पर्व, ३० किर्म्मीरवध पर्व, ३१ अर्जुनाभिगमन पर्व, ३२ किरातार्जुनयुद्ध पर्व, ३३ इन्द्रलोकगमन पर्व, ३४ धर्म और करुणा-रसयुक्त नलोपाख्यान पर्व, ३५ कुरुराज युधिष्ठिरकी तीर्थयात्रा पर्व, ३६ यक्षयुद्ध पर्व, ३७ निवातकवच युद्ध-पर्व, ३८ अजगर पर्व, ३९ मार्कण्डेय समस्या पर्व, ४० द्रौपदी और सत्यभामा संवाद पर्व, ४१ घोषयात्रा पर्व, ४२ द्रौपदी-हरण पर्व, (इस पर्वमें जयद्रथ द्वारा द्रौपदीका हरण, पतिव्रता सावित्रीके अद्भुत चरित्रका वर्णन और रामोपाख्यान सम्मिलित है) ४३ कुण्डलाहरण पर्व, ४४ आरणेय पर्व, ४५ विराट् पर्वमें पाण्डवोंका विराट् नगरमें आना और अज्ञातवासका पर्व, ४६ कीचकवध पर्व, ४७ गोहरणपर्व, ४८ अभिमन्यु और उत्तराका वैवाहिक पर्व, ४९ सैन्योद्योग पर्व, ५० सञ्जययान पर्व, ५१ चिन्तान्वित धृतराष्ट्र पर्व, ५२ गुह्यतम अध्यात्मज्ञान विषयक सनत सुजात पर्व, ५३ यान-सन्धि पर्व, ५४ भगवद्यान पर्व (इस पर्वमें मातलिका उपाख्यान, गालव चरित, कृष्णका प्रवेश और विदुला पुत्रका शासन आदि वर्णित हैं), ५५ कृष्ण और कर्णका संवाद पर्व, ५६ कुरुपाण्डवका निर्वाण पर्व, ५७ रथातिरथ संख्या पर्व, ५८ कोपवर्द्धन, उलूक दूताभिगमन पर्व, ५९ अम्बोपाख्यान पर्व, ६० अद्भुत भीष्माभिषेक पर्व, ६१ जम्बूद्वीप सन्निवेश पर्व, ६२ द्वीपविस्तारकी कीर्त्तनात्मा भूमि पर्व, ६३ भगवतगीता पर्व, ६४ भीष्मवध पर्व, ६५ द्रोणाभिषेक पर्व, ६६ संसप्तकवध पर्व, ६७ अभिमन्युवध पर्व, ६८ प्रतिज्ञापर्व, ६९ जयद्रथवध पर्व, ७० घटोत्कच-वध पर्व, ७१ लोमहर्षण द्रोणवध पर्व, ७२ नारायणास्त्र त्याग पर्व, ७३ कर्ण पर्व, ७४ शल्यवध पर्व, ७५ तालाब-प्रवेश पर्व, ७६ गदायुद्ध पर्व, ७७ सारस्वत तीर्थकीर्त्तन पर्व, ७८ अत्यन्त बीभत्स सौप्तिक पर्व, ७९ सुदारुण ऐषीक पर्व, ८० जल प्रादानिक पर्व, ८१ स्त्रीविलाप पर्व, ८२ कुरुगणका श्राद्धपर्व, ८३ ब्राह्मणवेशधारी चार्वाक राक्षस-वध पर्व, ८४ धीमद्धर्मराजका अभिषेक पर्व, ८५ गृहपरिभाग पर्व, ८६ शान्ति पर्व, ८७ राजधर्मानुशासन पर्व, ८८ आपद्धर्म पर्व, ८९ मोक्षधर्म पर्व, इसमें शुभ प्रश्नाभिगमन, ब्रह्मप्रश्नानुशासन, दुर्वासा

प्रादुर्भाव और मायाके साथ कथोपथन वर्णित है), ६० अनुशासनिक पर्व (इसमें धीमान भीष्मकी स्वर्गारोहणकी बात लिखी है), ६१ पीछे सर्वपापप्रणाशक आश्वमेधिक पर्व, ६२ आध्यात्मविषयक अनुगीता पर्व, ६३ आश्रमवास पर्व, ६४ पुत्रदर्शन पर्व, ६५ नारदागमन पर्व, ६६ महाप्रास्थानिक पर्व, ६७ स्वर्गारोहणिक पर्व, ६८ खिल नामक हरिवंश पर्वान्तर्गत हरिवंश पर्व, ६६ विष्णु पर्व (इसमें शिवचर्य्या और कृष्ण द्वारा कंस वधका उल्लेख है), १०० पीछे अति अद्भुत भविष्यपर्व, महामति व्यासने सौ पर्वोंको लिखा है। सूतकुलोद्भव लोमहर्षणके पुत्र उग्रश्रवाने नैमिषारण्यमें क्रमसे अठारह पर्वोंको संक्षेपमें वर्णन किया। उसी संक्षिप्त विवरणको हम यहां उल्लेख करते हैं।

पौष्य, पौलोम आस्तीक आदिवंशावतरण, सम्भव, लक्षागृहदाह, हिडिम्बवध, चैत्ररथ, द्रौपदीका स्वयंवर, वैवाहिक, विदुराका आगमन, राज्यलाभ, अर्जुनका वनवास, सुभद्राहरण, यौतुकाहरण, खांडववनदाह और मयदर्शन—ये सब विषय आदि पर्वमें वर्णित हैं।

पर्वो के विषयोंका वर्णन।

पौष्यपर्व।

इसमें उतङ्कका माहात्म्य वर्णित है। पैलोम पर्वमें भृगुवंशका सविस्तार वर्णन है। आस्तीक पर्वमें गरुड तथा सर्पोंकी उत्पत्ति, और समुद्रमन्थन, उच्चैःश्रवाकी उत्पत्ति और महाराज परीक्षितके पुत्र जन्मेजयके सर्पयज्ञानुष्ठानके समय भरतवंशीय महात्माओंके सम्बन्धकी महाभारतीय कथा वर्णित है।

सम्भव पर्व।

इसमें राजाओं और अन्यान्य वीरों तथा द्वैपायनकी उत्पत्ति, देवताओंके अंशावतार, दैत्य, दानव, नाग, यक्ष, सर्प, गन्धर्व, पक्षी और अन्यान्य विविध प्राणियोंकी उत्पत्ति तथा भरतके नामानुसार भारतवंशख्याति, शकुन्तलाका वृत्तान्त, शान्तनुराजके घर गङ्गाके गर्भसे वसुओंकी उत्पत्ति और स्वर्गारोहण, भीष्मका जन्म और उनका राज्यत्याग, ब्रह्मचर्यावलम्बन और प्रतिज्ञापालन, भीष्मकर्तृक चित्राङ्गदकी रक्षा और चित्राङ्गदके मारे जाने पर उनके छोटे भाई विचित्रवीर्यकी रक्षा तथा राजसिंहासन पर स्थापन, अणीमाण्डव्यके शापसे धर्मकी नरयोनिमें उत्पत्ति, वरदानके बलसे कृष्णद्वैपायनसे धृतराष्ट्र और पाण्डुका जन्म तथा पाण्डवोंकी उत्पत्ति, पाण्डवोंके वारणावर्त यात्राके सम्बन्धमें दुर्योधनकी कुमन्त्रणा और उसके द्वारा पाण्डवोंके पास पुरोचनका भेजना, हितानुष्ठानके लिये राहमें विदुर द्वारा म्लेच्छ भाषामें धीमद्धर्मराजके प्रति हितोपदेश देना, विदुरके वाक्यके फलस्वरूप सुरङ्गका तय्यार किया जाना, पांच पुत्रोंके साथ सोई हुई निषादी और पुरोचनका लक्षागृहदाह, निविडवनमें हिडिम्बा राक्षसीको पाण्डवोंका देखना, महाबल भीम द्वारा हिडिम्बका वध, घटोत्कचकी उत्पत्ति, पाण्डवोंका व्यासका दर्शन और व्यासके आज्ञानुसार एक ब्राह्मणोंके घर पाण्डवोंका अज्ञातवास, बकराक्षसवध और उनके दर्शनसे गांववालोंका विस्मयान्वित होना, द्रौपदी और धृष्टद्युम्नकी उत्पत्ति, एक ब्राह्मणके मुंहसे द्रौपदीका स्वयंवर होना सुन कौतुहलाक्रान्त हो पाण्डवोंका पाञ्चाल देशकी ओर यात्रा करना (पाञ्चाल अब पञ्जाब कहलाता है), गङ्गाके किनारे अङ्गारपर्ण नामक गन्धर्वको अर्जुनका जीतना, उसके साथ मैत्री स्थापित करना तथा उसके मुंहसे तपती, वशिष्ठ और औवरकी कथा सुन कर पाण्डवोंका वहांसे पाञ्चाल नगरमें जाना, वहां सारे राजाओंके बीच लक्ष्यभेद कर द्रौपदीको पाना और वहां युद्ध होने पर भीमसेन और अर्जुन द्वारा शल्य, कर्ण और अन्यान्य मदान्ध वीरोंका पराजित होना, भीमार्जुनके अलौकिक तेज देख और उन्हें पाण्डव समझ कृष्ण और बलरामका भार्गव गृहमें आगमन। द्रौपदीके पांच पति होंगे—यह सुन कर द्रुपदराजका विमर्ष होना, इस पर पञ्चेन्द्रका उपाख्यान, द्रौपदीका देवकृत अमानुषिक विवाह, धृतराष्ट्र द्वारा विदुरको पाण्डवोंके पास भेजना, विदुरका आना और भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन पाना, पाण्डवोंका खाण्डवप्रस्थमें वास करना और अर्द्धराज्य शासन, नारदकी आज्ञाके अनुसार द्रौपदीके घरमें जाना और पांचों भाइयोंका नियम बांधना, सुन्दोपसुन्दकी कथा, द्रौपदीके साथ युधिष्ठिर जिस घरमें थे, उस घरमें नियम तोड़ कर ब्राह्मणोंके उपकारार्थ अर्जुनका गाण्डीवको

लानेके लिये जाना, नारदकी नियम-रक्षाके लिये अर्जुन-का वन गमन ; पार्थके वनवासके समय नागकन्या उलूपीके साथ राहमें ही समागम और पुण्यतीर्थमें जाना, वभ्रुवाहनका उत्पन्न होना, अर्जुन द्वारा तपस्वी ब्राह्मणके शापसे ग्राहयोनिमें उत्पन्न हुई पञ्चस्वरूपा अप्सराका शापविमोचन, प्रभासतीर्थमें अर्जुनके यहां श्रीकृष्णका समागम, कृष्णके आज्ञानुसार द्वारकामें जा कर अर्जुन-से कामयान द्वारा सुभद्राका हरण, कृष्णका उपढौकन ले कर खाण्डवप्रस्थमें गमन, अभिमन्युका जन्म, द्रौपदीके पुत्र होना, कृष्ण और अर्जुनका जलविहारके लिये यमुनामें जाना और वहां चक्र और धनु प्राप्ति, खाण्डव-दाह, मयदानव और भुजङ्गोंका अग्निसे रक्षा पाना, शार्ङ्गी-के गर्भसे मन्दपाल नामक महर्षिका पुत्रोत्पादन आदि विषय आदि पर्वमें वर्णित है। इस पर्वमें २२७ अध्याय और ८८८४ श्लोक हैं।

२ सभापर्व ।

इसमें बहुतेरे वृत्तान्तोंसे परिपूर्ण महाभारतके दूसरे पर्वका नाम सभापर्व है। पाण्डवोंका सभा-निर्माण करना, किङ्करदर्शन, नारद द्वारा लोक-पाल-सभा वर्णन, राजसूय यज्ञारम्भ, जरासन्धवध, कृष्ण द्वारा गिरिदुर्गमें बंधे राजाओंका मुक्त करना, पाण्डवोंकी दिग्विजय, राजसूय यज्ञमें उपढौकन ले कर राजाओंका आगमन, अर्घदानके लिये वादानुवादमें शिशुपालका वध, यज्ञका ऐश्वर्य देख दुःखी और ईर्षान्वित दुर्योधनका भीम द्वारा सभामें ही उपहास, इससे दुर्योधनका क्रोधित होना, द्यूतक्रीड़ाका अनुष्ठान, धूर्त्त शकुनि द्वारा पाश-क्रीड़ामें युधिष्ठिरकी पराजय, द्यूतार्णवमें डूबती स्नुषा द्रौपदीका महाप्राज्ञ धृतराष्ट्र द्वारा उद्धार, द्यूतक्रीड़ाके लिये दुर्योधनका पुनः पाण्डवोंको बुलाना, द्यूतमें दुर्यो-धनकी जीत तथा पाण्डवोंका वनवास गमन—आदि विषय सभापर्वमें वर्णित हैं। इस पर्वमें ७८ अध्याय और २५११ श्लोक हैं।

३ वनपर्व ।

३ वनपर्व । यह पर्व बहुत बड़ा है। महामती पाण्डवोंके वन गमन करने पर धर्मपुत्रके पीछे पुर-वासियोंका जाना, धौम्यमुनिके आज्ञानुसार अनुगत ब्राह्मणोंके भरण-पोषणार्थ अन्न और औषधिकी प्राप्तिके लिये धर्मराजका सूर्यकी आराधना करना, सूर्यके प्रसाद-से अन्नकी प्राप्ति, धृतराष्ट्र द्वारा हितवादी विदुरका परित्याग, विदुरका पाण्डवोंके यहां जाना और धृत राष्ट्रकी आज्ञाके अनुसार पुनः विदुरका लौटना, कर्ण-का उपहास वाक्य, वनवासी पाण्डवोंका वध करनेके लिये दुर्योधनकी कुमन्त्रणा, यह जान कर व्यासका दुर्योधनके समीप आना और दुर्योधनका वनगमन निषेध करना, सुरभिका उपाख्यान, मैत्रेयका हस्तिनापुरमें आना और धृतराष्ट्रको शापदान, भीमसेन द्वारा संग्राम-में किर्मीरका वध, शकुनी द्वारा पाण्डवोंका छला जाना सुन कर पाञ्चाल और वृष्णिका युधिष्ठिरके पास आना, अर्जुन द्वारा क्रोधान्वित कृष्णका ठण्ढा होना, कृष्णके निकट द्रौपदीका विलाप, कृष्णका पाञ्चालीको सान्त्वना देना, सौभवधाख्यान, कृष्ण द्वारा पुत्रके साथ सुभद्राका द्वारकामें जाना, धृष्टद्युम्न द्वारा द्रौपदी तनयोंका पाञ्चाल देशमें लाना, पाण्डवोंका रमणीय द्वैत-वनमें जाना, युधिष्ठिर, भीम और वेदव्यासका आगमन और युधिष्ठिरको प्रतिस्मृति नामकी विद्या देना, व्यासके वहांसे चले जाने पर पाण्डवोंका काम्य-वनमें प्रवेश, दिव्यास्त्र प्राप्तिके लिये अर्जुनका प्रवास, किरातरूपी महादेवके साथ अर्जुनका युद्ध, अर्जुनका लोकपाल-दर्शन और अस्त्रप्राप्ति तथा उनका अस्त्र-शिक्षाके लिये महेन्द्रलोकमें जाना, यह सुन कर धृतराष्ट्रका चिन्तित होना, युधिष्ठिरका परमतत्त्वज्ञ बृहदश्व नामक महर्षिका दर्शन, उनके सामने कातर हो कर युधिष्ठिरका परिताप और विलाप करना, नलोपाख्यान—(इसमें नलका चरित और दमयन्तीका विपदकालमें भी मर्यादाका पालन करना वर्णित है)। महर्षि बृहदश्वसे युधिष्ठिरका अक्षहृदय नामका विद्य पाना, स्वर्गसे लोमश ऋषिका पाण्डवोंके यहां आना और उनका स्वर्गस्थ अर्जुनका वृत्तान्त कहना, अर्जुनका समाचार सुन कर पाण्डवों-की तीर्थयात्रा, तीर्थयात्राका फल और पुण्य कथन, महर्षि नारदकी पुलस्त्य तीर्थ-यात्रा और पाण्डवोंका तीर्थमें जाना, इन्द्रकी प्रार्थनासे कर्णको कुण्डल-प्रदान, गयासुरका यज्ञ, अगस्त्यका उपाख्यान और वातापि-

भक्षण, सन्तानके लिये अगस्त्य ऋषिका लोपामुद्रा नाम्नी स्त्रीका परिग्रह, कौमार ब्रह्मचारी ऋष्यशृङ्गका चरित, जमदग्निके पुत्र परशुरामका चरित, कार्त्तवीर्यका वध, हैहय-वध, प्रभासतीर्थमें वृष्णियोंके साथ पाण्डवोंका सम्मिलन, सुकन्याका उपाख्यान, शर्यातिके यज्ञमें च्यवन मुनि द्वारा अश्विनीकुमारद्वयके यज्ञीय सोमरसका दान, अश्विनीकुमारों द्वारा च्यवनमुनिका यौवन प्राप्त, मान्धाताका उपाख्यान, जन्तु नामक राजपुत्रका उपाख्यान, सोमकराज द्वारा बहुपुत्र लाभार्थ पुत्रविनाश द्वारा याग और सौ पुत्रोंका पाना, अत्युत्तम श्येन-कपोतका आख्यान, इन्द्र, अग्नि और धर्म द्वारा शिविराजकी परीक्षा, अष्टावक्रीय उपाख्यान, जनक राजाके यज्ञमें नैयायिक प्रवर वरुणात्मज वन्दीके साथ विप्रर्षि अष्टावक्रका वादानुवाद, अष्टावक्रके साथ विवादमें वन्दीकी पराजय, पराजय करनेके बाद अष्टावक्रका अपने पिता कहोड़को सागरसे डूबनेसे बचाना, यवक्रीतका उपाख्यान, महानुभव रैभ्यका उपाख्यान, पाण्डवोंकी गन्धमादनकी यात्रा और नारायणाश्रममें वास। वहां रहते हुए सौगन्धिक आहरणार्थ द्रौपदी द्वारा नियुक्त भीमके कदली-वनके पथमें हनुमानका दर्शन, भीम द्वारा पद्मवनका ध्वंस, वहां राक्षस, मणिमत् महावीर यक्षोंसे भीमका तुमुल संग्राम, भीम द्वारा जटासुर नामक राक्षसका वध, वृषपर्वा नामक राजर्षिके पास पाण्डवोंका जाना, फिर वहांसे पाण्डवोंका आर्ष्टि-सेनाश्रममें जाना और वहां ही रहना, पाञ्चाली द्वारा भीमका उत्साहवर्द्धन, भीमका कैलाश पर चढ़ना और महाबली मणिमत् आदि राक्षसोंसे घोरतर युद्ध करना, पाण्डव और कुबेरका सम्मिलन, भ्राताओंके साथ अर्जुनको भेंट, सव्यसाचि अर्जुनको दिव्यअस्त्रप्राप्ति, इन्द्रकार्यार्थ हिरण्यपुरवासी निवात कवच नामक दानवों और पुलोम पुत्र कालकेयोंके साथ अर्जुनका युद्ध और उन सबोंका अर्जुन द्वारा वध होना, महाराज युधिष्ठिरके सामने अर्जुनका अस्त्र दिखानेका उद्योग करना और देवर्षि नारद द्वारा अस्त्र दिखाना बाद करना, पाण्डवोंके गन्धमादनसे उतरना, इसी महावनमें पर्वताकार अजगर सर्प द्वारा भीमका पकड़ा जाना, युधिष्ठिरके प्रश्नार्थ कहनेसे भीमका उद्धार, पाण्डवोंके काम्यवनमें फिर आना, पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवोंको देखनेके लिये वसुदेवका काम्यवनमें आना, मार्कण्डेय समस्याघटित बहुतेरे उपाख्यान, इन सब महर्षियों द्वारा वेण-पुत्र पृथुराजका उपाख्यानकीर्त्तन, महानुभव तार्क्ष्य ऋषि और सरस्वतीका संवाद, मत्स्योपाख्यान, मार्कण्डेय समस्या और पुरावृत्त कीर्त्तन, इन्द्रद्युम्नका उपाख्यान, धुन्धुमारका उपाख्यान, पतिव्रतोपाख्यान, अङ्गिराका उपाख्यान, द्रौपदी और सत्यभामाका कथोपकथन, पाण्डवोंका फिर द्वैतवनमें प्रवेश, घोषयात्रा, इसमें गन्धर्वों द्वारा दुर्योधनका पकड़ा जाना, लज्जाभिभूत दुर्योधनको अर्जुनका छुड़ाना, युधिष्ठिरका मृगस्वप्न दर्शन और काम्यकवनमें फिर जाना, सविस्तार व्रीहिद्रौणिक उपाख्यान, दुर्वासा-उपाख्यान, आश्रमसे जयद्रथ द्वारा द्रौपदीका हरण और भीम द्वारा जयद्रथका पञ्चशिखीकरण, रामोपाख्यान, सावित्रीका उपाख्यान, इन्द्रके लिये कर्णका अपने दोनों कुंडलोंको उतार कर दे देना, इससे प्रसन्न हो कर इन्द्रका पुरुषघातिनी-शक्ति कर्णको देना, आरण्यका उपाख्यान, धर्म द्वारा अपने पुत्रका अनुशासन, वरलाभके बाद पाण्डवोंका पश्चिम ओर जाना इत्यादि। वनपर्वमें इन्हीं सब विषयोंका उल्लेख है। इसमें २६१ अध्याय और ११८६४ श्लोक हैं।

४ विराट् पर्व।

विराट् राज्यमें उपस्थित होनेके बाद श्मशानमें शमीवृक्षका दर्शन, उस पर पाण्डवोंका अस्त्र रखना, नगरमें जा कर छद्मवेशमें उनका वहां रहना, कामाभिभूत दुर्वृत्त कीचकके पाञ्चालीके प्रति विषय भोगकी प्रार्थना और भीम (वृकोदर) द्वारा उसका वध, पाण्डवोंको खोजनेके लिये दुर्योधनका चारों ओर चतुर चरोंका भेजना, उन चरों द्वारा पाण्डवोंका अनुसन्धान न पाना, प्रथमतः त्रिगर्तीय सैन्य द्वारा विराट्का गोधन-हरण और इसके लिये इन लोगोंके साथ विराटराजका लोमहर्षण महासंग्राम, भीम द्वारा गोधन विराट्का उद्धार, तथा पाण्डवों द्वारा गोधनका लौटाना, कौरवों द्वारा गो ग्रहण, अर्जुनके साथ युद्ध करनेमें सभी कौरवोंकी हार, किरीटीका विक्रम प्रदर्शन कर गोधनका लौटा ले आना,

स्नेह कर विराट्का अर्जुनको उत्तराका दान तथा सुभद्रा पुत्र अभिमन्युके साथ उत्तराका विवाह। विराट् पर्वमें यही सब विषय हैं। इसमें ६७ अध्याय और श्लोक-संख्या २०५० है।

५ उद्योग पर्व।

पाण्डवोंका उपप्लव्य नामक स्थानमें एकत्र होना और दुर्योधन तथा अर्जुनका श्रीकृष्णके समीप पहुंचना और दोनोंकी सहायताकी प्रार्थना करना, कृष्णका पूछना, कि किसको क्या चाहिये, एक और मेरी दश करोड़ नारायणी सेना है और दूसरी ओर मैं अकेला अस्त्रहीन रहूंगा। मन्दभाग्य दुर्योधन सैन्यवरकी प्रार्थना, दूसरी ओर अर्जुनको अयुध्यमान कृष्णका पाना, मद्रराज पाण्डवोंके साथ आ रहे थे, राहमें खबर पा कर दुर्योधनका जाना और उनका आगत स्वागत कर उनको प्रसन्न करना, फिर उनसे सहायताकी वर प्रार्थना करना, मद्रराज शल्यका सहायता स्वीकार कर पाण्डवोंके समीप आना, शल्यका युधिष्ठिरको सान्त्वना देना और इन्द्रविजयवर्णन, पाण्डवोंका दुर्योधनके पास पुरोहितका भेजना, पाण्डवोंके भेजे पुरोहितके मुंह से इन्द्रविजय विषयक वाक्य सुन कर विदुरके कहनेसे धृतराष्ट्रका शान्तिस्थापनके लिये सञ्जयको दूत बना कर भेजना, श्रीकृष्ण और पाण्डवोंकी बातोंको सुन कर चिन्तासे धृतराष्ट्रका निद्रात्याग करना, विदुरके मुंहसे धृतराष्ट्रका विचित्र और हितकर वाक्य सुनना, सनत्कुमार ऋषिके मुंहसे शोकाकुल धृतराष्ट्रका अध्यात्म-विषयक शास्त्र सुनना, प्रातःकाल राजसभामें सञ्जयका कृष्ण और अर्जुनके कहे वाक्यको कहना, महामति कृष्णका सन्धिस्थापनके लिये दुर्योधनके यहां जाना, दोनों पक्षकी हितकामनासे कृष्णका सन्धिका प्रस्ताव करना और दुर्योधनका अग्राह्य करना, दम्भोद्भवका आख्यान, मातलीका अपनी पुत्रीके लिये वर खोजना, महर्षि गालवका चरित्रवर्णन, विदुलापुत्रका अनुशासन, कर्ण और दुर्योधन आदिको दुष्ट मन्त्रणा जान कर राजाओंके समीप कृष्णका योगीश्वरत्व दिखलाना, कर्णको कृष्णका अपने रथमें बैठाना और उत्तम शिक्षा देना, गर्वित कर्ण द्वारा कौशलपूर्वक कृष्णका प्रत्याख्यान करना, हस्तिनापुरसे उपप्लव्यमें आ कर पाण्डवोंके पास कृष्णका सब वृत्तान्त कहना, कृष्णका बात सुन कर हितकर कार्यकी मन्त्रणा कर पाण्डवोंकी संग्रामसज्जा, हस्तिनापुरसे युधिष्ठिरके लिये रथ, घोड़े, हाथी, पैदल सैनोंका आयोजन करना, सैन्यसंख्या, महायुद्धके आरम्भ होनेसे एक दिन पहले दुर्योधनका उलूक नामक व्यक्तिको दूत बना कर पाण्डवोंके पास भेजना, रथातिरथसंख्या, अम्बोपाख्यान, उद्योगपर्वमें ये सब वृत्तान्त लिखे गये हैं। इसमें ८६ अध्याय और ६६६८ श्लोक हैं।

६ भीष्म पर्व।

सञ्जय द्वारा जम्बूखण्डका निर्माण कथन, युधिष्ठिरके सैन्योंका अत्यन्त विषाद और अर्जुनका मोह, दशाहव्यापी घोरतर सुदारुण युद्धके समय योगविषयक नाना हेतुवाद द्वारा महामती कृष्णका अर्जुनके मोहको तोड़ना, कृष्णका रथसे उतरना और निर्भय चित्तसे चक्र लिये भीष्मको बध करनेके लिये दौड़ना, वाक्यरूपदण्डसे कृष्ण द्वारा अर्जुनको चोट पहुंचाना, अर्जुनका शिखण्डीको आगे कर भीष्म पर तीर छोड़ना और भीष्मका भूपतित होना, भीष्मका शरशय्याशयन। ये सब भीष्मपर्वमें लिखे गये हैं। इस पर्वमें ११७ अध्याय और ५८८४ श्लोक हैं।

७ द्रोण पर्व।

प्रतापशाली द्रोणाचार्यका सेनापति वर्णना, दुर्योधनके लाभार्थ द्रोणाचार्यका युधिष्ठिरको पकड़ लानेकी प्रतिज्ञा करना, नारायणीसेना द्वारा युद्धस्थलसे अर्जुनका हटाया जाना, महाराज भगदत्तका अपने हाथीके साथ रणस्थलमें अतुल इन्द्रतुल्य विक्रम प्रकाश, अर्जुन द्वारा भगदत्तका बध, जयद्रथ प्रभृति महारथियों द्वारा अप्राप्त यौवन अकेले अभिमन्युका बध। अभिमन्युके बधके बाद क्रोधान्वित अर्जुन द्वारा रणभूमिमें सात अक्षोहिणी सैन्य और जयद्रथका बध, महाराज युधिष्ठिरके आज्ञानुसार महाबाहु भीम और सात्यकि द्वारा देवताओंके अलङ्घनीय कुरुसैन्यमें घूसना, हतावशिष्ट नारायणी सेनाका विनाश, अलम्बुष, श्रुतायु, जलसन्ध, भूरिश्रवा, विराट, द्रुपद और घटोत्कच आदि अनेक वीर पुरुषोंका बध, द्रोणाचार्यका बध, युद्धमें

द्रोणाचार्यके मरनेके बाद क्रोधान्वित अश्वत्थामाका भयङ्कर आग्नेयास्त्र (नारायणास्त्र)-का प्रयोग करना, रुद्रमाहात्म्य-वर्णन, व्यासका आगमन और कृष्ण-अर्जुनका माहात्म्य वर्णन,—इस पर्वमें ये विषय विशेषरूपसे वर्णित हुए हैं। सिवा इसके अनेकों राजाओंके मरनेका वृत्तान्त भी लिखा गया है। इस पर्वमें १७० अध्याय और ८६०० श्लोक हैं।

८ कर्णपर्व।

धीमद् मद्रराजका सारथिके काममें नियुक्त होना, पौराणिक त्रिपुरका मरण वृत्तान्त वर्णन, युद्धयात्राके समय मद्रराज और कर्णका परस्पर वाक्-युद्ध, कर्णको तिरस्कार करनेके लिये शल्य द्वारा हंस और कौएका आख्यान, अश्वत्थामा द्वारा पाण्ड्यराजका विनाश, दण्डसेन और दण्डका वध, सर्व धनुर्द्धारी योद्धाओंके सम्मुख द्वैरथ-युद्धमें कर्ण द्वारा धर्मराज युधिष्ठिरका प्राणसंकट, युधिष्ठिर और अर्जुनका परस्पर कोप, कृष्ण द्वारा अर्जुनका अनुनय, वृकोदरका रणस्थलमें पूर्व प्रतिज्ञाके अनुसार दुःशासनके वक्षःस्थलको फाड़ कर उसका रक्तपान करना, द्वैरथ युद्धमें अर्जुन द्वारा कर्णका वध। इस पर्वमें इन्हीं सब विषयोंका समावेश है। इसमें ६६ अध्याय और ४६६४ श्लोक हैं।

९ शल्यपर्व।

कर्णके वध होने पर शल्यका सेनापति होना, नाना रथियोंके पृथक् पृथक् रथयुद्धका वर्णन, कौरव पक्षीय प्रधान प्रधान योद्धाओंका वध, धर्मराज द्वारा शल्यका वध, प्रायः सारी सेनाओंके मारे जानेके बाद दुर्योधनका तालावमें प्रवेश और जलस्तम्भ कर वहां रहना, व्याधोंका दुर्योधनके छिपनेका हाल भीमसे कहना, धर्मराजकी तिरस्कार पूर्ण बातोंको सुन दुर्योधनका तालावसे निकलना, जहां भीमके साथ दुर्योधनका गदा युद्ध हुआ वहां सब लोगोंका आना, इसके बाद बलरामका आगमन, सरस्वती-तीर्थ और अन्यान्य तीर्थोंका माहात्म्य-वर्णन, उस रणभूमिमें दुर्योधनके साथ भीमका तुमुल गदा-युद्ध, युद्धस्थलमें भीमकी गदासे दुर्योधनकी जंघा तोड़ना,—इस पर्वमें ये ही सब विषय वर्णित हुए हैं। इसमें ५६ अध्याय और ३२२० श्लोक हैं।

१० सौप्तिकपर्व।

पाण्डवोंके रणस्थल त्याग करनेके बाद दुर्योधन टूटी हुई जांघकी अवस्थामें जहां पड़ा था वहां सन्ध्याको कृतवर्मा, कृप और अश्वत्थामाका उपस्थित होना, दुर्योधनकी अवस्थाको देख अश्वत्थामाका क्रोधित होना और प्रतिज्ञा करना, कि धृष्टद्युम्न आदि पाञ्चालगण और अन्यान्य मन्त्रियोंके साथ पाण्डवोंका विनाश जब तक न करूंगा, तब तक शरीरसे कवच न उतारूंगा। इसके बाद उन तीनों रथियोंका वहांसे जाना और सूर्यास्तसे पहले एक महावनमें प्रवेश करना और एक वटवृक्षके नीचे जा कर एक उल्लूको रातके समय कौओंका विनाश करते देखना, यह देख अश्वत्थामाका पितृ-वध स्मरण करना और क्रोध कर मनमें यह कल्पना करना, कि सो जाने पर पाञ्चालोंका विनाश करूंगा। इसके बाद पाण्डवोंके खेमेमें अश्वत्थामाका जाना और खेमेके दरवाजे पर पर्वताकार गगनस्पर्शी भयङ्कर राक्षसको देखना। राक्षसका भीतर घुसनेमें बाधा डालने पर द्रोणपुत्र अश्वत्थमाका वीरुपक्ष रुद्रकी आराधना कर कृप, कृतवर्माके साथ खेमेमें प्रवेश और सोते हुए धृष्टद्युम्न और सपरिवार पाञ्चालों तथा द्रौपदी तनयोंका संहार करना। कृष्णके चातुर्यसे सात्यकि और पञ्चपाण्डवोंकी रक्षा, बाकी सबोंका विनाश, अश्वत्थामाका अपने हाथोंसे पाञ्चालोंको मारना, धृष्टद्युम्नके सारथीका इस भयङ्कर दुर्घटनाका वृत्तान्त पाण्डवोंसे कहना, शोकार्त्ता और पुत्र तथा भ्रातृवधकातरा द्रौपदीका पतियों पर अनशन कर त्याग करनेका दृढ़ संकल्प करना, भीम पराक्रमी भीमसेनका द्रौपदीके कहनेके अनुसार उसके प्रियसाधनके लिये क्रोधित हो कर गदा ले कर अश्वत्थामाके पीछे पीछे दौड़ना, द्रोणपुत्रका भीमका भयतुर होना और दैवप्रेरित क्रोधपूर्वक 'पृथ्वी पाण्डवरहित हो' ऐसा कह नारायणास्त्रका छोड़ना, इस पर कृष्णका अश्वत्थामाको मना करना, अश्वत्थामाका विद्रोहाचरण देख अर्जुनका उसी अस्त्रसे निवारण करना, अश्वत्थामा और द्वैपायन व्यासका परस्पर शापका

आदान प्रदान, जयश्रीप्राप्त पाण्डवोंका द्रोणपुत्रके सिरसे मणि ले कर हृष्टान्तःकरणसे द्रौपदीको देना—इस पर्वमें इन्हीं सब विषयोंका वर्णन है। इसमें १८ अध्याय और ८७० श्लोक हैं।

११ स्त्रीपर्व।

प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र पुत्रके शोकसे सन्तप्त हो कर भीमके विनाशकी कामना करना, कृष्ण-प्रदत्त लौहमय भीमकी मूर्त्तिको धृतराष्ट्रका तोड़ना, पीछे धृतराष्ट्रके शोक सन्तप्तहृदयको शान्त करनेके लिये विदुरका नाना प्रकारके सान्त्वना वाक्यका प्रयोग करना, धृतराष्ट्रका अन्तःपुरमें प्रवेश कर अन्तःपुर-वासिनी रमणियोंको साथ ले रणभूमिमें जाना तथा वीर पत्नियोंको अतिकरुण रुदन करते देख धृतराष्ट्र और गांधारीका क्रोधित और मोहित होना, वीर क्षत्राणियोंके अपने पति, पुत्र और भ्राताओंको भूपतित देखना, गांधारीको पुत्रशोकसे अभिभूत हुआ देख कृष्णका सान्त्वना देना, धार्मिकप्रवर महाप्राज्ञ युधिष्ठिरका शास्त्रानुसार युद्धमें मारे गये वीरोंका शवदाह करना, पीछे तिलाञ्जलि देते समय कुन्तीका कर्णको अपना पुत्र बताना। इसमें इन्हीं सब विषयोंका समावेश है। यह पर्व करुणाश्रुप्रवर्त्तक और हृदयविदारक है। इसमें २७ अध्याय और ७७० श्लोक हैं।

१२ शान्तिपर्व।

यह पर्व ज्ञानगर्भ तथा विविध उपदेशपूर्ण उपाख्यानोंसे परिपूर्ण है। इसमें धर्मराज युधिष्ठिरका पिता, भ्राता, प्रभु, साले, मामा आदि सभीका संहार करके निर्वेदको प्राप्त होना, शरशय्याशायी भीष्मका युधिष्ठिर आदि राजाओंको धर्मका उपदेश देना और उनका आपद्धर्म कहना आदि विषय हैं जिनको सुन सभी लाभ उठा सकते हैं।

इस पर्वमें निम्नलिखित विषय विशेष रूपसे वर्णित हुए हैं। नारदसे युधिष्ठिरका कर्णकी उत्पत्ति कहना, कर्णके प्रति अभिशाप, कर्णका अस्त्रलाभ, स्वयंवरमें दुर्योधनका कन्याहरण करना, कर्णका विक्रम दिखलाना, स्त्री-जातिके प्रति युधिष्ठिरका अभिशाप, युधिष्ठिरका विलाप करना, ऋषि-शकुनिका संवाद, नकुल-वाक्य, सहदेववाक्य, द्रौपदीवाक्य, अर्जुनवाक्य, भीमसेनवाक्य, युधिष्ठिरको देवस्थानका उपदेश, युधिष्ठिरको व्यासका उपदेश, श्येनजित्‌का उपाख्यान, राजिक उपाख्यान, नारद पर्वतोपाख्यान, सुवर्णष्ठीवीका उपाख्यान, प्रायश्चित्त वर्णन, युधिष्ठिरके प्रति व्यासका उपदेश, युधिष्ठिरका नगरमें आना, चर्वाककी धर्मनिन्दा, चर्वाकवधोपाय कथन, युधिष्ठिरका राज्याभिषेक, भीमकी यौवराज्य-प्राप्ति, श्राद्धकार्यका वर्णन कृष्णके प्रति युधिष्ठिरका स्तव, गृह विभाग, युधिष्ठिरके प्रश्न, युधिष्ठिर द्वारा रचित महापुरुषोंका स्तव, परशुरामका उपाख्यान, कृष्ण, युधिष्ठिर आदिका भीष्मके पास जाना, युधिष्ठिर आदिका विदा होना, सूत्राध्याय, वर्णाश्रम धर्मकीर्त्तन, ऐलकश्यपका कथोपकथन, मुचुकुन्द-उपाख्यान, कैकयीका उपाख्यान, वासुदेव नारदका कथोपकथन, कालकवृक्षीय-उपाख्यान, युधिष्ठिरके प्रति भीष्मका मन्त्रणा-स्थान-कीर्त्तन, दुर्गपरीक्षा, राष्ट्रगुप्ति-कीर्त्तन, उतथ्य गीता-कीर्त्तन, वामदेवगीता, इन्द्राम्बरीष-संवाद, शत्रु-समाक्रान्त व्यक्तिका कर्त्तव्य-कथन, सेनापति कैसा होना चाहिये उसके विषयमें वक्तव्य, इन्द्रबृहस्पतिका संवाद, सत्यानृतयकीर्त्तन, व्याघ्र-गोमायुका संवाद, उष्ट्रग्रीवोपाख्यान, सरितसागरका संवाद, ऋषि और कुत्तेका संवाद, दस्तकीर्त्तन, दन्तोत्पत्ति कथन, प्रह्लादविप्रका वृत्तान्त, ऋषभगीता कथन।

आपद्धर्म पर्वाध्याय—राजर्षि वृत्तान्तकीर्त्तन, काबव्य और दस्युका संवाद, शाकुलोपाख्यान, विड़ाल और चूहेका संवाद, ब्रह्मदत्त पूजनीका संवाद, कणिकका उपदेश, विश्वामित्र-निषादका संवाद, कपोतलुब्धक-संवाद, भार्याप्रशंसा कीर्त्तन, इन्द्रोत-परीक्षितका कथोपकथन, गृध्रगोमायुका कथोपकथन, पवनशाल्मली-का संवाद, आत्मज्ञान-कथन, दमका गुणवर्णन, तपःकथन, सत्यकथन, लोभोपाख्यान, नृशंस-प्रायश्चित्तका विवरण, खड्ग उत्पत्तिका विवरण, षड्जगीता और कृतघ्नोपाख्यान।

मोक्षधर्म पर्वाध्याय—पिङ्गलागीता, पितापुत्रका संवाद, संपाकगीता, मङ्किगीता, बोध्यगीता, प्रह्लाद और अजगरका संवाद, शृगाल काश्यपका संवाद, भृगु-भरद्वाज-संवाद,

आचारविधि, जापकोपाख्यान, मनुबृहस्पतिका संवाद, सर्वभूतोत्पत्ति, गुरुशिष्य संवाद, कृष्णका माहात्म्य-कीर्त्तन, पञ्चशिखजनक संवाद, इन्द्र और प्रह्लादका संवाद, वालिवासवका संवाद, इन्द्र और नमुचीका संवाद, वलिदान संवाद, लक्ष्मीवासवका संवाद, देवल जैगीषव्य संवाद, वासुदेव उग्रसेनका कथोपकथन, शुकानुके प्रश्न, मृत्यु और ब्रह्माका संवाद, धर्मके लक्षण, तुलाधार जाजलीसंवाद, चिरकालिक उपाख्यान, द्युमत्सेन सत्यवत्-संवाद, स्युमरश्मि और कपिलका संवाद, कुण्डधार उपाख्यान, यज्ञनिन्दा, प्रश्नचतुष्टय कीर्त्तन, योगाचार वर्णन, नारद और देवल ऋषिका संवाद, माण्डव्य और जनकका संवाद, पितापुत्रका संवाद, हारीतगीता, वृत्रगीता, वृत्रवध, ज्वरोत्पत्ति, दक्षयज्ञका विनाश, दक्ष द्वारा महादेवके सहस्र नामका कीर्त्तन, पंचभूतकीर्त्तन, समङ्ग-नारदका संवाद, सगरारिष्ट नेमीका संवाद, भवभार्गवका संवाद, पराशरगीता, हंसगीता, योगविधि वर्णन, सांख्ययोग-कथन, वशिष्ठ-करालजनक संवाद, याज्ञवल्क्यजनक-संवाद, जनकपंचशिख-संवाद, सुलभाजनक-संवाद, वेदव्यास शुकका संवाद, धर्ममूलवर्णन, शुकोत्पत्ति, शुकजनक-संवाद, शुकनारदका संवाद, शुकका अभिपतन, नारायण-माहात्म्य-वर्णन, व्यासोत्पत्तिका वर्णन, उञ्छवृत्त्युपाख्यान।

इस पर्वमें ये विषय विशदरूपसे वर्णित हैं। इसमें ३३९ अध्याय और १४७०७ श्लोक हैं।

१३ अनुशासन पर्व।

कुरुराज युधिष्ठिर भीष्मके मुखसे धर्मका निर्णय सुन कर शान्त हुए। इस पर्वमें धर्म और अर्थसम्बन्धी समस्त व्यवहार, विविध दानका पृथक् पृथक् फल, पात्रविशेषसे दानकी उत्कर्ष विधि, आचार व्यवहार-निरूपण, सत्यकी पराकाष्ठा, गोब्राह्मणका माहात्म्य, देशकालके भेदसे धर्मरहस्य और भीष्मकी स्वर्गप्राप्ति लिखी हुई है। इस १३वें पर्वमें १४६ अध्याय और ८००० श्लोक हैं।

१४ आश्वमेधिक पर्व।

सम्वर्त्त और मरुत्तका उत्तम उपाख्यान, सुवर्णकोष-सम्प्राप्ति, पहले अस्त्राग्नि द्वारा दग्ध और पीछे कृष्ण द्वारा पुनःसञ्जीवित परीक्षितका जन्म, यज्ञमें अश्वमोचन करके उसके साथ जानेवाले अर्जुनके साथ कई जगह अमर्षण राजाओंका युद्ध, चित्रवाहन राजाकी कन्या चित्राङ्गदाके गर्भसे उत्पन्न अपने पुत्र वभ्रुवाहन द्वारा अर्जुनका जीवनसंशय, अश्वमेध महायज्ञके समय नकुलाख्यान। यही सब विषय महाद्भुत आश्वमेधिक पर्वमें लिखे हैं। इस पर्वमें १०३ अध्याय और ३३२० श्लोकसंख्या है।

१५ आश्रमवासिक पर्व।

इस पर्वमें गान्धारीके साथ राजा धृतराष्ट्र और विदुर राज्यका परित्याग कर आश्रमधर्मका पालन करनेके लिये जंगल चल दिये। यह देख कर गुरु शुश्रूषा-परायणा साध्वी कुन्ती भी पुत्रका राज्य छोड़ कर धृतराष्ट्रकी अनुगामिनी हुईं। जंगलमें राजा धृतराष्ट्रने युद्धमें मारे गये और परलोकवासी पुत्र, पौत्र और अन्यान्य वीर राजाओंको फिरसे आये हुए देखा। धृतराष्ट्र कृष्ण-द्वैपायनकी कृपासे इस उत्तम और आश्चर्य घटनाको देख कर गान्धारीके साथ परम सिद्धिको प्राप्त हुए, उनका कुल शोक जाता रहा। जितेन्द्रिय सञ्जय और विदुरने धर्मको आश्रय करके सद्गति पाई। धर्मराज युधिष्ठिरने नारदके मुखसे वृष्णिगणके कुलक्षयका हाल सुना। यही सब विषय आश्रमवासाख्य पर्वमें वर्णन किया गया है। इस पर्वमें ४२ अध्याय और १५०६ श्लोक हैं।

१६ मौषलपर्व।

जो रणस्थलमें अस्त्राघातको आसानीसे सहन करते थे, वे यादव वीर ब्रह्मशापरूप दण्डसे दण्डित हो कर समुद्रके किनारे नशेकी हालतमें परका तृणरूपी शराघातसे मारे गये। इसी प्रकार रामकृष्ण भी समस्त यदुवंशका उच्छेद कर अपने सर्वसंहारकारी उपस्थित कालसे बचने न पाये थे। पीछे नरश्रेष्ठ अर्जुन यादव-शून्य द्वारकाको देख कर बड़े दुःखित हुए। उन्होंने अपने मामा नरश्रेष्ठ वासुदेवका सत्कार कर सुरापानसभामें यदुवंशीय वीरोंको मरा पाया। अर्जुन, राम और कृष्ण आदि प्रधान प्रधान यदुवंशियोंका अग्नि-संस्कार आदि

करके द्वारकासे आवाल वृद्धवनिताके साथ आ रहे थे कि राहमे घोर विपदने उन्हें एकाएक घेर लिया। इस समय उनके गाण्डीव धनुष और दिव्यास्त्रने कोई काम नहीं दिया, वे मानों बिलकुल अप्रसन्न हो रहे थे। पीछे यादव रमणियोंके अपहरण और पराक्रमकी अनित्यता देख कर वे बड़े मर्माहत हुए और युधिष्ठिरके समीप लौट कर व्यासके वाक्यानुसार संन्याससे आश्रम ग्रहण करनेकी इच्छा प्रकट की। इस मौषल पर्वमें इन्हीं सब विषयोंका वर्णन है। इसमे ८ अध्याय और ३२० श्लोक हैं।

१७ महाप्रास्थानिक पर्व।

पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवोंने राज्यका परित्याग कर द्रौपदीके साथ महाप्रस्थानका अवलम्बन किया। पीछे लोहित सागरके किनारे उन्हें अग्निके दर्शन हुए। उसी जगह अग्निके आदेशानुसार अर्जुनने उस महाप्रभावशाली अग्निकी पूजा करके अपना गाण्डीव धनुष उन्हें प्रदान किया। अनन्तर युधिष्ठिर, पहले द्रौपदी और पीछे एक एक कर सभी भाइयोंको निपतित देख मायाममताका परित्याग करते हुए अकेले चलने लगे। इस पर्वमें यही सब विषय वर्णित हैं। इसमें ३ अध्याय और ३२३ श्लोक-संख्या हैं।

१८ स्वर्गारोहण पर्व।

महाप्राज्ञ धर्मराजको लानेके लिये जब स्वर्गसे देवयान पहुंचा तब वे अपने एकमात्र साथी कुत्तेको छोड़ कर देवयान पर चढ़नेको राजी न हुए। महात्मा युधिष्ठिरकी ऐसी अविचलित धर्मनिष्ठाको देख कर धर्मने कुत्तेका रूप परित्याग कर उन्हें साक्षात् दर्शन दिये। युधिष्ठिर धर्मके साथ स्वर्ग गये। वहां देवदूतने जब छल करके उन्हें नरकका दर्शन कराया तब उन्हें भारी दुःख हुआ। धर्मात्मा युधिष्ठिरने उस नरकमें यमके वशवर्त्ती अपने भाइयोंकी करुण ध्वनिको सुना। इन्द्र और धर्मने 'ऐश्वर्य भोगका यह फल है' कह कर उन्हें आश्वासन दिया। अनन्तर युधिष्ठिरने आकाश-गङ्गामे स्नान कर मानवदेहका परित्याग किया। पीछे देवलोकमें स्वधर्मोपार्जित स्थान पा कर देवराज और अन्यान्य देवोंसे पूजित हो सुखपूर्वक रहने लगे। इस पर्वमें इन्हीं सब विषयोंका वर्णन है। इसमें ५ अध्याय और २०६ श्लोक हैं।

१८ पर्वोंका हाल संक्षेपमें कहा गया। इसका खिल हरिवंश और भविष्य पर्व कहलाता है। महर्षि व्यासने उसमें बारह हजार श्लोकोंकी रचना की है। अठारह अक्षौहिणीने मिल कर अठारह दिन तक युद्ध किया था। यही युद्ध महाभारतयुद्ध कहलाता है।

महाभारतकी अनुक्रमणिकामें जो प्रति पर्वमे श्लोक-संख्या दी गई है, उसके साथ मुद्रित महाभारतकी श्लोक-संख्याका मेल नहीं खाता। यहां तक कि एशियाटिक सोसाइटी और बम्बईसे जो महाभारत प्रकाशित हुआ है उसमें भी श्लोकसंख्यामें विभेद देखा जाता है। नीचे एक तालिक दी गई है उसीसे मालूम हो जायेगा, कि कितना प्रभेद है।

पर्व	पर्वसग्रहमें श्लोकसंख्या	सोसाइटीकी श्लोक संख्या	बम्बई मुद्रितका श्लोक
१। आदि	८८८४	८४७६	८६२३
२। सभा	२५११	२७०६	२७१२
३। वन	११८६४	१७४७६	१६६५६
४। विराट	२०५०	२३७६	२२३२
५। उद्योग	६६९८	७६५६॥	६६१४
६। भीष्म	५८८४	५८५६	५८६६
७। द्रोण	८६००	९६४६	९६४४
८। कर्ण	४९६४	५०४६	५०१५
९। शल्य	३२२०	३७६१	३६३८
१०। सौतिक	८७०	८११	८०३
११। स्त्री	७७०	८२७॥	८२५
१२। शान्ति	१४७०७	१३९४३	१३७७४
१३। अनुशासन	८०००	७७९६	७७०१
१४। आश्वमेधिक	३३२०	२९००	१०८८
१५। आश्रमवास	१५०६	११०५	१०८८
१६। मौषल	३२०	२९२	२८७
१७। महापास्थानिक	३२०	१०९	११०
१८। स्वर्गारोहण	२०९	३१२	३२०
१९ खिलहरिवंश	१२०००	१६३७४	१६३५४

महाभारतकी अनुक्रमणिकामें अश्वमेध पर्वकी जो

श्लोकसंख्या दी गई है प्रचलित अश्वमेध पर्व में उससे बहुत कम हैं। इससे बहुतोंकी धारणा थी, कि अश्वमेध पर्वका अन्तिम २३वां अध्याय लुप्त हो गया है। कुछ दिन हुए, बम्बईसे पण्डित वामनशास्त्री इसलाम पुरकरने जो पराशरसंहिता प्रकाश की है, उसके मुख बंधमें शास्त्री महाशयने लिखा है, कि मलयालम् अक्षरमें लिखित एक अतिप्राचीन महाभारत ग्रन्थमें २३ अध्याय हैं। इसके अतिरिक्त वृद्ध गौतमस्मृति नामक अभिहित धर्मशास्त्रमें भी इन्होंने उतने ही अध्याय देखे हैं।

महाभारत पढनेकी विधि।

महाभारतमें लिखा है, कि जो ब्राह्मण चतुर्वेद, वेदाङ्ग और उपनिषत् आदिमें पारदर्शी हैं फिर भी यह महाभारतीय आख्यान नहीं जानते, उन्हें विद्वान् कभी भी नहीं कहा जा सकता। असाधारण प्रज्ञासम्पन्न व्यासदेवने इस महाभारतको अर्थशास्त्र, कामशास्त्र और अति विस्तृत धर्मशास्त्र बतलाया है। जिस प्रकार नर कोकिलका शब्द सुन कर कर्कश काकका शब्द सुननेकी इच्छा नहीं होती, उसी प्रकार यह उपाख्यान सुननेसे दूसरा कोई भी उपाख्यान सुननेका जी नहीं चाहता। एक महाभारतसे ही सभी प्रकारका कवित्व लाभ होता है। जिस प्रकार जरायुज, स्वेदज, अण्डज और उद्भिज ये चारों प्रकारकी प्रजा अन्तरीक्षमें ही वास करती है, उसी प्रकार सभी पुराण इस आख्यानके अन्तर्गत हैं। जिस प्रकार मनकी क्रियायें इन्द्रियकी आश्रयस्वरूप हैं, उसी प्रकार यह उपाख्यान दानअध्ययन आदि क्रिया तथा शमदम आदि गुणके आश्रय-स्वरूप हैं। जिस प्रकार विना भोजनके शरीरधारण करना कठिन है उसी प्रकार इस आख्यानके आश्रयके विना कोई भी आख्यान नजर नहीं आता। जो अवहितचित्तसे महाभारत सुनते हैं उन्हें सभी तीर्थोंका फललाभ होता है। ब्राह्मण दिनमें जो सब पाप करते हैं, शामको महाभारतका नाम कीर्त्तन करनेसे वे सब पाप नष्ट हो जाते हैं। फिर रातको कायमनोवाक्य द्वारा जो पाप किया जाता है, वह पाप सवेरे महाभारतका नाम कीर्त्तन करनेसे शरीरमें रहने नहीं पाता। एक वह व्यक्ति जो बहुश्रुत और वेदविद् ब्राह्मणको सुवर्णश्रृङ्गयुक्त एक सौ गौ दान करता है और दूसरा इस पवित्र भारत कथाको प्रति दिन सुनता है उन दोनोंको समान फल प्राप्त होता है। (भारत आदिपर्व २ अ०)।

महाभारत किस विधिसे पढ़ना और सुनाना चाहिये उसका विषय इस प्रकार लिखा है। एक दिन जनमेजयने वैशम्पायनसे पूछा था, 'भगवन्! किस नियमसे महाभारत सुनना चाहिये तथा सुननेसे कौन सा फल प्राप्त होता है, पारणके समय किस किस देवताकी पूजा करनी चाहिये, प्रत्येक पर्वकी समाप्तिमें कौन कौन द्रव्य दान करना उचित है तथा कैसे व्यक्तिको वक्ता बनाना चाहिये, ये सब विषय कृपापूर्वक मुझे बतला दीजिये।'

उत्तरमें वैशम्पायनने कहा था, "स्वर्गीय देवगण क्रीड़ा करनेके लिये पृथ्वी पर उतरे थे, पीछे अपना अपना कार्य शेष करके स्वस्थानको चले गये। रुद्रगण, साध्यगण, विश्वदेवगण, आदित्यगण तथा अन्यान्य स्थावर जङ्गम और सुरासुर समस्त जगत् इस महाभारतमें एक आधार पर लक्षित हुए हैं। उनको प्रतिष्ठाका श्रवण तथा नामकीर्त्तन करनेसे उसी समय महापातक दूर हो जाते हैं। आत्मसंयमपूर्वक जो इस महाभारतका इतिहास सुनते हैं उन्हें फिरसे मृत्युलोकमें जन्म नहीं लेना पड़ता। महाभारत सुन कर भीष्मादि महापुरुषोंके उद्देशसे श्रद्धापूर्वक दान करनेसे परमपुण्य लाभ होता है।

साध्यानुसार सरलचित्तसे शुभ्र पापरायण, सत्यरत, दान्त, शुचि आदि गुणसे युक्त हो महाभारत सुनना चाहिये। श्रवणकालमें बाहरी किसी ओर मनको नहीं दौड़ाना चाहिये। शुचि, सुशील, शुक्लवस्त्रपरिधायी, संस्कार सम्पन्न, सब शास्त्रोंमें ज्ञानवान्, श्रद्धाशील असूयाहीन, जितेन्द्रिय, रूपवान्, सौभाग्यवान्, समगुणविशिष्ट, सत्यवादी, दाता और मान्य व्यक्तिको महाभारतका पाठक वा वक्ता बनाना चाहिये।"

भारत पढनेका नियम।—पाठकको चाहिये कि वे कुशके आसन पर बैठ सुस्थचित्त और समाहित हो रस और भावका समन्वय विधान तथा पदोंका सुस्पष्ट विन्यास करते हुए पाठ करें। पाठके समय बिलम्ब, आयास, त्वरता अधैर्य, अनुत्साह आदि पाठ-दोषोंका परिहार करना आवश्यक है। पाठके समय पहले नारायण, नर, नरोत्तम

और देवी सरस्वतीको प्रणाम कर पीछे जयका उच्चारण करे। जो ऊपर लिखे गये नियमानुसार महाभारतका पाठ करते हैं उनके निकट नियमस्थ और शुचि हो महाभारत सुननेसे अशेष पुण्य प्राप्त होता है।

महाभारत पढ़नेके समय कर्त्तव्य।—महाभारत पढ़नेके समय प्रति पर्वमें जाति, देश, सत्त्व, माहात्म्य और धर्म प्रवृत्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको जो दान करना होता है उसका विधान इस प्रकार कहा गया है। पहले ब्राह्मणको स्वस्तिवाचन करा कर कार्य आरम्भ करे। पूर्व समाप्त होने पर अपने साध्यानुसार उनकी पूजा करना उचित है। आदि पर्व समाप्त होने पर पाठकको यथाविधि वस्त्र और गन्धयुक्त मधु पायस भोजन करावे। आस्तीक पर्व शेष होने पर फल, मूल, घृत और मधुमिश्रित पायस भोजन तथा गुड़ोदक-दान, सभापर्व शेष होने पर अपूप और मोदकके साथ हविष्यान्न भोजन, वन पर्वके शेषमें तरह तरहके जंगली फलमूलादिका दान, विराटपर्वके शेषमें विविध वस्तु, उद्योग पर्वमें सब प्रकारके अभीष्ट और गन्धमाल्यादि, भीष्म पर्वमें उत्कृष्ट दान और अन्नदान, द्रोण पर्वमें अच्छी तरह भोजन करा कर शर, धनुष और खड्गदान, कर्णपर्वमे अच्छा तरह ब्राह्मण भोजन, शल्यपर्वमें मोदक, गुड़ोदन और अपूपयुक्त आहार, गदापर्वमें मूंग मिला हुआ अन्न, स्त्री पर्वमे रत्न, ऐषिकपर्वमें घृतोदन, हविष्यान्न भोजन, आश्वमेधिक पर्वमे इच्छानुसार भोजन, आश्रमवासमे हविष्यान्न भोजन, शान्ति पर्वमें मौषल, महाप्रस्थानिक पर्वमें गन्धमाला और अनुलेपनदान तथा स्वर्ग पर्वमे हविष्य भोजन कराना चाहिये। पीछे हरिवंशपाठ शेष होने पर हजार ब्राह्मणोंको खिलाना उचित है।

श्रेयस्काम पुरुषको श्रद्धा और यत्नपूर्वक महाभारत सुनना चाहिये। जिसके घरमें महाभारत है वह व्यक्ति मानो नित्य जयशील है। महाभारत सभी शास्त्रोंमें प्रधान तथा मोक्ष और तत्त्व प्राप्तिका निदान है। पृथ्वी, गौ, सरस्वती, ब्राह्मण, विष्णु और भारतसंहिता इनका नाम लेनेसे अवसाद उपस्थित नहीं होता। वेद, रामायण और महाभारतके आदि और अन्तमें अर्थात् सभी जगह नारायणका वर्णन है।

(हरिवंश पर्वसंग्रह-अध्याय)

यूरोपीय मत।

महाभारतके सबंधमें यूरोपीय संस्कृत विद्वानोंने यथेष्ट आलोचना की है। किन्तु उनका मत इस देशके पण्डितोंके मतसे नहीं मिलता, उनका मत सचमुच आश्चर्यजनक है। उनके अभिप्रायका सार मर्म नीचे लिखा जाता है।

प्रसिद्ध जर्मन पण्डित वेबर (Weber) साहबके मतसे—'महाभारतको प्राचीन ग्रन्थ नहीं कह सकते। १ली शताब्दीमें लिखित क्रिसोसटोम ग्रन्थको छोड़ कर उसके पूर्ववर्त्ती किसी ग्रन्थमें महाभारतका स्पष्ट प्रसङ्ग नहीं मिलता। यहां तक कि पाणिनिके समयमें भी महाभारत नहीं रचा गया था। क्योंकि, पाणिनिके युधिष्ठिर, हस्तिनापुर, वासुदेव आदिका उल्लेख करने पर भी उन्होंने 'महाभारत' 'पाण्डु' अथवा 'पाण्डव' शब्दका उल्लेख तक भी नहीं किया है। आश्वलायन और शाङ्खायन गृह्यसूत्रमें भारत और महाभारतका उल्लेख रहने पर भी वह अंश प्रक्षिप्त ही समझा जायेगा। वाजसनेयसंहितामें इन्द्रको ही 'अर्जुन' कहा गया है। यजुर्वेदकी आलोचना करनेसे मालूम होगा, कि कुरु और पाञ्चालमें किसी प्रकारका विरोध नहीं था। दोनोंमे गाढ़ी मित्रता थी। शतपथ-ब्राह्मण देखनेसे ही जाना जाता है, कि परिक्षितके लड़के जन्मेजयका चरित उस समय भी जनसाधारणके स्मृति पथ पर समुज्ज्वल था। उनके अभ्युदय और अधःपतनको उस समय भी जनसाधारण भूले नहीं थे। समस्त महाभारत तीन अंशोंमें विभक्त किया जा सकता है,—१ले मूल अंशमे महाभारतका वर्णन, २रे अंशमें प्राचीन आख्यान और उपाख्यान संग्रह तथा ३रे आधुनिक अंशमें क्षत्रियका कर्त्तव्य, विशेषतः ब्राह्मणोंका श्रेष्ठता-प्रसङ्ग है। इसी अंशमें शक, यवन, पह्लवादिका उल्लेख देखा जाता है। महासमरका वर्णन ही महाभारतका मूल उद्देश्य है, किन्तु इस सम्बन्धमें २०००० हजारसे अधिक श्लोक नहीं हैं। यह अंश रामायणके मूल अंशके

समयकी रचना है। किन्तु रामायणका रूपकाश इससे भी बहुत पीछे रचा गया है। वेदमें ब्राह्मण और उपनिषद्में जिस इतिहासका उल्लेख है, उसी वपुल आख्यायिकाका सारसंग्रह ही महाभारतका दूसरा अंश है। तीसरे अंशमें पह्लव आदि आधुनिक नामका उल्लेख देख कर वेवरसाहवने नोल्डको साहवका मतानुसरण कर लिखा है, कि पार्थिव शब्दसे १ली सदीमें 'पह्लव' शब्दकी उत्पत्ति हुई। २रीसे ४थी सदीके मध्य भारतवासीने इस शब्दको काममें लाया होगा। कहनेका तात्पर्य यह कि जब मेगेस्थिनिजने महाभारतका कोई प्रसङ्ग उल्लेख नहीं किया तथा १ली शताब्दीमें डूयनक्रिससएसने उल्लेख किया है, तब यह स्पष्ट है, कि ईसाजन्मसे पहले ३रीसे १ली शताब्दीके मध्य मूल महाभारत रचा गया होगा। किन्तु इसका तीसरा अंश उससे भी बहुत पीछे (ब्राह्मण्य धर्मके अभ्युदयके समय) अर्थात् ३री और ४थी शताब्दीके मध्य रचा गया है, इसमें सन्देह नहीं।

स्रोडर (Schroeder) ने महाभारतकी जो आलोचना की है वह इस प्रकार है—

जिस समय ब्रह्मा सर्वप्रधान देवता समझे जाते थे, उस समय (ईसाजन्मसे पहले ७००—५०० वा ४०० ई०में) (महाभारतके) आदि कविने जन्मग्रहण किया। वह गायक कुरुभूमिके रहनेवाले थे। उन्होंने लोगोंके मुखसे कुरुवंशके पराभव और अज्ञातपूर्व एक जातिके हाथसे उनकी पराजय कहानी सुनी थी। उसी वियोगान्त घटनाके आधार पर उन्होंने देशीय वीरोंको क्षात्रधर्मका आदर्श तथा यादव वीर कृष्णके साथ पाण्डव, पाञ्चाल, मत्स्य आदि विजातियोंको नीच कुलोद्भव और अन्यायरूपसे जयकारी बतला कर चित्रित किया था। वही प्राचीन भारत-गान आश्वलायन गृह्यसूत्रमें गाया गया है। उसके बहुत समय बाद जब कृष्णने अवतार लिया, तब पाण्डुवंशियोंकी सहायतासे कृष्णभक्त पुरोहितोंने बुद्धके विरुद्ध कृष्ण वा विष्णुको खड़ा किया। उन लोगोंकी चेष्टा सफल हुई। ४थी शताब्दीमें विष्णु ही प्रधान देव हुए। उनके अनुरक्त पुरोहितोंने 'भारत' काव्य ले कर उसे बिलकुल बदल डाला। उनके प्रधान सहाय पाण्डुवंशधर थे। अतएव आदि भारतमें जहां जहां उनकी अपकीर्त्तिका वर्णन था वहां वहा उनकी तारीफ तथा उनके विपक्ष कुरुओंकी निन्दा की गई। पाण्डुवंश यथार्थमें दाक्षिणात्य वंशोद्भव होने पर भी इस समय कुरुवंशकी एक शाखा माने गये।

१८८६ ई०में अमेरिकाकी प्राच्य सभाकी पत्रिकामें अध्यापक हापकिन्स (E, W, Hopkins)ने '*Position of Ruling Caste in Ancient India*' नामसे एक लम्बचौड़ा प्रबन्ध प्रकाशित किया। उस प्रबन्धमें उन्होंने अध्यापक लासेन और स्रोडरके मत विरुद्ध बहुत सी आलोचना की है। उनका कहना है, कि स्रोडरने दिखलाया है, कि यजुर्वेदसे भी पहले भारतकाव्य रचा गया। क्योंकि यजुर्वेदमें ही कुरुपाञ्चालकी नातेदारीका हाल लिखा है और उसी नातेदारीसे दोनोंमें महासमर भी छिड़ा। अध्यापक लासेनने भी बहुत पहले प्रकाशित किया था, कि कुरुपाञ्चालका युद्धकीर्त्तन करना ही आदि भारतकाव्यका उद्देश्य था। किन्तु उक्त दोनों महाशयका मत अभी माननीय नहीं है। स्रोडरका विपर्यय सिद्धान्त भी प्रतिपन्न नहीं होता। एक बार शुभ्रवर्णमें चित्रित हो कर दूसरी बार परवर्त्ती कवियोंके हाथसे कृष्णवर्णमें चित्रित हुआ है, इसका कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। परवर्त्ती कवियोंकी यदि पाण्डुवंशकी बड़ाई करनेकी इच्छा रहती, तो वे पाण्डुवंशके सभी दोष उड़ा सकते थे। किन्तु ऐसा नहीं है, कविने दोनों पक्षको दोषी ठहराया है। यथार्थमें आदि भारतका विपर्यय साधन करके वर्त्तमान भारतकी सृष्टि स्वीकार किये विना आदि भारतके परिवर्त्तनसे वर्त्तमान भारतकी परिपुष्टि स्वीकार की जा सकती है। आदि समाज-चित्र और परवर्त्ती समाज चित्रकी आलोचना करनेसे ही बहुत कुछ मालूम हो जायेगा। धर्मकी निम्न गतिके साथ नीतिज्ञानको ऊंची गति होती है। परवर्त्ती धर्मज्ञान पूर्वतन की अपेक्षा बहुत सरल और विशुद्ध मालूम होगा। किंतु परवर्त्ती नीति पूर्वतनसे बहुत कुछ उच्च भावापन्न और कठोर नियमवद्ध है। आदि भारतकी गल्प सभीको मालूम है। वह गल्प प्राचीन नीतिजड़ित तथा परिवर्द्धित नीति-

ज्ञानसे विभिन्न है। अतः प्राचीन आख्यायिकाको उड़ा देना जैसा सहज नहीं है, पूर्वतन धर्मचित्रको अलग करना भी वैसा ही असम्भव है। इसीलिये परवर्त्ती कविने पहलेकी बातोंको न उड़ा कर उसमें अपनी समयोपयोगी परिवर्द्धित नीतिको शामिल कर दिया है। इससे महाभारतका आकार पहलेसे कुछ बढ़ गया। किंतु प्राचीन लोगोंके निकट जो सरल और धर्म्म समझा जाता था, नीतिज्ञानसम्पन्न आधुनिकको निगाहमें वह यशस्कर नहीं भी समझा जा सकता है। जैसे आदि गल्पमें लिखा है, कि अर्जुनने निराश्रय अवस्थामें कर्णको मारा था। हो भी सकता है, पूर्वनीतिने इसे दोष न समझा हो, पर वर्त्तमान नीति इसे कभी भी माननेको तैयार नहीं। "समान समानमें अर्थात् जोड़में न्याय युद्ध करो" यही हुआ परवर्त्ती कवियोंका वचन। किन्तु अर्जुन जैसे धर्मात्मा व्यक्ति निराश्रयका प्राणवध कर अन्यायकार्य कर सकें, इसे परवर्त्ती नैतिक उचित नहीं समझते। इसीलिये उन्होंने प्रकाशित किया, कि जब यह स्वयं भगवान्का आदेश था तब फिर न्याय और अन्यायकी क्या बात रही? परवर्त्ती कविकी इच्छा थी, पाण्डुवंशकी कीर्त्तिघोषणा और सन्नीतिका प्रवर्त्तन। कहीं कहीं पर कविने नीतिके निकट कीर्त्तिकी बलि दे दी है अर्थात् नीतिके निकट कीर्त्तिको तुच्छ समझ रखा है। यहां तक कि, कुरुगण पाण्डवोंको लगती बातोंमें गाली दे कर कहते हैं, 'जब दो व्यक्ति लड़ रहे हैं, तब उसमे तीसरेको पड़नेकी क्या जरूरत, और इस प्रकार मित्रका पक्ष ले कर शत्रुका निधन करना क्या धर्म है?" अर्जुन हंसते हुए उत्तर देते हैं, 'क्या आश्चर्य! तुम लोग मुझे व्यर्थका दोषी ठहराते हो! जब देखा, मेरा बांधव शत्रुके हाथसे सताया जा रहा है, तब शत्रुको आघात करना क्या कर्त्तव्य नहीं? यदि प्रत्येक स्वयं युद्ध करे, तो फिर विवाद ही किस लिये? युद्धनीति ऐसा नहीं कहती।' सचमुच ऐसा मालूम पड़ता है, कि कुरुओंका अभिप्राय कौन अच्छा और कौन बुरा है इसे पृथक् करनेके लिये गठित नहीं हुआ है। किन्तु पाण्डुवंशमें नीतिकी परिपुष्टि इसे बतलाये देती है। अध्यापक हापकिनिसने अन्तमें यह स्थिर किया कि महासमरकी कहानीमे यदि कुछ भी सत्य रहे, तो यह स्वीकार करना होगा कि बहुत दिनोंके प्रतिष्ठित अभिजात कुरुवंशमें उच्चतर सभ्यताका लक्षण परिस्फुट था, किन्तु नवोदित इतर पाण्डुवंशमें वह प्राचीनता बिलकुल न थी। इसके बहुत दिन बाद यह फिरसे सभ्यसमाजमें आधिपत्य फैला कर प्रतिष्ठित हुआ था। कहानी और चरित्रसमूहका सम्यक् परिवर्त्तन करना परवर्त्ती कवियोंकी बिलकुल इच्छा न थी। सन्नीतिका प्रचार करनेके लिये ही परवर्त्ती कवियोंने विवर्त्तन और परिवर्द्धन किया है। कोई कोई कहते हैं, कि कुरु-पाञ्चाल-युद्ध ही मूल बात है, पीछेसे पाण्डुप्रसङ्ग जोड़ दिया गया है। किन्तु इसकी भी कोई भित्ति नहीं है। पाण्डुपाञ्चालका परस्पर सम्बन्ध महासमरका कारण है, यह भले ही कहा सकता है। फिर किसीने भारतके धृतराष्ट्रको वैदिक धृतराष्ट्रके साथ मिलानेका प्रयास किया है, किन्तु यह भी समीचीन नहीं है कारण, यजुर्ब्राह्मणके धृतराष्ट्र प्रकृत थे, पाण्डुवंश उस समय बिलकुल अज्ञात था। भारतकाव्यके पाण्डुवंश प्रकृत हैं, कुरुराजकी छायामात्र चित्रित है। सच पूछिये तो, उस समयके कुरुराज दुर्योधन थे। अभी कुरुवंशका प्रभाव जाता रहा, नाममात्रको रह गया है। पाण्डुवंशके पुरोहितोंने पाण्डुवंशकी विजयघोषणाके समय उनका गौरव बढ़ानेके लिये ही कुरुवंशको वेदका प्रभावशाली कुरु बतलाया था और इसी कारण इन्होंने वेदके धृतराष्ट्रको राजा कुरुकी जगह बैठाया है। यथार्थमें वेदोक्त धृतराष्ट्रके बहुत पीछे पांडुवंशका अभ्युदय हुआ। इसी प्रकार वे ब्राह्मणोक्त जनमेजयको वर्त्तमान भारत नायकका पुत्र बतलानेसे बाज नहीं आये हैं। वे जानते थे, कि जो जितने पुराने हैं उनका उतना ही आदर होता है और जिनका जितना आदर होता है वे उतने ही उत्तरोत्तर गौरवप्रकाशक हैं। इस महाकाव्यकी परीक्षा कर देखनेसे मालूम होगा, कि दो कारणोंसे इस महाकाव्यका आकार बड़ा हो गया है। पहला कारण है, महाकाव्यके बीच बीचमें उपाख्यानादि पूर्वतन विषयोंका समावेश और दूसरा अस्वाभाविक रूप अभिनव घटनाका संयोजन। शान्तिपर्वमें पहले कारणके परिपोषक अनेक विषय हैं, फिर स्वर्गा-

रोहनपक्षमें श्रेणोक्त प्रसङ्गकी भरमार है। इस प्रसङ्गमें अध्यापकने और भी कहा है, कि इस महाकाव्यसे भारतके दो सामाजिक चित्र देखे जाते हैं, पहला ढाई हज़ार वर्ष पहलेकी अर्द्धं पुष्ट अवस्था और दूसरा उसके हज़ार वर्ष बादकी अवस्था।*

अध्यापक डा: बुह्लर (Dr Buhlei)ने महाभारतका इतिहास आलोचना करते करते एक प्रबन्धमें लिखा है, ३रीसे ५वीं शताब्दी तक वर्त्तमान स्मृतिग्रन्थोंकी तरह महाभारत भी एक उत्कृष्ट दृष्टान्तपूर्ण स्मृतिग्रन्थ समझा जाता था। १८८४ ई०में अध्यापक लाडविगने गूढ़ आलोचना करके लिखा है, कि महाभारतको जो इतिहास समझते हैं, वे भूल करते हैं, इसमें सन्देह नहीं। महाभारतमें ऐतिहासिकताका यथेष्ट अभाव है। अध्यापक होल्ज़मान (Prof Holtzman) लाडविगके मतका बहुत कुछ समर्थन करते हुए "महारभात—प्राच्य और प्रतीच्य" इस नामसे चार खण्डोंमें विभक्त एक बड़ी पुस्तक लिख गये हैं।

१८९५ ई०में डा० डाह्मान (Dr, Dahlmann)ने Das Mahabharata als Epos und Rechtsbuch अर्थात् "महाभारतकाव्य और धर्म ग्रन्थ" इस नामसे एक पुस्तक लिखी। उन्होंने आश्वलायनके गृह्यसूत्र, पाणिनिके व्याकरण, पतञ्जलिके महाभाष्य तथा अश्वघोषके बुद्ध चरित तथा बौद्धोंके जातक और जैनोंकी धर्म कथाके उपाख्यानोंको सदृशता देख कर तथा अन्यान्य युक्तोंकी आलोचना कर स्थिर किया है, कि वर्त्तमान महाभारतका काव्यांश ईसाजन्मसे ५ सदी पहले अति सामान्य परिवर्त्तित आकारमे वर्त्तमान था। उन्होंने महाभारतकी क्रमपुष्टि आलोचना कर यह दिखलाया है, कि महाभारतके उपाख्यान-अंशका पहले नीतिकथारूपमें प्रचार था। किन्तु अभी उसमें दूसरे दूसरे विषयोंका समावेश हो जानेसे वह ऐसा हो गया है, कि उसमेंसे उपाख्यान अंश बाद दे कर नीति कथाको चुन लेना एक प्रकार असम्भव है। पितृहीन पाण्डवोंने दुष्ट दुर्योधनके हाथसे कष्ट पा कर आखिर महासमरमें स्वार्थसाधन किया। अधर्म द्वारा धर्मका उत्पीड़न और पीछे धर्मको जयघोषणा करना ही नीति-कथाका उद्देश्य है। आगे चल कर इस दृष्टान्तको अलङ्कारसे सजानेके लिये इसमें बहुत-सी बातें जोड़ दी गई हैं। नायक युधिष्ठिर दुर्दशाके मारे कहीं अधीर न हो जावें, इसलिये किसी कविने नलोपाख्यानकी सृष्टि की है। इसी प्रकार किसी कविने गान्धर्वविधानमें विवाहकी वैधता प्रमाणित करनेके लिये शकुन्तलोपाख्यान, आसुर-विवाहके उदाहारणस्वरूप माद्री, लक्षणा, सुभद्रा, अम्बा और अम्बालिकाका हरण प्रकाशित किया। शायद इसी प्रकार नियोग-प्रचार द्वारा सन्तानोत्पादनके दृष्टान्तस्वरूप पराशर द्वारा सत्यवतीके, व्यास द्वारा अम्बालिकाके और देवगण द्वारा कुन्तीमाद्रीके पुत्रलाभका विवरण प्रकाशित हुआ होगा। अलावा इसके वैष्णव और शैव धर्मकी प्रधानताको घोषणा करनेके लिये दार्शनिक तत्त्व और अनेक प्रकारके उपाख्यानोंकी सृष्टि हुई। डाक्टर डाह्मनने और भी लिखा है, कि द्रौपदीके स्वतन्त्र सत्ता ही न थी, अविभक्त सम्पत्तिका विना विसम्वादके किस प्रकार भ्रातृगण भोग कर सकते इसे दिखानेके लिये ही पत्नीरूपमें द्रौपदीका चित्र कल्पित हुआ है। अध्यापक होल्ज़मनने दुर्योधन शब्दकी व्युत्पत्तिमें भ्रम दिखलाते हुए स्थिर किया है, कि कौरवके शत्रुओंने पाण्डवको प्रसन्न करनेके लिये महाभारतके इतिहास-अंशमें बहुत जटिलता दिखलाई है। उनके मतसे पाण्डवभक्त कविने दुर्योधन शब्दका दुष्ट वा कुत्सितयोद्धा अर्थ लगाया है। किन्तु इसका असल अर्थ है जिसे युद्धमें आसानीसे परास्त न किया जा सके। पाण्डवको प्रसन्न रखनेके लिये ही पाण्डव पक्षकी सतता और नाना प्रकारके जटिल विधि निषेधादि प्रतिष्ठित और समर्थित हुए हैं। किन्तु डा: डाह्मन अध्यापक होल्ज़मनके इस मतको आभ्रान्त बतला कर माननेको तैयार नहीं हैं। उन्होंने भी ऐतिहासिकताके अभावके सम्बन्धमें अध्यापक लाडविगके मतको समर्थन किया है।

१८९५ ई०में अध्यापक लाडविगने महाभारतके सम्बन्धमे एक बहुत लंबा चौड़ा प्रबन्ध लिखा। उस प्रबन्धमें उन्होंने कहा है, कि पञ्चपाण्डव ग्रीष्म, वर्षा, शरत्, हेमन्त और वसन्त इन पांच ऋतुओंकी मूर्त्ति हैं।

* Journal of the American oriental society for 1884

दुर्योधन शीत ऋतु हैं, द्रौपदी पृथिवी है, युद्धादि ऋतु-परिवर्त्तन है, पाशा खेलनेको जगह (जुआखाना) शीत ऋतुसंचारक नाक्षत्रिक अवस्थान है तथा खेलमें जय ही पृथिवी पर शीतका आविर्भाव है, इत्यादि।

कुछ दिन हुए, अध्यापक जाकोविने बौद्ध धर्मका उत्पत्ति विषयक जो प्रवन्ध लिखा है उसमे वे प्रसङ्गतः महाभारत-रचनाकालका उल्लेख कर गये हैं। उन्होंने कहा है, कि महाभारतको लोग चाहे कितना ही प्राचीन क्यों न कहे, पर वे इसे खृष्टपूर्व दो वा तीन शताब्दोसे पहलेका कभी भी नहीं कह सकते। इसके समर्थनमें उनका कहना है, कि महाभारतमें शक वा यवनजातिको कहीं भो पंजाववासो नहीं वतलाया गया है और न उसमें पञ्जावमें बुद्ध अथवा पारसिक प्रभावका कोई उल्लेख ही है।

भारतकी आलोचना।

पाश्चात्य पण्डितोंने महाभारतके सम्बन्धमें जो आलोचना की है और आज करते भी हैं, उसके साथ हम लोगोंका मत नहीं मिलता। फिर उनकी आलोचना विलकुल भित्तिहीन और अमूलक है, ऐसा भी नहीं कह सकते। आदि महाभारत भिन्न भिन्न स्थानमें भिन्न भिन्न मनुष्यके हाथ पड कर वड़ा हो गया है, इसमें संदेह नहीं। महाभारतमें लिखा है—

"मन्वादि भारत केचिदास्तिकादि तथापरे।
तथोपरिचराद्यन्ये विप्राः सम्यगधीयते ॥
विविध संहिताज्ञान दीपयन्ति मनीषिणः।
व्याख्यातु कुशलाः केचिद् ग्रन्थान् धारयितुं परे ॥"
(आदि० १।५२-५३)

कोई ब्राह्मण 'नारायणं नमस्कृत्य' इत्यादि प्रथम मंत्रसे, कोई आस्तिक पर्वसे और कोई उपरिचर राजाके उपाख्यानसे इस महाभारतका आरम्भ हुआ समझ कर पढ़ते हैं। इस प्रकार पण्डित लोग कई तरहसे संहिताका भावार्थ लगाते हैं। कोई तो ग्रन्थव्याख्यानमें पटु हैं, और कोई ग्रन्थका अर्थ लगानेमें हो निपुण हैं।

अतः यह कहना होगा, कि वहुत पहलेसे ही महाभारतका कौन अंश आदि और कौन अंश अन्त था, इसका कोई ठीक नहो। आदि पर्वके १म अध्याय में लिखा है—

"इदं शतसहस्रन्तु लोकाना पुण्यकर्मणाम् ॥१०१
चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।
उपाख्यानैर्विना तावद्भारतं प्रोच्यते बुधैः ॥१०२
ततोऽध्यर्द्धं शतं भूयः सक्षेपं कृतवानृषिः।
अनुक्रमणिकाध्यायं वृत्तान्ताना सपर्वणाम् ॥" १०३

पुण्यात्मा लोगोंके लिये यह शतसहस्र (लाख) श्लोकात्मक महाभारत रचा गया है। किन्तु व्यासदेवने पहले पहल २४००० श्लोकमयी भारतसंहिताकी रचना की थी। पण्डितोंका कहना है, कि उपाख्यान-अंशको छोड़ महाभारतकी संख्या इतनी ही होती है। पीछे संक्षेपमें सर्वार्थका सङ्कलन करके उन्होंने १५० श्लोकोंका अनुक्रमणिकाध्याय रचा।

उक्त चौबीस श्लोकोंका ग्रन्थ ही भारतसंहिता कहलाता है। इस भारतसंहिताको ही हम लोग आदि महाभारत समझते हैं। यहो संहिता कृष्णद्वैपायन वेदव्यासको रचना है। यह अति प्राचीन ग्रन्थ है—आश्वलायन और सांख्यायनगृह्यसूत्रमें इसोको भारत वतलाया है—

"सुमन्तुजैमिनिवैशम्पायनपैल सूत्रभाष्यभारतधर्माचार्य्याः...
ये चान्ये आचार्यास्ते सर्वे तृप्यन्त्विति।"
(आश्वगृह्य ३।४)

अर्थात् उपनयनकालमें सुमन्त, जैमिनी, वैशम्पायन, पैल, सूत्रभाष्य और भारतधर्माचार्य तथा अन्यान्य जितने आचार्य हैं सभो तृप्त होवें (ऐसा कहना होता है)।

आश्वलायनने दूसरी जगह श्राद्धादि पितृकार्यमें भी इतिहास पुराणादि पढ़नेकी व्यवस्था दी है।

"आयुष्मता कथाः कीर्त्तयन्तो माङ्गल्यानीतिहासपुराणानीत्याख्यापयमानाः।" (आश्वगृह्य ४।६)

बहुतेरे पण्डितोंका कहना है, कि उस आदिभारत-संहिताका ही आश्वलायन गृह्यसूत्रमें 'इतिहास' नाम रखा गया है। महाभारतमें भी लिखा है—

"इतिहासाः सवैयाख्या विविधाः श्रुतयोऽपि च।
इह सर्वमनुक्रान्तमुक्तं ग्रन्थस्य लक्षणं ॥" (१।१।५०)

व्याख्याके साथ सभी इतिहासों और विविध श्रुतियोंका यथाक्रमसे इस ग्रन्थमें वर्णन किया गया है, यही इस ग्रन्थका लक्षण है।

वर्त्तमान महाभारतसे ही हम लोगोंको पता चलता है, कि यह इतिहासरूप भारतकाव्य एक दूसरेके मुखसे ही प्रकाशित हुआ था।* प्रचलित महाभारतमें लिखा है—

"क्षेत्रे विचित्रवीर्यस्य कृष्णद्वैपायनः पुरा।
उत्पाद्य धृतराष्ट्रञ्च पाण्डुं विदुरमेव च ॥९५
जगाम तपसे धीमान् पुनरेवाश्रमं प्रति।
तेषु जातेषु वृद्धेषु गतेषु परमां गतिं ॥९६
अब्रवीद्भारतं लोके मानुषेऽस्मिन् महानृषिः।
जनमेजयेन पृष्टः सन् ब्राह्मणैश्च सहस्रशः ॥९७
शशास शिष्यमासीनं वैशम्पायनमन्तिके।
स सदस्यैः सहासीनः श्रावयामास भारतम् ॥९८
कर्मान्तरेषु यज्ञस्य चोद्यमानः पुनः पुनः।
विस्तरं कुरुवंशस्य गान्धार्या धर्मशीलतां ॥९९
क्षत्तुः प्रज्ञां धृतिं कुन्त्याः सम्यग् द्वैपायनोऽब्रवीत्।
वासुदेवस्य माहात्म्यं पाण्डवानाञ्च सत्यतां ॥१००
दुर्वृत्तं धार्त्तराष्ट्रानामुक्तवान् भगवानृषि।" (१।१ अ०)

पुराकालमें धीमान् कृष्ण-द्वैपायन विचित्रवीर्यके क्षेत्रमें धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुरको उत्पादन करके तपस्याके लिये अपने आश्रममें लौटे। जब उक्त तीनों वीर वृद्ध हो कर परलोकवासी हुए, तब उन महामतिने मनुष्यलोकमें इस 'भारत' को सुनाया था। पीछे जनमेजयके सर्पयज्ञमें हजारों ब्राह्मण और स्वयं जनमेजयके आग्रह करने पर वेदव्यासने यज्ञमें आये हुए वैशम्पायनको महाभारत सुनाने कहा था। तदनुसार प्रतिदिनका यज्ञकार्य शेष होने पर वैशम्पायन उन्हें महाभारत सुनाया करते थे। कुरुवंशका विवरण, गान्धारीकी धर्मशीलता, विदुरकी प्रज्ञा, कुन्तीका धैर्य, कृष्णका माहात्म्य, पाण्डवोंकी सत्यनिष्ठा और धृतराष्ट्रके पुत्रों अर्थात् कौरवोंकी दुर्वृत्तता आदि सभी विषय द्वैपायन ऋषिने सविस्तार सुनाये थे।

कुरुपाण्डव-प्रसङ्गको ले कर ही पहले पहल भारत-संहिता रची गई थी। महाभारतके मतसे उस संहितामें २४००० श्लोक हैं। यथार्थ प्रचलित महाभारतका उपाख्यान-अंश यदि बाद दिया जाय और कुरु पाण्डवका विवरण लिया जाय, तो २०००० श्लोक हो सकते हैं। उसीको हम लोग आदि और अति प्राचीन भारत कह सकते हैं। जनमेजयके सर्पयज्ञमें वही आदि भारत सबसे पहले सबके सामने सुनाया गया था। पीछे नैमिषारण्यमें कुलपति शौनकके द्वादश वार्षिक यज्ञमें सूत लोमहर्षणके पुत्र उग्रश्रवाने दूसरी बार यह भारत-संहिता लोगोंको सुनाई थी। जनमेजयका सर्पयज्ञ दीर्घकालस्थायी नहीं था, अतएव लोगोंके चित्तविनोदनार्थ २४००० श्लोकात्मक भारतसंहिताका गान ही उतने समयके लिये यथेष्ट था। किन्तु बारह वर्षवाले लंबे यज्ञमें उतने श्लोकोंसे काम नहीं चलता, इसी कारण उसे बढ़ानेकी कोशिश करनी पड़ी थी। अर्थात् ऋषियोंके चित्तविनोदनार्थ उग्रश्रवाने भारत गानके समय उसमें बहुतसे उपाख्यान जोड़ कर उन्हें सुनाया था। महाभारतके प्रारम्भमें उग्रश्रवाने कहा है,—

कुरु, पुरु, यदु, शूर विष्वगश्व, अणुह, युवनाश्व, ककुत्स्थ, रघु, विजय, वीतिहोत्र, अङ्ग, भव, श्वेत, बृहद्गुरु, उशीनर, शतरथ, कङ्क, दुलिदुह, द्रुम, दम्भोद्भव, वेन, सगर, सस्कृति, निमि, अजेय, परशु, पुण्ड्र, शम्भु, देवावृध, देवाह्वय, सुप्रतिम, सुप्रतीक, बृहद्रथ, सुक्रतु, निषधापति नल, सत्यव्रत, शान्तभय, सुमित्र, सुबल, जानुजङ्घ, अनरण्य, अर्क प्रियभृत्य, बलबन्धु, निरामर्द, केतुश्रृङ्ग, बृहद्बल, धृष्टकेतु, बृहत्केतु, दीप्तकेतु, अविक्षित्, चपल, धूर्त्त, कृतबन्धु, दृढ़षुधि, महापुराणसम्भाव्य, प्रत्यङ्ग, प्रवहा, श्रुति, इत्यादि हजारों राजाओंके कर्म, विक्रम, दान, माहात्म्य, आस्तिक्य, सत्य, शौच, दया और आर्जवादीका विवरण विद्वान सत्कवियोंने पुराणमें गाया है। (आदि पर्व १ अ०, २३२ से २४२ श्लोक)

अधिक सम्भव है, कि उग्रश्रवाने उन प्राचीन आख्यायिकाओंको भारतसंहिताप्र-सङ्गमें कीर्त्तन किया था। उनके समयमें जहां जितने प्राचीन आख्यान और उपाख्यानादि प्रचलित थे, वे सभी भारतसंहितामें शामिल किये गये। इस प्रकार संहिताका आकार पहलेसे कहीं बढ़ गया और वही संहिता उक्त यज्ञमें आये हुए

* आदिपर्व १म अध्याय, १०, ११, १७, २० और २६ श्लोक देखो।

हजारों ऋषियोंके निकट इसी 'महाभारत' नामसे प्रसिद्ध हुई। यहां तक कि, उग्रश्रवाके महाभारत नामसे ऋषि-वृन्द इतने प्रसन्न हो गये थे, कि उन्होंने इसे पञ्चम वेद मान लिया था। पीछे जो जिस विषयको अच्छा समझते थे वे उसे इस महाभारतमें शामिल करने लगे। आदि पर्वके द्वितीय अध्यायके शेषांशमें साफ साफ लिखा है, कि यह महाभारत अर्थशास्त्र, कामशास्त्र और धर्मशास्त्र माना गया है। दिलचस्प उपाख्यान, श्रेष्ठतम इतिहास, सभी पुराण और आख्यान इसके अन्तर्गत हैं। यह सर्वप्रधान काव्य है। इसकी बराबरी कोई भी काव्य नहीं कर सकता। (महाभारत आदि २ अ०)

इस शेषोक्त विवरणसे मालूम होता है, कि प्राचीन कवियोंने जहां जो कुछ अच्छी रचना देखी उसे कुल अथवा उसका सार माल ले कर इस महाभारतमें जोड़ दिया है। यहां तक, कि बहुतसे कवि अपनी अपनी रचनाका वेदव्यासके नामसे प्रचार कर धन्य हो गये हैं, इसमें सन्देह नहीं। महाभारतमें परवर्त्तीकालके नाना कवियोंकी रचना रहनेसे एक विषयका बार बार उल्लेख (जैसे आदिपर्वके १३से १५ अध्याय तथा ४५से ४८ अध्याय तक जरत्कारुका उपाख्यान), एक उपाख्यान कहते कहते बिना किसी कारणके दूसरे उपाख्यानका प्रसङ्ग (जैसे पौष्य पर्वमें आरुणि और उपमन्युका उपाख्यान), बिना पूर्व सूचनाके व्यक्ति विशेषका सहसा वाक्य-समावेश (जैसे आदिपर्वके २४वें अध्यायमें रुरु और प्रमतिका कथोपकथन)। १२वें अध्यायके शेषमें रुरु कहते हैं, कि उन्होंने अपने पिता प्रमतिसे आस्तीकोपाख्यान सुना था। किन्तु इस सम्बन्धकी और कोई बात नहीं मिलती। पीछे १३वें अध्यायमें उग्रश्रवा कहते हैं, कि मैंने पितासे आस्तीकोपाख्यान जैसा सुना है, वैसा कहता हूं। अलावा इसके कई जगह पर असम्बन्ध उपाख्यान भी वर्णित देखा जाता है (जैसे पौष्यपर्वमें सर्पयज्ञके अनुष्ठानकी सूचनाके बाद ही पौलमपर्वमें भृगुवंशका वर्णन)।

इस प्रकार महाभारतका बड़ा आकार होने पर परवर्त्ती व्यास वा सङ्कलनकर्त्ताने उसमें वेदव्यास-गणेश-संवाद मिला दिया था, इसमें संदेह नहीं। उन्होंने जनताको यह कह कर समझाया था, कि ऐसा बड़ा ग्रन्थ सामान्य लेखकके हाथका नहीं हो सकता। ग्रन्थमाहात्म्यका प्रचार करनेके उद्देशसे गणपति महाभारतके लेखकरूपमें कीर्त्तित हुए। किन्तु आदि भारतसंहिता लिखी नहीं गई, एक दूसरेके मुंहसे इसका प्रचार हुआ, यह पहले ही कह आये हैं।

बहुतोंका विश्वास है, कि महाभारतने बहुत आधुनिक समयमें ऐसा विराट् आकार धारण किया है, और तो क्या बहुतेरे इस महाभारत नामको नितान्त आधुनिक समझते हैं। उसका कारण यह है, कि बालिद्वीपमें महाभारतका जो कविभाषामें प्राचीन अनुवाद है, वह 'बारत युद्ध' कहलाता है, उसमें महाभारतका उल्लेख नहीं है। यहां तक कि वेबर आदिका विश्वास है, कि पाणिनिके समयमें भी 'महाभारत' इस नामका कोई ग्रन्थ ही न था। किन्तु हम लोगोंके ख्यालसे यह लाख श्लोकका विराट् महाभारत उतना आधुनिक ग्रन्थ नहीं है। बुद्धके आविर्भावसे बहुत पहले यह महाग्रन्थ प्रचलित था, ललितविस्तर और आदिपालि भाषामें लिखित बहुतों बौद्ध-ग्रन्थसे इसका पता लगता है।

"महान् व्रीह्यपराह्णगृष्टीष्वासजाबालभारभारतहैलिहिलरौरवप्रवृद्धेषु" (पा ६।२।३८)

अर्थात् व्रीहि, अपराह्ण, गृष्टी, ष्वास, जाबाल, भार, भारत, हैलिहिल, रौरव, प्रवृद्ध ये दश शब्द पीछे रहनेसे उनके पहले 'महत्' शब्दका प्रयोग होता है, जैसे महाव्रीहि, महाभारत।

उक्त सूत्रमें पाणिनिने स्पष्टतया महाभारतका नाम लिया है। वे जो महाभारतप्रतिपाद्यविषयसे अवगत थे, वह अष्टाध्यायीका ४।१।१४५, ४।३।९८, ६।३।७५, ८।३।९५ आदि सूत्र पढ़नेसे मालूम होता है।

५वीं शताब्दीमें भारतवर्षसे सभी हिन्दूधर्मग्रन्थ यवद्वीपमें लाये गये। वे सब धर्मग्रन्थ आज भी बालिद्वीपमें मूल और अनुदित आकारमें मौजूद हैं। वहां महाभारतका सम्पूर्ण अनुवाद नहीं है। पर हां, महासमरके आधार पर कविभाषामें 'भारतयुद्ध' नामक काव्य रचा गया है—वही काव्य वहांके हिन्दूसमाजमें सर्वत्र आदृत है। भीष्म, द्रोण, कर्ण और शल्य पर्वको ले कर यह ग्रन्थ तय्यार हुआ है। इस ग्रन्थका विशेष

प्रचार रहनेसे ही महाभारतका नाम जनसाधारण नहीं जानते। पर हां, जिनके घरमें संस्कृत महाभारत है, उन की बात दूसरी है। आज तक बालिद्वीपमें आदि, विराट, उद्योग, भीष्म, आश्रमवास, मौषल, महाप्रस्थानिक और स्वर्गारोहण पर्वका संस्कृत अंश पाया गया है।

कोई कोई सभा, वन, द्रोण, कर्ण, शल्य, गदा, अश्वत्थामा, सौप्तिक, स्त्रीविलाप और अश्वमेधयज्ञ पर्वके नामोंसे अवगत हैं। हमलोगोंका विश्वास है, कि यदि अनुसन्धान किया जाय, तो बालिद्वीपसे सभी मूल महाभारत निकल सकते हैं। इत्यादि प्रमाणके अनुसार हमलोग महाभारतको आधुनिक ग्रन्थ नहीं मान सकते। बुद्धके आविर्भावके बाद इस महाभारतमें कोई विशेष परिवर्त्तन नहीं हुआ।

संस्कृत शास्त्रज्ञ पुराविदोंका विश्वास है, कि बौद्ध-विप्लवमें दूसरे दूसरे संस्कृत धर्मशास्त्रोंके साथ साथ महाभारत भी नष्ट होने पर था। परन्तु मालविकाग्निमित्र नाटकके नायक विदिशाधिपति अग्निमित्रने ही इसका उद्धार किया। इन शुङ्गसम्राट्ने हिन्दूधर्मकी पुनः प्रतिष्ठाके लिये अश्वमेधयज्ञका अनुष्ठान किया था। कुरु-यज्ञमें महाभारत-पाठकी आवश्यकता आन पड़ी थी। इसलिये उन्होंने देश देशके प्रधान प्रधान पण्डितोंको बुला कर महाभारत-ग्रन्थ तय्यार किया। इस समय कोई ऐसा भी नहीं कह सकते कि महाभारतसे अनेक प्राचीन आख्यान अलग कर दिये गये, समयोपयोगी भावाका प्रचार हुआ तथा अति सामान्यभावमें नई बातें नहीं जोड़ी गई हैं। पर हां, दो चार श्लोक इसमें ऊपरसे अवश्य दिये गये हैं। इन दो चार श्लोकोंके लिये महाभारतकी प्राचीनता नष्ट हो जायगी ऐसा कदापि नहीं हो सकता। प्रक्षिप्त अंश उनमेंसे चुन लेना कोई बड़ी बात नहीं है। जैसे शान्तिपर्वके २१८वें अध्यायमें नास्तिकमत-खण्डनके उपलक्षमें 'क्षणिक विज्ञानवादी सौगतोंकी निन्दा' तथा अनुशासनपर्वके १४२वें अध्यायमें मुण्डितमस्तक काषाय वास (बौद्ध) भिक्षुकोंको स्वेच्छाचारी तपस्वी कहना। राजा अग्निमित्र बौद्धविद्वेषी एक कट्टर ब्राह्मणभक्त थे। अतः उनके बनाये महाभारतमें बौद्धनिन्दासूचक दो चार श्लोकोंका रहना असम्भव नहीं। इसके लिये यदि कोई कहे कि महाभारत इस समयका ग्रन्थ है, तो उनकी भूल है। महाभारतमें ऐसे कितने पुराणाख्यान हैं जो प्रचलित रामायणसे प्राचीन प्रतीत होते हैं। फिर महासमरके उपलक्षमें रचित भारतसंहिता रामायणसे बहुत पीछे रची गई। कारण, रामायणके समय संस्कृत भाषा ही जन-साधारणकी प्रचलित भाषा समझी जाती थी। आर्य-सभ्यताका प्रसार उस समय भी दाक्षिणात्यमें सर्वत्र नहीं था। किन्तु महाभारतमें पाण्डवोंके वारणावर्त्तमें रहते समय विदुरको म्लेच्छभाषामें कथोपकथन और समस्त दाक्षिणात्यमें आर्यसभ्यताकी आलोचना करनेसे साफ साफ मालूम होता है, कि रामायणसे बहुत पीछे भारतसंहिता रची गई। क्षत्रिय राजाओंकी उपदेश-मूलक राजनीति और धर्मशास्त्रीय नाना विषय उससे बहुत पीछे रचे गये, यह पहले ही कह आये हैं।

शेषोक्त अंशमें शक यवनादिका उल्लेख रहनेसे कोई कोई इस अंशको आधुनिक समझते हैं। फिर भी वे सब जातियां जब पंजाबवासी नहीं मानी गई हैं, तब भारतमें शकयवनाधिकारसे बहुत पहले वह अंश रचा गया है, इसमें सन्देह नहीं।

महाभारतमें सभी शास्त्रोंका समावेश है, इस कारण जो जिस भावको ग्रहण करना चाहते हैं वे वही भाव ग्रहण करते हैं। यही कारण है कि महाभारत सम्बन्धमें पाश्चात्य पण्डितोंके मध्य इतना मतभेद देखा जाता है। और तो क्या, कुरुक्षेत्रके प्रसिद्ध महासमर तक भी बहुतेरे उड़ा देना चाहते हैं। किन्तु जब यह महासमर प्रकृत ऐतिहासिक घटना है और डेढ़ हजार वर्ष पहलेसे ही चला आ रहा है, तब फिर इसे किस प्रकार उड़ा सकते हैं। यहां तक, कि ५५६ शकमें २य पुलकेशिके शिला-फलकमें भारतयुद्धसे एक स्वतन्त्र अब्द प्रचलित था, उसके बहुतसे प्रमाण भी मिलते हैं। इस शिलाफलकके मत ५५६ शकसे ३७३५ वर्ष पहले भारतयुद्ध छिड़ा था। इस हिसाबसे आजसे ५०३० वर्ष पहले भारतयुद्ध हुआ था, इसमें जरा भी सन्देह नहीं।

महाभारत जितना प्राचीन है, इसका खिल वा परिशिष्ट स्वरूप हरिवंश उतना प्राचीन नहीं है। महाभारतमें वैष्णव धर्मका हाल रहने पर भी हरिवंशमें उसका पूर्ण प्रभाव देखा जाता है। उस समय शाक्तगण भी अपना सर उठाये हुए थे। "ह्रीं श्रीं गार्गीश्च गान्धारी योगिनी

योगदां सदा" इत्यादि उक्ति उसकी पोषक है। विशेषतः १ली शताब्दीमें रचित मृच्छकटिकमें हरिवंशका आभास और उसके मध्य बौद्धप्रभावका निदर्शन नहीं रहनेसे हरिवंशको भी बुद्धाविर्भावके पहलेका ग्रन्थ कह सकते हैं।

महाभारतकी टीका।

महाभारतकी बहुत-सी टीकाएं पाई जाती हैं जिनमें देवस्वामी, वैसम्पायन और विमलबोधकी टीका बहुत प्राचीन है। इसमे व्यासकूटका अर्थ और दुरूहस्थानका अर्थ लिखा है। इसके अतिरिक्त अर्जुनमिश्रकी भारत अर्थदीपिका, आनन्दपूर्ण मुनि विद्यासागरकी व्याख्यारत्नावली, चतुर्भुजमिश्रकी टीका, देवबोधकी ज्ञानदीपिका, नन्दकिशोरकी गूढ़ार्थ प्रकाशिका, नन्दनाचार्यकी भारतदीपिका, नारायणसर्वज्ञकी भारतार्थ प्रकाश, नीलकण्ठचातुर्धरकी भारतभावदीप, परमानन्द भट्टाचार्यकी मोक्षधर्म टीका, यज्ञनारायणकी भारत-टीका, रत्नगर्भकी टीका, लक्ष्मणभट्टकी भारतदीपिका, श्रीनिवासाचार्य रचित टीका, रामानुजकी व्याख्याप्रदीप, आनन्दतीर्थकी महाभारततात्पर्यनिर्णय-टीका, महाभारततिलक और महाभारतनिर्वाचन नामक अज्ञात ग्रन्थकार रचित दो टीकाएं पाई जाती हैं।

महाभारतका अनुवाद।

पहले ही लिखा जा चुका है, कि बहुत दिन हुए यवद्वीपमें भीम, द्रोण, कर्ण और शल्यका कविभाषामें 'वारत वा भारतयुद्ध' नामसे अनुवाद हुआ था। भारतवर्षमें भी प्रायः सभी भाषाओंमें महाभारतका अनुवाद वा मर्मानुवाद देखा जाता है। हालकनाड़ामें कुमारव्यासका अनुवाद मिलता है। इस ग्रन्थका १२वीं शताब्दीमे बल्लालवंशीय विष्णुवर्द्धनके समय अनुवाद हुआ था। १२वीं शताब्दीमें मराठी भाषामें भी महाभारतका अनुवाद हुआ। उत्कल भाषामें बहुतसे प्राचीन अनुवाद देखे जाते हैं। कृष्णानन्द वसु, अनन्तमिश्र, नित्यानन्दघोष, द्विजकविन्द्र, उत्कलकवि सारण, षष्ठीवर, गङ्गादाससेन, राजेन्द्रदास, गोपीनाथ दत्त, राजारामदत्त आदिने महाभारत लिख कर अच्छी ख्याति पाई है। इनमेंसे कितने काशीरामदासके पूर्ववर्त्ती हैं। जबसे काशीरामदासका महाभारत प्रकाशित हुआ तबसे पूर्वतन कवियोंका नाम बहुत कुछ लोप हो गया है। काशीरामके बाद उनके लड़के नंदरामदास, द्वैपायन दास, निमाई पण्डित, त्रिलोचन चक्रवर्त्ती, वल्लभदेव, लोकनाथ दत्त, मधुसूदन नापित, शिवचन्द्रसेन, भृगुराम दास आदिके नाम उल्लेखनीय हैं। ये लोग अङ्गरेजी अमलदारीके पहले विद्यमान थे। अङ्गरेजी अमलदारीके बाद जो सब अनुवाद प्रकाशित हुए उनमें कलकत्ता वासी कालीप्रसन्न सिंह द्वारा प्रकाशित बङ्गला गद्यानुवाद ही सर्वप्रधान है।

महाभारतिक (सं० त्रि०) महाभारताभिज्ञ, महाभारततत्त्वको सम्पूर्णरूपसे जाननेवाले।

महाभाष्य (सं० क्ली०) पतञ्जलि-कृत पाणिनि व्याकरण-सूत्रका विशद भाष्य। फिर भर्त्तृहरि, कैयट आदिने इस भाष्यकी टीका भी लिखी है। पतञ्जलि देखो।

महाभासुर (सं० पु०) १ विष्णु। (त्रि०) २ अतिशय दीप्तियुक्त, जिसमें चमक दमक हो।

महाभिक्षु (सं० पु०) १ भिक्षुश्रेष्ठ। २ शाक्यमुनि, भगवान् बुद्ध जो संसारकी सब कामनाको परित्याग कर भिक्षु हुए थे।

महाभिजन (सं० पु०) उच्चवंश, सम्भ्रान्तवंश।

महाभिजनजात (सं० त्रि०) सम्भ्रान्त वंशसम्भूत, जिसका उच्चमें जन्म हुआ हो।

महाभिज्ञा-ज्ञानाभिभू (सं० पु०) बुद्ध।

महाभिमान (सं० पु०) अतिशय अभिमान, बड़ा भारी घमण्ड।

महाभिष (सं० पु०) इक्ष्वाकुवंशीय राजपुत्रभेद। (भाग० ९।२२।१२)

महाभिषव (सं० पु०) बड़े आडम्बरसे सोमरसका चुआना।

महाभिषेक (सं० पु०) प्रधान अभिषेक-क्रिया, राजपद पर निर्वाचन।

महाभिष्यन्दिन (सं० त्रि०) अत्यन्त आर्द्रताकारक, बड़ा सम्मान करनेवाला।

महाभीत (सं० त्रि०) महान् अतिशयो भी :। अतिशय भययुक्त, बड़ा डरपोक। (पु०) २ राजा शान्तनुका

एक नाम। ३ शिवके भृंगी नामक द्वारपालका एक नाम।

महाभीता (सं० स्त्री०) लज्जालुवृक्ष, लजालू।

महाभीति (सं० स्त्री०) महती भीतिः। १ अतिशय भय, भारी डर। (त्रि०) २ महाभयग्रस्त, जो बहुत डरता हो।

महाभीम (सं० पु०) महानतिशयो भीमः, भीषणाकृतित्वात् शिवांशसम्भूतत्वाच्च तथात्वं। १ राजा शान्तनुका नामभेद। २ भृङ्गिनामक शिवद्वारपाल। (त्रि०) ३ अतिशय भयानक, अत्यन्त डरावना।

महाभीरु (सं० पु०) महान् अतिशयो भीरुः। १ ग्वालिन नामका बरसाती कीड़ा। (त्रि०) २ अतिशय भयशील, अत्यन्त डरपोक।

महाभीषणक (सं० त्रि०) अतिशय भयावह, डरावना।

महाभीष्म (सं० पु०) महानतिशयो भीष्मः। राजा शान्तनुका एक नाम।

महाभुज (सं० त्रि०) महान्तौ भुजौ यस्य। महाबाहु, आजानुलंबित बाहु, जिसकी बाहें बहुत लंबी हों।

महाभूत (सं० क्ली०) महच्च तत् भूतञ्चेति कर्मधा० पञ्चतन्मात्रेभ्यः स्थौल्यादस्य तथात्वं। १ पृथिव्यादि पञ्चभूत। पक्षी, जल, अग्नि, वायु और आकाश ये पञ्चतत्त्व हैं। २ स्थावर जङ्गमांश।

महाभूतदान (सं० क्ली०) शास्त्रोक्त दानविशेष।

महाभूमि (सं० स्त्री०) महती भूमिः। १ विपुल भूमि। २ महादेश।

महाभूषण (सं० क्ली०) मूल्यवान् अलंकार, कीमती जेवर।

महाभृङ्ग (सं० पु०) महांश्चासौ भृङ्गश्चेति। नील भृङ्गराज, नीले फूलवाला भङ्गराज।

महाभृङ्गराजतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, आनूपदेशोत्पन्न सुधौत भृङ्गराजरस १६ सेर, चूर्णके लिये मजीठ, पद्मकाष्ठ, लोध, रक्तचन्दन, गेरुमट्टी, विजवंद, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, नागेश्वर, प्रियङ्गु, मुलेठी, प्रपौण्डरीक और श्यामालता, प्रत्येक द्रव्य एक एक पल। इन्हें दूधके साथ पीस कर पाक करे। पीछे तैलपाकके विधानानुसार इसका पाक करना होगा। यह तेल शिर पर लगानेसे बालोंका गिरना बंद हो जाता है तथा मन्यास्तम्भ, गलग्रह, शिरोरोग, कर्णरोग और चक्षुरोग आदिमें यह तेल विशेष लाभदायक है। (भैषज्यरत्नाकर क्षुद्ररोगाधि०)

महाभैरव (सं० पु०) महान् भैरवः। शरभरूपी महादेव।

"योऽसौ महाभैरवाख्यः सकायः शारभो हरः।
भैरवः पृथगेवाय गणाध्यक्षो हरात्मजः॥
(कालिकापुराण ४६ अ०)

महाभैरवी (सं० स्त्री०) तान्त्रिकोंके अनुसार एक विद्या का नाम।

महाभोग (सं० त्रि०) महान् आभोगः विशालता यस्य। महाविशालताविशिष्ट, अतिशय विशाल।

"ततस्तत्र महाभोग सच्छायस्कन्धसुन्दरम्।
गुहचन्द्रो ददर्शाथावेकं न्यग्रोधपादकम्॥"
(कथासरित्सागर १७।२०६)

महाभोगा (सं० स्त्री०) महान् आभोगः परिपूर्णतास्याः वा महान् भोगः सुखरूपमस्याः। १ दुर्गा।

"महार्थसाधनी देवी महाभोगा ततः स्मृता॥"
(देवीपु० ४५ अ०)

भगवती दुर्गा महार्थका साधन करती हैं इसलिये उनका महाभोग नाम पड़ा है। (पु०) २ सर्प, सांप। ३ वृहत् परिधिविशिष्ट, बड़े घेरेका।

महाभोगी (सं० पु०) महत् चक्र वा फणाधर, बड़े फणवाला सांप।

महाभोज (सं० पु०) १ एक राजाका नाम। २ राजचक्रवर्त्ती। ३ बड़ा भोज।

महाभोट (सं० पु०) भोट वा तिब्बत राज्य।

महाभौम (सं० पु०) पुराणानुसार एक राजाका नाम।

महाभ्र (सं० क्ली०) घनमेघ, गहरी घटा।

महाभ्रवटी (सं० स्त्री०) वटिकौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—अबरक तांबा, लोहा, गंधक, पारा, मैनसिल, सोहागा, यवक्षार और त्रिफला प्रत्येक ८ तोला। ये सब द्रव्य शोधित होने चाहिये। पीछे उसमें अर्ध तोला विष डाल कर भंगकी पत्ती, केशुरिया, सोमराज, भृङ्ग-

राज, बिल्वपत्र, पालिधापत्र, गनियारी, विढङ्क, तुम्बुरु, सम्हालु, नाटाकरञ्ज, धतूरेका पत्ता, श्वेत अपराजिता, जयन्ती, अदरक, गीमासाग, अड़ूस और पान इन्हें ८ तोले रसमें पृथक् पृथक् रूपसे भावना दे। पीछे जब कुछ जल रह जाय, तब उसमें ८ तोला मरिचका चूर्ण डाल कर एक रत्तीकी गोली बनावे। अनुपान दोषके अवस्थानुसार स्थिर करना होगा। इसके सेवनसे सब प्रकारकी ग्रहणी, अतीसार और सूतिका आदि रोग अति शीघ्र दूर होते हैं।

दूसरा तरीका—अबरक, लोहा, तांबा, राजपट्ट, पारद गंधक, सोहागा, मरिच, यवक्षार, हरताल, हरीतकी, आमलकी, बहेड़ा और विष प्रत्येक एक भाग। पीछे उसे अच्छी तरह चूर्ण कर गीमा साग और पानके रसके साथ सात बार भावना दे कर ६ रत्तीकी गोली बनावे। इसके सेवनसे सूतिकाज्वर, खांसी और सूजन आदि स्त्री-रोग बहुत जल्द जाते रहते हैं।

(रसेन्द्रसारसंग्रह सूतिकारोग-धिका०)

महामख (सं० पु०) महान् मखः। महायज्ञ, मानवोंके प्रतिदिन अवश्य कर्त्तव्य महायज्ञ।

"बलिकर्म स्वधाहोम स्वाध्यायातिथिसत्क्रियाः।
भूतपित्रमरब्रह्ममनुष्याणां महामखाः॥"

(याज्ञवल्क्य १।१०२)

महामञ्जूषक (सं० पु०) स्वर्गीय पुष्पभेद।

महामणि (सं० पु०) मूल्यवान् रत्न।

महामणिचूड़ (सं० पु०) नागभेद।

महामण्डल (सं० पु०) राजभेद।

महामण्डलिक (सं० पु०) नागभेद।

महामण्डूक (सं० पु०) महान् मण्डूकः। पीतमण्डूक, सोना बेंग।

महामण्डलेश्वर (सं० पु०) राजाकी उपाधिविशेष।

महामत (सं० त्रि०) सम्मानके योग्य।

महामति (सं० त्रि०) महती मतिर्यस्य। १ अति बुद्धिमान, चतुर।

"किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते।
यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु॥" (चण्डी)

(पु०) २ गणेश। ३ वृहस्पतिग्रह। ४ यक्षराजभेद। ५ बोधिसत्त्वभेद। (स्त्री०) करुणाकरकी पत्नी और पद्मनाभकी माता।

महामत्त (सं० त्रि०) अतिशय मत्त, मतवाला।

महामत्ता (सं० स्त्री०) महाकरञ्जका पेड़।

महामत्स्य (सं० पु०) तिमि प्रभृति बड़ा सामुद्रिक मत्स्य।

महामद (सं० पु०) महान् मदो यस्य। १ मत्त हस्ती, मस्त हाथी। महान् मदः। २ अतिशय हर्ष, बहुत प्रसन्न। (त्रि०) ३ अतिशय हर्षयुक्त मदविशिष्ट।

महामधुफला (सं० स्त्री०) पीला-कद्दू।

महामनस् (सं० त्रि०) महत् प्रशस्तं मनो यस्य। महाशय, महामति, उदार मनोयुक्त।

"इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानां शर्ध उग्रम्।
महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात्॥"

(ऋक् १०।१०३।९)

२ महाशालका पुत्र।

महामनस्क (सं० त्रि०) १ उद्भ्रान्तःकरणविशिष्ट, महामति। (पु०) २ एक राजाका नाम। ३ शरभजातीय जीवविशेष, टिड्डीकी जातिका एक जीव।

महामनुष्य (सं० पु०) एक प्राचीन कवि।

महामन्त्र (सं० पु०) १ इष्ट मन्त्र। २ मन्त्रसम्बलित प्रसिद्ध वेदग्रन्थ।

महामन्त्रानुसारिणी (सं० स्त्री०) बौद्धोंके एक देवताका नाम।

महामन्त्री (सं० पु०) १ प्रधान मन्त्रणादाता। २ राजाका प्रधान या सबसे बड़ा मन्त्री।

महामन्दार (सं० पु०) वृक्षभेद।

महामयूरी (सं० स्त्री०) बौद्धोंकी एक देवीका नाम।

महामरकत (सं० पु०) १ श्रेष्ठ मरकतमणि, उत्कृष्ट पन्ना। २ मरकत मणि शोभित अलंकार।

महामलयपुर—मद्रासके पासका एक प्राचीन जनस्थान पहाड़को काट कर यहां सात पागोदे बनाये गये हैं।

महाबलिपुर देखो।

महामह (सं० पु०) महोत्सव, बहुत बड़ा उत्सव।

महामहावारुणी (सं० स्त्री०) महती चासौ महावारुणी चेति। गंगास्नानका एक योग। गौणचान्द्र चैत्रकी

कृष्ण त्रयोदशीके दिन शनिवार, शतभिषा नक्षत्र तथा शुभयोग होनेसे महावारुणी होती है। इस दिन गंगास्नान करनेसे तीन करोड़ कुलका उद्धार होता है तथा स्नानदानादि विशेष शुभ फलप्रद है। फाल्गुन पूर्णिमाके बाद कृष्ण त्रयोदशीके दिन वारुणी और उसमें पूर्वोक्त योग लगनेसे महावारुणी होती है।

"शुभयोगसमायुक्ता शनौ शतभिषा यदि।
महामहेति विख्याता त्रिकोटीकुलमुद्धरेत् ॥"

(तिथितत्त्व)

महामहिमन् (सं० त्रि०) महान् महिमा यस्य। १ अतिशय महिमान्वित, बड़ा प्रतापवान्। (पु०) २ अतिशय महिमा। ३ आश्चर्य प्रभाव।

महामांहव्रत (सं० त्रि०) प्रभूत शक्तिसम्पन्न, बड़ा बलवान्।

महामहेश्वर कवि—एकावली नामक अलङ्कारशास्त्रके प्रणेता।

महामहेश्वरायतन (सं० क्ली०) देवलोकभेद।

महामहोपाध्याय (सं० पु०) १ श्रेष्ठ पण्डित, गुरुओंका गुरु। २ एक प्रकारकी उपाधि जो आज कल भारतमें संस्कृतके विद्वानोंको ब्रिटिश-सरकारकी ओरसे मिलती है।

महामांस (सं० क्ली०, महत् गर्हितं मांसं, अत्र मांसशब्दस्य पूर्वं प्रयुक्ततया महच्छब्दस्य गर्हितार्थत्वं। मनुष्यके शरीरका मांस। शङ्ख, तैल, मांस आदि शब्दोंके पहले महत् शब्दका प्रयोग निषिद्ध है। इस कारण मांस शब्दके पहले महत् शब्दको प्रयोग रहनेसे श्रेष्ठ अर्थ न समझा जा कर गर्हित अर्थ समझा जाता है।

"शङ्खे तैले तथा मांसे वैद्ये ज्योतिषिके द्विजे।
यात्राया पथि निद्राया महच्छब्दो न दीयते॥"

(भट्टिटीका)

गाय, हाथी, घोड़े भैंस, वराह, ऊंट, उरग इन सात प्रकारके जन्तुओंके मांसको भी महामांस कहते हैं। महाष्टमी तिथिमें भगवती दुर्गादेवीको महामांस द्वारा पूजा करनेसे साधकके सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं।

"अष्टम्यां रुधिरैर्मांसैर्महामांसैः सुगन्धिभिः।
पूजयेद्बहुजातीयैर्बलिभिर्भोजनैः शिवाम्॥" (तिथितत्त्व

"गोनरेभाश्वमहिष-वाराहोष्ट्रोरगोद्भवम्।
महामांसाष्टकं देवि देवताप्रीतिकारणम्॥"

(कौलार्च्चनदीपिका)

२ गो-मांस, गो-का गोश्त।

महामांसविक्रय (सं० पु०) नरमांस-विनिमय, नरमांसका बेचना।

महामांसी (सं० स्त्री०) रुदन्तीवृक्ष, संजीवनी नामका पौधा।

महामाई (हिं० स्त्री०) १ दुर्गा। २ काली।

महामात्य (सं० पु०) राजाका प्रधान या सबसे बड़ा अमात्य, महामन्त्री।

महामात्र (सं० त्रि०) महती मात्रा मर्यादा-परिमाणं यस्य। १ प्रधान, श्रेष्ठ। २ समृद्ध, सम्पन्न। ३ धनवान, अमीर। (पु०) ४ प्रधान अमात्य, महामात्य। ५ राज्यका प्रधान कर्मचारी, प्रधान व्यक्ति। राज्यकी समस्त देखरेख जिसके हाथ हो अर्थात् जिसकी बड़ी क्षमता हो वही महामात्र कहलाता है।

"दूषिते हि महामात्रे रिपुस्तोऽपि धीमता।
स्वपक्षे यस्य विश्वास इत्थम्भूतश्च निष्क्रियः॥"

(कामन्दकी ६।६९)

६ हाथियोंको निरीक्षक। ७ महावत। ८ महादेव।

महामात्री (सं० स्त्री०) महामात्र-ङीष्। १ आचार्यपत्नी। २ महामात्रकी स्त्री।

महामानसिका (सं० स्त्री०) महामानसी, जैनियोंकी एक विद्यादेवीका नाम।

महामानसी (सं० स्त्री०) महत् मानसं भक्तान् प्रति सदयं चेतो यस्य। जैनियोंकी एक विद्यादेवीका नाम।

महामानिन् (सं० त्रि०) अतिशय अभिमानी, बड़ा भारी घमंडी।

महामानी (सं० त्रि०) महामानिन् देखो।

महामाया (सं० पु०) १ विष्णु। २ शिव। ३ असुरभेद। ४ विद्याधरभेद। (स्त्री०) ५ गङ्गा। ६ शुद्धोदनकी पत्नी और बुद्धकी माताका नाम। ७ आर्या छन्दका तेरहवां भेद। इसमें १५ गुरु और २७ लघु वर्ण होते हैं। अघटन घटन-पटीयस्त्वेन विसदृश प्रीतीतिसाधनं माया महती चासौ मायाचेति यद्वा महती माया विश्वनिर्माण शक्तिर्यस्याः ८ दुर्गा। (राजनि०) इसका लक्षण—

"गर्भान्तर्ज्ञानसम्पन्नं प्रेरितं सूतिमारुतैः ।
उत्पन्नं ज्ञानरहितं कुरुते या निरन्तरम् ॥
पूर्वातिपूर्वसंवद्ध-संस्कारेण नियोज्य च ।
आहारादौ ततो मोहं ममत्वं ज्ञानसंशयम् ॥
क्रोधोपरोधलोभेषु क्षिप्त्वा क्षिप्त्वा पुनः पुनः ।
पश्चात् कामे नियोज्याशु चिन्तायुक्तमहर्न्निशम् ॥
आमोदयुक्तं व्यसनासक्तं जन्तुं करोति या ।
महामायेति सा प्रोक्ता तेन सा जगदीश्वरी ॥"
(कालिकापु० ६ अ०)

गर्भके मध्य जीवके तत्त्वज्ञानका उदय होने पर भी पीछे जब वह प्रवल सूतिमारुत द्वारा उत्पन्न होता है, तब उसे जो तत्त्वज्ञानशून्य बना देती और पूर्व जन्मके संस्कार वलसे आहारादि कार्यमें प्रवृत हो कर मोह, ममता और संशय उत्पादन करती है, जो जीवको वार-वार क्रोध, लोभ और मोहमें डाल कर आमोदयुक्त और व्यासनासक्त वनाती हैं उन्हींका नाम महामाया है। महामाया इसी मायावलसे जगदीश्वरी कहलाती हैं ।

जगत्में मायाका प्रभाव वड़ा ही आश्चर्य है। नहीं होनेवाले कामको जो कर दिखलाती हैं उन्हींका नाम माया है। इस संसारमें सुख दुःख और मोह आदि जो कुछ देखनेमें आता है वह इसी महामायाका प्रभाव है। महामायाके प्रभावसे ही जगतकी सृष्टि हुआ करती है।

"महामायाप्रभावेन संसारस्थितिकारणं ।
तन्नात्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः ॥" (चण्डी)

जगत्कारणभूता अविद्याको ही माया कहते हैं। इसके अधिष्ठात्री देवी भगवती दुर्गा ही महामाया हैं। यही देवी जगत्को मोहित करती है।

"महामाया हरेश्चैतत् तथा समोह्यते जगत् ।"
(मार्कण्डेयपु० ८१।४१) माया देखो ।

(त्रि०) ६ मायावी।

महामायाधर (सं० पु०) विष्णु ।

महामायाशम्वर (सं० क्ली०) तन्त्रभेद ।

महामायूरी (सं० स्त्री०) वौद्धदेवीभेद । महामयूरी देखो ।

महामारकत (सं० पु०) महामरकत देखो ।

महामारी (सं० स्त्री०) महतः दुर्दान्तान् दानवादीन् मारयति इति मृङ्-णिच्-अण्-ङीष् । १ महाकाली ।

"व्याप्तं तयैतत् सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर ।
महाकाल्या महाकाले महामारी स्वरूपया ॥
सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा ।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥"
(मार्कण्डेयपु० चण्डी)

म्रियन्ते प्राणिनो यस्या इति-मृङ्-घञ्-ङीष्; महती-मारी । २ अतिशय मरक, वह संक्रामक और भीषण रोग जिससे एक साथ ही वहुत से लोग मरें। जैसे हैजा, चेचक, प्लेग इत्यादि । जहां महामारी हुई हो उस स्थानको छोड़ देना चाहिए तथा इससे छुटकारा पानेके लिये माहात्म्य दुर्गापाठ, शान्तिस्वस्त्ययन और होमादि करना उचित है। ऐसा करनेसे महामारीकी तुरत शान्ति होती है।

महामार्जारगन्धिका (सं० स्त्री०) वनमुद्ग, जंगली मूंग ।

महामाल (सं० पु०) शिव, महादेव ।

महामालिका (सं० स्त्री०) छन्दोभेद । इसके प्रति चरणमें १८ वर्ण रहते हैं जिनमेंसे ६, ८, ११, १४ और १७वां वर्ण गुरु और शेष वर्ण लघु होते हैं।

महामालिनी (सं० स्त्री०) नाराच छन्दका एक नाम ।

महामाष (सं० पु०) महांश्चासौ माषश्चेति । राजमाष, बड़ा उड़द । राजमाष देखो ।

महामाषतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, काढ़े के लिये श्लथ पोट्टलीवद्ध उड़द ४ सेर, दशमूल ६। सेर, श्लथ पोट्टलीवद्ध वकरेका मांस ३० पल, इन्हें एक साथ मिला कर ६४ सेर जलमें पाक करे। जब १६ सेर जल बच रहे, तब उसे उतार ले। दूध १६ सेर, चूर्णके लिये अलकुशीका मूल, रेड़ीका मूल, सोयां, सैन्धव, विट्, शाम्भर लवण, जीवनीय वर्ग, मजीठ, चव्य, चितामूल, कायफल, त्रिकटु, पिपरामूल, रास्ना, मुलेठी, सैन्धव, देवदारु, गुलञ्च, कुट, असगंध, वच और कचूर, प्रत्येक दो तोला । पीछे तैलपाकके विधानानुसार पाक करना होगा। इस तैलका व्यवहार करनेसे पक्षाघात, अर्दित, वधिरता, हनुग्रह और सव प्रकारके वातव्याधिरोग दूर होते हैं। वातव्याधिमें तो इस तैलको रामवाण ही समझना चाहिये।

विना मांसके भी एक प्रकारका महामाषतैल तैयार

किया जाता है। उस तैलको निरामिष महामाषतैल कहते हैं। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, काढ़े के लिये दशमूल ८ सेर, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, उड़द ८ सेर, दुग्ध १६ सेर, चूर्णके लिये असगंध, कच्चूर, देवदारु, विजवंद, रास्ना, गन्धभादुली, कुट, फालसेका फल, वरङ्गी, कुष्माण्ड, भूमिकुष्माण्ड, पुनर्णवा, खट्टानीबू, जीरा, मंगरेला, हींग, सोयां, शतमूली, गोखरू, पिपरामूल, चितामूल, जीवनीयगण और सैन्धव कुल मिला कर एक सेर। तैलपाकके विधानानुसार इस तैलका पाक करना होगा। इसके व्यवहारसे पक्षाघात, हनुस्तम्भ, अर्दित, अवबाहुक विश्वची, खञ्जता, पङ्गुत्व आदि वातरोग नष्ट होते हैं। (भैषज्यरत्नावली वातव्याधि०)

महामाहेश्वर (सं० पु०) शिवके एक उपासकका नाम।

महामीन (सं० पु०) मत्स्यविशेष।

महामुख (सं० पु०) महत् मुखमस्य। १ कुम्भीर। २ महादेव। ३ सिन्धुराजके एक सैनिकका नाम। ४ बृहन्मुख, बड़ा मुंह। ५ नदीका मुहाना, वह स्थान जहां नदी गिरती है। (त्रि०) महत् मुखं यस्य। ६ महत् मुखविशिष्ट, बड़ा मुंहवाला।

महामुद्गलाचार्य—श्रीरामचन्द्रार्याष्टोत्तरशतकके प्रणेता।

महामुचिलिन्द (सं० पु०) वृक्षभेद।

महामुचिलिन्दपर्वत (सं० पु०) पर्वतभेद।

महामुण्ड (सं० क्ली०) वोल नामक गन्ध द्रव्य।

महामुण्डिनिका (सं० स्त्री०) महाश्रावणिका, गोरखमुंडी। पर्याय—महामुण्डिका।

महामुद्रा (सं० स्त्री०) १ योगके अनुसार एक प्रकारकी मुद्रा या अंगोंकी स्थिति। २ एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महामुनि (सं० पु०) महाश्चासौ मुनिश्चेति। १ मुनियोंमें श्रेष्ठ, बहुत बड़ा मुनि। २ कपटी व्यक्ति, धोखेबाज। ३ अगस्त्य ऋषि। ४ बुद्ध। ५ कृपाचार्य। ६ काल। ७ व्यासदेव।

"श्रीमद्भागवते महामुनिकृते किंवा परैरीश्वरः।
सद्योहृद्यवरुध्यतेऽत्र कृतिभिः शुश्रूषुभिस्तत्क्षणात्॥"
(भागवत १।१।२)

८ तुम्बुरुका वृक्ष। ९ एक जिनका नाम। १० औषध। ११ धन्याक, धनिया।

महामूढ़ (सं० त्रि०) महान् मूढः। अतिशय मूढ़, बड़ा बेवकूफ।

महामूर्ख (सं० पु०) अतिशय अज्ञ, अत्यन्त निर्बोध।

महामूर्त्ति (सं० पु०) महती मूर्त्तिर्यस्य। विष्णु।

महामूर्द्धन् (सं० पु०) महान् मूर्द्धा यस्य, व्यापकत्वात् तथात्वं। १ शिव। २ ऋद्धि। ३ वृद्धि। (त्रि०) ४ बृहन्मस्तकयुक्त, जिसका सिर बड़ा हो।

महामूर्द्धा (सं० स्त्री०) महामूर्द्धन देखो।

महामूल (सं० पु०) महत् स्थूलं मूलं यस्य। १ राजपलाण्डु, प्याज। २ छिलिहिण्ड, छिरेटा।

महामूल्य (सं० क्ली०) महच्च तत् मूल्यं चेति कर्मधा० १ महार्घ, महंगा। (त्रि०) महत् मूल्यं यस्य। २ बहुमूल्यविशिष्ट, जिसका मूल्य अधिक हो। (पु०) ३ माणिक, मणि।

महामूषिक (सं० पु०) महान् मूषिकः। बृहदुन्दुरु, बड़ा चूहा। पर्याय—मूषी, विघ्नेशवाहन, महाङ्ग, शस्यमारी भूफल, भित्तिपातन।

महामृग (सं० पु०) महान् मृगः पशुः। १ हस्ती, हाथी। २ शरभ, टिड्डी। ३ बड़ा सिंह।

महामृगाङ्करस (सं० पु०) रसौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—सोना १ भाग, रससिंदूर २ भाग, सोनामक्खी ५ भाग, प्रवाल ७ भाग, सोहागा १ भाग इन्हें अच्छी तरह चूर्ण कर लवङ्गके काढ़ेमें तीन दिन तक भावना दे पीछे उसे लवणपूर्ण भाण्डमें रख कर मुंह बंद कर दे और चार पहर पाक करके उतार ले। अनन्तर उसमें ६४ अंश शोधित हीरा, हीरेके अभावमें १६ अंश वैक्रांत मिलावे। इसका अनुपान घी, मिर्च और पीपलका चूर्ण बतलाया गया है। इसके सेवनसे खांसी, दमा, सब प्रकारके ज्वर, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद, अरुचि, वमि, मूर्च्छा, भ्रम, विषदोष, पाण्डु, कमला आदि रोग जाते रहते हैं। (रसेन्द्रसारस० यक्ष्मारोगाधि०)

महामृत्यु (सं० पु०) १ यम। २ शिव।

महामृत्युञ्जय (सं० पु०) महामृत्युं यमं जयतीति जि-खच्-मुम् च। शिवका मन्त्रविशेष। यह मन्त्र मानवकी

आयुको बढ़ाता है। यह मन्त्र यदि सिद्ध हो जाय, तो मानव निरामय हो कर दीर्घायु होते हैं। मृत्युञ्जय तन्त्रमें इसके मन्त्रादिका विषय इस प्रकार लिखा है।

'यदि हते महती प्रीतिस्तवास्ति कुलभैरव।
कथयस्व विशेषेण महामृत्युञ्जयाभिधम्॥
शृणु देवि प्रवक्ष्यामि महामृत्युञ्जयाभिधम्।
आयुर्वृद्धिकरं पुंसा मृत्योर्मृत्युकर परम्॥
यस्य विज्ञानमात्रेण चिरजीवी निरामयः।
नित्यमष्टशतं जप्त्वा मृत्युं मृत्युपथं नयेत्॥"

(मृत्युञ्जयतन्त्र)

महामृत्युञ्जय मन्त्रका प्रतिदिन १०८ वार जप करनेसे मृत्यु जय होती है अर्थात् वह दीर्घायु होता है।

कठिनसे कठिन रोगमें यदि महामृत्युञ्जय शिवपूजा की जाय, तो वह रोग अवश्य दूर होता है। महामृत्युञ्जय शिवपूजासे बढ़ कर दुःसाध्य रोगकी और कोई चिकित्सा ही नहीं है। इससे प्रत्यक्ष फल दिखाई देता है।

मृत्युञ्जय देखो।

महामृत्युञ्जयरस (सं० पु०) रसौषधविशेष इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गन्धक, लौह, अवरक, तांवा, मैनसिल, विषमुष्टि, कौडी, तूतिया, शङ्ख, रसाञ्जन, जायफल, कटुकी, साचिक्षार, यवक्षार, जयपाल, सोंठ, पीपल, मिर्च, हींग सैन्धव लवण इनका बराबर बराबर भाग ले कर चूर्ण करे। पीछे सूर्यावर्त्त और विल्वपत्रके रसमें ७ बार भावना दे। इसके बाद फिरसे सूर्यावर्त्तरसमें घोंट कर २ रत्तीकी गोली बनावे। अनुपान दोषके बलावलके अनुसार स्थिर करना होगा। इसके सेवनसे प्लीहा, यकृत्, गुल्म, अष्ठीला, अग्रमास, शोथ, उदरी, वातरक्त और विद्रधि आदि रोग प्रशमित होते हैं।

(रसेन्द्रसारस० प्लीहाधि०)

महामृत्युञ्जयलौह (सं० क्ली०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गंधक और अवरक प्रत्येक ४ माशा, लोहा १ तोला, तांबा २ तोला, यवक्षार, सैन्धव, विट्, कौड़ीकी भस्म, शङ्खकी भस्म, चितामूल, हरताल, हींग, कटुकी, रोहितककी छाल, निसोथ, इमलीकी छालकी भस्म, गोपाल कर्कटीका मूल, अपाङ्गकी भस्म, तालजटाकी भस्म, अम्लबेंत, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, प्रियंगु, इन्द्रयव, हरीतकी, वनयवानी, यवानी, तूतिया, शरपुङ्ख और रसाञ्जन, प्रत्येक ४ माशा। इन्हें एकत्र पीस कर अदरक और गुलञ्चके रसमें भावना देनी होगी। पीछे उसमें २ पल मधु डाल कर ६ रत्तीकी गोली बनावे। दोषके अनुसार चिकित्सकको अनुपान स्थिर करना चाहिये। प्रतिदिन सवेरे इसका सेवन करनेसे प्लीहा, ज्वर, खांसी, विषमज्वर, गुल्म, शोथ आदि विविध रोग शान्त होते हैं। (भैषज्यरत्नावली प्लीहायकृदधि०)

महामृध (सं० पु०) भीषण युद्ध।

महामेघ (सं० पु०) महान् मेघ इव। १ शिव। महान् मेघः। २ अतिशय मेघ, काली घटा।

महामेघस्वान (सं० क्ली०) वज्रपातके जैसा निदारुण शब्द।

महामेघौघनिर्घोष (सं० त्रि०) जीमूतमन्द्रका गभीर शब्दपरम्परा विशिष्ट।

महामेघनिवासी (सं० पु०) शिव। ये चिर तुषारावृत कैलास शिखर पर वास करते हैं।

महामेद (सं० पु०) मेदयति स्निग्धीकरोतीति मिद्-णिच्, अच् महान् मेदः। १ अष्टवर्गमेंसे एक प्रसिद्ध औषधि। पर्याय—पुरोद्भव। २ गृहत् मेद। ३ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़।

महामेदा (सं० स्त्री०) मेदयतीति मिद-णिच्-घञ्-टाप्, महती मेदा। अष्टवर्गमेंसे एक प्रसिद्ध ओषधि, स्वनामख्यात कन्दशाक। पर्याय—वसुच्छिद्रा, जीवनी, पाशुरागिणी, देवेष्टा, सुरामेदा, दिव्या, देवमणि, देवगन्धा, महाच्छिद्रा, वृक्षाहा। इसका गुण हिम, रुचिकर, कफ और शुक्रवृद्धिकारक, दाह, अस्र, पित्त, क्षय, वात और ज्वरनाशक माना गया है। (राजनि०)

भावप्रकाशके मतसे—महामेदाख्य कन्द मौरंग देशमें पाया जाता है। प्रधान प्रधान मुनि इसे महामेद कहते हैं। यह देखनेमें अदरकके समान होता है। इसकी लता चलती है। इसको नाखूनसे काटनेसे मेदोधातुकी तरह इससे रस निकलता है। मेदके बहुतसे प्रसिद्ध नाम हैं। यथा—स्वल्पपर्णी, मणिच्छिद्रा, मेदा, मेदोभवा और अध्वरा। मेद और महामेद दोनों ही गुरु, मधुर रस, शुक्रजनक, स्तनदुग्धवर्द्धक, कफकारक, शरीरका उपचयकर, शीतल तथा रक्तपित्त, वायु और ज्वरनाशक हैं। (भावप्रकाश)

महामेधा—सह्याद्रिवर्णित एक राजा।

महामेरु (सं० पु०) श्रेष्ठ मेरु पर्वत।

महामैत्र (सं० पु०) मित्रस्य भवः मित्र-अण्-मैत्रं, महद्भिः सह महद् वा हृदि मैत्रमस्येति। एक बुद्धका नाम।

महामैत्री (सं० स्त्री०) प्रगाढ़ बन्धुता, गाढ़ी मित्रता।

महामैत्रीसमाधि (सं० पु०) बौद्ध-मतसे समाधि अवलम्बनके लिये योगप्रकरणविशेष।

महामोद (सं० पु०) कंदपुष्पका गाछ।

महामोदकारी (सं० पु०) एक वर्णिक वृत्ति। इसके प्रत्येक चरणमें ६ यगण होते हैं। इसका दूसरा नाम क्रीडाचक्र भी है।

महामोह (सं० पु०) मोहः भ्रान्तिज्ञानं अतथाभूते वस्तुनि तथात्वज्ञानमित्यर्थः महान् मोहः। १ भोगेच्छारूप ज्ञान। २ संसारमूल कारण रागरूप मोह। महान् मोहो यस्मादिति। ३ महामोहजनक कामराजवीज।

"ससर्जाग्रे ऽन्धतामिश्रमथ तामिश्रमादिकृत्।
महामोहञ्च मोहञ्च तमश्चा ज्ञानवृत्तयः॥"

(भागवत ३।१२।२)

सांसारिक सुखोंके भोगका नाम महामोह है। यह अविद्याका नामान्तर माना गया है।

पञ्चपर्वा अविद्याके मध्य यह एक प्रकार है। ब्रह्माने पहले पहल अविद्याकी सृष्टि की। पीछे इसी अविद्यासे तमः, मोह, महामोह आदिकी उत्पत्ति हुई।

पूर्वोक्त श्लोककी टीकामें श्रीधरस्वामी लिखते हैं, "ब्रह्मा स्वसृष्टौ अविद्यासृष्टीः ससर्ज, तत्र तमोनाम स्वरूपाप्रकाशः, मोहो देहाद्यहं बुद्धिः, महामोहः भोगेच्छा।"

"तमो ऽविवेको मोहः स्यादन्तः करणविभ्रमः।
महामोहश्च विज्ञेयो ग्राम्यभोगसुखैषणा॥"

(भागवतटीका स्वामी ३।१२।२)

महामोहा (सं० स्त्री०) दुर्गा।

महामोहन (सं० त्रि०) अतिशय महामोहविशिष्ट।

महामौद्गल्यायन (सं० पु०) बुद्धके एक शिष्यका नाम।

महाम्बुक (सं० पु०) शिव, महादेव।

महाम्बुज (सं० पु०) एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महाम्बुद (सं० पु०) शिव, महादेव।

महाम्ल (सं० क्ली०) महत् अम्लं अम्लरसयुक्तं, यद्वा महान् अम्लः अम्लरसो यस्मिन्। १ तिन्तिडीक, इमली। (त्रि०) २ अतिशय अम्लरसयुक्त, बहुत खट्टा।

महायक्ष (सं० पु०) यक्ष्यते पूजयति इति यक्ष-अच्, महान् यक्षः। १ अर्हत् उपासकविशेष। २ यक्षपति। ३ एक प्रकारके बौद्धदेवता।

महायक्ष-सेनापति (सं० पु०) तान्त्रिकोंके अनुसार देव-मूर्त्तिविशेष।

महायक्षी (सं० स्त्री०) यक्षरानी।

महायज्ञ (सं० पु०) महान् यज्ञः। १ विष्णु। २ वेद-पाठादिरूप पञ्चप्रकार यज्ञ। देवपाठ, होम अतिथिपूजा, तर्पण और वलि ये पांच महायज्ञ हैं।

"पाठो होमश्चातिथीनां सपर्यातर्पणं वलिः।
एतैः पञ्च महायज्ञा ब्रह्मयज्ञादिनामकैः॥"

(अमर २।७।१४)

यह पञ्च महायज्ञ नित्यप्रति करना अवश्य कर्त्तव्य है। वराहपुराणमें लिखा है—दिव्य, भौम्य, पैत्र, मानुष और ब्राह्म इन पांच प्रकारके यज्ञोंका नाम महायज्ञ है। जो इस पञ्च महायज्ञका अनुष्ठान करते हैं वे विशुद्ध होते हैं।

"दिव्यो भौमस्तथा पैत्रो मानुषो ब्राह्म एव च।
एतैः पञ्च महायज्ञा ब्रह्मणा निर्मिताः पुरा॥
इतरेषान्तु वर्णानां ब्राह्मणैः कारिता शुभाः।
एवं कृत्वा नरो भुक्त्वा स्याद्धरित्री विशुध्यते॥"

(वराहपुराण)

मनुष्य नित्य जो पाप करता है, उसका नाश इस पञ्चमहायज्ञके अनुष्ठानसे हो जाता है। इसलिये सबोंको इस महायज्ञका अनुष्ठान प्रतिदिन अवश्य करना चाहिये।

विशेष विवरण पञ्चमहायज्ञमें देखो।

महायज्ञभागहर (सं० पु०) विष्णु।

महायन्त्र (सं० क्ली०) एक प्रकारका यन्त्र।

महायम (सं० पु०) यमराज।

महायमक (सं० क्ली०) श्लोकभेद। इसके प्रत्येक चार पादमें एक प्रकारकी शब्दात्मक वर्णमाला तो दी जाती है; किन्तु उनके अर्थमें प्रभेद पड़ता है।

महायमलपत्रक (सं० पु०) काञ्चन वृक्ष, कचनारका पेड़।

महायशस् (सं० पु०) महत् यशो यस्य, विभाषाग्रहणात्

न कप्। १ भूतकी एक तरहकी पूजा। २ शिव। (त्रि०) ३ अतिशय यशोयुक्त, बड़ा यशस्वी।

"एवं स संक्रमस्तत्र स्वर्गलोके महायशाः।
ततो ददर्श शक्रस्य पुरीन्ताममरावतीम्॥"
(भारत ३।४२।४१)

(स्त्री०) ४ स्कन्दकी एक मातृकाका नाम

महायशस्—गोभिलीयश्राद्ध-कल्पभाष्यके प्रणेता। रघुनन्दनने इनका मत उद्धृत किया है।

महायशस्क (सं० त्रि०) महत् यशो यस्य, (शेषोद्विभाषा। पा ५।४।१५४) इति समासान्त कप् प्रत्ययः। अतिशय यशोविशिष्ट, बड़ा यशस्वी।

महायस (सं० त्रि०) १ महाफलक। २ महालौहयुक्त।

महायात्रा (सं० त्रि०) १ महातीर्थकी यात्रा, काशीयात्रा। २ महाप्रस्थान, मृत्यु।

महायान (सं० क्ली०) १ एक विद्याधरका नाम। २ वृहत् यान, बड़ी सवारी। ३ श्रेष्ठ शकट, बड़ी बैलगाडी।

महायान—बौद्धसम्प्रदाय विशेष। शुद्धोदनके पुत्र शाक्यबुद्ध निर्वाणवादरूप प्रकृष्ट मोक्षका उपाय जनसाधारणमें प्रवर्त्तन कर गये हैं। उनके बाद शिष्यों और अनुयायियोंमें मतभेद हो गया उसी मतभेदसे महायान मतकी उत्पत्ति हुई।

महायान शब्दका प्रकृत अर्थ है श्रेष्ठ वाहन, अर्थात् यह संसार और परलोकयात्राका प्रकृष्ट उपाय बतलाता है, इसीसे इस सम्प्रदायका मत महायान नामसे प्रसिद्ध हुआ। अतः महायान कहनेसे परागति ही समझी जाती है। इस परागतिके उपायनिर्देशक बौद्धयतिगण महायानी या महायानसम्प्रदायभुक्त कहलाते हैं।

प्राचीन अर्थात् शाक्यबुद्धप्रवर्त्तित आदिम बौद्धधर्म-रक्षामें यत्नवान् बौद्धसम्प्रदाय केवल सद्धर्माचारनिरत श्रावकोंको ही जीवन्मुक्तिलाभके अधिकारी बतलाते हैं। इस मतको विश्वास करनेवाले व्यक्तिमात्र ही आगे चल कर हीनयान मतावलम्बी कहलाये*। फिर भी, महायान मतावलम्बिगण सब जीवोंकी मुक्ति तथा बोधिसत्त्व पदप्राप्तिका विषय निरूपण कर गये हैं। अतः हम लोग इस महायान-सम्प्रदायको बोधिसत्त्वयान भी कह सकते हैं। प्रकृत बुद्धमार्गसेवीकी मुक्ति अनिवार्य है—उन्हें फिर कभी भी संसारका दुःख नहीं भोगना पड़ता।

सुप्राचीन वैदिक युगमें देवयान और पितृयान नामक दो पारलौकिक गतिका उल्लेख देखनेमें आता है। किस प्रकार जीवात्माकी देवलोक या पितृलोकमें गति होती है अर्थात् किस प्रकार वे परब्रह्ममें लीन होते हैं, यही विषय उक्त दोनों यानमें लिखा है। उसी प्रकार हम लोग बौद्ध युगमें महायान, हीनयान, तन्त्रयान और वज्रयान, कालचक्रयान नामक और भी कई एक यानोंका उल्लेख देखते हैं। देवयान और पितृयान देखो।

महायानगण प्रकृतिसत्त्वाके पूर्ण विकाशार्थ जीवात्माके तीन कायोंकी कल्पना कर गये हैं—१ धर्मकाय—निराकार और स्वयम्भू, ध्यानी, आदि या विरोचन-बुद्धरूप। २ सम्भोगकाय—ध्यानी बोधिसत्त्व या लोचन और ३ निर्माणकाय—मानुषी बुद्ध अर्थात् जिन्होंने प्रकृष्ट पथका अवलम्बन कर मनुष्यशरीरसे बुद्धत्त्व लाभ किया है, जैसे शाक्यमुनि। वाडेल साहबका कहना है, कि महायान या बोधिसत्त्वयानमें उसी प्रकार जनसाधारणको उन्नतिके लिये जिन तीन यानोंका उल्लेख है, उनमेंसे पहला श्रावकयान है अर्थात् केवलमात्र पुण्यवान् धर्म श्रोतागण ही छागरूप यान पर चढ़ कर भवनदीको पार कर सकते हैं। २रा प्रत्येक बुद्धयान अर्थात् निर्जनवासी ध्यानी बुद्धगण हरिणरूपी यान पर चढ़ भवसागरको पार करते हैं और ३रा बोधिसत्त्वयान—बोधिसत्त्वगण हाथी पर चढ़ कर भवसमुद्रके अतलस्पर्शी तलदेशको मथते हुए पूर्णप्रज्ञाधिष्ठित हो जीवनयात्रा पार करनेमें समर्थ होते हैं। यथार्थ ज्ञानालोकमें सभी जीवोंकी मुक्ति ही महायानका उद्देश्य है।

हीनयानगण श्रावक या जिन्होंने बुद्धसे धर्मोपदेश सुना है, उनके सिवा और किसीकी भी निर्वाणमुक्ति नहीं स्वीकार करते। किन्तु महायान क्या यति, क्या गृही सबोंकी मुक्ति स्वीकार कर गये हैं।

जीवात्माकी मङ्गल कामनाके लिए महायान-सम्प्रदायने

* 'हीनयान' शब्द किसी प्राचीन बौद्धग्रन्थमें नहीं मिलता। उत्तरदेशीय महायान मतावलम्बियोंने अपनी श्रेष्ठताकी घोषणा करनेके लिए अपनेको 'महायान' तथा दक्षिणदेशीय प्राचीन बौद्ध मतको हीन समझ कर 'हीनयान' नामसे घोषित किया है।

जीवगतिका मुख्य उपायस्वरूप सभी मनुष्योंका उपयुक्त मत विशदरूपसे जनसामाजमें प्रकाशित किया है। किस समय और किस मनीषी बौद्ध यति द्वारा यह नया पथ निकाला गया था, बौद्धप्राधान्यके इतिहासमें इसका कोई प्रकृत प्रमाण नहीं मिलता।

बहुतेरे अनुमान करते हैं, कि शाक्य बुद्धकी मृत्युसे सौ वर्ष बाद वैशालीमें महासाङ्घिक नामक अन्य मतावलम्बी जिस एक बौद्ध सम्प्रदायका आविर्भाव हुआ था, उसके स्थविरगण पूर्वतन मतके संस्कारसाधनमें बद्धपरिकर हुए थे। क्रमशः उसी संस्कारसम्पन्न महासाङ्घिक सम्प्रदायसे 'महायान' मतका आविर्भाव हुआ। १ली शताब्दीमें अश्वघोषरचित 'महायानश्रद्धोत्पाद-शास्त्र' नामक महायान मतके उत्पत्तिविषयक प्रबन्धसे उसकी प्राचीनताका आभास मिलता है। ७० ई०सन् मे अश्वघोषका रचा हुआ एक काव्यग्रन्थ चीनदेश लाया गया। सुतरां उससे भी पहले यदि अश्वघोषके आविर्भाव कालकी कल्पना की जाय, तो ई०सन्के पहले ही महायान मतकी प्रतिष्ठा तथा प्रचार होना सम्भव प्रतीत होता है।

१ली शताब्दीमें महायानमतका विस्तार सूचित होने पर भी यथार्थमें माध्यमिक मतके प्रवर्त्तयिता नागार्जुन से ही इसका प्रचार तथा प्रसार निरूपित होता है। नागार्जुनके पहले बौद्ध यतियोंके मध्य वस्तुसत्ता और सत्ताभास तथा स्थिति और ध्वंस इस मतको ले कर बड़ा ही गोलमाल चलता था; उन्होंने मध्यपथका अवलम्बन कर अर्थात् सिद्धान्ताभास द्वारा इसकी पूर्वपक्षमीमांसा और अर्थवैपरीत्यसे मिला कर दोनों मतका खण्डन किया, इसीलिये उनका प्रवर्त्तित मत माध्यमिक नामसे प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने इस सम्प्रदायका प्रज्ञापारमिता नामक एक उत्कृष्ट ग्रन्थ रचा। इसके अलावा वे बुद्धावतंसक, समाधिराज और रत्नकूटसूत्र नामक और भी तीन ग्रन्थोंमें बौद्धधर्मका प्राधान्य कीर्त्तन कर गये हैं। प्रज्ञापारमितामें कितने ही स्वर्गीय या आध्यात्मिक बुद्ध और बोधिसत्त्वका उल्लेख है। बुद्ध या बोधिसत्त्वका बहुत्व महायान सम्प्रदायके प्रवर्त्तित मतसे बहुत कुछ मिलता जुलता है। माध्यमिक देखो।

किसीका विश्वास है, कि नागार्जुन महायान-मतावलम्बी अश्वघोषके शिष्य थे। उनका माध्यमिक मत महायान मतका प्रधान सहायक हुआ था। फिर किसीका कहना है, कि वे राहुलभद्र नामक एक ब्राह्मणके शिष्य थे। उक्त ब्राह्मण सन्तान पहले ब्राह्मण-धर्मावलम्बी थे। पीछे उन्होंने महायान-बौद्धमतको ग्रहण किया। साधूत्तम कृष्ण तथा गणेशके अनुग्रहसे उनके धर्माभिव्यक्ति हुई थी। इस अस्फुट ऐतिहासिक तत्त्वके रूपककी आलोचना करनेसे स्पष्ट मालूम होता है, कि उन्होंने भगवान् श्रीकृष्णप्रोक्त भगवद्गीता और शैवमतका अनुसरण कर महायान मतके कलेवरकी पुष्टि की थी। सुतरां नागार्जुन प्रवर्त्तित मतमें जो स्वतः ही ब्राह्मण्याभास झलकता है, उसमें सन्देह करनेका कोई कारण नहीं।

अनेक प्रकारके प्रवादसे जाना जाता है, कि नागार्जुन ६० वर्ष तक जीवित रह कर सुखावती नामक स्वर्गमें गये। अन्यान्य प्रवादके मतसे वे पांच सौ वर्ष तक विद्यमान थे। यदि राजतरङ्गिणीका उपाख्यान स्वीकार किया जाय, तो नागार्जुन तुरुष्क राजाओंके परवर्त्तिकालमें आविर्भूत हुए थे, ऐसा अनुमान किया जाता है।

नागार्जुन देखो।

महायान मतकी उत्पत्ति तथा परिवृद्धिके प्रकृत इतिहासकी आलोचना करनेसे मालूम होता है, कि शकराज कनिष्कने साम्प्रदायिक धर्मविरोधका खंडन करनेके लिए ३य महासङ्घका अनुष्ठान किया। उसी समयसे ३य सम्प्रदायकी यथेष्ट परिपुष्टि हुई। जलन्धरके निकटवर्त्ती कुवन सङ्घाराममें, दूसरेके मतसे काश्मीरके अन्तर्गत कुंडल वनविहारमें इस धर्मसभाका अधिवेशन हुआ।

साम्प्रदायिक मतभेदके कारण बौद्धशास्त्रसमूहकी विशृङ्खलता देख कर संस्काराभिलाषी राजा कनिष्कने जो महासभा की थी, उसके कालनिर्णयादिके सम्बन्धमें विभिन्न बौद्धसम्प्रदायके मध्य विशेष मतभेद देखा जाता है। चीनपरिव्राजक यूएनचुवंग उन प्रवादोंके आधार पर जो सब घटना लिख गये हैं, उन पर भी पूरा निर्भर नहीं किया जा सकता। तिब्बतीय धर्मग्रन्थमें लिखा है, कि राजाने साम्प्रदायिक धर्मशास्त्र-

समूहका संग्रह करनेके लिए एक महासभा बैठाई। सभाके कार्य निर्वाहके लिए पार्श्व या पार्श्विकके अधीन पांच सौ बोधिसत्त्व नियुक्त हुए। इस महासङ्घसे क्रमशः सौत्रान्तिक-टीका, विनय-विभाषा और अभिधर्मविभाषा सङ्कलित हो कर अठारह बौद्धसमितिकी सम्मतिके अनुसार जनसाधारणमे प्रचारित हुई। उसी समय विनय, सूत्र तथा अभिधर्म नामक बौद्धशास्त्रग्रन्थ संगृहीत, परिशोभित और लिपिवद्ध हुआ था।

उक्त महासभा केवल शास्त्र और उसकी टीकाकी रचनाके लिए ही बैठी थी, ऐसा नहीं कहा जा सकता। पर हां बौद्ध धर्मके मूलसत्यके रक्षणार्थ १८ विभिन्न समितियां जो एकमत हुई थीं, उसमे कोई सन्देह नहीं। वाह्य या आभ्यन्तर घटनाका अनुशीलन करनेसे अनुमान किया जाता है, कि श्रावक या हीनयान मतने इस सभामे विशेष प्रतिपत्ति लाभ की थी। किन्तु महायान मत एकबारगी छोड़ दिया गया।

इस महासङ्घकी कार्यपरम्परा न मालूम होने पर भी यह निश्चय है, कि सिंहलवासी बौद्धगण इस सभाकी परिगृहीत धर्मप्रणालीसे विलकुल पृथक् थे। इस वातको महायान प्रभृतिउत्तर भारतीय बौद्ध सम्प्रदाय मुक्त कण्ठसे स्वीकार करते हैं। किंतु इस महासभाका प्रधान लक्षण यह हुआ, कि उस समयसे विभिन्न बौद्धधर्मसङ्घके मध्य जो बहुकालस्थायी मतभेद चला आता था, वह विलकुल जाता रहा। जो महायानसम्प्रदाय इतने दिनोंसे क्षीण ज्योतिरूपमें विद्यमान था, उसने थोड़े ही दिनोंके मध्य परिपुष्ट हो कर बौद्धसमाजमें सिर ऊंचा किया।

माध्यमिकमतके प्रतिष्ठाता नागार्जुन महायानमतके पृष्ठपोषक थे। उन्होंने अपने मतमें हिंदूधर्मशास्त्र तथा हिन्दूदर्शन सन्निवेशित किया था, यह पहले ही कहा जा चुका है।

इस नवोदित सम्प्रदायकी समेवत चेष्टासे बहुत बड़ा शास्त्र सङ्कलित हुआ। उन्होंने बौद्ध त्रिपिटकसे सम्यक् या आंशिक भावमें किसी मतको ग्रहण तो नहीं किया, पर प्राचीन बौद्धसूत्रसमूहका परित्याग अथवा उस पवित्र गाथा समूहकी उतनी अयौक्तिकता नहीं दिखलाई। उन्होंने केवल बुद्धप्रकटित सत्यसमूहकी टीकाटिप्पनीको सन्निवेश करनेमें ही उस विस्तीर्ण सत्यपथको अन्धकारावृत कर डाला है। हीनयानगण उस नवीन मतके पृष्ठपोषक नहीं हुए, वे वरावर इसकी निन्दा ही करते रहे। यही कारण है, कि नवीन मतावलम्बियोंने अर्हतोंको नीचा आसन दे कर बोधिसत्त्वोंको ऊंचे आसन पर बैठाया है।

शून्यवाद ही महायान मतका प्रधान लक्षण है। इसी शून्यता या "सर्वं शून्यं" वचनको ही वे बौद्धधर्मको मूलसत्ता स्वीकार करते हैं। यथार्थमें यह शून्यवाद प्राचीन त्रैविद्यासूत्रोक्त अनात्मवादकी विवृति मात्र है। वे कहते हैं, कि शाक्य बुद्धने कहा है—वस्तुसत्ताके प्रकृति नहीं है, इसलिये इसके आदि अन्त भी नहीं है। यही कारण है कि बहुत दिन तक वह पूर्ण शान्तिमें विराजित और सम्पूर्णरूपसे निर्वाणमे निमग्न रहती हैं। किंतु विरुद्धवादिगण इस सत्यवाक्यकी अवहेला कर इसका विश्वास नहीं करते।

इस शून्यताका सम्पूर्णरूपसे ध्वंस वा विनाश नहीं है। बौद्धशास्त्रमे शून्यता, महाशून्यताके भेदसे अठारह भेद कहे गये हैं, किन्तु तिब्बतीय बौद्ध लामागण ७० प्रकारके भेद बतलाते हैं।

पहले ही कहा जा चुका है, कि नागार्जुनसे ही महायान कालमें योग और भक्तिमार्गका प्रवेश होना शुरू हुआ उसी भक्तिमें लीन हो महायानगण लाखों मनुष्यको विह्वल कर अपने मतानुयायी बनानेमें समर्थ हुए थे। इस प्रकार बौद्ध इतिहासमें प्राचीन धर्ममतकी अपेक्षा महायान मतका गुरुत्व अधिक हो गया। धीरे धीरे महायान-सम्प्रदायने अन्यान्य बौद्धसम्प्रदायका दमन कर अपना कलेवर पुष्ट किया और दाक्षिणात्यके बौद्धगण सदाके लिये एक स्वतन्त्र सम्प्रदाय गिने जाने लगे—उन्होंने पूर्वतन सत्यपथका विलकुल परित्याग नहीं किया।

नागार्जुनके बाद वसुवन्धु ही महायानमतके प्रचारमें आगे बढ़े। न्याय शब्द देखो।

जो कुछ हो, महायानोंको बौद्धधर्मका शीर्ष स्थान अधिकार करनेमें सैकड़ों वर्ष तक विरुद्धवादी बौद्धसम्प्रदायके साथ वाक्वितण्डा करनी पड़ी थी। भक्ति

तथा योगधर्ममें अभ्यस्त और हिन्दूदर्शनाभिज्ञ महायानोंका मत खण्डन करनेके लिये हीनयानोंको भी हिन्दूदर्शन पढ़ना पड़ा था। क्योंकि दर्शनशास्त्र सुलभ न्याय, मीमांसा या युक्तिका खण्डन उन्ही सब शास्त्रोंके ज्ञानानुकूल है। इस प्रकार परस्परमें उच्च स्थान पानेकी चेष्टासे बौद्धोंके मध्य चार दार्शनिक सम्प्रदायका आविर्भाव हुआ। यथा—वैभाषिक, सौत्रान्तिक, योगाचार और माध्यमिक।

उनमेंसे वैभाषिक और सौत्रान्तिकगण हीनयानमतके तथा योगाचार और माध्यमिकगण महायान मतके प्रतिपोषक थे।

वैभाषिक और सौत्रान्तिक-गण भूत, भौतिक, चित्त तथा चैत्तिक इन्ही चारोंको स्वीकार करते हैं। वैभाषिकोंके मतसे अभिधर्मके सिवा सूत्रकी कोई बलवत्ता नहीं है। स्वयं शाक्यमुनिने हो मानुषसत्ता ले कर जन्म ग्रहण किया था। वे अपनी साधनाके बलसे बुद्धत्व तथा निर्वाणको प्राप्त हुए थे। अपने स्वभावज ज्ञान द्वारा सत्यलाभ हो बुद्धत्वका स्वर्गीय लक्षण है। सौत्रान्तिकगण इसके प्रतिकूलमें अभिधर्मकी उपेक्षा कर सूत्रको हो प्रामाण्य बतलाते हैं। वे बुद्धको दशबल, चातुर्वैशारद्य तथा त्रिमृत्युपस्थानसमन्वित और सब भूतोंमें समदयावान् मानते हैं। इसके अलावा वे बुद्धशरीरमें धर्मकाय और सम्भोगकायको आरोप कर गये हैं।

इधर योगाचार और माध्यमिकगण विज्ञानवादी थे। वे वस्तुसत्ता बिलकुल स्वीकार नहीं करते। उनके मतसे जड़जगत् प्रकृत भ्रमात्मक और नामरूपका विकारमात्र है। वेदान्तवादीके पारमार्थिक और व्यवहारिक सत्यकी तरह वे भी परमार्थ तथा संवृति नामक दो सत्यको स्वीकार करते हैं। संवृति प्रज्ञाशक्ति (बुद्धि)-के सिवा और कुछ भी नहीं है। इसीलिए सभी माया भ्रमात्मक या स्वप्नसादृश है। उनके मतसे वस्तुसत्ताकी उत्पत्ति वा विनाश नहीं है। सुतरां आत्माका जन्म वा निर्वाणलाभ भी असम्भव है। जिन्होंने निर्वाण प्राप्त किया है और जिन्होंने नहीं किया है इन दोनोंमें कोई विशेष पार्थक्य नहीं रह सकता। यथार्थमें जीवदेह और भोगदेहकी सभी अवस्था स्वप्नवत् है।

माध्यमिकोंने मायावादका परित्याग कर सांख्याचार्यके प्रधान तथा प्रकृतिके अनुकरण पर प्रज्ञा और उपायकी व्यवस्था की है। युक्ति और अनुमान द्वारा वस्तुसत्ताका अस्तित्व अस्वीकार करने पर भी वे यथार्थमें बौद्धधर्मके नैतिकमार्गसे विचलित नहीं हुए।

पहले ही कह आये हैं, कि नागार्जुनने माध्यमिक सत्ताका प्रचार किया। उनके समसामयिक कुमारलब्धने सौत्रान्तिक मत फैलाया था। पूर्ववर्णित अश्वघोष भी महायान सम्प्रदायके एक महारथि थे। नागार्जुनके बाद आर्यदेवका नाम प्रसिद्ध हुआ। वे महायान-मतके प्रचारके लिये बहुतसे दार्शनिक ग्रंथ लिख गये हैं। इसके बाद नालन्दा विहारमें नागाह्वय (तथागतभद्र) नामक और भी एक बौद्ध स्थविरका नाम देखनेमें आता है।

उत्तर और दक्षिण बौद्धसमाजकी अवस्था तथा पृथकता देख कर फाहियान ५वीं शताब्दीके आरम्भमें लिख गए हैं, कि अभिधर्म और विनय सेवकमण्डली अभिधर्म तथा विनयपिटकको और महायान मतावलंबी प्रज्ञापारमिता, मंजुश्री तथा अवलोकितेश्वरको उपासना करते थे। उन्होंने पाटलिपुत्र नगर आ कर दो बड़े सङ्घाराम देखे थे, उनमेंसे एक हीनयान और दूसरा महायान मतावलम्बियोंका वासस्थान था। महायान सङ्घाराममें रहते समय उन्होंने महासाङ्घिक मतका एक सम्पूर्ण विनयग्रन्थ संस्कृत भाषामें देखा था। मठवासियोंसे पूछने पर उन्हें मालूम हुआ, कि महासाङ्घिक मतके साथ महायान मत बहुत कुछ मिलता जुलता है। यहांके महायानगण अपने धर्ममतकी पुस्तकोंके अलावा सर्वास्तिवाद और संयुक्ताभिधर्म-हृदय, परिनिर्वाण, वैपुल्यसूत्र, अभिधर्म प्रभृति महासाङ्घिक मतपोषक ग्रन्थको भी आलोचना करते थे।

२री और ३री शताब्दीसे पाण्डित्यपूर्ण बौद्धदर्शनका प्रचारित होने लगा। इस समय गान्धारवासी आर्य असङ्ग और वसुबन्धु नामक दो विख्यात बौद्धभाइयोंका आविर्भाव हुआ।

असङ्ग पहले महीशासक मताचारी थे। बादमें वे महायान मतमें दीक्षित हुए। ईस्वीसन्‌से पहले

प्रचारित पतञ्जलिका बनाया हुआ योगशास्त्र पढ़नेसे उनके मनमें योगका उदय हो आया। तदनुसार वे योगाचार या योगाचार्य नामक एक महायान-शाखाका उद्भव कर गए हैं। उन्होंने अपने जीवनका अवशिष्ट समय अयोध्या और मगधमें बिताया था। राजधानी राजगृहमें उनकी मृत्यु हुई। उन्होंने एक योगशास्त्र लिखा है। चीनपरिव्राजक यूएन चुवङ्गके मतसे असङ्गने ही महायानके मध्य तन्त्रका प्रचार किया।

उनके छोटे भाई वसुबन्धु बाल्यावस्थामें सङ्घभद्र नामक काश्मीरवासी एक हीनयानके निकट पढ़ते थे। बादमें वे काश्मीरसे अयोध्या आये और कट्टर सर्वास्तिवादी बन गए। पहले तो उन्होंने अपने भाईके बनाये योगशास्त्रकी तीव्र निन्दा की पर पीछे वे महायान-मतका अवलम्बन कर नालन्दा मठके आचार्य हो गये। कुछ दिन वहीं रहनेके बाद उन्होंने वृद्धावस्थामें नेपाल मतान्तरसे अयोध्या) जा कर देहरक्षा की। उनका अभिधर्मकोष बौद्धदर्शनका एक प्रधान ग्रंथ है। इसके अलावा वे बहुतसे महायानग्रंथोंकी टीका लिख गये हैं।

असङ्ग और वसुबधुके बाद दिङ्नाग, गुणप्रभ, स्थिरमति, सङ्घदास, बुद्धदास, धर्मपाल, शीलभद्र, जयसेन, चन्द्रगोमिन, चन्द्रकीर्त्ति, गुणमति, वसुमित्र, यशोमित्र, भव्य, बुद्धपालित, रविगुप्त प्रभृति बौद्धाचार्योंके नाम पाये जाते हैं। ये सब महायान-सम्प्रदायके अलङ्कारस्वरूप थे। इनके रचित धर्मशास्त्र तथा टीका बौद्ध समाजकी बड़े ही आदरकी वस्तु है।

६ठी और ७वीं शताब्दीमें बौद्धविज्ञानकी उन्नतिकी पराकाष्ठा देखी गई। उस समय दोनों सम्प्रदायने धर्मचर्चाकी ओर विशेष ध्यान दिया था।

७वीं शताब्दीके अन्तमें परिव्राजक इत्सिंह अपने भारतभ्रमण ग्रन्थमें लिख गये हैं, कि उनके पहले महामति धर्मकीर्त्ति बौद्धधर्म रक्षामें विशेष यत्नवान् थे। ये प्रसिद्ध हिन्दूदार्शनिक कुमारिल भट्टके समसामयिक थे।

७वीं शताब्दीमें ही उत्तरदेशीय बौद्धसमाजमें अर्थात् महायानोंके मध्य तान्त्रिकताका स्रोत प्रवाहित था। तान्त्रिकोंके संमिश्रणसे बौद्धसमाजमें प्रकृति (शक्ति), मातृडाकिनी, योगिनी प्रभृतिके उत्सवका प्रचार हुआ। ये स्वर्गीय मातृकाएं हिन्दू देवदेवियोंकी पत्नीरूपमें गृहीत न हो कर 'स्वर्गस्थ बोधिसत्त्वोंकी पत्नी निर्द्धारित हुई थीं। साथ साथ भौतिकप्रक्रिया, चक्र-धारणी प्रभृति अनुष्ठानका भी अभाव नहीं था। उन्होंने भी दुष्टग्रहका प्रकोप निवारण करनेके लिये मन्त्रयुक्त कवचादि धारण करनेको सीखा था। अन्तमें यही मन्त्रयान पद लाने लगा।

आलोचना द्वारा जाना जाता है, एक समय मथुरा, काबुल, काश्मीर, कार्लि, नासिक, अमरावती, उद्यान, पञ्जाब, नालन्दा प्रभृति स्थानोंमें महायानधर्मकी प्रधानता प्रतिष्ठित हुई थी। इसका प्रमाण शिलाफलक और बौद्धसङ्घाराम अब भी दे रहा है। ७वीं शताब्दीमें कन्नौजराज हर्षवर्द्धन, शिलादित्य महायान मतके पृष्ठपोषक तथा हीनयानोंके घोर विरोधी हुए थे। हर्षचरित पढ़नेसे जाना जाता है, कि उनकी विधवा बहन राज्यश्री बौद्धभिक्षुणी हुई थी।

उसी समयसे हिन्दूप्राधान्यकी पुनः सूचना हुई। कर्णसुवर्णराज शशाङ्क और काश्मीरराज दुर्लभचद्ध'नके समयसे ही हिन्दूधर्मकी धीरे धीरे उन्नति तथा बौद्धधर्मकी अवनति होने लगी। इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि ८वीं शताब्दीके मध्यभागसे ही यथार्थमें बौद्धोंका अधःपतन हुआ।

६४० ई०को तिब्बतमें जो महायान-मत प्रचारित हुआ, उसमें भी तान्त्रिकताका प्रभाव देखा जाता है। यह तान्त्रिकतापूर्ण महायान-मत ही पीछे 'मन्त्रयान' नामसे प्रसिद्ध हुआ। बङ्गालके सभी पालराजा इसी मन्त्रयानमिश्रित महायानके पृष्ठपोषक थे। उनके समयमें सारा बङ्गाल-विहार मन्त्रयान मतमें ही दीक्षित हुआ था। पहले ही कहा जा चुका है, कि शून्यवादके सिवा महायानोंके और सभी अनुष्ठान हिन्दूधर्मानुकूल थे, सुतरां उक्त मतावलम्बी तान्त्रिकमें विशेष प्रभेद नहीं था। इसीलिये जब बङ्गालमें सेनराजाओंका अभ्युदय और हिन्दूधर्ममें जब उनका अनुराग हुआ, तब जनसाधारणमें भी अनायास तान्त्रिकपथ फैल गया। इसमें उन्हें कुछ विशेष असुविधा न हुई। इस प्रकार मन्त्रयान मतावलम्बी बहुतसे बङ्गवासी हिन्दूराजाके प्रभावसे हिन्दूतान्त्रिक समझे

जाने लगे थे। मगधके नालन्दामें उस समय भी जो सब बौद्धतान्त्रिकगण थे, उनमेंसे बहुतोंने मुसलमानोंके अत्याचारसे स्वदेश छोड़ कर नेपालमें आश्रय लिया और अधिकांश मनुष्य मुसलमानोंके हाथसे मारे गये। इस तरह बुद्धकी जन्मभूमिसे बौद्धधर्म जाता रहा। नेपालमें जिन्होंने शरण ली, वे पुनः तान्त्रिक आचार्योंके शिष्य बन गये। वही तान्त्रिक आचार्यगण वज्राचार्य नामसे प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अपनी अपनी प्रधानताकी रक्षाके लिए जो मत प्रचार किया, वही वज्रयान कहलाया। अब भी नेपालमें वज्रयान और तिब्बतमें कालचक्रयान प्रचलित है।

हीनयान और बौद्ध शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

महायानदेव (सं० पु०) चीन-परिव्राजक यूएनचुवंगकी उपाधि।

महायानपरिग्राहक (सं० पु०) महायान-मतावलम्बी।

महायानप्रभास (सं० पु०) बोधिसत्त्वभेद।

महायानसूत्र (सं० क्ली०) महायानोंके कुछ सूत्रग्रन्थोंके नाम।

महायाम (सं० क्ली०) साममेद।

महायाम्य (सं० पु०) विष्णु।

महायावनाल (सं० पु०) देवधान्यवृक्ष, ज्वारका पौधा।

महायुग (सं० क्ली०) सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि इन चारों युगोंका समूह। मानवोंका यह चार युग देवताओंका एक युग होता है। युग देखो।

महायुत (सं० पु०) एक बड़ी संख्या जो सौ अयुतकी होती है।

महायुध (सं० पु०) महान् आयुधो यस्य। १ शिव, महादेव। (त्रि०) २ महा आयुधयुक्त, जिसे बड़ा शस्त्र या हथियार हो।

महायोगिन् (सं० पु०) १ श्रेष्ठ योगी। २ विष्णु। ३ शिव।

महायोगी (सं० पु०) महायोगिन् देखो।

महायोगेश्वर (सं० पु०) पितामह और पुलस्त्य आदि ऋषि।

पितामहः पुलस्त्यश्च वशिष्ठः पुलहस्तथा।
अङ्गिराश्च क्रतुश्चैव कश्यपश्च महानृषिः।
एते .....महायोगेश्वराः स्मृताः॥"

पितामह, पुलस्त्य, वशिष्ठ, पुलह, अङ्गिरा, क्रतु और कश्यप ये सब ऋषि महायोगेश्वर कहलाते हैं।

महायोगेश्वरी (सं० स्त्री०) १ नागदमनी, नागदौना। २ दुर्गा।

महायोनि (सं० स्त्री०) योनिरोगविशेष, वैद्यकके अनुसार स्त्रियोंका एक प्रकारका रोग। इस रोगमें उनकी योनि बहुत बढ़ जाती है। यह रोग अत्यन्त दुःखदायक है। योनिरोग देखो।

महायौगिक (सं० पु०) २६ मात्राओंके छन्दोंकी संज्ञा।

महायौधाजय (सं० स्त्री०) साममेद।

महार्घ्य (सं० त्रि०) पूज्य, पूजने लायक।

महारक्षस् (सं० क्ली०) भीषण राक्षस।

महारक्षा (सं० स्त्री०) बौद्ध-कुलदेवीभेद। महाप्रतिसरा, महामायूरी, महासहस्रप्रमर्दिनी, महाशीतवती और महामन्त्रानुसारिणी ये पांच महारक्षा हैं।

महारक्षित (सं० पु० बौद्ध-आचार्यभेद।

महारक्त (सं० क्ली०) प्रवाल, मूंगा।

महारजत (सं० क्ली०) महच्च तत् रजतञ्चेति। १ सुवर्ण, सोना। २ धुस्तूर, धतूरा। ३ वृहद् रौप्य।

महारजन (सं० क्ली) रज्यतेऽनेनेति रञ्ज करणे ल्युट् (अनिदित मिति। पा ६।४।२४) इत्यत्र 'रजकरजनरजःसूपसंख्यानं कर्त्तव्य' इति काशिकोक्त्या न लोपः, महच्च तत् रजनञ्चेति कर्मधा०। १ कुसुम्भपुष्प, कुसुमका फूल। २ स्वर्ण, सोना।

महारण (सं० पु०) महायुद्ध, घोर लड़ाई।

महारण्य (सं० क्ली०) महत् अरण्यं। वृहद्वन, बड़ा वन। पर्याय—अरण्यानी, कान्तार।

'प्रविश्य तु महारण्य' दण्डकारण्यमात्मवान्।
रामो ददर्श दुर्द्धर्षस्तापसाश्रम मण्डलम्॥ (रामायण ३।१।१

महारत (फा० स्त्री०) अभ्यास, मश्क।

महारतिवल्लभमोदक (सं० पु०) मादकौषधिविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—सिद्धिबीजचूर्ण ५ पल, घी ४ पल, शक्कर १६ पल, शतावरीका रस ३२ पल, दूध ३२ पल, सिद्धिरस या उसका काढ़ा ३२ पल, बकरीका दूध ३२ पल इन्हें एक साथ मिला कर पाक करे। पीछे उसमें आंवला, जीरा, मंगरैला, मोथा,

दारचीनी, इलायची, तेजपत्र, नागकेशर, वानरीवीज (अलकुशीका वीया), गोरक्षतण्डुला, तालांकुर, केशराज, शृङ्गाटक, त्रिकटु, धनिया, अबरक, रांगा, हरीतकी दाख, कंकोली, क्षीरकंकोली, पिंडखजूर, कोकिलाक्षवीज, कटुकी, मुलेठी, कुष्ठ, लवङ्ग, सैन्धव, यमानी, वनयमानी, जीवन्ती और गजपिप्पली, प्रत्येकका चूर्ण २ तोला डाल दे। अनन्तर यथाविधान यह मोदक तैयार हो कर जब ठण्ढा हो जाय तब उसे सुगंधित करनेके लिये २ पल मधु तथा मृगमद और कपूरका चूर्ण छोड़ दे। इसका सेवन करनेसे रक्तपित्त आदि विविध रोगोंकी शान्ति तथा बल, वीर्य और रतिशक्तिकी वृद्धि होती है। (भैषज्यरत्ना० वाजीकरणाधि)

महारत्न (सं० क्ली०) महच्च तत् रत्नञ्चेति। मुक्तादि नवरत्न। मोती, हीरा, वैदुर्य, पद्मराग, गोमेद, पुष्पराग, मरकत, प्रवाल और नीलरत्न ये नौ प्रकारके महारत्न हैं।

महारत्नप्रतिमण्डित (सं० पु०) कल्पभेद।

महारत्नमय (स० त्रि०) महार्घ्य रत्न-विशिष्ट।

महारत्नवत् (सं० त्रि०) महार्घ्य रत्नसम्पन्न।

महारत्नवर्षा (सं० स्त्री०) तान्त्रिकोंकी एक देवीका नाम।

महारथ (सं० पु०) रमन्त लोका यस्मिन्निति रम (हनिकुषिनीरमिका शिभ्यः कथन्। उण् २।२) इति कथन्, महाश्चासौ रथश्चेति। १ शिव। महान् रथोऽस्य। २ अयुत धन्वीके साथ अस्त्रशस्त्रमें निपुण योद्धा।

एको दशसहस्राणि योधयेद् यस्तु धन्विनाम्।
अस्त्रशस्त्रप्रवीणश्च महारथ इति स्मृतः॥"
(गीताटीकामें स्वामी)

जो अकेला दश हजार योद्धाओंसे लड़ सके उसीको महारथ कहते हैं। महान् रथः। ३ वृहद् रथ, बड़ा रथ। ४ राजविशेष।

महारथत्व (सं० क्ली०) महारथस्य भाव त्व। महारथका भाव वा धर्म, महारथका कार्य।

महारथी (सं० पु०) महारथ देखो।

महारथ्या (सं० स्त्री०) राजपथ, प्रधान रास्ता।

महारम्भ (सं० क्ली०) १ लवण। (त्रि०) २ जिसका आरम्भ करनेमें बहुत अधिक यत्न करना पड़े।

महारव (सं० पु०) महान् रवो यस्य। भेक, बेंग।

महारश्मिजालावभासगर्भ (सं० पु०) बोधिसत्त्वभेद।

महारस (सं० पु०) महान् अधिको रसोऽस्य रुचिप्रदत्वात् तथात्वं। १ काञ्जिक, कांजी। २ खजूर, खजूर। ३ कोषकार। ४ कसेरू। ५ इक्षु, ऊख। ६ पारद, पारा। ७ कान्तलौह, कांतीसार लोहा। ८ हिंगुल, ईंगुर। ९ स्वर्णमाक्षिक, सोनामक्खी। १० अभ्रक। ११ रौप्यमाक्षिक, रूपामक्खी। १२ जम्बूवृक्ष, जामुनका पेड़। (त्रि०) १३ महारसविशिष्ट, जिसमें खूब रस हो।

महारसवत् (सं० त्रि०) १ उत्कृष्ट आस्वादयुक्त, जिसमें वढ़िया स्वाद हो। (पु०) २ खाद्यविशेष।

महारसशार्दूल (सं० पु०) रसौषधविशेष। बनानेका तरीका—शोधित अबरक, तावा, सोना, गंधक, पारा, मैनसिल, सोहागा, यवक्षार, हरीतकी, आंवला और बहेड़ा प्रत्येक ८ तोला; दारचीनी, इलायची, तेजपत्र, जैत्री, लवङ्ग, जटामांसी, तालिशपत्र, स्वर्णमाक्षिक और रसाञ्जन, प्रत्येक ४ तोला। पान और गोमा सागमें सात वार भावना दे कर उसमें ८ तोला मिर्च छोड़ दे। इसका अनुपान और मात्रा दोषके बलावलके अनुसार स्थिर करनी होगी। इसका सेवन करनेसे सूतिकारोग, ज्वर, दाह, वमिभ्रम, अतीसार, अग्निमान्द्य आदि रोग जाते रहते हैं। (रसेन्द्रसारसंग्रह सूतिकारोगाधिकार)

महारसाष्टक (सं० क्ली०) महारसाना अष्टकम्। अष्ट धातुविशेष। पारद, अभ्रक, हिंगुल, वैकान्त, स्वर्णमाक्षिक, रौप्यमाक्षिक, शङ्ख और कान्त लौह यही अष्ट धातु हैं।

दरदः पारदः सस्यो वैक्रान्तं कान्तमभ्रकम्।
माक्षिकं विमलश्चेति स्युरेतेऽष्टौ महारसाः॥" (राजनि०)

महारसोनपिण्ड (सं० क्ली०) आमवात रोगकी औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—लशुन १०० पल, बिना भूसीके तिल ५० पल, इन्हें मट्ठेके साथ पीस कर १६ सेर गायके दूधमें मिला दे। पीछे उसमें त्रिकटु, धनिया, चव्य, चितामूल, गजपीपल, वनयमानी, दारचीनी, इलायची और पिपरामूल, प्रत्येक १ पल, चीनी ८ पल, मिर्च ८ पल, कुट, ४ पल, मंगरेला ४ पल, मधु ४ पल, अदरक, ४ पल, घी २ पल, तिलतैल ८ पल, शुक्त

(कांजी) १० पल, सफेद सरसों ४ पल, रेंची ४ पल, हींग २ तोला और पञ्चलवण प्रत्येक दो तोला। इन्हें एक साथ मिला कर घाममें सुखा ले। पीछे उसे घीके घड़ेमें रख कर धानके ढेरमें १२ दिन तक रख छोड़े। प्रतिदिन सवेरे शरीरके बलानुसार उचित मात्रामें सेवन करे। इसका अनुपान सुरा, सौवीरक, सीधु या दूध, दही और पीठीको छोड़ कर जो पचा सके वही खाना उचित है। एक महीने तक इस महौषधका सेवन करनेसे वातज, कफज और पित्तज नाना प्रकारकी व्याधि अर्थात् प्रमेह, अर्श, गुल्म, कोढ, क्षय, शोथ योनिशूल आदि रोग जाते रहते हैं। टूटी हुई हड्डीको जोड़ने और आमवातको दूर करनेमें यह विशेष फलदायक है।

महाराज (सं० पु०) महांश्चासौ राजा प्रभावविशेषवानिति। १ पूर्वजिनविशेष। महत्या दीप्त्या राजते अंगुलिषु शोभते इति राज-अच्। २ नख, नाखून। ३ राजाओंमें श्रेष्ठ, बहुत बड़ा राजा। ४ ब्राह्मण, गुरु, धर्माचार्य या और किसी पूज्यके लिये एक संबोधन। ५ एक उपाधि जो आधुनिक भारतमें वृटिश सरकारकी ओरसे बड़े बड़े राजाओंको दी जाती है। ६ रुद्र-सम्प्रदायी, वल्लभाचारी और गोकुलके गोसाई आदि हिन्दू-सम्प्रदायके आचार्यो को उनकी शिष्यमण्डली 'महाराज'-का उपाधि देती है। मथुरा, वृन्दावन, गुजरात, मालवा, वम्बई, उदयपुर और आस पासके ग्रोजोग्राममें आचार्य महाराजाओंका वास है। इन सब महाराजाओंमें श्रीजीके महाराज ही सबसे श्रेष्ठ हैं। ये लोग वैष्णवधर्मावलम्बी हैं, श्रीकृष्णकी वालगोपाल-मूर्त्तिकी उपासना करते हैं।

इस सम्प्रदायके लोग कभी कभी अपने दीक्षागुरु महाराजको पूजा करनेकी इच्छासे उन्हें अपने घर लाते हैं। श्रीकृष्णकी रासयात्रा और होली पर्वमें प्रायः महाराज ही हिंडोले पर झूल झूल कर अपनी शिष्याणीके साथ फाग खेलते हैं।

वल्लभाचारी साम्प्रदायिक मतसे महाराजगण सभी शिष्याणीके पतिस्वरूप हैं। पहले उत्सवके समय रमणियां महाराजके घर आया करती थी। कुछ स्त्रियां तो वार वार उनके घर आ कर अपनी कुललज्जा खो देती थीं। १८५५ ई०में वल्लभाचारियोंने एक सभा करके अपनी कुलवती भार्याको गुरुके घर भेजनेका एक समय निर्दिष्ट कर दिया। उस समय प्रायः महाराजगण देवमन्दिरादि पूजाकर्ममें लगे रहते थे। १८६२ ई०में महाराजके चरित्र पर संदेह किया गया और उक्त प्रथा उठा दी गई।

वल्लभाचार्य देखो।

महाराज—सह्याद्रि-वर्णित एक राजा।

महाराजक (सं० पु०) राजते इति राज-वुन्, महांश्चासौ राजकश्चेति। महाराजिकगण।

महाराजगञ्ज—सारण जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह छपरासे १२॥ कोस उत्तर पश्चिम अक्षा० २६° ७' उ० तथा देशा० ८४° १०' पू०के मध्य अवस्थित है। रावलगञ्जकी तरह यहां भी जोरो वाणिज्यव्यापार चलता है। जनसंख्या तीन हजारसे ऊपर है।

महाराजगञ्ज—पटना जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यहां पटना, गया और शाहावाद जिलेके सभी प्रकारके अनाज विकनेको आते हैं। पटना नगरका यही स्थान वाणिज्य-केन्द्र समझा जाता है।

महाराजगञ्ज—युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलेकी उत्तरीय तहसील। यह अक्षा० २६° ५४' से २७° २१' उ० तथा देशा० ८३° ७' से ८३° ५७' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १२३६ वर्गमील और जनसंख्या पांच लाखसे ऊपर है। तीलपुर, विनायकपुर और हवेली परगनेके अंशको ले कर यह उपविभाग संगठित हुआ है। इसमें सिसवा वाजार नामक १ शहर और १२६५ ग्राम लगते हैं। तहसीलका उत्तरीय भाग जंगलसे आच्छादित है। पहाड़ी प्रदेशमें एकमात्र गोरखा, नेपाली और थारु जातिका वास देखा जाता है।

महाराजगञ्ज—युक्तप्रदेशके रायबरेली जिलेकी उत्तरीय तहसील। इनहुना, वछरावान, सिमरौता, कुम्हारवान, मोहनगञ्ज और हरदोई परगने ले कर यह तहसील संगठित हुई है। यह अक्षा० २६° १७' से २६° ३६' उ० तथा देशा० ८०° ५६' से ८१° ३४' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४६५ वर्गमील और जनसंख्या तीन लाखके करीब है। इसमें ३६ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है।

महाराजगञ्ज—अयोध्याप्रदेशके उनाव जिलेके अन्तर्गत एक नगर।

महाराजचूत (सं० पु०) महता मिष्टादिगुणेन राजते आद्रियते इत्यच्, ततः कर्मधारयः। उत्तम आम्र, बढ़िया आम। पर्याय—महाराजाम्रक, स्थूलाम्र, मन्मथानन्द, कङ्क, नीलकपित्थक, कामायुध, कामफल, राजपुत्र, नृपात्मज, महाराजफल, काम, महाचूत। कच्चेका गुण—कटु, अम्ल, पित्त और दाहवर्द्धक। पक्केका गुण—स्वादु, मधुर, पुष्टि, वीर्य और बलप्रद।

महाराजद्रुम (सं० पु०) महाराजोऽतिश्रेष्ठो द्रुमः। आरग्वधवृक्ष।

महाराजनगर—अयोध्याप्रदेशके सीतापुर जिलान्तर्गत एक बड़ा ग्राम। यह लाहारपुरसे खेरी जानेके रास्ते पर, सीतापुर नगरसे ८ कोस पूर्वमें अवस्थित है। मुसलमानी अमलदारीमें यह नगर बसाया गया है। उस समय इसका नाम इस्लामपुर था। पीछे राजा तेजसिंह नामक किसी गौड़ीय राजपूतने इसे जीत कर महाराजपुर नामसे घोषित किया। आज भी यह स्थान उन्हीं लोगोंके अधिकारमें है।

महाराजनगर—मध्यभारतके बुन्देलखण्डके अन्तर्गत चरखाड़ी सामन्तराज्यका एक नगर।

महाराजनृपतिवल्लभरस (सं० पु०) रसौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—कांतीसार लोहा ६ तोला, अबरक, तांबा, मुक्ता और सोनामक्खी प्रत्येक दो तोला, सोना, चांदी, सोहागा, कर्कटशृङ्गी, गजपीपल, दन्तमूल, मिर्च, तेजपत्र, यमानी, अतिबला, मोथा, सोंठ, धनिया, सैन्धवलवण, कपूर, विड़ङ्ग, चिता, विष, पारा, गन्धक प्रत्येक १ तोला, निसोथका चूर्ण २ तोला, लवङ्ग, जायफल, जैत्री, दारचीनी प्रत्येक ४ तोला कुल मिला कर जितना हो उसका आधा विट्लवण तथा सबके समान इलायची उसमें मिलावे। पीछे बकरीके दूधमें ७ बार और टावा नीबूके रसमें सात बार भावना दे कर १० रत्तीकी गोली बनावे। गोलीको छायामें सुखा लेना होगा। इसका सेवन करनेसे मन्दाग्नि, संग्रहणी, आम, कोष्ठबद्ध, कृमि, पाण्डु, छर्दि, अम्लपित्त, हृद्रोग, गुल्म, उदरी, भगन्दर, अर्श, पित्तरोग आदि रोग जाते रहते हैं।

दूसरा तरीका—सोनामक्खी, लोहा, अबरक, रांगा, चांदी, सोना, सोहागा, सोंठ, तांबा, पिपरामूल, दारचीनी, यमानी, सैन्धवलवण, अतिबला, मोथा, धनियां, गंधक, पारा, कपूर और कर्कटशृङ्गी प्रत्येक एक एक माशा, हींग २ माशा, मरिच ४ माशा, जैत्री, लवङ्ग और तेजपत्र, प्रत्येक १ तोला, छोटी इलायची १२ तोला ३ माशा, विट्लवण ४ तोला, इन सब वस्तुओंको बकरीके दूधमें अच्छी तरह पीस कर ४ रत्तीकी गोली बनावे। इसका सेवन करनेसे आनाह, ग्रहणी और पूर्वोक्त रोग अति शीघ्र नष्ट होते हैं।

(रसेन्द्रसारस० ग्रहणीरोगाधि०)

महाराजपुर—मध्यप्रदेशके मण्डला जिलान्तर्गत एक प्रसिद्ध ग्राम। यह अक्षा० २२° ३५´ उ० तथा देशा० ८०° २४´ पू० नर्मदा और बंजारा नदीके संगमस्थल पर अवस्थित है। पहले यह स्थान ब्रह्मपुत्र नामसे प्रसिद्ध था। १७३७ ई०में राजा महाराज शाहने इसे अपने नाम पर बसाया। प्रतिवर्ष यहां एक मेला लगता है।

महाराजपुर—सन्थाल परगनेके राजमहल विभागान्तर्गत एक बड़ा गांव। यह अक्षा० २५° ११´ ४५´´ उ० तथा देशा० ८७° ४७´ पू०के मध्य अवस्थित है। यहां इष्ट-इण्डियन-रेलवेका एक स्टेशन है।

महाराजपुर—मध्यप्रदेशके ग्वालियर राज्यान्तर्गत एक बड़ा गांव। यह अक्षा० २६° २८´ उ० तथा देशा० ७८° ७´ पू०क मध्य अवस्थित है। जनसंख्या चार सौके करीब है। १८४३ ई०को २९वीं दिसम्बरको अंगरेज-सेनापति सर ह्यु गाफने यहा पर मरहठोंका परास्त किया था। मरहठोंने रणक्षेत्रमें ५६ कमान और बारूद तथा गोला गोली छोड़ कर ग्वालियरके दुर्गमें आश्रय लिया। इस युद्धकी विजयकीर्त्तिकी घोषणा करनेके लिये उन सब कमानोंको धातुसे कलकत्तेमें एक स्मृतिस्तम्भ बनाया गया है।

महाराजप्रसारिणीतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ६८ सेर, काढ़ेके लिये भल्लातक ३०० पल, असगंध, रेंड़ीका मूल, बिजबंद, शतमली, रास्ना, पुनर्णवा तथा दशमलका प्रत्येक द्रव्य और फरहदकी छाल प्रत्येक द्रव्य १०० पल करके, देवदारु ५०

पल, शिरीषकी छाल ५० पल, लाख २५ पल, लोध २५ पल इन्हें एक साथ ८४०० सेर पानीमें पाक करे। जब १२८ सेर पानी रह जाय, तब उसे उतार ले। पीछे उसमें कांजी ६४ सेर (यद्यपि कांजीका परिमाण २६ आढ़क बतलाया गया है, तो भी ६४ सेर ही देना चाहिये, नहीं तो तेलसे केवल कांजीको ही गंध निकलेगी) दूध ४० सेर, दही ४० सेर, दहीका पानी १६ सेर, ईखका रस ३२ सेर, बकरेका मांस ३०० पल, पाकार्थ जल १८० सेर, शेष ६८ सेर, मजीठ ६० पल, जल ६० सेर; शेष १५ सेर पहले इन्हें सब द्रव्योंके साथ तैलपाक करे। पीछे उस में भल्लातककी गुठली (असह्य होने पर लाल चन्दन) पीपल, सोंठ, मिर्च, प्रत्येकका रस ६ पल, हरीतकी, बहेडा, आंवला, सरलकाष्ठ, सोयां, कर्कटशृङ्गी, वच, कचूर, मोथा, नागरमोथा, पद्मपुष्प, मेद, पिपरामूल, मजीठ, असगंध, पुनर्णवा, दशमूल, चकचंद, रसाञ्जन, गन्धतृण, हरिद्रा, जीवनीयगण प्रत्येक २ पल। पहले इन सबका चूर्ण डाल कर तेलपाक करनो होगा। लवङ्ग, गंधवोल, तेजपत्र, धूना, शैलज, प्रियंगु, खसखसकी जड, सौंफ, जटामांसी, देवदारु, लवणखोरि (लोवान) नालुका, काष्ठखोरी, छोटी इलायची, कन्दूरखोरी, मुरामांसी, तीन प्रकारकी नखी (पहला गूलरपत्रके जैसा, दूसरा उत्पलके जैसा, तीसरा घोड़ेके खुरके जैसा), दारचीनी, तेजपत्र, चव्य, खट्टासी, चम्पेकी कली, दौनेका फूल, रेणुक, चोर कंकोली और भंटी, प्रत्येक ३ पल इन सबके चूर्ण और गन्धोदकके साथ दूसरीवार पाक करना होगा। गन्धोदक साधनका नियम—तेजपत्र, पत्रक, खसखसकी जड, मोथा, सुगंधवालाका मूल, प्रत्येक २५ पल, कुट ११॥ पल जल १०० सेर शेष ५० सेर, दूसरा पाक इसी गन्धजलके साथ होगा।

इस गन्धजल और चन्दन जलके साथ पीछेका लिखा हुआ कल्कपाक करना होगा। चन्दनाम्बु प्रस्तुत करनेका नियम,—५० पल चन्दनको ५० सेर जलमें सिद्ध कर जब २५ सेर जल बच रहे, तब उसे उतार ले। पूर्वोक्त गन्धजल ५० सेर और चन्दनजल २५ सेरके साथ नागेश्वर, कुट, दारचीनी, केशर, श्वेतचन्दन, गठिवन, लता कस्तूरी, लवङ्ग, अगुरु, कंकोल, जयित्री, जायफल, इलायची और लवङ्ग, प्रत्येक ३ पल, मृगनाभि ६ पल, कपूर १॥ पल इन्हें तेलमे डाल कर पाक करे। पीछे इसमे मृगनाभि ६ पल और कपूर १॥ पल छोड दे।

महाराज प्रसारिणीतैलमें जो कांजी देनेका विषय कहा गया है, वह निम्नोक्त शुक्तका लक्ष्य करके। शुक्त बनानेका नियम—अनाजका मांड़ ४ सेर, कांजी ८० सेर, दही २ सेर, गुड २ सेर, अम्लमूलक (कांजीके नीचेका अन्न) १ सेर, अदरक, २ सेर, पिपरा, जीरा, सैन्धव, हरिद्रा और मिर्च, प्रत्येक २ पल, इन्हें एकत्र कर घीके बरतनमें ८ दिन तक रख छोड़े। पीछे उसमें दारचीनी, तेजपत्र, इलायची और नागेश्वर प्रत्येकका चूर्ण ६ तोला डालना होगा। इसीको शुक्त कहते हैं।

इसी शुक्तसे तैलपाक करना होगा। विशेष अभिज्ञ वैद्यको बड़ी सावधानीसे तथा शुचि हो कर यह तैलपाक करना चाहिये। यह महाराजप्रसारिणी तैल राजसेव्य है। इसकी शक्ति अन्यान्य प्रसारिणी तेलकी अपेक्षा बढ़ी चढ़ी है। इसके व्यवहारसे सभी प्रकारकी वातव्याधि जाती रहती है।

(भैषज्यरत्ना० वात व्याधिरोगाधि०)

महाराजवटी (सं० स्त्री०) वटिकौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गंधक और अबरक, प्रत्येक दो तोला, वृद्धदारक, रांगा, लोहा प्रत्येक १ तोला, सोना, कपूर और तांबा प्रत्येक ८ तोला, गांजा, शतमूली, श्वेतधूप, लवङ्ग, तालमखाना, भूमिकुष्माण्ड, तालमूली, शूकशिम्बी, जातिफल, जैत्री, विजबंद और गोपवल्ली प्रत्येक दो मांशा इन्हें तालमूलीके रसमें पीसे। पीछे नियमानुसार इसे तैयार कर ४ रत्तीकी गोली बनावे। इसका अनुपान मधु है। इसके सेवनसे सब प्रकारके वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक ज्वर, खांसी, दमा, कमला, प्रमेह और रक्तपित्त आदि रोगोंकी शान्ति होती है। यह बल और पुष्टिकर है। इस औषधका सेवन कर यदि नित्य स्त्री प्रसङ्ग किया जाय, तो शुक्र और बलका ह्रास नहीं होता। (रसेन्द्रसारस० ज्वराधि०)

महाराजाधिराज (सं० पु०) १ बहुत बडा राजा, अनेक राजाओंमें श्रेष्ठ। २ एक प्रकारकी पदवी जो ब्रिटिश भारतमे सरकारकी ओरसे बडे राजाओंको मिलती है।

महाराजिक (सं० पु०) महती राजिः पङ्क्तिरस्य (शेषाद्विभाषा। पा ५।४।१५४) इति कप्। गणदेवताविशेष, एक प्रकारके देवता जिनकी संख्या कुछ लोगोंके मतसे २३६ और कुछ लोगोंके मतसे ४००० है।

महाराजोपचार (सं० पु०) महाराजार्थं उपचारः, महाराजानामुपचारो वा। राजार्हपूजोपकरण, महाराजाके योग्य पूजाकी सामग्री, चामर, छत्र पादुका आदि।

तत्तश्च चामरच्छत्रपादुकादीन् परानपि।
महाराजोपचाराश्च दत्त्वादर्शं प्रदर्शयेत् ॥"
(विष्णुधर्मोत्तर)

देवपूजामें महाराजोचित उपचार सामग्री दे कर पूजा करनी होती है। ऐसा करनेसे अशेष पुण्यलाभ होता है।

हरिभक्तिविलासके अष्टम विलासमें इसका विशेष विवरण लिखा है।

महाराज्ञी (सं० स्त्री०) १ दुर्गा। २ महारानी।

महाराज्य (सं० क्ली०) बहुत बड़ा राज्य, साम्राज्य।

महाराणा (सं० पु०) उदयपुर वा चित्तौर राजवंशकी उपाधि। मेवार, चित्तौर और उदयपुर देखो।

महारात्र (सं० क्ली०) द्विपहर रात्रि, आधी रात।

महारात्रि (सं० स्त्री०) महत्यां प्रलयावस्थायां राति आत्मस्वरूपं ददाति सुप्तशक्त्या सर्वान् जीवान् आत्मरूपेण अवस्थापयति त्रायते पञ्चपर्व्वलक्षणाया अविद्यायाः सकाशात् रक्षतीति वा इ। १ ब्रह्मलयोपलक्षिता महाप्रलय-रात्रि। जब कि ब्रह्माका लय हो जाता है और दूसरा महाकल्प होता है तब उसीको महारात्रि कहते हैं।

"ब्रह्मणाश्च निपाते च महाकल्पो भवेन्नृप।
प्रकीर्त्तिता महारात्रिः सा एव च पुरातनैः ॥"
(ब्रह्मवैवर्त्त पु० प्र०ख० ५ अ०)

२ दुर्गा। ३ तान्त्रिकोंके अनुसार ठीक आधी रात बीतने पर दो मुहूर्त्तोंका समय जो बहुत ही पवित्र समझा जाता है। कहते हैं, कि इस समय जो पुण्य कृत किया जाता है, उसका फल अक्षय होता है।

"अर्द्धरात्रात् परं यच्च मुहूर्त्तद्वय मुच्यते।
सा महारात्रिरुदिता तद्दत्तमक्षयं भवेत् ॥" (तन्त्रशास्त्र)

४ आश्विनकी शुक्लाष्टमी, दुर्गाष्टमी, नवरात्र।

"शुक्लाष्टमी चाश्विनस्य नवरात्रं तु तत्र वै।
महारात्रिर्महेशानि कालरात्रिं शृणु प्रिये ॥"
(शक्तिसङ्गमतन्त्र)

महाराम—१ आसामप्रदेशके खासिया पहाड़ी प्रदेशके अन्तर्गत एक सामन्त राज्य। यहांके सर्दारगण सियेम कहलाते हैं। राजा उकिसन सिंह १८८४ ई०में राज्य करते थे। यहांके निवासी खनिज लोहेका अस्त्र शस्त्र बनाना जानते हैं।

२ उक्त प्रदेशके अन्तर्गत एक दूसरा सामन्तराज्य। यहांकी आय १०४० रु० है। सर्दार सियेम सिंह १८८५ ई०में मौजूद थे। इस पहाड़ी भूमिसे अनेक प्रकारका द्रव्य निकलता है।

महारामायण (सं० क्ली०) बृहत् रामयण, बड़ा रामायण।

महारावण (सं० पु०) पुराणानुसार वह रावण जिसके हजार मुख और दो हजार भुजाएं थीं। अद्भुत रामायणके अनुसार इसे जानकीजीने मारा था।

महारावल—राजपूताना, जैसलमेर और डूंगरपुर राजवंशकी उपाधि। मारवाड़, जयपुर और योधपुर देखो।

महाराष्ट्र—भारतवर्षके दक्षिण-पश्चिमप्रान्तवर्त्ती एक विस्तीर्ण जनपद। इसके उत्तरमें सूरतप्रदेश और शतपुरा गिरिश्रेणी, पश्चिममें अरब समुद्र, दक्षिणमें कर्णाट प्रदेश और पूर्वमें गोण्डावन तथा तैलिङ्ग है। पूर्व ओरकी सीमा स्पष्टरूपसे बतलानेमें यह कहना पड़ता है, कि गङ्गा और वर्द्धा (वरदा) नदी, माणिकदुर्ग, माहुरनगर, नान्देड़, बिदर और तालिकोट नगर महाराष्ट्रदेशकी पूर्वसीमा पर अवस्थित है। कृष्ण और मालप्रभा नदी तथा बेलगांव जिलेका दक्षिणांश और सदाशिवगढ़ (करवाड़) ये सब देश इसकी दक्षिणसीमाके रूपमें गिने जाते हैं। कृष्णनदीके दक्षिणी किनारे जिस भूमिखण्डको 'दक्षिण महाराष्ट्र' कहते हैं, अंगरेज ऐतिहासिक ग्राण्ट-डफ-साहबने उसे महाराष्ट्रदेशके अन्तर्गत बतलाया है। यथार्थमें यह प्रदेश महाराष्ट्र-देशके ही अन्तर्भुक्त है। इस विशाल देशका क्षेत्रफल लगभग एक लाख पचीस हजार वर्गमील है। इस देशकी

जनसंख्या करीब तीन करोड है। महाराष्ट्र प्रदेश साधारणतः पथरीला और उपजाऊ है। यहांका जलवायु भारतवर्षके अनेक स्थानोंके जलवायुकी अपेक्षा स्वास्थ्यकर हैं।

प्राकृतिक दृश्य।

सह्यपर्वत महाराष्ट्रदेशको पूर्वपश्चिम दो भागोंमें बांटता है। उनमेंसे पूर्वाञ्चलका नाम 'देश' और पश्चिमाञ्चल 'कोङ्कण' है। शेषोक्त प्रदेशकी लम्बाई उत्तरमें दमनगङ्गासे ले कर दक्षिणमें सदाशिवगढ तक लगभग चार सौ मील है और चौड़ाई कुल मिला कर ५० मील है। यह प्रदेश अत्यन्त बन्धुर, अनुर्वर तथा पर्वतोंसे परिपूर्ण है। कोङ्कणका जो अंश पश्चिमघाट गिरिमालाके समीप अवस्थित है, उसे 'कोङ्कणघाटमाथा' कहते हैं। घाटमाथाका पाददेशस्थित भूभाग बोलचालमें "तलकोङ्कण" या निम्न कोङ्कण नामसे प्रसिद्ध है। यहांके अधिवासी साधारणतः सरलहृदय, कष्टसहिष्णु, उद्यमशील, शिकारी तथा शान्तप्रकृतिके हैं।

विस्तृत विवरण कोङ्कण शब्दमें देखो।

कोङ्कणके पूर्व पश्चिमघाट पर्वत श्रेणी अपनी विशाल देहको ऊंचा किए हुए प्राचीराकारमें अवस्थित है। इस पर्वतका दृश्य अत्यन्त गम्भीर, भयानक और सुन्दर है। कहीं ओषधिपूर्ण शैलश्रेणी विद्यमान है, कहीं सात महीने तक वर्षा ही होती रहती है और कहीं वन्यजन्तुओंका भीषण गर्जन हमेशा सुनाई देता है। इस प्राचीरवत् शैलश्रेणीमें कहीं कहीं पर मनुष्योंके आने जानेके लिए कई एक बहुत तंग रास्ते हैं जो 'घाट' कहलाते हैं। ये सब पार्वत्यपथ अत्यन्त विघ्नपूर्ण और दुरारोह हैं। स्थानीय मनुष्योंके सिवा दूसरे कोई भी उस पथसे विचरण नहीं कर सकते। इस सङ्कटमय रास्तेको पार कर सह्याद्रिके समीप जानेसे पर्वत और वनसे घिरे हुए अनेक छोटे छोटे गांव नजर आते हैं। यह भूमिखण्ड 'कोङ्कणघाटमाथा' (शीर्ष) कहलाता है। इसीका एक अंश "मालव" नामसे प्रसिद्ध है। महात्मा शिवाजीकी मालवी-सेना इसी प्रदेशसे संगृहीत होती थी। घाटमाथाकी चौड़ाई कहीं भी २०-२५ मीलसे ज्यादा नहीं है। इस प्रदेशका अधिकाश बन्धुर, जङ्गलमय तथा हिंस्रजन्तुसे परिपूर्ण है। वर्षाकालमें यह प्रदेश बड़ा ही डरावना मालूम पड़ता है और वर्षाके अधिकांश समयमें यहां बदली छाई रहती है। यहांकी गिरिशिखरमालाएं इस प्रकार अवस्थित हैं, कि थोड़े परिश्रमसे ही वे सब अत्यन्त दुर्भेद्य दुर्गमें परिणत की जा सकती हैं। घाटमाथाकी शिखरावली पर आज भी छत्रपति शिवाजीके बनाये सिंहगढ़ प्रभृति सैकड़ों दुर्ग नजर आते हैं। ऐसा सुदृढ़ प्रदेश पृथ्वी पर बहुत कम देखनेमें आता है। इस-प्रदेशके मनुष्य स्वभावतः मृगयाकुशल, लक्ष्यवेधमें निपुण बलशाली, साहससम्पन्न और धर्ममें गभीर विश्वासयुक्त हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

कोङ्कण-घाटमाथासे उतर कर पूर्वकी ओर जानेसे क्रमशः शैलविरल, नदनदीसमन्वित, सुविशाल और कहीं कहीं समतल क्षेत्र देखनेमें आता है। इस प्रदेश, को महाराष्ट्रीयगण 'देश' कहते हैं। देश या पूर्व महाराष्ट्र देश कोङ्कणकी तरह ऊसर नहीं है। ताप्ती, गोदावरी और कृष्णानदी तथा बेणगङ्गा, नीरा, भीमा, मञ्जिरा आदि उपनदियां पूर्व महाराष्ट्रदेशको कुछ कुछ उपजाऊ बनाती हैं। फिर भी वर्षाकालके सिवा दूसरे समयमें इस प्रदेशकी अधिकाश भूमि मरुभूमिकी तरह उद्भिज्जशून्य रहती है। इस अञ्चलमें जाड़े, गर्मी और तूफानका प्रकोप भी कुछ कम हैं। धान, गेहूं, ज्वार और बाजड़ा यहांकी प्रधान उपज है। ईख, कपास, चीनाबादाम और तंबाकूकी खेती तथा बिक्री होती है।

पूर्व महाराष्ट्रप्रदेश भी एकबारगी पर्वतशून्य नहीं है। "चान्दोर गिरिश्रेणी" "अह्मदनगर शैलमाला" "शम्भूशिखरावली" और पूनाकी दक्षिणस्थित शैलपंक्ति, इन चारोंने सुदृढ़ प्राकारकी तरह महाराष्ट्रदेशको दुर्भेद्य बना रखा है। यह प्रदेश दश जिलोंमें विभक्त है। गोदावरी, भीमा, नीरा और माननदीके तीरवर्ती प्रदेशोंमें बड़े ही सुन्दर महाराष्ट्री घोड़े पाये जाते हैं। ये घोड़े छोटे कदके, ग़ुसचर, अत्यन्त कष्टसहिष्णु और भारी बोझ ढोने तथा पर्वतमय प्रदेशमें बहुत तेज चलनेवाले होते हैं। महाराष्ट्रोंके अभ्युदयके पक्षमें ये बड़े ही कामके हुए थे।

अधिवासी।

महाराष्ट्रदेशके अधिवासी साधारणतः मराठा या मरहट्टा कहलाते हैं। किन्तु महाराष्ट्रमे "मराठा" कहनेसे पूर्वमहाराष्ट्रवासी क्षत्रिय और कृषक ही समझे जाते हैं। उत्तर-भारतकी तरह दक्षिणमें भी चातुर्वर्ण्य व्यवस्था है। महाराष्ट्रीय ब्राह्मण पञ्चद्राविड़के अन्तर्भुक्त हैं। ये प्रधानतः देशस्थ, कोङ्कणस्थ, कहाड और देवरुथ इन्हीं चार श्रेणीमें विभक्त हैं। इन चार श्रेणियों-में कन्याका आदानप्रदान शिष्टाचारविरुद्ध तथा अत्यन्त विरल होने पर भी ये एक दूसरेके यहां बिना रोक टोक-के खाते पीते हैं। जो मद्य, मांस और मत्स्य नहीं खाते महाराष्ट्रमे वे ही प्रकृत ब्राह्मण गिने जाते हैं। इसीलिये मत्स्याहारी शेवणी या सारस्वत ब्राह्मणोंको महाराष्ट्र-की ब्राह्मणश्रेणीमेंसे कोई भी ऊंचा आसन नहीं देते। महाराष्ट्रीय ब्राह्मण बुद्धिमान्, विश्वस्त तथा कार्यदक्ष होते और शास्त्रोक्त सोलह प्रकारके संस्कारोंका यत्न-पूर्वक अनुष्ठान करते हैं। शिवाजीके उच्चपदस्थ कर्म-चारियोंमेंसे बहुतेरे देशी ब्राह्मण ही थे। महात्मा राम दास स्वामी, एकनाथ स्वामी, ज्ञानेश्वर, मुकुन्दराम, आदि बड़े बड़े कवि, पण्डित और धर्मोपदेशक साधु-पुरुष देशस्थ ब्राह्मणश्रेणीभुक्त थे। महाराज शाहूके राजत्वकालसे कोङ्कणके ब्राह्मणोंकी प्रतिपत्ति बढ़ने लगी। पूनाके पेशवा और दक्षिण-महाराष्ट्रके प्रसिद्ध सरदारगण कोङ्कणके ही वासी थे। बुन्देलखण्ड और मध्यभारत अञ्चलमे कहाड़गण बहुत बढ़े चढ़े थे। झांसीकी रानी लक्ष्मीबाई कहाड़-ब्राह्मणवंशकी थी। महाराष्ट्रदेशके बहुत प्रसिद्ध कवि मरोपन्त भी इसी कहाड़ श्रेणीके ब्राह्मण थे। ग्वालियर-महाराज सिन्धिया-के दरबारमें शेणवियोंका ही अधिकतर चला बना है। महाराष्ट्रमें हजार पीछे लगभग ३५० ब्राह्मण लिखे पढ़े हैं। उनमेंसे सैकड़े पीछे अंगरेजी भाषा जानते हैं। महाराष्ट्र-ब्राह्मणरमणियोंमे परदा-रिवाज कुछ भी नहीं है। ये बड़ी ही श्रमशीला और गृहधर्ममे सुनिपुण होती हैं। इनमेंसे हजार पीछे २७ पढ़ी लिखी है।

महाराष्ट्रवासी कायस्थगण प्रभु कहलाते है। शिवाजीके समयमें इन्होंने कार्यदक्षता, बुद्धिमत्ता, साहस तथा स्वदेश हितैषितागुणसे यथेष्ट ख्याति प्राप्त की थी। बङ्गाल बिहार आदिकी तरह महाराष्ट्रमें भी ये लोग मसि-जीवी हैं। पहले असिजीवी कायस्थोंकी संख्या अधिक थी। इसीलिए ये सब बहुत दिनोंसे क्षत्रिय ही कहे जाते हैं। प्राचीन कालमें बहुत जगह क्षत्रियत्व ले कर बड़ा ही गोलमाल हुआ था। वर्त्तमान समयमें इन लोगोंमें हजार पीछे लगभग १६० मनुष्य अंगरेजी और ३३० मराठी भाषा लिख पढ़ सकते हैं। प्रभु-रमणियोंके मध्य सैकड़े पीछे ६ लिखना पढ़ना जानती हैं। इनमें अंगरेजी शिक्षाका भी खूब प्रचार हुआ है। हजारमें ६ प्रभुरमणी अंगरेजी भाषा भी जानती हैं। इन लोगोंमें परदेकी प्रथा प्रचलित है।

महाराष्ट्रमें मराठोंकी संख्या (बेरार छोड़ कर) लगभग आठ लाख है। ये दो श्रेणीमें विभक्त हैं। उनमें-से जो केवल मराठा या कुलीन मराठा कहलाते हैं, वे ही क्षत्रिय होनेका दावा रखते हैं। पूर्व इतिहास पढने-से अनेक मराठा परिवारको ही क्षत्रिय कहना पड़ता है। ये नाटे, बलिष्ठ, समरप्रिय, बुद्धिमान् तथा स्वाधीनता प्रयासी होते हैं। श्रद्धालुता, दृढ़चित्तता, अनालस्य, आतिथेयता और कलह-प्रियता इनके चरित्रकी विशेषता है। ये बाल्य-विवाहके पक्षपाती और विधवा-विवाहके विरोधी हैं। ये जनेऊ भी पहनते हैं। मराठा ९६ कुलमे बटे हैं। कुलके नामानुसार ही उनकी उपाधि होती है। नीचे सबोंकी तालिका दी जाती है,—सुरवे, पवार (प्रमार), भोंसले, घोरपडे, राने, शिन्दे, शालुंके, सिसोदे, जगताप, मोरे, मोहिते, चौहान, दभाड़े, गायकवाड सावन्त, महाडीक, तावडे, धूलप (धुमाल, धुले), बाभवे, शिरके, तोयर, यादव, दलवी, सालवे, मुलीक, पालवे, कदम, नलांड़े, वाघ, राउत, निसीम, पारवे, कासरे, माली, माने, मराडे, काठे, कासले, निम्बालकर, धडम, चारगें, दलपते, गवाली, नवसे, घरत, नाइक, घोर, विचारे, सितोल, धाड, गवसे, सकपाल, नकासे, राव, दुधे, पाटक, सीगवन, घाटगे, पाताडे, वाघमारे, आपराधे, भोवर, जोशी, कलपाते, दर-चारे, केशरकर, कामरे, कांठे, काठवटे, रणदिवे (रणद्वीप)

निकम, भाते, कम्बले, ठाकुर, भोहर, भोगले, साङ्गल, नामजादे, जाम्बले, चिरकुले, घुरे, परव, दिवठे, फांकडे, शेलके, वागवान, गांवड, मोकल, तामटे, वुलके, धावडे, जालिन्धरे, जशवन्त, जगपाल, पटेल, जगले, घुमक, सीरगरे, घरत और अहिराव। इनमेंसे भोंसले, सावन्त, खानविलकर, सुरवे, घोरपडे, चौहान, शिरके, मोरे, मोहिते, निम्बालकर, अहिराव, शालोके, माने, याघव, महाड़ीक, पवार, दलवी, घाटगे आदि परिवार वंश-मर्यादामें श्रेष्ठ गिने जाते हैं। मराठा क्षत्रियोंके मध्य प्रदेशकी प्रथा प्रचलित है।

जो सब मराठा कृषिजीवी, व्रात्य-भावापन्न अथवा सङ्कर होते हैं, वे कुनवी कहलाते हैं। ये युवा अवस्था होने पर ही कन्याका विवाह करते हैं। निम्नश्रेणीके कुनवियोंमें विधवा-विवाह भी प्रचलित है। कुनवी क्षत्रियत्वका दावा नहीं करते, अपनेको शूद्र बतलाते हैं। मराठा क्षत्रिय इनकी कन्यासे विवाह करते, किन्तु ये किसी भी कुलीन मराठेका जमाई नहीं हो सकते। देशस्थ और कोङ्कणस्थ कुनवियोंमें कन्याका आदान प्रदान नहीं चलता। ऐसा विवाह इनके मध्य निषिद्ध नहीं है, किन्तु वर कन्याका वासस्थान दूर होनेके कारण वे इसे असुविधाजनक समझते हैं। कुनवी धनवान् और प्रभावशाली होने पर अपनेको मराठा ही कहना पसन्द करते हैं। ये भी परिश्रमी, आतिथेय, स्वल्पसन्तुष्ट और श्रद्धालु होते हैं। कुनवी रमणियोंमें परदेकी प्रथा उतनी चालू नहीं है। सुरापानका मराठों और कुनवियोंमें खूब प्रचार है, किन्तु शिष्टाचारके विरुद्ध जरूर है। ज्वार और बाजड़ेकी मोटी मोटी रोटी (भाकरी) मराठों और कुनवियोंकी प्रधान खाद्य है।

धर्म और देवदेवी।

उल्लिखित तीन प्रधान जाति ही तमोमय शैवधर्मकी उपासक हैं। मल्लारी नामक असिधारी भयङ्कर शिव ही अधिकांश मराठोंके कुलदेवता हैं। मराठा लोग शिवपूजामें राजपूतोंकी तरह मदिरा और लोहू उत्सर्ग करते हैं। अष्टभुजा, षोडशभुजा तथा अष्टदशभुजा महिषमर्दिनीकी पूजा भी सभी जगह प्रचलित है। तुलजापुरकी भवानीदेवी सभी महाराष्ट्रवासियोंकी आराध्या हैं। कोह्लापुरमें महालक्ष्मीके उपासकोंकी संख्या भी कम नहीं है। कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंकी कुलदेवी योगेश्वरीदेवी हैं। ये गणपतिके भी उपासक हैं। महाराष्ट्रवासियोंका विश्वास है, कि भूत, प्रेत और बेताल गणेशके अज्ञाकारी हैं। भवानीको ग्रामकी रक्षक समझ कर ही सभी ग्रामोंमें उनकी प्रतिमूर्त्ति प्रतिष्ठित हैं। सातो मातृकाएं महामारी आदिको दूर करनेके लिए ही पूजी जाती हैं। खण्डोवा देशरक्षकदेव हैं। ये ईश्वर और महादेवके अवतारस्वरूप कहे जाते हैं। जेजूरी नामक स्थानमें इनका प्रधान मन्दिर अवस्थित है, वहीं इनकी लिङ्गमूर्त्ति विराजमान है। दूसरी जगह इनकी अश्वारूढ असिधारी अन्यमूर्त्ति भी देखनेमें आती है। महालसादेवी इनकी सहधर्मिणी है। ये स्वामीके साथ युद्धके वेशमें एक ही आसन पर घोड़े पर बैठी हैं। कहाड ब्राह्मणगण इनकी धातुकी बनी मूर्त्तिका पूजन करते हैं। धान रोपने और फसल काटनेके पहले भैरवकी पूजा होती है। ये ग्रामरक्षक हैं। मारुति या हनूमान्‌की पूजा दक्षिणापथमें बहुत प्रचलित है। प्रायः प्रत्येक ग्रामके बाहर इनका मन्दिर रहता है। ये अनेक समय देवता भी कहलाते हैं। नारियल इनकी बड़ी ही प्रिय वस्तु है। मारुति रामचन्द्रके एकनिष्ठ सेवक तथा आदर्श ब्रह्मचारी कह कर सम्मानित हैं। स्त्रियां इन्हें स्पर्श करके नहीं पूजती। कार्त्तिककी पूजा और दर्शन स्त्रियोंके वैधव्यका कारण कहा जाता है। इस देशकी तरह महाराष्ट्रमें भी षष्ठीदेवीकी पूजा प्रचलित है। वेताल मल्ल और व्यायाम करनेवालोंका देवता है। शिवरात्रिके दिन इनका पूजन होता है। बेंतमें वेतालका वास है।

महाराष्ट्रदेशमें विष्णुभक्त भी कम नहीं हैं। उस देशके वैश्यगण अकसर वैष्णव-धर्मावलम्बी हैं। प्रसिद्ध भक्त कवि तुकाराम वैश्यजातिके थे। ब्राह्मणकवि और धर्मोपदेशक ज्ञानेश्वरने भी विष्णु भक्ति प्रवर्त्तित की। नामदेव, वामनपण्डित, मोरोपन्त प्रभृति बहुतसे सुप्रसिद्ध भक्त ग्रंथकारोंने विष्णु तथा कृष्णभक्तिका प्रचार किया। इस महादेशके सर्वप्रधान तीर्थक्षेत्र पण्ढरपुरमें कृष्ण और रुक्मिणीकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित है। राधाकी उपासना महाराष्ट्रोंमें

बहुत कम है। शैव शाक्त आदि सभी महाराष्ट्र-वासियोंके लिये पण्ढरपुर अत्यन्त पवित्र तीर्थक्षेत्र है। जगन्नाथकी नाईं वहां जातिभेदका बन्धन और विचार नहीं है। गोदावरीके तीरवर्त्ती प्रदेशमें एकनाथस्वामी-की प्रवर्त्तित दत्तात्रेय-उपासना और कृष्णानदीके किनारे रामदास स्वामीकी प्रचारित रामोपसनाका प्रभाव बहुत देखा जाता है। उपासक सम्प्रदाय एकसे ज्यादा होने पर भी अद्वैतवादने महाराष्ट्रदेशमें सर्वत्र ही विशेष प्रतिष्ठा लाभ की है। द्वैतवादी महाराष्ट्रोंकी संख्या बहुत कम है। जीव और ब्रह्मके अभेदज्ञानके कारण सब जीवोंमें समदर्शिता अपेक्षाकृत अधिक मात्रामें महा-राष्ट्रसमाजमे नजर आती है। महाराष्ट्रमें जातीय एकता और राष्ट्रोन्नतिसाधनमे अद्वैतवादकी विशेष सहायता-का प्रयोजन पड़ा था।

चैत्र मासमें नववर्षोत्सव, ज्येष्ठमे सावित्रीव्रत, आषाढ़में शयनैकादशी, श्रावणमें नागपञ्चमी, भाद्रमें गणेशचतुर्थी, आश्विनमें दशहरा (विजयादशमी), कार्त्तिकमें दीपावली, अग्रहायणमें चम्पाषष्ठी, पौषमें मकरसंक्रान्ति और फाल्गुन मासमें दोल, ये सब इस देशके प्रधान धर्मोत्सव हैं। पण्ढरपुर, कोल्हापुर, गोकर्ण, जेजूरी, आलन्दी, तुलजापुर प्रभृति स्थान महाराष्ट्र देश-के तीर्थक्षेत्र गिने जाते हैं।

उक्त सभी धर्म-सम्प्रदायके सिवा महाराष्ट्रमें और भी एक विशेष धर्मसम्प्रदाय है। यह सम्प्रदाय लिङ्गायत् नामसे प्रसिद्ध है। महाराष्ट्रीय वैश्योंके मध्य बहुतेरे इसी धर्मके अनुयायी हैं। जैन धर्मावलम्बी वैश्य भी महाराष्ट्र-में हैं। लिङ्गायत् वीर शैव नामसे अपना परिचय देते हैं। ये ब्राह्मणके प्राधान्य और श्रेष्ठत्वको नही मानते अबालवृद्धवनिता सबके सब गलेमें छोटा शिवलिङ्ग पहनते हैं। इनके गुरुको "जङ्गम" कहते हैं। जङ्गम या गुरु इष्टदेवता शिवकी अपेक्षा इस सम्प्रदायके लोगोंके निकट विशेष पूजनीय हैं। इनकी क्रियाकर्मपद्धति भी स्वतन्त्र है। इस सम्प्रदायमें भी ब्राह्मणादि वर्णभेद है।

अन्यान्य जाति।

महाराष्ट्रके वैश्यवणिक् १२ शाखाओंमें विभक्त हैं। इनमें हजार पीछे ४४४ मनुष्य लिख पढ़ सकते हैं। स्त्रियोंके मध्य हजारमे लगभग ८५ शिक्षिता हैं।

शूद्र जाति महाराष्ट्रदेशमें कोली (मत्स्यजीवी), भाण्डारी (खर्जूरमद्य प्रस्तुतकारी), महार (डोम), धेड (कसाई), रामोशी (आरण्य दस्यु) प्रभृति बहुत-सी श्रेणियोंमें विभक्त है। ये अनार्योंसे बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। इनका विवरण उन्हीं सब शब्दोंमें देखो। महाराष्ट्रमें भील जातिकी संख्या भी कम नहीं है। खान्देशमे इनका वास अधिक है। ये मराठी भाषामें बातचीत करते हैं। ये लक्ष्यभेदमें सुपटु हैं और आध कोसकी दूरी परकी वस्तुको भी धनुशरकी सहायतासे अनायास विद्ध कर सकते हैं।

पल्लिसमाज।

महाराष्ट्रदेशमें गण्डग्रामको अकसर 'गांव' कहते हैं। जिस ग्राममें बडी हाट या बाजार नही होता वह 'मौजा' और जहां होता है वह 'कसबा' कहलाता है। इन सब ग्रामों और पल्लीके अधिवासी प्रधानतः कृषिजीवी हैं। वे 'उपरी' और 'मीरासदार' इन दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं। मीरासदार लोग पुरुषानुक्रमसे जमीन पर दखल जमाते हैं। जो इच्छुक होने पर भी जमीन बेच नहीं सकते और जिन्हें थोडे दिनके लिए ही जमीनका बन्दोबस्त मिलता है वे ही 'उपरी' कहलाते हैं। मीरासदार अपने इच्छानुसार जमीन बेच और दान कर सकते थे, किन्तु १९०२ ई०से गवर्मेण्टने प्रजासे यह अधिकार छीन लिया है।

गांवमें जो मण्डल या प्रधान हैं, उनका नाम पाटिल या ग्रामरक्षक है। इनके सहायक चौगुला कहलाते हैं। ये साधारणतः ब्राह्मण भिन्न है, किन्तु मराठाजातिके हैं। पाटिलके दूसरे सहायकका नाम कुलकरनी या ग्राम-लेखक है। गांवको कुल जमीनका हिसाब किताब रखना इन्हींका काम है। इसीलिये वे गांवके जमीनका पचीसवां हिस्सा निष्कर भोग करते हैं। महकूमेके अधिकारीको देशमुख या 'देशाई' कहते हैं। देशलेखकका दूसरा नाम देशपाण्डे या कानूनगो भी है।

कुलकरनी आदि कर्मचारीगण अकसर ब्राह्मणजाति-के ही होते हैं। महाराष्ट्रमें जमींदार नहीं है। पूर्वोक्त कर्मचारीगण देशकी राजशक्तिसे राजस्व संग्रह कर

राजसरकारको भेज देते और वेतनके बदले 'कमीशन' पाते हैं।

महाराष्ट्रका पल्लिसमाज भारतके अन्यान्य प्रदेशोंके जैसा नहीं है। वहां साधारणतः बढ़ई (सूत्रधर) लोहार (कर्मकार), महार (डोम) माङ्ग (ये हिन्दुओं में सर्वनिम्नश्रेणीस्थ और चर्मव्यवसायी है) कुम्हार (कुम्भकार), चमार (चर्मकार) परीट (रजक), न्हावी (नापित), भट (पुरोहित), मौलाना (मुल्ला) गुरव, कोली (जलवाहक)—ये वारह श्रेणीके मनुष्य पल्लिसमाजके प्रधान अङ्ग हैं। ये ग्रामवासी कृषकों की यथासाध्य सहायता करते और वर्षके अन्तमें या फसल काटनेके समय कृषकोंसे उसका एक अंश पाते हैं। बढ़ई और लोहार कृषकोंके खेतीवारी करनेके सामान विना कुछ लिये ही बना देते हैं। महार ग्राम-रक्षक या चौकीदारका काम करते हैं। माङ्ग लोग कृषकोंके प्रयोजनानुसार चमड़ेकी डोरी और जलमोट आदि बना देते हैं। इन सब कामोंके लिए वे प्रत्येक कृषकसे २० अंटिया धान पाते हैं। सिर्फ "महार' को ही इससे दूगुने पारिश्रमिक मिलते हैं। पल्लि-समाजमें इनका स्थान पहला है।

कुम्भकार, चर्मकार, रजक और नापित ये सब यथाक्रम मृत्पात्र, पादुकासंस्कार, वस्त्रपरिस्कार और क्षौरकार्य द्वारा ग्रामवासी कृषकोंको सहायता कर फसल काटनेके समय उनसे १५ अंटिया करके धान पाते हैं।

भट हिन्दूकी पुरोहिताई करते हैं। यहां सोनार-ब्राह्मण, धोबी-ब्राह्मण आदि विभिन्न श्रेणीके ब्राह्मण नहीं हैं। मौलाना मुसलमानोंका विवाहादि काम कराते हैं। कुनवी यदि क्षत्रियदेवताको कोई भी पशु वलि-स्वरूपमें उत्सर्ग करना चाहें तो उसका सिर मौलाना को ही काटना पड़ता है। इसके लिये वह प्रत्येक पशु पर दो पैसे और निहत पशुका हृदयांश पाता है। जब तक मौलाना मन्त्र पढ कर मांस शुद्ध नहीं कर देता, तब तक प्रायः कोई भी मराठा उसे मेध्य नहीं समझता। गुरव पत्तेकी पुड़िया बना कर अपना गुजारा चलाते हैं। कोलि भैंसेकी पीठ पर पानी लाद कर गांवके कृषकोंका कष्ट दूर करते हैं। इन चार श्रेणीके लोगों को सूत्रधार प्रभृतिके प्राप्त पारिश्रमिकका आधा मिलता है।

इतिहास।

महाराष्ट्रदेशका अधिकांश प्राचीनकालमें दण्ड-कारण्य कहलाता था। सबसे पहले अगस्त्य मुनि विन्ध्याद्रिको पार करके इस भयङ्कर अरण्य प्रदेशमे आये वहीं अपना आश्रम बनाया। उन्होंने वहांके किसी एक प्रधान निशाचरको साथ कर जब उस प्रदेशको निर्विघ्न कर दिया, तब बहुतसे ऋषिगण भी वहां आ कर बस गये। इसके बाद इक्कीस बार पृथ्वीको निः-क्षत्रिय कर महावीर परशुरामने वीरहत्याके पापसे मुक्ति-लाभ करनेके लिए अश्वमेधयज्ञका अनुष्ठान और महर्षि कश्यपको सारी पृथ्वी प्रदान कर दी और आप तपस्या करनेके लिये पश्चिम समुद्रके तीरवर्त्ती कोङ्कणप्रदेशमें जा रहने लगे। उनकी चेष्टासे धीरे धीरे यह अञ्चल आर्योंके वासोपयोगी बन गया। उन्होंने आर्यावर्त्तसे ब्राह्मण ला कर कोङ्कणमें प्रतिष्ठित किया। त्रेतायुगके अन्तमें रघुकुलतिलक रामचन्द्रने दक्षिणापथके अनेक राक्षसोंका विनाश कर उक्त प्रदेशको निर्विघ्न कर दिया। प्रवाद है, कि उनके राजत्वकालमें अयोध्या-प्रदेशसे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यगण क्रमशः दक्षिणदेश जा कर बस गये।

महाराष्ट्र शब्दकी उत्पत्ति पहले पहल किस समय हुई, इसका निश्चय करना दुरूह है। रामायणमें यह देश सभी जगह दण्डकारायण और महाभारतमें दण्डदेश या दण्डकराज्य कहलाता है। कोङ्कण प्रदेश महाभारत के अपरान्त (उत्तरकोङ्कण) और गोकर्ण (दक्षिण-कोङ्कण) नामसे प्रसिद्ध था। मार्कण्डेयपुराण, शक्ति सङ्गमतन्त्र, रत्नकोष, वृहत्संहिता आदि समीचीन ग्रन्थोंमें महाराष्ट्र और इसके अन्तर्गत कोङ्कण, नासिक कोल्हापुर, वनवासी प्रभृति प्रदेशोंका नाम मिलता है।

महाराष्ट्रदेशके नाना स्थानोंमें जो सब शिलाशासन और प्राचीन मुद्रादि मिली हैं, उनके लिखित विवरण पढ कर प्रत्नतत्त्वविंत् डा० रामकृष्ण गोपाल भाण्डार कर महोदयने यह सिद्धान्त किया है, कि ईस्वीसन् ४००

वर्ष पहले रट्ट, रठ्ठ, राष्ट्रिक और भोज उपाधिधारी क्षत्रियगण महाराष्ट्र देशमें वास और आधिपत्य करते थे। यही तीन जातियां कालक्रमसे साहस और पराक्रमवशतः उत्तर महाराष्ट्र प्रदेशमें 'महारठ्ठ' 'महाराष्ट्रिक' और 'महाभोज' नामसे प्रसिद्ध हुई। ये लोग अपनेको शिनिप्रवर सात्यकिके वंशधर बतलाते थे। शिलालिपियोंमें उनकी रमणियां 'महारट्ठिनी' और 'महाभोजी' कही गई हैं। महारट्ठजातिके साथ महाभोज जातिकी कन्याका आदानप्रदान प्रचलित था। उसी प्राचीन महारठ्ठ और महाराष्ट्रिक शब्दसे वर्त्तमान समयमें महाराष्ट्र, मराठा और मरहट्टा शब्दकी उत्पत्ति हुई है। इस रठ्ठ जातिके अन्तर्गत कुछ परिवार या कुल इकट्ठे हो कर कालक्रमसे "कूड़" (संस्कृत कूट) या कुलमें परिणत हुआ था। इस संस्कृत कुलमें जिन्होंने जन्म लिया, वे पहले "रठ्ठकूड' (संस्कृत राष्ट्रकूट) और आर्यावर्त्त जा कर "राठोर" नामसे प्रसिद्ध हुए।

मराठोंके प्राचीन नामानुसार उनका वासप्रदेश ईस्वी-सन् ३०० वर्ष पहले महारठ्ठ देश कहलाता था। महारठ्ठ देशका आयतन वर्त्तमान महाराष्ट्रके जैसा बड़ा न था। पूना, सतारा और अह्मदनगर यह तीन जिला और सोलापुर जिलेका पश्चिमाञ्चल प्राचीन कालमें "महारट्ठ" देशके नामसे प्रसिद्ध था। कालक्रमसे महाराष्ट्र जातिके वंशविस्तार तथा क्षमतावृद्धिके साथ साथ कोङ्कण, कोलवन, गोण्डवन, खानदेश, विदर्भ, उत्तर-कर्णाट प्रभृति प्रदेश भी महाराष्ट्र-देशके अन्तर्भुक्त हुए।

अशोकके पांचवें अनुशासनमें और दीपवंश, महावंश आदि बौद्ध-इतिहास-ग्रन्थमें लिखा है, कि महाराज प्रियदर्शी अशोकके आदेशानुसार महारट्ठ, अपरान्त (उत्तरकोङ्कण) और वनवासी (दक्षिण महाराष्ट्र) प्रदेशमें भोज तथा राष्ट्रिक जातिके और प्रतिष्ठान पुरवासियोंके मध्य बौद्धधर्म प्रचारके लिए बहुत से बौद्धयाजक भेजे गये।

उस समय वर्त्तमान महाराष्ट्रदेश तगर, आशीर, प्रतिष्ठान, विदर्भ, कुन्तल, अपरान्त और वनवासी आदि बहुत-से छोटे छोटे राज्योंमें विभक्त था। अनन्तर ईस्वी सन् २५० वर्ष पहले मिस्रदेशीय वणिकगण वहां वाणिज्य करनेके लिए आये। नगरके अधिपति राजाधिराज उपाधिधारी और क्षत्रिय थे। उनका प्रभाव बहुत दूर तक फैला हुआ था। आशीर नामक स्थानमें भी एक एक छोटा राज्य था। प्रवाद है, कि ईस्वी सन् १६०० वर्ष पहले कोशलदेशसे कुछ क्षत्रिय परिवार महाराष्ट्रमें आ कर बस गये। आशीर राजवंश पूर्वोक्त कोशलदेशसे आये हुए क्षत्रवंशसम्भूत थे। विदर्भ देशमें यज्ञसेन नामक राजाका राज्य था। मगधपति शुङ्गवंशीय पुष्पमित्रके साथ उनका जो युद्ध हुआ था, उसका विवरण कालिदास प्रणीत मालविकाग्निमित्र नाटकमें वर्णित है।

सातवाहन-वंश।

ईस्वी सन् १०० वर्ष पहले सात वाहन (शालिवाहन) वंशका अभ्युदय हुआ। इस वंशके राजाओंने उपर्युक्त राज्योंको विनष्ट कर रट्ठ, महारट्ठ, भोज और रट्टकूड प्रभृति जातिको हरा दिया और सारे दक्षिणपथका सार्वभौम आधिपत्य लाभ किया। कहते हैं, कि जब शालिवाहनने आशीर-पतिको भी बन्धु वर्गोंके साथ मार डाला तब उक्त राजवंशीय एक महिला राजाके बहुत छोटे बच्चेको ले कर भाग गई और शतपुरा पहाड़ पर छिप कर प्राणरक्षा की। यही बालक अन्तमें चित्तौरके राणावंशके प्रतिष्ठाता हुए।

नासिक और कोल्हापुर प्रभृति स्थानोंसे प्राप्त प्राचीन मुद्रा और शिला शासनादि पढ़नेसे जाना जाता है, कि ईस्वी-सन् ७३ वर्ष पहलेसे कर २१८ ई० तक शालिवाहन या सातवाहनवंशियोंने महाराष्ट्रदेशका राज्य शासन किया। तैलङ्ग या अन्ध्रदेशके अन्तर्गत धनकटक (गण्टुरके निकटवर्त्ती वर्त्तमान धरकोट) नगरमें उनकी राजधानी थी। महाराष्ट्रदेशमें प्रतिनिधि शासनकर्त्ताके रूपमें भेजे जाते थे। गोदावरीके किनारे प्रतिष्ठानपुरमें उनकी राजधानी थी। उनके शासनकालमें महाराष्ट्रदेश शकजाति द्वारा आक्रान्त हुआ था। उस समय सातवाहनवंशीय भूपतिगण कुछ हीनबल हो गये थे। उसी समय शकजातियोंने महाराष्ट्रके नाना स्थानोंको अधिकार कर लगभग ५२ वर्ष राज्य किया। भारतवर्ष शब्दमें इसका विवरण देखो। आखिर १२३ ई०में

गोतमीपुत्र शातकर्णि नामक सातवाहनवंशीय एक पराक्रान्त राजा और उनके पुत्र श्रीपुलोमवि-(टलेमीके सिरि-पेलेमिस)-ने शकजातिको हरा कर महाराष्ट्रसे भगा दिया । शिलाशासनमें गोतमीपुत्र शातकर्णि दक्षिणपथाधीश नामसे प्रसिद्ध हुए हैं । इस वंशमें इनके परवर्त्ती राजाओंमेंसे श्रीपुलोमवि, यज्ञश्री, चतुष्पर्ण और मढ़रीपुत्र शकसेन ये चार मनुष्य बड़े ही शूरवीर हुए थे । विस्तृत विवरण सातवाहन शब्दमें देखो ।

उस समय महाराष्ट्रदेशमें बौद्ध और ब्राह्मण्य दोनों धर्मका समान प्रधान्य था । सातवाहनवंशीय राजगण वेदपाठ वेदाध्यापनके लिए जिस प्रकार पाठशाला स्थापित करते और वेदाध्यापक ब्राह्मणोंको प्रचुर वृत्ति देते थे, बौद्धधर्मकी उन्नतिके लिए भी उसी प्रकार अर्थ-व्यय और परिश्रम करते थे । उन लोगोंके समयमें वाणिज्य-व्यवसायकी भी खूब उन्नति हुई थी । पाश्चात्य देशसे नाना प्रकारके पण्यद्रव्य महाराष्ट्रमें आते और फिर महाराष्ट्रमें होनेवाले विविध द्रव्य आदि सामुद्रिक जहाज द्वारा पाश्चात्य देशमें भेजे जाते थे । भरुकच्छ या भरोंच (Broach) उस समयका प्रसिद्ध बन्दर था । महाराष्ट्रकी राजधानी प्रतिष्ठानसे कपासवस्त्र, मलमल, उत्कृष्ट प्रस्तर आदि पण्यद्रव्य विदेश जाते थे । प्रतिष्ठानके कल्याण, तगर, चौल, मण्डगोरा (वर्त्तमान-मन्दाड), पाल, नासिक, कहाड, कोल्हापुर, जयगढ आदि स्थान व्यवसाय-वाणिज्यके केन्द्रस्वरूप थे ।

नासिककी एक प्रस्तरलिपिमें निगम-सभाका जो उल्लेख है, उससे यह वर्त्तमान समयके म्यूनिसिपलिटीका-सा प्रतीत होता है । सातवाहनवंशीय राजा प्रजाओंकी भलाईमें जिस प्रकार तत्पर रहते थे, प्रजामण्डली भी उसी प्रकार मनुष्यके हितकर कार्यानुष्ठानमें आनन्दपूर्वक साथ देती थी । उस समय सैकडे ५से ७॥ रु० वार्षिक सूद पर कर्ज मिलता था ।

सातवाहनवंशीय नरपतिगण "कविवत्सल" और विद्योत्साही कहे गए हैं । उन्हींके आदेश तथा आनुकुल्यसे संस्कृत, मराठी और पैशाची आदि भाषाओंमें बहुतसे ग्रंथ रचे गए थे । उनके राज्यकालमें कात्यायन वररुचिने प्राकृत भाषानियमका एक व्याकरण रचा था । उन्हीं लोगोंके आदेशानुसार सर्ववर्माका कातन्त्र-व्याकरण रचित हुआ । गुणाढ्य नामक और भी एक कवि तथा राजमन्त्रीने वृहत्कथा नामक एक कथाग्रंथकी रचना की । सातवाहनवंशीय राजाओंमेंसे किसी किसीने सरस्वतीकी उपासनासे स्वयं सफलता प्राप्त की थी, ऐसा भी उल्लेख मिलता है ।

सातवाहनवंशके अधःपतनके बाद देशमें कहीं कहीं पर आभीर जातिका आधिपत्य प्रतिष्ठित हुआ था । किंतु थोड़े ही दिनोंमें रट्ठ, राष्ट्रिक, महारट्ठ और रट्ठकूड़ जातियोंने प्राधान्य लाभ कर देशमें सर्वत्र अपना अधिकार फैलाया । कमसे कम ढाई सौ वर्ष तक इनका राज्यशासन रहा । उस समयका विशेष विवरण नहीं मिलता है ।

चालुक्य वंश ।

६ठीं शताब्दीके अन्तमें महाराष्ट्रदेशमें चालुक्य-वंशीय राजाओंका शासन प्रवर्त्तित हुआ । इन्होंने अयोध्यासे आ कर यहां आधिपत्य फैलाना चाहा । राष्ट्रकूट या रट्ठकूडवंशीय राजाओंको युद्धमें परास्त कर इन्होंने वातापिपुर या वादामी नगरमें राजधानी स्थापित की । चौलुक्य या चालुक्योंने ग्यारह पीढ़ी तक महाराष्ट्रमें राज्य किया था ।

विस्तृत विवरण चालुक्य शब्दमें देखो ।

उक्तवंशीय राजाओंके शासनकालमें सुप्रसिद्ध चीन देशके परिव्राजक यूएनचुअङ्ग इस देशमें आये थे । उनके महाराष्ट्रपरिभ्रमणके समय (६३९ ई०में) सत्याश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ द्वितीय पुलकेशी महाराष्ट्र-सिंहासन पर बैठे थे । चीनपरिव्राजक यूएनचुअङ्गका महाराष्ट्र-वर्णन नीचे दिया जाता है,—

'इस राज्यकी परिधि छह हजार लीग (लगभग १२ सौ मील) और इसकी राजधानीकी परिधि ३० लीग या ६ मील है । इस प्रदेशकी जमीन बड़ी ही उपजाऊ और शस्यपूर्ण है । इस राज्यकी राजधानी एक बड़ी नदीके पश्चिम किनारे संस्थापित है । यहांके राजा क्षत्रियवंशसंभूत हैं । वर्त्तमान महाराष्ट्रपति स्थिरबुद्धि, गम्भीर-प्रकृति तथा परदुःखदुःखी हैं । इनकी उदारता और परोपकार प्रशंसनीय है । प्रजागण इनके

आन्तरिक भक्त हैं। कान्यकुब्जाधिपति हर्षवर्द्धन शिलादित्य सारा आर्यावर्त्त जीत कर बार बार महाराष्ट्रदेश पर आक्रमण करते थे, किंतु महाराष्ट्रवासी उनके शरणागत न हुए।'

महाराष्ट्रोंके स्वभाव-चरित्रके सम्बन्धमें उनका कहना यों है,— इस देशके लोग साधारणतः लम्बे, बलवान्, साहसी और कृतज्ञ हैं, किन्तु स्वभावतः कुछ क्रोधित होते हैं। इनका आचार-व्यवहार सरल और कपटताविहीन है। ये लोग उपकारीको सहायता करनेसे कदापि मुख नहीं मोड़ते और न अपकारकारीको सहजमें क्षमा ही करते हैं। अपमानकी शान्तिके लिए ये प्राण तक भी विसर्जन कर देनेमें प्रस्तुत रहते हैं। विपद्में पड़ कर यदि कोई इनसे सहायता मांगता है, तो ये स्वार्थको छोड उसी समय उसको सहायता पहुंचाते हैं। शत्रुको दण्ड देनेसे पहले उसका कारण वतला कर ही ये उस अपकारका वदला लेते हैं। ये लोग वर्म पहनते और हाथमे वल्लम ले कर युद्ध करते हैं, पर रणसे भागे हुए शत्रुका पीछा नहीं करते, किन्तु शरणागतोंको अभयदान देनेसे विमुख नही होते हैं। सेनापति जव युद्धमे हार जाते हैं, तव उन्हें स्त्रियोंकी पोशाक पहननी पडती है। इस अपमानको न सह कर वे प्रायः आत्महत्या कर चिरशान्ति लाभ करते हैं। इस देशमे मृत्युभयशून्य सैकड़ों वीर हैं। वे रणसज्जाके समय मदिरा पी कर मत्त रहते हैं। इसी हालतमे वल्लमको हाथमे लिये ये वीर पुरुष शत्रुपक्षके हजारों अस्त्रधारीके सामने जा डटते है। युद्धोपयोगी हाथीको मदिरा पिला कर उन्मत्त कर लेना पड़ता है। कोई भी शत्रु महाराष्ट्र वीरोंका युद्धमें सामना नहीं कर सकता।'

उस समय महाराष्ट्रदेश तीन भागोंमें वंटा था जिसमें लगभग ९९ हजार गांव थे। उस समय भी वैदिक यागयज्ञादिका प्रचलन कम नहीं था। राजा अश्वमेध यज्ञ करते थे। ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आदि देवमूर्त्तिकी प्रतिष्ठा, मन्दिर-निर्माण और ब्राह्मण-भोजन प्रभृति कार्य पुण्यकर गिने जाते थे। तभीसे वौद्धधर्मकी अवनतिका आरम्भ हुआ था। जैनधर्म दक्षिण-महाराष्ट्रमे फैल रहा था। चालुक्यवंशीय राजगण धर्मके सम्बन्धमें समदर्शी थे।

राष्ट्रकूटवंश।

चालुक्यवंशके अधःपतनके वाद राष्ट्रकूटवंशीय राजाओंका प्रादुर्भाव हुआ। ये राष्ट्रकूट महाराष्ट्रदेशके प्राचीन महाराष्ट्रीय क्षत्रियोंके वंशधर थे। अयोध्या प्रदेशसे आये हुए चालुक्योंने इन्हें परास्त कर महाराष्ट्रदेशकी स्वाधीनता अपनाई। ८वीं शताब्दीके आरम्भमें ये लोग विलकुल स्वतन्त्र हो गए। राष्ट्रकूटोंने चालुक्यवंशीय द्वितीय कीर्त्तिवर्माको हरा कर स्वाधीनता घोषणा कर दी। दन्तिदुर्ग और कृष्ण नामक राष्ट्रकूट वंशीय दो वीर पुरुषोंने चालुक्योंको विनाश कर डाला। राष्ट्रकूटोंकी वंशतालिका यों हैं,—

१ दन्तिवर्म, २ इन्द्रराज, ३ गोविन्द (प्रथम), ४ कर्क (प्रथम), ५ इन्द्रराज (द्वितीय), ६ दन्तिदुर्ग (७५३-७७५ ई०में), ७ कृष्ण (प्रथम) इनका दूसरा नाम आकालवासी और शुभतुङ्ग भी था, ८ गोविन्द (द्वितीय वल्लभ), ९ ध्रुव (निरूपम, धारावर्ष, कलिवल्लभ), १० गोविन्द (तृतीय, जगतुङ्ग, प्रभूतवर्ष), ११ अमोघवर्ष, १२ कृष्ण (द्वितीय अकालवर्ष), १३ इन्द्रराज (तृतीय), १४ अमोघवर्ष (द्वितीय), १५ गोविन्द (चतुर्थ), १६ वद्दिग या अमोघवर्ष (तृतीय), १७ कृष्ण (तृतीय), १८ खोटिक, १९ कक्कल या कर्क द्वितीय।

इनमेंसे प्रथम कर्क वैदिक धर्मके उत्साहदाता थे। उन्होंने वहुतसे यागयज्ञोंका अनुष्ठान किया था। दन्तिदुर्ग वड़े ही पराक्रमी राजा थे। कर्णाटक-राजाको जिन सेनाओंने काञ्ची, केरल, चोल, पांड्य आदि दक्षिणापथ और उत्तरभारतके सार्वभौम राजा श्रीहर्षको युद्धमे परास्त कर अक्षयकीर्त्ति सञ्चय की थी, उन्हींको दन्तिने अपनी थोडी सेनाके साथ सम्मुख समरमें हरा कर स्वयं दाक्षिणात्यका सार्वभौमपद प्राप्त किया। अन्तमें उन्होंने काञ्ची, कलिङ्ग, कोशल, श्रीशैल, मालव, लाट, टङ्क आदि प्रदेशोंके राजाओंको हराया और चालुक्योंकी शक्ति छीन ली। इन्हींकी तरह इनके पुत्र कृष्णराजने भी चालुक्योंको पूरे तौरसे हराया था। इलोराके प्रसिद्ध गुहामन्दिरमें कैलास नामक जो सुदृश्य शिवमन्दिर विद्यमान है, वह कृष्णराजका ही वनाया हुआ है। नवें राजा ध्रुवने अपने वाहुवलसे काञ्ची, चेर, कौशाम्बी, गौड

और कोशलादि देशके राजाओंको परास्त किया था, ऐसा उनके ताम्रशासनमें लिखा है। गोविन्द तृतीय, ८०८ ई०में उत्तर मालवसे ले कर काञ्चीपुर तकके प्रदेशोंके राजचक्रवर्त्ती थे। नासिक जिलेके अन्तर्गत मोरखण्ड नामक गिरिदुर्गमें इन्होंकी राजधानी थी। प्रवाद है, कि इनके राजत्वकालमें राष्ट्रकूट पुराणोक्त यदुवंशके जैसे अजेय हो गए थे। इन्होंने बारह राजाओं-की इकट्ठी सेनाको बड़ी शूर वीरताके साथ हराया था। इनके भाई लाटदेश (गुजरात)के राजा बनाये गये। अमोघवर्षके समयमें मान्यखेट (वर्त्तमान माल-खेड़) नगरमें राष्ट्रकूटोंकी राजधानी स्थापित हुई। दिगम्बर मतावलम्बी जैनोंके बड़े ही पक्षपाती थे। उन्होंने स्वयं भी जैनधर्म ग्रहण किया था। उनके पुत्र कृष्ण अकाल वर्षने चेदिदेशके हैहयवंशकी राजकन्यासे विवाह किया। कृष्णके पुत्र जगत्तुङ्गने अपनी ममेरी बहनको ब्याहा। ये कभी भी सिंहासन पर बैठ न सके। इनके पुत्र इन्द्रराजने ९१४ ई०में सिंहासन पर बैठते ही २० लाख रुपये धर्मार्थ दान किये। इनके कनिष्ठपुत्र गोविन्द अपने बड़े भाई अमोघवर्षको सिंहासनसे उतार स्वयं गद्दी पर बैठे और "साहसाङ्क" की उपाधि धारण की। इनकी प्रभूतवर्ष तथा सुवर्णवर्ष भी उपाधि थी। वद्दिग बड़े ही सदाचारसम्पन्न राजा थे। तृतीय कृष्णराजने पाण्ड्य, सिंहल, चोल, चेर और अन्यान्य देश जीत कर बड़ी वीरतासे राज्य शासन किया था।

इसके कुछ दिन पहलेसे ही चालुक्योंकी क्षमता बढ़ रही थी। राष्ट्रकूटोंने इनका दमन कर अपना प्रभाव अक्षुण्ण रखा था। अन्तमें कक्कल या द्वितीय कर्कके समयमें चालुक्योंकी क्षमता इतनी बढ़ गई, कि महाराष्ट्र-की राजलक्ष्मी उनके पास आनेको बाध्य हुई। चालुक्य-वंशीय तैलप नामक एक पराक्रमशाली व्यक्तिने कक्कलको लड़ाईमें हरा कर महाराष्ट्रका सिंहासन ९७५ ई०में अपनाया।

राष्ट्रकूटवंशने २२५ वर्ष तक दक्षिणापथमें अपना प्रभाव एक-सा बनाए रखा। इलोराके प्रसिद्ध गुहा-मन्दिर इसी वंशके राजाओंके ऐश्वर्य तथा शिल्प सौन्दर्यानुरागका परिचय देते हैं। इनके अमलमें महाराष्ट्रदेशमें पुराण प्रसिद्ध देवदेवियोंकी उपासना सभी जगह प्रचलित थी। बौद्धधर्म एकबारगी हीन-प्रभ हो गया था। किन्तु जैनधर्मका प्रभाव ज्योंका त्यों बना था। उस समय देशमें संस्कृतविद्याका विशेष प्रचार था। संस्कृत-भाषा जाननेवाले बहुत-से कवियों और पण्डितोंने उनकी सभा सुशोभित की थी। इसी वंशके कृष्ण नामक एक राजा पण्डित प्रवर हलायुध-प्रणीत काव्यरहस्य नामक काव्यके नायकरूपमें कल्पित हुए थे। राष्ट्रकूट राजा भी चालुक्योंकी तरह वल्लभ, पृथिवीवल्लभ और वल्लभ नरेन्द्र आदि उपाधि धारण करते थे।

यही राष्ट्रकूट राजपूतानेके उपाधिधारी राजपूतों-के पूर्वपुरुष हैं। बहुतेरे अनुमान करते हैं, कि तृतीय गोविन्दके समय दक्षिणापथसे राष्ट्रकूटगण विजय प्राप्त करते हुए उत्तर भारतमें आ बसे।

उत्तर चालुक्य।

तैलप नामक जिस चालुक्यवंशीय वीरपुरुषने राष्ट्र-कूटोंका सिंहासन अपनाया, उनके साथ पूर्व समयके चालुक्यराजवंशका कोई सम्बन्ध नहीं था। इसीलिए उनका प्रतिष्ठित राजवंश उत्तर कालीन चालुक्यवंश कहलाता है। इस राजवंशके राजाओंकी तालिका और उनके कार्य-कलापका विवरण चालुक्य शब्दमें देखो।

इस चालुक्य-राजवंशने ९७५ ई०से ११८९ ई० तक महा-राष्ट्र प्रदेशमें राजकाज चलाया। कल्यान नगरमें इनकी राजधानी थी। इनके समयमें दक्षिणपथमें लिङ्गायत् सम्प्र-दायका प्रभाव फैला हुआ था। बौद्धधर्म एकबारगी विलुप्त और जैनधर्म हीनप्रभ हो गया था। पुराण और स्मृति शास्त्रको एक कर ब्राह्मणोंने उस समय निबन्धन और मीमांसा-ग्रन्थोंकी रचना आरम्भ कर दी थी। इस वंशके राजा बड़े ही विद्यानुरागी थे। काश्मीरदेशके विह्लणकवि इसी वंशके २य विक्रमादित्यके १०७६-११२६ ई०में सभा-पण्डित थे। विक्रमादित्यने उन्हें विद्यापतिकी उपाधि दी थी। विह्लणने भी अपने आश्रय दाताका गुणवर्णन करते हुए "विक्रमाङ्कदेवचरित" नामक सत्तरह सर्गोंका एक काव्य रचा। इस काव्यमें नैषधके जैसा पदविन्यास देखा जाता है। इसकी आद्योपान्त रचनामें ग्रन्थकारने अच्छी

कविताका परिचय दि ा है। विक्रमादित्यके राज्यकाल-में ही परमहंस परिव्राजकाचार्य विज्ञानेश्वरका सुप्रसिद्ध मिताक्षरा नामक ग्रन्थ रचा गया। विज्ञानेश्वर उक्त राजाके अन्यतम मन्त्री थे। इस वंशके तृतीय सोमेश्वरने स्वयं संस्कृत भाषामें 'अभिलषितार्थ-चिन्तामणि' या मानसोल्लास नामक एक बहुत बड़ा ग्रन्थ रचा। यह ग्रन्थ एनसाइक्लोपीडिया या सर्वसंग्रहसे बहुत कुछ मिलता जुलता है। इस ग्रन्थमें राजनीति, ज्योतिष, फलित ज्योतिष, न्यायशास्त्र, अलङ्कारशास्त्र, छन्दःशास्त्र गान्धर्वविद्या, चित्रकला, शिल्प वैद्यक, अश्वशिक्षा, गज शिक्षा, श्वानशिक्षा, मृगया, युद्धविद्या, क्रीड़ाकौतुक आदि अनेक विषयोंका समावेश है।

चालुक्यवंश विभिन्न शाखाओंमें विभक्त है। इनके वंशधरगण आज भी चालके और शिरके उपाधिसे परिचित हैं।

कलचूरी।

हैहयवंशीय जो राजवंश चेदिदेशमें वा वर्त्तमान जब्बलपुर प्रदेशके चारों ओर प्राचीनकालमें राज्य करते थे उन्हींका नाम कलचूरी राजवंश था। राष्ट्रकूट राजवंशको इन्होंने अपनी कन्या दी थी। इस वंशके विजल ना क एक राजा चालुक्य सोमेश्वरके सेनापति और शान्त राजा थे। चालुक्योंको दुर्बल देख विजल ने उक्त वंशके दशवें राजा तैलपको पदच्युत कर महा-राष्ट्रसिंहासन पर दखल जमाया। विजलके शासन कालमें महाराष्ट्रमें एक भयङ्कर धर्मविप्लव उठ खड़ा हुआ जिससे लिङ्गायत नामक धर्मसम्प्रदायका अभ्युदय हुआ। सम्प्रति कर्णाटक प्रदेशमें लिङ्गायत्गण बहुत बढ़े चढ़े हैं। पूर्वोक्त विप्लवके कुछ दिन बाद ही चालुक्यो-ने फिरसे सेना संग्रह कर कलचूरी राजाओंको हराया और अपने राज्यका एक अंश इनसे छीन लिया। इसी समय उत्तर महाराष्ट्रमें यादववंशीय मराठाओंने भी प्राधान्य लाभ कर देशके बहुत-से अंश दखल किये। कालक्रमसे कलचूरी-राजवंशका सम्पूर्णरूपसे नाश हो गया। ११६५—११८२ ई० तक इस वंशने राज्य किया था

शिलाहार।

महाराष्ट्रदेशमें शिलार या शिलाहार नामसे परि-चित तीन प्रसिद्ध सामन्तराजवंश भिन्न भिन्न स्थानमें राजधानी स्थापित कर राजकाज चलाते थे। श्रीहर्ष-कृत 'नागानन्द' नामक नाटकमें जीमूतकेतु नामक जिस राजाका उल्लेख है, उन्हींको शिलाहारवंशीय अपना आदि पुरुष बतलाते हैं। राजा जीमूतकेतु विद्याधरोंके अधिपति कहे गये हैं। इन्हीं महात्माने शङ्खचूड नामक नागकी रक्षा करनेके लिए पक्षिराज गरुड़को अपना शरीर दे दिया था। शिलाहार-वंशीय सभी राजा अपनेको तगर-पुराधीश्वर बतलाते थे। इससे पुरातत्त्वविद्गण अनुमान करते हैं, कि प्राचीन तगर-राजवंशसे उनकी उत्पत्ति हुई होगी। तगर नामक नगर १ली शताब्दीमें जैसा प्रसिद्ध था पीछे भी बहुत दिनों तक वह प्रसिद्धि ज्योंकी त्यों बनी रही थी। किन्तु यहांके प्राचीन राजाओंका कुछ भी विवरण आज तक नहीं मिला है।

शिलाहारवंशका राष्ट्रकूटोंके ही समयमें उल्लेख आया है। उस समय इनमेंसे एक वंश उत्तर कोङ्कणमें, दूसरा दक्षिण कोङ्कणमें और तीसरा दक्षिण महाराष्ट्रमें राज्य करते थे। ये महामण्डलेश्वर या सामन्त राज ही कहलाते थे। पहला वंश उत्तरकोङ्कणके लगभग १४ सौ गांवोंके अधिकारी थे और पुरी नामक स्थानमें उनकी राजधानी थी। द्वितीय वंशके प्रथम राजा शणफुल्ल राष्ट्रकूटवंशीय कृष्णराजके (७५३—७७६ ई०) बड़े ही अनुगृहीत थे। ये राष्ट्रकूटोंकी अधीनतामें पर्वत और समुद्रके मध्यवर्त्ती द्वीप पर राज्य करते थे। खारेपाटनके निकट इनकी राजधानी थी। ६३० शकमें इस वंशका अधःपतन हुआ।

शिलाहारोंका तीसरा वंश कोल्हापुर, मिरज और कहाड़ प्रदेशमें राज्य करता था। राष्ट्रकूटोंके विनाश-कालमें ८७१ शकको इसका आविर्भाव हुआ। इसके प्रथम राजाका नाम था जतिग। इसी वंशमें गण्डरा-दित्य नामक एक अत्यन्त प्रसिद्ध और वीर्यशाली राजा-ने जन्मग्रहण किया था। इन्होंने १०३२से १०५८ शकाब्द तक राजकाज चलाया और प्रयागक्षेत्रमें एक लाख ब्राह्मणोंको भोजन कराया था, ऐसा वर्णन मिलता है।

करवीर माहात्म्य नामक ग्रन्थमें कोल्हापुरसे दो कोसकी दूरी पर प्रयाग नामक एक अत्यन्त पवित्र तीर्थका उल्लेख है। ज्ञात पड़ता है कि गण्डरादित्यने इसी प्रयागमें लाख ब्राह्मणोंको भोजन कराया था। इसी राजाके अर्थव्ययसे बुद्ध, जिनेश्वर, अर्हत् और महादेव शिवका मन्दिर-निर्माण तथा उनके उद्देश्यसे भूमिदानादि हुआ है। ये उदार और सच्चरित्र थे।

१०६५ शकमें गण्डरादिके पुत्र विजयार्क सिंहासन पर बैठे। श्रीस्थानक (ठाना) और गोपकपुर (गोआ)के राजा जब शत्रुके हाथसे जर्जरित हो गए, तब विजयार्कने उनकी सहायता कर पुनः स्वराज्यमें प्रतिष्ठित किया। १०७९ शकमें विजलराजने कल्याणके चालुक्यराजवंशको जब सिंहासनसे उतार दिया, तब शिलाहारने राजा विज्जणराजको सहायता पहुंचाई थी। विजयार्कके पुत्र भोजके समय (१२०५ ई०में) यादवोंके वीर्यबलसे इस राजवंशका विलोप हुआ।

शेषोक्त शिलाहारगण स्वाधीन राजा थे, ऐसा अनुमान किया जाता है। ये लोग हिन्दूधर्मावलम्बी हो कर भी दूसरे धर्मके प्रति विद्वेषभाव नहीं रखते थे। श्रीमहालक्ष्मी इनकी कुलदेवी थी। सम्प्रति शिलार या शेलार उपाधिधारी जो सब दरिद्र मराठापरिवार नाना स्थानोंमें नजर आते हैं, वे पूर्वोक्त शिलाहार-वंशसम्भूत हैं।

यादव-वंश।

इस राजवंशका ऐतिहासिक विवरण हेमाद्रिके रचित "व्रतखण्ड" नामक ग्रन्थकी भूमिकामें दी गई है। ग्रन्थकारने उस अंशका नाम "राजप्रशस्ति" रखा है। इस राजप्रशस्तिमें समुद्रमन्थनोत्पन्न चन्द्र ही यादवोंके आदिपुरुष कहे गए हैं। हेमाद्रिने चन्द्रसे ले कर १३वीं शताब्दीके अन्तमें प्रादुर्भूत महादेव राव नामक राजा तक यादववंशीय सभी राजाओंके नामकी तालिका दी है। यह वंशावली कुछ पौराणिक और कुछ ऐतिहासिक-सी प्रतीत होती है।

उक्त प्रशस्तिके अनुसार प्राचीनकालमें यादववंशमें सुवाहु नामक एक चक्रवर्ती राजा थे। अपने चार पुत्रोंमेंसे द्वितीय पुत्र दृढ़प्रहारके हाथ उन्होंने दक्षिण-भारत-राज्यका कुछ अंश सौंपा। यादवगण पहले मथुराके राजा थे। श्रीकृष्णने जब द्वारकामें राजधानी स्थापित की, तब उनके वंशीय सुवाहुके पुत्र दृढ़प्रहारने दक्षिणपथ पर अधिकार जमाया। श्रीनगरमें इनकी राजधानी थी। एक ताम्रशासनमें लिखा है, कि चन्द्रादित्यपुरमें उनकी राजधानी थी। चन्द्रादित्यपुर वर्त्तमान समयमें चांदोड कहलाता है जो नासिक जिलेके अन्तर्गत है। दृढ़प्रहारके बाद उनके वंशधरगण चान्दोडके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। शिलाहार, चालुक्य और राष्ट्रकूटोंके साथ उनका विवाहादि सम्बन्ध हुआ था। ९८८ शकमें इस वंशके सेवन नामक एक राजाने चालुक्यवंशीय द्वितीय विक्रमादित्यको शत्रुके साथ युद्धके समय विशेष सहायता पहुंचाई थी। सेवनराजकी निम्न पीढ़ीमें मल्लोके पुत्र पञ्चम भिल्लम बड़े ही प्रसिद्ध हुए। ११३१ शकमें उन्होंने चालुक्यराजाओंसे प्रायः सारा राज्य अपने अधिकारमें कर लिया। दृढ़प्रहारसे ले कर भिल्लम तक २३ पीढ़ी होती है। उन्होंने ४३७ वर्ष तक राज्य किया। राष्ट्रकूटोंने जब प्राचीन चालुक्योंके हाथसे महाराष्ट्र देश छीन लिया, उस समय अर्थात् ७५४ ई०को उक्त यादवराजकुलकी प्रतिष्ठा हुई।

चालुक्यवंशीय द्वितीय विक्रमादित्य त्रिभुवनवल्लभके राजत्वकालमें मैसूर अञ्चलमें एक दल यादव रहते थे। वे उस समय दक्षिणापथके सार्वभौम राजा होनेकी चेष्टामें लगे थे। विष्णुवर्द्धन नामक यादववंशीय एक वीरपुरुषने चालुक्योंके अधिकृत प्रदेशों पर चढ़ाई कर कृष्णानदीके किनारे छावनी डाली। किन्तु त्रिभुवनमल्ल बड़े ही बलवान् राजा थे, इसीलिए विष्णुवर्द्धनकी चेष्टा इस बार फलवती न हुई। अन्तिम चालुक्य राजा चतुर्थ सोमेश्वरके राज्यकालमें उनके सेनापति विज्जलने विद्रोही हो कर राज्य पर दखल जमाया, पर लिङ्गायत् धर्मके आविर्भावके कारण देशमें घोर विप्लव उपस्थित हुआ। इस सुअवसरमें विष्णुवर्द्धनके पौत्र वीर वल्लाल यादवने चालुक्योंके राज्यका कुछ अंश अपने अधिकारमें कर लिया। दक्षिणमें मैसूर अञ्चलके यादववंशीय मराठा लोग इस प्रकार चालुक्योंको दमन कर जब अपनी धाक जमानेकी चेष्टामें लगे थे, उस समय उत्तर अञ्चलके यादवगण बिलकुल चुपचाप नहीं बैठे थे। उसी

समय सेवन राज्य (खान्देश)-के यादवोंमें भिल्लम नामक एक बड़े ही शूरवीर राजाने जन्मग्रहण किया। इन्हें अन्तल नामक राजासे श्रीवर्द्धनपुर मिला। इन्होंने प्रत्यण्डक नगरके राजाको युद्धमें परास्त, मङ्गलवेष्टक नामक प्रदेशके चिल्लण नामके राजाको निहत तथा कल्याण-प्रदेश अधिकार कर दक्षिण प्रदेशीय यादवोंको अपने वशमें कर लिया। इस प्रकार इन्होंने कृष्णानदी-के उत्तरी किनारे तक सभी प्रदेशोंमें यादवोंकी प्रधानता स्थापित कर ११०६ शकमें देवगिरि पर दुर्ग बनवाया। इसी साल वहां राजधानीकी प्रतिष्ठा और उनका अभि-षेक सुसम्पन्न हुआ। इसके बाद भिल्लम कृष्णाके दक्षिणी किनारे पर भी अपना आधिपत्य फैलानेमें अग्रसर हुए। किन्तु मैसूरके वीर-बल्लाल यादवने उनको रोक दिया। धारवाड़ जिलेके लोकिगुण्डि नामक स्थान पर दोनों पक्षमें घोरतर युद्ध हुआ जिसमें वीरबल्लालने जयलाभ कर दक्षिण महाराष्ट्रमें अपना प्रभाव अक्षुण्ण बनाए रखा। (१०१३ शक या ११६१ ई०में)

भिल्लमके बाद उनके पुत्र जैत्रपाल ११११ शकमें देव-गिरिके सिंहासन पर बैठे। उन्होंने आन्ध्रदेश पर चढ़ाई कर वहांके काकतेयवंशीय रुद्र नामक राजाको युद्धमें मार डाला। गणित तथा ज्योतिष-शास्त्रज्ञ महापण्डित भास्कराचार्यके पुत्र लक्ष्मीधर इनके सभापण्डित थे।

जैत्रपालके पुत्र सिंघनने ११३२ शकमें पैतृक सिंहा-सन प्राप्त किया। इनके समान प्रतापी राजा यादववंशमें कोई भी न हुआ। मालवाके राजा अर्जुनको इन्होंने हराया था। मथुरा और वाराणसीके राजा उनके साथ युद्धमें मारे गये थे। सिंघनके एक कमसीन सेनापतिने युद्धमें हमीरको परास्त किया। उन्होंने पहालाके शिला-हारवंशीय भोजराजको कैद कर लिया और चेदिवंशीय जाजल्ल नामक राजा, गुर्जरराज तथा रम्भागिरिके सिंह-कल्प लक्ष्मीधर राजाको युद्धमें हराया। आभीर जाति-के राजगण उन्हींके हाथसे निर्वंश हुए थे; ऐसा भी सुना जाता है। उनके अधीनस्थ ब्राह्मणोंने भी सेना-पतिका काम किया था और कई बार गुजरातको फतह किया था। दक्षिण-महाराष्ट्रका विजयकार्य सिंघनके समयमें फिरसे शुरू हो गया और बहुत कुछ सिद्ध भी हुआ था। प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् भास्कराचार्यके पौत्र चङ्गदेव इन्हींके सभापण्डित थे।

११६६ शकमें सिंघनके मरने पर उनके पुत्र जयसिंह देवगिरिमें रह कर राज्यशासन करने लगे। किन्तु इनके भाग्यमें बहुत दिन तक राज्यसुख बदा न था। उसी साल इसके पुत्र कृष्णराज राजगद्दी पर बैठे। इन्होंने अनेक यागयज्ञ कर प्रसिद्धि पाई थी। इनके समयमें वैदिकधर्म और भी दृढ़ हो गया। इन्होंने चोलदेशको अपने अधिकारमें कर लिया और मालव, गुजरात, कोङ्कण, तैलङ्ग आदि देशके राजा सर्वदा इनसे डरते थे।

११८२ शकमें कृष्णराजके छोटे भाई महादेव राज्या-भिषिक्त हुए। उनके समयमें कोङ्कणदेश यादवोंके अधिकारमें आया। उन्होंने तैलङ्ग, कर्णाट, लाट, गुर्जर और मालवादि देशके राजाओंको अच्छी तरह हराया था। शिलाशासनादिमें वे "प्रौढ़प्रतापचक्रवर्त्ती" नामसे वर्णित हुए हैं। इनके एक ब्राह्मण-सेनापतिने "आप्तोर्याम" यज्ञका अनुष्ठान किया था।

महादेवकी मृत्युके बाद १२७१ ई०में उनके भतीजे रामचन्द्र राजगद्दी पर बैठे। वे रामदेव राव या राम-राज भी कहलाते थे। रामराजका शिलाशासन दक्षिण-में महिसुर देशके सीमान्त तक सभी स्थानोंमें उत्कीर्ण है। इससे मालूम होता है, कि उन्होंने दक्षिणपथमें सार्वभौमप्रभुत्व प्राप्त किया था। उनके शासनादिमें लिखा है, कि मालवदेशके राजाके साथ युद्धमें उन्होंने फतह पाई थी और तैलङ्गदेशके राजाने भी उनकी अधी-नता स्वीकार की थी। पूनाके डेक्कानकालेजमें इन्हीं रामचन्द्र रावके राजत्वकाल (४३६८ कल्यब्द)में लिखित अमरकोषका एक ग्रन्थ है। इनके समयमें भी ब्राह्मणों-ने सेनापति और प्रादेशिक शासनकर्त्ताका काम किया था। सुप्रसिद्ध धर्मशास्त्रविषयक ग्रन्थकार हेमाद्रि यादव-वंशीय महादेव और रामचन्द्र रावके समयमें ही प्रादु-र्भूत हुए थे। वे उक्त दोनों राजाके श्रीकरणाधिप या श्रीकरणप्रभु (वर्त्तमान समयके चीफ सेक्रेटरी) थे। शिलालिपिमें हेमाद्रिको साधारण मन्त्री भी बतलाया है। वे व्रतखण्ड नामक ग्रन्थकी भूमिकामें यादववंशका

आद्योपान्त विवरण लिख कर आधुनिक ऐतिहासिकोंके धन्यवादभाजन हुए हैं।

हेमाद्रि वत्सगोत्रीय ब्राह्मण थे। उनके पिताका नाम कामदेव, पितामहका वासुदेव और प्रपितामहका नाम वामन था। उनके यहां विद्वान् और पण्डितोंकी अच्छी खातिर थी। वे धर्मनिष्ठ, सदाचारसम्पन्न और पराक्रमशाली कहे गए हैं। उनके चतुर्वर्गचिन्तामणि-के जैसा विविध धर्मविषयपूर्ण प्रकाण्ड ग्रन्थ संस्कृत भाषामें बहुत कम देखनेमें आता है। वाग्भटके वैद्य-विषयक ग्रन्थकी आयुर्वेद-रसायन नामक एक प्रसिद्ध टीका है। जनसाधारणका विश्वास है, कि हेमाद्रि ही उसके रचयिता थे। वोपदेवके मुक्ताफल नामक वैष्णव मतप्रतिपादक ग्रन्थकी एक टीका हेमाद्रिने ही बनाई है। महाराष्ट्रीय बखरनिचयमें ये "हरिभक्तिपरायण हेमाडपन्थ" नामसे प्रसिद्ध हैं। इन्होंने सिंहल या भारत-के दक्षिण सीमान्तवर्त्ती प्रदेशोंसे वर्णमाला संग्रह कर महाराष्ट्र देशमें उसका प्रचार किया था। यह वर्णमाला अति शीघ्र लिखनेमें बड़ी उपयोगी है। बखरकारोंने इसे राक्षसोलिपि बतलाया है। हेमाद्रि स्वदेशमें अट्टालिका निर्माणकीएक अभिनव प्रणालीका प्रवर्त्तन कर स्वदेश वासियोंके निकट चिरस्मरणोय हो गये हैं। शोलापुर जिलेमें उनकी प्रवर्त्तित प्रणालीके अनुसार बने हुए कई एक मन्दिर आज भो विद्यमान हैं।

सुप्रसिद्ध व्याकरण वोपदेव भी उसी समय प्रादुर्भूत हुए थे। हेमाद्रिके अधीन बहुत से पण्डितोंमेंसे यह एक थे। मुग्धबोध और मुक्ताफल नामक ग्रन्थके सिवा हरि-लीला नामक एक और ग्रन्थ वोपदेवका रचा हुआ है। शेषोक्त दो ग्रन्थ हेमाद्रिके अनुरोधसे लिखे गये थे, ऐसा स्वयं ग्रन्थकारने स्वीकार किया है। आयुर्वेद सम्बन्ध-में उनके कई एक ग्रन्थ इस देशमें प्रचलित हैं। वोपदेव-के मुक्ताफलकी टीकामें हेमाद्रिने ग्रन्थकारकी इस प्रकार वर्णना की है, "जिनके व्याकरणमें अद्भुत कीर्त्ति, व्याकरण विषयमें जिनका दश प्रबन्ध, वेदग्रन्थके ऊपर नौ प्रबन्ध, कर्मशास्त्र-विषयमें तिथिनिर्णय नामक एक ग्रन्थ, साहित्य सम्बन्धमें तीन ग्रन्थ और भागवतके तीन प्रबन्ध हैं, उन अन्तर्वंशी "कोविद-गर्व पर्वत" महामहोपाध्याय वोप-देवके कौन कौन गुण अलौकिक नहीं थे?" उक्त महा-पण्डित-प्रणीत परमहंसप्रिया, शतश्लोकचन्द्रिका, कवि-कल्पद्रुम और उसकी टीका, रामव्याकरण तथा काव्यकाम धेनु प्रभृति ग्रन्थोंका उल्लेख भी मिलता है।

वोपदेव केशव नामक वैद्यके पुत्र और धनेश पण्डित के शिष्य थे। इनके पिता और गुरु दोनों ही विदर्भ देशके अन्तर्गत वरदा नदीके किनारे सार्थ नामक गांवमें रहते थे। वे देशी ब्राह्मण थे। महाराष्ट्रके आदिकवि और साधु पुरुष ज्ञानेश्वर जब समाजच्युत हो गए, तब उनके बाद उन्हें सारे ब्राह्मण समाजकी ओर से जो शुद्धिपत्र मिला था, उसकी रचना वोपदेवने ही की थी। इनके वंशधरगण आज भी बेरार अञ्चलमें विद्यमान हैं। कोई कोई वोपदेवको वंगीय वैद्यवंशजात समझते हैं किन्तु यह अनुमान बिलकुल मिथ्या है। यथार्थमें वे मराठी ब्राह्मण थे। वैद्यवृत्तिको महाराष्ट्र देशमें आज भी अति उच्च श्रेणीके ब्राह्मणगण अवलम्बन करनेमें कुण्ठित नहीं होते। किन्तु महाराष्ट्रमें वैद्य नामक कोई स्वतन्त्र जाति नहीं है।

महाराष्ट्रदेशके आदिकवि मुकुन्दराज, ज्ञानेश्वर और नामदेव प्रभृति यादववंशियोंके राज्यकालमें प्रादु-र्भूत हुए थे। उनमेंसे मुकुन्दराज पूर्व वर्णित जैत्रपाल राजाके दीक्षागुरु थे। इस राजाको शङ्कराचार्यका अद्वैतमत सिखानेके लिये उक्त ब्राह्मण कविने विवेक सिन्धु नामक ग्रन्थ रचा था। ज्ञानेश्वरने श्रीमद्भग-वद्गीताकी एक बड़ी टीका प्रणयन की है। इस टीकाके उपसंहारमे महाराज रामचन्द्रकी राजधानी देवगिरिका वर्णन है। यह टीका ज्ञानेश्वरी नामसे प्रसिद्ध है और १२१२ शकमें रची गई है। नामदेव ज्ञानेश्वरके समसाम-यिक थे। जान पड़ता है, कि महाराष्ट्र देशमें वे भक्तिमार्ग-के प्रथमप्रवर्त्तक थे और सबसे पहले उन्होंने ही मराठी भाषामें भक्तितत्त्व रचा था। उनकी प्रणीत अभङ्ग (गीति)-माला आज भी महाराष्ट्रवासी आबाल-वृद्ध वणिताके मुखसे सुनी जाती है। नामदेवके परिवारमें सभी भक्त-कवि थे। उनकी स्त्री, कन्या, पुत्र, भाई यहां तक, कि जना नामकी दासीने भी भक्ति-मूलक कविताकी रचना की है।

इन यदुवंशीय राजाओंके समयमे ही आधुनिक महाराष्ट्रीय भाषा और साहित्यका प्रथम उदय हुआ। इनके पूर्वदेशीय भाषामे रचित किसी ग्रन्थ या कविताका निदर्शन नहीं मिलता। अति प्राचीनकालमें (ई० १म शताब्दीमें) महाराष्ट्री नामक प्राकृत भाषामे सप्तशती ना॰ का एक काव्य-ग्रन्थ रचा गया था। उसके बाद भवभूति, राजशेखर, भारवी आदि पण्डितोंने संस्कृत भाषामें अनेक ग्रन्थ रचे थे। परन्तु मुकुन्दराजसे पहले प्रचलित देशी भाषामें ज्ञानगर्भ ग्रन्थादिकी रचनाकी कोशिश हुई थी, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

यादववंशीय नरपतियोंने महाराष्ट्र देशके छोटे छोटे राज्योंका लोप कर एक विशाल महाराष्ट्र साम्राज्य स्थापित किया। उनके द्वारा स्थापित एकच्छत्र साम्राज्यमें यथोचित दृढ़ता आनेसे पहले ही सहसा उत्तर भारतसे मुसलमान विप्लवका स्रोत बार बार महाराष्ट्र देश पर वेगसे उमडने लगा। इसीलिये थोड़े ही दिनोंमें यह साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। रामदेव रावके राज्यकालमे ही (१२९४ ई०) अलाउद्दीन खिलजी ५ हजार सेना ले कर पहले तो शिकारके बहाने और फिर ओरंगलके राजाके पास नौकरीकी तलाशमे देवगिरिके पास पहुंचे थे। महाराज रामचन्द्र युद्धके लिए बिलकुल ही तैयार न थे, यहां तक कि पहले वे अलाउद्दीनके कौशलको भी न समझ सके थे। इस कारण जब अलाउद्दीनने अकस्मात् देवगिरि पर चढ़ाई की, तब महाराज रामचन्द्रकी तरफसे अत्यन्त व्यस्तताके साथ किसी तरह चार हजार सेना और दुर्गमें ज्यादा दिनोंके लिये रसद इकट्ठा की गई। मुसलमानोंने दुर्गके बाहरका सारा शहर आक्रमण करके लूट लिया और दुर्गके चारों तरफ घेरा डाल दिया। सुचतुर अलाउद्दीनने कौशलसे यह अफवाह फैला दी, कि दिल्लीके बादशाह बड़ी भारी सेना ले कर देवगिरिको जीतने आ रहे हैं, यह सैन्यदल तो उसका अगला हिस्सा है। इस खबरको पा कर राजा रामचन्द्र भी घबराये। उन्होंने अब मुसलमानोंसे विरोध करना व्यर्थ समझा और सन्धिका प्रस्ताव किया।

उस जमानेमें बारहो महीने वेतन दे कर सेना रखनेकी व्यवस्था न थी। सामन्त राजाओं और जमीदारोंको सैन्यदल गठनके लिये भूसम्पत्ति दी जाती थी। वे भी देशकी प्रजाको प्रायः निष्कर जमीन भोगने देते थे। इस तरहसे जो लोग जमीन लेते थे, उन्हें युद्धके समय अस्त्र शस्त्र ले कर राजाकी सहायताके लिये अग्रसर होना पडता था। परन्तु पहलेसे संवाद पाये बिना युद्धमें उपस्थित होना उनके लिए संभव न होता था। उस समय पहलेसे बिना खबर पहुंचाये कोई किसीके राज्य पर आक्रमण भी न करता था। कारण छिप कर या अचानक आक्रमण करना तब अधर्म समझा जाता था। मुसलमानोंने इस देशमे आ कर नवीन युद्धनीतिका अवलम्बन किया था। इधर भारतीय राजगण भी राजानीतिके अनुशासनका उल्लंघन कर महाराष्ट्रको समाचार देनेमें लापरवाही कर रहे थे। मुसलमान-दरबारमें उनके राज्य पर आक्रमण करनेके लिये जो गुप्त मन्त्रसभाएं होती थीं, उनकी खोज रखी जाती, तो शायद वे इस तरह अतर्कित अवस्थामे आक्रान्त न होते। रामदेव राव पर भी इन्हीं सब कारणोंसे यह विपत्ति आ टूटी थी।

कुछ भी हो, रामदेव रावकी तरफसे सन्धिका प्रस्ताव रखा जाने पर अलाउद्दीनने अपनी कमजोरियों पर ख्याल करके तुरन्त ही उसे स्वीकार कर लिया। उन्होंने निर्भय स्वरूप धन ले कर अवरोध छोड कर चले जानेका निश्चय किया था। इतनेमें रामचन्द्र रावके पुत्र शङ्करदेव बहुतसी सेना ले कर पिताके उद्धारार्थ देवगिरिके निकट आ पहुंचे। तब अलाउद्दीनने दुर्गका अवरोध ज्योंका त्यों रहने दिया और एक दल सेना ले कर वे शङ्करदेवके विरुद्ध लडने चल दिये। देवगिरिके पास जो युद्ध हुआ उसमें मुसलमान लोग पराजितप्राय हो गये थे। अलाउद्दीनने शत्रुपक्षकी गति विधि देखनेके लिये पास ही एक दल सेना रख छोडी थी। उस सेनाने आ कर सहसा मुसलमानोंका साथ दिया। उस सेनाके सहसा आगमनसे घोड़ोंकी टापोंसे उडी हुई धूलसे आकाश भर गया, जिससे शङ्कररावकी सेनाने सोचा कि दिल्लीकी जो सेना आनेवाली थी वह आ गई। हिन्दू सेना इससे डर कर भागने लगी। तब उस नवागत सेनाकी सहायतासे अलाउद्दीनने शङ्कररावको परास्त किया।

रामचन्द्र रावने फिर सन्धिका प्रस्ताव उपस्थित

किया। तव अलाउद्दीनने मौका देख कर अपना दावा बढ़ाया। देशके अन्यान्य हिन्दू राजा देवगिरिके राजाकी सहायतार्थ तैयार हो रहे थे। रामचन्द्र राव और कुछ दिन अवरुद्ध अवस्थामें रहते तो प्रतिवेशी नरपतियोंकी सहायतासे वे उन्मुक्त हो सकते थे। किन्तु दुर्ग-रक्षाके लिए कृतसङ्कल्प होने पर उन्हें मालूम हुआ, कि अवरोध-से पहले जिन बोरोंको उन्होंने शस्यपूर्ण समझ कर भण्डारमें रखगये थे, वे असलमें नमकके बोरे थे। दैव-दुर्विपाकसे सहसा रसद घट जानेसे उन्हें अलाउद्दीनसे दवना पड़ा। उन्होंने ६०० मन मोती, २ मन रत्न, १००० मन चांदी और ४००० हजार रेशमके थान तथा अन्यान्य बहुमूल्य पदार्थ दे कर अलाउद्दीनसे सन्धि मोल ली। इसके सिवा एलिचपुर जिला मुसलमानोंको देना पड़ा और नियमित्त कर दे कर दिल्लीश्वरकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। तव अलाउद्दीन घेरा उठा कर अपने देशको चल दिये।

इसके वाद अलाउद्दीनने अपने वृद्ध चचा जलालउद्दीन खिलजीको किस तरह मार कर दिल्लीका सिंहासन हथि-याया, यह इतिहास-प्रसिद्ध वात है। उनके वादशाह होने पर रामदेव रावने कई वर्ष तक दिल्लीको कर नहीं भेजा। इस कारण अलाउद्दीनने मालिक काफूरकी अधीनतामें तीस हजार अश्वारोही सेना उनके विरुद्ध युद्धार्थ भेजी। १३०७ ई०में सेना देवगिरिके पास पहुंची। मालिक काफूरने उन्हें कैद करके दिल्ली भेज दिया। वहां छः मास तक कैद रखनेके वाद अलाउद्दीनने उन्हें सम्मान-के साथ लौट जानेकी अनुमति दी। इसके वाद रामदेव रावने वरावर दिल्लीश्वरसे मेल रखा।

१३०९ ई०में रामदेव रावकी मृत्यु हुई और शङ्कर राव राजसिंहासन पर बैठे। उन्होंने दिल्लीश्वरके साथ विरुद्ध आचरण किया, जिससे १३१२ ई०में वे मालिक काफूरके हाथ मारे गये।

इस समय देवगिरिमें मुसलमानोंका आधिपत्य हो गया। अलाउद्दीनकी मृत्युके वाद दिल्लीके दरवारमें जो गड़वड़ी फैली थी, उस मौके पर रामदेवके जामाता हरपालदेवने विद्रोही हो कर दाक्षिणात्यसे मुसलमान शासकोंको मार भगाया। १३१८ ई०में अलाउद्दीनके तृतीय पुत्र मुवारकको इस विद्रोह दमनके लिए दाक्षिणात्य आना पड़ा। हरपाल मुसलमानोंके हाथ पकड़े और मार डाले गये। इस तरह महाराष्ट्रदेशसे हिन्दूराज्य विलुप्त हुआ। मुसलमान लोग दिनों दिन प्रवल हो उठे और सारे महा-राष्ट्रमें अपना प्रभुत्व फैलाने लगे।

महाराष्ट्र देशके प्राचीन हिन्दू राजवंशका इतिहास अव तक संक्षेपमें कहा गया। मुसलमानोंके आगमन पर्यन्त जो जो प्रधान घटनाएं महाराष्ट्रदेशमें हुई हैं, उनकी तालिका नीचे दी जाती है।

रामायण-काल .	महाराष्ट्रदेशमें अनार्य-निवास।
महाभारत-काल......	महाराष्ट्रमें आर्य-उपनिवेशकी प्रतिष्ठा।
ईसी पूर्व ३५० से ७३ तक	अशोकके उद्योगसे बौद्धधर्मका प्रचार। देशीय रठ्ठ, भोज, राष्ट्रिक, महारठ्ठ रठ्ठकुड़ आदि जातियोंका अधिपत्य।
ई०-पूर्व ७३से२१८ ई० तक	सातवाहन-वंशका राजत्व।
२१८ ई०से ६०० ई० तक	आभीर, राष्ट्रकूट आदिका आधिपत्य।
६०५ ई०से ७४७ ई० तक	पूर्व चालुक्य।
७४८ ई०से ९७३ ई० तक	राष्ट्रकूट।
९७३ से ११८६ ई० तक	उत्तर-चालुक्य।
११८७ से १३१८ ई० तक	यादव-वंश।

उस जमानेका साहित्य।

महाराष्ट्र देशमें वहुत प्राचीन समयमें पालिभाषा प्रचलित थी। सातवाहनवंशके राज्यकालमें महाराष्ट्र नामक प्राकृत भाषाका इस देशमें तथा मालवादि प्रदेशमें भी प्रचार था। प्राकृतप्रकाशके कर्त्ता वररुचिका मत है, कि इस महाराष्ट्री भाषासे शौरसेनी, मागधी और पैशाची आदि देशीय भाषाओंकी उत्पत्ति हुई है। साहित्य-दर्पणके रचयिताने "गाथासु महाराष्ट्री प्रयोजयेत्' अर्थात् नाटकमें महाराष्ट्री भाषामें सङ्गीतादिकी रचना करनेका विधान किया है। सातवाहनकी सप्त-

शतोके सिवा सेतुवन्ध आदि दो एक काव्य-ग्रन्थ भी इसी प्राचीन महाराष्ट्री भाषामें रचे गये थे। वर्त्तमान मराठी भाषाको उसी प्राचीन महाराष्ट्रीको दुहिता समझना चाहिए। इस भाषाके १० भागोंमें ६ भाग शब्द संस्कृत वा संस्कृतमूलक हैं। इस भाषाके साहित्य संस्कृत ग्रन्थ वहुतसे मौजूद हैं। यादववंशीय राजाओंके राज्य-कालमें आधुनिक मराठी भाषामें जो जो ज्ञानगर्भ पुस्तकें रची गईं उनका परिचय पहले ही दिया जा चुका है। मुसलमानी जमानेमें भी महाराष्ट्र-साहित्य क्रमशः परि-पुष्ट हो रहा था, यथास्थानमें विवरण दिया गया है।

मुसलमान अधिकार-वाह्मनी राजवंश।

पाठकोंको महाराष्ट्रदेशके मुसलमानी जमानेका इति-हास 'वाह्मनी' 'निजामशाही' आदि शब्दोंमें मिलेगा। यहां सिर्फ वे ही वातें कही जायगीं, जिन घटनाओंके साथ महाराष्ट्रियोंकी भावी उन्नतिका सम्वन्ध था।

मुसलमानोंके देवगिरिके हिंदूराज्य ध्वंस करने पर १३२० ई०में दिल्लीमें जो विद्रोह उपस्थित हुआ, उसके साथ दाक्षिणात्यके छोटे छोटे हिंदू राजाओंका गुप्त सम्वन्ध था। सिर्फ इतना ही नहीं, वल्कि उस समय दाक्षिणात्यमें उन लोगोंने भी विद्रोह उपस्थित किया था। उस विद्रोहके दमनार्थ महम्मद तुगलकको दाक्षिणात्य जाना पड़ा। इस घटनाके वाद २५ वर्ष वीतने भी न पाये, कि महाराष्ट्रियोंने मौका देख कर १३४७ ई०में पुनः पराधीनताकी वेडी तोड़ फोड़नेके लिये कार्रवाई कर दी। इसी समय स्थानीय मुसलमानोंने भी दिल्लीके मुसलमानोंके विरुद्ध चलनेके लिए कमर कस ली। मुहम्मद तुगलक इस विद्रोहका दमन न कर सके। मौके पर हुसेन गाङ्गू नामक एक मुसलमानने दाक्षिणात्य में नये राज्यकी स्थापना कर दी। इस राज्यके स्थापन करनेमे महाराष्ट्रके छोटे छोटे राजाओंकी विशेष सहा-यता थी। परन्तु कार्योद्धारके वाद हुसेनने उनकी मित्रताको विलकुल भुला दिया। हिंदुओंने सोचा था, दिल्लीके साथ सम्वन्ध विच्छेद कर देनेसे हो वे दाक्षिणात्यमे मुसल-मानोंके साथ प्रतिद्वन्द्वितासे जीत जायंगे। इसी भरोसे पर उन्होंने हुसेनकी सहायता की थी। हुसेन भी मह-मूद गजनवी जैसे हिंदूधर्मके विद्वेषी न थे। वे सिया सम्प्रदायके थे, जिससे कि हिन्दूधर्मकी दो एक वातें मिलती जुलती हैं। सुन्नीसे सिया मत वहुत कुछ उदार है। हुसेन गाङ्गूके चरित्रमे अगर यह उदारता विशेष रूपसे परिस्फुटित न होती, तो वे शायद ही हिन्दुओं-से इतनी सहानुभूति प्राप्त कर सकते। हिन्दुओंके जातीय जीवनमे तव अवसाद उपस्थित हुआ था। यादववंशके राजत्वकालमें वहुतसे दिग्विजय करके वे श्रान्त क्लान्त तथा वहु विलासी हो गये थे। इसी कारण राजनीति कौशल और सामरिक अध्यवसायमे वे दाक्षि-णात्यके तरुणवीर्य मुसलमानोंका मुकावला न कर सके। हुसेन गाङ्गूने उन लोगोंके साथ विश्वासघातकता करके भी अपने राज्यकी उन्नति करनेमें सफलता पाई। महाराष्ट्रके उत्तरमें नर्मदासे ले कर दक्षिणमें कृष्णा तक तथा पश्चिममें सह्याद्रिसे ले कर तैलङ्ग और गोण्डवन तक यह मुसलमानीराज्य विस्तृत हुआ। कोङ्कणके हिन्दू-राजाओंने वहुत दिनों तक मुसलमानोंके प्राधान्यकी परवाह नहीं की थी।

हुसेनके वाद उनके पुत्र महम्मदशाह (१३५८—१३७५ ई०) वाह्मनी राज्यके अधिपति हुए। इनके जमाने-में महाराष्ट्रमें नये सिक्के चले, जिसमें हिन्दूराजाओंने वाधा पहुंचाई। वे नये सिक्कोंको गला देने लगे। इस समाचारको पा कर महम्मदशाहने वहुत-से हिन्दुओंको कठोर दण्ड दिया इस सुलतानके साथ युद्ध करके जव उनकी आंखे खुलीं तव वे समझ गये, कि दिल्लीके वादशाहके विरुद्ध हुसेन गाङ्गूको सहायता दे कर उन्हों-ने अच्छा नहीं किया। तव वे फिर दिल्लीके वादशाह तुगलकको दाक्षिणात्य पर आक्रमण करके मुहम्मदका उच्छेद करनेके लिए वुलानेका प्रयत्न करने लगे। परन्तु फिरोजशाहने इस वात पर ध्यान नहीं दिया। हिन्दुओं-ने फिर एक वार महम्मदके साथ वलकी परीक्षा की। इस युद्धमें हिन्दुओंने तोपोंसे काम लिया था, ऐसा उल्लेख मिलता है। सत्तर हजार हिन्दू इस युद्धमें मारे गये। मुसलमान लोग जीत तो गये पर झगड़ेका अन्त नहीं हुआ। १३६६ ई०में हिन्दुओंने फिर मुसलमानोंके साथ युद्ध किया। अवकी वार भी हार गये। इसके वाद राज्यके अभ्यन्तरीण विप्लव-निवारणमें सुलतानके कुछ दिन वीत गये।

महम्मदशाहके बाद जितने भी सुलतान हुए, उनके विस्तृत विवरणके साथ इस इतिहासका कोई सम्बन्ध नहीं है। उनके राजत्व कालमें भी दाक्षिणात्यमें हिन्दू मुसलमानोंका विवाद मिटा नहीं। सिया सुन्नी सम्प्रदाय भी परस्पर लडता झगडता रहा। मध्य एशियासे धर्मान्ध मुसलमानोंकी आतम ज्यादा न होनेसे दाक्षिणात्यमें मुसलमानोंका क्रमशः ह्रास होने लगा। कुछ ही दिनोंमें इस्लामधम पर हिन्दू धर्मका प्रभाव पडा। बहुतसे मुसलमान हिन्दू देव-देवियोंके प्रति श्रद्धा करने लगे।

१५२६ ई०में वाह्मणीवंशका विलोप हो गया। इस वंशके सुलतानोंने कुल १७१ वर्ष महाराष्ट्रमें राज्य किया था। ईसाकी १५वीं शताब्दीमे इसके समान प्रवलपराक्रान्त राजवंश सारे भारतमें और नहीं था। दिल्लीके बादशाहगणको भी इन राजाओंके प्रति टेढी नीगाह करनेका साहस नही होता था। इस वंशके प्राचीन राजाओंने जैसी सुव्यस्था की थी, उससे इनका राज्य और भी स्थायी रह सकता था। परन्तु पीछेके सुलतानगण जरा जरासे कारणों पर दूसरोंके राज्य हडपने पर उतारू हो गये और इस तरह राज्य-विस्तारकी कोशिश करने लगे, तथा नये जीते हुए राज्योंकी समुचित व्यवस्था न कर सके। सूवेदार लोग वहुत जगह बलवान् हो उठे और सुलतान हीनवल होने लगे। महम्मद गवानके मन्त्रित्वकालमें इन विषयो पर एक वार ध्यान गया था। परन्तु उनकी व्यवस्थासे राजकर्मचारियोंकी आजादी पर चोट पहुची, जिससे वे उसके घोर विरोधी हो उठे। इस कारण गवानकी मृत्युके वाद फिर चारों तरफ विशृङ्खलता फैल गई। जिस साल वाह्मनी राज्यका लोप हुआ, उसी साल वावरने उत्तर-भारतमें मुगल-साम्राज्यका सूत्रपात किया था। मुगलोंने ही अन्तमें वाह्मनी राज्यकी अन्तिम शाखाको काट डाला।

प्रजाके सुख-दुःखके प्रति वाह्मनी-वंशके राजाओंका ध्यान था। विना कारण वे हिन्दुओंको कष्ट न देते थे। हिन्दू लोग उनके शासन कालमें कभी उच्च पद पर नियुक्त नहीं हुए, न उन्हें सामरिक विभागमें ही नियुक्त होनेका अधिकार था। वे खेती वारी और कम तनखाहमें नौकरी करके ही अपना गुजारा चलाया करते थे। वे विधर्मी राजा उनके धर्म पर आघात न करते थे। उस समय राज्यमें जो विद्रोह हुआ था, उसमें हिन्दुओंने प्रकाश्य रूपसे विलकुल ही योग नहीं दिया था, न उनकी इसमें सहानुभूति ही थी। इस वंशके राज्य-कालमें महाराष्ट्रमें तुर्की, इरानी, हवसी, मुगल आदि विभिन्न वंशके मुसलमान आ कर बसे थे। धीरे धीरे इनकी प्रतिष्ठा ऐसी बढ़ी कि पासमें अगर विजयनगरका हिन्दू राज्य न रहता तो महाराष्ट्रकी अवस्था बहुत शोचनीय हो जाती। कुछ भी हो, मुसलमान व्यापारियोंके प्रयत्नसे इस समय देशके वैदेशिक वाणिज्यने बहुत कुछ उन्नति कर ली थी। मुसलमान लेखकोंका कहना है, कि वाह्मनी राज्यमें चोर डकैत और राहजानियोंका डर विलकुल न था। मुसलमानोंकी कोशिशसे वड़ी वड़ी इमारतें भी वन गई थीं, जिससे देशके स्थापत्य शिल्पकी वहुत कुछ उन्नति हुई। मुसलमान वालकोंकी शिक्षाके लिए वाह्मनी सुलतानोंने ग्राम ग्राममें पाठशालाएं खोल दी थीं। पूर्त्तकार्यों में भी उनकी लापरवाही न थी। विदर और कुलवर्गामें उनकी राजधानी थी।

वाह्मनीवंश देखो।

बरिदशाही वंश।

वाह्मनीवंशके सुलतानोंका गौरवसूर्य जितना ही अस्ताचलकी ओर बढ़ने लगा, उतनी ही उनके राज्यमें सियो और सुन्नी सम्प्रदायोंमें झगडेकी आग धधकने लगी। इस मौके पर महम्मदशाहके राज्यकालमें (१४८२-१५१८ ई०) महाराष्ट्रोंने एक वार विद्रोह करके मस्तक उठाया था, किन्तु कासिम वरिद नामक एक मुसलमान सरदारके प्रयत्नसे वह विद्रोह दव गया। सुलतानने सरदारके इस कार्यसे खुश हो कर उनकी तरक्की कर दी। वे विदर प्रान्तकी सूबेदारी पा कर १४९२ ई०मे सुलतानके प्रभुत्वको अस्वीकार कर स्वाधीन हो गये। यह सरदार वरिदशाहीवंशके आदि पुरुष हैं। इनके वंशधरोंने "शाह" उपाधि ग्रहण की थी। अहमदनगर और वीजापुरके सूबेदारोंके साथ कलह होनेसे वरिद शाही राज्य वहुत कुछ क्षीण हो गया था। अन्तमें दाक्षिणात्यमें औरङ्गजेवकी सूवेदारीके समय उन्हीके आदेशसे

मीर जुमलाकी कोशिशसे इस राज्यका अस्तित्व जाता रहा।

इमादशाही वंश।

इस वंशके आदिपुरुष एक तेलगू ब्राह्मण थे। विजयनगरके राजाका पक्ष ले कर युद्धके समय ये वाह्मनीवंशके सुलतानकी सेनाके हाथ पकड़े गये थे। उन्हें सपरिवार मुसलमान बना लिया गया था। तबसे वे फतेह-उल्ला नामसे परिचित हुए। ये अपने कार्यदक्षता गुणके बल पर महम्मद गवानके प्रियपात्र हो गये और इमाद उल्मुल्क उपाधि प्राप्त कर बरार प्रान्तके सूबेदार बन गये। १४८४ ई०में फतेह उल्लाने 'इमाद शाह' नाम धारण कर स्वतन्त्रताकी घोषणा कर दी। इनके वंशधर अधिक दिन राज्य न कर पाये थे। अहमदनगरके सूबेदार ही इस वंशके ध्वंस होनेके कारण हुए। (१५७२ ई०)

निजामशाही राजवंश।

तिमप्पा बहिरु (भैरव-बहिरओ) नामक एक ब्राह्मण विजयनगरमे वास करता था। इमादशाही वंशके आदिपुरुषकी तरह उस ब्राह्मणका लड़का भी युद्धमें पकड़ा जा कर मुसलमानोंके हाथ कैद हुआ और मुसलमान बना लिया गया। यह ब्राह्मणका लड़का बादमे मालिक नायब निजाम उल मुल्कके नामसे परिचित हुआ। महम्मद गवानके कार्यकालमें आपने उच्च पद प्राप्त किया था। मालिक नायबके पुत्र मालिक महम्मद निजामशाही वंशके आदिपुरुष थे। इनके समयमें वाह्मनीवंशके अधःपतनके पूर्वलक्षणोंको देख कर मराठोंने नाना स्थानोंमें सिर उठानेकी कोशिश की थी। राज्यमें शान्ति स्थापनके लिए मन्त्री महम्मद गवानको किसी किसी स्थानमे देशकी रक्षाके लिए इन्ही लोगोंको नियुक्त करना पडा था। पश्चिम महाराष्ट्रके नाना स्थानोंमे मराठोंका ही आंशिक आधिपत्य स्थापित हो गया था। वे मुसलमानोंके प्रतिनिधि बन कर देशका शासनकार्य चला रहे थे। मालिक महम्मदने दौलताबाद प्रान्तकी सूबेदारी पाते ही मराठा-दुर्ग-रक्षकोंको पूरी तरहसे अपने वशमे लानेकी कोशिश की। परन्तु सुलतानकी सनद रहने पर भी उन लोगोंने मालिक महम्मदको परवाह न की, न दखल दिया। अहमदने तब एक एक करके उन सबके विरुद्ध युद्ध प्रारम्भ कर दिया। पहले जुन्नरके अन्तर्गत शिवनेरी दुर्ग (महात्मा शिवाजीका जन्मस्थान)में घेरा डाला। कई मास अवरोध कायम रहा पर फिर भी मराठोंने पराजय स्वीकार नहीं किया। मालिक अहमदने उन लोगोंसे जब अनेक विद्रोह-अपराध पर क्षमा प्रदान करनेकी प्रतिज्ञा की, तब मराठोंने विरोध त्याग दिया। पीछे पुरन्दर, मनोरञ्जन, चन्दनवन्दन, लोहगढ, तोरणा आदि महाराष्ट्रके प्रधान दुर्ग इनके हस्तगत हुए। राजापुर तक कोङ्कणदेश भी इन्होंने जीत लिया। स्वाधीनता लाभके पहलेसे ये जुन्नरमें रहते थे। अहमदने अपने शासनाधीन प्रदेशमें ऐसा सुशासन प्रवर्त्तित किया कि, लोग लाठीकी मूठों पर सोना बांध कर प्रकाश्य भावसे चाहे जहां जा आ सकते थे। १४८९ ई०में इन्होंने वाह्मनीवंशके सुलतानकी अधीनता अस्वीकार कर दी। दौलताबाद और जुन्नर इन दोनोंके बीच बिङ्कर नामक एक ग्राम था। उस ग्रामको इन्होंने विशाल नगर बना दिया। उनके नामानुसार उस नगरका नाम महमदनगर पडा (१४८४ ई०)। मालिक अहमदने 'निजामशाह' उपाधि ग्रहण करके राज्यशासन करना प्रारम्भ कर दिया। इनके समान संयतेन्द्रिय व्यक्ति मुसलमान समाजमें उस समय दूसरा कोई न था। द्वन्द्वयुद्ध द्वारा विवादकी मीमांसाका मार्ग दाक्षिणात्य में इन्हीके समयमें प्रवर्त्तित हुआ था। फल स्वरूप, महाराष्ट्रके गांवोंमें भी तलवार घुमानेका अनुराग बढ़ने लगा और प्रायः सर्वत्र ही तलवार घुमानेके लिए रङ्गशालाएं स्थापित हो गईं।

अहमशाहके बाद उनके पुत्र सप्तमवर्षीय बुहरनशाह निजामशाही राज्यके अधिपति हुए। आदिलशाही और इमादशाही सुलतानोंके साथ युद्धमे ये पराजित हो गये। कम्वरसेन (कुमारसेन) नामक एक ब्राह्मण बुहरनके दरबारमें बहुत दिनोंसे प्रधान मंत्रीका कार्य करते थे। इस सुलतानके समयमें मराठोंने राजनैतिक क्षेत्रमे समधिक प्रसिद्धि पा ली थी। सम्भाजी चिटनीसको "प्रताप राव" उपाधि दे कर बुहरनशाहने उन्हें महाराष्ट्रमें दूत बना कर भेजा था। पार्वत्य प्रदेशवासी मराठे अधीनता

स्वीकार न करके प्रायः विद्रोहादि किया करते थे। इस कारण सुलतानने पेशवा कंवरसेनके परामर्शानुसार उन्हें उच्च राजकार्योंमें नियुक्त करके शन्त किया। इसी समयसे महाराष्ट्र लोग दिनों दिन राजकार्यमें सर्माधक दक्षता दिखा कर अपने भावी अभ्युदयका मार्ग साफ करने लगे। बुरहनशाह सियामतके विशेष पक्षपाती थे, इससे सुन्नी सम्प्रदायके लोग सनक गये। फल यह हुआ कि राज्यमें लड़ाई-दंगा और अशान्ति होने लगी। ४७ वर्ष राज्य भोगनेके वाद १५५३ ई०में सुलतानकी मृत्यु हुई।

इस वंशके तृतीय सुलतान हुसेन निजामशाहके शासनकालमें दक्षिणापथमें हिंदू मुसलमानोंका झगड़ा चरम सीमा तक पहुंच गया। दाक्षिणात्यकी सभी मुसलमान शक्तिने इकट्ठी हो कर एकमात्र हिन्दू राज्य विजयनगरका ध्वंस कर डाला। १५६४ ई०में तालकोट-के युद्धमें रामराजके मारे जानेसे हिन्दू लोग हिम्मत हार गये। मुसलमानोंको कुमारिका अन्तरीप तक अधिकार फैलानेका मौका मिल गया। इसी समय आर्यावर्त्तमे मुगल-सम्राट् अकवर एक एक करके सारे हिंदू राज्यों पर आक्रमण कर हिन्दूजातिका विनाश कर रहे थे। गत एक हजार वर्षके भीतर हिन्दू जातिके लिए ऐसा दुःसमय और सारा हिन्दुस्तान प्रायः यवन स्थानमें ऐसा परिणत हो गया था, कि भारतवर्षमें स्वधर्मनिष्ठ हिन्दुओंके लिए कोई आश्रय न रह गया।

इसके वाद मुर्तजा निजामशाहका जमाना आया। इनके जमानेमें विजयनगरके राज्य विभागको ले कर मुसलमानोंमें युद्ध विग्रहका सूत्रपात हुआ। नतीजा यह हुआ कि मराठोंको सिर उठानेका मौका मिला। इसी समय पुर्त्तगीजोंने भी आ कर पश्चिम भारतमें उपद्रव मचाना शुरू कर दिया। निजामशाहके सरदारोंको शरावकी भेंट दे कर इन लोगोंने भारतमे उपनिवेश स्थापन करनेकी आज्ञा प्राप्त कर ली। मुर्त्तजाने रेवा पर अधिकार करके इमादशाहीवंशका अस्तित्व ही मिटा दिया। इनके जमानेमें खानदेश भी निजामशाह राज्यके अन्तर्गत हो गया।

१५८६ ई०से १५६४ ई० तक मीरन् हुसेन, इस्माइल और बुहरन निजाम शाहने महाराष्ट्रके उत्तरभागका शासन किया। इनके शासनकालमे सिया और सुन्नियोंमें झगड़ा वढा था। फलस्वरूप मीरनको भी प्राण देने पडे थे। इस्माइलका राज्यकाल 'मुसलमानोंके आपसके कलहमे ही समाप्त हुआ। एक दल मुसलमानोंने दिल्ली के वादशाह अकवरकी सहायताके लिए प्रार्थना की थी। वुहरन भी धर्मसम्बन्धी कलहको निवृत्ति न कर सके थे। इनकी सेना कुरला नामक स्थानमें पुर्तगीजोंसे युद्ध-में पराजित हुई थी।

इसके वाद हुसेन निजाम शाहकी लडकी सुलताना चांदवीवीका शासनकाल ही विशेष प्रसिद्ध है। इस असाधारण गुणशालिनी रमणीने मुगलोंसे अपने राज्य-की रक्षा जिस तरह की थी, वह वर्णनातीत है।

विस्तृत विवरण चादवीवी शब्दमे देखो।

चादवीवीके वाद निजामशाहीका इतिहास इस राज्यके मंत्रियोंके कार्यकलापसे ही भरा पडा था। अहमदनगर मुगलोंके अधीन हो जाने पर परिन्दा किलेमें निजामशाही राज्यकी राजधानी स्थानान्तरित कर दी गई। इस समय मालिक अम्बर नामक एक मुसलमान सरदार (जो अत्यन्त बुद्धिमान् और विश्वासी था) की चेष्टासे निजामशाहीका नष्टप्राय गौरव कुछ दिनके लिये रक्षित हुआ था। मुसलमानोंके परस्परके झगड़ेसे मरहठोंको वड़ा लाभ हुआ, इनको शक्ति और प्रतिपत्ति विशेषरूपसे वृद्धि हुई। मरहठोंकी सहायता-से निजामशाहीकी रक्षा सरदार अम्वरने की थी। शिवाजीके पितामह मालोजी भोंसले और मातामह लुखजी यादव रावने उससे कुछ पहलेसे निजामशाही दरवारमें प्रतिपत्ति लाभ की थी। वीजापुरके आदिल-शाही दरवारमें भो मरहठोने अपनी प्रतिपत्ति और प्रभुत्व प्रतिष्ठामें कोई कसर न रखी।

मुगल-सम्राट् अकवरके और कुछ दिनों तक जीवित रहने पर निजामशाहीका अस्तित्व शीघ्र ही विनष्ट हो जाता, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। किन्तु उसकी मृत्यु हो जानेसे जहांगीरके दिल्लीके सिंहासनको प्राप्त करनेमें जो परस्पर कलह हुआ, उससे मालिक अम्बरने महरठोंकी सहायतासे फिर अहमद नगर पर अपना

अधिकार जमा लिया और मुगल प्रतिनिधि तथा सरदार खानखानाको पराजित किया। इसके बाद वह राज्यके भीतरी संस्कारों और प्रजाके उन्नतिसाधनमें प्रवृत्त हुआ। उसकी प्रजाहितैषिता आज भी उस देशकी प्रजाके मुंहसे सुनाई देती है। भूमिकी मालगुजारीके सम्बन्धमे प्रजाके हितके लिये जो सब संस्कार हुए उसमें भी सवाजी आनन्द राव, शिवाजीपन्त, मुत्सुद्दी और सखाराम मोकाशी प्रभृति मरहट्ठे कर्मचारियोंने निजामशाही राज्यको कई तरहसे सहायता दे कर अमरकीर्त्ति प्राप्त की है। मालिक अम्बरके इजारा पदपद्धतिका उन्मूलन करनेसे प्रजा अति सुखी हुई। खजाना वसूलीका भार ब्राह्मण कर्मचारियोंके हाथ सौंपना ही अम्बरको उचित जंचा था। इन सब नई व्यवस्थाओंसे प्रजाके सुखी और सन्तुष्ट होने पर मालिक अम्बर मुगलोंके विरुद्ध शक्तिसंवाद करनेमे शीघ्रतापूर्वक समर्थ हुए थे।

इधर जहांगीरने अहमदनगर पर पुनः अधिकार कर लेनेके लिये फिर सैन्य भेजा। इस समय मालिक अम्बरने गुजरातके मुगल-सरदार अब्दुल्ला खांको पराजित किया था। मुगलोंने उस समय भेदसे बीजापुरके आदिलशाही सुलतान और अनेक महरठोंको फोड़ कर मालिक अम्बरसे अलग कर दिया। निरुपाय हो मालिक अम्बरको मुगलोंके साथ युद्ध करना पड़ा। फलतः मुगलोंने अहमदनगर और उसके समीपके गावों पर कब्जा कर लिया। इसके बाद शाहजहा ससैन्य काश्मीर पर चढ़ाई करनेके लिये चला। यह देख मौका पा कर अम्बरने दक्षिणसे मुगलोंको भगा कर निजामशाही राज्यका उद्धार किया। फिर शाहजहाके दक्षिण लौटने पर मालिक अम्बरको पराजित होना पड़ा। इसके बाद मुगलोंके साथ मालिक अम्बरका झगड़ा न हुआ। सन् १६२६ ई०में अस्सी वर्षकी उम्रमे मालिक अम्बरको मृत्यु हो गई। इसके ऐश्वर्य, औदार्य, ईश्वरनिष्ठा, सदाचार और न्यायपरताने मरहठोंके चित्तको आकर्षित कर लिया था।

मालिक अम्बरके बाद उसका पुत्र फतह खां निजामशाही राज्यका एकमात्र कर्णधार हुआ। वह पिताकी तरह बुद्धिमान् और कार्यदक्ष नहीं था, तथापि मालिककी राज-रक्षाके विषयमें यत्नवान् था, किन्तु अदूरदर्शी सुलतानने अन्यान्य परामर्शदाताओंके अनुरोधसे उसको कैद कर लिया। इस कार्यसे निजामशाहीके दूसरे सरदार भी भयभीत हुए। लुखजी यादवराव इससे पहले एक बार मुगलोंके पक्षावलम्बन करने पर भी इस समय निजामशाही राज्य-रक्षाको ही चेष्टा करते थे। किन्तु सुलतानने सन्देह कर गुप्त सलाह करनेके बहानेसे बुला कर मरवा डाला। यादवरावके एक युवक पुत्र थे। वे भी इसी दुर्घटनामें मारे गये। इस घटनासे सारी मरहठा सेना सुलतान पर क्रोधित हो उठी। लुखजीके भ्राताने मुगलोंका साथ दिया। उनके दामाद शाहजी भोंसले राज्यरक्षा विषयमें हताश हो कर पूनाके चारों ओरके प्रदेशोंको यथासम्भव शीघ्र अपने अधिकारमें करने लगे। ये निजामशाही और आदिलशाही दोनों राज्यके शासनाधीन प्रदेशोंको हस्तगत करने लगे। इधर मुगल सैन्यने राजधानी पर अधिकार कर लिया। इस समय राजकर्मचारी जो जिस प्रदेशका शासन करते थे वे उसे अपने अपने अधिकारमे कर स्वतन्त्ररूपसे शासन करने लगे। इस समय मरहठे सरदारोंमें कुछ एकताका सञ्चार हुआ था। शाहजी भोंसले इनके नेता थे। जूनानगरमें श्रीनिवास नामक एक अमलदार था। उसने शाहजीके साथ मिल कर शामगढ़ हस्तगत कर लिया। इसके बाद क्रमशः सैन्य संग्रह कर सङ्गमनसे अहमदनगर और दौलताबाद तक सारे प्रदेश उसके हाथ आ गये। शाहजीने विजापुर राज्यके जिन प्रदेशोंको जीता था, उनका पुनरुद्धार करनेके लिये विजापुर पतिने मुरारराव नामक एक ब्राह्मण सेनापतिकी अधीनतामें सेना भेजी। इस सैन्यदलने पूनाको बहुत क्षतिग्रस्त कर दिया था।

इस समय खानजहां लोदी उत्तर भारतमे दिल्लीके बादशाहके विरुद्ध बलवा कर महाराष्ट्रमें भाग आया। शाहजी आदि मरहठे सरदार लोदीके साथ मिल गये। किन्तु जब शाही फौज दक्षिणमें उपस्थित हुई, तब लोदीको परित्याग कर उन्होंने शाहजहांकी अधीनता स्वीकार कर ली। फलतः शाहजीको बादशाहकी ओरसे पांच हजारी मनसबदारी मिली। लोदी अब निजामराज्यमें भागा,

वहां उसको निजामने आश्रय दिया। इससे मुगलोंने निजामको पराजित किया। ठीक इसी समय सन् १६२६ ई०में महाराष्ट्र देश लगातार दो वर्षकी अनावृष्टिसे जर्जरित हो गया। बहुतेरे भूखों मरे, देशके पशुपक्षी मर गये, कितने ही लोगोंने भाग कर आत्मरक्षा की। जो देशमें रह गये, वे महामारीके कारण पञ्चत्वको प्राप्त हुए। इधर मुगलोंकी बन गई। इन्होंने इस देशको खार क्षार करना स्थिर कर लिया था। ऐसे समय निजामने प्रसिद्ध मालिक अम्बरके पुत्र फतेह खांको कैदसे छुडा कर मंत्री बना लिया। फल यह हुआ, कि फतेह खांने अब सुलतानको ही कैद कर लिया और उसे मरवा डाला। सुलतानके प्रियतम सरदारोंको इसी घटनामें प्राणत्याग करना पडा था। फतेह खां ऐसा कठिन काम करने पर भी स्वयं राज्यभोग नहीं कर सका। वह निजामशाही धनवैभवके साथ मुगलोंके अधीन हो गया।

फतेह खांके इन सब कामोंसे शाहजीके मनमें घोर घृणाका सञ्चार हुआ। उन्होंने निजामशाहीकी रक्षाके लिये बिजापुरकी आदिलशाही सुलतानसे साहाय्यकी प्रार्थना की। साहाय्य प्राप्त होने पर उन्होंने देवगिरि या दौलताबादके किलेको फिर हस्तगत करनेके लिये यात्रा कर दी। किन्तु मुगलोंसे युद्ध करनेमें उनको विफलता हुई। मुगलोंने निजामशाही राज्यके उत्तराधिकारी दश वर्षके राजपुत्रको कैद कर दिल्ली भेजा। (सन् १६३३ ई०)

फिर भी शाहजी भोसले निरस्त न हुए। उन्होंने दो वर्ष तक मुगलसैन्यसे कलह कर निजामशाहीकी पुनः प्रतिष्ठाके लिये प्राणपणसे चेष्टा की। इस कार्यमें उन्होंने जैसा अलौकिक शौर्य और साहस प्रकट किया था, सामदान दण्ड विभेद नीतिका जिस तरह उन्होंने प्रयोग किया था, वह उनके अल्पवयस्क महात्मा शिवाजीके लिये उदाहरण स्वरूप हो गया था। शाहजीने सह्याद्रिके निम्न दुर्गम प्रदेशको हस्तगत कर मुगलोंके विरुद्धाचरणकी व्यवस्था की। यथासम्भव युद्धका आयोजन सम्पन्न होने पर उन्होंने राजवंशीय एक दश वर्षके बालकको निजामशाही राज्यके उत्तराधिकारी विघोषित कर राज्यसिंहासन पर बैठाया और बहुतेरे बुद्धिमान और कार्यदक्ष ब्राह्मणोंकी सहायतासे राज्यकार्य सञ्चालन करने लगे। अल्प समयमें ही सारे कोङ्कण प्रदेशके साथ निजामशाहीके बहुतेरे प्रदेश शाहजीके हाथ आ गये। मुगलोंको दक्षिण विजय करनेके लिये वृहत् युद्धायोजन करना आवश्यक हो गया।

शाहजीके अध्यवसाय और कार्यकलापको देख दिल्लीसे शाहजहां स्वयं सैन्य परिचालन करनेके लिये दक्षिणमें आया। शाहजीने मुगलोंकी सागर प्रवाहिनी सेनाको देख बिजापुरके सुलतानको मुगलोंके विरुद्ध भड़काया। सुलतानने मुरारपन्त और रणदुल्ला खांको शाहजीकी सहायताके लिये भेज दिया। कुछ दिन युद्ध होनेके बाद शाहजहांने सुलतानको खबर भेजी, कि जब तक शाहजीको सहायता न दोगे, तब तक बिजापुर पर शाही-सेना आक्रमण नहीं करगी। सुलतानने बादशाहके इस भुलावे पर कर्णपात नहीं किया। शाहजीने अपने सैन्यको छोटे छोटे दलोंमें विभाजित किया और अव्यवस्थित युद्धनीतिको अवलम्बन कर मुगलोंको तंग कर डाला। इधर मुगलोंने भी शाहजीको अपदस्थ करनेमें जरा भी त्रुटि नहीं की। सैन्यसज्जा विशेष होनेकी वजह मुगल सब जगह विजयी होने लगे। शाही सैन्यके उपद्रवसे तंग आ कर बिजापुरके सुलतानने शाहजीका साथ छोड शाहजहांके साथ सुलह कर ली। शाहजीने कोङ्कण जा कर आश्रय ग्रहण किया। मुगलोंने वहां भी उनका पीछा किया। शाहजी क्लान्त हो गये थे, अतः उन्हें मुगलोंका विरुद्धाचरण परित्याग करना पडा। मुगलोंकी अधीनतामें मनसबदारी करनेकी उनकी इच्छा थी। किंतु शाहजहांने इस प्रस्तावको रद्द कर शाहजीको बिजापुरके सुलतानके दरबारमें रहनेका आदेश दिया। मुगलोंने निजामशाहीके अन्तिम उत्तराधिकारी वंशधरको (सन् १६३७ ई०) कैद कर आगरेको भेज दिया। इस तरह निजामशाही राजके उत्तराधिकारीको समाप्ति हुई।

आदिलशाही वंश।

इस वंशके आदिपुरुष युसूफ आदिलशाह कुस्तुन्तुनियाके राजवंशमें जन्मग्रहण करने पर भी भाग्यवश स्वदेश निर्वासित तथा नौकरोंके साथ वास करनेको बाध्य हुआ। सन् १४५६ ई०में वह सामान्य वेशमें

भारतमें आ कर वाह्मनी राजाके प्रधान मन्त्री महम्मद गवानकी अधीनतामें काम करने लगा। कुछ ही समयमें अलौकिक कार्यफलसे उसकी पदोन्नति हुई। इसने विजापुरकी सूबेदारीके समय महम्मद शाह वाह्मनीकी मृत्यु हो जानेके वाद स्वाधीनताकी घोषणा कर नये राजवंशकी प्रतिष्ठा की। युसूफ आदिलशाहकी चेष्टासे विजापुर सौधमालाओंसे परिशोभित हुआ था। सियापन्थी मुसलमानोंको इसने आश्रय दिया था। पुर्त्तगीजोंसे गोवानगर छीन लेनेमें यह समर्थ हुआ था। शौर्य, विद्या और व्यवहारचातुर्य्यतामें तथा राजनीतिज्ञतामें उस समय केवल महम्मदके सिवा और कोई इसकी वरावरीमें न था। इसने मुकुन्द राव नामक एक मरहठेकी वहनसे अपनी शादी की थी। इस हिन्दू रमणीसे इसका बड़ा प्रेम था। इसके गर्भसे उत्पन्न इस्माइल ही इसके वाद राज्यका उत्तराधिकारी वना। धर्मके सम्बन्धमें युसूफका समान ख्याल था। हिन्दुओंको खास कर मरहठोंको विशेष आश्रय देता था। योग्यता दिखा कर कितने ही ब्राह्मण और क्षत्रिय इसके राजत्वकालमें उच्च पदों पर प्रतिष्ठित हुए थे। राजदरवारमें और सरकारी कागज पत्र लिखनेके लिये फारसीकी जगह महाराष्ट्र भाषाका प्रयोग करनेका इन्होंने ही आदेश दिया था। अहमदनगर, सोलापुर, पारिन्दा, मीरज आदि सुदृढ़ दुर्ग आज भी इसकी कीर्त्ति घोषणा कर रहे हैं। सन् १५१० ई०में इसकी मृत्यु हुई।

इस्माइलने अल्पवयस्क होने पर भी मुकुन्द रावकी वहन या अपनी माके साथ दक्षतापूर्वक विद्रोही मुसलमानोंका दमन करते हुए राज्यशासन किया था। दक्षिण-देशके सभी सुलतान मिल कर इस्माइलको हरानेमें समर्थ हुए। विजय नगरके राजाके साथ इस्माइलका सदा युद्धमें ही दिन वीता था। इस्माइलने चम्पामहल और मुद्गलका किला वनाया था। २६ वर्ष तक युद्ध-विग्रह तथा राज्यशासन कर इसने इहलोकका परित्याग किया। यह न्यायपरायण दूरदर्शी और दयालु था।

सन् १५३४ ई०में इस्माइलका पुत्र इब्राहिम राज्य-सिंहासन पर वैठा। इसने सिया मुसलमानोंको भगा कर सुन्नी मुसलमानोंको आश्रय दान किया। इब्राहिमने दरवारकी भाषा फारसीको हटा कर फिर मराठी भाषामें कागजपत्र या अदालती कार्रवाई करनेकी आज्ञा दी। इसीसे राजकर्मचारियोंमें मरहठोंकी अधिक संख्या हो गई। इसी समयसे विजापुरके मरहठोंकी प्रतिपत्ति दिनों दिन वढ़ने लगी। निम्वालकर, घाटगे, घोरपड़े, डफले, माने और सावन्त आदि मरहठा-परिवारोंका गौरवरवि उसी समय उदित हुआ था। निजामशाह, कुतुवशाह और विजयनगरके राजाके साथ इब्राहिमका युद्ध हुआ। विजयनगरके राम राजाकी सहायता कर निजामशाहने इब्राहिम आदिलशाहको पराजित किया था। इसी समय पुर्त्तगीजोंने मीरज तक उपद्रव मचा दिया था। किन्तु इब्राहिमने उनको दमन किया था। अन्तिम उम्रमें इब्राहिम दुराचारी तथा उन्मत्त हो गया था। वहां १५५७ ई०में परलोक सिधारा।

इसके वाद आदिलशाह विजापुरकी गद्दी पर वैठा। इसकी चेष्टासे प्राचीन वलवैभव-सम्पन्न विजयनगर राज्यका सर्वनाश हुआ था। अलीने सत्पथमें वहुत खर्च किया था। गगनमहल, जुम्मा मसजिद, शाह वुरुज, महावुरुज आदि विजापुरकी सव इमारतें अली आदिलशाहकी ही कीर्त्ति हैं। इतिहास-प्रसिद्ध चांदवीवी इसीकी स्त्री थी। इसके जमानेमें फिर सिया मुसलमानोंका प्रावल्य हो गया। फिर भी मरहठोंकी शक्ति कम न हुई। इसके राजस्व विभागमें मरहठे ब्राह्मण ही थे।

सन् १५८० ई०में इसके वाद अलीके भतीजा इब्राहिम द्वितीय शाह सिंहासनारूढ़ हुआ। इसकी अमलदारीमें प्रजा सुखस्वच्छन्दतापूर्वक रहती थी। इब्राहिम विलासी तथा गीतवाद्यप्रिय होने पर भी वीर और वुद्धिमान था। धर्मविषयक ज्ञान और समदर्शीके गुणसे इसने "जगत्‌गुरु"-की उपाधि ग्रहण की थी। महाराज टोडरमलके द्वारा प्रवर्त्तित (लगान) राजस्व-व्यवस्था इस सुलतानकी चेष्टासे समूचे विजापुर राज्यमें प्रचलित हुआ। राज्यकी सामरिक और अन्यान्य जगहों पर सुलतानने मरहठोंको अधिक नियुक्त किया था। ईसाई भी इसके अनुग्रहसे वञ्चित नहीं हो सके। धर्मविषयमें अकवरसे भी कहीं अधिक इसको इतिहासमें स्थान

मिला है। अच्छी अच्छी इमारतोंके बनानेमें भी इसका बड़ा नाम है। विजापुरमें इसने ५२ लाख रुपया खर्च कर भास्करशिल्पके आदर्शस्वरूप एक मसजिद बनवाई थी। इसका कार्य ३६ वर्ष तक होता रहा। इसके जमानेमें अहमदनगरके निजामशाहके साथ आदिल-शाहियोंका एक वार युद्ध हो गया था। इसमें इब्राहिम-को ही विजयलक्ष्मी प्राप्त हुई थी।

(सन् १६२६-५६ ई०में) इब्राहिमके पुत्र मुहम्मद आदिलशाहका शासनकाल दक्षिणके इतिहासमें अधिक प्रसिद्ध है। अधिक दिनों तक मरहठोंने विजातियोंकी अधीनतामें रह उनकी जुतियोंकी ठोकर गुजर कर इस समय पुनः स्वतन्त्रताके लिये पूर्ण चेष्टा की। राजनीति कुशल अकबर और शाहजहांने भी एक वार महा-राष्ट्र देश पर अधिकार करनेके लिये चेष्टा करनेमें त्रुटि नहीं की। किन्तु मरहठोंका अभ्युदय वन्द न हो सका।

महम्मद आदिलशाहके शासनकालके प्रारम्भमें वंका-पुरके शासक कदमराव नामक एक मरहठेने विद्रोहकी घोषणा कर स्वाधीनता प्राप्त की। सुलतानने उसके विरुद्ध सेना भेज कर उसको तहस नहस कर दिया। इसके अमलमें शाहजहांने निजामशाही राज्यका विनाश कर आदि शाहीराज्य पर भी कुदृष्टि की थी। मुरार राव आदि कई मरहठे सरदारोंने निजामशाही राज्यको रक्षा-के लिये चेष्टा करनेके लिये महम्मदको सलाह दी। शाह-जी भोंसले इस समय निजामशाही राज्यकी रक्षाके लिये प्राणपणसे चेष्टा कर रहे थे। नूरजहांके भाई आसफ खांकी अधीनतामें मुगलोंके विजापुर अवरोध करने पर मुरार रावने उन पर वार वार आक्रमण कर उन्हें ऐसा तंग कर दिया, कि मुगलोंको विजापुरकी सीमाको छोड़ कर भाग जाना पड़ा। मुरारराव परिन्दा किलेमें जा कर वहांसे "मुल्क-इ-मैदान" या रणभूमिका राजा नामको जो प्रसिद्ध तोप थी उसको विजापुर ले आये। यह दुर्ग पहले निजाम शाहीके अधीन था। निजाम शाहकी आज्ञासे यह वृहत् तोप अहमदनगरमें ढाली गई थी। यह वजनमें ४ सौ मन थी। वालिकोटके युद्धमें इसका व्यवहार हुआ था। यह चौदह फीट लम्बी और उतनी ही चौड़ी थी। दो फीट चार इञ्चका गोला इस-में व्यवहार होता था। विजापुरके लोग अब भी इस तोपकी पूजा करते हैं। कड़क विजली नामक और एक तोप विजापुरमें लानेका भार मुरारराव पर दिया गया था। किन्तु वह पथमें ही कृष्णानदीमें डूब गई। आज भी कृष्णानदीमें उसका अस्तित्व दिखाई देता है।

आसफ खांके पराजित होने पर शाहजहांने मुहब्वत खांको दक्षिण भेजा। मुहब्वतके दौलताबाद पर आक्र-मण करने पर मुरार राव और रणदुल्ला खां निजामशाह-की सहायताके लिये भेजे गये। उस समय प्रवल प्रचण्ड शाही सैन्य विजापुर पर आक्रमण करनेमें प्रवृत्त हुआ। इस विपत्तिके समय शाहजी भोंसलेकी तरह राजकाज धुरन्धर और बुद्धिमान् सरदारको आवश्यकता महम्मद आदिलको प्रतीत हुई। शाहजीको भी उस प्रवल प्रचण्ड सैन्यके आगे अकेला अधिक देर तक ठहरना असम्भव था। शाहजीके पास उस समय १२ हजार सुशिक्षित सेना थी। इसी कारणसे इन्होंने विजापुरके सुलतानसे मित्रता स्थापित की। इन दोनोंके सम्मिलनसे महम्मद खांको पराजय स्वीकार करनी पड़ी।

सन् १६३५ ई०में मुराररावकी शक्ति दिनों दिन अधिक परिमाणसे बढ़ती देख महम्मद आदिल शाहने गुप्तघातक-द्वारा उनको मरवा डाला। इसके वाद शाहजी और रण-दुल्ला खाने शाही सैन्यको वहुत तङ्ग किया था, किन्तु अन्तमें मुगलोंने शाहजीको जर्जरित तथा निजामशाही को विनष्ट कर दिया। फिर महम्मद आदिलशाहने कर देना स्वीकार कर शाहजहांसे सन्धि कर ली।

मुगलोंके साथ सन्धि करनेके वाद आदिल शाहने राज्यको भीतरी संगठन करनेकी चेष्टा की। इन्होंने कर्ना-टकके विद्रोही जमीन्दारोंको वशीभूत करनेके लिये रण-दुल्ला खा और शाहजी भोंसलेको भेजा। कुछ दिनके वाद कर्नाटकका समूचा राज्यभार शाहजी भोंसलेको मिला। शाहजीने कर्नाटकको एक स्वतन्त्र हिन्दूराज्य संगठित करनेकी चेष्टा की। किन्तु इनके कार्यकी गति धीर और सतर्कतापूर्ण थी। उधर शाहजीके पुत्र शिवाजी घाटमाथाके मानलियोंकी सहायतासे पूनाके निकट-के प्रदेशोंको जीत कर स्वाधीन मरहठा साम्राज्यको

प्रतिष्ठा करने लगे। उन्होंने तरुण हृदयके असीम तेज-बलसे धीरे-धीरे थोड़े ही दिनमें बहुतेरे दुर्गों पर अधिकार कर लिया। अन्तमें आप प्रकट रूपसे विजापुरके राजाके विरुद्ध खड़े हुए। इस पर विजापुरका सुलतान उनका दमन करनेमें प्रवृत हुआ। इधर मुस्तफा खां नामक एक सरदारसे शाहजीका मनमुटाव हो गया। इस कारणसे तथा पुत्रदोषके कारण सुलतानने उन्हें कैद कर लिया और वे तीन वर्ष जेलमें रहे। इसके बाद शिवाजीने मुगलसम्राट्से पिताकी मुक्तिका परवाना ला कर पिताको कारागारसे छुड़ाया। यह सन् १६५३ ई०की घटना है।

इसके बाद भी आदिलशाह शिवाजीका दमन करनेकी चेष्टा करता ही रहा। किन्तु सफलता होनेसे पूर्व ही इहलोकका उसने परित्याग किया। इसके शासनकालमें विजापुरनगर अत्यन्त विस्तृत तथा सौन्दर्यपूर्ण हो उठा था। इसके विलासी होने पर भी प्रजा-रक्षामें यह उदासीन नहीं रहता था। इसके पास ढाई लाख पैदल, ८० हजार अश्वारोही और ५०० सौ हाथीसे परिपूर्ण सेना रहती थी। २० करोड़ रुपया प्रतिवर्ष सरकारी खजानेमें आता था। विजापुरकी एक मसजिदका गुम्बज या शिखर इसके हुकमसे इस तरह बनाया गया है, कि वैसा गुम्बज पृथ्वीके किसी हिस्सेमें दिखाई नही देता। इसकी निर्माणकुशलता देखने पर प्रसिद्ध पण्डित फरगुसनने कहा था, कि पाश्चात्य स्थापत्य विज्ञानिकोंको भी इसके सामने हार माननी पड़ती है।

महम्मद शाहके बाद उसका पुत्र अली (द्वितीय) आदिल शाहने विजापुरकी गद्दी प्राप्त की। इस कार्यमें उसने मुगल-सम्राट्की आज्ञा न मानी। इससे राजकुमार औरङ्गजेबने दक्षिणके सूबेदारके रूपमें विजापुर पर आक्रमण किया। किन्तु इस युद्धके समाप्त होनेसे पहले ही दिल्लीसे शाहजहांकी सांघातिक बीमारीका संवाद पा कर चतुर औरङ्गजेब सुलतानसे सन्धि कर तुरत दिल्लीको रवाना हुआ।

इस समय आदिलशाहके राज्यमें दो प्रधान प्रवल शत्रुओंने प्रवलता प्राप्त की थी। इनमें प्रथम शिवाजी भोंसले और दूसरा मुगलसम्राट् औरङ्गजेब था। जब निजामशाहके राज्यको मुगलोंने विनष्ट कर दिया तब उसका एक अंश विजापुरपतिओंके अंशमें पड़ा था। पूना और सूपा परगना तथा कोङ्कणका कुछ अंश विजापुरके अधीनमें था। प्रथमोक्त दोनों परगना सुलतानने शाहजीको जागीरके रूपमें दिया था। कर्नाटकमें शाहजीके नियुक्त होने पर उनके पूना और सूपाका शासन-भार शिवाजी पर पड़ा। इन दोनों प्रदेशोंको शिवाजीने नये सांचेमें ढाल दिया। शिवाजी क्रमशः नये प्रदेशोंको जीत कर स्वाधीन महाराष्ट्रको प्रतिष्ठाका आयोजन करने लगे। इस पर शिवाजीका दमन आवश्यक समझ अली आदिलशाहने बारह हजार सैन्योंके साथ अफजल खांको भेजा। किन्तु उससे कुछ भी लाभ नहीं हुआ। शिवाजीके हाथसे अफजल मारा गया और उसकी सेना पराजित हुई। सन् १६५९ ई०के दूसरे वर्षमें आदिल सिद्दी जौहर नामक एक सेनापतिको उसने शिवाजीका दमन करनेके लिये फिर भेजा। किन्तु शिवाजीने कौशलसे उसको वशीभूत कर लिया। इस पर क्रोधित हो स्वयं आदिलशाहने युद्धयात्रा की। इस यात्राके फलसे पाहाला नामक दुर्ग शिवाजीके हाथसे निकल सुलतानके हाथ आया। किन्तु दुर्गसे शिवाजीके दुर्गम पहाड़ी जंगलोंमें चले जाने पर सुलतानको लौट आना पड़ा।

इसके बाद सिद्दी जौहर विद्रोही हो उठा। जब तक सुलतान इसका दमन भी न कर पाये थे, कि दूसरा बेदनूर अञ्चलमें भद्रनायक नामक एक जमींदारने बलवा मचा दिया। अलीने उसको भी दमन किया, किन्तु इधर शिवाजीकी शक्ति द्रुत गतिसे बढ़ने लगी। मुगल भी उनके आचरणसे तंग आ गये थे। उनके विनाश करनेके लिये मुगल और पठान अपनी अपनी सेना ले कर आये। एक ही समय मुगलोंकी ओरसे जयसिंह तथा दूसरी ओरसे विजापुरके खावसखा शिवाजीकी शक्तिको चूर करनेके लिये आगे बढ़े। शिवाजीको प्राणपणसे चेष्टा तथा महाराष्ट्रसैन्यके असीम साहस दिखलाने पर भी इस घोर संकटमें विजयश्री प्राप्त न कर सके। अन्तमें शिवाजीने मुगलोंसे सन्धि कर ली। सन्धिमें इन्होंने कहा, कि मैं विजापुरके साथ युद्ध करनेमें सहायता दूंगा।

फलतः विलम्ब न कर मुगलसेना शिवाजीकी सहायतासे विजापुरकी ओर बढ़ी और विजापुर पर आक्रमण होने लगे। अचानक सिर पर शत्रु देख आदिल शाहने युद्धकी यथाशीघ्र तय्यारी की। सर्ज्जा खां और खवास खा ये दोनों प्रधान सेनापति प्राणपणसे युद्ध करने लगे। इस विपद्के समय कुतुव शाहके विजापुरकी सहायताके लिये आगे आने पर जयसिंहको वार वार परास्त और मुगल सैन्यको नितान्त जर्जरित होना पडा। एक युद्धमे सर्ज्जा खाकी मृत्यु हो गई। निहत होने पर भी मुगल-सैन्यको परास्त होना पडा। दूसरे जयसिंह बहुत कष्टसे मृत्युमुखसे छुटकारा पा कर दिल्लोकी ओर भागे।

इस तरह अली आदिलशाहने प्राणपणसे अपने राज्य-की रक्षा कर सन् १६७२ ई०में इहलोकका परित्याग किया। यह विलासी होने पर भी प्रजाकी ओरसे उदासीन नहीं रहता था। यह कवि और विद्वानोंके आश्रयदाता था। विजापुर दरवारमें मन्त्रियोंमें परस्पर घोर ईर्ष्या द्वेष चल रहा था किन्तु अलीके चातुर्यपूर्ण शासनके फलसे यह उनको अमलदारोमें प्रकट न हो सका। शिवाजीके घोर विद्रोह करने पर भी उसके आश्रयमें कितने ही मरहट्टे सरदार और ब्राह्मण रहते थे।

सिकन्दर अली आदिल शाह इस वंशका अन्तिम राजा था। पिताकी मृत्युके समय यह ५ वर्षका था। इसोसे मन्त्रियोंकी ईर्ष्याकी अग्नि भभक उठी और इससे राज्यभरमें वड़ी गडवडी मच गई। मन्त्रियोंके कलहसे शत्रुओंको वड़ा लाभ पहुंचा। शिवाजीने पह्नाला दुर्ग पर फिर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। वह्-लोल खांने शिवाजोके विरुद्ध युद्ध कर उन्हें बहुत तंग किया। खावास खाने कौशलपूर्वक मुगलसूबे-दार वहादुर खांके साथ सन्धि कर ली। यह सन्धि अधिक दिन तक टिक न सकी। पठान सैनिकोंने वेतन न पाने पर दंगा मचा दिया। मुगल-सरदार दिलेर खांने मौका पा कर विजयपुर पर आक्रमण किया। किन्तु उस समय तक आदिलशाही राजाको आयु कुछ शेष थी इसीसे शिवाजो विजयपुर दरवारको विशेष सहायता दे कर दिलेर खांके विरुद्ध उठ खड़े हुए। फलतः दिलेर खांको असफल हो कर दिल्लीकी शरण लेनी पडी।

सन् १६८३ ई०में स्वयं वादशाह औरङ्गजेव वहुतेरी फौजोंको ले कर दक्षिण विजयके लिये रवाना हुआ। शिवाजीके पुत्र शम्भाजी पिताकी नीति अवलम्बन कर उस समय विजापुरकी रक्षा कर रहे थे। सिकन्दर उस समय १६ वर्षका था। दरवारमे कोई भी बुद्धिमान् दरवारी न था। अतः जब औरङ्गजेवने विजापुरको घेर लिया तव समूचे राज्यमें हाहाकार मच गया। सुलतान सिकन्दर निरुपाय हो कर मुगलसैन्यके शरणापन्न हुए। औरङ्गजेवने उसे १ लाख वार्षिक वृत्ति दे कर औरङ्गा-वादके किलेमे वन्द कर रखा। विजापुरने १९७ वर्ष तक आत्मगौरवकी रक्षा कर १६८६ ई०की १५वीं अक्टूबर-को मुगलोंके हाथ आत्मसमर्पण कर दिया। औरङ्ग-जेवने सन् १७०१ ई०में हतभाग्य सिकन्दरको विष दे कर इह जगत्से आदिलशाहीवंशकी जड़ उखाड़ कर फेंक दी।

कुतुवशाही वंश।

कुतुवशाही-वंशने गोलकुण्डाप्रदेशमें १५१२-से १६८७ ई० तक राज्य किया था। यह प्रदेश महाराष्ट्र-देशके अन्तर्गत न होने पर भी यहाके सुलतानोंके अधीन रह कर अनेक मरहट्टा परिवारोंने विशेष उन्नति की थी। सन् १७०० ई०में महाराष्ट्र जातिका जो अभ्युदय हुआ, उसका साथ मरहठा-परिवारका घनिष्ठ सम्बन्ध था। इस कारण इस राजवंशके सम्बन्धमें कई वातोंका लिखना आवश्यक है।

कुली कुतुवशाह इस वंशका आदिपुरुष था। यह वाह्मनी सुलतानका सूवेदार और सरदार था। अन्तमें उक्त सुलतानकी भीरुता देख उसने स्वतन्त्रताको घोषणा कर गोलकुण्डामे पृथक् एक राजवंशकी प्रतिष्ठा की। तैलङ्गके हिन्दू राजाओंके साथ युद्ध कर उनको स्वत-न्त्रताके अपहरण करनेमे उसका वहुत समय व्यतीत हुआ।

उसके छोटे लड़के जमसेद कुतुव शाहकी अमल-दारीमें मरहठोंन दरवारमें प्रतिपत्ति लाभ की। जमसेदके सहायक सेनापतियोंमें जगदेव राव नामक मरहठा

सरदारने विशेष यश अर्जन किया था। परवर्त्ती सुलतान इब्राहिम कुतुबशाहके सिंहासनारोहणके उपलक्ष्यमें जो गड़बड़ी मची थी, उसमें जगदेव रावने इब्राहिमको सबसे अधिक सहायता की थी। और तो क्या, इब्राहिमको उसने सिंहासनारूढ कराया था यह कहनेमें भी अत्युक्ति नहीं। इससे इब्राहिम कुतबशाहने अपना मन्त्रिपद दे कर जगदेव रावको विशेष पुरस्कृत किया था। इस समय राय राव नामक एक मरहठा-सरदारने अपनी कार्यदक्षता दिखला कर सुलतानकी विशेष प्रीति लाभ की थी। इन दो सरदारोंके यत्नसे गोलकुण्डा दरबार और सामरिक विभागमें बहुतेरे मरहठे भर्त्ती हो गये। मुसलमान-सरदारोंने यह देख असन्तोष प्रकट किया और सुलतान के सामने मरहठोंको सदा शिकायत किया करते थे। सुलतानने पहले तो उनकी बातों पर ध्यान तक न दिया, किन्तु पीछे विचलित हो कर राय रावको प्राणदण्डकी आज्ञा दी। जगदेव रावने वहांसे भाग कर निजाम शाहके राज्यमें आश्रय लिया। किन्तु वहांसे भी कुछ ही दिनोंमें उनकी ऐसी ख्याति बढ़ी, कि स्वयं निजाम साहबको भी भयभीत होना पड़ा। समग्र देश पर अधिकार कर मुसलमान-वंशके विलुप्त करनेकी जो इच्छा परवर्त्ती मरहठोंके हृदयमें बलवती हुई थी; इस समय उसकी प्रकाशतः सूचना मिली। क्रमशः जगदेव राव क्षमताशाली हो उठे। इसके बाद उन्होंने बहुतेरे मरहठा, मुसलमान, अरबी, इरानी और हबशी-सैन्यको ले कर कुतबशाही राज्य पर टूट पड़े, किन्तु इस युद्धमें जगदेव रावको ही पराजय हुई। उस समय वे आदिल शाहकी अधीनतामें कार्य करने लगे। उनकी सहायतासे कुतब शाहने भी निजाम शाहको वारम्वार युद्धमें जर्जरित कर दिया। वहांके नायकों (जमींदारों)-के साथ सांजश कर उन्होंने तैलङ्गदेशके अन्तर्गत अधिकांश किलों पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। उस समय कुतुब शाहने डर कर जगदेव रावके साथ सन्धि और मित्रता स्थापित कर सब बखेड़ोंको तय कर दिया। शिवाजी और शाहजीके पहले जगदेव राव जैसा महापराक्रमशाली वीर मरहठा-सरदार और कोई पैदा न हुआ था। इस समय बिजापुरके सुलतानके अधीन जो मरहठा-सरदार थे वे भी कुतुब शाहके राज्यमें घुस कर विविध प्रकारसे उपद्रव करने लगे। इब्राहिम कुतुब शाहको अमलदारीके अन्तिम भागमें मुरार राव नामक एक ब्राह्मणने मन्त्रित्व लाभ किया था। राजनीति-कुशलतामें वे सारे दाक्षिणात्यके सभी मुसलमानोंको परास्त कर नेता बने थे।

इसके बाद आबू-हुसेन कुतुब शाहके अमलमें (सन् १६५८-८७ ई०) मरहठोंकी बड़ी उन्नति हुई। मदनपन्त नामक एक ब्राह्मणने मन्त्रीका पद पाया। मुरारपन्तकी चेष्टासे मालगुजारीमें सुधार होनेसे प्रजा खूब खुशी थी। मुसलमान कर्मचारिगण उनका विरुद्धाचरण करके भी कृतकार्य न हो सके। कुतब शाहने अन्तमें मुगलोंके हाथसे रक्षा पानेके लिये शिवाजीके पुत्र शम्भाजीसे सन्धि कर ली। इससे मुगल बड़े क्रुद्ध हुए। स्वयं औरङ्गजेबने उसके विरुद्ध यात्रा कर गोलकुण्डाको दिल्लीमें मिला लिया।

जातीय अभ्युदयके कारण।

पाठक! इस इतिहासके पढ़नेसे यह स्पष्ट मालूम होगा, कि तीन सौ वर्ष राजत्वकालका प्रथमार्द्ध व्यतीत होने पर ही मरहठोंके अभ्युदयका बीज वपन हुआ था। इस समयसे पहले मुसलमान अपने राज्यमें किसी ऊंचे पद पर हिन्दुओंको नियुक्त करते न थे। इधर उनके एकमात्र आश्रयस्थल विजयनगरके राज्य पर बारंबार आक्रमण कर हिन्दू-शक्तिका मूलोच्छेद किया जा रहा था। फिर भी, महाराष्ट्रदेशमें उनका शासन स्थायी न हो सका। जिन सब कारणों से मुसलमानोंका अधःपतन और मरहठोंका अभ्युदय हुआ था, वे इस तरह हैं:—

१ मुसलीम-सभ्यता हिन्दू-सभ्यता पर अपना अधिकार न जमा सकी। स्थापत्यशिल्प आदि इन दो एकके सिवा प्रायः किसी विषयमें ही हिन्दू-सभ्यता पर प्रभाव विस्तार करनेकी शक्ति मुसलमानोंको न थी। मुसलमानी-सभ्यता महाराष्ट्रके ग्रामों या सामाजिक आचार-विचार व्यवहार आदि जातित्वकी भित्तियोंका विनाश कर न सकी। मुसलमानी-सभ्यताके संघर्षसे महाराष्ट्र-सभ्यताने अपने अस्तित्वकी रक्षा करनेमें

समर्थ हो "योग्यतमका संरक्षण" विषयक नियम यथार्थमें प्रतिपन्न किया था। वरं मुसलमान ही हिंदू-सभ्यताके वशीभूत हो गये थे।

२ मुसलमानोंका हिंदू-रमणीके पाणि-ग्रहणका प्रयास। पहले वर्णित इतिहासमें दिखाई देगा, कि प्रसिद्ध प्रसिद्ध मुसलमानोंमें बहुतेरे हिन्दू-रमणीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। जो कीर्त्ति और बुद्धिमत्ता हिन्दूरमणी गर्भजात सन्तानोंने दिखाई थी वैसी बुद्धिमत्ता दक्षिणमें आये हुए विशुद्ध मुसलमान वंशधर नहीं दिखा सके। अनेक मुसलमान स्वजातीय रमणीकी अपेक्षा हिन्दू-रमणीके साथ दाम्पत्यसम्बन्ध स्थापन अधिकतर उत्तम समझते थे। इस तरहके दाम्पत्य संयोगसे उत्पन्न मुसलमानोंके हृदयमें हिन्दू विद्वेषभाव वैसी प्रबलता लाभ नहीं कर सकता था। अनेक प्रसिद्ध मुसलमान सरदार मूलतः ब्राह्मण थे पीछे धर्मत्याग करनेको बाध्य किये गये। किन्तु फिर भी हिन्दूजातिके प्रति अनुराग एकदम विलुप्त नहीं हो गया था। बाह्मनी राजत्वके अन्तमें इस तरहकी घटनाओंकी अधिकतासे मरहठोंको मुसलमान-दरबारमें घुसनेमें बड़ी सुविधा हुई और वे सब तरहके राजकार्यमें दक्षता प्राप्त कर सके।

३ हिन्दू-स्त्रियोंसे ब्याह करनेके फलसे ही मुसलमानोंको कई पीढ़ियोंमें ही उनके हृदयमें हिन्दुओंके प्रति जो विद्वेषभाव था, वह विलुप्त हो गया, किन्तु हिन्दुओंके लिये मुसलमानी-पाणिग्रहण निषेध रहनेसे वे किसी तरह ही मुसलमानोंके साथ मिल न सके। इसी कारण मौका पाते ही मुसलमानोंकी जड़ खोद डालनेमें उन्होंने जरा भी आनाकानी नहीं की।

४ उत्तरभारतमें जिस तरह अफगानिस्तान और इरानसे स्वधर्मोन्मत्त मुसलमान दल दलमें आ कर वहां हिन्दू विद्वेष अक्षुण्ण रख सकनेमें समर्थ हुए थे, उस तरह महाराष्ट्रमें नहीं हो सका। उत्तर-भारतकी तरह दक्षिणमें नित्य नये इरानी सैन्योंके समागमकी सुविधा न थी। इससे मुसलमानोंको कुछ ही दिनके बाद मरहठोंकी सहायता बाध्य हो कर लेनी पड़ती थी। क्योंकि बिना इनकी सहायताके राजकार्य चल नहीं सकता था। आदि निवाससे अधिकांश सम्बन्धविच्छेद होनेसे मुसलमानोंको कई विषयोंमें हिन्दू मरहठों पर निर्भर करना पड़ा था।

५ उत्तर-भारतमें मुसलमानी दरबारोंमें फारसीभाषा व्यवहृत होती थी, किन्तु पूर्वोक्त कारणसे दक्षिणमें ऐसा न हो सका। यदि हुआ भी तो अधिक दिन तक स्थायी न हो सका। फलतः दरबारमें मराठी भाषाकी प्रधानता थी। मरहठोंके जातीय भाव अक्षुण्ण रखनेका यह एक कारण है।

६ बाह्मनी राज्यके आरम्भसे सिया सुन्नियोंका झगड़ा, वैदेशिक मुसलमानोंके साथ दाक्षिणात्य मुसलमानोंका कलह—इन कारणोंसे मुसलमानोंमें एकताका विनाश हो गया।

७ विजयनगरमें हिन्दूराजाकी वजहसे मुसलमानोंके स्वेच्छाचारमें बाधा तथा मरहठोंके जातीय भाव सुरक्षित रखनेमें आंशिक सहायता मिलना ही ७वां कारण है।

८ महाराष्ट्रदेशका भौगोलिक अवस्थान भी मरहठोंके लिये स्वाभाविक स्वातन्त्र्यप्रियता प्रदान करनेवाला है। महाराष्ट्रदेशका ग्राम्य समूह प्रायः छोटे प्रजातन्त्र राज्य की तरह गठित हुआ है। यथासमय सरकारी मालगुजारी चुका देनेमें भीतरी शासनके काममें राजाको हस्तक्षेप करनेकी जरूरत ही नहीं होती थी। इसी कारणसे देशमें प्रतिष्ठित राजशक्तिके विनाशके लिये मरहठोंके राजनीतिक स्वतन्त्रताके खो देने पर भी ग्राम्यसंगठनके फलसे उनके हृदयसे स्वाभाविक स्वतन्त्रोद्धारका अंकुर विदूरित नहीं हुआ। कार्यदक्षता, अध्यवसाय, राजनीतिक, दूरदर्शिता आदि गुणमें भी वे भारतीय अन्य जातियोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ थे। इसी कारणसे राजपूतोंकी तरह मरहठे अपने प्रनष्ट स्वातन्त्र्यका उद्धार कर ही बैठ न गये, वरं समूचे भारतवर्षमें हिन्दू-साम्राज्यकी प्रतिष्ठा करनेमें अग्रसर हुए थे।

यही सब कारण अधिकांश उत्तर-भारतमें भी मौजूद थे। फिर भी मरहठोंकी तरह आसमुद्र हिमाचलव्यापी हिन्दूसाम्राज्यकी स्थापनाकी चेष्टा न की गई। मालूम होता है, कि अन्तिम दोनों कारणोंके अभावसे ही

ऐसा हुआ था। मरहठोंको स्वातन्त्र्यप्रियताका नमूना मुसलमानी राज्यमें इतिहासके पन्नोंमें भरा पड़ा है। अतएव यहां धर्म और साहित्यगत उन्नतिका संक्षिप्त परिचय प्रदान करनेसे भी महाराष्ट्र जातिके अभ्युदयका अव्यवहित कारण पाठकोंको हृदयङ्गम हो सकता है।

महाराष्ट्र-धर्मोन्नति।

राजपूतों और सिक्खोंकी तरह मरहठोंका अभ्युदय किसी व्यक्ति विशेपकी चेष्टासे या केवल जातीय पौरुष-गुणसे नहीं हुआ है। वे अभिनव धर्मामृत पान करनेसे वलवान् हो अभ्युदयके मार्गमें अग्रसर हुए थे। इसीसे राजपूतों और सिखोंको अपेक्षा इनकी सफलता विशेप रूपसे हुई थी। फलतः समग्र जातिकी वहुत दिनोंकी शिक्षा और साधना विविध तरहकी तथा विभिन्न सम्प्रदायकी क्रमिक धर्मोन्नति और वहुसंख्यक असाधारण पौरुषेय तथा अतुल वुद्धिवैभव आदि समताके फलसे महाराष्ट्र जातिका अभ्युदय हुआ था। इसी कारणसे उनकी उन्नति राजपूतों और सिखोंको तरह एक देशीय न हो कर जगत्‌के आन्यान्य सभ्य जातियोंकी तरह सर्वाङ्गीण रूपसे साधित हुई थी। अच्छी तरह रोपा हुआ पेड़ वड़ा होने पर जिस प्रकार फलफूलोंसे युक्त हो दर्शकोंके मनको मोहता है और कुछ दिन वाद फल फूलके झड़ जाने पर निस्तेज हो जाता है उसी प्रकार महाराष्ट्रीयगण मुसलमानोके कवलसे छुटकारा पानेके वाद उन्नतिके सोपान पर चढ़ कर अतुल ऐश्वर्य और विस्तृत भूभागके अधीश्वर हुए थे। वहांकी प्रायः सभी श्रेणियोंमें असंख्य समर-कुशल, दिग्विजयी वीर, असाधारण प्रतिभासम्पन्न राजनैतिक धर्मसंस्कारक, भगवद्भक्त, योगी, स्वभावजात कवि और समाजसंस्कारक महापुरुषोंने जन्म ले कर महाराष्ट्रीय सभ्यताकी परिपुष्टि की थी। अभी उन सव गुणोंके अभावसे वे लोग ऊपर बतलाये गये पेड़की तरह निष्प्रभ हो गये हैं।

धर्मके विना कभी भो किसी जाति वा साहित्यकी उन्नति और श्रीवृद्धि नहीं होती। जिन सव कारणोंसे महाराष्ट्रदेशमें अब्राह्मण शूद्रोंकी इस प्रकार सर्वविषयणी उन्नति हुई थी, उनमेंसे धर्मसंस्कार ही प्रधान कारण था। महाराष्ट्रीय जातिके अभ्युदयका इतिहास वहांके धर्मोपदेशक भक्त कवियोंके जीवनकी कार्यावलीके साथ घनिष्ठभावमें सम्वन्ध रखता है। अंगरेज-इतिहास लेखक हिन्दूहृदयके धर्मभाव सम्वन्धमें अनभिज्ञतानिवन्धन सुप्रणीत इतिहास ग्रन्थोंमें भी इन सव विषयोंका समावेश नहीं कर सके हैं। इसी कारण हमें यहां पर स्वतन्त्र भावमें इस विषयका उल्लेख करना पड़ा।

वौद्धयुगके अवसानकालमें श्रीमत् शङ्कराचार्यके यत्नसे चतुर्वर्ग मूलक प्राचीन वैदिक धर्मने प्रवर्त्तित और सुसंस्कृत हो कर महाराष्ट्रदेशमे जो आकार धारण किया था वही महाराष्ट्र जातिकी उन्नतिका पथ परिष्कार कर देता है। इस धर्मको महाराष्ट्रदेशमें भागवत धर्म कहते हैं। भागवत धर्मसे वैदिक यागयज्ञादि और वौद्धोंके शुष्क ज्ञानमार्गका माहात्म्य ह्रास हो कर भक्ति प्रधान हरिसंकीर्त्तन, भजन-पूजनादि कार्य्य और जीव-ब्रह्मका विश्वास प्रधान अंगरूपमे गिना जाने लगा। वौद्धधर्मके प्रभावसे जो जातिभेदका मूल शिथिल हो गया था, अभी वह भी दृढ़ हो गया और उसीसे वंश परम्परागत गुणकर्मकी उन्नति होने लगी। इस प्रथाका कुफल दूर करनेके लिये इस नवधर्मके प्रवर्त्तकोंने वर्त्तमान कालके संस्कारोंकी तरह कहीं भी ब्राह्मण-प्राधान्यका लोप करनेकी चेष्टा न कर अपने कौशलसे ब्राह्मणभिन्न जातिको मर्यादा वृद्धिका रास्ता निकाला। पहले ब्राह्मण-सेवा ही शूद्रोंके पक्षमे मुक्तिका एकमात्र उपाय-स्वरूप था। अभी उसके वदलेमें इस ऐश्वरीक तत्त्वपूर्ण सरसधर्ममें ब्राह्मणोंकी तरह शूद्रादिका भी अधिकार हो गया। इस धर्मसेवाका उत्कर्ष दिखा कर समाजमें सम्मानलाभका पथ भी परिष्कार कर दिया गया। ऐसी नूतन व्यवस्थाके फलसे महाराष्ट्र देशमें रामदास और एकनाथस्वामी आदि ब्राह्मणसन्तानोंने जैसा सम्मान पाया था, संन्यासिपुत्र ज्ञानेश्वर, वैश्यप्रवर तुकाराम, शूद्रजातिके नामदेव और वोधले वावा तथा अन्त्यज वोखा आदि भगवद्भक्तोंने भी वैसा ही सम्मान पाया, उससे किसी भी अंशमें कम नहीं। परंतु आजन्म ब्राह्मण-तनया मुक्तावाई और कर्मावाईकी तरह जनादासो और मीरावाई आदि शूद्र जातीय रमणियां भी भक्तिके प्रभावसे आवालवृद्धवनिताकी श्रद्धाभाजन हुई थीं।

जब तक यह अद्वैतवादमूलक भक्तिप्रधान असाम्प्रदायिक भागवत-धर्म संस्कृत भाषामें रचित ग्रन्थोंमें ही आबद्ध रहा, तब तक सर्वसाधारणने इसका कोई अमृतमय सुफल नही पाया। १२वी और १३वी शताब्दीमें आदि कवि मुकुन्दराज, ज्ञानेश्वर और नामदेव आदि प्रसिद्ध साधु पुरुषोंने स्वदेशीय आपामर लोगोंके बीच उदार भागवत धर्मका प्रचार करनेका बीडा उठाया। इससे महाराष्ट्रदेशमें मानो नवजीवनका बीज बोया गया। सबसे पहले मराठी भाषामे मुकुन्दराजने विवेकसिन्धु और परमामृत नामक ग्रंथ लिख कर ब्रह्म, माया, जीवात्मा, परमात्मा तथा मुक्तिके चारों प्रकारके भेद्का विषय जिससे देवभाषानभिज्ञ लोग जान सकें उसका प्रबन्ध कर दिया। इस काममें ज्ञानेश्वरने बहुत कुछ मदद पहुंचाई थी। ज्ञानेश्वरने भी भ्रातृत्ववृत्तिबोध, सोपानमार्ग, अमृतानुभव, अनुगाताकी टीका आदि लिख कर मानवजीवनका अति महत् उद्देश्य क्या है, वह स्वदेश-वासियोंको समझाया। ये लोग आचण्डाल आदिके बीच ब्रह्मज्ञान वितरण करते थे। ज्ञानेश्वरने जो भावार्थदीपिका नामक श्रीमद्भगवद्गीताकी टीका लिखी है वह बहुत लंबी चौड़ी है। यही टीका भक्तिमूलक अद्वैत मत प्रचार करनेका मूल है। १६वी शताब्दीमें इस ज्ञानेश्वरीका पुनः प्रचार करके ही एकनाथस्वामी अपने देशमें धर्मभावको जगानेमें समर्थ हुए थे। वणिक्-पुत्र 'तुका' ज्ञानेश्वरका ग्रंथ पढ़ कर 'तुकाराम बाबा' नामसे तमाम पूजे जाने लगे। यह ग्रंथ महाराष्ट्रवासीको आत्मशक्तिके प्रति निर्भर रहने और मराठी भाषाके प्रति अनुराग दिखलानेके लिये शिक्षा देता है। नामदेवकी कवितावली भी इन सब सद्भावों के परिपोषणमें सहायता करती है। किन्तु आदि कवियोंके इन सब ग्रंथोंका महाराष्ट्र-समाजमें प्रचार होनेसे पहले ही—उन लोगोंका बोया हुआ बीज अंकुरनेसे पहले ही, उत्तर दिशासे मुसलमानी आक्रमणकी प्रबल तरङ्गमाला महाराष्ट्रदेशमें उमड़ आई। इससे आदि कवियोंका सुमहान् उद्देश सिद्ध होनेमें भारी धक्का पहुंचा। इतना होने पर भी उनका बोया हुआ बीज नष्ट नही हुआ। वरन् सैकड़ों शाखा-प्रशाखाओंमें निकल कर उसने महाराष्ट्रवासीका त्रिताप दूर करनेमें सहायता पहुंचाई। किन्तु कुछ दिनके लिये अर्थात् ढाई सौ वर्ष तक मुसलमानोंके कठोर शासनचक्रसे जर्जरित हो कर महाराष्ट्रदेशसे आर्यधर्म और आर्यविद्या विलुप्त सी हो गई तथा अधिवासियोंका जातीय जीवन निष्क्रान्त हो गया।

इस दुःसमयमें एकनाथस्वामी, मुक्तेश्वर, दासोपन्त, आनन्दतनय, वामनस्वामी, रघुनाथस्वामी, गङ्गाधर बाबा, केशवस्वामी, रङ्गनाथस्वामी, मोरयादेव, जयरामस्वामी, तुकाराम और रामदास आदि उदार चरितवाले धर्मोपदेशक कविगण आविर्भूत हो कर महाराष्ट्र-समाज और साहित्यका जो अशेष उपकार कर गये हैं, वह इतिहासमें सुवर्णाक्षरमें लिख रखनेके योग्य है।

वे लोग अपने अपने सुखदुःखके प्रति जरा भी ख्याल न कर गांव गांवमें घूमने और भागवत-धर्मका अर्थ समझा कर लोगोंका अज्ञानान्धकार दूर करने लगे। स्वधर्मालोचनाविमुख, परधर्मावलम्बनप्रयासी, विपन्न जातिको स्वधर्मका सुगमपंथ दिखला कर और प्रेमभक्तिकी शिक्षा दे कर वे लोग शुष्क प्राणमें अमृत सींचने लगे। इधर विधर्मी शासक-सम्प्रदायके निर्यातन और उदार देवभाषाके पक्षपाती कुसंस्कारपरायण, शुष्ककर्मकाण्डके उपासक ब्राह्मण पण्डितोंके विराग और सामाजिक उत्पीडनको सहन करते हुए उन्होंने स्वदेशवासीके कल्याणके लिये कोई कसर उठा न रखी। पीछे उन्होंने विविध अध्यात्म ग्रंथोंकी रचना कर जातीय साहित्यके पुष्टिवर्द्धन और महाराष्ट्र जातिके अमरता-लाभका उपाय निकाला। प्राचीन ग्रीक और लाटिन भाषासे अङ्गरेजी आदि प्रचलित भाषामें बाइबिल आदि धर्मग्रंथोंका अनुवाद हो जानेसे १६वी शताब्दीमें यूरोपमें जिस प्रकार देशव्यापी धर्मान्दोलनने समस्त पाश्चात्य जातिकी मोहनिद्रा तोड़ी थी और उन्नतिका पथ परिष्कार किया था, महाराष्ट्रदेशमें भी उसी प्रकार एकनाथ, मुक्तेश्वर आदिके यत्नसे रामायण, महाभारत, एकादशस्कन्ध भागवत और श्रीमद्भगवद्गीता आदि ग्रंथोंका सरल भाषामें अनुवाद होनेसे उसे पढ़ कर मरहठोंकी स्वधर्मप्रीति बहुत कुछ बढ़ गई। साधुपुरुषोंकी कथकता, संकीर्त्तन और धर्मोप-

देशसे समस्त जातिके निस्तेज प्राणमें अतुल बलका संचार हो आया। अब मुसलमानोंके अत्याचारसे स्वधर्मकी रक्षा करनेके लिये वे लोग अपने प्राणको न्योछावर करने तय्यार हो गये। उक्त साधुगण जनसाधारणको संसारमें रह कर सदाचार ज्ञान, भक्ति और सब जीवों पर समान दृष्टि रखनेकी शिक्षा देते थे। ईश्वरके प्रेममय स्वरूप, सब जीवोंमें उनका अधिष्ठान, साधनमार्गमें विभिन्नता रहते हुए भी साध्यविषयके अभिन्नत्व सम्बन्धमें विश्वास, ये सब उन साधुपुरुषोंके उपदेशसे महाराष्ट्रवासियोंके चित्तमें अच्छी तरह मुद्रित हो गये। केवल यही नहीं, उनके उपदेशसे महाराष्ट्र वासियोंमे एकताका भी संचार हो गया था।

राजपूत जातिके मध्य जिस प्रकार एकताका अभाव देखा जाता है, मरहठोंमें वैसा नहीं है। शौर्य, साहस, सहिष्णुता, सरलता और दूरदर्शिता ादि विविध सद्गुणोंकी तरह एकता भी महाराष्ट्रजातिका एक स्वाभवसिद्ध गुण है। किन्तु उन लोगोंके मध्य मराठा क्षत्रियोंमें विवादप्रियता वा भ्रातृविरोधिता अत्यन्त प्रबल है। इसी दोषसे मुसलमान शासनकर्त्ता विविध कौशलसे उनके मध्य विवाद वह्नि सुलगाने और उन पर अपना प्रभुत्व अक्षुण्ण रखनेमें समर्थ हुए थे। किन्तु पूर्वोक्त साधु पुरुष और भक्त कवियोंके उपदेश तथा धर्मप्रचार-गुणसे आपसकी विवाद वह्नि बढ़ने न पाई और उनके जातीय अभ्युत्थानका सूत्रपात हुआ।

नये धर्मामृतका आस्वाद चख कर उस समय मरहठोंको धर्म पिपासा ऐसी बढ़ गई थी, कि साधुपुरुषोंके धर्मोपदेशपूर्ण कथकता और संकीर्त्तन सुननेके लिये दूर दूर देशके लोग एक जगह जमा होते थे। शिवरात्रि, रामनवमी, जन्माष्टमी और प्रसिद्ध महापुरुषोंके आविर्भाव और तिरोभावादि पर्वोंमें जब एक एक साधुपुरुषके आश्रममें अपरापर साधु-संन्यासिगण शिष्यमण्डलीके साथ आते और मधुर वीणा तथा मृदङ्गादि बजा कर संकीर्त्तन और भक्तिका माहात्म्य गाते थे उस समय वहां हजारोंकी भीड लग जाती थी। इस प्रकार वर्षमें कई बार होता था। इससे धीरे धीरे आपसमें सहानुभूतिका सञ्चार होने लगा। आखिर पण्ढरपुरमें सार्वजनिक धर्म महोत्सवमें वह भाव परिपुष्ट हो कर मरहठोंके स्वाभाविक सम्मिलन और शक्तिका पूर्ण विकाश हुआ।

आषाढ़ी और कार्त्तिकी एकादशी उपलक्षमें महाराष्ट्रदेशके प्रधान तीर्थ पण्ढरपुरमें प्रतिवर्ष बड़ा मेला लगता है। जिस समयको बात कही जाती है, उस समय भी देशके सभी साधुसंन्यासी इस मेलेमें पण्ढरपुर आते थे। वे आपसमें तर्कवितर्क कर अपने अपने धर्ममतको मार्जित और गठित करनेकी कोशिश करते थे। इन सब विभिन्न देशसे आये हुए साधुपुरुषोंके एकत्र दर्शनलाभ और तीर्थाधिष्ठात्री देवताकी पूजा करनेके लिये लाखों नरनारियां पण्ढरपुर आती थीं। महाराष्ट्रदेशमें खास कर पण्ढरपुरमें धर्मोत्सवके समय जातपांतका विचार नहीं किया जाता था। आज भी वहां ब्राह्मणसे ले चण्डाल तक सभी एक जगह जमा होते और हरिकीर्त्तन करते हैं। उस समयके नवदीक्षित सभी श्रेणीके मरहठे भीमानदीके विस्तृत वालुकातट पर इकट्ठे हो कर नाच गानके साथ हरिकीर्त्तन करते थे। भक्तहृदयके आनंदोच्छ्वाससे चारों ओर प्लावित हो जाता था। उस भक्तितरङ्गमें गोता मार कर प्रेमविवशचित्तसे ब्राह्मण चाण्डाल आपसमें आलिङ्गन करते हुए हरिकीर्त्तन करते थे। इससे उनका आपसका मनोमालिन्य दूर हो जाता और एकताका सञ्चार होता था। आजकल जिस प्रकार जातीय महासमिति और प्रादेशिक समितिके वार्षिक अधिवेशनके फलसे भारतवर्षके विभिन्न सम्प्रदायको शिक्षितमण्डलीमें सहानुभूतिका संचार होता है, उसी प्रकार उस समयके साधुपुरुषोंके यत्नसे महाराष्ट्रदेशमें होता था। अन्तमें मरहठोंके इस प्रबल स्वधर्मानुरागने उन्हें स्वधर्म रक्षाके लिये मुसलमानोंका मूलोच्छेद करनेमें उत्साहित किया था। जो लोग इस महत् कार्यको करनेके लिये अग्रसर हुए थे उनके अधिनायकका नाम था महात्मा शिवाजी।

महाराष्ट्रदेशकी तरह इस समय भारतवर्षके दूसरे दूसरे प्रदेशोंमें भी भक्तिप्रधान उदार सार्वजनिक धर्म और सार्वजनिक धर्म-महोत्सवादिका प्रवर्त्तन हुआ था। किन्तु महाराष्ट्रमें इस आन्दोलनसे जैसा अच्छा फल

निकला वैसा और कहीं भी नहीं। महाराष्ट्रोंका स्वाभाविक स्वाधीनतानुराग और सम्मिलन प्रवलता ही ऐसे फलभेदका एक प्रधान कारण था।

मध्ययुगका साहित्य।

१६वीं और १७वीं शताब्दीके साहित्याचार्योंने ज्ञानविस्तार द्वारा महाराष्ट्र-जातिके अभ्युदयका पथ परिष्कार कर दिया था। जो समझते हैं; कि एक दल अशिक्षित डकैतोंके लूट मारके फलसे हो महाराष्ट्रदेशमें मुसलमान शासनका मूल शिथिल हो गया था तथा आखिरमें इन्हीं डकैतोंकी शक्तिके प्रभावसे उत्तर भारतमें मुगल साम्राज्यकी नींव गिरने पर थी, वे भारी भूल करते हैं। उनकी भूल नीचेका विवरण पढनेसे आपे आप सुधर जायेगी। जनसाधारणके मध्य धर्म और साहित्यके ज्ञानविस्तारके फलसे ही महाराष्ट्र-साम्राज्यकी नीव डाली गई थी, इसमें सन्देह नहीं। पहले कह आये हैं, कि मुकुन्दराज और ज्ञानेश्वर इस विभागके पथदर्शक थे। किन्तु उनका ग्रंथ मुसलमान विप्लवके समय विलुप्तप्राय हो गया था जिससे महाराष्ट्र-जाति सुप्त अवस्थामें अपना समय बिताती थी। एकनाथस्वामीने इस सुप्त जातिको जगानेका बीड़ा उठाया। १५४७ ई०में उनका जन्म हुआ। उनका पहला काम था विलुप्तप्राय ज्ञानेश्वरी (भावार्थदीपिका)-का पाठसंशोधन करके उसका वहुल प्रचार करना। एकनाथ और उनके गुरु जनार्दनस्वामी दोनों ही राजकार्यमें निपुण और समर-विद्यामें विशारद थे। जनार्दनस्वामी पहले निज़ाम शाहके मंत्री थे। पीछे संन्यास-ग्रहण कर उन्होंने महाराष्ट्रमें दत्तात्रेयोपासना प्रचलित की। एकनाथने भी कुछ दिन तक मुसलमान-राजाके यहां नौकरी की थी। दोनोंको ही सुलतानकी ओरसे समरक्षेत्रमें उतरना पडा था। पीछे दोनोंने ही शेष जीवन स्वदेशसेवामें—ज्ञान और धर्मके प्रचारमें लगाया।

ज्ञानेश्वरीका उद्धार करनेके बाद एकनाथने मराठी भाषामें रुक्मिणी-स्वयम्बर (१७१२ श्लोक), भावार्थ-रामायण (४० हजार श्लोक), स्वात्मसुख, चतुःश्लोकी भागवत, हस्तामलक, श्रीमद्भागवतका एकादश स्कन्ध (२० हजार श्लोक) आदि ग्रंथ तथा सैकडों पदावलीकी रचना कर जातीय ज्ञानभाण्डारकी पुष्टि की। उनकी रचना वहुत सरल, गम्भीर और प्रीतिप्रद होती थी। उनका सदाचारप्रभाव महाराष्ट्र समाजकी अन्तर्वेल वृद्धिका सहाय हुआ था। सभी श्रेणियोंमें ब्रह्मज्ञानका प्रचार करनेके लिये उन्होंने ग्रंथरचनामें एक अभिनव मनोरम पद्धतिका प्रणयन किया था। चण्डाल तक भी उनकी प्राञ्जल रचना पढ़ और सुन कर मुग्ध होता था।

इस समय दासोपन्त नामक एक और प्रसिद्ध ग्रंथकारने जन्म लिया। उन्होंने श्रीमद्भगवद्गीताकी जो वृहत् टीका लिखी उसका नाम 'गीतार्णव' रखा गया। गीतार्णव सचमुच समुद्रके जैसा विशाल ग्रंथ है। उसमें १ लाख २५ हजार श्लोक हैं। इन व्यासकल्प प्रतिभाशाली ग्रंथकारका १६०८ ई०में देहान्त हुआ। महाराज शिवाजीके पिता राजा शाहजीके गुरु आनन्द-तनय भी इस समयके एक कवि थे। हंसराज नामक किसी साधु पुरुषने इस समय 'वाक्यवृत्ति' और ज्ञानेश्वर-प्रणीत 'अमृतानुभव' नामक ग्रंथकी सरल व्याख्या लिख कर जनसाधारणका वडा उपकार किया। भक्त-चरित लेखक उद्धवचिद् आदि और भी कितने छोटे वडे कवि इस युगमें हो गये हैं।

१६०८ ई०में रामदास, तुकाराम, मुक्तेश्वर और विट्ठल कविका जन्म हुआ। इसके दूसरे वर्ष एकनाथस्वामी इहलोकसे चल वसे। उस समयके राजनीति क्षेत्रमें राजा शाहजी तथा धर्म और साहित्यक्षेत्रमें एकनाथ आदि साधु ग्रन्थकारोंने जो सब कार्य आरम्भ किये थे, रामदास, तुकाराम आदि साधुपुरुषों और शिवाजी, तानाजी मालुसरे और मयूरपन्त आदि राजनीतिविदोंने उनका शेष किया था। रामदास और तुकारामके समय मरहठोंमें सब प्रकारके गुणोंका अपूर्व विकाश छा गया था। इसके बाद एक सदीके अन्दर महाराष्ट्रदेशमें जितने पुरुषोंका आविर्भाव हुआ था, पृथ्वीके और किसी भी देशमें इस थोडे समयके अन्दर उतने नवरत्नोंका आविर्भाव नहीं हुआ।

१७वीं सदीके प्रथम भागमें विलासप्रिय राजयोगी

रङ्गनाथस्वामी थे। उनके बनाये हुए ग्रंथोंमें बृहद्काव्य-वृत्ति, भगवद्गीताकी टीका और योगवाशिष्ठका भाषा-न्तर उल्लेखनीय है। मधुर पदविन्यासके गुणसे निम्नोक्त तीन ग्रंथोंका विशेष आदर है।

रङ्गनाथके भतीजे श्रीधर एक लोकप्रिय कवि थे। उनके बनाये पाण्डवप्रताप, हरिविजय, रामविजय, शिव-लीलामृत और जैमिनीय अश्वमेध ये पांच ग्रन्थ बड़े ही मनोरम हैं। ऐसा ग्रन्थ महाराष्ट्रीय दक्षिण-पथमें बहुत कम देखनेमें आता है। महाराष्ट्र-रमणी-समाजमें और संस्कृत भाषानभिज्ञ पाठकमण्डलीमें श्रीधरसे बढ़ कर और किसी भी कविका सम्मान नहीं हुआ। श्रीधरने जितने ग्रन्थ बनाये उनमेंसे कोई भी ५० हजार श्लोकसे कमका नहीं है। एकनाथके पोते मुक्तेश्वर रामायण और महाभारतके आधार पर दो स्वतन्त्र काव्यग्रन्थ लिख गये हैं। मुक्तेश्वरका रामायण विशेष प्रशंसनीय नहीं होने पर भी महाभारतमें उनकी कविप्रतिभाका जैसा परिचय पाया जाता है वैसा महाराष्ट्र-साहित्य भरमें किसीका नहीं है। साधकप्रवर 'बहिरापिसा'ने इस समय श्रीमद्भागवतका दशम स्कन्ध मराठी भाषामें अनु वाद किया।

१७वीं शताब्दीके दूसरे श्रेष्ठ कवि वामन पण्डित थे। वे भी बहुतसे ग्रन्थ रच गये हैं। वामन पहले घोर द्वैतवादी, कर्मकाण्डके एकान्त पक्षपाती और कट्टर वैष्णव थे। देवभाषा भिन्न प्राकृत जनकथित भाषामें बोलचाल करना वे पाप समझते थे। नाना देशोंमें पर्यटन कर उन्होंने बहुतसे विजयपत्रोंका संग्रह किया था। किन्तु रामदास स्वामीके निकट उनका दर्प चूर्ण हुआ। तभीसे वे अद्वैतमतको अवलम्बन कर भक्ति-मार्गके प्रचारमें लग गये। रामदास स्वामीके उपदेश-से उन्होंने संस्कृतका परित्याग कर देशीय भाषामें ग्रन्थ लिखना आरम्भ कर दिया। मराठी भाषामें यथार्थ-दीपिका नामक उन्होंने जिस टीकाकी रचना की उसमें बड़ी दक्षताके साथ सांख्य, जैन, बौद्ध आदि मतोंका खण्डन और अद्वैतवादका समर्थन किया गया है। ज्ञानेश्वरके भावार्थदीपिकाका प्रसाद-गुण जैसे ओतप्रोतभावमें विद्यमान है यथार्थदीपिकामें भी वैसा ही पाण्डित्य और तर्क विचारका बाहुल्य देखा जाता है। षड्दर्शन और अष्टादश पुराण वामनके करतलगत थे। निगमसार, जीवतत्त्व, कर्मतत्त्व, वेदतत्त्व, ब्रह्म-स्तुति, नामसुधा, कृष्णलीला आदि विषयोंमें उन्होंने मौलिक ग्रन्थकी रचना की है। यथार्थदीपिकाको छोड़ कर अन्यान्य ग्रन्थोंमें प्रसादगुण यथेष्ट देखा जाता है। उनके बनाये हुए भर्तृहरिके तीन शतकका अनुवाद अनेक जगह मूलग्रन्थकी अपेक्षा बहुत सरस हुआ है। महाराष्ट्रदेशमें वामन जैसे उत्कृष्ट काव्यानुवाद और विद्वान् 'न भूतो न भविष्यति' अर्थात् न हुए न होंगे। सरलार्थपूर्ण यमक रचनाका चातुर्य उनकी प्रतिभाका एक प्रधान गुण है।

विट्ठल कवि वामनके पूर्ववर्त्ती तथा महाराष्ट्रीय भाषामें यमक, चित्रकाव्य और कूटश्लोक रचनाके प्रथम पथप्रदर्शक थे। उन्होंने बिल्हण चरित, रसमञ्जरी, विद्व-ज्जीवन, सीता-स्वयम्बर, रुक्मिणी-स्वयम्बर और बहु-संख्यक पदावलीकी रचना कर महाराष्ट्र साहित्यको सेवा कर गये हैं। जयराम स्वामीका शान्तिपञ्चीकरण तथा केशव स्वामी, आनन्दस्वामो और मोरयादेव आदि कवियोंकी भक्तिज्ञानपूर्ण कवितावली भी उल्लेख-नीय है।

अभी तुकाराम और रामदासका नामोल्लेख करनेसे ही इस युगके कवियोंका परिचय एक प्रकारसे शेष हो जाता है। तुकारामका चरित और उनके रचित अभङ्गका विषय पाठकोंको अच्छी तरह मालूम होगा। तुकाराम शब्द देखो। उनकी अभङ्ग नामक भक्तिपूर्ण कवितामाला पढ़ कर बम्बई-शिक्षाविभागके भूतपूर्व डिरे-क्टर सर अलेकजण्डर ग्राण्ट महोदयने कहा है—जिन्होंने तुकारामका अभङ्ग पढ़ा है, उसके निकट नीति-तत्त्वकी प्रशंसा करना वृथा है।

गोदावरीके किनारे जम्बूग्राममें १६०८ ई०को राम-दासका जन्म हुआ। बचपनसे रामकी उपासनामें इनका विशेष अनुराग था। ध्रुव प्रह्लादिका चरित सुन कर बचपनमे ही उनके हृदयमें ईश्वर-दर्शनकी लालसा बलवती हो गई थी। विवाहसे पहले ही वे

घर द्वार छोड़ कर पञ्चवटी चले गये और वहाँ द्वादश-वर्षव्यापी तपस्याका आरम्भ कर दिया। तपस्या और योगसाधनके बाद बारह वर्ष तक भारतके नाना स्थानों-में घूमते रहे। बादमें स्वदेश लौट कर ग्रंथरचनामें लग गये। उनके उपदेश और रचनासे महाराष्ट्रमें युगान्तर उपस्थित हुआ। पूर्ववर्त्ती साधु पुरुषोंके यत्नसे महा-राष्ट्रमें नूतन धर्मोत्साह और ज्ञानानुरागका संचार होनेसे समाजमें जिस नये बलका सञ्चार हुआ था उसे इन्होंने देशकी भलाईमें लगाया। इन्होंने सबसे पहले वैदेशिक-शासनके विरुद्ध उत्तेजनापूर्ण कवितावली लिख कर मरहठोंको स्वराज्यस्थापनमें उत्साहित किया था। दासबोध नामक ग्रंथमें उन्होंने जातीय शिक्षोपयोगी सभी विषयोंका उपदेश भर दिया है। परमार्थसाधन जीवका मुख्य उद्देश्य होने पर भी पार्थिवविषयमें अमनो-योग अकर्त्तव्य है। "स्कूल मेन"-के अनावश्यक ज्ञानके हाथसे बेकनने जिस प्रकार यूरोपवासीका उद्धार कर उनके चित्तको अधिक फल देनेवाले ज्ञानकी ओर खींचा था, उसी प्रकार रामदासने भी आधिभौतिक विषयकी प्रयोजनीयता प्रतिपादन करके महाराष्ट्रवासीके वैराग्य और उदासीनताका निराकरण और उन्हें राष्ट्रोन्नतिका पथ प्रदर्शन किया। बेकनके Advancement of Learning नामक ग्रंथसे रामदासका दासबोध ग्रंथ किसी अंशमें कम नहीं है, वरं आधिभौतिक और आध्यात्मिक उन्नतिके एकता विधान कौशलमें यदि इसे उच्च स्थान भी दिया जाय, तो कोई दोष नहीं। राम-दासके 'पंचीकरण', 'मनोबोध' और रामायणादि ग्रंथ भी कम प्रसिद्ध नहीं है। किन्तु दासबोध ही उनका सर्वप्रधान ग्रंथ समझा जाता है। उनके इस ग्रंथमें अक्षरपरिचय और लिपिपद्धतिसे ले कर स्थापत्यविद्या तक प्रायः सभी लौकिक ज्ञानका उपदेश देखा जाता है। देशकी दुरवस्थादिके वर्णन, पराधीन जातिकी अवलम्बनीय नीति, राजनीति आदि विषयोंके साथ ब्रह्मनिर्वाणलाभके सभी उपाय इस ग्रंथमें वर्णित हैं। उद्यान-रचना, पण्यशाला स्थापन (कारखाना) और दुर्गनिर्माण-पद्धति विषयोंमें भी रामदासने अच्छा उपदेश दिया है। देशकी दुरवस्था और उसके निवारणके उपाय सम्बन्धमें उन्होंने जो लिखा है उसका एक अंश नीचे उद्धृत किया जाता है। इसीसे पाठकोंको मालूम होगा, कि रामदासने साहित्यक्षेत्रमें कैसे विषयोंकी अव-तारणा की थी। उन्होंने लिखा था,—'मुसलमान लोग बहुत दिनोंसे अत्याचार करते आ रहे हैं। हिन्दुओंमें ऐसा एक भी वीर नहीं जो उन्हें उचित दण्ड दे सके। दुष्टोंके अत्याचारसे देव-ब्राह्मणका उच्छेद, सभी धर्म-कर्म भ्रष्ट, तीर्थक्षेत्र विध्वस्त, ब्राह्मणोंके वासस्थान अप-वित्रीकृत, समस्त देश विप्लवपूर्ण और धर्म विलुप्त हो गया है। पापियोंका बल बढ़ जानेसे धार्मिकगण दुर्बल हो गये हैं और देवगण अत्याचारके भयसे छिप रहे हैं। ब्राह्मणगण तिलकमाला आदिका परित्याग कर मुसल-मानोंके अनुकारी हो गये हैं। सबोंका पूर्वसम्मान लोप हो गया है। मुसलमान लोग दुर्बल प्रजाके प्रति कटु भाषाका प्रयोग करते और उन्हें बुरी तरह सताते हैं। अतएव धर्मरक्षाके लिये सभी अपने अपने जीवन-को विसर्जन कर दो, देशका म्लेच्छभाव दूर करो और सभी मराठा मिल कर एक मतावलम्बी हो जाओ। अपने महाराष्ट्रधर्मको फैलाओ, देवद्रोहियोंको कुत्ते समझ कर मार भगाओ। देवताओंको अपने मस्तक पर रख कर एक उद्यमसे सभी उठ खड़े हो और तुमुल-संग्राम ठान दो। अध्यवसायके साथ सभी चारों ओरसे म्लेच्छों पर टूट पड़ो। स्वदेशद्रोहियोंका विनाश कर देशकी रक्षा करो। धर्मस्थापनके लिये नये देशको फतह करो तथा चारों ओर महाराष्ट्र-धर्म और महा-राष्ट्र राज्य फैलाओ। अभी समय है, सतर्क हो जाओ, नहीं तो पीछे पछताओगे।'

रामदासके शिष्यगण जब इस उत्तेजनामयी वाणीको ओजस्विनी भाषाकी कवितामें मरहठोंके दरवाजे दरवाजे गाने लगे, तभी नूतन महाराष्ट्र साम्राज्यकी नींव डाली गई। महात्मा शिवाजी जैसे उद्यमशील क्षत्रिय युवकने रामदासका शिष्यत्व स्वीकार किया, स्वधर्म और स्वदेशरक्षाकी प्रबलाकांक्षाने सारी महा-राष्ट्र जातिको उन्नत कर दिया। शिवाजीके नेतृत्वमें महाराष्ट्रवासी दक्षिणपथसे मुसलमानी राज्यकी जड़ उखाड़ फेंक देनेके लिये बद्धपरिकर हुए।

ज्ञानेश्वर और मुकुन्दराजने परमार्थज्ञान और भक्ति सूत्रके अवलम्बन पर महाराष्ट्र-साहित्यकी प्राणप्रतिष्ठा की थी। परवर्त्ती कवियोंकी चेष्टासे वह क्रमशः परिपुष्ट हो कर आखिर रामदासके असामान्य प्रतिभावलसे अपूर्वविजयश्रीमें विभूषित हुआ। उस समय महाराष्ट्र-साहित्यके इस पूर्णविकाशकालमें वहुसंख्यक भक्तरमणियोंने सात्त्विकभावपूर्ण कविता लिख कर मातृभाषाको अलंकृत किया था। शेख महम्मद नामक एक मुसलमान-कविने योगसंग्राम नामक ग्रंथकी रचना और तुकारामकी तरह पण्ढरपुरके विट्ठलदेवकी उपासनामें अपना तन मन लगा दिया था। इसी समय मराठी गद्यरचनाका भी सूत्रपात हुआ। मरहठा सरदारों द्वारा अनुष्ठित युद्धादिकी विजयवार्त्ताके आधार पर गीतिकविता रचनाकी प्रथा भी इसी समयसे प्रवर्त्तित हुई। फलतः महाराष्ट्रियोंके जातीय अभ्युदयसे कुछ पहले महाराष्ट्र-साहित्यकी इस प्रकार पूरी उन्नति हुई थी।

अभ्युदय।

महाराष्ट्रीय जातिके अभ्युदयको उपादान-सामग्री किस प्रकार मुसलमानोंके शासनकालमें ही परिपुष्ट हुई थी, धर्म और साहित्यगत उन्नतिके फलसे किस प्रकार महाराष्ट्र जनसाधारणका चित्त सुसंस्कृत और आत्मनिर्भरशील हो उठा था, किस प्रकार मुसलमानोंके आत्मकलह और दुर्बलताकालमें मराठागण दीवानी, फौजदारी और देशरक्षा आदि कामोंमें कार्यदक्षता और बुद्धिमत्ता दिखलाते हुए मुसलमानोंके दाहिने हाथ बन गये थे, उसीका विवरण यहां तक लिखा जा चुका। इसी समयमें रामदासने पार्थिवज्ञानपूर्ण अपूर्व वीररसप्रधान साहित्यकी सृष्टि करके किस प्रकार स्वदेशवासीके हृदयमें स्वाधीनताका बीज बो दिया था, वह भी पाठकको मालूम ही है। अभी किस प्रकार विभिन्न नेताके अधीन यह महाजाति उन्नति पथ पर बढ़ने लगी और किस प्रकार फिरसे उनकी अवनति हुई वह पाठकगणको शिवाजी शम्भाजी, राजाराम, शाहु, पेशवा माधव राव, रघुनाथ राव, सदाशिव राव, माधव राव नारायण, बाजी राव, सिन्दे (सिन्धिया), होलकर आदि शब्द पढ़नेसे भलिभांति मालूम होगा। यहां पर तत्संक्रान्त कुछ प्रयोजनीय विषयोंका संक्षेपमें उल्लेख किया जाता है।

ऊपर लिखी घटनामें जो शामिल थे, सबसे पहले स्वदेशका उद्धार करना जिनके जीवनका महाव्रत था, उन्हें बहुत सी कठिनाइयां झेलनी पड़ी थीं। स्वदेशमें जो सब मराठा सुलतानके अधीन रह कर अच्छे अच्छे ओहदे पर थे तथा जागीर पा कर चैनसे दिन बिताते थे उनमेंसे बहुतेरे शिवाजी-प्रमुख स्वदेशोद्धारकामी मरहठोंके विरुद्ध खड़े हुए। क्योंकि, उन लोगोंको संदेह था, कि शायद स्वदेशोद्धारकामियोंकी चेष्टा सफल न हो। इस कारण अनिश्चित-स्वाधीनताके लिये अपनी नौकरी पर लात मार कर विद्रोहमें शामिल होना उन्होंने अच्छा नहीं समझा। इन स्वदेशविरोधियोंमेंसे मोरे, सुरवे, दलवी, सावन्त, शिरके आदि बाहुबलसे तथा मोहिते, माने, गुजर आदि कौशलसे स्वपक्षमें लाये गये थे। वैदेशिक शत्रुओंमें विजापुरके पठानवंशीय सुलतान और उत्तर भारतके मुगल इस स्वाधीनतालोलुप मरहठोंके प्रधान विरोधी थे। दोनों शक्तिके साथ एक समयमें युद्ध करना अच्छा न समझ कर शिवाजी प्रमुख मराठाओंने विजापुरके सुलतानके विरुद्ध चढ़ाई कर दी और मुगलोंसे मेल कर लिया। १६६२ ई० तक वे लोग विजापुरके सुलतानकी सेनाओंको परास्त करते रहे। जब उन्होंने देखा, कि सुलतानकी बार बार पराजयसे आत्मशक्ति कुछ बढ़ गई तब मुगलोंको भी धीरे धीरे वे लोग दक्षिणापथसे हटानेकी कोशिश करने लगे। किन्तु उनकी यह चेष्टा सहजमें फलवती न हुई। मरहठोंने साइस्ताको परास्त तो किया, पर उन्हें भी मुगलपक्षीय सेनापति जयसिंहके हाथसे अपनी पराजय स्वीकार करनी पड़ी। उसका फल यह हुआ, कि दलपति शिवाजी दिल्ली जानेको वाध्य हुए। वहां जा कर उन्हें ऐसी मुसीबतें उठानी पड़ीं, कि नवप्रतिष्ठित महाराष्ट्र-राज्यका अंकुर ही नष्ट होना चाहता था। किन्तु कर्मचारियोंकी विश्वस्तता और देशीय जनसाधारणकी सहानुभूतिसे वीर शिवाजीके उन्नतिपथमें जरा भी बाधा न पहुंची। कुछ दिन बाद शिवाजी अपने असाधारण चातुर्य बलसे दिल्लीसे भागे। अब उन्होंने फिरसे

मुगलोंके साथ युद्ध ठान दिया। मराठोंने अलौकिक उत्साह और बलवीर्य दिखलाते हुए सिंहगढ आदि बहुतसे दुर्ग मुगलोंके हाथसे छीन लिये। दिल्लीके बादशाह औरङ्गजेबको भी शिवाजीकी स्वतन्त्रता स्वीकार करनी पड़ी। महाराष्ट्रमें स्वाधीन हिन्दू राजाका स्वतन्त्र सिक्का चलने लगा। मराठोंको इस पर भी संतोष नहीं हुआ। इस समय स्वदेशवासियोंमेंसे कितने उनके साथ मिल गये थे, इस कारण आत्मवृद्धि देख कर वे लोग खान्देशसे मुगलोंको भगानेकी कोशिश करने लगे। सालर और चन्दरमें मुगलोंकी पूरी तरह हार हुई (१६७० ई०में)।

अब शिवाजीका ध्यान विजापुरके शासनसे दक्षिण-महाराष्ट्रके उद्धारकी ओर दौड़ा। युद्धमें बार बार हार खा कर विजापुरके सुलताननें आखिर महाराष्ट्रकी अधीनता स्वीकार कर ली। अब १६७४ ई०की ६ठी जूनको बड़ी धूमधामसे मुसलमानप्लावित भारतवर्षमें स्वाधीन हिन्दू राजा शिवाजी राज-सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। रायगढ़में स्वाधीन महाराष्ट्रकी राजधानी हुई। महाराष्ट्रदेशमें गो, ब्राह्मण और सनातनधर्म निष्कण्टक हुआ। इस स्वाधीन राज्यको मरहठा लोग 'स्वराज्य' कहते थे।

अभिषेकके समय अन्यान्य पराराष्ट्रके दूतोंकी तरह इष्ट इण्डिया कम्पनीके दूत भी रायगढ़में उपस्थित हुए थे। अंगरेज और पुर्त्तगीज आदि पाश्चात्य जातियोंके साथ मित्रता करके शिवाजीने पाश्चात्य नौविद्या और जलयुद्धका कौशल सीखा। पीछे उन्होंने कोली नामक धीवर जातिको ले कर एक महाराष्ट्रीय नौसेना दलका संगठन किया। अन्तमें इसी नौसेनाके हाथसे अंगरेजों और पुर्त्तगीजोंको कई बार परास्त होना पड़ा था।

इसके बाद शिवाजीके सैन्यदलने कर्णाटकको जीत कर स्वराज्यकी सीमा बढ़ाई। इस प्रकार मरहठोंका उत्कर्ष देख मुसलमान जलने लगे और उनका दमन करनेको तुल गये। बहुत जल्द लड़ाई छिड़ गई। मुगल-सेनापति दिलेर खांको शिवाजीके हाथ पराजय स्वीकार करनी पड़ी। इस चढ़ाईके बाद ही अधिक परिश्रमके कारण शिवाजीका स्वास्थ्य खराब हो गया। फलतः थोड़े ही दिनोंके मध्य अर्थात् १६८० ई०की ५वीं अप्रेलको महाराष्ट्र-शिरोमणि वीरशिवाजी इस लोकसे चल बसे।

शिवाजीकी चेष्टासे महाराष्ट्र राज्य मजबूत नींव पर खड़ा हो गया था। उन्होंने मुगल पठानकी तरह राजाके हाथ कुछ इख्तियार न सौंप कर आठ मन्त्रियोंके ऊपर राजकार्यका कुल भार सौंपा था। ये आठ मन्त्री "अष्ट प्रधान" कहलाते थे। राजाको इन आठ मन्त्रियोंकी सलाह लिये विना कोई काम करनेका अधिकार नहीं था। उन आठोंके नाम भी उन्होंने प्राचीन संस्कृत भाषाकी पद्धतिके अनुसार रखे थे। नीचे उनके नाम, काम और वेतनका विवरण दिया गया है :—

	संस्कृत नाम	पारसी नाम	कार्य	कर्मचारीके नाम	वेतन
१	पन्तप्रधान	पेशवा	प्रधान मन्त्रित्व	मोरोतिमल पिङ्गले	वार्षिक १५००० होन
२	पन्त अमात्य	मजुमदार	राजस्व उगाहना और हिसाव रखना	नीलसोमदेव	,, १२००० ,,
३	पन्त सचिव	सुरनीस	दफ्तरखानेका अध्यक्ष	अन्नाजी दत्त	,, १०००० ,,
४	मन्त्री	वांकानवीस	प्राइभेट सेक्रेटरी	दत्ताजी पन्त	,, ,,
५	सुमन्त्र	दवीर	परराष्ट्रसचिव	सोमनाथ पन्त	,, ,,
६	सेनापति	सरनोवत	सर्वसेनाध्यक्ष	प्रतापराव गुजर और हम्बीरराव	,, ,,
७	न्यायाधीश	——	प्रधान विचारपति	बालाजी पन्त और नीराजी रावजी	,, ,,
८	पण्डित राव	——	धर्माध्यक्ष	रघुनाथ पण्डित	,, ,,

मुगलोंको राज्य-व्यवस्थाका मूलसूत्र सामरिक विभागके कर्मचारियोंके हाथ सौंपा था। इससे प्रजाके शुभ अशुभका विचार अच्छी तरह नहीं होता था। किन्तु शिवाजीका लक्ष्य था प्रजावृद्धि। इसीसे उन्होंने राजकार्यको १८ भागोंमें विभक्त किया था। प्रत्येक विभागमें स्वतन्त्र परिदर्शक कर्मचारी था। शिवाजीने कर्म-

चारियोंको नगद रुपये देनेकी प्रथा निकाली। सेनापतियों और सचिवोंको भी जागीर देना शुरू कर दिया गया। सभी राजकीयपद कर्मचारीके जीवनव्यापी किये गये। मुसलमानी जमानेमें अन्यान्य पैतृक सम्पत्तिकी तरह पिताके पद पर भी पुत्रका अधिकार रहता था। इससे प्रजाके प्रति अत्याचार और राजकार्यकी उन्नति होने नहीं पाती थी। आठ प्रधान मन्त्रियोंसे मन्त्रिसभा संगठित कर प्रत्येक राजकार्यमें उनसे सलाह लेनी पड़ती थी। आगे चल कर अष्ट प्रधान पद्धति उठा दी गई जिससे महाराष्ट्र राज्यकी विशेष क्षति हुई थी।

शिवाजीकी शासनप्रणालीमें एक और विशेषता थी वह थी देश देशमें दुर्गका निर्माण। वैदेशिक आक्रमणसे देशको बचानेके लिये स्वराज्यके उत्तर, पश्चिम और दक्षिणमें उन्होंने ३।४ सौ दुर्ग बनवाये थे। वे सब दुर्ग प्रायः मण्डलाकारमें महाराष्ट्रभूमिको चारों ओरसे घेरे हुए हैं। समुद्रके किनारे जलमें भी द्वीपके ऊपर दुर्ग बनवा कर उन्होंने सिद्दी, अंगरेज, पुर्त्तगीज आदिके आक्रमणसे बचनेका प्रबन्ध भी कर दिया था। महाराष्ट्रके समतल प्रदेशमें प्रसिद्ध नगरोंकी रक्षाके लिये चहारदीवारी भी बनाई गई थी। प्रत्येक दुर्गमें एक मराठा जातिका हवलदार और उसकी अधीनतामें एक ब्राह्मण सबनीस (सेनालेखक) और प्रभुकायस्थका कारखानानवीस कर्मचारी रहता था। दुर्गरक्षा, दुर्गसंस्कार, दुर्गाधीन प्रदेशकी राजस्व व्यवस्था और दुर्गमें रसद जुटानेका भार भी उन्हीं पर सौंपा गया था। प्रत्येक दुर्गमें सभी वर्णोंके कर्मचारी समान संख्यामें रहते थे, इससे वर्णगत विद्वेषादि बढ़ने नहीं पाता था। परवर्त्तीकालमें यह प्रथा भी उठा दी गई। एक एक दुर्ग और प्रदेशमें एक ही वर्णके कर्मचारियोंपर कुल काम सौंपा गया। इससे जातिभेदजनित मात्सर्यका उदय हुआ और मूलशक्तिका प्रभाव धीरे धीरे जाता रहा।

सामरिक विभागमें स्वाधीन महाराष्ट्र राज्यकी प्रतिष्ठार्थमें जो नूतन संस्कार प्रवर्त्तन किया गया था उसीसे महाराष्ट्र जातिका सौभाग्य गर्व अनेकों विघ्न बाधाओंके रहते हुए भी दीर्घकाल तक अक्षुण्ण रहा। भारतमें सभी जगह सेनापतियोंको तनखाहके बदलेमें जागीर मिलती थी। स्वयं सेनापति ही सैनिकोंको तनखाह देते थे। इससे प्रकृत सेनादलके साथ राजाका विशेष परिचय नहीं रहता था। जब सभी सेनापति बागी हो जाते थे, उस समय सेनादल भी राजाका पक्ष न ले कर सेनापतिका ही पक्ष लेता था। महाराष्ट्रमें सबसे पहले इसी कुप्रथाका संस्कार हुआ। सामान्य पदातिसे ले कर प्रधान सेनापति तक सभी राजसरकारसे ही नगद रुपये तनखाहमें पाने लगे। शताधिप जुम्लेदारका वेतन एक सौ होन (साढ़े तीन रुपयेका एक होन), एक हजारी सरदारका ५ सौ होन और पांच हजारी सेनापतिका २॥ हजार होन स्थिर हुआ। महाराष्ट्रमें घुड़सवार सेना दो भागोंमें विभक्त थी। जो राजसरकारसे घोड़े और अस्त्रशस्त्र ले कर युद्ध करते थे वे बारगीर और जो अपने घोड़े, ढाल, तलवार और बन्दूक ले कर युद्ध करते थे वे शिलेदार कहलाते थे। शिलेदारी करना मरहठा लोग अति गौरवका कार्य्य समझते थे। इन्हें भी महीनवारी तनखाह ६ होनसे १२ होन तक मिलती थी। तनखाह नियत समयमें देनेका प्रबन्ध था। सेनादलमें स्त्री, दासी, कलवार आदिका प्रवेश निषिद्ध था। लूटका माल सैनिकोंको नहीं मिलता था, राजसरकारमें जमा किया जाता था। इन सब नियमोंका कोई उलङ्घन न कर सके, इसके लिये गुप्तचर नियुक्त रहता था। जो रणक्षेत्रमें वीरता दिखलाते थे, उन्हें राजकोषसे सुवर्णादि अलङ्कार पुरस्कारमें मिलता था। शिवाजीकी चेष्टासे महाराष्ट्रीय नौसेनादलों और जंगी जहाजोंकी ऐसी चल बनी, कि हबसी, पुर्त्तगीज और अङ्गरेज आदि जलयुद्ध-कुशलजातियोंको भी उनके निकट पराभव स्वीकार करना पड़ा था। १६६५ ई०में शिवाजीके अधीन ३०से १५० टन तक माल लाद कर ले जानेके लिये ८५ छोटे और ३ बहुत बड़े जहाज थे। इससे ६ वर्षके बाद महाराष्ट्रराज्यके जंगी जहाजकी संख्या १६० तक हो गई थी। इन्हीं सब जहाजोंके बलसे मरहठे लोग सिद्दी और पुर्त्तगीजोंको दमन करने तथा अङ्गरेजोंके हाथसे बम्बईके निकटस्थित कनेरी (Kennery) द्वीपका उद्धार करनेमें समर्थ हुए थे। काह्नोजी आङ्ग्रे,

दरियासागर, मैनाक भण्डारी और इब्राहिम खाँ आदिके नाम महाराष्ट्र एडमिरल वा नौसेनाध्यक्षोंके मध्य इतिहासमें बहुत प्रसिद्ध हैं।

नवप्रतिष्ठित महाराष्ट्र-राज्यकी राजस्व व्यवस्था भी प्रजाके पक्षमें सुखकर थी। पहले प्रजामण्डली उपजका ⅔ भाग मालगुजारीमें देती थी, पर अब नगद रुपये देनेका नियम जारी हुआ। पहले ठेकेदारोंके ऊपर मालगुजारी उगाहनेका भार था, पर इस समयसे सरकारी कर्मचारी स्वयं उगाहने लगे। दीवानी मुकद्दमेका फैसला ग्राम्य पंचायत द्वारा ही होता था। विशेषज्ञ अङ्गरेज राजनीतिज्ञ भी कहते हैं, "In provinces in which the laws of Shivaji remained in force, there was nothing to improve but much to imitate," समूचा राज्य बारह महालोंमें विभक्त था। महालके अध्यक्ष वार्षिक ४ सौ होन पाते थे। राज्यकी वार्षिक आय ५३ लाख रुपयेकी थी। अलावा इसके मुगल राज्यसे कर (चौथ) और लूटका माल भी आता था। मरहठोंको धर्मोन्मादकताके फलसे यह नया राज्य प्रतिष्ठित होने पर भी इसलाम धर्म पर आघात करनेकी मरहठोंने कभी भी कोशिश नहीं की। मुसलमानोंकी मसजिदकी देख भाल, खर्च वर्चा और मुसलमानोंप्रजाको आध्यात्मिक उन्नतिके लिए शिवाजीने भूमिदानको व्यवस्था कर दी थी।

इस विप्लवपूर्ण समयमें भी महाराष्ट्रपतिका देशमें विद्याप्रचारकी ओर विशेष ध्यान था। टोल पाठशाला आदि खोलनेके लिए शास्त्रज्ञ ब्राह्मणोंको राजकोषसे वार्षिक वृत्ति मिलती थी। संस्कृत और मराठी भाषामें ग्रन्थ-रचनाके लिये ग्रन्थकार राजासे पुरस्कार पाते थे।

शिवाजीकी मृत्युके बाद महाराष्ट्र-समाजका नेतृत्व दुर्भाग्यवशतः सम्भाजीके हाथ आया। एकनाथ और रामदास आदि ब्राह्मणोंके धर्मभावकी उत्तेजनासे, तानाजी मालुसरे और प्रताप राव आदि क्षत्रिय वीरोंके बाहुबलसे तथा बालाजी चिटनोस आदि कायस्थोंके नीतिकौशलसे शिवाजी जैसे प्रतिभाशाली धर्मप्राण राजाके नेतृत्वाधीनमें महाराष्ट्रराज्य जिस परिमाणमें उन्नतिकी चरमसीमा तक पहुंच गया था उनके दुर्वृत्त पुत्र सम्भाजीके कर्मदोषसे वह उसी परिमाणमें रसातलको चला गया। सम्भाजी शौर्य और सामर्थ्य हीन तो नहीं थे, पर उनकी ओर व्यसनासक्ति और प्रकृष्ट राजनीतिज्ञानके अभावसे सारे महाराष्ट्र समाजको विपन्न होना पड़ा था। शाहजादा अकबरको उन्होंने आश्रय दिया था, इस कारण औरङ्गजेब स्वयं १२ लाख (काफी खांके मतसे २० लाख) सेना ले कर दक्षिणपथ जितनेके लिये १६८३ ई०में नर्मदा नदी पार हुए। सम्भाजीको व्यसनासक्त देख कर जंजीरामें सिद्दीने और गोआमें पुर्त्तगालोंमें सर उठाया। इन सब शत्रुओंके साथ जो युद्ध हुआ था उसमें सम्भाजीने असाधारण वीरता दिखलाई थी। किन्तु उनको यह मालूम नहीं था, कि बहुतसे शत्रुके उपस्थित होने पर एकसे युद्ध और दूसरेसे सन्धि करना उचित है। इस विषयमें वे अष्ट प्रधानकी सलाह भी नहीं लेते थे। सिद्दी, पुर्त्तगीज और अंगरेज आदि शत्रुओंके साथ युगपत् समर आरम्भ करके भी उन्होंने असाधारण शौर्य बलसे सबोंसे अनुकूल संधिपत्र ले लिये थे। इन सब युद्धप्रसङ्गमें महाराष्ट्रीय नौसेनाने अलौकिक समर कौशल दिखलाया था। गोआके निकट कोण्डदुर्गमें पुर्त्तगीजोंके साथ जो युद्ध हुआ उसमें मरहठोंने पुर्त्तगीजोंके दो सौ यूरोपीय और एक हजार देशीय सैनिकोंके सिर काट डाले थे। औरङ्गजेब उस समय यदि दक्षिणपथमें न रहते तो सम्भव था, महाराष्ट्रगण पुर्त्तगीजोंको समूल नष्ट कर देते।

१६८३ ई०में औरङ्गजेबको मुगलसेनाके साथ बागलानमें मराठोंका घोर युद्ध हुआ। मराठोंने इस युद्धमें मुगलोंको नितान्त जर्जरित कर दिया। सुप्रसिद्ध निजाम उल मुल्क जब बहुतसे प्रसिद्ध सेनापतिओंके साथ रामसेज दुर्ग जीतनेको गये, तब उन्हें मराठोंके हाथसे हार खा कर लौट जाना पड़ा। शिवाजीके शिष्य हम्बीर राव मोहिते इस समय मराठा सैन्यदलके अधिनायक थे। कोङ्कण जीतनेके लिये मुगलोंके कदम बढ़ाने पर महाराष्ट्रीय सैन्यदलने अव्यवस्थित युद्धनीतिका अवलम्बन कर उन्हें ऐसा विपन्न कर डाला, कि भागनेका रास्ता भी नहीं मिला। असंख्य मुगलसेना मराठा सैनिकके

हाथसे और रसदके अभावमे परलोक सिधारी। इस प्रकार बार बार परास्त होनेसे मुगलोंने मराठोंके साथ कलह छोड़ दिया और विजापुर तथा गोलकुण्डा आदि का अस्तित्व मिटानेके लिये संकल्प किया। दो तीन वर्ष तक मुगलसेनाको महाराष्ट्रके विरुद्ध कोई कार्रवाई करनेका साहस नहीं हुआ। मूर्ख सम्भाजी इस अवकाशका यथोचित सद्व्यवहार न करके पुनः व्यसनासक्त हो गये। उनकी विलासिता और अव्यवस्थाके दोषसे राजकोष खाली पड़ गया, राजस्व भी वसूल नहीं होने लगा। शिवाजीकी प्रवर्त्तित नियमावली भी उपेक्षित होने लगी। इन सब कारणोंसे देशमें अराजकता फैल गई।

१६८७ ई०में औरङ्गजेवने फिरसे मरहठोंके साथ युद्ध ठान दिया। वाईके निकट मुगल सरदार सर्जे खांके साथ जो युद्ध हुआ उसमें सेनापति हम्बीरराव एक गोलेके आघातसे पञ्चत्वको प्राप्त हुआ। इस समय एक दल मुगलसेना कर्णाटक जीतनेके लिये रवाना हुई। सम्भाजीने भी अपना सैन्यदल वहां भेजा। युद्धमें मुगलोंकी हार हुई, किन्तु इधर महाराष्ट्र-रक्षाका कोई भी उपाय नहीं किया गया। कर्णाटकसे प्रधान सेनादलके लौटनेसे पहले मुगल लोग महाराष्ट्रमें भारी ऊधम मचा रहे थे। १७८८ ई०के शेष भाग तक सम्भाजी बड़ी वीरतासे मुगल-सम्राट्के साथ युद्ध करते रहे। पीछे उनका मन विलासिताकी ओर झुका। युद्धादिको छोड़ छाड़ कर वे सङ्गमेश्वर चले गये और वहीं आमोद प्रमोदमें समय बिताने लगे। यह संवाद पा कर मुगल-सेनापति उन्हें अनायास कैद कर दिल्ली ले गये। वहां वादशाहने उन्हें निष्ठुरभावसे मरवा डाला। इस प्रकार मरहठा लोग मुगलोंको बार बार परास्त करके भी सुयोग्यनेताके अभावमें सुफल लाभ न कर सके।

पेशवा और सम्भाजी देखो।

स्वाधीनताके लिये युद्ध।

महात्मा शिवाजीके पुत्रके इस शोचनीय परिणाम पर महाराष्ट्र समाजमें सनसनी फैल गई। उन्होंने सम्भाजीके लड़के शाहुजीको जो बहुत छोटे थे, गद्दी पर बिठा कर मुगलोंके विरुद्ध युद्धघोषणा कर दी। किन्तु दुर्भाग्यवशतः थोड़े ही दिनोंके अन्दर किसी विश्वासघातक मराठाके दोषसे रायगढ मुगलोंके हाथ चला गया। उसके साथ साथ छोटा बालक शाहु अपनी माता यसुबाईके साथ मुगलोंके हाथ वन्दी हुआ। अष्टप्रधानोंने बड़ी मुशकिलसे भाग कर अपनी जान बचाई। इसके बाद एक एक करके प्रायः सभी दुर्ग मुगलोंके हाथ आने लगा। १२ लाख मुगलसेनाने महाराष्ट्रको चारों ओरसे घेर लिया। बहुतोंने तो यह समझा, कि महाराष्ट्र-राज्य शून्यमें विलीन हो गया। किन्तु ज्ञान और धर्मकी नींव पर जो राज्य खड़ा था, वह उस घोर संकट-कालमें भी नष्ट नहीं हुआ। इधर इस दुर्घटनामें सभी महाराष्ट्र वीरोंने प्रकृत पौरुष, स्वदेशप्रीति और स्वदेश-रक्षामें अपने सद्गुणोंका अच्छा परिचय दिया।

इसके बाद सम्भाजीके छोटे भाई राजाराम राजसिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। वे व्यसनारहित, दयालु और परार्थपरायण थे। किन्तु क्षत्रियजनोचित प्रखर तेज उनमें बिलकुल नहीं था। रायगढ़ दुर्ग शत्रुके हाथ जाने पर वे अष्टप्रधानकी सलाहसे कर्णाटकके अन्तर्गत जिञ्जिदुर्गमें अपनी राजधानी उठा ले गये। अमात्य रामचन्द्र पन्त पर विशालगढ़ और पहाड़ा दुर्गमें रह कर महाराष्ट्ररक्षाका भार सौंपा गया। सम्भाजी घोरपड़े और धनाजी यादव नामक दो सेनापतिके हाथ जिञ्जि और महाराष्ट्रके मध्यभागमें घूम घूम कर मुगलसेनाको रसद बंद करनेका भार रहा। राजारामने जिञ्जी जा कर नये अष्टप्रधानको निर्वाचन किया। अब वे शिवाजीके चलाये हुए नियमोंके अनुसार कुल काम करने लगे। इधर सम्भाजीके मारे जाने तथा विजापुर और गोलकुण्डाके अस्तित्व लोप पर मुगल वादशाह औरङ्गजेवके आनन्दका पारावार न रहा, उनका उत्साह पहलेसे दूना हो गया। अब उन्होंने हिन्दुओं पर वीभत्स अत्याचार करना शुरू कर दिया। कहते हैं, कि वे विजयोन्मत्त हो कर हिन्दूसैन्यदलका धर्म नष्ट करनेमें उतारू हो गये थे। किन्तु इससे विपरीत फलकी सम्भावना देख उन्हें उस संकल्पको त्यागना पड़ा। जो कुछ हो, मुगलोंके हाथसे अपना धर्म जाते देख महाराष्ट्रवीर सबके सब बागी हो गये। उन लोगोंके राजा राजाराम (शिवाजीके

कनिष्ठ पुत्र) उस समय स्वदेशसे विताड़ित हो कर मुसलमानोंके भयसे मान्द्राजप्रान्तके 'जिञ्जी' दुर्गमें रहते थे। रायगढ़ आदि प्रधान प्रधान दुर्गों पर मुगलोंने कब्जा कर लिया था। मरहटोंमें सुशिक्षित सैन्यकी संख्या भी बहुत थोडी थी। समाजमें दो चार विश्वासघातक देश वैरीका अभाव नहीं था। किन्तु इन सब प्रतिकूल अवस्थामें रहते हुए भी वे लोग स्वधर्म और स्वराज्यकी रक्षाके लिये बद्धपरिकर हुए, धर्मोत्साहसे प्रमत्त हो प्रचण्ड सागरतरङ्ग सदृश मुगलसेनाको गति रोकनेके लिये आगे बढ़े। जो कोई एक बल्लम भी किसी तरह पा लेता था, वही मुगलोंके पीछे दौड़ पडता था। उन लोगों को और भी उत्साहित करनेके लिये राजारामने जिंजीसे विविध पुरस्कारकी घोषणा कर दी। अब उनकी भीषण रणोन्मत्तता देख औरङ्गजेबके भी छक्के छूट गये। मरहठोंके स्वधर्म और समधर्मियोंकी रक्षार्थ प्राणविसर्जन का संकल्प करने पर शाही सेनाको जगह जगह हार होने लगी। बारह लाख सुशिक्षित सेना ले कर मुट्ठी भर मराठी सेनाके साथ सत्तरह वर्ष तक लगातार युद्ध कर के भी औरङ्गजेबने विजयकी कोई आशा न देखी।

इस समय सन्ताजी घोरपडे और धनाजी यादव इन दोनों सेनापतिने असाधारण वीरता दिखलाई थी। ये दोनों शिवाजीके समयसे ही महाराष्ट्रीय सामरिक विभागमें काम करते थे। इनकी कर्णार्जुनके साथ यदि उपमा दी जाय तो, कोई अत्युक्ति न होगी। मुसलमान इतिहास लेखक काफी खां कहते हैं—"सन्ताजी मुगलसरदारोंको नाकों दम लाया था। उनके सामनेसे कोई भी मुगल-सैनिक जीता नहीं लौट सकता था। बडे बडे मुगल योद्धा भी उनके सामने दहल जाते थे। उनके साथ युद्धमें जयलाभ कर सके, ऐसा एक भी सरदार मुगलपक्षमें नहीं था।' एक बार सन्ताजी श्येन पक्षीकी तरह मुगलके खेमे पर टूट पड़े और उसके ऊपरका स्वर्ण-कलस ले कर ही लौटे। उस समय औरङ्गजेब खेमेमें नहीं थे, नहीं तो उनकी जान पर आ बनती। धनाजीमें भी कम वीरता न थी। उनके नाममात्रसे मुगल तुरङ्गदलमें भीतिका संचार हो गया था। कहते हैं, कि उनका नाम सुननेसे ही मुगलोंका घोड़ा चमक कर पानी पीना छोड देता था।

इधर भीमा नदीके किनारे शाही सेना छावनी डाल कर पडी हुई थी। उधर धनाजी और सन्ताजी आदि महाराष्ट्रवीर दक्षिणमें कर्णाटकसे उत्तर खानदेश तक सभी देशोंमें विप्लव खड़ा कर एक एक करके सभी मुगलथानाओंको जीतने लगे। विशाल मुगलसेना जब उनका पीछा न कर सकी, तब वे कर्णाटकमें राजारामको पकड़नेकी कोशिश करने लगी। यह ले कर १६६४ ई०को उमेरी नामक स्थानमें दोनोंमें मुठभेड़ हुई। सन्ताजीके हाथ मुगल सरदार कासिम खाँ मारे गये।

उधर बादशाही सेनाने जुलफकर खाँकी अधीनतामें जिंजी दुर्गमें घेरा डाल दिया था। पांच वर्ष तक घेरा डाले रहने पर भी राजाराम और उनके सहचरोंने पराजय न स्वीकार की। आखिर बादशाहके जिंजी जीतनेके लिये कठोर आदेश देने पर मुगलसेनाने प्राणपणसे युद्ध करके जिंजीको अधिकार किया। किन्तु दुर्गमें प्रवेश कर उन्होंने देखा, कि राजाराम और उनके सचिवगण उसके पहले ही दुर्गसे भाग गये हैं। यह घटना १६६८ ई०में घटी।

राजाराम जिंजीसे भाग कर महाराष्ट्र लौटे और सतारामें राजधानी बसाई। वहांसे सभी सरदारोंको साथ ले उन्होंने मुगलोंके विरुद्ध युद्धयात्रा कर दी। इस अभियानके फलसे उत्तर महाराष्ट्रके जो सब प्रदेश मुगलोंके शासनाधीन थे, वहांसे सरदेशमुखी और चौथ वसूल किया गया।

इसी समय १७०० ई०में राजारामकी मृत्यु हुई; किन्तु इस दुर्घटना पर भी महाराष्ट्र वीर जरा भी विचलित न हुए। १६८०से १७०० ई० तक बीस वर्षके भीतर एक एक करके शिवाजी, सम्भाजी और राजाराम इस लोकसे चल बसे। तिस पर भी मराठोंके उत्साह और उत्कर्षका जरा भी ह्रास न हुआ।

"छिन्नोऽपि रोहति तरुश्चन्द्रः क्षीणोऽपि वर्द्धते।"

इस न्यायके अनुसार मराठोंका अध्यवसाय और विक्रम दिनों दिन बढ़ने लगा। धनाजी और रामचन्द्र पन्तप्रमुख महाराष्ट्र-वीरोंने जरा भी मुगलोंको चैनसे बैठने न दिया। उनके आकस्मिक आविर्भाव और तिरोभाव, शीतग्रीष्म वर्षाके समान उत्साह, क्षुधा, तृष्णा और विश्रामके प्रति अमनोयोग तथा फिरसे समरोद्यम

आदि देख कर मुगल-सेनापति स्तम्भित हो गये और कहने लगे "मरहठे लोग आदमी नही हैं—ये तो भूत हैं।" इसके बाद बादशाहने स्वयं मरहठोंके विरुद्ध चढ़ाई की, पर कोई फल न निकला।

मरहठोंकी कालान्तक मूर्त्ति संहार न होती देख मुगलसैनिक लौट जानेको वाध्य हुए। किन्तु मरहठोंके विक्रमसे उनका भागना भी उनके लिये बहुत कष्टकर हो उठा। वृद्ध सम्राट् बिलकुल हताश हो गये और राहमें 'वृथा जन्म गया' कह कर प्राणत्याग किया। यह १७०७ फरवरीकी घटना है। अब दक्षिणपथमें हिन्दूधर्म प्रायः निष्कण्टक हो गया। स्वधर्म और स्वदेशकी रक्षाके लिये प्रबल पराक्रान्त मुगल बादशाहके साथ ऐसी प्रतिकूल अवस्थामें लगातार युद्ध करनेका भारतकी और किसी भी जातीको साहस न हुआ। अकृत्रिम धर्मोत्साह और गभीर स्वदेशभक्ति यदि समग्र जातिकी नस नसमें भरी न होती तो, कभी भी ऐसा दुसाध्य कार्य नहीं हो सकता था। फलतः इस समय महाराष्ट्रदेशमें स्वधर्मानुराग और स्वदेशप्रीतिका ऐसा अपूर्व विकाश था, कि वैसा शिवाजीके समयमें भी नही दिखाई दिया था। फलतः शिवाजी जो राष्ट्रीय भावका बीज वपन कर गये थे, उस बीजने आज अंकुरित और पल्लवित ,हो दुर्द्धर्ष मुगलोंके दांत खट्टे कर दिये थे।

सम्भाजीकी हत्याके बाद उनके स्त्री पुत्रको मुगलगण बन्दी कर ले गये थे। उनको उद्धार करनेके लिये मराठागण पंद्रह वर्ष तक लगातार चेष्टा करते रहे, पर कृतकार्य न हो सके। औरङ्गजेबके मरने पर मरहठोंका बल, दर्प और साहस ऐसा बढ़ गया, कि नये बादशाह १७०८ ई०में उन्हें कारामुक्त करनेको वाध्य हुए। उन्होंने समझ रखा था, कि शाहके देश लौटने पर राजारामके पुत्रके साथ उनका कलह खड़ा होगा। इससे नव प्रतिष्ठित महाराष्ट्रराज्य क्षार क्षार हो जायगा और तब दाक्षिणात्यमे फिरसे मुगल-साम्राज्य स्थापनका उन्हें अवसर मिलेगा। औरङ्गजेबका भी ऐसा ही विश्वास था। कारण, तरुण सम्राट्की तरह वे भी महाराष्ट्रशक्तिका मूल तत्त्व क्या है, उसे समझ न सके थे। महामति रामदासने महाराष्ट्रसमाजमें जो स्वधर्मानुरागका बीज वपन किया था उसके इतने थोड़े समयमें नष्ट होनेकी बिलकुल सम्भावना न थी।

चार वर्षके अन्दर ही मरहठोंने अपने अपने गृह विवादको निवटा लिया। परवर्त्ती चार वर्षोंके भीतर उन्होंने देशकी भीतरी शान्ति-शृङ्खलाका विधान और यथोपयुक्त बलका संग्रह किया। पेशवा शब्द देखो।

इसके बाद सारे भारतवर्षमें हिन्दूधर्मकी विजय-पताका फहरानेके लिये वे लोग प्राणपणसे लग गये। १७१८ ई०में दिल्लीश्वरको काबू करके पेशवा बालाजी विश्वनाथने उनसे दाक्षिणात्यकी देशमुखी और चौथ उगाहनेकी सनद ले ली। यही सनद आगे चल कर मरहठोंके स्वधर्म और स्वराज्य विस्तारकी प्रधान उपाय-स्वरूप हुई। हिन्दूधर्म रक्षाके लिये "हिन्दूपत् बादशाही" अर्थात् स्वाधीन हिन्दू साम्राज्य-स्थापनकी आवश्यकता इसके पहले ही मालूम हो गई थी। हिन्दूधर्मका निग्रह करके मुसलमान लोग स्वधर्मानुरागी मरहठोंके बड़े विद्वेषी हो गये थे। इस कारणसे भी इस समय 'मुगल-शाही'की जगह भारतवर्षमें 'हिन्दूशाही'का स्थापन उन लोगोंका प्रधान लक्ष्य हुआ।

चौथ।

मुगलोंके शासनकालमें देशकी शान्ति-रक्षा और बाहरी शत्रुओंके आक्रमणसे राज्यको बचानेके आयोजनमें साधारणतः राजस्वका चतुर्थांश व्यय किया जाता था। महात्मा शिवाजीकी चेष्टाके फलसे महाराष्ट्रशक्तिने जब देशमें प्रधानता प्राप्त की, तब महाराष्ट्र-राजे दुर्बल पड़ोसी राज्यकी शान्तिरक्षा और शत्रुओंके आक्रमणसे बचानेका भार लेने लगे। इन पड़ोसी-आश्रित राज्योंके राजस्वका चतुर्थांश या "चौथ" इनको मिलने लगा। फलतः इसी "चौथ"से मरहठे राजे दूसरे राज्यकी रक्षाके लिये रखी गई सेनाओंका व्यय निर्वाह करते थे।

इस तरहका चौथ ले कर अपनी सेनाओंके पोषणके व्ययभारको लाघव करनेकी कल्पना पहले पहल महात्मा शिवाजीने ही की थी। वे बहुत दिनोंसे विजापुर और गोलकुण्डाके सुलतानोंसे और मुगल सम्राट्से उनके राज्यकी रक्षा करने तथा उसके वेतन स्वरूप उनके

'चौथ'के लिये प्रार्थना करते थे। अन्तमें सन् १६६८ ई०में मुगलोंके आक्रमणके भयसे भयभीत हो दक्षिणके सुलतानोंने चौथस्वरूप आठ लाख रुपये शिवाजीको देना स्वीकार किया। इस पर शिवाजीने उनकी रक्षाका भार अपने ऊपर लिया उस समय केवल शिवाजीकी सहायतासे ही बिजापुर और गोलकुण्डाके सुलतानोंने मुगलोंके भीषण आक्रमणसे रक्षा पाई थी। इस तरह सर्वसम्मतिसे पहले पहल दक्षिणमें "चौथ"-की प्रथा प्रचलित हुई।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं, कि आत्मरक्षानीति-के वशवर्त्ती हो कर राजनीतिज्ञ शिवाजीने इस चौथ-प्रथाका उद्भावन किया था। उन्होंने समझ लिया था, कि दूसरे राज्यकी रक्षाका भार ले उसके बदलेमें चौथ न लेनेसे भारतमें महाराष्ट्र शक्तिकी प्रतिष्ठा नहीं हो सकेगी। कारण, इसके द्वारा प्रथमतः परराष्ट्रके व्ययसे महाराष्ट्रोंकी सैन्य संख्या और सामरिक बल बढ़ेगा। दूसरे जो राज्य महाराष्ट्र सैनिकोंसे रक्षित होगा, उन सब राज्योंसे महाराष्ट्र राजशक्तिको विशेष कोई अनिष्टकी आशङ्का न रहेगी। तीसरे 'चौथ' नामसे शान्ति रक्षाका वेतन होने पर भी कार्यतः वह सामन्तोंके निकट प्रधान राजशक्तिका प्राप्त 'कर' समझा जाने लगा। इति-हासज्ञ पाठकोंको अविदित नहीं, कि ईस्वीसन्‌से १९वीं शताब्दीके प्रारम्भमें मार्क्विस आफ वेलेसली साहबके द्वारा प्रवर्त्तित "सबसिडियरी सिष्टम" भी इसी नीतिके आधार पर हुआ था। जो हो, सन् १६८० ई०में शिवाजीके स्वर्गारोहणसे पहले ही दक्षिण-भारतकी सभी हिन्दू-मुसलमान राजशक्तियोंकी सम्मतिसे उनकी रक्षाका भार ग्रहण और उसके बदलेमें चौथ वसूल करनेकी प्रथाने जोड़ पकड़ लिया था।

शिवाजीकी मृत्युके बाद सम्राट् औरङ्गजेब मरहठों-की स्वतन्त्रताको अपहरण कर उनकी शक्तिको चूर्ण-विचूर्ण करनेके लिये यथासाध्य चेष्टा करने लगे। किंतु स्वाधीनता-प्रिय महाराष्ट्रीय वीरोंके असाधारण शौर्य-गुणसे उसके सब यत्न ही विफल हुए। बीस वर्ष युद्ध करनेके बाद सन् १७०५ ई०में सम्राट्‌ने उनको सनद प्रदान की थी। वरं उन्होंने देशकी अशान्ति दूर करनेके लिये उसने उन लोगोंको दक्षिण-भारतस्थित मुगल-शासित प्रदेशके सरदेशमुखी सत्त्व या समग्र राजस्वके दशमांश—वार्षिक १ करोड़ अस्सी लाख रुपया देना स्वीकार किया। इसके लिये सरदेशमुखकी तरह अपने सैन्य द्वारा दक्षिण-भारतके शाही प्रदेशोंकी शान्तिरक्षा-का भार उन्हें लेनेको कहा गया। किन्तु इस पर मरहठे सम्मत और सन्तुष्ट नहीं हुए। वे सरदेशमुखीके साथ शिवाजीकी चलाई उस 'चौथ'-प्रथाके प्रवर्त्तनके लिये बादशाहसे प्रार्थना करने लगे। क्योंकि उस समय देशमें जिस तरह असंख्य राज्यों और स्वातन्त्र्यप्रिय पुरुषोंका आविर्भाव हुआ था, उससे यथोपयुक्त सैन्य न रखनेसे देशमें शान्ति तथा मरहठोंकी रक्षाकी सम्भा-वना न थी। किन्तु सम्राट्‌के चौथप्रथाके स्वीकार न करने पर फिर दोनों पक्षोंमें युद्ध आरम्भ हुआ। अन्तमें १७१० ई०में औरङ्गजेबके पुत्र फर्रुखसियरने आंशिक रूपसे और उसके बाद सन् १७१९ ई०में सम्राट् महम्मद शाहने सम्पूर्णरूपसे मरहठोंको सरदेशमुखी सत्त्व तथा चौथ प्रथाके चलानेके लिये सनद प्रदान की। बाजीराव पेशवाके पिता बालाजी विश्वनाथ स्वयं दिल्ली जा कर शेषोक्त सनद ले आये।

सनद लाभ करके भी मरहठे सर्वत्र चौथ प्रथाको प्रचलित कर न सके। दिल्लीके बादशाहके सूबेदारोंने और दूसरे स्वातन्त्र्य-प्रिय राजाओंने भी बिना युद्धके महाराष्ट्रोंके रक्षणाधीन स्वीकार करनेमें असम्मति प्रकट की। निजाम उल मुल्क इनमें प्रधान था। इसीलिये बीस वर्षों तक उसके साथ मरहठोंको लड़ना पड़ा था। बाजीराव पेशवाने इस युद्धमें विशेष प्रसिद्धिलाभ किया था। क्योंकि मरहठोंके एकमात्र वे ही नेता थे। मरहठोंसे बारंबार आक्रान्त हो कर निजामको उनकी रक्षणाधीनता और चौथ प्रथाको स्वीकार करना पड़ा था। इसके बाद दक्षिणके सभी छोटे बड़े राजाओंको भी मरहठोंकी प्रधानता स्वीकार करनी पड़ी। फलतः बालाजी विश्वनाथने मुगलोंसे अपने स्वदेश-वासियोंके लिये जो सनद प्राप्त की थी, उनकी जीवनव्यापी चेष्टाके फलसे ही मरहठे उस यथार्थ फलभोगके अधिकारी हुए थे।

केवल यही नहीं, शाही सनदके अनुसार उत्तर-भारतमें चौथ उगाहनेकी क्षमता मरहठोंको नहीं थी। इससे बाजीरावके पूर्व समग्र भारतसे चौथ वसूल करनेकी कल्पना अन्य किसीके मस्तिष्कमें उदय नहीं हुई। वीर श्रेष्ठ बाजीरावने ही सर्वप्रथम समग्र भारतवर्षको चौथ प्रथाके सूत्रमें आवद्ध कर कन्याकुमारीसे हिमालयके शिखर पर स्थित 'अटक' तक समूचे देशकी शान्ति रक्षा या शासन और पालन करनेका भार वहन करनेको महनीय आकांक्षा की थी। महाराज शाहुके मन्त्रिमण्डली और फौजें बाजीरावकी इस महती आकांक्षाको देख चकित स्तम्भित हो उनको इससे प्रतिनिवृत्त करानेकी चेष्टा करने लगी। किन्तु बाजीरावने यह कह कर मरहठोंमें उत्साहानल प्रज्ज्वलित किया, कि भारतमें हिन्दू शक्ति और हिन्दूधर्मका पुनः प्राधान्यकी प्रतिष्ठा करना और विधर्मी शासनका अन्त करना प्रत्येक महाराष्ट्र-सन्तानका आवश्यक कर्त्तव्य है। इसके विषयमें महाराज शाहुके दरबारमें उन्होंने ओजस्विनी भाषामें जो भाषण किया, उसको सुन कर समस्त महाराष्ट्र-सरदारोंने एक मत हो कर भारतमें हिन्दूप्राधान्य-स्थापनमें अग्रसर होना ही अपना कर्त्तव्य स्थिर किया। शिवाजीके द्वारा प्रवर्त्तित चौथ प्रथाकी सहायतासे भारतवर्षमें हिन्दू-साम्राज्य स्थापनके लिये अग्रगमन नीतिका (Forward policy) प्रचार ही बाजीरावके चरित्रका विशेषत्व है। इस नीतिके अनुसरण करनेमें सारे मरहठोंको एकता-सूत्रमें बांधना ही उनके चरित्रका प्रधान महत्व है। उसी महत्वके प्रभावसे हिन्दुस्तानमें सौ वर्ष पर्यन्त हिन्दुओंका प्राधान्य परिरक्षित हुआ था।

महाराज शाहुकी आज्ञासे बालाजी विश्वनाथके पुत्र बाजीराव दिल्लीपतिकी दी हुई सनद हाथमें ले कर कार्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण हुए। अटकसे दक्षिण रामेश्वर तक समग्र भूभागमें हिन्दूसाम्राज्य प्रतिष्ठा करनेके लिये स्वदेशवासियोंको उन्होंने उत्साहित किया। इसी समय दाक्षिणात्यमें निजाम उल मुल्क बहुत प्रतापान्वित हो उठे थे। उनकी कुटिलतासे या घरफोड़ी नीतिके फलसे मरहठोंमें कई बार गृहविवाद उपस्थित हुआ था। किन्तु बाजीरावने कई युद्धोंमें उसका और दिल्लीके बादशाहका दर्प चूर्ण किया था और यमुनासे तुङ्गभद्रा तक समस्त देशोंसे चौथ वसूल करनेकी व्यवस्था की। दिल्ली दरबार और निजामके सारे उद्यम नष्ट हुए। पेशवा देखो।

महाराष्ट्र सामन्त-मण्डल।

बाजीरावने जिस नीतिका अवलम्बन कर कार्यारम्भ किया था, उसके फलसे महाराष्ट्रदेशमें एक अभिनव सामन्तमण्डलकी सृष्टि हुई। इस सामन्तमण्डलको अङ्गरेजीमें (The Maratha Confederacy) कहते हैं। कनफेडेरेसी कहनेसे सामन्तका भाव नहीं मालूम होता, किन्तु पहले पहल जब यह मण्डल स्थापित हुआ, तब उसमें राजमण्डलकी अपेक्षा सामन्तमण्डलका भाव ही अधिक था। महाराष्ट्र राज्यके छत्रपतिके प्रधान मन्त्रीके रूपमें मण्डलान्तर्गत जिस किसी सामन्तको पदच्युत करनेका अधिकार पेशवाको था। पीछे केन्द्रशक्तिके दुर्बल होनेसे सामन्तोंने बहुत कुछ स्वतन्त्रताका अवलम्बन किया था। शिवाजीके आठ प्रधानके बदलेमें जिस तरह इस नूतन मण्डलकी सृष्टि हुई थी वह इतिहासप्रिय पाठकोंसे छिपा नहीं है। महाराष्ट्र-इतिहासका यह अंश समझनेसे पहले पाठकोंको शाहुजीके दरबारमें बाजीरावने जो व्याख्यान दिया था, उसका स्मरण करना होगा।

पेशवा शब्दमें व्याख्यान देखो।

औरङ्गजेबके साथ बीस वर्ष तक अनवरत युद्ध कर मरहठे अपनी स्वातन्त्र्य रक्षामें कृतकार्य हुए और बालाजी विश्वनाथकी अद्भुत चेष्टाके फलसे राज्यमें आभ्यन्तरीण शान्तिकी स्थापना हुई। इसके बाद मरहठोंकी उन्नतिके लिये किस प्रथाका प्रयोजन है—यह समस्या बाजीरावके सामने उपस्थित हुई थी। शिवाजी द्वारा प्रवर्त्तित नियमावलीको अनुसरण कर इतने दिनों तक मरहठे विपद्में भी आत्मसंरक्षण करनेमें समर्थ हुए थे, किन्तु इस घोरविपद्से पार होनेके बाद उन्होंने देखा, कि मरहठोंके स्वदेशमें बंधे रहने पर उनका मङ्गल नहीं होगा। मुसलमानोंकी शक्तिका केन्द्रस्थल दिल्ली पर अधिकार न कर सकनेसे यवनोंका प्रभाव और देशके म्लेच्छभाव दूर होनेकी सम्भावना नहीं। दिल्लीमें जब

तक मुसलमान-शक्ति अक्षुण्ण रहेगी तब तक मरहठे निश्चिन्त हो कर शान्तिरक्षा न कर सकेंगे। क्योंकि दिनों दिन क्षीण होते रहने पर भी उसकी अनेक शाखायें भारतवर्षके विभिन्न प्रदेशोंमें परिव्याप्त हो रही थी। इस शाखाशक्तिसमूहके क्रमशः स्वातन्त्र्य अवलम्बन करने पर भी वे अपनेको मुगलसाम्राज्यका प्रधान अवयव समझते थे। उनकी यह धारणा थी, कि भारतवर्षका शासनाधिकार भी न्यायानुसार उन्हींको मिलना चाहिये। केन्द्रशक्तिका ह्रास होने पर भी वे अपने बाहुबलसे भारतके विविध अंशोंमें मुसलमान गौरव अक्षुण्ण रखेंगे—ऐसा उन्होंने सङ्कल्प किया था। इस शाही शक्तिका विनाश होने पर भी वे अपना प्रभुत्व अक्षुण्ण रखनेमें विरत नहीं हुए।

मरहठोंने सोचा, कि शिवाजीके समयसे ५० वर्ष अनवरत चेष्टा करने पर जब मुसलमान शक्तिको दमन करनेमें हम समर्थ हुए हैं, हमने स्वदेश स्वतन्त्रताको लौटा लिया है, तब सूबेदारोंको प्रभुत्व क्यों करने देंगे। दूसरे मुसलमानोंकी केन्द्रशक्तिके विनष्ट होने पर भारतवर्ष एक तरह विना राजाका हो गया था। सभी मुगलसम्राट्के स्थानको अपने बाहुबल और बुद्धि चातुर्यसे अधिकारमें लेनेकी चेष्टा कर रहे थे। मरहठोंके साथ युद्ध करनेसे ही मुगल-सिंहासन शक्तिहीन और शून्यप्राय: हुआ था। ऐसी दशामें उनके रहते मुसलमान आ कर मुगलसिंहासनको अधिकार कर लें—मरहठे यह कैसे सह सकते थे। इसीसे देशमें फैले हुए मुसलमानोंका उच्छेद साधन कर महाराष्ट्र साम्राज्यका विस्तार करना मरहठोंने अपना कर्त्तव्य स्थिर किया। महाराष्ट्रकेशरी शिवाजीके समयमें ही इस नीतिका सूत्रपात हुआ था। उन्होंने महाराष्ट्रके स्वाधीनता-सम्पादनके बाद दक्षिण कर्नाटक प्रदेशको भी विजय किया था। इसी समयसे कन्या कुमारी अन्तरीप तक मरहठोंका प्रसार हुआ था। इस समय उत्तरमें नर्मदाको पार कर दिल्लीके राजनीति क्षेत्रमें प्रवेश करनेका अधिकार प्राप्त करनेकी इच्छासे मरहठे वीरोंके लिये नितान्त स्वाभाविक था।

बालाजी विश्वनाथ और उनके वंशधरोंके मनमें भी ऐसी धारणा हुई थी। बाजीरावने शाहुके दरबारमें जो व्याख्यान दिया था, उसका भी मर्म ऐसा ही था। मरहठोंके दिल्लीके सिंहासन पर अधिकार न करने पर भी जब दूसरा इस पर अधिकार कर लेना चाहे, तब मरहठोंके हो दिल्ली पर अधिकार कर लेनेमें क्षति क्या है? पेशवोंके मनमें १८वीं शताब्दीके अन्त तक यही भाव जमा हुआ था। समग्र भारतमें हिन्दूसाम्राज्यकी स्थापनामें कैसी दिक्कत उठानी पड़ेगी, शिवाजीके समयमें इसका अनुमान किया जा नहीं सकता था। किन्तु पेशवोंके लिये यह बहुत तरहसे सहज हो गया था। विशेषतः दिल्लीके प्रति समस्त जातिकी कुदृष्टि करा दे सकने पर स्वदेशके छोटे छोटे मुसलमान राजाओंका नष्ट करना सहज हो जायेगा—यही सोच कर वे अग्रगमननीतिकी विशेष पक्षपाती थे। प्रतिनिधि परशुराम त्रिम्बक आदि कई राजपुरुष बाजीरावकी आकर्षताको न देख सकनेके कारण या अन्य किसी कारणसे भारतमें हिन्दू साम्राज्यके स्थापनके घोर विरोधी थे।

परिणाम देख कर विचार करनेसे कहना होगा, कि प्रतिनिधिकी अपेक्षा पेशवाकी नीति ही अधिकतर श्रेयस्कर थी। क्योंकि, दिल्लीकी शक्तिके क्षीण होते ही भारतीय क्षमताशाली व्यक्तियोंने ही बादशाही गौरवके उत्तराधिकार या समस्त भारतका प्रभुत्व लाभ करनेकी चेष्टा की थी। ऐसे समयमें उस प्रतियोगिताके क्षेत्रसे दूर रहना मरहठोंके लिये कठिन था। उच्चाकाङ्क्षा या दुराकांक्षाकी अपेक्षा आत्म-रक्षिणी नीतिके वशवर्त्ती हो कर उन लोगोंको इस पथका अनुसरण करना पड़ा था। पचास वर्षके बाद वृटिश राज्य-स्थापक क्लाइव भी इसी तरहके विचार और कार्यप्रणालीका अनुसरण करने पर बाध्य हुए थे। बालाजी विश्वनाथने सैयदोंके सहाय द्वारा दुर्बल बादशाहसे जिस तरह चौथ और सरदेश-मुखीकी सनद मिली थी, सन् १७५५ ई०में क्लाइवने भी उसी तरह शाह आलमसे दीवानीकी सनद प्राप्त की थी।

बाजीरावने शाहुके दरबारमें जो भाषण दिया था और भविष्यमें कर्त्तव्यके लिये जिस नीतिका अनुसरण करना स्थिर किया था, उसके फलसे महाराष्ट्रसाम्राज्यमें एक सामन्तमण्डलीकी सृष्टि हुई। उनकी स्थिर की हुई

नीतिके अनुसार ही काय करना कर्त्तव्य समझ कर पेशवाने तदुपयोगी कार्य करनेका आयोजन किया। महाराज शाहु शिवाजीकी तरह प्रतिभासम्पन्न न होने पर भी वुद्धिमें कम न थे। उन्होंने पेशवाकी नीतिका मर्म समझ करके ही उसका समर्थन किया। किन्तु इस प्रणालीको कार्य में परिणत करनेकी क्षमता उनमें नहीं थी। समरकुशलता तथा शौर्य्यगुण उनमें जरा भी न था। फिर भी, उस समय शौर्य्यके सिवा दूसरे गुणोंका आदर वैसा नहीं होता था। बाजीराव शौर्य्यगुणके आधार पर थे, इसीसे महाराज शाहुने बाजीरावको प्रधान मन्त्री या यों कहिये, दूसरी तरहसे उनको महाराष्ट्रसाम्राज्यका नेतृत्व प्रदान किया था। प्रतिनिधिके पक्षके कितने ही सरदार उनके अधीनमें कार्य्य करना नहीं चाहते थे। यदि महाराज शाहु स्वयं नेतृत्व करते, तो महाराष्ट्रदेशके सभी वीर उनके आदेश पालनमें साग्रह आगे बढ़ते। किन्तु शाहुजी नेतृत्व ग्रहण करनेमें असमर्थ थे। इसीसे प्रतिनिधि आंग्रे, दभाड़े, गायकवाड़, आदि बूढ़े सरदारोंने नये पेशवाके अधीन कार्य्य करनेमें अनिच्छा प्रकट की। महाराज शाहुके आज्ञापालनमें अन्यथाचरण करनेवाला उस समय कोई भी न था फिर भी, उन बूढ़े सरदारोंके साथ पेशवाका कभी सौहार्द न था। इससे उन सरदारोंकी सहानुभूति प्राप्त न हुई। इसी अभावके कारण पेशवाको दूसरे मन्त्रिमण्डलकी स्थापना करनी पड़ी। इस तरह पेशवाकी चेष्टासे शिन्द, होलकर, पवार और पटवर्द्धन आदि नये सरदारोंकी सृष्टि हुई। इस नये सरदारोंकी सृष्टि एक और कारणसे अनिवार्य्य हो उठी थी। दिल्लीके सिवा मध्य भारत, मालव, वङ्ग, गुजरात, कोङ्कण (जञ्जिरा) दक्षिण कर्नाट आदि स्थानोंमें मुसलमान शक्तिके छोटे छोटे केंद्र थे। उन केन्द्रोंको विना सर्वनाश किये महाराष्ट्र साम्राज्यकी निर्विघ्नता और उद्देश्यकी पूर्त्ति होनेकी सम्भावना नहीं थी। इसी कारणसे इन केन्द्रोंकी मुसलमान शक्तियोंका दमन करनेके लिये प्रत्येक स्थानमें एक एक महाराष्ट्रीय सरदार नियुक्त करनेका प्रवन्ध किया गया था। इसीसे इन सब सरदारोंको कुछ स्वतन्त्रता प्रदान कर मुसलमान शक्तियोंके वक्षस्थल पर महाराष्ट्रीय नई राजधानी कायम करनेकी आज्ञा दी गई। इस तरह मध्यभारतमें शिन्द, मालवा, पवार और होलकरको रखा गया। स्थिर हुआ, कि भोंसलेको नागपुरमें वङ्गीय मुसलमानों पर शासन करनेका अधिकार देनेकी आज्ञा दी जाय। सेनापति दभाड़ेको गुजरातका भार दिया गया। कोङ्कणमें आंग्रे सिद्दी पुर्त्तगीजों और अन्यान्य पश्चिमीय डाकुओंको दमन करनेके लिये रखे गये। निजाम समग्र दक्षिणका सूबेदार था, पेशवाने उसका दमन करनेका भार स्वयं अपने ऊपर लिया। भारतके अति दक्षिणांशमें पहले कुछ दिनों तक भोंसले, पीछे घोरपडे, और इसके बाद पटवर्द्धन सरदार हिन्दूप्राधान्य-रक्षाके लिये प्रस्तुत हुए। इस तरह समग्र भारत-साम्राज्यमें महाराष्ट्रीय शासन प्रवर्त्तित करनेका उपाय पेशवा बाजीराव और उनके पुत्र बालाजी बाजीरावकी चेष्टासे किया गया। फलतः ग्वालियर, धारवाड, इन्दोर, नागपुर, पूना, कोलावा, मोरज प्रभृति नगरोंमें महाराष्ट्र-साम्राज्यकी नई राजधानियां कायम हुईं। क्रमशः शिवाजीके सङ्कीर्ण महाराष्ट्र-समाजका स्थान इस तरह एक विशाल महाराष्ट्र समाज बन गया। इस समाजके पेशवा ही नेता हुए। दुर्भाग्यकी बात इतनी ही थी, कि महाराज शाहु यह नेतृत्व पद ग्रहण करनेमें समर्थ नहीं हो सके। इसलिये जिसने इस स्कीम (उपाय) की रचना की है, उसी पर यानी पेशवा पर इसको कार्यमें परिणत करनेका भार देना पड़ा था। फलतः शाहुके आदेश और इच्छासे पेशवा पर ही महाराष्ट्र समाजके नेतृत्वका भार अर्पित हुआ। बाजीरावके बाद इस दायित्वपूर्ण कामका भार बालाजीके हाथ सौंपा गया। आंग्रे, दभाड़े, भोंसले और गायकवाड़ प्रभृति विशेष मर्य्यादाशाली सरदारोंकी इच्छाके विरुद्ध शाहु बालाजीको नेतृत्व प्रदान पर बाध्य हुए। क्योंकि उस समय शाहुकी समझमें बालाजीकी अपेक्षा महाराष्ट्रमें कोई योग्यतर व्यक्ति नहीं था। फिर उस समय महाराष्ट्र-समाजका नेतृत्व करनेके लिये अपेक्षाकृत योग्य व्यक्तिकी आवश्यकता थी। बालाजी बाजीरावने अपनी असीम शक्तिसे महाराष्ट्रसाम्राज्यको बढ़ाया था। किंतु पुराने और नये सामन्त-मण्डल पर वे यथोचित प्रभुत्व

रख न सके। इसीसे एक ओर नया देश जीत कर महाराष्ट्र साम्राज्यकी उन्नति, दूसरी ओर सरदारोंके पर स्पर झगड़े और उद्दामव्यवहारसे साम्राज्यकी जड़ खोखली होने लगी।

फलतः परवर्त्ती पेशवाओंकी कमजोरीसे सामन्त-मण्डलके क्रमशः स्वाधीन होने पर भी, भारतके मुसल-मानोंके दमनका कार्य बहुत कुछ सुसाधित हुआ था। उनके बीचमें परस्पर झगड़ा न होने पर यह निश्चय था, कि इस देशसे वैदेशिक शक्तिका सम्पूर्ण ह्रास हो जाता, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। भारतवर्षके हजार वर्षके इतिहासमें और किसीके ऐसा असाध्य साधन करनेका जिक्र दिखाई नहो देता जैसा महाराष्ट्रके राजाओंने किया था। यवनमय भारतको वैदेशिक शक्तियोंकी परा-धीनतारूपी जंजीर उनके द्वारा छिन्न भिन्न हो गई थी, यह बात किसी तरह अस्वीकार नहीं की जा सकती। गत सहस्र वर्षोंमें केवल मरहठोंने ही सबसे पहले इस तरहकी चेष्टाको कार्यरूपमें परिणत किया था। भारत-वर्षमें इस तरहकी चेष्टा और किसीने भी न की थी। यही कारण है, कि ये अच्छी तरह सफलता प्राप्त नहो कर सके।

जो हो, इस सामन्तमण्डलकी सृष्टि होनेके बाद गुजरात, कटक, बेरार, मध्यप्रदेश, मालवा, बुन्देलखण्ड, दिल्ली, आगरा, दोआब, रुहेलखण्ड, बङ्ग, कर्णाटक, मैसूर, पञ्जाब, तञ्जोर, अयोध्या आदि कई स्थानोंमें मुसलमानों के साथ मरहठोंने पचास वर्षों तक महासमर किया था। इन स्थानोंमें मुसलमानोंके सिवा अन्य कई देशी और वैदेशिक शक्तियोंके साथ भी उनको युद्ध करना पड़ा था। कोल्हापुरके सम्भाजीके सरदार महाराज शाहुकी शक्ति ह्रास और सेनापति दभाड़े पेशवाके ईर्षावश शत्रुओंके साथ कभी कभी मिल जाते थे। शाहु और पेशवाको कभी कभी स्वदेशके इन लोगोंसे भी युद्ध करना पड़ता था। राजपूतानेके क्षत्रिय राजे मरहठोंका चक्रवर्त्तित्व स्वीकार नहीं करते थे तथा बादशाहके हुक्मसे चौथ नहीं देते थे, इससे कई बार उन लोगोंसे भी मरहठोंको युद्ध करना पड़ा था। सिवा इसके पारस्परिक झगड़ेमें भी महाराष्ट्रोंके साथ सैन्य भेज राजपूत राजे युद्ध करनेसे बाज न आते थे। वैदे-शिक शत्रुओंमें गोवाके पुर्त्तगीज पश्चिम समुद्रके तीर मरहठोंके शासनमें बाधा उपस्थित करते थे। यह देख कर कि दिल्लीका सिंहासन मरहठोंको मिल रहा है, जो अनुतप्त हुए थे, उनमें नादिर शाह और अब्दाली आदि साहसी वीर पुरुष भारतको लूटते हुए उनके क्षोभके आंशिक निवारणमें यत्नशील हुए थे। इन सब बाहरी शत्रुओंसे भारतको बचानेका भार भी मरहठोंके सर पर था। फलतः इन सब बहुसंख्यक मुसलमानों-के कार्यमें बाधा देनेमें भी उनका बहुत समय खर्च हुआ था। दीर्घकालके परिश्रम करनेके बाद उनको सफलता प्राप्त हुई। इससे मुसलमान-शक्ति नितान्त निर्बल हो गई थी। उस समय उपस्थित विपद्को देख कर मुसल-मान एक बार जी तोड़ कर आत्मरक्षाके लिये प्राणपणसे चेष्टा करने लगे। उस समय मरहठोंके हार जाने पर भी मुसलमानोंके नष्ट गौरवका पुनरुद्धारकी आशा सदाके लिये विलुप्त हो गई। माधवरावकी अमलदारीमें मरहठोंने नये बलको प्राप्त किया। दुर्भाग्यके कारण अकाल उपस्थित होने पर माधवरावकी मृत्यु हुई। इस समय और भी एक शक्ति धीरे धीरे अपनी प्रधानता प्राप्त कर रही थी। असाधारण कौशलसे वही शक्ति आज भारत पर शासन कर रही है।

बाजीरावने नया सामन्तमण्डल कायम किया और फिर देश-विजय-कार्यमें वे अग्रसर हुए। उनके सामन्तों-की चेष्टासे नित्य नये नये देश जाते जाने लगे। इस समय शाहुके आठ प्रधान यदि उन सब नये जीते देशों-के भीतरी शासनका संस्कार कर वहां अपने शासनकी जड़ मजबूत कर लेते, तो महाराष्ट्र-साम्राज्यका कभी विलोप नहीं होता। किन्तु उदासीनता तथा अक-र्मण्यताके वशीभूत हो तथा कुछ बाजीरावके प्रति विद्वेष-के कारण वे इस काममें चित्त नहीं लगा सके। महा-राज शाहुकी दृष्टि इधर न जा सकी। बाजीराव जैसे रणकुशल थे, वैसे राजनीतिक अन्य विषयोंमें निपुण नहीं थे। इससे देश पर देश जीत कर महाराष्ट्र साम्राज्य बढ़ने लगा। चौबीस देशोंके सिवा अन्य देशोंकी शासन शृङ्खलाकी कोई चेष्टा नहीं की गई। उधर

बाजीरावके रणपाण्डित्यको देख हिंसानल बड़े जोरोंसे प्रज्वलित हो उठा।

बाजीरावके पुत्र बालाजीरावने भीतरी शासनके शृङ्खला विधानमें बहुत दक्षता दिखलाई थी। फिर दो एक जगह भ्रान्त नीतिका अवलम्बन ले कर उन्होंने समाजकी बहुत कुछ क्षति की। राज्यके भीतरी शत्रु-स्वरूप प्रतिपक्षियोंमें अन्यतम रघुजी भोंसले उनके कार्यमें बाधा डालते थे। उनको और किसी तरह वशमें न आते देख बालाजी बाजीरावने बङ्गालके सूबेदार अलीवर्दी खांका पक्ष अवलम्बन कर उनको तंग किया था। भीतरी शत्रु दबानेके लिये एक सामान्य शत्रुका साहाय्य लेना बालाजी रावके प्रति गर्हित कार्य हुआ, ऐसा बहुत लोगोंका मत है। कुछ दिनके बाद होल्कर आदि सरदारोंने भी बालाजीकी दिखाई नीतिका ही अनुसरण किया। उन्होंने पेशवाको शक्तिको चूर्ण करनेके लिये महाराष्ट्र समाजके घोरशत्रु रुहेला सरदार नजीब खांको कौशलसे पेशवाके रोषानलसे बचा कर अपने हाथों स्वजातिके सर्वनाशका पथ परिष्कृत किया था। पेशवा शब्दमे विस्तृत विवरण देखो। पुराने सामन्तोंमें आंग्रे प्रतिनिधि और गायकवाड़ आदि पेशवाके विरोधी थे, यह पहले बता चुके हैं। पेशवाने अपने बाहुबलसे इन लोगोंको कई बार वशीभूत किया था सही, किन्तु इन लोगोंने कभी भी सम्पूर्ण वश्यता स्वीकार नहीं की। गृह-विवादमें मत्त हो आंग्रेके लिये पेशवाको अधिक दिन तक असुविधा सहन करनी न पड़ी। प्रतिनिधि वंशके लोग दिनों दिन बलहीन हो पेशवाके कार्यमें अधिक दिनों तक बाधा न दे सके। गायकवाड़ और नागपुरके भोंसले अन्त तक पेशवाको बाधा देते रहे। होलकर आदि नये सामन्त भी पेशवाको अधीनतासे निकलनेकी चेष्टा करते रहे। किन्तु ये लोग अन्तिम पेशवा बाजीरावके पहले तक इस विषयमें कोई काम भी प्रकाश्यरूपसे करनेमें साहसी नहीं हुए। फिर मौका मिलने पर लुके छिपे पेशवाके विरुद्धाचरण करनेमें भी कुण्ठित नहीं होते। मल्हार राव होलकरने सबसे पहले इस विषयमे पथ दिखलाया था। फिर अन्य सरदारोंने भी इसी पथका अनुसरण किया था। फलतः अपने हाथों मरहठोंका पराभव हुआ। माधव रावने सरदारोंके असन्तोषको निवारणकी चेष्टा की थी। उन्होंने सभीको समझा दिया था कि, महाराष्ट्र साम्राज्यकी उन्नतिमें सब किसीका समान हक है। उनके उदारता पूर्ण व्यवहारसे पेशवाके सरदारोंके मनमें जिस मात्सर्य्यका सञ्चार हुआ था उसका बहुत कुछ अंश दूर हो गया। इसी कारणसे मरहठे अपने हाथों होनेवाली क्षतिकी पूर्त्ति बहुत जल्द हो कर सके। दुर्भाग्यवश माधव राव भी दीर्घजीवी न हुए। इसके बाद नानाफड़नवीसके मन्त्रित्वके समयमें भी सरदारोंको पेशवोंके प्रति मात्सर्य्य प्रकट करनेका मौका हाथ नहीं आया। अन्तिम बाजी रावके समयमें सारे महाराष्ट्र राज्यमें ही अराजकता फैल गई। अशान्त चित्त सामन्तदल पेशवाका पक्ष समर्थन कर न सका। सामन्तोंकी शक्ति ह्रास करनेके लिए बाजी रावने अङ्गरेजोंकी सहायता ली। उस समय सामन्तोंकी शक्ति लाघव हुई थी सही, किन्तु उन सामन्तोंके साथ साथ बाजी रावका भी सौभाग्यसूर्य सदाके लिये अस्त हो गया। फिर उन दोनोंके साथ-साथ महाराष्ट्र साम्राज्य भी विलीन हो गया। उनके सामन्त-मण्डल आज भी वृटिश शासनकालमें अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा कर हिन्दूधर्मको आश्रय दान कर रहा है।

महाराष्ट्रजातिकी चरमोन्नति।

सामन्तोंके इस अन्तर्विप्लवके चित्रको हृदयसे निकाल कर महाराष्ट्र साम्राज्यके बाह्य चित्रों पर दृष्टिपात करने पर समग्र जातिके असाधारण उत्साहके परिचयसे विस्मित होना पड़ता है।

सन् १७४०-४१ ई०में बाजीरावके पुत्र बालाजी राव मरहठोंका नेतृत्व करने लगे। उनके साधारण बुद्धिबलसे महाराष्ट्र समाजके विभिन्न शक्तिसमूह कुछ कालके लिये एकाग्र हुआ था। रामदास और शिवाजीके जीवनका प्रधान व्रत इसी समय सफल हुआ। बालाजी बाजीराव ही सभी मरहठोंको एकत्र कर सारे महाराष्ट्र धर्मका विस्तार करनेमें समर्थ हुए थे। उनकी ही चेष्टासे देशमें प्राचीन आर्य्य विद्याकी चर्चा फैलने लगी। उन्होंने वेद, स्मृति, दर्शनशास्त्र, पुराण, ज्योतिष,

वैद्यक प्रभृति विविध शास्त्रोंमें विद्वान् ब्राह्मणोंकी परीक्षा प्रति वर्ष लेते और उनको पुरस्कृत करनेका भी आयोजन करते थे। इसके उपलक्षमें वा प्रति वर्ष २६ लाख रुपये तक खर्च कर देते थे। काशी, रामेश्वर, मिथिला आदि बहुत दूर दूरके विद्यार्थी पुरस्कार पानेकी लालचसे पूनाको परीक्षामें प्रतिवर्ष सम्मिलित होते थे। समागत ब्राह्मणोंकी परीक्षा लेने और पुरस्कार वितरण करनेके लिये एक अलग आलय बनाया गया था। पुरस्कारके लोभसे देशमें ब्राह्मण सन्तानोंने शास्त्रज्ञान-लाभमें मनोनिवेश किया था। क्रमशः प्रतिवर्ष पूनामें ३०-४० सहस्र विद्वान् ब्राह्मणोंका समावेश हुआ करता था। देशमें शास्त्र चर्चाका स्रोत वेगसे प्रवाहित होने लगा। कवि, शिल्पी, चित्रकार और गीतवाद्यविशारद व्यक्ति भी राजाश्रय-लाभसे वञ्चित नहीं होते थे। देशके कृषिवाणिज्यकी उन्नतिको ओर भी बालाजी बाजी रावकी विशेष दृष्टि थी।

पहले दस वर्षके भीतर महाराष्ट्रराज्यकी भीतरी शासनशृङ्खला और महाराष्ट्रशक्तिको दृढ़ करके बालाजीका हिन्दूसाम्राज्य स्थापनका जो सुमहान संकल्प था। उसे वे कार्यमें परिणत करनेके लिये तनमनसे लग गये। मरहठोंने बालाजी जैसे राजनीति-कुशल शासनकर्त्ता और सुदक्ष सेनानायक पा कर अपनी अलौकिक क्षमतासे सारे संसारको कंपा दिया था। बालाजीके उपदेशानुसार १७५० ई० तक ग्यारह वर्षके भीतर उन लोगोंने कमसे कम ४२ बार युद्धयात्रा की थी। प्रायः सभी यात्राओंमें बालाजी उन लोगोंके साथ थे। अयोध्या, विहार और बङ्गदेशसे मुसलमानी शासनकी जड़ उखाड़ कर उत्तरमें अटकसे दक्षिणमें रामेश्वर तक आसमुद्र हिमाचलव्यापी 'हिन्दूपत् बादशाही' (हिन्दू-साम्राज्य) स्थापन करनेके लिये महाराष्ट्रगण बड़े व्यग्र हो गये थे। यही कारण था, कि उन्होंने दक्षिण और उत्तर-भारतवर्षके हिन्दू-राजाओंके विरुद्ध कभी भी युद्धयात्रा नहीं की—केवल उन्हें छत्रपतिका सार्वभौमत्व स्वीकारने और कर देनेके लिये बाध्य किया था। मुसलमानोंके हाथसे मुक्तिपुरी अयोध्या, श्रीक्षेत्र, वाराणसी और पवित्र प्रयागक्षेत्रका उद्धार करनेके लिये मरहठोंने जी जानसे कोशिश की थी। यहां तक, कि वे मुसलमानोंको उक्त क्षेत्रोंके बदलेमें कुछ निज अधिकृत देश भी देनेको तैयार हो गये थे। किन्तु दुर्भाग्यवशतः कई कारणोंसे उनकी चेष्टा फलवती न हुई। फिर भी प्रत्येक हिन्दू-संतानको उनके उद्यमकी प्रशंसा अवश्य करनी चाहिये। ऐसा पवित्र उद्यम 'हिन्दूसूर्य' उपाधिधारी राणा लोगोंने भी कभी नहीं दिखलाया था।

१७५०से १७६१ ई० तक मरहठोंने अपने संकल्पको कार्यमें परिणत करनेके लिये प्राणपणसे चेष्टा की थी। उनकी चेष्टा बहुत कुछ सफल भी हुई थी। उन लोगोंके अध्यवसाय और उच्चांक्षाकी ओर ध्यान देनेसे विस्मित होना पड़ता है। बालाजीके चचेरे भाई श्रीमन्त भाउसाहबने समुद्रवलयाङ्कित भारतभूमिको पार कर कुसतुसतुनियामें महाराष्ट्र-विजयपताका फहरानेकी इच्छा प्रकट की थी। पानीपतकी लड़ाईमें अह्मदशाह अबदालीके साथ बलपरीक्षामें यदि मरहठोंके भाग्यने पलटा न खाता तथा परवर्त्ती दैवविड़म्बना उन पर टूट न पड़ती, तो भावसाहबका अभिलाष पूर्ण होना असम्भव न था।

बालीजी बाजीरावके यत्नसे भारतवर्षमे मरहठोंका चक्रवर्त्तित्व सर्वत्र स्वीकृत हुआ था। पञ्जाब, अजमीर, मालव, नागपुर, बेरार (विदर्भ), महाराष्ट्र, कर्णाट और गुजरात आदि प्रदेशोंमें उनका आधिपत्य बद्धमूल हो गया था। बङ्गाल, राजपूताना और अन्यान्य छोटे छोटे राज्योंसे नियमितरूपमें उन्हें चौथ मिलता था। महिसुर, हैदराबाद, मारवाड और अयोध्यादि प्रदेशोंके राजा उन्हें कर देते थे। दिल्लीके सिंहासन पर मरहठोंने अपने पसन्दके आदमीको बादशाहके रूपमें स्थापित कर अपने हाथका खिलौना बना लिया था। भारतवर्षमें अब उनके एक भी भीतिप्रद शत्रु न रह गया। महाराष्ट्र-साम्राज्यमें तमाम मानो शान्तिदेवीका राज्य था। यह शान्ति यदि कुछ दिन अक्षुण्ण रहती, तो देशके अन्तर्वाणिज्य और बहिर्वाणिज्य विस्तार तथा कलाविद्याके विशिष्ट संस्कारकी ओर मरहठोंका ध्यान दौड़ता, इसमें सन्देह नहीं। किंतु दैवविड़म्बनासे उनकी आशा पर पानी फिर गया।

भारतवर्षसे जो मुसलमान-शासनका प्रभाव जाता रहा और सर्वत्र हिन्दूओंकी तूती बोलने लगी उससे मुसलमान-समाजके अधिनायक बड़े उद्विग्न हो गये। जिन दिल्लीश्वरके प्रतापसे एक दिन सारा भारतवर्ष कंप उठा था, जिनके आदेशसे महाराष्ट्रपति शम्भाजी निहत और उनके पुत्र शाहु परिवार समेत बन्दी हुए थे, कालचक्रके अद्भुत परिवर्त्तनसे उन्हींके वंशधरोंको आज मरहठोंके हाथका खिलौना देख उनके परितापकी सीमा न रही। वे लोग महाराष्ट्रशक्तिकी सर्वग्रासिनी मूर्त्तिको देख कर बहुत डर गये। पीछे उन्होंने आत्मरक्षाके लिये उनसे मेल करना ही अच्छा समझा। पर भीतर ही भीतर उनके विरुद्ध कार्रवाई भी करते रहे। अहादशाह अबदालीके पास भारतवर्ष पर आक्रमण करनेके लिये उन्होंने चुपके निमंत्रण-पत्र भेजा। बादशाही स्थापनकी दुराकांक्षाने फिरसे उनके चित्तक्षेत्र पर अधिकार जमाया। थोड़े ही दिनोंके मध्य कुरुक्षेत्रके विस्तृत समरप्राङ्गणमें अहमदशाह, नजीव खां रोहिला, सुजाउद्दौला, कुतुवशाह, अहाद खां, दुन्दे खां आदि रोहिला, पठान और दुर्रानी-सरदारगण अपनी अपनी चतुरङ्गिणी सेनाके साथ युद्धार्थ उतर पड़े।

मरहठोंने भी विपुलवाहिनोके साथ उनका मुकावला किया। दोनो तरफसे प्रायः ढाई लाख वीरपुरुष भारतके भाग्यका निर्णय करनेके लिये समरप्राङ्गणमें उपस्थित हुए थे। दुःखका विषय है, कि राजपूतानेके हिंदूराजे मरहठोंकी चलती पर जलते थे, इस कारण उन्होंने उनका साथ न दे कर मुसलमानोंका ही साथ दिया। जाटके सरदार सूरजमल्ल भी युद्धारम्भसे कुछ पहले मरहठोंका पक्ष छोड़ कर सुजाउद्दौलाके साथ मिल गया। दिल्लीका आधिपत्य पानेमें असमर्थ हो मरहठोंके साथ उनका स्वार्थसंघर्ष भी चला था। इन सब कारणोंसे मरहठोंको एकमात्र आत्मशक्ति पर निर्भर करके ही वैदेशिक शक्तिका मुकाबला करना पड़ा। स्वधर्मरक्षाके लिये एक लाख सत्तर हजार महाराष्ट्रवीर अपने प्राणको न्योछावर करने तैयार हुए। युद्धके 'पहले उनका उत्साह, विधर्मियोंके प्रति विद्वेष, हिन्दूधर्मरक्षाके लिये प्राणविसर्जनमे अनुराग और आग्रह, युद्धका शोचनीय परिणाम आदि विषय मल्हार राव होलकरके आदेशानुसार लिखित बखरमें बड़ी ही मर्मस्पर्शिनी भाषामें लिखे गये हैं। इस भयानक युद्धके विषयमें दोनों पक्षको भारी संशय था, इस कारण बीचमें सन्धिका प्रस्ताव भी उठा। किन्तु मुसलमान लोग उस सन्धिमें जो सब स्वत्त्व मांगने लगे, उसे महाराष्ट्रवीर देनेको बिलकुल तैयार न हुए। उस घोर आपत्कालमें महाराष्ट्र सेनापति यदि शत्रुपक्षकी कुछ भी शर्त्त मान कर उस समय लड़ाई बंद कर देते और पीछे मौका देख कर प्रथम मरहठायुद्धमें पराजित अंगरेजोंकी तरह 'सन्धिपत्र पर कलकत्ते (महाराष्ट्रीय पक्षमें पूना)-के कर्त्तृपक्षका हस्ताक्षर और सम्मति नहो थो" आदि आपत्ति कर संधि तोड़ देते, तो भारतवर्षका इतिहास इतने थोड़े दिनोंके मध्य अन्य मूर्त्ति धारण करता या नहीं, संदेह है। किंतु पूर्वोक्त बखर-लेखकका कहना है, कि कुरुपाण्डवके लीलाक्षेत्रमें कृष्णसहाय धर्मराज (युधिष्ठिर)-के विजयभूमिमें पदार्पण करनेसे स्वधर्मानुरागी मरहठोंका मुसलमानोंके प्रति विद्वेष बहुत बढ़ गया था, इस कारण वे सन्धिप्रस्ताव पर सहमत नहीं हुए। जो कुछ हो, युद्ध अनिवार्य हो उठा। १७६१ ई०के प्रारम्भमे पानीपतकी लड़ाईमें महाराष्ट्र वैभवकी पूर्णाहुति हुई। भारतमें हिन्दूसाम्राज्यस्थापनकी उच्चाकांक्षा कुछ दिनके लिये विलीन हो गई।

युद्धके बाद मुसलमानोंने जिन सब महाराष्ट्रवीरोंका कैद किया था, उनके सिर काट डाले। इतना ही नहीं, जिन्होने उनका शरण ली था, उन पर भी उन्होंने दया न दरसाई। इस प्रकार हतभाग्योंका कटा हुआ सिर पर्वतके समान ढेर लग गया और निष्ठुर अफगानियोंके आनन्दका ठिकाना न रहा।

इस युद्धमें जय पा कर भी अवदालीको महती क्षति हुई थी। उत्तर भारतके मुसलमानोंको इस युद्धके पुरस्कार स्वरूप कुछ भी नहीं मिला। दिल्लीका गौरव पुनरुद्दीप्त होनेकी बात तो दूर रहे, बादशाहकी अवस्था दिनों दिन शोचनीय होती गई। पूर्वाञ्चलमें अङ्गरेज और दक्षिण भारतमें हैदर अली तथा पञ्जाबमे सिखजातिका अभ्युदय हुआ।

इस दुर्घटनासे मरहठोंकी जो क्षति हुई उसको शुमार नहीं। उनके प्रधान प्रधान सेनापति और लाखसे ऊपर सैनिक इस संग्रामानलमें भस्मीभूत हुए। महाराष्ट्र देशके प्रायः सभी सरदारों और सम्भ्रान्त जागीरदारोंने पानीपतकी लड़ाईमें प्राण विसर्जन किये। बहुसंख्यक मरहठा परिवारका अस्तित्व बिलकुल लोप हो गया। महाराष्ट्रके एक भी परिवारने इस घटनामें आत्मीयवियोगसे अव्याहति न पाई। अतएव घर घर कुहराम मच गया। बालाजी बाजी रावके बड़े लड़के विश्वास राव और उनके चचेरे भाई भाऊ साहब भी युद्धमें मारे गये थे। अपनी विशाल दिग्विजयी सेनाकी ऐसी शोचनीय दशा सुन कर बालाजी रावका हृदय टूट गया। पुत्र विश्वासराव और भाऊसाहबके शोकसे तथा प्रजाकी हाहाकार ध्वनि सुन कर वे उन्मादग्रस्त हो थोड़े ही दिनोंके अन्दर पञ्चत्वको प्राप्त हुए। उनके जैसे दूरदर्शी नेताके अभावसे महाराष्ट्र समाजका मेरुदण्ड भग्नप्राय हो गया।

इस युद्धमें मरहठोंकी जो अपार धनसम्पत्ति, असंख्य वीर पुरुष और अपरिमेय युद्धसामग्री नष्ट हुई थी उसकी चिन्ता करनेसे भी हृदय अवसन्न हो जाता है। भारतवर्षकी किसी दूसरी जाति पर यदि इस प्रकार विपत्तिका पहाड़ टूट पड़ता, तो वह उसी समय धराशायी हो जाती, इसमें संदेह नहीं। किन्तु महाराष्ट्रसमाजके 'मूलमें जो भारतव्यापी हिन्दूसाम्राज्य स्थापन और स्वधर्मके प्रतापको अक्षुण्ण रखनेके लिये पवित्र वासनाबीज निहित था उसीने इस घोर विपद्कालमें भी उनकी प्राणरक्षाकी थी। पानीपतके भाग्यविपर्ययसे मरहठोंकी अग्रगति कुछ दिनके लिये रुक तो गई, पर जिन्होंने समझा था, कि इससे अधःपतन होगा, वे युद्धके पांच मास बाद ही असाधारण अध्यवसायसम्पन्न महाराष्ट्र-सेनाको दिल्लीके चारों ओर अपने आधिपत्य स्थापनमें पुनः प्रवृत्त देख बड़े विस्मित हुए।

बालाजी बाजीरावके मरने पर महाराष्ट्र समाजकी अधिनायकताको ले कर पूनामें गृहविवाद खड़ा हुआ। बालाजीके चचेरे भाई रघुनाथराव (दादासाहब) दूसरा विवाह आनन्दीबाईके साथ करके उसके वशीभूत हो रहे थे। स्त्रीके कहनेसे उन्होंने राज्यके आधे भाग पर दावा किया। इसीसे आपसमें झगड़ा खड़ा हुआ। इस समय बालाजीके लड़के माधव राव नाबालिग थे। फिर भी उन्होंने चचेके हाथ आत्मसमर्पण करके घर झगड़ेको शान्त किया। पर दुष्ट रघुनाथको इस पर भी संतोष नहीं हुआ। वह माधवरावको कैद कर निष्कण्टक राज्य करने लगा।

इधर पानीपतकी लड़ाईमें मरहठोंका शक्तिह्रास हुआ देख हैदराबादके निजाम अपना अधिकार फैला रहे थे। इस पर रघुनाथने उनके विरुद्ध लड़ाई ठान दी, पर स्वयं परास्त हुए, किन्तु पेशवाका हाथी युद्धक्षेत्रसे भागना नहीं जानता था, इस कारण रघुनाथकी लाख चेष्टा करने पर भी हाथी वहांसे न टला। फलतः दादासाहबको शत्रुके हाथ बन्दी होना पड़ा। युवक माधवराव बन्दीके वेशमें वहीं पर खड़े थे। वे चचाकी दुर्दशा देख बड़े दुःखित हुए और अपने रक्षिवर्गके साथ समरक्षेत्रमें कूद पड़े। वृद्ध मलहार राव होलकरने इस समय निजाम पर आक्रमण न करके पूनाका सिंहासन अपनानेके लिये माधवरावसे कहा। माधव रावने उत्तर दिया, "चचाको शत्रुके हाथ झोंक कर किस मुखसे पूना लौटूंगा?" युवकके इस महत्त्वपूर्ण उत्तर पर वृद्ध मलहारराव लज्जित हो गये। माधव रावने अपने शौर्यबलसे निजामको परास्त कर चचा रघुनाथका उद्धार किया। इस घटनासे माधवके प्रति दादा साहबका बहुत स्नेह हो गया और प्रसन्न हो कर इन्हें राजसिंहासन दे दिया।

माधवराव तेजस्वी, क्रोधी और धार्मिक थे। वह किसीको *अन्याय* आचरण पर माफ नहीं करते थे। कहते हैं, कि एक दिन उनके मामाने किसी अनाथा युवतीके प्रति बुरी निगाह डाली। माधवको इसका पता लग गया, सो उन्होंने बेंतसे उसे खूब पिटवाया था। उनकी माताने अपने भाईकी ओरसे बहुत अनुनय विनय किया, पर माधवने एक भी न सुनी। क्योंकि वे राजधर्मसे विच्युत होना नहीं चाहते थे। उन्होंने 'बेगार' पकड़नेकी प्रथाको बिलकुल उठा दिया था। एक दिन उनके

प्रधान सेनापतिने उनके नियमका उल्लङ्घन कर बेगार पकड़वाया था, इस पर माधव इतने बिगड़े, कि आखिर उसे माफी ही मांगनी पड़ी थी। प्रजाको सुखी करनेके लिये माधवरावने बहुतसे हितकर काम किये थे। सुप्रसिद्ध न्यायपरायण पण्डित रामशास्त्री विचारपतिके पद पर प्रतिष्ठित थे। मलहार राव होल्करके मरने पर उनकी पुत्रवधू प्रातःस्मरणीया अहल्याबाईको अधिकारच्युत करके अर्थलुब्ध दादा साहबने होलकर राज्यको खास करनेके लिये बहुत कोशिश की थी, पर न्यायपरायण माधवरावने इस काममें बाधा डाली जिससे रघुनाथकी चेष्टा पूरी न होने पाई।

इस समय हैदराबादके निजामके दीवान रुखमतउद्दौलाने अपनी इमारत बनानेके लिये एक ब्राह्मणकी जमीन जबरदस्ती ले ली थी। ब्राह्मणने निजामके पास इसकी नालिश की, पर कोई फल नहीं हुआ। बादमें वह ब्राह्मण पेशवाकी शरणमें पहुंचे। इस विषयका प्रतीकार करनेके लिये पेशवाने कई पत्र निजामके पास भेजे, पर निजामने उस ओर कान नहीं दिया। इस पर माधवरावने नवाबका होश ठंढा करनेके लिये अपनी सेना सजाई। मराठा फौजके राजधानीके समीप पहुंचने पर नवाबकी नींद टूटी। अब वे संधिके लिये प्रार्थना करने लगे। इस पर माधवने कहा, 'ब्राह्मणकी भूमि ब्राह्मणको लौटा देनेसे ही आपका कुशल है। इस अभियानके व्ययस्वरूप आप जो देंगे वही मैं ले लूंगा। किन्तु आपको कुरान छू कर वंशपरम्पराक्रमसे उस ब्राह्मणको उसकी भूमिका उपस्वत्व भोगनेकी सनद लिख देनी होगी।' नवाबके यह प्रस्ताव मान लेने पर महाराष्ट्र सेना पूना लौटी।

माधवरावके यत्नसे मरहठोंमें फिरसे नवजीवनका संचार हुआ था। पानीपतकी लडाईमें महाराष्ट्रोंका सर्वनाश हुआ है, समझ कर जिन्होंने सर उठानेकी कोशिश की थी उनका माधवरावने थोड़े ही दिनोंके अन्दर अच्छी तरह दमन किया। नागपुरके भोंसलोंने इस समय एक गृहविवाद खड़ा कर दिया था। किंतु माधवरावके नीतिकौशलसे पुनः मरहठोंमें मेल हो गया। दाक्षिणात्यमें दुर्द्दर्ष हैदर अली, निजाम अली, अरकाटके नवाब और कुटिलनीतिकुशल अङ्गरेज महाराष्ट्रशक्तिके सामने सिर झुकाते थे। मध्यभारत और राजपूतानेके राजे महाराष्ट्र-विक्रम पर स्तम्भित हो पुनः पेशवाको कर देने लगे। जाट लोगोंने भी अपनी हार स्वीकार की। केवल यही नहीं, १७७० ई०में दिल्लीका दरवाजा भी मराठोंके सिंहनादसे कांपने लगा। पानीपतमें पराजयके बाद मराठा इतने दिनोंके अन्दर चर्मण्वती (चाम्बेल) नदी पार कर सकेंगे, यह रोहिलोंने स्वप्नमें नहीं सोचा था। शौर्यशाली सिखोंके अफगान-दमनमें प्रवृत्त होनेसे रोहिलोंने दिल्ली, आगरा और गङ्गा यमुनाकी अंतर्वेदीमें अपना अधिकार जमाया था। उन लोगोंकी स्पर्द्धा इतनी दूर तक बढ़ गई थी, कि उन्होंने आखिर दिल्लीके शाह आलमको वृत्ति देना बंद कर दिया और बेगमोंके प्रति बुरी तरह पेश आये। इधर दिल्लीश्वर अंगरेजोंके साथ युद्धमें हार खा कर उनके आश्रयमें इलाहाबादमें रहनेको बाध्य हुए थे। मरहठोंने रोहिलोंका दमन करके मुगलवंशधर शाह आलमको उनके पैतृक सिंहासन पर बिठाया। १७७१ ई०की २५वीं दिसम्बरको मरहठोंकी सहायतासे दिल्लीमें बड़ी धूमधामसे उनका अभिषेक हुआ। दिल्लीवासी रोहिलोंके उद्धत व्यवहार पर बहुत मर्माहत हो गये थे। अब वे अपने प्रकृत बादशाहको सिंहासन पर अधिरूढ़ देख फूले न समाये। उत्तर-भारतमें मरहठोंकी क्षमता पूर्ववत् फैल गई।

इसके बाद मरहठा लोग मुसलमानोंके हाथसे अयोध्या, वाराणसी और प्रयागका उद्धार करनेका उद्योग कर रहे थे। इसी समय दाक्षिणात्यसे पेशवा माधवरावकी अस्वस्थताकी खबर आई। मरहठोंके दुर्भाग्यवशतः २८ वर्षकी उमरमें माधवराव यक्ष्मारोगसे आक्रान्त हुए। उनके प्रधान सेनापतियोंको उत्तरभारतमें अपना प्रभुत्व फैलाते देख, दक्षिण-पथमें हैदरअलीने उपद्रव मचा दिया था। इस कारण अपने सेनापतियोंको राजधानी लौट आनेके लिये माधवरावने हुकुम दिया। सेनापतियोंके दाक्षिणात्य पहुंचनेके पहले ही महाराष्ट्रपति माधवरावका जीवन-प्रदीप बुझ गया। उसके साथ साथ मरहठोंकी आशारूपी लता भी निर्मूल

हो गई। एकच्छत्र हिन्दू-साम्राज्य स्थापनका सुयोग सदाके लिये जाता रहा। अङ्गरेजोंको अपनी क्षमता फैलानेका मौका मिला।

१७७२ ई०में माधवरावके छोटे भाई नारायणराव, जिनकी उमर १६ वर्षकी थी, राजसिंहासन पर बैठे। दादासाहब (रघुनाथराव) उनके नामसे राजकार्य चलाने लगे। आनन्दीवाईकी कुमंत्रणासे उनकी मति भ्रष्ट हो गई। उस पापीयसीकी प्ररोचनासे १७७३ ई०के भाद्रमासमें नारायणराव वडी बुरी तरह मार डाले गये। अब पूनामें फिरसे अन्तर्विप्लव खड़ा हो गया। सुचतुर अंगरेज लोग इसी मौकेमें पूर्वकृत संधिको तोड कर स्वार्थ-साधनमें लग गये। नारायणरावके सद्योजात औरस पुत्रको गद्दीसे उतार कर दुराचार रघुनाथको सिंहासन पर प्रतिष्ठित करनेके लिये अंगरेज वद्धपरिकर हुए। नारायणरावके मारे जाने पर अब पूनामें गोलमाल खड़ा हुआ, उसी समय उन्होंने महाराष्ट्र राज्यके एक बन्दरको अन्यायपूर्वक अधिकार कर लिया था। मरहठे लोग आज तक उनके साथ सद्व्यवहार करते आ रहे थे। किंतु इस समय अङ्गरेजोंका राज्यलोभ ऐसा दुर्निवार हो उठा था, कि वे लोग अपना मतलब निकालनेके लिये पूना दरबारमें उत्कोचप्रदान, विद्रोहकी उत्तेजना, राजपुरुषोंके मध्य विद्वेष-सञ्चार आदि विविध उपायका अवलम्बन करने लगे। अतः मरहठोंके साथ उनका युद्ध अनिवार्य हो गया। छः वर्षके बाद यह युद्ध शेष हुआ। अङ्गरेजोंने ऐसा अन्याय युद्ध और कभी भी नहीं किया था। पृथ्वीकी कोई भी सुसभ्य जाति ऐसे अधर्म युद्धमें प्रवृत्त हुई होगी, ऐसा मालूम नहीं होता।

इस समय पूनामें मरहठोंके मध्य एक भी नेता न रह गये। मन्त्रिमण्डलमें मतभेद हो गया था। सभी अपना अपना मतलब निकालनेमें तुले हुए थे। राजकोष खाली पड़ गया था और जातीय ऋणका परिमाण बढ़ जानेसे पूना दरबारकी अवस्था बड़ी शोचनीय हो गई थी। इस समय एक दूसरी विपदने आ घेरा;—भाऊसाहब जो पानीपतमें मारे गये थे उनकी लाश वहां पर नहीं मिली। इसलिये बहुतोंने समझा, कि वे आत्मरक्षाके लिये कहीं छिप रहे होंगे। यह अफवाह चारों ओर फैल गई। इसी समय बाजीगोविन्द नामक एक व्यक्ति अपनेको भाऊसाहब बतला कर राजसिंहासनका दावा करने लगा। कहनेकी आवश्यकता नहीं, अङ्गरेज लोग उसके पक्षमें मिल गये। किंतु थोड़े ही दिनोंके अन्दर वह धूर्त्त पकड़ा गया। पूनाके दरबारने उसके विचारके लिये पंचायत या कमीशन बैठाया। धूर्त्तकी पोल खुल गई और उसे प्राण-दण्ड मिला। इस घटनाके शेष होते न होते कोल्हापुर-पतिने पेशवाके राज्यमें उपद्रव आरम्भ कर दिया। जो कुछ हो, ऐसे दुःसमयमें भी महाराष्ट्र राजमन्त्री नानाफड़नवीसके मन्त्रणाकौशलसे तथा मरहठोंके अध्यवसायगुणसे अंगरेजोंकी कई बार हार हुई। उन्होंने दो बार पेशवासे क्षमा मांगी। आखिर मरहठोंने उनसे दो बार मेल किया, इस पर भी अङ्गरेज कम्पनीकी अबाध्यता घटी नहीं। उन्होंने विलायत और कलकत्तेके कर्तृपक्षकी असम्मतिका उल्लेख करते हुए पुनः सन्धि तोड दी। अतएव दोनोंमें फिरसे युद्ध छिड़ गया। दुर्भाग्यवशतः होलकरने भी इस समय विद्रोही हो कर अङ्गरेजरक्षित रघुनाथका पक्ष लिया। महाराष्ट्रदेशका ऐसा दुर्भाग्य औरङ्गजेबकी मृत्युके बाद और कभी भी नहीं हुआ था। आखिर अङ्गरेजोंने मरहठोंके हाथ युद्धमें नितान्त जर्जरित हो कर अपनी पराजय स्वीकार कर ली। उनका दर्प अच्छी तरह चूर्ण हुआ। रघुनाथ और आनन्दीवाई बन्दी भावमें कालयापन करने लगी।

अनन्तर नारायणरावके छोटे लड़के सवाई माधवराव (माधवराव नारायण)-को राजा बना कर नानाफड़नवीस सुचारुरूपसे राजकार्य चलाने लगे। निजाम और टीपू सुलतान मरहठोंकी प्रधानता स्वीकार करनेको वाध्य हुए। अब माधोजी शिन्दे उत्तर-भारतको गये। वहां उन्होंने गुलाम कादिरके पैशाचिक अत्याचारसे दिल्लीश्वर और उनकी पुरमहिलाओंको बचा कर उस प्रान्तके विद्रोही मुसलमानोंको बादशाहकी अधीनता स्वीकार करनेसे वाध्य किया। बादशाहने उन्हें (१७८६ ई०) 'आलिजा वहादुर'-की उपाधिके साथ अपने राज्यमें गो-हत्या नहीं करनेकी सनद दी। राजपूतानेमें भी मरहठोंका आधिपत्य निष्कण्टक हुआ।

काशी, प्रयाग और अयोध्या-उद्धारकी चेष्टा इस समय भी एक बार हुई थी, किन्तु कोई फल न निकला। जो कुछ हो, मरहठोंकी ऐसी वैभवोन्नति इससे पहले और कभी भी नहीं हुई थी। अभी साम्राज्यमें जैसी शान्ति विराजती थी, कि वाजोरावके भी समयमें वैसी न थी। यद्यपि पेशवा माधवरावकी उमर थोड़ी थी, तो भी महाराष्ट्रीय सरदारमण्डली उनकी फरमावरदार थी। उत्तरमें शतद्रु से ले कर दक्षिणमें तुङ्गभद्रा तक विस्तृत महाराष्ट्र-समाजमें एक भी शत्रु नजर नहीं आता था। प्रातःस्मरणीया अहल्यावाईके सुशासनसे मालव, बेरार, नागपुर, गुजरात, महाराष्ट्र, कोङ्कण आदि प्रदेशोंकी प्रजा सुखी थी।

अधःपतन।

दुर्भाग्यवश ऐसी अवस्था सदाके लिये न रही। कालचक्रके परिवर्त्तनसे अनेक प्रतिकूल घटनाएं घटीं जिससे महाराष्ट्रोंके सौभाग्यसूर्य अस्ताचलके पथिक होने चले। १७६४ ई०से लगायत १८०० ई०के मध्य माधोजी शिन्दे आदि प्रधान प्रधान सेनापति और नाना-फड़नवीस आदि राजनीतिज्ञ व्यक्तिगण एक एक कर परलोक सिधारे। पेशवा सवाई माधवरावका भी २१ वर्षकी अवस्था (१७६५ ई०)-में देहान्त हुआ। ऐसी लगातार दुर्घटनासे थोड़े ही दिनोंके मध्य राजकार्य-धुरन्धर व्यक्तियों और समर-कुशल सेनापतियोंके अभाव-से महाराष्ट्र-समाज शक्तिहीन हो पड़ा। अनेक जगह 'अवला यत्र प्रवला बालो राजा निरक्षरो मन्त्री' हो गया। अतः सुकर्णधारके अभावसे महाराष्ट्रोंका राष्ट्रपोत कालसागरमें डूब गया।

इस समय तरुणावस्थामें वाजीराव महाराष्ट्र-सिंहासन पर बैठा। यह रघुनाथराव और आनन्दीवाईका पुत्र था। माता पिताके सभी गुण उसमें पाये जाते थे। फल यह हुआ, कि कपटाचार और दुर्वृत्तताने वारुणी और वाराङ्गणा राजसभामें प्रवेश किया। शौर्य, साधुता और स्वदेशप्रीति धीरे धीरे लुप्त होने लगी। सामरिक खर्चको घटा कर वह विलासव्यसनमें राजस्वका अधिकांश उड़ाने लगा। छोटी छोटी बातोंके लिये उसने राजभक्त कर्मचारियोंकी हत्या करना, उन्हें कठिन, कठिन दण्ड देना और प्रजाको लूटना आदि आरम्भ कर दिया। उसके जैसा लंपट कापुरुष महाराष्ट्र-समाजमें इसके पहले कोई भी नहीं हुआ था। अङ्गरेजोंकी कुटिल नीतिका मर्म समझनेकी उसमें बिलकुल शक्ति न थी। आगे चल कर उसने सेनापतियोंको जागीरको जब्त करनेके लिये अङ्गरेजोंसे सहायता मांगी। ऐसे व्यक्तिके हाथसे राज नष्ट होना असम्भव नहीं। यशोवन्तराव होलकरने एक वार अङ्गरेजोंको परास्त कर महाराष्ट्र-पराक्रमण दिखलाया था। उनके मरने पर होलकरराज्य बालककी क्रीड़ाभूमि हो गया। शिन्दे रात दिन आमोद-प्रमोदमें लिप्त रहता था। नागपुरमें भोंसलेगण आपसमें लड़ कर खून बहाने लगे। राष्ट्रीय अधःपतनका इतिहास पृथ्वी भरमें प्रायः एक-सा था।

जो नानाफड़नवीस बहुत दिन राज्यरक्षा करके सारे महाराष्ट्र-समाजके कृतज्ञताभाजन हो गये थे, उनको कैद करना ही वाजीरावका पहला काम था। इस कामके लिये वह शिन्देको दो करोड़ रुपया देनेको राजी हुआ। शिन्देने नानाको कैद कर वाजीरावके हाथ सौंपा। बादमें उसने जब पूर्व कथनानुसार दो करोड़ रुपया मांगा, तब पेशवाने उसे पूना लूट कर उतनी रकम इकट्ठा करनेका हुकुम दिया। तदनुसार शिन्देने नगरके प्रधान प्रधान व्यवसायियोंका खजाना लूट कर दो करोड़ रुपये जमा किये। इसके कुछ दिन बाद ही वाजीरावने जैसा मनमाना काम शुरू कर दिया, कि शिन्देको वाध्य हो कर नानाफड़नवीसको कारामुक्त करना पड़ा। किंतु नानाको अधिक दिन जीवित रह कर राजकार्यका संस्कार करनेका अवसर नहीं मिला।

महाराष्ट्र राज्यकी विशृङ्खलता देख कर शत्रुओंने मस्तक ऊंचा किया। निजामके दीवान मशरुलमुल्क खुर्देकी लड़ाईमें कैदी वन कर पूनामें रहता था। इस समय वाजीराव उसे छोड़ देने तथा युद्धमें जितने देश हाथ लगे थे उन्हें निजामको वापिस करनेमें वाध्य हुए। शिन्दे और होलकरके बीच इस समय अनवनी चल रही थी। वाजीराव दोनोंमें मेल तो क्या कराते उस आगको और भी सुलगानेकी प्राणपणसे कोशिश करने

लगे। इस पर सरदार लोग बड़े बिगड़े। उन्होंने बाजी-रावसे दोनोंमें मेल करा देनेके लिये बार बार अनुरोध किया, पर कोई फल न निकला। उधर होलकरके भाईको विना किसी कारणके हाथीके पैर तले फेंक कर मरवा डाला। यह संवाद सुन कर यशोवन्तरावने ससैन्य पूना पर धावा बोल दिया। पूनाके समीप जा कर उन्होंने बाजीरावको खबर दी, 'मैं श्रीमान्‌के चरणोंमें प्रतीकार प्रार्थना करने आया हूं, युद्ध करना मेरा बिल-कुल उद्देश्य नहीं है।' मूर्ख बाजीरावने इस पर भी साम्यनीतिका अनुसरण न कर होलकरके विरुद्ध सेना भेज ही दी और आप सिंहगढ़में जा छिपे। अङ्गरेजोंसे सहायता मांगनेसे भी वे बाज नहीं आये। इधर यशो-वन्तरावने युद्धमें पेशवासेनाको हरा कर पूना लूटा और दादा साहबके दत्तकपुत्र अमृतरावका सिंहासन पर बिठा कर स्वदेश लौटा।

बाजीरावने अङ्गरेजोंका आश्रय लिया। १८०२ ई०की ३१वीं दिसम्बरको अङ्गरेजोंके साथ उनकी जो सन्धि हुई उसमें शर्त इस प्रकार थी,—

(१) अङ्गरेजोंको बाजीरावकी रक्षाके लिये पूनामें दश हजार सेना हर वक्त मौजूद रहेगी। सेनाके खर्च-वर्चके लिये पेशवा वार्षिक २६ लाख रुपये आयका राज्यांश अङ्गरेजोंको देंगे। (२) अङ्गरेज यूरोपीय शत्रुओंको अपने राज्यमें आश्रय नहीं दे सकते। (३) भारतीय दूसरे दूसरे राजाओंके साथ कलह उप-स्थित होने पर विना अङ्गरेजोंकी सम्मतिके बाजीराव उनके साथ युद्ध वा संधि नहीं कर सकते।

इस प्रकार अङ्गरेजोंकी सहायतासे बाजीरावने पुनः पूनामें प्रवेश किया। अङ्गरेजोंने मराठा सरदारोंको सूचित किया, कि आप लोगोंके अधिनायक जिस संधि-सूत्रमें हम लोगोंके निकट आवद्ध हैं, आप लोग भी आजसे उसी सन्धिसूत्रमें आवद्ध हुए। किंतु सरदारोंने इस प्रस्तावको मंजूर नहीं किया और कहा, 'हम लोगों-से सलाह लिये विना जब यह संधि की गई है तब हम लोग उसे क्यों मानने चले।' फलतः अङ्गरेजोंके साथ मराठोंका फिरसे युद्ध छिड़ गया। यही युद्ध इतिहास-में द्वितीय मराठायुद्ध कहलाता है।

इस प्रकार हठात् युद्ध आरम्भ होगा, सरदारोंने यह स्वप्नमें भी नहीं सोचा था। अंगरेज पहलेसे ही युद्धके लिये तैयार थे। कर्णल मालकम और ड्यूक आव वेलिंगटन आदि अङ्गरेज-सेनापतियोंने एक ही समय में और एक ही भावमें भिन्न भिन्न स्थानमें सरदारों पर आक्रमण करनेका संकल्प किया। इधर शिन्देके साथ विवादवशतः होलकरने पहले इस युद्धमें साथ नहीं दिया। गायकवाडने पहले ही सामन्तमण्डलके साथ स्वतन्त्र संधि कर ली थी। अतः शिन्दे और भोंसलेकी एकत्रित सेनाके साथ अङ्गरेजोंका युद्ध आरम्भ हुआ। बेरारमें आढ़गांव नामक एक स्थान है, वहीं वेलिङ्गटनने दोनों सेनाको परास्त किया। अब अङ्गरेज होलकरका मुकाबला करने चले। होलकरको भी कई युद्धोंमें अङ्ग-रेजोंके निकट अपनी हार माननी पड़ी। धीरे धीरे कई सरदारोंने ही अङ्गरेजोंका सार्वभौमत्व स्वीकार किया। यह घटना १८०५ ई०में घटी। विस्तृत विवरण शिन्दे और होलकर शब्दमें देखो।

उन्होंने हृदयसे सार्वभौमत्व स्वीकार नहीं किया। बाजीरावकी भी अंगरेजोंके प्रति प्रेम न था। वे शिन्दे, होल्कर और भोंसलेको अंगरेजोंके विरुद्ध युद्धघोषणा करनेके लिये छिप कर उत्साहित कर रहे थे। स्वयं भी युद्धकी तय्यारी करने लगे। अंगरेजोंने मरहठोंके एकत्र होनेसे पहले ही प्रत्येक महाराष्ट्र-शक्ति पर आक्रमण करना निश्चय कर लिया था। क्योंकि अंगरेजोंको बाजीरावके साजिशका पता लग चुका था। इस युद्धको तीसरा मरहठा-युद्ध कहते हैं। स्वयं बाजीरावने इस युद्धको आरम्भ किया। सन १८१७ ई०में उन्होंने किरकी (Kirki) स्थानमें अङ्गरेजोंकी छावनी पर आक्रमण किया। इसमें बाजीरावकी ही हार हुई। इसके बाद बाजीराव भाग गये। इनके भाग जाने पर भी उनके सेनापति बापू गोखलेने अङ्गरेजोंके साथ कई जगहोंमें युद्ध किया, किन्तु हारते ही गये। बेरारमें बाजीराव पकड़े गये। उन्हों-ने इच्छा-पूर्वक अपना राज्य अंगरेजोंके हाथ दे देना स्वीकार कर लिया। अंगरेजोंने उनको आठ लाख वार्षिक वृत्ति देना स्वीकार किया। सितारोके छत्रपति प्रताप-सिंह बाजीरावके साथ ही थे। अंगरेज इनको १४ लाख

वार्षिक वृत्ति देते थे। इसीलिये पिण्डारियोंसे अंग रेजोंका युद्ध हुआ। इसका विशेष विवरण पिण्डारी शब्दमें पढ़िये। मरहठे सरदार पिण्डारियोंके पृष्ठ-पोषक थे।

सन् १६४६ ई०में महात्मा शिवाजीने जिस स्वराज्य-की भित्ति कायम की थी, उसे सन् १८१८ ई०में नराधम बाजीराव अंगरेजोंके हाथ सौंप कर परमार्थ साधनके लिये वार्षिक आठ लाख वृत्ति ले कर ब्रह्मावर्त्तको गये। उसका परमार्थ कहां तक सिद्ध हुआ, यह परमात्मा ही जाने।

फलतः परमार्थ साधन सम्बन्धमें रामदास स्वामीके उपदेशको न मान कर ही मरहठे अवनतिके गड्ढेमें गिरने लगे। पवित्र महाराष्ट्र-धर्मके पालनसे विमुख होनेसे उनका अधःपतन आरम्भ हुआ। सदाचार, निस्पृहता, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि सात्त्विक नीति जो ज्ञानेश्वर और रामदास द्वारा प्रवर्त्तित महाराष्ट्रधर्मकी भित्तिस्वरूप थी वह मरहठोंके स्मृतिपथसे अन्तर्हित होने लगी। उनके द्वारा प्रवर्त्तित धर्म हिन्दू-साम्राज्य स्थापनका पक्षपाती हो कर भी परमार्थ मार्गका अन्तरायस्वरूप न था। इसी लिये गीतामें कहे हुए कर्मयोगकी तरह वह अतीव कष्ट-साध्य था। कोई भी समाज अधिक दिनों तक कठोर धर्मके पालनमें समर्थ नहीं हुआ। फलतः मरहठे भी अधिक दिनों तक इस धर्मका पालन न कर सके। निष्काम कर्त्तव्यनिष्ठाके ह्राससे 'महाराष्ट्री धर्म' (महान् राष्ट्रके उपयोगी स्वत्त्वगुणप्रधान हिन्दूधर्म भी मरहठोंके पाल-नीय धर्म) यह गौरवपूर्ण पवित्र नाम भी परवर्त्ती इति हाससे विलुप्त हुआ और कर्मकाण्डबाहुल्य राजस हिन्दू धर्मने उसका स्थान अधिकार किया। चित्तशुद्धिकी अपेक्षा सोपचार पूजार्चना बहुत कुछ पुण्यजनक समझी जाने लगी। ऐसी दशामें समाजमें ईर्ष्या, विद्वेष, कपटता और स्वार्थसाधनेच्छाकी बलवती होना कोई अस्वा-भाविक नहीं। निष्काम धर्मकी जंजीर ढीली होनेसे यह सब बातें उसमें पैदा हो गईं थीं। मल्हार राव होल्कर-की अवैध स्वार्थपरताके कारण मरहठोंका भाग्यसूर्य अस्त हो गया। रोहेलोंका दमन करनेमें होलकर ही मर-हठोंके प्रधान अन्तराय हुए थे। अङ्गरेजोंके साथ युद्ध करते समय उन्होंने स्वार्थानुरोधसे पापी रघुनाथ और अङ्गरेज़ कम्पनीका साहाय्य किया था। नागपुरके भोंसलेके दुर्व्यवहारसे भी महाराष्ट्र समाजकी कम क्षति नहीं हुई। नारायण रावकी हत्यामें आनन्दीरावकी अपेक्षा नागपुरके भोंसले किसी अंशमें कम न थे। इनकी स्वार्थपरता और क्रूरताकी वजहसे सारा महाराष्ट्रसमाज दुःखित और क्षतिग्रस्त हुआ था। बङ्गालमें उन्होंने ही महाराष्ट्र नामको कलङ्कित किया था। पहले महा-राष्ट्र-युद्धमें ये रिश्वत ले स्वदेशके अनिष्टसाधनमें प्रवृत्त हुए थे। सेंधियाने बहुत दिनों तक विश्वस्तरूप से कार्य किया। अन्तमें इन्होंने भी स्वार्थपरतामें पड़ कर स्वदेशका बहुत कुछ अनिष्ट किया था। स्वयं पेशवा भी सब जगह निष्काम कर्त्तव्यनिष्ठा दिखा न सके। फलतः सात्त्विक महाराष्ट्रधर्म उपेक्षित तथा महाराष्ट्रसमाज अन्तःसारशून्य हो रहा था। फिर भी, हिन्दूसाम्राज्य स्थापित कर हिन्दूधर्मको निष्कण्टक करनेकी पवित्र वासनासे वह बहुत दिनों तक समृद्ध अवस्थामें रहा। भारतकी और किसी जातिके हृदयमें उस महनीय वासनाका उदय नहीं हुआ। इसीसे उन-की उन्नति भी न हो सकी। इस तरहकी उच्चाशासे हृदय पूर्ण न होनेसे वह बारंबार हवाके झकोरेसे इस तरह दीर्घकाल तक अपने प्रतापको अक्षुण्ण नहीं रख सकते थे।

शासनपद्धति।

इस कौतूहलपूर्ण विषयको जाननेके लिये पाठक उत्सुक होंगे, कि मरहठोंका राजस्व निर्द्धारण करनेकी व्यवस्था, मालगुजारी वसूल करनेका नियमावली, नमक, मादकद्रव्य और अन्यान्य पदार्थोंका कर वसूल करनेके नियम कैसे थे; विदेशसे कर वसूल करनेके समय कौन-सी नीति काममें लाई जाती थी; नौकरोंका वेतन चुकानेका तरीका, जातीय ऋण ग्रहण और उसका परि-शोध करनेकी व्यवस्था, दीवानी फौजदारी मामलोंका विचारपद्धति, सैन्य-संग्रह, दुर्ग-रक्षा करनेकी प्रणाली, नौविभागका सैनिक निर्वाचन, पुलिसविभाग, डाक विभाग, टकसाल, कारागार, धर्मार्थ दान, वृत्तिनिर्द्धारण, चिकित्सा, विद्या और औषधि क्रियामें राजसाहाय्य,

ग्राम्य स्वास्थ्य-रक्षा, व्यवसाय-वाणिज्यमें उत्साहदान, शिक्षाविस्तार और उन्नतिविधान प्रभृति विविध कार्य्य किस तरह सम्पादित होता था। किन्तु इतिहासमें इन सब बातोंका कहीं उल्लेख दिखाई नहीं देता। फिर, उस समय इन सब कामोंका भार पेशवों पर था और पेशवा विशेष दक्षतासे यह सब कार्य्य निर्वाह करते थे। यह बात पूनाके राजदफ़रके काग़जातोंसे मालूम होती है।

प्रजापालनके विषयमें पेशवोंने कभी भी अपनी योग्यता प्रकट नहीं की है। अन्तिम समयमें विविध विषयोंमें पूर्व व्यवस्थाका व्यतिक्रम देने पर भी राजस्व वसूलके सम्बन्धमें पूर्व नियम अक्षुण्ण था। महाराष्ट्र राज्योंमें कर वसूलीके लिए प्रजा पर कभी जुलम या अत्याचार किया न गया, करकी रकम भी प्रजाके लिये किसी तरहसे दुर्वह न थी। वर प्रजा प्रसन्नताके साथ कर चुका देती थी। कर वसूलीकी व्यवस्था भी प्रजाके लिये कष्टकर न थी। इसके लिये पेशवोंकी प्रशंसा करनी चाहिए। जमीनकी मालगुजारीकी वसूलीकी तरह शुल्क अदाय करनेकी व्यवस्था भी कष्टकर न थी। दुकानदारों तथा समुद्रतीरवर्त्ती तम्बाकू और नमक व्यवसायियोंसे बहुत थोडा शुल्क लिया जाता था। नमकका शुल्क कहीं भी बीस मन पर २॥=) से अधिक न था। कहीं कहीं तो १।=) आने दे कर नमकके व्यवसायी छुटकारा पा जाते थे। उस समयकी तुलना करने पर हमें इस समय उससे २७ गुणासे ३० गुणा तक शुल्क दे कर नमक खाना पड़ता है। सिवा इसके नमक तय्यार करनेका व्यवसाय पेशवोंके एकाधिकृत न था, इससे भी लोगों पर अत्याचार या अतिचार होनेकी सम्भावना न थी। ताल, खजूर आदि रसों पर जो कर निर्द्धारित था, वह भी अत्यन्त अल्प था। किन्तु देशके लोग मद्यसेवी न बने, इस विषय पर पेशवोंका विशेष लक्ष्य था। विदेशसे जिन मालोंको आमदनी यहां होती थी, पेशवागण उससे महसूल लेते थे। किंतु इसका भी परिमाण बहुत कम था। सिवा इनके और किसी तरहका कर राजाकी ओरसे वसूल नहीं किया जाता था।

वर्त्तमान समयकी तरह उस समय भी सामरिक विभागके व्ययकी अधिकतासे राजकोषकी अवस्था अति शोचनीय रहती थी तथा जातीय ऋणका परिमाण बढ़ाना पड़ता था। गत शताब्दीके आरम्भकालमें अपनी क्षमता और स्वाधीनता ठीक रखनेके लिये मरहठोंको युद्ध करना पड़ा था। इससे इनका खजाना प्रायः सभी समय खाली रहता था। पहले बाजीराव आदि महाराष्ट्र नेतृवर्ग भी उत्तर-भारतकी यात्रा करनेके समय ऋण लेने पर वाध्य होते थे। सन् १७४० ई०से १७५६ ई० तक बालाजी बाजीरावको सैकडे वार्षिक १२ रुपयेसे १८ रुपये तक सूद पर डेढ़ करोड रुपया ऋण लेना पड़ा था। पानीपतके युद्धमे मरहठोंकी विशेष क्षति होनेसे प्रथम माधवराव जातीय ऋण चुकानेकी कोई विशेष व्यवस्था नहीं कर गये। बल्कि जिस समय वे मृत्युशय्या पर पडे थे, उस समय मन्त्री-मण्डलको ढ़ाई करोड रुपयेका ऋण चुकाना पडा था। इसके बाद नानाफडनवीसकी व्यवस्थाके फलसे प्रायः सभी ऋण चुक गया था. केवलमात्र कई लाख रह गया था। अंतिम बाजीरावके समयमें केवल ऋणको चुका ही नहीं दिया गया था वरं राजकोषमें धन भी बहुत एकत्र हो गया था।

विद्याशिक्षामें लोगोंके उत्साह बढ़ानेके लिये पेशवा बहुत धन खर्चा करते थे। वेद-शास्त्रके अध्ययनकारी राजकोषसे वृत्ति पाते थे। भारतके प्रायः सभी प्रदेशके लोग वेदाध्ययनके लिये वृत्ति लेने महाराष्ट्रमें आया करते थे। पूनाकी परीक्षामें उत्तीर्ण हो कर जो पुरस्कार प्राप्त करते थे उनका समग्र भारतमें नाम हो जाता था। इसीलिये पूनाकी परीक्षामें परीक्षार्थियोंमें प्रतिद्वन्द्विता होती थी। इस पुरस्कारके कार्यमें मरहठे ६० हजार रुपये सालाना खर्च किया करते थे। अन्तिम पेशवा बाजीरावके समयमें सब तरहके दान धर्ममे चार लाख रुपया खर्च होता था। संस्कृतके विद्यार्थियोंके सिवा अन्य किसीको भी वृत्ति पानेका हक न था, तो भी कितने ही कवि, पुराणपाठक, आदि लोग कुछ न कुछ वृत्ति पाते थे और कभी कभी उन्हें गुणानुसार पुरस्कार भी मिलता था। फलतः गुणी मात्र ही पेशवाके दरबारमें

आदर पाते थे। मरहठे कवि भी अपने काव्यग्रन्थको प्रचलित करनेके लिये राज-साहाय्य लाभ करते थे। षट्कर्मनिरत ब्राह्मणोंको अपने अग्निहोत्रादि शास्त्रविहित अनुष्ठान निर्विघ्न सुसम्पन्न करनेके लिये ब्रह्मोत्तर सम्पत्ति दी जाती थी। ऐतिहासिक गीत गानेवाले भी राजदरबारसे उत्साहित किये जाते थे। पेशवा वेद-विद्यालय और काव्यदर्शनादिके अध्ययनार्थ पाठशालादिकी व्यवस्था और परिचालनके सम्बन्धमें आवश्यकीय अर्थ व्यय करते थे। जो लोग अपने व्ययसे विद्यालय या पाठशाला खुलवाते थे, उनलोगोंको 'ग्राण्ट' आजकलका 'एड' या साहाय्य दिया जाता था। दरिद्र बालकोंकी शिक्षा तथा उनके भोजनके लिये राजकोषसे व्यवस्था की जाती थी। शिल्पकलामें उत्साह देनेके लिये शिल्पियोंकी बनाई चीजोंको मरहठा राजे अधिक मूल्य दे कर खरीदते तथा अर्थके पुरस्कारसे उन्हें पुरस्कृत करते थे।

पेशवोंने ऐसी व्यवस्था की थी, जिससे अदालतका विचार निरपेक्षता तथा दक्षताके साथ चलता रहे। विचारकके पद पर व्यवहार-विशारद, बुद्धिमान्, पापभीरु और साधुप्रकृति व्यक्ति ही रखे जाते थे। दीवानी मुकदमेमें वादी-प्रतिवादीका काम मनोनीत पञ्चके साहाय्यसे चलता था। इस तरहके विचारमें किसी पक्षको किसी तरहके असन्तोषका कारण नहीं रह जाता था। राज्यके सब स्थानोंके मुकदमोंकी अपील करनेके लिये पूनामें एक बड़ी अदालत भी रहती थी। फौजदारी मुकदमेमें आसामीसे जुर्माना और प्रतिवादीसे पुरस्कार लिया जाता था। नानाफड़नवीसके मन्त्रिपद प्राप्ति तक महाराष्ट्र राज्यमें असामियोंके प्रति कठोर दण्डकी व्यवस्था न थी। फांसी या शूली, कत्ल करना आदि किसी तरहका प्राणदण्ड भी महाराष्ट्रमें न था। किलेमें कैद कर रखना ही उस समयकी बहुत बड़ी सजा थी। कैदखानेमें भी कैदियोंके प्रति कोई दुर्व्यवहार नहीं किया जाता था, वरं सद्व्यवहारकी ही व्यवस्था थी। इसके बाद महाराष्ट्र शक्तिकी अवनतिके साथ देशमें जिस तरह अधिकतासे अराजकता बढ़ने लगी वैसे ही कठोर दण्डका विधान किया गया। कालक्रमसे चोर और लुटेरोंकी अधिकता होनेसे डाकुओंको जानसे मार डालनेकी व्यवस्था हुई थी। फलतः कैदियोंके प्रति कठोर व्यवहार तथा फांसीकी सजा दी जाने लगी। राजद्रोहियोंको हाथीके पैरमें बांध हाथीको दौड़ा कर उसका प्राण ले लेते थे। किन्तु उस समय आजकल जैसी विद्रोहकी बाहुल्यता न थी। सिंहासन अधिकार करनेकी चेष्टा करनेवालेको राजद्रोही कहा जाता था। मद्यपायी राजविधिसे दण्डित होता था। स्त्रियों तथा ब्राह्मणोंको अपेक्षाकृत लघुदण्डकी ही व्यवस्था थी। व्यभिचारके दोषसे स्त्रियां दासीकी तरह बिकती थी। उनसे उत्पन्न होनेवाली सन्तानकी भी दासमें गिनती होती थी। दासव्यवसायी इन्हींको ले कर अपना व्यवसाय चलाते थे। अन्यरूपसे दासदासियोंके क्रय विक्रय करनेके कोई आज्ञा न थी।

जो राजकार्यमें विशेष क्षमता दिखाते थे, उनको विशेष सम्मानकी उपाधिसे पुरस्कृत किया जाता था। महाराज शाहुने यह प्रथा प्रचलित की थी। महाराष्ट्र राज्यके अन्त समय तक यह प्रथा प्रचलित थी। फिर आजकलकी तरह जिस किसीको उपाधियां नहीं मिला करती थी। विशेष गुण न दिखाने पर किसीको जल्द उपाधि प्राप्त नहीं होती थी। समराङ्गणमें तथा देशके कार्यमें जो जीवन विसर्जन करते थे, उनके स्त्रीपुत्र और आत्मीय स्वजनको बहुत वृत्ति मिलती थी। इस कार्यमें मरहठा राजे कभी भी कृपणता नहीं करते थे। शहरमें कोतवाल तथा ग्रामोंमें पटलों पर शान्तिरक्षाका भार अर्पित होता था। पेशवोंने कई बार व्यवसाय वाणिज्यकी उन्नतिके लिये उत्साह प्रदान किया था। देव-आराधनाके लिये देवोत्तर भूसम्पत्ति भी बहुत दी जाती थी।

महाराष्ट्रोंकी टकसाल।

महात्मा शिवाजीने दक्षिणमें स्वाधीन हिन्दूराज्य-स्थापनका प्रयासी हो कर सन् १६६३ ई०में सबसे पहले अपने नामसे धातुमुद्राका प्रचलन कराया। उससे पहले मुसलमानोंकी अमलदारीमें मरहठोंके स्वतन्त्र सिक्का प्रचलित होनेका कोई प्रमाण नहीं मिलता। शिवाजीके पिता राजा शाहजीके समयमें सब जगह आदिलशाही सिक्का चलता था। सन् १६७३ ई०में उनकी मृत्यु हुई।

शिवाजीने पैतृक राज्यकी उपाधि धारण कर स्वनामाङ्कित मुद्रा प्रचलित की। यह नयी मुद्रा 'शिवराई होन' 'शिवरायका होन' नामसे प्रसिद्ध थी। यह 'होन' शब्द कर्नाटी 'होन्नू' शब्दका अपभ्रंश है। होन्नूका अर्थ सुवर्ण है। यही शब्द फारसीमें होन रूपसे उच्चारित होता है।

कर्नाटकके प्राचीन हिन्दू राज्योंमें केवल सोनेके सिक्के का चलन था। देशीय राजाओंके नामानुसार जो सोनेके सिक्के चलते थे, उनमें दो एकका नमूना आज भी कहीं कहीं दिखाई देता है। ये सब सिक्के गजपति होन या अश्वपति होन नामसे विख्यात थे। विजयनगर राज्यमें होनका प्रचार अत्यधिक था। वहां विद्यारण्य स्वामीके तपःप्रभावसे एक बार सोनेके सिक्केकी वर्षा हुई थी, वहां सिक्केके प्रचारबाहुल्यमें यह भी एक कारण हो सकता है। उस समय समूचे दक्षिणमें होनकी तरह मोहरका भी प्रचार कम न था। कितने ही लोगोंका अनुमान है, कि मुसलमानोंके समयमें ही रौप्यमुद्राका पहले पहल प्रचार हुआ। यह अनुमान यदि सत्य हो, तो कहना होगा, कि महाराष्ट्र और कर्नाट देशका अधिकांश सोना लूटा जा कर दिल्ली लाया गया था, इससे वहांके शासक चांदीके सिक्कोंका प्रचार करनेको वाध्य हुए थे।

जो हो, शिवाजीके समयमें महाराष्ट्र देशमें कई तरहके 'होन' प्रचलित थे। शिवाजीके अन्यतम कर्मचारी श्रीयुक्त कृष्णाजी अनन्त सभासद महोदयके द्वारा रचित "शिवछत्रपतिका चरित्र" नामक ग्रन्थमें जो छब्बीस प्रकारके 'होन' का वर्णन आया है, उसमें कुछके नाम नीचे दिये जाते हैं—१ पातशाही, २ शिवराई, ३ कावेरीपाकी, ४ त्रिशूली, ५ अच्युतराई, ६ देवराई, ७ रामचन्द्र राई, ८ गुती, ९ धारवाडी, १० ताडपत्री, ११ पाकनाइकी, १२ तञ्जोरी, १३ जड़माल, १४ वेलुडी, १५ महम्मदशाही, १६ रमानाथपुरी। ये ही सब होन महाराष्ट्रमें बहुत दिनों तक प्रचलित थे। इसके बाद टीपू सुलतानने 'सुलताना' और 'बहादुरी होन' दो तरहके सिक्के चलाये थे। इसके सिवा दिल्लीके बादशाहोंके 'आलमगिरी' नामक होनका आदान प्रदान सभी जगह अबाधरूपसे होता था। उस समयका होन इस समयके ३॥) रुपयेके बराबर होता था।

शिवाजीने सोने के सिक्केकी तरह चांदी और तांबेका सिक्का भी चलाया। वह सिक्का 'शिवराई रुपया' और 'शिवराई पैसा' कहलाता था। शिवराई पैसा आज भी महाराष्ट्रदेशमें तमाम पाया जाता है। किन्तु शिवाजीके चलाये हुए सोने और चांदीके सिक्के अभी नहीं मिलते। दूसरे जो सब प्राचीन होन काफी तौर पर नाना स्थानोंमें मिलते हैं, उनके अधिकांशके ऊपर अस्पष्ट पारसी अक्षर लिखे हुए दिखाई देते हैं। कहीं कहीं होनके ऊपर श्रीकृष्ण और वराह अवतारके चित्र भी देखनेमें आते हैं। प्रवाद है, कि शिवाजीके समय सज्जनगढ़ नामक दुर्गमें असंख्य होन थे। आज भी उस प्रान्तमें खेत जोतते समय दो एक होन मिल जाते हैं। इस होनका आकार चनेकी दालके जैसा होता है। इसीसे वहांके लोग उसे अकसर 'सोनेकी दाल' ही कहा करते हैं।

उस समय रायगढ़में महाराष्ट्रदेशकी राजधानी थी, इसीसे शिवाजीने वहां ही टकसालघर बनवाया था। इसके बाद राजधानी सातारामें लाई गई, जो उस समय एक छोटा-सा गांव था। शिवाजीकी मृत्युके बाद सम्भाजी और राजारामके राज्यकालमें मुगलोंके साथ अनवरत युद्ध होते रहनेके कारण देशमें घोर विप्लव मच गया था। उस अशान्तिके समयमें नये सिक्के चलानेकी कैसी व्यवस्था थी, टकसालका काम जारी था या नहीं, इसका पता नहीं लगता। मालूम होता है, कि उस समय नया रुपया नहीं ढाला जाता। क्योंकि, राजाराम मुगलोंके अत्याचारसे अपना घरबार छोड़ कर्नाटकके अन्तर्गत जिञ्जि नामक किलेमें रहनेको वाध्य हुए थे। महाराष्ट्रका राजसिंहासन भी वहीं उठ कर चला गया था और वहां बहुत दिन तक रहा भी, किन्तु इसका कुछ भी प्रमाण नहीं मिलता, कि वहां नये रुपये ढालनेके लिये टकसालघर भी बना था। फिर राजारामने जिञ्जिसे महाराष्ट्रदेशके जो कई देवोत्तर और ब्रह्मोत्तरदान पत्र लिखे थे, उनमें रुपयेका कहीं जिक्र दिखाई नहीं देता। किन्तु शिवाजीने ऐसे जो दानपत्र लिखे, उनमें कई जगहोंमें सोनेके सिक्केका जिक्र आया है।

मुसलमान शक्तियोंको चूर्ण कर राजारामने महाराष्ट्रदेशकी राजधानी सतारामें बसाई। किन्तु यह मालूम नहीं होता, कि वहां उन्होंने कोई टकसालघर भी बनाया था या नहीं। सन् १७१२ ई०में महाराष्ट्रदेश दो भागोंमें विभक्त हुआ। महाराज शाहु सतारेमें और राजारामके पुत्र सम्भाजी कोल्हापुरमें रह कर देशका शासन करते थे। इन दोनों राजधानियोंमें ही एक एक टकसालघर बना था। शाहुके नामका चांदी तथा तांबेका सिक्का "शाहु:सिक्का" और सम्भाजी टकसालका ढला सिक्का "शम्भू-सिक्का" कहलाता था। सन् १७८८ ई० तक कोल्हापुरके राजाओंका राजसिंहासन प्रधानतः पह्लालाके किलेमें ही था। जब तक कोल्हापुरमें राजधानी कायम न हो गई, तब तक कोल्हापुरके राजाओंका टकसालघर पह्लाला किलेमें ही रहा। इसी कारणसे सम्भाजीका रुपया पह्लाली रुपयेके नामसे भी मशहूर है। 'शंभू सिक्का' कहीं कहीं 'शम्भूपीररुपया'के नामसे भी विख्यात था। राजा शम्भू (सम्भाजी)-के नामके साथ पीर शब्द कैसे जोड़ा गया, इसका पता नहीं लगता। चाहे जो हो, महाराज सम्भाजीकी मृत्युके बाद भी कोल्हापुरके टकसालघरमें शम्भूसिक्का ढलता रहा। किन्तु इसके बादके कोल्हापुरके राजाओंके नामसे कोई सिक्का ढलता था या नहीं, इसका कोई प्रमाण अभी तक नहीं मिला है।

महाराज शाहुके समय सतारामें भिखाजी नायक और परशुराम नायक आदि कई शाहुकार या महाजन थे। छत्रपति शाहु, प्रायः इनसे आवश्यकता पड़ने पर कर्ज लिया करते थे। कभी कभी रुपयेके अभावमें टकसालमें रुपये ढाल कर इन लोगोंका कर्ज चुकाया जाता था। पीछे जिस प्रकार धीरे धीरे महाराष्ट्र-साम्राज्यका विस्तार होता गया उसी तरह टकसालघरकी संख्या भी बढ़ती गई। पेशवा बालाजी बाजीरावके जमानेमें राज्यके बहुतेरे स्थानोंमें लोगोंको या साहु महाजनोंको टकसालघर बनवानेका हुक्म दिया गया था। खास तौर पर २१५से २७० रुपये तक राजाको नजराना दे कर लोग सिक्का ढालनेका हुक्म ले लेते थे। किन्तु इसकी अवधि होती थी और वह भी तीन वर्षसे अधिक नहीं, किन्तु जो लोग एक वर्षके लिये हुक्म लेते थे, उन लोगोंको १२० रु० देना पड़ता था। सिवा इसके उतने समयमें जितना रुपया ढलता था, उन रुपयोंकी संख्याके हिसाबसे लोगोंको कुछ राजकर भी देना पड़ता था।

महाराष्ट्रदेशके बाहर मरहठे राजाओंके हुक्मसे जो टकसालघर स्थापित किये गये थे, उनमें धारवाड़का टकसालघर ही सबसे पहला था। यह सन् १७५३ ई०में प्रतिष्ठित हुआ था। बाघलकोटमें आदिलशाही सिक्का ढलता था, किन्तु आदिलशाहोंके नाश होनेके साथ साथ सिक्केका ढालना भी बन्द हो गया। बालाजी बाजीरावने पेशवाका पद प्राप्त कर फिर रुपया ढलवाना शुरू कर दिया। सबसे पहले इस बातकी ओर पेशवाकी दृष्टि आकृष्ट हुई थी, कि रुपयाके लिये लोगोंको किसी तरहकी असुविधा न होने पाये।

माधवराव पेशवाके समयमें भी राज्यके विविध स्थानोंमें रुपया ढाला जाता था। इनके बादके पेशवोंके समयमें भी इसकी कमी न होने पाई। केवल साहु महाजनों पर ही रुपया ढालना निर्भर न था बल्कि पेशवोंने सरकारी सरदारों और जागीरदारोंको भी रुपया ढालनेका हुक्म दिया था खानदेशके चन्दवाड़में तुकोजी होलकरको टकसालघर खोलनेका हुक्म दिया गया था। बुरहानपुर आदि स्थानोंमें सिन्धियाका टकसालघर था। उत्तर-भारतमें उज्जयिनी, इन्दोर, भूपाल, प्रतापगढ़, भिलसा, सिरोञ्ज, गञ्जबसोदा आदि स्थानोंमें भी पेशवाके हुक्मसे टकसाल घर कायम हुआ था। भड़ोचमें शिन्दे, कुलाबामें आग्रे, नागपुरमें भोंसले आदि सरदारोंने टकसालघर बनवाया था। आग्रेके टकसालघरमें जो सिक्का ढाला जाता था, वह 'श्रीसिक्का' कहलाता था। हबसियोंके जंजीरामें हबसानी या निशानी सिक्का ढलता था। इस सिक्के पर 'ज' अक्षर खुदा हुआ रहता था। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि 'ज' अक्षर जंजीरा शब्दका द्योतक था। कोङ्कण, नासिक और दौलताबाद प्रान्तमें पेशवाके सरदार तथा पेशवासे हुक्म ले कर महाजन भी रुपया ढाला करते थे।

कर्नाटकके बहुतेरे जागीरदार निर्दिष्ट नजराना और राजकर दे कर अपने अपने अधिकृत प्रदेशमें रुपया ढाला

करते थे। किन्तु माधवराव पेशवाको जब पता लगा, कि इन टकसालोंमें खराब और नकली रुपया भी तैयार होता है तब उन्होंने सन् १७६५ ई०में इन सब टकसालों-को बन्द कर दिया। किन्तु यथा शीघ्र उन्होंने धार-वाडमें पाण्डुरङ्ग नामक एक कर्मचारीके तत्त्वविधानमें एक सरकारी टकसालघर खोला। यहां ही इन प्रदेशोंके लिये रुपया ढलने लगा। उस समय जिन इक्कीस टक-सालोंको बन्द कर दिया गया था उनकी नामावली पूना के दफ्तरमें दिखाई देती है। कुछ दिनोंके वाद इन सब टकसालोंमें कुछ टकसाल खोलनेकी फिर आज्ञा दी गई थी।

सब प्रदेशोंमें एक ही तरहका सिक्का नहीं ढाला जाता था। वागलकोट प्रान्तमें भिखाजीराव पेशवोंके प्रधान सूवेदार थे। वादामी, वागलकोट, हुनगुन्द आदि मौजे उनके अधीन थे। उनके हुकमसे जो सिक्का तैयार होता था, लोग उसको मल्हारशाही रुपया कहते थे। इस सिक्केकी कीमत १५ आने ही थी। पेशवोंने इसी सिक्केको सारे देशमें चलाना चाहा था, इसके लिये वे दो रुपये सैकडे वट्टा भी देना चाहते थे। कुछ चला भी था, किन्तु इससे राजकोषकी वडी हानि होने लगी। अतः उन्हें यह उद्योग छोड देना पडा।

महाराष्ट्रदेशके भिन्न भिन्न प्रदेशोंमें भिन्न भिन्न प्रकारके सिक्कोंका प्रचलन था। उन सबोंका नाम और मूल्य पेशवोंके दफ्तरमें लिपिवद्ध दिखाई देता है। अन्तिम पेशवा वाजीरावके समय एक पूनामे ही कई तरहके चांदीके सिक्के चलते थे। धातुकी विशुद्धताके अनुसार उनके नाम और दाममें भी फर्क होता था। मिष्टर चपलिनकी रिपोर्टसे मालूम होता है, कि पूनाका टकसालघर सन् १८२२ ई०में वन्द हुआ था। किन्तु कुछ दिनके वाद ही वाजारमें रुपयेका अभाव हो जाने पर फिर उसे खोलना और रुपये ढालनेका काम जारी करना पडा था। सन् १८३८ ई०में पूनाका टकसालघर सदाके लिये वन्द हुआ। वागलकोट, कोल्हापुर, कुलावा आदिके टकसालघर भी इसी समय वन्द हुए थे।

उस समयके प्रायः सभी सिक्कों पर फारसी अक्षर अंकित होता था। किन्तु शिवाजी तथा शाहुके सिक्कों पर (देवनागरी) हिन्दी अक्षर दिखाई देता है। कुलावाके आग्रे अपने सिक्कों पर 'श्री' खुदवाया करते थे। जश-वन्तराव होलकरके सिक्कों पर भी हिन्दी अक्षर रहता था। पेशवोंके सिक्कों पर हिजरी सन् हिन्दीमें तथा अन्य विषय फारसीमें अङ्कित था। वाकी सभी सिक्कों पर फारसी अक्षर ही खुदे रहते थे। गायकवाड् आदि हिन्दू राजे भी फारसीके ही पक्षपाती थे।

पेशवोंके शासनकालमे रुपयेकी तरह अठन्नी चौअन्नी तथा दुअन्नीका भी प्रचार था। फिर पैसेका भी प्रचार कम न था। किन्तु पैसेके प्रचारमें किसी तरहकी रुकावट नहीं होती थी। उत्तर नर्मदासे तुङ्गभद्रा तक सभी जगह एक ही तरहका पैसा प्रचलित था। कुलावा, पनवेल, धारवाड आदि सभी टकसालघरों-में शिवराई ही पैसा ढलता था। इस पैसेकी एक पीठ पर तीन सतरमे "श्रीराजा शिव" और दूसरी पीठ पर 'छत्रपति' खुदा रहता था। महाराज शाहुने अपने नामका पैसा भी चलानेकी चेष्टा की थी। किन्तु उनको सफ-लता नहीं मिली। यह कहनेकी जरूरत नहीं, कि केवल शिवराई ही पैसाके सारे देशमें प्रचलन होना महात्मा शिवाजीके प्रति जनताकी श्रद्धाका द्योतक है। इस समय भी महाराष्ट्रके कई स्थानोंमें शिवराई पैसेका प्रचलन दिखाई देता है। सन् १३०८ फसलीमे यह अफवाह फैली, कि शिवराई पैसा उठा दिया जायेगा। इससे सारे देशमें हलचल मच गई। किन्तु अधिकारियोंने एक विज्ञप्ति निकाल कर उस अफवाहको अलीक प्रमाणित किया।

पेशवोंके समयका साहित्य

पेशवाके अभ्युदयकालमें महाराष्ट्र देशमे अच्छे सङ्गीत गायक 'अमृत राय' (१६९८-१७५३ ई०) पैदा हुए थे। वे "ब्राह्मविद्याभरण" संस्कृत ग्रन्थके रच-यिता और काशीवासी अद्वैतानन्दस्वामीके शिष्य थे। लोगोंके मुंहसे सुनाई देता है, कि उन्होंने विविध उपा-ख्यान, पदावली और सीता-स्वयम्वर आदि विषयों पर कितने ही पद वनाये थे। अमृत रायकी वनाई कविता में यथेष्ट माधुर्य्य दिखाई देता है। रघुनाथ पण्डित अमृतरायके समसामयिक थे। उनका नलोपाख्यान

नामक केवल एक काव्य मिला है। मनोहारिता तथा अन्यान्य गुणोंमें यह ग्रन्थ मराठी भाषामें अद्वितीय है। सुन्दर वर्णनाकौशल, श्रुति मधुर पदविन्यास, अलङ्कार प्राचुर्य्य और अन्तःकरण वृत्तिका विश्लेषण इस ग्रन्थमे जैसा दिखाई देता है, मराठी साहित्यमे ऐसा कहीं दिखाई नहीं देता। मुक्तेश्वरके सिवा अन्य कई भी कवि काव्यकलामें रघुनाथ पण्डितकी समता करनेमें समर्थ नहो हो सकते। 'वलिदान' और "वावण गर्वपरिहार"-के रचयिता चतुर सवाजी भी इसी समय हुए हैं।

इसके वाद महोपति हुए हैं। ये महाराष्ट्र देशमें सर्वप्रिय ग्रन्थकार हो गये हैं। श्रोधरकी तरह महीपतिकी ग्रन्थावली भी महाराष्ट्रमे आवाल-वृद्ध-वनिता सभी भक्ति और आदरके साथ पढ़ा करते हैं। भक्तविजय, मन्तविजय, भक्तलीलामृत और मन्तलीलामृत—इन चार ग्रन्थोंमें भारतवर्षके अधिकांश भक्तोंकी जीवनी महीपतिने बहुत सरल भाषामे लिखो है। इनको महाराष्ट्र धर्म-इतिहास प्रणेता कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी। कथासारामृत नामका दूसरा भी इनका एक वड़ा ग्रन्थ है। सन् १७७६ ई०में महीपतिकी मृत्यु हुई। महीपतिके साथ साथ मराठो साहित्यके वल, दर्प और सौभाग्य-शोभादिका विलोप भी आरम्भ हुआ। मरहठोंके शक्तिसागरमें मानो 'भाटा' आ गया। उनके राष्ट्रीय गौरव-सूर्य अन्तिम पेशवा वाजीरावके जघन्य कार्यकलाप देख कर अधोमुखो हो गये। समाजमें विलासिता तथा स्वार्थपरताका प्रसार बढ़ गया। सत्व गुणप्रधान भागवत धर्मका ह्रास हो कर तामसिक शाक्तसम्प्रदायका प्रादुर्भाव हुआ। इस समय जो सव कवि हुए उनमे शाक्त प्रवर 'रामजोशी' श्रेष्ठ माने जाते हैं। अपने छड़ा, छन्द, लावनी, ४ कुक्कुर, ४ वानर, २ मैना, एक अविद्या और उनके लिये रचित रेशमी दोला तथा नृत्यकुशल वालक और खञ्जनी आदि वाजेके साथ उन्होंने वाजीरावकी सभामे विशेष प्रतिष्ठा पाई थी। उनकी पदावलीके माधुर्य पर मुग्ध हो कर वहुतेरे उनके भक्त वन गये थे। वे सुपण्डित, असाधारण श्रीमान् और संस्कृत भाषाके मर्मज्ञ थे। 'छेका पद्धति' ग्रन्थमें उनके संस्कृतकी अद्भुत योग्यता दिखाई देती है। मोरोपन्त भी उसी युगके दूसरे एक कवि हैं। रामजोशीके सिवा उस समय मोरोपन्तका और कोई समकक्षी न था। मोरोपन्तकी धर्मनीतिमूलक कविताने विवेकभ्रष्ट कुपथगामी रामजोशीको सत्यपथमें प्रवृत्त किया था। काल पा कर रामजोशी मोरोपन्तके एक पक्के भक्त वन गये। मोरोपन्तके सहाय्यसे उनकी कविताकी गति वदली थी। मूर्ख वाजीरावने उनकी कविताको अपाठ्य कहा था इसलिये उन्होंने कविताका प्रचार करनेका भार अपने ऊपर लिया।

रामजोशीके वाद अनन्त फन्दीका नाम लावनी वनानेवाले कवियोंमें पहले लिया जाता है। इस समय उनकी कविता रचना-शक्ति असाधारण थी। उनकी कविता सुननेके लिये वीस कोससे लोग आते थे। उनकी सरस कविता सुन कर क्रोधान्वित अहल्या वाईने सन्नतासे उन्हें एक दुशाला उपहार दिया था। अनन्तफन्दी वहुत स्पष्टवक्ता थे। एक वार उन्होंने वाजीरावकी कार्य प्रणालीकी तीव्र निन्दा कर खुली सभामे सवको चकित कर दिया था। उन्होंने "माधवनिधान" नामक काव्यमें माधवरावकी मृत्यु कहानी का वर्णन किया है। इस समयके लावनी वनानेवालोंमें होनाजो, सगनभाउ आदि कवियोंका नाम उल्लेखनीय है। इन लोगोंकी वनाई कविताओंमें आदिरस और असारताकी अधिकता दिखाई देती है। संस्कृत नाटक और मर्मट आदिकी कविताओंमें अश्लीलता इस समय रावजीकी कृपासे मराठो साहित्यमें घुस गई। फिर भी वोररसपूर्ण कवितायें या रणगान इस समय कम न रचे गये। पानीपतका युद्ध, खुर्देका युद्ध, पेशवाओंका सैन्यवल और मराठे सरदारोंका वोरत्व आदि विषयोंका सम्बद्ध होता था। इन गानके वनानेवालोंमें 'प्रभाकरदाता' सवके शीर्षस्थानीय हैं। पूनाके निकटकी शैलशोभाका वर्णन, पेशवाओंके दानसागरका वर्णन, दूसरे माधवरावका होली खेलना, उनकी मृत्यु, पेशवाओंका ऐश्वर्य, सम्भ्रम, उनका अधःपतन, अन्तिम वाजीरावका दुराचार, नानाफडनवीस तथा अङ्गरेजोंका वर्णन, वाजीरावका भागना, पूनाका शिकस्त होना, अंग्रेजोंका पूनाको लूटना सामान्य वणिक् जाति द्वारा मरहठों जैसे वीरोंको पराजय

पर खेद, बाजीरावके लौटनेकी आशा और अन्तमें गभीरतत्वज्ञानमूलक उपदेश आदि विषयोंके वर्णनमें प्रभाकरदाताने जो असाधारण दक्षताका परिचय दिया है, उसकी तुलना नहीं हो सकती। अब तक ८० गीत-काव्य प्रकाशित हो चुके हैं, इनमें १२ प्रभाकर द्वारा रचित हैं। कृष्णाजी अनन्त सभासद्-रचित शिवाजी-की जीवनी सन् १६६३ ई०में लिखी गई। कृष्णाजीके ग्रन्थोंके बाद शिवदिग्विजय, शिवाजी प्रताप, पानीपतका बखर, भाऊ साहबका बखर और पेशवाओंका बखर, मराठी साम्राज्यका संक्षिप्त बखर, चित्रगुप्तकृत बखर, आदि गद्यकाव्य ऐतिहासिक ग्रन्थोंकी रचना हुई।

सतारा महाराजके हुकमसे मल्हारराव चिटनवीसने प्राचीन सरकारी कागजातोंके साहाय्यसे ऐतिहासिक ग्रन्थ की रचना की थी। इसमें शिवाजी, सम्भाजी, शाहु तथा राजारामके बखरोंका पूर्णरूपसे उल्लेख है। अनेक बखरों-की भाषा ओजमय और हृदयको आनन्द बढ़ानेवाली है। बखरकी भाषामें जैसा Compactness और पारिपाट्य है, वैसा आजकलकी कविताओंमें दिखाई नहीं देता।

पेशवोंके अधःपतनके समय जिन कवियोंका उदय हुआ है मोरोपन्त उनके शिरभूषणस्वरूप हैं। उन्हों ने आर्याच्छन्दमें प्रायः तीन लाख कविताओंकी रचना की थी। मोरोपन्तकी अमर लेखनीके स्पर्शसे मराठी भाषामें आर्याच्छन्दका गौरव बढ़ गया है, अगर ऐसा कहा जाय, तो दोष नहीं। उन्होंने अठारहों पर्व महाभारत (२० हजार आर्य्या), कृष्णविजय, वृहद्दशम, मन्त्रभागवत, मन्त्ररामायण (संस्कृत), एक सौ आठ तरहके रामायण, सन्मणिमाला, केकावली, प्रश्नोत्तर-माला, सत्सङ्ग, पण्ढरपुर माहात्म्य, नामसुधा, सन्मनोरथ राजि, संशयरत्नमाला आदि बहुतेरे छोटे बड़े ग्रन्थोंकी रचनायें की थी। दूसरे दूसरे देवताओं और साधुओं-की स्तुतिकी उनकी बनाई कितनी ही पुस्तकें मौजूद हैं। यमक, अलङ्कार और अनुप्रासके लिये उनकी कविता बहुत ही प्रसिद्ध है। कहते हैं, कि वे दिनमें डेढ सौ तक कविता आर्याच्छन्दमें बना लेते थे। फिर भी उनकी रचनामें मधुरता, विचित्रता और कल्पनामें कौतुकक्रीडा-की भरमार है। वे संस्कृतके भी विद्वान थे। अपनी रचनामें व्याकरणके दोषोंको दूर कर भाषाके संस्कारमें भी प्रयासी हुए थे। उनके काव्यमें कविजन सुलभ साधा-रण दोष भी अधिक नहीं। उनके चित्त संयम और तेज-स्विता यथेष्ट थी। रानी अहल्याबाई और पेशवा बाजी रावने उनको वृत्ति देना चाहा था। किन्तु स्वाधीन-चेता मोरोपन्तने स्वीकार नहीं किया। मोरोपन्तकी कविता आज भी मराठी साहित्यकी शोभाको बढ़ा रही है।

महाराष्ट्रक (सं० पु०) महाराष्ट्र-देशजात, महाराष्ट्रदेशमें होनेवाला।

महाराष्ट्री (सं० स्त्री०) महाराष्ट्रस्तद्देश उत्पत्तिस्थान-त्वेनास्त्यस्या इत्यच्, गौरादित्वात्, ङीष्। १ जल पिप्पली, जल-पीपल। २ शाकविशेष। ३ अठारह प्रकारकी भाषाके मध्य एक प्रकारकी भाषा। प्राकृत देखो। ४ महाराष्ट्रकी आधुनिक देशभाषा। ५ गुगुल।

महारिष्ट (सं० पु०) महान् अरिष्टः। १ महानिम्ब-विशेष, बकायन। पर्याय—कैटर्य, वामन, रमण, गिरि-निम्ब, शुक्रसाल। इसका गुण—कटु, तिक्त, कषाय, शीतल, लघु, सन्ताप, शोष, कुष्ट, अस्र, कृमि और विष-नाशक।

महान् रिष्टः। २ ज्योतिषके अनुसार मङ्गलसूचक चिह्न। ज्योतिष शास्त्रमें लिखा है—बालकके जन्म लेने पर सबसे पहले उत्तमरूपसे रिष्टका विचार करना चाहिए। जातबालकके २४ वर्ष रिष्टकाल तथा इसके बाद उसकी आयुगणना करना उचित है। इस समय तक केवल रिष्टका विचार कर उसका शुभाशुभ स्थिर करना होगा। महारिष्टयोग वा उसके भङ्गयोगकी अच्छी तरह विवेचना कर फलाफल निर्णय करना आव-श्यक है। रिष्ट देखो।

महारुज (सं० क्लि०) अतिशय पीड़ा, भारी दुःख।

महारुज (सं० त्रि०) महती रुग् यस्य। अतिशय पीडित।

महारुद्र (सं० पु०) रुद्राणां महान् स्वयं ईश्वर इत्यर्थः। महादेव।

"महाकाल्या महाकालश्चण्याकाकाररूपतः ।
मायायाच्छादितात्मा च तन्मध्ये समभागतः ।
महारुद्रः स एवात्मा महाविष्णुः स एव हि ॥"
(निर्वाणतन्त्र)

महारुद्र—१ कालज्ञान नामक वैद्यक ग्रन्थके प्रणेता । २ हिमालय पर्वत पर स्थित शिवलिङ्गभेद ।

महारुद्रसिंह—विज्ञानतरङ्गिणीके रचयिता ।

महारुद्रतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—कटुतैल ४ सेर, अडूसके पत्तोंका रस ४ सेर ; काढ़ेके लिये गुलञ्च ८ सेर, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर ; चूर्णके लिये पुनर्णवा, हरिद्रा, नीमकी छाल, बैंगन, अनारके फलका छिलका, कटाई, भटकटैया, नाटामूल, अडूसकी छाल, निसोथ, पटोलपत्र, धतूरा, अपाङ्गमूल, जयन्ती, दन्ती और त्रिफला प्रत्येक ४ तोला, विष १६ तोला, त्रिकटु प्रत्येक ३ पल, जल ४ सेर । पीछे तैल-पाकके नियमानुसार इस तैलका पाक करे । यह तैल लगानेसे वातरक्त, कुष्ठ, व्रण, कण्डु और दाह आदि रोग जाते रहते हैं । (भैषज्यरत्ना० वातरक्ताधि०)

महारुद्रगुडूचीतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—कटुतैल ४ सेर ; काढ़ेके लिये गुलञ्च १२॥ सेर, जल ६४ सेर, शेष १६ सेर, गोमूत्र ४ सेर ; चूर्णके लिये गुलञ्च, सोमराजीबीज, दन्तिमूल, करवीमूल, त्रिफला, दाड़िमबीज, नीमबीज, हरिद्रा, वृहती, कण्ट-कारी, गोपवल्ली, त्रिकटु, तेजपत्र, जटामांसी, पुनर्णवा, पिपरामूल, मजीठ, असगंध, सोयां, लालचन्दन, श्यामा-लता, अनन्तमूल और गोबरका रस प्रत्येक २ तोला । इस तैलकी मालिश करनेसे वातरक्त, कुष्ठ, विसर्प और व्रणादि जाते रहते हैं । (भैषज्यरत्ना० वातरक्तरोगाधि०)

महारुरु (सं० पु०) मृगोंकी एक जाति ।

महारूख (सं० पु०) १ थूहर, स्नुही । २ एक सुन्दर जङ्गली वृक्ष । इसकी लकड़ीसे आरायशी सामान बनता है । यह मदरास और मध्यप्रदेशमें अधिकतासे पाया जाता है ।

महारूप (सं० पु०) महत् महत्तत्त्वादिरूपं यस्य । १ महादेव । २ राल, धूना । (त्रि०) महद्रूपं यस्य । ३ अतिशय रूपयुक्त, बड़ा रूपवान् ।

महारूपक (सं० क्ली०) महत् रूपकं यत्र । नाटक ।

महारेतस् (सं० त्रि०) १ अतिशय वीर्यवान्, बलशाली । (पु०) २ शिव, महादेव ।

महारोग (सं० पु०) महान् घोरानिष्टकारकः रोगः यद्वा महान् जन्मान्तरीण भुक्तावशिष्टातिशयपातकेन जनितो रोगः । पापरोग । यह रोग आठ प्रकारका होता है, यथा—उन्माद, त्वक्‌दोष, राजयक्ष्मा, श्वास, मधुमेह, भगन्दर, उदर और अश्मरी । (शुद्धितत्त्व-नारद)

"महारोगेण वाभितप्तः प्राग्नीयान्यतरा गतिं गच्छति"
(आश्वलायन २।७।१७)

रसेन्द्रसारसंग्रह टीकाके मतमें भी महारोग आठ है । यथा—वातव्याधि, अश्मरी, कुष्ठ, मेह, उदर, भगन्दर, अर्श और ग्रहणी ।

२ महाव्याधिमात्र, बहुत बड़ा रोग । कहते हैं, कि इस प्रकारके रोग पूर्व जन्मके पापोंके परिणाम-स्वरूप होते हैं । वैद्य लोग ऐसे रोगोंकी चिकित्सा करनेसे पहले रोगीसे प्रायश्चित आदि कराते हैं ।

महारोगिन् (सं० त्रि०) महारोगः क्षयादिरस्त्यस्येति इनि । महारोगयुक्त । जिसे महारोग हुआ हो उसे महा-पातकी और जीवन पर्यन्त अशुद्ध समझना चाहिये । जब तक वह इन रोगोंका प्रायश्चित्त नहीं कर लेता तब तक धर्मकर्मादिमें उसे अधिकारी नहीं ।

"क्रियाहीनस्य मूर्खस्य महारोगिण एव च ।
यथेष्टाचरणस्याहुर्मरणान्तमशौचकम् ॥"
(शुद्धितत्त्वधृत कूर्मपुराण-वचन)

महारोगी (सं० त्रि०) महारोगिन् देखो ।

महारोच (सं० पु०) वृक्षभेद ।

महारोमन् (सं० पु०) महान्ति रोमाणि वृक्षादिरूपाणि विराटरूपे यस्य । १ शिव, महादेव । २ वृहद् रोमयुक्त, जिसके बड़े बड़े बाल हों । ३ कृत्तिरातके एक पुत्रका नाम ।

महारोहीतकघृत (सं० क्ली०) घृतौषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर ; काढ़ेके लिये रोहीतककी छाल १२॥ सेर, कुलथी ८ सेर, जल १२८ सेर, शेष ३२ सेर, बकरीका दूध १६ सेर, चूर्णके लिये त्रिकटु, त्रिफला, हींग, यमानी, धनिया, विटलवण, जीरा, कृष्णलवण,

अनारका बीज, देवदारु, पुनर्णवा, ग्वालककड़ीका मूल, यवक्षार, कुट, विडङ्ग, चितामूल, हवूषा, चव्य और वच प्रत्येक २ तोला, पाकका जल १६ सेर। मात्रा २से ३ तोला, अनुपान मांसका जूस और दूध वतलाया गया है। इसके सेवनसे यकृत्, प्लीहा आदि नाना प्रकारके रोग शान्त होते हैं। (भैषज्यरत्ना० प्लीहारोगाधि०)

महारौद्र (सं० पु०) १ अत्यन्त रौद्र, कड़ी धूप। २ शिव, महादेव। ३ वाईस मात्राओंके छन्दोंकी संख्या।

महारौद्री (सं० स्त्री०) दुर्गा।

महारौरव (सं० पु०) रुरूणामयं इति रुरु-अण्, महान् रौरवः तत्र गता जीवाः क्रव्यन् नामकैः रुरुभिः पीड्यन्ते अतएवास्य तथात्वं। नरकविशेष। जो इस नरकमें पतित होते हैं उन्हें क्रव्याद नामक रुरु (कुक्कुर) गण अत्यन्त पीड़ा देते है इसलिये इस नरकका नाम महारौरव पड़ा है। अग्निपुराणमें लिखा है, कि जो लोग देवताओंका धन चुराते या गुरुकी पत्नीके साथ गमन करते हैं, वे ही इस नरकमें भेजे जाते हैं। (अग्निपु०)

२ सामभेद।

महारौहिण (सं० पु०) दानवभेद।

महार्घ (सं० त्रि०) महान् अधिकः अर्घो मूल्यमस्य। १ महामूल्य, वेशकीमती। (पु०) महान् अर्घो मूल्यं यस्य। २ जिसका मूल्य ठीकसे अधिक हो, महंगा। ३ महासोम लता। ४ लावकपक्षी।

महार्घता (सं० स्त्री०) महार्घस्य भावः तल् टाप्। महामूल्यत्व, महामूल्यका भाव वा धर्म।

महार्घ्य (सं० त्रि०) १ महामूल्य, वड़े मोलका। (पु०) २ लावकजातीय पक्षिविशेष।

महार्चिस् (सं० पु०) महद् अर्चिर्यस्य। अग्नि।

महार्णव (सं० पु०) महान् सुविशालः अर्णवः। १ महासमुद्र, वहुत वड़ा समुद्र। महान् अर्णव इव प्रसादादिगुणवाहुल्यात् तथात्व। २ शिव, महादेव। ३ पुराणानुसार एक दैत्य जिसे भगवान्ने कूर्म अवतारमें अपने दाहिने पैरसे उत्पन्न किया था।

"सौराष्ट्रा दरदाश्चैव द्राविडाश्च महार्णवाः।
एते जनपदाः पादे स्थिता वै दक्षिणेऽपरे ॥"
(मार्कण्डेयपु० ५८।३२)

महार्थ (सं० पु०) १ दानवभेद। २ महाभाग्य।

महार्थक (सं० त्रि०) अतिशय मूल्यवान्, वेशी दामका।

महार्थवत् (सं० त्रि०) महार्थ अस्त्यर्थे मतुप् मस्य व। महार्थयुक्त, जिसका गूढ़ अर्थ हो।

महार्द्रक (सं० क्लो०) महद् आर्द्रकम्। १ वनार्द्रक, जंगली अदरक। इसका गुण अग्नि, दीपन, धारक, रुक्ष, वायु और कफनाशक माना गया है। २ शुण्ठी, सोंठ।

महार्द्ध (सं० पु०) महान् विपुलोऽर्द्धोऽस्य। वृक्षविशेष।

महार्वुद (सं० क्लो०) महद् अर्वुदम्। दशार्वुद, सौ करोड़ या दश अर्वुदकी संख्या।

महार्ह (सं० क्लो०) महान् अर्हः मूल्यं मर्यादा यस्य। १ श्वेतचन्दन, सफेद चन्दन। (त्रि०) २ महामूल्यवान्, वेशकिमती। ३ महापूजा योग्य।

"यस्माद्भागार्थिनो भागान् नाकल्पयत मे सुराः।
वराङ्गाणि महार्हाणि धनुषा शातयामि वः॥"
(रामायण १।६६।१०)

महाल (अ० पु०) १ वह स्थान जहां वहुत से वड़े मकान हों, मुहल्ला। २ भाग, पट्टा। ३ वन्दोवस्तके कामके लिये किया हुआ जमीनका एक विभाग, जिसमें कई गाव होते हैं।

महालक्ष्मी (सं० स्त्री०) १ महती लक्ष्मीः। राधा, नारायणकी शक्ति।

'यन्मायया मोहिताश्च ब्रह्मविष्णुशिवादयः।
वैष्णवास्ता महालक्ष्मीं पराराधां वदन्ति ते।
यदर्द्धाङ्गा महालक्ष्मीः प्रिया नारायणस्य च ॥"
(ब्रह्मवैवर्त्तपु० प्र० ख० ५१ अ०)

२ एक वर्णिकवृत्त जिसके प्रत्येक चरणमें तीन रगण होते हैं।

महालक्ष्मीपुर—प्राचीन नगरभेद।

महालय—पुराणवर्णित तीर्थभेद। यहां देवादिदेव महादेवके उद्देश्यसे स्नान और पूजादि करनेसे सव पाप जाता रहता है। स्कन्दपुराणके महालय-माहात्म्यमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है।

महालय (सं० पु०) महतां जैनानामालयः, महान् आलय इति वा। १ विहार। २ तीर्थ। ३ परमात्मा। ४ आश्विनका कृष्णपक्ष जिसमें पितरोंके लिये तर्पण और श्राद्ध आदि किया जाता है।

"येयं दीपान्विता राजन् ख्याता पञ्चदशी भुवि ।
तस्या दद्यान्न चेद्दत्त पितॄणां वै महालये ॥
महालये कन्यागतापरपक्षे ॥" (तिथितत्त्व)

५ वृहदालय, बड़ा मकान । ६ पुराणानुसार एक तीर्थका नाम ।

महालया (सं० स्त्री०) महालय स्त्रियां टाप् । आश्विन कृष्ण अमावस्या । इस दिन पितरोंके लिये पार्वणश्राद्ध करना होता है । जो तर्पण कृष्ण पतिपदसे शुरू होता है वह इसी महालयके दिन शेष होता है ।

महालस (सं० पु०) अतिशय अलस, बड़ा आलसी ।

महालसा (सं० स्त्री०) प्रसिद्ध टीकाकार नारायणकी माता ।

महालिकटभी (सं० स्त्री०) महान्तः अलयः तेषां कटभी आश्रयीभूतवृक्षः । श्वेतकिणिही वृक्ष, चिरचिटेका पौधा ।

महालिङ्ग (सं० पु०) महान् पूज्यतमो विपुलो वा लिङ्गो-ऽस्य । १ शिव, महादेव ।

"अकरोत् स महाहर्म्यैर्महालिङ्गं महावृषः ।
महात्रिशूलैर्महर्ती महामाहेश्वरो महीम् ॥"
(राजत० २।१३७)

२ हिमालयस्थित शिवलिङ्गभेद । (त्रि०) ३ वृह-लिङ्गयुक्त, जिसका लिङ्ग बड़ा हो ।

महालिङ्गयोगी—लिङ्गलीला-विलासचरित्रके प्रणेता ।

महालिङ्गशास्त्री—उणादिरूपावलीके रचयिता ।

महालीलसरस्वती (सं० स्त्री०) लीलया सरस्वती, महती लीलसरस्वती कर्मधा० । तान्त्रिकोंके अनुसार तारा-देवीका एक नाम ।

"लीलया वाक्प्रदा चेति तेन लीलसरस्वती ।
तारात्वरहिता त्वयां महालीलसरस्वती ॥" (तन्त्रसार)

महालुगि—एक विख्यात ज्योतिर्विद । नारायणकृत-मार्त्तण्ड वल्लभग्रन्थमें इनका नामोल्लेख है ।

महालोक (सं० पु०) महर्लोक देखो ।

महालोध्र (सं० पु०) महान् लोध्रः । लोध्रविशेष, पठानी लोध ।

महालोभ (सं० पु०) महान् लोभो यस्य । १ काक, कौआ । (त्रि०) अतिशय लोभी, बड़ा लालची ।

महालोमन् (सं० पु०) १ शिव । २ वृहद्रोमयुक्त, जिसके बड़े बड़े बाल हों ।

महालोल (सं० पु०) महदतिशयं लोलं लौल्यमस्य । १ काक, कौआ । (त्रि०) अत्यन्त चंचल ।

महालोह (सं० क्ली०) महदतिशयगुणवत् लोहं । अय स्कान्त, चुम्बक पत्थर ।

महावंश (सं० पु०) १ प्रसिद्ध वंश । २ पालि भाषामें लिखित प्रसिद्ध सिंहलीय राजाका इतिहास । इस ग्रन्थमें ईस्वीसन् ५४३के पहलेसे ईस्वीसन १७५० तक की अनेक ऐतिहासिक घटना लिखी हैं । यह ग्रन्थ भिन्न भिन्न प्रथकारोंसे रचा गया है । महानामने इसके प्रथम भागकी रचना की है । इस ग्रन्थके पढ़नेसे सिंहल में बौद्धप्राधान्य-विस्तार तथा धातुसेन बुद्धदास आदि राजाओं द्वारा आतुरालयस्थापनादि और राजनैतिक उन्नतिका यथेष्ट प्रमाण मिलता है ।

महावंशावली—ध्रुवानन्दमिश्र विरचित वंगालके वल्लाली कौलीन्यका एक सामाजिक इतिहास ।

महावंश्य (सं० त्रि०) महद्वंशोत्पन्न, जिसका जन्म उच्चकुलमें हुआ हो ।

महावकाश (सं० पु०) अतिशय अवकाश, काफी समय ।

महावक्त्र (सं० त्रि०) १ वृहत् मुखविशिष्ट, बड़ा मुंह-वाला । (पु०) २ दानवभेद ।

महावक्षस् (सं० पु०) महत् वक्षः विराड़् देहो यस्य । १ महादेव । (त्रि०) २ वृहद् वक्षोयुक्त, चौड़ी छाती-वाला ।

महावज्रकतैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—सफेद सरसों, करञ्ज, सप्तपर्णी, पूतिकरञ्ज, हल्दी, दारुहल्दी, रसाञ्जन, कुटज, चक्रमर्द, मृगादनी (ग्वालककड़ी), लाख, सर्जरस, अर्क, अपराजिता, आर-ग्वध, स्नुही, शिरीष, तुवर, अरुष्कर, वच, कुष्ठ, विड़ङ्ग, मजीठ, लाङ्गली, चित्रक, मालती, तितलौकी, गंधाली, मूलक, सैन्धव, करवीर, गृहधूम, विष, कम्पिल, सिन्दूर, तूतिया और गजपीपल, बराबर भाग ले कर जितना हो उससे दूने गायके मूतमें उसे अच्छी तरह पीसे । पीछे उसे चौगुने करञ्जतैल या सरसोंके तेलमें पाक करे । इसीको महावज्रकतैल कहते हैं । इस तेलकी मालिश

करनेसे सभी प्रकारके कोढ़, गण्डमाला, भगन्दर और नाड़ीव्रण आदि रोग नष्ट होते हैं। (सुश्रुत कुष्ठचि०)

महावट (हिं० स्त्री०) पूस माघकी वर्षा, वह वर्षा जो जाड़ेमें हो।

महावणिज् (सं० पु०) महान् वणिक्। श्रेष्ठ वणिक्।

महावत (हिं० पु०) हाथी हांकनेवाला, फीलवान।

महावतारी (सं० पु०) २५ मात्राओंके छन्दोंकी संख्या।

महावद (सं० पु०) ब्रह्मवादी।

महावध (सं० पु०) वज्र।

महावन (सं० क्ली०) महद् विपुल वनं। वृहद्वन, घोर जङ्गल। पर्याय—अरण्यानी, महारण्य, महाटवी।

महावन—१ युक्तप्रदेशके मथुरा जिलान्तर्गत एक तहसील। यह अक्षा० २७° १४´से २७° ४१´ उ० तथा देशा० ७७° ४१´से ७७° ५७´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २४० वर्गमील और जनसंख्या डेढ़ लाखके करीब है। इसमें ४ शहर और १६२ ग्राम लगते हैं। यहांकी प्रधान उपज जुआर, रूई, वाजरा, चना और गेहूं है।

२ उक्त तहसीलके चार शहरोंमेंसे एक बड़ा शहर और तीर्थक्षेत्र। यह अक्षा० २७° २७´ उ०से ७७° ४५´ पू०के मध्य यमुनाके वाम किनारे अवस्थित है। जन-संख्या पांच हजारसे ऊपर है।

यह वनभूमि श्रीकृष्णकी लीलाक्षेत्र समझी जाती है। इस कारण बहुत दिनोंसे इसका आदर चला आ रहा है। सुप्राचीन जैन, बौद्ध, शैव, गाणपत्य और वैष्णव आदि हिन्दू धर्म सम्प्रदायकी पुराकीर्त्तिका निदर्शन जो इधर उधर पड़ा है वह विभिन्न साम्प्रदायिक प्रभावका अस्तित्व सूचित करता है। मथुरा देखो।

किसी समसामयिक इतिहास-लेखकका वृत्तान्त पढ़नेसे मालूम होता है, कि १२३४ ई०में दिल्लीके बादशाह सुलतान शमसुद्दीनने जो कालिञ्जर जीतनेके लिये सेना-दल भेजा था उसने इसी महावनमें छावनी डाली थी। रूप गोस्वामीके वृन्दावन उद्धारकालमें यह ८४ वनोंके अन्तर्गत समझा जाने लगा। १८०४ ई०में महाराष्ट्रराज यशोवन्त राव होलकर फर्रुखावाद रणक्षेत्रमें पराजित हो कर इसी स्थानके निकट यमुना नदी पार कर गये थे। इसके दूसरे ही वर्ष प्रसिद्ध पठान-डकैत अमीर खाने यहींसे यमुना पार कर अपनी दस्युवृत्तिको चरितार्थ किया था।

कालक्रमसे यह प्राचीन स्थान महारण्यमें परिणत हुआ। इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि मुगल-बादशाह शाहजहां इस वनभूमिमें शिकार करने आये थे और चार बाघोंका शिकार किया था। प्रसिद्ध गोकुल नगरी इसके उपकण्ठमें अवस्थित है। महावनके ध्वस्त और श्रीहीन होने पर यहांके सभी लोग आध कोस दूर हट कर यमुनाके किनारे गोकुलमें बस गये। पुराणमें श्रीकृष्णके वाल्यलीलाक्षेत्र गोकुलका ही उल्लेख देखनेमें आता है। आज भी यहांके लोग महावनके ध्वंसाव-शेषको ही कृष्णलीलाका आदि स्थान बतलाते हैं। शायद यही स्थान पहले गोकुल कहलाता होगा। अभी वर्त्त-मान जनसमाकीर्ण नदीतटवर्त्ती उपकण्ठ ही गोकुल कह-लाता है।

इस महावनके मध्य नन्दालय ही देखनेलायक है। बादशाह औरङ्गजेबके जमानेमें मुसलमानोंने उस प्राचीन नन्द-प्रासादके चारों ओर दीवार खड़ी कर वहां एक मसजिद बनवाई। आज भी हिन्दू और बौद्धकीर्त्तिके सैकड़ों निदर्शन उस मसजिदमें देखे जाते हैं। यह स्थान 'अस्सीखंभा' कहलाता है। ८० खंभोंके मध्य सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, और कलियुग नामक चार खंभोंमें कालवैचित्र्यज्ञापक चित्रावली दिखलाई गई है। अलावा इसके बाकी खंभोंमें भी कितने हिन्दू चित्र खोदित हैं। फादर टिफन थलार ११वीं सदीके मध्यभागमें महावन देख कर लिख गये हैं, कि उस वृहत् अट्टालिकाका एक अंश हिन्दुओंके मन्दिर और दूसरा अंश मुसलमानोंकी मसजिद रूपमें व्यवहृत होता था।

पहले ही कह आये हैं, नदीतीरवर्त्ती गोकुलग्राम महा-वन ध्वंसके बाद बसाया गया है। यहां बहुत ही कम प्राचीन कीर्त्तिका निदर्शन देखनेमें आता है। अधिकांश अट्टालिका और मन्दिरादि जो श्रीकृष्णके लीलास्थलरूप-में वर्णित हो कर तीर्थ समझे जाने लगे हैं, वे भी नितांत आधुनिक कालके मालूम नहीं होते। १४७६ ई०में यहां वल्लभाचार्य नामक एक ज्ञानी वैष्णवका आविर्भाव हुआ। उन्होंने अपने नामसे वल्लभाचार्य मत चलाया। यहां

वल्लभाचार्य सम्प्रदाय वा गोकुलस्थ गोसाइयोंका प्रधान अड्डा होनेसे यह स्थान बहुत कुछ प्रसिद्ध हुआ। गुजरात वा बम्बईवासी सभी हिन्दू वणिक् इसी संप्रदायके शिष्य हैं। अतएव उनके द्वारा नवप्रतिष्ठित गोकुलनगरी की शोभा बढ़ाई गई हो, इसमें आश्चर्य ही क्या ? यथार्थ में वल्लभाचार्यके अभ्युदयसे गोकुलनगरीकी समृद्धिकी कल्पना की जाती है। गोकुल और वल्लभाचार्य देखो।

महावन--हजारा जिलेके पेशावर सीमान्तवर्त्ती यागिस्थान नामक प्रदेशके अन्तर्गत एक पर्वत। यह इसलामशैलशृङ्गके पूरब ओर सिन्धुनदके दाहिने किनारे अवस्थित है। इसकी ऊंचाई समुद्रपृष्ठसे ७४०० फुट है। इसका दक्षिणभाग घने जंगलोंसे ढका है इसीसे इस पर्वतका महावन नाम हुआ है।

यह गिरिशृङ्ग विशेष स्वास्थ्यप्रद है। किन्तु यहां दुर्द्धर्ष अफगान जातिका वास होनेके कारण किसीको भी इसके ऊपर चढ़नेका साहस नहीं होता।

महावन्ध (सं० क्लो०) योगप्रक्रियासे हाथ और पांवका बांधना।

महावप (सं० पु०) महामेघ।

महावर (हिं० पु०) लाखसे बना हुआ एक प्रकारका लाल रंग, यावक। इससे सौभाग्यवती स्त्रियां अपने पांवोंको चित्रित कराती हैं।

महावर—हजारीबाग जिलान्तर्गत एक गिरिश्रेणी। यह पूर्वपश्चिममें प्रायः १४ मील विस्तृत है। पर्वत पर चढ़ना बहुत खतरनाक है। किन्तु ऊपरकी अधित्यकाभूमि प्रायः १ मील चौड़ी है। शकरीनदी इस पर्वतके पश्चिम हो कर बह गई है। यहां कोकलहाट नामक ६०० फुट ऊंचा एक जलप्रपात है। उस प्रपातके सामने प्रतिवर्ष मेला लगता है।

महावरा (सं० स्त्री०) व्रियतेऽसौ देवादिभिरिति वृ-अच्, टाप् महती वरा। १ दूर्व्वा, दूब। २ मूर्वा, मरोड़फली।

महावरा (अ० पु०) मुहावरा देखो।

महावराह (सं० पु०) महान् ईश्वरोऽपि सन् वराहः, महांश्चासौ वराहश्चेति वा। वराहरूपी भगवान्।

"महावराहो गोविन्दः सुसेनः कनकाङ्गदी।"
(भारत १३।१७।१९)

२ शूरपुरके एक राजा।

महावरी (हिं० स्त्री०) महावरकी बनी हुई गोली या टिकिया जिससे स्त्रियोंके पैर चित्रित किये जाते हैं।

महावरेदार (अ० वि०) मुहावरेदार देखो।

महावरोह (सं० पु०) महान् अवरोहः शिफानां अधोऽवतरणं यस्य। प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़।

महावर्षाभू (सं० स्त्री०) श्वेतपुनर्नवा।

महावल—एक जैन राजा।

महावल—गिरनरप्रदेशके अन्तर्गत एक गिरिकन्दर। यह गिरनर दुर्गसे आठ कोस पर अवस्थित है। गुर्जराधिप सुलतान महमूद विगड़ा जूनागढ़ और गिरनर-दुर्ग जीतने की आशासे ससैन्य यहां आये। वहांके हिन्दू राजा राव मण्डलिकने अपने बचावका कोई रास्ता न देख दलबलके साथ महावल पर्वत पर आ कर आश्रय लिया। वहां युवराज तुगलक खांने उन्हें ससैन्य हराया। इसके चारों ओर उच्च शिखर मानो स्वभावतः दृढ़ दुर्गरूपमें गठित है। यहांका प्राकृतिक दृश्य उतना खराब नहीं है। स्थान विशेष स्वास्थ्यप्रद है।

महावल्क (सं० पु०) जातीफलवृक्ष, जायफलका पेड़।

महावल्ली (सं० स्त्री०) महती चासौ वल्ली चेति। १ माधवीलता। २ उत्तमालता, अच्छी लता। ३ श्वेत लावू, सफेद कद्दू। ४ कटुवल्लिका, कटकी।

महावस (सं० पु०) महती वसा वपास्य। शिशुमार, मगर नामक जलजन्तु।

महावसु (सं० त्रि०) १ प्रभूत धनशाली, बड़ा दौलतमन्द। (पु०) २ इन्द्रावरुणका एक नाम। ३ रौप्य, चांदी।

महावाक्य (सं० क्ली०) महद्वाक्यं। १ 'सोऽहं' शब्द। २ शङ्कराचार्यजीके मतानुयायियोंके मतसे 'अहं ब्रह्मास्मि', 'तत्त्वमसि', 'प्रज्ञानं ब्रह्म' और 'अयमात्मा ब्रह्म' इत्यादि उपनिषद्‌के वाक्य। ३ दान आदिके समय पढ़ा जानेवाला संकल्प।

महावात (सं० पु०) अतिशय वायु, जोरकी हवा, तूफान।

महावातव्याधि (सं० पु०) रोगभेद।

महावात्सप्र (सं० क्ली०) सामभेद।

महावादी (सं० त्रि०) विरुद्धवादी, विरुद्ध बोलनेवाला।

महावामदेव्य (सं० क्ली०) शान्तिकर्मोंके समय पढ़ा जानेवाला एक प्रकारका साम।

महावायु (सं० पु०) १ प्रबल झटिका, भारी तूफान। २ वायुभूत।

महावारुणी (सं० स्त्री०) वरुणो देवताऽस्या वरुण-अण् ङीप्, महती वारुणी। गंगा-स्नानका एक योग। गौण-चान्द्र चैत्रमासकी कृष्ण त्रयोदशीके दिन वारुणी योग होता है। इस दिन यदि शनिवार और शतभिषा नक्षत्र हो, तो महावारुणी होती है। करोड़ सूर्यग्रहणमें गंगा-स्नान करनेसे जो फल होता है, वही फल महावारुणीमें गंगास्नान करनेसे होता है।

"वारुणेन समायुक्ता मधौ कृष्णा त्रयोदशी।
गगाया यदि लभ्येत सूर्यग्रहशतैः समा॥
शनिवारसमायुक्ता सा महावारुणी स्मृता।
गगाया यदि लभ्येत कोटिसूर्यग्रहैः सम॥"

(तिथितत्त्व)

इस दिन स्नान दान आदि पुण्यकार्य अनन्त फल-दायक है।

महावार्त्ताकिनी (सं० स्त्री०) महावार्त्ताकुवृक्ष, जंगली बैंगनका गाछ।

महावार्त्तिक (सं० क्ली०) कात्यायनकृत पाणिनि-सूत्रका वार्त्तिक।

महावार्षिका (सं० स्त्री०) वृक्षभेद।

महावालभिद् (सं० त्रि०) स्तोत्रभेद।

महावास्तु (सं० क्ली०) महायतन।

महावाहन (सं० क्ली०) एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महावाहु—सह्याद्रि-वर्णित एक राजा।

महाविक्रम (सं० त्रि०) महान् विक्रमो यस्य। १ प्रबल पराक्रमशाली, बड़ा प्रतापवान्। (पु०) २ सिंह। ३ नागभेद।

महाविक्रमिन् (सं० पु०) १ बोधिसत्त्वभेद। (त्रि०) २ महाविक्रययुक्त, जिसकी खूब बिक्री हो।

महाविघ्न (सं० पु०) प्रबल विघ्न, बड़ी बाधा।

महाविज्ञ (सं० त्रि०) महान् विज्ञः। अतिशय ज्ञानी, बड़ा ज्ञानवान्।

महाविदेह (सं० पु०) पुण्यक्षेत्रभेद।

महाविदेहा (सं० स्त्री०) योगशास्त्रके अनुसार मनकी एक वहिर्वृत्ति।

महाविद्या (सं० स्त्री०) विद्यते ज्ञायते इति विद्-क्यप् टाप्, महती विद्याज्ञानं तत्त्वसाक्षात्कारो वा यस्याः। देवीविशेष। इन महाविद्याकी संख्या दश है, यथा—काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला, मातङ्गी, और कमलात्मिका। इन्हें सिद्धविद्या भी कहते हैं। इन महाविद्याका मन्त्र देनेमें नक्षत्रविचार, कालादिशोधन, मन्त्रका शत्रु और मित्र आदि दोष कुछ भी नहीं होता। इनका मन्त्रमात्र भी दिया जा सकता है।

"काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा॥
बगला सिद्धविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका
एता दश महाविद्याः सिद्धविद्या प्रकीर्त्तिताः॥
नात्र सिद्धाद्यपेक्षास्ति न नक्षत्रविचारणा।
कालादिशोधनं नास्ति न चामित्रादिदूषणम्॥
सिद्धविद्यातया नात्र युगसेवा परिश्रमः।
नास्ति किञ्चिन्महादेवि दुःखसाध्यं कथञ्चन॥"

(चामुण्डातन्त्र)

तन्त्रमें लिखा है—काली, नीला महादुर्गा, त्वरिता, छिन्नमस्ता, वाग्वादिनी अन्नपूर्णा, प्रत्यङ्गिरा, कामाख्या, वासली, वाला, मातङ्गी और शैलवासिनी ये सब देवी भी महाविद्या हैं।

"अथ वक्ष्याम्यह या या महाविद्या महीतले।
दोषजालैरसंस्पृष्टा स्ताः सर्वा हि फलैः सह॥
काली नीला महादुर्गा त्वरिता छिन्नमस्तका।
वाग्वादिनी चान्नपूर्णा तथा प्रत्यङ्गिरा पुनः॥
कामाख्या वासली वाला मातङ्गी शैलवासिनी।
इत्याद्याः सकला विद्याः कलौ पूर्णफलप्रदाः॥
सिद्धमन्त्रतया नात्र युगसेवापरिश्रमः।
अथ चैता महाविद्याः कलिदोषान्न बाधिताः॥"

(तन्त्रसार) दशमहाविद्या देखो।

मुण्डमालातन्त्रमें लिखा है—ये सभी महाविद्या

दशावतार हुई थीं। इनमेंसे काली कृष्णरूपमें, तारिणी रामरूपमें, काली कूर्ममें, धूमावती मीनमें, छिन्नमस्ता नृसिंहमें, भैरवी वराहमें, सुन्दरी जामदग्न्यमें, भुवनेश्वरी वामनमें, कमला बौद्धमें और दुर्गा कल्किरूपमें अवतीर्ण हुई थीं। २ गङ्गा। (काशीख० २६।१३६)

महाविद्युत्प्रभ (सं० पु०) नागभेद।

महाविद्येश्वरी (सं० स्त्री०) दुर्गामूर्त्तिभेद, दुर्गाकी एक मूर्त्तिका नाम।

महाविनायक—उड़ीसाके कटक जिलान्तर्गत वारुणीवन्त शैलका एक शृङ्ग। यह शृङ्ग देवताके समान पवित्र और पुण्यतीर्थ माना जाता है। कटकसे यह शृङ्ग दिखाई पड़ता है।

महाबिन्दुघृत (सं० पु०) घृतौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—घी २ सेर, चूर्णके लिये सोजका दूध २ पल, कमलाका चूर १ पल, सैन्धव ४ तोला, निसोथ १ पल, आंवलेका रस॥ आध सेर, जल ४ सेर। नियमपूर्वक धीमी आंचमें पका कर इस औषधिको प्रस्तुत करे। प्लीहा, गुल्म आदि उदररोगोंमें यह विशेष उपकारी है। पूर्वोक्त दोनों रोगोंमें इसकी माला २ तोला वतलाई गई है। चिकित्सकको रोगके अवस्थानुसार इस औषधका प्रयोग करना चाहिये।

महाविपुला (सं० स्त्री०) आर्याछन्दोभेद।

महाविभूत (सं० पु०) एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महाविभूति (सं० त्रि०) १ महाऐश्वर्ययुक्त, बड़ा प्रतापी। (पु०) २ विष्णु।

महाविराज (सं० पु०) विशेषेण राजते प्रकाशते इति विराज क्विप् महांश्चासौ विराट् चेति। महाविष्णु। (ब्रह्मवैवर्त्त पु० प्रकृतिख० ५१ अ०)

महाविल (सं० क्ली०) महच्च तत् विलञ्चेति। १ आकाश। २ वृहच्छिद्र, बड़ा छेद। ३ अन्तःकरण।

महाविवाह (सं० पु०) एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महाविशिष्ट (सं० त्रि०) अति प्रसिद्ध, बड़ा नामी।

महाविष (सं० पु०) महत् अत्युत्कटं विषमस्य। १ कालसर्प, वह सांप जिसके काटते ही तुरन्त मृत्यु हो जाय। २ महाविष, एक प्रकारका कन्द। (त्रि०) ३ महाविषविशिष्ट, बड़ा जहरीला।

महाविषुव (सं० क्ली०) विषु साम्यमस्त्यत्रेति विषु 'अप्रकरणेऽन्येभ्योऽपि दृश्यत इति वक्तव्यं।' (पा ५।२।१०८) इत्यस्य वार्त्तिकात् व प्रत्ययः महच्च तद् विषुवञ्चेति अस्मिन् समये दिवारात्रोः समत्वात् तथात्वं। मेषसंक्रान्ति। सूर्य जब मीनराशिसे मेषराशिमें आते हैं, तब उसे महाविषुवसंक्रान्ति कहते हैं। इस समय दिनरातका मान समान रहता है। इसीलिये इसका नाम महाविषुव हुआ है। इसका दूसरा नाम चैत्र-संक्रान्ति भी है। चैत्रमाससे वैशाखमास तक जिस समय सूर्य संक्रम होता है, उसीको महाविषुवसंक्रान्ति कहते हैं। यह सक्रमण दिन बहुत ही पुण्यजनक है। इस दिन मसूर और नीमपत्र खानेसे सर्पभय जाता रहता है।

"महाविषुवमाख्यात कृतिभिश्चैत्रचिह्नितम्।"

तस्मिन् मसूरनिम्बपत्रद्वयभक्षणं, यथा कृत्यचिन्तामणौ

"मसूरं निम्बपत्राभ्यां योऽत्ति मेषगते रवौ।
अपि रोषान्वितस्तस्य तक्षकः किं करिष्यति॥"

(तिथितत्त्व)

इस दिन सत्तू और जलपूर्ण घड़ा दान करना होता है। जो इस प्रकार दान करते हैं, वे परम गतिको प्राप्त होते हैं। जलपूर्ण घड़ा दान करनेका मन्त्र—

"एष धर्मघटो दत्तो ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः।
अस्य प्रदानात् सफला मम सन्तु मनोरथाः॥
वैशाखे यो घटं पूर्णं सभोज्यं वै द्विजन्मने।
ददाति सुरराजेन्द्र स याति परमां गतिम्॥" (तिथितत्त्व)

पितृ आदिके उद्देशसे जलपूर्ण घड़ा, जूता, छाता आदि दान करनेसे बहुत पुण्य होता है। जो इस संक्रान्तिके दिन उक्त दान करते उनके सभी पाप जाते रहते हैं।

"यो ददाति हि मेषादौ शक्तूनम्बुघटान्वितान्।
पितॄनुद्दिश्य विप्रेभ्य सर्वपापैः प्रमुच्यते॥"

तत्र छत्रपादुकादिदानं—

"विप्रेभ्यः पादुकाच्छत्रं पितृभ्यो विषुवे शुभम्॥"

(तिथितत्त्व)

महाविषुवचक्र (सं० क्ली०) महाविषुवस्य चक्रम्।

नक्षत्रघटित नराकार चक्र। एक मनुष्यदेहको अङ्कित करके उसके मस्तक पर ७ नक्षत्र, मुखमें ३, हृदयमें ५ और दोनों हाथ तथा दोनों पैरमें तीन तीन करके १२ नक्षत्र विन्यास करना होगा। इसीका नाम महाविषुव-चक्र है। सभी नक्षत्रोंके १, २ इत्यादि रूपसे यथाक्रम विन्यास करना होता है। पीछे उस मनुष्यके किस अङ्गमें कौन नक्षत्र पड़ा है, उसे देख कर फल निर्णय करना होगा। फल इस प्रकार है—मस्तक पर राज-सुख, मुखमें पटुता, हृदयमें धनाध्यक्षता, दाहिने हाथमें अर्थलाभ, वायेंमें महादुःख, दाहिने पैरमें सुख और बायें पैरमें भ्रमण। इस प्रकार अपने अपने नक्षत्र द्वारा फल जानना होगा। जिस किसी नक्षत्रका इस चक्रके अनु-सार फल जानना हो, वह नक्षत्र उस पुरुषके किस अंग पर पड़ा है, पहले वही स्थिर कर पोछे उस अङ्गके सुख-दुःखादिका जैसा फल ऊपर बतलाया गया है, उसीसे फल निर्णय करना होगा। (ज्योतिस्त्व)

महाविष्णु (सं० पु०) महांश्चासौ विष्णुः सर्वव्यापक-श्चेति। महाविराट्। (भागवतामृतकणिका)

महाविहङ्ग (सं० पु०) गरुड।

महाविहार (सं० पु०) सिंहलद्वीपके अनुराधापुरस्थ बौद्धसङ्घारामभेद। यहां बोधिवृक्ष प्रतिष्ठित हैं।

महावीचि (सं० पु०) न विद्यते वीचिः सुखं यत्र, महान् वीचिरत्र। मनुके अनुसार एक नरकका नाम।

"नरकं कालसूत्रञ्च महानरकमेव च।
सञ्जीवन महावीचिं तपनं सम्प्रतापनम्॥" (मनु ४।८७)

नरक देखो।

महावीज (सं० पु०) पियाल वृक्ष, चिरौंजीका पेड़।

महावीज्य (सं० क्ली०) वीजाय साधु इति यत्, महत् वीज्यं। विटप, मुष्क और वङ्क्षणका मध्य भाग।

महावीत (सं० पु०) पुराणानुसार पुष्कर द्वीपके एक पर्वतका नाम। (लिङ्गपु० ५३।२६)

महावीर (सं० पु०) वीन् पक्षिण ईरयतीति ईर-क, ततो महांश्चासौ वीरश्चेति कर्मधा०। १ गरुड। २ सिंह। ३ गौतम बुद्धका एक नाम। ४ मनुके पुत्र मखानलका एक नाम। ५ वज्र। ६ श्वेत तुरङ्ग, सफेद घोडा। ७ सञ्चान पक्षी, बाज। ८ हनुमानजी। ९ देवता। १० करवीरपुष्प वृक्ष, कनेरका गाछ। ११ एकवीर वृक्ष। १२ कोकिल, कोयल। १३ जैनोंके चौवीसवें जिनेन्द्र। महावीर स्वामी देखो। (त्रि०) १३ बहुत बड़ा वीर।

महावीरचरित (सं० क्ली०) महाकवि भवभूति-प्रणीत प्रसिद्ध श्रीरामचरिताख्यान।

महावीरचरित्र (सं० क्ली०) जैनतीर्थङ्कर महावीरकी जीवनी।

महावीर वर्द्धन ज्ञातपुत्र—बौद्धाचार्यभेद।

महावीर स्वामी—जैनोंके चौवीस तीर्थङ्करोंमेंसे अन्तिम तीर्थङ्कर, चौवीसवें जिनेन्द्र। 'भगवान् महावीर' नाम-से भी इनकी प्रसिद्धि है। पर्याय—वीर अतिवीर, वर्द्ध-मान और सन्मति। हरिवंश सूर्य राजा सिद्धार्थके औरस और महारानी त्रिशलाके गर्भसे भगवान् महावीरका जन्म हुआ था। 'जैन-हरिवंशपुराण' तथा 'महावीर पुराण'-में लिखा है,—सिद्धार्थ नामक एक प्रवलपरा-क्रान्त प्रजाप्रिय नरपति थे, जो मति-श्रुत अवधिज्ञानके स्वामी तथा जैन धर्मके परम भक्त और बड़े ही दानशूर थे। हरिवंश वा नाथवंशके आप सूर्य थे और काश्यप कुलके तिलक। उनकी पटरानीका नाम त्रिशलादेवी था। महारानी त्रिशला अत्यन्त गुणवती, रूपवती, जैनधर्म-भक्त और पतिको अति प्रिय थी। त्रिशलाका एक नाम प्रियकारिणी भी था। वे पूर्व सञ्चित पुण्यके प्रतापसे ही ऐसे मोक्षगामी और जगत्के कल्याणकारी तीर्थङ्कर पुत्रको जन्म देनेमे समर्थ हुई थीं। एक दिन त्रिशला सो रही थीं, सोतेमें रात्रिके शेषभागमे उन्होंने सोलह शुभ स्वप्न देखे, जो भगवान् महावीर जैसे अहिंसाधर्म-प्रचारक पुरुष-पुङ्गवके गर्भमें आनेकी सूचना देते थे।

आषाढ़ शुक्ला ६, उत्तराषाढ़ नक्षत्रमें श्री महावीर स्वामीकी आत्मा १६वें स्वर्ग (अच्युतस्वर्ग)-से चयन पूर्वक माता त्रिशलाके गर्भमें आई। जिस समय महावीर स्वामी गर्भमें थे, उस समय स्वर्गकी देवियां माताकी सेवा करतीं और नाना प्रकार मनोरम कथाएं सुनाया करती थी। अनन्तर चैत्र शुक्ला त्रयोदशीके दिन तीर्थङ्कर

महावीरका जन्म हुआ। आपके शरीरका रंग सुवर्ण-सदृश, दीप्तिमान मुखमण्डल, वज्रके समान अस्थियां और परम रूपवान् सुदृढ़ शरीर था। जन्म होते ही सौधर्म और ईशान इन्द्रने आपको क्षीरसागरमें अभिषेक पूर्वक स्नान कराया और बड़ा भारी उत्सव किया। उसी समय उनका वीर और वर्द्धमान नाम रक्खा गया। जैसा कि कहा है:—

"अयं स्यान्महता वीरः कर्मारातिनिकंदनात्।
श्रीवर्द्धमाननामासौ वर्द्धमानगुणा श्रयात्॥"

उस कालमें जैसे अन्य बालकोंको ५ वर्षकी अवस्थामें अक्षरारम्भ और ८ वर्षकी अवस्थामें गुरुके निकट उपासकाध्ययन आदि ग्रन्थ पढ़ने पड़ते थे, वैसे महावीरस्वामीको पढ़नेकी आवश्यकता न हुई, क्योंकि पूर्वसंस्कारसे महावीर जन्मसे ही मति-श्रुत-अवधिज्ञानके धारक थे, जिससे अन्य शास्त्र पढ़ना उनके लिए व्यर्थ था। उन्होंने किसीका शिष्यत्व ग्रहण नहीं किया था। आठ वर्षकी अवस्थामें स्वामीने गृहस्थोंके उपयुक्त द्वादशव्रत ग्रहण किये। *

महावीर कुमारावस्थामें ही बड़े वीर और साहसी थे। एक बार सौधर्म इंद्रने अपनी सभामें स्वामीके बलकी प्रशंसा की। संगम नामक एक देवको विश्वास न हुआ। वह परीक्षा करनेके लिये एक बड़े भारी काले नागके रूपमें आया, और जहां राजकुमारोंके साथ श्रीमहावीर खेल रहे थे, वहां जा कर जिस वृक्ष पर कुमार चढ़े थे, उससे लिपट गया। अन्य सब कुमार भयभीत हो वृक्षसे कूद कर भागे; परंतु वीर कुमारको कुछ भी भय न हुआ। वे उस सर्पको पकड़ कर उसके साथ क्रीड़ा करने लगे। इनके इस तरहके बलको देख वह देव अति प्रसन्न हुआ और बहुत भांति स्तुति कर स्वर्गलोक गया।

सम्यक्त्व और व्रत तथा अवधिज्ञानके प्रभावसे कुमारका पूर्ण उदासीन-चित्त गृह-जालमें न ठहरा, वह जलमें कमलकी तरह संसारसे निर्लिप्त रहा। इसी तरह पिता-माता और कुटुम्बियोंको आनन्दित करते हुए तथा राजकार्यका पर्यवेक्षण करते हुए स्वामीने ३० वर्ष व्यतीत कर दिये। विवाह करनेकी तरफ उन्होंने बिलकुल ही ध्यान न दिया, बालब्रह्मचारी रह कर पवित्र जीवन बिताया।

एक दिन, काललब्धि और चरित्रमोहनीय कर्मके विशेष क्षयोपशम होनेसे, स्वामीके मनमें सहसा वैराग्यका उदय हुआ। उस समय अवधिज्ञानसे स्वामीने विचार किया—मैंने इस सहसा नश्वर जगत्‌में भील, मारीचराजपुत्र, तिर्यञ्च (पशु आदि), नरक आदि भव धारण कर व्यर्थ ही अनेक कष्ट उठाये। परन्तु कहीं पर भी आत्मानंदका अनुभव न किया। अहो! मुझ मूढ़के इतने दुर्लभ दिन इस जगत्‌में विना महाव्रतके यों ही चले गये। मैंने इस भवमें भी तीन ज्ञानके धारी और आत्मज्ञानी हो कर इस गृहजालमें इतने दिन वृथा ही खो दिये। जो लोग ज्ञान पा कर निर्दोष तपका आचरण करते हैं, उन्हींका ज्ञान सफल है, दूसरोंके लिये ज्ञानाभ्यासादि मात्र क्लेशरूप ही है। ज्ञानवानोंको कोई भी पाप नहीं करना चाहिये, क्योंकि मोहसे दुर्द्धर राग और प्राण जाने पर भी मोहादि निंद्यकर्मरूप द्वेष उत्पन्न होते हैं। जिनके वश हो कर यह प्राणी महाघोर पाप कर लेता है और पापसे चिरकाल दुर्गतिमें दुःख पाता है। ज्ञानियोंको उचित है, कि पहले प्रगट वैराग्यरूपी खड्गसे सर्व अनर्थके कारण दुष्ट मोहरूपी शत्रुओंका संहार करें। अहो! इस मोहका जीतना गृहस्थियोंसे नहीं हो सकता, इसलिये पापके समान गृहके बंधनको भी दूरसे छोड़ देना चाहिये। वे ही इस जगत्‌में पूज्य महान् और धैर्यवान् हैं, जो युवा अवस्थामें दुर्जय कामरूपी शत्रुको अच्छी तरह नाश कर डालते हैं। ऐसा विचार कर गृहवासको कैदखानेके समान जान कर स्वामीने इसको त्याग कर तपोवनमें जाना निश्चय किया।

इसके बाद प्रभु अपने माता पितादि कुटुम्बियोंसे ममता छोड़ कर आत्मामें स्थिर हो अपने स्वरूपका अनुभव करने लगे। अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्म इन द्वादश शुभ भावनाओंका शुभ चिन्तवन

---

* "अष्टमे वत्सरे देवो गृही धर्माप्तये स्वयं।
आददौ स्वस्य योग्यानि व्रतानि द्वादशैवहि॥"
(महावीर-चरित)

करते हुए स्वामी संसार त्याग करनेका दृढ निश्चय करने लगे। यथा—

"यद्यनेनापवित्रेण पवित्रा गुणराशयः।

कैवल्याद्याः प्रसिद्धयन्ति तत्कार्यें का विचारणा॥"

"यदि इस अपवित्र शरीरसे पवित्र गुणोंके समूह केवलज्ञान केवलदर्शनादि सिद्ध हो सकते हैं, तो इस कार्यके करनेमें विचार ही क्या करना?

स्वामीके इन पवित्र विचारोंका पता लौकान्तिक देवोंको लगा; वे तुरन्त ही आ कर भगवान्‌की प्रशंसा करने लगे, जिससे उनका निश्चय और भी दृढ हो गया। भगवान उसी समय राजपाट, माता पिता, कुटुम्बादि सर्वस्व त्याग कर तपस्या करके मोक्ष प्राप्त करनेके उद्देशसे वनको चल दिये।

नगरके लोग धन्य धन्य करने लगे। पिता पूर्ण ज्ञानी थे, उन्होंने ऐसा ही होनहार जान कर सन्तोष धारण किया। परन्तु माता त्रिशलाको तीव्र मोह था, वे अनेक सखियोंके साथ रोती हुई भगवान्‌के पीछे पीछे चलीं। यथा—

"रोदनं चेति कुर्वाणा बन्धुभिः सममार्त्तधीः।"

आखिर जब बुद्धिमानोंने संसारका स्वरूप समझाया, तब माताका चित्त कुछ कुछ स्थिर हुआ और वे सखियों सहित अपने मन्दिरको लौटीं।

इसके बाद भगवान् महावीरने अपने हाथोंसे मस्तकके तथा श्मश्रुके केश उपाड डाले और शिशुवत् नग्न हो कर (मार्गशीर्ष कृष्णा १०मीको) त्रयोदश प्रकार चारित्र धारण कर मुनि हो गये।

अनन्तर बहुत दिन बाद भगवान् विहार करते हुए एक बार उज्जयिनी नगरीके बाहर श्मशान भूमिमें पहुंचे और वहीं तप करने लगे। उज्जयिनीमें उन दिनों ११वें रुद्र स्थाणु निवास करते थे, इनकी ही स्त्रीका नाम पार्वती था। पहले ये बड़े भारी तपस्वी थे। जब इनको मंत्रादि विद्याएं सिद्ध हो गईं, तब ये कामाशक्त हो विचलित हो गए। श्मशानमें महावीरस्वामीको ध्यानमग्न देख कर आप विचार करने लगे, कि ऐसे पुरुषका मन कितना ध्यानमें दृढ़ है, इस बातकी परीक्षा करनी चाहिये। बस, आप अपनी विद्याके बलसे नाना प्रकारके उपसर्ग करने लगे। सर्पों और विच्छुओंका डंसना, धूल, मिट्टी, पानीका बरसना, बिजलीका कड़कना, स्त्रियोंका हावभाव और शृङ्गार दिखाना, पिशाचोंका नाचना आदि घंटों तक स्थाणुने अनेक उपाय किये कि किसी तरह प्रभुका मन ध्यानसे चलायमान करें और उनके क्रोधादि पैदा हो जावे। परंतु किसी तरह भी वे सफल काम न हुए। भगवान् महावीर उसी तरह तपस्यामें दृढ रहे, जिस तरह बिना उपसर्गके रहते थे। उन्होंने अपनी आत्माको अजर, अमर, अविनाशी, अच्छेद्य अनुभव कर शरीरकी क्रियाओंको पुद्गलकी क्रिया जान कुछ भी क्षोभ न किया। स्थाणु अपनी परीक्षामें हार गये और अनेक प्रकार विनती कर क्षमा प्रार्थना की। फिर वहासे विहार करते हुए वे कौसांबी नगरी गये। वहा एक सेठ वृषभसेन बहुत धनी थे। उनके यहां प्रभुने आहार ग्रहण किया। इस प्रकार भ्रमण करते हुए वैशाख शुक्ला दशमीको अपराह्नके समय 'जृम्भिका' ग्रामके बाहर 'ऋजुकूला' नामक नदीके किनारे पहुंचे और वहां 'शालमूवृक्ष'के नीचे विराजमान हो कर प्रभु ध्यानमग्न हो गये। वहा भगवान्‌ने चार घातिया कर्मोंको नष्ट कर 'केवलज्ञान' प्राप्त किया।

अनन्तर इंद्रादि देवोंने समवशरण रचा, उसमें प्रभु अंतरीक्ष (अधर) सिंहासन पर विराजे। भगवान्‌के दर्शनार्थ विदेहदेशमें प्रसिद्ध इन्द्रभूति, वायुभूति, अग्निभूति नामक बड़े दिग्गज ब्राह्मण पंडित अपने सैकड़ों शिष्योंको ले कर आये और प्रभुके शिष्य हो गये। प्रभुके शिष्योंमें २८००० मुनि और ३६००० अर्जिकाएं तथा एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएं थीं। सबमें मुख्य थे इंद्रभूति, जिनका प्रसिद्ध नाम गौतमस्वामी हुआ। सुधर्माचार्य, वायुभूति, अग्निभूति आदि ११ गणधर और हुये। अर्जिकाओंमें मुख्य सती चन्दना हुई। भगवान्‌का दिव्य उपदेश जीवोंके पुण्यके उदयसे दिन रातमें चार बार छः छः घडीके लिये धाराप्रवाह मेघकी ध्वनिके समान होता था। इस उपदेशको देव, देवी, मनुष्य, स्त्री, पशु आदि समस्त प्राणी द्वादश सभाओंमें बैठ कर अपनी अपनी भाषामें सुनते थे। श्रोताओंमें मुख्य राजगृह नगरके स्वामी राजा श्रेणिक थे। प्रभुने

३० वर्ष तक अनेक देशोंमें इसी तरह धर्मोपदेश करते हुये विहार किया और सब जगहोंसे हिंसाका प्रचार बन्द कर अहिंसाधर्मका प्रचार किया। अनेकोंने मिथ्यात्व त्याग कर सम्यग्ज्ञानका लाभ किया। प्रभुकी दिव्यध्वनिमें जो सारगर्भित उपदेश हुआ था, उसको गौतमस्वामी गणधरने आचारांग आदि द्वादश प्रकारके महान् ग्रन्थोंमें रचा। उन्हींका कुछ अंश आधुनिक प्राप्त ग्रन्थोंमें उपलब्ध है।

कार्त्तिक कृष्णा अमावस्याके प्रातःकाल प्रभु विहार-प्रदेशके पावापुरीके बनसे शुक्लध्यानपूर्वक चार अघातिया कर्मोंका नाश कर मुक्तधाममें चले गये। अपने साध्यकी सिद्धि करके परमात्मपदका लाभ किया। शरीरको छोड़ते ही क्षणमात्रमें शुद्ध आत्माने उसी ही ध्यानाकारको धारण किये हुये निर्वाण-भूमिकी सीध पर ही जा कर लोकाग्रभागमें निवास किया और अनंत कालके लिये परम सुखी हो गये।

वह स्थान, जहांसे श्रीप्रभुने निर्वाण प्राप्त किया था, सम्पूर्ण जैनियोंका अति माननीय और पूजनीय (विहार स्टेशनसे ६ मील दूर) पोखरपुर (पावांपुर) है। उस ग्रामके बाहर एक वृहत् सरोवरके मध्यमें एक जिनमंदिर है, जिसमें भगवान्‌की चरण-पादुकाएं शोभित हैं। प्रति-वर्ष निर्वाणके दिन (अर्थात् कार्त्तिक कृष्णा अमावस्या-को) वहां बड़ा भारी मेला होता है। बहुत दूर दूरके अनेक जैनयात्री वहां दर्शन-पूजनार्थ आते हैं।

जिस दिन महावीर स्वामीको निर्वाण प्राप्त हुआ था, उसी दिन गौतमस्वामीने केवलज्ञानरूप लक्ष्मीको प्राप्ति की। उस दिन बड़ी भारी पूजनकी महिमा हुई। श्रावकोंने नगर-नगरमें दीपोत्सव किया। तभीसे दीवाली-का यह उत्सव प्रचलित है। श्रीमहावीरस्वामीने अपनी आयुके ७२ वर्ष अति ही पवित्रताके साथमें परम अहिंसा धर्मका पालन करते हुए बिताये।

महावीरस्वामी ऐतिहासिक महापुरुष थे और ऐसे धर्मके प्रचारक थे, जो बौद्धधर्मसे भिन्न था। इसका प्रमाण बौद्धोंके प्राचीन ग्रन्थ त्रिपिटक, महावग्ग, महा-परिनिव्वाणसुत्त, दिग्घनिकाय आदि ग्रन्थोंमें मिलता है, जिनमें महावीरस्वामीको नातपुत्त (ज्ञातपुत्र) लिखा है। Oldsteeg ओल्डन वर्गकी 'The Budhe" नामक पुस्तकमें स्पष्ट लिखा है, कि नातपुत्त महावीरको कहा गया है, कि जिन्होंने निर्ग्रन्थ मतका प्रचार किया है।

महावीरस्वामीकी प्रशंसामें डाक्टर रवीन्द्र नाथ ठाकुरने कहा है—

"Mahavira proclaimed in India the message of salvation that religion is a reality and not a mere social convention,—that salvation comes from taking refuge in that true religion and not from observing the external ceremonies of the community—that religion can not regard any barrier between man and man as an eternal verity"

जिस पवित्र धर्मका उपदेश श्रीमहावीरस्वामीने दिया उसके प्रतापसे भारतका बहुत उपकार हुआ है। यज्ञमें होनेवाली ऐसी पशु-हिंसा, जिससे रक्तकी नदियां वह जाती थीं, बिलकुल बंद हो गई है। इस बातको प्रसिद्ध तत्त्वज्ञ बालगंगाधर तिलकने भी अपने व्याख्यान-में स्पष्ट कहा है:—"यज्ञ यागादिकोंमें पशुओंका वध हो कर जो 'यज्ञार्थ पशुहिंसा' आजकल नहीं होती है जैनधर्मने यही एक बड़ी भारी छाप (मुहर) ब्राह्मणधर्म पर मारी है। पूर्वकालमें यज्ञके लिये असंख्य पशुओं-की हिंसा होती थी, उसके प्रमाण मेघदूतकाव्य तथा और भी अनेक ग्रन्थोंसे मिलते हैं।"

जैन-पुराणोंमें लिखा है, कि महावीरस्वामी जैनधर्म-प्रचारक मात्र थे, प्रवर्तक नहीं। उनके पूर्व भी ऋषभ-नाथसे ले कर पार्श्वनाथ पर्यन्त २३ तीर्थङ्कर और हो गये हैं, उन्होंने भी समय समय पर जैनधर्मका विस्तार और प्रचार किया था। जैनधर्म अनादि है।

कुछ भी हो, जैनधर्म हमे सिखलाता है, कि सर्वोच्च पवित्र जीवन ही आत्मोन्नतिका यथार्थ उपाय है और उसकी सत्यता अहिंसामें ही विद्यमान है। जगत्‌में अहिंसा ही एक ऐसा धर्म है, जो संसारके सम्पूर्ण प्राणिमात्रको सुख-शान्ति पहुंचा सकता है।

ईसासे ५२७ वर्ष पहले भगवान् महावीरने निर्वाण प्राप्त किया था। उसी समयसे जैनोंका वीर निर्वाण-संवत् प्रचलित हुआ।

"जैनधर्म" शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

महावीरा (सं० स्त्री०) महावीर-टाप्। क्षीरकंकोली।

महावीर्य्य (सं० पु०) महद् विश्वसृष्टये विपुलं वीर्य-मस्य। १ ब्रह्मा। महद्वीर्य तपोबलमस्य। २ बुद्धदेव। ३ वाराही कंद। ४ वितथके एक पुत्रका नाम। ५ विराजपुत्र। ६ बौद्धभिक्षुभेद। ७ जैनोंके एक अर्हतका नाम। ८ तामस रौच्य मन्वन्तरके एक इन्द्रका नाम। ९ बृहद्रथ वा बृहदुक्थके एक पुत्रका नाम। १० भवन्मन्यु-राजपुत्र। ११ एकवीर वृक्ष। (त्रि०) १२ अतिशय बलयुक्त, बड़ा भारी बलवान्।

महावीर्य्या (सं० स्त्री०) महावीर्य्य-टाप्। १ सूर्यकी पत्नी संज्ञाका एक नाम। २ वनकार्पासी वनकपास। ३ महाशतावरी। ४ शुक्लदूर्वा, सफेद दूब।

महाबुद्ध—नेपालकी बुद्धमूर्त्तिभेद।

महावृक्ष (सं० पु०) महान् वृक्षः। १ स्नुहीवृक्ष, थूहर। २ सेहुण्डवृक्ष, सेंहुड़का पेड़। ३ करंजवृक्ष। ४ ताल वृक्ष, ताड़का पेड़। ५ महापीलु वृक्ष। ६ बृहद्वृक्ष, बड़ा पेड़।

महावृद्ध (सं० त्रि०) अतिशय वृद्ध, बहुत बूढ़ा।

महावृन्द (सं० क्ली०) संख्याभेद। लाख वृन्दका एक महावृन्द होता है।

महावृष (सं० पु०) १ सुरम्य पर्वतके पासका एक तीर्थ। २ जातिभेद।

महावृषा (सं० स्त्री०) मुशलीभेद, सिया मुशली।

महावृहती (सं० स्त्री०) महावार्त्ताकी, वन बैंगन।

महावेग (सं० पु०) महान् अमोघो दुर्वारो वा वेगो यस्य। १ शिव, महादेव। २ अतिशय जव, बड़ा वेग। ३ गरुड़। ४ मर्कटविशेष, बन्दर। (त्रि०) ५ अतिशय वेगयुक्त, प्रबल वेगशाली।

"विकर्षन्तौ महावेगौ गर्जमानौ परस्परम्।
पश्य त्व युधि विक्रान्तावतौ च नरराक्षसौ॥"

(भारत १।१५५।१२)

महावेगलब्धस्थान—गरुडोंके एक राजाका नाम।

महावेगवती (सं० स्त्री०) महावेग अस्त्यर्थे मतुप् मस्य व, स्त्रियां ङीष्। १ अति वेगविशिष्टा, जिसमें खूब वेग हो। २ वृक्षविशेष।

महावेगा (सं० स्त्री०) स्कन्दकी अनुचरी एक मातृका-का नाम।

महावेदि (सं० स्त्री०) श्रेष्ठ वेदी, पीठरूप उच्चस्थान।

महावेध (सं० पु०) योगप्रक्रियाके अनुसार हस्तपादादि-का संस्थानभेद।

महावेल (सं० त्रि०) १ महातरङ्ग वा स्रोतयुक्त। २ विस्तृत तीरयुक्त।

महावैपुल्य (सं० क्ली०) अतिशय विपुलता।

महावैर (सं० क्ली०) चिरशत्रु, बड़ा भारी दुश्मन।

महावैराज (सं० क्ली०) सामभेद।

महावैश्वदेव (सं० क्ली०) ग्रहभेद।

महावैश्वनरव्रत (सं० क्ली०) सामभेद।

महावैश्वामित्र (सं० क्ली०) सामभेद।

महावैष्टम्भ (सं० क्ली०) सामभेद।

महाव्याधि (सं० पु०) महांश्चासौ व्याधिश्चेति। महा-रोग कुष्ठादि। महारोग देखो।

महाव्याहृति (सं० स्त्री०) महती चासौ व्याहृतिश्चेति। प्रणव और स्वाहायुक्त तीन व्याहृति। होम करनेमें महाव्याहृति होम करना होता है। "ओं भूः स्वाहा, ओं भुवः स्वाहा, ओं स्वः स्वाहा" इन तीन व्याहृतियोंको महाव्याहृति कहते हैं। वैदिक होम करनेमें यह महाव्याहृति होम करना ही होगा। सिर्फ तान्त्रिक होममें महाव्याहृति होम नहीं करना होता।

"ओंकारपूर्विकास्तिस्रः महाव्याहृतयोऽव्ययाः।
त्रिपदा चैव सावित्री विज्ञेयो ब्रह्मणो मुखम्॥"

(मनु २।८१)

महाव्युत्पत्ति (सं० स्त्री०) भोट भाषामें रचा गया एक संस्कृत-अभिधान।

महाव्यूह (सं० पु०) १ एक प्रकारकी समाधि। २ देव-पुत्रभेद।

महाव्रण (सं० क्ली०) महच्च तत् व्रणञ्चेति। दुष्टव्रण। यह रोग महापातकज है। इसके होनेसे प्राय-श्चित्त करना उचित है। दुष्टव्रण देखो।

महाव्रत (सं० क्ली०) महच्च तत् व्रतञ्चेति। १ द्वादश-वार्षिक व्रत, वह व्रत जो बारह वर्षों तक चलता रहे। २ आश्विनकी दुर्गा-पूजा।

"महाव्रत महापुण्यं शङ्कराद्यै रनुष्ठितम् ।
कर्त्तव्यं सुरराजेन्द्र देवीभक्तिसमन्वितैः ॥" (तिथितत्त्व)

३ माघमासमें जब सूर्य उदय होते हैं उस समयका गंगा-स्नान ।

"वासुदेव हरिं कृष्णं श्रीधरञ्च स्मरेत्ततः ।
दिवाकर जगन्नाथ प्रभाकर नमोऽस्तु ते ।
परिपूर्णं कुरुष्वेद माघस्नानं महाव्रतम् ॥"
(मलमासतत्त्व)

(त्रि०) ४ महाव्रतधारी, महाव्रत करनेवाला ५ श्रेष्ठव्रतमात्र, पाशुपतादि व्रत ।

महाव्रतवत् (सं० त्रि०) महाव्रत अस्त्यर्थे मतुप मस्य व । महाव्रत नामक सामविशिष्ट ।

महाव्रतिक (सं० त्रि०) १ महाव्रतपालनकारी, महाव्रत करनेवाला । २ पाशुपत व्रतावलम्बी, जो पाशुपतव्रत करता हो ।

महाव्रतिन् (सं० पु०) महाव्रतं योगनियमाद्यनुष्ठानादिकमस्यातीति व्रत इनि । १ शिव, महादेव । २ उत्स्कट । (त्रि०) २ महाव्रतयुक्त, जिसने महाव्रत धारण किया हो ।

"एतच्छ्रुत्वापि सावज्ञास्ते महाव्रतिनस्तदा ।
ऊचुर्निश्चयदत्त ते चत्वारं सहयायिनः ॥"
(कथासरित्सार ३७।५६)

महाव्रती (सं० त्रि०) महाव्रतिन् देखो ।

महाव्रतीय (सं० त्रि०) महाव्रतसम्बन्धीय ।

महाव्रात (सं० त्रि) बहुलोकयुक्त, मनुष्योंकी भीड ।

महाव्रीहि (सं० पु०) व्रीहिधान्य विशेष, साठी धान ।

महाशकुनि (सं० पु०) चक्रवर्त्तिभेद ।

महाशक्ति (सं० पु०) महत्यः शक्तयः मातृगणादयो महद् वा सामर्थ्यञ्च यस्य । १ कार्त्तिकेय । महती शक्तिः । २ अतिशय पराक्रम, अधिक बल । ३ शिव, महादेव । ४ कृष्ण पुत्रभेद, पुरानानुसार कृष्णके एक पुत्रका नाम । (त्रि०) ५ महापराक्रमशाली, बड़ा बलवान् ।

महाशङ्ख (सं० पु०) महान् शङ्ख इव वृहच्छुभ्रत्वात् । १ संख्याविशेष, एक बहुत बड़ो संख्याका नाम । दश निखर्वका एक महाशङ्ख होता है । २ ललाट । ३ निधिविशेष, नौ निधियोंमेसे एक । ४ कनपटीकी हड्डी । इस महाशङ्खकी मालासे किया हुआ जप प्रशस्त होता है ।

"महाशङ्खमयी माला नीलसारस्वते विधौ ।
नृललाटास्थिखण्डेन रचिता जपमालिका ।
महाशङ्खमयी माला ताराविद्याजपे प्रिये ॥" (तन्त्रसार)

५ बड़ा शंख । ६ सर्पभेद । ७ मनुष्यकी ठठरी ।

महाशङ्खद्रावक (सं० पु०) प्लीहा और यकृत् रोगनाशक औषधभेद । प्रस्तुत प्रणाली—इमलीकी छाल, पीपलकी छाल, सीजकी छाल, अकवनकी छाल और अपामार्ग, हरएकका अलग अलग क्षारजल तैयार करके लवण बनावे । पीछे सोहागा, यवक्षार, साचिक्षार, पञ्चलवण, हींग, हरताल, लवङ्ग, निशादल, जायफल, गोदन्ती, सोनामक्खी, गंधबोल, विष, समुद्रफेन, सोरा, फिटकरी, शङ्खचूर्ण, शङ्खनाभिचूर्ण, प्रस्तरचूर्ण, मैनसिल और हीराकस, इनका समान भाग ले कर चूर्ण करे। अनन्तर बेतसके रसमें भावना दे कर उसे काचकी कुप्पी में रखे । बादमें कपड़ेसे ढक कर उसे सात दिन तक गरम स्थानमें रख छोड़े । इसके बाद धीमी आंचमें वारुणीयन्त्रमें पका कर नीचे उतार ले । ठण्ढा होने पर किसी कांचके बरतनमें जल डाल कर उसीमें इसको अच्छी तरह रख दे । पानके साथ प्रतिदिन एक रत्ती सेवन करनेसे खांसी, दमा, प्लीहा, अजीर्ण, ग्रहणी, रक्तपित्त, गुल्म, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, आठों प्रकारका शूल, आमवात, वातरक्त, खञ्जगत, धनुष्टङ्कार, उदरामय, आमाशय, क्रिमिकोष्ठता आदि रोग नष्ट होते हैं । यह ऐसा अग्निवर्द्धक है, कि ठूस कर खा लेनेके बाद यदि इसका सिर्फ रत्ती भर सेवन किया जाय, तो फौरन उसे पचा देता है । (भैषज्यरत्नाकर)

महाशङ्खवटी (हिं० स्त्री०) उदररोगमें उपकारी औषधभेद । प्रस्तुत प्रणाली—शङ्खभस्म, पञ्चलवण, इमलीके छिलकेकी राख, त्रिकटु, हींग, विष, पारा और गंधक इनके बराबर बराबर भागको एकत्र कर अपाङ्ग और चितामूलके काढ़ेमें, नीबूके रसमें तथा अम्लवर्ग द्वारा भावना दे । औषधमें अम्लरस दिखाई देनेसे भावना देनेकी जरूरत नहीं । इस औषधमें लोहा और रांगा मिलानेसे महाशङ्खवटी बनती है । प्रतिदिन दो रत्तीकी गोली पानके साथ खानेसे अग्निमान्द्य, अजीर्ण, अर्श, पाण्डु, प्रमेह,

शूल, वातरक्त, महाशोथ आदि रोग जाते रहते हैं। भर पेट खाया हुआ अन्न सिर्फ एक गोली खानेसे पच जाता है।

दूसरा तरीका—उक्त द्रव्यसमूहको पूर्वोक्तरूपसे पाक कर गोली बनावे। इसमें लोहा और रांगा मिलानेकी आवश्यकता नहीं। इसके सेवनका समय भोजनके बाद बतलाया गया है। इससे अर्श और ग्रहणी आदि रोगोंका नाश तथा अग्निका अतिशय उद्दीपन होता है।

सारकलिकाधृत महाशङ्खवटीकी प्रस्तुत प्रणाली और प्रकारकी है। जैसे,—पिपरामूल, चितामूल, दन्तिमूल, पारद, गंधक, पीपल, यवक्षार, सार्जिक्षार, सोहागा पंचलवण, मिर्च, सोंठ, विष, वनयमानी, गुलञ्च, हींग और इमलीके छिलकेकी भस्म, प्रत्येक १ तोला करके, शङ्खभस्म २ तोला, इन्हें अम्लवर्गके रसमें भावना दे कर बेरकी आठीके समान गोली बनावे। यह खट्टे अनारके रस, नीबूके रस, मद्य, दहीके पानी, सीधू, कांजी अथवा उष्ण जलके साथ सेवनीय है। यह अग्निवर्द्धक तथा अर्श, ग्रहणी, क्रिमि, पाण्डु, कमला आदि रोगनाशक है। पथ्य शशक और एणादिका जूस बतलाया गया है। (भैषज्यरत्नाकर)

महाशठ (सं० त्रि०) महांश्चासौ शठश्चेति। १ अतिशय धूर्त्त, बड़ा धोखेबाज। (पु०) २ राजधुस्तूर, पीला धतूरा।

महाशण (सं० पु०) स्वनामख्यात वृक्षविशेष, सन नामक पौधा।

महाशणपुष्पिका (सं० स्त्री०) शणपुष्पी नामक क्षुपविशेष, वनसनई नामका पौधा। इसका गुण—कषाय, उष्ण और रसनियामक। (राजनि०)

महाशणा (सं० स्त्री०) आरण्यशण, वनसनई।

महाशता (सं० स्त्री०) महत् शतञ्च मूलानि यस्याः, टाप्। महाशतावरी, बड़ी शतावरी।

महाशतावरी (सं० स्त्री०) महती चासौ शतावरी चेति। वृहच्छतावरी, बड़ी शतावरी। पर्याय—शतवीर्य्या, सहस्रवीर्य्या, सुरसा, महापुरुष दन्तिका, वीरा, तुङ्गिनी, बहुपत्रिका, ऊद्ध्वकण्ठी, महावीर्य्या, फणिजिह्वा, महाशता, सुवीर्य्या। इसका गुण—मधुर, पित्तनाशक, शीतल, तिक्त, मेह, कफ और वातघ्न, रसायन तथा वश्यताकर। (राजनि०)

भावप्रकाशके मतसे यह मेध्य, हृद्य, वृष्य, रसायन, अर्श और ग्रहणी रोग नाशक मानी गई है।

महाशन (सं० पु०) १ असुरभेद। (त्रि०) २ बहुभोजी, पेटू।

महाशफर (सं० पु०) पार्वतमीन, चेल्हवा मछली।

महाशब्द (सं० पु०) महांश्चासौ शब्दश्चेति। १ वृहच्छब्द, भयानक शब्द। (त्रि०) २ महाशब्दयुक्त।

महाशमी (सं० स्त्री०) बड़ी शमीका पौधा।

महाशम्भु (सं० पु०) महाशिव।

महाशय (सं० त्रि०) महान् आशयः अभिप्रायः मनो वा यस्य। १ महानुभाव, उच्च आशयवाला। पर्याय—महेच्छ, उदात्त, महामनाः, उद्भट, उदार, उदीर्ण, महात्मा।

(पु०) महान् आशयः जलानामाधारः। २ समुद्र।

महाशयन (सं० क्ली०) महाशय्या।

महाशय्या (सं० स्त्री०) महती चासौ शय्या चेति। राजशय्या, राजाओंकी शय्या या सिंहासन।

महाशर (सं० पु०) महांश्चासौ शरश्चेति। स्थूलशर, रामशर। रामशर देखो।

महाशल्क (सं० पु०) महान् वृहत् शल्को यस्य। १ चिङ्गट मत्स्य, झिंगा मछली। २ वृहच्छल्क, बड़ा छिलका। (त्रि०) ३ वृहच्छल्कयुक्त, जिसमें बड़े बड़े छिलके हों।

महाशस्त्र (सं० क्ली०) भीषण वा तीक्ष्ण शस्त्र।

महाशाक (सं० क्ली०) महच्च तत् शाकञ्चेति। वृहत् शाकविशेष।

महाशाक्य (सं० पु०) श्रेष्ठ शाक्यवंश।

महाशाख (सं० त्रि०) वृहत् शाखायुक्त, जिसमे बड़ी बड़ी शाखाएं हों।

महाशाखा (सं० स्त्री०) महती शाखा यस्याः। नागवला, गंगेरन।

महाशान्ति (सं० स्त्री०) विघ्न बाधाओंको दूर करनेके लिये मन्त्रका अनुष्ठान।

महाशाल (सं० पु०) १ बड़ा घर। २ महागृहस्थ। (त्रि०) ३ वृहद् गृहयुक्त, बड़ा घरवाला।

महाशालि (सं० पु०) महांश्चासौ शालिश्चेति। स्थूल-

शालि, मोटा धान। पर्याय—सुगन्धिक। इसका गुण—गुरु, बलकर, चक्षु हितकर तथा बलवर्द्धक। (अत्रिसं० १५ अ०)

महाशालीन (सं० त्रि) अति विनीत, बड़ा नम्र।

महाशाल्वण (सं० क्ली०) व्याधि दूर करनेका एक उपाय।

महाशासन (सं० पु०) १ राजादेश, राजाकी आज्ञा। २ सचिवभेद, राजाका वह मन्त्री जो उसकी आज्ञाओं या दानपत्रों आदिका प्रचार करता हो।

(त्रि०) ३ महाशक्तियुक्त, अत्यन्त बलवान्।

महाशिर—स्वनामख्यात मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली। इसका मस्तक देहकी अपेक्षा बड़ा होता है, इसीसे इसका महाशिर नाम हुआ है। कहीं कहीं इसे महाशेल वा महाशोल भी कहते हैं।

उत्तर-ब्रह्मपुत्र, गंगा, काश्मीरकी तोहीनदी, यमुना और पंजाबकी दूसरी दूसरी नदियोंमें यह मछली पाई जाती है।

इसका मांस बहुत स्वादिष्ट होता है। इस कारण बहुतेरे पहाड़ी नदीके किनारे आ इसका शिकार करते हैं। एक एक मछली आध मनसे अधिक बोझल होती है। इसके दांत बहुत तेज होते हैं। घोंघा, केंकड़ा और तरह तरहकी मछली ही इसका प्रधान भोजन है। यह कीड़े, फतिंगेको भी बड़े, चावसे खाती है। हरिद्वार के स्नानघाटमें पिण्डपूजाके समय ये सब मछलियां पिण्ड खाने आती हैं।

महाशिरस् (सं० पु०) १ एक प्रकारकी मछली। २ फणवाले सांपकी एक जाति। ३ गोधेयक जातिभेद, ग्वालोंकी एक जाति।

महाशिरःसमुद्भव (सं० पु०) जैनियोंके छठे वासुदेव।

महाशिरोधर (सं० त्रि०) वृहद् ग्रीवा, लम्बी गरदन।

महाशिला (सं० स्त्री०) शस्त्रभेद, एक हथियारका नाम।

महाशिव (सं० पु०) महांश्चासौ शिवः कल्याणरूपी च। महादेव।

महाशीतवती (सं० स्त्री०) बौद्धोंकी पांच महादेवियोंमेंसे एक देवीका नाम।

महाशीता (सं० स्त्री०) महत्यधिका शीता शीतवीर्य्या। १ शतमूली। २ वनस्पतिविशेष। (त्रि०) ३ अतिशीत वीर्ययुक्त, जिसका वीर्य बहुत ठण्ढा हो।

महाशीर्ष (सं० पु०) शिवानुचरभेद, शिवके एक अनुचरका नाम।

महाशील (सं० पु०) जन्मेजयके एक पुत्रका नाम।

महाशुक्ति (सं० स्त्री०) मुक्ताप्रसविनी शुक्ति, वह सीप जिससे मुक्ता निकलती है। २ वृहत् शुक्ति, बड़ी सीप।

महाशुक्ला (सं० स्त्री०) महती चासौ शुक्ला शुक्लवर्णा च। १ सरस्वती। (त्रि०) २ अतिशुभ्रवर्णयुक्त, जो खूब उजला हो।

महाशुण्डी (सं० स्त्री०) हाथीसूंड़ नामक क्षुप।

महाशुभ्र (सं० क्ली०) महान् शुभ्रो वर्णोऽस्य। १ रजत, चांदी। (त्रि०) २ अतिशय शुभ्रवर्णयुक्त, जो खूब उजला हो।

महाशूद्र (सं० पु०) महान् शूद्रः। १ आभीर, ग्वाला। २ शूद्रोंके मध्य ग्वाला या नाई।

महाशूद्री (सं० स्त्री०) महाशूद्रस्य भार्य्या इति (अजाद्यतष्टाप्। पा ४।१।४) इत्यत्र महत् पूर्वस्य प्रतिषेधः इति काशिकोक्तया पुंयोगलक्षणा ङीष्। आभीरी, ग्वालिन।

महाशून्य (सं० क्ली०) आकाश।

महाशून्यता (सं० स्त्री०) महाशून्यस्य भावः तल्-टाप्। १ व्योमका भाव। २ योगियोंकी निरुद्धावस्था।

महाशैरीष (सं० क्ली०) सामभेद।

महाशैल (सं० पु०) पर्वतभेद।

महाशोण (सं० पु०) नदीभेद, सोन नदी।

महाशोल (सं० पु०) एक प्रकारकी मछली। यह मछली स्वादिष्ट तथा बलकर मानी गई है।

महाशौण्डी (सं० स्त्री०) महती चासौ शौण्डी चेति। सफेद किणिही वृक्ष, कटभीका पेड़।

महाशौषिर सं० पु०) मुखक्षतरोगभेद।

महाश्मन् (सं० पु०) पद्मराग मणि।

महाश्मशान (सं० क्ली०) महच्च तत् श्मशानञ्चेति, अत्र हि जीवानां मरणे समूल-कर्मनाशतः पुनर्जन्ममरणाद्यभावादस्य तथात्वं। काशी। यहां मृत्यु होनेसे सब पाप विनष्ट होते हैं। कर्मके फलसे जीवोंके जन्म और मृत्यु होती है। यदि मृत्युसे सब प्रकारके कर्मोंका ध्वंस

होता है, तो फिर जन्म मृत्युकी सम्भावना नहीं रहती।

महाश्यामा (सं० स्त्री०) महती चासौ श्यामा चेति। १ श्यामालता। २ शिंशपा वृक्ष, शीशमका पेड़। ३ वृक्षपादिवृक्ष।

महाश्रम (सं० पु०) तीर्थभेद। यहां स्नान करनेसे सब पाप नाश होते हैं।

महाश्रमण (सं० पु०) महान् श्रेष्ठश्चासौ श्रमणो बौद्धभिक्षुश्चेति। भगवान् बुद्धका एक नाम। पर्याय—सर्वार्थसिद्ध, कुलिशासन, गोपेश।

महाश्रय (सं० पु०) अक्षोट वृक्ष, अखरोटका पेड़।

महाश्रावक (सं० पु०) शाक्य बुद्धका प्रधान शिष्य।

महाश्रावणिका (सं० स्त्री०) महती चासौ श्रावणिका चेति। स्वनामख्यात महाक्षुप, गोरखमुण्डी। पर्याय—महामुण्डी, लोचनी, कदम्बपुष्पी, विकचा, क्रोडा, चोडा, पलङ्कषा, नदीकदम्ब, मुण्डाख्या, महामुण्डणिका, माता, स्थविरा, लोतनी, भूकदम्ब, अलम्बुषा। इसका गुण—उष्ण, तिक्त, ईषत, मधुर, वायुप्रशमक, स्वरवर्द्धक, रेचक तथा रसायन। (राजनि०)

भावप्रकाशके मतसे इसका पर्याय—मुण्डो, भिक्षु, श्रावणी, तपोधना, श्रवणाह्वा, मुण्डितिका, श्रवणशीर्षिका, महाश्रवणिका, भूकदम्बिका, कदम्बपुष्पिका, तपस्विनी। इसका गुण—पाकमें कटु, उष्णवीर्य, मधुर, लघु, मेध्य, पाण्डु, श्लीपद, अरुचि, अपस्मार, प्लीहा और मेदोरोगनाशक। (भावप्र०)

महाश्रावणी (सं० स्त्री०) महाश्रावणिका, गोरखमुण्डी।

महाश्री (सं० स्त्री०) महती श्रीरिव। बुद्धशक्तिविशेष, बुद्धकी एक शक्तिका नाम। पर्याय—तारा, ओंकारा, स्वाहा, श्री, मनोरमा, तारिणी, जया, अनन्ता, शिवा, लोकेश्वरात्मजा, खदूरवासिना, भद्रा, वैश्या, नीलसरस्वती, शङ्खिनी, महातारा, वसुधारा, धनन्ददा, त्रिलोचना, लोचना।

महाश्रुति (सं० पु०) गन्धर्वभेद।

महाश्व (सं० पु०) श्रेष्ठ अश्व, बड़ा तथा सुन्दर घोड़ा।

महाश्वशाला (सं० स्त्री०) राजाकी अश्वशाला या अस्तबल।

महाश्वास (सं० पु०) १ श्वास रोगभेद, एक प्रकारका श्वास रोग। २ मृत्युकालीन चरमश्वास, वह अन्तिम सांस जो मरनेके समय चलता है।

महाश्वासारिलौह (सं० पु०) खांसी दमे आदिकी एक महौषधि। प्रस्तुत प्रणाली—लोहा ४ तोला, अबरक १ तोला, चीनी ४ तोला और मधु ४ तोला, इन्हें तथा त्रिफला, मुलेठी, दाख, पीपल, बेरकी आंठीका गूदा, वंशलोचन, तालीशपत्र, विडङ्ग, इलायची, कुट और नागेश्वर, नामक द्रव्य, इनके एक तोले सूक्ष्म चूर्णको लोहेकी खरलमें अच्छी तरह पीसे। इसको मात्रा आध माशेसे २ माशे तक बतलाई गई है। मधुके साथ इसका सेवन करनेसे महाश्वास, पांच प्रकारकी खांसी और रक्तपित्तादि रोग जाते रहते हैं।

(भैषज्यरत्नाकर हिक्काश्वासाधि०)

महाश्वेत (सं० पु०) १ अतिशय श्वेत, बहुत साफ। २ महाशण पुष्पिका, सफेद चिचड़ा। ३ शुभ्र शर्कराखण्ड, चीनी।

महाश्वेतघण्टी (सं० स्त्री०) महाराणापुष्पका पेड़।

महाश्वेता (सं० स्त्री०) महत्यतिशया श्वेता, महान् श्वेतो वर्णो यस्या वा। १ सरस्वती। २ दुर्गा।

"श्वेत शुक्ल शिवस्थान यस्माच्चेह समागता।
महाभाव समुत्पन्ना महाश्वेता ततः स्मृता॥"

(देवीपु० ४५ अ०)

३ कृष्ण भूमिकुष्माण्ड, भुइंकुम्हड़ा। पर्याय—क्षीरविदारिका, क्षीरविदारी, ऋक्षगन्धिका, क्षीरवल्ली, क्षीरकन्दा, क्षीरिका। ४ श्वेतापराजिता, सफेद अपराजिता। ५ सिता, चीनी। ६ श्वेत किणिही वृक्ष, सफेद चिचड़ाका पेड़। ७ कादम्बरी-वर्णित हंस नामक गन्धर्वराजकी स्त्री गौरीके गर्भसे उत्पन्न कन्या।

महाषष्टिक (सं० पु०) साठी धान।

महाषष्ठी (सं० स्त्री०) महती चासौ षष्ठी च महामङ्गलदात्री षष्ठी वा। दुर्गा। ये बालककी रक्षा करती हैं इसलिये इनका महाषष्ठी नाम पड़ा है। महाषष्ठीकवच लिख कर बालकके दाहिने हाथमें बांधनेसे उसकी सारी विपद् दूर होती है।

कवचका मन्त्र,—"ओं दुं दुं दुं दुर्गे दुर्गे नाशय नाशय हन हन दह दह मथ मथ बध बध सर्वहिंसान

महाषष्ठीरूपेण बालकं रक्ष रक्ष चिरजीविनं कुरु कुरु श्रीं ह्रीं हूं फट् स्वाहा ॥" (योगिनीतन्त्र)

महाषट्पलघृत (सं० पु०) घृतौषधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर, दशमूलका काढ़ा ४ सेर, अदरकका रस ४ सेर, चुक ४ सेर, दूध ४ सेर, दहीका पानी ४ सेर, कांजी ४ सेर; चूर्णके लिये सचल लवण, पंचकोल, सैन्धव लवण, हवूष, विटलवण, वनयमानी, यवक्षार, हींग, जीरा, उद्भिद्लवण, मंगरेला और यमानी प्रत्येक ४ तोला। इस घृतका अन्न वा केवल घृतके साथ सेवन करना चाहिये। क्रिमि, ज्वर और ग्रहणी आदि रोगोंमें यह बहुत उपकारी है।

(भैषज्यरत्नाकर, ग्रहण्यधिकार)

महाषोढ़ान्यास (सं० पु०) मुद्राभेद।

महाष्टमी (सं० स्त्री) महत्या महादेव्या अष्टमी, महती अष्टमीति वा। आश्विन मासकी शुक्लाष्टमी। चान्द्र आश्विन मासमें ही यह अष्टमी होगी। यह तिथि भगवती दुर्गादेवीको अतिशय प्रिय है, इस कारण इसे दुर्गाष्टमी भी कहते हैं।

"आश्विने शुक्लपक्षस्य भवेद् या अष्टमी तिथिः।
महाष्टमीति सा प्रोक्ता देव्याः प्रीतिकरा परा॥"

(कालिकापुराण ५६ अ०)

इस महाष्टमी तिथिमें भगवती दुर्गाका तरह तरहके उपहार तथा मांसादि द्वारा पूजन करना चाहिये। इस तिथिमें पूजा और उपवास दोनों ही करने होते हैं। बालक, वृद्ध और रोगीको छोड़ कर और सबोंको उपवास करना उचित है। परन्तु उपवासमें विशेषता यह है, कि जो पुत्रवान् व्यक्ति हैं उन्हें इस अष्टमी तिथिमें निरम्बु उपवास नहीं करना चाहिये। बाकी सबोंके लिये निरम्बु उपवास बतलाया गया है। महाष्टमीका उपवास करनेसे सभी पाप विनष्ट हो कर पुण्यका संचार होता है। कहा भी है,—

पगलेकी चौदस, पगलीकी आठ,
ए करिये जनम काट। (खना)

पगलेकी चौदस अर्थात् शिवचतुर्दशी तथा पगलीकी आठ या महाष्टमी करके जन्म कटावो अर्थात् यह करनेसे सभी पाप नष्ट होते हैं। अष्टमीका उपवास करके नवमीके दिन पारण करना होता है। इस महाष्टमी तिथिमें देवीके उद्देशसे विभवानुसार दो पहर रातमें पूजा करनी चाहिये। इस समयकी पूजा अनन्त फल देनेवाली है। (तिथितत्त्व)

महासंख्या (सं० स्त्री०) बहुत वेशी संख्या।

महासंज्ञा (सं० स्त्री०) एक बहुत बड़ी संख्यका नाम।

महासंचितिकाफल (सं० क्ली०) काबुलमें होनेवाला सेव-फल।

महासंस्कारी (सं० पु०) १७ मात्राओंके छन्दोंकी संज्ञा।

महासती (सं० स्त्री०) सच्चरित्रा पतिव्रता स्त्री।

महासतोवृहती (सं० स्त्री०) वैदिक छन्दोभेद, एक वैदिक छन्दका नाम।

महासतोमुखा (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक प्रकारका छन्द।

महासत्ता (सं० स्त्री०) वस्तुका यथार्थ अस्तित्व।

महासत्त्र (सं० क्ली०) सोमयोगभेद।

महासत्त्व (सं० पु०) १ महाबल वा महाशक्ति। २ वृहदाकार जीव, बड़े आकारका जीव। ३ एक वोधिसत्त्वका नाम। ४ कुवेर। ५ शाक्यमुनि। (त्रि०) ६ सत्त्वगुणशाली, जिसका अन्तःकरण उच्च हो।

महासत्य (सं० पु०) यमराज।

महासन (सं० क्ली०) सिंहासन।

महासन्धिविग्रह (सं० पु०) शान्तिस्थापन और युद्धसंघटनादि कार्यका प्रधान मन्त्री।

महासन्न (सं० पु०) महान् अतिशयः सन्नो विषण्णः, कुदेहवत्त्वात्, यद्वा महतो हिमाद्रेर्महादेवस्य वा आसन्नः निकटवर्त्ती। १ कुबेर। २ अति निकट, बहुत करीब।

महासप्तमी (सं० स्त्री०) आश्विनकी शुक्ला सप्तमी।

महासफर (सं० पु०) महांश्चासौ सफरश्चेति। १ वहत् प्रोष्ठी मत्स्य, बड़ी सौरी मछली। २ पार्वत्य मत्स्य, चेल्हवा मछली।

महासमङ्गा (सं० स्त्री०) महती चासौ समङ्गा च। वृक्षविशेष, कंगही वा कंघी नामक पौधा। पर्याय—ओदनिका, ओदनाह्वया, वृक्का, रुहा, वृद्धवला, तण्डुला, भुजङ्गजिह्वा शीतपाकिनी, शीतवला, शीतावला, वलोत्तरा, वला, खिरहिट्टी, व्यालजिह्वा। इसका गुण—मधुर, अम्ल, दोषत्रयनाशक। (राजनि०)

महासमाप्त (सं० पु०) अत्यूर्द्ध संख्याभेद, एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महासमुद्र (सं० पु०) महासागर।

महासम्भव (सं० पु०) जगद्भेद।

महासम्मत (सं० त्रि०) १ अतिशय सम्मानित, बड़ा आदरणीय। २ बौद्धमतसे वर्त्तमान युगका प्रथम धरणीश्वर।

महासम्मतीय (सं० पु०) बौद्धसम्प्रदायभेद।

महासम्मोहन (सं० त्रि०) १ अतिशय मुग्धताकर, बहुत मुग्ध करनेवाला। (क्ली०) २ तन्त्रभेद।

महासरस्वती (सं० स्त्री०) श्रेष्ठा सरस्वती।

महासरोज (सं० क्ली०) एक बहुत बड़ी संख्याका नाम। दश निखर्वका एक पद्म और दश पद्मका एक महापद्म होता है।

महासर्ग (सं० पु०) महांश्चासौ सर्गश्चेति। जगत्‌की वह रचना जो महाप्रलयके उपरान्त फिर होती है।

महासर्ज (सं० पु०) महांश्चासौ सर्जश्च। १ असनवृक्षभेद, पीतशालका पेड़। २ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़।

महासर्प (सं० पु०) १ फणवाला साँप। २ सामभेद।

महासह (सं० पु०) सहते इति सह-अच्, महान् सह। कुब्जकवृक्ष, वाणपुष्प।

महासहस्रप्रमर्द्द (सं० पु०) १ बौद्धदेवताभेद। २ बौद्धसूत्रभेद।

महासहस्रप्रमर्द्दिनी (सं० स्त्री०) महासहस्रप्रमर्द्द देखो।

महासहा (सं० स्त्री०) महासह-स्त्रियां टाप्। १ माषपर्णी, जंगली उड़द। २ अम्लानवृक्ष, इमलीका पेड़।

महासाख्यायन (सं० पु०) महासाखका गोत्रापत्य।

महासांघिक (सं० पु०) बौद्धसम्प्रदायभेद।

महासागरप्रभागम्भीरघर (सं० पु०) गरुड़ोंके एक राजाका नाम।

महासाधनभाग (सं० पु०) १ राजकार्यका प्रधान। (Executive minister or officer) २ प्रधान मन्त्री।

महासाधु (सं० त्रि०) बड़ा साधु।

महासाध्वी (सं० स्त्री०) महासती, पतिव्रता।

महासान्तपन (सं० क्ली०) महत् सान्तपनं। व्रतविशेष, जावालके मतसे सात दिनमें होनेवाला एक व्रत। इस व्रतका अनुष्ठान करनेमें पहले दिन गोमूत्र, दूसरे दिन गोबर, तीसरे दिन दूध, चौथे दिन दही, पांचवें दिन घी, छठे दिन कुशोदक पान और सातवें दिन निरम्बु (बिना पानी पी कर) उपवास करना होता है, यह व्रत बहुत कष्टसाध्य है। प्रायश्चित्तविवेकमें लिखा है, कि जो व्रत सात दिनमें शेष होता उसे सान्तपन और उससे तिगुने अर्थात् इक्कीस दिनमें शेष होता उसे महासान्तपन कहते हैं। जहां सात दिनमें महासान्तपन बतलाया गया है वहां सान्तपन दो दिनमें और जहां सात दिनमें सांतपन कहा है वहां महासान्तपन इक्कीस दिनमें शेष होता है। यह महासान्तपन व्रत करनेसे भारीसे भारी पाप नष्ट होता है। अशक्तोंके लिये छः धेनुदान महासान्तपन व्रत करनेके समान फलदायक है।* सान्तपन देखो।

महासान्धिविग्रहिक (सं० पु०) महांश्चासौ सान्धिविग्रहिकश्चेति। राज्यका शान्तिस्थापक और युद्धका व्यवस्थापक सचिव वा मन्त्री।

महासामन् (सं० क्ली०) सामभेद।

महासामन्त (सं० पु०) सामन्त प्रदेशके अधीन राजा।

महासामराज (सं० क्ली०) सामभेद।

महासार (सं० पु०) महान सारः स्थिरांशो यस्य। दुष्खदिर, एक प्रकारका खैर।

महासारथि (सं० पु०) १ अरुण। २ श्रेष्ठ सारथि।

---

* "पृथक् सान्तपनैर्द्रव्यैः षडहस्सोपवासकः।
सप्ताहेनैव कृच्छ्रोऽयं महासान्तपनः स्मृतः॥
एतत् सप्ताहसाध्यं जावालः—
गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्।
एकैकं क्रमशोऽश्नीयादहोरात्रमभोजनम्॥
कृच्छ्रः सान्तपनो नाम सर्वपापप्रणाशनः।
एकैकमेतदेव हि त्रिरात्रमुपयोजयेत्॥
त्र्यहञ्चोपवसेदन्त्यं महासान्तपने विधिः॥
एष सप्ताहसाध्या सान्तपनमुक्ता एकविंशति दिनसाध्यं महासान्तपनमुक्तम्। महासान्तपन धेनुषट्कदानसमम्। जावालोक्त महासान्तपन एकविंशतिदिनसाध्यत्वेन सप्ताहसाध्यसान्तपनात् महासान्तपनेधेनुषट्क देयम्।" (प्रायश्चित्तविवेक)

महासार्थ (सं० पु०) दलवद्ध यात्री, दल बांध कर चलने वाला मुसाफिर।

महासावेतस (सं० क्ली०) सामभेद।

महासाहस (सं० क्ली०) महच्च तत् साहसञ्चेति। १ अति बलात्कारकृत कार्य्य, वह काम जो जबरदस्ती किया गया हो। २ अतिशय दम्भ, बड़ा घमण्ड। ३ अति दुष्कृत कर्म, बहुत खराब काम। ४ अतिशय द्वेष, बड़ी ईर्ष्या। ५ महाबल, खूब ताकत।

महासाहसिक (सं० पु०) महानतिशयः साहसिकः। १ चौर, चोर। (त्रि०) २ अत्यन्त साहसयुक्त, बड़ा साहसी। ३ बलपूर्वकापहारक, जबरदस्ती धर पकड़ करनेवाला या छीननेवाला।

महासाहसिकता (सं० स्त्री०) महासाहसिकस्य भावः तल टाप्। महासाहसिकका भाव या धर्म। महासाहसिकका कार्य।

महासिंह (सं० पु०) महान् सिंह इव। १ शरभ, सिंह। महांश्चासौ सिंहश्चेति। २ बड़ा सिंह। ३ दुर्गा देवीका वाहन सिंह।

"उत्थाय च महासिंह देवी चण्डमधावत॥" (चण्डी)

महासिंहतेजस् (सं० पु०) बुद्धभेद।

महासिद्ध (सं० त्रि०) योगसिद्ध, जिन्होंने योग द्वारा सिद्धि लाभ की है।

महासिद्धि (सं० स्त्री०) महती सिद्धिः। आठ सिद्धियोंमेसे एक। सिद्धि देखो।

महासीर (हिं० पु०) एक प्रकारकी मछली। यह पहाड़ी नदियोंमें पाई जाती है और इसका मांस बहुत अच्छा माना जाता है।

महासुख (सं० क्ली०) महत् सुखमस्मिन। १ शृंगार, सजावट। २ अतिशय आनन्द, बड़ी खुशी। (त्रि०) महत् सुखमस्य। ३ अतिशय सुखयुक्त। बड़ा सुखी। (पु०) महत् सुखं ईश्वरा नन्दोऽस्य अस्माद्वा। ४ बुद्धदेव।

महासुगन्ध (सं० त्रि०) महान् सुगन्धोऽस्य। १ अति सुगन्धयुक्त, जिसमें बड़ी अच्छी गंध हो।

महासुगन्धा (सं० स्त्री०) गन्धनाकुली, नाकुली कंद।

महासुगन्धषट्क (सं० क्ली०) महासुगन्धानां षट्कं। छः प्रकारको महासुगन्धि, यथा—चन्दन, कस्तूरी, कपूर, कृष्णागुरु, मूर्वा और कुंकुम।

महासुगन्धि (सं० स्त्री०) विषघ्न औषधभेद। (सुश्रुत)

महासुगन्धितैल (सं० क्ली०) तैलौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, चूर्णके लिये लाल चन्दन, केशर, खसखसकी जड़, प्रियंगु, छोटी इलायची, गोरोचन, शिलारस, अगुरु, मृगनाभि, कपूर, जयित्री, जातीफल, कंकोलीफल, सुपारी, लवङ्ग, लालुका, मांसी, कुट, रेणुका, तगरचण्डी, केवटीमोथा, नखी, व्याघ्रनखा, पृक्का, बोल, दमनक, चोरक, शिलाजतु, पलवालुक, वीरणमूल, पद्मकाष्ठ, धवका फूल, पुंडरिया और कचूर, प्रत्येक द्रव्य आध तोला, जल १६ सेर। पीछे तैलपाकके विधानानुसार इस तेलका पाक करे। यह तेल लगानेसे शरीरका घाम, मल और दुर्गन्ध, खुजली तथा कुष्ठरोग नष्ट होता है। सत्तर वर्षका बूढ़ा भी इस तेलके व्यवहारसे नौजवान-सा हो जाता है। इससे बाझ औरतकी बाझपन दूर होता है।

महासुगन्धितैल (सं० पु०) तैलौषधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—तिलतैल ४ सेर, मजीठ, देवदारु, सरलकाष्ठ, व्याघ्री (गन्धद्रव्य विशेष), वच, सुपारीके पेड़की छाल, दारचीनी, गंधतृण, कचर, हरीतकी, बहेड़ा, आंवला और मोथा, प्रत्येक दो पल। इन्हें एक साथ मिला कर पहले पाक करे। पीछे जटामांसी, मूरामासी, दौना, चम्पेका फूल, प्रियंगु, दारचीनी, गठिवन, सुगन्धवाला, कुट, मरुवक पुष्प और पीडिं शाक प्रत्येक २ पल। गंधविरोजा, कुन्दरखोटी, नखी, नालुका और सोया प्रत्येक १ पल। इसके द्वारा द्वितीय कल्कपाक करे। इलायची, लवङ्ग, शिलारस, श्वेतचन्दन, जातीपुष्प, खटाशी, कंकोल, अगुरु, लताकस्तूरी और कुंकुम प्रत्येक ४ तोला, मृगनाभि २ तोला, कपूर १ तोला, वा ६ माशा ४ रत्ती, इन सब द्रव्यों द्वारा तृतीय कल्कपाक करना होगा। पाक हो जानेके बाद उसमेंसे खटाशीको निकाल कर शिला पर पीसे और फिर उसे तेलमें डाल दे। बिल्वादि पञ्चपल्लवके क्वाथसे प्रथम कल्कको, गन्धाम्बुसे द्वितीयको और अगुरुधूपित गंधजलसे तृतीय कल्कको पाक करे। महाराजगन्धप्रसारिणी तैलकी

तरह इसमें भी सभी गन्धद्रव्यको शोधन कर लेना होगा। इसके व्यवहारसे विविध वातव्याधि नष्ट होती है।

ऊपर कहे गये कल्कसे दूना कल्क ले कर तेलमे पाक करनेसे लक्ष्मीविलास तेल बनता है।

महासुदर्शन (सं० पु०) चक्रवर्त्तीराजभेद।

महासुपर्ण (सं० पु०) पक्षिभेद। (सतपथब्रा० १२।२।३।७)

महासुर (सं० पु०) दानवभेद, एक दानवका नाम।

महासुरी (सं० स्त्री०) महादेवी दुर्गा।

महासुहय (सं० पु०) श्रेष्ठ अश्व, बड़ा घोड़ा। २ एक ऋषि।

महासूक्त (सं० क्ली०) १ वैदिक महास्तोत्र। (पु०) २ ऋग्वेदके दशवें मण्डलके एक ऋषि और उनका १-१२८ सूक्त।

महासूक्ष्म (सं० त्रि०) महाश्चासौ सूक्ष्म। अतिशय सूक्ष्म, बहुत बारीक।

महासूक्ष्मा (सं० स्त्री०) महदतीव सूक्ष्म। बालुका, बालू।

महासूचिव्यूह (सं० पु०) व्यूहभेद, युद्धके समय सेना रखनेकी क्रियाविशेष।

महासूत (सं० पु०) रणवाद्यभेद, प्राचीन कालका एक प्रकारका बाजा जो युद्ध-क्षेत्रमें बजाया जाता था।

महासेतु (सं० पु०) १ वृहत् सेतु, बड़ा समुद्र। २ एक प्रकारका मन्त्र।

महासेन (सं० पु०) महती सेना यस्य। १ कार्त्तिकेय। महती सेना अनुचरोऽस्य। २ शिव। ३ महासेनापति, बहुत बड़ा या सबसे प्रधान सेनापति। ४ श्वेताहंत पितृविशेष। ५ एक राजाका नाम। (त्रि०) ६ विपुल सैन्यविशिष्ट, बड़ी सेनावाला।

महसेननरेश्वर (सं० पु०) अष्टम अर्हतके पिता।

महासेना (सं० स्त्री०) विपुल सैन्य।

महासेनाव्यूहपराक्रम (सं० पु०) यक्षराजभेद।

महासोम (सं० पु०) सामभेद।

महासौपिर (सं० पु०) दन्तोवेष्टगत रोगविशेष, दातका एक प्रकारका रोग। इसमें दाँतोंके मसूड़े सड़ जाते हैं और मुंहमेंसे बहुत दुर्गन्ध आती है। कहते हैं, कि जब यह रोग होता है तब आदमी सात दिनोंके अन्दर मर जाता है। इसका दूसरा नाम महासुषिर भी है। मुखरोग देखो।

महास्कन्ध (सं० त्रि०) महान् स्कन्धोऽस्य। १ वृहत् स्कन्धयुक्त, बड़ी गरदनवाला। २ उष्ट्र, ऊंट।

महास्कन्धा (सं० स्त्री०) जम्बूवृक्ष, जामुनका पेड़।

महास्कन्धिन् (सं० पु०) अष्टपदविशिष्ट जन्तुभेद, टिड्डी।

महास्तूप (सं० पु०) बौद्ध स्मृति-रक्षित मंदिरके आकारका ऊंचा स्तूप।

महास्तोम (सं० त्रि०) स्तोमयुक्त।

महास्त्र (सं० क्ली०) अस्त्रविशेष, बड़ा अस्त्र।

महास्थली (सं० स्त्री०) स्थल (जानपदकुण्डगोलेत्यादि। पा ४।१।४२) इति ङीप् महती स्थली। १ पृथ्वी। २ श्रेष्ठ स्थान, बहुत सुन्दर स्थान।

महास्थविर (सं० पु०) बौद्धभिक्षु।

महास्थान (सं० क्ली०) ऊंचा और सुन्दर स्थान।

महास्थानप्राप्त (सं० पु०) बोधिसत्त्वभेद।

महास्थाल (सं० पु०) वृक्षभेद।

महास्नायु (सं० पु०) महती स्नायुः। वह प्रधान नाड़ी जिसमेंसे रक्त बहता है। इसे कंडरा या अस्थिबंधन नाड़ो भी कहते हैं।

महास्नेह (सं० पु०) छर्दिरोगकी एक दवा।

महास्पद (सं० त्रि०) महान् आस्पदो यस्य। महाप्रभाव शाली, बड़ा बलवान्।

महास्मृति (सं० स्त्री०) १ चिरप्रचलित वाक्य, किंवदंती। २ दुर्गा।

महास्रग्विन् (सं० पु०) महती स्रक् अस्थिमाला-सा अस्त्यस्येति विनि। महादेव।

महास्वन (सं० पु०) महान् स्वनः शब्दो यस्य। १ मल्लतूर्य, लड़ाईका डंका। २ वृहच्छब्द, जोरका शब्द। (त्रि०) ३ वृहत्शब्दविशिष्ट, जिससे भारी शब्द होता हो। ४ असुरभेद।

महास्वर (सं० त्रि०) १ उच्च स्वरयुक्त, बड़ा शब्द करनेवाला। (पु०) २ उच्च स्वर, जोरकी आवाज।

महास्वाद (सं० पु०) स्वादु, सुमिष्ट।

महाहंस (सं० पु०) १ हसभेद। २ विष्णु।

महाहनु (सं० पु०) महती हनुर्यस्य। १ शिव, महादेव।

२ तक्षककी जातिका एक प्रकारका सांप। ३ दानवभेद. एक दानवका नाम। (त्रि०) ४ वृहत् हनुयुक्त, बड़ी दाढ़ीवाला।

महाहय (सं० पु०) १ राजभेद, एक राजाका नाम। २ महान् अश्व, बड़ा घोड़ा।

महाहर्म्य (सं० क्ली०) राजप्रासाद।

महाहव (सं० पु०) महान् आहवः। घोरतरयुद्ध, घमासान लड़ाई।

महाहविस् (सं० क्ली०) महत् प्रशस्तं हविः। १ गव्य-घृत, गायका घी। सब घीसे गायका घी प्रशस्त और श्रेष्ठ है।

"गयायामथवा पिण्ड खड्गमास महाहविः।
कालशाक तिलाज्य वा कृशर मासतृतये॥"
(मार्क०पु० ३२।३३)

२ विष्णु। ३ महान्ति हवींषि अत्र। ३ वृहद् याग-विशेष, शाकमेध यज्ञ।

"अथातो महाहविष एव तद्यथा महाविषस्तथो तस्य।"
(शत०ब्रा० २।५।३।२०)

महाहस्त (सं० पु०) १ शिव, महादेव। (त्रि०) २ वृहद् हस्तयुक्त, जिसके लम्बे लम्बे हाथ हों।

महाहस्तिन् (सं० त्रि०) वृहद् हस्तयुक्त, लम्बा हाथ-वाला।

महाहस्ती (सं० त्रि०) महाहस्तिन् देखो।

महाहास (सं० पु०) महान् उच्चहासः। अट्टहास, जोरसे ठठा कर हंसना।

महाहि (सं० पु०) महान् अहिः। वृहत् सर्प, वासुकि नाग।

महाहिक्का (सं० स्त्री०) महती हिक्का। एक प्रकारका हिचकी रोग। इसमें हिचकी आनेके समय सारा शरीर कांप उठता है और मर्म-स्थानमें वेदना होती है।

हिक्का शब्द देखो।

महाहिमवत् (सं० पु०) महाहिम अस्त्यर्थे मतुप् मस्य व। हिमालय पहाड़।

महाहिवलय (सं० त्रि०) महासर्प द्वारा वेष्टित, बड़े बड़े सांपोंसे घिरा हुआ।

महाहिशयन (सं० क्ली०) विष्णुकी अनन्तशय्या।

महाहेतु (सं० पु०) एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महाह्न (सं० पु०) मध्याह्न।

महाह्रद (सं० पु०) १ वृहद् पुष्करिणी, बड़ा तालाब। २ एक तीर्थका नाम। ३ शिव, महादेव।

महाह्रस्व (सं० पु०) मध्याह्न, दोपहर।

महाह्रस्वा (सं० त्रि०) अति खर्व, बहुत छोटा।

महाह्रस्वा (सं० स्त्री०) कपिकच्छु, केवांच।

महि (सं० पु०) मह्यते इति मह पूजाया अदन्त चुरादि, (सर्वधातुभ्य इन्। उण् ४।११३) इति इन्। १ पृथ्वी। २ महत्, बड़ा। ३ महिमा। ४ महत्तत्त्व, विज्ञान-शक्ति।

महिका (सं० स्त्री०) मह (क्वुन् शिल्पिसंज्ञयोरपूर्वस्यापि। उण् २।३२) इति क्वुन् टाप्, अत इत्वं। हिम, वर्फ।

महिक्षत्र (सं० त्रि०) १ बड़ा पराक्रमशाली। (पु०) २ प्रभूत बल, खूब जोर।

महिख (सं० पु०) महिष देखो।

महिखरी (हिं० स्त्री०) अठाईस मात्राओंके एक छन्दका नाम। इसमें चौदह मात्राओं पर यति होती है।

महिञ्जक (सं० पु०) चूहा।

महित (सं० त्रि०) मह्यते स्मेति मह पूजायां (मतिबुद्धि-पूजार्थेभ्यश्च। पा ३।२।१८८) इति क्त। १ पूजित। २ पितृ-गणविशेष।

महिता (सं० स्त्री०) १ नदीभेद, एक नदीका नाम। २ महत्व, महिमा।

"सख्युः सखेव पितृवत् तनयस्य सर्वं।
सेहे महान् महितया कुमतेरघ मे॥"
(भाग० ३।१५।१६)

महित्री (सं० स्त्री०) ऋग्वेदका १०।१५६ सूक्तका मन्त्र-भेद।

महित्व (सं० क्ली०) प्रभुत्व, प्रभुता।

महित्वन (सं० क्ली०) महत्व, महिमा।

महिदास (सं० पु०) इतराके एक पुत्रका नाम।

महीदास देखो।

महिदेव (सं० पु०) ब्राह्मण।

महिधर (सं० पु०) महीधर देखो।

महिन् (सं० त्रि०) मह 'प्रेक्षादिभ्य इनिः' इति इनिः। महत्, बड़ा।

महिन (सं० क्ली०) महति मह्यते वा मह पूजाया, (महेरिनण् च। उण् २।५६) इति चकारादित्युक्तः इनन्। १ राज्य। (त्रि०) २ पूजनीय, पूजने योग्य।

महिनस (सं० पु०) शिवकी एक मूर्त्तिका नाम। (भागवत ३।१२।१२)

महिन्धक (सं० पु०) १ इन्दूर, चूहा। २ नकुल, नेवला। ३ भारवहनार्थ दन्तसंलग्न रज्जु, भार उठानेका छोका, सिकहर। इसे बहंगीके दोनों छोरोंमें बांध कर कहार बोझा उठाते हैं।

महिपाल (सं० पु०) महीपाल देखो।

महिफर (हिं० पु०) मधु, शहद।

महिमख (सं० पु०) देवसद्म, देवालय।

महिमन् (सं० पु०) महतो भावः महत् (पृथ्वादिभ्य इमनिज् वा उण् ५।१।१२२) इति इमनिच् ततः (टेः। पा ६।४।१५५) इति टिलोपः। महत्व, आठ प्रकारके ऐश्वर्य्योंमेंसे एक ऐश्वर्य्य।

"अणिमा लघिमा प्राप्तिः प्राकाम्य महिमा तथा।
ईशित्वञ्च वशित्वञ्च तथा काम वसायिता॥"
(अमरटीका भारत)

महिमा ऐश्वर्य प्राप्त होनेसे उनका प्रभाव इतना बढ़ जाता है, कि वेमनमाना कार्य करनेमें समर्थ होते हैं। योग द्वारा ही अणिमादि आठ प्रकारके ऐश्वर्य लाभ होते हैं। योग देखो।

२ माहात्म्य, गौरव। ३ उत्कर्ष, प्रशंसा। ४ राजतरंगिणीके अनुसार एक मन्त्री-पुत्र।

महिमत् (सं० त्रि०) प्रचुर, अधिक।

महिमभट्ट (सं० पु०) मन्मटभट्टका नामान्तर।

महिमसुन्दर (सं० पु०) जैन ग्रन्थकारभेद।

महिमा (सं० स्त्री०) महत्व, महिमा। महिमन् देखो।

महिमावत् (सं० क्ली०) मार्कण्डेयपुराणानुसार एक प्रकारके पितृगण।

महिम्न (सं० पु०) शिवका एक प्रधान स्तोत्र जिसे पुष्पदन्ताचार्यने रचा था।

महिम्नार (सं० पु०) हरिवंश वर्णित एक राजा।

महिया (हिं० पु०) ईखके रसका फेन जो उबाल खाने पर निकलता है।

महिर (सं० पु०) मह्यते पूज्यते इति मह पूजायां (सलिकल्यनि महीति। उण् १।५५) इति इलच् लस्य रत्वं। सूर्य।

महिरकुल (सं० पु०) एक राजा। मिहिरकुल देखो।

महिरावण (सं० पु०) एक राक्षसका नाम। कहते हैं, कि यह रावणका लड़का था और पातालमें रहता था। यह रामचन्द्र और लक्ष्मणको लंकाके शिविरसे उठा कर पाताल ले गया था। रामचन्द्र और लक्ष्मणको ढूंढ़ते हुए हनुमानजी पाताल गये थे और महिरावणको मार कर राम लक्ष्मणको ले आये थे।

महिला (सं० स्त्री०) मह्यत इति मह पूजायां (सलिकल्यनि महीति। उण् १।५५) इति इलच् टाप्। १ स्त्रीमात्र। २ प्रियंगुलता, फूलप्रियंगु। ३ रेणुका नामक गन्धद्रव्य। ४ मदमत्ता।

महिलाख्या (सं० स्त्री०) महिला इति आख्या यस्याः सा। महिला।

महिलारौप्य (सं० क्ली०) दक्षिणदेशका एक नगर।

महिलाह्वया (सं० स्त्री०) महिला इति आह्वयो यस्याः सा। महिला, प्रियंगुलता। पर्याय—

"प्रियंगु फलिनी कान्ता लता च महिलाह्वया।
गुन्द्रा गुन्द्रफला श्यामा विष्वक्सेनाङ्गनाप्रिया॥"
(भावप्र०)

महिलि—छोटा नागपुर और पश्चिम-बङ्गवासी पहाड़ी जातिविशेष। पालकी ढोना और खेत जोतना ही इनकी प्रधान उपजीविका है। कोई कोई बांसकी टोकरी भी बना कर अपना गुजारा चलाता है। ये साधारणतः बांसफोड़, पातर, सुलाङ्की, ताण्डो और मुण्डा नामक पांच श्रेणियोंमें विभक्त हैं। इन पांचोंमें भी फिर ३४ स्वतन्त्र थोक देखे जाते हैं। इन सब विभिन्न वंशके नामोंके साथ संथालोंकी श्रेणीविशेषके नाम मिलते जुलते हैं। महिलि-मुण्डाओंको कोई कोई मुण्डजातिकी एक शाखा मानते हैं।

मानभूमके पातर-महिलियोंमें बहुत कुछ हिन्दूका आचरण देखा जाता है। वे लोग गाय, सूअर आदिका मांस नहीं खाते और न एक थोकके मध्य अथवा मातृकुलमें आदान-प्रदान ही करते हैं। किन्तु सात पीढ़ीके बाद आदान-प्रदान चलता है।

हिन्दूकी पूजापद्धति और क्रियाकलापका बहुत कुछ अनुकरण करने पर भी उनमें आज भी पहाड़ी और मनसादेवीकी पूजा बड़े समारोहसे होती देखी जाती है। ये लोग कुर्मी, भूमिज और देशवाली सं थालोंके हाथका भोजन नहीं करते। मानभूमके उत्तर जो महिलि रहते हैं वे मुर्देको गाड़ते, परन्तु पातर-महिलि और सं थाल परगनेवासी महिलि उसे जलाते हैं। ११वें दिनमें श्राद्ध और पिण्डदान होता है।

महिवृध् (सं त्रि०) धनवर्द्धन, धन बढ़ानेवाला।

महिव्रत (सं० पु०) महाव्रत।

महिष (सं० पु०) मंहति पूजयति देवाननेनेति, महि (अधिमह्योष्टिषच्। उण् १।४६) इति टिषच्। स्वनामख्यात पशुविशेष, भैंस। पर्याय—लुलाप, वाहद्विषन्, कासर, सैरिभ, यमवाहन, विषज्वरन्, वंशभीरु, रजस्वल, आनूप, रक्ताक्ष, अश्वारि, क्रोधी, कलूष, मत्त, विषाणी, गवली, वली। (जटाधर)

ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र और अन्त्यजके भेदसे महिष पांच प्रकारका है।

ब्राह्मणजातिका महिष बहुत काला, पवित्र, कदमें ऊंचा, बहुत खानेवाला और मारक; क्षत्रियजातिका महिष भेंगा, कामी, मोटा, क्रोधी, मारक, बहुत खानेवाला और ताकतवर, वैश्यजातिका महिष शान्त, छोटे सींगका, क्रोधी, बोझ ढोनेवाल और बलशाली, शूद्रजातिका महिष अंगभंग, कमजोर, छोटे सींगका, कम क्रोधी, कम खानेवाला और बोझ ढोनेमें बहुत मजबूत होता है।

जो महिष हमेशा जलकी तलाशमें रहता है, महातेजस्वी और भार ढोता है तथा जिसके सींग बेढंगे होते हैं उसे अन्त्यज जातिका महिष कहते हैं।

जंगली महिषके मांसका गुण—दोषकारक, लघु, दीपन, बलदायक। ग्राम्य महिषके मांसका गुण—स्निग्ध, मलिनकर पित्तहर। (राजनि०) राजवल्लभके मतसे—तर्पण, स्निग्ध, उष्ण, मधुर, गुरु, निद्रा, पुंस्त्व और स्तन्यवर्द्धक तथा मांसदार्ढ्यकर। भावप्रकाशके मतसे महिष पर्याय—घोटकारि, कासर, पीनस्कन्ध, कृष्णकाय। मांसगुण—उष्णवीर्य, वायुनाशक, निद्राजनक, शुक्रवर्द्धक, बलकारक, शरीरको दृढ़ताजनक, गुरु, पुष्टिकारक, मलमूत्र-निःसारक तथा वायु, पित्त और रक्तदोषनाशक। (भा०प्र०)

देवी भगवतीके उद्देशसे महिषकी बलि देनेसे देवी बहुत तृप्त और प्रसन्न होती हैं। इसके फलसे साधक सौ वर्ष तक स्वर्गमें रहते हैं। (कालिकापु०)

महिष स्वभावतः बलवान्, स्थूल शरीरवाला और भार ढोनेमें मजबूत होता है। यह जल या कीचड़में रहना बहुत पसन्द करता है। शरीरके रोएं लम्बे, दोनों सींग बड़े और टेढ़े होते हैं। इसकी कनपटी चौड़ी और चिपटी, दो पैर पतले, खुर दो भागोंमें, बंटे और शरीरके रोंगटे खड़े होते हैं। मुखभागमें छाती पर और पैरकी गांठों पर अन्यान्य अंगोंकी अपेक्षा अधिक रोएं होते हैं। खाल और पशुओंकी अपेक्षा मोटी होती है। परन्तु सबसे मोटी खाल इसके चूतड़ परकी होती है। खालसे जूते फीते आदि बनाये जाते हैं।

महिष क्रोधकी मानो प्रतिमूर्त्ति है। अन्यान्य पशुओंकी अपेक्षा इसके क्रोधके अनेक निदर्शन पाये जाते हैं। नदीमें तैरते समय यदि कुम्भीर उसके अथवा उसके दलमेंके गायके बच्चेको पकड़े, तो वह महिषके हाथसे त्राण नहीं पाता। इस समय क्रोधमें आ कर वह नदीको मथ डालता है। कुम्भीर जहां उसके बच्चेको ले गया है जलके भीतर उसी स्थान पर वह पहुंच जाता और अपने सींगोंसे उसे भिद डालता है। पीछे उस मृत कुम्भीरको ले कर जलसे बाहर निकाल लाता है।

इसे सम्बन्ध ज्ञान भी अन्य पशुओंकी अपेक्षा अधिक है। कहते हैं, किसी पुत्रस्थानीय महिष द्वारा मातृसम्पर्कीय महिषके सन्तानोत्पादन कराते समय, स्वभावज ज्ञानसे वह विरुद्ध सम्पर्क-सङ्गम नहीं करता। कभी कभी यह इस घृणित कामसे ऐसा उत्तेजित हो जाता है, कि अपने पालकका भी प्राण ले लेता है।

साधारणतः काला, सफेद और धूसर रंगका महिष देखनेमें आता है। पालतू और जंगलीके भेदसे यह दो प्रकारका होता है। पालतू प्रधानतः महिष वा भैंस (Bos Buffalus) और जंगली अरना (Bos Arrana) कहलाता है। जंगली भैंसा ऐसा दुर्द्धर्ष होता है, कि

उसमें वश्यताका चिह्न बिलकुल दिखाई नहीं देता। गुस्साने पर यह कभी कभी आदमी पर टूट पड़ता है। उस समय यदि वह पासवाले पेड़ पर भी चढ़ जाय, तो भी उसके क्रोधसे बच नहीं सकता। लाल लाल आंखें किये वह जंगली भैंसा पेड़के समीप आता और अपने सींगोंसे उसे उखाड़नेकी कोशिश करता है।

इसके सींग साधारणतः लम्बे और किसी किसीके टेढ़े भी दिखाई देते हैं। अरना भैंसा जंगलमें दल बांध कर विचरण करता है। इसकी लम्बाई १०॥ फुट और ऊंचाई ६ फुट होती है। पालतू महिषकी अपेक्षा यह अधिक बलवान् होता है। यहां तक कि किसी किसी समय इसने क्रोधमें आ कर अधिक बलशाली हाथीको भी मार डाला है।

यह शरत्कालमें सङ्गम करता है। इस समय नर महिष कुछ महिषियोंको ले कर एक एक स्वतन्त्र दलमें हो जाता है। मैथुनकालमें यह बहुत डरावना दिखाई देता है। महिषी १० मास गर्भ धारण करके अन्तमें एक या दो बच्चे जनती है। पालत महिष जंगली महिषसे एक तिहाई छोटा होता है। दोनों जातिके महिष घास लता आदि खाना पसन्द करते हैं। कीचड़ ही इसके रहनेका प्रिय स्थान है। मलेरिया-प्रधान आदि स्थानोंमें रहनेसे इसके शरीरमें किसी प्रकारका वैलक्षण्य नहीं दिखाई देता। मेनिला (Manilla) देशीय महिष-को एक स्वतन्त्र थोकम शामिल किया गया है।

दक्षिण अफ्रिकाके Bubalus Caffer-की आकृति भारतीय महिषसे नहीं मिलती। इनके सींग बहुत छोटे होते हैं। ये दल बाध कर जंगलके समतल क्षेत्रमे घूमते हैं। एक एक दलमें पांच छः सौ महिषसे कम नहीं होते। शत्रुको नजदीक आते देख वे पहले उसे अच्छी तरह देख लेते, पीछे सत्त बाध कर उसके पीछे पड़ते हैं। शत्रुसे घायल हुआ महिष बहुत जोरसे चीत्कार करता हुआ उस पर टूट पड़ता है और जब तक उसकी जान नहीं ले लेता तब तक लौटता नहीं। थुनवर्गका भ्रमण वृत्तान्त पढ़नेसे मालूम होता है, कि इस प्रकारका एक खौफनाक महिष एक बार अपने आक्रमण-कारी पर, जो घोड़े पर सवार था, टूट पड़ा। समीप जा कर उसने घोड़ेको विदीर्ण कर उसकी हड्डीको चूर्ण चर्ण और मांसपिण्डको खण्ड खण्ड कर डाला।

महिषका मांस खानेमें उत्तम और सद्गन्धयुक्त होता है। बूढ़े महिषका मांस उतना उपादेय नहीं है जितना कि बच्चेका। इसके सींगसे तरह तरहके खिलौने और कंगही आदि काम आने लायक अनेक वस्तु बनाई जाती हैं।

२ श्मश्रुधारी म्लेच्छजातिविशेष। यह जाति पहले क्षत्रिय थी, पीछे जब सगरराजने इन्हें वेदादिमें अधिकार नहीं दिया, तब यह दूसरा वेश धारण कर म्लेच्छ हो गई है।

"सगरस्ता प्रतिज्ञाञ्च गुरोर्वाक्य निशम्य च।
धर्म जघान तेषा वै वेशान्य त्व चकार ह॥
अर्द्ध शकाना शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत्।
जवनाना शिरः सर्व काम्बोजाना तथैव च॥
पारदा मुक्तकेशश्च पह्लवाः श्मश्रुधारिणः।
निःस्वाध्यायवषट्काराः कृतास्तेन महात्मना॥
कोलिसर्पाः समहिषा दार्वाश्चोलाः सकेरलाः।
वशिष्ठवचनाद्राजन् सगरेण महात्मना॥"
(प्रायश्चित्त तत्त्व)

३ महिषासुर। इसे दुर्गादेवीने मारा था। महिषासुर देखो। ४ अर्हनका ध्वजविशेष। ५ देवगणभेद, निरुक्तके मतसे माध्यमिक देवगण। ६ कुश द्वीपस्थित पर्वत-विशेष, मार्कण्डेयपुराणानुसार कुश द्वीपके एक पर्वत-नाम। ७ कुशद्वीपका वर्षविशेष, कुशद्वीपके एक वर्षका नाक। ८ अग्निविशेष, एक अग्निका नाम। ९ कृता-भिषेक भूपाल, वह राजा जिसका अभिषेक शास्त्रानुसार किया गया हो। १० देशभेद, एक प्राचीन देशका नाम। ११ अनुह्लादका पुत्रभेद, अनुह्लादके एक पुत्रका नाम। १२ साध्याके पुत्रका नाम।

महिषक (सं० पु०) एक वर्णसंकर जातिका नाम।

महिषकन्द (सं० पु०) महिषाख्या प्रसिद्धः कन्दः। महा-कन्दविशेष, भैंसा कंद। पर्याय—शुभ्रालु, लुलापकन्द, शुककन्द, महिषीकन्द। इसका गुण—कटु, उष्ण, कफ, वातनाशक, मुखजाड्यहर, रुचिकर।

महिषघ्नी (सं० स्त्री०) महिषं महिषासुरं हन्तीति हन बाहुलकात् टक ङीष् । भगवती दुर्गा ।

"महिषघ्नी महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि ।
आयुरारोग्य विजयं देहि नमोऽस्तुते ॥" (दुर्गोत्सवपद्धति)

महिषत्व (सं० क्ली०) महिषस्य भावः त्व । महिषका भाव वा धर्म ।

महिषध्वज (सं० पु०) महिषो ध्वजश्चिह्नं वाहनत्वेन यस्य । १ यमराज । २ जैन शास्त्रानुसार एक अर्हतका नाम ।

महिषपाल (सं० पु०) महिषं पालयति पालि-अच् । महिष पालक, ग्वाला ।

महिषमत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली जो काले रंगकी होती है । इसके सेहरे बड़े बड़े होते हैं । यह बलवीर्यकारी और दीपनगुण युक्त मानी जाती है ।

महिषमर्द्दिनी (सं० स्त्री०) महिषं महिषाख्यमसुरं मृद्नातीति मृद्द णिनि-ङीप् । दुर्गा । इन महिषमर्द्दिनी देवीकी पूजा अष्टाक्षरी मन्त्र द्वारा करनी होती है ।

"भायड वियत् सनयन श्वेतो मर्द्दिनि ठद्वयम् ।
अष्टाक्षरी समाख्याता विद्या महिषमर्द्दिनी ॥" (तन्त्रसार)

तन्त्रसारमें इनकी पूजादिका विस्तृत विवरण लिखा है। इनका ध्यान—

"गारुड़ोपलसन्निभा मणिमयकुण्डलमण्डिता
नौमि भालविलोचना महिषोत्तमाङ्गनिषेदुषीम् ।
शङ्खचक्रकृपाणखेटकबाणकार्मुकशूलकान्
तर्ज्जनीमपि बिभ्रतीं निजबाहुभिः शशिशेखराम् ॥"

इसी ध्यानसे महिषमर्द्दिनीकी पूजा होती है ।

महिषमस्तक (सं० पु०) शालिधान्यविशेष, एक प्रकार का जड़हन धान ।

महिषवल्ली (सं० स्त्री०) महिषशब्द वाच्या वल्ली, शाकपार्थिवादिवत् समासः । लताविशेष, घिरेटा । संस्कृत पर्याय—सौम्या, प्रतिसोमा, अन्तवल्लिका, खण्डशाखा ।

महिषवाहन (सं० पु०) महिषः वाहनं यस्य । यमराज ।

महिषाक्ष (सं० पु०) १ भैंसा गुग्गुल । २ भगन्दर ।

महिषाक्षक (सं० पु०) गुग्गुल ।

महिषार्द्दन (सं० पु०) स्कन्दका एक नाम ।

महिषासुर (सं० पु०) महिष एव महिषाख्योवा असुर । असुरभेद, रंभासुरका लड़का ।

महिषासुरकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कालिकापुराणमें इस प्रकार लिखा है—रम्भ नामक किसी दैत्यने महादेवकी आराधना करके उन्हें प्रसन्न किया । महादेवने उसे वर मांगने कहा । इस पर अपुत्रक रम्भासुर बोला, 'देव ! मैं आपसे और कोई भी वर नहीं चाहता, सिवा इसके कि आप मेरे घर पुत्ररूपमें उत्पन्न हों और त्रिलोकमें अजेय, चिरायु, यशस्वी, श्रीमान् और सत्यप्रतिज्ञ बनें । महादेवने 'तथास्तु' कह कर इसे स्वीकार किया ।

रम्भासुर वर पा कर बहुत प्रसन्न हुआ और अपना घर लौटा । राहमें एक युवती ऋतुमती महिषी पर उसकी निगाह पड़ी । रम्भाने कामसे पीड़ित हो उसके साथ सम्भोग किया । महिषीके गर्भ रह गया । यथासमय उसी गर्भसे महिषासुरकी उत्पत्ति हुई । महिषासुर सब प्रकारके गुणोंसे सम्पन्न हो सुरासुरका राज्यभोग करने लगा । महिषासुर घोर मायावी था । एक दिन वह मनमोहिनीरूप धारण कर कात्यायन मुनिके आश्रममें गया । वहां मुनिके शिष्योंको लुभा कर उसने उनके तपमें बाधा डालनेकी कोशिश की । इस पर हिमालय-शिखरवासी मुनिवर कात्यायन बड़े बिगड़े और उसे शाप दिया कि, 'तुम स्त्रीके हाथसे मारे जाओगे ।' उसी अभिशापके फलसे वह भगवती दुर्गादेवीके हाथ मारा गया ।

महिषासुरने तीन बार जन्म लिया और तीनों ही बार देवीने तीन रूप धारण कर उसको मारा । देवीका पहला रूप उग्रचण्डा, दूसरा भद्रकाली और तीसरा रूप दुर्गा था ।

वर पा कर रम्भासुरके लड़के महिषासुरने जब देवअसुरोंके ऊपर अपना पूर्ण प्रभुत्व स्थापन किया, तब एक दिन उसने हिमालय पहाड़ पर सोतेमें एक भीषण स्वप्न इस प्रकार देखा था, 'भगवती भद्रकालीका रूप धारण कर उसका शिर काटती है और जो रक्त निकलता है उसे पी कर अपनी प्यास बुझाती है ।' नींद टूटनेके बाद वह बहुत डर गया और तभीसे भगवतीकी उपासना

करने लगा। भगवतीने प्रसन्न हो कर अपने दर्शन दिये। तब महिषासुरने प्रणाम कर उनसे कहा, 'देवि! मैंने स्वप्नमें जैसा देखा है, वह टलनेको नहीं, फिर उससे मैं क्षुब्ध भी नहीं हूं। मैं तीन मन्वन्तर काल तक निष्कण्टक सुरासुरका राज्यभोग कर चुका, भोग-सुखकी अब मुझे जरा भी लालसा नहीं है। आपसे मेरी अन्तिम प्रार्थना यही है, कि जिससे सभी यज्ञोंमें मेरी पूजा हो और मैं सर्वदा आपके चरणोंकी सेवामें निरत रहूं, यही वर मुझे दीजिये।' देवीने उत्तर दिया, 'महिषासुर! यज्ञका भाग कुछ शेष न रह गया, कुल देवताओंमें बांट दिया गया। जो कुछ हो, मैं तुम्हें अपनी पद-सेवामें निरत रखूंगा और जहां जहां मेरी पूजा होगी, वहां वहां तुम भी पूजे जाओगे।' इतना कह कर भगवतीने उग्रचण्डा, भद्रकाली और दुर्गा इन तीन मूर्त्तियोंके साथ साथ महिषासुरकी पूजाकी व्यवस्था कर दी।

वामनपुराणमें लिखा है—रम्भ और करम्भ नामक दो प्रबल पराक्रम असुर पञ्चनदके जलमें पैठ कर पुत्र-लाभकी कामनासे कठोर तपस्या कर रहे थे। इन्द्रने तपस्यासे भय खा कर कुम्भीका रूप धारण कर करम्भका विनाश किया। भ्रातृवियोग पर रम्भ बहुत दुःखित हुआ और अपना शिर काट कर अग्निमें होम करनेको उद्यत हो गया। यह देख कर अग्निने उस दारुण अध्यवसायसे उसे रोका और अभिलषित वर मांगनेको कहा। रम्भने अग्निकी बात मान ली और एक त्रिलोक्य-विजयी पुत्रके लिये प्रार्थना की। अग्निदेव 'तथास्तु' कह कर अन्तर्हित हो गये। वर पा कर रम्भ गद्गद् हो गया और अपने घर लौटा। राहमें एक युवती महिषीको देख कर वह कामपीड़ित हो गया। रम्भके संसर्गसे महिषीके गर्भ रहा। उसी गर्भसे यथासमय देवासुरविजयी मायावी महिषासुरने जन्मग्रहण किया।

(वामनपु० १७ अ०)

वराहपुराणमें लिखा है—स्वायम्भुव मन्वन्तरमें देवी वैष्णवीने मन्दर पर्वत पर दैत्य महिषासुरको मारा। पीछे वही महिषासुर पुनः चैत्रासुर नामसे उत्पन्न हुआ। देवी नन्दाने विन्ध्याचल पर उसे भी मारा, अर्थात् यों कहिये ज्ञानशक्तिके हाथसे अज्ञानमूर्त्ति महिषासुर मारा गया।

मार्कण्डेयपुराणके चण्डी-माहात्म्यमें लिखा है,—पूर्वकालमें देव और असुरोंमें सौ वर्ष तक युद्ध चलता रहा। उस दीर्घकालव्यापी युद्धमें देवताओंकी असुरोंके हाथसे अच्छी तरह हार हुई। पीछे असुराधिपति महिष स्वर्गसे देवताओंको भगा कर स्वयं इन्द्र बन गया और वहांका शासन करने लगा। अब देवगण मर्त्यलोकमें मर्त्यवासीकी तरह विचरण करने लगे। कुछ समय बाद वे ब्रह्माको आगे करके जहां हरि और हर विराज करते थे, वहीं पहुंचे। देवताओंने महिषासुरकी अत्याचार-कहानी उन्हें आद्योपान्त कह सुनाई। महिषासुरने अपने बाहुबलसे इन्द्र, यम, कुबेर, वरुण और अग्नि आदि देवताओंकी अधिकारभूमि छीन ली है, सुन कर तथा देवताओंको शरणापन्न देख कर हरि और हर दोनों ही आगबबूले हो गये। उन्होंने सभी देवताओंके शरीरसे सुमहत् तेज निकाल कर उसे एकत्र किया। अब उस तेजपुञ्जसे एक अद्भुत नारीमूर्त्तिका आविर्भाव हुआ। उस हजार भुजावाली भीषण, फिर भी प्रशान्ताकृति देवीमूर्त्तिको देख कर देवताओंने उन्हें अपने आयुधादि दे कर सम्मानित किया। इस समय देवी खिलखिला कर हंस उठीं। हंसीके शब्दसे जल, स्थल, शैल, कानन और वसुन्धरा कांप उठी। देवताओंके आशाका संचार हुआ। वे सबके सब भक्तिपूर्वक सिंहवाहिनीकी स्तुति करने लगे।

उधर महिषासुरने भी घोर गर्जन किया। वह दलबल के साथ विपुलविक्रमसे विविध आयुधोंके साथ युद्धार्थ देवीके सामने खड़ा हो गया। फिर क्या था, दोनोंमें घोर संग्राम चलने लगा। बहुत देर तक विविध युद्धके बाद संहारिणी देवीके हाथसे चारुकल, असिलोमा और बिड़ालाक्ष आदि महिषासुरके सेनापतियों द्वारा परिचालित सैन्यदल मारा गया। देवगण बड़े प्रसन्न हुए। आकाशसे पुष्पवृष्टि होने लगी। अनन्तर सैन्यदल और सेनापतियोंमेंसे एक एकको देवीके हाथसे निहत और निगृहीत होते देख चिक्षुर और चामर आदि महिषासुरके प्रधान प्रधान सेनापति देवीके साथ लड़ने लगे। इस बार उनके घोड़े, हाथी, रथ, शकट और अन्यान्य युद्धोपकरण

विध्वस्त किये गये। अन्तमें महिषासुरने स्वयं विपुल-वीर्य्यको आश्रय कर नाना मायावी मूर्त्तिसे भीषण लोम-हर्षण युद्ध आरम्भ कर दिया। कोपारुणनयना देवी चण्डिकाने महिषासुरके दौरात्म्यसे तंग तंग आ कर खड्गसे उसका शिर काट लिया। दुर्वृत्त महिषासुरके मारे जाने पर असुरोंकी सेनामें कुहराम मच गया। देव गण बड़े प्रसन्न हुए। सबोंने मिल कर चण्डिकाकी पूजा की।

महिषासुरसम्भव (सं० पु०) भूमिज गुग्गुलु, जमीनसे उत्पन्न गुग्गुल।

महिषासुरहन्त्री (सं० स्त्री०) दुर्गा।

महिषी (सं० स्त्री०) महिषस्य कृताभिषेकस्य नृपस्य पत्नी (पुंयोगाख्यायां। पा ४।१।४८) इति ङीष्। कृता-भिषेका राजपत्नी, पटरानी। जिस पत्नीके साथ राजा अभिषिक्त होते हैं उसीको महिषी कहते हैं। राजाकी पत्नीमात्र ही महिषी नहीं कहला सकती।

"इत्थं व्रतं धारयतः प्रजार्थं सम महिष्या महनीयकीर्त्तेः।
सप्त व्यतीयुस्त्रिगुणानि तस्य दीनानि दीनोद्धरणोचितस्य॥"
(रघु २।२५)

२ सैरिन्ध्री। ३ औषधिभेद। ४ महिषपत्नी, भैंस। पर्याय—मन्दगमना, महाक्षीरा, पयस्विनी, लुलापकान्ता, कलुषा, तुरङ्गद्विषणी। इसके दूधका गुण मधुर, पीनेमें ढंढा, गुरु, बल और पुष्टिप्रद, वृष्य, पित्त, दाह और अस्रनाशक; दधिका गुण मधुर, स्निग्ध, श्लेष्म-कारक, रक्तपित्तनाशक, बल और अस्रवर्द्धक, बलकर, श्रमघ्न; मक्खनका गुण—कषाय, मधुररस, शीतल, बल-कर, पित्तघ्न, स्थौल्यकारक; घीका गुण धृतिकर, सुखद, कान्तिवर्द्धक, वातश्लेष्मनाशक, बलकर, वर्णवर्द्धक, ग्रहणीविकारनाशक, मन्दानलोद्दीपक, चक्षुका दीप्ति-वर्द्धक तथा मनोहारक। इसके मूत्रका गुण आनाह शोफ, गुल्मदोषनाशक, कटु, उष्ण, कुष्ठ, कण्डूति, शूल और उदररोगनाशक माना गया है। (राजनि०)

महिषीकन्द (सं० पु०) एक प्रकारका कन्द जिसे भैंसाकंद भी कहते हैं।

महिषीघृत (सं० क्ली०) महिषी दुग्धोत्थ घृत, भैंसका घी। गुण—वायु और पित्तनाशक, शीतल, मधुर, गुरु, विष्टम्भी, बलकर।

महिषीतक्र (सं० क्ली०) भैंसके दूधका मट्ठा। गुण—कफवर्द्धक, कुछ गाढा तथा प्लीहा, अर्श, ग्रहणीदोष और अतीसारमें लाभदायक।

महिषीदधि (सं० क्ली०) भैंसका दही। गुण—मधुर, रक्तदोषकर, कफ तथा शोफहर, पित्त और वातवर्द्धक।

महिषीदान (सं० क्ली०) महिष-बलिदानरूप प्रक्रिया-भेद।

महिषीदुग्ध (सं० क्ली०) भैंसका दूध। गुण—स्निग्ध, वायु, शीतकर, तन्द्रा और निद्राकर, वृष्यतम, श्रमघ्न, बल-प्रद और पुष्टिकर।

महिषीपाल (सं० पु०) महिषीपालनकारी, भैंसको पोसने वाला ग्वाला।

महिषीप्रिया (सं० स्त्री०) महिषीणा प्रिया। शूलीतृण, शूली नामक घास।

महिषीभाव (सं० पु०) महिष्याभावः। महिषीका भाव।

महिषिमूत्र (सं० क्ली०) भैंसका मूत। गुण—तिक्त, कटु, कषाय, भेदक, वातनाशक, पित्तवर्द्धक, कुष्ठ, अर्श, पाण्डु, उदररोग और शूलनाशक।

महिषेश (सं० पु०) १ महिषासुर। २ यमराज।

महिषोत्सर्ग (सं० पु०) एक प्रकारका यज्ञ।

महिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशय महान्, बहुत बड़ा।

महिष्मत (सं० त्रि०) १ महिषयुक्त, जिसे भैंस हों। (पु०) २ एक राजा।

महिष्मती (सं० स्त्री०) अंगिराकी लड़की।

महिष्वनि (सं० त्रि०) प्रभूत धनशाली, बड़ा धनवान्।

महिष्वत (सं० त्रि०) १ महनीय, पूजन करने योग्य। २ महोत्सव-युक्त।

महिसुर—दक्षिणभारतके अन्तर्गत एक प्राचीन हिन्दू-राज्य और जिला। विशेष विवरण मैसुर शब्दमें देखो।

मही (सं० स्त्री०) मह्यते इति-मह-अच् (गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१) इति ङीष् यद्वा महि-कृदिकारादिति ङीष्। १ पृथ्वी। २ नदीविशेष। यह नदी मालवामें बहती है। इसके जलका गुण सुस्वादु, बलकर, पित्तहर और गुरु माना जाता है। (राजनि०) २ गाभी, गाय। ३ हिलमोचिका, हुरहुर। ४ लोक। ५ मिट्टी ६ अव-काश, स्थान। ७ झुण्ड, समूह। ८ क्षेत्रका

आधार। ६ एककी संख्या। १० सेना। ११ एक छन्दका नाम। इसमें एक लघु और एक गुरु मात्रा होती है। जैसे—मही, लगी, नदी इत्यादि।

मही (हि० पु०) मट्ठा, छाछ।

मही—मान्द्राज प्रदेशके मलवार जिलान्तर्गत फरासियों-का एकमात्र उपनिवेश। माही देखो।

महीकदम्ब (सं० पु०) भूकदम्ब।

महीकम्प (सं० पु०) भूमिकम्प, भूडोल।

महीकान्त—बम्बई-गवर्मेण्टके पालिटिकल एजेन्सी द्वारा परिचालित कुछ देशीय सामन्त राज्य। यह अक्षा० २३° १४' से १४' २८' उ० तथा देशा० ७२° ४०' से ७४° ५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३१२५ वर्गमील है। इसके उत्तरमें उदयपुर और डूंगरपुर नामक राजपूत राज्य, दक्षिण-पूर्वमें रेवाकान्त, दक्षिणमें अंगरेजाधिकृत खैरा जिला और पश्चिममें बड़ोदाराज्य, अहमदाबाद जिला और पाहलनपुर एजेन्सी है।

इन सामन्तराज्योंके सरदार विभिन्न मर्यादापन्न हैं। १८७७ ई०में उन लोगोंका अधिकार निरूपण कर यह सात भागोंमें बांटा गया। उस विभागानुसार इदरके राजा ही प्रथम श्रेणीभुक्त हुए हैं। ये स्वराज्यके दण्डमुण्ड-के विधाता हैं। केवल अंगरेजी प्रजाके विचारके समय पालिटिकल एजेण्टको अनुमति लेनी पड़ती है। द्वितीय श्रेणीके सरदार करीब २० हजार रुपये दीवानी और सभी प्रकारके फौजदारी मुकदमे फैसला करते हैं। प्राण दण्डका आदेश सिर्फ पालिटिकल एजेण्ट दे सकते हैं। ३य श्रेणीके सरदारको ५ हजार रुपये दीवानी, २ महीनेकी कैद और १००० रु० जुरमाना तथा फौजदारी मुकदमेका विचार करनेका अधिकार है। किन्तु अंगरेजी प्रजाके मुक-दमे अथवा प्राणदण्डमें पालिटिकल एजेण्टकी सलाह लेनी पड़ती है। ४र्थ श्रेणीके सरदारोंको राज्यशासनका कम अधिकार दिया गया है। उक्त सात श्रेणियोंकी तालिका नीचे दी गई है।

१म श्रेणीमें—इदर।

२य—पोल और दण्डा।

३य—मालपुर, मनसा, मोहनपुर।

४र्थ—वर्जोरा, पिठापुर, रणासन, पुणाद्रा, खराल, घोड़ासर, कतोसन, इलोल और अमलैरा।

५म—वलासना, दामा, वासना, सुदेष्णा, रूपाल, दधाल्य, मगोरी, वड़गांव और सतम्बा।

६ष्ठ—रमांस, देरोल, खेरावाड़ा, करोली, रूकापुर, प्रेमपुर, देभ्रोजा, ताजपुरी, हापा, सातलासना, भालुष्णा, लिखि और इरोल।

७म—मगुना, वोलेन्द्रा, तेजपुर, विश्रोरा, पालेज, देहलोली, कससलपुरा, महादपुरा, इजपुरा, रामपुरा, रानीपुरा, गावट, निम्बा, उब्रि, मोतकोरर्णा।

इन सामन्त राज्योंका प्राकृतिक सौन्दर्य विभिन्न स्थानमें विभिन्न प्रकारका है। उत्तर और पूर्वमें वन-परिवेष्टित पर्वतशृङ्ग है। इससे वहां अपूर्व शोभा दिखाई देती है। दक्षिण और पश्चिम-भूभाग समतल उर्वर क्षेत्रसे परिपूर्ण है, कहीं कहीं घना जंगल भी दिखाई देता है।

यहांकी मिट्टी वलुई है सही, पर उपजाऊ है। कहीं कहीं उर्वर कृष्णवर्णके खेत भी दिखाई देते हैं। यह प्रदेश उत्तर-पूर्वसे दक्षिण-पश्चिमकी ओर ढालू चला गया है। सरस्वती, शावरमती, हातमती, खारी, मेखवा, माजम, वायक आदि बहुत-सी छोटी छोटी नदियां इस भूभागमें बहती हैं। अलावा इसके रानी तालाव, कर्माबापी तालाव, वावसूर तालाव आदि पुष्करियां और कुएं अधिवासियोंके जलकष्ट दूर करते हैं। शेषोक्त तालावका परिमाण ६०७ बीघा है।

इसमें १७२३ ग्राम और ६ शहर लगते हैं। जनसंख्या चार लाखके करीब है। भील और कोलि नामक जाति ही यहांके आदिम अधिवासी हैं। मुसलमानोंके आक्र-मणसे उत्पीड़ित हो कर सिन्धुवासी राजपूत लोग अपनी वासभूमिको छोड़, इस प्रदेशमें आये और जंगली अधिवासियोंको परास्त कर वहीं बस गये।

१५वीं शताब्दीमें यह प्रदेश अहमदाबाद-राजवंशके अधिकारमें था। उक्त राजवंशके अधःपतनके बाद मुगल-बादशाहने अपना अधिकार फैलाया। किन्तु देश-का शासनकार्य देशी राजों पर ही सौंपा था। वे लोग सेना भेज कर बीच बीचमें कर उगाह लाते थे। १८११ ई०-में महाराष्ट्रशक्तिका अवसान देख कर अंगरेज-राज यहांसे राजकर वसूल करके गायकवाड़ राजाको देते थे।

१८२० ई०में अंगरेजोंने इस राज्यका शासनभार अपने हाथ लिया। इस समय बड़ोदाराजके साथ अंगरेजोंको एक सन्धि हुई जिसमें शर्त्त यह थी, कि अंगरेजराज अपने खर्चासे यहांका कर वसूल करके बड़ोदाराजको देंगे, किन्तु बड़ोदराज इस प्रदेशमें सेना नहीं भेज सकते और न शासन-कार्यमें हस्तक्षेप ही कर सकते हैं। अंगरेजी अमलदारीके बाद भी यहां १८३३-३६ और १८५७-५८ ई०में दो बार विद्रोह खड़ा हुआ। शेषोक्त विप्लवमें वरिङ्गा शैल पर एक छोटी लड़ाई हुई। इस लड़ाईमें अङ्गरेजी सेनाने मोन्देहो नगरको जीता। १८६७ ई०में पोसिनामें भी एक विद्रोह खड़ा हुआ। १८८१ ई०में पोलवासी भीलों ने सरदारोंके विरुद्ध खड़े हो कर अपने अधिकारकी घोषणा कर दी।

उपरोक्त सीमान्तवर्त्ती भीलों और राजपूतोंकी वृथा खूनखराबी और वाद विवाद निबटानेके लिये सर जेम्स आउटरामने १८३८ ई०में यहां एक पंचायत बैठाई। इस प्रकार सामान्तदेशकी विद्वेष-वह्नि सदाके लिये बुझ गई। जो सब दोषी ठहराये गये उन्हें क्षतिपूरणस्वरूप कुछ रकम देनी पड़ी। १८७३ ई०में इस नियमका अनेक बार संस्कार हुआ। इस समय एक अंगरेज-सेनापति पंचायतविचार-सभाके सभापति तथा दूसरे दो व्यक्ति सदस्य हो कर विचारकार्यमें सहायता करते थे। भील-को छोड़ कर और सभी दोषी व्यक्तियोंको दण्ड देनेकी व्यवस्था १८७८ ई०में सारे महीकान्त राज्यमें जारी हुई। तभीसे भील और कोलके सिवा और कोई भी व्यक्ति यहां अपने इच्छानुसार महुएसे शराब नहीं बना सकता।

यहां विभिन्न श्रेणीके अधिवासियोंमें भीलगण ही दुर्द्धर्ष हैं। इन लोगोंमें कन्या अपहरण कर विवाद करने-की रिवाज है। किन्तु कन्या-हरणकालमें यदि कोई उसे देख या पकड़ ले, तो कन्याका पिता उसे अच्छी तरह दण्ड देता है। ये लोग स्वजातिको विपद्‌में देख कर चुपचाप बैठ नहीं रहते, जीजानसे उसके उद्धारकी कोशिश करते हैं।

इस भील सम्प्रदायमें अधिकांश भगत् या भागवत कहलाता है। ये लोग भील सरदारके खेराड़ी मुरमलके शिष्य और रामोपासक हैं। उच्चश्रेणीके हिन्दूकी तरह ये लोग सदाचारी हैं। मास मछली नहीं खाते, कपाल पर सिन्दूरका तिलक लगाते और शिर पर पीतवर्णकी पगड़ी बांधते हैं। जंगली भीलोंने एक समय इस निरीह सम्प्रदायको समाजच्युत करके बहुत सताया था। आखिर अंगरेजोंने बीचमें पड़ कर मेल करा दिया।

राज्यकी आय कुल मिला कर ११॥ लाख रु० है। जिसमें १ लाख रुपया गायकवाड़को तथा आध लाख अन्यान्य राजोंको करमें देना पड़ता है। यहां स्काट कालेज नामक एक तालुकदारी स्कूल है। इस स्कूलमें सिर्फ राजे महराजेके लड़के पढ़ते हैं। अलावा इसके राजकुमार नामक एक और भी कालेज है, जिसमें सभी श्रेणीके लड़के पढ़ते हैं। कुल मिला कर स्कूलकी संख्या ११७ है।

महीक्षित् (सं० पु०) मह्यां क्षयते इष्टे क्षि-क्विप्, तुक् च। राजा, पृथिवी-पति।

महीखड़ी (हिं० स्त्री०) सिकलीगरोंका एक औजार। इसकी धार कुन्द होती है और इसमें लकड़ीका दस्ता लगा रहता है। इससे बरतन आदि खुरच कर साफ किये जाते हैं और उन पर जिला की जाती है।

महीगञ्ज—रङ्गपुर जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २५° ४३′ ३०″ उ० तथा देशा० ८९° २०′ पू० रङ्गपुर नगरके किनारे अवस्थित है। पहले यह स्थान पाट और नाना द्रव्योंका वाणिज्य केन्द्र था; किन्तु नवावगञ्ज बाजारमें नाना द्रव्योंकी आमदनी और रफ्तनी होनेके कारण यहांके वाणिज्यमें भारी धक्का पहुंचा है।

महीचंचल—सिंहपुराधिप राजा दिवाकरवर्मकी एक पदवी।

महीचन्द्र (सं० पु०) कन्नौजके एक राजा।

महीचर (सं० त्रि०) चरतीति चर अच्, मह्यां चरः। पृथिवीचारी, पृथ्वी पर विचरण करनेवाला।

महीचारी (सं० त्रि०) १ पृथ्वी पर चलनेवाला। (पु०) २ महादेव।

महीज (सं० पु०) मह्यां जायते इति जन-ड। १ आर्द्रक, अदरक। २ मंगलग्रह।

"खौ रसाब्धी सितगौ हयाब्धी द्वयं महीजे विधुने शराष्टौ।
गुरौ शराष्टौ भृगुजे तृतीयं शनौ रसाद्यन्तमिति क्रमायाम्॥"
(समयप्रदीप)

(क्रि०) ३ भूमिजातमात्र।

महीतट (सं० क्ली०) जनपदभेद।

महीतपत्तन (सं० क्ली०) स्थानभेद, एक नगरका नाम।

महीतल (सं० क्ली०) मह्याः तलम्। भूतल, पृथ्वी।

महीदत्त—वालविवेक नामक ज्योतिर्ग्रन्थके रचयिता।

महीदास—१ भाष्यकार महीधरका एक नाम। २ चरण-व्यूहभाष्यके प्रणेता। ३ ताजकमणि, मणित्थ, वर्षफल पद्धति और लीलावती टीकाके रचयिता। इन्होंने १५८७ ई०में लीलावती टीकाकी रचना की थी।

महीदासभट्ट (सं० पु०) भाष्यकार महीधरका नामान्तर।

महीदेव (सं० पु०) १ सूर्यवंशीय एक राजा। इनकी राजधानी पुष्पपुरमें थी। २ ब्राह्मण।

महीधर (सं० पु०) १ विष्णु। २ पर्वत। ३ शेषनाग। ४ बौद्धोंके अनुसार एक देवपुत्रका नाम। ५ एक वर्णिक वृत्तका नाम जिसमें चौदह बार क्रमसे लघु और गुरु आते हैं।

महीधर—१ एक प्राचीन कवि। २ बृहज्जातक-विवरणके प्रणेता। ३ मगधवासी एक प्राचीन कवि। ये राजा वर्णमान और रुद्रमानके समय १०५६ शकमें मौजूद थे। ४ विख्यात दीपिकाकार। इन्होंने वाजसनेय-संहिताके 'वेददीप' नामक भाष्यकी रचना कर अच्छी प्रसिद्धि पाई। ये रत्नाकरके पौत्र तथा रामभक्तके पुत्र थे। वाराणसी-धाममें रह कर इन्होंने केशवमिश्रके पुत्र रत्नेश्वर मिश्रसे विद्याशिक्षा प्राप्त की। इन्होंने अद्भुतविवेक, ईशावास्योपनिषद्भाष्य, एकाक्षरकोष, कात्यायनगृह्यसूत्रभाष्य, कात्यायन शुल्वसूत्रभाष्य, नृसिंहपटल, पुरुषसूक्तकी टीका, मातृकाक्षरनिघंटु या मातृकानिघंटु, योगवाशिष्ठसारविवृति, रामगीताकी टीका, रुद्रजपभाष्य, षडङ्गरुद्रभाष्य, सारस्वत-प्रक्रियाकी टीका और सौत्रामणिविनियोगसूत्रार्थ नामक बहुत-से ग्रन्थ बनाये। इसके अलावा इन्होंने १५६७ और १५८९ ई०में क्रमशः विष्णुभक्ति कल्पलता-प्रकाश तथा मन्त्रमहोदधि और नौका नामकी टीका लिखी। ५ सह्याद्रिखण्ड-वर्णित एक राजा।

महीध्र (सं० पु०) महीं धरतीति धृ-क। १ पर्वत। २ पृथ्वीके उद्धारकर्त्ता।

महीध्रक (सं० पु०) १ एक राजाका नाम। २ महीध्र, महीधर।

महीन (हिं० वि०) १ जिसकी मोटाई या घेरा बहुत ही कम हो। २ जिसके दोनों ओरके तलोंके बीच बहुत कम अन्तर हो, बारीक। ३ जो बहुत कम ऊंचा या तेज हो, धीमा।

महीन (सं० पु०) राजा, महीपति।

महीनगर—महीनदी-तीरस्थ एक प्राचीन नगर।

महीना (हिं० पु०) कालका एक परिमाण जो वर्षके बारहवें अंशके बराबर होता है। मास देखो।

महीनाथ (सं० पु०) मह्याः नाथः। पृथिवीपति, राजा।

महीप (सं० पु०) मही पाति पा-क। १ पृथिवीपति, राजा। २ एक अभिधानिक।

महीप—१ सोमपके पुत्र, एक ग्रन्थकर्त्ता। इन्होंने अनेकार्थ तिलक वा नानार्थरत्नतिलक और शब्दरत्नाकर नामक दो ग्रन्थ बनाये। वासवदत्तामें शिवरामने इनका नामोल्लेख किया है। २ बघेलवंशीय एक राजा।

महीपनारायण—१ वाराणसीके एक राजा। १७८१ ई०की १४वीं सितम्बरको वृटिश सरकारने उन्हें एक सनद दी थी।

महीपतन (सं० क्ली०) मह्याः पतनं। साष्टाङ्ग-प्रणिपात, झुक कर प्रणाम करना।

महीपति (सं० पु०) मह्याः पतिः। पृथ्वीपति, राजा।

महीपति—१ पञ्चसायकके रचयिता। २ वनथलीके चूडासमावंशीय एक सामन्तराज।

महीपति उपाध्याय—एक प्राचीन कवि। कवीन्द्र चन्द्रोदय में इनका नामोल्लेख है।

महीपतिमण्डलिक—एक प्राचीन कवि।

महीपद (सं० पु०) किञ्चुलुक, केंचुआ।

महीपाल (सं० पु०) महीं पालयतीति पालि-अण्। १ राजा।

"नीरकश्च महीपाल। रक्तवीजो महासुरः॥"

(मार्क०पु० ८८।६१)

२ एक राजाका नाम।

महीपाल—१ पालवंशीय एक गौड़ाधिपति। पालराजवंश देखो। २ सह्याद्रिखण्ड-वर्णित दो राजे। ३ राजपूतानेका

एक सामन्तराज। ४ चूड़ासमा वंशीय दो नरपति। ५ कच्छपघातवंशीय एक राजा। ६ एक कम्बोजाधिपति। ये १७७३ ई०में विद्यमान थे।

महीपालदेव—एक हिन्दू राजा। फतेपुर जिलेके अग्नि नगरकी शिलालिपिसे जाना जाता है, कि ६७४ सम्वत्‌में ये राज्य करते थे।

महीपालपुर—प्राचीन दिल्लीके उत्तर पश्चिममें स्थित एक विख्यात बड़ा ग्राम। यह कुतुब-मसजिद्‌से दो कोस दूर पड़ता है। यहां सुलतान घाजी, सुलतान रुक्न उद्दीन फिरोज और सुलतान मूयाज उद्दीन वहराम का समाधि-मन्दिर विद्यमान है। सम्राट् फिरोज शाह अपने फतूहत इ फिरोजशाही नामक ग्रन्थमें इसके पासके मलिकपुर ग्रामका उल्लेख कर गये हैं। मलिकपुरके जन शून्य होनेसे ही इस गांवकी श्रीवृद्धि हुई।

महीपुत्र (सं० पु०) मह्याः पुत्रः। मंगलग्रह।

महीपुर—दिनाजपुर जिलान्तर्गत एक नगर। यह राजा मही पाल द्वारा बसाया गया है इसलिये इतना प्रसिद्ध है।

महीप्रकम्प (सं० पु०) मह्याः प्रकम्पः। भूमिकम्प, भू-डोल।

महीप्ररोह (सं० पु०) वृक्ष, पेड़।

महीप्राचीर (सं० क्ली०) मह्याः प्राचीरमिव, सर्वदिक्षु स्थितत्वात् तथात्वं। समुद्र।

महीप्रावर (सं० पु०) समुद्र।

महीभट्ट (सं० पु०) एक वैयाकरण।

महीभर्त्तृ (सं० पु०) मह्या भर्त्ता। १ राजा। २ विष्णु।

महीभार (सं० पु०) मह्या भारः। भू भार, पृथ्वीका बोझ।

महीभुक् (सं० पु०) राजा।

महीभुज् (सं० पु०) मही भुनक्ति भुज्-क्विप्। राजा।

महीभुजि कृतिन्—यजुमञ्जरी नामक तन्त्रग्रन्थके प्रणेता।

महीभृत् (सं० पु०) महीं बिभर्त्ति धरतीति भृ-क्विप्। (ह्रस्वस्य पितिकृति तुक। पा ६।१।७१) इति तुगागमश्च। १ पर्वत, पहाड़। २ राजा।

महीमघवन् (सं० पु०) मह्या मघवा। पृथ्वीका इन्द्र, पृथ्वीका राजा।

महीमण्डल (सं० क्ली०) मह्या मण्डलं। पृथ्वी, भूमंडल।

महीमण्डल—मद्रास प्रदेशके उत्तर आरकट जिलेके चित्तुर तालुकके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यहां पहाड़की चोटी पर एक दुर्ग है। जनसाधारणका विश्वास है, कि मरहठोंने यह दुर्ग बनवाया था। मुसलमानोंने मराठोंके हाथसे यह दुर्ग ले लिया। पर्वतके ऊपर एक प्राचीन देव मन्दिर भी देखा जाता है।

महीम (हिं० पु०) एक प्रकारका गन्ना। यह पीलापन लिए हरे रंगका होता है। इसे पूनेका पौंढ़ा भी कहते हैं।

महीमय (सं० त्रि०) मह्या विकारो ह्वयवो वेति मही-मयट्। मृत्तिका निर्मित, मिट्टीका बना हुआ।

"तौ तस्मिन पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्त्तिं महीमयीम्।
अर्हनाञ्च क्रतुस्तस्याः पुष्पधूपाग्नितर्पणैः॥"

(मार्क०पु० ९३७)

महीमहेन्द्र (सं० पु०) मह्याः महेन्द्रः। पृथ्वीका राजा, महीपति।

महीमूढ़—गुर्जराधिपति मह्लाद विकाड़ाका शिलाफलक पर लिखा हुआ नाम।

महीमृग (सं० पु०) मृगभेद।

महीयस् (सं० त्रि०) मह-ईयसुन्। अत्यन्त महत्, बहुत बड़ा।

महीयत्व (सं० क्ली०) महीय त्व। श्रेष्ठत्व, श्रेष्ठता।

महीया (सं० स्त्री०) सुख, आनन्द।

महीयाल—गाहड़वालवंशीय एक राजा।

महीयु (सं० त्रि०) सुखी।

महीर (हिं० स्त्री०) १ वह तलछट जो मक्खन तपानेसे नीचे बैठ जाती है। २ मट्ठेमें पकाया हुआ चावल, मट्ठे-की खीर।

महीर—मिरजा महम्मद अलीका एक नाम। इनका वास-स्थान आगरा था। इनके पिता हिन्दू थे और मीर-जाफर मुमाइकी सभामें श्लेषवक्ताका काम करते थे। मीरजाफरके कोई सन्तान न थी इसलिये उन्होंने महीर-को मुसलमान धर्ममें दीक्षित कर पोष्यपुत्र बनाया था।

महीरने मीरजाफर द्वारा सुशिक्षित हो अनेक प्रकारकी ग्रन्थ-रचनासे 'महीर' की खिताब पाई। सम्राट् औरङ्गजेबका गुणकीर्त्तन कर उनके राज्याभिषेकके समय इन्होंने "गुल-आइ-औरङ्ग" ग्रन्थकी रचना की।

महीरजस (सं० क्ली०) मह्याः रजः। पृथ्वीकी रेणु, धूल।

महीरण (स० पु०) पुराणानुसार धर्मके एक पुत्रका नाम। यह-विश्वदेवके अन्तर्भुक्त हैं।

महीरत (सं० पु०) एक राजा।

महीरन्ध्र (सं० क्ली०) मह्या रन्ध्रं। भूगर्त्त, गड्ढा।

महीरावण—अद्भुत रामायणके अनुसार रावणके एक पुत्रका नाम। महिरावण देखो।

महीरुह (सं० पु०) मह्यां रोहति जायते इति रुह क। वृक्ष, पेड़।

महीलता (सं० स्त्री०) मह्या लतेव। किंचुलुक, केंचुआ।

महीला (सं० स्त्री०) महिला, स्त्री।

महीश—एक प्राचीन हिन्दू राजा।

महीशासक (सं० पु०) मह्या शासकः। पृथ्वी-पति, राजा।

महीशासक—हीनयान-मतावलम्बी बौद्धसम्प्रदायभेद। यह सर्वास्तिवाद या वैभाषिक मतकी पांच शाखाके अन्तर्भुक्त है।

महीश्वर (सं० पु०) मह्या ईश्वरः। पृथ्वीपति, राजा।

महीसन्तोष—एक प्राचीन गण्डग्राम।

महीसुत (सं० पु०) मह्याः सुतः। मंगलग्रह, पृथ्वी-का पुत्र।

महीसुर (सं० पु०) मह्याः सुरो देवता इव। १ भू-देवता, ब्राह्मण। २ राज्यविशेष, महिसुरराज्य।

महिसुर देखो।

महीसूनु (सं० पु०) मह्याः सूनुः पुत्रः। मङ्गलग्रह।

महुअर (हिं० स्त्री०) १ वह भेड़ जिसका ऊन कालापन लिए लाल रंगका होता है। २ महुआ मिला कर पकाई हुई रोटी।

(पु०) ३ एक प्रकारका बाजा। इसे तुमड़ी वा तूंबी भी कहते हैं। यह कड़वी पतली तूंबीका होता है जिसमें दोनों ओर दो नालिया लगी होती हैं। एक ओरकी नलीको मुंहमें लगा कर और दूसरी ओरकी नलीके छेद पर उंगलियां रख कर इसे बजाते हैं। प्रायः मदारी लोग सांपोंको मस्त करनेके लिये इसे बजाते हैं। ४ एक प्रकारका इन्द्रजालका खेल जो महुअर बजा कर किया जाता है। इसमें दो प्रतिद्वन्द्वी खेलाड़ी होते हैं जिनमेंसे प्रत्येक महुअर बजा कर दूसरेको मूर्छित अथवा चलने फिरनेमें असमर्थ करनेका प्रयत्न करता है।

महुअरि (हिं० स्त्री) महुप देखो।

महुअरी (हिं० स्त्री०) वह रोटी जो आटेमें महुआ मिला कर बनाई जाती है।

महुआ (हिं० पु०) स्वनाम प्रसिद्ध वृक्षभेद, भारतवर्षके सभी भागोंमें होनेवाला एक प्रकारका वृक्ष। संस्कृत पर्याय—मधूक, मधुष्ठील मधुस्रवा, मधुपुष्प, रोध्रपुष्प, माधव, वानप्रस्थ, मध्वग, तीक्ष्णसार, महाद्रुम।

यह पेड़ पहाड़ों पर तीन हजार फुटकी ऊँचाई तक पाया जाता है। हिमालयकी तराई तथा पंजाबके सिवा सारे उत्तरीय भारत तथा दक्षिणमें इसके जंगल पाये जाते हैं। उन जंगलोंमें यह स्वच्छंदरूपसे उगता है। पर पंजाब-में यह सिवाय बागोंके, जहां लोग इसे लगाते हैं और कहीं भी नहीं पाया जाता। यह पेड़ तीस चालीस हाथ ऊंचा और सब प्रकारकी भूमि पर होता है। इसकी पत्तियां पांच सात अंगुल चौड़ी, दश बारह अंगुल लम्बी और दोनों ओर नुकीली होती है। पत्तियोंका ऊपरी भाग हलके हरे रंगका और पीठ भूरे रंगकी होती है। इसका पेड़ ऊंचा और छतनार होता है और डालियां चारों ओर फैलती हैं। इसके फूल, फल, बीज और लकड़ी सभी चीजें काममें आती हैं। पेड़ बीस पचीस वर्षमें फूलने और फलने लगता है और सैकड़ों वर्ष तक फूलता-फलता है। इसकी पत्तियां फूलनेके पहले फाल्गुन चैत-में झड़ जाती हैं। पत्तियोंके झड़ने पर इसकी डालियोंके गुच्छे निकलने लगते हैं जो कूंचीके आकारके होते हैं। इसे महुएका कुचियाना कहते हैं। कलियां बढ़ती जाती हैं और उनके खिलने पर कोशके आकारका उजला फूल निकलता है। यह फूल गुदारा और दोनों ओर खुला हुआ होता है तथा इसके भीतर जीरे होते हैं। यही फूल खानेके काममें आता है और महुआ कहलाता है। महुएका फूल बीस बाईस दिन तक लगातार टपकता है। महुएके फूलमें चीनीका प्रायः आधा अंश होता है, इसीसे पशु-पक्षी और मनुष्य सभी प्राणी इसे बड़े चावसे खाते हैं। इसके रसमें विशेषता यह है कि उसमें

रोटियां पूरीकी तरह पकाई जा सकती हैं। यह हरे और सूखे दोनों हालतमें प्रयोग किया जाता है। हरे महुएके फूलको कुचल कर रस निकाल कर पूरियां पकाई जाती हैं और पीस कर उसे आटेमें मिला कर रोटियां बनाई जाती हैं जिन्हें 'महुअरी' कहते हैं। सूखे महुएको भून कर उसमें पियार, पोस्तके दाने आदि मिला कर कूटे जाते हैं। इस तरह जो तय्यार किया जाता है उसे लाटा कहते हैं। इसे भिगो कर और पीस कर आटेमें मिला कर 'महुअरी' बनाई जाती है। हरे और सूखे महुएको लोग भून कर भी खाते हैं, गरीबों-के लिये यह बड़े कामका होता है। गौओं, भैसोंके मोटी होने और अधिक दूध देनेके लिये यह खिलाया जाता है। इससे शराब खींची जाती है। महुएकी शराबको संस्कृतमें 'माध्वी' और आज कलके गंवार 'ठर्रा' कहते हैं। महुएका फूल बहुत दिनों तक रहता है और बिगड़ता नहीं। इसका फल परवलके आकारका होता है जो कलेंदी कहलाता है। इसके बीचमें एक बीज होता है जिससे तेल निकलता है। वैद्यकके मतसे महुएके फूलको मधुर, शीतल, धातुवर्द्धक तथा दाह, पित्त और वातनाशक, हृदयको हितकर तथा भारी लिखा है। इसके फलका गुण शीतल, शुक्रजनक, धातु, बलवर्द्धक, वात, पित्त, तृषा, दाह, श्वास, क्षयी, छालका गुण रक्त पित्तनाशक, व्रणशोधक और इसके तेलका गुण कफ, पित्त और दाहनाशक माना गया है।

महुआ दही (हिं० पु०) वह दही जिसमेंसे मथ कर मक्खन निकाल लिया गया हो, मखनिया दही।

महुआरी (हिं० स्त्री०) महुएका जङ्गल।

महुदी—हजारीबाग जिलेके कर्णपुर परगनान्तर्गत एक शैल। यह हजारीबाग अधित्यकासे आठ मील दक्षिण समुद्रपीठसे १४३७ फीट ऊंचा है। यहां चायके बड़े बड़े बगीचे हैं।

महुध—बम्बईप्रदेशके खेरा जिलेके नरियाद उपविभागान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २२° ४८′ ३०″ उ० तथा देशा० ७३° १′ पू०के मध्य अवस्थित है। प्रवाद है, कि प्रायः दो हजार वर्ष पहले मान्धाता नामक एक हिन्दू राजाने यह नगर बसाया था।

महुया (हिं० पु०) स्वनामख्यात वृक्षभेद। महुआ देखो।

महुयागढ़ी—सन्थाल परगनेके दुमका उपविभागके अन्तर्गत एक गिरिशृङ्ग। यहांकी अधित्यका-भूमि स्वास्थ्यकर है। यहां जो जङ्गल है, वह वृटिश-सरकारके अधीन है।

महुर्छा (हिं० पु०) महोत्सव।

महुरिगांव—वैतरणी तीरवर्त्ती एक बन्दर। यह कटक जिलेके चांदवाली बन्दरसे दो मील उत्तर पड़ता है।

महुला (हिं० वि०) १ महुएके रंगका। (पु०) २ वह बैल जिसके शरीर पर लाल और काले रंगके बाल हों। ऐसा बैल निकम्मा समझा जाता है।

महुवरि (हिं० स्त्री०) महुअर नामका बाजा, तूंबड़ी।

महुवा (हिं० पु०) महुआ देखो।

महुवा—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़ राज्यके हाला विभागान्तर्गत एक सामन्तराज्य। यहांके सरदार अंगरेज राजको १२०) और जूनागढ़ नवावको ३८ रुपये कर देते हैं।

महुवा (महोवा)—बम्बई-प्रदेशके काठियावाड़के भाव नगर राज्यान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २१° ५′ १५″ उ० तथा देशा० ७१° ४८′ ४५″ पू० समुद्रतीरसे दो मील पर अवस्थित है। यहां असंख्य अट्टालिकाएं और देवमन्दिर हैं।

समुद्रतीरके पूर्व जेश्री द्वीप अवस्थित है। इस द्वीपमें ६६ फुट उच्च एक आलोकस्तम्भ है जिसकी रोशनी प्रायः १३ मील दूरसे दिखाई पड़ती है। महुवाका प्राचीन नाम मोहेरक था। मालन नदी इस स्थान हो कर दौड़ गई है।

महूख (हिं० पु०) १ महुआ। २ जेठ मधु, मुलेठी।

महेच्छ (सं० पु०) महती इच्छा यस्य, हस्वश्च सामासिकः। महाशय।

महेत्थ—प्राचीन जनपदभेद। राजसूययज्ञके समय नकुलने इस स्थानमें परिभ्रमण किया था। (महाभारत)

महेन्द्र (सं० पु०) महांश्चासाविन्द्रश्च ऐश्वर्य्यवानित्यर्थः। १ विष्णु। २ शक्र, इन्द्र। ३ भारतवर्षके एक पर्वतका नाम। यह सात कुल पर्वतोंमें गिना जाता है।

"महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः।
विन्ध्यश्च पारिपात्रश्च सप्तैवात्र कुलाचलाः॥"
(मार्क० पु० ५७।१०)

महेन्द्र—१ एक विख्यात पण्डित। ये न्यायसारदीपिका-के प्रणेता जयसिंहके गुरु थे। २ एक प्राचीन कवि।

महेन्द्र—१ चाहमानवंशीय नडूलाके एक राजा। ये विग्रहपालके पुत्र थे। २ हस्तिकुण्डीके एक राष्ट्रकूट-राज। ३ एक कोशलाधिपति। ४ पुष्टपुरके राजा। ये दोनों ही गुप्तवंशीय विख्यात नरपति समुद्रगुप्तसे परास्त हुए थे। ५ गुहादित्यवंशधर ग्वालियरके दो राजे।

महेन्द्र—बौद्ध सम्राट् अशोकके पुत्र। ये अशोकराज-प्रतिष्ठित महाबोधिसङ्घ द्वारा ईस्वीसन् २४१-के पूर्व बौद्ध-धर्मका प्रचार करनेके लिये सिंहलमें भेजे गये थे। वहा ही वे करालकालके मुखमें पतित हुए।

महेन्द्र आचार्य—कैलास सामुद्री नामक ज्योतिर्ग्रन्थके रचयिता।

महेन्द्रकदली (स० स्त्री०) महेन्द्रसम्भवा तद्वर्णा वा कदली। कदलीभेद, एक प्रकारका केला। इसका गुण वात, असृगुदर और पित्तरोगनाशक माना गया है।

महेन्द्रगिरि—मद्रास प्रदेशके गञ्जाम जिलान्तर्गत पूर्वघाट पर्वतका एक शृङ्ग। यह अक्षा० १८° ५८´ १०´´ उ० तथा देशा० ८४° २६´ ४ पू० समुद्रपृष्ठसे ४९२३ फुट ऊंचे पर अवस्थित है। इस गिरिशृङ्ग पर चार प्राचीन और बड़े बड़े शिवमन्दिरोंके टूटे फूटे खंडहर नजर आते हैं। एक समय यह स्थान तीर्थक्षेत्र रूपमें गिना जाता था। यहाके गोकर्णस्वामीका माहात्म्य गाङ्गेय राजाओंकी शिलालिपिमें विशदरूपसे वर्णित है।

रामायणमें भी इस पर्वतका उल्लेख आया है। हनूमान इस पर्वतको लांघ कर लङ्का गये थे। तिन्ने-वल्लीके सामने इस पर्वतप्रान्तमें त्रिचेनगुड्डी नगर गो-पुरयुक्त सुन्दर मन्दिरसे परिशोभित है तथा पश्चिम-में त्रिवांकुडकी ओर लण्डन-मिसनरी सोसाइटीका प्राचीन आवास नगर-कोयल नगर अवस्थित है। पर्वत पर कहवेकी खेती होनेसे जङ्गलका बहुत कुछ अंश काट दिया गया है। इससे वन्यविभाग क्रमशः शून्य हो गया है। २ सिंहलकी गिरि।

महेन्द्रगुप्त (सं० पु०) एक राजाका नाम।

महेन्द्रचन्द्र—ग्वालियरके एक हिन्दू-राजा, माधवराजके पुत्र। ये ९५८ ई०में राजगद्दी पर बैठे थे।

महेन्द्रचाप (सं० पु०) महेन्द्रस्य चापः। इन्द्रचाप, इन्द्रधनुष।

महेन्द्रतनया—मद्रास प्रदेशके महेन्द्र पर्वतसे निकली हुई दो छोटी छोटी धाराएं। इनमेसे एक बुदरसिंगी, मद्रास और जलन्धा तालुक होती हुई वर्वा नगरके पास समुद्रमें जा गिरी है। दूसरी पर्ला-किमेदी भूमिभागके मध्य बहती हुई वंशधरा नदीमें मिली है। पर्ला-किमेदी नगर इस अन्तिम शाखाके किनारे अवस्थित है।

महेन्द्रत्व (सं० क्ली०) महेन्द्रस्य भावः त्व। इन्द्रके भाव या शक्ति।

महेन्द्रदेव—उत्कलराजवंशीय एक राजा, गौतमदेवके पुत्र। इन्होंने राजमहेन्द्री नगर बसाया।

महेन्द्रनगरी (सं० स्त्री०) महेन्द्रस्य नगरी। अमरावती।

महेन्द्रनाथ—हास्यार्णवव्याखाके प्रणेता।

महेन्द्रनारायण—बंगालके राढदेशके एक राजा। इन्होंने अपने राज्यको सुदृढ़ करनेके लिये दुर्ग बनाया था।

महेन्द्रपाल—पालवंशीय गौड़के एक अधिपति।

महेन्द्रपालदेव—कन्नोजके एक महाराज, भोजदेवके पुत्र। ये ९६० सम्वत्में मौजूद थे।

महेन्द्रपाल निर्भयराज—पण्डितप्रवर राजशेखरके शिष्य और प्रतिपालक एक राजा।

महेन्द्रपुर—प्राचीन नगरभेद।

महेन्द्रवर्मदेव—गंगवंशीय एक कलिंगके राजा।

महेन्द्रवाडी—मद्रास प्रदेशके उत्तर अरकाट जिलान्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह वालाजापेटसे ६ कोस पूर्व और उत्तरमें अवस्थित है। यहां एक दिग्गीके किनारे प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष देखा जाता है। कुरुम्बराज यहां राज्य करते थे। दीवारसे घिरे हुए दुर्गमें एक छोटे मन्दिरका निदर्शन पाया गया है जो बौद्ध वा जैन कीर्त्ति जैसा प्रतीत होता है।

महेन्द्रमन्त्री (सं० पु०) महेन्द्रस्य मन्त्री। देवराजके मन्त्री, बृहस्पति।

महेन्द्रमल्ल—नेपालके एक राजा। ये नरेन्द्रमल्लके पुत्र थे। नेपाल देखो।

महेन्द्रमहोदेव (रघुदेव)—राजमहेन्द्रीके एक नरपति।

महेन्द्रवर्म (१म)—पल्लववंशीय एक राजा, राजा सिंह-विष्णुके पुत्र। काञ्चीपुरमें इनकी राजधानी थी। चालुक्य राज २य पुलकेशीने इनको परास्त किया था।

महेन्द्रवर्मन् (२य)—उक्त पल्लवराजके पौत्र और राजा नर-सिंह-विष्णुके पुत्र।

महेन्द्रवर्मन् (३य)—पल्लवराज २य नरसिंहवर्माके पुत्र।

महेन्द्रवारुणी (सं० स्त्री०) महेन्द्रवरुणयोरियं प्रियत्वात् अण् ङीष्। लता-विशेष, बड़ा इन्द्रायण। पर्याय—चित्रवल्ली, महाफला, महेन्द्री, चित्रफला, त्रपुसी, त्रपुसा, आत्मरक्षा, विशाला, दीर्घवल्ली, महत्फला, महद्वारुणी, वृहत्फला, वृहद्वारुणी, सौम्या, गजचिर्भिटा, चित्रदेवी, धनुःश्रेणी, स्थाणुकर्णी, मरुसम्भवा।

२ इन्द्रवारुणी, ग्वालककड़ी।

महेन्द्रसिंह—एक हिन्दू राजा। इन्होंने ११७० फसलीमें फरीदपुर नगर और दुर्ग स्थापन किया।

महेन्द्रसिंह—कुमायूंके चांदवंशीय एक राजा। (१४८८-९० ईस्वी सन्)

महेन्द्रसिंह—धर्मघोषकृत शतपदीके टीकाकार। इन्होंने १२६४ विक्रम सम्वत्में उक्त ग्रन्थ लिखा।

महेन्द्रसूरी—१ एक जैनसूरि। इन्होंने अनेकार्थ-कैरवा-कर कौमुदी नामक हेमचन्द्रकृत अनेकार्थसंग्रहकी टीका, यन्त्रराज और उसकी टीका तथा शिवताण्डव नामक बहुत-से ग्रन्थ लिखे। २ अञ्चलिकमतावलम्बी एक जैना-चार्य। इन्होंने शतपदी नामक एक ग्रन्थकी रचना की।

महेन्द्राचार्य शिष्य—विजयभैरव नामक ज्योतिर्ग्रन्थके रच-यिता।

महेन्द्राणी (सं० स्त्री०) महेन्द्रस्य भार्येति महेन्द्र (पुंयो-गादाख्यायां। पा ४।१।४८) इति ङीष् (इन्द्रवरुणेति। पा ४।१।४९) इति आनुगागमः। १ इन्द्रभार्य्या, महेन्द्रकी स्त्री। २ इन्द्रचिर्भटी।

महेन्द्राधिराज—पल्लवराज नोड़म्बाधिराजके पुत्र। इनका दूसरा नाम वीरमहेन्द्र भी था। ९३० ई० ईस्वी-सन्के अन्दर इन्होंने पाश्चात्य गङ्ग पड़प्पोंको हराया।

महेन्द्राल (सं० स्त्री०) महेन्द्री नामक नदीका एक नाम।

महेन्द्री (सं० स्त्री०) १ एक नदीका नाम जो गुजरातमें बहती है। इसे महेन्द्रताल भी कहते हैं। २ महेन्द्रवारुणी लता।

महेन्द्रीय (सं० त्रि०) महेन्द्रसम्बन्धीय, इन्द्रसे सम्बन्ध रखनेवाला।

महेमति (सं० त्रि०) महामति, बड़ा बुद्धिमान्।

महेर—गुजरातके अन्तर्गत एक पर्वत।

महेर (हिं० पु०) झगड़ा, बखेड़ा। महेरा देखो।

महेरणा (सं० स्त्री०) महत् ईरणं प्रेरणमस्याः यद्वा महद् गजोत्सव-मीरयतीति ईर ल्यु-टाप्। शल्लकी वृक्ष, सलई-का पेड़।

महेरा (हिं० पु०) १ एक प्रकारका व्यञ्जन जो दहीमें चावल पका कर बनाया जाता है। यह दो प्रकारका होता है—सलोना और मीठा। सलोनेमें हलदी, राई आदि मसाले डाले जाते हैं और मीठेमें गुड़ पड़ता है। इसे महेला भी कहते हैं। महेला देखो। २ एक भोज्य पदार्थ। यह खेसारीके आटेको दहीमें उबालनेसे बनता है।

महेरि (हिं० स्त्री०) महेरा नामक खाद्य पदार्थ

महेरी (हिं० स्त्री०) १ उबाली हुई ज्वार। इसे लोग नमक-मिर्चसे खाते हैं। (वि०) २ अड़चन डालने-वाला, बखेड़ा खड़ा करनेवाला।

महेला (सं० स्त्री०) मह्यते पूज्यते इति मह-(सलिकल्य निमहीति। १।५५) इति इलच् पृषोदरादित्वादिकारस्यैकारः यद्वा महस्य उत्सवस्य इला भूमिः। १ नारी, औरत। (पु०) २ पशुओंके खिलानेका एक पदार्थ। यह चने, उर्द, मोठ आदिको उबाल कर और उसमें गुड़ घी आदि डाल कर बनाया जाता है। इसके खिलानेसे घोड़े, बैल आदि पुष्ट होते हैं।

महेलिका (सं० स्त्री०) महेला-स्वार्थे कन्-टाप्, अकार-स्येत्वं। १ नारी, महिला। २ स्थूल एला, बड़ी इलायची।

महेश (सं० पु०) महान् ईशः। शिव, महादेव।

"ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं।"

(शिवध्यान) शिवपूजा देखो।

२ ईश्वर।

महेश—हुगली जिलान्तर्गत एक बड़ा ग्राम। यह अक्षा० २२° ४०' उ० तथा देशा० ८८° २३' ४५" पू० श्रीरामपुर नगरके उपकण्ठमें गङ्गाके किनारे अवस्थित है। यहां-का जगन्नाथदेवका मन्दिर बड़ा ही मशहूर है। प्रति वर्ष ज्येष्ठ मासकी स्नानयात्रा और आषाढ़ मासकी रथ-यात्रा बड़े समारोहसे समाप्त होती तथा उन दिनों यहां

बड़ा मेला लगता है। रथयात्राके समय जगन्नाथदेव आठ दिन तक वल्लभपुरमें राधावल्लभपुरके मन्दिरमें आ कर रहते हैं। इस आठ दिनके मेलेमें लाखसे अधिक मनुष्य समागम होते हैं।

महेश—१ एक आभिधानिक। २ प्रयोगचिन्तामणि नामक व्याकरणके प्रणेता। ३ सुवर्णमुक्ताविवादके रचयिता। ४ स्मृतिसार और व्यवस्थासारसंग्रह नामक दो ग्रन्थके प्रणेता। अन्तका एक ग्रन्थ इन्होंने अपने पिताके स्मृतिसारसंग्रहसे संकलन किया। ५ एक प्राचीन कवि, अत्रिके पुत्र और जोटिङ्गकेशरके पौत्र। ये गुहिलवंशीय मेवाडराज्य राजमल्लके सभासद थे।

महेशकवि—सदाचार चन्द्रोदयके प्रणेता। ये सारस्वत दुर्गशर्माके पुत्र और मिथिलावासी पुरुषोत्तमके शिष्य थे।

महेशखाल—वङ्गालके चट्टग्राम जिलेके दक्षिण पार्श्वस्थ एक द्वीप। यह अक्षा० २१° ३६´ उ० तथा देशा० ९१° ५७ पू०के मध्य अवस्थित है। इस द्वीपके मध्य और पूर्वदिशामें कम ऊंचाईकी शैलश्रेणी है। उक्त शैलमालाकी ग्रामचोरी सबसे मशहूर है। इसकी ऊंचाई करीब ३ सौ फुट होगी।

महेशचन्द्र—वैद्यकसंग्रहके रचयिता।

महेशठक्कुर—१ तत्त्वचिन्तामण्यालोकदर्पणके प्रणेता। २ तिथितत्त्व चिन्तामणि, मलमाससारिणी और सर्वदेववृत्तान्तसंग्रहके रचयिता।

महादेशदत्त ब्राह्मण—एक भाषाकवि। आप धनौली जिला बाराबाकीके निवासी थे। संस्कृतमें भी आपकी अच्छी व्युत्पत्ति थी।

महेशनन्दी—षट्कारक नामक व्याकरणके प्रणेता।

महेशनारायण—सात्त्वताचारवादार्थ या भक्तिविलास तत्त्वदीपिका और हैमाङ्गिकी गौराङ्गदेवस्तुतिके रचयिता। इन्होंने पण्डितश्रेष्ठ राधारमन दाससे शिक्षा पाई थी।

महेशपाल—ग्वालियरके एक प्राचीन राजा।

महेशपुर—यशोर जिलेके बनगाव उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० २३° २१´ उ० तथा देशा० ८८° ५६´ पू०के मध्य कबदक नदीके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या चार हजारसे ऊपर है। १८६९ ई०में म्युनिस्पलिटी स्थापित हुई है।

महेशपुर—तैरभुक्तके अन्तर्गत एक प्राचीन बड़ा ग्राम।

महेशपुर—यशोर जिलांतर्गत एक नगर। यह अक्षा० २२° ५५´ ५५´´ उ० तथा देशा० ८८° ५६´ ५०´´ पू०के मध्य अवस्थित है।

महेशभट्ट—स्मार्त्तप्रयोगरत्नहिरण्यकके प्रणेता, महादेव भट्टके पुत्र।

महेशमिश्र—निर्दोषकुलपञ्जिका नामक राढ़ीय कुलग्रन्थके प्रणेता।

महेशबन्धु (सं० पु०) महेशो वध्यते वशीक्रियते येन लक्ष्मीस्तनजन्यत्वात्। श्रीफलवृक्ष, बेलका पेड़।

महेशाख्य (सं० त्रि०) १ अति प्रसिद्ध, बड़ा नामी। (पु०) २ महेश, शिव।

महेशान (सं० पु०) शिव, महादेव।

महेशानी (सं० स्त्री०) दुर्गा।

महेशितृ (सं० पु०) शिव, महादेव।

महेश्वर (सं० पु०) महांश्चासावीश्वरश्च कर्त्तुमकर्त्तुमन्यथा कर्त्तुं वा समर्थः यद्वा महत्या महामायया ईश्वरः शिव, महादेव।

इसकी व्युत्पत्ति :—

"विश्वस्थानाञ्च सर्वेषां महतामीश्वरः स्वयम्।
महेश्वरञ्च तेनेमं प्रवदन्ति मनीषिणः॥"

(ब्रह्मवैवर्त्तपु० प्र० ख० ५३ अ०)

ये संसारके सभी प्राणियोंके प्रभु हैं इसलिये उनका महेश्वर नाम पड़ा है। २ परमेश्वर।

"वायोर्नवैकादश तेजसो गुणा जलक्षिति प्राणभृता चतुर्द्दश।
दिक्‌कालयोः पञ्च षडेव चाम्बरे महेश्वरेऽष्टौ मनसस्तथैव॥"

(न्यायशास्त्र)

महान् ईश्वरः प्राजाना प्रभु। ३ ऐश्वर्यशाली राजा, प्रतापवान् राजा। ४ श्वेत मन्दार, सफेद मदार। ५ स्वर्ण, सोना।

महेश्वर—मध्यभारत एजेन्सीके इन्दोरराज्यके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २२° ११´ उ० तथा देशा० ७५° ३६´ पू०के नर्मदाके दाहिने किनारे अवस्थित है। जनसंख्या सात हजारसे ऊपर है।

यह नगर महेश्वर जिलेका सदर है। होलकरके अधीनस्थ निमारके शासनकर्त्ता इसकी देखभाल करते हैं। महाराज मलहार रावकी पुत्रवधू खण्डेरावकी पत्नी अहल्यावाई यहां प्रासाद वना कर स्वयं रहती थी।

इस नगरकी प्राचीनताके सम्बन्धमें भी बहुतसे प्रमाण मिलते हैं। बहुतेरे इसे चन्द्रवंशकी प्रथम राजधानी वा सहस्रार्जुन प्रतिष्ठित माहिष्मतिपुरी वतलाते हैं। भूमिकम्पसे अभी यह नगर श्रीभ्रष्ट हो गया है। नगरभागकी मट्टी खोदनेसे अभी भी भग्नगृह और गृहसज्जादि दिखाई देती है। यहां जो पत्थरका दुर्ग और राजप्रासाद हैं, वह संस्कारके अभावमे भग्नप्राय हो रहे हैं।

यहांका प्राचीन इतिहास हैहयराजवंशके साथ मिला हुआ है। ६वीं से १२वीं शताब्दी तक हैहय राजोंने मध्यभारतके पूर्वीय विभागका शासन किया। उनके प्रसिद्ध आदिपुरुष कार्त्तवीर्यार्जुन इसी नगरमें रहते थे। ७वी शताब्दीमें पूर्वीय चालुक्य राजा विनादित्यने हैहयराजको परास्त किया और माहिशमतीको अपने राज्यमें मिला लिया। पीछे उन्होंने हैहय राजाओंको वहांका शासन भार सौंपा और वे ही वंशपरम्परानुक्रमसे वहांका शासन करते रहे। ६वी सदीमें मालवाके अधःपतन पर महेश्वर उन्नतिकी चरमसीमा पर पहुंच गया। आगे चल कर मालवाके मुसलमान राजाओंके समय इसकी प्रसिद्धि वहुत कुछ मिट गई। १४२२ ई०में मालवाके होशङ्ग शाहसे गुजरातके राजा १म अह्मदने इसे छीन लिया। अकवर वादशाहके समय यह मण्डू सरकारके चोली महेश्वर महालका सदर वनाया गया।

१७३० ई०में यह स्थान मलहारराव होलकरके हाथ लगा। उनके मरने पर पुत्रवधू अहल्यावाई यहाका शासन करने लगी। उनके समय महेश्वरकी अच्छी उन्नति हुई थी। अहल्यावाईके वाद तुकोजीराव राजसिंहासन पर वैठे। उन्होंने भी इसी स्थानको राजधानी वनाया। १७६७ ई०मे तुकोजीके मरने पर महेश्वरके अधःपतनका सूत्रपात हुआ। राज्याधिकार ले कर विवाद खड़ा हुआ। १८६८ ई०में यशवन्तराव होलकरने खजानेको लूटा और नगरको तहस नहस कर डाला। १८११ ई०में उनकी मृत्युके सात वर्ष वाद अर्थात् १८१८ ई०मे 'मन्दरशोर'में एक सन्धि हुई। इस सन्धिके अनुसार यहांसे राजधानी उठ कर इन्दोर चली गई। १८१६से १८३४ ई० तक हरिराव होल कर यहांके दुर्गमें कैद रहे।

यहा वहुतसे कारुकार्यविशिष्ट राजप्रसाद हैं, किन्तु सभी हालके वने हैं। यहाका दुर्ग मुसलमानी अमलदारीमे वनाया गया था। किन्तु कोई कोई कहते है, कि हिन्दूराजने ही इसकी नींव डाली थी। १५६६, १६८२ और १७१२ ई०की वनी हुई तीन मसजिदें हैं। यहांकी अट्टालिका और धर्मशालामें अहल्यावाईकी वनी हुई छतरी ही मशहूर है।

यहां सूती और रेशमीके अच्छे अच्छे कपड़े तय्यार होते हैं। दाक्षिणात्यमे उन सव कपडों और पाड़दार धोती तथा साड़ियोंका वहुत आदर है। वनारसीकी जरी और छींटदार साड़ी तथा धोतीकी अपेक्षा यहांके वस्त्रादि उत्कृष्ट और वेशकीमती होते है।

महेश्वर—१ महाभाष्य-टीकाकार कैयटके गुरु। २ सिद्धान्त शिरोमणिकार भास्कराचार्यके पिता। ३ भोजप्रवन्धधृत एक प्राचीन कवि। ४ एक वैद्यक ग्रन्थके सङ्कलयिता। हेरम्ब सेनने इनका वचन उद्धृत किया है। ५ अमरकोषविवेकके रचयिता। ६ कामशास्त्रके प्रणेता। ७ केशवीवासनाभाष्य, यन्त्रराज और उसकी टीका, लघुजातकटीका और सिद्धान्तशिरोमणिभाष्य आदि ज्योतिर्ग्रन्थके रचयिता। ८ चित्युपनिषद्भाष्य और सहस्रै उपनिषद्भाष्यके प्रणेता। ६ चौरपञ्चाशिका टीका और प्रवोधचन्द्रोदय-टीकाके रचयिता। १० जीवन्मुक्तिप्रकरणके प्रणेता। ११ तत्त्वचिन्तामणिटीका और तत्वचिन्तामणि दीधितिटीकाके रचयिता। १२ दायभागटीकाके प्रणेता। १३ धूर्त्त विडम्बनप्रसेनके प्रणयकर्त्ता। १४ भर्त्तृहरिकृत नीतिशतकके टीकाकर्त्ता। १५ महाभारत-सङ्कलयिता। १६ मुद्राराक्षस-टीकाके प्रणेता। १७ रघुवंशटीकाके रचयिता। १८ रसार्णव नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता। १६ एक विख्यात आभिधानिक, ब्रह्माके पुत्र तथा कृष्ण (केशव)-के पौत्र। ११११ ई०में इन्होंने विश्वप्रकाश नामक एक अभिधानकी रचना

को। उक्त ग्रंथके परिशिष्टरूपमें उन्होंने शब्दभेदप्रकाश या शब्दभेदनाममाला नामक एक दूसरा ग्रंथ लिखा था। अलावा इसके उनका रचा हुआ साहसाङ्क चरित नामक एक और ग्रन्थ मिलता है। २० पुरुषोत्तमकृत विष्णुभक्तिकल्पलता ग्रंथके टीकाकार। १५६० ई०में इन्होंने उक्त ग्रन्थ समाप्त किया।

महेश्वर—नर्मदा नदीके उत्तरी किनारे अवस्थित एक नगर। इस नगरके नदीतीरवर्ती घाटकी शोभा बहुत कुछ वाराणसीधामसे मिलती जुलती है। मीरट इ-सिकन्दरी पढ़नेसे जाना जाता है, कि सुलतान अहमद-शाहने १४२२ ई०में यह नगर और दुर्ग कब्जा किया था।

महेश्वर—एक हिन्दू राजा, श्रीपालके पुत्र। ये दधीचि-गोत्रीय थे।

महेश्वर करच्युता (सं० स्त्री०) महेश्वरस्य करात् च्युता। करतोया नदी। कहते हैं, कि पर्वतराजकी कन्या गौरीके विवाहके समय गिरिराज-प्रदत्त जल महादेवके हाथसे पृथ्वी पर गिर पड़ा था उसीसे इस नदीकी उत्पत्ति हुई है। करतोया देखो।

महेश्वरतीर्थ—रामायण तत्त्वदीपिकाके प्रणेता। इन्होंने नारायण तीर्थसे विद्या सीखी थी। इनका दूसरा नाम महेश भी है।

महेश्वरतीर्थ—एक विख्यात वैदान्तिक। इन्होंने वार्त्तिक-सार नामक एक वेदान्तग्रन्थ बनाया।

महेश्वरदेवराय—दाक्षिणात्यके कुलचुरी राजाओंके अधी-नस्थ एक सामन्तराज

महेश्वरनाग—एक हिन्दू महाराज। ये नागभट्टके पुत्र थे।

महेश्वर न्यायालङ्कार भट्टाचार्य—काव्यप्रकाशादर्श नामक अलङ्कार ग्रन्थके रचयिता।

महेश्वरभट्ट—अन्त्येष्टिपद्धति और प्रतिष्ठापद्धति नामक दो ग्रन्थोंके प्रणेता।

महेश्वर भट्टाचार्य—सिद्धान्तदीप नामक न्यायग्रन्थके रच-यिता।

महेश्वरमिश्र—१ श्राद्धादर्शके रचयिता। २ पर्य्यायरत्न-मालके प्रणेता।

महेश्वरमिश्र—वामनालङ्कारसूत्रटीकाके रचयिता।

महेश्वर शर्मन्—शुद्धिकौमुदीके प्रणेता।

महेश्वरसिंह—मिथिलाके एक राजा, रुद्रसिंहके पुत्र तथा छत्रसिंहके पौत्र। ये व्रताचारके प्रणेता रत्नपाणिके प्रतिपालक थे।

महेश्वरसिद्धान्त (सं० पु०) पाशुपत शास्त्र।

महेश्वराचार्य—वृत्तशतक नामक ज्योतिर्ग्रन्थके प्रणेता, मनोरथके पुत्र। ये ज्योतिर्विंत्तिलक और कवीश्वरकी उपाधिसे भूषित थे। शाण्डिल्य इनका गोत्र था। त्रिजल पुरमें इनका जन्मभूमि थी। इनके पुत्र लक्ष्मीधर राजा जैत-पाल द्वारा सभापण्डित पद पर नियुक्त हुए थे।

भास्कराचार्य देखो।

महेश्वरानन्द—महार्थमञ्जरी और उसकी टीकाके प्रणेता।

महेश्वरी (सं० स्त्री०) महेश्वरस्य स्त्री, महेश्वर ङीप् महती चासौ ईश्वरी च महदादीना नियन्त्रीति वा। महे-श्वरकी पत्नी, शिवानी।

"ऐं पातु दक्षनेत्र मे ह्रीं पातु वामलोचनम्।
श्रीं पातु दक्षकर्णं मे त्रिवर्णात्मा महेश्वरी॥" (तन्त्रसार)

२ अपराजिता। ३ कास्य, कांसा। ४ राजरीति, पीतल। ५ यवतिक्त लता, शंखिनी नामकी लता।

महेश्वरी (माहेश्वरी)—पश्चिम भारतके वणिक् जाति-की एक शाखा। जयपुर राज्यान्तर्गत डिडवाना नामक ग्राममें इनका आदिनिवास है। किन्तु इस समय युक्त-प्रदेशके प्रायः सभी हिस्सोंमें यह जाति फैल गई है।

इनकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें किम्वदन्ती है, कि एक बार खण्डेला (जयपुर राज्यान्तर्गत) राजा सुजातसिंह पण्डितोंके परामर्शानुसार पुत्रोत्पादनकी इच्छासे वाणप्रस्थका अवलम्बन लिया। अपुत्रक राजा-ने वनमें देवादिदेव महादेवको अपनी आराधनासे संतुष्ट कर पुत्रवरकी प्रार्थना की थी। इस पर राजाको महेश्वरके वरसे एक पुत्र हुआ। इसके बाद नवजात शिशुको कुछ दिनों तक लालन पालन कर नवालिग अवस्थामें ही सुजातसिंहने अपनी इहलीला संवरण की। अनन्तर युवराज एक दिन सदल-बल शिकार खलनेके लिये निकले और वनमें यज्ञकार्यमें रत ऋषियोंके सम्मुख उपस्थित हुए। ऋषि लोग इस वीर वेशधारी सशस्त्र वीरमण्डलीको देख भयसे विह्वल हो अपने तपः-बलसे लौहदुर्गका निर्माण कर उसीमें छिप गये। आज भी यह लौहगढ़ दुर्गके नामसे प्रसिद्ध है।

राजकुमारके सहचर वनमे इस तरहका लौहगढ देख कर चकित स्तम्भित हुए। जब वे इसका कारण ढूंढने-के लिये चले, तो ऋषियोंके अभिशापसे पत्थरको मूर्त्ति वन गये। राज-रानियोंने तथा उनको सहचरियोंने चाहा कि चिता सजा कर सतोधर्मका पालन करें—किन्तु स्वयं महेश्वर उन्हें इस कामसे रोका पोछे उन्होंकी कृपासे उन सब स्त्रियोंने अपने अपने पतिमुखका दर्शन किया। दूसरे मतसे सतो रमणियोंकी प्रार्थनासे सतो शिरोमणि पार्वतो सन्तुष्ट हुई और उनके अनुरोधसे पूर्वोक्त शङ्कर-को कृपा द्वारा पत्थरको मूर्त्ति मनुष्यरूपमे परिणत हुई थी। महेश्वरकी कृपासे पुनः जीवन पा कर इन लोगोंने महेश्वर नामको चिरस्थायी रखनेके लिये अपना नाम माहेश्वरो या महेश्वरी रखा। इसी समय इस जाति ने शङ्करकी आज्ञासे अस्त्र त्याग वाणिज्यका कार्य्य ग्रहण किया। राजकुमारके साथ उनके ७२ सहचर पत्थर वन गये थे। इन्हीं ७२ आदमियोंके नामोंके अनुसार इनका गोत्र चालू हुआ। राजा महेश्वरी-सम्प्रदायके भाट या जाग हुए।

उक्त वहत्तरोंमे—इस समय अजमोढ़ी, औघड़, वहरी, वलदुआ, भांगड़, वरियाल, वेगी, भाण्डारो, भूतड़ा, विहानी, विन्नाणी, चण्डक, चेतलिंगिया, डांगा, दंमारो, दुरानी, धूत, हेरिया, जगु, भरकत, कवर, कल्याणो, कङ्कणी, कर्णाणो, ज्ञान्सात, खोखता, खालिया, कोठारी, लव्ध, लखौतिया, लोहिया, मल, मलपार्णे, माल्ल, मंत्री, मरद, मरुधवान, मन्धुर, नाथरोन, निष्कलङ्क, पर्त्ताणी, पुण्डपालिया, पर्वाल, राठो, सावू, सधर, सौघानो, सिकची, सोमाणी, सोनी, तोपारिया, तोषालिवाल और लोतल आदि नाम मिलते हैं। ये हिन्दू-वल्लभ संप्रदाय में अपनेको गिनाते हैं। गौड़ ब्राह्मण इनके पौरोहित्य कार्य्य किया करते हैं। देवद्विजोंमें इनकी वड़ी भक्ति है। श्रीकृष्णको समर्पित विना किये ये पान भी नहीं खाते।

राजपूतानेके महेश्वरियोंको विवाह-प्रथा स्वतन्त्र प्रकारकी है। वरके कन्या गृहमे प्रवेश करने पर कन्याके मामा कन्याको गोदमें ले कर वरको सात वार प्रदक्षिणा करेगा।

वम्बई प्रदेशके महेश्वरी वनिया मोध (मोधेरावासो) दश और वीस गोघुआ, दश और वीस अदालिया तथा दश और वीस मण्डालिया आदि श्रेणियोंमें विभक्त हैं। दश और वीस गोघुआ तथा दश और वीस अदालिया कच्छ और काठियावाड़ महेश्वरियोंके साथ आदान प्रदान करते हैं। मोधेरा (परान्दिजके अन्तर्गत) नगरमें इनकी कुलदेवी भद्रारिका देवीका मन्दिर मौजूद है। सभी तरहके महेश्वरो इस तीर्थक्षेत्रमें वड़ी श्रद्धा-भक्तिसे देवीके दर्शनके लिये आते हैं। ये वैश्य हैं और जनेऊ पहरनेके अधिकारो होने पर भो किसी महेश्वरोको जनेऊ धारण करते नहीं देखा गया है।

मण्डालियाके सिवा मोध आदि महेश्वरी विवाहके समय तलवार वांधते हैं। इनमें विधवा विवाह सर्वथा निन्दनीय है। किन्तु वहुविवाहमें कोई वाधा नहीं है।

कलकत्तेके महेश्वरी नागर और थर नगरको हो अपना आदिस्थान मानते हैं। वल्लभसम्प्रदायवाले महेश्वरी वैष्णव मतावलम्वी होने पर भी अपनी कुलदेवियोंको पूजा किया करते हैं। पालिवाल ब्राह्मण ही इनके कुलपुरोहित हैं। किन्तु इस समय कितने हो गोकर्ण ब्राह्मणोंने भी इनका पौरोहित्य स्वोकार कर लिया है। विवाहके समय कुल वधुएं कन्यावरण आदि स्त्री-आचार नहीं करता।

महेषु (सं० पु०) महान् इषुः। १ वड़ा तीर या वाण। (त्रि०) २ महदिषुयुक्त, वड़ा धनुर्धारी।

महेषुधि (सं० त्रि०) महान् इषुधिः यस्य। धानुष्क, धनुर्धारी।

महेष्वास् (सं० पु०) धानुष्क, वड़ा धनुर्धारी।

महेस (सं० पु०) महेश देखा।

महेसिया (हिं० पु०) एक प्रकारका उत्तम अगहनी धान।

महैकोद्दिष्ट (सं० पु०) आद्य श्राद्ध, आद्यैकोदिष्ट, वह श्राद्ध जो मरनेके वाद पहले पहल अशौचके अन्तमें मृत प्राणीके उद्देश्यसे किया जाता है।

महैतरेय (सं० क्ली०) वैदिक ग्रंथविशेष, ऐतरेयउपनिषद्।

महैरण्ड (सं० पु०) महांश्चासावेरण्डश्च. स्थूल एरण्ड, एक प्रकारका वड़ा रेंड। इसके वीज भी वडे, होते हैं।

महैला (सं० स्त्री०) महती चासावेला च। स्थूल एला, बड़ी इलायची।

महैश्वर्य्य (सं० क्ली०) १ विपुल ऐश्वर्य्य, राजपद। २ महाशक्ति, बड़ा बल।

महोक (हिं० पु०) महोखा देखो।

महोक्ष (सं० पु०) महान् उक्षा (अचतुरविचतुरेति। पा ५।४।७७) इति समासान्तः अच् निपातितः। बृहद् वृष, बड़ा बैल। पर्याय—वृषभ, वृष, पुङ्गव, बला, गोनाथ, ऋषभ, गोप्रिय, उक्षा, गोपति।

"महोक्षः स त्वया दृष्टः सत्तवश्च कृतो यदि।
तदिहानय त युक्त्या तावत् पश्यामि कीदृशः॥"
(कथासरित् ६०।६६)

महोख (हिं० पु०) महोखा देखो।

महोखा (हिं० पु०) एक प्रकारका पक्षी। यह कौएके बराबर होता है और भारतवर्षमें, विशेष कर उत्तरी भारतमें झाड़ियों और बंसवाड़ियोंमें मिलता है। इसकी चोंच, पैर और पूंछ काली, आंखें लाल तथा शिर, गला और डैने खैर रंगके या लाल होते हैं। यह झाड़ियोंके पास कीड़े, मकोड़े, खा कर रहता है। यह बहुत तेज दौड़ सकता है। पर बहुत दूर तक उड़ नहीं सकता। इसकी बोली बहुत तेज होती है और यह बहुत देर तक लगातार बोलता है।

महोगनी (अं० पु०) भारत, मध्य अमेरिका और मेक्सिको आदिमें होनेवाला एक प्रकारका बहुत बड़ा पेड़। यह सदा हरा रहता है। इसकी लकड़ी कुछ ललाई लिए भूरे रंगकी, बहुत ही दृढ़ और टिकाउ होती है और उस पर वार्निश बहुत खिलती है। यह लकड़ी बहुत महंगी बिकती है और प्रायः मेजें, कुर्सियां और सजावटके दूसरे सामान बनानेके काममें आती है।

महोच्छव (सं० पु०) महोत्सव देखो।

महोछा (हिं० पु०) महोच्छव देखो।

महोटिका (सं० स्त्री०) महान्तः फलेभ्यः स्थूला उटा पत्राण्यस्याः ततः स्वार्थे कन् टाप् अकारस्येत्व। वृहती, कटैया।

महोटी (सं० स्त्री०) वृहती, कटैया।

महोतो (हिं० स्त्री०) महुएका फल, कुलेंदी।

महोल्का (सं० स्त्री० महती उल्का। महोल्का, बड़ी उल्का।

महोत्पल (सं० क्ली०) महच्च तत् उत्पलञ्च। १ पद्म। २ सारस पक्षी।

महोत्सङ्ग (सं० पु०) अत्यूर्द्ध संख्याभेद, एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

महोत्सव (सं० पु०) महांश्चासावुत्सवश्च। अतिशय सुखजनक कर्म, बड़ा उत्सव।

"सर्वैश्च जन्मदिवसे स्नातैर्मङ्गलपाणिभिः।
गुरुदेवाग्निविप्राश्च पूजनीयाः प्रयत्नतः॥
स्वनक्षत्रञ्च पितरो तथा देवप्रजापतिः।
प्रतिसंवत्सरञ्चैव कर्त्तव्यश्च महोत्सवः॥" (तिथितत्त्व)

महोत्साह (सं० त्रि०) महान् उत्साहो यस्य। १ अतिशय उत्साहयुक्त, बड़ा उत्साही। पर्याय—महोद्यम। (पु०) २ विष्णु। ३ राजपुरुष। ४ अतिशय उद्यम, कड़ी मेहनत।

महोदधि (सं० पु०) महाश्चासावुदधिश्चेति। १ समुद्र, सागर।

महोदधि—एक प्राचीन कवि।

महोदधि (सं० पु०) औषधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—विष १ तोला, रससिंदूर १ तोला, जायफल २ तोला, सोहागेका लावा २ तोला, पीपल ३ तोला, सोंठ ६ तोला और लवङ्ग ५ तोला, इन्हें जलसे पीस कर एक रत्तीकी गोली बनावे। इसका सेवन करनेसे जठराग्निकी तेजी होती है। (भैषज्य० अग्निमान्द्याधिकार)

महोदय (सं० पु०) महान् उदयः उन्नतिर्यस्मिन्। १ पुर विशेष, कान्यकुब्ज, गाधिपुर, कौश, कुशस्थल।

कान्यकुब्ज देखो।

२ कान्यकुब्जदेश। ३ आधिपत्य। ४ अपवर्ग। ५ महाफल। ६ स्वामी। ७ बड़ोंके लिये एक आदरसूचक शब्द, महाशय।

महोदया (सं० स्त्री०) महानुदयो यस्याः टाप्। नागबला, गंगेरन।

महोदया (सं० स्त्री०) १ पुरानानुसार एक नदीका नाम। २ गङ्गाके दक्षिण अङ्गदेशमें प्रवाहित नदी।

महोदर (सं० त्रि०) महदुदरमस्य। १ वृहदुदरयुक्त, जिसका पेट बड़ा हो। (पु०) २ वृहदुदर, बड़ा पेट।

३ नागविशेष, एक नागका नाम। ४ दानवविशेष। ५ धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम। ६ शिव।

महोदरमुख (सं० पु०) शिवानुचरभेद, शिवके एक अनुचरका नाम।

महोदरी (सं० स्त्री०) महाशतावरी।

महोदरेश्वर (स० क्ली०) शिवलिङ्गभेद।

महोद्यम (सं० त्रि०) महान् उद्यमो यस्य। १ महोत्साह, वड़ा उत्साही।

"अथ निर्ज्जित्य दायादर्दैलब्ध्वा लक्ष्मीं क्षितीश्वरः।
जिष्णुर्दिग्विजयं कर्त्तुं श्रीमानासीन्महोद्यमः॥"
(राजत० ५।१४१)

(पु०) अतिशय उद्योग, वड़ा यत्न।

महोद्योग (सं० त्रि०) महान् उद्योगो यस्य। १ उद्यमशील, वड़ा उद्योगी। (पु०) २ अतिशय उद्योग, वडा यत्न।

महोना (हिं० पु०) पशुओंके एक रोगका नाम। इसमें उनका मुंह और पैर पक जाते हैं।

महोना—१ लखनऊ जिलेके मलिहावाद तहसीलका एक परगना। यह गोमती नदीके वाएं किनारे अवस्थित है। भूपरिमाण १४७ वर्गमील है। यहांके इतौञ्जा और मण्डियावन नगरकी जनसंख्या सवसे अधिक है। यह स्थान पहले भर जातिके अधिकारमें था। पीछे कुर्मियोंने इस पर अधिकार जमाया। इसके वाद पोंवार और चौहानराजपूतोंने यहांके कुर्मियोंको मार भगाया और महोना अपने दखलमें कर लिया। आज भी वे ही लोग यहाके प्रधान तालुकदार हैं।

२ उक्त तहसीलके अन्तर्गत एक नगर। यह लखनऊसे सीतापुर जानेके रास्ते पर अवस्थित है। लखनऊ नगरसे इसकी दूरी ७॥ कोस है। पहले इस नगरमें विचारसदर और गवर्मेण्टके कर्मचारियोंका वास तथा एक दुर्ग था। पार्श्ववर्त्ती गोविन्दपुर-ग्रामवासी एक ब्राह्मण खजाना नहीं देनेके कारण उस दुर्गको वन्द किया गया था। इस पर ग्रामवासीमें वड़ी सनसनी फैली और उन्होंने उत्तेजित हो कर दुर्ग पर आक्रमण कर दिया। इसके वाद आमिस वहादुरगंजमें नया दुर्ग वनाया गया था। नगरकी पूर्वसमृद्धिका अभी वहुत कुछ ह्रास हो गया है।

महोन्नत (सं० पु०) महानतिशय उन्नतः। १ तालवृक्ष, ताड़का पेड़। २ नारिकेल वृक्ष, नारियलका पेड़। ३ धाराकदम्व, एक प्रकारका कदमका पेड़। (त्रि०) ४ अत्युन्नतियुक्त, जिसकी वड़ी उन्नति हुई हो।

महोन्नति (सं० स्त्री०) महती चासावुन्नतिश्च। अतिशय वृद्धि, वड़ी उन्नति।

"भूयात्ते महदैश्वर्य्यं पुत्रादीनां महोन्नतिः।
अव्याधिना शरीरेण चिरं जीव सुखी भव॥" (उद्भट)

महोन्मद (सं० पु०) १ मत्स्यविशेष, मोय मछली। (त्रि०) २ अत्युन्मत्त, घोर पागल।

महोन्मान (सं० त्रि०) १ विस्तृत, लंवा चौडा। २ भारयुक्त, जिसे वोझ हो।

महोपनिषद् (सं० स्त्री०) १ उपनिषद्विशेष। इस उपनिषद्की भास्कराचार्य, शङ्करानन्द और नारायण कृत टोका देखो जाती है। (क्लो०) २ गुप्तमन्त्रभेद।

महोपमा (सं० स्त्री०) एक नदीका नाम। इसका दूसरा नाम महापगा भी है।

महोपाध्याय (सं० पु०) १ महान् उपाध्याय, प्रधान आचार्य। २ विद्वान् और भारवि कविकी उपाधि।

महोवा—१ युक्तप्रदेशके हमीरपुर जिलेका एक उपविभाग। इसमें महोवा और कुलपहाड़ नामक दो तहसील लगती है।

२ उक्त उपविभागकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ६' से २५° ३८' उ० तथा देशा० ७९° ४१' से ८०° ६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ३२९ वर्गमील और जनसंख्या ६ हजारसे ऊपर है। यहांका अधिकांश स्थान पहाड़ी अधित्यकाभूमिसे परिपूर्ण है। उस पर्वतवक्ष पर जो असंख्य ह्रदाकार पुष्करिणियां हैं वह चन्देलराजाओंको प्राचीन कीर्त्तिका घोषणा करती हैं।

३ उक्त जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर और महोवा तहसीलका सदर। यह अक्षा० २५° १८' उ० तथा देशा० ७९° ५२' पू०के मध्य अवस्थित है। यह नगर मदनसागर नामक एक वड़े ह्रदके किनारे पर्वतके ऊपर वसा हुआ है। मदनसागर ह्रद प्राचीन चन्देल राजवंशकी अक्षयकीर्त्तिस्वरूप है।

नगर प्रधानतः तीन भागोंमें विभक्त है, यथा—मध्यशैलके उत्तर प्राचीन दुर्ग, शैलशिखरदेश मध्य दुर्ग और दरिवा नामसे प्रसिद्ध दक्षिण भाग। ८वी सदीमें राजा चन्द्रवर्माने यहा एक वडा भारी यज्ञ किया था। तभीसे यह स्थान महोत्सव वा महोवा कहलाने लगा है।

यहा आस पासके स्थानोंमें चन्देल राजाओंकी अपूर्व कीर्त्तिके सैकडों निदर्शन पडे हैं। कहते हैं, कि रामकुण्ड नामक जो सरोवर हे उसके किनारे चन्द्रवर्माकी अन्त्येष्टि क्रिया हुई थो। जनसाधारणका विश्वास है, कि इस विस्तीर्ण ह्रदमें पुण्यसलिला नदियोंका जल भीतर ही भीतर आता है। उपरोक्त गिरिदुर्ग अभी भग्नावस्थामें रहने पर भी उसका स्वाभाविक सौन्दर्य दर्शकके मनको मोहता है। मुनिया देवीमन्दिरके प्रवेशद्वार पर राजा मदनवर्माके समयका उत्कीर्ण एक शिला फलक देखनेमें आता है।

वे सव ह्रद ११वीं वा १२वो सदीमें खोदे गये थे। किरत (कीर्त्ति) और मदनसागर नामक ह्रदको छोड कर वाकी ह्रद अभो देखनेमे नही आते। मदनसागरके मध्यस्थलमें एक छोटे द्वीपाकार स्थानके साथ मूलनगरका संयोग रखनेके लिये कारुकार्यविशिष्ट स्तम्भराजिपरिशोभित पुल मौजूद है। अलावा इसके ह्रदके किनारे वहुत सी इमारतें टूटी फूटी अवस्थामें पडी नजर आती हैं। प्राचीन राजाओंने ग्रीष्मकालमें सन्ध्याकालकी शीतल वायुका सेवन करनेके लिये पर्वतके ऊपर एक सुन्दर भवन वनवाया था। मदनसागरके उत्तरी तटसे ले कर समुद्र तट तक एक सोपान-श्रेणी चली गई है। उसके दोनों पार्श्वमें असंख्य देवमन्दिर विराजमान हैं। इन देवमन्दिरोंमेंसे कुछ जैन-मन्दिरोंका ध्वंसावशेष भी दिखाई देता है।

चन्देलराजवंशने यहा प्रायः २० पीढ़ी तक राज्य किया था। पृथ्वीराज द्वारा राजा परमालकी पराजयके वादसे चन्देल प्रभावका वहुत कुछ ह्रास हो गया। ११९५ ई०में दिल्लीके वादशाह कुतवुद्दीनने इस नगर पर दखल जमाया। उस समय यहां जो सव मुसलमानी कीर्त्ति स्थापित हुई थी उनमेंसे जलहन खाकी कब्र तथा अन्यान्य इमारतोंका निर्माण वहाके शिवमन्दिर आदिके भग्नावशेपसे हुआ था। इसके सिवा गयासुद्दीन तुगलकके जमानेमें १३३२ ई०को एक मसजिद वनाई गई। वह मसजिद आज भी शिलालिपि प्रतिष्ठाताकी कीर्त्ति-घोषणा करती है।

इसके वाद वंजारा जातिने इस पर अधिकार जमाया। वे लोग मध्यभारतमें अनाज आदि भेजनेके लिये यहा आये हुए थे। शहरमें तहसीली कचहरी, थाना, डाकघर, विद्यालय, औषधालय, सराय, वाजार आदि हैं।

महोवी (हिं० वि०) महोवेका

महोविया (हिं० वि०) महोवी देखो।

महोविहा (हिं० वि०) महोवी देखो।

महोरग (सं० पु०) महांश्चासावुरगश्च। १ वड़ा साप। २ तगरका पेड़। ३ जैनियोंके एक प्रकारके देवताओंका नाम। यह व्यन्तर नामक देवगणके अन्तर्गत हैं।

महोरस्क (सं० त्रि०) महत् उरः यस्य। विशालवक्ष, जिसकी छाती चौड़ी हो।

महोला (अ० पु०) १ हीला, वहाना। २ धोखा, चकमा।

महोलि—युक्तप्रदेशके सीतापुर जिलान्तर्गत मिशरिख तहसीलका एक परगना। भूपरिमाण ८० वर्गमील है। पश्चिम सीमान्तवर्त्ती कठनानदीकी वलुई पथरोली जमीनको छोड कर यहांका अधिकांश स्थान उर्वरा है। यह स्थान यथाक्रमसे पाशी, आह्वन और गौड जातिके अधिकारमें था। विख्यात सिपाही-विद्रोहके समय एक आह्वन राजा यहाका शासन करते थे। विद्रोहियोंमें शामिल होनेके कारण अंगरेजोंने उनका राज्य छीन कर एक राजभक्तके हाथ समर्पण किया।

महोल्का (सं० स्त्री०) महती चासावुल्का च। उल्का-विशेष। ज्योतिःशास्त्रमें लिखा है, कि महोल्कापात होने पर अनाध्याय होता है।

"विद्युत्स्तनितनिर्घातमहोल्कानाञ्च सप्लवे।
आकालिकमनध्यायमेतेषु मनुरब्रवीत्॥" (तिथितत्त्व)

महोविशीय (सं० क्ली०) सामभेद।

महोष्ठ (सं० पु०) १ शिव। (त्रि०) २ महदोष्ठयुक्त, जिसका होठ लम्वा और मोटा हो।

महौघ (सं० पु०) १ त्वष्टाके एक पुत्रका नाम। (कथा-सरित्सा० ८।६६) २ समुद्रकी वाढ़, तूफान।

महौजस् (सं० त्रि०) महदोजो यस्य। १ अतिशय ओजोयुक्त, बड़ा तेजस्वी। (पु०) २ कालके पुत्र एक असुरका नाम। ३ राजभेद। ४ जातिविशेष।

महौजस्क (सं० त्रि०) महत् ओजो यस्य। अति तेजस्वी, बड़ा प्रतापवान्।

महौदवाहि (सं० पु०) आश्वलायन गृह्यसूत्रके अनुसार एक वैदिक आचार्यका नाम।

महौषध (सं० क्लो०) महत् औषधं। १ भूम्याहुल्य, भुंजित खर। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ लशुन, लहसुन। ४ वाराहीकंद, गेंठी। ५ वत्सनाभ, वछनाग। ६ पिप्पली, पीपल। ७ अतिविषा, अतीस। ८ महाभेषज।

महौषधादि क्काथ—ज्वररोगमें हितकर एक प्रकारका काढ़ा। प्रस्तुत प्रणाली—सोंठ, गुलञ्च, मोथा, लालचन्दन, खसखसकी जड़ और धनियां कुल मिला कर २ तोला, इसे ३२ तोले जलमें पाक करे। जब ८ तोला जल रह जाय, तब उसमें २ माशा चीनी और २ माशा मधु डाल कर नीचे उतार ले। इसका सेवन करनेसे तीसरे दिन आनेवाला ज्वर जाता रहता है।

महौषधि (सं० स्त्री०) महती ओषधिः। १ दूर्वा, दूव। २ लज्जालु क्षुप, लजालू। ३ संजीवनी। ४ महास्नानीय द्रव्यविशेष, कुछ विशिष्ट ओषधियोंका समूह। भगवती दुर्गादेवीके महास्नानमें सर्वौषधि और महौषधि देनी होती है। महास्नानमात्रमें ही महौषधि आवश्यक है।

"सहदेवी तथा व्याघ्रीवला चातिवला तथा।
शङ्खपुष्पी तथा सिंही अष्टमी च सुवर्चला॥
महौषध्यष्टकं प्रोक्तं महास्नाने नियोजयेत्॥"
(गोविन्दानन्दधृत मत्स्यपुराणवचन)

बहेड़ा, व्याघ्री, वला, अतिवला, शङ्खपुष्पी, वृहती, अष्टमी (क्षीरकंकोली) और सुवर्चला इन आठोंके चूर्णको महौषधि कहते हैं।

दूसरेके मतसे—

"पृश्निपर्णी श्यामलता भृङ्गराजः शतावरी।
गुड़ूची सहदेवी च महौषधिगणाः स्मृतः॥"
(शब्दचन्द्रिका)

पृश्निपर्णी, श्यामलता, भृङ्गराज, शतावरी, गुड़ूची और सहदेवी इन पांचोंके समूहका नाम महौषधि है। ५ श्रेष्ठ ओषधि, अच्छी दवा।

महौषधी (सं० स्त्री०) महौषधि ङीप। १ श्वेतकण्टकारी, सफेद भटकटैया। २ ब्राह्मी। ३ कटुका, कुटकी। ४ अतिविषा, अतिवला। ५ हिलमोचिका।

महमूद (सुलतान-उल-आजिम, ममीन उद्दौला, निजामुद्दीन, अवदुल कासिम, महमूद गाजी)—सुप्रसिद्ध मुसलमान वादशाह। इनसे पहले किसी भी मुसलमान शासनकर्त्ताको वगदादके खलीफों द्वारा सुलतानकी पदवी नहीं मिली थी। इनके पिताका नाम आमीर उल-गाजी नासिरुद्दीन-उल्ला सुबुक्तगीन था। यह फारसके किसी ऊंचे खानदानका लड़का था। महमूदने सन् ३६१ हिजरीके १०वीं मुहर्रमकी रातको जन्मग्रहण किया था महमूदके जन्मसे एक घण्टा पहले उसका वाप यह स्वप्न देखता था, कि उसके घरके आंगनमें एक वृक्ष पैदा हुआ और वह इतनी फुर्तीसे वढ़ने लगा, कि देखते देखते आकाशको भेद कर वृहताकारमें परिणत हो गया। इसकी छायाने सारी पृथ्वीको समाच्छन्न कर दिया। इसके वाद सुबुक्तगीन जाग उठा और इस स्वप्न पर विचार करने लगा। इसी समय एक वांदीने आ कर खबर दी, कि उसकी स्त्रीने एक पुत्र प्रसव किया है। सुबुक्तगीन मारे हर्षके फूल उठा। इसने अपने लड़केका नाम महमूद रखा। महमूदका अर्थ है, प्रशंसाभाजन। उसी दिन रातको सिन्धुतीरके पर्शावर या पुरुषपुरका देव-मन्दिर अचानक आप ही आप धराशायी हुआ। महम्मदकी तरह महमूदके जन्मके समय भी यह ऊंचे स्थान पर थे। इससे सभीने जान लिया था कि, भविष्यमें यह महमूद असाधारण पुरुष होगा। महमूद अत्यन्त हृष्ट पुष्ट था। फिर भी उसके चेहरे पर चेचकका दाग था, इसलिये उसके स्वाभाविक सौन्दर्य कुछ भी न था। यहां तक कि उन्होंने एक दिन दर्पणमें अपना मुंह देख कर कहा था, कि साधारण राजाका चेहरा देख कर दर्शक प्रसन्न हो जाते हैं, किन्तु ईश्वर मेरे प्रति ऐसे निर्दय हैं, कि मेरा चेहरा मुझे ही पसन्द नहीं।

सन् ६६७ ई०में सुबुक्तगीन मर गया। मरनेके कुछ दिन पहले अपने छोटे लडकेको यह अपना उत्तराधिकार बना गया। इसका नाम इस्माइल था। मह्मूद इससे बडा था और खुरासान देशका शासक था। यह सब होने पर भी यह जारज (दोगला) था, इससे सुबुक्तगीनने अपने छोटे लडकेको ही राज पद पर बैठाया था। किन्तु महमूद अपने अधिकारको सहज ही छोडनेवाला पुरुष न था। इसने इस्माइलसे युद्ध कर उसे पकड कर कैदखानेमें डाल दिया और सुलतानका खिताब ले गजनीका अधीश्वर हुआ।

सुलतान महमूदने ३३ वर्षसे ज्यादा राज्य किया था। यह सत्तरह बार भारत पर आक्रमण कर यहांसे मणिमुक्तादि हीरा-जवाहर ले गया था। भारतके धनसे गजनी धनधान्य पूर्ण हो गया।

सन् १००० ई०में इसका पहला आक्रमण पेशावरके निकट सीमान्त प्रदेशके कई किलो पर हुआ। किले इसके दखलमें आ गये और वहां लूट पाट कर यह बहुत धन गजनी ले गया।

सन् १००२ ई०में इसका दूसरा आक्रमण हुआ था। यह कोई दश हजार घुडसवार ले कर पेशावर पहुंचा। वहां जयपालके साथ इसका युद्ध हुआ। इस युद्धमें जयपालने बडा पराक्रम दिखाया; किन्तु अन्तमें १५ सामन्तोंके साथ वे कैद कर लिये गये। यदि तुषारपात नहीं हुआ होता, तो जयपाल कभी पराजित नहीं होते। इस युद्धमें जयपालके ५००० सैनिक मारे गये थे। महमूदको यहां लूट पाटमे बहुत धन हाथ आया। सुप्रसिद्ध भारतीय हीरा कोहिनूर भी इसको इसी युद्धमें हाथ लगा था। (यही कोहिनूर एक दिन राजा कर्णके मस्तक पर उनके किरीटमें शोभा पाता था और आज कल यह रानी मेरीके मुकुटका शोभा बढा रहा है) तबकत इ-अकबरीमें जयपालकी वीरत्ववार्त्ता स्वर्णाक्षरोंमें लिखी हुई है।

हिन्दू राजा इसको कर नहीं देते थे; इससे यह क्रुद्ध हो कर तीसरी बार सन् १००४ ई०में भारतमें आया। मुलतान होते हुए यह भाटिया नामक स्थानमें आ पहुंचा। यहांके विजयराज अपने गढ़की मजबूतीके घमण्डमें निडर थे। इस गढ़के चारों ओर चहारदीवारी और किलेके चारों ओर एक गहरी खाई खुदी थी। तीन दिन तक इन्होंने अपने गढ़की इस तरह रक्षा की, कि मुसलमान सैनिकोंकी वीरता नष्ट हो चुकी थी। किन्तु महमूद बड़ा धीर पुरुष था। यह जल्द ही हताश होनेवाला न था। इसने अपने सैनिकोंको बहुत उत्साहित किया और फिर युद्ध करने लगा। घमसान युद्ध करनेके बाद महमूदने जयलाभ किया। विजयराजने कैदखानेमें ही प्राण विसर्जन किये। इस बार महमूद २८० हाथी, बहुतेरे सैनाध्यक्षोंको तथा लूटी हुई चीजोंको ले कर गजनी गया। भाटिया राज्य गजनीमें मिला लिया गया।

सन् १००६ ई०में इसका चौथा आक्रमण हुआ। मुलतानके शासक अबदुल फतेह लोदीने महमूदकी अधीनता अस्वीकार कर जयपालके पुत्र अनङ्गपालका साथ दिया। इसके आक्रमणका कारण केवल लोदीका दमन करना ही था। आनन्दपाल अपने अदम्य उत्साहसे महमूदके साथ पेशावरके निकट युद्धमें प्रवृत्त हुआ। किन्तु अन्तमें पराजित हो-कर उसने काश्मीरमे आश्रय लिया। विजयी सुलतानने मुलतानमें पहुंच उक्त लोदीको दमन किया।

अबदुल फतेह दाउद लोदी भाग कर गुजरातके निकट सरनद्वीपमें जा छिपा। महमूदको उसके खजानेसे २०००००० दिरहम यानी स्वर्णमुद्रा मिली। सिवा इसके बहुत बडा रत्नभाण्डार इसके हाथ आ गया। लोदीने २०००० दिरहम वार्षिक कर दे कर सन्धि की और फिर आ कर सिंहासन पर बैठा।

इसके बाद महमूदने २०० किलोंको जीता। ऐसे समय महमूदको खबर मिली, कि तातार राज्यके राजा इलाक खांने उसकी राजधानी पर आक्रमण किया है। महमूदने अपने विश्वासी नौकर शुकपाल पर विजित देशोंका भार दे कर वहांसे अपनी राजधानीकी यात्रा की। शुकपाल जयपालके वंशका ही था। किन्तु यह पेशावरकी लडाईमें कैद हो कर मुसलमान बन गया।

सन् १००८ ई०में महमूदका पांचवा आक्रमण हुआ। इस आक्रमणमें नवास शाहको पराजय हुई। महमूदके गजनी पर आक्रमण करनेवाले इलाक खांको पराजित

करनेके वाद खवर मिली, कि शुकपाल या नवास शाह उसकी अधीनता अस्वीकार कर तथा इस्लाम धर्मको ठुकरा कर हिन्दुओंकी सहायता कर रहे हैं। इन्हें दण्ड देनेके लिये महमूदका पांचवां वार आक्रमण हुआ। इसके पेशावर पहुंचते ही नवास शाह भाग गया। महमूद नवास शाह द्वारा इकट्ठी की हुई धनराशिको हस्तगत कर अन्य शासनकर्त्ताके हाथ अधिकृत देशोंका शासनभार दे कर आप स्वदेश लौट गया। कुछ लोगोंका कहना है, कि शुकपालका ही दूसरा नाम नवास शाह था जो जयपालका दौहित्र था। इसको महमूदने वलपूर्वक मुसलमान वनाया था।

सन् १००८-६ ई०में हिन्द वा सिन्ध और नगरकोट या कोटकांगडा पर महमूदका छठवां आक्रमण हुआ।

महमूदकी गैरहाजिरीमे जयपालके पुत्र आनन्दपाल सभी हिन्दूराजाओंको स्वदेश-प्रेमके उत्साहसे उत्साहित कर उत्तेजित कर दिया। भगेड़ू शुकपाल भी उन्हींके पक्षमें था। आनन्दपालके स्वदेश-प्रेमकी साधु-प्रेरणासे सभी हिन्दू राजे विधर्मी यवनके विरुद्ध उठ खड़े हुए। उज्जयिनी, कालिञ्जर, ग्वालियर, कन्नौज, दिल्ली, अजमेर आदि अनेक हिन्दू राजे पवित्र भारतसे यवनोंके मूलोच्छेद करनेके लिये कटिवद्ध हुए। सभी अदम्य उत्साहसे नववलसे वलवान् हो इस धर्मयुद्धमे प्रवृत्त हुए। प्रतिदिन वहुतेरे वीर युद्धमे अपना नाम लिखा कर अपने वलको दृढ़ करने लगे। धनवान् खुले हाथों धन देने लगे। किसान अन्न ले कर हाजिर हुए। वृद्ध मण्डलीने उत्साहवाक्यसे वीरोंको उत्साहित किया। भूषणप्रिया हिन्दूललनाएं अपने शरीरके आभूषणको उतार और शृङ्गारशोभा केशिराजिको कतर कर धनुर्गुणके लिये दे वनवासिनी द्रौपदीकी तरह अपने पति और पुत्रको युद्धके लिये उत्साहित करने लगी। हिन्दुस्तानमें एकता-का साम्राज्य दिखाई देने लगा। हिन्दू राजाओंके चेहरे पर उत्साह और स्फूर्त्तिकी रेखा दौड़ने लगी।

आनन्दपालने सेनापतिका पद ग्रहण कर पञ्चनदसे प्लावित पञ्जावकी ओर यात्रा की। पेशावरके वड़े मैदान-में महमूदसे इन लोगोंका सामना हुआ।

महमूदके पास एक लाख सेना थी, किन्तु हिन्दुओंका ऐसा जोश और तय्यारी देख महमूदका होश हवास गुम हो गया। इसने देखा, कि इस वार वलसे काम न चलेगा तव इसने कौशलसे काम लिया। यह पीछे हट कर एक खाई खोद कर वैठ गया। हिन्दू भी अपने खेमेमें प्रवेश कर रहने लगे। डेढ महीने तक दोनों ओर आक्रमणका कुछ दृश्य परिलक्षित न हुआ। हिन्दुओंकी विशाल सेना दिनों दिन वढ़ने लगी। सिवा इसके गक्खरोंकी ४०००० फौजें हिन्दुओंका साथ दे कर मुसलमानोंको विकल करने लगी। इस सैन्यसागरके खर्चके लिये देश देशान्तरसे अन्न आने लगा। और तो क्या भिखारिणी और कङ्गालिनी स्त्रियोंने भी अपने कते चर्खेसे उपार्जित अन्नधन देशोद्धारके लिये कार्यसे अर्पण किया।

आनन्दपालका पुत्र ब्रह्मपाल महमूद पर आक्रमण करनेके लिये आगे वढ़ा। हाथी, घोडे, और पैदल पंक्तिवद्ध खडे हुए। उधर महमूदने भी कोई उपाय न देख प्रत्याक्रमणके लिये अपनी फौजोंको सुसज्जित किया। तीस हजार पैदल गक्खर फौजोंने भीषण वेगसे आक्रमण कर महमूदके घुडसवार सैनिकोंको छिन्न भिन्न कर डाला। दो चार मिनटोंमें चार हजार मुसलमान सैनिक मारे गये। महमूद भागनेकी चेष्टा करने लगा। ऐसे समय आनन्दपालका हाथी गोले देख कर भयसे युद्धक्षेत्रसे भागने लगा, यह देख हिन्दू-सैन्यने दूरसे समझा, कि- आनन्दपाल उन्हें भागनेका इशारा कर रहे हैं, इसलिये वे सभी आनन्दपालका पदानुसरण करने लगे। इधर महमूदके सैन्योंने आक्रमण कर आठ हजार हिन्दुओंको मार गिराया। ३० हाथी और वहुत धन महमदको प्राप्त हुआ।

भागनेके वाद महमद हिन्दुओंका पीछा करते हुए नगरकोट तक आया, निकटके भीमनगरके दुर्भेद्य दुर्ग (किला) के सामने आ उपस्थित हुआ। दुर्गके चारों ओर गहरी खाईके रूप वाणगङ्गा प्रवाहित हो रही थी। भीमनगर यहासे एक मीलकी दूरी पर वसा हुआ है। इस समय इसका नाम 'भवान' हो गया है। यहां भीमदेव द्वारा प्रतिष्ठित शक्तिकी प्रतिमा मौजूद है।

भीमनगरके निकट ही प्रसिद्ध ज्वालामुखी तीर्थ सर्वदा लेलिहान अग्निजिह्वा फैला कर दर्शकोंके अन्तःकरणमें भययुक्त भक्तिका सञ्चार कर रहा है। कई

हजार वर्षसे इस तीर्थमें इतना धन और रत्नराशि एकत्र हुई थी कि, लोग इसे कुवेरकी अलका कहते थे। किलेकी फौजें यक्षकी तरह इस धनभाण्डारकी रक्षा करती थीं। महमूद इसका पता पा कर रक्तलोलुप शार्दूलकी तरह दुर्गप्राचीरके निकट उपस्थित हुआ।

भीमनगर पर आक्रमण।

महमद पुनः पुनः अपने सैन्यको उत्तेजित करने लगा। महमूदकी फौज वाणगङ्गाके प्रवल प्रवाहको पार कर किलेकी चहारदीवारीके निकट पहुंची और वडी कठिनतासे दुरारोह पर्वत पर चढने लगी। किलेके पहरेवालोंने देखा, कि मुसलमान सैनिकोंसे पर्वत भर गया है। इतनेमें मुसलमानगण किलेके भीतर पहरा देनेवाले अल्प संख्यक सैनिकों पर शरवृष्टि करने लगे हिन्दूसैनिक अनुत्साह हो कर कहने लगे कि, दैव ही हम पर रुष्ट है। अतएव उन्होंने कापुरुषता दिखा कर कुछ भी उसका प्रतिकार न किया और किलेका द्वार खोल महमूदको वुला लिया। महमूदने वडे आनन्दके साथ किलेमें प्रवेश किया और उस युग युगान्तरकी संगृहीत धन-राशिको जा कर देखा। दुर्गका रत्नभाण्डार कुवेरकी अलकाकी तरह अगणित मणिमुक्तादि और सोनेसे भरा था। लाखों वर्षकी सञ्चित धनराशि मणिमाला, स्थूल मुक्ता, साम्राज्यकी लूटी हुई अपार धनसम्पत्तिकी पर्वतोपम ढेर लगी थी। वडे वडे राजाओंके दिये शक्तिप्रतिमाका कण्ठाहार और अन्यान्य आभूषणोंका अभाव दिखाई देता था। महमूदने अपने दो विश्वासी नौकरके साथ इस धनागारमें प्रवेश किया। इन दोनों पर चादी रुपेकी ढेरोंका भार छोड आप मणिमुक्ता तथा हीराकी ढेरकी तरफ बढ़ा। महमूदके लाखों ऊंट भी उस अतुल धनागारको उठानेमें समर्थ नही हुए। सैनिकोंको हुक्म दिया गया, कि तुम लोग भी ढोओ। महमूदके सैनिक भी ढोने लगे। सत्तर करोड दिरहाम यानी मुद्रा, सात हजार वार मन सुवर्णखण्ड और इसके सिवा सैकडों वनारसी साडिया, मखमली कामदार कपडे, आदि कितनी ही गृहसामग्री मुसलमानोंको हाथ लगीं। इन चीजोंमें एक ६० हाथ लम्बी और ५० हाथ चौडी चांदीकी वनी एक वृहत् अट्टालिका थी। यह ऐसे कौशलसे वनाई गई थी, कि इच्छानुसार छोटी और वडी कर ली जाती थी और इसे खोल कर भी अलग कर लिया जाता और फिर जोड़ दिया जाता था। एक और ४० हाथ लम्बा सुवर्णमय चन्द्रातप सुवर्णके खम्भों पर अवस्थित था। उसका ऊपरी भाग रोम नगरके वने कामदार रेशमी कपडेसे ढंका रहता था। इसके सिवा छोटी छोटी अगणित चीजें थी।

महमूद इस वार अत्यन्त प्रसन्नताके साथ गजनी चला। उसने राजधानीमें पहुंच अपने आंगनको चांदीसे मढवा कर उसमें मणिमुक्ता हीरा आदि वखेर दिये। लाख अमलकीके मानिन्द मोटे मुक्ता, कई सौ मरकत, पन्ना, नीलम, चन्द्रकान्त, डिम्बाकार कितने ही वैदुर्य्य आदि मणिखण्ड उसके आगनको प्रकाशित करने लगे।

इसके वाद महमूदने वागदाद और तुर्कोंके राजाओंको बुला कर इस अतुल भण्डारको दिखलाया। वूढे मुसलमान मन्त्री कहने लगे, कि प्राचीन कालमें फारस और रोम साम्राज्यके राजाओंने इस धनराशिके सहस्रांशका एक अंश भी सञ्चित नहीं किया था। और तो क्या, कारुणको विधाताने जो कल्पतरु प्रदान किया था, उनको भी इतनी मणिमुक्ता नहीं थी।

सन् १०१० ई०में महमूदका आक्रमण नारायणमें हुआ था। फिरिस्तामें इसका कुछ भी जिक्र नहीं आया है, किन्तु मुसलमान इतिहासकारोंने इसका उल्लेख किया है। इतिहासकारोंने इसका आधुनिक नाम निरूपण करनेमें वडी गड़वड़ी कर दी है। किसीका कहना है, कि नारायणका आधुनिक नाम नार्दिन और कोई कहता है, अनहलवाड। जो हो, यहां आक्रमण करनेमें महमूदके विपुल साहसका परिचय मिला था। यहां भी महमूदको अगणित सोना, रूपा, हाथी घोडे प्राप्त हुए थे। इसके वारवार आक्रमणसे भीत हो कर जयपालने महमूदसे संधि कर ली। स्थिर हुआ, कि जयपाल महमूदको वहुमूल्य वस्तुओंके उपहारके साथ ५० हाथी, दो सहस्र पैदल सैनिक हर वर्ष देंगे।

सन् १०११ ई०में महमूदने नारायण जय करनेके वाद गौडराज्यको जीता और अपने आठवें आक्रमणमें मुलतानके करमतियोंको कैद किया। राजधानीको लूटपाट कर महमूद दाउदको पकड़ गजनी ले गया।

सन् १०१३ ई०में महमूदने अपनी विपुल वाहिनियों-के साथ झेलमके निकटके बालनाथ-पर्वत पर विराजित निन्दन दुर्ग पर आक्रमण किया। यह इसका नवां आक्रमण था। यह शरत् कालमें गजनीसे चला। जब भारतके सीमान्त पर गिरिसङ्कटमें आया, तब उसे बड़े संकटका सामना करना पड़ा। क्योंकि सीमान्त पर पहुंचनेसे उसने देखा, कि पथ तुषाराच्छन्न है। तुषारसे वहांकी जमीन इस तरह ढंक गई थी, कि लता, गुल्म, वृक्ष, नद, नदी, झील आदि किसी चीज़की खोज करना असम्भव था। महमूदके ऊंट और सैन्य जड़वत् हो गये। दिग्मण्डल तूफान आदिसे परिपूर्ण था। किसी-को अब दिशाका भी ज्ञान न रहा। किन्तु महमूदका साहस नहीं छुटा। यह उद्योग करता ही रहा। ईश्वर पर भरोसा कर उस जंगल और पहाड़को पार करने लगा। अश्वारोही सैनिकोंको कई दलोंमें विभाजित कर एक एक सेनापतिके हवाले कर दिया। निन्दनराज पुरु जयपाल निडर भीमपाल नामक सुदक्ष सैनिकके हाथ दुर्गरक्षाका भार दे कर आप काश्मीर पधारे। भीमपाल एक छोटे दुर्गम पथसे अपनी फौजोंके साथ गिरिसङ्कटके करीब आ कर घेरा डाल कर बैठ गया। मह मूद थक गया था। इसने इस समय युद्ध करना उचित न समझ यह पर्वत पर चढ़ने लगा। इसके अफगानी सैन्य बकरोंकी तरह पर्वत पर चढ़ने लगे। वहांसे अफ-गानी सैन्य भीमपालके सैनिकों और हाथियों पर तीर बरसाने तथा पत्थर फेंकने लगे। कई दिन तक प्राण-पणसे चेष्टा करके भी अफगानी भीमपालका विशेष कुछ बिगाड़ न सके। अन्तमें महमूदकी कापुरुषतासे चिढ़ कर भीमपालने समतल भूमिमें युद्ध करनेके लिये तय्यारी की। हस्ती श्रेणी इसकी दोनों बगलोंकी रक्षा करने लगी। भयङ्कर युद्ध हुआ। महमूदने हार जानेके भयसे अपने सैनिकोंको पर्वत पर चढ़ जानेका आदेश दिया। वहांसे ही वे भीमपाल पर तीर बरसाने लगे। महमूदका प्रधान योद्धा आबु अबदुल्ला घायल हो चुका था। इस-को बहुत गहरी चोट लगी थी। उसको प्राण-संकटमें देख कर महमूदने अपने शरीररक्षकों द्वारा इसका उद्धार किया।

सारा दिन तुमुल संग्राम हुआ। अन्तमें मह-मूद ही विजयी हुआ। हिन्दुओंकी मृतदेहसे पर्वत-उपत्यका भर गई।

निन्दनके बुद्ध-मन्दिरमें महमूदको एक शिला-लिपि मिली थी। इससे महमूदको मालूम हुआ कि यह मन्दिर उस समयसे ५०००० वर्ष पहलेका बना है। किन्तु मुसलमानोंके धर्म ग्रन्थोंसे सात हजार वर्ष मात्र पृथ्वीकी सृष्टि है। इससे महमूदको यह बात झूठी प्रतीत हुई। इस मन्दिरमें भी अगाध धनराशि थी। इसे उठा कर महमूद गजनी ले गया।

सन् १०१४ १५ ई०में इसका १०वां आक्रमण हुआ। पहलेसे ही महमूद सुन चुका था, कि भारतवर्षमें थानेश्वर मन्दिर बहुत विख्यात है। थानेश्वर राजाके पास बहुतेरे सिंहली हाथी हैं। इसका वर्णन करना कठिन है, कि उसके पास कितना धनभाण्डार था। इससे इसको विकलता हुई। सुतरां यह बातें सुनते ही धन लोभान्ध महमूद थानेश्वरकी ओर चल दिया। अधीनस्थ राजा आनन्दपालको खर्चके लिये रसद और लड़नेके लिये सैनिक जुटानेके लिये पत्र लिखा। आनन्दपाल उपयुक्त रसदका इन्तजाम कर दो हजार सैनिकोंके साथ अपने भाईको गजनी महमूदके पास भेजा और कहा, कि जा कर मेरा यह संदेशा कह देना कि थानेश्वर हिन्दुओंका पवित्र मन्दिर है। यह उपासकोंकी उपासनाका एकमात्र उपासना-स्थान है। अतएव आप उस पर आक्रमण करने-का ख्याल अपने दिलसे भुला दें—आपको उसके कर-स्वरूप बहुतेरे मणि-मुक्ता उपहारके साथ ५० हाथी प्रति-वर्ष भेजे जायेंगे।

महमूदने इसका उत्तर यों लिख भेजा, 'पृथ्वीकी प्रतिमाओंको तोड़नेके लिये ही मेरा जन्म हुआ है। ईश्वरने मुझे ऐसा ही उपदेश दिया है। इसके पुरस्कार-स्वरूप मुझे स्वर्ग मिलेगा।' फलतः थानेश्वर-आक्रमणसे वह विरत नहीं हुआ।

यह समाचार दिल्लीके राजाको भेजा गया। दिल्लीश्वर-ने महमूदके विरुद्ध भारतीय सभी राजाओंको उत्तेजित-किया। हिन्दुओंके युद्धके आयोजन होनेके पहले ही मह-मूद थानेश्वर आ पहुंचा। थानेश्वर जाने पर जिस मह-

भूमिको उसने पार किया, उससे पहले और किसीने भी उसे पार नहीं किया था।

थानेश्वरके निकट निर्मलजल स्रोतस्विनी बहती थी। महमूदने नदीके उत्पत्ति-स्थानमें जा कर देखा कि हिन्दू-सेना हस्ती, अश्व और पैदल आदिका व्यूह रच कर खड़ी है। महमूदने हिन्दूओंके सम्मुख कुछ थोड़ी सी सेना रख और सेनाओंको दूसरी ओर उस नदीको पार करनेका आदेश दिया। हिन्दू दो तीन ओरसे आक्रान्त होने पर भी भीम-पराक्रमसे युद्ध करने लगे। उस दिन शाम तक किसी-ने भी विजय नहीं पाई। अन्तमें विजयलक्ष्मी मुसल-मानोंकी अङ्कशायिनी हुई। सिवा एक हाथीके सभी हाथी महमूदने छीन लिये।

बीस हजार सैनिक इस युद्धमें मारे गये। रक्त स्रोतसे नदीका श्वेतनिर्मल जल रक्ताभ हो कर मानव समाजके लिये अपेय हो गया। थानेश्वरका अतुल ऐश्वर्य्य महमूदके हाथ लगा। वहाकी 'जगसोम' प्रतिमूर्त्ति गजनीमें लाई गई। वहा उस मूर्त्तिको बीच रास्तेमें खड़ा कर दिया गया। और जो जाता था, उस मूर्त्ति-पर चरण प्रहार करता था। अन्तमें मुसलमानोंने उस मूर्त्तिका सर अलग कर दिया। मन्दिरके भीतर कुबेर-के भण्डारको अगणित धनराशि थी। कन्दहारके हाजो महम्मदका कहना है, कि उस धनका एक हीरा ४५० मिष्काल वजनमें था। ऐसा बड़ा हीरा पृथ्वीमें दिखाई नहीं देता। महमूद सारा धन ले कर थानेश्वरसे चला। उसकी इच्छा रास्तेमें दिल्ली जीतनेकी थी, किन्तु उसके सैनिकोंकी इच्छा न रहनेसे उसको इस कामसे विरत होना पड़ा। जाते समय महमूद दो लाख नर-नारियोंको कैद कर ले गया। हिन्दुओंके गजनीमें पहुं-चने पर वह हिन्दू नगर सा जान पड़ता था।

सन् १०१६ ई०में इसका लोहकोटका ग्यारहवा आक्रमण है। लोहकोट किला काश्मीरकी राहमें अत्योच्च पर्वतकी चोटी पर बसा हुआ है। महमूद इस चढ़ाईमें बहुत ही क्षतिग्रस्त हुआ। तुषारपात और बाढ़से उसके बहुत सैनिक बह गये या मर गये। इसके पहले महमूदको इतनी गहरी क्षति नहीं हुई थी और न वह खाली हाथ फिरा ही था। इस बार उसे खाली हाथ गजनी लौटना पड़ा।

सन् १०१८-१९ ई०में इसका मथुरा और कन्नौज पर बारहवां आक्रमण हुआ। लोहकोटसे पराजित हो कर महमूदको कई दिनों तक आहार निद्रा आदि त्याग-करना पड़ा था। किन्तु फिर वह भारत पर चढ़ाई करने-का उपाय सोचने लगा। मथुरा और कन्नौजको धन-राशिका सुखद समाचार उसके कानोंको सुनाई दिया। इस बार उसने बीस हजार नये सैनिक भर्ती कर भारत-की ओर यात्रा की।

इस बार महमूद एक लाख घुड़सवार सैनिक तथा बीस हजार पैदल ले कर चला। तीन महीने अनवरत चल कर उसने सिन्धुनद पार किया। इसके बाद झेलम (चनाब), चन्द्रभागा, रावी, व्यासा, सतलज आदि पांच गहरी नदियोंको पार कर महमूद पञ्जाब पहुंचा। काश्मीरका एक शासक उसका पथ प्रदर्शक बना। दिनरात अविश्रान्त चल कर उसने सन् १०१८ ई०की २रो दिस म्बरको यमुना नदी पार किया। रास्तेमें जो पहाड़ो किले मिलते गये, उन्हें एक एक कर जीतता गया और लूट-पाट मचाता गया। अन्तमें वह बुलन्द शहरमें दाखिल हुआ। यहां हरदत्त नामका एक राजा राज्य करता था। मन्त्रियोंने मुसलमानोंकी सेनाको देख कर हरदत्तसे कहा,—स्वर्गीय दूत पृथ्वीमें धर्मप्रचार करनेके लिये अगणित सैन्य ले कर आपके राज्यमें आ रहा है। आकाशमें विमान पर आरूढ़ हो देवकन्यायें अपने वैद्यु-तिक प्रकाशसे दिग्मण्डलको प्रकाशित करती हुई उसके साथ आ रही हैं। अब हम लोगोंकी रक्षा नहीं। राजाने पूछा, कि तब हम अपने धनजनकी रक्षा कैसे करें? इस पर विचक्षण मन्त्रियोंने कहा, कि तुम मुसलमान धर्म ग्रहण करो।

हरदत्तने राज्यकी प्रतिमाओंको नदीगर्भमें सुरक्षित कर अपने १०००० साथियोंके साथ महमूदके सामने पहुंच मुसलमान धर्म स्वीकार कर लिया। यहांसे कुलचांद-के प्रसिद्ध किलेकी ओर महमूद रवाना हुआ। यहा पहुंच उसने एक करोड़ रुपया तथा ३० हाथी लिये थे। कुलचांद एक वीर राजा था। समर-विजयी कह कर वह भारतमें प्रसिद्ध था। उसकी राजधानी चारों ओरसे दुर्भेद्य किलोंसे घिरी हुई थी। चारों ओरसे बहुत बड़

बड़े हाथी खड़े हो कर शत्रुओंके कलेजेको कंपा देते थे। उसके ऐश्वर्यकी सीमा न थी। मणिमुक्तासे उसका घर सदा दैदीप्यमान रहता था। सोने चाँदीके बरतन ही उसके घर दिखाई देते थे। और तो क्या, उसके घरके सभी साज-सामान स्वर्णविमण्डित थे।

कुलचांद स्वदेश प्रेमसे उत्साहित हो कर महमूदसे लडनेके लिये अग्रसर हुआ तथा हाथी, घुड़सवार, सैनिक और पैदल सैनिकोंको साथ ले कर एक वनमें रहने लगा। इस वनकी एक ओर एक नदी बहती थी। यह उसके लिये एक खाईका ही काम देती थी। कुलचांदने महमूदके साथ लडाई छेड दी। घमसान लडाई होने लगी।

कुलचांदकी फौजें पर्वतोपम खडी रह कर असीम वीरत्व प्रकाशित करने लगी। किन्तु महमदकी एक लाख सेना द्रुतगतिसे किलेमें घुसने लगी। कुलचांदने इसे रोकनेकी बडी चेष्टा की, किन्तु सैन्यकी कमीसे वह असमर्थ हुआ। जीतना असम्भव देख उसने किलेमें पहुंच अपनी पत्नीका वध कर आत्महत्या कर ली। महमूदने खूब लूटा, स्वेच्छापूर्वक सब धन लूट लिया। १८५ हाथी उसके हाथ लगे। इस युद्धमे कितने हिंदू डूब गये और कितने ही कट मरे, किंतु उन्होंने पीठ नही दिखाई।

मथुरा-आक्रमण।

इसके बाद विजयसे उन्मत्त महमूद हिंदुओके तीर्थ मथुरापुरी पर आक्रमण करनेके लिये रवाना हुआ। मुसलमान ऐतिहासिकोंने विस्मयविमूढ़ चित्तसे ओजस्विनी भाषामें मथुराके शिल्प तथा धनवैभवका जो वर्णन किया है, उसे देख यह स्पष्ट मालूम होता है, कि उस समय भी कृष्णकी लीलाभूमि मथुरामें पुराने कीर्त्तिकलापका चिह्न मौजूद थे। कलकलनादिनी कालिन्दी वंशीस्वरमें सुमधुरतान करुणाकण्ठसे उस प्राचीन कीर्त्तिको स्मृतिपथमें जगा देती थी।

सुलतानने मथुरामे प्रवेश कर जो देखा उसे वह स्वप्नमें भी ख्याल नहीं कर सकता था। उसके मनमें यह हुआ, कि अमरावती नन्दन-कानन और मन्दाकिनीके साथ इस अवनीतल पर उतर आई है। मथुरा मर्मरपत्थरकी चहारदीवारीसे घिरी हुई थी। दो किले यमुना-जलसे पत्थरकी सीढियोंसे बने हैं। किसी दूसरी ओरसे नगरमें प्रवेश करनेका उपाय नही। दुर्गके सामने गगनचुम्बी एक विशाल मन्दिर हिंदुओंकी प्राचीन शिल्पकीर्त्तिकी घोषणा कर रहा है। सुलतानने सुना, कि इसे स्वयं विश्वकर्माने बनाया है। इसको भी यह विश्वास हो गया, कि सचमुच ही यह मन्दिर मानवनिर्मित नहीं है। यहां यह कृष्णका प्रमोद कोट कहा जाता है। मन्दिरके बाहर पत्थरो पर खुदी जो मूर्त्तियां थी, उनको देख महमद दंग रह गया। किलेका दरवाजा यमुनामें इस कौशलसे बनाया गया था, कि इच्छानुसार किलेमें यमुनाका जल लाया और निकाला जा सकता था राजपथमे दोनो ओर कालीन्दीके तीर पर सुन्दर शिल्पनैपुण्यसे अलंकृत प्रस्तरनिर्मित दो सहस्र मन्दिरोंको देख महमूद विस्मयविमूढ़ हो गया था। प्रत्येक मन्दिरमें मणिमाणिक्य विमण्डित बहुमूल्य मूर्त्ति थी। मन्दिरोंका भीतरी और बाहरी भागोको देख शिल्पनैपुण्यका अपूर्व परिचय मिल रहा था।

नगरके बीचमें बहुत बड़ा एक मन्दिर था। यह बहुमूल्य मर्मर पत्थरोंसे बनाया गया था। मुसलमान ऐतिहासिक कहते हैं, कि उसके रंग तथा चित्रोंका वर्णन नही किया जा सकता। तारीख ई-जामिनीमें लिखा है, कि सुलतानने कहा था, कि इस तरहका मन्दिर यदि कोई शिल्पकार बनाना चाहे तो इसमे सन्देह नहीं, कि सहस्रों लाखों स्वर्ण मुद्रायें खर्च करने पर भी दो हजार वर्षोंमे ऐसा एक भी मन्दिर बन सकेगा या नहीं। इनकी प्रत्येक मूर्त्तिका वर्णन करना असम्भव है। इनमें पाच प्रतिमायें विशुद्ध रक्तवर्ण सुवर्ण द्वारा निर्मित और प्रत्येक दश हाथ लम्बी तथा निराधार शून्यपथमें खडी या लटक रही हैं। मूर्त्तियोंकी आंखकी पुतलियां महामूल्य हीरोंसे बनाई गई हैं। ५०००० दिरहाम देने पर भी उनमें एक खरीदी नही जा सकती। आखकी पुतलिया ऐसे नीलकान्त मणिसे बनाई गई थी जिसकी स्वच्छतासे पानी तथा मर्मरकी स्वच्छता लज्जित होती थी। उनका प्रत्येकका वजन ४५० मिस्काल था और एक मूर्त्ति दो फीट लम्बी स्वर्ण निर्मित और मणिमण्डित प्रतिमाका वजन ४४०० मिस्काल था। कितनी ही मूर्त्तियां ९८३०० मिस्काल वजनकी भी थीं। प्रतिमायें अधिकांश सोनेकी

बनी थीं। सिवा इनके दो सौ रौप्य प्रतिमायें भी थीं। बीस दिन तक लूटते रहने पर भी महमूद लूट न सके।

नगर लूटपाट कर विधर्मी महमद पत्थरको मूर्त्तिको तोड़ने लगा। कई दिनोंमें मन्दिरोंको तोड फोड, आग लगा कर उसने स्वाहा कर दिया। सहस्र सहस्र मूल्यवान् शिल्पनैपुण्य भस्मराशिमें परिणत हो गई। इसके बाद महमदने नृशंसतापूर्वक लोगोंको मारने लगा। बीस दिनों तक हत्याकार्य चलता रहा। नदीजल रक्त धारामें परिणत हो गया।

कन्नौज पर आक्रमण।

मथुराको तोड़ फोड कर महमूद कन्नौज लूटनेके लिये चला। उस समय वहाका राजा जयपाल राज्य करता था। सुलतानका आना सुन तथा मथुराकी हालत देख सुन कर वह गङ्गा पार कर भाग गया। रास्तेमें जो पहाड़ी किले थे, उनको एक एक कर महमद जीतने लगा। कितने ही मुसलमान बन गये, कितने होने युद्ध भी किया। किन्तु महमूदसे सभोंने हार खाई। इन किलोंसे उसने बहुत धन लाभ किया।

इसके बाद सुलतान दुर्भेद्य प्राचीरवेष्टित सात दुर्गोंसे परिशोभित कन्नौज नगरमें आ पहुंचा। कन्नौज-का सातों दुर्ग भागीरथीके जलसे हो बनाये गये थे। गङ्गाके गभीर जलकी कल-कलनाद धारामें ये दुर्ग प्रवाहित हो रहे थे। गङ्गाके किनारे दश हजार पत्थरोंके मन्दिर थे। मन्दिरमें अङ्कित लेखोंसे सुलतानको मालूम हुआ था, कि यह सब तीन हजार पहलेके बनाये हुए थे। यहांके अधिवासी भाग गये। जो भागे नहो थे, उन्होंने भूपतित हो कर मन्दिरोंकी रक्षाकी प्रार्थना की। किन्तु वे सब भी मारे गये।

सुलतानने सब मन्दिरोंको तहस नहस कर दिया। इन मन्दिरोंमें जो राशि-राशि मणिमुक्ता मिली वह वर्णनातीत है। सारी स्त्रियां कैद की जा कर महमूदके संग चलीं। एक लाख ऊंट, घोड़े, हाथी और फौजें लूटी हुई चीजोंको ले कर बोझके मारे दबे हुए वहांसे रवाने हुईं।

इसके बाद सुलतान ब्राह्मणोंके अध्युषित मुञ्ज दुर्गकी ओर चला। कानपुरके दक्षिण पाण्डु नदीके तीर पर अभी भी उसका ध्वंसावशेष मौजद है। ब्राह्मणोंने महमूदकी वशता स्वीकार नहीं की। यह किला पर्वतके उच्च स्थान पर बना था। रक्तपातके भयसे कितने ही प्राण रक्षाके लिये दुर्गसे नीचे कूद पड़े। किन्तु वे कोई भी प्राण बचा न सके। कितने होने युद्ध किया, अंतमें सुलतानने दुर्ग पर अधिकार कर लिया।

यहांसे सुलतान अस्नी या अस्नीके दुर्गकी ओर चला। इस नगरसे फतेहपुर दस मील पर उत्तर-पूर्व गङ्गाके किनारे अवस्थित था। इसका यथार्थ नाम अश्विनी दुर्ग था। कहा गया है, कि सूर्यपुत्र अश्विनी कुमारने यहां एक महायज्ञ सम्पन्न कर अपने नामानुसार इसका नाम अश्विनी रखा। यहांके राजा चन्देल भोज अत्यन्त बलवान् थे। कन्नौजके राजाको भी इनसे पराजित होना पड़ा था। अश्विनी दुर्गके चारों ओर अथाह जलसे भरी खाई थी। इस खाईके चारों ओर घोर वन बड़े बड़े अजगरोंसे पूर्ण था। जंगल ऐसा घना था, कि दिनको रातका भ्रम होता था और वनमें बहुतेरे सर्प गर्जन करते थे। चन्देल सुलतानके आनेकी बात सुन कर ऐसा घबरा गया मानो यम उसको पकड़नेके लिये आ रहा है। अब वह क्षण भर भी ठहर न सका और वहांसे भागा।

सुलतानके हुक्मसे पांचों दुर्गों के भीतरसे धनरत्न लूटा गया। दुर्गकी सेनाओं पर दुर्ग ढाह दिया गया। बेचारे जीते ही डूब गये और यमलोक सिधारे। बहुतेरी स्त्रियां मर गईं और कुछ कैद हुईं।

इसके बाद सुलतानने सहारनपुरके निकट यमुनाके किनारे पराक्रान्त हिन्दूराजा चांदराय पर चढ़ाई की। चांदरायकी कीर्त्तिध्वजा सारे भारतवर्षमें फहरा रही थी। फिर भी पुरुजयपालके साथ अनेक बार युद्धमें पराजित हो कर चांदरायने उससे सुलह और अपनी लड़कीका विवाह उसके पुत्र भीमपालके साथ करदेना चाहा। जयपालने अपने पुत्र आनन्दपालको विवाह साजसे सजा कर उसके यहां विवाह करनेके लिये भेज दिया। चांदरायने भीमपालको सब साथियोंके साथ कैद कर लेना चाहा। पीछे जयपालने चांदरायके कहनेके

मुताविक धन प्रदान किया। अन्तमें भीमपालके साथ चांदरायकी कन्याका विवाह हो गया। अन्तमे पुरुजयपाल सुलतानके भयसे भाग कर भोजदेवके राज्यमे चले गये। चाँदराय सुलतानके साथ युद्ध करनेके लिये तय्यार था, किन्तु उनके दामाद भीमपालने उनको भाग जानेकी राय दी। अब युद्धकी बात भूल कर वे कुछ धन सम्पत्ति ले कर निविड़ वनमें भाग गये।

सुलतानने चांदरायके प्रसिद्ध पहाड़ी किले पर अधिकार जमा लिया। अपरिमित धनदौलत सुलतानके हाथ लगी। चांदरायको सुलतानने बहुत खोजा, किन्तु उनका कुछ पता नहीं लगा। चांदरायके पास एक बहुत बड़ा हाथी था, यह हाथी स्वयं सुलतानके खेमेके पास चला गया। इस पर सुलतानने यह सोचा, कि इसे खुदाने मेरे पास भेजा है। इसलिये इसका नाम खुदादाद रखा।

चांदरायके राज्यमें सुलतानको तीन करोड दिरहाम (सोनेका सिक्का) मिला था। सिवा इसके मणि मुक्ताकी तो बात ही नहो। यहांसे उसने गजनीकी यात्रा की। उसने वहां जा कर लूटके मालका हिसाव लगाया। बीस करोड़ सोनेका सिक्का, अगणित मणि मुक्ता हीरामोती, १५०० हाथी, और १ लाख कैदी यहांसे वह ले गया था। इन कैदियोंमें अधिकांश स्त्रियां ही थीं। कैदी वीस दिरहाममें वेचे जाने लगे। इराक और खुरासनके व्यवसायी आ कर कैदियोंको खरीद ले गये। मुसलमानभूमि सहस्र सहस्र हिन्दू दासदासियोंसे परिपूर्ण हुई।

सन् १०१२ ई०में उसका १३वां आक्रमण हुआ। सुलतानने सुना, कि कन्नौजराजके उनकी वशता स्वीकार करने पर नन्दराजने उसे मार डाला है। अतः नन्दराजको दण्ड देनेके लिये वह फिर तेरहवां वार भारतमें आया।

इस वार नन्दराजकी मदद करनेके लिये पुरुजयपालने यमुना किनारे अपना खेमा खड़ा किया। सुलतान राहमें छोटे छोटे राजाओंकी धनसम्पत्ति लूटते हुए नन्दराजकी ओर बढ़ने लगा। पुरुजयपाल जहां ठहरे थे उसका नाम राहिव था। यहां यमुनाका जल अथाह और किनारा पङ्कमय था। सुलतान नदीके किनारे पहुंच कर नदीको पार करनेके लिये अपने सिपाहियोंको उत्साहित करने लगा। सुलतानके आठ सुदक्ष सैनिक तैर कर नदी पार होनेके लिये उतरे। पुरुजयपालने बड़ी चेष्टा की, कि यह सिपाही पार न उतरें, किन्तु वह सिपाही पार हो आये। धीरे धीरे सुलतानके सभी सिपाही इस पार आ गये। डरपोक पुरुजयपाल भाग गया। सुलतानको २७० हाथी हाथ लगे।

यहांसे सुलतानने नगरोंको लूटता, मन्दिरोंको तोड़ता हुआ नन्दराजके पास वशता स्वीकार करनेके लिये अपना एक दूत भेजा। नन्दराजने अस्वीकार कर दिया और युद्धकी तय्यारी करने लगे। उनके पास ३६ हजार घुड़सवार, १ लाख पैदल और ६४० सिखाये हुए हाथी थे। उधर सुलतान नन्दराजकी निर्भीकताका कारण ढूंढनेके लिये पर्वत पर चढ़ कर उनकी फौजोंको देखने लगा। फौज देख उसके छक्के छूट गये। वह भूमि पर गिर कर ईश्वरसे जीतकी प्रार्थना करने लगा।

रातको आकाश मेघाच्छन्न हुआ, रजनीने घोर अन्धकारका साम्राज्य फैला दिया। नन्द उसी रातको दुःस्वप्न देख कर भयसे भयभीत हो कर वहांसे भाग गये। महमूदको सवेरे यह खबर मिली, किन्तु उसको यह विश्वास नहीं हुआ। गुप्तचरोंसे पक्की खबर पा कर उसने लूटना शुरू किया। १८० हाथी और अपरिमित धन भाण्डार उसके हाथ लगा। इस धनभाण्डारको पशु भी ढोनेमे असमर्थ हुए। वह फिर गजनीको यहांसे रवाना हुआ।

सन् १०१३ ई०मे किरात, नूर, लोहकोट और लाहौरमें उसका १४वां आक्रमण हुआ। उसने गजनी जा कर सुना, कि जलालाबाद और पेशावरके उत्तर पार्श्वमे मूर्त्तिपूजक रहते हैं। अनेक कारीगर और पत्थर काटनेवाले मिस्त्रियोंको साथ ले कर वह वहां पहुंचा। किरातगण सिंह और सिंहवानोकी पूजा करते थे। यहां बहुतेरे बौद्ध ध्वंसावशेष दिखाई देते हैं। किरातोंने मुसलमान बन कर वशता स्वीकार कर ली। नूरदेशके राजाने भी किरातोंका ही अनुसरण किया।

यहांसे सुलतान लोहकोट पर आक्रमण करनेके लिये चला। यह किला काश्मीरके सीमान्त पर है। महमूदने

काश्मीरको फतह करनेकी गरजसे काश्मीरकी यात्रा कर दी और लोहकोटके दुर्भेद्य किलेके पास आ पहुंचा। दुर्ग ऊंचे पर्वत पर बना था। एक मास तक चेष्टा करने पर भी सुलतान महमूद किलेके पास नहीं पहुंच सका। पहाड़ी बकरोंकी तरह विकट पहाड़ों पर चढ़नेमें पटु सिखो सिखाई महमूदकी फौज किसी तरह भी किलेके पास पहुंच न सकी। महमूद हतोत्साह हो लाहौर जा कर कुछ लूट पाट कर गजनीको लौट गया।

सन् १०२३ ई०में ग्वालियर और कालिञ्जरमें उसका १५वां आक्रमण हुआ। इस बार नन्दराजके राज्य पर आक्रमण करनेके लिये ही वह भारतमें आया था। उसने पहले ग्वालियर पहुंच कर ३५ हाथी और पारितोषिक ले कर सुलह कर ली। इसके बाद वह कालिञ्जरके लिये आगे बढ़ा। कालिञ्जरके सामने अजेय किला भारतमें और कोई नहीं था। कालिञ्जरराजने युद्धके पल्लेमें न पड़ कर ग्वालियरकी तरह सन्धि कर ली। नन्दराज कविता करना जानते थे, उन्होंने सुलतानके गुणकीर्त्तनकी एक कविता हिन्दीमें बनाई। यह कविता और उपहार भेज कर इन्होंने भी वश्यता स्वीकार कर ली। सुलतानके कवियोंने कविता पढ़ कर नन्दकी बड़ी प्रशंसा की। सुलतानने प्रेम भावसे नन्दसे कर लिया और तब वहांसे गजनीको लौटा।

सोमनाथका आक्रमण।

सन् १०२४ ई०में महमूदका १६ वां आक्रमण सोमनाथके मन्दिर पर हुआ। जिस समय मथुराके मन्दिरोंको सुलतान तोड़ रहा था, उस समय सोमनाथके पुजारियोंने कहा था, "विधर्मी सुलतान यहां आने पर अच्छी तरह दण्ड पायेगा।" यही बात सुन कर सुलतानके मनमें सोमनाथके आक्रमणको इच्छा बलवती हुई थी। इसके अनुसार मुलतानसे होता हुआ वह अजमेरमें आ पहुंचा। उसने अजमेर लूट पाट कर बहुत धन प्राप्त किया। यहांसे सोमनाथ पहुंचनेमें बाईस कोसकी एक मरुभूमि पार करनी पड़ती थी। सुलतानने पहले हीसे उसकी व्यवस्था कर ली थी। ३० हजार ऊंटों पर पानी और रसद ले कर सुलतान अनहलवाड़की ओर चला। वहांका राजा भीम सुलतानका आना सुन कर भागा और एक निकटके किलेमें छिप गया। सुलतान किलेको तोड़ फोड़ कर, इसकी धनसम्पत्ति लूट पाट कर और मूर्त्तियों तथा मन्दिरोंका नाश कर सोमनाथकी ओर चला। राहमें एक हिन्दूराजने बीस हजार सैनिकवीरोंको ले कर सुलतान पर आक्रमण किया था। किन्तु उस विशाल बाढ़िनी विधर्मी फौजोंके आगे वह क्या कर सकते थे। वे बेचारे भी पराजित हुए, किन्तु डरपोककी तरह पीठ दिखा कर नहीं। यहां भी विधर्मी सुलतानको बहुतेरे सामान हाथ आये। स्त्रियां कैद कर ली गई। फिर यह आगे बढ़ा और सोमनाथमें जा पहुंचा। कहा जाता है, कि सोमनाथ मन्दिरको सोमनामक किसी राजाने समुद्रके किनारे बनवाया था। समुद्रके किनारे यह मन्दिर एक पहाड़की तरह दिखाई देता था। समुद्रकी तरङ्गमाला मन्दिरके पाददेशको धोती हुई बहती थी। इस मन्दिरके अलीन्द समुद्र तक फैली हुई थी। ५६ सीसमके बने खंभे अलिन्दोंको घेर मन्दिरकी दृढ़ता सम्पादन कर रहे थे। इसके भीतर एक विशाल मण्डपमें एक प्रकाण्ड शिवलिङ्ग विराजमान थे। मूर्त्ति दश हाथ लम्बी और तीन हाथ चौड़ी थी। मन्दिरके मध्यभागमें चूड़ा देशसे दो सौ मन वजनकी एक सुवर्ण शृङ्खला थी। इसमें ७ हजार घण्टे लटकते थे। प्रदोषकालमें आरतीके समय दो सौ ब्राह्मण इसको पकड़ कर हिलाते थे। इसकी ध्वनि समुद्र तरङ्गमें प्रतिध्वनित हो कर दिग्मण्डलको गुंजायमान करती थी। मन्दिरमें निविड़ अन्धकार रहने पर भी सुवर्णमय दीपोंसे सुसज्जित नीलम, लाल और सादे सैकड़ों हीरोंकी समुज्ज्वल छटासे अलौकिक प्रकाश होता था। यह प्रकाश रात्रिको दिन बना देता था। दो हजार कोससे गङ्गाजल ला कर नित्य शिवलिङ्गको स्नान कराया जाता था। मन्दिरकी देव सेवाके लिये दश हजार देवोत्तर ग्राम नियत थे। एक हजार ब्राह्मण नित्य शिवलिङ्गकी पूजा करते थे। तीन सौ हज्जाम यात्रियोंकी हजामत बनाया करते थे। ३५० बन्दी प्रति दिन मन्दिरके दरवाजे पर स्तुति गान करते थे। ३०० गायक भजन गा गा कर यात्रियोंका चित्तरञ्जन करते थे। ५०० रूपलावण्य परिपूर्ण गणिकायें अपनी नृत्य कलासे लोगोंको मुग्ध किया करती थी। अगणित दास

दासियोंकी संख्या नहीं थी। सभी लोगोंको दैनिक वेतन दिया जाता था। सहस्र सहस्र मनुष्य मन्दिरसे प्रसाद पाते थे। चन्द्र और सूर्यग्रहणके समय लाखों यात्री विविध देशोंसे तीर्थदर्शनके लिये आते थे। उस समय इस शिव-मन्दिरकी अपूर्व छटा हो जाती थी। मन्दिरके भीतर शिवलिङ्गका शिखर एक चन्दातप नक्षत्रखचित नीलाम्बरकी तरह प्रतीयमान होता था।

महमूद वृहस्पतिवारके दिन सोमनाथके पास पहुंचा। मंदिरके चारों ओर पहाडकी तरह पहाड़ी चहारदीवारी खड़ी थी। सुलतानने दूरसे देखा, कि मंदिरके रहनेवाले चहारदीवारीकी मोटी छत पर नाच गान कर रहे हैं। पुजारियोंने मुसलमानोंके अर्द्धचन्द्राङ्कित पताकाको देख कर मंदिरका दरवाजा वन्द कर लिया। सुलतानने रात भर मंदिरके वाहर ही विताया। सबेरे मन्दिर पर आक्रमण करनेका मौका ढूंढ़ने लगा। मन्दिरमें घुसनेका कोई पथ न देख लकड़ीकी सीढ़ी वना कर चहारदीवारीको तोड़नेका हुक्म दिया। दलके दल मुसलमान सिपाहीके मंदिरके आंगनमे घुस जाने पर कत्लेआम जारी हुआ। सहस्र-सहस्र मनुष्योंके रक्तसे समुद्रका नील जल रक्तसे रञ्जित हुआ। वाकी जो जीवित वचे, उन्होंने मन्दिरकी रक्षा करनेके लिये सुलतानसे प्रार्थना की, किंतु उसका कुछ भी फल न हुआ। ब्राह्मणोंने मूर्त्तिके वदले दो करोड़ असर्फी देना चाहा, किन्तु सुलतानने किसी तरह स्वीकार नही किया।

रातको कत्ले-आम [वन्द हुआ। सवेरे उठते ही फिर वही कत्लेआम जारी हुआ। मन्दिरके दरवाजे पर जिस तरह कत्लेआम जारी था, उसका वर्णन कौन कर सकता है। दलके दल मुसलमान सिपाही मन्दिरमे घुसने लगे। एक हजार ब्राह्मणोंने हाथ जोड़, भूपतित हो कर देवमूर्त्तिकी भिक्षा मांगी। किन्तु बेरहम सुलतानने इधर जरा भी कर्णपात नहीं किया। जब ब्राह्मणोंने देखा, कि यवन हमको पकड़ ही लेगा, तो उससे युद्ध करना ही अच्छा है। हार निश्चय थी, युद्ध करके ब्राह्मण शिवमन्दिरके लिये कट मरे। ब्राह्मण मर्त्तिके वदले जव दो करोड़ रुपये देने लगे तो सुलतान ने कहा था, 'जव कयामत आयगी, तब खुदा मुझसे पूछेंगे, कि विधर्मियोंके हाथ मूर्त्तिका बेचनेवाला महमद किधर है, तो मैं क्या जवाव दूंगा? उस समय मुझे शर्मसे सर नीचा करना होगा। इससे मैं मूर्त्ति तोडनेवाला ही कहलाना चाहता हूं।' यह कह अपने कुठाराघातसे सुलतानने मूर्त्तिको तोड दिया। उस समय उसने देखा, कि मूर्त्तिमें युगयुगांतरका वटोरा हुआ जवाहर भरा पड़ा है। उसको दो करोड़के वदले सात गुना अर्थात् १४ करोड़से भी अधिक मिला।

मूर्त्ति तोड़ कर खजानेके द्वार पर जा कर उसने देखा, कि दश हजार सोने चादीकी मूर्त्तियां ताखों पर रखी हुई हैं। सिवा इसके खजानेमें इतनी असर्फियां और मणि मुक्ता भरी है, कि उसको कोई गिनने लगे, तो कई वर्षोंमें गिन सकेगा। सुलतानको २० करोड़ असरफियां मिलीं थी। मुसलमान-ऐतिहासिक कहते हैं, कि पृथ्वीकी सारी धनदौलत इकट्ठी करने पर भी सोमनाथकी धनदौलतकी वराबरी नहीं की जा सकती।

मन्दिरके भीतर और वाहर ५० हजार मनुष्य मारे गये थे और वहांकी गणिकाएं दासी वना कर गजनी लाई गई थी। सुलतान भारतका धन वैभव देख कर वहिश्त भी भूल गया। उसने सुन्दर और भव्य इस सोमनाथ मन्दिरमें रहनेकी इच्छा प्रकटकी थी। उसका विश्वास था, कि गुजरातमें हीरा जवाहिरकी खेती होती है, किन्तु वजीरोंके समझाने पर वह सोमनाथसे गजनी लौटा।

सोमनाथको लूट लेनेके वाद सुलतानको खवर मिली, कि अनहलवाड़के राजा भीम लड़नेके लिये फौज एकत्र कर रहा है। यह सुन कर कन्दहारके किले पर आक्रमण करनेके लिये सुलतान आगे वढ़ा। किलेके सामने पहुंच कर उसने देखा, कि एक वडी नदी किलेको खाईके रूपमें घेरे हुई है। उसने अपनी सेनाको नदी पार करनेके लिये कहा, किंतु सिपाही इधर उधर कर रहे थे, यह देख वह स्वयं घोड़े पर चढ़ कर नदीको पार कर गया। हिंदुओंने यह देख कर कहा, कि भगवान् हम पर नाराज हैं। हम लोग किसी तरह जीत नहीं सकेंगे, नही तो महमूद घोड़े पर चढ़ कर नदी कैसे पार कर लेता? इसके वाद फौजोंने नदी पार कर हिन्दुओंको मार पीट करके

सब धन छीन लिया। भीमका सब धन सुलतानके हाथ लगा।

सोमनाथकी मूर्त्तिको उसने चार टुकडे किये थे। इनमें एक खण्डको मक्का, दूसरे खण्डको मदीनेमें और दो खण्डोंको गजनीकी जुम्मा मसजिदकी सीढ़ीमें जड दिया था। उसका उद्देश्य यह था, कि मूर्त्तियोंके ये टुकडे मुसलमानोंके पैरोंसे मसले जायें। एक मुसलमानको वहांका करदराजा बना कर महमूद गजनी लौटा। जाते समय वह चन्दनका किवाड उखाड कर लेता गया था।

गजनी जाते समय उसे यह खबर मिली, कि परमलदेव नामक एक हिंदूराजा मेरी राह रोक कर खडा है और वह युद्ध करना चाहता है। महमदके साथ अपार धन वैभव था, वह इस समय युद्ध करना नहीं चाहता था इससे परम्लदेवके नगर न जा कर दूसरी राहसे गजनी चला गया। इसके लिये उसको मरुभूमि पार करते समय पिपासासे जर्जरित होना पडा था। अब उसके प्राण जानेको ही थे। रात हो चुकी थी। उसने खुदासे प्रार्थना की "हे खुदा पानी भेज।" अब अपनी मृत्यु सुनिश्चित जान अपने पथ प्रदर्शकको मार डाला। यह पथ प्रदर्शक एक हिंदू था। इसके बाद उत्तरकी ओर चमकती हुई एक रेखा दिखाई दी। सुलतान और उसके सिपाही उसी ओर दौडे। उन सबोंने देखा, कि वह रेखा नदी है। जल पी कर वे सब वहासे गजनी चल दिये।

सन् १०२७ ई०में जाटों पर महमूदका १७वां आक्रमण हुआ। लाहौरके निकट जाट अत्यन्त प्रबल प्रतापान्वित थे। इन्होंने मानसूरके अमीरको बलपूर्वक हिंदू बनाया। इनका पराक्रम और सैन्यसंख्या बहुत अधिक थी। इनको दण्ड देनेके लिये महमूदका यह १७वां आक्रमण भारत पर हुआ। सुलतानने मुलतानमें आ कर १४ सौ नावें तय्यार कराईं और जलयुद्धमें जाटोंकी हजार जङ्गी नावोंका ध्वंस कर दिया। जाटोंने निरुपाय हो कर उसकी वशता स्वीकार की। सुलतानने अधिकांश लोगोंको तलवारसे मार डाला। कितनी ही स्त्रियों और पुरुषोंको कैदी बना कर और धन-सम्पति लूट कर महमूद सदाके लिये गजनी चला गया।

ऐतिहासिकोंका कहना है, कि महमूदने हिन्दुस्तानमें २० हजार मूर्त्तियोंको तोडा और बीस हजार मन्दिरोंको मसजिदमें परिणत किया। उसने पूर्व-गजनीसे गङ्गा तक, पश्चिम-आजाम, खुरासान्, तब्रिस्तान इराक, तुर्की, घोर, निमराज्य आदि देशों पर कब्जा कर वहां अर्द्धचन्द्राकार पताका उडाई थी। हिंदुओंके पवित्र सोमनाथकी देवमूर्त्ति उसके शाही महलकी सीढ़ियोंमें जड़ दी गई थी। युद्धमें उसका अत्यन्त बल-पराक्रम था। २५०० हाथी उसके किलेकी रक्षा करते थे। ४ हजार तुर्की सेना उसके शरीररक्षकका काम करती थी। ये राजदरबारके चारों ओर घेर कर खडे रहते और पहरा दिया करते थे। दो हजार खिदमतगार सोनेका छत्र ले कर खडे रहते थे। महमूद जैसा साहसी वीर और पराक्रमी सुलतान कभी भी गजनीके तख्त पर नहीं बैठा।

उसने भारतवर्षसे जा कर इराक पर चढाई कर दी थी। वहासे वह बगदादके खलीफोंको सम्मानित करनेके लिये जाना चाहता था, किन्तु दैववाणी होनेसे लौट आया। सन १०३० ई०में इस हिन्दूद्वेषी महमूदकी मृत्यु हो गई। उसने ३५ वर्ष राज्य किया था।

मृत्युके दो दिन पहले महमूदने अपनी सब धनसम्पत्तिको अपने बडे आंगनमें निकाल कर रखवाया। भारतके कल्पवृक्षके अद्भुत फलको देख कर चमत्कृत हो जाना पड़ता था। वे चमकते हुए मणि माणिक्य देदीप्यमान दिखाई देते थे। आंगन इन रत्नोंके प्रकाशसे प्रकाशित हो उठा। सुलतान इन रत्नोंको निर्निमेष दृष्टिसे देखने लगा। हाथोंसे छुआ भी, किन्तु उसकी तृप्ति नहीं हुई। तब वह बालककी तरह चिल्ला कर रोने लगा। किन्तु कालने इसके रोनेकी जरा भी परवाह नहीं की और उसे अपने गालमें डाल लिया।

मृत्युके समय उसके सात पुत्र थे। इतिहास लेखकोंका कहना है, कि महमूद बडा कंजूस या कृपण था। उसके दरबारमें अनसारी, आसजादी और फरुंखी आदि कवि भी रहते थे। महमदके बुलाने पर विख्यात फारसी कवि फिरदौसी उसके दरबारमें आया था। फिरदौसी देखो। फिरदौसीकी कविता पर मुग्ध हो कर एक दिन

महमदने उससे कहा था, कि तुम फारसके राजवंश पर एक काव्यकी रचना करो। एक शैरके लिये तुम्हें एक असर्फी दी जायेगी। इस पर बड़े परिश्रमसे फिरदौसीने ६० हजार शैर बनाये, किन्तु महमूदने अपना वादा पूरा नहीं किया। इसके बदलेमें जब बहुत निन्दा हुई, तब उसने ६० हजार रुपया भेजवाया था। किन्तु दिलावर फिरदौसीने, जो लोग धन ले गये थे, उन्होंको यह धन बांट दिया था। व्यङ्गभाषामें एक काव्य बना कर महमूदके पास भेज वहांसे चल दिया। इसके बाद कविताका कोड़ा खा कर महमूदने ६० हजार असर्फी ही उसके पास भेजी, किन्तु इन असर्फियोंके पहुंचनेसे पहले ही फिरदौसी कब्रमें पहुंच चुका था।

महमूद—विकाय नामक मुसलमान व्यवहारशास्त्रके प्रणेता। ये बुरहान उल सरियात् नामसे भी मशहूर थे। महम्मद देखो।

महमूद—कन्धारका एक अफगान सरदार। यह घिलजै-वंशीय मीर वाईसका पुत्र था। महम्मद देखो।

महमूद—सुलतान महम्मद सलजुकीका लड़का। इसने सुलतान शहरियारके सहकारी-रूपमें कई वर्ष तक इराक और आजरविजान प्रदेशका शासन किया था। उसके सरल व्यवहार पर प्रसन्न हो शहरियारने सिती खातुन और मा-मालिक नामक दो कन्याओंको उसके साथ ब्याह दिया।

महमूद—मआसिर कुतुवशाही नामक मुसलमान-इतिहासके प्रणेता। इसके पिताका नाम कान्ह फिरोजो था। इसने तारीख-जामा-उल् हिन्द नामक एक इतिहासकी रचना की। श्य राजा कुली कुतुवशाहके जमानेमें इसने प्रायः २० वर्ष तक राजाके अधीन काम किया था। उक्त राजाकी मृत्युके समय अर्थात् १६१२ ई०मे ये जीवित थे।

महमूद—हक-उल्-यकीन नामक पारसियोंका धर्मशास्त्र-प्रणेता। महम्मद सुस्तारी देखो।

महमूद इब्न फराज—एक पाखंड मुसलमान। यह अपनेको मूसा बतलाता था। महम्मद देखो।

महमूद इब्न मसाउद—जिनात्-उज-जमानके प्रणेता।

महमूद खाँ—सिन्धुप्रदेशके अन्तर्गत भक्करका एक शासनकर्त्ता। १५६५ ई०में मिर्जा ईसा तरखानने अपने लड़के मिर्जा महम्मद बाकीके साथ भक्कर पर आक्रमण कर दिया। जब वे दुर्बला नगरके समीप पहुंचे, तब महमूदने दलबल ले कर उनका सामना किया। महम्मद बाकी महमदकी सैन्यसंख्या और पराक्रम देख कर भागनेकी तय्यारी करने लगा। इसी समय उनको मालूम हुआ, कि फिरंगियोंने उनके खट्टदेश पर आक्रमण कर दिया है। अब वे क्षण भर भी यहां न ठहरे, बड़ी तेजीसे स्वराज्यको लौट गये।

महमूद खा खिलजी—मालवके एक शासनकर्त्ता। यह महमूद शाह खिलजी (१म) नाम धारण कर मालव-सिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। इनके पिता खानजहान् खिलजी (मालिक मोगी और आजिम हुमायूं नामसे मशहूर) मालवराज सुलतान होसङ्ग शाहके वजीर थे। सुलतान होसङ्गके मरने पर उसका लड़का महम्मद शाह (दूसरा नाम गजनी खां) मालवका राजा हुआ। महमूदने अपने पिताके साथ षड़यन्त्र करके गजनी खांको विष खिला कर मार डाला और आप १४३६ ई०में मालव-सिंहासन पर बैठ गया। इस समय होसङ्गका दूसरा लड़का मसूद अपने राज्यसे गुजरात भाग गया। गुजरातके राजा सुलतान अहमद शाहने उसका पक्ष लिया और दलबलके साथ मालवको चल दिया।

गुजराती सेना जब सारङ्गपुर पहुंची, तब अहमदशाहने एक चतुर सेनापतिके अधीन खानजहान्के विरुद्ध एक सैन्यदल भेजा। चोहर, भिलसा और चन्देरीसे परिचालित सैन्यदल यदि माण्डुकी सेनाके साथ मिल कर राहमें अलग अलग हो जाता, तो निश्चय था, कि उन लोगोंकी जीत होती। किन्तु उनका यह कौशल व्यर्थ निकला। शामको खानजहान् माण्डु दुर्गमें पहुंचे। गुर्जराधिपति भी उनके पीछे पीछे दुर्गके समीप तक आये थे।

खण्डयुद्धमें असुविधा जान कर महमूद खिलजी दुर्गमें रह युद्धका आयोजन करने लगे। उन्होंने समझा था, कि अतर्कितभावमें शत्रुओं पर चढाई करना ही अच्छा होगा। एक दिन दो पहर रातको उन्होंने गुजराती सेना पर चढ़ाई कर दी। अहमद शाहको गुप्तचर

द्वारा इसकी पहले ही खबर लग चुकी थी । इसलिये वे भी दलबलके साथ बिलकुल डटे हुए थे। उसी अंधेरी रातको दोनोंमें युद्ध होने लगा। सवेरा होने पर महमूदने पुनः दुर्गमें प्रवेश किया।

जब महमूद युद्धविग्रहमें लिप्त थे उसी समय अहमद-शाहके पुत्र महम्मद खांने ५ हजार घुड़सवार सेना ले कर सारङ्गपुर जिले पर आक्रमण कर दिया। इसी समय होसङ्ग खाके लड़के मसूदने भी चन्देरीमें विद्रोह वह्नि प्रज्वलित कर दी। इस प्रकार चारों ओरसे शत्रुओं द्वारा घिरे जाने पर भी महमूद जरा भी विचलित नहीं हुए। वे बड़ी होशियारीसे अपनी सेनाको प्रसन्न रखने-की कोशिश करने लगे। दुर्गमें रसदका अभाव न हो और गुजराती सेनाको रसद न मिल सके, इसका भी महमूदने अच्छा प्रबन्ध कर दिया।

अधिक काल इस प्रकार दुर्गमें आबद्ध रहना अच्छा न समझ कर महमूद ८४२ हिजरीमें तारापुर दरवाजेसे निकल दल बलके साथ सारङ्गपुरको चल दिये। राहमें चम्बल नदी पार करते समय गुजराती सेनापति मालिक हाजीके साथ उनकी मुठभेड़ हुई। युद्धमें हार खा कर हाजी भागा और महमूदका सवाद अपने राजासे जा कहा। तदनुसार गुर्जरराजने अपने लड़के महम्मद खांको उनका मुकाबला करनेके लिये कहला भेजा। महम्मद उज्जयिनी-के रास्तेसे लौट कर जब पिताके समीप पहुचा, तब उधर सारङ्गपुरके शासनकर्त्ताने महमूदका साथ दिया। तब-कत्-इ-अकबरी पढ़नेसे मालूम होता है, कि महमूद महम्मदको खदेड़ते हुए उज्जयिनी तक आये थे। इसी मौके पर उमार खां चन्देरीसे सारङ्गपुरकी ओर बढ़ा। यह संवाद पाते ही महमूद लौटे और शत्रुनाशकी तय्यारी करने लगे।

उमार खाने महमूदकी आगमनवार्त्ता सुन कर कुछ सेना इकट्ठी की और गुप्तभावसे उनका काम तमाम करने-की कामनासे वे सबके सब राहमें छिप रहे। महमूदका भाग्य अच्छा था, वे उसी रास्तेसे दलबलके साथ आ रहे थे। उमार पर उनकी निगाह पड़ गई। अब कोई उपाय न देख उमारको सम्मुख युद्धमें प्रवृत्त होना पड़ा। युद्धमें उमार खां मारा गया।

इस समय गुजराती सेनादलमें हैजा फैल गया इस-से अहमदशाह सब दलबल लौट जानेको बाध्य हुए। उनका रोगग्रस्त सेनादल छत्रभङ्ग हो गया। अहमदके मरने पर उनका लड़का सुलतान महम्मद गुजरातके राज-सिंहासन पर बैठा। १४५१ ई०में चम्पान दुर्गको जीतने-की इच्छासे उसने राजा त्रिभङ्गदासके लड़के गङ्गादास-के विरुद्ध युद्धयात्रा कर दी। युद्धमें हार खा कर गङ्गा दासने दुर्गमें आश्रय लिया। कुछ समय वहां रह जानेके बाद रसद घट गई जिससे सेनाको भारी कष्ट हुआ। अब बचावका कोई रास्ता न देख गङ्गादासने माण्डुके राजा महमूदसे सहायता मांगी। महमूदने सहायता देना स्वीकार किया। इस लिये वे दलबलके साथ मालवा सीमा पर अवस्थित दाहोड नगरमें जा धमके। दोनों पक्षमें लड़ाई छिड़ गई। गुजराती सेना हार खा कर भागी। बादमें महमूद भी अपने राज्यको लौटे (८५४ हिजरी)।

महम्मदको भीरु तथा राजकार्य चलानेमें असमर्थ देख सुलतान महमूद गुजरात पर चढ़ाई करनेकी तैयारी करने लगे। इस समय मुसलमान-साधु शेख कमालके बहकानेसे उन्होंने गुजरात पर चढ़ाई कर दी। महम्मद उनके आनेका संवाद पाते ही नावसे डिउनगर भागनेकी तय्यारी करने लगा। उमरावोंने जब देखा, कि महम्मद राज्यरक्षामें अपनेको असमर्थ जान कर भाग रहा है, तब उन्होंने उसकी बीबीसे यह हाल जा कहा। आखिर सबोंने सलाह कर भीरु महम्मदको विष खिला कर मार डाला।

८५५ हिजरीमें महम्मदके स्वर्गवास होने पर उसका बड़ा लड़का सुलतान कुतुबुद्दीन गुजरातके सिंहासन पर बैठा। इस समय सुलतान महमूद खिलजीने दल-बलके साथ आ कर भरोच दुर्ग-पर आक्रमण कर दिया। दुर्गाधिप मालिक सोजी मर्जान खां उन्हें आत्मसमर्पण न करके दुर्गरक्षाका आयोजन करने लगा।

अनन्तर सुलतान वहांसे बड़ौदाकी ओर चल दिये। बड़ौदा लूटनेके बाद उन्हें मालूम हुआ, कि सुलतान कुतुबुद्दीन अहमदाबादके कुछ वीरचेता व्यक्तियोंकी सहायतासे माहेन्द्री-तीरवर्त्ती खानपुर बांकानीरमें उनके

आगमनकी प्रतीक्षा कर रहा है। इस सम्वाद पर दर्पित सिंहकी तरह महमूद आगे वढे, और रातको एकाएक कुतुवकी छावनी पर टूट पडे। दिनको फिर युद्ध हुआ। १४५१ ई०के मार्च मासमें उद्धत महमूद हार कर नौ दो ग्यारह हुए। उनका विख्यात सेनापति मुजःफर खां पकड़ा और पीछे मार डाला गया।

इस पर भी महमूद हतोत्साह न हुए, फिरसे नागोर जीतनेको निकले। कुतुवुद्दीनने उनकी गति रोकनेके लिये सैयद्अाता उल्लाको भेजा। शम्भरप्रदेशमें दोनों दलमें मुठभेड़ हुई। महमूद पहले ही व्यर्थ मनोरथ हो स्वराज्यमें लौट आये।

इसके कुछ दिन वाद नागोरराज फिरोज खांके मरने पर मुजाहिर खांने राजतख्त अपनाया और फिरोजके पुत्र सामस खांको राज्यसे निकाल भगाया। सामस् खांने कमलमीरमें आ कर राणाकुम्भका आश्रय लिया। पीछे राणाने नागोरके मुसलमानोंको तग तंग कर डाला और उनके नगरको लूटा।

अनन्तर सुलतान कुतुवुद्दीनने क्रुद्ध हो ४६० हिजरीमें राणाकी राजधानी कमलमीर पर धावा वोल दिया। इस युद्धमें राणा पराजित हो प्राणभिखारी हुए थे। दूसरे वर्ष ८६१ हिजरी (१४५७ ई०)-में कुतुवुद्दीन और महमूद खिलजीने मिल कर चित्तोर पर चढ़ाई कर दी। आखिर दोनोंमें मेल हो गया। महमूदको मन्दशोर प्रदेश मिला।

इसके वाद ८६६ हि० (१४६२ ई०)-मे निजाम उल-मुल्कके वहकानेसे महमूद खिलजीने दाक्षिणात्यकी ओर कदम वढ़ाया। उन्होंने हुमायूं शाहके पुत्र निजामशाहको विदरकी लडाईमें हरा कर दुर्गको घेर लिया। इस समय निजामके प्रार्थनानुसार गुर्जरपति महमूद विगाड़ा मालवाराजके विरुद्ध अग्रसर हुए। महमूद खिलजी यह संवाद पा कर गोण्डवानाको राहसे अपने राज्य लौटे। किन्तु राहमे गोंड़जातिने इन पर चढ़ाई कर दी थी, इस कारण इन्होंने क्रोधमे आ कर गोण्डवानापतिको मार डाला।

१४६३ ई०में महमूद खिलजीने फिरसे दाक्षिणात्यकी चढ़ाई कर दी। इस वार भी उनका मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ। कुछ समय तक निरुद्देश रह कर उन्होंने पुनः ८७० हिजरीमे इलिचपुरको आक्रमण किया और लूटा। इस युद्धके वाद शान्ति स्थापित हुई। निजाम शाहने इन्हें केरल प्रदेश दे कर छुटकारा पाया। जो कुछ हो, गुजरपति महमूकी मध्यस्थता तथा उनके शासनभयसे मालवपतिने दाक्षिणात्यकी चढ़ाईसे मुख न मोड़ा।

१४६६ ई० (८७३ हि०)-में महमूद खिलजीका परलोकवास हुआ। वादमें उनका लड़का गयासुद्दीन मालव-सिंहासन पर वैठा। गयासके पुत्र सुलतान २य महमूदके शासनकाल (१५३१ ई०)-में गुजरातके राजा वहादुर शाहने मालवको जीत कर अपने राज्यमें मिला लिया।

महमूद खा तुगलक—दिल्लीके तुगलक (पठान)-वंशीय अंतिम वादशाह। ये फिरोज शाह तुगलकके पौत्र और महम्मद शाहके पुत्र थे। महम्मद विन् फिरोज शाहके मरने पर उनका लड़का हुमायूं शाह १ महीना १६ दिन राज्य करके इस लोकसे चल वसे। पीछे उनके छोटे भाई महमूद खा १३६४ ई०के अप्रिल मासमें, जब उनकी उमर सिर्फ दश वर्षकी थी, नाशिर उद्द दुनियार उद्दीन महम्मद शाह नाम धारण कर दिल्लीके सिंहासन पर अधिरूढ़ हुए।

वालक राजाके शासनकालमे शासनविश्रृङ्खलता तथा अमीर उमरावोंके अन्तर्विप्लवके कारण राज्यमे सामतराजाओंने विद्रोह खड़ा कर दिया। इस सूत्रसे वहुतेरे सामन्तराज स्वाधीन हो गये। मौका पा कर इसी समय मुगलपति अमीर तैमूरने भारतवर्ष पर चढ़ाई कर दी। मुगलसेनाओंके साथ परास्त हो कर महमूद शाह गुजरातकी ओर भाग गये। ऐतिहासिक फिरिस्ताके मतसे १३९९ ई०की १५वीं तथा सरफउद्दीन वेजदीके मतसे १३९८ ई०की १७वीं दिसम्बरको यह युद्ध हुआ था।

महमूदके भागने पर तैमूर शाहने उसके दूसरे ही दिन दिल्लीके सिंहासनका अधिकार कर लिया। यहां लूटमें उन्हें जो कुछ माल लगा था उसे ले कर थोड़े ही दिनोंके अन्दर वे फारसको चल दिये।

इधर सुलतान महमूद शाहको गुजरातमें जाफर खां

तथा मालवमें आलप खांके यहां शरण न मिली, तव कन्नौज-राजधानीमें जा कर रहने लगे। तैमूरके जानेके बाद फिरोज शाहके पौत्र तथा फतेखांके पुत्र नसरत खां-ने नसरत् शाह नाम धारण कर दिल्ली-सिंहासनको अप-नाया। इस समय दिल्ली दरवारमें सिर्फ एक आदमी-की चलती थी जिसका नाम एकवाल खां था। आखिर १४०० ई०में दिल्ली-सिंहासन पर एकवाल खांने ही कब्जा किया। १४०५ ई०में अमीर तैमूरके मरने पर एकवाल खांने सुलतान महमूदको जब्त करनेकी इच्छासे कन्नौज पर चढाई कर दी। किन्तु मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ और वे पुनः दिल्ली लौट आये।

दूसरे वर्ष १४०५ ई०में जाफर खां सुलतानके सहायतार्थ दलवलके साथ दिल्लीको रवाना हुए। इसी समय उन्होंने सुना, कि खिजिर खांके साथ भीषण युद्धमें एकवाल खां मारा गया। अतः उन्हें यात्रा रोक देनी पड़ी।

एकवाल खांका मृत्युसंवाद पा कर सुलतान मह-मूद दिल्ली लौटे और उसी सालके दिसम्बर मासमें दूसरी वार दिल्ली तख्त पर बैठे। किन्तु प्रादेशिक शासनकर्त्ताओंने अव उनकी अधीनता स्वीकार न की। वे लोग राष्ट्रविप्लवमें शामिल हो कर स्वाधीन हो गये। १४१३ ई०के मार्च मासमें सुलतान महमूदकी मृत्यु हुई। उन्हींके कुशासनसे दिल्लीसाम्राज्य तुर्क-जातिके हाथसे निकल कर दौलत खां लोदीके हाथ लगा।

महमूद गवान—एक राजनैतिक मुसलमान। साधा-रणतः मालिक उत्-तज्जर ख्वाजा जहान् नामसे इनकी प्रसिद्धि थी। ये दाक्षिणात्यके वाह्मनीराज निज़ाम शाहके वजीर थे। २य महम्मदके शासनकालमें वकिल-उस सुलतानका काम इन्हीं पर सौंपा गया। इनके जो सव शत्रु थे, वे हमेशा इसी फिक्रमें रहते थे जिससे यह राजाकी आंखोंसे उतर आवे। आखिर एक दिन सबोंने षड़-यन्त्र रच कर इनके विरुद्ध जालसाजीका अभियोग लगाया। राजाने इस वातका पता लगाये विना ही इन्हें प्राणदण्डका हुकुम दे दिया। महमूद विशेष सुशि-क्षित व्यक्ति थे। राजनैतिक विषयमें इनका पूरा दखल था। यथार्थमें इन्हींके नीतिकौशलसे दाक्षिणात्यके राजन्यवर्ग सशङ्कित हो गये थे। मृत्युसे कुछ काल पहले इन्होंने महम्मदशाहका गुणानुकीर्त्तन करके एक पद्यकी रचना की थी। ये रौजात् उल-हनसा तथा और भी कई पद्य लिख गये हैं।

महमूद घोरी (गयासुद्दीन) भारत-विख्यात गयासुद्दीन महम्मद घोरीका लड़का और शाहवुद्दीन महम्मद घोरीका भतीजा। यह १२०६ ई०में घोर और गजनीके सिंहा-सन पर बैठा। आखिर यह ताजउद्दीन एलदुजको गजनीका सिंहासन छोड़ देनेको वाध्य हुआ। १२१० ई०में इसकी मृत्यु हुई।

महमूद ताव्रिजी—ताविजवासी एक मुसलमान-कवि। ये मिफताह-उल याजाज नामक अपने ग्रन्थमें सूफीमतकी विशेष प्रशंसा कर गये हैं।

महमूद तिस्तरी—गुलशान-ए राज नामक काव्यप्रणेता। जन्मभूमि तिस्तर नगरमें ही १३२३ ई०में अर्थात् ग्रन्था-वली शेष करनेके तीन वर्ष पीछे इनकी मृत्यु हुई।

महमूदपर्शा (ख्वाजा)—महम्मद पर्शा देखो।

महमूद मुल्ला—महम्मद मुल्ला देखो।

महमूद लोदी—विहारके एक पठान शासनकर्त्ता, सिकन्दर लोदीके पुत्र। शूरवंशीय प्रसिद्ध पठान-सरदार इनके अधीन काम करता था। महमूद वावर शाह द्वारा परास्त हुए थे।

महमूद विगाड़ा—गुजरातके एक विख्यात सुलतान, सुल-तान महम्मदशाहके पुत्र। इनकी माताका नाम वीवी मोगली था। इस कारण सुलतान कुतुव उद्दीनशाह इनके वैमात्रेय भाई होते थे। १४४५ ई०में इनका जन्म हुआ। पिताने इनका प्यारका नाम फते खाँ रखा था।

सुलतान कुतुब-उद्दीनने महमूदका काम तमाम करने-के लिये षड़यन्त्र रचा। माता मोगली इस वातको ताड़ गई, सो वह प्यारे पुत्रकी जान बचानेके लिये उसे अपने वहनोई शाह आलम (गुजरातके प्रसिद्ध मुसलमान फकीर वुरहान उद्दीनके पुत्र) के घर छिपा रखा। कुतुव शाह यह संवाद पा कर वहुत विगड़ा और शाह आलमके घरको ध्वंस करनेकी इच्छासे उसने रसूलावाद नगर लूटनेका हुकुम दे दिया। लूटपाटमें

व्यापृत रह कर वह अपने ही अस्त्र द्वारा घायल हुआ। इसीसे उसकी भी मृत्यु हुई। बाद इसके दाऊदशाह नामक उसका एक आत्मीय राजतख्त पर बैठा। इसने सिर्फ सात दिन तक गुजरातका शासन किया था। उसके प्रजापीड़न और कृपणतासे तंग आ कर अमीर उमरवों-ने उसे तख्त परसे उतार फते खांको राजा पसन्द किया। फतेखां सुलतान दीन् पाना महमूदशाहकी उपाधि धारण कर गुजरातके सिंहासन पर बैठा (१४५९ ई०) वीर्य, बुद्धि, न्यायपरता, दया आदि सद्‌गुणोंसे अलंकृत रहनेके कारण उसकी ख्याति चारों ओर फैल गई। जन-साधारणमें वह महमूद विगाड़ा नामसे ही मशहूर था। उसने जूनागढ़ और चम्पानेर दुर्गको जीता था, इसी कारण मुसलमान इतिहासकारोंने उसका वि (द्वि) गाडा नाम रखा। फिर किसी किसीने उसकी बुद्धिकी गम्भीरता देख कर अथवा उसे दुर्द्धर्ष जान कर 'विगाड़' शब्दसे अभिहित किया है।

उसके राज्यारोहणके कई मास बाद ही उमराव लोग बागी हो गये। तेरह वर्षका बालक महमूद राज्यारोहण-के आरम्भमें ही ऐसा विपज्जनक विप्लव देख विचलित हो गया। आखिर उसने बड़ी वीरताके साथ इस विद्रोहका दमन किया था। इस समय कई एक प्रसिद्ध उमराव मारे गये थे।

चौदह वर्षका बालक साधारण बुद्धिबलसे अनेक विपत्तियोंको झेलता हुआ अपने राज्यकी उन्नति करनेकी इच्छासे राज्यतन्त्रके संस्कारमें बद्धपरिकर हुआ। तद नुसार इसने अपने विश्वस्त मित्र और अनुचर मालिक हाजी, मालिक तोघान, मालिक वहाउद्दीन, मालिक आइन, मालिक काल्लू और मालिक सारङ्ग आदिको राज कार्यके प्रधान प्रधान पद पर नियुक्त किया था।

इसके बाद राजशक्तिकी वृद्धिके लिये उसने अपनी सैन्य संख्याको बढ़ाया। उसके जमानेमें गुजरात राज्य उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुंच गया था। डाकुओंका जो भय था, वह बिलकुल जाता रहा। दरवेश और वणिकगण स्वेच्छानुसार जहां तहां भ्रमण कर सकते थे। उसके सुशासनसे गुजरातमें तमाम शान्ति विरा-जने लगी थी।

सेनादलको वेतनके अलावा जो सब जागीर मिली थी, मरनेके बाद उसका उपभोग उसके बालबच्चे करेंगे, ऐसा नियम जारी हो गया। अमीरोंके लिये भी यही नियम चालू था। कोई भी सेना महाजनसे रुपये कर्ज नहीं ले सकती थी। जो कोई महाजन राजसैनिकको रुपये कर्ज देता उसे कानूनन दण्ड मिलता था। जब कभी सैनिकको रुपयेकी जरूरत पड़ती तब राजदरबारमें एक खत पेश करने पर ही उसे रुपये मिल जाते थे। इन सब नियमोंके जारी होनेसे देश बहुत कुछ उन्नत हो गया। सैनिकगण राजानुग्रहसे प्रसन्न हो प्राणपणसे युद्ध करते थे। इस प्रकार लोगोंको रुपयेका अभाव नहीं रहने-से महाजनकी संख्या दिनों दिन घटने लगी। यथार्थमें वह खोरासनके सुप्रसिद्ध राजा सुलतान हुसेन मिर्जा, उन का प्रधान वजीर मीर अली शेर, मौलाना हाजी, दिल्ली-श्वर सिकन्दर-बिन्-बह्लोललोदी और उनका मंत्री मियां भुवाख्स लोहानी, माण्डुराज महमूद खिलजीका पुत्र गयासुद्दीन तथा दाक्षिणात्यके विख्यात राजा महमूद-शाह बाह्मनी और उनके राजनीतिकुशल वजीर मालिक निशान (मालिक गवान्) आदिके चलाये हुए पन्थका अनुसरण करके शासनसम्पर्कीय तथा राजकीय सभी कार्य करता था।

उसके शासन कालमें धान आदि किसी भी अनाज को महंगी नहीं हुई। जो सब प्रजा विभिन्न देशजात वृक्ष रोपते थे, उन्हें पुरस्कार मिलता था। उसीके उत्साह-से फिरदोस और साबानका प्रसिद्ध उद्यान लगाया गया था। जगह जगह इनारे खोदे गये तथा टूटी फूटी इमारतोंका संस्कार किया गया। इन सब कामोंमें लाखों रुपये खर्च किये गये थे।

सुलतान महमूद यद्यपि व्यवहारशास्त्रके वेत्ता नहीं थे, तौभी साधुओंके साथ रहनेके कारण उन्हें न्यायान्यायके विचारमें अच्छी सूझ हो गई थी। शेखपुरानगरके प्रतिष्ठाता प्रसिद्ध मुसलमान-साधु शेख सिराज उद्दीन उनके गुरु और प्रधान परामर्शदाता थे। विना उनकी अनुमतिके महमूद किसी भी काममें हाथ नहीं डालते थे।

१४६०-१४६३ ई० तक इन्होंने दलबलके साथ कच्छ-

गञ्जकी चढाई की थी। अन्तिम दो वर्षमें माण्डराज महमूद खिलजीके दमन और निजामशाहके साहाय्य दानके अतिरिक्त उनके पूर्वोक्त दो अभिमानमें और कोई घटना न घटी। १४६५ ई०में उन्होंने तेलिङ्गनाके सेना दलकी सहायतासे वाभर-पर्वतवासी हिन्दूराजको परास्त कर वाभरदुर्गको जीता था।

१४६७ ई०में गिरिनार और जूनागढके राजा राव मण्डलिको वागी देख कर इन्होंने सदलवल गिरनारकी ओर यात्रा कर दी। जूनागढ पर्वतमालाके समीप पहुंच कर उपरोक्त दोनों दुर्गोंको जीतनेकी इच्छासे उन्होंने शाहजादा तुगलक खाको महावल गिरिसङ्कट हो कर भेजा। अन्यान्य सेनादल विभिन्न सेनानायकके अधीन रखे गये। राव मण्डलिकने थोडी सी सेना देख कर पहले कुछ भी परवाह न की थी। पीछे जब सुलतान खुदसे विशाल वाहिनी ले कर वहा पहुंचे तब उनकी आंखें खुली। वे अपने स्वल्पसंख्यक सैन्यदलको साथ ले सुलतानके विरुद्ध अग्रसर हुए। थोड़ी देर तक युद्ध करनेके बाद जब उन्होंने आत्मरक्षामें अपनेको असमर्थ देखा तब वे निकटवर्त्ती जङ्गलमें भाग गये। रणमें जयलाभ करके सुलतानने नगरमे घेरा डाला। उनकी वीरता देख कर माण्डलिक आत्मसमर्पण करनेको वाध्य हुए। सुलतानको उनकी अरजू मिनती पर दया आई और घेरा उठा लिया। १४६८ ई०में वे फिरसे रावमाण्डलिकको परास्त कर उनका स्वर्णच्छत्र और राज आभरणादि लूट लाये।

१४६९ ई०में सुलतानने पुन जूनागढ पर चढाई कर दी। राव माण्डलिकने वचावका कोई रास्ता न देख सुलतानके हाथ जनागढ दुर्ग सौंप दिया और आप गिरनार दुर्गमे चले गये। यहां आनेके वाद अपने विश्वस्त अनुचर विशाल (यह माण्डलिककी ओरसे रसद जुटाता और सभी विषयोंमें उन्हे सलाह देता था)-के साथ उनकी अनवनी हो गई। विशालने विश्वासघातकता करके चुपकेसे सुलतानको आमन्त्रण किया। सुलतान यह संवाद पा कर बहुत खुश हुआ और फौरन जूनागढ़को चल दिया। घमसान युद्धके वाद यह पहाड़ी दुर्ग भी उसके हाथ लगा। आखिर रावमाण्डलिकने इसलामधर्ममें दीक्षित हो खां अमासकी उपाधि हासिल की।

सूरतको जीत कर सुलतानने चम्पानेरके राजद्रोही राजा गङ्गादासके लड़के जयसिंहके विरुद्ध कूच किया। इस समय माण्डुराजकी सहायतासे उन्होंने दामोई और वडोदा प्रदेशमें विद्रोह खड़ा कर दिया था। सुलतानकी सैन्यसंख्याको देख कर जयसिंह डर गये और उनसे सुलह कर ली। इसके वाद १४७१ ई०मे सुलतान सिंधुप्रदेशवासी सुमारा और सोढ़ा राजाओंको दण्ड देनेके लिये चले। १४७० ई०में सिन्धुप्रदेशके विद्रोहिगण उनके हाथसे बुरी तरह परास्त हुए और उनके वाल बच्चे वन्दी भावमे जूनागढ़ दुर्गमें लाये गये। दूसरे वर्ष सुलतानने जगत् (द्वारका) और शङ्खोधारराजको परास्त कर उचित दण्ड दिया।

१४८२ ई०मे महमूद फिरसे चम्पानेर दुर्गको जीतनेकी इच्छासे रवाना हुए। पहले मालवराज गयासुद्दीनकी सहायतासे रावलराजने सुलतान महमूदका मुकावला किया। पीछे गयास राव जब उनका साथ छोड़ कर स्वराज्यको लौटा तब रावलने सुलतानके हाथ दुर्ग सौंप कर रिहाई पाई। १४८४ ई०में दो वर्ष युद्ध करनेके वाद चम्पानेर दुर्ग मुसलमानोंके हाथ लगा था।

१४९० ई०में महमूदने दभोलके शासनकर्त्ताके विरुद्ध जल और स्थल पथसे सेना भेजी। सुलतान महमूद वाह्मनीने इस युद्धमें उन्हें काफी मदद पहुंचाई थी। १४९८ ई०में मोरसा-प्रदेशके शासनकर्त्ता आलफ खाके वागी होने पर सुलतान उसे दण्ड देनेके लिये चल दिये। आलफ खांने डरके मारे उनकी अधीनता स्वीकार कर ली। वहांसे सुलतान इदर और नागर प्रदेश जीतनेको चले। यहां आने पर उन्हें काफी धन हाथ लगा था।

१४९९ ई०में आदिल खां फरुखी जव राजकर न दे सका, तब सुलतानने आशीर दुर्ग पर चढ़ाई कर दी। तासी नदीके किनारे जब सुलतान पहुंचे तब आदिल खां बहुत डर गया और राजकर दे कर उसने क्षमा मांगी। वहांसे सुलतान मन्दवाड़को और मन्दवाड़से थालनीर, धर्माल आदि दुर्गोंके परदर्शन करते हुए महम्मदावाद लौटे।

१५०७ ई०मे पुर्त्तगीजोंने जब बसाई और मादिम नगरमें विद्रोह खडा कर दिया, तब सुलतान उनका दमन करनेके लिये दलबलके साथ रवाना हुए। मुसलमानी सेनापति मालिक आजिजके हाथ पुर्त्तगीजोंकी पूरी तरह हार हुई। १५०८ ई०मे महमूद विगाड़ने आशोर दुर्गको जीत कर अपने नाती आलम खां विन खांको वहांका शासनकर्त्ता बनाया।

१५१० ई० (६१६ हि०)-मे सुलतानने पत्तनकी ओर कदम बढ़ाया। यहां उन्होंने मौलाना मुइनुद्दीन काजेरुणी और मौलाना ताज उद्दीन शिविरके साथ मुलाकात कर ईश्वरतत्त्वकी विशेष आलोचना की। चार दिन यहां पर रह कर अह्मदावादको वे चले गये। सरखेज नगरमे उन्होंने शेख अह्मद खाटूका मकवरा देखा था।

अह्मदावाद आते ही वे वीमार पड़े। तीन मास रोग भुगतनेके बाद जब जीवनकी आशा न देखी, तब उन्होंने अपने प्रिय पुत्र शाहजादा खलील खांको राज कार्यके सम्बन्धमें उपदेश देनेके लिये बड़ौदासे बुला भेजा। किन्तु दुर्भाग्यवशतः खलीलके पहुंचनेसे पहले ही ९१७ हि०की रमज़ानको ५४ वर्ष राज्य करके इस लोकसे चल बसे। मृत्युकालमे इनकी उमर ६७ वर्ष की थी।

महमूदशाह (१म) बङ्गालके एक पठान शासनकर्त्ता। १४४२-से १४५९ ई० तक ये बंगालके तख्त पर बैठे थे। महमूदावाद नगरके टकसालघरमें अपने नाम पर उन्होंने जो सिक्के बनवाये थे उनमेसे कुछ अभी वगुड़ा नगरसे ७ मील उत्तर महास्थानगढ़में पाये गये हैं। इनके लड़के वरवाक शाहको कीर्त्ति दिनाजपुर आदि स्थानोंमे आज भी विद्यमान है।

महमूदशाह (२य)—बङ्गालके एक पठान सुलतान, अला-उद्दीन हुसेनशाहके पुत्र और सुप्रसिद्ध नसरतशाहके भाई। (१५३६ ई० दूसरेके मतसे १५३८ ई०) मे शेर खांके सेनापति खावास खांने बङ्गाल पर आक्रमण कर दिया। महमूदने भाग कर चुनार-दुर्गमे हुमायूंकी शरण ली। हुमायूंने दलबलके साथ आ कर पटना और गौड़को अधिकार किया। हुमायूंके लौटने पर शेरशाहने पुनः बङ्गाल पर कब्जा कर लिया।

महमूदशाह (२य)—मालवराज सुलतान नासिरुद्दीनका तीसरा लड़का। इतिहासमें यह सुलतान महमूद बिन नासिरुद्दीन नामसे मशहूर है। पिताके मरने पर यह १५११ ई०में मालवके सिंहासन पर बैठा। इसी समय मालवाके उमरावोंने बागी हो कर इसे गद्दी परसे उतार दिया और इसके छोटे भाई महम्मदको गद्दी पर बैठाया।

अनन्तर महमूदने सेना इकट्ठी करके माण्डु दुर्गमें घेरा डाला और महम्मदको वहांसे मार भगाया। महम्मद-ने गुजरातके राजा २य मुजफ्फरकी शरण ली। सुलतान-से सहायता पानेके पहले ही मालवके अमीरोंको विद्रोही देख वे सुलतान मुजफ्फरसे विना सलाह लिये ही मालव आ कर उन लोगोंके साथ मिल गये। मुसलमान अमीरों-को इस विद्रोहमें लिप्त देख कर सुलतान महमूदने अपने विश्वस्त अनुचर मेदिनीरावको सेनापति बनाया। यहां तक कि उस समय मेदिनीराव समस्त मालवका हर्त्ता-कर्त्ता हो गया था।

हिन्दुओंका इस प्रकार उन्नतिपथ रोकनेके लिये स्वयं सुलतान मुजफ्फरने मालवाकी यात्रा कर दी। युवराज सिकन्दर खां गुजराती सेनादलके अधिनायक हुए। किन्तु मेदनीरावका बाल बांका भी न हुआ।

मेदिनीरावको मालव राज्यमें प्रकृत राजशक्तिकी परिचालना करते देख सुलतान महमूदने गुजरातके राजासे सहायता मांगी। आखिर मेदिनीराव एक विश्वस्त राजपूत अनुचरकी सहायतासे अपनी रानीको साथ ले रातो रात गुर्जरपतिके यहा भाग आये। राजा-ने उनकी अच्छी खातिर की थी।

चतुर मेदिनीरावको दण्ड देनेके लिये गुर्जराधिपति दल बलके साथ निकले। मालव सीमा पर देवल नगरमें जब मुजफ्फरकी सेना पहुंची, तब मेदिनीराव युद्ध अवश्यम्भावी जान कर स्वयं धारा नगरकी ओर बढ़ने लगे। सादी खां, राय पिथोरा, भीमकर्ण, बदन खाकू और उग्रसेनके हाथ माण्डुदुर्गका रक्षा भार सौंपा गया था। शत्रुकी सैन्य-संख्या अधिक देख मेदिनीरावने भाग उज्जयिनीके राणाकी शरण ली। इधर उनकी सलाहसे माण्डुदुर्गमें जो सेना-मण्डली थी उसने सुल-तान मुजफ्फरके पास सन्धिका प्रस्ताव करके भेजा।

मुजफ्फर इस बातको ताड़ गया और सन्धिके बदलेमें माण्डुदुर्गको अधिकार कर लिया। युद्धमें बहुतसे हिंदू मारे गये थे। अब महमूद फिरसे मालवके सिंहासन पर बैठे।

१०२५ हिजरीमें सुलतान महमूद खिलजीने सरदार भीमकर्णको गगरोन सरकार जीतनेके लिये भेजा। युद्धमें भीमकर्ण वन्दी और मारा गया। इसी सूत्रसे राणाके साथ उनका झगड़ा हुआ। राणासङ्ग उन्हें वन्दी करके चित्तोर ले गये। चित्तोरमें जब जखम अच्छा हुआ, तब राणाने उन्हें सम्मानपूर्वक माण्डुदुर्गमें भेज दिया।

१५२१ ई०में उन्होंने फिरसे मेवार राज्योंके कुछ अंशोंको लूटा। अनन्तर वे शिवास और शिलहारीके शासनकर्त्ता तथा सिकन्दर खांके प्राण लेनेको उतारू हो गये। उनके इस आचरणसे विरक्त हो सुलतान वहादुर शाहने उनको वड़ी निन्दा की। किन्तु महमूदने इसकी जरा भी परवाह न की। उन्होंने गुर्जरपतिके साथ मुलाकातके लिये राजी होने पर भी अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं की। सुलतान वहादुरशाहने उनके इस प्रकार लौट जानेसे अपनेको वड़ा अपमानित समझा। इसका वदला लेनेके लिये उन्होंने माण्डु नगरमें घेरा डाल दिया। गुजराती सेनावाहिनीके विरुद्ध युद्ध करना असम्भव जान कर वे आत्मसमर्पण करनेको वाध्य हुए। इसके वाद वे पुत्र समेत वन्दी भावमें गुजरात लाये गये।

उनकी मृत्युके सम्बन्धमें विभिन्न इतिहासमें विभिन्न घटनाका उल्लेख है। मीरट-इ सिकन्दरी पढ़नेसे मालूम होता है, कि महमूद खिलजी गुजराती सेनानायकसे परिवृत्त हो कर गुजरात जा रहे थे। दाहोड़ पहुंचने पर धांगडपुरके राजा उदयसिंहने उन्हें उद्धार करनेकी इच्छासे अपनी कोली सेनाको साथ ले उनका मुकावला किया। रक्षीदलने अपनेको इस प्रकार अतर्कित आक्रमणसे पराजित समझ सुलतान महमूदको मार डाला। तारीख-इ-अकवरी और तारीख-इ-असेफी पढ़नेसे मालूम होता है, कि रणमें हार खा कर उन्होंने वहादुरशाहको तीखी तीखी वातें कहीं थीं। इस पर सुलतानको वड़ी गुस्सा आई। उन्होंने प्राणदण्ड-

का हुकुम दे दिया। किसी किसी इतिहासमें लिखा है, कि जब वे वन्दीभावमें चम्पानेरदुर्ग लिवाये जा रहे थे। तव राहमें वे चाहे गुप्तभावसे मारे गये अथवा स्वयं मृत्युमुखमें पतित हुए। उनके मरने पर मालवराज्य गुजरात राज्यमें मिला लिया गया। इसके वाद गुजरातके अधीनस्थ शासनकर्त्ता कादेर खाँ, सुजा खां और वाज वहादुरने मालवराज्यका शासन किया। ५७० ई०में वाजवहादुरके हाथ मालवराज्य मुगलवादशाह अकवर शाहके हाथ लगा।

महमूदशाह—तैमुरशाहका लड़का। महम्मद शाह देखो।

महमूदशाह (१म और २य)—दाक्षिणात्यके वाह्मनी वंशके दो मुसलमान सुलतान।

महम्मद शाह और वाह्मनीवंश देखो।

महमूदशाह (१म)—गुजरातके एक सुलतान।

महमूद विगाड़ा देखो।

महमूदशाह (२य)—गुर्जरपति मुजफ्फर शाहके पुत्र।

२य महमूद शाह देखो।

महमूदशाह (३य)—गुजरातके एक राजा, लतीफ खांका लड़का। महम्मद शाह ३य देखो।

महमूदशाह (१म)—मालवका खिलजीवंशीय एक राजा।

महमूद खाँ खिलजी देखो।

महमूदशाह (२य)—मालवराज नासिरुद्दीनका लड़का।

महम्मद शाह २य देखो।

महमूदशाह पूरवी—महम्मद शाह पूरवी देखो।

महमूदशाह शर्की—जौनपुरका एक सुलतान।

महम्मद शाह शर्की देखो।

महमूदशाह तुगलक—महम्मद खाँ तुगलक देखो।

महमूद सुलतान (१म और २य)—कुस्तुनतुनियाके दो वादशाह। महम्मद सुलतान १म और २य देखो।

महमूदवाद—१ अयोध्या प्रदेशके सीतापुर जिलान्तर्गत एक परगना। इसका भू-परिमाण ३९७ वर्गमील है।

२ उक्त जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २७° १४´ उ० तथा देशा० ८१° ४´ पू० सीतापुरसे वहरामघाट जानेके रास्तेमें अवस्थित है। जनसंख्या ८६६४ है। यहां पीतलके वरतनका विस्तृत कारोवार है। यहां सप्ताहमें दो दिन वड़ी हाट लगती है। ढाई सौ वर्ष

पहले महमूदखाँ नामक यहाँके एक तालुकदारने यह नगर बसाया था।

महमूदाबाद—गुजरातके अन्तर्गत एक नगर।

महमूदी—गुजरातमें प्रचलित एक सिक्का। सुकोरमें यह सिक्का ढाला जाता था। इसका मान १२ पेन्स वा २६ पैसेके बराबर था।

महमूद समरकन्दी (मौलाना)—समरकन्दवासी एक मुसलमान-साधु। काव्यशास्त्रमें इनकी अच्छी व्युत्पत्ति थी। दाक्षिणात्यसे स्वदेश जाते समय शङ्खोधारके हिन्दू राजा भीमने इनके पोतादि लूट लिये थे। सुलतान महमूद बिगाड़ाने इस अत्याचारका बदला लेनेके लिये भीमको परास्त किया और पीछे मार डाला।

मह्य (सं० पु०) विवस्वतके एक पुत्रका नाम। नीलकण्ठने इनका दूसरा नाम 'सह्य' रखा है।

महयुत्तर (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक जातिका नाम।

महन (सं० पु०) एक राजाका नाम। इन्होंने महनस्वामी नामक देवमूर्त्ति और मन्दिरको प्रतिष्ठा की।

(राजतरङ्गिणी ४।४)

महनपुर (सं० क्ली०) महनराज द्वारा प्रतिष्ठित एक नगरका नाम।

माँ (हिं० स्त्री०) जन्म देनेवाली, माता।

माँकड़ी (हिं० स्त्री०) १ मकड़ी देखो। २ कमखाब बुननेवालोंका एक औजार। इसमें डेढ़ बालिश्तकी पांच तीलियां होती हैं और नीचे तिरछे बलमें इतनी ही बड़ी एक और तीलो होती है। यह ठाठ सवा गज लम्बी एक लकड़ी पर चढ़ा हुआ होता है और करघेके लग्घे पर रखी जाती है। ३ जहाजमें रस्से बांधनेके खूंटे आदिका वह बनाया हुआ ऊपरी भाग जिसमें लकड़ी या दोनों या चारों ओर इस अभिप्रायसे निकला हुआ रहता है, जिसमें उस खूंटेमें बांधा हुआ रस्सा ऊपर न निकल आवे। ४ पतवारके ऊपरी सिरे पर बनी हुई और दोनों ओर निकली हुई लकड़ी। इसके दोनों सिरों पर वे रस्सियां बंधी होती हैं जिनकी सहायतासे पतवार घुमाते हैं।

माँखन (हिं० पु०) मक्खन, नवनीत।

माँखना (अं० क्रि०) क्रुद्ध होना, क्रोध करना। माखना देखो।

माँखी (हिं० स्त्री०) मक्खी देखो।

माँग (हिं० स्त्री०) एक मांगनेकी क्रिया या भाव। २ बिक्री या खपत आदिके कारण किसी पदार्थके लिए होनेवाली आवश्यकता या चाह। ३ सिरके बालोंके बीचको एक रेखा। यह बालोंको दो ओर विभक्त करके बनाई जाती है। इसे सीमन्त भी कहते हैं। हिन्दू सौभाग्यवती स्त्रियाँ मांगमें सिन्दुर लगाती हैं और इसे सौभाग्यका चिह्न समझती हैं। ४ नावका गावदुमा सिरा। ५ सिलका वह ऊपरी भाग जो कूटा हुआ नहीं होता और जिस पर पीसो हुई चीज रखी जाती है। ६ किसी पदार्थका ऊपरी भाग, सिरा। ७ मांगी देखो।

माँग-टीका (हिं० पु०) स्त्रियोंका गहना। यह मांग पर पहना जाता है और इसके बीचमें एक प्रकारका टिकड़ा होता है जो माथे पर लटका होनेके कारण टीकेके समान जान पड़ता है।

माँगन (हिं० पु०) १ मांगनेकी क्रिया या भाव। २ याचक, भिखमंगा।

माँगना (हिं० क्रि०) १ याचना करना, कुछ पानेके लिए प्रार्थना करना या कहना। २ किसीसे कोई आकांक्षा पूरी करनेके लिए कहना।

माँगफूल (हिं० पु०) माँग-टीका देखो।

माँगल गीत (हिं० पु०) विवाह आदिमें मंगल अवसरों पर गाए जानेवाला गीत।

माँगी (हिं० स्त्री०) धुनियोंकी धुनकीमें-की वह लकड़ी जो उसकी उस डांड़ीके ऊपर लगी रहती है जिस पर ताँत चढ़ाते हैं।

माँच (हिं० पु०) १ पालमें हवा लगनेके लिये चलते हुए जहाजका रुख कुछ तिरछा करना। २ पालके नीचेवाले कोनेमे बंधा हुआ वह रस्सा जिसकी सहायतासे पालको आगे बढ़ा कर या पीछे हटा कर हवाके रुख पर करते हैं।

माँचना (अं० क्रि०) १ आरम्भ होना, जारी होना। २ प्रसिद्ध होना।

माँचा (हिं० पु०) १ पलंग, खाट। २ मचान। ३ खाटकी तरहकी बुनी हुई छोटी पीढ़ी जिस पर लोग बैठते हैं।

माँची (हिं० स्त्री०) बैलगाड़ियों आदिमे बैठनेकी जगहके

आगे लगी हुई वह जालीदार झोली जिसमें गाड़ीवान माल असवाब रखते हैं।

माँछ (हिं० पु०) १ मछली। २ माच देखो।

माँछना (हिं० क्रि०) घुसना, पैठना।

माँछर (हिं० स्त्री०) मछली।

माँछली (हिं० स्त्री०) मछली।

माछी (हिं० स्त्री०) मक्खी देखो।

माजना (हिं० क्रि०) १ जोरसे मल कर साफ करना, किसी वस्तुसे रगड़ कर मैल छुड़ाना। २ सरेसको पानीमें पका कर उससे तानीके सूत रंगना। ३ थपुवेके तवे पर पानी दे कर उसे ठीक करनेके लिये उसके किनारे झुकाना। ४ सरेस और शीशेको बुकनी आदि लगा कर पतंगको नख या डोरको दृढ़ करना, माझा देना।

माजना (हिं० क्रि०) १ अभ्यास करना, मश्क करना। २ किसी गीत या छन्दको बार बार आवृति करके पक्का करना।

माँजर (हिं० स्त्री०) हड्डियोंकी ठठरी, पंजर।

माँजा (हिं० पु०) पहली वर्षाका फेन जो मछलियोंके लिये मादक होता है।

माँझ (हिं० अव्य०) १ में, बीच, अन्दर। (पु०) २ अंतर, फरक। ३ नदीके बीचमें पड़ी हुई रेतीली भूमि।

माँझा (हिं० पु०) १ नदीके बीचकी जमीन, नदीमेंका टापू। २ एक प्रकारका आभूषण जो पगड़ी पर पहना जाता है। ३ वृक्षका तना। ४ एक प्रकारका ढांचा जो गोईके बीचमें रहता है और जो पाईको जमीन पर गिरनेसे रोकता है। ५ एक प्रकारके पीले कपड़े। यह कहीं कहीं वर और कन्याको विवाहसे दो तीन दिन पहले हलदी चढ़ने पर पहनाये जाते हैं। ६ पलंग या गुड्डी उड़ानेके डोरे या नख पर सरेस और शीशेके चूरे आदि से चढ़ाया जानेवाला कलफ जिससे डोरे या नखमें मजबूती आती है। मझा देखो।

माँझिल (हिं० वि०) बीचका, मध्यका।

माँझी (हिं० पु०) १ नाव खेनेवाला, केवट। २ जोरावर, बलवान्। ३ दो व्यक्तियोंके बीचमें पड़ कर मामला तै करनेवाला।

माँट (हिं० पु०) १ मिट्टीका बड़ा बरतन जिसमें अनाज या पानी आदि रखते हैं, मटका। २ घरका ऊपरी भाग, अटारी।

माँठ (हिं० पु०) १ मटका, कुंडा। २ नील घोलनेका मिट्टीका बना बड़ा बरतन।

माँठी (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी फूल धातुकी ढली हुई चूड़िया। पूरबमें नीच जातिकी स्त्रिया इसे हाथमें कलाईसे ले कर कोहनी तक पहनती हैं। इसे मठिया भी कहते हैं। २ मट्ठी या मठरी नामक पकवान जो मैदेका बना होता है।

माँड़ (हिं० पु०) १ पकाये हुए चावलोंमेंसे निकाला हुआ लसदार पानी, भातका पसेव। २ एक प्रकारका राग। (स्त्री०) ३ माँडनेकी क्रिया या भाव।

माँड़ना (हिं० क्रि०) १ मर्दन करना, मसलना, सानना। २ लगाना, पोतना। ३ मचाना, ठानना। ४ किसी अन्नकी बालमेंसे दाने झाड़ना। ५ रचना, बनाना।

माँड़नी (हिं० स्त्री०) संजाफ, मगजी।

माँड्यो (हिं० पु०) १ आगन्तुक लोगोंके ठहरनेका स्थान, अतिथिशाला। २ विवाहका मंडप, मँडवा। ३ विवाहादिके घरमें वह स्थान जहां सम्पूर्ण आहूत देवताओंका स्थापन किया जाता है।

माँडव (हिं० पु०) विवाह आदि अथवा दूसरे शुभ कृत्योंके लिए छाया हुआ मंडप।

माँडा (हिं० पु०) १ एक प्रकारकी बहुत पतली रोटी जो मैदेकी होती है और घीमें पकती है, लुचई। २ एक प्रकारकी रोटी जो तवे पर थोड़ा घी लगा कर पकाई जाती है, पराठा।

माँड़ी (हिं० स्त्री०) १ भातका पसावन, मांड़। २ कपड़े या सूतके ऊपर चढ़ाया जानेवाला कलफ़ जो भिन्न भिन्न कपड़ोंके लिए भिन्न भिन्न प्रकारसे तैयार किया जाता है। यह माड़ी आटे, मैदे, अनेक प्रकारके चावलों तथा कुछ बीजोंसे तैयारकी जाती है और प्रायः लेईके रूपमें होती है। कपड़ोंमें इसकी सहायतासे कड़ापन या करारापन लाया जाता है।

माँडौ (हिं० पु०) विवाहका मंडप, मंडवा।

माँढ़ा (हिं० पु०) माँडव देखो।

माँत (हिं० वि०) १ उन्मत्त, बेसुध । २ दीवाना, पागल । ३ बे रौनक, उदास । ४ हारा हुआ, पराजित ।

माँतना (अ० क्रि०) उन्मत्त होना, पागल होना ।

माँता (हिं० वि०) मतवाला, उन्मत्त ।

माँथ (हिं० पु०) माथा, सिर ।

माँथबंधन (हिं० पु०) १ सूत या ऊनकी डोरी जिससे स्त्रियां सिरके बाल बांधती हैं । इसे परांदा भी कहते हैं । २ सिर लपेटने या बांधनेका कपडा, पगड़ी या साफा ।

माँद (हिं० वि०) १ बे रौनक, बदरंग । २ किसीके मुकाबलेमें फीका, खराब या हलका । ३ पराजित, हारा हुआ । (स्त्री०) ४ गोबरका वह ढेर जो पड़ा पड़ा सूख जाता है और जो प्रायः जलानेके काम आता है । इसकी आंच उपलोंकी आंचके मुकाबलेमें मंद या धीमी होती है । ५ हिंसक जन्तुके रहनेका विवर, खोह ।

माँदगी (फा० स्त्री०) १ बीमारी, रोग । २ थकावट ।

माँदर (हिं० पु०) एक प्रकारका मृदंग । इसे मदल भी कहते हैं ।

माँदा (फा० वि०) १ थका हुआ । २ बचा हुआ, अवशिष्ट । (पु०) ३ रोगी, बीमारी ।

माँपना (अ० क्रि०) नशेमें चूर होना उन्मत्त होना । मापना देखो ।

माँय (अ० अव्य०) में, बीच, मध्य ।

माँस (सं० क्ली०) मन्यते इति ज्ञानार्थ मन्-सः दीर्घश्च । (मने दीर्घश्च । उण् ३।६४) रक्तजात धातुविशेष । इसे तृतीय धातु कहते हैं । चलित शब्द मांस है । सुखबोधके मतसे गर्भके बालकका आठवें महीनेमें मांस बनता है । किन्तु भागवतका मत पृथक् है । इसके मतसे चार महीने हीमें गर्भके बालकका मांस संयुक्त हो जाता है । पर्याय—पिशित, तरस, पालल, क्रव्य, आमिष, पल, अस्रज, जाङ्गल, कीर ।

मांसका रूप कैसा है, किस पदार्थको मांस कहते हैं, इसके सम्बन्धमें भावप्रकाशमें लिखा है ।

"शोणितं स्वाग्निना पक्वं वायुना च घनीकृतम् ।
तदेव मांसं जानीयात् तस्य भेदानपि ब्रुवे ॥"
(भावप्रकाश)

अर्थात् स्वकीय अग्नि द्वारा रक्तका परिपाक हो कर वायु द्वारा घनीभूत होनेवाले पदार्थको मांस कहते हैं । स्वकीय अग्नि कहनेसे रक्तधातु-गत धातुकी अग्निको समझना चाहिये । मांसके कई भेद हैं । रससे रक्त बनता है, यही रक्त गाढ़ा हो कर मांस हो जाता है । इस एक रससे ही मेद, अस्थि आदि बनती हैं । इसलिये आहारजनित रसको ही मांस कह सकते हैं । क्योंकि, मांस आदिका अंश यदि रसमें नहीं होता, तो उस रक्तसे मांस नहीं बन सकता था ।

"शोणितमिति शोणितस्थानगतत्वा
द्रस एव शोणितसंज्ञां लभते ।
एवमग्रे रसस्यैव मांसादिव्यपदेशः ॥" (भावप्रकाश)

यह मांस फिर पेशीके रूपमें विभक्त होता है । मनुष्यशरीरमें शिरोपथसे वायु वेगसे पहुंचती है । यह मांससे टकरा कर इसके प्रयोजनानुसार मांसको पेशीके रूपमें परिणत कर देती है । इस मांसपेशीकी संख्या पांच सौ है । शरीरके विभिन्न अंशोंमें मांसपेशीका रहना निर्णीत हो चुका है । पेशी देखो ।

"यथार्थमूष्मणा युक्तो वायुः स्रोतांसि दारयेत् ।
अनुप्रविश्य पिशितं पेशीर्विभजते तथा ॥
मांसपेश्यः समाख्याता नृणां पञ्चशतानि हि ।
तासां शतानि चत्वारि शाखासु कथितान्यथ ॥"
(भावप्रकाश)

साधारणतः सभी तरहके मांसका गुण वायुनाशक, शरीरका उपचयकारक, बलकर, पुष्टिजनक, प्रीतिकर, गुरु, हृदयग्राही, मधुररस और मधुरविपाक है ।

"सर्वं मांसं वातविध्वंसि वृष्यं बल्यं रुच्यं बृंहणं तच्च मांसं ।
देशस्थानत्व्यासात्मसंस्थं स्वभावैर्भूयो नानारूपतां याति नूनम् ।"
(राजनिं०)

मांस दो प्रकारका होता है, जाङ्गल मांस और अनूप मांस । जङ्गल, बिलस्थ, गुहाशय, पर्णमृग, विष्किर, प्रतुद, प्रसह और ग्राम्य ये हो आठ तरहके मांस जङ्गलजातिके मांस है । इसीसे इसको जाङ्गल मांस कहते हैं । इनका गुण मधुर, कषाय, रुक्ष, लघु, बलकारक, शरीरका उपचयकारक, शुक्रवर्द्धक, अग्निप्रदीपक, दोषघ्न और मूकता, मिन्मिनता, गद्गदता, अर्दित, बधिरता,

अरुचि, वमि, प्रमेह, मुंहका रोग, श्लीपद, गलगण्ड और वातरोगनाशक है।

"मांसवर्गो द्विधा ज्ञेयो जाङ्गलोऽनूपसञ्ज्ञकः।
मांसवर्गोऽत्र जाङ्गला बिलस्थाश्च गुहाशयाः॥
तथा पर्णमृगा ज्ञेया विष्किराः प्रतुदा अपि।
प्रसहा अथ च ग्राम्या अष्टौ जाङ्गलजातयः॥
जाङ्गला मधुरा रुक्षास्तुवरा लघवस्तथा।
बल्यास्ते बृंहणा वृष्या दीपना दोषहारिणः॥
मूकता मिन्मिनत्वञ्च गद्गदत्वार्दिते तथा॥
बाधिर्यमरुचिच्छर्दि प्रमेह मुखजान् गदान्।
श्लीपद गलगण्डञ्च नाशयत्त्वनिलामयान्॥"

(भावप्र०)

इन आठ तरहके जाङ्गल जातिमें हरिण, एण, कुरङ्ग, ऋष्य, पृषत, न्यूंकु, सम्बर, राजीव और मुण्डी आदि को जङ्गाल कहते हैं। हरिण—तांबेके रङ्गका मृग, एण—काले रंगका मृग, कुरङ्ग—अर्थात् जिसका आकार बड़ा और कुछ तांबेके रङ्गका और जिसकी आकृति देखनेमें काले हरिणकी तरह है। ऋष्य—नीला हरिण। यह सरोह्य नामसे भी प्रसिद्ध है। जो मृग हरिणकी अपेक्षा कुछ मोटा, शरच्चन्द्रकी तरह द्युतियुक्त है, उसको ही पृषत् कहते हैं। जिसके सींग बड़े होते हैं, उसका नाम न्यंकु है। बड़े आकारका मृग सम्बर कहलाता है। यह गवय नामसे भी विख्यात है। जो चितकबरे होते हैं, उसका नाम राजीव है और जिस मृगके सींग नहीं है वह मुण्डी कहलाता है। इन सब मृगांके मासका गुण प्रायः ही कफ और पित्तनाशक तथा वायुवर्द्धक, लघु और बल देनेवाला है।

विलेशय—गोधा, खरगोश, सांप, चूहे, साहीको विलेशय कहते हैं। इन सबोंका मास वायुनाशक, मधुरविपाक, शरीरको उपचय करनेवाला, मलमलको रोकनेवाला और उष्णवीर्य माना जाता है।

गुहाशय—सिंह, शेर, वृक, भालू, तरक्षु, द्वीपी, बभ्रु, गीदड़, बिल्ली—इन सबोंको गुहाशय कहते हैं। तरक्षु नेकड़े बाघ, द्वीपीको चीता बाघ और जिसकी पूंछ मोटी और आंखें लाल रंगकी होती हैं उसको नेवला कहते हैं। संस्कृतमें नकुल या बभ्रु कहते हैं। इन सबोंके मांस वायुनाशक, गुरु, उष्णवीर्य, मधुररस, मुलायम और बलकारक हैं। ये मांस आंख और गुह्यरोगीके लिये विशेष हितकर है।

पर्णमृग—बन्दर, बिडाल, पेड़ों पर रहनेवाली बन्दरियोंको सुश्रुत आदि महर्षियोंने पर्णमृग कहा है। इनके मासका गुण वीर्यवर्द्धक, चक्षु और शोषरोगियोंके लिये विशेष हितकर है। यह मलमूत्रको शीघ्र निकालता और खांसी तथा बवासीर और दमेके रोगको नाश करता है।

विष्किर—बटेर, लावा, तीतर, मुर्गा आदिको विष्किर कहते हैं। ये चोंचसे खाते हैं इससे इनका विष्किर नाम हुआ है। इनका मास मधुर, कषाय, शीतवीर्य, कटुविपाक, बलदायक, शुक्रवर्द्धक और त्रिदोषनाशक है। यह सुपथ्य और लघु होता है।

प्रतुद—हारीत (हरे), धवल (सफेद) और पाण्डुवर्ण (पीला) तीतर, बड़ा सुग्गा, कबूतर, खञ्जन, कोयल आदिको प्रतुद कहते हैं। यह अपने आहारको अपनी चोंचोंसे पटक पटक कर खाते हैं, इसलिये इनका नाम प्रतुद है। इन सबोंका मांस मधुर, कषाय, पित्तघ्न, कफनाशक, शीतवीर्य, लघु, मलरोधक और सामान्य वायुको बढ़ानेवाला है।

प्रसह—कौआ, गोध, उल्लू, चील आदि प्रसह नामसे विख्यात हैं। ये भी अपने आहारको पटक पटक कर खाते हैं, इससे इनका प्रसह नाम पड़ा। इनका मांस उष्णवीर्य है। इन सब जन्तुओंके मास खानेसे शोष, भस्मक और उन्मादरोग उत्पन्न होता है तथा वीर्य क्षीण होता है।

ग्राम्य—बकरा, भेड़ा, बैल, घोड़ा आदिको ग्राम्य कहते हैं। सभी ग्राम्य मांस ही वायुनाशक, अग्निवर्द्धक, कफ, पित्तवर्द्धक, मधुररस, मधुरविपाक, शरीरका उपचयकारक और बलवर्द्धक है।

पहले जो हमने अनूप मांसका उल्लेख किया है, वह पांच भागोंमें विभक्त है। यथा—कुलेचर, प्लव, कोशस्थ, पादी और मत्स्य-मांस। इनके मांस साधारणतः मधुररस, चिकना, गुरु, अग्निमान्द्यजनक, कफकारक, अत्यन्त मांसपोषक और यह प्रायः ही हितकर है।

"कूलेचराः प्लवाश्चापि कोशस्थाः पादिनस्तथा ।
मत्स्या एते समाख्याताः पञ्चधाऽनूपजातयः ॥
आनूपा मधुराः स्निग्धा गुरवो वह्निसादनाः ।
श्लेष्मलाः पिच्छलाश्चापि मांसपुष्टिप्रदा भृशम् ॥
तथाभिष्यन्दिनस्ते हि प्रायः पथ्यतमाः स्मृताः ॥"
(भावप्रकाश)

कुलेचर—भैंस, खड्ग (गैंड़ा), शूकर, चमरी और हाथी आदिको कुलेचर कहते हैं। इनका मांस वायु और पित्तजनक, शुक्रवर्द्धक, वलकर, मधुररस, शीतवीर्य, स्निग्ध (चिकना), मूत्रकारक और कफको बढ़ाने वाला है।

प्लव—हंस, सारस, बगुला, नन्दीमुखी आदिको प्लव कहते हैं। ये सब पक्षी जलमें तैरते हैं और जलीय पदार्थ को ही खाते हैं, इससे इनका नाम प्लव हुआ है। जिस पक्षीकी चोंचके ऊपर मोटे, कठिन और गोलाकार जामुन-की तरह उभरा हुआ मांसपिण्ड रहता है, उस पक्षीको नन्दीमुखी कहते हैं। इन सबोंके मांस पित्तघ्न, स्निग्ध (चिकना), मधुररस, गुरु, शीतवीर्य, सारक और वायु, कफ, वल और शुक्रवर्द्धक हैं।

कोशस्थ—शङ्ख, सीप आदि इसी जातीय जीवोंको कोशस्थ कहते हैं। इनका मांस मधुररस, चिकना, वातघ्न, पित्तनाशक, शीतवीर्य, देहका उपचयकारक, मलवर्द्धक, शुक्रजनक और वलकारक है।

पादी—कुम्भीर, कूर्म, नक्र, गोधा, मकर (घड़ियाल), शङ्कु और शिशुमार आदिको पादी कहते हैं। पादियोंके मांसका गुण पूर्वोक्त कोशस्थ मांसोंके समान ही है।

मत्स्य—मछली, मीन, विसार, झष, वैसारिण, अण्डज, शकली, पृथुरोमा और सुदर्शन, ये कई एक पर्यायके शब्द हैं। रोहित आदिको मत्स्य कहते हैं। इनका मांस चिकना, उष्णवीर्य, मधुररस, गुरु, कफवर्द्धक, पित्तजनक, वायुनाशक, देहका उपचयकारक, शुक्रवर्द्धक, रुचिजनक तथा वलवर्द्धक है। मद्यपायी और मैथुनासक्त व्यक्तियोंके लिये मछलीका मांस बहुत ही हितकर है।

आनूप और जाङ्गल मांसके साधारणतः गुणागुण का वर्णन हो चुका, अब प्रत्येक मांसका गुण अलग अलग लिखा जायगा।

हरिणमांस शीतवीर्य, मलमूत्ररोधक अग्निप्रदीपक, लघु, मधुररस, मधुरविपाक, सुगन्धि और सन्निपात-नाशक है।

एण अर्थात् काले हरिणका मांस—कषाय, मधुररस, धारक, रुचिकर, वलदायक और पित्त, रक्त, कफ, वायु और ज्वरनाशक।

कुरङ्गमांसका गुण—देहको उपचय करनेवाला, वलकर, शीतवीर्य, पित्तघ्न, गुरु, मधुररस, वायुनाशक, धारक और कुछ कफकारक है।

ऋष्यमांस—मधुररस, वलकारक, स्निग्ध, उष्णवीर्य और कफ तथा पित्तवर्द्धक। गवय, रोझ आदि भी ऋष्यके दूसरे नाम हैं।

पृषत अर्थात् चीता बाघका मांस—मधुर, रुचिकर, तथा दमा, ज्वर, त्रिदोष और रक्तनाशक है। न्यङ्कु-मांस—मधुररस, लघु, वलदायक, शुक्रजनक और त्रिदोषनाशक। साबरका मांस—चिकना, शीत-वीर्य्य, गुरु, मधुररस, मधुर विपाक, कफकारक और रक्तपित्तनाशक है। राजीव मांस पूर्वोक्त पृषत मांसकी तरह गुणकारक है। मुण्डीका मांस ज्वर, दमा, रक्त, क्षय और खांसीको दूर करनेवाला है। यह शीतवीर्य्य है। लम्बकर्ण, लोमकर्ण, शूली, विलेश्वर, शश या शशक—यह एक पर्यायवाची शब्द हैं। इसका मांस—शीतवीर्य्य, लघु, धारक, रूक्ष, मधुररस, अग्नि-वर्द्धक, वायुका स्वधर्म रखनेवाला और ज्वर, अतिसार, शोष, रक्तदोष, दमा, कफ और पित्तनाशक है। यह सब तरहसे हितकर है। सेधा, शल्यक और श्वावित ये कई नाम साहीके हैं। इसका मांस दमा, खांसी, रक्तदोष और त्रिदोषनाशक है।

पक्षिमांस—कुलचर और अनूप देशज भेदसे पक्षी दो तरहके होते हैं। कुलचर पक्षीका मांस वलकारक, स्निग्ध (चिकना) और गुरु होता है। पक्षियोंमें लावा चार तरहका होता है। पांशुल, गौरक, पौण्ड्रक और दर्भर—इन चार तरहके लावा पक्षियोंके मांसका गुण साधारणतः अग्निकारक, चिकना, सयोग विषनाशक, धारक और हितजनक है। इनमें पांशुक, कफकारक, उष्ण-वीर्य और वायुनाशकगुण है। गौरक—लघुतर, रूक्ष, अग्नि

वर्द्धक और त्रिदोषनाशक है। पौण्ड्रक—पित्तवर्द्धक, त्रिदोषनाशक, कुछ लघु और कफनाशक है। दर्भर—कफ पित्त और हृद्रोगनाशक तथा शीतवीर्य है। वर्त्तीक पक्षी—मधुररस, शीतवीर्य्य, रूक्ष तथा कफ और पित्तनाशक है। तीतर दो तरहका होता है, एक काला और दूसरा गोरा। काला तीतर वलकारक, धारक, हिचकी, त्रिदोष, दमा, खांसी और ज्वरनाशक, गोरा तीतर काले तीतरकी अपेक्षा अधिक गुणवान् है। चटक—शीतवीर्य्य, स्निग्ध, मधुररस, शुक्रवर्द्धक, कफप्रदायक और सन्निपातनाशक। गृह-चटकका मांस अति शुक्रवर्द्धक है।

कुक्कुट (मुर्गा) दो प्रकारका होता है,—वन्यकुक्कुट और स्थलकुक्कुट। वन्य कुक्कुटमांस (वनमुर्ग) का गुण—स्निग्ध, शरीरका उपचयकारक, कफजनक, गुरु तथा वायु, पित्त, क्षय, वमि और विषम ज्वरनाशक। स्थल कुक्कुटका मांस—शरीरका उपचयकारक, स्निग्ध, उष्णवीर्य, वायुनाशक, गुरु, चक्षुका हितकर, शुक्रजनक, कफकारक, वलकर, वृष्य तथा कषाय रस। हारीत पक्षी लाल या पीला होता है। उसके मासका गुण—रूक्ष, उष्णवीर्य, रक्तपित्तघ्न, कफनाशक, स्वेदजनक, स्वरवर्द्धक तथा कुछ वायुवर्द्धक माना जाता है। पाण्डु पक्षी दो तरहका होता है। इनमेंसे एकको चित्रपक्ष और कल ध्वनि तथा दूसरेको धवल, कपोत और स्फुटस्वन कहते हैं। चित्रपक्ष कफ, वायु तथा ग्रहणीरोगनाशक और धवल रक्तपित्तनाशक तथा शीतवीर्य माना गया है। कबूतरका मास—गुरु, स्निग्ध, रक्तपित्तघ्न, वायुनाशक, धारक, शीतवीर्य तथा वीर्यवर्द्धक। पक्षीके अण्डे भी वड़े कामके होते हैं। वे कुछ स्निग्ध, पुष्टिकारक, मधुररस, मधुरविपाक, वायुनाशक, गुरु तथा अत्यन्त शुक्रवर्द्धक होते हैं।

वकरेका मास—लघु, स्निग्ध, मधुरविपाक, त्रिदोषनाशक, मधुररस, पीनस नाशक, वलकर, रुचिकारक, शिरको उपचय करनेवाला और वीर्य्यवर्द्धक है। यह न तो अत्यन्त शीतल है और न अत्यन्त गर्म ही है।

विना व्यायी वकरीका मास—पीनसविनाशक, सूखी खांसी, अरुचि और शोषरोगमें हितकर तथा अग्निप्रदीपक है। छोटे वकरेका मांस लघुतर, हृदयग्राही, ज्वरनाशके लिये उत्तम, सुखप्रद और अत्यन्त वलकारक है। वधिया किये हुए वकरे (वगड़ा) का मांस कफकारक, गुरु, स्रोतःशोधक, वलकारक, मांसवर्द्धक एवं वायु और पित्तनाशक है। वुड्ढे और वीमारी से मरे वकरेका मांस वायु और कफवर्द्धक है। वकरेका मस्तक ऊर्द्ध्व जत्रुगत व्याधिनाशक तथा रुचिकर होता है।

भेडे के मास—पुष्टिकारक, पित्त और कफवर्द्धक तथा गुरु होता है। वधिया भेडेका मांस जरा लघु होता है। दुम्बे भेडेका मांस भी इसी देशी भेडके मांसकी तरह है। (दुम्बा भेड़ा—जिसकी दुम वहुत मोटी और वाल वडे मुलायम होते हैं, इसके वालसे जो कपडे वनते हैं, वे पशमीने कहलाते हैं।) इसकी मोटी दुमका मांस हृदयग्राही, शुक्रवर्द्धक, श्रान्तिहर, पित्त और कफवर्द्धक तथा सामान्य वातरोगनाशक है। गो मांस अत्यन्त गुरु, पित्त और कफवर्द्धक, शरीरका उपचयकारक, वातघ्न, वलकारक, अपथ्य तथा प्रतिश्यायनाशक; घोडेका मांस नमकीन, मधुर रस, अग्नि, कफ, पित्त और वलकारक होता है। यह वायुनाशक, उपचयकारक, नैनसुखकर और लघु है। भैंसेका मांस मधुर रस, चिकना, उष्णवीर्य, वायुनाशक, निद्राजनक, वीर्य्यवर्द्धक, वलकारक, गुरुपाक, पुष्टिकारक, मल मूत्र निःसारक और वायु, पित्त और रक्तदोषनाश करनेवाला होता है। मण्डूक मांस या मेंढकका मांस कफ वर्द्धक और वलकारक है। कुछुएका मास—वलकारक, वायु और पित्तनाशक तथा नामर्दीको दूर करनेवाला है।

ताजा मांस अमृत तुल्य और रोगनाश करनेमें समर्थ होता है। यह वयःस्थापक और देहके उपचयको वढ़ानेवाला है और हितकर है। ताजा मासके सिवा अन्य मांस परित्याग करने लायक है। जो प्राणी स्वयं मर जाते हैं, उनका मांस न खाना चाहिये, क्योंकि ऐसा मांस वलहानिकारक, अतिसारजनक और गुरु होता है। वूढे प्राणीका मांस त्रिदोषजनक, कम उम्रके प्राणीका मांस वलकारक और लघु माना गया है। सर्पादि हिंस्र जन्तु द्वारा जो सव प्राणी मरते हैं उनका मांस

दुष्ट, त्रिदोष और शूलरोगनाशक तथा गुरु होता है। सूखा हुआ मांस भी ऐसा ही होता है। इन दोनों तरहके मांसको त्याग करना चाहिये।

विष, जल और व्याधि या रोग द्वारा मरे हुए प्राणीका मास त्रिदोष, रोग और मृत्युकारक है। दुवले प्राणीका मांस वायु प्रकोप करनेवाला, जो प्राणी जलमें डूब कर मर जाते हैं, उनकी सिरा जलसे परिपूर्ण रहती है इसलिये इनका मास त्रिदोषनाशक है।

पक्षियोंमें नर पक्षीका मांस उत्तम है और चार पैरवाले जानवरोंमे मादा पशुका मांस अच्छा है। नरका निम्न अर्द्धांश लघु और समस्त प्राणीके शरीरके मध्य भागका मांस गुरु होता है। पक्षियोंके पंखका मांस गुरु होता है। क्योंकि पक्षिगण सदा अपने पंखको परिचालित करते रहते हैं। सब पक्षियोंकी गरदनका मांस और उनका अण्डा गुरु होता है। वक्षस्थल, कन्धा, पेट, मस्तक, दो पैर, हाथ, दोनों कमर, पीठ, चमडे, यकृत, अंतडी ये यथाक्रमसे गुरु होते हैं अर्थात् वक्षसे कन्धा गुरु होता है, कन्धासे पेट गुरु होता है इत्यादि। जो पक्षी अन्न खाते हैं, उनका मांस लघु और वायुनाशक है। जो मछल खाते हैं, उनका मांस पित्तवर्द्धक, वायुनाशक और गुरु होता है। सिवा इसके जो पक्षी मांस खाते हैं, उनका मांस कफकारक, लघु और रूक्ष होता है।

तुल्य जातिमे जिनका शरीर वड़ा है उनके मांसकी अपेक्षा छोटे शरीरवालेका मांस उत्तम है। फिर छोटे शरीरवाले जो हृष्ट पुष्ट हैं, उन्हींका मांस उत्तम होता है।

भावप्रकाशमें मछलीके मांसका भी गुण विस्तृत रूपसे लिखा है। लेख वढ़ जानेके भयसे यहां उल्लेख नहीं हुआ। मत्स्यका साधारण गुण मत्स्य शब्दमे लिख दिया गया है।

मासके जूस (शोरवे) का गुण—चक्षु यानी आंखका वृंहण, प्राणवर्द्धन, वार्तावकारक तथा कृमि, ओजः और स्वरवर्द्धक है। सिवा इसके जिनके शरीरका जोड टूटा हो, जो फोड़े फुंसियोंके रोगसे पिड़ित रहा करते हों, उनके लिये यह बहुत हितकर है।

तेलसे पकाये हुए मासका गुण—उष्णवीर्य्य, पित्तवर्द्धक, कटु, अग्निउद्दीपक, रुचिकर, पुष्टिप्रद और गुरु होता है।

घीका पकाया हुआ मांस तृप्ति और पुष्टिप्रद, लघु, सर्वधातुका प्रीणन तथा मुखशोष रोगियोंके लिये विशेष तृप्तिकारक होता है।

परिशुष्क और प्रदग्ध मासका गुण—अधिक घीमें जो मांस आग पर चढ़ा कर भुना जा सकता है और पीछे जीरा आदिसे परिलिप्त किया जाता है, उसको परिशुष्क मांस कहते हैं। इसके गुण ये हैं—स्थिर, चिकना, हर्षण, प्रीणन, गुरु, पित्तघ्न तथा वल, मेधा, अग्नि, मास, ओजः और शुक्रवर्द्धक। उक्त परिशुष्क मांसको तक्र आदिमें भिगो देने पर उसे प्रदिग्ध मांस कहते हैं। इसका गुण—वल, मांस और अग्निवर्द्धक तथा वात और पित्तनाशक है।

कूट कर मास पकाना—कूट कर जो मांस प्रज्वलित अङ्गारों पर पकाया जाता है, उसका गुण अत्यन्त गुरु, वृष्य और दीप्त तथा जठराग्निके लिये बहुत हितकर है। इसको साधारणतः शिक-कवाव कहते हैं।

पीसा हुआ मास—अच्छी तरह मांसको हड्डी निकाल कर पीस डालो। फिर इसमें गुड़, घी, कालोमिर्च मिला कर पकावो। इस तरह जो मास तय्यार किया जाता है उसको वेशवाका मांस कहते हैं। इसका गुण गुरु, चिकना (स्निग्ध), वल और उपचयवर्द्धक है। इस तरहके मांसमें जो चीजें मिलाई जायेंगी, उनका भी गुण इसी तरहका हो जायेगा। एक ही साथ कई तरहका मांस खाना वैद्यकशास्त्र निषेध करता है। शास्त्रानुसार परिपक्व कर जो मांस खाया जाता है, उसका ही यथा गुण (जैसा लिखा है) होता है।

वैद्यक शास्त्रमें एक जगह लिखा है—

"अन्नादष्टगुणं पिष्टं पिष्टादष्टगुणं पयः।
पयसोऽष्टगुणं मांसं मांसादष्टगुणं घृतम्॥
घृतादष्ट गुणं तैलं मर्दनान्न तु भोजनात्॥"
(राजवल्लभ)

निषेध मास—गरुड़पुराणमे लिखा है—क्रव्याद, दात्यूह, शुक, सारस, एकशफ, हंस, बलाक, वगुला, टिट्टिभ,

कुरर, जलपाद, खञ्जरीट (खंजन) और मृग आदिका मांस वर्जित है।*

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके प्रकृतिखण्डमे लिखा है—जो मनुष्य अपनी उदरपूर्त्तिके लिये दूसरेकी जान ले लेते हैं, वे शरीरान्त होने पर लाख वर्ष तक मज्जाकुण्डमें वास करते हैं। इस लम्बी अवधि। उनको आहार नहीं मिलता। उसी मज्जाको पान कर उनको जीवन धारण करना पड़ता है। इसके बाद क्रमशः सात जन्म तक, खरगोश, मीन और तृणादिका जन्म होता है। इसके बाद विशुद्ध हो सकते ५।†

कूर्मपुराणमें लिखा है, कि बलाक, हंस, दात्यूह, कलविङ्क, शुक, कुरर, चकोर, जलपाद, कोकिल, खञ्जरीट, श्येन, गृध्र, उलूक, चकई, भाष, कबूतर, टिटिहरी, ग्राम्य, टिटिहारी, सिंह, बाघ, मार्जार (बिल्ली), कुत्ता, सूअर, स्यार (गीदड़) बन्दर, गदहा, सब तरहके मृग और वनचर पक्षियोंका मांस भक्षण निषेध है।

पुराणादि धर्मशास्त्रमें मांसभक्षणको 'विधि' और 'वर्जन' दोनों ही दिखाई देते हैं। अवैध मांस भक्षण विलकुल निषेध है। भगवान् मनुने कहा है—विधिज्ञ ब्राह्मण कभी भी अवैधमांस भक्षण नहीं करें। इस जन्ममें जिसका मांस अवैधभावमें भक्षण किया जाता है, जन्मान्तरमें उसके द्वारा स्वयं भक्षित होना पड़ता है यानी उस जन्ममें वह भी उसे भक्षण करेगा। वृथा मांस भोजनसे जन्मान्तरमें जैसा पाप भोगना पड़ता है, वैसा निष्ठुर व्याधको भी भोगना नहीं पड़ता जो पैसेके लोभसे दूसरे जीवोंको मारा करता है। पशु आहार करनेमें यदि एकान्त इच्छा ही रहे, तो अन्ततः घृतमयी और पिष्टकमयी पशुमूर्त्ति बना कर भोजन करना चाहिये। फिर भी, अवैधरूपसे पशुहिंसा न करने चाहिये। जो मनुष्य अपनी इच्छाकी तृप्तिके लिये किसी पशुकी हत्या (हिंसा) करता है, उसे भी कई जन्मों तक दूसरोंके द्वारा वध्य होना पड़ता है। जिस पशुकी जो मनुष्य हत्या करता है, उस पशुकी रोम संख्याके अनुसार उसे वध्य होना पड़ता है। प्राणियोंकी विना हिंसा किये मांस प्राप्त नहीं हो सकता और प्राणिहत्यासे स्वर्गकी प्राप्तिसे वञ्चित रहना पड़ता है। अतएव मांसका सर्वथा परित्याग करना ही विधिसंगत है। किस प्रकार मांसकी उत्पत्ति होती है और उस मांसके भक्षण करनेसे किस तरह पतित होना पड़ता तथा उसका कैसा फल भोगना पड़ता है, यह सब देख सुन कर ही मनुष्यको इस मांसभक्षणसे सर्वथा वञ्चित रहना बहुत उत्तम है। जो अवैध मांस भक्षण नहीं करते, वे लोकप्रियता तथा नीरोगता प्राप्त कर सकते हैं। देव और पितृगणकी पूजा न कर जो मनुष्य दूसरेके मांस द्वारा अपने मांसकी वृद्धिके लिये यत्न करता है, उसके जैसा और कोई भी मन्द भागी नहीं होगा। जो मांस नहीं खाता वह मनुष्य सौ वर्ष तक प्रतिवर्ष एक अश्वमेध करनेवाले व्यक्तिके समान है। मांस त्याग करनेवाला व्यक्ति जैसा पुण्यफल प्राप्त करता है, वैसा पुण्यफल मुनि भी नहीं पाते, जो पवित्र फलमूलादि आहारको

* क्रव्यादपक्षिदात्यूहशुकमांसानि वर्ज्जयेत्।
सारसैकशफान् हंसान् बलाकावकटिट्टिभान्॥
कुरर जालपादञ्च खञ्जरीटमृगद्विजान्।
चाषान् मत्स्यान् रक्तपादान् जग्ध्वा वै कामतो नरः।
वन्धुर कामतो जग्ध्वा सोपवासस्त्र्यहं वसेत्॥"
(गरुड़पुराण ९६ अ०)

† "लोभात् स्वभक्षणार्थाय जीविन हन्ति यो नरः।
मज्जाकुण्डे वसेत् सोऽपि तद्भोजी लक्षवर्षकम्॥
ततो भवेत् न शशका मीनश्च सप्तजन्मसु।
तृणाद्यश्च कर्मभ्यस्ततः शुद्धि भवेद्ध्रुवम्॥"
(ब्रह्मवैवर्त्तपुराण)

"बलाक हंसदात्यूह कलविङ्क शुक तथा।
कुररञ्च चकोरञ्च जालपादञ्च कोकिलम्॥
चाषञ्च खञ्जरीटञ्च श्येन गृध्र तथैव च।
उलूक चक्रवाकञ्च भार्य पारावतन्त्वपि॥
कपोत टिट्टिभञ्चैव ग्रामटिट्टिभमेव च।
सिंहव्याघ्रञ्च मार्जार श्वानं शूकरमेव च॥
शृगाल मर्कटञ्चैव गार्दभञ्च न भक्षयेत्।
न भक्षयेत् सर्वमृगान पक्षियोऽन्यान् वनेचरान्॥"
(कूर्मपु० ९६ अ०)

त्याग कर जीवन धारण करते हैं। इहजन्ममें जिस पशुका जिसने मांस भक्षण किया वह पशु भी परजन्ममें उसे भक्षण करेगा। यही मांस शब्दकी व्युत्पत्ति निश्चित हुई है।

ब्रह्मपुराणमें लिखा है,—मरे हुए पशुका मांस कभी भी भक्षण न करना चाहिये।

'पशोस्तु मार्ग्यमाणस्य न मांस ग्राहयेत् क्वचित्।
पृष्ठमांसं गर्भशय्या शुष्कमांसमथापि वा॥"
(ब्रह्मपुराण)

महाभारतमें लिखा है,—जो लोभके वशवर्त्ती न हो कर रोगार्त्त हो कर भी मांसभक्षणसे अलग रहते हैं, वह व्यक्ति बिना प्रयास ही एक सौ अश्वमेधयज्ञका फल लाभ करते हैं।

"रोगार्तोऽभ्यर्थितो वापि यो मांस नात्यलोलुपः।
फलमाप्नोत्ययत्नेन सोऽश्वमेधशतस्य च॥"
(महाभारत)

नन्दिपुराणमें लिखा है—जो व्यक्ति किसीको मांस-भक्षण करनेसे रोकते हैं, वे भी पुण्यफलके भागी होते हैं।

"यश्चोपदेशं कुरुते परस्य तु महात्मनः।
मांसस्य वर्जनफलं सोऽमागादफल लमेत्॥"
(नन्दिपु०)

भविष्यपुराणमें लिखा है—जो मनुष्य रविवारको लाल साग और मांस भक्षण करते हैं वे सात जन्म तक कोढ़ी और दरिद्र होते हैं।

"आमिषं रक्तशाकञ्च यं भुङ्क्ते च रवेर्दिने।
सप्तजन्म भवेत् कुष्ठी दरिद्रश्चोपजायते॥" (भविष्यपु०)

विष्णुपुराणमें लिखा है—चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, पूर्णिमा और रवि संक्रान्ति इन सब पर्वोंमें जो मनुष्य मांस भक्षण करते हैं, तेलका व्यवहार करते हैं या स्त्रीसम्भोग करते हैं वे मरनेके बाद उनका विन्मूत्रभोजन नामक नरकमें वास होता है।

"चतुर्दश्यष्टमी चैव अमावास्याथ पूर्णिमा।
पर्वाण्येतानि राजेन्द्र! रविसंक्रान्तिरेव च॥
स्त्रीतैलमांस सम्भोगी पर्वस्वेतेषु वै पुमान्।
विन्मूत्रभोजनं नाम प्रयाति नरकं मतः॥"
(तिथ्यादितत्त्वधृत वि०पु०)

श्रीमद्भागवतमें मांस खानेकी कोई व्यवस्था नहीं पाई जाती। भागवतके मतसे वैध अवैध सब तरहके मांसका निषेध किया है। पांचवें स्कन्धमें लिखा है, कि जो सब पुरुष पुरुषमेधयज्ञ करते हैं और जो स्त्रियां नरपशु भोजन करती हैं—इन दोनों स्त्री-पुरुषोंको मृत्यु-भवनमें जा कर कष्ट भोगना पड़ता है।

"ये त्विह वै पुरुषाः पुरुषमेधेन यजन्ते याश्च स्त्रियो नृपशून् खादन्ति, तांश्च ताश्च ते पशव इव निहता यमसदने यातयन्तो रक्षोगणाः, . . ।" (भागवत ५।२६।३१ अ०)

पहले ही कहा जा चुका है, कि मांस भक्षणका निषेध और भक्षण दोनोंकी विधि है। शास्त्रीय निषेध बातोंका उल्लेख किया गया, अब उसके खानेकी विधिका उल्लेख किया जायेगा।

गरुड़पुराणमें लिखा है,—श्राद्धोपक्षमें देव और पितृगणके उद्देशसे पशुका वध कर मांस भक्षण करने पर किसी तरहके दोषका भागी नहीं होना होता, किन्तु इस नियमके सिवा यदि मांसभक्षण किया जाये या पशुहत्या की जाय, तो अपने दुष्कर्मके अनुसार उस हत पशुको लोमसंख्याके अनुसार उस मनुष्यको नरककी यातना भोग करनी पड़ती है।

"श्राद्धे देवान् पितृन् प्राच्य खादन् मांस न दोषभाक्।
वसेत् स नरके घोरे दिनानि पशुरोमभिः॥
सम्मितानि दुराचारोयो हन्त्यविधिना पशून्॥"
(गरुड़पु० ९९ अ०)

कूर्मपुराणमें लिखा है,—गोधा, कूर्म, शश, खड्गी, और शल्याक ये पांच मनुके मतसे भक्ष्य है। सशल्क मछली, रुरु, मृगका मांस—ये दो तरहके मांस देवब्राह्मणको बिना निवेदन किये नहीं खाना चाहिये। मयूर (मोर), तीतर, कपोत, कपिञ्जल, वार्ध्रीनस, बगुला, नील हंस इन सब पक्षियोंका मांस और मकर, सिंह-तुण्ड, पाठीन और रोहित (रोहू) आदि मछलीका मांस इन दोनों तरहके मांस प्रोक्षित होने पर ब्राह्मण-कामनासे भोजन किया जा सकता है। वैधभावसे मांस भक्षण करने पर पापसे लिप्त नहीं होना होता। जो मनुष्य श्राद्ध और किसी देवकार्यमें आमन्त्रित हो कर मांस-

भोजनसे इन्कार करता है, उस मनुष्यको भी पशुकी रोम संख्याके अनुसार नरक भोगना पड़ता है।

मांसके भक्षण और अभक्षणके विषयमें मनु भगवान्ने यों बताया है,—मनुके मतसे 'प्रोक्षित' मांसको भक्षण करना चाहिये। ब्राह्मणोंकी कामनासे आहारान्तरके असद्भावमें और प्राणसंकटमें मांस भक्षण किया जा सकता है। ब्रह्माने जीवके आहारके लिये स्थावरजङ्गमकी सृष्टि की है। स्थावर व्रीहि, यवादि और जङ्गम पशु आदि सभी प्राण या जीवकी आहार्य्य सामग्री है। इस लिये प्राणधारणके लिये, जीव मांस भक्षण कर सकता है। जङ्गम हरिण आदि पशु भी अजङ्गम तृण आदि घासोंका आहार करते हैं। व्याघ्र सिंह आदि हिंस्रजन्तु अहिंसक जंतु हरिण आदिका भक्षण करते हैं। इसी तरह हाथवाले मनुष्य विना हाथ पैरकी मछलियोंको खाते हैं। शूर स्वभाव वाला सिंह भीरु स्वभाववाले हस्तीको मार कर खा जाताहै, इसी तरह विधाताकी सृष्टि है। ब्रह्माने भक्ष्य और भक्षक दोनों हीकी सृष्टि की है। इसलिये भक्षकको भक्ष्य पदार्थके खानेका दोष नहीं लगता। यज्ञके लिये जो पशु मारा जाता है, उसका मांसभक्षण देवविधि कही गई है। सिवा इसके अपने उदरकी पूर्त्तिके लिये जो पशु मारा जाता और उसका मांस खाया जाता उसे राक्षसवृत्ति कहते हैं। इस प्रवृत्तिके वशवर्त्ती हो वृथा मांस खाना नितान्त अनुचित है। खरीद कर या यत्नपूर्वक सग्रह कर यदि कोई देव पितृगणको निवेदन करके मांस भक्षण करे, तो उनको दोषका भागी नहीं होना होता। श्राद्ध या मधुपर्ककी घटनामें मनुष्य यदि मांस भक्षण न करे, तो उनको जन्मान्तरमें इक्कीस जन्म पशु होना पड़ता है। वेदविहित मतसे जो पशुप्रोक्षणादि संस्कार-सम्पन्न नहीं हुए, ब्राह्मणोंको उनका मांस भक्षण करना न चाहिए। फलत. मन्त्रसंस्कृत मांस खाना ही ब्राह्मणोंके लिये विधिसङ्गत है।*

अन्तमें मनु भगवान् कहते हैं, कि ब्राह्मणादि वर्णोंके अधिकारानुसार मांस भक्षणका दोष नहीं लगता। क्योंकि भक्षण, पान, मैथुनादि कार्योंमे प्रवृत्ति ही प्राणीका नैसर्गिक धर्म है। मांसभक्षण, मद्यपान और स्त्री-सम्भोग इन सब कामोंमें मनुष्य स्वभावतः प्रवृत्त हुआ करता है। किन्तु बात यह है, कि इन सब कामोंमें प्रवृत्त न होना ही मङ्गलजनक है।

'न मांस भक्षणे दोषो न मद्ये न च मैथुने।
प्रवृत्तिरेषा भूताना निवृत्तिस्तु महाफला॥' (मनु ५।४६)

देवीपुराणमे लिखा है—अष्टमीके दिन उपवास कर नवमी तिथिमे मछली वा मांस उपहार द्वारा नैवेद्य प्रदान पूर्वक स्वयं भोजन करना।

"अष्टमीं समुपोष्यैव नवम्यामपरेऽहनि।
मत्स्यमांसोपहारेण दद्यान्नैवेद्यमुत्तमम्॥
तेनैव विधिनान्नन्तु स्वयं भुञ्जीत नान्यथा॥"
(देवीपुराण)

याज्ञवल्क्यने लिखा है—प्राणसंकटके समय, श्राद्धके उपलक्षमें अथवा ब्राह्मणके लिये देव पितृको अर्पण कर यदि प्रोक्षित मांस खाया जाये, तो उसमे कुछ दोष नहीं लगता।

'प्राणात्यये तथा श्राद्धे प्रोक्षित द्विजकाम्यया।
देवान् पितन् समभ्यर्च्च्य खादन् मांस न दोषभाक्॥'
(याज्ञवल्क्य)

* "मांसल्यातः प्रवक्ष्यामि विधिं भक्षणवर्ज्जने।
प्रोक्षित भक्षयेन्मांस ब्राह्मणानाञ्च काम्यया॥
यथाविधि नियुक्तन्तु प्राणानामेव चात्यये॥
प्राणस्यान्नमिदं सर्वं प्रजापतिरकल्पयत्।
स्थावर जङ्गमञ्चैव सर्वं प्राणस्य भोजनम्॥
चराणामन्नमचरा दंष्ट्रिणामप्यदंष्ट्रिणः।
अहस्ताश्च सहस्तानां शूराणाञ्चैव भीरवः॥
नात्ता दुष्यत्यदन्नाद्यान् प्राणिनोऽहन्यहन्यपि।
धात्रैव सृष्टा ह्याद्याश्च प्राणिनोऽत्तार एव च॥
यज्ञाय जग्धिर्मांसस्येत्येष दैवो विधिः स्मृतः।
अतोऽन्यथा प्रवृत्तिस्तु राक्षसो विधिरुच्यते।
क्रीत्वा स्वयं वाप्युत्पाद्य परोपकृतमेव वा॥
देवान् पितॄनर्च्चयित्वा खादन् मांसं न दुष्यति।
नियुक्तस्तु यथान्यायं यो मांसं नात्ति मानवः॥
स प्रेत्य पशुतां याति सम्भवानेकविंशतिम्।
असंस्कृतान् पशून् मन्त्रैर्नाद्याद्विप्रः कदाचन।
मन्त्रैस्तु संस्कृतानद्याच्छाश्वतं विधिमास्थितः॥'
(मनु ५ अध्याय)

धर्मशास्त्रकार यमने भी ब्राह्मण-कामनासे प्रोक्षित मांस भोजनकी व्यवस्था दी है।

"भक्षयेत् प्रोक्षितं मास सकृद्ब्राह्मणकाम्यया।
दैवेनियुक्तः श्राद्धे वा नियमे च विवर्ज्जयेत्॥"

(तिथितत्त्वधृत यमवचन)

तन्त्रसारमें वैष्णवाचार निर्णयमें मांसभक्षणका निषेध दिखाई देता है। नित्यातन्त्रके प्रथम पटलमें लिखा है—वैष्णवाचारपरायण व्यक्तिको मैथुन, मैथुनालाप, हिंसा, निन्दा, कौटिल्य और मांसभक्षणका परित्याग कर देना चाहिये।

"मैथुन तत्कथालाप कदाचिन्नैव कारयेत्।
हिंसा निन्दाञ्च कौटिल्य वर्जयेन्मासभोजनं॥"

(प्राणतोषिणीधृत नित्या०)

तन्त्रमें मांस पञ्चमकारके द्वितीय मकार रूपसे उल्लिखित है। पञ्चमकार देखो।

तन्त्रमें लिखा है,—

"मासन्तु त्रिविध ज्ञेय जलखेचरभूचरम्।
त्रिविध मासस प्रोक्त देवताप्रीतिकारणम्॥"

मांस तीन तरहका होता है—जलचर, भूचर और खेचर। इन तीन तरहके मांस देवताओंको प्रिय है।

गोमांस, भेड़ा, घोड़ा, भैंसा, गधा, बकरा, ऊंट और मृग यह सब मांस भूचरमांस है। इन भूचरमांसोंको महामांस कहते हैं।

"गोमेषाश्व महिषकगोधा जोष्ट्र मृगोद्भवम्।
महामासाष्टक प्रोक्त देवता प्रीतिकारकम्॥" (तन्त्रसार)

मांस द्वारा देवीकी पूजा करना चाहिये। यदि किसी तरह मांस न मिले तो उसके बदलेमें क्या करना चाहिये उसकी व्यवस्था भी लिखी है।

मांसका प्रतिनिधि—लवण, अदरक, पिण्याक, तिल, गेहूं, उड़द और लहसून ये सब मांसके प्रतिनिधि हैं। मांसके अभावमें यह सब चीजें दी जा सकती हैं।

"लवणाद्रकपिण्याक तिलगोधूम माषकम्।
लशुनञ्च महादेवि मास प्रतिनिधि स्मृतः॥"

(तन्त्रसार)

मांस खूब शुद्ध करके खाना चाहिये। "ॐ प्रतद्-विष्णुस्तरते" इत्यादि मन्त्रसे मांसको शुद्ध कर लेना चाहिये। पञ्चमकार शोधनकी जगह लिखा है, कि मद्य, मांस कहनेसे जो मालूम होता है, वास्तवमें वह उसका यथार्थ रूप नहीं है। कुलकुण्डलिनीशक्ति ही सुरा, परम शिव ही मांस, स्वयं भैरव ही भोक्ता हैं। जिस समय शिवशक्तिका योग होता है उस समय मोक्षमूल आनन्दका उदय होता है। आनन्द ही ब्रह्मका स्वरूप है। यह आनन्द साधकके शरीरमें ही मौजूद है। सुरा इसका व्यञ्जक है, इसोलिये योगी सुरापान करते हैं। जो षट्चक्र भेद करनेमें समर्थ हैं, जो पीठस्थानोंको पार कर महापद्मवनमें विहार या विचरण कर सकते हैं, जो मूलाधारसे ब्रह्मरन्ध्र तक बार बार जा कर चिन्मय परम शिवके साथ कुण्डलिनी शक्तिका सामरस्य सम्पादनपूर्वक सहस्र दल कमलमध्यगत चन्द्रमण्डलसे अमृतपान करते हैं, वे ही यथार्थमें मद्यपान करते हैं। दूसरा जो लौकिक मद्य है, वह पापजनक है।

जो योगी ज्ञानरूप खड्ग द्वारा पुण्य और पापरूप पशुका बलिदान कर परमब्रह्ममें चित्तलय हो जाते हैं, उन्हींका मांस भक्षण करना यथार्थ होता है। अथवा जो मनुष्य मनःप्रसूत इन्द्रियगणको संयमपूर्वक आत्मामें योजना करते हैं, वे ही यथार्थ मांसाहारी हैं और मांस खानेवाले प्राणिघातक हैं।

"सुरा शक्तिः शिवो मास तद्भोक्ता भैरवः स्वयम्।
तयोरैक्ये समुत्पन्ने आनन्दो मोक्ष उच्यते॥
आनन्द ब्रह्मणो रूप तच्च देहे व्यवस्थितम्।
तस्याभिव्यञ्जक द्रव्य योगिभिस्तेन पीयते॥
लिङ्गत्रयविशेषज्ञः षट्चक्रपद्मभेदकः।
पीठस्थानानि चागत्य महापद्मवन व्रजेत्॥
आमूलाधारमाब्रह्मरन्ध्र गत्वा पुनः पुनः।
चिच्चन्द्रकुण्डलीशक्तिसामरस्य महोदयः॥
व्योमपङ्कजनिस्यन्दसुधापानरतो नरः।
मधुपानमिद देवि चेतर मद्यपानकम्॥
पुण्यापुण्यपशु हत्वा ज्ञानखड्गेन योगवित्।
परे लय नयेच्चित्त पलाशीति निगद्यते॥
मानसादीन्द्रियगणा सयम्यात्मनि योजयेत्।
मासाशी च भवेद्देवि इतरे प्राणनाशकः॥"

(तन्त्रसार)

व्याकरणके अनुसार पाक शब्द और पाचन शब्द पीछे रहने पर मांस शब्दका अन्त्यलोप होता है। यथा—

"मांस्यचन्त्या उखायाः।" (महाभाष्य)

मन—सः दीर्घश्च। (पु०) ५ काल। ६ कीट। ७ वर्णसङ्कर जातिविशेष।

"चतुरो मागधी सूते क्रूरान्मायोपजीविनः।
मास स्वादुकर क्षौद्र सौगन्धमिति विश्रुतम्॥"
(महा० १३।४८।२२)

मांसकच्छप (स० पु०) तालुगत मुखरोगभेद। सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका रोग जो तालूमें होता है।

मांसकन्दी (स० स्त्री०) अर्बुदविशेष, आबु।

मांसकर्णी (सं० स्त्री०) १ वरव्यादि कीट, गंधिया कीडा। २ वक्रशुण्डा।

मांसकाम (सं० त्रि०) मांसप्रिय, जिसको मास खानेमें अच्छा लगता हो।

मांसकारिन् (सं० क्ली०) मांसं करोतीति कृ णिनि। रक्त, लहू।

मांसकीलक (सं० पु०) स्वनामख्यात गुह्यरोगभेद, ववासीरका मसा। इस रोगको अर्शोभेद भी कह सकते हैं।
(वागभट्ट ३३ अध्याय)

मांसकेशिन् (सं० पु०) पादरोगभेदयुक्त अश्व, वह घोड़ा जिसके पैरोंमें मांसके गुठले निकलते हों।

मांसकोथ (सं० पु०) मांसगलन, मांसका गलना।

मांसखण्ड (सं० क्ली०) मांसका टुकड़ा।

मांसखोर (फा० वि०) मांस खानेवाला, मांसाहारी।

मांसखुर (सं० पु०) पादरोगविशेषयुक्त अश्व, वह घोड़ा जिसके खुरमें मांसके गुठले निकलते हों।

मांसगज्वर (सं० पु०) ज्वरविशेष। इसके होनेसे जंघेके आधे भागमें वेदना, पिपासा, उष्मा, अन्तर्दाह, विक्षेप और ग्लानि आदि होती है।

मांसग्रन्थि (सं० पु०) मांसजात ग्रन्थिरोग, मांसकी गांठ जो शरीरके भिन्न भिन्न अंगोंमें निकल आती है।

मांसच्छदा (सं० स्त्री०) मांसं छादयति छद् णिच्-अच् ह्रस्व, अथवा मांस इव छदः पर्णमस्याः तदुपरि लोमोत्पत्तेरस्यास्तथात्वं। मांसरोहिणी नामकी लता। पर्याय—मांसी, मांसरोही, रसायनी, सुलोमा, लोमकारिणी। (राजनि०)

मांसच्छेद (सं० पु० स्त्री०) मांस-विक्रयी, जो मांस काट कर बिक्री करता हो।

मांसच्छेदिन् (सं० पु०) मांस विक्रयकारी जातिविशेष, मांस बेचनेवाली एक जाति।

मांसज (सं० क्ली०) मांसाज्जायते जन-ड। १ देहस्थित मांसजन्यमेद, मांससे उत्पन्न शरीरमें की चर्वी। (त्रि०) मांसजातमात्र, वह जो मांससे उत्पन्न हो।

मांसजाति (सं० स्त्री०) मृग, विष्किर, प्रतुद, प्रसह, विलेशय, महामृग, जलचर और मत्स्य आदि ये आठ प्रकारकी मांसजाति है। (पर्यायमुक्तावली)

मांसजाल (सं० क्ली०) जालवन्मांस, जालके जैसा मांस, मांसझिल्ली या जाला। मांसजाल, शिराजाल, स्नायुजाल और अस्थिजाल ये प्रत्येक चार चार हैं। ये आपसमें संश्लिष्ट और आपसके छेदमें मिल कर मणिवन्धसे गुल्फ तक रहते हैं।

मांसतान (सं० पु०) कण्ठगत मुखरोगभेद, एक प्रकारका गलेका भीषण रोग। इसमें गलेमें सूजन हो कर चारों ओर फैल जाती है और इसमें बहुत अधिक पीड़ा होती है। यह रोग त्रिदोषसे उत्पन्न होता है। इससे कभी कभी गलेकी नाली घुट कर बंद हो जाती है और रोगी मर जाता है। (सुश्रुत नि० १६ अ०)

मांसतेजस् (सं० क्ली०) मांसात् तेजोऽस्य बहुव्री०। मेद, चर्वी।

मांसदलन (सं० पु०) मांसं प्लीहात्मकं दलयति कृशीकरोतीति दल-णिच्-ल्यु। प्लीहघ्नवृक्ष, लाल रोहितक पेड़।

मांसद्राविन् (सं० पु०) मांसं द्रावयति णिच्-णिनि। अम्लवेतस, अमलवेंत।

मांसधरा (सं० स्त्री०) १ इस नामकी पहली कला। २ स्थूलापर नामक सप्तम त्वक्, सुश्रुतके अनुसार शरीरके चमड़ेकी सातवीं तह जो स्थूलापर भी कहलाती है।

मांसपचन (सं० क्ली०) मांसस्य पचनम्। मांसपाक।

मांसपाक (सं० पु०) १ मांसपाककरण, मांस पकाना या रींधना। २ शूकररोगभेद, एक प्रकारका लिंगका रोग। इसमें लिंगका मांस फट जाता है और उसमें पीड़ा

होती है। यह व्याधि त्रिदोषके विगड़नेसे होती है।
मांसपिण्ड (सं० क्ली०) शरीर, देह।
मांसपिण्डी (सं० स्त्री०) शरीरके अन्दर होनेवाली मांसकी गांठ। कहते हैं, कि पुरुषोंके शरीरमें इस प्रकारकी ५८० और स्त्रियोंके शरीरमें ५२० गांठें होती है।
मांसपित्त (सं० क्ली०) अस्थि, हड्डी।
मांसपुष्पिका (सं० स्त्री०) एक प्रकारका पौधा जिसमें सुन्दर फूल लगते हैं। इसे भ्रमरारि भी कहते है।
मांसपेशी (सं० स्त्री०) मांसस्य पेशी ६-तत्। १ गर्भस्थावयवभेद, गर्भकी एक अवस्था। पहले बुद्बुद उसके बाद सातवी रातमें मांसपेशी होती है। क्रमशः दो सप्ताह बाद वह रक्त मांसमें परिव्याप्त हो कर दृढ़ हो जाती है। मांसपेशीके सम्बन्धमें विस्तृत विवरण भावप्रकाशमें लिखा है। पेशी देखो। २ शरीरके अन्दर होनेवाला मांसपिंड।
मांसफल (सं० पु०) तरम्बुजवल्ली, तरबूज।
मांसफला (सं० स्त्री०) मांसमिव कोमलमस्याः वार्त्ताकी, भिंडी।
मांसभक्ष (सं० पु०) मांसं भक्षयतीति भक्ष अण् (कर्मण्यन। पा ३।२।४) १ मांसभक्षणकर्त्ता, वह जो मांस खाता हो। २ पुराणानुसार एक दानवका नाम।
मांसभक्षी (सं० पु०) मांस खानेवाला, गोश्तखोर।
मांसभिक्षा (सं० स्त्री०) हुतावशेष मांसयाचन, यज्ञका बचा हुआ मांस मांगना।
मांसभेत्तृ (सं० त्रि०) मांस-भिद तृच्। मांस-भेदकारी, मांस काटनेवाला।
मांसभोजी (सं० पु०) मांस खानेवाला, मांसाहारी।
मांसमण्ड (सं० पु०) मांसका झोल या रसा, शोरवा।
मांसमय (सं० त्रि०) मांस स्वरूपार्थे मयट्। मांसस्वरूप, मांसके जैसा।
मांसमासा (सं० स्त्री०) मस परिणामे घञ् मांसस्य परिणामोऽस्याः ५ वहु०। मांसपर्णी।
मांसयोनि (सं० पु०) रक्त मांससे उत्पन्न जीव।
मांसरक्ता (सं० स्त्री०) मांसरोहिणी, रोहिणी।
मांसरज्जु (सं० स्त्री०) १ मांसनिबन्धन स्नायु, सुश्रुतके अनुसार शरीरके अन्दर होनेवाले स्नायु जिनसे मांस बंधा रहता है। २ मांसका रसा, शोरवा। इसका गुण—चक्षुष्य, बृंहण, प्राणवर्द्धक, वृष्य, वातविनाशक तथा स्मृतिबल और स्वरवर्द्धन। सन्धिस्थलके भग्न या विश्लिष्ट तथा कृश और व्रणाक्रान्त होनेसे इसका व्यवहार बहुत फायदेमन्द होता है।
मांसरस (सं० स्त्री०) मांसस्य रसः ६-तत्। मांसका रस, शोरवा।
मांसरुहा (सं० स्त्री०) मांसरोहिणी।
मांसरोहा (सं० स्त्री०) मांसरुहा देखो।
मांसरोहिका (सं० स्त्री०) मांसरोहिणीविशेष।
मांसरोहिणी (सं० स्त्री०) मांसं रोहयतीति रुह-णिच्-णिनि ङीप् विकल्पे गुणाभावः। स्वनामख्यात सुगन्ध द्रव्य, एक प्रकारका जंगली वृक्ष। इसकी प्रत्येक डालीमें खिरमोके पत्तोंके आकारके सात सात पत्ते लगते हैं और इसके फल बहुत छोटे छोटे होते हैं। पर्याय—अग्निरुहा, वृत्ता, चर्मकषा, वसा, विकषा, मांसरोही, प्रहारवल्ली, वीरवती, कशामासी, महामांसी, रसायनी, सुलोमा, लोमकर्णी, रोहिणी, चन्द्रवल्लभा। इसका गुण उष्ण, त्रिदोषनाशक, वीर्य्यवर्द्धक, सारक और व्रणके लिए हितकारी माना गया है। (भावप्र० पू० १ अ०)
मांसल (सं० क्ली०) मांसं तद्वत्पुष्टिकरो गुणोऽस्त्यस्यास्मिन् वा मांस लच्-(शिध्मादिभ्यश्च। पा ५।२।९७) १ काव्यमें गौड़ी रीतिका एक गुण। २ माष नामक शिम्बीधान्य, उड़द। (त्रि०) ३ मांसयुक्त, मांससे भरा हुआ अंग। जैसे—चूतड, जांघ आदि। ४ बलवान्, मजबूत। ५ स्थूल, मोटा ताजा, पुष्ट।

"निस्वाश्च बहुरेखाः स्युर्निद्र व्याम्चिवुकैः कृशैः।
मांसलैश्च धनोपेतैरवक्रैरधरैर्नृपाः॥"

(गरुडपु० ६६ अ०)

६ अति बहुल, बहुत बेशी।
मांसलता (सं० स्त्री०) १ मांसलका भाव। २ स्थूलता और पुष्टी।
मांसलफला (सं० स्त्री०) मांसलं पुष्टं फलमस्याः। १ वार्त्ताकी, भिंडी। २ तरम्बुज, तरबूजा।
मांसलिप्त (सं० क्ली०) अस्थि, हड्डी।

मांसवर्ग (सं० पु०) १ जलचर, सजलदेशचर, ग्रामवासी, मांसभोजी, एकशफ (एक खुरवाला जन्तुमात्र) तथा जाङ्गल ये छः प्रकारके मांसवर्ग हैं। ये सब एकसे एक प्रधान हैं ऐसा जानना होगा। अर्थात् जलचरकी अपेक्षा सजलदेशवासी तथा सजल-देशवासीकी अपेक्षा ग्रामवासी प्रधान हैं। ये दो प्रकारके हैं, जाङ्गल और आनूप। विस्तृत विवरण जाननेके लिये भावप्रकाशका मांसवर्ग और सुश्रुत ४६ अध्याय देखो। २ मांससमूह, मांसकी ढेर।

मांसवहस्रोतस् (सं० क्ली०) मांसनायक नाडी। इस नाडीका मूल स्नायु और त्वक् है।

मांसवारुणी (सं० स्त्री०) वैद्यकके अनुसार एक प्रकारकी मदिरा जो हिरन आदिके मांससे बनाई जाती है। इसके बनानेका तरीका इस प्रकार है—हरिण आदिके मांसको टुकडे टुकडे कर उन्हें मट्ठेमें रख छोड़। ४८ दिनके बाद उससे थोडा थोडा रस निकाले।

मांसविक्रय (सं० पु०) मांस विक्रय करना, मांस बेचना।

मांसविक्रयिन् (सं० त्रि०) मांसविक्रयोऽस्यास्तीति वा मांसविक्रयेण जीवतीति इनि। आमिषविक्रयकर्त्ता, मांस बेचनेवाला या कसाव। पर्याय—वैतंसिक, कौटिक, मांसिक, शौनिक, कौटकिक। दैव और पैत्रकर्ममें कसावोंका संस्रव छोड़ देना चाहिये।

"चिकित्सकान् देवलकान् मांसविक्रयिणस्तथा।
विपणेन च जीवन्तो वर्ज्याः स्युर्हव्यकव्ययोः॥"

(मनु ३।१५१)

२ पुत्र-कन्या-विक्रयकारी, धनके लिये अपनी कन्या या पुत्रको बेचनेवाला।

मांसविक्रयी (सं० त्रि०) मांसविक्रयिन् देखो।

मांसविक्रेतृ (सं० त्रि०) मांस-विक्रयी, कसाव।

मांसवृद्धि (सं० स्त्री०) मांसस्य वृद्धिः। १ अर्बुद। २ गलगण्ड, घेघा। ३ श्लीपद, फीलपाँव। ४ कोरण्ड, अण्डवृद्धिका रोग।

मांसशील (सं० त्रि०) १ मांसल, मांससे भरा हुआ। २ मांसप्रिय, जिसे मांस अच्छा लगता हो।

मांससङ्कोच (सं० पु०) मांसका सिकुडना।

मांससङ्घात (सं० पु०) तालुरोगविशेष, एक प्रकारका रोग जिसमें तालुमें कुछ दूषित मांस बढ जाता है। इसमे पीडा नही होती।

मांससमुद्भवा (सं० स्त्री०) वसा, चर्वी।

मांससर्पिः (सं० पु०) राजयक्ष्मारोगमें घृतौषधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—बिलमें रहनेवाले पक्षियोंका मांस १२॥ सेर, जल १२८ सेर, शेष १६ सेर; घी ४ सेर; चूर्णके लिये जीवंती प्रत्येक १ पल। इन सबोंको एक साथ मिला कर पाक कर लेना होता है।

(वाभट चि० ५ अ०)

मांससार (सं० पु०) मांसस्य सारः ६-तत्। १ मेदोधातु, शरीरके अन्तर्गत मेद नामक धातु। (राजनि०) मांसेष्वपि सारो बलमस्य बहुव्रीo। २ स्थूलकाय, वह जो हृष्ट पुष्ट हो। मांससार मनुष्योंका शरीर हृष्ट पुष्ट होनेसे वे विद्वान्, धनी और सुन्दर होते हैं।

"उपचितदेहो विद्वान् धनी सुरूपश्च मांससारो यः"

(बृहत्स० ६८।१००)

मांसस्नेह (सं० पु०) मांसानां स्नेहः ६-तत्। १ मेदोधातु, शरीरके अन्तर्गत मेद नामक धातु। २ वसा, चर्वी।

मांसहासा (सं० स्त्री०) मांसेन हासः प्रकाशो यस्याः। चर्म, चमडा।

मांसाद् (सं० पु०) मांसमत्तीति मांस-अद-क्विप्। १ मांसभक्षक, वह जो मांस खाता हो। २ राक्षस।

"अद्य तर्प्स्यन्ति मांसादाः भूः पास्यत्यरिशोणितम्"

(भट्टि १६।२६)

मांसाद (सं० पु०) मांसाशी मांसभक्षक। जो मांस खाता है उसे 'मांसाद' कहते हैं।

"यो यस्य मांसमश्नोति स तन्मांसाद उच्यते।
मत्स्यादः सर्वमांसादस्तस्मान्मत्स्यान् विवर्जयेत्॥"

(मनु ५।१५)

मांसादिन् (सं० त्रि०) मांसाशी, मांसभोजी।

मांसाङ्कुर (सं० पु०) १ अंकुरके जैसा मांससमूह। २ अर्शकी वलि।

मांसारि (सं० पु०) अम्लवेत।

मांसार्बुद (सं० क्ली०) शूकरोगभेद। शूकप्रयोगके बाद

मांस जब दूषित हो कर उससे फोड़े निकलते हैं, तब उसे मांसार्बुद कहते हैं। यह रोग असाध्य है।

२ अर्बुदविशेष। इसका लक्षण—मुष्टि आदि द्वारा अङ्ग जब घायल होता है, तब मांस दूषित हो कर सूज जाता है। इसमें जलन नहीं होती और न उसका वर्ण ही बदलता है, किन्तु वह पत्थरके जैसा कठिन और अविचलित हो जाता है। इसीका नाम मांसार्बुद है। यह पकता नहीं है। इस रोगको भी असाध्य समझना चाहिये।

"अवेदनं स्निग्धमनन्यवर्णपाकमश्मोपममप्रचाल्यम्।
प्रदुष्टमांसस्य नरस्य बाढमेतद्भवेन्मांसपरायणस्य।
मांसार्बुदं त्वेतदसाध्यमुक्तम्... .. ..॥"
(सुश्रुतनि० ११ अ०)

मांसावदारण (सं० क्ली०) मांसभेदन, मांस काटना।

मांसाशन (सं० क्ली०) १ मांसस्याशनम्। मांसभोजन, मांस खाना। (पु०) २ मांसाशी, वह जो मांस खाता है। ३ राक्षस।

मांसाशी (सं० पु०) १ मांसभोजी, वह जो मांस खाता हो। २ राक्षस।

मांसाष्टका (सं० स्त्री०) मांसेन सम्पाद्या अष्टका मांस प्रधाना अष्टका वा। गौणचान्द्र माघ कृष्णाष्टमी। प्राचीन कालमें इस दिन मांसके बने हुए पदार्थोंसे श्राद्ध करनेका विधान था। अष्टका तीन प्रकारकी हैं, यथा—अपूपाष्टका, मांसाष्टका तथा शाकाष्टका। यथाक्रमसे अपूप, मांस और शाक इन तीन प्रकारके द्रव्योंसे उक्त तीन अष्टका समाहित होती हैं इसलिये यह नाम पड़ा है। अष्टका देखो।

'आद्यापूपैः सदा कार्या मांसैरन्या भवेत्तथा।
शाकैः कार्या तृतीया स्यादेष द्रव्यगतो विधिः॥"
(अष्टकाश्राद्ध)

मांसाहारी (सं० पु०) मांसभक्षी, मांस भोजन करनेवाला।

मांसिक (सं० पु०) मांसाय प्रभवति वा मांसेन जीवतीति मांस ठञ्। मांसविक्रयी, कसाव।

मांसिका (सं० स्त्री०) जटामांसी।

मांसिनी (सं० स्त्री०) मांसवत् पदार्थमस्यातीति मांस-इनि ङीप्। जटामांसी।

मांसी (सं० स्त्री०) मांसमस्यास्तीति मांस-अश आदित्वादच् ततो गौरादित्वात् ङीष्। १ जटामांसी। २ ककोली, काकोली। ३ मांसच्छदा, मासी नामकी लता। ४ मुरामांसी। ५ चन्दन आदिका तेल। ६ वाट्यालक, अडूस। ७ अङ्गारक तैल। ८ एलादि, इलायची। ९ मांसरोहिणीभेद। १० रुदन्ती, संजीवनी।

मांसी (हिं० पु०) १ उर्दके रंगके समान एक प्रकारका हरा रंग। (वि०) २ उर्दके रंगका।

मांसीय (सं० त्रि०) मांसेच्छु, मांस चाहनेवाला।

मांसेपाद् (सं० त्रि०) मांसलपादयुक्त पशु।

मांसेष्टा (सं० स्त्री०) मांसमिष्टं प्रियमस्याः बहुव्री०। वल्गुणा।

मांसोन्नति (सं० स्त्री०) मांसकी स्फीतता।

मांसोपजीवी (सं० पु०) १ मांसविक्रयी, मांस बेचनेवाला व्यक्ति। २ मांस बेच कर अपना निर्वाह चलानेवाला व्यक्ति।

मांसौदन (सं० पु०) मांससिद्ध ओदन मांसमें सिझाया हुआ चावल। इसका गुण धातुवृद्धिकर, स्निग्ध और गुरु है।

मांसौदनिक (सं० त्रि०) मांसौदन सम्बन्धीय, मांस रांधनेवाला।

मांस्पचन (सं० क्ली०) मांस रन्धनकार्य, मांस रांधना।

मांस्पाक (सं० पु०) मांसपाक, मांस रांधना।

मांह (हिं० अव्य०) में, बीच।

मा (सं० अव्य०) दैवादिक वा आदादिक मा-क्विप्। १ वारण, मत। २ विकल्प। ३ निन्दा, शिकायत। ४ पश्चात्, पीछे।

"धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्॥"
(मनु० ८।१५)

मा-क्विप् अथवा मा-क, ततष्टाप्। ५ लक्ष्मी। ६ माता।

"भारमा सुषमा चारुच्वा मारवधूत्तमा।
मात्तघूर्त्तंतमावासा सा वामा मेहस्तु मा रमा॥"
(साहित्यद० १० अ०)

मा भावे-क्विप्। ७ मान। ८ ज्ञान। ९ दीप्ति, प्रकाश। १० अस्मत् शब्दका द्वितीयैकवचननिष्पाद्य वैकल्पिक रूप। पदके उत्तर विकल्पमें 'मां' के स्थानमें मा आदेश होता है। इसका अर्थ मेरा अर्थात् मुझको है।

माइं (हिं० स्त्री०) १ छोटा पूआ। इससे विवाहमें मातृ पूजन किया जाता है। २ पुत्री, लड़की। ३ मामाकी स्त्री, मामी।

माइ (हिं० स्त्री०) माई देखो।

माइका (हिं० पु०) स्त्रीके लिये उसके माता पिताका घर, नैहर।

माइकेल मधुसूदन दत्त—वङ्गालके एक प्रधान और अद्वितीय कविका नाम, कलकत्तेकी छोटी अदालतके प्रसिद्ध वकील राजनारायण दत्तके पुत्र। इनकी माता जाह्नवी दासी जेसर (यशोहर)के काठिपाड़ाके जमींदार गौरीचरण घोषकी पुत्री थीं। सन् १८२८ ई०की २५वीं जनवरीको (१२वीं माघ १२३० फसली) शनिवारके दिन जेसर जिलेके कपोताक्ष नदीके परवर्त्ती सागर दांडीगांवमें कविवरका जन्म हुआ। किंतु यह जन्मभूमि उनके पूर्वपुरुषोंकी नहीं। उनके प्रपितामह रामकिशोर दत्त खुलनेके ताला ग्राममें रहते थे। उनके जेठ पुत्र रामनिधिदत्त पिताके मरनेके बाद वहांसे अपने छोटे भाई माणिकराम और दयारामके साथ मामाके घर आ गये। उनका ननिहाल सागरदाडीमें था। यहां उनके चार पुत्र हुए। इनमें कनिष्ठ पुत्रका नाम राजनारायण था। राजनारायणके जेठ पुत्र ही हमारे चरित नायक मधुसूदन हैं।

राजनारायणने अपनी पत्नी जाह्नवी दासीके जीते ही और तीन रमणियोंका पाणिग्रहण किया था। इनका खर्च भी अंधाधुन्द होता था। जिस समय मधुसूदनका जन्म हुआ, उस समय इस दत्त परिवारका सौभाग्य-सूर्य्य क्रमशः उदय हो रहा था। इसके फलसे मधुसूदनका जातकर्म संस्कार बड़ी धूमधामसे हुआ।

जिस समय मधुसूदन सात वर्षके थे, उस समय उनके पिता राजनारायण वकालती करनेके लिये कलकत्ते आये और खिदिरपुरमें एक मकान मोल लिया। इसी समय मधुसूदनने ग्राम्य पाठशालाकी पढ़ाई आरम्भ की। यहांकी पढ़ाई खतम करनेके बाद वे यथाशीघ्र कलकत्ता लाये गये। यहां कुछ दिनों तक किसी स्कूलमें विद्याध्ययन करनेके बाद सन् १८३७ ई०में वे हिन्दू कालेजमें भर्ती हुए। थोड़े ही दिनोंमें अपने अध्यवसाय तथा परिश्रमसे कालेजमें एक होनहार विद्यार्थी गिने जाने लगे। इसके बाद सन् १८४१ ई०में सरकारसे इनको वृत्ति मिलने लगी। इससे इनका उत्साह दिनों दिन बढ़ने लगा। कुछ दिन बाद उन्होंने लुक छिप कर गणितका अध्ययन भी किया। उन्होंने इसमें कुछ ही दिनोंमें सफलता पाई।

कालेजमें पढ़ते समय मधुसूदनकी विलास प्रियता दिनों दिन बढ़ने लगी। स्वच्छ और सुन्दर कपड़ा तथा इत्र आदिके बिना नहीं रहा जाता था। वे प्रत्येक कार्यमें आवश्यकतासे अधिक खर्च करते थे। इस विलास प्रियतासे सौ गुना बढ़ कर एक और भी दोष ने इनको स्पर्श किया था। डिरोजियोंकी छात्रमण्डलीमें पानदोष और हिन्दूधर्म-निषिद्ध भोजन करना उस समय एक अनुकरणीय सभ्यताका लक्षण समझा जाता था। पानदोषके साथ साथ उच्छृङ्खलताने भी छात्रावस्थामें मधुसूदनके चरित्रको कलङ्कित कर दिया था। बचपनसे पिता माताके शासन शैथिल्य और आत्यादरसे प्रतिपालित हो उस तरुणावस्थाके भावोंको संयत करना उनके लिये असम्भव हो गया था। धीरे धीरे वे दुर्नीतपरायण हो गये। मधुसूदन दूसरेको अच्छा समझ कर अपना सकते थे किन्तु अपनेको दूसरेके हाथ समर्पण करना वे जानते ही नहीं थे। अपनी इच्छाको दूसरे किसीकी भी इच्छा पर विसर्जन करना उन्होंने नहीं सीखा था। इसी कारण हतभाग्य कवि चिरजीवनके लिये दुर्नीतिके तमोन्धकारमें निमज्जित हुए थे।

आठ दश वर्षकी उमरमें मधुसूदन अपनी माता और घरकी अन्यान्य प्राचीन महिलाओंको रामायण महाभारत, कविकङ्कणचण्डी आदि बड़े यत्नसे पढ़ कर सुनाते थे। रामायण, महाभारत पढ़ कर जो कवित्व

बीज मधुसूदनके हृदयमें अंकुरित हुआ था, वह रिचार्ड- सनकी शिक्षा और आदर्शसे पल्लवित होने पर आ गया। कालेजकी अति निम्नश्रेणोसे ही उन्होंने अङ्गरेजीमे पद्य और गद्यको रचना आरम्भ कर दी थो। यद्यपि उनको पूर्ण वयसको रचनाके साथ उनके बाल्यजीवनकी रचना का कोई सम्बन्ध नहीं था, तो भी उनका साहित्यगत-जीवन आबद्ध और विकाश हो गया था, इसमे सन्देह नहीं।

अठारह वर्षकी उमरमें जब ये हिन्दूकालेजकी द्वितीय श्रेणीमे पढ़ते थे उस समय सुन्दर अङ्गरेजी कविता लिख कर इन्होंने अच्छा नाम कमाया था। वे तथा डिरोजियो दोनों ही बायरणके शिष्य थे। अतएव दोनों-की कविता एक आदर्शकी होती थी। इसी अठारहवर्षकी अवस्थामें इन्होने Literary Gleaner नामक पत्रिका-मे 'King Porus-A legend of old' नामकी कविता १८४३ ई०में प्रकाशित की थी।

हिन्दूकालेजसे उनकी वङ्गला भाषाकी शिक्षा शेष हुई। उन्होंने अपने स्वाभाविक प्रतिभाबलसे निज भाषा-प्रकाशकी प्रणालीका पथ आविष्कार कर लिया। धीरे धीरे वङ्गला भाषामे उनका अधिकार हो गया। इस समय कविता रचनामे इन्हें बहुतसे सोने और चाँदीके पदक भी पुरस्कारमे मिले थे।

इङ्गलैण्ड जानेकी उनको प्रबल इच्छा थी। वे कहते थे, कि इङ्गलैण्ड गये विना किसीको भी कवित्वशक्ति पूरी नहीं कहला सकतो। इङ्गलैण्ड जानेसे पहले ही इन्होंने मेघनाद, वोराङ्गणा, ब्रजाङ्गना आदि उत्कृष्ट काव्योंकी रचना कर वङ्गसाहित्यमें सर्वोच्च सिंहासन अधिकार किया था।

हिन्दू कालेजमें पढ़ते समय मधुसूदन उच्छृङ्खल, असंयतेन्द्रिय, अमितव्ययी, विलासी और धर्मनीति सम्बन्धमें बिलकुल उदाशीन थे। उधर अध्ययनशीलता, काव्यानुराग, प्रेमपिपासा, परदुःख दुःखी, उद्देश्यसाधन-में दृढ़ता आदि सद्गुणोंने उन्हें अलंकृत कर दिया था। किन्तु अकस्मात् इसी समयसे कोई अभावनीय घटनास्रोत उनके जीवनप्रवाहको अन्य पथसे ले चला।

यह घटना उनके ईसा धर्मग्रहण करनेके सिवा और कुछ भी नहीं था। मधुसूदनने दूसरा धर्ममत क्यों ग्रहण किया उसका ठीक ठीक पता नहीं चलता। हिन्दू-कालेजमें पढ़ते समय वे ह्यूम, टामसपेन, थियोडर पार्कर आदि ग्रन्थ आदरपूर्वक पढते थे। उस समय सहपाठियोंके जैसे वे भी सभी मतकी उपेक्षा करते थे। अलावा इसके डिरोजियो, रिचार्डसन, डेभिडहेयर आदि की छात्रवृन्दके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि रहती थी। इन्हीं सब करणोंसे मालूम होता है, मधुसूदनने आगे चल कर ईसाधर्मको ग्रहण किया था।

ईसाधर्म ग्रहण करनेका एक दूसरा कारण यह भी था कि वे एक ईसाई कन्याके रूपगुण पर मोहित हो गये थे। उन्होंने समझा, कि यदि ईसाधर्म ग्रहण कर लूं, तो इस कन्यासे विवाह करने तथा इङ्गलैण्ड जानेमें सुविधा हो सकती है। इसी उद्देशसे एक दिन मधुसूदन रेभेरेण्ड कृष्णमोहन वन्दोपाध्यायके निकट गये और अपनी इच्छा प्रकट की। इस पर रभेरेण्ड बड़े प्रसन्न हुए और मधुसूदनको वङ्गालके सहकारी शासनकर्त्ता मि० बार्डके निकट ले गये। मि० बार्डने इस शिक्षित युवकको दीक्षा देनेके लिये ईसा-याजकमण्डलोके हाथ सौंपा। कही मधुसूदनके आत्मीय उन्हें याजकोंके साथसे बलपूर्वक छोन न ले जायं, इस भयसे उन्होंने मधुसूदनको फोर्ट-विलियमके किलेमें बंद रखा। लाख चेष्टा करने पर भी राजनारायणको अपना पुत्र नहीं मिला। दो चार दिन किलेमे वन्दीके रूपमे रहनेके बाद १८४३ ई०की ६वी फरवरीको मधुसूदन आर्च डिकन डिल्ट्रोके निकट ओल्ड मिसन चर्च-धर्म-मन्दिरमे दीक्षित हुए थे। उसी दिनसे उनके नामके पहले 'माइकल' शब्द जोडा गया।

ईसाधर्म ग्रहण करनेके बाद मधुसूदन अपना घर छोड़नेको बाध्य हुए। जब कभी वे घर आते तब उनकी स्नेहमयी माता उन्हें पूर्ववत् खिलाती पिलाती थी; किन्तु समाजच्युतिके भयसे उन्हें घरमे स्थान नहीं देती थी। अनेक अनु-नय विनय करने पर भी मधुसूदनने शास्त्रानुमोदित-प्रायश्चित्त द्वारा फिरसे हिन्दूसमाजभुक्त होना नहीं चाहा। अब जीविकाके लिये उन्हें ईसा सम्प्रदायका अनुग्रहकांक्षी होना पड़ा। उनके माता पिताने उनकी

अवाध्यता और कृतघ्नताको भूल कर उनका आर्थिक अभाव दूर कर दिया।

ईसाधर्म ग्रहण करनेके साथ उनके गार्हस्थजीवनमें वहुत हेरफेर हुआ था। उनका मान्द्राज आना, यूरोपीय महिलासे विवाह करना, सांसारिक सुखोंसे वंचित रहना, आत्मीय स्वजनोंसे नाता टूटना तथा अन्तमें अनाथ की तरह दातव्य चिकित्सालयमें मरना, ये सब उनके ईसाधर्म ग्रहण करनेके फल थे। जब मधुसूदनने देखा, कि पितासे जो सहायता मिलती थी वह भी बंद हो गई, साथ साथ स्वदेशसे भी निर्वासित हुए तब उन्होंने साहित्यको ही अपने जीवनका एकमात्र सहारा समझ कर ग्रहण किया था। अंगरेजी साहित्यसे अर्थाभाव दूर नहीं होना तथा यशका भी न फैलना देख कर उन्होंने मातृभाषाकी गोदमें आश्रय लिया था। सौभाग्यवशतः इस समय राजा प्रतापचन्द्र, पण्डितप्रवर ईश्वरचन्द्र और महाराज यतीन्द्रमोहन ठाकुर आदिकी सहायता तथा उत्साहसे उन्होंने वङ्गला साहित्यकी सेवामें जीवन उत्सर्ग कर दिया था। उनके ग्रन्थमें जातीय भावका अभाव तथा विजातीय भावका प्राधान्य उनके धर्ममत परिवर्त्तनके फलसे ही साधित हुआ था।

यूरोपीय महिलाका पाणिग्रहण करके वे पाश्चात्य समाजकी ओर अधिकतर आकृष्ट हुए थे। विशप्स कालेजमें ग्रीकभाषा सीख कर ग्रीकसाहित्यमें उनका अच्छा प्रेम हो गया था। यही कारण था, कि उन्होंने ग्रीक-साहित्यके अमूल्य रत्न होमर प्रणीत काव्योंकी अच्छी तरह आलोचना की थी। संस्कृत भाषामें उनका अधिकार न रहनेके कारण मेघनादवधमें जो उन्होंने रामचन्द्रका वर्णन किया है वह हिन्दूभावसे विलकुल अनुप्राणित नहीं। उन्होंने वाल्मीकिको परित्याग कर होमरका ही अनुसरण किया था।

मधुसूदनने चार वर्ष तक विशप्स कालेजमें पढ़ा। इसी थोड़े समयके अन्दर उन्होंने नाना भाषाओंमें व्युत्पत्ति लाभ की थी। लाटिन, ग्रीक, फ्रेञ्च, जर्मन और इटाली भाषामें वे अच्छी तरह बोल और पत्रादि लिख सकते थे। उक्त छः यूरोपीय भाषाके अलावा संस्कृत, फारसी, हिब्रू, तेलगू, तामिल और हिन्दी भाषामें भी उनकी कम अभिज्ञता न थी। सुतरां मातृभाषा वङ्गलाको छोड़ कर बारह विभिन्न भाषाओंमें उनका अधिकार था। भाषाशिक्षा और कवितानुशीलनके सम्बन्धमें उन्होंने इन थोड़े वर्षोंमें जैसी उन्नति की थी, दुःखका विषय है, कि उस विद्योन्नतिके साथ साथ उच्छृङ्खलताने भी उसी परिमाणमें उनका आश्रय लिया था। असंयतचित्त और परिणामदर्शी मधुसूदनके हृदयकी शान्ति दिनों दिन अन्तर्हित होने लगी। माताके अनुरोधसे वे कभी कभी घर आते थे, पर धर्म और सामाजिक आचार-सम्बन्धीय वृथा वादानुवादमें पिताके साथ उनका झगडा हो जाया करता था। उनके पिताने आखिर रञ्ज हो कर मासिक सहायता देना बंद कर दिया। यदि मधुसूदन इस समय पिताका कहना मान लेते तो भविष्य जीवनमें उन्हें कष्ट उठाना नहीं पड़ता।

जिन लोगोंने मधुसूदनको ईसा-धर्मग्रहण करनेमें उभाडा था, अब वे भी इनसे दूर हो गये। अतः वे चुपके से (१८४७-४८ ई०) मान्द्राजको चल दिये। इस समय इसके पास एक कौड़ी भी न थी। पाठ्य पुस्तकादि बेच कर जो कुछ साथ लाये थे, वह रास्तेमें ही खर्च हो गया। इसी निरावलम्ब अवस्थामें वसन्तरोगने इन पर आक्रमण कर दिया। अब जीवनयापन इनके लिये कैसा कठिन हो गया, पाठक स्वयं समझ सकते होंगे। सचमुच इसी समयसे उन्हें दरिद्रताका पूर्णमात्रामें उपभोग करना पड़ा। निरुपाय हो इन्होंने मान्द्राजके देशीय ईसा धर्मसम्प्रदायसे सहायता मांगी। उन्होंने मधुसूदनके दुःखसे दुःखी हो उन्हें अनाथ फिरंगी बालकोंके लिये प्रतिष्ठित विद्यालयमें शिक्षकके पद पर नियुक्त किया।

इससे भी उनका अर्थाभाव दूर नहीं हुआ। अब वे एकमात्र साहित्यके ऊपर निर्भर करनेको बाध्य हुए। अब तक तो वे अनुशीलन और विनोदके लिये साहित्य-सेवा करते आये थे, पर अभी उन्हें प्राणधारणार्थ साहित्यकी पूजा करनी पड़ी। उन्होंने मान्द्राजके प्रधान प्रधान समाचारपत्रोंमें प्रबंध लिखना शुरू कर दिया। थोड़े ही समयके अन्दर उनकी सुख्याति मान्द्राजके विज्ञ समाजोंमें

फैल गई। वे सुलेखक और सुपण्डित कहलाने लगे।

आठ वर्ष मान्द्राजमें रहनेके बाद मधुसूदन कलकत्ता लौटे। चार वर्ष पहले ही इनके मातापिता परलोकवासी हो चुके थे। कलकत्ते आ कर वे निःसहाय और निरावलम्ब हो गये। उनके आत्मीय लोगोंने समाज और धर्मत्यागीको आश्रय नहीं दिया। सौभाग्यवशतः कुछ दिनोंके बाद इन्हें पुलिस मजिष्ट्रेटके अधीन एक किरानीका काम मिला। धीरे धीरे इनकी तरक्की हो गई। इस समय संवादपत्रसे भी काफी रुपये मिल जाते थे।

१८५७ ई०के प्रारम्भमें इनका लिखा शर्मिष्ठा नाटक प्रकाशित हुआ। कुछ दिनोंके बाद 'पद्मावती' नाटक और 'तिलोत्तमासम्भवकाव्य'की भी इन्होंने रचना की। इन सब ग्रन्थोंमें भी इन्होंने प्राचीन रीतिके पक्षपाती न हो कर पाश्चात्य ग्रन्थकारोंको प्रवर्त्तित रीतिका ही अनुसरण किया था।

१८६१ ई०में मधुसूदनने वङ्गसाहित्यमें सुप्रसिद्ध मेघनाद काव्यकी रचना की। भाषाके लालित्यभावके उत्कर्ष और गाम्भीर्य तथा चरित्र समूह आदि गुणोंसे यह ग्रन्थ सर्वोत्कृष्ट हो गया है। इस समय एक ओर जिस प्रकार उनकी प्रतिभाका पूर्ण विकाश था, दूसरी ओर उसी प्रकार उनकी पाश्चात्य भावप्रवणता भी सम्पूर्ण रूपसे देखी जाती थी। मेघनादवधमें रामचन्द्रका यमालय दर्शन, प्रमिलाका विक्रम आदि वर्णन यूरोपीय साहित्यसे लिया गया है। इसके बाद इन्होंने टाड राजस्थानसे वियोगान्त कृष्णकुमारी नाटक, आत्मविलाप और वीराङ्गना काव्यकी रचना की। वीराङ्गना काव्यमें मधुसूदनकी प्रतिभाका पूर्ण विकाश लक्षित होता है।

१८६२ ई०की ९वीं जूनको मधुसूदनने काण्डिया नामक जहाज पर चढ़ इङ्गलैण्डकी यात्रा कर दी। १८६२ ई०के जुलाईमासके शेषमें ये इङ्गलैण्ड पहुंचे और Gray's Inn में प्रवेश कर वैरिष्ट्री परीक्षाके लिये प्रस्तुत हुए। इस समय भी अर्थाभावने उनका पीछा नहीं छोड़ा था। दयाके सागर विद्यासागर यदि सहायता न करते, तो वे कभी भी परीक्षा नहीं दे सकते थे। १८६७ ई०में वैरिष्ट्री परीक्षामें उत्तीर्ण हो कर इन्होंने मार्च मासमे स्वदेशकी यात्रा कर दी।

कलकत्ता पहुंच कर इन्होंने हाईकोर्टमें वारिष्ट्री आरम्भ कर दी। वैरिष्ट्रीमें इन्होंने विशेष लाभ नहीं देखा, वरन् वङ्गला साहित्यमें भारी धक्का पहुंचा। इङ्गलैण्डसे लौट कर ये सिर्फ छः वर्ष जीवित रहे। इतने समयके अन्दर इन्होंने नीतिमूलक कवितामाला, हेकृरवध और मायाकाननकी रचना आरम्भ कर दी, पर दुःखका विषय है, कि उनमेंसे एक भी ग्रन्थ वे समाप्त न कर सके।

शेष जीवनमें ये वैरिष्ट्री व्यवसायको छोड़ कर प्रिभिकौन्सिलमे अनुवादकका काम करनेको वाध्य हुए। अन्तिम समय इनका बड़े ही कष्टसे बीता। १८७३ ई०की २०वीं जून रविवारको मधुसूदन इस लोकसे चल बसे।

माईं (हिं० स्त्री०) माई देखो।

माई (हिं० स्त्री०) १ माता, जननी। २ बूढ़ी या बड़ी स्त्रीके लिये आदर सूचक शब्द।

माउल्लहम (अ० पु०) हिकमतमें मांसका बना हुआ एक प्रकारका अरक। यह बहुत अधिक पुष्टिकारक माना जाता है और इसका व्यवहार प्रायः जाड़ेके दिनोंमे शरीरका बल बढ़ानेके लिये होता है।

माकन्द (सं० पु०) मातीति मा क्विप् माः परिमितः सुघटितः कन्द इव फलमस्य। १ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। २ मानकन्द देखो।

माकन्दी (सं० स्त्री०) माकन्द-ङीष्। १ आमलकी, आँवला। २ एक गांवका नाम। युधिष्ठिरने दुर्योधनसे जो पांच गाँव मांगे थे उनमेंसे एक माकन्दी भी था। (भार० ५।७२।२५)

३ पीतचन्दन, पीला चन्दन। ४ माद्राणी, मंगनी। पर्याय—बहुमूली, माद्रनी, गन्धमूलिका। गुण—कटु, तिक्त, मधुर, दीपन, रुचिकर, अल्पवातकारक और पथ्य। (राजनि०)

माकरन्द (सं० त्रि०) मकरन्द पुष्पकी निर्यास सम्बन्धीय।

माकर (सं० त्रि०) मकर-अण्। मकर-सम्बन्धीय।

माकरा (सं० स्त्री०) मरुआ।

माकरी (सं० स्त्री०) मकरयुक्ता पौर्णमासस्यत्नेति मकर

अण् ङीष् । माघमासकी शुक्ला सप्तमी, माकरी सप्तमी* । यह एक पुण्यतिथि मानी जाती है। करोड़ सूर्यग्रहणमें स्नान करनेसे जो फल होता है वही फल इस तिथिमें भी गंगा-स्नान करनेसे होता है। स्नान सूर्योदयके समय करना चाहिये । इस दिन सात पत्ते बेरके और सात आकके ले कर सिर पर रखने चाहिये और निम्नोक्त मंत्र पढ़ना चाहिये। मन्त्र यथा—

"ओं यद्यज्जन्मकृत पाप मया सप्तसु जन्मसु ।
तन्मे रोगञ्च शोकञ्च माकरी हन्तु सप्तमी ॥"
(तिथितत्त्व)

स्नानके बाद सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये। बेरके पत्तेके साथ आकके पत्ते, दूब, अक्षत तथा चन्दन द्वारा अर्घ्य तैयार कर निम्नोक्त मन्त्रसे अर्घ्य देना होता है।

"जननी सर्वभूताना सप्तमी सप्तसप्तिके ।
सप्तव्याहृतिके देवि नमस्ते रविमण्डले ॥" (तिथितत्त्व)

अर्घ्य देनेके बाद इस मन्त्रसे प्रणाम करना चाहिये। मन्त्र यथा—

"सप्तसप्ति वहुप्रीत सप्तलोक प्रदीपन ।
सप्तम्याञ्च नमस्तुभ्यं नमोऽनन्ताय वेधसे ॥" (तिथितत्त्व)

* "सूर्य्यग्रहणतुल्या हि शुक्ला माघस्य सप्तमी ।
अरुणोदयवेलाया तस्या स्नान महाफलम् ॥
माघे मासि सिते पक्षे सप्तमी कोटिभास्करा ।
दद्यात् स्नानार्घदानाभ्यामायुरारोग्यसम्पदः ॥
अरुणोदयवेलाया शुक्ला माघस्य सप्तमी ।
गगाया यदि लभ्येत सूर्य्यग्रहशतैः समाः ॥
कोटिभास्करा कोटिसप्तमीतुल्या सप्तम्या भास्करदेवताकत्वात्, सूर्यग्रहण फल स्नानज ।
यस्मान्मन्वन्तरादौ तु रथमापुर्दिवाकराः ।
माघमासस्य सप्तम्या तस्मात् सा रथसप्तमी ॥
अरुणोदयवेलायां तस्या स्नान महाफलम् ॥
अर्घ्यदानपरिपाटी यथा—
अर्कपत्रैः सवदरैर्दूर्वाक्षतसचन्दनैः ।
अष्टाङ्गविधिनाचार्घ्यं दद्यादादित्य तुष्टये ॥
अष्टाङ्गमर्घ्यमापूर्य्य भानोर्मूर्द्धि निवेदयेत् ॥"
(तिथितत्त्व)

इस तिथिमें स्नान करने और अर्घ्य देनेसे परलोकमें पुण्य तथा इहलोकमें आयु, आरोग्य और सम्पत्तिलाभ होता है।

इस दिन सूर्यदेवके उद्देशसे यदि रथयात्रा की जाय, तो महापातक विनष्ट होता है।*

माकलि (सं० पु०) १ चन्द्र, चन्द्रमा। २ इन्द्रके सारथी मातलिका एक नाम।

माकण्डेय (सं० पु०) मकण्डुका गोत्रापत्य।

माकारध्यान (सं० क्ली०) एक तरहकी ईश्वरचिन्ता।

माकिस् (सं० अव्य०) मा, मत।

माकी (सं० स्त्री०) निर्मात्री, भूतजातकी निर्माणकर्त्री।

मा[illegible]म—आसामप्रदेश लखिमपुर जिलान्तर्गत एक बड़ा गांव। यह बुढ़िडिहिंग नदीके किनारे जयपुरसे दश कोस पूर्वमें अवस्थित है। यहां एक विस्तृत कोयले और किरासन तेलकी खान निकली है।

माकुर्त्ति—मद्रास प्रदेशके नीलगिरि-शैलकी कुण्डमालाका एक शृङ्ग। यह अक्षा० ११° २२' १५" उ० तथा देशा० ७६° ३३' ३०" पू० समुद्रपृष्ठसे ८४०३ फुट ऊंचे पर अवस्थित है। यह स्थान विनोद-विहारके लिये बड़ा ही उपयोगी है। इस शृङ्गके पश्चिम जो गहरा गड्ढा है उससे यहांके तोडोंका अनुमान है, कि मनुष्य और भैंसकी प्रेतात्मा यही हो कर यमलोक जाती है।

माकुली (सं० पु०) सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका सांप।

माकूल (अ० वि०) १ उचित, वाजिब। २ लायक, योग्य। ३ अच्छा, बढ़िया। ४ यथेष्ट, पूरा। ५ जिसने वाद-विवादमें प्रतिपक्षीकी बात मान ली हो, जो निरुत्तर हो गया हो।

माकोट (सं० क्ली०) तीर्थभेद। यहा दाक्षायणीकी पूजा करनेसे देवलोकको प्राप्ति होती है।

* माघमासस्य सप्तम्या देवं शाम्बपुर नराः ।
रथयात्रा प्रकुर्वन्ति सर्वद्वन्द्वविवर्जिताः ॥
गच्छन्ति तत्पदं शात सूर्यमण्डलभेदकम् ।
एतत्ते कथित देवि शाम्बशापसमुद्भवम् ।
पापप्रशमनाख्यान महापातकनाशनम् ॥" (वराह पुराण)

माक्ष (सं० पु०) स्पृहा। माख देखो।

माक्षव्य (सं० क्ली०) १ मक्षुका गोत्रापत्य। २ आचार्यभेद

माक्षिक (सं० क्ली०) मक्षिकाभिः कृतं मक्षिका (संज्ञाया। पा ४।३।११७) इति ठक्। १ मधु, शहद। मझोले आकारकी मक्खी जो शहद तय्यार करती है उसीका नाम माक्षिक है। इसका गुण—रुक्ष, श्रेष्ठ, विशेष श्वासादि रोगमें अति प्रशस्त। (राजवल्ली)

२ धातुविशेष, धातुमक्खी। यह माक्षिकधातु दो प्रकारकी है, स्वर्णमाक्षिक और रौप्यमाक्षिक। पर्याय—माक्षीक, पीतक, धातुमाक्षिक, तापिच्छ, ताप्यक, ताप्य, तापीत, पीतमाक्षिक, आवर्त्त, मधुधातु, क्षौद्रधातु, माक्षिकधातु, कदम्ब, चक्रनाम, अजनामक। इसका गुण—मधुर, तिक्त, अम्ल, कफ, भ्रम, हल्लास, मूर्च्छा, श्वास, कास और विषदोषनाशक।

भावप्रकाशमें लिखा है,—स्वर्णादि धातुके एक एक कर उपधातु है। उनमें स्वर्णधातुकी उपधातु स्वर्णमाक्षिक है। पर्याय—तापीज, मधुमाक्षिक, ताप्य, माक्षिकधातु और मधुधातु। इसमें कुछ अंश सोनेका मिला है इसीसे इसको स्वर्णमाक्षिक या सोना मक्खो कहते हैं। इसमें सोनेका कुछ गुण भी है। इससे सोनेके अभावमें इसका व्यवहार किया जा सकता है। इसका दर्जा सोनेसे नीचा है, इस कारण थोड़ा गुण भी है। सोनामक्खीमें सिर्फ सोनेका ही गुण है सो नहीं, अन्यान्य द्रव्योंके गुण भी इसमें विद्यमान हैं। इस धातुको शोधन कर काममें लाना होता है। शोधित धातु गुणदायक और अशोधित अनिष्टफलप्रद है। शोधित धातुका गुण—मधुर, तिक्तरस, शुक्रवर्द्धक, रसायन, चक्षुका हितकारक तथा वस्तिवेदना, कुष्ठ, पाण्डु, प्रमेह, विष, उदर, अर्श, शोथ, क्षय, कण्डु और त्रिदोषनाशक। अशोधितका गुण—मन्दाग्निकारक, अत्यन्त बलनाशक, विष्टम्भी, चक्षुरोग, कुष्ठ, गण्डमाला और व्रणरोग उत्पादक।

रौप्यधातुकी उपधातुका नाम रौप्यमाक्षिक है, इसमें कुछ रूपेका गुण है इसीसे इसको रूपामक्खी कहते हैं। रूपेके अलावा अन्यान्य द्रव्योंके गुण भी इसमें पाये जाते हैं। इस धातुका दूसरा नाम तारमाक्षिक भी है। इस माक्षिकको भी शोध कर काममें लाना होता है। रौप्यमाक्षिकका गुण—कुछ तिक्त मधुररस, मधुरविपाक, शुक्रवर्द्धक और पूर्वोक्त गुणसम्पन्न।

रसेन्द्रसारसंग्रहके मतसे इसकी शोधनप्रणाली इस प्रकार है—ओलमें माक्षिक धातुको रख कर गोमूत्र, कांजी, तैल, गोदुग्ध कदलीरस, कुलथी, कलायका क्वाथ और कोदों धानका क्वाथ, इनका स्वेद दे कर क्षार, अम्लवर्ग, लवणपञ्चक, तैल और घृतके साथ तीन बार पुट देनेसे यह विशुद्ध होता है।

दूसरा उपाय—माक्षिक तीन भाग, सैन्धवलवण एक भाग, इन्हें जम्बीर या टावा नीबूके रसमें लोहेके बरतनमें पाक करे। जब वह लाल हो जाय, तब जानना चाहिये कि माक्षिक विशुद्ध हो गया। (रसेन्द्रसारसं०)

माक्षिकज (सं० क्ली०) माक्षिकात् जायते जन-ड। शिक्थक, मोम।

माक्षिकफल (सं० पु०) माक्षिकवत् मधुरं फलं यस्य। मधुनालिकेरिक, मीठा नारियलका पेड़।

माक्षिकशर्करा (सं० स्त्री०) मिसरीके जैसा दानेदार चीनी।

माक्षिकस्वामीन् (सं० पु०) प्राचीन नगरभेद। (राजतर० ४।८८)

माक्षिकश्रेष्ठा (सं० स्त्री०) रौप्यमाक्षिक, रूपामक्खी।

माक्षिकान्त (सं० क्ली०) माधवी नामक मद्य, महुएकी शराब।

माक्षिकाश्रय (सं० क्ली०) माक्षिका-नामाश्रयः अभिधानात् क्लीवत्वं। शिक्थक, मोम।

माक्षीक (सं० क्ली०) मक्षिकाभिः कृतमित्यण् निपातनाद्दीर्घत्वम्। १ मधु, शहद। २ माक्षिक धातु, सोनामक्खी, रूपामक्खी।

माक्षीकशर्करा (सं० स्त्री०) माक्षीककृता शर्करा शाकपार्थिवादिवत् समासः। सिताखण्ड, चीनी।

माक्षीकश्रेष्ठा (सं० स्त्री०) रौप्यमाक्षिक, रूपामक्खी।

माक्षीकान्त (सं० क्ली०) माधवी मद्य, महुएकी शराब।

माख (हिं० पु०) १ अप्रसन्नता, नाराजगी। २ अभिमान, घमंड। ३ अपने दोषको ढकना। ४ पछतावा।

माखन (हिं० पु०) मक्खन देखो।

माखन कवि—एक कवि। आपका जन्म १८१७ सम्वत्‌में हुआ था। आपकी कविता बहुत ही ललित और सरल होती थी।

माखनलाल—एक प्रसिद्ध ज्योतिषी। इन्होंने जातकपद्धति और मकरन्ददीपिका नामक ज्योतिष और सिद्धान्तलव नामक एक धर्म-ग्रन्थकी रचना की है।

माखना (हिं० क्रि०) अप्रसन्न होना, नाराज होना।

माखी (हिं० स्त्री०) १ मक्खी। २ सोनामक्खी।

मागध (सं० पु०) मगधस्य तद्वंशस्यापत्यं (द्वेञ् मगध कलिङ्ग सूरमसादण्। पा ४।१।१७०) इति अण्। १ पाणिस्वनक, वंशपरम्पराक्रमसे राजाओंकी स्तुति करनेवाला। पर्याय—मधुक, वन्दी, स्तुतिपाठक। २ वर्णसङ्कर जातिविशेष। मनुके अनुसार वैश्यके वीर्य्यसे क्षत्रिय-कन्याके गर्भसे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है। इस जातिके लोग वंशक्रमसे विरुदावलीका वर्णन करते हैं और प्रायः 'भाट' कहलाते हैं।

"क्षत्रियाद्विप्रकन्याया सूतो भवति जातितः।
वैश्यान्मागधवैदेहो राजविप्राङ्गनासुतौ॥"

(मनु १०।११) भट्ट देखो।

३ जरासन्धका एक नाम। ४ शुक्ल जीरक, सफेद जीरा। ५ पिप्पलीमूल। ६ सौवर्च्चल लवण। ७ स्थूल जीरक, मोटा जीरा। ८ जीरक, जीरा। (त्रि०) ९ मगधदेशजात, मगधदेशका।

मागधक (सं० पु०) १ स्तुतिपाठक, भाट। २ मगधका रहनेवाला।

मागधपुर (सं० क्ली०) मगधकी राजधानी, राजगृह।

मगधमाधव—एक प्राचीन संस्कृत-कवि।

मगधादेवी (सं० स्त्री०) राधिका।

"तासान्तु मागधा देवी तप्तचामीकरप्रभा।
वृन्दावनेश्वरी राधा नाम्ना धात्वर्थकारणात्॥"

(पद्मपुराण पाताल ६ अ०)

मागधिक (सं० पु०) मगधदेशीय, मगध देशका।

मागधिका (सं० स्त्री०) पिप्पली, पीपल।

मागधिमूल (सं० क्ली०) पिप्पलीमूल।

मागधी (सं० स्त्री०) मागधे जाता मगध-अण् ङीप्। १ यूथिका, जूही। २ पिप्पली, छोटी पीपल। ३ क्रुटि, गुजराती इलायची। ४ शर्करा, चीनी। ५ जीरक, जीरा। ६ शालिधान्यविशेष, साठी धान। ६ मगधदेशकी प्राचीन प्राकृत भाषा।

मागधीजटा (सं० स्त्री०) पिप्पलीमूल।

मागधीशिफा (सं० स्त्री०) पिप्पलीमूल।

मागुरा—१ वङ्गालके यशोर जिलान्तर्गत एक महकूमा। मागुरा, महम्मदपुर और शालिखा थाना इसके अन्तभुक्त है।

२ उक्त विभागका विचार-सदर और जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २३° २६′ २५″ उ० तथा देशा० ८६° २८′ ५″ पू०के मध्य अवस्थित है। यहां चावल और चीनीका विस्तृत कारोबार होता है। यहां अच्छी अच्छी चटाई भी बनती है।

मागेलन—पुर्त्तगालवासी एक विख्यात नाविक, वे जलपथसे सारी पृथ्वीका प्रदक्षिण करके अक्षय नाम अर्जन कर गये हैं। अमेरिकाका आविष्कार करके महामति कलम्बसने जिस प्रकार नाविक जगत्‌में शीर्षस्थान प्राप्त किया था, उसी प्रकार इन्होंने भी मागेलन प्रणालीको अतिक्रम कर फिलिपाइन द्वीपपुञ्जका आविष्कार करके द्वितीय स्थान अधिकार किया है। मागेलन-प्रणाली हो कर वे अपना अर्णवपोत ले गये थे, इसीसे इनका नाम मागलेन पड़ा।

१४७० ई०में पुर्त्तगालके आलेमदेजो प्रदेशमें इनका जन्म हुआ था। वे ५ वर्ष भारतवर्षमें काम कर आलफन्सो आल्वोकार्कके साथ मलका पर चढ़ाई करने चल दिये। मलका पहुंच कर उन्होंने पहले वहांकी भाषा सीखी। पुर्त्तगालपति इन मानुएलने उनका वेतन नहीं बढ़ाया। इससे राजकार्यकी ओर उनका विशेष ध्यान नहीं रहता था। इस समय डन मानुएल भूप्रदक्षिण करना नहीं चाहते, सुन कर उन्होंने उन्नतिकी आशासे छिपके स्पेनकी यात्रा कर दी। स्पेनराज ५म चार्लस उस समय वल्लदोलिडेमें रहते थे। मागलेनने वहां जा कर उनसे मुलाकात की। राजाने उनका मनोभाव जान कर उन्हें सुप्रसिद्ध भूवेत्ता राय डि फलेरो (Roy de Fallero)के साथ भूप्रदक्षिणका हुकुम दिया। इस समय पिगाफेट आदि विख्यात नाविक भी उनके साथ थे।

इस यात्रामे इन्होंने ५ जहाज और २३४ आदमी तथा खाद्य द्रव्यादि साथ ले १५१६ ई०के अगस्त मासमे सेभिलनगरका परित्याग कर समुद्रयात्रा की। २० सितम्बरको सानलुका अतिक्रम कर वे सबके सब इस विख्यात नाविकके नामसे परिचित प्रणाली होते हुए २८वीं नवम्बर १५२० ई०को प्रशान्त महासागरमें पहुंचे। दूसरे वर्ष ६ठी मार्चको वे लड्रोन द्वीपमें, १८वींको समरमें और २८वीं मार्चको फिलिपाइन द्वीपपुञ्जमें गये। उसी सालकी ७वीं अप्रिलको वे शेबूद्वीपके एक बन्दरमें पधारे। वहां कुछ समय रह कर २७वीं अप्रिलको शेबूके पूर्व उपकूलस्थ त्राकतान द्वीपमें उपस्थित हुए। वहांके असभ्य अधिवासियोंके साथ मागेलनका एक युद्ध हुआ। इसी युद्धमें इनकी मृत्यु हुई।

माघ (सं० पु०) भारतके एक प्रधान कवि, शिशुपालवध नामक काव्यके प्रणेता। इनके पिताका नाम श्रीदत्तक सर्वाश्रय और पितामहका नाम सुप्रभदेव था। सुप्रभ श्रीधर्मदेव नामक एक राजाके मन्त्री थे। माघने शिशुपालवध-काव्यको लिख कर संस्कृत साहित्यजगत्‌में ऊंचा आसन प्राप्त किया है। शिशुपालवधके ४।२० श्लोकसे उनका 'घण्टामाघ' नाम पाया जाता है। क्षेमेन्द्रकी औचित्यविचारचर्चा और सरस्वतीकण्ठाभरण आदि कवितासंग्रहमे माघकी कवितावली उद्धृत हुई है। प्रसिद्ध जैनाचार्य सिद्धर्षि माघके ज्ञातिभ्राता थे। इस हिसाबसे शिशुपालवधके कविको ५३६ ई०का आदमी कह सकते हैं।

२ स्वनामख्यात महाकाव्य। माघ कविने इस ग्रन्थको लिखा है, इसीसे इसका माघ नाम पड़ा। संस्कृत काव्यग्रन्थके मध्य यही महाकाव्य अत्युज्ज्वल रत्नस्वरूप है। इस काव्यसम्बन्धमें प्राचीन विद्वानोंके मध्य इस प्रकार प्रवाद प्रचलित है—

'पुष्पेषुजाती नगरेषु काञ्ची नारीषु रम्भा पुरुषेषु विष्णुः।
नदीषु गङ्गा नृपतौ च रामः काव्येषु माघः कवि कालिदासः॥"

जिस प्रकार पुष्पमे जाति, नगरमें काञ्ची, नारीमें रम्भा, पुरुषमें विष्णु, नदीमे गङ्गा और राजामें राम श्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार काव्यमें माघ है। महाकाव्यमें 'माघ' काव्य ही सर्वोत्कृष्ट है। यही प्राचीन लोगोंका मत है। और भी प्रचलित है—

"उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थ गौरवम्।
नैषधे पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयोगुणाः॥" (उद्भट)

कालीदासकी उपमा, भारविका अर्थगौरव और नैषधका पदलालित्य सर्वोत्कृष्ट है। किन्तु एक माघमें उक्त तीनों ही गुण पाये जाते हैं।

माघनक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी अण् ङोप्, माघी सात मासे पुनरण्। ३ वैशाखादि बारह मासके अन्तर्गत दशम मास। यह मास तीन प्रकारका है, मुख्यचान्द्रमाघ, गौणचान्द्रमाघ और सौर माघ। मकरस्थित रविसे ले कर शुक्ला प्रतिपदसे अमावस्या पर्यन्तको मुख्यचान्द्र माघ, मकरस्थित रविमें कृष्ण प्रतिपदसे पूर्णिमा पर्य्यन्तको गौणचान्द्रमास और मकरराशिमें सूर्य जब तक रहते हैं, उतने समय तकको सौर माघ कहते हैं। रविको एक राशिसे दूसरी राशिमे जानेमें कमसे कम तीस दिन लगता है। धनूराशिसे जिस दिन सूर्य मकरराशिमे आते हैं, वही दिन सौर माघका प्रथम दिन है। पीछे समस्त मकरराशिको भोग कर कुम्भ राशिमें आनेसे मकरसंक्रान्ति होती है। यह दिन सौरमाघका शेष है। यह मास अकसर २९ वा ३० दिनका हुआ करता है, ३० दिनसे अधिकका नहीं होता। (मलमा०)

माघकृत्यके सम्बन्धमे इस प्रकार लिखा है,—यह मास अतिशय पुण्य मास है। इस मासमें सभीको प्रातः स्नान करना उचित है। इस मासमें अरुणोदयके समय गङ्गा स्नान करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है।

"स्वर्गलोके चिरं वासो येषां मनसि वर्त्तते।
यत्र क्वापि जले तैस्तुस्नातव्यं मृगभास्करे॥"
(कृत्यतत्त्व)

संक्रान्तिके दिन सङ्कल्प करके प्रतिदिन स्नान करना चाहिये। सङ्कल्प एक मास अथवा प्रतिदिनके लिये किया जा सकता है। जो गङ्गाके किनारे रहते हैं, उन्हें प्रतिदिन अरुणोदय-कालमें गङ्गा-स्नान करना चाहिये। जहां गङ्गा नहीं है, नदी है, वहां नदीमें ही स्नान करे। कहनेका तात्पर्य यह, कि माघमासमें सबोंको अरुणोदयकालमे स्नान करना कर्त्तव्य है।

कृत्यतत्त्वमें सङ्कल्पका विषय इस प्रकार लिखा

है—अरुणोदयकालमें जलमें मज्जन कर उत्तराभिमुखी हो आचमन करनेके बाद सङ्कल्प करे। कुश तिलादि ले कर "ओं अद्य माघ मासि अमुकदेवशर्मा मकरस्थरवौ यावत् प्रत्यहं अमुकगोत्रः-अमुकदेवशर्मा स्वर्गलोके चिरकालवासकामः विष्णुप्रीतिकामो वा प्रातःस्नानमहं करिष्ये" (कृत्यतत्त्व) इस प्रकार सङ्कल्प करे।

गङ्गामें यदि स्नान करना हो, तो उसका सङ्कल्प इस प्रकार है—पूर्वोक्त रूपसे नामादि उच्चारण कर—"प्रतिदिन-सहस्रसुवर्ण दानजन्यफलसमफलप्राप्तिकामः श्रीविष्णुप्रीतिकामो वा माघमासं यावत्प्रत्यहं गङ्गायां प्रातःस्नानमहं करिष्ये" (कृत्यतत्त्व) जिन्हें स्नानमें बाधा पहुंचनेकी सम्भावना रहे, वे प्रतिदिन सङ्कल्प करके स्नान कर सकते हैं। कहनेका तात्पर्य यह कि स्नान सङ्कल्प करके करना होगा, नहीं तो वह स्नान वृथा है। मन्त्र यथा—

"ओं दुःखदारिद्र्यनाशाय श्रीविष्णोस्तोषणाय च।
प्रातःस्नानं करोम्यद्य माघे पापविनाशनम्॥"
मकरस्थे रवौ माघे गोविन्दाच्युत माधव।
स्नानेनानेन मे देव यथोक्तफलदो भव॥" (कृत्यतत्त्व)

स्नानके बाद कृष्णादिका नाम स्मरण करके निम्नोक्त मन्त्र पढ़ना होगा,—

"ओं दिवाकर जगन्नाथ प्रभाकर नमोऽस्तु ते।
परिपूर्णं कुरुष्वेदं माघस्नानं महाव्रतम्॥" (कृत्यतत्त्व)

गङ्गादि तीर्थमें स्नान करके निम्नोक्त मन्त्र पढ़ना होता है।

"ओं माघमासमिमं पुण्यं स्नाम्यहं देव माधव।
तीर्थस्यास्य जले नित्यं प्रसीद भगवन् हरे॥"

पीछे पूर्वोक्त 'ओं दुःखदारिद्र्यनाशाय' इत्यादि मन्त्र-पाठ भी विधेय है।

बालक, वृद्ध और आतुरको छोड़ कर बाकी सभीके लिये यह माघस्नान उचित है।

माघमासमें मूलक (मूली) नहीं खाना चाहिये। यह सौर और चान्द्र दोनों ही पक्षमें जानना होगा। कोई कोई कहते हैं, कि यह केवल सौर मासमें ही निषिद्ध है, चान्द्र मासमें नहीं। किन्तु शास्त्रका अभिप्राय यह नहीं है, सौर और चान्द्र दोनों ही मासमें मूली खाना निषिद्ध है। यदि कोई खाये, तो उसे शराब पीनेके समान पाप लगता है।

माघमासकी कृष्णाष्टमी तिथिमें वकरेके मांससे पितरोंका श्राद्ध करना होता है। यदि मांस न मिले, तो पायससे श्राद्ध कर सकते हैं। कहनेका तात्पर्य यह कि श्राद्ध अवश्य करना चाहिये। माघ मासकी कृष्ण चतुर्दशीका नाम रटन्ती चतुर्दशी है। इस दिन भी अरुणोदय कालमें स्नान करना विशेष पुण्यजनक है। इस दिन स्नान करके चौदह यमके उद्देशसे तर्पण करना आवश्यक है। रटन्ती देखो।

श्रीपञ्चमी—चान्द्र माघकी शुक्ला पञ्चमीको श्रीपञ्चमी कहते हैं। इस दिन सरस्वती, लेखनी और मस्याधार (दावात) आदिका पूजन करना होता है। जो षट्पञ्चमीका व्रत करते हैं उन्हें भी इसी दिन व्रतारम्भ करना चाहिये। सरस्वती पूजा और पञ्चमी देखो।

माघसप्तमी—चान्द्र माघकी शुक्ला सप्तमी तिथिका नाम माघसप्तमी है। यह तिथि यदि अरुणोदय-कालमें पड़े, तो निषिद्धरूप होता है। यह तिथि यदि दोनों ही दिन अरुणोदय कालमें पड़े, तो पूर्वदिनमें माघसप्तमी होगी। "तत्र उभय दिने अरुणोदयकाले तल्लाभे पूर्वदिने। एकदिने तल्लाभे तद्दिने" (कृत्यतत्त्व) इस तिथिका दूसरा नाम माघीसप्तमी भी है। इस दिन अरुणोदयकालमें गङ्गास्नान करते समय सङ्कल्पमें कुछ विशेषता है। जैसे—

"ओम् अद्येत्यादि सर्वग्रहणकालीन-गङ्गास्नान-जन्य-फल-समफलप्राप्तिकाम आयुरारोग्य सम्पत्कामो वारुणोदयवेलायां स्नानमहं करिष्ये" (कृत्यतत्त्व)

इस प्रकार सङ्कल्प करके सात बेर और सात अकवनके पत्तोंको मस्तक पर रख कर स्नान करना चाहिये। शूद्रगण इस दिन तुल्यविधानमें स्नान करके अर्घ्यमन्त्र और प्रणाममन्त्रका पाठ करें।

"शूद्रेणापि स्नाने तुल्यविधानात् स्नानमन्त्रं विना अर्घ्य-प्रणाममन्त्राः पाठ्याः" (कृत्यतत्त्व) माकरी देखो।

इस सप्तमी तिथिमें विधान-सप्तमी-व्रत करना होता है। विधानसप्तमी देखो।

आरोग्यसप्तमी-व्रत—इस सप्तमी तिथिमें आरोग्य व्रत करना होता है। आरोग्यकी कामनासे यह व्रत किये जानेके कारण इसे आरोग्यसप्तमी कहते हैं। यह

व्रत एक वर्ष तक करना होता है। माघी सप्तमीसे ले कर फिरसे इसी सप्तमीके दिन यह व्रत शेष होता है। प्रति मासकी शुक्ला सप्तमोमें यह व्रत किया जाता है। 'आरोग्य' भास्करादिच्छेत्' भगवान् सूर्यके निकट आरोग्यकी कामना करनी होती है। इस कारण इसका दूसरा नाम सूर्यव्रत भी है। इस व्रतका सङ्कल्प इस प्रकार है—

"माघे मासि शुक्ले पक्षे सप्तम्यान्तिथावारभ्य ऐहिकारोग्य धनधान्य पारलौकिक शुभ स्थान प्राप्तिकामः सवत्सरः यावत् आरोग्यसप्तमी व्रतमहं करिष्ये" (कृत्यतत्त्व)

इस प्रकार सङ्कल्प करके शालग्राम शिला वा घटादि स्थापन करके निम्नोक्त मन्त्रसे श्रीसूर्यको तीन बार पूजा करनी होगी।

पूजामन्त्र यथा—

"आदित्य भास्करवर भानो सर्य दिवाकर।
प्रभाकर नमस्तेऽस्तु रोगादस्माद्विमोचय॥" (कृत्यतत्त्व)

भीष्माष्टमी—चान्द्रमासकी शुक्ला अष्टमीका नाम भीष्माष्टमी है। इस दिन पितरोंके उद्देशसे तर्पण कर-के भीष्मका तर्पण करना होता है। यह तर्पण सभीको करना उचित है।

चान्द्रमासकी शुक्ला एकादशीको भीम एकादशी कहते हैं। बालक, वृद्ध और आतुरको छोड कर सभीको इस एकादशीका उपवास करना चाहिये। माघमासकी पूर्णिमा युगाद्या है अर्थात् इसी दिन कलियुगने प्रवेश किया है। माघी देखो।

माघमासमें जन्मग्रहण करनेसे मानव विद्वान्, स्वकुल प्रधान, सदाचारसम्पन्न, प्रवीण, विषयविरक्त और योग-रत होते हैं—

"विद्याविनीतः स्वकुलप्रधानः सदासदाचारयुतः प्रधानः।
योगानुरक्तो विषयेष्वसक्तो माघेऽथ मासे मघवानिवेशः॥"

पद्मपुराणमें माघस्नानका माहात्म्य इस प्रकार लिखा है—

"व्रतदानैस्तपोभिश्च न तथा प्रीयते हरिः।
माघमज्जनमात्रेण यथा प्रीणाति केशवः॥
न सम विद्यते किञ्चित् तेजः सौरेण तेजसा।
तद्वत् स्नानेन माघस्य न समाः क्रतुजाः क्रियाः॥"
(पद्मपुराण उत्तरख० ४ अ०)

माघमासमें जो प्रातःस्नान करते उन पर विष्णु भग-वान् जैसा प्रसन्न होते हैं, वैसा दान व्रत और तपस्या करनेवालों पर भी प्रसन्न नहीं होते। जिस प्रकार सौर तेजके साथ जगत्के किसी भी तेजको तुलना नहीं होती, उसी प्रकार यज्ञादि कोई भी काम माघ स्नानके समान नहीं है।

माघचैतन्य (सं० पु०) कल्पलता नामक ग्रन्थके अष्टम भागके प्रणेता।

माघपाक्षिक (सं० त्रि०) माघमासके पक्षसम्बन्धीय।

माघमा (सं० स्त्री०) कर्कट केकड़ा।

माघवती (सं० स्त्री०) मघवान् देवताऽस्याः यद्वा मघवत इयमिति मघवत्-अण् (मघवा बहुलम्। पा ६।४।१२८) इति तादेशः ङीप्। पूर्वदिक्, पूर्व दिशा।

माघवन (सं० क्ली०) मघवत इदं ष्ण, वा मघवन् अण् (मघवा बहुल। पा ६।४।१२८) इति विकल्पान्न तादेशः। १ इन्द्रसम्बन्धि वस्तु। (त्रि०) २ इन्द्रसम्बन्धीय।

माघी (सं० स्त्री०) मघया युक्तः कालः अस्यामिति मघा (नक्षत्रेण युक्तः कालः। पा ४।२।३) इत्यण् ङीप्। मघा-युक्ता पौर्णमासी, माघी पूर्णिमा। माघमासकी पूर्णिमा के दिन मघा नक्षत्रका योग होता है, इसीसे इस पूर्णिमा-को माघीपूर्णिमा कहते हैं। यह तिथि कलियुगाद्या है अर्थात् इसी दिन पहले पहल कलियुगने प्रवेश किया है।

"अथ भाद्रपदे कृष्णे त्रयोदश्यान्तु द्वापरम्।
माघे च पौर्णमास्या वै घोर कलियुग स्मृतम्॥"
(मलमासतत्त्व)

इस तिथिमें पुण्य कर्म करनेसे अनन्त फल होता है। इस दिन तीर्थस्नान और दानादि अवश्य कर्त्तव्य है।

"शतमिन्दुक्षये पुण्य सहस्रन्तु दिनक्षये।
विषुवे शतसाहस्रमाकामावेष्वनन्तकम्॥
आ का मा वैषु-आषाढी कार्त्तिकी माघीवैशाखीषु॥"
(रघुनन्दन)

इस पूर्णिमा तिथिमें पार्वण-विधानानुसार श्राद्ध करनेको कहा गया है। अतएव सबोंको इस दिन पार्वण श्राद्ध करना चाहिये।

'पौर्णमासी तथा माघी- श्रावणी च नरोत्तम।
प्रौष्ठपद्यामतीताया तथा कृष्णा त्रयोदशी॥
एतास्तु श्राद्धकालान् वै नित्यानाह प्रजापतिः॥"
(मलमासतत्त्व)

माघी पूर्णिमाके दिन यदि मघा नक्षत्रका योग न हो और यदि सिंहराशिमें वृहस्पति रहें, तो यह गुरु निष्फल है। इसे अकाल प्रतिप्रसव सम्बन्धमें जानना होगा।

"माघ्या यदि मघा नास्ति सिंहे गुरुरकारणम्।"
(मलमासतत्त्व)

हारीत, गर्ग आदि मुनियोंका कहना है, कि माघमासमें वृहस्पति यदि सिंहराशिमें रहे, तो अकाल होता है। अतएव उस समय विवाहादि नहीं करना चाहिये। इसमें विशेषता यह है, कि माघी अर्थात् माघमासकी पूर्णिमा तिथिमें यदि मघा नक्षत्रका योग न हो, तभी निषिद्ध है, नहीं तो नहीं। इसीसे पहले "सिंहे गुरुरकारणं" ऐसा कहा गया है।

"गुरौ हरिस्थे न विवाहमाहुर्हारीतगर्गप्रमुखा मुनीन्द्राः।
यदा न माघी मघयुता स्यात् तदा च कन्योद्वहन वदन्ति॥"

माघोन (सं० त्रि०) मघवन्-अण्। इन्द्रसम्बन्धीय।

माघोनी (सं० स्त्री०) मघवान देवताऽस्याः माघोन इयमिति वा मघवन् अण् ङीप्। पूर्वदिक, इन्द्रसम्बन्धिक। इन्द्र इस दिशाके अधिपति हैं इसलिये इसका नाम मघोनी हुआ है।

माघ्य (सं० क्ली०) माघे जातमिति माघः (तत्र जातः। पा ४।३।२५) इति यत्। कुन्दपुष्प, कुंदका फूल।

माङ्गापुर—अयोध्या प्रदेशके उन्नाव जिलान्तर्गत एक नगर। मानकेवलखास नामक किसी एक वाईसरदारने छः सौ वर्ष पहले यह नगर बसाया।

माङ्ग—दाक्षिणात्यवासी निम्नश्रेणीकी एक जाति। अहमद नगर जिलेमें इनकी चपलसाडे, गारुडी, होलार, जिराइत, खास, माङ्ग और थोंकरफोड़े आदि कितनी ही श्रेणी हैं। वेलगाव जिलेमें भी मादिगेरु, मोचिमादिगेरु और माङ्गरौत नामक कई एक स्वतन्त्र थोक देखे जाते हैं। इस श्रेणिमध्यगत व्यक्तियोंके अवलम्बनीय कार्यकलापके तारतम्यानुसार इनमें भी समाजकी पृथकता देखी जाती है।

थोकके फोड़ेगण किसीके साथ बैठ कर भोजन नहीं करते और न दूसरी श्रेणीसे विवाहादि सम्बन्ध ही जोड़ते हैं। दूसरी दूसरी श्रेणीके एक पदवीविशिष्ट व्यक्तिके साथ भी आदान-प्रदान प्रचलित नहीं है। सभी मराठी भाषा बोलते हैं। वहिरोवा, खण्डेवा, महामारी और महसोवा इनके कुलदेवता हैं।

ये हट्टे कट्टे, मजबूत और काले होते हैं। चेहरा देखनेसे ही सहजमें ये कुणवी और मालीसे भिन्न जान पड़ते हैं। ये अपनेको महार जातिसे उत्पन्न बतलाते हैं। कहते हैं, कि जम्बु ऋषिके महार नामक एक दास था। वह ऋषिकी गायोंकी देखरेख करता था। एक दिन महार गायोंको ले कर जङ्गलमें चराने गया। वहां भूखसे पीड़ित हो उसने मालिककी एक गायको काटा और उसका मांस खा लिया। उसके इस निष्ठुर व्यवहारसे ऋषिने क्रुद्ध हो कर उसे माङ्ग यानी निष्ठुर कह कर शाप दिया। उसी समयसे उसके वंशधर 'माङ्ग' नामसे परिचित हैं। गो मांस छोड़ कर ये सभी जानवरके मांस खाते हैं। ये लोग मरे हुए पशुओंका मांस खानेमें जरा भी संकोच नहीं करते। शराब, भांग, गांजा, तम्बाकू आदि नशेकी चीज खानेके लिये ये बड़े लालायित रहते हैं। इसी कारण इनकी प्रकृति स्वभावतः उद्धत, निष्ठुर और प्रतिहिंसापरायण है। भद्रता कौनसी चीज है उसे ये लोग जानते ही नहीं।

ये लोग आलसी तो जरूर होते पर अपनी जीविका चलानेमें बड़े उद्यमशील हैं। भिक्षा, कृषि, दौत्य (पत्रवाहन) आदि इनके प्रधान कार्य हैं। खूनी आदमीको फांसी पर चढ़ाना दाक्षिणात्यमें केवल माङ्ग जातिमें ही देखा जाता है। होलाके माङ्ग गीत-वाद्यसे और गारुडी भोज-विद्यासे अपनी अपनी जीविका चलाते हैं। माङ्ग रौतगण चमड़ेका फीता बना कर, जूता सी कर और बांसकी टोकरी (डाली) बना कर अपना गुजारा चलाते हैं।

ये निम्नश्रेणीके हिन्दू तथा 'अन्त्यज' कह कर परिचित हैं। ये मन्नत कर हिन्दू देवदेवीको पूजा देते

और शुक्लपक्षकी एकादशी, शिवरात्रि तथा श्रावणके सोमवार और शनिवारमें उपवास करते हैं। जब इनमें विसूचिका फैल जाती है तब ये मरियाई देवीकी पूजा करते हैं। किन्तु देव-मन्दिरमें कोई घुसने नहीं पाता, बाहरसे ही देवमूर्त्तिका दर्शन करता और पुरोहितके हाथ पूजाकी सामग्री देता है। देशके ब्राह्मण ही इनकी पुरोहिताई करते हैं।

माङ्गगण डाइन वा भूत-प्रेत तथा भविष्य वाणी पर तनिक भी विश्वास नहीं करते। गांवके बाहर एक पत्थरके टुकड़ेमें सिन्दुर लेप देते और उसीको देवमूर्त्ति समझ कर पूजते हैं।

प्रसवके छठे दिन वे पटवाई देवीकी पूजा करते और बारहवें दिन अशौचान्त होने पर प्रसूति घरसे बाहर होती है।

इनमें बाल्य-विवाह उतना प्रचलित नहीं है। साधारणतः पात्र २५ वर्ष और बालिकाके युवती होने पर ही विवाह होता है।

ये शव-देहको गाड़ देते तथा तेरह दिन तक अशौच मानते हैं। तेरहवें दिन मृतका पुत्र वा पिण्डाधिकारी कोई आदमी जातिवर्गको ले कर समाधि-मन्दिर जाता है। वहां क्षौरादिकर्म समाप्त कर पिण्डाधिकारी १३ बरतन समाधिके सामने रखता और उस पर जल ढालता है। बाद उसके वे अपने घरको लौट आते और अवस्थानुसार जातिवर्गको भोज देते हैं। मेहतर भी इसी जातिके अन्तर्भुक्त है।

माङ्क्षव्य (सं० पु०) मंक्षुका गोत्रापत्य।

माङ्गल (सं० क्ली०) दोनों अश्विनीकुमारके उद्देश्यसे मंगलजनक स्तुतिमन्त्र।

माङ्गल—पञ्जाब गवर्मेण्टके अधीन एक छोटा पहाड़ी सामान्त राज्य। भू-परिमाण १२ वर्गमील है। पहले यह कहलूर राज्यमें शामिल था। १८१५ ई०में गोरखाके यहांसे विताड़ित होने पर यह राज्य स्वाधीन हो गया। यहांके सरदार जीतसिंह अत्रिवंशके राजपूत हैं। इनके पूर्वपुरुषोंने मारवाड़से यहां आ कर राज्यकी स्थापना की।

माङ्गलि (सं० पु०) धर्माचार्यभेद।

माङ्गलिक (सं० त्रि०) १ मङ्गलजनक शुभानुष्ठान संबंधीय, मङ्गल प्रकट करनेवाला। (पु०) नाटकका वह पात्र जो मङ्गलपाठ करता है।

माङ्गलिका (सं० स्त्री०) दशकुमार-चरित वर्णित नायिका-भेद।

माङ्गल्य (सं० त्रि०) मंगलाय हितमिति मंगल-ष्यञ्। १ शुभजनक, मंगलकर। (पु०) २ मंगलका भाव।

माङ्गल्यकाथा (सं० स्त्री०) १ दूर्वा, दूब। २ हरिद्रा, हल्दी। ३ ऋद्धि, एक प्रकारकी लता। ४ माषपर्णी। ५ गोरोचन। ६ हरीतकी, हर्रे।

माङ्गल्यकुसुमा (सं० स्त्री०) शंखपुष्पी।

माङ्गल्यगीत (सं० पु०) वह शुभ गीत जो विवाह आदि मंगलके अवसरों पर गाये जाते हैं।

माङ्गल्यप्रवरा (सं० स्त्री०) वचा, बच।

माङ्गल्या (सं० स्त्री०) १ गोरोचना। २ शमीवृक्ष, शमीका पेड़। ३ जीवंती।

माङ्गल्यागुरु (सं० पु०) अगुरुभेद। इसका गुण शीतल, सुगन्ध, योगवाह और श्रेष्ठ माना जाता है। (राजनि०)

माङ्गल्यार्हा (सं० स्त्री०) माङ्गलस्य अर्हा। त्रायमाणा लता।

माङ्गुष (सं० पु०) मंगुषका गोत्रापत्य।

माच (सं० पु०) मा अञ्चतीति अनच् क। पन्था, रास्ता।

माच (हिं० पु०) मचान देखो।

माचना (हिं० क्रि०) मचना देखो।

माचल (सं० पु०) मा चलति भोगमदत्वादचिरेणैव स्थानं न मुञ्चतीति चल-अच्। १ ग्रह। २ रोग, बीमारी। ३ वन्दी, कैदी। ४ चौर, चोर।

माचल (हिं० वि०) १ मचलनेवाला, जिद्दी। २ मचला।

माचा (हिं० पु०) बैठनेकी पीढ़ी जो खाटकी तरह बुनी होती है, बड़ी मचिया।

माचाकीय (सं० पु०) एक वैयाकरण।

माचिका (सं० स्त्री०) मा अञ्चति क्षतादिकं त्यक्त्वा न गच्छतीति अनच् क, ततः कन् टाप् अत इत्वं। १ मक्षिका, मक्खी। २ अम्बष्ठा। ३ पाठा। ४ आम्रातकवृक्ष, आमड़का पेड़।

माचिर (सं० अव्य०) मा चिरं। शीघ्र, जल्दी।

"अथाब्रवीत् तदा मत्स्यस्तानृषीन् प्रहसन् शनैः।
अस्मिन् हिमवतः शृङ्गे नाव बध्नीत मा चिरम्॥"
(भारत वनप० मत्स्योपा०)

माची (सं० स्त्री०) काकमाची, मकोय।

माची (हिं० स्त्री०) १ हल जोतनेका जुआ, वह जुआ जो हल जोतते समय बैलोंके कन्धे पर रखा जाता है। २ बैठनेकी वह पीढ़ो जो खाटकी तरह बुनी हुई होती है। ३ बैलगाडीमें वह स्थान जहां गाड़ीवान् बैठता और अपना सामान रखता है।

माचीक (सं० क्ली०) देवदारु।

माचीपत्र (सं० क्ली०) एक प्रकारका साग। इसे सुरपर्ण भी कहते हैं।

माछ (हिं० पु०) मछली।

माछर (हिं० पु०) १ मच्छड़ देखो। २ मछली।

माछी (हिं० स्त्री०) १ मक्खी। २ बंदूककी मछिया। मछिया देखो। ३ मछली।

माजवाडी—फरिदपुर जिलेके कोटालिपाड़ परगनेके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध गांव। यहां एक पाश्चात्य वैदिक ब्राह्मणके घरमें पत्थरकी बनी सुन्दर, बड़ी और भक्तिभावोद्दीपक वासुदेवकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित है। प्रायः तीन सौ वर्ष पहले एक तालाब खोदनेके समय मिट्टीसे यह पद्मशोभित मूर्त्ति निकली थी।

माजरा (अ० पु०) १ हाल, वृत्तान्त। २ घटना।

माजल (सं० पु०) माजलमित्यभिप्रायोऽस्य, वर्षणवारिभ्योऽस्य पक्षयोर्भारजड़त्वात् तथात्वं। चासपक्षी, चातक।

माजलपुर (सं० क्ली०) नगरभेद।

माजिक (सं० पु०) राजतरङ्गिणी-वर्णित एक मनुष्यका नाम।

माजिरक (सं० पु०) मजिरकका गोत्रापत्य।

माजीज (सं० क्ली०) जनपदभेद। इसका दूसरा नाम माजूज भी है।

माजू (फा० पु०) एक प्रकारकी झाड़ी। यह यूनान और फारस आदि देशोंमें अधिकतासे पाई जाती है। इसकी आकृति सरोको-सी होती है। इसकी डालियों परसे एक प्रकारका गोंद निकलता है जो 'माजफल' कहलाता है और जिसका व्यवहार रंग तथा औषधिके लिये होता है।

माजून (अ० स्त्री०) १ औषधके रूपमें काम आनेवाला कोई मीठा अवलेह। २ वह बरफी या अवलेह जिसमें भांग मिली हो।

माजूफल (फा० पु०) माजू नामक झाड़ीका गोटा या गोंद। यह ओषधि तथा रंगाईके काममें आता है। पर्याय—मायाफल, माईफल, सागरगोटा।

माञ्जरिक (सं० पु०) अपामार्गक्षुप, चिचड़ेका पौधा।

माञ्जिष्ठ (सं० क्ली०) मञ्जिष्ठया रक्तं (तेन रक्तं रागात्। पा ४।२।१) इत्यण। १ लोहित वर्ण, लाल रंग। २ एक प्रकारका मूत्र रोग। इसमें लाल पेशाब होता है।

(त्रि०) ३ मजीठका-सा, मजीठके समान। ४ मजीठके रंगका।

माञ्जिष्ठक (सं० त्रि०) लोहितवर्ण, मजीठ-सा लाल।

माञ्जिष्ठिक (सं० क्ली०) लोहितवर्ण, लालरंग।

माञ्जीरक (सं० पु०) मञ्जीरकका गोत्रापत्य।
(पा ४।१।११२)

माट (हिं० पु०) १ एक मिट्टीका बना हुआ एक प्रकारका बड़ा बरतन। इसमें रंगरेज लोग रंग बनाते हैं। इसे 'मठोर' भी कहते हैं। २ बड़ी मटकी जिसमें दही रखा जाता है।

माट—१ युक्तप्रदेशके मथुरा जिलेकी उत्तर पूर्व तहसील। यह यमुना नदीके पूर्वी किनारे बसा है। भूपरिमाण २२१ वर्गमील है। यहां नोहझील और मतिझील नामके दो बड़ बड़े ह्रद मौजूद हैं।

२ मथुरा जिलान्तर्गत एक नगर और इसी नामका तहसीलका विचार-सदर। यह अक्षा० १७° ३५´ ४२″ उ० तथा देशा० ७७° ४४´ ५६″ पू०के मध्य अवस्थित है। यह हिन्दूके प्रधान तीर्थस्थलोंमें गिना जाता है। बालक्रीडामें भगवान् श्रीकृष्णने यहां दूधका माट (घड़ा) फोड़ा था, इसीसे यह स्थान माट नामसे विख्यात हुआ। वहांके प्राचीन मिट्टीके बने किलेमें पुलिस और तहसीली कचहरी लगती है।

माटा (हिं० पु०) लाल च्यूंटा जिसके झुंडके झुंड आमके पेड़ों पर रहते हैं।

माटाम्रक (सं० पु०) माटाख्यः आम्रः ततः कन्। वृक्षभेद, एक प्रकारका पेड़।

माटियारी (सं० क्ली०) हुगली जिलेका एक नगर।

माटियाखाड़—कामरूप जिलान्तर्गत खासिया जिलेका एक रक्षित वनभाग। कुलसी नदीके किनारे कुकुरमारा गांवमें यहांकी लकड़ीकी आढ़त है।

माटी (सं० स्त्री०) पर्णफलशिर, पानकी डंटी।

माटी (हिं० स्त्री०) १ मिट्टी देखो। २ साल भरकी जोताई या उसकी मेहनत। ३ धूल, रज। ४ शरीर, देह। ५ पांच तत्त्वोंके अन्तर्गत पृथ्वी नामक तत्त्व। ६ मृत शरीर, लाश।

माठ (हिं० पु०) १ एक प्रकारकी मिठाई। मैदेकी मोटी और बड़ी पूरी पका कर शक्करके पागमें जो पकाया जाता है उसीको माठ कहते हैं। यही मिठाई जब छोटे आकारमें बनाई जाती है तब उसे 'मठरी' वा 'टिकिया' कहते हैं। २ मिट्टीका पात्र जिसमें कोई तरल पदार्थ भरा जाय, मटकी। ३ सुनिषणशाक, सुसना साग।

माठर (सं० पु०) १ सूर्यके एक पारिपार्श्विक जो यम माने जाते हैं। २ व्यास। ३ विप्र, ब्राह्मण। ४ शौण्डिक, कलाल।

माठर (मातर)—१ बम्बई प्रदेशके खेरा जिलेका एक उपविभाग। भू परिमाण २१७ वर्गमील है।

२ उक्त विभागका एक प्रधान नगर। यह अक्षा० २२° ४२´ उ० तथा देशा० ७२° ५१´ पू०के बीच पडता है। यहां श्रावक या जैनियोंका एक प्रसिद्ध मठ (मन्दिर) विद्यमान है।

माठर आचार्य—साङ्ख्यकारिकावृत्तिके प्रणेता।

माठरक (सं० त्रि०) माठरसम्बन्धीय।

माठरायण (सं० पु०) माठरका गोत्रापत्य।

माठव्य (सं० पु०) शकुन्तला नाटकमें वर्णित विदूषक माधव्यका एक नाम।

माठर्य (सं० पु०) मठका गोत्रापत्य।

माठा (हिं० पु०) १ मट्ठा या मठा देखो। २ कृपण, कंजूस।

माठी (सं० स्त्री०) लौहवर्म्म, वख्तर।

माठी (हिं० स्त्री०) वङ्गाल, आसाम और संयुक्त प्रदेशमें अधिकतासे मिलनेवाली एक प्रकारकी कपास। आज कल यह कपास बहुत निम्नकोटिकी मानी जाती है।

माठेरन—बम्बई प्रदेशके थाना जिलान्तर्गत एक पहाड़ी स्वास्थ्यवास। यह अक्षा० १८° ५८´ उ० तथा देशा० ७३° १६´ पू० बम्बई शहरसे ३० मील पूर्वमें अवस्थित है। समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊंचाई २४६० फुट है। १८५० ई० में मि० ह्यु मालेटने स्वास्थ्यके लिये उपयोगी स्थान देख कर यहां एक स्वास्थ्यवास बनवाया था।

पश्चिमघाट पर्वतके एकदेशमें अवस्थित रहनेके कारण इस स्थानका प्राकृतिक सौन्दर्य बहुत मनोहर है। सामनेमें श्यामल शस्यक्षेत्र और उर्मिसंकुल समुद्रतरङ्ग सूर्यकी किरणोंसे प्रतिभात हो कर दर्शकके नयनोंको आकृष्ट करती है। अलावा इसके प्रातःकालकी हवामें विचरण करनेवाले दर्शक जब उच्च स्थानसे नीचेकी ओर दृष्टिपात करते हैं, तब उन्हें वह समतलक्षेत्र कुहेरेसे ढका दिखाई देता है। जैसे जैसे सूर्य ऊपर उठते जाते हैं वैसे वैसे पर्वत पर अतुलनीय शोभा दृष्टिगोचर होती है और सूर्यकी किरणमालासे कुहरेके दूर हो जानेसे वह समतलक्षेत्र पुनः उन्हें दिखाई देने लगता है।

इस स्वास्थ्यवासके चारों ओर बहुतसे गिरिसानु (Points or headlands) फैले हुए हैं।

यहां काफी वर्षा होने पर भी पौषमासमें पर्वतमें बहनेवाली किसी भी स्रोतस्विनीमें जल नहीं रहता। सिर्फ पूर्वभागके हारिसन और पश्चिम-मालट नामक झरनेमें बारहों मास जल रहता है। उस झरनेका जल जनसाधारण पीनेके काममें लाते हैं। यहां मलेरिया ज्वरका बिलकुल प्रकोप नहीं है। अक्तूबर और नवम्बर मासमें तथा अप्रिलसे जून मास तक यहांकी आबहवा अच्छी रहती है। किसी सिविल सर्जनके ऊपर यहांकी स्वास्थ्यरक्षाका कुल भार सपुर्द है। वे यहां पर तृतीय श्रेणीके मजिष्ट्रेटका भी काम करते हैं। यहां अङ्गरेजोंके रहनेके लिये होटल, लाइब्रेरी, जिमखाना, गिर्जा, डाकबंगला आदि मौजूद हैं। यहां लुइसा पैण्टके निकट वर्षाकालमें प्रायः हजार फुट नीचे जानेवाला एक प्रपात दिखाई देता है। यहां धागड़, ठाकुर और काठकाड़ी नामक अनार्य जङ्गली जातिका वास है।

माड़ (सं० पु०) ताड़की जातिका एक पेड़। पर्याय—माडद्रुम, दीर्घ, छत्रवृक्ष, वितानक मदद्रुम। इसका गुण—मोहकारी, श्रमनाशक और श्लेष्मकारक। (राजनि०)

माड़ (हिं० पु०) माड़ देखो।

माड़—छोटा नागपुरमें रहनेवाली कृषिजीवी एक जाति। ये मालवा राजपूत नामसे भी परिचित हैं। प्रवाद है, कि उनके पूर्वपुरुष मालव क्षत्रिय थे। इनमें जनेऊ पहननेकी भी प्रथा थी। जङ्गलमें आ कर अपनी जिविका निर्वाहका कोई उपाय न देख ये खेती करनेमें वाध्य हुए। नीच वृत्ति ग्रहण करनेसे ही ये संस्कार विहीन हो पड़े हैं।

इनकी आकृति प्रकृति आर्यवंशोद्भव जैसी मालूम पड़ती है। किन्तु जङ्गलमें वास करनेके कारण इनमें अनार्यका रक्तस्रोत वह गया है। बहुतोंने अनार्यकी उपाधि ग्रहण की है।

ये हिन्दूकी सभी देव देवियोंका बड़े भक्ति भावसे पूजन करते हैं। पूजा तथा विवाहादि कार्यमें ये ब्राह्मणको ही बुलाते हैं। अन्य जातिकी तरह इनमें भी सतीपूजाका बड़ा ही आदर है। पहले इनमेंसे जो 'सती' रमणी जीवन उत्सर्ग कर स्वामीकी सहगामिनी हुई हैं उनकी आज भी देवीवत् पूजा होती है।

सम्प्रति इनकी सामाजिक अवस्था बहुत कुछ निकृष्ट तथा बड़ी ही शोचनीय हो गई है। विधवा-विवाह तथा सगाईकी प्रथासे ये भौजाईके साथ भी विवाह कर सकते हैं।

माडद्रुम (सं० पु०) १ स्वनामख्यात वृक्षविशेष। यह कोङ्कणदेशमें पाया जाता है। २ नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

माडना (अ० क्रि०) ठानना, मचाना।

माड़ना (हिं० क्रि०) १ मंडित करना, भूषित करना। २ आदर करना, पूजना। ३ धारण करना, पहनना। ४ मर्दन करना, पैर या हाथसे मसलना। ५ घूमना, फिरना।

माडव (सं० पु०) एक वर्णसंकर जाति। लेटके औरस और तीवरकन्याके गर्भसे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है।

"लेटस्तीवरकन्यायां जनयामास पपुत्रान्।
माल मल्ल माडवश्च भड कोलश्च कन्दरम्॥"
(ब्रह्मवैवर्त्त पुराण ब्रह्मखण्ड १० अ०)

किसी किसी पुस्तकमें 'माडव'के स्थानमें 'मातर' ऐसा भी देखा जाता है।

माड़व (हिं० पु०) माड़ी या मण्डप देखो।

माड़वाड़—राजपुतानेके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। आज कल यह योधपुर नामसे परिचित है।

मारवाड़ और योधपुर देखो।

माड्ड्य (सं० त्रि०) मड्डाका सम्बन्धीय।

माड्डुक (सं० पु०) मड्डुकवादनं शिल्प मस्येति (मड्डुकझर्झरादण्यतरस्या। पा ४।४।५६) इति अण्। मड्डु नामक वाद्यवादक, मड्डु नामक बाजा बजानेवाला।

माड्डुकिक (सं० पु०) माड्डुक देखो।

माढ़ा (हिं० पु०) १ अटारी परका वह चौबारा जिसकी छत गोल मंडपके आकारकी हो। २ अटारी परका चौबारा। ३ मठा देखो।

माढि (सं० स्त्री०) माहतीति-माह (अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते। उण् ४।१०५) इति क्तिन्। १ देशभेद, एक देशका नाम। २ पत्रशिरा, पत्तेकी नस। ३ एक प्रकारका दाँत। ४ पत्रभङ्ग, साटी। ५ दैन्यप्रकाश, दीनता प्रकाश करना।

माढी (सं० स्त्री०) माढि कृदिकारादिति ङीष्। १ दन्तशिरा, दाँतोंका मूल। २ पर्णशिरा, पत्तोंकी नस। ३ पत्तेका अंकुर।

माढ़ी (हिं० स्त्री०) मढ़ी देखो।

माण (सं० पु०) कन्दविशेष, एक प्रकारका कन्द।

माणक (सं० पु०) मीयते पूज्यते परिमीयते वेति मान-मा वा घञ् स्वार्थे कन्, निपातनाण्णत्वं। स्वनामख्यात कन्दविशेष, मानकंद। पर्याय—स्थलपद्म, माण, बृहच्छद छत्रपत्र। गुण—स्वादु, शीतल, गुरु, शोथहर, कटु। (राजव०)

माणकघृत (सं० क्लो०) शोथाधिकारमें घृतौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—घी चार सेर, चूर्णके लिये मानकंद एक सेर, काढ़ेके लिये मानकच्चू साढ़े बारह सेर; जल एक मन २४ सेर, शेष १६ सेर। पीछे घृतपाकके नियमानुसार इस घृतको प्रस्तुत करना होगा। इसका सेवन करनेसे एक दोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज शोथ नष्ट होता है। (भावप्र० शोथरोगाधि०)

माणकादिगुड़िका (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी औषध जो प्लीहायकृद्रोगमें बहुत लाभदायक है। प्रस्तुत प्रणाली

एक वर्षका पुराना मानकन्द, अपाङ्गमूलभस्म, गुलञ्च, अड़ूसका मूल, शालपर्णी, सैन्धवलवण, चितामूल, सोंठ, तालजटाका क्षार प्रत्येक ६ तोला। विट, सचल लवण, यवक्षार और पीपल प्रत्येक २ तोला। कुल चूर्ण १६ सेर ले कर गोमूत्रमें पाक करे। पीछे गाढ़ा हो जाने पर उसे ठंढा करनेके लिये नीचे उतार ले। अनन्तर ३ पल मधु उसमे डाल कर आध तोलेकी गोली बनावे। इसका सेवन करनेसे विरेचन हो कर यकृत और प्लीहा आदि रोगोंका नाश तथा जठराग्निकी तेजी होती है।

दूसरा प्रकार—पुराना मानकंद, अपाङ्गमूलकी भस्म, शालपर्णी, चितामूल, सीजका मूल, सोंठ, सैन्धव, लवण, सचललवण, यवक्षार, विटलवण, तालजटाको भस्म, विडङ्ग, हवूष, चव्य, वच, पीपल, शरपुङ्ख, जीरा और पालिधामदारका मूल प्रत्येक ४ तोला, गोमूत्र २४ सेर। कुल मिला कर पाक करे। गाढ़ा होने पर उसमें जीरा, त्रिकटु, हींग, यमानी कुट, सोंठ, निसोथ, दन्तीमूल और ग्वालककडीका मूल प्रत्येकका चूर्ण २ तोला डाल कर यथाविधि पाक करे। ठंढा हो जाने पर उसमें ३ पल मधु मिला दे। अग्निवल और दोषादिकी विवेचना कर चिकित्सक मात्रा और अनुपान स्थिर कर दे। इसका सेवन करनेसे प्लीहा और गुल्म आदि अनेक प्रकारकी पीड़ा शान्त होती है। इसे वृहन्माणकादि गुड़िका भी कहते हैं।

माणघृत (सं० पु०) शोथाधिकारोक्त घृतौषधभेद। प्रस्तुत प्रणाली—घी ४ सेर, काढ़े के लिये अच्छी तरह कूटा हुआ मानकच्चूका मूल ८ सेर, जल ६४ सेर। इसका सेवन करनेसे नाना प्रकारके शोथ जाते रहते हैं।

माणतुण्डक (सं० पु०) एक प्रकारका जलचर पक्षी।

माणमण्ड (सं० क्ली०) शोथरोगकी एक दवा। प्रस्तुत प्रणाली—पुराना मानकंद १ भाग, अरवा चावलका चूर २ भाग, जल मिला हुआ दूध ४२ भाग, इन्हें एकत्र कर पाक करे। प्रतिदिन इसका सेवन करनेसे वातोदर, शोथ और पाण्डुरोग जाता रहता है।

माणव (सं० पु०) मनोरपत्यं पुमान्-मनु अपत्यविवक्षायां अण्, ततो नकारस्य णत्वं।

"अपत्ये कुत्सिते मूढे मनोरौत्सर्गिकः स्मृतः।
नकारस्य च मूर्द्धन्यस्तेन सिध्यति मानवः॥"

(पा ४।१।१६१)

इति काशिका सूत्र वृत्तिः। १ मनुष्य, आदमी। २ बालक, बच्चा। ३ षोडश यष्टिक हार, सोलह लड़ीका हार।

माणवक (सं० पु०) अल्पो मानवः (अल्पे। पा ५।३।८५) इति कन्। १ बालक। सोलह वर्ष तककी उम्रवाले मनुष्यको माणवक कहा जाता है। २ हारभेद, बीस या सोलह लडीका हार।

"द्वात्रिंशता गुच्छो विंशत्याकीर्त्तितोऽर्द्ध गुच्छाख्यः।
षोडशभिर्माणवको द्वादशभिश्चार्द्ध माणवकः॥"

(वृहत्संहिता ८१।३३)

३ कुपुरुष, निन्दित या नीच आदमी। ४ वटु, विद्यार्थी।

माणवकक्रीडा (सं० क्ली०) एक वर्णवृत्त। इसके प्रत्येक पदमें आठ वर्ण एक भगण, एक तगण और दो लघु होते हैं।

माणवीन (सं० त्रि०) मानवस्येदमित्यर्थे णीन, वा माणवाय हितं (माणवचरकाभ्यां खञ्। पा ५।१।११) इति खञ्। माणव सम्बन्धीय, माणवका हित।

माणव्य (सं० क्ली०) माणवानां समूहः माणव्यं विकार संघेनि ण्य, मानवानां समूहः (ब्राह्मणमाणववाड़वाद यन्। पा ४।२।४२) इति यन्। शिशु समूह, बालकोंका झुण्ड।

माणशूरणाद्यलौह (सं० क्ली०) अर्शरोगकी उत्तम औषध। बनानेका तरीका—मानकच्चू, ओल, भिलावा, निसोथ, दन्ती, त्रिकटु, त्रिफला और त्रिमद अर्थात् चिता, मोथा और विड़ङ्ग, प्रत्येकका बराबर बराबर चूर्ण। कुल चूर्ण मिला कर जितना हो, उतनी लोहेकी भस्म। प्रतिदिन १ माशा करके सेवन करनेसे अर्शरोग दूर होता है।

माणहल (सं० पु०) वृहत्संहिताके अनुसार एक जाति।

माणिक (सं० पु०) माणिक्य देखो।

माणिकगञ्ज—ढाका जिलेके अन्तर्गत एक उपविभाग। यह अक्षा० २३° ३७´ से २४° २´ उ० तथा देशा० ८९° ४५´ से ९०° १५´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरि माण

४८६ वर्गमील और जनसंख्या पांच लाखके करीब है। इसमें माणिकगञ्ज नामक एक शहर और १४६१ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त विभागका प्रधान नगर और विचारसदर। यह अक्षा० २३° ५२' ४५" उ० तथा देशा० ९०° ४' पू०के मध्य वलेश्वर नदीके पश्चिमी किनारे अवस्थित है। प्रति वर्ष यहां एक हाट लगती है।

माणिकगाङ्गुली—धर्ममङ्गलके प्रणेता एक वङ्गकवि।

माणिकचन्द्र—उत्तरवङ्गके एक धर्मशील प्रसिद्ध राजा। रङ्गपुर और दिनाजपुर अञ्चलमें इनके तथा इनके पुत्र गोपीचन्द्रके स्वार्थत्यागका गान आज भी दीन दुःखीके मुखसे सुना जाता है।

माणिकचन्द्रके गानसे ही मालूम होता है, कि माणिकचन्द्र एक बड़े धार्मिक राजा थे। प्रजाके ऊपर उनका किसी प्रकार अत्याचार नहीं था। मालगुजारी निहायत कम थी। प्रति गृहस्थसे हल पीछे डेढ़ पैसा लिया जाता था। जब नया सचिव नियुक्त हुआ तब उसने मालगुजारी बढ़ा दी किन्तु प्रजा बढ़ाई गई मालगुजारी देनेको बिलकुल राजी न हुई। सबोंने विद्रोह खड़ा कर दिया, यहां तक कि प्रधानके परामर्शसे वे सभी राजाका काम तमाम करनेको तुल गये।

माणिकचन्द्रकी स्त्री मैनावती सिद्धा थी। गोरक्षनाथके निकट उन्होंने योगज्ञान सीखा था। ध्यानमें उन्हें पतिकी विपद्का हाल मालूम हो गया। अब वह पतिकी रक्षाके लिये यथासाध्य चेष्टा करने लगी, किन्तु धर्मराजके हाथसे रक्षा न कर सकी। पतिके मरने पर उनके हृदयमें प्रतिहिंसानल धधक उठा। उनका जीवन उनके लिये बोझसा मालूम पड़ने लगा। इस समय रानीके सात मासका गर्भ था। गोरक्षनाथके वरसे अठारह मासमें उनके एक परम सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ। गोपीचन्द्र वा गोविन्दचन्द्र उसका नाम रखा गया। मैना जानती थी, कि उनके प्रियपुत्रका जीवनकाल सिर्फ अठारह वर्ष है। गोपीचन्द्रके एक और छोटा भाई था जिसका नाम खेलुआ लङ्केश्वर था।

अकालमें पतिवियोग और फिर १८वें वर्षमें पुत्रवियोग होगा, इस चिन्तासे मैना अस्थिर हो गई। जो कुछ हो, उन्होंने अति शीघ्र हरिश्चन्द्र राजाकी कन्या उदुना पुदुनाके साथ पुत्रका विवाह कर दिया।

देखते देखते १८वां वर्ष आ पहुंचा। मैना स्थिर न रह सकी। वे जानती थी, कि पुत्रके संन्यासग्रहणके सिवा रक्षाका और कोई उपाय नहीं है। इस कारण उन्होंने पुत्रको बुला कर कहा, 'वत्स! यह जगत् मायाका खेल है, सभी क्षणिक हैं, जो आज है, वह कल नहीं है। अतएव यदि चिर शान्ति चाहते हो, तो इसी समय संन्यास ग्रहण करो। राजधानीकी पशुशालामें हाडिपा सिद्ध* रहते हैं उन्हींका चेला बनो। पहले तो राजा गोविन्दचन्द्रने सुख ऐश्वर्यका परित्याग कर योगी होना नहीं चाहा, किन्तु पीछे माताके उत्साह और उपदेशसे मुग्ध हो उन्होंने हाडीसिद्धकी शरण ली। संसार परित्यागके समय राजा गोविंदचन्द्रकी रानियोंने जो विलाप किया था वह मर्मस्पर्शी है। संसारत्यागके कालमें उन्होंने कनफटे योगियोंकी तरह कान फड़वा कर कुण्डल पहन लिया था।

गोविन्दचन्द्रके गीतमें लिखा है, कि पहले हाडिपाने शिष्यकी परीक्षा लेनेके लिये उन्हें भिक्षार्थ भेजा। किंतु भिक्षाके लिये बाहर निकलनेसे पहले हाडिपा एक दैवज्ञके वेशमें प्रति ग्राममें जा गृहस्थसे कह आये थे, कि "आज एक नवीन संन्यासी भिक्षाके लिये आयेगा, जो उसे भिक्षा देगा उसका धन उड़ जायगा। अतएव सबोंको उचित है, कि अपने अपने दरवाजेके सामने कांटा गाड़ रखे। इससे वह नवीन संन्यासी दरवाजे पर चढ़ने नहीं पायेगा।" सभी गृहस्थोंने वैसा ही किया। गोविन्दचंद्र गाँव गाँव घूमा, पर भिक्षा कहीं नहीं मिली। इस पर हाडिपाने कहा, "जहां घूमने पर भी भीख नहीं मिलती, वहां रहना उचित नहीं।" अतः हाडिपा गोविन्दचन्द्रको ले कर दक्षिणकी ओर चल दिये। वहां हाडिपाने हीरादारी नामक एक वेश्याके यहां गोविन्दका बन्धक रखा।

* यह हाड़ीसिद्ध जालन्धर सिद्ध नामसे बौद्धग्रन्थमें प्रसिद्ध है। तिब्बतीय बौद्धग्रन्थमें भी हाडिया नाम आया है। वे गोरक्षनाथके शिष्य थे। हिन्दूमात्र उन्हें हठयोगी कहा करते थे।

शर्त्त यह ठहरी, कि बारह वर्षके बाद आ कर वे अपने शिष्यको ले जायँगे।

हीरा युवक राजाके अपूर्व सौन्दर्य पर मुग्ध हो गई। उन्हें पानेकी आशासे वेश्याने बहुत कोशिश की, किन्तु राजकुमार मोहिनीके जालमें न फँसे। वे उसे माता कह कर पुकारने लगे। अब हीराने मर्माहत हो कर राजकुमारको कठिन परिश्रमका भार सौंपा। बड़ी बड़ी कलसीमें उन्हें दूरसे जल लाना होता था। कामके बोझसे वे दिनो दिन दुबले पतले होते गये। समय पर खानेको नहीं मिलता था, जब मिलता भी था, तो भर पेट नहीं, फिर भी ऊपरसे वेश्याकी लगती बात। इस प्रकार १२ वर्ष बीत गये। इधर गोविन्दचन्द्रकी दो रानियोंने बहुत दिनोंसे राजाका कोई समाचार न पा कर अपने पालतू सुग्गेको स्वामीका समाचार लानेके लिये छोड़ा। वह पक्षी नाना देशोंमें घूमता हुआ हीराके घर आया। यहां उसने देखा, कि गोविन्दचन्द्रके मुखमण्डल पर वह श्री नहीं, वह कान्ति नहीं, वह ज्योति नहीं। राजा क्षीणदेहसे कलसी लिये धीरे धीरे आ रहे थे। बोझके मारे वे थक गये और कुछ देरके लिये विश्राम करने लगे। इसी समय सुग्गेने उन्हें पहचान लिया और उनके हाथ पर बैठ कर रानियोंकी विरहकाहिनी सुनाई। राजाने उँगली चीर कर उसी रक्तसे पत्र लिखा और उस सुग्गेको विदा किया। हीराकी दासियां कहीं खड़ी थी, सो उन्होंने यह घटना देख ली और मालकिनसे जा कहा, 'गोविन्द भागनेकी तैयारी कर रहा है।' अब हीराने उसे भेड़ा बना कर बांध रखा। राजकुमार मर्मवेदनासे कातर हो गये। उनका मनोक्लेश हाड़िपाको ध्यानमें मालूम हो गया। शिष्यका उद्धार करनेके लिये वे उसी समय हीराके घर आये। हीराने कहा, 'तुम्हारा आदमी मर गया, अब वह मिलनेको नहीं।' हाड़ियाको विश्वास नहीं हुआ, सो उन्होंने हुङ्कार किया। उस हुङ्कारसे लौह जंजीर टूट गई और गोविन्दचंद्र मुक्तिलाभ करके गुरुके निकट हाजिर हुए।

शिष्यको ले कर हाड़िपा राजधानी लौटे। मैनावतीने आदरपूर्वक पुत्रको गोदमें लिया। किन्तु थोड़े ही दिनोंके अन्दर वे विलासिनी नारियोंकी सेवामें ऐसे लीन हुए कि गुरुका उपदेश बिलकुल भूल गये। इतने दिनोंको साधना मिट्टीमें मिल गई। उदुना पुदुनाकी बातोंमें पड़ कर राजाने एक गहरा गड्ढा खोदवाया और उसमें गुरुको डाल कर ऊपरसे मट्टी ढक देनेका हुकुम दिया। सिद्धयोगी उस गड्ढेमें ध्यानमग्न हो कर रहे। कुछ दिन बाद गोरक्षनाथके आदेशसे कानुफायोगी बहुतसे योगियोंको साथ ले हाड़िपाका उद्धार करने आये। गोविन्दचन्द्रके साथ उनकी मुलाकात हुई। राजाने समझा, कि ये सामान्य पुरुष नहीं हैं, क्षणभरमें उनका खार छार कर सकते हैं। कानुफाके मुखसे उन्होंने यह भी सुना, कि हाड़िपा अब भी गड्ढेमें जीवित हैं। जो कुछ हो, राजाने योगियोंको प्रसन्न किया। योगियोंके एकान्त अनुरोधसे हाड़िपाने राजाका अपराध क्षमा कर दिया। शुभ दिनमें शुभ घड़ीमें राजा मस्तक मुड़वा कर फिरसे संन्यासी हो गये। इस बार फिर संसारमें नहीं लौटे। इतने दिनोंके बाद मैनावतीकी इच्छा पूरी हुई।

माणिकचन्द्र, गोविन्दचन्द्र और मैनावतीकी कहानी तिब्बत और चट्टग्रामके बौद्धग्रन्थमें भी आई है। पिता, पुत्र और माताका चरित्र ले कर बङ्गभाषामें सैकड़ों काव्य रचे गये थे। माणिकचाँदका गान और गोविन्दगीत यद्यपि आधुनिक कविके हाथसे बहुत कुछ मार्जित हुआ है, तो भी इसको अस्थिमज्जामें प्राचीन बौद्धयुगका भाव मिश्रित है जो सहज ही पहचानमें आ जाता है।

रङ्गपुरके उत्तरपश्चिमांशमें जो डिमला थाना है वहां धर्मपालकी राजधानी धर्मपुरका ध्वंसावशेष तथा वहांसे एक कोस पश्चिम 'मैनावती-कोट' नामसे प्रसिद्ध माणिकचन्द्रकी राजधानी देखी जाती है। कोई कोई कोचबिहारके पाटगाँवको गोविन्दचन्द्रकी राजधानी पाटिकानगर बतलाते हैं। धर्मपाल माणिकचन्द्रके रिश्तेदार थे। उन्हींके हाथसे माणिकचन्द्रको पराजय और मृत्यु हुई। आखिर मैनावतीके हाथसे धर्मपालने इसका प्रतिफल पाया था। माणिकचन्द्र और गोविन्दचन्द्र किस समय राज्य करते थे, ठीक ठीक मालूम नहीं। ग्रियार्सन साहब माणिकचन्द्रको १४वीं शताब्दी और गोविंदको ११वीं शताब्दीमें विद्यमान बतलाते हैं।

माणिकपुर—१ अयोध्या प्रदेशके गोण्डा जिलान्तर्गत एक परगना। भूपरिमाण १२७ वर्गमील है।

२ उक्त परगनेका प्रधान सदर। पहले यह स्थान थारु जातिके अधिकारमें था। पीछे भर जातिने इस पर दखल जमाया। भर-सरदार मकने ही माणिकपुर नगरको बसाया। भर सरदारोंके छः पीढ़ी यहां राज्य करने पर नेवालशाई नामक किसी चन्द्रवंशी राजपूतने इसे दखल किया। उनके वंशधरोंने यहा बारह पीढ़ी तक राज्य किया था। अन्तिम राजा अपुत्रक थे, इस कारण उनकी स्त्रीने गोण्डाके विषेण-राजपुत्रको गोद लिया। तभीसे यह स्थान उन्हीके अधिकारमें चला आ रहा है।

माणिकपुर—अयोध्या प्रदेशके प्रतापगढ जिलान्तर्गत एक परगना। यह गङ्गानदीके उत्तरी किनारे अवस्थित है। भूपरिमाण ८४ वर्गमील है।

ऐतिहासिक घटनासे समाश्रित होनेके कारण इस स्थानने जनताकी दृष्टिको आकृष्ट किया है। कन्नोज-राज बलदेवके छोटे लडके मानदेवने इस नगरको बसाया। फिर किसीका यह भी कहना है, कि इतिहास-प्रसिद्ध कन्नोज-राज जयचाँदके छोटे भाई माणिक-चाँद द्वारा यह नगर बसाया गया था। यहाके मुसलमान शेख लोग कहते हैं, कि उनके पूर्वपुरुषगण सैयद-सलारके आक्रमणकाल (१०३२-३३ ई०) मे यहां आ कर बस गये। ११९३-९४ ई०में कन्नोज-राजवंशके अधःपतनके बाद यह स्थान सचमुच मुसलमानोके अधिकारभुक्त हुआ। किन्तु उस समय यहा मुसलमानों का प्रभाव पूर्णतया प्रतिष्ठित न होनेके कारण पार्श्ववर्त्ती राजाओंके साथ उनका हमेशा युद्ध हुआ करता था। दिल्लीश्वर बहोल लोदीने जौनपुर जीत कर इसे दिल्ली-साम्राज्यमे मिला लिया। किन्तु उनके मरने पर अन्तर्विप्लवसे दिल्लीराज्य कई टुकडोंमें बट गया, साथ साथ लेहूकी धारा भी यहां बह चली। मुगल बादशाह अकबर शाहके सुशासनसे यहा पुनः शान्ति स्थापित हुई। उक्त बादशाहने इस स्थानको इलाहाबाद सुबाका एक सरकारभुक्त बना कर शासनशृङ्खला स्थापन की थी। उनके परवर्त्ती तीन मुगल बादशाहके जमानेमें माणिकपुर नगर उन्नतिकी चरमसीमा तक पहुंच गया था। इस समय साम्राज्यके गण्यमान्य उमरावोंने यहां बड़ी बडी इमारतें बना कर नगरकी शोभाको और भी बढ़ा दिया। सम्राट् औरङ्गजेबने आगरा जाते समय एक बार इस नगरमें पदार्पण किया था। उनके आदेशसे सुबहकी इबादत करनेके लिये रात भरमें यहा एक सुन्दर मसजिद बन गई थी।

मुगल-शक्तिके अवसानके बादसे ही इस नगरकी श्रीवृद्धिका ह्रास होने लगा। १७५१ ई०में रोहिलोंने तथा १७६०-६१ ई०मे मरहठोंने इसे लूट कर तहस नहस कर डाला। १७६२ ई०में अयोध्याके नवाब वजीर सुजा-उद्दौलाने मरहठोंका परास्त किया। तभीसे यहां और कोई विप्लव होने न पाया।

२ उक्त प्रतापगढ जिलेका एक नगर और माणिकपुर परगनेका विचार सदर। यह अक्षा० २५° ४६' उ० तथा देशा० ८१° २६' पू०के मध्य गङ्गानदीके उत्तरी किनारे अवस्थित है। यहां मुगल-जमानेके बने हुए राजप्रासाद, अट्टालिका, मसजिद, पुष्पवाटिका और मकबरे आदि अभी भी भग्नावस्थामे पडे नजर आते हैं।

माणिकपुरमें वर्षमे दो बार धर्ममेला लगता है, एक आषाढ मासमें ज्वालादेवीके उद्देशसे और दूसरा कार्त्तिक मासमे गङ्गास्नानके समय। इस समय लाखों की भीड लग जाती है।

हिन्दूकीर्त्तिके मध्य राजा जयचन्द्रके भाई माणिक्य-चन्द्रकी गङ्गातीरवर्त्ती दुर्गवाटिका, बिलखानाथका मन्दिर, कुछ ध्वंसप्राय बौद्धस्तूप तथा गङ्गातीरवर्त्ती ज्वालामुखी आदिका आधुनिक शैव और शाक्तमन्दिर प्रधानतः उल्लेखनीय है। काडा दुर्गके पूर्व द्वारमें यशःपालका जो शिलाफलक है उसे पढ़नेसे मालूम होता है, कि यह स्थान प्राचीन कौशाम्बी राज्यके अन्तर्भुक्त था।

माणिकपुर—युक्तप्रदेशके बाँदा जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° ३' ३०" उ० तथा देशा० ८१° ८' २०" पू०के मध्य अवस्थित है। वहां इष्टइण्डिया रेलवेकी जब्बलपुर शाखाका एक स्टेशन है जिससे अभी यह बाँदा जिलेका वाणिज्यकेन्द्र समझा जाता है।

माणिका (सं० स्त्री०) माणक टाप् अकारस्येत्वं । अष्ट-दल परिमाण ।

मणिकैला—रावलपिण्डो जिलान्तर्गत एक बड़ा गाँव । यह अक्षा० ३३° २७' ३०'' उ० तथा देशा० ७२° १७' १५'' पू० के मध्य अवस्थित है। यहां कई एक बौद्धस्तूप, १४ मठ, १५ सङ्घाराम और पत्थरकी दीवार इधर उधर पड़ी नजर आती है। एक स्तूपसे ३२ ई०की रोमक मुद्रा और एक पेटी पाई गई है जिसमे राजा कनिष्कका नाम खुदा है। वह स्तूप राजा कनिष्कका है। १म ई०में क्षत्रपराज जिह-निस द्वारा स्थापित एक और भी स्तूप देखनेमें आता है। स्थानीय प्रवाद है, कि राजा माणिक यहांका सबसे बड़ा स्तूप बनवा गये हैं।

इस स्थानका प्राचीन नाम माणिकपुर है। बौद्ध प्रधानताके समय यह नगर महासमृद्ध था। प्राचीन गान्धार राज्यमें ऐसी प्राचीन बौद्धस्मृति और कहीं भी नजर नहीं आती। प्रवाद है, कि यह नगर सात राक्षसों के अधिकारमें था। शियालकोटके राजा शालिवाहनके पुत्र रसालुने राक्षसोंको मार कर यह स्थान अधिकार किया।

अभी कुछ मठोंके चिह्नके अलावा यहां प्राचीन नगर वा दुर्गका कोई भी निदर्शन नहीं मिलता। यहां माकि-दनपति अलेकसन्दरका प्यारा घोड़ा बुकेफला गाड़ा गया था, इससे यह स्थान ग्रीक इतिहासमें भी प्रसिद्ध है।

माणिक्य (सं० क्ली०) मणिप्रकारः मणि (स्थूलादिभ्यः प्रकारवचने कन् । पा ५।४।३) इति प्रशंसायां कन् ततो मणिक मेवेति मणिक (चतुर्वर्णादीनामुपसंख्यान । पा ५।४।३) इति वार्त्तिकत्वात् ष्यञ् । १ रक्तवर्ण रत्नविशेष, लाल रंगका एक रत्न जो लाल कहलाता है। पर्याय—शोणरत्न, रत्नराट्, रविरत्नक, शृंगारी, रङ्गमाणिक्य, तरुण, रत्न-नामक, रागयुक्, पद्मराग, रत्न, शोणोपल, सौगन्धिक, लौहितक, कुरुविन्द । यह मधुर, स्निग्ध, वातपित्तनाशक तथा रत्न प्रयोगमें बड़ा ही उपयोगी और श्रेष्ठ रसायन है। विशेष विवरण चुणी और पद्मराग शब्दमें देखो।

२ भावप्रकाशके मतसे एक प्रकारका केला। (त्रि०) ३ सर्वश्रेष्ठ, शिरोमणि ।

माणिक्य—राजपूतानेका एक शाकम्भरी राज ।

माणिक्य कदली (सं० पु०) कदलीविशेष, एक प्रकारका केला ।

माणिक्यचन्द्र (सं० पु०) तीरभुक्तिके एक राजा। ये धर्मचन्द्रके पुत्र तथा रामचन्द्रके पौत्र और अलङ्कार शेखर-के प्रणेता केशरके प्रतिपालक थे।

माणिक्यचन्द्र सूरि—एक जैन पण्डित सागरेन्दुके शिष्य। इन्होंने संकेतकाव्य प्रकाशकी टीका, नलायन या कुवेरपुराण और १२७६ सम्वत्में पार्श्वनाथ चरित्र प्रणयन किये।

माणिक्यदेव—उणादि सूत्र वृत्ति दशपादीके प्रणेता। भट्टो जीने इस टीकाका उल्लेख किया है।

माणिक्यमय (सं० त्रि०) पद्मराग मण्डित, लालसे मढ़ा हुआ।

माणिक्यमल्ल—एक हिन्दू राजा। किरातार्जुनीय टीका और श्रुतबोध टीकाके प्रणेता। मनोहर शर्म्मा इनके सभापण्डित थे।

माणिक्यवर्म्मन्—पञ्जावके एक हिन्दू राजा।

माणिक्यसुन्दर आचार्य—एक प्रसिद्ध जैनाचार्य्य। इन्होंने मलय सुन्दरी चरित्र, यशोधर-चरित्र, पृथ्वीचन्द्र-चरित्र आदि संस्कृत ग्रन्थ लिखे हैं। शीलरत्नसूरिने मेरुतुङ्ग-रचित मेघदूतकी जो टीका लिखी थी, १५११ सम्वत्में माणिक्यसुन्दरने ही उसका संशोधन किया था।

माणिक्य सूरि (सं० पु०) शकुन-सारोद्धारके रचयिता।

माणिक्या (सं० स्त्री०) माणिक्य-टाप् । ज्येष्ठी, छिपकली, पर्याय—मुषली, गृहगोधिका, गृहगोलिका, भित्तिका, पल्ली, कुड्यमत्स्य, गृहोलिका।

माणिचर (सं० पु०) रथाङ्गकी परिचालक शक्तिका एक भेद।

माणिपार (सं० पु०) मणिपारका गोत्रापत्य, एक ऋषि।

माणिपाल (सं० त्रि०) मणिपाल-सम्बन्धीय।

माणिबन्ध (सं० क्ली०) मणिबन्धे गिरोभवं मणिबन्ध-अण्। सैन्धव लवण, सेंधा नमक।

माणिभद्र (सं० पु०) मणिभद्रात्मज, एक यक्षराज।

माणिमन्थ (सं० क्ली०) मणिमन्थ गिरौभवं मणिमन्थ-अण्। सिन्धुज लवण, सेंधा नमक।

माणिरूप्यक (सं० त्रि०) मणिरूप्यसम्बन्धीय ।
माणिट (सं० पु०) वैदिक आचार्यभेद ।
माण्डकर्णि (सं० पु०) मण्डकर्णका गोत्रापत्य, मुनि-विशेष ।
माण्डप (सं० त्रि०) मण्डप-अण् । मण्डपसम्बन्धीय ।
माण्डरिक (सं० त्रि०) मण्डरका गोत्रापत्य ।
माण्डलिक (सं० पु०) मण्डलं रक्षति मण्डल ठक् । १ मण्डलरक्षक, वह जो किसी मण्डल या प्रान्तकी रक्षा अथवा शासन करता हो । इसे अंगरेजीमें Magistrate कहते हैं । २ वह छोटा राजा जो किसी सार्वभौम या चक्रवर्त्ती राजाके अधीन हो और उसे कर देता हो । ३ शासन कार्य ।
माण्डव (सं० क्ली०) सामभेद ।
माण्डवा—रेवाकान्थाके संखेड़-मेवासके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य ।
माण्डवा—वम्बई प्रदेशके कोलावा जिलेके अलीवाग उप-विभागान्तर्गत एक नगर ।
माण्डवी (सं० स्त्री०) १ राजा जनकके भाई कुशध्वज-की कन्या जो भरतको व्याही थी । (रामा० १।७३।२६) २ माण्डव्य नगरमें स्थित दाक्षायणी मूर्त्ति ।
माण्डवी—वम्बईप्रदेशके कच्छ राज्यका एक वन्दर । यह अक्षा० २२° १५′ ३०″ उ० तथा देशा० ६९° २१′ ४५″ पू० कच्छ उपसागरके किनारे अवस्थित है । इसका प्रधान वाणिज्यस्थान मस्कमाण्डवी है जिसका प्राचीन नाम रायपुर है ।
माण्डवी—१ वम्बई प्रदेशके सूरत जिलेका एक उप-विभाग । भू परिमाण २८० वर्गमील है ।

२ उक्त उपविभागका एक प्रधान नगर । यह अक्षा० २१° १८′ २०″ उ० तथा देशा० ७३° २२′ ३०″ पू०के बीच पड़ता है । ३ रेवानदी तीरस्थ एक प्राचीन तीर्थ । (रेवाखण्ड)
माण्डव्य (सं० पु०) १ वैदिक आचार्यभेद । ये माण्डवी-के पुत्र थे । २ मण्डुका गोत्रापत्य । ३ एक जातिका नाम । ४ एक प्राचीन नगरका नाम । ५ एक प्राचीन ऋषि । इनको वाल्यवस्थाके किये हुए अपराधके कारण यमराजने शूली चढ़वा दिया था । इस पर ऋषिने यम-राजको शाप दिया, कि तुम शूद्र हो जावो । फलस्वरूप यमराज दासीके गर्भसे पाण्डुके यहां उत्पन्न हुए थे ।
माण्डव्य—एक विख्यात ज्योतिर्विद । इन्होंने माण्डव्य-संहिता और कार्त्तिकविवाहपटल नामके दो ज्योतिग्रन्थ वनाये । रघुनन्दन, नारायण, हेमाद्रि आदि तथा वृह-त्संहितामें इनका नाम पाया जाता है ।
माण्डव्यापुर (सं० क्ली०) गोदावरी नदीके किनारे स्थित एक नगर । इसका वर्त्तमान नाम माण्डवी है ।
माण्डव्यायन (सं० पु०) माण्डव्यका गोत्रापत्य ।
माण्डव्येश्वर (सं० क्ली०) १ शिवलिङ्गभेद । २ एक तीर्थका नाम ।
माण्डू—मध्यभारतके धारराज्यके अन्तर्गत एक परित्यक्त नगर । माण्डोगढ देखो ।
माण्डूक (सं० पु०) प्राचीनकालके एक प्रकारके ब्राह्मण जो वैदिक मण्डूक शाखाके अन्तर्गत होते थे ।
माण्डूकायन (सं० पु०) माण्डूक देखो ।
माण्डूकायनि (सं० पु०) एक वैदिक आचार्यका नाम ।
माण्डूकि (सं० पु०) माण्डूकका गोत्रापत्य ।
माण्डूकीपुत्र (सं० पु०) वैदिक आचार्यभेद ।
माण्डूकेय (सं० पु०) मण्डूकका गोत्रापत्य, वैदिक आचार्य-भेद ।
माण्डूकेयीय (सं० त्रि०) १ माण्डूकेय सम्बन्धीय । (पु०) २ माण्डूकेयका मत ।
माण्डूक्य (सं० त्रि०) मण्डूक सम्बन्धी ।
माण्डूक्योपनिषद् (सं० स्त्री०) एक उपनिषदका नाम ।
माण्डोगढ—मध्यभारतके धार राज्यके अन्तर्गत एक नगर । मुसलमानोंकी अमलदारीमें यहां मालव राज्यकी प्राचीन राजधानी थी । यह नमदानदीके किनारे १९४४ फुट ऊंची एक अधित्यका पर वसा हुआ है । प्रत्नतत्त्व-विदोंका मत है, कि यह नगर ३१३ ई०में वसाया गया था । उस समय यह विशेष समृद्धिशाली और ३७ मील लंबे प्राकारसे घिरा था ।

यहांके ध्वंसावशेषमें जामि-मसजिद, मालवावासी होसङ्ग घोरीकी मर्मरकी वनी मसजिद और वाज़ वहादुर-का प्रासाद अफगान-कीर्त्तिका परिचय देता है । राजा होसङ्ग घोरीने १४वीं शताब्दीमें नगरको चारों ओर खाई

खोदवा कर इसे सुरक्षित किया था। १५२६ ई०में गुर्जर-पति बहादुर शाहने इस नगरको जीत कर अपने राज्यमें मिला लिया। १५७० ई०में यह मुगल बादशाह अकबर-के अधिकारमें आया।

मात (हिं० स्त्री०) माता देखो।

मात (अ० स्त्री०) १ पराजय, हार। (वि०) २ पराजित। ३ मदमस्त, मतवाला।

मातङ्ग (सं० पु०) मतङ्गस्येदं मतङ्ग स्यापत्य पुमान् वा मतङ्ग अण्। १ हस्ती, हाथी। २ अश्वत्थ वृक्ष, पीपल-का पेड़। ३ किरात जातिविशेष। ४ श्वपच, चांडाल। ५ संवर्त्तक मेघका एक नाम। ६ ज्योतिषके अनुसार चौवीस योग। ७ प्रत्यकबुद्धभेद। ८ एक नागका नाम। ९ अर्हत उपासकका एक भेद। १० एक ऋषिका नाम। ये शवरीके गुरु और मातङ्गी देवीके उपासक थे। ये मौन रहा करते थे, इसीलिये जिस पर्वत पर ये रहते थे उसका नाम ऋष्यमूक पड़ गया था।

मातङ्गकृष्णा (सं० स्त्री०) गजपिप्पली, गजपीपल।

मातङ्गज (सं० त्रि०) मातङ्गाजायते जन् ड। मातङ्गजात, हाथीका बच्चा।

मातङ्गदिवाकर (सं० पु०) सम्राट् हर्षवर्द्धनको सभाके एक कवि।

मातङ्गनक (सं० पु०) वृहदाकार कुम्भीरभेद, एक प्रकार-का बहुत बड़ा नाक जन्तु।

मातङ्गमकर (सं० पु०) मातङ्गाकारो मकरः। महामत्स्य-भेद, एक प्रकारकी बड़ी मछली।

मातङ्गसूत्र (सं० क्ली०) बौद्धसूत्रभेद।

मातङ्गवन—कामरूपका एक प्राचीन तीर्थ।

मातङ्गी (सं० स्त्री०) मतङ्गस्य मुनेरपत्यं स्त्री, मतङ्ग-अण्, ङीष्। दशमहाविद्याके अन्तर्गत नवम महाविद्या। तन्त्रसारमें इस विद्याके पूजन और मन्त्रादिके विषयमें इस प्रकार लिखा है—

"अथ वक्ष्ये महादेवीः मातङ्गीं सर्वसिद्धिदाम्।
अस्योपासनमात्रेण वाक्सिद्धिं लभते ध्रुवम्॥"
(तन्त्रसार)

सर्वसिद्धिदायिनी मातङ्गीकी उपासना करनेसे ही साधक अति शीघ्र वाक्सिद्धि लाभ करते हैं।

'ओं ह्रीं क्लीं हू मातङ्ग्यै फट् स्वाहा" यही मातङ्गी देवी-का मन्त्र है। इस मन्त्रके ऋषि दक्षिणामूर्त्ति, छन्दः विराट् तथा देवता मातङ्गी देवी हैं। यह देवी साधक-के सभी कार्य सिद्ध करती है। इनकी पूजापद्धति तंत्र-सारमें विस्तार-पूर्वक लिखी है। इस महाविद्याकी पूजा में यन्त्रको अङ्कित करना आवश्यक है। यथा—पहले षट्कोण अङ्कित करके बाहर अष्टदलपद्म बनावे। उस षट्कोणमें देवीका मूलमन्त्र लिख दें। इस प्रकार मन्त्र तैयार हो जाने पर जवापुष्प द्वारा देवीकी पूजा करनी होगी। मन्त्रस्थित पद्मके अष्टदलमें विविध उपहार द्वारा मनोभवा, रति, प्रीति, क्रिया, श्रद्धा, अनङ्गकुसुमा, अनङ्गमदना और अनङ्गलालसा इन आठ शक्तियोंका पूजन और जप करना उचित है। इसके बाद देवीका ध्यान और पूजन करना होता है। ध्यान यथा—

"श्यामाङ्गीं शशिशेखरां त्रिनयनां रत्नसिंहासनस्थिताम्।
वेदैर्बाहुदण्डैरसिखेटकपाशाङ्कुशधराम्॥"
(तन्त्रसार)

इस प्रकार देवीका ध्यान करके मनोहर गन्धपुष्पादि उपहार द्वारा पूजा करे और शक्कड़ मिला हुआ पायस नैवेद्य चढ़ावे।

मातङ्गी मन्त्रका यदि पुरश्चरण करना हो, तो पहले छः हज़ार जप करना होगा। जपके बाद दशांश संख्या-में घी और मधु मिले हुए ब्रह्मवृक्षके समिधसे होम करना होगा। होमके समय उक्त अष्टशक्तिको आहुति देनी होगी।

इस देवताकी पूजामें विशेषता यह है, कि पूजाके बाद साधक किसी चौराहे पर अथवा मरघटमें जा मछली और मांस प्रदान कर गुग्गुल द्वारा धूप दे। रातको यह धूप देना होगा। इस प्रकार देवीकी आराधना करनेसे साधकका मनोरथ पूरा होता और उनमें कविता बनाने-की शक्ति भी आ जाती है। इस प्रयोग द्वारा साधकका शत्रुनाश होता तथा उन्हें अग्निस्तम्भन और वाक्य-स्तम्भनकी शक्ति उत्पन्न होती है। यों कहिये, मातङ्गीदेवीकी पूजा करनेसे साधकका सभी अभीष्ट सिद्ध होता है।

दशमहाविद्या देखो।

मातदिल (अ० वि०) मध्यम प्रकृतिका, जो गुणके विचारसे न बहुत ठंढा हो और न बहुत गरम। इस शब्दका प्रयोग प्रायः ओषधियों या जल-वायु आदिके सम्बन्धमें होता है।

मातना (अ० क्रि०) मस्त होना, नशेमें हो जाना।

मातबर (अ० वि०) विश्वास करने योग्य, विश्वसनीय।

मातबरी (अ० स्त्री०) मातबर होनेका भाव, विश्वसनीयता।

मातम (अ० पु०) १ मृतकका शोक, वह रोना-पीटना आदि जो किसीके मरने पर होता है। २ किसी दुःखदायिनी घटनाके कारण उत्पन्न शोक।

मातमपुर्सी (फा० स्त्री०) जिसके यहां कोई मर गया हो उसके यहां जा कर उसे ढाढ़स देनेका काम, मृतकके सम्बन्धियोंको सान्त्वना देना।

मातमी (फा० वि०) मातम संबंधी, शोक सूचक।

मातमुख (हिं० वि०) मूर्ख।

मातर (सं० पु०) कृमि, छोटा कीड़ा।

मातरपितरौ (सं० पु०) माता च पिता च (मातरपितरावुदीचाम्। पा ६।३।३२) इत्यार ङा देशो मातृशब्दस्य निपात्यते। तात और जनयित्री, मां बाप। यह शब्द हमेशा द्विवचनान्त है।

मातरिपुरुष (सं० पु०) वह जो केवल घरमें अपनी माता आदिके सामने ही अपनी वीरता प्रगट करता हो, बाहर या औरोंके सामने बड़ा डरपोक हो।

मातरिश्व (सं० पु०) अग्निभेद, एक प्रकारकी अग्नि।

मातरिश्वन् (सं० पु०) मातरि अन्तरीक्षे श्वयति वर्द्धते इति-यद्वा मातरि जनन्या श्वयति वर्द्धते सप्त सप्तकत्वादिति श्वि (श्वन् उक्षन्निति। उण् १।१५८) इति कनिन् नाम्नि सप्तम्या अलुक्। १ वायु, अन्तरिक्षमें चलनेवाला पवन। २ अग्निभेद, एक प्रकारकी अग्नि।

मातला, रायमतला,—चौबीस परगना जिलेमें प्रवाहित एक नदी। विद्याधरी, करतोया और अठारवांका नामकी तीन नदी आपसमें मिल कर उक्त नामसे सुन्दरवन होती हुई बङ्गोपसागरमें जा गिरी हैं। इस नदीका मुहाना सागरद्वीपसे १५ कोस पूर्व तथा कलककत्तेसे १४ कोस दक्षिण पड़ता है। नदीका मुहाना विस्तृत तथा गहरा होनेसे नावें पण्यद्रव्य ले कर आसानीसे आ जा सकती हैं।

मातला या पोर्टकैनिंग नगर इसी नदीके किनारे बसा है। लार्ड कैनिंगने यहांसे यूरोपीय वाणिज्यकी सुविधा होगी जान कर यहां अपने नाम पर राजधानी बसाई थी, किन्तु अभी वे सब मकान छोड़ दिये गये हैं।

मातला—इसी नामकी नदीके किनारे बसा हुआ एक बड़ा गांव।

मातलि (सं० पु०) मतिं लातीति ला-क, पृषोदरादित्वात् साधुः वा मतलस्यापत्यं पुमान् मतल (अत इञ्। पा ४।१।९५) इति इञ्। इन्द्रके सारथी।

"मतस्त्रिलोकराजस्य मातलिर्नाम् सारथिः।
तस्यैकैव कुले कन्या रूपतो लोकविश्रुता॥"

(भारत ५।९७।११)

मातलिसूत (सं० पु०) इन्द्र।

मातली (सं० पु०) एक प्रकारके वैदिक देवता। ये यम और पितरोंके साथ उत्पन्न माने गए हैं।

मातलीय (सं० त्रि) मातली-सम्बन्धीय।

मातवचस (सं० पु०) मतवचाका गोत्रापत्य।

मातहत (अ० पु०) किसीकी अधीनतामें काम करनेवाला, अधीनस्थ कर्मचारी।

मातहती (अ० स्त्री०) मातहत या अधीनतामें होनेका काम या भाव।

माता (सं० स्त्री०) मान्यते पूज्यते इति मान पूजायां तन् ततष्टापि निपातनात् साधुः। जननी, जन्म देनेवाली। मातृ देखो।

"विश्वेश्वरीं विश्वमाता चण्डिका प्रणमाम्यहम्।"

(शिवरहस्य दुर्गोत्सव)

माता (अ० वि०) मदमस्त, मतवाला।

माताङ्गा (सं० स्त्री०) नागबला, गंगेरन।

मातादीन मिश्र—सरायमीराके रहनेवाले एक भाषाकवि। इन्होंने शाहनामाका भाषामें अनुवाद किया। अलावा इसके कविरत्नाकर नामक एक संग्रह ग्रन्थ भी इन्होंने बनाया।

मातादीन शुक्ल—एक सरयूपारी ब्राह्मण। ये अजगरा जिला प्रतापगढ़में रहते थे। राजा अजीत सिंह सोम

वंशी प्रतापगढ़वालेके यहां थे। इन्होंने छोटे छोटे कई ग्रन्थोंकी रचना की। ये शिवसिंहसरोजकारके समयमें जीवित थे।

मातान (मार्तण्ड)—काश्मीर राज्यमें एक भग्न मन्दिर। यह अक्षा० ३३° ४२´ उ० तथा देशा० ७५° २१´ पू० काश्मीर उपत्यकाके समीप ही एक शैलश्रृङ्गकी अधित्यका पर स्थापित है। प्रवाद है, कि इस मन्दिरके समीप पूर्वकालमें एक धनजनपूर्ण महासमृद्धिशाली नगरी थी। यही राजतरंगिणी वर्णित रामपुर स्वामीका मन्दिर है।

प्रत्नतत्त्वविद्गण इस मन्दिरके कारु कार्यकी निपुणता देख कर अवाक् हो गये हैं। डा० कैनिंहमके मतसे यह मन्दिर ३७० ई०में बनाया गया था। यह मार्त्तण्ड-मन्दिर सूर्यकी उपासनाका प्रधान स्थान है। हुगेल साहबका कहना है, कि उक्त मन्दिर पाण्डुवंशधरों की अक्षय-कीर्त्ति तथा खृष्ट-जन्मसे बहुत पहले बनाया गया है। कप्तान वेटिसके अनुमानानुसार ऐसी सुचारु कीर्त्ति सभ्य जगत्‌में और कहीं भी नजर नहीं आती।

मन्दिर काश्मीरी सौन्दर्यसे पूर्ण है। इस्लामाबाद नगर और काश्मीरकी पश्चिमी सीमामें आज भी इस मन्दिरका ध्वंसावशेष दृष्टिगोचर होता है। मन्दिरमेंकी सुचूड़ अट्टालिकाओंको छोड़ कर चारों ओर खंभोंसे घिरा हुआ २२० फुट लम्बा और १४२ फुट चौड़ा बरामदा है। आज भी उस प्राचीन कीर्त्तिके निदर्शनस्वरूप मरमरकी मूर्त्ति और कारुकार्य्ययुक्त पत्थरके खंभे देखनेमें आते हैं। मन्दिरके समीप एक विख्यात और पवित्र तालाब भी है।

मातापितरौ (सं० पु०) माता च पिता च (आनङ् ऋतो द्वन्द्वे। पा ६।३।२५) इत्यानङादेशः। जननी और जनक, माता-पिता। पर्याय—पितरौ, मातरपितरौ, तातजनयितारौ।

मातापुत्र (सं० पु०) मा और बेटा।

माताभाङ्गा—गङ्गानदीकी एक शाखा। यह जलङ्गी नदीसे ५ कोस दक्षिण कृष्णगञ्ज और कृष्णनगरके निकट होती हुई बह गई है।

भैरवनदीके मुहानेसे २० कोस दक्षिण महेशखण्ड नामक एक स्थान है। वहांसे माताभाङ्गाकी एक शाखा ४० मील तक हावली वा कुमारनद नामसे बहती हुई सुन्दरवनकी ओर चली गई है। इसकी दूसरी शाखाका नाम चूर्णी है जो चाकदह (चक्रदह) के निकट भागीरथी नदीमें गिरती है।

इस नदीका आकार छोटा होने पर भी इसकी धार बहुत तेज है। १८२० ई०में कालिकापुरा नदी इसमें मिल गई थी जिससे इसका कलेवर बहुत बढ़ गया था। वर्षाकालमें माताभाङ्गा नदीमें बड़ी बड़ी नावें और स्टीमर आते जाते हैं।

मातामह (सं० पु०) मातुः पिता (पितृव्यमातुलमातामहपितामहाः। पा ४।२।३६ इति डामह् च निपातिश्च। माताका पिता, नाना। मातामहको मृत्यु होने पर दौहित्रको तीन दिन तक अशौच रहता है।

"मातामहाना मरणे त्रिरात्र स्यादशौचकम्॥"

(शुद्धितत्त्व)

जहां पुत्र न हों वहां श्राद्धाधिकारके नियमानुसार दुहिता श्राद्धकी अधिकारिणी होती है और दौहित्र धनके अधिकारी। किन्तु जब तक दुहिता जीती रहेगी तब तक धन बंट नहीं सकता। अस्थायीभावसे दुहिता ही धनकी अधिकारिणी होती है। दुहिताके अभावमें दौहित्र श्राद्धके अधिकारी होते हैं।

मातामही (सं० स्त्री०) मातामहस्य पत्नीति (पुंयोगाद्‌ल्याया। पा ४।१।४८) इति ङीष्। मातामह-पत्नी, नानी। मातामही माताकी तरह पूजनीया हैं।

"मातामही मातृमाता मातृतुल्या च पूजिता।
प्रमातामहीति विख्याता प्रमातामह कामिनी॥
वृद्ध प्रमातामही ज्ञेया तत्पितुः कामिनी तथा॥"

(ब्रह्मवै०पु० ब्रह्मख० १० अ०)

मातामहीकी मृत्यु होने पर दौहित्रको पक्षिणी अशौच होता है। दो दिन और एक रातका नाम पक्षिणी है।

"मातुले श्वशुरे मित्रे गुरौ गुर्व्वङ्गनासु च।
अशौच पक्षिणीं रात्रिं मृता मातामही यदि॥"

(शुद्धितत्त्व)

यदि मातामही और दुहिता न हों तो दौहित्र ही श्राद्धके अधिकारी हैं। मातामहीके यौतुकको छोड़ कर

दूसरे धनमें पौत्र तकका अभाव होनेसे दौहित्रका अधिकार होता है अर्थात् पुत्र या पौत्रके नहीं रहने पर दौहित्र ही अधिकारी होगा। मातामहोका यौतुकधन पुत्रके न रहनेसे ही दौहित्रको मिलेगा।

"मातामह्या अयौतुकधने पौत्रपर्य्यन्ताभावे दौहित्रास्याधिकारः, यौतुकधने तु पुत्रपर्य्यन्ता भावे दौहित्र्याधिकारः, यथा—

'दौहित्रोऽपि ह्यमुत्रैन सन्तारयति पौत्रवत्' इति मनुवचने दौहित्रे पौत्रधर्म्मातिदेशात् पुत्रेण परिणीत दुहितुर्वाधाद् वाधकपुत्रेण वाध्यदुहितृपुत्रवाधस्य न्याय्यत्वात्" (दायतत्त्व)

मतामहीय (सं० त्रि०) मातामह-सम्बन्धीय।

मातामुडा—चटगांवके पार्वत्यप्रदेशमें प्रवाहित एक नदी। यह आराकान और चटगांवके मध्यवर्त्ती पर्वतमालाकी संगु नदीके उत्पत्तिस्थानसे निकली है और दोनों पहाडी तटोंको धोती हुई बङ्गोपसागरमें गिरती है।

माताली (सं० स्त्री०) मातुः आली पृषोदरादित्वात् ऋकार लोपः यद्वा मातायाः आली। माताकी सखी।

माति (सं० स्त्री०) १ परिमाण। २ प्रकृत अवगति, यथार्थ धारणा।

मातु (हिं० स्त्री०) माता, मा।

मातुल (सं० पु०) मातुर्भ्राता (पितृव्यमातुलेति। पा ४।२।३६) इति निपात्यते तत्र 'मातु र्डुलच्' इति वार्त्तिकात् डुलच्। १ मातृभ्राता, माताका भाई, मामा। मातुलके मरने पर भागिनेयको पक्षिणी (दो दिन एक रात) अशौच होता है।

"मातुले पक्षिणीं रात्रिं शिष्यर्त्विग्बान्धवेषु च।'

(शुद्धितत्त्व)

२ व्रीहिभेद, एक प्रकारका धान। ३ मदनवृक्ष। ४ धुस्तूर, धतूरा। ५ सर्पविशेष, एक प्रकारका साप। ६ कलाय, मटर।

मातुलक-(सं० पु०) मातुल-स्वार्थे कन्। १ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका गाछ। २ मातुल, मामा।

मातुलद्रुम (सं० पु०) १ धुस्तूर वृक्ष, धतूरेका गाछ। २ शाल्मली वृक्ष, सेमरका पेड।

मातुलपुत्रक (सं० पु०) मातुलस्य पुत्रकः। १ धुस्तूरफल, धतूरा। २ मातुलतनय, मामाका लडका।

मातुलपुष्प (सं० क्ली०) धुस्तूरपुष्प, धतूरेका फूल।

मातुला (सं० स्त्री०) मातुल टाप्, मातुलस्य स्त्री (इन्द्रवरुणेति। पा ४।१।४९) इति ङीष् आनुक च। १ मातुलपत्नी, मामी। मातुलानीको मृत्यु पर भागिनेयको पक्षिणी अशौच होता है।

"श्वशुरयोर्भगिन्याश्च मातुलान्याश्च मातुले।
पित्रोः स्वसरि तद्वच्च पक्षिणीं क्षपयेन्निशाम्॥"

(शुद्धितत्त्व)

२ कलाय, मटर। ३ भङ्ग, भांग। ४ शण, सन। ५ प्रियंगु वृक्ष, प्रियंगुका पेड।

मातुलानी (सं० स्त्री०) मातुला देखो।

मातुलाहि (सं० पु०) मा तुल्यतेऽसौ इति तुल मूलविभुजादित्वात् क, मातुलश्चासौ अहिश्च। सर्पविशेष, एक प्रकारका साप। पर्याय—मालुधान। इस सांपकी आकृति खटिया जैसी, देह बडी, पूंछ लम्बी और पैर चार होते हैं।

मातुलि (स० पु०) मातलि देखो।

मातुली (सं० पु०) मातुलस्य स्त्री मातुल (इन्द्रवरुणभवेति। पा ४।१।४९) इति ङीष्। १ मातुलपत्नी, मामी। २ भङ्ग, भांग। ३ शण, सन।

मातुलुङ्ग (सं० पु०) मातुलुङ्ग-संज्ञायां स्वार्थे वा कन्। छोलङ्गवृक्ष, विजौरा नीबू। पर्याय—फलपूर, वीजपूर रुचक मातुलुङ्ग, श्वफल, फलपूरक, लुंगुष, पूरक, पूर, वीजपूर्ण, अम्बुकेश्वर। गुण—हृद्य, अम्ल, लघु, अग्निदीपक, आध्मान, गुल्म, प्लीहा, हृद्रोग और उदावर्त्तनाशक। यह विबन्ध, हिचकी, शूल और सर्दीमें बडा फायदा पहुंचाता है। इसके छिलकेका गुण—तिक्त, दुर्ज्जर, कफपित्तनाशक। मांसगुण— स्वादु, शीतल, गुरु और वायुपित्तनाशक। (राजव०)

मातुलुङ्गशिफा (सं० स्त्री०) मातुलुङ्ग, विजौरा नीबूकी जड।

मातुलुङ्गा (सं० स्त्री०) मातुलुङ्ग-टाप्। मधुकुक्कुटी।

मातुलुङ्गिका (सं० स्त्री०) मातुलुङ्ग संज्ञायां कन् टाप्, अकारस्येत्वं। वनवीजपूर, विजौरा नीबू।

मातुलेय (सं० पु०) मातुल-पुत्र, ममेरा भाई।

मातुलेयी (सं० स्त्री०) ममेरी बहन।

मातुल्य (सं० क्ली०) मातुलालय, मामाका घर।

मातुष्वसृ (सं० स्त्री०) मातुः स्वसा। माताकी भगिनी, मौसी। मातृष्वसृ देखो।

मातृ (सं० स्त्री०) मान्यते पूज्यते या सा मान पूजायां नाम्नोति मातृ इति भरतः, यद्वा (नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपोतृभ्रातृ-जामातृमातृपितृदुहितृ। उण् २।९६ इति तृच् निपातितश्च स्वस्रादित्वात् टाप् निषेधः। १ जननी, माता। पर्याय— जनयित्री, प्रसू, सवित्री, जनि, जनी, जनित्री, अक्का, अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका, मातृका। (जटाधर)

माता सोलह प्रकारकी है। यथा—

"स्तनदात्री गर्भधात्री भक्ष्यदात्री गुरुप्रिया।
अभीष्टदेवपत्नी च पितुः पत्नी च कन्यका॥
सगर्भजा या भगिनी पुत्रपत्नी प्रियाप्रसूः।
मातुर्माता पितुर्माता सोदरस्य प्रिया तथा॥
मातुः पितुश्च भगिनी मातुलानी तथैव च।
जनाना वेदविहिता मातरः षोडश स्मृताः॥"
(ब्रह्मवैवर्त्तपु० गणपतिख० १५ अ०)

स्तन पिलानेवाली, गर्भधारण करनेवाली, भोजन देनेवाली, गुरुपत्नी, अभीष्ट देवपत्नी, पिताकी पत्नी (विमाता), पितृकन्या (सौतेली बहिन), सहोदरा बहिन, पुत्रकी पत्नी, प्रियाप्रसू (सास), मातृमाता (नानी), पितृमाता (दादी), भौजाई, माता और पिताकी वहन (मासी और फोसी) तथा मातुलानी (मामी) यही सोलह मातृपदवाच्य हैं।

पितासे बढ़ कर माता पूजनीया हैं। माता गर्भधारण करतीं और पोसती हैं, इसीसे वे सर्वश्रेष्ठ हैं।

"जनको जन्मदातृत्वात् पालनाच्च पिता स्मृतः।
गरीयान् जन्मदातुश्च योऽन्नदाता पिता मुने॥
विनाह्यन्नस्वरं देहो न नित्यः पितृरुद्भवः॥
तयोः शतगुणो माता पूज्या मान्या च वन्दिता।
गर्भधारणपोषाभ्यां सा च ताभ्यां गरीयसी॥"
(ब्रह्मवैवर्त्तपु० गणपतिख० ४० अ०)

जिन्हें मातृसम्बोधन किया जाता है, वे भी माताके समान पूजनीया हैं। उनके साथ असद्व्यवहार करनेसे कालसूत्र नामक नरक होता है।

"मातरित्येव शब्देन याश्च सम्भाषते नरः।
सा मातृतुल्या सत्येन धर्मसाक्षी सतामपि॥
तया सहित भक्षारे कालसूत्रं प्रयाति सः।
तत्र घोरे वसत्येव यावद्वै ब्रह्मणो वयः॥
प्रायश्चित्तं पापिनश्च तस्य नैव श्रुतौ श्रुतम्॥"
(ब्रह्मवैवर्त्तपु० ब्रह्मख० १० अ०)

आत्ममाता, गुरुपत्नी, ब्राह्मणी, राजपत्नी, गाभी, धात्री और पृथिवी इन सातोंको माता कहते हैं। माता महागुरु हैं।

२ शिवका परिचारविशेष। देवताओंने जब असुरों-का संहार किया, उस समय ब्रह्मादिके पसीनेसे निम्न-लिखित मातृगणकी उत्पत्ति हुई। अष्टमातृगण यथा—

"ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री वाराही वैष्णवी तथा।
कौमारी चैव चामुण्डा चर्चिकेत्यष्ट मातरः॥"

सप्तमातृका यथा—

"ब्राह्मी च वैष्णवी चैन्द्री रौद्री वाराहिकी तथा।
कौवेरी चैव कौमारी मातरः सप्त कीर्त्तिताः॥"
(अमरटीका भरत)

ब्राह्मी, माहेश्वरी, ऐन्द्री, वाराही, वैष्णवी, कौमारी, चामुण्डा और चर्चिका ये अष्टमाता हैं। ब्राह्मी, वैष्णवी, ऐन्द्री, रौद्री, वाराहिका, कौवेरी और कौमारी ये सात सप्तमातृका हैं तथा ब्रह्माणी, वैष्णवी, रौद्री, वाराही, नर-सिंहिका, कौमारी, माहेन्द्री, चामुण्डा और चण्डिका ये नौ भी मातृका कहलाती हैं। ब्राह्मी ब्रह्माके पसीनेसे उत्पन्न हुई हैं। इसी प्रकार और और देवताओंके पसीनेसे उक्त मातृकाओंकी उत्पत्ति हुई है। दुर्गापूजाके समय इन सब मातृकाओंकी पूजा की जाती है।

गौरी आदि षोडश देवताओंको षोड़श मातृका कहते हैं। आभ्युदयिक श्राद्ध और षष्ठी पूजामें इस षोड़श मातृकाकी पूजा करनी होती है। षोड़शमातृका यथा—

"गौरीपद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः॥
शान्तिः पुष्टिर्धृतिः स्तुष्टिरात्मदेवतया सह।
आदौ विनायकः पूज्योऽन्ते च कुलदेवता॥"
(श्राद्धतत्त्वधृत बह्वृच गृह्य परिशिष्ट)

गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, शान्ति, पुष्टि, धृति, तुष्टि, आत्म-देवता और कुलदेवता यही षोड़शमातृका हैं। इस षोड़श मातृका पूजामें पहले विनायक और पीछे कुलदेवताकी पूजा करनी होती है।

वैष्णवपूज्य-मातृकागण—

"अथ मातृगणाः पूज्यास्तत्र ह्येताः प्रपूजयेत्।
सदा भागवती पौर्णमासी पद्मान्तरङ्गिका॥
गङ्गा कलिन्द तनया गोपी वृन्दावती तथा।
गायत्री तुलसी वाणी पृथिवी गौश्च वैष्णवी॥
श्रीयशोदा देवहूति दैवकी रोहिणी मुखाः।
श्रीसती द्रौपदी कुन्ती ह्यपरे ये महर्षयः॥
रुक्मिण्याद्यास्तथा चाष्ट महिष्योयाश्च ता अपि॥"

(पद्मपुराण उत्तरख० ७८ अ०)

भागवती पौर्णमासी, पद्मा, अन्तरङ्गिका, गङ्गा, कलिंद तनया, गोपी, वृन्दावती, गायत्री, तुलसी, पृथिवी, गौ, वैष्णवी, श्रीयशोदा, देवहूती, रोहिणी, श्रीसती, द्रौपदी, कुन्ती और रुक्मिणी आदि अष्टमहिषी ये सभी वैष्णवी-मातृगण हैं।

२ गाभी, गाय। ३ भूमि, पृथ्वी। ४ विभूति, ऐश्वर्य। ५ लक्ष्मी। ६ रेवती। ७ आखुकर्णी, मूसाकानी। ८ इन्द्रवारुणी। ९ महाश्रावणी। १० जटामांसी। (त्रि०) ११ परिमाणकर्त्ता, नापनेवाला। १२ निर्माणकर्त्ता, बनानेवाला।

मातृक (सं० त्रि०) १ माता सम्बन्धी। (पु०) २ मातुल, मामा।

मातृकच्छिद (सं० पु०, मातुः क शिरश्छिनत्तीति छिद-क, पित्रादेशात् मातृशिरश्छेदनादस्य तथात्वं। परशुराम।

मातृका (स० स्त्री०) मातेव मातृ (इवे प्रतिकृतौ। पा ५।३।९६) इति कन्-टाप्। १ धातृका, दूध पिलानेवाली दाई। मातैव मातृ-स्वार्थे कन्। २ माता, जननी। ३ देवी-भेद।

मातृकागणकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें वराहपुराणमें इस प्रकार लिखा है—पूर्व समयमें रुद्रदेवने अपने त्रिशूलसे अन्धकासुरका शरीर भिद डाला। किन्तु इससे उसका जीवन नष्ट नहीं हुआ, वल्कि शरीरसे जो लेहू निकला उससे असंख्य अंधकासुरकी सृष्टि हुई। रुद्रदेव इस आश्चर्य घटनाको देख कर अपने त्रिशूलकी नोक पर अन्धकासुरको उठा रणाङ्गनमें नाच करने लगे। अन्यान्य जो सब अन्धकासुर समरक्षेत्रमें विचरण करते थे, ब्रह्मा और विष्णु उनका संहार करने लगे गये। अजस्र दैत्य जमीन पर ढेर होने लगे, पर इससे भी असुरवंश समूल निर्वंश नहीं हुआ। एकके मरने पर दूसरा अंधकासुर तय्यार हो जाता था। इस पर रुद्रको बहुत क्रोध हुआ। क्रोधवशतः उनके मुखमण्डलसे एक वह्निशिखा निकली। यह वह्निशिखा एक देवीरूपमें परिणत हुई। योगेश्वरी उनका नाम रखा गया। यही योगेश्वरी प्रथम और प्रधान मातृका कहलाती हैं। धीरे धीरे ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, कार्त्तिकेय, यम और वाराहरूपी विष्णुने एक एक मातृका मूर्त्तिकी सृष्टि की। इस प्रकार कुल मिला कर आठ मातृकाकी उत्पत्ति हुई।

शरीरमें जो काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य, पैशुन्य और असूया नामक आठ पदार्थ हैं, वे अष्टमातृका कहलाते हैं। इनमें काम योगेश्वरी, क्रोध माहेश्वरी, लोभ वैष्णवी, मद ब्राह्मणी, मोह कौमारी, मात्सर्य ऐन्द्राणी, पशुन्य दण्डधारिणी और असूया वाराही नामसे प्रसिद्ध है। उक्त आठ मातृका जब उत्पन्न हुई तब उन्होंकी एकत्रित शक्तिसे अवशिष्ट असुरोंका विनाश हुआ। यह मातृकागण तभीसे देव मनुष्य दोनों ही लोकमें पूजी जाती हैं।

बेल खा कर जो इन मातृकाओंकी पूजा करते हैं उनके सभी अभीष्ट सिद्ध होते हैं।

मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है, कि दैत्यपति शुम्भके सेनापतियोंके साथ जब चण्डिका देवीका युद्ध हुआ, तब ब्रह्मा, महेश्वर, कार्त्तिकेय, विष्णु और इन्द्र इनकी अपनी अपनी शक्ति अपने अपने वाहन, भूषण और आयुधके साथ असुरका विनाश करनेके लिये समरक्षेत्रमें कूद पड़ी। ब्रह्माकी शक्ति ब्रह्माणी, महेश्वरकी शक्ति माहेश्वरी, कार्त्तिकेयकी शक्ति कौमारी, विष्णुशक्ति वाराही और इन्द्रशक्ति ऐन्द्राणी कहलाई थी। यह समवेत शक्तिपुञ्ज भी मातृका नामसे प्रसिद्ध है।

४ वर्णमालाकी बारहखड़ी। ५ कारण। ६ ग्रीवा-देशस्थ आठ शिराभेद, ढोंठ परकी आठ विशिष्ट नसें। ७ स्वर। ८ उपमाता, सौतेली मा।

मातृकाकुन्द (सं० पु०) वैद्यकके अनुसार गुदाका एक फोड़ा या व्रण जो बहुत छोटे बच्चोंको होता है।

मातृकान्यास (सं० पु०) मन्त्रप्रयोगरूप न्यासभेद। कालिकापुराणमें इसका विषय यों लिखा है—ब्रह्माणी आदि देवी मातृका कहलाती हैं। चन्द्रविन्दुयुक्त समस्त स्वर और व्यञ्जन उनके मन्त्र हैं। ये सभी प्रकारके अभीष्टको सिद्ध करती हैं। जो इनका अनुष्ठान करते वे देवत्वको प्राप्त होते हैं। मातृकाओंके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री और देवता सरस्वती हैं। शरीर शुद्धि आदि सभी प्रकारके काम और अर्थके साधनमें तथा मन्त्रोंकी न्यूनता पूर्ण करनेमें इसका प्रयोग होता है। अकारके साथ ककारादि जो प्रथम वर्ग है उसके अन्तर्गत सभी अक्षरोंको चन्द्रविन्दुके साथ जोड़ कर आकारका उच्चारण करे। पीछे 'अंगुष्ठाभ्यां नमः' कह कर दोनों अंगूठेमें मातृकान्यास करे। अनन्तर दूसरे दूसरे वर्णोंमें स्वरके साथ अच्छी तरह चन्द्रविन्दु लगा कर न्यास करना होगा। अर्थात् दोनों तर्जनीमें प्रथम ह्रस्व इकार, उसके वाद चवर्ग और अन्तमें दीर्घ ईकारमें चन्द्रविन्दु लगा कर 'तर्जनीभ्यां स्वाहा' ऐसा कह पहलेके जैसा न्यास करे। दोनों मध्यमामें ह्रस्व उकार, तवर्ग और दीर्घ ऊकारका यथाक्रम चन्द्रविन्दुके साथ उच्चारण कर 'अनामिकाभ्यां हुं फट्' उच्चारण करते हुए न्यास करे। दोनों कनिष्ठामें ओकार, पवर्ग और औकारको उसी प्रकार विन्दुयुक्त कर 'कनिष्ठाभ्यां वौषट्' ऐसा कह कार्यसिद्धिके लिये विन्यास करे। करतल और उसकी पीठमें अं, य से क्ष तक वर्ण, अन्तमें अः का पहलेके जैसा उच्चारण कर 'अस्त्राय फट्'-से न्यास करना होगा। अङ्गन्यासके शेष भागमें 'वषट्' इस शब्दका प्रयोग करे। हृदयादि षड़ङ्गमें पहलेके जैसा उक्त छः छः अक्षरों द्वारा न्यास करना होगा। मुख, चिवुक, गण्ड, दोनों कान, ललाट, अङ्ग और कक्ष इन सब अङ्गोंमें तथा रोमकूप, ब्रह्मरन्ध्र, अपानदेश, दोनों जङ्घा, नख, पाद और करतलमें भी पहलेके जैसा न्यास करे। जो मनुष्य सभी प्रकारके यज्ञकार्यमें तथा पूजामें इस प्रकार मातृकावर्गका न्यास करते हैं, वे पवित्र और उनके सभी काम सिद्ध होते हैं। इससे वढ़ कर श्रेष्ठ मन्त्र और कहीं भी नहीं मिलता। यह मन्त्र कामद, पवित्र, चतुर्वर्गप्रद और शुभ है। जो व्यक्ति हृदयमें वाग्देवता और मस्तकमें सभी अक्षरोंका ध्यान करके क्रमानुसार मातृका मन्त्रोंको तीन वार उच्चारण करते हुए जलपान करते हैं, वे वाग्मी, पण्डित, बुद्धिमान् और कवि होते हैं। पण्डित मनुष्य पहले चन्द्रविन्दुयुक्त सभी स्वरोंका उच्चारण और पीछे केवल व्यञ्जनोंका पाठ करे। आकारादिसे ले कर क्षकार तकके वर्णोंका इस प्रकार न्यास करके हाथमें जल ले। पीछे सभी अक्षरोंका पाठ करे तथा उस जलको अभिमन्त्रित कर पहले पूरक मन्त्र द्वारा पीछे रेचक द्वारा वह जल पी जावे। इस प्रकार एक बार वा तीन वार पूरक, कुम्भक और रेचक द्वारा जलपान करनेसे दृढ़ाङ्ग, पण्डित और पुत्रपौत्रयुक्त होता है। मातृकामन्त्र द्वारा अभिमन्त्रित जलको तीन शाम पीनेसे कवित्वशक्ति बढ़ती तथा सभी प्रकारकी कामनाएं सिद्ध होती हैं। जो पूरक, कुम्भक और रेचक द्वारा मातृकामन्त्रसे अभिमन्त्रित जलको हमेशा पीते हैं, वे सभी प्रकारके काम, पुत्र, पौत्र और समृद्धिलाभ करते तथा इस लोकमें महाकवि, वलवान् और सत्यविक्रम होते हैं। यहां तक, कि अन्तमें उन्हें मोक्षकी प्राप्ति होती है। मातृकामन्त्रकी साधना करनेसे राजा, राजपुत्र वा राजभार्या वशीभूत होती हैं। न्यासक्रममें जिस प्रकार वर्णक्रम वतलाया है, उसी प्रकार अक्षरक्रमसे जलपान करना चाहिये। देवता, ऋषि वा राक्षसोंके जो सव मन्त्र हैं वही सव मन्त्र मातृकान्यासमें दिये गये हैं। यह सर्वमन्त्रमय, सर्वदेवमय और चतुर्वर्गप्रदायक है।

(कालिकापुराण ७३ अ०)

मातृकान्यासका प्रयोग—"अस्य मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मा-ऋषिर्गायत्रीच्छन्दो मातृकासरस्वती देवता हलो वीजानि, स्वराः शक्तयो मातृकान्यासे विनियोगः।" यह मन्त्र पढ़ कर मस्तक पर ओं ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखमें गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदयमें ओं मातृकासरस्वत्यै देवतायै नमः। गुह्यमें ओं व्यञ्जनेभ्यो वीजेभ्यो नमः। दोनों पैरमें ओं स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः। अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकायां हुम्। ओं पं फं वं भं मं औं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं नं

यं अः करतल पृष्ठाभ्यां फट्। इस प्रकार करन्यास कर-के पीछे अं कं ५ आं हृदयाय नमः, इत्यादि प्रकारसे अङ्गन्यास करे।

"अ आ मध्ये कवर्गन्तु इ ई मध्ये च वर्गकम्।
उ ऊं मध्ये टवर्गन्तु ए ऐं मध्ये तवर्गकम्॥
ओं औं मध्ये पवर्गन्तु विन्दुयुक्त न्यसेत् प्रिये।
अनुस्वारविसर्गान्तर्यशवर्गौ सलक्षकौ।
हृदयञ्च शिरोदेवि ! शिखा कवचक तथा।
नेत्रमन्त्र न्यसेत् ङेऽन्त नमः क्रमेणतु॥
वषट् हु वौषडन्तञ्च फडन्त योजयेत् प्रिये॥"

(ज्ञानार्णव)

अन्तमातृकान्यास—विन्दुयुक्त अकारादि षोडश स्वर, कण्ठमूलस्थित षोडशदल कमलमें, विन्दुयुक्त ककारादि द्वादशवर्ण सविन्दु द्वादशदल हृत्पद्ममें, सविन्दु डकारादि दश वर्ण, नाभिस्थित दशदल पद्ममें, वकारादि षडवर्णको विन्दु-संयुक्त करके लिङ्गमूलमें षड्दल कमलमें, विन्दु-युक्त वकारादि चार वर्ण, मूलाधारमें चतुर्दल पद्ममें न्यास करे। ह क्ष इन दोनोंमें विन्दु लगा कर भ्रू मध्यस्थ द्विदल पद्ममें न्यास करना होगा।

वाह्यमातृकान्यास—

"पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्तमुखदोःपन्मध्यः वक्षःस्थला,
भास्वन्मौलिनिवद्धचन्द्रसकलामापीनतुङ्गस्तनीम्।
मुद्रामक्षगुणां सुधाढ्यकलसं विद्याञ्च हस्ताम्बुजै-
र्बिभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये॥"

इस प्रकार ध्यान करके न्यास करे। गौतमीय तन्त्रमें लिखा है,—ललाटमें अं नमः, मुख वृत्तमें आ नमः, दोनों चक्षुमे इं ईं, दोनों कानमें उं ऊं, दोनों नाकमें ऋं ॠं, दोनों गण्डमें लृं ॡं, ओष्ठमे एं, अधरमें ऐं, ऊद्ध्वदन्तमें ओं, अधोदन्तमें औं, ब्रह्मरन्ध्रमे अं, मुखमें अः, दक्षिण वाहुमूलमें कं, कूर्परमे खं, मणिवन्धमें गं, अंगुलिके मूलमे घं, अंगुलिके अग्रभागमें ङं, इसी प्रकार चकारादि पञ्च वर्णको वामवाहु, वाहुमूल, वाहुसन्धि और सन्धिके अग्रभागमें, ट आदि पञ्चवर्णको दक्षिणपादमूलमें, पादसन्धि और पादाग्रमें पञ्चवर्णको वामपाद, पादमूल, पादसन्धि और वामपादाग्रमें, दक्षिण पार्श्वमें पं, वामपार्श्वमें फं, पृष्ठमें वं, नाभिमें भं, जठरमें मं, हृदयमें यं, दक्षिण वाहु-मूलमें रं, स्कन्धमे लं, वाहुमूलमें वं, हृदादि दक्षिणहस्तमें शं, हृदादि वामहस्तमें षं, हृदादि दक्षिणपादमें सं, हृदादि वामपादमें हं, हृदादि उदरमें लं, हृदादि मुखमे क्षं। इस प्रकार सब वर्णोंके अन्तमें नमः शब्दका उच्चारण करके न्यास करे।

न्यासमें अंगुलिनियम—

"ललाटेऽनामिका मध्ये विन्यसेन्मुखपङ्कजे।
तर्जनी मध्यमाऽनामा वृद्धाऽनामे च नेत्रयोः॥
अगुष्ठ कर्णयोन्यस्य कनिष्ठाङ्गुष्ठकौ नसोः।
मध्यास्तिस्त्रोगण्डयोश्च मध्यमाञ्चोष्ठयोर्न्यसेत्॥
अनामा दन्तयोर्न्यस्य मध्यमामुत्तमाङ्गके।
मुखेऽनामा मध्यमाञ्च हस्तपादे च पार्श्वयोः॥
कनिष्ठाऽनामिकामध्यतास्तु पृष्ठे च विन्यसेत्।
ताः साङ्गुष्ठा नाभिदेशे सर्वाः कुक्षौ च विन्यसेत्॥
हृदये च तलं सर्व असयोश्च ककुत्स्थले।
हृत्पूर्व्वं हस्तपत्कुक्षिमुखेषु तलमेव च॥"

अनामिका और मध्यमाको एकत्र कर ललाट, तर्जनी मध्यमा और अनामिकाको मिला कर मुख, वृद्धा और अनामाको मिला कर दोनों आँख, अंगुष्ठसे दोनों कान, कनिष्ठा और अंगुष्ठको मिला कर दोनों नाक, मध्यकी तीन उंगलियोंसे दोनों कपोल, मध्यमासे दोनों ओष्ठ, अनामिकासे दांतोंकी दोनों पंक्ति, मध्यमासे मस्तक, अनामिका और मध्यमाको एकत्र कर मुख, कनिष्ठा, अनामिका और मध्याको एकत्र कर हस्त, पाद, पार्श्व, तथा मध्यमाको सम्बद्ध कर नाभिदेश और कुक्षिस्पर्श करे। हृदय, दोनों अंस, ककुद्, हृदयके पूर्वभागसे ले कर हस्त, पाद, कुक्षि, मुख, इन्हें हस्ततल द्वारा स्पर्श करके न्यास करना होगा।

विशुद्धेश्वरतन्त्रमे लिखा है—वाक्सिद्धिके लिये वाग्भवाद्या, श्रीवृद्धिके लिये रमाद्या, सर्वसिद्धिके लिये हल्लेखाद्या, लोक-वशीकरणके लिये कामाद्या, इस प्रकार श्रीकण्ठादि न्यास करनेसे सभी मन्त्र प्रसन्न होते हैं।

(तन्त्रसार)

मातृकामय (सं० त्रि०) सोलह मातृकाका बीजमन्त्रयुक्त।

मातृकायन्त्र (सं० क्ली०) तान्त्रिकोंके अनुसार एक यन्त्र।

मातृकावह (सं० पु०) पटकीट, एक प्रकारकी कीड़ा।

मातृकेशट (सं० पु०) मातृके कुले शटति पुत्ररूपेण गच्छतीति शट्-अच्। मातुल, मामा।

मातृगण (सं० पु०) शिवके परिवार। मातृ शब्द देखो।

मातृगन्धिनी (सं० स्त्री०) १ मातृनामधारिणी। २ विमाता, सौतेली माता। ३ पिताकी उपपत्नी, पिताकी रखेली।

मातृगर्भ (सं० पु०) मातुर्गर्भः। माताका गर्भ।

मातृगामिन् (सं० त्रि०) मातृ-गम्-णिनि। माताके साथ सम्भोग करनेवाला।

मातृगुप्त—संस्कृतके एक कवि। इन्होंने उज्जयिनीके राजा हर्षदेवकी कृपासे काश्मीरका राज्य पाया था।

"नाना दिगन्तराख्यातं गुणवत्सुलभं नृपम्।
तं कविर्मातृगुप्ताख्यः सभास्थानस्थ मासदत्॥"

(राजतरङ्गिणी ३।१२९)

काश्मीरके इतिहास राजतरङ्गिणीमें इनकी कथा इस प्रकार लिखी है।

एक दिन राजा हर्षदेवकी सभामें मातृगुप्त नामक कवि आये। मातृगुप्त अनेक राजाओंकी सभामें गये थे। तमामसे निराश हो कर आखिर हर्षदेवकी प्रशंसा सुन इनकी सभामें आये। राजाके मान आदरसे मातृगुप्त बड़े प्रसन्न हुए और तभीसे उन्हींकी सभामें रहने लगे।

राजा भी अपनी सभाको ऐसे महात्मासे अलंकृत देख बड़े प्रसन्न हुए। उधर मातृगुप्त भी जिस प्रकार स्वामीकी सेवा करनी चाहिये उसी प्रकार सर्वतोभावसे राजाकी सेवामें रहने लगे। इस प्रकार मातृगुप्तके तीन वर्ष बीत गये।

एक दिन राजा कहीं बाहर घूमने निकले थे। उन्होंने मातृगुप्तकी दुरवस्था देखी। इससे राजाको बड़ा ही कष्ट हुआ और पश्चात्ताप कर कहने लगे, 'हाय! मैंने इस गुणी पर धनके उन्मादसे बड़ा ही अत्याचार किया। मैं अभी तक इसके लिये कुछ भी प्रबन्ध न कर सका। मैं क्या इसे अमृत दे दूंगा या चिन्तामणि जो इसकी इतनी कड़ाईसे परीक्षा ले रहा हूं। धिक्कार है मुझको! इस प्रकार चिन्ता कर राजाने उन्हें सम्मानित करना चाहा। किन्तु किस वस्तुसे उनका सम्मान किया जाय, वह बहुत विचारने पर भी राजा निश्चित नहीं कर सके।

एक दिन शीतकालकी रातमें एक पहर रात बाकी थी। उसी समय सहसा राजाकी निद्रा उचट गई। घरके दीपकोंका प्रकाश क्षीण हो रहा था। राजाने अपने नौकरोंको बाहरसे बुलाया, किन्तु कोई भी नहीं आया। कारण वे सबके सब सो रहे थे। उसी समय बाहरसे उत्तर आया, 'महाराज! मैं मातृगुप्त हूं, यदि आज्ञा हो तो भीतर जाऊं।' राजाने उनको अन्दर बुला लिया। राजाकी आज्ञासे उन्होंने दीपकको प्रज्वलित किया। मातृगुप्त वहांका काम करके बाहर निकले आ रहे थे, उसी समय राजाने उनसे ठहरनेको कहा। मातृगुप्त ठहर गये। राजाने पूछा, 'कितनी रात है?' मातृगुप्तने उत्तर दिया, एक पहर। राजाने फिर पूछा, 'रातको तुम्हें निद्रा क्यों नहीं आती?' उत्तरमें मातृगुप्तने कहा, 'महाराज! मैं इस कठिन शीतकालमें अग्निसेवनके द्वारा समय बिता रहा हूं। मेरा शरीर शिथिल है और थरथरा रहा है। भूखके मारे बोली नहीं निकलती। मैं चिन्ताके समुद्रमें डूब रहा हूं। इसी कारण निद्रा अपमानित दयिताके समान मुझको छोड़ कर कहीं चली गई और सत्पात्रप्रदत्त राज्यके समान रात्रिका भी अन्त नहीं होता।' यह सुन कर राजाने उन्हें धन्यवाद दे विदा किया। राजा सोचने लगे, कि इनको क्या दूं। उसी समय उन्हें स्मरण हुआ, कि काश्मीर राज्यका सिंहासन इस समय सूना पड़ा है। यद्यपि काश्मीरराज्य हमारे अनेक आश्रित राजा हमसे मांगते हैं, तथापि यह राज्य इन्हींको देना उत्तम है। यह सोच कर राजाने एक दूत काश्मीरके मन्त्रियोंके पास पत्र ले कर भेजा। पत्रमें लिखा था, 'मातृगुप्त नामका एक मनुष्य हमारा शासनपत्र ले कर आवेगा। तुम लोग उसे ही अपना राजा मानना।' दूतको भेज कर राजाने उसी रातको मातृगुप्तके नाम काश्मीरके लिये शासन-पत्र भी लिखवाया। प्रातःकाल होने पर राजाने मातृगुप्तको शासनपत्र दे कर काश्मीर जानेकी आज्ञा दी। वे बेचारे करते ही क्या उसी टूटी फूटी हालतमें काश्मीर जानेके लिये तैयार हुए।

मातृगुप्त यथासमय काश्मीर पहुंचे। मन्त्रियोंने इनका बड़ा आदर-सत्कार किया। अनन्तर सबोंने मिल कर इन्हें राजसिंहासन पर बिठाया। मातृगुप्तने ४ वर्ष ६ महीने १ दिन तक काश्मीरका राज्य किया था। इसी समय मालवाधिपतिका देहान्त हुआ। काश्मीर राज्यके प्रकृत अधिकारी प्रवरसेनने इनको राज्य न छोड़नेके लिये बहुत कहा, किन्तु इन्होंने एक भी न मानी। कारण पूछने पर इन्होंने कहा था, 'हमको जिसने राज्य दिया था, अब उसके न रहने पर राज्यभोग करना हमारे लिये नितान्त अनुचित है।' मातृगुप्त काशीमें जा कर संन्यासी हो गये। (राजतरङ्गिणी)

औचित्यविचारचर्चामें इनकी बनाई श्लोकावली उद्धृत हुई है। वासुदेव-कृत कर्पूरमञ्जरीमें इन्हें अलङ्कार शास्त्रके रचयिता बतलाया है। अलावा इसके इन्होंने भरतकृत नाट्यशास्त्रकी एक टीका लिखी है।

मातृग्राम (सं० पु०) १ राजतरङ्गिणीके अनुसार एक नगर। २ मातृरूपा स्त्रीजाति मात्र, माताकी जैसी स्त्रीजातिमात्र।

मातृघात (सं० पु०) मातृहत्याकारी, माताकी हत्या करनेवाला।

मातृघातिन् (सं० त्रि०) मातरं हन्ति हन णिनि, हस्य घ। १ मातृहन्ता, माताको मारनेवाला।

मातृघाती (सं० त्रि०) मातृघातिन् देखो।

मातृघातुक (सं० पु०) १ मातृहन्ता, वह जो माताको मारता हो। २ इन्द्र।

मातृघ्न (सं० त्रि०) मातरं हन्ति हन् क। मातृघातक, माताको हनन करनेवाला।

मातृचक्र (सं० क्ली०) १ ज्योतिषके अनुसार एक प्रकार का चक्र। २ मातृगणसमूह, देवमाताओंका एक साथ रहना।

मातृचेट—ग्वालियर गोपगिरिके सूर्य्यमन्दिरके प्रतिष्ठाता। इन्होंने राजा मिहिरकुलके समय पन्द्रह वर्षमें उक्त मन्दिर निर्माण किया।

मातृतम (सं० त्रि०) मातृतुल्य, माताके सदृश।

मातृतस् (सं० अव्य०) मातृ-पञ्चम्यर्थे तसिल। मातासे।

मातृतीर्थ (सं० क्ली०) कनिष्ठ अंगुलका निम्नस्थान, हथेलीमें सबसे छोटी उंगलीके नीचेका स्थान।

मातृतीर्थ—एक प्राचीन तीर्थस्थान। यह श्रीरंगपत्तनके सन्निकट अवस्थित है।

मातृदत्त—मन्त्रमालाटीका नामक हिरण्यकेशीसूत्रवृत्ति-के प्रणेता। कमलाकरने इनका मत उद्धृत किया है।

मातृदेवी (सं० स्त्री०) शक्तिमूर्त्तिभेद, तान्त्रिकोंकी एक देवीका नाम।

मातृनन्दन (सं० पु०) मातॄणां नन्दनः पुत्र आनन्द-वर्द्धनो वा। १ कार्त्तिकेय। २ महाकरञ्जवृक्ष, महाकरंज का पेड़। ३ गुच्छकरंजका पेड़।

मातृनन्दा (सं० स्त्री०) शाक्तोंकी एक देवीका नाम।

मातृनन्दिन् (सं० पु०) मातृनन्दन देखो।

मातृनामन् (सं० क्ली०) १ अथर्ववेदके एक सूक्तका नाम। २ उक्त सूक्तके एक ऋषि और देवताका नाम।

मातृनिन्दक (सं० त्रि०) मातुर्निन्दकः। १ जननीका निन्दाकारी, माताकी निन्दा करनेवाला। २ प्रतुद जाति-का एक पक्षी।

मातृपालित (सं० पु०) दानवभेद।

मातृपूजन (सं० क्ली०) मातुः पूजनम्। मातृपूजा, माताकी पूजा।

मातृपूजा (सं० स्त्री०) विवाहकी एक रीति। इसमें विवाहके दिनसे एक वा दो दिन पूर्व छोटे छोटे मीठे पूए बना कर पितरोंका पूजन किया जाता है। इसीको 'मातृ पूजा' या 'मातृका-पूजा' कहते हैं।

मातृबन्धु (सं० पु०) मातुर्बन्धुः। मातृबान्धव, माताके सम्बन्धका कोई आत्मीय। बन्धु तीन प्रकारका है,—आत्मबन्धु, पितृबन्धु और मातृबन्धु।

"मातुः पितृष्वसुःपुत्रा मातुर्मातृष्वसुः सुताः।
मातुर्मातुलपुत्राश्च विज्ञेया मातृबान्धवाः॥" (मिताक्षरा)

मातृबान्धव (सं० पु०) मातुर्बान्धवः। मातृसम्पर्कीय आत्मीय, माताके सम्बन्धका कोई आत्मीय।

मातृभाषा (सं० स्त्री०) वह भाषा जो बालक माताकी गोदमें रहते हुए बोलना सीखता है, माता पिताके बोलनेकी और सबसे पहले सीखी जानेवाली भाषा।

मातृभेदतन्त्र (सं० क्ली०) तन्त्रभेद।

मातृभोगीन (सं० त्रि०) मातुर्भोगः मातृभोगः तस्मै हितं

(आत्मन् विश्वजनभोगोत्तरपदात् ख । पा ५।१।९) इति ख । मातृभोगके निमित्त हितकर ।

मातृमण्डल (सं० क्ली०) मातृणां मण्डलम् । दोनों आखोंके बीचका स्थान । जिनकी मृत्यु निकट आ जाती है वे मातृमण्डली देख नहीं सकते ।

"अरुन्धतीं ध्रुवञ्चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आसन्नमृत्युर्नोपश्येच्चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥
अरुन्धती भवेज्जिह्वा ध्रुवो नाशाग्रमुच्यते ।
विष्णोः पदानि भ्रूमध्ये नेत्रयोर्मातृमण्डलम् ॥"

(काशीख० ४२ अ०)

मातृमत् (सं० त्रि०) माता विद्यतेऽस्य-मतुप् । मातृयुक्त ।

मातृमाता (हिं० स्त्री०) मातृमातृ देखो ।

मातृमातृ (सं० स्त्री०) मातुर्माता । १ माताकी माता, नानी । २ दुर्गा ।

मातृमुख (सं० पु०) जड़ ।

मातृमृष्ट (सं० त्रि०) जननी-कर्त्तृक विशुद्धोकृत, जो मातासे विशुद्ध किया गया हो ।

मातृयज्ञ (सं० पु०) मातृगणके उद्देश्यसे अनुष्ठेय यागभेद, एक प्रकारका यज्ञ जो मातृकाओंके उद्देश्यसे किया जाता है ।

मातृरिष्ट (सं० क्ली०) ज्योतिषोक्त दोषविशेष । कुलग्नमे पुत्र और कन्याके जन्म लेनेसे मातृरिष्ट होता है। इसमें माताके रोग वा प्राणनाशकी सम्भावना रहती है ।

दिनमें प्रसव होनेसे शुक्रग्रह बालककी माता और रात्रिमे प्रसव होनेसे चन्द्रमा माता होते है। यदि दिनमे बालकका जन्म हो और शुक्रग्रह पापग्रहके साथ मिला रहे, अथवा पापग्रहसे देखा जाता हो, तो निश्चय ही बालककी माताकी मृत्यु होती है। यदि शुक्र पापग्रहके साथ रहता हो तथा वह पापग्रह यदि अपने घरमे रहे, फिर भी उस पर किसी शुभग्रहकी दृष्टि न पड़ती हो, तो जातबालककी माताको प्राणनाश होगा, ऐसा जानना चाहिये । रातको बालकके जन्मके समय यदि चन्द्र पाप ग्रहके घरमे रहे तथा अन्यान्य पापग्रहोसे संस्पृष्ट हो, तो निश्चय ही माताकी मृत्यु होगी। यदि पापग्रह सर्वदा क्षीणचन्द्रको निरीक्षण करते हों और उन पर शुभग्रहकी दृष्टि न रहे, तो बालककी माताका प्राणनाश होता है। जातबालकके जन्मलग्नके आठवें अथवा छठे स्थानमें चंद्र, और सातवें स्थानमें मङ्गल यदि अन्यान्य पापग्रहोंसे मिला रहे, तो माताका जीवननाश अवश्यम्भावी है। चन्द्रके आठवें स्थानमे यदि मङ्गल रहे और मङ्गलके शत्रुकी यदि मङ्गल पर दृष्टि पड़ती हो तथा वह स्थान यदि जातबालकके जन्मलग्नका छठा स्थान हो, तो वह मातृहीन होती है तथा उसका पिता परदेशमे था, यह भी जानना होगा । जन्मलग्नके चौथे स्थानमें यदि बलवान् पापग्रह रहे, तो वह पापग्रह निश्चय ही बालककी माताका प्राण लेता है। इसमें विशेषता यह है, कि चन्द्रराशिसे चौथे स्थानमें बलवान् पापग्रहके रहने पर भी माताकी मृत्यु होगी। बालकके जन्म-कालमे चन्द्रमा यदि शनि और मङ्गलके बीचमें रहे अथवा मङ्गल और सूर्यके साथ मिलता हो, तो भी बालककी माताकी मृत्यु होती है। जन्मलग्नमे अथवा उसके चौथे, पांचवें, छठे, सातवें, नवे, दशवें, बारहवें स्थानमें पापग्रह रहनेसे माताकी मृत्यु निश्चय है। उस पापग्रहके साथ चन्द्रमा यदि मिल कर रहते हो, तो सात दिनके मध्य माताकी मृत्यु होगी, ऐसा जानना चाहिये । जातबालकके लग्नके सातवें स्थानमें यदि सूर्य रहे तथा वह स्थान सूर्यका उच्च स्थान यानी मेषराशि हो अथवा नीचस्थान तुलाराशिका कोई भी एक स्थान हो, तो जातबालककी माता बहुत जल्द मरेगी ऐसा जानना चाहिये ।

मातृवत् (सं० अव्य०) मातरीव इवार्थे वति । माताके तुल्य, माताके समान । परस्त्रीको माताके समान जानना चाहिए ।

"मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ट्रवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः ॥"

(चाणक्य)

मातृवत्सल (सं० त्रि०) मातरि वत्सलः । १ माताके प्रति भक्ति करनेवाला । (पु०) २ कार्त्तिकेय ।

मातृवध (सं० पु०) मातुर्वधः । माताको मारना ।

मातृवर्त्तिन् (सं० त्रि०) माताका आज्ञाकारी ।

मातृवहिणी (सं० स्त्री०) बगुला ।

मातृशर्मण—एक प्राचीन कवि।

मातृशासित (सं० त्रि०) मात्रा शासितः। स्नेहाधिक्यात् केवलं मात्रैव शासितः। मूर्ख।

मातृषेण—एक प्राचीन कवि।

मातृष्वसा (सं० स्त्री०) मातृष्वसृ देखो।

मातृष्वसृ (सं० त्रि०) मातुः स्वसा (मातृपितृभ्यां स्वसा। पा ८।३।८४) इति षत्वं। मातृभगिनी, मौसी। मौसी माताके समान पूजनीया है।

"मातृष्वसा मातुलानी पितृव्यपत्नी पितृष्वसा।
श्वश्रूः पूर्वजपत्नी च मातृतुल्याः प्रकीर्त्तिताः॥"
(दायभाग)

मातृष्वसेय (सं० पु०) मातृष्वसुरपत्यं पुमान् मातृष्वसृ (मातृष्वसुश्च। पा ४।१।१३४) इत्यत्र 'छण् प्रत्ययो ढकिलोपश्च' इति काशिकोक्तेः ढक्। मातृष्वसृपुत्र, मौसेरा भाई। पर्याय—मातृष्वस्रीय।

मातृष्वसेयी (सं० स्त्री०) मातृभगिनी कन्या, मौसेरी वहन।

मातृष्वस्रीय (सं० पु०) मातृष्वसुरपत्यं पुमान् मातृष्वसृ-छण् (पा ४।१।१३४) मातृभगिनीपुत्र, मौसेरा भाई।

मातृष्वस्रेया (सं० स्त्री०) मौसेरी वहन।

मातृसपत्नी (सं० स्त्री०) समानः पतिर्यस्याः सपत्नी, मातुःसपत्नी। सौतेली माता, विमाता।

मातृसिंही (सं० स्त्री०) वासकवृक्ष, अडूसका पेड़।

मातृसूनु—सुबोधपञ्जिका नामक वेदान्त ग्रन्थके रचयिता।

मातृस्थान—प्रभासके अन्तर्गत एक तीर्थ। यहां विनायककी मूर्त्ति प्रतिष्ठित है।

मातृहन् (सं० पु०) मातरं हन्ति (बहुल छन्दसि। पा ४।२।८८) इति हन् क्विप्। मातृहन्ता, वह जो माताका हनन करे।

मात्र (सं० अव्य०) मीयते इति मा त्रन। १ कार्त्स्न्य, सफलता। २ केवल, सिर्फ। ३ अवधारण, निश्चय।

मात्रराज (अनङ्गहर्ष)—तापसवत्सराज नामक नाटकके प्रणेता।

मात्रा (सं० स्त्री०) मीयतेऽनया मा (हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्। उण् ४।१६८) इति त्रन् टाप्। १ परिच्छद, हाथी, घोड़ा आदि। २ अल्प, थोड़ा। ३ परिमाण, मिकदार। ४ कर्णभूषा, कानमें पहननेका एक आभूषण। ५ वित्त, सम्पत्ति। ६ अक्षरका एक अवयव, वारहखड़ी लिखते समय वह स्वरसूचक रेखा जो अक्षरके ऊपर या आगे पीछे लगाई जाती है। ७ कालविशेषसे उतना काल जितना एक ह्रस्व अक्षरका उच्चारण करनेमें लगता है।

"कालेन यावता पाणिः पतति जानुमण्डले।
सा मात्रा कविभिः प्रोक्ता ह्रस्व दीर्घप्लुता मता॥"
(प्राचीना०)

जितने समयमें हाथ एक वार जानुमण्डल पर गिरता है, उतने समयका नाम मात्रा है।

तन्त्रसारमें लिखा है—

"वामजानुनि तद्धस्तभ्रमणं यावता भवेत्।
कालेन मात्रा सा ज्ञेया मुनिभिर्वेद पारगैः॥"
(तन्त्रसार)

वाएं घुटने पर वायां हाथ रखनेमें जितना समय लगता है, उतने समयको एक मात्रा कहते हैं। शब्दका उच्चारण करनेमें मात्राका ज्ञान रहना वहुत जरूरी है। मात्रा द्वारा ही ह्रस्व, दीर्घ और प्लुतका उच्चारण समझा जाता है।

"एकमात्रो भवेद्ध्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते।
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्द्धमात्रकम्॥"
(व्याकरण)

ह्रस्वस्वर एकमात्र है, जैसे—अ, इ, उ इत्यादि। दीर्घस्वर द्विमात्र, प्लुत त्रिमात्र और व्यञ्जन अर्द्धमात्र है। ह्रस्व एक स्वर है अर्थात् 'अ' यह शब्द उच्चारण करनेमें जो समय लगता है उसे मात्रापरिमितकाल कहते हैं। साफ साफ उच्चारण विना मात्राज्ञानके नहीं हो सकता। सङ्गीतमें भी मात्राका ज्ञान रहना बहुत आवश्यक है, नहीं तो सङ्गीतका ताल मालूम नहीं होता।

८ छन्दका ह्रस्व-दीर्घादि प्रभेद। ९ इन्द्रिय। इसके द्वारा सभी विषयोंका अनुभव होता है, इसीसे इसको मात्रा कहते हैं। १० इन्द्रियवृत्ति। ११ अवयव, अंग। १२ शक्ति। १३ रूप। १४ किसी चीजका कोई निश्चित छोटा भाग। १५ एकवार खाने योग्य औषध।

मात्राच्छन्द (सं० क्ली०) मात्रावृत्त, छन्दोभेद। छन्द दो प्रकार है, वृत्त और जाति। जहां अक्षरकी संख्याके अनुसार होता है वहां वृत्त और जहां मात्रा द्वारा होता है वहां उसे जाति अर्थात् मात्रावृत्त वा मात्राच्छन्द कहते हैं। इस वृत्तमें अक्षरको संख्याके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। मात्राके अनुसार ही यह निरूपित होता है। जैसे आर्याजाति, यह मात्रावृत्त है। जिसके प्रथम पाद में १२ मात्रा, द्वितीय पादमें १८ मात्रा, तृतीय पादमें १२ और चतुर्थ पादमें १५ मात्रा रहती है उसे आर्याजाति कहते हैं। यही मात्राच्छन्द है।

विशेष विवरण छन्दस् शब्दमे देखो।

मात्रापताका (सं० स्त्री०) छन्दोग्रन्थके अनुसार मात्रावृत्तका लघु-गुरु ज्ञानानुगुण पताकाकार चक्र।

मात्राभस्त्रा (सं० स्त्री०) पोट्ली, थैली।

मात्रामर्कटी (सं० स्त्री०) छन्दोग्रन्थके अनुसार मात्रावृत्तस्थित लघुगुरु-ज्ञानानुगुण जालचक्रभेद।

मात्रामेरु (सं० पु०) छन्दोग्रन्थके अनुसार मात्रावृत्तस्थ लघु-गुरु ज्ञानानुगुण मेरुचक्र।

मात्रावत् (सं० त्रि०) मात्रा विद्यतेऽस्य मतुप् मस्य व। मात्रायुक्त।

मात्रावस्ति (सं० पु०) वैद्यकोक्त अनुवासनभेद, वैद्यककी एक क्रिया जिसमें रोगीको दुरुस्त करानेके लिये उसकी गुदामें पिचकारी आदिसे तेल आदि मिला हुआ कोई तरल पदार्थ भरते हैं।

मात्रावृत्त (सं० क्ली०) मात्रया कृत वृत्तं। आर्य्यादि छन्दोभेद, मात्राछन्द।

मात्राशित (सं० क्ली०) परिमित भोजन, परिमित आहार।

मात्राशिन् (सं० त्रि०) मात्रा-अश-णिनि। परिमित-भोजी, अन्दाजसे खानेवाला।

मात्रासमक (सं० क्ली०) एक छन्द। इसके प्रत्येक चरणमें १६ मात्राएं और अंतमें गुरु होता है।

मात्रास्पर्श (सं० पु०) भौतिक पदार्थोंका एक होना।

मात्रास्वरचक्र—तान्त्रिकोंके अनुसार एक चक्र।

मात्रिक (सं० त्रि०) १ मात्रा-सम्बन्धीय, मात्राका। २ मात्राओंके हिसाबवाला, जिसमें मात्राओंकी गणना की जाय।

मात्सर (सं० त्रि०) १ मत्सरयुक्त, स्वार्थी। २ हिंसुक, दूसरेकी चलती पर जलनेवाला।

मात्सरिक (सं० त्रि०) मत्सरयुक्त, स्वार्थी।

मात्सर्य (सं० क्ली०) मत्सर-ष्यञ्। मत्सरका भाव, किसीका सुख वा उसकी सम्पदा न देख सकनेका स्वभाव, दूसरको अच्छी दशामें देख कर जलना या उससे डाह करना।

"मागाश्चिराय्यैकतरः प्रमाद वसन्नसाम्यघशिवेऽपि देशे।
मात्सर्य्यरागोपहतात्मना हि स्खलन्ति साधुष्वपि मानसानि॥"

(भारवि० ३ अ०)

मात्स्य (सं० त्रि०) १ मत्स्यतुल्य, मछलीका। (पु०) २ मत्स्यदेशका राजा। ३ एक ऋषिका नाम। ४ पुराणभेद।

मात्स्यक (सं० त्रि०) मत्स्यसम्बन्धीय, मछलीका।

मत्स्यगन्ध (सं० पु०) एक प्रकारकी जाति।

मात्स्यिक (सं० पु०) मत्स्यं हन्ति (पक्षिमत्स्यमृगान् हन्ति। पा ४।४।३५) इति ढक्। जालिक, मछली मारनेवाला या मछुआ।

मात्स्येय (स ० पु०) मत्स्य देशमें रहनेवाली एक जाति।

माथ (सं० पु०) मान्थ्यते पोड्यते जनः अस्मिन् माथ-घञ्, ज्वलादित्वात् णोवा, निपातनात् नुम-भावः। १ पन्था, रास्ता। २ मन्थन, मथना।

माथव (सं० पु०) मथुका गोत्रापत्य।

माथा (हिं० पु०) १ सिरका ऊपरी भाग, मस्तक। २ वह चित्र आदि जिसमें मुख और मस्तककी आकृति बनी हो। ३ किसी पदार्थका अगला या ऊपरी भाग। ४ यात्रा, सफर। ५ एक प्रकारका रेशमी कपड़ा।

माथितिक (सं० त्रि०) मथित भावयुक्त।

माथुर (सं० पु०) मथुरायाः आगतः अण्। १ मथुरासे आगत, वह जो मथुरासे आया हो। २ मथुराजात, मथुराका निवासी।

"ततः स दृष्टो वहुलक्षे शस्ता पुरुषोऽब्रवीत्।
मुग्धे पवनसेनाख्यो वणिक् पुत्रोऽसि माथुरः॥"

(कथासरित्सा० ३६।७३)

३ मथुरासे कहा हुआ, मथुरानाथ कृत वृत्ति। ४ ब्राह्मणोंकी एक जाति, चौबे। प्रवाद है, कि इस जातिकी उत्पत्ति वराह अवतारके पसीनेसे हुई है।

"सर्व्वे द्विजा कान्यकुब्जा माथुर मागध विना।
वराहस्य तु धर्म्मे या माथुरो जायते भुवि॥"

मथुरा देखो।

५ कायस्थोंकी एक जाति। ६ वैश्योंकी जाति। ७ मथुराप्रान्त। (त्रि०) ८ मथुरा सम्बन्धी, मथुराका।

माथुरक (सं० पु०) १ मथुरादेशसम्बन्धीय, मथुराका। २ मथुराका अधिवासी, वह जो मथुरामें रहता हो।

माथुरदेश्य (सं० त्रि०) मथुरादेशभव, मथुराका।

माथुरी—मथुरानाथकृत तत्त्वचिन्तामणिदीधिति नामक न्यायग्रन्थकी प्रसिद्ध टीका।

माथे (हिं० क्रि०) १ माथे पर, सिर पर। २ भरोसे, सहारे पर।

माद (सं० पु०) माद्यते इति मद घञ्, नुमभावः। १ दर्प, घमंड, शेखी। २ हर्ष, प्रसन्नता। ३ मत्तता, मस्ती।

माद (हिं० पु०) छोटा रस्सा।

मादक (सं० पु०) माद्यति वर्षागमे हृष्यतीति मद ण्वुल। १ दात्यूह पक्षी, पपीहा। २ मादक द्रव्य, नशा उत्पन्न करनेवाला पदार्थ।

"इन्द्रियाणि महाभाग मादकानि सुनिश्चितम्।
अदारस्य दुरन्तानि पञ्चैव मनसा सह॥"

(देवीभाग० १।२४।६४)

३ अहिफेण, अफीम। ४ भङ्गा, भांग। ५ हरिणभेद, एक प्रकारका हिरन। ६ प्राचीनकालका एक प्रकारका अस्त्र। इसके विषयमें यह प्रसिद्ध है, कि उसके प्रयोगसे शत्रुमें प्रमाद उत्पन्न हो जाता है। (त्रि०) ७ नशा उत्पन्न करनेवाला, नशोला।

मादकता (सं० स्त्री०) मादक होनेका भाव, नशीलापन।

मादन (सं० पु०) मादयति विरहिणः मद-णिच्-ल्युट्। १ लवङ्ग, लौंग। मादयति चित्तविकार मुत्पादयतीति मद-णिच्-ल्यु। २ कामदेव। ३ मदन वृक्ष। ४ धुस्तूर वृक्ष, धतूरेका गाछ। (त्रि०) ५ हर्षकारयिता, प्रसन्न करनेवाला।

मादनी (सं० स्त्री०) मादन स्त्रियां ङीप्। १ माकन्दी, आँवला। २ विजया, भांग।

मादनीय (सं० त्रि०) मत्तताजनक, मादकता उत्पन्न करनेवाला।

मादयित्नु (सं० त्रि०) अत्यन्त मदकर, बहुत नशा लानेवाला।

मादयिष्णु (सं० त्रि०) हर्षोत्पादक, आनन्द बढ़ानेवाला।

मादर (फा० स्त्री०) मां, माता।

मादरज़ाद (फा० वि०) १ जन्मका, पैदाइशी। २ एक मासे उत्पन्न, सहोदर भाई। ३ जैसा मांके पेटसे निकला था वैसा हो, बिलकुल नंगा।

मादा (फा० स्त्री०) स्त्री जातिका प्राणी, नरका उलटा। इस शब्दका व्यवहार बहुधा जीव जंतुओंके लिये ही होता है।

मादागास्कार—भारत महासागरका एक बड़ा द्वीप। यह अफ्रिका महादेशके मोजाम्बिक उपकूलसे २४० मील पूर्वमें अक्षा० १२ से २५° ४५' उ० तथा देशा० ४३° से ५१° पू०के मध्य अवस्थित है। उत्तर-दक्षिणमें यह केप एम्बासे केप सेण्ट-मेरी तक ६६० मील लम्बा और केप इष्टसे केप केलिक्स तक ५०० मील चौड़ा है। कहीं कहीं इसकी चौड़ाई २०० मील भी देखी जाती है।

इसका पूर्व-उपकूल पूर्वोत्तरमुखी एक सीधमें चला गया है। केवल एण्टोङ्गिल उपसागर उसके बीचमें पड़ता है। उत्तर पश्चिम उपकूलमें अम्बासे सेण्ट आनद्रू अन्तरीपके मध्य टिम्पाइकी, नरिन्दा, मज़ोमा और बेम्बा-कोटा तथा दक्षिण पूर्वमें क्रकटद्वीपसे वाराकोटा द्वीपके मध्य मार्ड रर और सेण्ट अगस्टिन उपसागर है। फिर इसके निकट ही कमरो कोयेरिम्बा, जोयन-डिनोभा, यूरोपा और फरासियोंके अधिकृत सेण्टमेरी आदि कितने छोटे छोटे द्वीप हैं।

इस द्वीपके उत्तर दक्षिणमें एक गिरिश्रेणी देखी जाती है। समुद्रपृष्ठसे उसकी चोटियां १०से १२ हजार फीट ऊंची होगी। इस पर्वतसे बहुत-सी नदियां निकल कर समुद्रमें गिरी हैं। केपसेण्ट आनद्रू और केपपसादा-के बीचका स्थान असंख्य नदियोंसे वेष्टित एक जलाभूमि है। यह जलाभूमि समुद्रके उपकूलसे प्रायः ८० मील तक फैली हुई हैं।

सेण्ट अगष्टाइन उपसागरकी ओङ्गलहे नदीके मुहाने पर सारिडद्वीप है। यहां यूरोपीय जहाज लंगर डाल कर रहते हैं। सौदागर अपने साथ लाये हुए द्रव्योंके

बदलेमें वहांसे मवेशी जहाज पर लाद कर ले जाते हैं। इस नदीमें सैकडो कुम्भीर नजर आते हैं। वेम्बाटुका उपसागर और वेम्बाटुका अन्तरीपके उत्तर वेम्बाटुका नगर अवस्थित है। यह नगर और उसके पासका माजुन्दा वंदर यहांका वाणिज्यकेन्द्र है। फरासी-सौदागर यहांसे हिजडा खरीद कर डफिण दुर्गमें ले जाते है। मास्कटवासी अरवगण पहले यहांसे नौकरको खरीद कर ले जाते थे। यहांके 'ओभा' अधिवासिगण विशेष वलशाली, परिश्रमी और अन्यान्य द्वीपवासीसे वढ़ कर सुसभ्य हैं। इसके समीप खानान्-अरिभ नामक जो ग्राम है वह समुद्र-पृष्ठसे ४००० फुट ऊंचो एक अधित्यका भूमि पर वसा हुआ है। राजा रदामके शासनकालमे यहा यूरोपोय ढंग पर वहुत-सो इमारतें वनाई गई थीं।

पूर्व-उपकूलमें टामाटेभ वंदर है। फरासियोंने १८११ ई०में इस नगरको तहस नहस कर डाला। इसके उत्तर फाउल पैण्ट है जहां वाणिज्यके जहाजें लंगर डाल कर रहते हैं।

एण्टोङ्गिल उपसागरमे वहुतसे छोटे छोटे द्वीप दिखाई देते हैं। उन सव द्वीपोंमे विदेशीय जहाजोंके रहने लायक उपयुक्त स्थान नहो है। उपकूलस्थ एक नदीके मुहाने पर फरासियोंका अधिकृत चेंसुलवंदर और उसको वगलमें डाफिनदुर्ग है। १७४० और १७४३ ई०मे सेण्ट-मेरी पर फरासियोंने कब्जा किया, पर १७६१ ई०मे उसे फिर छोड दिया।

सारा मादागास्कर २२ छोटे छोटे राज्योमे विभक्त है। प्रत्येक राज्यमें पृथक् पृथक् राजा है। १६वीं शताब्दीके आरम्भमे ओमाराज रदामाने कुछ राज्योंको जोत कर अपनी राज्यसीमा वढ़ाई थी। उनके यत्नसे यहां ईसाई मिसनरियोंने प्रतिष्ठालाभ किया था। इसो समय स्कूल आदि खोल कर जनतामे विद्याप्रचार-की व्यवस्था की गई। १८२८ ई०मे रदामाके गुप्तभाव-से मारे जाने पर राजा रणवलमञ्जोक सिंहासन पर वैठे। उन्होंने १८३५ ई०के अनुशासन-वलसे ईसाधर्मका प्रचार रोक दिया और मूर्त्तिपूजाकी प्रथा जारी कर दी। किन्तु इस प्रकार राजनिषेध रहने पर भो फरासियोंने धर्म-प्रचार करना छोड़ा नहीं।

यहांकी प्रचलित भाषाके साथ मलयद्वीपकी भाषा-का मेल देख कर भाषातत्त्वविद्गण अनुमान करते हैं, कि वहुत पहले मलयवासी डकैतोंकी नावें तूफानसे यहा पर लाई गई होंगी अथवा नाव पर चढ कर वे लोग इस देशमें आते होंगे। भूतत्त्वको आलोचनासे मालूम होता है, कि एक समय मलयद्वीपके साथ मादागास्कर-का संयोग था। कालप्रवाह तथा समुद्र-जलके प्रखर स्रोतसे दोनोंके मध्यवर्त्ती द्वीप जलमग्न हो गये हैं। कहते हैं, कि रावणका लङ्काराज्य यहां तक फैला हुआ था।

यहां दोदो नामक एक प्रकारका वड़ा पक्षो देखा जाता था। भिन्नदेशीय शिकारप्रिय व्यक्तियोंके उपद्रव तथा देशवासियोंकी ताडनासे उनका अभी नामनिशान भी न रह गया है।

मादायन (सं० पु०) मदका गोत्रापत्य।

मादारिपुर (मान्दारिपुर)—१ वङ्गालके फरिदपुर जिलेका एक उपविभाग। भूपरिमाण ६७६ वर्गमोल है। मदारी-पुर, गोपालगञ्ज, कोतवाली, पालङ्ग और शिवचरखाना इसके अन्तर्गत है।

२ उक्त जिलेका एक नगर। यह आड़ियाल खाँ और कुमारनदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। यहां स्थानीय अनाज, पटसन, चीनो, चावल आदिका विस्तृत कारवार है।

मादारिया—युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २६° २०' ५०" उ० तथा देशा० ८३° २३' ४०" पू० कुचाना नदीके किनारे अवस्थित है। नगरमें स्थानीय उत्पन्न द्रव्योंका जोरों कारवार चलता है। नदीतीरवर्त्ती देवमन्दिर आदिकी शोभा अति मनो-रम है।

मादारी—२२ परगना जिलेमें प्रवाहित एक छोटी नदी। चेतल और वांसडाकी लंबी चौडी हाट इसी नदीके किनारे अवस्थित है।

मादिन् (सं० त्रि०) मदकारिन्, नशीला।

मादिन (फा० स्त्री०) मादा देखो।

मादिनी (सं० स्त्री०) शक्राशन, भांग।

माद्रुघ (सं० त्रि०) मद्रुघ वृक्षसम्बन्धीय।

माद्रुर्णा (सं० स्त्री०) एक प्राचीन गांवका नाम।

माद्दृश् (सं० त्रि०) अहमिव दृश्यते इति दृश-क्विप्। मत्सदृश, मेरे जैसा।

माद्दृश (सं० त्रि०) अहमिव दृश्यते इति (त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ्च। पा ३।२।६०) इति कञ्। मत्सदृश, मेरे समान। स्त्रियां ङीष्। माद्दृशी।

'तस्य त्वं पदवीं गच्छ गच्छेयुस्त्वादृशा यथा।
तादृगस्येदृशे काले माद्दृशैरभिचोदितः॥
कथं नु भार्य्या प्रार्थाया तव कृष्णसखा विभो।
धृष्टद्युम्नस्य भगिनी सभा कृष्यते मादृशी॥"
(भार० ७।१०८।८३-८४)

इस अर्थमें 'माद्दृक्ष' ऐसा पद भी होता है।

माद्दा (अ० पु०) १ वह मूल तत्त्व जिससे कोई पदार्थ बना हो। २ मवाद, पीव। ३ योग्यता। ४ शब्दकी व्युत्पत्ति।

माद्य (सं० पु०) मदनीय, मदभावयुक्त।

माद्रक (सं० पु०) मद्रदेशका राजपुत्र।

माद्रकी (सं० स्त्री०) मद्रराणी, मद्रदेशकी रानी।

माद्रकुलक (सं० त्रि०) मद्रकुलसम्बन्धीय, मद्रकुलका।

माद्रनगर (सं० पु०) मद्रराजधानी।

माद्रवती (सं० स्त्री०) राजा परीक्षितकी स्त्रीका नाम।

माद्री (सं० स्त्री०) मद्रे जाता मद्र-अण्-ङीप्, भर्गादित्वात् प्रत्यय लुक्। १ पाण्डु राजाकी पत्नी और नकुल तथा सहदेवकी माता। यह मद्रराजकी कन्या थी। राजा पाण्डुके मरने पर यह उनके साथ सती हुई थी। विशेष विवरण पाण्डु शब्दमें देखो।

२ अतिविषा, अतीस।

माद्रीनन्दन (सं० पु०) नकुल और सहदेव।

माद्रीपति (सं० पु०) माद्र्याः पतिः। पाण्डुराज।

माद्रुकस्थलक (सं० त्रि०) मद्रुकस्थली नामक जनपद जात, जिसका जन्म मद्र कस्थलीमें हुआ हो।

माद्रेय (सं० पु०) माद्रीके गर्भजात पुत्र, नकुल और सहदेव।

माधव (सं० पु०) यदुपुत्रस्य मधोरपत्यं पुमान् इति मधु-अण्, मा लक्ष्मीस्तस्याः धवः, मायाः विद्याया धव इति वा। विष्णु, नारायण।

"मा च ब्रह्मस्वरूपा या मूलप्रकृतिरीश्वरी।
नारायणीति विख्याता विष्णुमाया सनातनी॥
महालक्ष्मीस्वरूपा च वेदमाता सरस्वती।
राधा वसुन्धरा गङ्गा तासां स्वामी च माधवः॥"
(ब्रह्मवैवर्त्त श्रीकृष्ण ११० अ०)

मा शब्दमें ब्रह्मस्वरूपा तथा मूलप्रकृति, नारायणी, सनातनी विष्णुमाया, महालक्ष्मी, वेदमाता सरस्वती, राधा, वसुन्धरा, गङ्गा और इनके स्वामी माधव हैं।

महाभारतमें लिखा है—मौन, ध्यान तथा योगसाधन करनेसे ही माधव नाम हुआ है।

"मौनाद्ध्यानाच्च योगाच्च विद्धि भारत माधवम्॥"
(भारत ५।७०।४)

माधव नाम लेनेसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त होता है।

"ओं मित्येकाक्षरे मन्त्रे स्थितः सर्वगतो हरिः।
माधवायेति वै नाम धर्मकामार्थमोक्षदम्॥"
(अग्निपुराण)

२ वैशाख मास।

"न तेन सख्या सहितो जगामाम्रवण वनम्।
पत्नीभिः स समं रन्तु माधवे मासि पार्थिव॥"
(मार्क०पु० ११७।२७)

३ वसन्त ऋतु। ४ मधुकवृक्ष, महुएका पेड़। ५ कृष्णमुद्ग, काला उर्द। ६ जीरकवृक्ष, जीरेका पेड़। ७ मधूकभेद, एक प्रकारका महुआ। (वैद्यकनि०) ८ एक प्रकारका सङ्कर-राग। यह मल्लार, विलावल और नट नारायणको मिला कर बनाया गया है। ६ एक राग। यह भैरवरागके आठ पुत्रोंमेंसे एक माना जाता है। १० एक वृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें ८ जगण होते हैं। इसीका दूसरा नाम 'मुक्तहरा' है।

माधव—एक विख्यात योगी। ये मधुसूदन सरस्वतीके गुरु थे।

माधव—कुछ प्राचीन संस्कृत ग्रंथकारके नाम। यथा—१ एकाक्षरकोषके प्रणेता। २ किरातार्जुनीय-टीकाके रचयिता। ३ छन्दसीभाष्य और सामवेदसंहिताभाष्यके प्रणेता। ये नामी पण्डित नारायणके पुत्र थे। ४ जातकदर्पणके प्रणयनकर्त्ता। ५ ज्योतिषरत्नमाला

टीकाके रचयिता। दुर्गाभक्तितरङ्गिणीके प्रणेता। ७ द्रव्यगुणरत्नमाला नामक वैद्यक ग्रंथके बनानेवाले। ८ नारायणबलिविधिके प्रणेता। ९ माधवी शान्तिके रचयिता। १० रत्नमाला नामक अभिधानके प्रणेता। ११ नीलकण्ठकृत वर्षफल नामक ग्रन्थके एक टीकाकार। १२ विवेकदीपिकाके रचयिता। १३ वेदान्तसिद्धांत नामक ग्रंथके बनानेवाले। १४ शक्तिवादटीकाके रचयिता। १५ सारदातिलकके टीकाकार। १६ एक ज्योतिर्विद्। इन्होंने सिद्धान्तचूडामणि नामक ग्रन्थकी रचना की। १७ सूर्य्यार्घ्यदानपद्धतिके प्रणेता तथा रामेश्वर भट्टके पुत्र। १८ दानलीला काव्यके रचयिता। ये भद्मणके पुत्र, वाचिदेवके पौत्र, महेश्वरके प्रपौत्र और विष्णुशर्म्माके वृद्धप्रपौत्र थे। १९ वेंकटाचार्यके पुत्र। इन्होंने वेदभाष्य, माधवानुक्रमणिका, आख्यातानुक्रमणि, स्वरानुक्रमणि, निपातानुक्रमणि, निर्व्वचनानुक्रमणि और उसका भाष्य तथा नामनिघंटुकी रचना की। देवराजने निघण्टुभाष्यमें इनका नामोल्लेख किया है। २० पद्यावलीधृत कुछ कवि।

माधव—इस नामके बहुतसे ज्योतिर्विदोंके नाम मिलते हैं। यथा—१ भास्वतीकरणके टीकाकार। उन्होंने १४५२ शकमें टीका लिखी। २ गोविन्दके पुत्र। उनके पितामह नीलकण्ठ टोडरमल्लके अतिप्रिय ज्योतिर्विद् थे। उन्होंने टोडरानन्द आदि बहुत से ग्रन्थ बनाए तथा माधवशिशुबोधिनी समाविवेकवृत्ति नामक १५५५ शकमें पितामहकृत ताजिकभूषणकी टीका और उदाहरणप्रकाश किया। उन्होंने लिखा है, कि उनके पिता पीयूषधाराके रचयिता गोविन्दकी मुगल बादशाह जहांगीरके दरबारमें अच्छी चलती थी। ३ काशीके रहनेवाले एक चित्तपावन ब्राह्मण। इन्होंने सामुद्रिक-चिन्तामणिकी रचना की। इनके कनिष्ठ भ्राता दादा भाईने भी १६४१ शकमें सूर्य सिद्धान्तकी किरणावलि नामक एक टीका लिखी।

माधव—१ सह्याद्रिवर्णित एक राजा। २ एक प्राचीन कवि तथा दद्दके पुत्र। ये चन्देलराज यशोवर्म्मा और धङ्गके सभापण्डित थे। ३ राजा ईशानदेवकी सभाके कवि। ये दासवंशीय थे। ४ कूटमन्दिरके रचयिता। ५ विहारवापीके प्रणेता तथा सुब्रह्मण्यके पुत्र।

माधवक (सं० पु०) माधव (कुलालादिभ्यो वुञ्। पा ४।३।११८) इति वुञ्। मधुजात मद्यविशेष, महुएकी शराब।

माधवकर—एक सुप्रसिद्ध चिकित्सक, इन्दुकरके पुत्र। इन्होंने आयुर्वेदप्रकाश, आयुर्वेदरसशास्त्र, कूटमुद्गर और उसकी टीका, पर्यायरत्नमाला रसकौमुदी तथा रोगविनिश्चय या माधवनिदान नामक ग्रन्थ बनाये।

माधवकविराज—एक वैद्यक ग्रन्थकार। इन्होंने मुग्धबोधज्वरादिरोगचिकित्सा नामक एक वैद्यकग्रन्थ प्रणयन किया।

माधवकवीन्द्र—उद्धवदूतके रचयिता।

माधवगुप्त (सं० पु०) १ वासवदत्ता-वर्णित एक नायकका नाम। २ गुप्तवंशीय एक राजकुमार। ये कन्नोजराज श्रीहर्षके समसामयिक और मित्र थे।

माधवघोष—उत्तरराढ़ीय कायस्थकुलोद्भव श्रीगौराङ्गके पार्श्वद भक्त। वे एक संगीतविशारद और पदकर्त्ता थे। नित्यानन्द प्रभु उनके गान पर नृत्य करते थे;

माधवघोष प्रसिद्ध गौरगीतिके रचयिता वासुदेव घोषके भाई थे। वैष्णवगण व्रजकी गुणतुङ्गासखी समझ कर इनका आदर करते थे। माधव अधिक समय गौर निताइके साथ ही कीर्त्तन करते थे। इसीसे गौरनिताइ सम्बन्धीय उनके बनाये पदोंका ऐतिहासिक मूल्य अधिक था।

माधवचक्रवर्त्ती—पद्यावलीधृत एक कवि।

माधवज्योतिर्विद्—एक विख्यात ज्योतिर्विद्। ये गोविन्द ज्योतिर्विद्के पुत्र थे। उन्होंने श्रीपतिकृत जातकपद्धतिकी जनबोधिनी नामकी टीका, भास्वतीविवरण, महादेवी टीका, विद्यामाधवीय व्याख्यान और १६४० ई०में ज्योत्स्ना नामकी श्रुतबोधकी टीका लिखी।

माधवतर्क सिद्धान्त—रघुनाथ-कृत पदार्थतत्त्वकी टीकाके प्रणयनकर्त्ता।

माधवतीर्थ—मध्वसम्प्रदायके एक गुरु। यह नरहरि तीर्थ (विष्णु शास्त्री)की मृत्युके बाद गद्दी पर बैठे। १२३१ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

माधवदास ब्राह्मण—एक कवि। इनका जन्म संवत् १५८० ई०में हुआ था। इनके बनाये पद रागसागरोद्भवमें पाये जाते हैं। ये अधिकतर जगन्नाथपुरीमें ही रहा करते

थे। कहते हैं, कि ये एक बार व्रजमें भी आये थे।

माधवदेव—१ भावस्वभाव नामक वैद्यक ग्रन्थके रचयिता। २ वेदभाष्यके प्रणेता। ३ काशीस्थित एक विख्यात नैयायिक। ये लक्ष्मणदेवके पौत्र थे। इन्होंने रामभद्रकृत गुण रहस्यकी गुणरहस्यप्रकाश नामकी टीका, न्यायसार, प्रमाणादिप्रकाशिका और तर्कभाषासारमञ्जरी नामक बहुत-से न्याय ग्रन्थ बनाये। शेषोक्त ग्रन्थमें इन्होंने गौरीकान्त और गोवर्द्धनका मत उद्धृत किया है।

माधवद्रुम (सं० पु०) आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

माधवद्विज—नवद्वीपके जमींदार शुभानन्दके दो पुत्र थे, रघुनाथ और जनार्दन। ये सभी 'राजा' नामसे जनसाधारणमें परिचित थे रघुनाथके पुत्रका नाम जगन्नाथ तथा जनार्दनके पुत्रका नाम माधव था। ये ही माधव और जगन्नाथ जगाइ मधाइ नामसे सभी जगह विख्यात हैं। माधाइकी धर्मपरिवर्त्तन कहानी विचित्र है। कहते हैं, कि पहले ये मद्य मांस तथा पर-स्त्री गमनमें मस्त रहते थे। सच पूछिये तो ऐसा कोई भी खराब काम न था जिसे इन्होंने न किया हो। यहां तक, कि वे गो वध तथा ब्रह्म-वधको भी अधर्म नहीं समझते थे। श्रीमहाप्रभुने निताइ और हरिदास पर हरिनाम प्रचारका भार सौंपा था। नामका प्रचार करते करते निताइ एक दिन जगाइ माधाइके सामने जा पहुंचे। उन्हें देखते ही माधाइको गुस्सा हुआ और एक फूटे बरतनके टुकड़ेको ले कर उनके सिरमें मारा। इसकी चोटसे सिरसे लेहू चलने लगा। इतने पर भी निताइचांद जरा भी विचलित न हुए, वरन् मीठे स्वरोंमें उस पापीसे कहने लगे—"माधाइ तुमने हमें कलसीके टुकड़ेसे मारा है तो भी मैं तुम्हें प्यार करूंगा।" इतना कहते ही पत्थल गल गया। मरुभूमिमें बाढ उमड आई। माधाइ निताइके प्रेमपाशमे बंध गए और उनका शिष्यत्व ग्रहण किया।

माधवनन्दन—अशौचदशकके प्रणेता रामेश्वर सूरिके पुत्र।

माधवपण्डित—१ एक विख्यात पण्डित। ये पण्डित-श्रेष्ठ विश्वेश्वरके गुरु थे। २ दत्तादर्शके रचयिता।

माधवपदाभिराम—तर्कसंग्रहवाक्यार्थनिरुक्ति नामक ग्रन्थके रचयिता।

माधवपाठक—पुरश्चरणचन्द्रिकाके प्रणेता।

माधवपार्श्व—चन्द्रद्वीपके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध स्थान। यह माधवपाशा नामसे विख्यात है।

माधवपुर—राजगृहके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम।

माधवपुरी—पद्यावलीधृत एक प्राचीन कवि।

माधवप्रिय (सं० क्ली०) पीतचन्दन, पीला चन्दन।

माधवभट्ट—१ निम्बार्कसम्प्रदायके एक आचार्य। ये भूरिभट्टके शिष्य और श्यामभट्टके गुरु थे।

२ दूसरे तीन प्रसिद्ध पण्डित। ३ कवीन्द्रचन्द्रोदयधृत एक कवि। ४ सिद्धान्तरत्नावलि नामक सारस्वत प्रक्रियाकी टीकाके रचयिता। ५ प्रणयो माधवचम्पू और सुभद्राहरण श्रीगदित नामक दो ग्रन्थोंके प्रणयनकर्त्ता। ये मण्डलेश्वर भट्टके पुत्र तथा हरिहरके भाई थे।

माधव मागध (सं० पु०) एक प्राचीन कवि।

मागध माधव देखो।

माधवमिश्र—१ अनुमानालोकदीपिका नामक तत्त्वचिन्तामण्यालोक टीकाकी व्याख्याके प्रणेता। २ गदाधरके पुत्र। इन्होंने भेददीपिका नामक एक वेदान्तग्रन्थ रचा।

माधवमुनि—चापण्णभट्टीय व्याख्याके प्रणेता।

माधवयतीन्द्र (सरस्वती)—सुराष्ट्रवासी एक पण्डित। इन्होंने मितभाषिणी नामकी शिवादित्यकृत सप्तपदार्थीय टीका रची।

माधवयोगी—एक साधुपुरुष। ये मीमांसानयविवेकालङ्कारके प्रणेता दामोदरके गुरु थे।

माधवराव—महाराष्ट्रके चतुर्थ पेशवा। यह पेशवा बालाजी बाजीरावके द्वितीय पुत्र थे। इनका असल नाम था माधवराव बल्लाल। पिताके मरनेके समय इनकी उमर सिर्फ १७ वर्ष थी। उस समय भी महाराष्ट्रपति सतारामें शक्तिहीन और नाममात्रको राजा थे। माधवराजने उनके समीप आ कर १७६१ ई०के सितम्बर मासमें पेशवाकी खिलअत ली।

इस समय अङ्गरेजोंकी सहायतासे जञ्जिराके सिद्दी कोङ्कणके अनेक स्थानोंका पुनरुद्धार कर रहे थे। अङ्गरेज लोग भी सालसिट आदि द्वीपों पर दाँत गड़ाये बैठे थे। इस समय पेशवाकी तहवील भी खाली थी। इसी दुःसमयमें माधवराव पेशवा हुए। उन्होंने अपने चचा

रघुनाथरावके ऊपर कुल भार सौंप दिया। उन्होंने अपने बुद्धिकौशलसे अङ्गरेजोंके दांत खट्टे कर दिये। सालसिट जीतनेकी उनकी कुल चेष्टा व्यर्थ गई। इस समय मुगलवाहिनी अहमदनगरकी ओर बढ़ रही थी। उन्होंने तोका नगरमें आ कर कुछ हिंदूदेवमन्दिरोंको तोड डाला। इससे उनकी सेनामें जो महाराष्ट्र वोर थे वे क्रुद्ध हुए और निजाम उल-मुल्कके छोटे लडकेको ले कर पेशवाके दलमें मिल गये। अनन्तर निजाम पेशवाके साथ १७६२ ई०में सन्धि करनेको बाध्य हुए। इस सन्धिके अनुसार मरहठोंको २७ लाख रुपये आयका औरङ्गाबाद और विदरराज्य मिला। उक्त सन्धिके कुछ दिन बाद ही रघुनाथके साथ माधवका झगडा पैदा हुआ। रघुनाथ भी अपनी द्वितीय स्त्री आनन्दीबाईकी बातमें पड कर राज्यका अर्द्धांश दखल कर बैठे। इस समय रघुनाथराव, सखाराम ब.पू और कुछ मंत्रियोंने अपना पद परित्याग किया। माधवरावने फौरन अपने मामा त्रिम्बकरावको दीवान बनाया। मिरजके जागीरदार गोपालराव गोविन्द पटवर्द्धन उनके सहकारी नियुक्त हुए। इसी समय हरिपन्त फड़के और बालाजी जनार्द्दन भानु (पीछे नानाफडनवीस)-को कारकुन पद मिला। इधर रघुनाथरावकी स्त्री आनन्दीबाईने अपना उद्देश सिद्ध हुआ न देख माधवरावकी माता गोपिकाबाईसे झगड़ा ठान दिया। रघुनाथका हृदय बहुत कुछ उन्नत होने पर भी स्त्रीके वशमें आ अभी वे भी उत्तेजित हुए और नासिकसे औरङ्गाबादको चले आये। मुगलोंको ५१ लाख रुपये आयकी सम्पत्ति तथा दौलताबाद, आसीरगढ़, अहमदनगर और शिवनेरि दुर्गका प्रलोभन दिखा कर उन्होंने मुगलोंसे सहायता ली। पूना और अहमदनगरके बीच चचा भतीजेमें लड़ाई छिड़ी। माधवराव परास्त हुए। चचाके साथ युद्ध करके स्वजाति और स्वराज्यका अनिष्ट साधन करना कर्त्तव्य नहीं है और कुछ दिन अगर इस प्रकार विवाद चलता रहा तो सम्भव है, कि महाराष्ट्र-राज्य खार छार हो गया, इस प्रकार सोच विचार कर माधवरावने आत्मसमर्पण किया। अब रघुनाथने प्रभुता पा कर सखाराम बापूको ६ लाख रुपये जागीर और नीलकण्ठपुरन्दरको पुरन्दर-दुर्गकी अधिनायकता दे कर उन्हें अपने काबूमें कर लिया। उनके लडके भास्करराव प्रतिनिधि और नारोशङ्कर उसके सहकारी नियुक्त हुए। यहां तक, कि उन्होंने स्वार्थान्ध हो कर गोपालराव पटवर्द्धनसे मिरज दुर्ग छीन लिया। इस पर गोपाल राव और कुछ सम्भ्रान्त मराठा-सरदार चिढ़ कर निजामके दलमें मिल गये। निजामके साथ बहुत जल्द युद्ध छिड गया। निजाम अली भीमवेगसे पूना पर चढ़ आये। उस आक्रमणसे पूनाके सभी घर तहस नहस हो गये। निजामको काफी धन हाथ लगा। थोडे ही समयके मध्य वर्षा होने लगी जिससे मुगल लोग पूना छोड औरङ्गाबाद लौट जानेको बाध्य हुए। सताराका कर्त्तत्व पानेके लोभसे जानोजी भोंसलेने निजामका पक्ष लिया था। निजामको प्रतिज्ञापालनमें विमुख देख वे फिरसे पेशवाके दलमें मिल गये। युवक माधवराव स्वजातिकी गौरव-रक्षाके लिये पुनः रणक्षेत्रमें कूद पडे। उनके रणकौशल और बुद्धिसे तान्दुलजा नामक रणक्षेत्रमें मरहठोंने विजय पताका फहराई थी।

इसके कुछ समय बाद ही रघुनाथरावके प्रिय पुत्र भास्कररावका देहान्त हुआ। अब भवानराव प्रतिनिधि हुए। गोपालराव पटवर्द्धनको मिरज वापस मिला। बालाजी जनार्द्दन भानु भी इस समय फडनवीस पद पर सुशोभित हुए। पीछे ये ही नानाफडनवीश कहलाने लगे।

महिसुरमें हिन्दू प्रभावके अवसानके साथ साथ हैदरअली अपना मस्तक ऊंचा कर रहा था। उसका प्रचण्ड विक्रम खर्व करनेके लिये माधवरावने विपुल सेना इकट्ठी की। वैशाख मासमें तीस हजार घुडसवार और उतना ही पदातिक ले कर युवक वीरने कर्णाटकमें पदार्पण किया।

हैदरके विरुद्ध चढ़ाईकालमें माधवरावने चचा रघुनाथको राज्यशासन करनेके लिये पूनामें रहनेका अनुरोध किया था। सखाराम बापूने भी पेशवाका पक्ष लिया। रघुनाथरावने इच्छा नहीं रहते हुए भी पेशवाकी बात मान तो ली, पर वे मन ही मन चिढ़ कर नासिकके निकटवर्त्ती आनन्दवेली नामक स्थानमें चले आये। इससे

पेशवाको युद्धयात्रामें कुछ अरसा लग गया। उनके कर्णाटक आनेके पहले ही हैदरके सेनापति फजल खाँने गोपालराव पटवर्द्धनको परास्त किया था। किन्तु माधवका भाग्य अच्छा था, उन्होंने कर्णाटक आते ही आम्नवेती नामक स्थानमें हैदर अलीको हराया। यहां तक, कि हैदर नगद ३२ लाख रुपये, मुराराव घोरपडे-की सारी सम्पत्ति और सावनूरके नवावका पावना छोड देनेको वाध्य हुए। १७६५ ई०में माधवराव इस प्रकार विजयपताका फहराते हुए स्वदेश लौटे। इधर गोपिकाबाई और आनन्दीवाईको परस्पर ईर्षासे माधवराव और रघुनाथरावमें वहुत मनमुटाव हो गया। माधवरावको मालूम था, कि उनके चचा मौका पाने पर जानोजी भोंसले अथवा निजाम अलीसे सहायता ले सकते हैं। इस आशङ्कासे उन्होंने १७६६ ई०मे निजाम अलीके साथ चुपके मेल कर लिया। उसी साल निजाम अलीने भी हैदर और मरहठोंका प्रभाव खर्व करनेके अभिप्रायसे अंगरेजोंसे सन्धि कर ली। यह संवाद माधवरारावको वहुत जल्द मालूम हो गया। उन्होंने समझा था, कि इस सम्मेलनसे मरहठोंके पक्षमें विशेप क्षतिकी सम्भावना है। इसलिये वे फौरन कर्णाटक प्रदेशमे जा धमके। हैदरसे ३० लाख और कर्णाटकके अपरापर सामन्तोंसे भी प्रायः १७ लाख रुपये वसूल कर निजामके रणक्षेत्रमें आनेसे पहले ही वे दक्षिणपथमे लौटे। निजाम और अगरेजोंने माधवरावसे उक्त रुपयेमेंसे कुछ मांगा, किन्तु उन्होंने एक कौडी भी न दी इस समय रघुनाथरावने अपना प्रभाव फैलानेकी आशासे एक दल सेना ले कर ग्वालियरकी यात्रा कर दो। राणा छत्रशालके साथ उनका वहुत दिन तक युद्ध होता रहा। माधवरावसे उत्साह पा कर छत्रसालने अपना पराजय स्वीकार न को। वहुत दिन तक जो युद्ध चलता रहा उससे रघुनाथ ३२ लाख रुपयेके ऋणि हो गये। आखिर घृणा, लज्जा और मनःकष्टसे वे नासिक लौटे। इस समय माधवराव आ कर उनसे मिले। रघुनाथका माधवरावके साथ जो मनमुटाव था वह दिनोंदिन वढ़ता ही जाता था। उन्होंने अमृतराव नामक एक ब्राह्मणपुत्रको गोद ले कर उसीको अपना उत्तराधिकारी वनाया।

पूना आने पर माधवरावको मालूम हुआ, कि वम्वई-गवर्मेण्टने मोस्तिन नामक एक साहवको उनके पास दूतके रूपमें भेजा है। अंगरेजोंका अभिप्राय था, कि वे जिससे हैदर अथवा निजामके साथ किसी भी सन्धिसूत्रमे आवद्ध होने न पावे। किन्तु माधवरावने उस प्रस्तावको कबूल नहीं किया और दूतको यह कह कर लौटा दिया, कि वे (माधवराव) जैसा देखेंगे वैसा ही करेंगे। पीछे माधवने यह भी सुना, कि रघुनाथराव उन्हें सिंहासनच्युत करनेका आयोजन कर रहे हैं। अभी उसका प्रतिविधान होना उचित समझ कर माधवराव २५००० हजार घुडसवार ले कर नासिक गये और रघुनाथ पर चढाई कर दी। रघुनाथ भी विलकुल तैयार थे। किन्तु दुर्भाग्यवशतः इस समय उनके साथी कुंकुम तातिया और तुकाजी होलकर उन्हें छोड़ कर पेशवाके दलमें मिल गये थे। रघुनाथ हार खा कर घोरप वा दुधहाट नामक दुर्गमें छिप रहे। माधवरावने नासिकको लूटा और रघुनाथके अनुचरोंको वन्दी कर उक्त दुर्गमें गोला वरसाने लगे। दो तीन दिन लगातार गोला वरसानेसे चारों ओर मानो अग्निमय हो गया। रघुनाथको अव दुर्गमें रहनेका साहस नहीं हुआ। वे वाहर निकल कर माधवरावके समीप आये। माधवने चचाके पैर छू कर अपराधके लिये क्षमाप्रार्थना की। आखिर वे रघुनाथको हाथी पर चढ़ा पूना आये। यहा आदरपूर्वक उन्हें एक वडे घरमें एक प्रकार नजरवन्दी तौर पर रखा।

नागपुरके जानोजी भोंसलेने रघुनाथको मदद पहुंचाई थी। १७६६ ई०में चचाको वन्दी कर पेशवा जानाजीका दमन करनेके लिये अग्रसर हुए। नागपुरपतिको पेशवाका सामना करनेका साहस नहीं हुआ। वे तोन मास तक नाना स्थानोंमें भटके। आखिर १५ लाख रुपया नजर दे कर छुटकारा पाया। नागपुर जीतनेके वाद माधवराव वडी धूमधामसे पूना लौटे। किन्तु यहां वे निश्चिन्त वैठ न सके। कुछ दिन वाद उन्हें मालम हुआ, कि हैदरअली पुनः अपनेको प्रवल प्रतापी समझ कर मरहठोंके ऊपर अत्याचार कर रहा है। यहा तक कि वह अनेक महाराष्ट्र सामन्तोंसे कर भी उगाहने लगा है।

१७७० ई०के कार्त्तिक मासमें उन्होंने गोपालराव पटवर्द्धन और मल्हारराव रास्तियरके अधीन बहु संख्यक अश्वारोही भेजे। पीछे आप भी बीस हजार अश्वारोही और १५ हजार पदातिकको ले कर युद्धके लिये निकले। उनकी जय पताका तमाम उड़ने लगी। बहुतसे देश उनके हाथ लगे। किन्तु दुर्भाग्यवशतः जेठके महीनेमें वे यक्ष्मारोगसे आक्रान्त हुए। उनको विश्वास था, कि कोल्हापुर सरदारकी माताके अभिशापसे ही वे ऐसे कठिन रोगमें फंसे हैं। जो कुछ हो, वे मामा त्र्यम्बकके ऊपर युद्धका भार दे पूना लौट आये। १७७१ ई०में स्वास्थ्यलाभ करके उन्होंने फिरसे मामाका साथ दिया। किन्तु कुछ दिन बाद ही वे पुनः रोगग्रस्त हो लौटे। इस बार युद्धका कुल भार बलवन्तराव पर सौंपा गया था। आपा बलवन्तके कौशलसे हैदर परास्त और वश्यता स्वीकार करनेको बाध्य हुए थे। वर्षाकालमें माधव बिलकुल चंगे हो गये। किन्तु दुःखका विषय था, कि चैत्रमासमें वे पुनः बीमार पड़े। इस बार का रोग सचमुच दुस्साध्य था। अब पेशवा मरनेको तैयार हो गये। उन्होंने रघुनाथरावको बुला कर उनके चरण स्पर्श किये और पूर्व अपराधके लिये क्षमा प्रार्थना की। माधवरावकी अवस्था देख कर सचमुच रघुनाथराव रोने लगे। नाना देशोंसे उन्होंने वैद्य और साधु संन्यासी बुला कर भतीजेकी चिकित्सा कराई, पर कोई फल न निकला। मृत्युसे पहले माधवरावने अपने छोटे भाई नारायणरावको चचाके हाथ सौंप दिया। थेउर नामक ग्राममें हिन्दूकुलतिलक महाराष्ट्रके एक उज्ज्वल रत्नने इस लोकका परित्याग किया (१८वीं नवम्बर १७७२ ई०)। इस समय उनकी उमर सिर्फ २८ वर्ष थी। उनके तिरोभाव के साथ साथ महाराष्ट्रकी भावी आशा भी अथाह जलमें डूब गई।

माधवराव-नारायण—महाराष्ट्रके सप्तम पेशवा। ये पेशवा नारायणरावके पुत्र और माधवरावके भतीजे थे। १७७४से १७९५ ई० तक उन्होंने पेशवापदका भोग किया था। नारायणरावकी मृत्युके समय माधवराव-नारायण गर्भमें ही थे इसीलिये उनके जन्मसे पहले तक रघुनाथराव पेशवा रहे। उनके जन्मके बाद सरदार और सचिवोंकी चेष्टासे वे पेशवा पद पर अधिष्ठित हुए तथा उनकी माता गङ्गाबाई पेशवा और महाराष्ट्र-राज्यकी रक्षयित्री हुई। उनके समयका विस्तृत विवरण रघुनाथ राव और नानाफड़नवीस शब्दमें देखो।

माधवरामानन्द सरस्वती (सं० पु०) एक विख्यात पण्डित।

माधववर्म्मा—दाक्षिणात्यके विष्णुकुण्डिन-वंशीय एक प्राचीन राजा।

माधववल्ली (सं० स्त्री०) लताविशेष, एक प्रकारकी लता।

माधवविद्यारण्य—माधवाचार्य देखो।

माधववैद्य—आनन्दलहरी टीकाके प्रणेता।

माधवशास्त्री—एक विख्यात पण्डित। संन्यास आश्रम लेनेके बाद ये रामचन्द्र तीर्थ नामसे परिचित हुये। १३१७ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

माधवशुक्ल—एक प्राचीन पण्डित। ये कूकके पुत्र और व्यासनारायणके पौत्र थे। इन्होंने १६५६ ई०में कुण्डलकल्पद्रुम नामक एक ग्रन्थ लिखा।

माधवश्री (सं० स्त्री०) वसन्तशोभा, वसन्त ऋतुकी बहार।

माधवश्रीग्रामकर—सामुद्रिकचिन्तामणि नामक ग्रन्थके रचयिता।

माधवश्री जगन्नाथी—एक वैष्णव साधु। नीलगिरि धाममें समुद्रके किनारे उनका वास था। उन्होंने सांसारिक धर्मको छोड़ कर भगवत् भजनमें अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया था। क्रमशः भोगस्पृहा त्याग करनेके लिये विषयवासनाको भी उन्हें छोड़ना पड़ा। उनके तीन दिन निराहार रहने पर जगन्नाथ प्रभु स्थिर न रह सके। रातको सोनेकी थालीमें जो नैवेद्य उन्हें नित्य प्रति उत्सर्ग किया जाता था उसी थालीको उन्होंने लक्ष्मीठाकुरानी द्वारा माधवकी कुटीमें भेज दिया। इधर सोनेकी थालीको न देख मन्दिरके पण्डा इधर उधर चोरको खोजने लगे। अन्तमें माधवदासके घरमें वह थाली देख उन्हें ही चोर बतला कर बेंतकी मार देने लगे। ठीक इसी समय महाप्रभुने सेवकोंके प्रति आदेश कर कहा, "मैंने ही भोजनके साथ यह थाली माधवको कुटीमें भेज दी है।"

एक समय और जब वे आमाशयसे पीड़ित हो जलके कारण बालू पर पड़े थे उस समय भगवान्‌ने उसके

हाथ धुलानेके लिये जल ला दिया था। अलावा इसके शीतक्लिष्ट माधवको अपना शीतवस्त्र दान, उनको ले कर गोपालकी फुलवारीमें कटहलकी चोरी उसके साथ जगन्नाथदेवकी वृन्दावन यात्रा आदि बहुत-सी अलौकिक घटनाएं सुनी जाती हैं। वृन्दावनमें उन्होंने विहारीजीको भुने हुए चनेका भोग दे कर परितुष्ट किया था।

वृन्दावनसे नीलाचल लौटते समय वे अपने तीन शिष्योंके अभीष्ट पूर्ण कर माताके दर्शनके लिये पूर्व आश्रम गये। बाद उसके वहांसे वे पुण्यमय पुरीधाममें पधारे। जगन्नाथजीके साथ उनकी मित्रता हो गई थी।

(भक्तमाल)

माधवसरस्वती—१ पद्यावलीधृत एक कवि। २ न्यायचूडामणि नामक वेदान्त ग्रन्थके प्रणेता। आप चण्डीश्वरके गुरु तथा विश्वेश्वरके शिष्य थे। ३ पदचन्द्रिका नामको योगवाशिष्ठ टीकाके रचयिता।

माधवसिंह—जयपुरके एक राजा। ये महाराज मानसिंहके छोटे भाई थे। उनकी पटरानी कृष्णभक्ति परायणा थीं। जब माधवसिंह अपने ज्येष्ठ भ्राता मानसिंहके साथ काबुल गये तब दीवान ही राजप्रतिनिधिरूपमें राजकार्य चलाता था। इसी समय एक दिन रानी पलंग पर सोयी थी, दासी उनका पांव दबाते दबाते कृष्णविषयक प्रेमगीत प्रफुल्ल चित्तसे गाने लगी। इस अपूर्व गानके सुनते ही रानीका हृदय पिघल गया। उसी दिनसे उन्होंने कृष्णका प्रेमधन पानेकी प्रत्याशासे आत्मजीवन उत्सर्ग कर दिया।

विषयवासना और भोगविलासको छोड़ उन्होंने कृष्णकी सेवामें मन प्राण समर्पण किया। वे घरमेंके चित्रको देख कर ही कृष्णके साधका सुख अनुभव करती थी। वैष्णव-सेवासे कृष्णमें प्रेम होगा, ऐसा विचार कर उन्होंने वैष्णवसेवा आरम्भ कर दी। वैष्णवगण उनकी आज्ञासे हमेशा राज-अन्तःपुरमें आने जाने लगे। वे अपने ही हाथों से माला और चन्दन दे कर वैष्णवकी सेवा किया करती थीं। रानीको इस प्रकार पर्दारहित देख कर दीवान आग बबूले हो गये और इसका परहेज करनेको उनसे कहा। उत्तरमें रानीने कहला भेजा, कि श्रीकृष्णके चरणोंमें मैंने पर्दाके साथ यह क्षणभंगुर शरीर समर्पण किया है। इस लिए उन युगल किशोरके प्रेममें मैंने लज्जा, धर्म, मान, धन, आत्मजन, यहां तक कि अपने प्राणको भी न्योछावर कर दिया है।

दीवानने यह संवाद राजा माधवसिंहके पास कहला भेजा। माधवसिंहने दीवानके पत्रका मर्म पुत्र प्रेमसिंहको कह सुनाया। पुत्र भी माताके समान कृष्ण भक्त थे। उन्होंने पितासे कहा, 'मैंने श्रेष्ठ कृष्णपद प्राप्त किया है। माताकी इस भगवद्भक्तिसे ही हम लोगोंके तीन कुलोंका उद्धार हुआ है।' पुत्रके इस वचनसे उन्हें बहुत गुस्सा आया। उसी गुस्सेमें आ कर उन्होंने पुत्रकी घोर निन्दा की और रानीका शिर काट डालनेका हुक्म दे दिया। इससे पिता-पुत्रमें लड़ाईकी नौबत आ गई। अनन्तर लोगोंके समझानेसे दोनोंमें मेल हो गया।

राजा रानीको दण्ड देनेके लिये अति शीघ्र घरको लौटे। मंत्रीकी सलाहसे स्त्री-हत्या न कर रानीको बाघके मुखमें फेंक देना ही स्थिर हुआ। अंतमें राजाकी पशुशालासे एक बाघ ला कर रानीके घरमें छोड़ दिया गया।

रानी उस समय कृष्णकी पूजामें लीन थी। बाघको इतना साहस न हुआ, कि वह कृष्णभक्तके प्रति अन्याय अत्याचार करे। और तो क्या, वह भी नम्र हो कर रानीके पैर चाटने लगा। बाघको पासमें देख रानीने उसे पकड़ लिया तथा कृष्णका नाम लेनेके लिये बार बार कहने लगी। इस पर बाघ भी पुलकित हृदयसे अपनी पूंछ हिलाने लगा।

भक्तिका ऐसा माहात्म्य देख राजा डर गये। वे कुटुम्ब परिवार और मित्रको साथ ले कर रानीके पास आये और क्षमाके लिये प्रार्थना करने लगे। एक दिन जब राजा माधवसिंह और मानसिंह नदीके किनारे घूम रहे थे उस समय भी रानीके अलौकिक प्रभावका स्मरण कर उन्होंने प्रबल तूफानसे रक्षा पाई थी।

माधवसिंह—कोटाराजवंशके प्रतिष्ठाता। ये बूंदीके हर राजवंशीय राजा राव रत्नसिंहके मध्यम पुत्र थे। सम्राट् शाहजहांकी अमलदारीमें बुर्हानपुरकी लड़ाईमें बड़ी वीरता दिखा कर माधवने फतह पाई थी। सम्राट्ने उनके कृतकार्यके पुरस्कारस्वरूप उन्हें कोटाप्रदेश और उसके

अधीनस्थ बहुतसे गांव दिये थे। अब माधवसिंह पितृराज्य बूंदीको छोड़ स्वाधीन भावसे कोटाराज्यका शासन करने लगे। इसी समयसे बूंदी और कोटा ये दोनों भिन्न भिन्न राज्यमें परिणत हुआ। पहले कोटा-राज्य बूंदीराज्यके सामन्त शासित प्रदेशरूपमें गिना जाता था।

हरराजवंशके इतिहाससे जाना जाता है, कि १५६५ ई०में माधवसिंहका जन्म हुआ। उन्होंने अपने वीरत्वसे पारितोषिकस्वरूप सम्राट्से कोटाराज्य तथा राजाकी उपाधि पाई थी।

पहले कोटामें भीलोंका बड़ा प्रभाव था। उस समय सामन्त बहुत थोड़ी-सी जगह ले कर ही राज्य करते थे। कोटाके प्रथम स्वाधीन चौहान राजा माधवसिंहने दिल्लीश्वरके अनुग्रह और अपने बाहुबलसे राज्य बढ़ाया। उनके मृत्युकालमें कोटाराज्यकी सीमा मालव और हर-वतीकी सीमा तक विस्तृत थी। १६८७ई०में मुकुन्दसिंह, मोहनसिंह, जुझाड़सिंह, कुनिराम सिंह और किशोर-सिंह इन पांच पुत्रोंको छोड़ वे परलोक सिधारे।

माधवसिंह—गढ़ादेशके एक राजा।

माधवसिंह—एक हिन्दू राजा। ये यवनपारिपाश्या राज-रीति नामक ग्रन्थके प्रणेता दलपतिरायके प्रतिपालक थे।

माधवसिंह—१ खेचर पद्धतिके रचयिता। २ शब्दकौमुदी नामक ग्रन्थके प्रणेता।

माधवसिंह—जयपुरके कच्छवाहवंशीय राजा सवाई जय सिंहके पुत्र। ये अपने मामा मेवाड़की रानाकी सहायता से भाई ईश्वरीसिंहको राजतख्तसे उतार अम्बरके सिंहा-सन पर बैठे। इस समय राजा सूर्यमल्ल जाटके प्रधान पुत्र जवाहिरसिंह भरतपुरके सिंहासनको अलंकृत कर रहे थे। वे माधवसिंहके विरुद्ध खड़े हुए और बिना उनकी अनुमतिके जयपुरराज्य होते हुए दलबलके साथ पुष्कर तीर्थ पहुंचे। यहां मारवाड़पति विजयसिंहके साथ इन्होंने मित्रता कर ली। राजाकी मनाही रहनेपर भी जवाहिरने बलदर्पित हो जरा भी परवाह न की और फिरसे जयपुरराज्य हो कर ही लौटे। इसी सूत्रसे दोनोंमें घमसान युद्ध छिड़ गया। युद्धमें हार खा कर जवा-हिर भागे।

राज्याधिकारकालमें उन्होंने महाराष्ट्र-नेता आपाजी सिन्धिया और मलहार होलकरके साथ युद्ध करके अच्छी ख्याति पाई थी। राज्यरक्षाके लिये भी वे कई एक युद्ध करके अपनी वीरताका प्रकृष्ट निदर्शन दिखला गये हैं। जिस दिन अम्बरसेनाके साथ जाटसेनाका घमासान युद्ध छिड़ा उस दिन माचेरीके सामन्तने, जो माधवसिंहसे सताये गये थे, स्वजातिका अपमान समझ कर दलबलके साथ अम्बरपतिका साथ दिया। जाटराज परास्त हुए। माचेरीके सरदार प्रतापसिंहका अम्बरराजने बड़ा सम्मान किया।

इस युद्धके चार दिन बाद ही अमाशयरोगसे माधव-सिंहकी मृत्यु हुई। उन्होंने सत्तरह वर्ष तक राज्य किया था। कुछ दिन और वे यदि जीवित रहते, तो उनके छोटे छोटे लड़कोंके शासनकालमें अराजकताके कारण कच्छवाह राज्यकी शासनशक्ति ऐसी क्षीण न हो जाती। वे पिताके जैसे विद्योत्साही और ज्योतिःशास्त्र पारदर्शी थे। उनके शासनकालमें जयपुरराज्यमें दूर दूर देशोंके पण्डित आ कर बस गये थे।

पृथ्वीसिंह और प्रतापसिंह नामक दो स्त्रीके गर्भसे उनके दो पुत्र थे।

माधवसिंह राजा—देवविलासार्या नामक ग्रन्थके प्रणेता।

माधवसेन—एक प्राचीन कवि।

माधवसेन—बङ्गालके सेनवंशीय एक राजा।

सेनराजवंश देखो।

माधवसोमयाजिन् (सं० पु०) एक पण्डित।

माधवाचार्य देखो।

माधवानन्द—शाम्भव कल्पद्रुमके रचयिता

माधवाचार्य (विद्यारण्यस्वामी)—भारतवर्षके एक असा-धारण पण्डित, वेदके विख्यात भाष्यकार सायणाचार्यके बड़े भाई। १४वीं सदीमें दक्षिणकी तुङ्गभद्रा नदीके तीरस्थित पम्पा नगरीमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिताका नाम मायण और माताका नाम श्रीमती था। विजयानगरम्के राजा बुक्करायके ये कुलगुरु तथा प्रधान मन्त्री थे। भारतीतीर्थके पास इन्होंने संन्यासकी दीक्षा ली थी। १३३१ ई०में ये शृङ्गेरीमठके शङ्करा-चार्यके पद पर अभिषिक्त हुए। हालकणाड़ा भाषामें

रचित 'विद्यारण्यकालज्ञान' नामक पुस्तक पढ़नेसे माधवाचार्यके विषयमें इस प्रकार मालम होता है,—

माधवने भुवनेश्वरीको प्रसन्न करनेके लिये विद्यारण्यमें आ कर कठोर तपस्या की। उनकी तपस्यासे संतुष्ट हो कर महामायाने उन्हें उसी वनमें गुप्तधन दिखा दिया। माधवने उस अपर्याप्त धनसे वन कटवा कर वहां एक नगर बसाया। तभीसे विद्यारण्य 'विद्यानगर' (पीछे चलित भाषामें विजानगरम्) नामसे प्रसिद्ध हुआ। माधव भी विद्यारण्यस्वामी कहलाने लगे। इस प्रकार १२५८ शकमें विद्यानगरकी प्रतिष्ठा हुई। प्रवाद है, कि उन्होंने हरिहर और बुक्करायको ला कर विद्यानगरमें बसाया। नाना स्थानोंकी शिलालिपि पढ़नेसे मालम होता है, कि पण्डितप्रवर माधवाचार्य कम्पराजपुत्र सङ्गमराजके प्रधान मन्त्री थे। इन्हीं सङ्गमके पुत्रका नाम हरिहर और बुक्कराय था। माधवकी अरण्य उपाधि देखनेसे मालम होता है, कि वे शङ्कराचार्यके दलभुक्त थे। शङ्करमठके संन्यासिगण केवल विद्यागौरवमें ही नहीं, धनगौरवमें भी तमाम प्रसिद्ध थे। अधिक सम्भव है, कि प्रबल प्रतापी मुसलमानोंका प्रभाव ध्वंस करनेके लिये उन्होंने सङ्गम वा उनके लड़के हरिहरको हिन्दूधर्मरक्षामें नियुक्त किया था। उन्होंने जो इस दारुण दुर्दिनमें भी वेदमार्गप्रवर्त्तनकी यथेष्ट चेष्टा की थी तथा विजयनगरके राजगण जो उनके अनुवर्त्ती हुए थे उसका प्रकृष्ट परिचय उनके विराट् वेदभाष्यसे मालम होता है। सायणाचार्य देखो। और तो क्या, माधवाचार्य एक प्रसिद्ध राजनैतिक परम तापस तथा जाति और स्वधर्मरक्षामें तत्पर थे। वे एक हाथमें शास्त्र और दूसरे हाथमें शस्त्र ले कर कर्मक्षेत्रमें उतरे थे। जिन्होंने गोआके इतिहासकी आलोचना की है, वे ही जानते हैं, कि १४वीं शताब्दीमें जब मुसलमानोंने गोमन्त (गोआ) जीत कर हिन्दूदेवालय तथा देवमूर्त्तियोंको तोडनेकी कोशिश की थी, तब किस प्रकार माधवाचार्यके प्राण रो उठे थे। पीछे उन्होंने बहुत-सी सेना ले कर १३१२ शकमें मुसलमानोंके करालकवलसे गोआ नगरीका उद्धार किया। उनके वंशधरोंने सौ वर्ष तक यहाका शासन किया था। गोया देखो।

वेदभाष्यके अलावा उन्होंने और भी कितने ग्रन्थोंकी रचना की, यथा—अधिकरणमाला, जैमिनीय न्यायमालाविस्तर नामक मीमांसाग्रन्थ, अनुभूतिप्रकाश, अपरोक्षानुभूतिटीका, अभिनव-माधवीय नामक धर्मशास्त्र, आत्मानात्मविवेक, आशीर्वादपद्धति, कर्मविपाक, कालनिर्णय वा कालमाधवीय, कुरुक्षेत्रमाहात्म्य, कृष्णचरणपरिचर्याविवृति, गोत्रप्रवरनिर्णय, जातिविवेक, शतप्रश्न, जीवन्मुक्तिविवेक, ज्ञानयोगखण्डभाष्य, णत्वभेद, त्र्यम्बकभाष्य, दक्षिणामूर्त्त्यष्टकटीका, दत्तकमीमांसा, दर्शपूर्णमासप्रयोग, दर्शपूर्णमासयज्ञतन्त्र, धातुवृत्ति, पञ्चदशी, पञ्चसारव्याख्या, पराशरमाधव (पराशर-स्मृतिका आचार और व्यवहाराध्यायकी विस्तृत व्याख्या), पाणिनीय शिक्षाभाष्य, पुराणसार, पुरुषार्थसुधानिधि, प्रमेयसारसंग्रह, ब्रह्मगीताटीका, भगवद्गीताभाष्य, महावाक्यनिर्णय, माधवीयवेदान्तभाष्य, मुक्तिखण्डटीका, मुहूर्त्तमाधवीय, यज्ञतन्त्रसुधानिधि, यज्ञवैभवखण्डटीका, योगवाशिष्ठसारसंग्रह, रामतत्त्वप्रकाश, लघु जातकटीका, व्यासदर्शनप्रकार, शङ्करविलास, शिवखण्डभाष्य, शिव माहात्म्यभाष्य, सर्वदर्शनसंग्रह, सहस्रनामकारिका, सिद्धान्तविन्दु, स्कन्दपुराणीय सूतसंहितातात्पर्यदीपिका, स्मृतिसंग्रह, स्वरविग्रहशिक्षाभाष्य, हरिस्तुतिटीका। ९० वर्षकी अवस्थामें इनका परलोकवास हुआ।

माधवाचार्य—विश्वेश्वराचार्य और भगीरथाचार्य नामक दो मित्र थे। दोनों एक ही गाँवमें रहते थे। दोनोंकी स्त्रियां भी एक दूसरेको बहिनके समान देखती थीं। विश्वेश्वरकी स्त्रीका नाम महालक्ष्मी था। एक दिन महालक्ष्मी बीमार पडी। सखीको देखनेके लिये भगीरथाचार्यकी स्त्री जयदुर्गा उसके घर गई। महालक्ष्मीने जयदुर्गाको देख धैर्य बाँधा और अपने पुत्र माधवको सखीके हाथ सौंपा। इसके बाद ही वह इस लोकसे चल बसी। जयदुर्गा अपने पुत्रके समान माधवका लालन-पालन करने लगी। विश्वेश्वरने गृहको त्याग कर संन्यास धर्म ग्रहण किया। इसलिये माधव भगीरथके ही तृतीय पुत्ररूपमें गिने जाने लगे। यही माधव आगे चल कर नाना शास्त्रोंमें पारदर्शी हो आचार्यकी उपाधिसे

परिशोभित हुए। नित्यानन्द प्रभुकी कन्या गङ्गादेवीके साथ इनका विवाह हुआ।

वैष्णव सम्प्रदायमें इन्हें शान्तनु राजाका अवतार बतलाया है। 'माधव शान्तनुनृप:' गौरगणोद्देशदीपिकामें भी यह श्लोक पाया जाता है।

माधवाचार्य—चट्टग्रामके चक्रशाला ग्रामवासी पुण्डरीक विद्यानिधिके बाल्यसखा। दोनों ही एक साथ पढ़ते और दोनों ही आखिर श्रीगौराङ्गके भक्त हुए थे।

माधवाचार्य—नवद्वीपवासी वैदिक दुर्गादास मिश्रके दो पुत्र थे, सनातन और कालिदास। सनातनके एक पुत्र और एक कन्या थी। कन्याका नाम विष्णुप्रिया देवी था। ये ही श्रीचैतन्य महाप्रभुकी दूसरी स्त्री थी। कालिदासके भी एक पुत्र हुआ। उसी पुत्रका नाम माधव था।

एक दिन श्रीवासालयमें श्रीमहाप्रभुका अभिषेक हो रहा था। सभी भक्त उपस्थित थे। इसी समय माधवाचार्य भी वहां पहुंचे। श्रीमहाप्रभुकी कृपासे माधवने कृष्णप्रेम लाभ किया। पीछे महाप्रभुके कहने पर वे श्रीगौराङ्ग अद्वैत प्रभुसे दीक्षित हुए। माधव एक प्रसिद्ध कवि थे। श्रीगौराङ्गके आदेशसे इन्होंने कृष्णमङ्गल काव्यकी रचना की थी।

माधवाचार्य—निम्बार्क-सम्प्रदायके एक गुरु, स्वरूपाचार्यके शिष्य और वलभद्राचार्यके गुरु।

माधवानन्द—शाम्भव-कल्पद्रुमके रचयिता।

माधवानल (सं० पु०) माधवनलाख्यानके रचयिता एक प्राचीन पण्डित।

माधवार्य—नरकासुर-विजय नामक नाटकके प्रणेता। ये माधवेन्द्र नामसे भी साधारणमें परिचित थे।

माधवाश्रम—एक साधु पुरुष। ये नारायणाश्रमके शिष्य थे। इन्होंने स्वानुभवादर्श नामक एक ग्रन्थ बनाया। इनका दूसरा नाम माधव भिक्षु भी था।

माधविका (सं० स्त्री०) माधवी-कन् टाप्। माधवीलता।

माधवी (सं० स्त्री०) मधौ साधु पुष्यति मधु-(कालात् साधु पुष्प्यत् पच्यमानेषु। पा ४।३।४३) इत्यण् ङीप्। १ स्वनामख्यात पुष्पलता। इसमें इसी नामके सुगंधित फूल लगते हैं। यह चमेलीका एक भेद है। पर्याय—अतिमुक्त, पुण्ड्रक, वासंतीलता, अतिमुक्तक, माधविका, माधवीलता, चन्द्रवल्ली, सुगन्धा, भ्रमरोत्सवा, भृङ्गप्रिया, भद्रलता, भूमिमण्डपभूषणा, वासन्ती, दूती, लतामाधवी। (शब्दरत्ना०)

इसका गुण—कटु, तिक्त, कषाय, मदगन्धी, पित्त, कास, व्रण, दाह और शोषनाशक। (राजनि०) भावप्रकाशके मतसे पर्याय—वासन्ती, पुण्ड्रक, मण्डक, अतिमुक्त, विमुक्त, कामुक, भ्रमरोत्सव। गुण—मधुर, शीतल, लघु तथा त्रिदोषनाशक।

२ मिसि, अजमोदा। ३ कुटनी। ४ मधुशर्करा, शहदकी चीनी। ५ मदिरा, शराब। ६ तुलसी। ७ दुर्गा। ८ माधवकी पत्नी। ९ मधुवंशजा कन्या, वह कन्या जिसका जन्म मधुवंशमें हुआ हो। १० सवैया छन्दका एक भेद। ११ ओड़व जातिकी एक रागिणी। इसमें गांधार और धैवत वर्जित हैं।

माधवी—एक वैष्णवी-कवि। ये नीलाचल (उड़ीसाके अन्तर्गत)-की रहनेवाली थी। शिखिमाइती और मुरारिमाइतीकी छोटी बहन होने पर भी वैष्णवग्रन्थमें उन्हें 'तीन भ्राता' बतलाया है।

महाप्रभु दाक्षिणात्यका पर्यटन कर जब नीलाचलमें पधारे, तब प्रथम दर्शनमात्रसे ही माधवीको उनके भगवदवतारका ज्ञान हो गया था। इसलिये वे उसी समय उनकी भक्तिन हो गईं।

माधवीदेवीके गौरविषयक पद ऐतिहासिकतत्त्वसे पूर्ण हैं।

जगन्नाथदेवके श्रीमन्दिरका दैनिक विवरण लिखनेके लिये एक लेखकको आवश्यकता थी। माधवीका लिखना अच्छा होता था। उनके स्वल्पाक्षर-ग्रथित रचनामाधुर्य, पाण्डित्य और बुद्धिगौरवसे मोहित हो कर राजा प्रतापरुद्रने स्त्री होने पर भी माधवीको इस पद पर सम्मानित किया था। उड़िया रमणी होने पर भी उनकी भाषा, भाव और लिखनेकी शैली बड़ी ही अच्छी थी। उनकी रचनामें सरलता और मधुरताका दुर्लभ निदर्शन जड़ा था।

माधवीय (सं० त्रि०) १ माधवाचार्य-प्रणीत, माधवाचार्यका बनाया हुआ। २ वसन्तसम्बन्धीय, वसन्तऋतुका।

माधवीलता (सं० स्त्री०) माधवी नामक सुगंधित फूलों की लता। माधवी देखो।

माधवीवन—दाक्षिणात्यके अन्तर्गत एक प्राचीन तीर्थ। यह मद्रास-प्रदेशके तंजोर जिलेके तिरुकरकावुर नामक स्थानमें अवस्थित है। स्कन्दपुराणके माधवीवन-माहात्म्यमें इसका माहात्म्य वर्णित है।

माधवेन्द्रपुरी—पद्यावलीधृत एक कवि। कुमारहट्ट देखो।

माधवेन्द्र सरस्वती—शाङ्कर सम्प्रदायके आचार्य।

माधवेष्टा (सं० स्त्री०) माधवस्य इष्टा। १ वाराहीकंद। २ दुर्गा।

माधवोचित (सं० क्ली०) कक्कोल, कंकोल।

माधवोद्भव (सं० पु०) माधवादुद्भवोऽस्य। राजादनी, खिरनीका पेड।

माधव्य (सं० पु०) मधोर्गोत्रापत्यं मधु (मधुवभ्रोर्ब्राह्मण कौशिकयोः। पा ४।१।१०६) इति यञ्। १ मधुका गोत्रापत्य ब्राह्मण। २ शकुन्तला नाटकमें राजा दुष्मन्तके विदूषकका नाम।

माधी (हिं० पु०) भैरवरागके एक पुत्रका नाम।

माधुक (सं० पु०) १ मैत्रेयक नामकी संकर जाति। २ मधुक-पुष्पजात मदिरा, महुएकी शराब। ३ मधुरभाषिन्, प्रिय बोलनेवाला।

माधुकर (सं० त्रि०) १ मधुकर सम्बंधीय। २ मक्खीके समान इकट्ठा करनेवाला। ३ मधुक मद्य, महुएकी शराब।

माधुकरी (सं० स्त्री०) वृन्दावन तीर्थप्रसिद्ध भिक्षावृत्ति विशेष। मधुमक्खीकी तरह मौन हो कर दर दर भीख मांगनेसे इसका नाम माधुकरीवृत्ति पड़ा है। २ तृतीयाश्रम चार भिक्षुकोंकी पांच घरसे ली गई भिक्षा।

माधुकर्णिक (सं० त्रि०) मधुकर्ण सम्बन्धीय।

माधुगढ़—युक्तप्रदेश जलौन जिलेकी एक तहसील। यह पहुज और यमुना नदीके बीच अवस्थित है। भूपरिमाण २८२ वर्गमील है। इस तहसीलके पश्चिमसीमान्त वर्ती रामपुर, जगमोहनपुर और गोपालपुरके राजा तथा जमींदार अङ्गरेज गवर्मेण्टको किसी तरहका कर नहीं देते। उन्होंने अपनी अपनी भूसम्पत्तिके शासनकार्यकी देखरेखके लिये स्वतन्त्र विचारविभाग खोल रखा है किन्तु सभी विषयोंमें जिलेके डिपुटी कमिश्नरकी अनुमति लेनी पड़ती है। यहां ईखकी खेती अच्छी लगती है।

२ उक्त जिलेका एक नगर, तथा उसी तहसीलका विचारसदर। जनसाधारण इसे रानीजू नगर भी कहते हैं।

माधुकि (सं० पु०) दोनों अश्विनीकुमार।

माधुच्छन्दस (सं० त्रि०) १ मधुच्छन्दासम्भूत। २ अघमर्षण और जेतृका गोत्रापत्य।

माधुपर्किक (सं० त्रि०) मधुपर्क देनेके समय पूज्य व्यक्तिकी पाद्य, अर्घ्य और मधुपर्कादिसे पूजा करनी होती है। इस समय जो धन दिया जाता है उसीको माधुपर्किक कहते हैं।

"विद्या धनन्तु यद्यस्य तत् तस्यैव धनं भवेत्।
मैत्र्यमौद्वाहिकञ्चैव माधुपर्किकमेव वा॥" (मनु ६।२०६)

'माधुपर्किकं मधुपर्कदानकाले पूज्यतया यल्लब्धं तस्यैव तत् स्यात्' (कुल्लूक) इस माधुपार्किक धनका भाई आदिमें बंटवारा नहीं होता। यह जिसको मिलता उसीके पास रहता है।

माधुमत (सं० पु०) मधुमत्सु भवः मधुमत् (कच्छादिभ्यश्च। पा ४।२।१३३) इति अण्। काश्मीरदेशभव, काश्मीरमें होनेवाला।

माधुमतक (सं० त्रि०) मधुमत् (मनुष्यतत्स्थयोर्वुञ्। पा ४।२।१।१३४) इति वुञ्। काश्मीरदेशभव, काश्मीरदेशका।

माधुर (सं० क्ली०) मधु अस्ति अस्य अस्मिन् वेति मधु (उषसुषिमुष्क मधोः रः। पा ५।२।१०७) इति र ततः स्वार्थे अण्। १ मल्लिका, चमेली। (त्रि०) २ मधुरसम्भव, मीठा।

माधुरई (हिं० स्त्री०) मधुरता, मिठास।

माधुरता (सं० स्त्री०) मीठापन, मिठास।

माधुरी (सं० स्त्री०) माधुर-गौरादित्वात् ङीष्। १ मद्य, शराब। २ माधुर्य, शोभा।

"तानि स्पर्शसुखानि ते च तरलाः स्निग्धा दृशोर्विभ्रमा।
स्तद्वक्त्राम्बुजसौरभ स च सुधास्यदी गिरा वक्रिमा॥

सा विम्बाधरमाधुरीति विषया सङ्गेऽपि चेन्मानसं।
तस्या लग्नसमाधिहन्तविरहव्याधिः कथं वर्द्धते॥"
(गीतगो० ३ सर्ग)

माधुर्य (सं० क्ली०) मधुरस्य भावः मधुर-(वर्णदृढादिभ्यः ष्यञ् च पा ५।१।१२३) इति ष्यञ्। १ मधुर होनेका भाव, मधुरता। २ लावण्य, सुन्दरता।

"रूप किमप्यनिर्वाच्यं तनोर्माधुर्य मुच्यते।"
(उज्ज्वलनीलमणि)

शरीरके किसी अनिर्वचनीय रूपविशेषका नाम माधुर्य है। २ पाञ्चालीरीतिविशिष्ट काव्यगुण। साहित्य-दर्पणमें लिखा है, कि जिस रचनामें चित्त द्रवीभूत होता और अत्यन्त प्रसन्नता आती है उसे माधुर्य कहते हैं। यह सम्भोग, करुण, विप्रलम्भ और शान्त रसमें ही अधिक होता है। इसमें अवृत्ति वा अल्पवृत्ति तथा इसकी रचना मधुर होगी। इस रचनामें अन्त्यवर्ण, युक्तवर्ण तथा ट, ठ, ड और ढ आदि वर्णोंका प्रयोग दोषावह है।

"चित्तद्रवीभावमयोह्लादोमाधुर्य मुच्यते।
सम्भोगे करुणे विप्रलम्भे शान्तेऽधिकं क्रमात्॥
मूर्द्धिन वर्गान्त्यवर्णेन युक्ताष्टठ-ड-ढान विना।
रणौ लघु च तद्व्यक्तौ वर्णाः कारणतां गताः॥
अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा मधुरा रचना तथा॥"
(साहित्यदर्पण ८ परि०)

३ नायिकोंका अयत्नज अलङ्कारविशेष।

"सङ्क्षोभेष्वप्यनुद्वेगो माधुर्य परिकीर्त्तितम्।"
(साहित्यदर्पण ३।१२९)

सङ्क्षोभकालमें भी जो चित्तका अनुद्वेग रहता है, उसे माधुर्य कहते हैं। ४ सात्त्विक नायक गुणभेद, विना किसी कारणके शृङ्गार आदिके ही नायकका सुन्दर जान पड़ना। ५ वाक्यमें एकसे अधिक अर्थोंका होना, वाक्यका श्लेष।

"या पृथक्पदतावाक्ये तन्माधुर्य प्रकीर्त्यते।"

६ मिठाई, मिठास।

माधुर्य प्रधान (सं० पु०) गानेका एक प्रकार, वह गाना जिसमें माधुर्यका अधिक ध्यान रखा जाय और उसके शुद्ध रूपके विगड़नेकी परवा न की जाय।

माधूक (सं० पु०) वर्णसङ्कर जातिविशेष। इस जातिके लोग मधुर शब्दोंमें लोगोंकी प्रशंसा करते हैं इसीसे ये माधूक कहलाते हैं। मनुष्योंकी सदा प्रशंसा करना ही इनकी वृत्ति है।

"मैत्रेयकन्तु वैदेहो माधूकं सम्प्रसूयते।
नॄन् प्रशंसत्यजस्रं यो घण्टाताडोऽरुणोदये॥"
(मनु १०।३३)

कुछ लोग इन्हें वन्दी भी कहते हैं। ये प्रातःकाल घंटा बजा कर राजाओंकी अजस्र प्रशंसा करते हैं जिससे उनकी नींद टूट जाती है।

माधूकर (सं० त्रि०) मधुमक्खियोंके जैसा संग्रह करनेवाला।

माधूची (सं० स्त्री०) मधु ब्राह्मणपूजक।

"या देवप्रीतये मधुमाच्चीभ्या मधुमाधूचीभ्या"
(शुक्ल यजु ३७।१८)

'माधूचीभ्यां मधुब्राह्मणमञ्चयतः पूजयतः तौ मध्वञ्चौ ताभ्यां मध्वग्भ्यामिति प्राप्ते ङोपि अलोपे मधूचीभ्यामिति लिङ्गव्यत्ययः आदिदीर्घश्छान्दसः' (वेददीप)

माधूल (सं० पु०) मधूल गोत्रापत्य।

माधो (हिं० पु०) १ श्रीकृष्ण। २ श्रीरामचन्द्रजी।

माधौ (हिं० पु०) माधव देखो।

माध्यन्दिन (सं० त्रि०) मध्ये भव, मध्य (अन्तःपूर्वपदात्। ठञ्। पा ४।३।६०) इत्यत्र काशिकासूत्रवृत्तौ 'मध्यो मध्यं दिनण् चास्मात्' इति दिनण्। १ मध्यम, दिनका मध्य भाग, दोपहर। २ मध्यन्दिनसम्बन्धी।

माध्यन्दिनशाखा (सं० स्त्री०) शुक्लयजुर्वेदकी एक शाखा।

माध्यन्दिनायन (सं० पु०) माध्यन्दिन शाखाका गोत्रापत्य।

माध्यन्दिनि (सं० पु०) १ माध्यन्दिनका गोत्रापत्य। २ एक वैयाकरण।

माध्यन्दिनी (सं० स्त्री०) शुक्ल यजुर्वेदकी एक शाखाका नाम।

माध्यन्दिनीय (सं० त्रि०) १ माध्यन्दिन शाखा सम्बन्धीय। (पु० २ नारायण, परमेश्वर।

माध्यन्दिनीयक (सं० क्ली०) माध्यन्दिन तीर्थ।

माध्यन्दिनेय (सं० पु०) १ मध्यदिन सम्बन्धी यज्ञ, दोपहरका यज्ञ। २ मध्य, बीच।

माध्यम (सं० त्रि०) मध्ये भवं मध्य (अन्तःपूर्वपदाट् ठञ्। पा ४।३।६०) इत्यस्य काशिकासूत्रवृत्तौ 'मणमीयौ च प्रत्ययौ वक्तव्यौ' इति मण्। १ मध्यभव, मध्यका, बीचवाला।

"मध्यम माध्यम मध्यमीय माध्यन्दिनश्च तत्॥" (हेम)

(पु०) २ वह जिसके द्वारा कोई कार्य सम्पन्न हो, कार्यसिद्धिका उपाय या साधन।

माध्यमक (सं० त्रि०) काठकके अन्तर्गत मध्य शाखा।

माध्यमकेय (सं० पु०) जातिविशेष।

माध्यमिक (सं० पु०) १ मध्यदेश। २ मध्यदेशका निवासी।

माध्यमिक—बौद्धोंका दार्शनिक मतभेद। बौद्धोंका चार मत बड़ा ही प्रबल हुआ था जिनमें वैभाषिक और सौत्रान्तिक हीनयानमतानुवर्त्ती तथा योगाचार और माध्यमिक महायान समर्थक हैं। महायान देखो।

माध्यमिक लोग बहुत कुछ शून्यवादी या पूर्ण नास्तिक समझे जाते हैं। बहुतोंका विश्वास है, कि सुप्रसिद्ध नागार्जुनने ही आदि बुद्धमतका सार संग्रह कर इस मतका प्रचार किया। सांख्यप्रवचनभाष्य (१।२२) में विज्ञानभिक्षुने जिस नामरूपका खण्डन किया है, माध्यमिक भी वैदान्तिकके समान उस चूड़ान्त नामरूपको स्वीकार कर गये हैं। वेदान्त-भाष्यकार शङ्करने जिस प्रकार 'पारमार्थिक' और 'व्यवहारिक' इन दो स्थूल सत्यको स्वीकार किया है, माध्यमिकोंने भी उसी प्रकार "परमार्थ" और 'संवृति'को माना है। बोधिचर्यावतारमें शान्तिदेवने लिखा है,—

"संवृतिः परमार्थश्च सत्यद्वयमिदं मतम्।
बुद्धेरगोचरस्तत्त्वं बुद्धिः संवृतिरुच्यते॥ २
एवं न च निरोधोऽस्ति न च भावोऽस्ति सर्वदा।
अजातमनिरुद्धञ्च तस्मात् सर्वमिदं जगत्॥ १५०
स्वप्नोपमास्तु गतयो विचारे कदलीसमाः।
निर्वृतानिर्वृतानाञ्च विशेषो नास्ति वस्तुतः॥" १५१

तत्त्वबुद्धिका अगोचर यही बुद्धि संवृति है। यह समस्त संसार कभी उत्पन्न नहीं होता और न रुद्ध ही होता है—इसके निरोध वा भाव नहीं है। सभी स्वप्नवत् है। यथार्थमें जिन्होंने निर्वाण प्राप्त किया है और जिन्होंने नहीं किया है, दोनों ही समान हैं, कुछ भी विशेषता नहीं है। माधवाचार्यने सर्वदर्शनसंग्रहमें भी ठीक इसी प्रकार माध्यमिक-मत प्रकाश किया है,—'माध्यमिक मत कुछ भी नहीं है—सभी शून्य है। जो सब वस्तु स्वप्नमें देखी जाती हैं वह जगतमें कुछ भी देखी नहीं जाती। फिर जो वस्तु जगतमें दृष्टिगोचर होती है, स्वप्नमें वह कुछ भी नजर नहीं आती, सोतेमें कोई वस्तु दिखाई नहीं देती है। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है, कि वस्तुतः कुछ भी नहीं है सभी स्वप्नवत् है—केवल शून्य ही तत्त्व है।'

माध्यमिकगण 'माया' शब्दको नहीं मानते। साङ्ख्यके प्रधान और प्रकृतिकी तरह वे 'प्रज्ञा' और 'उपाय'-का व्यवहार करते हैं। उनके मतानुसार मूल जो सत्य है उसमें भला बुरा कुछ भी नहीं है। माया हीसे पाप पुण्य होता है—

"मायापुरुषघातादौ चित्ताभावान्नपापकम्।
चित्ते मायासमेते तु पापपुण्य समुद्भवः॥" (शान्तिदेव)

माध्यामिनेय (सं० पु०) मध्यमाका अपत्य।

माध्यस्थ (सं० त्रि०) १ मध्यवर्त्ती, दो मनुष्यों वा पक्षोंके बीचमें पड़ कर किसी वाद विवाद आदिका निपटेरा करनेवाला, पंच। २ पक्षपातशून्य, निरपेक्ष। ३ कुटना। ४ दलाल। ५ व्याह करानेवाला ब्राह्मण, बरेखी।

माध्यस्थ्य (सं० क्ली०) १ मध्यस्थ होनेका भाव, मध्यस्थता। २ औदासीन्य, उदासीनता।

माध्याकर्षण (सं० क्ली०) पृथ्वीके मध्य भागका वह आकर्षण जो सदा सब पदार्थोंको अपनी ओर खींचता रहता है और जिसके कारण सब पदार्थ गिर कर जमीन पर आ पड़ते हैं।

इङ्गलैण्डके प्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता न्यूटनने वृक्षसे एक सेवको जमीन पर गिरते हुए देख कर यह सिद्धान्त स्थिर किया था, कि पृथ्वीके मध्य भागमें एक ऐसी आकर्षणशक्ति है जिसके द्वारा सब पदार्थ यदि बीचमें कोई चीज बाधक न हो, तो उसकी ओर खिंच आते

हैं। जिस प्रकार चुम्बककी अयस्कर्षणीशक्ति स्वभाव सिद्ध है, उसी प्रकार लोहेमें भी चुम्बक खींचनेकी शक्ति है। किन्तु यह शक्ति प्रत्यक्ष दिखाई न देने पर भी उसकी विशेषता मालूम हो जाती है। लोहेको छोड़ कर किसी दूसरे ज्ञात पदार्थमें चुम्बककी आकर्षणी-शक्ति जिस प्रकार साफ साफ दिखाई नहीं देती, उसी प्रकार जागतिक विभिन्न पदार्थके मध्य जो एक अननुभूत आकर्षणशक्ति विद्यमान है, उसे सहजमें जाननेका उपाय नहीं।

सर आइजक न्युटनने गभीर गवेषणा द्वारा जो आणविक वा पादार्थिक आकर्षणशक्तिकी विद्यमानता स्थिर की है उसका ज्योतिर्विद् प्रवर भास्कराचार्य, जिनका जन्म न्यूटनसे बहुत पहले हुआ था, अपने गोलाध्यायमें 'आकृष्टिशक्तिश्च महीतया यत्***" श्लोकमें विवरण कर गये हैं। अतएव हम लोग सिर्फ इतना ही कह सकते हैं, कि भास्कराचार्यकी इस वस्तुकी स्वशक्ति आइजक न्युटन द्वारा विस्तृततरूपसे आलोचित हो कर जनसमाजमें प्रचारित हुई है। सच पूछिये, तो इस शक्तितत्त्वका उद्भावक यूरोप नहीं, हम लोगोंकी आर्यप्रधान भारतभूमि हैं।

पण्डित न्युटनने कहा है, कि माध्याकर्षण भौतिक पदार्थनिष्ठ, अनिमित्तक वा सहजधर्म है। इस धर्म वशतः एक जड़वस्तु मध्यवर्त्ती बिना किसी संयोजक-आलम्बनकी सहायताके दूरस्थित दूसरी एक जड़वस्तुके ऊपर क्रिया कर सकती है। माध्याकर्षण निश्चय ही निर्दिष्ट नियमानुसार क्रियाकारिशक्तिविशेष द्वारा प्रवर्त्तित होता है। यह शक्ति भौतिक है वा अभौतिक, इसी पर विचार करना आवश्यक है।

उक्त पण्डित-प्रवरने अपने ग्रंथमें दूसरी जगह अभिघात वा आपीड़नको ही माध्याकर्षणका कारण वतलाया है। प्रसिद्ध गणिताध्यापक इलर (*Eular*) माध्याकर्षणको किसी चेतन पदार्थ अथवा किसी सूक्ष्म-अतीन्द्रिय शक्तिविशेषका कार्य्य समझते हैं। अध्यापक चालिस (Prof. Challis)-ने माध्याकर्षणका प्रकृत तत्त्व जाननेके लिये वर्षों गभीर-गवेषणा की और आखिर जड़वस्तुओंके परस्पर संयोगजनित आपीड़नको ही इसका मूल कारण स्थिर किया। वे स्पष्टतया कह गये हैं, कि वस्तुसङ्घके संयोगके सिवा माध्याकर्षणका दूसरा कारण और हो ही नहीं सकता।

माध्याकर्षणका तत्त्व जाननेके लिये वैज्ञानिक लोग जिन सब अनुमानोंकी कल्पना कर गये हैं उनमें कोई भी आज तक समीचीन और सर्व्ववादिसम्मत नहीं माना गया है। लार्ड केलविनके आवर्त्तवादसे माध्याकर्षणकी उत्पत्ति होनेकी आशाको बहुतेरे पोषण करते हैं। अध्यापक टेट (Tait) और ष्टुवार्ट (Stewart)-के मतसे तैजस इथर (Luminiferous Ether)-के साथ माध्याकर्षणका सम्बन्ध स्थापन बिलकुल निष्फल है।

माध्याकर्षण कहनेसे सचमुच प्रत्येक वस्तुके साथ भिन्न जातिकी प्रत्येक वस्तुका आकर्षण ही समझा जाता है। यह (attraction of Gravitation) चौम्बक आकर्षण (Magnetic attraction)-से बिलकुल पृथक् है। इन दोनों आकर्षणी-शक्तिके गुरुत्व (*Intensities*)-की विभिन्नता पर ध्यान देनेसे आपे आप विस्मय होना पड़ता है। किन्तु अनुशीलन द्वारा उस सूक्ष्मतम तत्त्वका हाल मालूम हो जानेसे और कोई सन्देह रहने नहीं पाता।

सचमुच चुम्बकमें दो पृथक् जातीय आकर्षणकी विद्यमानता मौजूद है। उनमेंसे एक है चुम्बककाधारस्थित चौम्बक आकर्षण—इसीसे वह लोहेको नजदीक खींच लाता है। फिर वर्त्तमान प्रतिपादित माध्याकर्षण शक्तिके बलसे वह लोहे द्वारा आकृष्ट होता है, ऐसा कह सकते हैं। अतएव एक चुम्बकमें युगपत् चौम्बक और वास्तव आकर्षण विराजमान है। इसीसे चौम्बक-आकर्षणमें पादार्थिक आक्रमणसे ज्यादा बल बतलाया है। यह स्वतःसिद्ध माने जाने पर भी वस्तुकी आकृतिगत विभिन्नताके अनुसार आकर्षणमें भी तारतम्य हुआ करता है। किन्तु साधारण पदार्थमात्रका घनत्व (intensity) और आकृति परिमाण कितना ही बड़ा क्यों न हो, चौम्बक-आकर्षणकी तुलनामें माध्याकर्षणशक्ति करोड़ों अंशमें कम होगी।

इस प्रकार विभिन्न वैज्ञानिकोंके विभिन्न मतकी पोषकता करने पर भी जब उससे किसी असल बातका पता नहीं लगता, तब हम लोग निश्चय ही प्राचीन-सिद्धान्तका आश्रय लेते हुए द्रव्योंके अन्यान्य अभिघात वा आपीड़नको माध्याकर्षण-क्रियाका निष्पत्ति-सूचक कह सकते हैं।

सचमुच वस्तुमात्रमें अवस्थित माध्याकर्षणशक्तिकी अधिकता इतनी थोड़ी है, कि दो एक विशिष्ट कारणों तथा सुप्रणालीबद्ध गभीर आलोचनाको छोड़ कर हम लोग उसका अस्तित्व नहीं जान सकते। एक मेजके ऊपर दो किताब रखनेसे यह कहना होगा, कि वे एक दूसरेको आकर्षण करती हैं। कारण भौतिक पदार्थका आकर्षण अवश्यम्भावी है। किन्तु उस आकर्षणका प्रभाव इतना कम है, कि मेज पर रखी जानेके कारण मेजके आकर्षणको अतिक्रम कर एक दूसरेकी ओर अग्रसर नहीं हो सकती। जो कुछ हो, परीक्षा द्वारा मालूम हुआ है कि दो जड़पिण्डको आकृतिके परिमाणानुसार उनके आणविक सङ्कर्षणमें भी पृथकता होती है। उन दो जड़पदार्थका आकार यदि छोटा हो, तो उनकी शक्ति भी छोटी होगी, इस कारण विना परीक्षाके उसका ज्ञान नहीं हो सकता। किन्तु यदि उन दो पदार्थोंमें एक पदार्थ दूसरेसे बड़ा हो, तो आकर्षणशक्तिकी अधिकता सहजमें मालूम हो जायगी।

इस प्रकारकी प्रणालीका अनुसरण कर हम लोगोंने प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा जागतिक माध्याकर्षणशक्तिका अस्तित्व अनुभव करना सीखा है। पृथिवीसे संलग्न जितनी जड़ और चेतन वस्तु हैं उन्हें देख कर हम लोग इस शक्तिका प्रकृत सत्त्व निरूपण करनेमें समर्थ हुए हैं। इस पृथिवीकी आकृति बड़ी होनेके कारण उसके ऊपर या समीपमें जो पदार्थ है, उस पर इस बृहत् जड़पिण्डकी आकर्षणीशक्ति जो ज्यादा पड़ती है, वह सहजमें मालूम होता है।

वस्तुविशेषके भारीपनके अनुसार उस उस वस्तुके साथ पृथिवीकी आकृष्टि-शक्तिका सामञ्जस्य है। इसी आकर्षणके कारण ऊपर फेंकी गई वस्तु पृथ्वी पर गिरती है। पृथ्वीमें ऐसी आकर्षणशक्ति है, कि वह ऊपरवाली सभी वस्तुओंको अपनी ओर खींचती है। यदि इसमें खींचनेकी शक्ति न होती, तो ऊपर फेंकी गई वस्तु ऊपर ही ठहर जाती।

स्वभावतः ऊपर फेंकी गई वस्तुमात्र ही नीचे गिरती है, इसका कारण क्या? इस प्रश्नको हल करनेके लिये विज्ञानविद्गण परीक्षा और प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा जिस सिद्धान्त पर पहुंचे हैं, नीचे उसका संक्षिप्त विवरण दिया जाता है।

परीक्षा द्वारा देखा गया है, कि निर्वातस्थानमें एक भारी सीसेके टुकड़े और हलके काग (शोला)-को नीचे गिरानेसे दोनों एक ही समयमें पृथ्वी पर पहुंचते हैं। किन्तु खुले मैदानमें एक पर और एक खण्ड पत्थरको समान ऊंचाईसे नीचे गिराने पर ऐसा देखा गया है, कि परसे पहले पत्थरका टुकड़ा जमीन पर गिरा। इसका कारण यह है, कि शेषोक्त दो वस्तुओंका आपेक्षिक गुरुत्व और आकृति-मान समान नहीं है। अलावा इसके पृथ्वी परकी वायु पत्थरकी अपेक्षा परको नीचे उतरनेमें बाधा देती है, इसीसे आकर्षणशक्तिमें फर्क पड़ जाता है।

यदि किसी वैज्ञानिक उपायसे वायुको वहांसे निकाल लिया जाय, तो साफ तौरसे देखनेमें आयेगा, कि उपरोक्त पत्थर और पर एक ही समयमें एक ही ऊंचाईसे जमीन पर गिरेगा।

वस्तुकी आकर्षणी-शक्तिका निरूपण करनेके लिये वैज्ञानिकगण पतनशील वस्तुके आपेक्षिक गुरुत्व और उसके आवयविक परिमाणके ऊपर निर्भर करके पतनकालका पार्थक्य और आकर्षण-प्रभाव निर्देश कर गये हैं। वे कहते हैं, कि पृथ्वी पर यदि वायुप्रवाह न रहता, तो उस शून्य अन्तरीक्षसे एक वेलन वा पक्षीको नीचे उतरनेमें जितना समय लगता, उतने ही समयमें ५६ पौंड तौलका एक जड़पिण्ड भी जमीन पर गिरता।

केवल वस्तुके घनत्व और गुरुत्वके ऊपर वस्तुका पतन-समय निर्भर करता है, सो नहीं। भूपृष्ठके स्थान-विशेषमें वायुस्तरकी विभिन्नता तथा भूपञ्जरके तारतम्यानुसार भी इस पतन वा आकर्षण-शक्तिमें बहुत कुछ पृथकता होती है।

किसी वस्तुको जब ऊपरसे नीचे गिराते हैं, तब वह प्रथम मुहूर्त्तमे जहां तक जाती है, दूसरे मुहूर्त्तमें उससे भी दूर चली जाती है। इस प्रकार तृतीय और चतुर्थ मुहूर्त्तमे उसका वेग और भी बढ़ता ही जाता है। इसका कारण यह है, कि ऊपर फेंकी गई वस्तु पतन-कालमें जितना ही नीचे उतरेगी, उतनी ही उसकी आकर्षणी-शक्ति भी बढ़ती जायगी। आकर्षणी-शक्तिको इस विशेषताके कारण घड़ीके दोलक (Pendulum)-की गतिका पार्थक्य निरूपित हुआ है।

उपरोक्त घड़ोसे साफ साफ प्रमाणित होता है, कि वस्तुमात्र ही एक केन्द्रातिग-आकर्षण प्रभावसे एक दूसरेके साथ निबद्ध है। जागतिक सभी पदार्थ जिस प्रकार भूकेन्द्रकी ओर एक सरल रेखा पर आकर्षित होते हैं, उसी प्रकार वे भी अपनी अपनी केन्द्राभिमुखी आकर्षणी-शक्तिसे भूकेन्द्रकी ओर आकृष्ट होते हैं।

इस प्रकार नक्षत्रादि गतिका लक्ष्य कर वैज्ञानिकोंने स्थिर किया है, कि प्रत्येक ग्रह अपनी अपनी दूरीके व्यवधानानुसार सूर्यकेन्द्रकी ओर आकर्षित होता है। हम लोग देखते हैं, कि इसी एक नियम और शक्तिवशसे उपग्रह-मण्डली भी अपने अपने कक्ष पर घूमती है। सर आइजक न्युटन जागतिक दोनों वस्तुकी परस्पर आकर्षण शक्तिका निरूपण कर जनसाधारणमे जिस नियम को लिपिबद्ध कर गये हैं, वर्त्तमान युगमे वह भिन्न भिन्न वैज्ञानिकसे भिन्न भिन्न रूपमें प्रतिपादित होने पर भी जनसाधारणने उसीको सत्य समझ कर ग्रहण कर लिया है।

माध्याह्निक (सं० त्रि०) मध्याह्नकाल सम्बन्धीय, ठीक मध्याह्नके समय किया जानेवाला कार्य्य।

माध्व (सं० पु०) १ मध्वाचार्यके मतावलम्बीमात्र, वैष्णवोंके चार मुख्य सम्प्रदायोंमेंसे एक जो मध्वाचार्य-का चलाया हुआ है। इस मतवाले काले-तिलक लगाते और प्रति वर्ष चक्रांकित होते रहते हैं।

मध्वाचारी, मध्वाचार्य और पूर्णप्रज्ञ देखो।

२ मध्वाचार्यका शिष्य-सम्प्रदाय। ३ माधवी मद्य, महुएकी शराव। ४ मधुर-कण्टक नामकी मछली।

माध्वक (सं० क्ली०) माध्वीक पृषोदरादित्वात् ईकार-ह्रस्वाकारः। माध्वीक, महुएकी शराव।

माध्वब्राह्मण—दाक्षिणात्यके एक श्रेणीके ब्राह्मण। मध्वाचार्यके मतावलम्बी ब्राह्मण माध्वब्राह्मण वा वैष्णव कहलाते हैं। इस श्रेणीके ब्राह्मण अठारह थोकोंमें विभक्त हैं। बम्बई प्रदेशमें धारवार जिलेके प्रायः सभी बड़े बड़े शहरों और ग्रामोंमें इस श्रेणीके ब्राह्मणोंका वास है। समाजमें इनका यथेष्ट सम्मान और प्रतिपत्ति देखी जाती है। इनमेंसे बहुतेरे हजारों वर्षसे एक ही स्थानमें वंशपरम्परासे वास करते आ रहे हैं।

इस श्रेणीके ब्राह्मण कभी भी अपने हाथसे हल नहीं चलाते। सरकारी नौकरी, व्यवसाय, याजकता अथवा भूम्याधिकारिताका अवलम्बन कर अपनी जीविका निर्वाह करते हैं। कर्णाटी उनकी मातृ-भाषा है। फिर किसी किसी थोकके लोग मराठी अथवा मराठी-मिश्रित कणाड़ी भाषामें भी बोलचाल करते हैं। पुरुषोंके नामके पहले देव और स्त्रियोंके नामके पहले देवी अथवा नदी-वाचक शब्दका प्रयोग रहता है। उनके उपास्य देवता हैं मङ्गलरके अन्तर्गत उदपीके कृष्ण, मान्द्राजके अन्तर्गत अहोबले, निजामराज्यके अन्तर्गत कप्राके नृसिंह, श्रीरङ्ग-पत्तनके रङ्गनाथ, तिरुपतिके वेङ्कटरमण और पण्ढरपुरके विठोवा।

इनके अठारहों थोकोंमें आपसमें खान-पान चलता है। सगोत्र-विवाह प्रचलित नहीं है। स्त्री-पुरुष दोनों ही देखनेमें सुन्दर और बलिष्ठ होते हैं।

ये लोग ललाटमें श्रीमुद्रा अथवा जातीय चिह्न धारण करते हैं जिससे उन्हें सहजमें पहचाना जाता है। विवाहिता स्त्रियां मांगमें सिन्दूर पहनती तथा विधवा कपाल पर छोटीसी श्रीमुद्रा और कृष्णरेखा अङ्कित करती हैं। इन लोगोंके पुरोहित अपरिमितभोजी हैं, किन्तु दिन-रातमे सिर्फ एक ही शाम खाते हैं। लशुन और प्याज कोई भी नहीं खाता। उत्सवादिमें खिचड़ी आदि मुख-रोचक अन्नका भी व्यवहार होता है। ये लोग फल अधिक खाते हैं।

मादक द्रव्यको ये लोग छूते तक भी नहीं। उत्सवादिमें मृगनाभि, कपूर तथा अन्यान्य सुगन्धित द्रव्यों-के साथ सुवासित पेय पदार्थ प्रस्तुत करते हैं। शुभ

कार्योपलक्षमे प्रस्तुत पिष्टकादिका श्राद्धादिमें तथा श्राद्ध-कार्यमें प्रस्तुत पिष्टकादिका विवाहादिमें व्यवहार बिलकुल निषिद्ध है। भोजके समय पहले कुल सामग्री विष्णु, लक्ष्मी और हनुमानको उत्सर्ग करते और तब लोगोंके बीच परोसते हैं। शुभकार्यादि उपलक्षमें भोजनके समय केलेके पत्तेका जो अंश वाम भागमें रहता है, श्राद्धादि उपलक्षमें भोजनके समय वह अंश दक्षिण भागमें रखना होता है।

छोटे छोटे बच्चोंको छोड कर सूर्योदय और सूर्यास्तके मध्य कोई भी दो बार नहीं खाता। विधवा दिनमें एक बार खाती और रातको सिर्फ जल पी कर रहती हैं। पर्वाह, पक्षान्त, मकरसंक्रान्ति, विषवसंक्रान्ति आदि दिनोंमें ब्राह्मणमात्रको ही एकाहारी रहना होता है।

माध्वब्राह्मणोंकी धारणा है, कि रातमें ब्राह्मण-भोजन करानेसे अत्यन्त पुण्य होता है। भोजन करनेके बाद कोई पान खाता, कोई तमाकू पीता और कोई नस लेता है।

इनकी स्त्रियां कुरता पहनती हैं। विधवा सफेद साडी पहनतीं और उत्तरीयसे अपने शरीरको ढके रहती हैं। ब्राह्मण शिखामात्र रख कर शिर मुडवाते हैं। उपनयनसे पहले बालकोंका मस्तकमुण्डन नहीं होता। पुरुषमात्र ही मूंछ रखते हैं। बालिका और विवाहिता स्त्रियां जूडा बांधती हैं और उसे तरह तरहकी पुष्पमालासे सजाती भी हैं।

पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यताके प्रादुर्भावसे अङ्गरेजी शिक्षित युवकोंमेंसे कितने विलायती पोशाकके शौकीन हो गये हैं। माध्व-संन्यासीकी वेशभूषा स्वतन्त्र है। वे सिर्फ गेरु कौपीन पहनते हैं। वे लोग यज्ञोपवीत अथवा अलङ्कारादिका व्यवहार नहीं करते। किन्तु सभी ललाटमें जातीय तिलक धारण करते हैं। उनके हाथमे डंडा और पैरमें खड़ाऊं रहता है। माधवब्राह्मणोंमें बालविधवायें भी किसी प्रकारका अलङ्कारादि नहीं पहनतीं।

पुरुष और स्त्री दोनों ही शरीरकी शोभा बढानेके लिये अलङ्कार पहनते हैं। जो धनी हैं उनके पैरके भूषणको छोड़ कर और सभी भूषण सोने, मणिमुक्ताके होते हैं। केवल राजा और रानी अपने पैरोंमें सोनेके अलङ्कारादि पहन सकती हैं। क्योंकि जनता उन्हें देवता समझ कर पूजती है।

माध्वब्राह्मण साधारणतः कार्यदक्ष, विनीत, परिष्कार परिच्छन्न और अतिथिवत्सल होते हैं। शास्त्रानुमोदित क्रियाकलाप तथा नानाविध व्रतनियमादिके अनुष्ठानमें सभी तत्पर रहते हैं। शिवरात्र तथा होलीमे सभी उत्सव मनाते और एकादशी तथा जन्माष्टमीमें उपवास करते हैं। विष्णुपञ्चरात्र तथा चान्द्रायणका अनुष्ठान भी सर्वत्र दिखाई देता है। समय समय पर वे काशी, बदरिकाश्रम आदि प्रधान प्रधान तीर्थोंके भी दर्शन करने जाते हैं। हरएकको दीक्षागुरुसे मन्त्र लेना पडता है। विवाहित व्यक्ति भी दीक्षा-गुरु हो सकते हैं। किन्तु दीक्षागुरु होनेके बाद वह स्त्रीका मुखदर्शन अथवा किसी कन्याका पाणिग्रहण नहीं कर सकता। गर्भाधानसे ले कर अन्त्येष्टि तक सोलह प्रकारके संस्कार प्रचलित हैं। प्रथम प्रसवके समय कन्याको अपने मैके जाना होता है। प्रसवके समय जब अधिक वेदना मालम होती है, तब पुरानी मुहरको जलमें धो कर वही जल उसे पिलाया जाता है। इससे प्रसूति सुखपूर्वक प्रसव कर सकती है। शिशुके भूमिष्ठ होते ही एक बहुत पुरानी सोनेकी अंगूठीको मधुमें डाल कर दो एक बूंद वही मधु उसको मुखमें दिया जाता है। जातकर्मसे निष्क्रमण और अन्नप्राशनसे विवाह पर्यन्त सभी संस्कार नियमपूर्वक होते हैं। लड़केकी मासी ही उसका नाम रखती है। इस समय उसे नया कपड़ा मिलता है।

बालकका उपनयन-संस्कार बड़ी धूमधामसे होता है। जिस बालकके यज्ञोपवीत हो गया है, वह तीन बार सन्ध्योपासन करता है।

इन लोगोंमें बाल्यविवाह प्रचलित है। बालकोंका ८से २० वर्षके भीतर और बालिकाओंका ४से ११ वर्षके भीतर विवाह होता है। अर्थके लोभसे माता-पिता ६०।७० वर्षके बूढ़े साथ कन्याका विवाह देनेसे भी बाज नहीं आते।

कन्याका पिता ही पहले वरकी तलाश करता है। वर मिल जाने पर कन्याका पिता वरके पिताके पास

अपनी कन्याकी कोष्ठी भेज देता है। दोनोंकी कोष्ठीमें जब विवाहयोग्य मेल दिखाई देता है, तब ज्योतिषी विवाहकी सलाह देते हैं। वर-दक्षिणा ठीक हो जाने पर विवाह-लग्न स्थिर किया जाता है।

विवाहमें आनन्दोत्सवकी सीमा नहीं रहती। विवाहसे ले कर सप्तपदीगमन तक सभी कार्य वेदानुमोदित शास्त्रानुशासनसे ही होते हैं।

किसी व्यक्तिकी मृत्यु आसन्न दिखाई देने पर उसका शिर मुड़वा दिया जाता है। पीछे उसे गोपी-चन्दन द्वारा श्रीमुद्राकी तरह तिलककी छाप चक्र और शङ्खचिह्न दे कर सफेद वस्त्र पहना देते हैं। अनन्तर उसके मुखमें पञ्चगव्य दिया जाता है। समय रहने पर अवस्थानुसार वैतरनी-दान भी होता है।

उस मुमूर्षुके कानमें जोरसे विष्णुनाम सुनाया जाता और धर्मग्रन्थ पढ़ा जाता है। प्राण निकल जाने पर उसे पुनः स्नान कराया जाता और ललाट, वक्षःस्थल तथा बाहु पर श्रीमुद्राका चिह्न दिया जाता है। पीछे श्मशानमें ला कर यथाविधि अग्निक्रियादि होती है। तीन वर्षसे कम उमरवाले बालक और संन्यासीकी लाश गाड़ी जाती है। शवदाहके बाद कुछ हड्डीको किसी पूतसलिला नदीके जलमें फेंक देना होता है। दशवें दिन वृषोत्सर्गादि द्वारा श्राद्धक्रिया सम्पन्न होती है।

जाताशौच और मृताशौच दोनों ही दश दिन तक रहता है। अशौचके समय कोई भी किसी प्रकारका मिष्टान्न नहीं खा सकता। शास्त्रानुशासनकी कठोरता सभी विषयोंमें दिखाई देती है।

इन लोगोंमें स्त्रीकी अवरोध-प्रथा बहुत प्रबल है। नवोढ़ा स्त्री किसी स्त्रीके साथ बातचीत तक भी नहीं कर सकती।

प्रति श्रावण मासमें ही सभी माध्वब्राह्मण अपनी अपनी कन्याको ससुरालसे अपने घर लाते हैं। माध्व-समाजमें बाल्यविवाह और बहुविवाह प्रचलित रहने पर भी विधवाविवाह प्रचलित नहीं है।

माध्वाम्र (सं० क्लो०) आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

माध्विक (सं० पु०) मधुसंग्रहकारी, वह जो मधु इकट्ठा करता हो।

माध्वी (सं० स्त्री०) मधुनो विकारः, मधु-अण्-ङीप् (मृत्य वास्त्यवास्त्वमाध्वीति। पा ६।४।१७५) इति निपात्यते। १ मद्य, शराब। २ मध्वादिकृत सुरा, वह शराब जो महुएसे बनाई जाती है। ३ मधुर-कण्टक नामकी मछली। ४ पुराणानुसार एक नदीका नाम।

"तेभ्यः शान्ता च माध्वी च द्वे नद्यौ सम्प्रसूयाताम्।"
(मत्स्यपु० १२०।७१)

(त्रि०) ५ मधुमत्, मधुयुक्त।

माध्वीक (सं० क्ली०) माध्वी स्वार्थे कन्। १ मधूक-पुष्पकृत मद्य, महुएकी शराब। पर्याय—मध्वासव, माधवक, मधु। मद्य देखो। २ मधु, मकरंद। ३ द्राक्षा-कृत मद्य, दाखकी शराब। ४ निष्पाव, सेम।

माध्वीकफल (सं० पु०) माध्वीकं मधुमत् फलमस्य। मधुनारिकेल वृक्ष, मीठे नारियलका पेड़।

माध्वीका (सं० स्त्री०) श्वेत निष्पाव, सफेद सेम।

माध्वीमधुरा (सं० स्त्री०) माध्वीमद तदेव मधुरा। मधुरखर्जूर, मीठी खजूर।

माध्वीशर्करा (सं० स्त्री०) मधुशर्करा, चीनी। मधु आठ तरहका होता है इसीसे यह शर्करा भी आठ प्रकार-की है। इसके सभी गुण मधुके समान हैं।

माध्वीसिता (सं० स्त्री०) मधुशर्करा।

मान (सं० क्ली०) मीयतेऽनेनेति मा-करणे ल्युट्। परि-माण, तौल। पर्याय—यौतव, द्रवय, पाय्य, पौतव।

तुला, अंगुलि और प्रस्थके भेदसे मान तीन प्रकार-का है। तुलासे उन्मानादि, अंगुलिसे हस्तादि और प्रस्थसे द्रव्यादिका मान समझा जाता है।

"न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित्।
अतः प्रयोगकार्य्यार्थं मानमत्रोच्यते मया॥" (शार्ङ्गधर)

भावप्रकाशमें मानका विषय इस प्रकार लिखा है,—बिना परिमाणके किसी भी द्रव्यका प्रयोग नहीं हो सकता। इसलिये सबसे पहले मानकी परिभाषा जान लेना आवश्यक है। आयुर्वेदके मतसे मान दो प्रकार का है, मागध और कालिङ्ग। सभी मानोंसे मागध-मानकी ही श्रेष्ठता बतलाई गई है।

मान।—तीस परमाणुका एक त्रसरेणु होता है। झरोखेसे घरमें जो त्रसरेणुको ध्वंसी भी कहते हैं।

सूर्यकी किरण आती है, उसमे बहुतसे छोटे छोटे अणु दिखाई देते हैं, उसी एक अणुको ध्वंसी कहते हैं। छः ध्वंसीकी एक मरीचि, छः मरीचिकी एक राजिका, तीन राजिकाको एक सरसों, आठ सरसोंका एक जौ, चार जौका एक गुञ्जा (रत्ती), छः रत्तीका एक माश, (पर्याय—हेम और धामक) चार माशेका एक शान (दूसरा नाम धरण और टङ्क), दो शानका एक कोल (पर्याय—क्षुद्र, वटक और द्रंक्षण), दो कोलका एक कर्ष (पाणिमानिक, षोड़शिका, करमध्य, हंसपद, अक्ष, पिचु, पाणितल, किञ्चितपाणि, तिन्दुक, विडाल पदक, हंसपद, सुवर्ण, कवडग्रह और उडुम्बर, ये सब कर्षके पर्याय हैं), दो कर्णका एक अर्द्धपल (पर्याय—शुक्ति और अष्टमिका), दो अर्द्धपलका एक पल (पर्याय—मुष्टिमात्र, चतुर्थिका, प्रकुञ्च, षोड़शी और विल्व), दो पलकी एक प्रसृति, दो प्रसृतिकी एक अंगुलि (पर्याय—कुडव, अर्द्धशराव और अष्टमान), दो कुड़व या अंगुलि की एक माणिका (पर्याय—शराव और अष्टपल), दो शरावका एक प्रस्थ, चार प्रस्थ या ६४ पलका एक आढ़क (पर्याय—भाजन, कंस और पात्र), चार आढ़कका एक द्रोण (पर्याय—कलश, लल्वण, अर्मण, उन्मान, घट और राशि), दो द्रोण या ६४ शरावका एक सूर्प (कुम्भ), दो सूर्पकी एक द्रोणी, चार द्रोणी या ४०९६ पल (५१२ सेर)-की एक खारी, दो हजार पलका एक भार और एक सौ पलकी एक तुला होती है।

माशा, टङ्क, अक्ष, विल्व, कुडव, प्रस्थ, आढक, राशि, द्रोणी और खारी यह एक दूसरेसे यथाक्रम चार गुना भारी है अर्थात् माशासे टङ्क, टङ्कसे अक्ष आदि।

मागधपरिभाषा—चरकके मतसे ६ रत्तीका एक माशा, २४ रत्तीका एक टङ्क, ९६ रत्तीका एक कर्ष और सुश्रुतके मतसे ५ रत्तीका एक माशा, २० रत्तीका एक टङ्क और ८० रत्तीका एक कर्ष होता है।

कालिङ्गपरिभाषा—८ रत्तीका १ माशा, ३२ रत्तीका १ टङ्क, ढाई टङ्क अर्थात् ८० रत्तीका एक कर्ष होता है।

कालिङ्गमान।—कलिकालमें मनुष्य मन्दाग्नियुक्त, खर्वकाय और सत्त्वगुणविहीन होते हैं। अतएव उसीके अनुसार मानका प्रयोग करना उचित है। १२ सफेद सरसोंका एक जौ, २ जौका एक गुंजा, ३ गुंजेका एक वल्ल, ८ रत्तीका एक माशा (कहीं कहीं ७ रत्तीका) ४ माशेका एक शान, ६ माशेका एक गद्यान, १० माशेका एक कर्ष, ४ कर्षका एक पल, १० शानका एक पल और ४ पलका एक कुड़व होता है। प्रस्थादि करके अन्यान्य सभी मान पूर्ववत् है। मान शब्दसे मात्राका भी बोध होता है। मात्राका कोई निर्दिष्ट नियम नहीं है। काल, अग्नि, बल, वयःक्रम, प्रकृति, दोष और देश आदि विषयोंका विचार कर मात्राका प्रयोग करना होता है। उपयुक्त मात्रासे कम या बेशी औषधका प्रयोग करनेसे कोई फल नहीं। जिस प्रकार धधकती हुई आगमें थोड़ा जल डालनेसे वह नहीं बुझती उसी प्रकार कठिन रोगमें कम औषध देनेसे रोगको शान्ति नहीं होती। फिर जिस प्रकार खेतमे अपरिमित जल होनेसे फसलकी नुकसानी होती है उसी प्रकार सामान्य रोगमें अधिक औषधका प्रयोग करनेसे रोग घटता नहीं, बढ़ता ही जाता है। (भावप्रकाश मानपरिभाषा) परिमाण देखो।

२ सङ्गीत-शास्त्रानुसार जहां तालका विराम होता है, उसे मान कहते हैं। यह मान चार प्रकारका है, सम, विषम, अतीत और अनागत। (सङ्गीतशास्त्र)

(पु०) मन्यते बुध्यतेऽनेन इति मन घञ्। ३ चित्तकी समुन्नति, अभिमान, शेखी, धनादिके कारण किसी विषयमें यह समझना, कि हमारे समान कोई भी नहीं है।

"द्वेषं दम्भञ्च मानञ्च क्रोधं तैक्ष्ण्यञ्च वर्जयेत्।

(मनु ४।१६३)

द्वेष, दम्भ, मान तथा क्रोधादिका परित्याग करना ही उचित है। 'आत्मनि पूज्यता बुद्धिर्मानः" (नीलकण्ठ) अपनेको श्रेष्ठ समझनेका नाम मान है।

"अतिदर्पे हता लङ्का अतिमाने च कौरवाः।"

(चाणक्य)

अत्यन्त मानसे कौरव भी विनष्ट हुए थे।

न्यायदर्शनके अनुसार जो गुण अपनेमें न हो, उसे भ्रमसे अपनेमें समझ कर उसके कारण दूसरोंसे अपने आपको श्रेष्ठ समझना मान कहलाता है।

४ पुराणानुसार पुष्कर द्वीपके एक पर्वतका नाम

५ सामर्थ्य, शक्ति। ६ उत्तर दिशाके एक देशका नाम। ७ प्रतिष्ठा, इज्जत।

"अधमाः कलिमिच्छन्ति सन्धिमिच्छन्ति मध्यमाः।
उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महता धनम्॥
मानो हि मूलमथ स्य माने म्लाने धनेन किम्।
प्रभ्रष्टमानदर्पस्य किं धनेन किमायुषा॥"

(गरुडपु० ११५ अ०)

उत्तम व्यक्ति सम्मानकी इच्छा करते हैं। क्योंकि, बड़ोंके लिये मान ही एकमात्र धन है। मानका अर्थ है मूल। जिनकी मानहानि होती है उनका धन और आयु निष्प्रयोजन है अर्थात् मानहीन हो कर जीवित रहना अत्यन्त क्लेशकर है।

८ अनुरक्त दम्पतीके भावविशेषका नाम मान है।

"दम्पत्योर्भाव एकत्र सतोरप्यनुरक्तयोः।
स्वाभीष्टाश्लेषवीक्षादि निरोधी मान उच्यते॥"

(उज्ज्वल नीलमणि)

प्रिय व्यक्तिकी अपराधसूचक चेष्टाका नाम मान है। प्रिय व्यक्ति जो अपराध करता है और उस अपराधके लिये उसे जो मानसिक विकारकी उत्पत्ति होती है उसीको मान कहते हैं। रसमञ्जरीमें लिखा है, कि यह लघु, मध्यम और गुरुभेदसे तीन प्रकारका है। अल्प चेष्टा द्वारा अपनीत होनेको लघु, कष्ट करके अपनय करनेको मध्यम और अत्यन्त कष्टसे जो अपनय किया जाता है उसे गुरु कहते हैं। जहां असाध्य है वहां रसाभास होता है।

नायिका नायकको यदि दूसरी स्त्रीके साथ बातचीत करते देखे, तो उसे जो मान होता है उसका नाम लघु, नायक नायिकाके साथ बातचीत करते समय यदि किसी दूसरी नायिकाका नाम ले, तो नायिकाको जो मान उत्पन्न होता है उसका नाम मध्यम और नायकके अन्य नायिकाके साथ सम्भोगादि चिह्न देख कर जो मान होता है, उसका नाम गुरु है।

नाना प्रकारके कौतूकादि द्वारा लघुमान अपनीत होता है। शपथादि द्वारा मध्यम मान, चरणधारण और भूषणादि दान द्वारा गुरुमान अपनीत हुआ करता है।

(रसमञ्जरी)

९ ग्रह। १० परिच्छेदक। ११ मन्द।

मान—बम्बईप्रदेशके सतारा जिलान्तर्गत एक उपविभाग। भू-परिमाण ६४१ वर्गमील है। माननदीके दाहिने किनारे दहिवाड़ी गाँवमें इसका विचारसदर प्रतिष्ठित है।

मानक (सं० पु०) मानं वृहत्परिमाणस्य (शेषाद् विभाषा। पा ५।४।१५४) इति कप्। १ माणक, मानकच्चू। २ शराव, ५१ सेर। ३ मालाकन्द।

मानकक्षार (सं० पु०) मानकस्य क्षारः। मानकदण्ड-पत्रक्षार, मानकच्चूके डंठल और पत्तेको भस्म कर जो राख बनती है उसीको मानक्षार कहते हैं।

मानकच्चू (हिं० पु०) १ एक प्रकारका मीठा कंद जो बङ्गालमें बहुत अधिकतासे होता है। यह प्रायः तरकारीके रूपमें या दूसरे अनाजोंके साथ खाया जाता है। यह बहुत जल्दी पचता है, इसलिये दुर्बल रोगियों आदिके लिये बहुत लाभदायक है। कहीं कहीं अरारोट या सागूदानेकी जगह भी इसका व्यवहार होता है। आधुनिक चिकित्सकोंने इसे मृदु, विरेचक, मूत्रकारक और बवासीर तथा कब्जियतके लिये बहुत उपयोगी माना है।

२ एक प्रकारकी मिस्री जो सालिब मिस्रीके नामसे बाजारोंमें मिलती है।

मानकन्द (सं० पु०) मानकच्चू देखो।

मानकर—वर्द्धमान जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २३° २५′ ४०″ उ० तथा देशा० ८७° ३७′ ३०″ पू० कलकत्तेसे ९० मीलकी दूरी पर अवस्थित है। यह वाणिज्यका प्रधान केन्द्र है और यहां इष्ट-इंडियन-रेलवे-कम्पनीका एक स्टेशन भी है।

मानकलह (सं० पु०) १ ईर्षा, डाह। २ प्रतिद्वन्द्विता, चढ़ा-ऊपरी।

मानकलि (सं० पु०) अभिमानज कलह, वह विवाद जो घमंडसे खड़ा होता है।

मानकवि—राजपूतानेके रहनेवाले एक कवि। इनका जन्म संवत् १७५६में हुआ था। ये व्रजभाषाके बड़े निपुण कवि थे। राणा राजसिंह मेवाड़वालेकी आज्ञासे इन्होंने उदयपुरका इतिहास राजदेव विलास नामक ग्रन्थ बनाया था। इस ग्रन्थमें महाराणा राजसिंह और औरङ्गजेबकी अनेक लड़ाइयोंका वर्णन है।

मानकवि—चरखारीके रहनेवाले एक वन्दीजन। ये विक्रमशाह बुन्देला राजा चरखारीके दरबारमें थे।

मानकवि—एक कवि। ये बैसवारेके रहनेवाले ब्राह्मण थे। इनका जन्म सवत् १८१८में हुआ था। इन्होंने कृष्णकल्लोल नामक एक ग्रन्थ बना था और कृष्णखण्डका अनेक छन्दोंमें भाषा किया। इस ग्रन्थमें इन्होंने कई राजाओंको वंशावली भी दी है।

मानकृत (सं० त्रि०) सम्मानजनक।

मानकोट—शिवालिक पर्वतके अन्तर्गत एक छोटा सामंत-राज्य। सम्राट् अकबर शाहने ६६४ हिजरीमें इस नगर पर चढ़ाई कर राजा भक्तमल्लको परास्त किया था।

मानक्रीडा (सं० स्त्री०) सूदनके अनुसार एक प्रकारका छन्द।

मानक्षति (सं० स्त्री०) मान हानि।

मानगांव—१ बम्बई प्रदेशके कोलावा जिलान्तर्गत एक उपविभाग। भू-परिमाण ३५३ वर्गमील है।

२ उक्त उपविभागके अन्तर्गत एक बड़ा गांव। यह प्रसिद्ध राजगढ़दुर्गसे ३५ मील दूर पडता है। यहां डाक-घर, महकूमेकी कचहरी आदि हैं।

मानगृह (सं० पु०) रूठ कर बैठनेका स्थान, कोपभवन।

मानग्रन्थि (सं० पु०) मानस्य ग्रन्थिरिव वाधकत्वात्। १ अपराध, जुर्म। २ अभिमानवर्द्धन।

मानचित्र (सं० पु०) किसी स्थानका बना हुआ नकशा, जैसे ऐशियाका मानचित्र।

मानज (सं० पु०) १ क्रोध, गुस्सा। (पु०) २ मानसे उत्पन्न।

मानतरु (सं० पु०) पर्पटक, खेतपापड़ा।

मानतस् (सं० अव्य०) मान पञ्चम्याः सप्तम्या वा तसिल। मानसे या मान विषयमें।

मानता (हिं० स्त्री०) मनौती, मन्नत।

मानतुङ्ग (सं० पु०) इस नामके एकसे अधिक जैनाचार्य और जैनग्रन्थोंके नाम मिलते हैं, यथा—१ शातवाहन-राजके समसामयिक एक आचार्य। २ मालवके चौलुक्य-राज वयरसिंहका एक मन्त्री, जैन-श्वेताम्वरोंका तपा-गच्छ कुलोद्भव। तपागच्छ-पट्टावलीसे जाना है, कि उसने वाराणसी धाममें वाण और मयूरके कुहकसे मुग्ध मालवराजको 'भक्तामर-स्तवन' सुना कर प्रसन्न किया था। 'भट्टिभर' प्रारम्भसूचक स्तोत्र भी उसीकी रचना है। प्रभावक चरितमें मानतुङ्गका चरित्र सविस्तार लिखा है, किन्तु उसमेंसे कितने किंवदन्ती और अनैति-हासिक बातोंसे पूर्ण है। वाराणसीमें हर्षराजकी सभामें वाण और मयूरके साथ मानतुङ्गका तर्कयुद्ध चला था। यही विवरण बहुत बढ़ा चढ़ा कर प्रभावचरितमें लिखा गया है। भाषाकल्पसूत्रके मतसे मानतुङ्गका भक्तामर-स्तवन ८०० विक्रम सम्वत्में रचा गया। किन्तु उज्ज-यिनोसे १०३६ सम्वत्में उत्कीर्ण मालवराज वाक्पतिकी जो शिलालिपि पाई गई है उसमें मालवराजाओंकी तालिका इस प्रकार है,—१म कृष्णराज, २य वैरसिंह, ३य सियक, ४र्थ अमोघवर्ष वा वाक्पति। (१०३६ सं०)

मानतुङ्गरचित परिग्रहप्रमाण-प्रकरण और द्वादशव्रत-निरूपण नामक दो मागधी ग्रन्थ पाये जाते हैं। जो कुछ हो, उनके भक्तामरस्तोत्र और भयहरस्तोत्रका जैन-पण्डित समाजमें बहुत आदर है। १३६५ सम्वत्में जिन-प्रभसूरिने भयहरस्तोत्रकी तथा शान्तिसूरिने भक्तामर स्तोत्रकी एक एक टीका लिखी थी।

३ सिद्धजयन्तीचरित्रके रचयिता। उनके शिष्य मलय-प्रभने १२६० सम्वत्में सिद्धजयन्तीचरित्रकी टीका रची है। मलयप्रभने अपने गुरुके सम्बन्धमें लिखा है, कि प्राग्वाट (पोवार)-वंशसे वट वा बृहद्गच्छ उत्पन्न हुआ। इस गच्छमें सर्वदेवने आचार्य-पद लाभ किया। सर्वदेव-के शिष्य जयसिंह, जयसिंहके शिष्य चन्द्रप्रभ, धर्मघोष और शीलगण थे। इन्हीं तीनोंसे पूर्णिमागच्छ उत्पन्न हुआ। मानतुङ्गने शीलगणसे दीक्षा ली। उनके एक और शिष्यका नाम प्रद्युम्नसूरि था। इन्हीं प्रद्युम्नने १२९२ सम्वत्में हेमचन्द्रके योगशास्त्रविवरण नामक ग्रन्थके शेषमें लिखा है, कि मानदेव, मानतुङ्ग और बुद्धि-सागर ये तीनों ही चन्द्रकुलमें प्रधान आचार्य थे। उक्त ग्रन्थके शेषमें २य मानतुङ्गकी गुरुपरम्परा इस प्रकार लिखी है,—

बुद्धिसागर, पीछे प्रद्युम्नसूरि, प्रद्युम्नके बाद देव चन्द्र, देवचन्द्रके बाद मानदेव और पूर्णचन्द्र और सबसे अन्तमें मानदेवके शिष्य मानतुङ्ग हुए।

मानद (सं० त्रि०) मानः ददातीति दा-क। १ मानदायी, बड़ाई करनेवाला। (पु०) २ विष्णु।

मानदण्ड (सं० पु०) मानाथ दण्डः। परिमाणार्थं दण्ड, वह डंडा या लकड़ी जिससे कोई चीज नापी जाय।

मानदास—एक ब्रजवासी कवि। संवत् १६८० में थे उत्पन्न हुये थे। इनके पद रागसागरोद्भव नामक ग्रन्थमें पाये जाते हैं। वाल्मीकि रामायण और हनुमान नाटक आदि ग्रन्थोंसे सार ले कर इन्होंने भाषामें रामचरित बनाया है। इनका बनाया रामचरित बड़ा ही ललित है। इनकी रचना शैली विलक्षण है। ये एक महान् कवि माने जाते हैं। इनकी कविता बड़ी रोचक होती थी। उदाहरणार्थं एक नीचे देते हैं—

जागिये गोपाललाल जननी बलि जाई।
उठो तात भयो प्रात रजनीको तिमिर गयो
प्रकटे सब ग्वाल बाल मोहन कन्हाई
उठो मेरे आनन्दकंद गगनचन्द मन्द मन्द
प्रकट्यो द्युतिवान् भानु कमलनि सुखदाई।
सिङ्गो सब पुरत वेनु तुम बिना न छुटे धेनु
उठो लाल तजो सेज सुन्दर वर राई॥
मुखतें पट दूर कियो यशोदाको दर्श दियो
और दधि सब मांगि लियो विविध रस मिठाई।
जेंवत दोउ राम श्याम सकल मङ्गल गुणनिधान
थारमें कुछ जूठ रही सो मानदास पाई॥

मानदेव—इस नामके भी अनेक जैनाचार्योंके नाम मिलते हैं। उनमेंसे एकने लघुशान्तिस्तोत्रकी रचना की।

मानदेव (सं० पु०) लिच्छविवंशीय एक राजा।
लिच्छविवंश देखो।

मानद्रुम (सं० पु०) शाल्मली वृक्ष, सेमलका पेड़।

मानधन (सं० त्रि०) मानमेव धनं यस्य। मान ही जिसका एकमात्र धन हो, बड़ा इज्जतदार।

मानधाता (सं० पु०) मान्धाता देखो।

मानधानिका (सं० स्त्री०) कर्कटी, ककड़ी।

मानन (सं० क्ली०) सम्मान-प्रदर्शन।

मानना (हिं० क्रि०) १ अंगीकार करना, मंजूर करना। २ कल्पना करना, समझना, फर्ज करना। ३ ध्यानमें लाना, समझना। ४ ठीक मार्ग पर आना, अनुकूल होना। ५ कोई बात स्वीकार करना, कुछ मंजूर करना। ६ आदर करना, किसीको पूज्य, आदरणीय या योग्य समझना। ७ देवता आदिको भेंट करनेका प्रण करना, मन्नत करना। ८ दक्ष समझना, उस्ताद समझना। ९ धार्मिक दृष्टिसे श्रद्धा या विश्वास करना। १० किसी पर बहुत अनुरक्त होना, किसीके साथ बहुत प्रेम करना। ११ स्वीकृत करके अनुकूल कार्य करना। १२ ध्यानमें लाना, समझना।

माननीय (सं० त्रि०) मान्यते पूज्यते इति मान-अनीयर्। जो मान करनेयोग्य हो, पूजनीय।

"मानो मन्योऽसि वृद्धेषु माननीयः सुरासुरः।
स्नापयामि महादेवीं मान देहि गृहे मम॥"
(दुर्गोत्सव पूजापद्धति)

मानन्तवाड़ी (मानन्तोड्डी)—मन्द्रास प्रदेशके मालबार जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० ११° ४८´ उ० तथा देशा० ७६° २´ ५५″ पू०के मध्य अवस्थित है। १८२८ ई०में यहां कहवेकी खेती शुरू हुई। क्रमशः यह स्थान वैनाड जिलेके कहवा-वाणिज्यका प्रधान केन्द्र हो गया। यहां वृटिश सरकारका विचारसदर और कहवेके व्यवसायके लिये अन्यान्य कार्यालय प्रतिष्ठित हैं। १९वीं शताब्दीके प्रारम्भमें अंगरेज-राजने यहां छावनी डाली। १८०२ ई०के कोटिवट-विद्रोहमें उस सेनादलका ध्वंस हुआ।

मानपर (सं० त्रि०) मान एव परं प्रधानं यस्य। अतिशयमानी, बहुत पूजनीय।

मानपरिखण्डन (सं० क्ली०) मानहानि, अवमानना।

मानपात (सं० पु०) मानकच्चू देखो।

मानपाल—एक राजा। ये देवपालके पुत्र थे।

मानपुर—१ मध्यभारतके भुपावर एजेन्सीके अन्तर्गत एक परगना। यह विन्ध्यपर्वतश्रेणीके शिखर पर अवस्थित है। यहांका प्राकृतिक सौन्दर्य बड़ा ही मनोरम है। भूपरिमाण ६० वर्गमील और जनसंख्या पांच हजारके करीब है। इसके उत्तर, दक्षिण और पूर्वमें इन्दोर-राज्य तथा पश्चिममें जामनिया नामक छोटा राज्य है। १८६० ई०में ग्वालियर-राजके साथ संधि हो जाने पर यह स्थान अङ्गरेजोंके हाथ आया।

२ उक्त परगनेका एक शहर। यह अक्षा० २२' २६' उ० तथा देशा० ७५' ४०' पू० इन्दोरसे २४ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। जनसंख्या १७४८ है। जयपुरके राजा मानसिंहने इस नगरको बसाया, इसीसे यह नाम पड़ा है। भील लोग यहाके प्रधान अधिवासी हैं। शहरमें एक डाकघर, एक स्कूल, अस्पताल और डाकबंगला है।

मानप्राण (सं० त्रि०) मानजीवन, जिसका मान ही प्राण हो।

मानभङ्ग (सं० पु०) मानस्य भङ्गः। मानहानि, मान-मर्द्दन।

मानभाण्ड (सं० क्ली०) परिमाणभाण्ड।

मानभाव (सं० पु०) चोचला, नखरा।

मानभाव (महानुभाव शब्दका अपभ्रंश)—बम्बई प्रदेश-वासी वैष्णव-सम्प्रदायविशेष। इस सम्प्रदायकी उत्पत्तिके सम्बन्धमे दो मत प्रचलित हैं। सताराके मानभावोंका कहना है, कि पाच सौ वर्ष पहले एक धर्मपरायणके मुनीन्द्र और दिवाकर नामक दो शिष्य थे। मुनीन्द्र मास खाता था, इस कारण भट्टाचार्य नामक दिवाकरके एक शिष्यके साथ उसका झगडा हो गया। भट्टाचार्यने मुनीन्द्रका साथ छोड़ दिया, यह सुन कर उस सम्प्रदायके वहुतसे लोग भट्टाचार्यके दलमें मिल गये। भट्टाचार्यने अपने पार्षदोंको गेरु वस्त्र छोड कर कृष्ण-वस्त्र पहननेका आदेश किया और उन्हें 'महानुभाव' नामसे पुकारने लगे। तभीसे यह सम्प्रदाय 'मानभाव' नामसे प्रसिद्ध हुआ।

वेरारमे एक दूसरा प्रवाद प्रचलित है,—कृष्णभट्ट जोषी नामक एक व्यक्ति इस सम्प्रदायके प्रवर्त्तक थे। वेतालमें उनकी अच्छी सिद्धि थी। वेतालने उन्हें एक मुकुट दे कर कहा था, 'यह मुकुट सिर पर रखनेसे कृष्ण हो सकते हो, किन्तु उस समय यदि मनकी वृत्तिको न रोकोगे अर्थात् असत् आचरणका पक्ष लोगे, तो निश्चय ही विनाशको प्राप्त होगे।' जो कुछ हो कृष्णभट्ट वह मुकुट पा कर कृष्ण वन गये और वहुत-सी युवतियोंका सतित्व नाश करने लगे। उनके इस असत् आचरण का व्यवहार देवगिरिके राजमन्त्रीको मालूम हो गया। उन्होंने कौशलसे कृष्णको पकड़ा और मुकुट छीन लिया। मुकुटके शिर परसे अलग होते ही कृष्णभट्टकी कृष्णमूर्त्ति भी वदल गई। राजा रामचन्द्रदेवके आदेशसे कृष्ण निर्वासित हुए। किन्तु मानभाव लोग इस वातको अस्वीकार करते हैं। वे कहते हैं, कि वलराम कृष्णवस्त्र पहना करते थे, इसलिये वे लोग भी कृष्णवस्त्र पहनते हैं।

उक्त प्रवादके अनुसार राजा रामचन्द्रके समयमें अर्थात् प्रायः ७०० वर्ष पहले मानभावकी उत्पत्ति स्वीकार करनी होगी।

मानभाव दो प्रकारका है—घरवासी और वैरागी। फिर घरवासीके भी दो भेद हैं—गृहस्थ और भोले। गृहस्थ वा संसारी मानभाव जातपांतका विचार नही करते, किन्तु भोले मानभाव नामसे परिचित होने पर भी अपने अपने जातिधर्मका पालन कर चलते हैं। अन्त्यजको छोड कर सभी हिन्दू मानभाव हो सकते हैं। वैरागी मानभावमें स्त्री और पुरुष दोनों हो हैं। दोनों ही मस्तक मुंडाते हैं। वे विवाह नही कर सकते, मन्दिरमें अथवा नाना स्थानोंमें घूम कर अपना समय विताते हैं। वैरागियोंमें पुरुष गुरु वा महन्तसे और स्त्री स्त्री-गुरुसे दीक्षित होती हैं। वैरागी अथवा वैरागिनीमें कोई संस्रव नही रहता। यहा तक, कि वे एक दूसरेका मुख भी नहीं देख सकते। वैरागिनीके मरने पर उसे समाधिस्थ करनेका अधिकार भी वैरागीको नही है। सिर्फ वे उसकी शवदेह ले कर समाधिस्थानमें पहुंचा आते हैं। पीछे वैरागिनी उसके कपड़े उतार उत्तर मुख करके एक वड़े गड्ढेमें गाड़ देती हैं।

वैरागीके मरने पर भी उसे निज श्रेणीके लोग दफनाते हैं। दफनानेके समय शवके ऊपर नमक छिड़क दिया जाता है। गृहस्थ लोग शवदाह करते हैं। दत्तात्रेय और कृष्ण इनके उपास्य देवता हैं। निजाम राज्य भुक्त माहुर ग्राममें जो दत्तात्रेय और कृष्णका मन्दिर है वही मानभावोंका सर्वप्रधान तीर्थस्थान है। भगवद्गीता उनका प्रधान धर्मग्रन्थ है। जिस जिस धर्मग्रन्थमें दत्तात्रेय और कृष्णका माहात्म्य-वर्णित है उसी उसी ग्रन्थका मानभाव-समाजमें विशेष आदर है। वे लोग दत्तात्रेय और कृष्णको छोड़ कर और किसी भी देवदेवीकी

पूजा नहीं करते। वेरारमें जो मानभाव हैं उनके पांच प्रधान मठ हैं, नरमठ, नारायणमठ, ऋषिमठ, प्रवरमठ और प्रकाशमठ अलावा इसके और भी बहुतसे छोटे छोटे मठ हैं पर वे उन्हीं पांचोंके अन्तर्गत माने गये हैं। उनके सर्वप्रधान एक गुरु रहते हैं जो महन्त कहलाते हैं। वेरारके अन्तर्गत ऋधपुरग्राममें महन्तकी गद्दी है। मान भावोंमें महन्तदर्शन और उनका पादपूजन बहुत पुण्य-जनक समझा जाता है।

क्या गृहस्थ, क्या वैरागी सभी अहिंसापरायण हैं। चलते समय या खानेके समय कहीं जीवहिंसा न हो जाय, इस भयसे वे हमेशा सतर्क रहते हैं। कोई भी प्राणि-हिंसा नहीं करता। यदि इन्हें मालूम हो जाय, कि अमुक स्थानमें वलिदान होगा तो वे उसके तीन दिन पहले उस स्थानको छोड़ देते हैं। यहां तक, कि कभी कभी वे जंगलमें जा कर आश्रय लेते हैं।

मानभाव १० दिन तक अशौच मानते हैं। ग्यारहवें दिन वैरागीभोज देना होता है। किसी मठाध्यक्षके मरने पर उनका जो प्रधान चेला रहता है उसे अहमदनगर जिलेके अन्तर्गत पैठन मठमें आ कर पण्डितोंके निकट परीक्षा देनी होती है। परीक्षामें उत्तीर्ण होने पर वे मठाध्यक्षके उच्चासन पर बैठता और पूजित होता है। कार्य-भार ग्रहण करनेसे पहले उसे निजामराज्यके अन्तर्गत पाञ्चालेश्वरके मन्दिरमें जा कर दत्तात्रेयकी पूजा करनी होती है। इसके बाद वह मान-भावोंको भोज और भिखारियोंको भीख देता है। किसी वैरागिनीके अपराधी होने पर स्त्री-गुरु उसका विचार करती है। योग्य होने पर कोई शूद्रकन्या भी स्त्री-गुरु हो सकती है। वैरागिणी होनेके समय जो ब्राह्मण-कन्या है वह भी उससे मन्त्र लेनेको वाध्य है। चाहे वैरागी हो या वैरागिणी, जो ब्रह्मचर्यका पालन नहीं करता, उसे समाजच्युत किया जाता है। जो इस कठिन नियमका पालन करनेमें असमर्थ है वह विवाह करके घरवासी मानभाव हो सकता है।

मानभूम—विहार और उड़ीसाके पश्चिमी प्रान्त पर अव-स्थित एक जिला। इसका भूपरिमाण ४१४७ वर्गमील है। पुरुलियामें इसका चीफ कोर्ट या सदर अदालत है। यह अक्षा० २२° ४३´ से ले कर २४° ४´ उ० तथा देशा० ८५° ४९´ से ले कर ८६° ५४´ पू०के मध्य अवस्थित है।

इसके उत्तरमें हजारीवाग और वीरभूम जिला है। पूर्वमें वर्धमान और बांकुड़ा जिला तथा दक्षिणमें सिंहभूम और मेदिनीपुर तथा पश्चिममें हजारीवाग तथा लोहर-डांगा नामक स्थान है। इसके सिवा इसके उत्तर और उत्तर-पूर्वमें वराकर और दामोदर नदी तथा इसके दक्षिण और पश्चिममें सुवर्णरेखा वहती है।

इस जिलेमें वाघमुण्डी, दालमा, पांचेट, विहारनाथ और पार्श्वनाथ आदि कई पहाड़ हैं। इस पर्वतश्रेणी-से यहांके वनभूमिकी शोभा और भी बढ़ गई है। अधि-त्यका और उपत्यकाएं वनराजिसे विभूषित होने पर भी कई छोटी छोटी पहाड़ी नदियोंके खरस्रोतसे निनादित होती रहती हैं। पर्वत श्रेणियोंमें वारोधा, वन्दी, वांसा, वन्दीपाल, भाण्डारी, चरगोनाल, दावो, कारण्टी, कल्यान-पुर, लकाईसिनी, सवाई, कोलावणी नामके कई शृङ्ग प्राकृतिक सौन्दर्यकी अपूर्व छटा दिखा रहे हैं। इनमें किसी किसी शिखर पर मन्दिर भी बने हुए हैं।

दराकर, खुदिया, दामोदर, इजरी, गुयाई, धलकिशोर या द्वारकेश्वर, शिलाई, कांसाई, कुमारी, टटका और सुवर्णरेखा आदि नदियों तथा गिरिपार्श्वमें बहनेवाली स्रोतस्विनियोंका जल ही यहांके अधिवासी पीते हैं। सिवा इनके पुरुलिया-साहववांध, जयपुर-रानीवांध और पाण्ड्राकी पोद्दार-डिहीवांध नामकी झील तथा उपत्यका-वक्षमें विराजित कई छोटे छोटे जलाशय वहांके लोगों-के लिये जल प्रदान करते हैं। पीनेका तो काम चलता ही है, वरं इससे सिंचाईका भी लोग काम लेते हैं।

पहाड़ी वनोंमें वाघ भालू आदि हिंस्रजन्तु भी देखे जाते हैं। शाल, अशन और महुएके पेड़ यहां बहुतायतसे मिलते हैं। अङ्गरेज-सरकार शालके पेड़ोंको वेचनेके लिये इस वनभागकी रक्षा करती है। महुएका फूल इस देशके दरिद्र अनार्यजातिका प्रधान आहार है। इससे देशी मद्य तय्यार होता है।

सुवर्णरेखा नदीके खरस्रोतमें कभी कभी सोना भी वह कर चला आता है। यहांके लोग नदीके किनारे बहुत परिश्रम करके सोना संग्रह करते हैं। इसके

सिवा कई जगह लोहे, तांबे तथा कोयलेकी खानें पाई गई हैं। यहांसे यह सब चीजें निकाली जाती हैं।

पर्वतोंसे पत्थर काटे जाते हैं और उनसे देवमन्दिर, देवमूर्त्ति, पत्थरके बरतन आदि तैयार किये जाते हैं। पातकुमके अन्तर्गत चैतन्यपुरमें एक उष्ण प्रस्रवण है। यहांका जल स्वास्थ्यके लिये विशेष उपयोगी है।

शाल आदि लकड़ियोंके सिवा यहांके वनविभागसे लाह, टसर, मोम और धूना आदि संग्रह किये जाते और बाहर भेजे जाते हैं।

अंगरेजोंके अनुग्रह तथा रेल हो जानेकी सुविधासे विविध प्रदेशोंसे आ कर यहां लोग बस गये हैं। वाणिज्य-के कारण कितने ही व्यवसायी महाजन यहां आ कर बस गये हैं। इस जिलेका प्रधान नगर पुरुलिया है। इस समय इसकी शोभा देखते ही बनती है। असंख्य सौध-मालाओंसे विभूषित यह नगर धनजनसे पूर्ण हो जाता है। यथार्थमें अनार्य ही यहांके आदिम अधिवासी हैं। असुर, शबर, भर, भूमिज, धाँगड़, खड़िया, मुण्डा, नायक, नाइया, नाट, पहाड़िया, पुराण, सरदार और सन्थाल अनार्योंमें उल्लेखनीय हैं। कुर्मी, बागदी, बाउरी आदि जाति अनार्य भावापन्न होने पर भी इनमें बहुत कुछ हिन्दूभाव दिखाई देता है। दलमागिरि-वासी पहाड़ी सिनानग्रामी गुहामें देवीके सामने नरबलि चढ़ाते थे। अन्य अनार्य जातियोंमें भी यह कुप्रथा दिखाई देती है। भूमिज पञ्चकोटकी रङ्किनी देवीके सामने नरबलि देते थे। सन् १८३२ ई०में गङ्गानारायणके नेतृत्वमें यहां एक बलवा भी हुआ था जो "चूयाड़का बलवा" कहलाता है। यहांके अनेक राजे भी अनार्य जातिके हैं।

बराहभूम देखो।

पुरुलिया, झालिदा, रघुनाथपुर, काशीपुर और मान-बाजार यहांका प्रधान व्यवसायिक स्थान है। यथार्थमें नगरकी अपेक्षा इन्हें ग्रामसङ्घ ही कहते हैं। ये सब नगर वहांकी म्युनिसपलिटीके अधीन है। इससे ये दिनों दिन उन्नति कर रहे है। पुरुलिया नगरमें ही जिलेकी सदर अदालत है।

पुरुलियाके दक्षिण चाकुलता ग्राममें प्रत्येक वर्ष मेला होता है। यह मेला आश्विन महीनेके छातापर्वके उपलक्षमें लगता है। पुरुलियासे बढ़ाकर जानेमें अनाड़ा एक ग्राम आता है। चैत्र संक्रान्तिके अवसर पर चड़कपूजाके उपलक्ष्यमें अनाड़ामें भी एक मेला लगता है। यह मेला कोई बीस दिन तक रहता है। निकटके जिलोंके व्यवसायी दुकानें ले कर यहां आते और व्यव-सायसे लाभ उठाते हैं।

यहां कांसाई, दामोदर, सुवर्णरेखा आदि नदियोंके किनारे किनारे हिन्दू तथा जैनमन्दिर दिखाई देते हैं। इन मन्दिरों तथा इनके सामनेकी पड़े खण्डहरोंको देख कर अनुमान होता है, कि एक समय हिन्दू और जैन-वणिक् नदी द्वारा यहां आ कर बस गये थे। समय पा कर जब पुरुलियाने प्राधान्य लाभ किया, तो यह नगर श्रीहीन और खण्डहरके रूपमें परिणत हुआ था।

पुरुलियाके स्टेशनके निकट कांसाई तीर पर पलमा बस्तीमें ध्वंसप्राय एक जैन-मन्दिरका नमूना दिखाई देता है। इस मन्दिरमें कई जैन तीर्थङ्करोंकी मूर्त्तियां पाई गई हैं।

सिवा इसके पुरुलियाके निकट चाड़ाग्राममें श्रावकों-का एक देवालय है। दामोदर नदीके तट पर अवस्थित तेलकुर्पामें विरूपदेवका मन्दिर और कांसाई नदीके तीर-के बोरमग्राममें एक हिन्दू-मन्दिरका ध्वंसावशेष दिखाई देता है। कांसाई और पारश शैलके बीच बुद्धपुरग्राममें चार देवमन्दिर और कई प्राचीन कीर्त्तियोंके ध्वंसाव-शेष इधर उधर पड़े दिखाई देते हैं। यहांके चैत्र संक्रान्ति पर लगनेवाले 'चड़क' मेलेमें दूर दूरकी दुकानें आती हैं।

जहां ग्राण्डट्रङ्करोडने बढ़ाकर नदीको पार किया है वहांसे थोड़ी ही दूर एक खण्डशैल पर चार चारुशिल्प-मय मन्दिरका ध्वंसावशेष पड़ा हुआ है। इनमे एक शिलालेख भी पाया गया है। यह शिला-लेख रानी हरि-प्रिया देवीके समयका है। यह बङ्गाक्षरमें सन् १३८३ शकका लिखा हुआ है। बुधपुरके कांसाई तीर पर एक कोसमें और उसके दो कोस उत्तर बाकपीड़ा ग्राममें नौ फीट ऊँची एक बौद्ध मूर्त्तिके साथ साथ और भी कितने ही मन्दिर दिखाई देते हैं।

सुवर्णरेखा और करकरी नदीके सङ्गमस्थित दालमी

ग्राममें कितने ही हिन्दू-मन्दिरोंका ध्वंसावशेष है। इन सब ध्वंसावशेषोंमें एक प्राचीन दुर्ग (किला) और शिव, पार्वती, विष्णु, लक्ष्मी, गणेश, काली आदि देव देवियो की मूर्त्तियां पाई गई हैं।

इसके बाद पञ्चकोट या पञ्चेटराजवंशकी कीर्त्ति ही उल्लेखयोग्य हैं। इनका राजप्रासाद और देवमन्दिरादिके ध्वंशावशेष आज भी उस प्राचीन कीर्त्तियोंके गौरवको घोषणा कर रहे हैं। राजा रघुनाथ नारायणसिंह देव पञ्चकोटसे केशवगढ़ राजधानी उठा लाये। इसमें वहां-के राज-प्रासाद तथा उसके निकटवर्त्ती अट्टालिकायें खण्डहर रूपमें दिखाई देती हैं। इसके बाद राजा नील मणिसिंहदेवके पिता फिर काशीपुर गये और वहां राज प्रासाद बनवा कर रहने लगे। पाचेट देखो।

पहले सारा मानभूम प्रदेश देशीय सामन्त राजाओं-के द्वारा शासित होता था। यह घटवाल कहलाते थे। पड़ोकेस राजाओंके आक्रमणसे ये अपनी अपनी रक्षाके लिये घाट और गिरिपथोंमें छिपे रहते थे। विदेशियों से देशकी रक्षा तथा डाकुओंका दमन ही उनका प्रधान काम था। इसी कामके लिये उन्हें जागीर मिली थी। भूमिज-सरदार तथा मुण्डे और मानकी आदि अनार्य सरदार भी राजाकी ओरसे युद्ध करते थे। इसीसे उनको भूमि भी मिली थी।

सन् १७६५ ई०मे वङ्गाल विहार और उड़ीसेकी दीवानीका अधिकार मिलनेके बाद मानभूम जिला अङ्गरेजोंके हाथ आया। तबसे सन् १८०५ ई० तक उस के कुछ सामन्तराजोंको वीरभूम तथा कुछको मेदिनी-पुरके अन्तर्गत रख कर शासनकार्य्य निर्वाह होता था। इसके बाद आनेवाले वर्षमे अङ्गरेजी इष्ट इण्डिया कंपनीने इन राज्योंको पकड़ कर एक स्वतन्त्र जिला बना दिया। इसका नाम हुआ जङ्गल-महल। सन् १८३२ ई०के चुयड़के बलवेके बाद इस स्थानको शासनशृङ्खलाको दृढ़ करनेके लिये कम्पनीने सेनपहाडी, शेरगढ़ और विष्णुपुर-को छोड़ अन्यान्य राज्योंको और मेदिनीपुरके धलभूमको काट कर एक मानभूम नामक जिलेकी सृष्टि की। गवर्नर जेनरल या बड़े लाट साहबने यहांके शासनका भार दक्षिण-पश्चिम सीमान्तकी रक्षाके लिये मुकर्रर किये गये एजेण्ट पर सौंप दिया। सन् १८४६ ई०में यहां एक फौजदारी दंगा हो गया जिससे मानभूम फिर सिंह-भूममे मिला दिया गया था। सन् १८५४ ई०में यहाके कार्य्य-निरीक्षक एक कमिश्नर नियुक्त हुए। सन् १८७१ ई०मे इस जिलेकी सीमा कायम कर दीवानी फौजदारी अदालतोंकी व्यवस्था की गई।

मानमण्ड (सं० क्ली०) मानकच्चूसे बनी हुई एक प्रकार-की औषध।

मानमनौती (हिं० स्त्री०) १ मानता, मन्नत। २ रूठने और मनानेकी क्रिया। ३ पारस्परिक प्रेम।

मानमन्दिर (सं० पु०) ज्योतिष्कमण्डलोके गतिविधि-निरूपणके लिये वैज्ञानिक यन्त्रसमन्वित अट्टालिका, वह स्थान जिसमें ग्रहो आदिका वेध करनेके यन्त्र तथा सामग्री हो। वेध और वेधशाला देखो। २ स्त्रियोंके रूठ कर बैठनेका एकान्त स्थान।

मानमय (सं० त्रि०) गर्वयुक्त, घमंडी।

"तदागताभिर्न्नराहृतास्तु कृष्णोऽस्या मानमयास्तथैव।"

(हरिवंश ८४।५५)

मानमरोर (हिं० स्त्री०) मन-मुटाव।

मानमहत् (सं० त्रि०) अत्यन्त मानोन्नत।

मानमान्यता (सं० स्त्री०) इज्जत, प्रतिष्ठा।

मानमोचन (सं० पु०) साहित्यके अनुसार रूठे हुए प्रियको मनाना। यह साम, दाम, भेद, प्रणति, उपेक्षा और प्रसंग विध्वंस इन छः उपायों द्वारा बतलाया गया है।

मानमोड़ा—बम्बई प्रदेशके पूना जिलान्तर्गत जुन्नरके समीप एक गिरिमाला। यहाकी अम्बिका श्रेणीको गुहा से जो शिलालिपि आविष्कृत हुई है उसमे 'मानमुकुड' (मानमुकुट) नामक पुरका उल्लेख देखनेमें आता है। अधिक सम्भव है, कि उसी मानमुकुट शब्दके अपभ्रंशसे मानमोडा हुआ हो। इस गिरिमालाके पाददेशमे बौद्ध और हिन्दूराजाओंके समयमे खोदी हुई बहुत-सी गुहा नजर आती हैं। उन गुहाओंके लिये यह गिरिमाला प्रत्नतत्त्वानुसन्धित्सुके निकट विशेष द्रष्टव्य है।

भीमशङ्कर।

मानमोड़ाके दक्षिण-पूर्व समतलक्षेत्रसे प्रायः दो सौ

फुटकी ऊंचाई पर 'चैत्य' नामसे प्रसिद्ध बहुत-सी बौद्ध गुहाएं हैं। उन सब गुहाओंको लोग भीमशङ्करका अंश समझते हैं। भीमशङ्कर गुहाएं जुन्नरसे आध कोस दक्षिण-पूर्वसे ले कर पूना जानेके रास्तेसे आध कोस पश्चिम प्रायः आध कोस तक फैली हुई हैं। उक्त गुहाओंका परिचय बहुत संक्षेपमें नीचे दिया गया है :—

१ली गुहा लयना (लेना) वा वानरवास कहलाती है। इसके एक अंशमें बरामदा और दूसरे अंशमें कोठा है। इसके बीचमें जो खभे लगे हैं, वे प्राचीन आन्ध्र ढग पर बने हैं। २री गुहाका नाम चैत्य है। इसके द्वारदेशमें "सिद्ध' उपासकस नगमस, सतमलपुतस, पुत वोरभुतिन्" यह लिपि खुदी हुई है। ३री गुहा एक सत्र है। उसके दक्षिण जलका एक चहवच्चा मौजूद है। ४थी और ५वी गुहामें भी चार बड़े बड़े जलाधार दिखाई देते हैं। ५वीं गुहाकी दीवार पर "सिव समपुतस सिवभुतिना देयधम्म पाढ़ि' यह लिपि उत्कीर्ण है। ६ठी गुहा 'मण्डप' वा विश्राममण्डप कहलाती है। इसकी छतकी दीवारमें जो "राणो महाखतपस सामि नहपानस अमात्यास वचस गोतस अयमस देयधम्म पाढ मतपोच पुनथयवस ४६ कता" शिलालिपि उत्कीर्ण है। उससे मालूम होता है, कि महाक्षत्रप स्वामी नहपानके प्रधान मन्त्री वत्सगोत्रीय अयमने इस मण्डप और जलाधारको उत्सग किया था। ७वीं और ८वी गुहाके द्वारमें बहुत छोटी छोटी अटारी हैं। ८वी गुहासे प्रायः ३ फुट नीचे ९वीं गुहामें एक बड़ा सत्र वा भोजमण्डप है। इसको छत अभी टूट फूट गई है। ८वी और ९वीं गुहा के बीचमें बहुतसे जलाधार हैं। पहाड़के ऊपरका जल इन जलधारामें गिरता है। उक्त जलाधारोंसे दक्षिण ८० गजको दूरी पर १०वी वा भीमशङ्करकी अन्तिम गुहा अवस्थित है।

अम्बिका।

भीमशङ्करसे ३०० गज दूर अम्बिका नामक गुहाश्रेणी आरम्भ हुई है। पूर्व-दक्षिणसे पश्चमोत्तरको ओर विस्तृत उत्तर पूर्वमुखी १९ गुहाओंको ले कर यहां अम्बिका श्रेणी बनी है। अम्बिकाकी अधिकांश गुहाएं अभी टूट फूट गई हैं। इसकी चौथी गुहाकी छतके नीचे और दरवाजेके ऊपर "गहपतिपुताना दोनङ्क स चौगभं देयधम्म" ऐसा लिखा है। इसकी छठी गुहामें 'अम्बिका' नाम्नी जैनदेवमूर्त्ति प्रतिष्ठित है। इसीसे इस गुहाका नाम 'अम्बिकालेने' पड़ा है। नाना स्थानोंसे जैन और जुन्नर-वासी हिन्दू उस देवीकी पूजा करने आते हैं। उस गुहाके दरवाजेके वाएं भागमें जैन-क्षेत्रपालमूर्त्ति और दाहिने भागमें एक ताख पर 'चक्रेश्वरी'-को मूर्त्ति रखी हुई है। इस गुहाकी २री अटारी पर नेमिनाथ, आदिनाथ, अम्बिका तथा अम्बिका पुत्र सिद्ध और बुद्धकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित है। मुसलमानोंके हाथसे अधिकांश मूर्त्ति भग्न वा अङ्गहीन हो गई हैं।

यहांकी ११वीं गुहा एक असम्पूर्ण चैत्य है। पहले यहां जैनोंका प्रधान पूजाका स्थान समझा जाता था। १ली सदीके अक्षरोंमें जो शिलालिपि उत्कीर्ण है, उसे पढ़नेसे मालूम होता है, कि वानद ग्रामवासी पलयने इस चैत्यको दान किया और इसकी देखरेख अपराजितोंके पयोगक (प्रयोगक) नामक एक व्यक्ति करते थे। इसको दूसरी शिलालिपिसे मालूम होता है, कि यह गुहा उस समय 'गिधविहार' नामसे प्रसिद्ध थी। कोणाचिक श्रेणीमुक्त 'आडुथुम' नामक एक शक उपासकने इसे विहारके उद्देशसे दान किया था। इस विहारकी १०वी शिलालिपिसे ही मानमुकुद (मानमुकुट) नामक पुरका पता लगता है। यहांकी १८वीं शिलालिपिमें मन्दन्त स्थविर-सुदर्शनके शिष्य त्रैविद्य चैत्यक स्थविरका प्रसङ्ग है।

भूतलिङ्ग।

अम्बिकासे २०० गज दूर पूर्वोक्त दोनों श्रेणीकी गुहामालासे ऊपर और भी १६ गुहाएं देखी जाती हैं। लोग उन्हीं गुहाओंको 'भूतलिङ्ग' कहते हैं। यह सब गुहाएं बहुत पुरानी होने पर भी भास्करकार्य और शिल्पनैपुण्य उतना अच्छा नहीं है। इन गुहाओंके निकट और आस पासमें बहुतसे सोते देखे जाते हैं। उक्त गुहाको लोग बौद्धगुहा मानते हैं। इसकी ७वीं और ९वीं गुहा एक बौद्ध 'दागोब' समझी जाती है। ९वीं गुहाकी 'यवनस चन्दानं देयधम गभदार' इस लिपिसे जाना जाता है, कि इसका गर्भगृह 'चन्द्र'

नामक एक मुसलमानने बनवाया था। यहां गरुड़ और नागराजमूर्त्ति तथा छत्र-संलग्न छोटे छोटे चैत्य हैं। वे सब चैत्य लिङ्गरूप हैं और यहांकी मूर्त्तियां भूतमें कल्पित हुई हैं। इसीसे सम्पूर्ण गुहाका नाम 'भूत-लिङ्ग' पड़ा है।

मानमृताफल (सं० पु०) पटोलवृक्ष, परवलकी लता।

मानयितव्य (सं० त्रि०) सम्मानार्ह, सम्मान करनेके योग्य।

मानयितृ (सं० त्रि०) सम्मानकारी, आदर करनेवाला।

मानरन्ध्रा (सं० स्त्री०) मानार्थं समयपरिमाणज्ञापकं रंध्र-मस्या। ताम्री, जलघड़ी। इसका व्यवहार प्राचीन-कालमें जब घड़ी नहीं थी, समय जाननेके लिये होता था। इसमें एक कटोरा होता था। उस कटोरेके पेंदेमें एक छोटा-सा छेद रहता था। यह कटोरा किसी बड़े जल-पात्रमें छोड़ दिया जाता था। उस छेदसे धीरे धीरे कटोरेमें पानी भरने लगता था। वह कटोरा ठीक एक दण्ड या घड़ीमें भर जाता और पानीमें डूब जाता था। फिर उसे निकाल कर खाली करके उसी प्रकार पानीमें छोड़ देते और इस प्रकार समयका निरूपण करते थे।

मानराज—मेवाड़के मोरी-कुलोद्भूत एक राजा। इनकी राजधानी चित्तौर नगरमें थी। ईस्वीसन् ८वीं शताब्दी-को इन्होंने मुसलमानोंसे युद्ध किया था।

मानराय—असनीके रहनेवाले वन्दीजन। इनका जन्म संवत् १५८० ई०में हुआ था। ये अकबरके दरबारी थे।

मानव (सं० पु०) मनोरपत्यं मनोर्गोत्रापत्यं पुमान् मनु-अण्। १ मनुका अपत्य, मनुष्य, आदमी। मनुसे उत्पत्ति हुई है इसीसे मनुष्यको मानव कहते हैं।

"मनोर्वंशो मानवानां ततोऽयं प्रथितोऽभवत्।
ब्रह्मक्षत्रादयस्तस्मान्मनोर्जातास्तु मानवाः॥"
(भारत १।७५।१२)

मनुना प्रोक्तं मनु-अण्। २ उपपुराणविशेष।

"सनत्कुमारं प्रथमं नारसिंहं ततः परम्।
नारदीयं शिवञ्चैव दौर्वाससमनुत्तमम्।
कापिलं मानवञ्चैव तथा चौशनसं स्मृतम्॥"
(देवीभा० १।३।१३)

३ चौदह मात्राओंके छन्दोंकी संज्ञा। इसके ६१० भेद है।

मानवक (सं० पु० १ छोटे कदका आदमी, बौना, वामन। २ तुच्छ आदमी।

मानवकोत्तम (सं० पु०) शिशु, बालक।

मानवत् (सं० त्रि०) मान अस्त्यर्थे मतुप मस्य व। मान करनेवाला, रूठा हुआ।

मानवतत्त्व—(Anthropology) मानव-जातिका प्राकृतिक इतिहास। मानव-प्रकृतिके परिचायक लक्षणोंको जाननेके लिये मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, उद्भिद् और जड़ आदि सभी तत्त्वान्वेषण करना होता है। अतएव मानवतत्त्वका यथार्थ रहस्य जाननेके लिये पदार्थ विद्या (Physics), रसायन (Chemistry), जीवविज्ञान (Biology) और उद्भिदविद्या (Botany), शारीरविज्ञान (Anatomy and Physiology), मनोविज्ञान (*Psychology*), भूविद्या (Geology), वाग्विज्ञान या शब्दविज्ञान (Science of language), नीतिविज्ञान (Ethics), समाजविज्ञान (Sociology), धर्मविज्ञान (Religion or Theology) इन सब विज्ञानोंका साहाय्य लेना पड़ता है। मानवतत्त्व (Anthropology) इन सब विज्ञानोंके साथ मालाकी तरह गुथा हुआ है। अतएव ये सभी तत्त्व मानवतत्त्व-निर्णयके लिये पथप्रदर्शकका काम करते हैं। विभिन्न विज्ञानका अभिज्ञान न रहने पर मानवतत्त्व स्वनन्त्र रूप से हृदयङ्गम नहीं किया जा सकता।

पहले तो पदार्थविद्या और रसायनशास्त्रका चूडान्त-ज्ञान न रहने पर भूत और भौतिक पदार्थका स्वरूप निर्णय नहीं हो सकता। सृष्टिवाद या क्रमाभिव्यक्ति वाद—दोनोंका मत है, कि मानवका शरीर भूतविकार—भौतिक पदार्थोंका परिणाम है। अतएव भूतपदार्थ (Matter) स्वरूपनिर्णयविषयक शास्त्र मानवतत्त्वा-वरोधका प्रथम आवलम्बन है। भौतिकशक्ति और जीवनी शक्ति अभिन्न हो या भिन्न, यह स्पष्ट ही दिखाई देता है, कि भौतिक देहमें जीवनी शक्तिका स्फुरन होने पर साधारण जीवकी अभिव्यक्ति होती है। देहमें चैतन्य का किस तरह समावेश होता है, इस विषयमें तरह तरह-के मत होने पर भी इसमें सन्देह नहीं, कि इन दोनोंमें

एक दुर्ज्ञेय या अज्ञेय सम्बन्ध है। भूतत्त्व-विद्या या पदार्थ विद्या जीवविज्ञानका सोपानवत् मार्ग है।

प्राच्य मतसे—प्रकृति और तद्विकार बुद्धि, मन, इन्द्रिय और भूत—ये दृश्य और भोग्य हैं। प्रकृतिके साहाय्य बिना पुरुषको जानना असम्भव है। प्रकृतिकी उपासना द्वारा ही पुरुषका अनुसन्धान करना होगा, जड़-विज्ञानसे ही जीव विज्ञानका परिचय मिलता है। इसी लिये भगवान् कपिलने मुक्तकण्ठसे प्रकृतिदेवीकी स्तुति की है। क्योंकि प्रकृति बिना पुरुषके नहीं रहती। विश्वजगत् केवल जड़प्रकृतिका कार्य नहीं—जगत्के प्रत्येक अणुमें पुरुष और प्रकृतिका युगलरूप विद्यमान है। पुरुष और प्रकृति एक ब्रह्मकी ही दो मूर्त्तियां हैं। यही वेदमें भी कहा गया है। वैज्ञानिकोंने जड़देहमें चैतन्यका अस्फुट स्फुरन माना है। इसलिये जड़विज्ञान का साहाय्य लिये बिना जीवविज्ञानको उच्चतम श्रेणीमें समारूढ़ मानवतत्त्वका रूप किस तरह निर्णय होगा।

प्राच्यमतका विवरण सृष्टितत्त्वमें देखो।

पाश्चात्य-मतमें क्रमाभिव्यक्तिवादकी भित्ति नैसर्गिक नियमों पर ही स्थित है। पहले—शरीर विज्ञानसे मनुष्य शरीरका गठन और क्रियाकी बात जानी जा सकती है। मनोविज्ञानसे मानवको मानसिक क्रिया और शारीरिक क्रियाके साथ मानसिक क्रियाका सम्बन्ध मालूम किया जाता है। वाग्विज्ञान या शब्दविज्ञानसे भिन्न भिन्न भाषातत्त्वके गूढ़ रहस्योंका पता चलता है। नीतिविज्ञान-से मनुष्यकी स्वेच्छाप्रणोदित कार्यावलीकी समालोचना द्वारा मनुष्यके प्रति मनुष्यका कर्त्तव्य स्थिर किया जाता है। समाजविज्ञान द्वारा भिन्न भिन्न समाजको मानव-जातिकी सामाजिक प्रतिष्ठा, शिल्प और विज्ञानकी उत्पत्ति, परिपुष्टि, उस विषयमें विद्वद् पुरुषोंका विश्वास और मन्तव्य तथा विभिन्न समाजकी रीतिनीतिकी आलोचना की जा सकती है। भूविद्या और प्रत्नतत्त्व भूस्तर-स्थित प्रस्तरीभूत जीवकी ठठरियों और अन्यान्य चिह्नों-को देख कर अनुमानमें न आनेवाले दश हजार वर्ष पूर्वके पृथ्वीके विवरणको बताता है। पृथ्वीके प्राचीन-तम अधिवासियोंके विवरणको संग्रह करनेमें अतीत-साक्षी इतिहास जहां निर्वाक् है, वहां भूतत्त्वविद्या उंगलीके सङ्केत (इशारे) से दिखा रही है, कि विशाल काय सर्प (शेषनाग), कच्छप आदि लीलाक्षेत्रमें वसुन्धराके विशालवक्ष पर मानव शिशुका पदचिह्न नहीं है। भिन्न भिन्न युगमें जिन्होंने जीव धरित्रीकी लीलाभूमिसे अवसर ग्रहण कर इह जीवलीलाकी समाप्ति की है, भूत-धात्री धरित्रीने मातृस्नेहकी प्रेरणासे उनको यत्नपूर्वक अपने हृदयमें रखा है। उन समग्र तत्त्वोंकी पर्यालोचना कर और भूगर्भस्थित मनुष्योंकी आदि अवस्थाकी व्यवहृत वस्तुओंके नमूनोंको देख पाश्चात्य प्रत्यक्षवादी वैज्ञानिक उच्चस्वरसे चिल्ला रहे हैं, कि बहुत क्षुद्रतम प्राणी, विवर्त्त-के अनन्त आवर्त्तमें परिवर्त्तित हो कर और क्रमाभिव्यक्तिको शक्तिसे मार्जित हो कर क्रमशः उन्नत प्रकृतिके जीव और अन्तमें मनुष्यरूपमें परिणत हुआ है। इस असंख्य ग्रंथिमय जीवशृङ्खलाका मनुष्य ही उच्चतम ग्रंथि (गांठ) है। इन सब विषयोंकी पर्यालोचना कर मानवके यथार्थ तत्त्वको जानना ही मानवतत्त्वका उद्देश्य है।

शरीर-विज्ञानके साथ सम्बन्ध।

विभिन्न जीवोंके शरीरोंके अवयवोंके जानकार पण्डितोंने मनुष्यके साथ अन्य जीवोंके सादृश्य-निरूपण-के लिये अग्रसर हो कर सम्पूर्णरूपसे अस्थिसमूहकी परीक्षा कर उल्लासके साथ यह स्वीकार किया है, ठठरियों (कङ्काल) के सादृश्यमें मनुष्य अनन्त शृङ्खलाबद्ध जीव-जगत्का ऊर्द्ध्वतन शृङ्खलग्रंथि है। इस नियममें मनुष्यसे तिर्यग् जातिका सम्बन्ध अविच्छिन्न है। केवल अस्थि-संस्थानके सादृश्यसे सन्तुष्ट न हो कर उन्होंने शरीर-यन्त्रके क्रियाकलापकी भी पर्यालोचना की है। उसमें देखा गया है, कि मनुष्यके साथ इतर जीवको विशेष भिन्नता नहीं। अध्यापक ओयन (Owen) कहते हैं,—वन्दरके सामनेके दोनों पैरोंसे मनुष्यके दोनों हाथोंका विकाश दिखाई देता है। वन्दरोंके हाथकी अपेक्षा गरिला (Gorilla)-के हाथ बहुत कुछ कौशल सम्पन्न है। वन्दरोंके शरीर पर अधिक रोमावली रहनेके कारण ही मनुष्यकी तुलनामें इतना अधिक बाह्यवैषम्य हुआ है। फिर भी मनुष्यके साथ वन्दरके बाह्यवैषम्य कुछ होने पर दोनोंके अन्तर्जगत्में, दोनोंके मानसक्षेत्रमें

जो विषम सादृश्य है, उसे कल्पनापथमें लाने पर दोनोंको एक जीवकी दूसरी शाखा कहनेकी प्रवृत्ति नहीं होती। इसके उत्तरमें 'हकसली'का कहना है,—बर्बर मनुष्य-समाजके साथ इस समयके सभ्य मनुष्य समाजकी तुलना करने पर जो पार्थक्य दिखाई देता है, उसीसे इस विषयकी मीमांसा हो सकती है। मनुष्य शरीरके अस्थिसंस्थानका पर्यवेक्षण कर शरीरशास्त्रके पण्डितों (ओयन और हक्सली)-ने स्थिर किया है, कि मनुष्य और वन्दरमें विशेष पृथकता नहीं। मनुष्य और वन्दरमे बहुत सामीप्य है। किसी किसी विषयमें पृथकता दिखाई देने पर भी नर वानरके अस्थि संस्थानमे अनेक सौसादृश्य है। अत्यन्त बढ़े हुए आयतनवाले गरिलेका मस्तिष्क कमसे कम २० औंस (१० छटाँक) और विकाशके प्रारम्भिक अवस्थाके मनुष्यके मस्तिष्कका वजन ३२ औंस (१६ छटाँक) होता है। किन्तु गरिलेका आयतन मनुष्यकी अपेक्षा अधिक है। शारीरिक प्रकृतिके कारण गरिला मनुष्यके निकटका ही जीव है, इसमे जरा भी सन्देह नही।

प्राणितत्त्व-विषयक-श्रेणीविभाग।

किसी प्राणितत्त्ववित् पण्डितने स्थिर किया है, कि मनुष्य शारीरिक और मानसिक प्रकृतिमें तिर्यग् जातिसे सम्पूर्णतः विभिन्न प्रकृतिका जीव है। किन्तु इस समयके प्राणिविद् पण्डित एक स्वरसे इसी बातका समर्थन कर रहे हैं। उनका कहना है, कि विभिन्न जातिके वन्दरोंमे जितना विषम विभेद दिखाई देता उतना अपूर्ण मनुष्यसे पूर्ण गरीलेमें नहीं। फिर भी मर्कटोंको प्राणितत्त्व पण्डितोंने वन्दरोंकी श्रेणीमे ही अन्तर्निविष्ट किया है। हकसली इसी युक्तिसे प्राणितत्त्व विषयक विभागमें मनुष्यको उत्तम श्रेणीका जीव कहना चाहते हैं। तिर्यग् जातियोंमें बुद्धिवृत्ति और समाजप्रीति अस्फुट रूपसे रहने पर भी मनुष्यमें ही उसका पूर्ण विकाश दिखाई देता है।

मानसिक उत्कर्षके विषयमें, तिर्यग् जातिके साथ मनुष्यका जो विषम पार्थक्य दिखाई देता है, शारीरविज्ञानके साथ तुलना करने पर उतना पार्थक्य दिखाई नही देता।

जो हो, भिन्न भिन्न स्वतन्त्र विज्ञानको मानवतत्त्वमें अन्तर्भुक्त करने पर भी और विभिन्न विज्ञानमें मनुष्यसम्पर्कीय सभी तत्त्वोंके उपादान रहने पर भी मानवतत्त्वकी एक सीमा निर्दिष्ट है। मनुष्यके शारीरिक और मानसिक प्रकृति तथा वसुन्धराके विशाल वक्षमें मानवके प्रथम आविर्भावसे अब तकके मानवजातिके इतिहास की पर्यालोचना करना मानवतत्त्वका उद्देश्य है।

तिर्यग् जातिके साथ मनुष्यका सम्बन्ध।

मानवतत्त्व शास्त्रके प्रथम प्रणेता डाक्टर पिकार्डने मनुष्यके साथ इतर प्राणियोंके शारीरिक सादृश्य और प्राकृतिक वैसादृश्यकी आलोचना कर कहा है, कि यह अतीत समयकी बात है, कि मनुष्य साधारण जीवका देहमात्र धारण कर विश्वसृष्टिके गूढ़ रहस्यका अनुसन्धान करता है।

मनोविज्ञानकी समानता।

प्राणितत्त्वविद् पण्डित मनोविज्ञानके विभागके अनुसार मनुष्यकी जीवजगत्‌के साथ तुलना करने पर बडी ही गड़बड़ोमे पड़ गये हैं। किस तरह जीव सृष्टिके ऊद्‌र्ध्वतन जीव गरिलेसे मनुष्यको मानसिक उन्नतिका अनन्त वैचित्र्य दिखाई दिया इसको ध्यानमें रखने पर मनुष्यको कभी भी जीवसृष्टिकी विकाश-शृङ्खलाका उच्चतम जीव न कह सम्पूर्ण रूपसे नई तरहके प्राणी कहा जा सकता है। ऐसा कहनेकी प्रवृत्ति नही होती, कि यह अनन्त वैषम्य सामान्य दैहिक गठन पर ही अवलम्बित है। इन्द्रियकी अनुभव-शक्तिमें किसी किसी बातमें मनुष्य तिर्यग् जातिसे पराजित हो जाता है। गृध्र पक्षीकी दूरदर्शनी दृष्टि और कुत्तोंकी घ्राण-शक्ति (सूंघनेकी शक्ति) मनुष्यके पूर्णविकशित इन्द्रिय-शक्तिकी अपेक्षा अधिक बलवती होने पर भी मनुष्य अनुभवमें बहुत बढ़ा चढ़ा हुआ है, यह सर्वथा स्वीकार करना होगा।

मानसिक-शक्ति।

मनुष्य विशाल काय हाथीके शरीरके सामने एक छोटा जीव है तथा सिंह या बाघके मुकाबलेमें बहुत ही कमजोर होने पर भी केवल बुद्धिबलसे अपनेको सुरक्षित रख प्रतिद्वन्द्विता करता है। प्रकृतिके साथ संग्राममे मनुष्य किसी समय पराजित होने पर भी प्रकृतिके

ऊपर इस समय अपना प्रभुत्व विस्तार कर रहा है। मनुष्यके कौशल तथा बुद्धिबलसे सहस्रों मतङ्ग हाथी या क्षुधार्त्त सिंह पराजित हो रहे हैं। कपोतका द्रुत-पक्ष और क्षिप्रगति मनुष्यके अग्नि-गोलेसे हार मानती है। कितने ही संस्कारोंमें सीमाबद्ध होने पर भी मनुष्यकी मानसिक उन्नतिके इतिहासकी पर्यालोचना करनेसे मनुष्यको पृथ्वीकी जीव-सृष्टिके साथ एक पर्यायमें रखनेकी इच्छा नहीं होती। तिर्यग् जातियोंमें स्मारकता-शक्ति, युक्तिशक्ति विचारशक्ति और नये विषय सीखने की शक्ति न्यूनाधिक दिखाई देने पर भी तथा अभ्यास-वश प्रकृतिमें परिवर्त्तन होने पर भी उसकी तुलना करने-पर मनुष्यको स्वर्गराज्यका जीव कहना पड़ता है। वेल्स साहबने ठीक ही कहा है,—जब विशाल विश्वसृष्टिमें मनुष्यने पशुचर्मसे लज्जानिवारण करना सीखा, जब नुकोले पत्थरोंसे पेड़ोंको काटा, अरणीके संयोगसे निविडवनमें अग्नि उत्पन्न करना सीखा, जिस दिन विना चेष्टाके शस्यका बीज कृष्टक्षेत्रमें वपन किया उसी दिन निसर्गराज्यके महापरिवर्त्तनका सूत्रपात हुआ था। नैस-र्गिक परिवर्त्तनमें बाधा डालनेमें समर्थ हो जिस दिन मनुष्यने प्रकृतिके विरुद्ध अस्त्र उठाया था, वह दिन अवश्य ही स्मरणीय है। परिवर्त्तनशील पृथ्वीकी पीठ पर मनुष्यने जिस दिन प्रतिद्वन्द्विता करना सीखा, उसी दिन मानव सृष्टिमें अभिनव-सृष्टिका सूत्रपात हुआ।

आज जो दर्शनशास्त्रके ज्ञानसमुद्रके रत्नसञ्चयमें निमग्न सत्य, न्याय और धर्मके ऊपर जो नीतिशास्त्र प्रतिष्ठित है,—जो धर्मशास्त्र विश्वेश्वरके साथ मनुष्यका सम्बन्धनिर्णयमें अग्रसर है, वे सब सम्पूर्ण रूपेण मान-वीय शास्त्र होने पर भी तिर्यग्‌जातियोंमें उनका पहला अंकुर दिखाई देता है।

वेल्सका कहना है—मनुष्य बिलकुल नये प्रकारका जीव है। उन्होंने फिर अभिव्यक्तिवादके प्रति तीव्र कटाक्ष कर कहा है—मनुष्य विवर्त्तवादकी उच्च सीढ़ी पर पहुंचने पर भी किसी अदृश्यमान प्राचीन जीवका सहो-दर किसी कश्यपकल्प ब्रह्माकी सन्ततिका अधस्तन वंश है। हो सकता है, कि जिस औरससे उरग और विह-ङ्गमकी उत्पत्ति हुई है उसी तरह मानव उनका सौतेला भाई है।

मनुष्यके सम्बन्धमें जड़वाद और अध्यात्मवाद।

डारुयिन् और हकसली-प्रमुख प्रत्यक्षवादी वैज्ञा-निकोंने मनुष्यको इस जीव-जगत्‌के सर्वश्रेष्ठ जीव कह डाला है। जड़वादी वैज्ञानिकोंको अनन्त वैचित्र्यमय मानवमस्तिष्कके विस्मयकर विकाशको देख कर भी नर-वानरोंमें अधिक प्रभेद नहीं दिखाई दिया है।

अध्यात्मवादियोंने कहा है,—मनुष्यजाति पशुपक्षीसे उद्भूत जीव नहीं। मनुष्य विधाताके ऐसी शक्तिसम्पन्न नई सृष्टि है। जीवात्मा ही मनुष्यके बुद्ध्यादि मानसिक गुणोंके मूलीभूत कारण है। यह आत्मा ही ऐसी शक्ति है। मनुष्य आत्माकी शक्तिमें जीवजगत्‌से संपूर्ण नया जीव है। मनुष्यके कशेरुके मज्जा आदि शारीरिक यंत्र और स्नायुमण्डलीके साथ जन्तुओंका सम्पूर्ण सादृश्य रहने पर भी मनुष्यकी स्वतन्त्रता है—अदृष्ट और पुरुषा कार है। अन्यान्य तिर्यग् जातियोंमें उसका प्रथम विकाश भी दिखाई नहीं देता। आत्मा मनुष्यके जान्तव शरीरमें रासायनिक संयोगसे उत्पन्न क्रियामात्र नहीं है। वर्त्तमान समयके बड़े बड़े वैज्ञानिक डारविनके मतकी पुष्टि नहीं करते। मनुष्य सृष्टिके सम्बन्धमें प्राचीन हिन्दुओंकी दार्शनिक तत्त्वालोचना पाश्चात्य मानवतत्त्व-की संज्ञासे बाहर है। पिकार्ड साहब कहते हैं, कि मनुष्यकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कोई स्वाधीन मतका प्रकाश मानवतत्त्वालोचनाके अन्तर्गत नहीं है। इस विषयमें प्राचीन वैज्ञानिकोंका एक मत नहीं है।

मनुष्यकी उत्पत्ति और अभिव्यक्ति।

मनुष्योंकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कई तरहके मत दिखाई देते हैं। किन्तु आज कलके सब मत जीव-विज्ञान-(Biology)-के ऊपर निर्भर करता है। मनुष्य-सृष्टिके सम्बन्धमें दो मतोंका उल्लेख करना आवश्यक है, एक सृष्टिविषयक, दूसरा विवर्त्त या अभिव्यक्तिविषयक। दोनों मत-वालोंका एक स्वरसे यही कहना है, कि मनुष्य सृष्टिका श्रेष्ठ जीव होने पर भी मातृरूपा वसुन्धराकी एक सबसे छोटी सन्तान है। उन्होंने भूगर्भस्थित प्रस्तर-वत् मानवकङ्काल या हड्डियोंको निकाल उनकी अच्छी तरह परीक्षा की है। उन्होंने देखा है, कि वहां मछलियों-तथा कच्छपोंकी ठठरियां ज्योंकी त्यों पड़ी हैं। किन्तु

सिंह या शार्दूलका पदचिह्न तक दिखाई नहीं देता। फिर उसके बादके भूस्तरमें विशालकाय सांपका विशाल शरीर सुरक्षित है; किन्तु दश हजार वर्षके बाद भूपृष्ठ पर मनुष्यशिशु भूमिष्ठ नहीं हुआ; भूतत्त्व इसका प्रमाण दिखा रहा है। जीवसृष्टिके क्रमविकाशकी पर्यालोचना करनेसे स्पष्ट मालूम होता है,—इसमें एक शृङ्खलावद्ध पद्धति है।

एगासिज् (Agassiz)-ने प्राणीतत्त्वकी पर्यालोचनाके सम्बन्धमें कहा है,—विभिन्न जातिकी जीवसृष्टिके विषयमें विधाताका विचित्र विधान विज्ञानवादियोंकी वाह्य परीक्षासे बहुत दूर है। सारी जातियोंके इतिहासका अनुशीलन न करनेसे मनुष्यसृष्टिका क्रम हृदयङ्गम करना बहुत कठिन है। सृष्टितत्त्व देखो।

इस विषयमे दार्शनिकतत्त्व परस्पर विरोधी हैं। पाश्चात्य मानवतत्त्व शास्त्र गभीर गवेषणा द्वारा मनुष्यके निकटतम पूर्वपुरुषके अनुसन्धानमें अभी तक कृत् कार्य हो नही सका है। इसलिये इन दोनों पक्षोंकी युक्तियोंकी आलोचना धीरतासे करना ही श्रेयस्कर है।

पण्डित टेलर (E. B. Tylor)ने अपने मनुष्य-इतिहासवाले लेखमें प्रारम्भिक उत्पत्तिके सम्बन्धमे बहुत कुछ कहा है। इस पर मनन करनेकी आवश्यकता है। उनका कहना है, कि क्रमविकाशवादमें अन्धपरमाणुओंका आकर्षण और विप्रकर्षणके सिवाय सृष्टिका अन्य कोई प्रवत्तक कारण निर्दिष्ट नहीं हुआ है। इससे मालूम होता है, कि सृष्टिप्रवाहके अनादित्व स्वीकार न करनेसे पाश्चात्य क्रमविकाशवादको आकस्मिक सृष्टिवाद अथवा अन्धकारणवाद कहना होगा। मनीषी-सम्पन्न पाश्चात्य बुधगण अभिव्यक्त यानी स्थूलरूपसे प्रकटित जीवजगत्के साम्य और वैषम्यको ले कर जैसे व्यग्र हैं, वैसे मूलकारणके खोजनेमें तत्पर नहीं।

सृष्टिवादी और क्रमाभिव्यक्तिवादी—दोनों दल अब मुक्त कण्ठसे स्वीकार करते हैं, कि पृथ्वीके सर्व जातीय जीवोंका एक साथ आविर्भाव नहीं हुआ है। क्योंकि भूतत्त्वविद् पण्डितोंके अव्यर्थ प्रमाणोंसे इस विषयका निपटारा हो चुका है। इस समय दोनों पक्ष जीवजगत्की क्रमोन्नति और क्रमविकाशकी पर्यालोचना कर न्यूनाधिक रूपमे कहते है—एक जातीय जीवके साथ दूसरे जातीय जीवोंके बहुत करके सौसादृश्य होने पर भी वह जातीय जीव साक्षात् सम्पर्कमें अन्य वंशोद्भव नहीं। बन्दरसे मनुष्यका या मत्स्यसे सांपका साक्षात् जन्म नहीं हुआ है। इसलिये स्तन्यपायी जीववर्ग मनुष्य जातिका पूर्व वंश हो सकता है पर पूर्व पुरुष नही।

डारविन और हेलमहोल्ज (Helmholtz) आदि क्रमविकाश-वादियोंका कहना है, कि सृष्टिप्रक्रिया ईश्वरके संकल्प और चैतन्यकी परवाह नहीं करती। अचेतन प्रकृतिके अन्धनियमोंमें अकस्मात् हुआ करता है। सृष्टिवादियोंका कहना है, कि जब प्रत्येक पत्तेके वृक्षसे गिरनेमें भी जब विधाताके नियमोंका व्यभिचार दिखाई नही देता, तब चेतनके अनधिष्ठित अचेतन द्वारा स्वतन्त्ररूपसे सृष्टि नही हो सकती। प्रकृतिकी कोई एक अनिर्वचनीय शक्तिमत्ता स्वीकार न करनेसे प्रकृतित्व सिद्ध नहीं होता। चैतन्यनिरपेक्ष नैसर्गिक नियमोंको अन्धचेष्टा या क्रिया द्वारा जीवके शरीर यन्त्रसमूहका यथायोग्य संविधान नहीं हो सकता। पण्डित बील (Beal)-ने यथार्थ ही कहा है, कि डारविन या हेमहोलके सहस्रों यत्न करने पर भी मनुष्यकी आदि उत्पत्तिके स्थिर सिद्धान्तका पता नहीं लगा सकते।

जीवजाति। निर्दिष्ट पैतृकता। (hereditary varieties)

पिता माताका स्वभाव तथा गुण सन्तानमें कितना मौजूद रहता है, इसीका निर्णय करना मानवतत्त्वका उद्देश्य है। पूर्वपुरुषकी गुणावली—सन्तानमें संक्रामित होती यानी आता है, इसका दृष्टान्त तिर्य्यग् जातिमें कम नही। कितने ही मनुष्योंके शारीरिक तथा कितनेके मानसिकधर्म पितृधर्ममें विद्यमान रहते हैं। इनमें जाति विभागका पहला धर्म त्वकका रूप है।

जाति-चिह्नोंमें वर्णका विशेषत्व पहले दिखाई देता है। प्राचीन मिस्रकी विविध जातियोंके जो चित्र मौजूद है हजारों वर्षके बाद भी उनकी अपेक्षा किसी भी जातिके वर्णकी विभिन्नता अधिक नहीं हुई है। सबकी अपेक्षा सुन्दर स्वीडेन वासियोंसे हटेन्टट तक या पाटल वर्ण मेक्सिको वासियोंसे पश्चिम अफ्रिकाके काले काफ्रि (हबूशी) तक सारे वर्णकी जातियोंका वर्ण

वैचित्र ब्रोका (Broca) के जातिचित्रमें दिखाई देता है। यह देख विभिन्न जातियोंके वर्णचित्रकी अच्छी तरह परीक्षा की जा सकती है।

२ केशका गठन—केशके वर्णकी अपेक्षा गठन-प्रणाली और साज बहुत अंशमें जातिकी विभिन्नता प्रदर्शित करती है। अनुवीक्षण यन्त्र द्वारा केशके कटे हुए भागकी परीक्षा करने पर इस विषयका सुस्पष्ट प्रमाण मिलता है।

३ अवयव और अङ्गसौष्ठव—गठनप्रणाली और अङ्ग-सौष्ठव जातिचिह्नका एक प्रधान अङ्ग है। किन्तु अवयव-संस्थानका कोई सार्वभौमिक नियम नहीं।

४ कपालकी आकृति या मस्तकका गठन जाति-विभागका चतुर्थाङ्ग है। वर्ण वैचित्र्यके नीचे ही कपालके गठनको स्थान देना उचित है। कपालके सूक्ष्मतत्त्वके निर्द्धारणमें बहुतेरे शारीरतत्त्वज्ञ पाश्चात्य पण्डितोंने पूरी चेष्टा की थी। उनमें ब्लूमेनवाक (Blumenbach), रेजियस् (Regius), भन्व्यार (Von Bear), वेलकर (Welker) डेविस् (Davis), ब्रोका (Broka), वास्क (Bush), लुके (Lucae) आदि मनुष्योंका नाम उल्लेखयोग्य है। इसी तरह अष्ट्रेलिया-वासियों तथा हवशियोंकी सुच्यग्र-चिवुकास्थि, यूरोपियोंके चिवुककी अपेक्षा विशेषरूपसे विभक्त है। कपालविद् पण्डितोंने कपाल तत्त्वके विषयमें बहुतेरे अविष्कार किया है। प्राच्य हिन्दू-शास्त्रोंमें भी कपाल गठनके तारतम्यके निर्द्धारणमें ५२ प्रकारके उपाय निर्दिष्ट हैं।

५ मुखाकृति--मनुष्योंके समस्त शरीर विच्छिन्न करने पर भी एकमात्र मुखावयव देख कर जाति विचार किया जा सकता है। मुखाकृतिके साधर्म्य और वैधर्म्य-को देख कर मनुष्यको जातिका निर्णय सहज ही हो सकता है। उनमें नासिकाका गठन और गालका स्थान-ओष्ठाधरकी आकृति और नेत्र गठन पर ही विशेष ध्यान देना चाहिये। मुखका पार्थक्य ही जातीय चिह्नका प्रधान उपादान है।

६ धातुवैचित्र्य या प्रकृति—(Constitution) और चरित्र—मनुष्यजीवनका जीवन वृत्त जलवायुके प्रभावसे और देशके प्रभावसे बहुत अंशोंमें परिवर्त्तित हुआ करता है। देशभेदसे शरीर सामर्थ्यका भी न्यूनाधिक होता रहता है। किसी जातिका नाश हो रहा है, तो कोई जाति अपना विस्तार कर रही है। देशकी प्राकृतिक या नैस-र्गिक नियमोंके साथ उस देशको जातिका सामञ्जस्य या सङ्गति न रहनेसे वे जातियां शीघ्र ही विलुप्त हो जाती हैं। इसी तरह पृथ्वीकी अतीत जातियां विलुप्तप्राय हो गई हैं। कोई जाति उद्यमशील है, कोई क्रोधशील, फिर कोई लज्जाशील, कोई समाजप्रिय, कोई जाति-निर्जनताप्रिय हैं—इत्यादि जातीयवैचित्र्य जातिविशेषके तारतम्य निर्द्धारणके लिये उपाय बतानेवाले हैं। सिवा इसके जातीय चरित्रके चिह्नका अवलम्बन ले कर जाति-का निरूपण होता है। विविध जातियोंका संघर्ष कभी कभी विजित जातियोंके अनिष्टका कारण बन जाता है।

जातिविभागका साधारण नियम।

सभी जातियोंमें ही कुछ न कुछ विशेषत्व रहता है। वही देख कर उनके अवान्तरके भेदका निर्णय किया जा सकता है। आकृति या प्रकृतिगत वैषम्य ही जाति-निर्णयका मूलसूत्र है।

क्वेटिलेट (Quetelete) साहबने जातिके संज्ञानिर्देश करनेमें विज्ञानसे काम लिया है। उन्होंने प्रत्येक जाति-में उच्चताका निरूपण कर उसीको उस जातिको उच्चताका आदर्श बताया है। उन्होंने सिवा इसके अन्य किसी विशेष गुणका अवलम्बन अर्थात् आकृति, वर्ण, भार आदिको भी आदर्श बतलाया है।

जातिकी सङ्करता।

विविध जातियोंको मिलावटसे बे-हिसाव सङ्कर जातिकी उत्पत्ति हो रही है। दो भिन्न भिन्न जातियों-को मिलावटसे कितनी तरहकी सङ्करता होती है, उसके निर्णय करनेमें हाक्सिली साहबने बहुत प्रयत्न किया है। केवल प्रयत्न ही नहीं, वरं उन्होंने सफलता भी पाई है। उनका कहना है, कि हटेण्टट जाति मूलजाति नहीं है। बुशमेन और निग्रो जाति (हवशी)-की मिलावटसे यह सङ्कर जाति और दक्षिण यरोपवासी मिश्रवर्णके (गोरे और कालेकी मिलावटसे उत्पन्न वर्ण) लोग सभी गोरे, उत्तर यूरोपवासी और दक्षिण-एशियाखण्डवासी जातियों-के सम्मेलनसे उत्पन्न हैं।

इस मानवतत्त्वशास्त्रका मूल उद्देश्य है, कि वह

इस बातका निर्द्धारण करें, कि किस तरह मूल जातिसे विविध जातियोंकी उत्पत्ति हुई। गत कई वर्षोंसे इस विषय-पर बड़े बड़े मानवतत्त्वज्ञ पण्डितोंमें वादविवाद चल रहा है। इन पण्डितोंमें दो सम्प्रदाय हैं, एक संप्रदाय स्वजातिका पक्षपाती और दूसरा बहुजातिका पक्षपाती है। प्रथम पक्षका कहना है, केवल एक मानवदम्पत्तिसे ही इस मानववंशकी उत्पत्ति है। दूसरा पक्ष कहता है, विविध मानवदम्पत्तिसे ही इस विशाल मानववंशकी सृष्टि हुई है। खृष्टानधर्मावलम्बियोंमें कुछ लोगोंने बाइबिलका आश्रय लिया है। किन्तु प्रत्यक्षवादी वैज्ञानिकोंने बाइबिलको ताक पर रख वैज्ञानिकतत्त्वोंकी अवतारणा की है।

पहले अरिष्टटल आदि यूरोपीय पण्डितोंको जाति-वैचित्र्यके सम्बन्धमें ऐसी धारणा थी, "एकमात्र मानव दम्पतीसे ही इस सभी जातियोंकी सृष्टि हुई है। एकके साथ दूसरेकी विषमता होनेका कारण प्रकृतिका परि-वर्त्तन है। देशभेदसे और जलवायुके प्रभावसे या वैचित्र्यसे ही जातिवैचित्र्य हुआ करता है। इथियोपिय-वासी सममण्डलकी प्रखर-सूर्य्य किरणोंके कारण काले हो जाते हैं और मेरुदेशके अधिवासी शीताधिक्य तथा सूर्यकी धीमी किरणोंके कारण श्वेत या सादे हो जाते हैं। कहीं भी इसका व्यतिक्रम नहीं दिखाई देता। वर्त्त-मान समयके प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् पण्डितको कोयटर फेजेस (M. de, Quatrefages)ने एक जातिवादके पक्षमें बहुतेरी अनुकूल युक्तियोंका दिग्दर्शन किया है। वास-स्थान तथा जलवायुके प्रभावसे ही जातीय भावका परिवर्त्तन होता है। यह बात सभी स्वीकार करते हैं। पहाड़ी जातियों और समतलक्षेत्रकी रहनेवाली जातियों-की प्रकृतिकी पर्य्यालोचना करने पर इस विषयकी सत्यता निर्द्धारित होती है।

किन्तु आधुनिक वैज्ञानिकोंमें बहुजातिवादके पक्षमें ही वादानुवाद चला आ रहा है। कुछ लोग अभिव्यक्ति-वादके साहाय्यसे जातिवैचित्र्यका कारण दिखाते हैं। डारविनने कहा है,—एक जातीय मनुष्योंके साथ अन्य जाति-मनुष्योंका बहुत बाह्यवैषम्य और परस्पर शारीर-यन्त्रका घनिष्ठ सादृश्य है। वालेस (A. R. Wallace) साहब अभिव्यक्तिकी दृढ़ भीत पर एक जातिवादकी युक्ति दिखा कर कहते हैं—अत्यन्त प्राचीनकालमें एक जाति हीसे विविध जातियोंकी उत्पत्ति हुई। जिस युगमें निग्रो (हबशियों)-के पिता तथा श्वेताङ्गोंके पिता—दोनों सहोदर थे उस युगमें वे लोग प्राकृतिक विप्लवके साथ संग्राम करनेमें समर्थ नहीं थे। प्राकृतिक अत्याचारसे आत्मरक्षा करनेकी शक्ति उनमें परिस्फुट नहीं हुई थी। इसीलिये जलवायु और वायुशक्तिका उन पर इतना अधिक प्रभाव था। वर्त्तमान समयमें मानवने शिक्षा और सभ्यताका उत्कर्ष संस्थापन की प्रकृतिके साथ प्रतिद्वन्द्विता से जयलाभ करना आरम्भ किया है। अत-एव प्रकृतिकी शक्ति मनुष्योंका परिवर्त्तन करनेमें उतनी कार्य्यकारिणी नहीं। इसीलिये गोरे वर्षों तक निग्रो या हबशियोंके देशमें रहने पर भी उनके सादृश्यको प्राप्त नहीं कर सके। जिस युगमें नंगे मनुष्य ग्रीष्मकालके प्रखर उत्तापमें इधरसे उधर जङ्गलमें घूमा करते थे, वर्षाके मुसलधाराको पार करते थे, उस समय 'शीतपथ' मनुष्यजाति पर प्रकृतिने अपना प्रभुत्व विस्तार किया था। किन्तु जिन मनुष्योंने सभ्यताके प्रारम्भमें अपनी रक्षा करना सीख लिया, पशु चर्म और वल्कलसे अपने शरीरको ढांक लेना सीखा, पर्णकुटि बना कर समाज शृङ्खलाका सूत्रपात किया उस समय-से प्रकृतिका आधिपत्य कम होने लगा।

आजकलके समयके शिक्षाप्रभावसे जो सभ्यता-गर्वित मानवजातिने चंचला चपलाका चाञ्चल्य दूर कर अञ्चलबद्धा नर्म-सहचरियोंकी तरह पंखा चलानेमें नियुक्त किया है एवं उसीकी रूपप्रभासे राजपथ और बड़ी बड़ी अट्टालिकायें प्रकाशित कर रही हैं, इन्द्रके अव्यर्थ वज्रास्त्रको जिन मनुष्योंके सामने लक्ष्य-भ्रष्ट होना पड़ता है, उस सुसभ्य मानव पर क्या प्रकृति अब अस्त्र चलायेगी? इस विषयोंमें जरा सन्देह नहीं, कि शीघ्र ही उसको रहस्यमय दुर्ग पर मनुष्यका अधिकार होगा। इसलिये वालेस साहबने कहा है, कि प्रकृतिको जो करना था, उसने वही किया। अब उसका प्रभुत्व नहीं चलेगा। इस समय मनुष्य प्रकृति-के साथ युद्ध करनेमें समर्थ है। वालेसकी युक्तिने

परम्परासे ही एक जातिवादकी दृढ़ भीति पर स्थापित किया है।

मनुष्यका प्रत्नतत्त्व ।

कुछ समय पहले शिक्षित समाजका विश्वास था, कि मनुष्यजातिका धारावाहिक रूप इतिहास मिल सकता है। क्योंकि, इङ्गलेण्डके प्रधान विशप आसार (Usher) ने गिन कर देखा था, कि ४००४ ईसाके पहले पृथ्वी और मनुष्यकी एक साथ सृष्टि हुई है। सब साधारणका यही विश्वास था। जो हो, वे सब विश्वास इस समय कल्पनाके ताक पर आराम कर रहे हैं। भूतत्त्वके प्रामाणिक सिद्धान्तसे वैज्ञानिक कह रहे हैं—इसकी गणना नहीं की जा सकती, कि मनुष्य और पृथ्वीकी सृष्टि कब हुई है। पृथ्वीके सबसे छोटे मानव शिशुकी उम्रको गिन कर भी वे उम्रकी हालतको कुछ नहीं जान सके हैं। डरते हुए अनुमानका आश्रय ले कर वे कहते हैं, कि मनुष्यजातिकी उम्र लाख हजारसे भी अधिक है।

प्रत्नतत्त्वविद् पण्डितोंने प्राग्‌ैतिहासिक युगके प्रत्नतत्त्वकी खोज कर इस विषयके मौलिकत्वका निर्देश किया है।

गत आधी शताब्दीसे भूतत्त्वविद्याकी उन्नतिसे मनुष्यका इतिहास बहुत कुछ परिस्फुट हुआ है। भूतलके जिस भागमें प्रस्तरवत् हाथी, गैंडे, भालू आदि जीवोंकी हड्डियां या ठठरियां मिली हैं, उसी भागमें मनुष्योंकी अस्थि, मनुष्योंकी ठठरियां, मनुष्योंके बनाये प्रस्तरके हथियार आदि अन्य चीजें भी दिखाई देती हैं। इससे स्पष्ट ही अनुमान किया जाता है, कि जो स्तन्यपायी जीव धरणीकी पीठसे अदृश्य हुए हैं मनुष्य उस समय भी मौजूद था। डाक्टर स्मैर्लिङ्ग (Dr. Schmerling) का कहना है, कि अति प्राचीनकालमें पृथ्वी पर जहां गुहाभालू (Cave-bear) विचरण करते थे, वहां मनुष्य भी थे। क्योंकि उनकी ठठरियोंके पास ही मनुष्यकी ठठरियां भी पाई जाती हैं। सुप्रसिद्ध फ्रान्सीसी प्रत्नतत्त्वविद् बूचर (Boucher de Perthes), रिगालों (Rigollot), फकनार (Falconer), प्रेष्टविच एवं इभनस आदि भूतत्त्वज्ञ पण्डितोंने सन् १८५० ई०से १८६० ई०के बीच बहुत गवेषणा तथा परीक्षा द्वारा स्थिर किया है, कि डाक्टर स्मारलिङ्गकी बात ठीक है। उन लोगोंने भी दिखलाया था, कि मनुष्य Quaternary या Drift युगमें पत्थरके बने कुठारका व्यवहार होता था। विशालकाय हाथीके शरीरकी ठठरियोंकी बगलमें मनुष्यका प्रस्तरास्त्र मौजूद है। मिष्टर गोडविन् अष्टेन (Mr Godwin Austin)ने बहुत परीक्षाके बाद यह प्रमाणित करते हुए कहा है—जब प्रस्तरीभूत भिन्न भिन्न प्राथमिक जीवोंकी ठठरियां अधिकतासे भूतलमें विद्यमान हैं, तब यह निश्चय है, कि मनुष्यकी ठठरियां भी वहां ही मिलेंगी। इसके बाद इङ्गलैण्डके केण्ट प्रदेशकी गुहा और मध्य फ्रान्सके किसी किसी स्थानको खोद कर भूतत्त्वविद् पण्डितोंने देखा, कि बारहसिंघेकी ठठरियोंके बाद मामथ जातीय हाथीकी ठठरी मौजूद है। उस समय मनुष्य एस्कुइमो जातिके अनुरूप आचार व्यवहार करते थे। हाथी दांतकी नक्काशीके बहुतेरे नमूने मिले हैं। इससे मालूम होता है, कि उस समयके मनुष्य भास्करविद्याके रसास्वादन करनेमें समर्थ थे।

मनुष्यके सम्बन्धमें इससे पहले और कोई तत्त्व नहीं पाया गया है। फिर यह निःसन्देह स्थिर है, कि जिस युगमें विशालकाय हाथी भूपृष्ठ पर विचरण करता, बारहसिंघे तुषारक्षेत्रमें दौड़ा सा फिरता था, उस अन्यतम शैलयुगमें मनुष्य प्रस्तरास्त्र द्वारा शिकार करते थे। चित्तविनोदके लिये हाथी दांत पर नाना प्रकारके चित्र खोदे जाते थे। इस विषयमें सर सी० लायल (Sir C, Lyell's Antiquity of man) प्रणीत मनुष्यके प्रत्नतत्त्व और सर जान लावक (Sir John Lubbock's Prehistoric Times) प्रणीत प्राग्‌ैतिहासिक काल नामकी दोनों पुस्तकोंमें विस्तार रूप वर्णित है।

Quaternary युगके मनुष्यजातिका प्रत्नतत्त्व ।

इस समयके भूतत्त्वविद् पण्डितोंने Quaternary युग तक मनुष्यका स्थितिकाल निर्णय किया है। जिस युगमें गण्डशैलसंकुला सब तुषारमयी प्रवाहिणी प्रकाण्ड प्रकाण्ड प्रस्तरखण्डको बहाती हुई दिग्‌दिगन्तमें प्रवाहित होती थी उसके और पहलेकी प्रस्तरमें मानव पदका

चिह्न दिखाई नहीं देता। सामान्यतः यह निर्द्धारित हुआ, कि अबसे दश हजार वर्ष पहलेका वह युग है। उस युग पर इतिहास अपना प्रकाश नही डाल सकता। अनुमानिक क्षीण प्रकाशसे उस अप्रत्यक्ष विवरणका निरूपण हुआ। इसके बाद मनुष्योंके व्यवहृत भूगर्भ-निहित वस्तुओंका अस्तित्व सूक्ष्मरूपसे निर्णय किया जा सकता है। इसके बाद प्राचीन शैलयुगमे (Paloc-olithic) चिक्कन पत्थरका अस्त्र अब दिखाई नहीं देता। इसके बाद नये शैलयुगमें (Neolithic) चिक्कन और विविध कारुकार्यसम्पन्न प्रस्तरास्त्र (पत्थरका अस्त्र) दिखाई दिया है।

उसके बादका समय अर्थात् प्राथमिक लौहयुग (Bronze Iron Age) से यूरोप ऐतिहासिककाल आरंभ होता है। मनुष्यके पत्थरका अस्त्र जो भूतलमें विद्यमान है,उस Quaternary युगके जीवोंमे अनेक स्तन्यपायी जीवकी ही प्रस्तरवत् ठठरी दिखाई देती है। उनमे अनेक जाति ही पृथ्वीमे अन्तर्हित हो गई है। मामथ या विशाल-काय हाथी, घनीभूत केशविशिष्ट गैंडा एवं आयरलैण्ड देशीय एल्क (Irish elk) और दिखाई नहीं देता। कस्तूरी देनेवाला हिरन और बारहसिंघे किसी किसी दूरवर्त्ती स्थानोंमें पाये जाते हैं। इससे अनुमान होता है, कि उस समय फ्रान्सदेशमें बहुत कठोर जलवायु था। पत्थरका अस्त्र धारण करनेवाले मनुष्योंसे ऐतिहासिक युगके प्रारम्भ तक जो समय बीत गया है, फ्रान्स-इति-हासका दो हजार वर्ष उसकी तुलनामें अत्यन्त सामान्य भग्नांश प्रतीत होता है।

इसके सिवाय नदियां पूर्व खात और उपत्यका समूहके भौगोलिक संस्थान द्वारा निर्णीत हुआ है, कि वर्त्तमान नदीवक्षसे उस समयका नदीवक्ष दो सौ फीट ऊंचा था।

मनुष्योंकी बनाई ईंटोंके चिह्न।

मिष्टर हरनर (Mr. Horner) ने नीलनदके तीर वर्त्ती भूभागोंको खोद कर ६० फीट गहरे भूस्तरमें ईंटो और अन्यान्य जली हुई ठठरियोंको पाया है। उससे अनुमान होता है, कि नीलनदका पूर्व खाद ६० फीट मट्टीके नीचे प्रोथित है अति प्राचीन कालमे भी उस देशके अधिवासी मनुष्य ईंटका व्यवहार करते थे। भू-तत्त्वविद् पंडितोंका कहना है, कि बहु शताब्दीमे भूभाग पर केवल कई इञ्च मिट्टी जमती जाती है। अतएव इससे मालूम होता है, कि नीलनदके तटीय भूमि पर ६० फीट मट्टी जमनेमें बहु शताब्दी बीत गई है। अध्यापक मर्लो (Mr. Morlot)ने जनेवा झीलके निकटकी भूमिको खोद कर परीक्षा द्वारा स्पष्ट प्रमाणित किया है, कि १५०० वर्षमें भूमि पर ४ फीटसे ज्यादा मिट्टी नही जमती। गणना करनेसे मालूम होता है, कि बहुत प्राचीनकालसे नीलनदके किनारे मनुष्यकी प्राथमिक सभ्यताका विकाश हुआ था।

प्रत्येक देशमें भूभागोंको खोद कर परीक्षा करनेसे उस देशके प्राचीन विवरणको जान सकते हैं। कलकत्तेके किलामैदानमें एक कुंआ खोदते समय ३०० फीट गहरी मिट्टीसे मनुष्य द्वारा व्यवहृत वस्तुसमूह और बड़े बड़े सुन्दरी वृक्ष मूलके साथ मिले थे। इससे स्पष्ट मालूम होता है, कि आज जहा सहस्र सहस्र विचित्र सौध-मालिनी चित्त चमत्कारिणी वस्तुओंसे परिपूर्ण यह कलकत्ता महानगरी विद्यमान है उसी स्थानके ३०० फीट नीचे पहले कलकत्तेकी स्तरावली भूगर्भमें विद्यमान हैं। बंगालके गांगेय डेल्टा-भूतत्त्वविद् पंडितोंके लिये हालका होने पर भी यह निश्चय है, कि बहुत सहस्र वर्ष पहले उसकी उत्पत्ति हुई है।

ऐतिहासिक प्रत्नतत्त्व।

पहले जिन विषयोंका वर्णन हुआ है वह भूतत्त्व विद्या अध्ययन करनेसे समझमें आ सकता है। किन्तु मनुष्यके लिखे इतिहासमें भी ईसाके ३००० वर्ष पूर्वसे शृङ्खलाबद्ध विवरण प्रकाशित हुआ है। मिस्रका पिरा-मिड वा प्रस्तरस्तूप-संबंधी विवरणसे वहांके प्राचीन तत्त्वोंको जान सकते हैं।

प्राचीन काल्दीय राज्यके इतिहास और रलिन्सन (Rawlinson) साहबके लिखे "प्राच्य जगत्का प्राचीन पंच साम्राज्य" नामक ग्रन्थके पढ़नेसे मालूम होता है, कि ईसाके ३००० वर्ष पहले काल्दीय और मिस्र राज्यकी जातीय सभ्यताका विकाश हुआ था। सर जान डेविस् (Sir John Davis)के रचे चीनदेशका विवरण पढ़नेसे

मालूम होता है, कि वहाँ खृष्टके जन्मसे २००० वर्ष पहले वहाके राजवंश सिंहासन पर बैठ कर राज्य करते थे। भारतवर्षके विज्ञानका अनंत भाण्डार और पृथ्वीका प्राचीनतम साहित्य वेदकी पर्यालोचना करने पर प्रचोल्य बुद्धमण्डलीने भयभीत हो कर आशंकित कंठसे कहा है, कि ईसाके ४,५ हजार वर्ष पहले इस वेदकी रचना हुई थी। भारतवर्षकी भूस्तरावली अच्छी तरहसे जाची नही गई है। केवल प्रत्नतत्त्वका साहाय्य ले कर प्रत्नतत्त्व विद् पंडित कुछ अनुमान करते हैं। फिर भी भारतीय भूतत्त्व नामक पुस्तक पढ़नेसे मालूम होता है, कि बहुत प्राचीन समयमें भारतवर्षकी उत्पत्ति हुई होगी। उन्होंने कहा है,-कि विन्ध्य पर्वत या विंध्याचल पर्वत एक प्राचीनतम ज्वालामुखी पर्वत है। जिस दिन सजीव ज्वालामुखी विंध्याचल अग्निहीन हुआ, जिस दिन यौवनके उद्दाम उच्छृङ्खलता दंडस्वरूप इन्द्र द्वारा उसका पक्ष लूट लिया गया, जिस दिन निरतेज दुवला पतला विन्ध्यागिरि अगस्तके पद पर झुका उस दिनका इतिहास २० हजार वर्ष पहलेका है। इधर उधर फेंके दाक्षिणात्यके शैलखण्डोंकी परीक्षा करनेसे देखा जाता है, कि वे विन्ध्याचलके ही फेंके हुए हैं। इसलिए कितने वर्ष पूर्व भारतके पूर्वाकाशमें सभ्यताका प्रथम विकाश हुआ था यह कौन कह सकता है?

भाषा और शिक्षाका प्रथम विकाश।

प्रतीच्य बुद्धमण्डलीका कहना है—"प्राचीन शैलयुगसे ही मानवसमाजमें सभ्यताका सूत्रपात हुआ। प्राचीन मिस्र, बाबिलन और चीनका इतिहास पढ़ कर उन्होंने उक्त सिद्धान्तके परीक्षित और सत्य होनेकी घोषणा की है। भाषाविज्ञानविद् पण्डित पृथ्वीकी प्राचीनतम भाषाओंकी परीक्षा कर कह रहे हैं, कि हिब्रूके साथ अरबी भाषाका बहुत ही सादृश्य और सामीप्य है। इससे अनुमान किया जाता है, कि ये दोनों भाषायें एक पिताकी दो सहोदरा हैं। कालके वशीभूत हो कर पितृभाषा अन्तर्हित हुई है। वही लुप्त भाषा उस समयके लोगोंकी मातृभाषा थी। उन्होंने उस प्राचीन भाषाके अधिकाश सादृश्य और उच्चारणकी समताको देख निरूपण किया है, कि सारी भाषायें ही एक विलुप्त साधारण पितृभाषाकी पुत्रियां हैं। उपरोक्त सिद्धान्तों पर मानवतत्त्वविद् पण्डित कहते हैं, कि इतिहासका सीमाबद्ध विवरण भाषासृष्टिके प्रथम समयमें संघटित हुआ है। उससे पहलेके इतिहासमें जिसका जानना कठिन है, जो घटनायें हुई थीं, भूतसाक्षी इतिहास उस विषयमें निरुत्तर हो जाता है। किस तरह पशुपक्षीके आकारसे साङ्केतिक चिह्न अवलम्बन कर भाषाकी सृष्टि हुई, उसका विवरण वाग्विज्ञान और वर्णमाला शब्दमें लिखा है।

भाषाविज्ञान।

भाषाविज्ञानके जाननेवाले पण्डितोंका कहना है, कि बहुत प्राचीनकालमें सब जातिकी ही वाक्यकथनप्रणाली एक तरहकी थी। पीछे देशभेदसे जब जातिवैचित्र्यकी सृष्टि हुई, तबसे ही उच्चारणका वैषम्य उपस्थित हो जातीय चरित्रके अनुरूप भावसे भाषाकी विभिन्नता होती रही। व्याकरण और अभिधान (डिक्शनरी) की रचनाप्रणाली अवलम्बन कर भाषा विज्ञानविद् पंडितोंने मानवतत्त्वके विषयमें बहुतेरे अभिनव विवरण लिखा है। भाषाविज्ञानके सूत्रपातसे ही सभ्यताका इतिहास आरम्भ हुआ है।

मूक व्यक्ति जैसे सङ्केत द्वारा मनका भाव प्रकाश करते, वैसे ही मानव जातिकी पहली अवस्थामें सङ्केत और विभिन्न चिह्नों द्वारा अभिप्राय जनाते थे। पीछे भाषाकी सृष्टि हुई। प्रत्येक जातिके इतिहासकी आलोचना करने पर यह मालूम होता है, कि सङ्केत ही भाषाकी पहली सीढ़ी है। मनका आवेग, दुःख, विस्मय और क्रोध प्रकाश करनेवाली भाषा प्रायः सभी जातियोंकी एक ही तरह है।

केवल गत अर्द्ध शताब्दीसे ही भाषाविज्ञान या वाग्विज्ञान (Philology)की सृष्टि हुई है। इस अल्प समयमें उक्त शास्त्र पृथ्वीकी विभिन्न भाषाओंकी वंशपरम्परा और उत्पत्ति तथा परिपुष्टि आदिके निर्णय करनेमें समर्थ हुआ है।

किसी किसी सम्प्रदायके भाषा-विज्ञानविदोंका कहना है, कि संस्कृत या अरबी, चीन या पेरुभियान किसी समयमें भी एक भाषासे उत्पन्न नहीं हुई है,

भिन्न भिन्न निरपेक्ष-भाषासे उत्पन्न हुई है। दोनों मतोंमें वादानुवाद चल रहा है। अभी तक कुछ भी निवटेरा नहो हुआ।

भाषा और सभ्यता।

भाषाका प्राधान्य जातीय चरित्र किस तरह परिवर्त्तित हुआ, वह चिन्ताशील मानवतत्वविद् पण्डित स्थिर कर गये हैं। जिन सब राजनैतिक कारणोंसे जातीय चरित्र परिवर्त्तन होता है उसका भाषा ही प्रधान अस्त्र है। क्योंकि भाषामें ही चिन्ताराशि विद्यमान है। भाषाके अध्ययनके समय वह सब भावराशि जातीय चरित्र मे प्रवेश कर विशेष परिवर्त्तन उपस्थित करती है। इसके भूरि भूरि दृष्टान्त मौजद हैं। जब लेटिन भाषाने यूरोप में अपना प्रभाव विस्तर किया था, तव सारा यूरोप इटालीके भावसे भर गया था। जब एक जाति दूसरी जातिका भाव ग्रहण करने लगती है, तब उसके साथ साथ अपने भाव प्रकाश करनेवाले वाक्योंको अपनी अपनी भाषामें समेट लेती है। जब फारसी जातिका सौभाग्यसूर्य मध्य गगनमें विद्यमान था, तब उनकी विजयपताका हिन्दुस्थानसे एटलाण्टिकके किनारे तक फहरा रही थी। तब सभी भाषा आदरके साथ फारसी भाषासे शब्द संग्रह करनेमें वभी हुई थीं। वङ्ग भाषाके शैशव शरीरमें फारसो भाषाकी लिखावट आज भी मौजद है और जातीय चरित्र पर यावनिक भावका आक्रमण नहीं हुआ है, यह कौन कह सकता है?

दाक्षिणात्यकी द्राविड़ी भाषा संस्कृत भाषाकी शब्द-सम्पत्तिसे समलंकृत हुई। इसीलिये तामील भाषामें इस समय संस्कृतका बहुत भाव घुस गया है। इस समय अङ्गरेजी भाषाके अनुशीलन प्रादुर्भावसे भाषामें, साहित्यमें, समाजमें, जाति और चरित्रमें जो सब पाश्चात्य भाव घुस गये हैं, मानवतत्त्वज्ञ चिन्ताशील व्यक्तियोंका वह चिन्ता करनेका विषय है। केवल भारतीय ही क्यो, सारे अङ्गरेजी साम्राज्यसे इस तरहके विजातीय भाव और भाषाके संघर्षसे बङ्गाली आदि जातियां जातीय चरित्रमें जो भाव विस्तार कर रही हैं, भाषा शिक्षा ही उसका मूल कारण है। फिर जर्मन आदि सुशिक्षित पाश्चात्य जाति संस्कृतालोचनमें वद्धपरिकर हो कर जातीय अभिधानमें बहुतेरे संस्कृत शब्द ले रहे हैं। कुछ प्राचीन ऋषियोंके द्वारा उद्भावित चिन्तापद्धतिका अनुसरण कर वे दार्शनिक तत्वोंमें वहुत अंशोंमें हिन्दूभावापन्न हो रहे हैं। उनका भविष्य चरित्र किस प्रकार गठित होगा, कौन कह सकता है? ज्ञानके उज्ज्वलालोकसे आर्यऋषि द्वारा प्रवर्त्तित चिन्तामार्ग तथा हिन्दू दर्शनके अवलम्बित पथको ही यदि सभ्यतागर्वित पाश्चात्य जातिके निकट यथार्थ समझा जाय, तो प्रतीच्य विद्वत्समाज प्राच्य भावके प्रभावको अतिक्रम नहीं कर सकते। भाषाशिक्षासे जातीय चरित्रमें कितना परिवर्त्तन होता है वह पाठकोंसे छिपा नहीं है।

सभ्यताका विकाश और परिपुष्टि।

असभ्यावस्थामें मनुष्य जिस दिन प्रकृतिके अत्याचारसे आत्मरक्षा करनेके लिये गिरिगह्वर और वृक्षकोटरमे छिप रहते थे उस दिनसे सभ्यतालोकित २०वीं शताब्दीके मनुष्योंके अतुल ऐश्वर्यकी पर्यालोचना करनेसे विस्मित होना पड़ता है। अंगरेज जातिका इतिहास अक्षर अक्षरमें इस वाक्यकी पोषकता भी प्रमाणित करता है। जो दो हजार वर्ष पहले रोमके शृङ्खलाबद्ध दास थे आज वे अधिकांश स्थानोंके राजराजेश्वर हैं। उन लोगोंकी विजयवैजन्ती समान भावमें फहरा रही है। जिनके देशमें सूय छः महीनेमें भी अपना दर्शन देते आज वे उनके अधिकृत राज्यमें अस्त तक भी नहीं होते। उन लोगोंका इतिहास पढ़ना और सभ्यताका इतिहास पढना दोनों समान है। जो एक समय असभ्य नामसे कलंकित थे, आज उनके वंशधरगण विधाताको भी सृष्टिकार्यमें अक्षम वतलानेकी कोशिश करते हैं। वे मानो तपस्यालब्ध आर्षबलसे बलिष्ठ हो कर अभिमान-दग्ध विश्वामित्रकी तरह जगतमें नूतन सृष्टिका सूत्रपात करने अग्रसर हुए हैं। इन सब विषयोंकी पर्यालोचना करनेसे साफ साफ मालूम होता है, कि मनुष्यकी सभ्यताका धारावाहिक इतिहास है तथा उस सभ्यताकी सोपानपरम्पराविवर्त्त और विकाशके उन्नतिशील सनातन नियमसे परिवर्त्तित हो रही है। जो मनुष्य एक दिन फलमूल भी रींधना नहीं जानता था, मृगयालब्ध पशुमांस कच्चा ही खा लेता था आज यन्त्र-

मध्यस्थ तीव्र हुताशनके तीक्ष्ण उत्तापसे भस्म न होता हो ऐसा कोई पदार्थ ही नहीं है।

मानवतत्त्व सभ्यताको विभिन्न स्तरपरीक्षा करके विकाशपद्धतिकी कारणावली प्रदर्शन करता है। इतिहास अतीतकी दृष्टान्तावलीकी मुक्तकण्ठसे घोषणा कर कहता है, कि ज्ञानके विस्तार द्वारा ही सभ्यताका विकाश, अभिनव उपायका उद्भावन, अज्ञाततत्त्वका आविष्कार, शिल्पवाणिज्यकी उन्नति और मानव जातिका सुख ऐश्वर्य बढ़ता है। आर्यविशप ह्वेटली (Whately)-ने 'सभ्यताकी उत्पत्ति' (Origin of civilisation) नामक ग्रन्थमें तथा टाइलर (Tylor)-ने 'मनुष्य-इतिहास' ग्रंथमें दिखलाया है, कि जिस प्रकार एक जातिका मनुष्य विवर्त्तके उच्च आवर्त्तसे उन्नतिके सोपान पर चढ़ता है, दूसरी जातिका मनुष्य उसी प्रकार अधःपतनके पिच्छिल पथसे फिसल जाता है। जातिकी उन्नति और अवनति विभिन्न जातिके साथ संघर्षका फल है।

प्रायः सभी देशोंके पौराणिक ग्रन्थ और धर्मशास्त्र कहते हैं, कि यह जो विराट् मनुष्यसमाज दिखाई देता है उसकी उत्पत्ति एकमात्र मानवदम्पतीसे हुई है। वह आदिम मनुष्यदम्पती वन वनमें शिकार करते थे, अपने हाथसे हल चलाते थे। इससे मालूम होता है, कि मनुष्य अभिव्यक्तिवादके द्रुतपदक्रमसे उन्नतिके शीर्षस्थान पर पहुंचे हैं। केवल हेसियड (Hesiad) ग्रन्थमें लिखा है, कि सबसे पहले उत्पन्न मनुष्यदम्पती सभ्यताके सभी गुणोंसे विभूषित थे। उनके समयमें सत्य अथवा सुवर्ण युग विद्यमान था। हिन्दूशास्त्रका मानवतत्त्व ऐसे ही सिद्धान्तसे संस्थापित है।

वैज्ञानिकोंमें कोई कोई कहते हैं, कि पशुप्राय एस्कुइमो जाति अभिव्यक्तिके अनन्त आवर्त्तसे भी सुसभ्य जाति नहीं हो सकती। किन्तु मिश्र, ग्रीस आसिरिया, बाबिलन, चीन आदि देशोंकी भूस्तरावलीकी आलोचना करके प्रत्नतत्त्वविद् तथा मानवतत्त्वविद् पण्डितोंने दिखलाया है, कि सभी देशोंमें एक समय शैलयुग विराजमान था। उस समयके मनुष्य पत्थरके बने हथियारसे शिकार करते थे। इन सब युक्तियोंसे मानवतत्त्व अभिव्यक्तिवादकी दृढ़ भित्ति पर संस्थापित हुआ है।

जो कुछ हो, वैज्ञानिक बुधमण्डली अभी एक वाक्यसे स्वीकार करती है, कि प्राथमिक सभ्यताके छोटे अंकुरसे आज विज्ञानके विचित्र वैभवसम्पन्न बहुत विस्तृत सभ्यतापादपकी उत्पत्ति हुई है। पृथ्वी पर जातिविशेषकी अवनतिसे ही समग्र मानवजातिकी उन्नति होती है, इसमें संदेह नहीं।

सभ्यसमाजमें आदिम रीतिनीतिका अनुजीवित्व।

टाइलर साहबने 'प्राथमिकशिक्षा' नामक पुस्तकमें दिखलाया है, कि मनुष्य अभी शिक्षा और सभ्यताके उच्च सोपान पर अधिरूढ होने पर भी वे प्राथमिक बर्बर समाजके आचार व्यवहारके कुछ संस्कारोंको छोड नहीं सके हैं। अंगरेज पादरीका सामरिक चिह्नयुक्त वेश (Coat of Arm) का धारण प्राथमिक युद्धप्रधानयुगका परिचय देता है। वर्त्तमान हिन्दूजाति अंगरेजी सभ्यतासे सुसभ्य होने पर भी यज्ञीय पवित्र अग्नि उत्पादन करनेके लिये दियासलाईका व्यवहार न कर अरणि संयोगसे पवित्राग्नि उत्पादन करते हैं। अंगरेज लोग अति सभ्य और विज्ञान-आलोकसे उद्भासित होने पर भी बाइबिलमें जो कुसंस्कार है उसे सुधार नहीं सके हैं। इसीसे आज भी उन लोगोंके मध्य परलोकगत आत्मीयवर्गकी प्रेतात्माके परितर्पणके लिये असभ्य जातियोंके जैसा पिण्डतर्पणादि (All Soul's Supper) की व्यवस्था है। जादूविद्या आदिमें भी असभ्य समाजका संस्कार विद्यमान है। जो किसी किसी पशुपक्षीकी बोलीसे भावी अमङ्गलकी पूर्व सूचना समझते हैं, उनके भीतर भी आदिम अवस्थाका चिह्न विद्यमान देखा जाता है।

टाइलर साहबका सिद्धान्त सर्ववादिसम्मत है ऐसा नहीं कह सकते। विज्ञान मृत्युके दूसरे किनारे तक पहुंच नहीं सकता। रसायन विश्लेषणकी अनन्त परीक्षासे चेतनाशक्तिके उपादान संग्रहमें अक्षम है। अतएव अज्ञेयतत्त्वके स्वपक्ष वा विपक्षमें टाइलरका वाक्य ग्रहणीय नहीं है। हिन्दू जातिने योगबलसे सर्वज्ञता लाभ की थी, आज भी योगबलसे प्रभूत अनुशीलन होता है—यह केवल विज्ञानकी गंडी रेखामें सीमाबद्ध है, ऐसा किसने कहा?

अभिव्यक्ति और साधारण विभाग।

सभ्यताके इतिहासकी स्तरावलीकी परीक्षा करनेसे देखा जाता है, कि सबसे पहले शैलयुग (Ston-age) सभी देशोंमें विद्यमान था। उस समय मनुष्य-समाजमें धातुके व्यवहारका नाम भी न था। पीछे पीतल-युग (Bronze Age)-का प्रादुर्भाव हुआ, उसके बाद लौहयुग। किन्तु किसी किसी देशमें शैलयुगके बाद ही लौहयुगका आविर्भाव हुआ है। वे लोग लोहे-का व्यवहार सीख कर जमीन जोतने लगे, जङ्गल काटने लगे, गिरिगह्वरका त्याग कर पर्णशालामें रहने लगे। धीरे धीरे उन्होंने अपने समाजकी परिपुष्टि कर ली। शिल्प और वाणिज्यका अंकुर निकला। क्रमशः शिक्षाके उत्कर्षसे वे लिख कर मनका भाव प्रकट करने लगे। इसी समयसे मनुष्य-समाजमें परिवर्त्तन स्रोत प्रबल वेगसे बहना आरम्भ हुआ है।

पूर्वोक्त परिवर्त्तन-शृङ्खलकी सूक्ष्मभावसे पर्यालोचना करना ही मानवतत्त्वका उद्देश्य है। २०वीं शताब्दीकी सभ्यताका विशाल इतिहास भी मानवकी भावी उन्नति-का सोपानमात्र है। अभिव्यक्तिकी स्तरावलीको अच्छी तरह परीक्षा करनेसे मालूम होगा, कि उन्नतिको विराम नहीं है। जो मनुष्य एक दिन घंटेमें दो कोस चल कर थक जाता था, आज वही मनुष्य घंटेमें खुशीसे ५० कोस चल सकता है। जिसकी दृष्टि एक दिन सूक्ष्म आव-रणका पर्दा हटा नहीं सकती थी, आज वही दृष्टि आलोकविज्ञानकी धूमल रश्मि (X, Rays,को सहायता-से दुर्भेद्य काठको दीवारके भीतरसे देखती है, सैकड़ों योजन ऊपरमें अवस्थित ग्रहनक्षत्रोंको आसानीसे देख पाती है,—चर्मचक्षु मांस तथा उसके भीतर अस्थि तक-को भी अवलोकन करता है। जिन्हें एक ग्रामसे दूसरे ग्राममें संवाद भेजनेमें बड़ी दिक्कत होती थी आज वे पृथ्वीके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्त तक क्षण भरमें संवाद भेजते हैं तथा अनन्त अन्तरीक्षमें घूमनेवाले मङ्गलवासी जीवोंके साथ सम्बन्ध स्थापन करनेमें अग्रसर हुए हैं। मनुष्यने यन्त्रशक्तिका उत्कर्ष-संस्थापन करके चंचला सौदामिनीको किङ्करी बना कर अभूतपूर्व परिवर्त्तनका सूत्रपात किया है।

इस अनन्त उन्नतिका लक्ष्यस्थल कहां है, मानव-तत्त्व उसे बतला सकता है। मानवतत्त्व केवल मनुष्यका भूत ले कर ही व्यस्त है सो नहीं, भविष्य विषयमें भी वह पीछा पड़ा हुआ नहीं है। पर हां, इतना जरूर है, कि कितनी उन्नत तथा सुसभ्य प्राचीन जाति धरापृष्ठसे अन्तर्हित हुई है—कितनी जातियोंका भाग्याकाश सूचिभेद्य अन्धकारमें आच्छन्न हुआ है, कितनी जातियां श्मशानमें लाई गई हैं, किन्तु मानव जातिरूप विराट् विग्रहकी अवनति नहीं है। उन्नति ही उनकी नियमबद्ध पद्धति है, अभिव्यक्ति ही उनकी सुप्रतिष्ठित भित्तिभूमि है। कहां तथा कितनी दूर जा कर इस उन्नति-की गति रुकेगी यह कौन कह सकता है? मनुष्यका अतीत जिस प्रकार प्रहेलिकाप्रच्छन्न है, भविष्य भी उसी प्रकार अनुमानका अनधिगम्य है। सृष्टिप्रवाह सादि है वा अनादि है, सान्त है वा अनन्त, इस विषयकी मीमांसाके सम्बन्धमें सीमाबद्धज्ञानविशिष्ट मनुष्य कभी भी समर्थ नहीं होगा।

मानवपति (सं० पु०) राजा।

मानवर्जक (सं० पु०) जातिविशेष, एक प्रकारकी जाति।

मानवर्जित (सं० त्रि०) मानेनवर्जितः। १ मानरहित, मानहीन। २ नीच, अप्रतिष्ठित।

मानवर्त्तिक (सं० पु०) १ पुराणानुसार एक प्राचीन देशका नाम जो पूर्व दिशामें था। जैनोंके हरिवंशके अनुसार यह देश वर्त्तमान मानभूमि है। २ उस देशका रहनेवाला।

मानवलक (सं० पु०) जातिभेद, एक प्रकारकी जाति। इसका दूसरा नाम मानवर्जक भी है।

मानवशास्त्र (सं० पु०) वह शास्त्र जिसमें मानवजातिकी उत्पत्ति और विकास आदिका विवेचन होता है। इस शास्त्रसे यह भी जाना जाता है, कि संसारके भिन्न भिन्न भागोंमें मनुष्यकी कितनी जातियां हैं, सृष्टिके अन्यान्य जीवोंमें मनुष्यका क्या स्थान है, मनुष्योंकी सृष्टि कब और कैसे हुई, उसकी सभ्यताका कैसे विकास हुआ इत्यादि। मानवतत्त्व देखो।

मानवाचल (सं० पु०) पुराणानुसार एक पर्वतका नाम।

मानवाद्य (सं० क्ली०) साममेद।

मानवास्त्र (सं० पु०) प्राचीन कालका एक प्रकारका अस्त्र।

मानवी (सं० स्त्री०) मानव स्त्रीत्वात् ङीप्। १ मनुष्य स्त्री, औरत। पर्याय—मानुष्यी, मानुषी, नारी।

"दिवौकस कामयते न मानवी नवीनमश्रावि तवाननादिद ॥"

(नैषध ६।४२)

२ शासन-देवताविशेष। ३ पुराणानुसार स्वायम्भुव मनुकी कन्याका नाम। (त्रि०) ४ मानव-सम्बन्धी, मनुष्यका।

मानवीय (सं० त्रि०) १ मनुसम्बन्धीय, मनुष्यका। (क्ली०) २ दण्डभेद।

मानवेन्द्र (सं० पु०) मानवानां इन्द्रः। राजा।

मानवेय (सं० पु०) मनुका गोत्रापत्य।

मानवेश (सं० पु०) राजा।

मानवौघ (सं० पु०) मानवानां ओघः यस्मिन्। ताराविद्यापीठके उत्तर वायुसे ईशानकोण तक पूज्य गुरु-पङ्क्तिविशेष। तन्त्रके मतमें तारादेवीके पूजनमें मानवौघ पूजनीय है। भानुमत्यम्बा, जयाम्बा, विद्याम्बा, महोदर्यम्बा, सुखानन्दनाथ, परानन्दनाथ, पारिजातानन्दनाथ, कुलेश्वरानन्दनाथ, विरूपाक्षानन्दनाथ तथा फेरव्यम्बा ये सब देवता तारादेवीकी गुरुपङ्क्ति हैं। इन्हें मानवौघ कहते हैं। मानवानां ओघः। २ मानवसमूह, जमावड़ा।

मानवोत्तर (सं० क्ली०) साममेद

मानव्य (सं० क्ली०) मानवानां समूह इति (ब्राह्मणमाणवबाडवाद् यन्। पा ४।२।४२) इति यन्। १ मानवसमूह, जमावड़ा। पाणिनिके उक्त सूत्रसे मूर्द्धन्य मध्यमानव शब्दके उत्तर यन् होता है, किन्तु किसी किसीके मतमें दन्त्य 'न' मध्य मानव शब्दके उत्तर यन् हो कर यहां मानव्य पद हुआ है। मनोर्गोत्रापत्यं (गोत्रादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५) इति मनु-यञ्। (त्रि०) २ मनुका गोत्रापत्य, मनुवंशीय।

मानव्यायनी (सं० स्त्री०) १ बालकसमूह। २ युवकसमिति।

मानःशिल (सं० त्रि०) मानःशिला-सम्बन्धीय।

मानस (सं० क्ली०) मन एव मनस् (प्रज्ञादिभ्यश्च। पा ५।४।३८) इति स्वार्थे अण्। १ मन, हृदय। विशेष विवरण मनस् शब्दमे देखो।

मनसा सङ्कल्पेन कृतमित्यण्। २ सरोवरविशेष, मान सरोवर।

"कैलासपर्वते राम मनसा निर्मितं परम्।
ब्रह्मणा नरशार्दूल तेनेदं मानसं सरः ॥"

(रामा० १।२४)

कैलास पर्वत पर ब्रह्माने अपनी इच्छामात्रसे जिस सरोवरका निर्माण किया था, उसीका नाम मानससरोवर है। मानसरोवर देखो।

(पु०) ३ नागविशेष, एक नागका नाम। ४ शाल्मली द्वीपके एक वर्षका नाम। (मत्स्यपु० ५३।२७) ५ पुष्कर द्वीपके एक पर्वतका नाम। ६ संकल्प-विकल्प। ७ सह्याद्रिवर्णित एक राजा। ८ मनुष्य, आदमी। (त्रि०) मनसि भवः जातो वा मनस्-अण्। ९ मनसे उत्पन्न, मनोभाव।

मानस मल—

"विषयेष्वति संरागो मनसो मल उच्यते।"

(एकादशीतत्त्व)

मन जब बहुत विषयासक्त हो जाता है, तब उसे मानसमल कहते हैं। मनमें जो कुछ होता है, उसीका नाम मानस है। मनके विषयकी ओर आसक्त होनेसे चित्त मलिन हो जाता है। इसीसे उसे मानस-मल कहते हैं। मुमुक्षु व्यक्तिको मानस मलका परिहार करना उचित है।

मानस ताप—

"कामक्रोधभयद्वेषलोभमोह विषादजः।
शोकासूयाऽवमानेर्ष्या-मात्सर्यादिभयस्तथा ॥
मानसोऽपि द्विजश्रेष्ठ तापो भवति नैकधा ॥"

(विष्णुपु० ६।५)

काम, क्रोध, भय, द्वेष, लोभ, मोह, विषाद, शोक, असूया, अपमान, ईर्षा और मात्सर्य आदि मानस ताप हैं। 'मनोग्राह्य' सुख दुख' सुख वा दुःख दोनों ही मनोग्राह्य है अर्थात् मनमें ही इन सबका अनुभव होता है। कामक्रोधादि द्वारा मनमें दुखकी उत्पत्ति होती है, इसीसे इन्हें मानस ताप कहते हैं। साङ्ख्यदर्शनमें लिखा है,

"दुःखं द्वेधा शारीरं मानसञ्च कामक्रोधादिनिमित्त मानसं"

(साङ्ख्यतत्त्वकौ)

प्रथमतः दुःख तीन प्रकारका है, आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक। इनमें फिर आध्यात्मिक दुःखके दो भेद है, शारीर और मानस।

वायु, पित्त और श्लेष्माकी विषमतासे शारीर तथा कामक्रोधादि निबन्धन मानस दुःख हुआ करता है।

दुःख शब्द देखो।

मानस कर्म तीन प्रकार है—

"परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम्।

वितथाभिनिवेशश्च त्रिविध कर्म मानसम्॥" (तिथितत्त्व)

परद्रव्य विषयमें अभिध्यान, मन द्वारा अनिष्टचिन्ता और मिथ्याभिनिवेश यही तीन प्रकारके मानसकर्म हैं।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, अभिमान, दैन्य, पैशुन्य, विषाद, ईर्षा, असूया, मात्सर्य आदि मानसरोग हैं अथवा उन्माद, अपस्मार, मूर्च्छा, भ्रम, तमः और संन्यास आदि रोगोंको मानसरोग कहते हैं।

(क्रि० वि०) १० मन द्वारा।

मानस—आसाम-प्रदेशमें प्रवाहित एक नदी। यह भूटान गिरिमालाके बीचसे निकल कर दक्षिणकी ओर अक्षा० २६° १५´ उ० तथा देशा० ९०° १४´ पू०के मध्य ग्वालपाड़ा नगरके पास ब्रह्मपुत्रनदमें गिरती है। ग्वालपाड़ाके उस पार अर्थात् नदीके पूर्वी किनारे पर प्रसिद्ध कामरूप राज्य और तीर्थ है। योगिनीतन्त्रमें इस नदीका माहात्म्य कीर्त्तित है।

आइ, बुड़िआइ, गवूर, कनामाकड़ा, दौलानी और चावलखोआ नामकी बहुत-सी शाखाएं इसमें आ मिली हैं जिससे इसकी धारा और तिव्र हो गई है। इस नदीमें सभी समय नावें आती जाती हैं। समतल क्षेत्रमें इसकी गति हमेशा ही बदला करती है।

मानसक्लैव्य (सं० क्ली०) चित्तसम्भूतक्लैव्य, मनकी क्षुण्णता।

मानसचारिन् (सं० लि०, मानस-चर-णिनि। एक प्रकारका हंस जो मानसरोवरमें होता है।

मानसचारी (सं० पु०) मानसचारिन् देखो।

मानसजप (सं० पु०) मानसेन कृतो जपः। बुद्धि द्वारा वर्णमालाका उच्चारण, मन ही मन जप। इस प्रकारका जप सभी जपोंसे श्रेष्ठ है। इसमें कोई नियम नहीं है अर्थात् दूसरे दूसरे जपमें शुचि हो कर जप करना होता है, लेकिन मानसजपमें वैसा कोई नियम नहीं है। वर्ण, स्वर, पदात्मिका अक्षरश्रेणीका मन ही मन उच्चारण कर जो जप किया जाता है उसे मानसजप कहते हैं। यह जप सोते, बैठते चलते, अर्थात् सभी समय किया जा सकता है। जप देखो।

"धिया यदक्षरश्रेणीं वर्णस्वरपदात्मिकाम्।

उच्चरेदर्थमुद्दिश्य मानसः स जपः स्मृतः। तज्जपे नियमो नास्त्येव, तथा च—

अशुचिर्वा शुचिर्वापि गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन्नपि।

मन्त्रैकशरणो विद्वान् मनसैव समभ्यसेत्॥

न दोषो मानसे जाप्ये सर्वदेशेऽपि सर्वदा॥" (तन्त्रसार)

मानसज्वर (सं० पु०) एक प्रकारका ज्वर या बुखार।

मानसतीर्थ (सं० क्ली०) मानसं तीर्थमिव, रागाद्यभावात्तथात्वं। रागादिरहित मन, जिस मनसे राग द्वेष आदि असद्गुण दूर हो जाते हैं, जिस मनके सत्वगुणकी वृद्धि हो कर रजः तथा तमोगुणके अभिभूत होनेसे राग द्वेष आदिकी उत्पत्ति नहीं होती, वैसा ही मन तीर्थस्वरूप है तथा वही मानस तीर्थ कहलाता है।

"तीर्थानि कथितान्येव भौमानि मुनिसत्तम।

मानसानीह तीर्थानि फलदानि विशेषतः।

मनो निर्म्मलतीर्थं हि रागादिभिरनाविलम्॥"

(नारसिंहपु० ४६ अ०)

तत्त्वदर्शिगण इस मानसतीर्थ हमेशा अवगाहन किया करते हैं। महाभारतके शान्तिपर्वमें लिखा है—

"अगाधे विमले शुद्धे सत्यतोये धृतिह्रदे।

स्नातव्यं मानसे तीर्थे सत्यमालम्ब्य शाश्वतम्॥

मनसा च प्रदीप्तेन ब्रह्मज्ञानजलेन च।

स्नाति यो मानसे तीर्थे तत् स्नानं तत्त्वदर्शिनाम्॥"

(भारत शान्तिपर्व)

मानसत्व (सं० क्ली०) मानस-भावे त्व। चिन्ताशीलता, आध्यात्मिकता।

मानसनयन (सं० क्ली०) मानसमेव नयनम्। १ मनोरूप चक्षु, मनके समान नेत्र। २ जीवनकृत न्यायग्रन्थ।

मानसपुत्र (सं० पु०) पुराणानुसार वह पुत्र या संतान जिसकी उत्पत्ति इच्छा मात्रसे हुई हो।

मानसपूजा (सं० स्त्री० मानसकृता पूजा शाकपार्थिववत् समासः। मनोरचित द्रव्यकरणक सपर्या। देवपूजा दो तरहसे करनी होती है, वाह्य और मानस। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, गंध, पुष्प आदि वाह्योपकरण द्वारा जो पूजा की जाती है उसे वाह्य तथा अन्तरोपकरण द्वारा मन ही मन करनेवाली पूजाको मानसपूजा कहते हैं। तन्त्रसारमें मानसपूजाका विषय इस प्रकार लिखा है,—जिस देवताकी पूजा करनी हो, पूजक पहले हृदयपद्मके मध्य उसी देवता की मूर्त्तिका स्मरण करे। वाद उसके कुण्डलीपात्रमें रखे हुए सहस्रधारामृत द्वारा पाद्य, मनको अर्घ्य, सहस्रदलपद्म-रूप भृङ्गारस्थ जलसे आचमनीय, प्रकृति, महत्, अहंकार, ग्यारह इन्द्रिय, पञ्चतन्मात्र और पञ्च महाभूत ये पचीस तत्त्व गन्ध, अहिंसा, विज्ञान, क्षमा, दया, अलोभ, अमोह, अमोत्सर्य्य, अमाया, अनहंकार, अराग, अद्वेष तथा सभी इन्द्रियां ये वारह पुष्प, तेजोरूप, दीप, वायुरूप धूप, अम्बररूप चामर, सूर्यरूप दर्पण, चन्द्ररूप छत्र, पद्मरूपा मेखला, आनन्दरूप उत्तम हार आदिकी मन ही मन कल्पना कर उत्सर्ग करे। पूजाके वाद घटादि वजाया जाता है, इस मानस पूजामें भी घंटे वजाने होंगे। यह सुधारसमय अम्बुधि, मांसपर्वत और ब्रह्माण्डपूरित पायस उपचार स्वरूप देना होगा। इस प्रकार कल्पना कर मन ही मन पूजा करनी होती है इसीसे इसका नाम मानसपूजा हुआ है। विना मानसपूजाके वाह्यपूजा नहीं होती।

(तन्त्रसार त्रिपुराप्रकरण)

मानसपूजा—"मूलाधारात् कुलकुण्डलिनीं उत्थाप्य हृदयादर्कमण्डलं नीत्वा सहस्रदलकमलान्तर्गतचन्द्रामृतधारया मूलमन्त्रं स्मरन् सिञ्चेत्।

"अर्च्चयन् विषयैः पुष्पैस्तत्तन्मयात्तन्मयो भवेत्।
न्यासस्तन्मयतासिद्धिः सोऽहं-भावेन पूजयेत्॥
तन्मयेति तदेकत्वज्ञानं सोऽहमिति—
मन्त्राक्षराणि चिच्छक्तौ प्रोतानि परिभावयेत्।
तामेव परमव्योम्नि परमानन्दवृंहिते।
दर्शयेत्यात्मसद्भाव पूजाहोमादिभिर्विना॥
विषयपुष्पाणि यथा—
अमायामनहङ्कारमरागममदन्तथा।
अमोहकमदम्भञ्च अनिन्दाक्षोभकौ तथा॥
अमात्सर्य्यमलोभञ्च दशपुष्पं विदुर्बुधाः।
अहिंसा परमं पुष्पं पुष्पमिन्द्रियनिग्रहः।
दयापुष्पं क्षमापुष्पं ज्ञानपुष्पञ्च पञ्चमम्॥"

मानसपूजामें पहले कुलकुण्डलिनी देवीको मूलाधारसे उठा कर हृदयके नीचे सूर्यमण्डलमें ले जाना होगा। पीछे सहस्रदलकमलके अन्तर्गत चन्द्रसे झरती हुई अमृतधारा द्वारा मूलमन्त्रको स्मरण कर अभिषेक करना होगा। अनन्तर विविध विषयरूप कुसुमों द्वारा अर्चना करके उसी समय तन्मय हो जाना होगा। यहां पर तन्मयता वुद्धि ही न्यास तथा तन्मयताका अर्थ एकत्व-ज्ञान है। यह पूजा सोऽहंभावसे ही करनी होगी। सोऽहंभावके अर्थमें कुण्डलिनी शक्तिमें सभी मन्त्राक्षर ग्रथित है। यह कुण्डलिनी शक्ति परमानन्दमयी हैं तथा परमाकाशमें अवस्थान करती हैं। वे साधककी आत्मासे अभिन्न हैं, ऐसा ही स्मरण करना होगा। पहले ही कह आये हैं, कि विषयपुष्प द्वारा पूजा करनी होगी। विषय-पुष्प दश हैं, यथा—अमाया, अर्थात् मायाका अभाव, अन-हंकार, अराग, अमद अमोह, अदम्भ, अनिन्दा, अक्षोभ, अमात्सर्य और अलोभ। इसको छोड कर अहिंसा, इन्द्रियनिग्रह, दया, क्षमा और ज्ञान ये पांच परमपुष्प हैं। इन्हीं पन्द्रह पुष्पोंसे मानसपूजा करनी होगी। (तन्त्रसार)

पूजाके समय पहले पुष्प द्वारा जिस देवताको पूजा करनी होती है उसी देवताका ध्यान कर इसी प्रकार मानसपूजा करना उचित है। मानसपूजा शेष होने पर फिर ध्यान करके वाह्यपूजा करनी होती है। सभी पूजाओंमें मानसपूजा आवश्यक है। गुरुपूजा आदिमें भी मानसपूजा करनी होती है। पूजा देखो।

मानसर (सं० पु०) मानसरोवर देखो।

मानसरुज (सं० स्त्री०) मानसी रुक्। मनःपीड़ा, मनमें चोट।

मानसरोवर—हिमालयके उत्तरगात्रमें अवस्थित एक पुण्यतोय ह्रद। यह अक्षा० ३०° ८´ उ० तथा देशा० ८१° ५३´ पू०के वीच पड़ता है। यह पुराणवर्णित कैलास-पर्वतके दक्षिणपार्श्वस्थ अञ्जन नामक पर्वतके निकट

वैद्युत पर्वतके पाददेशमें विराजित है। ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि यह हृद सिद्धसेवित है। यहांसे सब लोकोंको पवित्र करनेवाली पूण्यसलिला सरयू नदी निकली है। इसके किनारे वैभ्राज नामक उपवन अवस्थित है। प्रहेतृ-तनय ब्रह्मपात नामक राक्षस अपने अनुचरोंके साथ यहां रहता है।

वायुपुराणमें लिखा है, कि समुद्र स्वर्गसे मेरुशिखर पर गिरा और गिर कर प्रदक्षिण करता हुआ चार धाराओंमें विभक्त हो नदीरूपमें बह गया। इसी प्रकार यथाक्रमसे पूर्व धारासे मानस, पश्चिमधारासे शीलोद तथा उत्तर धारासे महाभद्र हृदकी उत्पत्ति हुई थी। इस पौराणिक विवरणसे स्पष्टतया प्रतीत होता है कि, कैलास पर्वतकी पादभूमि पुण्यसलिला नदी और हृद का प्रतरणक्षेत्र थी। यथार्थमें सिन्धु, शतद्रु और सनपु (ब्रह्मपुत्र नद) यहींसे निकल कर पश्चिम और पूर्वको ओर बह गई हैं। बहुतोंकी धारणा है कि, गङ्गा और शतद्रु का उत्पत्तिस्थान मानसहृद है; किन्तु वर्त्तमान अनुसन्धानसे मानसरोवरके पार्श्वस्थित रावणहृदसे शतद्रु का निकलना स्थिर हुआ है।

शिवनिकेतन कैलासपर्वतके पाददेशस्थ मानससरका विवरण स्कन्दपुराणके हिमवत्खण्ड (१५ अ०) में सविस्तार वर्णित है।

हिमवत्खण्डके मतसे—

"ससर्ज्ज मनसा ब्रह्मा मुदा यत्नेन शेखरे।
त्रिंशद् योजनविस्तारं तदेवाग्रे च विस्तर॥" (१५ अ०)

ब्रह्माने बड़े यत्नसे हिमालय शिखरके अग्रभागमें मनसे ३० योजन विस्तृत मानस हृदकी सृष्टि की थी।

प्राचीन ऋषियोंने इस स्थानकी अतुलनीय स्वभावशोभा देख कर इसके आस पासकी भूमिको स्वर्ग कह कर उल्लेख किया है।

मानसवल—पञ्जाबके काश्मीर राज्यान्तर्गत एक हृद। यह अक्षा० ३४° १३' उ० तथा देशा० ७४° ५६' पू० श्रीनगर जानेके रास्ते पर अवस्थित है। यह प्रायः ३ मील लम्बा और १ मील चौड़ा है। प्रकृतिके निर्जन कक्षमें रह कर यह स्थान नाना सौन्दर्यमय दृश्योंसे विभूषित है। दिल्लीकी प्रसिद्ध मुगल सम्राज्ञी नूरजहाने इसके तीर पर एक प्रासाद बनवाया जिसका भग्न निदर्शन आज भी देखनेमें आता है। इस हृदका जल एक नाले हो कर झेलम नदीमें गिरता है।

मानसवेग (सं० पु०) १ मनका वेग, चिन्ता। २ एक राजा।

मानसव्रत (सं० क्ली०) मानसकृतं व्रतम्, शाकपार्थिववत् समासः। अहिंसादि।

"अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्य्यमकल्कता।
एतानि मानसान्याहुर्व्रतानि तु धराधरे॥" (वराहपुराण)

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अकल्कता (दम्भहीनता) ये सब मानस व्रत हैं।

मानसशास्त्र (सं० पु०) एक प्रकारका शास्त्र, मनोविज्ञान। इसमें इस बातका विवेचन होता है, कि मन किस प्रकार कार्य्य करता है और उसकी वृत्तियां किस प्रकार उत्पन्न होती हैं।

मानसशुच् (सं० स्त्री०) मानसी शुक्। आन्तरिक पीड़ा, मनःपीड़ा।

मानससन्ताप (सं० पु०) मानसस्य सन्तापः। मनःपीड़ा, आन्तरिक दुःख।

मानससन्न्यासी—दशनामी संन्यासियोंके अन्तर्गत एक प्रकारके संन्यासी। जो मन ही मन संन्यास अवलम्बन कर गृहाश्रम परित्याग करते तथा उसके यथोचित अनुष्ठानमें प्रवृत्त रहते, अथच गैरिक वस्त्र आदि नहीं धारण करते वही मानस सन्न्यासी कहलाते हैं।

मानससर (सं० पु०) मानस सरोवर, मानसरोवर।

मानसहंस (सं० पु०) एक वृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें 'स ज ज भ र' होता है। इसका दूसरा नाम मानहंस या रणहंस है।

मानसा—कालिकापुराण वर्णित एक नदी। कहते हैं, कि तृणविन्दु नामक एक ऋषि इसे मानसरोवरसे लाये थे। समूचा वैशाख इस नदीमें स्नान करनेसे मानव स्वर्गको प्राप्त होते हैं। बादमें उसे विष्णुलोककी प्राप्ति और मोक्ष होता है। (कालिकापु० ८८ अ०)

मानसाङ्क (सं० क्ली०) गणितविशेष (Mental arithmatic)।

मानसायन (सं० क्ली०) मनसका गोत्रापत्य।

मानसार (सं० पु०) मालवराजके एक पुत्रका नाम।

मानसालय (सं० पु०) मानसे आलयो यस्य । हंस।

मानसिंह—बहुतसे प्राचीन संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम। १ आचारविवेकके प्रणेता । २ वृन्दावनमञ्जरीके रचयिता । ३ साहित्यसारके प्रणयन कर्त्ता।

मानसिंह—ग्वालियरके एक राजा। इन्होंने सम्राट् शाहजहांके अधीन रह कर चम्बाराज पृथ्वीचांदकी सहायतासे तारागढ़के राजा जगत्‌सिंहको पराजित किया और उनके अधिकृत दुर्ग आदिको तोड़ फोड़ दिये।

मानसिंह—ग्वालियरके एक दूसरे राजा। ईस्वीसन् १५वीं शताब्दीके अन्तमें अथवा १६वीं शताब्दीके शुरूमें वे राजसिंहासन पर बैठे थे।

मानसिंह—गुजरातके अन्तर्गत सालेर और महेर नामक पहाड़ी मुल्कके एक सामन्त राजा। गुजरातमें अमीरन् इ-सदाने जिस विद्रोहवह्निको सुलगाया, मालिक मकबुलने विद्रोहियोंको पराजित, शेष सरदारोंको पकड़ और बन्दी कर गुजरातको उस विद्रोहवह्निको बुझाया था।

मानसिंह—गुजरातके अन्तर्गत झालावार प्रदेशके एक सामन्तराज। इन्होंने सुलतान बहादुरशाहके विरुद्ध खड़े हो कर विरामगांव, मण्डल और बडवान आदि स्थानोंको लूटा तथा शिलादार शाहजीको निहत किया।

मानसिंह—योधपुरके राठोरवंशीय एक राजा। ये यशोमन्तसिंहके पुत्र और उदयसिंहके पौत्र थे। इन्होंने मानपुरराज्य बसाया। इनके वंशधर मानपुरायोध कहलाते हैं।

मानसिंह—मुगल-बादशाह अकबरशाहके प्रधान सेनापति। ये कच्छवाहवंशीय अम्बराधिप राजा भगवान्‌दासके पुत्र और राजा बिहारीमल्लके पौत्र थे। पिताके जीते जी इन्होंने कुमार मानसिंह नामसे इतिहासमें प्रसिद्धि पाई थी। भगवान्‌के मरने पर शाह अकबरने इन्हें राजाकी उपाधिसे अलंकृत किया। दिल्लीश्वरने इनके बलवीर्य पर संतुष्ट हो, इन्हें बङ्गालका शासनकर्त्ता बनाया। अकबर प्यार-वशतः इन्हें फरजन्द (पुत्र) कहा करते थे। दिल्लीदरबारमें इनकी 'मीर्जा राजा' नामसे ही प्रसिद्धि थी।

अम्बरराजधानीमें इनका जन्म हुआ। कर्नेल टाड साहबके मतसे ये भगवान् दासके छोटे भाई जगत्‌सिंहके पुत्र थे। भगवान्‌ने इन्हें गोद ले कर पुत्रके समान लालन पालन किया और अन्तमें वे इन्हें राज्यका उत्तराधिकारी बना गये। मुसलमानी इतिहासमें उनके इस पुत्रत्व-सम्बन्धमें किसी प्रकार विभिन्न मतका उल्लेख नहीं देखा जाता है। हिन्दूशास्त्रमें दत्तक और औरसजात पुत्रके अधिकारित्व सम्बन्धमें कोई विशेष प्रभेद न रहनेके कारण हमने मानसिंहको भगवान् दासका पुत्र ही मान लिया है।

वीर और उन्नतचेता भगवान्‌के यत्नसे लालित हो कर मानसिंह वंशोचित वीरव्रतका अवलम्बन करनेमें समर्थ हुए थे। बचपनसे ही युद्धविद्यादि उच्चशिक्षामें इनको उत्कट इच्छा थी। उसी प्रतिभाबलसे कच्ची उम्रमें ही इन्होंने मुगलराजसभामें उच्च सम्मान प्राप्त किया था। वे बादशाहके सहकारिरूपमें कुछ गुरुतर कार्य करके उनके विशेष प्रीतिभाजन हुए थे। उन्होंने अपने भुजबलसे खोतेनसे समुद्र पर्यन्त सारा प्रदेश मुगलसाम्राज्यमें मिला कर अच्छा नाम कमाया था। बङ्गाल, उड़ीसा, आसाम और काबुलको जीत कर इन्होंने ही मुगलसाम्राज्यकी सीमा बढ़ाई थी। भाग्य-लक्ष्मीकी प्रसन्नतासे वे बङ्गाल, विहार, उड़ीसा और काबुलके शासनकर्त्ता हुए। फिरिस्ताने लिखा है, कि मानसिंहको जिस समय कुमारकी उपाधि थी, उस समय इन्होंने विहार, हाजीपुर और पटनाका शासनदण्ड अपने हाथ लिया था।

सम्राट् अकबरशाह अपने शासनकालके छठे वर्षमें (९६९ हि०में) मुइन-इ-चिस्तीका समाधिमन्दिर देखनेके लिये अजमेर गये। बिहारीमल्लने सपरिवार शङ्गानीरमें आ कर उनका स्वागत किया। राजभक्तिसे प्रसन्न हो कर बादशाहने उन्हें राजोचित सम्मान दिखलाया था। सम्राट्‌के अनुरोधसे बिहारीमल्लने अपनी कन्याको उन्हें समर्पण किया। इसके बाद पुत्र भगवान् और पौत्र कुमार मानसिंहको साथ ले राजा बिहारीमल्ल रतननगरमें सम्राट्‌के समीप उपस्थित हुए। अनन्तर वे तीनों ही आगरा राजधानीकी ओर सम्राट्‌के साथ गये थे।

इस समय सम्राट्के साथ परिचित हो कर मानसिंह भी पितृपितामहकी तरह सेनानायकका काम करने लगे। तवकत् इ-अकवरी पढ़नेसे मालूम होता है, कि सम्राट्ने ९८४ हिजरीमें सुदक्ष सेनापति कुमार मानसिंहको राणा कीका (कमलमेरु-पति)-के विरुद्ध भेजा। इस युद्धमें मीरवक्सी आसफ खाँ उनके सहकारी थे। गोलकुण्डा-में दोनों पक्षकी राजपूतसेनामें घोर युद्ध छिड़ा। सम्मुख युद्धमें राणा कीका बुरी तरह घायल हुए और रणभूमिसे भागे। युद्धके बाद मानसिंह हलदी घाट पार कर गोलकुण्डा राजप्रासादमें पहुंचे। राणाके परित्यक्त प्रासाद-में रह कर इन्होंने सम्राट्को विजयवार्त्ता सूचित की। ग्वालियरके राजा रामशाह इस युद्धमें पुत्र समेत मारे गये थे। विजयवार्त्ता सुन कर सम्राट्ने कुमारको उत्तम पारितोषिक दिया था। आईन इ-अकबरीमें लिखा है, कि उक्त युद्धमें वे विजय प्राप्त न कर सके थे, इस कारण सम्राट्ने उन्हें बहुत धिक्कारा था। प्रतापसिंह देखो।

सम्राट् अकबरशाहके शासनकालके २३वें वर्षमें भगवान् दास पञ्जावके शासनकर्त्ता हुए। इस समय मानसिंह सिन्धुतीरवर्त्ती प्रदेशोंका शासन करते थे। ९९३ हि०में युवराज महम्मद हाकिमके मरने पर सम्राट्के आदेशानुसार इन्हें काबुल-में शान्तिस्थापनके लिये जाना पड़ा। यहां उनके कठोर शासनसे दुर्द्धर्ष रौशानी अफगानोंने शान्तभाव धारण किया। अनन्तर यूसुफ-जै जातिका दमन करनेके लिये वे मुगलसेनाका सेनापति बन कर फिर काबुल गये। अकबरके शासनकालके २९वें वर्षमें मानसिंहकी बहिनके साथ युवराज सलीम (जहांगीर)-का विवाह हुआ। दूसरे वर्ष जाबुलीस्थानके शासनकर्त्ता होनेके बाद इनके पिता भगवान् उन्मादरोगसे ग्रस्त हुए। इस कारण वहां-का शासनभार फिरसे इन पर सौंपा गया। ३२वें वर्षमें राजपूत जातिका औद्धत्य दूर करनेके लिये उन्हें पुनः भारतवर्ष आना पड़ा। इसके बाद वे बिहार प्रदेशके शासनकर्त्ता नियुक्त हुए थे।

९९८ हिजरीमें राजा भगवान् दासका स्वर्गवास हुआ। अब मानसिंह ही जयपुरके सिंहासन पर अधि-रूढ़ हुए। अकबर बादशाहने राजाकी उपाधि और पांच हजारी सेनानायकका पद दे इनका विशेष सम्मान किया। महावीर और गभीर राजनीतिज्ञ मानसिंहके शासनसे अम्बरराज्यकी भारत भरमें प्रसिद्धि हो गई थी।

वङ्गेश्वर वजीर खाँका मृत्युसंवाद जब दिल्लीदरबार-में पहुंचा, तब सम्राट् अकबर शाहने मानसिंहको ही वङ्ग राज्यका शासनकर्त्ता नियुक्त किया। पटनाके मुगल सेनापतिको हुकुम हुआ कि जब तक मानसिंह वङ्गाल न जायं, तब तक वे ही शासन करेंगे। इस समय मान-सिंह पेशावरप्रदेशके राजद्रोही अफगानोंका दमन करनेमें उलझे हुए थे। अफगानोंको युद्धमें परास्त कर राजा मानसिंह ९९७ हिजरी (१५८०-ई०)-में पटना नगर पहुंचे। यहां उन्हें मालूम हुआ, कि हाजीपुरके राजा पूरनमल वङ्गालको अराजक देख बागी हो गये हैं। बस, फिर क्या था, वे फौरन दलबलके साथ वहांसे रवाना हुए। मुगलसेनाकी संख्या देख कर पूरनमलने मान-सिंहकी शरण ली। पीछे उन्होंने बादशाहको हाथी घोड़े तथा तरह तरहके रत्न भेंट कर छुटकारा पाया।

इसके बाद मानसिंह घोड़ाघाटके मुगल कर्मचारियों-का अत्याचार रोकनेके लिये अग्रसर हुए। इस समय कुछ मुगल कर्मचारी यशोरके जिले तक अयथा कर उगाह रहे थे। मानसिंहने अपने पुत्र जगत्सिंहको उन्हें उचित दण्ड देनेके लिये भेजा। युद्धमें हार खा कर मुगल सरदार जंगल भाग गये।

वङ्गालका जलवायु मानसिंहके पक्षमें बहुत अस्वास्थ्य-कर था, इस कारण वे हमेशा विहारमें ही रहा करते थे। सैयद खाँ उनका सहकारी हो कर तोड़ामें रह पूर्ववङ्गका शासनकार्य चलता था।

विहारमें रहते समय मानसिंहने रोहतासके पहाड़ी दुर्गका जीर्णसंस्कार कराया। आज भी दुर्गके सामने पत्थरका बना जो सिंहद्वार और पद्मदल-परिशोभित बड़ा जलाशय दिखाई देता है वह राजा मानसिंहकी ही कीर्त्ति है। इस प्रीतिप्रद पहाड़ी उपत्यकामें सुखपूर्वक वायु-सेवन करनेके लिये उन्होंने एक प्रासाद और फारसी ढंग पर एक पुष्पवाटिका बनवाई थी।

९९८ हिजरीमें मानसिंह अफगान-कवलसे उड़ीसाका

उद्धार करनेकी इच्छासे सेना इकट्ठी करने लगे। भागलपुरमें कुछ सेना संग्रह कर वे वर्द्धमानके पश्चिम पहाड़ी रास्तेसे रवाना हुए। इधर सैयद खाँको कहला भेजा कि वे काँटोयाकी राहसे आ कर उनसे मिलें। इस समय वङ्गालमें वर्षाका दारुण प्रभाव था। अविश्रान्त जलधारासे समस्त पूर्ववङ्गाल जलमग्न हो गया। उस महाकष्टके समय सेना संग्रह करना कठिन जान कर अभागे सैयदने राजा मानसिंहसे वह यात्रा रोक रखनेकी प्रार्थना की। कारण, दलवलके साथ उड़ीसा जानेमें विविध रोगोंसे आक्रान्त हो सेनाक्षय होनेकी अधिक संभावना है। राजा मानसिंह इस संवाद पर हताश हो गये। तव तकके लिये सेनादलके रहनेके लिये उन्होंने द्वारिकेश्वर नदीके किनारे जहानावाद ग्राम में छावनी डाल दी।

जव मुगलगण जहानावादमें रह कर सहकारी शासनकर्त्ता सैयदकी वाट जोह रहे थे, ठीक उसी समय कुतलू खाँने धारपुर और पार्श्ववर्त्ती प्रदेशोंको लूटनेके लिये अपना सेनादल भेजा। जहानावाद छावनीसे २५ कोस दूर अफगानी सेना भारी ऊधम मचा रहे हैं, सुन कर मानसिंह स्थिर न रह सके। उन्होंने दुर्वृत्तोंका अभिप्राय व्यर्थ करनेकी इच्छासे अपने लड़के जगत्‌सिंहको दलवलके साथ भेजा। जगत्‌सिंहके साथ युद्धमें हार खा कर अफगानोंने दुर्गमें भाग कर आश्रय लिया। वहांसे उन्होंने वालकराज जगत्‌सिंहके निकट छल-सन्धिका प्रस्ताव कर भेजा। इधर कुतलू खाँकी सेनाके पहुंचने पर उन्होंने संधि तोड़ दी और रातको चुपकेसे जगत्‌सिंहके शिविर पर आक्रमण कर दिया। केवल आक्रमण ही नहीं, उनकी छावनीको खार छार भी कर डाला। रातको इस प्रकार विपद् देख कर मुगलसेना तितर वितर हो गई। राजपुत्र जगत्‌सिंहको वन्दी कर अफगान लोग वसन्तपुरकी ओर भाग गये। इस अपमानसूचक पराभव तथा शत्रुके हाथ पुत्रकी मृत्यु आशङ्कासे राजा मानसिंह कुछ समयके लिये किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गये थे।

दिल्लीश्वरके सौभाग्यवशतः इस घटनाके कुछ दिन वाद ही कुतलू खाँकी मृत्यु हो गई। सरदारके उपयुक्त पुत्रके अभावमें अफगानी सेनाने अव युद्ध करना नहीं चाहा और राजकुमारको छोड़ कर संधि कर ली। इस समय भी मूसलाधार वृष्टिसे सारे वङ्गालके नद, नदी, जलाशय आदि प्लावित हो गये थे। इसी कारण मानसिंहने उनका सन्धि प्रस्ताव स्वीकार कर लिया था। नवाव कुतलू खाँके लड़के इस समय दिल्लीश्वरकी वश्यता स्वीकार कर राजा मानसिंहका अभिनन्दन करनेके लिये मन्त्री ईसाके साथ राजाके समीप पहुंचे। दिल्लीश्वरको उन्होंने १५० हाथी और कुछ वहुमूल्य धनरत्न नजरमें दिये थे।

इस समय जो संधि हुई, उसमें अफगान राजकुमारोंने शान्तभावसे उड़ीसामें शासन करनेको अनुमति पाई। वे सम्राट् अकवर शाहके नामसे सिक्का चलाते थे। जितने राजकीय कागजात थे उनमें वादशाही मुहर चिपकी रहती थी। इस प्रकार उनकी राजभक्तिसे प्रसन्न हो मानसिंहने उन्हें सम्मानसूचक परिच्छदादि दिये थे। कुतलू खाँके पुत्रोंने राजाके इस सद्व्यवहारसे प्रसन्न हो कृतज्ञ हृदयसे पवित्र तीर्थ पुरीधाममें श्रीजगन्नाथदेवका मन्दिर और भूसम्पत्ति राजा मानसिंहके हाथ समर्पण की।

सम्राट्‌के शासनकालके ३५वें वर्षमें राजा मानसिंहने सौभाग्यवलसे अफगान-युद्ध जीता तथा पुरीको हस्तगत किया सही, किन्तु उनमें उद्यमहीनता और कार्यकारिता शक्तिका अभाव देख कर वादशाह उन पर अप्रसन्न रहा करते थे। जव तक ख्वाजा ईशा जीवित रहा, तव तक मुगल-पठानमें किसी प्रकारका मनोमालिन्य नहीं हुआ। किन्तु संधिके दो वर्ष वाद वृद्ध मन्त्रीका देहान्त हुआ। अव अफगानोंने ख्वाजा सुलेमान और ख्वाजा ओसमानकी अधिनायकतामें विद्रोही हो कर जगन्नाथदेवका मन्दिर आक्रमण किया और लूटा।

अफगानोंके इस अत्याचारसे क्रुद्ध हो धार्मिक राजा मानसिंहने उग्र मूर्त्ति धारण की। उन्होंने हिन्दूधर्मके अपमान करनेवालोंका समूल उच्छेद करनेके लिये वादशाहसे अनुरोध किया। वादशाहसे आदेश पा कर मानसिंहने अफगानोंको विध्वस्त करनेके लिये जो सेनादल विहारमें था झारखण्ड पथसे (छोटनागपुर)

मेदिनीपुर जानेका हुकुम दिया और आप अवशिष्ट सेना-को ले कर सैयद खाँके साथ जा मिले। अफगानी सेना इस आयोजनसे डर कर सुवर्णरेखाको पार कर गई और पहाड़ी प्रदेशमें जा कर शत्रुकी प्रतीक्षा करने लगी। दोनों पक्षमें युद्ध छिड गया। अफगानोंने नदी पार कर मुगलसेनाका नाश करनेका सङ्कल्प किया। इस समय मुगलसेनाकी गोलोसे कुछ अफगान तो नदीमें डूब मरे और कुछ जमीन पर गिर कर पञ्चत्वको प्राप्त हुए। बची खुची सेनाको भागते देख मानसिंहने उसका पीछा किया। जलेश्वर मानसिंहके हाथ लगा। मुगलसेना-पति सैयद खाँ युद्धमें क्लान्त और कर्मचारीकी जयस्पर्द्धासे ईर्षान्वित हो विना मानसिंहकी अनुमतिके समरक्षेत्र-का परित्याग कर तोड़ा लौटा।

इस प्रकार सहायहीन हो कर भी राजा मानसिंहने शत्रुका पीछा नहीं छोड़ा। अफगानोंने भाग कर कटक के राजा रामचन्द्रके दुर्गमें आश्रय लिया। राजा मान-सिंह उस दुर्गमें घेरा डाल कर जगन्नाथदेवके दर्शनके लिये पुरीधाम चले गये।

आत्मरक्षामें असमर्थ हो राजा रामचन्द्र और अफ-गानोंने मानसिंहकी शरण ली। उड़ीसा मुगलसाम्राज्य-में मिला लिया गया। कुतलू खाँके पुत्रोंको खसियावाद जागीर तौर पर मिला और रामचन्द्र कटकप्रदेशके शासनकर्त्ता बनाये गये। यह घटना १००० हिजरीमें घटी थी।

युद्धविजयसे स्पर्द्धित हो कर मानसिंह दलबलके साथ विहार लौटे। बङ्गाल और विहारका शासन करनेकी इच्छासे उन्होंने राजमहलमें राजधानी बसाई। उनके यत्नसे प्राचीन हिन्दूराजधानी पुनः सौधमालासे विभूषित और सुदृढ दुर्गसे सुरक्षित हुई। मुसलमानी-इतिहासमें यह स्थान अकबर-नगर नामसे प्रसिद्ध है। इस समय उन्होंने भाटी प्रदेशको जीत कर ब्रह्मपुत्रके पश्चिमी किनारे तक समस्त पूर्ववङ्ग अपने दखलमें कर लिया था। विहार लौटते समय वे अपने पुत्र जगत्-सिंहको ससैन्य उड़ीसा-सीमान्तमें रख आये थे।

दूसरे वर्ष राजा रामचन्द्र पुनः मुगलराजके विरुद्ध खड़े हो गये तथा अफगानोंने भी सातगाँव बन्दर पर आक्रमण कर दिया। राजा मानसिंह उनके इस असद्-व्यवहारसे क्रुद्ध हो पुनः रणक्षेत्रमें उतरे। किन्तु दोनों ही माफी मांग कर अपनी अपनी पूर्व सम्पत्तिका भोग करने लगे।

१००२ हिजरीमें सम्राट्के पौत्र सुलतान खुशरू उड़ीसाका शासनकर्त्ता बन कर बङ्गाल आये। राजा मानसिंह सम्राट्के आदेशसे युवराजके साहाय्यकारी हो राजकार्यका पर्यवेक्षण करने लगे। उसी वर्ष वे सम्राट्से मिलनेके लिये दिल्लीको चले गये। दिल्लीदरबारमें यथायोग्य सम्मान लाभ कर वे पुनः बङ्गाल लौटे।

१००४ हिजरीमें विहाराधिप राजा लक्ष्मीनारायण मुगल बादशाहकी अधीनता स्वीकार कर राजा मानसिंह के समीप उपस्थित हुए। उनके आत्मीयवर्ग तथा बङ्गालके अन्यान्य राजन्यवर्ग लक्ष्मीनारायणकी इस हीनता पर क्रुद्ध हो उनके विरुद्ध लडाईकी तय्यारी करने लगे। कोच्रविहारपतिने कोई उपाय न देख मानसिंह-की शरण ली तथा आत्मरक्षार्थ सहायता मांगी। इस सूत्रसे मुगलसेनाने कूचविहारमें प्रवेश किया। मुगलसेनापति जेहज खाँको इस विद्रोहदमनकालमें मोटी रकम हाथ लगी थी।

इस कृतोपकारके पुरष्कार स्वरूप राजा लक्ष्मीनारा-यणने अपनी वहनको राजा मानसिंहके हाथ समर्पण किया। उसी साल घोड़ाघाटमें राजा मानसिह विशेष रूपसे पीडित हुए। मौका पा कर अफगानोंने उन पर चढ़ाई कर दी, पर उनके दूसरे लड़के हिम्मतसिंहने उन्हें सुन्दरवन तक खदेरा। दूसरे वर्ष राजा लक्ष्मीनारा-यणको विपद्में डालनेके लिये फिरसे षड़यन्त्र रचा गया। मानसिंहने अपने सालेकी रक्षा करनेके लिये हाजिज खाँ नामक एक सेनापतिको कूचविहार भेजा। मुगलसेनाके आगमन पर विद्रोहिदल छत्रभङ्ग हो गया।

१००७ हिजरीमें सम्राट्को दाक्षिणात्य जीतनेकी इच्छा हुई। इसलिये उन्होंने राजा मानसिंहको एक पत्र लिख भेजा कि, 'बङ्गालमें एक सहकारी रख कर तुम जल्दी बङ्गीय सेनाके साथ दाक्षिणात्यकी चढ़ाई कर दो।' आज्ञा पाते ही मानसिंह अपने पुत्र जगत्सिंहको बङ्गालका सहकारी शासनकर्त्ता बना कर अजमीरमें कुमार सलीमसे मिलने चल दिये। उनका विश्वास था, कि

जब घोड़ाघाटका शासनकर्त्ता ईशा इस लोकसे चल बसा है, तब फिर अफगान अपना सिर उठा नहीं सकता। किन्तु कुछ समय बाद ही उनके पुत्र जगत्सिंहकी मृत्यु हो गई जिससे ओसमानके अधीनस्थ पठानोंने फिरसे विद्रोहवह्नि प्रज्वलित कर दी। इस समय मोहनसिंह और प्रतापसिंह (आईन-इ-अकबरीमें महासिंह नामसे प्रसिद्ध) विहार और बङ्गालका शासन करते थे। यह संवाद पा कर वह दंग रह गये और अपना सेनादल ले कर उड़िसाकी ओर चल दिये। भद्रकके समीप मुगल और पठानकी सेनामें मुठभेड़ हुई। इस युद्धमें मुगल लोग परास्त हुए और पाठानोंको बङ्गालका अधिकांश स्थान हाथ लगा।

सम्राट्ने इस अभावनीय दुर्घटनासे मर्माहत हो शीघ्र ही मानसिंहको बङ्गाल जानेका हुकुम दिया। इस समय राजा मानसिंह अजमीरमें रहते थे। बादशाहका आदेश पाते ही वे रोहतस दुर्गको लौटे। सरकार सरीफाबादके अन्तर्गत सेरपुर-आटाई नगरके समीप मानसिंहके साथ अफगानोंका युद्ध हुआ। इस युद्धमें अफगानोंकी हार हुई। पठान-सरदार ओसमान पराभूत सेनादल ले कर उड़ीसाको भाग चले। मुगलोंने शत्रुओंका पीछा किया। राहमें उन्होंने मीरबक्सी अबदुल रेजाकको हाथीकी पीठ पर देख पाया। अबदुल रेजाक मुगलकर्मचारी था। पूर्वयुद्धमें पठानोंने उसे बंदी किया था। इस बार मानसिंहको कृपासे उसने छुटकारा पाया। मानसिंह उसे बहुत चाहते थे।

मानसिंहके इस प्रकार हठात् पहुंच जाने पर पठान लोग पहले ही हताश हो गये। पीछे परास्त होनेसे स्वाधीनता लाभकी जो आशा था, वह बिलकुल जाती रही। फिर भी उन्होंने बङ्गालसे मुगलोंको मार भगानेका उद्योग छोड़ा नहीं।

पठानोंको समूल निर्मूल कर मानसिंह सम्राट्का अभिनन्दन करनेके लिये दिल्लीको चल दिये। इस बार सम्राट्ने ७ हजारी सेनानायकका पद दे कर इनका बड़ा सम्मान किया था। उनके पहले मुगलसरकारमें ऐसा मानसूचक पद और किसीके भी भाग्यमें नहीं बदा था। हिन्दू होते हुए भी वे मुसलमान सेनापतियोंमें प्रधान थे। उनके बाद शाहरुख और आजिजकोकाने उक्त पद प्राप्त किया था।

कुछ समय दरबारमें रह कर मानसिंहने फिरसे बङ्गालकी यात्रा कर दी। १६०४ ई० तक उन्होंने राजनीति-कुशलता और न्यायपरताके साथ बङ्गराज्यका शासन किया था। इस समय सम्राट् अकबर बीमार पड़े। मानसिंह राजकार्यसे फुरसत ले कर उनसे मिलने आगरा गये। सम्राट्को ६ सौ हाथी और बहुमूल्य अलङ्कारादि उपढौकन दे कर वे उनके विशेष सम्मानभाजन हुए थे।

राजा मानसिंह इतने बड़े बङ्गराज्यका स्वेच्छासे परित्याग कर सम्राट्के मृत्युकालमें आगरा क्यों आये? इस बातको हल कर किसी किसी ऐतिहासिकने लिखा है, कि सम्राट् बीमारीकी हालतमें राजकार्य नहीं देख सकते थे इस कारण उन्होंने वजीर खाँ आज़िमके हाथ कुल राज्यभार सौंपा था। जहांगीरको अकबर पहले हीसे नहीं चाहते थे। जहांगीरके खुशरू नामका एक लड़का था जो मानसिंहका भांजा होता था। उनका विवाह प्रधान वजीर खाँ आजिमकी कन्यासे हुआ था। अब मानसिंह और आजिम अपने भांजे और जमाईके लिये षडयन्त्र रचने लगे जिससे उसे दिल्लीका सिंहासन लाभ हो। राज्यके इन दो प्रधान व्यक्तियोंको षडयन्त्रमें लिप्त देख शाहजादा जहांगीर पिताके पास गया और कुल हाल उन्हें कह सुनाया। मृत्युशय्याशायी वृद्ध सम्राट्ने उन दोनोंको बुलाया और इस अत्याचारके लिये उनको बड़ी निन्दा की। बादशाहने उन दोनोंसे कहा, कि 'मेरे मरने पर जहांगीर ही एकमात्र दिल्लीसिंहासनका अधिकारी होगा। आप लोगोंसे अनुरोध है, जिससे जहांगीरको गद्दी मिले उसके लिये कोशिश करेंगे।' इतिहासमें लिखा है, कि राजा मानसिंहने स्वार्थसिद्धिके लोभसे वृद्ध सम्राट्के शेष दिनमें जो षड्यन्त्र जाल फैलाया था उसीसे उनका प्राणवियोग हुआ। अकबर देखो।

अकबरशाहकी मृत्युके बाद १६०५ ई०में राजा मानसिंह और आज़िम बादशाहकी बातको बिलकुल भूल गये और खुशरूको सिंहासन पर बैठानेकी कोशिश करने लगे। लाख कोशिश करने पर भी उनका मनोरथ सिद्ध न

हुआ। ऐतिहासिकगण जहांगीरके सिंहासन लाभकी कथा कुछ और तरहसे लिख गये हैं। कोई कोई कहते हैं, कि राजा मानसिंह वीस हजार राजपूतसेनाके अधिनायक और प्रवल क्षमताशाली होते हुए भी प्रकाश्यरूपसे सम्राट्‌का दमन न कर सके। उन्होंने गुप्तभावसे षड़यन्त्र रचा था। पीछे जहांगीरको यह वात मालूम हो जाने पर वे चुपकेसे नाव द्वारा भंजेके साथ भागे। फिर कोई कोई कहते हैं, कि मानसिंहने जहांगीरसे १० करोड़ मुद्रा रिशवत ले कर उन्हें चैन दिया था।

जो कुछ हो, जहांगीर अपने पथको साफ कर दिल्लीके सिंहासन पर बैठे। उन्होंने मानसिंह और अपने पुत्र खुशरूके कुल अपराध माफ कर दिये और मानसिंहको फिरसे वङ्गालके अफगानोंका दमन करनेके लिये वहां भेजा। यहां आठ मास रहनेके वाद १०१५ हिजरीमें उन्हें फिरसे रोहतसका दमन करनेके लिये जाना पड़ा। अनन्तर वे जहांगीरके पास पहुंचे। जहांगीरके आदेशानुसार उन्होंने कुछ समय पितृराज्यमें रह कर शान्तिसुखका भोग किया। इसके वाद वे स्वराज्यसे सेना और अर्थ संग्रह कर अवदुर रहीमके साथ दक्षिणप्रदेश जीतनेको गये। जहांगीरके शासनकालके ६वें वर्षमें मानसिंह दाक्षिणात्यमें रहते समय इहलोकका परित्याग कर परलोकको सिधारे।

किसी किसी मुसलमान इतिहासकारने लिखा है, कि जहांगीरके शासनकालमें १०२४ हिजरीको राजा मानसिंहका वङ्गालमें देहान्त हुआ था। किन्तु अन्यान्य इतिहासकारोंका कहना है, कि उत्तराञ्चलमें खिलजी जातिके विरुद्ध जो लड़ाई हुई थी उसके दो वर्ष पहले ये मारे गये थे। जयपुरमें मानसिंहकी जीवनीके संबंधमें जो सब ग्रन्थ और प्रवादवाक्य प्रचलित हैं, उनका सङ्कलन करनेसे एक वड़ा पोथा वन सकता है।

उनकी १५ सौ स्त्रियोंमें ६० सती हुई थीं। कुल स्त्रियोंके गर्भजात पुत्रोंमें एकमात्र भावसिंह (भवसिंह) पितृराज्यके अधिकारी हुए थे। वाकी सभी पुत्र पिताकी मृत्युके पहले इस लोकसे चल वसे थे।

आगरेमें जहां ताजवीवीका मशहूर रोजा 'ताजमहल' विद्यमान है वह स्थान राजा मानसिंहके ही दखलमें था।

मानसिंह—मारवाड़का एक दूसरा राजा। ये राजा विजयसिंहके पौत्र और गुमानसिंहके पुत्र थे। राजा विजयसिंहने अपनी अश्ववालजातिकी एक वारविलासिनीके अनुरोधसे मानसिंहको उस युवतीका दत्तक पुत्र और अपने सिंहासनका प्रकृत उत्तराधिकारी वतला कर घोषणा कर दी थी। इस पर सामन्तमण्डली बहुत विगड़ी और भूमसिंहके पुत्र भीमसिंहको गद्दी पर वैठानेकी कोशिश करने लगी। राजा विजयसिंहको जब यह मालूम हुआ, तब उन्होंने चिढ़ कर मानसिंहको अपना दत्तक पुत्र बना लिया। किन्तु सामन्तोंने मालकाशौनी नामक स्थानमें एकत्रित हो कर एक षड़यन्त्र रचा और वारविलासिनीका काम तमाम कर भीमसिंहको ही मारवाड़के सिंहासन पर विठाया। किन्तु विजयसिंहने उन्हें कौशलसे सिवान दुर्गमें भेज दिया।

विजयसिंहके मरने पर प्रवासित भीमसिंह जोधपुर आये और सिंहासन पर अधिकार कर वैठे। उन्होंने अपने राजपदको निष्कण्टक करनेके लिये चचा और चचेरे भाइयोंको यमपुर भेज दिया। एकमात्र मानसिंहने ही उनके कलुषित हाथसे रक्षा पाई थी। भीमसिंह देखो।

भीमसिंहके भाग्यमें राज्यसुख बहुत दिन तक वदा न था। थोड़े ही दिनोंके अन्दर वे कराल कालके गालमें फँस गये। अव मानसिंह फूले न समाये और भालोर दुर्गसे वाहर निकले। राठोर सेनाने उनका अच्छा सम्मान किया। १८६० सम्वत्‌में माघमासकी पञ्चमीको उन्हें वड़ी धूमधामसे राजटीका दी गई। उनके शासनकालसे मारवाड़ इतिहासका शोचनीय अध्याय आरम्भ हुआ।

राजा मानसिंहके सिंहासन पर वैठानेके कुछ दिन वाद ही पोकर्णके महातेजस्वी सामन्त सवाईसिंहने पूर्व प्रतिहिंसाको चरितार्थ करनेके लिये उनके साथ शत्रुता ठान दी। वे मृत राजा भीमसिंहके एकमात्र पुत्र धनकुलसिंहको मारवाड़-सिंहासनका उत्तराधिकारी वनानेके लिये सामन्तोंको उभाड़ने लगे। सवोंने मिल कर मानसिंहको राज्यच्युत करने और धनकुलको सिंहासन पर विठानेका षड़यन्त्र रचा।

राजा मानसिंहके कठोर शासन और विद्वेषभावसे

मृत राजा भीमसिंहके अनुगृहीत सामन्तगण उनके विरुद्ध खड़े हो गये। अपने सामन्तोंके प्रति अनुग्रह दिखलानेके कारण भट्टजातीय राजपूत सेनादल और महन्त कायम दासके अधीनस्थ विष्णुस्वामी नामक सेना-दल मानसिंहके पक्ष में थे।

इस पक्षपातिपत्य पर क्रुद्ध हो कर सवाई सिंह भीम-सिंहके पुत्र धनकुलका पक्ष ले कर अन्यान्य सामन्तोंके साथ राजा मानसिंहके समीप गये। उन्होंने जातवालक-के भरणपोषणके लिये नागर और सिवोना प्रदेश मान-सिंहसे मागा। इधर राजकोपसे पुत्रके अमङ्गलकी आशङ्का कर भीमसिंहकी रानीने सबके सामने कहा, कि धनकुल मेरा गर्भजात पुत्र नही है। इससे व्यर्थमनोरथ हो सवाईसिंह फिरसे षडयन्त्र रचने लगे। इस बार भी उनकी चेष्टा सफल न हुई। वे राजा मानसिंहका आनु-गत्य स्वीकार करनेको वाध्य हुए। उन्होंने चुपकेसे भीम सिंहकी लडकी कृष्णकुमारीका विवाह संबंध ले कर जय पुरराजके साथ झगडा खडा कर दिया। पहले मेवार-राजाके साथ कृष्णकुमारीके विवाह होनेकी वात थी। मानसिंहने जयपुरराजके इस अपमानजनक प्रस्ताव पर उत्तेजित हो जयपुरराजके दिये हुए उपहारोंको लूटा और सेनादलको परास्त किया।

इस सूत्रसे दोनों पक्षमें घमसान लडाई छिड़ी। सवाईसिंह इस प्रकार शठता द्वारा जयपुर और मेवारके राजोंके साथ मानसिंहका विवादनल प्रज्वलित कर अपना मतलब निकालनेका उपाय ढूढने लगे। इस समय वे धनकुलको ले कर जयपुरके शिविरमें गये। जयपुरराज जगत्सिंहकी जो वहिन भीमसिंहको व्याही गई थी उसीके गर्भसे धनकुलका जन्म हुआ था।

राजा जगत्सिंहने भांजेका पक्ष ले कर राजा मान-सिंहके विरुद्ध हथियार उठाया। उनके अधीन जितने सामन्त थे, सबोंने उनका साथ छोड दिया। उन्होंने लार्ड लेकके युद्धमें जिस होलकरपतिको आश्रय दिया था, अभी वे उन्हींकी शरणमें गये। किन्तु सवाईसिंहने लाख रुपये दे कर होलकरको कावूमें कर लिया और इस प्रकार मानसिंहकी ताकत घटा दी। इसके वाद जय-पुरकी सेनाने पिङ्गोली नामक स्थानमें इन पर आक्रमण कर दिया। युद्धके प्रारम्भमें इनके अधीन जो सब राठोर सामन्त थे वे सबके सब इन्हें छोड चले गये। दोनों पक्षमे घमसान युद्ध होनेके वाद राजा मानसिंहने मैरता-से योधपुरदुर्गमें जा कर आश्रय लिया। जगत्‌की सेनाने वहां तक इनका पीछा किया था।

मानसिंह जोधपुर दुर्गको दृढ़वद्ध तथा झालोर और अमरकोटमे सेना भेज कर शत्रुकी वाट जोहने लगे। जयपुरपति जगत्सिंह पांच महीने अवरोध करके भी कुछ न कर सके। मानसिंह असीम वीरताके साथ आत्मरक्षा करने लगे। इस समय जयपुरकी सेनामें वेतनभोगी अमीर खाँका सेनादल वागी हो गया। उन्होंने जगत्-सिंहके विरुद्ध अस्त्र उठाया। प्राणके भयसे जगत्-सिंहने रणक्षेत्रका परित्याग किया, साथ साथ सवाई सिंह भी अपने नगरको भागे।

युद्धके शेपमें अमीर खाँ और हिन्दूराजने राजा मान-सिंहको खासी मदद पहुंचाई थी। पीछे राजा मान-सिंहने उन दोनोंको उच्चपद और काफी धनरत्न दिया था। इसके वाद मारवाड राज्यमें अमीर खाँका प्रभुत्व विस्तार, नागरदुर्ग और नोत्रा दुर्गमें सैन्यस्थापन तथा मैरात और शाम्भरप्रदेशमे अधिकार फैलाते देख राजा मानसिंह वहुत चञ्चल हो गये। इस समय हिन्दू-और राजगुरु देवनाथको गुप्तभावसे निहत कर मान-सिंहका दिमाग खराव हो गया। अनन्तर उनके पुत्र छत्रसिंहने राज्यभार ग्रहण किया। छत्रसिंहकी दुश्च-रित्रतासे सभी सामन्त विद्रोही हो गये। राजा मान-सिंहका दिमाग जव ठिकानेमें आया तव उन्होंने फिरसे राज्यभार ग्रहण कर अंगरेजोंकी सहायतासे सामन्तोंकी भूसम्पत्ति छीन ली।

१८०३ ई०में इष्ट-इण्डिया-कम्पनीके साथ मानसिंह-की सन्धि हुई। अंगरेजी सेनाने मारवाड़के राजाका पक्ष ले कर सामन्तोंको उचित दण्ड दिया। १८१८ ई०-की सन्धिके अनुसार मि० वार्डर वृटिश गवर्मेण्टके प्रति-निधिस्वरूप अजमीर प्रदेशके सुपारिण्टेण्डेण्ट वन कर योधपुर राज्यमें आये। उन्होंने मारवाड़की राजनैतिक अवस्थाका संस्कार करनेके लिये चुपकेसे राजा मान-सिंहके साथ मिलना चाहा। किन्तु मिल न सके और

सीधे लौट गये। पीछे ले० कर्णल टाड साहब कम्पनीको ओरसे मारवाड़ राज्यके एजेण्ट बन कर आये। राजा मानसिंहके साथ कर्णलको गाढ़ी मित्रता थी। इस समय मारवाड़ प्रान्तमें मन्त्री अक्षयचांदने नादिरशाही आरम्भ कर दी थी। युद्धमें अक्षयचांद, किलादार, नागोजो, मूलजी, दन्धल, जोवराज, बिहारी, खीची, व्यास शिवदास और श्रीकृष्ण ज्योतिषी आदि अत्याचारी सरदार पकड़े और बन्दी किये गये। राजा मानसिंह उनमेंसे प्रत्येकका प्राण ले कर निष्कण्टक हो गये थे। पीछे इन्होंने पोकर्णके सलीमसिंहके वंशको ध्वंस करनेकी चेष्टा की। मानसिंहके इस व्यवहार पर सामन्तगण बड़े अप्रसन्न हुए। किन्तु मानसिंहने प्रतिहिंसावृत्तिको सफल करनेके लिये मानो संहार-मूर्त्ति धारण कर ली थी। उनके आदेशसे ८ हजार वेतनभोगी कमानवाही सेनाओंने रातको निजामके सामन्त सुरतान सिंह पर आक्रमण कर दिया। युद्धमें सुरतान मारा गया, सलीमसिंहने भाग कर अपनी जान बचाई। इतने दिनोंके बाद राजपूत वीर मानसिंह प्रकृत वीरतेजसे मारवाड़राज्य ध्वंस करनेको उद्यत हुए।

१८५० सम्वत्में अङ्गरेज कम्पनीके साथ महाराजाधिराज मानसिंहकी संधि हुई। जयपुराधिपने अपने भांजे धनकुल सिंहको राजतख्त पर बैठानेकी कामनासे पुनः मारवाड़ पर चढ़ाई कर दी। पहले मानसिंहको अङ्गरेजोंसे कोई साहाय्य नहीं मिला। पीछे अङ्गरेजी सेनाके रणक्षेत्रमें उतरते ही धनकुल दलबलके साथ भागा। इस समय जयपुरराज अङ्गरेज गवर्मेण्ट द्वारा विशेषरूपसे लाञ्छित हुए थे।

१८९२ सम्वत्‌की सन्धिके अनुसार योधपुरराज सैन्यसाहाय्यके बदलेमें एक लाख पन्द्रह हजार रुपये देनेको राजी हुए थे। वृटिश गवर्मेण्टने १८३५ ई०में राजा मानसिंहके अधिकारभुक्त मद्दीरवाड़ा प्रदेशके अन्तर्गत २८ ग्राम नौ वर्षोंके लिये इजारा ले लिया। उसके उपसत्त्वसे वे वार्षिक १५ हजार रुपये लेते थे। १८४३ ई०में इजारेका समय पूरा हो गया। उसी साल राजा मानसिंहकी मृत्यु हुई। वे अङ्गरेजोंकी सहायतासे मारवाड़ राज्यका बहुत कुछ संस्कार कर गये थे।

मानसिक (सं० त्रि०) मानस-ठञ्। १ मनोभाव, मनकी कल्पनासे उत्पन्न। किसी कष्टसे छुटकारा पानेके लिये देवताकी पूजा आदि मानसिक करनी होती है। २ मन सम्बन्धी, मनका। (पु०) ३ विष्णु।

मानसी (सं० स्त्री०) मानस-स्त्रीत्वात् ङीप्। १ विद्यादेवीविशेष, पुराणानुसार एक विद्यादेवीका नाम। २ मानसपूजा, वह पूजा जो मन ही मन की जाय। (त्रि०) ३ मनोभवा, मनसे उत्पन्न।

"ततोऽभिध्यायतस्तस्य जज्ञिरे मानसीः प्रजाः।"

(विष्णुपु० १।७।१)

मानसीगंगा (सं० स्त्री०) गोवर्धन पर्वतके पासके एक सरोवरका नाम।

मानसीव्यथा (सं० स्त्री०) हृदयजात शोकदुःखादि, मानसिक कष्ट।

मानसूत्र (सं० क्ली०) मानस्य गात्रप्रमाणस्य तन्मानार्थं वा सूत्रं। स्वर्णादिनिर्मित कटिसूत्र, सोनेकी करधनी।

मानसून (अं० पु०) १ एक प्रकारकी वायु। यह भारतीय महासागरमें अप्रैलसे अक्तूबर मास तक बराबर दक्षिण-पश्चिमके कोणसे और अक्तूबरसे अप्रैल तक उत्तर-पूर्वके कोणसे चलती है। अप्रैलसे अक्तूबर तक जो हवा चलती है, प्रायः उसीके द्वारा भारतमें वर्षा भी हुआ करती है। २ महादेशों और महाद्वीपों तथा उनके आस पासके समुद्रोंमें पड़नेवाले वातावरण सम्बन्धी पारस्परिक अन्तरके कारण उत्पन्न होनेवाली वायु। यह प्रायः छः मास तक एक निश्चित दिशामें और छः मास तक उसकी विपरीत दिशामें बहती है।

मानसोत्तर (सं० पु०) पर्वतश्रेणीभेद।

मानसौकस् (सं० पु०) मानसं सरः ओको वासस्थानं यस्य। हंस।

मानस्कृत (सं० पु०) पूजा या अभिमानके कर्त्ता।

मानस्य (सं० पु०) मनसका गोत्रापत्य।

मानहंस (सं० पु०) एक वृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें 'स ज ज भ र' होते हैं। इसके अन्य नाम मनहंस, रणहंस और मानसहंस भी हैं।

मानहन् (सं० त्रि०) मानं हन्ति हन-क्विप्। मानहन्ता, अप्रतिष्ठा करनेवाला।

मानहानि (सं० स्त्री०) मानस्य हानिः। अवमानना, बेइज्जती।

मानहीन (सं० त्रि०) मानेन हीनः। मानरहित, मानभ्रष्ट, जिसकी अप्रतिष्ठा हुई हो।

मानहुं (हिं० अव्य०) मानों देखो।

माना (हिं० पु०) १ एक प्रकारका मीठा निर्यास। यह इटली और एशिया माइनर आदि देशोंके कुछ विशिष्ट वृक्षोंमें छेव लगा कर निकाला जाता है। अथवा कभी कभी कुछ कीड़े आदिकी कई क्रियाओंसे उत्पन्न होता है। यह पीछेसे कई रासायनिक क्रियाओंसे शुद्ध करके औषधिके काममें लाया जाता है। भारतके कई प्रकारके बाँसों तथा अनेक वृक्षों पर भी यह कभी कभी पाया जाता है। यह रेचक होता है और इसका व्यवहार करनेसे मनुष्य बहुत निर्बल नहीं होता। देखनेमें यह पीले रंगका, पारदर्शी और हलका होता है और प्रायः बहुत महँगा मिलता है। २ अन्नादि नापनेका एक पात्र जिसमें पाव भर अन्न आता है। यह लकड़ी, मिट्टी या धातुका बना होता है। इससे तरल पदार्थ भी नापे जाते हैं। (क्रि०) ३ नापना, तौलना। ४ जांचना, परीक्षा करना।

माना—युक्तप्रदेशके गढ़वाल जिलान्तर्गत एक गिरिसङ्कट। यह अक्षा० ३०° ५७´ उ० तथा देशा० ७८° ३५´ पू० हिमालय शिखरमें चीन और भारत-साम्राज्यके बीचमें अवस्थित है। विष्णुगंगा नदीके किनारेसे माना उपत्यकास्थ मानागांवमें जाया जाता है। समुद्रपृष्ठसे यह रास्ता १८ हजार फीट ऊंचा होने पर भी पहले भारतवासी इस सङ्कट हो कर चीनतातारमें जाते आते थे। हिन्दू तीर्थयात्री इसी हो कर मानसरोवर तीर्थ जाते हैं।

मानाङ्क (सं० पु०) एक पुस्तक प्रणेता। इन्होंने गीतगोविन्दकी टीका, दुर्गमाशुबोधिनी नामक मालती माधवकी टीका मेघाभ्युदय-काव्य, वृन्दावनयमक और वृन्दावन-काव्य रचे। ये मालाङ्क नामसे भी परिचित थे।

मानाङ्क—राष्ट्रकूटवंशीय एक राजा।

मानाङ्कुलमहातन्त्र (सं० क्ली०) प्राचीन तन्त्रभेद।

मानानन्द (सं० पु०) एक योगाचार्य। शक्तिरत्नाकरमें इनका नामोल्लेख है।

मानानयन (सं० क्ली०) मानस्य परिमाणस्य आनयनम्। परिमाण आनयन, गणना कर परिमाण स्थिर करना। ज्योतिषमें रवि आदि ग्रहोंका मानानयन स्थिर कर गणना करनी होती है। विशेषतः ग्रहणगणना करनेके समय रवि और चन्द्रमाका मानानयन विशेष आवश्यक है।

मानायन (सं० पु०) मनायनका गोत्रापत्य।

मानाय्य (सं० पु०) मनाय्यका गोत्रापत्य।

मानाय्यानी (सं० स्त्री०) मनाय्यकी स्त्री अपत्य।

मानार उपसागर—भारतवर्षके दक्षिणमें अवस्थित भारतमहासागरका अंशविशेष। इसके पश्चिम तिन्नेवल्ली और मदुरा जिला, उत्तरमें आदामस ब्रिज (सेतुबन्ध द्वीप) और कुमारिका आदि पर्वतमाला तथा पूर्वमें सिंहलद्वीप है। कुमारिकासे दि-गल अन्तरीप तक इसका फासला २ मील है। दक्षिण पश्चिम मानसुन वायु बहनेसे इसका स्रोत बहुत प्रखर हो जाता है। उनके परिवर्त्तन समयमें भी अर्थात् उत्तर-पूर्व मानसुन वायुके बहते समय यहां पश्चिमी वायु बहती है तथा स्रोतमें भी बहुत अन्तर दिखाई देता है। इस समय जलस्रोतसे मलवार उपकूलका बालू कुमारिका अन्तरीपके दक्षिण जा कर जमा होता है। यहां मुक्ता पाई जाती है। मुसलमान और तामिल गोताखोर समुद्रमें डुबकी मार कर शंख, सीप, मोती आदि निकालते हैं। वृटिश सरकारने इसकी हिफाजतके लिये अच्छा प्रबन्ध कर रखा है।

मानाराव—बम्बई प्रदेशके काठियावाड़के सौराष्ट्र-विभागान्तर्गत एक छोटा सामन्तराज्य। यहांके राजा बड़ौदाराज और जूनागढ़ नवावको कर देते हैं।

मानासक्त (सं० त्रि०) १ अभिमानी। २ मानरक्षा ही जिसका मूलमन्त्र हो।

मानिंद (फा० वि०) समान, तुल्य।

मानिक (सं० क्ली०) आठ पलका एक मान।

मानिक (हिं० पु०) एक मणिका नाम। यह लाल रंगका होता है और हीरेको छोड़ कर सबसे कड़ा पत्थर है। इसमें विशेषता यह है, कि बहुत अधिक तापसे सुहागेके

योगसे यह काँचकी भाँति गल जाता है और गलने पर इसमें कोई रंग नहीं रह जाता। मानिक पत्थर गहरे लाल रंगसे ले कर गुलाबी और नारंगीसे ले कर बैंगनी रंग तकके मिलते हैं। जिस मानिकमें चिह्न नहीं होते और चमक अधिक होती है, वह उत्तम माना जाता और अधिक मूल्यवान् होता है।

विशेष विवरण मणि शब्दमें देखो।

मानिकखम्भ (सं० पु०) १ वह खूंटा जो कातरके किनारे गड़ा रहता है और जिसमें धुरेको रस्सीसे बांध कर जाटके सिरे पर अटकाते हैं, मरखम। २ विवाहमें मंडपके बीच गाड़ा जानेवाला एक खंभा। ३ मालखंभ, मलखम।

मानिकचंदी (हिं० स्त्री०) साधारण छोटी सुपारी।

मानिकजोड़ (हिं० पु०) एक प्रकारका बड़ा बगुला जिसकी चोंच और टांगें लंबी होती हैं।

मानिकजोर (हिं० पु०) मानिकजोड़ देखो।

मानिकरेत (हिं० स्त्री०) मानिकका चूरा। इससे गहने साफ किये जाते हैं और उन पर चमक लाई जाती है।

मानिका (सं० स्त्री०) मानयति गर्वी करोतीति मन-णिच्-ण्वुल, टाप् अकारस्येत्वं। १ मद्य, शराब। २ आठ पल या साठ तोलेका एक मान। वैद्यक-मतसे साठ तोलेका एक सेर होता है।

मानिटर (अं० पु०) पाठशालाकी श्रेणियोंमें एक प्रधान छात्र। यह अन्य छात्रों पर कुछ विशिष्ट अधिकार रखता है।

मानित (सं० त्रि०) मानोऽस्त्यर्थे तारकादित्वादितच्। सम्मानित, पूजित।

मानितसेन (सं० पु०) राजपुत्रभेद।

मानिता (सं० स्त्री०) मानिनो भावः तल-टाप्। १ मानीका भाव या धर्म, मानित्व, सम्मान, आदर। २ गौरव। ३ अहंकार, गर्व।

मानिन् (सं० त्रि०) १ मानोऽस्यास्तीति मान-इनि। १ मानविशिष्ट, सम्भ्रान्त। २ सिंह।

मानिनी (सं० स्त्री०) १ फलिवृक्ष, लक्ष्मणाकन्द। मानिन् स्त्रियां ङीप्। २ मानवती, अभिमानयुक्ता स्त्री, गर्ववती औरत।

"हरिरभिसरति वहति मृदु पवने।
किमपरमधिकसुखं सखि! भवने
माधवे मा कुरु मानिनि! मानमये॥"
(गीतगोविन्द ६।२)

३ साहित्यमें वह नायिका जो नायकके दोषको देख कर उससे रूठ गई हो। ४ मान करनेवाली, रुष्टा। ५ राजा राज्यवर्द्धनकी पत्नी। ६ शराव परिमाण, एक सेर।

मानिन्थ (सं० पु०) एक प्राचीन ज्योतिर्विद्।

मनित्थ देखो।

मानिमन्मथ (सं० क्ली०) सैन्धव लवण, सेंधा नमक।

मानी (सं० त्रि०) १ अभिमानी, घमंडी। २ मनोयोगी। ३ सम्मानित, गौरवान्वित। (पु०) ४ सिंह। ५ साहित्यमें वह नायक जो नायिकासे अपमानित हो कर रूठ गया हो। (स्त्री०) ६ कुंभ, घड़ा। ७ प्राचीन कालका एक प्रकारका मानपात्र। इसमें दो अंजुली वा आठ पल आता था। ८ साधारण छेद। ९ कुदाल, वसूले आदिका वह छेद जिसमें बेंट लगाई जाती है। १० अन्नका एक मान जो सोलह सेरका होता है। ११ किसी चीजमें बनाया हुआ छेद जिसमें कुछ जड़ा जाय। १२ चक्कीके ऊपरके पाटमें लगी हुई एक लकड़ी। इसके बीचके छेदमें कीली रहती है। जूआ न होने पर यह लकड़ी ऊपरके पाटके छेदमें जड़ी रहती है।

मानी (अ० स्त्री०) १ अर्थ, मतलब, तात्पर्य। २ तत्त्व, रहस्य। ३ प्रयोजन। ४ हेतु, कारण।

मानुतन्तव्य (सं० पु०) १ मनुतन्तुका गोत्रापत्य। २ ऐकादशाक्षरका अपत्य।

मानुष (सं० पु०) मनोर्जातः मनु (मनोर्जातावञ् यतौ षुक् च। पा ४।१।१६१) इत्यञ् षुगागमश्च। १ मनुष्य, मानव। २ याज्ञवल्क्य स्मृतिके अनुसार प्रमाणके दो भेदोंमेंसे एक। इसके तीन उपभेद हैं—लिखित, भुक्ति और साक्षी। (त्रि०) मनुष्यसम्बन्धी, मनुष्यका।

"अकृत्वा मानुषं कर्म यो दैवमनुवर्त्तते।
वृथा श्राम्यति सम्प्राप्य पतिं क्लीवमिवाङ्गना॥"
(महाभारत १३।६।२०)

मानुषक (सं० त्रि०) मनुष्यसम्बन्धीय, मनुष्यका।

मानुषता (सं० स्त्री०) मानुषस्य भावः तल-टाप्। मनुष्यत्व, मनुष्यका भाव या धर्म, आदमीयत।

मानुषप्रधन (सं० क्ली०) मनुष्यकी भलाईके लिये संग्राम।

मानुषसंवाद (सं० त्रि०) १ नरमांसाशी, मनुष्यका मांस खानेवाला। (पु०) २ राक्षस।

मानुषराक्षस (सं० पु०) १ राक्षसकी प्रकृति जैसा मनुष्य-शरीर, वह मनुष्य जिसका स्वभाव राक्षसके समान हो। २ मनुष्यका शत्रु, निष्ठुर प्रकृतिवाला दस्यु आदि।

मानुषलौकिक (सं० त्रि०) १ नरलोक-सम्बन्धीय, नरलोकका। २ मनुष्योंके उपयोगी।

मानुषिक (सं० त्रि०) मनुष्यस्य भावः कर्म वा मनुष्य-ठञ्। १ मनुष्यके कर्म आदि। २ मनुष्यसम्बन्धीय, मनुष्यका।

मानुषिवुद्ध (सं० पु०) नरशरीरधारी बुद्ध। जैसे गौतमबुद्ध आदि। ये ध्यानीबुद्धसे पृथक् देव हैं।

मानुषी (सं० स्त्री०) मानुषस्य स्त्री, मानुष जातित्वात् ङीष्। १ मनुष्य स्त्रीजाति, औरत।

"मनुष्यी मानुषी नारी मानवी मानुषस्त्रियाम्।"

(शब्दरत्ना)

२ तीन प्रकारकी चिकित्साओंमेंसे एक, मनुष्योंको उपयुक्त चिकित्सा। ३ औषध-निर्माणकार्य, दवाई बनानेका काम।

मानुषीक्षीर (सं० क्ली०) मानुषीस्तनदुग्ध, मनुष्यका दूध।

मानुषीदधि (सं० क्ली०) मानुषीदुग्ध-जातदधि, वह दही जो मनुष्यके दूधसे बनाया गया हो।

मानुषीय (सं० त्रि०) मनुष्य सम्बन्धीय, मनुष्यका।

मानुष्य (सं० क्ली०) मनुषस्य भावः मनुष्यस्येदमिति वा मनुष्य-अण्। १ मनुष्यत्व, आदमीयत। २ मनुष्य-शरीर, नरदेह।

"मानुष्ये कदलीस्तम्भे निःसारे सारमार्गणम्।
यः करोति स सम्मूढ़ो जलबुद्बुदसन्निभे॥" (शुद्धितत्व)

(त्रि०) मनुष्य सम्बन्धी, मनुष्यका।

मानुष्यक (सं० क्ली०) मनुष्याणां समूहः मनुष्य (गोत्रोक्षोष्ट्रोरभ्रे ति। पा ४।२।३९) इति वुञ्। १ मनुष्यसमूह, मनुष्यकी भीड़। मानुष-यत्। स्वार्थे कन् (त्रि०) २ मनुष्यसम्बन्धी, मनुष्यका।

"सुमन्त्रितं सुनीतञ्च न्यायतश्चोपपादितम्।
कृतं मानुष्यकं कर्म दैवेनापि विरुध्यते॥"

(भारत ५।७७।८)

मानुस (हिं० पु०) मनुष्य, आदमी।

माने (अ० पु०) अर्थ, मतलब, आशय।

माने माने (सं० अव्य०) सम्मानके साथ।

मानों (हिं० अव्य०) जैसे, गोया।

मानोखो (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी चिड़िया।

मानोज्ञक (सं० क्ली०) मनोज्ञस्य भावः कर्म वेति (द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च। पा ५।१।१३३) इति वुञ्। मनोज्ञता, मनोज्ञका भाव।

मानौं (हिं० अव्य०) मानों देखो।

मान्तव्य (सं० पु०) मन्तु यञ् (पा ४।१।१०५) मन्तुका गोत्रापत्य।

मान्त्र (सं० त्रि०) वैदिक मन्त्रसम्बन्धीय।

मान्त्रवर्णिक (सं० त्रि०) वैदिकस्तोत्र आदि लिखित मन्त्रवर्णको एक संज्ञाका नाम।

मान्त्रिक (सं० पु०) १ मन्त्रवेत्ता, जो वेदमन्त्रपाठमें विशेष पारदर्शी हो। २ रोझा, भोजवाजीकर आदि।

मान्थित (सं० पु०) मान्थित्यका वंशधर।

मान्थित्य (सं० पु०) मंथित्यका गोत्रापत्य।

मान्थरेषणि (सं० पु०) मन्थरेषणका गोत्रापत्य।

मान्थर्य (सं० क्ली०) दुर्बलता, कमजोरी।

मान्थाल (सं० पु०) मूषिकजातीय जीवभेद, मूसेकी जाति-का एक प्रकारका जीव।

मान्थ्य (सं० त्रि०) मन्थन या मर्दनयोग्य।

मान्द (सं० पु०) १ तड़ागभव जल, पोखरेका पानी। २ भौम्यादिग्रहके रवि या चन्द्रसम्बधीय नीचोच्च वा मन्दोच्च गति। मान्दफल Equation of the apsis, मान्दकर्म Process of correction for the apsis।

मान्दगांव—मध्यभारतके वरधा जिलान्तर्गत एक नगर। यह वना नदीके पास ही अवस्थित है।

मान्दार (सं० पु०) मन्दारसम्बन्धी।

मान्दारव (सं० पु०) मन्दारवसम्बन्धीय।

मान्दार्य (सं० त्रि०) वीतराग, जिसे अपना कह कर अभिमान न हो, विषयानुरागरहित।

मान्दालय—उत्तर ब्रह्मकी राजधानी। यह अक्षा० २१° ५९´ उ० तथा देशा० ९६°८´ पू०के मध्य ६०० सौ फुट उच्च एक पहाड़के पाददेशमें इरावती नदीसे १ कोस दूर समतल भूमि पर अवस्थित है। सिंहासनच्युत राजा थिवोके पिताने १८६० ई०में राजधानी अमरपुरका त्याग कर मान्दालयमें एक नई राजधानी वसाई। उस समयसे ले कर १८८६ ई०की १ली जनवरी तक यहां स्वाधीन ब्रह्मदेशकी राजधानी रही। पीछे अंगरेजोंने इसे कब्जा कर लिया।

राजधानीका आयतन समचतुर्भुज सरीखा है। राजधानीके चारों ओर २६ फुट ऊंची और ३ फुट चौड़ी दीवार दौड़ गई है।

नगरमें प्रवेश करनेके वारह द्वार हैं। प्रत्येक पार्श्वमें तीन तीन कर दरवाजे हैं। तोरणद्वारका ऊपरी भाग गुम्वजाकार लकड़ीके टुकड़ोंसे बना है। दो और तीन तल्लेमें दुर्गरक्षाका अच्छा प्रवंध है। १०० फुट लंबी और ६६ फुट चौड़ी एक खाई राजधानीको चारो ओरसे घेरे हुई है। वह खाई हमेशा गहरे जलसे भरी रहती है। उसको पार करनेके लिये पांच पुल बने हैं। वे सब पुल लकड़ीके इस प्रकार बने हैं, कि शत्रुके हठात् आगमन पर वे सहजमें उठा लिये जा सकते हैं।

राजप्रासाद नगरके ठीक बीचमें अवस्थित है। राजप्रासादकी बाहरी दीवार दुर्गकी दीवारके साथ एक सीधमें चली गई है।

अट्टालिकाका वाहरी भाग २० फुट ऊंची महोगनि लकड़ीकी दीवारसे घिरा है। इस प्रकार काठकी दीवारके परे और भी कई एक ईंटोंकी दीवारके वाद राजभवन बना हुआ है।

थिवो १८७८ ई०के अक्तूबर महीनेमें पितृसिंहासन पर वैठे। वे उक्त राजवंशके प्रतिष्ठाता आलम्प्रासे ग्यारहवें राजा थे। ब्रह्मवासियोंका कहना है, कि जिस वंशमें बुद्धदेवने जन्मग्रहण किया था, वे लोग उसी शाक्यवंशके हैं। ६९१ ई० सन्‌के पहले जब राजा अर्जुन कपिलवस्तुमें राज्य करते थे उसी समयसे ब्रह्मदेशका इतिहास आरम्भ हुआ है। अलम्प्राने पूर्व राजाओंको भगा कर एक शताब्दी पहले सिंहासन अधिकार किया था। उनकी शासनप्रणाली यथेच्छाचार-भावापन्न थी। राजगण बुद्धके सिवा और किसीकी भी उपासना नहीं करते थे। थिवोने राज्यशासन सुशृङ्खलभावसे नहीं किया। अंगरेजों प्रजाके साथ असद्व्यवहार करनेसे वे राज्यच्युत हो वन्दिभावमें भारतवर्ष लाये गये। तभीसे ब्रह्मदेश अंगरेजोंके अधिकारमें चला आ रहा है।

ब्रह्म जबसे अंगरेजोंके अधिकारमें आया, तबसे यहां बहुत परिवर्त्तन हुआ है। नगरके भीतर और बाहर बहुतसे बाजार हैं। जनसंख्या दो लाखके करीब है। यहां सभी जातियोंका वास है। नगरके वाहर और भीतर बहुतसे मठ और मन्दिरादि इधर उधर पड़े हैं। इरावती नदीके जलपथसे वहांका वाणिज्यकार्य चलता है। रफ्तनीमें रुई, महोगनि लकड़ी, मिट्टीका तेल, चमड़ा, गुड़, हाथीके दांत, लाख, सींग, गेहूं, तमाकू, पीला चन्दन और चाय प्रधान है। प्रधानतः चीनदेशके साथ स्थलपथसे वाणिज्य चलता है। ब्रह्मदेशके साथ चीनका वाणिज्य ही उल्लेखनीय है।

शहरमें ८ सिकेण्ड्री और ३ प्राइमरी स्कूल हैं। इनमें सेण्ट पेटरका हाईस्कूल और सेण्ट जोसेफ, अमेरिकन वैपटिष्ट मिशन स्कूल, यूरोपियन स्कूल और यूरोपियन वेसलिन मिशनका हाईस्कूल प्रधान है। स्कूलके अलावा एक अस्पताल और जेगयो वाजारके समीप एक चिकित्सालय है।

मान्द्राज—दक्षिण भारतवर्षकी एक प्रेसिडेन्सी। फोर्ट सेण्ट जार्ज नामक दुर्गके शासनभुक्त समस्त दक्षिण भारतको मान्द्राज प्रेसिडेन्सी कहते हैं। भूपरिमाण १४१७०५ वर्गमील है। मान्द्राज नगरमें अंगरेज सौदागरोंने पहले पहल उक्त दुर्ग बना कर कोठी खोली थी। वाणिज्यकार्यकी रक्षाके लिये यहां एक गवर्नर रहते थे। तभीसे दक्षिणभारतके अंगरेजी इतिहासमें मान्द्राजनगरकी ख्यातिका प्रथम सूत्रपात हुआ। जब सारा भारतवर्ष अंगरेजोंके हाथ आया, तब दाक्षिणात्यके अधिकारको अक्षुण्ण रखने तथा विचार कार्यको परिचालना करनेके लिये उन्होंने यहां दाक्षिणात्यका राजपाट वसाया। महिसुर आदि कुछ सामान्तराज्य, जिला और वन्य विभाग ले कर यह प्रेसिडेन्सी संगठित है।

उत्तर-पूर्वसे दक्षिण-पश्चिममें इसकी लंबाई ६५० मील और चौडाई ४५० मील है। इस प्रेसिडेन्सीमें वृटिश-सरकारके खास शासनमें २२ जिला हैं तथा स्वतन्त्र बन्दोवस्तसे गंजाम, विशाखपत्तन और गोदावरीका एजेन्सी विभाग एवं त्रिवांकुड़, कोचिन, पुडुकोटा, बङ्गनपल्ली और सन्दूर नामक पांच सामन्तराज्य मान्द्राज गवर्मेण्टके कर्त्तृत्वाधीनमें परिचलित होते हैं।

उत्तरको छोड कर बाकी तीन दिशामें समुद्र है। उत्तरपूर्वमें चिल्कासे ले कर समस्त पूर्व उपकूल तक बङ्गोपसागर विस्तृत है। दक्षिण-पूर्वमें अङ्गरेजोंका सिंहल उपनिवेश, सेतुबन्ध और पाक्प्रणाली, दक्षिण और पश्चिममें यथाक्रम भारतमहासागर और अरबसागर है। उत्तरी सीमा उत्तर-पूर्वसे क्रमशः दक्षिण-पश्चिममें नीची होती गई है। इसके पूर्वोत्तरसे उड़ीसा, मध्यभारतका पहाडीप्रदेश, निजामराज्य तथा धारवाड और उत्तरकनाडा जिला इसको घेरे हुए है। महिसुरका मित्रराज्य मान्द्राज गवर्मेण्टके वहिर्भूत होने पर भी भौगोलिक अवस्थानुसार वह एक प्रेसिडेन्सीके अन्तर्भुक्त हो गया है। अलावा इसके लाक्षाद्वीपपुञ्ज भी मलवार और दक्षिण कनाड़ा जिलेके शासनभुक्त हो जानेसे मान्द्राज प्रेसिडेन्सीका अंशविशेष समझा जाने लगा है।

दक्षिण भारतका मानचित्र देखनेसे मालूम होता है, कि पर्वत, नद, नदी और वनमालासमाकुल इस विस्तीर्ण भूभागका प्राकृतिक सौन्दर्य-स्थान विभिन्न भाव धारण किये हुए है। पूर्व और पश्चिमघाट पर्वतमालाकी वनमय दृश्यावलि स्वभाव सौन्दर्यकी रङ्गभूमि है। नीलगिरिकी अधित्यका और उपत्यका भूमि निर्झरप्रवाहिणी स्रोतस्विनीसे परिव्याप्त हो कर मानवजीवनके लिये विशेष स्वास्थ्यप्रद हो गई है। महिसुर, त्रिवांकुड़ त्रिचिनपल्ली आदि शब्दोंमें यहाके स्थानविशेषका प्राकृतिक इतिहास दिया गया है। अतएव अनावश्यक समझ कर उनका विवरण यहां पर नहीं किया गया।

नदियोंमें गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, पिनाकिनी, पलार, कैग, वेल्लूर और ताम्रपर्णी प्रधान हैं। अलावा इनके घाटगिरिमाला और अन्यान्य पर्वतोंसे बहुतसी छोटी छोटी स्रोतस्विनी निकल कर इधर उधर वह गई हैं। पर्वतोंमें पूर्व और पश्चिमघाटश्रेणी, नीलगिरि, आनमलय, पलनी, पालघाट और सेरवार गिरिमाला उल्लेखनीय हैं। आनमलय शैलश्रेणीका आनमुड़ी शृङ्ग (८८५० फुट) तथा नीलगिरिका दोदावेत्ता शिखर (८७६० फुट) दक्षिण भारतकी पर्वतमालाका सबसे ऊँचा शिखर है।

पलिकाट ह्रद ही सबसे बड़ा ह्रद है। वह उत्तर-दक्षिणमें ३७ मील विस्तृत है। मध्यदेश भागका सभी वाणिज्यद्रव्य इसी ह्रद हो कर मान्द्राज नगर और उत्तर-दिग्वर्त्ती प्रदेशोंमें जाता है। कनाड़ा, मलवार और त्रिवांकुड-समुद्रके किनारे परके पहाड़ोंसे निकली हुई प्रखर स्रोतवाली नदियोंके साथ समुद्रस्रोतके घात-प्रतिघातसे बहुतसे छोटे छोटे ह्रद बन गये हैं। इनमें कोचीनका ह्रद सबसे बडा है। इस ह्रदके दक्षिणसे एक नहर निकल कर कुमारिका अन्तरीप तक चली गई है।

खनिज पदार्थोंमें विभिन्न जातिके पत्थर, कोयले, लोहे, सोने आदिकी खान यहांके विभिन्न जिलोंमें पाई जाती हैं। सालेम जिलेमें बढिया लोहे, वैनाड़ और कोलारमें सोने, भद्राचल और दमगुडेम नामक स्थानमें कोयलेकी खान है। अलावा इसके नीलगिरि और वेलरीमें माङ्गनिज, पूर्वघाट पर्वत पर तांबा, मदुरामें चांदी और रसाञ्जन, कावेरी नदीकी उपत्यकामें पन्ना और उत्तर सरकारके स्थानविशेषमें हीरा और अकीक मानिक पाया जाता है। वन्यविभागमें शाल और महोगनी वृक्ष ही अधिक है। वनविभागसे गवर्मेण्टको काफी आमदनी है।

मान्द्राजविभागका इतिहास समग्र दाक्षिणात्यके इतिहासके साथ जड़ा हुआ है। यथार्थमें द्राविड़जातिका प्रकृत इतिहास ले कर ही इस प्रदेशका इतिहास बना है। किन्तु उपयुक्त इतिहासकारके अभावमें वे सब घटनाएं धारावाहिकरूपमें लिपिबद्ध नहीं हुईं। यह जाति किस प्राचीन समयमे यहां आई थी उसका कोई प्रमाण नहीं मिलता तथा किस जातिके साथ इनका निकट सम्बन्ध था, वह भी आज तक मालूम नहीं हुआ है।

प्रत्नतत्त्वविद्गण अनुमान करते हैं, कि रामायणोक्त

राक्षसराज रावणका नाश करनेके लिये रामचन्द्रने जिस वानरकुलकी सहायता ली थी सम्भवतः द्राविड़ लोग ही उस वानर जातिके रूपमें कल्पित हुए हैं। इस अनार्य जातिकी—उनकी आकृति प्रकृति देख कर—वानरवंशसम्भूत कह कर श्लेषोक्ति करना असङ्गत प्रतीत होने पर भी सभ्यतम रामचन्द्रके अनुचरोंके निकट निकृष्टता-सम्पादन करना ही उनका उद्देश्य था। जो कुछ हो, रामचन्द्रके शुभागमनसे इस देशकी अनार्य द्राविड़ जाति हिन्दूधर्ममे दीक्षित हुई थी, ऐसा अनुमान किया जाता है। इसके सिवा द्राविड़ जातिकी प्राचीनताका प्रमाण और कुछ भी संग्रह नहीं किया जा सकता।

इसके वाद यहां वौद्धधर्मस्रोत वहने लगा। वौद्ध-परिव्राजकोंने दाक्षिणात्यमें जो प्रभाव फैलाया था उसका विवरण दूसरी जगह दिया गया है।

वौद्धधर्म देखो।

वर्त्तमान ऐतिहासिकयुगमें मुसलमानी अमलदारीके वाद यहां महाराष्ट्र जातिका अभ्युदय हुआ था। विभिन्न समयमें विभिन्न राजाओंके शासनकालमें यहां धर्म और शासनकार्यका परिवर्त्तन होने पर भी यहांकी प्रचलित तामिल और तेलगूभाषामें कोई हेरफेर नहीं हुआ। इससे साफ साफ मालूम होता है, कि द्राविड़ जाति यहां वहुत पहलेसे रहती आई थी।

यद्यपि यहांकी राजकीय घटानावलीका कोई धारावाहिक इतिहास नहीं मिलता, तो भी इतना जरूर कहा जा सकता है, कि प्राचीन भारतीय इतिहासकी घटना दक्षिण भारतमें ही घटी थी वे सव घटनायें सचमुच ही वहुत विस्मयकर थीं। दाक्षिणात्य देखो।

विभिन्न देशीय राज-इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि मलवार उपकूल दाक्षिणात्यके वाणिज्यभाण्डार-रूपमें गिना जाता था। राजा सलोमनके शासनकालमे तथा उनके वाद तामिल नामक भारतीय पण्यद्रव्योंकी यूरोपमें वहुत प्रसिद्धि थी। सिरियावासी ईसाई और अरव देशके मुसलमान वाणिज्य करनेकी इच्छासे वहुत पहलेसे ही दाक्षिणात्यके पश्चिम उपकूलमे आ कर वस गये थे। उनके वंशधर आज भी मिश्रधर्मी हो कर मलवार और त्रिवांकुड़ प्रदेशमे वास करते हैं। कोचीनमें यहूदियोंका उपनिवेश-स्थान भी कई सदी पहले हुआ था।

भारतीय वाणिज्य-लोलुप पुर्त्तगीज सौदागरोंने इस मलवार उपकूलमें आते ही आशानुरूप पण्यद्रव्य संग्रह कर लिया था। पुर्त्तगीज देखो।

इसके वाद वहुत विघ्न वाधाओंको झेलते हुए अङ्गरेजोंने करमण्डल उपकूलमें अपनी गोटी जमाई। यहां क्लाइवके बुद्धिकौशलसे फरासी प्रतिनिधि डुप्लेकी राज्यलाभकी आशा पूरी न होने पाई। फिर सर आयरकूटकी अव्यर्थ कूटनीति, हैदरकी अदम्य वीरता, टीपू सुलतानकी जिघांसा और वीरवर वेलिङ्गटनके जयप्रवण-जीवनकी कार्यपरम्परा दिखाई देती है। सच पूछिये तो उन्हीं सव घटनाओंके वल अङ्गरेजोंने दाक्षिणात्यमें आधिपत्य फैलाया था। १८०६ ई०के वल्लूरविद्रोहके वाद मान्द्राजमें और कोई घटना न घटी।

इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि इङ्गलैण्डकी सर्वदमन राजशक्ति द्वारा मान्द्राजमें शान्ति स्थापित होनेसे पहले दक्षिण भारतमें और कभी भी एकच्छत्राधिपतिका शासन नहीं था। कुछ समयके लिये एकमात्र विजय नगरके हिन्दूराजाओंने यहां सर्वजनीन राजशक्ति फैलाई थी। किन्तु दुरारोह गिरिसङ्कट तथा उस पर्वतवासी दुर्द्धर्ष जातिके आक्रमणसे उनका साम्राज्य नष्टप्राय हो गया था।

दक्षिण भारतके प्राचीनतम इतिहासका पर्दा उठानेसे हम लोग देखते हैं, कि यह प्रेसिडेन्सी वहुतसे छोटे छोटे राज्योंमें विभक्त थी। उनमें एकके अभ्युत्थानसे दूसरेका अधःपतन हुआ था। पाश्चात्य ऐतिहासिकोंने जिस तामिलप्रदेशको द्राविड़ वतलाया है, वह भी एक समय पाण्ड्य, चेर और चोलराज्यमे विभक्त था।

मेगेस्थेनिस आदि भारत भ्रमणकारी ग्रीकवासियोके भ्रमणवृत्तान्तसे मालूम होता है, कि कलिङ्ग, अन्ध्र और पाण्ड्य-राज्य उस समय दक्षिण भारतमें वहुत चढ़ा वढ़ा था। वह अन्ध्रराज्य वर्त्तमान मान्द्राज-प्रेसिडेन्सीके उत्तर तथा कलिङ्गराज्य समुद्रके किनारे वसा हुआ

था। किंतु उन प्रभावशाली तीनों राज्योंकी विस्तृति कहां तक थी, ठीक ठीक मालूम नहीं।

अन्ध्र, कलिङ्ग और पाण्ड्य देखो।

बौद्ध-सम्राट अशोकके शासनकालमें हम लोग चोल और चेर (केरल) राज्यका प्रभाव देखते हैं। सम्भवतः उन दोनों सामन्त राज्योंने पाण्ड्यराज्यकी अधीनता तोड कर स्वाधीनता ध्वजा फहराई थी।

चोल और केरल देखो।

उसके बाद पल्लवराजवंशका अभ्युदय हुआ। उन्होंने मान्द्राजके समीप एक राजधानी बसा कर महाप्रभावशाली एक विस्तीर्ण साम्राज्यकी स्थापना की थी। प्रबल प्रतापी पल्लवोंके हाथसे कलिङ्ग और अन्ध्रराजवंशका अधःपतन हुआ। पल्लववंशके बाद भारतका पूर्वी उपकूल छोटे छोटे राज्योंमें विभक्त हो गया था।

पल्लव देखो।

पल्लवराजवंशका सौभाग्यसूर्य जब मध्यगगनमें उगा हुआ था, तब पश्चिम चालुक्यराजने चोल और पल्लवराज्य पर धावा बोल दिया। किन्तु चालुक्य-सेनामें प्रबल पराक्रम रहते हुए भी उक्त दोनों राज्योंका कुछ भी अनिष्ट नहीं हुआ। ७वीं शताब्दीमें पल्लवराजवंशके भाग्यने पलटा खाया। चालुक्य राजवंशसे वे परास्त हुए। तभीसे ले कर ११वीं सदी तक यहां पूर्व चालुक्य-राजवंशका आधिपत्य रहा। इस समय काञ्चीपुरके पल्लवगण चालुक्योंके हाथसे परास्त हुए। शेषोक्त चालुक्य राज दाक्षिणात्यमें सात पागोडा बना कर अपनी वंशकीर्त्तिको अचल कर गये हैं। पीछे इन दाक्षिणात्यवासी पल्लवोंने फिरसे चालुक्योंको भगा कर अपनी राजशक्तिको अक्षुण्ण रखा।

११वीं शताब्दीमें चोलराज्य विशेष समृद्धिशाली हो गया। चोलराजने अपने बाहुबलसे दक्षिणस्थ पाण्ड्य राजवंश, केरलके गङ्गवंश तथा सिंहलराजको अपने अधीन कर लिया था। धीरे धीरे उन्होंने पूर्व चालुक्य वंशके अधिकृत उडीसा तक तथा पल्लवराज्यके कुछ अंशोंको अपने राज्यमें मिला लिया।

इस प्रकार चालुक्यवंशका अधिकृत विस्तृत राज्य धीरे धीरे हाथसे जाता रहा। फिर १३वीं सदीमें मान्द्राजके उत्तरका समूचा चोलराज्य छोटे छोटे सामन्तराज्योंमें विभक्त हो गया। वे सब सामन्तराजगण एक तरह स्वाधीन भावसे ही राज्यशासन करते थे। वे लोग आपसमें रात दिन युद्धमें उलझे रहते थे। मुसलमान राजाओंने अच्छा मौका देख कर दाक्षिणात्य पर चढ़ाई कर दी। इधर जिस प्रकार मुसलमान लोग दक्षिण-भारतमें अपनी प्रतिष्ठा जमानेके लिये बद्धपरिकर हुए थे, उधर उसी प्रकार होयसाल बल्लालवंशीय राजगण चोल और केरल राजाओंको राज्यभ्रष्ट करके पाण्ड्य और गङ्गराज्यमें अपना प्रभाव फैला रहे थे। १४वीं शताब्दीके आरम्भमें हम दाक्षिणात्यके विभिन्न राजवंशका इस प्रकार परिचय पाते हैं:—भारतके सबसे दक्षिणमें एकमात्र पाण्ड्य राजवंशका प्रभाव फैला हुआ था। तञ्जोर और मान्द्राज-प्रदेशमें डूबता हुआ गौरव रवि क्षीण ज्योति दे रहा था। प्रायोद्वीपके मध्यांशमें प्रतापान्वित होयसाल बल्लालोंने राजशक्तिको दृढ कर रखा था, किन्तु उनके राज्यके उत्तर अराजकता सम्पूर्णरूपसे फैली हुई थी। बल्लाल देखो।

इन सब प्राचीन राजवंशको उत्पत्तिके सम्बन्धमें वहांके राजोपाख्यानमें अलौकिक प्रवाद आरोपित हुए हैं। वे सब आख्यान विश्वासयोग्य नहीं होने पर भी उन सब राजाओंके उत्कीर्ण शिलाफलक, ताम्रशासन और देवमन्दिरादिमें भास्करकीर्त्तिके जो अपूर्व निदर्शन हैं वे उन अतीत राजवंशधरोंके कार्यकलापका प्रकृत परिचय देते हैं।

मुसलमानोंके अभ्युदयसे ही यहांका धारावाहिक इतिहास मिलता है। दिल्लीके खिलजीवंशीय २य सम्राट् अलाउद्दीनके विख्यात सेनापति मालिक काफुरने होयसाल बल्लालवंशीय राजाको परास्त कर दाक्षिणात्य फतह किया। उन्होंने अपने बाहुबलसे कुमारिका अन्तरीप तकके समस्त भूभागोंको लूटा और पूर्व उपकूलस्थ जितने सामान्तराज थे उन्हें परास्त कर मुसलमानोंकी अधीनता स्वीकार कराई थी। मालिक काफुर देखो।

मुसलमानी सेनाके दाक्षिणात्यसे चले जाने पर विजयनगरके हिन्दूराजवंशने मस्तक उठाया। उन्होंने दाक्षिणात्यके दूसरे दूसरे हिन्दूराजाओंको परास्त कर तुङ्ग-

भद्राके किनारे राजधानी वसाई थी। जब उनका सौभाग्य-सूर्य मध्य गगनमें उगा हुआ था, उस समय वे प्रायः समस्त मान्द्राजप्रेसिडेन्सीका शासन करते थे।

विजयनगर देखो।

विजयनगरराजवंश दो सदी तक प्रबल प्रतापसे राज्यशासन करके १५६५ ई०में दाक्षिणात्यके चार मुसलमानराजवंशकी मिलित शक्तिसे अधःपतनको प्राप्त हुआ।

अफगान मुसलमानोंके बाद मुगल और महाराष्ट्र-शक्तिकी दाक्षिणात्यमें तूती बोलने लगी। इस समयसे दाक्षिणात्यके द्राविडीय राजवंशोंके जातीय जीवनका अवसन हुआ।

मुगल बादशाह औरङ्गजेबने कुमारिका तक अपना अधिकार फैला तो लिया था, पर वे यथार्थमें उन जीते हुए प्रदेशोंको अपने साम्राज्यमें न मिला सके थे। दाक्षिणात्यसे औरङ्गजेबके लौटने पर वहांके सभी राजे एक एक कर स्वाधीन हो गये। सम्राट्के दोर्दण्ड प्रतापसे भय खा कर भी उन्होंने अपने अधिकृत प्रदेशोंका स्वाधीनभावसे शासन करना छोड़ा नहीं। यहां तक, कि बादशाहके प्रतिनिधि निजाम भी अपनेको स्वाधीन बतलानेसे बाज नहीं आये। सामन्तप्रधान कर्णाटकके नवाब आर्कट राजधानीमें रह कर स्वाधीनभावसे राज्यशासन करते थे। तञ्जोरमें शिवाजीके एक वंशधरने राजपाट बसाया था। पाण्ड्यराज्यमें मदुराके नायकवंशका प्रभुत्व था। मध्य-अधित्यकाभूमिमें एक हिन्दू-सरकार अपनी धाक जमानेकी कोशिश कर रहे थे। आगे चल कर यही स्थान महिसुरराज्य नामसे बजने लगा। राजनीतिकुशल डुप्लेने जब देखा, कि दाक्षिणात्यके राजे मुगलशक्तिकी अधीनता स्वीकार करनेको राजी हैं, तब उन्होंने दाक्षिणात्यमें यूरोपीय प्रभाव फैलाना चाहा था।

पुर्त्तगीज नाविकप्रधान भास्को-डि गामा १४६५ ई०-की २०वीं मईको कालिकट पहुंचे। प्रायः एक सदी तक पुर्त्तगीजोंने मलवार-उपकूलका वाणिज्य-प्रवाह अपने हाथसे परिचालित किया था। पुर्त्तगीज प्रभावके विलुप्त होनेसे १७वीं सदीके प्रारम्भमें ओलन्दाजोंने पुर्त्तगीजोंकी टूटी फूटी कोठी आदिको ले कर वाणिज्य चलानेकी चेष्टा की। उनके बाद १६१६ ई०में अंगरेज सौदागरोंने कालीकट और कांगनूर आ कर वाणिज्य व्यवसाय चलानेके लिये कोठी खोली। १६८३ ई०में तेल्लोचेरीमें अंगरेजोंका पश्चिम उपकूलका वाणिज्य भाण्डार स्थापित हुआ। १७०८ ई०में कोठीकी रक्षाके लिये उन्हें कुछ जमीन मिली थी। अंगरेजोंकी उन्नतिके साथ साथ पुर्त्तगीजोंने गोआ प्रदेशमें और ओलन्दाजोंने स्पाइस द्वीपमें जा कर श्रांसारिक विप्लवसे हाथ खींच लिया।

१६११ ई०में अंगरेजोंने मछलीपत्तन बन्दरमें तथा कृष्णा जिलेके पेट्टपोली (निजामपत्तन) नगरमें आ कर करमण्डल उपकूलका वाणिज्यांश ग्रहण किया। पीछे उन्होंने नेल्लूर जिलेके अरमागांव बन्दरमें कोठी खोली। १६३९ ई०में चन्द्रगिरिके हिन्दूराजासे अनुमति ले कर अंगरेजोंने मान्द्राजमें एक और कोठी खोली थी।

१६७२ ई०में फरासियोंने पुंदीचेरीको खरीदा। उसके दो वर्ष बाद उन्होंने यहां एक उपनिवेश बसाया था। करमण्डल उपकूलमें दोनों विभिन्न वणिक्सम्प्रदाय शान्त भावसे वाणिज्य व्यवसाय चलाते थे, उनमेंसे किसीकी भी राज्य पानेकी इच्छा न थी।

१७४१ ई०में यूरोपमें अष्ट्रियाका सिंहासन ले कर अंगरेज और फरासीसीमें झगड़ा खड़ा हुआ। उस सूत्रसे भारतमें भी अंगरेज और फरासिसी आपसमें लड़ने लगे। १७४६ ई०में ला बोर्दनेने मान्द्राजके सेनावास पर आक्रमण किया और उसे जीत लिया। सेण्ट डेविड दुर्गको छोड़ कर और सभी स्थान अंगरेजोंके हाथसे जाते रहे। कर्णाटकके नवाब अङ्गरेजोंकी ओरसे फरासियोंके साथ लड़ने लगे। किन्तु सेण्ट थोमीके युद्धमें हार खा कर वे भाग गये।

१७४८ ई०में आयलाशापले (Aix-la chapelle)की सन्धिके अनुसार भारतमें फरासी और अंगरेजोंके बीच मेल हो गया। मान्द्राज अंगरेजोंको लौटा दिया गया। किन्तु इसी समयसे दोनों जातिके मध्य जातीय विद्वेषका सूत्रपात हुआ। एक दूसरेका दोष ढूंढने लग गया। खण्डराज्योंका सिंहासनाधिकार ले कर दोनोंमें फिरसे

लड़ाई छिड़ गई। अंगरेजोंको कर्णाटक और तञ्जोरके राजासे सहायता मिली थी। उधर फरासियोंने भी अपने निर्वासित एक राजपुरुषको हैदराबाद सिंहासन पर बिठा कर अपने पक्षको मजबूत कर लिया था।

इस प्रकार असंख्य विप्लव और षड़यन्त्रसे दाक्षिणात्यका इतिहास विशेष रूपसे परिवर्त्तित हुआ था। अन्तमें फरासी-राजनैतिक डुप्लेका अभ्युदय हुआ। वे कुछ समयके लिये दाक्षिणात्यके विभिन्न देशीय राज्योंके राजकीय मध्यस्थ हुए थे। बिना उनकी सलाहके कोई भी देशी राजा स्वेच्छासे किसी कार्यमें हाथ नहीं डाल सकते थे। जब उनका सामर्थ्य और सौभाग्य शीर्ष स्थान पर पहुंचा, उस समय इङ्गलैण्डके वीरपुरुष क्लाइव इष्ट-इण्डिया-कम्पनीके कर्मचारिरूपमें मान्द्राजमें रहते थे। आर्कटके भीषण युद्धमें सेनापतित्व ग्रहण कर उन्होंने जैसी वीरतासे अङ्गरेजोंकी रक्षा की थी कि उसीसे उनका नाम इतिहासमें मशहूर हो गया है।

क्लाइवकी इसी विजयसे भारतीय इतिहासका परिवर्त्तन हुआ था। डुप्लेके कूटनीति कौशलसे ही इतने दिनों तक फरासीका अधिकार दाक्षिणात्यमें निष्कण्टक रहा। युद्धके बादसे ही अंगरेजी कौशलसे उनके छक्के छूट गये। डुप्लेके बुद्धिविपर्ययको ही इस अनिष्टका मूल जान कर फरासी-सभाने उन्हें स्वदेशमें बुला लिया। लाली और बूसी नामक सेनापति उन पद पर भारतवर्ष आये। युद्धविद्यामें विशेष पारदर्शी होने पर भी वे डुप्लेकी तरह नीतिज्ञ नहीं थे। इसलिये वे विशेष दक्षतासे राजकार्य नहीं चला सके।

१७६० ई०में कर्नल कूटने वन्दिवासके युद्धमें लालीको हराया। अब दाक्षिणात्यमें अंगरेजोंका मुकाबला करनेवाला कोई भी न रह गया। इस युद्धके बादसे ही फरासी-शक्तिका ह्रास होने लगा। दूसरे वर्ष महिसुरराजसे सहायता न ले कर ही पुदिचेरी पर अधिकार कर लिया। तभीसे देशीय राजाओंके हृदयसे फरासीकी अनधिकार चर्चाका भय जाता रहा।

इसके बाद यद्यपि अंगरेजोंको यूरोपीय शक्तिके साथ युद्ध नहीं करना पड़ा, तथापि महिसुरके उन्मत्त मुसलमानोंके संघर्षसे उन्हें विशेष कष्ट भुगतना पड़ा था। महिसुरराज हैदर और उनके लड़के टीपू सुलतानके साथ अंगरेजोंका जो युद्ध हुआ उसमें अंगरेजोंको नाकोदम आ गया था। उस समय उन्होंने महिसुरसे ले कर कर्णाटक तकके सभी प्रदेशों और अंगरेजी दुर्गोंके सम्मुख प्रदेशोंको लूटा। १७६९ ई०में हैदरके साथ अङ्गरेजोंका प्रथम युद्ध आरम्भ हुआ। २य युद्धमें अंगरेज-सेनापति बेली हैदरके हाथ काञ्चीपुरके निकट मारा गया। इस समय टीपूने मलवार प्रदेशमें अंगरेजोंको कुछ दिनके लिये मार भगाया।

काञ्चीपुरकी वह विपद्वार्त्ता सुन कर बङ्गालके शासनकर्त्ता वारेन हेष्टिंगस्‌ने सेनापति कूटको मान्द्राज दलबलके साथ भेजा। पोर्टोनभोके युद्धमें दोनों पक्षने वीरताकी पराकाष्ठा दिखलाई थी। आखिर हैदर पराजित हो कर रणक्षेत्रसे भागा। तभीसे हैदरने फिर कभी भी अंगरेजोंके विरुद्ध अस्त्र नहीं उठाया। १७८२ ई०में हैदरके मरने पर उसका लड़का टीपू सुलतान राजतख्त पर बैठा। इसके दो वर्ष बाद मङ्गलूरकी सन्धिके अनुसार जिसने जो देश लिया था, वापिस कर दिया। १७९०ई० तक किसी भी पक्षने सन्धि नहीं तोड़ी। इसके बाद टीपू सुलतानने जब त्रिवांकुड़को लूटा, तब लार्ड कार्नवालिसने दलबलके साथ उनके विरुद्ध यात्रा कर १७९१ ई०में बङ्गलूर दुर्ग अधिकार कर लिया। दूसरे वर्ष टीपू सुलतान फिर भी पराजित हो कर अपना आधा राज्य खो बैठा। १७९९ ई०में वह फरासियोंके साथ षड़यन्त्र करके अंगरेजोंके विरुद्ध खड़ा हो गया। श्रीरङ्गपत्तन अवरोधके समय सुलतानकी मृत्यु हुई। यही इतिहासमें ४र्थ महिसुरयुद्ध कहलाता है।

पहले ही कहा जा चुका है, कि १९वीं शताब्दीके आरम्भसे यहां और किसी प्रकारका युद्ध नहीं हुआ। ये सब प्रदेश अंगरेजोंके अधिकारमें रहने पर भी पलिगार-सरदार स्वाधीन होनेकी कोशिश कर रहे थे। पश्चिम उपकूलमें दुर्द्धर्ष नायर और माप्पिला जातिके विद्रोहसे दोनों पक्षमें बेहद खूनखराबी हुई थी। उत्तर-सीमान्तवर्त्ती गञ्जाम और विशाखपत्तनके पहाड़ी प्रदेशवासी भी बागी हो गये। १८३६ ई०में गुमसुरके सरदारके बागी होने पर उसका राज्य छीन लिया गया।

इस समय खन्द्जातिमें नरबलिकी प्रथा प्रचलित थी। अंगरेजोंने उसे बंद कर दिया। १८७६ ई०में उत्तर-सीमान्तवर्त्ती रामपा प्रदेशके अधिवासी अंगरेजोंके विरुद्ध खड़े हुए। अंगरेजोंकी गोलीसे उनमेंसे कितने यमपुरको सिधारे।

अंगरेज सौदागरोंने किस प्रकार धीरे धीरे मान्द्राज प्रेसिडेन्सीके बहुतसे स्थानों पर अधिकार किया था नीचे उसका संक्षिप्त विवरण दिया जाता है।—१७६३ ई०में इष्ट इण्डिया कम्पनीने अर्काटके नवावसे मान्द्राज नगरके चारों ओरका भूभाग प्राप्त किया। वह भूभाग अभी चेङ्गलपत् जिला वा कम्पनीकी जागीर नामसे मशहूर है। १७६५ ई०में मुगल-बादशाहने कम्पनीको गञ्जाम, विशाखपत्तन, गोदावरी और कृष्णा जिला (उस समय उत्तर-सरकार नामसे प्रसिद्ध था) दे दिया। किन्तु अंगरेजराजने अपनी राजशक्तिको अविचलित रखनेके लिये निजामको ७ लाख रुपये दे कर उनसे उक्त संपत्तिकी सनद लिखवा ली। अंगरेजोंने यद्यपि यहांसे फरासियोंको मार भगाया था, फिर भी १८२३ ई०के पहले वे यहांका पूर्ण आधिपत्य लाभ न कर सके थे। १७९२ ई०में टीपू सुलतान बड़ामहल, मलवार, डिण्डिगल, पलनी और कंगुण्डी तालुक अंगरेजोंको समर्पण करनेके लिये बाध्य हुए। १७९९ ई०में टीपूके मरने पर महिसुर राज्यके पुनर्गठनके समय कोयम्बतोर, नीलगिरि, सलेम और दक्षिण कनाड़ा जिलेका कुछ अंश अंगरेजोंके हाथ लगा। उसी साल तञ्जोरराजने राज्यशासन करना छोड़ दिया था, उनके वंशधर १८५५ ई० तक नाम मात्रको राजा रहे। १८०० ई०में साहाय्यकारी सेनादलको रक्षाके लिये हैदराबादके निजामने अनन्तपुर, कर्नल, बेल्लरी और कडापा जिला अंगरेजोंको दिये। दूसरे वर्ष उन्होंने नेल्लूरसे तिन्नेवल्ली तक करमण्डल उपकूलस्थ कर्णाटक नवावके अधिकृत राज्यको अंगरेजोंके हाथ समर्पण किया। उस वंशके अन्तिम नवाव १८५५ ई०में परलोकवासी हुए। राज्यशासनमें उन्हें किसी प्रकारकी क्षमता न थी, नाममात्रको वे नवाव थे। उस वंशके प्रधान व्यक्ति 'नवाव आव-अर्काट' उपाधिसे भूषित तथा मान्द्राज गवर्मेण्ट द्वारा विशेषरूपसे सम्मानित हुए। १८३१ ई०में कर्नूलके नवाव अपने उच्छृङ्खल-शासनके दोषसे राज्यच्युत हुए। उनका राज्य अंगरेजीराज्यमें मिला लिया गया।

देशीय सामन्तराजाओंमें महिसुरराज सबसे बढ़े चढ़े हैं। १८३१ ई०में अंगरेजराजने महिसुरके शासनकी बागडोर अपने हाथ ली थी। किन्तु १८८१ ई०में वह जनपद पुनः देशीय हिन्दू राजाको लौटा दिया गया। विना अंगरेज कर्मचारीकी सलाहके राजा शासनसम्पर्कीय कोई भी कार्य नहीं कर सकते हैं। त्रिवाङ्कोड और कोचिनका हिन्दूराज्य अंगरेजोंकी देखरेखमें परिचालित होता है। १८०८ ई०में उक्त राज्यके दोनों सामन्त विद्रोही हुए थे। विद्रोहदमनके बाद यहां और किसी प्रकारका उपद्रव नहीं हुआ। पदुकोटाके तोण्डिमान सरदारने दाक्षिणात्यके युद्धमें अङ्गरेजोंकी बड़ी सहायता की थी। तभीसे यह राज्य अंगरेजोंके साथ मित्रतासूत्रमें आवद्ध है। बङ्गनपल्ली और सन्दूर राज्य भी अंगरेजोंकी देखरेखमें परिचालित होता है। जयपुर, विजयनगरम्, पारला, किमेदी, पिट्टपुर, वेङ्कटगिरि, रामनाथ और शिवगङ्गा आदि स्वाधीन सामन्तराज्य तो नहीं हैं, पर प्रत्येकको एक विस्तृत जमींदारी कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं।

इस प्रेसिडेन्सीमें गञ्जाम, विशाखपत्तन, गोदावरी, कृष्णा, नेल्लूर, कड़ापा, कर्नूल, बेल्लरी, अनन्तपुर, चेङ्गलपत, उत्तर और दक्षिण अर्काट, तञ्जोर, त्रिचिनपल्ली, मदुरा, तिन्नेवल्ली, सालेम, कोयम्बतोर, नीलगिरी, मलवार, दक्षिणकनाड़ा और मान्द्राज शहर नामक २२ जिला; त्रिवांकुड़, कोचिन, बङ्गनपल्ली, पदुकोटा और सन्दूर नामक पांच सामन्त राज्य तथा गञ्जाम, विशाखपत्तन और गोदावरीका एजेन्सी विभाग है।

प्रसिडेन्सीकी जनसंख्या ४१४०००००० है। इनमें निम्बुरी ब्राह्मण और क्षत्रियगण उच्च श्रेणीके हैं। अलावा इसके शेठी, मारवाड़ी, आदि वैश्यगण मध्य श्रेणी तथा वेलमा, बेल्लालर, नायर, नड़वर, इदैयर, गुल्ला, नायक, कोनकन, कुशावन, माला, होलिया, पलियार, माप्पिला, शबर, तोड़ा, कुरुचर, बुड़ार, लंबडि आदि नाना शूद्र और अनार्य जातिका वास है। वे लोग साधारणतः तामिल, तेलगू, मलयालम, कनाड़ी,

तेलुगु और मराठी भाषामें बोलचाल करते हैं। द्राविडीय अनार्य जातिमें बहुतेरे हिन्दू वा बौद्धधर्मको ग्रहण कर बहुत कुछ हिन्दू जैसे आचारसम्पन्न हो गये हैं। हिन्दू-मात्र ही शैव वा वैष्णव हैं। पहाडी जातिमेंसे अधिकांश लिङ्गायत हैं। यहां बहुत पहलेसे ही ईसाधर्मका प्रचार चला आ रहा है। यहांके सिरीय मिसनरियोंका कहना है, कि एपसल सेण्ट टामससे यहां ईसाधर्मका प्रचार हुआ। कोचीनमें प्राप्त एक आसिरीय भाषामें लिखित ८वीं शताब्दीका वाइविल ग्रन्थ केम्ब्रिजके फिटज विलियम लाइब्रेरीमें रखा हुआ है। लिटल माउण्ट नामक पहाड़ परके प्राचीन गिरजेमें जो पह्लवी भाषामें उत्कीर्ण एक शिलालिपि पाई गई है उससे मालूम होता है, कि मनिकीय वा नेष्टोरिय ईसाइयोंने कई शताब्दी पहलेसे यहां उपनिवेश बसा रखा था।

महात्मा फ्रान्सिस जेभियर, नाविलियस, वेसकी, स्कार्टिज, जिनिकी, स्कूलटज, सटोनियस, ओफाविक्रम आदि प्रसिद्ध धर्मप्रचारकोंके यत्नसे यहां ईसाधर्मका विशेष प्रचार हुआ था। लूथर मतानुयायी दिनेमारगण १७२८ ई०में तथा अंगरेज १८१४ ई०में यहां पहले पहल धर्मप्रचारार्थ पहुंचे थे। पीछे विभिन्न साम्प्रदायिक स्काच, अमेरिकन और अंगरेजमिसनरी आये।

धान सरसों आदि अनाजोंके सिवा यहां अंगरेज कर्मचारियोंके यत्नसे काफी, चाय, तमाकू, सिनकोने आदिकी खेती होती है। १८६५ ई०में सैदापेट नगरमें गवर्मेण्टकी आढत खोली गई। यहां कृषिकार्यकी उन्नतिके लिये कृषिविद्याकी शिक्षा दी जाती है।

१८७५-७६ ई०में अनावृष्टिके कारण प्रेसिडेन्सी भरमें दुर्भिक्ष पड़ा था। १८७७ ई०में कृष्णानदीके किनारेसे कुमारिका अन्तरीप तकके सभी जिलोंमें दुर्भिक्षका प्रबल प्रकोप दिखाई दिया था। तुङ्गभद्राके दक्षिण बेल्लारी, अनन्तपुर, कर्नूल, कड़ापा, नेल्लूर, उत्तर अर्काट और सलेम जिलेमें दुर्भिक्ष राक्षसने पैशाचिक प्रतिमूर्त्ति धारण कर बीभत्स नृत्य किया था। इस दुर्भिक्षसे सैकड़ों मनुष्य अनाहार यमलोकको सिधारे थे।

जलाभाव दूर करनेके लिये अंगरेजोंने नदी आदिसे नहर काट निकाली। पीछे १८८३ ई०में पेल्लूर, श्रीवैकुण्ठ, सङ्गम, पलार और पेलन्तोरई नामक बांध तथा कृष्णा, कावेरी और कर्नूलकी विस्तृत नहर काटी गई। अलावा इसके डेमरम्बकम और वरुडकी दिग्गी भी स्थानीय लोगोंके उपकारार्थ बनाई गई थी।

अनाजको छोड़ कर यहां नील, कहवा, सिनकोना और लवण तय्यार किया जाता है। मछलीपत्तन, मान्द्राज और मङ्गलूरमें सूतीके अच्छे अच्छे कपड़े बनते हैं। वाणिज्यकी सुविधाके लिये यहां रेलवे लाइन तमाम दौड़ गई है। पहले जहाज द्वारा मान्द्राजका वाणिज्य-व्यवसाय बङ्गालके साथ चलता था। अभी इष्टकोष्ट, साउथ इण्डियन, महिसुरस्टेट, नीलगिरि रीघी, मराठा-सिसटम, मङ्गलूर-गुन्टो आदि रेलवे लाइनके खुल जानेसे यहांका पण्यद्रव्य कलकत्ता, बम्बई आदि भारतको विभिन्न राजधानीमें भेजा जाता है।

१६३९ ई०में अंगरेज सौदागरोंकी कोठी जब तक नहीं खोली गई थी, तब तक मान्द्राज यवद्वीपके बण्टम-के कार्याध्यक्षोंके अधीन था। १६५३ ई०में मिः आरन वेकर यहांकी कोठीके अध्यक्ष थे। उसी साल जब मान्द्राज प्रेसिडेन्सी रूपमें गिना जाने लगा, तब वेकर साहब यहांके प्रथम गवर्नर नियुक्त हुए। १६५८ से १६८१ ई० तक बङ्गालकी कोठी मान्द्राजके अधीन थी। नवाब सिराजुद्दौलाको अन्धकूपहत्याके समय क्लाइव और वाटसन मान्द्राजसे कलकत्ते आये थे।

मान्द्राज जबसे अंगरेजोंके अधिकारमें आया, तबसे जिन सब अंगरेज लाटोंने यहांका शासन किया था उनके नाम नीचे दिये गये हैं।

१ आरन वेकर	१६५३	ई० सन्
२ टामस् चेम्बर	१६५६	,,
३ एडवर्ड विण्टर	१६६१	,,
४ जार्ज फक्सक्रफट्	१६६८	,,
५ विलियम लैंहरन	१६७०	,,
६ ष्ट्रीन्साम माष्टर	१६७८	,,
७ विलियम गिफोर्ड	१६८१	,,
८ एलिहु एल	१६८७	,,
९ नाथानिएल हिगिन्सन्	१६९२	,,
१० टमास् पिट्	१६९८	,,

११	गाल्ष्टन् एडिसन	१७०६ ई० सन्
१२	एडमण्ड मण्टेग	१७०६ "
१३	विलियम फ्रेजर	१७०६ "
१४	एडवड हारिसन	१७११ "
१५	योसेफ कोलेट	१७१७ "
१६	फ्रान्सिस् हेष्टिंस	१७२० "
१७	नाथानिएल एलविच	१७२१ "
१८	जेमस् मैक्रे	१७२५ "
१९	जार्ज मर्टन पिट्	१७३० "
२०	रिचार्ड वेन्‌योन्	१७३५ "
२१	निकोलस मर्स	१७४३ "

१७४६ ई०की १०वीं सितम्बरको मान्द्राज फरासियों-के अधिकारमें आया और फोर्ट सेण्ट डेभिडके सहकारी शासनकर्त्ता मिः जान हिण्डे कुछ समयके लिये यहांके शासनकर्त्ता नियुक्त हुए।

२२	चार्ल्स फ्लोयर	१७४७ ई० सन्
२३	टामस सण्डार्स	१७५० "

आइला-सापलेकी सन्धिके बाद मान्द्राज अंगरेजों-को लौटा देने पर भी उसके चार वर्ष बाद अर्थात् १७५२ ई०की ५वीं अप्रैलको मान्द्राज नगरमें अंगरेज गवर्मेण्ट-का राजपाट प्रतिष्ठित हुआ था।

२४	लार्ड पिगट	१७५५ ई० सन्
२५	राबर्ट पल्क	१७६३ "
२६	चार्ल्स बुर्कियर	१७६७ "
२७	जोसिया डु प्रे	१७७० "
२८	अलेकसन्दर विञ्च	१७७३ "
२९	लार्ड पिगट (२य वार)	१७७५ "
३०	जार्ज ष्ट्राटन	१७७६ "
३१	जनहोयाइहिल	१७७७ "
३२	टामस् राम्बोल्ट	१७७८ "
३३	जान होयाइहिल (२य वार)	१७८० "
३४	चार्ल्स स्मिथ	१७८० "
३५	लार्ड माकार्टन	१७८१ "
३६	अलेकसन्दर डेभिड्सन	१७८५ "
३७	आर्किवल्ड काम्बेल K. B.	१७८६ "
३८	जान हालण्ड	१७८९ "
३९	एडवर्ड हालण्ड	१७९० ई० सन्
४०	मेजर जेनरल विलियम मिडोज्	१७९० "
४१	चार्ल्स और केलि	१७९२ "
४२	लार्ड होवर्ट	१७९४ "
४३	सेनाध्यक्ष जार्ज हारिस्	१७९८ "
४४	लार्ड क्लाइव	१७९८ "
४५	लार्ड विलियम वेण्टिङ्क	१८०३ "
४६	विलियम पेट्रि	१८०७ "
४७	जार्ज हिलारो वार्लो K. B.	१८०७ "
४८	सेनाध्यक्ष जान एवारकम्बि	१८१३ "
४९	राइट आनरेवल होग एलियट	१८१४ "
५०	टामस मन्‌रो *K, C, B,*	१८२० "
५१	हेन्‌रि सुल्तान ग्रोमि	१८२७ "
५२	ष्टिफेन राम्बोल्ट लुसिंटन	१८२७ "
५३	फ्रेडरिक् एडम *K C, B,*	१८३२ "
५४	जार्ज एडवार्ड रसेल	१८३७ "
५५	लार्ड एलफिष्टन्	१८३७ "
५६	मार्किस् आव् टुइडडेल *C, B,*	१८४२ "
५७	हेनरी डिकिन्सन	१८४८ "
५८	हेनरी पटिञ्जर G. C. B.	१८४८ "
५९	दानियल एलियट	१८५४ "
६०	लार्ड हेरिस	१८५४ "
६१	चार्ल्स एडवर्ड ट्रिभेलियन *K, C, B,*	१८५९ "
६२	विलियम आम्ब्रोज मोरहेड	१८६० "
६३	हेनरी जार्ज वार्ड G C,M G	१८६० "
६४	विलियम आम्ब्रोज मोरहेड (२य वार)	१८६० "
६५	विलियम टामस् डेनिसन *K C, B*	१८६१ "
६६	एडवर्ड मल्टवि	१८६३ "
६७	लार्ड नेपियर आव मार्चिष्टोन	१८६६ "
६८	अलेकसन्दर जान आर्बुथनाट *C S, I,*	१८७२ "
६९	लार्ड होवर्ट	१८७२ "
७०	विलियम रोज राविन्सन	१८७५ "

७१ ड्यूक आव वार्किंहम और चान्दोस्	१८७५	ई० सन्
७२ राइट् आनरेबल विलियम पाट्रिक आदम	१८८०	"
७३ विलियम हाड्लष्टन C.S I.	१८८१	"
७४ मनष्टुयार्ट एलफिष्टन ग्राण्टडाफ् C. I E.	१८८१	"
७५ आर बुर्क	१८८६	"
७६ गार्डिन् C. S I.	१८६०	"
७७ लार्ड विये‍नलक	१८६१	"
७८ सर ए, इ, हावूलक्	१८६६	"
७६ लार्ड एमथिल	१६००	"
८० जेम्स टामसन	१६०४	"
८१ गावरिल ष्टोक्स	१६०६	"
८२ सर आरथर लावली	१६०६	"
	(अस्थायी)	
८३ सर टामस डेविड-गिवसोन कारमाइकेल	१६११	"
८४ सर मुरे हैम्मिक	१६१२	"
	(अस्थायी)	
८५ राइट आनरेब्ल वेरन पेण्टलैंण्ड	१६१६	"
८६ सर ए. जी. कारड्	१६१६	"
	(अस्थायी)	
८७ राइट आनरेब्ल वैरन विलिङ्गडन	१६१६	"
८८ सर सी. टोड हण्टर	१६२४	"
	(अस्थायी)	
८६ भाय-काउण्ट गोसेन	१६२४	"

१८२२ ई०में सबसे पहले सर टामस मनरोने विद्या-शिक्षाकी ओर विशेष ध्यान दिया। १८२६ ई०में १४ कलक्टरेट और ८१ तालुक स्कूल खोले गये। १७४० ई०में लार्ड एलेनवराने एक युनिवर्सीटी बोर्ड स्थापित किया और तदनुसार हाई स्कूल तथा कालेज खोले गये। बादमें राजमहेन्द्रीके सब कलक्टर मि. जी एन टायलरने वर्णा-क्युलरकी उन्नतिके लिये नरसापुर तथा आस पासके तीन शहरोंमें एलिमेण्ट्री स्कूल खोले। १८५५ ई०में लोकल वोर्डकी देखरेखमें दो चार गाँवके बीचमें छोटे छोटे बच्चोंके लिये पाठशाला खोली गई। इस प्रकार दिनों दिन विद्याशिक्षाकी उन्नति होती गई। अभी सैकड़ों प्राइमरी, मिडिल और सेकेण्ड्री स्कूल, ६०० वालिका स्कूल तथा कितने ही हाई स्कूल, ५० कालेज, नीति, चिकित्सा, खनिजतत्त्वपूतविद्या (Engineering) कालेज, सैदापेट और राजमन्द्रीमें २ सरकारी ट्रेनिंग कालेज और ५५ शिल्पकालेज है। १८५७ ई०मे मांद्राज-विश्वविद्यालय स्थापित हुआ। मुसलमान लड़कोंके पढ़नेके भी स्वतन्त्र स्कूल और कालेज हैं। इनमें आर-कटके नवाव द्वारा १८५१ ई०में स्थापित मदरसा इ-आजम, मैलापुर मिडिल और हारिस स्कूल, १८७२ ई०में स्थापित एलिमेण्ड्री स्कूल प्रधान है। स्कूलके अलावा कितने अस्पताल और चिकित्सालय हैं। प्रेसिडेन्सी भरमें ८६०१ सेना हैं जिनमे २७३१ गोरे और ५८७० देशी हैं। आवहवा कुल मिला कर अच्छी है। यहा गरम वहुत और जाड़ा कम पडता है।

२ उक्त प्रेसिडेन्सीका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० १३° ४' उ० तथा देशा० ८०° १५' पू० वङ्गालकी खाड़ीके किनारे अवस्थित है। इस नगरकी नामनिरुक्तिके सम्बन्धमें विभिन्न मत देखा जाता है। कोई कोई मण्डराज वा मण्डलराज शब्दसे, कोई माद्रासा शब्दसे मान्द्राज नामोत्पत्तिकी कल्पना करते हैं। फिर कोई कोई महाभारतोक्त मद्र या माद्रदेशसे इस नामकी उत्पत्ति वतलाते हैं। नायक-सरदार चेन्नप्पोके नामसे इसका चेन्नपत्तन नाम हुआ है। उस समय लोग इसे मान्द्राजपत्तन भी कहते थे।

१६३६ ई०में अरमागाँव कोठीके अध्यक्ष मि० फ्रान्सिस डेको विजयनगरराजवंशावतंस चन्द्रगिरिके अधिपति श्रीरङ्गराय लूसे वाणिज्य करनेके लिये जो भूमि मिली थी उसीके ऊपर वर्त्तमान मान्द्राज शहर वसा हुआ है। भूमि पा कर अंगरेज सौदागरोंने एक कोठी खोली और उसे सुरक्षित करनेके लिये चारों ओर दीवार खड़ी कर दी। तभीसे उस दीवारके वहिर्भागमें देशीय लोग वस गये।

१६५३ ई० तक यह वाण्टामके अध्यक्षके अधीन

रहा। १७०२ ई०मे सम्राट् औरङ्गजेवके सेनापति दाऊद खाँने वर्षों इस नगरको घेरे रखा। १७४१ ई०में मरहठोंने मान्द्राज पर आक्रमण किया सही, पर कृतकार्य न हुए। १७४३ ई०मे मान्द्राज दुर्गका संस्कार और आयतन परिवर्द्धित किया गया।

दाऊद खाँके आक्रमणसे पहले ही अंगरेज सौदागरोंने १६८४ ई०में नगरको दीवारसे घेरनेके लिये प्रजासे कर उगाहना शुरू कर दिया था। इस अयथा करसे वहांके सभी लोग विरक्त हो कर वागी हो गये। १६६० ई०में प्रजाको मुगलसेनापतिके आगमनकी आशङ्का सूचित कर राजी कर लिया और कर उगाहने लगे। उस करसे ब्लाक टाउन नगरका वहिर्भाग मिट्टीकी दीवारसे घेर दिया गया। १७०२ ई०मे मुगलसेनाके हाथसे आत्मरक्षार्थ उस प्राचीरको दृढ़ करनेके लिये फिरसे कर उगाहा गया। उसके फलसे नगरके उत्तरी और पश्चिमी भागमे पक्केकी दीवार खड़ी की गई और उसमे ११ वुर्ज दिये गये। आज भी वह ध्वंसावशिष्ट प्राचीर दिखाई देता है।

१७४६ ई०में फरासी सेनापति ला-वोर्डोने गोला वरसा कर दुर्गको दखल किया। उसके दो वर्ष वाद आइलासापलेकी सन्धिके अनुसार मान्द्राज दुर्ग अंगरेजोंके हाथ आने पर भी १७५२ ई० तक उन्हें यहांका शासन-भार नहीं मिला। १७५८ ई०में फरासी-सेनापति लालीने फिरसे ब्लाक टाउन और दुर्गमे घेरा डाला। ऐतिहासिक अर्मिने इस अवरोधका प्रकृत विवरण अपने ग्रन्थमें नहीं लिखा है। १७६६ और १७८० ई०मे हैदर-सेनाके मान्द्राज-आक्रमणके सिवा फरासी-अवरोधके वाद इस नगरमे और कोई भी वाहरी शत्रु घुसने नही पाया।

सेण्टथोमो नगर अभी मान्द्राज नगरके अन्तर्भुक्त है। उस नगरको १५०४ ई०में पुर्त्तगीज सौदागरोंने वसाया और दुर्गसे सुरक्षित किया था। १६७२-७४ ई० तक वह फरासियोंके दखलमें रहा। १६६८ ई०में जुलफकर खाँने इस स्थानको लूटा। १७४६ ई०मे अङ्गरेज वणिकोंने उसे अधिकार कर फरासी-धर्मयाजकोंको यहांसे मार भगाया।

मान्द्राज नगर साधारणतः दो भागोंमें विभक्त है। १ला ब्लाक टाउन वा देशीय लोगोंकी वासभूमि। यह कूम नदीके उत्तरी किनारे अवस्थित है। इसके समुद्र तट पर वाणिज्यपोतरक्षाके लिये एक वन्दर खोला गया है। यहां वैंक, कष्टम हाउस, हाई-कोर्ट और सौदागरी आफिस विद्यमान है। २रा ह्वाइट टाउन—१६३६ ई०में मि० डे द्वारा फोर्ट सेण्ट जार्ज, अंगरेज सौदागरोंकी कोठी तथा वासभवन जहां प्रतिष्ठित हुए थे वही स्थान ह्वाइट टाउन कहलाता है। इस भागमे विशेषतः अंगरेजोंका वास है।

यहांकी अट्टालिकाओं, कैथिड्राल, स्काच कार्फ, गवर्मेण्ट-प्रासाद, पाटचिपा हाल, मेमोरियल हाल, सीनेट हाउस, कर्णाटक नवावके चेपाक प्रासाद आदि देखने लायक है। मान्द्राजका सेण्ट मेरी गिर्जा भारतमें ईसा धर्म मन्दिरकी प्रथम प्रतिष्ठा है। १६७८ ई०से ले कर १७८० ई०में उसका निर्माणकार्य शेष हुआ। इस सर्वप्रधान ईसाधर्म मन्दिरसें धर्मयाचक स्क्वार्टज तथा सर टामस मनरो, सर हेनरी वोर्ड, लार्ड होवार्ड आदि शासनकर्त्ताओके मकवरे हैं।

यहां १७४६, १७८२, १८०७, १८११, १८७२, १८७४, १८७७ और १८८१, १६००, १६११, १६१८, १६२४, ई०में भयानक तूफान आया था। उस तूफानसे सैकड़ों जहाज और नावें डूब गई थी, वहुतसे घर उड़ गये थे तथा कितने मनुष्य यमपुर सिधारे थे।

शहरकी जनसंख्या पांच लाखसे ऊपर है। अधिकांश लोगोंकी भाषा तामिल है। विद्या शिक्षामे यह प्रान्त वहुत वढ़ा चढ़ा है। अभी कुल मिला कर १० शिल्प कालेज, ३ व्यवसाय कालेज, ६७ सेकण्ड्री और ४२१ प्राइमरी स्कूल तथा २२ टेकनीकल और ट्रेनिंग स्कूल है। १८५१ ई०मे जादूघर स्थापित हुआ है। १८५५ ई०में चिड़ियाखाना (Zoological garden) खोल कर उसके साथ संलग्न कर दिया गया है। किलपौक नामक स्थानमे पागल खाना (Lunatic Asylum) है। अलावा इसके शहरमें ६ अस्पताल और ५ चिकित्सालय हैं।

मान्द्य (सं० क्ली०) मन्दस्य भावः कर्म वा मन्द (पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ४।१।१२८) इति यक्। १ रोग, बीमारी। २ मन्दता, आलस्य।

"विश्वस्ते च ततस्तस्मिन् पुरोधसि चकार सः।
मान्द्यमल्पतराहारकृशीकृत तनुर्मृषा॥"
(कथासरित् २४।१३५)

मान्धातापुर (सं० क्ली०) एक प्राचीन नगरका नाम।

मान्धातृ (सं० पु०) मां धास्यतीति धेट्-तृच्। राजा युवनाश्वके एक पुत्रका नाम।

इनकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें विष्णुपुराणमें लिखा है:—पुत्र न होनेके कारण सूर्यवंशीय राजा युवनाश्व संसार छोड़ मुनि लोगोंके आश्रममें वास करने लगे। कालक्रमसे मुनियोंने दयापरायण हो उनके पुत्रोत्पादनके लिये यज्ञ आरम्भ किया। आधी रातमें यज्ञ समाप्त होने पर मुनि लोग मंत्रपूत जलकलसको वेदीके बीच रख कर सो गये। ऋषियोंके सो जाने पर प्याससे अत्यन्त पीड़ित राजा युवनाश्वने मुनियोंको विना जगाये उस जलको पी लिया। पश्चात् नींद टूटने पर ऋषि लोगोंने पूछा, "किसने इस मन्त्रपूत जलको पीया है? इस जल को पी कर युवनाश्वकी पत्नी पुत्र प्रसव करेगी, यह जल उन्हींके लिये था।" ऋषियोंकी इस बातको सुन राजा युवनाश्वने कहा, 'मैंने विना जाने प्याससे पीड़ित हो इस जलको पीया है।'

इस मंत्रपूत जलके प्रभावसे राजा युवनाश्वके गर्भ रहा। समयके प्रभावसे वह गर्भ प्रतिदिन बढ़ने लगा। अनन्तर समय पा कर राजाके पेटके दाहिने भागको फाड कर एक लड़का निकला। लेकिन इससे राजाका कुछ भी अनिष्ट नहीं हुआ। पेट फाड कर लडकेके बाहर निकलने पर ऋषि लोग बोले, कि किसका स्तन पान कर यह लडका जीवित रहेगा? अनन्तर देवराज इन्द्रने वहां आ कर कहा, 'यह लडका मुझे धारण करेगा, अर्थात् मेरी सहायतासे जीवित रहेगा, इसी कारण इसका नाम 'मान्धाता' होगा।'

तब देवराज इन्द्रने लडकेके मुखमें अपनी तर्जनी अंगुली डाल दी। लडका अंगुलीको चूसने लगा। इस अमृतस्राविणी अंगुलीको पा कर वह एक ही दिनमें बढ़ गया। इसी बालक मान्धाताने चक्रवर्त्ती राजा हो सप्तद्वीपा पृथ्वीका भोग किया था। इनके सम्बन्धमें एक श्लोक यों है—

"यावत् सूर्य उदेति स्म यावच्च प्रतितिष्ठति।
सर्वं तत् यौवनाश्वस्य मान्धातुः क्षेत्रमुच्यते॥"
(विष्णुपु० ४।२ अ०)

सूर्यदेव जहांसे उदय होते और जहां अस्त होते हैं उसके बीचका समस्त स्थल ही युवनाश्ववंशीय राजा मान्धाताका क्षेत्र था।

मान्धाताने शशविन्दुकी कन्या बिन्दुमतीसे विवाह किया और उसके गर्भसे पुरुकुत्स, अम्बरीष और मुचुकुन्द नामके तीन लडके और पचास कन्याएं उत्पन्न हुईं। (विष्णुपु० ४।२ अ०)

मान्धात्र (सं० त्रि०) १ मान्धातृ-सम्बन्धीय। (पु०) २ मान्धाताका वंशधर।

मान्धोद (सं० पु०) मन्धोदका गोत्रापत्य।

मान्मथ (सं० त्रि०) मन्मथ-सम्बन्धीय, मन्मथका।

मान्य (सं० त्रि०) मान्यत इति मान-कर्मणि ण्यत्। १ अर्च्य, पूजनीय, सम्मानके योग्य। पर्याय—पूज्य, प्रतीक्ष्य, भगवान्, भट्टारक। २ प्रार्थनीय।

'यथा वै भरतो मान्यस्तथा भूयोऽपि राघवः।
कौशल्यातोऽतिरिक्तञ्च मम शुश्रूषते बहु॥" (रामायण)

३ विष्णु। ४ शिव, महादेव। ५ मैत्रावरुण।

मान्यत्व (सं० क्ली०) मानस्य भावः त्व। पूज्यत्व, मान्यका भाव या धर्म, सम्मान या पूजा।

मान्यमान (सं० पु०) मन्यमानका गोत्रापत्य।

मान्यमान (हिं० पु०) अतिशय सम्मानयोग्य।

मान्यव (सं० त्रि०) मन्युसम्बन्धीय।

मान्यवती (सं० स्त्री०) १ माननीया, वह स्त्री जो सम्मानके योग्य हो। २ राजकन्याभेद।

मान्यस्थान (सं० क्ली०) मानस्य स्थानं। पूज्यत्वकारण, आदर या मानका कारण।

"वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पञ्चमी।
एतानि मान्यस्थानानि गरीयो यद्यदुत्तरम्॥

पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भूयांसि गुणवन्ति च।
यत्र स्युः सोऽत्र मानार्हः शूद्रोऽपि दशमीं गतः॥"

(मनु २ अ०)

धन, सुहृद्, वयस, कर्म और विद्या ये पांच पूज्यस्थान अर्थात् पूजाके प्रति कारण हैं। जो उक्त गुणसे सम्पन्न हैं वही पूजनीय हैं। इन पांचोंमें विद्या ही सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है।

मान्या (सं० स्त्री०) मान्य स्त्रियां टाप्। १ पूजनीया। २ मरुन्माला, असवर्ग।

माप (हिं० स्त्री०) १ मापनेकी क्रिया या भाव, नाप। २ परिमाण। ३ वह मान जिससे कोई पदार्थ मापा जाय, अहंडा, मान।

मापक (सं० पु०) १ मान, माप। २ वह जो मापता हो। ३ वह जिससे कुछ मापा जाय, मापनेकी चीज।

मापत्य (सं० पु०) मा विद्यते अपत्यमस्य। कामदेव।

मापन (सं० पु०) मापयति स्वर्णादिकमनेनेति मा-णिच्-करणे ल्युट्। १ तुल, नाप। २ परिमाण, तौलना। मापना देखो।

मापना (हिं० क्रि०) १ किसी पदार्थके विस्तार, आयत वा वर्गत्व और घनत्वका किसी नियत मानसे परिमाण करना, नापना। २ पदार्थके परिमाणको जाननेके लिये कोई क्रिया करना, नापना। ३ किसी मान वा पैमानेमें भर कर द्रव वा चूर्ण वा अन्नादि पदार्थोंका नापना। ४ मतवाला होना।

मापिल्ला—मलवार उपकूलवासी मुसलमान धर्मावलम्बी जातिविशेष। मलयालम् प्रदेशके अधिवासियोंने मुसलमान संस्रवमें आ कर इस्लामधर्म ग्रहण किया। धीरे धीरे उन्हीं सब लोगोंसे हिन्दूभावापन्न मुसलमान-समाज संगठित हुआ। कोल्लनूरके राजा इसी सम्प्रदायके अन्तर्भुक्त हैं तथा मापिल्लासमाजके प्रधान व्यक्ति समझे जाते हैं।

मलवार, त्रिवांकुड और कनाडा प्रदेशमें ही इनकी संख्या अधिक है। ये लोग अध्यवसायशील, कर्मक्षम और वर्द्धिष्णु, वलिष्ठ और सुडौल होते हैं। अभी इनमें से बहुतेरे शिक्षित हो गये हैं। इन लोगोंके जैसे परिश्रमी और किसी भी जातिके लोग भारतवर्षमें दिखाई नहीं देते।

मापिल्ला शब्दका अर्थ है मा का पिल्ला वा माताका पुत्र। ९१६ ई०में आवुजेदने लिखा है, कि मलवार उपकूलवासिनी स्वेच्छाविहारिणी उच्छृङ्खलप्रकृतिकी रमणियों और अरबी नाविकोंके संयोगसे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है। फिर कोई कोई अरबी रमणी और समुद्रगामी मुसलमान वणिकोंके संयोगसे इस जातिकी उत्पत्ति बतलाते हैं।

इनमें अधिकांश ही धीवर जातिके हैं। स्वयं कोल्लनूरके राजा इसी धीवरवंशसे उत्पन्न हुए हैं। समुद्रपथमें लूटना, अरबके साथ वाणिज्य तथा देशीय धीवरोंको अरबी धर्ममतमें दीक्षा देना ही इनका प्रधान कर्म है। यूरोपीय वणिक् सम्प्रदाय जब करमण्डल उपकूलमें पहुंचा तब कालिकटके सामरिराजने विदेशीसे उपकूल भागकी रक्षा करनेके लिये हजारों मनुष्योंको इस धर्ममें दीक्षित किया। अनिच्छा रहते हुए भी उन्हें बलपूर्वक गोमांस खिलाया गया था। पीछे वे लोग हिन्दूसमाजमें नहीं लिये गये। अभी वे लोग सम्पूर्णरूपसे मुसलमान न हो कर हिन्दू जातिके ही एक परित्यक्त थोकरूपमें गिने जाते हैं।

ये लोग स्वभावतः मूर्ख, वलिष्ठ और कर्मठ होते हैं। साहसिकतामें इनकी अच्छी प्रसिद्धि है।

उत्तर मलवारके मापिल्लोंने हिन्दू अभ्युदयके समयसे किसी किसी अंशमें हिन्दूभावको अवलम्बन किया है। ये लोग विधवा भौजाईसे सगाई करते हैं। इनमें योनाकेन वा यवन-मापिल्ला तथा नम्बुरिन वा नायरिन् मापिल्ला नामक दो विभाग देखे जाते हैं। पहला विभाग ग्रीक आदि जातिके संस्रवसे और दूसरा देशीय ईसाई आदिसे उत्पन्न हुआ है। दक्षिण पूर्वाञ्चलमें ये अरबी भाषामें बोलचाल करते हैं।

ये लोग मूंछ दाढ़ी रखते और सिरके बाल छ्रवाते हैं। सभी मस्तक पर टोपी पहनते हैं। जो धनी हैं वे पगड़ी धारण करते हैं। पगड़ीमें सोने चांदीका काम किया हुआ रहता है। ये लोग स्वभावतः परिष्कार परिच्छन्न हैं। स्त्रियां सफेद और नीले रंगकी साड़ी पहनती हैं। उत्सवादिमें वे अपनेको अच्छी तरह सजाती

हैं। इनमें पीतल, तांबे और चांदीके गहनोंका ही अधिकतर व्यवहार देखा जाता है।

उत्तर-मलवारमें इन लोगोंके मध्य अरबी भाषा तथा मलवारमें प्राचीन तामिल-भाषा प्रचलित है। धर्मविषयमें इनका उत्साह बहुत प्रबल देखा जाता है। भूमिसंक्रान्त विवाद ले कर जब कभी ये हिन्दुओंके साथ दंगा करते हैं, तब विशेषतः छुरोंको ही काममें लाते हैं।

तहफत् मुजाहिदीन नामक १६वीं सदीमें प्रकाशित ग्रन्थमें लिखा है, 'राजा चेरमान पेरुमलने इस्लामधर्म ग्रहण कर मक्काकी यात्रा की। अरबके सफहाई नगरमें उनकी मृत्यु हुई। मरनेसे पहले वे देशी सरदारोंको इस्लामधर्मकी प्रकृष्टताका उल्लेख करते हुए कई एक पत्र लिख गये। उस पत्रको ले कर मालिक इबन् दिनाई मलवार-उपकूलमें पहुंचे। देशीय सरदारोंने उनका अच्छा सम्मान किया। सरदारोंकी सहायतासे उत्साहित मुसलमानोंने पहले पेरुमलकी राजधानी कोडङ्गनूरमें मसजिद बनवाई। इस प्रकार धीरे धीरे त्रिवाङ्कुडके अन्तर्गत कोल्लन नगरमें, डिल्लीपर्वतमें, दक्षिण कनाडाके अन्तर्गत बरकुर और मङ्गलूर नगरमे, जैफत्तन (वर्त्तमान-नाम सुरुकुण्डपुरम्, इबन बतुताने १३ सदीमें इस मसजिदका उल्लेख किया है) नगरमें, तल्लीचेरीके अन्तर्गत धर्मपत्तन नगरमें तथा पन्थारिणी और बेपुर रेल टार्मिनसके समीप चालियम नगरमें बहुतसी मसजिद बनवाई गई। मसजिद बनवानेके साथ ही साथ इस देशमें मुसलमानी प्रभाव फैला था, इसमें सन्देह नहीं। उन सब मसजिदोंके खर्च वर्चके लिये सम्पत्ति भी दी गई थी।'

विदेशीय वाणिज्यकी उन्नतिके लिये सामरिराजने मुसलमानोंके प्रति विशेष सौजन्यता दिखलाई थी। इस समय उपकूलवासी मुसलमानों और इस्लामधर्ममें दीक्षित देशी अधिवासियोंकी संख्या बहुत बढ़ गई थी। धीरे धीरे राज्य भरमें उनकी तूती बोलने लगी। इस समय वाणिज्य-प्रयासी बहुतसे हिन्दुओंने समुद्रपथसे वाणिज्य व्यवसायमें लाभ उठानेकी आशासे हिन्दूशास्त्र-के कठोर नियमोंको परित्याग कर इस्लामधर्मका आश्रय लिया था।

ओलन्दाज वणिकोंके १६वीं और १७वीं शताब्दी-के विवरणमें लिखा है, कि पुर्त्तगीज नाविकोंके साथ वाणिज्य व्यापारमें बराबरी करनेके लिये सामरिराजने देशी लोगोंको इस्लामधर्ममें दीक्षित किया था। इस प्रकार मापिल्ला जाति धीरे धीरे मलवार उपकूलमें फैल गई। इन्होंने कायिक परिश्रमसे देशका बहुत उपकार किया था।

धर्मान्धतासे उन्मत हो इन्होंने १८४६ ई०में माञ्जरी-के मन्दिरमें घेरा डाल कर ब्राह्मण पुरोहितको मार डाला। इनका दमन करनेके लिये मान्द्राजसे पदातिक सेना भेजी गई थी। पीछे कनानूरसे ६४ नम्बर पल्टनने जा कर इन्हें परास्त किया था। ६४ मापिल्ले अदम्य उत्साहसे युद्ध करके अतुल विक्रम तथा रण नैपुण्य दिखलाते हुए रणक्षेत्रमें खेत रहे। १८५१ ई०में धर्मान्धतासे उन्मत्त हो उन्होंने फिरसे हिन्दुओंकी हत्या की। पीछे मान्द्राजसे सेनाने आ कर उनका अच्छी तरह दमन किया। अनन्तर बीच बीचमें हिन्दुओंके साथ इनका बहुत बार विप्लव खड़ा हुआ है।

माफ (अ० वि०) जो क्षमा कर दिया गया हो, क्षमित।

माफकत (अ० स्त्री०) १ मुआफिक होनेका भाव, अनुकूलता। २ मेल, मैत्री।

माफजल खाँ (सैयद)—एक मुसलमान ऐतिहासिक। ये १७वीं शताब्दीमें विद्यमान थे। इनके बनाये "तारीख-इ माफजली" नामक इतिहासमें सृष्टिके प्रारम्भसे ईस्वी-सन् १६६६ तककी घटनावलि वर्णित है। किसी हस्त-लिखित पुस्तकमें फर्रुखसियरके राजत्वकाल तक लिपि-बद्ध है। समूची पुस्तक सात भागोंमें विभक्त है। छठे और ७वें भागमे भारतवर्षके बहुत-से विवरण हैं।

माफल (हिं० पु०) एक प्रकारका खट्टा नीबू।

माफिक (अ० वि०) १ अनुकूल, अनुसार। २ योग्य, लायक।

माफिकत (अ० स्त्री०) माफकत देखो।

माफी (अ० स्त्री०) १ क्षमा। २ वह भूमि जिसका कर सरकारसे माफ हो, बाध। ३ वह भूमि जो किसीको विना करके दी गई हो।

माफुज खां—कर्णाटकके नवाबका एक पुत्र। सन् १७४६ ई०में व्यापारकी प्रतिद्वन्द्विता ले कर अङ्गरेजों और फ्रासी सियोंमें परस्पर विवाद चल रहा था। उस समय फ्रान्सवालोंकी शक्ति अंगरेजोंकी अपेक्षा बढ़ी चढ़ी थी।

सन् १७४६ ई०में फरासीसियोंने मद्रास दखल कर लिया। यह सुनते ही, नवाबने अपने लड़के माफुज खाँको १०००० सेनाके साथ मद्रास उद्धार करनेके लिये भेजा। फरासीसियोंने झूठ मूठका बहाना कर चार सप्ताहका समय लिया। अन्तमें फरासीसियोंके अध्यक्ष डुप्लेने जिस किसी उपायसे मद्रासकी रक्षा करनेका संकल्प किया। तब नवाबकी आज्ञा पा माफुज मद्रास पर आक्रमण करनेके लिये आगे बढ़ा।

माफुजने नगरके सम्मुख भागमें आ कर पहले पीनेके जलस्रोतको बंद कर दिया। फरासीसी लोग गुप्त रीतिसे आत्मरक्षा करने लगे। अन्तमें माफुज फरासीसी सेनाके चारों ओर मिट्टीकी दीवार द्वारा व्यूह बनवाने लगा। जलके सभी मार्गोंके बंद होनेसे भारी विपत्ति झेलनी पड़ेगी यह सोच फरासीसी सेनापतिने एक रात चुपकेसे माफुजकी सेना पर प्रबल वेगसे गोला बरसना शुरू कर दिया। नवाबके सैनिक तोप चलानेमें उतने अभ्यस्त नही थे, इसीलिये वे पीछे हट गये।

माफुज वहांसे दो कोस पश्चिम पांडीचेरी और मद्रासके बीचमें छावनी डाल युद्धकी प्रतीक्षा करने लगा। मद्रासके फरासीसियोंकी सहायताके लिये पाण्डीचेरीसे ७०० सिपाही पाराडिस् नामक सेनापतिके अधीन भेजे गये थे। बीच हीमें माफुजने उन लोगोंका रास्ता रोक रखा।

मद्रासके प्रसिद्ध सेनापति डि-इस्प्रिमेनिल पाराडिस्के आनेकी खबर पा दूसरी ओरसे माफुज पर चढ़ाई करनेकी चेष्टा करने लगा। आदिया नदीके किनारे सेण्ट थोमिके पास माफुज और पाराडिस्की पहली भेंट हुई। माफुजने तोप, घुड़सवार पैदल सैनिक आदि १०००० दश हजार सेना ले पाराडिस्के मद्रास आनेका रास्ता रोक दिया। सेण्ट थोमिके पास घमसान युद्ध हुआ। माफुजकी सेना योग्य संचालकके विना शत्रुओंके गोला बरसानेसे छिन्न भिन्न हो पड़ी। उन लोगोंने हट कर पिया नगरमें आश्रय लिया और फरासीसियोंकी दूसरी चढ़ाई होने पर उनके पैर उखड़ गये। माफुज हाथी पर चढ़ भागा। इस प्रकार मुट्ठी भर फरासीसी सेनाने सुशिक्षा और साहसके प्रभावसे बहुसंख्यक नवाबकी सेनाको परास्त किया। इस युद्धसे लोगोंके मनमें भयका विशेष संचार हुआ। इसके पहले कोई यूरोपीय जाति भारतीय सेनाके साथ युद्धमें जय नहीं प्राप्त कर सकी थी। फरासीसी लोग युद्धमें जयी हो कर भविष्यत् भारत-साम्राज्यका स्वप्न देखने लगे।

माम (सं० पु०) १ मातुल, मामा। २ कृपण, कंजूस। (त्रि०) ३ मत्सम्बन्धी, मेरा।

माम (हिं० पु०) १ ममता, अहंकार। २ शक्ति, अधिकार।

मामक (सं० त्रि०) ममेदं अस्मद् (तवकममकावेकवचने। पा ४।३।३) इति अण्, ममकादेशश्च। १ मदीय, मत्सम्बन्धीय, मेरा। २ ममतायुक्त।

(पु०) मातुल, मामा। ४ कृपण, कंजूस।

मामकीन (सं० त्रि०) ममेदं अस्मद् (तवकममकावचने। पा ४।३३) इति खञ्, ममकादेशश्च। मदीय, मत्सम्बन्धीय, मेरा।

"एतच्च मे कियत् किं हि न बुध्या साधयाम्यहम्।
प्रज्ञानं मामकीनञ्च श्रूयतां वर्णयामि ते॥"

(कथासरित्सागर ३२।१४५)

मामता (हिं० स्त्री०) १ अपनापन, आत्मीयता। २ प्रेम, मुहब्बत।

मामतेय (सं० पु०) १ ममता पुत्र। "ये पायवोमामतेयं ते अग्ने" (ऋक् १।१४७।३) 'मामतेय ममतापुत्रं दीर्घतमसं' (सायण) २ ममतासम्बन्धीय।

मामन्द—अफगान जातिकी एक शाखा।

मामरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पेड़। यह हिमालयको तराईमें रावी नदीसे पूर्वकी ओर तथा मद्रास और मध्यभारतमें होता है। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत और चिकनी होती है जिस पर रोगन करनेसे बहुत अच्छी चमक आती है। इसकी लकड़ीसे मेज, कुर्सी, आलमारी आदि आरायशी चीजें बनाई जाती हैं। इसकी छाल

ओषधिके काममें आती है और जड सांपके काटनेकी ओषधि है। यह बीजोंसे उगता है। इसे चौरी और रूही भी कहते हैं।

मामलत (अ० स्त्री) १ मामला, व्यवहारकी बात। २ विवादास्पद विषय।

मामलति (अ० स्त्री०) मामलत देखो।

मामला (हिं० पु०) १ व्यापार, काम, धंधा। २ पारस्परिक व्यवहार। जैसे लेन, देन, क्रय विक्रय इत्यादि। ३ व्यावहारिक, व्यापारिक वा विवादास्पद विषय। ४ झगड़ा, विवाद। ५ मुकदमा। ६ पक्की या तै की हुई बात, कौल करार। ७ सुन्दर स्त्री, युवती। ८ प्रधान विषय, मुख्य बात। ९ संभोग, स्त्री-प्रसङ्ग।

मामल्लदेवी (सं० स्त्री०) नैषधके रचयिता श्रीहर्षकी माता।

मामल्लपुर—प्राचीन नगरभेद। महाबलिपुर देखो।

मामा (हिं० पु०) माताका भाई, बापका साला।

मामा (फा० स्त्री०) १ माता, मां। २ रोटी पकानेवाली स्त्री। ३ बुड्ढी स्त्री, बुढ़िया। ४ नौकरानी, लौंड़ी।

मामिडी (सं० पु०) एक प्राचीन ग्रन्थकार।

मामिला (अ० पु०) मामला देखो।

मामी (हिं० स्त्री०) मामाकी स्त्री, मांकी भौजाई।

मामी (सं० स्त्री०) आरोपको ध्यानमें न लाना, अपने दोष पर ध्यान न देना।

मामुखी (सं० स्त्री०) बौद्धोंके एक देवताका नाम।

मामूँ (हिं० पु०) माताका भाई, मामा।

मामूल (अ० पु०) १ टेव, लत। २ रीति, रवाज, परिपाटी। ३ वह धन जो किसीको रवाज आदिके कारण मिलता हो।

मामूली (अ० वि०) १ नियमित, नियत। २ सामान्य, साधारण।

माम्बिका (सं० स्त्री०) अम्बष्ठा, पाढ़ा।

माय (हिं० स्त्री०) १ माता, माँ। २ किसी बड़ी वा आदरणीय स्त्रीके लिये सम्बोधनका शब्द। ३ माया देखो। (अव्य०) ४ माहि देखो।

माय (सं० पु०) मायाऽस्यास्तीति माया-अर्शआदित्वादच्। १ पीताम्बर।

"नमो विश्वाय मायाय चिन्त्याचिन्त्याय वै नमः॥"

(भारत १३।२४।३११)

मयस्यापत्यं पुमान् मत्व-अण्। २ असुर।

मायक (सं० पु०) माया करनेवाला, मायावी।

मायक (हिं० पु०) मायका देखो।

मायका (हिं० पु०) नैहर, पीहर।

मायण (सं० पु०) वेदभाष्यकार सायणाचार्यके पिताका नाम।

मायदास—ग्रहकौस्तुभके प्रणेता।

मायन (हिं० पु०) १ वह दिन वा तिथि जिसमें मातृका-पूजन और पितृ-निमन्त्रण होता है। २ उपर्युक्त दिनका कृत्य, मातृका-पूजन या पितृनिमंत्रण आदि कार्य।

मायनी (अ० स्त्री०) अर्थ, मतलब।

मायनी (मैनी)—बम्बईप्रदेशके सतारा जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० १७° २६´ उ० तथा देशा० ७४° ३४´ पू०के मध्य अवस्थित है। म्युनिसिपलिटीके अधीन रह कर इस नगरकी दिनों दिन उन्नति होती जा रही है।

मायरा—बङ्गालकी हलवाईकी एक जाति। इस जातिके मिठाई बना कर बेचना ही इनका जातीय व्यवसाय है। ये लोग कहीं कहीं मोदक वा कुड़ी भी कहलाते हैं। ढाकाके मायरामें पाटिया और दोपारिया नामक दो थोक तथा मध्य बङ्गालके मायरामें राढ़ाश्रम, मधुराश्रम, अजाश्रम और धर्माश्रम वा धर्मसुत नामक चार थोक देखे जाते हैं।

विवाहमें भी दोनों श्रेणीमें पृथकता देखी जाती है। सगोत्र विवाह निषिद्ध है। विवाहमें विशेषतः ये लोग अपने आचरणादिका ही अनुसरण करते हैं, शास्त्रविहित नियमोंका कम पालन करते हैं।

इन लोगोंके अकसर बालिका-विवाह ही होता है। कहीं कहीं सयानी लडकी ब्याही जाती है। समाजमें इसका कोई दोष नहीं समझा जाता है। उच्चश्रेणीके हिन्दू जैसा सम्प्रदान और सिन्दूरदान ही विवाहका प्रधान अङ्ग है।

ये लोग कट्टर हिन्दू हैं। अधिकांश वैष्णव धर्मावलम्बी हैं। हिन्दूके सभी देवताओंके प्रति इनकी विशेष भक्ति है। ये लोग काली, दुर्गा आदि शक्तिपूजा भी

करते हैं। जाड़ा ऋतुके बाद बिना गणेशकी पूजा किये ये कभी भी गुड़की मिठाई नहीं बनाते हैं।

मृतदेहको अन्त्येष्टि क्रिया होनेके बाद कोई कोई भस्म या नाभि ले कर गङ्गामें फेंकता है। ३० दिन तक अशौच रहता है। ३१वें दिन श्राद्ध तथा ब्राह्मणादि भोजन करा कर शुद्ध होते हैं।

मायल (फा० वि०) १ प्रवृत्त, झुका हुआ। २ मिश्रित, मिला हुआ।

मायव (सं० पु०) मायुका गोत्रापत्य।

मायवत् (सं० त्रि०) मायायुक्त।

माया (सं० स्त्री०) मीयते अपरोक्षवत् प्रदर्श्यतेऽनया इति मा (माच्छाशसिसूभ्यो यः। उण् ३।१ ६) इति य, टाप्। १ इन्द्रजालादि, छलमय रचना, जादू। पर्याय—शाम्बरी, साम्बरी। २ बुद्धि, अक्ल। मीमीते जानाति संख्यात्यनयेति मा-य-टाप्। ३ कृपा, दया। ४ दम्भ, चालबाजी। ५ शठता, बदमाशी। ६ प्रज्ञा, ज्ञान। ७ राजाओंका क्षुद्र उपायविशेष।

"मायोपेक्षेन्द्रजालानि क्षुद्रोपाया इमे त्रयः।" (हेम)

माया, उपेक्षा और इन्द्रजाल यही तीन राजाओंके सामान्य उपाय हैं।

८ दुर्गादेवी। इस नामकी निरुक्तिमें इस प्रकार लिखा है, मा शब्दका अर्थ श्री और या-का अर्थ प्रापण है। जो श्रीको दिलाती हैं उन्हींका नाम माया है। अथवा मा शब्दका अर्थ मोह और या शब्दका अर्थ प्रापण है, जो मोहित करती हैं, उन्हींको माया कहते हैं।*

जिनका कार्य और कारण विचित्र अर्थात् भिन्नरूप है, साधारण स्थलमें जैसा कारण है वैसा ही कार्य हुआ करता है, किन्तु माया विषयमें सो नहीं है। एक तरहके कारणसे इस प्रकारके कार्य हो सकते हैं तथा स्वप्न और इन्द्रजालकी तरह जिसका फल अचिन्तनीय है उसीको माया कहते हैं।

"विचित्रकार्यकारणा अचिन्तितफलप्रदा।
स्वप्नेन्द्रजालवल्लोके माया तेन प्रकीर्त्तिता॥"
(देवीपु० ४५ अ०)

विसदृश प्रतीति-साधनका नाम माया है। अघटनके घटनाविषयमें जो अत्यन्त पटुतमा हैं उन्हें माया कहते हैं। कोई कोई ईश्वरकी शक्तिको माया बतलाते हैं। इनका नामान्तर—प्रकृति, अविद्या, अज्ञान, प्रधान, शक्ति और अजा। मायावाद देखो।

९ लक्ष्मी। १० धन, सम्पत्ति। ११ अज्ञानता, भ्रम। १२ ईश्वरकी वह कल्पित शक्ति जो उसकी आज्ञासे सब काम करती हुई मानी गई है। १३ इन्द्रवज्रा नामक वर्णवृत्तका एक उपभेद। यह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के मेलसे बनता है। इसके दूसरे तथा तीसरे चरणका प्रथम वर्ण लघु होता है। १४ मगण, तगण, यगण, सगण और एक गुरुका एक वर्णवृत्त। १५ मयदानवकी कन्या। इसका विवाह विश्रवासे हुआ था। त्रिशिरा, सूर्पनखा, खर और दूषण इसीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। १६ देवताओंमेंसे किसीकी कोई लीला, शक्ति, इच्छा या प्रेरणा। १७ कोई आदरणीय स्त्री। १८ बुद्धदेव (गौतम)-की माताका नाम।

माया (हिं० स्त्री०) १ किसीको अपना समझनेका भाव, ममत्वक। २ कृपा, दया।

मायाकार (सं० पु०) मायां इन्द्रजाल व्यापारं करोतीति कृ अण्। ऐन्द्रजालिक, जादूगर, वह जो मायाके जैसा विसदृश कार्य दिखानेमें पारग हो। पर्याय—प्रातिहारिक।

मायाकृत (सं० पु०) मायां स्थलजलादौ जलस्थलादिज्ञानं करोति कारयतीति कृ-क्विप् तुगागमश्च। मायाकार, वह जो माया करता हो।

मायाकोण्डा—महिसुर राज्यके चित्तलदुर्ग जिलान्तर्गत एक बड़ा गांव। यह अक्षा० १४° १७' १५" उ० तथा देशा० ७६° ७' २५' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां १७४८ ई०में चित्तलदुर्गके पालेगार मदकेरी नायकके सथ

* "दुर्गे शिवेऽभये माये नारायणि सनातनि।
जये मे मङ्गलं देहि नमस्ते सर्वमङ्गले॥
शब्दः श्रीवचनो माश्च याश्च प्रापणवाचकः।
तां प्रापयति या सद्यः सा माया परिकीर्त्तिता॥
माश्च मोहार्थवचनो याश्च प्रापणवाचकः।
तं प्रापयति या नित्यं सा माया परिकीर्त्तिता॥"
(ब्रह्मवैवर्त्तपु० श्रीकृष्णजन्मख० २७ अ०)

वेदनूर, रायदुर्ग, हर्पनहल्ली और सावनूर सामन्त-राजाओं-की मिलित सेनाका एक भीषण युद्ध हुआ था। युद्धमें पराजित हो पालेगार-सरदारने आत्महत्या की तथा उनके सहयोगी चन्दासाहब (जो अरकाटका नवाब-पद पानेके लिये डुप्लेके शरणागत हुए थे भी) वन्दी हुए।

मायाक्षेत्र (सं० पु०) दक्षिणके एक तीर्थका नाम।

मायाचण (सं० त्रि०) मायया वित्तः 'वित्ते चुञ्चु चणपौ इति चणप्। माया द्वारा विख्यात, अतिशय मायावी।

"गाधेयदिष्ट विरसं रसन्त रामोऽपि मायाचणमल्र चुचुः।"

(भट्टि २।३२)

मायाचार (सं० पु०) मायावी।

मायाजीविन् (सं० पु०) मायया इन्द्रजालविद्यया जीवति जीवनयात्रां सम्पादयति इति जीव-णिनि। प्रातिहारिक, ऐन्द्रजालिक, जादूगरोंसे जीविका निर्वाह करनेवाला।

मायाजीवी (सं० पु०) मायाजीविन् देखो।

मायातन्त्र (सं० क्ली०) तन्त्रभेद, एक प्रकारका तन्त्र।

मायाति (सं० पु०) मायया सह अतति यद्वा मा अततीति (अतअल्यतिभ्या च। उणा ४।१३०) इति इण्। नरबलि। ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें लिखा है,—भगवती दुर्गादेवीके उद्देश्यसे अष्टमी और नवमी-संधिमें नरबलि देनी होती है। इस नरबलिका नाम मायाति है। पितृमातृविहीन युवक, रोगरहित, विवाहित, दीक्षित, परदारविहीन, अजारज और विशुद्ध इन सब गुणोंसे युक्त एक शूद्रको उसके मा बापको अधिक मूल्य दे कर खरीदना होगा। बादमें उसे एक वर्ष तक भ्रमण करा कर गंधमाल्यादि द्वारा यथाविधि अर्चना कर देवीके उद्देश्यसे बलि देनी होगी।* आज कल यह प्रथा प्रचलित नहीं है।

मायात्मक (सं० त्रि०) मायायुक्त।

मायाद् (सं० पु०) मायया छलेन धृत्वेत्यर्थः अत्ति भक्षयतीति अद-अच्। १ कुम्भीर, मगर। मायां ददातीति दा-क। (त्रि०) २ जो माया दान करे।

मायादेवी (सं० स्त्री०) बुद्धदेवकी माताका नाम।

मायादेवीसुत (सं० पु०) मायादेव्याः सुतः। बुद्ध।

मायाधर (सं० त्रि०) धरतीति धृ-अच्, मायायाः धरः। १ मायावी, मायापटु। २ असुर। ये बड़े मायावी हैं इसलिये इन्हें मायाधर कहा जाता है। ३ ऐन्द्रजालिक, जादूगर। ४ भ्रान्तिकर, भ्रान्तिजनक।

मायापटु (सं० पु०) मायया पटुः कुशलः। मायाकुशल, मायावी।

मायापति (सं० पु०) १ मायावी। २ मायाके स्वामी।

मायापुर—१ बंगालके २४ परगना जिलान्तर्गत एक बड़ा गांव। यह अक्षा० २२° २६' १५" उ० तथा देशा० ८८° १०' ५०" पू० हुगली नदीके किनारे इछापुरके दक्षिणमें अवस्थित है। यहां बृटिश-सरकारकी बारूदका कारखाना है।

२ हरिद्वारके निकटवर्त्ती एक पुण्यस्थान। हरिद्वार देखो।

३ नवद्वीपके अन्तर्गत एक स्थान। यह जलंगी और भागीरथीके संगमके निकट अवस्थित है।

मायापुरी (सं० स्त्री०) नगरभेद, एक प्राचीन नगरीका नाम।

मायाफल (सं० क्ली०) फलविशेष, माजूफल। पर्याय—मायिफल, मायिक, छिद्राफल, मायि। इसका गुण—वातहर, कटु, उष्ण, शैथिल्य, सङ्कोचक और केशको काला करनेवाला माना गया है।

मायामय (सं० त्रि०) माया-स्वरूपार्थे मयट्। मायास्वरूप, माया।

मायामोह (सं० पु०)-मायया मोहयति असुरानि मुहणिच्, अच् माया च मोहश्च तौ यस्येति वा। विष्णुदेहनिर्गत असुरमोहक पुरुष विशेष, विष्णुके शरीरसे निकला हुआ एक कल्पित पुरुष जिसकी सृष्टि असुरोंका दमन करनेके लिये हुई थी।

"इत्युक्तो भगवांस्तेभ्यो मायामोह शरीरतः।
समुत्पाद्य ददौ विष्णुः प्राह चेद सुरोत्तमान्॥"

(विष्णुपु० ३।१७ अ०)

विष्णुपुराणमें लिखा है,—असुरोंसे सताये जाने पर देवताओंने विष्णुकी शरण ली। भगवान् विष्णुने मायामोहको अपने शरीरसे उत्पन्न कर देवताओंको दिया और कहा, तुम लोग अब किसी बातकी चिन्ता मत करो। मायामोह जब दैत्योंको मोहित करेगा, तब वे सब वेदमार्गविहीन हो जायेंगे। वैसी हालतमें तुम

* ब्रह्मवैवर्त्तपुराण—प्रकृतिखण्ड १५ अ०।

लोग उन्हें सहजमें मार सकोगे। इतना कह कर विष्णु अन्तर्धान हो गये।

अनन्तर मायामोह दैत्योंके निकट जा कर उन्हें नाना प्रकार तर्क और युक्ति द्वारा मोहित करने लगा। अतएव वे शीघ्र ही बलहीन हो गये। तब देवताओंने उन्हें आसानीसे परास्त किया।

(विष्णु पु० ३।१७-१८ अ०)

मायायन्त्र (सं० क्ली०) सम्मोहन, किसीको मोहनेकी विद्या।

मायारवि (सं० पु०) सम्पूर्ण जातिका एक राग। इसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

मायारसिक (सं० पु०) परप्रतारक, मायापटु।

मायावचन (सं० क्ली०) छलवाक्य, फरेबकी बात।

मायावटु (सं० पु०) शबरराजभेद।

मायावत् (सं० त्रि०) माया विद्यतेऽस्य मतुप् मस्य व। १ मायाविशिष्ट, मायावी, कपटी। (पु०) २ राक्षस, असुर। ३ कंसराज, कंसका एक नाम।

मायावती (सं० स्त्री०) मायावत् स्त्रियां ङीप्। १ कामपत्नी, रति। इसका मायाती नाम होनेका कारण विष्णुपुराणमें इस प्रकार लिखा है,—पहलेमें जब कामदेव महादेवके कोपानलसे दग्ध हुआ तब रतिने अपने स्वामीको फिरसे पानेके लिये मायारूपसे शम्बरासुरको मोहित कर रखा और उसे मायारूप दिखाया। इसीसे उसका नाम मायावती हुआ*।

२ विद्याधरीविशेष। ३ राजकन्याविशेष। इनके पिता राजगृहाधिपति मलयसिंह थे।

(कथासरित्सा० ११२।१।१२)

मायावरम्—१ मान्द्राजप्रदेशके तञ्जोर जिलान्तर्गत एक तालुक। भू-परिमाण ३३२ वर्गमील है।

२ उक्त जिलेका एक नगर। यह अक्षा० ११° ६' २०" उ० तथा देशा० ७९° ४१' ५०" पू० कावेरी नदीके किनारे अवस्थित है। दाक्षिणात्यवासी इसको तीर्थस्थान समझते हैं। यहां साउथ इंडियन रेलवेका स्टेशन होनेके कारण वाणिज्यमें विशेष सुविधा हुई है।

मायावसिक (सं० त्रि०) मायया वसं आच्छादनं करोतीति ठन्। परप्रतारक, वञ्चक, छलिया।

मायावाद (सं० पु०) मायायाः वादः। मायाविषयक कथन। यह परिदृश्यमान जगत् भ्रान्तिमय है। यथार्थमें इसकी स्वाभाविक सत्ता नहीं। माया द्वारा ही इसका अस्तित्व उपलब्ध होता है। वेदान्तके शारीरिक भाष्यमें इत्याकार मायाविषयक जितनी युक्तियोंकी आलोचना हुई है, उसको ही मायावाद कहते हैं।

यह दृश्य-जगत् इन्द्रजालके सदृश है, तात्त्विक-सत्ताशून्य अर्थात् मिथ्या या झूठा है। जैसे कोई नट इन्द्रजालिक कौशलादि माया द्वारा इन्द्रजालकी सृष्टि करता है वैसे ही महामायावी ईश्वर भी स्वेच्छापूर्वक इस नश्यमान जगत्की सृष्टि करते हैं। उनकी इच्छा ही माया नामसे पुकारी जाती है। गुणवती माया एक होने पर गुणके प्रभेदसे अनेक रूप धारण करती है। उत्कृष्ट सत्त्वगुण द्वारा माया और मलिन सत्त्वके गुणसे अविद्या बन जाती है। मायाका उपहित ईश्वर और अविद्याका उपहित जीव है। जीव केवल उपहित ही नहीं वरं मायाके वशीभूत भी है। माया एक है—इसीलिये ईश्वर भी एक हैं। मालिन्यके न्यूनाधिक्यके अनुसार अविद्या अनेक है। इसीलिये जीव भी अनेक हैं मायाकी ज्ञानशक्तिका चरमोत्कर्ष है। इसीलिये उसके उपहित ईश्वर भी सर्वेश्वर हैं, सर्वज्ञ हैं, स्वतन्त्र हैं और सर्वनियन्ता हैं। जीव ज्ञानशक्तिके अल्पभाव वशतः वैसा नहीं है। जैसे एक ही आकाश घटरूप उपाधिसे घटाकाश, उसको छोड़ कर महाकाश है वैसे ही ब्रह्म मनुज आदि उपाधिसे (आधेयमें) जीव और तदुपगतमें ब्रह्म हैं।

अज्ञान ही संसार है। संसार और कुछ भी नहीं है।

* "इय मायावती भार्य्या तनयस्यास्य ते सती।
शम्बरस्य न भार्य्येयं श्रूयतामत्र कारणम्॥
मन्मथे तु गते नाशं तदुद्भवपरायणा।
शम्बरं मोहयामास मायारूपेण रूपिणी॥
व्यवायाद्युपभोगेषु रूपं मायामयं शुभम्।
दर्शयामास दैत्यस्य तस्येयं मदिरेक्षणा॥"

(विष्णुपु० ५।२७ अ०)

अखण्ड चेतन अद्वयब्रह्मकी पार्श्वचर-शक्ति अज्ञान है। इसके प्रादुर्भावसे अन्तःकरण आदिकी उत्पत्ति होती है। इसके उपरान्त वे अन्तःकरणादि परिच्छिन्न जीव हैं फिर इसके हट जानेसे वे अपरिच्छिन्न और निरञ्जन हैं। ब्रह्मकी यह शक्तिविशेष ही शास्त्रमें ऐशी शक्ति, जगत्‌योनि, अज्ञानशक्ति, मायासृष्टिशक्ति और मूल प्रकृति इत्यादि नामोंसे परिभाषित होती है। अन्तः-प्रपञ्च या बाह्यप्रपञ्च सभी अज्ञान या मायाका विलास है। इसीलिये यह भ्रान्तिका विजृम्भन कहा गया है।

शक्तिरूपी ब्रह्माश्रित अज्ञान ब्रह्ममें या ब्रह्मको जगत् रूपसे दिखा रहा है। इसलिये जगत् और ब्रह्म इस समय विमिश्रित या एक तरहके दिखाई देते हैं। अज्ञान, विकार या जगत् परमार्थ दृष्टिसे सत्य नही है, इसीलिये शास्त्रमें कहा है कि जगत् मिथ्या और ब्रह्म सत्य है।

ब्रह्म स्वयं अपनी माया द्वारा आकाशादिरूपमें विवर्त्तित हुए हैं। अतएव अभिन्न निमित्तोपादान वे ही इस प्रसारके कारण हैं। अभिन्न-निमित्तोपादानका दृष्टान्त मकडा है। मकडा सृज्यमान सूतेके प्रति स्वचैतन्य-प्रकाशका निमित्त कारण है। मकडा जिस सूतेकी सृष्टि करता है उसका उपादान वह किसी दूसरी जगहसे नहीं लाता, उसके शरीर ही में है। ब्रह्म अपनी इच्छा होसे विवर्त्तित होते हैं। विवर्त्त शब्दका अर्थ इस प्रकार है, एक प्रकारकी वस्तु जब दूसरे प्रकारकी हो जाती है तो उसे विकार और मिथ्या प्रतीत होने पर उसे विवर्त्त कहते हैं। जगत् ब्रह्मका विकार नहो, वरन् विवर्त्त है। अतएव पहले ही कहा जा चुका है कि यह जगत् तात्त्विक-सत्ता शून्य अर्थात् मिथ्या है।

मायाको सरल भाषामें अज्ञान कह सकते हैं। इस अज्ञान कालक्षण 'अज्ञानन्तु सदसद्‌भ्यामनिर्वचनीयं त्रिगुणात्मकं ज्ञानविरोधिभावरूपं यत्किञ्चिदिति वदन्ति।'

(वेदान्तसार)

अज्ञान क्या है? अज्ञान एक तरहका ज्ञान-नाशक-अनिर्वाच्य रहस्य है। उसका भाव और अभाव—वस्तु और अवस्तु—इन दोनोंसे वहिर्भूत है। तीसरी प्रकृति अर्थात् क्लीवक जैसे स्त्री-पुरुष—दोनोंसे वहिर्भूत है, वैसे ही अज्ञान भी भाव अभाव व्यतिरिक्त है। अज्ञान शशशृङ्ग (खरहेके सींग)-की तरह—वन्ध्या-पुत्रके समान आत्यन्तिक अवस्तु नहो। क्योंकि वह जीवमात्रमें हो है, ऐसा अनुभव होता है। अज्ञान ब्रह्म पदार्थकी तरहकी वस्तु भी नहीं है क्योंकि ज्ञान होने पर भी वह स्थायी नहीं रहता, ज्ञानोत्तरकालमें वह मिथ्या ही प्रतीत होता है। जो नही रहता, वह त्रैकालिक अस्तित्व नहीं, जो मिथ्या या भ्रम प्रत्यक्ष है, उसे किस तरह वस्तु कहा जाय? अतएव वह वस्तु या अवस्तु, सत्य या मिथ्या सावयव या निरवयव—कुछ भी नहीं रह जा सकता। जिसको यह अमुक या अमुक तरहका कह कर ग्रहण किया नहीं जा सकता वह अनिर्वाच्य है।

यह भी नहो कहा जा सकता, कि ज्ञानका अभाव ही अज्ञान है। क्योकि ज्ञानका अभाव "अज्ञान" है इस वाक्यमें ज्ञान शब्दके अर्थकी पर्य्यालोचना करनेसे देखा जाता है, कि अभाव पदार्थ नहीं है। शास्त्रमें चैतन्यको ज्ञान कहा गया है। फिर बुद्धिको भी ज्ञान कहते हैं। कुछ लोग ज्ञानको आत्माका गुण वतलाते हैं।

अज्ञान इन तीन तरहके ज्ञानोंमें किस ज्ञानका अभाव है? इसके उत्तरमें कहा गया है, कि प्रथमोक्त ज्ञान नित्य निरवयव है, अतएव उसका अभाव अस्वीकार्य्य है। द्वितीय वास्तविक ज्ञान नहीं, क्योंकि वह जड़ है। बुद्धि वृत्ति स्वयं वस्तु प्रकाश नहीं करती, चैतन्य व्याप्त हो कर वस्तुको प्रकाश करती है। बुद्धिवृत्ति जब चैतन्यको छोड कर वस्तुके प्रकाश करनेमें समर्थ नहीं, तब वह अवश्य ही जड़ है। ज्ञानका अर्थात् चैतन्यका संश्लिष्ट रहनेके कारण लोग उसे उपचारक्रमसे ज्ञान कहते हैं। अतएव अज्ञान उसका भी अभाव नही—तृतीय पक्ष भी नहीं। क्योंकि ज्ञान नामक आत्मगुणका बिलकुल अभाव होना असम्भव है। कारण जभी—"मैं अज्ञानी था, कुछ भी नहीं जानता था" कहोगे तभी तुम्हारे ज्ञानका अस्तित्व प्रमाणित होगा। उस समय तुम्हारा दूसरा कोई ज्ञान न हो सही; किन्तु अज्ञान विषयक ज्ञान था। तुम जो अज्ञानी थे इसका अनुभव भी एक तरहका ज्ञान ही है। "अज्ञान" था इसका अर्थ क्या है?

नहीं तुम्हारा ज्ञान (चैतन्य) उस समय अज्ञानके सिवा अन्य विषयका अवगाहन नहीं करता था। यही उसका अर्थ है। अतएव अज्ञान अभाव या शून्य रूपी नहीं है। वह भाव पदार्थ और अभाव पदार्थसे पृथक् है। वह यत्किंचित् अर्थात् एक प्रकार तुच्छ अस्थिक पदार्थ है।

अज्ञान कहनेसे लोग अभाव पदार्थ समझ लेते हैं। इस भयसे "भावरूप" विशेषण दिया गया है। निर्द्धारित रूपसे उसका स्वरूप निर्णय किया जा नहीं सकता, इससे "सद्सद्भ्याम निर्वचनीय" कहा गया है। मिथ्याज्ञान नामक आत्मगुण नहीं है इससे "त्रिगुणात्मक" कहा गया है। ज्ञानके साथ विरोध रहनेसे अर्थात् ज्ञान रहनेसे अज्ञान भाग जाता है। इससे उसको "ज्ञानविरोधी" कहा गया है। अज्ञान पदार्थको भाव कह कर व्याख्या करनेसे भी ब्रह्म पदार्थकी तरह पारमार्थिक भाव नहीं है। यह समझानेके लिये "यद्किञ्चित्" यह विशेषण दिया गया है। यत्किञ्चत् अर्थात् एक तरहका अस्थिर या अनिर्वाच्य तुच्छ पदार्थ हैं। इस तरहका जो अज्ञान है, वह अनुभवसिद्ध है। सभी लोग "अहं अज्ञः" मैं अज्ञ अर्थात् मैं नहीं जानता, मैं कौन हूं, यह मैं नहीं जानता यह क्या है? वह क्या है? यह मैं नहीं जानता इत्यादि वाक्य कहते हैं। प्रत्येक मनुष्यका ऐसा ही अनुभव प्रत्येक मनुष्यमे अज्ञान सद्भावका प्रमाण है। अज्ञान जो अनिर्वचनीय पदार्थ है, यह भी उत्तम रूपसे अनुभव द्वारा प्रमाणित हो सकता है। अज्ञान क्या है? यह निर्द्धारित रूपसे मालूम न रहनेके कारण हम मोहमे अभिभूत रहते हैं। अतएव अज्ञान एक प्रकारका अनिर्वचनीय यत्किञ्चत् पदार्थ है,—यह अनुभव और शास्त्र दोनों प्रमाणसिद्ध है। इस विषयमें शास्त्रका मत है, कि स्वयं प्रकाश आत्माका शक्तिरूप अज्ञान अपने गुणोंसे गुप्त है।

वह लक्षणाक्रान्त अज्ञान अन्ततः नाना रूपसे प्रकाशित होने पर भी वास्तवमे एक है। इसलिये शास्त्रमें उसकी समष्टि (समुदाय वा अपृथक् भाव) लक्ष्य कर एक और व्यष्टि (विभिन्न भिन्न भाव या विशेष विशेष अवस्था) लक्ष्य कर वहुत कह कर उल्लिखित है। जैसे विशेष वृक्षके समष्टिभावमें एक वन और जलके समष्टिभावमें सागर होता है, वैसे ही जीवगत नाना प्रकारके अज्ञानके समष्टिभावमें वह एक है। किसीका भी वह स्पष्ट नहीं, इस तरहका सत्व, रज और तमोगुणात्मक अज्ञान है*।

यह समष्टि अज्ञान उत्कृष्टका अर्थात् अप्रतिहत स्वभावपरिपूर्ण चैतन्य या ईश्वरकी उपाधि होनेसे विशुद्ध सत्वप्रधान है। जो निकट रह कर अपना गुण समीपको वस्तुमें आरोपित करता है, वह उपाधि है। जूहीका पुष्प स्फटिकके निकट रह कर अपना लौहित्य स्फटिकको प्रदान करता है। इससे जूहीका पुष्प स्फटिककी उपाधि है। अज्ञान भी चैतन्यके निकट रह कर अपना दोषगुण चैतन्यमें आरोपित करता है। इससे वह चैतन्यकी उपाधि है। जो जिसकी उपाधि है, वह उसका उपहित है। चैतन्यकी उपाधि अज्ञान है, इसीलिये चैतन्य अज्ञानका उपहित है।

उत्कृष्ट और विशुद्ध प्रधान इन दो शब्दों द्वारा इसी तरहका भावार्थ मिलता है, कि सृष्टिके समय मूलप्रकृतिके सिवा मन, बुद्धि आदि अन्य कोई उपाधि नहीं थी। इसलिये यह उत्कृष्ट है। सत्व, रजः और तमः ये तीन गुण जब समान रहते हैं, तब सृष्टि नहीं होती। जब किसी एक की वृद्धि हो जाती है, तब सृष्टि होती है। सृष्टिके पहले ही प्रकृतिकी या अज्ञानका सर्व प्रकाशक सर्वमर्यादाकारक, सर्वबीजस्वरूप सुखमय और प्रकाशक सत्व प्रवृद्ध हो कर महतत्त्वको प्रसव करता है। क्रमशः उससे अहंकार आदिकी सृष्टि होती है। अतएव समष्टि अज्ञानमे और महतत्वमे सत्वगुण प्रबल रहता है, रजः और तमोगुण विलुप्तप्राय या अभिभूतप्राय रहता है। इसीसे उसको विशुद्ध सत्व कहा जाता है।

समष्टि अज्ञानमे उपहित चैतन्य सर्वज्ञ, सर्वेश्वर, सर्व नियन्ता, अव्यक्त, अन्तर्यामी, जगत्कारण आदि नाम द्वारा अभिहित होते हैं। ऐसी समष्टि अज्ञानकी

* "इदमज्ञानं समष्टिव्यष्ट्यभिप्रायेणैकमनेकमिति च व्यवह्रियते, तथा हि, यथा वृक्षाणां समष्ट्यभिप्रायेण वनमित्येकत्वव्यपदेशः यथा वा जलानां समष्ट्यभिप्रायेण जलाशय इति तथा नानात्वेन प्रतिभासमान जीवगताज्ञानानां समष्ट्यभिप्रायेण तदेकत्वव्यपदेशः। अजामेकामित्यादिश्रुते" (वेदान्तसार)

अवभासक होनेकी वजह वह सर्वज्ञ हैं। इस विषयमें श्रुति इस तरह कहती है, जो समष्टि और तदन्तःपाती सभी व्यक्तियोंको जानते हैं, वे सर्वज्ञ और परमेश्वर हैं।

ईश्वरकी उपाधि स्वरूप समष्टि अज्ञान सबके लिये वस्तुका कारण है। इसीलिये वह ईश्वरके कारण-शरीर है।

जिस तरह वनकी व्यष्टि वृक्ष है, जो अनेक हैं और जलाशयकी व्यष्टि जल है, वह भी अनेक है, उसी तरह समष्टि अज्ञानकी व्यष्टि अज्ञान भी अनेक है। श्रुतिमें लिखा है, कि परमेश्वर बहुमाया द्वारा अनेक रूपोंमें प्रकाशित होते हैं।

यहां देह, इन्द्रिय और अन्तःकरण आदि नाना प्रभेद-युक्त जीवव्यापी अज्ञानको व्यष्टि अज्ञान और महतत्त्व नामक अविभक्त ईश्वरानुगत मूल-अज्ञानको समष्टि अज्ञान निर्देश किया गया है।

व्यष्टि अज्ञान निकृष्टको (अर्थात् असर्वज्ञ और अल्प-शक्तिमान जीवकी) उपाधि और मलिनसत्त्व प्रधान है। इसमें जो चैतन्य प्रतिविम्बित हो रहा है, उसको जीव कहते हैं, वह अल्पज्ञ है। अल्पज्ञता हेतु उसको अनीश्वरत्वादि गुणविशिष्ट प्राज्ञ कहते हैं (प्र अज्ञ)। मलिन सत्त्वप्रधान इसका भावार्थ यह है, कि महतत्त्व नामक मूल ज्ञानके बाद उसके रजः और तमो-अंश वृद्धि पा कर अहंकार और अन्तःकरणकी सृष्टि करता है। रजः और तमोमिश्रित होनेके कारण अन्तःकरणादिकी प्रकाश-शक्ति अल्प है इससे उसका उपहित चैतन्य भी अल्पप्रकाशक है। इसीलिये जीव अल्पज्ञ है।

जीवको प्राज्ञ नामसे पुकारनेका कारण यह है, कि जीव सब अज्ञानोंका अवभासक है। जीवकी उपाधि भी अस्पष्ट है अर्थात् रजस्तमोमिश्रित होनेसे मलिन है। इसीसे अल्प प्रकाशक या प्राज्ञ है। "प्रायेण अज्ञः' अर्थात् प्रायः ही नहीं जानता।

पहले जो व्यष्टि और समष्टिकी बात कही गई है वह केवल कल्पनामात्र है। वन और वृक्ष वास्तवमें जैसे अभिन्न हैं, वैसे ही व्यष्टि और समष्टि—दोनों अज्ञान ही अभिन्न है, अर्थात् एक है। भिन्नता कल्पना व्यवहारिक है।

इस अज्ञानने दो शक्तियां हैं:—एकका नाम आवरण-शक्ति, दूसरीका विक्षेप-शक्ति है। आवरण शक्ति समझनेके लिये यह दृष्टान्त दिया जा सकता है, कि एक छोटा-सा मेघखण्ड दर्शकके केवल नेत्रोंको आच्छन्न कर लेता है, किन्तु दर्शक जानता है कि इस मेघ खण्डने समूचे सूर्य्यको ढंक लिया है। उसी तरह अज्ञान भी अपने बुद्ध्यादिरूपसे परिच्छिन्न होने पर भी बुद्धिप्रतिविम्बित चैतन्यको आवृत करनेसे समझनेवालेको अपनेमें सर्वव्यापक आदि अनुभव नहीं होता। सर्वव्यापक चैतन्यके जिस अंशमें बुद्धि है उसी अंशमें जीव है। जीवांश अज्ञानसे आवृत होनेसे अपनेको बंधा हुआ और संसारी अनुभव करता है। अज्ञान जिस शक्ति द्वारा आत्माके स्वरूपको आवृत करता है, उसी शक्तिका नाम आवरण-शक्ति है। श्रुतिमें लिखा है, कि अज्ञ मनुष्य जिस तरह मेघाच्छन्न नेत्रसे सूर्य्यको मेघाच्छन्न और प्रभारहित देखता है वैसे ही अविवेकी पुरुष अपने अज्ञानसे समाच्छन्न हो कर अपनेको बंधा हुआ देखता है। जो मूढ बुद्धिकी दृष्टिसे बंधु हुएकी तरह दिखाई देता है, वही सर्वव्यापी परमात्मा मैं हूं।

ज्ञातव्य वस्तु यदि अज्ञान द्वारा आवृत हो अर्थात् यदि सब अंशोंमें स्फुर्त्ति नहीं होता, तो उसमें कोई एक विपरीत प्रत्यय उत्पन्न होती। जैसे रस्सी या जल धारा अज्ञानावृत होनेसे सर्पका बोध होता है या वैसे ही एक कल्पित दृश्य दिखाई देता है। अतएव परमात्माका स्वरूप अज्ञान द्वारा ढके रहनेसे कर्त्तृत्व, भोक्तृत्व, सुखित्व, दुःखित्व आदि सांसारिक धर्म कल्पित होते रहते हैं। उक्त अज्ञान जिस शक्ति द्वारा कल्पना करता उस शक्तिका नाम विक्षेप है।

विक्षेपशक्ति और सृष्टि करनेकी सामर्थ्य एक ही बात है। आवृत होने पर ही विक्षेप अर्थात् कल्पना उपस्थित होती है यह अनुभवसिद्ध है। जिस तरह रस्सीको अच्छी तरह न जान सकनेके कारण सर्प आदिकी कल्पना होती है, उसी तरह आत्मविषयक अज्ञानने स्वावृत आत्मामें तुच्छ अवस्तु आकाशादिकी सृष्टि की है। अज्ञानकी जिस शक्ति द्वारा ऐसी सृष्टि होती है, उस सृष्टिका नाम विक्षेप है। इस पर श्रुतिका कहना

है, "अज्ञानकी विक्षेपशक्ति नश्वर ब्रह्माण्डकी सृष्टि करती है।" मकड़ी जैसे अपने चैतन्यके फलसे अपने उत्पादन तन्तुओंका निमित्तकारण और शरीर द्वारा उपादानकारण है वैसे ही परब्रह्म भी अपने अज्ञान (माया) द्वारा सृष्टिके उपादानकारण और चैतन्यके सान्निध्यमे निमित्तकारण होते हैं। मकड़ी अपने लस्सादार पदार्थोंके बलसे तन्तुओंकी सृष्टि करती है वैसे ही आत्मा भी चैतन्यके सन्निधानके प्रभावसे मायिक-विकार द्वारा विचित्र जगतकी सृष्टि करती है।

उत्पत्तिकी प्रणाली इस तरह है,—तमोगुण बाहुल्यसे विक्षेपशक्तियुक्त अज्ञानोपहित चैतन्यसे पहले आकाश, फिर आकाशसे वायु, वायुमे अग्नि, फिर उससे जल और इसके बाद इन चारोंसे पृथ्वीकी उत्पत्ति होती है। क्रमशः इसी तरह सृष्टि होती है। प्रथम उत्पन्न पांचो पदार्थको पण्डित लोग सूक्ष्मभूत, तन्मात्रा और अपञ्चीकृत महाभूत कहते हैं। इन सब सूक्ष्म भूतोंसे जीवका सत्रह अवयवविशिष्ट सूक्ष्म (पतला) और स्थूलभूत (मोटा) शरीर उत्पन्न होता है। जब तक प्रलय नहीं होता, तब तक तक सूक्ष्म और स्थूल शरीर विद्यमान रहता है।

सत्रह अवयव, जैसे पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय, पांच प्राण, मन और बुद्धि। बुद्धि और पांच ज्ञानेन्द्रिय इन सबकी समष्टिको विज्ञानमय कोष कहते हैं। विज्ञानमय कोषको ही इहलोक या परलोक सञ्चारी जीव कहता है। इस विज्ञानमय कोषमें ही 'अहं कर्त्ता' 'अहं भोक्ता' 'अहं सुखी' इसी तरहका अभिमान उत्पन्न होता है। मन और पञ्चकर्मेन्द्रियके मिल जानेसे मनोमय कोष तथा पञ्च प्राण और पञ्चकर्मेन्द्रियके मिल जानेसे प्राणमय कोषकी सृष्टि हो जाती है।

इन सब कोषोंमें विज्ञानमय कोष ज्ञानशक्तिसम्पन्न और कर्तृस्वरूप, मनोमय कोष इच्छा शक्तिविशिष्ट और कारणरूप, प्राणमय कोष क्रियाशक्तियुक्त कार्यरूप है। योग्यताके अनुसार इस तरहको विभागकल्पना हुई। यह सम्मिलित तीनों कोष ही सूक्ष्म शरीर है।

इस सूक्ष्म शरीरमें भी वन-वृक्षकी तरह या जलाशय जलकी तरह समष्टि और व्यष्टि है। एकत्व-बुद्धिका विषय होनेसे समष्टि और पृथक् बुद्धिका विषय होनेसे व्यष्टि, स्थावरजङ्गम समूचे प्राणियोंके सूक्ष्म शरीर सूत्रात्मा-नामक हिरण्यगर्भकी बुद्धिके विषय होनेसे समष्टि और प्रत्येक जीवके अपनी अपनी बुद्धिका विषय होनेसे व्यष्टि होती है।

समष्टि सूक्ष्मशरीरोपहित चैतन्य सूत्रात्मा, हिरण्यगर्भ और प्राण नामसे व्यवहृत होता है। सूतेकी तरह प्रत्येकके अनुस्यूत होनेसे सूत्रात्मा तथा ज्ञान, इच्छा, क्रियाशक्तियुक्त सूक्ष्म भूताभिमानी होनेसे हिरण्यगर्भ और प्राण है।

हिरण्यगर्भकी उपाधिस्वरूप यह समष्टि कोषत्रय (सूक्ष्म शरीरकी समष्टि) स्थूल जगत्की अपेक्षा सूक्ष्म होनेसे सूक्ष्म, विशीर्ण होनेसे शरीर और जाग्रत्-संस्काररूपी हेतु स्वप्न और स्थूल प्रपञ्चके प्रलय-स्थान नामसे पुकारा जाता है। व्यष्टि सूक्ष्म शरीरमें उपहित चैतन्य का नाम तैजस है। तेजोमय अन्तःकरणमात्र ही उसकी उपाधि है। अर्थात् यह स्वप्नकालमें केवल अन्तःकरण-कल्पित विषयका अनुभव करता है।

इस स्थलमें भी पहलेकी तरह समष्टि व्यष्टि शरीरके वस्तुगत अभेद और तदुपहित चैतन्यका भी अभेद देखना चाहिये। पूर्वोक्त वन, वृक्ष और उससे अवच्छिन्न आकाश और जलाशय, जल और उससे प्रतिबिम्बित आकाशके दृष्टान्तमें लेना चाहिये।

यही सब मायिक है अर्थात् माया द्वारा ही इस तरहका ज्ञान होता है। ज्ञान होनेसे मायाकी कोई जरूरत नहीं होती।

आत्मासे एकत्व ब्रह्मचैतन्य-मायाका सम्पर्क हुआ है। जिस मायाके कारण जीव अपना सुख नहीं जानता, ब्रह्मभाव नहीं जानता और अपनेको सुखदुःख भोक्ता जन्म-मरणशील जीव समझता है इस मायाकी फाँससे छुटने पर अपनेको आनन्दस्वरूप समझने लगता है।

इसी मायासे इन्द्रजाल सदृश जन्ममृत्यु आदि कई बातें अघटनसे सघटनकी तरह दिखाई देती हैं, उसका कौन सीमा-निर्द्धारित कर सकता है? इसीको मायावाद कहते हैं।

जब जीव जन्ममरणादिकी यातनासे संसारके

अनलमें परितप्त हो कर वेदवेदान्तपारग गुरुके सामने उपस्थित होता है तव गुरु कृपा कर उसको ब्रह्मोपदेश प्रदान करते हैं। शिष्य क्रमसे श्रवण, मनन और निदिध्यासनादि द्वारा मायाके इन सब कार्योंको समझ सकता है। अज्ञ नवशतः रस्सीसे सांपका भ्रम होता है उसी तरह मायावेशमें एक, अद्वितीय, सच्चिदानन्द, ब्रह्ममें जो जगत्‌की भ्रान्ति होती थी, उसकी निवृत्ति होती है।

वेदान्तसार और वेदान्तदर्शन देखो।

साङ्ख्य प्रवचनभाष्यमें विज्ञान-भिक्षु इस मायावादको प्रच्छन्न बौद्धमत कहा गया है। उसके मतसे यह बौद्धोंका एक प्रकारका मत है। अतएव यह मिथ्या है।

"मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्धमेव च।
मयैव कथितं देवि। कलौ ब्राह्मणरूपिणा॥" (विज्ञानभिक्षु)

पुराण शब्दमें पद्मपुराणका विवरण देखो।

कलिकालमें ब्राह्मणरूपी शङ्कराचार्यने इस असत् मायाको प्रकाशित किया है, इससे जीवका निःश्रेयस लाभ दूर भागता है। सांख्यके मतसे यह जगत् सत्त्वरजस्तमोगुणात्मिका प्रकृतिसे उत्पन्न है। प्रकृति और पुरुषका पूर्णज्ञान होनेसे मुक्ति हो जायगी।

वेदान्तके मतसे भी सत्त्व, रज और तमोगुणमयी माया है। जीव जब यह समझ जाता है, कि यह माया या अज्ञानका कार्य है तब उसका मोक्ष होता है।

शङ्कराचार्य और वेदान्त शब्दमें विशेष विवरण देखो।

भगवद्गीतामें लिखा है—

"त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्॥
दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥
न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः॥"

(गीता ७।१३-१५)

त्रिविध गुणमय भावने ही जगत्‌को मोहित कर रखा है। मुझको (ब्रह्म) इसको अतीत और अव्यय समझना। मेरी सत्त्वादि त्रिगुणमयी माया नितान्त दुरतिक्रम्य है। जो मनुष्य केवल मेरी शरणमें रह कर मेरा भजन करते हैं, वे ही इस सुदुस्तर मायाको फांससे छूट सकते हैं। जो पापकर्मा, मूढ़ और नराधम हैं, जिसका ज्ञान माया द्वारा अपहृत हुआ है, वह मेरा भजन नहीं करता है। इसका तात्पर्य यह है, कि भगवान् नित्य शुद्ध मुक्तस्वभावके हैं। फिर भी यह मिथ्या ज्ञानमय जगत् किस तरह उनका विजृम्भण हुआ? अर्जुनका यह सन्देह दूर करनेके लिये भगवान्‌ने अर्जुनसे कहा था, कि जीव त्रिगुणमयी मायासे मोहित आत्मानात्मविवेकविहीन हो मुझको पहचान नहीं सकता। जैसे ग्रीष्मके प्रचण्ड मार्त्तण्डके तीव्र तेजकी ओर देखनेसे उसीमें मुग्ध हो जाता है, यथार्थ सूर्यको देख नहीं सकता, वैसे ही त्रिगुण व्यापारसे विमोहित हो कर जीव जिसका आश्रय ले कर यह गुण प्रकाशित किया हुआ है, उन्हीं भगवान्‌को लक्ष्य नहीं कर सकता।

वे त्रिगुणके अतीत और त्रिगुणके अधिष्ठानभूत भी हैं। किन्तु मायासे विमोहित जीव उनको देख नहीं सकता। जैसे स्वर्ण-कुण्डलमें 'कुण्डल' दिखाई देनेसे स्वर्णका ज्ञान नहीं रहता, वैसे ही त्रिगुणमयी दृष्टिके आगे ब्रह्म नहीं दिखाई देता।

सनातनी माया जैसी दुरतिक्रम्य है, इससे वह किसी तरह मुक्त नहीं हो सकता। अर्जुनके इस सन्देहको दूर करनेके लिये भगवान्‌ने और कहा है, कि मायाको विशुद्ध चैतन्याश्रिता विषयकी मूल प्रसूतिकी कल्पना की जा सकती है। उनका नाम दैवीमाया है। जैसे अन्धकार जिस घरमें रहता है, उसी घरको आच्छन्न करता है। जैसे रस्सीको तिगुना ऐंठ कर मजबूत बना कर उससे मनुष्यको बांध सकते हैं वैसे भगवान्‌की त्रिगुणमयी माया द्वारा जीव भी मजबूतीसे बंधा हुआ है। सर्वावरण छेद कर आत्मा और परमात्माका साक्षात् न होनेसे मायाका बन्धन मुक्त नहीं होता। जो जीव अनन्यकर्मा हो कर भगवान्‌के शरणापन्न होता है जिस जीवको भगवान्‌की भक्तिके विना किसी तरफ ध्यान नहीं रहता, पुण्य कर्ममें सदा अनुरक्त रहता वही जीव मायाबन्धनसे मुक्त हो सकता है।

जो पापासक्त है और जिसका पापकर्ममें ध्यान रहता है, वह नराधम है। वह अपना इष्टानिष्ट समझनेमें असमर्थ है। उसका विवेक माया द्वारा दूषित होनेके कारण

वह मेरे स्वरूपको देख नहीं सकता, इसलिये उसका मायाबन्धन मुक्त नहीं होता।

मायिकबन्धन बहुत कठिन बन्धन है, सब तरहका दुःख ही इसका मूल है, जिसको साधारण लोग सुख कहते हैं यथार्थमें वह सुख नहीं, वह सुख नामक दुःख है। जब तक मायाका बन्धन नहीं छुटता, तब तक सभी दुःख केवल मायाका विलास है और नटका खेल है। लोग जैसे स्वप्नमें सुखदुःखका अनुभव करता है; राजा वजीर होता या वजीर राजा होता है, उसी तरह यह भी झूठा मालूम होता है, मायाका बन्धन छुट जानेसे संसारकी भी उसी तरह निवृत्ति होती है।

योगवाशिष्ठके उपशम-प्रकरणमें लिखा है, कि इस संसार नाम्नी मायाका दूसरी किसी वस्तुसे पर्य्यावसान नहीं होता। केवल मनको जीतनेसे ही इसकी विनृत्ति होती है। इसके सम्बन्धमें एक उपाख्यान इस तरह है,—

कोशल जनपदमें गाधि नामके एक महामुनि थे। गाधिने भगवान्‌को प्राप्त करनेके लिये घोर तपस्या ठान दी। भगवान्‌ने इनको तपस्यासे सन्तुष्ट हो कर उनसे वर मांगनेको कहा। इस पर मुनि महाराजने यह वर मांगा, "भगवन्! आपने परमात्मामें जो एक मायाकी रचना की है, मैं मोहकारिणी संसार नाम्नी उसी माया को देखना चाहता हूं।" भगवान्‌ने कहा,—"तुम उस मायाको देख सकोगे, और पीछे इससे मुक्त भी हो जाओगे।' अनन्तर गाधि मायादर्शन करने जा कर कठोर संसारके आवर्त्त यानी चक्करमें फँस गये। इस मायामें पड़ कर उन्हें बहुत दिनों तक दुःख भोगना पड़ा। कभी राजा, कभी दरिद्र इस प्रकार मायाके खेलका जब उन्होंने खूब अनुभव किया, तो भगवान्‌ने उनको मायासे मुक्त कर दिया। योगवाशिष्ठके उपशम प्रकरणके ४५ सर्गसे ५५ सर्ग तक विशेष विवरण देखो।

मायावादिन् (सं० पु०) मायावादी देखो।

मायावादी (सं० पु०) ईश्वरके सिवा प्रत्येक वस्तुको अनित्य माननेवाला, वह जो मायावादके अनुसार सारी सृष्टिको माया या भ्रम समझता हो।

मायाविद् (सं० त्रि०) मायां वेत्ति विद् क्विप्। मायाज्ञ, जो मायाके स्वरूपसे जानकार हो।

मायाविन् (सं० त्रि०) प्रशस्ता माया कापट्यं अस्त्यस्येति माया-, अस्‌मायामेधास्रजो विनि। पा ५।२।१२१) इति विनि। १ मायाकार, बहुत बड़ा चालाक, धोखेबाज़। पर्याय—व्यंसक, मायी, मायिक, ऐन्द्रजालिक। (पु०) २ बिड़ाल, बिल्ली। ३ एक दानवका नाम। यह मयका पुत्र था और वालिसे लड़नेके लिये किष्किंधामें आया था। वाल्मीकिके अनुसार यह दुन्दुभी नामक दैत्यका पुत्र था। ४ मोहन शक्तियुक्त परमात्मा।

"स्वतश्चिदन्तर्यामी तु मायावी सूक्ष्मसृष्टितः।
सूत्रात्मा स्थूलसृष्ट्य व विराडित्युच्यते परः॥"

(पञ्चदशी ६।४)

मायाविनी (सं० स्त्री०) छल या कपट करनेवाली स्त्री, ठगिनी।

मायावी (सं० त्रि०) मायाविन् देखो।

मायावीज (सं० पु०) ह्रीं नामक तान्त्रिक मन्त्र।

मायासीता (सं० स्त्री०) मायाकल्पिता सीता। योग द्वारा अग्निकृत सीता, वह कल्पित सीता जिसकी सृष्टि सीताहरणके समय अग्निके योगसे हुई थी। ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें लिखा है—सीताहरणके समय अग्निने वास्तविक सीताको हटा कर उनके स्थान पर मायासे एक दूसरी सीता खड़ी कर दी थी। पीछे सीताकी अग्नि परीक्षाके समय फिरसे लौटा दी।

अग्निपरीक्षाके समय मायासीताने राम और अग्निपूछा था, 'मैं अभी क्या करूं, कोई रास्ता बतला दीजिये' इस पर अग्निने कहा 'तुम पुष्करमें जा कर तपस्या करो।' अग्निके वाक्यानुसार मायासीताने तीन लाख वर्ष तक कठोर तपस्या की थी। इस तपोबलसे मायासीता स्वर्गलक्ष्मी हो गई थीं।

(ब्रह्मवैवर्त्तपुराण प्रकृतिखण्ड १४ अध्याय)

अध्यात्मरामायणमें लिखा है—मारीच मायामृगका रूप धारण कर जब राम और सीताके समीप आया तब स्वयं भगवान् रामचन्द्रने सीताको एकान्तमें बुला कर कहा था, 'जानकि! भिक्षु रूप रावण तुम्हारे पास आयेगा अभी तुम अपनी सदृशाकृतिको छाया-कुटीरमें रख कर अग्निमें प्रवेश करो और वहां एक वर्ष तक ठहरो। रावण वधके बाद मैं तुम्हें फिर बुला लूंगा। जानकीने जैसा

रामचन्द्रने कहा था, वैसा ही किया। इसी माया सीताको रावण हर ले गया था। लक्ष्मण मायासीताके विषयमें कुछ भी नहीं जानते थे।

(अध्यात्मरामायण अरण्य ७८ अ०) सीता देखो।

मायासुत (सं० पु०) मायायाः मायादेव्याः सु :। मायादेवीके पुत्र, बुद्ध।

मायास्त्र (सं० पु०) एक प्रकारका कल्पित अस्त्र। इसके विषयमे यह प्रसिद्ध है,कि इसका प्रयोग विश्वामित्रने श्रीरामचन्द्रजीको सिखाया था।

मायिक (सं० क्ली०) माया मोहन-गुणः विद्यतेऽस्मिन् माया (व्रीह्यादिभ्यश्च। पा ५।२।११६) इति ठन्। मायाफल, माजूफल। (पु०) २ मायाकार, ऐन्द्रजालिक, जादूगर।

"यन्माया मोहितश्चाह सदा सर्वे परात्मनः।
परवान् दारुपाञ्चाली मायिकस्य यथा वशे॥"

(देवीभागवत ४।१९।४)

(त्रि०) मायाविशिष्ट, मायासे वना हुआ, जाली।

मायी (सं० पु० १ मायाका अधिष्ठाता, ईश्वर। २ माया करनेवाला व्यक्ति। ३ जादूगर। (स्त्री०) ४ हिलमोचिका।

मायी (हिं० स्त्री०) माई देखो।

मायु (सं० पु०) मिनोति प्रक्षिपति देहे उष्माणमिति मिञ् प्रक्षेपणे (कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्य उण्। १।१) इति उण् (मीनातिं दीडा जपि च। पा ६।१।५०) इति आत्वं ततो युक्। पित्त। २ शब्द। ३ वाक्य, वचन।

मायुक (सं० त्रि०) शब्दकारी, शब्द करनेवाला।

मायुराज (सं० पु०) १ कुबेरके एक पुत्रका नाम। २ एक कवि।

मायूक (सं० त्रि०) शब्दकारी, शब्द करनेवाला।

मायूर (सं० क्ली०) मयूराणां समूहः, मयूर (प्राणिरजतादिभ्योऽञ्। पा ४।३।१५४) इत्यञ्। १ मयूर, मोर। २ मयूर-नीयमान रथ, वह रथ जो मयूरोंसे चलता हो। मयूराणामिदं इति-अण्। (त्रि०) २ मयूरसम्बन्धी, मोरका।

"आज्यं गव्यं तथा मासं मायूरञ्चैव वर्जयेत्।"

(भारत १३।१०४।९०)

मायूरक (सं० पु०) वह जो जंगली मोरोंको पकड़ता हो।

मायूरकर्ण (सं० पु०) मयूरकर्णका गोत्रापत्य।

मायूरकल्प (सं० पु०) कल्पभेद।

मायूरा (सं० स्त्री०) काकोदुम्बरिका, कठूमर।

मायूरादिपक्षव्यजन (सं० क्ली०) मायूरादिपक्षस्य व्यजनं। मयूरके पंख, वस्त्र और वेंत आदिका वना पंखा। यह पंखा त्रिदोषजनक माना गया है।

मायूराज (सं० पु०) मायुराज, कुवेरके एक पुत्रका नाम।

मायूरिक (सं० पु०) मयूर पकड कर वेचनेवाला।

मायूरी (सं० स्त्री०) अजमोदा।

मायूस (फा० वि०) निराश, ना-उम्मेद।

मायूसी (फा० स्त्री०) निराशा, ना-उम्मेदी।

मायेय (सं० त्रि०) माया-जात, मायासे उत्पन्न।

मायोभव (सं० क्ली०) १ शुभ, अच्छा। २ सौभाग्य।

मार (सं० पु०) मृ-भावे घञ्। १ मृति, मरण। म्रियन्ते प्राणिनोऽनेन मृ-घञ्। २ कामदेव।

"अनुममार न मार कथं नु सा इति रतिरतिप्रथितापि पतिव्रता।
विरहिणीशतघातनपातकी दयितयापि तयासि किमुज्झितः॥"

(नैषध० ४।७९)

३ विघ्न। ४ मारण, मारनेकी क्रिया या भाव। ५ धुस्तूर, धतूरा। ६ विष, जहर। ७ वौद्धशास्त्रोक्त उपदेवताभेद। बुद्धदेव जब वोधिवृक्षके नीचे योगमग्न थे, उस समय मार अनुचरोंके साथ उन्हें छलने आया था। किन्तु बुद्धके प्रभावसे उसकी एक भी चाल न चली। बुद्ध देखो। ८ गणभेद। कालिकापुराणमें लिखा है,—

ब्रह्माने महादेवको मोहित करनेके लिये कामदेवसे कहा। काम भारी ऊहापोहमें पड गये कि वे महादेवको भुला सकेंगे वा नहीं। इस प्रकार चिन्ता करते करते उन्हे निःश्वास वायु चलने लगी। पीछे नानारूपधारी महापराक्रमी भीषणाकृति चञ्चल स्वभावके गण उनकी निःश्वास वायुसे उत्पन्न हुए। इन गणोंमें कोई तुरङ्गानन, कोई गजानन, सिंहानन, कोई वराह, गर्दभ, भल्लूक, विड़ाल आदि जन्तुके जैसा था। अतिदीर्घाकृति, अतिखर्वाकृति, अतिस्थूल, अतिकृश, पिङ्गललोचन, त्रिनयन, एकनयन, त्रिकर्ण, चतुष्कर्ण, स्थूलकर्ण, महाकर्ण, विस्तृतकर्ण,

कर्णहीन, चतुष्पद, पञ्चपद, त्रिपद, एकपद, एकहस्त, द्विहस्त, त्रिहस्त, चतुर्हस्त, हस्तहीन, गोधाकार, मनुष्याकार, वकाकार, हंसाकार आदि; अर्द्ध कृष्ण, अर्द्ध रक्त, कपिलवर्ण, पिङ्गलवर्ण, नीलवर्ण, शुक्लवर्ण, पीतवर्ण, हरितवर्ण आदि भीषणाकृति और नाना दलोंमें विभक्त हो सभी गण उत्पन्न हुए। उत्पन्न होते ही वे शङ्ख पट्ट मृदङ्गादि बजाने लगे। ये सभी गण जटाजूटधारी और रथारोही थे। नाना प्रकारके अस्त्र धारण कर वे 'मार काट' इत्यादि रूपसे भयानक शब्द करने लगे। कामदेवने इन सब गुणोंको देख कर ब्रह्मासे कहा, 'ब्रह्मन्! ये सब कौन काम करेंगे? कहां रहेंगे, इनका क्या नाम रहेगा? कृपया बतला दीजिये।' उत्तरमें लोकपितामह ब्रह्माने कहा, "इन्होंने जन्म लेते ही 'मार मार' ऐसा शब्द किया था और ये मारात्मक हैं, इस कारण इनका नाम मार होगा। ये सभी प्राणियोंका नाश कर सकेंगे। हे मनोभव! तुम्हारा अनुगमन करना ही इनका प्रधान कार्य होगा। जब कभी तुम अपने काममें कहीं जाओगे तब ये लोग भी साथ जा कर तुम्हारी सहायता करेंगे। तुम जिस पर अस्त्र छोड़ोगे, उसका मन इन सब गणों द्वारा उच्चाटन होगा तथा ये ज्ञानियोंके ज्ञान पथमें हमेशा बाधा डालेंगे। सभी प्राणी जिससे संसार बंधनके अनुकूल कार्य करे, विघ्न बाधा रहते हुए भी ये उन्हें काम करनेमें मदद देंगे। ये सब गण महावेगशाली और कामरूपी हैं। तुम इनका अधिनायक बनोगे। ये गण तपोनिष्ठ, संन्यासी और ऊर्द्ध्वरेता हैं।" (कालिकापु० ६ अ०)

मारक (सं० पु०) म्रियते प्राणिनः यस्मिन् येनेति वा, मृ-घञ्, ततः संज्ञायां कन्। १ मरक, मरण। २ पक्षि विशेष, बाज नामक पक्षी। ३ जन्मस्थानसे आठवें स्थानके अधिपति एक ग्रहका नाम। ज्योतिषके अनुसार मारकग्रह स्थिर करनेमें पहले मारकका स्थान स्थिर करना होगा। इस मारक स्थानका अधिपति जो ग्रह है, उसका दूसरा, सातवां और आठवां अधिपति साधारणतः मारकग्रह है। कारण, दूसरा, सातवां और आठवां स्थान मारकस्थान बतलाया गया है। अतएव उन सब स्थानोंके अधिपति ग्रह ही मारकग्रह हैं।

"भाग्यव्ययाधिपत्येन रन्ध्रेशो मारकः स्मृतः।" (पराशर)

भाग्यपति, व्ययपति और रन्ध्रपति भी मारक हैं। मारकग्रह द्वारा व्याधि, मृत्यु आदिका विचार करना होता है। मारकग्रहके विशेष योग वा दृष्टिसे मृत्यु और सामान्य योग वा सामान्य दृष्टिसे व्याधि होती है। मारक ग्रहकी दशा, अन्तर्दशा और प्रत्यन्तर्दशामें उक्त फल हुआ करता है। अथवा उन मारकग्रहोंके साथ यदि किसी दूसरेका सम्बन्ध हो, तो उस ग्रहको दशा वा अन्तर्दशामें वैसा ही फल होता है। मारकग्रहके साथ सम्बन्ध नहीं होनेसे पीडादि नहीं होती।

"अष्टम ह्यायुषस्थान अष्टमादष्टमञ्च यत्।
तयोरपि व्ययस्थान मारकस्थानमुच्यते॥" (लघुपराशर)

जन्मलग्नसे आठवां, सातवां और दूसरा स्थान मारकस्थान है। अतएव इन तीनों स्थानको ले कर मृत्यु और पीड़ादिका विचार करना उचित है।

पराशर संहितामें इसका विषय इस प्रकार लिखा है— जायापति और धनपति दोनों ही मारक हैं। रवि और चन्द्रको छोड़ कर मारक स्थानके सभी अधिपति ग्रह मारकदोषयुक्त होते हैं। रवि और चन्द्र ग्रहराज होनेके कारण उनमें मारकदोष नहीं है।

विंशोत्तरी मतसे मारकग्रहका निम्नोक्त प्रकारसे निरूपण करना होता है। मारक-विचारके पहले योग आयुः या स्फुटायुःकी गणना द्वारा परमायु स्थिर करके मारकका निरूपण करे। यदि शनि तीसरे, छठे वा ग्यारहवें स्थानका अधिपति हो कर अथवा उनके अन्यतम स्थानके अधिपतिके साथ युक्त हो कर किसी मारकग्रहका सम्बन्धी हो, तो वह शनि दूसरे सभी मारक ग्रहोंको अतिक्रम कर प्रबल मारक हो जाता है।

जायापति, धनपति, षष्ठपति और अष्टमपति ये सभी मुख्य मारक हैं, किन्तु जायापतिकी अपेक्षा धनपति और षष्ठपतिकी अपेक्षा अष्टमपति प्रबल है। अतएव इससे स्पष्ट मालूम होता है, कि धनपति प्रथम, जायापति द्वितीय, अष्टमपति तृतीय और षष्ठपति चतुर्थ श्रेणीका मारक है। पाप सम्बन्धसे बलवान् हो कर कहीं पर या व्यक्तिविशेषमें तृतीय वा चतुर्थ श्रेणीका मारक भी प्रथम श्रेणीके जैसा काम करता है। बृहस्पति और शुक्र केन्द्रपति हो द्वितीय वा सप्तमस्थ होनेसे दोनों ही

प्रवल मारक होता है। इन सब मारक ग्रहोंकी दशाके अप्राप्तिस्थलमें व्यक्तिविशेषमें पापग्रहके सम्बन्धी व्ययपति और तृतीयपति दोनों ही मारक हुआ करते हैं। आत्मक मारकग्रह और लग्नसे दूसरे, तीसरे, छठे, सातवें इन सब स्थानोंके ग्रहोंमें यदि कोई भी ग्रह अधिक बलवान् हो, तो वहां वही ग्रह मारक है। यदि ये सब समान बलके हों, तो उसका मारक नामका ग्रह ही मारक है।

यदि मध्यायुःयोगमें जन्म हो तथा छठे स्थानमें बहुतसे पापग्रहोंके योगादिका सम्बन्ध रहे, तो छठा पति ही मुख्य मारक है। फिर दीर्घायु-योगमें जन्म होनेसे छठा पति जिस राशिमें रहेगा उस राशिके अधिपतिकी दशामें अथवा छठे स्थानसे नवें वा पांचवें अधिपतिकी दशामें मृत्यु होगी, ऐसा जानना चाहिये। वृश्चिक वा मकरलग्नमें जिसका जन्म हुआ हो, उसका प्रबल मारक राहुग्रह है। बलवान् अनेक ग्रहोंके मारक होनेसे उन सब ग्रहोंकी दशा तथा अन्तर्दशाम रोग और क्लेशभोग होता है। उनमें जो ग्रह प्रबल मारक हैं, उनकी दशादिमें साङ्घातिक पीडा, भय, शोक, मृत्युभय, चोर और अग्नि-भय, अपमान, निन्दा, धनहानि और बन्धन, यह आठ प्रकारके मृत्युफल हुआ करते हैं। (पराशरसंहिता)

मारकगण (सं० क्ली०) मारकाणां गणं। रसेन्द्रसार संग्रहोक्त द्रव्यगण। बृहती, पान, पिण्डतगर, पुनर्णवा, मण्डूकपर्णी, कटुकी, मूसाकानी, मैनफल, अकवन और शतमूली ये सब द्रव्य मारकगण हैं।

(रसेन्द्रसारस०)

मारकत (सं० त्रि०) मरकत-अण्। मरकतसम्बन्धीय।

मारकती (सं० स्त्री०) मरकतमणिसम्बन्धी।

मारकवर्ग (सं० पु०) रसेन्द्रसारसंग्रहोक्त द्रव्यगण। गणके नाम—मोथा, वच, चिता, गोखरू, तितलौकी, दन्ती, जातिपुष्प, रास्ना, शरपुङ्ख, घृतकुमारी, चण्डालिनी, ओल, कुचिला, हारमुच, लज्जालु, घोषा, लाक्षा, दन्तोत्पल, वाला, पोपल, निसिन्दा, वन इलायची, विषलाङ्गलिया, शाल, अकवन, सोमराज, रविभक्ता, काकमाची, श्वेत आकन्द, अपराजिता, वायसतुण्डी, सीज, विजबंद, सोंठ, वराहकान्ता, हाथीसूंड, कदली, रास्ना, कच्ची इमली, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, पुनर्णवा, श्वेतपुनर्णवा, धतूरा, काकजङ्घा, शतमूली, क्षीरीप, परगाछा, तिल, भेकपर्णी, दूर्वा, मूर्वा, हरीतकी, तुलसी, गोक्षुर, मूसाकानी, वनबगलता, तालमूली, हींग, दारचीनी, सहिजन, अपराजिता, जलपीपल, भृङ्गराज, सैन्धवलवण, प्रसारिणी, सोमलता, श्वेतसर्षप, असन, हंसपदी, व्याघ्रपदी, पलाश, भिलावाँ और इन्द्रवारुणी। (रसेन्द्रसारस०)

मारका (अ० पु०) १ चिह्न, निशान। २ किसी प्रकारका चिह्न जिससे कोई विशेषता सूचित होती है। ३ युद्ध, लड़ाई। ४ बहुत बड़ी या महत्त्वपूर्ण घटना।

मारकाट (हिं० स्त्री०) १ युद्ध, लड़ाई। २ मारने काटनेका भाव। ३ मारने काटनेका काम।

मारकायिक (सं० पु०) बौद्धोंके अनुसार मारके अनुचर।

मारकीन (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका मोटा कोरा कपड़ा जो प्रायः गरीबोंके पहननेके काममें आता है।

मारखोर (फा० पु०) काश्मीर और अफगानिस्तानमें होनेवाली एक प्रकारकी बकरी या भेड़। यह प्रायः दो तीन हाथ ऊंची होती है और ऋतुके अनुसार रंग बदलती है। इसके सींग जड़में प्रायः सटे रहते हैं। इसकी दाढ़ी लम्बी और घनी होती है।

मारग (सं० पु०) मार्ग देखो।

मारङ्गा (सं० स्त्री०) मेदा।

मारजन (सं० पु०) मार्जन देखो।

मारजनी (सं० स्त्री०) मार्जनी देखो।

मारजातक (सं० पु०) मार्जार, बिल्ली।

मारजार (सं० पु०) मार्जार देखो।

मारजित् (सं० पु०) मारं कामं जितवान्, जि-क्विप् तुगागमः। १ बुद्धदेव। २ कन्दर्पविजेता, वह जिसने कामदेवको जीत लिया हो।

मारट (सं० क्ली०) इक्षुमूल, ऊखकी जड़।

मारण (सं० क्ली०) मार्यते इति मृ णिच् भावे ल्युट्। १ वध, हत्या करना।

"यावन्ति पशुरोमाणि तावत् कृत्वेह मारणम्।
वृथा पशुघ्नः प्राप्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि॥"

(मनु ५।३८)

२ अभिचार विशेष, जिस क्रिया द्वारा मृत्युव्याधि आदि अनिष्ट होता है उसे मारण कहते हैं। अथर्ववेद और तन्त्रशास्त्रमें इस मारण क्रियाका विधान है।

बलवान् और चन्द्रके क्रूरग्रहके साथ क्रूरग्रहके क्षेत्र-में रहते समय यदि वृष्टियोग हो, तो उस समय मारण क्रियाका अनुष्ठान करना चाहिये।

"अभिचारस्य विप्रयानाकर्ण्य वदामि ते।
सक्रूरे क्रूर वर्गस्थे चन्द्रे बलिनि शोधने।
विष्टियोगे च कर्त्तव्योऽभिचारोऽप्यरिनिधने॥"

(षट्कर्मदीपिका)

पापिष्ठ, नास्तिक, देवब्राह्मणादि निन्दक, अज्ञ, घातक, कुत्सितकर्मरत, क्षेत्र, वृत्ति, स्त्री और धनापहारी, कुलान्तकारी, समयनिन्दक, खल, राजद्रोही, विषाग्नि शस्त्रादि द्वारा प्राणियोंके प्राणनाशक, ऐसे दोषयुक्त व्यक्तियोंकी यदि हत्या की जाय, तो हत्या करनेवालेको कोई दोष नहीं लगता। दशास्थितिकी विवेचना कर मारणकार्य करना होता है। जो व्यक्ति पूर्व लिखित योगादिका विचार किये विना किसीको मारनेमें प्रवृत्त होता है, उसको मृत्यु शीघ्र ही होती है। ब्राह्मण, धार्मिक, राजा, स्त्री, यज्ञशील, दाता और दयावान् इन सब व्यक्तियोंके प्रति मारणादि किसी प्रकारका अभिचार कर्म नहीं करना चाहिये*। यदि कोई शत्रुतावशतः ऐसा करे, तो विपरीत फल होता है अर्थात् जो व्यक्ति अभिचार करेगा उसीकी मृत्यु होगी। जिसकी हत्या करनी होगी, पहले उसकी आयुका परिमाण जान लेना आवश्यक है। उसका जन्मलग्न, जन्म, नक्षत्र और जन्मलग्नाधिपति ग्रह इन तीनोंके अनुकूल मारणकर्म करना होगा। इन सब ग्रहोंके बलाबलका अच्छी तरह विचार किये विना यदि कार्य किया जाय, तो मारनेवालेकी मृत्यु होती है।

देवताके प्रति भक्ति दिखला कर गुरुके आज्ञानुसार गुरुदेवके पार्श्ववर्त्ती हो कार्य करे। अभिचारकार्यमें शत्रुके लिये शोक नहीं करना चाहिये। करनेसे फल नहीं होता, वरन् अनिष्ट ही होता है। जिसका मारण करना होगा, उसके जन्मलग्नसे अष्टम लग्नमें तथा अष्टम राशिमें क्रूरग्रहके रहते समय मारणकार्य करे। मारण कार्यमें राशिके अनुसार दिनका निर्णय करके पीछे काम शुरू कर दे। मेष और वृषको पूर्व दिशा, मिथुनको अग्निकोण, कर्कट और सिंहको दक्षिण दिशा, कन्याको नैऋतकोण, तुला और वृश्चिकको पश्चिम दिशा, धनुःको वायुकोण, मकर और कुम्भको उत्तर दिशा तथा मीनको ईशानकोण, इस प्रकार राशि-क्रम जान कर कार्य करे। दिनमें पांच पांच दण्ड करके एक एक राशि होती है। जब जिस ओर कार्य करना होगा, तब उसी ओरकी राशिको जान कर मारणकार्य करना श्रेय है।

लग्नसे गोचरमें, तृतीय और पञ्चम स्थानमें यदि अशुभ ग्रह रहे, तो मारणकार्य करना चाहिये।

मारणादि अभिचारकर्ममें कुण्ड बना कर होम करना आवश्यक है। यदि कुण्ड न बना सके, तो स्थण्डिल करके होम करे। स्थण्डिलका नियम इस प्रकार है—समतल भूमिको अच्छी तरह गोबरसे लीप कर एक हाथ चौकोन स्थान चिह्नित करे। पीछे उस पर चार अंगुल बालू खड़ा कर दे। इसीका नाम स्थण्डिल है। इसी स्थण्डिल पर होम करना होगा।

व्याघातयोग, हर्षणयोग, विषयोग, मृत्युयोग और क्रूर-योग, इन सब योगोंमें मारणादि अभिचारकार्य उत्तम है।

वशीकरण, आकर्षण, विद्वेषण और मारण आदि अभि-चार कर्मोंमें चार पुत्तलिका (पुतली) बनावे। पुत्तलिका मोम या मैदेकी होनी चाहिये। उस पुत्तलिकाको कुण्ड-में रख कर पूजा और होम करना होता है। सर्पमस्तकके

* "पापिष्ठान् नास्तिकाश्चैव देवब्राह्मणनिन्दकान्।
अज्ञांश्च घातकान् सर्वान् क्लेशकर्मसु संस्थितान्॥
क्षेत्रवृत्तिधनस्त्रीणां आहर्त्तॄन् कुलान्तकम्।
निन्दकं समयानाञ्च पिशुनं राजघातकम्॥
विषाग्निशस्त्राद्यैर्हिंसकं प्राणिनां मुदा।
योजयेन्मारणे कर्मण्येतान्न पातकी भवेत्॥
दशास्थितिञ्च संवीक्ष्य सूर्यान्मारणमात्मवान्।
अनवेक्ष्य कृतं कर्म आत्मानं हन्ति तत्क्षणात्॥
ब्राह्मणं धार्मिकं भूपं वनितामैष्टिक नरम्।
वदान्यं सदयं नित्यमभिचारे न योजयेत्॥
रिपोरष्टमलग्ने च क्रूरे त्वष्टमराशिगे।
स्थाने कुर्यादनिष्टानि तद्विनाशाय साधनम्॥" इत्यादि।

(षट्कर्मदीपिका)

स्रुवसे होम करना उचित है। साधक दक्षिण मुंह बैठ कर शत्रुका नामोच्चारण करते हुए त्रिकोणकुण्डमें दो पहर रातको होम करे।

किसी निर्जन प्रदेशमें वा श्मशानमें मारणादि अभिचारकार्य उत्तम है। जिस स्थान पर बैठ कर मारण-कार्य करना होगा उसके चारों ओरकी रक्षा राजाको करनी चाहिये। साधक स्वदेशमें वा स्वमण्डलमें अभिचारादि कार्य न करे। यदि कोई प्रमादवशतः ऐसा करे, तो अनेक विघ्न होता है।

बहेडे वृक्षकी लकडीसे आग बाल कर बहेडे और करञ्जफलको नागकेशरके रसमें अभिषिक्त करके होम करे। इससे अतिशीघ्र शत्रुका नाश होता है। करञ्ज-वृक्षकी लकडीसे आग बाल कर उस वृक्षके समिधको कटुतैल-मिश्रित करके यदि होम किया जाय, तो शत्रुका मारण होता है। बहेडे वृक्षकी लकडीकी आगमें उस वृक्षके फलको घृतयुक्त कर होम करनेसे शत्रु ज्वराभिभूत हो मृत्युमुखमें पतित होता है। कपासके बीजको कांजीमें मिला कर उससे होम करनेसे शत्रुगण आपसमें कलह करके मर मिटते हैं। सरसों, सोंठ, पीपल और मिर्च इन सब द्रव्योंको एकत्र घीमें मिला कर यदि होम किया जाय, तो शत्रुकी ज्वररोगसे मृत्यु होती है। ऋग्वेदोक्त लवण मन्त्रसे अभिचारकर्म भी किया जा सकता है।

मारणादि अभिचारकर्म विशेष कष्टसाध्य है। इस लिये इसमें विशेष सावधान रहना उचित है। इसमें किसी प्रकारकी अङ्गहानि होनेसे विपरीत फल होता है। अतएव सुशिक्षित क्रियावान् तन्त्रशास्त्रमें सुपण्डित व्यक्ति द्वारा यह कार्य कराना चाहिये।

(षट्कर्मदीपिका)

योगिनीतन्त्रमें मारणका विषय इस प्रकार लिखा है—

मङ्गलवारमें अष्टमी तिथि पडनेसे उस दिन रातको खैरकी लकडीका अंगार ले कर लौहफलकमें शत्रुकी प्रतिकृति अङ्कित करनी होगी। पीछे उस अङ्कित शत्रुके मस्तक, नेत्र, ललाट, हृदय, कर, नाभि, गुह्य, कटि, पृष्ठ और दोनों पैर आदिमें स्वाहान्त चतुर्दशाक्षर मन्त्र लिखने होंगे। यथाक्रम मन्त्रवर्णोंको लिख कर उसकी प्रतिष्ठा करनी होगी। पीछे संहारमुद्रा करके जयप्रदादेवीका ध्यान करना होगा। ध्यान इस प्रकार है—

"दीर्घाकारा कृष्णवर्णा सदार्द्धस्तनमस्तकाम्।
नृमुण्डयुगल हस्त चर्वयन्तीं दिगम्बरीम्॥
शत्रुनाशकरीं देवीं ध्यायेतशत्रुजयाय च॥"

इस मन्त्रसे ध्यान करके हलदी और ईंटके चूरको वाम हाथमें ले और 'ओं शत्रुनाशकर्यै नमः' इस मन्त्रसे धारा दे। जिसका मारण करना होगा, उसका नाम ले कर 'अमुकस्य शोणितं पिब पिब, मांसं खादय खादय ह्रीं नमः' इस मन्त्रसे दो पहर रातको पूजा करके १०८ बार जप करना होगा। ऐसा करनेसे ग्यारह दिनमें उसे ज्वर आता और बीसवें दिनमें मृत्यु होती है। (योगिनीतन्त्र पूर्वख० ४ पटल) दूसरा तरीका—साढ़का गोबर ले कर शिव बनावे। पीछे उस शिवका यथाविधान पूजन करनेसे मारण होता है।

मारणके बहुतसे उपाय तंत्रादिमें बतलाये गये है। विस्तार हो जानेके भयसे यहा कुछ नहीं लिखा गया। गुरुके निकट अभ्यास नहीं करनेसे इन सब कामोंमें हाथ नहीं डालना चाहिये। क्योंकि इसमें पद पदमें विघ्नका सम्भावना है। अतएव मारणकारी व्यक्तिको इसमें बहुत सावधान रहना चाहिये।

"गृध्रास्थिञ्च गवास्थिञ्च मूत्रनिर्माल्यमेव च।
अरेर्यो निखनेत् द्वारे पञ्चत्व मुपयाति सः॥"

(गरुडपुराण १८६ अ०)

गीधकी हड्डी, गायकी हड्डी और मूत तथा निर्माल्यको शत्रुके दरवाजे पर गाड देनेसे उसकी मृत्यु होती है।

४ भस्मकरण। आयुर्वेदमें लिखा है, कि रत्नादिका मारण करके उसका व्यवहार करना चाहिये। जिस उपायसे रत्नादिका दोष विनष्ट होता है उसे मारण कहते हैं। मारणको वैद्यकमें भस्म भी कहा गया है। धातु और रत्नादिका मारण विषय उन्हीं सब शब्दोंमे देखो।

मारतंड (सं० पु०) मार्त्तण्ड देखो।

मारतंडमंडल (सं० पु०) मार्त्तण्ड मण्डल देखो।

मारतंडसुत (सं० पु०) मार्त्तण्डसुत देखो।

मारतौल (हिं० पु०) एक प्रकारका बडा हथौड़ा।

मारना (हिं० क्रि०) १ वध करना, घात करना, प्राण लेना। २ दुःख देना, सताना। ३ शस्त्र आदि चलाना

या फेंकना। ४ बंद कर देना। ५ कुश्ती या मल्लयुद्ध मे विपक्षीको पछाड़ देना। ६ जरब लगाना, ठोंकना। दण्ड देनेके लिये किसीको किसी वस्तुसे पीटना या आघात पहुंचाना। ८ किसी वस्तुको इस प्रकार फेंकना कि वह किसी दूसरी वस्तुसे जोरसे टकरा जाय। ९ शिकार करना, आखेट करना। १० नष्ट कर देना, अन्त कर देना। ११ किसी शारीरिक आवेग या मनोविकार आदिको रोकना। १२ चलाना, संचालित करना। १३ गुप्त रखना, छिपाना, दवाना। १४ करना, लगाना। १५ अनुचित रूपसे, बिना परिश्रमके अथवा बहुत अधिक प्राप्ति करना। १६ धातु आदिको जला कर उसकी भस्म तैय्यार करना। १७ अनुचित रूपसे रख लेना, जो कुछ देना वाजिब हो वह न देना। १८ बल या प्रभाव कम करना, मारक होना। १९ विजय प्राप्त करना, जीतना। २० ताश या शतरंज आदि खेलोंमें विपक्षीके पत्ते या गोट आदिको जीतना। २१ निर्जीव सा कर देना, किसी योग्य न रहने देना। २२ लगाना, देना। २३ गुदा भंजन करना, पुरुषका पुरुषके साथ संभोग करना। २४ संभोग करना, स्त्री-प्रसङ्ग करना। २५ डसना, काटना।

मारप (सं० पु०) एक प्राचीन पण्डित।

मारपेच (हिं० पु०) चालबाजी, वह युक्ति जो किसीको धोखेमें रख कर उसकी हानि करने या उसे नीचा दिखानेके लिये की जाय।

मारफत (अ० व्य०) द्वारा, जरियेसे।

मारव (सं० पु०) मरुदेवता।

मारवराज्य (सं० क्ली०) राजतरंगिणीके अनुसार एक प्राचीन देश।

मारवा (हिं० पु०) १ एक सङ्कर राग। यह परज, विभास और गौरीको मिला कर बनाया जाता है। कुछ लोग इसे भ्रमसे श्रीरागका पुत्र मानते हैं। २ एक प्रकारका खयाल जो तिलवाड़ा ताल पर बजाया जाता है।

मारवाड़—राजपूतानेका सबसे बड़ा सामन्तराज्य। क्षेत्रफल ३५०१६ वर्गमील अर्थात् एजेन्सीके सम्पूर्ण क्षेत्रफलके चतुर्थांशसे भी अधिक है। जनसंख्या वीस लाखके करीब है। यह अक्षा० २४° ४२' उ० तथा देशा० ७०° ५१' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें बीकानेर, उत्तर-पश्चिममें जसलमीर, पश्चिममें सिन्ध, दक्षिण-पश्चिममें कच्छका रणप्रदेश, दक्षिण-पूर्वमें उदयपुर, पूरबमें अजमेर-मेरवाडा राज्य और किसनगढ़ तथा पूरबमें जयपुर कृष्णगढ़ है। इस राज्यमें २७ शहर और ४०३० ग्राम लगते हैं।

इस राज्यमें राजपूतानेकी प्रसिद्ध मरुभूमि अवस्थित है। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें "दाशेरक", "मरुस्थली" या मरुस्थानके नामसे इस देशका उल्लेख पाया जाता है। मुसलमान ऐतिहासिकोंने मरुदेशके अपभ्रंश मर्देश शब्दका व्यवहार किया है। यह मरुभूमि मृत्युस्थल है इसलिये यहांके लोग इसे 'मारवाड़' कहते हैं। योधपुर इस राज्यकी राजधानी है। इसलिये आज कल सभी लोग इसे जोधपुर-राज्य कहा करते हैं।

मरुभूमि होने पर भी जोधपुरराज्य प्राकृतिक सौंदर्यमें विशेष हीन नहीं है। लूनी नदी के किनारेकी समतल भूमिका दृश्य अत्यन्त सुन्दर है। अजमेरको एक झीलसे सागरमती नदी निकल कर गोविन्दगढ़के पास सरस्वतीसे मिलती है। यह सरस्वती नदी पुष्कर झीलसे निकली है। इस विशाल भूभागमें सागरमती और सरस्वतीका संगम अत्यन्त सुन्दर है। गोविन्दगढ़से यह सम्मिलित नदी लुनी नदीके नामसे दक्षिण पश्चिमकी ओर बहती हुई कच्छके रणप्रदेशकी दलदल भूमिमें जा गिरी है। अरवली पहाड़से निकल कर जोजरी, शुकरी, गुयराला, पाली, वान्दी आदि कई छोटी छोटी नदियां सहायक रूपसे इसके कलेवरको बढ़ाती है। वर्षाकालमें जो सब स्थान जलमें डूब जाते हैं उन सब स्थानोंमें जौ और गेहूंकी अच्छी फसल लगती है। नदीके किनारे रहनेवाले लोग पीने तथा खेतीका जल कुओंसे निकालते हैं।

जोधपुर और जयपुरके बीच कम्बर (कुमार) नामकी एक बड़ी झील है। इसका तथा इससे छोटी, दीदवाना और पाचपादरा नामकी दो झीलोंका जल खारा है। इन तीन झीलोंके जलसे ही यहां नमक निकाला जाता है। साचोर जिलेमें एक बड़ा जलमग्न भूभाग है। वर्षाके जलसे करीब ५० मील जमीन डूब जाती है, लेकिन ग्रीष्म

ऋतुमें जल सूख जाता है और तब जौ, चने आदिकी फसल लगाई जाती है।

यहांके पर्वतों पर तरह तरहके पत्थर हैं। अरवली पार कर पश्चिम ओर जानेसे बालुकामय भूभाग पर बालूके पहाड़ नजर आते हैं। फलतः अरवली पहाड़से लूनी नदी तक जोधपुर राज्य वालुकामय होने पर भी बीच बीचमें सुन्दर पर्वतश्रेणी शोभा देती है। इन पर्वतमालाओंमें नान्दोलाइ, पुण्यगिरि सुजातशैल, पालि शैल, गुन्दोजशैल, सुंदराशैल, आलेरशैल आदि उल्लेखनीय हैं। इन सब पर्वतोंमें अभी तक प्राचीन राजों और सामन्तोंकी कीर्त्ति वर्त्तमान है। लूनी पार करनेके बाद बालूके पहाडोंकी संख्या क्रमशः कम होती गई है। जोधपुर नगरके बाद ये पहाड़ और भी भिन्न रूपके हो गये हैं।

जोधपुर नगरके उत्तर बालू भरी जमीन 'थल' और बालूके छोटे छोटे पहाड 'टिब्बा' कहलाते हैं। इन बालूमय भूखण्डोंमें जहां तहां फसल लगी जमीन दिखाई देती है। लेकिन इन स्थानोंमें जलका बड़ा अभाव है। ऊपरमें बालू और नीचे उसी जातिके पत्थर पाये जाते हैं। कुआ खोदनेके समय इस प्रकार कठिन पत्थरकी तहें मिलती हैं। सुजातके पास रांगा पाया जाता है। सांभर, पादपाचर, दीदवाना, फलोड़ी, पोकर्ण, सर्गोत और कछवान नामक स्थानोंमें थोड़ा बहुत नमक उत्पन्न होता है। मकराणा और धांनरा नामक स्थानमें भी संगमरमर पाया जाता है। कापूरीमें सिमेंट मिट्टी बहुत मिलती है।

इतिहास।

मारवाड़का पुराना इतिहास नहीं मिलता। प्राचीन समयमें जिन राजाओंने मारवाड़के राजसिंहासनको सुशोभित किया था उनका वर्णन भाट लोगोंकी वंशावलियोंमें पाया जाता है। लेकिन लोग उन्हें बहुत अंशोंमें कपोल-कल्पित और असम्बद्ध समझते हैं। इसलिये प्राचीन कालको छोड़ ऐतिहासिक समयसे मारवाड़का एक संक्षिप्त इतिहास लिखा जाता है।

मेवाड़में जिस समय चौहान राजे राज्य करते थे उसी समय राठोर राजे मारवाड़के राजसिंहासन पर सुशोभित थे। किस समय इन राठोरोंने मारवाड़में अपना सिक्का जमाया सो मालूम नहीं। क्योंकि सप्रमाण इसका कोई विवरण नहीं मिलता। राठोर राजवंशकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें बहुत-सी किंवदन्तियां हैं। ये लोग मेवाड़के राणा वंशधरोंकी तरह अपनेको सूर्यवंशी कहते हैं। राठोर देखो।

जो हो, इस देशके इतिहाससे मालूम होता है, कि राठोरराज घरानोंने कान्यकुब्ज नगरमें अपना शासन जमाया था। वीरता और राज्य जयकी आशाने राठोर जातिको राजपूत जातियोंका अग्रगण्य बना दिया। क्रमशः इसी वीर जातिकी एक एक शाखा बीकानेर, कृष्णगढ़, इदर और अहमदनगरमें राज्य स्थापनमें समर्थ हुई। मारवाडमें राठोरोंके बसनेके पहिले अनुमान किया जाता है, कि इस देशमें जाट, मीना और भील-सरदार रहते थे। राठोरोंने इन सब सामन्तोंको हरा कर मारवाड़राज्यकी सीमा बढ़ाई।

एक प्राचीन राजकीय इतिहासमें सत्ययुगसे राठोर राजाओंका राज्यकाल कल्पित हुआ है। इस ग्रन्थकी राज-वंशावलीमें शासनकालकी घटनाओंका उल्लेख नहीं है, अतएव ऐतिहासिक दृष्टिसे इन्हें छोड़, राजा नयनपालकी राज्य प्राप्तिसे ऐतिहासिक विवरण दिया जाता है। राजा नयनपालने कन्नौजके राजा अजयपालको जीत और युद्ध हीमें उसे मार कर कन्नौज राज्यको अपना लिया। उस समय तक राठोर लोग कनोजिया राठोर कहलाते रहे और अपनी वीरताके पुरस्कारमें वंश-मर्यादा-सूचक "कामध्वज"की उपाधि इन्होंने ग्रहण की। राजा नयनपालके लड़के पदरत (भरत) और पदरतके लडकोंसे तेरह 'कामध्वज' उपाधिधारी राठोर राजवंशोंकी प्रतिष्ठा हुई। उनका विवरण यों हैः—

१ धर्मबिम्बसे दानेश्वर, २ भानुदसे अभयपुर, ३ वीरचन्द्रसे कुपोलिया, ४ अमरविजयसे कोड़ा, ५ सुजनविनोदसे जोरघैरा या ज्वरखरा, ६ पद्म, इन्होंने उड़िसा विजय किया था। ७ अहिहरसे अहिहरवंश, ८ वरदेवसे पारक कामध्वज, ९ उग्रप्रभुसे चन्देला, १० मुकमालसे वीर कामध्वज, ११ भारतसे भारतीय, १२ अलकुलसे क्षीरोदीय, १३ चांद काशीवासी हुए।

इन तेरह वंशो'से राठोरवंश क्रमशः शाखा-प्रशाखाओंमें विभक्त हो गया।

कन्नौज-राज धर्मविम्बके अजयचांद नामक एक लड़का था। इनसे २१ पीढ़ो नीचे तक 'राव'-की उपाधि थी। पश्चात् उदयचांद नरपति, कनकसेन, साहसपाल, मेघसेन, वीरभद्र, देवसेन, विमलसेन, धनसेन, मुकुन्द, भद्रु, राजसेन, त्रिपाल, श्रोपुञ्ज आदि 'राजा' कहलाये। विजयचंदके पुत्र जयचंद दाल थामूला उपाधिके साथ कन्नौजके प्रथम नायक हुए। किन्तु कन्नौज-पति जयचंद और उनके पूर्वपुरुषोंका जो ताम्र-शासन मिला है, उसके साथ ऊपरके वर्णनका कुछ भी मेल नहीं खाता। कन्नौज देखो।

इस प्रकार राठोर प्रतिष्ठाका संक्षिप्त वर्णन दे कर इतिहासकारने, एकदम जयचंदके राज्यकालसे ही वास्तविक इतिहासका अनुसरण किया है। सन् ११९४ ई०मे महम्मदगोरीने राजा जयचंदको हराया, राठोरोंका राज्य कन्नौजसे उखाड़ दिया। तव उनके पोते शिवजो और शेठराम १२१२ ई०में जन्मभूमिको छोड़ द्वारिकातीर्थ जानेकी इच्छासे पश्चिमकी मरुस्थलीमें आये। यहां आ कर वे कलुमदके सर्दारके अधीन काम करने लग गये। वाद उन्होंने फुलवारके नामी डकैतोंके सरदार लाखा फुलनाको हराया और सर्वसाधारणसे प्रशंसा लूटी। इस युद्धमें शेठ राम खेत रहे।

उनकी इस वीरतासे प्रसन्न हो कलुमदके सुलंकी सरदारने उन्हें कन्यादान दिया। इसके वाद वे द्वारिका गये। वहांसे लौटते समय उन्होंने लाखा फुलनाको अपने हाथसे मार डाला और रास्तेमे खरधारके गोहिल सरदार और महेशदासको मार कर उसके खरप्रदेशको अपना लिया। कर्नल टाडने लिखा है, कि खरप्रदेश जीतनेके वाद वे पालीप्रदेशके ब्राह्मणोंके बुलाने पर पहाड़ी डकैतोंको दवानेके लिये आगे वढ़े। डकैतोंके दमनके वाद ब्राह्मणोंके अनुरोधसे उन्होंने वहीं जमीन ले कर रहना शुरू किया। इस तरह पालीप्रदेशमें अपना राज्य वढ़ा राठोर-सरदार शिवजी भविष्य राज्य विस्तारकी नींव डाल गये। उनका राज्य उनके जेठे लड़के अश्वत्थामाके हाथ रहा। सुनिंगने इदरमे राज्य स्थापित किया और उनके सवसे छोटे लड़के अजयमलने भी कमण्डलराज्य विजय कर वहीं अपना राज्य वसाया। भाट लोगोंकी वंशावलिओंके अनुसार शिवजीके जेठे लड़के अश्वत्थामाने गुहाजातिको हराया और खरराज्य तक अपनी सीमा वढ़ाई और उनके भाई सुनिङ्ग गुजरातके इदरराज्यमें अभिषिक्त हुए।

मरनेके समय राजा अश्वत्थामाके दुहर, जपसिंह, खम्पश ह, भूपसिंह, दण्डल, जैतमल, वन्दर और उहर नामके आठ लड़के थे। जेठे लडके दुहर पिताके सिंहासन पर वैठ कन्नौज विजयकी चेष्टा करने लगे। लेकिन इसमें इन्हें सफलता न मिली। तव इन्होंने राजा परिहारके मन्दौर प्रदेश पर आक्रमण किया। इस युद्धमें राठोरके रक्तसे मन्दौर रञ्जित हो गया। मन्दौरके युद्धक्षेत्रमें राजा दुहर खेत रहे। उस समय इनके रायपाल, कीर्त्तिपाल, विहार, पित्तल, योगाइल दलु और वेगर नामके सात लड़के थे। इनके ज्येष्ठ पुत्र रायपालने पिताके सिंहासन पर वैठ अपने पिताको मारनेवाले मन्दौर सरदार परिहारको यमपुर भेज दिया। इनके तेरह लड़के मरुदेशके भिन्न भिन्न भागमें सामन्तोंकी हैसियतसे जम गये। इनका जेठा लड़का कणहाल इनके सिंहासन पर वैठा और राज्य किया। कणहालके लड़के जाह्न, जाह्नके लड़के चादु और चादुके लडके थिदु क्रमशः राजा हुए। राव थिदु शनिगड़ाको युद्धमें हराया और उनके भिल्लमाल प्रदेशको अपने अधिकारमें लाया। देत्तरा और वेलेचा जातियोके अनेक स्थानोको ले इन्होंने अपनी राज्यसीमा वढ़ाई।

वीर थिदुके मरनेके वाद उनके लड़के सिलूक राजा हुए। सिलूकके वाद उनके लडके विरामदेवके मरने पर उनके वलशाली पुत्र राव चण्ड गद्दी पर वैठे।

मारवाड़-राजवंशके स्थापक शिवजीसे नीचे राव-चण्ड ११वें राजा हुए। इनके वीर्य्यवलसे राठोर-राजलक्ष्मी जगमगा उठो। चण्डके शासनकालके १३८२ ई०से ही राठोरजातिकी वास्तविक मारवार-विजय मानी जाती है। इस समय युद्धके मदसे मतवाले राठोर लोगोंने मन्दौर नगरमें अपना अधिकार जमा वहां

राजधानी स्थापित की। चण्डने नान्दोल और नागोर-गढ़को दखल कर लिया था। इन्होंने परिहारकी राजपुत्री इन्दुमतीसे विवाह किया।

चण्डके चौदह लडके थे। इनमें रणमल, सत्य, अरण्यकमल और काणके वंश अभी भी मारवाडमें वर्त्तमान हैं। चण्डकी हंसा नामक एक लड़कीका विवाह मेवाड-पति राणा लक्षके साथ हुआ था। इस कन्याके गर्भसे राणा कुम्भ उत्पन्न हुए। इस विवाहको ले कर मेवाड और मारवाडके बीच घोर शत्रुता चली थी।

सन् १४०८ ई०में राव चण्ड स्वर्गवासी हुए। पीछे उनके बड़े लडके रणमल सिंहासन पर बैठे। ये भी पिताके जैसे शक्तिशाली थे। इनका चलाया हुआ तौल परिमाण अभी तक मारवाडमें प्रचलित है। इनके २४ लडके थे। बड़े लडके योध राव पिताके मरने पर गद्दी पर बैठे और कन्दल, चम्पा, अखिराज, मण्डल, पट्ट, लाखा, वाला, जैतमल, कर्ण, रूप, नाथू, डुंगर, सन्द, मन्द, वीरु, जगमल, हेम्पू, शक्त, करमचंद, अरिवल, केतुसिंह, शत्रुशाल और तेजमल नामके शेष २३ लडके भिन्न भिन्न प्रदेशके सामन्त हुए थे। इन २४ लडकोंसे २४ शाखायें निकलीं।

योधरावने राजा होने पर अपने भुजबलसे सुजात आदि देश जय किये। इन्होंने सन् १४५६ ई०में मन्दौर राजधानी छोड वर्त्तमान जोधपुर बसाया और यहीं अपना राजपाट उठा लाये। बादमें इनके लड़के सूर्यमल सिंहासन पर बैठे। राजा योधरावके शान्तल, सूर्य, गुम, दुदो, विको, भीलमल, शिवराज, कर्म्मसिंह, रायमल, सामन्तसिंह, विदा, बनहर और निम नामक १४ लडकोंसे १४ शाखाओं और सामन्त राज्योंकी उत्पत्ति हुई।

राजा सूर्यमलके भाग्य, उदय, स्वर्ग, प्रयाग और विरामदेव नामके पाँच लडके हुए। इन पाँचोंसे पाँच शाखाएं निकली। सूर्यमल रावकी मृत्युके बाद भाग्यके लडके गंगा राव सन् १५१६ ई०में राजगद्दी पर बैठे। उस वर्ष इन्होंने दौलत खाँ लोदीको हरा कर अपना राज्य सुदृढ़ कर लिया। सन् १५२८ ई०में इनकी राठोर सेनाने बड़े विक्रमके साथ उदयपुरके राणा संग्रामसिंहका पक्ष ले कर मुगल बादशाहके विरुद्ध बियाना (मतान्तरसे खानुया) रणक्षेत्रमें घोर युद्ध किया। इस युद्धमें गंगारावके पोते रायमल मारे गये। इस दुर्घटनाके बाद गंगाराव चार वर्ष जीते रहे।

गंगारावकी मृत्युके पश्चात् मारवाड़के कुलरवि मालदेव राठोर सिंहासन पर सन् १५३२ ई०में आरूढ़ हुए। इन्होंने नागोर, अजमेर, झालरापाटन, शिवनो, भद्राजुंन, बीकानेर, विक्रमपुर आदि स्थानोंको अपने शासनमें कर लिया। इन्होंने सांभर झीलके नमककी आयसे राज्यरक्षाके लिये मालकोट और भद्राजुंन दुर्ग बनवाये। इन्हींके बाहुबलसे सुजात, साम्भर, मेरतिया, खाता, वेदनूर, लादनु, रायपुर, भद्राजुंन, नागोर, शिवानो, लौहगढ़, जयकलगढ़, बीकानेर, भिल्लमाल, पोकर्ण, वार, कुशली, रेवास, जाजावर, झालोर, वाचली, मूलार, नादोल, फिलोडी, साचोर, दीदवाना, चात्सु लोवाइन, मुलरना, देवरा, फतेहपुर, अमरसर, खवर, वनियापुर, टोंक, थोड़ा, अजमेर, जहाजपुर और शेखावटीप्रदेश मारवाड़-शासनाभुक्त हुए थे।

इसके दश वर्ष बाद इनकी भाग्यलक्ष्मीने मुंह फेरना आरम्भ किया। सन् १५४४ ई०में दिल्लीके अफगान राजा शेरशाह ८० हजार सेना ले कर मारवाड पर चढ़ आया। शेरशाहकी जय हुई, लेकिन उसकी सेनाको राठोरोंके हाथ बड़ी क्षति उठानी पडी।

सन् १५६७ ई०में मुगल-बादशाह अकबरने मारवाड पर चढ़ाई की। मुगल सेनाने मालकोट या मैरतागढ़को घेर लिया। इसके बाद विजयके आवेशमें मुसलमान सेनाने भीमवेगसे दुर्भेद्य नागोरगढ़को भी जीत लिया। बादशाहने अपने अनुगृहीत शिवजीकी दूसरी शाखाके वंशधर बिकानेरपति रायमलको इस प्रदेशका शासक बनाया।

मालदेवका भाग्य क्रमशः बढ़ने लगा। इस समय बादशाह अकबर भारतवर्षमें मुगल-साम्राज्यको बढ़ा रहे थे। मुगल सेनासे बार बार पराजित हो उन्हें सन् १५६९ ई०में बादशाहकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। अधीनता दिखलानेके लिये उन्होंने अपने पुत्र चन्द्रसेनको नजरानेके साथ मुगलबादशाहके पास अजमेर भेजा। बादशाहने उनके इस व्यवहारसे क्रोधित हो रायसिंहको

केवल बीकानेरका शासन ही नहीं वरन् समूचे जोधपुर-की राज्य-सनद दी।

इसके बाद शत्रु-सेनाने जोधपुर पर चढ़ाई की। बूढे वीर राजा मालदेवको युद्धमे पराजित हो फिर अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। इस बार इन्होंने अपने दूसरे लड़के उदयसिंहको बादशाहके पास भेजा। इस राज-कुमारके व्यवहारसे सन्तुष्ट हो बादशाहने उन्हें मारवाड़-का भावी राजा कह कर स्वीकार किया। इस समय राजा मालदेवने बुढापेमे स्वाधीनता खो अपनी जीवन-लीला समाप्त की।

राजा मालदेवके बारह पुत्रोंमें केवल उदयसिंह बाद-शाहकी कृपासे अपने पिताके सिंहासन पर बैठे। इन्होंने अपनी बहिन योधबाईको बादशाहके हाथ समर्पण किया। सम्राट्की कृपासे ये मुगलसेना-नायकके पद पर नियुक्त हुए। पीछे अपने पुरुषाओं द्वारा शासित समूचा मारवाड़-राज्य इन्हें हाथ लगा। अजमेर प्रदेशके बदले इन्हें मालवाके कई हिस्से मिले थे।

इनके मरनेके बाद राजकुमार सुरसिंह सन् १५९५ ई०में राजगद्दी पर बैठे। इन्होंने भी बादशाहका साथ दे दाक्षिणात्य और गुजरात जय करनेमें राठोरोंकी वीरता-की रक्षा की थी। बादशाहने इनकी वीरतासे सन्तुष्ट हो इन्हें 'सवाई राजा' की उपाधि दी।

गुजरातको जीत कर और वहांके पठान-राजवंशको नष्ट कर राव सुरसिंह विश्राम लेने जोधपुर राज्य आये। इस समय इनके लड़के गजसिंह राठोर-सेना ले बादशाहके पास रहते थे। गजसिंहने झालोर विजय किया, पाश्चात् बादशाहने इन्हें मेवाड़पति राणा अमरसिंहके विरुद्ध भेजा।

फिर सन् १६२० ई०मे बादशाहके आज्ञानुसार सुर-सिंह दाक्षिणात्य गये। उसी वर्ष वहां उनकी मृत्यु हुई। पिताके मरनेके बाद गजसिंह मारवाड़के सिंहासन पर बैठे। ये अपने बाहुबलसे खिकीगढ़, गोलकुंडा, किलेना, पनाला, गाजनगढ़, आशीरगढ़ और सतारा आदि युद्ध-में जयलाभ कर बादशाहके विशेष सम्मानपात्र हुए। इस अपूर्व शक्ति और वीरताके लिये इन्हें 'दाल थामना'-की उपाधि मिली।

बादशाह जहांगीरके बड़े लड़के और उत्तराधिकारी राजकुमार परवेज मारवाड़-राजकुमारीके और द्वितीय राजकुमार खुर्रम जयपुर राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। ये दोनों ही राज्य-लोभसे चालबाजी करने लगे। खुर्रम जब गजसिंहको अपनी ओर लानेमें सफल न हो सके तब उन्होंने गजसिंहको दाक्षिणात्यसे निकालनेकी इच्छासे उनके चचा कृष्णसिंह द्वारा उनके विश्वासी सेवक और सामन्त गोविन्द दासको मरवा डाला। इस समाचारसे क्रोधित हो गजसिंह अपने राज्यको लौट आये।

इस समय खुर्रमने अपने भाई परवेजको मार डालने तथा अपने पिता जहांगीरको राजगद्दीसे उतारनेकी आशा-से राज्यमें बलवा खड़ा कर दिया। बादशाह जहांगीर-की विनती पर गजसिंह अपनी राठोर सेना ले कर बना-रसके पास विद्रोहियोंके सामने हुए। इस युद्धमें खुर्रम-की ओरसे लड़ कर मेवाडके राणा भीमसिंह मारे गये। खुर्रम हार कर जान ले भागा।

सन् १६३८ ई०में गजसिंह गुजरातकी लड़ाईमें मारे गये। बादमें उनका दूसरा लड़का यशवन्तसिंह सिंहासन पर बैठा। ये बादशाह शाहजहाँके चारों लड़कोंके अन्त-विप्लवमें औरङ्गजेबके विरुद्ध लड़े। फतहबादकी लड़ाई में इन्होंने हार कर औरङ्गजेबसे सन्धि ली की, लेकिन शाहजादा इनके अपराधको न भूला। दिल्लीकी राजगद्दी पर बैठनेके बाद औरङ्गजेबने बदला लेनेकी गरजसे राजा-को अपनी सेनाके साथ काबुल जानेकी आज्ञा दी। इस समय पहाडी अफगान लोग बादशाहके विरुद्ध बलवा कर रहे थे। विजय-गौरवको पानेकी इच्छासे राजा यश-वन्त सिह मारवाड़में अपने बड़े लड़के पृथ्वीराजको रख काबुल चल पड़े। काबुलमें शासन करनेके समय औरङ्गजेबके षड़यन्त्रमे पड़ इन्होंने प्राण त्याग किया। सुना जाता है, कि औरङ्गजेबने उनके वंशज पृथ्वी-सिंह, जगतसिंह और दलथामनाको मरवा कर अपना बदला सधाया। सन् १६७६ ई०में राठोरोंके प्रभाव को देख स्वयं औरङ्गजेब डर गये थे। इसीलिये उन्होंने पृथ्वीराजको बुला कर छलसे मरवा डाला था। इस

समय राठोरों और मुसलमानोंके रक्तकी नदी बह गई थी।

सन १६८० ई०में अत्याचारी वादशाह औरङ्गजेबके उत्पीडनसे यशवन्तसिंह और उनके पुत्र मार डाले गये। बादमें गर्भस्थ बालक अजितसिंह जातकर्म्मके बाद राज्याधिकारको प्राप्त हुए।

बालक अजितसिंहके शासन समयमें राज्य भरमें गड़बड़ी मची। बादशाह औरङ्गजेबने सेनाके साथ मारवाड़ पर चढ़ाई कर दी। मुगलसेनाने जोधपुर आदि नगरोंको लूट लिया। बादशाहने राठोरोंको हरा कर उन्हें मुसलमान बनानेकी आज्ञा घोषित की। इस संवाद पर मरवाड़के सामन्त लोग और राजपूतानेके सभी राजपूत सर्दार मिल कर मुगलशक्तिके विरुद्ध खड़े हुए। जयपुर, जोधपुर और उदयपुरके राजोंने एक सन्धि की और मुगल बादशाहसे स्वाधीन होनेकी चेष्टा करने लगे। इस सन्धिकी शर्तोंके अनुसार उदयपुरके राणावंशके साथ मुगल सम्बन्धसे कलुषित जयपुर और जोधपुरके राजाओंकी सन्तानोंका विवाह होना निश्चित हुआ। इस सन्धिके बल पटरानीके पुत्र अभयसिंह ही मारवाड़की राजगद्दी पर बैठे।

इस समयसे अजितसिंहकी भाग्यलक्ष्मी प्रसन्न हुई। बादशाह औरङ्गजेबको अपनी जवान पोती (अकबरकी लड़की)के सतीत्व भ्रष्ट होनेके डरसे अजितके साथ सन्धि करनी पड़ी। बादशाहने अपनी पोतीको वापस पा अजितसिंहको उनकी पहले ली गई बहुत-सी सम्पत्ति लौटा दी। शाहजादा स्वयं अजितसिंहको जोधपुर ले गये थे।

औरंगजेबके बाद शाह आलम गद्दी पर बैठा। इस नये बादशाहसे अजितसिंहका कोई विशेष वादविवाद नहीं हुआ। शाह आलमके बाद अजीम उस्सान बादशाह हुआ। अजीमने इनसे सन्तुष्ट हो इन्हें गुजरातका प्रतिनिधि बनाया। अजितसिंहने बादशाह फर्रुखसियरको धनरत्न उपहारसे सन्तुष्ट कर अपने हाथ कर लिया। पीछे इन्होंने षड़यन्त्र कर सैयद अली खां और हुसेन अली खांकी सहायतासे दिल्ली पर चढ़ाई की। दिल्लीमें खूनकी नदी बह चली और सरकारी खजाना लूटा गया। बादशाहकी रक्षाके लिये कोई मुगल अमीर उमराव प्रत्यक्ष रूपसे आगे न बढ़ सके। फर्रुखसियरकी हत्याके बाद मुगल अमीर लोगोंने मिल कर निकोशाहको आगरेमें बादशाह बनाया। लेकिन दोनों सैयदोंने रफिउद्दौलाको बादशाह बना आगरेकी ओर दलबलके साथ यात्रा की। मुगल लोग डर कर निको शाहको अजितसिंहके हाथ सौंपनेसे बाध्य हुए। इस समय बादशाह रफि उद्दौलाने प्राणत्याग किया। तब अजितसिंहने दोनों सैयद भाइयोंकी सहायतासे महम्मदशाहको हिन्दुस्तानका बादशाह बनाया।

सम्वत् १७८०के आषाढ़ महीनेमें अभयसिंहकी उत्तेजना और राज्यलाभकी लालसासे उसके भाई भक्तसिंहने वीरकेशरी वृद्ध पिताको विष खिला कर इस लोकसे विदा किया।

अजितसिंहको इस तरह निष्ठुरतासे मरवा कर अभयसिंह सन् १७२५ ई०में गद्दी पर बैठा, लेकिन वह सुखसे राज्यभोग न कर सका। १७२८ ई०में अपनी वीरता के पुरस्कारमें इन्हें 'महाराजराजेश्वर'की उपाधि मिली। बादमें अपने भाई भक्तसिंहके विरोधसे इन्हें बहुत कष्ट सहने पड़े। मेवार, अम्बर और मारवाड़में मेल हो जाने पर इन्हें फिर रणक्षेत्रमें उतरना नहीं पड़ा। सन् १७५० ई०में योधपुर नगरमें इनकी मृत्यु हुई। मालूम होता है, कि उक्त राजाओंमें आपसमें विवाद था, तभी तो उन्होंने दिल्लीके बादशाहकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। यह विद्वेष-ज्वाला वंशपरम्परासे चली आ रही थी।

अभयसिंहके मरनेके बाद उनके लड़के रामसिंहने मारवाड़-राज्यसे युद्ध किया। युद्धमें हार खा कर वे प्राण ले भागे। तब भक्तसिंह मारवाड़की राजगद्दी पर बैठे। ये भी पिताकी हत्याके प्रायश्चित्तमें १७५२ ई०को विष खिला कर मार डाले गये। बादमें इनके लड़के विजयसिंह सिंहासन पर बैठे। रामसिंह राज्य-लोभसे आगे बढ़े और दोनों भाइयोंके विरोधसे युद्धाग्नि भभक उठी। राव विजयसिंहके राज्यकालमें मारवाड़ आपसकी लड़ाईके कारण भस्मीभूत हो गया। सन् १७९२ ई०में विजयसिंहकी मृत्यु होने पर भीमसिंह अपने बड़े भाईको युद्धमें हरा कर गद्दी पर बैठे। भीमसिंहके मरनेके बाद सन् १८०३ ई०में

राजा मानसिंह मारवाड़के सिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। भीमसिंहके अत्याचार और राजा मानसिंहके शासनका वर्णन यथास्थानमें दिया गया है।

पहले ही कहा जा चुका है, कि अभयसिंहने जब उदयपुर, जोधपुर और जयपुर इन तीन शक्तियोंकी सन्धि तोड़ दी तब वे एक दूसरेके दुश्मन बन गये। अतएव भिन्न भिन्न सरदार भिन्न भिन्न राजवंशोंके राज्याधिकारके प्रश्नको ले युद्ध विग्रहादिमें लिप्त रह कर अपनी अपनी शक्तिका ह्रास करने लगे। राज्यमें प्रतिष्ठा पानेके लिये उन्हें पद पद पर उस समयके उन्नतिशाली महाराष्ट्रकी सहायता मांगनी पड़ी थी। क्रमशः सम्पूर्ण राजपूताना महाराष्ट्रकी राजधानी पूनाके अधिकारमें आ गया।

इस मौकेमें सिन्देराजने जोधपुर जीत कर ६ लाख रु० जमा किया तथा अजमेरगढ़ और नागर ले लिया। १८०३ ई०में महाराष्ट्र-युद्धके समय राज्यमें अराजकताकी सूचना पा सामन्तोंने भीमसिंहको गद्दीसे उतार दिया और मानसिंहको राजा बनाया। तब मानसिंहके साथ अंगरेजी-राज्यकी सन्धि हुई, लेकिन १८०४ ई०में होलकर-राज्यको आश्रय दे कर अंगरेजी सरकारने सन्धि तोड़ दी।

अङ्गरेजोंसे जब जोधपुर-राजको सहायता न मिली तब वे निरुपाय हो भारी विपद्में पड़ गये। इसी समय भीमसिंहका लड़का धोकलसिंह या धनकुलसिंह राज्यको अपने अधिकारमें लानेकी इच्छासे जोधपुरकी ओर दल-बलके साथ आगे बढ़ा। इस युद्धमें तथा उदयपुरकी राज-कन्याके विवाह-सम्बन्धमें जयपुरके साथ जो युद्ध हुआ था उसमें राजा मानसिंहको विशेष क्षति उठानी पड़ी। पीछे दोनोंने ही पिंडारीके डकैत-सरदार अमीर खांको अपने अपने दलमें लानेकी चेष्टा की। अमीर खाँने पहले जयपुरका और पीछे जोधपुर राज्यका पक्ष लिया। वह राजाको डर दिखा तथा लोगोंमें राजाको पगला बता सरकारी-खजाना लूटने लगा।

सन् १८१७ ई०में अमीर खाँके मारवाड़से चले आने पर छत्रसिंहने अपने पिताका राज्यभार लिया। १८१८ ई०में पिंडारी-युद्धके आरम्भमें अंगरेजोंने उनके साथ सन्धिका प्रस्ताव किया। अंगरेज सरकारने जोधपुर-राज्यका रक्षाभार अपने हाथ लिया और सिन्धराजको जो कर दिया जाता था उसका भार भी अपने पर लिया। राजा १५ सौ घुड़सवार जरूरत पड़ने पर अंगरेजोंकी सहायताके लिये भेजनेको राजी हुए। सन्धि पूरी तय भी न हो पायी थी, कि राजा छत्रसिंहका स्वर्गवास हुआ। इस सुयोगमें राजा मानसिंह अपने पागलपनके बहाने राजसिंहासन पर जा विराजे। १८२४ ई०में मीना और मेर जातियोंको अधीनतामें लानेके लिये इन्होंने मारवाड़के अन्दर २१ गांव अंगरेज सरकारको दिये। १८४३ ई०में इन गांवोंके अधिकारका समय पूरा हो गया। किन्तु उसी साल राजाकी मृत्यु होने पर और कोई नया बंदोबस्त नहीं हुआ। १८३६ ई०में मल्लानी प्रदेश पोलीटिकल एजेन्टकी देखभालमें रखा गया। लेकिन उसी समयसे अंगरेज लोग उस प्रदेशका कर उगाह रहे हैं।

राजा मानसिंहकी स्वेच्छाचारिताके कारण मारवाड़में गड़बड़ी हद दर्जे तक पहुच गई। राज्यमें भयानक विद्रोहकी आग लगती देख १८३९ ई०में अंगरेज-सरकारको लाचारी मारवाड़के शासनमें हस्तक्षेप करना पड़ा। इसलिये अंगरेजोंकी एक सेना जोधपुरमें रखी गई। राजा मानसिंहने जोधपुर राज्यमें सुशासन रखनेकी इच्छासे अंगरेजोंके साथ एक बन्दोबस्त किया। इस बंदोबस्तके बाद चार वर्ष तक राजा मानसिंह जीवित रहे।

इन्हें कोई सन्तान न थी और न इन्होंने कोई पोष्य पुत्र ही लिया था। अतएव इनके मरने पर इदर और अहमदनगरका सरदारवंश मारवाड़ राज्यका उत्तराधिकारी हुआ। विधवा रानियोंने सामन्तों तथा राज-कर्मचारियोंकी सलाहसे अहमदनगरके राजा भक्तसिंहके ऊपर मारवाड़-शासनका भार अर्पण किया। महाराज भक्तसिंहने मारवाड़की राजगद्दी पर बैठ अपने लड़के यशवन्तसिंहको अहमदनगर राज्यका शासन करने भेज दिया। इस समय इदर-राजने अहमदके सिंहासनको ले कर गोलमाल खड़ा किया। अङ्गरेज-सरकारने इस आन्दोलनके बाद न्याय और प्राचीन रीतिके अनुसार अहमदनगर इदरराजको दे दिया। १८४८ ई०में ६ वर्ष अहमदनगरका शासन कर जब

राजकुमार यशवंत मारवाड लौटे तब अहमदनगर इदर-राज्यमें मिला लिया गया।

महाराज मानसिंहके लम्बे शासनकालमें मारवाड़ तहस नहस हो गया था। १८१३ ई०मे सिन्धुप्रदेशके तालपुरके मीरोंने उक्त गढ़ और उसके अधीन राज्यको जीता। अङ्गरेजोंने सिन्धु-विजयके समय उस गढ़को अपना लिया। उस समयसे आज तक अङ्गरेज सरकारने उस गढ़को नहीं छोड़ा है। भक्तसिंहने जब गढ़ लौटा देनेकी प्रार्थना की, तब अङ्गरेज कर्मचारी मि० ग्रे टहेडने कहला भेजा कि उनको सेनाके वेतनके लिये एक लाख सत्तरह हजार देने पड़ते हैं। उसमें दश हजार माफ दिये जायेंगे और अङ्गरेज लोग बराबर अमरकोटको अपने अधिकारमें रखेंगे। राजाको इस प्रस्ताव पर अपनी सम्मति देनी पड़ी। उनके शासनकालमें सामन्तोंका बलवा शान्त हुआ। ये अङ्गरेजोंकी सहायतासे मारवाड़में सुशासन स्थापित करनेमें समर्थ हुए थे। १८५७ ई०में सिपाहियोंका भयानक बलवा समूचे भारतमें फैल गया था। राजा भक्तसिंहने अपनी सेनाकी सहायतासे विद्रोहियोंको दबाया और अङ्गरेज लोगोंको अपनी राजधानीमें आश्रय दे सरकारके प्रति अपनी राजभक्ति दिखलाई।

१८६७ ई०में गनोराके सामन्त-पदको ले कर सामन्तोंसे उनका विवाद हुआ। अङ्गरेज-सरकारके अनुरोधसे उन्होंने राज्यसे अशान्ति दूर करनेके लिये सामन्त लोगोंके सम्पूर्ण गोलमालको मिटा दिया।

१८७० ई०में भारतके वाइसराय लार्ड मेयोने अजमेरमें दरबार किया। इस दरबारमें प्राचीन नियमके अनुसार उदयपुरके महाराणाको पहला स्थान दिया गया। इस पर भक्तसिंह दरबारमें नहीं आये। उनके इस अशिष्टाचरण और अपमानसे क्रुद्ध हो लार्ड मेयोने उन्हें बहुत कोसा था।

१८७३ ई०में महाराज भक्तसिंहके मरने पर इनके जेठे लड़के कुमार यशवन्तने सिंहासन ग्रहण किया। सन् १८७५ ई०में प्रिन्स आव वेल्स (भूतपूर्व भारत सम्राट् सप्तमएडवर्ड) भारतवर्ष पधारे। इस समय कलकत्तेके किला मैदानमें एक दरबार बैठा। इस दरबारमें महाराज यशवन्तसिंह युवराजसे विशेष सम्मानित हुए और G. C. S. I. की उपाधि प्राप्त की। युवराजने स्वयं उनके डेरे पर पदार्पण किया था।

१८९५ ई०में महाराज यशवन्तसिंहकी मृत्यु हुई। पीछे उनके एकमात्र पुत्र सरदारसिंह राजसिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। १८८० ई०में इनका जन्म हुआ था। १८९८ ई० इन्होंने राजकार्यका कुल भार अपने हाथ लिया। इनकी नाबालिगी तक इनके चचा महाराज प्रतापसिंह (पीछे इदरके महाराज) शासनकार्य चलाते रहे। इनके समयमें जो मुख्य घटनाएं हुई वह इस प्रकार हैं,—१८९७-८ ई०में युक्तप्रदेशमें और १९००-१ ई०में चीनमें Imperial Service Lancers दलोंमें एक दलकी नियुक्ति, पहले सिंध तक और पीछे सिन्धसे हैदराबाद तक रेलवे लाइनका खोलना, १८९९-१९०० ई०में भीषण दुर्भिक्ष, १९०१ ई० में यूरोप-यात्रा। आप १९०३ ई०के जनवरी माससे १९०३ ई०के अगस्त मास तक Imperial Cadet corp के सदस्य रहे। आपके परलोकवासी होने पर आपके सुपुत्र उमेदसिंहने राजसिंहासन सुशोभित किया। आप ही वर्त्तमान महाराज हैं। आपको वृटिश सरकारकी ओरसे १७ तोपोंकी सलामी मिलती हैं। आपका पूरा नाम है,—"महाराजा एच, एच, राजराजेश्वर महाराजाधिराज सरमद-इ हिन्द महाराजा श्री सर उमेदसिंहजी साहब बहादुर के, सी, भी, ओ।

मारवाडका राजवंश।

नाम	राज्यारोहणकाल।
राव शिवजी	१२१२ ई० सन्
„ अश्वत्थामा	
„ दुहर वा धौलराय	
„ रायपाल	
„ कनहल	
„ अड्डुनसिंह	
„ छद	
„ थोद	
„ सलथ	
„ विरामदेव	
„ चण्ड	१३८१ ई०
„ रणमल्ल	१४०८ „

नाम	राज्यारोहणकाल
राव योध	१४२७ ई० सन्
„ सूर्यमल	१४८६ „
„ गंग	१५१६ „
„ मलदेव (मालदेव)	१५३२ „
„ उदयसिंह	१५८४ „
„ सूरसिंह	१५९५ „
राजा गजसिंह	१६२० „
„ यशोवन्तसिंह	१६३८ „
„ अजितसिंह	१६८० „
महाराज अभयसिंह	१७२५ „
„ रामसिंह	१७५० „
„ भक्तसिंह	१७५१ „
„ विजयसिंह	१७५२ „
„ भीमसिंह	१७९२ „
„ मानसिंह	१८०३ „
„ भक्तसिंह	१८४३ „
„ यशोवन्तसिंह	१८७३ „
„ सरदारसिंह	१९१० (?)
„ उमेदसिंह (वर्त्तमान महाराज)	

मारवाड़ी—मारवाड़वासी वणिक-सम्प्रदाय। मारवाड़ी कहनेसे अभी दो श्रेणीके लोग समझे जाते हैं, एक प्रकृत मारवाड़वासी स्वनाम-प्रसिद्ध जाति और दूसरी राजपूताना और उसके आसपास रहनेवाला वणिक-सम्प्रदाय। दूसरी श्रेणीमें अग्रवाल, ओसवाल और माहेश्वरी शाखाभुक्त अधिकांश जैन हैं। जो असल मारवाड़ी हैं वे दाक्षिणात्यके नाना स्थानोंमें मारवाड़ी श्रावक कहलाते हैं। व्यवसाय, वाणिज्य और महाजनी इनकी प्रधान उपजीविका है। ये भारतवर्षके नाना स्थानोंमें व्यवसायके उद्देशसे बस गये हैं। ऐसी सञ्चयी और मितव्ययी जाति मालूम होता है, संसार भरमें नहीं है। कर्ज लगाने और व्यवसाय वाणिज्यमें इनकी यथेष्ट चतुरता, धूर्तता और निष्ठुरता नाना कारणोंसे दिखाई देने पर भी ये अपरिचित स्वजातिके प्रति जो सहानुभूति और दयादाक्षिण्य दिखलाते हैं वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। जब कोई निर्धन निराश्रय मारवाड़ी श्रावक किसी एक धनी अथवा व्यवसायी मारवाड़ीके घर आता है, तब वे उसे अपने घरमें रख कर उसके गुजरका पूरा इन्तजाम कर देते हैं। केवल यही नहीं, लिखना पढ़ना और महाजनी आदिका हिसाब रखना भी उसे सिखाया जाता है। जब उक्त विषयोंका कुछ ज्ञान हो जाता है तब उसे थोड़ी पूंजी दी जाती है। इस प्रकार उसी पांच रुपयेकी पूंजीसे वह वाणिज्य-व्यवसाय करता और थोड़े ही समयमें दो चार हजार रुपया जमा कर लेता है। बादमें वह मारवाड़ लौटता और विवाह करके संसारी हो जाता है। जिस ग्राममें वह पहले व्यवसाय करता था, मितव्ययताके गुणसे थोड़े ही दिनोंके मध्य उस ग्राममें आ कर महाजन कहलाने लगता है। वह बड़ी बड़ी दूकान खोलता और इस प्रकार चंद रोजमें मालेमाल हो जाता है। तब स्वजातीय महाजन भी उसे अपने जोड़का समझने लगते हैं।

विभिन्न श्रेणीके मारवाड़ीमें परस्पर विवाह सम्बन्ध न होने पर भी वे सभी नाना विषय और एकतासूत्रमें आवद्ध रहते हैं। किसीकी मृत्यु हो जाने पर आस पासके सभी मारवाड़ी आते और अन्त्येष्टिक्रियाके समय सहायता करते हैं। वार्षिक श्राद्धकालमें मृत व्यक्तिके निकट संबंधी बहुत दूर देशसे आते और मारवाड़ीसमाजको बुला कर भोज देते हैं।

उत्तर-पश्चिम प्रदेशमें मारवाड़ियोंके मध्य सिंहानिया, गुन्दका, सराप, सरावगी, झुनझुनवाला, वजोरिया, क्षेमका, बजाज और वर्त्या ये नौ श्रेणियां हैं। प्रत्येक श्रेणी १७२ थोकोंमें विभक्त है। स्वश्रेणीमें विवाह करनेका नियम नहीं है। अलावा इसके मामा, माताका माता, पितामहका मामा, पितामहीका मामा, माताके पितामहका और माताकी पितामहीका मामा जिस जिस दलके हैं, उस उस दलमें भी विवाह नहीं होता किन्तु मारवाड़ी समाजमें विशेष कलकत्ते और झरिया आदिके मारवाड़ी समाजमें दो दल हो गया है। एक दल सुधारक-समाज कहलाता है। इसने बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह जैसे महा अनिष्टकर कार्योंको रोक कर मारवाड़ी समाजमें एक नया आदर्श जगत्के सामने रखनेका यत्न किया है। इसने अब तक मारवाड़ी-समाजमें

८०से अधिक विधवा-विवाह कराये हैं। जगह जगह सभायें कर यह सुधारक-समाज इस कार्यका विस्तृत रूप कर देनेके लिये यत्न कर रहा है। सच पूछिये, तो विधवा विवाह इन लोगोंमें प्रचलित नहीं है। कन्या और वरकी कुण्डली मिला कर विवाह किया जाता है। विवाहके दश दिन पहले होसे स्त्रिया जलसेवन किया करती हैं। उसी जलपात्रके निकट गणेशको मूर्त्ति स्थापित की जाती है। इस तरहका उत्सव कन्याके घर होता है। विवाहके तीन दिन पहले गात्र-हरिद्रा या शरोरमें हल्दी लगाई जाती है। माता पिताके सिवा सात स्त्रियां और भी होतीं हैं। इसी दिनसे विवाहके दिन तक नित्य गणेश-पूजा तथा हल्दी लगाई जाती है।

सन्तान उत्पन्न होनेके वाद दाई या चमारी आ कर नाल काटती हैं और प्रसूतिका घरके सामने उसे गाड़ देती हैं। इसके वाद वालकके मामा या फूफा आ कर जहां नाल गडा रहता है, वहां स्पर्श करते हैं। इसके लिये वे एक एक नया वस्त्र या धोती पाते हैं। इसके वाद ज्योतिषी आ कर कुण्डली वनाते हैं। पांचवें दिन प्रसूति स्नान कर नया वस्त्र पहनती है। पांच दिनों तक प्रसूतिके पास केवल चमारी रहती है। पांच दिनोंके वाद गृहकार्य करनेवाली दाइयां भी प्रसूति गृहमें आया जाया करती हैं। एक महीनेके वाद प्रसूति स्नान कर शुद्ध होती हैं और सूर्यका तर्पण देतो है। यदि समीपमें गङ्गा हों, तो प्रसूति नवकुमारको गोदमें ले कर गङ्गा पूजने जाती है। जव वालक छः मासका हो जाता है, तव उसका अन्नप्राशन कराया जाता है। इसके वाद चूडाकरण संस्कार होता है।

विवाहके दो दिन पहले भाइयोंकी जिम्मनवार होतो है। इस दिन पुरानो प्रथाके अनुसार पञ्चायत होती है। इस पञ्चायतमें किसी वातका निवटारा हो या न हो (सम्भव है, कि कोई कठिन समस्या आ उपस्थित हो तो उसका उस पञ्चायतसे निवटारा कर दिया जाता है) किन्तु जिम्मनवारके दिन पञ्चायत होगी अवश्य। लोग पञ्चायतमें पधारते और मिल मिला कर भोजनादि कर घर लौट जाते हैं। विवाहके एक दिन पहले ब्राह्मण-भोजन होता है। जिनको जैसी हैसियत है वे उतना ही अधिक ब्राह्मण-भोजन कराते हैं। प्रत्येक ब्राह्मणको एक रुपया कहीं कहीं इससे भी अधिक भोजन-दक्षिणा दी जाती है। विवाहके वाद "सज्जनगोठ" नामक भोज कन्या पक्ष वर-पक्षको देता है। वर-पक्षके लोग कन्याके घर जा कर भोजन करते हैं। मारवाड़ियोंमें कन्या पक्ष विवाहके दिन वर-पक्षी वरातको नहीं जिमोता, वरं विवाहके वाद 'सज्जनगोठ' देता है।

शीतलादेवोके सम्मानार्थ पहले वरको गदहे पर चढना होता है। इसी अवस्थामें वरको माताकी गोदमें शिर झुकाना पड़ता है। गधेके कपालमें सिन्दूर और हल्दीका टोका देना पड़ता है। गधेसे उतर कर वर घोड़े पर चढ़ता है। इस वार भो माताकी गोदमें शिर झुकाना पड़ता है। इसके वाद वर विवाहके लिये आगे वढ़ता है। उस समय एक आदमी छत्र धारण कर खड़ा रहता है और एक चवर झुलाता रहता है। उस समय वरकी वहन आ कर वरका पथ रोकती है। किन्तु कुछ उपहार पा कर वह वहांसे हट जाती है। इसके वाद वर कन्या गृहकी ओर समारोहके साथ आगे वढ़ता है। कन्याके घरके सामने आ कर दरवाजे पर लगा तोरण-को नीमकी टहनीसे तोड़ देना पड़ता है। इसके वाद कन्याकी माता आ कर वरण कर जाती है। इसके वाद वरात लौट जाती है। मारवाडियोंमें विवाहके लिये एक स्वतन्त्र विवाह-मण्डप तैयार होता है। कन्या उपस्थित ब्राह्मण-मण्डलीको मिष्टान्न देती है। अनन्तर कन्या गौरी-गणेशकी पूजा कर कुम्हारके घर जा कर उसके चाक (चक्र)-की पूजा करती है। वरके विवाह-मण्डपमें उपस्थित होने पर वर-कन्याका गेंठ जुड़ाव कर दिया जाता है। इसके वाद गौरी और गणेशकी पूजा कर पुरोहित द्वारा विवाहका मन्त्र कार्य सम्पन्न होता है। पुरोहितको सुमंगली दे कर वर-कन्या अन्तःपुरमें प्रवेश करती हैं। यहां स्त्रियोंके रीति रश्मोंके हो जानेके वाद वर आत्मीय स्वजनके समीप आता है।

दूसरे दिन कन्याके आत्मीय आ कर क्षमताके अनु-सार वरको कुछ दे कर आशीर्वाद दे जाते हैं। इसके वाद कन्या-पक्ष वर-पक्षको 'सज्जनगोठ' (जिसका ऊपर

विवरण दिया गया है) देता है। दूसरे दिन वर कन्या और ससुरालमें पाये हुए उपढौकनको ले कर उसी समारोहसे घर लौट आता है। मकानके चौकमें या आंगनमें सात पात्र क्रमसे वर-कन्याके सामने रखे जाते हैं। वर अपनी तलवारसे एक एक पात्रको हटा देता है। इसके बाद गङ्गा और शीतलादेवीकी पूजा की जाती और वर-कन्याका कंकण छुड़ाया जाता है।

मृतप्राय व्यक्तिको घरके बाहर ला कर सुलाते हैं। जहां सुलाते हैं, वहां पहले गोबरसे लीप लेते हैं। मृत्युके बाद मृतकके लिये पिण्डदान और शवदाह करते हैं। अन्त्येष्टिक्रियाकी पद्धति उच्चवंशीय हिन्दुओंकी तरह है।

मारवाड़ी (हिं० पु०) १ मारवाड़ देशका निवासी। २ मारवाड़ देशकी भाषा। (वि०) ३ मारवाड़ देशका, मारवाड़देश-सम्बन्धी।

मारवाड़ी-ब्राह्मण—महाराष्ट्रवासी एक श्रेणीके ब्राह्मण। ये पञ्चगौड़के अन्तर्भुक्त हैं। मारवाड़ देशमें इनके पूर्वपुरुषोंका वास था। इसलिये अपनेको ये मारवाड़ी-ब्राह्मण कहा करते हैं। ये अपनेको षड़्जातीय कह कर भी अपना परिचय देते हैं। दावन, गुजर, गौड़, सारस्वत, रण्डेलवाल, गौड़, पारिक और शिखावाल—यही षड़्जाति हैं। इनमें परस्पर खान-पान रहने पर भी परस्पर विवाह प्रचलित नहीं है। इनके नाम मारवाड़ियोंकी तरह ही होते हैं। मारवाड़ियोंके पौरोहित्य करते करते इनकी चाल-ढाल वेषभूषा मारवाड़ी-सी हो गई है। ये प्रायः तीन सौ वर्षों से मारवाड़ देशमें रहते आये हैं। इनमे भरद्वाज, काश्यप, वशिष्ठ और वत्स—ये चार गोत्र देखे जाते हैं। सगोत्र-विवाह प्रचलित नहीं है।

तिरुपतिके बावाजी, सूर्यनारायण और देवी इनके प्रधान उपास्य देवता हैं। यह एकाहारी, सभी निरामिषभोजी या जातिच्युतिके भयसे कोई भी मदिरा मांसका सेवन नहीं कर सकते। गेहूं और बाजड़ेकी रोटी और दाल घीके साथ रोज भोजन करते हैं। भात भी कभी कभी खाते हैं सही, किन्तु उसमें बिना चीनी और घी दिये नहीं खाते। ये नित्य सबेरे उठ कर गङ्गास्नान कर अपने इष्ट देवताकी पूजा कर यजमानोंके यहां पञ्चाङ्ग सुनाने जाया करते हैं। कोई अपने यजमानके यहां किसी देवताका पाठ बाचने जाया करता है। मध्याह्नमें अपने अपने घर आ कर फिर स्नान कर वैश्वदेव आदि नित्यनैमित्तिक क्रिया करते हैं। भोजनके बाद कोई कोई एक आध घण्टा विश्राम करते हैं। कोई कोई देवस्तोत्र पढ़ा करते हैं। इसके बाद फिर यह यजमानोंके यहां जाते हैं। सन्ध्या समय घर लौट कर ये सन्ध्या आदि क्रिया करते हैं।

इनमें स्मार्त्त और भागवत दोनों मतके लोग देखे जाते हैं। शिलासप्तमी, अक्षय तृतीया, दशहरा, पौषसंक्रान्ति, वसन्तपञ्चमी—ये ही कई इनके प्रधान पर्व हैं। ये शुक्लपक्षीय एकादशी, चतुर्दशी, रामनवमी, गोकुलाष्टमी, गणेश-चतुर्थी और शिवरात्रिके उपलक्षमें उपवास करते हैं। कोई तो पाक्षिक चान्द्रायणव्रत करते हैं और स्वश्रेणीसे ही अपना पुरोहित नियुक्त कर लेते हैं।

स्मार्त्त-सम्प्रदायके एक द्राविड़ ब्राह्मण इनके प्रधान आचार्य हैं। शृङ्गेरी-मठके शङ्कराचार्य इनके धर्मगुरु हैं। ये सोलह संस्कारोंमें गर्भाधानको छोड़ सभीका पालन करते हैं। बालकको ८ वर्षकी उम्रमें यज्ञोपवीत संस्कार और २१ वर्षकी उम्रमें विवाह संस्कार हो जाता है। सदासे कन्याओंका आठसे १५ वर्षके भीतर विवाह होता है। अशौचकाल केवल दश दिन रहता है। समाज विधिके विरुद्धाचरण करनेवाला पञ्चायतसे दण्ड पाता है। बालक सोलह वर्ष तक विद्यालयमें शिक्षा पाते हैं। इसके बाद पैतृक यजनादि क्रिया करते हैं। इनकी यजमानी-वृत्ति ही प्रधान जीविका है।

मारवो (सं० स्त्री०) संगीतकी एक माता।

मारवीज (सं० क्ली०) मन्त्रविशेष, एक प्रकारका मन्त्र।

मारात्मक (सं० त्रि०) मारः आत्मा यस्य, कप्। १ हिंस्र। २ खलस्वभाव, दुष्ट। ३ सांघातिक, प्राणनाशक।

माराभिभु (सं० पु०) मारं अभि-भवति मार अभि-भू-डु बुद्धदेव, मारजित्।

मारामार (हिं० वि० क्रि०) १ अत्यन्त शीघ्रतासे, बहुत जल्दी। २ मारपीट देखो।

मारारिनारीरज (सं० क्ली०) गन्धक।

मारि (सं० स्त्री०) मार्यते इति मृ-णिच्-इन्। १ मारण, मार डालना, वध करना। २ जनक्षय, मरी रोग।

पर्याय—मारक, उत्पात्। जब हैजेका वेशी प्रकोप होता है, तब उसे मारी कहते हैं। मारीभय उपस्थित होनेसे नामकीर्त्तन और शान्ति-स्वस्त्ययन करना आवश्यक है। जहा मरी रोग फैला हो उस स्थान को छोड़ देना चाहिये।

मारिचिक (सं॰ त्रि॰) मरिच-(पा ४।४।३) इति ठक्। मरिच द्वारा संस्कृत।

मारित (सं॰ पु॰) मार्यते नाश्यते भस्मीक्रियते इति मृ णिच् कर्मणि क्त। १ हत, जो मार डाला गया हो। नष्टीकृत, जो नष्ट भ्रष्ट कर दिया गया हो।

"असम्यङ् मारित स्वर्णं वलं वीर्यञ्च नाशयेत्।
करोति रोगान् मृत्युंश्च तद्धन्यात् यत्नतस्ततः॥"
(भावप्रकाश)

मारिन् (सं॰ त्रि॰) १ घातक, हत्या करनेवाला। २ मृत्युमुख-प्रवेशकारी, मृत्युके कराल गालमे पड़नेवाला।

मारिया—एक जाति। यह जाति अधिकतर मध्यप्रदेशके अन्तर्गत वस्तार नामक करदराज्यमें देखी जातो है। मारिया लोग कमरमें छुरी, कंधे पर कुठार तथा हाथमें तीर-धनुष रखते हैं। धनुष ही उनका प्रधान हथियार है। वे तीर चलानेमें बडे सुदक्ष हैं। दोनों पैरसे धनुषको फैला दोनों हाथसे गुण खींच कर ऐसे वेगसे तीर फेंकते हैं, कि तीर मृगकी शरीरको छेद कर वाहर निकल जाता है।

मारिव्यसनवारक सं॰ पु॰) मारिजन्यं व्यसनं तद्वारयतीति वृ-णिच्-अण्। राजर्षिविशेष, एक राजर्षिका नाम।

"कुमारपालश्चौलुक्यो राजर्षिः परमार्हतः।
मृतस्वमोक्ता धर्मात्मा मारिव्यसन वारकः॥" (हेम)

मारिष (सं॰ पु॰) मर्षति दोषानिति मृष-अच्, निपातनात् सिद्धं यद्वा मा रिष्यन्तिहिनस्ति कश्चिदपीति रिष-क। १ नाट्योक्तिमें मान्य व्यक्ति, मार्ष। २ नाटकका सूत्रधार।

"सूत्रधार भवेद्भाव इति वै पारिपार्श्विकः।
सत्रधारो मारिषेति हन्ते इत्यधमैः समाः॥"
(साहित्यद॰ ६ परि॰)

पुराणादिमें भी मारिष शब्दसे श्रेष्ठ व्यक्ति समझा जाता है।

"साहाय्यं ते करिष्यामि मन्त्रशक्त्या महामते।
भविता यदि सग्रामस्तव चेन्द्रेण मारिष॥"
(देवीभाग॰ ७।२६।१२)

३ पत्रशाकविशेष, मरसा नामक साग। यह सफेद और लालके भेदसे दो प्रकारका होता है। संस्कृत-पर्याय—कन्धर, मार्षिक। गुण—मधुर, शीतल, विष्टम्भी, पित्तनाशक, गुरु, वातश्लेष्मकर, रक्तपित्त और विषनाशक, अग्निवर्द्धक, रक्तवर्ण, गुरु, मधुर, श्लेष्मकर।
(भावप्र॰)

मारिषा (सं॰ स्त्री॰) मारिष टाप्। दक्षकी माता। विष्णुपुराणमें इनकी उत्पत्तिका विषय इस प्रकार लिखा है,—पुराकालमें वेदविदाम्वर कण्डु नामक एक मुनि गोमती नदीके किनारे तपस्या करते थे। इन्द्र तपस्यासे डर गये और तपस्या भंग करनेके लिये उन्होंने प्रम्लोचा नामक अप्सराको भेजा। प्रम्लोचाने अनेक प्रकारके हावभाव द्वारा तपस्या भंग कर दो। वादमें कण्डु कई सदी तक प्रम्लोचाके साथ रहे। एक दिन उनका मोह जाता रहा। वे प्रम्लोचा पर वहुत विगड़े और वोले, 'रे पापिनि! तुम अभी मेरे सामनेसे दूर हो जा। तुमने हावभाव दिखा कर मेरी तपस्या भंग को और देवराजका कार्य सिद्ध किया। इसलिये सामनेसे हट जा, नही तो भस्म कर दूंगा। मैं वहुत दिन तक तुम्हारे साथ रहा, इसलिये तुम्हारा दोष भी नही दे सकता, मैं स्वयं दोषी हूं। क्योंकि मैं अजितेन्द्रिय हूं।'

इस प्रकार मुनिसे तिरस्कृता प्रम्लोचा उनके आश्रमसे निकल आकाश मार्गसे उड गई। उनके शरीरसे जो पसीना छूटा, वह एक वृक्षसे दूसरे वृक्ष पर, इस प्रकार कई वृक्षों पर गिरा। ऋषिसे अप्सराके गर्भ रहा था और वही गर्भ रोमकूपसे स्वेदरूपमें निकला। जिस जिस वृक्ष पर वह पसीना गिरा था, वह गर्भवती हो गया। पीछे वायुने उन सवोंको एक साथ मिला दिया। आगे चल कर उस गर्भसे एक कन्या उत्पन्न हुई। वही कन्या मारिषा कहलाई। मारिषाके गर्भसे दक्षप्रजापतिने जन्म ग्रहण किया। (विष्णुपु॰ १।१५ अ॰)

२ देवमीढकी स्त्रीका नाम। (भागवत् १।१५ अ॰)

मारी (सं॰ स्त्री॰) मारि-(कृदिकारादिति) पक्षे ङीष्। १ चण्डी। २ जनक्षय, कोई ऐसा संक्रामक रोग जिसके कारण वहुत-से लोग एक साथ मरें, मरी रोग। ३ माहेश्वरी शक्ति।

मारीच (सं॰ पु॰) रामायणके अनुसार एक राक्षस।

कुम्भपुत्र सुन्देके औरस ताड़का राक्षसीके गर्भसे इसका जन्म हुआ। मारीचने सीताहरणके समय मायारूप धारण कर रामचन्द्रको मोहित किया था। पीछे रामचन्द्र द्वारा मारा गया। (रामायण) राम देखो। २ कश्यप।

३ कक्कोलक, कंकोल। ४ याजक ब्राह्मण, पुरोहित। ५ राजहस्ती, राजहाथी। ६ मरीचवन, गोलमिर्चका पेड़। (त्रि०) ७ मरीचसम्बन्धीय, मरीचका।

मारीचपत्रक (सं० पु०) सरलवृक्ष, चीड़का पेड़।

मारीचपत्रिका (सं० स्त्री०) सरल देवदारु, सर्जतरु।

मारीचवल्ली (सं० स्त्री०) मरिच वृक्ष, मिर्चका पेड़।

मारीची (सं० स्त्री०) मरीचेरियं इत्यण् ङीप्। एक प्रकारके देवता। ये मायादेवी हैं। पर्याय—त्रिमुखा, वज्र कालिका, विकटा, वज्रवाराही, गौरी, प्रोत्तिरथा।

साधनमालातन्त्रमें मारीचीका जो विवरण लिखा है, वह इस तरह है—

"सूर्य्ये पीतनाकारं ध्यात्वा तद्विनिर्गतरश्मिनिवहैराकाशे समाकृत्य भगवतीमग्रतः स्थापयेत्।—गौरीं त्रिमुखीं त्रिनेत्रामष्टभुजां, रक्तदक्षिणमुखीं नीलविकृतवामवराहमुखीं, वज्राङ्कुशशरसूचीधारिदक्षिणकरामशोकपल्लवचापसूत्रतर्ज्जनीधरवामचतुःकरां वैरोचन मुकुटिनीं नानाभरणवतीं चैत्यगर्भस्थितां रक्ताम्बरकञ्चुकोत्तरीया सप्तशूकररथारूढ़ां प्रत्यलीढपदां पकारजवायुमण्डले हुंकारजचन्द्रसूर्य्यग्राहिमहोग्रराहुसमधिष्ठितरथमध्यां देवीचतुष्टयपरिवृतां तत्र पूर्व्वदिशि वर्त्तालीं रक्तां वराहमुखीं चतुर्भुजां सव्याङ्कुशधारिदक्षिणहस्तां पाशाशोकधारिवामहस्तां रक्तकञ्चुकिञ्चेति। तथा दक्षिणे वदालीं पीतसशाकसूचीवामदक्षिणभुजां वज्रपाशदक्षिणवामकरां कुमारीरूपिणीं नवयौवनालङ्कावतीं। तथा पश्चिमे वरालीं शुक्लां वज्रसूचीवद्दक्षिणभुजां पाशाशोकधरवामकरां प्रत्यालीढपदां सरूपिणींचेति। तथोत्तरदिग्भागे वराहमुखीं रक्तत्रिनयनां चतुर्भुज वज्रशरवद्दक्षिणकरां चापाशोकधरवामकरां दिव्यरूपिणीं ध्यात्वा॥"

मारीची देवी।

"यह गौर वर्णकी है। इनके तीन मुख, तीन आंखें और आठ भुजाएं हैं। इनके मुंहका दाहिना भाग लाल वर्णका है और बायां नीला है। वन्य-शूकरोंकी तरह तिरछी खड़ी है। इनके दाहिने हाथोंमें वज्र,

अंकुश, तीर और सूची तथा बायें हाथों अशोकपत्र, धनुष और तर्जनीमें लपेटा हुआ सूता है। शिर पर वैरोचन मुकुट है। सभी भुजायें विविध आभूषणोंसे सुशोभित हैं। वे रथ पर बैठी हुई हैं। सात शूकर उनके वाहन हैं। रथ पर राहु भी है जो चन्द्र और सूर्यको निगलना चाहता है। उनके चारों पार्श्वमें वैताली, वराली, वदाली और वराहमुखी नामकी देवी खड़ी हैं।

मारीच्य (सं० पु०) १ मरीचिका गोत्रापत्य। २ अग्निष्वात्ता।

मारीभय (सं० पु०) मारीके लिये भय। मरी अर्थात् हैज़ा होनेसे जो भय होता है उसीको मारीभय कहते हैं।

मारीमृत (सं० त्रि०) मारीमें मृत, जिसकी महामारीमें मृत्यु हुई हो। साधारणतः संक्रामक रोगको ही महामारी कहते हैं।

"अथ पञ्चमे नृपभयं मारीमृतदर्शनञ्च वक्तव्यम्।
षष्ठे तु भयं ज्ञेयं गन्धर्वाणां सडोम्बानाम्॥"
(बृहत्स० ८७।३३)

मारीय (सं० त्रि०) कामदेव सम्बन्धीय।

मारीष (सं० पु०) मारिष शाक, मरसा साग। पर्याय—मारुष।

मारु—हिन्दीके एक कवि। ये बहुत-सी कविता बना गये हैं, उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं।

मारू म्हारे वालो है राज।
बागों बागों केवडाजी काई सायवा ऊपर फूल गुलाबी
नाजक पोंचा पकर लियोजी काई अजर करे पिया
प्यारी घूंघटडो जोर करे थे म्हारा सिरताज॥

मारुक (सं० त्रि०) मृत्युमुखी, मुमूर्षु।

मारुजी—एक हिन्दी कवि। इनकी कविता बड़ी मधुर होती थी। उदाहरणार्थ एक नीचे देते हैं।

मारूजीने कहजो हा जी म्हारा राज मारूजीने
कहजो समझाय आसमानी डोरी
रङ्ग चुवे जी लाल डेरांकी।
ऊँचा थारा तो तम्बू जरद बनात
हो हो आसमानी डोरी रङ्ग॥

मारुण्ड (सं० पु०) १ सर्पाण्ड, सांपका अंडा। २ पन्था, रास्ता। ३ गोमयमण्डल, गोबरका घेरा।

मारुत (सं० पु०) मरुदेव मरुत् (प्रज्ञादिभ्यश्च। पा ५।४।३८) इति स्वार्थे अण्। वायु। इसकी संख्या उनचास है। इनका जन्मविवरण भागवतमें इस प्रकार लिखा है,—कश्यपकी स्त्री दितिने सेवा-टहल द्वारा अपने स्वामी कश्यपको प्रसन्न किया और इन्द्रहन्ता एक पुत्रके लिये उनसे प्रार्थना की। कश्यपने कहा, 'यदि तुम सौ वर्ष तक नियमपूर्वक व्रतका पालन कर सको, तो तुम्हारे गर्भसे इन्द्रहत्याकारी और अति पराक्रमी एक पुत्र उत्पन्न हो सकता है। किंतु याद रहे यदि बीचमें तप भंग हो जाय, तो फल उलटा होगा।' कश्यपके कथनानुसार दितिने 'वैसा ही करूंगी' कह कर व्रत आरम्भ कर दिया।

इन्द्रको यह बात मालूम होने पर वे कपट साधुके वेशमें दितिके आश्रममें आये और उनकी परिचर्या करने लगे। इस प्रकार कुछ दिन बीत गया। इंद्रने दितिके उदरमें घुसनेका किसी प्रकारका छिद्र नहीं पाया। एक दिन दैवात् दितिके मोह उपस्थित हुआ। इन्द्रको अच्छा मौका हाथ लगा। उसी छिद्रसे वे योगमाया द्वारा दितिके उदरमें घुस गये। दिति बेहोश पड़ी थी, कुछ भी न जान सकी। उदरमें प्रविष्ट होते ही इन्द्रने गर्भको सात खण्डोंमें काट डाला। कटा हुआ गर्भखण्ड रोने लगा। इस पर इन्द्रने 'मत रोवो' इस प्रकार अश्वासन दे कर प्रत्येकको फिर सात खण्ड किया।

इन्द्र जब उन्हें फिर काटनेको तैयार हुए, तब खण्डगर्भ कृताञ्जलि हो कहने लगा, 'हे इन्द्र! तुम हम लोगोंका क्यों विनाश करते हो? हम मरुद्गण हैं, आपके भाई हैं।' इन्द्रने उत्तर दिया, 'मत डरो, तुम लोग मेरे पार्षद होगे।' भगवान्की कृपासे ये मरुद्गण इनके साथ मिल कर उनचास देवता हुए। पीछे वे सबके सब दितिके गर्भसे बाहर निकले।

दिति अभी सो रही थी। हठात् उनकी नींद टूटी और अपने कुमारोंके साथ इन्द्रको देखा। कुछ समय

बाद दितिने इन्द्रसे कहा, 'मैं ऐसे पुत्रके लिये तपस्या कर रही थी जो अदितिके पुत्रोंका संहार करता। किन्तु ये उनचास पुत्र किस प्रकार उत्पन्न हुए? हे पुत्र! यदि तुम यह विषय जानते हो, तो सच सच कहो, झूठ मत कहो।'

इन्द्रने उत्तरमें कहा, 'माता! आपको तपस्याका हाल जब मुझे मालूम हुआ, तब मैं आपके निकट आया और उदरमें प्रवेश करनेका अवसर ढूंढने लगा। अवसर पा कर मैंने आपके उदरमें प्रवेश किया और गर्भको काट डाला। पहले आपके गर्भको सात खण्ड किया जिससे सात कुमार उत्पन्न हुए। पीछे उन सातोंको भी फिर सात सात खण्ड किये। इस पर भी ये सब कुमार नहीं मरे। इस प्रकार आपके कुल मिला कर ४९ पुत्र हुए।' इन्द्रके मुखसे सारी घटना सुन कर दितिने अपने सभी कुमारोंको इन्द्रके साथ जानेकी अनुमति दी। इन्द्र इन मरुद्गणोंके साथ स्वर्गको चले गये। (भागवत ६।८ अ०)

२ दक्षिणदेशमें अवस्थित एक देशका नाम। ३ अग्निभेद। गर्भाधानके संस्कारमें जो अग्नि स्थापित की जाती है उसीका नाम मारुत है। ४ वायुका अधिपति देवता। (त्रि०) मरुतसम्बन्धी।

मारुतमय (सं० त्रि०) वायुमय।

मारुतव्रत (सं० क्ली०) मारुतस्य व्रत मिव व्रतं नियमोऽस्य। राजधर्मविशेष राजाका एक धर्म।

"प्रविश्य सर्वभूतानि यथा चरति मारुतः।
तथा चरैः प्रवेष्टव्य व्रतमेतद्धि मारुतम्॥"

(मत्स्यपु० २०० अ०)

मारुतसुत (सं० पु०) १ हनुमान्। २ भीम।

मारुतसूनु (सं० पु०) मारुतस्य सूनुः। १ वायुपुत्र, हनुमान। २ भीम।

मारुता (सं० स्त्री०) स्पृक्का, असवरग।

मारुतात्मज (सं० पु०) मारुतस्य आत्मजः। १ हनुमान। २ भीम।

मारुतापह (सं० पु०) मारुतं अपहन्ति हन ड। १ वरुण वृक्ष। (त्रि०) वायुनाशक।

मारुताशन (सं० पु०) मरुतोऽशन-मस्य वा अश्नातीति अश-ल्यु, मारुतानां अशनः भक्षकः। १ वह जो वायु पी कर रहता हो, सर्प।

"भक्तः प्रगृह्य मूर्द्ध्वा वै बाहुभ्या संशितव्रतः।
स्थितः स्थाणुरिवाभ्याते निश्चेष्टो मारुताशनः॥"

(भारत ५।१०६।१३)

२ कार्त्तिकेय। ३ सैनिकविशेष। (त्रि० ४ वायुमात्र भक्षक, सिर्फ हवा पी कर रहनेवाला।

मारुताश्व (सं० पु०) मारुत इव वायुरिव वेगवान् अश्वो यस्य। वायुसदृश वेग गामि अश्वयुक्त, वह घोड़ा जो वायुके जैसा बड़े वेगसे चलता हो।

मारुति (सं० पु०) मरुतस्यापत्यं पुमान् मरुत (अत इञ्। पा४।१।९५) इति इञ्। १ हनुमान्। २ भीम।

मारुतेश्वरतीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम।

मारुदेव (सं० पु०) पर्वतभेद, एक प्राचीन पर्वतका नाम।

मारुध (सं० क्ली०) जनपदभेद।

मारुवार (सं० क्ली०) मारवाड़ देखो।

मारू (सं० पु०) मरुदेश निवासी, मारवाड़ी।

मारू (हिं० पु०) १ एक राग। यह युद्धके समय बजाया और गाया जाता है। इसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं। यह श्रीरागका पुत्र माना जाता है। २ बहुत बड़ा डंका या नगाड़ा, जंगी धौंसा। (वि०) ३ एक प्रकारका शाहबलूत। यह शिमले और नैनीतालमें अधिकतासे पाया जाता है। इसकी लकड़ी केवल जलाने और कोयला बनानेके काममें आती है। इसके पत्ते और गोंद चमड़ा रंगनेमें काम आते हैं। ४ काकरेजी रंग।

मारूत (सं० पु०) हनुमान।

मारूत (हिं० स्त्री०) घोड़ोंके पिछले पैरोंकी एक भौंरी जो मनहूस समझी जाती है।

मारे (हिं० अव्य०) वजहसे, कारणसे।

मार्क (सं० पु०) भृङ्गराज, भंगरैया।

मार्क (अं० पु०) मार्का देखो।

मार्कट (सं० त्रि०) १ मर्कट सम्बन्धीय, मर्कटका। २ मर्कटवत्, मर्कट-सा।

मार्कटपिपीलिका (सं० स्त्री० क्षुद्रकाय कृष्णापपीलिका, छोटी काली चिउंटी।

मार्कटपिप्पली (सं० स्त्री०) कपि-पिप्पली, पीपल।

मार्कीट (सं० पु०) मर्कटका गोलापत्र।

मार्कण्ड (सं० पु०) मृकण्डोरपत्यं मृकण्डु-अण्। मार्कण्डेय मुनि।

मार्कण्ड (मार्कण्डेयार्क)—१ आरा जिलेका सौरतीर्थभेद। यह आरासे ३७ मील दक्षिण-पश्चिममें अव स्थित है। २ उक्त स्थानके नामानुसार प्रसिद्ध विहारके शाकद्वीपी ब्राह्मणोंका एक विभाग।

मार्कण्ड—दरभंगा, पूर्णिया, सन्थाल परगना तथा भागलपुर आदि स्थानोंमें रहनेवाली कृषिजीवी एक जाति। इस जातिके लोग खेती करके अपनी जीविका चलाते हैं। कहते हैं, कि मार्कण्डेय मुनिसे इनकी उत्पत्ति हुई है। किसी ब्राह्मणका जूठा खानेसे मार्कण्डेय जातिच्युत हुए थे। उसी समयसे उनके वंशधर मार्कण्ड कहलाने लगे हैं।

इनमें वाल्यविवाह तथा वहुविवाहका प्रचलन है। विधवा दूसरी वार मनमाने पतिसे व्याह कर सकती है। यदि कोई स्त्री व्यभिचारिणी हो जाय तो वह जातिसे निकाल दी जाती है।

मार्कण्डोंका आचार व्यवहार कट्टर हिन्दू-सा नहीं है। वडे वडे देवपूजनमें वे ब्राह्मणको पुरोहित नियुक्त करते हैं। ब्राह्मण उनकी पुरोहिताई करनेसे निन्दाभाजन नहीं होते।

सामाजिक मर्यादासे वे ग्वाले और कुर्मियोंके समकक्ष हैं। ब्राह्मण उनके हाथका जल तथा मिठाई आदि ग्रहण करते हैं।

मार्कण्ड—नागपुरसे ६० मील दक्षिण-पूर्व कोण पर वेणावती नदीके किनारे पर वसा एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान। यहां वहुसंख्यक मन्दिर शैलभूमि पर श्रेणीवद्ध भावसे खडे हैं। यहांके सवसे वडे मन्दिरका नाम मार्कण्ड है। मन्दिरके नीचे नदीका जल केवल दो फीट गहरा है। नाव आदिके विना नदीको पार कर सकते हैं। निकटके गाँवका नाम मार्कण्डी है। वहुत पहले यहां जनाकीर्ण नगर था। वारंवार वाढ़ आनेके कारण यहांके लोग वाहर चले गये हैं।

मार्कण्डेय मुनिके नाम पर ही इस मन्दिरका नामकरण हुआ है। किन्तु मन्दिर शिवके नाम पर उत्सर्ग किया गया है। इसमें शिवलिङ्ग स्थापित हैं। यह मन्दिर कव वनाया गया था, इसका कोई लिपिवद्ध प्रमाण नहीं मिलता। नागपुर और वेरारप्रान्तके मन्दिरोंके सम्बन्धमें जैसी कहावत प्रचलित है, यहांके मन्दिरोंकी सम्बन्धमें भी ठीक वैसी ही है। कहते हैं, ये सभी मन्दिर एक रातमें ही हेमाडपन्थ द्वारा वनाये गये थे। भाण्डकसे काशी तक सभी मन्दिर हेमाडपन्थके ही वनाये हुए हैं। हेमाड़पन्थ एक ब्राह्मणके पुत्र थे। गौडराज लक्ष्मणसेन और इनका जन्मवृत्तान्त भी प्रायः एक ही तरह है। प्रसववेदना होने पर हेमाडपन्थकी माताने देखा, कि इस समय यदि लडका भूमिष्ठ होगा, तो अशुभ योगमें पड़ेगा। यह देख दासियोंको उन्होंने हुकम दिया, कि प्रसवको रोकनेके लिये तुम लोग यत्न करो। उनके हुक्मके मुताविक उनके दोनों पैरमें रस्सी वांध कर सर नीचे और पैर ऊपर करके टांग दिया। शुभ लग्न आने पर दाइयोंने उनको वन्धनमुक्त कर पूर्ववत् सुला दिया।

लेटते ही हेमाडपन्थका जन्म हुआ। किन्तु माता वच न सकीं। शुभलग्नजात हेमाड (हेमाद्रि) शुक्लपक्षीय शशिधरकी तरह वढने लगे और थोडे ही समयमें सव शास्त्रोंमें सुपण्डित हो उठे। विशेषतः चिकित्साशास्त्रमें उनकी प्रगाढ़ व्युत्पत्ति हुई। विभीषण जव वीमार हुए थे, तव हेमाडने ही उनको अच्छा किया था। उस समय पुरस्कारस्वरूप उनको एक वर मिला था। उसी वरसे उन्होंने राक्षसोंकी सहायतासे गोदावरीके वीचमें इन मन्दिरोंका निर्माण किया था। ये मन्दिर १७६ फीट लम्वे और ११८ फीट चौडे हैं। चारों ओरसे चहारदीवारी दी हुई है। मंदिर देखनेमें वहुत सुन्दर हैं। वीचमें मार्कण्डेयका मन्दिर है। इस मन्दिरके चारों ओर श्रेणीवद्धभावमें अन्यान्य मंदिर खड़े हैं। मन्दिरोंका निर्माण-परिपाटी देखनेसे मालूम होता है, कि वे १०वीं या ११वीं शताब्दीके वने हुए हैं। दक्षिण ओर प्रधान प्रवेशद्वार तथा अगल वगल एक एक और दरवाजा है। मन्दिरके भीतर १२ तरहके शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित हैं। सिवा इनके दशावतार आदि देवमूर्त्तियां भी हैं।

मार्कण्डेय ऋषिका मन्दिर ही सवसे वड़ा है और

कारुकार्य सम्पन्न है। दो सौ वर्ष पहले एक वज्राघातसे मन्दिरका शिखर टूट गया है।

शिवलिङ्गका ऊपरी भाग पीतलसे मढ़ा हुआ है। या यों कहिये, कि शिवलिङ्गको मुकुट पहनाया गया है। मुकुटके चारों ओर पांच नरमुण्ड और ऊपरमें फण उठाये नागका चन्द्रातप है।

बाकी मन्दिरकी निर्माण-प्रणाली खजूराहुके मन्दिर आदिकी तरह है। दो फीट तीन इञ्च लम्बी खोदित मनुष्य मूर्त्ति चारों ओर श्रेणीवद्ध खड़ी है। प्रत्येक श्रेणीमें ४५ मूर्त्तियोंके हिसावसे तीन श्रेणियोंमें १३५ मनुष्यमूर्त्ति है। मनुष्य श्रेणीके बाद हंस श्रेणी, फिर बन्दर श्रेणी, इसके बाद चार श्रेणीमें मनुष्य-मूर्त्ति खड़ी हैं। वास्तवमें मन्दिरका सम्मुख भाग नाना प्रकारके भास्करशिल्पसे सजा हुआ है। किसी किसी स्थानमें नर्त्तकियोंकी मूर्त्तियां खोदी गई हैं। फिर कहीं वीणावादन परायण अलङ्कार भूषिता सीमन्तनियोंकी मूर्त्तियां शिल्पियोंके निर्माणनैपुण्यका साक्ष्य प्रदान कर रही है।

शिवमूर्त्तिका प्रशान्त भाव सर्वत्र ही परिस्फुट है। समरांगणमें रौद्ररसकी अभिव्यक्तिमें वसन्त पुष्पाभरण विलोलनयना गौरीके साथ प्रेमालापके कमनीय भावमें सर्वत्र ही शिवका प्रशान्त गाम्भीर्य रक्षित हुआ है। सिवा इसके नन्दिकेश्वर, मृत्युञ्जय, यम, उमा महेश्वर, राजराजेश्वर आदि मन्दिर भी विशेषरूपसे उल्लेखनीय है।

मार्कण्डिका (सं० स्त्री०) भूम्याहुल्य, भूंईखखसावल्ली।

मार्कण्डीय (सं० क्ली०) भूम्याहुल्य, भूंईखखसावल्ली।

मार्कण्डेय (सं० पु०) मृकण्डोरपत्यं, मृकण्डु (शुभ्रादिभ्यश्च। पा ४।१।१२३) इति ढक्। मृकण्डु मुनिके पुत्र। जन्मतिथि और संस्कारादि कार्यमें इनकी पूजा करनी होती है। गर्भाधानादि संस्कारकार्यमें षष्ठीपूजाके बाद मार्कण्डेय पूजा की जाती है। इनका ध्यान इस प्रकार है—

"द्विभुजं जटिलं सौम्यं सुवृद्ध चिरजीविनम्।
मार्कण्डेयं नरो भक्त्या पूजयेत् चिरायुषम्॥"
(तिथितत्त्व)

इस ध्यानसे विधिपूर्वक पूजा करके निम्नोक्त मन्त्र द्वारा प्रार्थना करनी होती है। प्रार्थनामन्त्र इस प्रकार है—

"चिरजीवी यथा त्वं भो भविष्यामि तथा मुने।
रूपवान् वित्तवांश्चैव श्रिया युक्तश्च सर्वदा॥
मार्कण्डेय महाभाग सप्तकल्पान्तजीवन।
आयुरिष्टार्थसिद्ध्यर्थमस्माकं वरदो भव॥" (तिथितत्त्व)

मार्कण्डेयपुराणमें मार्कण्डेयका उत्पत्ति-विवरण इस प्रकार लिखा है,—महात्मा भृगुके ख्यातिके गर्भसे धाता और विधाता नामक दो पुत्र हुए। ये दोनों ही देवता थे। नारायणकी पत्नी श्री भी इसी ख्यातिके गर्भसे उत्पन्न हुई थीं। मेरुके दो कन्या थीं, आयति और नियति। धाता और विधाताने दोनोंका पाणिग्रहण किया था। यथासमय आयतिके प्राण और नियतिके मृकण्डु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। मृकण्डुकी स्त्रीका नाम मनस्विनी था। इन्हीं मनस्विनके गर्भसे मार्कण्डेयने जन्म लिया। इनकी स्त्रीका नाम धूमावती और पुत्रका वेदशिरा था। (मार्कण्डेयपु ५२ अ०)

नरसिंहपुराणमें लिखा है, कि भृगुके एक पुत्र थे। मृकण्डु उनका नाम था। मृकण्डुके मार्कण्डेय नामक एक पुत्र हुआ। पुत्रके उत्पन्न होते ही मृकण्डुको मालूम हो गया, कि इस पुत्रकी बारहवें वर्षमें मृत्यु होगी। इस पर वे बड़े दुःखित हुए। एक दिन मार्कण्डेयने अपने पितासे उनके दुःखका कारण पूछा। पिताने उनकी मृत्युका हाल जैसा सुना था, कह सुनाया। मार्कण्डेयने पितासे कहा, 'आप इसके लिये जरा भी चिन्ता न करें, मैं अपने बाहुबलसे मृत्युको परास्त कर चिरजीवी हो सकता हूं।' पीछे मार्कण्डेय पिता और माताको आश्वासन दे कर तपस्याके लिये जंगल चले गये। वहां विष्णुमूर्त्तिकी प्रतिष्ठा करके कठोर तपस्या करने लगे। इस तपोबलसे वे मृत्युको परास्त कर चिरजीवी हो गये।
(नरसिंहपु०)

पद्मपुराणमें लिखा है—महामुनि मृकण्डु सस्त्रीक तपस्या कर रहे थे। इसी समय उनके मार्कण्डेय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रकी आठवें वर्ष मृत्यु होगी, यह उन्हें अच्छी तरह मालूम था। इसलिये पुत्रको यज्ञोपवीत दे कर मृकण्डुने कहा, 'तुम ऋषियोंका अभिवादन करो।' मार्कण्डेय वैसा ही करने लग गये। इसी समय सप्तर्षि वहां पहुंचे। मार्कण्डेयने उनको

अच्छी सेवाटहल की। जाते समय 'तुम चिरायु हो' कह कर ऋषियोंने इन्हें आशीर्वाद दिया। किन्तु जब उन्हें मालूम हुआ, कि बालककी आयु थोडी है, तब वे उसे ले कर ब्रह्माके पास गये। ब्रह्माके वरसे ब्रह्माकी परमायुके समान इनकी आयु हुई। मार्कण्डेय इस प्रकार दीर्घायुः लाभ कर अपने घरको लौटे। इनके विषयमें ऐसा प्रसिद्ध है कि ये अब तक जीवित हैं और रहेंगे।

मार्कण्डेयेन प्रोक्तं अण्। २ पुराणविशेष, मार्कण्डेय पुराण। यह अठारह महापुराणोंमें सातवाँ महापुराण है। पहले स्वयम्भुने मार्कण्डेयको जो उपदेश दिया था उसीको ले कर यह पुराण आरम्भ किया गया है। यह पुराण पढने वा सुननेसे आयुर्वृद्धि और सभी कामनायें सिद्ध होती तथा समस्त पाप जाते रहते हैं। विपद्से बचनेके लिये घर घर जो चण्डी-पाठ होता है वह इसी पुराणके अन्तर्गत है। पुराण देखो।

३ नाडीपरीक्षाके प्रणेता।

मार्कण्डेय कवीन्द्र—प्राकृतसर्वस्वके रचयिता।

मार्कण्डेयचूर्ण (सं० पु०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—पारा, गंधक, हिंगुल, सुहागेका लावा, त्रिकटु, जायफल, लवङ्ग, तेजपत्र, इलायची, चितामूल, मोथा, गजपीपल, सोंठ, अतिवला, अबरक, धवका फूल, अतीस, सहिंजनका बीया, मोचरस और अफीम प्रत्येक एक पल ले कर अच्छी तरह चूर्ण करे। इसीका नाम मार्कण्डेय-चूर्ण है। चीनीके साथ प्रतिदिन १ मांशा सेवन करनेसे संग्रहणी-रोग आरोग्य होता है।

(भैषज्यरत्नावली ग्रहण्यधिकार)

मार्कपलो—एक प्रसिद्ध पर्यटक। भिनिस नगरके किसी संभ्रान्त वंशमें इनका जन्म हुआ था। निकलो और माथु नामक दो भाई थे। कुस्तुनतुनिया और क्रिमियामें उनका वाणिज्यकेन्द्र था। उन्होंने १२५४ ई०में भिनिसका परित्याग कर पूर्वकी यात्रा की। १२६० ई०में वे कुस्तुनतुनियाको छोड़ कर वोखारा होते हुए कुवल खाँके राज्यमें गये। कुवल खाँने उन दोनोंको पोपके निकट दूत बना कर भेजा। तदनुसार वे १२५६ ई०में एकर-नगरमें पहुंचे। निकलोने वहां जा कर देखा, कि उनकी स्त्री पुत्र मार्कपलोको छोड़ परलोक सिधार गई है। उस समय मार्कपलोकी उमर १५ वर्षकी थी। दो वर्ष बाद मार्कपलो और एक पुरोहितको साथ ले वे भ्रमणमें निकले। पुरोहितने पोपको पत्रादि दे कर उन सबोंका साथ छोड़ दिया। एकरसे ले कर सिरिया उपकूल भागमें उन्होंने तीन वर्ष तक भ्रमण किया। पीछे बाग दाद और हर्मुज होते हुए वे फर्मान, खोरासन, बालख और वदक्सान तक गये। वदक्सानमें मार्कपलो बीमार पडा जिससे उन्हें वहां बहुत दिन तक ठहरना पडा था। वदाक्सानसे वे कच और श्रीकोल ह्रदको पार कर पमीर उपत्यकामें पहुंचे। वहांसे काशगर, यारकन्द और खोटान होते हुए एशियाको गोवी मरुभूमि पार कर चीनदेशके उत्तर-पश्चिममें आये।

चीनदेशकी चहारदीवारी घुसने पर कुवला खाँका कर्मचारी उनके समीप आया। उस समय कुवला खाँ चहारदीवारीसे ५० मील उत्तर सांट नगरमें राज्य करते थे। पीछे पिता-पुत्र पिकिन नगरमें आये। मार्कपलोकी उमर उस समय २१ वर्ष थी। वे थोडे ही समयमें चीन-भाषा सीख कर चीन-सम्राट्के प्रियपात्र हो गये। पीछे २६ वर्ष तक वहां रह कर मार्कपलोने बहुतसे राजकीय तथा उच्च कर्मचारीके कार्य्य भी किये थे। राजकन्याके साथ तातारवंशीय पारस्य-राजकुमारका विवाह स्थिर हुआ था—मार्कपलो राजकन्याके रक्षकरूपमें पारस्यदेश गये थे। उन्होंने एक बार और यूनानप्रदेश होते हुए सीमान्त-प्रदेशकी यात्रा की। पीछे वे कोटिलान्तर्गत काराकोरम नगरमे पहुंचे। वहांसे भारत-महासागरके सुमात्रा द्वीपमें जलपथसे रवाना हुए। कुवला खाँके भतीजे अर्गान खाँके विवाहके लिये एक सर्वाङ्गसुन्दरी कन्याकी तलाशमें मार्कपलोको मुगल-देश भी जाना पड़ा था। इनके पहले सुमात्रा द्वीपका हाल किसीको भी मालूम नहीं था। मार्कपलो १२६५ ई०में भिनिस लौटे। अनन्तर १२६८ ई०में कुर्जलाकी लड़ाईमें ये कैद किये गये। स्वदेश लौट कर इन्होंने अपना भ्रमणवृत्तान्त हाथसे लिख कर जनसाधारणमें प्रकाशित किया। जेनोआ-वासी राष्टिजिया नामक एक व्यक्तिने सबसे पहले इनके अपूर्व भ्रमणवृत्तान्तको लिपिवद्ध कर जनसमाजमें प्रचार किया। यह वृत्तान्त १३२० ई०को लाटिन-भाषामें

लिखा गया। पीछे १४०२ ई०में लिसबनमें इसका प्रचार हुआ। फरासी देशमें १५५६ ई०को इसका प्रथम संस्करण निकाला गया।

मार्कर (सं० पु०) भृङ्गराज, भंगरैया।

मार्कव (सं० पु०) मर्कति केशरञ्जनार्थं गच्छतीति मकवः, मर्के सर्पं नाप्नोति अवः निपातनाद् वृद्धिः। भृङ्गराज, भंगरैया। (भावप्रकाश)

मार्का (अं० पु०) संकेत, कोई अंक या चिह्न जो किसी विशेष बातका सूचक हो।

मार्केट (अं० पु०) बाजार, हाट।

मार्ग (सं० पु०) मार्ग्यते संस्क्रियते पादेन मृग्यते गमनाय अन्विष्यते इति वा मार्ग- वा मृग घञ्। पन्था, रास्ता।

'त्रिंशद्धनूंषि विस्तीर्णो देशमार्गस्तु तैः कृतः।
विंशद्धनुर्ग्राममार्गः सीमामार्गो दशैव तु॥
धनूंषि दश विस्तीर्णः श्रीमान् राजपथः स्मृतः॥"
(देवीपुराण)

तीस धनुका देशमार्ग, बीस धनुका ग्राममार्ग, दश धनुका सीमामार्ग और दश धनुका राजमार्ग बनाना चाहिये। चार हाथका एक धनु होता है। २ गुदा, पायु। ३ मृगमद कस्तूरी। ४ मार्गशीर्षमास, अगहनका महीना। ५ अन्वेषण, खोज। ६ मृग शिरा नक्षत्र। ७ विष्णु। ८ रक्तापामार्ग, लाल चिचडा। मृगस्येदं मृग-अण्। (त्रि०) ९ मृगसम्बन्धी।

"तद्वर्ज्यं सलिलं तात! सदैव पितृ-कर्मणि।
मार्गमाविकमौष्ट्रञ्च सर्वमेकशफञ्च तत्॥"
(मार्कण्डेयपु० ३२।१७)

मार्गक (सं० पु०) मार्ग स्वार्थे कन्। १ अग्रहायण मास, अगहनका महीना। २ मार्ग देखो।

मार्गण (सं० क्ली०) मार्ग्यते अन्विष्यत इति मार्ग भावे ल्युट्। १ अन्वेषण, ढूंढ़ना। पर्याय—सम्वीक्षण, विचयन, मृगणा, मृग। २ याचञा, परीक्षा करना। ३ प्रणय, प्रार्थना। (पु०) ४ याचक, भिखमंगा। ५ शर, वाण।

"ते सर्वे दृढधन्वानः संयुगेष्वपलायिनः।
बहुधा भीष्ममानर्च्छुर्मार्गणैः कृतमार्गणाः॥"
(भारत ५।११५।४४)

मार्गणक (सं० पु०) मार्गण स्वार्थे कन्। याचक, भिखमंगा।

मार्गणता (सं० स्त्री०) १ मार्गण या धानका भाव। २ याचकता।

मार्गतोरण (सं० क्ली०) पथपार्श्वमें स्थापित तोरण, बाहरी फाटक।

मार्गद (सं० पु०) केवट।

मार्गदायिनी (सं० स्त्री०) १ केदारस्थ दाक्षायिणी। २ पथ दिखानेवाली।

मार्गद्रुम (सं० पु०) पथपार्श्वस्थ वृक्ष, रास्ताकी बगलका पेड़।

मार्गधेनु (सं० पु०) मार्गस्य धेनुः परिमाणं। एक योजनका परिमाण।

मार्गधेनुक (सं० क्ली०) मार्गधेनु स्वार्थे कन्। योजन।

मार्गप (सं० पु०) राजकर्मचारिभेद, राज्यका वह कर्मचारी जो मार्गोंका निरीक्षण करता हो। इसे अंगरेजीमें Road-inspector कहते हैं।

मार्गपति (सं० पु०) मार्गप देखो।

मार्गपाली (सं० स्त्री०) मार्गं पालयति हिंस्रेभ्यः रक्षतीति पाल-अच्, गौरादित्वात् ङीष्। स्तम्भ, खंभा।

"ततोऽपराह्नसमये पूर्वस्यां दिशि नारद।
मार्गपालीं प्रबध्नीयाद् गस्तम्भे च पादपे॥"
(पद्मपु० उत्त० १२४ अ०)

मार्गबन्धन (सं० क्ली०) पथरोध, रास्ता रोकना।

मार्गमाण (सं० पु०) खोजा, नपुंसक व्यक्ति।

मार्गमित्र (सं० पु०) सहपाठी, साथ जानेवाला।

मार्गरक्षक (सं० पु०) पथरक्षक, पहरावाला।

मार्गरोधिन् (सं० त्रि०) पथरोधक, रास्ता रोकनेवाला।

मार्गव (सं० पु०) वर्णसङ्कर जातिविशेष। इसकी उत्पत्ति निषाद पिता और आयोगवी मातासे मानी जाती है।

"निषादो मार्गवं सूते दाशं नौकर्मजीविनम्।
कैवर्त्तमिति यं प्राहुरार्य्यावर्त्तनिवासिनः॥"
(मनु १०।३४)

"ब्राह्मणेन शूद्रायां जातो निषादः प्रागुक्तः, प्रकृतायामायोगव्यां मार्गवं दाशापरमाना- नौव्यवहारजीविनं जनयति।"
(कल्लूक)

इस जातिका दूसरा नाम दाश भी है। ये लोग नाव खे कर अपनी जीविका चलाते हैं।

मार्गवती (सं० स्त्री०) पथिकोंकी रक्षा करनेवाली एक देवीका नाम।

मार्गवशानुग (सं० त्रि०) पथानुवर्त्ती, पथस्थित।

मार्गवशायात (सं० त्रि०) मार्गवशानुग देखो।

मार्गवाहिनी (सं० स्त्री०) छोटी नाडी।

मार्गविद्या (सं० स्त्री०) १ संगीतके देवता और प्राचीन ऋषियोंके बनाये हुए गाने बाजे और नृत्यकी प्रकरणविद्या। २ पथनिर्माणादि विद्या, रास्ता आदि बनानेको विद्या।

मार्गवेय (सं० पु०) ऐतरेय ब्राह्मणोक्त एक ऋषिकुमारका नाम। राममार्गवेय देखो।

मार्गशाखिन् (सं० पु०) मार्गे यः शाखी। मार्गस्थित वृक्ष, रास्ते पर जो पेड रहता है उसीको मार्गशाखी कहते हैं। (रघु १।४५)

मार्गशाखी (सं० पु०) मार्गशाखिन् देखो।

मार्गशिर (सं० पु०) मृगशिरानक्षत्रयुक्ता पौर्णमास्यत्र मृगशिरा-अण्। मार्गशीर्ष मास, अगहनका महीना।

"शुक्ले मार्गशिरे पक्षे योषिद्भर्त्तुरनुज्ञया।
आरभेत व्रतमिदं सर्वकामिकमादितः॥"

(भाग० ६।१९।२)

मार्गशिरस् (सं० पु०) मार्गशीर्ष, अगहनका महीना।

मार्गशीर्ष (सं० पु०) मार्गशीर्षी अण्, मृगशीर्षेण युक्ता पौर्णमासी मार्गशीर्षी साऽस्मिन् मासे भवति मार्गशीर्ष। अग्रहायण मास, अगहनका महीना। इस मासकी पूर्णिमातिथिमें मृगशिरा नक्षत्रका योग होता है, इसीसे इसका 'मार्गशीर्ष' नाम हुआ है। पर्याय—सहा, मार्ग, आग्रहायणिक, मार्गशिर, सह। (शब्दरत्ना०)

यह मास सौर, मुख्यचान्द्र और गौणचान्द्रके भेदसे तीन प्रकारका होता है। जब तक रवि वृश्चिक राशिमें रहते हैं, उतने समयको सौर मार्गशीर्ष, रविके वृश्चिक राशिमें रहते समय शुक्ल प्रतिपद्से अमावस्या पर्यन्तको मुख्यचान्द्र मार्गशीर्ष और रविके वृश्चिक राशिमें रहते समय कृष्ण प्रतिपद्से मुख्य चान्द्र मार्गशीर्षकी पौर्णमासी तकको गौणचान्द्र मार्गशीर्ष कहते हैं। कृत्यतत्त्वमें मासकृत्यस्थलमें (अर्थात् किस मासमें क्या करना आवश्यक है) कहा है, कि इस मासमें नवान्न श्राद्ध करना उचित है। हैमन्तिक धान इसी समय पकता है। यह नया धान पहले देवता और पितरोंको उत्सर्ग कर ब्राह्मण, आत्मीय और कुटुम्बोंको खिलानेके बाद पीछे आपको खाना चाहिये। नये अन्नसे पितरोंका श्राद्ध होता है, इसीसे इसको नवान्नश्राद्ध कहते हैं। यह श्राद्ध पार्वणके विधानानुसार करना होता है। नवान्न देखो।

मार्गशीर्षमास ही नवान्नका मुख्य समय है। यदि कोई दैवविड़म्बनाके कारण इस मासमें नवान्न न कर सके, तो माघ मासमें कर सकता है। इस मासकी शुक्ला चतुर्दशी तिथिको सौभाग्यकी कामना कर पाषाणाकार पिष्टक द्वारा देवताकी पूजा करे और पीछे उस पिष्टकको आप खावे। पूर्णिमा तिथिमें पार्वण श्राद्ध अवश्य करना चाहिये। (कृत्यतत्त्व) मार्गशीर्षमासमें यदि किसीका जन्म हो तो वह बालक धार्मिक, परोपकारी, तीर्थ वा प्रवासरत, सद्वृत्तियुक्त तथा कामुक होता है।

"यस्य प्रसूतिः खलु मार्गमासे तीर्थे प्रवासे सततं मतिः स्यात्।
परोपकारी धृतसाधुवृत्तिः सद्वृत्तियुक्तो ललनाभिलाषी॥"

(कोष्ठीप्रदीप)

यह मास सभी मासोंमें श्रेष्ठ है। स्वयं भगवान्ने कहा, कि मैं मासोंमें मार्गशीर्ष हूं।

"मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः।"

(गीता १० अ०)

ज्योतिषमें लिखा है—उस मासमें ज्येष्ठ पुत्र और कन्याका विवाह वा चूड़ाकरण नहीं करना चाहिये।

"मार्गशीर्षे तथा ज्येष्ठे क्षौरं परिणयं व्रतम्।
ज्येष्ठपुत्रदुहित्रोश्च यत्नतः परिवर्जयेत्॥" (दीपिका)

किसी किसीका मत है, कि ज्येष्ठमासमें प्रथम दश दिन वा १८ दिन बाद दे कर विवाहादि किया जा सकता है, लेकिन अग्रहायण मासके सम्बन्धमें ऐसा कोई नियम नहीं है। यह समूचा मास वर्जनीय है। कोई कोई कहते हैं, कि मार्गशीर्ष मासमें भी ऊपर कहे गये दिनोंको बाद दे कर विवाहादि किया जा सकता है। किन्तु जो ऐसा कहते हैं उनका मत नितान्त अश्रद्धेय और अशास्त्रीय है।

मार्गशीर्षी (सं० स्त्री०) अगहनकी पूर्णिमा।

मार्गशीर्षक (सं० पु०) मार्गशीर्ष-स्वार्थे कन्। मार्गशीर्ष मास, अगहनका महीना।

मार्गशोधक (सं० पु०) पथ-परिष्कारक, झाड़दार।

मार्गशोभा (सं० स्त्री०) सम्मान-प्रदर्शनार्थ पथसज्जा, सम्मान दिखानेके लिये रास्तेको सजाना।

मार्गहर्म्य (सं० क्ली०) पथस्थित गृह, रास्ते परका घर।

मार्गागत (सं० त्रि०) पथसे उपस्थित।

मार्गायात (सं० त्रि०) पथ विस्तृत, चौड़ा रास्ता।

मार्गार (सं० पु०) मृगादिका अपत्य।

मार्गिक (सं० त्रि०) मृगान् हन्तीति मृग (पक्षिमत्स्य-मृगान् हन्ति। पा ४।४।३५) इति ठक्। १ मृगहन्ता, मृगों को मारनेवाला। २ पथिक, यात्री।

मार्गित (सं० त्रि०) मार्ग अन्वेषणे क्त। अन्वेषित, खोजा हुआ।

मार्गितव्य (सं० त्रि०) मार्गतव्य। अन्वेषणीय, अन्वेषणके योग्य।

मार्गिन् (सं० पु०) मार्गगामी, मार्ग पर चलनेवाला व्यक्ति, बटोही।

मार्गी (सं० पु०) १ मार्गिन् देखो। (स्त्री०) २ संगीतमें एक मूर्च्छना। इसका स्वर ग्राम इस प्रकार है—नि स रे ग म प ध। म प ध नि स रे ग म प ध नि स।

मार्गीयव (सं० क्ली०) सामभेद, एक प्रकारका साम गान।

मार्गेश (सं० पु०) मार्गस्य ईशः। मार्गप, मार्गपति।

मार्गोपदिश (सं० पु०) उपायोपदेष्टा, उपाय बतलानेवाला।

मार्ग्य (सं० त्रि०) मृज्यते इति मृज् (मृजेर्विभाषा) इति पक्षे ण्यत् वृद्धिश्च (चजोः कुघिण्ण्यतोः। पा ७।३।५२) इति कुत्वं। १ मार्जनीय, मार्जन करने योग्य। २ अन्वेषणीय, ढूंढने लायक।

मार्च (अं० पु०) १ अंगरेजीका तीसरा मास, फरवरीके बाद और अप्रैलके पहले पड़नेवाला अंगरेजी महीना। यह प्रायः फागुनमें पड़ता है। २ गमन, गति। ३ सेनाका प्रस्थान, सेनाका कूच।

मार्ज (सं० पु०) मार्जयति पापमलं प्रक्षाल्य उद्धरति जनानिति मार्ज-णिच्-अच्। १ विष्णु। मार्जयति वसनमलमिति मार्ज अच्। २ रजक, धोबी। ३ मार्जन।

मार्जक (सं० त्रि०) १ मार्जनकारी, साफ करनेवाला। (पु०) २ रजक, धोबी। ३ सम्मार्जक, झाड़ू देनेवाला।

मार्जन (सं० क्ली०) मार्ज्यते इति मार्ज भावे ल्युट्। परिष्करण, साफ करनेका भाव। पर्याय—मार्ष्टि, मार्ष्टी, मार्जना, मृजा, मार्ज, मार्जा (अमर)

स्नानकालमें शरीरको अच्छी तरह मलना चाहिये। इससे शरीरकी दुर्गन्ध, गुरुता, खुजली, दाद आदि चमड़े का रोग तथा अरुचि और स्वेद विनष्ट होता है।

"दौर्गन्ध्य गौरव कण्डू कच्छू मलमरोचकम्।
स्वेद वीभत्सता हन्ति शरीरपरिमार्जनम्॥"

(राजवल्लभ)

भावप्रकाशमें लिखा है—स्नान करनेके बाद अंगोछेसे शरीरको अच्छी तरह पोंछ डालना चाहिये। इससे शरीरकी कान्ति बढ़ती है और खुजली दाद आदि चर्मरोग जाते रहते हैं। शरीर पोंछ डालनेके बाद वस्त्र पहनना उचित है।

"स्नानस्यानन्तरं सम्यग् वस्त्रे नाङ्गस्य मार्जनम्।
कान्तिप्रद शरीरस्य कण्डूत्वग् दोषनाशनम्॥"

(भावप्र०)

देवगृहमार्जन अतिशय पुण्यजनक है। स्त्री वा पुरुष जो कोई व्यक्ति प्रतिदिन देवगृहमार्जन करता है उसके सभी पाप जाते रहते हैं। अन्तमें उसे स्वर्गको प्राप्ति होती है। अतएव सभोंको चाहिये, कि वे प्रतिदिन देव गृहको परिष्कार करें।

"समार्जनन्तु यः कुर्यात् पुरुषः केशवालये।
रजस्तमोभ्यां निर्मुक्तः स भवेन्नात्र संशयः॥
पांशूना यावता राजन् कुर्यात् समार्जनं नरः।
तावन्त्यब्दानि स सुखो नाकमासाद्य मोदते॥"

(विष्णुधर्मोत्तर)

सभी शास्त्रोंमें एक स्वरसे कहा है, कि देवगृहमार्जन करनेसे अशेष पुण्य होता है। विस्तार हो जानेके भय से यहां पर कुल वचन उद्धृत नहीं किये गये। हरिभक्तिविलासमें विस्तृत विवरण दिया गया है।

२ स्नानविशेष। शारीरिक असुस्थताके कारण जिस दिन स्नान न कर सके उस दिन शरीरको धो लेना चाहिये। यदि यह भी न कर सके तो गीले अङ्गोछेसे

इसूत्रा शरीर पोंछ डाले। इसको गौण स्नान कहते हैं।

"अशिरस्कं भवेत् स्नानं स्नानाशक्तौ तु कर्मिणाम्।
आर्द्रेण वाससा वापि मार्जनं दैहिकं विदुः॥
इति जावालवचनात् शिरो विहाय गात्रप्रक्षालनं तदशक्तौ सर्वगात्रमार्जनं आर्द्रेण वाससा कुर्यात्॥"

(आह्निकतत्त्व) स्नान देखो।

वैदिकसंध्या करनेके समय मन्त्र पढ कर मस्तक और गात्रादि पर कुशपत्र द्वारा जल सिञ्चन करे। इसको भी मार्जन कहते हैं। मार्जन द्वारा विशुद्धिता लाभ होती है, किन्तु इस वैदिक संध्योपासनान्तर्गत मार्जन द्वारा पापमल दूर और शरीर पवित्र होता है। इसीसे प्रति दिन सन्ध्योपासनाके समय पहले ही मार्जन करनेको कहा गया है * (पु०) मार्ज्यतेऽनेनेति मार्ज-ल्युट्। ३ लोध्रवृक्ष, लोध। ४ श्वेत लोध्र, सफेद लोध। ५ रक्त लोध्र, लाल लोध।

मार्जना (सं० स्त्री०) मार्ज्यते इति मार्ज भावे युच्-टाप्। १ मार्जन, सफाई। २ मुरजध्वनि, मृदंगकी बोल। ३ क्षमा, माफी।

मार्जनी (सं० स्त्री०) मार्ज्यतेऽनयेति मार्ज करणे ल्युट् स्त्रियां ङीप्। सम्मार्जनी, झाड़।

"नमामि शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बरीम्।
मार्जनी कलसोपेतां शूर्पालङ्कृत मस्तकाम्॥"

(शीतलास्तव)

* "शिरसो मार्ज्जनं कुर्य्यात् कुशैः सोदकविन्दुभिः।
प्रणवो भर्भुवः स्वश्च गायत्री च तृतीयिका॥
अब्दैवत्य त्र्यचश्चैव चतुर्थमिति मार्ज्जनम्॥
ॐकारो भुरादिव्याहृतित्रय तृतीया च गायत्री चतुर्थं आपो हि ष्ठेति ऋक्त्रय इतीदं मार्ज्जनं मार्ज्जनक्रियाकरणमित्यर्थः।
ऋगन्ते मार्ज्जनं कुर्य्यात् पादान्ते वा समाहितः।
आपो हि ष्ठेत्यचा कार्यं मार्जनन्तु कुशोदकैः॥
प्रतिप्रणवसयुक्तं क्षिपेन्मुर्द्धिन् पदे पदे।
त्र्यचस्यान्तेऽथवा कुर्य्यांद्दपीणा मतमीदृशम्॥
आपो हि ष्ठेति सुक्तस्य सिन्धुद्वीपऋषिः स्मृतः।
आपो वै देवता छन्दो गायत्री मार्जनं स्मृतम्॥"

(आह्निकतत्त्व)

हिन्दू शास्त्रज्ञोंका कहना है, कि मार्जनीरजः यानी झाड़की धूल शरीरमें नहीं लगानी चाहिये। इससे इन्द्रतुल्य व्यक्ति भी शीघ्र ही श्रीभ्रष्ट हो जाते हैं।

२ मध्यम स्वरकी चार श्रुतियोंमेंसे अन्तिम श्रुति।

मार्जनीय (सं० त्रि०) मार्ज्यते इति मृज्-अनीयर्। १ मार्जनयोग्य, परिष्कार करने योग्य। २ अग्नि। ३ शोधन।

मार्जार (सं० पु०) मृज (कञ्जिमृजिभ्या चित्। उण् ३।१३७) इति आरन्चित् 'मृजेर्वृद्धिः' इत्युर्ज लदचोक्त वृद्धिश्च। १ रक्तचित्रक वृक्ष, लाल चीता पेड़। २ पूतिसारिवा, वनबिलाव। ३ खट्टास, खटाम। ४ बिड़ाल, बिल्ली। मार्जारको स्पर्श नहीं करना चाहिये, संयोगवश यदि स्पर्श हो जाय, तो स्नान कर लेना उचित है।

"अभोज्यसूतिकाषण्डमार्जाराख्वश्वकुक्कुरान्।
पतितापविद्धचण्डाल मृतहाराश्च धर्मवित्।
संस्पृश्य शुध्यते स्नानादुदक्याग्रामशूकरौ॥"

(मार्कण्डेयपुराण)

पारिभाषिक मार्जार—जो केवल अहङ्कारके लिए जप तप करता है तथा जिसका कार्य पारमार्थिक नहीं है उसको मार्जार कहते हैं। ऐसे व्यक्तिको विड़ाल तपस्वी कहते हैं। इसका अन्न अभोज्य है। अर्थात् विडाल-तपस्वीका अन्न खानेसे पाप होता है।

"दम्भार्थं जपते यश्च तप्यते यजते तथा।
न परत्रार्थमुद्युक्तो मार्जारः परिकीर्त्तितः॥
अभोज्याः सूतिकाषण्डमार्जाराख्वश्च कुक्कुटाः॥"

(वामनपु० १५ अ०)

मार्जारक (सं० पु०) मार्जार (संज्ञायां कन्। पा ४।३।१४७) इति कन्। २ मयूर, मोर। २ विडाल, बिल्ली।

मार्जारकण्ठ (सं० पु०) मार्जारस्येव कण्ठः कण्ठस्वरो यस्य यद्वा मार्जारो मसृणः कण्ठो यस्य। मयूर, मोर।

मार्जारकर्णिका (सं० स्त्री०) मार्जारस्य कर्णौ इव कर्णौ यस्याः, स्त्रियां-ङीप् स्वार्थे कन्। चामुण्डाका एक नाम।

मार्जारकर्णी (सं० स्त्री०) मार्जारस्येव कर्णावस्याः ङीप्। चामुण्डाका एक नाम।

मार्जारगन्धा (सं० स्त्री०) मार्जारस्येव गन्धोऽस्याः। मुद्गपर्णी, वनमूंग।

मार्जारगन्धिका (सं० क्ली०) मार्जार गन्ध कन् टाप् अंत इत्वञ्च। मुद्गपर्णी वनमूंग।

मार्जारपाद (सं० पु०) अश्वभेद, एक प्रकारका बुरे लक्षणवाला घोड़ा। जिस घोड़के खुर उसके शरीरके रंग जैसा न हो कर दूसरे रंगका हो उसीका नाम मार्जार पाद है। ऐसे घोड़का व्यवहार नहीं करना चाहिये, करनेसे अमङ्गल होता है।

मार्जारि (सं० पु०) पुराणानुसार मगधराज सहदेवके पुत्र।

मार्जारी (सं० स्त्री०) मार्ष्टि शोधयति केशादिकमनया मृज आरन् स्त्रियां ङीप्। १ कस्तूरी। २ जन्तुविशेष, खटासी। पर्याय—पूतिका, पूतिकज, गन्धचेलिका।

(राजनि०)

मार्जारीटोड़ी (हिं० स्त्री०) सम्पूर्ण जातिकी एक रागिनी। इसमें सब कोमल स्वर लगते हैं।

मार्जारीय (सं० पु०) मार्जारस्यायं मार्जार (गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८) इति छ। १ विडाल, बिल्ली। २ शूद्र। ३ कायशोधन, शरीरका परिष्कार करना।

मार्जाल (सं० पु०) मार्जाररलयोरैकत्वात् रस्य ल। मार्जार, विड़ाल।

मार्जालीय (सं० पु०) मृज् (स्याचतिमृजेगलच वालच्चालीयचः। उण् १।११५) इति आलीयच्। १ विडाल, बिल्ली। २ शूद्र। ३ कायशोधन, शरीरका परिष्कार करना। ४ महादेव।

"ललाटाक्षाय सर्वाय मीढुषे शूलपाणये।
पिनाकगोप्त्रे सूर्य्याय मार्जालीयाय वेधसे॥"

(भारत ३।३९।७७)

५ पुराणानुसार एक ऋषिका नाम। इसका दूसरा नाम मर्जालीय भी है।

मार्जित (सं० त्रि०) मार्जते मृज-णिच् कर्मणि क्त। १ शोधित, स्वच्छ किया हुआ। स्त्रियां टाप्। २ रसाल, एक प्रकारका खाद्य पदार्थ। दही, चीनी, शहद और मिर्च आदिको मिला कर और उसमें कपूर डाल कर यह बनाया जाता है। रसाल देखो।

मार्ड़ाकव (सं० पु०) मृडाकोर्गोत्रापत्यः (अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०४) इति मृडाकु अञ्। मृडाकु ऋषिका गोत्रापत्य।

मार्डाकवायन (सं० पु०) मार्डाकव (हरितादिभ्योऽञः। पा ४।१।१६०) इति अञन्तात् फक्। मार्डाकवका गोत्रापत्य।

मार्डीक (सं० क्ली०) सुखसाधन।

मार्त्तण्ड (सं० पु०) मृतश्चासौ अण्डश्चेति, मृताण्डे भव तीति मृताण्ड (तत्र भवः। पा ४।३।५३ इति अण्। १ अर्कवृक्ष, अकवनका पेड़। २ शूकर, सूअर। ३ स्वर्ण-माक्षिक, सोना मक्खी। ४ सूर्य। इनका उत्पत्ति विवरण-मार्कण्डेयपुराणमें इस तरह लिखा है,—प्राचीनकालमें दानवोंने देवताओंको परास्त कर स्वर्गराज्य पर अधिकार जमाया। देवमाता अदिति पुत्रोंकी भलाईके लिये भगवान् भास्करके उद्देशसे कठोर तपस्या करने लगी। भास्करदेव तपस्यासे संतुष्ट हो अदितिके समीप उपस्थित हुए और उन्हें वर मांगने कहा। अदिति बोली, 'दैत्य और दानवोंने मेरे पुत्र देवताओंका त्रिभुवन और यज्ञभाग ले लिया है। अतः प्रार्थना करती हूं, कि जिससे देवगण फिरसे यज्ञभागभुक् और स्वर्गाधिपति हों वह उपाय बतला दीजिये।' भगवान् भास्करने अदितिके प्रति प्रसन्न हो कहा, 'तुम्हारे गर्भसे मैं सहस्रांशमें उत्पन्न हो कर तुम्हारे पुत्रके शत्रुओंका विनाश करूंगा।' इतना कह कर भगवान् अन्तर्धान हो गये।

इस प्रकार अदितिका अभिलाष पूरा होने पर उन्होंने तपस्या करना छोड़ दिया। कुछ दिन बाद रविका सौषुम्न नामक कर अदितिके गर्भमें घुसा। देवजननी अदिति समाहित चित्तसे शौच और कृच्छ्र चान्द्रायणादि व्रत करके उस दिव्य गर्भको वहन करने लगीं। कश्यप अदितिके प्रतिकूल हो बोले, 'तुम प्रतिदिन उपवास करके क्या इस गर्भाण्डको नष्ट कर दोगी?' अदितिने जवाब दिया, 'तुम यह जो गर्भाण्ड देखते हो इसे मैं नष्ट नहीं करती हूं, यह विपक्षियोंकी मृत्युका कारण स्वरूप है।' फिर दोनोंमें बातचीत करते करते विवाद हो गया। इस पर अदितिने उसी समय गर्भको गिरा दिया। कश्यप उस गर्भको उदीयमान् भास्करकी तरह प्रभा विशिष्ट देख उसका स्तव करने लगे। इसी समय उन्हें अन्तरीक्षसे सम्भाषण करते हुए देववाणी हुई, 'तुमने इस गर्भाण्डको 'मारित' अर्थात् मार डालोगी, ऐसा

कहा था। इसलिये तुम्हारे इस पुत्रका नाम मार्त्तण्ड होगा। यह पुत्र संसारमें सूर्यका कार्य और यज्ञभागहारी असुरोंका संहार करेगा।'

देवताओंको जब यह संवाद मालूम हुआ तब वे प्रसन्न हुए और मार्त्तण्डको अगुआ बना कर असुरोंके साथ युद्ध करने लगे। इस युद्धमें सभी असुर भगवान् मार्त्तण्ड द्वारा देखे जाते ही उनके तेजसे भस्म हो गये।

इस प्रकार असुरोंके मारे जाने पर देवताओंने फिर अपना नष्ट अधिकार प्राप्त किया। मार्त्तण्डदेव कदम्बपुष्पकी तरह ऊपर और नीचे अपनी प्रखर किरण फैलाने लगे। उन्होंने देखते देखते प्रज्वलित अग्निपिण्डकी तरह अति प्रदीप्त कलेवरको धारण किया।

प्रजापति विश्वकर्माकी कन्या संज्ञाके साथ इनका विवाह हुआ। संज्ञाके गर्भसे दो पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई। ज्येष्ठ पुत्रका नाम वैवस्वत मनु, दूसरेका यम और कन्याका नाम यमी वा यमुना था।

संज्ञा मार्त्तण्डदेवके उस गोलाकार रूपसे उत्पन्न प्रखर तेजको किसी तरह सह न सकी और अपनी छायाको देख कर कहने लगी, 'छाया! तुम्हारा कल्याण हो। मैं अपने पिताके घर जाती हूं, तुम मेरे कथनानुसार सूर्यके साथ रहना। मेरे दो पुत्र और एक कन्या हैं उनका भी भलीभांति लालन पालन करना। किन्तु यह बात सूर्यके समीप कभी भी न खोलना।'

छायाने कहा, 'मार्त्तण्डदेव जब तक मेरे केश न पकड़ेंगे और मुझे शाप न देंगे, तब तक मैं तुम्हारे कथनानुसार ही चलूंगी। तुम्हारी जहां इच्छा हो, जा सकती हो।'

छायाके इस प्रकार कहने पर संज्ञा पितृभवनको चली गई और कुछ दिन वहीं ठहरी। अनन्तर पितासे स्वामीके पास जानेके लिये बार बार अनुरोध की जाने पर वह वडवारूप धारण कर उत्तर-कुरुको चल दीं और वहीं तपस्या करने लगीं।

इधर संज्ञाके पितृगृह जाने पर छाया उनका रूप धारण करके सूर्यदेवकी परिचर्या करने लगी। मार्त्तण्डने उसे संज्ञा ज्ञान कर उसके गर्भसे दो पुत्र और एक कन्याको उत्पन्न किया। इनमेंसे वड़ेका नाम सावर्णि मनु था। ये भी वैवस्वत मनुकी तरह प्रभावशाली थे। दूसरे पुत्रका नाम शनैश्चर और कन्याका नाम तपती था। राजा सम्वरणके साथ तापती व्याही गई थी।

इस प्रकार कुछ दिन वीत गये। पीछे जब मार्त्तण्डको यह रहस्य मालूम हो गया तब वे संज्ञा पर बड़े विगड़े और उसी समय विश्वकर्माके समीप चले गये। विश्वकर्माने यथाविधि सत्कार कर कहा, 'संज्ञा तुम्हारे प्रखर तेजको सह न सकनेके कारण कठोर तपस्या कर रही है। संज्ञा तुम्हारी कमनीय रूपाभिलाषी है। यदि तुम्हें उसे पानेकी इच्छा हो, तो अपने इस प्रखर तेजको घटा दो।'

सूर्यदेवके स्वीकार करने पर विश्वकर्मा शाकद्वीपमें मार्त्तण्डको भूमियन्त्रमें आरोपित कर उनके तेजको घटाने लगे। इस प्रकार उनका तेज विलकुल शान्त हो गया और शरीर बड़ा कमनीय दिखाई देने लगा। उनका तेज १५ भागोंमें विभक्त किया गया था। प्रत्येक भागसे विश्वकर्माने विष्णुका चक्र, महादेवका शूल, कुवेरकी शिविका (पालकी), यमका दण्ड और कार्त्तिकेयकी शक्ति बनाई। (मार्कण्डेयपु० १०५-१०९ अ०)

संज्ञा और सूर्य देखो।

मार्त्तण्ड—काश्मीरके अन्तर्गत काश्मीरकी प्राचीन राजधानी इस्लामावादसे ५ मील पूर्वमें अवस्थित एक प्राचीन पुण्यस्थान। यहांका मन्दिर जगद्विख्यात है। ऐसा सुन्दर मन्दिर भारतवर्षमें और कहीं भी नहीं है। इसका शिल्पनैपुण्य देख कर यहां जितने शिल्पशास्त्रवित् आये, सभी मुक्त कण्ठसे इसकी प्रशंसा तथा प्राच्य-जगत्की अपूर्व अतीत कीर्त्तियोंमें इसे श्रेष्ठ स्थान दे गये हैं। मूलमन्दिर किस समय बनाया गया वह भी किसीको मालूम नहीं है। राजतरङ्गिणीके प्रमाणानुसार बहुतेरे इसे काश्मीर-पति रणदित्यकी कीर्त्ति कहते हैं। फिर कोई कोई भारतविजयी ललितादित्यको इस मन्दिरका निर्माता बतलाते हैं।

मातान शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

मार्त्तण्डतिलकस्वामी (सं० पु०) प्रसिद्ध दार्शनिक वाचस्पति मिश्रके गुरु। इन्होंने ब्रह्मसूत्रभाष्य प्रणयन किये।

मार्त्तण्ड मिश्र—प्रायश्चित्तमार्त्तण्ड और संस्कार मार्त्तण्डके रचयिता।

मार्त्तण्डमूल (सं० क्लो०) अर्कमूल, अकवनकी जड।

मार्त्तण्ड वर्मन्—केरलके एक राजा। ये १३१२ ई०में मौजूद थे।

मार्त्तण्डवल्लभा (सं० स्त्री०) मार्त्तण्डस्य वल्लभा, प्रिया। १ सूर्यकी पत्नी, छाया, संज्ञा। २ आदित्य-भक्ता, हुरहुर।

मार्त्तवत्स (सं० क्ली०) मृतवत्साका अपत्य।

मार्त्ताण्ड (सं० पु०) मृतको छोड कर अण्डसे उत्पद्यमान, वह जिसकी उत्पत्ति अण्डेसे हुई हो।

"विश्वे मार्त्ताण्डो व्रजसा पशुः।" (ऋक् २।३८।८)

मार्त्तण्डः 'मृताद्भिन्ना दण्डादुत्पद्यमानः' (सायण)

मार्त्तिक (सं० पु०) मृत्तिकाया विकार इति मृत्तिका (तस्य विकारः। पा ४।३।१३४) इति ठक्। १ शराव, पुरवा। (त्रि०) २ मृत्तिका निर्मित, मिट्टीका बना हुआ।

मार्त्तिकावत (सं० क्ली०) १ एक नगरका नाम। यह चेदि-राज्यके अन्तर्गत और ऋक्षवान्-पर्वतके समीप नर्मदा-नदीके किनारे अवस्थित है। हरिवंशमें यह मृत्तिका वती नामसे उल्लेख हुआ है। २ जनपदभेद। ३ उस देशके राजा। ४ उस देशके निवासी।

मार्त्तिकावतक (सं० त्रि०) मार्त्तिकावत-सम्बन्धीय या उस देशका निवासी।

मार्त्स्य (सं० त्रि०) दैहिक धातुमल, शरीरकी मैल।

"तस्यास्तद्योगविधूतमार्त्स्यं मार्त्स्यमभूत सरित्।
श्रोतसा प्रवरासौम्यसिद्धिदा सिद्धसेविता॥"

(भागवत ३।३३।३२)

मार्त्त्यव (सं० पु०) १ मृत्यु सम्बन्धीय। २ अन्तकका गोत्रापत्य।

मार्त्युञ्जय (सं० त्रि०) मृत्युञ्जय-सम्बन्धीय।

मार्त्स्न (सं० क्ली०) क्षुद्र चूर्ण।

मार्दङ्ग (सं० क्ली०) मृत् अङ्गमस्य, ततः स्वार्थे अण्। १ पत्तन, मृदङ्ग। (त्रि०) २ मृदङ्गवादक, मृदंग बजाने-वाला।

मार्दङ्गिक (सं० त्रि०) मृदङ्गवादनं शिल्पमस्य, मृदङ्ग (शिल्प। पा ४।४।५५) इति ठक्। १ मृदङ्ग-वादक, मृदङ्ग बजानेवाला। पर्याय—मौरजिक, साङ्गिक, औद्धिविक।

मार्दव (सं० क्ली०) मृदोर्भाव इति मृदु (पृथ्वादिभ्य इमनिज् वा। पा ५।१।१२२) इत्यत्र वावचनमणादेः समा-वेशार्थं इति काशिकोक्तेरण। १ दूसरेको दुःखी देख कर दुःखी होना। यह उत्तम, मध्यम और अधमके भेदसे तीन प्रकारका है।

"मार्दवं कोमलस्यापि सस्पर्शासहतोच्यते।
उत्तमं मध्यमं प्रोक्तं कनिष्ठञ्चेति तत्त्रिधा॥"

(उज्ज्वलनीलमणि)

२ अकाठिन्य, सरलता।

"विललाप सवाष्पगद्गदं सहजामप्यपहाय धीरताम्।
अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते, कैव कथा शरीरिषु॥"

(रघु ८।४३)

(पु०) मार्दवं मृदुत्वं अस्यास्तीति अर्श-आद्यच्। ३ एक प्राचीन संकर जाति। इस जातिके लोग बहुत मृदु स्वभावके होते थे। ४ अभिमान रहित होना, अहं-कारका त्याग।

मार्दवायन (सं० पु०) मार्दवका गोत्रापत्य।

मार्दवीकृत (सं० त्रि०) मृदुकृत, मुलायम किया हुआ।

मार्देय (सं० पु०) मृदका अपत्य।

मार्देयपुर (सं० क्ली०) एक प्राचीन नगरका नाम।

मार्द्वीक (सं० क्ली०) मद्यविशेष, दाखकी बनी मदिरा, अंगूरकी शराब।

मार्फत (अ० अव्य०) द्वारा, जरिये।

मार्मिक (सं० त्रि०) विशेष प्रभावशाली, मर्म स्थान पर प्रभाव डालनेवाला।

मार्मिकता (सं० स्त्री०) १ मार्मिक होनेका भाव। २ पूर्ण अभिज्ञता, किसी वस्तुके मर्म तक पहुंचनेका भाव।

मार्ष (सं० पु०) मृष्यति क्षमते जनातीति, मृष् (इगु-पधज्ञाप्रीकिरः कः। पा ३।१।१३५) इति क, मृषं स्वार्थे अण्। १ नाटकका सूत्रधार। २ नाटकमें किसी मान्य या प्रतिष्ठित व्यक्तिके लिये सम्बोधन। ३ मारिषशाक, मरसा नामक साग।

मार्षिक (सं० पु०) मार्ष-ठक्। मरिष शाक, मरसा नामक साग।

मार्ष्टव्य (सं० त्रि०) परिस्कर्त्तव्य, परिस्कार करने योग्य।

मार्ष्टि (सं० स्त्री०) मृज-क्तिन् (मृजे वृद्धिः। पा ७।२।११४) इति वृद्धिश्च। १ मार्जन। २ तैलम्रक्षण, तेल लगाना

"तैलमल्पं यदङ्गेषु न भवेत् साहुसङ्गतम्।
सा माष्टिः पृथगभ्यङ्गो मस्तकादौ प्रकीर्त्तितः॥"
(आह्निकतत्त्व)

माष्टिमत् (सं० त्रि०) १ मार्जन विशिष्ट। (पु०) २ सारणके एक पुत्रका नाम।

माल (सं० क्ली०) माति मानहेतुर्भवतीति मा (मृजेन्द्राग्रनेत्यादि। उण् ३।२८) इति रन्, पृषोदरादित्वात् रस्य लत्वं। १ क्षेत्र। २ कपट। ३ वन, जगल। ४ हर ताल। ५ एक प्राचीन अनार्य जाति। भागवतमें इसे म्लेच्छ लिखा है।

"माला भिल्लाः किरातास्च सर्वेऽपि म्लेच्छजातयः।"
(भागवत ६।१।३९)

६ मेदिनीपुरके अन्तर्गत एक देशका नाम। यह मालभूमि नामसे प्रसिद्ध है। ७ जनलोक। मां लक्ष्मी लातीति ला-क। ८ विष्णु।

माल (हिं० स्त्री०) १ माला, हार। २ पंक्ति, पाँती। ३ वह रस्सी वा सूतकी डोरी जो चरखेमें मूडी वा बेलन परसे हो कर जाती है और टेकुएको घुमाती है। (फा० पु०) ४ संपत्ति, धन। ५ सामग्री, सामान। ६ क्रय-विक्रयका पदार्थ। ७ वह धन जो करमें मिलता है। ८ फसलकी उपज। ९ उत्तम और सुस्वादु भोजन। १० गणितमें वर्गका घात, वर्ग अंक। ११ सुन्दर स्त्री, युवती। २ वह द्रव्य जिससे कोई चीज बनी हो।

माल—पश्चिम और मध्यबङ्गको कृषिजीवी जातिविशेष। बहुतोंका कहना है, कि ये द्राविडीय कृषकवंशसे उत्पन्न हुए हैं। ये लोग ग्राम्य चौकीदारका काम करते हैं और चोरी करनेमें बड़े निपुण हैं।

पूर्वबङ्गके मालोंमें ऐसा प्रवाद है, कि पहले ये लोग ढाकाके नवाबकी सभामें मल्लक्रीडा किया करते थे। तभीसे इनका मल्ल वा माल नाम पड़ा है। किन्तु इस विषयका कोई प्रमाण नहीं मिलता। बेभरली (Beverly) साहबने १८७२ ई०में मर्दुमशुमारीके विवरणमें कनिंहम साहबका मत उल्लेख करते हुए कहा है, कि भागलपुरके दक्षिण जो मन्दार पर्वत है वहांके Mandei नामक अधिवासियों के साथ महानदीतीरवासी Manada और टलेमी कथित Mandalae जातिका बहुत कुछ सदृशता देखी जाती है। ये सभी एक शाखाभुक्त हैं।

पटनाके दक्षिण-गङ्गातट पर जो सब मल्ली वा मले जाति रहती है, मालूम होता है वही टलेमी-वर्णित मडली जाति है। वर्त्तमान मुण्डाकोलोंके साथ इनका बहुत कम प्रभेद देखा जाता है। तामिल भाषामें मलय शब्द-का अर्थ पहाड़ है। अतएव माल शब्दसे पहाड़िया वा पार्वत्य जाति समझी जाती है। दो हजार वर्ष पहले यह द्राविडीय जाति समस्त पश्चिमबङ्गमें फैली हुई थी। पीछे अन्यान्य जातिकी प्रतियोगितासे वे लोग जहां तहां जा कर बस गये।

हण्टर साहबने मालभूमि (मानभूम) वा मल्लभूमि-को जो मल वा चोरोंका वासस्थान बतलाया है वह ठीक नहीं जचता। मालभूमि शब्दसे माल वा पहाड़िया जातिका निवासस्थान समझा जाता है। शायद मालदह सबसे पहले माल जाति द्वारा उपनिविष्ट हुआ होगा। ये सब माल पूर्व प्रान्तमें फैल कर निम्नश्रेणीके हिन्दुओंमें परिणत हो गये हैं। अन्यान्य आदिम हिन्दुओंकी तरह मालगण ४५ प्रकारकी चण्डाल जातिमें अन्तर्निविष्ट हुए हैं। बङ्गदेशके प्रत्येक जिलेमें थोड़ा बहुत चण्डाल दिखाई देता है। कोई कोई कहते हैं, कि माल और चण्डाल भिन्न जाति नहीं है। फिर कोई इन्हें मल्लक्रीडानिपुण जाति विशेष, कोई सापुड़िया वा माल वैद्य, कोई मुसल-मान और कोई बेदिया और बाधाजिया बतलाते हैं। इन मालोंमें बहुतसे मुसलमान हैं उसका यथेष्ट प्रमाण मिलता है।

बाकुड़ा जिलेमें इन लोगोंके मध्य निम्न लिखित श्रेणी विभाग देखे जाते हैं, यथा—धाड़या, गोवरा वा गुरा, खेरा राजवंशी और सानागं था। मेदिनीपुर और मानभूममें—धूनकाटा, राजवंशी, सापुड़िया, बेदिया माल और तङ्का। वीरभूममें—खाटुरिया, मल्लिक और राजवंशी। सन्थाल परगनेमें—देशवार, मगहिया, राज-वंशी वा राजमाल, राढीमाल, और सिन्दूरा।

बाँकुड़ाकी तरह मुर्शिदाबादमें भी विभिन्न श्रेणीके मालोंका वास है। इन सब विभागोंकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता। कच्छ जातिमें राजवंशी उपाधि देखी जाती है, फिर भी वे माल नहीं हैं। मालूम होता है, किसी स्थानीय राजवंशसे

ही राजवंशी विभागकी उत्पत्ति हुई होगी। कोवरा माल-वानर पकड़ता है। मालूम होता है, कि खैरासे खोटा डोम जातिकी शाखाविशेषकी उत्पत्ति हुई है। सानागान्था—तांतियोंके कपड़ा बुननेके सानेसे उत्पन्न हुआ है।

ये लोग सगोत्रमें विवाह नहीं करते। पितृपक्षमें पांच पीढ़ी और मातृपक्षमें तीन पीढ़ी छोड़ कर विवाह करते हैं। जब कोई इस जातिमें मिलना चाहता है, तब वह माल सरदारका पादोदक लेता और समाजको एक बड़ा भोजन देता है।

वाल्य और यौवन दोनों प्रकारका विवाह इनमें प्रचलित है। बहुविवाह प्रचलित रहने पर भी ये दीनता के कारण एकसे अधिक स्त्री नहीं करते। विधवा-विवाह प्रचलित है। इसके लिये कोई विशेष अनुष्ठान नहीं करना होता। केवल तुलसीकी माला बदल देनेसे ही विधवा-विवाह सम्पन्न होता है। स्त्री यदि व्यभिचारिणी निकले तो स्वामी ग्राम्य पंचायतकी अनुमति ले कर उसे छोड़ सकता है। व्यभिचारिणी भी विधवाकी तरह फिरसे विवाह कर सकती है।

इस जातिके लोगोंने अभी सम्पूर्ण रूपसे हिन्दूधर्मको अवलम्बन कर लिया है। उनमें आदिम-धर्मका अभी कोई भी चिह्न दिखाई नहीं देता। ये लोग जनसाधारणमें प्रचलित स्थानीय धर्मको ग्रहण करते हैं। फिर कहीं कहीं ये लोग अपनेको वैष्णव शैव और शाक्त वतलाते हैं। जननी मनसा इनकी कुलदेवी हैं और बड़ी धूमधामसे उसकी पूजा करते हैं। किसी किसी जगह ये ब्राह्मण पुरोहितको नियुक्त करते हैं और कहीं नहीं भी करते। किन्तु अकसर बूढ़े ही पूजा करते हैं। सन्थाल परगनेमें राजमालाओंके पुरोहित ब्राह्मण हैं।

साधारणतः ये मृतदेहको नदीके किनारे जलाते हैं और चिता-भस्म ले कर जलमें फेंक देते हैं। ग्यारवें दिन श्राद्धक्रिया हिन्दुओंकी तरह होती है। जिसकी अपघातसे मृत्यु होती है उसका चौथे दिनमें श्राद्ध होता है। कालीपूजाकी रातको ये मृत पूर्वपुरुषोंके सम्मानार्थ महासमारोहसे मशाल आदि जलाते हैं। चैत्र मासके अन्तिम दिनमें सभी पितृतर्पण करते हैं।

वालिकाओंकी लाश पट कर जमीनमें गाड़ी जाती है। जो गरीब है उसकी लाशको उत्तर शिर करके नदीके किनारे गाड देते हैं।

कृषिकार्य्य ही इनकी प्रधान उपजीविका है। बहुतेरे मजदूरी करके भी अपना गुजारा चलाते हैं। ये लोग सूअर और गो-मांस आदि नहीं खाते, इस बातका इन्हें बड़ा गौरव है।

माल—सिंहभूम जिलेकी एक प्रकारकी भुइयां जाति। किसी किसी कैवर्त्तकी भी माल उपाधि है।

माल (संस्कृत मल्ल) कुर्मी जातिकी एक शाखा। आजमगढ़ जिलेमें ये अधिक संख्यामें रहते हैं। प्रवाद है, कि मयूरभट्ट मुनिके औरस और किसी कुर्मी रमणीके गर्भसे इनकी उत्पत्ति है। मयूरभट्ट गोरखपुरका परित्याग कर सरयूनदीके किनारे कड़्करादि नामक स्थानमें रहते थे। वह स्थान आजमगढ़ जिलेके नाथुपुर परगनेके अन्तर्गत है। वर्त्तमान मालोंका कहना है, कि उन्होंने कन्नोजराज हर्षवर्द्धनसे निष्कर भूमि पाई है। ये लोग गोरखपुरके नागवंश कुर्मियोंके साथ आदान-प्रदान करते हैं। कोई भी एकसे ज्यादा विवाह नहीं करता। इनमें वाल-विवाह प्रचलित नहीं है, विधवाविवाह निषिद्ध है।

इन लोगोंके मध्य वैष्णवोंकी संख्या बहुत थोड़ी है, प्रायः सभी वैष्णव हैं। ये लोग कालीपूजा तथा विविध ग्राम्यदेवताकी पूजा करते हैं। इनका आचार व्यवहार बहुत कुछ कुर्मियोंसे मिलता जुलता है।

माल—नेपालके अन्तर्गत एक पर्वतका नाम।

मालकंगनी (हिं० स्त्री०) एक लताका नाम। यह हिमालय-पर्वत पर झेलम नदीसे आसाम तक ४००० फुटकी ऊंचाई तक तथा उत्तरीय भारत, वरमा और लङ्कामें पाई जाती है।

इसकी पत्तियां गोल और कुछ कुछ नुकीली होती हैं। यह लता पेड़ों पर फैलती है और उन्हें आच्छादित कर लेती है। चैतके महीनेमें इसमें थौदके थौद फूल लगते हैं। सारी लता फूलोंसे लदी हुई दिखाई पड़ती है। जब फूल झड़ जाते हैं, तब इसमें नीले नीले फल लगते हैं। ये फल पकने पर पीले रंगके और मटरके वरावर होते हैं। फलोंके भीतरसे लाल दाने निकलते

हैं। इन दानोंमें तेलका अंश अधिक होता है जिससे इन्हें पेर कर तेल निकाला जाता है। मान्द्राजमें उत्त रीय सरकार तथा विजिगापट्टम, दलौरा आदि स्थानोंमें इसका तेल बहुत अधिक तैयार होता है। यह तेल नारंगी रंगका होता है और औषधके काममें आता है।

विशेष विवरण ज्योतिष्मती शब्दमें देखो।

मालकँगुनी (हिं० स्त्री०) मालकँगनी देखो।

मालक (सं० क्ली०) मलते धारयति शोभामिति, मल धारणे ण्वुल्। १ स्थलपद्म। २ निम्ब वृक्ष, नीमका पेड़।

मालकगुनी (हिं० स्त्री०) मालकँगनी देखो।

मालकन्द (सं० पु०) स्वनामख्यात महाकन्द शाक।

मालका (सं० स्त्री०) मल-ण्वुल स्त्रियां टाप्। माला।

मालकुंडा (हिं० पु०) एक प्रकारका कुंडा। इसमें नील कड़ाहेमें डाले जानेके पहले रखा जाता है।

मालकोश (सं० पु०) मालस्य हरेः कोशात् कण्ठान्निर्गतः इति अण्। रागविशेष। इसे कौशिकराग भी कहते हैं। हनुमतके मतानुसार यह छः रागोंके अन्तर्गत माना गया है। यह संपूर्ण जातिका राग है। इसका स्वरूप वीर रसयुक्त, रक्त वर्ण, वीर पुरुषोंसे आवेष्टित, हाथमें रक्त वर्णका दण्ड लिये और गलेमें मुण्डमाला धारण किये लिखा गया है। कोई कोई इसे नील वस्त्रधारी, श्वेत दण्ड लिये और गलेमें मोतियोंकी माला धारण किये हुए मानते हैं। इसकी ऋतु शरद और काल रातका पिछला पहर है। कोई कोई शिशिर और वसन्त ऋतुको भी इसकी ऋतु बतलाते हैं। हनुमत्के मतानुसार कौशिकी, देवगिरि, वरवारी, सोहनी और नीलाम्बरी ये पांच इसकी प्रियाएं और वागेश्वरी, ककुभा, पर्टाका, शोभनी और खंभाती ये पांच भार्याएं तथा माधव, शोभन, सिंधु, मारू, मेवाड, कुन्तल, कलिङ्ग, साम, विहार और नीलरंग ये दश पुत्र हैं।

मतान्तरसे केदारा, हम्मीर, कामोद, खम्भाती और वहार नामक पुत्र, भूपालि, कामिनी, झिंझोटी, कामोदा और विजया नामकी पुत्रवधू, वागेश्वरी, वहार, शहाना, अताना, छाया और कुमारी नामकी रागिनियां तथा शङ्करी और जयजयवंती सहचरियां हैं। किसीके मत-से यह सङ्करराग है। इसकी उत्पत्ति पट सारंग, हिंडोल, वसन्त, जयजयवंती और पञ्चमके योगसे बत-लाई जाती है।

रागमालाके मतसे यह पाटलवर्ण, नीलपरिच्छद, यौवनमदमत्त, यष्टिधारी और स्त्रीगणसे परिवेष्टित, गलेमें शत्रुओंके मुण्डकी माला पहने और हास्यमें निरत है। इस मतमें टोडी, गौरी, गुणकरी, खंभात और ककुभा नामक पांच स्त्रियाँ, मारु, मेवाड, वड़हंस, प्रबल, चंद्रक, नन्द, भ्रमर और खुखर नामक आठ पुत्र बतलाये गये हैं। भरतके मतानुसार गौरी, दयावती, देवदाली, खंभावती और कोकभा नामक पांच भार्यायें, गाधार, शुद्ध, मकर, त्रिज्ञन, सहान, भक्तवल्लभ, मालोगौर और कामोद नामक आठ पुत्र हैं।

मालकोस (हिं० पु०) मालकोश देखो।

मालखाना (फा० पु०) वह स्थान जहां पर माल अस-बाव जमा होता हो या रखा जाता हो।

मालखेड—राष्ट्रकूट राजाओंकी राजधानी। इसका प्राचीन नाम मान्यखेट है।

मालगाड़ी (हिं० पु०) रेलमें वह गाड़ी जिसमें केवल माल असबाव भर कर एक एक स्थानसे दूसरे स्थान पर पहुंचाया जाता है। ऐसी गाड़ीमें यात्री नहीं जाने पाते।

मालगुजार (फा० पु०) १ मालगुजारी देनेवाला पुरुष। २ मध्यप्रदेशमें एक प्रकारके जमींदार। ये किसानोंसे वसूल करके सरकारको मालगुजारी देते हैं।

मालगुजारी (फा० स्त्री०) १ वह भूमिकर जो जमींदारसे सरकार लेती है। २ लगान।

मालगुर्जरी (सं० स्त्री०) सम्पूर्ण जातिकी एक रागिनी। इसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं। कुछ लोग इसे गौरी और सोरठसे बनी हुई संकर रागिनी मानते हैं।

मालगोदाम (हिं० पु०) १ वह स्थान जहां पर व्यापारका माल जमा रहता है। २ रेलके स्टेशनों पर वह स्थान जहां मालगाड़ीसे भेजा जानेवाला अथवा आया हुआ माल रहता है।

मालचक्रक (सं० क्ली०) पुट्ठे परका वह जोड़ जो कमर-के नीचे जाँघकी हड्डी और कूल्हेमें होता है।

मालजातक (सं० पु०) गन्धमार्जार, गंधबिडाल।

मालञ्चा—नदीविशेष। कपोताक्ष नदी जहां समुद्रमें गिरती है उस मुहानेके निकटवर्त्ती प्रवाहको मालञ्चा कहते हैं। विद्याधरीनदीके साथ मालञ्चाका संयोग है। मालञ्चा रायमङ्गल मुहानेसे दो कोस पूर्वमें अवस्थित है। पङ्गस तथा माञ्चाके मध्यवर्त्ती पाटनीद्वीपके समीप १७६६ ई०में फालमाउथ (Fal mouth) जहाज डूब गया था।

मालटा (अं० स्त्री०) एक प्रकारकी लाल रंगकी नारंगी। यह देखनेमें सुन्दर और खानेमें बहुत स्वादिष्ट होती है। गुजराँवाला और लखनऊमे यह बहुतायतसे होती है।

मालतिका (सं० स्त्री०) स्कन्दानुचर मातृभेद, कार्त्तिकेयकी एक मातृकाका नाम।

मालती (सं० स्त्री०) मलते शोभां धारयतीति मल (भृदृशियजीत्यादि। उण् ३।११०) इत्यत्र बाहुलकात् मलतेरलच् गौरादिनिपातनादुपधाया दीर्घत्वं, इति उज्ज्वलदत्तोक्तेः अतच, उपधाया दीर्घत्वं ङीष् च वा मां लक्ष्मीं लातीति मालो विष्णुः तं अततीति अच्। अधिकतासे होती है। वर्षाऋतुके प्रारम्भमें इसमें फूलोंके घौद लगते हैं। फूल सफेद होता है जिसमे पंखड़ियाँ होती है। पंखड़ियोंके नीचे दो अंगुलका लम्बा डंठल होता है। जब फूल झड़ जाते हैं, तब वृक्षके नीचे फूलोंका बिछौना-सा बिछ जाता है। इस लताके फूलने पर भौंरे और मधुमक्खियाँ प्रातःकाल उस पर चारों ओर गुंजारती फिरती हैं।

अति प्राचीनकालमे भी जाति पुष्पसे गन्धतैल और पुष्पसारादि तैयार होता था। जातिकुसुम-मिश्रित तेल मस्तिष्कको ठंढा रखता है, इसीसे विलासी भारतवासी आदरपूर्वक इसका व्यवहार करते हैं। यूरोपमें भी जाति पुष्पका बहुत आदर है। स्पेनदेशमें इसकी बहुतायतसे खेती होती है। एक बीघा जमीनमें ८०से १०० मन फूल लगता है और १५० रु० तक लाभ हो सकता है।

पुष्पसारको ग्रहण करनेमे आधी खिली हुई कलियोंको चर्वीके ऊपर रख कर दो तीन दिनके अन्तर पर फूल झाड़ना होता है। इस प्रकार वह चर्वी पुष्पकी सुगंधको चूस लेती है। पीछे उसे धीमी आंचमें गलाते हैं। तेल निकालनेमें एक सूती कपड़ेको जैतूनके तेलसे भिगो कर जमीन पर फैला देना होता है। एक सेर जैतूनके तेलमे पाव भर सुरासार मिला देना चाहिये। उसके ऊपर ताजे फूल बिछा देते हैं। अनन्तर ग्रीष्मकालकी कडी धूपमें १५ दिन तक सुखानेसे ही तेल तैयार होता है। ऊपरका अंश तेल रूपमें और पात्रके नीचे जो घनी तह जम जाती है वह 'पमेटम' वा केशतैलरूपमें व्यवहृत होता है। सुसभ्य यूरोपवासियोंके पक्षमे जातिकुसुम-वासित रुमाल सभ्यताका चूड़ान्त निदर्शन है।

मालतीपुष्प अनेक ओषधीमें व्यवहृत होता है। हिन्दू और मुसलमान लेखकगण भैषज्यतत्त्वमें मुक्त कण्ठसे इसका उल्लेख कर गये हैं। शरीरके किसी स्थानमें इस तेलका प्रलेप देनेसे वह स्थान बहुत ठंढा हो जाता है। मुखमे यदि किसी प्रकारका फोड़ा हो गया हो, तो इसके पत्तेको घीमें भून कर चबानेसे वह अच्छा हो जाता है। जाड़ेके समय इस तेलको मुखमें लगानेसे मुख कभी भी नही फटता। वैद्यकमें इसे कफ, पित्त, मुखरोग, व्रण, क्रिमि और कुष्ठनाशक माना है।

पद्मपुराणके उत्तरखण्डमे लिखा है,—गौरी, लक्ष्मी और स्वधा ये तीन देवी धात्री, मालती और तुलसी-वृक्षरूपमें उत्पन्न हुई हैं। मा अर्थात् लक्ष्मीसे उत्पन्न होनेके कारण इसका नाम मालती हुआ है।

"क्षिप्रेभ्यस्तत्र वीजभ्यो वनस्पत्यस्त्रयोऽभवन्।
धात्री च मालती चैव तुलसी च नृपोत्तम्॥
धात्र्युद्भवा स्मृता धात्री मा-भवा मालती स्मृता।
गौरीभवा तु तुलसीरजःसत्त्वतमोगुणाः॥"

(पद्मपुराण उत्तरख० १४९ अ०)

यह लता उद्यानोंमे लगाई जाती है, पर इसके फैलनेके लिये बड़े वृक्ष वा मण्डप आदिकी आवश्यकता होती है। यह कवियोंकी बड़ी पुरानी परिचित पुष्पलता है। कालिदाससे ले कर आज तकके प्रायः सभी कवियोंने अपनी कवितामे इसका वर्णन किया है।

एक और प्रकारकी मालती है जिसे पीतमालती (Jasminum humile) कहते हैं। संस्कृत पर्याय—स्वर्णयूथिका, हेमपुष्पिका। इसकी लता हिमालयप्रदेशमें २००० से ५००० फुटकी ऊंचाई पर काश्मीरसे नेपाल तक दिखाई देती है। भारतवर्षके प्रायः सभी स्थानोंमें तथा सिंहल-

पुष्पोद्यानमें यह फूल उत्पन्न होता है। हिमालय-सन्निहित कुमायूं प्रदेशमें इसके मूलसे पीला रंग तैयार किया जाता है।

अन्यान्य सुगन्धित फूलोंकी तरह इसका पुष्प तेलमें व्यवहार होता है। इसकी जडके रससे दद्रु आदि चर्म रोग सहजमें दूर होते हैं। भगन्दर आदि क्षतरोगोंमें इसके छिलकेका रस बहुत फायदेमंद हैं।

२ युवती। ३ बारह अक्षरोंकी एक वर्णिक वृत्तिका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें दो नगण, दो जगण और अन्तमें रगण होता है। ४ छः अक्षरोंकी एक वर्णवृत्तिका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें दो जगण होता है। ५ सवैयाके मत्तगायद नामक भेदका दूसरा नाम। ६ रात्रि, रात। ७ ज्योत्स्ना, चांदनी। ८ पाठा, पाढा। ९ जायफलका पेड, जाती।

मालतीक्षारक (सं० पु०) टङ्कण, सोहागा।

मालतीजात (सं० पु०) मालत्यां मालतीनदीतोरे जातः। टङ्कणक्षार, सोहागा।

मालतीटोडी (हिं० स्त्री०) सम्पूर्ण जातिकी एक रागिनी। इसमें सब शुद्ध स्वर लगते हैं।

मालतीतीरज (सं० पु०) मालती तदाख्या नदी, तस्यास्तीरे जायते इति जन ड। टङ्कण, सोहागा।

मालतीतीरसम्भव (सं० क्ली०) मालत्यास्तीरे सम्भवोऽस्य। श्वेत टङ्कण, सफेद सोहागा।

मालतीपत्रिका (सं० क्ली०) मालत्याः पत्रीव, मालतीपत्र-प्रतिकृतौ कन्, टाप् अत इत्वं। जातीपत्री, जाविती।

मालतीपुष्प (सं० क्ली०) मालत्याः पुष्पं। मालतीपुष्प।

मालतीफल (सं० क्ली०) मालत्याः फलं। जातीफल, जायफल।

मालतीमाला (सं० स्त्री०) मालतीनां मालती-पुष्पाना माला ६-तत्। मालतीपुष्पकी माला।

मालद (सं० पु०) वाल्मीकीय रामायणके अनुसार एक प्रदेशका नाम। इसे ताडकाने उजाड दिया था। २ मार्कण्डेयपुराणके अन्तर्गत एक अनार्य जातिका नाम।

मालदह—बंगाल गवर्नरके शासनाधीन एक जिला। राजसाही और भागलपुरके कुछ अंशोंको ले कर सन् १८७६ ई०में यह जिला संगठित हुआ है। यह अक्षा० २४° २१´ ५०″ से २५° ३२´ ३०″ उ० तथा देशा० ८७° ४८´ से ८८° ३३´ ३०″ पूरबके मध्य अवस्थित है। इसके दक्षिण पश्चिमकी ओर गंगा नदी बहती हैं। भूपरिमाण प्रायः १८९१ वर्गमील है। इसका प्रधान शहर अंगरेज-बाजार महानन्दा नदीके दक्षिण तीर पर बसा हुआ है।

महानन्दा नदी इस जिलेमें उत्तरसे दक्षिणकी ओर बहती हुई समूचे प्रदेशको दो भागोंमें विभक्त करती है। इसका पश्चिम भाग पंक और मिट्टीसे भरी हुई नीची जमीन है और अत्यन्त उपजाऊ है। इसका पूर्व भाग प्राचीन गौड़ नगरके खंडहरोंको चारों ओरसे घेरे हुए हैं। जहां पर यह नगर था वहां अब घने जंगल भरे पड़े हैं। पूर्वी हिस्सा कुछ ऊंचा है और वरेन्द्र कहलाता है। यह भाग महानन्दाके पूरबी किनारे है। इसके बीच टाङ्गन और पुनर्भवा नदी अनेक शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त हो बहती हैं। यहांकी जमीन कडी तथा लाल रंगकी है। यह स्थान कटहल नामक स्थानीय कटीले वृक्षोंसे भरा है। यहां आमन धान खूब होता है। जाडेके दिनोंमें भिन्न भिन्न स्थानसे मजदूर लोग यहां धान काटने आते हैं।

महानन्दाके किनारेका भूभाग अनेक प्रकारके शस्योंसे सुशोभित है। दोनों किनारों पर बड़े बडे आमके बगीचे तथा इमली वृक्षोंके कतार दीख पड़ते हैं। उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण तक गंगा सीमाबंदी करती है।

गंगाकी धारा राजमहल पहाडकी मिट्टीको मालदह बहा ले आती है और इसकी जमीन पर पंक जमा देती है। गंगाकी पुरानी धारा प्राचीन गौडके पास बहती थी। नदीके पुराने गर्भको देखनेसे साफ मालूम होता है, कि गौड अत्यन्त सुरक्षित शहर था। महानन्दाकी प्रधान शाखा कालिन्दी वाणिज्य-प्रधान हियातपुर नामक स्थानके पास गंगासे मिली है। वर्षाकालमें टांगना और पुनर्भवानदी हो कर दिनाजपुर आदि स्थानोंसे नाना प्रकारके वाणिज्य द्रव्योंसे लदी हुई नावें मालदह में आ ठहरती हैं।

गौड तथा पौण्ड्रवर्द्धन इन दो प्राचीन राजधानीके खंडहरों पर ही मालदह बसा हुआ है। गंगाके किनारे

उक्त राजधानीके खंडहर स्पष्टरूपसे देखनेमें आते हैं। सैकड़ों वर्ष तक गौड़ और पौण्ड्रवर्द्धनमें हिन्दू तथा मुसलमानोंकी राजधानी थी। महानन्दा और गंगाका मध्यवर्त्ती भूभाग प्रायः २० वर्गमील है।

गौड और पौण्ड्र देखो।

मुसलमान शासनके बहुत पहलेसे गौड बङ्गालकी राजधानी था। जिस वर्ष (अर्थात् १७७५ ईस्वीसनमें) अकबरने पठानोंको हराया था उसी वर्ष महामारीके प्रकोपसे गौड़ नगर जनशून्य हो गया। उस समयमें बंगालके मुसलमान शासनकर्त्ता राजमहलमें राजधानी उठा ले गये। पण्डुआ वा पेंड़ा गौडसे २० मील उत्तरपूर्व अवस्थित है। अफगान राजाओंने वहां १४वीं शताब्दीमें राजधानी बसाई। इसका भग्नावशेष वने जङ्गलसे घिरा होनेके कारण अब तक भी वह ज्योंका त्यों मौजूद है। पण्डुआकी अदीना मसजिद भारतमें पठान स्थापत्य-शिल्पका चरमोत्कर्ष है। पठानोंकी बनाई इमारतोंमें जो मरमर पत्थर हैं वे हिन्दुओंके भग्न मन्दिरसे लिये गये हैं। किन्तु गौड़के भग्नावशेषमें वेशी ईंट ही दिखाई पड़ती है। मालदह जिलेके पश्चिम तांडा नगरीका खण्डहर है इसकी पूर्व अवस्थिति गङ्गाके गतिपरिवर्त्तनसे नष्ट हो गई है। गौड नगर शून्य होनेसे सौ वर्ष तक वङ्गालकी राजधानी तांड़ा हीमें थी।

१६८६ ईस्वीसनसे मालदहके साथ इष्ट इंडिया कम्पनी (प्राच्य वणिकसमिति) का संस्रव हुआ है। इस समय अङ्गरेजोंने वहां रेशमकी कोठी खोली। १७७० ई०सनमें मालदहका अङ्गरेज-बाजार प्रधान वाणिज्यका केन्द्र समझा गया। उसके बादकी प्रणालीसे बनी हुई अङ्गरेजोंकी कोठी आज भी मौजूद है। १८१३ ई०सनसे वर्त्तमान मालदह जिलेकी सृष्टि हुई है। १८३२ ई०सनमें यहां राजकोष स्थापित हुआ। ईस्वीसन् १८५९से यहां मजिष्ट्रेट कलक्टर नियुक्त हुए।

इस जिलेकी जनसंख्या ९ लाखके करीब है। यहां वङ्गाल और विहारके असभ्य आदिम अधिवासी तथा हिमालय और छोटानागपुरके पहाड़ी लोग भी अधिक संख्यामें देखे जाते हैं। मुसलमानोंकी संख्या बहुत थोड़ी है। यहांकी प्रधान उपज धान है। गेहूं, चने और जुन्हरीकी भी फसल लगती है। यहां पहले नील बहुत उपजाई जाती थी, अभी भी गङ्गाके किनारे पर उपजाई जाती है। यहांसे रेशमी सूते, धान, चावल, चने रुई, आम और पटसनकी रफतनी तथा नारियल, सुपारी, घी, गुड़, तांबे, पीतल आदिकी आमदनी होती है।

विद्याशिक्षामें यह जिला बहुत पीछा पड़ा हुआ है। सैकड़े पीछे चार मनुष्य पढ़े लिखे मिलते हैं। अभी कुल मिला कर ५०० स्कूल हैं। स्कूलके अलावा अस्पताल भी हैं।

२ उक्त जिलेका एक पुराना विध्वस्त नगर। यह अक्षा० २५° २' उ० तथा देशा० ८८° ८' पू०के मध्य कालिन्द्री और महानन्दा नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। भूपरिमाण हजारके करीब है।

मालदह नगरके नामानुसार मालदह जिलेका नाम करण हुआ है। अभी सदर स्टेशन अंगरेज-बाजार नगरको मालदह कहते हैं। किन्तु असल मालदहनगर यहांसे तीन कोस उत्तर महानन्दाके पूर्वी किनारे अवस्थित है। अभी असल मालदहको पुराना मालदह कहते हैं। पुराने मालदहके अन्तर्गत एक स्थानका नाम मालदह है। वहां बहुत-सी कब्र देखी जाती हैं। उस छोटे स्थानका नाम मालदह क्यों पड़ा, उसका संतोषजनक कारण आज तक कोई नहीं बतला सका है। बहुतोंका कहना है, कि यहां मालदपीरकी कब्र है। उसी पीरके नामानुसार मालदह नाम हुआ है सो भी नहीं कह सकते। मालजातिसे मालदहका नाम हुआ है ऐसा भी बहुतोंका अनुमान है। वाणिज्यके लिये इस नगरकी बहुत उन्नति हुई थी। किस समय मालदह नगर बसाया गया उसका कोई प्रमाण आज तक नहीं मिला है। सम्राट् फिरोज तुगलक इस नगरके जिस अंशमें छावनी डाल कर पाण्डुआ पर चढ़ाई करनेका उद्योग कर रहा था, उसका नाम फिरोजपुर है। कोई कोई कहते हैं, कि पाण्डुआका खाद्य द्रव्य संग्रह करनेके लिये जो बन्दर खोला गया था वही मालदह है। किन्तु यह कहां तक सत्य है, कह नहीं सकते। पीरगञ्ज पांडुआके समीप है और महानन्दाके किनारे बसा हुआ है। पीरगञ्जके समीप गङ्गाकी एक शाखा महानन्दामें आ कर

गिरती थी। गौड़के उजड़ जाने पर यहाके बहुतसे लोग मालदहमें आ कर बस गये। इस नगरमे पहले मुसलमानोंकी ही प्रधानता थी। पीछे मुसलमानोंकी संख्या क्यों घट गई और हिन्दुओंकी बढ़ गई, वह ठीक ठीक मालूम नहीं। आज भी घर बनाते समय कब्र दिखाई देती है। पुराने मालदहकी क्रमशः अवनति होती जा रही है, जनसंख्या घट गई है, वाणिज्यकी भी वृद्धि नहीं है।

नदीके उत्तरी किनारेसे पाण्डुआका उपनगर आरंभ हुआ है। अभी मूल पाण्डुआ नगर ही जंगलोंसे ढका हुआ है। उपनगरोंमें अभी एक भी दिखाई नहीं देता। किन्तु यहां पहले बहुतसे लोगोंका वास था, इसका अनुमान यहांकी बहुसंख्यक पुष्करिणी और इधर उधर पड़ी ईंटोंके ढेरसे किया जाता है। यहां मुसलमानोंके आगमनके पहले बहुतसे हिन्दू राजा राज्य कर गये हैं। बीच बीचमें यहां देवनागर अक्षरमें चिह्नित मुद्रामें पाई जाती है। संथाललोग जब पहले पहल यहांके जंगलको परिष्कार करते थे, तब इस तरहकी बहुत सी मुद्राएं पाई जाती थीं। पाण्डुआके निकट राइहोराणी नामक एक देवी का स्थान है जो अभी हिन्दूदेवी मानी जाती हैं।

पहले यह नगर नाना सौधमालासे विभूषित था। अभी वह भग्नस्तूपमें परिणत हो कर अतीत गौरवका परिचय दे रहा है। पुरानी मसजिदमें जुम्माकी मसजिद आज भी विद्यमान है। १००४ हिजरीमें अकबर शाहके समय उक्त मसजिद बनाई गई थी। जुम्मा मसजिद बहुत प्राचीन नहीं होने पर भी प्राचीन उपकरणोंसे बनी हुई है। हिन्दूराजोंके बने मन्दिरका खोदित प्रस्तर इसमें दिये गये हैं।

मालदही (हिं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी नाव। इसमें माझी छप्परके नीचे बैठ कर खेते हैं। २ एक प्रकारका रेशमी डोरिया कपड़ा। यह कपड़ा पहले मालदहमे बनता था और इसके लहंगे बनाये जाते थे।

मालदार (फा० पु०) धनवान, धनी।

मालदेव—जोधपुरके एक प्रसिद्ध राजा। मारवाड़ देखो। ये राठोर-वंशके उज्ज्वल सूर्य स्वरूप थे। १५३२ ई०में इन्होंने राठोर सिंहासनको सुशोभित किया। इनके जैसे पराक्रान्त राजा मारवाड़में और कोई भी नहीं हुए थे। संग्राम सिंहके मरने पर मारवाड़में जो शोक-रजनीका आविर्भाव हुआ था, मालदेवके अप्रतिहत प्रभावसे राजस्थानका सौभाग्याकाश पुनः प्रभात-सूर्यको रुण किरणसे रञ्जित हो उठा। मुसलमान ऐतिहासिक फेरिस्ताने इन्हें राजपूतानेमें सबसे बढ़ कर पराक्रमी राजा बतलाया है।

सिंहासन पर बैठते ही मालदेवने लोदियोंके अधिकृत नगर और अजमीढ़का पुनरुद्धार किया। १५४३ ई०में ये सिन्धियोंसे झालोर, शिवोना तथा भद्राजुनको अपने अधिकारमें लाये। इस प्रकार धीरे धीरे ४० प्रदेशोंको अपने बाहुबलसे जीत कर इन्होंने मारवाड़राज्यकी सीमाको बहुत कुछ बढ़ा दिया। इन्होंने नाना प्रकारके दुर्ग और अट्टालिका बना कर राजधानीको अलंकृत किया था। इन्होंने जोधपुरके चारों ओर दुर्भेद्य उच्च प्राचीर, प्रायः तीन लाख रुपया खर्च करके मैरताका मालकोट दुर्ग, भट्टिजातिको परास्त कर पोकर्णमें सुदृढ़ दुर्ग तथा भीम लोह पर्वत पर दुर्ग बनवाया। फलतः इनके शासनकाल में जोधपुर उन्नतिकी चरमसीमा पर पहुंच गया था। शम्बर झीलके लवणकी आयसे इनका खजाना हमेशा भरा रहता था।

१५४२ ई० तक राज्यसीमाको बढ़ा कर मालदेव राज्यकी रक्षामें लग गये। इस समय चारों ओर छोटे छोटे राजपूत-दलपति स्वाधीन होनेकी चेष्टा कर रहे थे। मालदेवने बड़े कौशलसे उन्हें प्राप्य अधिकार दे कर शान्त किया था।

उस समय हुमायूं दिल्लीके बादशाह थे। किन्तु थोड़े ही दिनोंके अन्दर प्रादेशिक शासनकर्त्ता सेरशाहने हुमायूंको भगा कर दिल्लीका सिंहासन अपनाया। तब राज्यच्युत-हुमायूंने मालदेवसे सहायता मांगी। किन्तु मालदेवने विश्वासघातकता द्वारा अपने नामको कलङ्क-कालिमासे कलुषित कर दिया। वियानाके प्रसिद्ध युद्धमें इनके बड़े लड़के रायमल मारे गये। किन्तु उस समय मालदेवने ऐसा स्वप्नमें भी नहीं सोचा था, कि हुमायूंके भावी वंशधर अकबर भारतके राजराजेश्वर होंगे। हुमायूंके भागते समय मरुभूमि-मध्यस्थ अमरकोटनगरमें अकबरका जन्म हुआ। मालदेवने शरणागत अतिथिके

प्रति जो सद्व्यवहार नहीं किया था, इसके लिये उन्हें भविष्यमें बहुत अनुताप करना पड़ा था। अकबर देखो। मालदेव शरणागत हुमायूंको सहायता नहीं करने पर भी सेरशाहकी दृष्टि पर चढ़ गये।

१५४४ ई०में सेरशाहने ८० हजार सेना ले कर मालदेवके विरुद्ध युद्धयात्रा कर दी। मालदेवने ५० हजार सेना ले कर उसका सामना किया। राजपूत सेनाओंकी सुशिक्षा और व्यूह निर्माणको देख कर युद्धविशारद सेरशाह दंग रह गया और मन ही मन पश्चात्ताप करने लगा। आखिर भागनेका भी कोई उपाय न देख छावनी डाल कर वहीं पर रहने लगा। इस प्रकार एक मास बीत गया, पर सेरशाहको राजपूत-सेना पर चढ़ाई करने का साहस न हुआ। रणमें पीठ दिखाना अत्यन्त अपमानजनक समझ कर कूटबुद्धि सेरशाहने विश्वास घातकताका अवलम्बन किया। वह राजपूत सेनापतियोंमें अविश्वास पैदा करनेकी कोशिश करने लगा। किसी सेनापतिके साथ सन्धिका प्रस्ताव चल रहा है, इस आशय पर एक पत्र लिख कर उसने मालदेवके पास एक दूत भेजा। दूतके हाथ पत्र पा कर मालदेवको अपने सेनापतियों पर संदेह हो गया। इस संदेह पर उन्होंने उन लोगोंके प्रति बुरा व्यवहार आरम्भ कर दिया। इस पर प्रभुभक्त राजपूतसेनापतिगण बड़े मर्माहत हुए। एक सेनापति इस अमूलक संदेहको सह्य न कर १२ हजार सेनाके साथ प्रबल वेगसे सेरशाहकी सेनाके मध्य घुस गया। हजारों पठानसेनाको यमपुर भेज कर पीछे आप रणक्षेत्रमें खेत रहा। उसके विक्रमसे सेरशाहका व्यूह बिलकुल छिन्न भिन्न हो गया। मालदेवको बहुत देरीसे सेरशाहकी चातुरी समझमें आई। सेरशाहने बड़े कष्टसे उस विपद्‌से बच कर कहा था, 'मैं मरुभूमिमें उत्पन्न मुट्ठी भर भुट्टेके लिये भारत-साम्राज्यको चौपट करने उद्यत हुआ था।'

कुछ दिन बाद हुमायूंकी अदृष्ट लक्ष्मी प्रसन्न हुईं। दिल्लीके राजप्रासाद पर मुगल-पताका उड़ने लगी। कुछ दिन बाद ही हुमायूंकी मृत्यु हुई। होनहार बालक अकबर चौदह वर्षकी उमरमें दिल्लीके राजसिंहासनपर बैठा।

मालूम होता है, कि अकबरशाहने मालदेवके दुर्व्यवहारसे अमरकोटमें आसन्नप्रसवा जननीका दुःख स्मरण कर ही सिंहासन पर बैठते ही १६६१ ई०में मारवाड़ पर चढ़ाई कर दी थी। मालदेवका प्रियदुर्ग मैरता या मालकोट अकबरके हाथ लगा। नवबलदृप्त अकबरने मालदेवके सुरक्षित शैलदुर्ग जीत कर बीकानेरके राजा रायसिंहको दे दिये।

दूरदर्शी मालदेवने सौभाग्यलक्ष्मीको अकबरकी अनुरागिणी देख सम्राट्‌की अधीनता स्वीकार कर ली और अपने चौथे लड़के चन्द्रसेनको कुछ भेंटके साथ अजमेर भेजा। उस समय अकबर अजमेरको जीत कर वहीं रहते थे। उन्होंने चन्द्रसेनके उद्धत व्यवहार पर असंतुष्ट हो बीकानेरके राजा रायसिंहको सनद दे कर फिरसे समस्त जोधपुरराज्य प्रदान किया।

कुछ दिन बाद ही शत्रुकी सेनाने जोधपुर पर धावा बोल दिया। मालदेवकी राजधानीमें घेरा डाला गया। वृद्ध वीर बड़े साहससे युद्ध करके भी परास्त हुए। पीछे उन्होंने वश्यता स्वीकार कर तीसरे लड़के उदयसिंहको उपढौकनके साथ सम्राट्‌के पास भेजा। अकबर उदयसिंहके नम्र व्यवहार पर बड़े सन्तुष्ट हुए और उन्हें जोधपुरका भावी राजा बनाया। इसके कुछ दिन बाद मालदेव १५८४ ई०में इस लोकसे चल बसे। मरते समय उन्हें बहुत पश्चात्ताप करना पड़ा था। विपुल पराक्रमसे उन्होंने जो विशाल राज्य संगठन किया था उसका अधिकांश अभी मुगलसाम्राज्यमें मिला लिया गया। किन्तु उनके जीते जी किसी भी मुसलमानको ऐसा साहस न हुआ, कि वह राजपूत कुलललनाका पाणिग्रहण कर सके। अगर वे कुछ दिन और जीवित रहते, तो उदीयमान चित्तोरराज प्रतापसिंहके साथ मिल कर राजपूत स्वाधीनताकी स्थापन करनेमें समर्थ होते।

मालदेवके बारह पुत्रोंमेंसे उदयसिंह ही १५८४ ई०में पितृसिंहासन पर बैठे। उदयसिंहने अकबरके हाथ अपनी बहिन जोधबाईको समर्पण किया।

मालद्वीप (मलयद्वीप)—भारत-महासागरके अन्तर्गत सिंहलके समीप एक द्वीपपुञ्ज। यह अक्षा० ४२' से

७° ६´ उ० तथा देशा० ७२° ३३´ से ले कर ७३° ४४´ पू० तक विस्तृत है। इसमें कुल मिला कर १६ द्वीप हैं। यह द्वीप-समूह ४६६ मील लम्बा और ६० मील चौड़ा है। द्वीपके बीचकी प्रणालीका जल बड़ा गहरा है, किन्तु समुद्रांशमें उतनी गहराई नहीं है। इसीसे पहाड़ी उपकूल भागमें समुद्रकी तरंगें बड़े जोरसे टक्कर लगाती हैं। प्रणाली हो कर अर्णवपोत आसानीसे द्वीप श्रेणीमें जा सकता है।

'मालद्वीप' नामकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें यूरोपीय पण्डित अनेक प्रकारके सिद्धान्त पर पहुंचे हैं। चार प्रधान द्वीपोंको ले कर मालद्वीप गठित हुआ है देख कर उन्होंने इसका नेलेद्वीप नाम रखा। मालवाकी भाषामें नेले शब्दका अर्थ चार है। मतान्तरसे दिवमहलसे मालद्वीप शब्द निकला है। महलका अर्थ राजप्रासाद है। किसी एक द्वीपमें सुलतानका महल था उसीसे द्वीपपुञ्जका नाम महलद्वीप पड़ा है। फिर किसीका यह भी कहना है, कि द्वीपश्रेणी मालाकी तरह अवस्थित है, इसीसे मालाद्वीप या मालद्वीप नाम हुआ है, किन्तु मलबार, मलय, मालद्वीप आदि शब्द मलय शब्दसे ही निकले हैं। ब्रह्माण्डपुराणमें मलयद्वीपका नाम मिलता है। उसमें इस द्वीपको अति विस्तृत बतलाया गया है।

भूतत्त्वविद् पण्डितोंमेंसे किसी किसीका कहना है, कि यह द्वीप प्रवालकीट-निर्मित है। फिर कोई कहते हैं, कि द्वीपपुञ्जके आस पासके स्थानोंमें अभी उतने प्रवालकीट नहीं देखे जाते। द्वीपकी ओर नजर दौड़ानेसे मालूम होता है, कि भारतके दक्षिण मलयसे ले कर लंका पर्यन्त एक प्रकाण्ड भूखण्ड था। बादमें भूपञ्जरकी चालना या पृथ्वीकी अभ्यन्तरस्थ अग्निकी शक्तिसे उक्त भूखण्ड समुद्रगर्भमें धंस गया है। सिर्फ ऊंचा पर्वत इधर उधर द्वीपरूपमें विद्यमान है। वास्तवमें लंकासे ले कर मलय प्रायद्वीप तकके अधिवासी तथा उत्पन्न द्रव्यादिका जैसा सादृश्य देखा जाता है उससे उक्त सिद्धान्त असमीचीन-सा प्रतीत नहीं होता।

मालद्वीपकी भाषामें द्वीपका स्थानीय नाम आटोल है द्वीपपुञ्जोंमेंसे सिर्फ १६ प्रधान हैं तथा हरएकमें मनुष्य वास करते हैं।

१। हिवान्दु फोलो आटोल—यह १२ मील लम्बा और ७ मील चौड़ा है। २४ द्वीपपुञ्जोंसे यह गठित है जिनमेंसे केवल सातमें मनुष्योंका वास है।

२। टिलाडु माटि आटोल—इसका परिमाण ३५ वर्गमील है। यह ३८ द्वीपपुञ्जोंसे गठित है। सभी आबादी है।

मलकम—यहां बहुतसे अर्णवपोत नष्ट भ्रष्ट हो गये हैं।

४ मिलाडुमडु—यह १०१ द्वीपपुञ्जोंसे बना हुआ है। उनमेंसे केवल २३में मनुष्य वास करते हैं।

५। फैडिफोलो—१० द्वीपसे गठित है।

६। माह्लपमाडो—यह अक्षा० ५°से ले कर ६०° तक विस्तृत तथा ४ द्वीपपुञ्जोंसे संगठित है।

७। अरि आटोल—पूर्वकी ओर है और बहु संख्यक द्वीपोंसे गठित है।

८। माले आटोल—इसके निकट माले द्वीप या राजद्वीप अवस्थित हैं। यहांकी जनसंख्या २००० है। अङ्गरेजोंके लिये यहांका जलवायु अस्वास्थ्यकर है।

९। खडद्वीप या गाडु।

१०। दक्षिण मालेद्वीप—यह २२ द्वीपोंसे गठित है। इसमें केवल ३ द्वीपोंमें लोगोंका वास है।

११। फाले डो आटोल—यह अक्षा० ३° ११´ से ले कर ३° ४१´ तक विस्तृत है।

१२। मोलोक आटोल—यह पूर्व पश्चिममें १५ मील विस्तृत है।

१३। नीलापडु आटोल—यह अक्षा० २° ४०´से ले कर ३° २०´ तक विस्तृत तथा २० द्वीपोंसे बना हुआ है।

१४। कुम्लो मण्डु—तमाम मिट्टी पड़ी है, इसका दूसरा नाम सूर्याद्वीप है।

१५। फूआ मोलकु—यह दक्षिण पूर्वकी सीमा पर अवस्थित है। इसकी लम्बाई एक कोस है। यहांके अधिकांश अधिवासी तांती और मल्लाह हैं।

१६। आद्दु आटोल—मालद्वीपके दक्षिणमें अवस्थित है। यह विषुव रेखाके बहुत करीबमें है। प्रायः १७५ द्वीपोंमें मनुष्योंका वास है। कुल मिला कर अधिवासियोंकी संख्या प्रायः दो लाख है। स्थानीय लोगोंका विश्वास है, कि मालद्वीपमें दश हजार छोटे छोटे द्वीप हैं।

इवन वतुता नामक एक अरव देशीय यात्री १३४० ई०सन्‌में सबसे पहले मालद्वीपमें आया और वहांके वजीरकी कन्यासे विवाह कर लिया। बाद उसके १६०२ ई०में पिराड (Pyrard) नामक एक फरासी नाविक जहाज डूव जानेके कारण मलद्वीप पहुंचा। द्वीपवासियोंने उसे पांच वर्ष तक वन्दी कर रखा था।

उसके पहले १५वों शताब्दीमें पुर्त्तगोज वणिकोंने मालद्वीपका आविष्कार किया। कुछ दिन हुए लेफ्टिनेण्ट क्रिष्टोफर (Lieutenant Christopher R N.) जमोन नापनेके लिये मालद्वीप आये थे। उन्होंने एक वर्ष तक रह कर यहांका विवरण लिखा। उन्हींके विवरणसे यहांके सभी तत्वोंका पता लगा है।

बहुत प्राचीनकालसे मालद्वीप सिंहलराज्यके शासनाधीन था। ग्रीक, अरवीय और चीनदेशीय पर्यटकगण सभी मालद्वीपको सिंहलके शासनाधीन वतला गये हैं। १७वीं शताब्दीके प्रारम्भमें पिराडके समय यहां जो भाषा प्रचलित थी वही आज भी है। सिंहली भाषा ही यहांकी प्रचलित भाषा है। बौद्धधर्मके निदर्शन सर्वत्र देखे जाते हैं। इव्‌न-वतुताके वर्णनसे मालूम होता है, कि १३वीं सदीके शुरूमें द्वीपवासिगण मुसलमान-धर्ममें दीक्षित हुए थे।

१६वीं शताब्दीके आरम्भमें पुर्त्तगोजोंने सामान्यभावसे इस द्वीप पर आधिपत्य किया था।

अलेकजन्द्रियावासी पापुस (Papp s) नामक प्रसिद्ध पर्यटकने ४थी शताब्दीमें सिंहलभ्रमणके समय लिखा है, कि १३७० द्वीप सिंहलराज्यके अन्तर्गत थे। ५वीं शताब्दीमें चीना यात्री फा-हियान भी सिंहलके चारों ओरके बहुतों द्वीपोंका उल्लेख कर गये हैं। उन्होंने कहा है, कि इन सभी द्वीपोंमें मुक्ता और हीरा बहुतायतसे पाया जाता है। टलेमी तथा कोसमस (Cosmos ने भी ६ठी शताब्दीमें इन सब द्वीपोंका उल्लेख किया है। सलिमन (Sulliman) ९वीं शताब्दीमें लिख गये हैं, कि यह सब द्वीप वहांकी एक सम्राज्ञीके शासनाधीन था। ११वीं शताब्दीमें आल वरुणी इन सब द्वीपोंका उल्लेख करते समय कौड़ीके व्यवसायके सम्बन्धमें बहुत-सी बातें लिख गये हैं।

मि० ग्रे-ने मालद्वीपवासियोंके आचार-व्यवहारकी पर्यालोचना कर लिखा है,—प्राचीन समयमें मालद्वीपवासी जो दानव पूजक था उसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। कई जगह बौद्धधर्मके भी निदर्शन देखे गये हैं। उन्होंने केवल चार सौ वर्ष तक मुसलमान-धर्म ग्रहण किया है। जिस मुसलमान प्रचारकने सबसे पहले यहां धर्म-प्रचार किया उसकी कब्र मालिद्वीपमें आज भी विद्यमान है। यहांके अधिवासी भक्तिके साथ इस स्थानको देखते हैं। मालद्वीपमें 'बुदु' शब्दको प्रतिमा और मन्दिरको 'बौदखाना' कहते हैं। शायद वह बौद्ध शब्दका अपभ्रंश होगा। इस विषयमें एक ऐसा प्रवाद है, कि एक समुद्रवासी दैत्य मालद्वीपवासिनी कुमारियोंके ऊपर घोर अत्याचार करता और उन्हें हर कर ले जाया करता था। माग्रेविन अबुल वेराकात नामक एक मुसलमान-प्रचारकने कुरानकी जादूगरी-शक्तिसे उस दैत्यको मन्त्रमुग्ध कर मार भगाया।

मालद्वीपके रहनेवाले बहुत कुछ सत्यवादी हैं। वे भारतवर्षके बंगाल, चटगांव, मालवाके उपकूल तथा सिंहलके साथ वाणिज्य करते हैं। वे नावें चलानेमें बड़े निपुण होते हैं। मालद्वीपमें उक्त विद्या सीखनेके बहुतसे विद्यालय हैं। यहांके लोग अति निरीह तथा शान्तस्वभावके हैं। सभ्यजगत्‌में जो दोष देखा जाता है वह यहां कुछ भी नहीं है। वे शराब नहीं पीते। उनका तामड़ावर्ण तथा कद छोटा होता है। कहीं कहीं हवशी जातिका संस्रवदोष दिखाई देता है। स्त्रियां सुश्री नहीं, पर बड़ी डरपोक होती हैं।

बहुतसे अर्णवपोत यहां डूब गये हैं जिनमेंसे कुछका नाम तथा डूबनेका समय नीचे दिया जाता है। १८७७ ई०में लिफे (Leffy), १८७९ ई० सन्‌में सिगल (Seagall) और १८८० ई०सन्‌में कनसेट (Consett) इत्यादि। अभी अनेक कारणोंसे वर्त्तमान सुलतानकी ऐसी धारणा हो गई है, कि डूबे हुए जहाजों पर जीवित नाविकोंका स्वत्व नहीं था। इसीसे सुलतानकी अनुमतिके विना किसीने जहाज निकालनेमें सहायता नहीं की थी।

यहांके उत्पन्न द्रव्योंमें नारियल प्रधान है।

अलावा इसके ६०।७० हाथ लम्बे ताडके पेड भी बहुता-यतसे होते हैं। यहा थोडा बहुत फल भी मिलता है। मकई और रुई कहीं कहीं उत्पन्न होती है। यहां बहुत-से कौडीके स्तूप भी नजर आते हैं। कौडी ही द्वीप-वासियोंकी प्रचलित मुद्रा है। यहांका प्रधान खाद्य और वाणिज्य-द्रव्य मछली ही है। सभी द्वीपोंका उत्पन्न द्रव्य मालिद्वीपमें और मालिद्वीपसे भारतवर्षके नाना स्थानोंमें भेजा जाता है। सोना और सूखी मछली, नारियल, नारियलका तेल, विचित्र कारुकार्ययुक्त चटाई, प्रवाल, कछुए-की हड्डी और कौडी यहांका प्रधान वाणिज्य है। वैदेशिक वणिक् प्रतिवर्ष यहांसे धान, रेशम तम्बाकू, नमक, चावल, कपडा, घी, चीनके वरतन, लोहे और पीतलके वरतन ले जाते हैं।

द्वीपपुञ्ज एक सुलतान द्वारा शासित होता है। उनके मरने पर उनके पुत्रपौत्रादि उत्तराधिकारी होते हैं। सुलतानके अधीन छः मन्त्री रहते हैं। प्रधान मन्त्रीको दुरिमिन्द कहते हैं। वह मन्त्री और सेनापति दोनों ही होता है। वैदेशिक वणिक् राजधानीको छोड अन्यत्र द्रव्यादि खरीद नहीं सकते। भारतवर्षकी प्रचलित मुद्रा यहा व्यवहृत होती है। यहा तक, कि एक रुपये में बारह हजार कौडी मिलती है।

ईस्वीसन् १७६६से अंगरेजोंने सिंहलको अपने कब्जेमें कर लिया है। उस समयसे मालद्वीपके सुलतान इच्छा-पूर्वक प्रति वर्ष अङ्गरेजोंको कर दिया करते हैं। मालद्वीपकी प्रचलित पद्धतिके अनुसार राजदूतको सुलतानके दिये पत्रको रौप्यनिर्मित पत्रमें रख कर शिर पर ढोना होता है। पत्रका आवरण मखमल और सुरञ्जित रेशमका होता है।

मालद्वीपमें तीन प्रकारकी वर्णमाला देखनेमें आती है। यथा—ध्य ही हाकुरा, अरवी और गाविलि-टाना। शेषोक्त यानी गाविलि-टाना ही मालद्वीपवासियोंकी मातृभाषा है। प्राचीन समाधिक्षेत्रमें ध्य ही हाकुरा भाषा देखी जाती है। शायद आदिम अधिवासी इसी भाषाका व्यवहार करते होंगे। कहीं कहीं दक्षिण-सीमांत द्वीपमें उक्त अक्षरमें लिखी पुस्तक मिलती है। विद्यालय-में कुरान पढाया जाता है।

यहांकी आबहवा उतनी अच्छी नहीं है। बुरिवेरी नामक पेटकी बीमारी यहाके अधिकांश लोगोंको सताती है। ज्वर होनेसे अकसर नहीं बचता है। ताप परिमाण ७५' से ७५' डिगरी तक चढ़ता है।

मालन (हिं० स्त्री०) माली देखो।

मालपहाडिया—सन्थाल-परगनेके रामगढ़ पर्वतवासी एक जातिविशेष। जातितत्त्ववेत्ता इन लोगोंको द्राविड़ जातिका समझते हैं। यह जाति आज तक शिकारसे ही जीवन-निर्वाह करती है। अत्यन्त प्राचीनकालसे ही इस जातिके लोग 'झुम' प्रथाके अनुसार खेती करते है। उत्तरके मालपहाडिया लोग दक्षिणवालोंको 'मालेर' कहते और उन्हें सजाति समझते हैं। लेकिन दक्षिणके मालपहाड़ी इस बातको स्वीकार नहीं करते। ये लोग उत्तरवालोंको 'चेर' तथा अपनेको 'माल' या 'माड' कहते हैं। माल लोगोंके तीन विभाग हैं—कुमारपलि, दागरपलि और मारपलि। ये लोग उत्तरवासी लोगोंको 'सुमरपलि' कहते हैं।

यह सब देख कर अनुमान किया जाता है, कि ये सब एक ही जातिसे उत्पन्न हुए हैं। पहले सम्प्रदायके लोगोंकी चाल-ढाल प्रायः एक-सी है। ये लोग टूटी फूटी बंगला बोलते हैं। इन लोगोंमें जो राजा होता है, उसकी उपाधि "सिंह" होती है। मध्यम श्रेणीके धनी लोग गृही कहलाते हैं। ये लोग अपनी जातिके गरीब लोगोंको ८० पैसे कर्ज दे कर सहायता करते हैं। कोई भी किसी प्रकारकी सरकारी नौकरी नहीं करता। तीसरे सम्प्रदायके लोगोंको गांवके मांझी या मोड़ल कहते हैं। चौथे सम्प्रदायके लोग अर्थात् आहुति लोग केवल शिकार कर अपना पेट भरते हैं।

कोई कोई कहते हैं, कि मालपहाडी लोग आदिम पहाडी जातिसे बिलकुल पृथक् हैं। क्योंकि, ये लोग हिन्दू जातिके संसर्गमें आ बहुत कुछ हिन्दूभावोंको अपना चुके हैं। बीचा बीचमें पहाडी जातिके साथ इन लोगोंका विवाद चला करता है।

मालपहाडिया फिर दो शाखाओंमें विभक्त है, मालपहाडिया और कुमार या कुमरभागिया। पूर्वकथित कुमरपलि जाति इस कुमरभागिया जातिसे भिन्न नहीं

है। इन लोगोंकी एक किंवदन्ती है, कि किसी गायसे इन लोगोंकी उत्पत्ति हुई थी। मानभूमके पंचकोटमें भी इस तरहका प्रवाद प्रचलित है। बुकानन साहबने अनुमान किया है, कि पहले समयमें किसी राजाने शायद एक मालपड़िहाको दीवान या फौजदार बनाया होगा और उसीसे पञ्चकोटवंशको सृष्टि हुई होगी। किन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता है।

इन लोगोंमे बाल और यौवन दोनों ही तरहके विवाह प्रचलित हैं। प्रायः १० या ११ वर्षके पहले लड़कीका विवाह नहीं होता। कई जगह लड़की सयानी होनेके बाद भी ब्याही जाती है। ऐसी हालतमें यदि वे पुरुषके प्रेममें फंस जांय तो उतना दोष नहीं समझा जाता। इसका कारण यह है कि अगर किसी लड़कीके विवाहके पहले गर्भ रह जाय, तो जिसके द्वारा गर्भ हो गया है उसीको उस लड़कीके साथ विवाह करना पड़ता है। लड़कीका बाप अपनी लड़कीका दहेज लेता है। घटक लोग सम्बन्ध ठीक कर देते हैं। ५) से २५) रू० तकका दहेज होता है। लड़कीके बापको जिस दिन सब रु० चुका देना होता है उस दिन लड़कीके लिये कुछ मदिरा और एक खंड साड़ी देनी पड़ती है। लेकिन जब तक विवाह नहीं होता तब तक रुपये लड़कीके मामाके पास अमानत रहते हैं। विवाहमे मामाकी प्रधानता देख कर बहुतेरे अनुमान करते हैं, कि पहले माताके ही सम्बन्धसे सभी परिचित होता था। लड़कीके दहेज देनेके बाद घटक फिरसे लड़कीके घर भेजा जाता है। उस समय घटकके हाथ पर तीरके आघातका चिह्न रहता है और उसके चारों ओर पीला सूता लपेट दिया जाता है। विवाहके जितने दिन शेष रहते हैं उतनी ही गांठ उसमें दी जाती है। लड़की-पक्षके लोग प्रतिदिन एक गांठ खोलते हैं। विवाहके एक दिन पहले वर लड़कीके घरके पास आ ठहरता है। लड़कीके बापको विवाहके दिन सवेरे एक बड़ा भोज देना पड़ता है। शेमलकी डालसे घेर कर वरका आसन ठीक किया जाता है। उस स्थानमें वर पूरब मुंह बैठता है और लड़कीके साथ गांठ-जुड़ाव दिया जाता है। लड़की भी पीले रंगकी साड़ी पहने रहती है। लड़कीकी सखियां वरको सजती हैं और उसके हाथमें सिन्दूर देती हैं वर लड़कीके मांगमें सिन्दूर लेप देता है। लड़कीको अंगुलीसे वरके कपाल पर सिन्दूरके सात टीके लगा दिये जाते हैं। उस समय बड़े आनन्दके साथ बाजे बजते हैं और तरह तरहके उत्सव होते हैं। नर्त्तकियां नाचती है और गायिका उच्च स्वरसे गाती हैं। सन्ध्या समय सभी वरके घर जाती हैं और समूची रात नाच गानमें बिताती हैं। इन लोगोंमें बहु-विवाहकी प्रथा है। स्त्रियां साधारणतः बांझ होने पर ही दूसरा विवाह कर सकती हैं। स्त्रीको यदि अनेक बहनें हों तो उससे बड़ी बहनोंको छोड़ सभीसे उसका स्वामी विवाह कर सकता है। विधवा-विवाहकी प्रथा इन लोगोंमें जारी है। लेकिन देवर रहने पर और किसीसे विवाह नहीं हो सकता, विधवाको उसीसे विवाह करना पड़ता है। अगर देवर अपनी भौजाईसे विवाह करना न चाहे, तो विधवा अपने इच्छानुसार विवाह कर सकती है। केवल नये स्वामीको ३) रु० देने पड़ते हैं। विधवा-विवाहमें सिन्दूर आदिसे काम नहीं लिया जाता, केवल वर नया कपड़ा पहना कर विधवाको अपने घर ले जाता है। स्त्री अगर बदचलन निकले तो गांवकी पञ्चायतसे राय ले कर स्वामी उसे त्याग सकता है। अथवा स्त्री-पुरुष दोनोंकी इच्छा हो तो वे पंचोंके सामने सखुएके पत्तेको फाड़ कर विवाह सम्बन्ध तोड़ सकते हैं। अपने स्वामीके रहते स्त्री अगर दूसरेसे फंस जाय, तो उपपतिको उसके स्वामीका दिया दहेज देना पड़ता है।

इन लोगोंके देवताओंमें सूर्य ही प्रधान हैं। प्रातः और संध्याकाल ये सब सूर्यकी उपासना करते हैं। किसी एक रविवारको घरका मालिक विशेषरूपसे सूर्यकी पूजा करता है। इसके लिये उसे शुक्रवारको संयम करना पड़ता है और शनिश्चरको उपास रह कर केवल दूध और गुड़ खाना होता है। सूर्योदयसे पहले ही चावल सुपारी आदि पूजाकी सामग्री ले घरके सामने आंगनमें घरका मालिक खड़ा होता है और सूर्योदय होते ही उच्च स्वरसे मंत्र पढ़ने लगता है। ये लोग सूर्यको गोसांई कहते हैं। प्रार्थनाका तात्पर्य यह है कि सूर्य भावी विपदसे उन लोगोंकी रक्षा करें। ये लोग बकरे-

की वलि देते हैं। वह मांसका प्रसाद घरवालोंको छोड दूसरे नहीं खा सकते।

सूर्यके बाद ही ये लोग धरती माईकी पूजा करते हैं। धरतीकी दासी 'गरांमा' देवीकी भी पूजा होती है। उसके बाद सिंहवाहिनीकी पूजा होती है। सिंहवाहिनी वाघ, साँप, विच्छू आदि पर शासन करती हैं। पृथिवी माताकी पूजामें आषाढ़ और माघके महीनेमें वकरे, सूअर और पक्षीकी वलि दी जाती है।

हिन्दुओंकी दुर्गा-पूजाके समय ये लोग वकरे, भैंसे वलिदान दे कर सिंहवाहिनीकी पूजा करते हं।

ये लोग नाचके वड़े प्रेमी होते हैं। एक अनोखी प्रथा इन लोगोंमें देखी जाती है। जिसके कल्याणके लिये नाच गान होता है उसे उत्सवकी पहली रातको पुआल पर सोना पड़ता है। पीछे नशेकी हालतमें नर्त्तक और नर्त्तकिया उच्च स्वरसे शब्द करती हुई उस सोते व्यक्तिके चारों ओर नाच गान करती हैं।

ऊपर कह गये देवताओंके अलावा ये अनेक दानवोंकी भी पूजा करते हैं। उनमेंसे चोर-दानव और महादानव ही प्रधान हैं। अंडे चढ़ा कर महादानवकी पूजा होती है। हिन्दू देव-देवीके मध्य ये लोग काली और लक्ष्मीको पूजा देते हैं।

माली जातिकी तरह मृत पूर्व-पुरुषाओंकी पूजा भी इन लोगोंमें चलती है। ये लोग सखुएके पेडमें सिन्दूर लेप उसकी पूजा करते हैं। यही कारण है, कि ये सखुएके पेडको नहीं काटते। माझी या घरका मालिक ही पुरोहितका काम करता है। सभी ब्राह्मणके वड़े भक्त होते हैं।

ये लोग मुर्दे जलाते हैं। जलानेके वाद अस्थियोंको नदीके गहरे जलमें फेंक देते हैं।

अशौच पांच दिन रहता है। इस समय कोई नमक नहीं खा सकता। छठें दिन हजामत आदिके वाद जेठा लड़का अपने समाजको भोज देता है। अन्त्येष्टि क्रियाके लिये राजाको यथोचित कर देना होता है। यह सब खर्च देनेके वाद भी अगर मृतकका धन कुछ बच रहे तो वह उसके लडकोंमें वट जाता है। लडकियोंको कुछ नहीं मिलता। गरीव लाग धनाभावके कारण मुर्दे गाड़ देते हैं और श्राद्धादि-क्रिया कुछ भी नहीं करते। लेकिन कुमारभाग प्रान्तके मालपहाडियोंने अपने हिन्दू पड़ोसीकी देखादेखी श्राद्धादि करना शुरू कर दिया है।

ये लोग 'भुम' की खेती और शिकारको अपना पैतृक व्यवसाय समझते हैं। फसल जब अच्छी तरह नहीं लगती, तब ये नाना प्रकारके जंगली फल-मूलको खा कर जान बचाते हैं। आज कल ये लोग फल-मूलकी खेती करने भी लग गये हैं। ये लोग सूअर और मुर्गीका मांस खाते हैं, किन्तु गो-मांस, साँप और छछूंदरका मास छूते तक भी नहीं।

मालपुआ (हिं० स्त्री०) मालपूआ देखो।

मालपुर—वम्बईप्रदेशके मध्य एक करद राज्य। राजधानीका नाम मालपुर है। यह अक्षा० २३° २१´ २०´´ उ० तथा देशा० ७३° २४´ ३०´´ पू० महीकांथा राज्यके दक्षिणपूर्वमें अवस्थित है। यह प्रदेश पर्वत और जंगलोंसे घिरा है। वाजड़ा और गेहूं यहांकी प्रधान उपज है। इसके सिवा यहा और भी कई तरहके अन्न उपजते हैं। वर्त्तमान राजाओंकी उत्पत्ति इदर-राजवंशसे है। किरातसिंहजीके कनिष्ठ पुत्र विराजमल इदररावसे ७वीं पीढ़ीमें हैं। उन्होंने राज्यको खूब वढ़ाया था। उनके लड़के खानजिमाल नामक स्थानमें प्रतिष्ठित हुए। उनके पौत्र रणधीरसिंहजी मानसे मराना नामक स्थानमें जा कर वस गये। उसके वाद उनके प्रपौत्र रावल वागसिंहजी मालपुरमें अधिष्ठित हुए। उस समय मालपुर मालोकान्त नामक एक भील सरदारके अधीन था। मालपुरवासी एक ब्राह्मणके परमासुन्दरी कन्या थी। मालोकान्तके साथ उसका खूब प्रेम था। यह देख ब्राह्मणने गुस्सा कर रावलसिंहकी शरण ली। रावलने युद्धमें मालोकान्तको पराजित किया और मार भगाया। उसी समयसे रावलके वंशधर यहां राजत्व करते हैं। रावल दीपसिंहजी १८८१ ई०में विद्यमान थे। ये राठोरवंशीय राजपूत तथा किरातसिंहसे ३३ पीढ़ी नीचे थे। ये वृटिश सरकार, इदरके राव और वरधाके गायकवाड़को कर देते हैं।

मालपूआ (हिं० पु०) एक पकवानका नाम। इसका वनानेका तरीका इस तरह है। गेहूंके आटे वा सूजीको

शक्करके रसमें गीला घोलते हैं। फिर उसमें चिरौंजी पिस्ता आदि मिला कर धीमी आंच पर घीमें थोड़ा थोड़ा डाल कर खिभा कर छान लेते हैं। कभी कभी पानीकी जगह घोलते समय इस दूध वा दही भी मिलाते हैं।

मालपूवा (हिं० पु०) मालपूआ देखो।

मालवरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी ईख जो सूरतमें होती है।

मालभंडारी (हिं० पु०) जहाज परका वह कर्मचारी जिस के अधिकारमें लदे हुए माल रहते हैं।

मालभञ्जिका (सं० स्त्री०) मालं भज्यते (सज्ञायां। पा ३।३।१०९) इति ण्वुल्। क्रीड़ाभेद, प्राचीनकालके एक प्रकारके खेलका नाम।

मालभारिन् (सं० त्रि०) मालां बिभर्त्ति-भृ-णिनि (इष्टके-षीका मालाना चिततूलभारिषु। पा ६।३।६५) इति पूर्व पदस्य ह्रस्वः। मालाधारी, माला पहरनेवाला।

मालभारी (सं० त्रि०) मालभारिन् देखो।

मालय (सं० पु०) मा शोभा तस्याः लयः आस्पदं। १ चन्दनवृक्ष। २ गरुड़के एक पुत्रका नाम। ३ व्यापारियों-का झुंड। ४ अभिसार-स्थानभेद, वह स्थान जहां प्रिया-से नायक मिलता है।

"क्षेत्रं वाटी भग्नदेवालयो दूतीगृहं वनम्।
मालयश्च श्मशानश्च नद्यादीनां तटी तथा॥"

(साहित्यद० ३ परि०)

५ पद्मकाष्ठ। ६ श्रीखंडचन्दन। (त्रि०) ७ मलय-सम्बन्धी, मलयका।

"तनुच्छटोत्तमालया तया सुवोत्तमालया।
अहारि शीतमालयानिलावधूतमालया॥" (नलोदय २।३७)

मालव (सं० पु०) मालः उन्नतक्षेत्र मत्स्यत्र माल (केशाद्-वोऽन्यतरस्या। पा ५।२।१०९) इत्यत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते काशिकोक्तेः व प्रत्ययः। १ अवन्तिदेश।

"अङ्गा वङ्गा मद्गुरका अन्तर्गिरिवहिर्गिरी।
सुह्मोत्तराः प्रविजया मार्गवाङ्गेय मालवाः॥"

(मत्स्यपु० ११३।४४ अ०)

२ रागविशेष, छः प्रकारके रागोंमेंसे प्रथम राग। कोई कोई इसे भैरव राग भी कहते हैं।

"आदौ मालवरागेन्द्रस्ततो मल्लारसञ्जितः।
श्रीरागस्तस्य पश्चाद्वै वसन्तस्तदनन्तरम्।
हिल्लोटश्चाथ कर्णाट एते रागाः प्रकीर्त्तिताः॥"

(सङ्गीतदा०)

इस रागका स्वरग्राम—

सा ऋ ग म ० ध नि सा ::

मतान्तरसे—नि सा ऋ ग म प ध नि ::

मतान्तरसे—सा ऋ ग म प ध नि सा ::

(सगीतरत्नाकर)

संगीत दामोदरमें इसका रूप माला पहने, हरित वस्त्र धारी, कानोंमें कुंडल धारण किये, संगीतशालामें स्त्रियोंके साथ बैठा हुआ लिखा है। इसकी धनश्री, मालश्री, रामकीरी, सिंधुड़ा, आसावरी और भैरवी नाम-की छः रागिनियां हैं। कोई कोई इसे षाडव जातिका और कोई सम्पूर्ण जातिका राग मानते हैं। षाडव माननेवाले इसमें मध्यम स्वर वर्जित मानते हैं। यह रातको गाया जाता है। ३ अश्वपति राजाके मालती गर्भजात पुत्रगण।

४ उपोदकी, एक प्रकारका साग। ५ मालवदेश-वासी वा मालव देशमें उत्पन्न पुरुष। ६ सफेद लोध।

(त्रि०) मालवदेशसम्बन्धी, मालवेका।

मालव—भारतवर्षकी एक प्राचीन हिन्दू जाति। इसका अधिकार अवन्ती (पश्चिम मालवा) और आकर (पूर्वी मालवा) पर रहनेसे उन देशोंका नाम मालव (मालवा) हुआ। ऐसा अनुमान किया जाता है, कि मालवोंका अधिकार राजपूतानेमें जयपुर राज्यके दक्षिणी अंश, कोटा तथा झालावाड़ राज्यों पर रहा हो। वि० स० पूर्वकी ३री सदीके आस पासकी लिपिके कितने तांबेके सिक्के जयपुर राज्यके उणियाराके निकट प्राचीन नगर (कर्को-टक नगर)-के खंडहरसे मिले हैं जिन पर 'मालवानां जय' लिखा है। इस प्रकारके और भी कितने सिक्के पाये गये हैं। ये सब सिक्के मालवगण या मालव जातिकी विजयके स्मारक हैं। परन्तु ऐसे छोटे सिक्कों पर उन-के नाम और विरुदका अंशमात्र ही आनेसे उन नामों-का स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। कुछ लोगोंने उनके नाम

पढ़नेका यत्न किया है और २० नाम प्रकट भी किये हैं। ये सब नाम विलक्षण एवं अस्पष्ट हैं, यथा—मपचन, यम, मजुप, मपोज, मपय, मगजश, मगोजय, मगच्छ, पयमरज इत्यादि। इन्हीं अस्पष्ट पढ़े हुए नामों परसे कुछ विद्वानोंने यह भी कल्पना कर डाली है, कि मालव एक विदेशी जाति थी। किन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। इसलिये हम उसे स्वीकार करनेको तैयार नहीं हैं। अब तो मालव जातिका नाम निशान भी नहीं रहा है।

मालव—मालवा देखो।

मालवक (सं० त्रि०) १ मालवदेशसम्बन्धी, मालवेका। (पु०) २ मालवदेशवासी, मालवाका रहनेवाला।

मालवगुप्त (सं० पु०) आचार्यभेद। रङ्गनाथने इनका उल्लेख किया है।

मालवगौड़ (सं० पु०) षाड़व जातिका एक संकरराग। इसमें पञ्चम स्वर नहीं लगता। इसका स्वरग्राम म ध नि स रि ग म है। इसका उपयोग वीर रसमें किया जाता है। कुछ लोग इसे सम्पूर्ण जातिका मानते हैं और इसके गानेका समय सायंकाल बतलाते हैं।

मालवरुद्र (सं० पु०) एक कवि। क्षे द्रकृत कविकण्ठाभरणमें इनका उल्लेख है।

मालवर्त्ति (सं० पु०) एक प्राचीन जातिका नाम।

मालवश्री (सं० स्त्री०) श्रीरागकी एक रागिनीका नाम। यह सम्पूर्ण जातिकी रागिनी है और इसके गानेका समय सायंकाल है। नारद इसे मालवकी रागिनी मानते हैं और हनुमत इसे हिंडोल रागकी रागिनी लिखते हैं। हनुमत इसे ओडव जातिकी मानते हैं और इसके गानेमें धैवत तथा गांधारको वर्जित लिखते हैं। इसे मालश्री और मालसी भी कहते हैं।

मालवा (हिं० स्त्री०) एक प्राचीन नदीका नाम।

"हिरण्वती वितस्ता च तथा प्लक्षवती नदी।
वेदस्मृतिर्वेदवती मालवाथाश्ववत्यपि॥"
(भारत १३।१६५।२५)

मालवा—मध्यभारतका एक प्रदेश। यह मध्य भारत एजेन्सीके पश्चिमांशमें सबसे बड़ा भाग है। इसमें कई देशी राज्य हैं। यह पोलिटिकल एजेण्टके अधीन और वह पोलटिकल एजेण्ट मध्यभारतके एजेण्टके अधीन हैं।

यह अक्षा० २२° २०' से २५° ६' उ० तथा देशा० ७४° ३२' से ७६° २८' पू० के मध्य विस्तृत है। इसका रकबा ८६१६ वर्गमील है। इसमें १५ शहर तथा ३४८४७ गांव लगते हैं। इसकी आबादी करीब १०॥ लाख है।

मालवाके जैसा उपजाऊ प्रदेश मध्यभारतमें दूसरा कोई नहीं है। वर्षाके अभावसे यहां कभी भी अकाल नहीं पड़ता। इन्दौर, भूपाल, धार, रतलाम, जावरा, राजगढ़, नरसिंह गढ़ और ग्वालियरके नीमच आदि राज्य इसके अन्तर्गत हैं। अत्यन्त पुराना और प्रसिद्ध उज्जैन नगर मालवाकी राजधानी था। विक्रमादित्यका नाम उज्जैनके साथ इतिहासमें अमर हो गया है।

प्राकृतिक दृश्य।

इस प्रदेशकी भूमि ऊंची नीची है। छोटी छोटी शैलश्रेणी और पहाड़ी नदियां तमाम फैली हुई हैं। घास, कांटोंके झाड़ तथा तरह तरहकी छोटी छोटी लताओंसे ज़मीन एकदम ढकी हुई है। जंगलोंमें बाघ, चीते, भालू, सूअर, हरिन आदि पशु रहते हैं। लेकिन अब खेतोंके विस्तारके कारण जंगलोंका रकबा कम हो रहा है। सभी नदियां दक्षिणकी ओर समुद्रमें मिली हैं। केवल एक नदी उत्तरकी ओर बहती हुई चम्बल महानदीमें गिरी है। लोहा तथा पत्थरको छोड़ और कोई खनिज द्रव्य निकाला नहीं जाता। यहां वर्षमें ३८ इंच वर्षा होती है।

भूतत्त्व।

मालवाका पश्चिम भाग दाक्षिणात्यके विस्तृत पहाड़ोंसे भरा हुआ है। ज्वालामुखी पहाड़से निकले हुए द्रव पदार्थोंसे इस भागकी रचना हुई है। समूचे प्रदेशमें बड़ी बड़ी शिलायें इधर उधर बिखरी पड़ी हैं। यह सब देख भूतत्त्ववेत्ताओंने निश्चय किया है, कि पर्वत-युगमें दाक्षिणात्यका ज्वालामुखी पर्वत क्रीड़ास्थान था। मालवाके पत्थर जलवायुके कारण रूप नहीं बदलते। मालभूमि प्रदेशमें इस तरहके पत्थर बहुत मिलते हैं। माण्डू नगरीके भवन बनानेके लिये जो सब खनिज पत्थर निकाले गये थे वे अभी तक वर्त्तमान हैं।

मण्डलेश्वर तथा महेश्वर नामक दो स्थानमें नर्मदानदीके पंककी तहसे बना हुआ एक बड़ा भूमिखंड

निकला है। सरकारने इस स्थानमें लोहा गलानेका कारखाना खोला था, दुर्भाग्यवश वह कारखाना अभी उठा दिया गया।

अधिवासी।

सिन्दे, राजपूत, भील, कुलुरी, अंजना और अहीर नामके बहुतसे खेतीहर यहां रहते हैं। मगिया जातिके लोग मेवाडसे आ कर यहां बस गये हैं। ये लोग चोरी करनेमें बड़े कुशल होते हैं। अहीर और अंजना जातिके लोग धनवान् हैं। साधारणतः जुआरका मैदा यहांके कृषकोंका प्रधान खाद्य है। ये लोग अफीमके भुने हुए पत्तोंके साथ रोटी खाते हैं। अन्न नहीं मिलने पर ये लोग फरिन्दा नामक जामुन खा कर प्राण-रक्षा करते हैं। इनकी साधारण पोशाक धोती, कमरबंद, कुरता और चादर है। धनी लोग आस्तीनवाले कपड़े तथा धनी स्त्रियां कानमें सोनेकी बाली पहनती हैं। मकान अक्सर मिट्टीके तैयार होते हैं। कहीं कहीं ताडके पेड़के खंभों पर ताडके पत्तोंकी छौनी देखी जाती है। घरमें एकसे अधिक दरवाजे या झरोखे नहीं होते। मध्यम श्रेणीके गृहस्थोंका गुजारा १० या १२ रु०में चल जाता है। धनी कृषकोंका ५, ६ रु०में परिवार-खर्च चलता है।

जुआर ही यहांकी मुख्य फसल है। इसके अलावा गेहूं, जौ, चना, बाजरा, पटसन, ईख और अफीम भी यहां उपजती हैं। कार्त्तिक और अगहनमें खेत जोत अफीमका बीज बोआ जाता है।

चावल रु०में १२ सेर, जुआर १ मन, गेहूं २२ सेर, नमक ८ सेर और मकई १ मन ५ सेर मिलती है। एक एक ईख दो पैसेसे कममें नहीं मिलती। महुएकी शराब—चौथाई बोतलका चार आनेसे छः आने तक। पक्की तौल कहीं भी काममें नहीं लाई जाती। भिन्न भिन्न स्थानमें भिन्न भिन्न तौल है। ब्राह्मण और बनियेको छोड़ दूसरी दूसरी जातिकी स्त्रियां खेत पर काम करने जाती हैं। ये एक या दो सेर अन्न प्रतिदिन पाती हैं।

वर्त्तमान समयमें मालवामें रेल लाइनके खुल जानेसे जाने आनेमें बड़ी सुविधा हो गई है। साथ साथ सभ्यता भी फैल रही है। अफीम और रुई ही मालवाकी प्रधान रफ्तनी है। गुजरातके साथ गौ आदि पशुओंका व्यापार उल्लेखनीय है।

यहांके वासिन्दे अपने जीवनमें कमसे कम एक बार नर्मदाके किनारे ओङ्कारविग्रह और गङ्गाके किनारे शरणघाटका दर्शन करते हैं तथा पवित्र नदीके जलमें मरे हुए की अस्थि फेंक देते हैं। तीर्थदर्शनके बाद लौटने पर प्रत्येक मनुष्यको बड़े समारोहके साथ अपने स्वजनोंको एक बड़ा भोज देना पड़ता है। भोजनकी दक्षिणामें हर एक निमन्त्रित व्यक्तिको पीतलकी एक एक थाली दी जाती है जिनमें देनेवालेका नाम खुदा रहता है। यहांके कृषक बड़े गरीब हैं। ये लोग बनिया लोगोंसे २५ रु० सैकड़े सूद पर रु० कर्ज लेते हैं। जेवर बन्धक रखनेसे १२, १४ रु० सैकड़ा, शरीर बन्धक रखने या नौकर हो कर रहनेसे ६ रु० सैकड़ा सूद देना पड़ता है।

इतिहास।

अति प्राचीन कालसे ही मालवाकी प्रसिद्धि सभी स्थानोंमें फैली हुई है। इसी मालवामें रन्तिदेव राज्य करते थे और दशपुरमें (जिसका वर्त्तमान नाम दशोर या मन्दशोर है) इनकी राजधानी थी। इनकी दूसरी राजधानी उज्जैनमें भी थी वह केवल समृद्धिशाली नगर होनेके कारण ही प्रसिद्ध नहीं, वरन् यहां महाकाल और ओंकार पौराणिक देवता हैं। इसलिये उज्जैन सात मोक्ष स्थानोंमें एक है तथा एक प्रधान तीर्थ गिना जाता है।

अवन्ती और उज्जैन देखो।

बहुत पुराने समयमें मालवा या अवन्ती राज्य भारतका एक प्रधान नगर समझा जाता था। अति प्राचीन कालमें इसका आकार कितना बड़ा था, इसका कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता, तौ भी इतना निश्चय है, कि माकिदन वीर सिकन्दरके समयमें यह राज्य बहुत बड़ा था। यहां तक कि पञ्जाबका दक्षिण भाग भी मालव जातिके अधिकारमें आ गया था। मालूम होता है, कि बौद्धकालमें जो भारतके राजचक्रवर्त्ती हुए चाहे उन्होंने या उनके पुत्रने किसी समय मलवाका शासन किया था। जैन इतिहाससे मालूम होता है, कि चन्द्रगुप्तने मालवाको अपने साम्राज्यमें मिला लिया था। पीछे उनके लड़के बिन्दुसार और बिन्दुसारके लड़के अशोक दोनोंने ही कुछ समय तक यहांका शासन किया। राजा प्रियदर्शीके अनुशासन

मालूम होता है, कि ये जिस समय मगधके राज-सिंहासन पर सम्राट्के रूपमें विराजमान थे, उस समय भी इनके एक लडके इनके अधीन मालवाका शासन करते थे। शिलालेखसे जाना जाता है, कि सम्राट अशोकने अपने साले यवन तुषाष्पको सुराष्ट्र प्रदेशका शासन भार दिया था। मौर्यवंशकी शक्ति क्षीण होने पर मुसलमानोंने सुराष्ट्रसे मालवामें अधिकार बढाया था। पश्चात् मालवा पर शक लोगोंका आधिपत्य हुआ। ये लोग ब्राह्मणभक्त तथा क्षत्रिय थे। जैन लोगोंकी कालकाचार्यकथासे ज्ञात होता है, कि मालवाकी राजधानी उज्जैन पर ७४ वर्ष ईस्वीसन्के पूर्वसे ५७ वर्ष तक शक लोगोंका अधिकार रहा। उस समय सातवाहनवंश भी दाक्षिणात्यमें बढा चढा था। सम्भवतः सातवाहनवंशके विक्रमादित्य नामक राजाने शक लोगोंको हरा कर मालवामें सम्वत्का प्रचार किया जो मालवीय या विक्रम सम्वत् नामसे प्रचलित हुआ। इसी विक्रमादित्यने शक लोगोंको परास्त कर "शकारी" उपाधि प्राप्त की। विक्रमादित्य देखो। इनका या इनके वंशके राजाओंका मालवा पर अधिकार स्थायी नहीं रहा। ईस्वीसन्की १ली शताब्दीमें शक लोगोंका अधिकार फिर फैला था। पहले चष्टनके पिता यहां एक साधारण राजा थे। लेकिन शकोंके राजा महावीर चष्टन आन्ध्र-वंशको हरा कर सम्पूर्ण मालवाके राजा हुए। इन्होंने विक्रम-सम्वत्के स्थानमें अपनी जातिका गौरव बढ़ाने के लिये शकाब्द चलाया। शकाब्द और सम्वत् देखो। इनके प्रभावसे सातवाहनवंश शक्तिहीन हो गया। लेकिन इनके स्वर्गवासी होने पर इनके अधीन राजा नहपान और इनके जामाता उषवदातने महाक्षत्रपकी उपाधि धारण की और राज्यका विस्तार किया। इन लोगोंके प्रभावसे उज्जैनके राजा चष्टनके पुत्र जयदाम और उनके कुटुम्ब सातवाहन लोग श्रीहीन हो गये। सन् १३३ ई०में सातवाहनोंके कुलभूषण गौतमीके पुत्र राजा शातकर्णिने शक लोगोंके घमण्डको चूर कर दक्षिण पथ से राजपूताना तक अपना अधिकार फैला लिया। लेकिन उनका भी शासन स्थायी नहीं हो सका। पराजित शक-वीरोंने उज्जैन आ कर जयदामके पुत्र रुद्रदामका आश्रय लिया। इन सब वीरोंकी सहायतासे शकोंके राजा रुद्रदाम शकजातिकी खोई हुई प्रतिष्ठाको लौटानेमें समर्थ हुए थे। दाक्षिणात्यके स्वामी शातकर्णि इनके सम्बन्धी थे, इसीसे इन्होंने उनके पैतृक राज्य में हाथ नहीं बढाया। राजा रुद्रदामके समय मालवामें शकोंकी उन्नति चरमसीमा तक पहुंच गई थी। रुद्रदामवंशके राजोंने ई०स०की चौथी शताब्दी तक राज्य किया था। ये लोग 'क्षत्रप महाराज' कहलाते थे। इस शकवंशके २८ राजाओंके नाम तथा राज्यकाल मिलते हैं। भारतवर्ष देखो।

आर्यावर्त्तमें गुप्त, दाक्षिणात्यमें चेदि और चालुक्य राजवंशके अभ्युदय होने पर मालवाके क्षत्रपवंशका लोप हो गया। मालवामें देशी शासनकी स्थापनाके साथ फिरसे मालव या विक्रमीसम्वत् प्रचलित हुआ। इतिहासवेत्ता फर्गुसन साहबने गहरी आलोचना कर दिखाया है, कि सन् ५४४ ई०में विक्रमी सम्वत् चलाया गया था। लेकिन मालवाके मन्दशोरसे प्राप्त कुमारगुप्तके शिलालेखमें ४६३ मालव संवत् अर्थात् सन् ४३६ ई०सन पाया जाता है। पहले ही कहा जा चुका है, कि चौथी शताब्दीमें शकोंके राज्यका अन्त हो गया। जब तक मालवामें शकोंका शासन रहा तब तक शक सम्वत् चलता रहा। ५वीं शताब्दीमें मालवजातिके भाग्योदयके साथ ५वीं शताब्दीसे फिर मालव अर्थात् विक्रमी सम्वत् चलने लगा। गुप्तसम्राटोंके शासन कालमें यहां गुप्त और मालव दोनों ही सम्वत् चलते थे। इसका स्पष्ट प्रमाण कुमारगुप्तके शिलालेखसे मिलता है। ई०सनकी ५वी शताब्दीसे गुप्त-सम्राटोंके अधीन वर्म्मन राजाओंका यहां अभ्युदय हुआ। शिलालेखमें नरवर्मा, उनके पुत्र विश्ववर्म्मा (सन् ४२३ ई०) और उनके पुत्र बन्धुवर्म्मा (सन् ४३६ ई०) इन तीन वर्म्मन राजाओंके नाम मिलते हैं। दशपुर (वर्त्तमान मन्दशोर)-में इनकी राजधानी थी। इन तीन राजाओंके बाद जिन्होंने मालवाका शासन किया उनके नाम नहीं मिलते। सन् ४८४ ई०में सुरश्मिचन्द्र राजाका नाम शिलालेखमें पाया जाता है। ये सम्राट् बुधगुप्तके अधीन यमुनासे नर्म्मदा तकके सम्पूर्ण

भूभागका शासन करते थे। फिर इन लोगोंके अधीन मातृविष्णु और उनके छोटे भाई धन्यविष्णु दो ब्राह्मणराजाओंके नाम पाये जाते हैं। इस समय हून राजा तोरमानने पंजाबसे आ कर मालवा पर अधिकार जमाया। इनके प्रभावसे गुप्त साम्राज्य कांप उठा। बाद इनके पुत्र मिहिरकुलने भी हूनशासनका विस्तार किया। इसी मिहिरकुलके समयमें मालवामें यशोधर्माका अभ्युदय हुआ था। इन्हों ने लालसागरसे पश्चिम सागर और हिमालयसे महेन्द्राचल तकके विशाल भूभागको अपने बाहुबलसे अपने शासनमें मिला लिया। गुप्त और हून राजा लोग जिन सब स्थानों पर अधिकार न पा सके थे उन्हों ने उन सब स्थानोंको विजय कर लिया। हून राजा मिहिरकुलको इनकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी। सम्भवतः इसी यशोधर्माने 'विक्रमादित्य' की उपाधि प्राप्त की थी। प्रसिद्ध ज्योतिषी वराहमिहिर और वासवदत्ताके लेखक सुबन्धु इनकी सभाके रत्न थे। चीनयात्री यूएनचुवङ्ग आदि बहुतेरे इन मालवपतिके शौर्य्य वीर्य्यकी प्रशंसा कर गये हैं। इन यशोधर्माके बाद फिर मालवा पर गुप्त लोगोंका अधिकार हुआ था। लेकिन उन लोगोंका राज्य स्थायी नहीं रहने पाया। स्थाण्वीश्वरमें वर्द्धनवंशके अभ्युदय होने पर गुप्त प्रभावका ह्रास हो गया। इस समय सम्भवतः राज्य खो कर माधव गुप्त और कुमारगुप्त इन दो राजकुमारोंमें वर्द्धन राजसभामें आश्रय लिया। माधवगुप्त सम्राट् हर्षवर्द्धनके मित्र हो गये थे।

चीनयात्री यूएनचुवंग सन् ६४० ई०में मालवा आये। उन्होंने लिखा है, कि मालवराज्यका क्षेत्रफल प्रायः ६००० लीग अर्थात् १००० मील है। इसकी राजधानी प्रायः ३० लीग या ५ मील है। राजधानीके दक्षिण और पूर्वमें माही-नदी बहती है। इस समय उज्जैन और माहिष्मती अर्थात् महेश्वरपुर स्वतन्त्रराज्य कहलाने पर भी मालवपतिके अधीन भिन्न भिन्न ब्राह्मण-राजाओंके शासनमें थे। कनिंगहम साहबके मतसे उस समय मालवाराज्य पश्चिममें कच्छसे ले कर पूर्वमें उज्जयिनी तक और उत्तरमें गुजरात और विराटसे ले कर दक्षिणमें वलभी और महाराष्ट्र तक फैला हुआ था। उस समय धारानगरमें राजधानी थी।

चीनयात्रीके मालवामें आनेके ६० वर्ष पहले शिलादित्य (यशोधर्म) वर्त्तमान थे। यूएनचुवंगने लिखा है, कि राजा शिलादित्यने ५० वर्ष बड़े प्रतापके साथ राज्य किया था। वे अनेक शास्त्रोंके ज्ञाता तथा असाधारण विद्वान् थे। जन्मसे जीवहिंसा कर इन्होंने कभी अपने हाथको कलुषित नहीं किया। इन्होंने अपने राजभवनकी बगल होमें विहार स्थापित किया था। प्रत्येक वर्ष वे सभी स्थानोंसे आचार्योंको निमन्त्रित कर 'मोक्ष महापरिषद्'-की बैठक करते थे। चीनयात्रीके वर्णनके अनुसार मालवराज शिलादित्य सन् ५८० ई० तक राज्य करते रहे। इस समयके शिलालेखके अनुसार यशोवर्म्मा नामक एक बड़े प्रतापी राजाका नाम पाते हैं। पहले ही लिखा जा चुका है, कि मातृविष्णु और धन्यविष्णु नामके दो ब्राह्मण सामन्त राज्य करते थे। सम्भवतः चीन यात्रीने उज्जैन और महेश्वरपुरमें इस तरहके ब्राह्मणराजाओंको ही देखा होगा।

चीनयात्री मालवामें रहते समय वहांके लोगोंकी विद्वत्ता देख कर विस्मित हो गये थे। उन्होंने लिखा है, कि भारतके दो ओर दो राज्य विद्याके लिये प्रसिद्ध हैं, एक दक्षिण पश्चिममें मालवा राज्य और दूसरा उत्तर पूर्वमें मगध राज्य।

वास्तविक शिलादित्य या यशोधर्माके बाद मालवाका किसने शासन किया, यह जाना नहीं जाता। सम्राट् हर्षवर्द्धनके पिता प्रभाकर वर्द्धनने ५८५ ई०में मालवा विजय किया। सम्भवतः इस समय उनके जामाता मौखरि ग्रह वर्म्माको कुछ दिनोंके लिये मालवाका शासन भार मिला था। प्रभाकर वर्द्धनकी मृत्युके बाद शायद मालवाके राजाने ग्रहवर्म्माको मार अपना राज्य लौटा लिया था। ६०५ ई०में अपने बहनोईकी हत्याका बदला लेनेके लिये राजा राज्यवर्द्धनने मालवा पर चढ़ाई की थी। ६०६ ई०में चालुक्य राज सत्याश्रय पुलिकेशीने मालवा विजय किया। ६४० ई०में जब चीन यात्री यहां आये उस समय भी यहां एक क्षत्रिय राजा राज्य करते थे। उस समय चीनयात्रीने उनका नाम नहीं दिया है। उस समय

मालवाके राजा शिलादित्यके भतीजे ध्रवभट वल्लभीका शासन करते थे। इसके बाद किस वंसने मालवा पर राज्य किया, इसका कोई ठीक प्रमाण नहीं मिलता। ७४८ ई०में राष्ट्रकूटपति तृतीय गोविन्दने मालवा जय कर मारसर्व नामक राजाकी पूजा प्राप्त की। इसके कुछ दिन बाद मालवामें परमार (पारमाल) वंशका अभ्युदय हुआ। परमार देखो। इस वंशने प्रायः ८२५ ई०से १२११ ई० तक बड़े प्रतापके साथ मालवाका शासन किया था। इस वंशके राजा भोज और वाक्पतिका नाम सर्वत्र प्रसिद्ध है। भोज और वाक्पति देखो।

परमारवंशके शासन-कालमें १००६ ई०में चौलुक्य वल्लभ राज, ११०० ई०में चन्देल राजा सल्लक्षण वर्म्मा, ११३५ ई०में चन्देल मदनवर्म्मा, ११४३ ई०में चौलुक्य कुमारपाल और १२२६ ई० यादव सिंहके सेनापति ब्राह्मण वीर खोलेश्वरने मालवा पर चढ़ाई की थी।

भट्ट ग्रन्थके अनुसार राजा भोजके बाद जय चन्द मालवाके सिंहासन पर बैठे। उनके बाद जितपाल नामके एक राजपूत शासक मलवाके राजा हुए और उन्होंने यहां तोमरवंशकी जड़ जमाई। इस तोमर वंशने १४२ वर्ष मालवामें राज्य किया। पश्चात् जगद्देव नामके एक चौहान सर्दारने मालवाके सिंहासनको अपनाया। इस वंशके चौथे राजा वामदेवने सम्राट्की उपाधि धारण की। इनके समयमें राज्य सभी विषयोंमें उन्नत हो गया और शिल्प तथा वाणिज्यकी यथेष्ट उन्नति हुई। इस वंशके अन्तिम राजा मालदेवके समयमें वैश्यजातिके आनन्ददेवने मालवा पर अधिकार कर लिया। इन्हीके समयमें मालवा मुसलमानोंके हाथ आया।

जिस समय तैमूरलंगको चढ़ाईसे दिल्लीके बादशाह महम्मद तुगलक घवड़ा गये थे उसी समय दिलेर खांने मालवामें स्वाधीनताकी ध्वजा फहराई और धारानगरमें राजधानी बसाई। इसके लड़के अलिफ खां हुसंग शाहके नामसे गद्दी पर बैठा और माडु नगरमें राजधानी उठा लाया। इस नगरका घेरा ३७ मील था और यह विन्ध्याचलके नीचे ८ मील तक फैला हुआ था। शाह हुसंगने हुसंगाबादकी स्थापना की थी। इसने गोंड़वनके राजा नरसिंहको हराया और मार डाला तथा उसकी राजधानीको अपने राज्यमें मिला लिया। हुसंगने ३० वर्ष राज्य किया था। इसके बाद इसका लड़का गजनी या हुसेन शाह गद्दी पर बैठा। यह एकदम कमजोर दिलका और लम्पट था। इसको गद्दीसे उतार इसका मन्त्री महम्मद खिलजी राजा बन बैठा। राजगद्दी पर बैठनेके बाद इसने उदारता और शासनमें निपुणताका पूर्ण परिचय दिया था। इसने भूतपूर्व सम्राट्के नाम पर विद्यालय स्थापित किये और सुन्दर सुन्दर महल बनवाये। मुसलमान इतिहासकार फिरिस्ताने लिखा है, कि इसके जैसा सब गुणोंसे युक्त मुसलमान राजा भारतमें बहुत थोड़े हुए हैं। इसके शासन-कालमें गुजरातके राजा अहमद शाहने मालवा पर चढ़ाई की। महम्मदके शासनकालमें प्रजा अत्यन्त सुखी थी। इसने मांडुनगरसे ३ कोस उत्तर नलचा नामक स्थानमें बहुतसे प्रासाद बनवाये। फिरिस्ता लिखता है, कि महम्मद सुशिक्षित, साहसी और न्यायी था। इसके राज्यमें हिन्दू और मुसलमान दोनों ही सुखी थे। मन्त्रियोंके षड़यन्त्रसे एक बार अपने राज्यको खो बैठा था। पश्चात् गुजरातके राजा सुलतान मुजफ्फरकी सहायतसे फिर अपना राज्य लौटा लिया।

महम्मदके बाद उसका लड़का गयासुद्दीन सन् १४६८ ई०में पिताकी राजगद्दी पर बैठा। लेकिन यह वजीरों पर राज्य भार सौंप आप भोग-विलासमें लग गया। माडु नगरमें सके प्रमोदगृहमें भिन्न भिन्न जातियों तथा भिन्न भिन्न देशोंको ५ हजार स्त्रियां रहती थी। गयासुद्दीन इन स्त्रियोंके साथ रात दिन नये नये भोग-विलास कर समय काटता था। इसके पिता महम्मदने राज्यकी ऐसी सुव्यवस्था कर दी थी कि गयासके ३३ वर्षोंकी असवधानीमें राज्यकी कोई क्षति नहीं हुई। गयासके बाद उसका लड़का नूर उद्दीन १५०१ ई०में मालवाका राजा हुआ। यह बड़ा विषयी था। इसके ११ वर्षके शासनमें भी मालवा राज्यका प्रभाव ज्योंका त्यों बना रहा। अति मदिरापान इसकी मृत्युका कारण हुआ। महम्मद खिलजीने अपने असाधारण बाहुबलसे तथा बुद्धि कौशलसे मालवा राज्यको ऐसा सुदृढ़ कर दिया था, कि उसके पुत्र और पौत्रके आधी शताब्दी विषय-

वासनाकी सेवा करने पर भी मालवाकी समृद्धि जरा भी न घटी। नूर उद्दीनका लडका महमूद १५१२ ई०में राजगद्दी पर बैठा। इसके राज्याभिषेकके जुलूससे मालवाकी सम्पत्तिका पता चलता है।

महमूदके भाइयोंके षडयन्त्रसे राज्यमें शीघ्र ही अशान्ति फैली। जब इसके एक भाईने चन्देरी पर चढ़ाई की तब इसने राजपूत राजाओंसे सहायता मांगी और मदारीराय राजपूतको प्रधान मन्त्री बनाया। कुछ ही दिनोंमे महमूद मदारीराय पर सन्देह करने लगा और छलप्रपंचसे उसे हटानेकी चेष्टा करने लगा। इससे राजपूत लोग विगड़ उठे। महमूद गुजरात भाग गया। गुजरातके राजा मुजफ्फर शाहने इसका पक्ष लिया। राजपूत लोग महमूदको पकड़नेके लिये गुजरातकी ओर बढ़े। हिन्दू मुसलमानोंमें घमसान लड़ाई हुई। इस लड़ाईमें प्रायः १६००० राजपूत सैनिक जूझ मरे। प्रायः एक लाख मुसलमान सैनिकोंके मरने पर मुसलमान लोग विजयी हुए।

इस समय मेवाड़के राणा सङ्ग अर्थात् संग्रामसिंह चारों ओर अपनी प्रधानता फैला रहे थे और, तैमूरलङ्ग का वंशज मुगल सेनापति बाबर शाह भी दिल्लीके राजसिंहासन पर दांत गड़ाये हुए था। ऐतिहासिक लोग कहते हैं, कि बाबरका अभ्युदय न होता तो खिलजीवंशके अन्त होने पर भारतसाम्राज्य राजपूतोंके हाथ आ जाता।

१५२६ ई०मे महमूदको मार कर गुजरातका राजा बहादुरशाह कुछ दिनों तक मालवाकी गद्दी पर बैठा। इस समयसे ले कर अकबरके शासन समय तक ३० वर्ष मालवामे अराजकता फैली रही और राष्ट्रविप्लव होता रहा।

हुमायूं बहादुर शाहको भगा मालवाका राजा बन बैठा। पश्चात् मल्लू खाँ 'कादर मालवी'की उपाधि ले मांडू नगरमें १५३० ई०को मालवाके सिंहासन बैठा। पीछे वह शेरशाहसे १५४२ ई०मे हार कर गुजरात भाग गया। इस समय सुजल खाँ शेरशाहके अधीन सामन्तके रूपमें मालवाके सिंहासन पर बैठा। यह भी अत्यन्त इन्द्रिय लोलुप था। सहरानपुरको रूपमती नामक एक अत्यन्त सुन्दरी हिन्दू नर्त्तकीने इसको एकदम अपने काबूमें कर लिया था। राजा बहादुरने रूपमतीके प्रणयके बदलेमें मांडू नगरमें एक सुन्दर भवन बनवा दिया। अभी तक भी उसके खंडहर पाये जाते हैं और अपने देशकी भाषामें रूपमतीके प्रणयपूर्ण गीतोंकी अनेक किताबें मिलती हैं।

इधर राजा बहादुर रूपमतीके साथ भोगविलासमे लीन था उधर १५६१ ई०में अकबर बादशाहकी विजय कीर्त्ति माडू नगर तक आ पहुंची। १५७० ई०में मालवा अपनी स्वाधीनता खो दिल्लीके बादशाह अकबरके अधीन हो गया। मांडू नगरके खंडहरोंकी जाच करनेसे मालूम होता है, कि मालवाके राजा अपने राज्यकालमें सौभाग्य सम्पत्तिकी उच्च सीमा तक पहुंच गये थे। इस स्थानके स्थापत्य-शिल्पको देख शिल्पशास्त्र जाननेवाले इस नगरकी भूरि-भूरि प्रशंसा कर गये हैं।

बीच बीचमें जोधपुरके राजपूत राजाओंने मालवाके कुछ अंशो पर अधिकार कर लिया था। मुसलमानोकी शक्ति क्षीण होने पर लालाजीने मालवामें रायगढ़ नामक राजधानी कायम की थी। पीछे उनके पोते बलभद्रसिंह मालवाके राजा हुए। इस समय मालवा अजमेर आदि अनेक स्वाधीन राज्योंमें बंट गया।

इनके शासनकालमें मराठोंने शक्तिशाली हो मालवा पर चढ़ाई की। जयपुरके प्रतिष्ठाता प्रसिद्ध जयसिंहने बाजीरावको मालवा जय करनेमें बड़ी सहायता पहुंचाई थी। कहा जाता है, कि जयसिंह और बाजीरावके बीच बहुत लिखा पढ़ी हुई थी। जयसिंहने ब्राह्मणप्रमुख मराठाराज्यको पुष्ट करनेकी इच्छासे सहायता की। जयसिंहकी सहायताके बिना बाजीराव मालवामे हिन्दूराज्यकी स्थापना नही कर सकते। भट्ट लोगोंके ग्रन्थोंमे इस विषयका विस्तारके साथ वर्णन है।

मुसलमान इतिहासकार फिरिस्ताने लिखा है, कि मुगलसाम्राज्यके अधःपतनके बाद गुजरात मराठा लोगोंके अधिकारमें आया। १७३४ ई०में पेशवाने मालवासे चौथ लिया। उसके बाद सिन्दे और होलकरने मालवामें अपना राज्य बढ़ाया। उनके उत्तराधिकारी लोग अभी तक उस राज्यका भोग करते आ रहे हैं। मराठा

लोग अच्छी तरह शासन नहीं चला सकते थे, इसलिये मालवा उस समय पिण्डारी आदि दाक्षिणात्यके दुष्ट डकैतोंका अड्डा हो रहा था। इन लोगों हीके अत्याचारसे वाध्य हो उस समयके गवर्नर जेन रल लार्ड हेष्टिंग्सने चौथा मराठा युद्ध ठान दिया था। युद्धमें पिंडारी लोग हारे और भाग गये। पीछे भील लोगोंने लार्ड मालकमके समयमें शान्तभाव धारण किया। तभीसे इस स्थानके जंगल साफ हैं। अनेक भीलोंने अंगरेजी सेनामें प्रवेश किया। सरदारपुरमें चार सौ मालवाके भीलोंकी एक सेना है। १८वीं शताब्दीके मध्यमें उतरे। मालवा १७८० ई०के पहले २५ वर्ष तक, एक बृहत् समरक्षेत्र बना रहा वहां मराठे, मुसल मान और यूरोपवाले बराबर लड़ते भिड़ते रहे। अन्तमें १८१८ ई०में ब्रिटिश-प्रधानता यहां स्थापित हो गई। बाद ४० वर्ष तक मालवामें कोई उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। लेकिन १८५७ ई०के गदरमें इन्दौर, मौ, नीमच, अजर, मेहिदपुर और सेहोरमें विद्रोहीदल उठ खड़े हुए थे। १८९९ १९०० ई०में मालवा घोर दुर्भिक्षसे पीड़ित रहा। १९०३ ई०में एक और मुसीवत आई, मालवामें प्लेग हुआ जिससे अनेक जिलोंके बहुसंख्यक कृषक यमपुरको सिधारे।

आज कल मालवा अफीमके लिये प्रसिद्ध है। हर साल प्रायः ८००० बक्से अफीम विदेश भेजी जाती है। अनेक करद राज्यको ले कर पश्चिम मालवा एजेन्सी बनी है। एक अंगरेज एजेण्ट इन सबोंकी देख रेख करते हैं। जावरा, रत्लाम, सिलुना, सीतामौ आदि राज्य और उज्जैन, शाहजहानपुर, आगरा, मन्दशोर, नीमच, रामपुर, मेहिदपुर, कैथा, तराना, आलौत, पिरावा, आवर, पाचपहाड़, दग और गंगरार जिले उक्त एजेन्सीके अधीन हैं।

नीचे लिखे स्थानोंके ठाकुरोंका अधिकार गवर्मेण्टसे मंजूर किया गया है। अजरन्दा, वर्रा, बिच्छौद, बिलन्दा दात्रि, दताना, धुलतिया, जवालिया, सालुखेरा, सालगढ़ नरवार, ननगाव, नौलना, पन्तापिप्लोदा पिप्लिया, पिफ्लोदा,एवं शिवगढ। इन स्थानोंका क्षेत्रफल १२००० वर्गमील है। जनसंख्या प्रायः १६ लाख। आगरेमें इन सब स्थानोंकी सदर अदालत है। यहाके पोलिटिकल एजेण्ट नीमचके दौरा जजका काम करते हैं।

मालवा—पंजाबका एक भूभाग। यह अक्षा० २९° ३१' उत्तर तथा देशा० ७४° ३०' ७७" पूरबके मध्य अवस्थित है। यह सतलजके दक्षिण है और यहां सिक्ख रहते हैं। इसमें फिरोजपुर तथा लुधियानाके जिले और पटियाला, झिंद, नाभा और मालर कौटलाके देशी राज्य अवस्थित हैं। यह प्रदेश सिक्ख रंगरूटोंकी भर्तीके लिये प्रसिद्ध है और इस सम्बन्धमें यह केवल माझासे नीचे है। कहते हैं, कि इस प्रदेशका यह नाम हालका है। मालवासिंहकी उपाधि यहांके सिक्खोंको उनकी बहादुरीके लिये बन्दा वैरागीने दी थी। बन्दा वैरागीने कहा था कि यह प्रदेश मालवाके जैसा ही समृद्धिशाली होगा।

मालवानक (सं० पु०) जातिभेद।

मालविका (सं० स्त्री०) मालवेषु जाता मालव-ढक्-टाप्। त्रिवृत्, निसोथ।

मालविटपिन् (सं० पु०) कुम्भी वृक्ष।

मालवी (सं० स्त्री०) १ श्रीरागकी एक रागिणीका नाम। यह ओड़व जातिकी है और हनुमत्के मतसे इसका स्वरग्राम नि सा ग म ध नि है। इसमें ऋषभ और पञ्चम स्वर वर्जित है। कोई कोई इसे हिंडोल रागकी रागिणी मानते हैं। २ पाठा, पाढ़ा। (त्रि०) ३ मालवीय देखो।

मालवीब्राह्मण—उत्तर-पश्चिम भारतवासी ब्राह्मणश्रेणीकी एक शाखा। वाराणसी आदि प्रान्तोंमें इस श्रेणीके बहुतसे लोग रहते दिखाई देते हैं। ये लोग लेखकका काम करके अपना गुजारा चलाते हैं। कोई कोई वाणिज्य व्यवसाय भी करते हैं। परन्तु याजनादि कोई भी नहीं करते।

मध्यभारतमें षड़ज्ञाति (छज्ञाति) ब्राह्मण नामक जो छः स्वतन्त्र दल हैं, वे भी अपनेको मालव-ब्राह्मण कहते हैं। उनका कहना है, कि प्रायः ३० पीढ़ीसे वे लोग जन्मभूमि मालवका परित्याग कर भारतके नाना स्थानों में बस गये हैं। जातितत्त्ववित् मि० सेरिंने उन्हें गुजराती ब्राह्मणकी एक शाखा बतलाया है।

उन लोगोंके मध्य किंवदन्ती है, कि किसी मालव

राजने अपने यहां मालववासी ब्राह्मणोंको कच्ची और पक्की रसोई खानेको कहा, लेकिन वे लोग राजी नहीं हुए। इस पर राजाने उन्हें दो खनवाले मकानमें बंद रखा। रातको उन लोगोंने देखा, कि स्थानीय अधिवासी बड़े उत्साहके साथ उस कारावासके समीप ही पांड़े-बाबाकी पूजा कर रहे हैं। यह देख कर वे लोग भी भक्तिपूर्वक उस देवताकी उपासना करने लगे तथा उन्हें इस विपद्‌से बचानेके लिये बार बार प्रार्थना करने लगे। पांड़े-बाबाने उनकी स्तुति पर प्रसन्न हो घरका दरवाजा खोल दिया। रातको ही ऐसा सुयोग पा कर वे सबके सब वाराणसीको भाग आये। जो नहीं भागे तथा जिन्होंने राजाके हाथकी कच्ची पक्की रसोई खा ली उन लोगोंसे इस श्रेणीके लोग पृथक् हो गये और तभीसे पृथक् हैं।

मालवी ब्राह्मणोंमें साढ़े तेरह गोत्र प्रचलित हैं। भरद्वाज, चौबे, पराशर दूबे, आङ्गिरस चौबे, भार्गव चौबे आदि गोत्र और उपाधारी ब्राह्मण ऋग्वेदी हैं। शाण्डिल्य दूबे, काश्यप चौबे, कौत्स दूबे आदि यजुर्वेदी, वत्स, व्यास और गौतम तिवारी, लोहित तिवारी और कौण्डिल्य-गोत्रधारी ब्राह्मण सामवेदी हैं। पीछे इन लोगोंके मध्य कात्यायन पाठकाण्ड और मैत्रेय अर्द्ध गोत्ररूपमें प्रविष्ट हुए। विवाहादि क्रियामें ये लोग अन्यान्य ब्राह्मणोंकी तरह कार्यकलापका अनुष्ठान करते हैं। मथुराके चौबे ब्राह्मण इनके पुरोहित हैं।

मालवीय (सं० त्रि०) १ मालवदेशसम्बन्धी, मालवेका। २ मालवदेशवासी, मालवेका रहनेवाला।

मालव्य (सं० पु०) १ मालवराज पुत्र। २ महापुरुषभेद।

"मद्रबुधेन वलिना मालव्यो दैत्यपूज्येन॥" -
(बृहत्सं० ६९।२)

मालश्री (सं० स्त्री०) मालवश्री देखो।

मालसियान—पञ्जाबके अन्तर्गत जालन्धर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० ३१° ४' उ० तथा देशा० ७५° २३' १५" पू०के बीच पड़ता है।

मालसिरा—बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत सोलापुर जिलेका एक महकूमा। भूपरिमाण ५७४ वर्गमील है। इस जिलेमें ६६ ग्राम लगते हैं। यहां जंगल बहुत कम है। नदियोंमें नीरा और भीमा प्रधान है। यहांका जलवायु उतना खराब नहीं है। यहांकी अधिकांश भूमि काली है। यहां विविध प्रकारका अन्न उपजता है।

मालसी (सं० स्त्री०) मल-स्वार्थे अण्, मलं स्यति नाशयति सो-ड-ङीप्। १ केशपुष्प वृक्ष। २ रागिणी-विशेष। यह रागिणी मालवरागकी पत्नी है।

"धानुषी मालसी रामकिरी च सिन्धुडा तथा।
अश्ववारी भैरवी च मालवस्य प्रिया इमाः॥" (हारीत)

फिर किसीने इस रागिणीको मेघरागकी पत्नी बतलाया है।

"ललिता मालसी गौड़ी नाटी देवकिरी तथा।
मेघरागस्य रागिण्यो भवन्तीमाः सुमध्यमाः॥"
(सङ्गीतदा०)

इस रागिणीके गानेका समय शरत् है अर्थात् शक्रोत्थानसे ले कर दुर्गापूजा तक। वृष्टिके लिये इन्द्रके उद्देशसे जो महोत्सव होता है उसे शक्रोत्थान कहते हैं। इस उत्सवके उपलक्षमें भाद्र मासके शुक्लपक्षको द्वादशीसे आश्विनकी शुक्लानवमी तक इस रागिणी-गानका अच्छा समय है।

"इन्द्रोत्थानात् समारभ्य यावद् गौमहोत्सवम्।
गेया भवेद्बुधैर्नित्यं मालसी सा मनोहरा॥"
(सङ्गीतदा०)

फिर भी लिखा है, कि सायंकालमें यह रागिणी गान किया जा सकता है।

"गान्धारी दीपिका चैव कल्याणी पुरवी तथा।
अश्ववारी कानडा च गौरी केदारपाहिड़ा॥
माधवी मालती नाटी भूपालीसिन्धुडा तथा।
सायाह्ने रागिणीरेता प्रगायति चतुर्दश॥" (सङ्गीतदा०)

गान्धारी, दीपिका, कल्याणी, पुरवी, अश्ववारी, कानड़ा, गौरी, केदार, पाहिड़ा, माधवी मालती, नाटी, भूपाली और सिन्धुड़ा इन चौदह रागणियोंके गानेका समय संध्याकाल है।

इस रागिणीका स्वरूप—

"नीलारविन्दस्य दलानि वाला विधारयन्ती तनुदेहयष्टिः।
मालूरवृक्षस्य तले निषण्णा शोणा मृदुर्मालसिका प्रदिष्टा॥"
(सङ्गीत दामोदर)

मालहायन (सं० पु०) एक गोत्रप्रवर्त्तक ऋषिका नाम।

माला (सं० स्त्री०) माति मानहेतुर्भवतीति मा (भुवेन्द्राग्रवज्रे। उण् २।२८) इति रन्, रस्य लत्वं टाप् च अथवा मा शोभां लातीति ला-क-टाप्। १ श्रेणी, पंक्ति। पर्याय—राजि, लेखा, तती, वीची, आली, आवलि, पंक्ति धारणी।

"द्विरेफमाला सविशेषसङ्गा।" (कुमार १ स०)

२ मस्तकन्यस्त पुष्पदाम, गलेमें पहननेका फूलोंका हार, गजरा। पर्याय—माल्य, स्रक, मालिका, मालाका, मालका, गुणनिका, गुणन्तिका।

"अनधिगतपरिमालापि हि हरति दृशं मालतीमाला।"

(साहित्यद० १० अ०)

३ जपमाला। मन्त्रजप करनेके लिये मालाका व्यवहार किया जाता है। इस जपकी माला साधारणतः जप माला कहलाती है। कामनाभेदसे जपमाला अनेक प्रकार की हो सकती है। इनमेंसे प्रधानतः तीन प्रकारकी जपमालाका ही व्यवहार देखनेमें आता है। यथा —करमाला, वर्णमाला और अक्षमाला। इन तीनों प्रकारकी जपमाला के भेद और जप क्रमादिका विवरण पहले ही लिखा जा चुका है। जपमाला देखो।

पुराणादि धर्मशास्त्रोंमें तुलसी, रुद्राक्ष आदिकी माला पहननेकी व्यवस्था है। विना माला पहने जप करनेमें महापातक होता है। यहां तक कि उसे अभीष्ट देवकी अप्रसन्नतासे नरक भी जाना पड़ता है।

"धारयन्ति न ये मालां हैतुकाः पापबुद्धयः।
नरकान्न निवर्त्तन्ते दग्धाः कोपाग्निना हरेः॥" (गरुडपु०)

धात्रीफल, पद्माक्ष, तुलसीकाष्ठ वा तुलसीदल द्वारा माला बना कर सबसे पहले श्रीकृष्णको चढ़ानी चाहिये। वैष्णव व्यक्ति अपने इच्छानुसार मस्तक, कान, दोनों बाहु तथा दोनों हाथमें तुलसी-काष्ठ-भूषण धारण करें।

"ततः कृष्णार्पिता मालां धारयेत्तुलसीदलैः।
पद्माक्षैस्तुलसीकाष्ठैः फलैर्धात्र्याश्च निर्मिताः।
धारयेत्तुलसीकाष्ठ-भूषणानि च वैष्णवः।
मस्तके कर्णयोर्बाह्वोः करयोश्च यथारुचि॥" (स्कन्द पु०)

हरिको विना निवेदन किये माला धारण करनेसे कोई फल नहीं होता, वरन् उसे नरककी गति होती है। अतएव वैष्णव व्यक्तिको चाहिये कि वे पहले तुलसी माला हरिको निवेदन कर पीछे आप धारण करे। माला धारण करनेके पहले पञ्चगव्य द्वारा उसे धो डाले। पीछे उसके ऊपर इष्ट मन्त्र और आठ बार गायत्री जप करे। जप करनेके बाद मालाको धूपित करके भक्ति-पूर्वक उस की पूजा करे। पूजाके बाद निम्नलिखित मन्त्रसे प्रार्थना करनी होती है। प्रार्थनाका मन्त्र इस प्रकार है,—

"तुलसीकाष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये।
बिभर्मि त्वामहं कण्ठे कुरु मां कृष्णवल्लभम्।
यथात्वं वल्लभा विष्णोर्नित्यं विष्णुजनप्रिया।
तथा मां कुरु देवेशि नित्यं विष्णुजनप्रियम्॥
दाने माधातुवद्दिष्टो लाभि मा हरिवल्लभे।
भक्तेभ्यश्च समस्तेभ्यस्तेन माला निगद्यसे॥"

इस प्रकार प्रार्थना करनेके बाद विधिपूर्वक कृष्णके गलेमें माला समर्पण करे पीछे आप पहने। जो वैष्णव इस नियमसे माला धारण करते हैं उन्हें अन्तमें विष्णुलोकको प्राप्ति होती है। वैष्णवोंको धात्रीफलकी माला अवश्य पहनी चाहिये। जो माला धारण नहीं करते, पर विष्णु पूजामें हमेशा रत रहते हैं उन्हें वैष्णव नहीं कहा जा सकता।

"धात्रीफलकृतां मालां कण्ठस्थां यो वहेन्न हि।
वैष्णवो न स विज्ञेयो विष्णु पूजारतो यदि॥"

स्कन्दपुराण, गौतमीय पुरश्चरणप्रसङ्ग तथा हरिभक्तिविलास आदि ग्रन्थोंमें लिखा है, कि जो तुलसी और धात्रीफलकी माला पहनते हैं उन्हें अशेष पुण्य होता है। अन्तमें उन्हें मोक्षकी प्राप्ति होती है।

तुलसी और धात्रीकी तरह सम्प्रदायभेदसे रुद्राक्षमाला पहननेकी भी विधि है। लिङ्गपुराणमें कहा है,—भस्म, त्रिपुण्ड और रुद्राक्षमाला, ये सब विना पहने शिवपूजा नहीं करनी चाहिये।

विना भस्मत्रिपुण्ड्रेण विना रुद्राक्ष मालया।
पूजितोऽपि महादेवो न स्यात्तस्यफलप्रदः॥" (लिङ्गपु०)

रुद्राक्षका उत्पत्ति विषय संवत्सर प्रदीपमें इस प्रकार लिखा है—त्रिपुरवधके समय रुद्रकी आंखोंसे आंसूकी बुंदें जमीन पर गिरी थीं, उन्हीं सब बुंदोंने पीछे रुद्राक्षरूप धारण किया।

"त्रिपुरस्य बधे काले रुद्रास्याद्नेोऽपतस्तु ये।
अश्रुणो बिन्दवस्ते तु रुद्राक्षा अभवन् भुवि॥"

(सवत्सरपु०)

रुद्राक्ष अनेक प्रकारका है। एक मुख, दो मुख, तीन मुखसे ले कर चौदह मुख तकके रुद्राक्षका उल्लेख देखनेमें आता है। एकमुख दो मुखवाला रुद्राक्ष अकसर देखनेमें नहीं आता। यही कारण है, कि रघुनन्दनने तिथितत्त्व-मे सिर्फ पञ्चमुख रुद्राक्षके ही माहात्म्यका विषय लिखा है। चाहे किसी भी प्रकारका रुद्राक्ष क्यों न हो, पहननेसे मानवका मङ्गल होता है, सभी पाप जाते रहते हैं और सभी कामनाएं सिद्ध होती हैं। पांच मुंह-वाला रुद्राक्ष मूर्त्तिमान् कालाग्निरुद्र है। इसके पहनने-से अगम्या गमन, अभक्ष्य भक्षण आदि सभी पाप नष्ट होते हैं।

"पञ्चवक्त्रः स्वयं रुद्रः कालाग्नि र्नाम नामतः।
अगम्यागमनाच्चैव अभक्षस्य च भक्षणात्॥
मुच्यते सर्वपापेभ्यः पञ्चवक्त्रस्य धारणात्॥"

(तिथ्यादितत्त्वधृत स्कन्दपु०)

३ नदीविशेष। ४ बल्ली दूर्वा, एक प्रकारको दूब। ५ भूम्यामलकी, भुंइ आंवला। ६ उपजाति छन्दके एक भेदका नाम। इसके प्रथम और द्वितीय चरणमें जगण, तगण, जगण और अन्तमें दो गुरु तथा तीसरे और चौथे चरणमें दो तगण, फिर जगण और अन्तमें दो गुरु होते है।

मालाकण्ट (स० पु०) मालाकाराः कण्टाः कण्टकाः अस्य। अपामार्ग, चिचड़ा।

मालाकण्ठ (सं० पु०) गुल्मभेद, एक गुल्मका नाम।

मालाकन्द (सं० पु०) माला गण्डमाला-नाशकः कन्दः। १ मूलविशेष, एक प्रकारका कन्द। पर्याय—आविलकन्द, त्रिशिखादला, ग्रन्थिदल, पादिकन्द, कन्दलता। वैद्यक-में इसे तीक्ष्ण, दीपन, गुल्म और गण्डमाला रोगको हरनेवाला तथा वात और कफका नाशक लिखा है।

मालाकार (सं० स्त्री०) माला एव माला स्वार्थे कन्, ततष्टाप्। माला।

मालाकार (सं० पु०) मालां करोतीति कृ-अण्। १ एक वर्णसंकर जातिका नाम। ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके अनुसार यह जाति विश्वकर्मा और शूद्रासे उत्पन्न हुई है; पर पराशरने इसे तेलिन और कर्मकारसे उत्पन्न बतलाया है।

"तैलिक्या कर्मकाराच्च मालाकारस्य सम्भवः॥"

(पराशरपु०)

२ मालाकारक, माली। पर्याय—मालिक, मालाकार, पुष्पाजीवी, वनाच्चंक, पुष्पलाव, पुष्पलावक।

मालीके घरमें कौन कौन फूल रहनेसे बासी नहीं होता इस सम्बन्धमें मेरुतन्त्रका वचन इस प्रकार है—

"न पर्युषितदोषोऽस्ति तुलसीविल्व चम्पके।
जलजे वकुलेऽगस्त्ये मालाकारगृहेषु च॥" (मेरुतन्त्र)

तुलसी, विल्वदल, चम्पक, वकुल, अगस्त्य तथा जलजात पुष्प ये सब मालीके घरमें रहनेसे पर्युषित दोष-से अपवित्र नहीं होते।

यदि हस्ता नक्षत्रमें शनि रहे, तो मालाकार आदिको पीड़ा होती है।

"हस्ते नापितचाक्रिकचौरभिषक्सूचिकपद्दीपग्राहाः।
बन्धक्यः कौशलका मालाकारश्च पीड्यन्ते॥" (बृहत्सं० १०।६)

विशेष विवरण माली शब्दमे देखो।

मालाकारी (सं० स्त्री०) मालकारको पत्नी। प्रेमिका कामिनियां प्रेमिकको अपना अभिप्राय जतानेके उद्देश्य से भिक्षुकी, दासी, धात्री, मालाकारी आदिको दूतीरूप-में भेजती हैं।

"भिक्षुणिका प्रव्रजिता दासी धात्री कुमारिका रजिका।
मालाकारी दुष्टाङ्गना सखी नापिती दूत्यः॥"

(बृहत्स० ७८।६)

मालकूटदन्ती (सं० स्त्री०) राक्षसीविशेष।

मालाका—भारत-महासागरस्थ द्वीपपुञ्जविशेष।

विस्तृत विवरण मलाका शब्दमे देखो।

मालागिरि (हिं० पु०) एक रंगका नाम। यह रंग टेसू और नासफलसे बनाया जाता है। सेर भर टेसूका फूल पानीमें आठ दिन तक भिगोया जाता है जिसे दिनमें दो बार चलाया जाता है। इसी प्रकार आध सेर नासफलकी बुकनी पानीमें भिगोई जाती है और प्रतिदिन दो बार चलाई जाती है। फिर आठ दिन बाद दोनोंके रंग पृथक् पृथक् छान लिये जाते और फिर मिला दिये जाते हैं। फिर इसमें डेढ़ माशे रंग डाल कर दो बार कपड़ा रंगाते

हैं। सुगंधके लिये इसमें कपूर कचरीकी जड़ें भी पीस कर मिलाई जाती हैं। (वि०) २ मालागिरि रंगमें रंगा हुआ।

मालागुण (सं० पु०) १ मालाग्रन्थनसूत्र, माला गूथनेका सूता। २ कण्ठहार, गलेमें पहननेका गहना।

मालागुणा (सं० स्त्री०) एक प्रकारका असाध्य रोग जिसे लूता भी कहते हैं।

मालाग्रन्थि (सं० पु०) मालेव ग्रन्थिरस्य। मालादूर्वा, वल्ली नामक दूब।

मालाङ्क (सं० पु०) एक राजकवि। इन्होंने मालतीमाधव और वृन्दावन नामक ग्रन्थकी टीका लिखी।

मालातृण (सं० क्ली०) मालाकारं तृणम्। १ भूस्तृण, खवी। २ आन्ध्रदेशमें प्रसिद्ध रोहिल नामकी घास।

मालातृणक (सं० क्ली०) मालातृण स्वार्थे कन्। भूस्तृण, गठियारी नामकी घास। पर्याय—रौहिष, भूति, भूमिक कुटुम्बक, भूस्तृण, पालघ्न, छलातिच्छत्र। भावप्रकाश-के मतसे पर्याय—गुह्यवीज, भूतीक, सुगंध। गुण—जामुनके जैसा उत्कटगंधयुक्त और भूमिलग्न। (भरत) २ आन्ध्रदेशमें प्रसिद्ध रोहिष तृण।

मालादीपक (सं० क्ली०) अर्थालङ्कारभेद। इसमें एक धर्मके साथ उत्तरोत्तर धर्मियोंका संबंध वर्णित होता है या पूर्व-कथित वस्तुको उत्तरोत्तर वस्तुके उत्कर्षका हेतु बतालाया जाता है। इस अलङ्कारको कविराज मुरारि-दानने संकर अलङ्कार माना है और इसे दीपक तथा शृङ्खलालंकारका समुच्चय कहा है।

मालादूर्वा (सं० स्त्री०) माला इव ग्रन्थियुक्ता दूर्वा। दूर्वाविशेष, एक प्रकारकी दूब। इसमें बहुत सी गाठें होती हैं। पर्याय—वल्लीदूर्वा, अलिदूर्वा, मालाग्रन्थि, ग्रन्थिला, ग्रन्थिदूर्वा, शूलग्रन्थि, वेलनी, ग्रन्थिमूला, रोहत्पर्वा, पर्ववल्ली, शिवाह्वा। गुण—सुमधुर, तिक्त, शिशिर, पित्तदोषनाशक और कफ, वमि और तृष्णापह।

मालाधर (सं० त्रि०) १ मालाधारक, मालाधारी। २ सतह अक्षरोंके एक वर्णिक वृत्तका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें नगण, सगण, जगण फिर सगण और यगण तथा अन्तमें एक लघु और फिर गुरु होता है।

मालाधरवसु—श्रीकृष्णविजयके प्रणेता प्रसिद्ध वङ्ग-कवि। इनकी उपाधि गुणराज खाँ थी।

गुणराज खाँ देखो।

मालाधार (सं० पु०) दिव्यावदानके अनुसार बौद्धोंके एक देवताका नाम।

मालाप्रस्थ (सं० पु०) एक प्राचीन नगरका नाम।

मालाफल (सं० क्ली०) रुद्राक्ष।

मालामणि (सं० पु०) रुद्राक्ष।

मालामनु (सं० पु०) मालामन्त्र।

मालामन्त्र (सं० पु०) मन्त्रविशेष।

मालामय (सं० त्रि०) बहु मालायुक्त।

मालामाल (फा० वि०) धनधान्यसे पूर्ण, संपन्न।

मालारिष्टा (सं० स्त्री०) पाटी लता। इसके पत्तोंकी गणना सुगंधि द्रव्यमें होती है।

मालालिका (सं० स्त्री०) माला अलतीति अल्-ण्वुल्, टाप्, इत्वञ्च। पृक्का, असवरग।

मालाली (सं० स्त्री०) मालामलतीति अल्-अच्, ततो ङीष्। पृक्का, असवरग।

मालावती (सं० स्त्री०) एक संकर रागिनीका नाम। यह पंचम, हम्मीर, नट और कामोदके संयोगसे बनती है। कुछ लोग इसे मेघरागकी पुत्रवधू भी मानते हैं।

मालावत् (सं० त्रि०) माला विद्यतेऽस्य माला-मतुप्। मालाविशिष्ट, मालाधारी।

मालाश्रेष्ठतमा (सं० स्त्री०) तुलसीवृक्ष।

मालि (सं० पु०) एक राक्षस। ग्रामणी गन्धर्वकी कन्या देववतीके गर्भसे राक्षस सुकेशके औरससे यह उत्पन्न हुआ था। (रामा० उत्त० ५ सर्ग)

मालिक (सं० पु०) मालास्य पण्यं (तदस्य पण्यम्। पा ४।४।५१) माला ठक्, यद्वा मालाग्रन्थन शिल्पमस्येति माला (शिल्पम्। पा ४।४।५५) इति ठक्। १ माला-कार, माली। २ पक्षिविशेष, एक प्रकारकी चिड़िया। ३ रजक, धोबी। ४ द्राक्षामद्य, दाखकी शराब। ५ मल्लिकाविशेष, एक प्रकारकी चमेली। ६ मद्य, शराब। ७ सप्तला, सातला। ८ अतसी, अलसी।

मालिक (अ० पु०) १ ईश्वर, अधिपति। २ स्वामी। ३ पति, शौहर।

मालिक अम्बर—आविसिनिया (हवसी) देशवासी एक मुसलमान। यह भारतमें आ कर दाक्षिणात्यके अह्मद नगर राजवंशके यहां नौकरी करने लगा। अपने असाधारण प्रतिभा बलसे यह थोड़े ही समयके अन्दर राज्यका एक प्रधान कर्मचारी हो गया। इसके कूट मन्त्रणाबलसे तथा युद्धकौशलसे वादशाह जहांगीरकी मुगल सेनाको भी पीछे हटना पड़ा था।

अह्मदनगरकी वीर रानी चांद वीवीके मरने पर १६०३ ई०मे मुगल-सेनापतिने अह्मदनगर पर चढ़ाई कर दी। इस समय निजामशाही राजगण हीनवल हो रहे थे। मालिक अम्बर कोई उपाय न देख राजधानीको लौटा और थिर्की (औरङ्गावाद)-में राजधानी उठा ले गया। यहां रह कर वह अपने भुजबलसे निजामशाहीवंशकी गौरवरक्षा कर रहा था। इसके सुशासनसे दाक्षिणात्यवासी मुसलमान वड़े संतुष्ट हुए थे।

सम्राट् जहांगीरने निजामशाही वंशका उच्छेद करनेके लिये तथा मालिक अम्बरके शौर्यवीर्य पर ईर्षान्वित हो गुजरात, मालव और दाक्षिणात्यसे तीन सेनादल उसके विरुद्ध भेजा। दोनों पक्षमें घमसान लड़ाई छिड़ी। युद्धमें मुसलमानोंकी हार हुई। १६१० ई०में वह फिरसे अह्मदनगर-सिंहासन पर अधिकार कर बैठा।

धीरे धीरे राज्य भरमें उसकी धाक जम गई। यही राज्यका सर्वेसर्वा हो गया। विदेशीको राजशक्ति परिचालनमें बद्धपरिकर देख दाक्षिणात्यवासी भारतीय मुसलमान विद्वेषवशतः इसे छोड़ कर चले गये।

इस प्रकार स्वजातीय शक्तिसे विच्युत हो मालिक अम्बर हीनवल हो गया। बचावका कोई उपाय न देख इसने मुगल-बादशाहकी अधीनता स्वीकार कर ली और अह्मदनगर बादशाहको लौटा दिया। इसके बाद इसने पुनः अह्मदनगरको कब्जा किया तथा मालवराज्य पर चढ़ाई कर दी। जहांगीरके प्रिय पुत्र खुर्रमसे हार खा कर यह राजसंसारसे अलग हो जानेको बाध्य हुआ। महाराष्ट्रकेशरी शिवाजीके पिता विख्यात शाहजी भोंसले इसके दाहिने हाथ थे।

मालिक अह्मद—अह्मदनगर राजवंशके प्रतिष्ठाता निजाम-उल मुल्कका लड़का। इसने १४९० ई०में जुन्नर जा कर स्वाधीनता अवलम्बन की थी। निजामशाही देखो।

मालिक-उत्-तुज्जार (मालिक हसन)—वसोराका रहनेवाला एक प्रसिद्ध वणिक् सम्राट्। यह अह्मदशाह वाह्मनीका एक आत्मीय और मित्र था। दाक्षिणात्यसे आ कर इसने माहिमद्वीपके शासनकर्त्ता कुनवको हराया और बलपूर्वक उक्त स्थान अधिकार कर लिया। गुजरातके सुलतान अह्मदने इसका दमन करनेके लिये अपने लड़के जाफर खाँको भेजा तथा दीउ, गोआ आदिके नवाबोंके पास सहायतार्थ पत्र लिखा। सभी मिल कर ७०० जंगी जहाज ले जल और स्थलपथसे युद्धके लिये अग्रसर हुए। मालिक-उत्-तुज्जारने बहुतसे वृक्षोंको काट कर उपकूल भागमे ढेर लगा दिया और आप माहिमद्वीपके मध्यभागमे रहने लगा। जाफर खाँ और उसके सहयोगियोंने जलपथ और स्थलपथसे मालिक अम्बर पर आक्रमण कर दिया। अह्मदशाह वाह्मनीने मालिककी सहायतामें १०००० हजार सेना और कुछ घोड़े हाथी भेजे और आप जलपथसे भाग गये। जाफर खाँने गुजरात पर अधिकार किया।

मालिक-उस शर्क—जौनपुर शर्की राजवंशका प्रतिष्ठाता। यह दिल्लीपति महम्मद तुगलकका प्रधान मन्त्री था। लोग इन्हें ख्वाजा जहान कहा करते थे।

महमूदकी शासन-विशृङ्खलासे दिल्लीके अधीनस्थ शासनकर्त्ताओंने वागी हो स्वाधीनता अवलम्बन की। १३९४ ई०में ख्वाजा जहान मालिक उस शर्ककी उपाधि ले कर पूर्वाञ्चलका शासन करने आया।

जौनपुर आ कर इसने अपनी राजधानी बसाई। थोड़े ही दिनोंके अन्दर इसने अपनेको स्वाधीन राजा बतला कर दिल्लीके अधीनता-पाशको तोड़ दिया। इसके दत्तकपुत्र मुवारक शाहसे ही शर्की वंशका सौभाग्यसूर्य उदय हुआ था।

मालिक काफुर—खिलजीवंशीय दिल्ली सम्राट् अलाउद्दीनका एक प्रिय और विख्यात सेनापति। अलाउद्दीनके सेनापति आलुफ खाँने १२९७ ई०मे गुजरातके अन्तर्गत अनहलवाड़ाके राजा कर्णरायको परास्त किया और युद्धके क्षतिपूरणस्वरूप उनसे समृद्धिशाली खम्भात

(काम्बे) नगर ले लिया। आलुफ खाँने वहां पर हवसी वणिकोंसे काफुर नामक एक खोजा दास खरीदा। यही खोजा दास आगे चल कर अलाउद्दीनका प्रिय सेनापति मालिक काफुर नामसे प्रसिद्ध हुआ। आलुफखाँने जिसे धन दे कर खरीदा था, आज वही क्रीतदास आलुफके विरुद्ध खड़ा हो गया। काफुरने दिल्ली जा कर अलाउद्दीनको प्रसन्न किया और उसका प्रियपात्र बन गया।

इस समय दाक्षिणात्यके देवगिरिके राजाने तीन वर्ष तक दिल्ली दरबारको कर नहीं दिया था। अलाउद्दीनने मालिक काफुरको एक लाख घुड़सवारके साथ उनके विरुद्ध भेजा। देवगिरि-राजने जब देखा कि वे काफुर-के साथ युद्धमें ठहर नहीं सकते तब निर्दिष्ट राजकर और धनरत्न उपहार दे कर काफुरके साथ दिल्ली आये। १३०९ ई०में इसने ओरङ्गलके हिन्दूराजाके विरुद्ध युद्ध यात्रा कर दी। किन्तु पहली बार काफुरकी सेना हार खा कर भाग गई। काफुर विशेष क्षतिग्रस्त हो दिल्ली लौट आया। उसी साल उसने सैन्य संग्रह करके दूने उत्साहसे पुनः ओरङ्गल पर चढाई कर दी। इस बार ओरङ्गलराज-लद्दर प्रबल प्रतापसे युद्ध करके भी परास्त हुए। युद्धके व्ययस्वरूप उन्हें प्रचुर अर्थ और निर्दिष्ट कर देना पड़ा। इस काम के लिये अलाउद्दीनने काफुरकी बड़ी तारीफ की थी। दूसरे वर्ष १३१० ई०में काफुरने कर्णाटके द्वारसमुद्रके राजाके विरुद्ध कूच किया। वह स्थान उस समय होयशाल बल्लालोंके अधीन था। दाक्षिणात्यमें इसके जैसा समृद्ध राज्य दूसरा कोई भी नहीं था। मालिक काफुर-ने मलवार उपकूलमें पहुच कर उस घटनाको स्मरणीय रखनेके लिये वहां एक मसजिद बनवाई। काफुरने बड़ी आसानीसे द्वारसमुद्र पर अधिकार कर राजधानीको लूटा। पीछे सुप्रसिद्ध और अतुल ऐश्वर्यपूर्ण शिव-मन्दिरको ढाह कर वहाका प्रकाण्ड धनभाण्डार लूट ले गया। आज भी उस भग्नमन्दिरमें उस समयके हिन्दू-स्थापत्यका उज्ज्वल दृष्टान्त देखनेमें आता है। काफुर अपरिमित धनरत्न ले कर दिल्लीको लौटा। फेरिस्ता-ने लिखा है, कि काफुरको ९६००० मन सोना, ३१२ हाथी और २०००० घोड़े हाथ लगे थे। काफुरने दाक्षिणात्यका चिरसञ्चित अतुल धन भण्डार लूट कर दिल्लीके राजकोषको भर दिया था। दिल्ली इस समय सौभाग्यकी चरम सीमा पर पहुंच गई। बहुत-सी इमारतें और राजप्रासाद बनवाये गये। बुढ़ापा आ जानेके कारण अलाउद्दीनने प्रियतम काफुरको राज्यका कुल भार सौंप दिया।

काफुरने १३१२ ई०में दाक्षिणात्य पर आक्रमण किया और ओरङ्गलसे बहुत धन रत्न ले कर दिल्ली लौटा। अलाउद्दीनका अंतिम समय देख कर काफुरने उसके बड़े लड़के खिजिर खाँ तथा सादी खाँकी आंखें निकलवा कर उन्हें कैदमें डाल दिया। पीछे उसने अलाउद्दीनका एक जाली बिल दिखा कर सम्राट्के सात वर्षके चौथे लड़के उमुर खाँको सिंहासन पर बिठाया और आप सर्वसर्वा हो कर राजकार्य चलाने लगा। वह सम्राट्के तीसरे लड़के मुबारकका काम तमाम करनेका षड़यन्त्र कर रहा था। मुबारकके रक्षकोंको इस बातका पता लग गया और उन्होंने १३१७ ई०के जनवरी मासमें उसे मार डाला। काफुरने सिर्फ ३५ दिन राजप्रतिनिधिका काम किया था।

मालिक राजा फरुखी—खान्देशके फरुखीराजवंशका प्रति-ष्ठाता। यह अपनेको खलीफा ओमारका वंशधर बतलाता था। प्रायः ३० वर्ष तक दिल्लीश्वरके अधीन खान्देश-का शासक रह कर १३९९ ई०में इसने अपनेको स्वाधीन राजा घोषित किया। फरुखीराजवंश देखो।

मालिका (सं० स्त्री०) मालैव माला कन्-टाप् अत इत्वञ्च। १ सप्तला, सातला। २ पुत्री। ३ ग्रीवालङ्कार, कण्ठहार। ४ पुष्पमाला। ५ नदीविशेष। ६ सुरा। द्राक्षा मद्य, अंगूरकी शराब। ७ चन्द्रमल्लिका, चमेली। ८ अतसी, अलसी। ९ पंक्ति। १० पक्के मकानके ऊपरका खण्ड, रावटी। ११ मालिन।

मालिकाना (फा० पु०) १ वह कर, दस्तूरी या हक जो मालिक-अदना या कब्जेदार मालिक ताल्लुकेदारको देते हैं। २ स्वामीका अधिकार या स्वत्व, मिलकियत। (क्रि० वि०) ३ मालिककी भांति, मालिककी तरह।

मालिकी (फा० स्त्री०) १ मालिक होनेका भाव। २ मालिकका स्वत्व।

मालित (सं० त्रि०) मालाकारमें परिवेष्टित।

मालिन् (सं० पु०) माला पण्यत्वेनास्त्यस्य माला (व्रीह्यादिभ्यश्च । पा ५।२।११६) इति इनि । १ मालाकार, माली । २ राक्षस सुकेशके एक पुत्रका नाम (रामा-उ० ६ अ०) माला अस्थिमाला अस्त्यस्येति इनि । ३ महादेव ।

"व्यालरूपो गुहावासी गुहोमाली तरङ्गवित् ।"

(महाभा० १३।१७।६)

अस्ति मालास्येति इनि । (त्रि०) ४ मालायुक्त, मालाधारी ।

मालिनी (सं० स्त्री०) माला मुण्डमाला अस्त्यस्या अस्या वा माला (व्रीह्यादिभ्यश्च । पा ५।२।११६) इति इनि ततो ङीप् । १ मातृकाभेद । मालिन् ङीप् । २ मालिक पत्नी, मालिन । ३ चम्पानगरीका एक नाम । ४ गौरी । ५ मन्दाकिनी, गंगा । ६ नदीविशेष, एक प्राचीन नदीका नाम । इसीके किनारे महर्षि कण्वका आश्रम था और यही पर मेनकाके गर्भसे शकुन्तला उत्पन्न हुई थी ।

"जनयामास स मुनिर्मेनकाया शकुन्तलाम् ।
प्रस्थे हिमवतो रम्ये मालिनीमभितो नदीम् ॥"

(महाभा० १।७२।८)

७ अग्निशिखावृक्ष, कलियारी । ८ दुरालभा, जवासा । ९ वृत्तभेद । इसके प्रत्येक पादमें १५ अक्षर होते हैं जिनमें पहले छः वर्ण, दशवां और तेरहवां अक्षर लघु और शेष गुरु होते हैं । १० अप्सराविशेष । ११ स्कन्दकी सात माताओंमेंसे एक माताका नाम ।

"काकी च हलिमा चैव मालिनी वृंहिला तथा ।
आर्या पलाला वैमित्रा सप्तैताः शिशुमातरः ॥"

(महा० ३।२२३।१०)

१२ द्रौपदीका एक नाम ।

"मालिनीत्येव मे नाम स्वयं देवि चकार सा ।"

(महा० ४।८।२१)

१३ रौच्य मनुकी माताका नाम । (मार्कण्डेयपु० ९८।५-७) १४ श्वेतकर्णकी पत्नीका नाम । १५ मदिरा नामकी एक वृत्तिका नाम ।

मालिनीतन्त्र (सं० क्लो०) तन्त्रभेद ।

मालिन्य (सं० पु०) पर्वतभेद ।

मालिन्य (सं० क्लो०) मलिन (गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च ...) इति ... प्यञ्प्रत्ययः; अथवा मलिनस्य भाव इत्यर्थे मलिन ष्यञ् । १ मलिनता, मैलापन ।

"भोगवागेन मालिन्यं नेतुं मध्यगतेऽपि सः ।
न शक्यते स्म पङ्केन प्रतिमेन्दुरिवामलः ॥"

आकाश और पापके वर्णनमें कवि लोग मालिन्यका वर्णन करते हैं । अलङ्कार-शास्त्रमें इसे 'कविसमयख्याति' बतलाया गया है ।

"मालिन्यं व्योम्नि पापे यशसि धवलता वर्ण्यते हासकीर्त्योः ।"

(साहित्यदर्पण)

२ अंधकार, अंधेरा । ३ कलुष । ४ कुप्रवृत्ति ।

मालिमण्डन—सह्याद्रिवर्णित एक राजाका नाम ।

मालियत (अ० स्त्री०) १ मूल्य, कीमत । २ संपत्ति, धन । ३ मूल्यवान् पदार्थ, कीमती चीज ।

मालिया (हिं० पु०) मोटे रस्सोंमें दी जानेवाली एक प्रकारकी गांठ । इसका व्यवहार जहाजके पाल बांधनेमें होता है ।

मालिया—वम्बईके काठियावाड़ विभागकी एक जमींदारी । यह अक्षा० २३° १' से २३° १०' उ० तथा देशा० ७०° ४६' से ७१° २' पू०के मध्य विस्तृत है । भूपरिमाण १०३ वर्गमील और जनसंख्या ९ हजारसे ऊपर है । इसमें १७ ग्राम लगते हैं । राजस्व डेढ़ लाख रुपयेके लगभग है । यहांके शासनकर्त्ताकी उपाधि ठाकुर है । वे राजपूत जातिके हैं । यहां ईख और रुई बहुतायतसे होती है ।

मालिवन्त—एक ऋषि ।

मालिवन्तक—सह्याद्रि-वर्णित एक राजा ।

(सह्या० ३१।४९)

मालिवान—सह्याद्रिवर्णित तीन राजाओंका नाम ।

माली—पुष्प बेचनेवाली जातिविशेष । ये लोग प्रधानतः पुष्पमालाओंको गूंथते और देवपूजा तथा विवाहादि शुभकर्मोंमें व्यवहार करनेके लिये मौर आदि पुष्पाभरण तय्यार कर बेचा करते हैं । पुष्पसम्भार संग्रहके लिये बङ्गालके माली अपने घरके निकट वाटिका तैय्यार कर पुष्प उत्पादन करते हैं ।

यह जाति किसी किसी ग्रन्थमें अन्त्यज कही गई है, किन्तु यथार्थमें ऐसी नहीं है । बङ्गालके माली

नवशाखके मध्य गिने गये हैं। इनका छुआ जल श्रेष्ठ ब्राह्मण भी पी लेनेमें आनाकानी नहीं करते। वङ्गालके माली अपनी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहा करते हैं—उनका पूर्वपुरुष मथुराराजवंशके दरवारमें फूल दिया करता था। भगवान् कृष्ण कंसासुरको मारनेके लिये मथुरामें उपस्थित हो कर अपनी वेशभूषाका परिवर्त्तन करना चाहते थे ऐसे समय इन मालियोंका पूर्वपुरुष कंसका माली फूल ले कर कंसके घर जा रहा था, भगवान् श्रीकृष्णने इस मालीको बुला कर अपनी चूड़ामें फूल लगा देनेके लिये कहा। उन वाञ्छाकल्पतरु विष्णुके अवतार श्रीकृष्णकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये उनकी चूड़ामें मालीने फूल लगा दिये। किन्तु फूलोंका बन्धन ढीला देख भगवान्‌ने सूतसे बांध देनेका हुक्म दिया। मालीको उस समय कहीं सूता दिखाई नहीं दिया। चट उसने अपने यज्ञोपवीतसे सूता तोड़ कर कृष्णका आदेश पालन किया। यह देख कृष्णने तिरस्कार कर कहा—"हाय! तूने यज्ञोपवीतके विषयसे अनभिज्ञ होनेके कारण ऐसा अनर्थ किया है, इससे अब तुमको यज्ञोपवीत ग्रहण नहीं करना होगा। इस पापके प्रायश्चित्त-स्वरूप तुम्हें शूद्रत्व भोग करना होगा।" उसी समयसे माली जाति यज्ञोपवीत-संस्कारशून्य हो शूद्रत्वको प्राप्त हुई है।

वङ्गाली मालियोंका विश्वास है, कि अन्यान्य उच्च श्रेणीके लोगोंकी तरह ये भी बादशाह जहांगीरके जमानेमें युक्तप्रदेशसे ही आ कर बस गये हैं। वङ्गालमें इनकी बहुत अधिक बस्ती देखी जाती है। इसका कारण यह भी हो सकता है, कि वङ्गाली भारतीय विलासप्रिय जातियोंमें एक है। इनके यहां फूलोंका व्यवहार अधिक देखा जाता है। इससे इनकी संख्या और प्रान्तोंसे समधिक दिखाई देती है। वङ्गालके मालियोंमें दो दल हैं। १ला फूलकटा माली—ये कई तरहके फूलोंके गहने बना कर वेचते हैं। दूसरा दुकानदार माली—यह दुकान पर माला, हार या फूलोंके गहने बना बना कर वेचा करते हैं। फूलकटा मालियोंमें तीन श्रेणियां हैं—राढ़ी, वारेन्द्र और अटघरिया। इनमें आलम्यायन, काश्यप, मौद्गल और शाण्डिल्य गोत्र देखा जाता है। अन्यान्य उच्च जातियोंकी तरह इनमें सगोत्र-विवाह नहीं होता।

डाक्टर वायेजने लिखा है, कि ढाकेआदिके मालियोंमें दो दल हैं। किन्तु इनमें विशेष पार्थक्य दिखाई नहीं देता। केवल विवाह आदिके रिवाजोंमें कुछ अलगाव दिखाई देता है। एक दल दूसरे दलमें यदि विवाह करता है, तब उसको दोनों दलके लोगोंको भोज देना पड़ता है। कन्यापक्षको अधिक दान दहेज नहीं देना पड़ता। वाल्यविवाह प्रचलित है, विधवाविवाह नहीं। पत्नीके चरित्रमें दोष दिखाई देने पर उसको जातिच्युत होना होता है और उसके स्वामीको भी प्रायश्चित्त करना पड़ता है।

वङ्गालके माली सभी वैष्णव हैं। गोसांइयोंसे मंत्र-दीक्षा लेते हैं। चेचककी (वसन्तरोग) बीमारीको आराम करनेमें ये बड़े निपुण होते हैं। चैत्र महीनेके १ले दिनको महाधूमधामसे शीतला देवीकी पूजा करते हैं। इस समय सभी शीतला देवीकी पूजा अपने अपने घरोंमें किया करते हैं।

विहारके माली वङ्गालके मालियोंसे विशेष उन्नत हैं। वहां ये कुम्हार, कोइरी और कहार आदिके बराबरीके हैं। इनके हाथका जल ब्राह्मण पीते हैं। पार्थक्य इतना ही है, कि इनमें विधवाविवाह प्रचलित है।

फिर युक्तप्रदेशके मालियोंकी उत्पत्ति वङ्गालकी तरह नहीं। इनका कहना है, कि एकबार पुष्प तोड़ते समय पार्वतीकी उंगलीमें कांटा चुभ गया। इस कांटेको शङ्करने निकाल कर रक्तस्रावको बन्द किया था। पार्वतीकी उंगलीसे जो रक्तपात हुआ था, उसी रक्तसे माली जातिकी उत्पत्ति हुई।

यह जाति युक्तप्रदेशमें इस समय सामाजिक उन्नतिमें अग्रसर है। वैदिक युगमें पुष्पोंका उतना आदर देखा नहीं जाता है। हां, जबसे पुष्पोंके सुषमा-सौन्दर्यको देख लोग विमोहित होने लगे हैं, तब (पुष्प-व्यवसायी जाति) माली जातिकी आवश्यकता हुई। पाश्चात्य कवि होमरके समकालमें यूनानमें पुष्पका आदर होने पर भी इसकी उपजका कुछ विशेष उल्लेख दिखाई नहीं देता।

यहां वहौलिया, भागीरथी, दिल्लीवाल, गोले, कर्पूरी, कनौजिया, और फूलमाली नामसे आठ प्रधान श्रेणी

हैं। सिवा इसके स्थानविशेषमें देशवाली, पनवार, समरी, वहलियान भनोली, भवानी, खलि, मोहर, मेथियान, मूलान, पेमनियान, राजपूरिया, खोलिया, कोटा, कच्छ-माली, खटिया, हरदिया, माथुर, मेवाती, दिलवारी, फूल माली, खुराद, सैनी, कच्छी आदि कई दल हैं। इनमे भी सगोत्र-विवाह निषेध है। और तो क्या, कन्या यदि मातामही पितामहीकी गोत्रीय हो, तो उससे विवाह नहीं हो सकता, क्योंकि यह समाज विरुद्ध है।

बाल्यविवाह खूब होता है, किन्तु असमर्थके लिये कन्याओंका अधिक उम्रमें भी विवाह होता है। स्त्री जीवित रहने पर सालीसे विवाह भी कर सकता है। विधवा और छोड़ी हुई पत्नीके 'सगाई धरीचा' प्रथाके अनुसार पुनर्विवाह करनेमें कोई रुकावट नहीं। कहीं कहीं देवरसे भी विवाह होता है।

युक्तप्रदेशके माली शाक्त हैं। देवी, काली, महाकाली आदि शक्तिकी पूजा ये बड़ी धूमधामसे करते हैं। सिवा इनके पांचपीर, नरसिंहदेव और अघोरनाथको भी पूजा होती है। फर्रुखाबादके माली कुरैना नामक ग्राम्यदेवताकी पूजाके समय बकरेकी वलि चढ़ाया करते हैं। विवाह और जातकर्ममें अधिक इन ग्राम्यदेवताकी पूजा होती है।

यहां भी वङ्गालकी तरह शीतलादेवीकी पूजाके पुजारी यही हैं। पहले यही बालक-बालिकाओंको टीका देते थे। चेचककी बीमारीको दूर करनेके लिये यह बड़े सिद्ध-हस्त हैं। अब भी ये जहां बीमारी कुछ गड़बड़ी दिखाई देती है, वहां ये बुलाये जाते हैं। यह आ कर एक घरमें रोगीके चारपाईके निकट आसन जमा कर बैठ जाते और विधिविधानसे शीतला माताकी पूजा करते हैं। सैकड़े ८५ ऐसे रोगी इनके द्वारा आराम होते देखे जाते हैं। जिन रोगियोंकी आशा बिलकुल नहीं रह गई है, वैसे वैसे रोगियोंको चङ्गा कर देना इन्हीं लोगोंका काम है। हिन्दू समाजमें इस जातिका स्थान उतना हेय नहीं। बारातमें यह कहीं कहीं मशालची यानी मशाल दिखानेका काम करते हैं। मौर भी ये ही बनाया करते हैं। ये पत्तङ्ग भी बनाते हैं। ब्राह्मण और कायस्थोंके यहांका पक्का भोजन (घृतपाकी भोजनका हा पक्का भोजन कहा जाता है) करते हैं।

प्राचीन कहानियोंमें माली-पुत्र ही अनेक समय नायकरूपसे वर्णित दिखाई देता है। युक्तप्रदेशमें यह कहावत प्रचलित है,—

"माली चाहे बरसना धोबी चाहे धूप।
साहू चाहे बोलना चोर चाहे चूप॥"

किस्से कहानियोंमें मालीकी अपेक्षा मालिनकी ख्याति अधिक है। ये मालिनें खूबसूरतीमें मशहूर हैं। धूर्त्त भी ये गज़ब की होती हैं। चाणक्यने भी कहा है,—स्त्री धूर्त्तश्च मालिनी। ये बड़े बड़े घरोंमें बेरोक टोक फूल देनेके लिये आया जाया करती हैं। इनका कार्य भी चातुर्यपूर्ण होता है।

बम्बईप्रदेशमें विभिन्न श्रेणीके मालियोंका वास है। ये साधारणतः हल्दीमाली, जीरामाली, लिङ्गायत-माली और फूलमाली नामसे परिचित हैं। फूलमाली और कदूमाली दोनों एक स्थानमें बैठ कर खा सकते हैं किंतु परस्पर पुत्रकन्याका विवाह नहीं हो सकता।

माली (हिं० पु०) १ वाल्मीकीय रामायणके अनुसार सुकेश राक्षसका पुत्र। यह माल्यवान् और सुमालीका भाई था। २ राजीवगण नामक छन्दका दूसरा नाम। (फा० वि०) २ आर्थिक, धनसंबंधी।

मालीगौड़ (हिं० पु०) मालवगौड देखो।

मालीद (अं० पु०) एक धातुका नाम। यह चाँदकी तरह सफेद और चमकदार होती है। इसमें विशेषता यह है, कि यह धातु चाँदीसे अधिक कड़ी होती और बहुत तेज आँचमें गलती है। इसका अत्वी भार ९६ होता है। इसका क्रोमियम, टंगस्टेन और यूरेनियमसे रासायनिक संबंध है और उन्हींकी तरह इससे अम्ल-जित् बनता और क्षारके गुणोंको धारण करता है। यह सल्फेटके रूपमें मिलता है।

मालीदा (फा० पु०) १ मलीदा, चूरमा। २ एक प्रकार-का ऊनी कपड़ा। यह बहुत कोमल और गरम होता है। यह विशेषतः काश्मीर और अमृतसरमें बनता है। मालीदेकी गिनती उत्कृष्ट ऊनी वस्त्रोंमें की जाती है।

मालीनगर—दरभङ्गा जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° ५६' ३०" उ० तथा देशा० ८५° ४२' ३०" पू० गण्डकी नदीके उत्तर किनारे अवस्थित है। यहां १८४४ ई०का

बनाया हुआ एक बडा शिव-मन्दिर है। यहां राम-नवमीमें एक बडा मेला लगता है जिसमें बहुतसे यात्री समागम होते और तरह तरहके वाणिज्य द्रव्यकी आमदनी होती है।

मालीय (सं० त्रि०) १ मालासम्बन्धीय। २ मालाकार सम्बन्धीय, मालीका।

मालु (सं० पु०) मृ (मृगय्वादयश्च। उण् १।५) इति वाहुल कात् ञुण्। १ पत्रलता, एक लताका नाम जो पेडोंमें लिपटती है। २ नारी, स्त्री।

मालुक (सं० पु०) १ कृष्णार्जक, काली तुलसी। २ एक प्रकारका मटमैले रंगका राजहंस।

मालुकाच्छद (सं० पु०) अश्मातक वृक्ष, वहेडा।

मालुद (सं० पु०) बौद्ध मतानुसार एक बहुत बडी संख्याका नाम।

मालुधान (सं० पु०) मालु मरणं विदधातीति धा-ल्युः। मालुलाहि, एक प्रकारका सांप। २ आठ नागोंमेंसे एक नागका नाम। ३ महापथ।

मालुधानी (सं० स्त्री०) एक लताका नाम।

मालूक (सं० पु०) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

मालूधानी (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी लता।

मालूम (अ० वि०) ज्ञात, जाना हुआ।

मालूर (सं० पु०) मा परेषा वृक्षान्तराणां श्रियं प्रभावं लुनातीति लुञ् वाहुलकात् रः। १ विल्व वृक्ष, बेलका पेड।

'स वारनारी-कुचसञ्चितोपम।
ददर्श मालूरफलं पचेलिमम्॥" (नैषध १।९४)

इसका संस्कृत पर्याय—विल्व, महाकपित्थ, श्रीफल, गोहरीतकी, पूतिवात, माङ्गल्य, महाफल। भावप्रकाशके मतसे विल्व, शाण्डिल्य, शैलूष और श्रीफल। २ कपित्थ वृक्ष, कैथका पेड।

मालूर—१ महिसुर-राज्यमें कोलर जिलेका एक तालुक। भू-परिमाण १५४ वर्गमील है।

२ कोलर जिलान्तर्गत एक गांव। पहले इसका नाम मल्लिकपुर था। १६वीं सदीमें यह स्थान हरकोटके गौड सरदारके अधिकारमें रहा। अनन्तर बीजापुरके मुसलमानोंके अधीन रह कर मराठोंके कब्जेमें आया। पीछे हैदर अलीके समयमें महिसुरके अन्तर्भुक्त हुआ।

मालूरमूल (सं० क्ली०) विल्वमूल, बेलकी जड।

माले (माली)—राजमहल शैलमालावासी एक पहाड़ी जाति। जातितत्त्वविदोंने ओरावन जातिके साथ इनका सादृश्य और सामंजस्य निरीक्षण कर इन्हें द्राविड़ीय शाखाभुक्त बतलाया है। कहीं कहीं ये माल, समरिया माले, शवर पहाडिया और सन्धि नामसे परिचित हैं। इनकी आकृति और प्रकृतिगत सामञ्जस्यकी ओर नजर दौडानेसे ये स्पष्टतया वलकलधारी वनवासी शवर जातिसे मिलते जुलते हैं।

ये छोटे कदके, घोर काले तथा हट्टे कट्टे होते हैं। इनकी नाक हवशी जाति-सी चिपटी होती है। इनकी कथित भाषामें भी आनुनासिक स्वरकी अधिकता देखी जाती है।

वनमण्डित पर्वत-शृङ्ग पर वास करनेके कारण अन्यान्य पर्वतवासी जातिकी तरह ये दुर्द्धर्ष थे। जिस समय पठान और मुगल-राजाओंने बंगालमें मुसलमानी विजय-पताका उडाई थी,—जब राजमहलमें मुसलमान नवाबोंका राजपाट कायम हुआ था, उस समय यही माले जाति अपनी वन्य स्वाधीनताकी रक्षा करनेमें समर्थ हुई थी। किन्तु ये आपसमें झगडा लडाई कर बलहीन हो रहे थे।

प्रभूत प्रतिपत्तिशाली मुगल शक्तिकी शासनशृङ्खलाके अधीन न होते हुये भी इन्होंने उस वन्य वर्व्वरतामें भी शासनकार्यकी आवश्यकता देखी। पहाडके नीचे समतलक्षेत्रमें जो सब जमींदार रहते थे उन्हींके शासन कार्यको प्रणाली लक्ष्य कर अपनी शासन-प्रणाली ठीक कर ली थी। प्रत्येक पर्वतके एक एक तप्पे यानी परगनेमें एक या दो सरदार नियुक्त रहते थे। इन सरदारोंके अधीन प्रत्येक गांवमें एक एक मांझी गाँवका सामाजिक और राजनैतिक कार्य चलाता था।

सरदारगण साधारण मालेकी अपेक्षा बहुत कुछ सुसभ्य थे। पहाडी लोग समतलक्षेत्रमें उतर कर लूट-पाट न करें इसके लिये उन्हें पार्श्ववर्त्ती जमींदारोंसे जागीर मिलती थी। इस जागीरमें रह कर वे जो अर्थ उपार्जन करते उससे उन्होंने पहाडी रास्तोंमें एक एक थाना बनाया था। उधर जमींदार या सामन्तराज भी पहाड़ी लोगोंके

आक्रमणसे बचनेके लिये आस पासमें चौकीदार रखते थे।

हर साल दशहरा उत्सवके दिन माले-सरदारगण अपने अपने अधीनस्थ मांझियों को साथ ले समतल क्षेत्रमें उतरते थे। उस समय जमींदार पुनः शान्तिरक्षाका बन्दोबस्त कर उन्हें भरपूर भोजन कराते और बादमें एक एक नयी पगड़ी दे कर उन्हें विदा करते थे।

बहुत दिनोंसे इस प्रकार शासनकार्य निर्वाहित होनेके कारण पार्वत्य माले तथा समतलदेशवासी जनसाधारणके बीच शान्ति और सौहार्द स्थापित हो गया था। किन्तु १८वीं सदीके मध्य भागमें जमींदारोंने विश्वासघातकता कर इनकी स्वाधीन छीननेकी चेष्टा की। उन्होंने वार्षिक भोजके दिन आये हुए बहुतसे सरदारों और मांझियोंको अचानक मार डाला। तभीसे इन्होंने जमींदारों पर विरक्त हो कर गिरिसंकटोंकी रक्षा करना छोड़ दिया। इस समयसे माले जातिने उपद्रव मचाना शुरू कर दिया। वे दलके दल समतल-क्षेत्रमें उतर वहांकी प्रजाओंका सर्वस्व लूट ले जाते थे। १७७० ई० तक जमींदारगण अपनी अपनी प्रजाओंको इनके उपद्रवसे किसी तरह बचा सके थे। किन्तु उसी साल दुर्भिक्ष उपस्थित हुआ जिससे चौकीदार अपना अपना काम छोड़ कर वहांसे भागे। साथ साथ माले जातिका भी अत्याचार दूना बढ़ गया। इन्होंने क्रमशः राजमहलके पार्वत्यप्रान्तसे गंगाके किनारे तकके सभी गांवों और नगरोंमें आग लगा कर लूटा। इनके पड़ोसी लूटके माल पानेकी आशासे इन्हें समय समय पर सहायता पहुंचाया करते थे। इनका औद्धत्य देख कर जमींदार भी डर गये थे। वणिकोंको रातमें गंगासे जहाज पर पण्यद्रव्य ले जानेका साहस नहीं होता था। ऐसी अवस्थामें उस प्रदेशमें एक प्रकार अराजकता फैल गई थी।

मुसलमान नवाबोंकी तरह अङ्गरेज-सरकार भी इनका दमन करनेके लिये तैयार हो गई। १७७२ ई०में कप्तान ब्रूकके अधीन वनयुद्धकुशली एक पदातिक सेनादल माले डकैतोंके विरुद्ध भेजा गया। अङ्गरेज-सेनादल उस दुरारोह पर्वत पर चढ़ा, पर उन छिपे हुए माले लोगोंका कुछ भी न कर सका। उल्टे उनके विषाक्त वाणोंसे कितने अङ्गरेज-योद्धा प्राण खो बैठे। इस प्रकार वृथा सेनाक्षय होते देख अङ्गरेज सेनापति मालेजातिको बिना वशीभूत किये ही लौट आये।

इस दारुण अराजकताके समय अङ्गरेज-पत्रवाहकगण (Mail runners) राजमहल शैलमालाके नीचे हो कर तेलियागढ़ी सङ्कटमें जाया करते थे। विद्रोही माले लोगोंने हिताहित ज्ञानशून्य हो कुछ पत्रवाहकोंको मार डाला। इस पर अङ्गरेज-सरकार उन्हें समूल नष्ट करनेके लिये पहलेसे दूनी तैयारी करने लगी। इस समय राजमहलके सेनाध्यक्ष कप्तान ब्राउनकी सलाहसे सरदार और मांझियोंको पूर्ववत् अपना अपना पद और अधिकार दिया गया। अङ्गरेज-सरकार डकैतोंका दमन करनेके लिये सीमान्तवासी सरदारोंकी धनसे सहायता करनेको राजी हो गई। उसी साल ब्राउन साहबकी प्रार्थना गवर्मेण्ट द्वारा अनुमोदित होने पर यथारीति कार्य आरम्भ हुआ। १७७९ ई०में माले लोगोंका अधिकृत पार्वत्यप्रदेश भागलपुरके तात्कालिक कलकृर मि० अगष्टस क्लिभलाण्डके शासनाधीनमें रखा गया था। क्लिभलाण्डके सदय व्यवहारसे अधिकांश सरदार और मांझी थोड़े ही समयके अन्दर उनके वशीभूत हो गये। उन्होंने वारेन हेष्टिंगसको एक पत्र लिखा, कि वे मालेजातिसे एक सेनादल संगठन करें। तदनुसार १७८० ई०में तीरधारी माले-सेनादल गवर्मेण्टके खर्चसे खड़ा किया गया। उस सेनादलका नाम पड़ा 'दि भागलपुर हिल रेञ्जर्स'। लेफ्टेनाण्ट शाव (Lieut shaw) ने उन लोगोंके नायक हो कर उन्हें कूच कवायद सिखलाई। उसी साल इस सेनादलने एक पहाड़ी विद्रोहका दमन कर अच्छी ख्याति पाई थी। १८५७ ई०के गदरके बाद इस दलको पुरस्कार मिला था।

इस सेनादलके मध्य जो अपराध करता था उसका विचार करनेके लिये मि० क्लिभलाण्डने एक शासन-समिति संगठन की। वह समिति पहले सामरिक विचार-सभा और पीछे पार्वत्यसमिति कहलाने लगी। क्लिभलाण्डके परामर्शानुसार वह समिति वर्षमें दो बार बैठती थी। उसकी नियमावली १७९६ ई०को १ली अप्रेलको

गठित हुई। पीछे यथाक्रम १८२७ ई०की १ली और १८७१ ई०के २७वीं धारासे उसका संस्कार और परिवर्त्तन हुआ। स्थानीय मजिस्ट्रेट सामान्य दोषके लिये माले पर अभियोग नहीं ला सकते।

१७८३ ई०में क्लिमलाण्डने माले लोगोंको काबूमें रखनेके लिये उन्हें कुछ जागीर दी। उन्होंने यह भी कहा था, कि सरदार लोग दो दो महीनेके बाद यदि अपने पहाडी-गुहावासको छोड़ कर समतलक्षेत्र पर न आयेंगे, तो उनकी वृत्ति बंद कर दी जायगी। किन्तु मालेने इसकी जरा भी परवाह न की और वे कभी भी विना कामके समतलक्षेत्र पर न उतरे। इस समय पश्चिमसे संथाल लोग यहां आ गये। अब तो इन्हें और भी अपना गुहावास छोड़नेका साहस नहीं हुआ।

माले जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें एक किम्वदन्ती इस प्रकार प्रचलित है,—भगवान्ने सात भाइयोंको पृथ्वी पर वास करनेके लिये भेजा। यहां आ कर उन्होंने एक बड़े भोजकी तैयारी की। एक एकने एक एक खाद्य द्रव्य ले लिया। उसी भक्ष्य वस्तुसे उनके वंशधरोंकी जाति निर्दिष्ट हुई। इनमें बकरेके मास खानेवालेसे हिन्दू, सूअरको छोड़ और सभी पशुओंके मांस-भक्षकसे मुसलमान, सूअरके मास-भक्षकसे किरात तथा कदर आदि निकृष्ट जातिको उत्पत्ति हुई। सातोंमें जो बड़ा था वह बीमार होनेके कारण कुछ भी खा न सका। उसके लिये एक दूसरे बरतनमें सभी प्रकारका मांस और खाद्य द्रव्य रखा गया था। शेष छः भाइयोंने उसे सर्वभक्षक जान कर पर्वत पर छोड़ दिया और आप अपने अपने स्थानको रवाना हुए। इस प्रकार जातिच्युत हो बड़ा भाई पर्वत पर रहने लगा। उसीके वंशधर 'माले' कहलाये। हो और मुण्डा जातिमें भी इसी प्रकारका एक प्रवाद है। इससे साबित होता है, कि मालेगण हिन्दूजातिके संस्पर्शमें आ कर सभ्यता सीखनेके बाद अपनेको हिन्दू, मुसलमान, अंगरेज आदि सुसभ्य जातिके मुकाबलेके तथा एक पिताके सन्तान बतलाते हैं।

ये लोग ओरावन जातिकी तरह आदान प्रदान करते हैं। विवाहमें गोत्र या दल पर विचार नहीं किया जाता। कन्या जब सयानी होती तभी वह अपनी इच्छासे पतिको चुनती है। विवाहसे पहले यदि कन्याके गर्भ रह जाय, तो इस दुष्कर्मके प्रायश्चित्तस्वरूप उसे एक जीवकी बलि देनी होती है, पीछे उसका विवाह दिया जाता है।

विवाह सम्बन्ध स्थिर करनेके लिये एक घटक रहता है। जब कन्याका पण ठीक हो जाता है, तब विवाहका एक शुभ दिन स्थिर होता है। बारात अवस्थानुसार सजाई जाती है। वरपक्षको अपने साथ कन्या पण और विवाहभोजके लिये बकरा ले जाना होता है। जरूरत पड़ने पर घटकके हाथ पहले ही कन्यापण मंगा लिया जाता है।

विवाह-स्थलमें वर पूर्वमुख और कन्या पश्चिममुख बैठाई जाती है। इसके बाद कन्याकर्त्ता आ कर अपनी कन्याका हाथ वरके हाथ पकड़वा देता है। पीछे कन्याको स्वामीके प्रति सदय और सरल व्यवहार करनेका उपदेश दिया जाता। अनन्तर घटक आता और वरके दाहिने हाथकी कनिष्ठांगुलिसे सिन्दूर ले कर कन्याकी माँग पर दिलाता है। कन्या भी अपनी अंगुलिसे वरके कपाल पर सिन्दूरका टीका लगाती है। आखिर तोपध्वनि करके विवाहकार्य शेष किया जाता है। विवाह हो जाने पर कन्याकर्त्ता बारात तथा अपने ज्ञाति वर्गको खिलाता है।

इन लोगोंमें विवाह-बंधन तोड़नेका नियम है। स्त्रीके बांझ, कुलटा आदि होने पर अथवा चाहे जिस कारण से हो, विवाह सम्बन्ध तोड़ा जा सकता है। पञ्चायत यदि स्त्रीमें कोई दोष देखे, तो स्वामीको पूर्व प्रदत्त कन्या पण वापिस मिलता है। किन्तु स्वामी यदि अपनी स्त्रीका दोष प्रमाणित न कर सके तो पणका रुपया जब्त हो जाता है। स्त्री यदि अपनी इच्छासे स्वामीको छोड़ दे, तो उसका पिता रुपया लौटा देनेको बाध्य है। विवाहबंधन तोड़नेके समय स्त्री एक सखुएके पत्ते अथवा एक सूतेको दो टुकड़े कर देती है। बादमें वह अपने सिर पर एक घड़ा जल डाल कर चली जाती है। इस प्रकार विवाह-बंधन टूट जाने पर वह फिरसे विवाह कर सकती है।

ये लोग मूर्त्तिपूजक हैं। असभ्य जातिके प्रसिद्ध पश्वाचार व्रतका अवलम्बन कर नाना देवयोनिको

उपासना करते हैं। प्रत्येक गृहस्थके घरके सामने एक काठका टुकड़ा गाड़ा रहता है। कृषिकार्यके समय तथा कोई मुशीवत आने पर उस काठके टुकड़ेमें सिन्दूर, तेल आदि लगाया जाता और वकरे, मुर्गे आदिको वलि दे कर उसकी पूजा की जाती है। पूजाके समय गांवके लोग वहां अधिक संख्यामें जमा होते हैं। इनका पुरोहित सरदार ही होता है। वह काठकी पुतली धर्मके गोसांई (सूर्यदेव)-रूपमें पूजी जाती है। शराव चुआनेके समय अथवा गांवमें वाघ, संक्रामक रोग आदि उपद्रव उपस्थित होने पर एक खण्ड काले पत्थरको वृक्षके नीचे रख कर ये लोग रक्षीदेवताकी पूजा करते हैं। अलावा इसके १० ग्रामके अधिष्ठात्रीरूपमें चालनाद-देवताकी पूजा होती है। उक्त प्रतिमूर्त्ति भी काले पत्थरकी वनी होती है। चालनादिकी पूजाके समय वकरे, सूअर और गायकी वलि दी जाती हैं। इस प्रकार वाँस, पत्थर और काठके टुकड़ेको ले कर ये पौ गोसाँई, द्वार गोसांई, कुलगोसाँई, गुमो गोसाँई, चामदा गोसाँई आदिकी पूजा करते हैं। सभी पूजाओं चामदा गोसाँईकी पूजा वड़ी धूमधामसे होती है।

गांवके मोड़ल (सरदार)-को छोड कर नाइया, देमानो और चेरिन भी किसी किसी काममें इनके पुरोहित होते हैं। इन सवोंमें देमानो ही अधिकतर शक्ति-सम्पन्न और जनसाधारणके पूजनीय हैं। उनका विश्वास है, कि ये ऐश्वरिक शक्तिसे शक्तिमान् हैं। भूत भगाने और रोग झाड़नेमें ये लोग वड़े निपुण हैं। ये गलेमें कौड़ीकी माला पहनते और हल्दी नही खाते हैं।

ये लोग मृतदेहको गाड़ते हैं। सांप काटने अथवा किसी वीभत्स व्यापारसे मृत्यु होने पर लाश जंगलमें फेंक दी जाती है। उनका विश्वास है, कि मुर्देको जमीनमें गाड़नेसे वह प्रेत वन कर गाँवमें ऊधम मचा सकता है। मृताशौचके पाँचवें दिन ये आत्मीयवर्गको भोज देते हैं। इन लोगोंमें भी षाण्मासिक और वात्सरिक श्राद्धकी विधि है। किन्तु वह हिन्दूशास्त्रानुमोदित नही है। इस षाण्मासिक वा वार्षिक पिण्डदानके समय देमानो मृतव्यक्तिकी तरह अपनेको सजा कर मृतव्यक्तिके आत्मीयसे अभिलषित वस्तु मांगता है। इनका विश्वास है, कि देमानो प्रसन्न हो कर जो वस्तु मांगेगा उसीसे उस मृत व्यक्तिकी प्रेतात्मा तृप्त होगी। इसके वाद जनसाधारणके साथ देमानोको भी खिलाया जाता है।

पर्वतके शिखर पर प्रायः समतल स्थान देख ये लोग वांसके टुकड़ोंसे घर वनाते हैं। गाय, सूअर आदि पशुओंका निन्दित मांस तथा दूसरेका जूठा खानेमे ये लोग जरा भी घृणा मालूम नही करते।

मालेगाँव—१ वम्बईके नासिक जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २०° २०' से २०° ५३' उ० तथा देशा० ७४° १८' से ७४° ४६' पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण ७७७ वर्गमील है। इसमें १ शहर और १४६ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या लाखके करीव है। इसका उत्तर-प्रदेश पर्वतमय और दक्षिण प्रदेश समतल है। यह स्थान वहुत स्वास्थ्यकर है। वीचमें गिरना नदी कई शाखा प्रशाखामें विभक्त हो गई है। वर्ष भरमे यहां औसतसे २० इञ्च वृष्टिपात होता है। पिण्डारी-युद्धके समय मालेगाँव अरवसेना द्वारा अधिकृत हुआ था। अंगरेज-सेनापति कर्नल डावेलने १८१८ ई०में नगर और दुर्ग पर कब्जा किया। किन्तु युद्धमें २०० अंगरेजी सेना मारी गई थी। अरव लोग युद्धमे हार खा कर जलपथसे भागे। नरुशङ्कर नामक एक अरव सरदारने १७४० ई०मे यहांका दुर्ग वनवाया था। कोई कोई कहते हैं, कि दिल्लीश्वरके भेजे हुए एक स्थपतिसे उक्त दुर्ग वनाया गया था।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० २०° ३३' उ० तथा देशा० ७४° ३२' पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण २० हजारके करीव है। १८६३ ई०मे यहां म्युनिस्पलिटी स्थापित हुई है। शहरमे दो सूत कातनेके कारखाने हैं। अलावा इसके एक सव-जजकी अदालत, दो अंगरेजी स्कूल और एक अस्पताल भी है।

मालेया (सं० स्त्री०) मल ढक् ततष्टाप्। स्थूलैला, वडी इलायची।

मालेरकोटला—पञ्जाव गवर्मेण्टके अधीन एक करद राज्य। यह अक्षा० ३०° २४' से ३०° ४१' उ० तथा देशा० ७५° ४२' से ७५° ५६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १६७ वर्गमील और जनसंख्या ८० हजारके लगभग

है। इसके उत्तरमें लुधियाना जिला तथा बाकी तीन दिशाओंमें पतियाला राज्य विस्तृत है।

इस स्थानके नवाब अफगान-वंशके हैं। इनके पूर्व पुरुष मुगलबादशाहके अधीन सरहिन्दके शासनकर्त्ता थे। पीछे १८वीं शताब्दीमें मुगल-साम्राज्यके अवसानके समय वे लोग धीरे धीरे स्वाधीन हो गये। १७३२ ई०में मालेरकोटलाके नवाब जमाल खाँ जालन्धर दुआबमें अवस्थित बादशाही सेनाके साथ मिल कर पतियालाके सिखराज आलासिंहके विरुद्ध खड़े हो गये। पीछे १७६१ ई०में जमाल खाँने अह्मदशाह दुर्रानीकी ओरसे सिखोंके साथ युद्ध किया। इस पर अहमदशाहने संतुष्ट हो कर जमाल खाँको सरहिन्दका शासनकर्त्ता बनाया। इसके लिये जमाल खाँके वंशधरोंको निकटवर्त्ती सिखोंका बहुत अत्याचार सहना पड़ा था। आखिर जमाल खाँ भी सिखोंके साथ युद्धमें मारे गये। अनन्तर उनके लड़कों में सिंहासन ले कर झगड़ा खड़ा हुआ। अन्तमें भीखन खाँ सिंहासन पर बैठे।

अह्मदशाहके भारतवर्षसे चले जाने पर पतियालाके राजा अमरसिंहने भीखन खांके राज्य पर आक्रमण कर दिया। भीखनने अपनेको अमरसिंहके साथ युद्ध करनेमें असमर्थ देख सन्धि कर ली। संधिके बादसे भीखन खाँने कई बार सिखोंको मदद पहुंचाई थी। इस प्रत्युपकारमें पतियालाके राजा साहेबसिंहने मालेरकोटलाके नवाबका पक्ष ले बहादुर शाहके विरुद्ध युद्ध किया था। पीछे १७९४ ई०में नानकके वंशधर वेदि साहबसिंहने मालेरकोटलाके नवाबोंके साथ युद्ध ठान दिया। आखिर दोनोंमें मेल हो गया। १७८८ ई०से मराठोंको इस प्रदेशमें तूती बोलने लगी। जब अंगरेज सेनापति लार्ड लेकने १८०५ ई०में होलकरके विरुद्ध युद्धयात्रा की, तब मालेर कोटलाके नवाब अंगरेजोंकी ओरसे लड़े थे। १८०९ ई०में रणजित्‌सिंहके मालेरकोटला जीतनेका उद्योग करने पर अंगरेजी-सेनाने नवाबकी सहायता की थी। किन्तु अंगरेज दूत मेटकाफके अनुरोध करने पर भी रणजित् सिंहने १८०८ ई०मे मालेर-कोटलाके नवाबसे १ लाख रुपया बलपूर्वक वसूल किया। पीछे कर्नल अक्टरलोनीने १८०९ ई०में रणजितके साथ संधि करके मालेर-कोटला के नवाबकी सहायता की।

अनन्तर महम्मद इब्राहिम खाँ १८७७ ई०में राजतख्त पर बैठे। इनका जन्म १८५७ ई०में हुआ था। दुर्भाग्यवशतः उनका दिमाग खराब हो गया, इस कारण राजकार्य अधिक दिन चला न सके। पीछे उनके लड़के महम्मद अह्मद अली खां राजसिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। ये ही वर्त्तमान नवाब हैं। इन्हें ११ सलामी तोपें मिलती हैं। इस राज्यमें मालेर-कोटला नामक १ शहर और ११५ ग्राम लगते हैं। नवाबकी सेनामें ५० घुड़सवार और ४४० पैदल सिपाही, ८ कमान और १६ गोलन्दाज हैं। यहां एक ऐङ्गलो-वर्नाक्युलर हाई स्कूल और तीन प्राइमरी स्कूल हैं।

२ उक्त राज्यका एक शहर। यह अक्षा० ३०° ३२´ उ० तथा देशा० ७५° ५९´ पू०के मध्य विस्तृत है तथा लुधियाना शहरसे ३० मील दक्षिण पड़ता है। जनसंख्या २० हजारसे ऊपर है। शहर दो भागोंमें विभक्त है। मालेर और कोटला ; लेकिन हालमें ही उसके बीचमें मोतीबाजार स्थापित हो जानेसे दोनों एकमें मिला दिये गये। पहला भाग मालेर-कोटलावंशके प्रतिष्ठाता सदरुद्दीन द्वारा १४६६ ई०में और दूसरा १६५६ ई०में बयाजिद खाँ द्वारा बसाया गया था। बारक शहरके बाहरमें अवस्थित है। शहरमें एक हाई-स्कूल, एक अस्पताल और एक मिलिटरी डिसपेन्सरी है।

मालो—बंगालकी नौकावाही और मत्स्यजीवि जातिविशेष। ये कैवर्त्त या तीयर (तीवर) जातिसे स्वतन्त्र हैं। सम्भवतः मार्गव (नौकावाही मांझी) शब्दसे इस मालो जातिका नामकरण हुआ है। ये घोर काले, छोटे कदके तथा मजबूत होते हैं। इसलिये जातितत्त्वविद् इन्हें द्राविड़ीय जातिके वंशधर तथा गांगेय डेल्टाके आदिम अधिवासी अनुमान करते हैं। इनके घुंघराले बाल, छोटी छोटी मूंछ और दाढ़ी तथा होंठ मोटे होते हैं छोटी छोटी नाक और बड़े बड़े नाकके छेद उक्त अनुमानके उपयुक्त प्रमाण हैं। अलावा इसके इनमें विभिन्न श्रेणी-विभाग न रहनेके कारण ये बंगालके आदिम अधिवासी जान पड़ते हैं।

हिन्दूके आचार व्यवहार और धर्मकर्मादिके प्रति लक्ष्य रख कर इन्होंने बहुत कुछ उस जातिके

अनुष्ठेय क्रियाकलापका अनुकरण किया है। यहां तक कि इनमें आलिमान (आलम्बायन), वाणऋषि, वङ्गऋषि, भरणऋषि, खोंड़ाऋषि, कार्त्तिकऋषि, कुलीनराशि, मेषराशि, पद्मराशि, पुरिराशि, सिंहराशि, शिवराशि और उदधि आदि जो सब गोत्र प्रचलित हैं वे भी उसी अनुकरणके फल हैं।

बहुतेरे मत्स्यजीवी राजवंशधरोंको भी इनकी शाखा बतलाते हैं किन्तु यथार्थमें वे कोचजातीय हैं, मालोंके साथ उनका कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। फाटार या व्यापारी मालो नामकी एक और श्रेणी है जो मछली नहीं पकड़ती, पर मछली काट कर बेचती है। वह मालो जातिसे पृथक् तथा मुसलमान धर्म्मावलम्बी है।

इनमें सगोत्र या मातृगोत्रमें विवाह निषिद्ध है। अलावा इसके सात पीढ़ी तक पिण्डप्रतिबन्धकताको छोड़ विवाह देनेका नियम प्रचलित है। उच्चश्रेणीके हिन्दू जैसा इनमें भी विवाह कार्य सम्पन्न होता है। इनमें बहुविवाह प्रचलित है किन्तु छोटी सालीको छोड़ दूसरी किसी भी स्त्रीसे विवाह करनेकी प्रथा नहीं देखी जाती। स्त्रीके बदचलन होने पर उसे स्वामी छोड़ देता तथा वह जातिसे निकाल दी जाती है।

ये प्रधानतः वैष्णवधर्म्मावलम्बी हैं। गोसाई इनके दीक्षागुरु होते हैं। पतित ब्राह्मण साधारणतः इनका पौरोहित्य करते हैं। जिस नदीमें ये नाव खेते या मछली पकड़ कर जीविका निर्वाह करते हैं उस नदीको ये बड़ी भक्तिके साथ समय समय पर पूजा देते हैं। श्रावण मासके महोत्सवमें मालाकुमारीकी पूजा करनी होती है।

नदीके किनारे ही ये प्रधानतः शवदाह करते हैं। तीस दिनमें श्राद्ध होता है। उसके बाद जातिका भोज होता है। अनन्तर एक वर्ष तक प्रति मास एक एक मासिक तथा वर्ष वर्षमें वार्षिक श्राद्ध होता है। किसी व्यक्तिकी यदि अपघात मृत्यु हो जाय, तो चौथे दिनमें तथा इकतीसवें दिनमें शेष श्राद्ध होता है।

हिन्दू-समाजमें ये विशेष हेय समझे जाते हैं। ब्राह्मण इसके हाथका जल ग्रहण नहीं करते। ये कैवर्त्त और तीवर जातिसे नीच हैं।

मालोक—एक प्राचीन कवि।

मालोजी—रेणुकास्तोत्रके प्रणेता।

मालोपमा (सं० स्त्री०) अलङ्कारभेद, एक प्रकारका उपमालंकार जिसमें एक उपमेयके अनेक उपमान होते हैं और प्रत्येक उपमानके भिन्न भिन्न धर्म होते हैं। इसका लक्षण—

"मालोपमा यदकस्योपमान बहु दृश्यते।" (साहित्यद० १०)

उदाहरण,—

"वारिजेनेव सरसी शशिनेव निशीथिनी।
यौवनेनेव वनिता नयेन श्रीर्मनोहरा॥" (साहित्य द० १०)

माल्य (सं० क्ली०) मालेवेति मालाचतुर्वर्णादित्वात् ष्यञ्। १ पुष्प, फूल। २ पुष्पस्रक्। इसका गुण—

"वृष्यं सौगन्धमायुष्यं काम्यं पुष्टिवलप्रदम्।
सौमनस्यमलक्ष्मीघ्नं गन्धमाल्यनिषेवणम्॥"

(चरक सू० ५ अ०)

३ मस्तकन्यस्त पुष्पदाम, वह माला जो सिर पर धारण की जाय।

देवताओंको माला गंधादि दान करनेसे अशेष फललाभ होता है और अन्तमें उसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है। पुराणादिमें माला दानादिके फलका विस्तृत विवरण लिखा है। नरसिंहपुराणमें कहा है,—वैष्णवगण यदि सहस्र जातिपुष्प द्वारा सुन्दर मालाकी रचना कर भक्तिपूर्वक विष्णुको चढ़ावे, तो कोटिकल्प तक वे सूर्यलोकमें वास कर सकते हैं। जातीपुष्पके साथ कपूर दान करनेसे और भी अधिक पुण्य होता है। स्कन्दपुराणमें लिखा है, कि थोड़े खिले हुए मालती पुष्पकी माला बना कर हरिके मस्तक पर चढ़ानेसे अश्वमेधका फल लाभ होता है। कार्त्तिक मासमें मालतीकी मालासे यदि हरिकी अर्चना की जाय, तो वैष्णवको मृत्युभय नहीं रहता।

"मालती कलिकामालामीषद्विकसिता हरेः।
स्वर्णलक्षाधिकं पुष्पं माला कोटिगुणाधिका॥"

(हरिभक्तिवि०)

"दत्त्वा शिरसि विप्रेन्द्र! वाजिमेधफलं लभेत्॥"

(स्कन्दपु०)

सुन्दर सुगन्धित पुष्पोंकी माला बना कर देवताको समर्पण तथा स्वयं धारण करनेसे धर्म तथा स्वास्थ्य दोनोंकी उन्नति होती है। उत्तम माला धारण करनेसे

मानसिक और शारीरिक शक्ति बढ़ती है, ऐसा शास्त्रोंमें कहा है। माला पहन कर स्वयं उसे गलेसे उतार न फेंकना चाहिये तथा केशोंके बाहर भी माला धारण निषिद्ध है।

"नाश्नीयात् सधिवेलायां नगच्छेन्नापि सविशेत्।
न चैव प्रलिखेद्भूमिं नात्मनोपाहरेत् स्रजम्॥"

"न हि गर्हां कथा कुर्याद्बहिर्माल्यं न धारयेत्।
गवाञ्च यान पृष्ठेन सर्वथैव विगर्हितम्॥" (मनु ४ अ०)

'न च माला धृता स्वयमेवापनयेदर्थादन्येनापानयेदित्युक्तमिति, केशकलापाद्बहिर्माल्यं न धारयेदिति च।' (कुल्लूक)

अपने हाथसे उठा कर माला नहीं पहननी चाहिये, इससे कोई फल नहीं होता, बल्कि अति शीघ्र श्रीभ्रष्ट होना पड़ता है।

"स्वयं माल्यं स्वयं पुष्पं स्वयं घृष्टञ्च चन्दनम्।
नापितस्य गृहे क्षौरं शक्रादपि हरेत् श्रियम्॥"
(कर्मलोचन)

अग्निपुराणमें लिखा है—श्रद्धापूर्वक ब्राह्मणोंको निमन्त्रण कर यदि गन्धमाल्यादि द्वारा उन्हें प्रसन्न किया जाय, तो भगवान् उस पर बहुत सन्तुष्ट होते हैं।

आमन्त्रयित्वा यो विप्रान् गन्धमाल्यैश्च मानवः।
तर्पयेच्छ्रद्धया युक्तः स मामर्चयते सदा॥" (अग्निपु०)

माला पहन कर बाहर नहीं जाना चाहिये।

"बहिर्माल्यं बहिर्गन्धं भार्यया सह भोजनम्।
विमृष्यवाद कृत्वा वा प्रवेशञ्च विवर्ज्जयेत्॥" (कूर्मपु०)

माल्यक (सं० पु०) १ मदनवृक्ष, दौनेका पेड़। २ माला।

माल्यचन्दन (सं० क्ली०) सम्मानार्ह व्यक्तिकी सम्मानरक्षाके लिये प्रदत्त मालाचन्दनादि वस्तु।

माल्यगुण (सं० पु०) मालाका गुण।

माल्यजीवक (सं० पु०) मालाकार, माली।

माल्यपिण्डक (सं० पु०) माल्यगुच्छ।

माल्यपुष्प (सं० पु०) मालाकाराणि पुष्पाण्यस्य। शणवृक्ष, सनका पेड़।

माल्यपुष्पिका (सं० स्त्री०) माल्यपुष्प कन्-टाप्, अत इत्वञ्च। शणपुष्पी। शणपुष्पी देखो।

माल्यवत् (सं० पु०) माला-मतुप् मस्य वः। १ पर्वतविशेष।

"सोऽयं शैलः ककुभसुरभिर्माल्यवान्नाम यस्मिन्।
नीलस्निग्धः श्रयति शिखरं नूतनस्तोयवाहः॥"
(उत्तर रामचरित)

सिद्धान्तशिरोमणिके मतसे यह पर्वत केतुमाल और इलावृत वर्षके सीमापर्वतरूपसे निर्दिष्ट है। नील और निषध पर्वत तक इसका विस्तार है।

२ राक्षसविशेष। यह राक्षस गन्धर्वकन्या देववतीके गर्भसे राक्षस सुकेशके औरससे उत्पन्न हुआ है। इसके भाईका नाम सुमाली था। इसी सुमालीकी कन्या निकषाके गर्भसे विश्वविख्यात रावणका जन्म हुआ था। (रामायण उ० ६ स०) (त्रि०) ३ मालाविशिष्ट, जो माला पहने हो।

माल्यवती (सं० स्त्री०) पुराणानुसार एक प्राचीन नदीका नाम। (त्रि०) २ जो माला पहने हो।

माल्यवन्त (सं० पु०) माल्यवान् देखो।

माल्यवान् (मालवान्)—बम्बई प्रदेशके रत्नगिरि जिलान्तर्गत एक उपविभाग। यह अक्षा० १६° १' से १६° १६' उ० तथा देशा० ७३° २७' से ७३° ४१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २४० वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें मालवान नामक एक शहर और ५८ ग्राम लगते हैं। इसके उत्तरमें देवगढ़ उपविभाग पूर्वमें सामन्तवाड़ी-सामन्तराज्य, दक्षिणमें कालीखाड़ी और पश्चिममें अरब-सागर है।

रत्नगिरिका अधित्यकामय उपकूलभाग ले कर यह उपविभाग संगठित है। इसके मध्य हो कर कोलम्ब और कालावली खाड़ी चली गई है। इस उपविभागके मध्यदेशमें जंगलोंसे आच्छादित गिरिमाला शोभा देती है। पथरीली जमीन होने पर भी फसल अच्छी लगती है। काली और कालावली खाड़ीके निकट धान और ईख बहुतायतसे उपजती है। मालवान उपसागरके राजकोट अन्तरीपमें स्टीमरोंके रहनेके लिये एक सुन्दर बन्दर है। उक्त दोनों खाड़ीमें छोटी छोटी नावें २० मील तक माल ले कर आती जाती हैं। मालवान् उपकूलस्थ देमजढ़, आचड़ा और माल्यवान् बन्दरमें वाणिज्य जोरों चलता है।

२ उक्त उपविभागका एक नगर। यह अक्षा०

६१° ३' उ० तथा देशा० ७३° २८' पू० रत्नगिरि शहरसे ७० मील दक्षिणमें अवस्थित है। जनसंख्या २० हजार है। माल्यवान् उपसागरके सम्मुख भागमें पर्वतसंकुल छोटे छोटे द्वीप रहनेके कारण नावें बड़ी सावधानीसे ले जानी होती है। इन पर्वतज द्वीपोंमें जो बड़ा द्वीप है उसमें महाराष्ट्रकेशरी शिवाजी द्वारा प्रतिष्ठित इतिहास प्रसिद्ध सिन्धुगढ़ तथा पद्मगढ़ नामक दो दुर्ग मौजूद हैं। पद्मगढ़ अभी भग्नावस्थामें पड़ा है। इसके पीछे और भी एक छोटे द्वीपमें प्राचीन मालवान् नगर प्रतिष्ठित था। अभी चर पड़ जानेसे वह द्वीप भारतवर्षमें मिल गया है। वर्त्तमान माल्यवान् नगर भी अभी पहलेके जैसा समृद्धिशाली नहीं रहा। उसका बहुत कुछ अंश टूट फूट गया है और वहां ताड़के बहुतसे पेड़ दिखाई देते हैं। नये नगरके मध्यस्थलमें एक ऊंची भूमिके ऊपर राजकोट दुर्ग अवस्थित है। उसके तीनों ओर समुद्र-उपकूल है। मराठा-डकैत इस दुर्भेद्य दुर्गमें रह कर अपनी दस्यु वृत्तिको चरितार्थ करता था। १८१२ ई०में करवीरकी सन्धिके बाद कोल्हापुरके राजाने यह दुर्ग अंगरेजोंको समर्पण किया। उसी साल अंगरेज-सेनापति ल्युनल स्मिथने यहांके डकैतोंको समूल निर्मूल किया था।

इस नगरके पास ही लोहेकी एक खान पाई गई है। यहां नमक तैयार होता है। शहरमें एक सब-जजकी अदालत और ११ स्कूल हैं जिनमें २ बालिका-स्कूल हैं।

माल्यवान्—राक्षसविशेष। यह माली और सुमालीका भाई था। इसके पिताका नाम सुकेश और माता गन्धर्व कन्या वेदवती थी।

माल्यवृत्ति (सं० पु०) वह जो फूल और माला बेच कर अपनी जीविका चलाता हो।

माल्या (सं० स्त्री०) तृणभेद, एक प्रकारकी घास,

माल्यापण (सं० पु०) माल्य-विक्रयस्थान, फूलकी दूकान।

माल्ल (सं० पु०) मल्ल-चातुरर्थकत्वात् अञ्। वर्णसंकर जातिविशेष। यह जाति ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें लेट-पिता और धीवरी मातासे उत्पन्न कही गई है।

माल्लवास्तव (सं० त्रि०) मल्लवास्तु-सम्बन्धीय।

माल्लवी (सं० स्त्री०) मल्ल स्वार्थे अण्। मल्ल यात्रा, मल्लोंकी विद्या वा कला।

माल्ला (मल्लाह)—धीवर और नाव चलानेवाली जातियों की एक जाति। बङ्गाल और विहार प्रदेशकी नाव चलानेवाली जाति माल्ला या मल्लाह नामसे परिचित हैं। इस समय उत्तर-भारतमें कई निकृष्ट जातियां भी मल्लाह नामकी एक स्वतन्त्र जाति हो गई हैं। इन्होंने अपना अपना एक एक दल कायम कर लिया है। जातीयतत्त्व-का अनुसन्धान करनेवाले रिस्ले साहबने बङ्गालके मल्लाहोंमें मल्लाह, भूरिया या भुरियारी, पाण्डवी, या बघ-रिया, चैन या चै, सुरारा, गुरिया, तोयर, कुलवत्, केवट (खेवट) आदि दल निर्देश किये हैं। उत्तर-पश्चिम-भारतमें मल्लाह, केवट, टियर, कर्वाक, निषाद, मछवाहा, मांझी आदि जातिके लोग नावें चलाते और धीवरका व्यवसाय कर मल्लाह नामसे पुकारे जाते हैं। ये द्राविडीय जातिसे सम्पूर्णतः अलग हैं।

मल्लाह अपनेको विन्ध्यवासी निषादोंके वंशधर बतलाते हैं। ऋक्संहिता, रामायण और महाभारतके नलोपाख्यानमें इस निषाद जातिका नाम दिखाई देता है। यह जाति नलके राजत्वके समय विन्ध्य और ऋक्ष-पर्वतके कटिदेशसे विदर्भ और कोशल-राज्य तक फैल गई थी। गङ्गातीरवर्त्ती शृङ्गवेरपुर नगरमें इस जातिका बास था, जिसका रामायणसे ही पता चलता है। श्रीरामचन्द्र जब शृङ्गवेरपुरमें पहुंचे तब निषाद-राजने उनका आदर सत्कार किया था। मनु महाराजने निषादोंको मार्गव नामसे उल्लेख किया है।

बाथमा या श्रीवास्तव मल्लाह कहते हैं, कि वे श्रीवास्तव कायस्थ थे और श्रीनगरमें वास करते थे। वहांके राजाने इस जातिकी एक सुन्दरी कन्याका पाणि-ग्रहण करनेकी इच्छा प्रकट की, किन्तु इस जातिने अस्वीकार कर दिया। इस पर राजाने इस जातिको अपने राज्यसे निकाल दिया। इसी समयसे किसी निविड़-वनके पार्वत्य-प्रदेशमें यह जाति आ कर रहने लगी। यहां इस निकृष्ट वृत्ति अवलम्बनसे ही अपनी जीविका-निर्वाह किया करती है।

गाङ्गेय-उपत्यकाके पूर्व ओरके अधिवासी मल्लाहों-का कहना है, कि चित्रकूट-पर्वत पर आनेके समय उनके पूर्वपुरुष दशरथ-तनय रामचन्द्रको नदी पार कराया था।

रामचन्द्रने नदी पार कर जिस पथका अनुसरण किया था, वह इस समय 'रामचौरा'के नामसे विख्यात है। इस समय भी वहां मल्लाहगण पूर्ववत् नदी पार कराया करते हैं। मिर्जापुरके रहनेवाले मल्लाह टौंस (तमसा) नदी तीरवर्ती शीर्षा ग्राममें रहते और नावोंके चलानेका काम करते हैं। बनारसके मल्लाहोंका कहना , कि रामचन्द्रने प्रसन्न हो कर उनके दलपतिको एक घोड़ा दिया। निषाद दलपतिने मूर्खताके कारण घोड़ेकी लगामको मुंहकी ओर न लगा पूंछकी ओरसे लगाया था। उसी समय से उनमें नौकाके पीछे पाल लगानेकी प्रथा हो गई।

इन किम्वदन्तियोंमें कुछ तथ्य हो या न हो किन्तु इतना जरूर कह सकते हैं, कि प्राचीन कालमें जो अनार्य निषाद-सुत मार्गव जाति नाव चलाया करती थी, वही मुसलमानी युगसे अरबी मल्लाह नामसे पुकारी जाने लगी। इनमें जो स्वतन्त्र एक श्रेणी विभाग था, वह भी एक उत्तम दलमें परिणत हुआ है। जाति-तत्त्वविद् पण्डितोंका भी यह अनुमान है। यह अनु-मान कहां तक युक्तिसंगत है, वह विवेचनीय है। निषाद आदि छोटी जातियोंके सिवा मुसलमान आदि अन्यान्य जातियोंमें भी मल्लाह जातिका अस्तित्व देखा जाता है। इस समय निम्न शूद्रश्रेणीकी छोटी छोटी अनार्य जातियां भी इसी वृत्तिके अवलम्बन पर बाध्य हुई हैं। बङ्गालमें इस समय गौरी, चाइनविन्द, केवट, तोयर, सुरियारी, सुरह्या, माली और केवर्त्त भी माल्ला नामसे पुकारे जाते और मल्लाहका काम करते हैं।

गत मनुष्यगणनासे मालूम हुआ है, कि हिन्दू मल्लाहोंमें ६२५ शाखायें तथा मुसलमान मल्लाहोंमें २२ शाखायें हैं। इनमें अलीगढ़का चौधरिया, मथुराका वालिया, आगरे और मैनपुरी जिलेका जरिया, कानपुरका भोक, इलाहा-वादका नाथू, बनारसका भारमार, गाजीपुरका तीवर, बलियाका कुलवन्त, गोरखपुरका गौंडिया, वस्तीका घेल फोंडा, महोद्र, सोनहार और तुरहा, गढ़वालका भोंटिया और मछहा, लखनऊ और बारावंकी जिलेका राजघटिया, उन्नाव जिलेका धार, फैजाबादका खरौतिया और सुल-तानपुरका खास तथा जलछत्री शाखा ही प्रधान हैं। उपर्युक्त दल और शाखाके सिवा इलाहाबादके घोघ, खड़विन्द, बाथमी आदि और भी कई शाखा जातियोंके नाम दिखाई देते हैं।

उपर्युक्त श्रेणीकी सभी जातियां निषादवंश-सम्भूत नहीं हैं। श्रावस्ती देशमें रहनेके कारण बाथवा, श्रीबाथव या श्रीवास्तव नामसे परिचित हैं। चाइन चवं नामक जातिच्युत वैश्य जातिका एक शाखासे उत्पन्न है। घुत्रिया, केवट, खड़विन्द, निषाद आदि जातियां निषाद की शाखायें हैं।

इन जातियोंमें परस्पर खानपान नहीं है और तो क्या हुक्का पानीकी भी एकता नहीं है। इनमें बुड्ढोंकी एक पञ्चायत बनाई जाती है। यह पञ्चायत स्वजाति लोगोंके गुण और दोषों पर विचार करते हैं। यदि किसीको पञ्चायत जातिच्युत करती है, तो वह भोज दे कर जातिमें मिल जाता है। जो सामाजिक अवस्थामें अपेक्षाकृत उन्नत हैं वे ही बाल्यविवाहके पक्षपाती हैं। विवाहके पहले यदि कन्या पर-पुरुष पर आसक्त हो, तो उसको समाजमें बड़ी लांछना भोग करनी पड़ती है। स्वजातिके पुरुषसे आसक्त होने पर उतना दोषावह नहीं होता, यदि अन्य किसी जातिके पुरुषसे प्रणयासक्त हो, तो वह कन्या और उसका पिता जातिच्युत कर दिया जाता है। किन्तु जातिके लोगोंको केवल एक भोज देनेसे ही सब झगड़ा तय हो जाता है। वह कन्या फिर समाजमें विवाह कर सकती है।

इनमें विवाहका कोई नियत निर्दृष्ट समय नहीं और एक वंशमें विवाह करनेमें कोई अड़चन दिखाई नहीं देती। जो अपने वंशको जानते हैं, वे अपने वंशमें कभी विवाह-सम्बन्ध नहीं करते। हां, जो चार पांच पीढ़ीके ऊपर अपने वंशको भूल गये हैं। वे ही भूलसे अपने वंश में विवाह कर सकते हैं।

इनकी विवाह-पद्धति चढ़ौवा नामसे विख्यात है। पहले वर और कन्याका देखा देखी, उसके बाद कुण्डली-का मिलान, इसके बाद वर-कन्याको वस्त्र उपहार दे विवाह-सम्बन्ध दृढ़ किया जाता है। इसके बाद पण्डितों-को बुला कर शुभ दिन नियत कर वर-कन्याको तेल ऊबटन लगाया जाता है। इसके बाद लग्न ठीक कर दोनों पक्ष अपने अपने हितनात इष्ट-मित्रको निमन्त्रण दे कर बुलाते हैं।

जब कन्याके घर वारात जाती है, तब गणेशजीकी पूजा की जाती है। यहां गृहदेवता और पितृपुरुषगणके लिये अ ंदान (देवता और पितरका नेवतना) आदि शुभ कर्मोंका अनुष्ठान होता है। वर आ कर कन्याके ग्राममें उसके लिये नियत स्थानमें ठहरेगा। यहां नाइन वर-कन्याका 'गेंठ बन्धन' करती हैं। पांच वार प्रदक्षिणा करनेके वाद यानी पांच बार भावरि फेरनेके वाद वर मांगमें सिन्दुर प्रदान करता है, वस विवाहकी विधि हो गई। इसके वाद यहां स्त्रियोचित रश्म-रिवाज शुरू होता है। विवाह हो जानेके वाद वर कन्याको घरमें लाये जाते हैं। यहां वर शिरसे मौर (मयूर) उतार कर दही और मिष्टान्न खाता है। इस समय वरसे वोलो-ठठोली करनेवाली स्त्रियां हंसती, वोलती और तरह तरह-का मनविनोद कर वरका मनरञ्जन करती हैं। जब वर लौट कर घर आता है, तब विवाहकी खुशीमें गंगाजी-की पूजा करता है। उसी दिन कंकण आदि खुलता है।

इनमें विधवा विवाह प्रचलित है। यह सगाई, धरौना और वैठकीके भेदसे तीन प्रकारका है। स्वामीके कनिष्ठ भ्राताको पुनः पति बना लेना इनका कर्त्तव्य है। किन्तु इसका देवर बहुत छोटो उम्रका हो, तो वह वाध्य हो कर दूसरा पति कर लेती है।

यदि कोई रमणी वन्ध्या या गृहकर्म करनेमे असमर्थ हो, तो उस स्त्रीको सहायतार्थं सगाई करके पुरुष दूसरी विधवाका पाणि-ग्रहण कर सकता है। किन्तु साधारणतः जिनकी पत्नियां मर चुकी हैं, वे ही विधवा विवाह करते हैं। पुरुषोंके नावोंको ले कर देश विदेश चले जाने पर इनकी स्त्रियोंका आचरण ठीक नहीं रहता है। इसी कारणसे स्त्री-त्याग, भोजकी अधिकता तथा सगाई की प्रथा कायम है।

स्त्रीके गर्भ धारण करने पर किसी संस्कारकी आवश्यकता नहीं होती। पुत्र होने पर छः दिनमें और कन्या उत्पन्न होने पर आठ दिनमें षष्ठी पूजा होती है। आठवें दिन अशौचान्त होने पर पण्डित आ कर लड़केका राशि नाम कह देते हैं। आठ वर्षकी कम उम्रके वालकके मरने पर उसे जमीनमें गाड़ देते हैं। जमीनमे वहीं गाड़ते हैं, जहां गङ्गा नहीं है, जहां गङ्गा है वहां गङ्गाजीमें फेंक देते है और उसका श्राद्ध नहीं करते। पुरुषके लिये दश दिनमें दश पिण्ड और स्त्रियोंके लिये नौ दिनमें नौ पिण्ड देने पड़ते हैं। यहां ब्राह्मण या महापात्र आ कर यजमानी वृत्ति करते हैं। वर्षमें जो श्राद्ध करते वह 'वरषी' नामसे विख्यात है। वरखी या वरषीमें ये केवल दो पिण्ड देते है। पुत्रहीन व्यक्तियोंके लिये एक ही पिण्ड देने-की व्यवस्था है। कोई कोई गयाधाममें जा कर पिण्ड-दान करते हैं। किसी दूर देशमें मरने पर "नारायण वलिरूप"-श्राद्ध किया जाता है।

ये महादेव, काली, भगवती, महावीर, गङ्गा, महालक्ष्मी, महासरस्वती जटाईवावा, मशानदेवी, पांचोपीर, परिहार, गांजीमियां आदिकी पूजा करते हैं। दशहराके दिन ये गङ्गाजीकी पूजा करते हैं। सिवा इसके वीमारी होने पर ये वीरतियां वीरकी पूजा किया करते हैं। माता शीतलाकी पूजा मिष्टान्नसे की जाती है। दूर देशकी यात्रा करने पर नावको माला पहना कर उसको पूजा और होम भी करते हैं।

माल्य (सं० क्लो०) मूर्खता, विवेकहीनता।

माल्ह (सं० पु०) १ मल्ल देखो। (स्त्री०) २ माल देखो।

मावत् (सं० त्रि०) मत्सदृश, मेरे जैसा।

मावल—वम्वई प्रदेशान्तर्गत सह्याद्रिके समीप पूना जिलेका एक महकूमा। यह अक्षा १८° ३६' से ले कर १६° उ० तथा देशा० ७२° ३६' से ले कर ७३° ५१' पू०के वीच पड़ता है। क्षेत्रफल ३८५ वर्गमील है। इस स्थानका अधिकांश जंगलाकीर्ण है यहांकी मिट्टी मटमैली और लाल है। इन्द्रायणी और अन्ध्रा नामकी दो प्रधान नदी महकूमे हो कर वह गई है। धांगड़, कुली, माली, माङ्ग, माड़, कुणवी आदि जातियां इस प्रदेशमें कृषि कार्य करती हैं। ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे-लाइन इसी हो कर गई है। यहांके पहाड़ी प्रदेशमें विशापुर और लौहगढ़ दुर्गका भग्नावशेष देखा जाता है।

मावली—दक्षिण भारतकी एक पहाड़ी वीर जातीका नाम। इस जातिके लोग शिवाजीकी सेनामें अधिकतासे थे। मावलीसैन्य देखो।

मावलोकर—मान्द्राज प्रदेशके त्रिवाङ्कोड़ जिलेका एक तालुक और उसका प्रधान नगर। इसमें १४५ ग्राम लगते हैं। नगरमें एक प्राचीन दुर्गका खंडहर देखा जाता

है। इससे मालूम होता है, कि एक समय यह एक प्रसिद्ध स्थान था। उस दुर्गका घेरा २ मील है और उसमें २४ बुर्ज तथा २४ प्रवेशद्वार हैं।

दुर्गके मध्यस्थमें एक प्राचीन पागोडा मौजद है। उसके चारों ओर जो मकान है उनमें अभी राजाके दफ्तर लगते हैं। दक्षिण भागके एक 'कोटारम'में राजवंशधर रहते हैं। दुर्गके उत्तर-पूर्व कोणमें सिरीय ईसाइयोंकी वासभूमि देखी जाती है।

मावलीसैन्य—शिवाजीकी सेनाओंमें एक पराक्रान्त युद्ध विशारद सैनादल। इनके अदम्य प्रतापसे औरङ्गजेबके सुशिक्षित मुसलमान सैनिकोंने कई बार रणक्षेत्रमें पीठ दिखाई थी। ये शब्दभेदी बाण चलाते थे। तलवारके युद्धमें भी ये बड़े दक्ष थे। सन् १६७० ई०के फरवरी महीनेमें शिवाजीकी आज्ञासे तानोजी मालश्रोने अपने कनिष्ठ भाई सूर्याजीकी सहयोगितासे १००० सुशिक्षित मावली-सैन्य ले सिंहगढके दुर्भेद्य दुर्ग पर चढ़ाई की थी। सूर्याजीके अधीन कुछ सैनिकोंको रख उन्होंने बाकी सैनिकोंको ले कर सध्याके अन्धकारमें दुर्गकी ओर यात्रा की। वह किला पहाड पर अवस्थित था। तानोजीकी सेना रस्सीकी बनी सीढियोंसे उस अज्ञात और अन्धकारपूर्ण पहाडी पर चढ़ने लगी। केवल ३०० सैनिक ही ऊपर चढ़ चुके थे। ऐसे समय सिंहगढके पहरेदारोंने इन्हें देख लिया और वे मशाल जला कर युद्धके लिये आगे बढे। तानोजी अन्य उपाय न देख उन्हीं ३०० सैनिकोंको ले कर हा भीमवेगसे किले पर टूट पडे। किन्तु तानोजीके युद्धमें काम आनेके बाद उनकी मावलीसैन्य भाग खड़ी हुई और रस्सीकी सीढ़ीसे नीचे उतरने लगी। ऐसे समय सूर्याजी अपने सैनिकोंको ले कर वहा पहुंच गये और अपनी भागती हुई सैन्यको उत्साहित करने लगे। सैनिकोंने दूसरे सेनापतिको देख अपूर्व उत्साहसे 'हर हर बम बम' शब्दोंसे निस्तब्ध गगनको गूंज कर दिया और अदम्य उत्साहसे किले पर आक्रमण किया। यह देख राजपूत-सैनिक तितर-बितर हो गये। किले पर सूर्याजीका अधिकार हो गया। इस युद्धमें ३०० मावली और ४०० राजपूत मारे गये। सूर्याजीने शिवाजीके पास इस आनन्दका समाचार भेजा। इसी युद्धसे इनका नाम हुआ।

मावा (हिं० पु०) १ पीच, माड। २ निष्कर्ष, सत्त। ३ प्रकृति। ४ खोया। ५ वह दूध जो गेहूं आदिको भिगो कर वा कच्चा मल कर निचोड़नेसे निकलता है। ६ अंडेके भीतरका पीला रस, जरदी। ७ चन्दनका इत्र जिसे आधार बना कर फूलों और गंध द्रव्योंका इत्र उतारा जाता है। ८ मसाला, सामान। ९ हीरेकी बुकनी जिससे मल कर सोना चांदीको चमकाते हैं वा उन पर कुंदन या जिला करते हैं। १० वह गाढ़ा लसदार सुगंधित द्रव्य जिसे तमाकूमें डाल कर उसे सुगंधित करते हैं खमीर।

मावासी (हिं० स्त्री०) मवासी देखा।

मावेल्यक (सं० पु०) जातिविशेष।

माश (हिं० पु०) माष देखो।

माशब्दिक (सं० त्रि०) मा इत्याहेति (प्राग्व हतेष्ठक्। पा ४।४।१) इत्यत्र तदाहेति मा शब्दादिभ्य उपसंख्यानमिति वार्त्तिकोक्तत्वात् माशब्द ठक्। निषेधकर्त्ता, मना करनेवाला।

माशा (हिं० पु०) एक प्रकारका बाट या मान। इसका व्यवहार सोने, चांदी, रत्नों और ओषधियोंके तौलनेमें होता है। यह आठ रत्तीके बराबर और एक तोलेका बारहवा भाग होता है।

माशी (हिं० पु०) १ एक प्रकारका रंग। यह कालापन लिये हरा होता है। कपड़े पर यह रंग कई पदार्थोंमें रंगनेसे आता है। इनमें हड़का पानी, कसीस, हलदी और अनारकी छाल प्रधान हैं। इनमें रंगे जानेके बाद कपड़ेको फिटकरीके पानीमें डुबाना पड़ता है। २ जमीनकी एक नाप जो २४० वर्गगजकी होती है। (त्रि०) ३ उडदके रंगका, कालापन लिये हरे रंगका।

माशूक (अ० पु०) वह जिसके साथ प्रेम किया जाय, प्रेमपात्र।

माशूकी (फा० स्त्री०) माशूक होनेका भाव, प्रेमपात्रता।

माष (सं० पु०) माषस्य फलम्। माष अण् (लुपच पा ४।३।१६६) इत्यस्य फलपाक शुपामुपसंख्यानमिति काशिकोक्तेरणोलुप्; अथवा मस-घञ् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ व्रीहिभेद, उड़द। संस्कृत पर्याय—कुरुविन्द, धान्यवीर, वृषाकर, मासल, बलाढ्य, पित्र्य, पितृभोजन। इसका

गुण—स्निग्ध, बहुमलकर, शोषण, श्लेष्मकर, अनुष्ण-वीर्य, सहसा रक्त और पित्तप्रकोपकर, वातहर गुरु, बलकर, रोचक, स्वादु तथा श्रमसुखयुक्त व्यक्तियोंके लिये नित्यसेवनीय है। (राजनि०) भावप्रकाशके मतसे इसका गुण—गुरु, मधुर विपाक, स्निग्ध, रुचिकर, वायुनाशक, स्रंसनगुणयुक्त, तृप्तिकर, बलकर, शुक्रवर्द्धक, शरीरका उपचयकारक, मलमूत्रनिःसारक, स्तन्यवर्द्धक, मेदोजनक, पित्तवर्द्धक, कफकर तथा गुदकील, अर्दित, श्वास और परिणाम शूलनाशक। उड़दके दालके साथ मूली नहीं खानी चाहिये।

"मूलकं माषसूपेन मधुना च न भक्षयेत्।" (राजव०)

चतुर्दशी और रविवारको उड़दकी दाल नहीं खानी चाहिये। खानेसे चिररोगी और सातजन्म तक अपुत्रक होना पड़ता है।

"चिररोगी च माषके" इति "माषमामिषमासञ्च मसूरं निम्बपत्रक। भक्षयेद्यो रवेर्वारे सप्त जन्मन्यपुत्रक इति च।"

(तिथ्यादितत्त्व)

प्रतिदिन उड़दकी दाल खाना मना है। इससे कफकी वृद्धि होती है। कफकी वृद्धि होनेसे ही बुद्धि मोटी हो जाती है। इस सम्बन्धमें प्रवाद है,—

"अशेषशेमुषीनाशमाषमश्नामि केवलम्॥" (उद्भट)

२ परिमाण विशेष, माशा। पर्याय—माषक, मास (अमर और भरत) हेम, धानक। चरक, सुश्रुत आदि वैद्यक-ग्रन्थोंमें देशभेदसे माषका परिणाम पृथक् पृथक् बतलाया है। सुश्रुतके मतसे पांच गुंजे (घुंघची)-का और चरकके मतसे ६ ८ गुंजेका माष होता है। सुश्रुतके मतसे इसका कालिङ्गमान ५, ७, ८ गुंजा है। चरक और वैद्यकमें दूसरी जगह इसका मान १० और १२ गुंजा बतलाया है। चरकने जो १० रत्तीका इसका मान बतलाया है उसे गौड़माषल कहते हैं और यही माष सर्वत्र व्यवहृत होता है।

३ शरीरके ऊपर काले रंगका उभरा हुआ दाग या दाना, मसा। (त्रि०) ४ मूर्ख।

माषक (सं० पु०) माषप्रकारः माष-कन्। (स्थलादिभ्यः प्रकार वचने कन्। (पा ५।४।३) माशा, पांच रत्तीका परिमाण। लीलावती ग्रन्थमें भी पांच रत्तीका माशा बतलाया है—

"दशार्द्धगुञ्जं प्रवदंति माषं, माषाह्वयैः षोडशभिश्च कर्षम्।"

भावप्रकाशमें छः रत्तीका एक माष कहा है।

"षड्भिस्तु रत्तिकाभिः स्यान्माषको हेमधानकौ।
माषो गुञ्जाभिरष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत् क्वचित्॥"

२ व्रीहिभेद, उड़द। (भावप्रकाश०)

माषकलाय (सं० पु०) माषसंज्ञः कलायः शाकपार्थिव वत् समासः। स्वनामख्यात शस्य, उड़द।

माषतैल (सं० क्ली०) वैद्यकके अनुसार एक प्रकारका तेल जो अर्द्धाङ्ग, कम्प आदि रोगोंमें उपयोगी माना जाता है। बनानेका तरीका—तिलका तेल ४ सेर, काढ़ेके लिये उड़द, विजवंद, रास्ना दशमूल, जौ, कुलथी, बेर, बकरेका मांस प्रत्येक १६ पल, जल १६ सेर, शेष ४ सेर, चूर्णके लिये रास्ना, अलकुशीका मूल, सैन्धव, सोयां, रेंडीका मूल, मोथा, जीवक, ऋषभक, मेद, महामेद, ऋद्धि, वृद्धि कंकोली, क्षीरकंकोली, विजवंद, त्रिकटु, प्रत्येक २ तोला। इस तेलकी मालिश करनेसे अर्द्धाङ्ग, आक्षेपक, अपतानक, ऊरुस्तम्भ, भुजकम्प तथा अन्यान्य वायुरोग प्रशमित होते हैं।

(भैषज्य रत्ना०)

माषपत्रिका (सं० स्त्री०) माषपर्णी।

माषपर्णी (स० स्त्री०) माषस्य पर्णमिव पर्णं यस्याः बहुव्री, ततो ङीष्। वनमाष, जंगली उड़द। वैद्यकमें इसे वृष्य, बलकारक, शीतल और पुष्टिवर्द्धक माना है। पर्याय—हयपुच्छी, काम्बोजी, महासहा, सिंहपुच्छी, ऋषिप्रोक्ता, कृष्णवृन्ता, पाण्डु-लोमशपर्णिनी, आर्द्रमाषा, मांसमाषा, मङ्गल्या, हयपुच्छिका, हंसमाषा अश्वपुच्छा, पाण्डुरा, माषपर्णिका, कल्याणी, वज्रमूली, शालपर्णी, विसारिणी, आत्मोद्भवा, बहुफला, स्वयम्भु, सुलभा, घना, सिंहविन्ना, विशाचिका।

माषभक्तबलि (सं० पु०) माषश्च भक्तश्च तद्युक्तो बलिः। माष, तण्डुल और दधि मिश्रित पूजोपहारविशेष। कोई कोई उक्त द्रव्योंमें हलदी, घी और मधु भी मिलाते हैं। पूजापद्धतिमें दुर्गा, काली आदि देवताओंकी पूजामें माषभक्तबलि चढ़ानेकी व्यवस्था है। कालीको माषभक्तबलिदान करनेका मन्त्र इस प्रकार है।

"ओं जयत्व कालि सर्वेशे सर्वभूतमनमावृते ।
रक्ष मा निज भूतेभ्यो बलिं गृह्ण शिवप्रिये ॥
एष मासभक्तबलिः ओं काल्यै नमः ॥"

प्रार्थना-मन्त्र यथा—

ओं मातर्मातर्वरे दुर्गे सर्वकामार्थ साधिनि ।
अनेन बलिदानेन सर्वान् कामान् प्रयच्छ मे ॥" (कृत्यतत्त्व

माषयोनि (सं० पु०) खाद्यद्रव्यभेद, पापड ।

माषरा (सं० स्त्री०) माड, पीच ।

माषरावि (सं० पु०) लाट्यायन सूत्रानुसार एक ऋषिका नाम। ये माषराविन् ऋषिके गोत्रमें थे ।

माषवटी (सं० स्त्री०) वटिकौषधभेद, उड़दकी बनी हुई बड़ी । बड़ी देखो ।

माषवर्द्धक (सं० पु०) माषं वर्द्धयतीति वृद्ध-णिच ण्वुल् । स्वर्णकार, सुनार ।

माषशस् (सं० अव्य०) माषं माष ददातीत्यर्थे मास शस् । प्रतिमाष, एक एक उड़द करके ।

माषसूप (सं० पु०) भृष्टमाष प्रस्तुत युष, भूने हुए उड़दका जूस । इसका गुण—स्निग्ध, वृष्य, वायुनाशक, उष्ण, सन्तर्पण बलकर, सुस्वादु, रुचिकारक ।

माषाद (सं० पु०) माषमत्तातिं अद् अण् । १ कच्छप, कछुआ । (त्रि०) २ माषभक्षक, उड़द खानेवाला ।

माषादिकाथ (सं० पु०) वैद्यकके अनुसार एक प्रकारका काढ़ा जो पक्षाघातरोगमें उपयोगी माना जाता है । प्रस्तुत प्रणाली—माषकलाय, अलकुशी, भरेण्डका मूल, विजबंद और जटामासी, कुल मिला कर २ ताला ले कर आध सेर जलमें पाक करे । जब आध पाव जल बच रहे, तब नीचे उतार ले । पीछे ऊपरसे १ माशा हींग और १ माशा सैंधव डाल दे । प्रति दिन यह काढ़ा पीनेसे पक्षाघात रोग जाता रहता है ।

मासादितैल (सं० क्ली०) तैलौषधभेद । प्रस्तुत प्रणाली—तिल तैल ४ सेर, चूर्णके लिये माषकलाय, अलकुशीका वीज, अतीस, भरेण्डका मूल, रास्ना, शतमूली और सैंधव कुल मिला कर १ सेर, काढ़ेके लिये माषकलाय १६ सेर, जल १ मन २४ सेर, शेष १६ सेर, विजबंद १६ सेर, जल १ मन २४ सेर शेष १६ सेर । इस तेलका यथाविधान पाक कर सेवन करनेसे पक्षाघात दूर होता है ।

माषान्न (सं० क्ली०) माषकृत अन्न । इसका गुण—दुर्जर, मांसवृद्धिकर, गुरु, वातनाशक और वृष्य । (वैद्यक)

माषाश (सं० पु०) अश्व, घोड़ा ।

माषिक (सं० पु०) १ जोवशाक । (त्रि०) २ माष परिमित

माषिण (सं० क्ली०) माषाणां भवनं क्षेत्रम् । माषका खेत ।

माषेण्डरि (सं० स्त्री०) माषपिष्टविकृति ।

माषोण (सं० त्रि०) माषेन ऊनः । एक माशेसे कम ।

माष्य (सं० पु०) माष बोने योग्य खेत, मशार ।

मास् (सं० पु०) माङ् माने (सर्वधातुभ्योऽसुन् । उण् ४।१८८) इत्य-सुन् । १ चन्द्रमा । २ मास, महीना ।

"चतुर्थे मासि कर्त्तव्य शिशोर्निष्क्रमणं गृहात् ।
षष्ठेऽन्नप्राशन मासि यद्वेष्ट मङ्गल कुले ॥" (मनु २।३४)

(क्ली०) ३ मांस, गोश्त ।

मास (सं० पु०) मस् परिमाणे भावे घञ् । १ मास परिमाण, माशा । मस्यते परिमीयते असौ-अनेन् वेति मस् घञ् । १ शुक्ल कृष्ण पक्षद्वयात्मककाल, महीना । मास १२ होता है । मास समयका अंशविशेष है । युग, वर्ष, ऋतु, मास, दिन, दण्ड आदि सभी अखण्ड दण्डायमान काल या समयके अंश हैं ।

मलमासतत्त्वमें मासका विशेष विवरण लिखा गया है । इसीसे यहां संक्षिप्त विवरण दिया जाता है । मास या महीनेको चार भागोंमें विभक्त किया जाता है । जैसे :—१ सौरमास, २ चान्द्रमास, ३ नाक्षत्रमास और ४ सावनमास ।

१ सौरमास—सूर्य जितने दिनों तक एक राशिमें रहते है, उतने दिनोंका एक सौरमास होता है । सूर्य की गति इसी मासकी नियामक है, इसीसे इसका नाम सौरमास है । सौरमास २९, ३०, ३१ और ३२ दिनोंका भी होता है । इससे कम और अधिक नहीं होता । बङ्गदेशमें इसी महीनेका व्यवहार होता है । साल और शकाब्द इसी सौरमाससे हुआ करता है ।

२ चान्द्रमास—तिथिघटित मासको ही चान्द्रमास कहते हैं । यह चन्द्रमास फिर दो तरहका है, १ मुख्यचान्द्र और २ गौणचान्द्र । शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे अमावस्या तक इस ३० तिथियोंसे जो चान्द्रमास होता है वह मुख्य चान्द्रमास और कृष्णपक्षकी प्रतिपदासे

पूर्णिमा तक इन ३० तिथियोंसे जो मास होता है, वह गौण चान्द्रमास कहलाता है। इसी चान्द्रमासके अनुसार वर्ष हुआ करता है।

३ नाक्षत्रमास—२७ नक्षत्रोंसे एक नाक्षत्रमास होता है। अश्विनीनक्षत्रका परिमाण ६० और भरणीनक्षत्रका परिमाण ६३ दण्ड इत्यादि क्रमसे २७ नक्षत्रोंके परिमाणोंको मिला कर जो समय बनता है, उसीको नाक्षत्रमास कहते हैं। अश्विनी-नक्षत्रसे आरम्भ कर रेवतीनक्षत्र तक जो समय होता है, वही एक नाक्षत्र मास है।

४ सावनमास—सावनमास भी दो हैं, सौर सावन और चान्द्रसावन। किसी भी तारीखसे आरम्भ कर ३० अहोरात्र (दिन-रात)-से जो मास होता है, वही सौरसावन है। जैसे १५वीं वैशाखसे १४वीं जेठ तक ३० दिनका एक सौरसावन हुआ। किसी भी तिथिसे आरम्भ कर ३० तिथियोंसे जो मास बनता है, वही चान्द्रसावन कहा जाता है। जैसे शुक्लपक्षकी द्वितीयासे परवर्त्ती शुक्ल पक्षीय द्वितीया तक जो समय होगा, उससे जो मास बनेगा वह चान्द्रसावन कहा जायगा। इनके अतिरिक्त नाक्षत्रसावनमास भी होता है।*

शास्त्रमें जिन सब धर्म-कर्मोंके करनेकी व्यवस्था है, उनमें मास, तिथि आदिका उल्लेख करना पड़ता है। मासोल्लेखकी जगह सौर और चान्द्रमासका उल्लेख करना आवश्यक है। इसीलिये इसके विशेष विशेष विधान अभिहित हुए हैं। स्नान, दान, श्राद्ध, विवाह आदि कर्मोंमें स्वेच्छापूर्वक मासोल्लेख करनेसे नहीं चल सकता। शास्त्रके नियमानुसार इन सब कामोंमें मासका उल्लेख करना होता है। किस काममें किस मासका उल्लेख किया जाना चाहिये उसका विवरण शास्त्रमें इस तरह लिखा है,—

पहले ही कह आये हैं, कि चान्द्रमास दो तरहका है, कर्मविशेषमें कहीं कहीं चान्द्रमासका और कहीं कहीं गौणचान्द्रमासका उल्लेख करना होता है। चूड़ा, उपनयन, विवाह, सभी तान्त्रिक कर्म, अगस्त्यके-लिये अर्घ्यदान, वैशाखमासका स्नान, दान हविष्यादि और उत्तरायणविहित पशुयागादि और सूर्यके अमुक राशिमें जाने पर यह कर्म करना होगा, अमुक ऋतुमें या अमुक अयनमें यह कर्म कर्त्तव्य है इसी तरहके विधिबोधित कर्ममें सौरमासका उल्लेख करना होगा। सौरमासका उल्लेख करने समय उस मासका नाम और अमुक राशिमें सूर्य वर्त्तमान है, यह भावबोधक उच्चारण करना होगा। जैसे,—"वैशाखे मासि मेषराशिस्थे भास्करे" इत्यादि। प्रत्येक सौरमासोल्लेखकी जगह राशि उल्लेख करनी होगी।

सूर्यका मेषराशि भोग करनेका काल वैशाखमास है। वृषराशिका भोगकाल ज्येष्ठमास है। इनके सिवा मिथुनमें सूर्य रहने पर आषाढ़, कर्कटमें श्रावण, सिंहमें भाद्र, कन्यामें आश्विन, तुलामें कार्त्तिक, वृश्चिकमें मार्गशीर्ष, धनुमें पौष, मकरमें माघ, कुम्भमें फाल्गुन और मीनमें चैत्रमास होता है। इन १२ मासोंमें पूर्वोक्त कर्मोंमें १२ राशियोंका उल्लेख करना होगा।

इनके सिवा अन्यान्य सभी कर्मोंमें चान्द्रमासका उल्लेख करना कर्त्तव्य है। चान्द्रमासोल्लेखकी जगह भी कभी तो मुख्यचान्द्र और कभी चान्द्रका उल्लेख करना होगा। इसका नियम यह है,—तिथि-विशेषविहित कर्ममें अर्थात् पञ्चमीमें सरस्वती-पूजा करनी चाहिये। अष्टमीमें उपवास करना चाहिये। इस तरह विशेष

---

* "चन्द्रमाः कृष्णपक्षान्ते सूर्येण सह युज्यते।
सन्निकर्षादथारभ्य सन्निकर्षमथापरम्॥
चन्द्रार्कयोर्वु धैर्मासश्चान्द्र इत्यभिधीयते।
सावने च तथा मासि त्रिंशत्सूर्योदयाः स्मृताः॥
आदित्यराशिभोगेन सौरमासः प्रकीर्त्तितः।
सर्वर्क्षपरिवर्त्तैस्तु नाक्षत्र इति चोच्यते॥"

चन्द्रार्कयोः सन्निकर्षात् दर्शात्। अथानन्तर प्रतिपदमारभ्य अन्यथा सन्निकर्षमारभ्येति ब्रूयात् अपर सन्निकर्ष यावत् तावत् कालश्चन्द्रः, एतेन सन्निकर्षादि सन्निकर्षान्तो मास इति नारायणोपाध्यामत निरस्तं त्रिंशदहोरात्मकः सावनः आदित्येक राशि भोगावच्छिन्नः सौरः, सप्तविंशति नक्षत्रभोगावच्छिन्नो नाक्षत्रः इति चतुर्विधा मासाः। तथा च ब्रह्मसिद्धान्ते—

"चान्द्रः शुक्लादिदर्शान्तः सावनस्त्रिंशता दिनैः।
एक राशौ रविर्यावत् कालं मासः सभास्करः।
सर्वर्क्षपरिवर्त्तैस्तु नाक्षत्रः इति चोच्यते॥" (मलमासतत्त्व)

विशेष तिथिके नामसे जो सब काम विहित हैं उसमें एवं ब्रह्मपुराणोक्त कर्ममात्रमें ही गौणचान्द्रमासका उल्लेख होगा। जन्मतिथि-पूजा, कृष्ण-जन्माष्टमी, शिवरात्रि, वारुणी, अपर पक्षीय श्राद्ध (आश्विनमासके कृष्ण पक्षका नाम अपर पक्ष है) आदि कर्मोंमें भी चान्द्रमासका उल्लेख होगा। पिता-माता आदिकी मृत तिथिमें श्राद्ध, स्नान, दान, गर्भाधान, नामकरण पुंसवन, सीमन्तोन्नयन इत्यादि कर्मोंमें ही मुख्यचान्द्र मासका उल्लेख करना आवश्यक है।

कार्त्तिक मासमें, माघमासमें और सौर मासमें, गौणचान्द्रमासमें या मुख्यचान्द्रमासमें भी प्रातःस्नान हविष्य और ब्रह्मचर्य्यादिका पालन करना चाहिये। मासोल्लेख भी तदनुसार ही होगा। कुछ लोगोंका कहना है, कि नवान्न श्राद्धमें मुख्यचान्द्रमासका ही उल्लेख करना होता है।

सौरमासके वैशाख आदि १२ नाम हैं वे सब मास निम्नोक्त प्रणालीसे मालूम होते हैं। जिस मासकी पूर्णिमामें विशाखा या अनुराधाका योग होता है, उस मासका नाम वैशाख है। विशाखा नक्षत्रमें होनेसे ही इस मासका नाम वैशाख हुआ। मुख्यचान्द्र वैशाख की उक्त पूर्णिमामें प्रथम पक्ष अन्त है और उक्त पूर्णिमामें गौणचान्द्र वैशाखको परिसमाप्ति है। सब मासोंके सम्बन्धमें ऐसा ही नियम है। जिस पूर्णिमामें ज्येष्ठा या मूल नक्षत्रका योग होता है, वही ज्येष्ठ मास कहलाता है। ज्येष्ठा नक्षत्रका विशेष सम्बन्ध रहनेके कारण उक्त मासका नाम ज्येष्ठ हुआ। पूर्वाषाढ़ा या उत्तराषाढ़ा नक्षत्र जिस पूर्णिमामें आता है, वही आषाढ़ है। श्रवणा वा धनिष्ठानक्षत्रके योगसे श्रावण, शतभिषा, पूर्व भाद्रपद अथवा उत्तर-भाद्रपदके योगसे भाद्रमास, रेवती, अश्विनी अथवा भरणीनक्षत्रके योगसे आश्विन; कृत्तिका या रोहिणीके योगसे कार्त्तिक, मृगशिरा या आर्द्रा नक्षत्रके योगसे मार्गशीर्ष या अग्रहायण पुनर्वसु या पुष्यासे पौष, अश्लेषा या मघासे माघ, पूर्वफाल्गुण या उत्तरफाल्गुनी नक्षत्रके योगसे फाल्गुन और चित्रा या स्वाती नक्षत्रके योगसे चैत्र मास होता है। इस तरह जिस जिस नक्षत्रका योग जिस जिस पूर्णिमामें होता है, उसीके नामानुरूप नाम होता है।

स्मार्त्त रघुनन्दन भट्टाचार्यने चान्द्रमासके ये जो नियम बनाये हैं कभी कभी इनमें व्यभिचार भी दिखाई देता है। फिर साधारणतः ये ही नियम दिखाई देते हैं।

मुख्यचान्द्रमासका और एक साधारण लक्षण इस तरह माना जा सकता है। शुक्लपक्षीय प्रतिपदाके अव्यवहित पूर्वक्षण अर्थात् पूर्व अमावस्याका चरम क्षण जिस सौरमासमें पड़ेगा, उसी शुक्लपक्षीय प्रतिपदसे अमावस्या तक ३० तिथियोंके नामके अनुसार सौरमासका नामकरण होगा। जैसे वैशाख मासकी एक अमावस्याका अन्त होनेसे परवर्त्ती शुक्लपक्षीय प्रतिपद्‌से अमावस्या तक जो मास होगा, वह मुख्यचान्द्र वैशाख है और उक्त शुक्लपक्षीय प्रतिपद्‌के पूर्ववर्त्ती कृष्णपक्षीय प्रतिपद्‌से गौणचान्द्र वैशाख आरम्भ होता है।

पञ्चाङ्गके साथ इन नियमोंको मिला कर देखनेसे सहज ही यह समझमें आ जाता है। नारायणोपाध्यायके मतसे अमावस्या तक मुख्यचान्द्रमास है। स्मार्त्त रघुनन्दनने इस मतका खण्डन किया है। उनका कहना है, कि ऐसा नियम बनानेसे वर्षमें छःसे अधिक चान्द्रमास नहीं हो सकते।

सौर और चान्द्र—इन दो तरहके महीनोंकी प्रयोजनीयता प्रदर्शित हुई। अभी नाक्षत्रमास और सावन मासकी प्रयोजनीयता दिखाई जायेगी। जन्मनक्षत्र यदि शनि मङ्गलवारको पड़े, तो उस महीनेका कल्मष नाम होता है और इस मासमें मनुष्योंको दुःख भोग करना पड़ता है।

> "जन्मनक्षत्रे यदि स्याता वारौ भौमशनैश्चरौ।
> स मासः कल्मषो नाम मनोदुःखप्रदायकः॥"
>
> (मलमासतत्त्व)

इस वचनके मास शब्दसे नाक्षत्र मास समझना होगा।

> "नक्षत्रसत्रायणानि चेन्द्रोर्मानेन कुर्य्यादगणात्मकेन।"
>
> (मलमासतत्त्व)

नक्षत्रक्षेत्रमें याज्ञिकोंके लिये प्रसिद्ध मास संवत्सर साध्य यागविशेषमें मासगणना नाक्षत्रमासके हिसाबसे होगा। सोमायनयागमें भी ऐसा ही नियम है। नाक्षत्र मासके नाम भेद नहीं, अर्थात् वैशाख, ज्येष्ठ आदि इस तरहके नाम नहीं हैं। संकल्प वाक्यमें मासका उल्लेख नहीं होगा। सौरमास अथवा गौणचान्द्रमासका

उल्लेख करनेकी विधि होनेसे वही करना चाहिये, नहीं तो मुख्यचान्द्र मासका उल्लेख करना उचित है। निम्नलिखित सावन मासके लिये भी यही नियम है। गणना होगी सावन मासके अनुसार और कर्मविशेषमें किसी जगह सौर और किसी जगह चान्द्रमासोल्लेख होगा।

गर्भाधान, पुंसवन, सीमान्तोन्नयन, नामकरण, चूड़ाकरण और उपनयन आदि तथा अशौचादिमें दिन मास और वर्ष-गणनाके लिये ही सावन मासको प्रयोजनीयता रहती है।

इसमें विशेषता यही है, कि जिस कर्ममें किसी मासके उल्लेख करनेका कोई विशेष नियम नहीं है वहां मुख्यचान्द्रमासका उल्लेख होगा। क्योंकि, मास कहनेसे मुख्यचान्द्रमासका ही बोध होता है। "मास् चन्द्रः तस्यायं मासः" चन्द्र सम्बन्धी यही है, यही अर्थबोधक मास शब्द है। चन्द्र शुक्ल और कृष्णपक्ष द्वारा (मस) परिमाण करते हैं, इसीलिये इसका नाम मास है। अतएव मास शब्द चान्द्रमासका ही बोधक है।*

वैशाखादि विशेष विशेष नाम लेनेसे ही मुख्य चान्द्र वैशाखादि समझना होगा। साधारणतः वैशाखमास कहनेसे लोग सौरवैशाख मास ही समझते हैं। किन्तु वह शास्त्रानुमोदित नहीं है। वैशाख कहनेसे चान्द्रवैशाख ही समझना चाहिये। जीमूतवाहन आदिने मास कहनेसे साधारणतः सौरमास निर्देश किया है। किन्तु रघुनन्दनने इसका खण्डन कर यह स्थिर किया है, कि मास शब्द चन्द्रमासका ही बोधक है।

सौर, चान्द्र, नाक्षत्र और सावन ये चार तरहके मास होते हैं। इन चार प्रकारके मासों द्वारा चार तरहके वर्ष होते हैं। जैसे,—१२ सौरमासोंमें एक सौर वत्सर, बारह चान्द्रमासमें एक चान्द्र वर्ष, १२ नक्षत्रमासोंमें एक नाक्षत्र वर्ष, और १२ सावन मासोंमें एक सावन वर्ष होता है। वैशाख मास प्रथम सौरमास है। मेषराशि ही सर्व प्रथम राशि है। मेषमें सूर्य रहनेसे वैशाखमास होता है। इसीसे वैशाख प्रथम सौरमास है। साल और शकाब्द सौरवर्ष संघटित है। इसीलिये इसका आरम्भ सौरवैशाख माससे ही होता है।

संवत् चान्द्रमाससम्बन्धी है। इसका प्रारम्भ प्रथम चान्द्र माससे होता है। चैत्र मुख्यचान्द्र ही प्रथम चान्द्रमास है।

"चैत्रे मासि जगद्ब्रह्मा ससर्ज्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्लपक्षे समग्रन्तु तदा सूर्य्योदये सति।
प्रवर्त्तया मास तदा कालस्य गणनामपि।" (ब्रह्मपुराण)
"चैत्रसितादेरुदयाद्भानोर्वर्षन्तु मासयुगकल्पाः।
सृष्टयादौ लङ्कायामिह प्रवृत्ता दिनैर्वत्स ॥"
(मलमासतत्त्वधृत ब्रह्मसिद्धान्त)

ब्रह्माने चैत्रमासके शुक्लपक्षके प्रथम दिन अर्थात् प्रतिपत् तिथिको जगत्की सृष्टि की थी और मास, ऋतु, वत्सर युगादिकी गणना भी इसी समयसे प्रवर्त्तित की। इसीलिये वर्षका आरम्भ भी इसी दिन होता है।
(मलमासतत्त्व) वत्सर शब्द देखो।

---

* अथ कर्म्मविशेषे मासविशेषादिः—तत्र पितामहः—

"आब्दिके पितृकृत्ये च मासश्चान्द्रमसः स्मृतः।
विवाहादौ स्मृतः सौरो यज्ञादौ सावनो मतः॥

प्रथमादिपद यात्राग्रहचारपर, यत्कर्म्म सूर्य्यभोग्यराशुल्लेखेन यच्च विशिष्योदगयनादिविहितं तत्परञ्च, अयनस्य सौरमासघटितत्वात्। तच्च चूडोपनयनादि, द्वितीयादिपद सत्रप्रभुतिवृद्धिप्रायश्चित्तायुर्दायाशौचगर्भाधानपुंसवनसीमन्तोन्नयननामकरणान्नप्राशननिष्क्रमणचूड़ादिपर। तथाच विष्णुधर्मोत्तरे—

अध्यायनञ्च ग्रहचारकर्म्म सौरेन मासेन सदाध्यवस्येत्।
सत्राण्युपास्यान्यथ सावनेन लौक्यञ्च यत्स्याद्व्यवहारकर्म्म॥

अध्यायन अध्वगमन यात्रेति यावत्। अथ सौरादिमासविहितकर्म्मणि—

विवाहोत्सवयज्ञेषु सौर मासं प्रशस्यते।
पार्वणे त्वष्टकाश्राद्धे चान्द्रमिष्टं तथाब्दिके॥

अत्र यज्ञपदमुदगयनादिविहितपशुयागाभिप्रायं पितामहोक्तस्तु विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तसत्रपर। गर्गः—आयुर्दायविभागश्च प्रायश्चित्तक्रिया तथा।
सावनेन तु कर्त्तव्या मन्त्राणामप्युपासना।
सूर्य्यसिद्धान्ते—सूतकादिपरिच्छेदो दिनमासाब्दपास्तथा॥
मध्यमग्रहभुक्तिश्च सावनेन प्रकीर्त्तिता।
मध्यमग्रहभुक्तिर्ज्योतिर्गणाना प्रसिद्धा॥" (मलमासतत्त्व)

१२ महीनेका वर्ष होता है। किसी किसी समय १३ महीनेका भी वर्ष हो जाता है। जिस बार १३ महीने का वर्ष होता है, उस वर्ष इन तेरह महीनोंमें एक मास मलमास होता है। यह मास निकृष्ट है, इसीसे 'मलमास' नाम हुआ है। विशेष विवरण मलमास शब्दमें देखो।

दो दो मासकी एक एक ऋतु होती है। इनमें माघ फाल्गुन शिशिर, चैत्र वैशाख वसन्त, ज्येष्ठ आषाढ़ ग्रीष्म है। ये तीन ऋतुएं उत्तरायण हैं, ये देवताओंके दिन है। श्रावण भाद्र वर्षा, आश्विन कार्त्तिक शरत्, अग्रहण और पौष हेमन्त है, ये तीन ऋतुएं दक्षिणायण हैं। ये देवताओंकी रात्रि हैं।

"तथा च श्रुतिः—तपस्तपस्यौ शैशिरावृतुः, मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतुः शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतुः, अथैतदुदगयनं देवानां दिनम्। नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतः इषश्च उर्जश्च शारदावृतुः सहाश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतुः, अथैतद्दक्षिणायनं देवाना रात्रिरिति।"

(मलमासतत्त्व) ऋतु शब्द देखो

किस किस मासमें कौन कौन धर्म कर्म करना चाहिये, इसका विशेष विशेष विधान शास्त्रमें लिखा है। पद्मपुराणमें मासकृत विधान इस तरह लिखा है,— आषाढ़ मासकी शुक्ला द्वितीयामें वृषोत्सव, एकादशीके दिन स्वापोत्सव (शयनैकादशी), श्रावणमें श्रवणाविधि, भाद्रमें जन्माष्टमी, आश्विनमासमें पार्श्वपरिवर्त्तन एकादशी और कार्त्तिकमें उत्थान एकादशी करनी चाहिये। जो यह नहो करते वह विष्णुद्रोही होते हैं। कार्त्तिक मासमें दीपदान, अग्रहायणको शुक्लषष्ठीमें शुभ्र वस्त्र द्वारा षष्ठीपूजा और सूती वस्त्र द्वारा विष्णुपूजा, पौष मासमें पुष्याभिषेक और माघमासकी संक्रान्ति तिथमें सुगन्धित तण्डुल विष्णुको निवेदन कर निम्नोक्त मन्त्र पाठ करना होता है,—

"जीवन सर्वभूताना जनकस्त्वं जगद्गुरो।
तन्मायालीनता प्राप्ता त्वयैवजनिता प्रभो॥"

(पद्मपु० पाता० ख० १२ अ०)

पीछे नाना प्रकारकी स्वादिष्ट वस्तुओं द्वारा ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिये। इस दिन एक ब्राह्मण-भोजन करोड़ ब्राह्मण-भोजन करानेका फल होता है। माघमासकी शुक्ला पञ्चमीको और फाल्गुन मासको पूर्णिमाको होली मनानी चाहिये। (पद्मपुराण पातालख० १२ अ०)

हरिभक्तिविलासमें भी मासकृत्यका विशेष विवरण लिखा है।

स्मार्त्त रघुनन्दन कृत्यतत्त्वमे मासकृत्यके विषयमें कहते हैं,—

वैशाखकृत्य—वैशाखमासमें प्रातःस्नान, संक्रान्तिके दिन भोज्य पदार्थके साथ जलपूर्ण घटदान और अक्षय-तृतीयाके दिन स्नान, दान और व्रतादिका अनुष्ठान करना चाहिये। इस मासमें मसूर और नीमकी पत्ती जरूर खानी चाहिये। नीमके भोजनसे सर्पका भय नही रहता। मासके किसी दिनको नीमकी पत्ती खा लेनी चाहिये।

"मसूरनिम्बपत्राभ्या योऽत्ति मेषगते रवौ।
अपि रोषान्वितस्तस्य तक्षकः किं करिष्यति॥"

(कृत्यतत्त्व)

इस मासके शुक्ला द्वादशीको पिपीतक द्वादशीव्रत और यवश्राद्ध करना होता है।

ज्येष्ठकृत्य—कृष्णा चतुर्दशीमें सावित्रीव्रत, शुक्ला षष्ठीको आरण्यषष्ठी और महाज्येष्ठीमें जगन्नाथ दर्शन या गङ्गा स्नान करना चाहिये।

आषाढ़कृत्य—अम्बुवाची समयमें सर्पभय-निवारणके लिये दुग्धपान, नवोदकश्राद्ध और चातुर्मास्य-व्रतारम्भ और विष्णुशयन एकादशीव्रत करना चाहिये।

श्रावणकृत्य—श्रावणमासकी शुक्ल पंचमीको आंगनमें स्नूहीवृक्ष (थूहर)-की स्थापना कर मनसादेवी और अष्टनागकी पूजा करनी चाहिये। इससे सर्पभय निवारित होता है।

भाद्रकृत्य—जन्माष्टमीव्रत, शुक्ला पञ्चमीमें सर्पका चित्र बना कर पूजा करनी चाहिये। इसीसे इसको नागपञ्चमी कहते हैं। पार्श्वपरिवर्त्तन एकादशीव्रत भी अवश्य कर्त्तव्य है। इस मासकी शुक्ला और कृष्ण चौथके दिन चन्द्र नहीं देखना चाहिये। भाद्र शुक्ल १४-चतुर्दशीका नाम अघोरा-चतुर्दशी है। इस दिन शिवके लिये उपवास और अनन्तव्रत करना चाहिये। इस मासकी शुक्ला सप्तमी, अष्टमी और नवमी तिथिमें कुक्कुटीव्रत,

दुर्गाष्टमीव्रत और तालनवमीव्रतका विधान भी है। अगस्त्य-पूजा कर उनके उद्देश्यसे अर्घदान भी करना चाहिये।

आश्विनकृत्य—अपर पक्षमें तर्पण, महालया श्राद्ध, दुर्गोत्सव और लक्ष्मीपूजा करनी होती है। कार्त्तिक कृत्य—इस मासमें प्रातःस्नान करना चाहिये। मत्स्य और मांस भोजन बिलकुल नहीं करना चाहिये। शुक्ल प्रतिपदासे पूर्णिमा तक मांस-भक्षण विशेषरूपसे मना है। भूत, चतुर्दशी, दीपान्विता अमावस्या द्यूतपात पट्टु सुरुङ्गि तृतीया और विष्णु उत्थान एकादशी ये सब भी अवश्य कर्त्तव्य हैं।

अग्रहायणकृत्य—इसमें नवान्न श्राद्ध, शुक्ला चतुर्दशी-के दिन सौभाग्य कामनासे पिष्टक द्वारा देवीकी पूजा और पूर्णिमाके दिन पार्वणश्राद्ध अवश्य कर्त्तव्य है।

पौषकृत्य—इस मासकी कृष्णाष्टमीमें पूजोपकरण द्वारा पार्वणविधानसे श्राद्ध करना चाहिये। इस श्राद्धको पूपाष्टका श्राद्ध कहते हैं।

माघकृत्य—इस मासमें अरुणोदय समयमें स्नान करना आवश्यक है। माघ महीनेमें मूली नहीं खानी चाहिये। कृष्णाष्टमीमें बकरेका मांस, मांसके अभावमें पायस और पायसाभावमें केवल अन्न द्वारा श्राद्ध करना विधेय है। इसके सिवा रटन्ती चतुर्दशी, श्रीपञ्चमी, माघ सप्तमी, विधान सप्तमी, आरोग्य सप्तमी और भीष्माष्टमी विहितकार्य भी करना चाहिये।

फाल्गुणकृत्य—इस मासकी कृष्णाष्टमीको केवल अन्न द्वारा पार्वण श्राद्ध और शिवरात्रिव्रत करनेकी विधि है। इस मासको शुक्ल-द्वादशी और गोविन्द द्वादशीके दिन गङ्गास्नान करनेसे महापातक नष्ट होते हैं।

चैत्रकृत्य—इस मासको संक्रान्तिके दिन ये चक्र आदि विस्फोटकके भयको दूर करनेके लिये स्नूहीवृक्षमें घण्टा-कर्णकी पूजा करनी चाहिये। इसके बाद वारुणी, अशोका-ष्टमी, श्रीरामनवमी व्रत, मदन त्रयोदशी और मदन चतु-र्दशी व्रत भी करना चाहिये। जिन सब बातोंका नामो-ल्लेख किया गया उनका विशेष विवरण उन्हीं सब शब्दों-में देखना चाहिये। (कृत्यतत्त्व)

मासक (सं० पु०) १ माषक परिमाण, माशा। २ मुख्य मास। ३ क्षुद्ररोगविशेष।

मासकालिक (सं० त्रि०) १ महीनेका समय। २ मासिक।

मासचारिक (सं० त्रि०) मासानुष्ठेय, जो एक मास तक कर्त्तव्य हो।

मासजात (सं० त्रि०) १ एक मासके जैसा। २ जिसको जन्म होनेसे केवल एक महीना हुआ हो।

मासज्ञ (सं० पु०) १ दात्यूह पक्षी, वनमुर्गी। २ हरिण-विशेष, एक प्रकारका हिरन। (त्रि०) ३ मासज्ञाता, महीना जाननेवाला।

मासतम (सं० त्रि०) १ मासिक। २ पूरा एक महीना।

मासताला (सं० स्त्री०) मासेन तालो ध्वनिः परिच्छेदो यस्याः। वाद्ययन्त्रभेद, करताल।

मासतुल्य (सं० त्रि०) एक मास तक।

मासत्रय (सं० क्ली०) तीन महीने।

मासत्रयावधि (सं० अव्य०) तीन महीने तक।

मासदेय (सं० त्रि०) प्रति मासमें परिशोधनीय।

मासद्वयोद्भव (सं० पु०) १ षष्टिक शालिधान्य, साठी धान। २ गौरषष्टिक एक प्रकारका धान।

मासद्वयोद्भवा (सं० स्त्री०) मासद्वयोद्भव देखो।

मासधा (सं० अव्य०) प्रति महीनेमें।

मासन (सं० क्ली०) सोमराज।

मासपर्णी (सं० स्त्री०) माषपर्णी देखो।

मासपाक (सं० त्रि०) एक मासमें परिपक्व।

मासपूर्व (सं० त्रि०) पहले महीनेमें संघटित, एक महीना पहिले।

मासप्रमित (सं० त्रि०) मास घटित, जो एक महीनेमें हो।

मासप्रवेश (सं० पु०) मासागम, महीनेका प्रारम्भ होना।

मासफल (सं० पु०) वह पत्र जिसमें फलित ज्योतिषके अनुसार महीने भरका शुभाशुभ फल लिखा हो। इसे मासपत्र भी कहते हैं।

मासभुक्ति (सं० स्त्री०) मासिकगति।

मासमान (सं० पु०) मासैर्द्वादशभिर्मानमस्य। १ वत्सर, वर्ष। २ मासपरिमाण, एक महीने तक। ३ माषमान, एक माशा।

मासर (सं० पु०) मस-णिच् बाहुलकात् अरन्। अन्न-

समुद्भव मण्ड, एक प्रकारका पेय पदार्थ जो चावलके मांड और अंगूरके उठे हुए रससे बनाया जाता था। इसका प्रयोग यज्ञोंमे तथा यह मादक होता था। पर्याय—आचाम, निस्राव। २ काञ्जिक, कांजी।

मासवर्त्तिका (सं० स्त्री०) सर्षपी नामक पक्षिविशेष, श्यामा वा पवईकी जातिका एक पक्षी।

मासवृद्धि (सं० स्त्री०) १ कोरण्ड अंड वृद्धिका रोग। २ गलगण्डादि, घेघा।

मासल (सं० त्रि०) मास सिध्मादित्वात् लच्। मांसल, मांसयुक्त, हट्टा कट्टा।

मासशम् (सं० अव्य०) प्रति मास, हर एक महीना।

माससञ्चयिक (सं० त्रि०) एक महीने तकके लिये संचय किया हुआ।

मासस्तोम (सं० पु०) एकाहभेद, एक प्रकारका एकाह यज्ञ।

मासा (सं० पु०) माशा देखो।

मासाधिप (सं० पु०) मासानामधिपः। मासाधिपति, वह ग्रह जो मासका स्वामी हो। चन्द्रसे उद्ध्वं कक्षाक्रमसे जो सब ग्रह अवस्थित हैं, वे ही त्रिशदिनात्मक मासके अधिप या स्वामी कहे गये हैं। उक्त क्रम यथा—चन्द्र, बुध, शुक्र, रवि, मंगल, वृहस्पति और शनि।

"ऊद्ध्वं क्रमेण शशिनो मासानामधिपाः स्मृताः।"

(सूर्यसिद्धान्त १२।७६)

मासाधिपति (सं० पु०) मासस्वामी, ग्रह।

मासानुमासिक (सं० त्रि०) प्रति मास सम्बन्धी, प्रति मासका।

मासान्त (सं० पु०) मासस्य अन्तः। एक महीनेका अन्त। २ अमावस्या, मासके अन्तमें यात्रा वना कर कहीं नहीं जाना चाहिये। जो इसमें यात्रा करते हैं उनकी मृत्यु होती है।

"पक्षान्ते निष्फला यात्रा मासान्ते मरणं ध्रुवम्॥"

(समयप्र०)

३ संक्रान्ति दिन। इस दिन विवाह होनेसे कन्याकी मृत्यु होती है। सुतरां विवाहमें यह दिन प्रशस्त नहीं माना गया है। मासके अन्तमें एक दिन छोड़ कर विवाहका दिन स्थिर करना होता है।

"मासान्ते म्रियते कन्या तिथ्यन्ते स्यादपुत्रिणी।
नक्षत्रान्ते च वैधव्यं रिष्टया मृत्युर्द्वयोर्भवेत्॥
मासान्ते दिनमेकन्तु तिथ्यन्ते घटिकाद्वयम्।
घटिका त्रितयं भान्ते विवाहे परिवर्ज्जयेत्॥"

(रत्नमाला)

मासापवर्ग (सं० त्रि०) एक महीने तक।

मासालर—भिक्षाजीवी जातिविशेष। कर्णाटप्रदेशमें इनका अधिक वास देखा जाता है। मान्द्राजके नाना स्थानोंमें ये लोग भीख मांगने जाते हैं। पहले पेनागुण्डी और हिन्दूपुरमें इनका वास था। १८७६ ई०के घोर दुर्भिक्षके समय ये लोग धारवार जिलेमें आ कर वस गये। तेलगू और मिश्र कनाडी भाषामें ये वोलचाल करते हैं। जब किसी गांवमें ये जाते, तव लादोगर वा माङ्गजातिके घर आश्रय लेते हैं। इनका विश्वास है, कि ये लोग भी इसी माङ्गवंशसे उत्पन्न हुए हैं। ये लोग गदहेको पालते हैं। जब कभी वाहर निकलते, तव उसी गदहे पर अपना कपड़ा लत्ता लादते हैं। ये लोग भेंडे, मुर्गी, मरे बैल, गाय, भैंस सूअर आदिके मास खाते हैं। शराव इन लोगोंको बहुत प्रिय है। ये रस्सेके ऊपर नाच दिखा कर पैसे कमाते हैं। विवाहमे ३०) से अधिक रुपया खर्च नहीं होता जिसमें १५) रु० लड़कीके वापको देना होता है। तिरुपतिके वेङ्कटरमण इनके उपास्य देवता हैं जो चतुर्भुज तथा शङ्ख, चक्र, गदा और पद्मधारी हैं। प्लेगकी अधिष्ठात्री दुर्गाम्मा देवीकी भी ये लोग पूजा करते हैं। पूजाके समय ब्राह्मणको जरूरत नहीं पड़ती। इनके कोई दीक्षागुरु भी नहीं हैं।

ये लोग जातवालकके पार्श्वदेशमें तप्तलौह शलाकासे × ऐसा चिह्न लगाते हैं। पीछे प्रसूति और वालकको स्नान कराया जाता है। इनका विश्वास है, कि इससे भविष्यमें वालक पर कोई आपत्ति नहीं आ सकती। विवाहके समय दुर्गादेवी और वेङ्कटरमणकी पूजा होती है। इनमें वाल्य विवाह और विधवा-विवाह प्रचलित है जनन वा मरणमें कोई भी अशौच नहीं मानता। इनकी मृतदेह गाड़ी जाती है।

मासावधिक (सं० त्रि०) मास पर्यन्त, एक महीने तक।

मासाहार (सं० त्रि०) एक मास अन्तर भोजनकारी, एक महीनेके वाद भोजन करनेवाला।

मासिक (सं० त्रि०) मासि भव इति मास ष्णिक्। मास-सम्बन्धीय, महीनेका।

"पयो देयोऽव्कुष्ठस्य षडुत्कृष्टस्य वेतमम्।
षाण्मासिकस्तथाच्छादो धान्यद्रोणस्तु मासिकः॥"
(मनु० ७।१२६)

मासे भवमिति मास (कालाट्ठञ्। पा ४।३।११) इति ठञ्। मृतके सजातीय द्वारा संवत्सर या वर्षके भीतर प्रति मासकी कृष्णा तिथिमें जो श्राद्ध किया जाता है उसे भी मासिक कहते हैं। यह नैमित्तिक श्राद्ध है। पर्याय—अन्वाहार्य।

"पितृणा मासिक श्राद्धमन्वाहार्य्यं विदुर्बुधाः॥"
(मनु ३।१२३)

प्रेतको प्रेतत्वविमुक्तिके लिये आद्य एकोद्दिष्ट, द्वादश मासिक, प्रथम और द्वितीय षाण्मासिक तथा सपिण्डी करण—ये षोड़स श्राद्ध करने होते हैं। प्रति महीनेकी निर्दिष्ट तिथिमें शास्त्रानुसार मासिक तथा प्रथम और द्वितीय षाण्मासिक (छः माही) श्राद्ध करना चाहिये। यदि किसी कारणवश मासिक-श्राद्ध महीने महीने न हो सके, तो यथार्थ तिथिके पूर्वाह्नमें प्रथम और द्वितीय षाण्मासिक कर दूसरे दिन बारहों मासिक किया जा सकता है।

"षाण्मासिकाब्दिके श्राद्धे स्यातां पूर्वद्युरेव ते।
मासिकानि स्वकीये तु दिवसे द्वादशापि च॥" (पैठीनसि)

सपिण्डीकरण करनेके पहले मलमास उपस्थित होने पर मासिकके सम्बन्धमें अलग व्यवस्था है। मृताहसे ग्यारह महीनेके बीचमें कहीं मलमास पड़ गया, तो एक मासिक अधिक करना होगा। अर्थात् १२-की जगह १३ मासिक-श्राद्ध करना होगा। छः महीनेमें मलमास पड़नेसे छःमासिककी पूर्व तिथिमे प्रथम षाण्मासिक और १३ मासिककी पूर्व तिथिमे द्वितीय षाण्मासिक करना होगा। इन मासिक श्राद्धोंमें यदि कोई मासिक पतित हो, या छूट जाय, तो कृष्ण एकादशी, अमावस्या अथवा मासिकान्तर तिथिमें मासिक श्राद्ध कर पीछे यथार्थ कार्य सम्पादन करना चाहिये। अशौच होने पर जब अशौच शेष हो जाय, तब मासिक श्राद्ध करनेकी विधि है। एकादशाहादि कई श्राद्ध कर यदि श्राद्ध करनेवाला मर जाय, तो बाकी श्राद्ध दूसरे आदमीको पूरा कर देना उचित है। मासिक व्यवस्थाके सम्बन्धमें अन्यान्य विषय श्राद्ध शब्दमें देखो।

मासिक एकोदिष्ट श्राद्धका प्रयोग यों है,—श्राद्धके पहले दिन निरामिष एकाहार करके दूसरे दिन स्नानादि करनेके बाद यथासमय भोज्योत्सर्ग कर कुशमय ब्राह्मण-स्नान, वास्तु-पुरुषादिकी पूजा और भूस्वामी पितृगणको श्राद्धाग्र भाग दान करना चाहिये। इसके बाद दक्षिण मुंह हो कर इस तरह अनुज्ञा-वाक्य पढ़ना चाहिये। जैसे,—अद्यामुके मासि अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक गोत्रस्य प्रेतस्य अमुक देवशर्मणः प्रथममासिकैकोदिष्ट श्राद्धं दर्भमय ब्राह्मणोऽहं करिष्ये।" पीछे पुरोहितको 'कुरुष्व' ऐसा उत्तर देना चाहिये। इसके बाद गायत्री, "देवताभ्य" इत्यादि मन्त्रोंका तीन बार पाठ, पुण्डरीकाक्ष स्मरण कर मूजल द्वारा श्राद्धीय द्रव्य प्रोक्षण और रक्षार्थ उदकपूर्ण पात्रको एक जगह स्थापन, दर्भासन दान, अर्घ्यादि दान, अन्न दान, गायत्री 'मधुवाता' और 'यज्ञेश्वरो हव्यः समस्त' इत्यादि मन्त्र पाठ, पिण्डदान, पिण्ड-पूजा, पिण्डोपरि-वारिधारा, दक्षिणा, ब्राह्मण विसर्जन, अच्छिद्रावधारण, दीपाच्छादन और विष्णु स्मरण आदि करना कर्त्तव्य है। श्राद्धके बाद श्राद्धीय पिण्ड गौ या बकरीको खिला दे या ब्राह्मणको दे दे या अग्निमें जला दे अथवा जलमें फेंक दे। मासिक श्राद्धप्रयोगके सम्बन्धमें मोटा-मोटी ये कई बातें कहीं गईं। इसमें जिन सब वाक्यों, मन्त्रों तथा अन्यान्य प्रक्रियाओंका उल्लेख है, विस्तार हो जानेके भयसे वे यहां पर नहीं लिखे गये। मासिक-श्राद्धका प्रयोग बाहुल्यश्राद्धप्रयोग तत्त्वमें देखो।

इसी तरह २रा ३रा मासिक भी करना कर्त्तव्य है। श्राद्ध देखो।

मासी (हिं० स्त्री०) माँकी बहिन, मौसी।

मासीन (सं० त्रि०) मासं भूतं मास-(मासाद्वयसि यत् खञ्। पा ५।१।८१) इति खञ्। जिसकी अवस्था एक महीने-की हो, महीने भरका, जैसे—द्विमासीन, पञ्चमासीन, षण्मासीन इत्यादि।

मासुरकर्ण (सं० पु०) मसुर कर्ण-अपत्यार्थे अण्। (शिवा-

दिभ्यो उञ् पा ४।१।११२) मसुरकर्णके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

मासुरी (सं० स्त्री०) मसुर-अण् ङीप्। १ श्मश्रु, मूंछ दाढ़ी। २ मातृभगिनी, मांकी वहिन, मौसी।

"पितृष्वसा पितुर्भग्नी मातृभग्नी च मासुरी॥"

(ब्रह्मवैवर्त्तपु० ११।१०।१४५)

३ सुश्रुतके अनुसार चीर फाडके एक शस्त्र या औजारका नाम।

मासोपवास (सं० पु०) एक मास तक अनशन-व्रताचार।

मासोपवासिनी (सं० स्त्री०) एक महीने तक उपवास करनेवाली स्त्री। अनेक समय व्यङ्गसे असच्चरित्रा कामुकीके प्रति इस शब्दका प्रयोग किया जाता है।

मास्टर (अं० पु०) १ स्वामी, मालिक। २ शिक्षक, गुरु, उस्ताद। ३ किसी विषयमें परम प्रवीण। ४ वालकोंके लिये व्यवहृत शब्द।

मास्टरी (अं० स्त्री०) १ मास्टरका काम, पढानेका काम, अध्यापकी। २ मास्टरका भाव।

मास्म (सं० अव्य०) मा च स्म च तयोः समाहारः। वारण, निषेध, मत। पर्याय—मा, अलं।

मास्य (सं० त्रि०) मासं भूतः मास-वयोऽर्थे (मासाद्वयसि यत् खञौ। पा ५।१।८१) इति यत्। महीने भरका, जो एक महीनेका हो।

माह (सं० पु०) माष, उड़द।

माह (फा० पु०) मास, महीना।

माहकस्थलक (सं० त्रि०) १ माहकस्थलीवासी, माहकस्थलीमें रहनेवाला। २ माहकस्थलीमें उत्पन्न। ३ माहकस्थली सम्बन्धीय, माहकस्थलीका।

माहकस्थली (सं० स्त्री०) एक प्राचीन जनपदका नाम।

माहकि (सं० पु०) १ महकका गोत्रापत्य। २ एक आचार्यका नाम।

माहत (सं० त्रि०) महतका भाव वा धर्म, महत्त्व, वड़ाई।

माहताव (फा० पु०) १ चन्द्रमा। २ महतावी देखो।

माहतावी (फा० स्त्री०) १ महतावी देखो। २ एक प्रकारका कपडा जिस पर सूर्य, चन्द्रादिकी सुनहरी या रुपहली आकृतियां वनी रहती हैं। ३ तरवूज। ४ चकोतरा नीवू। ५ आँगनमें ऊँचा खुला हुआ चबूतरा जिस पर लोग चाँदनीमें बैठते हैं।

माहन (सं० पु०) ब्राह्मण।

माहनीय (सं० त्रि०) पूजनीय, श्रेष्ठ।

माहर (हिं० पु०) १ इन्द्रायन, इनारू। (वि०) २ माहिर देखो।

माहली (हिं० पु०) १ वह पुरुष जो अन्तःपुरमें आता जाता हो, महली, खोजा। २ सेवक, दास।

माहवार (फा० पु०) १ महीनेका वेतन। (वि०) २ प्रति मास, महीने महीने। ३ हर महीनेका, मासिक।

माहवारी (फा० वि०) हर महीनेका, मासिक।

माहा (सं० स्त्री०) गाभी, गाय।

माहाकुल (सं० त्रि०) महाकुलस्यपत्यमिति (महाकुलादञ् खञौ। पा ४।१।१४१) इति अञ्। महाकुलोद्भव, जिसका उच्च कुलमें जन्म हुआ हो।

महाकुलीन (सं० त्रि०) महाकुलस्यापत्यमिति महाकुल खञ्। (पा ४।१।१४१) महाकुलोद्भव, महाकुलीन।

माहाचमस्य (सं० पु०) महाचमस-ष्यञ्। महाचमसके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

माहाचित्ति (सं० त्रि०) महाचित्त-(सुतङ्गमादिभ्य इञ् पा। ४।२।८०) इति इञ्।

माहाजनिक (सं० त्रि०) महाजनाय हितं महाजन ठक्। महाजनोंमें भलाई करनेवाला।

माहाजनीन (सं० त्रि०) महाजने साधु महाजन-(प्रतिजनादिभ्यः खञ्। पा ४।४।९९) इति खञ्। महाजनोंमें साधु।

माहात्मिक (सं० त्रि०) महात्म-सम्बन्धीय, सर्वाधिपत्यलक्षण, राजासन, वह स्थान जिस पर राजा या राजकर्मचारी वैठ कर प्रजा-पालन करता है।

"राज्ञो माहात्मिके स्थाने सद्यः शौचं विधीयते।
पूजानां परिरक्षार्थमासनञ्चात्र कारणम्॥"

(मनु० ५।९४)

माहात्म्य (सं० क्ली०) महात्मनो भावः इति महात्मन्-ष्यञ्। १ महात्मता, माहात्माका भाव या क्रिया, महिमा, वड़ाई। २ मान, आदर।

माहानद (सं० त्रि०) महानद-(उत्सादिभ्योऽञ्। पा ४।१।८६) इति अञ्। महानदसम्बन्धीय, उससे उत्पन्न।

माहानस (सं० त्रि०) महानस-अञ् (पा ४।१।८६) महानससम्बन्धीय ।

माहानामन् (सं० त्रि०) महानाम्नी-ऋग्मन्त्रसम्बन्धीय ।

माहानामिक (सं० पु०) महानाम ब्रह्मचर्यमस्य (तस्य ब्रह्मचर्यं । पा ५।१।९४) इति ठञ् । माहानाम्निक, महानाम्नी नामक ऋग्वेत्ता ब्राह्मण ।

माहानाम्निक (स ० पु०) महानामन् (तदस्य ब्रह्मचर्यं । पा ५।१।९४) इत्यत्र 'महानाम्नादिभ्यः षष्ठ्यन्तेभ्य उपसंख्यानं' महानाम्न्यो नाम विदा मघवन्' इत्याद्या ऋचः तासां ब्रह्मचर्यमस्य इति ठञ् । माहानाम्नी आदि ऋग्वेत्ता ब्राह्मण ।

माहाकुलि (सं० त्रि०) महाकुल-(सुतङ्गमादिभ्य इञ् । पा ४।२।८०) इति इञ् । महाकुल-सम्बन्धी ।

माहाप्राण (सं० त्रि०) महाप्राण-(उत्सादिभ्योऽञ् । पा ४।१।८६) इति अञ् । महाप्राण या दीर्घश्वास सम्बन्धीय ।

माहाभाग्य (सं० क्ली०) महाभाग्य, सौभाग्य ।

माहारजन (सं० त्रि०) महारजनेन रक्तं महारजन (तेन रक्त रागात् । पा ४।२।१) इति अण् । महारजन द्वारा रंजित, कुसुमके फूलसे रंगा हुआ ।

माहाराजिक (सं० त्रि०) महाराजो देवता अस्य महाराज (महाराज प्रोष्ठपदाभ्यां ठञ् । पा ४।२।३५) इति ठञ् । जिसके देवता महाराज हैं ।

माहाराज्य (सं० क्ली०) महाराजका पद या मर्यादा ।

माहाराष्ट्र (सं० त्रि०) महाराष्ट्र-अञ् । महाराष्ट्र-सम्बन्धीय ।

माहावार्त्तिक (सं० त्रि०) कात्यायन-कृत पाणिनीका वार्त्तिकज्ञ ।

माहाव्रती (सं० स्त्री०) १ पाशुपत-व्रतावलम्बी । २ पाशुपतशास्त्र संहति । ३ यज्ञमीमांसा ।

माहाव्रतीय (सं० त्रि०) महाव्रत सम्बन्धीय ।

माहिक (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक जातिका नाम ।

माहिकीप्रस्थ (सं० त्रि०) उत्तर-भारतके एक नगरका नाम ।

माहित (सं० पु०) महित अपत्यार्थे (कण्वादिभ्योगोत्रे । पा ४।२।१११) इति अण् । महित ऋषिके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष ।

माहित्थ (सं० पु०) शतपथ-ब्राह्मणके अनुसार एक ऋषिका नाम ।

माहित्य (सं० पु०) महितस्य गोत्रापत्यं महित (गर्गादिभ्यो यञ् । पा ४।१।१०५) इति यञ् । महितके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष ।

माहित्र (सं० क्ली०) महित्र शब्दोऽस्मिन्नस्ति, महित्र विमुक्तादिभ्योऽण् । पा ५।२।६१) सूक्तभेद, एक ऋचाका नाम ।

"कौत्सं जप्त्वाप इत्येतद्वासिष्ठञ्च प्रतीत्यृचम् ।
माहित्रं शुद्धवत्यश्च सुरापोऽपि विशुध्यति ॥"
(मनु ११।२५०)

माहिन (सं० क्ली०) मह्यते पूज्यतेऽस्मिन् इति मह् (महेरिनण् च । उण् २।५६) इति इनण् । १ राज्य । (त्रि०) २ मंहनीय, पूजनीय । ३ प्रवृद्ध, खूब बढ़ा हुआ ।

माहिनावत् (सं० त्रि०) महिमोपेत, महिमायुक्त ।

माहिम—१ बम्बईप्रदेशके थाना जिलान्तर्गत एक उपविभाग यह अक्षा० १९° २१' से १९° ५२' उ० तथा देशा० ७२° ३९' से ७३° १' पू०के मध्य विस्तृत है । भूपरिमाण ४०९ वर्गमील और जनसंख्या ८० हजारसे ऊपर है । इसमें माहिम नामक एक शहर और १८७ ग्राम लगते हैं । इसके उत्तर-दक्षिणमें विस्तृत वनमाला-विमण्डित एक गिरिश्रेणी देखी जाती है । उसकी आशरी और तकमक चोटी ही सबसे ऊंची है । यहांका समुद्रोपकूलवर्त्ती स्थान बहुत स्वास्थ्यप्रद है । पर्वतका मध्यस्थल तथा खाड़ीके दो पारका स्थान बाढ़की जलसे डूब जाया करता है । यहां वैतरणी नदी बहती है ।

२ उक्त विभागका प्रधान नगर और जिलेका एक बन्दर । यह अक्षा० १९°१' उ० तथा देशा० ७२°५२' पू०के मध्य विस्तृत है । यहांसे ५॥ मील पूर्व बम्बई, बड़ौदा और मध्य-भारतीय रेलवेका पालगढ़ स्टेशन मौजूद है । रेलवे-लाइनके खुल जानेसे वाणिज्य-व्यवसायमें बहुत सुविधा हो गई है । यह स्थान तालवनके लिये बहुत मशहूर है । ऐसा सुन्दर तालवन और कहीं भी देखा नहीं जाता । खाड़ीके ठीक दूसरे किनारे केलवी नामका एक बड़ा गांव है । वहांसे थोड़ी ही दूरके फासले पर एक छोटा दुर्ग देखनेमें आता है । बन्दरभाग

छोटे छोटे पहाड़ोंसे भरा है। यहा तक कि, कहीं कहीं उपकूलसे दो मील तक यह जलमें विस्तृत देखा जाता है।

१३१५ ई०में दिल्लीके पठान राजाओंने इस स्थान पर अधिकार जमाया। पीछे यह गुजरातके मुसलमान शासनकर्त्ताके हाथ लगा। १५३२ ई०में पुर्त्तगीजोंने उनसे छीन लिया। १६१२ ई०में मुगल-बादशाह जहांगीरके विरुद्ध माहिमवासीने घमसान युद्ध कर आत्म-रक्षा की थी।

माहिम—पञ्जाब प्रदेशके रोहतक जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। यह अक्षा० २८° ५८´ उ० तथा देशा० ७६° १८´ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ८ हजारके करीब है। नगर अभी टूट फूट गया है। खंडहरके निदर्शनोंकी आलोचना करनेसे मालूम होता है, कि एक समय यह नगर बहुत समृद्धिशाली था। मुसलमानी-आक्रमणके बहुत पहले यह बसाया गया था। शाहबुद्दीन घोरीने भारतकी चढाईके समय इसे तहस नहस कर दिया। १२२६ ई०में पेशवा नामक किसी बनियेने इसका पुनःसंस्कार किया। मुगल बादशाह अकवर शाहने यह नगर शाहबाज खाँ नामक एक अफगानको जागीर-रूपमें दे दिया था। उसके वंशधरोंके यत्नसे नगरकी बहुत उन्नति हुई थी।

सम्राट् औरङ्गजेबके जमानेमें दुर्गादास नामक एक राजपूत-सरदारने सम्राट्के विरुद्ध युद्ध कर इस नगरको लूटा था। पीछे जब फिर आबादी हुई तब वाणिज्यकी पहले-सी उन्नति होने न पाई।

सम्राट् शाहजहाके राजदण्डधारी सैदुकलालने १५२६ ई०में यहा जो सीढी लगा हुआ एक विस्तृत जलाशय खुदवाया था वह इसकी प्राचीन कीर्त्तिका दूसरा निदर्शन है। अलावा इसके ध्वंसावशिष्ट कुछ मकबरे और प्राचीन मसजिद तथा नगरवेष्टित प्राचीर इसके अतीत गौरवका परिचय देता है।

माहियत (अ० स्त्री०) १ तत्त्व, भेद। २ प्रकृति। ३ विवरण।

माहियाना (फा० वि०) १ माहवार। (पु०) २ मासिक वेतन।

माहिर (सं० पु०) मह्यते पूज्यतेऽसौ मह-बाहुलकात् इरन्। इन्द्र।

माहिर (अ० वि०) तत्त्वज्ञ, जानकार।

माहिष (सं० त्रि०) १ भैंसका दूध आदि। २ महिष-सम्बन्धी।

माहिषक (सं० पु०) १ महिषचारी गोप, भैंस चरानेवाला ग्वाला। २ एक प्राचीन देशका नाम। ३ उस देशमें रहनेवाली एक जातिका नाम।

माहिषघृत (सं० क्ली०) महिषीक्षीरजात घृत, भैंसका घी। यह घी तीक्ष्ण, भस्मकादि रोगमें हितकर, वातश्लेष्मनाशक, बलकर, वर्णकर, अर्श और ग्रहणीनाशक, दीपन तथा चक्षुका हितकर माना गया है।

माहिषदधि (सं० क्ली०) महिषा-दुग्धकृत दधि, भैंसका दही। यह दही बड़ा स्वादिष्ट होता है। गुण—मधुर, स्निग्ध, रक्तपित्तघ्न, श्लेष्मवर्द्धक, बल और शोणित-वर्द्धक, वृष्य, श्रमघ्न, शोधन।

माहिषनवनीत (सं० क्ली०) महिषी-दुग्धजात नवनीत, भैंसके दूधसे निकला हुआ मक्खन। गुण—कषाय, मधुर, शीतल, वृष्य, बलकर, ग्राही, पित्तनाशक और पुष्टिप्रद।

माहिषमूत्र (सं० क्ली०) महिषजल, भैंसका मूत। गुण—कटु, उष्ण, आनाह, शोथ, गुल्म, कुष्ठ, कण्डूति, शूल और उदररोग नाशक।

माहिषवल्लरी (सं० स्त्री०) कृष्णवृद्धदारक, काला विधारा।

माहिषवल्लिका (सं० स्त्री०) श्वेतवृद्धदारक, सफेद विधारा।

माहिषवल्ली (सं० स्त्री०) मधु सोमलता, छिरहटी।

माहिषस्थली (सं० स्त्री०) एक प्राचीन नगरका नाम।

माहिषाक्ष (सं० पु०) माहिषाक्ष गुग्गुलु, भैंसा गुग्गुल।

माहिषिक (सं० पु०) महिष्यै रोचतेऽसौ महिषी-ठक्। १ महिषीपति, व्यभिचारिणी स्त्रीका पति, वह स्वामी जो व्यभिचारिणी स्त्री पर अनुरक्त हो।

"महिषीत्युच्यते नारी या च स्याद्व्यभिचारिणी।
तां दुष्टां कामयति यः स वै माहिषिकः स्मृतः॥"

(स्कान्द काशीख०)

२ महिषोपजीवी, भैंससे जीविका निर्वाह करनेवाला व्यक्ति। महिषी नारी पणमस्येति महिषी (तदस्य पण्य। पा ४।४।५१) इति ठक्। ३ भग द्वारा उपार्जित

स्त्रीधनोपजीवी, जो स्त्रीकी वृत्ति द्वारा उपार्जित धनसे अपनी जीविका-निर्वाह करता है उसीको माहिषिक कहते हैं।

"महिषीत्युच्यते भार्य्या भगेनोपार्जितं धनम्।
उपजीवति यस्तस्याः स वै माहिषिकः स्मृतः॥"

(विष्णुपु ३।६।१५)

माहिषिका (सं० स्त्री०) एक नदीका नाम।

(राम० ४।४०।२१)

माहिषेय—१ एक प्राचीन वैयाकरण। त्रिभाष्यरत्नमें इनका मत उद्धृत हुआ है। २ महिषीके गर्भसे उत्पन्न सुत-जाति। माहिष्य देखो।

माहिष्मती—पुराण-महाभारतादि प्रसिद्ध भारतवर्षकी एक अति प्राचीन नगरी। भागवतादिमें लिखा है,—यहां हैहयराज कार्त्तवीर्य्यार्जुन राज्य करते थे। स्कन्द-पुराणके नागरखण्डके मतसे यह नगर नर्मदाके किनारे अवस्थित था। यहां रेवाके जलमें सहस्रार्जुन बहुत-सी स्त्रियोंको ले कर जलक्रीड़ा करते थे। रावण उनके बलवीर्यको न जानते हुए उनके साथ युद्ध करने आया और अन्तमें सहस्रार्जुनके हाथ बन्दी हुआ। (भागवत ९।१५।२२०) महाभारतके सभापर्वमें लिखा है, कि राज-सूयकालमें सहदेव यहां कर उगाहने आये थे। उस समय यहां नीलराज (पुराणोक्त नीलध्वज)-का राज्य था। स्वयं अग्निदेव उनके जामाता थे। अग्निकी सहायतासे नीलराजने सहदेवको परास्त किया। आखिर अग्निके कहनेसे नीलराजने सहदेवकी पूजा की और उन्हें कर दे कर विदा किया। गरुड़पुराणमें इस स्थानको एक महातीर्थ बतलाया गया है। (८१।१९)

बौद्ध-प्रधानताके समय भी माहिष्मती समृद्धि-शालिनी नगरी थी। बहुतसे पण्डितोंका वास होनेके कारण इसका तमाम आदर था। सिंहलके महावंशमें लिखा है, कि सम्राट् अशोकने इस महेशमण्डलमें (माहि-ष्मती मण्डलमें) थेरो महादेवको भेजा था। ७वीं सदी-में चीन-परिव्राजक यूएनचुवंग यहां आये थे। उन्होंने मो हि-शि-फ-लो पुलो (महेश्वरपुर)-के नामसे इस स्थान का उल्लेख किया है। उस समय इस नगरका परिमाण ३० लीग वा ५ मील तथा समस्त राज्यका परिमाण ६००० लीग वा ५०० मील था। उस समय भी इसकी गिनती एक स्वतन्त्र राज्यमें थी। चीनपरिव्राजकने लिखा है, कि यहांके अधिवासियोंकी रीति नीति तथा उत्पन्न वस्तु उज्जयिनीकी तरह थी। अधिकांश अधि-वासी पाशुपत मतावलम्बी थे। बुद्धसे बड़ा वे किसीको नहीं मानते थे। यहांका राजा भी जातिका ब्राह्मण था। पुराविद् कनिंहमके मतसे नगरका वर्त्तमान नाम मण्डल है। जब्बलपुरसे ६ मील दूर त्रिपुरारि नामक नगरीका अभ्युदय होने पर माहिष्मतीकी समृद्धि विलुप्त हुई।* महाभारतके समय माहिष्मती और त्रैपुर दोनों स्वतन्त्र राज्य समझा जाता था। यथा—

"माद्रीसुतस्ततः प्रायाद्विजयी दक्षिणां दिशम्।
त्रैपुरं स वशे कृत्वा राजानममितौजसम्॥" (२।३१।६०)

अनन्तर सहदेवने माहिष्मतीको जीत कर दक्षिणकी ओर प्रस्थान किया था। बड़े प्रतापी त्रैपुरराज्यको वे अपने काबूमें लाये थे।

माहिष्मतेयक (सं० त्रि०) माहिष्मती (कत्त्र्यादिभ्यो ढकञ्। पा ४।२।९५) इति ढञ्। माहिष्मतीदेशभव, माहिष्मती देशका।

माहिष्य (सं० पु०) महिष्यां साधुरिति महिषी ष्यञ्। जातिविशेष। क्षत्रियके औरस और वैश्याके गर्भसे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है।

स्मृति और पुराणसे माहिष्य जातिके बहुतेरे प्रमाण मिलते हैं। मनु भगवानने इस जातिके विषयमें कोई बात नहीं कही है।

याज्ञवल्क्यने कहा है,—

"वैश्याशूद्र्योस्तु राजन्यान्माहिष्योग्रौ सुतौ स्मृतौ।" (१।९२)

क्षत्रियके औरससे वैश्याके गर्भसे माहिष्य और क्षत्रियके औरस तथा शूद्राके गर्भसे उग्र जातिकी उत्पत्ति हुई है।

सह्याद्रिखण्डमें लिखा है,—

"वैश्यायां क्षत्रियाज्जातो माहिष्यस्त्वनुलोमजः॥४४
अष्टाधिकारनिरतश्चतुःषष्ट्यङ्गकोविदः।
व्रतबन्धादिकास्तस्य क्रियाः स्युः सकला विशः॥४५

* Cunningham's Ancient Geography, p. 488.

ज्योतिष शाकुन शास्त्र स्वरशास्त्रञ्च जीविका।
सुगन्ध वनिता वस्त्र गीत ताम्बुलभोजनम् ॥४६
शय्या विभूषा सुरत भोगाष्टकमुदाहृतम्।" (पूर्वार्द्ध २६)

क्षत्रिय और वैश्याके संयोगसे माहिष्य जातिकी उत्पत्ति हुई। ये अष्टभोगनिरत, चतुःषष्टि अङ्गवित् हैं। इस जातिकी उपनयनादि सब क्रियायें वैश्यकी तरह होती हैं। ज्योतिष, शाकुन और स्वरशास्त्र ही इस जातिके लोगोंकी उपजीविका है। सुगन्ध, स्त्री, वस्त्र, गीत, पान, शय्या, अलङ्कार और रतिक्रीडा आदिको अष्टभोग कहते हैं।

आश्वलायनने कहा है,—

"वैश्यायां क्षत्रियाज्जातो माहिष्याम्बष्ठसंज्ञकः।
चौर्य्येणास्यामनेनैव भवेद्धीवरसंज्ञकः ॥"
(आश्वलायन स्मृति० २१ अ०)

क्षत्रिय और वैश्याके संयोगसे माहिष्य अम्बष्ठ जाति और गुप्तभावसे (अवैधरूपसे) क्षत्रियसे ही वैश्याके गर्भसे धीवर जाति उत्पन्न हुई है।

आश्वलायनका और भी कहना है,—

"अम्बष्ठायां समुत्पन्नः सुवर्णेन द्विजोत्तमाः।
अग्निनयन्तकाख्यो स इति प्रोक्त महर्षिभिः ॥
करण्यायान्तु विप्रेन्द्रा माहिष्याख्योऽभिजायते।
स तक्षा रथकारश्च प्रोक्तः शिल्पी च वार्द्धुषी।
लोहकारश्च कर्म्मारः इति वेदविदो विदुः ॥" (२१ अ०)

अर्थात् सुवर्ण जाति द्वारा अम्बष्ठाके गर्भसे जो उत्पन्न हुआ, उसको महर्षियोंने अग्निनयन्तक कहा है। फिर सुवर्णके औरस और करण कन्याके गर्भसे जो उत्पन्न हुआ उसकी माहिष्य संज्ञा हुई। यही माहिष्य वेदविदों द्वारा तक्षा (सूत्रधार या बढ़ई), रथकार, शिल्पी, वार्द्धुषी, लोहकार या लोहार नामसे पुकारे गये हैं।

फिर आश्वलायनने कहा है,—

"महिषी सोच्यते भार्य्या भगेनोपार्ज्जित धनम्।
तस्यां यो जायते पुत्रो स माहिष्यः सुतः स्मृतः ॥"
"वार्षलेयश्च वै कुण्डगोलकः शूद्रयोनिजः।
निन्द्यास्तु माहिषेयोपि विप्रजाः ॥"

"एतेषां याजनं यस्तु ब्राह्मणः कुरुते यदि।
स याति नरकं घोर यावदिन्द्राश्चतुर्द्दश ॥
अद्विजानां जलं चान्न याजनञ्च प्रतिग्रहम्।
ब्राह्मणो नैव गृह्णीयादिति प्राहुर्मुनीश्वराः ॥"

अर्थात् मनुष्य जिस स्त्री द्वारा वेश्यावृत्तिसे धन उपार्जन करता है, उस स्त्री या भार्य्याको महिषी कहते हैं, उससे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह माहिष्य नामसे पुकारा जाता है। वृषली-पुत्र, कुण्डगोलक, ब्राह्मणके औरस और शूद्राके गर्भसे जो पुत्र होता है, वे और माहिषेय सुत—ये सब निन्दित हैं। जो ब्राह्मण इनका याजन (यजमानी) करता है, वह १४ इन्द्रके अवस्थान समय तक घोर नरकमें जाता है। मुनीश्वरोंका आदेश है, कि कोई ब्राह्मण इन अद्विजोंका जल, अन्न या यजमानवृत्ति और दान ग्रहण न करे। जो हो, उक्त प्रमाणसे हम तीन माहिष्य पाते हैं, १ क्षत्रिय वैश्याजात उच्च श्रेणीका माहिष्य, २ करणीके गर्भजात मध्यम माहिष्य और वेश्यावृत्तिसे उत्पन्न अति जघन्य माहिष्य।

इस समय वङ्गालके कैवर्त्त अपनेको माहिष्य कहते हैं। इस तरहका परिचय देनेका कारण ब्रह्मवैवर्त्तपुराणमें लिखा है।

"क्षत्रवीर्य्येण वैश्यायां कैवर्त्तः परिकीर्त्तितः।
कलौ तीवरसंसर्गाद् धीवरः पतितो भुवि ॥"
(ब्रह्मखण्ड १०।१११)

क्षत्रियके औरस और वैश्याके गर्भसे जो जाति उत्पन्न हुई है, वह कैवर्त्त नामसे प्रसिद्ध है। कलिकालमें तीवरके संसर्गसे ये धीवर कैवर्त्त धरातलमें पतित हुए हैं।

वर्त्तमान समयमें हालिक कैवर्त्तगण जालिक (धीवर)-से बिलकुल स्वतन्त्र हैं। इसलिये वे कहा करते हैं, कि वे विशुद्ध कैवर्त्त या माहिष्य हैं, पतित या धीवर कैवर्त्त नहीं हैं। आश्वलायनने यह सन्देह दूर कर कहा है, कि 'चौर्य्येण' अर्थात् गुप्तरूपसे अवैधभावसे जो उत्पन्न हुआ है, वही धीवर या कैवर्त्त हैं। किन्तु किसी भी शास्त्रमें माहिष्य कैवर्त्त कह कर उल्लेख नहीं दिया गया है।

माहिष्य और कैवर्त्तके सिवा क्षत्रिय और वैश्याके संयोगसे और भी कई जातियां उत्पन्न हुई हैं। जैसे—

"क्षत्रवीर्येण वैश्यायामृतौ प्रथमवासरे।
जातः पुत्रो महादस्युर्बलवांश्च धनुर्द्धरः॥
चकार वागतीतञ्च क्षत्रियेणाऽपि वारितः।
तेन जात्या स पुत्रश्च वागतीतः प्रकीर्त्तितः॥

(ब्रह्मखण्ड १०।११७-११८)

ऋतुके प्रथम दिन वैश्याके गर्भमें क्षत्रियका वीर्यवपन करनेसे जो बालक उत्पन्न हुआ, वह महा डाकू, बलवान् और धनुर्द्धारी निकला। क्षत्रियके मना करने पर भी उस बालकने वागतीत या अनिर्वचनीय कर्मोंका सम्पादन किया था, इसलिये वह वागतीत याव ाग्दी नामसे मशहूर है।

फिर औशनसधर्मशास्त्र नामक एक अप्राचीन ग्रन्थमे लिखा है—

"नृपाज्जातोऽथ वैश्याया गृह्याया विधिना सुतः।
वैश्यवृत्त्या तु जीवेत क्षत्रधर्मं न चाचरेत्॥"

क्षत्रियके औरस और पाणिग्रहण की हुई वैश्यासे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह सूत है। उन्हें वैश्यवृत्ति द्वारा अपनी जीविका निर्वाह करना चाहिये।

जो हो, क्षत्रियसे और वैश्याके गर्भसे जन्म लेनेसे ही सभी माहिष्य होंगे, ऐसा नहीं है। माहिष्यके सिवा धीवर या कैवर्त्त, सुत और वागदी ये भी क्षत्रिय वैश्याजात है।

कुल्लूकभट्टने लिखा है—"नृत्यगीतनक्षत्रजीवनं शस्यरक्षा च माहिष्याणां" अर्थात् नाच गान, शुभाशुभ कहना और शस्य (फसल)-की रक्षा आदि माहिष्यकी वृत्ति है। किन्तु किसी प्राचीन स्मृतिपुराणमें या लेखमें माहिष्योंकी शस्यरक्षावृत्ति निर्दिष्ट नहीं है।

आश्वलायन और औशनस धर्मशास्त्रोक सुत मनुक्त सूतसे भिन्न है। आश्वलायनने जिसको धीवर कहा है, उसीको ब्रह्मवैवर्त्तपुराणकारने कैवर्त्त नामसे पुकारा है। "कैवर्त्तो दाशधीवरौ" इस कोषवचन और ब्रह्मवैवर्त्तके 'क्षत्रवीर्य्येण' इत्यादि सम्पूर्ण वचनानुसार धीवर और कैवर्त्त एक पर्याय-शब्द और एक जातिके कहे गये हैं। फिर यह भी कहना आवश्यक है, कि कैवर्त्त जाति एक तरहकी नहीं है। इस समय जैसे हालिक और जालिक ये दो प्रकारके कैवर्त्त देखे जाते हैं, वैसे पहले भी कई तरहके कैवर्त्त थे। जैसे—

(क) "निषादो मार्गवं सूते दाशं नौकर्मजीविनम्।
कैवर्त्तमिति यं प्राहुरार्य्यावर्त्त निवासिनः॥"

(मनु १०।३४)

निषादसे मार्गव या दाश जाति पैदा हुई है। यह जाति नावें चलानेवाली जाति है। इसे आर्यावर्त्तवासी कैवर्त्त कहते हैं।

(ख) "स्वर्णकाराच्च कैवर्त्तं कुवेरियया बभूव ह।"

(परशुरामीय० जातिमा०)

अर्थात् स्वर्णकार (सोनार)-से कुवेरनी या कोयरी कन्यासे कैवर्त्त उत्पन्न हुए हैं।

जो हो, हम तीन प्रकारके कैवर्त्त देखते हैं।

(१) क्षत्रिय और वैश्यजात कैवर्त्त, शस्यरक्षा उपजीविका अवलम्बन कर सम्भवतः ये ही इस समय हालिक कैवर्त्त नामसे विख्यात हैं। इस जाति और माहिष्यकी उत्पत्ति भी क्षत्रिय-वैश्यासे होनेसे और समय समय पर दक्षिण बङ्गालके अनूप प्रदेशमें इस जातिका विस्तार होनेसे विशुद्ध माहिष्योंके साथ सम्बन्ध होना कुछ असम्भव नहीं। मेदिनीपुर जिलेमें इस जातिका बहुत दिनोंसे राजत्व चला आता है और इसी राजकीय प्रभावसे ये राजपूतोंसे सम्बन्ध करनेमें सफलीभूत हुए हैं।*

(२) मनुकथित मार्गव या दाश भी आर्यावर्त्तमें कैवर्त्त नामसे प्रसिद्ध है। किन्तु बङ्गालमें मार्गव या मालो नामसे परिचित हैं। ये आज भी यहां नावें चला कर अपनी जीविका चलाते हैं।

(३) वेदोक्त आदि कैवर्त्त या धीवर इस समय जाली कैवर्त्त नामसे विख्यात हैं। इनकी आदि उत्पत्ति ठीक न कर सकने पर सम्भवतः आज कलके जातिमालाकार परशुरामने इनको कुवेरिणी या कोयरी रमणीके गर्भसे उत्पन्न बतलाया है। ये ही अन्त्यज होनेके कारण नाना संहितामें अन्त्यज कहे गये हैं। कैवर्त्त देखो।

माहिषेय सुत या निम्नश्रेणीके माहिष्योंके याजन प्रतिग्रहादि लेना मना किया गया है, वह आश्वलायनकी उक्तिसे स्पष्ट है। यहांके हालिक कैवर्त्तोंको इसी

* Risley's Tribes and Castes of Bengal.

तरहका जघन्य माहिष्य समझ कर सम्भवतः उच्चश्रेणीके ब्राह्मण उनके पौरोहित्य नहीं करते। इसीलिये हालिक-कैवर्त्त धनसम्पन्न हो कर बहुत दिनोंसे दक्षिण-बङ्ग और मेदिनीपुर जिलेमें प्राधान्य लाभ करने पर भी किसी अज्ञात-कारणसे जालिक कैवर्त्तोंके पौरोहित्य ग्रहण करने पर वाध्य हुए थे। आश्वलायन जघन्य माहिष्योंकी पुरोहिताई करनेवाले ब्राह्मणोंको अद्विज और अनाचरणीय कह गये हैं। इस तरहके ब्राह्मण स्कन्दपुराणके सह्याद्रि-खण्डमें "शूद्रप्राय" कैवर्त्त ब्राह्मण कहे गये हैं। ये कैवर्त्त पुरोहित 'पराशर', 'व्यासोक्त', 'दाक्षिणात्य' और 'द्राविड़' श्रेणीके ब्राह्मण कहे जाते हैं। सह्याद्रिखण्डमें इनकी उत्पत्ति इस तरह लिखी हुई है—

"भगवान् परशुरामने सह्याद्रिशृङ्ग पर चढ़ कर देखा, कि गिरितटका चुम्बन करता हुआ कल्लोलमय उत्ताल-तरङ्गाकुल समुद्र प्रवाहित हो रहा है। परशुरामने समुद्रको शीघ्र ही हट जानेका हुक्म दिया। साथ ही अपना परशु भी चलाया। जहां आ कर परशु गिरा, वहा तक समुद्र सूख गया और वही समुद्रकी सीमा कायम हुई। जलके हट जानेसे भार्गव सह्याद्रिसे नीचे उतरे और उन्हें वहां देश देखनेमें आया। दक्षिण कन्या-कुमारीसे उत्तर नासिक त्र्यम्बक तक उसकी सीमा थी। भार्गवने वहा कैवर्त्तोंको भेजा और उन लोगोंके जालोंको तोड़ ताड कर उन्हें यज्ञोपवीत पहना दिया। इस तरह भार्गवने कैवर्त्तोंको ब्राह्मण बना लिया। उनको वर दिया, कि तुम लोगोंके देशमें कभी अकाल या दुर्भिक्ष नहीं पड़ेगा। यह भूमि शस्यशालिनी होगी। जब तुम्हें कोई विपद् उपस्थित हो, तब तुम लोग मेरा स्मरण करना। मैं आ कर तुम लोगोंकी विपद्को दूर करूंगा। यह कह कर भार्गव चले गये। किन्तु इन विप्ररूपधारी कैवर्त्तोंको सन्देह हुआ। वे लोग परशुरामकी बातोंकी परीक्षा करनेके लिये जोरोंसे चिल्ला चिल्ला कर रोने लगे। तुरन्त ही परशुराम आ गये और उनकी बदमाशी जान कर बड़े क्रुद्ध हुए और यह अभिशाप दिया, कि तू आजसे मोटे अन्न खानेवाले, मैले कुचैले फटे पुराने वस्त्र पहननेवाले होगे और अप्रसिद्ध स्थानमें श्लाघनीय हो रहोगे। इस तरह अभिशाप दे कर भार्गव वहांसे चले गये। शापपीड़ित कैवर्त्त ब्राह्मण, शूद्रप्रायः हो गये।*

इस समय भी ये ब्राह्मण दाक्षिणात्यमें वास करते हैं। ये पराशर नामसे प्रसिद्ध हैं और उच्च ब्राह्मण-समाजमें निन्दित हैं। कहीं कहीं इन्होंने अपने कर्म-निष्ठा गुण और ऐश्वर्यके प्रभावसे कुछ कुछ उच्चता प्राप्त की है। हिन्दू समाजमें जालिक कैवर्त्तोंकी अपेक्षा उनके पुरोहित हीनावस्थापन्न हैं। वास्तविक आश्वलायन-स्मृति और सह्याद्रिखण्डसे भी यही मालूम होता है।

---

* "कन्याकुमारी चैकत नासिकात्र्यम्बकः परः।
सीमारूपेण विद्येते दक्षिणोत्तरतः शुभौ ॥२९
शतयोजनायामञ्च विभेदे सप्तधा तलम्।
आब्रह्मयये तदा देशे कैवर्त्तान् प्रेक्ष्य भार्गवः ॥३०
छित्वा सत्वडिश कण्ठे यज्ञसूत्रमकल्पयत्।
दाशानेव तदा विप्रान् चकार भृगुनन्दनः ॥३१
क्षोणीतले यद्यदस्ति पुनस्तत्र ससर्ज तत्।
वर ददौ स्वदेशेभ्यो दुर्भिक्ष मा भवत्विति ॥३२
इति दत्त्वा वर तेभ्यो जामदग्न्यः कृपानिधिः ॥३६
गोकर्णं प्रययौ रामो महाबलदिदृक्षया।
तत् सत्यमनृत वेति परीक्षा कुर्म्महे वयम्।
इति सर्वे समालोच्य रामेत्युच्चैः प्रचुक्रुशु ॥४१
आक्रन्दित तदा तेषां श्रुत्वा रामः कृपानिधिः।
प्रादुरासीत् पुरोभागे देवर्षिभार्गवः स्वयम् ॥४२
भार्गव उवाच। किमर्थ क्रन्दित विप्रा भवद्भिर्मिलितैरिह।
किं दुःखं भवतामद्य नाशयाम्यचिरादहम् ॥४३
इति तस्य वचः श्रुत्वा प्रत्यूचुस्ते भयान्विताः।
न किञ्चिदपि सप्राप्त दुःखं त्वत्कृपया विभो ॥४४
जल्पित भवता सत्यमनृत वेति शङ्कितैः।
केवल तु परीक्षार्थं क्रन्दित मीलितैः प्रभो ॥४५
इति तेषा वचः श्रुत्वा क्रोधसरक्तलोचनः।
निर्दहन्निव नेत्राभ्यामालोकयत भूसुरान् ॥४६
शशाप तान् तदा विप्रान् जमदग्निकुमारकः।
कदन्नभोजिनो यूय चेलखण्डधरा भवि ॥४७
अप्रसिद्धावनीस्थाने श्लाघनीया भविष्यथ।
शप्त्वेत्थ भार्गवो रामो महेन्द्रं तपसे ययौ ॥४८
गते तु भार्गवे रामे तत्क्षेत्रस्था द्विजातयः।
शापग्रस्ताः सुदुःखार्त्ताः शूद्रप्रायास्तदाभवन् ॥"४९
(सह्याद्रिख० उत्तरार्द्ध ७ अध्याय)

बहुतोंका विश्वास है, कि उड़ीसामें जिस गजपतिवंशने राजत्व किया था और इस समय भी मयूरभञ्ज आदि विभिन्न स्थानोंमें जो क्षत्रिय या राजपूत राजे राज कर रहे हैं, वे सब माहिष्य हैं और मेदिनीपुरके विभिन्न गढ़ोंके अधिपति माहिष्य कैवर्त्तोंकी जातिके हैं। किंतु कहना यह है, कि यह अमूलक विश्वास भित्तिहीन है। उड़ीसाके गङ्गवंशीय और गजपतिवंशीय राजाओंके बहुतेरे शिलालेख और ताम्रपत्र मिले हैं। इनसे मालूम होता है, कि ये चन्द्र और सूर्यवंशीय हैं। मयूरभञ्जका राजवंश भी वैसे ही चन्द्रवंशीय क्षत्रिय हैं और तो क्या उड़ीसाका कोई राजा अपनेको माहिष्य नहीं कहते। उड़ीसाके राजाओंका "माहिष्य" होना लिखना आधुनिक वङ्गीय कवियोंकी केवल कल्पना है। अतएव उड़ीसाका राजवंश और मेदिनीपुरके कैवर्त्त राजवंशको एक जातीय नहीं कहा जा सकता।

भारतवर्षमें श्रेष्ठ माहिष्य जातिका अब अस्तित्व नहीं रहा। सम्भवतः यह जाति अवस्थाके अनुसार राजपूत समाजमें अथवा अन्य किसी समाजमें मिल गई है। वालिद्वीपमें अब भी माहिष्य जातिकी वस्ती है। क्षत्रियके वीर्य और वैश्यकन्यके गर्भसे इस जातिकी उत्पत्ति है। वालिद्वीपमें आज भी उस सुप्राचीन हिंदूसमाजका आदर्श विद्यमान है। वहांके माहिष्योंके आचार व्यवहार क्षत्रियोंकी तरह हैं। वहां बहुतेरे स्थानोंमें माहिष्योंका राज्य है। वे अपनेको माहिष्य क्षत्रिय कहते हैं।*

माही (हिं० स्त्री०) दक्षिण देशकी एक नदीका नाम जो खम्भातकी खाड़ीमें गिरती है।

माही (फा० स्त्री०) मछली।

माहीगीर (फा० पु०) मछुआ, मछली पकड़नेवाला।

माहीन (सं० पु०) महत्, उत्कृष्ट।

माहीपुश्त (फा० वि०) १ जो मछलीकी पीठकी तरह बीचमें उभरा हुआ और किनारे किनारे ढालुआँ हो। (पु०) २ एक प्रकारका कारचोबीका काम जो बीचमें उभरा हुआ और इधर उधर ढालुआँ होता है।

माही मरातिब (फा० पु०) राजाओंके आगे हाथी पर चलनेवाले सात झण्डे जिन पर अलग अलग मछली, सातों ग्रहों आदिकी आकृतियां कारचोबीकी बनी होती हैं। इस प्रकारके झंडोंका आरम्भ मुसलमानोंके राजत्व कालमें हुआ था। सूर्य, पञ्जा, तुला, अजगर, सूर्यमुखी, मछली और गोले ये सात शकलें झण्डों पर होती हैं।

माहुखडक भट्ट—एक प्राचीन कवि।

माहुदा—हजारीबाग जिलेके करणपुर परगनेका एक बड़ा पहाड़। यह हजारीबागसे ४ कोस दक्षिणमें अवस्थित है। इसको ऊंचाई ८०० फुटसे २४३७ फुट तक है। दूरसे इसका दृश्य बड़ा ही मनोरम है। चोटीका ऊपरी भाग ठीक अर्द्ध चन्द्रके जैसा है। इसके नीचे अभी खेती होती है।

माहुर (हिं० पु०) विष, जहर।

माहुरदत्त (सं० क्ली०) नगरभेद।

माहुल (सं० पु०) महुलका गोत्रापत्य।

माहुल—युक्तप्रदेशके आजमगढ़ जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ४८' से २६° २७' उ० तथा देशा० ८२° ४०' से ८३° ७' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४३६ वर्गमील और जनसंख्या ३ लाखसे ऊपर है। इसमें २ शहर और ६४७ ग्राम लगते हैं। कनवार नदी इसको दो भागोंमें बाँटती है। सभी नदियोंमें टोंस बड़ी है।

माहुली—वम्बईप्रदेशके सतारा जिलान्तर्गत एक बड़ा गाँव। गाँवके बीचमें हेमाडपन्थियोंका सुप्रसिद्ध कदम्ब देवीका मन्दिर विद्यमान है। मन्दिरकी ऊंचाई ४० फुट और परिधि २० फुट है। इसका मण्डपांश भास्करशिल्पसे पूर्ण है। उत्तरमें परशुरामको गोदमें लिये महिषासुरीदेवी, पश्चिममें नरसिंह-मूर्त्ति और दक्षिणमें गजानन, षड़ानन आदि देवमूर्त्तियां खुदी हुई हैं। गर्भगृहकी देवीमूर्त्तिके पार्श्वमें महादेवकी लिङ्गमूर्त्ति स्थापित है।

माहुली (सङ्गम-माहुली)—वम्बईप्रदेशके सतारा जिलान्तर्गत एक नगर। कृष्णा और वेणावा नदीके कारण इसका सङ्गममाहुली नाम हुआ है। यह अक्षा० १७° ४२' उ०

---

* Journal of the Royal Asiatic Society N, S, vol. ix. p, 116,

तथा देशा० ७४° ६´ पू०के मध्य विस्तृत है। यह नगर प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है। जो भाग कृष्णानदीके पूर्वी किनारे अवस्थित है उसे क्षेत्रमाहुली और जो पश्चिमी किनारे है उसे वस्तिमाहुली कहते हैं।

महाराष्ट्रीय सुविख्यात पन्तप्रतिनिधिवंशके अधिकारमें रह कर यह नगर उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुच गया था। धर्मप्राण सचिववंशकी देवकीर्त्तियां आज भी माहुली नगरीको गौरव-रक्षा करती हैं। कृष्णा-तीरवर्त्ती १० देवमन्दिर ही प्रधानतः उल्लेखनीय हैं। क्षेत्रमाहुलीके गिरिघाट पर अवस्थित राधाशङ्कर-मन्दिरका चबूतरा बापुभट्ट गोविन्दभट्ट द्वारा १७८० ई०में बनाया गया। १७४२ ई०में श्रीपतराव पन्तप्रतिनिधि-प्रतिष्ठित विश्वेश्वर-मन्दिर, १७०० ई०में परशुरामनारायण अङ्गल द्वारा निर्मित रामेश्वर-मन्दिर, १७४० ई०में श्रीपतराव पन्तप्रतिनिधि द्वारा स्थापित सङ्गमस्थलका सङ्गमेश्वर महादेव-मन्दिर और १७३५ ई०में श्रीपतराव द्वारा स्थापित विश्वेश्वर महादेवका मन्दिर विशेष उल्लेखयोग्य हैं। विश्वेश्वर-मन्दिरमें जो बड़ा घण्टा लटक रहा है, उसे १७३९ ई०में वसई जीतने पर महाराष्ट्रगण किसी पुर्त्तगीज गिर्जासे उठा लाये थे। मन्दिरके पश्चाद् भागमें रामचन्द्रका मन्दिर विद्यमान है। उसका निर्माण १७७२ ई०में सेनापति लिम्बक विश्वनाथ पेटे द्वारा हुआ था। उक्त पांच मन्दिरोंके अलावा और भी पांच छोटे छोटे मन्दिर हैं। इन सब मन्दिरोंका भी कारुकार्य किसी अंशमें कम नही है। इन पांच छोटे मन्दिरोंमेंसे विठोवाका मन्दिर १७३० ई०में चिचनेरवासी ज्योतिपन्त भागवत द्वारा, १७७० ई०में भैरवदेवका मन्दिर कृष्णम्भट्ट तालका द्वारा, १६५४ ई०में कृष्णाबाईका मन्दिर और १७६० ई०में महादेवका मन्दिर कृष्णदीक्षित चिपलुनकर द्वारा स्थापित हुआ। अलावा इसके सतारा रानीका बनाया हुआ एक और भी शिल्पकार्य-युक्त मन्दिर है।

उक्त मन्दिरोंको छोड कर रास्तेके दोनों बगल समाधिस्तम्भ दृष्टिगोचर होते हैं। इनमें सतारा राजपरिवारका स्मृतिचिह्न ही अधिक है। राजा शाहु (१७०८-१७४९ ई०)-ने अपने प्यारे कुत्तेकी स्मृतिरक्षाके लिये यहां एक स्तम्भ खड़ा किया। उस कुत्तेने उन्हें बाघके आक्रमणसे बचाया था। इस कृतज्ञता स्वरूप शाहु उसे बहुमूल्य वस्त्रसे ढके रहते थे तथा जहां वे जाते, वहां कुत्तेको पालकी पर चढ़ा ले जाते थे।

केवल देवकीर्त्तिके लिये ही इस नगरकी प्रसिद्धि थी सो नही। चतुर्थ पेशवा माधवरावके गुरु और राजकार्यमें सलाह देनेवाले देवप्रतिम रामशास्त्री परभोनेका यहां जन्म हुआ था। १८१७-१८ ई०में अन्तिम पेशवा बाजीरावके साथ अंगरेजोंके युद्ध-घोषणा करनेसे कुछ पहले सर जान माकम यहां आ कर पेशवासे मिले थे। युद्धके समय नाना स्थानोंमें पर्यटन कर स्वयं पेशवाने ही यहा कई बार आश्रय लिया था।

माहूं (हिं० स्त्री०) एक छोटा कीड़ा जो राई, सरसों, मूली आदिकी फसलमें उनके डंठलों पर फुलनेके समय या उसके पहले अण्डे दे देता है जिससे फसल नितान्त हीन हो कर नष्ट हो जाती है। यह काले रंगका परदार भुनगेके आकारका कीडा होता है और जाड़ेके दिनोंमें फसल पर लगता है। यदि पानी बरस जाय तो कीड़े नष्ट हो जाते हैं। प्रायः अधिक बदलीके दिनोंमें, जब पानी नहीं बरसता, ये कीड़े अण्डे देते हैं और फसलके डंठलों पर फूलोंके आस पास उत्पन्न हो जाते हैं।

माहेजी—बम्बई प्रदेशके खान्देश जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २०° ४८´ उ० तथा देशा० ७५° २४´ पू०के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या डेढ़ हजारसे ऊपर है। यहां १८७१ ई०में म्युनिसपलिटी स्थापित हुई थी, पर १९०३ ई०में उठा दी गई। ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवेका एक स्टेशन होनेके कारण नगर दिनों दिन उन्नति कर रहा है।

शहरमें प्रति वर्ष माघसे ले कर चैतमास तक माहेजी नामक एक कृषक-रमणीके उद्देशसे मेला लगता है। खान्देशमें ऐसा बडा मेला और कहीं भी देखनेमें नहीं आता। मेलेके समय गाय, घोड़े आदि बिकनेको आते हैं तथा कृषिप्रदर्शनी होती है।

स्थानीय प्रवाद है, कि उक्त रमणी ब्रह्मचर्यका अवलम्बन कर योगसिद्ध हुई थी। आजसे प्रायः २७५ वर्ष पहले वे जनतामें अपना अलौकिक प्रभाव दिखा गई है। जहां मेला लगता है उसके पासही माहेजीकी

औचन्त समाधिका स्थान आज भी देखनेमें आता है।

माहेतावा (फा० पु०) चिलमची।

माहेन्द्र (सं० त्रि०) महेन्द्रो देवता अस्य महेन्द्र (महेन्द्राद घाणौ च। पा ४।८।२९) इति अण्। १ महेन्द्रदैवत्य, जिसका देवता इन्द्र हो।

"अविभ्रजत्तु तः शस्त्रमैषीकं राक्षसो रणे।
तदप्यध्वसदासाद्य माहेन्द्रलक्ष्णोरितम्॥"
(भट्टि १५।९३)

२ महेन्द्रसम्बन्धी, इन्द्रसम्बन्धी। (पु०) महेन्द्रस्यायं अण्। ३ शुभदण्डविशेष, वारके अनुसार भिन्न भिन्न दंडोंमें पड़नेवाला एक योग जिसमें यात्रा करनेका विधान है। रवि आदि सभी वारोंमें माहेन्द्र, वारुण आदि दण्ड हैं, उस दण्डको साधारणतः माहेन्द्र, योग वा माहेन्द्रक्षण कहते हैं। यह योग प्रतिवारको क्रमानुसार पंद्रह वार आता है। प्रतिदिनके दण्डोंमें ये चार चार योग भिन्न भिन्न क्रमसे आते रहते हैं; माहेन्द्र, वरुण, वायु और यम। इनमें वरुण और माहेन्द्रका दण्ड शुभ तथा वायु और यमका दण्ड अशुभ है। * चारों योग सप्ताहके प्रति दिन इस प्रकार आया करते हैं:—

दिन	प्रथमदण्ड	द्वितीयदण्ड	तृतीयदण्ड	चतुर्थदण्ड
रवि	वायु	वरुण	यम	माहेन्द्र
चन्द्र	माहेन्द्र	वायु	वरुण	यम
भौम	वरुण	यम	माहेन्द्र	वायु
बुध	माहेन्द्र	वायु	वरुण	यम
गुरु	वायु	वरुण	यम	माहेन्द्र
शुक्र	माहेन्द्र	वायु	यम	वरुण
शनि	यम	माहेन्द्र	वायु	वरुण

* "स्यात वा व य मा सूर्ये मा वा व य कलानिधौ।
व य मा वा कुजे ज्ञेया मा वा व ज सुधाशुजे॥
गुरौ वा व य मा चैव मा वा थ व तथा-भृगौ।
सूर्यपुत्रे च य मा वा घटीयुग्मं शुभाशुभम्॥
माहेन्द्रे विजयो नित्यं वारुणे च धनागमः।
वायौ च भ्रमते नित्यं यमेऽपि मरणं ध्रुवम्॥"
(सारसंग्रह)

इन चारों योगोंमें माहेन्द्र योग विजयाकारक, वरुण धनप्रद, वायु नित्यभ्रमण करानेवाला और यम मृत्यु देनेवाला है।

४ जैनियोंके एक देवता जो कल्पभव नामक वैमानिक देवगणमें हैं। ५ एक अस्त्रका नाम।

६ सुश्रुतके अनुसार एक देवग्रह। इसके आक्रमण करनेसे ग्रहग्रस्त पुरुषमें माहात्म्य, शौर्य, शास्त्र-वृद्धिता, भृत्यभरण आदि गुण एकाएक आ जाते हैं।

"माहात्म्य शौर्यमाज्ञा च सततं शास्त्रबुद्धिना।
भृत्याना भरणाञ्चापि माहेन्द्र लक्षणोरितम्॥"
(सुश्रुत सूत्र ४ अ०)

माहेन्द्रज (सं० पु०) जैनियोंके एक देवताका नाम।

माहेन्द्रवाणी (सं० स्त्री०) महाभारतके अनुसार एक नदीका नाम।

माहेन्द्री (सं० स्त्री०) महेन्द्रस्येयं महेन्द्र अण्, स्त्रियां ङीष्। १ इन्द्राणी। २ गाभी, गाय। ३ इन्द्रवारुणीलता, इन्द्रायण। ४ सप्त मातृकाभेद, सात मातृकाओंमेंसे एक। ५ स्कन्दानुचर मातृभेद। ६ ऐन्द्रशक्ति, इन्द्रकी शक्ति।

माहेय (सं० त्रि०) माही ढक्। १ महीका अपत्य, मिट्टीका बना हुआ। (पु०) २ महाभारतके अनुसार एक जनपदका नाम। ३ मंगलग्रह। ४ जातिविशेष। ५ विद्रुम, मूंगा।

माहेयी (सं० स्त्री०) मह्याः सुरभ्याः अपत्यमिति मही- (नद्यादिभ्यो ढक। पा ४।२।९७) इति ढक् स्त्रियां ङीष्। १ गाभी, गाय। २ माही नदी।

माहेल (सं० पु०) एक गोत्र-प्रवर्त्तक ऋषिका नाम।

माहेश (सं० पु०) महेश अण्। १ महेशसम्बन्धीय, महेशका। (क्ली०) महेशेन कृतमित्यण्। २ व्याकरण-विशेष, माहेशव्याकरण।

माहेश—हुगली जिलेके गंगातीरवर्त्ती एक प्रसिद्ध गांव। यहां जगन्नाथदेवके स्नान और रथयात्रा उपलक्षमें एकत्र मेला लगता है। महेश देखो।

माहेशी (सं० स्त्री०) महेशस्येयं महेश-अण्, ङीष्। दुर्गा।

"महादेवात् समुत्पन्ना महान्तैरीदयते यतः।
माहेश्वर्या तनुर्यस्या माहेशी तेन सा स्मृता॥"
(देवीपु० ३५ अ०)

माहेश्वर (सं० त्रि०) महेश्वर अण्। १ महेश्वरसम्बन्धीय, महेश्वरका। (क्ली०) २ एक उपपुराणका नाम। ३ यज्ञभेद।

"माहेश्वर भागवत वासिष्ठञ्च सविस्तरम्।
एत्यान्युपपुराणानि कथितानि महात्मभिः॥"
(देवीभाग० १।३।१६)

४ शैवसम्प्रदायका एक भेद। ५ सभानाटकके प्रणेता। ६ माहेश्वराल, एक अस्त्रका नाम। ७ पाणिनिके वे चौदह सूत्र जिनमें स्वर और व्यञ्जन वर्णोंका संग्रह प्रत्याहारार्थ किया गया है। इसके विषयमें लोगोंका विश्वास है, कि ये सूत्र शिवजीके तांडव नृत्यके समय उनके डमरूसे निकले थे। सूत्र ये हैं—अइउण्, ऋलृक्, एओङ्, ऐऔच्, हयवरट्, लण्, ञमङणनम्, झभञ्, घढधष्, जबगडदश्, खफछठथचटतव्, कपय्, शषसर्, हल्।

माहेश्वरकवच—माहेशाक्षर संयुक्त कवचभेद। ज्वरातिसार रोगमें यह कवच बड़ा उपकारी है। इसके पहननेसे शरीरमें शिवके समान बल होता तथा भूत, पिशाच, विनायक आदि शरीरमें प्रवेश नहीं कर सकता। कवचकी प्रस्तुत प्रणाली और मन्त्र नीचे लिखे हैं—

"ओं नमः पञ्चवक्त्राय शशिशेखरार्कनेत्राय भयार्त्तानाम भयाय मम सर्वगात्ररक्षार्थे विनियोगः।

ओं ह्रीं ह्रां ह्रां मन्त्रेणानेन वृषगोमयभस्मानामामन्त्र्य ललाटे तिलक मादाय पठेत्॥

"त्राहि मा देवदुष्प्रेक्ष शत्रूणा भयवर्द्धन।
ओं स्वच्छन्दोभैरव प्राच्यामाग्नेयां शिथिलोचनः॥
भूतेशो दक्षिणे भागे नैर्ऋत्या भीमदर्शनः।
वरुणे वृषकेतुश्च वायौ रक्षतु शङ्करः॥
दिग्वासाः सौम्यतो नित्यमैशान्या मदनान्तकः।
वामदेव ऊर्द्ध्वतो रक्षेदधो रक्षेत् त्रिलोचनः॥
पुरारिः पुरतः पातु कपर्द्दी पातु पृष्ठतः।
विश्वेशो दक्षिणे भागे वामे कालीपतिः सदा॥
महेश्वरः शिरोभागे भवो भाले सदैव तु।
भ्रुवोर्मध्ये महातेजास्त्रिनेत्रो नेत्रयोर्द्वयोः॥
पिनाकी नासिकादेशे कर्णयोर्गिरिजापतिः।
उग्रः कपालतो रक्षेन्मुखदेशे महाभुजः॥
जिह्वायामङ्गकध्वंसी दन्तान् रक्षतु मृत्युजित्।
नीलकण्ठः सदा कण्ठे पृष्ठे कामाङ्गनाशनः॥
त्रिपुरारिः स्कन्ददेशे बाह्वोश्च चन्द्रशेखरः।
हस्तिचर्मधरो हस्ते नखाङ्गुलिषु शूलभृत्॥
भवानीशः पातु हृदयं पातूदरकटीमृडः।
गुदे लिङ्गे च मेढ्रे च नाभौ च प्रथमाधिपः॥
जङ्घोरुचरणौ भीम सर्वाङ्गे केशवप्रियः।
रोमकूपे विरूपाक्षः शब्दस्पर्शे च योगवित्॥
रक्तमज्जवसामांसशुक्रे वसुगणार्चितः।
प्राणापानसमानेषूदानव्यानेषु धूर्जटिः॥
रक्षाहीनन्तु यत् स्थान वर्जितं कवचेन यत्॥
तत् सर्वं रक्ष मे देव व्याधिदुर्गज्वरादितः।
कार्य कर्म त्विद प्राग्नेदीप प्रज्वल्य सर्पिषा॥
नैवेद्य शिखिनेत्राय वारयेच्चोत्तर मुखम्॥
ज्वरदाहपरिक्रान्त तथान्यव्याधिसंयुतम्।
कुशैः संमार्ज्य समार्ज्य क्षिपेत् दापशिखे ज्वरम्॥
ऐकाहिक द्व्याहिक वा तृतीयक चतुर्थकम्।
वातपित्त कफोद्भूत सान्निपातोग्रतेजसम्॥
अन्यं दुःख दुराधर्ष कर्मजञ्चाभिचारिकम्।
धातुस्थ कफसमिश्र विषम कामसम्भवम्॥
भूताभिषङ्गसंसर्ग भूतचेष्टादिसंस्थितम्॥
शिवाज्ञा घोरमन्त्रेण पूर्ववृत्त स्मय स्मर॥
जहि देह मनुष्यस्य दीप गच्छ महाज्वर।
कृत्वा तु कवच दिव्य सर्वव्याधि भयार्द्दनम्॥
न बाधन्ते बाधयन्त बालग्रहभयाश्च ये।
लूताविस्फोक घोर शिरोर्तिच्छर्दिविग्रहम्॥
कामला क्षयकासञ्च गुल्माश्मरी भगन्दरान्।
शूलोन्मादञ्च हृद्रोग यकृत पाण्डुविद्रधिम्॥
अतीसारादयो रोगा डाकिनी ग्रहपीडितान्।
पामाविचर्चिकादद्रुकुष्ठव्याधिविषार्द्दनम्॥
स्मरणान्नाशयत्याशु कवचं शूलपाणिनः।
यस्तु स्मरति नित्य वै यस्तु धारयते नरः॥
स मुक्तः सर्वपापेभ्यो वसेत् शिवपुरे चिरम्।
सख्या व्रतस्य दानस्य यज्ञस्यास्तीह शाश्वतः॥
न संख्या विद्यते शम्भोः कवचस्य प्रसादतः॥
तस्मात् सम्यगिद सर्वैः सर्वकाम फलप्रदम्।
श्रोतव्य सतत भक्तया कवच सर्वकामिकम्॥
लिखित तिष्ठते यस्य गृहे सम्यगनुत्तमम्।
न तत्र कलहोद्वेग नाकालमरण भवेत्॥

नाल्पप्रजाः स्त्रियस्तत्र नादौर्भाग्यसमाश्रिताः।
तस्मान्माहेश्वरं नाम कवचं सुरगणार्चितम् ॥"

माहेश्वरधूप (सं० पु०) ज्वराधिकारोक्त धूपौषधभेद। बनानेका तरीका—हिंगुल, देवदारु, सरलकाष्ठ, गव्यघृत, गोकी हड्डी, गन्धतृण, शिवनिर्माल्य, कटुकी, सफेद सरसों, निम्बपत्र, मयूरपुच्छ, सांपका केंचुल, बिडालकी विष्ठा, गोशृङ्ग, मदनफल, वृहती, कण्टकारी, धानकी भूसी, बकरेकी विष्ठा, शृगालकी विष्ठा और हस्तिदन्त,—इन सब द्रव्योंको संग्रह कर बकरेके मूतमें भावना दे। पीछे उखलीमें कूट कर मिट्टीके बरतनमें रख धूपित करे। यह धूप एक दिन, दो दिन, तीन दिन, और चार दिनमें आनेवाले सभी प्रकारके विषम ज्वरको नाश करता है। जिस घरमें यह धूप दिया जाता है, वहां उसकी गंधसे सांप पिशाच आदि घुसने नहीं पाता। 'ओं नमो भगवते उमापतये सम्पन्नाय नन्दिकेश्वराय।' इस मन्त्रसे धूपको अभिमन्त्रण करे।

माहेश्वरी (सं० स्त्री०) महेश्वरस्येयं अण् ङीप्। १ यवतिक्ता, शंखिनी नामकी लता। २ दुर्गा।

"भगवद्देवानुजातायां सर्वासां वामलोचना।
माहेश्वरी महादेवी प्रोच्यते पार्वती हि सा ॥"
(भाग० १४।४३।१५)

३ एक मातृकाका नाम। ४ पीठस्थानभेद एक पीठका नाम। (देवीभा० ७।२०।७२) ५ नदीविशेष। ६ वैश्योंकी एक जाति।

मिं—चीनदेशकी एक जाति। इस जातिने १३७० ई०से १६५० तक चीनमें राज्य किया था। इस वंशका प्रतिष्ठाता यु-येन-यां एक श्रमजीवीका लड़का था। युवावस्थामें वह किसी बौद्धमठमें एक नौकर था। पीछे मोङ्ग लोयोंने जब चीन पर आक्रमण किया, तब यह दलपति हो कर उनके साथ लड़ा था। थोड़े ही दिनोंके अन्दर वह एक बड़े सेनादलका अधिनायक हो गया। पीछे उन्हीं सेनाओंकी सहायतासे इसने चीन-साम्राज्यके १३ प्रदेशोंको ले कर नया राज्य संगठन किया। उस समय इसके जैसा राजनीतिज्ञ और युद्धविशारद राजा कोई भी न था।

सिंहासन पर बैठते ही इसने प्राचीन कालके तां-की तरह एक अनुशासनपत्र इस आशय पर निकाला, कि वह चीनमें राज्यशासन करनेके लिये स्वर्गसे भेजा गया है। (ता १७६६ ई०में इस प्रकार अनुशासन पत्र निकाल कर हियावंशके राजाको भगा सिंहासन पर बैठा था।)

प्रजावर्गकी सहानुभूति पानेके लिये इसने जो व्यक्ति जिस लायक था उसे उसी काम पर भर्त्ती किया था। जातीयभाषाकी उन्नतिके लिये इसने जनसाधारणको बहुत उत्साह दिया था। इसके शासनकालमें शिक्षा, सभ्यता, शिल्प और वाणिज्यकी बहुत उन्नति हुई थी। चीनकी ऐसी शिक्षा सभ्यतासे मुग्ध हो देश-देशान्तरसे विद्योत्साही व्यक्तिगण वहां आये थे। ईसाधर्म, बौद्धधर्म और कनफूत्रीके मत आदिके आन्दोलनसे चीनमें उच्च दार्शनिक भावकी उत्पत्ति हुई थी।

जेसुट-धर्मयाजक मांटियो रिसिने चीनभाषाके दर्शन, विज्ञान और धर्मग्रन्थोंका पाठ कर उनमें असाधारण व्युत्पत्ति प्राप्त कर ली थी। उसके शिक्षा नैपुण्य पर चीनवासी ऐसे लट्टू हो गये थे कि मि कुयं-टि नामक एक चीनदेशीय विख्यात पण्डितने जेसुटधर्मका समर्थन कर पुस्तक प्रकाशित की थी। इस समय चीन भाषामें एक बड़ा अभिधान-ग्रन्थ सङ्कलित हुआ। वह ग्रन्थ २२००० भागोंमें विभक्त है और उसमें ११ लाख पृष्ठ हैं। चीनके सुप्रसिद्ध राजकीय ग्रन्थालय और हावीलमें इस समय १० लाख पुस्तक थीं। १०वीं सदीमें प्रजाविद्रोहसे मिं-वंश सिंहासन-च्युत हुआ और एक माञ्च सरदार सिंहासन पर बैठा।

मिंगनी (हिं० स्त्री०) मेंगनी देखो।

मिंगी (हिं० स्त्री०) मींगी देखो।

मिंट (अं० पु०) १ टकसाल, वह स्थान जहां सिक्के ढलते हों। २ एक प्रकारका बढ़िया सोना, टकसाली सोना।

मिंडाई (हिं० स्त्री०) १ मींड़ने या मींजनेकी क्रिया या भाव। २ मींडनेकी मजदूरी। ३ देशी छींटकी छपाईमें एक क्रिया जो कपड़ेको छापनेके बाद और धोनेसे पहले होती है। इसके लिये पानीसे भरी एक नांदमें कुछ रेंड़ीका तेल और बकरीकी मेंगनी तथा दो एक और मसाले डाले जाते हैं, और उसमें छापा हुआ कपड़ा तीन चार

दिन तक भिगोया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर यह क्रिया दो तीन बार भी की जाती है। नाँदमेंसे निकाल कर कपड़ा धोबीके यहां भेजा जाता है। इससे छींटका रंग पक्का और चमकदार हो जाता है। इसे तेलचलाई भी कहते हैं।

मिहदी (हिं० स्त्री०) मेंहदी देखो।

मिआद (अ० स्त्री०) मीआद देखो।

मिआदी (अ० वि०) मीआदी देखो।

मिआन (फा० वि० पु०) मियाना देखो।

मिकद (फा० स्त्री०) मलद्वार, गुदा।

मिक़दार (अ० स्त्री०) परिमाण, मात्रा।

मिक़नातीस (फा० पु०) चुम्बक पत्थर।

मिकाडो—जापानके सम्राट्‌की उपाधि।

मिकिर—आसामके अन्तर्गत नौगाव जिलेका पहाड़ी प्रदेश। यह स्थान नाला पहाड़के उत्तर अवस्थित है तथा गारो पहाड़से ले कर पाटकाई पहाड़ तक फैला हुआ है। पूर्वकी ओर इस पहाड़की उपत्यका हो कर धान्येश्वरी नदी तथा दक्षिण पश्चिम हो कर दियं, यमुना और कपिला बह गई है।

२ पहाड़ी-जातिविशेष। ये लोग पहले जयन्ती पहाड़ पर रहते थे, पीछे वहांसे उतर कर आसाममें जा कर बस गये हैं। नौगावसे कछाड़ तकके स्थानोंमें इनका वास देखा जाता है। किन्तु नौगाँवमें इनका प्रधान अड्डा है। इनकी संख्या प्रायः एक लाख होगी। आसामकी पहाड़ी जातियोंके मध्य ये लोग सबसे शान्तप्रकृतिके और परिश्रमी हैं। दूसरी किसी जातिके साथ इनका संस्रव नहीं है। ये लोग ४ सम्प्रदायमें विभक्त हैं,—डुमराली, चिन्त', रङ्ग' और अमरी। ये लोग सगोत्रमें विवाह नहीं करते। पहाड़ी खेतोंमें रुई और धानकी खेती कर अपना गुजारा चलाते हैं।

ये लोग गौ आदिको नहीं पालते और तो क्या, अपवित्र जान कर उनका दूध तक भी स्पर्श नहीं करते। सभ्यताके क्षीणालोकसे इनके कुसंस्कारका अन्धकार कुछ कुछ दूर होता जा रहा है। अभी ये हल चलाने लगे हैं।

अरणेमकोठे इनका सर्वप्रधान देवता है। ये लोग देवताके उद्देशसे सूअर और मुर्गोंकी बलि चढ़ाते हैं। गाव गांवमें पूजाका निर्दिष्ट स्थान है। वैशाख, कार्त्तिक और माघ मासके प्रथम दिन बड़ी धूमधामसे पूजा होती है।

यह जाति भूत और पिशाच आदिकी पूजा करती है। भूतोंके नाना विभाग हैं, जैसे पहाड़ी, जंगली और जलाधिष्ठाता इत्यादि। प्रत्येक गृहस्थको महीनेमें दो बार करके गृह भूतकी पूजा करनी होती है। इनका विश्वास है, कि सभी प्रकारकी पीड़ा भूतों द्वारा ही हुआ करती है।

ये लोग मृत देहको जलाते हैं। प्रेतात्माके उद्देशसे बलि दी जाती है और कुछ दिन तक बड़े समारोहसे पान, भोजन, नाच गान होता है। इस प्रकार ये लोग बड़े आनन्दके साथ शोक प्रकट करते हैं। किसी मृत व्यक्तिके स्मरणार्थ पत्थर स्तम्भ गाड़ कर उस पर बीच बीचमें अन्न जल दिया करते हैं।

इन लोगोंमें यौवन विवाह प्रचलित है। जिसकी अवस्था अच्छी है, वह बहुविवाह कर सकता है। दरिद्र लोग विवाह नहीं करते। माता पिता पुत्रकन्याका विवाह नहीं देते। वर और कन्याके आपसमें प्रणय होनेसे ही विवाह होता है। विवाहके बाद वरको दो वर्ष कन्याके घर रहना पड़ता है। स्त्रियोंको पुरुषके समान स्वाधीनता दी गई है। लुसाई-युद्धके समय १८७२ ई०में इन्होंने कुलीका काम करके गवर्मेण्टका भारी उपकार किया था।

मिङ्गल—पहाड़ी असभ्य जातिविशेष। चोरी डकैती करके ही ये अपना जीवन निर्वाह करते हैं। झालवानके दक्षिण खोजदारसे ले कर बेला तक इनका वास देखा जाता है। इनमें दो विभाग हैं, माहिजाई और फैलवानजाई। अलावा इसके इनमें बिजंजु नामक एक और श्रेणी है। फिर उसमें भी आमालारी और ताम्बावारी नामके दो थोक हैं। ये अत्यन्त दुर्द्धर्ष और लुण्ठन प्रिय होते हैं। जिगार-मिङ्गल और रक्षणी लुस्कोंमें इनका वास है। खास कर इनके कोई घर नहीं, तम्बूमें ही रह कर कालातिपात करते हैं।

मिचकना (हिं० क्रि०) १ आंखोंका बार बार खुलना और बंद होना। २ पलकोंका झपकना या बंद होना।

मिचकाना (हिं० क्रि०) १ बार बार आंखें खोलना और बंद करना। २ पलक झपकाना या बंद करके दबाना। जैसे, आंखें मिचकाना।

मिचना (हिं० क्रि०) आखोंका बंद होना।

मिचराना (हिं० क्रि०) विना भूखके खाना, इच्छा न होने पर भी भोजन करना।

मिचलाना (हिं० क्रि०) कै आनेको होना, उबकाई आना,

मिचवाना (हिं० क्रि०) मोचनेका काम दूसरेसे कराना, दूसरेसे आखें बंद कराना।

मिचिता (सं० स्त्री०) १ एक प्राचीन नदीका नाम।

मिचौलना (हिं० क्रि०) मीचना देखो।

मिच्छक (सं० पु०) एक बौद्ध स्थविरका नाम।

मिचनी—पञ्जाब प्रदेशके पेशावर तहसील और जिलेका एक गिरिदुर्ग। यह अक्षा० ३४° १७´ उ० तथा देशा० ७१° २७´ पू०के मध्य काबुल नदीके बाएं किनारे अवस्थित है। काबुल नदीको पार कर दुर्द्धर्ष मामन्द नामक पहाड़ी अफगान अङ्गरेजी-सीमा पर उपद्रव मचाया करता था। उनका दमन करनेके लिये वृटिश सरकारने १८५१-५२ ई०में यह गिरिदुर्ग बनवाया। दुर्ग बनाते समय अङ्गरेज सेनापति लेफ्टनाण्ट बोलनोइ उनके हाथ मारा गया। १८५३ ई०में यहांके दुर्गाध्यक्ष निकटके पर्वत पर टहलते समय गुप्त-शत्रुके शिकार बने।

दुर्गके निकट कोई ग्राम वा नगर नहीं है। तरकजै-मामन्दगण इसके चारों ओर बस गये हैं। इसीसे इस स्थानका सम्मान बढ गया है। नदीके दक्षिण जो मामन्द लोग रहते हैं, वे अङ्गरेजोंके शासनाधीन हैं और दूसरे पूर्ण स्वाधीन हैं। अङ्गरेजोंसे शासित स्थानके रहनेवाले अनेक दोषी लोग दण्ड पानेके भयसे इस स्थानमें आश्रय लेते हैं। पेशावरके दुर्गाधिप ब्रिगेडियाके जेनरलके अधीन रह कर इस दुर्गके आवश्यक कार्य्योंका सम्पादन करते हैं। यहां बेङ्गल पदातिक और अश्वारोही सेनादल रहते हैं।

मिजराब (अ० स्त्री०) तारका बना हुआ एक प्रकारका छल्ला जिसमें मुड़े तारकी एक नोक आगे निकली रहती है और जिससे सितार आदिके तार पर आघात करके बजाते हैं, डङ्का।

मिज़ाज (अ० पु०) १ किसी पदार्थका वह मूल गुण जो सदा बने रहे, तासीर। २ शरीर या मनकी दशा, तबीयत। ३ प्राणीकी प्रधान प्रवृत्ति, स्वभाव। ४ अभिमान, शेखी।

मिजाज आली (अ० स्त्री०) एक वाक्यांश जिसका व्यवहार किसीका शारीरिक कुशल मंगल पूछनेके समय होता है।

मिजाजदार (अ० वि०) घमंडी, जिसे खूब अभिमान हो।

मिजाजपीटा (हिं० स्त्री०) जिसे बहुत घमंड हो, अभिमानी।

मिजाजपुरसी (फा० स्त्री०) किसीसे यह पूछना कि आपका मिजाज तो अच्छा है, तबीयतका हाल पूछना।

मिजाज शरीफ़ (अ० पु०) एक वाक्यांश जिसका व्यवहार किसीका शारीरिक कुशल मंगल पूछनेके लिये होता है।

मिझौना (हिं० पु०) वह खूंटी जो हलमें खड़े बलमें लगी हुई लकड़ीके बीचमें रहती है।

मिटका (हिं० पु०) मटका देखो।

मिटना (हिं० क्रि०) १ किसी अंकित चिह्न आदिका न रह जाना। २ खराब होना, बरबाद होना। ३ रद्द होना। ४ नष्ट हो जाना, न रह जाना।

मिटाना (हिं० क्रि०) १ रेखा, दाग चिह्न आदि दूर करना। २ नष्ट करना, न रहने देना। ३ रद्द करना। ४ खराब करना, बरबाद करना।

मिटिया (हिं० स्त्री०) १ मिट्टीका छोटा बरतन जिसमें प्रायः दूध आदि रखा जाता है, मटकी। (वि०) २ मिट्टीका।

मिटियाना (हिं० क्रि०) मिट्टी लगा कर साफ करना, रगड़ना या चिकना करना।

मिटिया फूस (हिं० वि०) जो कुछ भी दृढ़ न हो, बहुत ही कमजोर।

मिटिया महल (हिं० पु०) मिट्टीका मकान, झोंपड़ी।

मिटियासांप (हिं० पु०) मटमैले रंगका एक प्रकारका

साँप जिसके ऊपर काले रंगकी चित्तियां होती हैं।

मिट्टी (हिं० स्त्री०) पृथ्वी, भूमि।

विशेष विवरण मृत्तिका शब्दमे देखो।

मिट्टीका तेल (हिं० पु०) एक प्रसिद्ध ज्वलन-शील, खनिज पदार्थ। इसका व्यवहार प्रायः सारे ससारमें दीपक आदि जलाने और प्रकाश करनेके लिये होता है।

विशेष विवरण मृत्तिज तैलमे देखो।

मिट्टीका फूल (हिं० पु०) मिट्टी या जमीनके ऊपर जम जानेवाला एक प्रकारका क्षार। इसका व्यवहार कपड़ा धोने और शीशा बनानेमें होता है। इसे रेह भी कहते हैं।

मिट्टी खरिया (हिं० स्त्री०) खड़िया देखो।

मिट्ठा (हिं० पु० वि०) मीठा देखो।

मिट्ठी (हिं० स्त्री०) चुंबन, चूमा।

मिट्ठू (हिं० पु०) १ मीठा बोलनेवाला। २ तोता (वि०) ३ चुप रहनेवाला, न बोलनेवाला। ४ प्रिय बोलनेवाला, मधुर-भाषी। (स्त्री०) ५ मिट्ठी देखो।

मिट्ठो (हिं० स्त्री०) मिट्ठी देखो।

मिठ (हिं० वि०) मीठाका संक्षिप्त रूप। इसका व्यवहार प्रायः यौगिक बनानेके लिये होता है और यह किसी शब्दके पहले जोड़ा जाता है।

मिठ बोलना (हिं० पु०) मिठबोला देखो।

मिठलोना (हिं० पु०) वह जिसमें नमक बहुत ही कम हो, थोड़े नमकवाला।

मिठाई (हिं० स्त्री०) १ मीठे होनेका भाव, मिठास। २ कोई अच्छा पदार्थ या बात। ३ कोई मीठी खानेकी चीज।

मिठा तिवाना—पञ्जाब-प्रदेशके शाहपुर जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० ३२° १४´ ४०´´ उ० तथा देशा० ७२° ८´ ५०´´ पू०के मध्य अवस्थित है। यहांका मालिक-वंश बहुत कुछ प्रसिद्ध है। इन लोगोंने सिख-शक्तिके विरुद्ध युद्धयात्रा करके अपने अधिकारकी रक्षा की थी मूलतानका विद्रोह दमन करते समय ये लोग अङ्गरेजों की ओरसे लड़े थे। १८५७ ई०के सिपाहीविद्रोहके समय भी इन्होंने बृटिश-सरकारका पक्ष लिया था। इस उपकारके लिये अङ्गरेजराजने मालिकवंशके लिये कुछ मासिक रुपये निर्दिष्ट कर दिये और पारितोषिक स्वरूप मान्यसूचक खाँ बहादुरकी उपाधि दी। अश्व-सज्जा और वाणिज्यके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

मिठानकोट—पञ्जाबप्रदेशके डेरा गाजी खाँ जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २८° ५७´ उ० तथा देशा० ७०° २२´ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या साढ़े तीन हजार-के लगभग है। पहले इस नगरमे असिष्टाण्ट कमिश्नर रहते थे। १८६२ ई०को सिन्धु नदीमें जब भयानक बाढ़ आई, उस समय यह नगर गर्भशायी हो गया था। पीछे नदी तटसे ५ मीलकी दूरी पर नया नगर बसाया गया। किन्तु इससे वाणिज्यवृद्धिका बिलकुल ह्रास हो गया। १८८४ ई०में फिर एक बार बाढ़ उमड़ी थी, किन्तु इस बार नगरका उतना नुकसान नहीं हुआ। शहरमें १८७३ ई०को म्युनिसपलिटी स्थापित हुई है।

मिठास (हिं० स्त्री०) मीठे होनेका भाव, मीठापन, माधुर्य।

मिठौरी (हिं० स्त्री०) पीसे हुए उड़द या चनेकी बनी हुई बरी।

मिडाई (हिं० स्त्री०) मिंडाई देखो।

मिडिया—मिदिया देखो।

मिडिल (अं० वि०) १ किसी पदार्थका मध्य, बीच। (पु०) २ शिक्षाक्रममें एक छोटी कक्षा या दरजा जो स्कूलके अन्तिम दर्जे इन्ट्रेंससे छोटा होता था। अब यह नाम प्रचलित नहीं है।

मिडिलची (हिं० पु०) वह जो मिडिलकी परीक्षामें उत्तीर्ण हुआ है, मिडिल पास।

मिडिलस्कूल (अं० पु०) वह स्कूल या विद्यालय जिसमें केवल मिडिल तककी पढ़ाई होती हो।

मिडल्टन (सर हेनरी)—इष्ट इंडिया कम्पनीके एक कर्मचारी। इन्होंने १६१० ई०की छठी यात्राका अध्यक्ष हो कर पदार्पण आगमन किया। जब ये लालसागर हो कर आ रहे थे तब इन्होंने वणिकोंकी वाणिज्यतरी पर चढ़ाई कर दी और बहुतसे द्रव्यादि लूट लिये। मलाकाद्वीपमें इनकी मृत्यु हुई।

मिण्टो (लार्ड)—भारतवर्षका गवरनर-जनरल (१८०७से १८१४ ई०) सर जार्ज बार्लोके बाद ये भारतवर्षके शासक हो कर आये।

स्काटलेण्ड इनकी जन्मभूमि है। पिताका नाम गिलवर्ट इलियट था। ये एक सुशिक्षित राजनीतिज्ञ थे। मिण्टो आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयकी शिक्षाका अन्त कर सन् १७७४ ई०में पार्लियामेण्टके सभासद हुए। फ्रान्सीसी राष्ट्रविप्लवके समय उन्होंने फ्रान्सीसी सरकारका विशेष साहाय्य किया था। सन् १७९७ ई०में इन्होने आक्सफोर्डसे (D.C.L) डी० सी० एलकी उपाधि प्राप्त की। इसके बाद राजकीय पक्ष समर्थन करनेके लिये कमिश्नर हो कर इनको तूला नगरमें जाना पड़ा था। इसके बाद इन्होंने कर्सिकाद्वीपका शासनकर्त्ता बन वहांके कानूनका सुधार किया। इसके बाद वहां फ्रान्सीसियोंकी मजबूती हो जानेके कारण मिण्टोको उस द्वीपको छोड़ कर स्वदेश लौट आना पड़ा था। यह सन् १७९७ ई०की घटना है। इसके बाद उनको बारेनकी उपाधि मिली। यह सन् १७९९ ई०मे वियनाका राजदूत हुए और सन् १८०६ ई०में वोर्ड आफकण्ट्रोलके सभापति हुए थे।

इन्होंने वारेन हेष्टिङ्गसके विरुद्ध अभियोग चलाया था और उनके भारतीय शासनमे किये गये अत्याचारोंको जोरसे प्रतिवाद किया था। भारत आनेसे पहले इनका हृदय उदारमूर्त्ति वार्ककी तरह उदारतासे पूर्ण था। उन्होंने समझ लिया था, कि मैं भारतमें जा कर भारतीयोंका उपकार करूंगा और प्रीतिपूर्वक वहांका शासन करूंगा। किन्तु भारतमें आने पर भारतीय जलवायुके ऐन्द्रजालिक प्रभावके कारण उनको अपना मत-परिवर्त्तन करना पड़ा था।

सन् १८०७ ई०की ३री जुलाईको इन्होंने कलकत्तेमें पदार्पण किया। (उस समय कलकत्ता नगरी ही भारतकी राजधानी थी।) इनके शासनकालमें निम्न लिखित घटनायें हुई थीं—

१ बुन्देलखण्डकी दुर्घटना, निजामके साथ वन्दोवस्त, ३ सिन्धु, काबुल और फारसमे दूत भेजना, ४ मन्द्रास-विद्रोह, ५ त्रिवांकुरका झगड़ा, फ्रान्सीसियों और हालेण्ड-वासियोंके जीते हुए भारतसागरके द्वीपपुञ्जका आक्रमण, ६ अयोध्याकी शासन-विशृङ्खला, ७ राजस्व और विचार-प्रबन्धका संस्कार, ८ बनारसका काण्ड और ९ इष्ट इण्डिया कम्पनीकी सनदकी आलोचना।

लार्ड मिण्टोने इस देशमें आ कर ही अविरोध मतकी पोषकता की प्रेरणासे बुन्देलखण्डके झगड़ेमें हस्तक्षेप नहीं किया, किन्तु बहुत दिनोंको अराजकतासे बुन्देलखण्डकी अवस्था अति शोचनीय हो गई थी और डाकुओंके उपद्रवसे वहांके अधिवासियोंके जान-मालकी संरक्षा करना उनके लिये बहुत कठिन हो गया था। अजयगढ़के राजा लक्ष्मणदेव डाकुओंमें बड़े चढ़े थे। अजयगढ़के सुदृढ़ पहाड़ी किले पर आक्रमण करनेकी किसीको हिम्मत नहीं होती थी। लक्ष्मणदेवका पहले इस स्थानमें एकाधिपत्य था। कई वर्ष पहले निदृष्ट कर देना स्वीकार कर वे अजयगढ़का शासन करने लगे। किन्तु स्वीकृत कर ठीक समय पर चुकाते न थे। इस पर करनल मार्टिण्डलके अधीन एक फौज उनके विरुद्ध भेजी गई।

अङ्गरेज सेनापतिने बड़े परिश्रमसे अजयगढ़के किलेकी चहार-दीवारीके कुछ अंशोंको अपने जोरदार गोलोंसे तोड़ डाला। इस पर महाराज सन्धि कर लेने पर बाध्य हुए। इन्होंने अङ्गरेज सेनापतिकी आज्ञा मान कर स्वपरिवारके साथ किलेको छोड़ कर नौशहर नगरमें चले गये। किंतु उस किलेको पुनः पानेकी आशासे अङ्गरेजोंके यहां दरखास्त दी, किन्तु रिचार्ड सनने उनकी प्रार्थना नामंज्जूर कर दी। इससे व्यथित हो लक्ष्मणदेव अकस्मात् कहीं अदृश्य हो गये। किन्तु रिचार्ड सनने भविष्यमे कोई काण्ड उठ खड़ा होनेकी आशङ्कासे लक्ष्मणदेवके कुटुम्बके लोगोंको बाजीरावके तत्त्वावधानमें अजयगढके किलेमें जा कर रखनेका हुकुम दिया। किन्तु इस प्रस्ताव पर बाजीराव सहमत न हुए और वह लक्ष्मणदेवके कुटुम्बके साथ नौशहरमें रहने लगे। अङ्गरेज सेनापतिको बाजीरावके आज्ञा-पालन करनेमें देर होते देख सन्देह हो गया। इस पर उनके कार्य्योंकी देखभाल करनेके लिये सेनापतिने एक पहरेदार नियत कर नौशहर भेजा। पहरेदारने पहुंच कर देखा, कि जिस घरमे लक्ष्मणदेवकी माता, शिशुपुत्र, कन्या स्त्री हैं, उसी घरमें बाजीराव खुली नङ्गी तलवारको हाथ ले कर पहरा दे रहे हैं। बाजीरावको देख कर अङ्गरेज पहरादार उनकी ओर अग्रसर हुआ। इसको अपने घरमें

आते देख वाजीरावको शक हो गया, क्योंकि अपने दामादकी इज्जतकी उन्हें बड़ी ही चिन्ता थी। शायद उन्होंने यह समझ लिया होगा, कि इसके साथ पल्टन आई होगी, हमको और हमारे दामादके परिवारकी स्त्रियां और बच्चोंको पकड़ ले जायगी। इसी इज्जतको बचानेके लिये उन्होंने उस अंगरेज पहरुएको आते देख घरका किवाड़ वन्द कर दिया और उन्होंने जो उचित समझा, अपना कर्त्तव्यका पालन किया। पहरेदारने पहले तो किवाड़ी खुलवानेका यत्न किया। पीछे न खुलनेकी निराशासे वह किवाड़ तोड़ भीतर जा कर दाखिल हुआ, भीतर जा कर उसने जो दृश्य देखा उसका वर्णन करने में अङ्ग सिहर उठता है। उसने देखा कि घरमें रक्तकी धारा चल रही है। वाजीरावने अपनी पुत्री तथा दामादके प्रत्येक व्यक्तिको मार कर स्वयं भी आत्महत्या कर ली है। इस तरह लक्ष्मणदेवके परिवारका समूल नाश हुआ। बुन्देलखण्डवालोंने वाजीरावके इस काम-की बड़ी प्रशंसा की थी। इस तरह वहां अंगरेजोंने शान्ति स्थापितके वदले अशान्तिकी सृष्टि कर दी।

कितने ही दिनों तक लक्ष्मणदेवकी खोज खवर न मिली। अन्तमें एकाएक वे कलकत्तेमें दिखाई दिये। कलकत्तेमें आ कर उन्होंने गवर्नर-जेनरलकी सेवामें फिर प्रार्थना की, कि या तो मुझे मेरा किला लौटा दिया जाये या तोपके मुख रख मुझे उड़ा दिया जाये। किन्तु इस प्रार्थनाका कुछ भी फल न हुआ। घर लौट जानेके उद्देश्यसे लक्ष्मणदेव चले, किन्तु गवर्नर जेनरल मिण्टोने लक्ष्मणदेवको रास्तेमें ही गिरफ्तार करवा लिया। लक्ष्मणदेव कलकत्ते बुला लिये गये और उन्होंने जीवन पर्यन्त जेलमें सड़नेके वाद अन्त-में जीवन विसर्जन किया। मिण्टोने यह सोचा था, कि शायद लक्ष्मणदेव घर जा कर अशान्तिकी सृष्टि करें, इससे उन्होंने चिर शान्तिका उपाय कर दिया।

अंगरेजोंकी सैन्य बुन्देलगढ़से लौटी आ रही थी। राहमें पराक्रान्त दुन्दिया खाँके अधिकृत कमोनरके किले-को दखल कर लिया। इसके वाद निजामके राज्यमें विशृङ्खलता उत्पन्न हुई।

लार्ड वेलेसलीके समयमें ही निजाम अंगरेजोंके सन्धिसूत्रमें बँध गये थे। किन्तु उस समयके निजाम सिकन्दर शाह इस सन्धिसूत्रको तोड़ देनेका सुअवसर खोज रहे थे। लार्ड मिण्टोने यह समाचार पा कर निजाम-राज्यमें अपने अंगरेज प्रतिनिधिके पास सैन्य भेज दी। मीर आलम नामक एक मन्त्रीने निजामको परामर्श दिया, कि वे अंगरेजोंकी आज्ञाका पालन करें। किन्तु अन्य मन्त्रियोंने शाहको अंगरेजोंके विरुद्ध भड़काया और मीर आलमको गुप्त हत्यारेसे मरवा डालनेकी धमकी दी। मीर आलम वहांसे भाग अङ्गरेजोंकी शरणमें चला गया। इधर सिकन्दर शाहने अंगरेजोंसे सन्धि कर ली। इस वार मीर आलम ही शाहके दीवान वने। इनकी मृत्युके वाद अङ्गरेजोंके प्रियपात्र या कृपापात्र चान्दूलाल निज़ामके दीवान हुए।

अंगरेजोंके साथ वाजीरावकी वसाईमें जो सन्धि हुई थी उसके नियमोंको तोड़ कर पेशवाकी पदप्राप्तिके लिये विशेष यत्न कर रहे थे। इसीलिये छोटे छोटे मराठे अपनी उन्नति कर रहे थे। लार्ड मिण्टोने वाजीरावको एक फटकार सुनाई। इस पर वाजीरावने इच्छा न रहते हुए भी अंगरेजोंकी वश्यता स्वीकार कर ली।

इन्दोरके यशवन्त रावने प्राधान्य लाभ करनेके लिये बड़ी चेष्टा की थी। अधिक मादक वस्तुओंके सेवनसे उनका मस्तिष्क विकृत हो गया था। इससे उन्होंने अपने एक सहोदर भाई और भतीजेको मार डाला। इस घटनाके वाद उनको उन्माद हो गया। इसी उन्मादकी अवस्थामें सन् १८११ ई०को उनकी मृत्यु हो गई। मृत्युके वाद उनकी प्रियतमा पत्नी तुलसी वाईने अपने सचिव वलराम सेठेकी सहायतासे कुछ दिन तक राज्य किया। किन्तु सेठेकी उच्छृङ्खलताके कारण राज्यमें कई उपद्रवकी सृष्टि हो गई। यशवन्त रावके भतीजे महीपत राव प्रवल हो कर होलकर राज्य पर अधिकार कर लेनेकी चेष्टा करने लगे। किन्तु पूनेसे वेल्स और कर्नल डाभटन तुलसीवाईकी ओरसे सहायतार्थ आ गये। इससे महीपत राव भाग चले।

इसी समय अमीर खाँका उपद्रव आरम्भ हुआ। यह पहले यशवन्त रावके सामान्य सेनापति थे। पीछे अपने वाहुवल और बुद्धिकौशलसे बुन्देलखण्डके अनेकांशों

पर अधिकार कर पठान, पिण्डारा और मुगल आदिकी सहायतासे बेरार और राजपूतोंके राज्य पर आक्रमण किया। उनके अधीनमें हजारों अश्वारोही और सहस्रों पैदल पिण्डारी सैन्य थीं। सन् १८०६ ई०के जनवरी महीनेमें उन्होंने नर्मदा पार कर जब्बलपुर पर आक्रकिया। बेरार राज्यके साथ अंगरेजोंकी सन्धि न थी। फिर भी इस भयसे अंगरेज सेनापतिने बेरारको सहायता देनेके लिये सेना भेजी, कि दाक्षिणात्यमें अमीर खाँ कहीं नये राज्यकी सृष्टि न कर दें। अमीर खाँने कहा, कि मैं होल्कर राज्यका सेनापति हूं। इससे संधिके अनुसार मैं ही अंगरेजोंका साहाय्य पानेका हकदार हूं। यह सुन कर इसकी सत्यता जाननेके लिये होल्करके पास पत्र लिखा और इसके उत्तरमें उनको मालूम हुआ, कि यह सब झूठ है। इसके बाद अमीर खाँ अंगरेजोंके विरुद्ध खड़ा हो गया। किन्तु युद्धमें पराजित हो कर वह भूपाल भाग गया। सेनापतिने बहुत दिनों तक बेरारमें सैन्य रखना असङ्गत समझ वहांसे लौट आनेकी आज्ञा भेजी और बेरारराज्यके साथ सैन्यसाहाय्य देनेकी प्रतिज्ञा कर संधि कर ली।

इसी समय गोपालसिंह नामक एक दूसरे पराक्रान्त सरदार कोटराराज भक्तसिंहको भगा कर अपना ऐश्वर्य फैला रहे थे। इससे अंगरेज सेनापतिके पेटमें चूहा कूदने लगा। अतः लार्ड मिण्टोने गोपालसिंहको १८ गाँवोंकी जमीन्दारी दे कर उनके साथ सन्धि कर ली।

बुन्देलखण्डके अन्तःपाती कालञ्जर दुर्गके शासनकर्त्ता दरियावसिंह अंगरेजोंके प्रभुत्वकी जरा भी परवाह न कर निर्भीक भावसे राज्यका शासन कर रहे थे। कालञ्जरके पहाड़ी दुर्गमें उनका वासस्थान था। वह दुर्ग ६०० फीट ऊँचे एक पर्वतकी बगलमें था और इसके चारों ओर निविड़ अन्धकारपूर्ण जंगल था। दरियावसिंह अपने किलेकी मजबूती देख कर चारों ओर सैन्यसंग्रह कर अपना राजविस्तार कर रहे थे। सन् १८१२ ई०में अंगरेज-सेनापति करनल माण्टेगु प्रबल सैन्यदल ले उक्त दुर्ग पर आक्रमणके लिये यात्रा की। वे अत्यन्त कष्टसे जङ्गलमें जानेका रास्ता बना कर अग्रसर हुए। दूरसे ही किलेकी दीवार पर गोलावर्षण होने लगा। एक दल सैन्य किलेके नीचे खड़ा हो कर चहारदीवारी पर चढ़नेकी कोशिश करने लगी। किन्तु उस लम्बी चहारदीवारी पर चढ़ न सकनेके कारण विपक्षी दलकी ओरसे पत्थरके टुकड़े गिरने लगे जिससे बहुतेरे सैनिक नष्ट हो गये। सेनापति अकृतकार्य हो कर अपनी छावनीमें आ कर रहने लगे। दरियावने डर कर सन्धि कर ली। कुछ दिन हुए अंगरेजोंने उस किलेको तोड़ दिया है। कालञ्जरके राजा दरियावसिंहके साथ सन्धि और बेरार राजाके साथ मित्रता कर लार्ड मिण्टोने बुन्देलखण्डमें कुछ शान्ति स्थापित की।

इसके बाद लार्ड मिण्टोने दिल्लीके उत्तर पश्चिम सीमान्तप्रदेशके हरियाना प्रदेशको अपने राज्यमें मिला लिया। पानीपतमें इसकी राजधानी कायम हुई। वहांके अधिवासी जाट मुगलोंकी अधीनताको अस्वीकार कर स्वाधीनतापूर्वक राज्य करते थे। जार्ज टामस नामक एक आयरलैण्डवासी अंगरेज सेनापतिने सन् १७८१ ई०में अंगरेजोंका कार्य छोड़ दिल्लीके उत्तर-पश्चिम देशकी यात्रा की। जाटोंकी रानी बेगम समरूके यहां जार्ज टामस काम करने लगे। बेगमका सेनापति बन कर वे अपनी कार्यदक्षताके गुणसे उनका प्रियपात्र बन गये। पीछे बेगमका राज्य विनष्ट होने पर उन्होंने दूसरे एक जाटके यहां सेनापतिका काम कर लिया। अन्तमें जब उक्त जाट सरदारकी मृत्यु हो गई, तो टामसने अपनेको स्वाधीन होनेकी घोषणा कर दी। यह सन् १७६७ ई० की घटना है। साधारण उनको आइरिस राजा कहते थे। उन्होंने क्रमशः अपने राज्यकी वृद्धि करना आरम्भ किया। हांसी नामक स्थानमें उनकी राजधानी थी। सिन्देराज्यके अंगरेज सेनापति पेरन (Perron)-ने टामसके राज्य पर चढ़ाई की। टामसने पराजित हो कर राजसम्पद् त्याग कर स्वदेश लौट जानेकी इच्छासे कलकत्ते को प्रस्थान किया। यह सन् १८०२ ई०की घटना है। राहमें बह्रमपुरमें उनको मृत्यु हो गई। उनका राज्य अंगरेजोंने अपने राज्यमें मिला लिया।

इस घटनाके बाद राजा रणजित् सिंहके साथ मिण्टोकी संधि हुई।

मराठा-युद्धके बाद राजा रणजित्‌सिंहने अपना प्रभुत्व विस्तार करने लगे और कौशलसे शतद्रु के पश्चिमी तट पर अपना राज्यविस्तार करनेका सुयोग खोज रहे थे। इसी समय पतियाला-नरेशकी मृत्यु हो गई। नाभाने चाहा, कि पतियालाका राज्य अपहरण कर लें। पतियालाकी रानीने रणजित्‌सिंहकी सहायताकी प्रार्थना की। इसके अनुसार राजा रणजित् सिंह शतद्रु हो कर अन्यान्य सिख राज्यों पर आक्रमण किया। इन सभी सिख-राज्योंने बाहरसे अङ्गरेजोंकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। इन्होंने दिल्लीके रेसिडेण्टसे सहायता मांगी। अङ्गरेज रेजिडेण्टने लार्ड मिण्टोको सूचना दी। मिण्टो रणजित्‌के बल पराक्रमको अच्छी तरह जानते थे। इसलिये मित्रभावसे मिष्टर मेटकाफको दूत बना कर रणजित् सिंहके यहां भेजा। मेटकाफने राजा रणजित्‌सिंहसे संधिकी प्रार्थना की। रणजित्‌सिंहने यमुनाके किनारे तक अपने राज्यकी सीमा बतला कर दावा किया। मेटकाफने इसे स्वीकार न किया और शतद्रु नदीके किनारे तक अङ्गरेजोंकी सीमा बतलाई। इस पर रणजित्‌सिंहने अङ्गरेजोंके राज्य पर आक्रमण करनेकी धमकी दी। अङ्गरेज भी अक्टरलोनीकी अधीनतामें एक फौज और सेण्ट लेजरकी अधीनतामें दूसरी फौज ले कर यमुना पार हो लुधियाना राज्यमें घुस जानेका उपाय खोजने लगे।

इसके बाद रणजित्‌सिंहने अङ्गरेजों द्वारा एक बग्घी और एक जोड़ी सुन्दर घोड़े पा कर अङ्गरेजोंके साथ सन्धि की और शतद्रु तीर तक अङ्गरेजोंकी राज्य सीमाको स्वीकार किया। राजा रणजित्‌सिंहके पास एक लाख सुशिक्षित रणविशारद सेना थी। सन् १८०६ ई०में दिल्लीके सम्राट् शाह आलमकी मृत्यु होनेसे उनके पुत्र २य अकबर नाम रख कर सिंहासन पर बैठे। विलुप्त मुगल वैभवकी पूर्व स्मृति उदित होनेसे वे धीरे धीरे अङ्गरेजोंके प्रति असन्तोष प्रकट करने लगे। अकबरके तृतीय पुत्र मिर्जा जहांगीर ज्येष्ठ पुत्रको उत्तराधिकारी न मान कर स्वाधीनतापूर्वक सिंहासन लाभका सुअवसर ढूंढ़ रहे थे। अकबर भी तीसरी बेगममें अधिक प्रेम होनेके कारण उनका पक्ष समर्थन करने लगे। अङ्गरेज रेसिडेण्ट मि० सेटनने इसके लिए अकबरका तिरस्कार किया। इस पर अकबरने मि० सेण्ट पर गोली दाग दी। किंतु लक्ष्यभ्रष्ट होनेसे अकबरका वार खाली गया। मिस्टर सेण्टने भाग कर अपने प्राणकी रक्षा की। इस घटनासे अङ्गरेजी सेनाने जा कर मिर्जा जहाँगीर और अकबरको कैद कर इलाहाबादके जेलमें भेज दिया। वहां वे ७६५०० रु० मासिक वृत्ति पाने लगे।

इस समय सुप्रसिद्ध फ्रान्सीसी वीर नेपोलियन बोनापार्टने अपने सौर्य प्रभावसे समस्त यूरोपखण्डको जीत कर अङ्गरेजोंके हृदयमें भयका संचार कर दिया।

लार्ड मिण्टोने विशेषरूपसे विचलित हो कर सिन्धु देश, काबुल और पारस्यसे मित्रता स्थापित करनेके लिये तीन दूतोंको वहां भेजा। मिष्टर हेङ्किस्मिथ सिंधुदेशके अमीरोंके यहा वाणिज्य-विषयक मित्रता स्थापित करनेके लिये भेजे गये। अमीरोंने सन् १८०९ ई०में ६वीं अगस्तको यह कह कर सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर कर दिया, कि अंग्रेजोंकी सीमाकी रक्षा करेंगे। किन्तु उन्होंने कच्छ-विजय करनेके लिये अङ्गरेजोंको सहायता चाही। किन्तु अङ्गरेजोंके मदद न देने पर अमीर सन्धिके नियमोंके पालनमें आनाकानी करने लगे।

माउण्ट स्टुवार्ट एलफिन्स्टन बहुत बहुमूल्य उपढौकन ले कर काबुलके अमीर सुजा उल-मुल्कके पास पहुंचे। इन्होंने फ्रान्सीसियोंको सहाय्य न देनेकी बात कबूल करवा कर काबुलके अमीरसे सन्धि कर ली। किन्तु इस सन्धिसे कुछ फल नही हुआ। एलफिन्स्टन किसी तरह प्राण ले कर वहासे भागे। काबुलियोंने उनके पैरके मोजेसे लेकर घोड़ेका साज तक छीन लिया। राहमें डाकुओंने बची खुची चिजोंको भी छीन लिया। एलफिन्स्टनको अमीरके हीरेसे खचित सिंहासनको देख कर बड़ा विस्मय हुआ था।

अङ्गरेजोंकी निन्दा कर फान्सीसी दूत गार्डेने (Gardanne) फारसके दरबारमें प्राधान्य लाभ किया था। इसलिये डर कर अङ्गरेज पहले सर जान मानकम और सर हारफाड जोनसको नाना तरहके उपढौकनादिके साथ दूतके रूपमें भेजा। किन्तु वे दोनों अकृतकार्य हो कर लौट आये।

पीछे सन् १८१० ई०के जून मासमें मालकम फिर दूत बन कर फारसको गये और इङ्गलैण्डराज तृतीय जार्जने इसी समय नाना प्रकारके उपढौकन फारसको भेजे। इस बार फारसराजने सन्तुष्ट हो कर अंग्रेजों-का स्वागत किया। उन्होंने मालकमको बहुमूल्य तलवार और 'खाँ' की उपाधि दी। मालकमने फारसराजको आलू उपहारमें दिया। आज भी फारसमें इसे 'माल-कमका प्लाम' कहते हैं।

इसी समय सौभाग्य लक्ष्मीने वीर नेपोलियनको त्याग दिया। उस समय निश्चिन्त हो मालकम दौत्य कार्यसे निवृत हुए।

इसी समय त्रिवांकुरका युद्ध छिड़ा। टुलतान-के पराजयके बाद मैसूर-राजके साथ अंगरेजोंकी दो संधियां हुईं। किन्तु त्रिवांकुरराजने सन्धिके अनुसार बहुत दिनों तक कुछ भी नहीं दिया। जब अंगरेजोंने अपने निर्दिष्ट अर्थकी मांग पेश की, तब उन्होंने कई तरह की बातें बना कर उज्र किया। यह सुन कर अंगरेज रेसिडेण्टने वेलू ताम्बो नामक राजाके दीवानको पदच्युत कर दिया। दीवान नायकोंको उत्तेजित कर और फ्रान्सी-सियोंसे सहायताकी प्रार्थना कर अंगरेजोंके विरुद्ध साजिश करने लगे। कुछ ही दिनोंमें ४०००० सैन्य और १६ तोपें एकत्र की गईं। कुइलन नामक स्थानमें वेलने अंगरेजों पर प्रबल वेगसे आक्रमण किया। किन्तु पांच घण्टे की प्रचण्ड लड़ाई होनेके बाद वे भाग गये। थोड़े ही दिनोंमें अंगरेजोंकी सैन्यसंख्या बढ़ जानेके कारण वेलने त्रिवाङ्कुर-राज्यमें जा कर शरण ली। वेल दो वर्ष तक युद्ध कर अन्तमें पराजित हुए। वेलने कैद होनेसे पहले ही आत्महत्या कर ली। उसका भाई फांसी पर लटका दिया गया। युद्धका बिलकुल खर्चा त्रिवांकुर और कोचीनको देना पड़ा। अंगरेजों द्वारा उनके राज्य परिचालित होने लगे।

इस घटनाके बाद मान्द्राजकी फौजोंमें बलवा हो गया। लार्ड मिण्टोने इसका बड़े कष्टसे दमन किया था।

इस समय यूरोपमें अंगरेज फ्रान्सीसियोंमें विरोध उपस्थित होनेसे फ्रान्सीसियोंने पुर्त्तगाल पर अधिकार कर लिया। इसके अनुसार लार्ड मिण्टोने जलपथसे सैन्य भेज कर गोआ, मकाव, मौरिशस और मलका आदि भारतमहासागरके द्वीपों पर अधिकार किया। इसके बाद यव और उसके निकटके द्वीपों पर कबजा कर लिया।

इस समय कम्पनीकी फिर सनद पानेके विषयमें इङ्गलैण्डमें घोर आन्दोलन हुआ।

लार्ड मिण्टो सन् १८१३ ई०के अन्तिम भागमें कार्य छोड़ कर बिलायत चल गये। उन्होंने बड़ी चालाकी-से शृङ्खलबद्ध भारतका शासन किया था। उन्होंने जैसी शासन-बुद्धि दिखाई थी, वैसी पहले किसीने दिखाई नहीं थी। इसके पहले सरकारने जो ऋण लिया था, उसके लिये सरकारको १२) सैकड़े सूद देना पड़ता था। किन्तु मिण्टोके समयमें १५०००००० सालाना राजस्वकी वृद्धि करनेके कारण कम्पनी कागजके सूदकी दर ६) रु० सैकड़ा हो गई। मिण्टोने अत्यन्त विज्ञताके साथ भारतका शासन किया था। बंगालियोंकी श्री-वृद्धिके लिये उन्होंने पूरी चेष्टा की थी। वेलेस्लीके समयमें फोटविलियम कालेजकी स्थापना हुई थी। उन्होंने वेलेसलीका अनुकरण कर हिन्दूदर्शनशास्त्र आदि पढ़ाने-के लिये 'नवद्वीप' (नदिया) और मिथिलामें पाठशालायें स्थापित की थीं। सिवा इसके अन्यान्य जगहोंमें मुसल-मानोंके लिये मदरसे भी खोले गये। वारेनहेष्टिङ्गसके प्रति उन्होंने अभियोग उपस्थित कर हिन्दुओंके प्रति जो उदारभाव दिखलाया था, वह हिन्दुओंके हृदयसे कभी भूल नहीं सकता।

उन्होंने सरकारी खर्चसे बङ्गभाषामें एक अभिधान और एक व्याकरण बनानेकी विशेष चेष्टा की थी और श्रीरामपुरसे बङ्गभाषामें बाइबिलका अनुवाद प्रकाशित करानेमें विशेष सहायता पहुंचाई थी।

अंगरेज ऐतिहासिकोंने मिण्टोके प्रति कलङ्क कालिमाके छींटे फेंके हैं; किन्तु मिण्टो इसके योग्य नहीं। उन पर ऐतिहासिकोंने जो दोषारोपण किया है, उससे वह बिलकुल वञ्चित हैं, वे बिलकुल निर्दोष हैं। उस समय श्रीरामपुरमें ईसाइयोंने बङ्गभाषामें ईसाकी गुण-गरिमाका वर्णन कर और हिन्दू देव देवियोंका तिर-

स्कार कर ईसाईधर्मका प्रचार करना आरम्भ किया था हिन्दू धर्म और सम्मानकी रक्षाको राजधर्म समझ कर मिण्टोने पादरियोंको उनके धर्मप्रचारमें हिन्दुओंके प्रति निन्दासूचक प्रस्ताव प्रकाशित करानेका निषेध किया था इससे पादरी कलकत्ते आने पर बाध्य हुए। इससे स्वार्थी अंगरेज ऐतिहासिकोंको बड़ी मर्मव्यथा हुई थी। इसीसे उन सबोंने कहा, कि ईसाई-धर्मका प्रचार बन्द कर मिण्टोने महापातक सञ्चय किया है। किन्तु उन्होंने राजधर्मकी जरा भी परवाह नहीं की। राजधर्मकी प्रेरणासे नीतिज्ञ और धार्मिक मिण्टोने समदर्शिताका परिचय दिया था। समदर्शिता स्वार्थियोंकी बाधक हो सकती है। इसीसे कुछ अंगरेज ऐतिहासिकोंने मिण्टोका यह कार्य अनुचित और पापमूलक बताया है। जो हो, लार्ड मिण्टोने अपने शासनकार्यमें जिस निर्भीकता और न्यायकी प्रेरणासे समदर्शिताका परिदिया था, वह इस देशके अंगरेज या अन्य किसी भी शासकको अनुकरणीय है। वृटिश पार्लियामेण्टसे उन्होंने अपनी शासनदक्षताके गुण पर धन्यवाद और अर्लकी उपाधि प्राप्त की थी। किन्तु यह सम्मान अधिक दिन तक वे भोग न सके।

वे सन् १८१४ ई०के मई महीनेमें लण्डन पहुंचे, यहां आने पर ही स्वास्थ्य भङ्ग हुआ, तब अपनी प्रिय जन्मभूमिकी दर्शनाभिलाषा बलवती हुई, किन्तु उनके भाग्यमें ऐसा न हो सका। इसी सन्‌की २१वीं जूनको पथमें ही हाईकोर्ट-शायरमें उनकी मृत्यु हो गई। इस समय उनकी ६३ वर्षकी अवस्था थी। वे अत्यन्त शान्त प्रकृतिके और रहस्यप्रिय थे। उनकी मधुरपूर्ण बातोंसे बात करनेवाले प्रसन्न हो जाते थे। परिमार्जित और ओजस्विनी भाषामें वे अपना मनोभाव प्रकट किया करते थे।

मिण्मिण (सं० क्ली०) नाकसे अस्पष्ट बात करना।

मित (सं० त्रि०) मि वा मा मा क। १ परिमित, जो सीमाके अंदर हो। २ कम, थोड़ा। ३ क्षिप्त, फेंका हुआ।

मितङ्गम (सं० पु० स्त्री०) मितं परिमितं गच्छतीति गम खच् मुम् च। १ गज, हाथी, स्त्रियां ङीप्। (त्रि०) २ परिमित गामी, सीमाके अन्दर चलनेवाला।

मितज्ञु (सं० त्रि०) सङ्कुचित जानु, जांघको सिकुड़ानेवाला।

मितद्रु (सं० पु०) मितं द्रवतीति द्रु कु (हरिमितयोर्द्रुवः। उण् १।३५) १ समुद्र, सागर। ३ मितमार्ग। ४ परिमितगामी, सीमाके अन्दर चलनेवाला।

मितध्वज (सं० पु०) राजभेद।

मितभाषितृ (सं० त्रि०) मितभाषण, विचार कर बोलनेवाला।

मितभाषिन् (सं० त्रि०) स्वल्पभाषी, थोड़ा बोलनेवाला, समझ बूझ कर बात कहनेवाला।

मितभाषा (सं० त्रि०) मितभाषिन् देखो।

मितभुक्‌ (सं० त्रि०) परिमितभावमें कृताहार, थोड़ा खानेवाला।

मितभुज् (सं० त्रि०) मिताहारी, थोड़ा खानेवाला।

मितमति (सं० त्रि०) अल्पमति, थोड़ी बुद्धिवाला।

मितमेध (सं० त्रि०) अल्प यागयुक्त।

मितराविन् (सं० त्रि०) अल्पशब्दकारी, थोड़ा शब्द करनेवाला।

मितरोचिस् (सं० त्रि०) परिमित दीप्तिशाली, थोड़ी कान्तिवाला।

मितवाच् (सं० त्रि०) स्वल्पवाक्य-प्रयोगकारी, थोड़ा बोलनेवाला।

मितव्यय (सं० पु०) कम खर्च करना, किफायत।

मितव्ययता (सं० स्त्री०) कम खर्च करनेका भाव।

मितव्ययी (सं० त्रि०) परिमित व्ययकारी, किफायत करनेवाला।

मितशायी (सं० त्रि०) अल्प निद्राशील, बहुत कम सोनेवाला।

मितम्पच (सं० त्रि०) १ कृपण, कंजूस। २ परिमित पाककारी, थोड़ा पकानेवाला।

मिताई (हिं० स्त्री०) मित्रता, दोस्ती।

मिताक्षर (सं० त्रि०) परिमिताक्षर विशिष्ट।

मिताक्षरा (सं० स्त्री०) याज्ञवल्क्य स्मृतिकी विज्ञानेश्वर-कृत टीका।

मिताचार (सं० पु०) परिमित आचार।

मिताचारिन् (सं० त्रि०) परिमिताचार-विशिष्ट, कम आचारवाला।

मितार्थ (सं० पु०) १ परिमितार्थ, प्रकृत अर्थ। (त्रि०) २ परिमितार्थयुक्त।

मितार्थ (सं० पु०) तीन प्रकारके दूतोंमेंसे एक प्रकारका दूत। अलंकारशास्त्रमें तीन प्रकारके दूतोंका उल्लेख देखा जाता है। यथा—

"निसृष्टार्थो मितार्थश्च तथा सन्देशहारकः।
कार्यप्रेष्यस्त्रिधा दूतोदूत्यश्चापि तथाविधाः॥"

(साहित्यद० ३)

निसृष्टार्थ, मितार्थ और सन्देशहारक ये तीन प्रकारके दूत हैं। इनमेंसे जो दूत दोनों पक्षके मनोगत अभिप्रायको समझ स्वयं उत्तर देता तथा सुश्रृंखलताके साथ कार्य चलाता है, उसका नाम निसृष्टार्थ, जो बुद्धिमत्तापूर्वक थोड़ी बातें कह कर कार्य सम्पन्न करता है उसे मितार्थक और जो प्रभुके कहे संवादोंको ले जाता है उसे सन्देशहारक दूत कहते हैं।

(साहित्यद० ३८६-८८)

मितार्थक (सं० पु०) १ मितार्थयुक्त, कम अर्थका। २ सतर्कके साथ बोलनेवाला। ३ सतर्क दूत।

मिताशन (सं० क्ली०) १ परिमित आहार, थोड़ा भोजन। (त्रि०) २ परिमित-भोजी, कम भोजन करनेवाला।

मिताशिन् (सं० त्रि०) परिमित भोजनशील, कम भोजन करनेवाला।

मिताहार (सं० पु०) १ परिमित भोजन, थोड़ा भोजन। (त्रि०) २ मितभोजी, कम खानेवाला।

मिति (सं० स्त्री०) मयते इति मा-भावे क्तिन्। १ मान, परिमाण। २ विज्ञान। ३ अवच्छेद, सीमा। ४ परिच्छेद, विभाग।

मिती (हिं० स्त्री०) १ देशी महीनेकी तिथि या तारीख। २ दिन, दिवस। ३ वह तिथि जब तकका ब्याज देना हो।

मितोक्ति (सं० स्त्री०) १ अल्पवाक्यका प्रयोग। (त्रि०) २ अल्प वाक्य-वक्ता, कम बोलनेवाला।

मितौली—अयोध्या प्रदेशके खेरी जिलान्तर्गत एक नगर। यह कठना नदीके किनारेसे एक कोस पूर्वमें अवस्थित है। नगरके चारों ओर बड़े बड़े आमके बगीचे और हरे भरे खेत देखनेमें आते है। यहां राजा लोनसिंहका प्रासाद था। विख्यात सिपाही-विद्रोहमें सहायता देनेके कारण वृटिश-सरकारने उनकी सम्पत्ति छीन ली और महमूदराजके तालुकदार राजा अमीर हुसेन खांके हवाले की।

मित्ति—१ वम्बईप्रदेशके थर और पार्कर जिलेका एक तालुक।

२ उक्त तालुकके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २४° ४४' उ० तथा देशा० ६९° ५१' पू०के वीच पड़ता है। इस नगरमें स्थानीय विचारसदर प्रतिष्ठित है। स्थानीय पण्यद्रव्योंकी आमदनी और रफतनी होती है। इस कारण यह स्थान वहांका वाणिज्यकेन्द्र हो गया है।

मित्र (सं० क्ली०) मिनोति मानं करोतोति मि-क्त (अमिचिमि दिशसिभ्यः क्त्रः। उण् ४।२६२) अथवा मेद्यति स्निह्यतीति मित्रासुस निपातनात् गुणाभावः, द्वितकारं एकतकारश्चैत्येके (अमरटीकामें भरत) १ शत्रुको छोड़ राजाओंके राज्यके परवर्त्ती राजाके सिवा दूसरा राजा। मध्यस्थित नरपतिके राज्यहरणरूप कार्यमें साथ देनेसे यह दोनों परस्पर मित्र हैं।

"राजा शत्रु रिति स्यात एकार्थाभिनिवेशतः।
भूम्यैकान्तरितो राजा स मित्र मित्रकार्य्यतः॥"

(शब्दरत्नाकर)

महाभारतमें राजधर्म जहां वर्णित है, वहां चार तरहके मित्रोंका उल्लेख है। जैसे—सहार्थ, भजमान, सहज और बनावटी। २ अतिविषलता, अतीस। (वैद्यकनि०) ३ बन्धु, दोस्त। पर्य्याय—सखा, सुहृत्। विश्वासी साधुचरित्र लोगोंके साथ ही मित्रता स्थापन करना कर्त्तव्य है। नहीं तो जो पीछेमें सर्वनाश करनेके लिये सचेष्ट रहते हैं और मुख पर दो एक मधुरवाक्यसे सन्तुष्ट करना चाहते हैं, ऐसे मित्रोंसे सदा अलग रहना चाहिये। क्योंकि ऐसे मित्र "पयोमुख विषकुम्भवत् कहे गये हैं। तुलसीदासने भी अपने रामचरितमानसमें लिखा है—

"जे न मित्र दुःख होहि दुःखारी,
तिनहिं विलोकत पातक भारी।
निज दुःख गिरि सम रज करि जाना,
मित्रके दुःख रज मेरु समाना।

"जिन्हके असि मति सहज न आई,
ते शठ हठि बस करत मिताई।
कुपथ निवारि सुपथ चलावा,
गुण प्रकटे अवगुणहिं दुरावा।
देत लेत मन संक न धरहीं,
बल अनुमान सदा हित करहीं।
विपतिकाल कर सत गुण नेहा,
स्रुति कह सत मित्र गुण येहा।
आगे कह मृदु बचन बनाई,
पाछे अनहित मन कुटिलाई।
जा कर चित्त अहि गति सम भाई,
अस कुमित्र परिहरे भलाई।"

प्रकृत विश्वासी व्यक्ति ही मित्र होने योग्य है। चाणक्य-नीतिमें कहा गया है,—

"कुलीनैः सह सम्पर्कं पण्डितैः सह मित्रताम्।
ज्ञातिभिश्च समंमेलं कुर्वाणो न विनश्यति॥"

किन्तु कुमित्र, कुभार्या, कुराजा, कुप्रेम, कुबन्धु और कुदेश आदि यह सब त्याज्य है। क्योंकि नीति कहती है—

"दुष्टा भार्य्या शठं मित्रं भृत्यश्चोत्तरदायकः।
ससर्पे च गृहेवासो मृत्युरेव न संशयः॥"

दुष्टोंकी मित्रता सिवा नुकसानके तिलमात्र नफा होनेकी सम्भावना नहीं। अतएव खूब सोच समझ कर जान बूझ कर मित्रता स्थापित करनी चाहिये। संसारमें कोई किसीका न मित्र है और न कोई किसीका शत्रु। मनुष्य अपने कामोंसे दूसरेको शत्रु-मित्र बनाया करते हैं। (पु०) ४ सूर्य।

"स्वस्ति मित्रः सहादित्यैः स्वस्ति सदा दिशन्तु ते।"
(गौड़ीय रामा० २।२२)

५ द्वादश आदित्योंमेंसे एक।

"धाता मित्रोऽर्य्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च।"
(महाभारत १।६५।१०)

६ मरुतोंमेंसे एक। (हरिव० १६६।५२) ७ वशिष्ठके एक पुत्रका नाम जो ऊर्जाके गर्भसे उत्पन्न हुआ था।

"चित्रकेतुः सुरोचिश्च विरजा मित्र एव च।
उल्वणो वसुभृद्यानो द्युमान् शक्त्यादयोऽपरे॥"
(भागवत ४।१।३७)

मित्र—आर्य जातिके एक प्राचीन देवता। ऋक्संहितामें (१०।७२।८-९) लिखा है।

"अष्टौ पुत्रासो अदितेर्ये जातास्तन्वस्परि।
देवा उप प्रैत्सप्तभिः परा मार्त्तण्डमास्यत्॥८
सप्तभिः पुत्रैरदितिरुप प्रैत्पूर्व्यं युगं।
प्रजायै मृत्यवे त्वत्पुनर्मार्त्तण्डमाभरत्॥"९

अदितिके तनुसे जो आठ पुत्र उत्पन्न हुए थे, उनमें सात पुत्र ले कर वे देवलोकमें गईं; किन्तु मार्त्तण्ड नामक पुत्रको उन्होंने दूर फेंक दिया। इस तरह प्राचीन कालमें अदिति सात पुत्र ले कर गईं, केवल जन्म और मृत्युके लिये ही मार्त्तण्डका पालनपोषण किया गया था।

सायणने उक्त ऋक्के भाष्यमें लिखा है,—"अष्टौ पुत्रासः पुत्रा मित्रादयोऽदितेर्भवन्ति। तान् अनुक्रमिष्यामो मित्रश्च वरुणश्च धाता च अर्यमा च अंशश्च भगश्च विवस्वानादित्यश्चेति।" अर्थात् अदितिसे जो आठ पुत्र हुए थे वे मित्रादि हैं। उनके क्रमसे नाम इस तरह है—मित्र, वरुण, धाता, अर्यमा, अंश, भग, विवस्वान और आदित्य आदि। शतपथ ब्राह्मण (३।१।३।३)-में लिखा है—

"अष्टौ ह वै पुत्रा अदितेः। यां स्त्वेद्वे वां आदित्या इत्याचक्षते सप्त ह वै ते" अर्थात् अदितिके आठ पुत्र हुए थे, किन्तु उनमें सप्तदेव ही आदित्य कहे जाते हैं। ऋक्संहितामें ये सात आदित्य इस तरह कथित हुए हैं—

"इमा गिर आदित्येभ्यो घृतस्नुः सनाद्राजभ्योजुह्वा जुहोमि।
शृणोतु मित्रो अर्यमा भगो न स्तुविजातो वरुणो दक्षो अंशः॥"

मैं जुहु द्वारा सदा शोभायमान आदित्योंके उद्देश्यसे घृतस्रावी स्तुति कर रहा हूं। मित्र, अर्यमा, भग, तुविजात या धाता, वरुण, दक्ष* और अंश मेरे स्तवको सुनें।

जो हो, सबसे पहले ये सात या आठ आदित्य

---

*भाष्यकारने दक्षकी गणना आदित्यमें नहीं की है। किन्तु उक्त ऋक्में और यास्कके निरुक्तमें इस दक्षको भी एक आदित्य कहा है। इस ऋक्में सूर्यका नाम नहीं रहने पर भी १०।८८। ११ ऋक्में सूर्य आदित्य नामसे ही वर्णित हुए हैं।

सूर्य देखो।

प्रसिद्ध थे। वेदके संहिताभागमें १२ आदित्योंका उल्लेख न रहने पर भी शतपथब्राह्मणमें १२ आदित्योंका उल्लेख है। महाभारत और पुराणोंमे इन्ही बारह आदित्योंके नाम मिलते हैं।

"धाताऽर्य्यमा च मित्रश्च वरुणोऽंशो भगस्तथा।
इन्द्रो विवस्वान् पूषाच त्वष्टा च सविता तथा॥
पर्ज्जन्यश्चैव विष्णुश्च आदित्या द्वादश स्मृताः॥"
(भारत आदि० १२१ अ०)

धाताः अर्य्यमा, मित्र, वरुण, अंश, भग, इन्द्र विवस्वान, पूषा, सविता, पर्ज्जन्य और विष्णु ये ही द्वादश आदित्य हैं। (विष्णुपु० १।१५।६०)

महाभारत और पुराणमे आदित्योंके मध्य मित्रका स्थान बहुत पीछे रहने पर भी वेदमें मित्र ही आदित्योंमें प्रथम गिने गये हैं।

यास्कनिरुक्तमें लिखा है—"आदित्यः कस्मादादत्ते रसान्। आदत्तेः पुत्र इति वा। अल्पप्रयोगन्तु अस्यै तदार्चाभ्याम्नाये सूक्तभाक् सूर्यमादितेयमदितेः पुत्रम्। एव-मन्यासामपि देवतानामादित्यप्रवादाः स्तुतये भवन्ति। तद्यथा एतन्मित्रस्य वरुणस्य अर्य्यम्णो दक्षस्य भगस्य अंशस्य इति।" (२।१३)

आदित्य नाम क्यों पड़ा? इससे, कि ये रसोंका आदान प्रदान करते हैं। ये प्रकाश देते हैं और उसी प्रकाशसे प्रकाशित होते हैं। अथवा ये अदितिके पुत्र हैं इससे उनका नाम आदित्य है। ऋग्वेदमे इनका अल्प ही प्रयोग मिलता है। अदितिके पुत्र होनेसे सूक्तमे अदिति सूर्यका नाम दिखाई देता है। इसी तरह अदिति पुत्र अन्यान्य देवगण भी स्तुतिके समय आदित्य नामसे पुकारे जाते हैं। जैसे वरुण, अर्य्यमा, दक्ष, भग और अंशके सम्बन्धमें भी इसी तरह हैं।

ऋग्वेदके अनेक सूक्तोंमें मित्र और मित्रावरुणकी स्तुति लिखी है। इससे स्पष्ट मालूम होता है, कि मित्र और वरुण प्राचीन वैदिक ऋषियोंके प्रधान देवता थे। सायणने लिखा है, कि—"मैत्रं वै अहरिति श्रुते... श्रूयते च वारुण रात्रीति' मित्रसे ही दिन और वरुणसे रात्रि होती है, ऐसा वेदमें कहा है। अर्थात् मित्र ही आलोकदेव और वरुण आवरण देव हैं।

वेदमे मित्रावरुणका जैसा प्रभाव और उज्ज्वल चित्र दिया गया है, परवर्त्ती संस्कृतशास्त्रोंमें उस सम्मानका बहुत कुछ ह्रास देखा जाता है।

ऋक्संहितामें (३।५९ सूक्तमें) विश्वामित्र मित्रदेवका स्तव करते हैं।

"मित्रो जनान् यातयति ब्रुवाणो मित्रो दाधार पृथिवीमुत द्याम्।
मित्रः कृष्टीरनिमिषाभिचष्टे मित्राय हव्यं घृतवज्जुहोत॥१
प्र स मित्र मर्त्तो अस्तु प्रयस्वान् यस्त आदित्य शिक्षति व्रतेन।
न हन्यते न जीयते त्वोतो नैनमंहो अश्नोत्यन्तितो न दूरात्॥२
अनमीवास इळया मदन्तो मितज्ञवो वरिमन्ना पृथिव्याः।
आदित्यस्य व्रतमुपक्षियन्तो वयं मित्रस्य सुमतौ स्याम॥३
अयं मित्रो नमस्यः सुशेवो राजा सुक्षत्रो अजनिष्ट वेधाः।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम॥४
महाँ आदित्यो नमसोपसद्यो यातयज्जनो गृणते सुशेवः।
तस्मा एतत् पन्यतमाय जुष्टमग्नौ मित्राय हविराजुहोत॥५
मित्रस्य चर्षणीधृतोऽवो देवस्य सानसि।
द्युम्नं चित्रश्रवस्तमम्॥६
अभि यो महिना दिवं मित्रो बभूव सप्रथाः।
अभि श्रवोभिः पृथिवीम्॥७
मित्राय पञ्च येमिरे जना अभिष्टिशवसे।
स देवान् विश्वान् बिभर्त्ति॥८
मित्रो देवेष्वायुषु जनाय वृक्तबर्हिषे। इष इष्टव्रता अकः॥९

मित्र जनसाधारणको कार्य्यमे प्रवर्त्तित करते हैं। मित्र पृथ्वी और आकाशको थामे हुए हैं। मित्र अपने निर्निमेषलोचनसे सबके कामोंको देखते हैं, मित्रको घृत-युक्त हव्य निवेदन करो। हे आदित्य मित्र! जो मनुष्य व्रत नियमसे तुमको हव्य निवेदन करते हैं, वह अन्नवान् (धनी) बनें। तुम जिसकी रक्षा करते हो उसको कोई मार नही सकता तथा पराजित नही कर सकता। हम लोग नीरोग और अन्नलाभसे हृष्ट पुष्ट हो कर पृथ्वीके विस्तृत क्षेत्रमे घुटने टेक कर स्वर्गगामी आदित्यव्रत करते हैं। मित्र, मुझ पर दया करें। ३ ये मित्र उतर आये हैं। ये नमस्कार करने योग्य हैं; सुन्दर मुख, राजा, अत्यन्त बलयुक्त, निखिलकी जनयिता और यज्ञार्ह हैं। हम लोग इनकी अनुकम्पा और कल्याणप्रद वात्सल्य प्राप्त करते हैं। ४ (यह) आदित्य महान् हैं, सब लोगोंके प्रवर्त्तक हैं,

हमें अवनत मस्तकसे उनकी पूजा करनी चाहिये। जो आपकी स्तुति करता है, उस पर आप सदा प्रसन्न रहते हैं। (उन्हीं) स्तुति करने योग्य मित्रके सन्तोषके लिये यह हव्य अग्निमें डाल देना चाहिये।५ मनुष्योंके पालन करनेवाले मित्र देव, अन्न और भजनार्ह धन बड़ा ही कीर्त्तिमय है।६ जिस मित्रने अपनी महिमासे द्युलोक-(स्वर्ग) को वशीभूत कर रखा है, उन्होंने ही कीर्त्ति-मान् हो कर पृथ्वीको खूब शस्यशालिनी बनाया है।७ जो लोग शत्रुओंके जीतनेमें सक्षम (इन) बलवान् मित्रको हव्य देते वे मानो सब देवताओंको धारण करते हैं। देव और मनुष्योंमें जो बर्हि अर्पण किया करते हैं, उनको मित्र कल्याणकर अन्न दिया करते हैं।

किन्तु मनुसंहितामें क्या लिखा है, सुनिये,—

"मनसीन्दुं दिशः श्रोत्रे क्रान्ते विष्णुं बले हरं।
वाच्यग्निं मित्रमुत्सर्गे प्रजने च प्रजापतिम् ॥" (१२।१२१)

मनमें चन्द्र, कर्णमें दिक्, यात्राके समय विष्णु, बल-में हर, वातमें अग्नि, मलमें मित्र और उत्पादन काल-में प्रजापतिका नाम लिया करना चाहिये। यहां मनुसंहिताकारके हाथ मित्रदेवकी अवस्था शोचनीय हो गई है। उनका एक समय अत्यन्त ऊंचा आसन था। अवश्य ही उनको कोई परित्याग कर न सका। वेदमें सूर्य और मित्र भिन्न भिन्न देवता हैं किन्तु पौराणिक-युगमें मित्र और सूर्य एकमें मिल गये हैं।

सूर्य शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

मित्र केवल वैदिक ऋषियोंके ही उपास्यदेवता नहीं वरन् एक दिन सारे सभ्य जगत्‌के आर्य्योंके उपास्यदेवता थे।

पारसियोंके प्राचीन अवस्ताशास्त्रमें यह मित्रदेव 'मिथ्र' नामसे और इसके बादके पह्लवीशास्त्रमें 'मिहिर' नामसे विख्यात है। ऋग्वेदमें जैसी मित्रकी स्तुति है, अवस्ताशास्त्रके मिहिरयष्तमें भी 'मिथ्र'-देवकी वैसी ही स्तुति दिखाई देती है। इस मिहिरयष्तके आरम्भमें ही लिखा है,—

"यहां आओ, हम लोगोंको साहाय्य करो। हम लोगों-के सामने आओ और सुखी करो। अग्र, अजेय पूज्य, प्रशस्य और अमित्रध्रुक् मित्र विस्तीर्ण क्षेत्रोंके शास-यिता है।"

इसके बाद जगह जगह पर इस तरहके मन्त्र पाये जाते हैं—'सदा सत्यवादी मित्रके सहस्र कर्ण और सहस्र नेत्र हैं। ये अपने विस्फारित नेत्रोंसे जगत्‌के लोगोंका काम देख रहे है और मङ्गलका विधान करते हैं।'

उन्होंने पहले ही द्युलोक (स्वर्गलोक) में वैदुर्य्य शैलके पूर्व देशको पार किया, जहां आशुगति (अत्यन्त शीघ्र-गामी) घोड़ोंके साथ अमर्त्त्य सूर्य रहते हैं। मिथ्र-स्वर्णने भूषित हो कर उस शैलके शिखरसे सारे इरानको देखा था। उन्हींकी कृपासे राज यवर्ग दुर्गोंका निर्माण करते हैं। उन्हींके प्रभावसे बहु क्षेत्र-मण्डित सारे शैलों पर जीवोंका आहार उत्पन्न होता है। उन्हींके कारणोंसे गंभीर कूपमें अधिक जल रहता है और उन्हींकी कृपासे नावें चलानेवाली स्रोतस्विनियां ऐस्कत, पौरुत् मरु, हरोयु (सरयू), गोमुग्ध और काईरिजेम प्रवाहित हो रही है। वे सप्तलोकमें प्रकाश दिया करते हैं। जो याग यज्ञमें उपयुक्त स्तोत्रोंसे उनकी पूजा करते हैं उनके कानोंमें जयध्वनि निनादित हो रही है।

मिहिर यष्तमें मित्रको वज्रधर, अमित्रध्रुक् और अहुरमज्दसे ऊंचा स्थान दिया गया है। फिर अवस्ता के यश्नमें अहुरमज्द ही सर्वप्रधान सृष्टिकर्त्ताके रूपमें वर्णित है।

'अहुरमज्द स्पितम जरथुस्त्रको कहते हैं, जब मैंने विस्तृत क्षेत्रके अधिपति मिथ्रकी सृष्टि की, तब मैंने अपनी तरह ही उसको भी याग और प्रजाके उपयुक्त बना कर सृष्टि की थी।"

पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे वेदमें जिस तरह मित्रा-वरुण हैं, अवस्तामें उसी तरह मिथ्र और अहुरमज्द हैं।

वरुण देखो।

प्राचीन इरानमें सर्वत्र इन्हीं मिथ्रकी उपासना प्रच-लित थी। इन मित्ररूप सौरज्योतिकी उपासनाका शकद्वीपमें भी प्रचार था। जरथुस्त्रके अहुरमज्दको सर्व-शक्तिमान् और सर्वप्रधान कह कर प्रचार करनेसे मित्रके पूजनेवाले दो भागोंमें विभक्त हो गये। जरथुस्त्रके मताव-लम्बियोंने अहुरमज्दको सर्वशक्तिमान् और सर्व-प्रधान तथा मिथ्रको अपना आदि और पवित्रतम विकाश स्वीकार किया। किन्तु वे दिन और रातके अधिदेवता थे। दूसरा दल अहुरमज्दकी श्रेष्ठताको

स्वीकार नहीं करता और पूर्वापर मिथ्रको ही सर्व प्रधान और सर्वशक्तिमान् समझ पूजा करने लगा। इसी शैवोक्त सम्प्रदायके पुरोहितगण भारतवर्षमें आ कर शाकद्वीपीय नामसे पुकारे गये। भोजक ब्राह्मण देखो।

ईसाके ५०० वर्ष पहले भी फारसमें सर्वत्र मित्रकी ही उपासना प्रचलित थी। वे आदि सृष्टिकर्त्ता और आदि प्रकृतिके नामसे ही पुकारे जाते थे। ये ही मित्र देव फारसीमें प्रकाश और अग्निके अधिष्ठात्री देवस्वरूप इथुपीय, मिश्र और यूनानदेशमें पूजित होते थे। इथुपीय इन्हीं अग्निदेवको आदि धर्मशास्त्रकार और धर्म्म-प्रवर्त्तक समझ कर उनकी पूजा भी करते थे। नीलनदके तीरवर्त्ती अधिवासियोंका एक दिन विश्वास था, कि मित्रने ओं या होलिओपलिस (सूर्यनगर स्थापित किया। यहांके सर्वप्रथम राजा मित्रः (Metics नामसे परिचित थे। भगवान्‌के सिंहासनसे जो दिव्यज्योति निकलती है उसका चिह्न दिखानेके लिये मित्रराजाने अपूर्व सूर्य-स्तम्भकी प्रतिष्ठा की।

रोमक-बादशाहके यत्नसे मित्रपूजा समस्त रोम साम्राज्यमें प्रचलित हुई थी। पूसके महीनेमें जिस दिन यहां बड़ा दिन होता है उस दिन रोम-नगरमें मित्रका जन्मोत्सव खूब धूमधामसे मनाया जाता था। इस दिन तमाम नाच गान होता था और सारी नगरी रोशनीसे सजाई जाती थी। रोमसाम्राज्यके विस्तारके साथ साथ मित्रपूजा (Mitriaca)का समस्त जर्मनीमें प्रचार हुआ था। भूगर्भसे जो चित्रलिपि आविष्कृत हुई है उसके भग्नावशेषसे उसका निदर्शन निकला है। फोटीयस (*Photias*)-ने लिखा है, कि ग्रीक और रोमकगण मित्रके उद्देशसे नरबलि देते थे। सुइदास (Suidas) ने कहा है, कि मित्रपूजाका रहस्याधिकारी होनेमें पूजककी अग्नि परीक्षा देनी होती थी।

भारतवर्षमें भी कई समय सर्वत्र मित्रपूजा प्रचलित थी। आज भी शाकद्वीपी ब्राह्मण सूर्यरूपमें इस मित्रकी पूजा करते हैं। पारसिक लोग 'मिथ्रिवन' वा मित्र मन्दिरमें उनकी पूजा करते थे। भविष्य और वराहपुराणमें 'मित्रवन' नामक मित्रके पूजास्थानका माहात्म्य वर्णन किया गया है। मित्रकी तरह उनकी पत्नी मित्रा (*Mithia*) देवीकी पूजा भी प्राचीन पारसिकोंमें प्रचलित थी। वे अग्निकी अधिष्ठात्री देवी समझी जाती थी। आसिरियामें उनका मायलित्ता (*Myletta*) नामसे तथा प्राचीन अरबमें आलिता नामसे पूजन होता था। लोग उन्हें जगज्जननी और प्रजाविवर्द्धिनी समझते थे।

आदि पारसिकगण मित्र और मित्राका पुरुष और प्रकृतिरूपमें वर्णन कर गये हैं। मित्राने प्रजापति अहुरमजदेकी सहायतासे जागतिक देह धारण कर सृष्टि बीज रूप वह्निको अपने गर्भमें धारण किया था।

मित्रक (सं० पु०) मित्र स्वार्थे कन्। मित्र, दोस्त।

मित्रकरण (सं० क्ली०) बन्धुतास्थापन, दोस्ती करना।

मित्रकर्मण (सं० क्ली०) बन्धु या मित्रका कार्य।

मित्रकाम (सं० त्रि०) बन्धुसङ्गलाभेच्छु, मित्रका साथ चाहनेवाला।

मित्रकार्य (सं० क्ली०) बन्धुत्व, मित्रता स्थापन।

मित्रकृत (सं० पु०) १ पुराणानुसार बारहवें मनुके एक पुत्रका नाम। २ सह्याद्रिवर्णित एक राजा।

मित्रकृति (सं० स्त्री०) मित्रका कार्य।

मित्रकृत्य (सं० क्ली०) मित्रका कार्य।

मित्रक्रु (सं० पु०) वह जो मित्रका अपकार करता हो।

"मित्रक्रुवो यच्छसनेन गावः।" (ऋक् १०।८९।१४)

"मित्रक्रुवो मित्राणां क्रूरस्य कर्म्मणः कर्त्तारः।" (सायण)

मित्रगुप्त (सं० त्रि०) १ मित्र द्वारा रक्षित, वह जो मित्र द्वारा बचाया गया हो। (पु०) नायकभेद।

मित्रघ्न (सं० पु०) १ मित्रहननकारी, वह जो मित्रकी हत्या करता हो। २ विश्वासघातक। ३ राक्षसभेद, एक राक्षसका नाम।

मित्रघ्ना (सं० स्त्री०) एक नदीका नाम।

मित्रज्ञ (सं० पु०) यज्ञद्रव्यापहारी राक्षसभेद, एक राक्षसका नाम जो यज्ञकी सामग्री आदि छीन ले जाया करता था।

मित्रता (सं० स्त्री०) मित्रस्य भावः, तल् टाप्। १ मित्र होनेका भाव, दोस्ती। २ मित्रका धर्म।

मित्रतूर्य (सं० क्ली०) बन्धुवर्गका जयोल्लास।

मित्रत्व (सं० क्ली०) मित्रस्य भावः त्व। मित्र होनेका भाव, सौहार्द, दोस्ती।

मित्रदात—एक बहुत प्राचीन पार्थिव सम्राट्। युक्रे टाइडेसका साम्राज्य जब अन्तर्विप्लवके कारण छिन्न भिन्न हो गया, तब इस (Mithridates I) ने उस राज्यके अधिकाराको जीत लिया। ईसाके १४० वर्ष पहले इसने भारत पर भी चढ़ाई की थी। पञ्जाब जीत कर यह वहां "छत्रप" या छत्रपतिको शासनकर्त्ता नियुक्त कर गया था। आज भी पञ्जाबमें उस पार्थिव सम्राटोंके आनेका मुद्राचिह्न मिल रहा है। अब तक जो पार्थिव-मुद्रा मिली हैं, वे सब ईसाके ६० से ६० सन् पहलेकी बनी हुई है।

मित्रदेव (सं० पु०) १ महाभारतके अनुसार एक राजाका नाम। २ बारवें मनुके एक पुत्रका नाम। ३ आदित्यदेव, मित्र नामके आदित्य।

मित्रद्रुह् (सं० त्रि०) मित्रके साथ शत्रुता करनेवाला। जन्द भाषामें इसे 'मित्रध्रुह्' कहते हैं।

मित्रद्रोह (सं० पु०) बन्धुसे शत्रुता करना।

मित्रद्रोहिन् (सं० त्रि०) मित्र' द्रुह्यतीति मित्रद्रुह-णिनि। मित्रसे शत्रुता करनेवाला।

मित्रद्विष् (सं० त्रि०) मित्रकी हिंसा करनेवाला।

"मित्रद्रोही कृतघ्नश्च ये च विश्वासघातकाः।
ते नरा नरक यान्ति यावचन्द्रदिवाकरौ ॥"
(द्वात्रिंशपुत्तलिका)

मित्रधर्मन् (सं० पु०) यज्ञविघ्नकारी असुरभेद, एक राक्षस जो यज्ञमें बाधा डालता था।

मित्रधित (सं० क्ली०) मित्रनिहित धन, मित्र द्वारा रखा हुआ धन।

मित्रधिति (सं० स्त्री०) मित्रका धारण, बन्धुओंकी रक्षा।

मित्रधेय (सं० त्रि०) यजमानके यागलक्षण कार्य।

मित्रध्रुह् (सं० त्रि०) मित्रद्रोहकारी, मित्रद्वेषी।

मित्रनाड़ु—सह्याद्रिवर्णित एक राजा।

मित्रपञ्चक (सं० क्ली०) रसेन्द्रसारसंग्रहके अनुसार घी, शहद, गुंजा, सुहागा और गुग्गुल इन पांचोंका समूह।

मित्रपति सं० पु०) मित्रप्रतिपालक, वह जो दोस्तोंकी परवरिश करता हो।

मित्रपद (सं० क्ली०) पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थका नाम। (मत्स्यपु० २२।११ अ०)

मित्रप्रतीक्षा (सं० स्त्री०) १ मित्रके प्रति सम्मान। २ दोस्तके लिये इन्तजार।

मित्रबाहु (सं० पु०) १ बारहवें मनुके एक पुत्रका नाम। २ श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम।

मित्रभानु (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक राजकुमारका नाम। (भारत १३ पर्व)

मित्रभाव (सं० पु०) मित्रका धर्म, मित्रता।

मित्रभृत् (सं० त्रि०) मित्रपोषणकारी, मित्रकी परवरिश करनेवाला।

मित्रभेद (सं० पु०) मित्रके साथ विवादकारी, वह जो मित्रोंमें लड़ाई कराया करता हो।

मित्रमहस् (सं० त्रि०) अनुकूल दीप्तियुक्त, हितकारी तेजस।

मित्रमिश्र (सं० पु०) वीरमित्रोदय नामक याज्ञवल्क्यस्मृति टीकाके रचयिता। ये परशुराम मिश्रके पुत्र और हंस पण्डितके पौत्र थे। राजा प्रतापरुद्रके पौत्र राजा वीरसिंहके आदेशसे इन्होंने उक्त ग्रन्थकी रचना की। २ आनन्दचम्पूके प्रणेता।

मित्रयज्ञ (सं० पु०) एक व्यक्तिका नाम। (सत्कारकौस्तुभ)।

मित्रयु (सं० त्रि०) मित्रं यातीति या-उ (क्याच्छन्दसि। पा ३।२।१७०) मित्रवत्सल। मृग-या-कुः निपातितश्च (मृगश्वादयश्च। उण् १।३८) (पु०) २ लोकयात्रिक। ३ लोमहर्षण ऋषिके एक शिष्यका नाम।

"सुमतिश्चाग्निवर्च्चाश्च मित्रयुः शांशपायनः।"
(विष्णुपु० १३।६।१८)

मित्रयुज् (सं० स्त्री०) १ मैत्रीयुक्त। (पु०) २ उपाधिभेद।

मित्रयुद्ध (सं० क्ली०) मित्रेण सह युद्धम्। सुहृत् संग्राम, दोस्तोंकी लड़ाई। पर्याय—मैत्रेयिका।

मित्रराज (सं० पु०) सह्याद्रि-वर्णित दो राजोंके नाम। (सह्या० ३२।१४, १३।५)

मित्रलब्धि (सं० स्त्री०) मित्रस्य लब्धिः ६-तत्। मित्र प्राप्ति।

मित्रलाभ (सं० पु०) मित्रस्य लाभः। १ मित्रके साथ सम्मिलन, दोस्तोंका मिलना। २ हितोपदेशका एक अंश।

"मित्रलाभः सुहृद्भेदो विग्रहः सन्धिरेव च ॥" (हितोप०)

मित्रवंश—भारतका स्वनामधन्य राजवंश। औदुम्बर, पञ्चाल स्थानोंमें इस वंशने राज्य किया था।

कुछ लोग इनको शुङ्ग-सम्राटोंकी शाखा कहते हैं। किन्तु मालूम होता है, कि पञ्चाल और औदुम्बरके मित्र स्वतन्त्र वंशके थे। इस वंशके अधिकांश राजा हिन्दू थे। कोई इनको शक क्षत्रिय और कोई शाकद्वीपीय ब्राह्मण भी कहते हैं। ईसाकी पहली और दूसरी शताब्दिमें इस वंशका अभ्युदय हुआ था। औदुम्बरसे अजमित्र, महीमित्र, विश्वामित्र, भानुमित्र तकके सिक्के मिले हैं। पञ्चालसे भानुमित्र, ध्रुवमित्र, सूर्यमित्र, फाल्गुनिमित्र, भूमिमित्र, अग्निमित्र, जयमित्र, इन्द्रमित्र, विष्णुमित्र और अयोध्यासे सत्यमित्र, सङ्घमित्र और विजयमित्रके सोनेके सिक्के मिले है। सिक्केके चिह्नोंको देख किसीको शैव, किसीको वैष्णव और किसीको सौर होनेका अनुमान होता है।

मित्रवती (सं० स्त्री०) पुराणानुसार श्रीकृष्णकी एक कन्याका नाम।

मित्रवत्सल (सं० त्रि०) मित्रस्य मित्रे वा वत्सलः। मित्रप्रिय। पर्याय—मित्रयु।

मित्रवन (सं० क्ली०) पञ्जावके मुलतान नामक नगरका प्राचीन नाम।

मित्रवत् (सं० त्रि०) मित्र-मस्यास्तीति मित्र-मतुप्, मस्य व। १ सुहृद्युक्त, जिसे मित्र हो। (पु०) २ एक असुरका नाम। ३ द्वादश मनुके एक पुत्रका नाम। ४ श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम।

मित्रवर्चस् (सं० पु०) १ एक ऋषिका नाम।

मित्रवर्द्धन (सं० पु०) १ महाभारतके अनुसार एक राजाका नाम। २ दस्युभेद, एक डकैतका नाम। ३ सह्याद्रि-वर्णित एक राजाका नाम। ४ बन्धु वृद्धिकारी, मित्रकी संख्या बढ़ानेवाला।

मित्रवर्मन् (सं० पु०) एक प्राचीन हिन्दू राजाका नाम।

मित्रवान् (हिं० वि०) मित्रवत् देखो।

मित्रवाह (सं० पु०) बारहवें मनुके एक पुत्रका नाम।

मित्रविद् (सं० पु०) मित्रं वेत्तीति मित्रविद्-क्विप्। गुप्तचर, जासूस।

मित्रविन्द (सं० पु०) १ अग्नि। २ बारहवें मनुके एक पुत्रका नाम। ३ पुराणानुसार श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम। ४ एक आचार्यका नाम।

मित्रविन्दा (सं० स्त्री०) पुराणानुसार श्रीकृष्णकी एक पत्नीका नाम।

मित्रवैर (सं० क्ली०) बन्धुद्वेषी, वह जो मित्रसे वैर या द्वेष करता हो।

मित्रशर्मन् (सं० पु०) कुछ पण्डितोंके नाम।

मित्रशस् (सं० त्रि०) मित्रं शास्ति इति शास् क्विप् (शास इदङ्हलोः। पा ३।४।३८) इत्यत्र काशिकोक्तेः क्विप् इत्वं ततो दीर्घश्च। सुहृच्छास्ता।

मित्रसप्तमी (सं० स्त्री०) मित्राय मित्र जन्मने मित्रस्य या सप्तमी। १ मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी। इसी दिन कश्यपके औरससे अदितिके गर्भसे मित्र नामके दिवाकरकी उत्पत्ति हुई थी। इसीसे यह तिथि मित्र सप्तमीके नामसे विख्यात हुई है। इस दिन उपवास या फलाहार किया जाता है।

"अदितेः कश्यपाज्जज्ञे मित्रो नाम दिवाकरः।
मार्गशीर्षस्य मासस्य शुक्ले पक्षे शुभे तिथौ॥
सप्तम्या तेन सा ख्याता लोकेऽस्मिन् मित्रसप्तमी।
तत्रोपवासः कर्त्तव्यो भक्षयाथ फलानि वा॥"
(सम्वत्सरकौमुदीधृत भविष्यपुराण)

मित्रसम्प्राप्ति (सं० स्त्री०) मित्रसमागम, मित्रलाभ।

मित्रसह (सं० पु०) कल्माषपाद राजाका एक नाम। २ हरिवंशवर्णित एक ब्राह्मणका नाम। (त्रि०) ३ मित्रके साथ वास करनेवाला।

मित्रसाह (सं० त्रि०) मित्र-सङ्ग, मित्रके साथ।

मित्रसाह्वया (सं० स्त्री०) महाभारतके अनुसार स्वर्गमें रहनेवाली एक देवीका नाम।

मित्रसाह्वया (सं० स्त्री०) स्वर्गस्थ देवताभेद।

"गौरी विद्याथ गान्धारी केशिनी मित्रसाह्वया।
सावित्र्या सह सर्वास्ताः पार्वत्या यान्ति पृष्ठतः॥"
(महाभारत वनपर्व)

मित्रसेन (सं० पु०) १ बारहवें मनुके एक पुत्रका नाम। २ श्रीकृष्णके एक पुत्रका नाम। ३ एक बुद्धका नाम। ४ एक द्राविड़देशके राजाका नाम।

मित्रहत्या (सं० स्त्री०) बन्धुविनाश।

मित्रहिंसक (सं० त्रि०) मित्रकी हत्या करनेवाला।

मित्रा (सं० स्त्री०) मित्र स्त्रियां टाप्। १ मित्रदेवकी स्त्रीका नाम। २ सुमित्रा, शत्रुघ्नकी माता। ३ एक अप्सराका नाम।

"अलम्बुषा घृताची च मित्रा मित्राङ्गदा रुचिः।"
(महाभारत १३।६।४४)

४ पराशरके शिष्य मैत्रेयकी माताका नाम।
(भाग० ३।४।३५)

मित्राक्षर (सं० क्ली०) छन्दो-बद्ध पद, छन्दके रूपमें बना हुआ पद।

मित्राख्य (सं० त्रि०) मित्र नामधेय। "आग्नेय मित्राख्यपर्व"
(बृहत्सं०)

मित्राणवली—पञ्जाब प्रदेशके सियालकोट जिलान्तर्गत एक नगर। यह स्थान सूती कपड़े और अनाज के वाणिज्य व्यवसायके लिये मशहूर है।

मित्रातिथि (सं० पु०) एक राजाका नाम। (ऋक् १०।३३।७)

मित्रानुग्रहण (सं० क्ली०) बन्धुके प्रति अनुग्रह दिखलाना।

मित्राभिद्रोह (सं० पु०) बन्धु विद्वेषक, मित्रसे वैर या द्वेष रखनेवाला।

मित्रायु (सं० पु०) १ राजा दिवोदासके एक पुत्रका नाम। (त्रि०) २ मित्रकी इच्छा करनेवाला।

मित्रावरुण (सं० पु०) मित्रश्चासौ वरुणश्चेति (देवता-द्वन्द्वे च। पा ६।३।१४१) मित्र और वरुण नामक देवता। मित्र और वरुण देखो। २ उत्सवभेद।

मित्रावरुणवत् (सं० पु०) मित्रावरुणयुक्त। (ऋक ८।३५।१३)

मित्रावरुणीय (सं० क्ली०) ऋत्विज मित्रावरुण सम्बन्धीय।

मित्रावसु (सं० पु०) १ विश्वावसुके एक पुत्रका नाम। २ सिद्धगणके राजा।

मित्रिन् (सं० त्रि०) बन्धुयुक्त, जिसे मित्र हो।

मित्रिय (सं० त्रि०) बन्धु सम्बन्धीय। (अथर्व २।२८।१)

मित्री (सं० स्त्री०) दशरथकी पत्नी सुमित्रा जो लक्ष्मण और शत्रुघ्नकी माता थीं।

मित्रेयु (सं० पु०) राजा दिवोदासके एक पुत्रका नाम।
(भाग० ६।२२।१)

मित्रेरु (सं० त्रि०) यजमानोंके, ईर्षयितावाधक। "जघन्या, इन्द्र मित्रेरून्" (ऋक् १।१७४।३)—"मित्रेरून् मित्राणां यजमाना नामीरयितॄन् बाधकान्।" (सायण)।

मित्रेश्वर (सं० पु०) मित्रशर्म प्रतिष्ठित काश्मीरके एक शिवलिङ्गका नाम।

मित्रोदय (सं० पु०) १ सूर्योदय। २ बन्धुओंके सौभाग्यका उदय।

मित्र्य (सं० त्रि०) जिमिदास्नेहने इति मिद्-स्वार्थे यत्। अनुरक्त। (ऋक् ५।८५।७)

मिथनी (सं० स्त्री०) मेथी।

मिथस् (सं० अव्य०) मेथति इति मथ् सङ्गमे असुन्, पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। १ अन्योन्य, परस्पर। २ रहः।

"व्यवहारो मिस्तेषा विवाहः सदृशैःसह।" (मनु १०।५३)

मिथस्तुर (सं० त्रि०) परस्पर बाधमान वा संश्लिष्ट।

"मिथस्तुर ऊतयो यस्य" (ऋक् ७।२६।६)

"मिथः परस्पर तुरो बाधमाना संश्लिष्टा वा।" (सायण)

मिथस्पृध्य (सं० त्रि०) परस्पर स्पर्द्धाविषय।
(ऋक् १।१६६।६)

मिथि (सं० पु०) मेथते हिनस्ति शत्रुकुलमिति मिथि इन (सर्वधातुभ्य इन। उण् ४।११७) राजा निमिके पुत्रका नाम। विष्णुपुराणमें यही जनक राजाके नामसे प्रसिद्ध हैं। राजा निमिको कोई पुत्र न था। इसीलिये मुनियोंने अराजकता बढ़ जानेके डरसे उनके शरीरको अरणीमें मथ डाला। मथनेके कारण उससे एक कुमार उत्पन्न हुआ। इसी कुमारका नाम जनक हुआ। इनका पिता विदेह अर्थात् देहरहित थे, इसीसे उनका दूसरा नाम विदेह भी हुआ। मथनेसे उत्पन्न होनेके कारण इनको संज्ञा मिथि हुई। इनको एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम था उदावसु। (विष्णुपु० ४।५ अ०) रामायणमें मिथिवंशका उल्लेख मिलता है। यथा—

"निमिः परमधर्मात्मा सर्वसत्त्ववतां वरः।
तस्य पुत्रो मिथिर्नाम जनको मिथिपुत्रकः॥"
(रामायण १।७१।४)

मिथित (सं० पु०) राजभेद।

मिथिनी (सं० स्त्री०) मेथी।

मिथिल (सं० स्त्री०) राजर्षि जनकका एक नाम।

मिथिला (सं० स्त्री०) मथ्यन्ते शत्रवो यस्यां, मथ इलच (मिथिलादयश्च । उण् १।५८) ततोऽकारस्येत्वं निपातितञ्च। अतिप्राचीन जनपदभेद। इसकी राजधानी मिथिला नगरी है और यही राजर्षि जनककी नगरी थी। इसका दूसरा नाम विदेह है। इसी कारण मिथिला-राजकन्या सीतादेवीका नाम मैथिली और वैदेही भी पड़ा था।

रामायण महाकाव्यमें इस जनपदका विशेष विवरण लिखा है। ब्रह्मर्षि विश्वामित्र ताड़कानिधनके लिये राम लक्ष्मणके साथ वन जङ्गलोंको पार कर मिथिलामें पहुचे थे। इसी समय राजर्षि जनकने एक महायज्ञ किया था।

यह मिथिला है कहां ? इसके सम्बन्धमें अनेक लोगोंके अनेक मत हैं। रामायण, पुराण या तन्त्र आदि ग्रन्थोंमें इसके जो प्रमाण दिखाई देते हैं, उन्हें यथा स्थान लिखेंगे। यहां देखना है, कि महाकवि बाल्मीकजीने इस मिथिलाके सम्बन्धमे क्या लिखा है ?

तपोधन विश्वामित्र राम लक्ष्मणको साथ ले कर अयोध्यासे दो कोससे भी दूर सरयूके दक्षिण किनारे आ उपस्थित हुए। यहां उन्होंने रामचन्द्र और लक्ष्मणको बला और अतिबला दो मन्त्रोंकी शिक्षा दी। यहां रात बिता कर दूसरे दिन ये लोग गङ्गा-सरयूके सङ्गम पर आये। यहां कामदेवके पुण्याश्रममें वे रात बिता दूसरे दिन सबेरे नित्य कर्म पूरा कर नावमें चढ गङ्गाके दक्षिण चले। राहमें उन्होंने एक निविड़ वन देखा। रामचन्द्रने विश्वामित्रसे पूछा, 'महामुने! इस वनका क्या नाम है? इसके विषयमें आप जो जानते हों, उसे कहिये।' इस पर विश्वामित्रने कहा,—"प्राचीनकालमें यहां मलद और करूष नामके दो देवनिर्मित जनपद थे। ताड़का नाम्नी राक्षसी और उसका पुत्र मारीच राक्षसने इन दोनों जनपदोंका ध्वंस किया है। नदीके किनारेसे दो कोस पर ही ताड़का रहती है।" यह सुन कर राम और लक्ष्मणने वहां जा ताड़काको मारा। इसके बाद वे महात्मा वामनके आश्रममें आये। इसी आश्रममें विश्वामित्र रहते थे। उन्होंने आश्रममें पहुंचते ही यज्ञ आरम्भ किया। राम और लक्ष्मणने ६ रात जाग कर राक्षसोंके उपद्रवसे यज्ञकी रक्षा की थी।

यज्ञ समाप्त होनेके बाद विश्वामित्र उन्हें साथ ले वहांसे राजर्षि जनकके धनुस् यज्ञ देखनेके लिये जनकपुरी मिथिलामें आये। पथमे उनको पहले मगध (गिरिव्रज) राज्यके अन्तर्गत सोन नदीके किनारे आना पड़ा। यहां रात बिता कर दूसरे दिन वे फिर चलने लगे। दो पहरके समय वे गङ्गाके किनारे पहुंचे। भोजन आदिसे निवृत्त हो कर गङ्गाको पार कर उत्तर किनारे आये। यहां ही विशाला नामक महापुरी थी। यहां वे लोग विशालाके राजा सुमतिके अतिथि हुए। वह रात वहां ही बीती। दूसरे दिन सवेरे वे मिथिलामें गौतमाश्रममें पहुंच अहल्याको शापमुक्त कर पूर्वोत्तर कोनमें अवस्थित जनकके यज्ञक्षेत्रमें पहुंचे।

रामायणके वर्णनसे स्पष्टतया मिथिलाका कोई प्रकाशनः प्रमाण नहीं मिलता फिर भी इतना अवश्य मालूम होता है, कि मिथिला विशालाके उत्तर-पूर्व कोन पर अवस्थित थी। विशालाके उत्तर ही मिथिलाराज्य है। चीन परिव्राजक यूएनचुवंगके समय गंगाके उत्तर समूचा प्रदेश वृज्जि नामसे प्रसिद्ध था। यह प्रदेश तीन छोटे छोटे भागोंमें बंटा हुआ था—१ वैशाली या विशाला, २ तीरभुक्ति, ३ वृज्जि या मिथारि। पुराणके अनुसार निमिषके पुत्र मिथिके नाम पर ही मिथिलाराज्यकी स्थापना हुई। इसलिये इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि मिथिला वर्त्तमान तिरहुत (तीरभुक्ति)-का कोई न कोई अंश ही होगी।

पुराण-प्रसङ्गसे मालूम होता है, कि वैवस्वतमनुके पुत्र इक्ष्वाकु सूर्य्यवंशीय सर्व-प्रथम राजा थे। उनके सौ पुत्रोंमें विकुक्षि, निमि और दण्ड नामके तीन पुत्र श्रेष्ठ थे। विकुक्षिसे ही रामचन्द्रादि सूर्य्यवंशीय राजाने जन्म लिया था। निमि मिथिलाधिपति जनकके आदि पुरुष हैं।

भविष्यपुराणमें लिखा है,—

"निमेः पुत्रस्तु तत्रैव मिथिर्नाम महान् स्मृतः।
प्रथम भुजवलैर्येन तैरहूतस्य पार्श्वतः॥
निर्मितं स्वीय नाम्ना च मिथिलापुरमुत्तमम्।
पुरीजननसामर्थ्याज्जनकः स च कीर्त्तितः॥"

निमिके पुत्र मिथि हैं। इन्हीं मिथिने तिरहुतके एक प्रदेशमें अपने नाम पर मिथिलापुर-नगरी बसाई।

पुरी-निर्माण करनेमें सामर्थ्यशाली होनेके कारण ही ये जनक नामसे विख्यात हुए। इनके तीन नाम हैं. मिथिल, वैदेह और जनक। विष्णु-पुराणमें लिखा है, कि मृतदेहसे जन्म होनेसे ही जनक नाम पड़ा। उनके पिता विदेह (देहविहीन) हुए इससे इनका नाम विदेह था। मथन द्वारा उनका जन्म हुआ इससे वे मिथि नामसे प्रसिद्ध हुए। श्रीमद्भागवत्‌ने भी इसी बातका समर्थन किया है। * वाल्मीकीय रामायणमें भी निमिके पुत्र मिथि और मिथि-के पुत्र जनक—ऐसा हो कहा गया है—

"निमिः परमधर्म्मात्मा सर्वतत्त्ववता वरः।
तस्य पुत्रो मिथिर्नाम् जनको मिथिपुत्रकः॥"

इसी जनक नामसे उनके पीछेके राजाओंने भी जनककी उपाधि ग्रहणकी थी†। अयोध्याधिपति दशरथ-तनय रामचन्द्रने जिस जनक दुहिता सीताका पाणिग्रहण किया था, वे सीता राजा ह्रस्वरोमाके ज्येष्ठ पुत्र राजर्षि सीरध्वजकी यज्ञभूमिसे उदय हुई थी। इसीलिये उस यज्ञभूमिका नाम सीतामढ़ी रखा गया था। राजा ह्रस्वरोमाके कनिष्ठ पुत्र साङ्काश्य नगराधिप कुशध्वजकी कन्या माण्डवीका भरतने और श्रुतकीर्त्तिका शत्रुघ्नने पाणिग्रहण किया। सीरध्वजकी दूसरी पुत्री उर्मिला-देवी लक्ष्मणको ब्याही गई थीं।

रामायणमें जनकवंशकी एक नामावली पाई जाती है। वह इस तरह है,—"१ निमि, २ मिथि, ३ जनक, ४ उदावसु, ५ ननिवर्द्धन, ६ सुकेतु, ७ देवरात, ८ वृहद्रथ, ९ महावीर्य्य, १० सुधृति, ११ धृष्टकेतु, १२ हर्यश्व, १३ मरु १४ प्रसिद्धक, १५ कृत्तिरथ, १६ देवमीढ़, १७ विबुध, १८ अन्धक, १९ कृतिराथ, २० कृत्तिरोमा, २१ स्वर्णरोमा, २२ ह्रस्वरोमा. २३ जनक और कुशध्वज। किन्तु विष्णु-पुराणके चतुर्थ अंशके पांचवें अध्यायमें उन वंशको एक बड़ी सूची लिखी है। यथा,—१ निमि (विदेह), २ जनक, ३ उदावसु, ४ नन्दीवर्द्धन, ५ सुकेतु (केतु), ६ देवरात, ७ वृहद्रथ (वृहदुकृथ), महावीर्य्य, ९ सुधृति, १० धृष्टकेतु, ११ हर्यश्व, १२ मरु, १३ प्रतिवन्धक, १४ कृतरथ (कृतिरथ), १५ कृति (देवामीढ, १६ विबुध, १७ महाधृति, १८ कृतिरात, १९ महारोमा, २० सुवर्णरोमा, २१ ह्रस्वरोमा, २२ सीरध्वज और कुशध्वज, २३ सीरध्वजके पुत्र भानुमान् और कन्या सीतादेवी, २४ शतद्युम्न, २५ शुचि, २६ ऊर्ज्जवह (ऊर्जबाहु), २७ सत्यध्वज (भारद्वाज), २८ कुणि, २९ अञ्जन ३० ऋतुजित् (क्रतुजित्), ३१ अरिष्ट-नेमि, ३२ श्रुतायु (शतायु), ३३ श्रुतायुध, ३४ सुपार्श्व (सूर्याश्व), ३५ सञ्जय (संनय), ३६ क्षेमारि, ३७ अनेना, ३८ मीनरथ (मानरथ), ३९ सत्यरथ, ४० सात्यरथि, ४१ उपगु, ४२ श्रुत (उपगुप्त), ४३ शाश्वत, ४४ सुधन्वा, ४५ सुभास (भास या सुभाष), ४६ सुश्रुत, ४७ जय, ४८ विजय, ४९ ऋत, ५० सुनय, ५१ वीतहव्य, ५२ सञ्जय, ५३ क्षेमाश्व, ५४ धृति, ५५ वहुलाश्व और ५६ कृति। ये सभी राजर्षि कहलाते थे।

न्यायदर्शनके रचयिता महर्षि गौतम इसी जनकवंश-के पुरोहित थे। इसी समयसे मिथिलामें न्यायकी चर्चा विशेष रूपसे चली आती है।*

महर्षि गौतम मिथिलामें जहां तपस्या करते थे, आज भी उस स्थानको गौतमाश्रम कहते हैं। यह गौतमा-श्रम आज कलके भरोरा परगनेके ब्रह्मपुर मौजेमें अव-स्थित है। गौतमपत्नी अहल्या जहां केवल वायु पी कर जीवित और भस्मराशि पर योगनिमग्न रह कर रामचन्द्रके दर्शनसे पापमुक्त हुई थीं, वह स्थान आज

---

* श्रीमद्भागवतके नवम स्कन्धमें लिखा है,—
"अराजकभयं नृणां मन्यमाना महर्षयः।
देहं ममन्थुः स्म निमेः कुमारः समजायत॥
जन्मना जनकं सोऽभूद्विदेहस्तु विदेहजः।
मिथिलो मथनाज्जातो मिथिला येन निर्मिता॥"
(भागवत ९।१३।१३-१४)

† उर्दू भाषामें लिखी आईन तिरहुत नामक पुस्तकमें लिखा है, कि प्रजा पालनमें राजा जनक पिताके जैसे थे, इससे इस वंशकी 'जनक' उपाधि हो गई।

* नवद्वीप (नदिया)-के मुखोज्ज्वल करनेवाले प्रसिद्ध नैया-यिक वासुदेव सार्वभौमने मिथिलासे न्यायशास्त्र अध्ययन किया था। स्वनामधन्य रघुनाथ शिरोमणि और स्मार्त रघुनन्दन दरभङ्गेके सर्वप ग्रामवासी पक्षधरमिश्रके छात्र थे।

भी अहल्याके नामसे प्रसिद्ध है। यह स्थान जारेल परगनेके महुआरी मौजेमें मौजूद है। शिवका धनुष भङ्ग कर जिस समय रामचन्द्रजीने जानकीसे विवाह किया, उस समय अहल्याके पुत्र शतानन्द जनक सीरध्वजके यहां पुरोहितका काम करते थे।

भविष्यपुराणके 'तैरहुतस्य पार्श्वतो' वचनके प्रमाणसे अनुमान किया जाता है, कि यह राज्य तिरहुत नामसे भी प्रसिद्ध था। अन्य कई संस्कृत ग्रन्थोंमें तीरभूक्ति शब्द पाया जाता है। 'तीरभूक्ति' नदीके किनारेवाली भूमिको कह सकते हैं। तीरहुत शब्दके मूल शब्द तीरभूक्ति या तीरमूक्ति शब्दका अपभ्रंश तिरहुत है। इससे अब जरा भी सन्देह नहीं रह जाता, कि आज कलका तिरहुत प्रदेश प्राचीनकालका तीरमूक्ति राज्य है। शक्तिसङ्गम तन्त्रमें इस राज्यकी सीमा इस तरह निर्द्धारित हुई है :—

"गण्डकी तीरमारम्य चम्पारण्यान्तग शिवे।
विदेहभूः समाख्याता तैरभुक्ता भिधः स तु ॥"

अर्थात् विदेह या तीरमुक्ति देश गण्डकी नदीके तीरसे ले कर चम्पारण्य (चम्पारण)-की अन्तिम सीमा तक फैला हुआ है।

पञ्जीधृत वृहद्विष्णुपुराणमें लिखा है—

"कौशिकीन्तु समारम्य गण्डकीमधिगम्य वै।
योजनानि चतुर्विंश द्व्यायामाः परिकीर्त्तितः ॥
गङ्गाप्रवाहमारभ्य यावद्धैमवत वनम्।
विस्तारः षोडश प्राक्तो देशस्य कुलनन्दन ॥
मिथिला नाम नगरी तत्रास्ते लोकविश्रुताः ॥"

कौशिकीसे ले कर गण्डकी तक मिथिलाकी पूर्वी पश्चिमी लम्बाई २४ योजन या ९६ कोस और गङ्गासे ले कर हैमवत् वन तक चौड़ाई १६ योजन यानी ६४ कोस है। इससे मालूम होता है, कि मिथिलाके पश्चिम गण्डकी, पूर्व कौशिकी, दक्षिण गङ्गा और उत्तर हिमवत्-वन या हिमालय पर्वत था। इससे अब तिरहुत या तीरमुक्ति शब्द सार्थक हो जाता है।

यहां अब प्रश्न हो सकता है, कि रामायणमें लिखी विशालापुरी कहां गई? यह स्वीकार करना होगा, कि मिथिलाका प्रभाव बढ़नेके कारण विशालानगरी मिथिलाके अन्तर्गत आ गई थी। वृहद्विष्णुपुराणमें लिखे विशालपुरको भी (हाजीपुर) तिरहुतमें मिला लिया गया है। अथवा विशाला-राजवंश विलुप्त होने पर उक्त राज्य मिथिलामें मिला लिया गया था। यह अनुमान भी असङ्गत नहीं जान पड़ता।

महाभारतमें भी इस विशाल जनपदका उल्लेख मिलता है :—

"ततः कोष समादाय वाहनानि च भूरिशः।
पाण्डुना मिथिला गत्वा विदेहाः समरे जिताः ॥

पाण्डवोंने मिथिलामें आ कर विदेहराजको पराजित किया था। इससे स्पष्ट है, कि उस समय तक मिथिला राज्यकी समृद्धिमें कमी नहीं हुई थी। महाभारतमें विदेहराजने कौरवोंकी ओरसे युद्ध किया था।
(भीष्मपर्व)

निमिसे ५६ पीढ़ीके बाद महाराज कृतिके समयसे जनकवंशकी इतिश्री हुई। उसके बाद जनकवंशका नाम दिखाई नहीं देता। 'आइने तिरहुत' उर्दू पुस्तकके लेखकका कहना है, जनक शब्दके अपभ्रंशसे 'जङ्ग' शब्दकी उत्पत्ति हुई है। यह शब्द जनक शब्दका बोधक है।

जनकवंशके अवसानके बाद हम संवत् ११४६ वि०में (सन् १०८६ ई०) न्यायदेव नामक एक क्षत्रियको तिरहुतका शासन करते देखते हैं। नेपालकी तराईके दोस्तिया परगने सिमरांवगढ़ नान्यदेवकी कीर्त्ति है। उक्त गढ़के शिलालेखमें लिखा है :—

"नन्देन्दुविन्दु विधु सम्मित शाकवर्षे १०१९
तत्श्रावणे सितदले मुनिसिद्धितिश्याम।
स्वातिशनैश्वर दिने करिवैरिलग्ने
श्रीनान्यदेव नृपतिर्विदधीत वास्तुम ॥'

राजा नान्यदेव १०११ शाके अर्थात् १०८९ ई०में तिरहुतमें आये। इसके बाद उन्होंने १०१९ शाके श्रावण महीनेकी सप्तमी तिथिमें स्वाति नक्षत्राश्रित शनिवारको सिंहलग्नमें यह गढ़ तैयार किया। आज भी तराईमें ५।७ कोस दूर तक इस गढ़ या किलेका नमूना दिखाई देता है। यही नैपाल तराईका प्रदेश पूर्वकथित हिमवत्वन है। तराईका अर्थ वन और पर्वतका पार्श्व है।

राज्यारोहणके पहले नान्यदेवने एक सर्पकी फणि पर यह श्लोक देखा था, ऐसी दन्तकथा है—

"रामो वेत्ति नलो वेत्ति वेत्ति राजा पुरूरवाः ।
अलर्कस्य धन प्राप्य नान्यो राजा भविष्यति ॥"
(भारत १८।११३।१)

जो हो, उन्होंने सीतामढ़ी महकूमेके मानपुरमें अपनी राजधानी कायम की थी ।

इस वंशके छः राजाओंके राज्य करनेके वाद ही नान्यदेवकावंश लुप्त हुआ । नीचे उनके नाम और सन्की सूची दी जाती है:—

	नाम	सन्
१	नान्यदेव (नानादेव)	१०८६—११२५
२	गङ्गदेव	११२५—११३६
३	नरसिंहदेव	११३६—११६१
४	रामसिंहदेव	११६१—१२८३
५	शक्तिसिंहदेव	१२८३—१२९५
६	हरिसिंहदेव	१२९५—१३२४

१०११ शाकेसे इस राजवंशने १२४५ शाके तक अर्थात् सन् १०८६ ई०से १३२४ ई० तक कुल २३५ वर्ष राजत्व किया था । इसके वाद दूसरे राजा भवसिंह-वंशका उद्भव हुआ ।

सुलतान शमसुद्दीन आलतमसके राजत्वकाल-में वङ्गालके सूवेदार सुलतान गयासुद्दीनने तिरहुतराज नरसिंहदेवको पराजित कर उनसे कर वसूल किया था । इसका पता नहीं चलता, कि किस वर्षमें राजा नरसिंह देव मुसमानोंके अधीन हुए । किन्तु यह प्रायः सभी इतिहासके पढ़नेवाले जानते हैं, कि गयासुद्दीन सन् १२१२ से १२२७ ई० तक वङ्गालके सूवेदार थे । इसी अवधिमें किसी समय गयासुद्दीनने चढ़ाई की होगी ।

गयासुद्दीन तुगलक दिल्लीके सिंहासन पर बैठ कर सन् १३२४ ई०में वङ्गालके विद्रोही सूवेदार वहादुर खांके विरुद्ध ससैन्य सुवर्णग्रामकी ओर यात्रा की । वहादुर खाँको राजच्युत कर लौटते समय तिरहुत-राज्य पर उसने आक्रमण किया था । इस समय हरिदेवसिंह तिरहुत सिंहासन पर बैठे थे । फिरिस्तामें इनका नाम 'राय तिरहुत' लिखा है ।

हरिसिंहदेवकी पराजयके सम्बन्धमें वहांके ग्रन्थमें इस तरह लिखा है—

"वाणाब्धियुग्मशशिसम्मिते शाकवर्षे ।
पौषस्य शुक्लनवमी रविसूनुवारे ।
त्यक्त्वा सुपट्टनपुरीं हरिसिंहदेवो ।
दुर्दैवदेशितपथोत्थगिरिं विवेश ॥"

अर्थात् १२४५ शाके (१३२४ ई०)-में हरिसिंहदेव सुपट्टनपुरीको छोड़ कर पर्वतवासी हुए । उक्त वर्षसे ही मुसलमानोंका तिरहुत पर अधिकार मानना होगा । गयासुद्दीनने जङ्गल कटवा कर राजाको गिरफ़ार किया । इस समय तिरहुत एक अलग सूवेके रूपमें परिणत हुआ अहमद खांको इसका शासनकर्त्ता वनाया गया । जङ्गल काट कर वस्ती वसा दी गई । आइन-तिरहुतमें लिखा है, कि दरभङ्गा भी इसी तरह जङ्गल साफ करके वसाया गया था । इसके वाद २४ वर्षों तक यहांके शासनमें कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ ।

शायद मुसलमान शासनकी विशृङ्खलता तथा अराजकताके कारण ही राजा हरिसिंहदेवके सभापण्डित कामेश्वर झाने (यह मैथिल-ब्राह्मण थे) दिल्लीके वादशाह महम्मद तुगलकसे सन् १३८४ ई०में तिरहुतका पट्टा अपने नामसे लिखा लिया और अपने ज्येष्ठ पुत्र भवसिंहदेवको दे दिया । महाराज भवसिंहदेवने सन् १३४५से १३८५ ई० तक राज्य किया । इनके समयमें गौड़ाधिपति मालिक हाजी इलायस शमसुद्दीन वाङ्गड़ने हाजीपुरमें राजधानी कायम की ।

भवसिंहकी मृत्युके वाद उनके ज्येष्ठ पुत्र देवसिंह १३८५ से १४४६ ई० तक ६१ वर्ष राज्य कर परलोकगामी हुए । सकुरी ग्राममें उनका वनाया एक वड़ा तालाव विद्यमान है ।

शिवसिंह और पद्मसिंह नामके उनके दो लड़के थे । उनमें ज्येष्ठ पुत्र शिवसिंहने हो गद्दी पाई थी । परिहारपुर जब्दी परगनेके लहराराज ग्राममें उनकी अट्टालिका तथा किला जङ्गल और खण्डहरके रूपमें विद्यमान है । इस राज-अट्टालिकाके सामने एक कोस लम्बी दिग्गी खुदवाई गई थी ।

सन् १४४६से १४४९ ई० तक ३ वर्ष ९ मास राज्य भोग

कर उन्होंने परलोकगमन किया। उनके मरनेके बाद उनके छः पत्नियोंमें महारानी लक्ष्मीदेवी और महारानी विश्वास देवी यथाक्रम १४४९से लगायत १४६० तक ११ वर्ष और १४६०से १४७२ ई० तक १२ वर्ष राज्य किया।

विश्वासदेवीकी मृत्युके बाद देवसिंहके सौतेले भाई हरिसिंहदेवके पुत्र दर्पनारायण (नरसिंह)ने सन् १४७८ ई० तक ६ वर्ष राज्य किया। इसके बाद उनके ज्येष्ठ पुत्र हृदयनारायण (धीरनारायण) सन् १५१३ ई० ३५ वर्ष तक गद्दी पर बैठे। हृदयनारायणकी मृत्युके बाद उनके सहोदर हरिनारायण सन् १५२७ ई० तक निरापद राज्य भोग कर गौड़ाधिप नसरत शाहके साथ युद्धमें मारे गये।

नसरत खांने तिरहुत पर क्यों आक्रमण किया, इसके बारेमें इतिहास हमें यों बता रहा है—९०५ हिज़री (सन् १५९९)में दिल्लीके बादशाह अलाउद्दीन सिकन्दर शाह विहारको जीतनेके लिये आगे बढ़े। जब गौड़ाधिपतिने देखा, कि बादशाह विहारको जीतने चले, तब उन्होंने बादशाहको विहार, तिरहुत और सारण प्रदेश आप ही आप दे दिया। सन्धि हो गई, शिरकी बला टल गई। बाबर शाहने जब भारत पर आक्रमण किया था, तब मौका पा कर अपने खोये हुए स्थानोंको फिर लौटाने की चेष्टासे नसरत शाहने तिरहुत पर आक्रमण किया। उन्होंने युद्धमें हरिनारायणको मार कर अपने दामाद अलाउद्दीनको शासनकर्त्ता नियुक्त कर दिया।

इसके बाद रूपनारायण १५१२-१५४२ ई०से और उनका पुत्र कंसनारायण १५४२से १५४८ ई० तक अपने पैतृक सिंहासन पर बैठे थे सही; किन्तु यथार्थमें उस समय भी अलाउद्दीन ही तिरहुतके सूबेदार थे। वे केवल नाममात्रको राजा थे। विद्यापति ठाकुरने अपनी पदावलीमें इस राजवंशके कई राजाओंकी गुणावली वर्णन की है।

नीचे भवसिंहकी वंशावली दी जाती है—

कामेश्वर झा
|
भवसिंह
|
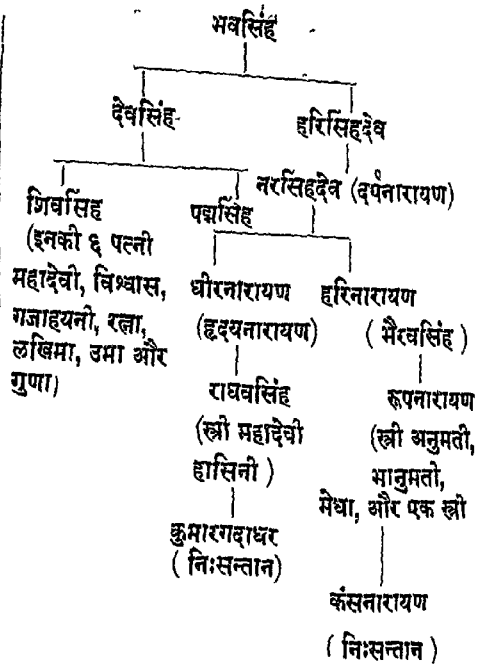
इस विषयमें पञ्जी नामक एक ग्रन्थमें बड़ा मतभेद दिखाई देता है, कि कामेश्वर झाके वंशके बाद तिरहुतका कौन वंश राजा हुआ? किसी मतसे राजा कंसनारायणके कायस्थ कर्मचारी मजुमदारने सन् ९५३ से ९५४ फसली तक राजत्व किया था और इसके बाद ९५५ से ९६३ फसली तक तिरहुतमें कोई राजा न था। अन्य पञ्जीकार कहते हैं, कि ९५६ फसली तक महाराज भवसिंहके वंशजों ने ही यहांका राज्य किया। इसके बाद महेशठाकुरके वंशके हाथ तिरहुतका राजत्व आया। दूसरे एक पञ्जीकारने लिखा है, कि ९५६ से ९५९ फसली तक ३ वर्ष मजलीस खांके हुकमसे यहांका राजकाज चलता रहा। ये जातिके मैथिल ब्राह्मण थे। सुलतानके दरबारसे इनको खाँकी उपाधि मिली थी। फिर एक पञ्जीकारने लिखा है, कि ९५६ से ९६५ फसली तक ९ वर्ष आठ मास ७ दिन विहौर राजपूतवंशने राजत्व किया था। इन पांच विहौर राजपूतोंके नाम नीचे लिखते हैं—

	नाम	राज्यकाल
१	वीरबल उर्फ रूपनारायण	७ महीना
२	उन्मादसिंह	११ महीना
३	खड्गसिंह	३ वर्ष २ महीना
४	कोशेश्वरसिंह	५ वर्ष
५	मन्मथसिंह	७ दिन

इसलिये यह देखा जा रहा है, कि कंसनारायणके बाद कायस्थ तथा मजलीस खां और बिहौर राजपूतोंका शासनकाल आरम्भ हुआ। सम्राट् अकबरशाहने इसी तिरहुतके कुछ अंशको महेशठाकुरके एक मैथिल ब्राह्मण छात्र (रघुनन्दनराय)को विद्याके पारितोषिक रूपमें दान किया था। फिर उस छात्रने इसे गुरुदक्षिणाके रूपमें महेश ठाकुरको दे दिया। महेश ठाकुरके पुत्र गोपाल ठाकुरने इस तिरहुत सम्पत्तिको किस तरह हस्तगत किया, इसका पूरा विवरण दरभङ्गा शब्दमे दिया गया है। दरभङ्गा देखो।

पूर्वोक्त मिथिलाजनपद आगे चल कर तिरहुत और दरभङ्गा-राजसरकारके अधिकारभुक्त हुआ था। विभिन्न वंशीय पठान और मुगल शासकोंके समयमें विभिन्न स्थानमें इसकी राजधानी कायम हुई थी।

किन्तु वह प्राचीन मिथिलापुरी कहां गई? कितनों हीका कहना है, कि मुजफ्फरपुर जिलेमें सीतामढीके १३ या १४ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित जनकपुर ग्राम ही मिथिलाराज जनकके नामानुसार मिथिलाके बदले रखा गया। यह नगर इस समय नेपालकी तराई और नेपाल-राज्यके अधीनमें है।

विलियम बोल्टस्-कृत सन् १७७१ ई०के बङ्गाल-मानचित्रमे उक्त जनकपुर ग्राम मघवान्, मोरावान, मोङ्गल या मोरङ्ग राज्यके अन्तर्गत दिखाई देता है। जनकपुरकी देवोत्तर सम्पत्तिके सम्बन्धमें वहां श्रीरामचन्द्रके मन्दिरके महन्तके पास दो दानपत्र दिखाई देते हैं, इनमें पहला मघवानपुरके राजा माणिक द्वारा सन् १७८४ संवत्में (१७२८ ई०) दिया गया था। गोरखा सैन्यने जब मघवानपुरके राजाको हरा कर तराई राज्यको अपना लिया तब गुरखाराज गीर्वाण विक्रमशाहने राजा माणिक सेनका दान स्वीकार कर सन् १८१२ ई०में दूसरा दान-पत्र प्रदान किया। गोरखाराज पृथ्वीनारायण शाहके पौत्र रणबहादुर शाहके औरससे गीर्वाण विक्रमका जन्म हुआ था।

मिथु (सं० अव्य) मिथ्या, असत्य।

मिथुन (सं० क्ली०) मेथतीति मिथ् (क्षुधिपिशिमिथः कित्। उण् ३।५५) इति उनन् किञ्चावादगुणाभावश्च। स्त्री और पुरुषका युग्म, स्त्री और पुरुषका जोड़ा।

"मा निषाद! प्रतिष्ठा त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौञ्च मिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥"
(रामायण १।२।१५)

पर्याय—द्वन्द्व, युगल। ३ संयोग, समागम।

४ मेषादि बारह राशियोंमेंसे तीसरी राशि। मृगशिरा नक्षत्रके शेषार्द्ध और समूचा आर्द्रा नक्षत्र तथा पुनर्वसु नक्षत्रके तृतीय पाद तक यही मिथुन राशि है। इसका अधिष्ठात्री देवता गदाधारी पुरुष और वीणा-धारिणी स्त्री है।

यह राशि शीर्षोदय, पश्चिम दिशाका स्वामी, वायु प्रकृतिकी, हरे रंगकी, वनमें रहनेवाली, शूद्रवर्णकी, स्निग्ध, मध्यम स्त्रीसङ्ग और मध्यम सन्तानकी है।

इस राशिमें जन्म लेनेवाला बालक क्षीण, सुरत-कुशल, ताम्रदृष्ट, शास्त्रार्थवेत्ता, दूतकर्म करनेवाला, कुञ्चितकेशविशिष्ट, हास्य, इशारावाज, जुआरी, मनोहर शरीर-सम्पन्न, प्रियभाषी या मधुर बोलनेवाला, अत्यन्त भोजन करनेवाला, गीत गाने (नृत्यगान)में पटु और ऊंची नाकवाला होता है।

कोष्ठीप्रदीपके मतसे मिथुनराशिमें जन्म होनेसे बालक मृदुगतिका, परोपकारी, मलिन स्वभावका, मलिन वेशधारी और वातश्लेष्मयुक्त होता है तथा गीतवाद्यमें उसकी विशेष अनुरक्ति रहती है।

४ मेषादि १२ लग्नोंमेंसे तीसरा लग्न। अयनांशशोधित लग्नमान ५।२८।२० है। यह मान कलकत्तेके निकट-वर्ती स्थानोंका समझना चाहिये। इस लग्नका होरा २।४४।२०, द्रेक्काण १।४६।२६।४०; नवांश ०।३६।२८। ५३।२०, द्वादशांश ०।२६।२१।४०, त्रिंशांश ०।१३।४६।४० है।

इस लग्नमें जन्म लेनेवाला बालक मधुरभाषी, काम करनेवाला, मिलनसार स्वभावका, अल्प मतिमान्, गुरु और साधुओंके पूजक, अल्प सहोदर और अल्प नेत्रान्वित, शत्रुमर्द नकारी, गुणी, धर्मसाधक, अनेक कर्म एक साथ करनेवाला, सर्वदा रोगयुक्त रहनेवाला होता है। इस लग्नमें पैदा होनेवाला बालक मनुष्य, सर्प, विष, मृग या जलसे मरता है।

राशि और लग्नमें जो बलवान् है, उसीके अनुसार फल-गणना होती है।

रवि आदि ग्रहोंके मिथुन राशिमें रहनेसे नीचे लिखे अनुसार फल होता है। मिथुनराशिमें रवि रहनेसे मेधावी, मधुरभाषी, वात्सल्यगुणवाला, वेदाचार-परायण, विज्ञानवेत्ता, धनवान्, उदार, निपुण, ज्योतिर्वेत्ता, सौभाग्यसम्पन्न और नम्र होता है।

यह रवि यदि चन्द्रसे दिखाई देता हो, तो रिपु और बान्धव द्वारा पीड़ित, विदेश-यात्रामें पीड़ित और बहुत विलापयुक्त होता है। यदि मङ्गल देखता हो, तो उसे सदा शत्रुभय लगा रहता है और वह झगड़ेमें रहता तथा दरिद्र और लज्जावान् होता है। बुधके देखने पर राजाकी तरह विख्यात, शत्रु-रहित, वान्धवयुक्त और ज्ञानवृद्ध हुआ करता है। वृहस्पतिके देखने पर शास्त्रदर्शी, सुखी, राजासे आदर पानेवाला, विदेश जानेवाला,स्वस्थ और सर्वदा उत्साह सम्पन्न रहता है। शुक्रके देखने पर धन, स्त्री और पुत्रवान्, अल्प स्नेहवाला, रोगहीन, सौभाग्यशाली और चंचल हुआ करता है। शनिके देखनेसे बहुतेरे नौकर रखनेवाला, उद्विग्नचित्त, सर्वदा खिन्न और धूर्त्त हुआ करता है।

मिथुन राशिमें चन्द्र रहनेसे सर्वदा सन्तुष्ट, शृङ्गार और काव्यकलाभिज्ञ, विषयसुखभोगी, शिरायुक्त, सौभाग्यशाली, हंसमुख और मधुरभाषी, स्त्रीजित और द्वैमातृक हुआ करता है। इस चन्द्रको यदि रवि देखता हो, तो वह प्राज्ञ, धनहीन, रूपवान्, धार्मिक और दुःखी होता है। मङ्गल यदि देखता हो, तो वह अतिशय शूर वीर, अतिप्राज्ञ, सुखी, वाहनयुक्त और विभव सम्पन्न होता है। बुध यदि देखता हो, तो अर्थ उपार्जन करनेमें कुशल, अपराजित और धीरवान होता है। वृहस्पति यदि देखता हो तो विद्या और शास्त्रमें गुरु, विख्यात, सच बोलनेवाला, रूपवान्, मान्य और वक्ता होता है। यदि शुक्र देखता हो, तो सदा उत्तम युवती, माल्य, वस्त्र उत्तम वाहन और भूषणादि द्वारा अलंकृत रहता है। शनि द्वारा देखने पर मित्रहीन, दरिद्र और लोकद्वेष्टा होता है।

मिथुनराशिमें यदि बुध हो तो सुन्दर वेशधारी, मधुरभाषी, मतिमान्, श्लाघान्वित, मानी, विख्यात, सुखी, घोड़ेकी तरह खिलाड़ी, स्त्रीपुत्रके साथ विवाद करनेवाला, कवि काव्यकुशल, बहुकर्मशील और बहुतेरे मित्रोंका मित्र होता है। बुध मिथुनका अपना घर है इसीलिये यहां शुभ फलदायी हुआ करता है।

इस बुधको यदि रवि देखता हो, तो सत्य बोलनेवाला, न्यायी, मीठा वचन बोलनेवाला, वाचाल, राजवल्लभ, प्रभु, सुन्दर चेष्टा करनेवाला और दयावान् होता है। चन्द्रके देखनेसे सुन्दर, मीठा वचन बोलनेवाला, बकवादी, शत्रुवत्सल, लम्बा चौड़ा जवान और सब कामोंमें माङ्गलिक होता है। मङ्गलके देखने पर शरीरमें फोड़े (क्षत), मलिन देह, प्रतिभा-सम्पन्न, राजाका नौकर और प्रियतर होता है। वृहस्पतिके देखने पर राजाका मन्त्री, उत्तम रूपवान्, उदार स्वभाव, विभव सम्पन्न और शूर होता है। शुक्रके देखने पर पण्डित, राजाका नौकर, नृत्यगानरत होता है। शनिके देखने पर सदा बुद्धिमान्, विनीत और अपने आरम्भ किये कामोंमें सफलता प्राप्त करता है।

मिथुन राशिमें वृहस्पतिके रहनेसे अन्याय उपायसे धनका सञ्चय करनेवाला, विज्ञ, वाग्मी, सुन्दर कार्य करनेवाला, गुरु और भाइयोंका मान्य लब्ध प्रतिष्ठ, सच्चे कवि और उत्तम पुरुष हुआ करता है।

इस वृहस्पतिको यदि रवि देखता हो, तो उत्तम ग्रामोंमें वह प्रधान, बहुत कुटुम्बवाला, पुत्रदारा और अधिक धनसम्पन्न हुआ करता है। चन्द्रके देखनेसे धनवान, मातृवत्सल, सुकीर्तिसम्पन्न, सुखी और व्यय हीन हुआ करता है। यदि मङ्गल देखता हो, तो वह क्षतरहित शरीर, धनी और लोकपूजित होता है। यदि बुध देखता हो, तो वह ज्योर्विद्, बहुत पुत्रवाला, विरूपवाक्य-सम्पन्न होता है। शुक्रके देखने पर वह देवमन्दिरका कार्य करनेवाला होता, वेश्यासक्त और स्त्रियोंके प्रियभाजन बनता है, शनिके देखने पर वह ग्राम और नगरका अधिपति और प्रधान होता है।

मिथुन राशिमें शुक्र रहनेसे विज्ञानकला और शास्त्रमें प्रखर बुद्धिवाला, अत्यन्त विख्यात, वाचाल, नृत्यगीतादिमें कुशल, मित्रवान्, देवद्विजानुरक्त और उत्तम वाक्य बोलनेवाला होता है।

इस शुक्रको यदि रवि देखता हो, तो राजाकी तरह पुत्रवान्, पतित धनसे धनवान् और सुखी होता है। चन्द्रके देखनेसे काली आखवाला, सुन्दर बालवाला, कम नीय मूर्त्ति, अत्यन्त मृदुस्वभावका और उत्तम भाग्यवाला होता है। मङ्गलके देखनेसे अतिशय कामी और स्त्रियोंके पीछे द्रव्य नष्ट करनेवाला होता है। बुधके देखनेसे पंडित, मधुरभाषी, धनवान्, उत्तम भाग्यवान् और मालिक हो कर रहता है। बृहस्पतिके देखनेसे अत्यन्त दुःखी और प्राज्ञ या आचार्य होता है। शनिके देखनेसे दुःखी, चचल और मूर्ख होता है। उसका सारा धन दुष्ट हरण कर लेते हैं। मिथुन राशिमें शनिके रहने पर बन्धन-युक्त, परिश्रमी, दाम्भिक, शिल्प जाननेवाला और वाक् पटु हुआ करता है।

इस शनिको यदि रवि देखता हो, तो वह सुखविहीन, अत्यन्त प्रधान, धार्मिक, क्लेश सहनेवाला और धीरवान् होता है। चन्द्रके देखनेसे वह राजा जैसा शरीरवाला, और स्त्री धन द्वारा धनवान् होता है। मङ्गलके देखनेसे विख्यात्, मूर्ख, बोझ ढोनेवाला और निर्द्धन होता है। वृहस्पतिके देखनेसे राजकुलका विश्वासी, सर्वगुणयुक्त, और साधुजनोंका वाछनीय होता है। शुक्रके देखनेसे स्त्रियोंका प्रिय और उसे स्त्रियोंसे धनागम होता है।

(बृहज्जातक)

ऊपर लिखे फल ग्रहोंके नैसर्गिक फल हैं। ग्रहगण बालकके जिस भावमें रहते हैं उसके तथा अन्यान्य ग्रहोंकी स्थिति आदिके विचारसे फलका निश्चय किया जाता है। नामकरणकी जगह खनाके नियमानुसार 'क' 'छ' ये दो अक्षर नामके आद्यक्षर होंगे। ज्योतिर्गन्थमें शतपद-चक्रानुसारसे ही नामकरणकी व्यवस्था देखी जाती है।

मिथुनत्व (सं० क्ली०) मिथुनका भाव।

मिथुनभाव (सं० पु०) मिथुनावस्था।

मिथुनव्रतिन् (सं० त्रि०) मैथुनव्रताचारी।

मिथुनाभाव (सं० पु०) सद्भावावस्था।

मिथुनेचर (सं० त्रि०) स्त्री-पुरुषमें वासकारी।

मिथुया (सं० अव्य०) मिथ्या-भूत, मिथ्यास्वरूप।

मिथुस् (सं० अव्य०) अन्योन्य, परस्पर।

मिथूनदृश् (सं० त्रि०) आपसमें मिलना।

मिथो (सं० अव्य०) मिथुस्, परस्पर।

मिथोयोध (सं० पु०) आपसमें लड़नेवाला।

मिथ्या (सं० अव्य०) मथ-विलोडने मथते अथवा मेथते हिनस्तोति मथा-क्यप् निपातनात् सिद्धम्। असत्य, झूठ। इसका पर्याय—मृषा, वितथ, अनृत।

(शब्दरत्नाकर)

"यदसद्भासन तन्मिथ्या, स्वप्नगजादिवत्।"

(साख्यप्र० भाष्यधृत)

पुराण ग्रन्थोंमें मिथ्याको अधर्मकी पत्नी कहा गया है। ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके प्रकृतिखण्डमें लिखा है,—अधर्मकी पत्नी मिथ्या धूर्त्तों द्वारा पूजित होती है। सत्ययुगमें इसका रूप किसीको दिखाई नही देता था। त्रेतायुगमें यह अतीव सूक्ष्म अवयवमें दिखाई देती थी। द्वापरमें भी इसका सारा शरीर दिखाई नही दिया था। उस समय भी धर्मके डरसे इसका अर्द्ध शरीर प्रकट हुआ था। किन्तु कलिकालके समागम होते ही इसकी विश्वव्यापी मूर्त्ति प्रकाशमान हुई। कलिके कल्याणके लिये यह सर्वत्र विद्यमान है। मिथ्याका भाई कपट है। मिथ्या अपने सहधर्मी भाईके साथ घर-घर (सर्वत्र) घूमती है।*

कल्किपुराणमें लिखा है,—अधर्मकी प्रियतमा पत्नी मिथ्या है। मिथ्याकी आँखें बिल्लीकी तरह पीली पीली होती हैं। अत्यन्त तेजस्वी मिथ्याका पुत्र दम्भ है। दम्भने अपनी बहन मायाके गर्भसे लोभ नामका पुत्र और निकृति नामकी एक कन्या पैदा की। इसी लोभसे बहन निकृतिके गर्भसे श्रीमान् क्रोधका आविर्भाव हुआ †

* 'अधर्मपत्नी मिथ्या सा सर्वधूर्त्तैश्च पूजिता।
यया विना जगत्सृष्टमुच्छन्नं विधिनिर्मितम्॥
सत्ये चादर्शना या च त्रेताया सूक्ष्मरूपिणी।
अर्द्धावयवरूपा च द्वापरे स वृता भिया॥
कलौ महाप्रमत्ता च सर्वत्र व्यापिका बलात्।
कपटेन समं भ्रात्रा भ्रमत्येव गृहे गृहे॥"

(ब्रह्मवैवर्त्तपु० प्र०ख० १ अ०)

† "अधर्मस्य प्रिया रम्या मिथ्या मार्जारलोचना।
तस्याः पुत्रोऽतितेजस्वी दम्भः परमकोपनः॥
स मायायां भगिन्यान्तु लोभं पुत्रञ्च कन्यकाम्।
निकृतिं जनयामास तयोः क्रोधः सुतोऽभवत्॥"

(कल्किपु० १ अ०)

मिथ्या व्यवहार या असत्य भाषण बड़ा ही दोषा वह है। उन्नतचेता और उदार चरित्रवाला साधुजन प्राण जाते समय भी झूठ नहीं बोलते। जिनका अन्तःकरण अति क्षुद्र है वही दुर्बल अन्तःकरण नीचाशय मनुष्य अपनी झूठी ख्याति तथा अपनी स्वार्थसिद्धिके लिये पद पद पर झूठ बोला करते हैं। और तो क्या, अपनी स्वार्थ-सिद्धिके लिये दूसरेका गला भी कट जाय, तो भी वे झूठ बोलनेसे वाज नहीं आते।

हमारे सभी धर्मशास्त्रोंमें मिथ्या व्यवहारकी निंदा की गई है। यदि दैवात् कभी झूठ बोल दिया, तो उस-के लिये प्रायश्चित्तका विधान है। फलतः किसी भी सम्प्रदायके धर्म वा नैतिक शिक्षामें झूठका प्रसार नहीं है। मिथ्या साधुसमाजके लिये गर्हित और धर्मपथकी बाधक है।

विष्णुपुराणमें लिखा है—यदि भूलसे एक बार झूठ कहा गया, तो श्रीकृष्ण नामके स्मरणसे ही उस पापका प्रायश्चित्त हो जाता है।

"कृते पापेऽनुतापो वै यस्य पुंसः प्रजायते।
प्रायश्चित्तन्तु तस्यैक कृष्णानुस्मरणं परम् ॥"
(विष्णु पु०)

विष्णुसंहितामें लिखा है—निन्दित प्रतिग्रह, वाणिज्य, कुसीदवृत्ति, असत्यभाषण और शूद्रसेवन आदि पापोंकी तप्तकृच्छ्र द्वारा शुद्धि करनी चाहिये। "निन्दि-तेभ्यो धनादानं वाणिज्यं कुसीदजीवनं। असत्यभाषणं शूद्रसेवनमिथ्यापात्रीकरणं कृत्य तप्तकृच्छ्रेण शुद्ध्यति।" (विष्णु पुराण) मनु भगवान्के अनुसार झूठ बोलने पर चन्द्रायणव्रत करना चाहिये।

"सङ्करापात्रकृत्यासु मास शोधनमैन्दवम्।" (मनु ११)

चारों वर्णोंके प्राणदण्डके विषयमें गवाही देते समय झूठ बोलनेका कठोर प्रायश्चित्त नहीं होता। याज्ञवल्क्यने इसके सम्बन्धमें एक छोटे दण्डकी व्यवस्था बतलाई है।

"वर्णिना हि वधो यत्र तत्र साक्ष्येऽनृत वदेत्।
तत्पावनाय निर्वाप्यश्चरुः सारस्वतो द्विजैः ॥"
(याज्ञवल्क्यसं०)

हारीतके मतसे सोम विक्रय, कन्याविवाह, भय, मैथुन, पालक-हत्या और गोब्राह्मणकी रक्षाके लिये यदि झूठ बोला जाय तो दोषावह नहीं होता।

यमने भी कहा है—नर्म बातें, मैथुन, स्त्रियोंके साथ रहस्य, प्राणविनाश और सर्वस्व अपहरण—इन पांच जगहोंमें झूठ बोलनेसे पाप नहीं होता।

"न नर्मयुक्त वचन हिनस्ति न स्वैरवाक्यं न च मैथुनार्थे।
प्राणात्यये सर्वधनापहारे पञ्चानृतान्याहुरपातकानि ॥"
(प्रायश्चित्तविवेकधृत यमव०)

आधुनिक युगमें भी परस्परके व्यवहारमें झूठ बोलने-से महा अनर्थ उपस्थित होता है। झूठेका कोई विश्वास नहीं करता। जो झूठ बोलता है, उससे कोई भी सात्त्विक व्यवहार नहीं रखता।

मिथ्याकर्म (सं० क्ली०) असत् कार्य।

मिथ्याकोप (सं० पु०) वृथा क्रोध।

मिथ्याक्रय (सं० पु०) वृथा खरीदना।

मिथ्याचर्या (सं० स्त्री०) मिथ्या व्यवहार, मूढ़ या कपट-पूर्ण व्यवहार।

मिथ्याचार (सं० पु०) मिथ्या आचारो यस्य। कपटा-चार, कपटपूर्ण आचरण। २ दाम्भिक, वह जो कपट-पूर्ण आचरण करता हो। जो व्यक्ति सभी कर्मेन्द्रियों को संयत कर मन ही मन समस्त इन्द्रियोंका स्मरण वा भावना करता है, भगवत्गीतामें वैसे मूढ़ व्यक्तिको भी मिथ्याचार कहा है।

"कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरण।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥"
(गीता ३ अ०)

मिथ्याजल्पित (सं० क्ली०) वृथा जल्पना।

मिथ्याज्ञान (सं० क्ली०) असत्य बोध, भ्रान्ति।

मिथ्यात्व (सं० क्ली०) १ मिथ्या होनेका भाव। २ माया। ३ जैनोंके अनुसार अठारह दोषोंमेंसे एक।

मिथ्यात्विन् (सं० त्रि०) मायाच्छन्न।

मिथ्यादर्शन (सं० क्ली०) १ भूल देखना। २ भ्रान्त-मय। ३ वह दर्शन जिसमें झूठी बात लिखी गई है।

मिथ्यादृष्टि (सं० स्त्री०) मिथ्या च सा दृष्टिश्चेति कर्मधा०। कर्मफलापवादक ज्ञान, नास्तिकता।

मिथ्याध्यवसिति (सं० स्त्री०) मिथ्या असत्या च सा अध्यवसितिश्चेति। १ मिथ्या अध्यवसाय। २ असत् उत्साह। ३ एक अर्थालङ्कार। इसमें कोई एक

असंभव मिथ्या वात निश्चित करके तव कोई दूसरी वात कही जाती है और इस प्रकार वह दूसरी वात भी मिथ्या हो जाती है।

मिथ्यानिरसन (सं० क्ली०) मिथ्या असत्यं निरस्यतेऽनेनेति निर अस-करणे ल्युट्। शपथ पूर्वक किसी सच्ची वातका अस्वीकार करना।

मिथ्यापण्डित (सं० पु०) वह जो कुछ न जानता हो और झूठ मूठ पण्डित वनता हो।

मिथ्यापुरुष (सं० पु०) १ छायापुरुष, वह पुरुष जिसके प्रकृत स्वत्त्वा नहीं है।

मिथ्याप्रतिज्ञ (सं० त्रि०) मिथ्या-शपथकारी, अविश्वासी।

मिथ्याप्रवादिन् (सं० त्रि०) मिथ्यावादी, झूठ वोलनेवाला

मिथ्याप्रवृत्ति (सं० स्त्री०) असत् इच्छा, वृथा कार्यमें अनुराग।

मिथ्याफल (सं० क्ली०) काल्पनिक फल, मिथ्या पुरस्कार।

मिथ्याभिधान (सं० क्ली०) झूठ कहना।

मिथ्याभियोग (सं० क्ली०) मिथ्या असत्यमभियोगः। मिथ्यापवाद, किसी पर झूठ मूठ अभियोग लगाना। पर्याय—अभ्याख्यान।

मिथ्याभिशंसन (सं० क्ली०) मिथ्या असत्यस्य अभिशंसन कथनम्। मिथ्या कथावार, किसी पर झूठ मूठ कलंक लगाना। पर्याय—अभिशाप।

मिथ्याभिशस्ति (सं० क्ली०) मिथ्या अभियोग।

मिथ्याभिशाप (सं० पु०) मिथ्या अभिशापः। मिथ्यावाद। भाद्रमासकी शुक्ला चतुर्थीकी रातको चन्द्रदर्शन नही करना चाहिये. करनेसे अपवादग्रस्त यानी कलंकित होना पडता है।

"शुक्लपक्षे चतुर्थ्यान्तु सिंहे चन्द्रस्य दर्शनम्।
मिथ्याभिशाप कुरुते न पश्येत्तत्र त ततः॥"

(तिथ्यादितत्त्वधृत भोजराज)

मिथ्यामति (सं० स्त्री०) मिथ्या चासौ मतिश्चेति। १ भ्रान्ति, भूल। २ असत्य बुद्धि।

मिथ्यामान (सं० पु०) वृथा सम्मान।

मिथ्यायोग (सं० पु०) चरकके अनुसार वह कार्य जो रूप, रस या प्रकृति आदिके विरुद्ध हो। जैसे मल, मूत्र आदिको वेग रोकना शरीरका मिथ्यायोग है, कठोर वचन आदि कहना वाणीका मिथ्यायोग है, तीव्र गन्ध आदि सूंघना और भीषण शब्द आदि सुनना घ्राण और श्रवणका मिथ्यायोग है। (चरकसू० ११ अ०)

मिथ्यावाक्य (सं० क्ली०) मिथ्यावाद, झूठी वात।

मिथ्यावाच् (सं० त्रि०) मिथ्यावादी, झूठा।

मिथ्यावाद (सं० पु०) झूठी वात।

मिथ्यावादिन् (सं० त्रि०) असत्यवादी, झूठ वोलनेवाला।

मिथ्याविहार (सं० क्ली०) १ वृथा अटन, फिजूल इधर उधर घूमना। २ कुव्यवहार।

मिथ्याव्याहार (सं० पु०) २ असत् कार्य। २ अनधिकार चर्चा, किसी विषयको न जानते हुए भी उसमें दखल देना।

मिथ्यासाक्षिन् (सं० त्रि०) मिथ्याभाषी साक्षी, झूठी गवाही देनेवाला।

"उक्तेऽपि साक्षिभिः साक्ष्ये यदन्ये गुणवत्तमाः।
द्विगुणा वान्यथा ब्रूयुः कूटाः स्युः पूर्वसाक्षिणः॥"

(याज्ञवल्क्य)

मिताक्षरामें लिखा है,—पातकी, महापातकी, अग्निदायी तथा स्त्री और वालक-घातियोंकी जिस लोकमें गति होती है, मिथ्या या कूटसाक्षी देनेवाले भी उसी लोकको प्राप्त होते हैं। उन्होंने जन्मजन्मान्तरमें जो पुण्यसञ्चय किया था वह उसी व्यक्तिका हो जाता है जिसके विरुद्ध उन्होंने झूठी गवाही दी है।

"ये पातककृता लोका महापातकिना तथा।
अग्निदानाञ्च ये लोका ये च स्त्रीवालघातिना॥
एतान् सर्वानवाप्नोति यः साक्ष्यमनृत वदेत्।
सुकृत यत्त्वया किञ्चित् जन्मान्तरशतैः कृतम्॥
तत्सर्वं तस्य जानीहि य पराजयसेमृषा॥" (मिताक्षरा)

मिथ्याहार (सं० पु०) अनुचित या प्रकृतिके विरुद्ध भोजन करना।

मिथ्योत्तर (सं० क्ली०) मिथ्या असत्यमुत्तरम्। चार प्रकारके उत्तरोंमेंसे एक प्रकारका उत्तर। इसका लक्षण—अभियुक्त व्यक्ति यदि अभियोग-विवरणको छिपा रखे, तो उसे मिथ्योत्तर कहना चाहिये।

"अभियुक्तोऽभियोगस्य यदि कुर्य्यादपह्नवम् ।
मिथ्या तन्तु विजानीयादुत्तरं व्यवहारतः ॥" (नारद)

चार प्रकारके उत्तर ये हैं—१ला जो सरासर झूठ है, २रा मैं यह नहीं जानता, ३रा मैं वहां उपस्थित नहीं था और ४था उस समय मेरा जन्म भी नहीं हुआ था।

"मिथ्यैतन्नाभिजानामि मम तत्र न सन्निधिः ।
अजातश्चास्मि तत्काले इति मिथ्या चतुर्विधम् ॥"
(व्यवहारतत्त्व)

मिथ्योपचार (सं० पु०) प्रवातादि-सेवनरूप अनुचित आचार ।

मिदिया—एशियाखण्डका एक प्राचीन साम्राज्य (Media) वेदमें इस स्थानको उत्तर-मद्र लिखा है। यह देश दो भागोंमें विभक्त है। १ बड़ा मेडिया और २ मेडिया अत्रोप-टीन। पहला भूभाग एशियामें स्वास्थ्य और उर्वरताके लिये प्रसिद्ध था। ताइग्रिस और यूफ्रेटिस नदियां इसी भूभागसे होती हुई बहती है तथा जाग्रस् और परच्छत्र पर्वत इसके बीचमें मौजूद है। पर्यटकगण आज भी मिदियाका मनमोहन प्राकृतिक सौन्दर्य देख मुग्ध होते रहते हैं और चार हजार वर्ष पहलेकी मिदियाका प्राचीन गौरव हृदयङ्गम करते हैं। इस साम्राज्यके पूर्व ओर कास्पियन पर्वत और बीचमें एशियाकी मरुभूमि, उत्तर और पश्चिम-कादुसाई पर्वत, अत्रोपतीन् और मटिनी, दक्षिण जाग्रस् और परच्छत्र पहाड़ियां विद्यमान थीं। अतएव वर्त्तमान इराक प्रदेशका कुछ अंश इसमें आ जाता है। इस समय यह वर्त्तमान फारस राज्यकी सीमाके अन्तर्गत है।

एकवतना या अग्रवतना मिदिया राज्यकी राजधानी थी। पीछे यह फारसके राजाओंकी हवाखोरीका स्थान बन गया। वाजिस्थान भी इसका प्रधान नगर था। मिदियाके अधिवासियोंने ईसाके दो हजार वर्ष पहले बावेरुया बाबिलन पर आक्रमण किया था। आक्रमण ही क्यों, अधिकार भी उन्होंने उसी समय कर लिया। इसी विजयके उपलक्ष्यमें मिदियाकी महारानी सेमिरानीने एकवतना नगरमें इन्द्रके नन्दनकाननकी तरह एक प्रमोदोद्यान बनवाया था।

मर्द (मद्र) जाति ही मिदियाकी आदि अधिवासी है। प्रत्नतत्त्वविद् पण्डितोंका कहना है, कि भारतीय पञ्जाब और सिन्धुप्रदेशकी प्राचीन मद्रजाति मिदिया जातिकी अवान्तर शाखामात्र है। कुरुक्षेत्रके मैदानमें युद्धके समय युधिष्ठिरके मामा शल्य मद्रदेशके राजा थे। मद्र-राजकन्या माद्रीके साथ राजा पाण्डुका विवाह हुआ था। किन्तु यह मद्रदेश विराट्‌देश और पाण्ड्यदेशके बीचमें अवस्थित था। यह भी निश्चयरूपसे नहीं कहा जा सकता, कि इसी भारतीय मद्रजातिने एशियाखण्डमें आ कर मिदिया राज्यकी स्थापना की या मिदियावासियोंने भारतमें आ कर मद्रराज्यकी स्थापना की। फिर इसके बहुत प्रमाण हैं, कि कुरुक्षेत्रके युद्धके बाद मिदगण प्रबल पराक्रान्त हो उठे थे और इन्होंने बवेरु या बाबिलन और आसुर या आसिरीय राज्यका ध्वंसावशेष पर ही मिदियाराज्य स्थापित किया. मिदियावासियोंके अद्भुत पराक्रमके फलसे ही आसुर और बवेरूका ध्वंस हुआ।

ईसाके ३००० हजार वर्ष पहले मिदियावासियोंके बवेरू जीत कर २२४ वर्ष राज्य करनेके बाद आसुरियोंने नाइनासकी अधीनतामें फिर मिदिया पर आक्रमण किया। नाइनासने मिदियाको जीत कर उसकी रानी उन्नेश राजाकी पत्नी सम्राज्ञी सेमिरानीसे विवाह किया। इसके बाद सेमिरानीने विधवा होने पर भी बहुत दिनों तक राज्य किया। उन्होंने यूफ्रेटिस नदीके किनारे बावेरूनगरकी स्थापना की। उनका स्थापित किया हुआ सेमिराणगढ़ आज भी फारिसमें विद्यमान है।

इसका वंश १२०० वर्ष तक मिदिया राज्यमें कायम रहा। इसके बाद ईसाके पहले ६ शताब्दीके अन्तमें मिदियावासियोंने बलसञ्चय किया। इन्होंने हजार वर्षसे अधिक समय तक गुलामीका दुःख झेलनेके बाद ईसाके ८७६ वर्ष पहले बावेरू पर अधिकार कर उसे मिदियामें मिला लिया और वहांके राजासे कर वसूल किया। इसके बाद ईसाके ६०६ वर्ष पहले मिदिया-वासियोंने बाबिलन पर आक्रमण कर उसकी राजधानी निनेभ नगरका विध्वंस किया। इसी समयसे आसुरी साम्राज्यका लोप हुआ।

एक सौ वर्ष राज्य करनेके बाद फारसके राजा कैरासने ईसाके ५६१ वर्ष पूर्व मिदिया पर अधिकार किया।

प्राचीन मिद्गण ६ जातियोंमें विभक्त थे। उनमें मद्-गण वर्णगुरु समझे जाते थे। इनका दूसरा नाम आर्य या आरिया (Aria) है। यूनानके ऐतिहासिक हिरोदोतसके मतसे इन चार राजाओंने मिदियाका पीछले समयमें राज्य किया था,—

१ दायूसिस (७१०-६५७ ईसाके पूर्व) इन्होंने ५३ वर्ष तक राज्य किया।

२ फ्रवर्त्तीस (६५७-६५३ ईसासे पूर्व) इन्होंने २२ वर्ष तक राज्य किया। इनके समयमें मिदियाने चरम सोमाकी उन्नति की थी।

३ सियाकजेरास (६३५-५९५ ईसासे पूर्व) इन्होंने ४० वर्ष तक राज्य किया। इन्होंने अपने समयमें युद्ध-विद्याकी बडी उन्नति की थी। इन्होंने निनेभ नगर पर आक्रमण किया था, किन्तु वे पराजित हुए। इन्होंने सिंहासनच्युत हो कर २८ वर्ष तक अज्ञातवास किया था। फिर बलसञ्चय कर शत्रुओंको अपने देशसे भगाया और सिंहासनारोहण किया था।

४ अग्यादजेस (अस्त्याग) (५९५-५६० ईसासे पूर्व) इन्होंने ३५ राज्य किया। पीछे इनके नातीने इनको सिंहासन-च्युत कर मिदियाको फारसमें मिला लिया। यह घटना ईसासे ५५१ वर्ष पहलेकी है। ये फारसके राजा थे, फरैस इनका नाम था।

ईसाके ४०८ वर्ष पहले कैरसके पुत्र द्वितीय दरायुस-की अधीनताको अस्वीकार कर मिदियावासी विद्रोही हुए। किन्तु दुर्भाग्यवश ये पराजित हो फिर अधीनतापाशमें जकड़ दिये गये। इसी समयसे मिदियाकी स्वतन्त्रता सर्वदाके लिये पृथ्वीपृष्ठसे अन्तर्हित हो गई।

एकवतना-नगरका शिलालेख आज भी दरायुसकी विजय-कहानीका साक्ष्य दे रहा है। सुप्रसिद्ध प्राचीन इतिहास-संग्रहकर्त्ता कर्नल रविन्सनने उक्त शिलालेखोंका अनुवाद करा कर एशियाटिक सोसाइटीके १०वें भागमें प्रकाशित कराया है।

मिदियाके आर्कमिदवंशी राजोंने एक समय अट-लाण्टिकसे भारत महासागर और उत्तर ध्रुवसे सहारा भूमि तक अपना प्राधान्य फैलाया था। अति प्राचीन देश मिस्र भी इनके ही हाथ आया था। किन्तु इस समय शिलालेखों तथा इतिहासके पन्नोंके सिवा पृथ्वीमें उस जातिका चिह्न कहीं दिखाई नहीं देता।

मिद्ध (सं० क्ली०) १ आलस्य। २ निद्रालुता, निद्रा-शीलता। ३ जडता, मूर्खता।

मिनती (अ० स्त्री०) विनति देखो।

मिनती (हिं० पु०) मक्खीकी बोलीके समान कुछ नाकसे निकला हुआ स्वर।

मिनमिन (हिं० वि०) मक्खीकी भनभनाहटके रूपमें, कुछ नाकसे निकले धीमे स्वरमें।

मिनमिना (हिं० वि०) १ मिनमिन शब्द करनेवाला, नाक-से स्वर निकाल कर धीमे बोलनेवाला। २ थोडी-सी बात पर कुढ़नेवाला। ३ सुस्त, मट्ठर।

मिनमिनाना (हिं० क्रि०) १ मिन् मिन् शब्द करना, नाकसे बोलना। २ कोई काम बहुत धीरे धीरे करना, बहुत सुस्तीसे काम करना।

मिनवाल (अ० पु०) करघेमेंका वह बेलन जिस पर बुना हुआ कपडा लपेटा जाता है और जो बुननेवालेके ठीक आगे रहता है।

मिनहा (अ० वि०) जो काट या घटा लिया गया हो, मुजरा किया हुआ।

मिनाकोपी—अण्डमनद्वीपकी रहनेवाली जातिविशेष। समग्र सुसभ्य जातिके विदित भूभागोंमें कहीं भी ऐसी वन्यजातिका नमूना दिखाई नहीं देता। यथार्थमें यदि कहें, तो कह सकते हैं, कि यह जाति प्रकृतिकी सुन्दर गोदमें विश्राम कर रही है। सभ्यताके कोमल प्रकाशने आज भी मानो इस जातिको स्पर्श तक नहीं किया है। मनुष्य जातिमें इस तरहकी निकृष्ट और हेय अवस्था और किसीकी दिखाई नहीं देती। शबरादि पर्णधारी नीच जाति इसकी अपेक्षा कुछ अंशोंमें श्रेष्ठ है।

इसके रहनेके लिये घर नहीं। वृष्टि और रौद्रसे बचनेके लिये कोई उपाय नहीं। लज्जा रक्षाके लिये कोई वस्त्र नहीं। नरनारी दोनों ही वनमें छिपे पशुओंकी तरह नङ्गे विचरण करते हैं। एक दूसरेको देख कर नहीं लजाते। सिवा [illegible] अपने व्यवहारोपयोगी किसी तरहका शिल्प नहीं जानते। और तो क्या, [illegible]

पीतल आदि धातुसे भोजनोपयोगी बरतन तथा लकड़ी आदि काटनेका हथियार बनाना भी नहीं जानते।

किस युगमें इस समुद्रके किनारे वनमें आ कर इन्होंने आश्रय लिया है, उसका निर्णय करना कठिन है। इनकी काली सूरत और कठोर प्रकृति देखनेसे अनुमान होता है, कि ये इस द्वीपकी उत्पत्तिके साथ साथ यहां आये हैं। इस बातकी मीमांसा अत्यन्त सरल नहीं है। इस नीलाम्बुराशि परिवेष्टित बङ्गोपसागरमें इस तरहकी वन्य जातिका रहना असम्भव है। भूतत्त्वकी आलोचनासे मालूम हुआ है, कि एक समय मलयप्राय-द्वीपसे ले कर भारतमहासागरके द्वीपपुञ्ज तक एक बड़ा राज्य सुगठित हुआ था। वह सागराम्बरा सुविशाल राजधानी राक्षस-राज रावणकी लङ्कापुरी समझी जाती थी। रामचन्द्रजी द्वारा रावणके मारे जानेके बाद लङ्का राज्यमें जब विप्लव मच गया था उस समय जिसने जहां जगह पाई वह वहीं बस गया। उस समयसे आज तक सभ्यताः । बीज उनमें उत्पन्न नहीं हुआ है।

सन् १८५८ ई० अङ्गरेजोंने यहां पदार्पण किया। इन्होंने यहां आ कर इस जातिको प्रकृतिकी गोदमें सोते देखा। मनुष्य जातिको इस तरहकी हीनावस्था देख कर यथार्थमें वे आश्चर्यान्वित हुए थे। सभी प्रायः नंगे हैं। स्त्रियां कभी कभी कमरमें पत्ते लपेट लेती हैं सही, किंतु अधिकांश समयमें वे भी नंगी ही घूमती हैं। वैदेशिकके देखने पर भी उनके किसी तरहकी लज्जा नहीं आती। लज्जानिवारण उनके लिये प्रकृतिके विरुद्धके सिवा और कुछ नहीं है।

इनका पुरुष-समाज स्वभावतः ही चतुर होता है। ये क्रूर और प्रतिहिंसापरायण भी होते हैं। विदेशी लोगोंको देखते ही ये घोर चीत्कार करते और अपनी विरक्ति प्रकट करते हैं। कभी कभी ये इशारेसे अपनी निर्भीकता तथा अङ्गकी विकृतिसे मानसिक घृणा प्रकट किया करते हैं। कभी कभी ये उच्च हृदयका भी परिचय देते हैं। उस समयका इनका नम्र भाव देख कर चमत्कृत होना पड़ता है।

ये स्वभावसे ही छोटे हैं। ये ५ फीटसे अधिक ऊंचे नहीं होते। स्त्रियां साधारणतः ४ फीट ७ इञ्च लम्बी होती हैं। इनका शरीर नीलापन लिये काले रंगका होता है। कालेपनके साथ साथ इनमें चिकनाहट भी दिखाई देती है। ये चकमक पत्थरसे अपने शरीरमें पाछ लगाते हैं। मस्तककी क्षुद्रता तथा अन्य अङ्गको देखनेसे मालूम होता है, कि ये हबशी हैं।

ये नाच गानके प्रेमी हैं। कभी कभी तीर धनुष ले कर वनमें घूमते रहते हैं। शिकार पर इनका अचूक लक्ष्य होता है। मछली पकड़नेके लिये ये एक तरहके वृक्षकी छालसे सूता तय्यार करते हैं। फिर ये वृक्षके टुकड़े टुकड़े काट कर छोटी छोटी नावें भी बना लेते हैं। इनके तीरके फल चकमक पत्थरके बने होते हैं।

मिन्जानिब (अ० क्रि० वि०) ओरसे, तरफसे।

मिन्जुमला (अ० क्रि० वि०) सबमेंसे, कुलमेंसे।

मिन्त्रा—मलय प्रायोद्वीपवासी एक आदिम जाति। इस जातिके लोग भूत प्रेतादि पर विश्वास करते हैं। ये चैतके महीनेमें जङ्गल जला कर आश्विनके महीनेमें उस राखवाली जमीनमें खेती करते हैं। ये हमेशा तीर धनुष ले कर घूमते हैं। पशु पक्षी देखते ही ये उस पर तीर छोड़ते और उसे मार कर मांस खाते हैं। सौसे भी अधिक ऊंचे पशु पर तीर चलानेमें ये लक्ष्य भ्रष्ट नहीं होते।

मिन्दा (सं० स्त्री०) दैहिक दोष।

मिन्दानाव—प्रशान्त महासागरके फिलिपाइन द्वीपपुञ्जके अन्तर्गत एक द्वीप। यहां पालावङ्ग और सुलुद्वीपमाला अवस्थित है। डुमग, तगवलय, मालनो, मनवो, मिन्दा नाव आदि निरीह जातियां इसके आस पासके द्वीपोंमें रहती हैं। इनकी भाषा विभिन्न होने पर भी इन्हें पापुयान जातिमें शामिल कर सकते हैं।

मिन्दोरा—वोर्णियो द्वीपके समीप अवस्थित एक छोटा द्वीप। मिन्दोरा और वोर्णियो द्वीपके बीच जो छोटी प्रणाली बह गई है उसमें अङ्गरेज-नाविक मछलीका शिकार करते हैं। यह स्थान कहीं कहीं २७से ३३ मील तक विस्तृत है। यहांका जल ऐसा साफ है, कि २५ फादम नीचेमें अवस्थित प्रवाल कीट भी ऊपरसे साफ साफ दिखाई देते हैं।

हांके वेनगान नामक पहाड़ी प्रदेशमें निग्रेटो जातिका

नाम है। ये लोग अपने पड़ोस मानगुआनिस जाति-के साथ मिल कर रहते हैं, कभी भी आपसमें विवाद नहीं करते।

मिन्न (सं० वि०) क्लिन्न, पीड़ित।

मिन्नत (अ० स्त्री०) १ प्रार्थना, निवेदन। २ दीनता। ३ एहसान, कृतज्ञता।

मिन्मिन (सं० त्रि०) सानुनासिक वाक्यविशिष्ट, कुछ नाकसे निकले धीमे स्वरमें। वायु-कफके साथ मिल कर शब्दवाहिनी धमनियोंको आच्छादित किये रखती है, इसीसे बहुतेरे मनुष्य बहुत नहीं बोल सकते तथा मूक, गद्गद भाषी और मिन्मिन होते हैं।

"आवृत्य वायुः सकफो धमनी शब्दवाहिनीं।
नरान् करोत्यक्रियकान् मूकमिन्मिनगद्गदान्॥"

इस रोगकी चिकित्सा—घी ४ सेर ; चूर्णके लिये सोहिञ्जनकी छाल, वच, सैंधव, धवफूल, लोध और आकनादि प्रत्येक आध पाव, जल १६ सेर और बकरीका दूध ४ सेर, इन सबसे नियमपूर्वक घृत पाक करना होगा। उपयुक्त मात्रामें सेवन करनेसे जड़ता, मूकता और गद्गद स्वर नष्ट होता है, स्मरण शक्ति बढ़ती है और उच्चारण स्पष्ट होता है।

मिनहाज-इ सिराज—तबकत्-इ-नासीरी नामक प्रसिद्ध इसलाम राज्यके इतिहास-लेखक। इनका घर जर्जियामें था। यह एक प्रसिद्ध कवि भी थे। ये मुसलमानी राज्यको आदि प्रतिष्ठासे ले कर सन् १२५६ ई० (६५८ हि०) तकका सारी घटनाओंका उल्लेख अपने इतिहास-ग्रन्थमें कर गये हैं। इनका यथार्थ नाम है, आबू-उमर मिनहाज उद्दान-ओसमान बिन्द् सिराज उद्दीन अल्-जुर्जानी (जर्जिया)। ये सन् १२२७ ई० (६२४ हि०) में घोर राज्यसे सिन्धुप्रदेशमें आये थे। क्रमशः वहांसे उच्चा और मुलतानका परिभ्रमण कर दिल्लीके सुलतान शमसुद्दीन अलतमशके अधीन राजकार्यमें नियुक्त हुए। इसके बाद क्रमसे इन्होंने सुलताना रजिया और सुलतान बहरामशाहके अधीन भी कुछ दिनों तक कार्य किया। बहादुरशाहके मृत्युपरान्त ये हि० ६३६में लक्ष्मणावतीको देखनेके लिये गये थे। यहां ये तीन वर्ष रहनेके बाद हि० सन् ६४२में फिर दिल्ली लौट गये। इसके बाद ये नासिरिया विश्वविद्यालयके सभापति हुए थे। सन् १२५२ ई०में दिल्लीके बादशाह सुलतान नासीरउद्दीन महमूदके शासनकालमें उक्त इतिहासको रचना कर उसे इन्होंने बादशाहके कर-कमलोंमें समर्पण किया था। दिल्लीमें ये "सदरे-जहां" आदि कई उपाधियोंसे विभूषित किये गये थे।

मिमङ्क्षा (सं० स्त्री०) मज्जनेच्छा, मज्जनेके लिये चेष्टा।

मिमङ्क्षु (सं० त्रि०) मस्ज इच्छार्थे सन् तत उः। मज्जनेच्छु।

"यद्गतिनः कटकराहतटामिमङ्क्षो-
र्मट्च्युदपादिपरितः पटलैरलीनाम्॥" (माघ ५।३७)

मिमत (सं० पु०) एक प्राचीन ऋषिका नाम।

मिमन्थिषा (सं० स्त्री०) मन्थनेच्छा, मथनेकी इच्छा।

मिमन्थिषु (सं० त्रि०) मन्थनेच्छु, मथनेकी इच्छा करनेवाला।

मिमर्दयिषु (सं० त्रि०) मर्दन करानेमें इच्छुक।

मिमर्दिषु (सं० त्रि०) मर्दनेच्छु, दलनाभिलाषी।

मिमिक्ष (सं० त्रि०) जलसिक्त, पानीमें सींचा हुआ।

मिमिक्षु (सं० त्रि०) स्तोतृगणके इच्छानुसार फलवर्षणेच्छु।

मियाँ (फा० पु०) १ स्वामी, मालिक। २ पति, खसम। ३ बड़ोंके लिये एक प्रकारका सम्बोधन, महाशय। ४ बच्चोंके लिये एक प्रकारका सम्बोधन। ५ मुसलमान। ६ शिक्षक, उस्ताद। ७ पहाड़ी राजपूतोंकी एक उपाधि।

मियाँगञ्ज—अयोध्या-प्रदेशके उनाव जिलान्तर्गत एक बड़ा गाँव। यह अक्षा० २६° ४८' उ० तथा देशा० ८०° ३४' पू०के मध्य विस्तृत है। नवाव आसफ उद्दौला और सयादत अली खाँके राजस्व-सचिव मियाँ अलमस अलीने १७७१ ई०में यह नगर बसाया। किन्तु दुर्भाग्यवशतः वह अभी श्रीभ्रष्ट हो पड़ा है। १८०३ ई०में लार्ड भालेन्सिया (Valentia)-ने इस नगरकी समृद्धिका वर्णन किया है। किन्तु दुःखका विषय है, कि उसके २० वर्ष बाद ईसा-धर्मयाजक हेबर १८२३ ई०में उसकी इमारतोंके कुछ

खंडहरोंका विवरण लिख गये हैं। आज भी यहां २ पान्थ-निवास, १३ मसजिद और ४ हिन्दू मन्दिरोंका निदर्शन देखनेमे आता है। १८५७ ई०में विद्रोही सिपाही-दल इस नगरमे पराप्त हुआ था।

मियाँनी—पञ्जाब-प्रदेशके होशियारपुर जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० ३१° ४३´ उ० तथा देशा० ७५° ३४´ पू० व्यास नदीके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः छः हजारसे ऊपर है। मामन्द जातिका पठानवंश इस नगरका प्रकृत स्वत्वाधिकारी है। यहां चमड़े, गेहूं, चीनी और मवेशीका विस्तृत कारवार है। शहरमें एक सरकारी अस्पताल है।

मियाँनी—पञ्जावके शाहपुर जिलेके अन्तर्गत मेरा तहसील-का एक शहर। यह अक्षा० ३२° ३४´ उ० तथा देशा० ७३° ५´ पू०के मध्य झेलम नदीके बाएं किनारे अवस्थित है। जनसंख्या सात हजारसे ऊपर है। यह स्थान बहु प्राचीन कालसे खनिज लवणके वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध है। पहले इसका नाम शासनावाद था। नदीकी प्रबल बाढ़से जब वह तहस-नहस हो गया, तब बादशाह शाह-जहांके श्वसुर आसफ खाँने वहां पर वर्तमान नगर बसाया। १७५४ ई०में शाहके सेनापति नूर उद्दीनने इस नगरको लूटा और तहस-नहस कर डाला। १७८७ ई०में रणजित्‌सिंहके पिता महासिंहने नगरका संस्कार कर लवण-वाणिज्यमें बहुत कुछ उन्नति की। यहां उत्तर पंजाब-ग्रेट-रेलवेके खुल जानेसे लवण-वाणिज्यमें बहुत सुविधा हो गई है। अलावा इसके उत्कृष्ट घोड़ोंका कारो-बार भी होता है। नगर म्युनिसिपलिटीकी देख रेखमे रहने पर भी इसका पथघाट उतना साफ नहीं रहता। शहर-में एक ऐंग्लो-वर्नाक्युलर हाई-स्कूल और एक सरकारी अस्पताल है।

मियांनी—बम्बई-प्रदेशके काठियावाड़ विभागके अन्तर्गत एक प्राचीन बंदर। यह वर्त्तु नदीके मुहाने पर अवस्थित है। नदीमुखमें बालू भर देनेसे वाणिज्यमें बहुत धक्का पहुंचा है। बहुतेरे इस स्थानको प्राचीन मीननगर कहते हैं।

मियांनी—बम्बई प्रदेशके हैदराबाद जिलान्तर्गत एक बड़ा गांव। यह हैदराबाद नगरसे तीन कोस उत्तरमे अव-स्थित है। यहां १८४३ ई०की १७वीं फरवरीको अंगरेज सेनापति सर चार्लस् नेपियरने २८०० सेना और १२ कमान ले कर फुलेली नदीके किनारे २२ हजार बलूची सेनाको परास्त किया था। शत्रुसेना सम्पूर्ण-रूपसे परास्त हुई और करीब ५ हजार योद्धे मारे गये। जो सब अंगरेज-सैनिक इस युद्धमें खेत रहे उनके स्मरणार्थ एक स्मृतिस्तम्भ खड़ा किया गया था। स्तम्भके चारों ओर अभी एक सुरम्य उद्यान लगाया गया है। हैदराबाद नगरसे प्रायः सात मील विस्तृत घाससे ढके हुए इस रणप्राङ्गणको पार कर उद्यानमे आना होता है। उद्यान बड़ा ही सुखप्रद मालूम होता है। यहां एक समय सिन्धु प्रदेशीय अग्रवाही सेनादलकी छावनी थी। मछली पकड़नेके लिये यह स्थान बहुत मशहूर है। यहां तीन स्कूल हैं, जिनमेसे एक बालिकाके लिये है।

मियाँमज्जू—सुलतान इब्राहिम निजामशाहका प्रधान मन्त्री। इन्होंने अपने बुद्धिबलसे निजामशाही राज्यकी बहुत कुछ उन्नति की थी।

मियांमिट्ठू (हिं० पु०) १ मीठी बोली बोलनेवाला, मधुर-भाषी। २ मूर्ख, बेवकूफ। ३ तोता।

मियाँमीर—पञ्जाब प्रदेशके लाहोर जिलान्तर्गत एक नगर। यहां एक सेनावास प्रतिष्ठित है। लाहोरके सैनिक विभाग-का सदर यही नगर है। यह अक्षा० ३१° ३१´ १५´´ उ० तथा देशा० ७४° ३५´ १५´´ पू०के मध्य विस्तृत है। पहले यह सेनावास लाहोर-नगरके मध्य अनारकली नामक स्थानमे था। उस स्थानका स्वास्थ्य वैसा सुविधाजनक न होनेके कारण १८५१-५२ ई०में वहांसे ३ मील पूर्व दूसरी जगह उठा कर लाया गया। लाहोरके दुर्गमें यहांसे सेना ले जा कर रखा जाता है।

इस स्थानका प्राचीन नाम हसलिमपुर था। मुल्लन-शाह उर्फ मियांमीर नामक एक मुसलमान पीर यहां रहता था। सम्राट् शाहजहांके लड़के शाहजादा दाराशिकोह-ने हसलिमपुर ग्राम खरीद कर अपने धर्मगुरुको प्रदान किया। उसी पीरके नामानुसार इस स्थानका मियां-मीर नाम पड़ा। यहां उक्त पीरका मकबरा और एक मसजिद मौजूद है। यह मकबरा सफेद मरमर पत्थर-का बना हुआ है। सेनावासके पूर्व और पश्चिममें दो

रेलवे स्टेशन है। एकसे लाहोरसे मूलतान जाया जाता है।

मियाँराजू—मालिक अम्बरका सहकारी एक सेनापति। इसने मुगलसेनाके विरुद्ध युद्ध करके निजामशाही राज्य-की रक्षाकी थी।

मियांवाली—१ पञ्जावप्रदेशके मूलतान विभागका एक जिला। यह अक्षा० ३०´ ३६´से ३३´ १४´ उ० तथा देशा० ७०´४६´से ७२´ ०´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८१६ वर्गमील है। इसके पूर्वमें अटक, शाहपुर और झङ्ग, दक्षिणमें मुजफ्फरगढ, पश्चिममें इसा खेल तह-सील तथा उत्तरमे वन्नू और कौहट जिला है।

इस जिलेका प्राचीन इतिहास नही मिलता। १४वीं सदीमें दक्षिणसे जाटोंने आ कर इस स्थान पर दखल जमाया। १७वीं सदीके आरम्भमें हम जसकनी वलोच-का नाम पाते हैं। इसका राज्य सिन्धसे चनाव और चक्करसे लियाद तक विस्तृत था। मनकेरामें उसकी राजधानी थी। पीछे यह गक्करोंके हाथ आया। उन्होंने १७४८ ई० तक यहांका शासन किया। अनन्तर दुर्रानी ने इन्हें मार भगाया और सिंहासन पर कब्जा किया। द्वितीय सिख-युद्धमें सर एच एडवर्डने मूलतानका कुछ भाग दखल किया और उसके साथ साथ १८४८ ई०में मियाँवालीको भी उसमें मिला लिया। १९०१ ई०में यह जिला संगठित हुआ। ५७के गदरमें यह जिला एक तरह शान्त था। कुछ घुडसवार वागी हो गये थे, पर उनका शीघ्र ही दमन किया गया।

इस जिलेमें ४ शहर और ४२६ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या चार लाखसे ऊपर है। मुसलमानोंकी संख्या सबसे ज्यादा है। विद्या शिक्षामें इस जिलेका स्थान २८ जिलोंमें १६वा आया है। अभी कुल मिला कर ५ सिकेण्ड्री, ७२ प्राइमरी, ३ पवलिक, १३ उच्च श्रेणीके और २०४ एलिमेण्ट्री स्कूल हैं। इन सब स्कूलोंमें सबसे वडा हाई स्कूल है जो मियांवाली शहरमें अवस्थित है। स्कूलके अलावा सिभिल अस्पताल और पाच चिकि-त्सालय हैं।

२ उक्त जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३२´ ११´-से ३३´ २´ उ० तथा देशा० ७१ १६´ से ७१´ ५८´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १४७८ वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें इसी नामका एक शहर और ७० ग्राम लगते हैं। जबसे सिन्धु सागरसे दोआब की नहर काट निकाली गई है, तबसे यहां फसल अच्छी लगती है। यहांके अधिवासियोंमें मुसलमानोंकी संख्या ही अधिक है।

३ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३२´ ३५´ उ० तथा देशा० ७१´ ३१´ पू०के मध्य अवस्थित है। यहांका सुप्रसिद्ध सैयदवंश मियांवाली मियाँ नामसे मशहूर है। ये लोग स्थानीय किसी मुसलमान साधुके वंशधर हैं। अपनी उदारता और दयालुताके गुणसे इन्होंने सर्वसाधारणमें अच्छा नाम कमाया है। उक्त मियावंश जहां वास करते हैं वह वल्लोवखेल कहलाता है। वर्त्तमान मियावाली नगर उस वल्लोवखेल नगर-का अंशमात्र है। एक तहसीलदार और असिष्टण्ट कमिश्नर यहांका विचार कार्य करते हैं।

मियाँवाली—पञ्जावके गुजरानवाला जिलान्तर्गत एक प्राचीन नगर। अभी यह खंडहरमें पडा है। यह खान-नगर असरूर वा असरूव नामसे मशहूर था। यहा वहुत पुराने जमानेके ईंटोंके स्तूप पडे हुए हैं। प्रत्नतत्त्व वित् कनिंहम इसे चीन-परिव्राजक यूएनचुवङ्ग द्वारा वर्णित तसेकिया। (तकि) नगर वतलाते हैं। एक समय यह तकि-राज्य वहुत वढा चढ़ा था। पश्चिममें सिन्धुनद, उत्तरमें हिमालय पर्वत, पूर्वमें विलस्ता और दक्षिणमें सिन्धु-पञ्चनद-सङ्गम तक इसका विस्तार था।

उक्त वडे वड़े स्तूप देखनेसे मालूम हुआ है, कि उनके भीतर जो ईंटें हैं वह वहुत पुरानी और नाना-चित्रनैपुण्ययुक्त हैं। आज भी वर्षा ऋतुके समय उन स्तूपोंसे शकजातिके सिक्के निकलते हैं।

सम्राट् अकवर शाहके जमानेमें उग्रशाह नामक एक दोग्रा-सरकारने इस स्तूपसे कुछ ईंटें निकाल कर मस जिदकी छत वनवाई थी। यूएनचुवङ्गने तकि नगरसे दो मील उत्तर-पूर्व सम्राट् अशोक-प्रतिष्ठित बुद्धस्मृति चिह्न सम्वलित स्तूपका वर्णन किया है वहांसे थोडी दूरके फासले पर भी एक स्तूप देखा जाता है।

मियान (फा० स्त्री०) १ म्यान देखो। (पु०) २ मध्य-भाग, बीचका हिस्सा।

मियानतह (हिं० स्त्री०) वह साधारण कपड़ा जो किसी अच्छे कपड़के नीचे उसकी रक्षा आदिके लिये दिया जाता है।

मियानतही (हिं० स्त्री०) मियानतह देखो।

मियाना (फा० वि०) १ न वहुत बड़ा और न बहुत छोटा, मध्यम आकारका। (पु०) २ वे खेत जो किसी गांवके बीचमें हों। ३ गाड़ीमें आगेकी ओर बीचमें लगा हुआ वह बाँस जिसके दोनों ओर घोड़े जोते जाते हैं। इसे बम भी कहते हैं। ४ एक प्रकारकी पालकी।

मियाना—बम्बई प्रेसीडेन्सीके काठियावाड़ विभागमें रहनेवाली एक डाकू-जाति। मूचा नदीके किनारे मूचाकान्ता नामक स्थानके भल्लिया गांवमें इस जातिका वास है। यह अपने चौहट्टियों या सरदारको दलपति स्वीकार करने पर भी वहांके ठाकुर उपाधिधारी सामन्त राजका आदर करते हैं। किन्तु उसकी आज्ञाके अनुसार कोई काम नहीं करते।

मियाना—सिन्धुप्रदेशवासी मल्लाहकी एक जाति। मैं, मोयाना और मेयानी नामसे भी यह जाति पुकारी जाती है। यहांके कृषक जाट और बलूचियोंसे यह बिलकुल पृथक् जाति है। इसकी संख्या भी इन सबोंसे अधिक है।

ये कर्मदक्ष और व्यायामपटु होते हैं। इनका हृदय सरल और उदार है। ये नदीके किनारोंके गांवोंमें नाव और मछली पकडनेवाला जाल ले कर बसते हैं। मछली पकडना तथा बेचना इनकी प्रधान जीविका है। बहुतेरे इसी नदीमें या मंचूर नामकी झीलमें चीनियोंकी तरह नावों पर ही वास करते हैं। वहां इनके रहनेके लिये कोई घर नहीं देखा जाता। स्त्रियां भी नावें चला चला कर पुरुषोंकी सहायता करती हैं। पुरुष जब जाल ले कर समुद्रके किनारे मछली पकड़नेमें लगे रहते हैं, तब स्त्रियां एक छोटी नावमें मछलियोंको ले कर अपने सन्तानोंके साथ नाव चला कर चली जाती है। समुद्रकी प्रणालीके अज्ञात स्थानोंमें ये अद्वितीय नाव चलानेवाले हैं।

सिन्धुनदीके प्रसिद्ध पुल्ल नामक मछली पकड़नेकी प्रथा इनके द्वारा ही सम्पन्न होती है। यह प्रथा जालसे मछली पकडनेकी प्रथासे पृथक् है। उस समय ये एक मिट्टीका घड़ा ले कर जलमें कूद पड़ते हैं। पहले अल्लाह कह कर घड़ेके मुंहको पेटमें लगा दोनों हाथसे पानी चीरते जाते हैं। इसी तरह वे जहां चाहते हैं वहां जा सकते हैं। उस समय ये १५ फीट लम्बी चिमटेके आकारकी एक डण्डीके मुहमें जाल बांध कर जलमें डुबोये रहते हैं। मछलियां जब जालमें आ जाती हैं, तब चिमटेका मुख बंद कर देते हैं। इस समय मछलियां फंस जातीं और निकल नहीं सकती हैं। इसके बाद किनारे आ कर उसे अपनी छूरीसे टुकड़े टुकड़े कर डालते हैं।

इनकी स्त्रियां काली होने पर भी इनके मुखकी श्री उतनी खराब नहीं। कोई कोई तो परम सुन्दरी दिखाई देती हैं। कितनी ही वैश्याका काम करती हैं। नाचने गानेमें भी निपुण देखी जाती है, ये नदी किनारेपरकी एक तरहकी घाससे चटाई बनाया करती हैं और इसे बेचा करती हैं। नगर या ग्रामके साधारण अधिवासीसे दूर स्वतन्त्र हो अपना गांव बसा कर अलग रहते हैं। पुरुष मद्य भी बेचते हैं और बाजा बजा कर गान गाते फिरते हैं। स्त्रियां पथ हाटमें गाना गाती फिरती हैं। वेश्याकी तरह इनका हाव भाव देख कर कितने ही मुसाफिर इनके पञ्जेमें फंस जाते हैं।

मियाना—ग्वालियर-राज्यकी गुणा सब-एजेन्सीके अन्तर्भुक्त एक जागीर।

मियानी (फा० स्त्री०) पायजामेमें वह कपड़ा जो दोनों पायंचोंके बीचमें पड़ता है। इसे कहीं कहीं रूमाल कहते हैं।

मियार (हिं० पु०) वह लड़की जो कूएंके ऊपर दो खंभों पर लगी होती है और जिसमें गराडी पड़ी रहती है।

मियाल (हिं० पु०) मियार देखो।

मियेध (सं० पु०) १ पशु। २ यज्ञ।

मियेध्य (सं० त्रि०) यज्ञके योग्य, यज्ञार्ह।

मिरंगा (फा० पु०) प्रवाल, मूंगा।

मिरकी (हिं० स्त्री०) चौपायोंको होनेवाली एक प्रकारका मुंहकी बीमारी।

मिरखम्भ (सं० पु०) मिरखम देखो।

मिरखम (हिं० पु०) कोल्हूमें वह लकड़ी जो बैठ कर हांकनेकी जगह खड़े बलमें लगी रहती है।

मिरगचिड़ा (हिं० पु०) एक प्रकारका छोटा पक्षी।

मिरगिया (हिं० पु०) वह जिसे मिरगीका रोग हो।

मिरगी (हिं० स्त्री०) मृगी देखो।

मिरचा (हिं० पु०) लाल मिर्च।

मिरचाई (हिं० स्त्री०) १ मरिच देखो। २ काला दाना देखो।

मिरचियागंध (हिं० पु०) रूसा घास।

मिरचा (हिं० स्त्री०) छोटी पर बहुत तेज लाल मिर्च।

मिरजई (फा० स्त्री०) एक प्रकारका बंददार अंगा जो कमर तक और प्रायः पूरी बाँहका होता है।

मिरज़ा (फा० पु०) १ मीर या अमीरका लड़का, मीर जादा। २ राजकुमार, कुंवर। ३ तैमूरवंशके शाहजादोंकी उपाधि। ४ मुगलोंकी एक उपाधि। (वि०) ५ कोमल, नाजुक।

मिरज़ाई (फा० स्त्री०) १ मिरजाका भाव या पद। २ अभिमान, घमण्ड। ३ सरदारी, नेतृत्व। ४ मिरजई देखो।

मिरजान (फा० पु०) प्रवाल, मूंगा।

मिरजामिजाज (फा० वि०) नाजुक दिमागका।

मिरदंग (हिं० पु०) मृदङ्ग देखो।

मिरदंगी (हिं० पु०) वह जो मृदंग बजाता हो, पखावजी।

मिरनजै—अफगानी सीमाके निकटकी कोहाट उपत्यकाका एक अंश। कोहाटको पार कर १० कोसमें फैली हङ्गर उपत्यकामें जाना होता है। इसके बाद ही मिरनजैका समतल क्षेत्र दिखाई देता है। इसका क्षेत्रफल ६ वर्गमील है। इसके दक्षिण-पश्चिम ओर कुरम नदी बहती है। यहां दुर्गादि द्वारा सुरक्षित सात ग्राम हैं। यहांके अधिवासी अफगानी हैं। इनमें जिल्लोस्त अफगान संख्यामें कम होने पर भी विशेष वीर्यशाली और बुद्धिमान् हैं। इनमें घुड़सवार सेनादल भी हैं। पश्चिम मिरनजैसे पवार कोथूल पर्वतमाला तक इनकी वस्ती दिखाई देती है।

काबुलकी यात्रा करते समय अङ्गरेज-सेनापति लार्ड राबर्टस्ने इसी स्थानसे भारतीय सैन्यकी परिचालना की थी।

मिरफ (सं० स्त्री०) बौद्धमतसे एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

मिरा (सं० स्त्री०) १ मूर्वा। २ मदिरा, शराब।

मिराज (बड़ा)—बम्बई प्रेसिडेन्सीके दक्षिण महाराष्ट्र प्रदेशके पोलिटिकल एजेन्सीके अधीन एक सामन्त राज्य। इसका क्षेत्रफल ३४० वर्गमील है। यह प्रधानतः ३ खण्डोंमें विभाजित हुआ है, १ कृष्णनदीका उपत्यकांश, २ धारवाड़ जिलेका दक्षिण विभाग और ३ शोलापुर जिलेके अन्तर्गत प्रदेश।

इस राज्यका कृष्णनदीके किनारेका प्रदेश बहुत ही उर्वर और समतल है। सिवा इसके अन्य स्थान पार्वत्य और वन्यभूमिसे परिपूर्ण हैं। बीच बीचमें गण्डशैलमाला भी दिखाई देती है। इसकी मिट्टी काली तथा कपास उत्पन्न करनेके लिये परम उपयोगी है। यहां जलका अभाव भी नहीं। नहर, कुएं, तालाव आदि जलाशय यहांके जलकष्टको भगाये रहते हैं। दाक्षिणात्यके अन्यान्य स्थानोंकी अपेक्षा यह स्थान अपेक्षाकृत सूख जाता है। ग्रीष्म ऋतुमें यहांकी धूप सही नहीं जाती।

महाराष्ट्रके पेशवाने वहांके पटवर्द्धनवंशको यह स्थान जागीरमें दिया था। सन् १८२० ई०में सरकारने उक्त पटवर्द्धन-वंशका अधिकार स्वीकार कर इसको चार भागोंमें बांट दिया है। इनमें प्रत्येकने स्वीकार किया है कि वे घुड़सवार-सैनिक दिया करेंगे।

सन् १८४२ और १८४५ ई०में क्रमसे पुत्राभाववश इसके दो भागों पर अङ्गरेजोंने अधिकार कर लिया। बाकी दोमें बड़े मिराजके सरदार गङ्गाधरराव गणपत जातिके ब्राह्मण हैं। यह इन्दोरके राजकुमार कालेजमें विद्याभ्यास करते थे। दक्षिण महाराष्ट्र प्रदेशमें वे ही सर्वश्रेष्ठ सरदार समझे जाते हैं। उन्हें हत्याके अपराधीको दण्डविधान करनेमें पोलिटिकल एजेण्टसे राय लेनी नहीं पड़ती। सरदार-वंशमें दत्तक (गोद) लेनेका अधिकार है। ज्येष्ठ पुत्र राज्यासन पर बैठ कर शासन करते हैं। यहांका मिराज और लक्ष्मीश्वर नगर समृद्धिशाली है।

मिराज (छोटा)—दक्षिण महाराष्ट्र देशका दूसरा सामन्त राज्य। धारवाड़ जिलेके बङ्कापुर उपविभागके, सतारा जिलेके तासगाँव उपविभागके और शोलापुर जिलेके

पण्ढरपुर उपविभागके कई ग्रामोंको ले कर इस भूखण्ड-का संगठन हुआ है। इस जागीरका क्षेत्रफल २०८ वर्ग-मील है। यहां कपास बहुतायनसे पैदा होती है। सूती वस्त्रके कारखाने भी हैं।

यहां सरदारवंश भी बड़े मिराजके सरदारकी तरह ही अधिकार रखते हैं। सरदार लक्ष्मणराव हरिहर ब्राह्मण वंशके थे। नाबालिगी अवस्थामें राज्यका काम पोलिटिकल एजेण्टकी देख रेखमें हुआ। हत्यापराधीको दण्ड देनेको भी क्षमता बड़े मिराजके सरदारको तरह इनको भी है। इनकी सैन्य-संख्या २०० है और पहरे-दारोंको संख्या २१६ है।

मिराज—बड़े मिराजका प्रधान नगर। यह कृष्णानदीके किनारे बसा हुआ है। अक्षा० १६° ४९´ १०´´ उ० और देशा० ७४° ४१´ २०´´ पू०के मध्य विस्तृत है। म्यूनिसि-पलिटीके होनेसे इस नगरकी दिनों दिन अवस्था बदलती जाती है।

मिराज इ-महम्मद—इसलाम धर्मियोंका उत्सवभेद। धर्म-प्रवर्त्तक महम्मदकी परलोक-यात्राके स्मरणार्थ २७वीं रजबको यह पर्व हुआ करता है। यह पर्व मुसलमानोंमें लइ -इ-महम्मद नामसे परिचित है। कुरानके १७वें परिच्छेदमें इसका विस्तारित रूपसे वर्णन मिलता है। कातिब-अल वकीदीका कहना है, कि १७वीं रमजानको यह घटना संघटित हुई थी। उस समय ईश्वर-दूत जिब्राइल धराधाममें आ कर महम्मदको बुरफ् नामक घोड़े पर चढ़ा स्वर्ग (Heaven) (बहिश्त)-में ले गये थे।

मिराज शब्द ऊर्ज्जधातुसे उत्पन्न हुआ है। यह संस्कृतका उर्ज शब्दार्थबोधक है। मिराज इ-महम्मद-का अर्थ—महम्मदका स्वर्गारोहण है।

मिरि—औषधार्थमें प्रयोज्य बीजभेद।

मिरि (मीरी या मिड़ी)—आसामकी पार्वत्य उपत्यका-वासी जातिविशेष। आसामसे तिब्बतीय सीमा तक इस अनार्य जातिकी बस्ती है। वन्य आवर जाति इसको केवल एक शाखा है। अका, आवर और दफला नामकी तीनों पार्वत्य असभ्य जातियां इस मिरो जातिसे उत्पन्न हैं। लखीमपुर, शिवसागर, दरङ्ग आदि जिलोंको उपत्यका-भूमिमें इस जातिको बस्ती है। अका नाम्नी जातिके लोग समतलक्षेत्रमें, दफले पार्वत्य उपत्यकाओंमें और मिरी पहाड़ी जङ्गलोंमें अकेले रहते हैं।

अका, आवर और दफला देखो।

मिरियोंमें मुख्यतः दो दल,—१ बारगाम और २ दह-गाम। बारगाममें बारह श्रेणियां हैं और दहगाममें दश। ये दो दल स्वतन्त्र हैं। एक दूसरेसे नहीं मिलता।

आसामके समतलक्षेत्रमें बहुतेरे मिरी रहते हैं। आवरोंका कहना है, कि पहले ये गुलाम थे। भाग कर यहां चले आये और रहने लगे। किन्तु ये इस बात को नहीं मानते। इनमें इस तरहकी कहावत प्रचलित है—पहले पहाड़ी मिरी और आवरोंमें घोर विवाद चलता था। इस विवादके कारण ही इन दोनों जातियोंमें एक विकराल युद्ध हुआ। इसी युद्धके समय मिरी जातिके सभी लोग पहाड़ोंसे समतलक्षेत्र उतर आये थे। ये फिर पर्वतों पर नहीं जा सके। आवरोंको पराजित कर ये समतलक्षेत्रमें ही रहने लगे।

आसामके डिहिङ्ग नदीके सैकत भूमिमें बहुत प्राचीन-कालसे मिरियोंकी बस्ती है। ये 'खलास' नामसे परि-चित हैं। यानी ये जाति बन्धनसे मुक्त हो कर यहां आ कर वास करते हैं। छुटियामिरी अपनेको दिहिङ्ग नदीके उद्गम स्थानसे आये बताते हैं।

इनका मुगल जातिकी तरह कच्ची हल्दीका रङ्ग, लम्बाई और दृढ़ गठन देख कर अनुमान होता है, कि ये उत्तर देशसे आ कर क्रमशः आसामकी पार्वत्य उपत्यका-भूमि पर अधिकार कर बस गये हैं और वहांसे आगे बढ़ इन्होंने स्वजाति आवरोंको भगा कर समतल क्षेत्रमें भेज दिया है। दृढ़काय होने पर भी इनका चेहरा देखते ही इनके आलसी होनेका पता लग जाता है।

ये बहुत दिनोंसे आसाम-सरकारके अधीनमें रह आये हैं। ये आसामवासियों और आवर जातिके मध्य व्यवसायका परिचालन किया करते हैं। आवरजातिके पार्वत्य प्रदेशमें उत्पन्न हुई चीजोंको ले ये आसामके बाजारोंमें बेचते हैं और आसामसे कुछ आवरोंके आव-श्यकीय चीजोंको खरीद कर आवरोंके हाथ बेचा करते हैं। इस तरह ये दो जातियोंके बीच वाणिज्य-कार्य्य चलाते हैं। इसीसे इनका नाम मिरी हुआ है।

ये मुख्यतः नदीके किनारे छोटे छोटे गांवोंमें ४।५ फुट ऊंचे मचान बांध कर घर बनाते हैं। ये मुरगी और सूअर पालते हैं। गांवोंमें किसी भोजका समारोह होने पर स्वेच्छापूर्वक इन जीवोंका वध कर भक्षण करते हैं। किसी गाँवमें इनको भैंस पालते देखा गया है। ये भैंसके दूध दूहते हैं। साधारणतः जङ्गल काट कर ये खेती करते हैं। धान, सरसों, मकई और कपास यहां-की प्रधान उपज है।

ये बलशाली और स्वभावतः हृष्टपुष्ट होते हैं। ये सब जीवोंके मास भक्षण करते हैं। अब मिरी जातिके लोग समतलक्षेत्रके गाँवोंमें आ कर बस गये। फलतः हिन्दुओं-के संसर्ग होनेके कारण इन्होंने गोमांसका भक्षण करना छोड दिया है।

इनमें बाल्यविवाह आज तक प्रचलित नही है। किंतु बाल्यकालमें ही विवाह सम्बन्धकी मगनी हो जाती है। जब ये दोनों अपने खाने कमाने लायक हो जाते हैं तब इनका विवाह प्रकाशरूपसे विघोषित होता है। कभी कभी वरको कन्याके घर जा कर नौकरकी तरह काम करना पडता है। जब तक कन्याका स्थिर किया हुआ रुपया नही चुकता, तब तक वह वहीं नौकरका काम करता है।

स्त्रिया अपने पहननेके लिये कपडा बुन लेती हैं, सूती छीट बना कर उससे अंगरखा तय्यार करती हैं। इनका 'जीन' नामका मोटा गमछा गृहस्थोंके लिये विशेष उप-योगी होता है। पुरुष जङ्गल काट कर खेती करते हैं, इनकी स्त्रिया भी खेतोंमें जा कर शारीरिक परिश्रम करनेमें कोई कसर नही रखतीं।

ये सब मृतदेहको नीचे गाडते हैं। गाड देनेके बाद इनको मृतकके लिये अशौचकी शुद्धिके लिये कोई तूल तबाल नहीं करना पडता।

इनका धर्म कर्म अन्य जङ्गली जातिकी तरह है। इन-को कोई विपद् उपस्थित होने पर ये प्रेतोंकी परितृप्तिके लिये उनकी पूजा करते हैं। ये प्रेतात्मा नेकिरी और निकिरान नामसे मशहूर हैं। नेकिरीकी पूजा पुरुष और नेकिरानकी पूजा स्त्रिया करती हैं। सिवा इनके ये सूर्य (देन्या) स्वर्ग (तलङ्ग) और पृथ्वी (मरासिन) की विशेष भक्ति करते हैं।

ऊपर लिखे देवताकी पूजा करानेवाले मीबी या मिम्बोया नामके पुरोहित रहते हैं। रोगीको हवा देना और क्रियाकर्ममें जीवकी बलि देना इनका प्रधान कार्य है। मिम्बोया (पुरोहित) वंशानुक्रमसे होते हैं। ये इस पदको प्राप्त करना ईश्वरकी इच्छा कहते हैं। कैसे ये देवताओंका आह्वान करते हैं नीचे उसका उल्लेख किया जाता है।

१८ वर्षकी उम्रके समय प्रेतात्मा द्वारा परिचालित हो कर वनमें अपने इष्टदेवको ले जाते हैं। ये इस समय वन फल खा कर कुछ समय बिताते हैं। इसके बाद मानो ये नये उपादानसे गठित हो जाते हैं। उनकी आत्मा भी हर तरहसे परिमार्जित हो जाती है। ये दिव्यज्ञान प्राप्त कर अदृश्य वस्तुकी यथार्थता बतलाते हैं। ये स्तुति पाठ द्वारा चित्त परिशुद्ध कर रोगीको रोगसे मुक्त कर सकते हैं और सारी घटनावलीको देववाणी रूपमें कह देते हैं।

समतलक्षेत्रके गांवोंमें रहनेवाले मिरी प्राचीन प्रथाके अनुसार नेकिरी और नेकिरानकी पूजा छोड़ कर इस समय शङ्कर और परमेश्वरकी पूजा करने लग गये हैं। यह पूजा (चोरखेवा या बरखेवा) विशेष धूमधामसे की जाती है। गृहस्थ कभी कभी नेकिरी और नेकिरानकी पूजा करते हैं। मिम्बोया इस उत्सवमें पुरोहितका कार्य्य करते हैं सही, किन्तु पहलेकी तरह ईश्वरका काल्पनिक आदान नहीं करते। कोई भी देवता क्यों न हो, इनकी पूजाकी पद्धति एक ही प्रकारकी है। सभी पूजाओंमें मुर्गो, बकरे, शूकर और भैंसेकी बलि दिया करते हैं। उत्सवोंमें चावलसे तैयार किये हुए मद्यपानका विशेष प्रचार है।

धर्माचरणके सम्बन्धमें इनमें भकतिया और अभक-तिया नामकी दो श्रेणिया दिखाई देती हैं। अर्थात् जो 'गोसाई' के चेले हैं, वे भकतिया और जो गोसांइयोंसे मन्त्र दीक्षा नही लेते, वे अभकतिया नामसे परिचित हैं। आसाम शिवसागरमें गोसाइयोंका अड्डा है। वे प्रायः ब्रह्मपुत्रके दक्षिणी किनारे पर रहते हैं। कभी कभी यत्न माभुली द्वीपमें और ब्रह्मपुत्रके उत्तरतटवासियोंके

मिरियोंके यहां आ कर अपनी गुरुदक्षिणा चुकाते हैं।

ये कोई मूर्त्ति बना कर उसकी पूजा नहीं करते। किसीको भी ब्राह्मण-पुरोहित नहीं हैं। बहुतेरे भैंस या निषिद्ध मांसोंका भक्षण परित्याग कर हिन्दू-सम्प्रदायमें मिलनेकी चेष्टा कर रहे है। माटी मिरी अपनी स्वजातियों की तरह मचान बांध कर बननेवाले घरोंमें वास नहीं करते। वे अन्यान्य छोटे छोटे हिन्दुओंकी तरह मट्टीका घर बना कर रहते हैं और जातीय प्राचीन नीति रीति और धर्माचारको छोड़ कर हिन्दू-जातिके धर्माचारका अनुकरण कर रहे हैं।

जो पार्वत्य मिरी अङ्गरेज राजत्वमें सुवर्णश्री नदी-के किनारे रहते हैं, उनमें भी कई श्रेणियां हैं। उनमें घत-घासी, सराक, पानीबुटिया और तरबुटिया ही प्रधान हैं। सीमान्त प्रदेशकी रक्षाके लिये आसामके राजासे ये कुछ वार्षिक वृत्ति पाते थे। इस समय अङ्गरेज-सर-कार शान्ति-रक्षाके लिये उनको कुछ कुछ दिया करती है। पार्वत्य मिरी जातिके लोग एक दलपतिके अधीन वास करते हैं। किसी किसी ग्राममें एक एक कुटुम्बके लोग समूचे गांव पर आधिपत्य करते हैं। आवरोंकी तरह उनकी शासन शृङ्खला नहीं। वे रातमें जाग कर पहरा नहीं देते। अथवा मोरङ्ग नामक सभामें सम्मि-लित हो कर्त्तव्याकर्त्तव्यका अवधारण नहीं किया करते।

पानीबुटियोंके सरदारका नाम डेमा है। इनके रहने-का घर बांससे बना होता है और ७० फीट लम्बा होता है। इनकी स्त्रियां वेशभूषा और आभूषण पहना करती हैं। साधारणतः ये पहाड़ी निकृष्ट मणियोंकी माला गले-में डालती हैं। पुरुष बड़े बलिष्ठ होते हैं। सिंहलियों-की तरह सरमें जूड़ा बांधते हैं। इनके कानोंमें चाँदीके कुण्डल और सरमें बाघम्बरसे छाई हुई बेंतकी टोपी रहती है। कुरता और वस्त्रका विशेष व्यवहार नहीं करते।

हाथी आदि जन्तुओंको पकड़नेका कौशल इनको अच्छी तरहसे मालूम है। प्रायः फांदा लगा कर पशुओं-को पकड़ा करते हैं। पुरुष शेरका मांस खाते हैं। इनका विश्वास है, कि शेरके मांस खानेसे शरीरमें बल-का सञ्चार होता है। स्त्रियां शेरका मांस नहीं खातीं।

इनमें बहुविवाह भी प्रचलित है। सरदार स्वेच्छा-पूर्वक बहुत सी पत्नियां खरीद सकते हैं। पिताके मरने पर अपनी गर्भधारिणी माताको छोड़ अन्य विमाताओं-के साथ पुत्र विवाह कर सकता है। दरिद्रोंको पत्नी पानेकी आशामें घोर परिश्रम करना पड़ता है। कन्याको पण न दे सकनेके कारण विवाहमें बड़ी अड़चन होती है। इसीके फलसे स्त्रियां बहुतसे मर्द करने पर बाध्य होती हैं।

मिरी स्त्रियां अपने स्वामीकी बड़ी भक्ति करती हैं। कितना ही कष्ट होने पर भी अपने स्वामीको कटुवाक्य नहीं बोलतीं। वे जिस स्वामीके पास जब रहती हैं, तब उनसे किसी तरह अविश्वास नहीं करतीं। पुरुषके संग जमीन कोड़नेमें भी वे जरा सङ्कोच नहीं करतीं। पहले कह चुके है, कि ये प्रत्येक कार्यमें जीव-बलि देते हैं। इनका विश्वास है, कि जीवमात्र किसीके द्वारा मारे जाने या मरने पर स्वर्ग जाता है और उस प्रेतात्मा पर यम शासन किया करते हैं। प्रेतात्मा स्वर्गमें जाता है, इस लिये पूजा आदिमें जीवहिंसा करनेमें जरा भी नहीं हिचकते। इनके यमराज हिन्दुओंके यमराजके सिवा और दूसरा कोई नहीं। ये मृतदेहको जमीनमें गाड़ देते हैं। यदि कोई समतलक्षेत्रमें आ कर परलोकवासी होता है तो भी उसको पर्वत पर ला कर पूर्वपुरुषोंकी कब्रोंके पास गाड़ते हैं। किसी संक्रामक रोगसे मरने पर उसे पर्वत पर नहीं लाते। कब्रमें गाड़ते समय ये मृतात्माके लिये भोज्य पदार्थ, गहना और हांड़ी, लोटा आदि गाड़ा करते हैं। इनका विश्वास है, कि ये भोज्य-पदार्थ स्वर्गारोहणकी यात्रामें काम आयेगा। प्रेतात्माको स्वर्ग जानेके लिये पाथेय देनेकी प्रथा हिन्दुओंमें भी है जो वैतरणाके नामसे प्रसिद्ध है। प्रेतवालोंके गहनेको देख कर यमराज उसके गुरुत्वका हाल जान जायेंगे, ऐसा ही उनका विश्वास है।

ये अपनी उत्पत्ति तथा पर्वत पर रहनेके सम्बन्धमें कहा करते हैं, कि परम पिता द्वारा पर्वत पर वास करने योग्य उपादानोंसे हम लोगोंका शरीर गठित हुआ है और उन्हींकी आज्ञासे हम यहां वास करते हैं। पहले ये हिमालयके तिब्बतीय प्रान्तोंमें रहते थे। पक्षियोंको उड़

कर आसामकी ओर आते देख ये भी यहां आये हैं। ये पर्वतों पर चढ़नेमें बड़े ही दक्ष हैं। और तो क्या, पार्वतीय जिस पथसे बकरियां कठिनतासे आती जाती हैं, उस पथसे ये बोझ ले कर सरलतासे आते जाते हैं।

मिरिका (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी लता।

मिरिच (हिं० स्त्री०) मरिच देखो।

मिरिचियाकंद (हिं० पु०) रोहिस घास।

मिर्च हिं० स्त्री०) कुछ प्रसिद्ध तिक्त फलों और फलियोंका एक वर्ग। इसके अन्तर्गत काली मिर्च, लाल मिर्च और उनकी जातियां हैं। विशेष विवरण मरिच शब्दमें देखो।

मिर्चिया (हि० स्त्री०) रोहिस घास।

मिर्जापुर,—संयुक्त-प्रदेशके गवर्नरके शासनमें बनारस विभागका एक प्रसिद्ध जिला। यह अक्षा० २३° ५२'से २५° ३२' उत्तर तथा देशा० ८२° ७'से ८३° ३६' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरमें जौनपुर और काशी, पूरबमें बङ्गालके शाहाबाद और लोहरडंगा, दक्षिणमें सरगुजा सामन्त राज्य, पश्चिममें इलाहाबाद तथा रेवा महाराजका राज्य है। इसमें ७ शहर और ४२५७ गांव लगते हैं। शहरोंमें मिर्जापुर सबसे बड़ा शहर है। इसकी आबादी करीब ११ लाख है।

प्राकृतिक दृश्य।

संयुक्तप्रान्तमें मिर्जापुर जिला सबसे बड़ा है और प्राकृतिक विचित्रतासे भरा है। उत्तर दक्षिण इसकी लम्बाई १०२ मील तथा पूर्व पश्चिम इसकी चौड़ाई ५२ मील है। विन्ध्याचल और कैमूर पर्वत श्रेणियां इसको पूर्वी और पश्चिमी हिस्सेमें बांटती हैं। विन्ध्या श्रेणीके उत्तर गङ्गा किनारेकी जमीन पंकोंसे भरी है। इस भागकी जमीन समतल है। दक्षिण भाग क्रमसे ऊंचा होता हुआ विन्ध्याचल पहाड़की तराई हो कर चला गया है। इस भागमें ऊंची नीची बहुत-सी तराइयां दिखाई देती हैं। विन्ध्याचल और चुनारके पासकी जमीन बहुत कुछ समतल है।

गङ्गाके दक्षिण किनारेसे शोन नदीके पास तककी तराई ७० मील फैली हुई है। यह समतल क्षेत्रसे ३००-से ८०० फीट तक अधिक ऊंची है। इस तराईके बीचसे कर्मनाशा नदी निकली है।

कर्मनाशा नदी पहले धीमी चालसे बह कर केरामगौर परगनेमें गङ्गाजीसे मिलनेसे पहले चौड़ी हो गई है। यह स्थान काशीके हिन्दू राजाओंके वंशपरम्परासे शिकारका जङ्गल है। इसे नौगढ़ तालुका भी कहते हैं। इस भागमें हरे भरे वृक्षोंसे सुशोभित छोटी छोटी पहाड़ियां सुन्दरताका अपूर्व चित्र दिखाती हैं। यह भाग जङ्गलों और पहाड़ोंसे भरा है और इसमें अनेक छोटी छोटी पहाड़ी नदियां कलकल नाद करती हुई बहती हैं। यह तालुका प्रायः जङ्गलोंसे भरी है। यहांकी नदियोंमें कर्मनाशा और चन्द्रप्रभा प्रधान हैं। कर्मनाशा नदी ऊंचे स्थानसे अनेक जलप्रपातोंकी सृष्टि करती हुई समतल भूमिमें बहती है। जल-प्रपातोंमें देव-द्वारी और छानपाथर अत्यन्त प्रसिद्ध और रमणीय हैं। चन्द्रप्रभा नदीके पूर्वद्वारी नामक एक जलप्रपात है।

इस विभागके बाद शोन नदीके पासकी भूमि ही विशेष उल्लेखनीय है। यहां बहुत-सी छोटी छोटी घाटियां हैं। इनमें किवाइघाटी अत्यन्त रमणीय है। इसके दक्षिणमें सिंग्रौलीकी तराई है, जिसमें पत्थर कोयलेके बहुत स्तर मिलते हैं।

जङ्गली जानवरोंमें बाघ, चीते और भालू बहुतायतसे मिलते हैं। सांभर, हायना, भेड़िये, जंगली सूअर, चित्रमृग, नीलगाय तथा कृष्णसार आदि अनेक तरहके जन्तु यहां पाये जाते हैं। इस देशमें शिकारी और जलचर पक्षी अक्सर नहीं दीख पड़ते।

खेती और उपज।

गङ्गाके पासकी भूमिको छोड़ दूसरे दूसरे स्थानमें खेती नहीं होती। समूचे प्रदेशकी प्रायः आधी जमीन पर किसी राज्यकी मालगुजारी निश्चित नहीं है। इसको वृषि परगना कहते हैं। इस परगनेमें काशी, सिंग्रौली तथा कान्तित् इन कई राजोंके राज्यके कुछ अंश हैं। यहां धान, गेहूं, जौ आदि अनेक प्रकारके अन्न उपजते हैं। बसन्त ऋतु रब्बी और शरद ऋतु खरीफ काटनेका समय है। सभी जगहोंमें जौ खूब लगता है। वर्षाकालके अलावा भी पानी पड़ता है। लेकिन बसन्तमें प्रायः पानी नहीं पड़ता। अतएव बड़ी आसानीसे खेती चलती है। उपजका तृतीयांश खरीफ फसल है। इसके

अलावा बाजरा और जुआर भी बहुतायतसे होता है। अनेक स्थानोंमें अफीमकी खेती होती है। गढ़वालके पास पान खूब उपजता है।

कलकत्ते और बम्बईको छोड़ मिर्जापुरके जैसा वाणिज्य प्रधान स्थान दूसरा और नहीं है। कुछ समय पहले गल्ले और रुईके व्यापारके लिये मिर्जापुर भारतमें पहला स्थान समझा जाता था। लेकिन बम्बई-जब्बलपुर रेलवेके खुलने पर यहांका व्यापार बहुत कम हो गया है। तो भी इस प्रदेशको व्यापारका एक प्रधान केन्द्र कह सकते हैं। यहांसे पीतलके बरतन, लाह और दरी बहुत जगहमें भेजी जाती है। इस जिलेके उत्तर इष्ट-इण्डिया-रेलवे और गङ्गा रहनेके कारण व्यापारमें विशेष सुविधा हुई है। ग्रैण्ड-ट्रंक रोड और दाक्षिणात्यके राजपथके कुछ भाग इस जिले हो कर गये हैं। अनेक कारणोंसे मिर्जापुरमें कई बार दुर्भिक्ष हुआ जिससे बहुतेरे लोग कराल कालके ग्रास बने।

आज कल बहुत जगहोंमें जङ्गल काट खेती बढ़ाई जा रही है, लेकिन अभी तक दो तिहाई जमीन जङ्गलोंसे भरी है। सरकारके बन्दोबस्ती महालकी मालगुजारीको पत्तिदारी कहते हैं। काशीराजके अधीन जो पतनीदार हैं मंजूरीदार उनका नाम है। जमींदारके नीचे इन्हींका स्थान है। ये लोग किसानोंसे मालगुजारी वसूल करते हैं। यहांके किसानकी हालत और जगहोंसे अच्छी है। लेकिन ये लोग बड़े आलसी होते हैं। पानी नहीं पड़ने पर सिंचाईसे खेतीकी उन्नतिकी चेष्टा ये नहीं करते। इसलिये दक्षिणके गृहस्थ लोग अकालके दिन बड़ी मुसीबतमें पड़ जाते हैं।

इतिहास।

मिर्जापुर जिला काशी-प्रदेशका एक भाग समझा जाता है। अतएव इसका पुराना इतिहास काशीराज्यके इतिहासमें मिला हुआ है। मिर्जापुर शब्द किसी मिरजाके नामसे लिया गया है। अतएव खास मिर्जापुरका ब्योरा मुसलमानी सल्तनतके समयसे चला है। मिर्जापुरका पुराना इतिहास चुनार या चरणाद्रिगढ़के सम्बन्धमें कुछ दिया गया है। चुनार देखो।

प्राचीन कालमें मिर्जापुर हिन्दू राजोंके अधीन था। विजयगढ़ और चरणाद्रिगढ़ आदि शब्दोंके ब्योरेसे तथा विन्ध्याचलके पासवाले प्रदेशमें खण्डहरोंके देखनेसे इसके पुराने इतिहासका बहुत कुछ पता चलता है।

विन्ध्याचलकी तराईमें दुर्भेद्य प्रसिद्ध चुनारगढ़ बना हुआ है जिसे गंगा अपने जलसे पवित्र करती है। कहा जाता है, कि द्वापरयुगमें कोई देवता हिमालयसे कुमारी-अन्तरीपको जा रहे थे। रास्तेमें उन्हें गंगा-तटवर्त्ती विन्ध्याचलकी तराई मिली। वहां कुछ काल उन्होंने विश्राम किया। उन्हींके चरणचिह्नसे चुनार या चनार नाम हुआ है।

उज्जैनके राजा विक्रमादित्यके भाई भर्त्तृहरिने राज्य भोगका त्याग कर विन्ध्याचलमें बहुत दिनों तक योगाभ्यास किया था। आज भी उनका मन्दिर मौजूद है जो इस स्थानका माहात्म्य बतलाता है। भर्त्तृनाथका मन्दिर पत्थरोंका बना है। इसकी शिल्पकला देखने योग्य है।

पश्चात् गङ्गाजल और विन्ध्याचलकी इस रमणीय और प्रशान्त भावोंसे भरी सुन्दरता पर मोहित हो पृथ्वीराज इस प्रदेशमें रहने लगे थे। कुछ ही दिन बाद खैरउद्दीन सुबुक्तगीनने मिर्जापुर पर अधिकार किया और मुसलमानी शासन चलाया। फिर कुछ समयके बाद स्वामिराज नामके किसी हिंदू राजाने मिर्जापुर विजय किया था। चुनारगढ़के तोरणद्वार पर एक स्थानमें एक शिलालिपि है जिसमें १३३० सम्वत् (१२७३ ई०) खुदा हुआ है। इस शिलालिपिसे उक्त घटनाका प्रमाण मिलता है।

इसके बाद महम्मद साहबके रोहिल-सेनापति साहबुद्दीनने पूर्णरूपसे यहां मुसलमान राज्य स्थापित किया। इस वंशके एक शासककी विधवा स्त्रीसे विवाह कर शेर खां या शेरशाहने १५३० ई०में इस स्थान पर अपना अधिकार जमाया। १५१६ ई०में हुमायूंने रूमी खांकी सहायतासे ६ महीने इस स्थानको घेर पीछे दखल कर लिया। शेरशाहने चुनारगढ़में आश्रय लिया। कुछ दिन बाद यह स्थान फिर उसके हाथ लगा।

१५७५ ई०में मुगलोंने फिर चुनारगढ़ पर कब्जा कर अपने शासनको दृढ़ कर लिया। १७५० ई०में काशीराज

बक्सरामने मिर्जापुर पर अधिकार किया। अंग्रेज सेनापति मेजर मनरोने बक्सर युद्धके बाद ही चुनारगढ़में घेरा डाला। १७७२ ई०मे चुनारगढ़ अंग्रेजी शासनमें लाया गया।

१७८१ ई०में लार्ड वार्नहेष्टिंग्सने काशीराज चेतसिंहको राजच्युत करनेकी चेष्टा की। फलतः राजा मेजर पपहामसे लतीफपुरमें पराजित हुए और ग्वालियर भाग गये।

पश्चात् अंग्रेजोंकी कृपासे महीपनारायणसिंह काशी और मिर्जापुर प्रदेशके राजा हुये। १८५७ ई०में मिर्जापुरमें सिपाहियोंका गदर हुआ। पहले मिर्जापुरके एक खजानचीने सिपाहियोंको उभाड़ा। ३री जूनको बनारसमें और ५वीं जूनको जौनपुरमें सिपाही बागी हुए। कर्नेल पद ८७ सौ पैदल सेना ले बलवा दबाने चले। ८वीं जूनको सिक्ख लोग इलाहाबादमें इकट्ठे हुए। दूसरे दिन बागी सिपाहियोंके हमलाके डरसे मिष्टर टूकरको छोड़कर समूची अंग्रेजी फौजने चुनारगढ़में आश्रय लिया। १० जूनको सेनापति मिष्टर टूकरने बागियों पर हमला किया और उन्हें हराया। ११ जूनको मद्रासी अंग्रेजी फौज मिर्जापुर आई तथा इसने जल-डकैतोंके एक खास अड्डे गौरको ध्वंस किया। भदोही परगनेके ठाकुर सरदार आदवन्तसिंह बागी हुए। पीछे वे पकड़े गये और फांसी पर लटका दिये गये।

ठाकुर लोगोंने बदला लेनेके लिये वहांके ज्वाइंट मैजिष्ट्रेट पर हमला किया और उनको तथा दो और नीलहे गोरोंको पाली गांवकी कोठीमें मार डाला। २६ जूनको बन्दा और फतहपुरके तथा ११ अगस्तको दानापुरके बागी सिपाही लोग मिर्जापुरमें आ पहुंचे। अंग्रेजी सेनासे हार खा वे लोग मिर्जापुरसे भाग गये। ता० ८ को बागी जमींदार कमरसिंह मिर्जापुर आये और ता० १६ को नागर नामक स्थानसे ५००० देशी सिपाहियोंका दल बागी हो मिर्जापुर आया। १८५८ ई०के जनवरीमें सेनापति मिष्टर टूकरने विजयगढ़ नामक स्थानमें बागियों पर हमला किया और उन्हें हराया। बागी लोग शोन नदीके उस पार भाग गये। तभीसे मिर्जापुरमें शान्ति विराजती है।

मिर्जापुरमें प्राचीन कीर्त्तिके अनेक खण्डहर मिलते हैं। इसके पास ही दुर्गाकुंड नामका एक झरना है। इसके उत्तरमें कामाक्षा देवीका मन्दिर है। पर्वत खंडों पर बहुत-सी खुदी हुई मूर्त्तियां अभी तक वर्त्तमान हैं जो इस स्थानकी प्राचीनताका परिचय देती हैं। यहांके सिंह, घोड़े और हाथीकी प्रतिमायें अत्यन्त सुन्दर हैं।

मन्दिरके दूसरे पार्श्वमें गुप्तवंशीय राजाओंके समयके खुदे हुए बहुतसे शिलालेख हैं। बहुतोंमें चन्द्र और समुद्र नाम अंकित है। यह देख पुरातत्त्ववेत्ता अनुमान करते हैं, कि ये चन्द्रगुप्त और समुद्रगुप्तकी लीपियां हैं। हर साल यहां दुर्गापूजाके बाद एक मेला लगता है। पूर्व समयमें जो सब यात्री इस दुर्गामन्दिरके दर्शनार्थ आये थे उनके नाम अभी तक पर्वत पर खुदे हुए हैं। इन लीपियोंमें अधिकांश गुप्तवंशके पहलेका लिखा हुआ है।

मिर्जापुर-तहसीलके अन्दर बरियाघाट नामके स्थानमें हिन्दुओंका प्रसिद्ध विन्ध्याचल तीर्थ है। यहां विन्ध्येश्वरी या विन्ध्यवासिनी देवीका पुराना मन्दिर है। पुरानी कथासे मालूम होता है, कि विन्ध्याचलमें विलुप्त पम्पापुरकी राजधानी थी। प्रवाद है, कि इस स्थानमें १५० दुर्गाके मन्दिर थे। औरङ्गजेबके समयमें वे सब नष्ट किये गये। पुरातत्त्ववेत्ता कनिंहम, फर्गुसन और फूरर आदि कहते हैं, कि यहां प्राचीन समयमें एक बड़ी राजधानी थी। परन्तु उस पम्पापुरका इतिहास घोर अन्धकारसे ढका है। विन्ध्याचलसे थोड़ी दूर पर रामेश्वरनाथका वर्त्तमान मन्दिर है। इसके पासमें पत्थर-मूर्त्तियोंके अनेक टुकड़े पाये जाते हैं। उनमें एक देवीमूर्त्ति कौतुहलोद्दीपक वस्तु है। यह गोदमें बालक लिये किसी पूर्णांगी युवतीकी प्रतिमूर्त्ति है। ये अपने कोमल अंगोंमें पुत्र लिये सिंहासन पर बैठी हुई है। मुखका आकार बिगड़ा हुआ है। हिन्दूद्रोही बौद्ध लोगोंने इसके मुखको बदल कर तीर्थङ्कर या बुद्धदेवका मुख गढ़ना चाहा था। दहिना हाथ केहुनीसे नीचे टूटा हुआ है। बायें हाथमें सुकुमार शिशुमूर्त्ति देखनेसे मालूम होता है, कि बौद्ध लोगोंको दया आई और इसीलिये प्राचीन हिन्दू कीर्त्तिका चिह्न अभी भी वर्त्तमान

है और बौद्ध समयके पहलेके स्थापत्य शिल्पका परिचय दे रहा है।

प्रतिमाके पीछे आज तक पत्रों पुष्पोंसे लदा हुआ एक वृक्ष वर्त्तमान है। सिंहासनके नीचे एक सिंहकी मूर्त्ति है। प्रतिमाके बायें और दाहिने सात सखीको मूर्त्तियां हैं। दो, आकाशमें उड़ती अवस्थाके खुदे हुए चित्र हैं और शेष ५ मूर्त्तियां दोनों ओर खड़ी हैं। यहांके लोग इन्हें संकटादेवी कहते हैं। कनिंहमका कहना है, कि यह षष्ठोदेवीकी प्रतिमा है। डाक्टर फूरर भी कहते हैं वह सम्भवतः महावीरनाथकी माता त्रिशलाकी प्रतिमा हो सकती है।

इसे छोड़ और भी अनेक स्थानोंमें प्राचीन कीर्त्तिके खण्डहर हैं। आधेश्वर पर्वत पर एक दुर्भेद्य गढ़का निदर्शन है। उसके चारों ओर बहुतसे गह्वर मौजूद हैं। वहांके कोल उसमें उतरनेका साहस नहीं करते। कहा जाता है, कि विजयपुरके एक राजा एक गह्वरमें सीढ़ीसे उतरे थे। उसमें पार्वतीकी एक प्रतिमा है। आधेश्वरका पहाड़ी-गढ़ कालञ्जर और अजयगढ़के समान सुरक्षित है और लोगोंका उस पर चढ़ना कठिन है। अर्द्धा नदी इससे थोड़ी दूरी पर बहती है। उसी नदीके नाम पर गढ़ और पर्वतके नाम रखे गये हैं। अथवा यहांके अर्द्धेश्वर शिवकी मूर्त्तिके नाम पर गढ़का नाम पड़ा होगा।

रेहन्द और शोनके सङ्गम पर बालंद-राजवंशकी राजधानीका खण्डहर दीख पड़ता है। पहले यह राजधानी काशीके समान थी। पुराने गढ़के खण्डहरोंके बीच एक स्थानमें वर्त्तमान गढ़ बनाया गया है। उसमें जो पारसी अक्षर खुदे हैं उसे पढ़नेसे मालूम होता है, कि राजा मदन शाहके भाई माधवसिंहने १६१६ ई०में यह गढ़ बनवाया था। बलवन्तसिंहके समयमें इस गढ़ और विजयगढ़ दोनोंकी मरम्मत हुई थी। लोग कहते हैं, कि बालन्द राजाओंकी आज्ञासे असुरोंने यह गढ़ बनाया था।

इससे कुछ दक्षिण बेलखारा गांवके मैदानमें एक स्मारक स्तम्भ है। उसके ऊपर एक गणेश-मूर्त्ति और नीचे खोदी हुई दो शिलालिपियां हैं। इन दो शिलालिपियोंके मध्यभागमें पक्षी और घोड़ेके चित्र हैं। ऊपरका शिलालेख ११८६ ई०में कन्नौज राज लक्ष्मणदेवके समयका खुदा हुआ है। इससे साफ मालूम होता है, कि राठौरवंशी कन्नौजराज जयचन्द्रके मुसलमानोंसे हारनेके तीन वर्ष बाद यह शिलालिपि लिखी गई थी। उस समय मुसलमान लोग कन्नौजकी वास्तविक स्वाधीनताको नहीं छीन सके थे।

यहांसे कई कोस पूरब बहुतसे चौखूंटे स्मारक स्तम्भ हैं। उनसे उस समयकी सामाजिक पद्धतिका बहुत कुछ पता चलता है। कई स्तम्भों पर स्त्री और पुरुष एक दूसरेका हाथ पकड़े हुए हैं तथा कहीं कहीं केवल स्त्रियां ही वीणा बजाती हुई तरह तरहसे नाचती हैं। फिर कहीं यज्ञ समयके पशु वधका चित्र वर्त्तमान है। कितने ही स्तम्भों पर वराह और नरसिंह अवतारकी अनेक घटनाओंका चित्र अंकित है। कहीं गोपियां दही मथ रही हैं। अनेक स्तम्भों पर हनुमानका शरीर अंकित है। कहीं भैंसे पर चढ़ी हुई महिषासुर मर्दिनीकी टूटी प्रतिमा है। पश्चिमी विद्वान् कहते हैं, कि ये सब शिल्प कीर्त्तियां शबर राजाओंके राज्यकालमें रची गई थी।

अष्टभुज नामक स्थानमें अष्टभुजादेवी और पर्वतीकी बहुतेरी प्रतिमायें पाई जाती हैं। इस स्थानमें सीताकुण्ड नामका एक गरम झरना है। मिर्जापुर जिलेमें इस प्रकार प्राचीन कीर्त्तियोंके अनेक चिह्न अनेक स्थानोंमें पड़े हुए हैं।

२ उक्त जिलेकी पश्चिमी तहसील। यह उपरौध, चौरासी, छियानवे और कान्तित परगनेका कोन, तथा कसवार परगनेका तालुक मझवा ले कर बनी हुई है। यह अक्षा० २४° ३६′ से २५° १७′ उ० और देशा० ८२° ७′ से ८२° ५०′ पू०के बीच अवस्थित है। इसमें ६६४ गांव तथा २ शहर लगते हैं। इसका रकबा ११८५ वर्गमील है। इसकी आबादी करीब सवा तीन लाख है। हरएक वर्गमीलकी आबादी २८१ है। तहसीलका बड़ा हिस्सा गंगाके दक्षिण है। गंगा इस भागकी उत्तरी सीमा है। अतएव इसका अधिकांश भाग विन्ध्याचलकी अधित्यकामें पाता है। इसकी दक्षिणी भाग बेलन नदीसे सींचा जाता है। दक्षिण-पश्चिमी सीमाके पास कैमूर पहाड़ियां अधित्यका पर एकाएक उठी हुई है।

३ उक्त जिलेका प्रधान शहर। यह अक्षा० २५° १' उत्तर तथा देशा० ८२° ३५' पूरबके बीच गङ्गाके किनारे बसा हुआ है। जनसंख्या ६० हजारके करीब है। भारतमें वह शहर वाणिज्य प्रधान कह कर प्रसिद्ध है। लेकिन अनेक स्थानोंसे रेलवेका संयोग होनेके कारण इसकी प्रधानतामें धक्का पहुंचा है। गङ्गा किनारेसे सुन्दर मन्दिर, मसजिद, बड़े बड़े मकान तथा नौकायें दर्शकोंके चित्तको मोहती हैं। यहा अनेक धनवान् व्यापारी रहते हैं। यहा यूरोपियनके गिरजे तथा अनेक तरहके विद्यालय हैं। पहले यहा फौजकी छावनी थी। लेकिन सिपाहियोंके गदरके बाद अब यहां फौज नहीं रखी जाती।

यहां चपड़े लाखके (Shellac) कारबारमें ८०००से अधिक लोग अपनी जीविका-निर्वाह करते हैं। यहां पीतल और पत्थरके बरतन, खिलौने, गलीचे, अनेक प्रकारके गल्ले, चीनी, कपड़े, धातु, फल, मसाले, तम्बाकू, नमक, रुई और घीका व्यवसाय जोरों चलता है। यहां इष्ट इंडिया रेलवेका एक स्टेशन है।

मिल् (जान स्टुअर्ट)—सुप्रसिद्ध अंगरेज दार्शनिक। इन्होंने लण्डननगरमें सन् १८०६ ई०में जन्म लिया था। इनके पिता जेम्स मिल् एक गरीब किसानके लड़के थे। किन्तु किसी धनवान् स्त्रीके साहाय्यसे एडिनवर्गके विश्व विद्यालयमें उन्होंने शिक्षा पाई थी। इसके बाद वे ग्रन्थ रचनाके काममें लगे। उन्होंने पहले अनेक शास्त्रोंका अध्ययन कर पाण्डित्य लाभ किया था। उनके बनाये हुए बहुतसे उपादेय ग्रन्थ विद्यमान हैं जिनमें भारतवर्षका इतिहास ग्रन्थ अतीव प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ में उन्होंने भारतियोंके साथ आन्तरिक सहृदयता और समवेदनाका परिचय दिया है। वे स्वाधीनचेता तथा स्पष्टवादी थे। साधारणके मनोरञ्जन करनेके लिये अपने मतका परिवर्त्तन नहीं करते थे।

उनकी ये सारी गुणावली और प्रकृति पुत्रमें अधिक आ गई थी। जान स्टुअर्ट मिल् उनके ज्येष्ठ पुत्र हैं। जान स्टुअर्टके लिये उन्होंने जैसी शिक्षाकी सुव्यवस्था कर दी थी, वैसी सबके भाग्यमें नहीं होती। स्नेहमय परिजनवर्गकी शान्तिशीतल गोदमें बैठ कर जान विद्यारूपी कल्पवृक्षका आनन्द लूटनेमें समर्थ हुए थे। घर ही उनका विद्यालय था। उच्च शिक्षा पानेके लिये उन्हें विश्वविद्यालयकी सीमाको पार करना नहीं पड़ा था।

छात्रजीवन।

जान स्टुअर्ट मिल्के पिताने इनकी ३ वर्षकी अवस्थामें ही व्याकरणकी शिक्षा दी थी। एक वर्षमें ही इन्होंने यूनानी भाषामें अनुवाद करना आरम्भ कर दिया और शीघ्र ही 'ईशप' रचित कथामालाका अध्ययन किया। इस तरह विद्यामन्दिरकी प्राथमिक सीढ़ी पर चढ़ कर मिलने ८ वर्षमें हिरोदोतास, जेनोफन, सक्रेटिस, डायूजिनिस, आइसोक्रेटिस और प्लेटो आदि प्रसिद्ध ग्रन्थकारोंके विशाल ज्ञानभाण्डारमें प्रवेश किया था। जेम्स पुत्रको एक मिनटके लिये भी आंखसे अलग करते न थे। सोने, खाने, पढ़ने और टहलनेके समय सदा पुत्रके साथ रहते थे। मिल समवयस्क बालकोंके साथ एक बात भी करने नहीं पाते थे। इसलिये पिताको सदा पुत्रके शैशवावस्थासुलभ कौतुहलकी मीमांसा करनी पड़ती थी। पिता पुत्रको केवल पाठ अभ्यास करा कर ही चुप नहीं हो जाते थे, पुत्रकी प्रच्छन्न प्रतिभा उद्दीपित करनेके लिये पुस्तकके कठिन अंशोंको स्वयं समझ लेनेको कहते थे।

प्रातःकाल और संध्याको जेम्स पुत्रको साथमें ले कर टहलनेके लिये निकलते थे। वे कहानियों द्वारा सारगर्भित उपदेश देते थे। जान स्टुअर्ट संध्या समय पिताके गणितशास्त्रका अध्ययन करते थे सही, किन्तु इस विषयमें उनका जरा भी अनुराग न था। टहलनेके समय भी पुत्रसे पढ़ा हुआ पाठ पूछते थे। इस तरह थोड़े ही दिनमें प्रेमसय पिताके परमयत्नसे रावर्टसन ह्यूम, गीवन, प्लुटार्क और वर्नेट आदिका इतिहास पढ़ गये। जेम्स टहलनेके समय मौखिक धर्मनीति, राजनीति मनोविज्ञान और सभ्यताका इतिहास-सम्बन्धीय जो कौतुहलोद्दीपक उपदेश देते थे, उनको दूसरे दिन टहलते समय ही पूछ लिया करते थे और पुत्रकी अध्ययनप्रवृत्ति बलवती बनानेके लिये मिल्से नाना शास्त्रोंके सारगर्भ प्रसङ्गकी अवतारणा करते थे। इसके अनुसार मिल घर लौट आनेके बाद पिताके मुखसे सुने

ग्रंथोंको पढ़े विना नहीं रहते। जेम्स पुत्रको नाटक और उपान्यास पढ़ने नहीं देते थे। आमोदजनक पुस्तकोंमें केवल रविन्सन क्रसोको पढ़ सकते थे।

आठ वर्षकी अवस्थामें मिल यूनानी व्याकरण, साहित्य और इतिहासमें विशेष व्युत्पत्ति लाभ कर होमरका इलियड पढ़ने लगे। इसी समयसे वे लैटिन भाषा भी सीखने लगे। सिवा इसके इन्हें अपने छोटे छोटे भाई बहनोंको भी लैटिनकी शिक्षा देनी पड़ती थी। इससे भी इनका विशेष उपकार होता था। दूसरेके समझाये जाने पर पढ़ाये हुए विषयकी स्वयं दृढ़ता हो जाती है। इसके कुछ दिन बाद पितासे युक्लिडकी ज्यामिति तथा बीजगणित पढ़ने लगे। इस तरहसे २२ वर्षकी अवस्थामें अलौकिक प्रतिभासे मिल यूनानी, लेटिन भाषाके प्रायः सभी ग्रन्थोंका अध्ययन कर लिया। मानो स्वाभाविक संस्कारके बलसे प्राक्तन-विद्यायें भी उनकी आयत्त हुईं। मिलने अपने जीवन-चरितमें अपनी शिक्षाके विषयमें लिखा है,—"पाण्डित्य मण्डित पुत्रवत्सल पिताके विशेष यत्न और ध्यान देनेसे ही उन्होंने यह सफलता प्राप्त की थी।"

मिलको पृथ्वीके इतिहास पढ़नेमें बड़ा आनन्द आता था। यूनान और रोमके इतिहास सम्बन्धीय सभी ग्रन्थोंको उन्होंने पढ़ डाला था। इनमें मिरफोर्डका यूनान और फर्गुसनका रोम उनका प्रियपाठ था।

मिलने बाल्यावस्थामें ही रोमका इतिहास, पृथ्वीका इतिहास, इङ्गलैण्डका इतिहास, और रोमकी शासन-प्रणाली नामक इतिहासकी चार पुस्तकें बनाईं। इन सब पुस्तकोंमें उन्होंने प्रजातन्त्रका ही पक्ष समर्थन किया था।

पिताकी आज्ञासे मिल किशोर अवस्थामें ही कविताकी रचना करने लगे। किन्तु वे कवि न हो सके। जेम्सने पुत्रको कवि बनानेके लिये होमर, होरेस, वर्जिल, सेक्सपियर, मिल्टन, टामसन, पोप, स्पेनसार, स्कार, ड्राइडेन आदि कवियोंकी कविता पढ़ाई थी। किंतु चिन्तामणि प्राप्त करनेमें उत्सुक मिल गम्भीर चिन्ताशीलताको छोड़ कर काव्यभावकी तन्मयता प्राप्त न कर सके। वे विज्ञान और रसायनशास्त्रके परीक्षित विषयोंका पाठ और उनकी परीक्षा करनेमें लग गये।

१२ वर्षकी अवस्थामें मिल बाल्यकालकी शिक्षा समाप्त कर चिन्ता राज्यका पथ खोजने लगे। वे इस समयसे ही तर्कशास्त्रकी आलोचनामें लग गये। अर्गोनन् (Organon) द्वारा रचित तर्कशास्त्रको उन्होंने पहले पहल पढ़ा था। तर्कविद्याकी युक्तियां उनके चिन्ताप्रवण चित्तमें आनन्दकी वृष्टि करने लगीं। इसके बारेमें उन्होंने अपनी जीवनीमें लिखा है,—"तर्कशास्त्रकी तरह कोई भी शास्त्र बुद्धिको परिमार्जित कर नहीं सकता।

उन्होंने इसी समय प्रसिद्ध यूनानी वक्ता डिमस्थिनिसकी "फिलिपिकस" नामकी वक्तृता पढ़ी और यूनान देशकी रीति नीतिकी जानकारी प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने तासितास, जुविनल और कुइण्टिलिअन आदि विख्यात ग्रन्थकारोंकी पुस्तकोंको पढ़ा। फिर प्लेटोके अर्जियानने 'प्रोटेगोरस' और 'रिपबलिक' या साधारणतन्त्र नामके नये ग्रन्थोंको पढ़ने लगे। मिल स्वयं कह गये हैं, कि आत्मोत्कर्ष लाभ करने जा कर प्लेटोका ग्रन्थ न पढ़नेसे शिक्षाकी समाप्ति नहीं होती।

इसी समय सन् १८१८ ई०में उनके पिताने भारतवर्षका इतिहास खतम कर डाला। यह पुस्तक भी मिलकी शिक्षाका प्रधान उपादान हुई थी। यह पुस्तक पढ़ कर वे हिन्दुओंकी प्राचीन सभ्यता और समाजपद्धतिकी जानकारी प्राप्त कर हिन्दुओंके आन्तरिक हितैषी हो गये।

इसके कुछ दिनोंके बाद रिकार्डोकी अर्थनीति और राजनीतिकी एक पुस्तक उन्होंने लिखी। जेम्सने पुत्रकी चिन्ताशक्ति उत्तरोत्तर मार्जित करनेके लिये मिलको इस पुस्तककी मोटी-मोटी बातोंकी मौखिक शिक्षा देना आरम्भ किया। पीछे पुत्रको रिकार्डोकी पुस्तकके साथ आडाम स्मिथकी बनाई अर्थनीतिशास्त्रको मिला कर उत्कर्षापकर्षकी समालोचना करनेको कहते थे। जेम्स जैसे शिक्षागुरु पृथ्वीमें विरले ही आदमीको मिला होगा। फिर मिलकी तरह छात्र भी संसारमें विरला ही होगा। विधाताके विचित्रविधानसे पितापुत्र गुरु-शिष्यरूपसे ज्ञानराज्यके दुर्गमदुर्गमें बढ़ने लगे। इस तरह मिलने १४ वर्षकी अवस्थामें विद्याभ्यास समाप्त कर दी। इस समय वे अब पिताके छात्र नहीं रहे; स्वयं

शिक्षक बन बैठे। १४ वर्षकी अवस्थामें वे यूनानी, लेटिन और अंगरेजी भाषाके व्याकरण, साहित्य, काव्य, अलङ्कार, इतिहास, विज्ञान और दर्शन आदि शास्त्रोंको पढ़ कर वृहत् ज्ञानवृक्षकी ऊंची शाखा पर चढ़ गये। वे कभी स्कूल नहीं गये और न पिताके सिवा किसी अन्य शिक्षकके पास ही पढ़े।

शिक्षा सम्पूर्ण कर मिल देशपर्यटन करने निकले। पिताने पुत्रको उपदेश दिया,—"भ्रमण करने पर तुम नाना देशोंको देखोगे, तुमको दिखाई देगा, कि तुम्हारी उम्रके लड़के तुमसे बहुत पीछे हैं। यह देख कर तुम अभिमान मत करना। फिर विद्यालोचनासे कभी विरत भी न होना, क्योंकि शास्त्र अनन्त और वेदितव्य विषयकी सीमा नहीं है।

भ्रमण और विद्वज्जन सम्मेलन।

मिल पहलेसे ही भ्रमणप्रिय थे। लण्डनमें जन्म लेने पर भी वे कभी कभी शस्यश्यामल पृथ्वीकी शोभा देखनेके लिये बाहर गांवोंमें निकल जाते थे। इस समय सन् १८१३ ई०में पिताके मित्र सुप्रसिद्ध बेन्थामके साथ मिलने अक्सफोर्ड, बाथ, ब्रिष्टल, प्लीमाउथ आदि नगरोंका परिभ्रमण कर नाना उपदेश लाभ किये। इस समयसे मिल बेन्थमके साथ सालमें ६ महीने एक साथ रहते थे। इंग्लैण्डके नाना स्थानोंका परिभ्रमण कर मिल बेन्थमके साथ फ्रान्स गये। उन्होंने फ्रान्सकी पिरेनिस पार्वत्य-उपत्यकामें रह कर जड़ प्रकृतिके अद्भुत सौंदर्यका अवलोकन किया। यहां वे फ्रान्सीसी भाषा सीख कर उक्त भाषाके विज्ञान, दर्शन और साहित्यका अध्ययन करने लगे। फ्रान्सके विद्वानोंसे भेंट कर नाना तरहके उपदेश लाभ करने लगे। एक वर्ष वहां रह जानेके बाद वहांके प्रसिद्ध दार्शनिक सेण्ट साइमनके साथ उनकी मित्रता हुई। इस समयसे उनके हृदयमें स्वाधीन चिन्ताकी लहर लहराने लगी।

बेन्थम, ह्यूम, रिकार्डो आदि महामहोपाध्याय जेम्स-मिलके मित्र थे। मिलने अपने पिताके मित्रोंकी पुस्तकोंको पढ़ने और कथोपकथनसे अपनी शैशवावस्थासे ही उनके दिखाये पथ पर चलने सीखा था। इनमें बेन्थमकी नीतिने ही उनके चिन्ता-केन्द्रको स्थापित किया था। पीछे ग्रोट, चार्लस् अष्टिन आदि पण्डित मण्डलीके साथ मिलकी घनिष्ठता उत्पन्न हुई। मिल इतने दिनों तक घरमें ही अध्ययन करते आये थे, किन्तु अब उन्होंने समाजके विद्वानोंके साथ सम्मिलित हो कर नये जीवनमें प्रवेश किया। किन्तु सभी अवस्थामें क्रियानुशीलन उनका स्थिर लक्ष्य रहा।

कार्यक्षेत्र और ग्रन्थावली।

प्रगाढ़ पाण्डित्य प्राप्त कर मिलको क्लर्कका काम करना पड़ा था। जगत्में सर्वत्र ही शिक्षा कार्यका यह वैषम्य दिखाई देता है। सन् १८२३ ई०में अपनी १७ वर्षकी अवस्थामें मिल इष्ट-इण्डिया-कम्पनीके अधीन लेखक विभागमें कर्मचारी नियुक्त हुए। पीछे सन् १८३७ ई०में देशीय सामन्त राजाओंके साथ पत्रादि लिखनेके कार्यमें नियुक्त हुए। फिर इसके बाद उन्होंने कम्पनीके परीक्षा विभागके सर्वाध्यक्षका पद प्राप्त किया। किन्तु वे यह काम अधिक दिनों तक कर न सके। सन् १८५८ ई०में इष्ट इण्डिया कम्पनीका राजत्वकाल समाप्त होनेके साथ साथ उनकी नौकरीका भी अन्त उपस्थित हुआ। जब महारानी विक्टोरियाने भारतका शासन भार अपने हाथमें लिया, तब मिलने तीव्रभावसे उसका प्रतिवाद किया था। इसके विषयमें उनका मत यह था—"भारतवासियोंके प्रति अत्याचार करनेसे पार्लियामेण्ट उसका प्रतिविधान कर सकती है। किन्तु महारानीके प्रतिनिधि यदि भारतवासियोंके प्रति अत्याचार करेंगे तो निश्चय है, कि उन्हें अभियुक्त करनेका किसीको भी साहस नहीं होगा। उन्होंने रानीके अधीन कार्य पा कर उसे करना अस्वीकार कर दिया। मिलकी भविष्यद्वाणीने जो बड़ी सफलता प्राप्त की है सम्भव है, कि उससे शिक्षित भारतवासी सभी अवगत हैं।

मिल सन् १८६५ ई०में मजदूर-दलके प्रतिनिधि हो कर पार्लियामेण्टके सदस्य हुए। उन्होंने सर्वसाधारणके हितके लिये पार्लियामेण्टमें कई वक्तृतायें दी थीं। उनके समयमें ही रिफार्मबिल (Reform bill) या संस्कार आईन राजविधिमें परिणत हुआ था। मिलने पार्लियामेण्टमें स्त्री-प्रतिनिधि भेजनेका प्रस्ताव किया था, किन्तु यह प्रस्ताव उस समय कार्यरूपमें परिणत नहीं

हुआ। गुलामी प्रथाको ले कर अमेरिकावालोंमें गृह-विवाद उपस्थित हुआ था। उसमें गुलामी प्रथाके विरोधियोंके साथ इङ्गलैण्डके महानुभावोंने जो सहानुभूति प्रकट की थी, उनमे मिल अन्यतम हैं मिलने पुनः युनाइटेड स्टेट्स या युक्तराज्यके पक्षमें अपना मत प्रकट कर सहृदयता और विज्ञताका परिचय दिया था।

मिलने अपनी लेखनीसे अनेक ग्रन्थोंकी रचना की है। उन्होंने पहले सन् १८२३ ई०में Traveller और Chronicle नामक पत्रिकामें कई लेख लिखे।

इसके बाद उन्होंने अन्यान्य पत्र-पत्रिकाओंमें भी कितने ही गवेषणापूर्ण तथा गम्भीर लेख लिखे। तर्कशास्त्र और नीतिशास्त्रको छोड़ कर सन् १८५६ ई०से लगायत १८६१ ई०के भीतर उन्होंने स्वाधीनता (Liberty) हितवाद (Utiliterianism) और स्त्री जातिकी अधीनता (Subjection of Women) नामको तीन पुस्तकों की रचना की।

सन् १८५६-६०में प्रतिनिधि शासनप्रणाली (Representative Government) और हेमिल्टन द्वारा रचित दर्शनकी समालोचना की।

इसके बाद उन्होंने नेचर (Nature) और एकजामिनर (Examiner) नामकी पत्रिकाओंमें कई लेख लिखे।

मिल अपने अन्तिम जीवन तक ग्रन्थ-रचना तथा संशोधनके कार्यमें लगे हुए थे। इस समय इन्होंने मार्लेकी पाक्षिक समालोचनी पत्रिकामें कितने ही लेख लिखे।

अपनी पत्नीकी मृत्युके बादसे ही मिल वर्षमें दो बार आ कर लण्डनमें रहने लगे। उनकी लेखनी और जिह्वा परहित साधनसे कभी भी पराङ्मुख नहीं हुई। अधिकांश समय वे अपनी पत्नीकी कब्रके पास रह कर बिताते थे। यहां उन्होंने एक कुटी बना ली थी। पत्नीके शोकको उसकी गुणावलीको स्मरण कर घटाते थे। इसके बाद सन् १८७३ ई०के मई महीनेमें वहीं उनकी मृत्यु हुई। विद्वज्जगत्‌ने उनके वियोगमें व्यथित हृदयके साथ समवेदना प्रकट की थी। रमणी-संसारने उनके लिये अजस्र आंसू बहाये थे। मिलने भारतवासियोंके प्रति कितने प्रस्तावोंकी रचना कर पार्लियामेण्टमें आन्दोलन किया था उसके लिये भारतवासीमात्रको कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिये। अंगरेज-जाति दार्शनिक अग्रगण्य मिलको खो कर सुगभीर शोकमें निमज्जित हुई थी।

मिलका दार्शनिक मत वा नीतिशास्त्र।

१९वीं शताब्दीके अभ्युदयकालमें जिन महारथियोंने प्रतीच्यचिन्ताराज्यमें राष्ट्रविप्लव उपस्थित किया था, जान स्टुअर्ट मिल उनमें अन्यतम हैं। उन्होंने जिस समय जन्म लिया था, उस समयसे कुछ समय पहले मानवीय स्वत्व स्वाधीनताके सिद्धसेवक फ्रान्सीसी दार्शनिक भल्टेयर और प्रजातन्त्र प्रतिनिधि वाग्मिप्रवर मिरावों आदि मनस्वीगणकी स्वाधीनचिन्ता प्रसूत उन्मादनामय उद्दीपना मन्त्रकी अवश्यम्भावी फल, फ्रान्सके राजसिंहासनको चूर्ण और राजशक्तिको उन्मूलित कर लोमहर्षण फ्रान्सीसी विप्लवकी सृष्टि कर यूरोपमें प्रजातन्त्र-शक्तिकी साम्यसूचक विजयघोषणा कीर्त्तन कर रहा था।

इसी तरह जब मैं फ़काल, पेष्टालोजी, विलहम, मन-हम्बोलट, गेटे, भलटेयार और वेन्थम आदि महामहोपाध्यायोंकी स्वाधीन चिन्ताके उद्दीपन-मन्त्रसे चिरप्रचलित प्राचीन चिन्तारूपी दुर्गसे धुआं निकल रहा था, पीछे अगाध मनीषी मिलकी स्वाधीनता और हितवादके महामन्त्रसे चिन्ताराज्यका कुसंस्काराच्छन्न सुदृढ़ प्राचीन दुर्ग प्रज्वलित हो कर ध्वंसको प्राप्त हुआ। देवता और असुरगण अन्तर्हित होने लगे। ईश्वरका चिरप्रतिष्ठित न्यायका सिंहासन केवल कविकल्पित सा प्रतीत होने लगा। प्रजातन्त्र-शक्तिकी विजयदुन्दुभि सर्वत्र निनादित होने लगी। अब-लायें युक्तिके शस्त्रसम्पातसे गुलामीके दृढ़ बन्धनको छिन्न भिन्न कर सादर स्वाधीनतामयी विजयवैजयन्ती उड़ा कर समाजशृङ्खलाके विपर्ययसाधनमें कृतसङ्कल्प हुई। मिलका नीतिशास्त्र ही उन्नतिशील १९वीं शताब्दीके इस अभावनीय विप्लवका प्रवर्त्तक है।

मिलके दार्शनिक मतका विश्लेषण करनेसे उसमें ३ विषय सुस्पष्ट भावसे दिखाई देते हैं। इन्हीं त्रिधाराके अपूर्व सम्मिलनसे मिलका चिन्तास्रोत गठित हुआ था।

प्रथमतः उनके पिताके दी हुई धर्म और नीतिकी शिक्षाका बीज उनके हृदयमें अंकुरित हो चुका था। मिल सब तरहसे पिताकी दीक्षासे दीक्षित थे।

समाजकी अन्यान्य शक्तियां उनके चित्त पर अपना प्रभाव फैला न सकीं। जेमूसके हृदयमें धर्मचिन्ताके स्वाधीन भावका सबसे पहले उदय हुआ था। उन्होंने ईश्वरके स्वतःसिद्ध अस्तित्वमें विश्वास न कर उसे प्रमाणसापेक्ष स्वीकार किया था। किन्तु वे चार्वाक आदि प्राचीन दार्शनिककी तरह नास्तिक नहीं थे। क्योंकि, उन्होंने कहा है, कि इस परिदृश्यमान जगत्का आदि कारण अज्ञात और अज्ञेय है। उन्होंने अपने पुत्रको शिक्षा दी थी, कि ईश्वरने संसारमें वैषम्यकी सृष्टि की है। वे रोग, शोक आदि तितापोंसे मनुष्यको अनवरत दग्ध कर रहे हैं। वे कभी भी सर्वशक्तिमान् नहीं हो सकते। उनका सदा न्यायवान् और दयामय होना असम्भव है। इस तरह वे खृष्टान धर्मके विरोधी हो उठे थे। उनका मत यूनानी दार्शनिकोंके अनुरूप था। ष्टोयिक (Stoic), एपिक्यूरियन (Epicurian) और सिनिक (Cynic) इन तीन दार्शनिक मतके सारसे उनके मतकी सृष्टि हुई थी। किन्तु आनन्द तथा परार्थपरताको ही उन्होंने सुखोंमें सर्वोच्च आसन दिया है।

पिताका यह मत मिलके हृदयमें बैठ गया था। उसके सिवा मिल प्लेटोकी पुस्तकमें लिखे सक्रेटिस धर्ममतोंको हृदयङ्गम कर नीति-मार्गमें आगे बढ़े थे। न्यायपरता, परिमिताचार, सत्यप्रियता, उद्यमशीलता, दुःखसहिष्णुता आदि सद्गुणोंको सक्रेटिसने धर्मपदवाच्य कहा है। मिलने भी इन सब चित्तवृत्तियोंको धर्मका उच्च सोपान माना था।

द्वितीयतः—बेन्थमके नये मतने ही १९वीं शताब्दीके अभ्युदय कालमें प्राचीन सिद्धान्तके मूलमें कुठाराघात किया। बेन्थम मिलके पिताके मित्र थे। बात चीत और उनकी पुस्तकोंको पढ़ कर, आदि कई कारणोंसे मिल बेन्थमके नये प्रवर्त्तित चिन्तामार्गमें घुसे थे। बेन्थमकी व्यवहारशास्त्र नामकी पुस्तकने पश्चिमीय जगत्में नवयुगकी अवतारणा की थी। मिल शैशवावस्थासे इसी मतमें दीक्षित थे। इसलिये बेन्थमके प्रवर्त्तित हितवादका (Utilitarianism) अंकुर मिलके चित्तमें प्रकाण्ड वृक्षसे परिणत हुआ था। बेन्थमके पहले १८वीं शताब्दीके अन्त तक पाश्चात्यनीतिशास्त्र, प्रकृतिके नियम और विवेक बुद्धि आदिकी अभ्रान्त युक्तिसे परिचालित होता था। बेन्थमने अन्तमें यह प्रकट किया, जो जगत्का अत्यन्त हितकर है और असंख्य लोगोंके सुखका कारण है अर्थात् जो कार्य्य सर्वापेक्षा अधिकतासे लोगोंको सुख प्रदान करता है, वही मनुष्यका धर्म और कर्त्तव्य है यही ईश्वरके नियम और अभ्रान्त युक्तियोंके द्वारा अनुमोदित है। युक्ति और प्रमाणके सिवा अन्धविश्वास-प्रसूत काल्पनिक प्रकृति-नियमका पालन करना मनुष्यका कर्त्तव्य नहीं। मिलने बेन्थमसे हितवाद (Principles of utility) और सुखवाद (Doctrine of happiness) इन दोनों मतकी शिक्षा ग्रहण की थी। ये दोनों मत ही उनके हृदयमें अंकित हो गये थे। ये ही उनके चिन्ता-राज्यके पथप्रदर्शक हुए। हितवाद और सुखवाद ही उनकी नीतिके नियामक थे। इसी धारणाने उनको बिजलीकी तरह नये बलसे बलवान् किया था।

तृतीयतः—मिलके प्रति हेरियट टेलर नाम्नी स्वाधीनता-प्रिया विदुषी रमणीका आधिपत्य। मिलने अपनी जीवनीमें और उनके जीवनचरितके अन्य लेखकोंने अपनी पुस्तकोंमें मुक्तकण्ठसे स्वीकार किया है, कि उनका भविष्य जीवन उनकी विदुषी स्त्रीके प्रभावसे नियन्त्रित हुआ था।

विवाह होनेके बाद उन्होंने जो पुस्तकें लिखीं वे पतिपत्नी दोनोंकी लिखी हुई हैं। मिस टेलर भी ऐसी वैसी स्त्री नहीं, वरं बड़ी विदुषी थीं। और तो क्या, कभी कभी वे मिलके रचित विषयोंका संशोधन कर देती थीं। मिलके जीवनमें कोमलतर चित्त वृत्तिका जो विकाश दिखाई दिया था, वह पत्निप्रेमके सिवा और कुछ नहीं था। टेलर मिलकी गृहिणी बन करके उनके जीवनकी केन्द्रस्वरूप हो गई थीं। इस रमणीकी अगाध स्वाधीनप्रियता और समाजद्रोहिताकी वासना मिलके चित्तमें बैठ गई थी। इसका प्रमाण इनके लिखे परवर्त्ती ग्रन्थोंसे मिलता है।

इस तरह मिलके चिन्ताराज्यमें उक्त तिधाराओंने मिल कर एक अभिनव विप्लवकी सृष्टि कर दी थी। मिलने जिन पुस्तकोंको लिखा है, उनमें तर्कविद्या (Logic), हितवाद

(Utilitenanism), राजनीति, व्यवहारशास्त्र (Principles of Political Economy) और स्वाधीनता (Liberty) नामकी पुस्तकें ही विशेषरूपसे प्रसिद्ध और मौलिक भावापन्न हैं। 'नारी जातिकी अधीनता' (Subjection of Women) नामक पुस्तकमें उन्होंने स्त्री-स्वाधीनताके पक्षमें कितने ही दार्शनिक तर्क और युक्तिकी अवतारणा की है।

मिल प्रचलित समाजपद्धतिके प्रति दोषारोपण कर व्यक्तिगत स्वतन्त्रताके पक्षका समर्थन कर गये हैं। उन्होंने 'अपनी स्वाधीनता' और 'स्त्री जातिकी अधीनता' नामकी पुस्तकोंमें लिखा है—"सब तरहके समाज-बन्धन मनुष्यकी आकस्मिक आकांक्षित उन्नतिके बाधक हैं।" किन्तु वे व्यक्तिगत स्वतन्त्रताके पक्षपाती होने पर भी स्वेच्छाचारिता और उच्छृङ्खलताके समर्थक नहीं थे। उन्होंने कहा था, कि पृथ्वीका प्रत्येक मनुष्य ही कई साधारण स्वत्वोंका उत्तराधिकारी ही होता है। उनमें स्वाधीनता ही प्रधान है। यह स्वाधीनता दो प्रकारकी है,—व्यक्तिगत और जातीयभेद। किन्तु पुरुष और स्त्रियां अभिन्नरूपसे इसके अधिकारी हैं। पुरुषजातिने जो बहुत दिनोंसे अस्वाभाविक और अनुचित नियमोंसे स्त्रीजातिको अपने अधीनमें कर रखा है वह सामाजिक उन्नतिका सबसे बड़ा बाधक है। जिस दिन लीलामयी प्रकृति वसुन्धराके विशालवक्ष पर नियमके पैर तोड़ कर पक्षियोंकी तरह अबाध और असंकुचित भावसे विचरण करेंगी, उसी दिन पृथ्वीमें मनुष्यके बहुत दिनके अभिलषित स्वर्गराज्यका समागम होगा। यह मत मुक्तकण्ठसे घोषणा कर मिल स्त्री समाजके प्रियपात्र हुए थे।

विश्वप्रेमी और मानवहितैषी महात्मा मनुष्य जातिको दुःखनिवृत्तिके लिये ही बद्धपरिकर हो कर लेखनी उठाते हैं। जब पाठगृहकी संकुचित सीमा और पाठ्यपुस्तकोंकी काल्पनिक मनमोहन दृश्यावलीको पार कर मिल घटनाराज्यके कठोर संग्राममें प्रतिद्वन्द्विता करने लगे, तब उन्होंने देखा, कि संसारके चारों ओर वैषम्यका विचित्र प्रभाव है। मनुष्यका यह वैषम्य और दैन्य देख व्याकुल हो कर मिलने यौवनकी उद्दाम कल्पनामें पृथ्वी पर आदर्शराज्य स्थापित करना चाहा था। इसी सङ्कल्पके वशवर्त्ती हो कर वे समाज-संस्कारकी आशासे प्रोत्साहित हुए थे। उन्होंने सोचा था, कि दारिद्र्य दुःखको दूर कर वे साधारणको शान्ति-सुखका अधिकारी बनायेंगे। इसीके अनुसार उन्होंने तर्कविद्या तथा अर्थनीतिशास्त्रकी रचना की थी। किन्तु १० वर्षोंमें वे अभिलषित उन्नति पथकी अध्वशिलाको पार न कर सके। यह देख कर उन्हें कल्पना और घटनाका पार्थक्य उपलब्ध हुआ। फिर भी उन्नति प्रवाहकी विलम्बित और रुद्धगतिको देख कर आशा-भङ्ग-जनित मानसिक कष्टमें न पड़ उनका उद्यम द्विगुणित हो उठा। इसके अनुसार उन्होंने अविचलित भाव तथा निर्भीकताके साथ स्वाधीनताका मूल मन्त्र फूंका।

वे मानवके भविष्यत् आदर्शसमाजका जो चित्र अङ्कित कर गये हैं वह इस समय आकाशकुसुम या गन्धर्व नगरकी तरह अलीक मालूम होता है। किन्तु मानवप्रेमी प्लेटो, कोमते, वेन्थम, टेगर्ट और मिल आदि प्रतीच्य मनीषियोंने उल्लसित भावसे और आशापूर्ण अन्तःकरणसे उंगली दिखा कर उस चिर अभिषित आदर्शसमाजका पार्थिव स्वर्ग दिखा दिया है। मनुष्य उस कल्पना स्वर्गमें कब जायेगा, उसके सम्बन्धमें मिलने भी पूर्वाचार्योंके पदानुसरण कर कहा है, कि "यदि अनन्त अन्तरीक्षमें नन्दनकाननालंकृत मन्दाकिनी प्रवाहित सुखमय अमरावतीका होना सम्भव है, तो अनन्तकालस्रोतमें बहु संख्यक पुरुषपरम्पराके अक्लान्त यत्नसे परिदृश्यमान पृथ्वीकी पीठ पर सुखशान्तिपूर्ण स्वर्गराज्यकी प्रतिष्ठा होगी ही। उस राज्यके राजाओं और कङ्गालोंमें जरा भी फर्क नहीं रहेगा। पुरुष और स्त्रियां साम्यभावसे अपना अपना भाग ग्रहण करेंगी। सामाजिक नियमोंका लौहशृङ्खल मनुष्यकी वासनाको संयत नहीं कर सकता। वैषम्यकी बाधाविपत्तिपूर्ण मेघमालाका अन्तर्धान होनेसे समुज्ज्वल साम्य सूर्यसमाजमें किरणें फेंक कर नरनारीके हृदयमें निर्मल ज्ञानानन्द प्रदान करेगा।

मिलने अपने हितवाद ग्रन्थमें कहा है,—मनुष्यकी यन्त्रणाके जो प्रधान कारण हैं, उनमें अधिकांश ही

पुरुषकारके प्रवल यत्न करने पर भविष्यमें दूर होगा। किन्तु उसमें समय लगेगा। मानवसुखकी वाधाओंके साथ सम्मुख संग्राम करनेमें मनुष्यकी कई पीढ़ियां बीत जायेंगी। किन्तु अन्तमें जय सुनिश्चित है। फिर भी जिनकी बुद्धि परिमार्जित हैं और हृदय परार्थपरतासे उद्दीपित है, उन सब चिन्ताशील मानवहितैषी दार्शनिक योद्धाओंका मन सदा प्रफुल्लित रहेगा। उक्त सुखके साथ स्वार्थसिद्धिसम्भूत किसी भी सुखकी तुलना नहीं हो सकती। ज्ञानके विमलप्रकाशमें उद्भासित फिर भी अतृप्त चित्त मनुष्यके संशयाश्रित आनन्द विष्ठाभोजी शूकरकी तृप्तिसे भी सहस्र गुण बढ़ कर है। सांख्यदर्शनके रचयिता भगवान् कपिलकी तरह महात्मा मिल जगत्‌के आनन्दकी अनन्तता और आतिशय्य असम्भव समझते थे। किन्तु उन्होंने मुक्तकण्ठसे स्वीकार किया है, कि विविध दुःखकी अत्यन्त निवृत्ति पुरुषार्थ है और अविमिश्र अनन्त सुखकी सम्भावना होने पर भी शान्ति और चित्तप्रसाद मानवमात्रका अधिगम्य है। वे उसके लिये जो अनुष्ठेय सुप्रियोगकी व्यवस्था कर गये हैं, वे नीचे देते हैं,—

(१) जीवनमें जो सम्भव है, उससे अधिककी आशा न करना। (२) विद्यानुशीलनमें अनुरक्ति। (३) सहृदयता या हृदयका अकृत्रिम प्रेम। भक्ति और स्नेहका सस्थापन करना। (४) मनुष्य-प्रेम या सर्वसाधारणकी कल्याणचिन्तासे आनन्दातिशय्य अनुभव करना। यही मिलकी धर्मनीतिका मूलसूत्र है। किन्तु परिणत वयसमें सामाजिक संसर्गके लिये उन्होंने अनुकूल मत प्रकट किया है।

मिलकी लिखी पुस्तकोंकी समालोचना इस छोटेसे लेखमें करना असम्भव है। हम मिलके दार्शनिक मत और १६वीं शताब्दीमें उनकी उपयोगिताके सम्बन्धमें दो एक बात कह कर इस लेखका अन्त करेंगे। सन् १८५१ ई०में हामिल्टनका दर्शन प्रकाशित हुआ। मिलने ८ वर्षके बाद सन् १८५६ ई०में इस दर्शनकी विस्तृत समालोचना की और हेमिल्टनकी भ्रान्ति दिखला कर एक प्रकाण्ड प्रस्ताव प्रकाशित किया। इस पुस्तकमें उनका प्रगाढ़ चिन्ताशीलता और दर्शन मत अच्छी तरह समझमें आ जाता है। यूरोपका दर्शनशास्त्र दो भागोंमें विभक्त हुआ है। १ला श्रौत या आप्तवाद (Intuitive), २रा प्रमाण और प्रत्यक्ष वाद (Empirical)। १ला पक्ष विवेकके प्रकाशसे कर्त्तव्यका पंथ निर्द्धारित करनेको कहता है। २रा पक्ष परीक्षा और युक्तिके प्रकाशमें गन्तव्यपथका अवधारण करता है।

जर्मन दार्शनिकोंके मतका अनुसरण कर हेमिल्टनने १ले पक्षके (Intuitive) अनुकूलमें युक्ति दिखलाई थी। अतएव प्रमाणवादी मिल उसके सिलसिलेवार समालोचना किये बिना न रह सके। हेमिल्टनके शिष्योंने मिलके मतका प्रतिवाद किया था। इस तरह दार्शनिकयुद्धमें अंगरेजोंके दर्शन परिपुष्ट हो गये थे। इसके बाद मिलने अगष्टस् कोमतके दार्शनिक मतकी समालोचना की। यथार्थमें मिल और कोमते इन दो मनस्वियोंने ही १६वीं शताब्दीमें चिन्ताराज्यमें युगान्तर उपस्थित किया था। उसी चिन्ताके स्रोतने यूरोपको पार कर हिन्दुस्तानके मानसराज्यमें बहुत अधिकार जमा लिया था।

मिलके सम्बन्धमें यह वक्तव्य है, कि उनका दार्शनिक मत अधिक तमोगुणी है और कोमतेका मत रजोगुणी। दर्शन, विज्ञान, धर्मनीति, राजनीति, समाजतत्त्व आदि मानवीय शास्त्रोंके कुसंस्कारोंको नष्ट कर पृथ्वीमें सुखमय आदर्शराज्यकी स्थापना करना ही मिलका उद्देश्य और नये कल्पित राज्यकी सृष्टि करना कोमतेका उद्देश्य था। व्यक्तिगत स्वाधीनता पर समाजकी शृङ्खला सौंप देनेसे जगत्‌की उन्नतिकी गति बन्द हो जाती है, यह मिलका उद्देश्य था। मिल ईश्वरमें अविश्वास नहीं करते थे। उन्होंने कहा है,—'जो स्वेच्छापूर्वक सांसारिक दुःखोंकी सृष्टि कर मानवसमाजको अहर्निश दग्ध कर रहे हैं, वे कभी सर्वशक्तिमान् ईश्वर नहीं कहे जा सकते।" उनका मत कपिलके 'ईश्वरासिद्धेः' मतका पोषक है। अर्थात् प्रमाण द्वारा ईश्वरका अस्तित्व कायम नहीं किया जा सकता। अनवस्था दोष परिहारके लिये उन्होंने कहीं कहीं सृष्टिके प्रवाहको अनादि कहा है। मिलकी ग्रन्थावली पढ़नेसे यह स्पष्ट मालूम होता है, कि उन्होंने मानववात्सल्यताकी साधु प्रेरणासे प्रेरित हो कर लेखनी हाथमें ली थी।

विवाह और सांसारिक जीवन।

मिल संसारके साथ अधिक मिल न सके, सदा पृथक् ही रहे। इसीलिये समाजकी शक्ति कार्य क्षेत्रमें उन पर अपना आधिपत्य जमा न सकी। उनकी ज्ञानार्ज्जनी वृत्ति जैसी परिस्फुट हुई थी, कार्य्य-कारिणी वृत्तियोंका वैसा विकाश नहीं हुआ था। उनके हृदयकी भावराशि अर्थात् स्नेह, भक्ति, प्रेम आदि प्रवृत्तियां रीत्यानुसार विकसित नहीं हो सकी थीं। बाल्य जीवनमें पिताका यौवन और प्रौढ़ावस्थामें उनकी स्त्रीका ही आधिपत्य दिखाई देता है। किन्तु कोमल वृत्तियोंका उच्छ्वास उनके जीवनमें दिखाई नहीं दिया था। वार्डस्-वर्थकी कविता केवल उनके हृदयको ही उच्छ्वासित करतीथी और लीलामयी प्रकृतिके विचित्र दृश्यमें उनका चित्त विस्मयवशतामें निमग्न होता था।

मिल अपने यौवनकालके प्रारम्भमें सन् १८३० ई०-में अपने बाल्यमित्र मिष्टर टेलरके घर जाया करते थे। टेलरने उनका अपने पत्नीसे परिचय करा दिया था। किन्तु उस समय उन्होंने स्वप्नमें भी सोचा न था, कि टेलरकी पत्नी और उनमें प्रेमका बन्धन बंधेगा। मिल टेलर पत्नीकी विद्याबुद्धिको देख कर मन ही मन उन्हीं-को अपनी अधिष्ठात्रीदेवी बनानेका विचार करने लगे। स्वाधीनताप्रिय टेलर-पत्नीने भी स्त्रीजातिके प्रति मिल-का स्वाभाविक अनुराग और समवेदना देख मन ही मन उनको अपने हृदयसिंहासन पर बैठाया। दिन मणि-किरणोंसे नवविकशित कमलिनीकी तरह स्वतन्त्राभि-लाषी इन विदुषी रमणीकी अकांक्षा धीरे धीरे विकसित होने लगी। समाजबन्धनमें स्वाधीन जीवनको शृङ्खला-बद्ध करना उनके मतसे पाप था। इस तरहकी रमणी के साथ मित्रता-स्थापन मिलने अपने मतके अनुकूल समझ लिया था। मित्रता स्थापित होनेके बीस वर्ष बाद टेलरपत्नी पतिहीन हो गईं और सौभाग्यके अपूर्व सुयोगमें इनकी बहुत दिनोंकी आशालता लहलहा उठी। मिल इस रमणीके गुणों पर इस तरह मुग्ध थे, कि प्रणयिजनसुलभ दुर्बलताके अनुरोधसे उन्होंने इन-को शैली और कारलाइलकी अपेक्षा भी उच्च आसन दिया था और मुक्तकण्ठसे स्वीकार किया था, कि उनकी ग्रन्थावलीमें अधिकांश ही टेलरपत्नी द्वारा रचित हैं और बाकी दोनों को। अपनी 'स्वाधीनता' पुस्तक स्त्रीको समर्पण करते हुए उन्होंने कहा था,—"इनके साथ जो महती चिन्ताएं समाहित हुईं, उनका आधा भी जगत्‌में यदि व्यक्त होता तो जगत्‌की उन्नति चरमसीमाको पहुंचती।

जो हो, मिल प्रणयिनीसे जैसा प्रेम करते थे, वह प्रण-यियोंके लिये आदर्श स्वरूप है। किन्तु मिलकी जीवनीके लेखकोंने मिलको पत्नीपरायण लिख डाला है। क्योंकि जब मिल दक्षिण फ्रान्समें रहते थे, तब उनकी पत्नीका वहां मृत्यु हुई। पत्नीवियोगके बाद मिलके चिन्ताशील संयतचित्तमें भी दारुण आघात लगा था। वे उसी समयसे सांसारिक सुखको तिलाञ्जलि दे अभिटन नामक स्थानमें पत्नीकी कब्रके समीप कुटी बना कर अविरामवाही अश्रुजलके प्रणयतर्पणसे कब्रकी मिट्टीको सींचते थे। प्रकृतिकी उस शान्तमयी कुटीमें उस पत्नी-के पूर्वपतिके औरसजात कन्याके और उनका कोई साथी न था। उनकी मित्रमण्डली सदा उनको देखने जाया करती थी। मिलके कोई पुत्र न था।

मिलक (सं० पु०) मेलनकारी, एक साथ करानेवाला।

मिलक (अ० स्त्री०) १ जमीन-जायदाद, मिलकियत। २ जागीर।

मिलकासिंह—एक सिख-सरदार। ये १७६५ ई०में रावलपिण्डीको अपने कब्जेमें कर राज्यशासन करते थे। इनके यत्नसे स्थानीय वाणिज्यकी बड़ी ही उन्नति हुई थी।

मिलकी (हिं० स्त्री०) १ वह जिसके पास जमीन जाय-दाद हो, जमींदार। २ वह जिसके पास धन-संपत्ति हो, दौलतमंद।

मिलन (सं० क्ली०) १ समागम, भेंट, मिलाप। २ मिश्रण, मिलावट।

मिलनसार (हिं० वि०) जो सबसे प्रेमपूर्वक मिलता हो, सबसे हेल-मेल रखनेवाला।

मिलनसारी (हिं० स्त्री०) सबसे प्रेमपूर्वक मिलनेका गुण, सबसे हेल मेल रखना।

मिलनस्थान (सं० क्ली०) वह स्थान जहां मिलन होता है।

मिलना (हिं० क्रि०) १ सम्मिलित होना, मिश्रित होना, दो भिन्न भिन्न पदार्थोंका एक होना। २ आलिङ्गन करना, छातीसे लगाना। ३ भेंट होना, मुलाकात होना। ४ लाभ होना, फायदा होना। ५ प्रत्यक्ष होना, सामने आना। ६ सम्मिलित होना, समूह वा समुदायके भीतर होना। ७ सटना, चिपकना। ८ आकृति, गुण आदिके समान होना। ६ विद्वेष या विरोध दूर होना, मेल मिलाप होना। १० किसी पक्षमें हो जाना। ११ संभोग करना, मैथुन करना। १२ बजनेसे पहले बाजोंका सुर या आवाज ठीक होना।

मिलनी (हिं० स्त्री०) १ विवाहकी एक रस्म। यह कहीं तो कन्यादान हो चुकनेके उपरान्त और कहीं उससे पहले होती है। इसमें कन्यापक्षके लोग वर-पक्षके लोगोंसे गले गले मिलते और उन्हें कुछ नकद देते हैं। कहीं कहीं यह रस्म स्त्रियोंमें भी होती है। २ मिलान देखो।

मिलपल (सं० पु०) अश्मन्तक, बहेड़ेका पेड़।

मालिम्—युक्तप्रदेशके कुमायूं जिलेके जुहार परगनेका एक प्रसिद्ध नगर। अक्षा० ३०´ २५´ ३०´´ उ० तथा देशा० ८० १०´ १५´´ पू० हिमालयकी गिरिश्रेणीको पार कर तिब्बत जानेमें जो गिरिसंकट पड़ता है, उसीकी बगलमें यह नगर विद्यमान है। यहांके अधिवासी भोटिया हैं। इन्होंने सर्वतोभावसे हिन्दू रीति नीति और धर्माचारका अवलम्बन किया है। समुद्र तलसे यह १७२७० फीट ऊंचा है।

मिलमिलिया—आसामप्रदेशके कामरूप जिलान्तर्गत एक बड़ा शालवन। यह कुलथी नदीके बाएं किनारे अवस्थित है। अभी यह वन अंगरेजोंकी देख-रेखमें है।

मिलवाई (हिं० स्त्री०) १ मिलवानेकी क्रिया या भाव। २ वह धन या पुरस्कार जो मिलवानेके बदलेमें दिया जाय।

मिलवाना (हिं० क्रि०) १ मिलनेका काम दूसरेसे कराना, दूसरेको मिलनेमें प्रवृत्त करना। २ भेंट या परिचय कराना। ३ मेल कराना। ४ संभोग कराना।

मिलाई (हिं० स्त्री०) १ मिलनेकी क्रिया या भाव। २ मिलानेकी मजदूरी। ३ विवाहकी मिलनी नामक रस्म। मिलनी देखो। ४ जातिसे निकाले हुए आदमीको फिरसे जातिमें मिलानेका काम।

मिलान (हिं० पु०) १ मिलानेकी क्रिया या भाव। २ तुलना, मुकाबला। ३ ठीक होनेकी जाँच।

मिलाना (हिं० क्रि०) १ मिश्रण करना, एक पदार्थमें दूसरा पदार्थ डालना। जैसे—दूधमें पानी मिलाना। २ एक भिन्न भिन्न पदार्थोंको एक करना, बीचमें अन्तर न रहने देना। ३ सटाना, चिपकाना। ४ सम्मिलित करना, एक करना। ५ दो पदार्थोंमें तुलना करना, मुकाबला करना। ६ यह देखना, कि प्रतिलिपि आदि मूलके अनुसार है वा नहीं, ठीक होनेकी जांच करना। ७ दो व्यक्तियोंका विरोध या द्वेष दूर करके उनमें मेल कराना, सुलह वा संधि कराना। ८ भेंट या परिचय कराना। ६ किसीको अपने पक्षमें करना, अपना भेदिया या साथी बनाना। १० स्त्री और पुरुषका संयोग करना, संभोग या संबध करना, ११ बजानेसे पहले बाजोंका सुर या आवाज ठीक करना जैसे पखावज मिलाना, सारंगी मिलाना।

मिलाप (हिं० पु०) १ मिलनेकी क्रिया या भाव। २ मेल या सद्भाव होना, मित्रता। ३ संभोग, संयोग। ४ भेंट, मुलाकात। ५ एक साथ बजनेवालों बाजोंका एक सुरमें होना। ६ मिलाई देखो।

मिलाव (हिं० पु०) १ मिलानेकी किया या भाव, मिलावट। २ मिलाप।

मिलावट (हिं० स्त्री०) १ मिलाए जानेका भाव। २ किसी अच्छी या बढ़िया चीजमें कोई बुरी या घटिया चीजका मेल। इस शब्दका इस्तेमाल सिर्फ चीजोंके मिलानेके लिये होता है। प्राणियोंके संयोगके लिये नहीं।

मिलिक (अ० स्त्री०) १ जमीदार, मिलि्कयत। २ जागीर।

मिलित (सं० त्रि०) मिल- कर्त्तरि क्त। २ श्लिष्ट, सटा हुआ। २ सम्बन्धविशिष्ट, लगावका। ३ युक्त, मिला हुआ।

मिलिन (सं० त्रि०) सम्मिलनशील, मिलनसार।

मिलिन्द—भारतका एक यवनराज्य (Menander)। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें यह मिलिन्द नामसे लिखा है। सिकन्दरके

एशिया जीत लेनेके बाद जिन यूनानी शासकोंने प्राच्य भूभाग पर अपना आधिपत्य जमाया था, वे ही पीछे स्वाधीनताका अवलम्बन कर राज्य कर गये हैं। यूनान (ग्रीक)-का राजा मिलिन्द (Menander) बक्त्रियराज (Graeco Baktrian) नामसे प्रसिद्ध था। निकटके नगरोंमें ऐसे कई सिक्के उसके नामसे पाये गये हैं, जिनसे पता लगता है, कि उसने अपने बाहुबलसे बहुतसे देशों को जीता और एक वृहत् साम्राज्यकी स्थापना की थी।

अध्यापक लासेनके मतसे मिलिन्द ईसाके १४४ वर्ष पहले राज्याधिकारी हुआ था। ऐतिहासिक स्ट्राबो उनकी विजय कहानी लिख गये हैं। प्लूतार्ककी कहानीसे मालूम होता है, कि वह बक्त्रियामें राज्य करता था और ईसाके ११५ वर्ष पहले उसके मरनेके बाद कई राजधानियोंके अधिवासियोंमें उसकी चिताभस्मको ले कर परस्पर तुमुल संग्राम हुआ था।

पातञ्जलीके महाभाष्योक्त साकेत (अयोध्या)के घेरेको बात तथा यवन द्वारा माध्यमिकोका पराभव यवनराज मिनान्द (मिलिन्द)की विजयका उल्लेख पाया जाता है। मिलिन्दपन्ह नामक बौद्ध ग्रन्थोंल्लिखित मिलिन्दको आनुषंगिक वर्णनाके साथ मिनान्दारका विशेष सौसादृश्य है।

मिलिन्दक (सं० पु०) सर्पभेद, एक प्रकारका साप।

मिलीमिलिन् (सं० पु०) शिवका एक नाम।

मिलूर—मान्द्राज प्रदेशके मदुरा जिलान्तगत एक तालुक और नगर। मेलूर देखो।

मिलेठी (हिं० स्त्री०) मुलेठी देखो।

मिलौना (हिं० क्रि०) १ मिलाना देखो। २ गायका दूध दुहना। (पु०) ३ बालू मिश्रित एक प्रकारकी बढ़िया जमीन।

मिलौनी (हिं० स्त्री०) १ मुसलमानोंमें विवाहकी एक प्रथा। इसमें कुछ नगद या वस्तुएं भेंट की जाती हैं। २ मिलाई देखो। ३ मिलनेकी क्रिया या भाव, मिलावट। ४ मिलानेके बदलेमें मिला हुआ धन। ५ किसी अच्छी चीजमें कोई खराब चीज मिलाना।

मिल्क (अ० पु०) १ जमींदारी। २ जागीर, मुआफी। ३ जमीनकी एक प्रकारकी मिलकियत या मालिकाना हक। ४ धन संपत्ति, दौलत ५ अधिकार, मिल्कियत।

मिल्कियत (अ० स्त्री०) १ जमींदारी। २ जागीर, माफी। ३ धन सम्पत्ति, जायदाद। ४ वह पदार्थ या धन-सम्पत्ति जिस पर नियमानुसार अपना स्वामित्व हो सकता हो।

मिल्की (अ० पु०) १ मिल्कका स्वामी या अधिकारी, जमींदार। २ जागीदार, माफदार।

मिल्की—अयोध्या प्रदेशके पूर्व रहनेवाली मुसलमान जातिकी एक शाखा। खेती बारी करके यह जाति अपनी जीविका निर्वाह करती है। अनेक भूसम्पतिके अधिकारी हो गये हैं। आजमगढ़के अधिवासियोंका विश्वास है, कि मुसलमानोंके शासनाधिकारके समय ये लोग मिल्की पा कर धनवान् हुए हैं।

हिन्दुओंमें कायस्थ जैसे लेखनकलामें दक्ष हैं तथा राजकार्यमें सुचतुर और प्रतिभाशाली है, मुसलमान समाजमें भी यह मिल्की जाति वैसी ही है। अङ्गरेजोंके जमानेमें भी ये योग्यताके साथ वकालती करते हैं। ये कूटनीतिज्ञ हैं, इससे यहांके अधिवासी इनकी उदारता तथा सरलता पर विश्वास नहीं करते हैं। उत्तर-पश्चिम भारतमें इनके विषयमें लोग कहा करते हैं,—

"मिल्की क्या जाने पराये दिलकी,
पैठे द्वार, निकले खिड़की।"

ये प्रधानतः सिया और सुन्नी दोनों सम्प्रदायोंके अन्तर्गत है। सभी विश्वासके साथ इसलामधर्मका पालन करते हैं।

मिल्टन (जान)—इंगलैण्डके एक सुप्रसिद्ध महाकवि। इन्होंने "स्वर्गच्युत" (*Paradise Lost*) नामक पुस्तक (अङ्गरेजी काव्य) रच कर यूरोपीय समाज और अङ्गरेजी अध्यनकारी सुसभ्यमण्डलके प्रशंसा-पात्र हुए हैं। उनके पिता माताका नाम जान और सारा मिल्टन था। लण्डन महा नगरीके ब्रेडष्ट्रीटके पिता-भवनमें १६०८ ई०की ९वीं सितम्बरको उनका जन्म हुआ था उनके पिता एक संभ्रान्त-वंशीय शिक्षित पुरुष थे। पिताकी शिक्षाके दृष्टान्तसे पुत्रने भी उनके अनुरूप विद्योपार्जन किया था। गीतशास्त्रमें भी मिल्टनके पिताका असाधारण ज्ञान था। वर्णोंके संगीत-इतिहास

(History of music)-में उनके संगीत उद्धृत हैं। वर्त्तमान ग्रन्थकार अंगरेजीमें उनका नाम Milton लिखते हैं। किन्तु उनके ईसाई-मत ग्रहणकी फिहरिस्तमें उनका नाम Mylton लिखा है।

मिल्टन पहले केम्ब्रिज नगरके युसूफ कालेजमें और बाद सेण्टपाल और खाइष्ट कालेजमें विद्याध्ययन करनेके लिये गये। यह १६२४ ई०की बात है। बाल्यावस्था से उनका अङ्कशास्त्रमें विशेष आग्रह न रहनेके कारण मालूम होता है, कि उन्होंने केम्ब्रिज विद्यालयमें बेंतकी मार खाई थी। उन्होंने लेटिनभाषामें कविता लिख कर साधारणकी श्रद्धा आकर्षण की थी। उनके बाल्यकालका इस कवित्व-प्रेमने भविष्यमें उनको उनके सहयोगियोंमें उच्च आसन दिया था।

शिक्षा समाप्त कर वे अपने पिताके बक्किंम शायरवाले मकानमें आये। इसी समय उन्होंने अपने धर्ममतका परिवर्त्तन किया था। वहां पांच वर्ष रह कर उन्होंने लेटिन और यूनानी भाषाके प्रसिद्ध प्रसिद्ध काव्योंको पढ़ा। इसी काव्यामोदमें रह कर उन्होंने कल्पना प्रसूनसे Comus, L' Allegro, Il Penseroso और Lycidas काव्यमालाको गूंथा था।

सन् १६३७ ई०में अपनी माताके मरनेके बाद उन्होंने फ्लोरेन्स, रोम, नेपल्स और भिनिसको यात्रा की थी। इस समय तात्कालिक सुप्रसिद्ध पण्डित ग्रोसियस, गेलिलो और टासोके प्रतिपालक मनसोके साथ उनका परिचय हुआ। इसके बाद उन्होंने सिसली और यूनानका परिभ्रमण किया। किन्तु इङ्गलैण्डका राजनैतिक-विप्लव धीरे धीरे बढ़ता देख सन् १६३९ ई०में वे स्वदेश लौट आये और राजनीतिक कार्यावलीका पर्यवेक्षण करनेमें दत्तचित्त हुए।

राजनीतिक कार्यमें लिप्त रह कर राजनीतिक आलोचना करनेके बाद उन्होंने सन् १६४१ ई०में Of Reformation, Prelatical Episcopacy, The Reason of Church Government urged against Prelacy, An Apology for Smectymnuus और विशप हालके मतके खण्डनमें कई ग्रन्थोंकी रचना की।

सन् १५७३ ई०में उन्होंने पहली बार विवाह किया। किन्तु उनकी पत्नी अप पिताके घर आना न चाहती थी इससे उन्होंने सन् १६४४ ई०में अपनी पत्नीके तिरस्कार-सूचक चार लेख प्रकाशित कराये। इस समय उनकी Tractate on Education और Areopagitica या मुद्रायन्त्रकी स्वतन्त्रता सम्बन्धीय वक्तृता प्रकाशित हुई।

राजनैतिक क्षेत्रमें भिड जानेके समयसे ही उनकी सांसारिक अवस्था असच्छल हो गई थी। इस दारुण कष्टके समय स्त्रीके साथ मिल कर भी वे सुखी न हो सके। इङ्गलैण्डके अधीश्वर चार्लसके हत्याकाण्डके बाद उन्होंने इङ्गलैण्डके इतिहास और राज्यकी शान्तिविधान विषयक एक छोटी-सी पुस्तिकाकी रचना की। इसके बाद मंत्री-सभा द्वारा लेटिन सेक्रेटरी नियुक्त हुए। इस समय उन्होंने राजनैतिक वितण्डावादको दूर करनेके लिये Eikonoklastes और Defensio Populi Anglican नामक दो ग्रंथ लिखे।

लेटिन सेक्रेटरी पद पर नियुक्त होनेके बाद वे वेष्टमिनिष्टरमें आ कर रहने लगे।

अपनी पहली पत्नीके परलोक-गमनके बाद उन्होंने दूसरा विवाह किया, किन्तु उनकी यह पत्नी भी एक वर्षके भीतर ही सूतिकागारमें मर गई।

सन् १६६० ई०में एलिजवेथ मिनसूल नामक एक रमणीको उन्होंने अपनी तीसरी पत्नी बनाया। सन् १६६५ ई०में पाराडाइज लाष्ट (स्वर्गच्युति) नामक उनके विख्यात काव्यकी रचना समाप्त हुई। सामुएल-साइमनस् नामके एक पुस्तक-प्रकाशकने ५ पाउण्ड अर्थात् ७५) रुपये पर उनसे इसका सत्त्व (Copy Right) खरीदा। १३ सौ पुस्तकोंके बिक जानेके बाद उन्होंने लेखकको और भी ५ पाउण्ड देना स्वीकार किया था। उक्त ग्रंथका सन् १६७० ई०में दूसरा संस्करण १२ सर्गोंमें प्रकाशित हुआ। सन् १६७१ ई०में उनको Paradise Regained और Samson Agonistes नामक और भी दो पुस्तकोंकी रचना हुई। इसके बाद उन्होंने अपने अन्तिम जीवन तक कितने ही ग्रंथोंकी रचना की थी। सन् १६८४ ई०की ८वीं नवम्बरको उनकी मृत्यु हुई।

वे अलिवर क्रमवेलके सहयोगी और स्वाधीनताप्रयासी दल (Independants)-के थे।

मिल्टन विद्यालयकी पढ़ाई खतम कर जब ग्रीको लेटिन (Greaco-Latin) भाषाके कविता-काननमें पहुंचे, तब कविकीर्त्ति लाभके लिये दुर्निवार अभिलाष ने उनके हृदयमें चित्त-चाञ्चल्य पैदा कर दिया। उन्होंने इसके अनुसार युरोपके नाना देशोंमे परिभ्रमण कर निसर्गके निरूपम दृश्यको देखा और वे जातीय महाकाव्यका मसाला एकत्र करने लगे। यौवनके प्रारम्भसे उन्होंने मनुष्यका अधःपतन अवलम्बन कर एक अविनश्वर काव्य लिखनेका संकल्प किया। यौवन-सुलभ रचनावलीमें उन्होंने मुक्त कण्ठसे लिखा था, "मैं अध्यवसाय और परिश्रमसे इसमे ऐसी कविताकी रचना करूंगा, जिससे हमारे वंशज भूल न सकेंगे। (which the posterity will not let it die) वङ्गीय कवि माईकेलकी तरह कवियशः प्रार्थी मिल्टनने सोचा था, कि मेरे रचे हुए मधुचक्रसे लोग चिरसुधा पान करेंगे।

किस भाषामें यह काव्य रचा जायगा, इसका भी पहले उन्होंने विचार नहीं किया था। अन्तमे निश्चय किया, कि लेटिन भाषामें इस काव्यकी रचना करूंगा। इसके बाद उन्होंने स्वजाति वात्सल्यकी प्रेरणासे प्रेरित हो मातृभाषाके कण्ठमें अपनी अलङ्कारभूमिष्ठा गांभीर्य गुण भूपिता अपूर्व काव्यमालाको पहनाना चाहा। मालूम होता है, कि कुललक्ष्मीने उनसे स्वप्नमें कह दिया था, "वत्स! तुम्हारे घरमें रत्नोंकी राशि है—तुम्हारी मातृ भाषाके भाण्डारमें रत्नका अभाव नहीं। तुम उन्ही रत्न से कीर्त्तिमयी काव्य मेखलाको मातृभाषाके कटि देशमें अर्पण करो।"

मिल्टन साम्प्रदायिक मतके लिये उनका महाकाव्य नाना स्थानोंमें तीव्रभावसे समालोचित हुआ था। उनकी पैराडाइज लोष्ट नामक कवितामें राजद्रोहकी गन्ध पा कर राजकीय पुस्तक-परीक्षकने उसको छापनेकी आज्ञा देनेमें आनाकानी की थी। किन्तु अन्तमें यह काव्य छप ही गया।

मिल्टनके जीवनकी पर्यालोचना करने पर स्पष्ट दिखाई देता है, कि वे वाल्यकालसे महाकाव्य-रचनाके प्रयासमें आत्मोत्कर्ष लाभ कर रहे थे। चालीस वर्षके पहले उन्होंने अपनेको महाकाव्य लिखनेके अयोग्य कहा था।

लक्ष्मी सरस्वतीका सौतियाडाह सब देशोंमें प्रचलित है। इसीसे कविता देवीके प्रसिद्ध सेवक मिल्टन दरिद्र थे।

किन्तु विधाताके विचित्र नियमसे परस्पर विरोधिनी लक्ष्मी सरस्वतीकी संगति सदा ही एकाश्रय दुलभ है। अतएव विद्याभिलाषी धनवान् नहीं होते। इन्हीं सनातन नियमोंके अनुसार मिल्टनका दारिद्र्य विस्मयजनक नहीं। उन्हें पैराडाइजलोष्टके प्रथम संस्करणमें ५०) रुपये मिले थे।

मिल्टनके चित्तकी दृढ़ता और गम्भीरता सभीके चित्तको आकर्षण करती है। दारुण दरिद्रता और निर्य्यातनकी कठोर यन्त्रणाको सहते हुए दृष्टहीनतारूप दुर्दैवसे विडम्बित होने पर भी कवितारूपिणी उद्दाम लीलामयी कल्पनाने स्वच्छन्दविहारिणी विद्याधरीकी तरह मन्दारकुसुमालंकृत नन्दनकाननकी विचित्र शोभा, नरककी घोरयन्त्रणा और वीभत्स दृश्य दिखलाया था। अंगरेजी भाषामें मिल्टनका नाम सदा गौरवान्वित रहेगा।

मिल्टनने अपने सैमसन गोनिष्टिस (Samson Agonistis) नामक छोटेसे नाटकमे अपने अन्धजीवनके जिस करुण चित्रको अङ्कित किया है, वह अत्यन्त मर्मस्पर्शी है। दाम्पत्य-जीवनमें मिल्टन सुखलाभ कर न सके, इसीलिये डेलाइलार चरित्रको उन्होंने दारुण कलङ्क कालिमासे लीप पोत दिया है। स्त्रीजातिके प्रति मिल्टनकी श्रद्धा बहुत कम थी। सैमसनकी विलापहानीमें अश्रु संवरण किया नहीं जा सकता। यही मिल्टनका यथार्थ चित्र है। मिल्टनके हृदयकी वीरता देखनेके लिये (Satan) शैतानकी उक्तिका स्मरण करना होता है। स्वर्गके दासत्वकी अपेक्षा नरकका राजत्व सहस्र गुणा उत्तम है। मनुष्यका मनशिक्षा और दीक्षाके प्रभावसे दुग्धफेननिभशय्याके कोमलाभरण पर या जेलकी कण्टकाकीर्ण दुःखद शय्या पर सो कर समान भावसे रह सकता है। मिल्टनने इन्हो तरहका भाव अपनी कवितावलीमें भर दिया है। पैराडाइज लोष्टमें वीररस तथा देवासुर-

संग्रामकी तरह नाना घटनाओंसे परिपूर्ण है। मिल्टन पिउरिटन (पवित्रभाव सम्बन्धीय) समितिके प्रतिनिधि थे। सङ्गीतशास्त्र भी मिल्टनको प्रिय न था। वे मूर्त्तियों-के वडे विरोधी थे। उन्होंने यूनानी देवदेवियोंको नाना कुत्सितचित्रमें चित्रित किया था। किन्तु यूनानी साहित्यके रसलुब्ध अन्धकवि मिल्टनने हेलनाके अन्ध-कवि होमरकी तरह वाक्यारम्भमें वाग्देवीकी वन्दना की है काव्य-निर्माणके विषयमें उनके अनुग्रहकी प्रार्थना कर पूर्व-कवियोंका पथानुसरण किया है। मिल्टनके काव्यों-में जहां भारतवर्षका उल्लेख है, वहां मिल्टनने भारतके अतुल ऐश्वर्यका वर्णन किया है। पैराडाइज लोष्ट ग्रन्थमें नन्दन कानन एवं आदम और इभ का वर्णन अतीव हृदयग्राही है।

मिल्लत (हिं० स्त्री०) १ घनिष्ठता, मेल-जोल। २ मिलन-सारो। ३ समूह, मण्डली, जत्था।

मिल्लत (अ० स्त्री०) सम्प्रदाय, मजहब।

मिल्ला (सं० स्त्री०) विजयराजकी माता।

"विजयस्याथ जननी मिल्लाख्या स्वामिनोऽर्ज्जितम्॥"

(राजतर० ८।१०७१)

मिशन (अं० पु०) १ वह व्यक्ति अथवा व्यक्तियोंका समूह जो किसी विशेष कार्य या उद्देश्यसे कहीं भेजा जाय, विशिष्ट कार्यके लिये भेजे हुए आदमी। २ उद्देश्य मतलव। ३ राजनीतिक उद्देश्यसे भेजा हुआ दूत-मण्डल। ४ वह संस्था, विशेषतः ईसाइयोंकी संस्था जो सगठित रूपसे धर्म-प्रचारका उद्योग करती है। ५ ऐसी संस्थाका केन्द्र या कार्यालय आदि।

मिशनरी (अं० पु०) १ वह ईसाई पादरी जो किसी मिशनका सदस्य होता है और अनेक स्थानोंमें ईसाई धर्मका प्रचार करनेके लिये जाता है। २ ईसाइयोंका कोई धर्म पुरोहित, पादरी।

मिशमी—आसाम प्रदेशकी पूर्वी सीमामें अवस्थित एक पहाडी प्रदेश। यह तिब्बतके प्रान्त भाग तक विस्तृत है। यहांकी पर्वतमालाको मिशमीशैल और अधिवासीको मिशमी कहते हैं।

मिशमी—आसामकी मिशमी शैलवासी आदिम जाति-विशेष। इनका वास इरावती नदीकी नेमलङ्ग शाखाके किनारे, दफाभूम पर्वत पर तिब्बतके पार्वतीय जङ्गलमें तथा दिहिङ्ग नदीतट तक विस्तृत स्थानोंमें देखा जाता है।

जातितत्त्वानुसन्धित्सु कर्नल डालटनका अनुमान है, कि ये मिशमीगण पश्चिम-चीनकी यूनानप्रदेशवासी असभ्य मियान् तजे जातिकी एक शाखा हैं। दोनों जातिके वर्ण और आकृतिमें वहुत कुछ सदृशता देखी जाती है।

ये लोग कदमें छोटे मजवूत और सुन्दर होते हैं। ये मोङ्गलीके जैसे साहसी और वलवीर्यशाली हैं। तल-वार, वर्छा और शिरस्त्राण इनका प्रधान युद्धास्त्र है।

ये लोग एक स्थानमे रह कर खेती नही करते। इच्छानुसार नोमादियोंकी तरह एक स्थानसे दूसरे स्थान जाया करते हैं। वाणिज्य व्यवसायकी ओर इनका विशेष ध्यान रहता है। तिब्बत आदि देशोंमें भी जा कर ये लोग वाणिज्य-व्यवसाय करते हैं।

जो सव मिशमी अङ्गरेजी सीमा पर जा कर वस गये हैं उनके साथ अंगरेजोंका विशेष सद्भाव है। ये लोग निरीह और शान्तिप्रिय होते हैं। अङ्गरेज-परिव्राजक जव मिशमी पर्वत देखने आये; तव इन लोगोंके आचार-व्यवहार देख कर वडे संतुष्ट हुए थे। १८२७ ई०में कप्तान विलकाक्स, १८३६ ई०में डा० ग्रिफिथस और १८४५ ई०में कर्नल इ, ए रोलट तथा १८८१ ई०में फरासी मिश-नरी मुसौक्रक कुछ खामती-सरदारोंके साथ तिब्बत-सीमा तक आये थे। पर दुःखका विषय है, कि शेषोक्त धर्मयाजकको लौटते समय कहसा नामक एक स्वाधीन मिशमी सरदारने मार डाला। इस घटनासे उत्तेजित हो गवर्मेण्टने मिशमी सरदारको दण्ड देनेके लिये एक दल सेना भेजो। १८८५ ई०मे मिशमी-सरदार सपरिवार पकडा गया था।

पहले कहा जा चुका है, कि ये लोग नाना स्थानोंमें घूम कर पर्वतजात मेषादि, मृगनाभि आदि वेचते हैं। गो महिषादि पशुकी ये वडे यत्नसे रक्षा करते हैं। ये लोग शिकार प्रिय और मांसभोजी हैं। पहले ये लोग वहुत अत्याचारी थे। निकटवर्त्ती ग्रामोंमें आ कर स्त्री और वालकको चुरा ले जाते थे। वर्त्तमान समयमे

अङ्गरेज-राज और अरब-जातिके भयसे इन्होंने शान्त-स्वभाव धारण कर लिया है।

मिशि (सं० स्त्री०) १ मधुरिका, सौंफ। २ शतपुष्पा, सोयाँ। ३ मेथिका, मेथी। ४ कासभेद, दाभ। ५ जटामांसी, बालछड़।

मिशी (सं० स्त्री०) मिशि-कृदिकारादिति पक्षे ङीप्। १ जटामांसी। २ मधुरिका, सौंफ।

मिश्र (सं० पु०) मिश्र-बाहुलकात् रक्। १ चाणक्य मूलक, मूली। २ हाथियोंकी चार जातियोंमेंसे एक जाति।

भद्रो मन्दो मृगो मिश्रश्चतस्रो गजजातयः।" (हेम)

३ सन्निपात। ४ रक्त, लेहू। ५ ज्योतिषके अनुसार उग्र आदि सात प्रकारके गणोंमेंसे अन्तिम या सातवां गण। यह कृत्तिका और विशाखा नक्षत्रके योगसे होता है। (त्रि०) ६ मिश्रित मिला या मिलाया हुआ। ७ श्रेष्ठ, बड़ा। ८ जिसमें कई भिन्न भिन्न प्रकारकी रकमोंकी संख्या हो। जैसे,—मिश्र भाग, मिश्र गुण।

मिश्र—युक्तप्रदेशके गोरखपुर, आजिमगढ़ और वाराणसीवासी कृषिजीवी जातिविशेष। इस जातिके लोग अपने को भुंइहार तथा ब्राह्मणवंशके बतलाते हैं। ठाकुर, मिश्र और तिवारी इनकी वंशोपाधि है।

सरयूपारीण, कान्य-कुब्ज, सारस्वत और मैथिल आदि ब्राह्मणोंमें भी 'मिश्र' की उपाधि देखी जाती है। शाण्डिल्य, कात्यायन और विश्वामित्र आदि इनके गोत्र हैं। इन लोगोंकी 'मिश्र' उपाधि देख कर जातितत्त्ववेत्ता अनुमान करते हैं, कि ये लोग शायद 'मिस्र' देशसे इस देशमें आये होंगे।

मिश्र—कुछ ग्रन्थकारोंके नाम। जैसे—१ कुसुमाञ्जलिटीका और शब्दालोकप्रणेता। २ पाणिनीयोणादिसूत्रोद्धाटनके रचयिता। ३ छटा नामक मुग्धबोध टीका के प्रणेता। ४ कात्यायन श्रौतसूत्र भाष्य-कर्त्ता। अग्निहोत्रिन् इनकी उपाधि थी।

मिश्रक (सं० क्ली०) मिश्र कन्। १ औषर लवण, खारी नमक। २ यशद, जस्ता। ३ मूलक, मूली। ४ वङ्गभेद, वैद्यकके अनुसार एक प्रकारका रांगा जिसे खुरा रांगा भी कहते हैं।

"खुरकं मिश्रकं चेति द्विविधं वङ्गमुच्यते।" (भाव प्र०)

५ देवोद्यान, देवताओंका उद्यान। ६ तीर्थभेद, एक तीर्थका नाम।

"ततो गच्छेत धर्मज्ञ! मिश्रकं लोकविश्रुत।"
तत्र तीर्थानि राजेन्द्र! मिश्रितानि महात्मना॥
(महाभारत ३।८३।८८)

(त्रि०) ७ मिश्रणकर्त्ता, मिलानेवाला।

मिश्रकस्नेह (सं० पु०) गुल्मादि रोगोंमें प्रयोज्य औषध भेद। प्रस्तुत प्रणाली—निसोथ, त्रिफला, दन्तिमूल और दशमूल प्रत्येक १ पल, जल १६ सेर, शेष ४ सेर, घी २ सेर, रेंडीका तेल २ सेर, दूध ४ सेर। इन सब वस्तुओंसे यथाविधान उक्त औषध तैयार कर गुल्मादि रोगोंमें इसका प्रयोग करनेसे बहुत लाभ पहुंचता है।

"त्रिवृता त्रिफला दन्तीं दशमूलपलोन्मितम्।
जले चतुर्गुणे पक्त्वा चतुर्भागस्थित रसम्॥
सर्पिरेरण्डज तैलं क्षीरञ्चैकत्र साधयेत्।
स सिद्धो मिश्रकस्नेहः स क्षौद्रः कफगुल्मनुत्॥
कफवातविवन्धेषु कण्ठप्लीहोदरेषु च।
प्रयोज्यो मिश्रकस्नेहः योनिशूलेषु चाधिकार॥"
(चरक चि० ५ अ०)

मिश्रकावण (सं० क्ली०) मिश्रकाना वनं, अकारस्याकार (वनगिर्योः सज्ञाया कोटरकिंशुलकादीनां। पा ६।३।११७ ततो णत्वं (वन पुरगामिमिश्रकासिध्रकाशारिकाकोटराग्रेभ्यः। पा ८।४।४) इन्द्रका उद्यान, नन्दनवन। मिश्र देखो

मिश्रकेशव (सं० पु०) एक प्राचीन कवि।

मिश्रकेशी (सं० स्त्री०) एक अप्सराका नाम। यह मेनकाकी सखी थी।

मिश्रचतुर्भुज (सं० पु०) एक ग्रन्थकारका नाम।

मिश्रज (सं० पु०) मिश्रात् भिन्नजातीययोः सम्मेलनत् जात इति जन-ड। १ वह जो दो भिन्न जातियोंके मिश्रणसे उत्पन्न हुआ हो। २ खच्चर।

मिश्रजाति (सं० त्रि०) जो दो भिन्न जातियोंके मिश्रणसे उत्पन्न हुआ हो, वर्णसङ्कर, दोगला।

मिश्रण (सं० क्ली०) मिश्र ल्युट्। १ संयोजन, जोड़ना। २ एकत्रीकरण, दो या दो से अधिक पदार्थोंको एकमें मिलानेकी क्रिया।

मिश्रणीय (सं० त्रि०) मिश्रणयोग्य, मिलाने लायक।

मिश्रता (सं० स्त्री०) मिश्रका भाव, मिलने या मिलानेका भाव।

मिश्रदिनकर—शिशुपालवधके टीकाकार।

मिश्रधान्य (सं० क्ली०) मिश्रित धान्य, एकमें मिलाये हुए कई प्रकारके धान।

मिश्रपुष्पा (सं० स्त्री०) मिश्राणि परस्पर संश्लिष्टानि पुष्पाणि यस्याः। मेथिका, मेथी।

मिश्रवन (सं० पु०) वार्त्ताकी, भंटा।

मिश्रवनफला (सं० स्त्री०) वार्त्ताकी, भंटा।

मिश्रवर्ण (सं० क्ली०) मिश्रः मिलितः वर्णोऽस्य। १ कृष्णा-गुरु, काला अगरु। २ गन्ना, पौंढा। (त्रि०) ३ नानावर्ण समन्वित, भिन्न भिन्न रंगका।

मिश्रवर्णफल (सं० स्त्री०) मिश्रवर्णं फलमस्याः। वार्त्ताकी, भंटा, बैंगन।

मिश्रव्यवहार (सं० पु०) लीलावत्युक्त गणनाविशेष, गणितकी एक क्रिया।

मिश्रशब्द (सं० पु०) मिश्रः मिलितः अश्वरासभयोरिव शब्दो यस्य। खच्चर।

मिश्रित (सं० त्रि०) मिश्रः श्रेष्ठत्वमस्य संजातमिति मिश्र-इतच् अथवा मिश्र-क्त। १ युक्त, एकमें मिला हुआ। २ गौरवित। ३ सम्मिलित।

मिश्रिता (सं० स्त्री०) मिश्रित टाप्। मन्दा आदि सात प्रकारकी संक्रान्तियोंमेंसे एक प्रकारकी संक्रान्ति, वह सूर्य संक्रमण जो कृत्तिका और विशाखा नक्षत्रके समय हो।

"मन्दा ध्रुवेषु विज्ञेया मृदौ मन्दाकिनी तथा।
क्षिप्रे ध्वाङ्क्षीं विजानीयादुग्रे घोरा प्रकीर्त्तिता॥
चरेर्महोदरी ज्ञेया क्रूरैर्मृरैस्तु सक्रमे॥" (तिथितत्त्व)

मिश्रिन् (सं० त्रि०) १ मिश्रकारी, मिलानेवाला। (पु०) २ नागभेद एक नागका नाम।

मिश्री (हिं० स्त्री०) मिसरी देखो।

मिश्रीकरण (सं० क्ली०) एकत्रकरण, मिलानेकी क्रिया।

मिश्रीतुत्थ (सं० क्ली०) खर्पर, खपरिया।

मिश्रीभाव (सं० पु०) विमिश्रावस्था, मिलानेकी क्रिया या भाव।

मिश्रीभूत (सं० त्रि०) अमिश्रो मिश्रः सम्पन्न इति मिश्र-अभूततद्भावे च्विः। एकत्रीभूत, एकमें मिला हुआ।

"मिश्रीभूता विरेजुस्ते नभश्चरमहीचराः॥"
(योगवाशिष्ठ वैराग्य०)

मिश्रेया (सं० स्त्री०) १ मधुरिका, सौंफ। २ शाक-विशेष, एक प्रकारका साग। ३ शतपुष्पा, तालपर्णी। पर्याय—तालपर्णी, मिषि, शालेया, शीतशिवा, शालीना, वनजा, अवाक्पुष्पी, मधुरिका, छत्रा, संहित-पुष्पिका, सुपुष्पा, सुरसा, वत्सा। गुण—मधुर, स्निग्ध, कटु, प्रबलकफहर, वातपित्तोत्थ दोष और प्लीहादिनाशक।

मिश्रोदन (सं० क्ली०) खेचरिका, खिचड़ी।

मिष (सं० क्ली०) १ छल, कपट। २ बहना, हीला। ३ ईर्षा, डाह। ३ स्पर्द्धा, होड़। ४ दर्शन। ५ सेचन, सींचना।

मिषि (सं० स्त्री०) १ जटामासी। २ मधुरिका, सौंफ। ३ अजमोदा। ४ उशीर, खस।

मिषिका (सं० स्त्री०) मिषि-कन् टाप्। १ जटामांसी, बालछड़। २ मधुरिका, सौंफ। ३ शताह्वा, सोयां।

मिष्ट (सं० क्ली०) १ मधुररस, मीठा रस। (त्रि०) २ मीठा, मधुर। ३ सेका, भूना या पकाया हुआ।

मिष्टकर्तृ (सं० त्रि०) जो उत्तम रसोई बनाता हो।

मिष्टजम्बु (सं० पु०) निम्बवृक्ष, मीठो नीम।

मिष्टनिम्ब (सं० पु०) मीठा नीबू, जमीरा नीबू। गुण—स्वादिष्ट, गुरु, वायुपित्तहर, विषरोग और विषनाशक, कफघ्न, रक्तकर, कोष, अरुचि, तृष्णा और छर्दिनाशक तथा बलकर और बृंहण। (भावप्र०)

मिष्टपाक (सं० पु०) मिष्टेन पाको यस्य। १ मिष्टान्न, मुरब्बा। मुरब्बा अनेक प्रकारसे बनाया जाता है। इन मे एक प्रकार यों है—कच्चे आमको दो दो खण्ड कर उनमें छेद करे। पीछे उन्हें चूनेके जलमें चार दण्ड (१॥ घंटा) तक रख छोड़े। अनन्तर उन्हें जलसे धो कर धीमी आंचमें सिद्ध करे। जब सिद्ध हो जाय तब उन निर्जल आमके टुकड़ोंको चीनीकी चाशनीमें डुबो कर आंच पर चढ़ावे। आध दण्ड तक इस प्रकार आंच पर चढ़ाये रखनेसे जब रस गाढ़ा होने लगेगा तब जानना चाहिये कि मुरब्बा ठीक पर आ गया।

मिष्टपाचक (सं० त्रि०) सुमिष्टरूपसे रन्धनकारी, जो बहुत अच्छा भोजन बनाता हो।

मिष्टपाद (सं० पु०) वृक्षभेद।

मिष्टभाषी (सं० त्रि०) सुमधुर कथनशील, मधुरभाषी जो मीठा बोलता हो।

मिष्टरस (सं० क्ली०) मीठा रस।

मिष्टान्न (सं० पु०) मिष्टमन्नं। मधुरद्रव्य, मिठाई।

मिस (हिं० पु०) १ बहाना, हीला। २ पाषण्ड, नकल। (फा०) ३ ताम्र, ताँबा।

मिस (अं० स्त्री०) कुमारी, कुंआरी लड़की।

मिसकीन (अ० त्रि०) १ जिसमें कुछ भी सामर्थ्य या बल न हो, बेचारा। २ निर्धन, गरीब। ३ सीधा सादा।

मिसकीनता (अ० स्त्री०) दीनता, गरीबी।

मिसकीनी (अ० स्त्री०) मिसकीन होनेका भाव, दीन या दरिद्र होनेका भाव।

मिसन (हिं० स्त्री०) बालू मिली हुई मिट्टीकी जमीन, ऐसी भूमि जिसकी मिट्टीमें बालू भी मिला हुआ हो।

मिसनो (मिशनरी)—धर्मप्रचारके उद्देशसे प्रचारक याजक यानी पादरीका भिन्न भिन्न देशमें जाना। पूर्व समयमें ये सब प्रचारकगण देश देशमें घूमते और जनताके मध्य अपना अपना धर्म-मत प्रकट कर उन्हें अपने मतमें लानेकी कोशिश करते थे। संस्कृत ग्रन्थमें मिशनरी 'परिव्राजक' शब्दमें लिखा है।

ईसा जन्मसे बहुत पहले शाक्य बुद्धके तिरोधानके बादसे ही हम लोग भारतीय बौद्धोंके बीच धर्मप्रचार-वासनाका उदय होते देखते हैं। उस समय बौद्धसम्प्रदायने बौद्धधर्म फैलानेकी आशासे चीन, तिब्बत, सिंहल, ब्रह्म, श्याम, कोचीन, चीन, यव और जापान देशमें परिव्राजकोंको भेजा था। अलावा इसके चेरि, पार्थिया, वक्तिया, खोतन, काबुल (गान्धार), बुखारा आदि देशोंमें भी बहुत परिव्राजक भेजे गये थे। सम्राट् अशोकके शासनकालमें भारतवर्षमें तमाम बौद्धधर्मका प्रचार था। चीनसम्राट् मिन-तीने ६५ ई०में बौद्ध-परिव्राजक काश्यपको अपने राज्यमें बुलाया था। बुद्धभद्रने भी चीनदेशमें रह कर सभी धर्मग्रन्थोंका मर्मानुवाद कर डाला था। चीन-परिव्राजक फा-हियन और यूएनचुवंग धर्मग्रन्थ संग्रहके लिये जो भारतवर्ष आये थे, वह उसीका फल था। बौद्ध शब्द देखो।

बौद्धप्रधानताकी हतश्री होनेके बाद शङ्कराचार्य, कुमारिलभट्ट, माधवाचार्य, कबीर, नामदेव, रामदास, दादु, कृष्ण और तुकाराम आदिके यत्नसे हिन्दूधर्ममें शैव, वैष्णव आदि धर्मसंप्रदायका विस्तार हुआ था। १६वीं सदीमें राममोहनराय, केशवचन्द्रसेन आदिके यत्नसे ब्राह्मधर्मका प्रचार हुआ। ईसाई धर्म और इसलाम धर्मका ईसाई-मिशनरी और मुसलमानोंने प्रचार किया था।

खीष्टान, मुसलमान और ब्राह्म शब्द देखो।

मिसर (सं० क्ली०) देशभेद, इजिप्त। मिस्र देखो।

मिसरा (अ० पु०) कविता, विशेषतः उर्दू या फारसी आदिकी कविताका एक चरण, पद।

मिसरा तरह (अ० पु०) वह दिया हुआ मिसरा जिसके आधार पर उसी तरहकी गजल कही जाती है, पूर्त्तिकी लिये दी हुई समस्या।

मिसरी (हिं० स्त्री०) १ मिस्रदेशका निवासी। २ मिस्र देशकी भाषा। ३ दोबारा बहुत साफ करके जमाई हुई दानेदार या रवेदार चीनी जो प्रायः कुजे या कतरेके रूपमें बाजारोंमें बिकती है।

पहले हम लोगोंके देशमें दानेदार मिसरी तैयार होती थी वा नहीं, कह नहीं सकते। पर हां, मिसरीके रूपान्तरमें दोबारा और खांड (Loaf-Sugar) जरूर तैयार होती थी। सच पूछिये तो हम लोग अपने देशमें खांडका ही बहुत दिनोंसे प्रचार देखते आ रहे हैं। बहुत प्राचीनकालमें इजिप्त वा मिस्रदेशमें एक प्रकारकी सफेद दानेदार शक्कर बनती थी। जब मिस्रके साथ भारतवर्ष और अरबका वाणिज्य व्यापार चलता था उस समय मिस्रदेशकी दानेदार चीनी अरबी अथवा भारतीय प्राचीन वणिक् सम्प्रदायसे भारतवर्षमें लाई गई थी। मालूम होता है, कि जबसे मिस्रदेशकी चीनी इस देशमें आने लगी, तबसे भारतीय खांडके कारबारमें भारी धक्का पहुंचा और वह एक तरह उठ-सा गया। तभीसे हम लोग अपने देशकी बनी हुई पुरानी खांडका स्वाद और नाम भूल कर मिसरीके ही पक्षपाती हो गये हैं।

भारतके भिन्न भिन्न स्थानमें इसका भिन्न भिन्न नाम है। जैसे,—बङ्गालमें—मिश्री, मिछरी, पञ्जाबमें—चीनी वा भूरा, मिश्री, तामिल—कर्कण्डु, तेलगू—मलकण्ड, कनाड़ी—कलकण्ड ; मलयालम—कुल्कण्ट्र ; सिंहली—शकरी, संस्कृत—खण्ड, सितोपला, शर्करा, मत्स्याण्डी, अरवी—नवात, खन्द, पारसी—काण्डे-सफिद, कन्दे—सुपेद ; अङ्गरेजीमें—Sugar Candy।

मिसरी बनानेका तरीका—ईखके रससे गुड और गुडसे चीनी बनती है। अपरिष्कृत चीनीको जलमें डाल कर आंच पर चढ़ावे। जब जल फूटने लगे तब उसमें थोडा दूध डाल कर उसके कुल मैलको बाहर निकाल ले। मैल बिलकुल निकल जाने पर चीनीका रस परिष्कार और सफेद हो जायगा। अनन्तर उस गाढ़े रस (Syrup) को मट्टीके कूजे या कतरेमें डाल कर ठंढी जगहमें छोड दे। कुछ समय बाद ठढ लगनेसे वह रस जम जाता और उसमें दाना पड़ जाता है तथा बर्फकी तरह बरतनके जैसा उसका आकार हो जाता है। यही मिसरी कूजे या कतरेके रूपमें बाजारोंमें बिकती है।

वर्त्तमान समयमें विज्ञानविद् युरोपीय सौदागरोंने चीनीके कारबारमें लाभ देख कर भारतमें ईखकी खेतीकी ओर विशेष ध्यान दिया है। उन्होंने भारतवासियोंके मट्टीके कड़ाहके बदलेमें विभिन्न प्रकारके लोहेके कड़ाहों की सृष्टि की है। इनमें (क) Pans heated by fire, (ख) Pans heated by steam, (ग) Film evaporation, (घ) Vacuum pans, (ङ) Bath evaporators, (च) Fryo's concretor आदि उल्लेखनीय है।

लगभग ६० वर्ष हुए, वेलर साहबने मिसरीकी साचेमें ढालनेके बाद उसमें जो मैला रस रह जाता है उस रसको दानेदार बनानेकी विशेष चेष्टा की, केवल चेष्टा ही नहीं की, वरन् उसमें वे कामयाब भी हुए थे। उन्होंने जो तरीका निकाला उसीका अनुसरण कर Chevallier और १८७६ ई०में Alvers Reynoso ने अपनी चेष्टामें सफलता पाई थी।

वैद्यकमें मिसरीके अनेक गुण बतलाये गये हैं। तुरतकी तैयार की हुई मिसरीका शरवत दुर्बल व्यक्तिके लिये बहुत उपकारी है। यदि डकार आती हो, तो मिसरीके शरवतमें नीबूका रस डाल कर पीनेसे डकारका आना बद हो जाता है। रातको गरम जलके साथ मिसरी मिला कर खानेसे सर्दी और कब्जियत दूर हो जाती है। मिसरी और कालीमिर्चको एक साथ सिद्ध कर पान करनेसे सर्दीका पता नही रहता। धूपमें सफर करनेवाले मुसाफिरोंके लिये मिसरी बहुत फायदेमंद है। यह प्यास नहीं लगने देती और थकावटको दूर करती है।

मिसर (सं० पु०) देशभेद।

मिसरूमिश्र—पदार्थचन्द्रिका और विवादचन्द्र नामक स्मार्त्त ग्रन्थके प्रणेता। इन्होंने राजा चन्द्रसिंहकी पत्नी लछिया (लक्ष्मी) देवीके आदेशसे १४वी शताब्दीके मध्य भागमें उक्त दोनों ग्रन्थोंकी रचना की।

मिसरोटी (हिं० स्त्री०) १ मिस्सी आटेकी बनी हुई रोटी। २ कंडे आदि पर सेंक कर बनाई हुई चारी, अंगाकड़ी।

मिसल (अ० स्त्री०) सिक्ख धर्मसङ्घ। गुरु नानक प्रवर्त्तित धर्ममार्गानुचारी सिक्ख सम्प्रदाय पिछले समयमें धनकी लालसामें उन्मत्त हो कर एक दलपतिके अधीन एक एक विभिन्न दल या मिसल रूपसे संगठित हुआ।

गुरु नानकके बाद क्रमसे अङ्गद, अमरदास, रामदास, अर्जुन, हरगोविन्द, हरराय, हरेकृष्ण, तेगबहादुर और गुरुगोविन्दसिंह आदि गुरुपद पर अभिषिक्त हुए थे। ऐसा नहीं, कि वे केवल धर्म और नीतिपालनमें ही लगे हों, किन्तु उन्होंने युद्धविग्रहमें भी वे लिप्त होते थे। गुरुगोविन्दसिंह बन्दा नामक एक वैरागीको उत्तराधिकारी बना गये। इनके अधीनमें रह कर सिक्ख-सम्प्रदायकी राजनीतिक शृङ्खला समधिक दृढ़ हुई थी। बन्दाने डकैती कर जो प्रभुत अर्थ उपार्जन किया था, उसीके लोभमें पड़ कर तथा ईर्ष्यान्वित हो कर उनके पीछेके सिक्ख नेताओंने अपने अपने दलकी स्वतन्त्रतारक्षा करते हुए डकैतीसे अर्थ सञ्चय किया और कई मिसल या दलके सर्दार-वंश पीछे सामन्तराजके रूपमें परिगणित हुए। जब पञ्जाबकेशरी सरदार

रणजित्‌सिंहका अभ्युदय हुआ, तब सभी सिक्ख-दल उनके अधीन हो गये थे। इस सिक्ख-सम्प्रदायको एकताने एक दिन अंगरेज सरकारको भी कंपा दिया था। नीचे मिसलोंके नाम दिये गये हैं—

संस्थापक।	मिसल।
१ छज्जासिंह	भङ्गी।
२ खुशालसिंह	रामगढ़िया।
३ जयसिंह	कन्हिया।
४ हीरासिंह	नकई।
५ सदर्रसिंह	अहलूवलिया।
६ गुलाव क्षत्रिय	दल्लीवलिया।
७ सङ्गत और मोहर्रसिंह	निशानवाला।
८ कवोडीमल	कयोरासिंही।
६ कर्म और गुरुसिंह	सहीद और निहङ्ग।
१० फूल	चुलकिया।
११	सुकरूचकिया।

मिसाल (अ० स्त्री०) १ उपमा। २ उदाहरण, नमूना। ३ लोकोक्ति, मसल, कहावत।

मिसि (सं० स्त्री०) मस्यति परिणमतीति मिस्-इन, बाहुलकादत इकारः, पक्षे स्त्रियां ङीष्। १ मधुरिका, सौंफ। २ जटामांसी, वालछड़। ३ शतपुष्पी, सोयां। ४ उशीर, खस। ५ अजमोदा।

मिसिरी (हिं० स्त्री०) मिसरी देखो।

मिसिल (अ० वि०) १ तुल्य, समान। मिस्ल देखो। (स्त्री०) २ किसी एक मुकदमे या विषयसे संबंध रखनेवाले कुल कागज पत्रों आदिका समूह। ३ किसी पुस्तकके अलग अलग छपे फाम जो सिलाई आदिके कामके लिये क्रमसे लगा कर रखे गए हों।

मिसिली (हिं० वि०) १ जिसके सम्वन्धमें अदालतमें कोई मिसिल वन चुकी हो। २ जिसे न्यायालयसे दण्ड मिल चुका हो, सजायाफ्ता।

मिसी (हिं० स्त्री०) मिसि देखो।

मिस्कला (अ० पु०) सिकली करनेवालोंका वह औजार जिसकी सहायतासे वे सिकली करते हैं।

मिस्कीन (अ० पु०) १ दीन, वेचारा। २ दरिद्र, गरीब। ३ भूखा-नंगा, कंगाल। ४ सीधा-सादा, सुशील।

मिस्कीन सूरत (अ० वि०) जो देखनेमें सीधा-सादा या दीन, पर वास्तवमें दुष्ट या पाजी हो।

मिस्कीनी (अ० स्त्री०) दीनता, गरीवी। २ सुशीलता।

मिस्कौट (अ० पु०) १ भोजन, खाना। २ एक साथ वैठ कर खाने पीनेवालोंका समूह। ३ गुप्त परामर्श।

मिस्टर (अं० पु०) महोदय, महाशय। इस शब्दका इस्तेमाल अकसर अङ्गरेजोंमें अथवा अङ्गरेजी ढंगसे रहनेवाले लोगोंके नामके साथ होता है।

मिस्तर (हिं० पु०) १ काठका वह औजार जिससे राज-लोग छत या पलस्तर आदि पीटते हैं, पिटना। २ वह कल जिससे नीलकी टिकियां वनाई जाती हैं।

मिस्तर (अ० पु०) दफ्तीका वह वड़ा टुकड़ा जिस पर समानान्तर पर डोरे लपेट या सी लेते हैं। यह लिखनेके समय लकीरें सीधी रखनेके लिये लिखे जानेवाले कागजके नीचे रखा जाता है। कभी कभी इससे कागज भी दवाया जाता है। २ मेहतर देखो।

मिस्तरी (अ० पु०) वह जो हाथका वहुत अच्छा कारीगर हो, चतुर शिल्पकार। इस शब्दका प्रयोग अकसर लोहारों, वढ़इयों, राजगीरों और कल-पेंच आदिका काम करनेवालोंके लिये ही होता है।

मिस्तरीखाना (हिं० पु०) वह स्थान जहां लोहार, वढ़ई या कल पेंचका काम जाननेवाले वैठ कर काम करते हैं।

मिस्ता (हिं० पु०) १ वह मैदान जिसमें किसी प्रकारकी हरियाली न हो, वंजर। २ वह समभूमि जो अनाज दांनेके लिये तैयार की जाती है।

मिस्र (मिसर) (Egypt)—अफ्रिकाके उत्तर-पूर्वमें अवस्थित देशविशेष। इसकी उत्तरी सीमा पर भूमध्यसागर, पूर्व पेलेस्टाइन, अरव और लालसागर, दक्षिणी सीमा पर न्यूबिया और पश्चिमी सीमा पर सहाराभूमि है। यह अक्षा० २४° ३' से ३१° ३६' उ० तथा देशा० ३०° से ३४° ४०' पू०में अवस्थित है।

नामकी उत्पत्ति।

मिस्र शब्द अति प्राचीनकालसे भारतमें प्रचलित है। विलसन आदि विद्वानोंका अनुमान है, कि भारतीय 'मिश्र' उपाधिधारी ब्राह्मणोंने अति प्राचीनकालमें

अफ्रिकाके किनारे उपनिवेश स्थापित किया था, इसीके अनुसार मिश्र शब्दके अपभ्रंशसे 'मिस्र' या मिसर हो गया है। कुछ लोगोंका कहना है, कि संस्कृत 'मिश्र' (to mix) धातुसे मिसर या मिस्र शब्दकी उत्पत्ति है। बहुत पुराने जमानेमें फिनिक, मिरीय, आसिरीय, वाबिलनीय, काल्डीय, मिदीय, प्राथिंय और भारतीय आदि कई देशोंके वणिक् भूमध्यसागरमें व्यवसाय करते थे। मिस्रमें वाणिज्य आदिके लिये कई जातियोंके 'मिश्रण'-से मिसर अर्थात् मिश्र देश या मिस्र शब्दकी उत्पत्ति हुई है। किन्तु इस विषयमें कोई उपयुक्त प्रमाण नहीं मिलता।

अब देखना चाहिये, कि इजिप्ट भाषामें मिश्र या मिस्र शब्दकी व्युत्पत्ति किस तरह है। एनसाइक्लोपिडिया-ब्रिटेनिका नामक ग्रंथमें वृटिश म्यूजियमके ऐतिहासिक पण्डित रेजिनाल्ड स्टुआर्ट पुलने (Raginald stuart Poole) मिष्टर पिक् (Mr. Piele) के मतके अनुसार लिखा है, कि 'सेमितिक भाषा' को धातुके अर्थमें 'इजिप्त' शब्दकी कोई सन्तोषजनक व्युत्पत्ति नहीं है। यह संस्कृत 'गुप्' (रक्षणमें) (to guard) धातुसे उत्पन्न है। इजिप्त = आगुप्त (Guarded about, i.e. fortified) अर्थात् सुरक्षित देश। हिब्रु और अरबी भाषामें मिसर शब्दकी व्युत्पत्ति भी इसी अर्थमें मिलती है। मिसर शब्द हिब्रु भाषामें मजर (Mazr) और अरबी भाषामें (misr) शब्द भी बहुधा 'सुरक्षित' (fortified) के अर्थमें व्यवहृत होता है। मालूम होता है, कि हिब्रुमें मेजर, अरबीमें मिसर, इसके बाद भारतमें इसका रूप मिस्र या मिश्र हो गया है। आसिरीय भाषामें यह मुसर (musr) और फारसीमें मुद्राया (Mudraya), यूनानीमें इजिप्त (Aiguptos) या आगुप्तभावसे प्रचलित है। होमरके काव्यमें आगुप्तका वारंवार नाम आया है। हिब्रु भाषामें मजर और मिजरम (mizraim) दो तरहके शब्द आये हैं। मिस्र मिस्रके बदलेमें मिलरमका व्यवहार होता था। इसका प्रमाण मिलता है। हिब्रु भाषामें सीमान्तके अर्थमें कभी कभी 'मजर' शब्दका व्यवहार भी देखा जाता है।

जो हो, पण्डित लोग संस्कृत अर्थानुयायी यूनानी भाषाका 'आगुप्त' शब्द ही इस समय व्यवहारमें लाते हैं। उनका कहना है, कि आदि राजा मेना (मनु)-ने राज्य स्थापन कर किले बना कर इसको सुरक्षित किया था। इसीलिये 'इजिप्त' आगुप्त या हिब्रु मजर और पीछेके मिस्र शब्द एकार्थबोधक हैं।

मिश्र या मिस्रका दूसरा अर्थ कृष्णदेश है। अधिकांश पाश्चात्य पण्डित यही अर्थ लेते हैं। क्योंकि इस अर्थबोधकके अनेक प्रमाण हैं। मिस्रके पवित्र लेख या हाइयेरोग्लिफिक (Hieroglyphics) भाषामें इजिप्तका नाम केम या केमी (em) आया है। इसका अर्थ है—काला देश। इजिप्तकी भूमि काली है, इसीसे इस नामकी उत्पत्ति हुई है। कोप्ट (Copt) भाषामें भी इजिप्टका अर्थ काला देश है। इजिप्टके पुरातत्त्वज्ञ पण्डित डाक्टर ब्रागसस (Dr Brugsch)-का कहना है, कि 'केम' शब्द और बाइबिलका हाम (Ham) शब्द एकार्थबोधक है। क्योंकि 'क' स्थानभेदसे 'ह' के रूपमें परिणत हुआ है। ये दोनों शब्द ही काले देश और गर्म देशके अर्थमें प्रयोग हो सकते हैं। कुछ लोगोंका कहना है, कि यूनान आगुप्त (Aiguptos) शब्द गृध्रके अर्थमें व्यवहृत हो सकता है। इजिप्तमें गृध्र देवताके रूपमें पूजित हुआ है। इस गृध्र पक्षीके सम्बन्धमें कोई पौराणिक कहानी प्रचलित थी, जिसका इस समय नामोनिशान नहीं मिलता।

धात्वर्थके इस सन्दिग्ध अनुमानको छोड़ कर यूनानी और लेटिन भाषाके प्रति दृष्टिपात करनेसे दिखाई देता है, कि इजिप्त एशियाके अंशविशेषसे उल्लिखित हुआ है। बहुत प्राचीनकालके भौगोलिक संस्थानके अनुसार नील-नद एशिया और अफ्रिका इन दोनों देशोंके भीतरसे प्रवाहित होता था।

राज्यका विभाग।

भारतवर्षकी तरह बहुत पुराने जमानेसे मिस्रके दो विभाग दिखाई देते हैं, उत्तर-विभाग और दक्षिण-विभाग या उच्च और निम्न-विभाग। प्राचीनकालमें मिस्रके ४४ विभाग या प्रदेश (Nomes) थे। उत्तर-मिस्र और दक्षिण मिस्रमें २२ २२विभाग थे। इन सबोंके उल्लेख करनेकी कोई जरूरत दिखाई नहीं देती। प्रत्येक विभागके एक-एक शासनकर्त्ता अलग अलग शासन

करते थे। शासकोंका नाम 'हा' (Ha) होता था। प्रत्येक विभागमें स्वायत्तशासन या म्यूनिसिपल शासन-प्रणाली प्रचलित थी। प्रत्येक विभागमें ही धर्माधिकरण रहता था और उसके उपयुक्त विचारक और अन्यान्य कर्मचारी शासनव्यवस्था किया करते थे। दूसरे राजाके शासनकालमें विभागका परिवर्त्तन हो जाता था। भूमिका सरवेकर या नाप जोख कर भूमिका कर लगाया जाता था। प्रत्येक विभागके सीमान्तसूचक अलग-अलग चिह्न बनाये गये थे।

सेथस या सिसस्त्रिस् (sethos or sisostris) के राजत्वकालमें मिस्रके ३६ विभाग बनाये गये थे। भूगोलविद् टलेमीके समयमें ४७ विभाग थे। उस समय उच्च, निम्न और मध्य—ये तीन ही विभाग मुख्य थे।

सन् ४०० ई०में अरबोंके राजत्वकालमें मिस्रके तीन ही विभाग दृष्टिगोचर होते हैं, मसर एल बहरी या निम्न मिस्र, फैयूमेल वास्तामी या मध्य मिस्र, एस् सैद या उच्च मिस्र।

वर्त्तमान समयमें इजिप्तके जो विभाग हैं, वे नीचे लिखे जाते हैं,—

१। निम्न मिस्रके सात विभाग।

विभाग	प्रधान नगर।
१। बोहारिह	देमेनहुर
२। एलगिजे	एलगिजे
३। काल्युबुये	काल्युब
४। सरकिये	जगाजिग
५। मेनुफिये	सेयबिन्
६। घरबिये	तान्ता
७। दखलिये	मनसुरा।

२। मध्य मिस्रके दो विभाग।

१। बेनीसुरेफ फेयूम	बेनीसुवेफ
२। एलमिन्ये बेनीमेजर	एलमिन्ये।

३। उच्च मिस्रके चार विभाग।

१। आस्युत	आस्युत।
२। गिर्जा	सुहाग।
३। किने कुसर	किने।
४। इसने	इसने।

भूतत्त्व।

भूतत्त्वविद् पण्डितोंने मिस्रके उच्च और निम्न विभागकी परीक्षा कर कहा है,—"किसी विषयमें इनका सादृश्य नहीं। इसीलिये ये दोनों विभिन्न देश मालूम होते हैं। और तो क्या—पशु, उद्भिद् और प्राणि-राज्यमें भी सम्पूर्ण रूपसे विभिन्नता दिखाई देती है। निम्न मिस्रकी भूमि समतल है, किन्तु उच्च-विभागकी भूमि सवत्र ही बालुकामयी और पत्थरके टुकडो तथा नदीके किनारेकी भूमि ग्रानाइट नामके पत्थरोंसे परिपूर्ण है। प्राचीनकालमें इन्हीं सब पत्थरोंसे वहां पिरेमिड तय्यार हुआ था।

नीलनद मिस्रके बीचसे बहता है, इसके अगल-बगलकी भूमि उर्वरा हो गई है। मिस्रमें प्रायः वृष्टि नहीं होती। प्रतिवर्ष नीलनदकी बाढ़से दोनों किनारेकी भूमि डूब जाती है। इसलिये मिस्रका नाम नदीमातृक देश है। प्राचीन मिस्रवासी नीलनदकी पवित्रता की प्रशंसा कर गये हैं। मिस्रके पश्चिममें पृथ्वीकी सबसे बड़ी मरुभूमि, मध्यस्थलमें पृथ्वीकी सबसे बड़ी नदी और मनुष्योंकी कीर्त्तियोंके बहुत बड़े नमूने विद्यमान हैं। ये दर्शकोंके मनमें अद्भुत भावका उद्रेक करते हैं। निम्न मिस्र या डेल्टेकी भूमि नाना शस्यसम्पदोंसे भूषित रहती है। चारों ओर विविध स्मृति-स्तम्भ अतीत कीर्त्तियोंकी अक्षय महिमाकी स्मृति उद्रेक करते रहते हैं। मिस्रमें प्राकृतिक दृश्य और मनुष्य-कीर्त्तिने समभावसे ही कालस्रोतमें प्रतिद्वन्द्विता की है। मिस्रमें सभी जगह पर्वतश्रेणी विराजमान है। ये सभी पर्वतमालायें मनुष्य-शिल्पकी प्राचीन कीर्त्तियोंके निदर्शन अपने गात्र पर लिये खड़ी हैं। पृथ्वीके किसी देशमें अतीत कीर्त्तियोंके इतने चिह्न नहीं पाये जाते। थीरस नगरीका ध्वंसावशेष आज भी ५।६ कोसोंमें पड़ा हुआ है।

यहांकी आबोहवा साधारणतः उष्णप्रधान देशोंकी तरह है। यहांकी वायु अत्यन्त उत्तप्त और सूखी है।

यहाकी वायुमे जलकी भापका पूर्णतः अभाव है। इसीलिये मिस्रमें वृष्टि, तूफान या वज्रपात नही होता। समुद्रके किनारेके स्थानोंमें कुछ वर्षा होती है। उत्तरकी ओरसे वायु प्रवाहित होती है। शीत-ऋतु ही यहांकी आबो-हवाके लिये बहुत रमणीय है। बसन्तके अन्तमें 'साइमून' और 'सिरको' आदि मरुभूमिमे विषाक्त वायु प्रवाहित होती है। इसी वायुके स्पर्शसे प्राणिमात्र ही मुहूर्त्त भरमें काल-ग्रसित होते हैं।

प्राणि-राज्यमें नाना तरहके वैचित्र्य दिखाई देते हैं। नील-नदमें दरियाई घोड़े बहुतायतसे देखे जाते हैं। बहुत सहस्र वर्षों से ही यह प्राणी मिस्रमें पाये जाते हैं। आदि राजा 'मेना' दरियाई घोड़ोंका शिकार खेलनेमें ही मारे गये थे। इस समय नील-नदके दक्षिणांश-के सिवा ये दूसरी जगह नहीं दिखाई देते, मिस्रमें ही सबसे अधिक अहिनकुलका प्रादुर्भाव है। नीलनदके घड़ियाल पृथ्वीमे मशहूर हैं। गृहपालित सब तरहके पशु पक्षियोंके सिवा हिरण, शृगाल (सियार या गीदड़) और सींगवाले सर्प यहाके अद्भुत जन्तु हैं। टिड्डी बहुतायतसे देखी जाती हैं। तरह तरहके कीट-पतङ्गोंका भी यहां अभाव नही है।

मिस्रमें धातुद्रव्यकी खान नहीं है। ७००० वर्ष पहले मेनाके राजत्वकालमें पत्थरके बने अस्त्रोंका प्रयोग होता था। किन्तु ये इस तरहके कौशल-से बनाये जाते थे, कि उनसे हजामत तक भी बन सकती थी और अस्त्र चिकित्सा तकमें भी काम लिया जा सकता था, लकडी काटने और अन्यान्य कामोंकी कौन कहे।

खनिज द्रव्योंमें—मर्मर पत्थर, गन्धक, सोरा और नमक तथा छोटे छोटे हीरे ही प्रधान हैं।

धान, मक्का (मकई), बाजरा, कपास, जौ, गेहूं, ककड़ी, खीरे, ईख, अफीम, तम्बाकू, पटुआ और नील यहाकी प्रधान ऊपज हैं। भूमि अत्यन्त उर्वरा है। वर्षा न होने पर भी असंख्य नहरोंके जलसे खेतीका काम होता है। मिस्रके फलोद्यान पृथ्वीमें सबसे अधिक मश-हूर हैं। नारंगी (संतरा) आदि कई तरहके निम्बू, अंजीर, अखरोट, खजूर, बादाम, केला बहुतायतसे पाये जाते हैं। ताड़के पेड़ हर जगह दिखाई देते हैं। मिस्रमें अरण्य नहीं है। यहां "पेपाइरस" नामक पेड़ उत्पन्न होते हैं। ७००० वर्ष पहले मिस्रमें इसके वल्कल या छालसे कागज़ तैयार किया गया था। मिस्र-भाषाके प्रायः प्राचीन ग्रन्थ इसी छाल पर लिखे गये थे।

पहले जो यहांके राजा थे, उसकी उपाधि खदीव होती थी। पहले इन्हीं खदीवके अधीन एक मन्त्री-मण्डल रहता था। इसी मन्त्री-मण्डल द्वारा यहांका राज्यकार्य निर्वाहित होता था। इसमें सैनिकोंके विभाग-से ४ और विचारकोंके विभागसे ४ मन्त्री चुने जाते थे।

खदीवोंके जमानेमें मिस्रकी बड़ी श्रीवृद्धि हुई है। पाश्चात्य आदर्श पर कितने ही विद्यालय स्थान स्थान पर प्रतिष्ठित हुए हैं। सुएज़ केनेल (नहर) खुदवा देनेसे यहांके व्यवसाय-वाणिज्यकी बड़ी उन्नति हो रही है और पाश्चात्य सभ्यता यहांके अधिवासियोंका चित्त अपहरण कर रही है।

पुरातत्त्व।

मिस्रका पौराणिक इतिहास अन्धकारसे आच्छन्न है। ऐतिहासिकोंको पर्वत पर खुदे लेखोंसे पता लगा है, कि देवोंने सत्ययुगमें मिस्रमें २४६०० वर्ष तक राज्य किया था। इसके बाद मिस्रमें त्रेता और द्वापर युगमे देववंशसम्भूत राजाओंने ६००० वर्षों तक राज्य किया है। इसके बाद ईसाके ५००४ (या ७००४) वर्ष पहले मनुष्य जातिके आदि राजा मेनाने नये राज्यकी स्थापना कर राजवंशकी प्रतिष्ठा की थी। उस समयसे आज तक ७००० वर्षका धारावाहिक इतिहास मौजूद है। इस-लिये मिस्रका अतीत वृत्तान्त दुर्भेद्यतमसाच्छन्न नहीं है। अङ्गरेज पहले मिस्रके प्राचीनत्वमें सन्देह करते थे। क्योंकि अङ्गरेज-धर्मयाजक 'आसार' (Usher)-ने गणना कर बतलाया था, कि ईसाके ४००४ वर्ष पहले पृथ्वीकी सृष्टि हुई और २३४८ वर्ष ईसासे पूर्व जलप्लावन या प्रलय हो गया था। उस समयके लोग आसारकी गणनाको निर्मूल कहते थे। किन्तु प्रत्नतत्त्वविदोंने पर्वत पर लिखे विचित्र चित्रलिपियोंका (Hieroglyphes) यथार्थ तत्त्व जान कर भी आसीरिया, यूनानी,

हिब्रू, लेटिन और अरबी भाषामें लिखे पुरावृत्तोंको पढ़ देखा, कि मिस्रके पुरातत्त्वमें सन्देह करनेका कोई कारण दिखाई नहीं देता। इसके बाद मिस्रकी प्राचीन कीर्त्तियां एक स्वरसे उनके अनुकूलमें साक्ष्य प्रदान करने लगी। जिन सब प्राचीन ग्रन्थकारोंने मिस्रका इतिहास लिखा है, उनमें कई ग्रन्थकारोंके नाम लिखे जाते हैं।

होलिओ पालिसके पुरोहित शिवनितास (Sebenytus) नगरवासी प्राचीनतम ऐतिहासिक 'मनेथो' (Manetho)-ने सबसे प्रथम राजाके हुक्मसे मिस्रके इतिहासकी रचना की। इसे पढ़नेसे मालूम होता है, कि मेनाके राजत्वकाल (ईसा ५०६४ ५४००) से दूसरे दरायुसके राजत्वके समय (३०० वष ईसासे पहले) तक ३० राजवंशोंने मिस्रका राजत्व किया था। इसके बाद ३०० ई०में जुलियस अफेरिकनस् (Julius Africanus) ने मिस्रका इतिहास संग्रह किया। इसके बाद ८०० ई० तकका इतिहास यूसिवियस (Eusebius) और जाज सिन्सेलस (George, the syncellus)ने मिस्रका इतिहास लिखा। हिरोदोतस, दिउदोरस (Diodorus) जोसेफास् (Josephus) आदि बहुतेरे लेखक प्राचीन मिस्रका इतिहास लिख गये हैं। बाइबिलके सृष्टिविषयमें मिस्रमें बहुत-सी बातें मिलती हैं। होमरका काव्य मिस्रके वर्णनसे परिपूर्ण है। कुरानमें भी मिस्रका पूरा विवरण है। इन सब ग्रन्थोंके प्रमाणोंके सिवा प्राचीन मिस्रकी सभ्यताका अक्षुण्ण निदर्शन-स्वरूप प्रकाण्ड-पाषाणस्तूप (Pyramid) और पवित्र चित्रलिपि या प्रस्तर-खोदित देवाक्षरनिबद्ध वर्णन सुस्पष्टरूपसे मिस्रका इतिहास प्रकट कर रहा है।

इस समय जर्मनी, फ्रान्स, इटली और इंग्लैण्डके सैकड़ों प्रत्नतत्त्वविदोंने अपने अटूट परिश्रमसे मिस्रका इतिहास लिखा है। इन्होंने भूगर्भसे शिलालेखोंका उद्धार कर विविध तत्त्वोंकी मीमांसा की है। बुक (Boockh), लेपसियस (Lepsius आदि बहुत मनुष्योंने जीवन-व्यापी परिश्रमसे मिस्रके अतीत तत्त्वका उद्धार किया है।

सत्य या देव-युग।

मिस्रके पुराणोंमें ऐसा लिखा है, कि सूर्य आदि देवोंने (Path या Vulcan, Ran या Helios or Sun, Sos or shu Saturn (शनि) or Seb, Osiris or Heshar, Typhon or Seti and Horns or Hor) समुद्रसे घिरे और समुद्र द्वारा पादप्रक्षालित मिस्रका बहुत दिनों तक राजत्व किया था। उस समय इस मिस्रकी आभा और रमणीय दृश्यसे देवताओंको भी मुग्ध होना पड़ा था। देवोंके जो नाम लिखे गये, वे सभी सूर्यके ही नामान्तर या सूयके ही अर्थबोधक हैं; केवल शनि सूर्यके पुत्र हैं। इसलिये सूर्य आदि देवोंने और उनके वंशजोंने सबसे पहले मिस्रका राजत्व किया।

इसके बाद त्रेता और द्वापर युगमें देवकल्प मनेस (manes) आदि राजाओंने बहुत दिनों तक राज्य किया। इन सब राजाओंके अधिकांश नाम सूर्यके एकार्थबोधक हैं। इससे मालूम होता है, कि सूर्यवंशने बहुत दिनों तक राज्य किया था।

एसारमस विलसन (Erasmas Wilson) अपने रचित मिस्रके पुरातत्त्वमें लिखा है, कि इस देशके हर्सेसु (Horsesu) राजाके राजत्वकालमें एक शिलालेख और बकरीके चमड़े पर लिखी एक पुस्तक मिली है। लिखन प्रणाली परीक्षा द्वारा प्रमाणित हुआ है, कि उक्त प्रस्तर लिपि या शिलालेख मेनाके राजत्वकालके बहुत समय पहलेका है। कुछ प्रत्नतत्त्वविद् पण्डितोंका कहना है, कि मिस्रमे १००० वर्ष तक पौराणिक काल था। ईसाके ५७०२ वर्ष पहले (किसी किसीके मतसे ५००४ और ४०००) मिस्रके आदिम राजा मेना ('मेना' क्या मनु थे ?)-ने सिंहासन पर आरोहण किया था।

यहां हम मेनाकी वंशावली (मनुवंश)-की आलोचना करेंगे। बाइबिलके सृष्टितत्त्व प्रकरणके १०वें अध्याय (Genesis, Chap x) में उल्लेख है, कि हाम (Ham) के चौथे पुत्र (Mizrama)-से ही इजिप्टका नाम मिजराम हुआ है। हामके चार पुत्र थे,—कुश (Cush), मिजराम (mizram), फूत (Phut) और केनान (Canaan) इनमें मिजरामने ही मिस्रकी स्थापना की थी। मिजरामके सात पुत्रोंमें चारने मिस्रका आधिपत्य किया था। इन चारोंके नाम इस तरह हैं—१ लूद (Lud), २ अनम् (Anam), ३ पाथरस (Pathrus) और नप्त (Napthu)। लूद और रुत् पृथक् पृथक् हैं। अनमके वंशधरोंने

हेलियोपोलिस (Heliopolis) या सौर नगरकी प्रतिष्ठा कर सूर्यपूजाका प्रचार किया। इन लोगोंने पीछे गोसेन (Goshen) भूमि पर अधिकार कर मिस्रकी निम्न-भूमि पर अधिकार जमाया और सिरिया तक अपना राज्य फैलाया। सूर्य-कन्या पास्त (Pasht) या वास्त (Bast) उनकी अधिष्ठात्री देवी हैं।

पाथरस या पाथमिमगण उत्तरके विभागमें रहते थे। होलिओ या सूर्यनगरवासी पीछे मेमफाईट (Memphite) नामसे प्रसिद्ध हुए। पूर्व समयमें अरवी निम्न मिस्रके देवता सेट (Set या Typhon) की पूजा करते थे और पश्चिम एशियामें सर्वत्र सूर्यकी ही पूजा प्रचलित थी।

प्राचीन मिस्र जातिकी कहावतें कुछ वाइविलकी वर्णनासे मिलती जुलती हैं। असुर जब पापाचार फैलानेके लिये तत्पर हुए, तब सूर्यदेव (Hor-em kha)-ने युद्धमें उन सभोंको पराजित किया। असुरगण पराजित हो कर कुशस्थलमें अर्थात् दक्षिण-अफ्रिका (यही क्या कुशद्वीप है ?) भागे। पीछे यही निग्रो नामसे विख्यात हुए। निग्रोको ही हबशी कहते हैं। सुरोंमें या देवताओंमें कितनोंने ही श्वेत द्वीप और अफ्रिकाके उत्तर भूमध्य सागर तट पर आ कर उपनिवेशकी स्थापना की। तामाहु (Tamahu—तमोहा ?) इनके अग्रगण्य (नेता) थे।

अनम या आम् (Amn) के वंशधरोंने एशिया-खण्डमें प्रवेश कर पेलेष्टाइन, सिरिया, एशिया माइनर, अरब और कालदिया आदि देशोंमें जा कर उपनिवेशोंकी स्थापना की। चतुर्थ जाति शाशुकोन निर्दिष्ट स्थानमें न रह कर वेदुइनरूपमें परिणत हुई। इस जातिके लोग प्रायः अरबमें ही रहते थे। मिस्रके जातितत्त्वमें इन्हीं प्रधान चार जातियोंका उल्लेख है।

आज कलकी वैज्ञानिक मण्डलीने वाइविलकी वार्त्तोंकी उपेक्षा कर और वहांके किस्से कहानियोंकी परवाह न कर सुसंस्कृत विज्ञानानुमोदित प्रमाणके साहाय्यसे यह सिद्धान्त किया है, कि काकेशीय जातिके मानव सुदूरवर्त्ती प्राचीन कालमें एशियासे मिस्रमें गये थे। निग्रो जाति या इस्रेलाइट और अरब जातिसे यह पृथक् है। उपनिवेशिकोंने पहले भूमध्यसागरके तटोंके नाना स्थानोंमें वास किया। उनमें लिबू (libu) जाति पीछे लाइवियस नामसे परिचित हुई। अफ्रिकाका प्राचीन नाम लाइविया है। प्राचीन मिस्रकी पौराणिक कहावत इस तरह है, कि उनके पूर्व-पुरुष दक्षिण-पूर्वसे मिस्रमें आये थे। इनका आदिनिवास तानेतार (Taneter) या देवभूमि है।

आदि राजा मेनाके राजत्वकालमें सभ्यताका विकाश देखनेसे मालूम होता है, कितने सहस्र वर्ष पहले मिस्रमें मनुष्योंकी वसती हुई थी, इसका अनुमान लगाना कठिन है।

जो हो, द्वापर युगके अवसानमें मेनाने अपने सुशिक्षित और पराक्रमशाली सैनिकोंके साहाय्यसे ५००४ वर्ष ईसासे पूर्व (दूसरे मतसे ७००४ वर्ष) मिस्रके सिंहासन पर आरोहण किया। उन्होंने समाजमें विलास-वासनाकी सृष्टि कर पृथ्वीमें पापका वीज वपन किया। मिस्रके इतिहासमें उनके पूर्ववर्त्ती जनसमाजका रूप इस प्रकार अंकित हुआ है।

मेनाने ही सरलतामय मानव-जीवनमें पापका प्रवाह प्रवाहित किया था। उसके पहले मनुष्य जाति प्रकृतिके शिशुकी तरह वनमें, पर्वत कन्दरों और तराई आदि जङ्गलोंमें वास करती थी। मनुष्य अयत्नसम्भूत वनके फल-मूलोंको भक्षण कर अरण्य जन्तुकी तरह स्वच्छन्दरूपसे विचरण करते थे। वह दिगम्बर मानवदल सरलताकी प्रतिमूर्त्ति था।

झरने और नदीका जल ही जिसका पीनेका जल था, वन फल ही आहार था, दिग् ही जिसका अम्बर था, चन्द्र ही दीपके प्रकाश थे, नीलाम्बर जिसकी चाँदनी था, वृक्ष, लता, पशु, पक्षी जिसके सहचर थे और विशाल विश्वमन्दिर जिसका वासगृह था, उनमें किस लिये परस्पर द्वेष भावका सञ्चार होता ?

क्रमशः यह मानवदल सभ्यताकी आड़में उन्नतर सोपान पर चढा। तरु लता द्वारा आच्छादित व कुञ्जकुटि और पर्वतके निविड़ कन्दरको छोड़ कर वे पशु चर्म द्वारा शिविर (शामियाना) तय्यार कर वसुन्धराकी पीठ पर विचरण करने लगे। उस समय उनके रहनेका

कोई निर्दिष्ट घर न था। प्रकृतिका वैचित्र्यमय विशाल राज्य उनका आवास-स्थल था।

किन्तु प्रकृतिने उनके प्रतिकूल आचरण करना आरम्भ किया। नैदाघ सूर्यकी तीक्ष्ण रश्मि और वर्षाकी अविराम धारामें अपने स्त्री पुत्रको ले कर वे व्याकुल हो उठे।

ऐसे समय एक मानवीय महापुरुषने उनके अनन्त वासगृहको छुड़ा दिया, विशालत्व छोड़ कर क्षुद्रत्वकी सङ्कीर्ण सीमामें आवद्ध कर दिया, भ्रमणकारियों स्वेच्छापूर्वक गमन परित्याग कर नये मानव-समाजकी सृष्टिके साथ साथ झोपड़ोंको बनाया। ये मानवीय महापुरुष ही मेना (या मनु) या फारोवंशके (pharoah) प्रतिष्ठाता हैं। 'फारो' शब्दका अर्थ गृह है अर्थात् जिन्होंने सबसे पहले गृहका निर्माण किया और मनुष्यको गृहमें वास करनेकी शिक्षा दी वे ही फारवा या फारो हैं।

मेनाने सिंहासन पर बैठ नवप्रतिष्ठित राज्यकी रक्षा करनेके लिये लाइवियनोंको युद्धमें पराजित किया और सुरक्षित मेमफिस् नगरकी स्थापना की। पीछे उच्छृङ्खल मानव-जातिको सामाजिक नियमोंमें वद्ध करनेके लिये नियमका वन्धन तय्यार किया अर्थात् आईन कानून बनाया। यही मिस्रकी 'मेना' या 'मनुसंहिता' है। इस तरह बनावटी समाजकी स्थापना कर उन्होंने नाना प्रकारकी बनावटी चीजों पर मनुष्यका मन आसक्त करा दिया; नये नये विलास और अभावकी सृष्टि की। आप्त (ptah) मन्दिर निर्माण कर सूर्यकी पूजाका प्रचार किया। इसके सिवा मेनाने राज्यमें सर्व प्रकारकी सुश्रृङ्खला और सुख समृद्धिकी सृष्टि की। ६२ वर्ष राज्य कर उन्होंने दरियाई घोड़ोंके साथ युद्ध कर प्राण त्याग किया। कुछ लोगोंका कहना है, कि नीलनदमें स्नान करते समय उनको घड़ियालने पकड़ लिया था।

उनकी मृत्युके बाद उनके वंशके नौ राजाओंने ३५० वर्ष तक राजत्व किया था। मेनाके पुत्र तेता (Teta) या आथोथिस (Athothis)-ने मेमफिस् नगरमें एक वृहत् अट्टालिका निर्माण की। इसके पहले थिनिस (Thinis) नगरमें मेनाकी राजधानी थी। इसीलिये मेनावंशको थिनाइट (Thinite) राजवंश कहते हैं। अथोथिस्ने शरीर विज्ञान (Anatomy)-के सम्बन्धमें एक बड़े ग्रन्थकी रचना की। ईसाके ५००० वर्ष पूर्व मिस्रमें शरीर-विज्ञानका सम्यक् अनुशीलन देख कर पाश्चात्य पण्डित विस्मित हुए थे। अथोथिस्ने एक प्रकारके केशवर्द्धन तेलकी सृष्टि की थी और अस्त्रचिकित्सामें भी अद्भुत निपुणता दिखलाई थी।

थिनाइटवंशीय चतुर्थ राजा यूनेफेसके राजत्व-कालमें मिस्रमें एक बहुत बड़ा अकाल पड़ा था। इसमें बहुत आदमी मर गये। उनके समयमें कोचोम (Kochome) नगरमें सबसे पहले पिरामिड तय्यार हुआ। इसी समय स्त्रियोंके राज्याधिकारको न्याय संगत स्वीकार कर इसे राजकीय कानूनोंमें मिला दिया गया। प्रथम वंशके राजत्वकालमें ही सभ्यताका (पूर्ण अंग हो) यथासम्भव विकाश हुआ था। दूसरे फारोंके राजत्वकालमें साहित्यविज्ञानकी आलोचना आरम्भ हुई। चतुर्थ फारो उयेनफेसके राजत्वकालमें सक्काराका पहला पिरामिड तय्यार हुआ। पञ्चम फारोंके राजत्वकालमें दर्शनशास्त्रको उन्नति हुई और देव-देवीको पूजा पद्धति श्राद्ध-तर्पणादि विषयक व्यवस्था-शास्त्र संगृहीत हुआ। आत्माका विनाश नहीं है यह मत उसी समय प्रचलित हुआ था।

तृतीय वंशसे चतुर्थ वंशके अन्त तक मिस्रके बड़े बड़े कई पिरामिड तैयार हुए थे। इसीलिये इस समयको पिरामिड-युग कहते हैं। तृतीय वंशके दूसरे राजाने चिकित्साके शास्त्रमें इतनी उन्नति की थी, कि उस समयके लोग उसको Esculapius या धन्वन्तरी कहते थे। इसी समय बड़े बड़े जहाज तैयार हुए थे और वाणिज्यके लिये नाना देशोंमें आते जाते थे। शिल्प-विद्या और वस्तु-शिल्प तथा स्थापत्यने बड़ी उन्नति की। सब विषयोंमें साम्राज्यके बाहरी और भीतरी वैभवकी वृद्धि हुई।

इस युगमें मिस्रदेश शतरंज खेलना जानता था। चतुर्थवंशके राजा खुफुके राजत्वकालमें सर्वोच्च पिरामिड निर्मित हुआ। इसी समय ६४ अध्यायोंसे पूर्ण एक धर्मपुस्तक लिखी गई। इसी तरह प्रथम वंशसे दशम वंशके राजत्वकाल तक अर्थात् २००० वर्षों तक

मिस्र सब तरहके ऐश्वर्य्यसे विभूषित हो चुका था। इसके बाद कुछ समय तक मिस्रने कुछ भी उन्नति नहीं की। इसके बाद भिल्लवंशीय राजाओंके सिंहासनारूढ होने पर मिस्रकी फिर उन्नति होने लगी। तृतीय आमेनहातके राजत्वकालमें वर्त्तमान अलेकजेण्ड्रिया नगरके निकट मारिस झील (Maris Lake) खोदी गई। इस झीलसे नीलनदकी पथ-प्रणालीका संयोग था। इसके समान बडा बनावटी जलाशय पृथ्वीमें कहीं भी न था। आमेनहातने इस झीलमें एक अजीब गोरखधन्धेकी सृष्टि की थी। यह मिस्रकी अतीत कीर्त्तिका एक उज्ज्वल नमूना है। यहां प्राचीन मिस्र साम्राज्यके प्राचीन राजाओंका विशेष वर्णन करना कठिन है। संक्षेपमें यह कहा जा सकता है, कि मिस्रके सम्राट्‌ने बहुत दूर तक अपना राज्य विस्तार किया था। फिनकिया, बाबिलन, आसीरिया आदि प्रसिद्ध और पराक्रान्त प्राचीन साम्राज्य भी उन्होंने हस्तगत कर लिया था। इसके बाद आसीरियाका राजवंश कुछ काल तक मिस्रके सिंहासन पर बैठा। इसी समयसे विदेशी जातिके संसर्गसे मिश्रके राजाओंकी नीतिरीति कुछ कुछ बदलने लगी।

मिस्रका राजवंश ५००० वर्ष स्वाधीन भावसे राजत्व करनेके बाद ३४० वर्ष ईसासे पहले फारसके राजा दरायुस द्वारा पराजित हुआ।

राज-वंशावली।

१ला वंश। राजधानी थिनिस् थी, राज्यकाल (५७०४ वर्ष ई० पू० ५४५१) २५३ वर्ष था।

१। मेना।

२। तेता या अथोथिस।

३। आतेथ।

४। आता।

५। हेसेस्तो।

६। मेरिवा।

७। सेमेपसेस।

८। कुव्वे। (मेनावंशके ये आठ राजाओंने राजत्व किया। थिनिसमें उनकी राजधानी थी)

२रा वंश। राजधानी थिनीस। राज्यकाल—(ई०से पू० ५४५१-५१४६) ३०२ वर्ष।

९। बेतो।

१०। काकौ।

११। बेन्नोतार।

१२। औतनेस।

१३। सेन्तो।

३रा राजवंश। राजधानी मेम्फिस्। राज्यकाल। (ईसासे पहले ५१०६ ४६२५)—२१४ वर्ष।

१४। ताती।

१५। नवका।

१६। सरसा।

१७। तेता।

१८। सेतेस्।

१९। नेफेरकारा।

२०। सेनेफेरु।

४थे वंशमें पांच राजे। राजधानी मेमफिस। राज्यकाल (ई०से पू० ४९३५ ५६५१)—२८४ वर्ष।

२१। खुफु।

२२। तेतेफ्रा।

२३। मैनकौरा।

२४। खाफ्रा।

२५। असिसकाफ।

५वें वंशमें १० राजे। राजधानी मेमफिस्। राज्यकाल (ई०से पू० ४६६० ४४०३)—२४८ वर्ष।

२६। उसेरकाफ।

२७। सेहुरा।

२८। काका।

२९। नेफरकारा।

३०। उसरेनरा।

३१। मेनकौहर।

३२। तेतकारा।

३३। उनास्।

३४। आहतेस्।

३५। आकौहर।

६ठे वंशमें ७ राजे। राजधानी एलिफेण्टोनिस

(या हस्तिना राज्यकाल (ई०से पू० ४४०३-४२००) २०३ वर्ष।

३६। तेता।

३७। उसेरकारातो।

३८। मेरीरापेपी।

३९। मेरेनरा मेन्तुहोतेप।

४०। नेतेरकारा।

४१। मेरेनरा तेतेमसाफ।

४२। नेतेरकारा।

७वें ८वें वंशमे १९ राजे। राजधानो मेमफिस। राज्य-काल (ई०से पू० ४२००-३५००) ७०० वर्ष।

४३। मेनकाकारा।

४४। नेफेरकारा।

४५। नेफेरकारा नेनी।

४६। तेतकारासेमा।

४७। नेफेकारा खेन्तुरे

४८। मेरैनहर।

४९। सेनेफेका।

५०। एनकारा।

५१। नेफेरकारा तरेल।

५२। नेफेरकाहर।

५३। सेनफर्का अन्नू।

५४। नेनेफर्कारा पेपिसेसेनेब।

५५। कोरा।

५६। नेफेरकौरा।

५७। नेफेरकौहर।

५८। नेफेरकारा।

९वें वंशकी राजाधानी हेराक्लियुपोलिस।

इस वंशके फारोंके नाम नहीं मिलते, किन्तु स्मृति स्तम्भोंसे मालूम होता है, कि इस वंशने २४२ वर्ष तक राजत्व किया था।

१०वें, ११वें और १२वें राजवंशोंकी राजधानी हेराक्लियो पोलिस और थीवस राज्यकाल (ई०सं पू० ३३५८-३०६४)-२९४ वर्ष।

५९। आन्तेफ।

६०। मेन्तु होतेप।

६१। नेबखेरा।

६२। शङ्कारा।

६३। (१ला) अमेनहात।

६४। (१ला) उसेरतेसेस्।

६५। (२रा) अ-नहात।

६६। (३रा) उसेरतेसस।

६७। (३रा) उसरतेसेम्।

६८। (३रा) अमेनहात।

६९। (४था) अमेनहात।

७०। रानीसेबेक नेफसरा।

१३वें राजवंशकी राजधानी थीरस. राज्यकाल (ई० से पू० २८५१-२२२४) ६५७ वर्ष। इस राजवंशके केवल दो राजाओंके नाम मिलते हैं।

७१। सेबक होतेप।

७२। स्मेङ्कारा।

१४वें राजवंश राजधानी क्षाइस (Xois) इस वंशमें ७६ राजाओंने ५८५ वर्षों तक राज्य किया था। उनके नाम सब नही दिये जाते। १५वें, १६वें और १७वें वंशने (ई० से पू० २२२४-१७०२) एकत ५२१ राजत्व किया। १५वें राजवंशकी राजधानी तानिस् मेमूफिस थी।

१४७। सलातीस।

१४८। बिउन।

१४९। अपखनस।

१५०। अपोफिस।

१५१ जोनियस।

१५२ आसिस।

इस वंशके राजे हिकसस् (Hyksos or Sepherd king) या मेषपालक राजा कहे गये हैं।

१६वें राजवंश—१० राजाओंनेराजत्व किया, इनमें १७३वां राजा नूतबी (Nutbi) प्रसिद्ध था।

१७वें वंशमें तीन राजाओंने राजत्व किया।

१७४। सेतोपोथी।

१७५। सेतनेतनि।

१७६। अपेपी

इसके बाद ३ स्वदेश प्रेमिक सामन्त थीवस्ने राज्य किया था।

१६८। सेककेनेनरा ता।

१६६। ...

१७०। ..

१८वां राजवंश—राजधानी थीवस। राज्यकाल (ई० से पू० १६०३-१४६२) २४१ वर्ष।

१७१ (१ला) आहमेष।

१७२ (१ला) अमेने होतेप।

१७३। (१ला) रथमेष।

१७४। हतासु।

१७५। (२रा) रथमेष।

१७६। (३रा) „

१७७। (२रा) अमेने होतेप।

१७८। (४था) रथमेष।

१७९। (३रा) अमेने होतेप।

१८०। (४था) अमेने होतेप।

१८१। सा नेखत्।

१८२। तुताङ्का मेन।

१८३। आई।

१८४। होरेम हेव।

१९ वां राजवंश—राजधानी थीवस्। राज्यकाल (ई०से पू० १४६२-१२८८)—१७४ वर्ष।

१८५। (१ला) रामेसस्।

१८६। (१ला) सेती।

१८७। (२रा) रामेसस्।

१८८। (१ला) मेरेनप्ता।

१८९। (२रा) सेती।

१९०। मेरेनप्ता।

१९१। अमेन मेसेस्।

१९२। सिप्ता।

१९३। सेत नेख्त्।

२०वें राजवंशकी राजधानी थीवस्, राज्यकाल (ई०से पू० १२८८-१११०)—१७८ वर्ष। इस वंशमें १३ रामेसेसोंने राजत्व किया। (Rameses III to Rameses XII!)

२१वें राजवंशमें—पुरोहित-राजे। राजधानी थीवस् और तानिस। राज्यकाल—(ई०से पू० १११०-९८०) १३० वर्ष।

२०४। हेरहर।

२०५। (१ला) पिनोतम।

२०६। (२रा) „।

२०७। (१ला) पिसेव खाँ।

२०८। (२रा) पिसेव खाँ

२२वें राजवंशकी राजधानी बुवास्थेस (Bubasthes) राज्यकाल ई०से पू० ९८०-८१०।

प्रायः २२० स्वदेशीय स्वाधीन राजाओंने ४५०० वर्ष तक मिस्र पर राजत्व किया। इसके बाद ईसाके पूर्व ९८०ई०में असीरीय राजाओंने प्रबलता लाभ कर मिस्र पर अधिकार किया।

प्रथम असीरीय राजवंश।

(१ला) शेषेङ्क (शशाङ्क ?)

(१ला) उषार्कोन (उषार्क ?)

(१ला) तकेलाथ।

(२रा) उषार्कोन।

(२रा) शेषेङ्क।

(२रा) तकेलाथ।

(२रा) शेषेङ्क।

पिमाई

४था शेषङ्क।

२३वें राजवंशकी राजधानी तानीस। राज्यकाल (ई०से पू० ८१०-७२१) ८९ वर्ष।

पेतुवास्त।

उषार्कोन।

सेमौथ।

२४वें राजवंशकी राजधानी सेस और मेसफिस राज्यकाल ई०से पू० ७२१-७१५।

वक्कोरिव।

२५वां राजवंश—इथियोपीय राजे। राज्यकाल (ई०से पू० ७१५-६६५)-५० वर्ष।

इसी समय यानी ७१५ ई०मे ५० वर्षमे इथियोपीय जातिने प्रबल हो कर मिस्र पर आक्रमण किया। इस जातिके राजाओंके नाम इस तरह हैं,—

पियाखी।

नूत मेरामेन्।

तीर्थ।

रुतामेन।

२६वां राजवंश—राजधानी सैस्। राज्यकाल (ई०से पू० ६६५-५२७)-१३८ वर्ष।

१ला सेमेथेक।

नेको।

२रा सेमेथेक।

आप्रिस या होफरा।

अमसेस।

३रा सेमेथेक। (Psemethek III) इसी समय प्रबल पराक्रान्त फारसके राजाओंने मिस्र पर अधिकार किया।

२७वां राज्यवंश—पहला पारस्य राजवंश। राज्यकाल (ई०से पू० ५२७-४०६) १२१ वर्ष।

काम्बयसेस।

१ला दरायुस्।

१ला जरक्सेस्।

२रा "

शक्दीयानस्।

२रा दरायुस।

२८वां राजवंश—राज्यकाल (ई०से पू० ४०६-३६६) ७ वर्ष। अमर्त्त्यास (Amyrtaeus)

२६वां राजवंश—राजधानी मेण्डीस। राज्यकाल (ई०से पू० ३६६१-३७८) २१ वर्ष।

नेफाराइटिस्

आकोरिस।

सिमौत।

नेफोरोत।

३०वां राजवंश—सेवेन्निटस् (Sebennytos) राज्यकाल (ई०से पू० ३७८-३३०) ३८ वर्ष।

नेक्थोरेव।

टेथेरे या तियस।

नेकथानेव।

३१वां राजवंश—फारसका दूसरा आक्रमण। (ईसा से पूर्व ३४० वर्ष।)

३रा आर्त्त-जरक्सेस।

आर्सानेस।

३रा दरायुस।

इसके बाद मिस्र रोमक और यूनानी राजाओंके हाथ आया। फारसका दूसरा राजवंश यूनानी वीर दिग्विजयी सिकन्दर द्वारा पराजित हुआ था। (ई०से पू० ३३३ वर्ष) सिकन्दरने मिस्रको यूनानके अधीन कर अपनी विजय कहानी चिरस्मरणीय करनेके लिये भूमध्यसागरके किनारे अलेकजण्ड्रिया नगरीका निर्माण किया था। इनके दस वर्ष राज्य करनेके बाद (ईसासे पूर्व ३२३) टलेमी मिस्रका राजा हुआ। इसके बाद १० यूनानी राजाओंने ३०० वर्ष तक मिस्रका शासन किया था। पीछे ईसाके जन्मसे ५१ वर्ष पहले टेलेमी आरमटोस (यह अन्तिम टेलेमी हैं)-की बहन क्लिउपेट्राने मिस्रके सिंहासन पर आरोहण किया। ये भुवनमोहिनी सुन्दरी थी और अपने सहोदर टलेमी दिउनिसियाससे व्याही गई थी। दोनों (भाई बहन) पती-पत्नी रूपसे दम्पति बन कर मिस्रका राज्य करते थे। पीछे दोनोंमें मनोमालिन्य हो गया। इससे क्लिउपेट्रा सिजरके साहाय्यसे भाई और पति दिउनिसियसको युद्धमें पराजित कर स्वयं सिंहासन पर बैठ गईं।

इसी समय मिस्र रोमके हाथ आया। रोमवालोंने ७०० वर्ष तक राज्य किया। पीछे ६४० ई०में महम्मदके उत्तराधिकारी २रे खलीफा उमरने रोमियोंके हाथसे मिस्रको छीन लिया। इसीने अलेकजेण्ड्रियाके विशाल पुस्तकागारमें आग लगा दी थी। इसको गजनीका महमूद भी कह सकते हैं। क्योंकि इसीने मिस्रकी प्राचीन कीर्त्तियोंके स्तम्भको नष्ट किया था। इसने ३६००० सुन्दर नगर और नाना शिल्प-नैपुण्यसे अलंकृत ४००० प्राचीन धर्म-मन्दिरोंको दाह दिया था।

उमरके वंशजोंने ५०० वर्षों तक मिस्रका राजत्व किया।

पीछे ११७१ ई०में कुर्दीस-वंशीय युसुफ सालादिनने उमरवंशके अन्तिम राजा नूरउद्दीनकी मृत्युके बाद सिंहासन पर आरोहण किया।

इसके बाद ममेलुक-वंशीय राजोंने १२५० ई०में मिस

और अफ्रिकाके अधिकांश भाग पर अधिकार कर मिस्र का सिंहासन ग्रहण किया। इस वंशने ३०० वर्ष तक राजत्व किया। इसके बाद तुर्क-सम्राट् सलीमतने मिस्र पर अधिकार किया। इस समयसे कोई १०० वर्ष तक मिस्रमें घोर अराजकता फैली रही। पीछे तुर्क-सम्राट्के सेनापति हुसेन अली सन् १७४६ ई०में प्रतिद्वन्द्वी पक्षको पराजित कर मिस्रमें तुर्की-शासन प्रचलित किया। इसके बाद नेपोलियन बोनापार्टकी अधिनायकतामें फ्रान्सीसियोंने सन् १७६८ ई०में मिस्र पर अधिकार किया।

सन् १८०२ ई०में अंगरेजोंने फ्रान्सिसीयोंको भगा कर मिस्र पर अधिकार किया। इस समय महम्मद अलोने अंगरेजोंको सहायता दे कर फ्रान्सीसियोंके साथ युद्ध किया। महम्मद अली पहले एक दुकान पर आटा चावल बेचते थे। पीछे सैन्यमें भर्त्ती हो कर थोड़े ही दिनमे सेनापति हो गये। सन् १८०२ ई०में युद्धमें मुहम्मद अलोने अङ्गरेजोंका पक्ष लिया था। क्रमसे उनकी रागलोलुपता बढती गई। वे अपने पराक्रमके प्रभावसे शीघ्र ही सर्वप्रिय हो उठे। पीछे मामेलुक वंशीय भूतपूर्व राजवंशके साथ मित्रता कर उन्होंने उनके खोये हुए राज्यको पुनः लौटा देना चाहा। उनके बाहुबलसे मामेलुकवंशीयगण १८०६ ई०में मिस्रके सुलतान और महम्मद सुलतान द्वारा सन् १८०६ ई०में कायरोके पाशा या शासनकर्त्ता नियुक्त हुए। दूसरे ही वर्ष अपनी कार्य दक्षताके गुणसे वे अलेकजेण्ड्रियाके भी शासक बन गये।

क्रमशः उन्होंने उच्च पद पा कर सिंहासनकी ओर दृष्टिपात किया और १८११ ई०में ४७० मामेलुक-वंशीय भले आदमियोंको अपने राजभवनमे आमन्त्रित कर घोर नृशंसताके साथ उनका वध किया। इसके बाद बाकी १२०० सौ भले आदमियोंको भी मार कर मिस्रके अद्वितीय अधीश्वर बन गये और चारों ओर अपना राज्य विस्तार किया।

जिस समय युनानने तुर्कोंकी अधीनताकी शृङ्खला (जञ्जीर) तोडनेके लिये तुर्क-सम्राट्के विरुद्ध सर उठाया था, उस समय महम्मद अलीने तुर्कोंकी ओरसे यूनानके विरुद्ध १६३ जङ्गी जहाज भेजे थे। किन्तु इङ्गलैण्ड, फ्रान्स और रूसने यूनानकी सहायता कर इन जङ्गी जहाजोंका सत्यानाश कर दिया।

महम्मद अलीकी राज्यलिप्सा इतनी अधिक बढ़ी, कि उसने तुर्कोंके सिरिया राज्य पर आक्रमण कर दिया। इसके बाद तुर्क-सम्राट् २रे महम्मदने ५ यूरोपीय नरपतियोंसे साहाय्यकी प्रार्थना की।

अन्तमें महम्मद अली यूरोपीय शक्तियोंसे पराजित हो कर शान्त भावसे मिस्रका राज्य करने लगा। यूरोपीय पांच पराक्रान्त राजाओंने उसको मिस्रका स्वाधीन राजा स्वीकार कर लिया। महम्मदने १८४८ ई०में अपने पुत्र इब्राहिमको राज्य-भार सौंप कर अवसर ले लिया। किन्तु इब्राहिमकी शीघ्र ही मृत्यु हो गई। इससे उसका पुत्र महम्मदका पौत्र अब्बास पाशा मिस्रके सिंहासन पर बैठा।

महम्मद ८० वर्षकी उम्रमे सन् १८४६ ई०को परलोक सिधारा।

१६वीं शताब्दीका इतिहास महम्मद अलीके साथ दृढ सम्बन्ध रखता है। उसके शासनकालसे हो वर्त्तमान मिस्रकी श्रीवृद्धि हुई है। महम्मदने यूरोपीय ढंगकी शासन-शृङ्खलाको स्थान दिया था। महम्मदके वंशधर उसीके बताये मार्ग पर चलने लगे। कृषि, वाणिज्य, शिल्प आदि सब विषयोंमें ही मिस्र दिनों दिन उन्नत कर रहा है।

सन् १८५४ ई०मे अब्बास पाशाकी मृत्युके बाद महम्मद अलीका चौथा पुत्र सैयदपाशा मिस्रके राजसिंहासन पर बैठा। उसीने पिताकी तरह राज्यकी श्रीवृद्धि करनेके लिये यथेष्ट चेष्टा करना आरम्भ किया और सुएज नहर खुदवानेकी आज्ञा दी थी। सन् १८६३ ई०में उनकी मृत्यु होने पर उनका भतीजा इस्माइल पाशा मिस्रके सिंहासन पर बैठे। उसके सुशृङ्खल शासनसे मिस्रमें नये युगका आविर्भाव हुआ है। राज्यके सारे विभागोंको उसने शिक्षा और सभ्यताके संस्कारसे परिमार्जित किया है और उसको विलक्षणतासे शासन-प्रणालीकी सर्वांगीन उन्नति साधित हुई है। उसने सन् १८७६ ई०में यूरोपीय विचार-प्रणालीका अनुसरण

कर कई विचारालय स्थापित किये। दक्षिणमें बहुत दूर तक राज्यका विस्तार हुआ। सन् १८७७ ई०में इस्मा इलने अङ्गरेजोंके साथ परामर्श कर दासत्व प्रथाको उठा देनेके लिये प्राणपणसे प्रयत्न किया। मूल बात है, कि उसके राजत्वकालमें मिस्रने हर तरहकी उन्नति की।

व्यवहार-शास्त्र और शासन-प्रणाली।

मिष्टर चावास (*M* Chabas)-ने मिस्रके प्राचीन विचारकी वर्णना की है। फारोगण (*P*haroah)-के शासनकालमें मिस्रमें राजतन्त्र-प्रणाली प्रचलित थी। २रे वंशके राजत्वकालमें यह कानून बना कि स्त्रियां भी राजत्व कर सकेंगी। इसके बाद स्त्रियोंने मिस्रका राज्यसिंहासन लाभ किया; किन्तु इसमें कुछ विशेष सफलता न होती देख १६वें वंशके राजत्वकालमें स्त्रियोंकी उत्तराधिकारिताको अनिष्ट-जनक बता कानून रद् कर दिया गया। इस समय राजवंशमें शेमनाइट (Shemnite)-का प्रभाव दिखाई दिया। राजे यथेच्छाचारी न थे। स्वायत्तशासन सर्वत्र ही प्रचलित था। सब नगरोंमें म्युनिस्पलिटियां अपने अपने विभाग का कार्य सम्पादन करती थीं। राज्यके प्रत्येक विभागमें विचारालय होनेसे राजकर्मचारी विचार व्यवस्था कर शान्तिस्थापनमें जरा भी कसर नहीं रखते थे। किसी किसी जगह जूरी-प्रथाकी भी गन्ध मिलती है। उस समय अच्छी तरह जांच पड़ताल न कर राजाका हुक्म सुनाया न जाता था। सामाजिक सम्मानमें पुरोहित ही अधिक सम्मान पाते थे। ये जङ्गलमें कुटि बना कर दर्शनशास्त्रकी आलोचना किया करते थे।

असीरीय और बाबिलिनयोंकी शासन-प्रणालीके साथ मिस्रकी शासन-प्रणालीकी समानता दिखाई देती है। फिर कानूनभी एक-से नहीं हैं। प्राचीन स्मृतिस्तम्भोंके लेखोंके पढ़नेसे मालूम होता है, कि वहांके राजे पुत्र, पौत्रादि क्रमसे सिंहासन पर बैठते थे। किन्तु १८वें और २०वें वंशके राजत्वकालमें राज वंशके उत्तराधिकारीके सम्बन्धमें व्यक्तिक्रम दिखाई देता है। सिवा इनके अन्यान्य सभी वंशके राजत्वकालमें राजा ही सर्वमय कर्त्ता थे। प्रकृतिपुञ्जका शुभाशुभ उनकी इच्छा पर ही निर्भर करता था। राजा प्रजाके लिये परमदेवता माना जाता था और देववंशसम्भूत समझा जाता था। ऐतिहासिकोंका कहना है, कि इस स्वेच्छाचारी शासनसे ही मिस्रकी अवनति हुई। राजा द्वारा चुने हुए विचारक (जज) विचारका कार्य (फैसला) किया करते थे। किसी सन्देह-जनक अपराधका अनुसन्धान गुप्तचरोंसे करा कर उसका विचार या फैसला दिया जाता था। किसी किसी जगह (Commission)-समिति संगठित होती थी। गवाहोंकी गवाही लिखी जाती थी। इसके लिये लेखक विचारकोंके साथ साथ घूमते थे। आईन कानून जाननेवाले व्यक्ति वंशानुक्रमसे विचारक बनाये जाते थे। दूसरा कोई विचारक नहीं हो सकता था। विचारका फलाफल लिपिबद्ध किया जाता था। विचार-प्रणाली और दण्डाज्ञा लिखी जाती थी और राजाके पास भेजी जाती थी। अपराधीको कसम दिला कर उसका बयान लिया जाता था। शास्ति उतनी कठोर न थी। उत्तेजनाके कारणके सिवा नर-हत्या करनेसे अपराधीको प्राणदण्ड दिया जाता था। चोरी और व्यभिचारके लिये खूब कठोर दण्ड-विधान होता था। व्यभिचारीको निर्वासित किया जाता था। देवस्वकी चोरी करनेवाला कभी कभी प्राण-दण्ड भी पा जाता था। ऋणके सम्बन्धमें कोई खास कानून नहीं था। भूमिके सम्बन्धमें या प्रजा-सत्वके विषयमें कोई भी कानून आज तक नहीं देखी जाती। देवोत्तर-सम्पत्ति चिरस्थायी रूपसे कर-रहित थी। थिवकेस धर्माधिकरणमें प्रधान विचारकके सिवा ६ और धर्माधिकारी या विचारक थे।

सैन्यबल।

प्राचीन मिस्रके युद्धके विषयमें बहुत बातें जानी जा सकती हैं। स्वदेशी और विदेशी लोगों द्वारा सेनायें संगृहीत होती थीं। योद्धाओंकी एक स्वतन्त्र जाति थी। प्रायः उनके कई आचरण क्षत्रियोंके जैसे थे। सैन्योंको जागीर दी जाती थी। सैन्यके दो विभाग थे:—रथारोही और पैदल। रथ दो घोड़ोंसे परिचालित होता था। सारथी रथ चलाता था और

योद्धा रथारूढ़ हो धनुषवाण ले कर युद्ध करता था। पैदल नाना तरहके अस्त्र शस्त्रोंसे सज्जित हो कर युद्ध करते थे। इनमें धनुषवाण और तलवार, भाला, बरछा और कुठार आदि प्रधान अस्त्र थे। शिकारमें सूक्ष्माग्र-आग्नेय शिलाखण्डका व्यवहार होता था। सेनायें युद्धक्षेत्रमें नाना तरहके व्यूहाकारमें सुसज्जित होती थीं।

रीति नीति।

उत्कीर्ण शिलालेखों और प्राचीन पत्रोंमें (Hieratic papyri) प्राचीन मिस्रवासियोंका गार्हस्थ्य-जीवन स्पष्टरूपसे अङ्कित है। जिस शिक्षासे पौरुष महिमाका यथार्थ विकाश होता था, विद्यालयोंमें उसी तरहकी शिक्षायें दी जाती थीं। जो परीक्षामें उत्तीर्ण होते थे, वे राज्यके उच्च पदों पर प्रतिष्ठित किये जाते थे। बाल्य-कालमें सुन्नी-प्रथा प्रचलित थी। किन्तु वह धर्मका अनुष्ठान नहीं समझी जाती थी, स्त्रियोंका प्राधान्य था। वे याजक और पुरोहितोंके आसन पर बैठ सकती थीं और पुरुषोंके समानाधिकारको प्राप्त हो कर सांसारिक जीवनके बहुतसे कामोंमें भाग लेती थीं। पुरुष एक पत्नी रखते थे। स्त्री ही घरकी मालकिन रहती थी। उस समय भी उपपति और उपपत्नीका व्यवहार जारी था।

७००० वर्ष पहले वर्त्तमान सभ्य समाजकी तरह मिस्रमें स्त्री-स्वाधीनता थी। जातिभेद भी कुछ कुछ था ही। हिरोदोतस, दिउदोरास और प्लेटोके मतसे जातिभेद प्रचलित था। गुण-कर्म-विभागके अनुसार सात जातियोंकी सृष्टि हुई थी। पीछे ये पांच जातियां रह गईं, पौरोहित्य, योद्धा, कृषक, शिल्पी और पशुपालक या सेवक। भारतीय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन चार वर्णोंके अनुसरणसे ही सम्भवतः उनकी जातियां कायम हुई थीं, एक जातिके साथ दूसरी जातिका विवाह होता न था। पुत्र पिताके दिखाये हुए पथका अनुसरण किया करता था। पौरोहित्य या ब्राह्मण शास्त्रकी सृष्टि करते थे। पुरोहित विचारकके पद पर भी नियुक्त किये जाते थे।

राजाओंके यहां पटरानियोंके सिवा विलासिनी स्त्रियोंका अभाव न रहता था। परिवारके सभी व्यक्ति एकान्नभोजी थे। जीविकार्जनके लिये जो काम किया जाता था, वह कर्म, जातिभेद और पुरुषानुक्रमसे किया जाता था। दरिद्र प्रजा अपने दुःखोंको राजाके समीप कह सकती थी। वैदेशिकोंके प्रति विजातीय घृणा इनकी कम न थी। शिल्प-व्यवसायी उच्चवर्णका आदर नहीं पाते थे। और तो क्या, बढ़ई और चित्रकार भी निम्न श्रेणीमें गिने जाते थे। बड़े आदमी श्रमसाध्य कार्योंसे घृणा करते थे। पुरोहित-सम्प्रदाय वर्णगुरु थे। वे यजन, याजन, अध्ययन और अध्यापन करते थे।

राजकीय कर्मचारीगण उच्च वर्णोंसे लिये जाते थे। विज्ञानविदोंकी उच्च श्रेणीमें गिनती होती थी। सेवक-सम्प्रदाय श्रमजीवियोंसे अधिक आदर पाते थे। युद्धमें पकड़े गये कैदी गुलाम बनाये जाते थे।

शैलमय स्मृति-स्तम्भके गात्रमें मिस्री गार्हस्थ्य जीवनका उज्ज्वल चित्र अङ्कित है। धनाढ्य व्यक्ति प्रायः विलास सागरमें निमग्न रहते थे। किन्तु वे भोज-समारम्भ बड़े उत्सवके साथ करते थे। गृहस्थ और गृहिणी एकासन पर बैठ सकती थीं। सब निमन्त्रित व्यक्ति अपनी स्त्रियोंके साथ भोज-समारम्भमें उपस्थित होते थे। दम्पतीके लिये एकत्र दो कुर्सियां (Chair) और अविवाहित पुरुषोंके लिये एक एक आसन रखा जाता था। सम्भ्रान्त व्यक्ति या भले आदमी कुर्सियों पर और साधारण व्यक्ति फर्श पर बैठते थे। प्रत्येक निमन्त्रित व्यक्ति और अभ्यागतके उपस्थित होते ही गृहस्वामीके सेवक उनके गलेमें पुष्पहार पहनाते थे और कस्तूरीमिश्रित एक पद्मपुष्प उनके मस्तक या हस्तमें अर्पण करते थे। इसके बाद चारों ओर रखी कुर्सियोंके बीच मेज पर भोजन-सामग्री रख उनको ला कर वहां बैठाते और भोजन करनेका निवेदन करते थे। फल, मिष्टान्न, मांस, मद्य, मछली आदि अन्यान्य भोज्य-सामग्रीकी ढेर लगा दी जाती थी। गिलासमें मद्य ढाल कर रख दिया जाता था। भोजके पहले मधुरभाषिणी सौन्दर्यशालिनी युवती नर्त्तकियां विविधरूपसे नाच गान कर अभ्यागत व्यक्तियोंका मनोरञ्जन किया करती थीं।

नृत्य गीत आमोदका एक प्रधान अङ्ग समझा जाता

था। कहीं कहीं जमनाष्टिक (सर्कस) व्यायाम दिखलाया जाता था। धनशाली व्यक्ति कभी कभी शस्यश्यामल ग्राम्योद्यानमें जा कर प्रमोद-भवनमें प्राकृतिक दृश्यकी चमत्कारिताका उपभोग करते थे। कभी कभी पशुपाल अथवा कृषिकार्य द्वारा उत्पन्न शस्यों और शिल्पजात द्रव्योंको संग्रह कर वाणिज्य व्यवसाय के लिये समुद्र-यात्रा करते थे। कभी वे कभी स्त्री पुत्रके साथ नावों पर चढ़ कर दरियाई घोड़ोंके शिकारके लिये जल-यात्रा करते थे। थे कभी कभी जलचर पक्षियोंके विनाशके लिये धनुषवाण अथवा "सातनल" ले दल बांध कर शिकार खेलने जाते थे। कभी कभी तालाब की सीढ़ियों पर बैठ कर मछलीका शिकार करते थे। कभी कभी शिकारी कुत्तोंको ले कर वनमें हरिणोंके बच्चोंको पकड़ते फिरते थे।

धनशाली व्यक्तिमात्र ही दो घोड़ोंकी जोडी बग्घी रखते थे। वे स्वयं भी रथ चलाते थे।

धर्मतत्त्व।

पाश्चात्य प्रत्नतत्त्वविद् पण्डित-मण्डलीने गत ५० वर्षोंके अक्लान्त परिश्रमके बाद मिस्रके पुरातत्त्वकी आलोचना कर स्थिर किया है, कि मिस्रका धर्मतत्त्व आर्य ऋषियोंके वैदिक धर्मका रूपान्तरमात्र है। प्राचीन मिस्रवासियोंने सर्वशक्तिमान् एक विराट् विश्वस्रष्टाका अस्तित्व अनुभव किया था। शिलालेखोंसे जाना जाता है, कि उपनिषद्का ब्रह्मतत्त्व मिस्रवासियोंके हृदय पर अंकित था।

कई शताब्द पहले भारतवर्षमें गार्गी और नचिकेता, जनक और याज्ञवल्क्यने जिन रहस्यमय गूढ़ प्रश्नोंको हल करनेकी चेष्टा की थी, जो प्रश्न चिन्ताशील मानवचित्तका साधारण धर्म था, जिस प्रश्नके उत्तर देने में यमराजको भी आशंकित होना पड़ा था, जो प्रश्न मिथिला या मिस्र, बदरिकाश्रम या वाराणसी (काशी), बुगदाद या बरलिन, नवद्वीप (नदिया) या न्यूयार्क, लण्डन या लिपसिग, पारी या पाटलीपुत्र—सब स्थानोंमें सब समयोंमें मनुष्योंके मनमें विस्मय समन्वत महारहस्यकी सृष्टि करता है। प्राचीन मिस्रके पुरोहितोंने भी उस नित्य नये और बहुत पुराने प्रश्नोंकी समस्या पूर्त्ति करनेकी चेष्टा की थीं। वे कोलाहलमय नगरोंके दूरवर्त्ती स्थान पर्वतोंके कन्दरोंमें या किसी वननिकुञ्जमें शान्तिमय प्रकृतिकी गोदमें बैठ कर वैदिक ऋषियोंके सुरोंमें सुर मिला कर कहते हैं,—

> "द्यावाभूमि जनयन् देव एक आस्ते
> विश्वस्य कर्त्ता भुवनस्य गोप्ता।"

इस परिदृश्यमान जगत्का रचयिता कोई एक हैं। वही स्वर्गमर्त्यके विधाता हैं। वह स्वयम्भू स्वयम् प्रकाश और सर्वभूतोंमें अवस्थित है। उसी अनादि विधाताकी इच्छासे सृष्टि, स्थिति और लय हुआ करता है। वही मिस्रीय शास्त्रका आप्त (*Ptah*), यूनान और रोमका वलकान (*Vulcan*) या आर्य ऋषियोंका ब्रह्मा हैं। उसने सहस्रांशुसमप्रभ हेममय अण्डकी सृष्टि की। (Creator of the cosmic egg) इसी अण्डसे इस विशाल विश्वकी सृष्टि हुई थी। इसी ब्रह्माण्डसे सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आदिकी सृष्टि हुई। सूर्य ही विधाताका विराट् प्रतिनिधि है। अन्यान्य देव सूर्यके भिन्न भिन्न रूपान्तर है।

पाश्चात्य पण्डितोंका कहना है, कि मिस्री-धर्म पहले वैदिकभावमें अनुप्राणित हुआ था। पीछे निग्रो जातिके संबन्धसे बहुतेरे देवदेवियोंकी सृष्टि हुई। देवोंके ३ या ६ विभाग हैं। सूर्यके १२ समाज (द्वादशादित्य) हैं, पीछे अनेक देवदेवियां कल्पित हुई हैं। प्रत्येक मन्दिरमें देवगण, स्त्री, पुत्र या कन्या इन त्रिमूर्त्तियोंमें गठित हैं। कोई भी देवता अकेला नहीं रहते थे। मिस्रके प्रति नगरमें एक एक देवसमाज या प्रत्येक नगर ही किसी देवताके नामसे पुकारा जाता था। जैसे—अनहुर (Anhur), थिनिसेर, ओसिरिस (Osiris), आबिडस (Abydos) और आप्त (Ptah) मेमफिस नगरके अधिष्ठातृ देवता थे। आप्त या वलकानके सङ्गिनीद्वय पस्त (*Pasht*) और वस्त (Basht)-को मिला कर इन तीनोंसे मेमफिस नगरका देवसमाज कल्पित हुआ था। रा (Ra)के अनहुर पुत्र थे। शु (Shu) और तेफनेट (Tefnet) अनहुरके भ्राता थे।

रा (Ra) यूनानियोंके सोल (Sol) या जुपिटर (Jupiter = द्यौष्पितर) है। देवसमाजके दो प्रधान

विभाग थे। मेमफाइट समाज और थेवान समाज। सूर्यके आठवें समाजमें आठ देवता थे। आप्त (Ptah), रा (Ra), शु (Shu), सेव (seb), ओसिरिस् (Osiris), सेट या टाइफेन (Set or typhon) और होरास (Horus) इनमें अधिकाश ही सूर्यके भिन्न रूपान्तरमात्र थे। दूसरे समाजमें अमेन (Amen), मेन्थू (Menthu), आत्मू (Atmu), शु (Shu), सेव (Seb), ओसिरिस (Osiris), सेट (Set), होरस (Horus) और सेवेक। किसी किसी देवताकी आकृति मनुष्योंकी तरह थी। जैसे :—आप्त ओसिरिस आइसिस। कुछ देवताओंका शरीर मनुष्यकी तरह किन्तु मुख पशुकी तरह था।

रा या सूर्यका आकार मनुष्य जैसा है, किन्तु उसके मस्तक पर एक श्वेतपक्षी (Hawk) अपना पंख फैलाये हुए है। अर्थात् गरुड़ाग्रज अरुण सूर्यके सारथी-रूपसे रथ चला रहा है। उसके मस्तक पर सूर्य मण्डल की परिधि विद्यमान था।

ओसिरिस (ये ग्रीस या यूनान और रोममें बाकास (Bachus) या सुरादेव रूपसे माने गये थे) जुपिटरके पुत्र थे। किन्तु पिताकी अपेक्षा पुत्रकी पूजा अधिकतर प्रचलित था। रा-का पुत्र ओसिरिस और कन्याका नाम आइसिस था। भाई बहनमें विवाहका सम्बन्ध था। अतएव आइसिस ओसिरिसकी बहन और स्त्री दोनों थी। ये ही मिस्रवासियोंके प्रधान देवदेवी थे। मनुष्यके हितसाधन करनेके लिये अवनी-मण्डलमें अवतीर्ण हो इन्होंने सत्ययुगमें मिस्रदेशमें राजत्व किया। इन्होंने ही सबसे पहले सभ्यताका प्रदीप जलाया था और मनुष्योंको कृषि-वाणिज्यकी शिक्षा भी दी थी। उन्होंने मनुष्योंकी उन्नतिके लिये अपनी बहन और पत्नी आइसिसके हाथ मिस्रका शासन-भार सौंप कर यूरोप और एशियाके सब भागोंमें परिभ्रमण किया था। हर जगहमे उन्होंने ईश्वरकी पूजा प्रचलित कराई थी। उन्होंने ही जगत्में सबसे पहले ब्रह्मविद्याके गूढ़ रहस्यका प्रचार किया था। आइसिस स्वर्गमें जुपिटर रा (Ra)-की प्रणयिनी थी। पीछे प्रणयकलहके कारण प्रणयीके अभिशापसे उन्होंने गो का रूप धारण किया। अन्तमें उन्होंने नारिमूर्त्ति धारण कर मिस्रमें ओसिरिसकी बहनके रूपमें जन्म ले कर ओसिरिसके साथ विवाह कर लिया। उन्हीं की साइप्रेसमें भिनास (Venus), एथेन्समें मिनार्भा (Minerva), फ्रिजियादेशमें (Phrygians) साइबिल (Cybele), इलिउसिया (Elusia) देशमें सिरिस (Ceres), सिसिलीमें प्रसापाइन (Proserpine), क्रीतिद्वीपमें डायन (Diana), और रोममें बेलोना (Bellona) के रूपमें पूजा होती थी। वे विद्या-बुद्धिकी अधिष्ठात्री और शिल्प-विज्ञानकी जननी थीं। उन्होंने इन्द्रजाल और जादूविद्याको प्रसव किया था। वे भाई बहन या स्वामी-स्त्रीके रूपमें पृथ्वीकी कल्याणकामनासे मनुष्योंके ज्ञानराज्यके पथ-प्रदर्शक हुए।

किन्तु ओसिरिस और उनके भ्राता (किसीके मतसे पुत्र) टाइफन या सेटमें बहुत दिनोंसे शत्रुता चली आ रही थी। ओसिरिस जब देश-देशान्तरमें सभ्यताकी ज्योति फैला कर स्वदेश लौटे, तब टाइफनने कौशलसे उनका प्राणसंहार कर सैकड़ों टुकड़े कर एक बक्समें बन्द कर समुद्रमें फेंक दिया। आइसिसने समुद्र-गर्भसे उस बक्सको निकाल कर अपने मृत पतिके कटे हुए टुकड़े को जोड़ दिया और सञ्जीवनी विद्याके बलसे उनको जीवन प्रदान किया। पतिके वियोगमें आइसिसने जो अश्रु बहाया था उससे नीलनदकी उत्पत्ति हुई। नीलनद आज भी मिस्रकी अधिष्ठात्रीदेवी आइसिसके दुःखसे द्रवीभूत हो कल कल नादसे छल-छल नेत्रों द्वारा हाहाकार करता रो रहा है। ओसिरिस पातालमें जा कर प्रेतात्माओंके विचारक (धर्मराज) हुए और उनकी पत्नी आइसिस पाताल जा कर पतिके साथ मिल गईं।

शास्त्रमें लिखा है, सूर्य अस्ताचल जा ओसिरिसकी गोदमें जा कर विश्राम करता है। मिस्रकी भाषामें इस तरहका वर्णन आया है, कि जिस किसीकी मृत्यु होती है, वह ओसिरिसकी गोदमें सो जाता है। यमदण्डकी तरह उसके हाथमें न्यायदण्ड विराजता रहता है और ओसरिसके मस्तक पर उग्रपक्षीको पंखोंसे बना एक सुन्दर मुकुट रहता है।

आइसिसके गोरूपके चिह्नस्वरूप आसनमें एक गोका

सींग दिखाई देता है। उनके शिर पर अर्द्ध चन्द्राकार मुकुट है। दाहिने हाथमें मृत् संजीवनी विद्या (Crux Ansatas), बायें हाथमें वल्कल या छालका बना (वल्कलमें पुस्तक लिखी जाती थी) एक ऐन्द्रजालिक विद्यादण्ड अर्थात् विद्याकी भुवनमोहिनी शक्ति "ऐन्द्रजालिक दण्ड" है और सञ्जीवनी विद्याके रूपमें चित्रित हुआ है।

उनके पुत्र होरास (Horus) थे। यह यूनानी देशके आपोलो (Apollo) देवता थे। टाइफेनके भयसे आइसिसने अपने पुत्र होरास (Horus)-का गुप्तरूपसे प्रतिपालन किया था। होरास यौवन-सीमामें पहुंच पितृघातकका विनाश करनेके लिये यत्न करने लगे। टाइफेन अन्धकारके देवता माने गये हैं। होरासने कुछ दिनोंके बाद पितृघातकको मार कर पितृहत्याका बदला चुकाया और पीछे सारे मिस्रदेशका परिभ्रमण कर सर्वत्र शिल्पविज्ञानका प्रचार किया था।

ओसिरिस, आयसिस और होरास यह तीनों मिस्रमें सार्वभौमिक रूपसे पूजा पाते थे। क्योंकि उन्होंने मनुष्योंके हितके लिये जीवन उत्सर्ग किया था।

आप्त (Ptah)-की पत्नी पस्त या सेखेट (Pasht or Sekhet) और उनके पुत्र नेफेरसतुम (Nefertum) इमहोतेप (Imhotep) या आमेनरा (Amenra) आदिसे त्रिमूर्त्तिकी सृष्टि हुई थी। यह फिनिकियामें पातैकोस् (Pataikos) नामसे प्रसिद्ध थे। आप्तकी दो प्रकारकी मूर्त्ति देखी जाती है। १ली मनुष्य-मूर्त्ति, इसके मस्तक पर उज्ज्वल मुकुट, हाथमें संजीवनी विद्या और विश्वप्रसविता या सवितारूपसे भविष्यत् सृष्टिका मूलसूत्रज्ञापक चिह्न है, दूसरे हाथमें केशमण्डित राजदण्ड और गलेमें गलाबन्ध है। उनका पैर टेढ़ा (कुशपा) है। दूसरी मूर्त्ति—छोटा कद, दो शिर और उनके मस्तक पर सञ्जीवनी विद्या विद्यमान है। अन्धकार और पापकी मूर्त्तिने एक घड़ियालको पैरसे मर्दन कर (अर्थात् सूर्य्यालोकसे अन्धकारका विनाश कर) जगत्में आलोकरश्मिको विस्तार किया है और हाथमें पाप मूर्त्ति दो भीषण सर्पके गलेको दबाये उन पर दण्डायमान हैं। ये ही ब्रह्माण्डके सृष्टिकर्त्ता थे।

सेखेत

उनकी पत्नी पास्त या सेखेट (Sekhet) सिंहवदना हैं। ये आप्त-पत्नी या सूर्यकी मरीचि-अर्थात् सूर्य्य किरणकी अधिष्ठात्री देवी हैं। इनका मुंह सिंहकी तरह है। इनके मस्तक पर सूर्य्यमण्डलका गोलाकार परिच्छिन्नरूप मुकुट है। ये जगत्में ताप विस्तार करते हैं।

इनका पुत्र नेफेरतुम या इमहोतेप है। (यूनानके इमियोथेस Imuthes या Esculapius नामसे परिचित थे) ये थिवस् नगरमें आमेन-रा नामसे पूजित हुए थे। अन्य मतसे ये दूसरे देवता थे। नीचे इनकी प्रतिकीर्त्ति दी गई है।

आमन-रा (सूर्य्यपुत्र)

इनके मस्तक पर सूर्यमण्डलका चिह्न और एक पद्मपुष्प है। इन्होंने मू (Mu= mother or matter) या जड़प्रकृति, निट या नट (Nit or nat=shuttle the menerva) और खूनसू (Khonsu=Force or Hercules)के साथ मिल कर—एक देवसंघ संगठन किया था।

जब ओसिरिसने शरीर त्याग किया, तब अनूप या अनुवीसने सुगन्ध भैषजके संयोगसे देहकी रक्षा की थी। आमेन-राकी माताका नाम मूत (Sut) था। अमेनराने माताके साथ विवाह किया था। इसलिये उन्हें का-मूत्फ (Ka-mutf or husband of his mother) मातृपति कहते थे। किसी किसी मूर्त्तिमें उनका मस्तक भेड़की तरह है। (सच है, कि बकरेकी जातिके सिवा ऐसा जघन्य कर्म अन्य किसी जातिमें होना असम्भव है) इसका आध्यात्मिक अर्थ हम लोग कह नहीं सकते। इनके पुत्रका नाम खुनस (Khuns) है—इसके मस्तक पर चन्द्रकला सुशोभित हैं। उनकी केशराजि कौवके पंखके समान (जुल्फी) दोनों पार्श्वमें लटक रही है

है। कही कही उसका सर श्येनकी तरह भी है। देवताओंकी प्रथम श्रेणीमें इनका स्थान नही था। ये भैषज विद्यामें अतीव निपुण थे। किन्तु इनका मुख शृगाल या स्यारकी तरह है। ये ओसिरिसके पुत्र कहलाते थे। नीचे इनकी प्रतिकीर्त्ति दी गई है।

अन्त्येष्टिक्रियाके समय इनकी पूजा होती थी। क्योंकि ये मृतदेहकी रक्षा किया करते थे। इनकी दी हुई औषध या सुगन्धित वस्तुसे (Embalming) मृतदेह नहीं सड़ती थी।

थथ—किसी किसी स्थानमें ताउत (Taut) नामसे पुकारे जाते हैं। ये चन्द्रसम्भव देवता हैं। इसीलिये सूर्य

अनुप् या अनुबिस्।

सम्भवसे इनकी पदवी कुछ नीची है। इनका मुह गरुडकी तरह है (Ibis-headed) और मस्तकमें पूर्ण चन्द्र विराजित है। ये विद्याके अधिष्ठाता है और कालके नियामक (तिथिकारक) हैं। टाइफेनके साथ जब होरसका युद्ध हुआ, तब इन्होंने होरसका साहाय्य किया था (अर्थात् सुबुद्धि प्रदान की थी)। जब पातालमें ओसिसके समीप प्रेतात्माका विचार होता है, तब ये उसको लिपिबद्ध करते हैं। ये इसी तरह फिनिसियामें पूजित होते थे।

सूर्यकन्या मात (Mat) सत्यकी देवी थी। इनके शिर पर उज्ज्वल पंख है। ये बहुत कुछ शु (Shu) नामके प्रकाश-देवताकी तरह थे। किसी किसीके मतसे ये थथकी पत्नी थी। जब थथ मरणान्तमें प्रेतात्माके गुण दोषका विचार करते हैं, उस समय यह सत्य साक्ष प्रदान किया करते हैं।

थथ (Thoth

रा या जुपिटर सर्वदा अपाप (Apap) नामक भीषण सर्पके साथ युद्ध करते रहते हैं। यह अन्धकाररूपी सर्प सदा भागा करता है। 'रा' भी उसके पीछे पीछे दौड़ते रहते हैं। इस विरोधका अन्त नही।

मनुष्यकी सत्यासत्य जितनी वृत्तियां हैं उनमें प्रत्येककी एक एक अधिष्ठात्री देवी होती है।

दिनके भिन्न भिन्न समयमें सूर्यके भिन्न भिन्न नाम कहे गये हैं।

प्रभातके सूर्यका नाम मेन्तु (Mentu), अस्ताचलगामी सूर्यका नाम आत्मु (Atmu) था। हेलियोपालिस नगरमें मेन्तु और आत्मुकी पूजा होती थी। दोनों आकाश पातालके देवताके रूपसे क्रमसे वर्णित हुए हैं।

शु (Shu) सूर्यकिरण या शक्तिरूपी है। ये स्वर्गीय देवियोंकी रक्षा किया करते हैं। ये सत्य स्वरूप हैं। लोग इन्हें सत्यका प्रतिनिधि कहते हैं। तेफनेट (Tefnet) इनकी पत्नी है। ये भी सिंह वदना और शक्तिरूपिणी हैं। ये दोनों आलोक या सत्य और शक्तिके प्रतिनिधि कहे जाते हैं। शक्ति सिंहवदना है।

सेव (Seb) ओसिरिस परिवारके देवता थे। इनकी पत्नीका नुत (Nut) नाम था। ये दोनों देवोंके माता पिता कहे जाते हैं। सेव=पृथ्वीके प्रतिनिधि और नुत स्वर्गकी।

देवसमाजमें ओसिरिस और टाइफनके विरोधका पाश्चात्य पण्डितोंने अत्यन्त कौतुकपूर्ण वर्णन किया है। एक सुनीतिके प्रतिनिधि थे, मनुष्योंके हितसाधनके लिये कटिबद्ध रहते थे। दूसरे दुर्नीतिके प्रतिनिधि, सेट या शैतानके विग्रह और मनुष्यके अनिष्ट करनेमें अनवरत लगे रहते थे। दोनों ही सहोदर थे। आदित्य और दैत्यरूपसे सदा झगड़ते रहते थे। अन्तमें ओसिरिसकी विजय हुई। विधाताका नियम है, कि अधर्मको पराजय होती है। आइसिसके नेफथिस् (Nephthys) नाम्नी एक सहोदरा थी। उसके साथ टाइफ या शैतानका विवाह हुआ। दो भाइयोंने दोनों बहनोंके साथ विवाह किया था। किन्तु जब ओसिरिस मनुष्योंके हितसाधन करने जा कर टाइफनके हाथ मारे गये, तब नेफथियसने सहोदराके वैधव्य पर अजस्र आंसू बहाया था। अन्तमें होरास विद्यादेव थथकी सहायतासे शैतानको मार डाला। इसके आध्यात्मिक दो अर्थ देखे जाते हैं। सूर्यरूप सिंह सदा ध्वान्तरूप कुम्भीर और सर्पके साथ युद्ध कर रहे हैं। किन्तु जयपराजय समझमें नही आती। प्रकाश और अन्धकारकी

सदासे प्रतिद्वन्द्विता चली आती है। कौन कह सकता है, कि किसको जय हुई और किसकी पराजय।

दूसरे, मनुष्योंकी भीतरी धर्मबुद्धिसे प्रवृत्तिका सदासे युद्ध होता रहता है। विवेक और अविद्याका घोर संघर्ष उपस्थित है। मनुष्य अविद्याका विनाश कर अमरत्व पाना चाहता है। किन्तु भोगात्मिका अविद्याका नाश है क्या? संसार-प्रवाहमें जरा भी चैन नहीं। जय-पराजयका निर्णय कौन कर सकता? मिस्रदेशमें जिन पशुओंकी पूजा की जाती थी, उनमे तीन प्रधान हैं। पहला बैल आपिस (Apis) है। यह क्या बैलरूपी धर्म हैं? दूसरा बैल म्नेविस (*Mnevis*) है। तीसरा मेण्डेसियान बकरा (Mendesian Goat)। ओसिरिसकी पूजाके साथ बैल और बकरेकी पूजा होती थी। नील नदकी अधिष्ठात्री देवी हापी (Hapi) नामसे पूजित होती थी। कभी कभी लोग बैल और नीलनदको ओसिरिसके अवतार कहा करते थे। क्योंकि धर्मके प्रतिनिधिस्वरूप उन्होंने नरहितव्रतका उद्यापन किया था। कृषिके प्रधान अवलम्बन वृषरूपी धर्म है और जननीकी तरह हितकारिणी नील नदी है। उनके परोपकारिता-धर्मजीवनका दृष्टान्त अन्यत्र सम्भव नहीं हो सकता। वृषरूपी आपिस स्थान भेदसे सारापिस (Sarapis) नामसे पूजित होते थे। प्रस्तर-मण्डित समाधिक्षेत्र या कब्रिस्तानमे आपिस वृष या बैलकी ठठरियां मिली हैं।

ओसिरिस समाजकी एक और प्रधान देवी हटहर (Hathar)-थीं। बहुत लोग इनको दूसरे आइसिस कहते हैं। ओसिरिसने मनुष्य रूपमें मनुष्योंका जैसा हितसाधन किया था, इन्होंने स्त्री रूपमें भी उसी तरहका मनुष्य हितसाधन किया है। पीछेके समयमें मिस्रमें सर्वत्र ही इनकी पूजा होती आई है।

सेबेक (Sebek)का कुम्भीर-सा मुंह था। ये टाइफनकी ही तरह थे। मिस्रमें इनकी पूजा भी प्रचलित थी।

सुबेन (suben) दक्षिण मिस्रकी एक देवी है। कभी कभी लूसिना (Lucina) और इलिथिया (Eileth-yia) नामसे पुकारी जाती थीं। ये दक्षिण मिस्रकी अधिष्ठात्री देवी और मातृस्वरूपिणी थीं। गृध्र पक्षी इनका सांकेतिक चिह्न था। इनकी पूजामें नरबलि चढ़ाई जाती थी। उत्तर मिस्रकी अधिष्ठात्री उयाती (Uati) करीब करीब सुबेनकी ही अनुरूप थी। उरियास (Uraeas) सर्प इनका साङ्केतिक नाम था।

ओनुरिस या अनहेर (Onuris or Anher) थिनिस नगरके प्राचीन देवता थे।

इमहोतेप (Unhotep) आप्त और सेबकका पुत्र था और मेमफिस नगरकी त्रिमूर्त्तिमें अन्यतम था। ये थथकी तरह विज्ञानके अधिष्ठाता हैं।

पहले ही कहा गया है, कि मिस्रके देवता या देवियां कोई भी अकेली नहीं रहती थीं। मन्दिरमें सकुटुम्ब वास करते थे। उपर्युक्त देवोंके नाना जगहोंमें मन्दिर थे। मन्दिरमें सुशिक्षित पुरोहित रहते थे। दर्शन और धर्मशास्त्रालोचनाके लिये मन्दिरके समीप मठ और पाठागार आदि रहते थे। पुरोहित यहां ही विद्या पढ़ाते थे। देश-विदेशसे छात्र आ कर इस पाठागारसे लाभ उठाते थे।

जनसाधारण अपने अपने घर देवदेवियोंकी पूजा करते थे। नगरकी अधिष्ठात्री देवीकी पूजा बड़े समारोहसे होती थी। राजा भी इस उत्सवमें सम्मिलित होते थे। समाधिक्षेत्रमें पूजा आदि प्रकाश रूपसे होती थी। प्रायः सभी जगह प्रेतपुराधिष्ठाता ओसिरिसकी पूजा होती थी। पूजामें पशु-बलि और उद्भिद् जातिकी भी बलि दी जाती थी। देवताओंको प्रकाश्यरूपसे मद्य चढ़ाया जाता था। धूप आदि गन्धोंसे मन्दिर गूंज दिया जाता था। मनेथो (Manetho)-का कहना है, कि मिस्रमे बहुत दिनों तक नरबलि देनेका प्रचार था। पीछे १८वें वंशके प्रथम राजा अमोसिसने इस वीभत्स प्रथाको बन्द किया। इसके बदलेमें मोमकी बनी किसी मूर्त्तिकी बलि दी जाने लगी। प्रति वर्ष नीलनदकी पूजामें एक कुमारी नदीगर्भमें फेंक दी जाती थी। परन्तु आज मोमकी कुमारी बना कर जलमें प्रति वर्ष फेंकी जाती है। जलाशयकी प्रतिष्ठाके समय भी नरबलिकी आवश्यकता होती थी।

प्राचीन मिस्रवासियोंका विश्वास था कि मनुष्य अपने किये कर्मोंका फल भोगनेके लिये जन्मग्रहण करते

हैं। आत्माका विनाश नहीं है। फिर कर्मफलका भी क्षय नहीं होता। इसी कारणसे वार वार जन्म-ग्रहण करना पडता है। जो संसारमें पुण्यकर्म करते हैं, ओसिरिसके विचारफलसे वह स्वर्ग जाते हैं। जो पापाचरण करते हैं, वे अनन्त नरककी यन्त्रणाके अधिकारी होते हैं। ओसिरिसके विचारसे कोई वच नहीं सकता। सभीको अपने किये कर्मोंका फल भोगना पडता है। किन्तु मिस्र-धर्मशास्त्रके अनुसार जीवकी मुक्तिका उपाय अभी तक आविष्कार ही नहीं हुआ है। उन्होंने और भी कहा है, कि जो जैसा पुण्य और जैसी कामना करता है, उसे वैसा ही फल प्राप्त होता है। पुण्यके कर्मानुसार कोई चन्द्रलोक और कोई सूर्यलोक जाता है। देवगण स्वर्गसे पुष्पकरथ द्वारा आते-जाते हैं। यह पुष्पक रथ एक तरहकी नावकी तरह है जिसे हम लोग व्योमयान कह सकते हैं।

कालक्रमसे विविध संस्कार और पुरोहितोंके लोभके कारण विविध प्रकारकी काल्पनिक प्रथाकी सृष्टि हुई। पुरोहितोंने अन्तमें विधिविधान किया, कि जिसकी शवदेह प्रस्तरमय शवाधारमें गाडी जायेगी,- स्वर्गमें उसकी प्रेतात्माको सुरम्य सौध रहनेके लिये मिलेगा और मृतदेह पर कुछ मन्त्रपाठ करनेसे आत्मा सर्वपापसे मुक्त हो कर स्वर्गकी सीढियों पर चढ़ेगी। कभी कभी पुरोहित मृतदेह पर कवच आदिका भी प्रयोग करते थे। मृतदेहमें कवच आदि बांध देनेसे उसकी आत्माके निकट यमराजके दूत नहीं आ सकते। इसी विश्वास पर निर्भर कर राजा महाराजाओंने करोडों रुपये खर्च कर समाधिक्षेत्र या मकवरे वनवाये थे। १९वें और २०वें राजवंशीय राजाओंका समाधिक्षेत्र जिस तरह शिल्पनैपुण्य और निर्माण परिपाटीसे चित्रित किया गया है, वह इस समय विस्मय उत्पादन कर रहा है।

इस प्रकारके चिरस्थायी समाधि-मन्दिर बनानेकी प्रथामें मिस्रवासियोंके दो तरहके धर्मविश्वास देखे जाते हैं,—आत्माकी अमरता और मृतदेहका पुनरुत्थान (Resurrection of the flesh)। समाधि-मन्दिरमें मानवात्माका चित्र अङ्कित रहता है। इसका मुख मनुष्यकी तरह और शरीर श्येन पक्षीकी तरह पक्षविशिष्ट है। मृत्युके बाद आत्मा इसी रूपमें उड कर ओसिरिसके यहां जाती है। मिस्रके धर्मशास्त्रमें लिखा है, कि मानवात्मा बहुत दिनों तक स्वर्ग या नरकका परिभ्रमण कर जब अपने पहले शरीरमें आयेगी, तब उसकी सुरक्षित मृतदेहमें (Embalmed mummy) नये जीवनका सञ्चार होगा। और मनुष्य उस समयसे अनन्त जीवन लाभ कर सकेगा। उस चिरस्थायी सम्पद्की तुलनामें क्षणभंगुर मनुष्यजीवन अति अकिञ्चित्कर है। इसीसे राजे महाराजे करोडों रुपये खर्च कर ऐहिक भवनोंकी अपेक्षा पारलौकिक भवनोंका निर्माण करते थे। क्योंकि, शरीर नष्ट होनेसे आत्माका वासस्थान सदाके लिये विनष्ट हो जायेगा। आत्मा निरवलम्ब हो कर इधर उधर भागी फिरेगी। इसीलिये सुन्दर भवन बना कर मृतदेहको उसमें रख सुरक्षित रखते थे। प्रति वर्ष कब्रिस्तान पर जा कर सुगन्धित द्रव्योंसे श्राद्ध-तर्पण क्रिया करते थे। एक एक समाधि मन्दिरके लिये एक एक पुरोहित रहता था। शवदेहमें मोम, एक तरहकी दवा और अन्य चीजोंको लेप कर उसे सुरक्षित किया जाता था। शवकी नाडियां अन्य पात्रमें सुरक्षित रखी जाती थीं। यह पात्र चार दानवियोंके मुखकी तरह होता था। उक्त दानवी उसकी यत्नपूर्वक रक्षा करती थी। पिछले समयमें समाधि-भवनमें नाना प्रकारके खाद्य द्रव्य भी रखे जाते थे। बहुमूल्य हीरे और नाना अलङ्कारोंसे शवदेह भूषित होती थी।

यह प्रथा उस समय ऐसी प्रबल हो उठी थी, कि दरिद्र भी पिता माताका समाधि मन्दिर निर्माण करनेमें अपना सर्वस्व लुटा देनेमें कुण्ठित नहीं होता था।

धर्मशास्त्रके संस्कारोंमें श्राद्धका संस्कार ही सबसे प्रधान था। प्रत्येक व्यक्तिका आजीवन परिश्रम इसीमें खर्च हो जाता था। शास्त्रानुमोदित अन्य किसी संस्कारका पता नहीं लगता। किसी प्रस्तरस्तम्भ या शिलालेखमें विवाह-संस्कारका कुछ भी उल्लेख नहीं और न इसके लिये कोई नियम ही प्रचलित था। भाई बहनका विवाह होता था। चचा भतीजीके साथ भी विवाह कर सकते थे। अतएव विवाहके सम्बन्धमें कुछ भी नियम दृष्टिगोचर नहीं होता। दोनोंकी सम्मति

या प्रेमभाव उत्पन्न होनेसे ही विवाह हो जाता था; चाहे वे किसी भी गोत्र तथा किसी भी जातिके क्यों न हों। सब विषयोंमें स्त्रियां स्वाधीन थीं। मालूम नहीं, कि विवाहकी ऐसी प्रथा पृथ्वीके और भी किसी सभ्य देशमें है या नहीं।

भले घरकी स्त्रियां निःसङ्कोचरूपसे पुरुषोचित क्रीडा-कौतुकमें भाग ले सकती थीं और सर्वत्र खुले आम घूम फिर सकती थीं। फिर भी वे अपने घरका काम बड़ी उत्तमतासे सम्पादन करनेमें चुकती न थीं। दुर्भाग्यसे कोई दूसरी सवारी न रहनेके कारण बैलगाड़ी पर घूमना फिरना पड़ता था। वे बहुत ही आलसी और विलासिनी थीं। श्रमजीवि स्त्री-पुरुष बराबरी काम काज करते थे। प्राचीनकालके मिस्रवासीका इसी तरह आमोद-प्रमोदमें समय व्यतीत होता था।

भाषा और साहित्य।

मिस्रकी भाषाके सम्बन्धमे अभी भी कुछ स्थिर सिद्धान्त न हो सका है—कुछ आदमियोंका कहना है, कि ये शेमितिक शाखाके अन्तर्गत हैं। किन्तु वर्त्तमानकालमें भाषावित् पण्डितोंका इस विषयमें मतभेद है। मिस्रके प्रत्नतत्त्वके अद्वितीय पण्डित डाक्टर ब्रागस (Dr, Brugsch) साहसके साथ कहते हैं, कि अफ्रिकाकी भाषाके साथ मिस्रकी भाषाका कोई सादृश्य नहीं। निग्रो (हबशी) जातिके सम्बन्धसे भाषाका कुछ रूपान्तर हुआ है सही, किन्तु मिस्री-भाषा सम्पूर्णरूपसे पश्चिम-एशियाकी मौलिक भाषा है—The Egyptian (Language) has no analogy to the African languages........The problem will be solved by the discovery of by the unknown element in the Egyptian, in the Akkadian or some other primitive language of Western Asia which can not be called semitic in the recognized sense of the term........one curious inovation in the fashion under the Rameses family of introducing semitic words instead of Egyptian ones. From the manner in which these words are spelt it is evident that the Egyptian sat that time had no idea of semitic element...... There is a striking affinity of the Egyptian to the Indo-Germanic Languages" अर्थात् रामेशेस्-वंशके राजत्वकालमें मिस्री भाषामें सेमितिक भाषाके अनुकरण पर कई शब्द लिये गये थे सही, किन्तु उन शब्दोंके उच्चारणके प्रति लक्ष्य करने पर दिखाई देता है, कि रामिशेस्-वंशके पहले मिस्री-भाषामें सेमितिक-भाषाका कुछ भी अस्तित्व नहीं था। मिस्री-भाषा इन्दो-जर्मनी भाषाकी एक शाखामात्र है। पिछले समयमें मिस्रकी कोप्ट-भाषामें अधिकतासे यूनानी-भाषाका इस्तेमाल होता था। चित्रलिपियोंसे मूल-भाषाका पता लगाना अत्यन्त कठिन है।

यद्यपि मिस्रके प्राचीनतम साहित्यका कुछ अंश मिला है, तथापि वह ऐसी सुसभ्य जातिकी विशाल भाषा समुद्रकी तुलनामें एक सामान्य गोष्पद है।

वैदेशिक जातिके पुनः पुनः अत्याचारसे मिस्र भाषाका कीर्त्तिसमूह पृथ्वीकी पीठसे गुप्त हो गया है। आसीरीयगण बहुतरी पुस्तकें उठा ले गये। इनमें मैजिक और इन्द्रजालिक पुस्तकें अधिक थीं। फारसवाले लूट कर बहुतेरे ग्रन्थ ले गये। उस समय मिस्र सभ्य-जगत्का उच्चतम आदर्श था। पिछले समयमें जब जगत्की जातियां प्रबल होने लगीं, तब वे मिस्रके ज्ञान-भाण्डारकी रत्नराशिको अपहरण कर अपने अपने देशमें शिक्षा सभ्यताका प्रकाश फैलाने लगीं।

इसके बाद दिग्विजयी सिकन्दरने मिस्र पर आक्रमण किया। मिस्रकी सभ्यता और विद्याका उत्कर्ष देख उसने अलेकजण्ड्रिया नगरकी स्थापना की थी। उस नगरमें उसने बहुत बड़ा पुस्तकालय स्थापित कर मिस्री भाषाके बहुमूल्य ग्रन्थोंका संगृहीत किया था। इसके बाद भी विद्योत्साही टलेमी राजवंशने अपने राजत्वकालमें बहुतेरी पुस्तकोंका संग्रह कर इस पुस्तकालयकी वृद्धि की थी। इस पुस्तकालयमें ज्योतिष, विज्ञान, गणित, रसायन, इन्द्रजाल, दर्शन, साहित्य, व्याकरण, इतिहास, सङ्गीत आदि बहुतेरे शास्त्रोंके ग्रन्थ मौजूद थे। अहा! खलीफा ओमर उन सात लाख पुस्तकोंको जला कर विद्वज्जगत्का जो महा अनिष्ट कर

गये हैं, उसका वर्णन नही किया जा सकता। इन्हीं सब कारणोंसे मिस्र भापाका अमूल्य साहित्य ध्वंसको प्राप्त हुआ। इस समय प्रत्नतत्त्वमुग्ध जर्मन और फ्रान्सीसी पण्डितोंने अक्लान्त परिश्रमसे भूगर्भ और पर्वतोंसे चित्रलिपिका जो तत्त्व आविष्कार किया है गत अर्द्ध शताब्दीकी गवेपणामें उसके सम्बन्धमें वहुतेरी बातें प्रकट हुई हैं। पण्डितोंने मधुलोलुप मधुकरोंकी तरह विविध स्थानोंसे कई हजार वर्ष पहलेकी हस्तलिपियों बकरेके चमडे पर लिखित विवरणों, शिला और स्तम्भ लेखोंकी पर्यालोचना कर मुक्तकण्ठसे कहा है, कि मिस्रवासियोंके वहुत बडा जातीय साहित्य था।

केवल एक धर्म-ग्रन्थ (Ritual)-से कितने ही तन्त्र-मन्त्रोंका पता लगता है। इस पुस्तकमें देहान्तर आत्मा की गतिके सम्बन्धके कई ऐसे गूढ रहस्य भरे पडे हैं, जो आज तक समझमें न आये हैं। डाक्टर लेप्सियस Dr Lepsius) ने इस पुस्तकको प्रकाशित किया है और मिष्टर डी०-रुजे और डाक्टर वार्च (Mr De Rouge and Dr. Birch -ने उसका अनुवाद किया है। सिवा इसके एक और पुस्तक निम्न गोलार्द्धका इतिहास (History of the Lower Hemisphere) मिली है। सिवा इसके कब्रिस्तानोंके भीतरसे वहुतेरी पुस्तकें मिली है और मिल रही हैं। धर्मग्रन्थोंकी अपेक्षा नीतिशास्त्रकी पुस्तकोंकी चमत्कारिता अधिक है। दो तरहके इतिहास मिलते हैं—१ला राजकर्मचारियोंके लिखे और २रा साधारण लोगों द्वारा संगृहीत। राजकीय लेखकोंका इतिहास केवल राजकुलके विस्तार और प्रशंसाओंसे परिपूर्ण है। उपन्यासोंमें यथेष्ट रचना नैपुण्य दिखाई देता है। राजा आत्मजीवन वृत्तान्त लिखते थे। इन पुस्तकोंमें कई पुस्तकें मिली हैं।

एक किस्से कहानीकी किताबका नाम "सेटनौका किस्सा" (Tale of Setnau) है। इस पुस्तकमें वडी कौतुहलपूर्ण कहानिया हैं। ये वहुत ही सरस और मधुर है। अब भी ग्रन्थ पाये जाते हैं। पिरामिडके सुदृढ कमरोंमें और समाधि क्षेत्रोंके भीतरसे अतीत कीर्त्तिके विविध नमूने मिल रहे हैं। आशा है, कि भविष्यमें वहुतेरे अतीत रत्नोंका उद्धार होगा।

विज्ञान और शिल्प।

प्राचीनतम समयमें शिल्प विज्ञानका उत्कर्ष देखनेसे विस्मयविमूढ होना होता है और इतने सहस्र वर्ष बीत जाने पर भी ऐसा समझमें नही आता, कि सभ्यता-का प्रवाह अधिक आगे बढ़ा है।

सबसे पहले उस समयकी कालगणना पर दृष्टिनिक्षेप करनेसे दिखाई देता है, कि मिस्रवासी ज्योतिषमें बहुत आगे बढे थे। उन्होंने चन्द्र और सूर्यको कालका विधानकर्त्ता ("ये द्वे कालं विधत्तः" कालिदास) माना है। यह बडे ही आश्चर्यकी बात है, कि मिस्रकी सभ्यताके प्राथमिक सोपानका पता नहीं लगता। जब द्वापरयुगमें सूर्य पुत्र मेनाने सिंहासन पर बैठ मिस्रमें मानव राज्यका सूत्रपात किया था मिस्र उस समय भी सभ्यतासौधके उच्च सोपान पर बैठा दिखाई देता है। उस समय भी उसे कठिनाइयोंको पार कर ऊपर नहीं चढ़ाना पडा था।

मिस्रवासी ३६५ दिनका वर्ष मानते थे। वर्षमें १२ मास होते थे। इन १२ मासोंके नाम इस तरह है :—१ थथ (Thoth), २ फाओफी (*Phaophi*), ३ आथीर (*Athyr*), ४ चोइक (Choik), ५ ताइवी (Tybi), ६ (Mechir), ७ फामेनथ (*Phamenoth*), ८ फारमुथि (*Parmuthi*), ९ पाचोन (*Pachon*), १० पैनी (*Pyni*), ११ एपिपोई (*Epipoi*) और १२ मेसोरी है। चार मासोंकी एक ऋतु होती थी। इस तरह बारह मासोमें तीन ऋतुएं होती थी। ऋतु शा (Sha) या वर्षा ऋतु, पेर (*Per*) या शीतकाल और सेमा (Shema or Summer) या ग्रीष्म ऋतु। सूर्यके अद्रानक्षत्रमें प्रवेश करनेसे (Heliocal rising of the Sothis) अर्थात् वर्षाके प्रारम्भसे वर्षकी गणना होती थी। नीलनदकी पहली (जलप्लावन) बाढ़ वर्षकी शुभ सूचना देती थी। पिछले समयमें सौर और चान्द्र दोनों वर्षोंका प्रचलन हुआ। कुछ लोगोंका कहना है, कि वासन्तिक पतझडोंसे वर्षकी गणना की जाती थी।

३० दिनोंका मास होता था। दिन रात २४ घण्टों-में विभक्त थे। दोपहर रातके बादसे दिन गिना जाता था। प्रस्तरखोदित ज्योतिषिक लग्नसारणीमें आर्द्ध रात्रिक स्फुट गणित रहता था।

प्राचीन मिस्रमें रेखामिति और त्रिकोणमितिकी जो सम्यक् परिचालना हुई थी, वह पिरामिड निर्माण-प्रणालीकी आलोचना करनेसे जाना जा सकता है। आदफू (Adfoo) मन्दिरमें जो ज्यामितिका कौशल दिखलाया गया था उससे ज्यामितिके बनानेवाले युक्लिड मिस्रके अधिवासी हैं, ऐसा मालूम होता है। पुतली बनानेका कार्य्य भी बहुत चढ़ा बढ़ा था। नीलनदकी बाढ़से बचनेके लिये और भूमिकी सीमा निर्द्धारित करनेके लिये त्रिकोणमितिके अनुसार भूमि नापी जाती थी। किस कौशलसे बड़े बड़े शिलाखण्ड नीचेसे बहुत ऊंचे पहुंचाये गये थे, उस प्रणाली और कौशलको देख कर इस समय इञ्जीनियर दांतों तले उंगली दबाते हैं। फिर मिस्रमें लौह आदि धातुओंके हथियार उस समय तक प्रचलित नहीं थे। इसके अभावमें भी मिस्रवासियोंने किस तरह देवमूर्त्ति निर्म्माण और वास्तुशिल्पमें किस तरह ऐसी महीयसी कीर्त्ति प्राप्त की थी, उसकी चिन्ता करनेसे आज कलकी सुसभ्य जातियां प्रहेलिका समझेंगी।

रसायन और चिकित्साशास्त्रकी सम्पूर्ण उन्नति हो चुकी थी। भैषजमिश्रित लेपोंसे लेप कर मृतदेह अविकृत भावमें बहुत दिनों तक रखी जा सकती थी, जैसे त्रेतामें महाराज दशरथकी लाश रखी गई थी। अस्त्र चिकित्साका नैपुण्य प्राचीन कालसे ही साधारणको मालूम था। किस कौशलसे मिस्रवासी पीतलके बने अस्त्रसे इस्पातकी अपेक्षा अधिक सुदक्षतासे काम करते थे, वह आज तक भी समझमें नहीं आया।

पात्रशिल्प (*Pottery*)-की अत्यधिक उन्नति हुई थी। उत्तम कांचकी कई सुन्दर वस्तुएं तय्यार की जाती थी। पोर्सिलेन (*Porcelain*) पात्रोंका व्यवहार अधिक दिखाई देता है। आज भी पर्वतों पर खुदे हुए तरह तरहके पात्र दिखाई देते हैं। कांचके बने बोतल, जाप करनेकी माला, नाना तरहके नल आदि प्रचलित थे। पयः प्रणालियां भी कांचकी बनती थीं। स्नानागारमें कांचकी नलियों द्वारा जल लाया जाता था। स्फटिकका प्रचार भी कम न था।

यन्त्रशिल्पकी भी अत्यधिक उन्नति हो चुकी थी। सुप्राचीनकालमें लोग यन्त्रका व्यवहार अच्छी तरह जानते थे। नाना प्रकारके यन्त्रोंका चित्र पिरामिड तथा पर्वतों पर खुदा हुआ है। उनका नाम और व्यवहार आज कलके युगमें अज्ञात है। तराजू, बटखरे आदि सैकड़ों प्रकार यन्त्रोंके नमूने मिलते हैं।

यन्त्रोंमें प्रायः सहस्राधिक प्रकारके वाद्ययन्त्र देखे जाते हैं। इस समय उन सबोंके नाम और व्यवहार मालूम नहीं होते। इससे मालूम होता है, कि उस समय सङ्गीतशास्त्रकी पूर्ण उन्नति हो चुकी थी। और तो क्या, केवल एक तारयन्त्र ही इतने अधिक थे, जिसका निर्णय करना कठिन था। नृत्यकला भी पूर्णरूपसे विकसित हो चुकी थी। तन्त्री यन्त्रोंमें सप्तस्वरा (Heptachord), पञ्चस्वरा, त्रितन्त्री, एकतारा, वीणा, मुरज, बेहला, एसराज, सितार, तानपूरा तम्बरू (Tambourines) आदि १०० प्रकारके यन्त्र थे। वेणु वंशी (Flute) आदि असंख्य प्रकारके वाद्ययन्त्र थे। ढोलक, मृदङ्ग, पखावज, पणव, आनव, गोमुखी, मञ्जीरा, भेरी आदि सहस्र तरहके यन्त्र शिलास्तम्भमें खुदे हुए हैं। कई बड़े बड़े बाजोंके चित्र दिखाई देते हैं। उससे किस तरहकी वाद्यध्वनि निकलती थी, उसका निरूपण करना कठिन है। युद्धके समय बड़े बड़े डंकोंकी आवाज निकल कर गगनमण्डलको विदीर्ण करती थी। उत्सवोंमें नृत्यनिपुण बिम्बाधरा नर्त्तकियोंकी नृत्यलीला नाना ऐक्यतानिक बाजोंके साथ पूर्ण होती थीं। उस समयकी रमणियां गीतवाद्यमें बड़ी निपुण होती थीं। गायक वीणा हाथमें ले कर नाच-गान करते थे। नर्त्तकियां किञ्चित लज्जा ढंक कर विविध हाव-भावोंको दिखातीं और दर्शकमण्डलीका चित्त आकर्षित किया करती थीं।

वस्त्रशिल्पमें भी मिस्र इस समयकी अपेक्षा आगे बढ़ा हुआ था। धनी मानी विलासी लोग सूक्ष्म या बारीक वस्त्रोंसे अङ्गाच्छादन करते थे। नर्त्तकियां अर्द्धनग्नावस्थामें ही हाव भाव दिखाया करती थीं। वस्त्रकी अपेक्षा अलङ्कारकी अधिकता दिखाई देती थी। रानियां महारानियां अच्छे आभूषणोंसे अपना शृङ्गार किया करती थीं। उनके गलेमें स्वर्णकुठार राजलक्ष्मीके चिह्न-स्वरूप

शोभता था। कण्ठे, वाली, बाजू, अंगूठी, नुपूर, और स्वर्णमय दर्पण आदि नाना प्रकारके अलंकार प्रचलित थे। रानियोंके समाधिक्षेत्रसे सैकड़ों प्रकारके अलङ्कार या गहने मिले हैं। इन अलङ्कारों पर मीना शिल्पकलाम देख कर यह सहज ही अनुमान होता है, कि मिस्रमें मीनाशिल्पका कितना अधिक प्रचार था। कब्रमें संरक्षित रानी आ-होतेपके कारुकार्य्य खचित नाना तरहके सोनेके गहने पाये गये हैं।

सब तरहके व्यवहारिक शिल्पोंने (Fine Art) मिस्रमें बड़ी उन्नति की थी। मिस्री सभ्यता और शिल्प-विज्ञानने यूनानियोंकी सभ्यताकी सृष्टि की थी। यूनानियोंके देवता भी मिस्री देव-समाजके सदृश और सामान्य रूपान्तरमात्र हैं। चित्रशिल्पमें भी मिस्री कभी पीछे न थे।

सर्वोपरि मिस्रकी मूर्त्ति और वास्तुशिल्प जगत्‌में अद्वितीय है। जिनके स्थापत्यकी अद्भुत-कीर्त्तिने पृथ्वीके आश्चर्य पदार्थोंमें स्थान पाया है, उसके सम्बन्धमें कुछ कहना मेरा कर्त्तव्य है।

बेनीहासन नगरमें अमेनी (Ameni) समाधि-मन्दिरके कारुकार्यखचित स्तम्भोंको देख कर प्रत्नतत्त्व-विदोंने कहा है, कि यूनानका शिल्प मिस्री शिल्पकी अनुकृतिमात्र है। पण्डित लोग इसे 'प्रोटोडोरिक' कहते हैं। इसके स्तम्भ आठ कोनके बने हैं, स्तम्भका ऊपरी भाग पुष्पपल्लवसे अलंकृत है। घरकी चहारदीवारी चित्र-लिपि और चित्रपटसे सुशोभित है।

उक्त समाधि-मन्दिर शिल्पनैपुण्यका अद्भुत निदर्शन है। इस समय भी वह सभ्यजातिको विस्मय उत्पन्न करता है। वे सब कीर्त्तिस्तम्भ और सौधमाला हजारों वर्ष कालतरङ्गसे प्रतिद्वन्द्विता कर आज भी मिस्रके विलुप्त गौरवका साक्ष्य प्रदान कर रहा है।

मिस्रके स्थापत्य शिल्पकी प्राचीन कीर्त्तियोंको चार भागोंमें बांटा जा सकता है:—पिरामिड, ओबेलिस्क या शैलस्तम्भ, मम्मी या शवाधारका संरक्षित शव और मन्दिर तथा अट्टालिका आदि। मिस्रका पिरामिड पृथ्वी के सात आश्चर्योंमें एक है। मनुष्य-कीर्त्तिका इतना बड़ा नमूना पृथ्वीमें और नहीं है। अक्षा० २९° से ३०° तक ये सब पिरामिड दिखाई देते हैं। छोटे बड़े ७० पिरामिड आज भी विद्यमान हैं। हावर्ड वाइस (Howard Vyse) नामक एक पाश्चात्य प्रत्नतत्त्वविद्‌ने लाखों मुद्रा व्यय कर पिरामिडके सम्बन्धमें नाना रहस्योंकी मीमांसा की है।

पहले पाश्चात्य पण्डित लोग समझते थे कि ग्रह नक्षत्रादिका पर्यवेक्षण करनेके लिये ही ये सब बनाये गये हैं। किन्तु वाइस साहब कई स्थानोंको खुदवा कर प्रमाणित किया है, ये समाधि मन्दिरके सिवा और कुछ नहीं। पिरामिडकी भित्ति चौकोन है और इसकी भुजायें त्रिकोणाकार हैं। तीन पिरामिड सबसे अधिक उच्च हैं। खुफूर पिरामिड सर्वोच्च और श्रेष्ठ कहा जाता है। इसकी वर्त्तमान ऊंचाई ४५० फुट और इसकी भित्ति ७४६ फुट है। पहले यह और भी ३० फुट ऊंचा था। १० हजार शिल्पियोंने ५० वर्षों में इस पिरामिडको बनाया था। इसके सिवा गिजे और सक्करका पिरामिड भी प्रसिद्ध है। इन पिरामिडोंके भीतर विशेष तूल-तवाल नहीं है। केवल शवाधारके लिये दो तीन कोठरियां रहती हैं। वह भी केवल राजवंशको ही लाशें रखनेके लिये बनाई जाती हैं। ये कोठरियां अतीव सुन्दर तथा नाना कारुकार्य-सम्पन्न हैं। लाल मर्मर पत्थर इसमें जड़े हुए हैं।

मिस्रमें जो स्मृतिस्तम्भ पाये गये हैं, उनमें हेलिओपोलिस् नगरके उसार्त्तसेनका स्तम्भ ही प्राचीनतम है। यह खृष्टीय जलप्लावनके बहुत दिन पहले बना था। यह स्तम्भ नीचेसे ऊपर तक नाना चित्रोंसे परिशोभित है। इसकी ऊंचाई ६७ फुट है। कुछ स्तम्भ तो १०५ फीट तक ऊंचे हैं। सिवा इसके कर्नाक नगरका स्तम्भ, क्लिउपेटरा सूई (Cleopetra's needle) और पम्पीका स्तम्भ (Pompey's pillar) सबसे प्रसिद्ध हैं। इन सभी स्तम्भोंमें चित्रकारीका काम हुआ है। इसके पढ़नेसे उस समयके इतिहासकी बहुतेरी बातें जानी जा सकती हैं। लक्सरका स्तम्भ भी समधिक प्रसिद्ध है। सिवा इनके सहस्र सहस्र स्मृतिस्तम्भ विद्यमान रह कर मिस्रकी प्राचीन महिमाका गीत गा रहे हैं।

मिस्रका स्फिङ्क्स् विशेषरूपसे उल्लेखनीय है। इस तरहकी भीषणाकार विशाल काय दानवकी प्रतिमूर्त्ति

पृथ्वोके किसी देशमें नहां है। इस दानवको विराट् मूर्त्ति मिस्री शिल्पका अद्भुत निदर्शन (नमूना) है। शिल्पीने २०० हाथ उच्च एक पहाड़ काट कर एक प्रकाण्ड दानव मूर्त्तिका निर्माण किया था। यह कुछ अंशोंमें नरसिंहकी मूर्त्तिके समान है। इसकी भौंह भीषण और मुख मनुष्यकी तरह और नीचेका भाग सिंहकी तरह है। मिस्रके धर्मशास्त्रमें यह बाहुबल और विद्याबलका अपूर्व मिश्रण है। मनुष्यका मस्तक बुद्धिकी खान और पशुराज सिंहका शरीर वोरत्वबोधक है। स्फिङ्क्सकी मूर्त्ति पहले फारोकी प्रतिनिधि और मिस्रकी रक्षाकारो देवरूपमें वर्णित हुई थो। मिस्रके होरेमखू (Horemkhu) यूनानमें हर्मचिस् (Harmachis) रूपसे माना गया है। स्फिङ्क्स् दोनों मूर्त्तिके हो अनुरूप प्रतिनिधि है। स्फिङ्क्सकी भीषणाकृति सैकड़ो वर्ष पार कर आज अतीत कीर्त्तिकी घोषणा कर रही है। इसका शरीर १४० फीट ऊंचा है। चिवुकसे ललाट तक यह ३० फीट चौड़ी है, दोनों पैरोंका अन्तर ५० फीट है। दोनों पैरोंके बीच एक बहुत बड़ी अट्टालिका तैयार हुई है। इस मूर्त्तिके देखनेसे मिस्रके शिल्पनैपुण्यको चर्मोत्कर्षता सहज ही जानी जाती है। छोटी छोटी मूर्त्तिके बनानेसे सन्तुष्ट न हो वहांके शिल्पियोंने पर्वत काट कर ही एक विशाल मूर्त्तिको बनाया। इसकी अपेक्षा शिल्पोत्कर्ष और क्या हो सकता है?

यूनानी धर्मशास्त्रमें स्फिङ्क्स् बहुत कुछ रूपान्तरित हो गया था। उसका मुख स्त्रीकी तरह, पूंछ सापकी तरह, शरीर कुत्तेकी तरह, पञ्जा सिंहकी तरह है। इस मूर्त्तिकी तरह खाफराकी प्रतिमूर्त्ति भी अत्यन्त बड़ी है। यह भी एक विशाल पर्वतको काट कर ही तय्यार की गई है।

रामेसस्‌वंशीय राजाओंने जिन सौधमन्दिर और समाधिमन्दिरोंको बनाया था, वे सब रामेसियाम नामसे विख्यात हैं। इस मन्दिरका फैलाव २२५ फीट है। इसका अधिकांश ध्वंस हो गया है।

प्रत्नतत्त्वज्ञ पण्डित सहस्र सहस्र वर्षोंसे प्राचोन कीर्त्तिके स्मृतिस्तम्भका आविष्कार कर रहे हैं। बीसवीं शताब्दीके सुसभ्य वैज्ञानिकगण भी ७००० वर्ष पहलेके मिस्रके शिल्पनैपुण्यको देख कर विस्मयविमुग्ध हो रहे हैं। मिस्रके शिल्पविज्ञानने ही फिनिसीय और यूनान जातिको शिल्पविज्ञानका पाठ पढ़ाया था।

अनेक अतीत कीर्त्तियां नष्ट हो चुकी। कामबाइस के आक्रमणमें मिस्रके कितने ही मन्दिर नष्ट हो गये। उसके बाद खलीफा ओमरने ३६००० अट्टालिकायें और ४००० मन्दिर नष्ट किये और देवदेवियोंको उठा कर अरबमें ले गये।

इन सब विप्लवोंको सहन करते हुए आज भी मिस्र अपने शिलालेखों और चित्रलिपियोंसे महिमान्वित हो रहा है।

मिस्रके पुरातत्त्व, धर्मशास्त्र और रीतिनीतिकी पर्यालोचना करनेसे मिस्रके अधिवासियोंको आर्योंकी अन्यतम शाखा कहनेमें जरा भी अत्युक्ति नहीं होती। प्रतीच्य महापुरुष एक वाक्यसे इस बातका समर्थन करते हैं। जो सब अंग्रेज प्रत्नतत्त्वविद् भारतके वैदिकयुगको २००० ईसाके पूर्व बतलाते जरा भी कुण्ठित नहीं होते और अंग्रेजोंके भावों भरे भारतीय प्रत्नतत्त्वविद् भारतवर्षके प्राचीन इतिहासको ईसाके जन्मकालसे पीछेका बताते हैं, वे बेचारे मिस्रमें ७००० वर्ष पहले ही वैदिक युगका प्रभाव देख विस्मित होंगे। प्राचीन मिस्रके साथ प्राचीन भारतका बहुत सौसादृश्य है और पूर्ण रूपसे विचार करने पर बारंबार यही कहनेकी इच्छा करती है, कि मिस्र भारतका एकमात्र उपनिवेश है। मिस्रके अधिवासियोंने वैदिक धर्मनीतिका बीज ले कर मिस्रमें रोपण किया था सही, किन्तु वह सभ्यता वृक्ष विजातीयभूमिमें बद्धमूल हो नहीं सकता है। दोनों देशोंकी सभ्यताकी समालोचनाके तराजू पर रखने पर देखा जाता है, कि मिस्रकी सभ्यता वाक्यविज्ञानके विपुल वैभवसे पूर्ण रहने पर भी वहांकी समाजपद्धति सनातन धर्मशास्त्रको दृढ़भित्ति पर प्रतिष्ठित नहीं हुई थी। स्वेच्छाचारिता और स्वतन्त्रता ही वहांके सांसारिक सुखकी निदान थी। धर्मनीतिका दृढ़ गढ़ मिस्रवासियोंको किसी समय बांध न सका। उनके देवताओं ने मानववत्सलतासे प्रेरित हो कर मनुष्यको शिल्पविज्ञानकी शिक्षा दी और सुखोपार्जनका पथ दिखलाया

किन्तु उन्होंने आत्मविसर्जनके महामन्त्रकी शिक्षा नहीं दी। वहां साम्य, स्वाधीनता और साधारण स्वत्वाधिकारके प्रश्न पर बहुत वातवितण्डाके बाद यह निश्चित हुआ था, कि सहस्र सूर्यसमप्रभ हैमाण्डप्रसूत नरनारियोंमें कोई विषमता नहीं। मिस्रवासी स्त्री-जातिको साधारण सम्पत्ति समझते थे। भ्राता भगिनीका पतिपत्नीत्व समाजबन्धनका मूलमन्त्र था। वे केवल भोगको ही धर्म जानते थे, त्याग करना नहीं जानते थे, अर्जन करते थे किन्तु वर्जन नहीं करते थे। वहां मनु या याज्ञवल्क्यकी तरह मानवके मङ्गलमय विग्रह धर्मशास्त्र-की व्यवस्था देनेवाले भी नहीं थे। वहां धर्मकी ग्लानि और अधर्मका अभ्युत्थान हुआ था, किन्तु साधुजनोंके बचाने और दुष्टोंके दमन करने अथवा धर्मकी संस्थापनाके लिये विधातृ-शक्ति पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई न थी। इसीसे मिस्रमें सभ्यताका प्रवाह कालभेदसे परिमार्जित हो कर पवित्र प्रणाली द्वारा प्रवाहित नहीं हो सका। इसीसे सभ्यत गर्वित पराक्रान्त तथा प्राचीनतम मिस्र जाति अवनीमण्डलीसे लुप्त हो गई है। उसका आज पृथ्वी पर कोई सजीव नमूना रहने न पाया।

मिस्रियोंके पिरामिड या मम्मी आदि कीर्त्तिस्तम्भावली) अथवा शिल्पोद्यानको प्रफुल्ल पुष्पराजि आज भी नूतन विकसित गुलाबके कमनीय सौन्दर्यसे यूरोपीय चित्रशाला उज्ज्वल हो रही है, किन्तु कपिल या कणाद, व्यास या वाल्मीकि, पाणिनि या पतञ्जलि, जैमिनि या याज्ञवल्क्य, शाक्यमुनि या शङ्कराचार्यकी तरह मनीषियों-की महनीय मानस-महिमा युगयुगान्तरसे देशदेशान्तरमें मनुष्योंके चित्तको आत्मोत्कर्षके उच्चतम सोपान पर अधिरोहण करानेमें समर्थ नहीं हुई। इसीसे कहते हैं, कि मिस्रकी प्राचीन सभ्यता वाह्यवैभवके विराट् आडम्बरसे पूर्ण है। वहां,चिन्तामणिका उज्ज्वल प्रकाश अन्धकारमय भविष्यतके राज्यमें किरण प्रदान कर न सका। पिछले समयमें मिस्रके पुरोहित राज्यभोगकी विलास लालसामें धर्मचिन्ताको परित्याग कर सस्त्रीक सिंहासन पर बैठे थे। उन्होंने राजप्रासाद अथवा पिरामिडके निकट बने रक्तमय मर्मर पत्थरके प्रमोद-भवनमें भोग वासनाकी परीतृप्ति की थी। किन्तु प्राचीन भारतके ऋषियोंने संसारके सभी प्रलोभनोंको पद-दलित कर भोग सुखकी तिलाञ्जलि दे नैमिषारण्य या बदरिकाश्रमकी शान्तिमय प्रकृतिकी गोदमें बैठ शास्त्रसमुद्रको मन्थन कर मनुष्यके लिये अमृत पैदा किया था। उनके उस अपार्थिव सुधासमुद्रमें तत्त्वजिज्ञासु मानवप्राण सदा अमृतपान कर सकेंगे।

मनु आदि भारतीय मुनि ऋषियोंने विवाह विज्ञानके गूढतत्त्वको समझ कर कालोपयोगी कल्याणकारी नियमोंको प्रवर्त्तित किया था। देश, काल और पात्र-भेदसे लोगोंने मनुके अनुशासनका पालन किया था। किन्तु मिस्रके किसी संस्कारकने लौकिक युगमें स्त्री-जातिकी पवित्रतारक्षाके लिये कोई व्यवस्था नहीं की। मिस्रके दैव और लौकिक युगकी रीतिनीति एक पथसे परिचालित हुई थी। किन्तु भारतीय व्यवस्था लौकिक युगमें कालोपयोगी नई प्रणालीसे प्रचलित हुई थी। इसी लिये हिन्दू जातिने लाखों वैदेशिक संघर्षोंके निदारुण प्रहारसे जर्जरित हो कर आज भी अपनी धार्मिक स्वतन्त्रताकी रक्षा की है। किन्तु भारतीय सभ्यताको शाखा मिस्रमें जो वर्द्धित हुआ था, वह समूल विनष्ट हुआ है।

जातीय और सामाजिक पवित्रताका अभाव ही मिस्रवासियोंके अधःपतनका कारण हुआ था। सिकन्दरने मिस्र और भारत दोनों देशों पर आक्रमण किया था, किन्तु उस समयके वृत्तान्तोंको पढनेसे मिस्रवासियोंकी अपेक्षा भारतवासियोंको सहस्र गुना श्रेष्ठ कहा जा सकता है।

जहां भारतमें ब्रह्मचर्य और पवित्रता है, वहां मिस्रमें उच्छृङ्खलता और पापस्रोत है। स्त्री जाति हो पवित्रतारक्षाकी मुख्यपात्र है। स्त्रीचरित्रमें व्यभिचारके स्पर्श करनेसे शीघ्र ही समाजतरु जडसे उखड जाता है। यही कारण है, कि मिस्रकी प्राचीन जातियोंका आज संसारमें नामोनिशान दिखाई नहीं देता। मिस्रकी सभ्यताकी आलोचना करनेसे दिखाई देता है, कि वहांकी सभ्यता दूसरे देशकी है। आर्योंने जब प्राचीनतम मिस्रदेशमें उपनिवेश स्थापित किया था, तब स्वर्ग और नरकका चित्रमात्र उनको मालूम था, किन्तु उन्होंने स्वर्गारोहणके

लिये किसी तरहकी सीढ़ी नहीं बनाई। साधारणको यागयज्ञ या धारणाके अनुष्ठानके पथका पथिक न बनाया। मुक्तिके लिये उन्होंने कोई पथका निर्देश नहीं किया। वे आत्माकी अमरताको स्वीकार करते थे। किन्तु शरीरकी नश्वरता वे नहीं मानते थे। सब देशों-के असभ्योंमें समाधि-प्रथा दिखाई देती है। मालूम होता है, कि उपनिविष्ट आर्योंने संसर्गके दोषसे असभ्योंकी समाधि-प्रथा ले ली थी। किन्तु पूर्वपुरुष आत्माकी अमरताकी बात नहीं भूल सके। वे कभी भी शरीरके साथ जीवात्माके पृथक् भावको हृदयङ्गम नहीं कर सके। पुरोहित मन्त्र तन्त्रकी सृष्टि कर प्रेतात्माको परिशुद्ध करके स्वर्गमें भेज देते थे।

पीछले समयमें यूरोपियोंके धर्मयाजकोंकी तरह स्वर्ग-नरककी कुञ्जीको उन्होंने अपने करायत्त कर लिया था। समाधिके समय उनको अधिक दक्षिणाके सिवा स्वर्ग जानेका और कोई पथ नहीं था। पीछे मिस्रमें समाधि-मन्दिरका बनाना ही मनुष्यजीवनका उच्चतम लक्ष्य हो गया था। धनाढ्य और निर्द्धन अपना सर्वस्व बेच कर भी मृत देहकी रक्षामें लगे रहते थे। किन्तु आत्माकी परिशुद्धिके लिये किसी पथका अवलम्ब नहीं लेते थे। राजा पिरामिड निर्माण करनेमें ही लग जाते थे, कर भारसे प्रजाको दबा देते थे। इसी तरह प्रजा भी यथासर्वस्व बेच कर पर-लोकके लोभनीय राज्यका सोपान निर्माण करती थी। भारतीय आर्यगण पुनर्जन्म मानते थे। किन्तु जीर्णवस्त्र-की तरह परित्यक्त नश्वर देहके स्थायित्वकी कोई व्यवस्था नहीं करते थे।

मिस्रके धर्मशास्त्रमें पृथ्वीकी सृष्टिका कोई नया तत्त्व नहीं मिला है। उसमें महाप्रलयका कोई उल्लेख नहीं। धर्मतत्त्वका मूल सूत्र और दार्शनिक भित्ति, दोनों एक हैं। किन्तु पिछले समयके परिवर्त्तन या विवर्त्त स्रोत दोनों जातियोंका बिलकुल स्वतन्त्र है। मिस्रने पार्थिव और भारतियोंने अपार्थिव सुखका अनुसन्धान किया था। प्रत्येक विषयमें दो जातियोंके कीर्त्तिस्तम्भ मौजूद हैं। किन्तु चिन्ताकी संकीर्णताके कारण मिस्र जाति पृथ्वीमें प्राधान्य लाभ न कर सके। इसीलिये गिरि-गात्र जिनका लेखपत्र, शैलशलाका जिनकी लेखनी और प्रकृतिके विशालोद्यानके पदार्थपुञ्जकी आकृति जिनका चित्रिताक्षर था, ३००० सहस्र जिनकी वर्णमालायें थी, उनकी उस आश्चर्य-पुष्पपल्लवमयी चित्रलिपिमें कोई गम्भीर भाव क्यों न रहेगी? भारतमें भी शिल्प-विज्ञान उन्नतिके उच्च शिखर पर चढ़ा हुआ था, किन्तु संसारको जो कारागार समझते थे, काञ्चनको कांच समझते थे, सब प्रकारके भोग सुखको पददलित करते थे, स्वर्गीय अनन्त सम्पद्को भी जो घृणाकी दृष्टिसे देखते थे, निःश्रेयस जिनका एकमात्र लक्ष्य था, वह अपनी महिमाको विज्ञापन करनेके लिये हिमालय या विन्ध्य शिखरमें विराट् विग्रह किस लिये खोदेंगे? वे मनुष्योंके मानस-राज्यमें जिस स्तम्भोंका निर्माण कर गये हैं, उसमें काल-का भी हाथ नहीं। मुसलमानोंने सहस्र वर्षों तक लूट पाट कर कारुकार्यसमन्वित गगनभेदी मन्दिरोंको विनष्ट किया है, किन्तु आर्य ऋषियोंके कीर्त्तिस्तम्भमें चोट तक भी न पहुंचा सके हैं।

मिस्रकी देव देवियां इस समय चित्रशाला या चिड़ियाखानेकी कौतुहल बनी हैं। उनकी उपासक-मण्डली सम्पूर्णतः निर्वंश हो गई है। कौन अब बेलपत्र और फूल ले कर उनकी पूजा करेगा?

जिस सुसभ्य पराक्रान्त जातिने सहस्रों वर्ष तक राजदण्डकी परिचालना की थी, बनावटी शिल्पनैपुण्यसे प्रकृति देवीके साथ प्रतिद्वन्द्विता की थी, आज वह किस पापके कारण अपनी स्वतन्त्रता खो कर पृथ्वीकी पीठसे सदाके लिये विलुप्त हो गई? किस पापके कारण आसी-रिय, बाबिलनीय, मिदिय, पार्थिय, और पारसिक आदि प्राचीन जातियां पृथ्वीसे विलुप्त हो गईं। क्यों ऐसा हुआ? इसका उत्तर कौन देगा? मुट्ठीभर हिन्दूसन्तान आज भी जीवित रह किस कारणसे जातीय स्वतन्त्रताकी रक्षा कर सके है? कौन इसका निर्णय करेगा? भारत ही क्या आर्यशास्त्रका मूल काण्ड है? इसीसे सैकड़ों विप-त्तियोंको झेल कर भी आज प्राचीन हिन्दूशास्त्र सनातन और पुरातन क्षुण्ण मार्गमें सशङ्क भावसे चल रहा है।

इस समय कुछ लोग विश्वास करते हैं, कि मिस्रके पुरातत्त्वके साथ वैदिक युगका बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। हम इस जगह इसका निर्णय करनेमें असमर्थ हैं। आशा

है, कि वैदिक तत्त्वज्ञ कोई मनोषी गवेषणाके वलसे इस तत्त्वकी मीमांसा कर सकेंगे।

मिस्रा (हिं० पु०) मिसरा देखो।

मिस्री (हिं० स्त्री०) मिसरी देखो।

मिस्ल (हिं० पु०) समान, तुल्य।

मिस्सा (हिं० पु०) १ मूंग, मोठ आदिका भूसा। भेड और ऊंट इसे वड़े चावसे खाता है। २ एक प्रकारका आटा जो कई तरहकी दालों आदिको पीस कर तैयार किया जाता है। इसकी रोटी गरीव लोग वना कर खाया करते हैं।

मिस्सी (फा० स्त्री०) १ एक प्रकारका प्रसिद्ध मञ्जन। इसे प्रायः सधवा स्त्रियां दांतोंमें लगाती हैं। इससे दांतोंकी जड़ मजवूत होती तथा दांत काले हो जाते और सुन्दर दिखाई देते हैं। यह माजूफल, लोहचून और तूतिए आदिसे तैयार की जाती है।

यह मिस्सी सफेद और कालीके भेदसे दो प्रकारकी होती है। सफेद मिस्सीमें सफेद सुरमा और दारचीनीका चूर्ण मिलाया जाता है। यह दांतके रोगोंमें वहुत उपकारी माना गया है। काली मिस्सी माझानिसका अक्सि मिला कर वनाई जाती है। अलावा इसके हीराकसीस (Persulphate of iro) नामक मिस्सी चमड़े आदिको काले करनेमें व्यवहृत होती है।

२ किसी वेश्याका पहले पहल किसी पुरुषसे समागम होना। इसके उपलक्षमें प्रायः कुछ गाना वजाना और जलसा भी होता है। इसका दूसरा नाम सिरढकाई वा नथनी उतारन भी है।

मिह (सं० पु०) वृष्टिवर्णक मेघ, वरसता हुआ वादल।

मिहतर (फा० पु०) मेहतर देखो।

मिहदार (फा० पु०) वह मजदूर जिसे नकद मजदूरी दी जाती हो, अन्न आदिके रूपमें न दी जाती हो।

मिहनत (अ० स्त्री०) मेहनत देखो।

मिहनताना (अ० पु०) मेहनताना देखो।

मिहनती (अ० वि०) मेहनती देखो।

मिहना (हिं० पु०) मेहना देखो।

मिहमान (फा० पु०) मेहमान देखो।

मिहमानदारी (फा० स्त्री०) मेहमानदारी देखो।

मिहमानी (फा० स्त्री०) मेहमानी देखो।

मिहर (फा० स्त्री०) मेहर देखो।

मिहरवान (फा० पु०) मेहरवान देखो।

मिहरवानी (फा० स्त्री०) मेहरवानी देखो।

मिहरा (फा० पु०) मेहरा और महरा देखो।

मिहराव (फा० स्त्री०) मेहराव देखो।

मिहिका (सं० स्त्री०) मिहति स्नेहातीति मिह संज्ञायां क्वुन्, ततष्टाप् अत इत्वञ्च। १ नीहार, आसमानसे पडनेवाला वरफ, पाला।

"विशति युवतित्यागे रात्रीमुच मिहिकारुचम् (नैषध १९।३५)

२ कपूर, कपूर।

मिहिर (सं० पु०) मेहयति सेचयति मेघजलेन भूमिमिति मिह किरच्। (इषम—दिमुदिखिदिच्छिदिभिदिमन्दिचन्दितिमिमिहीति। उण् १।५२) १ सूर्य। २ अर्कवृक्ष, आकका पौधा। ३ ताम्र, ताँवा। ४ मेघ, वादल। ५ वायु, हवा। ६ चन्द्रमा। ७ भूपति, राजा। ८ विक्रमादित्यके नौ रत्नोंमेंसे एक। इनका असल नाम वराहमिहिर होने पर लोग इन्हें मिहिर ही कहा करते थे।

वराहमिहिर देखो।

धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशङ्कुवेतालभट्टघटकर्परकालिदासाः। ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य॥" (नवरत्न०) (त्रि०) ९ वृद्ध, बुड्ढा।

मिहिरकुल (सं० पु०) सूर्यवंश।

मिहिरकुल—शाकल प्रदेशके प्रसिद्ध हूण राजा तोरमाणके पुत्रका नाम। तोरमाणके मरने पर ये पितृ-राजसिंहासन पर वैठे। इन्होंने गुप्तसम्राटों पर विजय करके मध्यभारत तक अधिकार जमाया था। अन्तमें प्रायः ५३० ई०को ये मालवाधिप यशोधर्मासे करूकी लड़ाईमें परास्त हो कर काश्मीरको भाग गये। चीन-परिव्राजक यूएनचुवंगके वर्णनसे मालूम होता है, कि मिहिरकुल वौद्धोंके कट्टर शत्रु थे। इसी कारण एक वार मगधके राजा वालादित्यने इन्हें पकड लिया था, पर फिर अपनी माताके कहनेसे छोड दिया था। हुवं-चु-तै-सुसुरने चीनकी टीकामें लिखा है, कि मिहिरकुलने २४वें वौद्धस्थविर आर्यसिंह की हत्या की थी—

राजतरङ्गिणीमें मिहिरकुलका विवरण इस प्रकार आया है,—मिहिरकुल काश्मीरके एक राजा थे। इनके पिताका नाम वसुकुल था। अपनी क्रूरताके लिये ये प्रसिद्ध थे। इनके शासन-कालमें बकरे भेंडे की तरह मानव हत्या होती थी। वृद्ध और बालककी हत्या करना इनके लिये कोई बात हो न थी। एक दिन इनकी महारानी सिंहलदेशके कपड़े का कुरता पहने हुए थीं। कपड़े में पैर का चिह्न बना हुआ था। महारानीके स्तन पर पैरका चिह्न देख राजाके क्रोधका पारावार न रहा, परन्तु कञ्चुकी (अन्तःपुररक्षक)-के कहने पर राजाका सन्देह दूर हुआ। पीछे उन्होंने फौरन सिंहलदेशको जीतनेके लिये प्रस्थान किया। सिंहलराजको राज्यच्युत करके मिहिरकुलने वहां एक प्रबल राजाको प्रतिष्ठित किया। सिंहलसे लौट कर मिहिरकुलने चोल द्रविड कर्णाट आदि देशोंको जीतनेके लिये प्रस्थान किया। किन्तु वहांके अधिवासी राजा मिहिरकुलके आनेसे पहले ही देश छोड़ कर भाग गये थे। मिहिरकुल काश्मीर लौट आये और वहां उन्होंने मिहिरपुर नामक एक विशाल नगर तथा श्रीनगरमें मिहिरेश्वर नामक शिवकी स्थापना की थी।

भारतवर्ष, शक, हूण आदि शब्द देखो।

मिहिरदत्त—काश्मीर राजरानी प्रकाश देवीके गुरु। (राजत० ४।८०)

मिहिरपुर (सं० क्ली०) मिहिरकुल-प्रतिष्ठित एक प्राचीन नगर। इसका वर्त्तमान नाम मिहिरौलि है।

मिहिररति (सं० क्ली) भगनरायके पुत्र।

मिहिराण (सं० पु०) मिहिरेणाप्यणयते स्तूयत इति मिहिर अण घञ्। शिव, महादेव।

मिहिरेश्वर (सं० पु०) मिहिरकुल प्रतिष्ठित शिव।

मिहिलारोप्य (सं० क्ली०) दक्षिणपथमें अवस्थित एक नगर-का नाम।

मिंही (हिं० स्त्री०) मध्यप्रदेशमें हानेवाली एक प्रकार-की अरहर। इसके दाने कुछ बड़े होते हैं और कुछ देरमें तैयार होती है।

मींजना (हिं० क्रि०) १ हाथोंसे मलना, मसलना। २ मर्द्दन करना, दलना।

मींड (हिं० स्त्री०) सङ्गीतमें एक स्वरसे दूसरे स्वर पर जाते समय मध्यका अंश इस वखूबीसे कहना जिसमें दोनों स्वरोंके बीचका संबंध स्पष्ट हो जाय और यह न जान पड़े कि गानेवाला एक स्वरसे कूद कर दूसरे स्वर पर चला आया है। मींड़की जरूरत किसी स्वरसे केवल उसके दूसरे परवर्त्ती स्वर पर ही जानेमें नहीं पड़ती; बल्कि किसी एक स्वरसे किसी दूसरे स्वर पर जाने अथवा उतरनेमें भी पड़ती है। स्वरोंकी मूर्च्छनाओंका उच्चारण मींड़की सहायतासे ही होता है। देशी बाजोंमेंसे बीन, रबाब, सरोद, सितार, सारंगी आदिमें मींड़ बहुत अच्छी तरह निकाली जाती है, परन्तु पियानो और हारमोनियम आदि अंगरेजी ढंगके बाजोंमें यह किसी प्रकार निकल ही नहीं सकती। विद्वानोंका यह भी मत है, कि मींड निकालनेके लिये स्त्रियोंके कण्ठकी अपेक्षा पुरुषोंका कण्ठ बहुत अधिक उपयुक्त होता है।

मींडना (हिं० क्रि०) हाथोंसे मलना, मसलना।

मींडासींगी (हिं० स्त्री०) मेढासींगी देखो।

मीआद (अ० स्त्री०) १ किसी कार्यको समाप्ति आदिके लिये नियत समय, अवधि। २ कारागारके दण्डका काल। कैदकी अवधि।

मीआदी (हिं० वि०) १ जिसके लिये कोई समय या अवधि नियत हो। २ जो कारागारमें रह चुका हो, जो जेलखानेमें रह कर सजा भुगत चुका हो।

मीआदीहुंडी (हिं० स्त्री०) वह हुण्डी जिसका रुपया तुरंत न देना पड़े, बल्कि एक नियत समय या अवधि पर देना पड़े, वह हुण्डी जो मिती पूरने पर भुगताई जाय।

मीचना (हिं० क्रि०) बन्द करना, मूंदना।

मीजा (हिं० स्त्री०) १ अनुकूलता। २ स्वभाव। ३ सम्मति, राय।

मीजान (अ० स्त्री०) १ तुला, तराजू। २ तुलाराशि। ३ कुल संख्याओंका योग, जोड़। ४ मीजा देखो।

मीटना (हिं० क्रि०) मीचना देखो।

मीटिंग (अं० स्त्री०) परामर्श आदिके लिये एक स्थान पर बहुतसे लोगोंका जमावड़ा, अधिवेशन।

मीठा (हिं० वि०) १ जो स्वादमें मधुर और प्रिय हो, चीनी या शहद आदिके स्वादवाला। २ स्वादिष्ट, जाय केदार। ३ प्रिय, रुचिकर। ४ जो बहुत अधिक सुशील हो, किसीका कुछ भी अनिष्ट न करनेवाला, बहु-अधिक सीधा। ५ जो गुदा-भञ्जन कराता हो, औंधा। ६ जिसमें पुंसत्व न हो, नामर्द। ७ जो तीव्र या अधिक न हो, हलका। ८ साधारण या मध्यम श्रेणीका, मामूली। ९ धीमा, सुस्त। (पु०) १० मीठा खाद्य, मिठाई। ११ गुड। १२ हलुआ। १३ मुसलमानोंके पहननेका एक प्रकारका कपडा। इसे शोरींबाफ भी कहते हैं। १४ मीठा नीबू। १५ मीठा तेलिया या बछनाग नामक विष।

मीठा अमृतफल (हिं० पु०) मीठा चकोतरा।

मीठा आलू (हिं० पु०) शकरकन्द।

मीठा इन्द्रजौ (हिं० पु०) कृष्ण कुरज, काली कुडा।

मीठा कद्दू (हिं० पु०) कुम्हडा।

मीठा गोखरू (हिं० पु०) छोटा गोखरू।

मीठा चावल (हिं० पु०) वह चावल जो चीनी या गुडके शरबतमें पकाया गया हो।

मीठाजहर (हिं० पु०) विष, वत्सनाभ, बछनाग।

मीठाजीरा (हिं० पु०) १ कालाजीरा। २ सौंफ।

मीठाठग (हिं० पु०) झूठा और कपटी मित्र, जो ऊपरसे मिला रहे, पर धोखा दे।

मीठातेल (हिं० पु०) १ तिलका तेल। २ पोस्तके दाने या खस खसका तेल।

मीठातेलिया (हिं० पु०) वत्सनाभ, विष।

मीठानीबू (हिं० पु०) जमीरी नीबू, चकोतरा।

मीठानीम (हिं० पु०) भारतवर्षमें मिलनेवाला एक प्रकारका छोटा वृक्ष। इसमेंसे एक प्रकारकी मीठी गंध निकलती है। इसके छिलके पतले और खाकी रंगके और पत्ते बकायन या नीमके पत्तोंके समान होते हैं। फल भी नीमके फलके ही समान होते हैं। फल कच्चे रहने पर हरे और पकने पर काले हो जाते हैं। इनमें दो बीज रहते हैं। चैत वैशाखमें इसके गुच्छोंमें छोटे छोटे फूल लगते हैं। इसके मूल, छिलके और पत्ते औषधके रूपमें काम आते हैं। इसका गुण चरपरा, कडुआ, कसैला और दाह बवासीर, शूल आदि का नाशक माना गया है।

मीठापानी (हिं० पु०) नीबूका अंगरेजी सत मिला हुआ पानी। यह बाजारोंमें मिलता है।

मीठापोइया (हिं० पु०) घोडेकी वह चाल जो न बहुत तेज हो और न बहुत धीमी।

मीठाप्रमेह (हिं० पु०) मधुमेह।

मीठाबरस (हिं० पु०) स्त्रियोंको अवस्थाका अठारहवां और किसीके मतसे तेरहवां बरस जो उनके लिये कठिन समझा जाता है, मीठा साल।

मीठाभात (हिं० पु०) मीठाचावल देखो।

मीठाविष (हिं० पु०) वत्सनाभ, बछनाग।

मीठासाल (हिं० पु०) मीठाबरस देखो।

मीठी खरखोडी (हिं० पु०) स्वर्ण जीवंती, पीली जीवंती।

मीठीछुरी (हिं० स्त्री०) १ वह जो देखनेमें मित्र पर वास्तवमें शत्रु हो। २ कपटी, कुटिल।

मीठीतूंबी (हिं० स्त्री०) कद्दू।

मीठीदियार (हिं० स्त्री०) महापीलू वृक्ष।

मीठी मार (हिं० स्त्री०)ऐसी मार जिसकी चोट अंदर हो और जिसका ऊपरसे कोई चिह्न न दिखाई दे, भीतरी मार।

मीठीलकडी (हिं० स्त्री०) मुलेठी।

मीडम (सं० क्ली०) १ विवाद, द्वन्द्व। (अव्य०) २ अति मृदु या क्षीण स्वरसे।

मीढ (सं० ति०) मिह क्त। १ मूत्रित, पेशाब किया हुआ। २ मूत्रकी तरह जलीय, मूत्रके समान।

मीढुष (सं० त्रि०) १ दयार्द्र, दयालु। (पु०) २ इन्द्रके पुत्रका नाम।

मीढुष्टम (सं० पु०) मीढ्वस तमप्, पृषोदरादित्वात् साधुः। शिव, महादेव।

> "तदा सर्वाणि भूतानि श्रुत्वा मीढुष्टमोदितम्।
> परितुष्टात्मभिस्तात साधु साध्वित्यथाब्रुवन्॥"
>
> (भाग० ४।७।६)

२ सूर्य। ३ चौर, चोर।

मीढ्वस् (सं० पु०) मिह-सेच-नार्थे छन्दसि क्वसुः (दाश्वान् साह्वान् मीढ्वांश्च। पा ६।१।१२) ततो द्वित्वा भाव

अनिरत्वं उपधदीर्यत्वं हत्वञ्च निपात्यते। १ शिव, महा देव। २ वर्षिता, वर्षक।

मीन (सं० पु०) मीयते इति मीञ् हिंसायां (फेनमीनौ। उण् ३।३।३) इति नक् निपातितश्च। १ मत्स्य, मछली। मत्स्य देखो। २ मेष आदि राशियोंमेंसे अन्तिम या बारहवीं राशि। इस राशिमें पूर्वभाद्रपद नक्षत्रका अन्तिम पद और उत्तर भाद्रपद तथा रेवती नक्षत्र हैं। इस राशिकी अधिष्ठात्री देवियां दो मछलियां हैं। इसका पर्याय और संज्ञा है अन्त्यभ, क्षीट, जलज, सौम्य, अङ्गन, युग्म, सम, द्व्यात्मक, भक्ष्य, उत्तर दिङ्नाथ, गुरुक्षेत्र, दिनात्मक। (ज्योतिस्तत्त्व) यह राशि चरण रहित, कफ-प्रकृति, जल-चारी, निःशब्द, पिङ्गल वर्ण, स्निग्ध, बहुत संन्तानवाली और ब्राह्मणवर्णकी मानी गई है। इस राशिमें जो जन्म लेता है वह क्रोधी, तेज चलनेवाला, अपवित्र और अनेक विवाह करनेवाला होता है।

कोष्ठीप्रदीपके मतसे यह जलराशि है। इसमें जो जन्म लेता वह सलिलोत्पन्न, मौक्तिकादि सुखभोक्ता, मैथुनप्रसक्त, समान रुचिविशिष्ट, स्वल्पकाय, शत्रुका दमनकारी, स्त्रीजित लावण्ययुक्त, अतिशय धनलोभी और पण्डित होता है। (कोष्ठीप्र०)

३ लग्नभेद, मेष आदि बारह लग्नोंमेंसे अन्तिम लग्न। अयानांशशोभित कलकत्ते आदि स्थानोंका लग्नमान ३।४७।४६।८ है। इस लग्नमें जिसका जन्म होता है, वह कार्यदक्ष, अल्पभोजी, अल्पस्त्रीसंग, सुवर्णादि रत्न-युक्त, चञ्चल, नाना वाग्विन्यासमें अति धूर्त्त, प्रियजन-हितकारी, तेजस्वी, बलवान्, विद्वान्, धनवान्, छेदन, कर्मविरत, चर्मरोगी, विकृतमुख, कीर्त्तिशाली, विश्वासी, असहनीय, विनाशशाली, बहुकुटुम्बयुक्त, सौभाग्यशाली, धीर, भ्रातृयुक्त, सर्पदंशन, अग्निदाह, रक्त पतन और विषप्रवेश इत्यादि द्वारा पीड़िताङ्ग, स्थूल ओष्ठ, क्षुद्र चक्षु, उच्च नासिक, कफवातप्रकृति, महात्मा, बहुचेष्टायुक्त, काव्यज्ञानसम्पन्न, स्वजन और स्त्रीपूजित, धार्मिक, पित्त-रोगी, नीचाचार और शोभनीभार्यायुक्त, क्रूर और दारुण शत्रुयुक्त होता है। इस लग्नजात व्यक्तिकी मूत्रकृच्छ्रादि रोग, गुह्यरोग, मारणादि विद्यौषध प्रयोग, उपवास और मार्गदोष आदिसे मृत्यु होती है।

मीनलग्नका साधारणतः ऐसा ही फल जानना चाहिये। यदि इस लग्नमें रवि आदि कोई ग्रह रहे, तो उनके स्थितिजनित विभिन्नरूप फल हुआ करते हैं।

इस मीन राशिमें रवि आदि ग्रहोंकी स्थितिके लिये नीचे लिखे फल होते हैं।

मीनमें रविके रहनेसे अनेक मित्रवाला, शोक और सन्तापको सह्य करनेवाला, प्राज्ञ, अनेक शत्रुवाला, यशस्वी, मुक्तादि द्वारा धनवान्, सुन्दर, मिथ्यावादी, तेजस्वी, गुह्यरोगार्त्त और अनेक भाईवाला होता है।

यदि चन्द्रादि ग्रह इस राशिको देखते हों, तो विभिन्न फल हुआ करता है। जैसे—मीनराशिस्थित रवि यदि चन्द्रमासे देखे जाते हों, तो वाक्पटु, धनवान्, बुद्धिवान् और पुत्रयुक्त, राजाके सदृश, शोकहीन और सुन्दर शरीर वाला होता है। मीनस्थ रवि यदि मङ्गलसे दिखाई देता जाता हो, तो जातबालक संग्राममें विजयी, स्पष्टभाषी, धैर्यशील, सुखी और तीक्ष्ण होता है। मीनस्थ रवि बुधसे दिखाई देने पर मधुरभाषी, लिपिवेत्ता, काव्यकलावित्, गोष्ठीपाल और धनाढ्य होता है। वृहस्पतिसे दिखाई देने पर राजभवन-विचरणकारी वा राजा, हाथी घोड़े और धन युक्त तथा बुद्धिमान् होता है। शुक्रसे देखे जाने पर सुगन्धि माल्यादिके साथ सर्वदा दिव्य स्त्रीभोगरत और शान्त तथा शनिसे देखे जाने पर अशुचि, परान्नाकाङ्क्षी, नीचानुरत, चतुष्पद क्रीडनशील और अतिशय चपल होता है।

मीन राशिमें चन्द्रमाके रहनेसे शिल्पकुशल, अभि-चारवेत्ता, शास्त्रवेत्ता, विवेचक, कमनीय देह, गीतज्ञ, धार्मिक, अनेक स्त्रीवाला, मधुरभाषी, भूपसेवी, कुछ क्रोधी, महात्मा, सुखी, धनवान्, स्त्रीजित, स्त्रीभावापन्न, पानारक्त और दानशील होता है।

मीन राशिस्थित चन्द्रमा यदि रविसे देखे जाते हों, तो अतिशय कामुक, सुखी, दीप्तिशील, सेनापति, धनी और सुन्दर स्त्रीवाला होता है। मङ्गलसे दिखाई देने पर पराभूत, असुखी, पापी और शूर होता है। बुधसे दिखाई देने पर पुरुषश्रेष्ठ, राजा, अतीव सुखी और अनेक स्त्रीवाला, बृहस्पतिसे दिखाई देने पर कोमल, कान्ति-विशिष्ट, गुणग्रामविभूषित, मण्डलाध्यक्ष, अमात्ययुक्त और

स्त्रीजित, शुक्रसे देखे जाने पर सुशील, नृत्यगीतादि कुशल और स्त्रियोंका अति प्रियपात्र तथा शनिसे देखे जाने पर जातबालक अहितकर, विकलदेह, कामातुर, नीच और कुरूप स्त्रीवाला होता है।

यदि राशि और राशिपति तथा चन्द्र बलवान् रहे, तो उक्त राशिफल होते हैं, अन्यथा फलमें तारतम्य देखा जाता है।

मीन राशिमें मङ्गल रहनेसे जातबालक रोगी, कुत्सित संतानवाला, प्रवासशील, आत्मबन्धुसे तिरस्कृत, मायावी, ठग, विवादी, कुटिल, बार बार शोकातुर गुरु और विप्रका अवज्ञाकारी, सर्वदा असाधु वृत्तिसम्पन्न, इङ्गितवेत्ता, ज्ञानवान् और श्रुतिप्रिय होता है। मीनस्थ मङ्गल रविसे दि ाई देने पर पूजनीय, सुन्दर और दुर्गम स्थानमें भी गृहवासीकी तरह रहनेवाला तथा क्रूर स्वभाववाला, चन्द्रमासे दिखाई देने पर विकल देह, कलहकारी, बुद्धिमान्, पण्डित और राजाके विरुद्ध काम करनेवाला, बुधसे दिखाई देने पर मेधावी, शिल्पज्ञ और पण्डित, वृहस्पतिसे दिखाई देने पर सुन्दर स्त्रीवाला, सुखी, विजयी, धनी और व्यायामशील, शुक्रसे दिखाई देने पर स्त्रियोंका प्रिय, उदारप्रकृतिका, विषयी और सौभाग्य संपन्न; शनिसे दिखाई देने पर कुत्सितदेह, उदार, युद्धप्रिय, मूर्ख, असुखी, धनहीन और परोपकारी होता है।

मीन राशिमें बुधके रहनेसे आचार और शौच-निरत देवतारत, सन्तति-विहीन, दरिद्र, परिहासरत, दूसरेके धनसे धनी और विख्यात हुआ करता है।

मीनमें बुध रह कर यदि रविसे दिखाई देता हो, तो शूर, प्रमेह रोगी, अग्नि पीडित और शान्तस्वभाववाला, चन्द्रमासे दिखाई देने पर लेखक, सुकुमार शरीरवाला, विश्वासी, माननीय और सुखी, मङ्गलसे देखे जाने पर लिपिकर्मकारी, धनहीन, राजभृत्य और वनवासियोंका नेता, वृहस्पतिसे दिखाई देने पर मेधावी, शास्त्रज्ञ, राजमन्त्री, धनरक्षक और लिपिकर्मकर, शुक्रसे दिखाई देने पर कन्या और कुमारवर्गका लेखकाचार्य, धनी, रूपवान् और शौर्य-युक्त, शनिसे दिखाई देने पर दुर्ग वा अरण्यवासी, बहुभोजी, दुष्टस्वभावका, अतिशय मैला कुचेला रहनेवाला और सर्वकार्यहीन होता है।

मीन राशिमें वृहस्पतिके रहनेसे बालक वेद और अर्थशास्त्रवेत्ता, साधु और सुहृदोंका पूज्य, राजाका नेता, धनी, सर्वदा सन्तुष्टचित्त, दर्पित, स्थिर, उद्यमवाला और विख्यात होता है। मीन राशिस्थित गुरु यदि रविसे दिखाई देता हो, तो राजविरोधी, सर्वदा परितृप्त तथा धन और आप्तबन्धुविहीन, चन्द्रमासे दिखाई देने पर स्त्रियोंका प्रिय, मानी, धनी और ऐश्वर्यवाला, मङ्गलसे देखने पर संग्राममें जखमी, क्रूर, परपीडक और स्त्री पुत्रादिविहीन, बुधके देखने पर राजमन्त्री वा राजा, सुत, धन और सौभाग्ययुक्त, सभी मनुष्योंका आनन्दकर तथा अतिशय रूपवान्, शुक्रके देखने पर सुखी, धनवान्, पण्डित, दोषशून्य, उत्तम भाग्यवान् और स्त्रीयुक्त तथा शनिसे देखने पर अतिशय मलिनदेह, भीरु, दीन, सुखभोगरहित और इष्टविहीन हुआ करता है।

मीनराशि शुक्रका तुङ्गस्थान है। इस स्थानमें शुक्र सबसे बलवान् माना गया है। इस राशिमें शुक्रके रहनेसे जातबालक अत्यन्त गुणवान्, बहुत धनी, शत्रुकुलविजयी, लोकविख्यात, श्रेष्ठ, राजप्रिय, दाता, सज्जनप्रतिपालनकारी, चतुर्वेदवेत्ता, वंशधर, और ज्ञानवान्, मीनस्थ शुक्र रविसे देखे जाने पर अतिशय क्रूर, अत्यन्त शूर, पण्डित, धन और सत्त्वविशिष्ट, अतिप्रिय और विदेश गमनरत, चन्द्रके देखने पर विख्यात, राजपुरुष, अतिशय भोगी, लुब्ध और बलहीन, मङ्गलके देखने पर स्त्रीद्रोही, सुखी, श्रेष्ठ और गोधनयुक्त, बुधके देखने पर आभरण, भूषण, अन्न, पान और विचित्र-वसनादियुक्त तथा अर्थशाली, वृहस्पतिके देखने पर हस्ती, घोड़े और गोधनादियुक्त, अनेक सन्तानवाला और सुखी, शनिके देखने पर बहुत धनी, रोगी और शूर तथा मीनमें शनिके रहनेसे यज्ञप्रिय, शिल्पविद्याविशारद, शान्तस्वभाव, धनवान्, विनयी, रत्नपरीक्षक और धर्म-व्यवहाररत होता है।

मीन-राशिस्थित शनिके रविसे दिखाई देने पर परदारानिरत, धनी और विख्यात होता है। चन्द्रसे दिखाई देने पर मातृहीन, सच्चरित्र और धनी; मङ्गलके देखने पर वातव्याधि रोगयुक्त, लोकद्रोही, प्रवासशील और निन्दित स्वभाववाला, बुधके देखने पर राजाके जैसा

सुखी, अध्यापक, माननीय, धनी और उत्तम भाग्ययुक्त, बृहस्पतिके देखने पर राजा वा राजसदृश, मन्त्री अथवा सेनानायक और सर्वापद विहीन; शनिके देखने पर वनप्रिय, सुशील और सर्व सम्पद्युक्त होता है। राहु-ग्रह जिस ग्रहके साथ रहते हैं, फल उसी ग्रहके अनुसार होता है। विशेषतः राहु मीनमें शुभ फलप्रद नहीं होते। इसमें प्राय अशुभ फल ही हुआ करता है।

(बृहज्जातक और कोष्ठीप्र०)

४ दशावतारके मध्य प्रथमावतार, मत्स्यावतार।

"शेते स चित्तशयने मम मीन कूर्म्म-
कोलोऽभवत् नृहरिवामनजामदग्न्य।
योऽभूद्भव भरताग्रजकृष्णबुद्धः
कल्की सताञ्च भविता प्रहारिष्यतऽरीन्॥"

(मुग्धबोधव्या०)

तन्त्रके मतसे मीन ही धूमावती है।

"कृष्णारूपा कालिका स्याद्रामरूपा च तारिणी।
बगला कूर्म्ममूर्त्तिः स्यान्मीनो धूमावती भवेत्॥"

(मुण्डमालातन्त्र)

मीनक (सं० क्ली०) नयनाञ्जनविशेष, एक तरहका सुरमा।

मीनकाक्ष (सं० पु०) शुक्ल करवीर, सफेद कनेर।

मीनकेतन (सं० पु० मीनः केतनमस्य। १ कन्दर्प, कामदेव। २ सह्याद्रिवर्णित एक राजा। ३ एक पाण्ड्य-राज। पाण्ड्यराजवंश देखो।

मीनगन्धा (सं० स्त्री०) मत्स्यगन्धा, सत्यवती।

मीनगोधिका (सं० स्त्री०) मीनगोधिकानामावासोऽत्र। जलाशय, तलाव या झील आदि।

मीनघाती (सं० पु०) मीनं हन्तीति हन-णिनि। १ बक, बगला। (त्रि०) २ मत्स्यघातक, मछली मारनेवाला।

मीननगर—पञ्जावप्रदेशका एक प्राचीन जनपद और उसकी राजधानी। यह सिंधुनदके किनारे वा गौरशाखाके किनारे बसा हुआ था। पार्थिय-राजगण यहांका शासन करते थे। यद्यपि इस नगरका कोई वर्त्तमान निदर्शन नहीं मिलता तो भी विभिन्न देशीय सुप्राचीन इतिहासोंमें इसकी समृद्धिका विशेष उल्लेख देखनेमें आता है।

खलीफा अलमनसुरके सेनापति ओमरने सिन्धुको जीत कर इस नगरका मनसुरा नाम रखा था। प्रत्नतत्त्व-विद् कनिंहम उलुघ और आबुरिहन (अलबेरुणी) आदिका मतानुसरण कर २६° ४०' उ० अक्षा०में इसका स्थान निर्णय कर गये हैं। उनके मतसे पेरिप्लस-वर्णित यदु भारेजाकी राजधानी समी नगर (सेहस्तान) तथा अलेकजान्दरके शत्रु साम्बुसकी राजधानी शाम्बनगर मीन-नगरका अस्तित्वसूचक है। पेरिप्लस अलबेरुणी, आरियन टलेमी, एद्रिसो, डिवनभोले, दि ला रोकेट आदिने इस स्थानकी प्राचीनताका प्रमाण दिया है।

मीननाथ (सं० पु०) १ गोरखनाथके गुरु मत्स्येन्द्रनाथका एक नाम। मत्स्येन्द्रनाथ देखो। २ स्मरदीपिकाके प्रणेता।

मीननेत्रा (सं० स्त्री०) मीनस्य नेत्राकारा ग्रन्थिरस्याः। गण्डदूर्वा, गाडर दूब।

मीनपित्त (सं० क्ली०) कुटकी नामक ओषधि।

मीनर (सं० पु०) मीना भक्ष्यत्वेन सन्त्यस्य, मीन अश्वादित्वात र, (बुञ् छण्कठजिलेति। पा ४।२।८०) शाखोट वृक्ष, सिहोरा।

मीनरङ्क (सं० पु०) मीनरङ्ग-पृषोदरादित्वात् साधुः। मत्स्याशन पक्षी, मछरंग नामक पक्षी जो मछली खाता है। २ जलकाक, जलकौवा, मुरगाबी।

मीनरङ्ग (सं० पु०) मीनरङ्क देखो।

मीनरथ (सं० पु०) जनकवंशीय राजा अनेनाके एक पुत्र-का नाम।

मीनराज (सं० पु०) १ मत्स्यराज। २ जातकप्रणेता एक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्। ये यवनेश्वर नामसे प्रसिद्ध थे।

मीनवत् (सं० त्रि०) मत्स्यमय, जिसमें बहुत मछली हो।

मीना (सं० स्त्री०) ऊषाकी कन्याका नाम जिसका विवाह कश्यपसे हुआ था।

"ऊषायास्तु प्रवक्ष्यामि सर्गं पञ्च सुतास्ततः।
मीना मेनो तथा वृत्ता अनुवृत्ता तथैव च।
परिवृत्ता च विज्ञेया तासाञ्च शृणुत प्रजाः॥"

(अग्निपु०)

मीना—राजपूतानेकी एक युद्धप्रिय जातिका नाम। इति-हासमें ये मेओ, मेवाती, मीन, मीना-मेओ आदि नामोंसे परिचित हैं। प्राचीन मेवात (मीनवती) में रहने के कारण इनको ऐसे नाम पड़े हैं। आज कल जयपुर

राज्यके अजमेरसे दिल्ली तक समूचे राजपूतानेमें इनका वास पाया जाता है। शेखावतीके पूरब पहाड़ी जमीन ही इन लोगोंका प्रधान अड्डा है। यहां ये लुक छिप कर चोरी और डकैती करते हैं। यहां ये २५ मीलके घेरेमें जहां ये रहते हैं वह स्थान ६ राजाओंके राज्यमें है। जयपुरराजके अधिकारमें शेखावती राज्य और झालरापाटनके कुछ अंश हैं। क्षत्रि जिसका अधिकृत कुलपुन्नी नामक स्थान आज कल अंग्रेज-सरकारके अधीन है। इनके अलावा दक्षिसे फिदु, नूरनौलसे पतियाला, कान्तिसे नाभाके बीच तथा अलवर, लोहरू, बीकानेर और गुरगांव जिलेके शाहजहानपुरमें मीना-जातिके लोग बसे हुए हैं। मिरासि नामक भाट लोग इनकी विवाह-सभाओंमें जो वंशमहिमा गाते हैं उससे मालूम होता है, कि सम्राट् अकबरके प्रसिद्ध राजनैतिक टोडरमलके साथ मीना-सरदार बादरावकी दोस्ती थी। इस दोस्तीकी बदौलत टोडरमलके लड़के दरिया खा मेओके साथ बादरावकी लड़की शशिवदनीका विवाह हुआ। बारातके लोग बादरावके घर मीना लोगोंके साथ मांस मछली खानेको राजी न हुए। अतएव दोनों पक्षोंमें विवाद चला। इस कारण विवाहके बाद मेओ लोग राजधानी अजानगढ (अञ्जनगढ) लौट आये। रानी शशिवदनी अपने मैकेहीमें रही।

शशिवदनीने युवावस्था प्राप्त होने पर अपने पतिको पत्र लिखा। अतएव वे अपनी स्त्रीको लिवाने ससुराल आये। बादरावने जमाईका खूब खातिरदारी की। इस बार भी ससुर जमाईमें मदिरा पीते पीते नशेके कारण विवाद चला। दरिया खाने क्रोधसे पागल हो अपने ससुरका एक दांत तोड डाला। सरदारके इस अपमान पर मीना लोग दरिया खाके प्राण लेनेको उतारू हुए। यह देख शशिवदनीके भाईने दरिया खांको आगन में छिपा रखा। रातमें दरिया खा अपनी स्त्रीके साथ अपने देशको चल पडे। मीना लोगोंने उनका पीछा किया, लेकिन उन्हें पकड न सके।

अञ्जानगढमें आज तक भी इस वंशावलीको मिरासि लोग प्रत्येक विवाहके अवसर पर गाते हैं। अगर इस किस्सेके अन्दर कोई सत्य न हो, तो भी इससे मालूम होता है, कि मेओ और मीना जातियोंमें प्रचलित विवाहसम्बन्ध इस विवाहके बादसे ही बंद हो गया तथा पहलेके विवाहकी आलोचनासे अनुमान होता है, कि मीना और मेओ पहले एक ही शाखाके अन्तर्गत थे पीछे सामाजिक उन्नति और अवनतिके कारण ये अलग अलग हो गए हैं। जाति-विद्याविशारद इन लोगोंको प्लिनि वर्णित सिन्धु नदीसे यमुना तीर तक बसनेवाली Megallae (मीगाली) जाति बतलाते हैं।

मीना और मेओ लोगोंमें आज कल कोई सम्पर्क है, वा नहीं, इस विषयका विचार न कर वर्त्तमान समयमें दोनों जातियोंमें किस तरहकी सामाजिक रीति नीति प्रचलित है, नीचे उसीका विवरण दिया जाता है—

मेओ लोग अपनेको राजपूत कहते हैं। इन लोगोंमें १३ पाल या दल तथा ५२ गोत्र पाये जाते हैं। डाक्टर कनिंगहमके मतसे ये दल इस प्रकार हैं:—

४ यादोन—छिर्किलाट, दलात, दमरोत, नाई और पडलोत। ५ तोमर—बलोत, धारवाड, कलेसा, लुन्दावत और रकावत। १ कछवाहा—दिंगल, १ वडगूजर—सिंगल, अर्द्ध मिश्र—पलाकडा।

मर्दुमशुमारीसे मालूम होता है, कि वर्त्तमान हिन्दू मेओ लोगोंकी ६७ तथा मुसलमान मेओ लोगोंकी ४७ भिन्न भिन्न शाखायें हैं। हिन्दू मेओ लोगोंमें वड़गूजर, हर, जनवार, बानपुरिया, रघुवंशी, चन्देला, चाहमान, गहलोत, यादव, कछवाहा, रावत, तोमर और रठोरिया आदि राजपूत जातियोंका सम्मिश्रण पाया जाता है। साथ साथ भाट, दकौत, गदारिया, घोसी, गूजर, गुआल, गुलाहा, कवरिया, कोरि, नाई और रंगरेज आदि जातियां भी आ कर इनमें मिल गई हैं।

परिहार शाखाके मीना लोग हरवतीके अन्तर्गत खेवार नामक स्थानमें रहते हैं। ये लोग अपनेको परिहारराज नाहरसिंहके पुत्र सोमके वंशधर बतलाते हैं। किंवदन्ती है, कि राजकुमार सोमने मीनाकी कन्याको ब्याहा था। उन्हींके वंशमें परिहार मीना जातिकी उत्पत्ति हुई।

मीना लोग ही मेवाड और मारवाडके आदिम निवासी हैं। राजपूत लोगोंने वहां आ कर इन्हें मार

भगाया और देश पर अधिकार कर लिया। मारवाड़के जबरदस्त और बहादुर मीना लोग बूंदी, मेवाड़ और अजमेरके सरहदमें तथा जयपुरी मीना लोग अलवर, जयपुर और सरहदी अंगरेजी जिलाओंमें बसे हुए हैं। शिरोहीके रहनेवाले मीना लोगोंकी अवस्था अच्छी नहीं है।

चितामीना मैरवाड़ाके पहाड़ी जंगलोंमें रहते हैं। इस श्रेणीसे मेर या मैर नामकी शाखा निकली है। यह मैर शाखा मेरवाड, मैरात या मैरोत नामसे प्रसिद्ध है। संस्कृत मेरु पर्वतके नाम पर इन लोगोंका नाम पड़ा है। कमलमेरुसे अजमेर तक अरवली श्रेणीकी फैली हुई पहाड़ी भूमिमें मैर जातिके रहनेके कारण इस स्थानका नाम मैरवाड़ हुआ है।

चितामीना लोग दिल्लीके अन्तिम चौहान राजाके किसी पौत्रसे अपनी उत्पत्ति बताते हैं। प्रवाद है, कि उक्त चौहान राजाके भतीजे लाक्षाके अनिल और अनूप नामक दो लड़के थे। बात चली कि ये दोनों लड़के लाक्षाको मीना जातिकी किसी रखेलीसे उत्पन्न हुए हैं इससे वे दोनों लड़के लज्जित हो राज्यलोभ छोड़ अजमेर आ अपने ननिहालके लोगोंमें मिल गये।

अनिलने किसी मीना सरदारकी लड़कीसे विवाह किया। इनके चिता (चित्र) नामक एक लड़का हुआ। उस लड़केने मैरवाड़ाकी सारी मीना-शक्तिको हस्तगत किया और वह एक प्रधान सरदार समझा जाने लगा। अजमेरको उत्तरी-सीमाके चितावंशीय लोगोंने इस्लाम-धर्म कबूल किया था। इस वंशकी १६ पीढ़ी नीचेमें दुधा हुए। ये दाउद खांके द्वारा अजमेरके हाकिम बनाये गये। अथून नगरमें इनका महल था। इसलिये इनके वंशके मैरात सरदार लोग 'अथूनकी खान्' नामसे प्रसिद्ध थे। अथून, चंग, झक और राजोसि नामके नगर मैर लोगोंके अधिकारमें थे।

अनूपने भी अपने भाईकी तरह एक मीना स्त्रीसे विवाह किया। इनके बुराड नामका एक लड़का हुआ। बुराड़, भैरवाड़ा और मन्दिल नामक स्थानोंमें बुराड़के वंशधर रहते हैं।

अलवर-राज्यके मेवाति या मेओ लोग अधिकांश खेती करते हैं। लेकिन डाका मारनेमें भी ये लोग पहले हीसे प्रसिद्ध हैं। मुसलमानोंके राजत्वकालमें लूट, अत्याचार और उपद्रवके कारण आम लोगोंके लिये ये भयावह हो गये थे। पीछे भक्तावर और वन्नि (वह्नि) सिंहने अपने राज्यकालमें इन लोगों पर अच्छा शासन किया। उन्होंने इनके गाँवोंको छोटे छोटे टुकड़ोंमें बांट कर शासनकी सुव्यवस्था की। १८५७ ई०में इन्होंने अलवर राज्यके अनेक स्थानोंको लूटा और जला दिया। सरकारी फिरोजपुर और उसके आस पासके स्थानोंमें भी ये लोग अत्याचार और उपद्रव करनेसे बाज नहीं आये। अंगरेजी सेनाने जा कर इन लोगोंको पकड़ा और बहुतोंको फांसी दे दी।

वर्त्तमान समयमें मुसलमानोंकी संगतमें आ इनमेंसे बहुतेरे मुसलमानी नामोंका अनुकरण करने लगे हैं। होली जन्माष्टमी, दशहरा और दीवाली आदि हिन्दू त्योहारोंके साथ साथ मुहर्रम, ईद, सूबेबरात आदि मुसलमानी त्योहार भी मनाते हैं। अमावसके दिन ये कोई काम नहीं करते। उस दिन ये केवल भैरव या हनुमानजीकी पूजा करते हैं। मुसलमान मेओमें अधिकांश कलमा पढ़ना नहीं जानते।

हिन्दू मेओ लोग विवाहके समय ब्राह्मण बुलाते हैं। ब्राह्मण ही लग्नपत्र लिख देते हैं। विवाहका दहेज दो सौ रुपये होता है। नियम है, कि मुसलमान लोगोंमें भी ब्राह्मण लग्नपत्र लिख देते हैं, लेकिन विवाह सप्तमें काजी आता है और मन्त्रपाठके साथ कार्य समाप्त करता है। खतनेके समय नाई और फकीर मौजूद रहते हैं। ये लोग अपने वंशके लोगोंमें शादी नहीं करते। माताके गोत्रमें विवाह मना है, लेकिन चार पीढ़ी छोड़ विवाह करनेकी रीति है।

जयपुरके महाराजके अभिषेक-कालमें इन लोगोंके हाथसे टीका लेने पर अभिषेक पूरा समझा जाता है। ये लोग जयपुर राजभवनमें पहरा देनेका काम करते हैं। मैरवाड़के परिहार-मीना लोगोंके साथ जयपुरी मीना-जातिका कोई लगाव नहीं है।

वर्त्तमान समयमें हिन्दू मीना लोग मेओ और मीना के नामसे और मुसलमान मीना मेवाति नामसे

परिचित हैं। युक्तप्रदेशके मीना लोगोंमें एक कहावत है, कि राजा यशवन्तके दो लड़के शिकार करने जङ्गल गये और वहांसे दो गाय साथ ले आये लेकिन उनके बछड़ोंको उन्होंने जङ्गल हीमें छोड़ दिया। उनके पिता बछड़े के बिना दोनों गौओंके दुःखसे बड़े दुःखित हुए। अतएव उन्होंने अपने दोनों लड़कोंको घरसे निकाल दिया। उनमें एकने यामुन देशमें (गंगा यमुनाके बीचका स्थान) जा डकैतीसे बहुत धन जमा किया। वे धनके साथ अपना घर लौट आये और अन्तमें पिताकी गद्दी पर बैठे। जहा तहा डकैती करते करते हिन्दूधर्ममें इनकी श्रद्धा बहुत घट गई। इनकी जातिके लोगोंको अपनी श्रद्धा खोनी पड़ी। कोई कोई कहते हैं, कि ये मैदानमें गौ चराते थे, इसीलिये ये मेओ कहलाये। फिर एक दूसरी कहानीसे मालूम होता है, कि मुसलमान होने पर विशुद्ध हिन्दू लोग 'आमीना मेओ' कहलाने लगे, पीछे उसीसे 'मीना' नामकी उत्पत्ति हुई।

मुसलमान मेवाति लोग कहते हैं, कि वे यादव और मेवातवासी दूसरी दूसरी राजपूत शाखाओंसे उत्पन्न हुए हैं। अलाउद्दीन गोरीने इन्हें मुसलमान बनाया। इन लोगोंमें 'धरीला' प्रथाके अनुसार विधवा विवाह प्रचलित है। जन्म और मरणके सभी क्रिया कर्म इनके मुसलमानोंके जैसे होते हैं।

हिन्दू मीना लोग मुर्देको जलाते है। अन्त्येष्टि क्रियाके बाद ये लोग एक भोज देते हैं। इस भोजमें चीनीका खर्च खूब होता है। अतः इन्हें 'शक्कराना' कहते हैं।

इस मीना जातिकी वीरता-कहानी राजपूत इतिहासके साथ मिली हुई है। चाँद कविकी कवितासे पता चलता है, कि अजमेरके प्रसिद्ध राजा विशालदेव इन लोगोंको हरा कर अपने वशमें लाये थे। हजारसे ऊपर वर्ष पहले मीना-सरदार जयपुर महाराजके अधिकृत अधिकाश प्रदेशों पर शासन करते थे। अभी भी नगरके फाटक, गढ़ और खजाने घरके रक्षकके रूपमें ये राजकाज करते हैं।

रोहिला अफगानोंकी जैसी इन लोगोंकी शूरता और धीरता भारतके इतिहासमें अमर हो गई है। इन लोगोंके समान साहसी जाति भारतमें कहीं नहीं देखी जाती। राजपूतानेके कोलि लोगोंके साथ इन लोगों का विवाह सम्बन्ध पाया जाता है। क्रमशः अनेक जातिच्युत लोगोंके इनमें आ मिलनेसे ये लोग एक वर्णसंकर जातिके हो गये हैं।

इतिहाससे पता चलता है, कि दिल्लीके राजा पृथ्वीराजके समयमें राजपूतोंने इन्हें उत्तर-दोआबसे मार भगाया। मुसलमान-राज्यके शुरूमें इन लोगोंका उपद्रव बहुत बढ गया। गियासुद्दीनने दिल्लीके आस पासमें इनके उपद्रवके बारेमें लिखा है। गियासुद्दीन बलबन इन्हें अपने शासनमें लाये। मुबारकशाहने १४२५ ई०में घोर युद्धके बाद इन्हें हराया था। इसके तीन वर्ष बाद ये फिर बागी हुए। १३३५ ई०की लड़ाईमें परास्त हो कर इन्होंने शान्तभाव धारण किया। बाबरके आक्रमणकालमें मेवाति-सरदार हसन खां बागियोंका नेता था। फिरिस्तामें लिखा है, कि नासिरुद्दीन मुहम्मदके मन्त्री इमानुद्दीनने १२५६ और १२६५ ई०में मेवाति डकैतोंको जड़से उखाड़ दिया था। गदरके समय इन्होंने गुर्जर जातिके साथ मिल विद्रोहाग्नि प्रज्वलित करनेकी विशेष चेष्टा की थी।

अंग्रेजी शासनके आरम्भमें भी इनकी डकैती पूर्ववत् जारी थी। असीम साहससे और निर्भय हो ये अंग्रेज-सरकारके डाक लूटने, गांव जलाने तथा तहसील हड़पनेमें लगे रहते थे। सामन्त राजे तथा सरकारकी ठगी और डकैती विभागके कर्मचारी लाख चेष्टा करके भी इन लोगोंका दमन न कर सके। अन्तमें कर्नल यंग हलवैंडने खेएड पुलिसकी सहायतासे इन लोगोंको दबाया। कहीं पीछे ये गांवसे बाहर हो डकैती न करें इसके लिये घरसे बाहर होनेके रास्ते पर पहरा बैठा दिया गया था। उनके बताये ढंग पर चल कर अन्तमें कर्नल हाचिने इस काममें सफलता प्राप्त की थी।

मीना (फा० पु०) १ रंग बिरंगा शीशा। २ एक प्रकारका नीले रंगका कीमती पत्थर। ३ कीमिया। ४ सोने, चादी आदि पर किया जानेवाला रंग बिरंगका काम। ५ शराब रखनेका कंटर या सुराही।

मीना—कांचके जैसा थोड़ा सफेद और चिकना पदार्थविशेष। धातुद्रव्यके अलङ्कार और वरतन आदि पर तरह तरह मीना बैठाया जाता है। बहुत प्राचीन समयसे भारत वर्षमें इसका प्रचार है। जड़ाऊ गहनोंके इस तरहके चित्रनैपुण्यको मीनाकारी (Art of enamelling) या मीना-शिल्प कहते हैं। उक्त शिल्प इस समय प्रायः विलुप्त होता दिखाई देता है। केवल जयपुर-राज्यमें आज भी इस शिल्पकी सजीव अवस्था दिखाई देती है। इसके कारु नैपुण्यको देख कर सुसभ्य पाश्चात्य जातियां भी विमुग्ध हुई है।

जयपुर, अलवर, दिल्ली और काशीका स्वर्णमीना; मुलतान, वहवलपुर, काश्मीर, कांगड़ा, कुल्लू, लाहौर, हैदरावाद, करांची अब्बटावाद, नूरपुर, लखनऊ, कच्छ और जयपुरका रौप्य-मीना तथा काश्मीर और जयपुर आदि स्थानोंका ताम्रमीना आज भी पृथ्वीमें मीनाशिल्पकी प्रसिद्धि लाभ कर रहा है।

डाक्टर हेण्डली साहवने भारतीय शिल्प पत्रिकामें लिखा है, कि जयपुरके शिल्पी इस तरह अपने शिल्प नैपुण्यकी सहायतासे सोनेका मीना तय्यार करते हैं, ऐसा तैयार करते हैं, कि सात रंगका इन्द्रधनुष भी उसके सामने मात हो जाता है। यानी उसकी उज्ज्वलता तथा निर्मलतामें इन्द्रधनुष भी वरावरी नहीं कर सकता। मीनाके ऊपर मणिखचित करने पर भी मीना की चमकमें कमी नहीं होती।

जो सोनार पहले सोनेके पत्तर पर पुरानी पुस्तकका नमूना देख चित्र अङ्कित किया करते हैं, उनको चितेरा या चित्रकार कहते हैं। ये वङ्गालके नक्काशी करने वालोंकी तरह हैं। पहले गहनों पर घर वनाते हैं पीछे इन्हीं घरोंमें मीना बैठा देते हैं। घरोंमें मीना बैठाने पर गहनोंका अपूर्व सौन्दर्य हो जाता है।

पहलेके घर वनानेवाले दूसरे दूसरे कारीगर हैं। किन्तु मीना बैठानेवाले दूसरे हैं। इनको मीनाकार कहते है। मीना बैठानेके पहले सोनेके गहनोंके वने घर को चिकना कर लिया जाता है। इसका रंग नाना तरहकी मिलावटसे तय्यार किया जाता है। जयपुरके शिल्पी रंग वनाना नहीं जानते।

रंग तय्यार रहनेसे पहले तूतियका मिलाना अत्यन्त आवश्यक होता है। विना इसके पक्का या टिकाऊ रंग नहीं होता। पीछे लोह और कोवाल्ट धातुकी अवसाद (Oxide)-से रंग तय्यार होता है। जयपुरके भगोड़ सामन्त-राज्यमें कोवाल्ट धातु वहुतायतसे मिलती है। इसी धातुसे नीले रंगका उत्तम मीना तय्यार होता है। स्वर्णके ऊपर सब रंगके मीनेकी जड़ाई हो सकती है। रौप्य पर हरा, काला, गाढ़ा, पीला और लोहित रंगके मीनेकी जड़ाई होती है। तांवे पर सादा और कालेके सिवा किसी दूसरे रंगके मीनेकी जड़ाई होना सम्भव नहीं। किसी भी देशके शिल्पी लोहित वर्णके मीनेको किसी धातु पर स्थायीरूपसे प्रयुक्त न कर सके हैं, किन्तु ग्लासगो नगरकी शिल्पप्रदर्शनीमें जयपुरके लोहित मीनेकी चमत्कारिता देख वहांके शिल्पी चकितस्तम्भित हुए थे।

जयपुरमें नाना प्रकारके गहनों पर मीनाकी जड़ाई होती है। कड़ा, वाला, वाजू और हार आदि गहने वड़े खूब सूरत मीनेसे जड़े जाते हैं। हीरा और मुक्ताखचित गहनोंकी वगलमें दूसरी ओर मीना लगाया जाता है। एक जोड़ा घड़ियाल-मुखी मीनासे जड़ी हुई चूड़ी (Bracelet) १००) रुपयेको मिलती है। मणिखचित होने पर इसका मूल्य २००) रुपये तक हो जाता है। एक जोड़ा कर्णफूल १८), मछलीके रूपके कर्णफूल ६) और शिरके कांटे १२ रुपयेको मिलते हैं। वहुत प्रकारके गहने तैयार होते हैं। आमकी शक्लकी 'धुकधुकी' अत्यन्त नैपुण्यके साथ वनाई जाती है। हिन्दू मुसलमान इसका वड़े आदरके साथ व्यवहार करते हैं। मोहनमाला आदि गहनोंको देख आंखें चकमका जाती हैं। प्रायः ७० वर्ष पहले मीनाकारीका काम दिल्लीसे वङ्गालमें आया था, किन्तु वह पटनेमें कुछ दिनों तक रह कर लुप्त हो गया।

मिष्टर वादेन पावल (Mr. Baden Powel)-ने मीना-शिल्पमें बनारसको जयपुरके नीचे ही स्थान दिया है। किन्तु इस समय वनारसमें इसकी अधिकता देखी नहीं जाती। लखनऊ और रामपुर अञ्चलमें आज भी वरतनोंमें मीना लगाया जाता है।

दिल्ली, काङ्गड़ा, मुलतान, झङ्ग आदि प्रदेशोंमें मीना

शिल्पका काम बडी निपुणताके साथ होता है। इनमें दिल्लीका शिल्प कुछ कुछ जयपुरकी बराबरी कर सकता है।

वहवलपुरमें बडी बड़ी वस्तुओं में मीनाका काम होता है। कहा गया है, कि ४०० वर्ष पहले खुलू नामके एक मनुष्यने इस मीना-शिल्पका आविष्कार किया था। उस समयसे इसकी बडी उन्नति हुई है।

वङ्गालमें किसी गहनेमें मीना लगानेमें एक रुपये भरीसे लगायत २ रुपये भरी तक खर्च पड जाता है। योधपुरमें 'हिमनिया' नामका एक सोनेका गहना तैयार होता है। यह कण्ठके रूपमें पहना जाता है। यह गहना भारतीय और औपनिवेशिक प्रदर्शिनियोंमें विशेष प्रशंसित हुआ था। इसका मूल्य २०) से २००) रुपया तक है। मारवाड़की हिन्दू स्त्रियां इसका आनन्दके साथ व्यवहार करती हैं। बांकानेरमें भी मीना शिल्पका प्रचलन है। मीना लगानेमें ३) रुपये भरी मज-दूरी पड जाती है। आसामके अन्तर्गत जोडहाट प्रान्तमें स्वर्ण मीनाका प्रचार है। किन्तु विक्री अधिक न रहनेके कारण क्रमशः इसका ह्रास हो रहा है। इन्दौरमें भी मीनाका काम होता है।

१६वीं शताब्दीमें जयपुरमें मीनाशिल्पकी अत्यन्त उन्नति हुई थी। मुगल सम्राट् अकवरके दरवारमें मान-सिंहके मीनाशिल्पकी एक छडी थी। यह अकवरके सिंहासनके समीप रखी रहती थी। मानसिंह यह छडी ले कर अकवरके दरवारमें जाया करते थे। ५४ इञ्च लम्बी इस छडीमें ३३ स्वर्ण-मण्डित तावेकी चुङ्गी लगाई गई थी। इसके बीच बीचमें रंग विरंगे स्वर्णके साथ हीरेकी जडाई हुई थी। इसमें मीनाके कामका शिल्प नैपुण्य देख कर अवाक् रह जाना पडता था। इसके किसी किसी स्थानमें मीनाके काममें हरी हरी घास चरती हुई गायें दिखाई देती थी, किसी किसी जगह खिले हुए हरे पीले पुष्प-वृक्ष अपूर्व सोभा धारण करते दिखाई देते थे। जिस शिल्पीने इसे तैयार किया था, इस सभ्य जगत्में उस तरहके शिल्पी अत्यन्त विरल हैं। इस समय भी जयपुरसे मीनाकामका जो पात्र प्रिन्स आफ वेल्सको उपहारमें दिया गया था, वह भी अत्यन्त उल्लेखनीय है। इसके बनानेमें चार वर्ष लगा था। इसको देख कर सर आर्ज वार्डउडने कहा था, कि यह भारतीय मीना शिल्पका अद्वितीय स्मृति-स्तम्भ है। कहा गया है, कि इस मीनाशिल्पको मानसिंह लाहोरसे जयपुरमें लाये थे। जयपुरमें जो सब भुवनविख्यात शिल्पी उत्पन्न हुए थे, उनमें कुछके नाम इस तरह हैं:— हरिसिंह, अमरसिंह, कृष्णसिंह आदि। इनमें हरिसिंह और कृष्णसिंह समधिक प्रसिद्ध हैं।

काश्मीरमें भी मीनाके कामकी वडी उन्नति हुई है। भारतवर्षके अनेक स्थलोंमें काश्मीरके मीनाशिल्पकी चीजें बिकती हैं। काश्मीरका मीना प्रायः नीले रंगका होता है। यहां तरह तरहके लोटे, गिलास, डमरू आदि बाजे और विविध अलंकारों पर मीनाका काम होता है। कश्मीरी शालकी वारीक दस्तकारीमें मीना शिल्पका नैपुण्य भी दिखाई देता है। मीनाके कामका वरतन वजन-के हिसावसे विकता है। चांदीका मीना सवा रुपये भरी और तांबेका मीना ढाई आनेसे चार आने तक विकता है।

दिल्लीके मीनाके शिल्पमें पानदान और हुक्के बहुत विख्यात हैं। झङ्ग, मुलतानका गिलास मशहूर है। जयपुर-की शिल्पप्रदर्शनीके समय वहवलपुरसे मीना शिल्पका एक वोतल गिलास और शिशिया भेजी गई थीं। इनका शिल्प वडा ही मनोहर था। इनमें प्रत्येक यथाक्रम ८५), ८७) और १७) को विका था।

कलकत्तेकी अन्तर्जातीय महाप्रदर्शनीमें लखनऊसे एक हुक्का मीनाका काम किया हुआ आया था। इस पर जैसा कारुकार्य खचित हुआ था, उसकी प्रशंसा किये विना नहीं रहा जाता। राजपूतानेके प्रतापगढ़में एक तरहके नकली नीले मीनाका काम होता है। यह इस तरह छिपा कर तैयार किया जाता है, कि शिल्पियोंके कुटुम्बके सिवा और दूसरा कोई नहीं जान सकता। ये सब शिल्पी हाथी घोडे आदि कई तरहके जीव जन्तुओं-की पौराणिक चित्रावली और नाना तरहके विचित्र वस्तुओं पर नकली मीनाका काम करते हैं। इनकी इस शिल्पनैपुण्यकी पराकाष्ठा देख कर चमत्कृत होना पड़ता है। आज भी इनकी शिल्पसम्बन्धी बातें कोई नहीं जानता।

ब्रह्मदेशमें भी मीनाशिल्पका थोड़ा बहुत प्रचार दिखाई देता है। प्रत्नतत्त्वविद् पण्डितोंका कहना है, कि मीना शिल्पका काम पहले तूरानदेशमें आरम्भ हुआ। इसके बाद भारतवर्षमें आया। फिर चीनदेशमें गया। बादमें चीनसे असिरिया और वहांसे मिस्रदेशमें इसका प्रचार हुआ। इसके बाद क्रमशः यूरोपमें भी फैल गया।

मीनाकार (फा० पु०) वह जो चांदी या सोने आदि पर रंगीन काम करता हो, मीना करनेवाला।

मीनाकारी (फा० स्त्री०) १ सोने या चांदी पर होनेवाला रंगीन काम। २ किसी काममें निकाली या की हुई बहुत बड़ी बारीकी।

मीनाक्ष (सं० पु०) १ एक राक्षसका नाम। (त्रि०) २ मछलीके समान सुन्दर आंखोंवाला।

मीनाक्षी (सं० स्त्री०) मीनस्याक्षिणीव, अक्षिणी अस्याः। १ मत्स्याक्षी, वह जिसकी आंखें मछलीके समान सुन्दर हों। २ गण्डदूर्वा, गाड़र दूब। ३ कुबेरकी एक कन्याका नाम। ४ ब्राह्मी बूटी। ५ शक्कर, चीनी।

मीनाक्षी—मदुराकी एक रानी, राजा विजयराज चोक्कनाथ नायककी महिषी। त्रिचीनपल्ली जिलेके समरपुर और श्रीरङ्ग नगरमें इनकी कीर्त्तिका निदर्शन देखनेमें आता है।

मीनाघातिन्—मीनाण्ड देखो।

मीनाण्ड (सं० क्ली०) मत्स्याण्ड, मछलीका अण्डा।

मीनाण्डी (सं० स्त्री०) शर्कराभेद, एक प्रकारकी शक्कर।

मीनाम्रीण (सं० पु०) १ मछलीका जूस। २ खञ्जरीट पक्षी, खंजन।

मीनार (अ० स्त्री०) १ स्तम्भ, ईंट पत्थर आदिकी वह चुनाई जो प्रायः गोलाकार चलती है और ऊपरकी ओर बहुत अधिक तक चली जाती है। यह प्रायः किसी प्रकार की स्मृतिके रूपमें तैयार की जाती है। २ मसजिदों आदिके कोनों पर बहुत ऊंची उठी हुई इसी प्रकारकी गोल इमारत जो खंभेके रूपमें होती है।

मीनारा (अ० पु०) मीनार देखो।

मीनालय (सं० पु०) मीनानामालयः। सागर, समुद्र।

मीनाबाई—मध्यभारतके धारराज्यकी एक रानी, राजा २य आनन्दरावकी महिषी। स्वामीके मरने पर इन्होंने अपनी विलक्षण बुद्धि और शौर्य-बलसे सिन्दे और होल्कर राजके आक्रमणसे धार राज्यकी रक्षा की थी। अंगरेज राजके मालवा जीतनेके बाद इन्हें किसी विदेशी राजाका उपद्रव सह्य नहीं करना पड़ा था। राजा रामचन्द्र पंवार-को इन्होंने गोद लिया था। इस बालकके शासनकाल-में भी मीनाबाई अभिभावकरूपसे राजकार्य चलाती थीं।

मीमांसक (सं० पु०) मीमांसामधीयते वेद इति मीमांसा बुन् (क्रमादिभ्यो बुन्। पा ४।२।६१) १ मीमांसा शास्त्र, वह जो मीमांसा-शास्त्रका ज्ञाता हो। पर्याय—सिद्धान्ती, मीमांसाशास्त्राध्येता।

"छायायास्तमसश्चापि सम्बन्धाद्गुणा कर्मणोः।
द्रव्यत्वं केचिदिच्छन्ति मीमांसकसताश्रयाः॥"

(वैद्यकराजवल्लभधृत वादार्थदर्पण)

२ पूर्वमीमांसाके सूत्रकार जैमिनिऋषि। ३ कुमारिल भट्टका एक नाम। ४ भाष्यकार शबर स्वामीका एक नाम। ५ प्रभाकर। ये कुमारिल भट्टके छात्र और 'गुरु' नामसे प्रसिद्ध थे। इनका मत 'गुरुमत' कहलाता है। स्मार्त्त भट्टाचार्यने प्रभाकरके छात्रोंको प्रभाकर कहा है। ६ उत्तरमीमांसाके भाष्यकार शङ्कराचार्य। ये अद्वैतवादी थे। ७ रामानुज, ये विशिष्टाद्वैतवादी थे। ८ मध्वा-चार्य। ये द्वैतवादी थे। यथा—

"मीमांसको वड़वाग्नेः कठिनामपि कुपठयन्नसौ जिह्वाम्॥"

(भक्तिरसामृत सिन्धु १।१।३)

मीमांसन (सं० क्ली०) मीमांसाकरण, किसी प्रश्नको मीमांसा या निर्णय करनेका काम।

मीमांसा (सं० त्रि०) मान विचारे (मानबधदान शानभ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य। पा ३।१।६) इति सन् अ टाप्, अभ्यासस्येकारस्य दीर्घश्च। १ विचारपूर्वक तत्त्व-निर्णय। २ छः दर्शनोंमेंसे एक दर्शनशास्त्रविशेष। इसके दो भाग हैं—पूर्वमीमांसा तथा उत्तरमीमांसा। पूर्वमीमांसाके सूत्रकार जैमिनि हैं और उत्तरमीमांसाके बादरायण। उत्तरमीमांसा वेदान्तके नामसे ही प्रसिद्ध है। जैमिनिकृत पूर्वमीमांसा ही मीमांसादर्शन कहलाती है। पूर्वकाण्ड, कर्ममीमांसा, कर्मकाण्ड, यज्ञविद्या, अध्वरमीमांसा, धर्ममीमांसा ये सभी इसके नाम हैं। कोई कोई इसे द्वादश-लक्षणी भी कहते हैं।

नामकरण।

वैदिक याग यज्ञादि इस दर्शनके द्वारा मीमांसित हुए हैं, इसलिये इसका नाम मीमांसादर्शन है। विना प्रयोजनके कोई किसी कार्यमें नहीं लगता, धर्मनिरूपणके उद्देश्यसे जैमिनिने इस दर्शनका सूत्रपात किया, इसलिये इस दर्शनका नाम धर्ममीमांसा हुआ है।

वेदके तीन काण्ड हैं—कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड। इनमें जिस वेदभागको कर्मकाण्डात्मक कहते हैं उसका इस दर्शनमें विचार हुआ है, इस लिये इस दर्शनका नाम पूर्वकाण्ड, पूर्वमीमांसा और कर्ममीमांसा है।

कर्मकाण्डात्मक वेदमें याग, दान और होम आदि नाना प्रकारके कर्म्मोंका उल्लेख रहने पर भी, यागकी प्रधानता तथा उस सम्बन्धके विचार इस दर्शनमें यथोचित रूपसे आलोचित हुए हैं, इसलिये यह दर्शन यज्ञविद्या या अध्वरविद्या कहलाता है।

दर्शनमें धर्मसम्बन्धी विचारोंका बारह अध्यायोंमें वर्णन है, इसलिये इसको द्वादशलक्षणी भी कहते हैं।

वेदके मन्त्रभागकी मीमांसा करना इस शास्त्रका मुख्य उद्देश्य नहीं है। जहां कोई विधि निषेध नहीं पाया जाता, केवल उसी स्थानमें मन्त्रका अर्थ ले कर मीमांसा करनेका विधान है। विशेषतः कर्मकाण्डात्मक ब्राह्मणभागकी मीमांसा करनेके लिये ही इस मीमांसाशास्त्रकी रचना हुई है। उपसंहारमें इतिहास देखो।

प्रतिपाद्य विषय।

जैमिनिकृत मीमांसादर्शनमें प्रायः सभी स्थानोंमें धर्मतत्त्वके विचार हैं। इससे साफ मालूम होता है कि एकमात्र धर्ममीमांसा ही इस दर्शनका उद्देश्य और प्रतिपाद्य है।

"धर्म्माख्य विषय वक्तु मीमांसायाः प्रयोजनम्।"

धर्मके लक्षण तथा प्रमाणादिका निरूपण करना ही मीमांसादर्शनका एकमात्र उद्देश्य है। प्रायः सभी स्थानोंमें जो विषय प्रतिपादित होगा पहले वही निरूपित होता है। वेदान्तदर्शनमें 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' यही पहला सूत्र है। इससे जाना जाता है, कि ब्रह्म निरूपण ही वेदान्तका प्रधान उद्देश्य है। इसलिये किसी दूसरी बातका आरम्भ न कर सूत्रकारने 'ब्रह्मजिज्ञासा' यही लिखा है। सांख्यदर्शनमें "अथ त्रिविधदुःखात्यन्त निवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः" यही पहला सूत्र है। त्रिविध दुःखोंकी अत्यन्त निवृत्तिको परमपुरुषार्थ कहते हैं। दुःख उसकी उत्पत्ति तथा निवृत्ति आदि हीका सांख्यदर्शनमें प्रतिपादन हुआ है। दुःखनिवृत्तिका उपाय निरूपण ही सांख्यदर्शनका उद्देश्य है। इसलिये इस दर्शनमें पहले ही दुःख शब्दका उल्लेख आया है। इसी प्रकार मीमांसादर्शनका धर्मनिरूपण ही मुख्य उद्देश्य है। इसलिये 'अथातो धर्म जिज्ञासा' इस सूत्रका आरम्भमें ही समावेश हुआ है।

वर्त्तमान समयमें जो मीमांसादर्शन प्रचलित है वह बारह अध्यायोंमें बंटा हुआ है। प्रथम अध्यायमें धर्मज्ञानका प्रयोजन, धर्मके लक्षण धर्मके प्रमाण और वेदविहित क्रियाकलाप इन्हें धर्म क्यों कहा जाता है, इन सब विषयोंकी आलोचना हुई है।

दूसरे अध्यायमें धर्मकर्मोंके अर्थात् यागयज्ञादिके प्रभेद यानी अनेकत्वका निर्देश है। तीसरे अध्यायमें यागयज्ञादिका अङ्ग प्रधान-भावनानिर्णय है अर्थात् किस यागका क्या अङ्ग है उसका निरूपण तथा कौन अंश प्रधान और कौन अंश अप्रधान उसका अवधारण है। चौथे अध्यायमें याग करनेवालेका गुण तथा जिस योगमें जो करना पड़ता है उस विषयका निर्णय है। पांचवें अध्यायमें यज्ञकर्मोंका क्रम निर्णय और छठेमें अधिकारीका निर्वाचन है। सातवेंमें साधारणतया अतिदेश वाक्योंकी विवेचना है। आठवेंमे विशेषातिदेश-वाक्योंकी मीमांसा है। (अमुक कर्म अमुक कर्मके जैसा करना होगा ऐसे वाक्यको अतिदेश कहते हैं)। नवें अध्यायमें ऊह विचार है। ऊह शब्दका इस तरह अर्थ लगाया जाता है,—'अपूर्वोत् प्रेक्षणमूहः' मन्त्रादिमें जो पदार्थ नहीं है उसकी उत्प्रेक्षा या उसके उल्लेखको ऊह कहते हैं। इस ऊहको कैसे स्थानमें करना चाहिये, कैसे स्थानमें नहीं। इसका निर्णय करना ऊहके विचारका उद्देश्य है। जिस स्थानमें लिखा हुआ द्रव्य नहीं मिलता, वहां उसके बदलेमें दूसरे द्रव्यसे काम चलाया

जाता है। ऐसे स्थानमें भी अतिदेश-विधान और कार्य-करणकालमें ऊह-विचारके सिद्धान्तोंका आश्रय लेना पड़ता है। जैसे, मधुके स्थानमें गुड़ देनेकी व्यवस्था है, लेकिन जहां मधुके स्थानमें गुड़ दे कर काम चलाया जाता है वहां "मधुवाता ऋतायते" इत्यादि मन्त्र पढ़ना चाहिये कि नहीं यह प्रश्न उठ सकता है। कारण मधु रहने पर तो वह मन्त्र अवश्य पढ़ना होता, लेकिन जब मधु न रहे, तब प्रश्न है, कि ऐसे स्थानमें उस मन्त्रको पढ़नेकी आवश्यकता है कि नहीं। अब ऊह विचारका सिद्धान्त है कि ऐसे स्थानमें भी उक्त मन्त्र ज्योंका त्यों पढ़ना चाहिये।

दशवें अध्यायमें वाध-निर्णय है। वाध शब्दका अर्थ निवृत्ति है। कहां किस मन्त्र या द्रव्यको निवृत्ति त्याग करना होगा उसका निर्णय करना वाध-विचारका उद्देश्य है।

ग्यारहवें अध्यायमें तन्त्रता है। इसका लक्षण—"अनेकमुद्दिश्य सकृत् प्रवृत्तिस्तन्त्रता" वहुत कर्मोंके उद्देशसे अंगीभूत एक कर्म करनेको तन्त्रसिद्धि कहते हैं। अर्थात् जिस स्थानमें एक कर्त्ताको अनेक कर्म करना है ऐसे स्थानमें एक कर्मके अनुष्ठानसे औरोंका फल मिल जायेगा। इस तरहका निर्णय करना तन्त्रता विचारका उद्देश्य है। जैसे स्नान प्रत्येक क्रियाका अंग है, शास्त्र की सभी क्रियायें स्नानके वाद ही की जाती हैं लेकिन कर्त्ता यदि एक दिनमें पांच कर्म करे तो एक ही वार स्नान करना होता है, वार वार स्नान नहीं करना होता। उस एक ही स्नानसे और स्नानोंका फल मिल जायगा।

वारहवें अध्यायमें प्रसङ्गनिर्णय है। इसका अर्थ है—"अन्योद्देशेऽन्य सिद्धिः प्रसङ्गः" एक कार्यके उद्देशमें दूसरे कार्यकी सिद्धिको प्रसंग कहते हैं यानी "एक पंथ दो काज।" एक कार्यके लिये कुछ करने पर यदि अनिवार्यरूपसे दूसरा कोई फल सिद्ध हो जाय, तो उसे प्रसंगसिद्ध कहते हैं। जैसे आमके लिये वृक्ष रोपा जाता है लेकिन साथ ही छाया आप ही मिल जाती है। किसी एक प्रधान यागके लिये पुरोडास तैयार करने पर फिर दूसरे यागके लिये उसे तैयार करनेका जरूरत नहीं पड़ती। अंगयागका पुरोडास प्रसंगसिद्ध हुआ।

ऊपर लिखे १२ अध्यायोंको छोड़ चार और अध्याय पाये गये हैं, इन चार अध्यायोंका नाम सङ्कर्षकाण्ड है। भाष्यकार शवर स्वामी अथवा वार्त्तिककार कुमारिल अन्तके इन चार अध्यायोंका कोई उल्लेख नहीं करते हैं, इसलिये शंकराचार्यके मतवाले इन्हें मीमांसासूत्रमें नहीं लेते लेकिन रामानुजके मत माननेवाले इन चारों अध्यायोंकी मौलिकताको स्वीकार करते हैं। उपसंहारमें मीमांसाके इतिहासमें आलोचना देखो।

इस दर्शनकी आवश्यकता।

महामुनि जैमिनिने अपने दर्शनमें विशेषतः इन्हीं सब विषयोंका विचार और सिद्धान्त निर्णय किया है तथा प्रसंगवश और और विषयोंकी भी पर्य्यालोचना की है। मीमांसा दर्शनमें जिन सब विषयोंका विचार किया गया है वे सभी वैदिक हैं।

वेदोंमें याग, दान और होमादि विषय भिन्न भिन्न स्थानोंमें जिधर तिधर लिखे गये हैं, उन्हें देख कर योगादि करना अत्यन्त कठिन है और पद पद पर भूल होनेकी सम्भावना है। महामुनि जैमिनिने मीमांसादर्शन-की रचना कर याज्ञिक लोगोंके कष्ट और सन्देहको दूर कर दिया है। मीमांसादर्शनके वाद हीसे कर्मकाण्डकी पद्धति और शिक्षा सुगम हो गई है।

वेद।

महामुनि जैमिनिने वेदको मन्त्र और ब्राह्मण इन दो भागोंमें बांटा है। "मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" मन्त्र और ब्राह्मण दोनों भाग ही वेदके नामसे प्रसिद्ध हैं। पीछे फिर इन दो विभागोंके दूसरे तरहके विभाग किये गये हैं। जैसे ऋक्, यजुः और साम यही तीन विभाग।

मन्त्र और ब्राह्मणका इस प्रकार लक्षण निर्धारित हुआ है। "तच्चोदकेषु मन्त्राख्या" "शेषे ब्राह्मण-शब्दः" जो अनुष्ठान करनेके समय उपयुक्त अनुष्ठेय अर्थका ज्ञान कराता है, उसको मन्त्र तथा उसे छोड़ वाक्यसन्दर्भ-को ब्राह्मण कहते हैं। फिर भी किसी किसीके मतसे ऊपर कहे गये लक्षण प्रायिक हैं। "प्रयोगसमवेतार्थ स्मारका मन्त्राः" किन्तु जो मन्त्र कह कर सब दिनों-से प्रसिद्ध हैं केवल वही मन्त्र हैं। सूत्रस्थानके

ब्राह्मण उनकी व्याख्यास्वरूप हैं। आचार्य शवर स्वामीने अपने भाष्यके अनेक स्थानोंमें ही ब्राह्मण भागको मन्त्रोंकी व्याख्यास्वरूप कहा है।

"ब्रह्मणो वेदस्य व्याख्यानामति ब्राह्मणम्।"

वेद ऋक्, यजुः और साम इन तीन भागोंमें विभक्त हैं। इन्हें छोड और भी दूसरे तरहके विभाग हैं, ये सव विभाग इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा, नाराशंसी इत्यादि नामोंसे प्रसिद्ध हैं। वेदके उस अंशको जिसमें पुरानी घटनाओंका वर्णन है, इतिहास कहते हैं। पूर्वावस्था प्रकाशक वेदांशको पुराण, कर्त्तव्याकर्त्तव्य विषयक वेदभागको कल्प, प्रशंसा और गानयोग्य सन्दर्भको गाथा तथा मनुष्य चरित्र-बोधक सन्दर्भको नाराशंसी कहते हैं। वेदके ऋक् आदि जो तीन भाग हैं उनके लक्षण इस तरह निर्धारित हुए हैं।

"तेषामृक् यथार्थवशेन पादव्यवस्था" "गीतिषु सामाख्या" "शेष यजुःशब्दः" मन्त्र और ब्राह्मण दोनो प्रकार वेद वाक्योंमें जो वाक्य अर्थानुसार पादवद्ध हैं वे सब ऋक् कहलाते हैं। जो सव वाक्य गाये जा सकते हैं वे साम और वाकी यजुः कहलाते हैं। ऋक्, यजुः और साम ये तीन भाग पूर्वकथित दोनों भागोंके अन्तर्गत हैं।

समूचे वेदसे हम लोग जो समझते हैं उसीको समझानेके लिये पूर्वमीमांसाकी रचना हुई है। और तो क्या, पूर्वमीमांसाको सहायताके विना वेदका प्रतिपाद्य अर्थ क्या है, उसे हम लोग नहीं समझ सकते। इसलिये ऐसा कोई न समझे, कि पूर्वमीमांसा वेदको एक टीका या भाष्य है। वास्तवमें मीमांसादर्शनके एक भी सूत्रमें वैदिकपदकी व्याख्या नहीं है। फिर भी पूर्वमीमांसाको सहायताके विना वेदार्थ समझनेका कोई उपाय नही।

अत्यन्त प्राचीन कालसे उपदेशके कितने ही वाक्य इस देशमें प्रमाण माने जाते हैं, इन सव वाक्योंसे लोग जिसे कर्त्तव्य समझते हैं वही वास्तविक मनुष्यका कर्त्तव्य है। वही सव वाक्य "वेद" के नामसे प्रसिद्ध हैं। ये वेद श्रेष्ठ लाभका एकमात्र उपाय है।

वेदका अर्थ क्या है? इसके उत्तरमें पूर्वमीमांसाके रचयिता कहते हैं, कि कर्म ही वेदका अर्थ है। जिन कर्मोंके द्वारा किसी प्रकार दुनियादारी नहीं चलती और जिन्हें लौकिक प्रमाणकी सहायताके विना हम लोग नहीं समझ सकते, वे ही कर्म वेदके प्रतिपाद्य विषय हैं।

जैमिनिने सम्पूर्ण वेदविभागोंके ऊपर लिखे लक्षण और उदाहरण दिखा सभोंमें विधि, अर्थवाद, मन्त्र और नामधेय इन चार प्रधान विभागोंको स्थिर किया है। पश्चात् उन्होंने उनके द्वारा धर्म और धर्म-जनक याग, दान और होमादि कर्मोंके स्वरूप और अनुष्ठान-प्रणालीको निश्चित किया है। मीमांसक लोग कहते हैं कि वैदिक वाक्यकी याग, दान या होमस्वरूप जो अर्थ नहीं निकल सकता उसका प्रमाण नही है अर्थात् उसको वेद नही कह सकते। यही जैमिनिका कर्मवाद है।

अवयव।

छः दर्शनोंमे मीमांसा दर्शन सवसे वडा है। इसके १६ अध्याय हैं। पहले १२ अध्यायोंमें पादसंख्या ४८ है। सूत्रसंख्या हजारसे कुछ कम और अधिकरणसंख्या भी हजार है। अधिकरणका अर्थ विचार है। मीमांसाशास्त्रका प्रत्येक अधिकरण पांच अवयवका है अर्थात् पांच अवयवमें समाप्त होता है।

"विषयो विशयश्चैव पूर्वपक्षस्तथोत्तरम्।
निर्णयश्चेति पञ्चाङ्ग शास्त्रेऽधिकरणं स्मृतम्।" (भट्ट)

विषय—विचार्य वाक्य, जिसका विचार किया जायगा। विशय—संशय, पूर्वपक्ष—संशयके अनुसार किसी एक पक्षका अवलम्बन, उत्तर—पूर्वपक्षके दोषोंको दिखलाना, निर्णय—दोषोंको दूर कर अपने पक्षको सिद्ध करना। निर्णयका दूसरा नाम सिद्धान्त है।

ऊपर लिखे शास्त्रके पांच अंगोंका तात्पर्य यों है—पहले अंगमें विषय अर्थात् विचार्य वाक्यका उल्लेख रहता है। दूसरेमें उसके अर्थमें संशय किया जाता है। तीसरा अंग पूर्वपक्ष है। चौथे अङ्गमें पूर्वपक्षका प्रतिवाद रहता है। पांचवें अर्थात् अन्तमें प्रामाणादिके साथ सिद्धान्त निश्चित किया जाता है। इस प्रणालीके अनुसार किये गये विचारको मीमांसाशास्त्रमें अधिकरण कहते हैं।

न्याय आदि शास्त्रोंके विचारके पांच अंग हैं,

मीमांसा-शास्त्रके विचारके भी पांच अंग है। इन दोनों-मे अन्तर यही है, कि मीमांसामें वेद वाक्योंका विचार है और न्याय शास्त्रमें दृश्य पदार्थों तथा उनसे उत्पन्न ज्ञानका विचार किया गया है।

और सब दर्शनोंके जैसा मीमांसादर्शन भी सूत्रोंमे लिखा गया है। हर एक सूत्रकी रचना पंचाङ्ग विचार-प्रणालीके अनुसार हुई है।

मीमांसाके प्रथम सूत्रमें धर्म्म-विचारकी आवश्यकता-की विवेचना हुई है और दूसरे सूत्रके आरम्भसे ले कर पादके अन्त तक धर्म्म क्या है? धर्म्मके लक्षण क्या हैं? धर्म्म किन प्रमाणोंका प्रमेय अर्थात् सिद्धान्त है इस सब विषयोंके विचार तथा मोमांसा हुई हैं। दूसरे पादके आरम्भसे ले कर अन्त तक धर्म्मके साधन फल तथा धर्म्म-मूल वेदोंका प्रामाण्य स्थिर किया गया है।

आलोच्य विषय।

इस दर्शनका प्रधान आलोच्य विषय है "अथातो धर्म्म जिज्ञासा" पहला सूत्र। इसका अर्थ यह है, धर्म्म जिज्ञासा इसका नाम है या विचार द्वारा धर्म्मतत्त्व जानना अवश्य कर्त्तव्य है।

केवल वेदबोध्य अर्थ ही धर्म्म है तथा वेद ही धर्म्मके प्रमाण हैं। इसलिये ब्रह्मचारी वेदाध्ययनके बाद भी गुरुकुलमें वास कर धर्म्मकी जिज्ञासा करे। यहां जिज्ञासा शब्दका अर्थ विचारपूर्वक ज्ञानगोचर करना है। इस सूत्रका भी अधिकरणके अनुसार समझना होगा अर्थात् अधिकरणके अनुसार इसका अर्थ स्थिर करना आवश्यक है।

अधिकरण।

विषय—"स्वाध्यायोऽध्येतव्यः" "वेदमधीत्य स्नायात्" वेद अध्ययन करे और वेद अध्ययनके बाद स्नान अर्थात् समावर्त्तन करना पड़ता है। (वेदको अध्ययन करने वाले ब्रह्मचर्य्यव्रतको समाप्त कर गृहस्थीमे प्रवेश करनेसे पहले जो विधियुक्त कर्म करते हैं, उसका समावर्त्तन है)। यह विधिवाक्य विचारनेके जोग्य विषय है।

संशय—वेदके अध्ययनके बाद ही समावर्त्तन करना होगा, या कुछ समय तक धर्म निर्णयके लिये गुरुगृहमे रहना आवश्यक होगा?

पूर्वपक्ष—वेदाध्ययनके बाद ही समावर्त्तन होता है, इस विधिके वल अध्ययनके बाद ही समावर्त्तन करना कर्त्तव्य है।

उत्तर-पक्ष—"स्वाध्यायोऽध्येतव्यः" यह विधि केवल अक्षर प्रत्यक्षर अर्थ ग्रहण करने नहीं कहती, तात्पर्य्य ग्रहण करनेका भी उपदेश देती है। लेकिन विचारके विना तात्पर्य्यका ज्ञान नहीं हो सकता। अतएव अक्षरमात्र होने से निश्चित ज्ञान प्राप्त नहीं होता और निश्चत ज्ञान न मिला तो अध्ययनको सफलता हो नहीं सकती। इस-लिये समझना चाहिये, कि साधारण अध्ययनके बाद ही समावर्त्तन करना होगा, ऐसी विधि नहीं है।

सिद्धान्त—उक्त कारणसे अध्ययन समाप्तिके बाद भी धर्मजिज्ञासाके लिये गुरुके घर पर कुछ समय तक रहना अवश्य कर्त्तव्य है।

मीमांसक आचार्योंने जिस प्रकार सूत्रोंको अधिकरण-में शामिल किया है उसका एक अंश दिखलाया जा चुका। इसी दर्शनमें बराबर इस प्रणालीसे काम लिया गया है। "अथातो धर्मजिज्ञासा" इस सूत्रमें धर्म शब्द अधर्म शब्दका उपलक्षक है अर्थात् धर्मके जैसा अधर्मकी भी जिज्ञासा करनी चाहिये। धर्मकी जिज्ञासा जैसे धर्म-प्राप्तिके लिये करनी होती है उसी प्रकार अधर्मसे बचनेके लिये अधर्मकी भी जिज्ञासा करनी चाहिये। फलतः धर्म-लक्षणके निश्चित होने पर विपरीतके कारण अधर्मके लक्षण आपे आप निश्चित हो जाते हैं। इसके लिये अलग विचारकी आवश्यकता नहीं पड़ती।

धर्म्म।

जैमिनिने धर्मके ये लक्षण बतलाये हैं—"चोदना-लक्षणोऽर्थो धर्मः।" चोदनाका अर्थ प्रवर्त्तक वाक्य है इसका दूसरा नाम विधि और नियोग है। लक्षण—इस-का अर्थ ज्ञापक या बोधक। अर्थ—अनिष्टविपरीत अर्थात् श्रेयस्कर। जिसका ज्ञापक या बोधक विधिवाक्य है, जो अनर्थ विपरीत अर्थात् श्रेयस्कर या इष्ट है उसे ही धर्म कहते हैं। तात्पर्य्य यह, कि विधिबोधित भविष्यद् श्रेय स्कर क्रियाकलाप याग, दान और होमादि धर्म कहे जाते हैं। इसका प्रमाण चोदना अर्थात् वैदिक विधिवाक्य है। क्रियाके अभावमें आत्मामें उत्पन्न भविष्यत् मंगलके

कारणस्वरूप गुणविशेष या संस्कारविशेषको धर्म कहते हैं। इस धर्मको दूसरे शास्त्रोंमें पुण्य या शुभादृष्ट कहा गया है। इस सूत्रका भी अधिकरणके अनुसार विचार किया गया है।

विषय—धर्म।

संशय—धर्ममें प्रमाण है या नहीं? यदि प्रमाण है तो वह प्रसिद्ध प्रत्यक्षादि प्रमाणोंमें है या केवल विधि-वाक्यका दृष्टिगत है। इसमें प्रत्यक्षादि प्रमाणोंकी सहायता है या नहीं?

पूर्वपक्ष—विधिवाक्य प्रमाण नहीं है। वाक्यमात्र प्रत्यक्षादि प्रमाण है, समर्पित पदार्थका अनुवादक है। अतएव यह पृथक् प्रमाण नहीं है। अतएव कहना पड़ेगा, कि धर्ममें प्रमाण नहीं है।

अथवा धर्म प्रत्यक्ष और अनुमान अथवा दूसरे प्रमाण का प्रमेय है। अथवा धर्म योगियोंके लिये प्रत्यक्ष है और हम लोगोंको अनुमान या विधिवाक्यके द्वारा ही प्राप्त हो सकता है।

किसी निश्चित कारणके बिना यह संसार इतना विचित्र न होता और न इस इतनी विषमता ही रहती। कहा गया है, कि जगत्की विचित्रताका कोई दूसरा कारण नहीं है, धर्म ही एकमात्र कारण है। धर्म केवल विधि-वाक्योंसे प्राप्य नहीं वरन् अर्थापत्तिके साथ विधिवाक्य द्वारा प्राप्य है। धर्मप्रमाणके सम्बन्धमें ये चार पक्ष स्थापित हो सकते हैं।

उत्तर—विधिके शब्द सुननेसे जो ज्ञान होता है उस ज्ञानके विरुद्ध दूसरा प्रमाण न रहने पर शब्दज्ञान संशय-रहित प्रमाण हुआ। अतएव शब्द रहने पर धर्ममें प्रमाण नहीं है ऐसा कहना नितान्त अनुचित है। (मनुष्य) वक्ताके दोषसे उसके वाक्यका प्रमाण न हो तो न हो, वेद मनुष्यका वाक्य नहीं, अतएव वेदके सम्बन्धमें यह संशय न रहनेके कारण वेद धर्मके विषयमें स्वतःसिद्ध और आदि प्रमाण है। प्रत्यक्षादि प्रमाण वर्त्तमान पदार्थका उपलम्भक अर्थात् बोधक है, भविष्यत् पदार्थका बोधक नहीं है। धर्म भी वर्त्तमान पदार्थ नहीं है यह भविष्यत है, कारण इसे उत्पन्न करना पड़ता है। अतएव यह प्रत्यक्षादि प्रमाण द्वारा स्थिर हो नहीं सकता। योगी लोगोंका योगसे उत्पन्न ज्ञान भी भावनासे उत्पन्न होता है वह पहले अनुभव किये गये या सोचे गये पदार्थोंकी स्मृतिविशेष है। किस प्रकार वह ज्ञान जिसका कभी अनुभव न हुआ, जो कभी सोचा न गया, जिसकी उत्पत्ति करनी पड़ती है, उस धर्मका प्रमाण दे सकता है।

सिद्धान्त—ऊपर लिखे कारणोंसे यह स्थिर हुआ कि एकमात्र विधिवाक्य (चोदना) ही धर्मका प्रमाण है।

मीमांसाशास्त्रके अधिकरण अर्थात् विधिवाक्यकी विचार-प्रणालीके दो उदाहरण दिये गये। सभी सूत्रोंका इसी प्रकार अधिकरणके अनुसार अर्थ लगाना होगा।

चोदना (विधिवाक्य) ही धर्मका प्रमाण है और चोदनागम्य (विधिवाक्यसे प्राप्य) अर्थ ही धर्म्म है। इन लक्षणोंके स्थिर होने पर "चोदना लक्षणोऽर्थो धर्मः" इस तरहका सूत्र दिया गया है।

प्रमाण द्वारा इस धर्मका निर्णय करना आवश्यक है। कौन धर्म कौन प्रमाणका प्रमेय है, पहले इसका विचार करना परमावश्यक है। धर्म प्रत्यक्ष ज्ञानकी वस्तु है या नहीं, यह निश्चित करनेके लिये पहले प्रत्यक्ष ज्ञान किसको कहते हैं यह निश्चय करना चाहिये। इन्द्रिय वर्त्तमान वस्तुओंमें संयुक्त होती है इसलिये आत्मामें इन्द्रियसंयुक्तवस्तुका ज्ञान होता, इस ज्ञानको प्रत्यक्षज्ञान कहते हैं। इस प्रकार वर्त्तमान वस्तुका बोधक और अवर्त्तमान वस्तुका अबोधक धर्मका प्रमाण नहीं है। जो धर्म विद्यमान नहीं है उसे स्थिर करनेके लिये प्रत्यक्षके प्रत्यक्षमूलक अनुमानादि प्रमाण काममें नहीं ला सकते।

शब्दवाद।

अर्थके साथ शब्दका जो सम्बन्ध है अर्थात् बोध्यबोधक भाव है वह नित्य है। यह कृत्रिम या सांकेतिक नहीं है लेकिन स्वाभाविक है और इसीलिये औपदेशिक ज्ञान अर्थात् सुना हुआ अव्यतिरेक अर्थात् अबाधित और अव्यभिचारी सत्य है। शब्द अज्ञात विषयका सच्चा ज्ञान उत्पन्न करता है इसलिये यह स्थायी प्रमाण है। इसका प्रमाण भी दूसरे पर निर्भर नहीं करता अर्थात् वह स्वतः सिद्ध है।

दूसरे स्थानमें उसको या उसके जैसे दूसरेको देखने पर उसके सम्बन्धमें अदृश्य पदार्थोंका जो ज्ञान होता है उस ज्ञानको अनुमिति कहते हैं। आगके साथ धुआं उठता है। हम लोग वरावर देखते हैं, कि धुआं और आग वरावर साथ रहती है। अब हृदयमें एक वास्तविक ज्ञान सञ्चित रहता है, कि धुआंका कारण आग है, आग धुआंके साथ रहती है। इस सञ्चित ज्ञानके कारण पहाड़ आदि पर धुआं देख कर अनुमान करते हैं कि जहां से धुआं उठता है वहां आग अवश्य होगी। यही अनुमिति है। इस प्रकारकी अनुमिति भी धर्मका प्रमाण नहीं हो सकती अर्थात् इस अनुमानके प्रमाणसे भी धर्मनिर्णय नहीं हो सकता।

जैमिनिने निश्चय किया है, कि शब्द और अर्थ दोनों ही नित्य है तथा उनका बोधकबोध्य सम्बन्ध भी नित्य अर्थात् स्वाभाविक है। जैमिनिने पहले यह प्रतिज्ञा कर इसकी ६ आपत्तियां की है और पीछे उनका खण्डन किया है।

कोई कोई दर्शनकार (गौतम और कणाद) शायद कह सकते हैं, कि शब्द एक प्रकारकी उच्चारण क्रिया है, यह क्षणस्थायी है और चेष्टाविशेषसे उत्पन्न होता है। शब्द जो क्रियमाण है वह प्रत्यक्ष है। जैसे उच्चारणके पहले शब्द नहीं रहता, उच्चारणके बाद अनुभवमें आता है। अतएव क्रियमाण और क्षणस्थायी शब्दके साथ अक्रियमाण स्थायी अर्थका नित्य सम्बन्ध सम्भव नहीं।

शब्द स्थिर नहीं रहता और मुहूर्त्तकाल भी नहीं ठहरता। इसीसे जाना जाता है, कि शब्द पहले क्षणमें उत्पन्न हो कर दूसरे क्षणमें अस्तित्वको प्राप्त कर तीसरे क्षणमें विलीन हो जाता है।

लोग कहते हैं 'शब्द करो' 'शब्द मत करो'। शब्द करो, शब्द मत करो इस तरहका प्रयोग पूर्वकालसे प्रचलित है और इससे निश्चित होता है, कि शब्द मनुष्यकृत है, नित्य नहीं है।

एक ही शब्दका एक समयमें यहां, वहां, अनेक स्थानोंमें, अनेक देशोंमें मनुष्य उच्चारण करते हैं और सुनते भी हैं। अगर शब्द एक और नित्य होता तो इस प्रकार यौगपद्य नहीं हो सकता था। व्याकरणकी प्रक्रियामें भी देखी जाती है, कि शब्दोंकी प्रकृतिमें विकार होता है। 'इ' शब्द प्रकृति है 'उ' शब्द उसकी विकृति है अर्थात् व्याकरणमें 'इ' के 'य' होनेका विधान है। सभी नित्य पदार्थ अधिकारी हैं। शब्द नित्य होता तो इस प्रकार विलासविषयक न हो सकता था।

शब्दकी वृद्धि और उसका ह्रास देखा जाता है। अगर उच्चारण करनेवाले अधिक रहें तो शब्द बढ़ता है और कम रहें तो शब्द घटता है। जिसका ह्रास और वृद्धि होती है वह नित्य नहीं है।

शब्दकी नित्यताके सम्बन्धमें ये आपत्तियां कर फिर नीचे लिखे अनुसार उनका खण्डन किया है। शब्द उच्चारणके पूर्व उपलब्ध नहीं होता, उच्चारणके बाद उपलब्ध होता है। सिर्फ यही देख कर शब्दकी अनित्यताका निर्णय करना उचित नहीं। इस दर्शनमें नित्यता का भी विचार हो सकता है। नित्य निराकार शब्द भी उच्चारणके पहले अज्ञात रहता है अर्थात् शब्द उच्चारण के पहले अव्यक्त रहता है। उच्चारणचेष्टासे वह व्यक्त होता है। अतएव उच्चारण क्रियाके बाद शब्दका अनुभव होते देखा जाता है सही, लेकिन यह शब्दकी अनित्यताका कारण नहीं हो सकता। सारांश यह कि शब्द हम लोगोंकी नित्यताका यह प्रमाण हो सकता है।

शब्दके सम्बन्धमें दूसरी आपत्ति भी ठहर नहीं सकती। शब्द उच्चारणके बाद ही विनष्ट हो जाता है, यह भी तुच्छ आपत्ति है। शब्द नष्ट नहीं होता, यह जैसेका तैसा रहता है केवल सुननेमें नहीं आता। ऐसी बहुत चीजें हैं, जो हैं लेकिन इन्द्रियगम्य नहीं हैं। 'शब्द करो' 'शब्द मत करो' यह लौकिक प्रयोग ध्वनि के सम्बन्धमें है, शब्दके सम्बन्धमें नहीं। लोग स्थित शब्दके प्रकाशक ध्वनिविशेषको ही करने कहते हैं, शब्द करने नहीं कहते।

जिस प्रकार एक नित्यसूर्य्यको एक समय बहुत स्थानोंमें बहुत लोग देखते हैं उसी प्रकार एक नित्य वर्त्तमान वर्ण शब्दको अनेक स्थानोंमें अनेक लोग सुनते भी हैं।

व्याकरणमें 'इ' के स्थानमें 'य' वर्णका विधान है सही परन्तु दोनों वर्णोंमें प्रकृति-विकृतिका सम्बन्ध नहीं।

ये दोनों वर्ण एकदम स्वतन्त्र हैं। कोई किसीकी प्रकृति नहीं, और न कोई किसीकी विकृति ही आपत्ति है।

दूसरी आपत्ति यह है, कि शब्द बढ़ता है। यह भी अत्यन्त तुच्छ है। शब्द नही बढ़ता, वरन् उच्चारण करनेवालों के कंठकी आवाज ही बढती है। बहुत लोग जब एक साथ बोलते हैं, तब बडी आवाज होती है, शब्द जैसेका तैसा रहता है।

जैमिनिने इस प्रकार सभी आपत्तियोंका खण्डन कर शब्दकी नित्यताका प्रतिपादन किया है शब्द नित्य है, क्योंकि उच्चारणमात्र ही परार्थ है। लोग अपने जाने हुए शब्दार्थका दूसरेको ज्ञान दिलानेके लिये उस शब्दार्थको व्यक्त करनेवाली ध्वनि करते हैं जिसको उच्चारण कहते हैं। यदि शब्द पहले होसे रहे तो दूसरों-को उसका ज्ञान करानेके लिये उस शब्दको बतलाने-वाली ध्वनि करनेकी लोगोंको प्रवृत्ति हो सकती है। अगर नहीं, तो यह प्रवृत्ति हो ही नहीं सकती।

गो शब्दका उच्चारण करने पर उस समय सभी गौओं-का ज्ञान हो जाता है। यदि शब्द नित्य न रहता तो इस सम्पूर्णताका ज्ञान न होता। लोग ऐसा नहीं कहते, कि आठ बार गो शब्द करो। यह सब लोगोंका अनादि-कालसे आता हुआ व्यवहार शब्दको एकता और नित्यता सिद्ध कर सकता है।

उत्पन्न द्रव्यमात्रका उपादान या कारण रहता है किन्तु शब्द उत्पादनका उपादान दुर्लभ है। क्योंकि, शब्दकी उत्पत्ति और विनाशका कारण (जिसको अपेक्षा कहते हैं) नहीं है अतएव शब्दको उत्पत्ति नहीं, और न विनाश ही है।

कोई कोई आचार्य समझते हैं, कि वायु ही शब्दका उपादान अर्थात् कारण है। ये सब आचार्य शब्दकी उत्पत्ति और विनाश है, ऐसा कह सकते हैं लेकिन यह बात नहीं है। शब्दका कारण वायु नहीं। वायु ध्वनि का कारण है। वायु वातप्रतिघातोंसे उत्पन्न संयोग-विभागादिके वशसे ध्वनियोंको गुणी हो चारों ओर तरग के रूपमें फैल जाती है। अनन्तर वह कानोंमें पड अनु-भवमें आ जाती है। अतएव शब्दध्वनि व्यङ्ग होनेके कारण ध्वनिसे भिन्न है। इसलिये भी शब्द वायुसे उत्पन्न नही होता। जब वायु शब्दके उत्पत्ति-विनाशकी कारण नहीं हुई, तो वह दूसरे पदार्थोंके शब्दका कारण होगी, सम्भव नहीं।

इसलिये वेद भी कहते हैं, कि शब्द नित्य है। इस दर्शनके व्याख्याकारोंने और भी कहा है, कि शब्द ज्ञान-का मूल शब्द है, शब्दज्ञान पुरुष (कर्त्ता) के अधीन है। भ्रम, प्रमाद, विप्रलिप्सा और इन्द्रिया पाटव ये चार दोष पुरुषके हो सकते हैं। अतएव पुरुषकल्पित शब्द अप्रमाण हैं, तो भी वेद-शब्द अपौरुषेय हैं। इनमें वे दोष न रहनेके कारण वेद शब्दका प्रमाण अक्षत और स्वतः सिद्ध है। शब्द और शब्दार्थ कभी भी (पुरुषकृत) कृत्रिम नहीं। दोनोंका सम्बन्ध भी पुरुष-कृत सङ्केतमूलक नहीं है। अतएव किसी भी प्रकार वैदिक शब्दमें पुरुष-सम्पर्क दिखाया नहीं जा सकता। फिर शब्दके उत्पत्तिपक्षका उत्थान और उसका खण्डन किया गया है तथा पद, वाक्य और वाक्यार्थके बोध्य-बोधक सम्बन्धकी सङ्केत-मूलकता कहां तक मनुष्य करते हैं। इस पक्षका उत्थापन और खण्डन किया गया है। पश्चात् जैमिनिने वाङ्मय वेदमें काठक, कालापक, पैप्पलादक आदि संज्ञा शब्दोंका दृष्टान्त दे ऋषि-प्रणीत आशंका कर उन प्रयोगोंको कृतिमूलकताको छोड़ प्रवचन मूलकताकी व्यवस्था की है। (कठेन कृत काठकं, ऐसा नहीं, कठेन प्रोक्तं कठेन आचरितं) इस प्रकार कठने जैसा आचरण किया, वही कठ है। कठ ऋषिने जैसा किया नहीं, केवल प्रचार किया था। इस शब्दवादके बल पर जैमिनिने वेदको अपौरुषेय निश्चित किया है।

और और दर्शनोंके जैसे इस दर्शनमें प्रत्यक्षादि प्रमाण और उनके प्रमेय अनेक पदार्थोंका विचार दिखाया गया है। किन्तु ये सब अत्यन्त संक्षेपमें हैं। इसमें केवल वेदवाक्यके विचार ही बहुत विस्तार हैं तथा वैदिक विधिवाक्य, अभ्रान्त, स्वतः प्रमाण और श्रेष्ठ प्रमाण हैं इसीका इसमें प्रतिपादन हुआ है।

सामर्थ्य या अपूर्व।

धर्म्म है, इसमें मतान्तर नहीं। यह धर्म्म याग, दान और होमादि रूपमें वर्णित हुआ है। याग, दान और होमादि विशेष कार्यमें विशेषफल देते हैं। अतएव याग, दान और होमादि ही धर्म्म है। याग, दान और होमादि इन्हें (अनुष्ठान)

करनेवालेकी आत्मामें जो सामर्थ्य विशेष उत्पन्न करते हैं वह सामर्थ्यविशेष याग, दानादिका फल है। इस फलविशेषके कारण कर्त्ता (अनुष्ठाता) भविष्यत्‌में स्वर्गादि उपभोगका योग्य हो जन्मग्रहण करता है।

मीमांसादर्शनमें इस सामर्थ्यको "अपूर्व" कहते हैं। दूसरे दूसरे शास्त्रोंमें इसे अदृष्ट, पुण्य और धर्म्म बतलाया है। इस मतके अनुसार भी याग, दान और होमादि नामक क्रिया-कलाप धर्म्म है। यह द्रव्य, गुण और क्रियाका शिल्पविशेष है। अतएव धर्म्मका प्रथमरूप प्रत्यक्ष है किन्तु इसका अपूर्व नामक व्यापार या शक्ति अनुमेय है।

दूसरोंकी विवेचनासे याग, दान होमादि क्रियाके बलसे उत्पन्न अपूर्व नामक सामर्थ्य ही स्वर्गादि फल देनेवाला है। यह अपूर्व सामर्थ्य ही धर्म है। तब लोग या शास्त्र जो यागादि कर्म्मको धर्म्म कहते हैं ऐसा उपचार क्रमसे ही कहा करते हैं। आयु बढ़ानेवाले घीको आयु कहना वैसा ही है जैसा धर्म्म देनेवाली क्रियाको धर्म्म कहना। इस मतसे धर्म्म जनसाधारणके अनुभवसे बाहर होने पर भी योग अनुभवका विषय है। योगी लोग योगज सन्निकर्षके बलसे धर्म्माधर्म्म जान लेते हैं।

कोई कोई कहते हैं, कि क्रिया जनित अपूर्व शक्ति ही धर्म्म है। यह बात सत्य है, लेकिन यह ऋषि-ज्ञानके दृष्टिगत है। इस सम्बन्धमें मीमांसक लोग कहते हैं, कि धर्म्म और अधर्म्म कायिक, वाचिक और मानसिक हैं। ये क्रियासे उत्पन्न होते है तथा ये ही भविष्यत् सुख-दुःखके बीज होते हैं। धर्म उन फलों का जन्मान्तरभावी है। अर्थात् यह फलभोग दूसरे जन्म मे होता है। इसलिये यह लौकिक अनुभवसे बाहर है किन्तु वैदिक वाक्योंसे इसका ज्ञान होता है।

प्रामाण्यवाद।

ज्ञान उत्पन्न करनेकी सामर्थ्य रहनेके कारण वाक्य ही प्रमाण हैं। यह स्वतन्त्र और स्वतःप्रमाण है। यों तो अयथार्थ वाक्य भी बुद्धि उत्पन्न करता है, पर उस बुद्धिमे कारणदोष और बाधकज्ञान रहनेके कारण उसे प्रमाण नहीं कह सकते। फिर भी, वेदवाक्य अपौरुषेय अर्थात् मनुष्यकृत नहीं है। अतएव यह उक्त दोषोंसे रहित है, इस कारण वेदवाक्यका प्रमाण अक्षत है।

यहां पर देखना होगा, कि मनुष्यके किस प्रकार प्रामाण्यज्ञान उत्पन्न होता है। यह प्रमाण है, वह प्रमाण नहीं है, यह ज्ञान क्या ज्ञानके स्वभावसे आपे आप उन्नत होता है? अथवा यह कारणके गुणदोष देखनेसे अथवा अर्थक्रिया ज्ञानके द्वारा अर्थात् ज्ञेयपदार्थ-को कार्यकारिता देखनेसे उत्पन्न होता है। अथवा ज्ञानके स्वभावसे पहले प्रामाण्य-ज्ञान उत्पन्न होता है और पीछे ज्ञेयका अन्यथाभाव और कारणका दोष ज्ञानगम्य हो कर उसे दूर करता है। यह भी देखा जाता है, कि जहां ज्ञेयका तथात्व है, बाधक ज्ञानका अनुदय और कारणदोषका अनवधारण है, वहीं पर प्रामाण्य बोधका स्थायित्व देखा जाता है। इस विषयमें किसी किसी मीमांसकका सिद्धान्त इस प्रकार है—कारणकी कार्यशक्ति स्वाभाविक है, इसीलिये ज्ञान भी अपने स्वभाव और सामर्थ्यसे प्रामाण्य इन दोनोंको अवधारण करता है। इसमे दूसरेका विचार इस प्रकार है—ज्ञानपदार्थ एक समयमें अपनी अवगाह्य वस्तुके तथात्व और अ-तथात्वको समझने वा ग्रहण करनेमें समर्थ नही है। क्योंकि, तथात्व और अतथात्व ये दोनो ही भाव परस्पर विरोधी हैं, इस कारण एक समयमें और एक ज्ञानमे उक्त दोनो ज्ञान अवस्थान नहीं कर सकते। अतः यह स्वीकार करना होगा, कि कारणके गुणदोषके ज्ञान द्वारा ही प्रामाण्यादिका अवधारण हुआ करता है। इस पर कोई कोई मीमांसक कहते हैं, कि जब तक कारणका गुण दोष मालूम न हो जाय तब तक यदि उससे उत्पन्न वाक्यादि प्रमाण हैं वा अप्रमाण यह स्थिर न हो तो ज्ञानको निःस्वभाव वा निःशक्ति स्वीकार करना पड़ेगा। किन्तु इसे वे लोग स्वीकार नहीं करते। अतएव यह कहना उचित है, कि पहले अप्रामाण्य और पीछे संवाद ज्ञानादि द्वारा उसका अपनोदन और प्रामाण्य ज्ञानका उद्भव हुआ करता है। थोड़ा गौर कर देखनेसे मालूम होगा, कि ज्ञान उत्पन्न होते ही वह ज्ञेयका तथात्व अवधारण नहीं कराता। जब कारणका गुण और अर्थका तथात्व प्रतीत होता है, तभी प्रमाणजनित ज्ञानसे प्रामाण्यका उदय होता है।

शब्दज्ञानका कारण शब्द है, उसका गुण आप्त-प्रणीतत्व है। जब तक 'यह आप्त वाक्य है' ऐसा ज्ञान उत्पन्न न होगा, तब तक उस वाक्यमें प्रामाण्यका अवधारण नहीं होगा। विशेषतः जो वेदको अपौरुषेय कहते हैं, उनके मतसे वेदमें आप्तप्रणीतत्व गुणका अभाव है और यह बात भी है, कि वेदमें 'वनस्पतयः सत्रमासत' 'शृणोत ग्रावाणः' 'वनस्पतियोंने यज्ञ किया था' हे पत्थर! तुम लोग सुनो, इत्यादि अनेक असम्बद्ध वाक्य दिखाई देते हैं। इन सब बातोंको देख कर कौन नहीं कह सकता, कि वेद अनाप्त प्रणीत है। यदि यह अनाप्त प्रणीत है, तो यह अप्रामाणिक है। इसका खण्डन कर मीमांसक कहते हैं—

"परापेक्षं प्रमाणत्वं नात्मानं लभते क्वचित्।
मूलोच्छेदकरं पक्षं कोहि नामाध्यवस्यति॥"

परापेक्ष प्रामाण्य आत्म-प्राप्तिमें असमर्थ है। कौन बुद्धिमान् पुरुष मूलनाशक पक्षको स्वीकार कर सकता है? इसका तात्पर्य यह है, कि यदि सभी ज्ञान अपनी क्षमतासे स्वग्राह्य विषयोंके तथात्वको अवधारण नहीं करते, तो मनुष्य हजारों जन्ममें भी किसी एक वस्तुका तथात्व अवधारण नहीं कर सकता। अतएव प्रामाण्यका व्यवहार दिखाई नहीं देता; लोप हो जाता। यह सोचनेकी बात है, कि कारण गुण-ज्ञान भी ज्ञान ही है। इससे उसको भी अपने विषयके तथात्वको अवधारण करनेके लिये दूसरे ज्ञानका साहाय्य लेना पड़ेगा। फिर उस ज्ञानको भी अन्य ज्ञानका साहाय्य लेना पड़ेगा। इस तरहका साहाय्य लेना अवश्य ही मूलमें हानिकारक है, अर्थात् प्रामाण्य व्यवहारका उच्छेदक है। किन्तु अर्थ क्रियाका ज्ञान परापेक्ष नहीं, वर वह स्वतः प्रमाण है। वह ज्ञान अपनी सामर्थ्यसे ही अपने विषयका तथात्व अवधारण करता है, यह बात भी अव्यभिचारी नहीं है। स्वप्नावस्थामें जलाहरण नामकी क्रिया नहीं रहती, फिर भी उसका ज्ञान होता है। 'स्वप्नमें जल ला रहा हूं' ऐसा ज्ञान होता है, किन्तु यथार्थमें झूठ है। अतएव वादीका सिद्धान्त अपसिद्धान्त है। इस विषयमें मीमांसकका यह सिद्धान्त है,—ज्ञानमात्र ही स्वतः प्रमाण है। "वस्तुपक्षपातो हि धियां स्वभावः" वस्तु याथार्थ्यकी ओर ही ज्ञानकी गति है। ज्ञान ही प्रमाण है और उसका प्रामाण्य भी स्वतोग्राह्य है। थोड़ा गौर कर देखनेसे साफ दिखाई देगा, कि प्रामाण्य ज्ञान ही प्रथम है। भ्रमस्थलमें भी पहले प्रामाण्य ही है, पीछे उसका अपवाद हुआ करता है। ऐसे स्थलमें पहले उत्पन्न हुआ ज्ञान पीछे पदार्थान्यथा ज्ञान और कारणदोषज्ञानके द्वारा दूर होते देखा जाता है। जहां अपवाद नहीं होता, वहां अविवादमें पहले उत्पन्न हुआ प्रामाण्य ही स्थायी होता है।

लौकिक शब्दमें अनाप्त पुरुषोंका सम्पर्क रहता है। इसी कारणसे वह अप्रामाण्य दोषसे दूषित है। वेद शब्द वैसा नहीं है। इसमें पुरुष दोषका अनुप्रवेश न रहनेसे वेद शब्दमें अप्रामाण्यकी आशङ्का नहीं।

ऐसा कोई प्रबल प्रमाण नहीं जो वेदबोध्य अर्थका अपवाद करनेमें या मिथ्यात्व प्रमाणित करनेमें समर्थ हो। 'अश्वमेध यागसे स्वर्ग होता है' यह एक वेदार्थ है। इस अर्थके विरुद्धमें अर्थात् स्वर्ग नहीं होगा, ऐसे अर्थमें प्रत्यक्ष या अनुमान कोई भी प्रमाण उपस्थित नहीं। ऐसे स्थलमें कुछ लोग कहते हैं कि शब्दका पृथक् प्रमाण नहीं। शब्द केवल वक्ताके अन्तराभिप्रायका अनुवादक है। वाक्य सुनने पर श्रोताको वक्ताके भीतरी ज्ञानका पता लग जाता है। जिन सब ज्ञानोंके आकारवक्ताके भीतर अङ्कित हो जाते हैं, वे सब ज्ञान वक्ताके प्रत्यक्ष आदिसे अनतिरिक्त हैं। वक्ता जो देखता है, या सुनता है उसे समझाने या व्यक्त करनेकी आशासे शब्दविशेष उच्चारण करता है, श्रोता उसे सुन अनुमानसे समझ लेता है। अतएव वाक्य-प्रत्यक्ष आदि ज्ञानोंके अनुवादके सिवा और कुछ नहीं। इसके उत्तरमें मीमांसक कहते हैं—ऐसा नहीं, शब्द भी प्रमाण है, प्रत्यक्ष आदिकी तरह स्वतः प्रमाण हैं। मनुष्य कहता है, इस बातका अर्थ क्या। तात्पर्य यह कि यथावस्थित शब्द कण्ठध्वनिमें सञ्जात है या आरोहण कराता है, उत्पन्न नहीं करता। वर्ण अनादि निधन है, पदार्थ अनादिनिधन तथा बोध्यबोधक शब्द भी अनादि निधन है, वेद अपौरुषेय है अतएव अनाप्त वाक्य है, अर्थात् लोकवाक्यके प्रमाणशून्य होने पर भी

वेदवाक्यका प्रामाण्य उपरोक्त युक्तियोंसे किया जा सकता है।

कारणदोष और बाधकज्ञानवर्जित अगृहीतग्राही ज्ञान ही प्रमाण है अथवा अज्ञात ज्ञापक अबाधित या अविसंवादी विज्ञान ही प्रमाण है। यह लक्षण शब्द-ज्ञानमें सम्पूर्णरूपसे विद्यमान है।

'शास्त्र शब्द विज्ञानात् असन्निकृष्टेऽर्थे विज्ञानं' ज्ञातार्थे शब्द सुननेके बाद पदार्थबोध द्वारा जो वाक्यार्थ-विज्ञान उत्पन्न होता है, वही वाक्यार्थ विज्ञान अविसंवादी या अबाधित असन्निकृष्ट और अज्ञात-विषय मे अव्यभिचारी है, अतएव प्रमाण है। यह शब्दविज्ञान सर्वापेक्षा उत्तम और पूर्ण प्रमाणके नामसे प्रसिद्ध है।

यह प्रमाण दो भागोंमें विभक्त है, पौरुषेय और अपौरुषेय। आप्तवाक्य पौरुषेय है और वेदवाक्य अपौरुषेय। जो शब्द है, वह दोषग्रस्त नहीं—दोष वक्ताका है। वक्ताके दोषसे ही शब्दमे दोष आरोप होता है। इसीलिये अनाप्तप्रणीत वाक्य विसंवादिनी बुद्धि उत्पन्न करता है, किन्तु आप्तप्रणीत वाक्य अथवा अनादि अपौरुषेय वाक्य संवादी होता है। किसी समयमें भी वह असंवादिनी बुद्धि अथवा मिथ्याज्ञान उत्पन्न नहीं करता। न उत्पन्न करनेका कारण चाहे आप्तप्रणीत हो या अपौरुषेय।

अपौरुषेय भी दो तरहका है—एक सिद्धार्थ, दूसरा विधायक है। जो सिद्ध वस्तु विषयक विज्ञान उत्पन्न करता है, वह सिद्धार्थ है, जैसे—यह तुम्हारा पुत्र है, इत्यादि वाक्य। जो वाक्य कुछ करनेको कहता है, वह विधायक है, जैसे:—'स्वर्गकामोयजेत्' स्वर्गको कामना कर याग करना, इत्यादि वाक्य। विधायक वाक्य भी प्रकारान्तरसे दो तरहका है, उपदेश और अतिदेश। 'यह कार्य इस तरहसे करना' इस तरहका वाक्य उपदेश, 'अमुक कार्यके अनुसार अमुक कार्य करना चाहिये' यह वाक्य अतिदेश है।

शब्दप्रमाणवादी मीमांसकोंकी दूसरी एक गूढ़ अभिसन्धि दिखाई देती है। उसीके प्रभावसे मीमांसक शब्दको स्वतः प्रमाण कहनेसे नहीं डरते। इनकी अभिसन्धि यह है, कि काल, दिक्, आत्मा, परमाणु आदि जैसे अनादि निधन निरयव द्रव्य हैं, उसी तरह शब्द भी अनादि निधन निरयव द्रव्य है। शब्द अन्याय दर्शनोंमें आकाशका गुण और उत्पन्न प्रध्वंसी है, किन्तु मीमांसादर्शनके मतानुसार यह अनादि और अविनाशी है।

स्फोटवाद।

मनुष्य सङ्केतात्मक वाक्य नामक ध्वनिविशेष (कण्ठध्वनिमात्र) उद्भावन द्वारा उन सबोंका आकार दूसरेके ज्ञानमें बैठाता है और कुछ नहीं करता। जो सुना जाता है, अर्थात् जो कर्णगोचर होता है, वह शब्द नहीं। वह यथा अवस्थित उन शब्दोंके व्यञ्जकरूप कण्ठध्वनि है। सङ्केतमय कण्ठध्वनि द्वारा नित्यनिराकार शब्दका व्यवहार सिद्ध हुआ करता है। जैसे अक्षररूपी साङ्केतिक रेखा द्वारा आकाररहित ध्वन्यात्मक शब्दका ज्ञान और व्यवहार निष्पन्न होता है, वैसे ध्वन्यात्मक शब्दके द्वारा भी आकाररहित, अदृष्टचर, नित्यावस्थित शब्दका ज्ञान भी व्यहार-सम्पन्न हुआ करता है। क्रम, छेद, भङ्ग और मृदु मधुर या कर्कश सभी ध्वनिस्थित या ध्वनिका गुण शब्दमें आरोपित होता है, इसीसे लोग कहते हैं, कि यह शब्द कर्कश या मधुर है। मीमांसकोंके मतसे ध्वनि शब्द नित्य नहीं, वर्ण शब्द नित्य है। वर्णपद, वाक्य सभी नित्य या निरवयव हैं ये ही नित्य-निरयव वर्ण, पद और वाक्य स्फोट नामसे प्रसिद्ध है।

ध्वन्यारुढ़ वर्ण, पद और शब्द सुननेके बाद श्रोताके भीतर जो अर्थ प्रत्ययात्म ज्ञानमय वर्ण, पद और वाक्यका उदय होता है वही अमूर्त्त पदार्थ स्फोट है। निराकार वर्णकी, पदकी और वाक्यकी प्रतिच्छाया है। अथवा वे स्फोट ही अनादि निधन हैं। वर्ण, पद और वाक्य नामसे प्रसिद्ध हो इस तरह शब्दरहस्यके संसाधित करनेके लिये मीमांसकोंने नाना तरहकी युक्तियों और तर्कोंका प्रयोग किया है। मीमांसकोंके मतसे केवल शब्द ही नित्य नहीं, वरं शब्दशब्दार्थ और वाक्यवाक्यार्थका बोध्यबोधक सम्बन्ध भी नित्य है। वह साङ्केतिक नहीं, वरं स्वाभाविक है। पदपदार्थका बोध्यबोधक सम्बन्धस्वाभाविक है बनावटी या सङ्केतमूलक नहीं। यह निम्नक्त युक्तियोंसे प्रतिष्ठित हुआ है।

शब्द और अर्थकी आपसमें निःसम्पर्कता नहीं है। सम्पर्क या सम्बन्ध रहने पर भी वह प्रसिद्ध संयोग

समवाय आदि नहीं है और उनमें किसी तरहके कार्य-कारण भाव आदि भी दिखाई नहीं देते। इसी कारणसे इनका सिद्धान्त इस तरह है,—शब्दके साथ अर्थका सम्बन्ध है, वह सञ्ज्ञासंज्ञी, नामनामी या बोधक बोध्य-इन तीनों में एक है। शब्द नाम है—अर्थ उसका नामी है। शब्द संज्ञा है—अर्थ उसका सञ्ज्ञी है। शब्द बोधक है—अर्थ उसका बोध्य है। अभिहित सम्बन्ध रहनेका प्रमाण प्रत्यक्ष है, अर्थात् शब्द प्रचारके अव्यवहित दोनोंके बाद ही अर्थकी प्रतीत होना सबके अनुभवकी बात है। फिर भी, प्रोक्त सम्बन्ध स्वाभाविक और अनादि प्रवाह-परम्परागत है। इसको किसीने तय्यार नहीं किया, अथवा सङ्केत स्थापना द्वारा प्रचार भी नहीं किया। जो कहते हैं, कि शब्द वक्ताके हृदयगत अभिप्रायका अनुमापक होता है, तो पूछना यह है, कि रोगविशेष अवस्थामें या स्वप्नावस्थामें उच्चारित अर्थाभिप्रायशून्य शब्दोंके अर्थमें प्रतीति क्यों होती है? अर्थानभिज्ञको बात कैसे समझमें आ जाती है? प्रत्युत्तर देनेमें अक्षम होने पर भी यह स्वीकार करना उचित है, कि शब्द यथा वस्थित अर्थका ही प्रत्यायक है, अभिप्रायविशेषका अनुमापक नहीं। इसके उत्तरमें यह कहा जा सकता है, कि तब पहले सुननेसे ही समझमें क्यों नहीं आ जाता? अर्थप्रतीति क्यों नहीं होती? इसका यथार्थ प्रत्युत्तर यह कि सहकारीको कारणोंका अभाव है। सहकारी कारण संज्ञाज्ञान हैं, उसका अभाव अर्थात् उनका न होना या न रहना। नेत्र जैसे प्रकाशके साहाय्यके बिना अर्थका दर्शन नहीं करते और कराते भी नहीं, वैसे शब्द भी संज्ञा संविज्ञान न रहनेसे श्रोताके चित्तमें स्वार्थ-प्रत्यय नहीं उत्पन्न करता। जिन्होंने दूसरोंसे अर्थकी संज्ञा या नाम मालूम किया है, शब्द उसी मनुष्यके भीतर स्वार्थप्रमिति उत्पन्न करेगा।

वादी यहां इस तरह पूर्वपक्ष कर सकेंगे। वे कह सकते हैं, कि शब्दार्थका सम्बन्ध पौरुषेय है, अर्थात् पुरुषकृत सङ्केत मूलक है। पहले उसे अभिज्ञोंसे जान लेना चाहिये। जिसको दूसरा कह देता है, या दूसरा ही शिक्षा देता है, वह कैसे पौरुषेयके सिवा अपौरुषेय हो सकता है। पूर्व पक्षके प्रतिपक्षमें यह कहना यथेष्ट हो सकता है, कि वह सम्बन्ध तय्यार कर नहीं देता, यथा-वस्थित सम्बन्ध कह देता है। तय्यार कर देनेसे अथवा गोशब्द उच्चारण करनेके बाद अश्व कह देनेसे अभिज्ञ व्यक्ति उसको ग्रहण नहीं करता, करने भी नहीं देता वरं उसका निषेध करता है। जिसको अभिज्ञ कहा गया, वह भी शैशवमें अनभिज्ञ था और उसने भी दूसरेसे शिक्षा पाई थी। इस तरह परम्पराक्रमसे अनुसन्धान करने पर स्थिर रूपसे मालूम हो सकता है, कि शब्दके अर्थका और इन दोनोंका अनादित्व-सम्बन्ध स्वयं ही स्थिरीकृत हुआ करता है।

यदि ऐसा है, कि आदि सृष्टिकालमें भगवान् स्वयम्भूने पहले स्थावर जङ्गम, धर्म्माधर्म और शब्द-काण्डकी सृष्टि कर उन सबोंके व्यवहार्य शब्दोंके साथ अर्थके सम्बन्धकी कल्पना की थी, पीछे उन सबोंको समझानेके लिये कृतसङ्केत शब्द सन्दर्भित कर अर्थात् वेद प्रस्तुत कर मरीच्यादि पुत्रोंको दिया था। पीछे मरी आदि पुत्रोंने अपने नीचेवालोंको और उन्होंने फिर अपनेसे जो नीचे थे उनको दिया। इसी तरह हमें प्राप्त हुआ है, तो यह संगतियुक्त हो सकता है सही; किन्तु इस सिद्धान्तमें प्रमाणाभाव है। ऐसा कोई प्रमाण दिखाई नहीं देता जिसके द्वारा इस तरहका ज्ञान संवादी हो सके। इसमें और एक दोष होता है, कि साङ्केतिक शब्दार्थ घटित शास्त्रके प्रमाणकी रक्षा कठिन हो जाती है। परवर्त्ती साङ्केतिक शब्दार्थ घटित शास्त्र किस तरह पूर्व्ववर्त्ती विषयोंका साक्ष्य प्रदान कर सकता है। अतएव पहले कुछ भी नहीं था, होने पर भी इसका कुछ प्रमाण नहीं।

आदि सृष्टि और महाप्रलयका कुछ प्रमाण न रहनेसे ब्रह्मा द्वारा पदपदार्थोंका सम्बन्धकरण प्रमाण रहित है। शब्द भी असंख्य हैं और अर्थ भी असंख्य। एक एक करके उन सबोंका सम्बन्ध-करण एक व्यक्तिके लिये असम्भव है। यदि किसी भी शब्दका अर्थके साथ नैसर्गिक रूपसे सम्बन्ध न हो, तो वह अशक्य-करण है या नहीं, विचारना चाहिये। सम्बन्ध-करण करने पर किसी न किसी वाक्यको आवश्यकता होती है। यदि उस वाक्यके अर्थके समझानेकी सामर्थ्य न हो, तो वह कौन निर्वाह कर सकता है? वालुकामें तेल

पैदा करनेकी शक्ति नहीं है, इसीसे शिल्पी 'तेली' बालुकासे तेल निकालनेमे असमर्थ हैं। गो शब्दका अर्थ गलकम्बलादिमान् जीव यह समझानेकी सामर्थ्य न रहने पर कोई भी व्यक्ति गो शब्दका उदाहरण नहीं करता और उसको समझा नहीं सकता। उक्त नमूनेको देख यह स्थिर करना उचित है, कि वक्ता पदपदार्थका यथावस्थित शब्द-सम्बन्ध केवल मात्र व्यक्त करता है, उत्पादन नहीं कर सकता, करनेका कोई उपाय भी नहीं। वरं करनेका उपाय है। बालक जिन सब पदपदार्थोंका सम्बन्ध वृद्धोंसे अर्जन करते हैं उन सबको वृद्धोंने भी बालक-अवस्थामें वृद्धोंसे क्रमशः प्राप्त किया था। पर्य्यालोचना द्वारा इस तरह शब्द रहस्यके प्रतिभात होने पर स्थिर होता है कि शब्दार्थका सम्बन्ध भी अपौरुषेय है अर्थात् वह अनादि और स्वाभाविक है।

दिखलाये हुए विचारों द्वारा यह स्थिर किया जाता है, कि लौकिक वाक्य-सन्दर्भको उनकी बुद्धिके दोषसे बाधित अर्थमें प्रकाश करने पर भी इसके अपौरुषेय होनेसे वेद शब्दमें पूर्वोक्त दोषकी कुछ भी आशङ्का नहीं। वेद-सन्दर्भ निर्दोष और स्वतःप्रमाण है।

पहले ही कहा गया है, कि अज्ञातज्ञापक अविसंवादी विज्ञान ही प्रमाण है। जो लक्षण विधि अंशमें विद्यमान है अन्यान्य अंशोंमे नहीं है उसका न रहना केवल विधिभागको ही अर्थात् वैदिक चोदनाको ही धर्मप्रमितिका कारण कहा गया है।

वेद-विभाग।

ऐसा प्रश्न हो सकता है, कि वेदमे ऐसे कितने ह? वाक्य दिखाई देते है, जिनसे हम किसी तरहकी शिक्षा नही पाते। जैसे—"सोऽरोदीत्, यद्दरोदीत्, तद्रुद्रस्य रुद्रत्वम्" अर्थात् उन्होंने रोदन किया था, रोदन करनेसे ही उनका नाम रुद्र हुआ। इस तरहके वाक्य हम वेदमे कई जगह देखते हैं। ऐसे वाक्योंसे किसी तरहके कत्तव्यकर्मका स्वरूप प्रकाशित नहीं होता। अतएव कहना होगा, कि ऐसे शब्द वेदके नही हैं। सदासे पण्डित लोग कहते आते हैं, कि ये शब्द वेदके हैं। इस तरह आशङ्काको दूर करते हुए जैमिनि क्या कहते हैं, सुनिये,—"यह सत्य है सही, कि वेद कहनेसे ही धर्मका ज्ञान होता है। किन्तु सभी वेदवाक्य साक्षात्‌रूपसे कर्त्तव्य कर्मका स्वरूप प्रतिपादन नहीं करते। कितने ही शब्द साक्षात् याग दान या होमरूप कर्मके प्रकाशक हैं और कितने ही याग दान या होमरूप कर्मके अपेक्षित पदार्थोंको साक्षात् समझा कर परोक्षभावसे उन पदार्थोंके साथ संसृष्ट याग दान या होमरूप कर्मोंके प्रकाशक हैं। याग करनेमें घृत, होमकुण्ड, देवता, अधिकारी और समय चाहिये, इतने पदार्थोंको न समझ सकने पर याग, दान और होम आदि वैदिक कार्योंके समझनेकी शक्ति किसीमें नही। यागक्रिया होने पर भी घृत, अग्नि, होमकुण्ड, देवता या अधिकारी आदि तो कार्य या क्रिया नही, यह सभी द्रव्य हैं। इन सब द्रव्योंको न जाननेसे किसी भी यागका स्वरूपनिर्णय नहीं हो सकता। इसीसे वेदके कई वाक्य साक्षात्‌रूपसे किसी क्रियाके स्वरूपका बोध न करा वाक्यान्तर द्वारा बोधित क्रियाके साथ नियत सम्बन्ध द्रव्य या देवता अथवा उस क्रियाके अनुष्ठानोपयोगी किसी वस्तुका साक्षात्‌रूपसे बोध करा देते हैं। फलतः ये परोक्षभावसे किसी न किसी क्रियाका स्वरूप प्रतिपादन कर उसके अनुष्ठानमें सुविधा करा देते हैं। इसी भावके अनुसार वाक्योंको चुन लेनेसे वेदवाक्योंका विभिन्नार्थ ही प्रतिपादित होता है।

इसीसे ऋषि जैमिनिने स्वतः प्रमाण वेदवाक्योंको चार भागोंमे विभक्त किया है। जैसे—विधि, अर्थवाद, मन्त्र और नामधेय। पहले 'चोदना' शब्दका उल्लेख किया गया है, उसीका दूसरा नाम विधि है।

विधि।

जैमिनिसूत्रको व्याख्या करनेवालोंने 'विधि' शब्दका अर्थ इस तरह कहा है—

"विधिरत्यन्तमप्राप्तौ नियमः पाक्षिके सति।
तत्र चान्यत्र च प्राप्तौ परिसङ्ख्येति गीयते॥"

वेदके जिस अंश द्वारा किसी प्रयोजन सिद्धिका अनुकूल उपाय कर्त्तव्य बताया जाता है, यह उपाय वैसे ही प्रयोजनका साधन है, फिर भी उसे हम अन्य किसी लौकिक प्रमाण द्वारा जान नहीं सकते, जैमिनिके मतसे वही अंश विधि' है। जैसे "स्वर्गकामो यजेत" अर्थात्

स्वर्गकी कामना होनेसे ही याग करना। यहां 'स्वर्गकामो यजेत' इस वाक्यमें 'यजेत' इस अंशका विधि कहते हैं। क्योंकि, 'याग करना' इस तरहके कर्त्तव्य कर्मका निर्देश केवल 'यजेत' इस अंश द्वारा ही हुआ करता है, इसलिये यही 'अंश' विधि है। विधि भी तीन प्रकारकी हैं—उत्पत्तिविधि, नियमविधि और परिसंख्याविधि।

१ उत्पत्ति विधि—जिस कर्त्तव्य कर्मका स्वरूप पहले अन्य किसो प्रमाण द्वारा प्रतिपादित नहीं हुआ है, इसी तरहका कर्म कर्त्तव्य जान कर पहले हम जिस वाक्यसे जान जाते हैं उसो विधि वाक्यको उत्पत्ति-विधि कहते हैं। जैसे—"अग्निहोत्र जुहुयात्' अर्थात् "अग्निहोत्र नामक होम करना।"

यह अग्निहोत्र नामक होम एक तरहकी क्रिया है। इस क्रियाको कर्त्तव्य समझनेके लिये हम "अग्निहोत्र जुहुयात्" इस वाक्यके सिवा अन्य कोई प्रमाण नहीं पाते। अतएव इस विधिवाक्यको उत्पत्तिविधि कहा जा सकता है।

२ नियम विधि—लौकिक प्रमाणके साहाय्यसे हम जो समझते हैं, उसोको समझानेके लिये वेदमें जो विधि वाक्य दिखाई देता है, उसको नियमविधि कहते हैं। जैसे—"व्रीहिन् अवहन्ति" अर्थात् व्रीहि (अर्थात् धान) को अवघात करना या कूटना।

चावल, घी और दूध मिला कर पाक करनेसे पायस तय्यार होता है। दशपूर्णमास नामक यागमें देवताके लिये यही पायस तय्यार किया जाता है। इस पायसके लिये चावलकी जरूरत होती है। यह चावल कैसा होना चाहिये? इस प्रश्नके उत्तरमें 'व्रीहिन् अवहन्ति" यह विधिवाक्य कहा गया है। इस व्रीहिको अवघात करनेसे क्या फल निकलेगा? तण्डुल निष्पत्ति ही अर्थात् चावल निर्माण करना इसका फल है। अवघात कर या ढेंकीसे कूट कर धानकी भूसी निकाल चावल तय्यार किया जाता है। वेदमें कुछ भी उपदेश न रहने पर हम इसको समझते हैं। फिर वेदमें इस तरहका उपदेश क्यों किया गया, कि व्रीहि पर अवघात करना? इसके उत्तरमें मोमांसक कहा करते हैं, कि यदि अवघात न कर अर्थात् न कूट कर नखसे चावलकी भूसीको हटा या छांट कर, आदि अन्य किसी उपायसे हम यागके समय धानसे चावल निकाल कर पायस तय्यार करते हैं, ऐसा होनेसे इस प्रकारके पायससे यागका जो शुभादिष्ट फल होगा, वह सिद्ध नहीं। इसलिये वेदका उपदेश होता है, कि व्रीहियोंसे अवघात द्वारा यानी चोट दे कर चावल निकालना।

यदि किसी एक कार्यके दो या तीन उपाय मौजूद हैं, फिर भी ऐसा होता है, कि दो तीन उपायोंमें केवल एक उपायसे कार्य अच्छी तरह सम्पन्न हो जाता है, अन्य उपायोंसे कार्योंको प्रतीक्षा नहीं करनी पडती, ऐसे स्थलमें किसी एक उपाय द्वारा यह कार्य साधित होनेमें दूसरे एक या दो उपायोंकी अप्राप्तिकी सम्भावना रहती है,—अर्थात् कार्य करनेके लिये दूसरे उपायका अवलम्बन लेना भी नहीं पडता, इस प्रकार अप्राप्ति सम्भावनाको मीमांसकगण पाक्षिकअप्राप्ति कहा करते हैं। इसी पाक्षिक अप्राप्तिके निराकरण करनेके लिये शास्त्रमें जो विधि दिखाई देती है, उसको नियम विधि कहते हैं। इसी नियमके अनुसार "व्रीहीन् अवहन्ति" यह नियम विधि हुई। क्योंकि, धानके भीतर जो चावल है, उसको बाहर निकालनेके लिये उसके ऊपरके छिलकेको छुडाना चाहिये। उसी छिलके या भूसीको हटानेके लिये धानको कूटना पडता है, उसी तरह नखसे भी छुडाया सकता है। यदि कोई नखसे भूसी हटा दे, तो धानके कूटनेकी क्या आवश्यकता है? इसलिये उसकी अप्राप्तिकी सम्भावना है। इस अप्राप्ति सम्भावनाके परिहार करनेके लिये ही शास्त्र कहता है, कि धान कूटना। इससे यह धान नियमविधि हुआ।

किन्तु कहा जा सकता है, कि तण्डुल (चावल)-निष्पत्ति कार्य नखसे भूसी छुडा देनेसे भी हो जाता है, फिर विशेष करके अवघात (चोट) नियमका प्रयोजन क्या? इसके उत्तरमें मीमांसक कहते हैं, कि इस नियम विधिका एक अदृष्ट फल भी है। अवघातके द्वारा तण्डुल निष्पत्तिरूप दृष्ट फल भी जैसा होता है, वैसे ही अवघातके द्वारा तण्डुल निष्पन्न होने पर भी इस तंडुलके द्वारा यज्ञ सम्पादित होनेसे यज्ञकी सम्पूर्णता होती है

अर्थात् उसके अनुष्ठान द्वारा जो अदृष्ट उत्पन्न होता है, वह अविकल्ल होता है।

३ परिसंख्या विधि—यदि एक कार्यके साधक कई उपाय विद्यमान हैं, फिर इन सब उपायोंमें किसीको भी न छोड़ यदि सब उपायोंको व्यवहारमें लानेकी सम्भावना रहे, ऐसे स्थलमें अन्य उपायोंके ग्रहणका निवारण करनेके लिये यदि किसी एक उपायके ग्रहण करनेकी 'विधि' दिखाई दे, तो इसी विधिको परिसंख्याविधि कहते हैं। जैसे—"पञ्च पञ्चनखा भक्ष्याः" अर्थात् "जिनके पैरमें पांच नख हैं, उन पशुओंको पांचनखा (पचनोहा) कहते हैं। इन्हीं पञ्चनखा पशुओंमें खरगोश आदि पांच प्रकारके पशुओंको भक्षण करना।" यह पांच प्रकार पञ्चनख भक्षणकी जो विधि है उसको ही परिसंख्याविधि कहते हैं, क्यों कहते हैं।

मीमांसकोंका कहना है, कि हम कोई वस्तु अन्य किसी प्रमाण द्वारा नहीं समझते या समझनेको कोई आशा भी नहीं, उसी वस्तुको यदि वेद समझा सके, तो वेदको सार्थक कह सकते हैं। वेदविधि द्वारा यदि कोई ऐसा पदार्थ प्रतिपादित हो, जो वेदविधिके सिवा अन्य किसी प्रमाण द्वारा समझ सकते हैं, तो वह पदार्थ कभी भी वेदके प्रतिपाद्य अर्थ नहीं हो सकता। जहां वेदकी इस प्रकार अनर्थकताकी सम्भावना हो जाती है, वहां हो बाध्य हो कर मीमांसक वेदका अर्थ घुमा फिरा कर करते हैं। यहां उसी नियमानुसार हमें वेद या वेदमूलक स्मृतिका अर्थ घुमा फिरा न करनेसे नहीं चलता। क्योंकि जो मांस खाता है, वह क्षुधानिवृत्तिके लिये इच्छा होने पर सब प्रकारके पञ्चनख पशुओंके मांस खा सकता है, अथवा करता भी है। यह सदा होता आया है! अतएव मांस-भक्षी मनुष्यके लिये "खरगोश आदि पांच प्रकारके पञ्च-नख पशुओंका मांस-भक्षण करना पड़ेगा" इस तरहका शास्त्रीय विधान न रहने पर भी वह आदमी अन्य प्रमाणोंके साहाय्यसे अपनी क्षुधा-निवृत्तिके लिये पञ्च-नख पशुओंके मांस भक्षणका उपाय स्थिर कर सकता है और स्थिर कर बिना बाधाके भक्षण भी कर सकता है। यहां शास्त्र यों कहते हैं, कि "तुम पञ्च-नख पशुओंमें ये खरगोश आदि पांच नखवाले ही पशुका मांस भक्षण करना।" शास्त्र न रहनेसे क्या यह मांस-भक्षी पांच तरहके पञ्चनखी पशुओंके मांस न खाते? यह तो सम्भव नहीं, तब शास्त्र ऐसा विधान क्यों देते हैं? इस तरहका शास्त्रीय अप्रामाण्य दूर करनेके लिये मीमांसक कल्पना करते हैं, कि ऐसे स्थलमें शास्त्रका अर्थ ऐसा नहीं। अर्थात् हमको पांच प्रकारके पंचनख पशुओंके मांस भक्षणका जो आदेश देता है, वह ठीक नहीं। इस शास्त्रका तात्पर्य यह है, कि खरगोश आदि पांच तरहके पंचनखके सिवा अन्य बिल्ली बन्दर आदि पंचनखका भक्षण मत करना। अर्थात् अन्य पंचनखका भक्षण करनेसे परकालमें विशेषरूपसे अनिष्ट होगा। इस तरहके शास्त्रका अर्थ किया जाय, तो फिर पूर्वोक्तरूपसे शास्त्रके अप्रामाण्यकी सम्भावना नहीं रह जाती। अतएव "पञ्च पञ्चनखा भक्ष्या" इस शास्त्रका प्रामाण्य भी अबाधित रहा। इसी कारणसे मीमांसकगण इस प्रकार विधिवाक्योंको परिसंख्या विधि कहते हैं।

भट्टका कहना है, विधिलिङ्, लोट् और तव्यादि प्रत्ययका अर्थ विधि और उसका अन्य नाम भावना है। अतएव शाब्दी भावना और विधि समान बात है। प्रभाकरके मतसे विधि प्रत्ययमात्र ही नियोगवाची है। अतएव नियोगका ही अन्य नाम विधि है। जो जिस प्रकार बातोंमें विधि-लक्षण वर्णन क्यों न करें, सर्वत्र ही अप्राप्तार्थ-विषयक प्रवर्त्तनका भाव दिखाई देता हो है। सर्वत्र हो विधिका आकार 'कुर्यात्' 'क्रियते' 'कर्त्तव्य' 'यजेत' इत्यादि है।

"स्वर्गकामो यजेत" यही एक विधि है। यह विधि अर्थी, विद्वान् और समर्थ श्रोतृपुरुषको यागकरणक और स्वर्गफलक, भावनामें प्रवृत्ति उत्पन्न करती है। अथवा स्वर्गजनक याग अनुष्ठानमें नियुक्त करती है। जो स्वर्गार्थी, फिर भी अधिकारी हैं, वे याग करेंगे और अपनेमें स्वर्गजनक अपूर्व अर्थात् पुण्य विशेष उत्पन्न करेंगे। लक्षणका निष्कर्ष यही है, कि जिस वाक्य कामनायुक्त पुरुषको काम्य फललाभका उपाय कह देनेसे उसके अनुष्ठानिक प्रवृत्ति उत्पन्न हो, उस वाक्यको ही विधि कहते हैं।

वाक्य या पद धातु और प्रत्यय दोनों योगमें निष्पन्न

है। वाक्यके या पदके एकदेशमे जो लिङ्गादि प्रत्यय योजित रहता है उसी लिङ्गादि प्रत्ययका मुख्य अर्थ भावना अथवा नियोग है। भावना शब्दका अर्थ उत्पादन है—अर्थात् यह कुछ उत्पादन करनेकी प्रवृत्ति उत्पन्न करती है। यह भावना शाब्दी और आर्थीभेदसे दो तरह-की है। 'यजेत' इस वाक्यके एकदेशमें जो लिङ्ग प्रत्यय है, उसका अर्थ भावना है, तात्पर्य यह है, कि 'भावयेत्' अर्थात् जन्माना। यह भावना आर्थी अर्थात् प्रत्ययार्थ-लभ्य है। किस किस तरह किस प्रकारकी इत्याकार आकाक्षा या प्रश्न उठने पर उसके पूरण करनेके लिये "स्वर्ग, यागेन, अन्याधानादिभिः" इन सबके योगसे एक समन्वित विधि ही सम्पन्न होती है।

मीमांसकोंके मतसे आर्थी भावना—'किं, केन, कथं' इन तीन अंशोंमें पूर्ण होती है। जो आकांक्षाको पूरण करता है, वह आकांक्षोत्थाप्य है। आकाक्षोत्थाप्य-विधि मुख्य विधि नहीं। इस तरहकी आर्थी भावना भाव्य स्वर्ग, करणयाग और प्रकरण पठित समूचे वाक्य-सन्दर्भ यागोंकी इति कर्त्तव्यतावोधक है। 'किं, केन, कथं' इन तीनों आकांक्षाओंकी सामर्थ्यसे वाक्यान्तर संयोजित होने पर जो एक विधिवाक्य या महाविधि संगठित होती है, उसका आकार इस तरह हुआ करता है,—

"भावयेत् किं? स्वर्ग। केन? योगेन। कथ?..अन्या-धानादिभिरुपकारं कृत्वा योगेन स्वर्गं भावयेत्।"

अग्न्याधानादि क्रियाकलापके द्वारा याग और याग द्वारा स्वर्ग (स्वर्गसाधक पुण्य) उत्पादन करना।

लिङ्‌युक्त लौकिक वाक्य श्रवण करने पर भी प्रतीत होती है, कि यह व्यक्ति हमको इस वाक्यमें अमुक विषयमें प्रवृत्त होनेको कह रहे हैं और मैं अमुक कार्यमें प्रवृत्त होऊं, यही इसका अभिप्रेत है। वक्ता-का अभिप्राय तदुक्त विधिवाक्यके लिङ्गादि प्रत्ययका बोध्य है। अतएव वह वक्तृगामी है। अपौरुषेय वेद वाक्यमे यह शब्दगामी है। अर्थात् लिङ्गादि शब्द ही वह श्रोताको समझा देता है। क्योंकि, शब्दगामी है, इसी-लिये वह शाब्दी भावना नामसे अभिहित होता है। "स्वास्थ्यकामी प्रातर्भ्रमणं करे"। यह एक लौकिक विधि-वाक्य है। इस वाक्यको सुननेसे दो प्रकारका ज्ञान उत्पन्न होता है। एक प्रातर्भ्रमण स्वास्थ्य लाभका उपाय, जो मेरा कर्त्तव्य है और दूसरे जो कहते हैं, उनका अभिप्राय है, कि प्रातर्भ्रमण कर मैं स्वस्थ होऊं यह वाक्य वैदिक होने पर कहा जा सकता था, कि पहला ज्ञान आर्थी और दूसरा ज्ञान शास्त्रीय है।

कही हुई लक्षणाक्रान्त विधिकी दूसरी तरहका विभाग दिखाई देता है। यह विभाग चार प्रकारका है, उत्पत्ति, विनियोग, अधिकार और प्रयोग। जो एकमात्र कर्त्तव्य कर्मका वाधक है, वह उत्पत्ति विधि है। जैसे,—'अग्निहोत्रं जुहोति'। अग्निहोत्र वाक्य केवल अग्निहोत्र नामक कर्मका विधान करता है। अन्य किसी फल आदिकी वात कुछ नहीं करता। जो अङ्ग-कर्मका विधायक है, वह विनियोग विधि है। जैसे—'व्रीहिभिर्यजेत' 'दध्ना जुहोति'। व्रीहिहोम और दधिहोम अग्निहोम यागके अङ्ग हैं। जो फलस्वाम्यबोधक है, वह अधिकार विधि है। जैसे—'स्वर्गकामो यजेत' इसी विधि द्वारा मालूम होता है, कि यागकारी स्वर्ग लाभ करते हैं। इन तीन विधियोंके सम्मेलनको प्रयोगविधि कहते हैं। इस पर किसी मीमांसकका कहना है, कि प्रयोग विधिकल्प है और किसीके मतसे श्रौत है। जिस क्रम या जिस पद्धतिसे साङ्गप्रधान यागादि कर्म अनुष्ठित होंगे, वह क्रम या पद्धति प्रयोगविधि द्वारा विज्ञापित होती है।

अङ्ग और प्रधान।

जो अन्यार्थ है, वह अङ्ग है, जो अन्यार्थ नहीं, वह प्रधान है। अङ्गमात्र ही प्रधानका उपकारक है। अर्थात् मूल कर्मका सहाय या स्वरूपसम्पादक और प्रधानमात्र ही स्वयं फलजनक है। जैसे—कालीजी-की पूजा एक प्रधान क्रिया है, किन्तु स्नान आचमन और संकल्पादि उसकी अङ्गक्रिया है। यह अङ्गक्रिया भी दो तरहकी है—सिद्धरूप और क्रियारूप। द्रव्य और संख्या प्रभृति सिद्धरूप और वाकी क्रियारूप हैं। क्रियारूप अङ्ग भी दो है—सन्निपत्योपकारक और आरादुपकारक।

सिद्धरूप अङ्गके अर्थात् द्रव्यादिके लिये जो क्रियाका विधान है, वह क्रिया सन्निपत्योपकारक है। 'व्रीहिन्

अवहन्ति' 'सोमं अभिषुनोति' इत्यादि वाक्यमें व्रीहि और सोम द्रव्यमें अवघात और अभिषव क्रियाका विधान है जहां द्रव्यादिका उद्देश दिखाई नहीं देता, फिर भी, क्रियाका विधान है, वहां वह अङ्ग आरादुपकारक है। पूर्वोक्त सन्निपत्योपकारक कर्म प्रधान कर्मका उपकारक है और प्रधान कर्म उसका उपकार्य्य है। यह उपकार्य्य उपकारक भाव वाक्यगम्य है—प्रमाणान्तर गम्य नहीं। शेषोक्त आरादुपकारक कर्मके साथ प्रधान कर्मका जो उपकार्य्य और उपकारक भाव है, वह प्रकरणके अनुसार उन्नेय है।

अर्थवाद।

किसी विहित कर्म या किसी निषिद्धाचरणके क्रमसे प्रशंसा या निन्दा कर विधि या निषेधरूप वाक्य वेद भागके प्रामाण्य व्यवस्थापन करना ही वेदके जिस अंगका उद्देश है, उसी अंगको मीमांसक (वैदिक) अर्थवाद कहते हैं। ये अर्थवाद वाक्य गुणवाद, अनुवाद और भूतार्थ भेदसे तीन प्रकारका है।

"विरोधे गुणवादः स्यादनुवादोऽवधारिते।
भूतार्थवादस्तद्धानादर्थ वादस्त्रिधा मतः॥"

जो प्रमाण विरुद्ध अर्थका अभिधायक है, वह गुणवाद कहलाता है। जैसे 'आदित्यो यूपः' इस वाक्यका यूप ही आदित्य है। इस प्रकारका अर्थ प्रत्यक्ष विरुद्ध है। अतएव समझना होगा, कि यह उक्ति किसी एक गुण सादृश्यको अनुसारिणी है। आदित्य जिस तरह दिन पैदा कर यागका निर्वाह करता है उसी तरह यूप भी पशुबन्धन आश्रय द्वारा याग निर्वाह करता है।

जो प्रमाणसिद्ध अर्थ प्रकाश करता है, वह अनुवाद कहलाता है। जैसे—"वायुर्वै क्षेपिष्ठा देवता, वायुमेव स्वेन भागेनोपधावति, स एनं भूतिं गमयति" इत्यादि वाक्य है। वायु क्षिप्रगामो देवता है। यह अर्थ प्रत्यक्षप्रमाणलभ्य है, अतएव वायुको तदुचित भाग दे कर सन्तुष्ट करनेसे वह ऐश्वर्य प्रदान करता है। इस तरहका अर्थ ले कर "वायव्यं श्वेतमालभेत भूतिकामः" इस विधिवाक्यकी पोषकता करनी पड़ती है। जो प्रत्यक्ष प्रमाण विरुद्ध नहीं है फिर भी अप्राप्त या अज्ञात अर्थका ज्ञान पैदा करते हैं, वह भूतार्थवाद है। जैसे 'इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदयच्छ' इत्यादि वाक्य हैं। ये महाभारत और रामायणादि ग्रन्थोंके सम्बन्धके हैं ये प्रमाणविरुद्ध भी नहीं हैं प्रमाणान्तर प्राप्त भी नहीं। इसलिये भूतार्थवाद हैं।

अर्थवादमात्र ही विधिशक्तिका उत्तेजक हैं और विधिके साथ मिल कर विधिके अनुकूल अर्थका प्रकाशक बनता है। मीमांसक कहते हैं,—अर्थवाद वाक्यका यथाश्रुत आक्षरिक अर्थ अग्राह्य है। गुणवाद और अनुवाद इन दोनों अर्थवादोंके यथाश्रुत आक्षरिक अर्थका प्रामाण्य स्वीकार बिलकुल नहीं हुआ है। केवल भूतार्थवादके प्रामाण्य स्वीकृत दिखाई देता है।

अर्थवाद वाक्यमें जिस फलका उल्लेख रहता है, वह प्रलोभनमात्र है। फिर बहुत स्थानमें निन्दाश्रुति भी देखी जाती है, वह केवल भयप्रदर्शनमात्र है। अर्थवादके फलके विषयमें मीमांसकोंकी इस तरहकी एक उक्ति दिखाई देती है।

"पिब निम्बं प्रदास्यामि खलु ते खण्डलड्डुकम्।
पित्रैव मुक्तः पिबति न फलं तावदेव तु॥"

जैसे आरोग्यकामी पिता प्रलोभन दिखा कर अपने छोटे बालकको तिक्त भोजनको प्रवृत्ति उत्तेजित करते हैं, वैसे ही कुशलकामी शास्त्र भी फलका लोभ दिखा मनुष्योंको सद्प्रवृत्तिका उन्मेषण और असद् प्रवृत्तिका निवारण करनेकी चेष्टा करता है। बालक मिष्टान्नके लोभसे तिक्त पदार्थ खाता है सही, किन्तु पिता उसको मिष्टान्न नहीं देता, वैसे ही शास्त्र भी स्वोपदिष्ट अर्थके अनुष्ठाताको स्वोक्त फल प्रदान नहीं करता। पिताकी इच्छा पुत्र आरोगी हो, शास्त्रकी इच्छा मानवमण्डल ऐहिक और पारत्रिक कुशल लाभ करे। पिताकी प्ररोचनासे पुत्र यदि तिक्त भोजन करे, तो आरोग्यताके सिवा उसको कुछ नहीं मिलता अर्थात् उसे मिष्टान्न नहीं मिलता, उसी तरह शास्त्रकी प्ररोचनासे शास्त्र उपदिष्टपथमें अवस्थान करनेसे जीव ऐहिक और पारत्रिक कुशलके सिवा दूसरा कोई फल नहीं पाता।

मन्त्र।

"प्रयोगसमवेतार्थस्मारका मन्त्राः" अर्थात् अनुष्ठान सम्बन्धीय द्रव्य देवतादिका स्मारक है और उस अर्थका प्रकाशक हो वेदमन्त्र है। यज्ञ करनेके समय

जब 'होता' किसी देवताको लक्ष्य कर प्रज्वलित अग्निमें कोई द्रव्य डालता है, उस समय उस द्रव्य या देवताके स्मरण कर लेनेके लिये वेदका जो अंश उस समय उच्चारित होता है, उसके उस उस अंशको मन्त्र कहते हैं। जैसे—"अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देव मृत्विज होतारं रत्नधातमं" (ऋक् १।१।१) यह मन्त्र पढ़नेसे अग्नि-देवताका स्मरण होता है। अतएव इसको अग्नि देवताका मन्त्र कह सकते हैं। इसी तरह अन्य मन्त्रोंके लक्षण हैं। यह मन्त्र ऋक्, यजुः और सामवेदसे तीन हैं। अनुष्ठानके समय मन्त्रकी आवृत्तिमें द्रव्य और देवतादिकी आत्मामें क्रमविशेषका स्मरण होता है। उसके द्वारा अदृष्ट विषयकी उत्पत्ति होती है। मन्त्रके प्रामाण्य और प्रयोग विधिके साथ ऐक्यसे परिगृहीत हुआ करता है, स्वातन्त्र्यसे नहीं होता।

नामधेय।

"उद्भिदा यजेत पशुकामः" "विश्वजिता यजेत स्वर्गकामः', "गोमेधेन यजेत" इत्यादि वाक्यमें जो उद्भिद् विश्वजित्, गोमेध आदि शब्द हैं, वे सब नामधेय हैं अर्थात् विशेष विशेष यागोंके नाम है। इन सब अंशोंमें अर्थात् वाक्यों-विधिका लक्षण न रहनेसे विधि नहीं है, स्तुति या निन्दा न रहनेसे अर्थवाद नहीं है, मन्त्रचिह्न न रहनेसे मन्त्र भी नहीं है। अतएव केवलमात्र नाम ही है। ये सब नाम भागविधि अंशमें अवस्थित यागादिके साथ विना भेदके अन्वय प्राप्त होते हैं।

यज्ञकी तरह वैदिक होम और दान यह तीनों कर्म ही नामधेय हैं। इसी तरह मीमांसादर्शनमें शब्द, शब्द प्रामाण्य, विधि, अर्थवाद, मन्त्र और नामधेय आदि विषयकी आलोचना हुई है।

अन्यान्य दर्शनोंकी तरह इस दर्शनमें भी शरीर, इन्द्रिय मन, जीव, ईश्वर, ब्रह्म, सृष्टिका मूलपदार्थ, स्वर्ग, नरक, मोक्ष, सुख, दुःख, प्रमाण और प्रमेय और सृष्टि, स्थिति और प्रलय आदिका विचार हुआ है। इन सब विषयों-की भी संक्षिप्त आलोचना हुई।

शरीर, इन्द्रिय और मन।

मीमांसक मतसे शरीर पाञ्चभौतिक है। इन्द्रियां भी भौतिक हैं, किन्तु उन सबोंका भौतिकत्वप्राय न्यायदर्शन-की तरह है। इस दर्शनमें घ्राण, रसना, चक्षुः और त्वक् ये चार इन्द्रिया क्रमसे पृथ्वी, जल, तेज और वायुभूतकी विकृतिरूपसे निर्दिष्ट हैं। केवल श्रोत्रको इस दर्शन-में दिगात्मक कहा गया है। दिक् ही कर्णशष्कुल्य-वच्छिन्न हो कर शब्द ज्ञानका कारण हुआ है। "दिशः श्रोत्र" यह वेदवाक्य उसका प्रमाण है। मीमांसक कहते हैं—मन भी भौतिक है, किन्तु पृथिव्यादिका अन्यतम है, अर्थात् वह पृथिवी प्रकृतिक ही हो या वायु-प्रकृतिक ही हो, उसमें हमें कोई आपत्ति नहीं। फलतः यह नश्वर है।

जीव।

इस दर्शनके मतसे जीव अनेक हैं, मीमांसकगण वेदान्तकी तरह एक-जीववादी नहीं। जीव आत्माका ही अवस्थाविशेष है।

वेदान्तप्रसिद्ध ब्रह्माद्वैत मीमांसादर्शनका अभिमत है। इस दर्शनके मतसे अद्वय ब्रह्मबोधक है और नित्येश्वरबोधिका श्रुतियां केवल अर्थवाद हैं। ब्रह्म और ईश्वरके सम्बन्धमें इस दर्शनका मत प्रायः सांख्यदर्शन-की तरह है। मीमांसक द्वैतवादी और नित्य जग-द्वादी हैं।

मीमांसादर्शनमें वैशेषिक दर्शनकी तरह सात पदार्थ स्वीकृत हुए हैं। द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव—ये ही सात पदार्थ हैं। इनमें कुछ विशेषतायें ये हैं, कि वैशेषिकदर्शनमें नौ प्रकारके द्रव्य पदार्थ हैं, यथा—क्षिति, अप, (जल) तेजः मरुद्, व्योम, काल, दिक्, देह और मन किन्तु मीमांसक विशेष-रूपसे दश द्रव्यवादी हैं, फिर कोई-कोई मीमांसक एकादश द्रव्यवादी हैं। दश द्रव्यवादियोंके मतसे तम अर्थात् अन्धकार भी एक द्रव्य पदार्थ है। एकादश वादियों के मतसे शब्द एक अतिरिक्त नित्य द्रव्य है। जो ध्वनिसे व्यक्त होता है, वही शब्द है। शब्दव्यञ्जक ध्वनि बुद्धिगम्य है अर्थात् समझमें आती है। ध्वनि गुण होने पर उस-का व्यङ्ग शब्दपदार्थ गुण नहीं, वह द्रव्य है। इसके मतसे गन्ध नित्य है, बोध्यबोधकका सम्बन्ध भी नित्य है। केवलमात्र रचनामें अर्थात् व्यक्तकरणमें पुरुषका कर्तृत्व है। वैदिक सन्दर्भ अलौकिक है अर्थात् अपौरुषेय है।

अतएव उसके अनुवाद या उच्चारणके सिवा अन्य किसी विषयमें पुरुषका कर्त्तृत्व नहीं है।

शरीर भौतिक है, आत्मा उससे भिन्न है। इस दर्शनके मतसे आत्मा अनेक और प्रति शरीरमें भिन्न, अजर, अमर और ज्ञानशक्तिविशिष्ट है। आत्मा सुख-दुःख भोक्ता है और मानस अहंप्रत्ययका अधिगम्य है। आत्मा विभु है, आत्माकी ज्ञान, शक्ति आदि शरीरमें ही स्फुर्त्ति होती है, शरीरके बाहर नहीं। ज्ञान आत्मा-को शक्ति या गुण है। मोक्षकालमें आत्मा इन्द्रिया-तीत आगमपायिनी बुद्धि और सुख आदिसे रहित हो जाती है और स्वरूपगत ज्ञानशक्ति और सुख आविष्कृत होता है।

इस मतसे स्वर्ग सुखविशेष और नरक दुःखविशेष है। यह शरीर स्थानभेदसे भोग्य है। स्वर्ग सुखका और नरक भोगका उपभोग्य भोग्यस्थान भी है और शरीर भी है।

जो अनतिशय आनन्दस्वरूप और दुःखविवर्जित है वही स्वर्ग है। अथवा जहां कभी दुःखदैन्यका दर्शन नहीं होता और अभिलाषोपनीत होता है अर्थात् उस-की इच्छा होते ही उत्पन्न होता है, वही स्वर्ग है। इसी स्वर्गके लिये जीव प्रार्थना करता है। यागादि कर्म द्वारा ज़ीवको स्वर्ग प्राप्त हुआ करता है।

वैशेषिक दर्शनकी तरह इस दर्शनके मतसे सुख दुःखादि विशेष गुणोंके विच्छेदसे ही मोक्ष होता है। भोगायतन शरीर, भोगसाधन और भोग्यविषय यहसब प्रपञ्चान्तर्गत हैं। अतएव त्रिधाविभक्तप्रपञ्च उक्त तीन प्रकारसे पुरुषको बन्धन करता है अर्थात् भोग कराता है। भोग शब्दका अर्थ—सुखदुःखका साक्षात् करना है। इन तीनोंका सम्बन्ध परित्याग कर सकनेसे जीव मोक्ष पाता है। संसार दशामें आत्माका निजानंद अभिभूत या आच्छन्न रहता है। मोक्षकालमें उसकी स्फूर्त्ति होती है। मोक्ष होने पर शरीर और इन्द्रियां नहीं रहती, केवल मन रहता है। अन्यान्य दार्शनिकोंके मतसे मन भी नहीं रहता। क्योंकि उनके मतसे इन्द्रिय ही मन है, अतएव यह प्राकृतिक है। प्राकृतिक किसी तरह-का सम्बन्ध रहनेसे मुक्ति नहीं होती। प्रकृति या मायाके बन्धनमें जीव बंधा हुआ है। यदि उसके साथ सम्बन्ध ही रहा, तो मुक्ति हुई किस तरह? सुतरां प्राकृतिक कोई भी बन्धन रहनेसे मुक्तिकी सम्भावना नहीं। मीमांसकों-के मतसे मन रहनेसे ही मुक्तजीव अनन्त कालके लिये अपरिच्छिन्न सुखका स्वादग्राही होता है।

चैतन्य अर्थात् ज्ञानशक्ति, आनन्द अर्थात् सुख, नित्यत्व और विभुत्व अर्थात् सर्वव्यापित्व—ये ही सब आत्माके अपने धर्म हैं। जब जीवका मोक्ष होता है, उस समय उसमें ये सब विद्यमान रहते हैं। इसका उच्छेद होता।

मोक्षकी प्रणाली—काम्य, निषिद्ध शारीर और मानसक्रियाका वर्जन कर केवल निष्काम नित्य नैमित्तिक कर्ममें रत रह सकने पर या आत्मतत्त्व ज्ञानमें डूबे रहने पर पूर्वजन्मके कारणीभूत धर्माधर्मकी उत्पत्ति रुक जाती है। सञ्चित धर्माधर्म भी दग्ध बीजकी तरह निःशक्तिवान् हो जाता है। जब तक देह रहती है, तब तक जो भोग होता है, उसी भोगसे प्रारब्ध कर्म क्षयको प्राप्त होता है। सुतरां सुख दुःख और शरीरोत्पत्ति-का कारणीभूत प्रारब्ध सञ्चित और आगामी धर्माधर्मके अभावमें भविष्यत्में सुख दुःख और शरीर उत्पन्न नहीं होता। यह न होनेसे ही मोक्ष है। मुक्त तब अशरीर हो केवलमात्र मूल मनको ले कर अनवरत आत्म सुखास्वाद-से परितृप्तहुआ करता है।

शास्त्रमें जिस तत्त्वज्ञानकी प्रशंसा दिखाई देती है, वह यज्ञाङ्ग और मोक्षाङ्ग दो तरहका है। यज्ञादिकालका आत्मज्ञान यज्ञफलका पोषण करता है, फलका आधिक्य उत्पन्न करता है और सार्वभौमिक आत्मज्ञान मोक्षफलके कारणभावको प्राप्त होता है।

कर्मका फल अदृष्ट है। अदृष्ट शुभाशुभ भेदसे दो तरह-का है। विहित कर्मका फल शुभादिष्ट, निषिद्ध कर्मका फल अशुभादिष्ट है। इसीको पुण्य और पाप कहा जाता है। शुभा-दृष्ट भी दो तरहका है—एक अभ्युदयका हेतु और दूसरा निःश्रेयसका उपाय। सकाम कर्ममें अभ्युदय, लाभ होता है और निष्काम कर्ममें निःश्रेयस अर्थात् मोक्षलाभ होता है। निष्काम कर्म जो अदृष्ट उत्पादन करता है कर्मी उसीको सामार्थ्यसे निःश्रेयस प्राप्त कर कृतार्थ होता

है। जो निःश्रेयसजनक नहीं, वह अभ्युदयका अर्थात् ऐहिक और पारलौकिक उन्नतिका जनक है।

इस दर्शनके मतसे सुख दुःख अत्यन्त पृथक् है। सुखका अभाव दुःख है और दुःखका अभाव ही सुख है, ऐसा नहीं। सुख और दुःख संसार अवस्थाओंमें वैषयिक, आभ्यासिक, मानोरथिक और आभिमानिक इन चार प्रकारके विभागमें भोग होते देखे जाते हैं। आत्मसुख इन सब सुखोंसे पृथक है। दुःखगुण आत्माका स्वाभाविक नहीं है वह आरोपित या कल्पित है। यथार्थमें यह बुद्धिका गुण है।

मीमांसादर्शनमें ६ प्रमाण माने गये हैं। यह ६ प्रमाण वादी है। प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति और योग्यानुलब्धि यही छः प्रमाण हैं।

मीमांसक सर्वध्वंसरूप महाप्रलयको नहीं मानते। यह परिदृश्यमान जगत् बिलकुल ही नहीं था, पीछे हुआ, इस तरहकी अभिनव सृष्टि वे नहीं मानते। वे कहते हैं, कि 'न कदाचिदनीदृशम्' अर्थात् इस समय जो जगत् दृष्ट हो रहा है, इसका आत्यन्तिक और सर्वथा अन्यथाभाव किसी समय नहीं था। सर्वध्वंसरूप महाप्रलय युक्तिके विरुद्ध है, अतएव मिथ्या है। शास्त्रमें जो महाप्रलय शब्द आया है, उसका अर्थ खण्डप्रलय ही समझना चाहिये। महाप्रलयवाक्य मीमांसकोंके लिये केवल अर्थवाद है।

मीमांसक कहते हैं, कि पुराणादि शास्त्रोंमें जिन शरीरधारी इन्द्रादि देवोंका वर्णन आया है वे सब अर्थवाद हैं। अर्थात् ऊपर कहे हुए शरीरधारी इन्द्र आदि देवता यथार्थमें नहीं हैं। जिस देवताका जो जो मन्त्र वेदमें लिखा गया है, वह देवता वह मन्त्रस्वरूप हैं, मन्त्रातिरिक्त देवताओंके सम्बन्धमें कोई प्रमाण नहीं मिलता। वरं उसके विरोधमें बहुतेरे प्रमाण पाये जाते हैं। फलतः मीमांसादर्शनमें देवता विषयमें जो मत है, वह अतिशय कठिन और जटिल है, इसका सुस्पष्टभावसे प्रतिपन्न करना बहुत कठिन है। मीमांसक कहते हैं, यदि मन्त्रके सिवा कोई शरीरधारी देवता हों और उन देवताओंकी पूजा की जाये और वे ही यदि घटों और मूर्त्तियोंमें अधिष्ठित हों, तो घटें और मूर्त्तियां उनके भार सहनेमें असमर्थ हो चूर्ण विचूर्ण हो जातीं। अतएव देवताओंको मन्त्रात्मक कहनेसे कोई दोष नहीं होता। (सर्वदर्शनस० मीमांसाद०)

शङ्कराचार्य वेदान्त-व्याख्यामें मीमांसकके इस मतको खण्डन कर देवताके शरीरत्वको प्रमाणित किया है।

वेदान्त देखो।

मीमांसाका संक्षिप्त इतिहास।

किस समय मीमांसाशास्त्रका सूत्रपात हुआ उसका निर्णय करना असम्भव है। प्राचीन उपनिषदोंमें सांख्य, योग और वेदान्तका उल्लेख रहने पर भी मीमांसा न्याय अथवा वैशेषिकका उल्लेख नहीं है। उपनिषद्में बादरायण, जैमिनि, पतञ्जलि या कणादका भी नाम नहीं आया है। प्राचीन उपनिषदोंमें जहां जहां मीमांसा शब्द आया है, वहांके तत्त्वनिर्णयके अर्थसे किसी शास्त्रविशेषका बोध नहीं होता। इससे अनुमान होता है, कि उपनिषद्‌के समयमें जैमिनिका मीमांसादर्शन, बादरायणका ब्रह्मसूत्र, न्याय या वैशेषिकदर्शनका प्रचार नहीं हुआ था। पहले कर्मकाण्डात्मक मीमांसा थी छान्दोग्य उपनिषद् और आश्वलायन गृह्यसूत्रमें उसका उल्लेख है। वह मीमांसा सविस्तार या सुप्रणालीबद्ध थी कि नहीं, यह कहा जा नहीं सकता।

सभी हिन्दूशास्त्रकार स्वीकार करते हैं, कि जैमिनि मीमांसासूत्रके कर्त्ता हैं। उन्होंने पहले ही मीमांसाशास्त्रका प्रचार किया था, इसीलिये यह पूर्वमीमांसा और बादरायणने उसके बाद वेदान्तसूत्रमें जो ज्ञानतत्त्वकी मीमांसा की, वह उत्तरमीमांसा या पीछेकी मीमांसा कही गई, किन्तु इस समयका प्रचलित जैमिनिके मीमांसासूत्रकी आलोचना करनेसे स्पष्ट ही मालूम होता है, कि महर्षि जैमिनिने अपने सूत्रमें आत्रेय, बादरायण, बादरि, लावूकायन, ऐतिशायनकी मीमांसाके मतको उद्धृत किया है। अर्थात् जैमिनिका मीमांसाग्रन्थ सूत्राकारमें प्रचलित होनेसे पहले भी आत्रेय आदिके मत मीमांसाके सम्बन्धमें प्रचलित थे। जैमिनिने जैसे बादरायणका मत उद्धृत किया है, बादरायणने भी उसी तरह उत्तरमीमांसा या वेदान्तसूत्रमें जैमिनिके मतका उल्लेख किया है। अतएव प्रचलित पूर्वमीमांसा या जैमिनिसूत्र आदि

मीमांसा ग्रन्थ कह कर स्वीकार नहीं किया जा सकता। सिवा इसके उत्तर और पूर्व दोनों मीमांसासूत्रोंमें जैमिनि और बादरायणका नामोल्लेख रहनेसे किसीको भी आगे पीछेका नहीं कहा जा सकता।

जब नाना सम्प्रदायोंके अभ्युदयमें ज्ञान और कर्मकाण्डानुरागी विभिन्न लोगोंमें वैदिक क्रियाकलापके अनुष्ठानके सम्बन्धमें मतभेद चल रहा था, जब कर्मकाण्डकी ओर सबकी दृष्टि पड़ी, प्रत्येक यज्ञके प्रत्येक कार्यमें क्या करना होगा, सभीको जान लेनेकी आवश्यकता हुई, मूलप्रणालीको भूल कर लोग जब एक ही यज्ञको भिन्न भिन्न प्रणालीसे करने लगे, जब प्रत्येक अनुष्ठानमें विरोध उपस्थित होनेकी संभावना हुई, उसी समय मीमांसाशास्त्रकी आवश्यकता हुई थी। एक मीमांसा चाहिये, लेकिन किस तरहकी मीमांसा चाहिये, वह समझानेके लिये आत्रेय, लावुकायन, ऐतिशायन आदि नाना मुनियोंने अपना अपना मत प्रकाशित किया। किन्तु इस पर भी सर्वाङ्गसुन्दर मीमांसा न हुई। अन्तमें महर्षि जैमिनिने सभी मुनियोंके मतोंकी समालोचना कर वैदिक क्रियाकाण्ड समझा देनेके लिये "जैमिनिसूत्र"का प्रचार किया। खृष्टान धर्म्मयाजकोंने वाइबिलके तत्त्वाङ्गोंके समझानेके लिये जैसे Hermeneutic तत्त्वका प्रचार किया है, जैमिनिने उस तरहसे मीमांसा शास्त्रका प्रचार नहीं किया। धर्मयाजकोंने वाइबिलके जितने प्रकारके पाठोंको स्वीकार किया है, उनके समन्वयकी ओर Hermeneutic (हेरमेण्टिको)-का लक्ष्य है। वे वाइबिल शब्दको प्रधान धर्म कह कर उतना निर्भर नहीं करते, किन्तु वेदका शब्दवाद ही जैमिनिका प्रधान लक्ष्य है। उनके मतसे वेदका प्रत्येक शब्द ही अपौरुषेय आप्त-वाक्य है। यह शब्दवाद समझ जाने पर वैदिक धर्म्म समझमें आता है। इसीसे शब्दवाद या वेदकी अपौरुषेयता प्रतिपादनपूर्वक वेदके ब्राह्मणभागमें जो सब यागयज्ञादिक हैं वे सब किस तरह किस उपायसे सम्पन्न होंगे, और उनके उपलक्षमें किस स्थलमें किस भावमें मन्त्रका प्रयोग करना होगा, उसीका सम्यक् विचार कर जैमिनिने मीमांसाशास्त्र स्थापन किया है।

हिन्दू शास्त्रके मतसे गार्हस्थ्यधर्म प्रतिपालन करनेसे पहले वैदिक कर्मकाण्ड आवश्यक है। इसीलिये जैमिनिका कर्मकाण्डात्मक दर्शन पूर्वमीमांसा या कर्ममीमांसा नामसे प्रसिद्ध है और जीवनके उत्तरांश या शेष जीवनमें आलोच्य वैदिक ज्ञानकाण्ड समझनेके लिये जो दर्शन प्रवर्त्तित हुआ है, वही उत्तरमीमांसा या ब्रह्मसूत्रके नामसे प्रसिद्ध है।

मीमांसासूत्रको समझानेके लिये जिन महात्माओंने लेखनी उठाई थी, उनमें हम भगवान् उपवर्षका नाम सबसे पहले देखते हैं। शबरस्वामी और उनके बादके वार्त्तिक और टीकाकारोंने भी उन उपवर्षको ही वृत्तिकारके नामसे उल्लेख किया है। दुःखका विषय है, कि इस समय उपवर्षकी वृत्ति नहीं मिलती। इस समय जो सब भाष्य और टीकायें मिलता हैं, उनमें शबरस्वामीका भाष्य ही सबसे प्राचीन है। उन्होंने विस्तृतरूपसे मीमांसाशास्त्रको समझानेकी प्रथम चेष्टा की। (शबरस्वामी शब्द देखो)

शबरस्वामीने जो भाष्य किया था, उसको दार्शनिक भावसे समझानेके लिये कुमारिलभट्टने मीमांसावार्त्तिकका प्रचार किया। कुमारिलने शबरस्वामीके भाष्यके प्रथम अध्यायके प्रथम पद पर जो वार्त्तिक प्रचार किया, उसका नाम श्लोकवार्त्तिक है। प्रथम अध्यायके द्वितीय पादसे ले कर तृतीय अध्यायके चतुर्थ पाद तक जो वार्त्तिक प्रचार किया, उसका नाम तन्त्रवार्त्तिक है। चतुर्थ अध्यायके पञ्चम पादसे द्वादश अध्याय तक कुमारिलने जो वार्त्तिक किया, वही "टुप् टीका" नामसे विख्यात है। मीमांसाशास्त्रको बहुतेरे दर्शन (philosophy) कहनेमें कुण्ठित होते हैं, किन्तु अधिक क्या कहा जाय, महामति कुमारिलभट्टने ही श्लोकवार्त्तिकमें मीमांसाकी दार्शनिकता स्थापन की है। श्लोकवार्त्तिकको एक उत्तम दर्शन ग्रन्थ कहनेमें किसीको कोई आपत्ति नहीं होगी।

(कुमारिलभट्ट शब्दमें विस्तृत विवरण देखो)

कुमारिल द्वारा श्लोकवार्त्तिक रचित होनेसे पहले श्लोकमें रचित "संग्रह" नामसे एक मीमांसाग्रन्थ प्रचलित था। मीमांसादर्शनमें टीकाकारने इस 'संग्रह'का उल्लेख किया है, किन्तु इस समय वह नहीं मिलता।

हम कुमारिलके बाद प्रसिद्ध मीमांसक प्रभाकरको

पाते हैं। माधवाचार्यने नाना स्थानमें उनको "गुरु" कह कर उल्लेख किया है। उन्होंने "वृहती" नामक ग्रन्थमें सविस्तार मीमांसाशास्त्रकी आलोचना की थी। उन्होंने कई जगहोंमें कुमारिलके विपरीत मतको प्रकाश किया है। उनके और भट्टकुमारिलके मतमें यह एक विशेषत्व है, कि कुमारिलके मतसे वेदाध्ययन विधेय है और प्रभाकरके मतसे अध्यापना विधेय है।

इसके वाद पार्थसारथि-मिश्रका नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने कुमारिलके मतको समझानेके लिये 'शास्त्र-दीपिका' और 'न्यायरत्नमाला' का प्रचार किया। उन्होंने कई स्थानोंमें प्रभाकरके मतको दोषावह वताया है। पार्थसारथि मिश्रके अनुवर्त्ती विख्यात कर्नाटक ब्राह्मण सोमनाथका नाम भी उल्लेखयोग्य है। उन्होंने 'मयूख-माला' नामक शास्त्रदीपिकाकी एक उत्तम टीका प्रणयन की है।

प्रभाकरके वाद जो सव मीमांसक आविर्भूत हुए हैं, उनमें माधवाचार्यका नाम प्रथम कहा जा सकता है। शावरभाष्य और कुमारिलके मीमांसावार्त्तिकमें मीमांसा का जो जटिल अंश है, उस जटिल अंशको छोड़ साधारणकी सुविधाके लिये माधवाचार्यने "जैमिनीय न्यायमाला-विस्तार" प्रकाशित किया। इस ग्रन्थमें मीमांसादर्शनके प्रतिपाद्य सभी विषय स्थूलभावसे आलोचित हुए हैं।

पार्थसारथि मिश्रके वाद हम मीमांसावार्त्तिकके प्रसिद्ध टीकाकार खण्डदेवका नाम पाते हैं। उन्होंने स्वरचित "मीमांसाकौस्तुभ"में सविस्तार मीमांसाशास्त्र-की आलोचना की है। उन्होंने माधवाचार्य और पार्थ-सारथिका भी मत वीच-वीचमें उल्लेख किया है।

सिवा इसके जैमिनिके मीमांसा-दर्शनकी वहुत टीकायें मिलती हैं। उनमें राघवानन्दकी न्यायावली दीधिति उल्लेखयोग्य हैं। इस ग्रन्थमें प्रत्येक मीमांसा-सूत्रके प्रत्येक शब्दकी व्याख्या और प्रत्येक सूत्रार्थ विशद भावसे समझाया गया है।

मुसलमानोंके अभ्युदयके वाद मीमांसाके वहुत प्रकरण ग्रन्थ रचित हुए हैं। सूत्रभाष्यका परिचय देनेके लिये उन सवोंकी रचना नहीं हुई हैं। उनमें स्मृतिमें लगानेके लिये केवल कई सूत्रोंका प्रणयन किया गया है। ये प्रकरण वर्त्तमान स्मार्त्तोंके अवलम्बन है।

नीचे वर्णानुक्रमसे मीमांसकोंके और उनके रचे हुए ग्रन्थोंके नाम दिये गये हैं—

ग्रन्थकार	ग्रन्थके नाम
अनन्तदेव	फलसाङ्कर्य्य खण्डन, वलावल-क्षेपपरिहार
अनन्तदेव (आपदेवका पुत्र)	देवस्वरूपविचार
अनन्तमिश्र	न्यायप्रदीप
अनन्ताचार्य्य	वेदार्थचन्द्र प्रतिभाविलास
अप्पय्य दीक्षित (१५वीं शताब्दी रङ्गराजा ध्वरीन्द्रका पुत्र)	उपक्रमपराक्रम, नयमयुख मालिका विधि रसा-यन, अधिकरणमाला
आपदेव (अनन्तदेवका पुत्र)	अधिकरणचन्द्रिका, मीमांसान्याय प्रकाशिका वादकौतुहल, आपदेवीय
इन्द्रपति	मीमांसारपल्वल
करविन्द स्वामी	मीमांसासूत्र भाष्य
कविन्द्राचार्य्य	मीमांसासर्वस्व
कुमारिलभट्ट	श्लोकवार्त्तिक, तन्त्र-वार्त्तिक, टुप्टीका
कृष्णदेव	तन्त्रचूडामणि
कृष्णनाथ	भावकल्पलता-टीका
खण्डदेव	मीमांसाकौस्तुभ, भाष्या तार्थनिरूपण
गोपालभट्ट	मीमांसातत्त्वचन्द्रिका, मीमांसाविधिभूषण
गोविन्दभट्ट	मीमांसासङ्कल्पकौमुदी अधिकरणमाला
गोविन्दमहामहोपाध्याय	अधिकरणमाला
चन्द्रशेखर	धर्मविवेक
जिन्दक (काश्मीर कवि) मङ्खके समसामयिक	
जीवदेव (आपदेवका पुत्र)	भट्टभास्कर
जैमिनि	मीमांसासूत्र

ग्रन्थकार	ग्रन्थके नाम
तीरुमलाचार्य्या	सहस्रकरिणी
त्रैलोक्य मीमांसक (काश्मीर कवि मंखके समकालीन)	
दामोदर	मीमांसानयविवेकालंकार।
देवनाथ ठाकुर	अधिकरण कौमुदी अधिकरणसार
नारायण तीर्थ	भाट्टभाषा प्रकाशिका
पार्थसारथिमिश्र	मीमांसावार्त्तिक टीका, मीमांसान्यायरत्नाकर मीमांसावादार्थ
प्रभाकर गुरु	वृहती मीमांसासूत्रभाष्य
प्रभाकरभट्ट	मीमांसा नयविवेक
भट्ट	मोक्षवादमीमांसा
भवनाथ मिश्र	मीमांसानयविवेक (मीमांसासूत्र टीका)
भास्कर राय	मत्वर्थलक्षणविचार
भास्कराचार्य्य	लघुभास्करीय
मण्डनमिश्र	भावनाविवेक
माधवाचार्य्या	जैमिनीय न्यायमाला विस्तार
मुद्गलभट्ट	भावनासंग्रह भावकल्पलता
मुरारि मिश्र	अङ्गत्वनिरुक्ति
यदुपति	वल्लभाचार्य्यकृत मीमांसा भाष्यटीका
रघुवीर	मीमांसाकुतुहल
रङ्गराजाध्वरीन्द्र	मीमांसापरिभाषा
राघवानन्द सरस्वती	न्यायावलीदीधिति, मीमांसास्तवक।
राजचडामणि	तन्त्रशिखामणि
रामकृष्ण	मीमांसाप्रकाशिका, अधिकरण कौमुदी न्यायदर्पण।
रामचन्द्रभट्ट	विधिवाद, अधिकरणमाला।
रामेश्वर शास्त्री (सुब्रह्मण्यका पुत्र)	विहारवापी

ग्रन्थकार	ग्रन्थके नाम
रुद्रभट्टाचार्य्या	जैमिनिसूत्र संक्षेप।
लौगाक्षिभास्कर (मुद्गलका पुत्र)	अर्थसंग्रह
वरदमूर्त्ति	वाजपेयादि संशयनिर्णय
वरदराज	मीमांसानयविवेकदीपिका
वल्लभाचार्य	मीमांसासूत्रभाष्य
वाचस्पति मिश्र	न्यायकणिका (विधिविवेकटीका)
वसुदेव दीक्षित	मीमांसाकुतुहलवृत्ति, पयोग्रह समर्थनप्रकार
विश्वकर्म्मन्	मीमांसाका सार
विश्वेश्वर भट्ट	मीमांसा कुसुमाञ्जलि
वेङ्कटाचार्य	मीमांसाका मकरन्द
वेङ्कटाध्वरिन	विधित्रय, परित्राण
वेदान्तनारायण	अधिकरण चिन्तामणि
वैद्यनाथ (रामचन्द्रका पुत्र)	न्यायविन्दु (जैमिनिसूत्र टीका) न्यायमालिका,
शङ्कर	विधिरसायनदूषण
(नारायणभट्टके पुत्र)	विधिरसायनदूषण मीमांसाबालप्रकाश
शङ्कर	मीमांसानयविवेक शङ्करदीपिका
शङ्करविन्दुभट्ट	चिन्त्यसंग्रहवाद
शङ्कर शुक्ल	मीमांसासार्थप्रदीप
शवरस्वामी	मीमांसासूत्रभाष्य (शावरभाष्य)
शालिकनाथ	मीमांसाभाष्यटीका, प्रकरण पञ्चिकानयरत्न
शिरोमणि भट्टाचार्य	वाजपेयरहस्य
श्रीनिवासाचार्य	जिज्ञासादर्पण
सत्यानन्दतीर्थ	वेदप्रकाश
हलायुध	मीमांसाशास्त्रसर्वस्व

सिवा इसके अज्ञातनाम ग्रन्थकार रचित ये सब मीमांसा-ग्रन्थ प्रचलित हैं। यथा—अधिकरणरत्नमाला, कर्मभेदविचार, गुणगुण्यनेकशतिवाद, गुणविधि, गुरुमतसंक्षेप, तत्क्रतुन्यायवाद, तत्त्वदीपनी, तन्त्र-

चन्द्रिका, न्यायतत्व, न्यायभूषण, न्यायमार्त्तण्ड, न्याय मालावार्त्तिकसंग्रह, न्यायरत्न, (मीमांसासूत्र टीका) न्यायसंग्रह, पुरुषकारमीमांसा, पूर्वमीमांसाकारिका, प्रतिभाविलास, प्रयोगविधि, फलवती, (मीमांसा सूत्र-टीका) भाट्टशब्दपरिच्छेद, भाट्टशब्देन्दुशेखर, भाट्ट संग्रह, भाट्टोत्पादन भावनाविचार, मीमांसाकौमुदी, मीमांसाजीवरक्षा, मीमांसाधिकरणन्याय विचारोपन्यास, मीमांसाधिकरणमाला टीका, मीमांसानयविवेकार्थ-मालिका, मीमांसान्यायपरिमलोल्लास, मीमांसापरि-भाषा, मीमांसापादार्थनिर्णय, विधिरत्नमाला, विधि सुधाकर।

मीमांसित (सं० त्रि०) विचार-पूर्वक स्थिरीकृत, जो विचारपूर्वक स्थिर किया जा चुका हो।

मीमांस्य (सं० त्रि०) १ मीमांसाके योग्य। २ जिसकी मीमांसा करनी हो।

मीर (सं० पु०) मिन्वन्ति प्रक्षिपन्ति नद्यो जलान्यत्रेति मिन् कन् (शुसिचिमिमादीर्घश्च। उण् २।२५) नतो दीर्घ त्वञ्च। १ समुद्र। २ पर्वतका एक भाग। ३ सीमा, हद। ४ जल, पानी।

मीर (फा० पु०) १ प्रधान, नेता। २ धार्मिक आचार्य। ३ सैयद जातिकी उपाधि। ५ किसी बड़े सरदार या रईसका पुत्र। ४ ताश या गंजीफेमेंका सबसे बड़ा पत्ता। ६ किसी काममें लगे हुए कई आदमियोंमेंसे वह जो सबसे पहले काम कर ले। ७ वह जो खेलमें औरों-से पहले जीत कर या अपना दांव खेल कर अलग हो गया हो।

मीर अजीज बक्सी—एक मुसलमान सेनापति। इसने लाहोरके महाराष्ट्रीय शासनकर्त्ता अदिनावेग खाँका सेना पति बन कर घुड़सवारोंको साथ ले दुर्द्धर्ष शिखजातिके विरुद्ध चढ़ाई की थी। माझा नामक स्थानमें सिखोंने हार खा कर जङ्गलमें आश्रय लिया। किन्तु यहां भी उन्हें अजीजके हाथसे त्राण नहीं। अजीजने जङ्गलको घेर लिया और उन छिपे हुए सिखोंका जङ्गली पशुकी तरह शिकार किया। केवल रामगडिया मिसलके सरदार नोधा सिंह और उसके अधिनायकगण, यशसिंह, मल्लसिंह, और तारासिंह नामक तीन भाई तथा कोगडावासी जय सिंह, कनाइया और अमर सिंह नामक सरदार उसके हाथसे बच गये थे। इसके बाद उन सबोंने रामरौनीके मट्टीके दुर्गमें आ कर आश्रय लिया। मीर अजीजने रामरौनीमें घेरा डाल कर सिखका दमन करना चाहा, किन्तु सिखसेनाके बार बार आक्रमणसे उसका मनोरथ सिद्ध होने न पाया।

मीरअर्ज (फा० पु०) वह कर्मचारी जो बादशाहोंकी सेवामें लोगोंके निवेदनपत्र आदि उपस्थित करे।

मीर अली—एक विख्यात मुसलमान दार्शनिक। इनकी विद्यासे प्रसन्न हो पारस्यके ७वें राजा शाह अब्बासने अपनी प्रियतमा बहिनका इनके साथ विवाह कर दिया। इनके दार्शनिक अभिमतने प्रतीच्य जगत्‌में ऊंचा स्थान प्राप्त किया है। इनके प्रसिद्ध छात्र सदरीको लिखी हुई ग्रन्थावली पढ़ कर यूरोपीयगणने एक वाक्यसे स्वीकार किया है, कि ये विज्ञान विषयमें आरिष्टटलसे भी उच्चा-सन पानेके योग्य हैं।

मीर आतिश (फा० पु०) वह कर्मचारी जिसकी अधी-नतामें तोपखाना हो।

मीर आदिल खाँ फरुखी—खान्देशके फरुखी-राजवंश-का तीसरा राजा। १४३७ ई०में पिता मालिक वाशिर खाँके मरने पर यह सिंहासन पर बैठा। १४४० ई०में इसने अपने राज्यसे दाक्षिणात्यवासी हिन्दुओंको मार भगाया। १४४१ ई०के अप्रिल मासमें बुर्हानपुर नगरमें गुप्तशत्रु द्वारा इसकी मृत्यु हुई थी। तालनेरमें जहां इनके पिताकी कब्र थी उसके पास ही मकबरा बनाया गया।

मीर आलम—हैदराबाद निजामका प्रधान मन्त्री। इस-का असल नाम मीर आबुल कासिम था। इसने प्रायः ३० वर्ष तक दाक्षिणात्यका शासन किया था।

मीरकासिम—बङ्गालके अन्तिम सूबेदार और नवाब। इनका असल नाम था कासिम अली खाँ, मीर इनकी वंशोपाधि थी। सेनापति मीर जाफरके जमाईकी हैसि-यतसे इन्हें बङ्गालके नवाबके यहां अच्छी नौकरी मिली। सिराजुद्दौलाके अधःपतनके बाद मीरजाफर बङ्गालके नवाब हुए थे। इसके बाद मीर जाफरको तख्तसे उतार अङ्गरेज-कम्पनीने उनके सुदक्ष और साहसी जमाई मीर

कासिमको तख्त पर बिठाया। कासिम अली इस समय नवाब नासिर उल्मुल्क इमतियाज उद्दौला मीर कासिम अली खाँ नसरत् नाम धारण कर बङ्गालकी मसनद पर बैठे।

मुताक्षरीन पढनेसे मालूम होता है, कि पलासीको लड़ाईमें हार कर सिराजुद्दौलाने जब स्त्री पुत्र स त राजमहलके एक फकीरके यहां आश्रय लिया, उसी समय उसकी खोजमें भेजा गया मीर कासिमका दल-बल वहां जा धमका। संवाद पाते ही मीरकासिमने झटसे नदी पार कर सिराजको स्त्री-पुत्र समेत कैद कर लिया। हतभाग्य नवाब रोता रोता मीरकासिमके चरणों पर गिर पड़ा और प्राण भिक्षा मांगने लगा। किन्तु मीरकासिमने, जो एक समय उसीका दासानुदास था, उसकी विनीत प्रार्थना पर जरा भी कान न दिया। किंतु मुजफ्फरनामामें राजमहलके बदले सिराजकी मन्सूरगञ्ज में पकड़े जानेकी बात लिखी है।

मीरकासिमने सबसे पहले सिराजकी प्रियतमा पत्नी लुत्फ उन्निसा बेगम-साहबाको हस्तगत किया। पीछे सिराजको भय दिखला कर उसके हीरा-मुक्तासे जड़ा हुआ अलङ्कार और पेटी जिसमें जवाहर भरे थे, लूट ली। उन्हींका अनुसरण कर मीरजाफर खाँके भाई मीर दाऊद और दूसरे दूसरेने सिराज तथा उसकी रमणियों-का धनरत्न लूट लिया। मीरकासिमको जवाहरकी जो सब पेटियां हाथ लगी थीं, उनमेंसे प्रत्येकका मूल्य लाख रुपयेसे कम नहीं था। आगे चल कर इन्हीं धनरत्नोंसे मीरकासिमकी श्रीवृद्धि हुई थी।

सिराजको जो मीरकासिमने पकड़ा था, उसके लिये इनको अङ्गरेज-दरबारमें प्रतिपत्ति बढ़ गई थी। इन नवीन युवकको वाक्पटुता, साहसिकता और विचक्षणताको देख कर अङ्गरेज लोग धीरे धीरे इनके पक्षपाती हो गये थे। अर्थदानमें अक्षम और शासनकार्यमें अपारग देख कर कम्पनीके अध्यक्ष मीरजाफरको सूबेदारी मसनदसे हटानेका षडयन्त्र कर रहे थे। इसी समय क्लाइव विलायतको लौट गये। अतः इस शुभ अवसरमें हालवेल-को ही कम्पनीके अध्यक्षका आसन ग्रहण करना पड़ा था। अर्थलोलुप हालवेलका एकमात्र उद्देश्य था अङ्गरेजी खजानेको भरना। इसके लिये उन्होंने मीरकासिमसे मोटी रकम ले कर उनके हाथ नवाबी पद बेचना चाहा।

इस समय मीरकासिम एक दल नवाबी-सेनाको ले कर मेदिनीपुरकी ओर शिवभटके अधीनस्थ महाराष्ट्रीय सेना-दलके आक्रमणमें बाधा डालनेके लिये जा रहे थे। राहमें हालवेलके साथ इनको भेंट हो गई। बातचीत करते करते एकको दूसरेका मनोभाव मालूम हो गया। उच्चाभिलाषी, सुदक्ष और सुचतुर मीरकासिमने अपना भविष्य उन्नतिका पथ परिष्कृत देख उनके कथनानुसार चलनेकी प्रतिज्ञा की। पहले हालवेलने उन्हें पटनेके नवाबी-पद पर अधिष्ठित करनेकी कोशिश की। क्योंकि, उनका ख्याल था, कि ऐसा करनेसे मीर कासिम अङ्गरेज-कम्पनीको प्रचुर सम्पत्ति देंगे। इसके बाद हालवेलने अपना मतलब निकालनेके लिये अङ्गरेज सेनापति और नवाब मीरजाफरको इस सम्बन्धमें पत्र लिखा।

नवाब मीरजाफर अपने जमाईकी ऐसी पदोन्नति पर जलने लगे। इसलिये उन्होंने हालवेलके पत्रका कोई जवाब नहीं दिया। इस पर हालवेल बहुत बिगड़े और तभीसे मीरजाफरके दोष ढूढ़नेमें लग गये। कम्पनीको प्राप्य रुपये न देना, शाहजादा शाह आलमके साथ छिप कर सन्धि करना, ढाकाका शोचनीय हत्याकाण्ड और ओलन्दाजोंको ले कर दुरभिसन्धि आदि दोषोंका उल्लेख करते हुए हालवेलने मीरजाफरको राज्यच्युत कर बङ्ग-सिंहासनको किसी दूसरेके हाथ अधिक मोलमें बेचनेका सङ्कल्प किया। इस आशय पर उन्होंने पटनाके अध्यक्ष आमियट और सेनापति फेलडको पत्र लिखा। किन्तु सेनापतिके साथ एकमत न होनेके कारण वे किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गये।

पहलेसे ही अर्थाभावके कारण राजकार्यमें विशृङ्खलता उपस्थित थी। इसी समय मीरनकी मृत्यु हुई। वृद्ध नवाब पुत्रशोकके कारण बहुत कातर हो गये। वे चारों ओर विपद्जालसे अपनेको घिरे देख भारी ऊहापोहमें पड़ गये। राजस्व वसूलमें भी बड़ी गड़बड़ी मची। वेतनके कारण सेनादल तो पहलेसे ही असन्तुष्ट था। मीरनका मृत्युसंवाद पा कर उन्होंने वेतनके लिये बहुत

ऊधम मचाया और मुर्शिदावाद प्रासादको घेर लिया। अब नवाव जमाईकी शरण लेनेको वाध्य हुए। इस समय मीरकासिमकी धाक तमाम जम गई, फिर भी वे तृप्ति-लाभ न कर सके।

अभी कासिम अलीको राज्याकांक्षा वलवती होती जा रही थी। उन्होंने अर्थवलसे अंगरेज-सचिवोंको अपने कावूमें करके कुटिल कौशलसे वृद्ध श्वसुरका काम तमाम करनेका सङ्कल्प किया। सङ्कल्पसिद्धिके लिये उन्हें कलकत्ते आना पड़ा। यहां आ कर उन्होंने हाल वेलके सामने अपना अभिप्राय प्रकट किया।

अंगरेज-दरवारमें मोरकासिम जयो हुए। उन्होंने गवर्नर आदि अंगरेज-सदस्योंको रिशवतसे अपने कावूमें करके वङ्गाल, विहार और उड़ोसाके नायव-नवावी पद प्राप्त किया। १७६० ई०को २७वों सितम्वरको भान्सि-टार्ट, हालवेल और फेल्डने सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर किया। तदनुसार २री अक्तूवरको गवर्नर भान्सिटार्ट और सेनापति फेल्ड मुर्शिदावाद गये। १६वीं तारीख-को नवावके साथ परामर्श हुआ। अंगरेज गवर्नरने मीरकासिमके हाथ राजकार्यकी सुश्रृङ्खला विधानका भार अर्पण करनेका प्रस्ताव किया। इतने दिनोंके वाद मीर-जाफरको अंगरेजोंका चक्रान्त मालूम हुआ।

उस दिनकी वैठक तो यों ही समाप्त हुई, कुछ तै नहीं हुआ। मोरजाफर उठ कर चले गये। पोछे कासिम अलो खाँ वहां आये। उन्होंने अपनी आशङ्काको वात प्रकट कर गवर्नर भान्सिटार्टको विचलित कर दिया और यह भो भय दिखलाया, कि अंगरेज-कम्पनी यदि उनके साथ सन्धि-नियमका पालन न करेगी, तो वे वहुत जल्द शाह आलमसे मेल करनेको वाध्य होंगे।

दूसरे दिन भी मीरजाफरने जव कोई सम्वाद न भेजा, तव अंगरेज सेनादलने दोपहर रातको भागीरथी नदी पार कर राजप्रासाद और किलेको घेर लिया, उसके साथ साथ मीरकासिमकी पताका फहराने और डंकेकी चोट पड़ने लगी। सो कर उठे हुए मीरजाफरने सेनापति फेल्डको सिंहद्वार पर उपस्थित देख विना किसी छेड़छाड़के अपने जमाईके नामसे राजकीय सील मोहर भेज दी और राजकार्यका कुल भार छोड़ देनेको राजी हुए। इतने दिनोंके वाद मीरजाफर द्वारा किये गये अपराधका प्रायश्चित्त हुआ।

नवाव नासिर उल-मुल्क इमतियाज उद्दौला मीर महम्मद कासिम अली खाँ नसरत् जङ्गको वङ्गालकी मसनद पर वैठते ही राजकोषका अर्थाभाव मालूम हुआ। अंगरेजोंका पूर्व ऋण और स्वीकृत अर्थ तथा सेनादल-का वाकी वेतन चुकानेके पहले इन्होंने अपने वचनका पालन करनेके लिये राजकोषके नकद रुपये तथा सोने चांदोके पात्र द्वारा मुद्रा प्रस्तुत करा कर ऋण चुकानेको व्यवस्था की। इसके वाद जगत्‌सेठकी सहायतासे तथा अपने पूर्वसञ्चित भंडारसे कुछ अंश ले कर अंगरेजी सेनाके खर्चा वर्चाके लिये पहलेके वाकी १० लाख रुपयेमें ४॥ लाख तथा पटनेमें स्थापित नवावो सेनाके लिये ५ लाख रुपये सिंहासनलाभके लिये इन्होंने १२ दिनके भीतर ही दे दिये थे।

नवीन नवाव वुद्धिमान्, साहसो और कार्यदक्ष होने प. भी शक्की, क्रोधी और कठोर थे। प्रकाश्यतः प्रजा साधारणकी हितकामना और न्याय-विचारकी स्पृहा दिखलाने पर भी अर्थसञ्चयके उद्देश्यसे इन्होंने लोगोंको वहुत कष्ट दिया था। वर्द्धमान, मेदिनीपुर और चट्टग्राम कम्पनीके हाथ समर्पण करके भी उन्हें अंगरेज कौंसिल-के सदस्योंको चुपके तथा कम्पनीको प्रकाश्य तौर पर रुपये देनेका इन्तजाम करना पड़ा था।

इतने रुपये राजकोषमें थे नहीं, जो चुकाते, इसलिये वे प्रत्येक विभागका खर्च घटाने लगे। विलास-व्यापार-में जो फिजूल खर्च होता था उसे इन्होंने उठा दिया। आखिर जागीर-विभागके कर्मचारी किनुराम और मणि-लाल पर कई दोष मढ़ कर उनकी सभी सम्पत्ति छिन ली। इसके अलावा इन्होंने नवाव-सरकारके भूतपूर्व कर्मचारियोंको तंग कर उनसे कुछ रुपये मुंड़ लिये थे।

मीरकासिम चाहते थे, कि जिस किसी उपायसे हो अंगरेजोंका प्राप्य अवश्य चुकाना चाहिये। इस प्रकार पूर्वतन नवावोंको दासदासियोंसे भी कुछ रुपये खींच कर तथा जमींदारोंसे नजराना वसूल कर इन्होंने कुछ रुपये संग्रह किये और उसीसे अर्थपिपासु अंगरेजोंको प्यास वुझाई। इसके वाद इन्होंने मुर्शिदावादके सेना-

दलका वेतन चुकाया। इस समय कर्नल केलके कहने पर पटनासैन्यका अर्थाभाव दूर करनेके लिये इन्होंने एक दूसरे राजसचिव नवतूरायको ३ लाख रुपयेके साथ विहार भेजा। इसके वाद इन्होंने कम्पनीके प्राप्यमेंसे ६।७ रुपये कासिमवाजारके अध्यक्ष वाटसनके पास भेज दिये। उस रुपयेसे २॥ लाख रुपये मान्द्राजके फरासीसी-युद्धके खर्चाके लिये भेजे गये थे।

वर्द्धमानका राजस्व उगाहनेका भार जो अंगरेजोंके हाथ सौंपा गया था उससे राजा तिलकचंद वड़े अप्रसन्न हुए। वे सैन्यसंग्रह कर युद्धके लिये विलकुल तैयार हो गये। इस समय दक्षिण और पश्चिमके अर्द्धस्वाधीन राजे और जमींदार स्वाधीन होनेकी कोशिशमें थे। साथ साथ शिदभारके अधीनस्थ महाराष्ट्रीय दलके उपद्रवसे मेदनीपुरके कुछ सामन्तोंने प्रकाश्य भावसे स्वेच्छाचार आरंभ कर दिया था। शाहजादा जो वङ्गाल पर चढ़ाई करने पर थे उससे तथा महाराज नन्दकुमारको दुर्द्दमनीय आकाङ्क्षासे वङ्गालमें अशान्ति फैल गई थी।

मीरजाफरको अकस्मात् पदच्युति, मीरकासिमका राज्यग्रहण और विदेशी अंगरेजोंका वर्त्तमान व्यवहार देख कर देशके नेता वहुत असन्तुष्ट और उत्तेजित हो रहे थे। नये नवाव मीरकासिमने वीरभूमके जमींदार आसद्‌ जमान खांसे सहायता मांगी, किन्तु उनकी आशा पूरी न हुई। इस पर नवाव वहुत अप्रसन्न हुए। एक सामान्य जमींदारको ऐसी उपेक्षाको वे सह न सके। उन्होंने फौरन अपनी सेना तथा कासिमवाजारके अंगरेज-सेनापति मेजर यार्कके परिचालित सेनादलको ले कर वर्द्धमानको यात्रा कर दी। उधर आसद्‌ जमान भी अपने संगृहीत सेनादलको ले कर कड़ेयाके निकट एक दुर्गम स्थानमें खाई खुदवा कर नवाव और अंगरेजी सेनाकी वाट जोहने लगे। दोनों पक्षमें घमसान लड़ाई छिड़ी। युद्धमें असद्‌ जमान परास्त हुए और सेना तितर वितर हो गई।

इसके वाद उसी साल १७६० ई०में खड़गपुरके राजा नवावके विरुद्ध खड़े हुए। लगातार तीन वार लड़ाई होनेके वाद राजाकी सेनाने हार खा कर राजभवनमें आश्रय लिया। अंगरेजी सेनाने राजभवनमें आग लगा दी और गांवको छार खार कर डाला।

१७६१ ई०में फरासी-सेनापति मूसों-ला द्वारा परिचालित सेनादलको ले कर शाह आलमने वङ्गालकी ओर कदम वढ़ाया। विहारसे ३ कोस पश्चिम मोहानी नदीके किनारे सोयान नामक छोटे गांवमें दोनों दलमें मुठभेड़ हुई। अंगरेज सेनापति कर्नाकके अद्भुत कौशलसे मुसोंल वन्दी हुए। अंगरेजोंने वादशाहके साथ सन्धिका प्रस्ताव करके सिताबरायको पटना भेजा। किन्तु इससे कोई फल न हुआ। आखिर २री फरवरीको दोनों दलमें फिरसे लड़ाई छिड़ी। हतभाग्य शाह आलम इस वार पराजित हुए और वड़े दीनभावसे सन्धिको प्रत्याशासे अंगरेजी छावनीमें आये। इस लड़ाईमें मीरकासिमके सेनापति राजा राजवल्लभ और राजा रामनारायणने वड़ी वीरता दिखाई थी।

इधर वीरभूमिका शासनभार महम्मद तकी खांके हाथ सौंप कर नवाव मीरकासिम पटनाको चल दिये। उन्हें भारी संदेह था, कि वादशाह आलम और कर्नाकसे भेंट करते समय उन पर कहीं विपत्तिका पहाड़ न टूट पड़े। पटना आते ही इन्होंने नजराना और वहुमूल्य उपहार दे कर वादशाहको संतुष्ट किया और उनसे 'आलिजा'को उपाधिके साथ वङ्गाल, विहार और उड़ीसाकी सूवेदारी प्राप्त की।

करमण्डल उपकूलमें फरासी-युद्धको शेष करके कर्नल कूट अंग्रेज-सेनानायक हो कर कलकत्ते आये। कर्नाकके साथ नवाव मीरकासिमका पटता न देख कौन्सिलके सदस्योंने इन्हें १७६१ की २२वीं अप्रिलको पटना भेज दिया। इस समयसे कासिमके साथ कूट और कर्नाकका जो मनोमालिन्य था वह विवादमें परिणत हुआ। राजा रामनारायणके निकट विहारका हिसाव-किताव ले कर विवाद और भी वढ़ चला।

इधर शाहआलमके विहारसे चले आने पर नवाव पटना-दुर्गमें जा कर वादशाहके नामसे खुतवा पाठ करने और सिक्का चलानेका वचन दे चुके थे। किन्तु दुर्गद्वार पर अंग्रेजोंका पहरा देख इन्होंने अपमान समझ कर दुर्गमें प्रवेश नहीं किया। कूटने जव देखा, कि नवावने

अपने वचनको पूरा न किया जिससे आमन्त्रित जमींदारों तथा अन्यान्य प्रधान व्यक्तियोंका अपमान हुआ, तब उनके क्रोधका पारा बहुत चढ़ गया। वे सबोंकी उत्तेजनासे उत्तेजित हो एक दल सशस्त्र अनुचरको ले कर नवावकी छावनी पर आ धमके। अंग्रेज सेनापतिके इस दुर्व्यवहारकी बात नवावने गवर्नर भान्सिटार्टके पास लिख भेजी।

भान्सिटार्टके आदेशसे कूट और कर्नाक कलकत्ते आनेको बाध्य हुए। नवावका अभिप्राय सिद्ध हुआ। अंग्रेजी सेनाके पटनासे अपसृत होते ही मीरकासिम राजा रामनारायणको हिसाब-किताबके लिये बहुत तंग करने लगे। साफ तौरसे हिसाब न बुझानेके कारण कासिमने उन्हें कैद कर लिया। केवल कैद ही नहीं, वरन् उन्हें बहुत सताया, यहां तक कि उनके राजप्रासादको भी लूट लिया; राजप्रासादसे कुल मिला कर सात लाख रुपयेकी सम्पत्ति मीरकासिमको हाथ लगी थी। राजाके बन्धुवर्गको भी तरह तरहकी यन्त्रणा दे कर उनसे सात लाख रुपये वसूल किये। जिन्होंने किसी तरह भी रामनारायणकी सहायता की थी उन पर घोर अत्याचार किया गया था। जागीरदार राजा सुन्दरसिंह उनके मित्र होनेके कारण कैद किये गये। साथ साथ उनके दीवान और कोषाध्यक्ष गङ्गाविष्णु भी उसी पथके पथिक हुए। रामनारायणके भाई धाराजनारायण तथा चराध्यक्ष राजा मुरलीधर विशेष लाञ्छित हो कैदी बना कर मुर्शिदावाद भेज दिये गये। पटनाके कोतवाल महम्मद इशाख और प्रधान कोठिवाल मनसारामशाहको भी सता कर उनसे मोटी रकम ली गई। सरकारी वा रामनारायणका गुप्तधन बतला कर मीरकासिम पटनाके सभी धनी नागरिकोंको लूटनेसे वाज नहीं आये।

रामनारायणको पटनामें बन्दी रख कर मीरकासिमने सितावरायको निर्यातन करनेका सङ्कल्प किया, किन्तु अंग्रेज गवर्नरकी कृपासे वे मुक्तिलाभ कर अयोध्याको चल दिये।

विहारमें विरुद्धदलको ध्वस और गजकोप पूर्ण कर मीरकासिम जमींदारोंका दमन करने अग्रसर हुए। यूरोपीय ढंगसे सिखाये गये गुर्गन खांके अधीनस्थ सिपाही, गोलन्दाज और अश्वारोही सेनादल जब जमींदारोंका दमन करने निकले, तब वे सबके सब आत्मरक्षाका उपाय ढूंढने लगे। कमगार खां पर्वतमें जा छिपा। बुनियादसिंह और टिकारीराज फतेसिंह बन्दी हुए तथा भोजपुरके पलवानसिंह और अन्यान्य दुर्द्धर्ष जमींदारोंने सुजाउद्दौलाके राज्यमें आश्रय लिया। उन भागे हुए जमींदारोंकी सम्पत्ति ले कर मुसलमान सामन्तोंने आपसमें बांट ली।

इस समय सीताराम नामक राजस्वविभागके कर्मचारीने नये नवावके ऊपर अपना आधिपत्य जमाया था। दीवान सीताराम धीरे धीरे राजा सीताराम नामसे मशहूर हो गये। सभी कार्योंमें वे रिशवत लेते थे। आखिर नवावके विरुद्ध षडयन्त्र करनेके अपराधमें वे मारे गये। इसके साथ साथ और भी चार उच्च श्रेणीके नवाव-कर्मचारीको प्राणदण्ड मिला था। अंगरेज गवर्नर नवावके मित्र थे, इसलिये इस बातको ले कर कोई गड़बड़ी न उठी।

इसके बाद नवाव मीरकासिमने वङ्गविहारकी जमींदारी बन्दोवस्त और सैन्यसंस्कारकी ओर ध्यान दिया। दिनाजपुरके राजा रामनाथके मरने पर मीरकासिमने दूत भेज कर राजस्वका दावा किया। राजपुत्र कृष्णनाथ और वैद्यनाथसे नजर आदि ले कर उन्होंने ५७६३२४) रुपया अधिक कर बढ़ा दिया। राजशाहीमें भी ८ लाख रुपये की वृद्धि हुई। नदियाराज कृष्णचन्द्रके पक्षमें भी अच्छा नहीं हुआ।

इस प्रकार वङ्गविहारका राजकर प्रायः दूना बढ़ा कर नवाव मीरकासिमखांने दोर्द्दण्ड प्रतापसे प्रायः तीन वर्ष तक राजस्व उगाहा था। राजकार्यमें उनकी विशेष दक्षता रहने पर भी अपरिणामदर्शिता और वृथा अत्याचारका भी उनमें अभाव नहीं था। उनका राजत्व एक शृङ्खलाबद्ध अत्याचार मात्र था, उसे किसी हालतमें राज्यशासन नहीं कह सकते।

नवाव मीरकासिम अंगरेज-सदस्योंके बीच जो मनोमालिन्य था, उसे अच्छी तरह जानते थे। कौन्सिलमें भान्सिटार्टका पक्ष दुर्वल देख इन्होंने अंग्रेजोंसे दूर रहना

चाहा। इसी उद्देश्यसे वे मुङ्गेरमें दुर्गका संस्कार कर वहीं अपना राजपाट उठा ले गये। धीरे धीरे अंगरेजोंका अधीनता-पाश तोड़नेकी जो उनकी इच्छा थी, वह बलवती होने लगी। वे अंग्रेजोंकी आड़में सैन्यसंग्रह करने लगे। मुङ्गेरमें रह कर सेनादलके संस्कार और जमींदारी व्यवस्थाको पङ्कोद्धार कर इन्होंने शेष जीवनमें जो अर्थसंग्रह किया था उसे अपनी सङ्कल्पसिद्धिके उद्देश्यसे यों ही उड़ा दिया।

पटनाके अध्यक्ष एलिस उद्धत-स्वभावके आदमी थे। भान्सिटार्टके साथ उनकी नहीं पटती थी। इसलिये नवावका विरुद्ध-पक्ष वह लेना चाहते थे। नवावको तंग करनेके लिये वे जी-जानसे लग गये। किन्तु गवर्नर भान्सिटार्टके यत्नसे दोनोंने साम्यभाव धारण किया।

उक्त घटनाके कुछ बाद ही दो पदच्युत अंग्रेजसेनाको मुङ्गेर-दुर्गमें आश्रय दिया गया था। अध्यक्ष एलिसने इसका कारण जाननेके लिये कुछ सिपाही वहां भेजे। इस समय एलिसकी उद्धतासे तंग आ कर नवाव धीरे धीरे सावधान होने लगे। इधर अंगरेज कौन्सिल उनकी पदच्युतिकी ही पक्षपाती थी। उन्होंने अन्याय रूपसे २ लाख रुपयेका दावा किया। नवाव भी इस अनुचित दावे पर बहुत विरक्त हुए। इसके बाद अंगरेज-राजके शुल्कविहीन वाणिज्यसे अपने राजस्वमें घाटा होते देख नवावने अंगरेज-गवर्नरको इस बातकी सूचना दी। वाणिज्यद्रव्यके महसूलको ले कर बहुत तर्क-वितर्क होनेके बाद आखिर यह स्थिर हुआ कि केवल लवणके लिये सैकड़े पीछे २॥) रु० महसूल लगाया जाय। ढाका आदि अञ्चलमें भी लवण, तमाकू आदि पर महसूल लगाया गया। किन्तु नवावने जब देखा कि इससे कम्पनीकी ओरसे बहुत बाधा है, तब उन्होंने इस कामसे हाथ खींच लिया।

१७६२ ई०के जनवरी मासमें नवावने नेपालकी चढ़ाई कर दी। मकवानपुरके निकट नेपाली हिन्दू-वीरोंके साथ अर्माणी गुर्गन खाँका घोर संघर्ष उपस्थित हुआ। दो छोटी छोटी लड़ाइयोंमें गुरखा लोगोंकी हार होने पर भी नवावने इस कष्टसाध्य पार्वतीय युद्ध व्यापारमें जयकी आशा न देखी और अपनी सेनाको लौट आनेका हुकुम दिया। नवावी सेनाका नेपालियोंने समतल क्षेत्र तक पीछा किया था।

उपरोक्त युद्ध तथा अंगरेज-कम्पनीकी वाणिज्य-विपत्तिसे नवाव मन ही मन असन्तुष्ट रहते थे। उसी सालकी ३०वीं मार्चको अंगरेज-दरबारमें फिरसे मीरकासिमकी कार्यावली पर विचार किया गया। दरबारके परामर्शसे आमियट और हे-साहब दूत रूपमें नवावके पास भेजे गये। इस समय पटना नगरकी चहारदीवारीके एक छोटे दरवाजेको ले कर एलिसके साथ नवाव कर्मचारीका विवाद खड़ा हुआ। धीरे धीरे उस विवादने भीषण रूप धारण किया। भविष्यके लिये दोनों ही पक्षमें युद्धकी तैयारियां होने लगीं।

नवाव मीरकासिमने युद्ध अवश्यम्भावी देख गुर्गन खाँके परामर्शसे जगत्सेठ दोनों भाई महातापराय और राजा स्वरूपचाँदको हस्तगत करनेका संकल्प किया। तदनुसार उनकी आज्ञा पा कर वीरभूमके फौजदार महम्मद तकी खाँ सेठ दोनों भाइयोंको ले कर मुङ्गेर चले। यहां वे दोनों एक तरह नजरबंद रखे गये। इसके पहले राजा रामनारायण, राजा राजवल्लभ आदिको भी मुङ्गेर लाया गया था। सुना जाता है, कि राजा कृष्णचन्द्र भी इस समय मुङ्गेरमें वन्दीस्वरूप रहते थे।

इधर आमियट और हे मुङ्गेर पहुंच कर नवावसे मिले। नवावको सौजन्यसे उन लोगोंके मनमें आशाका संचार हो गया था। किन्तु २५वीं तारीखको जब कलकत्तेसे प्रेरित अंगरेजी सेनाके व्यवहारार्थ अस्त्र-पूर्ण कुछ जंगी जहाज मुङ्गेरके निकट पहुंचे, तब नवावकी आँखें खुलीं। उन्होंने फौरन जहाज रोकनेका हुकुम दिया। इसी सूत्रसे दोनोंमें युद्ध छिड़ा। इस बार सन्धिकी आशा बिलकुल जाती रही।

पटनासे मीर महदी खाँने संवाद भेजा, कि एलिस पटना जीतनेका आयोजन कर रहा है। २४वीं जूनको आमियटके मुङ्गेर-त्यागका संवाद और साथ साथ एक नवावी सैन्यदलका मुङ्गेरसे पटनाकी ओर आना, यह खबर सुनते ही उसी रातको एलिसने पटना पर चढ़ाई कर दी। सोती नवावी सेना सहसा आक्रमणसे इधर

उधर भाग गई। मीर महदी खाँ बहादुर दलबलके साथ मुङ्गेरकी ओर भागे। हिन्दू सेनापति लालसिंह और महम्मद अमीनने चेहाल सातुन वा दरबार प्रासादमें छिप कर जान बचाई। अंगरेजी सेनाने सवेरे करीब तीन पहर तक नगर लूटा था। उधर मीरकासिम द्वारा प्रेरित अर्मनी सेनापति मार्करके अधीन कुछ सेना पटना आ धमकी। दुर्गादि शत्रुओंके हाथ लगा न देख मार्कर पटना उद्धारके लिये चल दिये। लुण्ठन प्रिय अंगरेजी सेनामें लूटका माल ले कर तकरार खड़ा हुआ। यह देख नवाब सेनापति मीर नासिरने पूर्वद्वार पर खड़े शत्रुदलको हरा कर नगरमें प्रवेश किया। मार्करने जब अंगरेजोंकी कोठीमें घेरा डाला, तब वहांकी अंगरेजी सेना २६वीं जूनकी रातको गङ्गा पार कर छपराकी ओर भाग चली। इधर १ली जुलाईको माञ्जी नामक स्थानमें नवाबके फरासीसी-सेनापति समरूके साथ युद्ध छिड़ गया। सेनापति कार्स्टर आदिके युद्धमे मारे जानेसे अंगरेजीपक्ष निरुत्साह हो गया। कितने अंगरेज कैदी तौर पर मुङ्गेर लाये गये।

इसके बाद समरानल खूब जोरसे धधकने लगा। ६ठी जुलाईको अंगरेज दरबारमें मीरजाफरको पुनः बङ्गालको मसनद पर बिठानेके लिये सन्धिपत्रका मसविदा तैयार हुआ।

नवाब मीरजाफर अङ्गरेज वणिकोंका मनोरथ पूर्ण कर १७६३ ई०की १७वीं जुलाईको दलबलके साथ कलकत्तेसे अग्रद्वीपमें आ कर अङ्गरेजोंसे मिले। इसके पहले कासिम बाजार जीत कर मीरकासिमके सेनापतिगण सदलबल अग्रसर हो भागीरथीके पश्चिम पारमें तथा महमूद तकी खाँके सेनादल पूर्वी किनारे डटे हुए थे। इस समय मुर्शिदाबादके फौजदार सैयद महम्मदकी अविमृष्यकारितासे युद्धके आरम्भमें ही मीरकासिमके अधःपतनका पथ खुल गया था। यदि वे महम्मद तकीके कथनानुसार काम करते, तो बङ्गालका शासनदण्ड कभी भी दूसरेके हाथ नहीं जाता।

महम्मद तकीखाँने पलासीके दक्षिण भागमें छावनी डाली थी। अजयके दक्षिणी किनारे पराजित मुसलमान सेना-दल जब भागीरथी पार कर तकीके शिविरमें इकट्ठे हुए, तब वे अग्रगामी अंगरेज सेना-दलकी गति रोकनेके लिये मुट्ठी भर सेना ले कर अमितविक्रमसे आगे बढ़े। १६वीं जुलाईको युद्ध आरम्भ हुआ। विपक्षियोंके आघातसे उनका शिर कट गया। उन्होंने सहयोगी सेनापतियोंके कर्त्तव्य कार्यकी अवहेलाके लिये प्राण-विसर्जन किये। सेनापतिके मरने पर सैन्यदल छत्रभङ्ग हो गया। युद्धकी शेषावस्थामें भी यदि दूसरे दूसरे सेनादलको सहायता मिल जाती तो युद्धकी यवनिका किसी दूसरी तरहसे गिरती, इसमें सन्देह नहीं।

इधर अङ्गरेजोंकी कृपासे मीरजाफर पुनः बङ्गालके सूबेदारी पद पर अभिषिक्त हुए। २३वीं जुलाईको नवाब मीरजाफरने दूसरी बार अङ्गरेज बन्धुवर्गोंके साथ मुर्शिदाबादमें प्रवेश किया। फिरसे सिंहासन पर बैठनेके बाद उन्होंने अलीवर्दी खाँके प्रासादमें रहना चाहा।

तकी खाँके मृत्युसंवादसे व्यथित हो मीरकासिम निरुत्साह नहीं हुए। उन्होंने मार्कर, समरू, हैबतउल्ला, मीरनासिर, आसदउल्ला आदि सेनानायकोंको अपने अपने अधीनस्थ सेनादलको ले कर नदीके किनारे विस्तीर्ण मैदानमें एकत्रित होनेका हुकुम दिया। पूर्णियाके फौजदार भी दलबलके साथ आ कर उनसे मिले।

नवाबकी सेनाने भागीरथीके पश्चिमी किनारे छावनी डाली। नवाब मीरकासिम चाहते थे, कि ज्योंही अंगरेजी सेना बांशुली नदी पार करेगी, त्यों ही बांशुली और भागीरथीके मध्यवर्त्ती स्थानमें उन पर चढ़ाई कर दूंगा। दोनों पक्षमें घमसान युद्ध छिड़ा। अंगरेज विजयी हुए। मुसलमान घुड़सवारने अंगरेजी सेनाको बांशुली नदीके गहरे जलमें धकेल दिया था। इससे बहुतोंकी जान गई थी। नाना विषयमें अंगरेजोंकी इस प्रसिद्ध युद्धमें क्षति होने पर भी युद्धजयके साथ साथ उन्हें शत्रुकी १७ कमानें और डेढ़ दो सौ अन्नसे लदी नावें हाथ लगी थीं। सैन्यक्षय होने पर भी अंगरेज लोग जरा भी भग्नोत्साह नहीं हुए। सच पूछिये, तो गिरियाके प्रसिद्ध रणक्षेत्रसे ही भारतमें अंगरेजोंके सौभाग्य सूर्यका उदय हुआ था।

गिरियाकी रणविजयसे स्पर्द्धित हो अंगरेज और मीरजाफरकी सेनाने उधुआ नालाके सुदृढ़ दुर्गकी ओर कदम बढ़ाया।

महम्मद तकीके पराभव और गिरिया रणक्षेत्रकी पराजयसे मर्माहत हो मीरकासिम अपनी प्रियतम बेगम, दास दासी और मूल्यवान् सम्पत्तिको मीर सुलेमान और राजा नवतरायके तत्त्वावधानमें रोहितास गढ़ भेज कर निश्चिन्त हुए। इसके बाद उन्होंने उधुआनाला जानेका विचार किया। किन्तु उनके कठोर हृदयकी अरोचनासे थोड़ी ही दिनोंके अन्दर मुङ्गेरमें एक महा अनिष्टकर हत्याकाण्ड हो गया। उनके हुकुमसे राजा रामनारायण, पुत्र समेत राजवल्लभ, धनकुबेर जगत् सेठ दोनों भाई, सपुत्र वृद्ध राय राजा उमेदराम और फतेसिंह, बुनियाद्‌सिंह आदि विहारके हिन्दू बन्दी जमींदार बड़ी क्रूरता से मार डाले गये।

अनन्तर मीर कासिमने दल-बलके साथ भागलपुर चम्पानगरकी यात्रा की। यहांसे वे उधुआनालाकी रक्षा-के लिये सेना भेजनेका प्रबंध करने लगे। इधर ४थी अगस्तको गिरिया रणक्षेत्रका परित्याग कर अंगरेज-सेनापति आडमस और मीरजाफर खां २वों अगस्तको उधुआ खाईके पास हो पालकोपुर नामक स्थानमें आ धमके। अंगरेजी सेनाने नदी भाग हो कर दुर्ग पर आक्रमण किया। चारों ओर से गोला बरसने लगा, किन्तु दुर्ग-प्राचीरमें जरा भी नुकसान नहीं पहुंचा।

मीरजाफरने रुपये दे कर मार्कर और आराटुन नामक अपने जमाईके दो सेनापतियोंको काबू कर लिया। उन्हींके षड़यन्त्रसे दो पहर रातको अंगरेजी सेना आ कर दुर्गमें घुस गई। बाहर और भीतर अंगरेजी सेनाका कड़ा पहरा रहा। सो कर उठी हुई मुसलमानी सेना शत्रुके हाथसे यमपुरको सिधारी। जो पीछेकी ओरसे दुर्गद्वार तथा सेतु पार कर भागनेकी चेष्टा कर रहे थे वे समरू और मार्करको सेनाके शिकार बने। इस प्रकार अपने दलकी सैन्यसंख्याका ह्रास कर आराटुन और मार्कर अपने अधिकृत दुर्गद्वारको अंगरेजोंके हाथ समर्पण किया था।

उधुआनालाको पराजयके बाद मीरकासिम मुङ्गेरको भागे। वहां से उन्होंने अंगरेज कैदियोंको साथ ले सदल-बल पटनाकी यात्रा कर दी। इधर अंगरेज-सेनापति लड़ाईके कुल हथियार ले कर ७वीं सितम्बरको राजमहल पहुंचे। क्योंकि, मीरकासिम तेलियागढ़में पहले हीसे युद्धकी तैयारी कर रहे थे। यहांसे वे लोग मुङ्गेरको रवाना हुए। किलेदार अरबलीको विश्वासघातकतासे मुङ्गेर दुर्ग भी १७६३ ई०को ६वीं अक्तूबरको शत्रुके हाथ लगा।

इधर पटना जानेके कुछ समय बाद ही षड़यन्त्रकारी नवाबकी सेनाने वेतन मांगनेके हीलेसे गुर्गनखांके शिविरमें प्रवेश किया और उसे मार डाला। इस प्रकार शत्रुपक्षके कुमन्त्रणाजालमें सभीको जकड़े देख मीरकासिम की आशा पर पानी फेर गया। अंगरेजोंका विद्वेष भी उनके प्रति दिनों दिन बढ़ने लगा। आखिर मीरकासिम ने गुस्सेमें आ कर पटनेमें जितने अंगरेज-कैदी थे उन्हें बड़ी निष्ठुरतासे मरवा डाला। दुराचार समरूने इस पाशवका भार लिया था। ५वीं अक्तूबरके सवेरे एलिस, हे, लुसिंटन आदि नौ वीर भी यमपुर भेज दिये गये। पिशाचके हाथसे दुर्बल अबलाओंने भी रक्षा नहीं पाई। एलिसके दुधमुहें बच्चे भी मार डाले गये। इस प्रकार ११वीं अक्तूबरको चैहालसातुन प्रासादमें जितने अंगरेज थे, सभी उस पिशाचके हाथके शिकार बने, एक भी छुटने नहीं पाया। कमसे कम ५० कर्मचारी और सौसे ऊपर सैनिक मारे गये थे।

इस लोमहर्षण हत्याकाण्डका संवाद पा कर मेजर आडमस और मीरजाफरने दलबलके साथ पटनाको प्रस्थान किया। मीरकासिम इन लोगोंके पहुंचनेके पहले ही दुर्ग-रक्षाका भार कुछ सिपाहियों पर छोड़ भाग गये थे। वे रोहतास दुर्गसे परिवार और धनरत्नको ले कर अयोध्या-नवाबके यहां आश्रय लेनेकी आशासे कर्मनाशा की ओर चल दिये। वजीर सुजाउद्दौलाने प्रचलित प्रथाके अनुसार उनका स्वागत किया।

मीरकासिमके उपचार उपहारसे प्रसन्न हो तथा मैडक के सुशिक्षित सेनादलसे सहायता पा कर सुजाउद्दौला बड़े उत्साहित हुए। उनको आर्यावर्त्तके अधीश्वर होनेकी उच्चाशा और सुखस्वप्न कार्यमें परिणत होनेका सुभ अवसर नजदीक देख कर वे मीरकासिमके साथ मिल अंगरेजोंका मुकाबला करने चले। कर्मनाशा नदी पार कर उन्होंने काशीराजकी सेनाके साथ पटना-दुर्गमें

घेरा डाला। १७६४ ई०को ३री मईको सुजा उद्दौलाके हुकुमसे युद्ध आरम्भ हुआ। युद्धमें कुछ अंगरेजी सेनाके बन्दी होने पर भी नवावकी जीत नहीं हुई। संध्या काल होते देख घायल सुजाने मीरकासिमको बहुत धिक्कारा और दो चार लगती वातें सुना कर वे अपनी सेनाके साथ शिविरमें लौट गये। इस युद्धमें मीरकासिमके वुद्धि विपर्य्ययसे ही पराजय हुई थी।

इसके वाद सुजा उद्दौलाने पुनपुन नदीके किनारे छावनी डाली। वर्षाकालका आगमन देख वे वक्सरमें छावनी उठा ले जानेका आयोजन करने लगे। यहां वादशाहके प्राप्य ऋण चुकानेके लिये वे मीरकासिमको तंग करने लगे। इधर समरूने भी वेतनका दावा कर मीरकासिमके शिविरको घेर लिया। मीरकासिमने अपना भण्डार खाली देख परिवारवर्गके गुप्तभण्डारसे स्वर्णमुद्रा ले कर वेतन चुकाया। इस समय दो एक अंगरेज नौकर उनके गच्छित धनको ले कर नौ दो ग्यारह हुए थे। कोषाध्यक्ष मीरसुलेमानने सुजाका आश्रय लिया था। इसके वाद समरूने नवावको रुपये देनेमें असमर्थ देख सेनादलको कुछ समय दिया। किन्तु शक्तिहीन नवावकी आज्ञाको अग्राह्य कर उन्होंने अस्त्रादि नही लौटाये। धीरे धीरे समरूका सेनादल वजीरके अधीन काम करने लगा। स्वर्णमुद्राके गुप्तभण्डारको गंध पा कर सुजाने अभी मीरकासिमके शिविरको घेर लिया। महिलाओं और अनुचरोंके पास जो कुछ धन था उसे सुजाने जवरदस्ती छिन लिया। विपदका पहाड अपने ऊपर टूटता देख मीरकासिमने इसके पहले ही विश्वस्त अनुचर महम्मद इसाख आदिके हाथ कुछ धनरत्न दे कर रोहितखण्ड भेज दिया था। इस प्रकार उनका धनरत्न दूसरेके हाथ चले जानेसे सुजा उद्दौलाने जब देखा, कि अब ये रुपये नहीं दे सकते, तब वक्सरयुद्धके एक दिन पहले उन्हें एक पैर टूटे हाथीको पीठ पर चढ़ा कर शिविरसे विदा कर दिया। सच पूछिये, तो यहीं पर उनके नवावी जीवनका उपसंहार हुआ।

मीरकासिम धीमी चालसे इलाहावाद जा रहे थे। राहमें उन्होंने सुना, कि वक्सरके युद्धमें वजीरकी हार हुई और मन्त्री वेणी वहादुरने उन्हें अंगरेजोंके हाथ पकडवा देनेका प्रस्ताव किया है। अब उन्होंने अपने जीवनको सङ्कटापन्न देखा और वडी तेजीसे वे इलाहावाद पार कर गये। प्रधान रोहिला सामन्त और तात्कालिक वादशाही सेनापति नजव-उद्दौलाकी कृपासे मीरकासिमने कुछ दिन वरेलीमें वास किया था। उनका संन्दिग्ध चरित्र ही उनके सर्वनाशका कारण हुआ। वृथा संदेह और उत्पीड़नसे वहुतेरे विश्वस्त अनुचर उन्हें छोड चले गये। आखिर अपने कुटिल षड्यन्त्रके अपवादसे उन्होंने रोहिलखण्डका परित्याग कर ग्वालियरके समीपवर्त्ती घोडाके रानाका आश्रय लिया। रानाको भी उनका व्यवहार पसन्द न आया और अपने राज्यसे निकाल भगाया।

घोड़ासे भगाये जाने पर वे कुछ दिन इधर उधर भटकते रहे और आखिर दिल्ली-राजधानीमें पहुंचे। वादशाह शाहआलमको सात लाख रुपये दे कर उन्होंने मन्त्री अवदुल आहिद खांके पदके लिये प्रार्थना की। वादशाह अवदुलको वहुत चाहते थे। इस कारण उनकी प्रार्थना पर विलकुल ध्यान नही दिया, वरन् राज्यसे निकल जानेको उन्हें कहा गया। इसके वाद दिल्ली और आगरेके मध्यवर्ती एक सामान्य स्थानमें हदसे ज्यादा तकलीफ भुगत कर मीरकासिम इस लोकसे चल वसे। मुताक्षरीणमें लिखा है, कि मरनेके वाद उसका सिर्फ एक दुशाला वेच कर अन्त्येष्टिक्रिया की गई थी।

मीरजा (फा० पु०) १ अमीर या सरदारका लड़का, अमीरजादा। २ मुगल शाहजादोंकी एक उपाधि। ३ सैयद मुसलमानोंकी एक उपाधि।

मीरजाई (फा० स्त्री०) १ मीरजा होनेका भाव। २ मीरजाका पद या उपाधि। ३ सरदारी, अमीरी। ४ अमीरों या शाहजादोंका सा ऊंचा दिमाग होना। ५ अभिमान, घमण्ड। दमिरजई देखो।

मीरजाफर खाँ—वङ्गालका एक प्रसिद्ध सेनापति और नवाब। अङ्गरेज-कम्पनीकी कृपासे इसने दो वार वङ्गालकी सूवेदारी पाई थी। पहले यह नवाव अलीवर्दी खांके अधीन सेनानायकका काम करता था। उड़िष्याके मुर्शिदकुली खांके विद्रोहदमन-कालमें इसने वडी वीरता दिखलाई थी। मुर्शिदकुलीके जमाई वखर खांके युद्धमें अली-

बर्गोंकी सेना जब रणसे पीठ दिखाने पर थी, तब सेनापति मीरजाफर खाँ दलबलके साथ उन्हें मदद पहुंचानेको आगे बढ़ा। उसके भीषण आक्रमणसे मीर्जा बखरकी सेना तितर बितर हो गई। मीरजाफरने इस दिन जो असीम साहस और शौर्यवीर्य दिखलाया था वह प्रशंसनीय है। युद्धमे जयलाभके साथ साथ उसका यशोगौरव तमाम फैल गया।

मीरजाफर खाँ सैयद हजरतअलीके वंशका था। अलीवर्दी खांकी सौतेलो बहनसे इसका विवाह हुआ था। अब नवाबने इसे सैन्यपरिसंख्याका दीवान और मीरबक्सी (प्रधान सेनापति)-के पद पर नियुक्त किया। युद्धकार्यमे मीरजाफरके साहस और तेजस्विताका पता लगता था। मीरजाफरके बुढ़ापेकी जीवनीकी पर्यालोचना कर बहुतेरे भ्रान्त विश्वासके वशवर्त्ती हो ऐसा अनुमान करते हैं, कि वह युद्धकार्यसे उतना जानकार नहीं था। मुताक्षरीण पढ़नेसे मालूम होता है, कि महाराष्ट्रीय आदि अनेक युद्ध-क्षेत्रोंमें मीरजाफर अपनी वीरताका परिचय दे गया है।

उड़िष्याके राजा जानकीरामके पुत्र दुर्लभरामके शासनकालमें महाराष्ट्र सरदार रघुजी उत्कल गये और राजा दुर्लभरामको कैद किया। यह संवाद पा कर नवाबने मीरजाफर खांको सामरिक विभागके दीवानके साथ साथ उड़ीसाका नायब और मेदिनीपुर तथा हिजली अंचलका फौजदार बना कर ससैन्य मराठोंके विरुद्ध भेजा। मीरजाफर कुछ दिन उच्च पद पर रह कर विलासी हो गया। इसलिये मेदिनीपुरके समीप एक सामान्य महाराष्ट्र-सेनाको हरा कर ही वह शान्त हो गया। बड़ी बड़ी फौजोंका सामना करनेका साहस उसे न हुआ। जब उसने सुना, कि रघुजीके लड़के जानोजी दलबलके साथ आ रहे हैं, तब वह वर्द्धमानको भाग आया। उसके भागनेका हाल सुन कर नवाब अलीवर्दी खांने आताउल्ला नामक एक सेनापतिको उसकी सहायतामें भेजा। अब दोनोंकी सेनाने मिल कर मराठोंको परास्त किया। जयलाभसे स्पर्द्धित हो आताउल्ला राज्यभोगका सुखस्वप्न देखने लगा। मीरजाफर खांको उसने अपने पक्षमें मिला लिया। इस समयसे मीरजाफरके मनमें बङ्गालकी मसनद पानेकी आकांक्षा बलवती होने लगी।

अनन्तर मित्रोंके समझानेसे मीरजाफरने इस कल्पनासे हाथ खींच लिया। पीछे अलीवर्दीने ससैन्य आ इसे वर्गियोंको बाधा देनेमे अक्षम देख बहुत कोसा। इस पर सेनापतिके मनमें बहुत दुःख हुआ। केवल यही नहीं, अलीवर्दी खांने उसका मानभंजन करनेके लिये स्वयं उसके शिविरमें जानेकी इच्छा प्रगट की। किन्तु मूर्ख मीरजाफरने जब नवाबका स्वागत नहीं किया, तब नवाब थोड़ी दूर आ कर लौट गये। इसके बाद मीरजाफरको सुजनसिंह द्वारा नवाबने कहला भेजा, कि वह यहां आ कर हिसाब किताब समझा जाय। किन्तु मीरजाफरके राजी न होने पर सुजनसिंहको बलपूर्वक उसे नवाबके निकट लाना पड़ा था। अलीवर्दी खा देखो।

नवाबने सुजनसिंहको ही हिजलीका फौजदार और किसी दूसरेको सामरिक विभागका दीवान बनाया। मीरजाफरके अधीनस्थ सेनादलको अन्यान्य सेनाविभागमें कार्य देनेका हुक्म हुआ। इस प्रकार सैन्यदलके विच्छिन्न हो जानेसे उसकी आंखें खुलीं। वह अभिमान और गर्वका परित्याग कर मुर्शिदाबाद लौटा और नोआजिस महम्मदका आश्रय लिया।

इसके बाद पटनाके अफगान-विद्रोहमें मर्माहतको नवाब फिरसे मीरजाफरके साथ मिले। उसे पूर्व पद पर पुनः अभिषिक्त कर नवाबने उसके अधीन पांच छः हजार आदमी रख दिया तथा आता उल्ला खां और नोआजिस महम्मदके हाथ नगररक्षा और मरहठोंको बाधा देनेका भार सौंप आप दलबलके साथ विहारको चल दिये। इसके बाद नवाब अलीवर्दीके मृत्युकाल तथा उनके प्रियतम दौहित्र सिराजउद्दौलाके राजत्वकाल तक मीरजाफर बङ्गालके प्रधान सेनापतिके पद नियुक्त रहे।

सिराजको शासन उच्छृङ्खला, अत्याचार, मातामहके पुराने कर्मचारियोंके प्रति अपमान तथा राज्यके हर्त्ता कर्त्ता मीरजाफरकी पूर्व कल्पित राज्यलाभकी लालसा और मीरनके हिंसा द्वेष आदिने धीरे धीरे सिराजके विरुद्ध

एक षडयन्त्रकी रचना कर दी। मीरजाफर ही इस चक्रान्त-का नेता था। हीनचेता मीरजाफरसे यदि सहायता न मिलती तो कभी भी अंगरेज कम्पनी बंगालमें अपनी गोटी जमा सकती न थी।

सिराज और अंगरेजोंके बीच जो छोटी छोटी लडाइयां हुई उनमें मीरजाफर सिराजकी ओरसे लडता था सही, किन्तु दिलसे नहीं। वह अंगरेजोंकी ही विजय चाहता था। सिराजने जो मोहनलालको प्रधान मन्त्री बनाया था। वही इसका मुख्य कारण बतलाया जाता है। सिराज-उद्दौला देखो।

मोहनलालका मन्त्रिपद ही सिराजका काल हुआ। महाराज कृष्णचन्द्र, जगत्सेठ, राजा दुर्लभराम, मीरजाफर, घेसिटी बेगम आदि सिराजको सिंहासन च्युत करनेका षड्यन्त्र करने लगे। खोजा पित्रू नामक एक अर्मानी वणिक् मीरजाफरका अभिप्राय जतानेकी आशासे वाट्स साहबसे जा मिला। दोनोंमें सन्धिपत्र लिखा गया। अंगरेज कम्पनी अपना मन लब निकालने लिये मीरजाफरको सहायता पहुंचानेमें राजी हुई। १७५७ ई०की २३वीं जूनको पलासीकी लडाईमें बङ्गालके भाग्यने पलटा खाया। युद्धमें मीरमदन और मोहनलाल खेत रहे। इतिहासकार कहते हैं, कि पलासीकी लडाईमें अंगरेज सेनापति क्लाइवके हाथसे जो नवावका पराभव हुआ वह एकमात्र नवाबको शठतासे हो हुआ था। क्लाइव देखो।

युवक नवाब सिराजको यमपुर भेज कर मीरजाफर नवाबी मसनद पर बैठा। सुजाकी विलासिता, अलीवर्दीके बादशाही पेशकश और वर्गीके दंगेसे राजकोष खाली आ रहा था। सिराज उद्दौलाने भी बडी भारी फौज रख कर उसके खर्च-वर्चमें अपना धनागार खाली कर दिया था। मोटी रकम हाथ लगेगी, समझ कर ही मीरजाफरने अंगरेज तथा अन्यान्य षडयन्त्रकारियोंको यथेष्ट पुरस्कार देनेका वचन दिया था अब उसने जब देखा कि खजाना खाली पड़ा है, तब वह भारी ऊहापोहमें पड गया। आखिर उसने किसी तरहसे रुपया चुकानेका इन्तजाम किया। कम्पनीके कलकत्तेके कर्मचारियोंने इस उपलक्षमें मीरजाफरसे जो रुपया दुह लिया था उसकी फिहरिश्त नीचे दी गई है—

गवर्नर ड्रेक	२ लाख	८० हजार
कर्नल क्लाइव	२० लाख	८० „
वाट्स	१० „	४० „
मेजर किलपाट्रिक	५ „	४० „
मानिहम	२ „	४० „
विचार	५ „	
६ कौंसिलके सभ्य	६ „	
वाल्स	५ „	
स्क्राफटन	२ „	
लुसिंटन		५० „

सम्पूर्ण रूपसे स्वीकृत वा विशेष प्रमाण प्राप्त रुपयेका ही इसमें उल्लेख है। अलावा इसके षडयन्त्रके नेताओंमेंसे किसने कितना मुंडा था उसका हिसाब नहीं। पलासी विजयके १५ वर्ष बाद पार्लियामेण्ट महासभामें जब अंगरेज-कर्मचारियोंके रुपये लेनेका मामला पेश हुआ, तब क्लाइवने आत्मपथका समर्थन करते समय कहा था, 'मीरजाफरसे इस प्रकार रुपये लेनेको मैं अन्याय नहीं समझता, इससे कम्पनीके पक्षमें भी कोई क्षति नहीं है।'

नवाब मीरजाफरने अलीवर्दीका अनुसरण कर महब्बतजङ्गकी उपाधि ग्रहण की। अभी उसका पूरा नाम हुआ सुजाउलमुल्क हिसाम उद्दौला मीरजाफर अली खां महब्बतजङ्ग"। उसके लडके मीरनने शाहमतजङ्ग तथा भाई काजेम खांने हैबतजङ्गको उपाधि पाई थी।

नवाबी मसनद पर बैठते ही मीरजाफरने बंगाल, विहार और उडीसाके राजकर्मचारियोंको अपने अपने कार्यमें नियुक्त रहनेका परवाना भेज दिया। १५वीं जुलाईको अंगरेज-कम्पनीका वाणिज्यपथ साफ करनेके लिये खास हुकुम दिया गया। पीछे कलकत्तेके टकसाल-घरमें सिक्का ढालने और सन्धिकी शर्तोंका पालन करनेका परवाना जारी हुआ। २६वीं जुलाईको अङ्गरेज-दलपति क्लाइव और वाटसन आदिने नवाबी खिलअत पाई थी।

अर्थकृच्छ्रता ही मीरजाफरको काल हुई। उसके सहयोगी चक्रान्तकारियोंने जब देखा, कि मीरजाफर प्रतिज्ञाकी हुई रकम देनेको तैयार नहीं, तब वे बड़े अप्रसन्न

हुए और बदला चुकानेका मौका ढूंढ़ने लगे। उनके आत्मीय स्वजन और अनुचर भी आशानुरूप अर्थ न पानेसे चिढ़े थे। उधर सेना भी असन्तुष्ट थी, कारण उन्हें वाकी वेतन नहीं मिला था। अब मीरजाफरको चारों ओरसे विपद्ने घेर लिया। उसे डर था, कि कहीं राज विद्रोह भी न खड़ा हो जाय।

मीरजाफर और दुर्लभराममें गाढ़ी मित्रता थी। मीरजाफरके नवाब होनेसे जब दुर्लभने कोई लाभ न देखा, तब वह भी नई चाल चलने लगा। नवावको उस पर सन्देह हो गया। इसी सन्देह पर उसने विहारके राजा रामनारायण और मेदिनीपुरके फौजदार राजा मानसिंहको अपने वशमें लानेका सङ्कल्प किया। पूर्णियाके मोहनलालका लडका कैद किया गया। पीछे दुर्लभराम-को ही इस षडयन्त्रका मूल जान कर नवाब उसका काम तमाम करनेमें लग गया। दुर्लभराम ताड़ गये और उन्होंने आत्मरक्षाके लिये काफी सेना इकट्ठी की। परन्तु अंगरेजोंने दोनोंमें एक तरहसे मेल करा दिया।

मीरनने सिराजके भतीजे मिर्जा महसीको सिंहा-सनका कण्टक जान गुप्तभावसे मार डाला। कहते हैं, कि मीरजाफर भी गुणधर पुत्रके साथ इस बालकके हत्याकाण्डमें शामिल था। क्योंकि, इसके पहले ढाकाके नवाब सरफराज खांके दूसरे लड़के अमानी खांको सिंहासन पर विठानेकी कोशिश हो रही थी। वहांके नायव-नवावने अंगरेज-कोठीके लोगोंकी सहायतासे इस राष्ट्रविप्लवका दमन किया।

१७वीं नवम्बरको नवावने राजमहलकी ओर यात्रा की। क्लाइव भी उनसे आ मिले। नवाबकी सेनाके पहुंचने पर विद्रोही-दलने शान्तभाव धारण किया। यहां रह कर ही इसने खादेम होसेन खाँको पूर्णियाका फौज-दार बनाया। खादेमने यहांका विद्रोह दमन तो किया, पर उसके अत्याचारसे पूर्णियावासी बहुत तंग आ गये।

विद्रोहको शान्त देख क्लाइवने अंगरेजी कम्पनीका जो प्राप्य था उसे मांग भेजा। साथ साथ उन्होंने यह भी सूचित किया, कि वे नवावके साथ पटना जानेसे लाचार हैं। इस समय दीवान राजा दुर्लभरामकी आवश्यकता आन पड़ी। क्लाइवका अभय-पत्र पा कर दुर्लभराम दलवल के साथ वहां पहुंचे। अंगरेज कम्पनीका पावना जो २३ लाख रुपये था उसमेंसे आधा राजकोषसे और आधा वर्द्धमान और कृष्णनगराधिप तथा हुगलीके फौजदार अमीर वेगके खजानेसे चुकानेको कहा गया।

नवाब राजा रामनारायणको विहारसे भगाना चाहते थे, किन्तु दुर्लभराम और क्लाइवने ऐसा नहीं होने दिया। इसी समय महाराष्ट्र दलपतिने २४ लाख रुपये चौथका दावा करके नवावके पास आदमी भेजा। इसी समयमें नवावके साथ रामनारायणका मेल हो गया। पटनामें मीरजाफर खाँका दरवार बैठा। मीरन नाम-मात्रको पटनाका नवाव बनाया गया। रामनारायण डिपटी नवाबी पद पर स्थायी रहे। इस उपलक्षमें उन्हें ७ लाख रुपये देने पड़े थे। इसके कुछ समय बाद ही मीरजाफरको बादशाही सुबेदारी सनद मिली। इसी समय क्लाइव भी ६ हजारी मनसबदार और उमराव हुए थे।

इस समय राजा नन्दकुमारका नवाब मीरजाफरके साथ अच्छा सद्भाव था। राजस्व-विभागमें दक्षता रहनेके कारण वे दीवान दुर्लभरामके सहकारी वा खालसाके पेशकार थे। उनकी कुमंत्रणासे नवाब और मीरन दुर्लभरामको विपद्में डालनेकी कोशिश करने लगे।

दुर्लभरामका काम तमाम करनेमें नवावका उद्योग देख क्लाइवने उसे कलकत्ते ले जानेको कहा। नवावके ससैन्य रवाना होनेके ८ दिन बाद ही मीरनके आदेशसे सेनाने दुर्लभरामके मकानको घेर लिया। स्क्राफटनकी चेष्टासे सेनादल निवृत्त हुआ। पीछे क्लाइवने नवाबके षड़यन्त्र-जालसे उन्मुक्त कर राजा दुर्लभरामको सपरि-वार कलकत्ते भेज दिया।

नवाब दिनों-दिन अर्थाभावके कारण विपन्न हो रहे थे। अंगरेज-कम्पनीका ऋण चुकानेके लिये उसके राज्यका अच्छा अच्छा अंश जब्त कर लिया गया था। जागीर विभागके निम्नतम कर्मचारी चूनीलाल और मणिलाल राजस्व वसूल कर थोड़ा हिस्सा दरबारमें भेज देते और वाकी हड़प कर जाते थे। इधर सेनाओंका वाकी

वेतन चुकानेके लिये २ लाख रुपया अंगरेजोंसे कर्ज लिया, किन्तु इतनेसे क्या हो सकता था। धीरे धीरे सेनाविभागमें अशान्ति फैल गई। विद्रोहिदल षडयंत्रकारी मीरजाफरके प्राण लेनेको उतारू हो गये। मुहर्रमके समय चक्रान्तकारियोंने उसका काम तमाम करनेका सङ्कल्प किया। खाजाहादी खाँ पकड़ा और मीरन के हुकुमसे मरवा डाला गया।

१७५६ ई०में शाहज़ादा शाह आलमने बङ्गालकी चढ़ाई कर दी। राजा रामनारायणने शाहज़ादेका पक्ष लिया, जान कर मीरजाफर दलबलके साथ राजमहल पहुंचा। क्लाइवके बुद्धि-कौशलसे उपद्रव शान्त हो गया। इस उपकारमें नवाबने कलकत्तेकी जमींदारी क्लाइवको जागीर-स्वरूप दे दी। आगे चल कर इसी जमींदारीको ले कर क्लाइव और इष्ट-इण्डिया कम्पनीमें झगड़ा हो गया था।

उसी सालके अगस्त मासमें ओलन्दाज और जंगी जहाज भागीरथीमें दिखाई दिया। नवाबके उपदेशानुसार चूँचड़ाके ओलन्दाज गवर्नर उसे दूसरी जगह भेज देनेको वाध्य हुए। अक्तूबरके प्रारम्भमें नवाबने कलकत्ता पदार्पण किया। इसी समय क्लाइव विलायतको चल दिये। अब ओलन्दाज जंगी जहाजोंने फिरसे भागीरथीमें लंगर डाला। मीरजाफरको इस वार विपक्ष दलके अनुकूल देख क्लाइव ओलन्दाजोंके विरुद्ध खड़े हो गये। युद्धमें ओलन्दाजोंकी हार हुई उनका यथासर्वस्व अंगरेजोंके हाथ लगा ओलन्दाजोंने ५वीं दिसम्बरको अङ्गीकार-पत्रके साथ अपनी भूल स्वीकार कर युद्धके खर्च स्वरूप दो लाख रुपया दे कर छुटकारा पाया। इसके बाद १७६० ई०के फरवरी मासमें उन्होंने स्वदेशकी यात्रा की।

क्लाइवने विलायत जानेके कुछ समय बाद ही शाहजादाने दूसरी वार बङ्गाल पर चढ़ाई कर दी। नवाबी सेनाके साथ नवीन बादशाही दलका घमसान युद्ध छिड़ा। युद्धमें मीरन घायल हुआ। पीछे बादशाही सेनाने रणक्षेत्रसे ५ कोस दूर हट कर छावनी डाली। यहांसे वे मीरजाफरको वंदी करनेके लिये मुर्शिदाबादकी ओर चल दिये। सौभाग्यवशतः इस समय मीरजाफर वर्द्धमान अञ्चलमें महाराष्ट्रीय दलकी बाट जोह रहा था। मीरन और अंगरेज-सेनादल जब नवाबके साथ आ मिला, तब शाहआलमने फिरसे पटना पर चढ़ाई कर उसे जीत लिया। इस समय पूर्णियासे खादेम होसेन खां बादशाहके साथ मिलनेके अभिप्रायसे रवाना हुआ। कप्तान नक्स और सितावरायने खादेमको ससैन्य मार भगाया। केल्ड और मीरनने बहुत दूर तक उसका पीछा किया। इस समय मूषलधारसे वर्षा आरम्भ हुई। चार दिन लगातार यात्रा करनेके बाद २री जुलाईको वज्राघातसे मीरनकी मृत्यु हुई।

प्रियपुत्र मीरनकी मृत्युसे नवाब मीरजाफर शोकसागरमें डूब गया। एक तो चारों ओरसे रुपयेकी मांग, उसके ऊपर अंगरेजकी प्रतिपत्ति, प्रभुत्व और अयथा अर्थशोषणने उसे पागल बना दिया। अब राज्य करनेकी उसकी बिलकुल इच्छा न रही।

क्लाइवके स्वदेश जानेके बाद हालवेल कलकत्ताके अध्यक्ष हुए। उन्होंने अन्धकूपहत्याकी तरह मीरजाफरके अकर्मण्यादि दोषोंको नाना वर्णोंमें चित्रित कर अंगरेजसदस्यमण्डलीके निकट उपस्थित किया। हालवेलके सिद्धहस्तसे रचित मीरजाफरके दोषोंकी विस्तृत काहिनी तैयार होनेके समय मीरनकी मृत्यु हुई। इस समय षडयन्त्र-जालमें विजड़ित हो कर किस प्रकार मीरजाफर खाँ बङ्ग सिंहासनसे उतारा गया था, वह मीरकासिमके चरित्रमें अच्छी तरह आलोचित हुआ है।

मीरकासिम खाँ देखो।

गिरिया और उधुआनालाके युद्धके पहलेसे ही मीरकासिमके औद्धत्य और विद्रोहभावको देख कर अंगरेजोंने फिरसे बङ्गालके सिंहासन पर मीरजाफर खाँको बैठाना चाहा था। १७६२ ई०की १०वीं जुलाईको दोनोंके बीच सन्धि-पत्र लिखा गया। बक्सरकी लड़ाईके बाद मीरकासिमकी कुल आशा पर पानी फेर गया। बड़े दीनभावसे वह अपना जीवन व्यतीत करने लगा।

१७६४ ई०की ६वीं अक्तूबरको मेजर मनरोने बक्सरकी यात्रा की। युद्धके एक दिन पहले मीरकासिमके भाग जाने पर मीरजाफर खाँ फिरसे बङ्गालकी मसनद

पर बैठा। वर्त्तमान शासनमें उसने रुपये इकट्ठे करनेमें कोई कसर उठा न रखी। मन्त्री महाराज नन्दकुमार इसी उद्देशसे अपनी असाधारण प्रतिभाका परिचय दिखला गये हैं।

अंगरेजोंके अनुरोध करने पर वृद्ध महाराज दुर्लभ-राम निजामत विभागके दीवान हुए। कुल अधिकार उन पर सौंपा जाय, यह मीरजाफर वा नन्दकुमार नहीं चाहते थे। इसलिये दीवानखाना, जागीर विभाग, पटना अञ्चलका हिसाव, हुजुरनविसी, धनागार आदि निजामत दीवानीसे अलग कर नन्दकुमारके हाथ सौंपा गया। इस समय महम्मद रेजा खाँ हिसाव किताव न समझानेके कारण मुर्शिदावादमें कैद किया गया।

१७६४ ई०के नवम्वरमें गवर्नर भान्सिटार्टके स्वदेश जाने तथा क्लाइवके लौटनेकी आशासे उल्लसित मीर-जाफर कलकत्ता आया। उसने समझा था, कि कल-कत्ते जानेसे अव उनके सव कष्ट दूर हो जायंगे। लेकिन ऐसा हुआ नहीं, यहां अंगरेज-कम्पनीका रुपया चुकानेके लिये उस पर सख्त तकाजा होने लगा। इसी तकाजेके मारे वह अपना स्वास्थ्य खो मुर्शिदावाद लौटा। इस समय उसकी उमर ४४ वर्ष की थी। कहते है, कि अन्तिम समयमें हिताकांक्षी महाराज नन्दकुमारके अनुरोधसे उसने मुर्शिदावादके प्रसिद्ध पीठाधिदेवता किरीटेश्वरीका पादोदक पान किया था। १७६५ ई०के जनवरी मासमें मीरजाफर इस लोकसे चल वसा।

मीरजुमला—एक प्रसिद्ध मुगल-सेनापति। इनका जन्म फारसकी राजधानी इस्पहान नगरके पासके स्थानमें हुआ था। जवानीमें वे पारसिक वणिकोंके साथ अपनी किस्मतकी आजमाइश करनेके लिये भारतवर्षमें आये। पहले गोलकुण्डाके हीरेके व्यवसायमें इन्हें वहुत-सा धन हाथ लगा। वाद उसके ये १६१० ई०में तैलंगके सुलतान अवदुल्ला कुतव शाहके सामरिक विभागमें एक कर्मचारी नियुक्त हुए। क्रमशः अपनी वुद्धि और वीर्यवलसे ये प्रधान सेनापति हो गये। कुतव-शाहके अधीनमें रह कर इन्होंने कर्णाटकके अन्तर्गत वाला-घाट प्रदेश तथा गंजीकोटा और सुधुतके दुर्भेद्य दुर्ग पर आक्रमण किया। उक्त प्रदेशमें हीरे और सोनेकी वहुत-सी खानें थीं। मीरजुमलाने इन खानोंसे इतना धन इकट्ठा किया, कि जनसाधारण इन्हें धनकुवेर कहने लगे। अतुल धनका अधिपति हो कर मीरजुमला राज्य पानेके लिये वड़े उत्कण्ठित हुए। अतः पांच हजार सेना संग्रह कर इन्होंने उन्हें सुशिक्षित किया और स्वयं उनका खर्च देने लगे। इस घटनासे वे सुलतानकी आखोंके कांटे वन गये।

कर्णाटकमें युद्धयात्राके समय इन्होंने अपने पुत्र मीर महम्मद अमीनको सुलतानकी सभामें प्रतिनिधिस्वरूप रख छोड़ा। युवक अमीनने पिताके ऐश्वर्यका गर्व कर राजसभामें अनेक प्रकार अभद्रोचित व्यवहार किया था तथा एक दिन नशेमें चूर हो कर वह सुलतानकी पार्श्व-वर्त्ती मसनद पर सो गया। इससे सभासद्गण अत्यन्त विरक्त हुए और उसे सुलतानकी सभामें आनेसे मना कर दिया।

मीरजुमलाने जव यह संवाद पाया तव वे समझ गये, कि शत्रु उनके अधःपतनमें लगा हुआ है। अतः गोलकुण्डा लौटना इन्होंने अच्छा नहीं समझा। वे औरङ्गजेवकी शरणमें पहुंचे। इस समय औरङ्गजेव शाहजहांकी सेनाके अधिपति हो कर दाक्षिणात्य पर चढ़ाई कर रहे थे। उन्होंने मीरजुमलाको दिल्ली ले जा कर सम्राट् शाहजहांसे उनका परिचय करा दिया। शाहजहांने १६५५ ई०में गोलकुण्डाके सुलतानके पास एक दूत भेजा और पुत्र सहित मीरजुमलाको छोड़ देनेका हुक्म दिया।

किन्तु दूतके पहुंचनेसे पहले ही कुतव मीरजुमला-के अभिप्राय जान गये और उनके लड़के अमीनको कैद कर उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली। दूत भेजनेका कोई फल न देख औरङ्गजेवको भारी गुस्सा हुआ। इसका प्रतिशोध लेनेके लिये वे एक दल सेना ले कर तैलंग पर चढ़ आये। कुतवशाह युद्धमें परास्त हुए। औरङ्गजेवने सुलतानका राज्य तहस नहस कर हैदरा-वाद नगर लूट लिया। तव सुलतान निरुपाय हो कर मीरजुमलाको सारी सम्पत्तिके साथ उनके पुत्रको छोड़ देने स्वीकृत हुए तथा औरङ्गजेवको एक करोड़ रुपया और राजकुमार महम्मदके साथ अपनी लड़कीका विवाह दे कर उनसे संधि कर ली।

१६५७ ई०में मीरजुमला पुत्र और सम्पत्तिके साथ औरङ्गजेबसे जा मिले। धीरे धीरे औरङ्गजेबके साथ मीरजुमलाकी अत्यन्त घनिष्ठता हो गई। दिल्लीकी राज सभामें उपस्थित हो कर मीरजुमलाने सम्राट् शाहजहांको हीरेका एक बड़ा टुकड़ा, सोलह हाथी और अन्यान्य बहु-मूल्य उपढौकन अर्थात् पन्द्रह लाख रुपयेकी वस्तु भेंट दी। इसमें इन्हें सम्राट्की तरफसे "मुयाजिम खाँ"-की उपाधि तथा छः हजार अश्वारोहीकी अध्यक्षता मिली। इसके सिवा दीवानकी उपाधि और पांच लाख रुपयेके द्रव्यादि भी इन्हे मिले। बादमें वजीर सयादुल्लाकी मृत्यु होने पर शाहजहाने मीरजुमलाकी कार्यदक्षतासे संतुष्ट हो उन्हें वजीर पद पर नियुक्त किया। राजकुमार दाराने इसमें बड़ी आपत्ति की थी, किन्तु औरङ्गजेबकी सहायतासे मीरजुमलाकी कुछ भी क्षति न हुई।

जब दिल्ली-सिंहासनको ले कर औरङ्गजेबके भाइयों-के बीच विरोध खड़ा हुआ तब मीरजुमलाने औरंजेबको यथासाध्य मदद पहुचाई थी। औरङ्गजेबने मीरजुमलाकी युद्धतत्परता देख उन्हें ही प्रधान सेनापति बना कर अपने भाई सुजाके विरुद्ध लड़ाई करने भेजा। मीर-जुमला सुजाका पीछा करते हुए ढाका पहुंचे। यहां उनके रहनेके लिये पृथक् मकान बनाया गया तथा यहीं पूर्व बङ्गालकी राजधानी कायम हुई।

राजमहलमें रहते समय मीरजुमलाने अङ्गरेजोंका सोरा-से लदा हुआ वाणिज्यपोत रोक कर पटनाके वाणिज्य में बड़ी क्षति पहुंचाई थी। अङ्गरेजोंने दुर्बुद्धिक्रमसे १६६० ई०में मीरजुमलाके एक जंगी जहाज पर चढाई कर दी। इससे मीरजुमला बड़े बिगड़े और अङ्गरेजोंको बङ्गालसे निकाल भगानेका भय दिखलाया। जो हो, सुचतुर अङ्गरेजोंने उस यात्रामें क्षमा मांग कर संधि कर ली। मीरजुमलाके आदेशानुसार हुगलीके फौजदारने वार्षिक ३००० हजार रु० कर ले कर अङ्गरेजोंको वाणिज्य करनेकी अनुमति दी।

जब औरङ्गजेब सिंहासन पानेके लिये घरको लड़ाई-में उलझे थे तब सुयोग पा कर बंगालके जमींदार दिल्लीमे कर भेजना बंद कर अपने अपने राज्यको बढानेके मौका ढूंढ रहे थे। कोचविहारके राजा भीमनारायण ही इनमें सर्वप्रधान थे। उन्होंने मुगल-साम्राज्यके बहुत-से स्थानों पर चढ़ाई कर अन्तमें कामरूप अधिकार कर लिया। आसामके प्रधान राजा जयदेवसिंह इस समय बंगालके अनेक स्थानोंको लूट कर ढाका तक चढ़ आये तथा बहुत-से अधिवासियोंको बन्दी कर ले गये।

इस अत्याचारका प्रतिशोध लेनेके लिये मीरजुमला ढाकामें राजधानी स्थापन कर एक सेनादल इकट्ठा करने लगे। बहुत से जंगी जहाज, कमान और अन्यान्य अस्त्र आदि संग्रह कर कोचविहार पर चढ़ाई करनेके लिये १६६१ ई०मे उन्होंने सम्राट्से अनुमति मांगी। अनुमति पाते ही उन्होंने जलपथसे ब्रह्मपुत्र नदी पार कर युद्धयात्रा कर दी। नदीका दोनों किनारा दुर्भेद्य जङ्गलमय था, इसलिये जङ्गल काट कर उन्हें रास्ता बनाना पड़ा।

भीमनारायण पहलेसे ही आक्रमणका संवाद पा कर आत्मरक्षामें लगे थे। किन्तु उन्होंने जो सब पथ रोक रखा था मीरजुमला उस हो कर नहीं गये। जिस ओर घना जंगल था, मीरजुमलाने उसी ओर जंगल काटना शुरू किया। सेनाको उत्तेजित करनेके लिये वे अपनेसे ही कुठार ले कर वन काटने लगे। यह देख मुगलसेना भी घोड़ेसे उतर कर जंगल काटने लगी। इस प्रकार अतर्कितभावसे अकस्मात् मीरजुमला कूच-विहार पहुचे। भीमनारायण दूसरा कोई उपाय न देख जंगलसे घिरे पहाड़ीप्रदेशमें भाग गये। मीरजुमलाने कोचविहारको जीत और लूट कर उसका नाम "आलमगीर नगर" रखा और सैयद महम्मद मदकको उक्त प्रदेशका शासनकर्त्ता नियुक्त किया। नगरके सभी मन्दिर और देवमूर्त्ति तोड कर मीरजुमलाने उस स्थानमें मसजिद बनानेकी आज्ञा दी।

जो कुछ हो, मीरजुमलाने कोचविहारके अधिवासियों-के प्रति किसी प्रकारका अत्याचार नहीं किया। राजा भीमनारायणकी सारी सम्पत्ति छीन गई थी। कूच-विहारमें वहांके अधिष्ठाता नारायणदेवका एक प्रकाण्ड मन्दिर था। मीरजुमलाने धर्मान्ध हो स्वयं हाथमें कुठार ले कर नारायणदेवका विराट् विग्रह तोड डाला तथा सब मुसलमानोंको मन्दिरकी छत पर चढ़

कर कुरान पढ़ने कहा। इसके सिवा मीरजुम्लाने अधिवासियोंको किसी प्रकारका कष्ट नहीं दिया। इसीसे जिन्होंने मुसलमानके भयसे राज्य छोड़ कर वनमें आश्रय लिया था, वे पुनः अपने देशमें लौटे और निर्विघ्नसे वास करने लगे।

भीमनारायण जंगलसेठके पर्वत पर छिपे थे। अपने लड़के विष्णुनारायणके साथ उनकी नहीं पटती थी। विष्णुनारायण मीरजुम्लाके पास आ कर मुसलमान धर्ममें दीक्षित हुए। उन्होंने मीरजुम्लासे कहा, "यदि आप मुझे कोचविहारके राज्य पर अभिषिक्त कर दें तो मैं पिता को पकड़ आपके सामने हाजिर कर सकता हूं।

इस प्रकार धर्मद्रोही और पितृद्रोही विष्णुनारायण मुसलमान-सेनापति इस्फान्दियर वेगके अधीन वृहत् सैन्यदल ले कर पिताको पकड़ने वनमें घुसा। पिताने उपर्युक्त पुत्रके व्यवहारादि जान कर भूटान प्रदेशके एक दुर्भेद्य शैलदुर्गमें आश्रय लिया। अधित्यकाप्रदेशसे उक्त दुर्गमें जानेके रास्ते पर लोहेका एक पुल था। वह पुल ऐसे कौशलसे वनाया गया था, कि दुर्गमेंके आदमी उसमें लगी सीढ़ियोंको आसानीसे खींच सकते थे। पुत्र मुसलमान-सेनादलकी सहायता पा कर भी पिताको पकड़ न सका। तव गुस्सेमें आ कर उसने माता वहन आदि परिजनवर्गको कैद किया और उनकी सारी सम्पत्ति छीन कर वह शान्त हुआ। प्रधान मन्त्री भी पकड़े गये। अरण्यमें २५० वड़ी वड़ी कमान थीं। इसके सिवा दूसरी दूसरी वस्तु ले कर गुणधर पुत्र ढाका लौटा।

मीरजुम्ला कोचविहार राज्य पर दश लाख रुपया कर लगा कर तथा इसफान्दियर वेगके अधीन १४०० अश्वारोही और २००० गोलन्दाज सेना रख कर आसाम जीतने चले गये। वे ढाकासे जिन सव जंगी जहाजोंको ले गये थे उन पर नाना प्रकारके युद्धोपयोगी द्रव्य लाद कर ब्रह्मपुत्र होते हुए आसामकी ओर बढ़े। १६६२ ई०में रांगामाटीके निकट ब्रह्मपुत्र पार कर अग्रसर होने लगे। किन्तु प्रतिकूल स्रोतके कारण सेना जहाजका रस्सा खींचने लगी। अविश्रान्त चेष्टा करने पर भी वे एक दिनमें एक कोससे अधिक न जा सके। यहां तक, कि शत्रुगण वनमें अरक्षितभावमें रह कर गोली चला चला उन्हें तंग करने लगे। सेनाके आगे वढ़नेमें अनिच्छुक होने पर भी मीरजुम्लाके अक्लान्त उद्यमको देख वे उत्साहित हुई।

इस प्रकार कुछ दिन लगातार चल कर मीरजुम्ला सेमाइल या हाजो नामक दुर्गके पास पहुंचे। ब्रह्मपुत्र नदके किनारे एक उच्च शैलकी चोटी पर एक दुर्ग वना हुआ था। दुर्गकी चहारदीवारीस्वरूप ब्रह्मपुत्रमें वहुत-से जंगी जहाज थे। दुर्गमें वीस हजार सेना दुर्गकी हमेशा रक्षा करती थी। मीरजुम्लाने अपने जंगी जहाजकी सेनाओंको नौसेना पर चढ़ाई करनेका हुक्म दिया और आप दुर्गको आक्रमण करने आगे वढ़े। कामानके गोलावर्षणसे आसामीय जंगी जहाज छिन्न भिन्न हो गया। यह देख दुर्गकी सभी सेना रातमें प्राण ले कर भागी।

मीरजुम्लाने हठात् दुर्ग अधिकार कर आता-उल्ला नामक एक सेनापतिके अधीन वहां एक दल सेना रख आसामके वीच अग्रसर हुए। राजधानी घोड़ाघाट पर चढ़ाई की गई। मुगलसेनाके अविश्रान्त परिश्रमसे अत्यन्त क्लान्त होने पर मीरजुम्लाने उन्हें घोड़ाघाट और मतियापुरके मध्यवर्त्ती स्थानमें विश्राम करनेका हुकुम दिया।

मीरजुम्ला इस ख्यालमें थे, कि जव राजा जयदेवसिंह भाग गये हैं और अधिकांश अधिवासी हो उनके वशीभूत हुए हैं तव और किसी तरहके उपद्रवकी आशङ्का नहीं। इसी भ्रान्त विश्वासके वशवर्त्ती हो कर उन्होंने अपना विजय-संवाद सूचित करनेके लिये औरङ्गजेवके पास दूत भेजा और तुरत नया रास्ता वना कर समृद्धिशाली चीन-साम्राज्य पर भी चढ़ाई की जायगी—यह भी कहला भेजा।

औरङ्गजेव मीरजुम्लाका पत्र पा अत्यन्त संतुष्ट हुए तथा वहुत जल्द उनकी विजय-पताका चीन और जङ्गिस खाँके तातार राज्यमें उड़ेगी, सोच कर फूले न समाये। उन्होंने मीरजुम्लाको धन्यवाद देते हुए चीन-यात्राके लिये अपने हाथसे पत्र लिखा और उनके पुत्र अमीनको गौरवसूचक उपाधि दे कर सम्मानित किया।

अकस्मात् घटनाचक्रने पलटा खाया। वृष्टि इतनी हुई कि आसामके नद और नदी उमड़ गई जिससे आसामप्रदेश जलमय हो गया। मुगल-सेना और घोड़ोंको रसद घट गई। आसाम-राज जयदेवसिंह यह देखने ससैन्य आये। मुगल चारों ओरसे आक्रान्त हुए। जलवायुकी आर्द्रता आदि नाना प्रकारके प्राकृतिक उत्पातसे मुगल सेनामें महामारी फैल गई। यह सुयोग पा आसामवाले भी चढ़ाई कर मुगल सेनाका संहार करने लगे। मीरजुमला आगे पीछे किसी ओर न बढ़ सके।

कई महीनोंके बाद वृष्टि शेष हुई। मीरजुमलाने फिर आसामराज पर चढ़ाई की। राजाने सन्धिका प्रस्ताव किया; किंतु मीरजुमलाने वैरनिर्यातनकी इच्छासे उनका राज्य ध्वंस करनेकी प्रतिज्ञा की। लेकिन मीर जुमलाकी सेना विद्रोही हो गई। अन्तमें उन्होंने अपने सेनापति दिलावर खाँके परामर्शसे राजाके साथ सन्धि कर ली। आसामराजने सन्धिकी शर्त्तके अनुसार मीर-जुमलाको २०००० डोले अर्थात् ६ मन १० सेर सोना तथा ३१५ मन चाँदी, ४० हाथी और दो लावण्यवती ललनायें उपहारमें दीं। किसी किसीका कहना है, कि उनमें एक राजाकी कन्या थी।

मीरजुम्ला जब आसाम पर चढ़ाई कर रहे थे उस समय उनके प्रतिनिधि इसफान्दियर बेगके अत्याचार-से कूचविहारमें अनेक प्रकारका उपद्रव चल रहा था। वहांके अधिवासियोंने दल बांध कर भूतपूर्व राजा भीमनारायणको बुलाया था। भीमनारायणने प्रजाओं-की सहानुभूतिसे प्रोत्साहित हो इसफान्दियर खाँको राज्य छोड़ देनेके लिये कहला भेजा। मुगल-प्रतिनिधि डर कर गौहाटी चले गये और वहीं मीरजुम्लाकी बाट जोहने लगे।

मीरजुम्ला बंगालके लिये रवाना हुए। उनकी बड़ी भारी सेना प्रायः सभी ध्वंस हो गई थी। सैकड़े पीछे दश सैनिक जीवित थे, बाकी सभी आसाम प्रदेशमें मारे गये थे।

१६६२ ई०के प्रारम्भमें मीरजुम्ला गौहाटी पहुंचे तथा बाकी सेनाओंको इसफान्दियरके साथ कोचविहार कब्जा करनेके लिये भेज दिया और आप ढाकाको रवाना हुए। रास्तेमें खिजिरपुर नामक स्थानमें उनकी मृत्यु हुई। ऐतिहासिक एलफिन्सटनका कहना है, कि १६६३ ई०की ६ठी जनवरीको वे ढाका नगरमें मृत्युमुखमें पतित हुए। किन्तु ष्टुवार्ट आदि लेखक कहते हैं, कि उन्होंने कोच-विहारके अन्तर्गत खिजिरपुरमें १६६३ ई०को ३१वीं मार्च-को मानवलीला संवरण की।

औरंगजेब इनका मृत्यु संवाद पा बहुत दुःखित हुए। पीछे उनके लड़के अमीनको पितृपद पर नियुक्त किया गया। मीरजुम्ला असाधारण बुद्धिमान् और कार्यदक्ष सेनापति थे। अपने बुद्धिबल और उद्यमसे उन्होंने अच्छा नाम कमाया था। उनकी मृत्यु पर यूरोपीय वणिकोंने भी विशेष दुःख प्रकाश किया था।

मीरजुम्ला—एक मुगल-सेनापति। पारस्यराज्यके शाहरी-स्थान-नगरमें इनका जन्म हुआ। इनका असल नाम मीर महम्मद अमीन था। मुगल-सम्राट् जहांगीरके राजत्वकाल १६१८ ई०में ये भारतमें पधारे। सम्राट् शाहजहांने इन्हें पांचहजारी सेनानायकका पद और मीरजुम्लाकी उपाधि दी। १६३७ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

मीरजुम्ला—सम्राट् फर्रुखसियरके एक प्रियपात्र। इनका प्रकृत नाम अबदुल्ला था। सम्राट्के अनुग्रहसे इन्हें विहारप्रदेशकी सूबेदारी मिली थी। सम्राट् महम्मद शाहके राजत्वकालमें इन्हें 'सदर उस सदूर' का पद मिला था। १७३१ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

मीरट (मेरठ)—युक्तप्रदेशके छोटे लाटके अधीन एक विभाग। यह एक कमिश्नर द्वारा शासित होता है। अक्षा० २७° ३८´ से ३०° ५६´ उ० तथा देशा० ७७°७´ से ७८°४२´ पू०में विस्तृत है। देहरादून, सहारनपुर, मुजःफरनगर, मेरठ, बुलन्द शहर और अलीगढ़ नामके छः जिलोंको ले कर यह विभाग बना है। (प्रत्येक जिलेके वर्णनमें उनका विस्तृत विवरण दिया गया है)। इसकी उत्तरी सीमा पर शिवालिककी पहाड़ियां हैं। इसके पूर्व गङ्गा-नदी, दक्षिण मथुरा और एटा जिला तथा पश्चिममें यमुना नदी प्रवाहित हो रही है। इसका क्षेत्रफल ११३२० वर्गमील है।

इस भूखण्डमें ६८ नगर और ८२०६ ग्राम लगते हैं। नगरोंमें मीरट नगर और सेनावाद, अलीगढ़ (कोइला), सहारनपुर, खुर्जा और हाथरस नगर प्रधान हैं। इसमें २२ हजार लोग वसते हैं।

मीरट (मेरठ)—युक्तप्रदेशका एक जिला। इसके उत्तर मुजःफरनगर, पश्चिम यमुना, दक्षिण बुलन्द शहर और पूर्वमें गङ्गानदी प्रवाहित हो रही हैं। क्षेत्रफल २३५६ वर्गमील है। मीरट नगरमें इसकी सदर अदालत रहती है। गङ्गा और यमुनाके बीचमें रहनेके कारण इसकी जमीन समतल और उर्वरा है। यह स्थान वहुत पुराने जमानेसे अन्तर्वेदी नामसे तथा मुगल-शासनमें दोआब नामसे पुकारा जाता था। वड़े बड़े शस्यश्यामल क्षेत्रोंके सिवा कहीं कहीं वन-जङ्गल भी दिखाई देना है। इस जिलेके अनेक स्थानोंमें आम्रवाटिकायें प्रकृति-की लीला कुशलताका परिचय दे रही हैं। गंगा और यमुनाकी वालुकामयी भूमिमें खेती-बारी नहीं होती। जब वायु प्रवल वेगसे प्रवाहित होती है, तब बालू एक जगहसे उड कर दूसरी जगह जा एक स्तूप वन जाता है।

गंगा और यमुनाके सिवा यहां हिन्दन नामको और एक नदी है। वर्षा ऋतु- इस नदोके द्वारा नावोंमें माल एक जगहसे दूसरी जगह ले जाया जाता है। सिवा इन नदियोंके कितने ही वालुकामय निम्नस्थान हैं जो वर्षा ऋतुमें छिछले जलसे भरे रहने हैं और अन्य ऋतुओंमें सूख जाते हैं। इन जलाशयोंसे यहांकी खेतीमें वहुत उन्नति हुई है। अनूपशहरकी नहर ढालू गंगाके निकट के प्रदेशोंको सींचती है। इससे यहांका कृषिकार्य वहुत उन्नत हो रहा है।

बूढ़ीगंगा या गंगाका प्राचीन प्रवाहिका-स्थान वर्त्तमान नदीगर्भसे कुछ दूर पर अवस्थित है। इसीके किनारे महाभारतमें लिखी पाण्डव-राजधानी हस्तिना-पुरी मौजूद थी। अब उस प्राचीन नगरीका कुछ भी चिह्न दिखाई नहीं देता। एक अङ्गरेज ऐतिहासिकने लिखा है, कि इस भारतीय ट्रेय नगरीका कोई चिह्न रह न गया है। जो स्थान हस्तिनापुरका खण्डहर समझा जाता था वह गंगाके घटने वढ़नेके कारण उनके गर्भमें विलीन हो गया है। ईसाके जन्मसे पहले यह खण्डहर यहां मौजूद था।

हस्तिनापुर जैसा पुराना नगर न होने पर भी मीरट-की पाचीनता और प्राधान्य इतिहासमें दिखाई देता है। जिलेके बीचमें यह नगर वसा है। यहांसे दिल्ली तक रेल लाइन गई है। गाड़ियां आती जाती हैं। सिवा इसके उत्तर-पश्चिम भारतके प्रायः सभी समृद्ध नगरोंमें आने जानेकी सुविधाके लिये यहांसे रास्ते गये हैं। अंग्रेजोंके अधिकारके वाद छावनी कायम हो जानेसे यहां यूरोपियोंका शुभागमन हो गया है। इससे नगरकी वहुत उन्नति हो रही है।

इस मीरट प्रदेशकी तरह भारतके और कहींका ऐसा प्राचीन इतिहास नहीं मिलता। वैदिकयुगमें आर्य्य लोग अन्तर्वेदीमें वसे थे। उसी प्राचीनतम समयसे यहांकी श्रीवृद्धि हो रही है। रामायण पढ़नेसे मालूम होता है, कि अयोध्या, वैशाली और मिथिला जनपदोंमें सूर्य और चन्द्रवंशी राजाओंका आवास था। इससे यह स्वीकार करना होगा, कि आर्य्य लोग पहले दोआबमें रह कर शक्तिशाली हो कर पूर्वकी ओर वढ़े थे। जिस समय महाभारत हुआ, उस समय भी मीरट वहुत समृद्धि सम्पन्न नगर था। क्योंकि, दिल्ली नगरी (इन्द्रप्रस्थ)के निकटका यह मीरट नगर ही कुरुवंशी राजाओंकी राज-धानी हस्तिनापुर विद्यमान था। हस्तिनापुरीका कोई प्राचीन चिह्न न मिलने पर भी वहांके अधिवासी गंगाके निकटवर्त्ती जिस स्तूपको हस्तिनापुरका खण्डहर वताते हैं, वह निःसन्देह हस्तिनापुरका खण्डहर मालूम होता है। महाभारतका युद्ध समाप्त हो जाने पर यहां राजा परीक्षितके वंशधर कई राजाओंने राज्य किया था।

(विष्णुपुराण ४।२१ अ०) हस्तिनापुर देखो।

हस्तिनापुर (मेरठ)-को केन्द्र बना कर महाभारत-का युद्ध हुआ था। इस पौराणिक युद्धकी घटनावलीके वाद ऐतिहासिक युगमें पदार्पण कर हम देखते हैं, कि ईसाके ३०० वर्ष पहले यह नगरी विद्यमान थी। दिल्ली-की हस्तलिपियोंसे मालूम होता है, कि उस समय मेरठ नगर धन-जनसे परिपूर्ण था। सिवा इसके वौद्धकीर्त्तिया

भी इस बातका साक्ष्य प्रदान कर रही हैं। फिर ११वीं शताब्दीके मुसलमानी आक्रमणोंके बादसे तो यहांका धारावाहिक रूपसे इतिहास मिलता है। उससे पहलेकी किसी घटनाको किसी ऐतिहासिक प्रमाणोंसे सिद्ध करनेका कोई उपाय नहीं। विष्णुपुराणके अनुसार अधिसीमकृष्णके पुत्र निचक्षुके राज्यकालमें हस्तिनापुरी गंगाके गर्भमें विलीन हुई। इसके बाद इन्होंने अपनी राजधानी कौशाम्बी नगरमें स्थापित की। निचक्षुसे २१वीं पीढ़ीके राजा क्षेमर अपने मन्त्री द्वारा राज्यच्युत हुए थे।

बौद्ध सम्राट् अशोकके समयमें यहां बौद्धकीर्त्ति स्थापित हुई। उनके समयके दो पत्थरके स्तम्भ मिले हैं। इसके अनुसार ईसाके ४०० वर्ष पहले मौर्यवंशका होना साबित होता है। इसके बाद ईसाके ५७ वर्ष पहले यहां विक्रमादित्यका आधिपत्य रहा। इसके बाद दिल्लीमें शकवंशीय राजाओंका बल बढ़नेके साथ साथ यहां भी उनका आधिपत्य हुआ। इसका प्रमाण यहांके मिले शकवंशीय कई सिक्कोंसे मिलता है। कई शिलालेख भी इसका प्रमाण दे रहे हैं।

चीन-पर्यटक यूएनचुवंग ७वीं शताब्दीमें थानेश्वरके दर्शनके लिये यहां आये थे। इन्होंने जो इसकी सीमा निर्द्धारित की है, उससे मालूम होता है, कि मुजफ्फर नगरका दक्षिणांश, सारा मेरठ जिला और बुलन्द शहरका उत्तरार्द्ध उक्त राज्यकी सीमामें था। उस समय थानेश्वर नगर कन्नौजराज हर्षवर्द्धनके अधीन था।

इसके बाद दिल्लीके राज-इतिहासके अनुसार हम देखते हैं, कि तोमरवंशीय राजा अनङ्गपालने अन्दाज सन् ७३६ ई०में यहां राज्य किया था। इनके वंशधर राजे मुसलमानोंके उत्पातसे तंग आ कर कन्नौज छोड़ कर अयोध्याके बड़ी-नगरमें आ कर बस गये। इस वंशके अन्तिम राजा २रे अनंगपालके राजत्वकालमें चौहान राजविशालदेवने अधिकार किया। चौहान राजवंशके बाद यहां मुसलमानोंका आधिपत्य हुआ था।

सन् ११वीं शताब्दीमें यह प्रदेश लूटेरे जाट और डोर राजवंशके हाथ आया। वरणाधिपति राजा अहीवर्णके वंशधर डोर सरदार हरदत्तने मेरठ नगरमें एक किला बनवाया। कहते हैं, कि सन् १०१६ ई०में गजनीके महमूदने उनको पराजित कर उन्हें मुसलमान बनाया और उनसे कर वसूल किया था। यही घटना इतिहासमें "सिपहसालार समाउद्का आक्रमण"-के नामसे प्रसिद्ध है।

सन् ११९१ ई०में महम्मदगोरीके प्रसिद्ध सेनापति कुतुबुद्दीनने मेरठ पर अधिकार कर वहांके हिन्दू-मन्दिरोंको नष्ट भ्रष्ट कर मसजिद बनवाई थी। इसके बाद पठान राजे यहांका शासनकार्य चलाते थे। सन् १३९८ ई०के मुगल-तैमूरलंगके आक्रमण तक यहांका इतिहास दिल्लीके इतिहाससे जुड़ा हुआ है। तैमूरके मेरठ पर आक्रमण करने पर यहाके राजपूत उसके विरुद्ध खड़े हुए। लोगों किले पर आक्रमण करनेके समय राजपूतोंने अपने अपने घरोंमें आग लगा दी जिससे परिवारके बच्चे और स्त्रियां जल कर राख हो गई। किले पर अधिकार करनेके बाद लाखसे ऊपर वन्दी हिन्दू तैमूरके हुकमसे कत्ल कर दिये गये। तैमूर दिल्लीको लूट कर मेरठ लौट आया। यहां पठान-सरदार इलियास राज्य करता था। तैमूरने इसको मार भगाया।

१६वीं शताब्दीके मध्यभागमें जब दिल्लीके सिंहासन पर मुगलोंका प्रभाव था तब यथार्थमें मेरठमें शान्ति विराजती थी। मुगल-सम्राट् यमुनाकी इस उपत्यकामें शिकार खेला करते थे।

मुगल सम्राट् औरङ्गजेबकी मृत्युके बाद १७०२-१७७५ तक यहां फिर राज्यलोलुप सिख और महाराष्ट्रियोंका आगमन हुआ। इस विप्लवके समय उत्तरदोआबमें जाटों और रुहेलोंका अनवरत उपद्रव था।

दिल्लीके मुगलोंकी प्रतिभाका अवसान होनेके समय उत्तर-पश्चिम भारतमें अराजकताका स्रोत बह रहा था। ठीक इसी समय वाल्टर रीनहार्ट (Walter Reinhardt) नामक एक यूरोपीय सैनिक अपने भाग्यकी आजमाइश करनेके लिये उत्तर-पश्चिम भारतके इस रणक्षेत्रमें आ पहुंचा। वह अपने बाहुबलसे मेरठके सरधना परगने पर अधिकार कर वहांका शासन कर रहा था। सन् १७७८ ई०में उसकी मृत्यु हो गई। उसकी पत्नी बेगम समरू इस सम्पत्तिकी अधिकारिणी हुई। यह रमणी अरब देशकी एक वेश्याकी पुत्री थी। रीन हार्टने इसके

रूप पर लट्टू हो कर इसका पाणिग्रहण किया था। विवाहके समय इसने रोमन कैथलिक धर्मको अपनाया था।

सन् १८०३ ई०से ले कर दिल्लीके अधःपतन होने तक इसका दक्षिणांश महाराष्ट्रियोंके उपद्रवसे अराजक हो उठा था। इस वर्ष सिन्धुराजने गङ्गा और यमुनाका मध्यवर्त्ती भूभाग अंग्रेजोंके हाथ सौंप दिया था। उक्त बेगमने सिन्धुराजको बडी सहायता की थी। अंग्रेजोंके अधिकारमें आनेके वादसे सन् १८३६ ई०में अपने जीवन भर अंग्रेजोंको उसने साहाय्य किया था।

सन् १८१८ ई०में मेरठ एक पृथक् जिला बना दिया गया। इसके वाद १८२४ ई०में बुलन्द शहर और मुजफ्फर नगरसे अलग कर इसको वर्त्तमान आकार दिया गया। इस समयसे सन् १८५७ ई०के बलवेके मध्य भाग तक यहां कोई उल्लेखनीय घटना न हुई।

व्रजमोहन नामके एक सिपाहीने टोटा काटनेकी वातको सामने रख यहांके सिपाहियोंको उत्तेजित किया था। ६वीं मईको ३रे बङ्गाल घुड़सवार सैनिकोंको हुक्मअदुलीके लिये दश वर्ष कैदको सजा मिली। दूसरे दिन बलवेका सलाह मशवरा हुआ। इसी दिन संध्या ५ वजेसे अंग्रेजोंका यहां कत्ल आरम्भ हुआ। विद्रोहके वाद यहां एक वार फिर शान्तिका साम्राज्य छा गया। इसके वाद यहां बुलन्दशहरके मालागढ़ सरदार वलीदाद खांका भी विद्रोह खड़ा हुआ था, किन्तु यह टिक न सका। सिपाहीविद्रोह देखो।

२ उक्त जिलेकी एक तहसोल। कालीनदी, गङ्गाकी नहर और हिन्दन नदी इसके वोचसे प्रवाहित होती है। दिल्ली सिन्धु और पञ्जावका रेलपथ इसके वीचसे जाता है। इससे व्यवसायको वड़ी सुविधा हो गई है। यहां ऊखकी खेती और चोनोका कारवार होता है।

३ इस जिलेका प्रधान नगर। यहां सदर अदालत है। यहां छावनी होनेको वजह इस स्थानकी विशेष उन्नति हुई है। गङ्गा यमुनाके ठीक बीचमें मेरठ नगरी अवस्थित है। यह अक्षा० २६° ०' ४१" उ० और देशा० ७७° ४५' ३" पू०के मध्य विस्तृत है। कलकत्तेसे जो ग्राण्डट्रङ्क रोड पश्चिमको ओर गयो है, वह भी इस नगरमें होती हुई गई है। सिन्धु, दिल्ली और पञ्जाव जानेके लिये रेलपथका स्टेशन और सैनिकोंके रहनेको छावनी है। इससे यहां सेना भेजने और व्यवसायकी बड़ी सुविधा है।

इस समय जहां छावनी वनी है उसके दक्षिण भाग मे मेरठ नगर वसा है। बहुत पहलेसे यह चारों ओरसे सुदृढ प्राचीन (चहारदीवारी) से घिरा हुआ है। इसके नौ दरवाजोंमें ८ दरवाजे बहुत प्राचीन हैं। बौद्धयुगमें सम्राट् अशोकके राज्यकालमें यह नगर समृद्धशाली रहने पर भी अंग्रेजोंके अमलमें इसकी और भी उन्नति हुई है।

मेरठ शब्दकी व्युत्पत्तिके सम्बन्धमे चार विभिन्न आख्यानोंकी काल्पनिक सृष्टि होती है। वहांके लोगोंका कहना है, कि इसका पुराना नाम मीरथ या मीरठ है। मही नामक स्थपतिने इन्द्रप्रस्थके राजा युधिष्ठिरके राजमहलको वनाया था। इसके इनाम या पुरस्कारमें युधिष्ठिरने मीरथ ग्रामको दिया था। महीने अपने नाम पर इस जगहका नाम महिराष्ट्र रखा। उसने एक अन्दरकोट वनाया था जो आज भी मौजूद है।

फिर जाटोंका कहना है, कि उनके महिराष्ट्र गोत्रीय किसी उपनिवेशिकने इस मेरठ नगरको स्थापित किया था। कुछ लोगोंका कहना है, कि यह स्थान बहुत प्राचीन कालसे 'महीदन्तका खेरा' नामसे प्रसिद्ध था। इसी शब्दसे मीरठ नाम हुआ है। 'महीदन्तका खेरा' बौद्ध-युगका प्राधान्यसूचक है। 'शामस इ-सिराज' के पढनेसे मालूम होता है, कि अशोक प्रतिष्ठित स्तम्भलिपि दिल्लीके सम्राट् फिरोजशाहके द्वारा 'कुशाके शिकार' नामक महलमें लाई गई थी।

प्रत्नतत्त्वके नमूनास्वरूप यहां और भी प्राचीन कीर्त्तियोंके कितने हो खण्डहर देखे जाते हैं। इनमें १७१४ ई०मे जवाहरमल्ल द्वारा स्थापित सीताकुण्ड भी एक (कुछ लोग इसे सूर्य्यकुण्ड भी कहते हैं) है। इसके चारों ओर असंख्य मन्दिर, धर्मशालायें और सतीस्तम्भ स्थापित हैं। इन मन्दिरोंमें सम्राट् शाहजहांके राजत्व कालका बनाया मनोहरशाहका मन्दिर सबसे बड़ा है। विल्वेश्वरनाथका मन्दिर मुसलमानो आक्रमणसे बहुत

पहले बना था। वहांके लोगोंके मु हसे सुनाई देता है, कि यहाका महेश्वर मन्दिर पाण्डव-वंशीय किसी राजा-के द्वारा बनाया गया था।

सिवा इसके सन् १७१४ ई०में लाला दयालुदास-का बनाया तला और मातवल नामका तालाव, कुतुबुद्दीनका बनाया नौवस्ती महल्लाकी दरगाह १६२० ई०में नूरजहानका बनवाया शाहपीरकी दरगाह, १०१६ ई०-में गजनी महमूदके वजीर हसनमेहरोकी बनाई जामा मसजिद, मखदुमशाह तिलायतकी दरगाह, सन् ११६१ ई०के आबू महम्मदका मकबरा, सालारमसाग्य गाजोका मकबरा (११६१), आवूयार महम्मद खांका मकवरा (१३३६), करवला (१६०० ई०) आदि उल्लेखयोग्य हैं। सन् १८२१ ई०मे मेरठमें जो गिरजा बना, उसका उच्चशिखर गगनचुम्बन कर रहा है।

मीरतोजक—सेनानायकविशेष। युद्धयात्राकालमें सेना दलकी श्रेणीवद्ध गति रक्षा और शान्तिरक्षा तथा सेना वर्गकी अनुपस्थिति आदि प्रधान सेनापतिको जताना इसका काम था।

मीर दरद—एक मुसलमान कवि, विख्यात सेख साधु ख्वाजा नासिरका लड़का। साधु नासिरके अध्ययन-कौशलसे दरदने बहुत जल्द उपयुक्त शिक्षा प्राप्त की। उसकी माधुर्यपूर्ण उच्च अङ्गकी कवितामाला पढ़नेसे उसे कल्पनादेवीका मानस-पुत्र कहनेमें कोई अत्युक्ति नहीं। सचमुच उस समय इसके जोडका कोई कवि न था। इसका असल नाम ख्वाजा महम्मदमीर था। अपनी कविताशक्तिके परिचयस्वरूप इसने मीर दरदकी संज्ञा पाई थी।

दिल्ली नगरमें इसका जन्म हुआ था। यहां पढ़ना समाप्त कर यह सेना-विभागमें काम करने लगा। पीछे पिताकी अनुमतिसे इसने कठोर सैनिक वृत्तिका परि-त्याग कर ब्रह्मचर्य अवलम्बन किया। मुगल-बादशाहोंका शासनदण्ड जब दूसरोंके हाथ लगा, तब दिल्लीवासी नगरको छोड भाग गये। किन्तु मीर दरदने ऐसी अवस्थामें अदृष्टको ही मूल जान कर राजधानीका परि-त्याग न किया।

मीर सुफी सम्प्रदायका था। संगीतविद्यामें इसकी विशेष पटुता थी। प्रति मासमें इसके घर पर सङ्गीतशास्त्रविद् इकट्ठे होते थे। बहुतेरे इसके सुधाकंठ-से निकली हुई गीतलहरीको सुन कर मन्त्रमुग्ध हो जाते थे।

यह शाह गुलसान उर्फ सेख सादुल्लाका शिष्य था। इसके लिखे हुए आलिनाल-व-दरन, अली सरद, दरद-दिल, इल-उल-सिताव तथा फारसी और उर्दू भाषामें दो दीवानग्रन्थ पाये जाते हैं। अलावा इसके सुफी मतकी श्रेष्ठताको साबित करनेके लिये इसने विसाल-वारिदात नामक एक साम्प्रदायिक ग्रन्थकी रचना की। १७८४ ई०में इसका देहान्त हुआ।

मीरन—वंगालके अधिपति मीरजाफर अली खाँका लड़का। इसका असल नाम मीर सादिक था। यह बडा ही निष्ठुर और दुर्वृत्त था। पिता मीरजाफरका सिंहासन अविचलित रखनेके लिये बालक मीर्जामहदी और अलीवर्दी वेगम आदि राज्यके उत्तराधिकारी और राजकुल ललनाओंके प्राण संहार कर इसने जो पाशव-चरित्र और अत्याचारकी पराकाष्ठा दिखाई है उससे उनके पिताके चरित्रमें भी कलंककालिमा लग गई है। यही वंगालके बालक नवाव सिराजुद्दौलाके प्राणनाशका प्रधान षडयन्त्रकारी था, इसीसे वंगाल इतिहासमें इसने अक्षय नाम कमाया है।

पिताके उद्योगसे इसने पटनाका नवाबी पद और शाहमतजंगकी उपाधि पाई। पटना-युद्धके समयसे इनके वीरत्वका भी परिचय मिलता है। अपने ही खेमे-में वज्राघातसे इसकी मृत्यु हुई। इसकी वज्राघातसे मृत्युके सम्बन्धमें एक कहावत इस प्रकार है—ढाकाके नायब नवाब जसरत खाँने मीरनके आदेशसे बकार खाँ नामक एक दुराचारीके हाथ अलीवर्दीकी दो लड़की घोसवी और अमीना वेगमको सौंपा। दुराचारियोंने दोनों वेगमको नाव पर चढा कर जलमें डुबो दिया। वेगमोंने इस समय 'वज्राघातसे मीरनके पापका प्राय-श्चित्त हो' इस प्रकार अभिशाप दिया। मृत्युके बाद मीरनका शव पहले हाथीकी पीठ पर और पीछे नाव पर पटनासे राजमहलमें लाया और वहीं दफनाया गया था।

मीरन आदिल खाँ फरुखी—खान्देशका एक राजा। पिता मीरन मुवारिक खाँके मरने पर यह १४५७ ई०में सिंहासन पर बैठा। इसके शासनकालमें राज्यकी बड़ी उन्नति हुई थी। सुन्दर सुन्दर इमारत बनवानेका इसे बड़ा शौक था। सुनिपुण शिल्पियोंको नियुक्त कर इसने अशीर और मलयगढ़-दुर्गको दुर्भेद्य बना दिया था। १५०३ ई०में बुर्हानपुरके दौलत-मैदानके प्रासाद्-के पास ही इसके कथनानुसार इसकी लाश दफनाई गई थी। इसका दूसरा नाम मीरनखानि भी था।

मीरन मुवारिक खाँ फरुखी (१म)—खान्देशके अधिपति मीरन आदिल खाँ फरुखीका लड़का। पिताके मरने पर १४४१ ई०में यह खान्देशके सिंहासन पर बैठा। १७ वर्ष निरापदसे राज्य करनेके बाद १४५७ ई०में इसकी मृत्यु हुई।

मीरन मुबारिक खाँ फरुखी (२य)—खान्देशका एक मुसलमान राजा। १५३६ ई०में भाई मीरन महम्मद खाँके राज्यशासनके बाद यह खान्देशके सिंहासन पर अधिरूढ़ हुआ। १५६६ ई०में इसकी मृत्यु हुई।

मीरन मुहम्मद खाँ फरुखी (१म)—खान्देशका एक राजा। १६२० ई०मे पिता आदिल खाँके परलोक-वासी होने पर इसने राजसिंहासन सुशोभित किया। १५३७ ई०में गुर्जराधिपति वहादुर शाहके मरनेके बाद यह माता और उमरावोंके साथ अपने मामा बहादुरशाहके यहां आये और गुर्जर तथा मालवराज्यका अधीश्वर हुआ था। माण्डु में मीरन महम्मद शाह नाम धारण कर गुर्जरराज्य-का अधिपति हुआ सही, लेकिन अधिक दिन राज्यसुखका भोग न कर सका। तख्त पर बैठनेके २ मास बाद ही वह इस लोकसे चल बसा। पीछे उसका भाई २य मुबारक खाँ खान्देशके तथा बहादुरशाहका भतीजा महमूदशाह गुर्जरके सिंहासन पर बैठा। बुर्हानपुर नगरमें जहां उसके पिताका मकबरा था उसीकी बगलमें इसका मकबरा खड़ा किया गया था।

मीरन महम्मद खाँ फरुखी (२य)—खान्देशका एक राजा। १५६६ ई०में मुवारक खाँ (२य)-के बाद यह राजसिंहासन पर बैठा। १५७६ ई०में इसका देहान्त हुआ।

मीरन शाह (मिर्जा)—विख्यात मुगल वीर तैमुरशाहका बड़ा लड़का। पिताके परलोकवासी होने पर सिर्फ यही जीवित रहा। १३७ ई०में इसका जन्म हुआ। इराक, आजर वेजान, दयारफेर और सिरिया प्रदेश-का शासन कर १४०८ ई०में करो युसुफके युद्धमें मारा गया।

मीरन हुसेन निजामशाह—निजामशाही वंशका एक राजा। १५८८ ई०में पिता मूर्त्तजा निजामशाहकी गुप्तहत्याके बाद यह दाक्षिणात्यके अहमदनगरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुआ। इसकी हठकारिता और निष्ठुरप्रकृतिसे राज्यमें अशान्ति फैल गई थी। सिर्फ दश मास राज्य करनेके बाद इसे गद्दीसे उतार मार डाला गया।

मीरपुर—१ बम्बई प्रेसिडेन्सीके शिकारपुर जिलान्तर्गत रोहि महकूमेका एक तालुक। यह अक्षा० २७° १६' से २८° ४' उ० तथा देशा० ६९° १३' से ७०° ११' पू०के मध्य अवस्थित है।

२ उक्त तालुकका एक नगर। यह अक्षा० ३३° ११' उ० तथा देशा० ७३° ४६' पू०के मध्य अवस्थित है। समुद्रतलसे इसकी ऊंचाई १२३६ फुट है। सरकारी झेलम वारकसे यह २२ मील उत्तर पड़ता है। कहते हैं, कि दो सौ वर्षसे अधिक हुए, मीरन खाँ और सुलतान फतेह खाँ गक्करने इसे बसाया था। यहां पुराने समय-के बने हुए बहुतसे मन्दिर हैं जिनमें महाराज गुलाब-सिंह द्वारा निर्मित सरकारी रघुनाथका मन्दिर और दीवान अमरनाथका मन्दिर है। शहरमें स्कूल और अस्पताल है। अनाज और घीके व्यवसायके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है। यहा सिन्धु और पञ्जाब रेलवेका एक स्टेशन है।

मीरपुर खास—बम्बईके थर और पार्कर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २५° १२' से २५° ४८' उ० तथा देशा० ६८° ५४' से ६९° १५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४३७ वर्गमील और जनसंख्या चार हजारके करीब है। इसमें मीरपुर-खास नामक १ शहर और १३५ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तालुकका एक नगर। यह अक्षा० २५° ३०' उ०

तथा देशा० ६६° ३´ पू०के मध्य हैदरावादसे अमरकोट जानेके रास्ते पर अवस्थित है। १८०६ ई०मे मीर अली मुराद तालपुरने इस नगरको स्थापित किया। यह स्थान अनाज और रुईके वाणिज्यके लिये प्रसिद्ध है। १६०१ ई०में म्युनिसपलिटी स्थापित हुई है। शहरमें एक चिकित्सालय और एक प्राइमरी स्कूल है।

मीरपुर वतोरा—सिन्धुप्रदेशके कराची जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २४° ३६´ से २५° १´ उ० तथा देशा० ६८° ६´ से ६८° २६´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २६६ वर्गमील और जनसंख्या साढ़े तीन हजारसे ऊपर है। इसमें ६८ ग्राम लगते हैं। यहां घी और अनाजका जोरों वाणिज्य चलता है।

मीरपुर मादेलो—वम्बईके सुक्कर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २७° २०´ से २८° ७´ उ० तथा देशा० ६६° १६´ से ७०° १०´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १७२० वर्गमील और जनसंख्या ५० हजारके करीव है। तालुकके दक्षिण भागमें विस्तृत मरुभूमि है। यहां जुआर वहुतायतसे उपजता है।

मीरपुर सकरो—वम्वईके कराची जिलेका तालुक। यह अक्षा० २४° १४´ से २४° ५१ उ० तथा देशा० ६७ ६´ से ६७° ५५´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ११३७ वर्गमील और जनसंख्या ढाई हजारसे ऊपर है। इसमें ७४ ग्राम लगते हैं, शहर एक भी नहीं है। यहाकी प्रधान उपज धान, वाजरा और तिल है।

मीर फर्श (फा० पु०) वे गोल, ऊंचे और भारी पत्थर जो वडे वडे फर्शों या चाँदनियों आदिके कोनों पर इसलिये रखे जाते हैं जिसमें वे हवासे उड़ न जाय।

मीर वख्शी (फा० पु०) मुसलमानी अमलदारीका एक प्रधान कर्मचारी। इसका काम वेतन वाँटना होता था।

मीरवहर (फा० पु०) मीर वहरी देखो।

मीरवहरी (फा० पु०) १ मुसलमानी अमलदारीमें जलसेनाका प्रधान अधिकारी। २ वह प्रधान कर्मचारी जो वंदरगाहों आदिकी देख रेख करता है।

मीरवार (फा० पु०) मुसलमानी समयका एक अधिकारी। यह लोगोंको किसी सरदार या वादशाहके सामने उपस्थित होनेसे पहले उन्हें देखता और तव उपस्थित होनेका हुकुम देता था।

मीरभुयडी (फा० पु०) एक कल्पित पीर। इसे हीजड़े अपना आदिपुरुष और आचार्य मानते हैं। हीजड़े इसी वंशके अपनेको वतलाते हैं। कहते हैं, कि ये पीर स्त्रियोंके वेशमे रहते, चरखा कात कर अपना गुजारा चलाते और छः महीने स्त्री तथा छः महीने पुरुष रहा करते थे। जव कोई हिजड़ेमें शामिल होना चाहता है, तव वे इन्हींको नामकी कड़ाही तलते और उसे पकवान खिलाते हैं। प्रवाद है, कि जो कोई यह पकवान खा लेता है वह भी हीजड़ोंकी तरह हाथ पैर मटकाने लगता है।

मीरमंजिल (फा० पु०) वह कर्मचारी जो वादशाहों या लश्कर आदिके पहुचनेसे पहले ही मंजिल या पड़ाव पर पहुंच कर वहां सव प्रकारकी व्यवस्था करे।

मीरमजलिस (फा० पु०) सभा या अधिवेशनका प्रधान अधिकारी, सभापति।

मीरमदन—सिराज-उद्दौलाका एक सेनापति। पलासीकी लडाईमें यह अंग्रेजोंकी गोलीसे घायल हो पञ्चत्वको प्राप्त हुआ (१७५७ ई०)।

मीरमन्नू—पञ्जावका एक मुसलमान शासनकर्त्ता, वजीर करर उद्दीन खाँका लडका। इसके अमित पराक्रमसे १७४८ ई०में दुर्रानी-सरदार अवदाली हार कर भाग गया था। इस वालककी वीरता पर प्रसन्न हो सम्राट् महम्मदशाहने इसे लाहोर और मूलतानका शासनकर्त्ता वनाया तथा मुइन-उल् मुल्ककी उपाधि दे इसका सम्मान किया। उसी साल महम्मदशाहके मरने पर उसका लडका अहमदशाह दिल्लीके सिंहासन पर वैठा। मन्नूके साथ उसका पटता नहीं था, इस कारण वह इसका राज्य छिननेको आगे वढ़ा। इसी सूत्रसे दोनोंमें घमसान युद्ध आरम्भ हुआ। युद्धमें सम्राट्की हार हुई। इसके पराक्रमसे सारी सिख जातिको इसकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी थी। अनन्तर जव यह अहमदशाह अवदालीको प्रतिश्रुत कर देनेसे इन्कार चला गया, तव १७५१-५२ ई०में दुर्रानी-सरदारने फिरसे पञ्जाव पर आक्रमण किया। आखिर आत्मसमर्पण करके मन्नूने छुटकारा पाया था।

मीर मसूम—एक मुगलसेनापति और विख्यात् कवि। सम्राट् अकबर और जहांगीरके राजत्वकालमें यह एक-हजारी मनसबदारके पद पर नियुक्त था। इसका स्वभाव कठोर था सही, पर इसकी कविता बड़ी कोमल होती थी। यह 'मादन-उल्-अखबार' नामक मसनवी, एक दीवान और तारीख-इ सिसंद नामक सिन्धुदेशका इतिहास-ग्रन्थ लिख गया है। १६०६ ई०में विखर नगरमें इसकी मृत्यु हुई।

मीर महल्ला (अ० पु०) किसी महल्लेका प्रधान सरदार।

मीरमीरासुत (सं० पु०) असालतिप्रकाश नामक अभिधानके प्रणेता।

मीरमुंशी (अ० पु०) मुंशियोंमें प्रधान या सरदार, सबसे बड़ा मुंशी।

मीरराजो—दिल्लीवासी एक मशहूर कवि। एक गजल गा कर इसने एक शाहजादासे लाख रुपया इनाम पाया था।

मीर शिकार (फा० पु०) वह प्रधान कर्मचारी जो अमीरों या बादशाहोंकी शिकारकी व्यवस्था करता है।

मीर सैयद जयाराफ—फारसका रहनेवाला एक तांती। अपने कविता-गुणसे यह १५६२ ई०में भारतवर्ष आया था। सम्राट् अकबरशाह इसकी कविताका बहुत आदर करते थे। १५६५ ई०में भारतवर्षमें ही इसकी मृत्यु हुई। यह सवाई नामक कविता लिखता था, इस कारण लोग इसे मीर-सवाई कहा करते थे।

मीरसामान (फा० पु०) वह प्रधान कर्मचारी जो अमीरों या बादशाहोंकी पाकशालाकी व्यवस्था करता है।

मीरहाज (अ० पु०) हाजियोंका सरदार, हाजियोंके समूहका प्रधान।

मीरहाजी—दिल्लीवासी एक दुर्वृत्त मुसलमान सरदार। ५७के गदरमें इसने कप्तान डगलस आदि अनेक अंगरेजपुङ्गवोंकी हत्या की थी। गदरके बाद यह पकड़ा और कैदमें ठूस दिया गया। पीछे १८६८ ई०की २१वीं दिसम्बरको दिल्ली नगरीके लाहोर-दरवारमें इसे फाँसी हुई थी।

मीराबाई—मेवाड़के एक अधिपति महाराणा कुम्भकी स्त्री। सन् १४२० ई०में मारवाड़ राज्यके अन्तर्गत मेरता ग्रामके रतिया राना नामक एक सामन्तके घर इनका जन्म हुआ था। मीरा विष्णुकी उपासिका थी। परन्तु इनका पतिकुल शक्तिका उपासक था। बचपनसे ही इनके अन्तःकरणमें असाधारण भक्तिका विकाश दिखाई देता था। ये असामान्या रूपवती थीं। इनका सौन्दर्य दर्शकमात्रको ही इन्द्रजालकी तरह मुग्ध करता था। कोकिल शावक जिस प्रकार स्वाभाविक संस्कार बलसे मधुर कूजनसे दिग्दिगन्तमें सङ्गीतधाराकी वर्षा करता है, मीरा भी उसी प्रकार पूर्वजन्मार्जित भक्तिकी प्रेरणासे शैशवकालमें ही कलकण्ठके सङ्गीतसे सबोंको विमुग्ध करने लगी। इनके अलौकिक रूपलावण्यके साथ सुललित कण्ठध्वनि मिल कर पृथ्वी पर अमरावतीकी छाया प्रदर्शन करने लगी।

मीरा बचपनसे ही निर्जनमें रहना पसन्द करती थीं। इनकी समवयस्का क्रीडा सङ्गिनी जब सुन्दर खिलौने ले इधर उधर दौड़ती थीं तब यह आड़में बैठ कर हरिगुण गान किया करती थीं। जब सङ्गिनीगण इनके साथ मिल कर खेलती थीं, तब वे भी मीराके सुमधुर हरिकीर्त्तनसे मत्त हो जाती थीं। मीरा पुष्पमालाको बहुत चाहती थीं। जब कुसुमदामालंकृता चन्दन चर्चिता मीरा भक्तिके मोहन मन्त्रसे हरिगुण गाती थीं, उस समय सभी देवमाला कह कर इनका अभिवादन करते थे। अलौकिक रूप-गुणके मेलसे मीरामें मणिकाञ्चनका संयोग हो गया था।

धीरे धीरे मीराके सौन्दर्य और सङ्गीतकी ख्याति दूर दूर देशोंमें फैल गई। भक्तगण किन्नरकण्ठी मीराकी स्वरलहरी सुननेके लिये मेरता आने लगे। मीराके पिता एक सङ्गीतसम्पन्न सामन्त थे। वे यथोचित अभ्यर्थना द्वारा अभ्यागतोंका सत्कार करते थे।

राना मोकलदेवके लड़के चित्तौर युवराज कुम्भकर्णके कानोंमें जब मीराकी अलौकिक कहानीकी खबर पहुंची, तब वे स्थिर न रह सके। एक बार मीराके भुवनमोहन सौन्दर्यको देख कर तथा कलकण्ठकी मधुरकाकली सुन कर नेत्र और कर्णको परितृप्त करूंगा, यह वासना कुम्भके मनमें बलवती हो उठी। किन्तु चित्तोराधिपति एक सामन्तके घर एक बालिकाका सङ्गीत सुनने जायेंगे, यह बिलकुल असम्भव। भीमका ननिहाल मारवाड़में

था। ननिहाल जानेका बहाना कर वे छद्मवेशमे मीराके घर चले। राहमें उन्हें एक साथी मिल गया। उसी साथीके साथ वे मीराके घर पहुचे। वहा कुम्भने देखा, कि मनुष्योंकी अपार भीड है। सभी पिपासित नेत्रोंसे उनके मुखमण्डल-सौन्दर्य तथा सङ्गीतके मधुर रसको चूस रहे हैं, बीच में कुसुमालंकृता चन्दन-चर्चिता मीरा बैठ कर हरिगुणका गान करती हैं। कुम्भ स्वय सुकवि और सहृदय थे। मीराकी कलकण्ठध्वनि सुन कर वे चित्रार्पितकी तरह स्तम्भित हो रहे।

गान समाप्त होने पर सबोंने अपने अपने घरकी राह ली। किन्तु कुम्भ कहां जायंगे, क्या करेंगे इसका निर्णय न कर सके और वहीं किंकर्त्तव्यविमूढ हो खडे रहे। मीराके पिताने कुम्भके राजोचित आकार प्रकारको देख कर उन्हें अनायास ही एक सम्भ्रान्त वंशोद्भव समझ लिया और उस दिन अपने घर ठहरनेका अनुरोध किया। इस पर राजाने कहा, "महाशय! आपकी कन्याकी दिव्यसङ्गीतसुधा पान कर मेरा मन-मधुकर उद्भ्रांत हो गया है। श्रवणलालसाकी परितृप्ति बिलकुल नहीं होती।' मीराके पिताने दो तीन दिन ठहर कर सङ्गीत सुननेका अनुरोध किया और मीराको कुम्भकी परिचर्यामें लगाया। किन्तु राणाकी अतृप्तदर्शन लालसा निवृत्त तो क्या होगी, दिनों दिन बढती ही चली। कई दिन इस प्रकार कुम्भ मीराके घर ठहर गये। पीछे जब राजकार्यकी ओर उनका ध्यान आकर्षित हुआ, तब वे वहांसे चल दिये। जाते समय उन्होंने अपने हाथसे हीरेकी अंगूठी निकाल कर मीराबाईको दी थी और आत्मविस्मृत हो इस प्रकार कहा था,—

"मीरा! इस स्वर्गसुखका परित्याग कर चित्तोर जानेकी मेरी जरा भी इच्छा नहीं। तुम साफ साफ कहो, चित्तोरकी राजमहिषी होनेमें क्या तुम्हें कोई आपत्ति है?" मीरा उनके चरणों पर गिर पड़ी और क्षमा मागते हुए बोली, "हमने अज्ञातवशतः चित्तोरके राणाके प्रति जो यथोचित सम्मान नही दिखलाया, इसके लिये हमारा अपराध क्षमा कीजिये।"

मीराके पिताको जब इस बातका पता लगा, तब वे भी बड़े दुःखित हुए और पीछे मीराको उनके हाथ समर्पण कर क्षमा मांगने लगे। अब स्वच्छन्दविहारिणी विहङ्गिनी राजप्रासादके प्रमोद-प्रकोष्ठमें बन्दी हुई।

मीरा भोगविलासके अनन्त सौन्दर्यसे तृप्तिलाभ न कर सकी। क्योंकि, ससुरालकी सङ्कीर्ण सीमाके मध्य वह मुक्तप्राणकी उदार सङ्गीतधाराकी वर्षा न कर सकती थी। कुछ दिन बाद वह सख्त बीमार पड़ीं। राणाने मीराका चित्त-परिवर्त्तन देख कर इसका कारण पूछा, मीराने उत्तर दिया, 'महाराज! मेरा चित्त संसारकी किसी वस्तुसे मुग्ध होना नही चाहता। पिता, माता, आत्मीय स्वजन, भोगविलास, वस्त्रालङ्कार किसीसे भी मेरे चित्तकी निवृत्ति नहीं होती। जब तक आपके पदतलमें बैठी हूं, तभी तक कुछ सुखका अनुभव करती हूं, बादमे कुछ भी नही।"

राणा कविताकी रचना कर सकते थे। वे मीराको काव्यरचना करने सिखाने लगे। उनका ख्याल था, कि ऐसा करनेसे काव्यकी मोहिनी शक्तिसे मीरा आकृष्ट होगी। मीराने अपने प्रतिभाबलसे थोड़े ही दिनोंके अंदर कविता रचना अच्छी तरह सीख ली। राणाकी अपेक्षा वह अच्छी कविता करने लगी। इनका उपास्यदेव रणछोड़' नामक बालगोपाल थे इनकी सभी कविताएं उन्हीं भक्तवत्सल श्रीवत्सलाञ्छन नन्दनन्दनका प्रेम कहानीसे भरी रहती थी।

इस समय इन्होंने जिस कृष्णप्रेममय भक्तिरसात्मक रचना की सृष्टि की वह 'रागगोविन्द' नामसे राजपूत वैष्णव समाजमें परिचित है। अलावा इसके इनने जयदेव कृत प्रसिद्ध गीतगोविन्दकी भी एक टीका लिखी।

स्तव स्तुतिगीति कवितासे मीराका विमर्ष जरा भी दूर नही हुआ। इस पर कुम्भने फिरसे मीरासे इसका कारण पूछा। मीराने कहा—

'महाराणा! मेरी इच्छा है, कि मै स्वाधीन भावसे मुक्तकण्ठसे अपना सारा समय हरिगुणगानमे व्यतीत करूं। संसारमे सभी लोगोंके लिये मेरा प्राण तड़प रहा है।

राणाने गुस्सेमें आ कर कहा, 'चित्तोरेश्वरीके मुखसे ऐसा वचन निकलना शोभा नहीं देता। मीरा क्षमा

प्रार्थना कर चुप रहीं। किन्तु उनकी प्रफुल्लता दिनों-दिन नष्ट होने लगी, चेहरे पर उदासी छा गई।

पीछे राणा कुम्भने मीराके इच्छानुसार राजपुरीके भीतर रणछोड़जीका एक मन्दिर बनवा दिया। मन्दिर-मे बालगोपालकी मूर्त्ति प्रतिष्ठा की गई। मीराके आदेशसे सभी वैष्णवके वेशमें मन्दिर जा कर हरिकीर्त्तन करने लगे। मीरा भी अकुण्ठित चित्तसे उनके साथ मिल कर हरिगुणगानमे परमानन्द लाभ करने लगीं।

किन्तु राणा इन सब कामोंको पसन्द नहीं करते थे। चित्तोरकी राजमहिषी असंकुचितभावमें सबके सामने हरिकीर्त्तन करेंगी, इसे वे बरदास्त न कर सके। उन्हें मीराके चरित्रमें सन्देह भी होने लगा। इन सब कारणों-से राणा भारी चिन्तामें पड़ गये। आखिर उन्होंने दूसरा विवाह करनेका सङ्कल्प किया।

इधर मीरा मुक्तप्राणसे हरिकीर्त्तनमे मत्त हो रानाके पास भी न आने लगीं। मलयानिलसेवीको क्या कभी ताड़के पत्तोके पंखेमें प्रवृत्ति हो सकती है?

एक दिन कुम्भने मीराको बुला कर पूछा, 'मीरा! तुम रात दिन हरिकीर्त्तन करती हो। स्वामिसेवा क्या तुम्हारा कर्त्तव्य नहीं? मैं दूसरा विवाह करना चाहता हूं, क्या तुम्हें कोई आपत्ति भी है?'

मीराने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया, 'महाराणा! आप यदि दूसरा विवाह कर लें, तो मैं बहुत प्रसन्न होऊंगी। क्योंकि, मैं आप लोगोंकी यथोचित चरणसेवा नहीं कर सकती। आप एक दूसरी दासी लावें, इसमे मुझे हर्षके सिवा विषाद नहीं।'

यह सुन कर राणाको मीराके चरित्रमे जो सन्देह था वह और भी दृढ़ हो गया। एक दिन रातको चित्तोरके राजकुलदेवताने उन्हें स्वप्न दिया कि "मीरा कृष्णप्रेमानुरागिणी परम सती है, भक्तिकी सजीव निर्झरिणी है।"

प्रातःकालमे जब राणा सो कर उठे, तब अपने अमूलक सन्देहके लिये बहुत पश्चात्ताप करने लगे। पीछे उन्होंने मीराके सामने उनकी कुल अभिलाषाएं पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा की।

मीरा गोविन्दजीके मन्दिरमें अपना सारा समय कृष्णप्रेमके मधुर सङ्कीर्त्तनमें बिताने लगी। सांसारिक भोग-वासनाके प्रलोभनसे मीराका चित्त बिलकुल आकृष्ट होनेको नहीं, जान कर राणा दूसरा विवाह करनेकी तैयारी करने लगे।

इस समय झालवार-राजकुमारीके साथ मन्दर-राजकुमारका विवाह सम्बन्ध स्थिर हो चुका था। झालवार राजसे इशारा पा कर जिस दिन विवाह होता उसी रातको राणा कुमारीको हर लाये। किन्तु वह कन्या मन्दर राजके प्रति बिलकुल आसक्त हो गई थी। अतएव कुम्भ दाम्पत्य-प्रणयका सुख जीवनमें अनुभव न कर सके। प्रणयलाभ बलपूर्वक नहीं होता।

गोविन्दजीके मन्दिरमें रात दिन वैष्णव लोग बेरोक-टोक मीराके प्रेमोन्मत्त संकीर्त्तनमें सम्मिलित होने लगे। दूर दूर देश विदेशके भिन्न भिन्न सम्प्रदायके लोग भी भेष बदल मीराके अनुपम सौन्दर्य और लावण्यका दर्शन करने और स्वर्गीय संगीत सुननेके लिये आने लगे। मीराबाई सभी अभ्यागतोंको अपने हाथसे पैर धोनेके लिये जल दे कर स्वागत करती और सभोंको अपने हाथसे प्रसाद भोजन करा कर सन्ध्या समय आप प्रसाद पाती थी।

एक दिन मन्दर-राजकुमार नये वैष्णवके भेषमें गोविन्दजीके मन्दिर पहुंचे। सभी वैष्णवोंने प्रसाद खाया, लेकिन नये वैष्णवने कुछ नहीं ग्रहण किया। मीराके बार बार अनुरोध करने पर उन्होंने कहा, 'महारानी! आपसे मुझे एकान्तमे कुछ कहना है। आप मेरी सुन लेंवे तब मैं भोजन कर सकता हूं।' अतिथिवत्सला मीरा तुरत सहमत हुईं। एकान्त कमरेमें मन्दर-कुमारने मीरासे कहा, "आप यदि मेरी अभिलाषाको पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा करें तो मैं अपना अभिप्राय प्रकट करूं।" मीरा बहुत सोच विचार कर सहमत हुईं। राजकुमारने आत्मवृत्तान्त प्रकट करते हुए कहा, 'मैं झालवार-राजकुमारीको एक बार देखना चाहता हूं। हम दोनों प्रेम पाशमें आबद्ध हैं।

मीराने कहा,—"चारों ओर हथियारबंद पहरेदार घूम रहे हैं। आप किस प्रकार राजाके अन्तःपुरमें घुस कर

राजकुमारीको देख सकेंगे।" मन्दर-राजकुमार बोले "मृत्युसे मैं नहीं डरता, एक बार अपनी प्रणयिनीको देख कर ही मरूंगा।"

परोपकार करनेकी इच्छासे मीराने झालवनका एक गुप्तद्वार खोल दिया। ज्यों ही मन्दर-राजकुमार राजकुमारीके सोनेके कमरेके पास पहुंचे त्यों ही झरोखेसे राणा कुम्भने जोरसे गरज कर कहा, "झालवनमें प्रवेश करके भी तुम राजकुमारीको नहीं देख सकते।"

मन्दर-राजकुमार मूर्च्छित हो धरती पर गिर पड़े। गुस्सेमें आ राणाने मीराको ही पथप्रदर्शक समझा और इनके पास आ कर कहा, "मीरा! झालवनके गुप्तद्वार को किसने खोला?" मीराने साफ उत्तर दिया, "मैंने ही गुप्तद्वार खोला है। बलसे कहो क्या प्रेम प्राप्त हो सकता है? अन्य पुरुषके प्रेममें आसक्त रमणीको आप बंद रख कर क्या फल पायेंगे?" इस प्रकार निर्भीक और अभिमानयुक्त उत्तर सुन चित्तौरके राणा स्तम्भित हो बोले, "मीरा! क्या तुम्हें मालूम है, कि अन्तःपुर द्वार खोलनेसे कौनसा दण्ड मिलता है?'

मीराने बिना किसी घबराहटके कहा, 'महाराणा! अपराधके लिये क्षमा मांगती हूं। दण्डसे यह दासी नहीं डरती। किन्तु सिसौदिया कुलके समुज्ज्वल यशमें मैं प्राण रहते कलङ्क-कालिमा न देख सकूंगी।"

राणाने आखें लाल पीली कर कहा, "मीरा! तुम बड़ी ढीठ हो गई हो। तुम चित्तौरकी राजमहिषी हो कर भी मुझ पर वेश्याकी तरह आक्रमण करती हो। तुम्हारे ही सन्तोषके लिये मैंने अन्तःपुरमें गोविन्दजीका मन्दिर बनवा दिया। लोकलाजको तिलाञ्जलि दे तुमने जनसाधारणके साथ संकीर्त्तन करना चाहा—मैंने तुम्हारी यह बात भी मान ली। इसके बाद अंधेरी रातमें मेरे शत्रु मन्दर राजकुमारके साथ बाहर निकल चित्तौर-महाराणाके भुजापाशमें बंधी रमणीको भगानेकी चेष्टा कर, कहो तुमने कैसा विश्वासघात किया है! भगवत् प्रेममें तुम रम गई हो, तो मन्दिरमें रह संकीर्त्तन करो। कुलाङ्गनाको बहकानेकी तुम्हें क्या जरूरत! अब मैं तुम्हें क्षमा न कर सकता। अभी चित्तौर छोड़ चली जा। देवताके बहाने तुम पाप को स्थान देती हो। मेरा हृदय अत्यन्त क्षुब्ध हो उठा है। तुम इसी क्षण मेरी आंखोंसे दूर हो जा। न जानें पीछे ममताकी दुर्बलता या सौन्दर्य्यके मोहमें पड़ फिर क्षमा कर तुम्हारी जैसी काली-नागिनीको घरमें आश्रय देना पड़े।"

मीरा सिर झुकाये प्रसन्न मुखसे वहांसे विदा हुई। आधी रातको हरिनाम संकीर्त्तन करते हुए मीराने राजभवनका परित्याग किया। यह संवाद पा चित्तौरवासी राणाकी मूर्खताको धिक्कारने लगे। मीरा चली गई, साथ साथ राजभवनमें गोविन्द मन्दिरका आनन्दप्रवाह भी बन्द हो गया।

एक दिन जहां भक्तोंके कलनिनाद और मृदङ्गवादसे आनन्दकी वर्षा होती थी और राजनगरीकी सजीवता घोषित होती थी, उसके एकाएक बन्द होनेसे राजधानी निरानन्द-सी हो गई।

मीरा चित्तौर छोड़ कर राजपूतानेके जिस प्रदेशमें भ्रमण करतीं वहीं उनके कलकंठके स्वर्गीय संगीतसे आनन्द नदी उमड़ने लगती। सहस्र सहस्र स्त्री-पुरुष उनके अनुपम सौन्दर्य्यका दर्शन कर और सङ्गीतसे मोहित हो उन्हें शापभ्रष्टा दूसरी देवांगना ही मानने लगे।

राणा कुम्भको अपनी भूल सूझ पड़ी। वे राजभवनके उदास और निरानन्दभावको न सह सके। अतएव उन्होंने मीराको लौटा लानेके लिये ब्राह्मण-दूतोंको पत्रके साथ भेजा। अभिमान-रहित वैष्णवी मीराने ब्राह्मणोंसे कहा, "मैं महाराणाकी दासी हूं, उनकी अनुमति पा मैं फिर उनके चरणप्रान्तमें आ सकती हूं।"

मीरा जब चित्तौरके तोरण द्वारा पर पहुंची तब राणाने गाजेबाजेके साथ उनका स्वागत किया अन्तःपुर ले जा कर राणाने मीरासे क्षमा मांगी। मीरा स्वामीके चरणों पर गिर कर बोली, "मैं आपके चरणोंकी दासी हूं। मुझसे क्षमा मांग आप मेरा अपराध न बढ़ावें, मेरे सभी अपराधोंको आप क्षमा करें।"

राणा कुम्भने कहा, 'मीरा! तुम आजसे गोविन्दजीके मन्दिरमें तथा चित्तौरकी खुली सड़कों पर सभोंको साथ ले संकीर्त्तन कर सकती हो। देखें, इससे भी चित्तको शान्ति होती है या नहीं।

मीरा पहले जब गोविन्द मन्दिरमे संकीर्त्तन करतीं तो वहां सर्वसाधारण नही जा सकते थे, केवल वैष्णवों-का आन जान होता था। जब खबर फैली, कि मीरा-बाई अब राजपथ पर सर्वसाधारणके सामने संकीर्त्तन करेंगी, तो देश देशान्तरसे सहृदय और सम्मानित लोग उनका अलौकि संगीतसुधा पान करनेको एकत्रित होने लगे। चित्तौरके राजपथ पर हरिसंकीर्त्तनके उत्सवमे प्रति दिन मनुष्योंकी धार छूटने लगी। सभी जातिके लोग मीराको सङ्गीतसुधाका पान करनेके प्रयासी होने लगे। लोग आहार निद्रा, शोक, दुख आदि भूल कर मीराके ऐन्द्रजालिक संगीतके मोहमन्त्रसे अपने आपको भूलने लगे। इस प्रकार सिद्धभूमि चित्तौरने भक्ति-सञ्जीवनी सरिताकी आनन्दधारासे अपूर्व श्री धारण की।

इतिहास न जाननेवाले जीवन चरित्र-लेखकोंने अनेक असत्य घटनाओंको मीराके जीवनचरित्रमें स्थान दिया है। भ्रममे पड़ उन्होंने लिखा है, कि दिल्लीका बादशाह अकबर संगीताचार्य्य तानसेनको साथ ले मीरा-का सङ्गीत सुनने आया था। यह मालूम होने पर राणा-ने मीराको दुश्चरित्रा समझ तलवारसे काम लेना चाहा था तथा विषप्रयोग आदि द्वारा अनेक कष्ट दिये थे। लेकिन १५४२ ई०में अकबरका जन्म हुआ। अतएव १५० वर्ष पूर्व वह किस प्रकार मीराके सङ्गीत सुनने आया और ७ लाख रुपयेका मुक्ताहार गोविन्दजीके गले पहनाया—यह समझमें नही आती। कहा जाता है, कि अकबर दूसरे जन्ममें मुकुन्द ब्रह्मचारी था। उनका भी मीराके समयमें होना असम्भव है।

भक्तमालग्रन्थमें भी मीराके विषयमें लिखा है, कि बादशाह अकबर मीराके श्रीमुखसे निकला हुआ अपूर्व सङ्गीत सुधापान करनेके लिये तानसेनके साथ वैष्णव-के वेशमें आये थे। किन्तु यह कहां तक सत्य है, पहले हो कह आये हैं।

प्रवाद है, कि कोई उदासीनवेशी महाराज मीराके गीत पर मुग्ध हो बहुमूल्य मुक्तामाला उनके गलेमें पह-नानेको तैयार हो गये थे। किन्तु मीराके अस्वीकार करने पर उदासीने उसे गोविन्दजीके गलेमें पहना दिया। धीरे धीरे इसकी खबर राणाके कानोंमें पहुंची। वे आश्चर्यान्वित हो उस मुक्ताकी मालाको देखनेके लिये आये। जहूरियोंने कहा था, कि इसका मूल्य १० लाख रुपया है। दिल्लीके सम्राट्के सिवा ऐसा मुक्ताहार और किसीके पास नहीं हो सकता।

वहां जितने लोग उपस्थित थे, सबोंने कहा, कि उदासीनवेशी पुरुष अपने हाथसे मीराको मुक्तामाला पहनाने गये थे। शक्की रानाने सोचा कि, केवल सगीत गुन पर कोई दश लाख रुपया नही दे सकता। मीराके रूपलावण्य पर मुग्ध हो उसे लुभानेके लिये यह मुक्ता-माला दी गई होगी। हो सकता है, मीराने सतीत्व बेच लिया हो। धीरे धीरे सन्देहपिशाचने उनकी बुद्धि शक्तिको अच्छन्न कर लिया। मूर्खतावशतः उन्होंने यह नहीं समझा, कि जो रमणी चित्तौरकी चिरस्मर-णीय स्वर्णसिंहासन है, मणिमाणिक्ययुक्त रत्नभूषण है, भोग-विलासके सजीव प्रसवण राजभवन पर लात मार कर कृष्णके प्रेममें उन्मादिनी है वह क्या एक लड़-मुक्ताकी मालाके प्रलोभनमें अपार्थिव सम्पद् सतीत्वरत्न को बेचेगी ?

सन्देहरूपी पिशाचके आवेशमें राजाके हृदयमें इसी तरह बुरी बुरी भावनाओंका उदय होने लगा। राजपथमें वैष्णवगण करताल बजा बजा कर मीराका सङ्गीतगान करने लगे। 'मीरा कहे बिना प्रेमसे मिले न नन्दलाल' यह कविता सुन कर राणाने समझा, कि सर्वसधारण व्यङ्गसे उनकी स्त्रैणता घोषित करता है अब मीराका नाम सुनते ही वे जलने लगे। मीराको कौन-सा दण्ड दिया जाय, इसका स्थिर वे न कर सके। उन्होंने समझा था, कि मीराको चित्तोरसे निकाल देने पर सर्वसाधारण उनके साथ हो लेंगे। मूढ़ कुम्भकी धारणा थी, कि जिस प्रकार वे पत्नीभावमें मीराके रूप लावण्य पर मुग्ध हैं, उसी प्रकार सभी लोग उनके सौन्दर्य पर मुग्ध होंगे। इसी अमूलक धारणाके वशवर्त्ती हो वे मीराके प्राणनाश करनेको उतारू हो गये। क्योंकि, उनका ख्याल था, कि ऐसा करनेसे मीराकी स्मृति और उनका गीत भी सदाके लिये लोप हो जायगा। किन्तु उन्होंने यह नहीं समझा, कि मीराके मरने पर भी उनकी पवित्रकाहिनी और सङ्गीतध्वनि सदा अमर रहेगी।

मूर्ख राणा समझते थे, कि मीराको जो कुछ करने कहा जायगा उसे वे खुशीसे करेंगी। इसी विश्वासके वश उन्होंने मीराको एक पत्र लिखा, 'मीरा! तुम्हारे कारण मैं रात दिन बेचैन रहता हूं। तुम रातको नदीमें डूब प्राण त्याग करो, तो मैं निश्चिन्त हो जाऊं।'

मीराने पत्र पढ़ कर पत्रवाहकसे राणाके साथ एक बार मुलाकात करा देनेको कहा। पत्रवाहकने उत्तर दिया, कि राणाका ऐसा हुकुम नहीं है। इस पर मीराने कोई जवाब नहीं दिया, वे चुप हो रहीं। गहरी रातको जब राजभवनके सभी सो रहे थे, उसी समय मीराने भक्तिपूर्वक गोविन्दजीको प्रणाम कर अलक्षित भावमें राजभवनका त्याग किया। नदीके किनारे उपस्थित हो पतिव्रता मीरा नदीमें कूद पड़ी। संज्ञाशून्य हो मीराने स्वप्न देखा कि, 'एक सुन्दर बालक उन्हें गोदमें लेनेके लिये हाथ बढ़ा रहा है। वे नवीन नीरदश्याम, नीलेन्दीवर-लोचन, वनमालाविभूषित गोपालरूपी कृष्ण उन्हें अङ्कमें लगा कर कह रहे हैं, 'मीरा! तूने पतिकी आज्ञाको प्रतिपालन करके पतिभक्तिकी पराकाष्ठा दिखाई है। अभी उठो, त्रितापित संसार दुःखसे दग्ध नरनारीको भक्तिकी सञ्जीवनी गाथा सुना कर अपने कर्त्तव्यका पालन करो। कर्त्तव्य कर्मका अभी भी शेष नहीं हुआ है। उठो! मेरी आज्ञाका पालन करो।"

होशमें आ मीराने देखा कि मैं बालू पर पड़ी हुई हूं। मीरा फिर चित्तौर न लौटीं। हरिगुण गाते गाते वृन्दावनधाम चली गईं। वृन्दावनचन्द्र कृष्ण बालक भेषमें मीराको पथ दिखलाते, उनकी भूख प्यासको शान्तिका उपाय करते उनके साथ चले। इस प्रकार बालकोंके साथ संकीर्त्तन करते करते मीरा वृन्दावनकी ओर जाने लगी। रास्तेमें मीराके संकीर्त्तन भावसे उन्मत्त हो भावुक लोग उनके साथ वृन्दावन चले। इस प्रकार देश देशान्तरमें कृष्णप्रेमकी सरिता उमड़ चली। शोक तापविभूत लोग उस सञ्जीवनी-शान्ति सरिताका शान्तिसुधा पान कर सन्तप्त हृदयको शीतल करने लगे।

जैसे ऋतुराज वसन्तके आविर्भावसे वसुन्धराके विशाल-वक्ष पर अपूर्व सौन्दर्य और दिव्य शोभा दिखाई देती है उसी प्रकार मीराके आगमनसे वृन्दावनमें प्रेमतरंगकी बाढ़ उमड़ आई। निर्जीव वृन्दावन मानो कृष्ण-प्रेमके नये प्रसादसे सजीव हो उठा।

कृष्णके लीलाक्षेत्रमें कलनिनादिनी कालिन्दीरूपिणी भक्तिकी मूर्त्तिमती सरित्को देख मीराका भक्तिरसाक्रान्त हृदय प्लावित होने लगा। उनके दोनों नेत्रोंसे प्रेमाश्रु अजस्र धारामें बह चले, मानो वृन्दावनके सभी स्थानोंको पूर्व-स्मृतिने मूर्त्तिमती हो उन्हें उद्वेलित कर दिया हो। उन्होंने देखा, कि गोपालवेशमें श्रीकृष्ण विविध वस्त्र और भूषणोंसे भूषित युवती गोपियोंसे घिरे हुए, कालिन्दीके सुनील-जलमें क्रीडा करनेके लिये उत्सुक, मुक्तामाला धारण किये, सुवर्णवलय, नूपुर और किरीट पहने कदम्बवृक्षमें संलग्न स्वर्णमण्डपिकामें बैठ मुस्कुराते और कटाक्ष मारते, सुन्दर ओठों पर वंशी लगाये सुमधुर स्वरसे गोपियोंका मन मोह रहे हैं। उस वंशी गानके महोल्लासका स्मरण कर मीरा भक्तिके आवेशमें क्षण क्षण मूर्च्छित होने लगीं। उनका प्रेमाश्रु बंद न हुआ। इस प्रकार वृन्दावनके आनन्दसागरमें गोता मार मीरा हरि-कीर्त्तन करने लगी।

कहते हैं, कि भगवद्भक्त रूपगोस्वामी इस समय वृन्दावनमें रहते थे। उन्होंने कामिनीकाञ्चनका त्याग किया था, यहां तक, कि वे स्त्रियोंके मुख तक नहीं देखते थे। मीराबाईने परमभक्त रूपगोस्वामीके भी साथ मिलनेकी इच्छा प्रकट की। किन्तु गोस्वामीने इसे स्वीकार नहीं किया। इस पर मीराबाईने पत्र द्वारा उन्हें सूचित किया, 'गोस्वामी ठाकुर! आज भी स्त्री पुरुषका समझ न सके! भगवान्के लीलाक्षेत्र वृन्दावनधाममें केवल एक पुरुषका ही आविर्भाव सम्भव है। वे ही स्वयं कृष्ण हैं। इसके अलावा सभी कृष्णगत प्राणा गोपिनी है।' यदि रूपगोस्वामी आपको पुरुष बतला कर अभिमान करें, तो भगवान्के लीलाक्षेत्र वृन्दावनमें उन्हें वास करना उचित नहीं। क्योंकि, वे शीघ्र ही किसी अन्य गोपीसे लाञ्छित होंगे।"

रूपगोस्वामी भक्तश्रेष्ठा मीराबाईके पत्रका आशय समझ कर उन्हें बुलाया और दोनो शास्त्रालोचनामें परम सुखसे दिन बिताने लगे।

धीरे धीरे भक्तप्राण मीराकी सुललित पदावली भारतवर्षके कोने कोने फैल गई। इतने दिनोंके बाद राणा कुम्भको अपनी भूल सूझ पड़ी। अभी उन्होंने समझा, कि मीरा इस क्षुद्र चित्तोरकी रानी नहीं, वे मानवजातिके हृदयराज्यकी अद्वितीय सम्राज्ञी हैं। उनके सम्मानके सामने राजसम्मान तुच्छ है।

राणा छद्मवेशमें चित्तोरका परित्याग कर वृन्दावन आये। कुछ दिन बाद मीराने उन्हें पहचान लिया और उनके चरणोंमें लेट रहीं। राणाने बड़े दीन स्वरमें मीरासे क्षमा प्रार्थना की। अब दोनों कृष्णप्रेममें उन्मत्त हो आनन्दसे नृत्यगीत करने लगे।

राणा मीराको अपने साथ चित्तोर लाये। किन्तु मीराका अधिकांश समय वृन्दावनमें ही बीतता था। इसके बाद मीराने वृन्दावनसे द्वारका तक सभी तीर्थोंमें परिभ्रमण किया। द्वारकामें कृष्णप्रतिमाके दर्शनकालमें मीराने प्रेमाश्रु बहा प्रतिमाके पादपद्मको धो डाला था। कहते हैं, कि मीराकी भक्तिसे प्रतिमा दो टुकड़ोंमें बंट गई और मीरा उसमें अन्तर्हित हो गई। फिर किसीका कहना है, कि चित्तोरके रणछोड़के साथ उसी भावमें मिल गई थी। अलावा इसके मीराकी जीवनीके सम्बन्धमें और भी बहुत-सी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। यहां पर विस्तार हो जानेके भयसे उनका उल्लेख नहीं किया गया। उनकी बनाई भक्तपक्षकी कविता आज भी घर घर सुनी जाती है। उदाहरणार्थ एक दो कविता नीचे दी गई है,—

(१) "अखिया श्याम मिलनकी प्यासी।
आप तो जाय द्वारका छाये
लोक करत मेरी हाँसी।
आवकी डारी कोयल बोले
बोलत शब्द उदासी।
मेरे तो मनमें ऐसी आवत
है करतब लूं जाय कासी।
मीराके प्रभु गिरिधर नागर
चरण कमलकी दासी।"

(२) "गोपाल रङ्ग राची श्याम मैं रङ्ग राची
कहा भयो जल विषके खाये
तिनहु ते मैं बाची।
तात मात लोग कुटुम्ब
तिन कीनी उपहासी।
नन्द नन्दन गोपी ग्वाल
तिनके आगे मैं नाची।
और सकल छाडिके मै
भक्ति काछु काची।
मीराके प्रभु गिरिधर नागर
मेरी जानत झूठी और साची।।"

क्रमशः इष्टदेवके लिये मीराका प्रेमोन्माद बढ़ गया। राणा उनके हृदयवेगको रोक न सके। मीरा मुक्त प्राणसे स्वाधीन विहङ्गमकी तरह द्वारका तक सभी तीर्थोंमें कृष्णगुणकीर्त्तन करनेके लिये व्याकुल हो गईं। पहले वे चित्तोर-राजधानीका परित्याग कर हरिनाम-कीर्त्तन करती हुई वृन्दावन पहुंची। यहा आ कर उनके हृदयमें जैसा महाभाव उपस्थित हुआ था, वह लिख कर प्रकट नहीं किया जा सकता। वे श्रीकृष्णके प्रत्येक लीलास्थानमें जा कर हरिनाम गान करती थीं। अनेक समय तो वे प्रेममें आ कर मूर्च्छित हो जाती थीं। उनकी असाधारण प्रेमभक्ति देख कर गृहस्थ वैरागी उनके शिष्य होनेको तैयार हो गये थे। द्वारकामें आ कर उन्होंने प्रेमाश्रु बहा कर इष्टदेवके चरणोंको अभिषिक्त किया था। इस बार भी राणा बहुत अप्रसन्न हो गये, पीछे अपनी भूल मालूम हुई। मीराके लिये राणाने अनेक कृष्णमन्दिर बनवा दिये। कहते हैं, कि एक दिन मीराने भगवान् रणछोड़को प्रत्यक्ष किया और सदाके लिये उन्हींकी गोदमें अन्तर्हित हो गईं। आज भी रणछोड़जीके साथ चित्तौरमें मीराबाईकी पूजा होती है।

उनके भक्तगण मीराबाई-सम्प्रदाय कहलाते हैं। यह सम्प्रदाय अभी वल्लभाचारीकी एक शाखा समझा जाता है।

मीराबाई—उपासक-सम्प्रदाय। यह सम्प्रदाय वल्लभाचारीकी ही एक शाखा समझा जाता है।

मीरास (अ० स्त्री०) वह धन सपत्ति जो किसीके मरने पर उसके उत्तराधिकारीको मिले, बपौती।

मीरासी—बनारस आदि युक्तप्रदेशवासी एक मुसलमान

जाति। ये डोम मीरासी नामसे पुकारे जाते हैं। पहले ये डोम थे, किन्तु जब मुसलमान बने, तब मुसलमान डोम कहलाये। गीतविद्या ही इनका जातीय व्यवसाय है। कहीं कहीं ये धार्मिक गीत गाते या कहीं कहीं भाटोंकी तरह गाते फिरते हैं। अपनी पुत्रियोंको शैशवावस्थासे ही नृत्यगानकी शिक्षा देते हैं। ये वहां पखावजी, कलावत, कव्वाल या गल्पकार कहे जाते हैं। धारी नामक मुसलमानोंके साथ इनका लेन देन चलता है। नृत्य-गीतमें पटु मीरासी रमणियां सम्भ्रान्त महिलाओंके निकट जा कर तरह तरहका खिलवाड़ दिखला उनका चित्त रंजन किया करती हैं। इस काममें उनकी आमदनी भी कम नहीं होती।

पुरुष केवल ढोलक, मञ्जीरा (करताल) और किङ्गरी या वंशी बजा कर गान किया करते हैं। जाट जातिके विवाह और अन्त्येष्टिक्रियाके समय ये आ कर नाचते गाते हैं।

लोगोंका कहना है, कि सुलतान अलाउद्दीन खिलजीके समय १२९५ ई०में अमीरखुशरु नामक एक मुसलमान कवि द्वारा आमन्त्रित हो कर ये मुसलमान बना दिये गये। एक समय इस वंशके उद्दौला नामक एक मनुष्य अयोध्या-राज सरकारकी कार्यविधि परिदर्शन किया करते थे। सिवा इसके अलीबक्स नामक दूसरे एक व्यक्तिका नाम दिखाई देता है। उसने एक यूरोपीय रमणीसे विवाह किया था। इसकी कन्याके साथ नासीर उद्दीन हैदरका विवाह हुआ।

उत्तर-पश्चिम प्रदेशमें इनकी निन्दाजनक कई बातें प्रचलित है—

"डोम बनिया पोस्ती तिनों बेमान।

"बाप, डोम और डोम ही दादा, मिया कहे में सुर्फा जादा।"

इत्यादि।

सिन्धुप्रदेशमें मीरासी भाट या शायरका कार्य करते हैं। ये सरदारोंके साथ रणक्षेत्रमें जा कर युद्धके समय शेरें बना बना कर सिपाहियोंको उत्तेजित करते हैं। भारतके अन्यान्य स्थानोंमें ये बजनिया, नाई और गणकका काम करते हैं।

मीरासी—मुसलमान राजाओं द्वारा लगाया राजकर-विशेष। दाक्षिणात्य और बम्बईमें जमींदारोंसे लगानकी वसूलीका इसी तरहका कायदा है। तामीलमें इसको कनिपाक्षी कहते हैं। यह हमारे देशके मौरूशी शब्दका प्रतिरूप है। जो रैयत वंशानुगत राजकर दे कर अपनी जमीन पर काबिज है, स्वयं सरकार भी उसके सत्वको छीन नहीं सकती।

मीरी (फा० स्त्री०) १ मीर होनेका भाव। २ खेलमें लड़केका सर्वप्रथम होना। ३ खेलमें लड़कोंका अपना दाँव खेल कर खेलसे अलग हो जाना।

मीर्जा अलीबेग—बदाक्सानका रहनेवाला तथा सम्राट् अकबरका एक उच्चपदस्थित कर्मचारी। जहांगीरके राज्यकालमें यह चार हजार सेनाका अधिनायक हुआ। सम्राट् जहांगीर जिस समय प्रसिद्ध साधु मैनरुद्दीन चिस्तिकी मसजिद देखने अजमेर गये थे उस समय अलीबेग उनके साथ था। अलीबेग अपने भूतपूर्व मित्र साहबाज खाका मकबरा देख शोकके मारे अपनेको भूल गया और मकबरेको आलिंगन कर उच्चस्वरसे उनके गुणका कीर्त्तन कर रहा था कि इसकी मृत्यु हो गई।

मीर्जा ईसा और मीर्जा इनायत उल्ला—सम्राट् शाहआलमके राज्यकालमें ये टाटाप्रदेशके शासनकर्त्ता थे। दोनोंके मकबरे समुज्ज्वल पीले रंगके संगमर्मर पत्थरके बने हुए हैं। उनमें यथेष्ट शिल्पनिपुणता दिखलाई गई है। वहांकी शिलालिपिको पढ़नेसे मालूम होता है, कि १६४८ ई०में उन्होंने अपनी मानवलीला समाप्त की थी।

मीर्जा खाँ—आजम शाहकी सभाके एक कवि। "तूहफत् उल् हिन्द" नामक हिन्दू-संगीतकी एक अपूर्व पुस्तक इन्होंने लिखी है। इस पुस्तकमें हिन्दू साहित्यका संक्षिप्त इतिहास वर्णन किया गया है। उन्होंने प्रसिद्ध पण्डितोंकी सहायतासे "रागार्णव" तथा "रागदर्पण" आदि पुस्तकोंकी रचना की थी।

मीर्जा नासिर—नवाब सुजाउद्दौलाका मातामह। यह सम्राट् बहादुर शाहके राज्यकालमें हिन्दुस्तान आया था। १७०८ ई०में सम्राट्ने इसे पटनाका शासनकर्त्ता बनाया। इसी स्थानमें इसकी मृत्यु हुई।

मीर्जा नासिर—माजन्दरानके रहनेवाले एक कवि। ये अन्धे थे। सम्राट् शाह आलमके राज्यकालमें ये हिन्दु-

स्तान आये थे। इन्होंने जुलफिकर खांके अधीन काम किया था।

मीर्जा महम्मद—पारस्का एक सुप्रसिद्ध वीणावादक। संगीतकी निपुणतामे उन्होंने "बुलबुल"-की पदवी पाई थी। पारसके एक व्यक्तिने सर विलियम जौन्सनके सामने मीर्जा महम्मदका जिक्र करते हुए कहा था, कि मोर्जा सिराज नगरमें श्रोताओंके बीच जब तक बीणा बजाते तब तक कलकंठ बुलबुलगण उसके चारों ओर घेर कर तथा अपनेको भूल कर संगीत सुनती थीं।

मीर्जा मोहर नासिर—पारसके राजा करीम खांके राज्य-कालका प्रसिद्ध चिकित्सक। इसने एक मसनवी बनाई थी। जितने पारसी कवियोंने वसन्तकालका कमनोय सौन्दर्य वर्णन किया है उनमें कोई भी मीर्जा मोहरका मुकाबला नहीं कर सकता।

मील (सं० पु०) वन, जंगल।

मील (अं० पु०) दूरीका एक माप जो १७६० गजकी होती है। यह कोसका आधा माना जाता है।

मीलक (सं० पु०) रोहित मत्स्य, रोहू मछली।

मीलन (सं० क्ली०) १ नेत्रमुद्रण, आंख बंद करना। २ संकुचित करना, सिकोड़ना।

मीलित (सं० त्रि०) मील-क्त। १ अप्रफुल्ल, बंद किया हुआ। २ संकुचित, सिकोड़ा हुआ। (पु०) ३ एक अलंकार। इसमे यह कहा जाता है, कि एक होनेके कारण दो वस्तुओंमें अर्थात् उपमेय और उपमानमे भेद नहीं जान पड़ता। वे एकमे मिली जान पड़ती हैं।

मीवग (सं० पु०) बौद्धमतानुसार एक बहुत बड़ी संख्याका नाम।

मीवर (सं० त्रि०) मीनाति हिनस्तीति मीञ् ष्वरच् (छित्वरच्छत्वर धीवरमीवरपीवरेति। उण् ३।१) निपातितश्च। १ हिंस्र, हिंसक। २ पूज्य, माननीय। मीयत इति मा-ष्वरच्च निपातितश्च। ३ सेनापति।

मीवा (सं० पु०) मीनाति हिनस्तीति मो वन्, निपात्यते च। (शेवायहजिह्वाग्रीवाप्वामीवाः। उण् १।१५४) १ उदरकृमि, पेटमेका कीड़ा। २ वायु, हवा। ३ सार-तत्त्व। ४ शीकर, तुषार।

मीशान (सं० पु०) महाराजवृक्ष, अमलतास।

मुंगना (हिं० पु०) सहिजन, मुनगा।

मुंगरा (हिं० पु०) हथौड़ेके आकारका काठका बना हुआ एक औजार। यह किसी प्रकारका आघात करने या किसी चीजको पीटने-ठोंकने आदिके काममें आता है। २ नमकीन बुंदिया।

मुँगिया (हिं० पु०) एक प्रकारका धारीदार या चार-खानेदार कपड़ा। मूँगिया देखो।

मुंगौरी (हिं० पु०) मूंगकी बनी हुई बरी।

मुंज (हिं० पु०) मूंज।

मुंड़करी (हिं० स्त्री०) घुटनोंमे सिर दे कर बैठना या सोना, जो प्रायः बहुत दुःखके समय होता है।

मुंड़चिरा (हिं० पु०) १ एक प्रकारके फकीर। ये प्रायः अपना सिर, आंख या नाक आदि छूरे या किसी नुकीले हथियारसे घायल करके भीख मांगते हैं। जो भीख जल्द नहीं देता उसके दरवाजेके अड कर वे बैठ जाते और अपने अंगोंको और भी अधिक घायल करते हैं। ऐसे फकीर प्रायः मुसलमान हो होते हैं। २ वह जो लेन देनमें बहुत हुज्जत और हठ करे।

मुंडचिरायन (हिं० पु०) लेन-देन आदिमें बहुत हुज्जत और हठ।

मुंडना (हिं० क्रि०) १ मूंडा जाना, सिरके बालोंकी सफाई होना। २ लुटना। ३ ठगा जाना, धोखेमें आना। ४ हानि उठाना।

मुंड़ा (हिं० पु०) १ वह जिसके सिरके बाल न हों या मुड़े हुए हों। २ वह जो सिर मुंड़ा कर किसी साधु या योगी आदिका शिष्य हो गया हो। ३ वह पशु जिसके सींग होने चाहिये, पर न हों। ४ एक प्रकारकी लिपि। इसमें मात्राएं आदि नहीं होतीं। इसका व्यवहार प्रायः कोठीवाले करते हैं। ५ बिना नोकके जूता। इस प्रकारका जूता प्रायः सिपाही लोग पहना करते हैं। ६ वह जिसके ऊपरी अथवा इधर उधर फैलनेवाले अंग न हों। ७ छोटा नागपुरमे रहनेवाली एक असभ्यजाति। मुण्डा देखो।

मुंड़ाई (हिं० स्त्री०) १ मूंडने या मुड़ानेकी क्रिया अथवा भाव। २ मूंड़ने या मुंड़ानेके बदलेमे मिला हुआ धन।

मुंडासा (हिं० पु०) वह साफा जो सिर पर बांधा जाता है।

मुंडासाबंद (हिं० पु०) वह जो कपड़े से पगड़ी बनानेका काम करता हो, दस्तारबंद।

मुंडा हिरन (हिं० पु०) पाठा मृग।

मुंडिया (हिं० पु०) वह जो सिर मुंडा कर किसी साधु या योगी आदिका शिष्य हो गया है, संन्यासी।

मुंडी (हिं० स्त्री०) १ वह स्त्री जिसका सिर मुंडा हो। २ विधवा, रांड़। ३ एक प्रकारकी बिना नोकवाली जूती। ४ मुण्डी देखो।

मुंडेर (हिं० स्त्री०) १ मुंडेरा। २ खेतके चारों ओर सीमा पर अथवा क्यारियोंमेंका उभरा हुआ अंश, मेंड, डोला।

मुंडेरा (हिं० पु०) १ दीवारका वह ऊपरी भाग जो सबसे ऊपरकी छतके चारों ओर कुछ कुछ उठा हुआ होता है। २ किसी प्रकारका बांधा हुआ पुश्ता।

मुंडेरी (हिं० स्त्री० मुंडेर देखो।

मुंडो (हिं० स्त्री०) १ वह स्त्री जिसका सिर मुंडा गया हो। २ स्त्रियोंकी एक प्रकारकी गाली जिससे प्रायः विधवाका बोध होता है।

मुंढिया (हिं० स्त्री०) बैठनेका छोटा मोढा।

मुंतकिल (अ० वि०) एक स्थानसे दूसरे स्थान पर गया हुआ।

मुंतजिम (अ० पु०) प्रबंध करनेवाला, वह जो इंतजाम करता हो।

मुंतजिर (अ० वि०) प्रतीक्षा करनेवाला, इंतजार करनेवाला।

मुंदना (हिं० क्रि०) १ खुली हुई वस्तुका ढक जाना, बंद होना। २ छिद्र आदिका पूर्ण होना, छेद, बिल आदि बंद होना। ३ लुप्त होना, छिपना।

मुंदरा (हिं० पु०) १ एक प्रकारका कुंडल, जो योगी लोग कानमें पहनते हैं। २ कानमें पहननेका एक प्रकारका आभूषण।

मुंदरी (हिं० स्त्री०) १ सादा छल्ला जो उंगलीमें पहना जाता है। २ अंगूठी।

मुंशियाना (हिं० वि०) मुंशियोंका-सा, मुंशियोंकी तरहका।

मुंशी (अ० पु०) १ लेख या निबंध आदि लिखनेवाला, लेखक। २ लिखा-पढ़ीका काम या प्रतिलिपि आदि करनेवाला, मुहर्रिर। ३ वह जो बहुत सुन्दर अक्षर, विशेषतः फारसी आदिके अक्षर लिखता है।

मुंशीखाना (अ० पु०) वह स्थान जहां मुंशी या मुहर्रिर आदि बैठ कर काम करते हों, दफतर।

मुंशीगिरी (फा० स्त्री०) मुंशीका काम या पद।

मुंसरिम (अ० पु०) १ प्रबंध या व्यवस्था करनेवाला, इंतजाम करनेवाला। २ कचहरीका वह कर्मचारी जो दफतरका प्रधान होता है।

मुंसलिक (अ० वि०) साथमें बांधा या नत्थी किया हुआ।

मुंसिफ (अ० पु०) १ वह जो न्याय करता हो, इन्साफ करनेवाला। २ दीवानी विभागका एक न्यायाधीश जो छोटे छोटे मुकदमोंका निर्णय करता है और जो सब-जजसे छोटा होता है।

मुंसिफी (अ० स्त्री० १ न्याय करनेका काम। २ मुंसिफका काम या पद। ३ मुंसिफकी अदालत, मुंसिफकी कचहरी।

मुंह (हिं० पु०) १ प्राणीका वह अंग जिससे वह बोलता और भोजन करता है। मुख देखो। २ मनुष्यका मुखविवर। ३ मनुष्य या किसी और प्राणीके सिरका अगला भाग। इसमें माथा, आंखें, नाक, मुंह, कान, ठोढ़ी और गाल आदि अंग होते हैं, चेहरा। ४ साहस, हिम्मत। ५ योग्यता, सामर्थ्य। ६ मुलाहजा, लिहाज। ७ छिद्र, छेद। ८ किसी पदार्थके ऊपरी भागका विवर जो आकार आदिमें मुंहसे मिलता जुलता हो। ९ ऊपरी भाग, ऊपरको सतह या किनारा।

मुंहकाला (हिं० पु०) १ अप्रतिष्ठा, बेइज्जती। २ एक प्रकारकी गाली। ३ बदनामी।

मुंहचटौवल (हिं० स्त्री०) १ चुम्बन, चूमाचाटी। २ बकबक, बकवाद।

मुंहचोर (हिं० पु०) वह जो दूसरोंके सामने जानेसे मुंह छिपाता हो, लोगोंके सामने आनेमें संकोच करनेवाला।

मुंहछुआई (हिं० स्त्री०) केवल मुंह छूनेके लिये, ऊपरी मनसे कुछ कहना।

मुंहछुट (हिं० वि०) जिसका मुंह ओछी या कटु बातें कहनेके लिये खुला रहे, मुंहफट ।

मुंहजोर (हिं० वि०) १ वह जो बहुत अधिक बोलता हो, बकवादी । २ मुहफट देखो । ३ उद्दण्ड, तेज ।

मुंहजोरी (हिं० स्त्री०) १ मुंहजोर होनेकी क्रिया या भाव । २ उद्दण्डता तेजी ।

मुंहदिखलाई (सं० स्त्री०) मुँहदिखाई देखो ।

मुंहदिखाई (हिं० स्त्री०) १ नई वधूका मुंह देखनेकी रस्म, मुंहदेखनी । २ वह धन जो मुंह देखने पर बधु को दिया जाय ।

मुंहदेखा (हिं० वि०) १ जो हार्दिक या आन्तरिक न हो, जो किसीको केवल संतुष्ट या प्रसन्न करनेके लिये हो । २ सदा आज्ञाकी प्रतीक्षामे रहनेवाला ।

मुंहनाल (हिं० स्त्री०) १ धातुकी बनी हुई वह नली जो हुक्केकी सटक आदिके अगले भागमें लगा देते हैं और जिसे मुंहमें लगा कर धूआं खींचते हैं । २ धातुका वह टुकड़ा जो म्यानके सिरे पर लगा होता है ।

मुंहपड़ा (हिं० पु०) १ वह जो सब लोगोंके मुंह पर हो, प्रसिद्ध, मशहूर ।

मुंहफट (हिं० वि०) जिसकी वाणी संयत न हो, बदजबान ।

मुंहबंद (हिं० वि०) १ जिसका मुंह बंद हो, खुला न हो । २ अक्षतयोनि, कुमारी ।

मुंहबंधा (हिं० पु०) जैन साधु जो प्रायः मुंह पर कपड़ा बांधे रहते हैं ।

मुंहबोला (हिं० वि०) जो वास्तविक न हो, केवल मुंहसे कह कर बनाया गया हो ।

मुंहभराई (हिं० स्त्री०) १ मुंह भरनेकी क्रिया या भाव । २ वह धन आदि जो किसीका मुंह बंद करनेके लिये उसे कुछ कहने या करनेसे रोकनेके लिये दिया जाय, घूस ।

मुंहमांगा (हिं० वि०) मनोनुकूल, अपने मांगनेके अनुसार ।

मुंहामुंह (हिं० क्रि० वि०) भरपूर, मुंह तक ।

मुंहासा (हिं० पु०) मुंह परके दाने या फुंसियां जो युवा अवस्थामें निकलती हैं और यौवनका चिह्न मानी जाती है । इन फुंसियोंके निकलनेसे चेहरा कुछ भद्दा हो जाता है । २०से २५ वर्ष तककी अवस्थामें ये निकलती हैं ।

मुअज्जन (अ० पु०) नमाजके लिये सब लोगोंको पुकारनेवाला ।

मुअत्तल (अ० वि०) १ जिसके पास काम न हो, खाली । २ जो काममें कुछ समयके लिये दण्डस्वरूप अलग कर दिया गया हो ।

मुअत्तली (अ० स्त्री०) १ मुअत्तल होनेका भाव, बेकारी । २ कामसे कुछ दिनके लिये अलग कर दिया जाना ।

मुअम्मा (अ० पु०) १ रहस्य, भेद । २ प्रहेलिका, पहेली । ३ पेचीली बात, ऐसी बात जो जल्दी समझमें न आवे ।

मुअल्लिम (अ० पु०) शिक्षा देनेवाला, इल्म सिखानेवाला ।

मुआफ (अ० वि०) माफ देखो ।

मुआफकत (अ० स्त्री०) १ मुआफिक या अनुकूल होनेका भाव । २ दोस्ती, हेलमेल ।

मुआफिक (अ० वि०) १ अनुकूल, जो विरुद्ध न हो । २ मनोनुकूल, इच्छानुसार । ३ ठीक ठीक, बराबर ।

मुआफिकत (अ० स्त्री०) १ अनुरूपता, सदृशता । २ मित्रता, दोस्ती । ३ अनुकूलता ।

मुआफी (अ० स्त्री०) माफी देखो ।

मुआमला (अ० पु०) मामला देखो ।

मुआयना (अ० पु०) निरीक्षण, जांच पड़ताल ।

मुआलिज (अ० पु०) चिकित्सक, इलाज करनेवाला ।

मुआलिजा (अ० पु०) चिकित्सा, इलाज ।

मुआवजा (अ० पु०) १ बदला, पलटा । २ वह धन जो किसी कार्य अथवा हानि आदिके बदलेमें मिले । ३ वह रकम जो जमींदारको उस जमीनके बदलेमें मिलती है जो किसी सार्वजनिक कामके लिये कानूनकी सहायतासे ले ली जाती है ।

मुआहिदा (अ० पु०) दृढ़ निश्चय, करार ।

मुइजउद्दीन—बादशाह जहान्दारशाहका पूर्व नाम । जहान्दार शाह देखो ।

मुइजउद्दीन—सुलतान गयासुद्दीन बलबनके पौत्र कैकोबादका दूसरा नाम । कैकोबाद देखो ।

मुइजउद्दीन महम्मद घोरी—साहबुद्दीन महम्मद शाहका एक नाम । महम्मदशाह देखो ।

मुईज-उद्दीन बहरम—अत्यन्त साहसी, उद्यमशील तथा युद्धप्रिय दिल्लीके सम्राट्। उनके जैसे आडम्बररहित सम्राट् दिल्लीके सिंहासन पर कभी भी नहीं बैठे थे। अन्यान्य सम्राटोंकी तरह वे राजोचित उज्ज्वल वेशभूषा-से अपनेको नहीं सजाते थे। जब रजिया बेगमको कारावास हुआ तब १२४० ई०में कुछ कालके लिये ये सिंहासनारूढ हुए थे।

मुईज लि-दीन अल्ला अबि तामिम याद—बर्वर राज्यका चतुर्थ खलीफा तथा मिस्र-राज्यका फतिमा वंशीय प्रथम राजा। पिता इस्माइल अल मनसुरकी मृत्युके उपरान्त वे बर्वर राजसिंहासन पर बैठे थे। इन्होंने अपने बाहु-बलसे इजिप्ट-राज्य जीत कर वहांके केरवान नामक स्थानमें राजधानी बसाई थी। इनके सुशासनसे सारा मिस्र-राज्य समृद्धशाली हो उठा था। इनकी बसाई हुई अल्-काहिरा नगरीने भारत आदि देशान्तरीय पण्य द्रव्योंसे पूर्ण हो कर नगरकी समृद्धिको बढ़ाया था। २४ वर्ष राज्य करनेके बाद ये परलोक सिधारे। मिस्रके फतिमावंशीय राजाओंके राज्यकाल ९५२ ११८८ ई०में मिस्रमें वैदेशिक-वाणिज्यकी समधिक उन्नति हुई थी।

मुईन उद्दीन—गञ्ज सआदत नामक ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने अपना ग्रन्थ सम्राट् आलमगीर बादशाहको उत्सर्ग किया था।

मुईन उद्दीन इस्फरारी (मौलाना)—तारीख मुबारक शाहा नामक इतिहासक प्रणेता।

मुईन उद्दीन खाँ—दिल्लीके राजपुर-रक्षक मन्त्रिप्रवर जवित, खांका पुत्र। अंगरेज राजकी सहायता देनेके कारण वे मासिक पांच हजार रुपया वेतन पाते थे। इतिहासमें ये भानबु खांके नामसे भी परिचित हैं।

मुईन उद्दीन चिस्ती (ख्वाजा)—प्रसिद्ध मुसलमान साधु। ११४२ ई०में शिस्तानमें इनका जन्म हुआ था। जिस समय दिल्लीश्वर पृथ्वीराज शाहबुद्दीन गोरी (मुइज उद्दीन महम्मद साम) द्वारा ११९२ ई०में बन्दी हुए थे उस समय मुसलमान-साधु चिस्तीने अजमेरमें पदार्पण किया था। १२३६ ई०में ९७ वर्षकी अवस्थामें वहीं पर इनकी मृत्यु हुई। उनके पवित्र नामके स्मरणार्थ अजमेरमें समाधि-मन्दिर बनाया गया था जिसकी शिल्प-निपुणता अभी भी भास्कर विद्याका गौरव घोषित करती है।

मुईन उद्दीन जविनि (मौलाना)—जविनका रहनेवाला एक मुसलमान कवि। (१३वीं सदी) इसने प्रसिद्ध पारसी कवि सादीका अनुकरण कर 'निगारिस्तान' नामकी एक नीतिपूर्ण गद्य-पद्य सम्बलित पुस्तककी रचना की थी।

मुईन उद्दीन महम्मद—हिरातका रहनेवाला एक मुसलमान ऐतिहासिक। इसने तारीख-मुसावी नामसे मिस्रदेशमें रहनेवाले यहूदियोंका इतिहास लिखा था। इसके अतिरिक्त इसने 'रौजत-उल-जनात'-में हिरात नगरकी समृद्धिका वर्णन करते हुए एक ग्रन्थ १४८६ ई०में समाप्त कर सुलतान हुसेन आबुलगाजी बहादुरके नामसे उत्सर्ग किया था। १४८६ ई०में इसने मिआ-राज उल्-नबुयात नामका अवताराभिव्यक्ति ग्रन्थ तथा रौजत-उल-वायजिन नामक ग्रन्थ लिखा था।

मुईन-उल मुल्क रुस्तम हिन्द—लाहौरका एक मुसलमान शासनकर्त्ता। सरहिन्दके युद्धमें अहमदशाह अब्दालीको पराजित कर इसने मुगल सम्राट् अहमद शाहसे शासकका पद प्राप्त किया था। १७५४ ई०में इसकी मृत्यु हुई। इसका दूसरा नाम मीरमन्नू था।

मुकन्द (सं० पु०) कुंदरू। २ पलाण्डु, प्याज। ३ षष्टिक, व्रीहिविशेष, साठी धान।

मुकन्दक (सं० पु०) १ पलाण्डु, प्याज। २ षष्टिक व्रीहिविशेष, साठी नामक धान। ३ कुधन्यभेद, कोदों।

मुकट (हिं० पु०) मुकुट देखो।

मुकटा (हिं० पु०) एक प्रकारकी रेशमी धोती जो प्रायः पूजन या भोजन आदिके समय पहनी जाती है।

मुकता (हिं० पु०) १ मुक्ता देखो। (वि०) २ यथेष्ट, बहुत अधिक।

मुकत्ता (अ० वि०) १ काट छाँट कर दुरुस्त किया हुआ, ठीक तरहसे बनाया हुआ। २ शिष्ट, सभ्य।

मुकदमा (अ० पु०) १ अधिकार आदिसे संबंध रखनेवाला कोई झगडा अथवा किसो अपराधका मामला जो निबटारे या विचारके लिये न्यायालयमें जाय, अभियोग। २ धनका अधिकार आदि पानेके लिये अथवा किये हुए

अपराध पर दण्ड दिलानेके लिये किसीके विरुद्ध न्याया-लयमें कार्रवाई, नालिश।

मुकदमेबाज (फा० पु०) वह जो प्रायः मुकदमे लड़ा करता हो।

मुकदमेवाजो (फा० स्त्री०) मुकदमा लडनेका काम।

मुकद्दम (अ० वि०) १ प्राचीन, पुराना। २ सर्वश्रेष्ठ। ३ आवश्यक, जरूरी। (पु०) ४ मुखिया, नेता। ५ रान-का ऊपरी भाग जो कूल्हेसे जुड़ा हो।

मुकदमा (अ० पु०) मुकदमा देखो।

मुकद्दर (अ० पु०) प्रारब्ध, भाग्य।

मुकद्दस (अ० वि०) पवित्र, पाक।

मुकना (हिं० पु०) मकुना देखो।

मुकम्मल (अ० वि०) पूरा किया हुआ, सब तरहसे तैयार।

मुकरना (हिं० क्रि०) कोई बात कह कर उससे फिर जाना, नटना। (पु०) २ कह कर मुकर जानेवाला, वह जो कहे और मुकर जाय।

मुकरनो (हिं० स्त्री०) मुकरी या कह-मुकरी नामक कविता।

मुकराना (हिं० क्रि०) १ दूसरेको मुकरनेमें प्रवृत्त करना। २ दूसरेको झूठा बनाना।

मुकरी (हिं० स्त्री०) चार चरणोंकी एक कविता। इसके प्रथम तीन चरण ऐसे होते हैं जिनका आशय दो जगह घट सकता है। इनसे प्रत्यक्षरूपसे जिस पदार्थका आशय निकलता है, चौथे रणमें किसी पदार्थका नाम ले कर उससे इन्कार कर दिया जाता है। इस प्रकार मानों कही हुई बातसे मुकरते हुए कुछ और ही अभि-प्राय प्रकट किया जाता है। अमीर खुशरोने इस प्रकार बहुत-सी मुकरियाँ कही हैं। इसके अन्तमें सखि शब्द रहनेके कारण लोग इसे सखी या सखिया भी कहते हैं।

मुकर्रर (अ० क्रि० वि०) दोबरा, फिरसे।

मुकर्रर (अ० वि०) १ निश्चय, जो ठहराया गया हो। २ निस्सन्देह, अवश्य हो।

मुकर्ररी (अ० स्त्री०) १ मुकर्रर होनेकी क्रिया या भाव। २ मालगुजारी, नियत राजकर। ३ नियत वेतन या वृत्ति आदि।

मुकल (सं० पु०) १ आरग्वध, अमलतास। २ गुग्गुल।

मुकव्वी (अ० वि०) बलवर्द्धक, पुष्टिकारक।

मुकाबला (अ० पु०) १ आमना सामना। २ मुठभेड़। ३ समानता, बराबर। ४ तुलना। ५ मिलान। ६ विरोध, लड़ाई।

मुकाबिल (अ० क्रि० वि०) १ सम्मुख, सामने। (वि०) २ सामनेवाला। ३ समान, बराबरका। (पु०) ४ प्रतिद्वन्द्वी। ५ शत्रु, दुश्मन।

मुकाम (अ० पु०) १ ठहरनेका स्थान, टिकान। २ ठह-रनेकी क्रिया, विराम। ३ ठहरनेका स्थान, घर। ५ अवसर, मौका। ५ सरोदका कोई परदा।

मुकामा—पटना जिलेके अन्तर्गत एक नगर। मोकामा देखो।

मुकियल (हिं० पु०) एक प्रकारका बांस। इसे नल बांस या बिधुली भी कहते हैं।

मुकियाना (हिं० क्रि०) १ किसीके शरीरमें मुकियोंसे बार बार आघात करना। ऐसा करनेसे अङ्गोंकी शिथि-लता दूर होती है। २ आटा गूंधनेके बाद उसे नरम करनेके लिये मुकियोंसे बार बार दबाना। ३ मुक्का लगाना या मारना, घूंसे लगाना।

मुकिर (अ० वि०) १ प्रतिज्ञा करनेवाला। २ किसी दस्तावेज या अर्जीदावे आदिका लिखनेवाला।

मुकु (सं० पु०) मुच-बाहुलकात् कुः, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ मुक्ति, मोक्ष। २ छुटकारा, रिहाई।

मुकुट (सं० क्ली०) मङ्कते मण्डयतीति मकि उटन् नलो-पश्च। स्वनामख्यात शिरोभूषण। पर्याय—किरीट, मौलि, कोटीर उष्णीष, मकुट मौलीक, शेखर, अवतंस, वतंस, उत्तंस, उष्णीषक, कौटीरक।

"रजांसि मुकुटान्योषामुत्थितानि व्यधर्षयन्।"

(महाभा० १।३०।३५)

प्राचीन कालके राजा मुकुट धारण किया करते थे। यह प्रायः बीचमें ऊंचा और कंगूरेदार होता था। यह सोने, चांदी और बहुमूल्य धातुओंका और कभी कभी रत्न-जटित भी होता था। यह माथे पर आगेकी ओर रख कर पीछेसे बांध देते थे। इसमें कभी कभी किरीट भी खोंसा जाता था। २ पुराणानुसार एक देशका नाम। (स्त्री०) ३ एक मातृगण।

मुकुटराय—दिल्ली बादशाह द्वारा सम्मानित नवद्वीपवासी एक ब्राह्मण। ये क्रोडियान् नामसे परिचित थे।

मुकुटिन् (सं० त्रि०) मुकुट-मस्यास्तीति मुकुट-इनि। मुकुटधारी, जिसने मुकुट धारण किया हो।

मुकुटी (सं० स्त्री०) अंगुलि-मोटन, उंगली मटकाना।

मुकुटेकार्षपण (सं० क्ली०) प्राचीनकालका एक प्रकारका राजकर जो राजाका मुकुट बनवानेके लिये लिया जाता था।

मुकुटेश्वर (सं० पु०) १ राजपुत्रभेद। २ शिवलिङ्ग-विशेष। ३ प्राचीन तीर्थविशेष।

मुकुटेश्वरी (सं० स्त्री०) माकोट (मुकुट) देशको दाक्षायणी मूर्त्तिभेद।

मुकुटेश्वरीतीर्थ (सं० क्ली०) मुकुटेश्वरी देवीमूर्त्ति प्रतिष्ठित प्राचीन तीर्थभेद।

मुकुट्ट (सं० पु०) एक प्राचीन जातिका नाम जिसका उल्लेख महाभारतमें आया है। (भारत० सभापर्व)

मुकुण्टी (सं० स्त्री०) युद्धास्त्रविशेष, लड़ाईका एक हथियार।

मुकुन्ति—तैलङ्गके अन्ध्रवंशीय एक राजा।

मुकुन्द (सं० पु०) १ विष्णु। मोक्ष देनेके कारण इनका नाम मुकुन्द हुआ है। अथवा वे भक्तिरसमय प्रेमवचन ब्राह्मणोंको दान करते हैं, इसीसे इनका नाम मुकुन्द है।

"मुकुमव्ययमान्तञ्च निर्वाणमोक्षवाचकम्।
तद्ददाति च या देवो मुकुन्दस्तेन कीर्त्तितः॥
मुकु भक्तरसप्रेमवचन वेदसम्मतम्।
यस्तद्ददाति विप्रेभ्यो मुकुन्दस्तेन कीर्त्तितः॥"
(ब्रह्मवै०पु० जन्मख० ११० अ०)

२ निधिविशेष।

"यत्र पद्ममहापद्मौ तथा मकरकच्छपौ
मुकुन्दो नन्दकश्चैव नीलः शङ्खोऽष्टमोनिधिः॥"
(मार्कण्डेयपु०६८।५) निधि देखो।

३ रत्नभेद। ४ कुन्दुरि, कुंदरू। ५ पारद, पारा। ६ श्वेत करवी, सफेद कनेर। ७ उपोदिका, पोईका साग। ८ गाम्भारवृक्ष, गम्भारी नामका पेड।

मुकुन्द—कुछ प्राचीन संस्कृत ग्रन्थकारोंके नाम। यथा—१ काशीमाहात्म्यसंग्रहके रचयिता। २ केनोप निषट्टिप्पन, गरुडोपनिषट्टिप्पन, चूलिकोपनिषट्टिप्पन और ब्रह्मसूत्र व्याख्या नामक चार ग्रन्थोंके प्रणेता। ३ रागानुगा विवृत्ति के रचयिता।

मुकुन्दक (सं० पु०) १ पलाण्डु, प्याज। कोई कोई सुकुन्दककी जगह मुकुन्दक पढ़ते हैं।

"विशाखो तत्र भूयीष्ठ वरुकः सुमुकुन्दकः॥" (सुश्रुत १।४६)

२ षष्टिकव्रीहि, साठी धान।

"षष्टिकः शतपुष्पश्च प्रमोदकमुकुन्दकौ।
महाषष्टिक इत्याद्याः षष्टिकाः समुदाहृताः॥" (भा०प्र०)

३ तैरभुक्तके अन्तर्गत एक स्थानका नाम।

मुकुन्दकवि—गुह्यानविंशतिके रचयिता।

मुकुन्दगोविन्द—ब्रह्मामृत-वर्षिणीके प्रणेता रामानन्दके गुरु।

मुकुन्द दत्त—श्रीचैतन्य महाप्रभुके सहपाठी एक प्रसिद्ध वैष्णव। चट्टग्रामके चक्रशाला नामक गांवमें मुकुन्ददत्तका घर था, किन्तु बाल्यवस्थासे ही वे नवद्वीपमें रहते थे। श्रीमहाप्रभुके साथ ही उनकी विद्याशिक्षा आरम्भ हुई थी।

मुकुन्ददत्त—एक प्रसिद्ध वैष्णव। आयुर्वेद शास्त्रमें उनका विशेष अधिकार था। एक सुचिकित्सक होनेके कारण उनकी सर्वत्र प्रसिद्धि थी। नवाब हुसेन खाँ हिन्दू कर्म्मचारियोंके विशेष पक्षपाती थे। उन्होंने इन्हीं मुकुन्दको राजचिकित्सक नियुक्त किया था। एक दिन नवाब वायु सेवनके लिये ऊंचे स्थान पर बैठे थे, भृत्य मस्तककी बगलमें मोरपंखसे धीरे धीरे पंखा कर रहा था। चिकित्सक भी उसी जगह उपस्थित थे। मोरपंखका गुच्छा नवाबके मस्तकमें लगते देख चिकित्सकके मनमें एक महान भावका उदय हुआ। उनको स्मरण हुआ—"बर्हापीड नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकार बिभ्रद्वासः कनककपिश वैजयन्तीव माला। रन्ध्रान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोप वृन्दै वृन्दारण्य स्वपदरमया प्राविशद्गीत कीर्त्तिः"

स्मरण होते ही वे मूर्च्छित हो नीचे गिर पड़े। बहुत देरके बाद मूर्च्छा दूर होने पर नवाबने पूछा, 'तुम्हारे हठात् गिरनेका कारण क्या है?' वैद्यने उत्तर दिया, 'शाहनशाह! हमें यह एक रोग है।'

इन भावुकवरका नाम मुकुन्ददत्त था। श्रीखण्डवासी नारायणदत्तके मुकुन्द तथा नरहरि नामके दो पुत्र थे। नरहरि शब्द देखो। नरहरि नवद्वीपमें रहते थे तथा श्रीमहाप्रभुके निकट भाईको वैषयिकबन्धनसे मुक्त करनेके लिये प्रार्थना करते थे। मुकुन्द एक बार अपने भाईको देखनेके लिये नवद्वीप आये और गौरांग महाप्रभुकी भक्ति-नदीमें गोता मारने लगे। वे भी भक्तगणोंके साथ मिल कर नवद्वीप हीमें रहने लगे। इन्हीं मुकुन्दके पुत्र प्रसिद्ध रघुनन्दन हुए। रघुनन्दन देखो।

मुकुन्द दास—१ गौतमीय न्यायसूत्रके टीकाकार। २ भावार्थ दीपिका नामकी भागवत गीता टीकाके रचयिता।

मुकुन्द दीक्षितद्विवेदिन—एक विख्यात् वैदिक पण्डित। इनके पुत्र युवराजने ऋग्वेदकाव्य बनाया था।

मुकुन्ददेव (सं० पु०) उड़िष्याके गजपतिवंशीय अन्तिम राजा। १५६७ ई०में वङ्गालके मुसलमान राजाके सेनापति काला पहाड़ने इनको पराजित कर पुरीके पवित्र मन्दिरको ध्वंस कर डाला था। गङ्गा-सरस्वती सङ्गमके उत्तर त्रिवेणी-स्नान-घाट इन्होंके द्वारा बनाया गया है। उत्कल देखो।

मुकुन्दद्वार—राजपूतानेके अन्तर्गत कोटा-प्रदेशका एक नगर तथा पहाड़ी मार्ग। यह अक्षा० २४° ४८' ५०" उत्तर तथा देशा० ७६° ४' ५०" पू० चम्बल तथा काली सिन्धुके संगम पर अवस्थित है। कोटाके राजा महाराव माधव सिंहके ज्येष्ठ पुत्र मुकुन्द सिंहके नामानुसार उक्त स्थान मुकुन्द द्वारके नामसे प्रसिद्ध है। मुकुन्द सिंहने अनेक द्वार तथा अट्टालिकाओंका निर्माण किया था।

मुकुन्द परिव्राजक—विज्ञान नौकाप्रणेता।

मुकुन्दपुर—तिरहुत जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर।

मुकुन्द प्रिय—एक धर्माचार्य, काशीखंडटीकाकृत रामानन्दके पिता।

मुकुन्द भट्ट—१ जगन्नाथविजयके रचयिता। २ नलोदयके टीकाकार। ३ पदचन्द्रिकाके प्रणेता।

मुकुन्द भट्ट गाड़गिल—एक विख्यात नैयायिक, अनन्त भट्टके पुत्र तथा मनोहर वीरेश्वरके छात्र। इन्होंने ईश्वरवाद तथा तर्कसंग्रहचन्द्रिका नामक अन्नम भट्टकृत तर्क संग्रहकी टीका और तर्कामृत तरंगिणी नामक जगदीश कृत तर्कामृतकी टीका लिखी है।

मुकुन्द भट्टाचार्य्य—पद्यावलीधृत एक कवि।

मुकुन्दराज—एक प्रसिद्ध वैदान्तिक, श्रेष्ठ पण्डित रामनाथके शिष्य। इन्होंने अद्वैत ज्ञानसर्वस्व, अष्टावक्र गीताभाष्य, आत्मबोधपञ्चीकरण, परमामृत, विवेकसार-सिंधु, विवेकसिंधु वा वेदान्तार्थविवेचन महाभाष्य नामक कई पुस्तकोंकी रचना की है। मुकुन्द मुनिके नामसे भी ये परिचित हैं।

मुकुन्द राम—आनन्द कलिकाके रचयिता।

मुकुन्द राम चक्रवर्त्ती—बंगला भाषाके चण्डिकाव्य प्रणेता। जनतामें ये कविकङ्कण उपाधिसे परिचित हैं। कविकङ्कण देखो।

कविकङ्कण शब्दमें मुकुन्द रामका आत्मपरिचय दिया गया है। दामुन्यामें उनके सात पुरुषाओंका वासस्थान था। उस समय अधार्मिक राजा हुसेन कुली खाँ बंगालका शासनकर्त्ता था। उसके अनुग्रह तथा प्रजाओंके पापके फलस्वरूप महमूद सरीफ डिहीदार हुए थे। डिहीदारके अत्याचारसे उत्कंठित हो कर तथा अपने स्वामी गोपीनाथ नंदीसे मालगुजारीकी बाबत सरकारसे बंदी हुये, देख वे गम्भीर खांके परामर्शानुसार चण्डीगढ़के श्रीमन्त खांकी सहायतासे स्त्री, शिशुपुत्र तथा भाई रमानन्दको साथ ले आरडामें आ कर रहने लगे।

दामुन्यामें उन्होंने पहले शिवकीर्त्तन नामक एक क्षुद्र कविताकी रचना की थी। दामुन्यासे जब भाग रहे थे, तब मार्गमें चण्डी देवीके आदेशानुसार वे पुस्तक लिखनेमें प्रवृत्त हुए। आरडामें उक्त चण्डी काव्यकी समाप्ति हुई। इस ग्रन्थके शेषमें कविने लिखा है, 'शाके रसरसवेद शशांक गणता' अर्थात् शाके १४६६में चण्डीगीत समाप्त हुआ। इस समय कविके जामाता, पुत्रवधू तथा पौत्रका उल्लेख देख कर अनुमान होता है कि उनका जन्म १६ वीं शताब्दीमें हुआ था। कविकङ्कणके पिता हृदय मिश्र 'गुणराज' उपाधिसे भूषित थे। कविके परिचयके अनुसार उनके ज्येष्ठ भ्राता कवि चन्द्र (निधि राम) तथा कनिष्ठ रामानन्द होते हैं। भूलसे कविकङ्कण शब्दमें कविके दो पुत्र तथा दो कन्याओंका नाम असम्बन्ध भावमें लिखा गया था। अभी अनुसन्धान करनेसे पता चला

है कि उनकी माताका नाम देवकी, उनके दोनों पुत्रोंके नाम शिवराम तथा पञ्चानन, पुत्रवधूका नाम चित्रलेखा, कन्याका नाम यशोदा और जामाताका नाम महेश था।

कविने अपने दोनों भाइयोंके साथ माणिक दत्त नामक अध्यापकके निकट सङ्गीत शास्त्रकी शिक्षा पाई थी। किंवदन्ती है, कि पाथरकुचा-निवासी गोपाल चन्द्र चक्रवर्त्ती नामक एक गायकने ब्राह्मणभूमिकी राजसभामें सबसे पहले उनके चण्डीकाव्यका गान किया था। दामुन्यामें कविकी हस्तलिखित कुछ पुस्तकें इस समय भी सुरक्षित हैं। उनसे कविका वंशपरिचय, समकालीन सज्जनोंका सङ्ग तथा दामुन्याका माहात्म्य प्रकट होता है।

मुकुन्दराम राय (राजा)—बङ्गालके एक विख्यात हिन्दू-शासनकर्त्ता। ये बारभूंयामेंसे एक थे। फतेहाबाद तथा भूषणामें उनकी जमींदारी थी। ये बंगाली कायस्थ थे। गंगाके दूसरे किनारे फरीदपूरके चरमुकुन्दिया नामक स्थान आज भी उनके अस्तित्वको सूचित करता है। अकबरनामा और बादशाहनामामें उनकी वीरताका यथेष्ट परिचय दिया गया है। अबुलफजलके वर्णनसे मालूम होता है, कि फतेहाबादमें सरकारी अफगान और हिन्दू जमींदारों तथा पुर्त्तगोज सरदारोंका प्रभाव विस्तृत था। १५७४ ई०में खान खाना मुनइम अकबरशाहकी सेनाको ले कर बङ्गाल तथा उड़ीसा पर आक्रमण करनेके लिये अग्रसर हुए थे। उनकी आज्ञासे मुराद खाँके अधीन एक सैन्यदल पूर्व बङ्गालके दुर्द्धर्ष जमींदारोंको वशमें लानेके लिये गया था। भूषणा राज मुकुन्दरायके साथ उसका घोर संग्राम हुआ। हिन्दू-राजने मुसलमान आततायियोंसे बचनेके लिये चतुराईसे उसको निमंत्रण दे कर पुत्र सहित मार डाला।

उनके पुत्र शत्रुजित्‌ने मुगल सम्राट् जहांगीर बादशाहके तत्कालीन बंगालके शासनकर्त्ताको बहुत सताया था। अन्तमें शाहजहां बादशाहके राज्यकालमें वे कोचविहार तथा कोचहाजोंके राजाके साथ षड़यन्त्रमें शामिल होनेके कारण मुगल सेनापतिसे पराजित हुए। अनन्तर बंदी अवस्थामें १६३६ ई०को वे मारे गये। उन्हींने शत्रुजित्‌पुर नगर बसाया था। इस प्रदेशमें महम्मदपुरके स्थापक राजा सीताराम भी वीरता दिखा कर कायस्थ जातिके गौरवको बढ़ा गये हैं।

मुकुन्दलाल—वाराणसी (काशी)-के रहनेवाले एक विख्यात पण्डित। कौलगजमर्द्दन, गणेशार्च्चनचन्द्रिका, गोपालरहस्य, गौतमीयतंत्रटीका, तन्त्रसार, तीर्थमञ्जरी, त्रिकूटारहस्यटीका, प्रणवार्च्चन चन्द्रिका, प्रायश्चित्तकुतूहल, भैरवीरहस्य, मार्त्तण्डार्च्चनचन्द्रिका, विज्ञानेश्वरकृत मिताक्षराके प्रायश्चित्ताध्यायटीका, वामकेश्वरतंत्रटीका, शक्तिसङ्गमतन्त्रटीका, श्राद्धमञ्जरी, समयप्रकाश, स्मृतिसार, स्मृत्यर्थसार आदि अनेक ग्रंथोंकी इन्होंने रचना की है।

मुकुन्दवन—१ स्वाम्यार्च्चनचन्द्रिकाके प्रणेता, आनन्दवनके गुरु। यह एक प्रसिद्ध साधु थे। २ महिम्नस्तवटीकाके रचयिता।

मुकुन्दशर्म्मन्—१ तन्त्रदीपिका नामक तन्त्र ग्रंथके प्रणेता। २ अमरकोषके लिङ्गानुशासनटीकाके रचयिता।

मुकुन्दसेन—एक हिंदू राजा। ये मुकुन्दविजयके प्रणेता श्रेष्ठ पण्डित परमके प्रतिपालक थे। इनके पिताका नाम रुद्रसेन और प्रपितामहका चन्द्रसेन था।

मुकुन्दु (सं० पु०) मोचयति विषयान्तरानुरागमिति अन्तर्भूतण्यर्थ मुच् का, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्, तं. उन्द्त्यार्द्रीकरोतीति उन्द उन्, पृषोदरादित्वात् साधुः। कुन्दुरु, कुंदरू। २ श्वेत करवी, सफेद कनेर। ३ गंभारी नामक वृक्ष। ४ पोईका साग।

मुकुम् (सं० अव्य०) १ निर्वाण, मोक्ष। २ भक्तिरस। ३ प्रेम। मुकुन्द देखो।

मुकुर (सं० पु०) मक-(मकुरदर्दुरौ। उण् १।४१) इत्यत्र बाहुलकादकारस्थाने उकार इत्युज्ज्वलदत्तोक्तेः उरच्। १ दर्पण, आईना। २ वकुलवृक्ष, मौलसिरी। ३ कुलालदण्ड, कुम्हारका वह डंडा जिससे वह चाक चलाता है। ४ कुलवृक्ष, बेरका पेड। ५ मल्लिकापुष्पवृक्ष, एक प्रकारका बेला। ६ कोरक, कली।

मुकुरित (सं० त्रि०) मुकुरः अस्य सञ्जातः (तदस्य सजातं

तारकादिभ्य इतच् । पा ५।२ ४१) इति इतच् । मुकुलित, खिला हुआ ।

मुकुल (सं० पु० क्ली०) मुञ्चति कलिकात्वं, मुच् उलक् । १ ईषद् विकशित-कलिका, कुछ खिली हुई कली । पर्याय—कुम्मल, मकुल, पौटकोरक । २ शरीर । ३ आत्मा । ४ प्राचीन कालका एक प्रकारका कर्मचारी । ५ एक प्रकारका छन्द । ६ जमालगोटा । ७ भूमि, पृथ्वी । ८ गुग्गुल देखो।

मुकुल (मोकलदेव)—मेवाड़के एक राणा । राणा लाक्षाके औरससे मारवाड राजकन्याके गर्भसे उनका जन्म हुआ था । लाक्षाके ज्येष्ठ पुत्र चण्डने अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार राजसिंहासन पानेकी इच्छा छोड़ दी थी । चण्डकी प्रार्थनासे राणाके गयातीर्थ उद्धारके लिये यात्रा करनेसे पहले मुकुलजीको टीका दे कर चित्तौरके राजसिंहासन पर बिठाया गया । उस समय मुकुलजीकी अवस्था केवल पांच वर्षकी थी । पिताकी अनुपस्थितिमें चण्ड अपने कनिष्ठके उपकारार्थ विशेष सुदक्षताके साथ राज्यकार्य्यको देख-भाल करने लगे । मुकुलकी विधवा माता अपने प्रभुत्वको नष्ट होते देख बहुत दुःखित हुई । ईर्ष्याके वशीभूत हो वह चण्डके कार्यों में दोषारोपण करने लगी । विमाताके व्यवहार पर चण्डको बहुत घृणा हुई और चित्तौरको छोड़ कर माण्डूराज्य चल दिये ।

इस तरह चण्डके चित्तोर छोड़ने पर मारवाडसे मुकुलकी माताके आत्मीय कुटुम्बोंने मेवाड़में आ कर अपना प्रभुत्व फैलाया । राणा रणमल्ल राजकुमारको ले कर सिंहासन पर बैठे । मेवाड़राजवंशका प्रभुत्व बिलकुल घट गया । शिशोदिया तथा राठोरवंशकी प्रचण्ड वीरता तथा प्रतियोगिता प्रारम्भ हुई ।

राणा मुकुलके तीन पुत्र और एक कन्या थी । माद्रियाकी पहाडी प्रजाओंके विद्रोहको शांत करते समय वे अपने दो चाचासे अकारण मारे गये । चित्तौर नगरके पश्चिम पर्वत श्रेणीके मध्यभागमें जो चतुर्भुजा देवीका मन्दिर है वह उन्होंके यत्नसे बनाया गया था ।

मुकुलक (सं० पु०) दन्तीवृक्ष ।

मुकुलभट्ट—अभिधावृत्तिमातृकाके प्रणेता, कल्लटके पुत्र । रत्नकण्ठने इनका नामोल्लेख किया है ।

मुकुलाग्र (सं० क्ली०) प्राचीनकालका एक प्रकारका अस्त्र । इसका आकार कलीकी आकृति-सा होता था ।

मुकुलित (सं० त्रि०) मुकुलतारकादित्वात् इतच् । १ जिसमें कलियां आई हों । २ कुछ खिली हुई । ३ कुछ कुछ खुला । ४ झपकता हुआ ।

मुकुली (सं० पु०) मुकुल-अस्त्यर्थे इनि । मुकुलयुक्त, वह जिसमें कलियां आई हों ।

मुकुलीभाव (सं० पु०) अमुकुलो मुकुलो भवति भू-घञ् । अविकाशका विकाश भाव, पहले जो मुकुल या खिला हुआ नहीं था, पीछे उसका होना या खिलना ।

मुकुष्ठ (सं० पु०) वनमुद्ग, मोठ ।

मुकुष्ठक (सं० पु०) मुकुं स्तकति प्रतिहन्ति स्तक-अच्, पृषोदरादित्वात् साधुः । वनमुद्ग मोठ । पर्याय—मयष्ठक, मयष्ठ, मपष्ठक, मुद्गष्ठक, मकुष्ठक, मयुष्ठक । गुण—शीतल, ग्राहक, कफ और पित्तज्वरनाशक । इसका जूस रोगियोंको दिया जा सकता है । यह बहुत ताकतवर है ।

"मुद्गान् मसूरांश्चनकाश्च कुलत्थान् समुकुष्ठकान् ।
आहारकाले युषार्थे ज्वरिताय प्रदापयेत् ॥"

(वैद्यकचक्रपाणि०)

मुकेरियन—पञ्जाबके हुसियारपुर जिलान्तर्गत एक नगर । यह अक्षा० ३१° ५६' ५०" उ० तथा देशा० ७७° ३८' ५०" पू०के मध्य अवस्थित है । यह स्थान वाणिज्य-समृद्धिसे पूर्ण है । यहां स्थानीय विभिन्न प्रकारके अनाजों और सूती कपड़ेका जोरों वाणिज्य चलता है । यहांके सरदार बूढ़ासिंह द्वारा प्रतिष्ठित धर्मशाला और दिग्गी उल्लेखनीय है ।

मुक्का (हिं० पु०) बंधी मुट्ठी जो मारनेके लिये उठाई जाय ।

मुक्की (हिं० पु०) १ मुक्का, घूंसा । २ आटा गूंधनेके बाद उसे मुट्ठोंसे बार बार दबाना जिससे आटा नरम हो जाता है । ३ वह लड़ाई जिसमें मुक्कोंकी मार हो । ४ मुट्ठियां बांध कर उससे किसीके शरीर पर धीरे धीरे आघात करना जिससे शरीरकी शिथिलता और पीड़ा दूर होती है ।

मुक्केबाजी (हिं० स्त्री०) मुक्कोंकी लड़ाई, घूंसेबाजी ।

मुक्कैश (अ० पु०) १ चांदी या सोनेका एक विशिष्टरूपमें कटा हुआ तार जिसे बादला कहते हैं । २ सुनहले या रुपहले तारोंका बना हुआ कपड़ा, ताश ।

मुकैशी (अ० वि०) १ बादलेका बना हुआ । २ जरी या ताशका बना हुआ ।

मुकैशी गोखरू (हिं० पु०) एक प्रकारका महीन गोखरू जो तारोंको मोड़ कर बनाया जाता है ।

मुक्खी (हिं० पु०) १ एक प्रकारका कबूतर जो गोले कबूतरसे मिलता जुलता है। यह कबूतर प्रायः उन्हींके साथ मिल कर उड़ता है और अपनी गरदन कसे रहता है। २ वह कबूतर जिसका समूचा शरीर तो काला, हरा या लाल हो, पर जिसके सिर और डैनों पर एक या दो सफेद पर हों।

मुक्त (सं० त्रि०) मुच्-क्त। १ प्राप्तमोक्ष, जिसे मोक्ष प्राप्त हो गया हो। जिन्होंने तीनों प्रकारके दुःखोंसे आत्यन्तिक रूपमें निष्कृति पाई है, जिनका मायिक बंधन पूर्ण रूपसे छिन्न हो गया है वे ही मुक्त हैं। जीव मायाबंधनसे बद्ध रहते हैं, जो इस मायाबंधनको काट कर अलग हो जाते हैं वही मुक्त हैं। मुक्ति देखो।

२ मोचित, जो बंधनसे छूट गया हो। ३ जो पकड़ या दबावसे इस प्रकार अलग हुआ हो कि दूर जा पड़े, फेंका हुआ।

४ नृपविशेष। (राजतर० ७।१६५) ५ ऋषिविशेष। ये सप्तर्षियोंमेंसे एक थे।

"अग्निध्रश्चाग्निबाहुश्च शुचिर्मुक्तोऽथ माधवः।
शुक्रोऽजितश्च सप्त ते तदा सप्तर्षयः स्मृताः॥"

(मार्कण्डेयपु० १००।३१)

मुक्तक (सं० क्ली०) मुच्यते स्मेति मुच-क्त, संज्ञायां कन्। १ क्षेपणीयास्त्रभेद, प्राचीनकालका एक प्रकारका अस्त्र जो फेंक कर मारा जाता था। २ एक ही पद्यमें पूरा होनेवाला एक प्रकारका काव्य, फुटकर कविता।

मुक्तकच्छ (सं० पु०) १ बौद्धभेद। (त्रि०) २ जिसने काछ खोला हो।

मुक्तकञ्चुक (सं० पु०) मुक्तः कञ्चुको येन। वह साप जिसने अभी हालमें केंचुली छोड़ी हो। पर्याय—निर्मुक्त।

मुक्तकण्ठ (सं० त्रि०) मुक्तः कण्ठो येन। १ चिल्ला कर बोलनेवाला, जो जोरसे बोलता हो। २ जो बोलनेमें बेधड़क हो, जिससे कहनेमें आगा-पीछा न हो।

मुक्तकेश (सं० त्रि०) मुक्तः केशो येन। त्यक्तकेश, जिसका जूड़ा खुला हो।

मुक्तकेशी (सं० स्त्री०) काली देवीका एक नाम।

मुक्तचक्षुस् (सं० पु०) मुक्त सचेतः क्षिप्तं चक्षुर्येन। १ सिंह, शेर। (त्रि०) २ मुक्तनेत्र जिसकी आँखें खुली हों।

मुक्तचन्दा (सं० स्त्री०) चिंचा नामक साग, चंचु।

मुक्तचेता (सं० पु०) वह जिसमें मोक्ष प्राप्त करनेकी बुद्धि आ गई हो।

मुक्तता (सं० स्त्री०) मुक्तस्य भावः तल् टाप्। १ मुक्तत्व, मुक्त होनेका भाव। २ छुटकारा।

मुक्तद्वार (सं० त्रि०) मुक्तं द्वारं यत्र जहां दरवाजा खुला हो।

मुक्तनिद्र (सं० त्रि०) जाग्रत्, जगा हुआ।

मुक्तनिर्मोक (सं० पु०) मुक्तो निर्मोको येन। मुक्तकञ्चुक, वह सांप जिसने अभी हालमें केंचुली छोड़ी हो।

मुक्तपलाव्य (सं० पु०) तालीश।

मुक्तपालेवत (सं० पु०) एक प्रकारकी खजूरका पेड़।

मुक्तपुरुष (सं० पु०) मुक्तः पुरुषः कर्मधा०। वह जिसकी आत्मा मुक्त हो, वह जिसका मोक्ष हो गया हो।

मुक्तफुत्कार (सं० त्रि०) शब्दकारी, आवाज करनेवाला।

मुक्तबन्धन (सं० त्रि०) शृङ्खलमुक्त, जो बन्धनसे छूट गया हो।

मुक्तबन्धना (सं० स्त्री०) १ मल्लिकावृक्ष, बेला। २ एक प्रकारका मोतिया।

मुक्तवर्त्म (सं० क्ली०) १ मुक्तिमार्ग। २ सरल और उत्तम पथ।

मुक्तबुद्धि (सं० पु०) वह जिसमें मुक्ति प्राप्त करनेके योग्य बुद्धि आ गई हो।

मुक्तमण्डूककण्ठ (सं० त्रि०) बेंगकी तरह रात दिन चिल्लानेवाला।

मुक्तमातृ (सं० स्त्री०) शुक्ति, सीप।

मुक्तमाता (सं० स्त्री०) मुक्तमातृ देखो।

मुक्तमूर्द्धज (सं० त्रि०) मुक्तो मूर्द्धजो येन। मुक्तकेश।

मुक्तरसा (सं० स्त्री०) मुक्तो रसो यस्याः। १ रास्ना, रासना। (त्रि०) २ त्यक्तरस, जिसका रस बह गया है।

मुक्तरोष (सं० त्रि०) त्यक्त क्रोध, जिसे गुस्सा न हो।

मुक्तलज्ज (सं० त्रि०) लज्जा त्यागकारी, जिसने लज्जाका परित्याग कर दिया हो। २ निर्लज्ज, बेहया।

मुक्तवसन (सं० त्रि०) मुक्तं वसनं येन। १ जिसने वस्त्र पहनना छोड़ दिया हो, नंगा रहनेवाला। २ जिसके शरीर पर कोई वस्त्र न हो। (पु०) ३ जैन-यतियों या संन्यासियोंका एक भेद।

मुक्तवास (सं० पु०) शुक्ति, सीप।

मुक्तवेणी (सं० स्त्री०) १ द्रौपदीका एक नाम। द्रौपदीने कौरवोंकी सभामें लाञ्छित हो कर प्रतिज्ञा की थी, कि जब तक इस अपमानका बदला न लिया जायगा, तब तक वे मुक्तकेशी हो रहेंगी, अर्थात् जूड़ा न बांधेगी। भीमने दुःशासनका रक्तपान और दुर्योधनका ऊरुदेश भङ्ग कर उस मुक्तवेणीको बांधा था। तभीसे द्रौपदी मुक्तवेणी नामसे प्रसिद्ध हैं।

२ प्रयागका त्रिवेणी संगम।

मुक्तव्यापार (सं० त्रि०) १ कार्य परित्यागकारी, जिसने कारबार छोड़ दिया हो। २ संसारमें निर्लिप्त, जिसका संसारके कार्यों या व्यापारोंसे कोई सम्बन्ध न रह गया हो, संसार त्यागी।

मुक्तशङ्ग (सं० पु०) रोहितक मत्स्य, रोहू मछली।

मुक्तसंशय (सं० त्रि०) मुक्तः संशयो येन। त्यक्त संशय, जिसका संदेह दूर हो गया हो।

मुक्तसङ्ग (सं० त्रि०) मुक्तः सङ्गो येन। १ जो विषय वासनासे रहित हो गया हो। (पु०) २ परिव्राजक।

मुक्तसर—१ पञ्जाबके फिरोजपुर जिलान्तर्गत एक तहसील। यह अक्षा० ३०° ६′ से ३०° ५४′ उ० तथा देशा० ७४° ४′ से ७४° ५२′ पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ६३५ वर्गमील और जनसंख्या डेढ़ लाखसे ऊपर है। इसके उत्तर-पश्चिममें सतलज नदी, पूर्वमें फरिदकोट और दक्षिण पूर्वमें पतियाला राज्य है। इसमें इसी नामका एक शहर और ३२० ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० ३०° २८′ उ० तथा देशा० ७४° ३१′ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः ६३८९ है। फिरोजपुर जिलेमें यह शहर सबसे बड़ा और वाणिज्य-व्यापारमें चढ़ा बढ़ा है। पूसके महीनेमें यहां सिखोंका तीन दिन तक मेला लगता है। यहां एक बड़ा तालाब है जिसमें यात्री स्नान करते हैं। उस तालाबका खोदवाना रणजित्ने आरम्भ किया था, पर वे उसे पूरा कर न सके। पीछे पतियाला, झिन्द और फरीदकोटके सरदारोंने उसे पूरा किया। १७०५-०६ ई०में मुगलवाहिनीके साथ सिख-गुरु हरगोविन्दका भीषण युद्ध हुआ था, उसीके स्मरणमें मेला लगता है।

महामेलेमें आये हुए दरिद्र यात्रियोंके रहनेके एक स्वतन्त्र मकान हैं। उन यात्रियोंको सरकारकी ओरसे भोजन भी मिलता है। मुक्तसरसे कोटकपुर तक रेल लाईन दौड़ जानेसे इसकी समृद्धि दिनों दिन बढ़ती जा रही है।

मुक्तसार (सं० पु०) कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

मुक्तस्वामी (सं० पु०) काश्मीरराज द्वारा प्रतिष्ठित मोक्षदातृ-देवमूर्त्तिभेद। (राजतर० ४।१९८)

मुक्तहस्त (सं० त्रि०) मुक्तो हस्तो येन। जो खुले हाथों दान करता हो, बहुत बड़ा दानी।

मुक्ता (सं० स्त्री०) मोच्यते निःसार्य्यते इति वा मुच् क्त, टाप्। १ रास्ना, रासना। २ रत्नविशेष, मोती (Pearl)। पर्याय—मौक्तिक, सौम्या, शौक्तिकेय, तार मौतिक, भौतिक, अन्तःसार, शीतल, नीरज, नक्षत्र, इन्दुरत्न, लक्ष्मी, मुक्ताफल, विन्दुफल, मुक्तिका, शौक्तेयक, शुक्तिमणि, स्वच्छहिम, हिमवल, सुधांशुभ, सुधांशुरत्न, शौक्तिक, शुक्तिबीज, हारी, कुवल। (जटाधर०) इसका गुण—सारक, शीतल, कषाय, स्वादु, लेखन, (वमन करानेवाला और धातुको पतला करनेवाला) नेत्रोंका हितकर। इसको धारण करनेसे पाप और दरिद्रता दूर होती हैं। (राजवल्लभ) इसके अधिष्ठात्री-देवता चन्द्रमा हैं।

भावप्रकाशमें लिखा है—

"मौक्तिकं शौक्तिकं मुक्ता तथा मुक्ताफलञ्च तत्।
शुक्तिः शङ्खो गजक्रोडः फणी मत्स्यश्च दर्दुरः॥
वेणुरेते समाख्यातास्तज्ज्ञैर्मौक्तिकयोनयः।
मौक्तिकं शीतलं वृष्यं चक्षुष्यंबलपुष्टिदम्॥ (भावप्रकाश)

पर्याय—मौक्तिक, शौक्तिक, मुक्ता एवं मुक्ताफल। शुक्ति (सीप), शंख, गजक्रोड़, सर्प, मत्स्य, भेक (मेढ़क) और वेणु ये सब मुक्तायोनि हैं अर्थात् इन सबसे मुक्ताकी उत्पत्ति होती है।

वैद्यकमतसे मुक्ताके गुण ये हैं—शीतवीर्य्य, शुक्रवर्द्धक, नेत्रहितकर, बलकर तथा पुष्टिकारक । भाव प्रकाशके मतसे शुक्ति (सीप) आदि ऊपर लिखे सात पदार्थोंसे मुक्ता उत्पन्न होती है।

"मातङ्गोरगमीनपोत्रिशिरसस्त्वक्सारशङ्खाम्बुभृत् ।
शुक्तीनामुदराच्च मौक्तिकमणिः स्पष्ट भवत्यष्टधा ॥"

(युक्तिकल्पतरु)

हाथी, सांप, मछली, सूअर, बांस, शंख तथा सीप इन सबके पेटसे आठ प्रकारकी मुक्ता उत्पन्न होती है।

वृहत्संहिताके मतसे—

"द्विपभुजगशुक्तिशङ्खाभ्रवेणु तिमिशूकर प्रसूतानि ।
मुक्ताफलानि तेषा बहु साधु च शुक्तिज भवति ॥"

(वृहत्स० ७१।१)

हाथी, सांप, सीप, शंख, अभ्र, वेणु, तिमि मछली तथा शूकर इन्हीं सबसे मुक्ताकी उत्पत्ति होती है। इन सब मुक्ताओंमें सीपसे उत्पन्न मुक्ता ही उत्तम है। शुक्तनीतिके अनुसार मछली, सांप, शूकर, शङ्ख, बांस, मेघ तथा सीप ये सब मुक्ताके आकर है अर्थात् इन्हीं सबसे मुक्ता उत्पन्न होती है। ऊपर लिखी मुक्ताओंमें सीपसे उत्पन्न मुक्ता ही बहुतायतसे मिलती है, दूसरी दूसरी मुक्तायें दुर्लभ हैं।

"मत्स्याहिशङ्खवाराहवेणुजीमूतशुक्तितः ।
जायते मौक्तिक तेषु भूरि शुक्त्युद्भव स्मृतम् ॥"

(शुक्रनीति)

गरुडपुराणके मतसे बड़े बड़े हाथी, मेघ, शूकर, शंख, मछली, सांप, सीप तथा बांस ये सब मुक्ताके उत्पत्ति-स्थान हैं।

"द्विपेन्द्रजीमूतवराहशङ्खमत्स्याहि शुक्त्युद्भववेणुजानि ।
मुक्ताफलानि प्रथितानि लोके तेषान्तु शुक्त्युद्भवमेव भूरि ॥"

(गरुडपुराण ६९ अध्याय)

अग्निपुराणमें लिखा है—सीप, शंख, हाथीदांत, कुंभ, सूअर, मछली, बांस तथा मेघ इन सबसे मुक्ताकी उत्पत्ति होती है।

"सौगन्धिकोत्थाः काचाया मुक्ताफलास्तु शुक्तिजाः ।
विमलास्तेभ्यः उत्कृष्टा ये च शखोद्भवा मुनेः ॥
नागदन्ता भवाश्चाग्र्याः कुम्भशूकरमत्स्यजाः ।
वेणुनागभवा. श्रेष्ठा मौक्तिक मेघज वरम् ॥"

(अग्निपुराण २४६ अ०)

हाथी, सांप, सूअर और मछलीके मस्तकमें मुक्ता होती है। बांस, साप और शखके पेटमें भी मुक्ता उत्पन्न होती है।

"गजाहिकोलमत्स्याना शीर्षे मुक्ताफलोद्भवः ।
त्वक्सारशुक्तिशखाना गर्भे मुक्ताफलोद्भवः ॥"

(युक्तिकल्पतरु)

मुक्ता नौ रत्नोंमें एक प्रधान रत्न है।

"मुक्तामाणिक्यवैदुर्यगोमेदान् वज्रविद्रुमौ ।
पुष्पराग मरकत नीलञ्चेति यथाक्रमात् ॥"

(तन्त्रसार)

मुक्ता बहुमूल्य रत्न है। इसकी छाया, वर्ण और विशेष विशेष गुण परीक्षादिके विषय हैं। इस सम्बन्धमें अग्निपुराण, गरुडपुराण, शुक्रनीति, वृहत्संहिता तथा युक्तिकल्पतरु आदि ग्रन्थोंमें बहुत कुछ कहा गया है। ज्योतिषशास्त्रमे भी इसकी बड़ी प्रशंसा की गई है। इसको पहननेसे विशेष फल होता है। चंद्रमा और वृहस्पति ग्रह जिसके विमुख हैं उसके लिये मुक्ताधारण विशेष शुभप्रदफल है। जो रत्न धारण करनेके योग्य है वही रत्न धारण करना चाहिये, नहीं तो अशुभ फल होता है। ग्रहोंकी प्रसन्नताके लिये मूल, धातु तथा अन्तमें रत्न धारणकी व्यवस्था देखी जाती है।

वृहत्संहितामें लिखा है—सिंहलक, पारलौकिक, सौराष्ट्रक, ताम्रपर्णी, पारसव, कौवेर, पाण्ड्यवाटक तथा हैम आदि देशोंमें हाथी आदिसे मुक्ता निकाली जाती है।

इन सब मुक्ताओंमें जो विविधाकृति, स्निग्ध और हंसकी जैसी आभायुक्त बडी बड़ी मुक्तायें हैं वह लंकामें पाई जाती हैं।

ताम्रपर्णि देशमें उत्पन्न मुक्ता कुछ तामड़ा रंग लिये सफेद होती है। सफेद या पीली कर्कश और विषम मुक्ताको पारलौकिक मुक्ता कहते है।

सौराष्ट्र देशकी मुक्ता न तो बहुत बडी और न उतनी

छोटी ही होती है। इसका रंग घीके जैसा होता है इसलिये इस मुक्ताको सौराष्ट्र कहते हैं। प्रकाशयुक्त, सफेद, भारी और अच्छे गुणोंसे युक्त मुक्ता पारसव कहलाती है। छोटी, मथे हुए दहीके रंगकी, बडी तथा बेडौल मुक्ता हैम नामसे प्रसिद्ध है। काले या सफेद रंगकी, बेडौल, छोटी तथा तेजस्क मुक्ताको कौवेर कहते हैं। पाण्ड्य देशकी मुक्ता नीमके फल, त्रिपुट और धानके चूर्णकी जैसी होती है।

वैष्णव अथवा विष्णुदैवत मुक्ता अतसीफूलकी जैसी श्यामवर्णकी, ऐन्द्र मुक्ता चन्द्रमाकी जैसी, वारुण मुक्ता हरताल-सी चमकीली और यमदैवत मुक्ता काले रंगकी होती है। वायुदैवत मुक्ता अनार, गुञ्जा और तांवेकी जैसी पक्के रंगकी तथा आग्नेयमुक्ता धूमरहित अग्नि और कमलकी जैसी चमकीली होती है।

रविवार और सोमवारको पुष्या और श्रवणा नक्षत्रमें ऐरावत जातिके हाथियोंका जन्म होता है तथा जो सब हाथी उत्तरायणकालमें चन्द्र सूर्यग्रहणके समय जन्म लेते उन हाथियोंके दांतमें तथा कुम्भमें बड़ी-बड़ी मुक्ता होती है। यह मुक्ता अनेक प्रकारके नाना संस्थानसम्पन्न और प्रभायुक्त होती है। इन सब हाथियोंको वेंचना या शिकार करना उचित नहीं। क्योंकि, ये वडे प्रभायुक्त तथा परम पवित्र होते हैं। ऐसे हाथीको पकड़नेसे राजाके पुत्र, विजय तथा स्वास्थ्यलाभ होते हैं।

शूकरके दांतकी जड़में चन्द्रमाकी कान्ति-सी और अनेक गुणोंसे युक्त वाराहमुक्ता होती है। तिमि मछलीसे मछलीकी आंख जैसी चमकीली बहुत गुणोंसे युक्त, पवित्र और बड़ी मुक्ता निकलती हैं, इसको तिमिज मुक्ता कहते हैं। मेघसे भी मुक्ता उत्पन्न होती है। सप्तम-वायुके स्कन्धसे गिरी हुई और दामिनी सदृश प्रभा-वाली ओलोंके समान जो मुक्ता होती है उसे मेघज मुक्ता कहते हैं। इस मुक्ताको देवगण हरण करते हैं; अतएव पृथ्वी पर यह मुक्ता नहीं मिलती।

तक्षक तथा वासुकिवंशमें उत्पन्न जो सब कामगामी सर्प हैं उनके फनके अग्रभाग पर नीलद्युतिसम्पन्न स्निग्ध मुक्ता उत्पन्न होती है। पवित्र स्थानमें चांदीके वरतनमें रख छोड़नेसे जो मुक्ता तौलमें हठात् बढ जाती है उसीको सर्पसे उत्पन्न मुक्ता जानना चाहिये। यदि नागज मुक्ता प्राप्त हो और मूल्य निश्चित किया जाय तो राजाओंके विष और दारिद्र्य दूर होते तथा शत्रुओंका विनाश होता है। इससे यश फैलता और सभी कार्योंमें विजय प्राप्त होती है।

वेणुजात मुक्ता कपूर और स्फटिककी जैसी दीप्तिमान्, चिपटी और विषम होती है। शंखज मुक्ता चन्द्रमाकी जैसी दीप्तिमान् गोल और सुन्दर होती है।

शंख, तिमि, वेणु, हाथी, सूअर, सांप और अवरकसे उत्पन्न मुक्तायें वेधी जा सकती हैं। इन सब मुक्ताओं-में अपरिमित गुण हैं, अतएव इनका कोई निश्चित मूल्य नहीं हो सकता। ये मुक्तायें राजाओंके पुत्र, धन, सौभाग्य और यश देनेवाली, उनके रोग शोकको दूर करनेवाली तथा मनोरथ पूर्ण करनेवाली मानी गई है।

राजे महाराजे मुक्ताकी माला गलेमें पहनते हैं। चार हाथ लम्बी एक हजार आठ मोतियोंकी गुंथी माला इन्द्रच्छन्द कहलाती है। यह देव लोगोंका भूषण है। इसका आधा होनेसे उसे विजयच्छन्द कहते हैं। १०८ या ८१ मुक्ताओंकी मालाको देवच्छन्द, ६४ मुक्ता-वाली मालाको अर्द्धहार, ५४ को रश्मिकलाप, ३२ को हारगुच्छ, २० को अर्द्धगुच्छ, १६ को हारमानवक, १२ को अर्द्धमानवक, ८ को हारमन्दिर, ५ को हार, और २७ मुक्ताओंको गुंथी हुई एक हाथ लम्बी मालाको नक्षत्रमाला कहते हैं। मुक्तामाला अन्तर मणि संयुक्त हो, तो मणिसोपान कहलाती है। सोनेसे दानेदार और चञ्चलमध्यमणि संयुक्त हो तो उसे चाटुकार कहते हैं। यदि हार में यथेष्ट मुक्तायें हों और उसमें मणि न रहे तथा वह एक हाथका हो, तो उसे एकावली और यदि वह मणिसंयुक्त हो, तो उसे यष्टि कहते हैं।

(वृहत्संहिता ८१ अध्याय)

गजमुक्ताके बारेमें चाणक्यने लिखा है, कि 'मौक्तिकं न गजे गजे' अर्थात् सभी हाथीमें मुक्ता नहीं रहती। हाथीके मस्तकमें किस प्रकार मुक्ता उत्पन्न होती है इस विषयमें यों लिखा है—

"मतङ्गजा ये तु विशुद्धवंश्यास्ते मौक्तिकाना प्रभवाः प्रदिष्टाः।
उत्पद्यते मौक्तिकं तेषु वृत्त आपीतवर्णं प्रभया विहीनम्॥
वक्ष्ये गजपरीक्षायां गजजातिश्चतुर्विधा।
मौक्तिकं तेषु जातं हि चतुर्विधमुदीर्य्यते॥
ब्राह्मणं पीतशुक्लन्तु क्षत्रियं पीतरक्तकम्।
पीतश्यामन्तु वैश्यं स्यात् शूद्रं स्यात् पीतनीलकम्॥
काम्बोजकुम्भसम्भूतं धात्रीफलनिभं गुरु।
अतिपिञ्जरसच्छाया मौक्तिकं मन्ददीधितिः॥"

(युक्तिकल्पतरु)

जो हाथी पवित्र वंशमें जन्म लेते हैं उन्हींके मस्तकमें मुक्ता उत्पन्न होती है। इन हाथियोंमेंसे किसी किसीमें सुगोल, कुछ पीली और छायाविहीन मुक्ता होती है। हाथी कई श्रेणीके होते हैं। इनमें उच्च वंशके हाथीके चार भेद हैं, उन चारोंमें मुक्ता पाई जाती है। अतएव इनसे उत्पन्न मुक्ता भी चार प्रकारकी होती है। जैसे—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ब्राह्मण जातिकी मुक्ता पीली और शुक्लवर्णकी, क्षत्रिय जातीय मुक्ता पीली और लाल, वैश्यजातीय मुक्ता पीली और श्याम वर्णकी तथा शूद्रजातीय मुक्ता पोली और नील वर्णकी होती है।

कम्बोजदेशमें हाथीके कुम्भमें जो मुक्ता होती है, उसका आकार ठीक गोल नहीं, वरन् आंवले फलके जैसा होता है। यह तौलमें कुछ भारी, पिञ्जरसकी होती है और इसमें छाया तथा कान्ति बहुत थोडी रहती है। अग्निपुराणके मतसे गजमुक्ता सर्वोत्कृष्ट है।

"नागदन्तभवाश्चाग्र्याः" हाथी दांतसे उत्पन्न मुक्ता ही सर्वश्रेष्ठ मुक्ता है।

फणिमुक्ता—सर्पसे उत्पन्न मुक्ता। जिन सांपोंके मस्तक पर पत्थर रहता है वे अपने विषसे विभोर रहते हैं। जो सांप वासुकि या तक्षकके वंशमें जन्म लेते हैं और अपने इच्छानुसार चल फिर सकते हैं उनके फनके अगले भागमें स्निग्ध और नीलवर्णकी मुक्ता जन्म लेती है। यह देखनेमें अत्यन्त सुन्दर, गोल, नीलवर्णकी और अत्यन्त दीप्तिमान् होती है। बड़े भाग्यसे ऐसी मुक्ता हाथ लगती है।

यह फणिजमुख श्रृगालकौल (उन्नाव) आँवले गुञ्जे या बेरकी जैसी डीलडौलमें होती है। ये चार प्रकारकी मुक्तायें भी ब्राह्मणादि चार वर्णके सांपोंसे उत्पन्न होती है।

मीनज मुक्ता—मछलीविशेषके मुंहमें एक प्रकारका पत्थर होता है उसीको शास्त्रमें मत्स्यमुक्ता कहा गया है। पाठीन नामकी मछलीसे जो मुक्ता निकलती है वह पाठीनकी पीठके रंगकी, गोल और छोटी होती है। जिन मछलियोंसे मीनमुक्ता निकलती है वे समुद्रके बीच रहा करती हैं। भिन्न भिन्न प्रकारकी मछलियोंसे भिन्न भिन्न प्रकारकी मुक्ता निकलती है। वायु, पित्त और कफ इन तीनोंमेंसे दो दो या तीन तीन गुणवाली सभी मछलियां सात प्रकृतिकी होती हैं अतएव मुक्ताके भी सात भेद हुआ करते हैं।

वातप्रधान मछलीसे छोटी और लाल रंगकी, पित्त-प्रधानसे मृदु और कुछ पीले रंगकी और कफप्रधानसे बडी और उजले रंगकी मुक्ता निकलती है। वात और पित्त दोनों प्रबल रहे, तो मुक्ता कोमल और छोटी होती है। वात और कफ दोनोंकी अधिकता हो, तो कुछ बडी तथा पित्त और कफकी अधिकता हो तो मुक्ता अधिक स्वच्छ होती है। एक एक या दो दो प्रकृतिके जो सब लक्षण बतलाये गये हैं वे सबके सब अल्प परिमाणमें जिस मुक्तामें पाये जांय उसे सान्निपातिकज कहते हैं। इन सब मुक्ताओंमें सान्निपातिकज और एकज (एक प्रकृतिकी) मुक्ता प्रशस्त और शुभ-दायक होती है।*

वराहमुक्ता—पहले कहा जा चुका है, कि शूकरसे भी एक प्रकारकी मुक्ता निकलती है। किस जातिके शूकरसे मुक्ता जन्म लेती है, उसके लक्षण क्या हैं, ये सब विषय शास्त्रमें इस प्रकार बतलाये गये हैं। सांपके फन पर, मछलीके मस्तक पर और हाथीके दन्तकोषमें जिस प्रकार मुक्ता

* "वातपित्तकफद्वन्द्वसन्निपातप्रभेदतः।
सप्तप्रकृतयो मीने सप्तधा तेन कीर्त्तितम्॥
लघिष्ठमरुणं वातात् आपीतं मृदु पित्ततः।
शुक्लः गुरुकफोद्रेकात् वातपित्तान्मृदुर्लघुः॥
वा श्लेष्मभवं स्थूलं पित्तश्लेष्मजमच्छकम्।
सर्वलिङ्गप्रयोगेण सान्निपातिकमुच्यते॥" (गरुडपुराण)

उत्पन्न होती है उसी प्रकार शूकरके दन्तकोषमें भी मुक्ता उत्पन्न होती है। ब्राह्मणादि चार वर्णों के जैसे शूकरोंके भी चार वर्ण हैं, अतएव वराहज मुक्तायें भी तदनुसार चार वर्णोंमें विभक्त हुई हैं। शुभ्रवर्ण वराह-मुक्ता ब्राह्मण जातीय और रक्तवर्ण मुक्ता क्षत्रिय जातीय होती है। यह बड़ी खुरखुरी होती है। वैश्य जातीय मुक्ता शुक्ल-पीतवर्णकी और बेर-फूलकी जैसी तथा शूद्र जातीय मुक्ता शुक्ल और कृष्णवर्णकी तथा कर्कश होती है। इसकी बनावट बेर फूलकी जैसी और रंग शूकरके नये दांतके जैसा होता है। वराह-मुक्ता अत्यन्त दुर्लभ और अत्यन्त प्रशस्त होती है।

वेणुज मुक्ता—वांसमें जो मुक्ता होती है उसे वेणुज मुक्ता कहते हैं। वांसमे जिस प्रकार वंशलोचन होता है उसी प्रकार मुक्ता भी उत्पन्न होती है। बांसकी मुक्ता चन्द्रमा या कपूरके समान सफेद, गठनमें कंकोल फलकी जैसी और स्निग्ध होती है। अनेक जन्मोंके पुण्यके विना यह मुक्ता प्राप्त नहीं होती। पञ्चभूत गुणाधिक्यके अनुसार बांस पांच प्रकारका होता है अतएव बांससे उत्पन्न मुक्तायें भी पांच तरहकी होती हैं। पृथिवीकी प्रधानता हो, तो वेणुज मुक्ता वजनमे भारी, अग्निकी प्रधानता हो, तो हलकी, वायुकी प्रधानतामे मृदु और बड़ी, आकाशकी प्रधानतामें कोमल और जलकी प्रधानतामें अत्यन्त उजली और स्निग्ध होती है। इन सब मुक्ताओंको पहननेसे किसी तरहकी व्याधि नहीं होती।

शंखज मुक्ता—शंखसे इसकी उत्पत्ति होती है, इसीसे इसको शंखज मुक्ता कहते हैं। इस मुक्ताका रंग शंखके पेटके जैसा और परिमाणमें यह एक बड़े बेरके समान होती है। पाञ्चजन्य शंखके वंशज शंखोंसे उत्पन्न मुक्ता कबूतरके अंडेके बराबर और ओले या दामिनीकी तरह चमकीली होती है।

अश्विनी आदि २७ नक्षत्रोंमें मुक्ता उत्पन्न करनेवाले शंख जन्म लेते हैं। तदनुसार शंखज मुक्तायें भी २७ प्रकारकी होती है। शुक्ल, अशुक्ल, पीत, रक्त, नील, लोहित, पिञ्जर, कर्बुर और पाटल आदि वर्ण तथा महत्, मध्य, लघु, आदि परिमाण द्वारा इसके २७ भेद किये गये हैं। गुणमें शंखज मुक्ता सबसे निकृष्ट होती है।

जीमूत मुक्ता—जीमूतका अर्थ मेघ है, मेघसे उत्पन्न मुक्ता जीमूत मुक्ता कहलाती है। मेघसे मुक्ता उत्पन्न होती है इस विषयमें रत्नज्ञोंका मतभेद नहीं है। मेघमे जैसे बिजली उत्पन्न होती है वैसे ही मुक्ता भी जन्म लेती है। बिजली जिस प्रकार मेघसे गिरती है उसी प्रकार सप्तम वायुस्कन्धसे दामिनीकी जैसी मुक्ता भी गिरती है। किन्तु यह मुक्ता पृथिवी तक न पहुंचने पाती बीच ही में देवता लोग हरण कर लेते हैं। इसकी प्रभा विद्युत्की जैसी होती है। जलविन्दुओंके परिपाक विशेषसे भी मेघमें मुक्ता उत्पन्न होती है। लेकिन मनुष्य इसे पा नहीं सकते। यह मुक्ता मुर्गीके अण्डेके समान गोल, तौलमें भारी और सूर्य्यकिरणकी जैसी दीप्तियुक्त होती है। मनुष्य इसका भोग नही कर सकते।

मेघजात मुक्ता धरती पर नहीं गिरती। देवता लोग इसे हरण कर लेते हैं। यह मुक्ता तेज और प्रभासे सभी दिशाओंको प्रकाशित करती है तथा सूर्य्यके समान यह दुर्निरीक्ष्य है। यह अग्नि, चन्द्रमा, नक्षत्र, ग्रह और तारागणके भी तेजको मात कर देती है। यह रात दिन एक समान प्रकाशित होती है। इसका मोल नहीं हो सकता।

यदि जन्मजन्मान्तरोंके पुण्यफलसे किसीको यह मुक्ता मिल जाय तो वह शत्रुरहित हो कर सारी पृथिवीका भोग करता है। यह मुक्ता केवल राजाओंके लिये शुभ नही, वरन् जिस स्थानमें यह रहती है उसके चारों ओर सौ योजन स्थानका अशुभ दूर हो जाता है।

मेघ जल, ज्योति और वायुसे उत्पन्न होता है। अतएव इससे उत्पन्न मुक्ता भी तीन प्रकारकी होती है। जलप्रधान मेघसे उत्पन्न मुक्ता अत्यन्त स्वच्छ, कोमल और कान्तियुक्त होती है। ज्योतिःप्रधान मेघसे उत्पन्न मुक्ता सुगोल, सुकान्ति, सूर्यकिरणकी जैसी प्रकाशवाली है। आंखें इसके प्रकाशको नही सह सकतीं। वायुका भाग अधिक हो तो मेघजमुक्ता सुकान्ति, सुकोमल और सुगोल होती है। लेकिन यह सबसे छोटी हुआ करती है।

दर्दुर मुक्ता—दर्दुर=मेढ़क। मेढकके माथेमें भी मुक्ता जन्म लेती है। यह मुक्ता नागमुक्ताके समान आदरणीय और गुणोंमें उसीके समान होती है।

"भेकादिष्वपि जायन्ते मण्यो ये कचित् कचित्।
भोजङ्गममप्येस्तुल्यास्ते विज्ञेया बुधोत्तमैः॥" युक्तिकल्पतरु

शुक्तिमुक्ता—शुक्ति=सीप। सीपमें जो मुक्ता उपजती है उसे शुक्तिज मुक्ता कहते हैं। यही मुक्ता सब स्थानों में पाई जाती है। 'तेषान्तु शुक्युद्भव मेव भूरि' जितने प्रकारकी मुक्तायें हैं उनमें शुक्तिजमुक्ता बहुतायतसे उत्पन्न होती हैं। दूसरी दूसरी मुक्ता दुर्लभ हैं।

कोई कोई कहते हैं, कि समुद्रमें ही शुक्तिज मुक्ता उत्पन्न होती है, अतएव केवल समुद्र ही शुक्तिमुक्ताकी खान है। लेकिन केवल समुद्रमें ही मुक्ता उत्पन्न हो, दूसरी जगह नहीं, ऐसा कोई नियम नहीं। किसी किसी जलाशयमें भी शुक्ति-मुक्ताकी उत्पत्ति देखी जाती है। समुद्रमें यह बहुतायतसे होती हैं, इसीलिये समुद्रको मुक्ताका आकर कहते हैं।

"यस्मिन् प्रदेशेऽम्बुनिधौ पपातत् सुचारुमुक्तामणिरत्नवीजम्।
तस्मिन् पयस्तोयधरावकीर्णा शुक्तौ स्थित मौक्तिकतामवाप॥
स्वात्या स्थिते रवौ मेघैर्ये मुक्ता जलविन्दवः।
शीर्णाः शुक्तिषु जायन्ते ते मुक्ता निर्मलत्विषः॥" (युक्तिकल्पतरु)

शुक्तिज मुक्ताके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है—

"यस्मिन् प्रदेशेऽम्बुनिधौ पपात सुचारुमुक्तामणिरत्नवीजम्।
तस्मिन् पयस्तोयधरावकीर्णा शुक्तौ स्थितं मौक्तिकतामवाप॥
स्वात्या स्थिते रवौ मेघैर्ये मुक्ता जलविन्दवः।
शीर्णाः शुक्तिषु जायन्त ते मुक्ता निर्मलत्विषः॥"

(युक्तिकल्प०)

वर्षा विशेषकी जलधारा ही मुक्तोत्पत्तिका कारण है। मेघसे छूटा हुआ मुक्तावीज स्वरूप जल जिस देशमें या जिस समुद्रमे गिरता है वहांके सीपोंमें वह जल रह कर मुक्ता उत्पन्न करता है। स्वातिनक्षत्रके मेघका जल सीपोंमें पड मुक्ता हो जाता है। इस मुक्ताकी आभा बडी निर्मल होती है।

वृहत्संहितामें सिंहल, पारलौकिक सौराष्ट्र, ताम्रपर्णी, पारसव, कौवेर, पाण्ड्य, वाटधान और हैम इन ८ स्थानोंको मुक्ताका उत्पत्तिस्थल कहा है। इनके लक्षण लिखे जा चुके हैं। ८ स्थानोंमें उत्पन्न होनेके कारण मुक्ता भी ८ प्रकारकी* होती है।

पारलौकिक देशकी (*Paralia*) मुक्ता काले, उजले और पीले रंगकी और खुरखुरी होती है। सिंहलदेशकी मुक्ता बडी, मंझौली, छोटी और विन्दुपरिमाण, सभी प्रकारकी होती है। इन सब मुक्ताओंकी छाया या कान्ति स्निग्ध और मधुर होती है। पारलौकिक देशकी मुक्ता अत्यन्त कठिन और भारी होती हैं। काले, उजले और पीले इन तीनों रंगकी मुक्ता वहां होती है। इन सब मुक्ताओंमें कंकरका दाग रहता है और ये विषम अर्थात् विलकुल गोल नहीं होती।

सौराष्ट्रदेशकी मुक्ता स्थूल, सुगोल, सुन्दर, सुनिर्मल, शुभ्रवर्ण और घनी होती है। ताम्रपर्णी मुक्ता ताम्रवर्णकी और पारसव देशीय मुक्ताकी जैसी होती है। विराट्देशकी मुक्ता उजली और रूखी लावण्यरहित होती है।

रुक्मिणी नामक एक जातिकी शुक्ति होती है उसमे मुक्ता प्रायः नहीं उत्पन्न होती। यदि उत्पन्न हो तो वह सबसे उत्तम समझी जाती है। गरुडपुराणमें लिखा है—

"रुक्मियाख्या तु या शुक्तिस्तत् प्रसूतिः सुदुर्लभा।
तत्र जात सित स्वच्छ जातीफलसम भवेत्॥
छायावद्बहुल रम्य निर्दोष यदि लभ्यते।
अमूल्य तद्विनिर्दिष्ट रत्नलक्षणकोविदैः॥
दुर्लभ नृपयोग्य स्यादल्पभाग्यैर्न लभ्यते॥"

(गरुडपुराण)

रुक्मिणी नामक शुक्तिमें जो मुक्ता जन्म लेती है

---

* "सिंहलक-पारलौकिक-सौराष्ट्रक-ताम्रपर्णि-पारशवाः।
कौवेर पाण्ड्य वाटकहैमा इत्याकारा ह्यष्टौ॥"
(वृ०स० ८१।२)

अन्यान्तरमे—सैंहलिक पारलौकिकसौराष्ट्रिक ताम्रपर्ण पारसवाः।
कौवेर पाण्ड्य विराट्मुक्ता इत्याकाराश्चाष्टौ॥

प्रथम श्लोकमें पाण्ड्यवाटकसे एक देश या पाण्ड्य और वाटधान समझा जाता है लेकिन दूसरे श्लोकसे पाण्ड्य और विराट् दो देशका बोध होता है।

वह बड़ी कठिनाईसे मिलती है। यह मुक्ता चन्द्रमाकी किरणके समान उजली, स्वच्छ और परिमाणमें जायफलके बराबर होती है। इसकी कान्ति अत्यन्त उत्तम और देखनेमें बड़ी सुन्दर होती है। बड़े भाग्यसे ऐसी मुक्ता मिलती है। रत्नज्ञ पण्डितोंने मुक्ताकी तरह शुक्तिको भी ब्राह्मणादि चार श्रेणियोंमें विभक्त किया है,—

"ब्रह्मादिजातिभेदेन शुक्तयोऽपि चतुर्विधाः।
तासु सर्वासु जातं हि मौक्तिकं स्याच्चतुर्विधम्॥
ब्राह्मण्यास्तु सितः स्वच्छो गुरुः शुक्लः प्रभान्वितः।
आरक्तः क्षत्रियः स्थूलस्तथारुणप्रभान्वितः॥
वैश्यस्त्वापीतवर्णोऽपि स्निग्धः श्वेतः प्रभान्वितः।
शूद्रः शुक्लवपुः सूक्ष्मस्तथा स्थूलोऽसितद्युतिः॥"
(गरुडपुराण)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्रभेदसे शुक्ति चार प्रकारकी होती है। अतएव उससे उत्पन्न मुक्ता भी ब्राह्मणादि भेदसे चार प्रकारकी है। जो मुक्ता श्वेत, निर्मल, भारी तथा शुक्ल प्रभायुक्त होती है वह ब्राह्मण-जातीय मुक्ता है। जो कुछ लाल, स्थूल और अरुणप्रभावाली है वह क्षत्रिय जातिकी; कुछ पीली, स्निग्ध और शुभ्रप्रभावाली वैश्य जातिकी तथा जो मुक्ता स्थूल और काली है, वह शूद्र जातिके समझी जाती है।

उक्त सभी मुक्ताओंके एक एक अधिष्ठात्री देवता है, जिसके सम्बन्धमें पहले ही लिखा जा चुका है।

इस प्रकार जाति और देवताका निर्णय कर शास्त्रमें मुक्ताके दोष गुणका विचार किया गया है।

मुक्ताके साधारण दोष और गुण—मत्स्यपुराणमें मुक्ताके ८ गुण तथा ११ दोष दिखाये गये हैं।*

दश दोषोंमें प्रधान ४ और मध्यम ६ दोष हैं। मुक्ताके ८ गुण ये हैं—१ सुतार, २ सुवृत्त, ३ स्वच्छ, ४ निर्मल, ५ घन, ६ स्निग्ध, ७ सच्छाय और ८ अस्फुटित। गगनमें सुशोभित तारोंकी जैसी द्युतिविशिष्ट होनेसे उसे सुतार कहते हैं। सुतार गुणवाली मुक्ता बहुत कम मिलती है। जो मुक्ता चारों ओर एक समान गोल हो उसे सुवृत्त और जो दश दोषोंसे रहित हो उसे स्वच्छ, मलरहितको निर्मल और जो तौलमें भारी हो उसे घन कहते हैं। घन गुणयुक्त मुक्ता सबसे श्रेष्ठ होती है। जो मुक्ता स्नेह अर्थात् घी, तेल आदिकी जैसी दीख पड़ती है उसे स्निग्ध कहते हैं। जिस मुक्तामें किसी न किसी प्रकारकी कान्ति (छाया) रहे उसे सच्छाय कहते हैं। जिस जिस मुक्तामें व्रण अर्थात् छिद्राकार चिह्न या किसी प्रकारकी रेखा न रहे उस चिह्नरहित मुक्ताको अस्फुटित कहते हैं। यह मुक्ता बड़ी मूल्यवान् तथा दुर्लभ होती है।

अग्निपुराणमें रत्नपरीक्षा प्रसंगमें मुक्ताके चार गुण बतलाये गये हैं,—वृत्तत्व, शुक्लता, स्वच्छ और महत्त्व। इन चार गुणोंके आधार पर मुक्ताका मूल्य निर्द्धारित किया जाता है।

इन गुणोंके अतिरिक्त मुक्ताके भी कई महागुण हैं, उन सब गुणोंवाली मुक्ताको महारत्न कहते हैं। वे गुण ये हैं,—भ्राजिष्णु दीप्तिविशिष्ट, कोमल लावण्ययुक्त, कान्ति-कमनीय, इच्छोद्रेकारि-गुणविशिष्ट। कहनेका तात्पर्य यह, कि देखते ही जिसे लेनेकी इच्छा हो जाय, जो देखनेमें सुन्दर हो, और और गुणोंके साथ दीप्तियुक्त हो अर्थात् प्रकाश देती हुई दीख पड़े तो ऐसी मुक्ताको

---

* "सुतारञ्च सुवृत्तञ्च स्वच्छञ्च निर्मलन्तथा।
घन स्निग्धं स्वच्छायं तथा स्फुटितमेव च॥
अष्टौ गुणाः समाख्याता मौक्तिकानामशेषतः॥
तद्यथा—
तारकाद्युतिसङ्काशं सुतारमिति गद्यते।
सर्वतो वर्त्तुलं यच्च सुवृत्तं तन्निगद्यते॥
स्वच्छं दोषविनिर्मुक्तं निर्म्मलं मलवर्जितम्।
गुरुत्वं तुलने यस्य तद्घनं मौक्तिकं वरम्॥
स्नेहेनैव विलिप्तं यत्तत् स्निग्धमिति गद्यते।
छाया समन्वितं यच्च सच्छायं तन्निगद्यते॥
व्रणरेखाविहीनं यत्तत् स्यादस्फुटितं शुभम्।
भ्राजिष्णु कोमलं कान्तं मनोज्ञं स्फुरतीव च॥
स्रवती च सत्त्वानि तन्महारत्नसंज्ञितम्।
श्वेतकाचसमाकारं शुभ्रांशु शतयोजितम्।
शशिराजप्रतिच्छायं मौक्तिकं देवभूषणम्॥"
(मत्स्यपुराण)

महारत्न कहते हैं। जो मुक्ता काँचकी जैसी और चन्द्र-किरणयुक्त हो वह देवभूषण है अर्थात् दुर्लभ है।

शुक्रनीतिमें लिखा है—

"कृष्णं सित पीतवर्णं द्विचतुः सप्तपञ्चकम्।
त्रिपञ्चसप्तावरणमुत्तरोत्तमतमम् ॥
कृष्णं सितं क्रमात् रक्तं पीतं तु जरठं विदुः।
कनिष्ठं मध्यम श्रेष्ठं क्रमात् शुक्त्युद्भवं विदुः ॥"

कृष्णवर्ण, शुभ्रवर्ण, पीतवर्ण तथा २, ४, ७, गुंजा भर और ३, ५, ७ आवरणकी मुक्ताओंमें पिछली मुक्ता उत्तम होती हैं। कृष्णवर्ण शुक्तिकी मुक्ता हीन, श्वेतवर्णकी मध्यम और रक्तवर्ण शुक्तिकी मुक्ता श्रेष्ठ समझी जाती है। पीत मुक्ताको जरठ कहते हैं। जो मुक्ता देखनेमें तारोंकी जैसी अत्यन्त शुद्ध, स्निग्ध, स्थूल, निर्म्मल, व्रण-रहित तथा जो तौलमें भारी हो वह बहुमूल्य होती है।

पहले ही कहा जा चुका है कि, मुक्ताके १० दोष हैं। उनमेंसे ४ महादोष और ६ मध्यम हैं। जैसे—शुक्ति लग्न, मत्स्याक्ष, जठर या जरठ और अतिरिक्त ये चार महादोष हैं। और त्रिवृत्त, चिपीट, त्र्यस्र, कृश, कृशपार्श्व, और अवृत्त ये ६ मध्यम दोष हैं। इन सब दोषोंके लक्षण निम्न लिखित हैं—

"चत्वारः स्युर्महादोषाः षण्मध्याश्च प्रकीर्त्तिताः।
एवं दश समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥
शुक्तिलग्नञ्च मत्स्याक्षं जठरञ्चातिरक्तकम्।
त्रिवृत्तञ्च चिपीटञ्च त्र्यस्रं कृशकमेव च।
कृशपार्श्वमवृत्तञ्च मौक्तिकं दोषवद्भवेत् ॥"

(युक्तिकल्पतरु)

१ शुक्तिलग्नदोष—जिस मुक्ताके किसी भागमें सीपका टुकड़ा लगा हो उसको शुक्तिलग्न कहते हैं। इस मुक्ताको धारण करनेसे कुष्ठ रोग दूर होता है।

२ मत्स्याक्षदोष—किसी किसी मुक्तामें मछलीकी आंखके जैसा एक प्रकारका चिह्न देखा जाता है उसीको मत्स्याक्ष कहते हैं। इस दोषसे दूषित मुक्ताको धारण करनेसे पुत्रनाश होता है।

३ जरठ या जठर दोष—जिस मुक्तामें दीप्ति या छाया नहीं, उसे जरठ मुक्ता कहते हैं।

४ अतिरक्त दोष—जो मुक्ता प्रवालकी जैसी लाल होती है उसको अतिरक्त कहते हैं। इसको पहननेसे दरिद्रता होती है। ये ही चार मुक्ताके प्रधान दोष हैं।

५ त्रिवृत्तदोष—जिस मुक्ताके ऊपर स्तरके सदृश रेखा दीख पड़ती है उसे त्रिवृत्त कहते हैं, इसको पहनने-से सौभाग्यका क्षय होता है।

६ चिपीटदोष—जो मुक्ता गोल न हो, उसको चिपीट अर्थात् चिपटी कहते हैं।

७ त्र्यस्रदोष—लम्बी मुक्ता कृश कहलाती है। यह बुद्धिको नाश करती है।

८ कृशपार्श्व दोष—जिस मुक्ताका एक भाग भग्न या भग्नप्राय हो अथवा टेढ़ा या विषम हो, उसको कृशपार्श्व कहते हैं। यह मुक्ता दूषित समझी जाती है।

१० अवृत्तदोष—पीडकायुक्त मुक्ता अवृत्त कहलाती है। इसको धारण करनेसे सारी सम्पत्ति नष्ट हो जाती है। अन्तके ६ मध्यम दोष हैं। इन्हें छोड़ मुक्ताके छोटे छोटे और भी अनेक दोष हैं। इन दोषोंसे युक्त मुक्ताओंको धारण करना उचित नहीं लेकिन ये औषधिके काममें आ सकती हैं।

वर्ण-स्फुरणको छाया कहते हैं। शास्त्रोंने मुक्ताकी चार छाया बतलाई है—पीत, मधुर, शुभ्र और नील। पीत छायावाली मुक्ता धन देनेवाली, मधुर बुद्धि देने वाली, शुक्ल यश बढ़ानेवाली, और नीली सौभाग्य देने-वाली मानी गई है।

मुक्तावेधप्रणाली—मुक्ता अत्यन्त कठिन होती है अतएव इसको बेधना सुगम नहीं है। पहले कुछ विशेष विधिसे इसको कोमल बनाओ, तब इसमें छेद कर सकते हो। मुक्ताको कोमल बनानेका तरीका यह है,—सीप-के पेटसे मुक्ताओंको निकाल कर खाली सीपोंमें बंद कर दो। फिर 'दार' नामक द्रव्यका बरतन बना कर उसे इसी बरतनमें रक्खो। अब यह बरतन जब फटने पर आ जाय, तब मुक्ता निकाल लो। अनन्तर इन्हें एक महीना धानकी ढेरमें रख छोड़ो। बादमें अन्नके साथ एक दूसरे बरतनमें जंबीरी निबूके रसके साथ पाक करो। इसके बाद मदन वृक्षकी जड़को टुकड़े टुकड़े कर उनसे मुक्ताओं-को घिसते जाओ। ऐसा करनेसे मन मुताबिक इनमें सुराख कर सकते हो।

मुक्ता शोधनविधि—मुक्ता जिस समय सीपके पेटमें रहती है उस समय इसमें उज्ज्वलता या सुकान्ति नहीं रहती। प्रक्रिया-विशेषसे मलिनता दूर होने पर इसकी कान्ति उज्ज्वल हो उठती है। मत्स्यपुटयन्त्रमें मट्टी लगा कर मुक्ताको रख छोड़ो, तब खसकी जड़ और दूधके साथ उसे पाक करो। पश्चात् गरमजल उसमें डालो और किसी चूर्णके साथ पाक करो। इसके बाद केवल जलमें पाक करना होगा। अब इन मुक्ताओंको अब साफ और महीन कपड़ेसे घिसोगे तो वह बिलकुल चमकीली हो जायगी।

मुक्ताकी पहचान—मुक्ता बड़े मोलकी चीज है। इसकी परख रखना आवश्यक है। गरुड पुराणमें इसकी परीक्षा इस प्रकार बतलाई गई है—

यदि किसी मुक्ताके विषयमें सन्देह हो तो जलमें और नमक मिले हुए तेल या घीमें उसे एक रात रख छोड़ो। इस अलावा सूखे कपड़ेमें धानसे उसे मांज डालो। ऐसा करने पर रंगमें यदि फर्क आ जाय तो उस मुक्ताको नकली समझो।

"यस्मिन् कृत्रिमसन्देहः क्वचिद्भवति मौक्तिके।
उष्णो सलवणो स्नेहे निशा तद्वासयेज्जले॥
व्रीहिभिर्म्मर्द्दनीय वा शुष्कवस्त्रोपवेष्टितम्।
यत्तु ना याति वैवर्ण्यं विज्ञेयं तदकृत्रिमम्॥"
(गरुडपुराण)

युक्तिकल्पतरुमें लिखा है, कि यदि सन्देह हो कि अमुक मुक्ता नकली है, तो नमक और क्षारयुक्त गोमूत्रके बरतनमें उसे रख छोड़ो या आगसे तपाओ। पीछे सूखे कपड़ेमें लपेट धानसे रगड़ो। अगर मुक्ता नकली होगी तो टूट जायगी, नहीं तो उसकी कान्ति और भी उज्ज्वल निकलेगी।

शुक्रनीतिमें लिखा है—नमक और छागमूत्र या गोमूत्रसे भरे बरतनमें मुक्ताको रख छोड़ने और पश्चात् धानकी भूसीमें मलने पर उसका रंग न बिगड़े तो उसे असली मुक्ता जानना चाहिये।

लंकाके लोग नकली मुक्ता बनाते हैं, अतएव इसकी अच्छी तरह परीक्षा करनी चाहिये। नमक मिले हुए तेल या घीको गरम कर उसमें रख छोड़ो। पश्चात् उसे जलमें रात भर रहने दो। फिर उसे धानसे मलो, यदि उसका रंग फीका न पड़े तो उसको असली समझो।

"कुर्व्वन्ति कृत्रिम तद्वत् सिंहलद्वीपवासिनः
तत्सन्देहविनाशार्थं मौक्तिकं सुपरीक्षयेत्॥
उष्णो सलवणस्नेहे जले निःशुषित हि तत्।
व्रीहिभिर्म्मर्दित नायात् वै वर्ण्यं तदकृत्रिमम्"॥
(शुक्रनीति)

मुक्ताका मूल्यनिरूपण—बृहत्संहिता, गरुडपुराण, युक्तिकल्पतरु आदिमें इसके मूल्यके विषयमें यों लिखा गया है।

मुक्ताकी तौल, तेज, कान्ति आदि गुणोंके अनुसार उसका मोल होता है। चार माशे अर्थात् २० रत्ती वजनकी मुक्ता यदि सतेज, सुतार, सुवृत्त तथा और और गुणोंसे युक्त हो तो उसका मूल्य ५३ सौ कार्षापण होगा।

प्राचीनकालमें कौडीके बदलेमें मुक्ताकी खरीदबिक्री हुआ करती थी। जिस समय सोने, चांदी और तांबेकी मुद्रा प्रचलित हुई, उस समय भी कौड़ीका विशेष प्रचार था।

बृहत्संहितामें साधारण मुक्ताओंके मूल्यके सम्बन्धमें कुछ निर्णय नहीं है, तौ भी एक माशेसे ले कर शाण परिमाण तक इसका मोल देखा जाता है। २० रत्तीका एक शाण होता है। शाणसे अधिक होने पर हरएक माशेका दूना दाम होना है। ४ कृष्णल अर्थात् ४ गुञ्जा भरका ३५९० काहण और साढे तीन गुञ्जा भरका ७० रूपक दाम होता है। ३ रत्ती भर गुणयुक्त मुक्ताकी कीमत ५० रूपक और २ गुञ्जा भरकी कीमत ३५ रूपक होगी। पलके दशवें भागको धरण कहते हैं और धरणके तेरहवें भाग भर एक सुन्दर मुक्ता दाम ३२५ रूपक होगा। इसी प्रकार वजनके हिसाबसे मुक्ताका मोल दिखलाया गया है। अन्तमें कहा है कि उत्तम गुणयुक्त मुक्ताका दाम वजनके मुताबिक ऊपर लिखे नियमानुसार निश्चित्त करना और कम वजनका हो तो भागों पर दाम बैठा कर काम चलाना चाहिये। गुणकी कमी हो तो दाम भी कम होगा। कृष्ण, श्वेत, पीत, ताम्र और विषम मुक्ताका दाम उत्तम

मुक्ताके दामका एक तिहाई कम होगा। थोड़ा विषम या पीड़कायुक्त हो तो एक छठां भाग दाम कम होता है।

ऊपरके नियम उत्तम मुक्ताके ही मोल पर लागू हैं। जो मुक्ता चन्द्रमाकी किरण जैसी उज्ज्वल हो लेकिन बिलकुल गोल न हो उसका दाम निर्द्धारित मूल्यका सातवां भाग होगा। तात्पर्य यह कि मुक्ता जितनी गोल होगी उतना ही उसका मूल्य अधिक होगा।

गुणयुक्त और अवृत्त मुक्तासे पीतक जातिके मुक्ताका दाम आधा होता है। विषम और ध्वस्त जातीय मुक्ता का दाम साधारण मुक्ताके दामका आधा है। जिस मुक्तामें स्फोट, चुणविन्दु, शुक्तिखण्ड, कासेका रंग, गिरह आदि दोष रहें उसका दाम साधारण मुक्ताके दामका आधा होगा।

गोमेदको छोड़ कर सभी रत्नोंका दाम वजन पर होता है। मुक्ताको छोड़ दूसरे दूसरे रत्नोंके सम्बन्धमें २० क्षुमाकी १ रत्ती होती है। लेकिन मुक्ताके लिये ४ गुञ्जाकी १ रत्ती मानी गई है। २४ रत्तीका १ रत्नटंक और ४ रत्नटंकका १ तोला होता है। ५ गुञ्जाका १ माशा और ४ माशेका १ तोला होता है। शास्त्रमें मुक्ताके तौलकी यही परिभाषा देखी जाती है।

१ शाण तौलकी उत्तम शुक्ति मुक्ताका दाम १३०५ पण और आध माशा होने पर ४०० पण होता हैं। ढ़ाई माशेका १३०० पण, दो माशेका ७०० पण और डेढ़ माशेका ३२५ पण दाम होगा। ६ मासेकी मुक्ताका दाम निर्द्धारित मूल्यसे १२० पण अधिक होगा।

मुक्ता-मूल्यके विषयमें शास्त्रमें सविस्तार वर्णन है, लेकिन आज कल वह नियम जारी नहीं है। इसीलिये पूर्व प्रणालीका आभास मात्र यहां दिया गया है।

वैद्यकमें मुक्तासे औषध बनानेकी विधि है। इसके लिये मुक्ताको शोधना आवश्यक है।

शोधन-प्रणाली—कुलथी और उड़दके काढ़े में भिगो कर तीन धूप दिखलानेसे मुक्ता शुद्ध हो जाती है। इसके अलावा जयन्ती पत्तेके रसमें दोलायन्त्रमें रख स्वेद देनेसे मुक्ता शुद्ध हो जाती है।

भस्मप्रणाली—मुक्ताको चूर कर काञ्जीके साथ पाक करनेसे या मुक्ताको तपा कर घृतकुमारी या क्षुद्र-नटके रसमें छोड़ देनेसे मुक्ताभस्म तैयार होती है।

ज्योतिःशास्त्रमें लिखा है, कि मुक्ता महामूल्य रत्न है इसको धारण करनेसे आधिव्याधि दूर हो जाती है। अतएव, उत्तम दिन देख कर इसको धारण करना चाहिये।

"रेवत्यश्विध निष्ठासु हस्तादिषु च पञ्चसु।
शङ्खविद्रुममुक्ताना परिधान प्रशस्यते॥" (समयप्रदीप)

रेवती, अश्विनी, धनिष्ठा तथा हस्तादि पांच नक्षत्रोंमें उत्तम वार रिक्तादि तिथि छोड़ कर चन्द्र तारादि-विशुद्ध दिनमें मुक्ताधारण करना चाहिये। उत्तम तिथिमें ही मुक्ताधारण मंगलजनक होता है, नहीं तो अशुभ होनेकी सम्भावना रहती है।

मुक्ताकी उत्पत्ति।

ऊपर मुक्ताकी उत्पत्ति की विस्तृत आलोचना हो चुकी है। आजकल शुक्तिमुक्ता ही प्रशस्त समझी जाती है। आकार और वर्णकी विभिन्नताके अनुसार मुक्ताके कई भेद हैं और उन्ही भेदोंके अनुसार मूल्यमें भी अन्तर होता है। साधारण लोगोंकी धारणा है कि मुक्ता केवल सीपसे उत्पन्न होती है, लेकिन सो बात नही है। शम्बूक (घोंघा) आदिमें भी मुक्ताकी उत्पत्ति देखी जाती है।

सीप और शम्बूक खोलदार जलजन्तु हैं। इनका वैज्ञानिक नाम 'आविकुला' (Avicula) या 'मिलग्रिना मार्गारिटिफेरा' (or Melegrina *Margaritifera*) है। सीप, केंकड़े, कछुए आदि जलजन्तुओंके खोलोंका प्रधान उपादान चूना है। क्योंकि इन्हें जलानेसे चूना निकलता है। सीप आदिके भीतरी भागमें एक प्रकारका सफेद चिकना पदार्थ है। यही पदार्थ रूपान्तरित हो कर मुक्तामें परिणत होता है। इस पदार्थको 'नेकर' (Nacre or mother of Pearl) या मुक्ता-माता कहते हैं। सभी सीप, शम्बूक आदिमें न्यूनाधिक यह पदार्थ रहता है। यह श्वेत रस घनीभूत हो बिन्दुके जैसा गोल हो जाता है, पीछे उसीसे मुक्ताकी उत्पत्ति होती है। खूबी तो यह है बिलासी

जिस मुक्ताको उत्तम रत्न समझता है वह सीपका एक प्रकारका रोग है। अनेक कारणोंसे सीपके पेटमें दाह उठता है। सीप पहले उसे जलसे शान्त करना चाहता है। जब उससे काम नहीं चलता तब उस श्वेत रससे दाहस्थानको ठंढ़ा करनेकी चेष्टा करता है। यही रस क्रमशः गाढ़ा हो कर गोलाकार हो जाता है और कुछ समयके बाद मुक्ता बन जाता है। सीपके दाहको उत्पत्तिके सम्बन्धमें अनेक मत हैं। बहुतोंका कहना है, कि सीपके कोमल मांस पर चोट लगनेसे दाह उत्पन्न होता है, और इस बातकी परीक्षा भी कई बार हो चुकी है। मुक्ताव्यवसायी बहुतसे लोग बड़ी होशियारी-से सीपके पेटमें दाह उत्पन्न कर मुक्ता तैयार करते हैं। पहले वे सीपोंको जलसे निकाल किसी बड़े तालावमें छोड़ देते हैं। पश्चात् उन्हें बाहर कर उनके पेटमें बालू भर कर फिर तालावमें छोड देते हैं। इन बालूकणोंके चारों ओर 'नेकार' सञ्चित हो मुक्ता उत्पन्न करता है।

उद्भिद्‌विद्याविशारद लिनियस्‌ने स्वीडेन देशमें यह कार्य्य प्रारम्भ किया था और इसके लिये वहांके गवर्नर जेनरलसे उन्हें ७००० रु० पुरस्कार मिला था। चीनमें बहुतसे लोग तालावमें सीप पाल कर मुक्ता उपजाते हैं। युनिया युह्रविया नामक एक प्रकारके सीपमें मुक्ता होती है। जलसे उन्हें बाहर कर सीसेके छर्रे उनके पेटमें दे दिये जाते है और इन छर्रोंके चारों ओर 'नेकर' लिपट कर मुक्ता हो जाता है। कभी कभी चतुर मनुष्य बुद्धदेवकी छोटी प्रतिमा बना कर सीपके पेटमें डाल देता है। जब मुक्ता-मण्डित वह प्रतिमा बाहर निकलती है तब बुद्धरूपमें भगवान्‌के अवतारकी वह घोषणा करता है। देश विदेशसे यात्री आ उस प्रतिमाकी पूजा करते हैं। इस प्रकार वह व्यक्ति खूब कमा लेता है। पश्चात् वह अधिक दाम पर किसी राजे महाराजेके हाथ बेच डालता है। ये सब मुक्तायें भी असली हैं, केवल इनकी उत्पत्ति प्रणाली कृत्रिम है।

उद्यमशील पाश्चात्य लोग रसायनशास्त्रकी सहायतासे हीरक आदि रत्नोंको तैयार करनेकी चेष्टा करते हैं। सामुद्री अभिकुइलाकी मुक्ता तैयार करनेमें उन्होंने विशेष श्रम किया था। लंकाके जिस स्थानमें मुक्ता निकाली जाती है उसके पास आरियुर नामका एक गांव है। वहां डनस्थान नामक एक साहब तालाब खुदवा कर मुक्ता उपजाता था। उसने तालाबके समुद्रके खारे जलसे भर १२००० बच्चे सीपोंको छोड़ दिया था, किन्तु उनमें बहुतेरे मर गये। इङ्गलैण्ड और फ्रान्सके अनेक स्थानोंमें समुद्रके निकट मुक्ताकी खेती होती है और उससे बहुतोंकी जीविका चलती है।

अतएव अब यह निःसन्देह कहा जा सकता है, कि सीपके पेटमें किसी बाहरी चीजके चले जानेसे जो दाह उत्पन्न होता है उसीसे मुक्ताकी उत्पत्ति होती है। इसके अनेक प्रमाण भी मिले हैं। फारस उपसागरसे एक बार दो सीप निकाले गये थे। उनमेंसे एकके पेटमें एक मछली और दूसरेके पेटमें एक केंकड़ा था। मछली और केंकड़ेके चारों ओर नेकार जम रहा था और मुक्ता बन रही थी। इसी अवस्थामें वे सीप पकड़े गये थे। कुछ लोगोंका कहना है कि स्वभावतः भी सीपके पेटमें दाह उठता है।

मुक्तास्थान।

प्राचीनकालमें भारतवर्ष और फारस उपसागरकी मुक्ता ही संसारमें प्रचलित थी। इंगलैंडके कवि मिल्टन-की भाषामें इसका उत्तम प्रमाण मौजूद है। वर्त्तमान समयमें पृथिवीके दूसरे दूसरे स्थानोंमें भी मुक्ता पाई जाती है। अष्ट्रेलियाके उपकूलमें, सुलुद्वीपवर्त्ती सागरमें, मध्य अमेरिकाके उपकूलमें तथा प्रशान्तमहासागरके दक्षिण भागमें मुक्ता-शुक्ति पकड़ी जाती है। लंकाके दक्षिणमें तुंतकुड़ि बन्दर वर्त्तमान समयमें मुक्ता शुक्तिका प्रधान स्थान है। अमेरिकाके कालिफोर्निया और पनामा उप-सागरमें मुक्ता बहुतायतसे मिलती है। १८८२ ई०में कालिफोर्निया उप-सागरमें ७५ कैरेट अर्थात् १५० रत्ती भरकी एक मुक्ता पाई गई थी। द्वितीय फिलिप ने १५७९ ई०में मार्गरिटा द्वीपसे २५० कैरेट अर्थात् ५०० रत्ती वजनकी एक मुक्ता पाई थी। आज कल अष्ट्रेलियाके उपकूलमें उत्कृष्ट मुक्ता पाई जाती है।

बहुत स्थानोंमें नदीके सीपोंमें भी मुक्ता पाई जाती है। अमेरिकाके युनाइटेड ष्टेट, स्काटलैंड, आयरलैंड, साक्सनी, बहेमिया, बवेरिया, लपलैंड, कनाडा आदि राज्योंकी

नदियोंमें मुक्ता पायी जाती है। चीनके अनेक स्थानों-की नदियोंमें मुक्ता पैदा होती है।

बंगालकी जिन नदियोंमें मुक्ता पायी जाती है उसमें इछामती नदी ही विशेषरूपसे उल्लेखनीय है। अभी सरकारने मुक्ता निकालना बंद कर दिया है। कुंभीरसे भरी इछामती मुक्ताकी खान है, यह किसीको मालूम नही था, केवल मछुआ लोग इस रहस्यको जानते थे।

इसके अतिरिक्त दूसरे दूसरे स्थानोंकी नदियों और तालावोंमें छोटी छोटी मुक्ता पायी जाती है। मुक्ता जलाई जाने पर सीपके चून जैसी चून हो जाती है। इस चूनेको उत्तेजना-शक्ति अत्यन्त वलवती होती है। बंगालके विलासी नवाब लोग मुक्ताभस्मके चूने पानमें खाते थे। पाश्चात्य विलासियोंने कई वार मुक्ता मालाको जला कर उसके चूनेको मदिराके साथ पान किया हैं, इसके अनेक दृष्टान्त पाये गये हैं।

सीपनिकालनेकी विधि

सीप निकालनेके लिये देश देशके व्यापारी लोग अपने अपने अधीन अनेक गोताखोर रखते हैं। पाश्चात्य भाषामें इस व्यापारको *Pearl fishing* कहते हैं। किस प्रकार सीप समुद्रमेंसे वाहर निकाला जाता है तथा किस प्रकार मुक्ता उसके भीतरसे वाहर कर सभ्य तथा शौकीन-समाजमें विलाससामग्री रूपमें क्रय विक्रय होती है, उसका विवरण संक्षेपमें नीचे दिया गया है।

भारतवर्षमें केवल लङ्काद्वीपके निकटस्थ सागरमें मुक्ता सीप पाया जाता है। इसके अलावा एशिया द्वीपके पारस्योपसागर, लालसमुद्र, सुलू तथा पापुआ द्वीपके समीपस्थ समुद्रमें भी सीप पाया जाता है। अमेरिका महाद्वीपके प्रशान्त तथा अटलाण्टिक महासागरमें विशेष कर कैलिफोरनिया न्युजरसी तथा पनामाके उपसागरमें बहुतायतसे सीप पाया जाता है। लगभग तीन लाख मन सीप प्रति वर्ष वाहर निकाला जाता है। इनमें दशांशमें मुक्ता मिलती हैं और शेषमें कुछ भी नही।

लङ्काके निकटस्थ जहां सीप पाया जाता है वहां वर्षमें दश महीने तक कोई नही रहता। वैशाख तथा ज्येष्ठ महीनेमें विदेशी व्यापारी लोग वहां आ कर रहते हैं। मुक्ताका व्यापार सरकारी कर्मचारीकी देख-रेखमें होता है। इस व्यापारमें आशातीत लाभ देख सरकारने बहुतसे कर्मचारी तथा नावोंका इन्तजाम किया है। ये कर्मचारी लोग इसी स्थानमें रहते हैं परन्तु जिनको प्रत्येक वर्ष आना पड़ता है वे लोग वांसका घर बना कर यहीं पर रहते हैं।

सीप निकालनेके एक दिन पूर्व ही नाविक लोग बड़े समारोहके साथ हांगर देवताकी पूजा करते हैं। इस कार्यके निर्विघ्न समाप्त होनेसे उनके आनन्दकी सीमा नही रहती। परन्तु गोताखोरोंके मनमे अनेक प्रकारकी शंका बनी रहती हैं।

दक्षिण भारतमें तुतकुड़ी वन्दर ही सीप निकालनेका मुख्य स्थान है। सीप निकालनेमे डूबनेवालेको अनेक विघ्न वधाओंका सामना करना पड़ाता है। खास कर हांगर तथा जेली नामक मछलीके उपद्रवका अधिक भय रहता है। इसके आलावा अन्यान्य जलचरोंसे भी विपद्की शंका रहती है।

पहले ही कहा आ चुका है कि समुद्र-गर्भस्थ मुक्ता सरकारी सम्पत्ति है। इच्छानुसार लोग सीप नहीं निकाल सकते। वर्षमें केवल दो महीने तक ही इसका व्यापार होता है। कार्य्यारम्भके पहले ही सरकार इसकी घोषणा करती है। इसी समय तूतकुड़ी एक वड़ी नगरी सी हो जाती है। सरकारी कर्मचारीवर्ग, पुलिस, डाक्टर, मल्लाह, मुक्ता ठेकेदार, व्यापारी, मोदी इत्यादिसे स्थान परिपूर्ण हो जाता है। कार्य्यारम्भके एक दिन पहले होसे डूबनेवाले, मल्लाह इत्यादि प्रस्तुत रहते हैं। पहले हांगरदेवको पूजा होती है। हांगरदेवके पुजारी एक ईसाई सज्जन हैं। इनका जीवननिर्वाह हांगरदेवकी पूजामें प्राप्त आयसे ही होता है।

जिस दिन सीप निकालनेका काम आरम्भ होता है उस दिन प्रातःकालमें तोप छोड़ी जाती है। शब्द होते ही वह स्थान कोलाहल-पूर्ण हो जाता है। इसके वाद नाव समुद्रमें डाली जाती है। तीरसे लगभग ६ मील दूरमें सीप निकाला जाता है। जिस स्थान पर गोताखोर डूवते हैं उस स्थानको पहले हीसे किसी वस्तु द्वारा निश्चित कर दिया जाता है। इस सीमाके वाहर कोई नही डूव सकता। कोई इस

आज्ञाको उलङ्घन न करे इसके लिये वहां एक सरकारी जहाज लङ्गर डाले रहता है। सीप निकालनेमें वही नाव काममें लाई जाती है जो तीन चार सौ मन तक भार वहन कर सकता है। एक एक नाव पर १३ मल्लाह और १० डूबनेवाले रहते हैं। पांच पांच डूबनेवाले एक साथ गोता लगाते हैं। कभी कभी दो दो आदमी भी एक साथ काम करते हैं। डूबनेवालोंके लिये एक एक रस्सी वहां मौजूद रहती है। प्रत्येक रस्सीके एक छोरमें १५ या १६ सेर वजनका पत्थर और दूसरे छोरमें थैली या टोकरी बंधी रहती है।

बिलायती डूबनेवालेकी वेश-भूषा स्वतंत्र रहती है। उन लोगोंके सांस लेनेके लिये नल लगा रहता है। देशी डूबनेवाले पत्थरके सहारे जैसी आसानीसे गोता लगा सकते हैं वैसी आसानीसे विलायती डूबनेवाले नहीं लगा सकते। उन लोगोंके लिये Diving bell नामक यन्त्रका आविष्कार हुआ है। देशी डूबनेवालेके लिये ये सब झंझट कुछ नहीं। केवल कौपीन ही उनका अवलम्ब रहता है। डूबनेवाले बायें हाथसे रस्सी पकड़ते हैं और इसके बाद पत्थर पर एक पांव रख लम्बी सांस ले कर दाहिने हाथसे नासिका बन्द कर लेते हैं। किसी किसीके साथ नासिका बन्द करनेके लिये धातुका बना एक यन्त्र रहता है। उस यन्त्रको वे सूतेमें बांध गलेमें लटकाये रहते है। रस्सीका एक छोर पकड़ कर एक आदमी नाव पर बैठा रहता है। डूबनेवालेके संकेतमात्रसे ही वह रस्सीको ढीला करता जाता है। रस्सी पकड़ कर पत्थर पर पांव रख डूबनेवाले समुद्रमे गोता लगाते हैं। यहां पानीकी गहराई अधिक नही रहती। ४०से ले कर ६० हाथ अधिक गहराईमें सीप नहीं पाया जाता है।

रस्सी ढीली होते ही नाव परका आदमी समझ जाता है कि डूबनेवाला नीचे पहुंच गया। नीचे पहुंच कर डूबनेवाले पत्थर छोड़ समुद्र-तल पर खड़े हो जाते हैं। तब नाव परका आदमी रस्सी खींच कर पत्थरको बाहर निकाल लेता है। अब डूबनेवाले हाथ संचालन कर सीप बटोर बटोर कर टोकरी या थैलीमें भरते हैं। वेश-भूषासे सुसज्जित तथा सांस लेनेके लिये नाली रहनेसे विलायती डूबनेवाले अधिक देर तक पानीके भीतर रह सकते हैं। इन सुविधाओंके अभावके कारण ही देशी गोताखोर दो मिनटसे अधिक पानीके अन्दर नहीं रह सकते। जो अधिक सीप निकालता है वह अधिक रुपया पाता है। कभी कभी सीपको ले कर पानी के अन्दर उन लोगोंमें झगड़ा भी हो जाता है जिससे किसी किसीको प्राणत्याग भी करना पड़ता है। सीप एकत्रित कर रस्सी संचालन करने हीसे नाव परका मनुष्य उसको ऊपर खींच लेता है। इसके बाद वह दल विश्राम करता और दूसरा दल प्रविष्ट होता है। इसी प्रकार बारी बारीसे वे भीतर प्रवेश करते हैं। एक आदमी दिनमें आठ बारसे अधिक नीचे नहीं जा सकता। दो पहरके समय काम कुछ समय तक बंद रहता है। फिर ४ बजे डुब्बे जलके नीचे जाते हैं दिन भरमें एक डुब्बा २०००से अधिक सीप नहीं निकाल सकता है। लेकिन विलायती डुब्बा साजबाजके साथ समुद्र तक पहुंच १८००० सीप बाहर कर सकता है। किंतु विलायती डुब्बोंके रखनेमें बहुत खर्च पड़ता है इसलिए देशी डुब्बों हीसे काम लिया जाता है।

तीसरे पहरको काम बन्द होने पर नावें किनारे लौट आती हैं। तब डुब्बे लोग अपने अपने संग्रहीत सीपको 'कोटट्ट' अर्थात् सीप रखनेके सुरक्षित स्थानोंमें ले जाते हैं। कोटट्ट जा कर डुब्बे लोग सीप गिन कर तीन हिस्से लगाते हैं। दो हिस्से सरकार और एक हिस्सा आप लेते हैं। डुब्बे लोग तुरत अपना अपना हिस्सा समुद्र किनारे पर बेच डालते हैं। सरकारके सीपोंकी ढेर लगाई जाती है और संख्याके पहले एक एक हजारकी ढेर नीलाम कर दी जाती है। डुब्बे कभी कभी १) रु०में ४० सीप और कभी कभी ४ आनेमें एक सीप बेंचते हैं।

जो लोग थोड़े सीपोंकी बिक्री करते हैं वे उसी समय सीपोंको फाड़ कर मुक्ता ढूंढ़ लेते हैं। इसके बाद वह सीप फेंक दिया जाता है। जो लोग अधिक परिमाणमें सीपोंकी बिक्री करते हैं वे कच्चे सीपोंको रेलसे दूर देशोंमें भेज देते हैं और कुछ लोग उन्हें धो डालनेके लिये कोट्ट ले जाते हैं। ताजे सीपोंको तुरत फोड़ने पर उसमें छोटो

छोटी मुक्तायें नजर नहीं आतीं। कोट्टूमें महाजन लोग सीपें सड़ने देते हैं। सड जाने पर असंख्य नीली नीली मक्खियां सीपोंका मास खाने लगती हैं। उस समय वड़ी दुर्गंधि निकलती है। इस दुर्गन्धसे कभी कभी हैजा भी फैल जाता है। हैजा फैलने पर मुक्ता निकालना एक दम बंद हो जाता है। हांगरमछलीके उपद्रवसे भी किसी किसी वर्ष मुक्ता निकालनेका काम बंद रहता है। १८९० ई०में हागर देवताकी पूजा अच्छी तरह न होनेके कारण हांगरने वड़ा उपद्रव किया था। पीछे एक बूढ़ी औरतने मन्त्र पढ कर हागरको भगा दिया। अङ्गरेज लोग जलके भीतर डिना-माइटका शब्द कर हांगर भगाते हैं। यह शब्द जलमें तीन कोस तक जाता है। सेतुबन्धके पास एक ओर तुतिकडि और दूसरी ओर सिंहलमें मुक्ता निकाली जाती है। सिंहलमें मुसलमान लोग मुक्ता निकालनेके लिये नियुक्त किये जाते हैं।

अच्छी तरह सडने पर सीपके छिलकेको अलग कर सडे मांसको भली भांति धोते हैं। बादमें उसीके भीतरसे मुक्ता निकलती है। पश्चात् छोटी वड़ी मुक्ताओंको पृथक् पृथक् करनेके लिये एक साथ पीतलके दश प्रकारकी चलनी काममें लाई जाती हैं। चलनियोंका आकार एक-सा रहता है। पहली चलनी में २० छेद होते हैं। इसके द्वारा वडी वडी मुक्तायें अलग कर ली जाती हैं। छोटी मुक्तायें छेद हो कर नीचे गिर पडती हैं। दूसरी चलनीमें ३० छेद रहते हैं। इसी प्रकार ५०से ले कर १००० छेदवाली चलनी काममें लाई जाती है। १००० छेदवाली चलनीके छेद सरसोंके समान होते हैं। २० छेदवाली चलनीमें जो मुक्तायें अटक रहती हैं, वे वहुमूल्य होती हैं और उन्हें 'आनि' कहते हैं। ८०० से ले कर २००० छिद्रयुक्त चलनियोंमें जो मुक्तायें अटकती हैं उनका नाम 'टुल' है। चुनना समाप्त होने पर वडी मुक्ताओंमें छेद किया जाता है। छोटे छोटे सुराखवाले तख्तेके हर एक छिद्रमें एक एक मुक्ता भर दी जाती और तख्ता जलमें डुबा दिया जाता है। जलमें तखता फूल उठता और मोती छिद्रोंमें अच्छी तरह बैठ जाते हैं। तब तुरपुणके सदृश एक यन्त्र-से उनमें छेद कर धागा पिरोया जाता है। सरसोंके समान छोटे छोटे मोती चीनदेश भेजे जाते हैं तथा वे औषधिके काममें आते हैं। करीब करीब दो महीनों-में समुद्र उपकूल एकदम जनशून्य हो जाता है। प्रति वर्ष तीनसे छः लाख रु०की मुक्ता निकाली जाती है।

होप नामक साहबके पास एक बहुत वड़ी मुक्ता है। उसका घेरा ४ इंच और वजन ६०० रत्ती अर्थात् आध पाव होगा। रोममें एक व्यक्तिके पास ८ लाख रुपयेकी एक मुक्ता-माला थी। इसके अलावा मिथ्रोडिटिसकी प्रतिमूर्त्ति और दिल्लीकी मोती मसजिद उल्लेखनीय है।

मिश्रदेशकी-साम्राज्ञी सुन्दरीश्रेष्ठ क्लिओपेट्राने डेढ़ लाख रु०की एक मुक्ताको चूर कर सेवन किया था। एलिजा-वेथके समयमें सर टामस् ग्रोस साहब अपनी माताकी ढ़ाई लाख रु०की एक मुक्तामालाको स्पेनके राजदूतके सामने मदिरामें मिला कर पी गया था। ग्रोस्म साहब स्पेनकी रानीके प्रेममें वावला हो गया था।

मुक्ताकण (सं० पु०) राजा अवन्तिवर्माके प्रतिपालित एक कवि। (राजतर० ५।३४)

मुक्ताकलाप (सं० पु०) मुक्तानां कलापः समूहोऽत्र। मुक्ताहार, मुक्ताकी माला।

मुक्ताकार (सं० त्रि०) मुक्ताकी तरह आकारविशिष्ट।

मुक्ताकेशी (सं० पु०) एक प्रकारका वहुत उमदा बैंगन।

मुक्तागाछा—मैमनसिंह जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन भूसम्पत्ति। राजा कृष्णाचार्य इस राजवंशके आदि-पुरुष हैं।

मुक्तागार (सं० क्ली०) मुक्ताया आगारमिव, मुक्तोत्पा-दनाधारत्वादस्य तथात्वं। शुक्ति, सीप।

मुक्तागिरि—गाविलगढ़के निकटस्थ एक गण्डशैल। इसकी गिनती एक हिंदू-तीर्थमें की गई है।

मुक्तागुण (सं० पु०) मुक्ताहार, मुक्ताकी माला।

मुक्तागृह (सं० पु०) शुक्ति, सीप।

मुक्ताजाल (सं० क्ली०) मुक्ताका अलङ्कारविशेष।

मुक्तात्मन् (सं० त्रि०, मुक्तः आत्मा यस्य। मुक्तपुरुष जो मायिक वन्धनको काट कर मुक्त हुए हों। जो सांसारिक वा जागतिक सुख दुःखमें विमोहित नहीं होते, वे ही मुक्तात्मा हैं। मुक्ति देखो।

मुक्तादामन् (सं० पु०) मुक्ताकी माला।
(भागवत १।१०।१७)

मुक्तापात (हिं० पु०) एक प्रकारकी झाड़ी। इसके डंठलोंसे सीतलपाटी नामक चटाई बनाई जाती है। बङ्गाल, आसाम और बरमाकी नीची तर भूमिमें यह झाड़ी अधिकतासे उगती है।

मुक्तापीड़ (सं० पु०) १ काश्मीरके एक राजाका नाम। (राजत० ४ ४२) २ एक प्राचीन कविका नाम।
काश्मीर देखो।

मुक्तापुर (सं० पु०) हिमालय पर्वतका स्थानभेद।

मुक्तापुष्प (सं० पु०) मुक्ता इव पुरुपाण्यस्थ। कुन्द-वृक्ष, कुंदका पौधा या फूल।

मुक्ताप्रसू (सं० स्त्री०) मुक्तां प्रकर्षेण सूते जनयतीति प्र-सू-क्विप्। शुक्ति. सीप।

मुक्ताप्रालम्ब (सं० पु०) मुक्तानां प्रालम्बः हारभेदः। मुक्ताहारभेद।

मुक्ताफल (सं० क्ली०) मुक्ता-फलमिव। १ कपूर, कपूर। मुक्तैवफलमिव। २ मौक्तिक, मोती। मुक्ता देखो। ३ लवली फल, हरफा रेवरी। ४ एक प्रकारका छोटा लिसोड़ा। ५ वोपदेवकृत भक्तिप्रधान ग्रंथभेद।

"मुक्ताफलेन ग्रन्थेन सद्भागवत शुक्तिना।
भक्तिस्वात्यम्बुना मुग्ध मार्कण्डेय शिशुश्रिया॥
विद्वद्धनेशशिष्येण भिषक् केशवसूनुना।
हेमाद्रिर्वोपदेवेन मुक्ताफलमचीकरत्॥" (मुक्ताफलग्रन्थ)

६ शबरराजभेद (कथासरित्सा० ५५।२३०)

मुक्ताफलकेतु (सं० पु०) विद्याधरराजभेद।

मुक्ताफलजाल (सं० क्ली०) मुक्ताका बना हुआ जलके रंगका एक प्रकारका अलङ्कार।

मुक्ताफलध्वज—प्राचीन राजभेद।

मुक्ताफललता (सं० स्त्री०) मुक्ताफलेन लतेव। मुक्ता हार, मुक्ताकी माला। (मार्कण्डेयपु० २३।१०२)

मुक्ताभा (सं० पु०) त्रिपुर मल्लिमा, त्रिपुरमाली।

मुक्तामय (सं० त्रि०)१ मुक्ताविनिर्मित, मुक्ताका बना हुआ। २ मुक्तायुक्त, जिसमे मुक्ता हो।

मुक्तामातृ (सं० स्त्री०) मुक्तानां माता, आकरत्वात्। शुक्ति, सीप।

मुक्तामाता (सं० पु०) मुक्तामातृ देखो।

मुक्तामान—बारकामध्वजी राठोरवंशके प्रतिष्ठाता एक राजा। इन्होंने भानु तुअरको परास्त कर उसका राज्य दखल किया था।

मुक्तामुक्त (सं० त्रि०) मुक्तश्च अमुक्तश्चेति विशेषणयोर्द्वन्द्वं। क्षिप्ताक्षिप्त।

मुक्तामोदक (सं० पु०) मोतीचूरका लड्डू।

मुक्ताम्बर (सं० त्रि०) मुक्तं अम्बरं येन। १ मुक्तवसन, नंगा। (पु०) २ जैनसंन्यासिभेद, दिगम्बर।

मुक्तारत्न (सं० क्ली०) मुक्ता एव रत्नं। मुक्तामणि, मुक्ता।

मुक्ताराम मुखोपाध्याय—राजा कृष्णचन्द्रकी सभाके विदूषक। वीरनगरमें इनका घर था। राजा इन्हें वैवाहिक नामसे पुकारते थे।

मुक्तालता (सं० क्ली०) मुक्ताभिर्लतेव। मुक्ताहार, मोतियोंका कंठा।

मुक्तावली (सं० स्त्री०) मुक्तानां आवल्यत्र। १ मुक्ताहार, मोतियोंका कंठा। २ मौक्तिक श्रेणी, मोतियोंकी श्रेणी। ३ तालविशेष।

मुक्तावास (सं० पु०) शुक्ति, सीप।

मुक्ताशुक्ति (सं० स्त्री०) मुक्ता-जनयित्री शुक्ति। वह जिसमें मुक्ता पाई जाती है।

मुक्तासन (सं० क्ली०) १ परित्यक्तासन, वह जगह जो छोड़ दी गई हो। २ योग प्रक्रियाका आसनभेद, सिद्धासन।

मुक्तासेन (सं० पु०) विद्याधर राजभेद।

मुक्तास्फोट (सं० पु०) मुक्तानां स्फोटः विकाशोऽत्र। शुक्ति, सीप।

मुक्तास्फोटा (सं० स्त्री०) मुक्तास्फोट-टाप्। शुक्ति, सीप।

मुक्तास्रज (सं० स्त्री०) मुक्तायाः स्रक्। मुक्ताकी माला।

मुक्ताहार (सं० पु०) मुक्तः आहारो येन। १ त्यक्ताहार, जिसने खाना पीना छोड़ दिया हो। २ मोतियोंका कंठा।

मुक्ति (सं० स्त्री०) मुच् भावे क्तिन्। आत्यन्तिक दुःख-निवृत्ति। पर्याय—मोक्ष, कैवल्य, निर्व्वाण, श्रेयस्, श्रेयस, अमृत, अपवर्ग, अपुनर्भव, स्थिर, अक्षर। (अमर)

शरीर और इन्द्रियोंसे आत्माके छुटकारा पानेको मुक्ति कहते हैं। सांख्य और नैयायिकोंके मतसे आत्यन्तिक दुःखनिवृत्ति ही मुक्ति है। वेदान्तिकोंके मतानुसार 'नित्यसुखावाप्ति' नित्य सुख प्राप्तिका नाम मुक्ति है। जिस सुखका कभी नाश नही होता उसको नित्य-सुख कहते हैं।

"मुक्ति मिच्छसि चेत्तात। विषयान् विषवत् त्यज।
क्षमार्जवदयातोष सत्य पीयूषवद्भज॥"

(अष्टावक्रस० १।२)

मुक्ति चाहनेवाले व्यक्तिको चाहिये, कि वे विषय अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंधको विषके समान छोड़ कर क्षमा, सरलता, दया, सन्तोष और सत्यको अमृतके समान भजे।

मुक्तिके पाच भाग हैं। जैसे—सार्ष्टि, सालोक्य, सारूप्य, सायुज्य और निर्वाण।

"सार्ष्टि सारूप्यसालोक्य सामीप्यैकत्वमप्युत।
दीयमान न गृह्णन्ति विना मत्सेवन जनाः॥"

(भागवत)

दर्शनशास्त्रमे मुक्तिको विशेष पर्यालोचना को गई है। अत्यन्त संक्षेपमें उस विषयको यहां आलोचना की जाती है। "अथ त्रिविध दुःखात्यन्त निवृत्ति रत्यन्तपुरुषार्थः।

(साख्यसू० १।१)

दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हेतौ।
दृष्टे सापार्थाचेन्नैकान्तात्यन्ततोऽभावात्॥
दृष्टवदानुश्रविकः स ह्यविशुद्धि क्षयातिशययुक्तः।
तद्विपरीतः श्रेयान् व्यक्ताव्यक्त विज्ञानात्॥"

(साख्यकारिका १।२)

त्रिविध दुःखकी अत्यन्तनिवृत्तिका नाम मुक्ति है। महात्मा कपिलने मनुष्योंको त्रितापसे पीडित देख कर उसके निवारणके लिये सांख्यदर्शनको रचा। पहले उन्होंने दुःख, दुःखनिवृत्ति, दुःखोत्पत्तिके कारण तथा दुःखनिवृत्तिके उपायका निर्द्धारण किया।

पहले विचार कर यह देखना चाहिये, कि दुःख क्या है? दुःख है कि नही? उसकी निवृत्ति होती है वा नहीं? इस प्रश्नके उत्तरमें सभी मुक्तकंठसे स्वीकार करेंगे कि दुःख सर्वदा सभी मनुष्यके अन्तःकरणमें चेतनाशक्तिके प्रतिकूल अनुभवसे उत्पन्न होता है। दुःख है, इसमें किसीका मतभेद नही। दुःखको निवृत्ति होती है, कि नहीं, इस विषयमें भी किसीका मतान्तर नहीं दीख पडता। शास्त्रका अभिप्राय यह है, कि मनुष्य जानता है दुःख क्या है और वह यह भी जानता है कि दुःखकी निवृत्ति होती हैं, लेकिन उसकी आत्यन्तिक-निवृत्ति कैसे होती है सो वह नही जानता। वह उपाय लौकिक ज्ञानके अलभ्य है अर्थात् साधारण ज्ञानसे मालूम नही हो सकता।

धातुओंकी विषमताके कारण शारीरिक दुःख हुआ करता है, परन्तु इस शारीर दुःखनिवृत्तिका उपाय सैकडों वैद्यक ग्रन्थोंमें बतलाया गया है। विषय-विशेषके न पानेसे मानसिक दुःख होता है। उसके निवारणके उपाय भी बहुतसे लौकिक पदार्थ हैं, जैसे—मनोनुकूल स्त्री, भोजन, पान, वस्त्र, आभूषण आदि। नीतिशास्त्र में कुशलता और निरुपद्रव स्थानमें वास करनेसे आधिदैविकादि दुःख आक्रमण नही कर सकता। ये सब बातें सत्य हैं परन्तु ये सब उपाय ऐकान्तिक और आत्यन्तिक दुःखनिवृत्तिके उपाय नही। ऐकान्तिक और आत्यन्तिक दुःखनिवृत्तिका उपाय साधारण ज्ञानसे परे हैं।

दुःख क्या है, किसका दुख है, दुःख होता है क्यों, उसकी आत्यन्तिकनिवृत्ति होती है कि नही? अर्थात् वह फिर कभी नहीं होगा, ऐसा होता है कि नही? यदि होता है, तो किस उपायसे? ये सब जन साधारण नही जान सकते। दुःखनिवृत्तिके जो जो उपाय साधारण लोगोको मालूम हैं उन सबसे दुःख निवृत्ति निश्चय होगी, ऐसा भी नहीं कह सकते। उनसे दुःखकी निवृत्ति कभी होती है, कभी नहीं भी होती, होने पर भी फिर आ जाता है। इसलिये कहा गया है कि लौकिक उपायसे दुःखकी आत्यन्तिकनिवृत्ति नहीं होती। शास्त्रीय उपायसे दुःखकी निवृत्ति अवश्य हो सकती है और वही आत्यन्तिक निवृत्ति है।

सांख्यदर्शनके मतसे आत्यन्तिक दुःख निवृत्तिका नाम मुक्ति, मोक्ष या स्वरूप प्रतिष्ठा है। यही परम-पुरुषार्थ-शब्दका अभिधेय या वाच्य है। मनुष्य जो कुछ प्रार्थना करता है सभी दुःख-निवारणके लिये; इसलिये दुःख-निवृत्ति और उसके उपाय दोनोंके लिये प्रार्थना करनी चाहिये। लेकिन लौकिक उपायसे आत्यान्तिक दुःख-निवृत्ति नहीं होती, जो होती है वह क्षणिक है। इसीसे वह पुरुषार्थ होने पर भी परमपुरुषार्थ नहीं है।

महर्षि कपिलका मन्तव्य है कि मनुष्य सर्वदा दुःख पाता है फिर भी वह उसका स्वरूप और रहनेका स्थान नहीं जानता।

जैमिनि आदि मीमांसकोंका मत है, कि मनुष्यमात्र-की यही इच्छा रहती है कि "सुख हो--दुःख अणुमात्र भी न हो।" इसी इच्छाके वशवर्त्ती हो वह कार्य्यमें प्रवृत्त होता है। निरवछिन्न सुखभोग किसी समय पानेकी सम्भावना है कि नहीं यह विचार कर देखनेसे 'नहीं' उत्तर नहीं आता। जैमिनि लिखते हैं—

यन्न दुःखेन सम्भिन्नं न च प्रस्तमनन्तरम्।
अभिलाषोपनीतञ्च तत्सुखं स्वःपदास्पद॥"

(सांख्यतत्त्वकौ०)

निरवछिन्न सुखसंभोग ही स्वर्ग है तथा यही मनुष्यकी सुखतृष्णाकी विश्रामभूमि है। वही परमपुरुषार्थ है और वही मुक्ति या अमृत है। उसको छोड़ और कोई अमरत्व या मोक्ष नहीं है। वह अमरत्व या मोक्ष यज्ञ-विद्यासे प्राप्त होता है। वेदोक्त याग-यज्ञादि द्वारा यह अलौकिक सुख प्राप्त हो सकता है। शे

मीमांसकोंका यह मत कापिलको स्वीकार नहीं। वे वेद मानते हैं और वेदोक्त यागादि द्वारा स्वर्ग मिलता है यह भी स्वीकार करते है, लेकिन कहे गये अनुरूप फल-को वे स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है कि कर्म-साध्य सुख भी ऐहिक सुखके समान दुःखमिश्रित और नश्वर है। क्योंकि, यागमात्र हिंसासाध्य है, पशुघात और वीजविनाशके विना कोई भी याग नहीं किया जा सकता। अतएव हिंसाघटित कार्य्यकलाप-से निरवच्छिन्न सुखका उत्पादन कैसे हो सकता है? क्रियाकाण्ड कभी भी उस तरहका सुख नहीं दे सकता। केवल हिंसादि दोषरहित विशुद्ध तत्त्वज्ञान ही उस प्रकारके सुखका—सर्वसुखविध्वंस या मुक्तिका उपाय है।

लौकिक उपाय विशेषसे सुखविशेषकी स्थिति कुछ काल तक देखी जाती है लेकिन वह क्षणिक है उसके वाद ही दुःखोत्पत्तिकी पूरी सम्भावना रहती है। जिस उपायसे दुःखमूलकी शान्ति होती है वह शान्ति अनन्त-कालके लिये व्यवस्थित है। दुःखका मूल कारण यदि न रहने दिया जाय अर्थात् काट दिया जाय, तो दुःख होगा क्यों? जिस उपायसे दुःखके मूलका विनाश होता है वह उपाय लोगोंको ज्ञात नहीं और वह यज्ञ-विद्यामें भी नहीं है। कारण, वह उपाय है तत्त्वज्ञान। कर्म-शास्त्रमें तत्त्वज्ञानका उपदेश नहीं है और वह तत्त्वज्ञान आपे आप भी नहीं होता।

तत्त्वज्ञानका आकार,--मैं-महत् अहङ्कार और इन्द्रिय आदि नहीं, इनमेंसे कुछ भी मैं नहीं, ये सब मेरे नहीं हैं। मैं इन सवोंसे भिन्न चित्स्वरूप हूं। केवल और एक रस इत्याकार ज्ञानका नाम तत्त्वज्ञान है। सांख्य शास्त्रमे यह तत्त्वज्ञान, सत्त्वपुरुषान्यताप्रत्यय और विवेकख्यातिके नामसे प्रसिद्ध है। इस प्रत्ययके उत्पादनके लिये आत्मा और जगत् इन दो पदार्थोंका यथास्वरूप अन्वेषण करना होता है। आत्मा और प्रकृति जगद्व्यापन्ना हैं, इन दोनोंके वास्तविक रूपको अनुसन्धानके साथ वारम्वार बुद्धिको आगे बढ़ानेका नाम तत्त्वाभ्यास है। श्रद्धा और भक्तिपूर्वक दीर्घकाल तक तत्त्वका अभ्यास कर सकनेसे उस प्रत्ययका आविर्भाव होता है और तव मुक्ति होती है।

मुक्तिके सम्बन्धमें सांख्यशास्त्रका अभिप्राय यह है, कि आत्मामें जो सुख दुःख और मोहादि प्राकृतिक धर्म्म प्रतिविम्वित होता है उसका लोप होने हीसे आत्माकी मुक्ति होती है। महर्षि कपिलने वार वार कहा है,— "तदुच्छित्तिःपुरुषार्थः तदुच्छित्तिः पुरुषार्थः।" जिस किसी प्रकारसे हो, प्राकृतिक सम्बन्धका उच्छेद होना ही परम पुरुषार्थ है। सार यह है, कि जड़संबंधरहित अर्थात् केवल होना ही मुक्ति है।

मुक्ति होने पर आत्मा किस अवस्थामें रहती है वह

अनिर्वचनीय है। बन्धनमें पड़ा जीव उसे सहजमें नहीं समझ सकता। इस संसारमें उसका कोई स्पष्ट दृष्टान्त नहीं है। एक साधारण दृष्टान्त है उसके द्वारा मुक्त अवस्था साधारणरूपसे अनुभूत हो सकती है।

वह दृष्टान्त है सुषुप्ति अर्थात् निःस्वप्ननिद्रा। जीव जिस प्रकार सुषुप्तिके समय प्राकृतिक सुख-दुःखसे मुक्त हो जाता है—केवल-भाव प्राप्त होता है उसी प्रकार मुक्तिकालमें भी होता है। प्रभेद इतना ही है कि सुषुप्ति कालमें तमसाच्छन्न रहना पड़ता है और मुक्ति होने पर वह आवरण नहीं रहता। सुषुप्तिके विराम है, भंग है। मुक्तिके विराम, भंग कुछ नहीं। सुषुप्तिके बाद जागरण होता है। लेकिन मुक्ति होने पर फिर सुख दुःख नहीं होता अर्थात् फिर पूर्वावस्था नहीं आती। मुक्ति और सुषुप्तिमें यही अन्तर है। यदि यह अन्तर न रहता तो सुषुप्ति मुक्तिका सम्यक् दृष्टान्त हो सकती थी। कपिलने कहा है "सुप्ति समाध्योर्ब्रह्मरूपता" जीव नींद और समाधि-के समय ब्रह्मरूपमें रहता है। अतएव समझना होगा कि सुख-दुःखसे छुटकारा पाना ही सांख्यमतसे मुक्ति है। शरीर रहते वह नहीं हो सकती, शरीरनाशके बाद प्राप्त होती है। शरीर रहते बन्धनका मूलोच्छेद तो होता है लेकिन उसका आभास या सूक्ष्मसंस्कार रह जाता है। वह संस्कार देहपातके बाद विलुप्त हो जाता है। असङ्ग चित्स्वरूप आत्मा तब स्वरूपप्रतिष्ठ होती है। अर्थात् तब फिर उनमें कोई प्राकृतिक भाव प्रतिबिम्बित नहीं होतो। इसलिये वह अवस्था केवल अर्थात् एक रूप गुणातीत है।

सर्वदुःख-विमोचनात्मक कैवल्य, मुक्तिका पर्याय या दूसरा नाम है। यह कैवल्य वेदान्तकी मुक्ति और बौद्ध लोगोंका निर्वाण है। दूसरे दूसरे मतसे भी मुक्ति-का यही रूप है, लेकिन वेदान्त-मतमें मुक्तिमें आनन्द-संयोगका उल्लेख है। आत्माका स्वरूप है आनन्दघन है, अतएव मुक्त होने पर आत्मा निर्विकार और आनन्दघन होती है।

सांख्याचार्य ईश्वरकृष्णने मुक्तात्माके सम्बन्धमें जो कुछ कहा है उसके साथ वैदान्तिक मत प्रायः मिलता जुलता है। उन्होंने कहा है—

"तेन निवृत्तप्रसवमर्थवशात् सप्तरूपविनिवृत्ताम्।
प्रकृतिं पश्यति पुरुषः प्रेक्षकवदवस्थितः स्वच्छः॥"

(सांख्यकारिका)

अर्थ यही है कि विवेक-ज्ञान उत्पन्न होने पर, उसके प्रभावसे प्रकृतिकी प्रसवशक्ति निवृत्त होती है अर्थात् जो आत्माका प्रकृति-दर्शन होता है प्रकृति उस आत्माके पास धर्माधर्म ऐश्वर्यानैश्वर्य तथा ज्ञानाज्ञान प्रसव नहीं करती। अतएव आत्मा तब रजः, तमः या किसी दूसरे गुणमें लिप्त नहीं होती, केवल अकेली रहती है, दर्शक पुरुषकी तरह उदासीन रहती है अर्थात् यह मुक्त आत्मा वन्ध्याप्रकृतिको देखती है, लेकिन उसमें लिप्त नहीं होती। इसीको मुक्तावस्था कहते हैं।

बहुत साधनाओंसे यह मुक्ति मिलती है। मनुष्य इस प्रकारकी मुक्ति पा सकता है कि नहीं? इसके उत्तरमें सभी दर्शनकारोंने एक स्वरसे कहा है कि साधना द्वारा यह मुक्ति मिल सकती है। (सांख्यदर्शन)

नैयायिकोंके मतसे प्रमाण-प्रमेयादि सोलह पदार्थों-का तत्त्व अपरोक्ष ज्ञानके गोचर होने पर तत्त्वभेदसे भिन्न भिन्न प्रकारके निःश्रेयसको प्राप्त होता है। परन्तु जो परम निःश्रेयस् है, जिसका नाम मुक्ति है, जिसको आत्यन्तिक दुःख-निवृत्ति कहते हैं, वह केवल आत्मतत्त्व-के साक्षात्कारसे ही प्राप्त हो सकता है, दूसरे उपाय-से या दूसरे पदार्थके तत्त्वज्ञानसे नहीं। यह क्रमानुसार लाभ होता है। कारण यह है, कि ज्ञान अज्ञानका या मिथ्याज्ञानका विरोधी अर्थात् नाशक है। यह अन्य पदार्थका नाश नहीं करता। अतएव स्वीकार करना पड़ता है कि आत्मतत्त्वज्ञान आत्मविषयक मिथ्या ज्ञानका विनाश कर क्रमपरम्परासे आत्यन्तिक दुःखकी निवृत्ति करनेवाले मोक्षका उत्पादन करता है। गौतम-ने मुक्तिका लक्षण इस प्रकार बतलाया है :—

"दुःख जन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरापाये तद-न्तरापायादपवर्गः। (गौतमसू० १ अ०)

दुःख, जन्म, प्रवृत्ति, दोष एवं मिथ्याज्ञानका उत्तरो-त्तर विनाश होने पर जब पूर्णरूपसे उनका मूलोच्छेद हो जाता है तब अपवर्ग अर्थात् मुक्ति होती है। इस सूत्र-का तात्पर्य यह कि आत्मविषयक तत्त्वज्ञान आत्मविषयक

मिथ्याज्ञान नष्ट करता है। मिथ्याज्ञानके नष्ट होनेसे दोष नष्ट होता है। दोषके अभावसे प्रवृत्तिका अभाव तथा प्रवृत्तिके अभावसे जन्म लेना बन्द हो जाता है और जन्म लेना बन्द होनेसे ही अपवर्ग अर्थात् मोक्षलाभ होता है।

गौतम कहते हैं कि देह, इन्द्रिय और मन इन तीनोंमें कोई एक भी आत्मा नहीं है। आत्मा इन तीनोंके अतिरिक्त है। मन जो इन सब अनात्मा-पदार्थोंमें आत्मभावका आरोपण करता है, वही मिथ्याज्ञान है। आत्मविषयक आत्मज्ञानको तत्त्वज्ञान तथा अनात्मामें आत्मज्ञानको मिथ्याज्ञान कहते हैं।

यह शरीरादिके अनुकूल है, यह शरीरादिके प्रतिकूल है, इस ज्ञानके वशवर्त्ती हो जो उन विषयोंमें आसक्त और विद्विष्ट होते हैं उनकी वह आसक्ति और विद्वेष दोष कहलाता है। फलतः कोई भी आत्माके वास्तव अनुकूल या प्रतिकूल नहीं है। अतएव मिथ्याज्ञान ही दोष उत्पन्न करता है तथा इस मिथ्याज्ञानके विनाशसे दोषका भी विनाश होता है। दोष राग, द्वेष और मोह इन तीन भागोंमें विभक्त है। तीन भागोंमें विभक्त दोष ही सभी प्रवृत्तिका मूल या कारण है। प्रवृत्ति वैधावैधभेदसे दो प्रकारकी और कायिक, वाचिक और मानसिक भेदसे फिर तीन प्रकारकी है। जीवमात्र दोष-प्रेरित हो तीन प्रकारके कार्य्योंमें प्रवृत्त होता है। मनुष्य मोहकी प्रेरणासे दोषके वशवर्त्ती हो शरीर द्वारा हिंसा और चोरी आदि तथा वाक्य द्वारा मिथ्या वचनादि अवैध कार्य्य और मन द्वारा दयादाक्षिण्यादि और इन्द्रिय वशीकरणादि वैधकार्य भी करता है। यह अवैध-प्रवृत्ति अधर्मको और वैध-प्रकृति धर्मको उत्पादन करती है। यह दो प्रकारकी प्रवृत्ति जब शरीरमें बाहर और मनमें मानसिक क्रियासे परितुष्ट या चरितार्थ होती है, तब उससे आत्माका वासनामय धर्माधर्म या पुण्यपाप नामक संस्कार-विशेष उत्पन्न होता है। पीछे उसीके बल पर जन्म होता है। जन्म अर्थात् शरीरोत्पत्ति होनेसे दुःख अनिवार्य है। इस प्रकार कारण-कार्यके क्रममें चक्रकी तरह प्रवृत मिथ्या ज्ञानादिकी प्रवाहपरम्पराका नाम संसार है। इसमें यदि कोई मनुष्य पुण्य-बलसे समझ सके कि यह सब दुःखका घर और दुःखसे भरा है तब वही मनुष्य इन सबकी हीनता समझ कर रागरहित होनेकी चेष्टा करता है। अनन्तर वह दुःखमूल या संसारमूल मिथ्या ज्ञानादिका उच्छेद करनेके लिये अग्रसर होता है। पश्चात् प्रमाणरूपिणी विद्या द्वारा उसे प्रमेयका रहस्य मालूम हो जाता है। यह तत्त्वज्ञान प्रमेय-विषयक मिथ्याज्ञानको विनष्ट करता है। मिथ्याज्ञानके नष्ट होने पर रागद्वेषादि दोषके दूर हो जानेसे प्रवृत्तिका अवरोध होता है। जन्मके अवरोध या उच्छेदसे अपवर्ग अर्थात् आत्यन्तिकी दुःखनिवृत्ति स्थिरताको प्राप्त होती है। दुःखसे बंधे रहनेको बन्धन कहते हैं और विमुक्त होना ही मोक्ष है। उस समय और किसी प्रकारके दुःखसे सम्बन्ध नहीं रह जाता। अतएव उस अवस्थाको मुक्तावस्था कहते हैं। (न्यायदर्शन) गदाधर भट्टाचार्यने मुक्तिवाद नामक ग्रन्थमें नाना प्रकारकी युक्ति और तर्क दिखा कर यही निश्चय किया है कि आत्यन्तिकी दुःखनिवृत्ति ही मुक्ति है।

मुक्तिका (स० स्त्री०) उपनिषद्भेद। इसमें मुक्तिके सम्बन्धमें मीमांसा की गई है।

मुक्तिक्षेत्र (सं० क्ली०) मुक्तिप्रदं क्षेत्रम्। मुक्तिप्रद स्थान, काशी। जिस जीवकी मृत्यु काशीमें होती है उसे मुक्ति होती है, इसीसे इसका नाम मुक्तिक्षेत्र हुआ है।

काशी देखो।

२ कावेरी नदीके पासका एक प्राचीन तीर्थ। इसका दूसरा नाम बकुलारण्य भी था।

मुक्तितीर्थ (सं० पु०) १ योगिनी तन्त्रोक्त तीर्थभेद। २ मुक्ति देनेवाली, विष्णु।

मुक्तिपति (सं० पु०) मुक्तिदाता।

मुक्तिपुर (सं० क्ली०) द्वीपभेद।

मुक्तिप्रद (सं० पु०) हरित् मुद्ग, हरा मूंग।

मुक्तिमण्डप (सं० पु०) मुक्तिदायकः मण्डपः यद्वा मुक्तेर्मण्डपः। विश्वेश्वरके दक्षिण पार्श्वमें अवस्थित एक मण्डप।

"निमेषमात्र स्थितचित्तवृत्तास्तिष्ठन्ति ये दक्षिणमण्डपेऽत्र।
अनन्यभावा अपि गाढ़ मानसा न ते पुनर्गर्भदशामुपासते॥"
(काशीखण्ड)

२ पुरीके जगन्नाथमन्दिरके दक्षिण पार्श्वमें अवस्थित एक मण्डप।

मुक्तिमती (सं० स्त्री०) नदीभेद, महाभारतके अनुसार एक नदीका नाम।

मुक्तिमुक्त (सं० पु०) मुक्त्या मोचनेन मुक्तः। शिह्लक, शिलारस।

मुक्तिवाद (सं० पु०) मुक्ति-विषयक विचार। मुक्ति देखो।

मुक्तिसाधन (सं० क्ली०) मोक्षलाभके लिये ईश्वरानुचिन्तनरूप साधनाविशेष, मुक्ति प्राप्त करनेकी कामनासे ईश्वर और आत्माके स्वरूपका चिन्तन करना।

मुक्तिसेन (सं० पु०) राजभेद।

मुक्तेश्वर (सं० क्ली०) १ शिवलिङ्गभेद। २ उडिष्याके अन्तर्गत एक विख्यात मन्दिर। इसका शिल्पकार्य परशुराम और भुवनेश्वर मन्दिरके जैसा है। ३ सह्याद्रिवर्णित देवमूर्त्तिभेद।

मुखडा (हिं० पु०) भारी आदि टोंटीदार बरतनोंमें किया हुआ वह छेद जिसमें टोंटी जडी जाती है।

मुख (सं० क्ली०) खनति विदारयति अन्नादिकमनेन खन्यते विधात्रासुखमनेनेति खन् (डित् खनेर्मुट् चोदात्तः। उण् ५।२०) इति करणे अच्, सच डित् मुडागमश्च। १ मुखविवर, मुंह।

"प्रजासृजा यतः ख्यातं तस्मादाहुर्मुखं बुधाः।"
(अमरटीका)

शिर, आँखें, नाक, मुंह, कान, ढोढी और गाल आदि सभी अंग मुख कहलाते हैं। गर्भस्थ भ्रूणके पांचवें मासमें मुख होती है। पर्याय—वक्त्र, आनन, आस्य, वदन, तुण्ड, लपन।

"ओष्ठौ च दन्तमूलानि दन्ता जिह्वा च तालु च।
गलो गलादिसकलं सप्ताङ्गं मुखमुच्यते॥" (भावप्र०)

दोनों होंठ, दातकी जड, दांत, जीभ, तालु और गला इन सातोंको मुख कहते हैं। गलेके ऊपरी भागसे ले कर तालु तक मुख शब्दका अभिधेय है। स्त्री और वालकोंका मुख हमेशा शुद्ध रहता है।

"मक्षिका सन्तता धारा मार्जारा ब्रह्मबिन्दवः।
स्त्रीमुखं बालकमुखं न दुष्टं मनुरब्रवीत॥" (कर्मलो०)

२ निःसरण, घरका द्वार। ३ नाटकमें एक प्रकारकी संधि। ४ नाटकका पहला शब्द। ५ किसी पदार्थका अगला या ऊपरी भाग। ६ शब्द, आवाज। ७ नाटक। ८ वेद। ९ पक्षीकी चोंच। १० जीरक, जीरा। ११ आदि, आरम्भ। १२ वडहर। १३ मुरगाभी। १४ किसी वस्तुसे पहले आनेवाली वस्तु। (त्रि०) १५ प्रधान, मुख्य।

मुखक्षुर (सं० पु०) दन्त, दांत।

मुखगंधक (सं० पु०) मुखे गन्धः अस्मात् कप्। पलाण्डु, प्याज। प्याज खानेसे मुखसे दुर्गन्ध निकलती है, इसीसे इसका मुखगंधक नाम पडा है।

मुखघण्टा (सं० स्त्री०) मुखे घण्टेव शब्दसादृश्यात्। वहुत-सी स्त्रियोंके मुखसे निकला हुआ वह शब्द जो माङ्गलिक कार्यमें किया जाता है।

मुखचन्द्र (सं० पु०) चन्द्रमाके समान समुज्ज्वल मुखश्री।

मुखचपल (सं० त्रि०) मुखेन चपलः। मुखर, जो अधिक या वढ वढ़ कर वोलता हो। २ कटुभाषी, जो कटुवचन कहता है।

मुखचपलता (सं० स्त्री०) १ वहुत अधिक या वढ़ चढ़ कर वोलना। २ कटुभाषण।

मुखचपलत्व (सं० क्ली०) मुखचपलस्य भावः त्व। मुखचपलता। मुखचपलता देखो।

मुखचपला (सं० स्त्री०) आर्याच्छन्दोविशेष। चपला, मुखचपला और जघनचपलाके भेदसे आर्या अनेक प्रकार की है। इनमेंसे मुखचपलाके प्रथम पादमें १२ मात्रा, द्वितीयपादमें १८ मात्रा, तृतीय पादमें १२ मात्रा और चतुर्थ पादमें १५ मात्रा होती है।

मुखचपेटिका (सं० स्त्री०) १ कानके अन्दरका एक अवयव। २ गालमे तमाचा लगाना।

मुखचीरी (सं० स्त्री०) मुखस्य चिरं वस्त्रविशेष इव मुख-चीर-स्वल्पार्थे ङीष्। १ जिह्वा, जीभ। २ पलाण्डु, प्याज।

मुखज (सं० पु०) मुखात् जायते इति जन-ड। ब्राह्मण। 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्' (श्रुति) ब्रह्माके मुखसे ब्राह्मण उत्पन्न हुए हैं, इसीसे ब्राह्मणको मुखज कहा है (त्रि०) २ मुखजातमात्र, मुखसे उत्पन्न।

मुखजाह (सं० क्ली०) मुखस्य मूलं (तस्य पाकमूले पील्वादि-

कर्णादिभ्यः कुणप् जाहचौ। पा ५।२।२४) इति मुख-जाहच्। मुखमूल।

मुखड़ा (हिं० पु०) मुख, चेहरा। इस शब्दका इस्तेमाल अक्सर बहुत ही सुन्दर मुखके लिये होता है। जैसे,—चाँद-सा मुखड़ा।

मुखतस् (सं० अव्य०) मुख-तस्। मुखमें, मुखसे।

मुख़तार (अ० पु०) १ एक प्रकारके कानूनी परामर्शदाता जो वकीलसे छोटे होते हैं और प्रायः छोटी अदालतोंमें फौजदारी या मालके मुकदमे लड़ते हैं।

मुख़तारआम (अ० पु०) वह गुमास्ता या प्रतिनिधि जिसे सब प्रकारके काम करने, खास कर मुकदमे आदि लड़नेका अधिकार दिया गया हो।

मुखतारकार (फा० पु०) वह जो किसी कामकी देख-रेखके लिये नियुक्त किया गया हो।

मुखतारकारी (फा० स्त्री०) मुखतारका काम या पद। २ मुखतारी देखो।

मुखतारखास (फा० पु०) वह जो किसी विशिष्ट कार्य या मुकदमेके लिये प्रतिनिधि बनाया गया हो।

मुखतारनामा (फा० पु०) १ वह अधिकार-पत्र जिसके द्वारा कोई व्यक्ति किसीकी ओरसे अदालती कार्रवाई करनेके लिये मुखतार बनाया जाय। इसके दो भेद हैं, मुखतारनामा खास और मुखतारनामा आम। २ वह अधिकार-पत्र जिसके अनुसार कोई पेशेवर मुखतार कोई मुकदमा लड़नेके लिये नियुक्त किया जाय।

मुखतारनामा आम (फा० पु०) वह अधिकार-पत्र जिसके द्वारा कोई मुखतार आम नियुक्त किया जाय।

मुखतारनामा खास (फा० पु०) वह अधिकार-पत्र जिसके द्वारा कोई मुखतार खास नियुक्त किया जाय।

मुखतारी (फा० स्त्री०) १ मुखतार हो कर दूसरेके मुकदमे लड़नेका काम। २ मुखतारका पेशा। ३ प्रतिनिधित्व।

मुखताल (हिं० पु०) किसी गीतका पहला पद, टेक।

मुखतीय (सं० त्रि०) मुखसम्बन्धी, मुंहका।

मुखदघ्न (सं० त्रि०) मुख प्रमाणार्थे दघ्नच्। मुखपरिमाण, मुंह भर।

मुखदूषण (सं० पु०) मुखं दूष्यते अनेनेति दुष-णिच् करणे ल्युट्। पलाण्डु, प्याज।

मुखदूषिका (सं० स्त्री०) मुखं दूषयति विवर्णं करोतीति दुष-णिच् ण्वुल्, टाप्, अत इत्वञ्च। मुखजात क्षुद्ररोगविशेष, मुंहासा। इसका लक्षण—

"शाल्मलीकण्टकप्रख्याः कफमारुतपित्तजाः।
जायन्ते पीडका यूना ज्ञेयास्ता मुखदूषिकाः॥" (भावप्र०)

जवानीकी चढ़तीमें कफ, वायु और रक्तके बिगड़नेसे चेहरे पर छोटी छोटी फुंसियां निकल आती हैं। यह चेहरेको भद्दा बना देती हैं, इसीसे इसको मुखदूषिका कहते हैं।

प्रायः सभी युवकोंको यह रोग हुआ करता है। इसमें निम्नोक्त प्रकारसे चिकित्सा करनी चाहिये,—लोध, धनिया और वच तीनोंका समान भाग ले कर अच्छी तरह पीसे। पीछे उसे मुखमें लेपनेसे मुखदूषिका नष्ट होती है। जब तक लेप सूख न जावे, तब तक उसे रहने देना चाहिये। सूख जानेके बाद ही उसे तुरत धो डाले, नहीं तो चेहरे पर तरह तरहके रोग निकलनेकी सम्भावना है। गोरोचन और मिर्चको पीस कर प्रलेप देनेसे उपकार होता है। सफेद सरसों, वच, लोध और सैन्धव इन्हें पीस कर प्रलेप देनेसे भी मुखदूषिका नष्ट होती है। तेज सेमलके कांटोंको सिर्फ दूधमें पीस कर मुख पर लगानेसे भी यह रोग दूर होता है और पीछे कमलकी तरह मुखकी सौन्दर्य-वृद्धि होती है।

मुखप्रलेपका नियम—अवस्थाभेदसे प्रलेपकी प्रधान मात्रा आधी उंगली, मध्य मात्रा एक उंगलीका तिहाई भाग और हीन मात्रा एक उंगलीका अर्द्धांश मोटी होनी चाहिये। लेकिन याद रहे, लेप सूखते ही उसे धो डालें, नहीं तो उपकारके बदले भारी अपकार होता है।

(भावप्र० क्षुद्ररोगाधि०)

मुखदूषी (सं० पु०) लहसुन।

मुखदौर्गन्ध्य (सं० क्ली०) मुखसे निकली हुई एक प्रकारकी दुर्गंध। पित्तकी अधिकतासे यह रोग होता है। हेलञ्च आदि तीता साग खानेसे बहुत कुछ उपकार होता है।

मुखधावन (सं० क्ली०) मुखस्य धावनं धाव ल्युट्। आस्यप्रक्षालन, दतुवनसे मुख धोना। प्रातःकालमें मुख धोना हर एकका कर्त्तव्य है।

"पटोलनिम्बजम्बाम्र-मालती वनपल्लवैः ।
पञ्चपल्लवजः श्रेष्ठः कषायो मुखधावन ॥" (भावप्र०)
दन्तधावन देखो ।

मुखधौता (सं० स्त्री०) मुखं धौतं मार्जितमनेनेति, धव-कर्मणि क्त, स्त्रियां टाप् । १ ब्राह्मणयष्टिका । २ भार्गी, भारंगी ।

मुखनिवासिनी (सं० स्त्री०) मुखे निवसति या सा नि-वस्-णिनि, स्त्रियां ङीष्, वाणीरूपत्वादस्यास्तथात्वम् । सरस्वती ।

मुखनिरीक्षक (सं० पु०) मुखं निरीक्षते इति निर् ईक्ष ण्वुल् उद्योगं विहायान्यमुखापेक्षित्वेनावस्थानादस्य तथात्वं । अलस, निरुद्योगी ।

मुखन्नस (अ० वि०) नपुंसक ।

मुखपट (सं० पु०) १ मुख ढकनेका कपडा, नकाब । २ घूंघट ।

मुखपाक (सं० पु०) १ घोडे के मुखका एक रोग । २ मनुष्योंके मुखका एक रोग ।

"करोति वदनस्यान्तर्व्रणान् सर्वसरोऽनिलः ।
सञ्चारिणोऽरुणान् रूक्षान् ओष्ठौ ताम्रौ चलत्वचौ ॥
जिह्वा शीता सहा गुर्वी स्फुटिता कण्टकाचिता ।
विवृणोति च कृच्छ्रेण मुखपाको मुखस्य च ॥"
(वाग्भट उ० २१ अ०)

वायुके बिगडनेसे चेहरे पर फुंसियां निकल आती हैं। ये फुंसियां लाल और रूखी होती हैं । इसमें दोनों ओंठ लाल और कंटीली तथा भारी मालूम होती हैं । मुखरोग देखो ।

मुखपान (हिं० पु०) पानके आकारका पीतल वा किसी और धातुका कटा हुआ टुकडा । यह संदूक या अलमारी आदिमें ताली लगानेके स्थानमें सुन्दरताके लिये जडा जाता है। इसके बीचमें ताली लगानेके लिये छेद होता है ।

मुखपिड़िका (सं० स्त्री०) मुंहासा ।

मुखपिण्ड (सं० पु०) वह पिण्ड जो मृत व्यक्तिके उद्देश्य-से उसकी अन्त्येष्टिक्रियासे पहले दिया जाता है ।

मुखपूरण (सं० क्ली०) मुखं पूर्यतेऽनेनेति पूर-करणे ल्युट् । १ गण्डूष, कुल्ला । २ मुंहमें कुल्लीके लिये लिया हुआ पानी ।

मुखप्रक्षालन (सं० क्ली०) मुखस्य प्रक्षालनं । मुख धावन, मुंह धोना ।

मुखप्रसेक (सं० पु०) भावप्रकाशके अनुसार एक रोग जो श्लेष्माके विकारसे होता है ।

मुखप्रसाद (सं० पु०) दीप्तिमान् मुखमण्डल, सुन्दर चेहरा ।

मुखप्रिय (सं० पु०) मुखस्य प्रियः । १ नारङ्ग, नारंगी । २ वक्त्ररोचक, वह जो खानेमें अच्छा लगे । ३ कर्कटी, ककड़ी ।

मुखप्रेक्ष (सं० त्रि०) दूसरेका मुंह ताकना ।

मुखफ़फ़ (अ० वि०) १ जो खफ़ीफ़ या हलका किया गया हो, जो घटा कर कम किया गया हो । (पु०) किसी पदार्थ या शब्द आदिका संक्षिप्त रूप ।

मुखबंद (हिं० पु०) घोड़ोंका एक रोग । इसमें उनका मुंह बंद हो जाता है और जल्दी नहीं खुलता । इसमें उसके मुंहसे लार भी बहुत बहती है ।

मुखबन्ध (सं० पु०) प्रस्तावना, अनुक्रमणिका । किसी ग्रन्थ वा गल्प रचनाके प्रारम्भमें प्रस्तुत विषयके पहले ग्रन्थकार जो अपना मतामत प्रकाश करते हैं उसीका नाम मुखबन्ध है ।

मुखबन्धन (सं० क्ली०) १ छिद्ररोध, मुंह रोकना । २ मुखबन्ध, प्रस्तावना ।

मुखबिर (अ० पु०) भेदिया, जासूस ।

मुखव्यादान (सं० क्ली०) मुखस्य व्यादानं । मुंह बाना ।

मुखभूषण (सं० क्ली०) मुखं भूषयति रक्तिम्नालङ्करोतीति भूष णिच्-ल्यु । ताम्बूल, पान ।

मुखभेद (सं० पु०) शस्त्रादि द्वारा मुंह फाडना ।

मुखमण्डनक (सं० पु०) मुखं मण्डयति भूषयतीति मण्डि ल्यु-स्वार्थे कन् । तिलक वृक्ष, तिलका पौधा ।

मुखमण्डल (सं० क्ली०) मुखावयव, चेहरा ।

मुखमण्डिका (सं० स्त्री०) १ मुखरोगभेद । २ उक्त रोग-की अधिष्ठात्री देवी ।

मुखमण्डितिका (सं० स्त्री०) बालकोंका एक प्रकारका रोग ।

मुखमसा (अ० पु०) बखेड़ा, झमेला ।

मुखमाधुर्य (सं० क्ली०) मुखस्य माधुर्यम् । श्लेष्मज

मुखरोगभेद, श्लेष्मारोगके विकारसे होनेवाला एक रोग। इसमें मुंह मीठा-सा बना रहता है।

मुखमार्जन (सं० क्ली०) मुखधौत करना, मुंह धोना।

मुखमोद (सं० पु०) मुखस्य मोदः हर्षः अस्मात्। १ शोभाञ्जन, काला सहिजन। २ शल्लकी वृक्ष, सलईका पेड़।

मुखम्पच (सं० पु०) भिक्षुक, भिखारी।

मुखम्मल (अ० वि०) १ पांच कोनों या अंगोंका। (पु०) २ उर्दू या फारसीकी एक प्रकारकी कविता। इसमें एक साथ पांच चरण होते हैं।

मुखयन्त्रण (सं० क्ली०) मुखं अश्वादीनां यन्त्र्यते सङ्कोच्यते येनेति यन्त्रि सङ्कोचने करणे ल्युट्। कविका, घोड़े या बैल आदिकी लगाम।

मुखर (सं० त्रि०) मुखं अस्यास्तीति मुख (उपमूषिमुष्कमधो रः। पा ५।२।१०७) इत्यत्र प्रकरणे 'खमुखकुञ्जेभ्य उपसंख्यानं' इति काशिकोक्त्या र। १ अप्रियवादी, जो अप्रिय बोलता हो। पर्याय—दुर्मुख, अबद्धमुख।

"एको भार्या प्रकृतिमुखरा चञ्चला च द्वितीया।" (उद्भट)

२ बहुत बोलनेवाला, बकवादी। ३ अग्रगण्य, प्रधान। (पु०) ४ काक, कौआ। ५ शङ्ख।

मुखरोग (सं० पु०) मुखस्य रोगः। वक्त्रामय, मुंहका रोग। इसके लक्षण और चिकित्साका विषय वैद्यकशास्त्रमें इस प्रकार लिखा है। गलेसे ले कर तालुदेश तकके भागको मुख कहते हैं।

"ओष्ठौ च दन्तमूलानि दन्ता जिह्वा च तालु च।
गलो मुखादिसकलं सप्ताङ्गं मुखमुच्यते॥" (भावप्रकाश)

दोनों ओंठ, मसूड़ा, दांत, जीभ, तालू और गला इस सातों अङ्गको मुख कहते हैं। इन सब अङ्गोंमें जो रोग होता है, उसे मुखरोग कहते हैं। मुखरोग कुल मिला कर ६७ प्रकारके माने गये हैं। इनमेंसे ओंठमें ८, मसूड़ेमें १६, दांतमें ८, जीभमें ५, तालूमें ६, कण्ठमें १८ और मुंहमें ३ हैं।

आनूपमांस, दूध, दही और उड़द आदिका सेवन करनेसे कफप्रधान तीनों प्रकारके दोष कुपित हो जाते हैं जिससे मुंहमें नाना प्रकारके रोगोंकी उत्पत्ति होती है।

ओष्ठरोगका निदान और संख्या—ओष्ठरोग ८ प्रकारका है, वातज, पित्तज, कफज, सान्निपातिक, रक्तज, मांसज, मेदज और अभिघातज।

वातिक ओष्ठरोगका लक्षण—वातसे उत्पन्न ओष्ठरोगमें दोनों ओष्ठ कर्कश, रूक्ष, स्तब्ध और वातवेदनाविशिष्ट हो जाते हैं तथा ओष्ठ और त्वक् कुछ फट जाते हैं। पैत्तिक लक्षण—पित्तसे उत्पन्न ओष्ठरोगमें ओष्ठके ऊपर दाह, पाक और वेदनायुक्त पीली फुंसियां चेहरे पर निकल आती हैं। श्लेष्मज लक्षण—इसमें ओष्ठके ऊपरी भाग पर फोड़े निकलते हैं। उन फोड़ोंका रंग शरीरके रंगके जैसा होता है। दर्द बिलकुल नहीं होता। ओष्ठ पिच्छिल, शीतल और गुरु हो जाते हैं।

सन्निपातज लक्षण—त्रिदोषके प्रकोपसे ओष्ठके ऊपरी भागमें कभी काले और कभी पीले फोड़े निकलते हैं।

रक्तज लक्षण—रक्तसे उत्पन्न ओष्ठरोगमें ओष्ठके ऊपर खजूरके रंगके जैसे फोड़े निकलते हैं। उन फोड़ोंसे रक्त हमेशा बहता रहता है और ओष्ठ बिलकुल लाल दिखाई देते हैं।

मांसज लक्षण—मांससे उत्पन्न ओष्ठरोगमें मांसपिंडकी तरह पीड़का (फोड़े) निकलती हैं। ये पीड़का गुरु, स्थूल और उन्नत होतीं तथा उनमें कीड़े उत्पन्न होते हैं।

मेदोज लक्षण—इसमें घृतमण्डकी तरह खुजली होती है जिससे स्फटिककी तरह सफेद पीप हमेशा अधिक मात्रामें गिरती रहती है।

अभिघातज लक्षण—अभिघातसे उत्पन्न ओष्ठरोगमें ओष्ठ फट जाते हैं, पर दर्द नहीं होता और लाल दिखाई देते हैं। इन ८ प्रकारके ओष्ठरोगोंकी यथाविधि चिकित्सा करनी चाहिये।

चिकित्सा—उक्त सभी प्रकारके रोग रक्तकी अधिकतासे हुआ करते हैं। गले, मसूड़े और दांतके रोग प्रधानतः रक्तकी अधिकतासे उत्पन्न होता है। अतएव इन सब रोगोंमें दुष्ट रक्तको निकाल देना उचित है। रक्त निकालनेके बाद तेल, घी, चर्बी और मज्जा

इन्हें मोममें मिला कर लगानेसे बहुत उपकार होता है।

शिरावेध, वमन, विरेचन, तिक्तघृतपान, मांसभोजन, शीतलप्रलेप और परिषेक द्वारा पैत्तिक ओष्ठ रोगकी चिकित्सा करनी होती है। कफज ओष्ठ रोगमें रक्त निकाल कर शिरोविरेचन, धूम, स्वेद और कवलका प्रयोग हितकर है। मेदोज ओष्ठरोगमें क्षतस्थानको काट कर मेद निकाल देना चाहिये। पीछे उसे विशुद्ध कर स्वेद प्रयोग और अग्नि कर्म करना आवश्यक है। इसके बाद प्रियंगु, त्रिफला और मधु द्वारा प्रतिसारण करे। चूर्ण, कल्क वा अवलेह द्वारा दन्त, जिह्वा और मुखको धीरे धीरे उंगलीसे घिसनेको प्रतिसारण कहते हैं।

दन्तवेष्टरोग—दन्तवेष्टरोग १६ प्रकारका है, जैसे—शीताद, दन्तपुप्पुट, दन्तवेष्ट, शैशिर, महाशैशिर, परिदर, उपकुश, वैदर्भ, खलिवर्द्धन, अधिमांस, पांच प्रकारकी दन्तनाडी तथा दन्तविद्रधि।

जिह्वागत रोगका निदान और सख्या। जिह्वारोग पाच प्रकारका है, वातज, पित्तज, कफज, अलास और उपजिह्विका।

वातज जिह्वारोग—वातदूषित जिह्वा विदीर्ण हो कर रसज्ञानशून्य होती है और उसमें काटे पड जाते हैं। पित्तज लक्षण—जिह्वा ज। पित्तसे दूषित होती है, तब उसमें जलन देती है और छल्ले पड जाते हैं। कफज लक्षण—जिह्वा कफसे दूषित हो कर गुरु और स्थूल हो जाती हैं तथा उसमे शीमल काटेके जैसे मांसाङ्कुर निकल आते हैं।

अलास लक्षण—दूषित कफ और रक्तसे जिह्वाका निम्न भाग जब सूज जाता है तब उसे अलास नामक जिह्वारोग कहते हैं। इस रोगके बढनेसे जिह्वा स्तम्भित हो जाती और पकने लगती है। स्तब्धता वायुका कार्य है और पाक पित्तका कार्य है। अतएव जिह्वाके स्तम्भित और पाकयुक्त होनेसे समझना चाहिये, कि वायु और पित्त ही इसका कारण है। अतएव यह रोग त्रिदोषज दुःसाध्य है।

उपजिह्विका लक्षण—उपजिह्विका रोगमें दूषित कफ और रक्तसे जिह्वाके निचले भागमें जिह्वाके अग्रभागकी तरह सूजन पड़ जाती है और उससे पीप भी निकलती है।

चिकित्सा—जिह्वागत रोगमें रक्त निकाल देना अच्छा है। गुलञ्च, पीपल, नीम और कटकी इन सब द्रव्योंका काढ़ा कर कुछ गरम रहते कुल्ली करनेसे जिह्वारोग शान्त होता है। वातज ओष्ठरोगोक्त चिकित्साकी तरह वातज जिह्वारोगकी चिकित्सा करनी होती है। पित्तज जिह्वारोगमें रुखे पत्तेसे जीभको घिस कर दूषित रक्त निकाल दे। पीछे काकोल्यादिगणकृत प्रतिसारण, गण्डूष, नस्य और मधुर द्रव्यका प्रयोग करना होता है। कफज जिह्वारोगमें मण्डलादि अस्त्र द्वारा दूषित रक्तको निकाल कर पीछे मधुयुक्त पिप्पल्यादिगण चूर्णका उंगलीसे घिसे। ऐसा करनेसे रोग बहुत जल्द दूर हो जाता है।

उपजिह्विका रोगमें रूखे पत्तेसे जीभको घिस कर यवक्षार, हरीतकी और चिता इनका समान भाग ले कर चूर्ण करे। पीछे उस चूर्णको घिसने अथवा उससे चतुर्गुण जलमें तेल पाक करके प्रयोग करनेसे बहुत लाभ होता है।

तालुरोग—तालुरोग ६ प्रकारका है, जैसे—गलशुण्डी, तुण्डिकेरी, अध्रुष, कच्छप, तालवर्बुद, मांससंघात, तालुपुप्पुट, तालुशोष और तालुपाक।

गलशुण्डिका लक्षण—दूषित कफ और रक्तसे तालुमूलमें लम्बा अथच वातपूर्ण चर्मपुटककी तरह अत्यन्त शोथ उत्पन्न होनेसे उसको गलशुण्डी कहते हैं। इस रोगमें प्यास खूब लगती, खांसी और दमा होता है। तुण्डिकेरी लक्षण—दूषित कफ और रक्तसे तालुमूलमें सुई चुभने सी वेदना और पाकयुक्त वनकपास फलके जैसा जब शोथ उत्पन्न होता है, तब उसे तुण्डिकेरी कहते हैं। अध्रुष लक्षण—कुपित रक्तसे तालुमूलमें ज्वर और अत्यन्त वेदनाविशिष्ट रक्तवर्णका स्तब्ध शोथ उत्पन्न होनेसे उसे अध्रुष कहते हैं। कच्छप लक्षण—कुपित कफसे तालुमूलमें वेदनाविहीन अथच चिरोत्थित एवं कच्छप-सी आकृतिवाले शोथका नाम कच्छप है। तालवर्बुद लक्षण—तालुमूलमें पद्मकी कर्णिकाकी तरह तथा पूर्वोक्त रक्तार्बुदके लक्षणविशिष्ट शोथ उत्पन्न होनेसे उसको तालवर्बुद कहते हैं। मांससंघात लक्षण—

दूषित कफसे तालुमूलमें वेदनारहित फोड़े निकलते हैं, इसीको मांससंघात कहते हैं। तालुपुप्पुट लक्षण—मेदोयुक्त कफसे तालुमूलमे वेदनारहित शोथ होनेसे उसे तालुपुप्पुट कहते हैं।

तालुशोथका लक्षण—दूषित वायुसे जब तालुदेश सूज आता और दर्द करता है तथा रोगीकी श्वास गति तेज हो जाती है तब उसे तालुशोष कहते हैं। तालुपाक लक्षण—दूषित वायुसे तालुमे जब अत्यन्त पाक उपस्थित होता है, तब उसे तालुपाक कहते है।

इसकी चिकित्सा—कुट मिर्च, वच, सैन्धव, पीपल, अकवन और केवटी मोथा इनके चूरको मधुके साथ मिला कर घिसनेसे गलशुण्डी नष्ट होती है। वृद्धांगुली और तर्जनी अंगुलिसे संदंश या संड़सी नामक हथियार को पकड़ बाहर खींच कर मण्डलाग्र अस्त्र द्वारा जिह्वा पर की गलशुण्डीको काट डाले। यह काम बड़ी सावधानी से करना होता है, क्योंकि, अधिक कट जानेसे रोगीकी जान पर पड़ती है। फिर अच्छी तरह नहीं काटनेसे भी शोथ, लालस्राव और भ्रम होता है। अनन्तर पीपल, अतीस, कुट, वच, मिर्च, सैन्धव और सोंठ इनके चूर्णको मधुके साथ मिला कर प्रतिसारण करना होता है। वच, अतीस, रास्ना, कटकी और नीम इनका काढ़ा बना कर कुल्ली करनेसे तुण्डिकेरी, अध्रुष, कच्छप, मांससंघात और तालुपुप्पुट नष्ट होता है। शस्त्रक्रियाके बाद और अवस्थाविशेषमें यह क्रिया करनी चाहिये। तालुपाकरोगमे पित्तनाशक क्रिया करनेसे बहुत उपकार होता है। तालुशोषमें स्नेह स्वेद तथा वायुनाशक क्रिया करनी होती है।

गलरोग—गलरोग १८ प्रकारका होता है। जैसे,—पांच प्रकारकी रोहिणी, कण्ठशालूक, अधिजिह्व, वलय, वलास, एकवृन्द, वृन्द, शतघ्नी, शिलाघ, गलविद्रधि, गलौघ, स्वरघ्न, मांसतान और विदारी।

पांच प्रकारकी रोहिणीके लक्षण—दूषित वायु, पित्त, कफ और रक्त गलेमेंके मांसको दूषित कर गलेमे मांसका अंकुर पैदा करता है। यह अंकुर गलेको रोक देता है। इसीका नाम रोहिणी है। यह रोग जीवनाशक माना गया है।

वातज लक्षण—वातसे उत्पन्न रोहिणी रोगमें जीभके चारों ओर दर्द करनेवाला और गलेको रोकनेवाला मांसका अंकुर निकलता है। पित्तज लक्षण—पित्तसे उत्पन्न रोगमें मांसका अंकुर बहुत जल्द निकल आता है। उसमें जलन देती है और वह पकने पर आ जाता है। इस समय ज्वर भी चढ़ आता है। श्लेष्मज लक्षण—कफसे उत्पन्न रोहिणी रोगमें मांसका अंकुर गुरु, स्थिर और अल्पपाकविशिष्ट होता है तथा कण्ठस्रोत बंद हो जाता है।

सन्निपातिक लक्षण—त्रैदोषिक रोहिणीरोगमे उक्त तीनों प्रकारके लक्षण दिखाई देते हैं तथा मांसांकुर गम्भीर पाकी हो उठता है। यह रोग असाध्य है।

रक्तज लक्षण—रक्तजन्य रोहिणीरोगमें जीभके निचले भागमें छल्ले पड़ जाते हैं और पित्तज रोहिणीके सभी लक्षण दिखाई देने लगते हैं। यह रोग साध्य है।

त्रिदोषसे जो रोहिण रोग उत्पन्न होता है वह उसी समय रोगीका प्राण हरता है। कफज रोहिणी रोगमें ५ दिनमें और वातजमें ७ दिनके अन्दर रोगीका प्राण नाश होता है।

कण्ठशालूक लक्षण—कफके बिगड़नेसे गलेमे जो मांसपिण्ड निकल आता है उसीको कण्ठशालक कहते हैं। यह रोग शस्त्रक्रिया द्वारा आराम होता है।

अधिजिह्वक—रक्तमिश्रित कफसे जीभके ऊपर सूजन पड़ जाती है, इसीको अधिजिह्वक कहते हैं। पकने पर इस रोगको असाध्य समझना चाहिये।

वलय—कफके बिगड़नेसे गलेमे शोथ उत्पन्न होता है। यह शोथ विस्तृत, उन्नत और अन्नवहा नाड़ीको रोकता है। इसीका नाम वलय है। यह रोग भी असाध्य है।

वलास—जिस रोगमें कुपित वायु और कफसे गलेमे वेदनायुक्त शोथ उत्पन्न होता है तथा रोगी सुई चुभनेसी वेदना अनुभव करता है उसीको वलास कहते हैं। यह रोग असाध्य है।

एकवृन्द—दूषित कफ और रक्तसे गलेके भीतर जलन देती है और वर्त्तुलाकार शोथ उत्पन्न होता है, इसीका नाम एकवृन्द है।

शतघ्नी—जिस रोगमें त्रिदोषके बिगड़नेसे गलेमें कण्ठ-को रोकनेवाला मांसांकुर निकल आता है तथा उसमें काटे और सूजन पड जाती है उसीको शतघ्नी कहते कहते हैं। यह रोग जीवननाशक है।

शिलाघ—जिस रोगमें दूषित कफ और रक्तसे गलेमें आवलेकी गुठलीकी तरह स्थिर और अल्प वेदनायुक्त गांठ पड़ जाती है तथा खाया हुआ अनाज गलेमें अटका हुआ-सा मालूम होता है उसे शिलाघ कहते हैं। यह रोग शस्त्र द्वारा शान्त होता है।

गलविद्रधि—जिस जिस रोगमें त्रिदोषके बिगड़नेसे समूचा गला सूज जाता और दर्द करता है उसीको गलविद्रधि कहते हैं। इस रोगमें त्रैदोषिक विद्रधिके सभी लक्षण दिखाई देते है।

गलौघ—जिस रोगमें रक्तमिश्रित कफसे गलेमें कंठ को रोकनेवाला और श्वास-प्रश्वासको बाधा देनेवाला महाशोथ उत्पन्न होता है तथा रोगीको अत्यन्त ज्वर आ जाता है उसको गलौघ कहते हैं।

स्वरघ्न—जिस रोगमें वायुके बिगडनेसे रोगीको धुंधला दिखाई देता तथा श्वासकी गति तेज होती है, गला सूखता है, स्वर भङ्ग होता है, खाया हुआ पदार्थ भीतर नहीं जाने पाता तथा वायुवहा नाड़ियां कफसे दूषित मालूम होती हैं उसको स्वरघ्नरोग कहते हैं।

मांसतान—जिस रोगमें त्रिदोषके बिगड़नेसे गलेमें लम्बा और अत्यन्त कष्टदायक शोथ उत्पन्न हो कर गले-को रोक देता है, उसको मांसतान कहते हैं। यह रोग जीवन-नाशक है।

विदारी—जिस रोगमें पित्तके बिगड़नेसे गले और मुखमें ताम्रवर्ण तथा दाह और सूचिविद्धवत् वेदना-युक्त शोथ उत्पन्न होता है तथा दुर्गन्धयुक्त सड़ा मांस गिरता रहता है उसे विदारी रोग कहते हैं। रोगी जिस करवटसे अधिक देर तक सोता है उसी करवटमें यह रोग होता है।

इसकी चिकित्सा—साध्यरोहिणी रोगमें रक्तमोक्षण, वमन, धूमपान, गण्डूषधारण और नस्य लेना लाभदायक है। वातसे उत्पन्न रोहिणीरोगमें दूषित रक्तको निकाल कर प्रियंगु चूर्ण, चीनी और मधु घिसने तथा दाख और फालसेके फलके काढ़े की कुल्ली करनेसे बहुत उप-कार होता है। कफज रोहिणी रोगमें गृहधूम, सोंठ, पीपल और मरिच चूर्ण द्वारा प्रतिसारण करना चाहिये।

सफेद अपराजिता, विडङ्ग, दन्ती और सैन्धव द्वारा तैल पाक करके नस्य लेने तथा कुल्ली करनेसे कफज रोहिणीरोग आराम होता है। पित्तज रोहिणीरोगमें पित्तरोगमें बतलाई गई चिकित्सा करनी चाहिये। कण्ठ शालूकरोगमें रक्त निकाल कर तुण्डिकेरी रोगकी तरह चिकित्सा करने तथा स्निग्ध यवान्न अल्प मात्रामें रोगीको खिलाने कहा है। अधिजिह्वक रोगमें उप-जिह्विक रोगकी तरह चिकित्सा करनी होती है। एक-वृन्द रोगमें रक्तको निकाल कर विरेचनादि द्वारा काय-शोधन करना आवश्यक है। वृन्दरोगमें एकवृन्दरोग-की तरह चिकित्सा करनी होगी। शिलाघरोग शस्त्र-क्रिया द्वारा आरोग्य होता है। गलविद्रधि रोगमे मर्म-स्थानके गत नही होनेसे उसे शस्त्र द्वारा काट डालना चाहिये।

कण्ठगतरोगमें रक्त निकाल कर कडी सुंघनी लेना लाभदायक है। दारुहरिद्राकी छाल, नीलकी छाल, रसाञ्जन और इन्द्रयव इनके तथा हरीतकीके काढ़े में मधु डाल कर पी जानेसे कण्ठरोग प्रशमित होता है। कटुकी, अतीस, देवदारु, अकवन, मोथा और इन्द्रजौ, इनका गो-मूत्रके साथ काढा बना कर पीनेसे कण्ठरोग नष्ट होता है। दाख, कटुकी, त्रिकटु, दारुहरिद्राका छिलका, त्रिफला, मोथा, अकवन, रसाञ्जन, दूब और चव्य, इनके समान भाग चूर्णका मधुके साथ प्रयोग करनेसे बहुत लाभ पहुंचता है। ये तीनों योग यथाक्रम वात, पित्त और कफनाशक है। यवक्षार, चव्य, अकवन, रसाञ्जन, दारु-हरिद्रा तथा पीपल इनके चूर्णको मधुके साथ मिला कर गोली बना कर मुंहमें रखनेसे सब प्रकारका गलरोग नष्ट होता है।

समस्त मुखरोग—समस्त मुखगत रोग वातज, पित्तज और कफजके भेदसे तीन प्रकारका है। इसे सर्वसर-रोग कहते है। वातसे उत्पन्न सभी मुखरोग जिह्वादि सातों अङ्गोंमें जहरीले फोड़े निकल आते हैं जिनसे सुई चुभनेसी वेदना होती है।

इसकी चिकित्सा—यह रोग यदि वातज हो, तो वातघ्न चूर्ण और सैन्धव द्वारा प्रतिसारण तथा वातघ्न औषध द्वारा तैलपाक करके कुल्ली तथा सुंघनी लेनी चाहिये। पित्तजन्य समस्त मुखरोगोंमे विरेचनादि द्वारा काय-शोधन तथा सब प्रकारकी पित्तनाशक क्रिया और मधुर तथा शीतल द्रव्यका प्रयोग करे। कफज होनेसे कफघ्न प्रतिसारण, गण्डूष, धूम और संशोधनका क्रमसे प्रयोग करनेसे यह रोग दूर होता है। मुखपाकरोगमें शिरावेध और शिरोविरेचन तथा मधु, गोमूत्र, घृत या दुग्ध द्वारा शीतल कवल हितकर हैं। जातीपत्र, गुलञ्च, द्राक्षा, जवसा, दारुहल्दी और त्रिफलाके काढ़ेमे मधु डाल कर शीतल गण्डूष धारण करनेसे मुखपाक नष्ट होता है। प्रतिदिन अधिक मात्रामें जातीफलकी पत्तियां चबानेसे मुखपाक प्रशमित होता है। कृष्णजीरा, कुट और इन्द्र जौ इन सब द्रव्योंको एक साथ मुखमें डाल कर चबानेसे मुखपाक, मुखगत व्रण, क्लेद और दुर्गन्ध नष्ट होता है।

पटोल, नीम, जामुन और मालतीके नये पत्तोंका काढ़ा बना कर उसमें मधु डाल मुख धोनेसे मुखपाक नष्ट होता है। दारुहरिद्राके रसको आंच पर चढ़ा कर गाढ़ा करके उसमें मधु डाल दे। पीछे उसका प्रयोग करे, तो मुखरोग, रक्तदोष और नाड़ीव्रण नष्ट होता है।

खसखसकी जड़, परवल, मोथा, हरीतकी, कटकी मुलेठी और लालचन्दन इनका काढ़ा बना कर पीनेसे मुखपाकरोग नष्ट होता है। तिल और नील कमलका चूर्ण तथा घी, चीनी और दूध इनमें अधिकमात्रामे मधु मिला कर कुल्ली करनेसे मुखपाक नष्ट होता है। बिजौरा नीबूके छिलकेको एक बार खानेसे मुखकी दुर्गन्धि जाती रहती है। हरिद्रा, निम्बपत्र, मुलेठी और नीलोत्पल इनके चूर्णको चतुर्गुण जल द्वारा पाक कर प्रयोग करने-से भी मुखपाक नष्ट होता है। तेल ४ सेर, कल्कके लिये मुलेठी आध पाव और नीलोत्पल तीन सेर चौदह छटांक, दूध ८ सेर। यथानियम तैलपाक करके सुंघनी लेनेसे मुखस्राव बंद हो जाता है। शरीरमें मालिश करने-से धीरे धीरे दोषसंघात, शुष्कव्रण और अङ्गविघट्टन नष्ट होता है। (भावप्रकाश)

सुश्रुतमें भी मुखरोगका विस्तृत विवरण दिया गया है, विस्तार हो जानेके भयसे यहां नहीं लिखा गया।

मुखलाङ्गल (सं० पु०) मुखं लाङ्गलमिव भूविदारकमस्य। शूकर, सूअर।

मुखलिसी (अ० स्त्री०) छुटकारा, रिहाई।

मुखलेप (सं० पु०) १ मुखरोगभेद, मुंहका चट चट करना। २ वह लेप जो मुंह पर शोभा या सुगंधके लिये लगाया जाय।

मुखवत् (सं० त्रि०) १ मुखके जैसा। २ मुखशाली, मुंह-वाला।

मुखवन्ध (सं० पु०) मुखस्य प्रारब्धविषयस्य वन्धः संग्रहः। अनुक्रमणिका, भूमिका।

मुखवन्धन (सं० क्ली०) मुखं प्रारम्भविषयः तस्य वन्धनं संग्रहोऽत्र। अनुक्रमणिका, भूमिका।

मुखवल्लभ (सं० पु०) मुखस्य वल्लभः प्रीतिकरः। १ दाड़िम वृक्ष, अनारका पेड़। (त्रि०) २ मुखप्रिय, जो खानेमें अच्छा लगे।

मुखवाचिका (सं० स्त्री०) मुखं वाचयति शोधयतीति वच णिच् ण्वुल् स्त्रियां टाप्, अत इत्वं। अम्बष्ठा, ब्राह्मणी या पाढ़ा नामकी लता।

मुखवाद्य (सं० क्ली०) मुखेन वाद्यं। १ वक्रनालवाद्य, मुंहसे फूंक कर बजाया जानेवाला बाजा। २ शिव-पूजनमें मुंहसे 'बम् बम्' शब्द करना। मातृकामन्त्रके साथ सद्वृत्य मुखवाद्य दुर्लभ है। पूजाके बाद इस प्रकार मुखवाद्य करनेसे अशेष पुण्यलाभ होता है। पचास मातृकावर्णका विन्दुके साथ अनुलोम विलोममें उच्चारण करके मुखवाद्य करनेसे शिवत्वकी प्राप्ति होती है। मुखवाद्य करनेसे असुर और राक्षसादि दूर भागते हैं।*

---

* "लिङ्ग निर्माय विधिवत् पूजयेच्च तम्।
षडक्षर जपित्वा वै मुखवाद्यं शुचिस्मिते॥"
(लिङ्गार्चनतन्त्र १५ प०)

अपिच—
मुखवाद्य सुवृत्य हि कृत्वा तु परमेश्वरि।
मातृका मन्त्रसहित मुखवाद्यं सुदुर्लभम्॥

मुखवास (सं० पु०) मुखस्य वासः सौरभ्यमस्मात्। १ गन्धतृण, सुगंधित घास। २ तरम्बुज-लता, तरबूजकी लता।

मुखवासन (सं० पु०) मुखं वासयतीति वस् णिच् ल्यु। मुखका सद्गन्धकारक द्रव्य, वह चूर्ण जिससे मुंहकी दुर्गंध दूर होती है और उसमें सुवास आती है। पर्याय—आमोदी। अनेक प्रकारकी सुगंधित द्रव्योंको मिलानेसे यह प्रस्तुत होता है। जैसे—

"कस्तूरिकायामामोदः कर्पूरे मुखवासनः।
वकुले स्यात् परिमलश्चम्पके सुरभिस्तथा।
गन्धा द्विषष्टिरप्येते गुणि वृत्तौ त्रिलिङ्गकाः॥"
(शब्दार्णव)

मुखवासिनी (सं० स्त्री०) सरस्वती।

मुखविपुला (सं० स्त्री०) मात्रावृत्तभेद, आर्याछन्दका एक भेद। इसे केवल विपुला भी कहते हैं। इसके प्रथम चरणमें १८, द्वितीयमें १२, तृतीयमें १४ और चतुर्थमें १३ मात्राएं होती हैं। इसका लक्षण इस प्रकार है—

"संलङ्घ्य गणत्रयमादिमं शकलयोर्द्वयोर्भवति पादः।
यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति॥"
(छन्दोम०)

मुखविलुण्ठिका (सं० स्त्री०) मुखेन विलुण्ठयतीति लुण्ठ-णिच्-ण्वुल् स्त्रियां टाप्, अत इत्वं। छागी, बकरी।

मुखव्यादान (सं० पु०) मुंह बाना।

मुखविष्ठा (सं० स्त्री०) मुखे विष्ठा मलमस्याः। तैल-पायिका, तेलचट या सनकिरवा नामका कीड़ा। इसके मुंहमें मल रहता है, इसीसे यह नाम पड़ा।

'मलगुलिका मुखविष्ठा पयोष्णी तैलपायिका॥'
(हेम)

मुखवैदल (सं० पु०) कीटभेद, सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका कीड़ा। इसके काटनेसे वायु-जन्य पीड़ा होती है।

मुखव्यङ्ग (सं० पु०) गण्डगत क्षुद्ररोग, मुंह पर पड़ने वाले छोटे छोटे दाग। इसका लक्षण—

"क्रोधायासप्रकुपितो वायुः पित्तेन संयुतः।
मुखमागत्य सहसा मण्डलं प्रसृजत्यतः॥
नीरुजं तनुकं श्यावं मुखव्यङ्गं तमादिशेत्॥"
(भावप्र०)

क्रोध और परिश्रमसे कुपित वायु पित्तके साथ मिल कर मुखदेशका आश्रय लेती है। उससे चेहरे पर छोटी छोटी काली फुंसियां निकल आती हैं इसीको मुखव्यङ्ग कहते हैं। इसके निकलनेसे मुखकी शोभा बिगड़ जाती है। इस रोगमें किसी प्रकारका कष्ट नहीं होता।

इसकी चिकित्सा।—शिरावेध, प्रलेप और अभ्यङ्ग द्वारा यह रोग शान्त होता है। बरगदकी कली और मसूरको एकत्र पीस कर मुखमें लगानेसे यह रोग चंगा होता है। फिर मधुके साथ मंजीठको घिस कर प्रलेप देने अथवा खरहेका लेहू लगानेसे भी मुखव्यङ्ग रोग जाता रहता है। वरुणवृक्षकी छालको बकरेके मूतसे पीस कर उसका प्रलेप, जातीफलका प्रलेप, अकवनके दूध और हल्दीको एकत्र पीस कर उसका प्रलेप देनेसे पुराना मुखव्यङ्ग भी नष्ट होता है। मसूरको दूधमें पीस कर घीके साथ प्रलेप देनेसे मुखव्यङ्ग नष्ट होता है तथा पद्म की तरह मुखकान्ति हो जाती है। बरगदकी कच्ची पत्तियां, मालतीका फूल, रक्तचन्दन, कुट, कालीयक और लोध इन सब द्रव्योंका प्रलेप भी इस रोगमें बहुत हित-कर है। अलावा इसके कुंकुमादि तैलको मुंहमें लगाने से मुखव्यङ्गादि रोग दूर होता है तथा चन्द्रमाके समान

अकारादिक्षकारान्तमनुलोमविलोमतः।
उच्चार्य परमेशानि मुखवाद्य शुचिस्मिते॥
सबिन्दु वर्णमुच्चार्य पञ्चाशत् मातृका प्रिये।
अनुलोमविलोमेन सर्वेषां च वरानने॥
अनेनैव विधानेन मुखवाद्य करोति यः।
स सिद्धः सगणः सोऽपि स शिवो नात्र संशयः॥
मृत्युञ्जयोऽहं देवेशि मुखवाद्यप्रसादतः।
यस्मिन् काले महेशानि असुरो बलवान् भवेत्॥
तस्मिन् काले महेशानि मुखवाद्यं करोम्यहम्।
तत् श्रुत्वा परमेशानि असुरा राक्षसाश्च ये।
पलायन्ते महेशानि तत् श्रुत्वा परमेश्वरि॥"
(लिङ्गार्च्चनतं० ८ पटल)

मुखकान्ति हो जाती है। (भावप्र० क्षुद्ररोगाधि०)

मुखशफ (सं० पु०) मुखं शफं क्षुर इव तीक्ष्णमस्य। दुर्मुख, वह जो कटुवचन कहता हो।

मुखशुद्धि (सं० स्त्री०) मुखस्य शुद्धिः। वक्त्रशोधन, मंजन या दतुवन आदिकी सहायतासे मुंह साफ करना। प्रातःकालमें दन्तधावन और मुख प्रक्षालनादि द्वारा मुखशुद्धि करनी होती है। शास्त्रमें किसी किसी दिन दंतधावन निषिद्ध बतलाया है। निषिद्ध दिनमें दन्तधावन न करके दश कुल्ली कर लेनेसे ही मुखशुद्धि होती है।

"अभावे दन्तकाष्ठानां प्रतिषिद्धदिने तथा।
अपां द्वादशगण्डूषैर्मुखशुद्धिर्विधीयते॥" (आह्निकतत्त्व)

मुख, दन्तमल और जिह्वामल जिस उपायसे परिष्कार किया जाता है उसे मुखशुद्धि कहते हैं।

२ भोजनके उपरान्त पान, सुपारी आदि खा कर मुंह शुद्ध करना।

मुखशोधन (सं० पु०) मुखं शोधयत्यनेन शुध णिच् करणे ल्युट्। मुखशोधक द्रव्यमात्र, वह पदार्थ जिसके खानेसे मुख शुद्ध होता है। (क्ली० मुखस्य शोधनं। २ गुड़त्वक्, दालचीनी। ३ तज। (त्रि०) ४ चरपरा।

मुखशोधिन् (सं० पु०) मुखं शोधयतीति शुध-णिच्-णिनि। १ जम्बीरवृक्ष, जंबीरी नीबू। २ मुखशोधक द्रव्यमात्र, मुंहको शुद्ध करनेवाला पदार्थ।

मुखशोष (सं० पु०) मुखस्य शोषः। १ शुष्कास्यता, प्यास या गरमीसे मुंहका सूखना। २ तृषा, प्यास।

मुखश्री (सं० स्त्री०) मुखस्य श्रीः। मुखकी शोभा, कांति। (भाग० ७।६।११)

मुखष्ठीव (सं० त्रि०) मुखं ष्ठीवति निरस्यति विकृतं करोतीति भावः ष्ठीव इगुपधत्वात् क पृषोदरादित्वात् वस्य लत्वं। दुर्मुख, कटुभाषी।

मुखसम्भव (सं० पु०) मुखात् सम्भव उत्पत्तिरस्य। ब्राह्मण। 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्' (श्रुति) ब्रह्माके मुखसे ब्राह्मण उत्पन्न हुए थे, इसीसे ब्राह्मणको मुखसम्भव कहते हैं। २ पुष्करमूल, पुहुकरमूल।

मुखसिञ्चनमन्त्र (सं० पु०) एक प्रकारका मन्त्र जिससे जल फूंक कर उस आदमीके मुंह पर छींटे दिये जाते हैं जिसके पेटमें किसी प्रकारका विष उतर जाता है। वह मन्त्र इस प्रकार है,—

"ओं हर हर नीलकण्ठ अमृत प्लावय प्लावय हुङ्कारेण विषम ग्रस ग्रस क्लीङ्कारेण हर हर हौङ्कारेण अमृत प्लावय प्लावय हर हर नास्ति विष उच्छिरे। (अत्रिस० ३।५६ अ०)

मुखसुख (सं० क्ली०) १ मुखका सुख। (त्रि०) २ मुखका सुखजनकमात्र।

मुखसुर (सं० क्ली०) मुखस्य सुरा इति (विभाषासेनासुराछायाशालानिशाना। पा २।४।२५) इति षष्ठी समासे सुराशब्दस्य ह्रस्वत्वं। १ तालसुरा, ताड़ी। २ अधरामृत।

मुखसूची (सं० स्त्री०) आम्रातक वृक्ष, अमड़ेका पेड़।

मुखस्थ (सं० त्रि०) मुखे तिष्ठति स्था-क। १ मुखस्थित, मुंहमेंका। कण्ठस्थ, जो जबानी याद हो।

मुखस्राव (सं० पु०) स्रु-भावे घञ् मुखात् स्रावः पतनमस्य। १ थूक, लार। २ बालकरोगभेद, बालकोंका एक रोग। इनमें उनके मुंहसे अधिक लार बहती है। कफसे दूषित स्तन पीनेसे यह रोग होता है।

मुखाकार (सं० पु०) मुख सदृश, मुंहके जैसा।

मुखाग्नि (सं० पु०) मुखं मुख्योऽग्निः। दावाग्नि, जंगलकी आग। २ मृत व्यक्तिको चिता पर रख कर पहले उसके मुंहमें आग लगानेकी क्रिया। शास्त्रमें लिखा है, कि मुंहमें आग न लगा कर शिरमें आग लगानी चाहिये।

"देवाश्चाग्निमुखाः सर्वे गृहीत्वा तु हुताशनम्।
गृहीत्वा पाणिना चैव मन्त्रमेतदुदीरयेत्॥" (शुद्धित०)

पहले अग्नि ग्रहण कर शवका प्रदक्षिण करे। पीछे निम्नोक्त मन्त्र पढ़ कर शवके शिरःस्थानमें अग्नि प्रदान करे। मन्त्र इस प्रकार है—

"कृत्वा तु दुष्कृतं कर्म जानता वाप्यजानता।
मृत्युकालवशं प्राप्य नरं पञ्चत्वमागतम्॥
धर्माधर्मसमायुक्तं लोभमोहसमाश्रितम्।
दहेयं सर्वगात्राणि दिव्यान् लोकान् स गच्छतु॥"
(शुद्धित०)

मुखमें आग न लगा कर शिरमें आग लगानी चाहिये, यही शास्त्रकी व्यवस्था है। शिर भी मुखका एक अंश है। यही कारण है, कि शिरमें आग लगानेको भी मुखानल कहते हैं। प्रेतकृत्य देखो।

"एवमुक्त्वा ततः शीघ्रं कृत्वा चैव प्रदक्षिणाम्।
ज्वलमान तथा वह्निं शिरः स्थाने प्रदापयेत्।
चातुर्वर्ण्येषु सस्थानमेवं भवति पुत्रिके ॥" (शुद्धितत्त्व)

मुखाग्र (सं० क्ली०) १ ओष्ठ, ओंठ। २ किसी पदार्थका अगला भाग। (त्रि०) ३ कण्ठस्थ, जो जबानी याद हो।

मुखातिब (अ० वि०) जिससे बातकी जाय, जिससे कुछ कहा जाय।

मुखानिल (सं० पु०) मुखस्य अनिलः। मुखमारुत, मुखवायु।

मुखापेक्षक (सं० त्रि०) अनुग्रहलाभेच्छु, दूसरोंका मुंह ताकनेवाला।

मुखापेक्षा (सं० क्ली०) दूसरोंके आश्रित रहना, दूसरोंका मुंह ताकना।

मुखापेक्षी (सं० पु०) दूसरेकी कृपादृष्टिके भरोसे रहनेवाला, वह जो दूसरोंका मुंह ताकता हो।

मुखामय (सं० पु०) मुखस्य आमयः ६ तत्। मुखरोग।

मुखामृत (सं० क्ली०) मुखनिःसृत अमृत वा सौन्दर्य, मुखश्री। २ वह लार जो छोटे छोटे बच्चोंके मुंहसे वहती है।

मुखामोद (सं० पु० स्त्री०) १ शल्लकी वृक्ष, सलईका पेड़। २ कृष्ण शिग्रु, काला सहिजन।

मुखार्चिस (सं० क्ली०) मुखे दत्तं अर्चिः। मुखाग्नि।

मुखार्जक (सं० पु०) अर्जक वृक्ष, वनतुलसीका पौधा।

मुखालिफ (अ० वि०) १ विपरीत, खिलाफ। २ शत्रु, दुश्मन। ३ प्रतिद्वन्द्वी।

मुखालिफत (अ० वि०) १ विरोध। २ शठता, दुश्मनी।

मुखालु (सं० पु०) स्वनामख्यात कन्दशाकविशेष, एक प्रकारका बड़ा मोटा कंद। इसे स्थूलकन्द, महाकन्द या दीर्घकन्द भी कहते हैं। यह मधुर, शीतल, रुचिकारी, वातवर्द्धक तथा पित्त, शोष, दाह और प्यासको दूर करनेवाला माना गया है।

मुखासव (सं० पु०) १ थूक। २ लार।

मुखास्त्र (सं० पु०) मुखं अस्त्रमिव यस्य। कर्कट, केकड़ा।

मुखास्राव (सं० पु०) मुंहसे बहनेवाली लार या थूक।

मुखिक (सं० पु०) मुष्कक वृक्ष, मोखा नामक पेड़।

मुखिया (हिं० पु०) १ नेता, प्रधान। २ किसी कामको सबसे पहले करनेवाला, अगुआ। २ वल्लभसंप्रदायके मन्दिरोंका कर्मचारीविशेष। इसका प्रधान काम मूर्त्ति पूजना और भोग लगाना है। ऐसा कर्मचारी प्रायः पाकविद्यामें भी निपुण हुआ करता है।

मुखुली (सं० स्त्री०) बौद्ध देवताभेद, बौद्धोंकी एक देवीका नाम।

मुखेभव (सं० त्रि०) मुखजात, जो मुंहसे निकला हो।

मुखोत्कीर्ण (सं० पु०) काश्मीर-पति कुमारसेनका मन्त्री। (राजतरङ्गिणी ३।३८४)

मुखोल्का (सं० पु०) मुखं उल्केव यस्याः। दावानल, दावाग्नि।

मुख्तलिफ (अ० वि०) १ भिन्न, अलग। २ विविध प्रकारका, तरह तरहका।

मुख्तसर (अ० वि०) १ संक्षिप्त, जो थोड़ेमें हो। २ अल्प, थोड़ा। ३ क्षुद्र, छोटा।

मुख्तार (अ० पु०) मुखतार देखो।

मुख्य (सं० पु०) मुखमिव मुख्यः विकार सङ्घेत्यादिना इवार्थे य। १ प्रथम कल्प, यज्ञका पहला कल्प।

यागादिषु शास्त्रोक्तप्रथमः कल्पो मुख्यः स्यात्।
(अमरटीका भरत २।३।४०)

२ वेदका अध्ययन और अध्यापन। ३ अमान्त मास। (त्रि०) ४ श्रेष्ठ, सबमें बड़ा।

"प्रधानमुत्तम रम्य श्रेष्ठं मुख्यमनुत्तमम्।
वर वरेण्य प्रमुख परार्द्ध प्रवरन्तथा॥"
(वैद्यक रत्नमाला)

मुख्यचान्द्र (सं० पु०) मुख्यश्चान्द्रः। चन्द्रसम्बन्धीय प्रधान मास, चान्द्रमासके दो विभागोंमेंसे एक। चान्द्रमास दो प्रकारका है, मुख्यचान्द्र और गौणचान्द्र।

मुख्यतस् (सं० अव्य०) मुख्य-तसिल। श्रेष्ठरूपसे, अच्छी तरह।

मुख्यता (सं० स्त्री०) मुख्य भावे तल् टाप्। श्रेष्ठता, मुख्य होनेका भाव।

"गदापरिघयुद्धेषु सर्वास्त्रेषु च तावुभौ।
अचिरान्मुख्यता प्राप्तौ सर्वलोके धनुष्मताम्॥" (हरिवंश)

मुख्यनृप (सं० पु०) मुख्यः श्रेष्ठ नृपः। श्रेष्ठ राजा।

मुख्यमन्त्री (सं० पु०) प्रधान मंत्री। (Prime minister)

मुख्यसर्ग (सं० पु० मुख्यानां सर्ग इति । स्थावर, सृष्टि ।
"मुख्य सर्गश्चतुर्थस्तु मुख्या वै स्थावराः स्मृताः ॥"
(वराहपु०)

मुख्यशस् (सं० अव्य०) प्रधानतः, सबसे पहले ।

मुख्यार्थ (सं० पु०) मुख्योऽर्थः । १ श्रेष्ठार्थ, प्रधान अर्थ । (त्रि०) २ श्रेष्ठार्थयुक्त ।

मुगदर (हिं० पु०) एक प्रकारकी लकड़ीकी मुगरी । यह गावदुमी, लम्बी और भारी होती है । इसका प्रायः जोड़ा होता है और व्यायाम आदिके लिये इसका उपयोग किया जाता है । विशेष विवरण मुद्गर शब्दमें देखो ।

मुगदस (सं० क्ली०) स्थानभेद ।

मुगदेसु (सं० क्ली०) नगरभेद ।

मुगना (हिं० पु०) मोगरा देखो ।

मुगरेला (हिं० पु०) कलौंजी या मंगरैला नामक दाना । इसका व्यवहार मसालेमें होता है ।

मुग़ल—मध्य-एशियाकी तातार नामकी अधित्यकामें रहनेवाली एक जातिका नाम । उत्तर-महासागर, काला-समुद्र, कास्पीय झील, आकसस् नदी और हिमालय पर्वतसे घिरे हुए एक बृहत् भूभागको तथा वहांके रहनेवालेको तातार कहते हैं । इस्लाम-धर्मके अभ्युदयके बाद यह तातार जाति तुर्क, मुगल और मंचु नामक तीन शाखाओंमें विभक्त हो गई ।

बहुत प्राचीनकालसे इन तातार लोगोंने यूरोप और और दक्षिण-एशियाके प्रधान प्रधान नगरों और राज्योंको लूट उन्हें राखकी ढेर कर छोड़ा है । इन लुटेरोंके अत्याचारोंका वर्णन इतिहासके ज्वलन्त अक्षरोंमें लिखा गया है । किसी किसी विजित देशमें उपनिवेश बसा वहां इन लोगोंने अपना जातीय प्रभाव बढ़ाया था । यद्यपि ये लोग अत्यन्त प्राचीन कालसे एशियाके दक्षिण भागको अपने आक्रमणोंसे विध्वस्त करते आ रहे थे तो भी १०वीं सदीमें खलीफाके राज्यमें इनके प्रवेश और उपनिवेश बसाने आदि घटनासे ही वास्तवमें इन लोगोंके प्रभाव और उत्थानकालका आरम्भ माना जाता है । चेंगिज (जंगिस्) खांके अभ्युत्थानसे ही वास्तवमें मुगल जातिका गौरव-सूर्य इतिहास-गगनमें मध्याह्न-सूर्यके समान देदीप्यमान हो उठा । इस मुगल-सरदारने अपने बाहुबलसे सम्पूर्ण एशिया और यूरोपको थर्रा दिया था ।

किस समय तातार लोग इस्लाम कबूल कर मुगल नामसे परिचित हुए—इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता । सम्भवतः यह वीर सम्प्रदाय खलीफा वंशके बढ़े चढ़े प्रभाव पर मुग्ध हो खलीफाका कृपापात्र होनेकी आशासे तुर्किस्तान, रूम आदि देशोंमें गया होगा । उसी समयसे इन लोगोंके दीक्षाकालका आरम्भ माना जाता है । कानुन इ-इस्लाम् नामक ग्रन्थमें मुसलमान जातिके सम्प्रदाय-निर्णय-प्रसंगमें मुगल नामकी उत्पत्ति दी गई है । कोई कोई मुगल नामको मंगोलीय जातिका अपभ्रंश मानते हैं ।

जो हो, मुसलमान होनेके बाद इन मंगोलियावासी तातारोंने लोगोंको अपना तेज बल दिखानेके लिये आस पासके राज्योंको लूटना शुरू किया । क्रमशः हरएक स्थानमें एक एक डकैत सरदार मुगल सरदार हो उठा । इन भिन्न भिन्न मुगल-सरदारों पर शासन या चेंगिज खांका अभ्युदय हुआ था । मुगल-सरदार चेंगिज खाँ (कुछ लोग उसे तातार-सरदार कहते हैं) चीन और तमघाज् प्रदेशका सामन्त था । अपनी शक्ति तथा बलवान् सैन्यदलके बल पर वह शक्तिशाली मुसलमान राजाओंके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ । चेंगिज खांकी वीरताका बखान आज भी सभी जगह होता है । उसके आक्रमण, उपद्रव और अत्याचारकी कथा एक समय, भारत, यूरोप और एशियाके सभी स्थानोंमें प्रचलित थी

तबकत् इ-नासिरि, अकबरनामा आदि मुसलमानी राज इतिहासमें इस मुगल जातिकी उत्पत्ति, विस्तार और प्रतिपत्तिका उल्लेख यों है,—ईश्वरपुत्र महात्मा नोया इस सुविशाल पृथ्वीके अधीश्वर थे । उन्होंने अपने साम्राज्य-शासनके लिये धरतीको अपने तीन पुत्रोंमें बांट दिया । उनके तीसरे लड़के याफिजको वर्त्तमान चीन, तुर्किस्तान और आकसस् नदीके तट प्रदेश शासनके लिये मिले । बल्गा नदीके किनारे उनकी राजधानी थी । ये याफिज ही तुर्कजातिके आदि पुरुष हैं ।

याफिजके आठ (दूसरे मतसे ग्यारह) लड़के थे । इनके बड़े लड़के तुर्क पिताके उत्तराधिकारी हुए । इन्होंने

शीतल और गरम झरनोंसे सिञ्चित और हरे हरे शस्यों से सुशोभित सिन्-उक नगरमें अपनी राजधानी बसाई। इनके नाम पर इनके अधिकृत प्रदेशका नाम तुर्किस्तान पड़ा तथा वहांके रहनेवाले तुर्की कहलाये। तुर्कके बाद पुत्रादि क्रमसे तुनाक्, ज़ाल्ज़ा (अलमिञ्जा), दिब्बाकुए, किवाक् और किवाक्के बाद पांचवीं पीढ़ीमें आलिञ्जा खां राजा हुए। आलिञ्जाके तातार और मुंगल नामके दो यमज लड़के उत्पन्न हुए। दोनों लड़कोंके जवान होने पर उन्होंने अपने राज्यको दोनों भाइयोंमें बांट दिया। पहले दोनों भाइयोंने एक साथ शासन चलाया, अन्तमें आपसमें विरोध होने पर वे तातार-इ माक और मुंगल-इ माक नामके दो स्वतन्त्र राजवंशोंकी प्रतिष्ठा कर गये। उस मुगल राज्यकी सीमा उस समय पूरबमें खिताए, दक्षिणमें खर्वेज् तागूंत्, पश्चिममें इगुर और उत्तरमें केनिर तक फैली हुई थी।

मुगल खाँके बाद करा खाँ, आघूज खाँ, कून खाँ आई खाँ, यूलदूज, मंगली खाँ, तिंगिज खाँ, और नवों पीढ़ीमें इयल खा राजा हुए। इयल खांके समयमें तूर नामका एक शक्तिशाली राजा राज्य करता था। इसने इयल खाँको हरा कर अपना राज्य बढ़ाना चाहा।

पहले होसे तातार और मुगलखांके खानदानोंमें पुश्त दर पुश्त विवाद आ रहा था। जब राजा तूर इयल खाँ पर हमला करनेको आगे बढ़ा तब तातार खानदानका आठवा राजा सून्दज खाँने उसकी सहायता की। इधर मुगल खाँके दूसरे लड़के इंगुरके वंशधर अपने गोत्रज शत्रुओंका विनाश करनेके लिये राजा तूरकी सेना में आ मिले। राजा तूर इस बडी सेनाको ले इयल खासे लड़ने चला।

मुगल लोग इयल खाके बड़े अनुरागी थे। ये लोग शत्रुओंकी गति रोकनेके लिये प्राणपणसे लडने लगे। इनके हाथसे बहुतेरे तातार और इंगुर योद्धा मारे गये। राजा तूर इन लोगोंको धोखा देनेके लिये भाग चला। मुगलोंने शत्रुओंको पराजित देख उनका पीछा किया। इस प्रकार मुगलोंका व्यूह टूट गया जिससे ये लोग कमजोर हो गये। रातमें शत्रुओंने अचानक इन लोगों पर हमला कर दिया। इन लोगोंसे कुछ करते धरते न बना। ये शत्रुओंकी गति रोकनेमें असमर्थ रहे और उनके हाथसे मारे गये। केवल इयल खांका लड़का कइयान् खां और उसके मामाका लड़का नगुज खां दूसरी जगह रहनेके कारण वच गये। मुगल खाके बाद तीसरी पीढ़ीके राजा अघूज खांने अपने चचाओंको बड़ा सताया जिससे वे भाग कर चीन-राज्य चले गये और अपनी आत्मरक्षा की। राजा तूरने मुगलवंशका एक प्रकारसे संहार ही कर दिया था। अतएव अनुमान किया जाता है कि वर्त्तमान मुगल लोग अघूजके चचा कइयान् खां और नगुजके वंशधर हैं।

उक्त कइयान् खां और नगुज खा अपनी स्त्रीके साथ रातमें भाग पर्वतके दूसरी ओर एक हरी-भरी तराईमें आ ठहरे। यहां उन्होंने मकान बना कर अपने साथ लाये हुए धन रत्नोंको सुरक्षित किया तथा वे गौ भेड़ आदि पालन करने लगे। इस स्थानमें उक्त दोनों मुगलोंके वंशधर कई हजार वर्ष तक रहे (अबुल फजलके मतसे २ हजार और अबुल गाजीके मतसे ४ हजार वर्ष तक)।

एक स्थानमें हजारों वर्ष रहनेके कारण वे लोग बहुसंख्यक हो अनेक शाखा प्रशाखाओंमें बंट गये। उन लोगोंने अपनी जन्म भूमि इर्गानाकून् उपत्यकाको छोड़ अपने पितृराज्यके उद्धार करनेका निश्चय किया। मुगल लोगोंने विघ्न और विपत्तियोंको झेलते हुए, अपने पितृ-राज्यमें आ कर देखा कि तातार-इ-माक् जातिके लोग मुगलभूमि पर अधिकार किए हुए हैं। मुगलोंने उन्हें युद्धमें हरा उस स्थानको जीत लिया। पीछे अघूज-के चाचा जो चीनमें रहते थे, मुगल भूमिको लौटे और कइयान् और नगुजवंशवालों (दुर्लागिन) में मिल गये। इस समय मुगलोंका अधि-नेता मंगली खांका लड़का यालदूज खां था। अबुल फजलके मतसे यालदूज खांने ईरानके राजा नौशे खा (सन् ५२१से ५७९ ई० तक)-के राजत्वकालमें अपनी पैतृकभूमि पर अधिकार किया था। मुगलोंने इरगानाकून् तराई छोड कर अपने पितृराज्यको विजय करनेके उपलक्षमें एक उत्सव मनाया था। किम्वदन्ती है, कि उक्त तराई-का रास्ता भूकम्पमें लोहोंके गिरनेसे वन्द हो गया था,

इसलिये आगकी सहायतासे रास्ता साफ करना पड़ा था। इस घटनाको याद कर आज भी मुगल राजे तपाये लोहेको पीटते हैं। कोई कोई समझते हैं, कि चेंगिज खां खिता राज्यमें लोहारका काम करता था। इसीलिये उस शुभ दिनका उत्सव मनाया जाता है।

इस समय मुगल लोग अनेक शाखा, प्रशाखाओंमें बट गये। एक दल दूसरेका आधिपत्य नहीं मानता था। शिकार के मांस तथा सहजमे मिलनेवाली मछलियां ही उन लोगोंका प्रधान आहार थी। पालतू तथा वनैले पशुओंके चमड़ेसे अपनी लज्जा निवारण करते थे। उस समय सभ्यताका कुछ भी प्रकाश उन लोगोंके बीच नहीं फैला था। मुगल लोगोंकी इस अवनतिके समय ५७१ ई०में महम्मद अरबदेशमे पैदा हुए।

यालदूज़ खांकी मृत्युके बाद उसका लडका जुइना बहादुर उसके स्थान पर बैठा। जुइनाकी लडकी आलान् कुवानने अपने दो नावालिग लड़कोंके प्रतिनिधिस्वरूप कुछ दिन तक राज्य चलाया। आलान् कुवान्के वैधव्या वस्थामें तीन लड़के हुए। कहा जाता है कि रातमें एक अपूर्व ज्योति उसके शरीरमें प्रवेश कर सब अंगोमे व्याप्त हो गई और उसीसे वह गर्भवती हुई। एक साथ उत्पन्न हुए तीन लड़कोंमें सबसे छोटा लड़का बु-जञ्जर खांने मुगलस्थानके एक भागमे अपना राज्य फैलाया। बुजञ्जरके वंशमे क्रमशः बुकाए खां, जुतुमीन, काइदु खां, वाय संघय आदिने राज्य किया। इन लोगोंके पुत्र-परिवारसे बु-जञ्जरवंशकी श्रीवृद्धि और उन्नति हुई।

बु-जञ्जर खांसे नीचे ६ठी पीढ़ीमें तोमनाई खां हुआ। इसके दो स्त्रियां थीं। पहलीसे ७ पुत्र और दूसरीसे कवाल और काजुली नामके दो यमज उत्पन्न हुए। पिताके मरने पर कवाल खां राजपद पर बैठा और काजुली खां प्रधान सेनापति और मन्त्री नियुक्त हुआ।

कवाल खां बड़े प्रतापके साथ शासन कर गया है। उसके समयमें भिन्न भिन्न शाखाके मुगल लोग बन्धुत्व बन्धनमे बंध गये थे। कवाल खांका स्थानीय खिता राज्यके राजा अल्तान् खांके साथ झगड़ा हो गया जिससे दोनोंमे शत्रुता हो गई। प्रतिहिंसावश अल्तान्ने उकीन्-बर्काक नामक कबालके युवक पुत्रको मार डाला। कबालकी मृत्युके बाद उसका सबसे छोटा लड़का कुबिला खां राज्यका शासक हुआ। इसने अपने भ्रातृहन्तासे बदला लेनेके लिये अपनी सेनाके साथ खिताकी ओर चढ़ाई की। युद्धमें शत्रु-सेनाको हरा और बहुत धन रत्न लूट कर कुबिला अपने राज्यको लौट आया। कुबिला खांके मरने पर उसका छोटा भाई बर्तान् बहादुर (इसने पूर्व पुरुषोंकी खां उपाधि छोड़ बहादुर उपाधि धारण की) राजसिंहासन पर बैठा।

बर्तानके राज्यकालमे काजुली खांके मरने पर उसका बेटा इर्दम मन्त्री हुआ। इर्दमने चिर्लास्की उपाधि धारण कर मुगलकी एक नई शाखाकी सृष्टि की। वह शाखा उसीके नाम पर बरलास्के नामसे प्रसिद्ध हुई।

बर्तान्के बाद उसका लड़का यास्सुक राजा हुआ। इसके कुछ दिन बाद इर्दम-चिवरलास् मर गया और उसका लडका सुघुचि अर्थात् सुघुजिजान् मन्त्रिपद पर नियुक्त हुआ। यह अमीर तैमूरका पांचवा पूर्वपुरुष था। मन्त्रीकी सहायतासे एक बड़ी सेना खडी कर राजा यास्सुक चिरशत्रु तातार लोगोंको हरा और उन्हें पूर्णतया विध्वस्त कर अपनी राजधानी दिलुन् गुलदु लौट आया। यहां सन् ११६७ ई०के जनवरीके महीनेमें उल्कनूत् जातिकी उसकी प्रधान रानीके एक लडका हुआ। तातारोंको जीतनेके बाद, राजाने पुत्र मुख देखा था, अतः विजयकी स्मृतिस्वरूप उस लड़केका नाम तमुरचि रक्खा। आगे चल कर यही लड़का चेंगिस्के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

५३२ हिजरीमें पिताकी मृत्युके बाद तमुरचि १३ वर्ष की उम्रमें राजसिंहासन पर बैठा। तमुरचिके राजगद्दी पर बैठनेके समय भी मुगलोंमें सभ्यताकी उज्ज्वल किरण प्रवेश न कर सकी थी। उस समय भी मुगल लोग पशुपालक थे। ये लोग हरे हरे मैदानमें तम्बू जैसी झोपड़ी बना रहा करते थे। घोड़े, गौ और भेड़ ही इनकी प्रधान सम्पत्ति थे। शिकारका ही मांस इनका आहार था और ये बिना विशेष आवश्यकताके पालतू जीवोंको नहीं मारते थे। खेतीसे इन्हें अधिक मुहब्बत

न थी। ये नामोद लोगोंके जैसे भ्रमण करते रहते थे। बच्चोंका पालना, भोजनादि बनाना और घरके दूसरे दूसरे काम घरकी स्त्रियोंके हाथमें थे।

बराबर खुले मैदानमें रह कर शिकार करने अथवा शत्रुओंके अचानक आक्रमणसे अपने प्राण बचानेके लिये ये लोग अधिकांश समय घोड़ेकी पीठ पर सशस्त्र रहा करते थे। इस प्रकार भूख, प्यास, धूप और वर्षा सहन कर ये लोग कष्टसहिष्णु हो गये थे। साथ साथ कठोर और बलवान् भी हो गये थे। अपने सम्प्रदायके किसी खास परिवारके प्रधान व्यक्तिकी देखरेखमें इनका राज्यशासन चलता था।

इस समय मुगल, तुर्क और तातार भिन्न भिन्न शाखाओंमें विभक्त हो गये। एक या दो शाखा पर शासन करनेवाला एक एक सरदार रहता था। ऐसे ७१ सरदार (हाकिम) थे। मुगलजातिकी नैरुण शाखाने यास्सुक बहादुरके पुत्र तमुरचिको अपना सरदार बनाया। इसके बाद ही दूरदर्शी मन्त्री सुघुजिजान यहांसे चल बसा। उसका अल्पवयस्क लड़का नूयान (कराचार)-को मन्त्रिपद पर नियुक्त किया गया। इस पर नैरुण लोग कच्ची अवस्था और बुद्धिके दो बालकों-के हाथ अपने शासनकी बागडोर देख असन्तुष्ट हुए और प्रायः ४० हजार नैरुण परिवारोंमें से २७ हजार परिवार तमुरचिको छोड ताइ'जिउत् या तान् जिउत् नामक शत्रुपक्षके मुगलदलमें आ मिले। केवल १३ हजार नैरुण परिवारने उन दोनोंको नहीं छोड़ा।

इस प्रकार शत्रुओंसे घिरे रह कर ये लोग विपत्तियोंके समुद्रमें वास करने लगे। तीस वर्ष तक इन्हें अनेक कष्ट और विपत्तियां झेलनी पड़ीं। गद्दी पर बैठनेके बादसे १७ वर्ष तक नाना विघ्नों और विपत्तियोंके बीच रहने पर इनके भाग्यने पलटा खाया। धीरे धीरे नैरुण परिवार उनकी अधीनता स्वीकार कर उनके दलमें मिल गये। नैरुण लोगोंके फिर आ मिलनेसे (११८३ ई०) इनका दल जबरदस्त हो गया और तमुरचि एक दूसरी मुगल शाखा पर अपना शासन जमा सका।

तमुरचिकी भाग्यलक्ष्मी अधिक दिन तक प्रसन्न न रही। नैरुण लोगोंके इसके दलमें फिरसे आ मिलनेके कारण तान्जिउत् शाखाके मुगलसरदार तुघूताए करील्-तुक बादशाह क्रोधित हो उसको बन्दी कर (११८७-११८८ ई०) ले गया। करील-तुक् बादशाह बुजञ्जर राजवंशके चौथे राजा काइदु खांसे पांच पीढ़ी नीचे था और हमड्ढारका परपोता होता था। शेष नैरुणगण इसीके अधीन रहते थे। नैरुण लोगोंका जाति विरोध ही इस उत्तेजनाका कारण था।

कारागारमें कुछ दिन बन्दी रहनेके बाद तमुरचि मौका पा कर भाग निकला। पासवाली एक झीलमें वह नाक भर पानीमें छिप रहा। इस अवस्थामें बादशाह तुघूंताएके सैनिक लोग उसकी टोह न पा सके। भाग्य वश उस झीलके तट पर सुर्घान सिराह नामक एक सल्दुज खेमा डाले हुए था। उसने जलके बाहर नाक देख उसे भगोड़ा समझ लिया। अब उसने, जो सैन्यदल उसकी तलाशमें आ रहा था, उसे बहका कर दूसरी जगह भेज दिया। शत्रु लोग जब ढूढनेके लिये दूर चले गये तब सुर्घानने तमुरचिको इशारेसे बुलाया। गहरी रातमें वह तमुरचिको जलसे बाहर कर अपने तम्बूमें ले गया तथा उसके कंधेसे 'ढोशाखा'* खोल दिया और उसे भेडके ऊनसे लदी हुई गाडोमें छिपा रक्खा।

इधर तुघूंताएके सैनिकको सुर्घान् सिराह पर सन्देह हो गया। वे उसके तम्बूको एक एक कर जांचने पहुंचे। बहुत जांच पडतालके बाद, उन्होंने पशमकी गाड़ीको जगह जगह ठुकराया और उसके भीतर छिपे हुए तमुरचि पर आघात भी पहुंचाया लेकिन सौभाग्यवश वे उस पीड़ित सरदारको बाहर न निकाल सके। अन्तमें विफल मनोरथ हो वे लोग घर लौट गये।

शत्रुओंके चले जाने पर सुर्घान् सिराहने निर्भय हो तमुरचिको बाहर निकाला और उसे आत्मरक्षाके लिये रसद और तीर-धनुष दे अपने काले घोड़ेसे शीघ्र चले जानेको कहा। चे'गिजने सुर्घानको उच्च पद दे सम्मानित किया था। इसी वंशमें प्रसिद्ध अमीर चौपान उत्पन्न हुए थे।

---

* दो सींगोंका काठका एक यन्त्रविशेष। उस समय बेडीके बदलेमें वही अपराधीके गले डाला जाता था।

इस तरहकी दुर्गतिके बाद तमुरचि घोड़े पर सवार हो अपनी मांके पास पहुंचा। उसकी माता और स्त्रियों (जो उसे मरा जान निश्चिन्त हो गई थीं)-के आनन्दकी सीमा न रही। उसका छोटा लड़का तुली भी पिताके आने पर आनन्दके मारे नाचने लगा था। इस आनन्द के दिन तमुरचि काले घोड़े पर सवार था, इसीलिये अब भी मुगल लोग इस तरहके घोड़ेका अधिक आदर करते हैं।

तमुरचि अपने देशको लौट अपना राज्य बढ़ानेकी इच्छासे युद्धोंमे उलझा। इस समय उसने जाजरात्, नैरुण, जामुका, साजान् (जजान्) तान्जिउत्, कुङ्गाराट्, जलाइर, दूरमान, वोथो, सूजो और वर्लास नामक शत्रु-पक्षीय मुगलोंको अपने अधीन कर लिया। केवल वर्लास वंशके अगुर कराचार लोग पहले हीसे उसके साथ सन्धि सूत्रमें बंधे थे।

त्रिजित विपक्ष उसको समूल नाश करनेके लिये षड़यन्त्र रच ११६३ ई०में एक स्थानमें इकट्ठे हुए। तमुरचि उन्हें संख्यामें अधिक तथा प्रबल देख रोकनेके लिये आगे न बढा, वरन् उसने अपने पिताके मित्र आवंग खांके शरण लेनेकी इच्छासे उसके देशकी ओर चल पड़ा। कराचारका सरदार भी उसके साथ हो लिया।

आवंग खां दुरलगीन् मुगलवंशकी करायत् शाखा-का स्वामी था। करायत् लोग संख्यामें अधिक तथा तुर्कजातिमे सर्व प्रधान थे। सम्भ्रान्त और ऐश्वर्यवान् बादशाह खिता-ए-राज आलतान खांके साथ आवंग खांकी मित्रता रहनेके कारण दोनोंकी राजशक्ति सुदृढ़ हो गई थी। आवंग खां तुग्रल तुगीन् भी कहलाता था।

तमुरचि अपने अनुचरोंके साथ करायतोंके राजाके पास पहुंचा। राजाने उसे बड़े आदरके साथ रखा। यहां दिनों-दिन उसकी अवस्था सुधरने लगी। आवंग खां प्रत्येक काममे उससे सलाह लिया करता था। क्रमशः तमुरचि उसका ऐसा प्रीति-पात्र हो गया कि आवंग उसको स्नेहवश पुत्र कहा करता था। उसने तमुरचिको उच्च पद पर नियुक्त कर अपनी उदारता दिख लाई थी। इस प्रकार प्रायः ८ वर्ष तक तमुरचिने सम्राट्के अधीन अपना समय बिताया। इसी बीचमें उसने अपने आश्रय-दाताके अनेक उपकार किये तथा उसकी तरफसे अनेक युद्धोंमें जयलाभ कर उसकी राज्यसीमा बढ़ाई।

आठ वर्ष इस प्रकार तमुरचिको सुखसे दिन बिताते देख आवंग खांके मन्त्री और पड़ोसी जलने लगे। विपक्षियोंके षड्यन्त्रसे तमुरचि थोड़े ही दिनोंमें आवंग खांके लड़के संगूनकी कड़ी दृष्टि पर पड़ गया। लड़केकी बार बार उत्तेजनासे आवंग खां अपने आश्रित-के नाशमें सहमत हुआ। षड़यन्त्र चलने लगा और तमुरचि विपत्तिको पास आई जान कराचार नु यानके साथ भागनेकी सलाह करने लगा। तदनुसार उन्होंने अपने अपने लड़के वालोंको कलाचीन पर्वतके पास बाल्जुना बुलाक नामक स्थानमें भेज दिया और आप दोपहर रातको अपने अनुचरोंके साथ भाग गये। आवंग खांकी सेनाने उन लोगोंका पोछा किया लेकिन युद्धमें हार खा कर उसकी सेनाको लौटना पड़ा। इस युद्धमें संगूनका मुंह शत्रुके तीरसे विद्ध हो गया और कितने रायत् सैनिकोंने प्राण त्याग किये।

तमुरचि अपने देशको लौटा। इस समय उसकी अवस्था ४६ वर्षकी थी। उसके बुरे दिनोंमें जो सब नैरुण मुगल उसका साथ छोड़ इधर उधर भाग गये थे, वे सभी धीरे धीरे उसके दलमें मिल गये। इस समय और कितनी ही मुग़ल शाखाओंने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली थी।

इस प्रकार एक बड़ी सेना खड़ी कर शक्तिशाली हो तमुरचिने बादशाह आवंगके विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी। युद्धमें पराजित हो आवंग खांने शत्रुओंके हाथ रानी तथा लड़कियोंको समर्पण कर आत्मरक्षा की। आवंगके भाईने अपनी तीन लड़कियोंको तमुरचिके हाथ सौंप छुटकारा पाया। आवंग खा जैसे प्रबल पराक्रमी बादशाहको हराने पर तमुरचिका यश चारों ओर फैल गया। उसकी शक्तिको देख और भी कितनी ही मुग़ल शाखायें उसके अधीन हो गईं। इस समय तमुरचिने सामान्कोड़ा नामक स्थानमें खाँकी उपाधि ग्रहण की (५६६ हिजरी)।

इसके बाद उसने आस-पासके तुर्कों, तातारों और

दूसरे दूसरे मुग़ल वंशोंके अधिकृत स्थानोंको अपनानेका निश्चय किया। अतएव उसने १२०२-३ ई०में उन सब मुगलोंको जो उसके अधीन हो गये थे युद्धके लिये बुलाया। उसका उपदेश सुन सभी उत्तेजित हो उठे। अनन्तर कुकजू नामक उसके सौतेले भाईने स्वप्न सुना कर लोगोंको ईश्वरके आगमन, तमुरचिके चेङ्गिस खां नाम बदलने तथा उसके साम्राज्य बढ़नेका कारण जताया। इस दैवी शक्तिकी कथा सुन, मूर्ख मुग़ल लोग चे'गिस् खांके प्रति विशेष अनुराग दिखलाने लगे। इस मिली मुग़लशक्तिके बल पर चे'गिस् खां भिन्न भिन्न स्थानोंमें अपना साम्राज्य विस्तार करनेमें समर्थ हुआ। कहा जाता है कि उस देववाक्यको पालन करनेके लिये उसकी सेनामे अमानुषिक शक्तिका आविर्भाव हुआ था। इस बलवती सेनाकी सहायतासे चे'गिस खांने पश्चिममें गुर खांके राज्यकी सरहदसे ले कर उत्तरमें चीनके पार्श्ववर्त्ती देश तक फैले हुए सम्पूर्ण भूभाग पर अपना आधिपत्य फैला लिया।

इस प्रकार सारी मुगलशक्तिको हस्तगत कर चेंगिस् खा पहले अपने वंशके चिरशत्रु खिटाए राजाको दण्ड देनेकी इच्छासे दलबलके साथ रवाना हुए। खिटाए के राजा आलतून् खांने अपनी रक्षार्थ राज्यके प्रवेश-पथ पर उन्हें रोकनेके लिये ३० हजार घुड़सवार तैनात कर दिये। चे'गिस् खा खिटाए राज्यके ज्ञात प्रवेश-पथ को शत्रुओंसे रुद्ध देख गुप्त राहकी तलाश करने लगा। कहा जाता है, कि उसने जाफर नामके किसी मुसलमान गुप्तचरको बनियाके भेषमें राजा आल्तुनके पास भेजा था। उसने एक गुप्तपथका पता लगा कर चेंगिस् खाको जताया। तब चे'गिस्ने सभी मुगल-परिवारोंको पर्वतके पास इकट्ठे होनेकी आज्ञा दी। उसके आदेशानुसार सभी स्त्री पुरुष और मा बेटोंको पृथक् पृथक् खुले सिर तीन दिन तक उपवास रहना पड़ा था। खुद चे'गिज खां एक 'खड़गा' (तम्बू) में जा गले। रस्सी लगा ईश्वरकी आराधनामें प्रवृत्त हुआ। बाहरमें जो लोग खड़े थे वे ईश्वर (टिगार टिंगरी) का नाम लेते हुए जय जयकार कर रहे थे। चौथे दिन प्रातःकाल चे'गिस् खां तम्बूसे बाहर निकल कर बोला कि 'टिंगरी' (ईश्वर) ने मुझे जयमालसे भूषित किया है। हम लोग अब आलतून खांको दण्ड देने प्रस्थान करेंगे। पश्चात् मुगलोंने भोजकी तैयारी की।

भोजके बाद चे'गिस् खांने गुप्त पथसे खिटाए राज्यमें प्रवेश कर तमधाज प्रदेश पर चढ़ाई की। आल-तून खां चे'गिस्के आनेकी खबर पा हक्का बक्का हो गया। जब उसकी सेना मारी जाने लगी और नगर लूटा जाने लगा तब सभी लोग राज्य छोड़ भाग निकले। जो लोग नहीं भाग सके वे कुछ तो शत्रुओंके शिकार बने और कुछ बन्दी कर लिये गये।

चेंगिस् इस प्रकार तमधाज्, टिंगिट और शघर-प्रदेश पर अधिकार कर खिटाए राज्यकी राजधानी तमघाज् नगरमें आ धमका और घेरा डाला। आलतून् खां असीम साहससे नगरकी रक्षा करने लगा। अन्तमें आत्मरक्षामें असमर्थ देख उसने तमधाज् शत्रुओंके हाथ समर्पण कर दिया।

चे'गिस् खांके उत्थान और मुगल सेनाके विजयकी खबर तमाम फैल गई। ख्वारजमके राजा सुलतान मह-म्मदने सच्ची बातका पता लगाने दूत भेजा। राज दूतने राजधानीके पास आ पहाड़के जैसा ऊंचा सफेद एक टीला देखा। वह टीला मुगल युद्धमें मारे गये सैनिकोंकी हड्डियोंका पुंज था। इस राजदूतने राजधानीके द्वार पर जा कर देखा कि दुर्गका द्वार मनुष्यके ठट्ठरोंसे सजा हुआ है। तलाश करने पर मालूम हुआ कि ६० हजार बालिकाओंने मुगलों-के ग्राससे बचनेके लिये आत्महत्याकी थी। वह ठट्ठरोंकी ढेर उसी दुर्घटनाकी स्मारक-स्वरूप थी।

सुलतानका दूत चेंगिस् खांके दरबारमें सादर बैठाया गया। मुगल-सरदारने नाना प्रकारके रत्न भूषण सुलतानको उपहार दे मित्रताको प्रार्थना की और दोनों राज्योंमें बे-रोकटोक व्यापारके लिये सन्धि करने-का प्रस्ताव किया। तदनुसार चे'गिस् खांके भेजे व्यापारी लोग धन रत्न और ऊंट आदि ले ख्वारजम पहुंचे। लेकिन वहांके सुलतानने धन लोभसे उन्हें मरवा डाला। इस शोचनीय संवादसे चे'गिस्की क्रोधाग्नि धधक उठी और उसीसे समूचा खारम राज्य भस्मीभूत हो गया।

१२१८ ई०में सुलतानको पूरा दण्ड देनेके लिये, चीन, तुर्किस्तान और तमघाजसे एक बहुत बड़ी सेना

इकट्ठो कर चेंगिस्ने उआके गढ पर धावा मारा। उसके बाद क्रमशः उसने बुखारा, समरकन्द, बाल्ख, तिरमिद, तालकान, घोर, गजनी आदि राज्यों और नगरोंको पूर्णतया लूट, जला और मथ कर अपनी मुगल-सेनाको सिन्धु नदकी ओर बढाया। इस स्थान पर ख्वारजम शाहजादा जलाल उद्दीन मंगवणि अपनी सेना ले आत्मरक्षामें लगा था। १२२७ ई०में मुगलसेना सिंधु नदके पास पहुंची और दोनों दलोंमें घोर युद्ध शुरू हुआ। प्रायः ११ वर्ष तक इस युद्धमें ख्वारजम साम्राज्य विध्वस्त और छिन्न भिन्न हो गया। इस युद्धमें असंख्य मुसलमान बन्दी हो कर मुगल सेनाके पीछे पीछे पैदल चले। मारे गये मुसलमानोंकी गिनती नहीं हो सकती, केवल एक समरकन्दमें ५० हजार मुसलमान मारे गये थे। इसके अलावा जिस जिस देश हो कर मुगलसेना जाती थी वहांके बच्चे, बूढ़े, स्त्रियां सबके सब तलवारके शिकार बनते थे। हरी भरी फसलको इन्होंने नष्ट कर डाला तथा नगरोंको जला कर उजाड़ दिया, असंख्य स्त्री पुरुष बाजारमें बेचे जानेके लिये मुगलोंके कारागारमें बन्द किये गये। इधर दूर देशमें युद्धमें फंसे रहनेके कारण चेंगिस्के अपने राज्यमें बगावतकी तैयारी होने लगी। दूतोंसे संवाद पा ख्वारजम राज्यको नष्ट करनेके बाद ही वह विजय-मदसे मतवाला हो धीरे धीरे अपने राज्यको लौटने लगा। रास्तेमें बीमार पड गया। उस समय उसकी अवस्था ६५ वर्ष थी, लेकिन उसके सतेज मुखको देखनेसे उसके जवान होनेका भ्रम होता था।

अपनी मृत्युके पहले वह जिन जिन युद्धोंमें लिप्त था उनसे काथे, खोटान्, उत्तर और दक्षिण चोन, किलोक्, सकसिन्, बुलगेरिया, आस (क्रिमिया), रुसिया आलन, ट्रान्स-अक्सियाना, बाल्ख, खुरासन इरान, तुरान् आदि देशोंको ले वह एक बड़े साम्राज्यकी स्थापना कर गया। इस विस्तीर्ण साम्राज्यको उसने अपने पुत्रोंमें बांट दिया। उसका जेठा लड़का तुषी उसके जीते जी मर गया था, अतएव तुषी खांका लड़का बतु खां उसके स्थान पर बैठा। उसने अपने तीसरे लड़के ओकताइ खांको साम्राज्यका राजसिंहासन दे अन्यान्य सम्पत्तियोंको दूसरे लड़के चाघताइ और सबसे छोटे लड़के तुली खांके बीच बांट दिया।

उसका पोता बतु खांको किफचाककी समतल भूमिका राज्य मिला। यह राज्य जक्षर्तेश नदी, आरल झील और कास्पीय समुद्रके उत्तरमें डन भलगा नदीके तीरवर्त्ती प्रदेश तथा कृष्णसागरके पासवाले कुछ स्थानोंमें विस्तृत था। दूसरे लड़के चाघताईको पश्चिममें किफ्चाक, दक्षिणमें मेकरान्, पूरबमें मुगलोंका आदिम वासस्थान और उत्तरमें साइबिरियाकी सीमाके बीच समूचे भूभागका राज्य मिला। इनके अलावा, कासगार, खोटैन, औघोर, बदाकसान, बाल्ख, ख्वारजम, खुरासान, गजनी, और काबुल आदि प्रदेश उसके राज्यमें थे। तीसरे लड़के उकताइके हाथ मुगलभूमि और उसके आसपासके कई स्थान आये तथा चौथेको चीनका शासन मिला।

इस प्रकार साम्राज्यको बांट चेंगिस् खां १२२७ ई०में स्वर्गवासी हुआ। मरनेके समय भी उसको राज्य शासनकी कूटनीति सूझती थी। अपने अमानुषिक अत्याचारके लिये निन्दनीय होने पर भी कहना पड़ेगा कि उसके जैसा असाधारण शक्तिवान् पुरुष संसारमें बहुत थोड़े ही हैं। चेङ्गिस् खां देखो। चेंगिस्के लड़कोंने अपने अपने राज्यके लिये अलग सेना रखी थी। उलु, यायावर, मुगल और दूसरी दूसरी तुर्कजातिके सैनिक इस दलमें शामिल थे।

उकताइकी मृत्युके बाद उसकी स्त्री तुराकिना खातुन मुगल साम्राज्यकी साम्राज्ञी हुई। उसके राज्यकालमें शासनमें गड़बड़ी मची। तब मुगल अमीरोंने उसे उतार उसके लड़के कयूकको राजसिंहासन पर बिठाया। कयूकके मरनेके बाद सम्राट्का चुनाव ले कर मुगल साम्राज्यमें घर-झगड़ा खड़ा हुआ। कुछ ही वर्षोंमें मुगल सरदार सम्राट् या अधिनेताकी अधीनतासे मुक्त होनेकी चेष्टा करने लगे। किस समय चेंगिस् साम्राज्यकी ऐसी अवनति हुई, इतिहासमें इसका ब्योरा नहीं है। १२२६ ई०की मुद्रामें मुगल अधिनेताको बगलमें फारसके राजाका नाम अङ्कित देखा जाता है। १३०४ ई०में काजान् खांने अधिनेताका नाम छोड अपने नाम पर सिक्का चलाया। सम्भवतः इसी समय तुषि और चाघताइ वंशके राजे स्वाधीन हो उठे थे।

इसके बाद चेंगिस् खानदानके राजे अपनेको सम्राट् कहने लगे। इन मुगल राजाओंने दक्षिण चीन जीतनेके बाद ऊन नदी पार कर बुलगारिया और पोलैण्डमें मुगल शासनकी विजय पताका फहराई। इसके अलावा हुनगेरी, बस्निया, डालमेसिया और साइनेमिया पर आक्रमण करने और भियाना विजय करनेमें प्रवृत्त हो मुगलोंने सम्पूर्ण क्रिस्तान जगत्को भयभीत कर दिया। इस प्रकार ७० वर्ष गुजरने पर ये लोग आपसमें बिछुड गये। आपसको इस फूटके कारण इन लोगोंका यूरोप साम्राज्य और तो क्या, कोरियासे ले कर एशियाटिक समुद्र तकका सम्पूर्ण साम्राज्य भी सैकडों टुकडोंमें विभक्त हो गया। यूरोपके मध्य केवल रूसमें मुगलोंका आधिपत्य था। चेंगिस् खाके चार पुत्रोंसे चार मुगल शाखाओंकी उत्पत्ति हुई। इन सब वंशोंको सन्तानों की क्रमशः वृद्धि होने पर भी मुगलराज्यमे विक्षेप अपनी गोटी न जमा सका। केवल चाघताइवंश मुगल जातिकी गौरवरक्षा करनेमें समर्थ हुआ था।

चेंगिस् खाका निर्दिष्ट चाघताई राज्य प्रधानतः तीन भागोंमें बटा था। १ सीर और कास्गरसे उत्तरका प्रदेश। यह जनशून्य मरूभूमिके समान था। २ कास्गर, यारखन्द, खोटेन, अफ्सु और तरफान् आदि नगरोंसे सुशोभितदेश। इसका दक्षिण भाग लोगोंसे भरा और समृद्धिशाली तथा उत्तर भाग मरुस्थान था। जक्षर्त्तेश-नदीके उत्तरी किनारेसे दक्षिणमें हिन्दुकुश और हजारा पर्वतमाला, तासखन्द, समरकन्द, बुखारा और बाल्ख तक उसके राज्य फैला हुआ था। यह भाग उपजाऊ खेतोंसे भरा और नगरोंसे सुशोभित था।

यायावर नामकी स्वदेशभक्त प्रबल जाति मरुभूमिके समान प्रथम भागकी एकमात्र अधिवासी थी। ये लोग उच्छृङ्खलभावमें जीवन बिताते थे। दूसरे भागके रहनेवाले सम्प्रदाय भेदसे प्रायः एक स्थानसे दूसरे स्थानको जाते थे और कोई कोई मातृभूमिमें स्थायीरूपसे रहते थे। तीसरे भागके अधिकांश रहनेवाले स्थायीभावसे वास करते थे। ये सब प्रायः मुगलवंशके थे। इन सब सम्प्रदायोंको छोड़ दक्षिण-पूर्व की ओर कालिमक नामक एक बड़े बलवान् सम्प्रदायका वास था। चीन सरहदके पास ये लोग बसे हुए थे। चाघताई अपनी राजधानी बिस्वालीन नगरमें और कभी अपने भाई उक्ताईके साथ काराकोरम नगरमे अपना समय बिताता था। राज्यसम्बन्धी सभी कार्य्य कराचार बूयानके हाथमें थे। इस प्रकार मन्त्रीके हाथ शासन रहनेके कारण चाघताईके उत्तराधिकारियोंके बीच मनोमालिन्यका अवसर उपस्थित हुआ। एक शताब्दीके बीच राजकुमार लोग आपसमें बिछुढ सिर और आमू नदीके तीरवर्त्ती प्रदेशोंमें जा बसे। क्रमशः आपसके विरोधके कारण वे शक्तिहीन हो गये और मन्त्रीवंशने चाघताई राजसिंहासन पर अधिकार पाया। चाघताईके वंशधर उनके हाथके खिलौने बन गये थे। राजा इमाल बुगा खा १मके राज्यकाल तक चाघताईके वंशधरोंने आपसमें अलग हो स्वतन्त्र राज्यकी स्थापना न की थी। इस समय चाघताई वंशजोंने दो भागोंमें विभक्त हो दो स्वाधीन राज्य स्थापित किये। एक राज्य मुगलभूमि और कासगर प्रदेशमें तथा दूसरा मावरावन्नाहार प्रदेशमें स्थापित हुआ।

इसके बाद जो सब मुगलराजे हुए वे विलासमे विभोर रहते थे तथा प्रजा पालनकी ओर उनका बिलकुल ध्यान न था। उनके मन्त्री लोग ही राजकाज चलाते थे। ट्रान्स-अक्सोनिया प्रदेशमें अराजकताके लक्षण दीख पड़े। घर झगडा ही इस दुरवस्थाका एक मात्र कारण था। उसी समय तातार लोग भयानक बाढकी तरह देश पर चढ़ आये। ऐसे सङ्कटके समय असाधारण शक्तिशाली मुगल गौरव सूर्य तैमूरलंग विपक्षियोंको हरा कर एशियाके भाग्याकाशमे चमक उठा। उसके अभ्युदयसे मुगल जातिमें नये जोशका संचार हुआ।

चेंगिस खांके अच्छे दिनोमे मुगल लोग अज्ञान-अन्धकारमें पडे थे। पासके चीन और तिब्बतके प्रचलित बौद्धधर्मके संस्पर्शसे यद्यपि उन्होंने उन देशवासियोंके आचार-व्यवहारका अनुकरण करना सीखा था तो भी उन लोगोंके मनमें धर्मबीज अभी तक बोया नहीं गया था।

चेंगिसकी मृत्युके बाद मुगल जातिमें इस्लामधर्म्म फैला। तुषि खांके लड़का बर्का खा (किफचाक, तुर्कि-

स्तान और सक्सिनका शासक) ने इस्लाम कबूल किया। तुषिका पोता और बतुका लड़का उजबक इस्लाम कबूल कर उस धर्मका प्रचारक हुआ। उजबक खांकी चेष्टा-से किफचाकवासी मुसलमान हो गये। इसके बाद चाघ-ताईवंशका तुगलक तैमूर खां अधिनेता होनेके बाद इस्-लामका पक्षपाती हुआ। उसने कुरानमें विश्वास किया और उस मतको कबूल किया। उसके आदेशसे उसके अधीन अधिकांश प्रजा मुसलमान हो गई। पश्चात् इस्-लाम धर्म धीरे धीरे मुगलोंमें फैल गया। तैमूरलङ्गके उत्थानके दिनोंमें सम्पूर्ण मुगलजाति पर इस्लामका छाप पड़ गया।

चे'गिस् खांके वंशमें तुली खां, उसका भाई उक्ताइ, उकताइकी स्त्री तुरकिना खातुन, कयूक खां, कयूककी स्त्री अगुलगणमिस् तथा तुलि खांके लड़के मंगु खांने १२५१ ई०से १२५६ ई० तक राज्य किया। मंगुका भाई कुबलाई खांने चीनके अधिकृत प्रदेशमें जा राज्य किया। उसीसे चीनदेशमें यूएनराजवंशकी प्रतिष्ठा हुई।

चे'गिस्के दूसरे लड़के चाघताई खांने ट्रान्स-अक्सो-निया नामक मध्य एशियाखंडमें चाघताई-वंशका शासन बढ़ाया था। भारतका मुगल राजवंश अपनेको चाघ-ताई वंशसे उत्पन्न बतला कर गौरवान्वित समझा था।

चे'गिसका लड़का जुजी या तुषीखां फिक्चाक राजवंश का प्रतिष्ठाता था। इस प्रकार मुगल-सम्प्रदायमें चेंगिस खांके लड़कों और पोतोंसे अनेक स्वतन्त्र शाखाओंको उत्पत्ति हुई।

तुली खांके लड़के मंगु खांके बाद उसका भाई इलाकु खां फारसका राजा हुआ। इस इलाकु खांसे फारसके इल्खानि राजवंशको उत्पत्ति हुई। इलाकुके बाद आबा खां, निकोदर अह्मद खां, अर्घू'न खां, कैखातु खां, बाईदु, याजान खां अल्जैतु और उसका लड़का आबु सैयद बहादुर खां यथाक्रम फारसके राजे हुए। अन्तिम राजाके निस्तेज और बलहीन होनेके कारण इल्खानि वंशको दूसरे राजवंशकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी।

पहले ही कहा जा चुका है, कि तुमीनाबु खांके वंशधर कजुली खांके वंशमें अमीर तैमूरका जन्म हुआ था इस वंशकी दूसरी शाखामें मुगल वीर चे'गिसने जन्म लिया था। तैमूरने चे'गिसकी वीरताकी कहानी पढ़ उसीके उज्ज्वल दृष्टान्तका अनुसरण किया। उसने भी मुगलोंका अधिनायक हो एक विशाल मुगल साम्राज्य स्थापित किया था। उसकी राजधानी समरकन्दमें थी। १३९८ ई०में उसने भारत पहुंच दिल्ली पर कब्जा किया। भारत-विजयके बाद उसकी इच्छा थी, कि चीन-विजय करें, लेकिन मृत्युने ऐसा न होने दिया। उसने भारतको जय किया तथा लूटा लेकिन यहां राज्य स्थापित न कर सका। तैमूरलंग देखो।

अमीर तैमूरके बाद समरकन्द राजधानीमें तैमूरवंश-के जिन जिन मुगल राजाओंने राज्य किया उनके नाम नीचे दिये जाते हैं।

१ सुलतान खलील—यह तैमूरके तीसरे लड़के मीरन शाहका लड़का था।

२ शाहरुख मीर्जा—तैमूरका चौथा लड़का।

३ अब्दउद्दौला—मीर्जा।

४ उलुघबेग—शाहरुखका लड़का।

५ मिर्जा बाबर। इसने अपने बाहुबलसे दिल्लीको अपने अधिकारमें ला भारतमें मुगल राजवंशकी प्रतिष्ठा की। यह उमर शेख मिर्जाका लड़का था। आबु सैयद मिर्जा-का पोता, महम्मद मिर्जाका परपोता और मीरन शाहका वृद्ध परपोता था।

६ मिर्जा अबदुल लतीफ।

७ मिर्जा शाह महम्मद।

८ मिर्जा इब्राहिम।

९ सुलतान आबू सैयद।

१० मिर्जा यादगार महम्मद।

मुगल सम्राट् मिर्जा बाबर शाहने भारत-सम्राट् हो कर भी समरकन्द राजसिंहासनको अक्षुण्ण रखा था। उसका लड़का शक्तिहीन हुमायूं जब भारत-साम्राज्य ले कर उलझा हुआ था उसी समय उलुघबेगका लड़का अबदुल लतीफ मिर्जा समरकन्दके राजसिंहासन पर जा बैठा। तैमूरके दूसरे दूसरे लड़के और पोते मुगल-साम्राज्यके एक एक खंडमें राज्य स्थापित कर अलग हो स्वतन्त्ररूपसे रहते थे। बाबरका बड़ा लड़का हुमायूं दिल्लीको राज-

गद्दी पर बैठा। उसके कमरान्, आस्कुरि और हिन्दाल नामके और भी तीन लड़के थे। लेकिन सूरवंशके अफगान सरदार शेरशाहने हुमायूंको भगा कर कुछ दिन भारत-साम्राज्यका शासन किया। हुमायूंके इस प्रवासकालमें अमरकोटमें अकबरका जन्म हुआ था। अकबरके बाद जहांगीर, शाहजहा और औरङ्गजेब बादशाह दिल्लीके सिंहासन पर बैठे और सम्पूर्ण भारतमें मुगल-शासनका विस्तार किया। बाबर, हुमायूं, अकबर, जहांगोर, नूरजहां, शाहजहा आदि शब्दोंमें विशेष विवरण दिया गया है।

मुगलोंका अधःपतन।

वीरहृदय बाबर, बनविहारी हुमायूं, सुप्रसिद्ध अकबर शाह, चञ्चलचित्त जहांगीर और सौभाग्यशाली शाहजहां आदिकी राजकीय शासन-प्रणाली देख कर अनुमान किया जाता है कि उनके शासनमें तुर्कजातिका प्रभाव पूर्णरूपसे वर्त्तमान था। उसके साथ भारतीय हिन्दू प्रजाके प्रति उन लोगोंकी असीम दया, सद्भाव और सहृदयता रहनेके कारण दोनों जातियोंमें किसी प्रकारका विजातीय विद्वेष और वैषम्य नहीं दिखाई देता था। अकबर और जहांगीरके हिन्दू-स्त्रियोंके पाणिग्रहण करने, हिन्दुओंको सेनापति आदि उच्च राजकीय पद देने और हिन्दुओंको शासक बनानेके कारण दोनों जातियोंमें विरोध बढनेके बदले एक सुखमय समताकी वृद्धि हुई थी। अकबर शाहका दिन् इ इलाही नामक धर्ममत उस समय दिल्लीके शासनमें सर्वप्रिय हो गया था। क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, क्या पठान सबके सब उस सर्वनियन्ताकी दृष्टिमें बराबर हैं अतएव आपसमें भेदभाव रख जातीय शत्रुता उत्पन्न करना सरासर अन्याय है यही उनका उपदेश था।

सम्राट् अकबरने अपनी असाधारण प्रतिभाके बल पर इसी उत्तम मार्गका अनुसरण किया। भारतके हिन्दू राजाओंके साथ बराबर छेड़छाड़ करनेसे किसी न किसी समय बगावत फैल सकती है और उससे समूचे मुगल साम्राज्यका अधःपतन हो सकता है, बुद्धिमान् अकबर यह अच्छी तरह समझता था। इसीलिये वह हिन्दू-मुस्लिम एकताका पक्षपाती था। उसके सुयोग्य पुत्र सलीमने पिताके अभीष्ट मार्ग और उपदेशोंको उलङ्घन करनेकी इच्छा न की। यह सच है कि कभी कभी नशेकी हालतमें वह पुराने मार्गसे बहक जाता था, लेकिन वह उन राजकीय भूलों या अपराधोंको मिटाने तथा प्रजाओंके दुःख दूर करनेमें उदासीन नहीं रहता था। भारत-साम्राज्ञी नूरजहान्ने भी शासनको दृढ किया था।

अकबरका लड़का जहांगीर हिन्दू रमणीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था, अतएव 'नराणां मातुलक्रम' नियमके अनुसार उसे अपनी मांके सजातियोंके प्रति अपनापनकी रक्षा करनी पड़ी थी। जहांगीरका लड़का बादशाह शाहजहां जोधपुरके राजा उदय सिंहकी लड़की बालमतीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। अतएव हिन्दू रक्तके संयोगसे उसके हृदयमें भी हिन्दुओंकी स्वाभाविक दया वृत्तिका संचार था। शाहजहांने अपने पिता और पितामहके दृष्टान्त रहते हिन्दुओंके विरुद्ध चलनेका साहस नहीं किया, वरन् प्रजाओंको प्रसन्न रखनेकी ओर उसका विशेष ध्यान था। यद्यपि वह सौभाग्य सुखमें विभोर हो शासनको पूर्ववत् सुदृढ़ न रख सका, तोभी उसके राज्यकालमें किसी भी देशी राज्यको मुगल-शक्तिके विरुद्ध उठनेका साहस नहीं हुआ। पर हां यह अवश्य स्वीकार है कि विलासिता और भोगकामना होके कारण वह राजकार्यसे अलग रहा करता था। बादशाहकी शिथिलताके कारण ही शासन शिथिल पड़ गया था। शाहजहांकी विलासिताने ही मुगल-साम्राज्यकी अवनतिका सूत्रपात किया।

मयूर सिंहासन, मोतीमसजिद, ताजमहल, शाहजहानाबाद-नगरका निर्माण शाहजहाकी विलासिताका चूड़ान्त दृष्टान्त है। प्रजाकी खून चूस कर इस प्रकार अपरिमित धन व्यय कर कब्र, मसजिद और सिंहासनका बनवाना मुगल-अत्याचारोंसे पीड़ित भारतकी प्रजा तथा राजाओंको बहुत अखरा। सिंहासनके शोभामात्र विलासी शाहजहांके प्रति प्रजाके बीच श्रद्धाके बदले ईर्षाग्नि धधक उठी। उस समय भी मुगल शक्तिकी धाक भारतमें जमी हुई थी, इसलिये बगावत उठने न पाई। लेकिन प्रजा और राजाओंके हृदयमें वह आग सुलग रही थी।

शाहजहांके शासन तथा युद्ध-विभागोंमें हिन्दू और मुसलमान कर्मचारियों और सेनापतियोंका समान आदर और समान प्रभाव था इसलिये कोई सम्प्रदाय दूसरेका विपक्षी नहीं हुआ। यदि ईर्षावश हिन्दूलोग मुगल-सम्राट्के विरुद्ध उठ खड़े होते तो दोनोंमें एकका विनाश अवश्यम्भावी था। इस कारण उस समयके हिन्दूराजे पूर्ण प्रभावशाली मुगल शक्तिके विरुद्ध नहीं खड़े हुए।

शाहजहांको जेल भेज आलमगीर (औरंगजेब) दिल्लीके तख्त पर बैठा। उसका हिन्दुओंके प्रति द्वेष, हिन्दुओं पर जिजिया नामक* नया कर लगाना, दाक्षिणात्य अभियानमें अनेक राजाओंको सताना, हिन्दुओंसे इस्लाम कबूल करवानेकी चेष्टा इत्यादि अनेक कारणोंसे हिन्दुओंका मुगलोंके प्रति द्वेष स्वभावतः जाग उठा। शाहजहांने प्रजाके खून चूस घोर अपव्ययसे जिस जातीय द्वेषाग्निको सुलगा दिया था, औरंगजेबने जिजिया बैठा कर मानो उस अग्निमें इंधन डाल दिया। शाहजहांके समयकी धुंआती आग औरंगजेबके समयमें धधक उठी। औरंगजेबके निष्ठुर शासनमें अत्याचार-पीड़ित भारतके राजोंने उसके जीते जी ही मुगल-शासनके विरुद्ध उठ मुगल साम्राज्यके अधःपतनका बीज बो दिया।

औरङ्गजेबके राज्य-कालमें हिन्दुओंका प्रभाव एक तरह मिट गया था। सम्राट् हिन्दुओंको काफिर समझ उन पर विश्वास नहीं करते थे। अकबरके शासनकालमें मानसिंह, जयसिंह आदि जो हिन्दू वीरश्रेष्ठ अत्यन्त सम्मानित तथा उच्च उपाधियोंसे विभूषित हुए थे और जिन्होंने मुगल राज पताका भारतमें फहराई थी वे सब हिन्दू वीर औरंगजेबकी दृष्टिमें निकम्मे जंचते थे। धर्म विद्वेषके कारण औरंगजेब हिन्दुओंके हाथ शासनकी बागडोर देना उचित नहीं समझता था, हिन्दूमात्र उसके अप्रिय तथा घृणाके पात्र थे। इस द्वेषके कारण औरंग-जेब हिन्दू प्रधान भारतमें हिन्दुओंके प्रति सहानुभूति छोड़ मुसलमानोंका पृष्ठपोषक हो गया। अतएव अपमानित हिन्दू राजोंने भी मुगल साम्राज्यको नष्ट कर डालनेका निश्चय किया।

औरङ्गजेबके समयमें मुसुलमानोंकी प्रधानता बाद-शाहसे स्वीकृत होनेसे राज्य भरमें मुसलमानोंका प्रभाव बढ़ गया। क्रमशः स्वजाति विद्वेषवह्नि भी धधक उठी। जो मुसलमान (मुगल) सेनापति औरङ्गजेबके दोर्दण्ड प्रतापसे भीत हो उसके समयमें विपरीत चाल नहीं चल सके थे, वे लोग उसकी मृत्युके बाद ही धन-लोभसे उसके वंशधरोंको मार भगानेके लिये तैयार हो गये। इसी समय मुगल साम्राज्यको मिट्टीमें मिला देनेवाला सेनापति जुलफि-कार खांका आविर्भाव हुआ। जुलफिकारने राजकुमारोंके राज्याधिकारप्रसंगमें प्रवञ्चना और स्वार्थपरताका जैसा परिचय दिया था, यह इतिहास-पाठकोंसे छिपा नहीं है।

प्रत्येक जातिका उत्थान और पतन अवश्यम्भावी है। व्यक्ति विशेषकी प्रतिभा और बाहुबलसे साम्राज्यका संगठन होता है। फिर उस राजवंशमें प्रतिभा और बल-के ह्रास या अभाव होनेसे राजशक्ति छिन्न हो जाती है।

---

* 'किसी किसी मुसलमान ऐतिहासिकका कहना है, कि इस 'जिजिया' करका लगाना युक्ति-सगत था। कुरानके मतानुसार मद्यपान और मूर्त्तिपूजन निषिद्ध है। कट्टर मुसलमान आलमगीर हिन्दुओंके प्रति इन सबका निषेध न करके इनके बदले कर लगा उन्हें छुटकारा दिया था। उसकी तीक्ष्ण दृष्टिसे कोई भी रक्षा नहीं पा सकता थे। जो कोई मुसलमान शराब पीता उसे उसी समय दण्ड मिलता था। किन्तु जिजिया देनेवाले हिन्दूके पक्षमें कोई बखेड़ा न था। मुसलमान ऐतिहासिक यह भी कहते है, कि मुगल-बादशाह औरङ्गजेब यथार्थमें हिन्दूद्वेषी नहीं था। उसकी स्वधर्म-प्रीतिने ही उसे बदनाम बना दिया था। अकबरशाह सचमुच हिन्दू-द्वेषी था। उसका चलाया इलाही मत इस बातका साक्ष्य देता है। अकबरने हिन्दूके साथ मिल कर कितने हिन्दूको मुसलमान बनाया था, वह मूर्ख हिन्दू समझ नहीं सका। राजपूत कन्यासे विवाह कर क्या उसने हिन्दूकी जाति लेनेकी चेष्टा नहीं की? औरङ्गजेब मुसलमान था, इसलिये अपने इसलाम धर्मका पालन करना उसका कर्त्तव्य था। उसने हिन्दू मुसल-मानोंमें पृथकता दिखलानेके लिये भिन्न भिन्न परिच्छदादि भी निर्देश-कर दिये थे।

बाबरशाहकी अद्भुत प्रतिमाने भारतमें जिस मुगल-साम्राज्यकी स्थापनाका सूत्रपात किया, दुर्बल हुमायूंके समयमें, उसमें वह प्रतिभा न रहनेके कारण, उस साम्राज्यका मानो मेरुदण्ड ही टूट गया। पीछे समदर्शी अकबरने एकतासूत्रमें भिन्न सम्प्रदायोंको बांध मुगल साम्राज्यकी पुनः प्रतिष्ठा की। उसका लड़का जहांगीर महावत खां और शाहजादा खुर्रम (शाहजहां)के विद्रोहसे तंग तंग आ गया। फिर भी अपने पिताके जीते जी ही औरङ्गजेब आदि शाहजादोंने राज्यलोभसे युद्ध किया। औरङ्गजेब अपने भाइयोंके रक्तसे वसुंधराको रंजित कर तथा अपने वृद्ध पिताको कारागार भेज राजसिंहासन पर बैठा। मुगल-राज्यमें मुसलमान सेनापति कृपा-पात्र बननेकी इच्छासे भिन्न भिन्न शाहजादोंकी खुशामद किया करते थे। ये लोग उन्हें सिंहासन हस्तगत करनेके लिये उभाड़ते भी थे। उच्च पद और सम्मान पानेकी लालसा स्वभावतः उन्हें चञ्चल बना देती थी। फलतः शाहजादोंकी बगावत साधारण बात हो गई। शाहजादोंका घोर विद्रोह ही मुगल-शक्तिके अधःपतनका वास्तविक कारण था।

शाहजादोंका विद्रोह, सिंहासनके उत्तराधिकारीका निश्चित न रहना जिससे शासनमें व्यवस्थाका अभाव, शाहजादोंका राजाज्ञाका उल्लङ्घन करना, छोटे छोटे सामन्तोंकी स्वतन्त्र होनेकी चेष्टा और सेनापतियोंकी जागीरदारी आदि अनेक कारणोंसे मुगल साम्राज्य की इतिश्री हुई। राजकर्मचारी लोग शासनमें कमजोरी देख अपनी अपनी स्वार्थसिद्धिकी फिक्रमें रहते थे।

इस सारी गड़बड़ीमें मुगल साम्राज्यके नाशके बीज छिपे थे। औरङ्गजेबकी विचारहीनताने उस बीजको उगा दिया। धर्म विद्वेष और प्रजापीड़नके कारण हिन्दू उससे घृणा करते थे। शक्की बादशाहको बुढ़ापेमें भी शान्ति न मिली। किसीके प्रति उसकी सहानुभूति न थी, अतएव कोई उसका हितैषी भी न था। दाक्षिणात्य जीतनेके लिये दीर्घकाल-व्यापी युद्ध तथा उसमें धन और शक्तिका क्षय, हिन्दुओंकी स्वाधीनता प्राप्त करनेकी इच्छा, दाक्षिणात्यमें महाराष्ट्रकेशरी शिवाजीका अभ्युत्थान और पञ्जाबसे गुरुगोविन्दसिंहके नेतृत्वमें सिक्खोंका उत्थान ये सबके सब मुगल साम्राज्यके अधःपतनके कारण हुए।

इसके अलावा औरङ्गजेबके उत्तराधिकारी कमजोर दिलके निकले। शासन चलानेके लिये उन लोगोंको स्वार्थी और झगडालू मन्त्रियों पर निर्भर करना पड़ता था। प्रजा विद्रोही हो स्वाधीनताकी चेष्टामें थी और मन्त्री लोग अपना स्वार्थ साधनेमें लगे थे। इस दुरवस्थामें औरङ्गजेबके बाद मुगल-शासन जाता रहा।

१७०७ ई०में औरङ्गजेबकी मृत्युके बाद शाहजादा मुअज्जिम और उसके छोटे भाई अजीमके बीच तकरार पैदा हुआ। मुनीम खांने मुअज्जिमका पक्ष लिया और दूसरे सेनापति अजीमके सहायक हुए। राजशासनको यह गड़बड़ी देख दिल्लीके लोग चिढ़ गये। मुअज्जिम मथुरा भाग गया। ढोलपुर और आगरेके बीच दोनों पक्षमें घोर युद्ध हुआ। अजीम खेत रहा और मुअज्जिम बहादुर शाहकी उपाधि ले दिल्लीके सिंहासन पर बैठा। मुनीमको 'खान्‌खानान्'-की उपाधि और मन्त्री-पद मिला।

बहादुर शाह अपने पितामह शाहजहांके जैसा बड़े आडम्बरके साथ अपना दरबार लगाता था। हिन्दुओंका मुसलमानोंके प्रतिद्वेष इसके पहले ही चरम-सीमाको पहुंच चुका था। राजपूत, जाट और सिख लोग मुगल-साम्राज्यके विरुद्ध उठ खड़े हुए। उस समय औरङ्गजेबका एक लड़का कामबक्स बीजापुरका शासक था। अपने भाईकी बढ़तीको वह न देख सका और लड़नेको तैयार हुआ। उसको पकड़ लानेका भार मुनीम खांको दिया गया। उस समय औरङ्गजेबका पुराना सेनापति जुलफिकर खां दाक्षिणात्यमें था। कामबक्सको उससे शत्रुता थी। जुलफिकरने बादशाहके हुक्मके बिना ही कामबक्सको लड़ाईमें हरा बन्दी कर लिया। उसी हालतमें कामबक्सकी मृत्यु हुई।

बादशाहकी कृपासे जुलफिकर खां दाक्षिणात्यका सूबेदार हुआ। उस समय मुगलपक्षके महाराष्ट्रके सेनापतियोंके बीच मतान्तर हो गया। जुलफिकर और मुनीमखांने भिन्न भिन्न पक्ष लिया। बादशाह मुंह पर किसीकी प्रार्थनाको अस्वीकार नहीं कर

सकता था। फलतः दाक्षिणात्यको बुरी हालत गुजरी। इधर राजपूतों और सिक्खोंका मुगलोंके प्रति द्रोह बढ़ता ही गया। सिक्खोंकी तलवारके आगे मुगल सिंहासन कांप उठा।

बहादुरशाहने सिक्खोंकी उद्दण्डतासे घबड़ा कर राजपूतोंसे सन्धि कर ली। अम्बर, योधपुर और उदयपुर-के साथ सन्धि हुई। टाड साहबने लिखा है, कि सन्धि के परिणामस्वरूप बाबरका सिंहासन धूलमें मिल गया और मुगलशाही खानदानके झगड़ोंको ले मरहठे लोग मुगल साम्राज्यके अधिकांश भागको हड़प जानेमें समर्थ हुए। बहादुरशाह देखो।

मुनीम खाँने सिक्ख विद्रोहको दबाया। उसकी मृत्युके बाद मन्त्री पदके लिये विवाद उठा। जुलफि-कर खांने शासकका पद छोड़ मन्त्री होना स्वीकार नहीं किया। इस पर शाहजादा अजीम उस्सान खुद सेकार्य चलाने लगा। लेकिन शाहजादा कार्य्यपटु नहीं था। राज्यमें भारी गड़बड़ी मची। सुन्नी लोग बागी हुए और राजपूतों, जाटों और सिक्खोंके उत्थानसे मुगल शक्तिका अन्त-सा दीखने लगा। बहादुरशाहका आडम्बर और दान भी मुगलोंके अधःपतनका एक कारण था।

बहादुर शाहकी मृत्युके बाद अराजकता शुरू हुई। तब दक्षिणात्यके शक्तिशाली जुलफिकर खांकी सहा-यतासे शाहजादा जहान्दार पिताकी राजगद्दी पर बैठा। कृतज्ञताके फलस्वरूप जुलफिकरको मन्त्रीपद मिला और दाउद खां दाक्षिणात्यका प्रतिनिधि बनाया गया। जुलफिकरके पिता आसफ खाँको वकील-इ मुतालककी उपाधि मिली थी।

जहान्दार बिलासी, दुश्चरित्र और कर्त्तव्य विमुख था। लालकुमारी नामक एक कुलटाके प्रणयमें आसक्त हो वह राज्यकार्य्यसे अलग रहा करता था। उसके शासन-कालमें अत्याचार और व्यभिचार चरमसीमा तक पहुंच गया था।

उस समय अजीम उस्सानका लड़का फर्रुखसियर बङ्गालमें था। वह सिंहासन लेनेकी इच्छासे जहान्दार-के राजत्वके तीसरे महीनेमें बङ्गाल छोड़ दिल्लीकी ओर बढ़ा। आते समय वह अपने पिताके मित्र हुसेन अली खाँ (विहारका शासक और सैयद अबदुल्ला खां (इलाहाबादका शासक) नामके दो सैयद भाइयोंसे वह मिला। उसने दोनों भाइयोंसे सहायता मांगी इस प्रकार संयुक्त सेना आगे बढ़ी। इलाहाबादके पास दोनों पक्षोंमें युद्ध हुआ। जुलफिकर और जहान्दार हार खा कर भाग चला। वृद्ध मन्त्री जुलफिकरने जब देखा कि जहान्दारकी भाग्य-लक्ष्मी अब जाने पर है, तब उसने भावी सम्राट्की कृपा पानेके लिये कपटी सम्राट्को बन्दी कर लिया। जुलफिकार और जहान्दार देखो।

फर्रुखसियर बादशाह हो दोनों सैयद भाइयोंको उच्च पद पर सम्मानित किया। हुसेन अली मीर बक्सी और अबदुल्ला खां वजीर बनाये गये। शासनकी ताली सैयद भाइयोंके हाथ रही। वे वास्तवमें राजशक्तिके मालिक बने और बादशाह केवल राजसम्पत्तिका भागी रहा।

इस समय बङ्गालका काजी मीरजुम्ला बादशाहका प्रियपात्र हुआ। मीरजुम्लाके आदेशानुसार हुसेन अलीने योधपुरके राजा अजित्सिंहके विरुद्ध मुगल सेनाको सञ्चालित किया। इससे वजीर अबदुलाके स्वार्थ में धक्का पहुंचा। अतएव वह मीरजुम्लाके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। लेकिन अधिकांश उमरा और स्वयं बाद-शाहने मीरजुम्लाका पक्ष लिया जिससे उसका मतलब न सध सका। वह दरबारकी रुख देख कर ताड़ गया कि अब हम लोगोंको नीचे गिरना जरूर है। अपने भाईको दिल्लीमें बुलानेके सिवा दूसरा उपाय न देख उसने शीघ्र उसे पत्र लिख भेजा।

राजपूतानेमें सन्धि कर हुसेन अली दिल्ली लौटा। तब शासनकी बागडोरके लिये विरोध पैदा हुआ। पहले दलके अधिनेता हुसेन अली खां और दूसरे दलके अगुआ मीरजुम्लाको दूर भेज देना उचित समझा गया। उस युक्तिके अनुसार मीरजुम्ला बिहारका और हुसेन दाक्षिणात्यका शासक बनाया गया।

बादशाहकी आज्ञासे जुलफिकर खांके मारे जाने पर, उसका प्रतिनिधि दाउद खां ही दाक्षिणात्यका शासक हुआ। हुसेन अली दाक्षिणात्य पहुंचा और बादशाहके

इशारेसे दाउद खां उससे लड़नेको तैयार हुआ। युद्धमें दाउद खा मारा गया।

इस समय सिक्खोंने फिर सर उठाया। मुगल सेनापतिने बड़ी निष्ठुरतासे दो हजार सिख सैनिकोंको मार एक हजारसे अधिक अनुयायियोंके साथ सिखगुरु वन्दाको बन्दी किया। बंदा मुगलोंके हाथ मारा गया। इस घटनाके एक वर्ष बाद मीरजुम्ला पटना छोड़ राजधानीके पास आया। बादशाह हुसेन अलीके परामर्शानुसार दरबारमें उसका स्वागत न कर सके। वह तुरंत शासन-कार्यके लिये लाहोर भेजा गया।

इधर सैयद भाइयोंका प्रभाव जितना बढ़ता जाता था, उधर बादशाहको भी विलासिता उतनी ही अधिक बढ़ती जाती थी। राजकाजमें बादशाहका जी जरा भी न लगता। और तो क्या, प्रधान मन्त्रीको उसका दस्तखत लेना भी कठिन हो गया। राज्यकी इस विशृङ्खल दशामें, जिजिया कर फिरसे लगाया गया। हिन्दू कर्मचारियोंसे बरखास्तगीकी धमकी दिखा हिसाबका तलब किया गया। बादशाहने सैयद भाइयोंके पंजोंसे छुटकारा पानेकी आशासे उठते हुए मराठोंको उत्साहित करना शुरू किया। इस आपसी विवादके कारण सभी जगह हिन्दुओंका पराक्रम बढ़ गया और मुगल-साम्राज्यका गौरव जाता रहा।

हुसेन अली बहुत दिन तक युद्ध करके भी मराठोंको न दबा सका, अन्तमें उसे सन्धि करनी पड़ी। इस सन्धिके फलस्वरूप, मराठोंको शिवाजीके अधिकृत प्रदेशोंमें स्वतन्त्र राज्य तथा दाक्षिणात्यमें चौथ और सरदेशमुखी उगाहनेका अधिकार मिला। इसके बदले उन लोगोंने बादशाहको सालाना १० लाख रुपया और एक हजार सेना भेज सहायता देना स्वीकार किया।

सैयद भाइयोंके विपक्षियोंकी सलाहसे बादशाह इस घृणित प्रस्ताव पर उत्तेजित हो उठा। वह सैयदभाइयोंको जड़से उखाड़ डालनेके लिये योधपुरके राजा अजित्‌सिंह के साथ सम्मिलित हुआ। अबदुल्ला खां अपनी रक्षाके लिये सैन्यसंग्रह करने लगा। चञ्चल चित्त बादशाहकी आज्ञासे हुसेन अली राजधानी बुलाया गया। उसको इस षड़यन्त्रका पहले ही बू मिल गया था। अतएव दूसरा उपाय न देख वह आत्मरक्षाके लिये १० हजार मराठी सेना ले कर दिल्ली पहुंचा और अपने भाईको मदद पहुंचानेके लिये अरक्षित राजधानी पर हमला कर दिया तथा उसे अपने कब्जेमें कर लिया। प्रासादकी छत पर नगरकी महिलाओंसे घिरा हुआ बादशाह बंदी हुआ। यह कारागार मानो उसका कब्र ही था। यहां भी बादशाह मुक्त होनेकी आशासे पहरेदारोंके साथ सैयद भाइयोंके विरुद्ध षड़यन्त्र रचने लगा। बंदी होनेके तीन महीने बाद विपक्षियोंका दिया हुआ विषयुक्त आहार खा कर बादशाहने अपनी मानवी लीला सम्वरण की। फरुखसियर देखो।

सैयद भाइयोंने इस बीचमें रफि उस्सेन (बहादुर शाहका लड़का)-के सबसे छोटे लड़के रफिउद्-दराजतको मयूरसिंहासन पर विठाया। उसको सैयद भाइयोंके स्वेच्छाशासन पर निर्भर करना तथा केवल नामका बादशाह रहना पसन्द न था। अतएव उसने अपने बड़े भाई रफि-उद्दौलाके नामसे खुतुबा-पाठ और सिक्का चलानेका प्रस्ताव किया। तदनुसार रफि उद्दौला बादशाह हुआ। वह भी पुतली जैसा तीन महीने राजकाज चला इस लोकसे चल बसा। इन दिनों हिन्दू शक्ति बढ़ती तथा मुगल-शक्ति क्षीण होती जाती थी।

राजपूतराज जयसिंह और अजित्‌सिंह बड़े शक्तिशाली थे। वे लोग अपनी सेना ले दिल्लीके द्वार पर आ डटे। सैयद भाइयोंने उन लोगोंका क्रोध शान्त करनेके लिये जयसिंहको सुरतका तथा अजित्‌सिंहको अजमेर और अहमदाबादका शासन दे दिया। फलतः उन लोगोंका राज्य भारत-महासागर तक फैल गया। मराठे लोग पहलेसे ही दाक्षिणात्यमें स्वाधीन हो चुके थे। अब केवल आगरेके आस-पासके स्थान ही मुगल बादशाहके शासनमें बच रहे।

रफि-उद्दौलाकी मृत्युके बाद दोनों सैयद-भाई अपनी बताई राह पर चलनेवाले एक शाहजादेकी खोजमें चले। बहादुर शाहके सबसे छोटे लड़के जहान शाहके लड़के सुलतान रोशन अख्तरको उन्होंने महम्मद शाह नाम दे दिल्लीकी राजगद्दी पर विठाया। अन्तिम मुगल-बादशाहोंमें शाहजहांके मयूर सिंहासन पर बैठनेका सौभाग्य केवल इसीको प्राप्त हुआ था।

इसी समय फारससे आये हुए सआदत् अली और तुर्क चिनकिलिज् खांका प्रभाव दिल्ली दरवारमें जम गया। वे लोग अपने अपने दलके सरदार थे। बादशाहने उन लोगोंकी सहायतासे सैयद भाइयोंकी शक्ति नष्ट कर डाली।

एकके पतनसे दूसरेका उत्थान हुआ। वाढ़ावासी सैयद भाइयोंका शक्ति ह्रास तो हुआ लेकिन तुरानी और इरानी दो सरदारोंकी शक्ति बढ़ गई। मरहठे लोग इस समय सर उठाये खड़े थे। उन लोगोंसे चिन्‌किलिजने हार कर मालवा राज्य छोड़ दिया और राज-दरवारसे कुछ कर देना भी स्वीकार किया। अब शाही शासनमें उसका भी प्रभाव घट गया। कारण, उस समय दौरान् खां सर्वेसर्वा हो रहा था।

चिन्‌किलिजने अपने सम्मानकी रक्षाके लिये सयादत्‌से सलाह ले फारसके राजा नादिरशाहको बुला भेजा। उस समय सरहदकी वात ले कर दिल्ली सरकार और नादिरशाहके बीच तकरार चल रहा था। १७३८ ई०में नादिरशाह भारत आया। सयादत् युद्धके वहानेसे आगे बढ़ा। उसकी सहायतामे खां दौरान् दौडा और युद्धमे मारा गया। इसके वाद सयादत् अलीकी मृत्यु हुई। यही अयोध्याके वजीरवंशका प्रतिष्ठाता था। अयोध्या और सयादत् अली देखो।

चिन्‌किलिज्‌ने सन्धिका प्रस्ताव किया। नादिर-शाहने उसको उपेक्षा कर दिल्लीमें प्रवेश किया। वह ८ करोड़ रुपया और मयूरसिंहासन ले कर अपने देश लौट गया। नादिरशाह देखो।

१७४५ ई०में रोहिलखंड तथा वंगाल, विहार और उड़ीसाके शासक लोग तथा हैदरावादमे निजाम नामसे चिन्‌किलिज् स्वाधीनताके साथ राजकाज चलाने लगे। इसके वाद ही दुर्रानी सरदार अहमद शाह अवदाली हिन्दुस्तान लूटने आया। १७४८ ई०में युद्धके वाद भागते समय वजीर कमरुद्दीन्‌की मृत्यु हुई। भाईके वियोग-शोकसे वादशाहका स्वास्थ्य खराव हो गया। उसी वर्ष १६वी अप्रिलको वादशाहकी मृत्यु होने पर उसका लड़का अहम्मदशाह सिंहासन पर बैठा। इस समय रोहिला-युद्ध, सफदरजंग और निजामपुत्रका विद्रोह, दाक्षि-णात्यमें नासिरजंगका शासन, राजमाता कुदुसिया वेगम (उदमवाई)-के प्रियपात्र खोजा जाविद खांका प्रभुत्व, जाविद-हत्या, सिया और सुन्नी दलोंमें विरोध, अपनी विलासिता तथा मुगल साम्राज्यको नष्ट करने-वाली मराठा और जाट-शक्तिका उत्थान आदि अनेक कारणोंसे वादशाह घवड़ा उठा और शासन न चला सका। मन्त्रियोंने षड्यन्त्र कर उसको गद्दीसे उतार दिया तथा सलीमगढ़के कारागारमें उसे वन्दी रक्खा। दुष्ट द्रोहियोंने उसको दोनों आंखें निकलवा लीं। तैमूरवंशीय अन्तिम वादशाहोंमें यही कुछ कुछ साम्राज्य सुखका भोग कर सका था। इसके वाद जो मुगल-वाद-शाह गद्दी पर वैठे वे सव मरहठों या अंगरेजी कम्पनीके खिलौनेमात्र हुए। अहमदशाह, नाशिरगज और सफदरजंग आदि शब्द देखो।

१७५४ ई०में अहमदशाहको कारागार भेज मन्त्री लोगोंने जहान्दारके (अनूप वाईके गर्भसे उत्पन्न) छोटे लड़के अज़ीज उद्दीनको २य आलमगीरके नामसे सिंहा सन पर विठाया। इसके राज्यकालमें अराजकतासे लाभ उठा। १७५८ ई०में अह्मद अवदालीने दूसरी वार भारत पर चढ़ाई की। अहमदशाह देखो।

१७५६ ई०में २य आलमगीर गुप्तरूपसे मारा गया और औरंगजेवके लड़के कामवक्सका पोता महि उल सुन्नत '२य शाहजहां' नाम धारण कर दिल्लीके सिंहासन पर बैठा। केवल कुछ महीने ही इसका राज्य रहा। उन दिनों मन्त्री लोगोंको वदमाशीसे दिल्लीमें अराजकता अत्यन्त बढ़ गई और इसलिये २य शाहजहांके राज्य-कालको इतिहासमें स्थान नहीं दिया गया है। इस समय सदाशिव भाउ द्वारा चलाया गया पानीपतका युद्ध समाप्त हुआ। भाउ साहवकी बुद्धिके दोषसे महा-राष्ट्र साम्राज्यका स्थापन दुष्कर हो गया। पानीपतकी लड़ाईमें मराठे नष्ट भ्रष्ट हो गये तथा हिन्दूजातिकी आशा पर पानी फेर गया।

१७४० ई०मे मराठोंने दिल्ली लूटा। मरहठा-सेना-पतिने अकर्मण्य २य शाहजहांको राजगद्दीसे उतार २य आलमगीरके लड़के अली गौहरको वादशाह वनाया। उस समय अली गौहर बंगालमें वैठ अपने भाग्यकी

परीक्षा कर रहा था। मराठा-सेनापति भाउ साहबने अली गौहरके लडके मिर्जा जवान भखत्को उसका प्रतिनिधि बनाया।

इस घटनाके ठीक पहले बंगालमें सिराज उद्दौलाको हरा कर अंगरेजी कम्पनी वहां मुगल-शक्तिको कमजोर कर रही थी। इसी समय कम्पनीको बंगालकी दीवानी मिली। इसको ले कर दिल्ली-सरकारके साथ अङ्गरेजोंकी घनिष्ठता बढ गई। कोम्पनी देखो।

१७६० ई०में पानीपतमें एक ओर हिन्दू सैन्यके 'हर हर महादेवकी जय' और दूसरी ओर पठानोंके 'अल्लाह अल्लाह, दिन्, दिन्'-के निनादसे रणक्षेत्र और आकाश गूंज उठा। पाठान लोगोंने रामलीलाके समय अचानक हिन्दुओं पर हमला किया। युद्धमें संयुक्त हिन्दू और मुगल हार गये। इधर अयोध्याके नवाव वजीर सफदरजंगके लडके सुजा उद्दौलाकी शक्ति ध्वंस हो गई। १७६४ ई०में वक्सरके युद्धमें मेजर मुनरोने सुजा उद्दौला को परास्त किया।

१७६१ ई०में पानीपतके युद्धके वाद, कावुलका शासक अवादली हिन्दुस्तानसे वहुमूल्य रत्न अपना देश ले गया। निर्वासित शाह आलमके लडके जवान् भख्त्को शासनभार मिला। प्रसिद्ध नाजिव उद्दौला (रोहिला) उसका रक्षक नियुक्त हुआ। १७६४ ई०में वक्सरमें सुजा उद्दौलाकी पराजयके वाद, आलमने इष्ट इण्डिया-कम्पनीको वंगालकी दीवानीकी सनद दी। १७७८ ई०में अंग्रेजी कम्पनीकी रक्षामें रहना कष्टकर समझ, शाह आलम दिल्ली चला गया। राजधानी आने पर रोहिला सरदार कादिर खाने उसकी दोनों आंखें निकाल ली। नाजिव उद्दौलाके लडके नाजिव खाकी सम्पत्ति उसके चरित्र दोषके कारण जव्त कर राजकोषमें ले ली गई। इस अत्याचारका वदला सधानेके लिये गुलाम कादिरने वादशाहके वंशधरको अंधा कर डाला। उसके वाद १८०६ ई० तक शाह आलम राज्य करके यहाँसे चल वसा।

१७५७ ई०के पलाशी-युद्धमें सिराज मारा गया। वास्तवमें अंग्रेजी कम्पनी वंगालका सूवेदार हुई और नवावका खानदान केवल एक निर्दिष्ट मासिक वृत्ति ले कर सन्तुष्ट रहा। मीरजाफरके दामाद मीरकासिमके साथ शासन विषयमें अंग्रेजोंका विरोध हुआ। इस मौकेमें अङ्गरेज लोग वंगालका मालिक वन वैठे। इधर जैसे मरहठोंकी शक्ति वढ़ती जाती थी उधर वैसे ही अंग्रेजोंका भाग्य उगता जाता था। जिस समय मराठे और फरासीसी लोग मिल कर अङ्गरेजोंके विरुद्ध उठ खड़े हुए उस समय मुगलशाही खानदानकी हालत बुरी हो गई थी। लार्ड वेलेस्लीके शासनकालमें अङ्गरेज सेनापति लार्ड लेक वजीर सयादत अली खाको सहायतामें दिल्ली आया (१८१२)। इसी समय दिल्ली-सरकार पर अङ्गरेजोंका प्रभाव जम गया। अङ्गरेज रेसिडेन्टकी प्रार्थना पर तथा सपारिषद् गवर्नर जेनरलके आवेदन पर कोर्ट आव डिरेक्टर्सने भारतके वादशाहकी वार्षिक वृत्ति निश्चित कर दी। इस आवेदनपत्र पर वेलेसली, जो० एच० वार्लो और जी उंडीरके हस्ताक्षर थे।

वादशाह शाहआलमके मरने पर १८०६ ई०में ४८ वर्षकी उम्रमें २य अकवरशाह दिल्लीके राजगद्दी पर वैठा। तव तक अङ्गरेज प्रतिनिधिने राजदरवारमें अपना प्रभुत्व फैला लिया था। लार्ड वेलेस्लीने वादशाहकी शक्ति नष्ट कर और दश हजार रु०की वार्षिक वृत्ति निश्चित कर दी। अकवर एक अच्छा कवि था। कवितामें उसका 'सूया' नाम पाया जाता है। जिस समय रोमकी राज्यविजयिनी शक्तिकी अवनति हो गई थी उस समय रोमवासियोंने तलवार छोड कलाओंका आश्रय लिया था। नेपोलियनके अन्त होने पर फ्रांसकी शक्ति सिथिल पड़ गई थी और वहांके रहनेवाले विलासोंमें डूव गये थे। इस प्रकार फ्रांसवाले राज शक्तिके कम हो जाने पर विद्याके जोरसे अनेक वैज्ञानिक तत्त्वोंका आविष्कार कर सके थे। लेकिन भारतके शक्तिहीन दिल्ली-साम्राज्यके अवसान समयमें दो एक कविता-ग्रन्थकी रचना छोड़ और कोई विशेष उन्नति न हुई। वलहीन मुगल भोगविलासमें पागल हो पाप-समुद्रमें कूद पड़े थे। वे पापोंका आश्रय न छोड़ सके। इसीलिये अपने अधःपतनके वाद मुगल लोग और किसी प्रकारकी जातीय उन्नति न कर सके।

१८३१ ई०में अबुल नशर् मुइन् उद्दीन् महम्मद

अकबरशाह (२य)-के मरने पर उसका लड़का २य बहादुरशाह] अबुल मुजफ्फर सिराज-उद्दीन महमद बहादुरशाह नाम धारण कर बादशाही तख्त पर बैठा। अङ्गरेज-सरकार उसको भी १ लाख रु० मासिक वृत्ति देती थी। वह फारसीका अच्छा विद्वान् था। उसकी रची उर्दू कवितामें 'जाफर' नामकी भणिता पाई जाती है। कितनोंका कहना है यही १८५७ ई०के गदरका प्रवर्त्तक था। गदरके बाद तैमूरवंशका अन्तिम बादशाह बहादुरशाह (२य) अंगरेजोंके हाथ बन्दी हुआ। १८५८में यह कलकत्तेमें नजरबन्द किया गया। पश्चात् उसी वर्षकी ४थी दिसम्बरको 'मेगोया' नामक राजकीय जहाज पर चढ़ा कर वह बर्म्माकी राजधानी रंगूनमें निर्वासित किया गया।

इस प्रकार बाबर शाहके राज्याधिकारसे ले कर बहादुर शाह (२य) के राज्यकाल तक ३३२ वर्ष दिल्लीके राजसिंहासन पर बैठ मुगल बादशाहोंने भारतका शासन किया। अन्तिम ५० वर्ष तक मराठों और सैयद भाइयोंके कूटनैतिक विप्लवमें मुगल शासन चलाया गया था।

जिस पानीपतके रणक्षेत्रमें १५२६ ई०में बाबरशाहने मुगल साम्राज्यकी आंखें खोली थीं उसी पानीपतके रणक्षेत्रमें सन् १७६१को मुगल-साम्राज्यकी मृत्यु हुई और मानो १८५८ ई०में गदरके बाद उस साम्राज्यका श्राद्ध हुआ।

मुगल शासनमें भारतमें जो सम्यक् उन्नति हुई थी वह केवल अकबर बादशाह और शाहजहांके राज्यकालमें दीख पड़ती है। अरबी, प्राकृत और हिन्दीभाषाके सम्मिश्रणसे सुललित और सरल उर्दू या रेख्ता भाषा उत्पन्न हुई। राजदरबार और उसके आस पासके स्थानोंमें उर्दू इ मुयाली व्यवहृत होती थी। बादशाह शाहजहांके राजधानी दिल्लीमें राजपाट चिरस्थायी रखनेका बन्दोबस्त करने पर उर्दू-इ-मुयाली राजके बही-खातोंमें भी व्यवहृत होने लगी थी और दिल्लीके लोग जो उर्दू बोलते थे उसे उर्दुकी जबान (Lingua Franca—राष्ट्रीयभाषा) कहते थे।

बादशाह अकबरके प्रयत्नसे सैकड़ों संस्कृत ग्रन्थ उर्दू या पारसीमें लिखे गये थे और उसके राज्य कालमें संगीतकलाका भी आदर बढ़ गया था। उस समय तानसेन आदि जगत्प्रसिद्ध गायक लोग हुए थे। काशीके मानमन्दिरको ज्योतिःशास्त्र सम्बन्धी उन्नति और राजा टोडरमलकी पैमाइशी बन्दोबस्त मुगलशासनकी सुव्यवस्थाके प्रमाण है। मुसलमान शब्द देखो।

अकबर जैसा विद्यानुरागी, सदाशय और स्वजनप्रिय था उसके पुत्र और पोतोंमें उन गुणोंका विशेष अभाव नहीं था। अकबर धर्म और कर्मवीर था। कर्मक्षेत्रमें रह कर राजसिक उन्नतिके साथ उसने कुछ कुछ सात्त्विक उन्नति भी की थी। उसका चलाया इलाही मत इस बात को साबित करता है। "एक ईश्वरके पास सभी प्राणी समान हैं" उसका मत उस समय भारतमें स्थायी न हो सका। मुगल लोग प्रायः सिया मतावलम्बी हैं।

शाहजहां बादशाह भोगविलासमें आसक्त हो १६४५ ई०में सुन्दर प्रासादोंसे सुशोभित मनोरम वर्त्तमान दिल्ली नगर (शाहजहानाबाद) बसाया। उसके बनाये प्रासादोंमें उसके वंशधर १८५७ ई० तक निर्विवाद रहते आये। ये भवन तथा इनके मध्य आमखास दीवान इ आम और दीवान् इ खास इस समय श्रीहीन होने पर भी प्राचीन कीर्त्तिका परिचय दे रहे हैं। उसके राज्यकालमें और निज व्ययसे निर्मित ताजमहल समाधि-मन्दिर संसारका सबसे उत्तम स्थापत्य-निदर्शन है। संसारके अत्यन्त आश्चर्यजनक पदार्थोंमें ताजमहल भी एक है। ग्राणाडा और कर्डोभाकी मुस्लीम-कीर्त्ति इसकी जोड़की नहीं है। शाहजहांकी स्थापित्यकीर्त्ति उसके कर्मजीवनका परिचय देती है। उसके लड़के निष्ठुर औरंगजेबने प्रजाको अनेक प्रकारके अत्याचारोंसे कष्ट दे कर उनके धर्म कर्ममें भी बाधा दी थी। औरंगजेबने जो विषके बीज बोये थे उसके वंशधरोंको उन्हींका फल चखाना पड़ा और उस विषको खा कर ही भारतमें तैमूर वंशका नाश हुआ।

दिल्लीका अन्तिम बादशाह बहादुर शाह अपनी दो स्त्रियों, एक लड़के और एक पोतेके साथ बर्मामें निर्वासित हुआ था। अभी भी उसके वंशधर वहां बड़े कष्टसे दिन बिता रहे हैं। बहादुर शाहके दूसरे दूसरे

लड़के गदरके पृष्ठपोषक होनेके कारण अंग्रेजोंके हाथ पकड़े और मार डाले गये। बहादुरशाहने गदरके समय अपने नामके सिक्के चलाये थे।

मुगलई (फा० वि०) मुगलोंका-सा, मुगलोंकी तरहका।

मुगल पठान (फा० पु०) एक प्रकारका खेल। यह जमीन पर खाने खींच कर सोलह कंकड़ियोंसे खेला जाता है।

मुगलाई (फा० स्त्री०) मुगल होनेका भाव, मुगलपन।

मुगलानी (फा० स्त्री०) १ मुगलजातिकी स्त्री। २ कपड़ा सोनेवाली स्त्री। दासी, मजदूरनी।

मुगली (फा० स्त्री०) एक प्रकारका पसली रोग जो छोटे छोटे बच्चोंको होता है। इसमें उनके हाथ पैर ऐंठ जाते और वे बे-होश हो पड़ते हैं।

मुगवन (हिं० पु०) वनमूंग, मोठ।

मुगवा (सं० स्त्री०) अतिसवा, मयूरवल्ली।

मुगलता (अ० पु०) धोखा झांसा।

मुगस्थान (सं० क्ली०) जनपदभेद।

मुगूह (सं० पु०) १ दात्यूह पक्षी, पपीहा। २ हिरण-विशेष।

मुग्दई—मध्यप्रदेशके चांदा जिलेके पेंजागढ पहाड़का एक सोता और कन्दरा। कन्दरामें बहुत-सी देव देवियोंकी प्रतिमूर्त्तियां हैं। पिण्डारी-डकैतोंके उपद्रवसे आत्म-रक्षा करनेके लिये इस ग्रामके अधिवासी इसी पर्वत पर छिप रहते थे। यहां एक मेला लगता है।

मुग्धम (हिं० वि०) १ सङ्केत रूपमें कही हुई, जो बहुत खोल कर या स्पष्ट करके न कही जाय। (पु०) २ दाँव-में वह अवस्था जिसमें न हार हो और न जीत।

मुग्ध (सं० त्रि०) मुह-कर्त्तरि क। १ मूढ़, मोह या भ्रममें पड़ा हुआ। २ सुन्दर, खूबसूरत। ३ मोहित, आसक्त। ४ नवीन, नया।

मुग्धता (सं० स्त्री०) मुग्ध-तल-टाप्। १ मुग्धत्व, मूढ़ता। २ सौन्दर्य, सुन्दरता। ३ मोहित या आसक्त होनेका भाव।

मुग्धदृश् (सं० स्त्री०) १ विशाल दृष्टि, बड़ी बड़ी आंखें। (त्रि०) २ सुन्दर चक्षुविशिष्ट, अच्छी आँखवाला।

मुग्धधी (सं०त्रि०) सरल बुद्धि।

मुग्धबुद्धि (सं० त्रि०) जिसकी बुद्धि भ्रान्त हो, बेवकूफ।

मुग्धबोध (सं० क्ली०) मुग्धः सुन्दरः बोधः ज्ञानं पद-पदार्थानां भवत्यस्मात्, यद्वा मुग्धान् मूढान् अल्प बुद्धीन् जनान् बोधयतीति बुध अण्। बोपदेवकृत व्याक-रणविशेष। यह व्याकरण पढ़नेसे पदपदार्थका अच्छी तरह ज्ञान हो जाता है, अथवा मन्दबुद्धिवाले भी उत्तम ज्ञानलाभ कर सकते हैं, इसीसे इसका नाम 'मुग्धबोध व्याकरण' हुआ है। प्रायः सभी व्याकरणकारोंने पाणिनिका अनुसरण कर व्याकरण लिखे हैं। किन्तु बोपदेवने किसीका आधार नहीं लिया है, नये ढङ्ग पर इस व्याकरणकी रचना की है। इसमें जो सब संज्ञाएं और सूत्र हैं वे दुरुच्चार्य और गूढ़ार्थयुक्त हैं। इसीसे यह व्याकरण आसानीसे समझमें नहीं आता। विशेष बुद्धिमत्ता न रहनेसे इस व्याकरणमें व्युत्पत्ति लाभ करना कठिन है।

> "मुकुन्दं सच्चिदानन्दं प्रणिपत्य प्रणीयते।
> मुग्धबोधं व्याकरणं परोपकृतये मया॥"
>
> (मुग्धबोधव्या०)

इस व्याकरणको सरल करनेके लिये मुग्धबोधपरि-शिष्ट, मुग्धबोधप्रदीप मुग्धबोधसम्बोधिनी, मुग्धबोध बोधिनी आदि टीकाएं रची गई हैं।

मुग्धभाव (सं० पु०) सरलता, बुद्धिहीनता।

मुग्धवत् (सं० त्रि०) मोहित, आसक्त।

मुग्धा (सं० स्त्री०) मुग्ध-टाप्। नायिकाभेद। यह नायिका स्वीया और परकीयाके भेदसे दो प्रकारकी है। इनमें फिर स्वीयाके तीन भेद हैं, मुग्धा, मध्यमा और प्रगल्भा। यह तीनों नायिका ज्ञातयौवना और अज्ञात-यौवनाके भेदसे दो प्रकारकी है। फिर इसके भी दो प्रकार हैं, नवोढ़ा और विश्रब्धनवोढ़ा। सलज्जभाव और पराधीनरति होनेसे नवोढ़ा तथा सञ्जात-प्रणयाको विश्रब्धनवोढ़ा कहते हैं। इसकी चेष्टा और क्रिया मनो-हारिणी है। इसका कोप बहुत ही मृदु होता है और इसे साज-सिंगारका बहुत भाव रहता है।

मुघीस उद्दीन—दिल्लीका गुलामवंशीय राजा बलवनका भतीजा। इसका असल नाम मालिक छाजू था। राज-

द्रोही हो कर इसने अपना नाम सुलतान मुघीस उद्दीन रखा था।

मुङ्ग—काश्मीरके एक राजाका नाम।

मुंङ्ग—पंजाब-प्रदेशके गुजरात जिलाअन्तर्गत फालियन तहसीलका एक बड़ा गाँव। यह अक्षा० ३२° ३६´ उ० तथा देशा० ७३° ३३´ पू० गुजरात शहरसे ३५ मील दूरमें अवस्थित है। यहां बहुत पुराने जमानेका ईंटों-टीला नजर आता है। उस टीलेसे बहुतसे सिक्के पाये गये हैं जिनमें शक-राजाओंके नाम अङ्कित हैं। बहुतसे सिक्कोंमें साङ्केतिक निक् नाम देखा जाता है जिससे डा० कनिंहम अनुमान करते हैं, कि यहीं पर महात्मा अलेकसन्दरने निकिया (Nikia) नगरी बसाई थी। माकिदन-वीरने जिस रणक्षेत्रमें पुरुराजको परास्त किया था, अपनी विजय कीर्त्तिकी घोषणाके लिये वहां सिकन्दर निकिया नगरी बसा गये थे।

यहांके लोगोंका कहना है, कि यहां मोग नामक किसी राजाकी राजधानी थी। डा० कनिंहम कहते हैं, कि पाये गये सिक्कोंमें जो मोया (Moa) वा मोनस (Mona.) राजाका नाम मिलता है वही अपभ्रंशरूपमें मोगराज नामसे प्रसिद्ध है।

मुङ्गद—काश्मीरराजके एक सेनापतिका नाम।

(राजतर ८।१०६२)

मुङ्गपाकम्—मन्द्राजप्रदेशके विशाखपत्तन जिलान्तर्गत एक बड़ा गांव। यह अक्षा० १७° ३८´ उ० तथा देशा० ८३° ३´ ३०´´ पू०के मध्य विस्तृत है। यहा स्थानीय पण्यद्रव्यका बड़ा कारबार है।

मुङ्गराम—हरिवंश, मन्मथचरित और सम्यक्कौमुदीके प्रणेता।

मुङ्गरोड़—कीकट देशके अन्तर्गत एक प्राचीन स्थान।

मुङ्गा (सं० स्त्री०) पुराणानुसार एक देवीका नाम।

मुङ्गेर—विहार और उड़ीसा प्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० २४° २२´ से २५° ४६´ उ० तथा देशा० ८५° ४०´ से ८६° ५५´ पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण ३६२२ वर्गमील है। इसके उत्तरमें भागलपुर और दरभंगा जिला, पूर्वमें भागलपुर, दक्षिणमें सन्थाल परगना और हजारीबाग तथा पश्चिममें पटना, गया और दरभंगा जिला है।

पुण्यसलिला गङ्गानदी इस जिलेको दो भागोंमें बांटती है। उत्तरी और दक्षिणी भागका प्राकृतिक सौन्दर्य परस्पर विभिन्न है। उत्तरमें बूढ़ीगण्डक और तिलजुगा नामकी गङ्गाकी दो शाखा नदियां बहती हैं। वर्षाकालमें जब उनमें बाढ़ उमड़ आती है तब किनारेसे २ वर्गमील स्थान तक जलप्लावित हो जाता है। पानीके हट जाने पर वहां एक तरहकी घास उगती है जिसे भैंस बड़े चावसे खाती हैं। घासके अलावा वहां गेहूं और धानकी भी अच्छी फसल लगती है।

गङ्गाका दक्षिणभाग अपेक्षाकृत सूखा है और जलका अभाव होनेसे उपजाऊ नहीं है। इस भागमें बहुत सी छोटी छोटी पहाड़ियां देखी जाती हैं। खड़गपुरकी पर्वतमालासे क्यूल और मान नदी निकल कर गंगामें गिरती हैं।

इस जिलेकी नदियोंमें गङ्गा, छोटी गण्डक, तिलजुगा और क्यूलमें बारहों महीने नावें चलती हैं। अलावा इसके खगड़िया, बाघमती और चन्दा आदिमें भी नावें चलती देखी जाती हैं। इस कारण स्थानीय वाणिज्यकी दिनों दिन उन्नति हो रही है।

पहाड़ी भूभागमें नाना वर्णके पत्थर, लोहे, रांगे, अबरक आदि पाये जाते हैं। जङ्गलमें शीशम, सखुआ साखू, आम, महुआ, पीपल, पाकड़, इमली और कदम्ब आदि बड़े बड़े पेड़ देखे जाते हैं।

जङ्गली पेड़ोंमें महुआ ही पहाड़ी जातिका जीवनाधार है। उसके फूलका सुखा कर वे अपने खाद्यद्रव्यरूपमें काम लाते हैं। गवर्मेण्टकी देख-रेखमें फूलसे शराब बनाई जाती है। देशी लोग महुएके बीजसे एक प्रकारका तेल निकालते हैं जो मिठाई आदि बनानेके काममें आता है। इसके अतिरिक्त जङ्गली पेड़ोंसे धूना, गुग्गुल, लाख, गोंद और हरीतकी आदि वाणिज्य द्रव्य भी बहुतायतसे पाये जाते हैं। जङ्गली चेहार और सबाई नामकी घाससे रस्सा बनाया जाता है।

समूचे जिलेका कोई विशिष्ट इतिहास नहीं है। बहुत प्राचीन कालमें यह स्थान अङ्गराज्यके अधीन था। ब्रह्मखण्ड नामक संस्कृत भूगोल ग्रन्थमें काकटराज्यके

अन्तभुक्त मुङ्गरोड नामक नगरका उल्लेख देखनेमें आता है। मुद्गगिरिसे ही वर्त्तमान मुङ्गेर नगर और उससे जिलेका नामकरण हुआ होगा।

पौराणिक तथा भारतीय पुरावृत्त युगका आख्यान अन्धकारसे ढंके रहनेके कारण मुसलमानी अमलसे ही इस जिलेका इतिहास आरम्भ किया जाता है। ११९५ ई०में महम्मद इ-बख्तियार खिलजीके वङ्गविजय कालसे ले कर १८वीं सदीके अन्तमें वङ्गेश्वर मीरकासिमके साथ अङ्गरेजोंका जो युद्ध हुआ, उस समय तक मुङ्गेर दुर्ग और राजधानीमें मुसलमान शासनकर्त्ताओंका ही प्रभाव देखा जाता है। आईन-इ-अकवरी और राजा टोडरमल-द्वारा रचित भारतके पैमाइशी ग्रन्थमें मुङ्गेर सरकारमें ३१ महालोंकी बात लिखी है। उन ३१ विभागोंकी मालगुजारी कुल मिला कर १०९६२५९८१ दाम (दमडीका तिहाई) थी। बादशाहको जरूरत पडने पर उक्त सरकारके शासनकर्त्ता २१५० घुडसवार और ५० हजार पैदल सेना भेजनेके लिये बाध्य थे। उस समय गङ्गाके दक्षिण विभागमें कुछ देशी सामन्त राजा अर्द्धस्वाधीनभावमें राजकार्य करते थे। इससे अनुमान किया जाता है, कि मुगल-राजसरकारमें कभी भी नियमित रूपसे राजा टोडरमल द्वारा ठहराया गया राजस्व जमा नहीं होने पाता था।

इस सब देशी सामन्तोंमें खडगपुरका राजवंश उल्लेखनीय है। खडगपुरके राजा विशेष पराक्रमी थे। २४ परगनोंमें उनका शासन था। एक भाग्यवान् राजपूत सरदार इस राजवंशके प्रतिष्ठाता हैं। उन्होंने घोर विश्वासघातकता द्वारा खेतौरीवंशके आदि राजाओंको राज्यच्युत किया था। उनके लडके जहांगीर बादशाहके शासनकालमें मुसलमान हो गये थे। पीछे उन्होंने बादशाह खानदानकी एक कन्यासे विवाह कर अपने राज्यकी नींवको मजबूत कर लिया। अंगरेजोंकी अमलदारीसे ही इस राजवंशका अधःपतन आरम्भ हुआ। इस समय अंगरेज-सरकारमें यथासमय खजाना न देनेके कारण बहुत बाकी पड़ गया था और उसीमें सम्पत्तिका बहुत कुछ अंश बिक गया। उनमेंसे अधिकांश दरभंगाके महाराजने खरीद किया है। महाराज अभी भी पूर्वतन राजवंशके प्रतिनिधिको कुछ कुछ वार्षिक वृत्ति देते हैं। अन्यान्य प्राचीन राजवंशमें फरकिया राजवंश एक है। एक राजपूत-सरदार इस वंशके प्रतिष्ठाता थे। उन्होंने ही हुमायूंके जमानेमें दुसाध नामक अत्याचारी और दुर्द्दान्त जातिको परास्त कर काबू किया था। इस कारण बादशाहने उन्हें एक जमींदारी उपहारमें दी। उनके वंशधर आज भी उस स्थानका शासन करते हैं। किन्तु उस समयका राज्य अभी अनेक भागोंमें बंट गया है। गिधोरके महाराज सर जयमङ्गल सिंह के, सी, एस, आई आदिम राजासे नीचे २९वीं पीढ़ीमें हैं। उन्होंने वृटिश सरकारके प्रति विशेष राजभक्ति दिखलाई है। उनके लडके महाराज शिवप्रसाद सिंह बहुत दानी थे।

अंगरेजी-शासनके आरम्भमें मुङ्गेरकी ऐतिहासिक घटनावली भागलपुर जिलेके साथ मिला दी गई। नवाब मीरकासिमके मुङ्गेरमें रहते समय अंगरेजोंके साथ उनका जो विवाद खडा हुआ वह मीरकासिम शब्दमें सविस्तार लिखा जा चुका है। मीरकासिम देखो।

पहले यह जिला भागलपुरके अधीन था। १८३२ ई०में यहां एक स्वतन्त्र डिपटी कलकृर और ज्वाइण्ट मजिष्ट्रेट नियुक्त किये गये। पीछे जिलेके परिरक्षकने उन्हें प्रधान मजिष्ट्रेट और कलकृरके पद पर अभिषिक्त किया। इसी समयसे मुङ्गेरका राजस्व और विचार विभाग भागलपुरसे बिलकुल अलग हो गया।

इस जिलेमें मुङ्गेर, जमालपुर, शेखपुरा और खगडिया नामक ४ शहर और २५१६ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या २० लाखसे कुछ ऊपर है। हिन्दूकी संख्या सैकडे पीछे ९० है, बाकीमें मुसलमान तथा अन्यान्य जातियां हैं। विद्याशिक्षामें यह जिला बहुत पीछा पडा हुआ है। अभी कुल मिला कर १५००० स्कूल हैं जिनमें ३० सेकेण्ड्री, ३०० स्पेशल और बाकी प्राइमरी स्कूल हैं। इनमें डायमण्ड जुबली कालेज और जिला स्कूल तथा बेगूसराय और जमूईका हाई स्कूल प्रधान है। स्कूलके अलावा २० अस्पताल भी हैं। जमालपुरमें इष्ट इण्डिया कम्पनी रेलवे-कम्पनीका लोहेका एक कारखाना है। ऐसा बडा कारखाना भारतमें और कहीं भी नहीं देखा जाता

यहांका सीताकुण्ड नामक गरम सोता एक हिन्दू-तीर्थ समझा जाता है। शहरमें एक कारागार भी है।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २४° ५७' से २५° ४४' उ० तथा देशा० ८५° ३८' से ८६° ५१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १८६२ वर्गमील और जनसंख्या ६ लाखके करीब है। इसमें मुङ्गेर, जमालपुर, खगडिया और शेखपुरा नामक ४ शहर और १२६२ ग्राम लगते हैं। मुङ्गेर और खगड़िया शहर ही सबसे बड़ा है। यहां वाणिज्य जोरों चलता है। क्यूल, जो लक्खीसरायके पास है, एक प्रधान रेलवे-जंकशन है।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० २५° २३' उ० तथा देशा० ८६° २८' पू०के मध्य गङ्गाके दक्षिणी किनारे अवस्थित है। इस नामकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें बहुत मतभेद है। कहते हैं, कि अति प्राचीन कालमें मुद्गल ऋषि इस स्थानमें तपस्या करते थे। उन्हींके नामानुसार यह स्थान मुद्गलपुरी, मुद्गलगिरि वा मुद्गलाश्रम नामसे प्रसिद्ध हुआ। हरिवंशमें लिखा है, कि गाधि-सुत विश्वामित्रके पुत्रोंमें मुद्गल नामक एक राजा इस स्थानका शासन करते थे। उन्हींके नाम पर इस स्थानका मुद्गलपुर नाम रखा गया। डा० बुकानन हमिल्टनका कहना है, कि ८०० वर्षकी पुरानी एक शिलालिपिमें 'मुद्गगिरि' शब्द खोदा हुआ है। मुद्गल शब्दसे मुद्गर शब्द हो सकता है। क्योंकि, विहारके लोग 'ल'-की जगह 'र' का उच्चारण करते हैं। इससे मालूम होता है, कि मुद्गगिरि वा मुद्गलगिरिके अपभ्रंशसे 'मुङ्गेर' शब्द निकला होगा।

कनिंहम साहब कहते हैं, कि पाल राजाओंकी खोदित लिपिमें भी 'मुद्गगिरि'-का उल्लेख देखनेमें आता है। वे यह भी कहते हैं, कि पहले यहां 'मन्' वा 'मुण्ड' नामक अनार्य जाति रहती थी, इसी सूत्रसे इस स्थानका नाम मुङ्गेर हुआ है।

मुङ्गेर नगर दो भागोंमें विभक्त है। एक भागमें दुर्ग और दूसरेमें नगर बसा हुआ है। विचारालय, पुलिस, डाकघर और बहुतसे सरकारी कार्यालय दुर्गमें हैं। दुर्ग देखनेमें बहुत सुरम्य और सुरक्षित है। कहते हैं, कि इस दुर्गमें पहले राजा कर्ण रहते थे। दुर्गको देखनेसे उसकी प्राचीनताके सम्बन्धमें किसीको सन्देह नहीं रह जाता। दुर्ग एक पहाड़ी भूमिके ऊपर अवस्थित है। इसकी लम्बाई ५ हजार फुट और चौडाई साढ़े तीन हजार फुट है। उसके चारों ओर जो दीवार दौड गई है वह १५ हाथ ऊंची है। एक ओर पुण्यसलिला जाह्नवी दुर्गके चारों ओर घूम कर वह गई है, दूसरी ओर गहरी खाई विद्यमान है। दुर्ग द्वार पर बहुत-सी लुप्तप्राय बौद्धमूर्त्ति नजर आती है जो अतीत कीर्त्तिकी घोषणा कर रही है।

दुर्गमें चार द्वार हैं। रेलवे स्टेशनसे पूर्व द्वार हो कर प्रवेश करना होता है। इसका नाम लोहिततोरण (लोहेका दरवाजा) है। इस स्थानसे दुर्गका दृश्य बड़ा ही मनोरम लगता है। दक्षिणकी ओर एक सुन्दर राजपथ दौड़ गया है। इसके दोनों ओर दो बड़ी बड़ी दिग्गी हैं।

भागलपुर शहरके समीप 'करणगढ़' नामक स्थानमें राजा कर्णकी राजधानी थी। कहते हैं, कि वे प्रति दिन यहां चण्डिका देवीकी पूजा करने आते थे। एक प्रकाण्ड अग्निकुण्डमें एक कराह घी रख कर वे पूजा करने बैठते थे। पूजाके उपरान्त वे उस खौलते हुए घीमें कूद पड़ते थे। इस प्रकार उनका शरीर घीसे अच्छी तरह भुन जाने पर देवीकी डाकिनी वह मांस खाती थी। पीछे वे हड्डीके एक टुकड़ेको अमृतकुण्डके जलसे सिक्त कर उसीसे राजाको जिला देती थी। अनन्तर चण्डिका देवी राजाको वर देना चाहती थीं। तदनुसार राजा एक कराह सोने, चांदी और मणि मुक्ताके लिये प्रार्थना करते थे। उस बड़े कड़ाहेमें एक सौ मन सोना अंटता था। दाता कर्ण प्रति दिन सबेरे ब्राह्मण और दरिद्रोंके बीच वह रत्न बांट देते थे।

राजा कर्ण किस प्रकार प्रति दिन सौ मन सोना दान करते हैं, यह जाननेके लिये राजा विक्रम छद्मवेशमें कर्णके यहां आये और नौकरी करने लगे। राजा कर्णने उन्हें फूल तोडने और पूजाका सामान जुटानेमें नियुक्त किया। थोडे ही समयमें विक्रमको कर्णका पूजा-रहस्य मालूम हो गया। एक दिन रातको छद्मवेशी विक्रम

कर्णके आनेसे पहले चण्डिकादेवीके मन्दिरमें गये और पूजा करने लगे। पूजाके उपरान्त राजा कर्णकी तरह वे भी उस खौलते हुए घीमें कूद पड़े। डाकिनीने उनके शरीरका मांस खा कर अमृतकुण्डके जलसे पुनः उनको जिला दिया। पूर्ववत् चण्डिका देवी वर देनेको तैयार हो गईं। प्रभुवत्सल विक्रमने प्रार्थना की, कि आजसे राजा कर्णको इस स्थान पर आते ही धनरत्न मिल जाय और इसके लिये उन्हें प्राणत्यागका कष्ट न भोगना पड़े।

देवी 'तथास्तु' कह कर अपने स्थानको चली गई और राजा विक्रमने कटाहको उलटा कर कर्णके आनेसे पहले वहांसे प्रस्थान किया।

आज भी चण्डिकादेवीके मन्दिरकी छत कटाह सी दिखाई देती है। प्रवाद है, कि वह कटाह आज भी छत के ऊपर रखी हुई है। कहते हैं, कि जो मन्दिरमें अकेला रहता वह अपने प्राणसे हाथ धो बैठता है।

इस मन्दिरके समीप ३।४ शिवमूर्त्ति, अन्नपूर्णा और पार्वती मूर्त्ति प्रतिष्ठित है। शिवमूर्त्तिमेंसे एकका नाम कालभैरव है।

मन्दिरके बांई ओर जो पर्वत है उसका शिखर करण चौरा' वा 'कर्णचत्वर' कहलाता है। यहां शामको दाता कर्ण बैठा करते थे और इसी स्थान पर बैठ कर प्रतिदिन सवेरे सौ मन सोना चांदी दीन-दुखियोंको दान करते थे। कर्णचत्वरके ऊपरमें एक पुरानी इमारत देखनेमें आती है। पहले यहां मुंगेरके सिविल-जज रहते थे। पीछे मुर्शिदाबाद-के रहनेवाले अन्नदाप्रसाद राय बहादुर नामक एक जमी-दारने उसे खरीद लिया। लोगोंकी धारणा है, कि जो उस मकानमें रहता है उसकी अकाल मृत्यु होती है। राय अन्नदाप्रसादकी अकाल मृत्युसे तो वह धारणा लोगोंके हृदयमें और भी पक्की हो गई है।

दूसरे पर्वतके ऊपर शाह साहबका प्रासाद नामक एक सुन्दर अट्टालिका है। अभी स्थानीय कलकृर उस में रहते हैं। इसके पश्चिम भागमें शाहजहां बादशाहके लड़के सुलतान सुजाका सुरम्य राजप्रासाद था। अभी वह कारागार आदिमें परिणत हो गया है। पहले इस प्रासादसे ले कर गङ्गातट तक एक सुरंग खोदी गई थी। वह तट आज भी बौली घाट नामसे प्रसिद्ध है। सुरंगमे पत्थरकी सीढ़ी भी शोभती थी।

शाह सुजाकी अन्तःपुरचारिणी, जिन्हें सूर्य भी नहीं देख पाते थे, इस सुरंगसे गंगास्नान करने जाती थीं। बहुतोंका विश्वास है कि राजा कर्णने इसे बनवाया था। हिन्दू रमणियां इस सुरंगसे गङ्गास्नान करने जाती थीं। सुरंगमें वायु और रोशनीकी सुविधाके लिये बीच बीचमें बड़े बड़े खंभे खड़े थे जिनका ऊपरी भाग खुला रहता था। आज भी उनका खंडहर दिखाई देता है। इसके पास ही कष्टहरणी घाट है। इस स्थानसे भागीरथी उत्तरवाहिनी हो गई है।

दुर्गके बाहरसे मुंगेरका दृश्य बड़ा ही मनोरम दिखाई देता है। इस भागमें बहुतसे लोग भी बस गये हैं। शहरके प्रायः सभी हाट-बाजार, दूकान आदि इसी भागमें अवस्थित हैं।

शाहसुजाकी 'बौली' के समीप 'कष्टहरणी' का घाट है। प्रवाद है, कि इस घाटमें बैठ कर मुद्गल ऋषि तपस्या करते थे। उनकी तपस्याका ऐसा नियम था, कि वे एक पखवारा सिर्फ जल पी कर रहते थे और दूसरा पखवारा चावलका कण संग्रह कर खाते थे। उनकी ऐसी कठोर तपस्यासे विष्णु भगवान् बड़े प्रसन्न हुए। दूसरे पखवारेमें जब ऋषि चावलके कणको सिद्ध कर खानेका उद्योग कर रहे थे उसी समय भगवान् वृद्ध ब्राह्मणके वेशमें वहां पधारे। ऋषिने अतिथिके शुभा-गमन पर प्रसन्न हो उस भोजनमेंसे आधा निकाल कर अतिथिका सत्कार किया। छद्मवेशी नारायणने उससे तृप्त न हो कर दूसरा हिस्सा भी खानेको मांगा। इस पर ऋषिने प्रसन्न हो उसी समय अपने लिये रखा हुआ भोजन भी उन्हें दे दिया। अतिथिके चले जाने पर ऋषि फिरसे तपस्यामें लग गये। इस प्रकार दो पक्ष बीत गये। तीसरे पक्षमें वे पुनः चावल कण संग्रह कर भोजनकी तैयारी करने लगे। छद्मवेशी नारायणने आ कर पूर्ववत् भोजनके लिये प्रार्थना की। ऋषि सन्तुष्ट चित्तसे समस्त भोजन अर्पण कर फिरसे तपस्यामें प्रवृत्त हुए। तब छद्मवेशी नारायणने अपना परिचय दे कर ऋषिको वर देना चाहा। ऋषि बोले, 'भगवन्! मुझे किसी वस्तुकी

चाह नहीं है। क्योंकि, पार्थिव भोग मैं नहीं करना चाहता। एक परमब्रह्मकी ही मेरी अभिलाषा थी, सो भी आज आपके दर्शनसे पूरी हो गई। केवल एक बार आप यदि शङ्ख-चक्र-गदापद्मभूषित चतुर्भुज मूर्त्तिमें मुझे दर्शन दें तो मेरा कुल मनोरथ पूर्ण हो जाय। नारायणने अपनी मूर्त्ति धारण कर ऋषिसे फिर वर मांगनेको कहा। परोपकारी मुद्गलने कहा, 'आज इस स्थानमें आपके दर्शनसे जिस प्रकार मेरे कष्ट दूर हुए हैं, उसी प्रकार आप मुझे यही वर दीजिये कि जो इस घाटमें स्नान करे उसके सभी कष्ट दूर हो जांय और मरनेके बाद उसे स्वर्गकी प्राप्ति हो। 'तथास्तु' कह कर भगवान् अन्तर्हित हो गये। तभीसे यह घाट 'कष्टहरणी घाट' नामसे प्रसिद्ध है।

मुङ्गेरके नगरप्रान्तमें गङ्गाके किनारे एक मन्दिर है जहां चण्डिका देवीकी मूर्त्ति विद्यमान है। इस स्थानका नाम चण्डीस्थान और देवीका नाम विक्रमचण्डी है। चंडिका देवीके सम्बन्धमें अनेक किम्वदन्तियां प्रचलित हैं।

१७८० ई०में मुङ्गेर दुर्गके समीप एक ताम्रशासन पाया गया है। उसे देखनेसे मालूम होता है, कि पाटलीपुत्रके राजा देवपालने नावका पुल बना कर गंगा पार किया था। पालराजवंशका इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि देवपाल धर्मपालके बाद ९वीं सदीमें राज्य करते थे। पालराजवंश देखो।

मुसलमानी अमलमें मुङ्गेर एक प्रधान नगर समझा जाता था। उसके पहले पालराजाओंने ११वीं सदी तक यहांका शासन किया था। १३३० ई०में मुङ्गेर वङ्गालप्रदेशमें मिला लिया गया। उसके पहले वह विहारके अधीन था। परन्तु १९१२ ई०से यह पुनः विहारमें शामिल किया गया है। गौड़के हुसेनशाहके लडके राजकुमार दानियालने १३९७ ई०में मुङ्गेर दुर्गका संस्कार किया और शाहनाफ नामक एक विख्यात मुसलमान पीरकी दरगाह पर एक सुन्दर गुम्बज बनवा दिया। गुम्बजमें आज भी खोदित लिपि देखी जाती है। मुङ्गेर-दुर्गके पश्चिम द्वार हो कर बेल्हन राजाके गांवमें जाते समय उक्त दरगाह बाईं ओर पडती है।

दरगाह एक छोटे पहाड पर अवस्थित है। उस पहाड़को लोग पीर-पहाड कहते हैं। दरगाहके रक्षक 'खादिम' लोगोंका कहना है, कि कुमार दानियालने दरगाह-संस्कार करानेके पहले स्वप्नमें देखा था, कि एक मकबरेमेंसे मृगनाभकी गंध निकलती है। सबेरे तलाश करने पर जमीनके अन्दर वह मकबरा दिखाई दिया। उसे किसी महापुरुषका मकबरा जान कर उसका नाम 'शाहनाफ' रखा गया। फारसी भाषामें 'नाफ' शब्दसे कस्तूरीपूर्ण वोजकोष समझा जाता है। जिस समय अकबर शाहने १५८० ई०में वङ्गालके पठान-सामन्तोंको परास्त कर मुगल-शासन फैलाया था, उस समय मुङ्गेरमें टोडरमल रहते थे।

टोडरमलने दूसरी बार मुङ्गेर-दुर्गका संस्कार किया। पीछे १६५७ ई०में शाहजहांका चौथा लड़का सुलतान सुजा पितृ-सिंहासन पानेकी इच्छासे औरङ्गजेबके विरुद्ध खड़ा हुआ। मुङ्गेरमें ही रह कर वह युद्धकी तैयारी करता था।

आईन-अकबरी पढ़नेसे मालूम होता है, कि उस समय मुङ्गेर सरकार ३१ परगनोंमें विभक्त थी। कुल परगनोंका राजस्व मिला कर २७४०६४९ अकबरी-सिक्का था। राजा मानसिंहने वङ्गाल और उड़ीसा जीत कर कुछ समय इस नगरमें वास किया था। जहांगीरके शासन-कालमें कासिम खाँ नामक एक व्यक्तिके हाथ मुङ्गेरका शासन भार सपुर्द था। इस शहरमें कुछ दिन औरङ्गजेबकी लडकी जेब उन्निसाके शिक्षक करिमुल्ला महम्मदने वास किया था। साहित्यसंसारमें वह असरफ नामसे मशहूर है।

वङ्गालके अन्तिम नवाब कासिम अली खाँने मुङ्गेरमें राजधानी बसा कर अंगरेजोंसे लड़ना चाहा था। इसलिये उसने इस्पाहननिवासी ग्रेगरी नामक एक व्यक्तिको सेनापति बना कर सुशिक्षित सैन्यदलका संगठन किया और बन्दूकका कारखाना खोला। वही सेनापति इतिहासमें गुर्गन खाँ नामसे मशहूर है। दो वर्षके भीतर मीरकासिमने ५००० घुडसवार और २५०००० पैदल सिपाही संग्रह किये। सुदक्ष गुर्गनने अंगरेजी ढंगमें अपनी सेनाको युद्धविद्या सिखा कर तालीम कर दिया। मीरकासिमने बड़ी निष्ठुरतासे जिस स्थान पर पटनाके

शासनकर्त्ता रामनारायण और वङ्गालके डिपटी गवर्नर राय दुर्लभको गलेमें कलसी बांध कर गङ्गामें डुवा दिया था, दुर्ग सन्निहित उस स्थानको आज भी लोग उंगलीसे दिखाते हैं तथा जिस स्थान पर राजवल्लभ 'हा राम' कहते कहते गङ्गामें गिरे थे, उस स्थानमें आज भी उस शोकसूचक घटनाकी हृदयविदारिणी प्रतिध्वनि अतीत दुःखस्मृतिको उद्दीपित करती है। अलावा इसके मीरकासिमने यहा और भी कितने आदमीको जलमें डुवा कर मार डाला था। उनमेंसे वङ्गालके धनकुवेर सुविख्यात जगत्‌सेठ दोनों भाइयोंकी हत्या ही लोमहर्षण है। इसमें राय रायाँ राजा उमेदसिंह, वुनियादसिंह, फतेसिंह आदि तथा कितने अंगरेजोंको भी मीरकासिमने गंगामें डुवा डुवा कर अपनी नृशंसताका परिचय दिया था।

अंगरेजी शासनकालसे ही इतिहासमे मुङ्गेरकी प्रसिद्धि देखी जाती है।

मुङ्गेरकी सीताकुण्ड और रामकुण्ड नामक दो गरम सोते हिन्दू तीर्थ माने जाते हैं। सीताकुण्ड शब्द देखो।

मुङ्गेरके कमान-वन्दूकके कारखानेमें अभी तरह तरह के देशी अस्त्र शस्त्र वनते हैं। अलावा इसके यहाका हाथी दातसे मढा हुआ सुन्दर आवलुस लकडोका वक्स, उसकी डालकी छडी, लकडीका कलमदान, खिलौना, पनवट्टा, अलमारी और खसका पंखा मशहूर है। मुङ्गेर का लौहशिल्प एक समय भारतविख्यात था, इसीसे इसका नाम भारतीय 'वर्म्मिंहम' रखा गया था।

शहरकी जनसंख्या ४० हजारके करीव है जिसमें हिन्दूकी संख्या ज्यादा है। १८६४ ई०में म्युनिसपलिटी स्थापित हुई है। इष्ट इण्डियन रेलवेकी लूप लाइनसे एक शाखा-लाइन निकल कर मुङ्गेर शहर तक चली आई है। यहासे मुसाफिर स्टीमर द्वारा गङ्गा पार करते हैं।

मुङ्गेली—१ मध्यप्रदेशके विलासपुर जिलान्तर्गत एक उपविभाग। यह अक्षा० २१° ५३' से २२° ४०' उ० तथा देशा० ८१° १२' से ८२° २' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १७६४ वर्गमील और जनसंख्या प्रायः २५५०५४ है। इसमें १ शहर और ८७७ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २२° ४' उ० तथा देशा० ८१° ४१' पू० आगर नदीके किनारे विलासपुर शहरसे ३१ मील पश्चिममें अवस्थित है। इसके तीन ओर आगर नदी रहनेके कारण वाणिज्यव्यवसायमें वडी उन्नति है। शहरमें सरकारी अस्पताल, एक वर्नाक्युलर मिडिल और एक वालिका स्कूल है।

मुङ्गौली—ग्वालियरराज्यके इलागढ़ जिलेका एक सदर। यह अक्षा० २४° २५' उ० तथा देशा० ७८° ८' पू०के मध्य वेतवा नदीके किनारे अवस्थित है। जनसंख्या ५ हजारके करीव है। १८०४ ई०में म्युनिसपलिटी स्थापित हुई है। सरकारी अदालतके अलावा एक स्कूल, एक कारागार, एक अस्पताल और स्टेट डाकघर है।

मुचंगड (हिं० वि०) मोटा और भद्दा।

मुचक (सं० पु०) लाक्षा, लाख।

मुचकुन्द (सं० पु०) स्वनामख्यात पुष्प वृक्ष। मुचुकुन्द देखो।

मुचलका (तु० पु०) एक प्रकारका प्रतिज्ञापत्र। इसके द्वारा भविष्यमें कोई काम, खास कर अनुचित काम न करने अथवा किसी खास शर्त्त पर कचहरीमें हाजिर होनेकी प्रतिज्ञा करता है और कहता है, कि यदि मुझसे कोई अनुचित काम हो जायगा, अथवा मैं नियत समय पर कचहरीमें हाजिर न होऊंगा, तो मैं इतना आर्थिक दण्ड दूंगा। साधारणतः शान्तिरक्षाके लिये मुचलका लिया जाता है।

मुचिर (सं० त्रि०) मुञ्चति धनादिकं ददाति मुच् (इषिमदिखिदिछिदिभिदिमन्दीति। उण् १।५२) इति किरच्। १ दाता, उदार। (पु०) २ धर्म। ३ वायु। ४ देवता।

मुचिलिङ्ग (सं० पु०) १ मुचकुन्दवृक्ष। २ तिलकवृक्ष, तिलपुष्पी। ३ एक नागका नाम। ४ एक पर्वतका नाम। ५ एक चक्रवर्त्तीका नाम।

मुचिलिन्द (सं० पु०) १ मुचकुन्द। २ तिलक, तिलपुष्पी।

मुचुक (सं० पु० पु०) मैनफल।

मुचुकुन्द (सं० पु०) मुच्-वाहुलकात् कु, मुचुःकुन्द इवेति, राजदन्तादित्वात् पूर्वनिपातः। १ स्वनामख्यात पुष्पवृक्ष। इसके पत्ते फालसेके पत्तोंसे मिलते

झुलते हैं। पत्तोंमें महीन महीन रोईं होती है जिससे वे छूनेमे खुरदरे लगते हैं। फूलके दल पाँच छः अंगुल लंबे और एक अंगुलके लगभग चौड़े होते हैं। दलोंके मध्यसे सूतके समान कई केसर निकले होते हैं। दलोंके नीचेका कोश भी बहुत लंबा होता हैं। फूलकी गंध बहुत मीठी होती है। सिरके दर्दमे फूल पीस कर लगानेसे बहुत लाभ पहुंचता है। इसके फल कटहलके प्रारम्भिक फलोंके समान लंबे लंबे और पत्थरकी तरह कड़े होते हैं। फल और फूल दोनों ही औषधके काममे आते हैं। पर्याय—छत्रवृक्ष, चिलक, प्रतिविष्णुक, बहुपुत्र, हरिवल्लभ, सुपुष्प, लक्षणक, रक्तप्रसव। गुण—कटु, तिक्त, कफवातनाशक, कण्ठस्वर वर्द्धक, त्वग्दोष तथा शोकनाशक, जीर्ण ज्वर, शिरः पोड़ा, पित्त, अस्र और विषनाशक।

२ महाराज मान्धाताके पुत्र। कहते हैं, कि इन्होंने देवताओंका पक्ष ले कर असुरोंका विनाश किया था। इससे प्रसन्न हो कर देवताओंने इन्हें वर देना चाहा। मुचकुन्दने वर मांगा, कि जो कोई मुझे निद्रासे जगावेगा वह मेरे देखते ही भस्म हो जायगा। मथुरा जीत कर कालयवन श्रीकृष्णचन्द्रको ढूढते ढूंढते गिरनार पहुंचा। उसने मुचुकुन्दको कृष्ण समझ कर लात मारी और भस्म हो गया।

मुचुटी (सं० स्त्री०) १ उंगली मटकाना। २ मुष्टि, मुट्ठी।

मुच्या (हिं० पु०) मांसका बड़ा टुकड़ा, गोश्तका लोथड़ा।

मुछंदर (हिं० पु०) १ जिसकी मूछें बड़ी बड़ी हों। २ कुरूप और मूर्ख, भद्दा और बेवकूफ। ३ चूहा।

मुछियल (हिं० पु०) बड़ी बड़ी मूंछवाला।

मुजक्कर (हिं० पु०) पुल्लिङ्ग।

मुजफ्फर खां—अजमेर प्रदेशका एक मुसलमान नवाब। अपने बड़े भाई अमीर उल उमरा खां दौरान् अबदुल सहमद खांकी चेष्टासे बादशाह फर्रुखसियरके राज्यकालमें इसको अजमेरका शासन मिला। मराठा-सरदार मलहार राव होलकरने जब अम्बरके राजा सवाई जयसिंहकी राजधानी जतपुर पर चढ़ाईकी तब यह उनके विरुद्ध मुगल-सेना ले लड़ने चला था। मुगल बादशाह मुहम्मद शाहके साथ नादिरशाहके युद्धमे १७३६ ई०में यह मारा गया।

मुजफ्फर खां—आगरेका एक शासक। १६२१ ई०में बादशाह जहांगीरने इसे शासक बनाया। १६३१ ई०मे इसने आगरा नगरमे काली मसजिद बनवाई। वह मसजिद आज कल खण्डहरमें पड़ी है।

मुजफ्फर खां तिब्बती—बादशाह अकबरके अधीन बंगालका एक शासक। १५७६ ई०मे उसे शासनभार मिला। उसके शासनकालमें बाब खां काकशालने बागी हो गौड़ नगर अधिकार कर लिया और १५८० ई०में उसे मार डाला।

मुजफ्फरगढ़—पञ्जाबके मुल्तान डिविजनका एक जिला। यह अक्षा २८° ५६' से ३०° ४७' उ० और देशा० ७०° ३१' से ७१° ४७' पू०के बीच अवस्थित है।

इसके उत्तरमे डेरा इसमाइल खां और झंग जिला, पूर्व-दक्षिणमें चनाब या चन्द्रभागा नदी और पश्चिममे सिन्धु नद हैं। यह जिला तीन तहसीलोंमे विभक्त है, उत्तरमें सोनावल, दक्षिणमे अलीपुर और मध्यभागमे मुजफ्फरगढ़। इसमे ४ शहर तथा ७०० गाँव लगते हैं। इसका रकबा ३६३५ वर्गमील और आबादी ४ लाखसे ऊपर है।

इसका आकार प्रायः त्रिभुजके जैसा है। सिन्धु नदकी अनेक शाखा प्रशाखायें इसके चारों ओरकी भूमि को अत्यन्त उपजाऊ बनाती हैं। जिलेके बहुतसे स्थान वर्षाकालमें जलमग्न हो जाते हैं, इसलिये उपजके लिये पंजाबका यह प्रधान जिला है। वर्षाऋतुमे गावोंके जलमे डूब जाने पर गरीब किसान काठके मचान बना कर रहते हैं। सिन्धु नद और चन्द्रभागानदीका संगम-स्थान अत्यन्त सुन्दर है। इस स्थान पर सिन्धुनदकी चौड़ाई शीतकालमें एक कोस और दूसरे समयमें उससे अधिक रहती है। जाड़े के दिनोमें काबुल आदि अनेक स्थानोंसे गौ आदि पशु इस प्रान्तमें आया करते हैं। पांच नदियां अपने जलसे इसको चुम्बन करती हैं इसी कारण इसका प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त हृदयग्राही हैं। इन नदियोंके

अतिरिक्त खेतीकी सुविधाके लिये स्थानीय राजा बहुत-सी नहर खुदवा गये हैं।

इस जिलेमें १८ वन-विभाग हैं जिसका रकवा प्रायः ३ लाख बीघा होगा इस जिलेके अधिकांश स्थान भिन्न भिन्न प्रकारकी वनस्पतियों और वृक्षोंसे भरे हुए हैं। यहां खजूरकी खेती बहुतायतसे होती है जिससे सरकारको बडा लाभ है। शीशमके पेड यहां खूब लगते हैं। सड़कके दोनों ओर कतारमें शीशमके पेड लगाये जाते हैं। इसके अलावा झाड, कन्द, शिरीष, झाल, करिता, पीपल आदि वृक्षोंका भी अभाव नहीं है। उद्यानके वृक्षों में अनार, आम, आत, कमला नीबू तथा अञ्जीर उल्लेखनीय है।

जंगली जानवरोंमें बाघ और सूअर प्रधानतः सभी स्थानोंमें पाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त भेडिया, सजारु, खरगोश, शृगाल, फरुमियारो, और छोटे छोटे हरिण भी बहुतायतसे पाये जाते हैं। पालतू पशुओंमें गाय, भैंस, बकरा, भेंडा, ऊंट और घोडा तथा पक्षियोंमें हस, बगुला, कोयल, तीतर और अनेक प्रकारके जल-पक्षी ही प्रधान हैं। तरह तरहकी स्वादिष्ट मछली सभी जगह मिलती है।

इस जिलेका कोई स्वतन्त्र इतिहास नहीं है। मुलतानके साथ इसका इतिहास जुडा हुआ है। अकबरके राज्यकालमे यह जिला मुलतान-सरकारके अन्दर था। जिस समय दुर्रानीवंशके शासकगण मुगलराज्यके अधः-पतनके समय नया साम्राज्य स्थापित करनेका अवसर ढूढ रहे थे उस समय यह उन लोगोंका प्रधान स्थान हो गया था। अफगानवंशीय मुलतानके अन्तिम शासक मुजफ्फर खाने अपने नाम पर इसका नाम रखखा। उसी समयसे इसका नाम मुजफ्फरगढ चला आ रहा है। मुजफ्फरखाने इस नगरके चारों ओर दीवार खड़ी की थी। उस समय इस जिलेका अधिकांश बहवलपुरके नवावके अधीन था। सिक्खों और अफगान शासकोंकी लड़ाईमें यहांके कृषक मुसलमानोंका पक्ष ले कर बडे क्षतिग्रस्त हुए थे। १८१८ ई०में रणजित्‌की सेनाने इस पर चढाई की और इसे अपने अधिकारमें कर लिया। तभीसे यह सिक्खोंके शासनमे आया। सिक्ख सरदार सावमल और उसके लडके मूलराजने शासनमें बहुत कुछ सुधार किया था। उसके बाद बहलपुरके नवावोंने रणजित्‌सिंहसे इसका कुछ अंश पट्टा लिया। लेकिन बहुत दिनों तक उन लोगोंने राजकर नहीं दिया तब रणजित्‌सिंहने मेनटुरा नामक सेनापतिको उस प्रदेशको विजय करने भेजा १८४६ ई० तक मुजफ्फरगढ़में सिक्ख-शासन रहा। उसके बाद मुलतानकी बगावतके समय १८४६ ई०में यह अङ्गरेजी राज्यमें मिला लिया गया।

अङ्गरेजी शासनमे पहले खागर मुजफ्फरगढ़का प्रधान नगर हुआ। कई वर्ष तक लगातार बाढ़से डूब जानेके कारण सदर स्टेशन वहांसे उठा कर मुजफ्फरगढ़-में लाया गया। उपजाऊ जमीन होनेके कारण व्यापारिक उन्नति कर उक्त प्रदेशका यह मुख्य स्थान हो गया।

चारों ओर बहुतसंख्यक नदी और नहर रहनेसे खेतीकी यहां बडी सुविधा है। साढे ६ लाख बीघा जमीन नहरके जलसे आबाद होती है और ४ लाख बीघा जमीन गोचर है। कई लाख बीघा जमीन अभी भी परती है। वर्षाके पानीसे खेतीमें सहायता नहीं मिलती। अधिकांश स्थानमे नहरका समुचित प्रबन्ध न रहनेके कारण बडी क्षति होती है।

जौ और गेहूं यहांकी प्रधान उपज है। शरदमें बाजरा और खरीफ इत्यादि भी खूब होते हैं। उत्तर भागमें नील, रुई और ईख लगती है। यहा श्रमजीवियोंकी संख्या बहुत ज्यादा है। खुरासान प्रदेशसे ये लोग यहां आते हैं।

यहां व्यापारकी विशेष उन्नति नही देखी जाती। खुरासनके पोविन्दा व्यापारी लोग प्रधानतः व्यापार करते हैं। यहांकी रफ्तनीमें गेहूं, गुड, रुई और घी तथा आमदनी चीजोंमें लोहा, चून, नमक और अनेक तरहकी विलायती चीजें ही प्रधान हैं। खैरपुर ही प्रधान वाणिज्यकेन्द्र है। बैलगाडी यहां अधिक नहीं मिलती। ऊंट ही विशेष कर बोझ ढोते हैं। सभी जगह नस्य, मोटे कपड़े, खजूर और चटाई आदिका व्यवसाय होता है।

मुजफ्फरगढ़ जिलेमें खांगर, खैरपुर, अलिपुर, सहर सुलतान, शीतपुर, जातोई, कोटआदु और देरादिनपना

ये ही चन्द शहर मशहूर हैं। इन सब शहरोंमे म्युनिसिपलिटी अर्थात् स्थानीय स्वायत्तशासन है।

अधिवासियोंमें अधिकांश मुसलमान हैं। फिर हिन्दू, जैन, सिक्ख, क्रिस्तान आदि और बलुची भी यहां रहते हैं।

यहांके शासनविभागमें एक डिपुटी कमिश्नर, एक असिस्टेंट कमिश्नर और एक एड्डिशनल असिस्टेन्ट कमिश्नर हैं। हरएक जिलेमें सब-जज और मुन्सिफ हैं। प्रधानतः ८ सिविल-जज तथा ११ मैजिष्ट्रेट न्याय किया करते हैं। शिक्षामें यह स्थान बिलकुल पिछड़ा हुआ है। इसमे सरकारी और गैरसरकारी कुछ स्कूल हैं। सिविल हास्पिटलको छोड और भी ६ चिकित्सालय है। जलवायु यहांका बड़ा स्वास्थ्यप्रद है।

२ मुजफ्फरगढ़ जिलेकी तहसील या एक सब-डिविजन। यह अक्षा० २९° ५४′ से ३०° १५′ उ० तथा देशा० ७०° ५१′ से ७१° २१′ पू०के मध्य अवस्थित है। यह चनाव और सिन्धु नदके बीच बसा हुआ है। इसका रकवा ६१२ वर्गमील है। धान, जौ, गेहूं, बाजरा और ईख आदि बहुतायतसे उपजती है। ६ दीवानी और ५ फौजदारीअदालत हैं।

३ उक्त जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३०° ४′ तथा देशा० ७१° १२′ पू०के मध्य अवस्थित है। इसकी आवादी ४ हजारसे ऊपर है। १७९५ ई० मुजफ्फर खांने इसे सदर बनाया। तभीसे यह उसीके नामसे चला आ रहा है। मुजफ्फर खांने यहां एक गढ़ बनवाया और शहरके चारों ओर दीवार खडी कर दी थी। गढ़की दीवार प्रायः २० हाथ ऊंची है। गढ़के चारों ओर १६ बुर्ज हैं जो ईंटके बने हुए है। इसके उत्तरांशमे राजकर्म्मचारी लोग रहते हैं।

यहां विशेषकर कुएंका जल ही पीनेके काममें आता है। १८१८ ई०में रणजित्सिंहने उक्त गढ़ पर आक्रमण किया था। शहरके अन्दर डाकबङ्गला, डाकघर, गिर्जाघर और चिकित्सालय आदि हैं।

मुजफ्फरजङ्ग—फर्रुखाबादका एक मुसलमान नवाब। १७७१ ई०मे वह अपने पिता अहमद खां बङ्गशके मरनेके बाद सिंहासन पर बैठा। वह मुजफ्फर हुसेन खां और दिलेर हिम्मत खांके नामसे भी परिचित था। सिंहासन पर बैठनेके समय बादशाह शाहआलमसे उसे उक्त उपाधि मिली थी। १८०२ ई०में १ लाख ८ हजार रु०की मासिक वृत्ति ले कर इसे अपना राज्य अंग्रेजोंके हाथ छोडना पडा। इसके मरनेके बाद इसका पोता तफजल हुसेन खां मसनद पर बैठा।

मुजफ्फरजङ्ग—हैदराबादके प्रसिद्ध सूबेदार निजामउल्मुल्कका नाती। इसका वास्तविक नाम हिदायत् मुहीनुद्दीन था। निजाम उल् मुल्ककी मृत्युके बाद उसने घोषणा कर दी कि मेरा नाना मरनेके समय एक दान पत्र द्वारा मुझे ही अपने राज्यका उत्तराधिकारी बना गये हैं। इधर उसका मामा नासिरजंग अपनेको पितृराज्यका एकमात्र उत्तराधिकारी जान राज्यको दखल कर राजकाज चलाने लगा। पिताकी अतुल सम्पत्ति पा कर नासिरने अपनी सेनाका वेतन चुका दिया और इसी कारण सेनाने उसका साथ नहीं छोडा। मुजफ्फरजङ्ग अपनी सेनासे नासिरजङ्गकी सेना बडी देख पहले तो निश्चेष्ट हो गया, पर पीछे बल सञ्चय कर फरासीसियोंकी सहायतासे १७४९ ई० आर्कटकी लड़ाई मे वहांके नवाब अनवर उद्दीन खांको हराया और आप दाक्षिणात्यका सूबेदार बन बैठा। लेकिन यह राज्यसुख उसको बहुत दिन बदा न था। कुछ महीनेके बाद ही उसे नासिरजङ्गके हाथ आत्मसमर्पण करना पड़ा। उस समयसे १७५० ई०के दिसम्बरमे गुप्त शत्रुओंके द्वारा नासिरजङ्गकी मृत्यु पर्य्यन्त उसे जेलमें रहना पड़ा। पश्चात् वह फिरसे फरासीसियोंको सहायता पा कर सूबेदारी मसनद पर बैठा। कुछ ही समयके बाद १७५१ ई०के फरवरीमें उसीके एक नौकरने उसे मार डाला। उसकी मृत्युके बाद वृद्ध निजामका तीसरा लड़का सलावतजङ्ग मसनद पर बैठा। डुप्ले और हैदराबाद देखो।

मुजफ्फरनगर—संयुक्त प्रदेशके मीरट डिविज़नका एक जिला। यह अक्षा० २९° १०′ से २९° ४५′ उ० और ७७° २′ से ७८° २′ पू०के बीच फैला हुआ है। इसके उत्तरमें सहारनपुर जिला और दक्षिणमें मीरट है। पूरबमें गंगा इसको बिजनौरसे और पश्चिममे यमुना कर्नालके पंजाब जिलेसे अलग करती है। इसमे १५

शहर तथा ९१३ गाँव लगते हैं। इसका मुख्य शहर मुजफ्फर नगर है। इसका रकबा १६६६ वर्गमील और आबादी प्रायः ९ लाख है।

यह जिला गंगा यमुनाके किनारेके उत्तर भागमें अवस्थित है। जमीन पंकसे भरी है। बीचका हिस्सा कुछ ऊंचा है। हिन्दन और काली नदी इसको तीन भागोंमें विभक्त करती है। जिस भाग हो कर गंगा बहती है उस नीची जमीनको खादर कहते हैं। इस जिले की दलदल भूमिमें किसी प्रकारकी खेती नहीं होती, पर ऊंची जमीन बडी उपजाऊ है।

यमुना और हिन्दनके मध्यवर्ती विभागमें यमुनाकी नहर रहनेके कारण खेतोंमें बडी सुविधा हुई है। यमुनाके किनारेका भूभाग 'ढाक' वृक्षके जंगलसे भरा है।

किम्वदन्ती है, कि मुजफ्फर नगर पहले पाण्डवोंका राज्य था तथा मीरटके पास ही हस्तिनापुरका खंडहर मिलता था। उसके बाद दिल्ली सम्राट् पृथ्वीराज चौहानने इस पर अधिकार किया। ब्राह्मण और राजपूत यहांके प्रधान अधिवासी थे। ई०सनकी १३वीं शताब्दीमें यहा मुसलमानी शासनने जड पकडा था।

दिल्लीके बादशाहोंके अधीन शासक लोग यहाका शासन करते थे। उस समय जाट लोग यहांके प्रधान अधिवासी थे। आज भी वे ही लोग इस स्थानमें शक्तिशाली माने जाते है। उसके बाद गुर्जर लोग यहा आ कर बस गये। मुसलमानी शासनके प्रारम्भसे शेख सैयद, पठान कहलाने वाले लोग यहा रहते हैं।

१३९९ ई०में तैमूरने यहां आ कर बडी निष्ठुरतासे असंख्य मनुष्योंको मरवा डाला। अकबरके राजत्वकालमें यह जिला सहारनपुर सरकारके अन्दर था। ई० सनकी १७वीं शताब्दीमें वाढाका सैयदवंश प्रवल हो उठा। दिल्लीमें सैयदवंशके शासनकालमे १३५० ई०को इस वंशके प्रतिष्ठताने यहा अपनी प्रधानता स्थापित की।

१४१४ ई०में सुलतान खिजर खांने सैयद सलीम को सहारनपुरका शासनभार सौंपा। उस समयसे उसके वंशधर उत्तरोत्तर शक्ति बढाते आ रहे हैं।

२ मुजफ्फरनगर जिलेके उत्तर पश्चिम विभागकी तहसील या सबडिविजन। यह ५ परगनोंमें विभक्त है। इसका रकवा ४६४ वर्गमील है। इसमें १३ दीवानी और फौजदारी अदालत हैं। गङ्गा और सिन्धु इस तहसील हो कर बहती हैं। इसके अलावा इस तहसीलमें बहुतसी नहर हैं। इसमें ५ पुलिस थाने हैं।

३ उक्त जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २९°२८´ ३० और देशा० ७७° ४१´ पू०के बीच मीरटसे हरकी हरद्वार जानेवाली प्रधान सडक पर अवस्थित है। इसकी आवादी प्रायः २५००० है। यह नौर्थ वेष्ट-रेलवेका स्टेशन है। शाहजहांके शासनकालमें मुजफ्फर खां खानखानाके एक लडकेने १६३३ ई०में इस शहरको बसाया था। पहले यह स्थान बड़ा अस्वास्थ्यकर था, अब कुछ अच्छा हुआ है। कृषिकी पैदवारको छोड यहां दूसरे व्यवसायकी चलती नहीं है। कम्बलका व्यवसाय जोरों होता है। प्रतिवर्ष मार्चमें यहा घोड़ेकी हाट लगती है। यहा एक हाई स्कूल, एक तहसीली स्कूल और एक कन्या-पाठशाला हैं।

मुजफ्फरपुर—विहार प्रदेशके तिरहुत डिविजनका एक जिला। यह अक्षा० २५° २९´ और २६° ५३´ ३० और देशा० ८४° ५३´ और ८५° ५०´ पू०के बीच विस्तृत है। इसके उत्तरमें नेपाल, पूरबमें दरभंगा, दक्षिणमें गङ्गानदी तथा पश्चिममें चम्पारण और गण्डक नदी हैं। इस जिलेका प्रधान नगर मुजफ्फरपुर है। इसमें ४ शहर तथा ४१२० गांव लगते हैं। यह उत्तरसे दक्षिण ६५ मील और पूरबसे पश्चिम ४८ मील है। इसका क्षेत्रफल ३०३५ वर्गमील और आवादी २७ लाखसे अधिक है।

एक समय मुजफ्फरपुर पटना डिविजनका एक जिला था। १८७४ ई०में पूर्व तिरहुत जिला दरभंगा और मुजफ्फरपुर दो जिलाओंमें विभक्त किया गया था।

यह जिला वागमती और बूढी गण्डक नदी द्वारा प्रधानतः तीन भागोंमें विभक्त है। प्रथम भाग बूढी गण्डकके दाहिने किनारे हाजीपुर सब डिविजन है। इस सब-डिविजनमें अफीम; नील और तम्बाकू बहुतायतसे होते हैं। मध्यभाग बूढी गण्डक और वागमतीका मध्यवर्त्ती स्थान है। इस विभागकी भूमि पंकमय है तथा इसके अधिकांश भागमें धान लगता है। उत्तर भाग

नेपाल और बागमतीके बीच है। इसके भी अधिकांश भागमें धान और शेष भागमें दूसरी दूसरी फसल होती है।

कई बड़ी बड़ी नदियां इस जिलेमें बहती है। उनमें गङ्गा, बागमती, बूढ़ी गण्डक, लखनदाई और बाइर प्रधान हैं। इन नदियोंके कारण यहां कृषि तथा व्यापारमें बड़ी सुविधा हुई है।

इस जिलेके मुख्य शहर हाजीपुर, लालगञ्ज, सीतामढ़ी आदि स्थान उल्लेखनीय हैं। यहांकी उपजमें सोरा, नील, तम्बाकू और अफीम प्रधान हैं।

बि० एन० डबल्यू रेलवे इस जिले हो कर गई है। मुजफ्फरपुरसे सीतामढ़ी और हाजीपुर तक दूसरी लाइन दौड़ी है। मुजफ्फरपुर, लालगञ्ज, सीतामढ़ी और मोहनगर आदि कई स्थानोंमें म्युनिसपलिटी और दातव्य चिकित्सालय हैं।

इस जिलेमें १७ इंच वर्षा होती है। गण्डक आदि नदियोंके कारण बाढ़ अक्सर आया करती है। भयानक बाढ़के कारण यहांके लोग कई बार बड़े क्षतिग्रस्त हुए हैं। १९०६ ई०की बाढ़ सबसे बड़ी भयानक थी। उस बाढ़ने करीब १००० गांवको तहस नहस कर दिया था, लोगोंकी जो क्षति हुई थी वह अकथनीय है। आज कल बांधका प्रबन्ध हो गया है।

२ उक्त जिलेका उपविभाग या सब डिविजन। इसका रकबा १२२१ वर्गमील है।

३ जिलेका प्रधाननगर। यह गण्डक नदीके दाहिने किनारे अक्षा० २६° ७' उ० और देशा० ८५° २४' पूरबके मध्य अवस्थित है। रकबा २५६० एकड़ होगा।

शहर देखनेमें सुन्दर है। आज कल तिरहुत डिविजनके कमिश्नरका हेडक्वार्टर यहीं है। यहां अदालत और सरकारी दातव्य-चिकित्सालय हैं। स्वर्गीय बाबू लंगटसिंहका बनवाया जि० बी० बी० कालेज़ है। यह फस्ट ग्रेड कालेज है और इसमें बी, ए, क्लास तक पढ़ाई होती है। इसके अलावा एक संस्कृत कालेज और कई स्कूल भी हैं।

गण्डक नदीके द्वारा व्यापार खूब चलता है। अदालतके पास गंडकका पहलेका एक गड्ढा एक सुन्दर झील हो गया है। नदीके किनारे किनारे एक बांध बनवा दिया गया है। १८७१ की बाढ़से शहरकी बड़ी हानि हुई थी। शहरके बीचमें राम और सीताजीके दो विशाल मन्दिर हैं। इनके अतिरिक्त कई शिव-मन्दिर भी देखनेमें आते हैं।

मुजफ्फरशाह (१म)—गुजरातके प्रथम मुसलमान राजा। इनका असल नाम जाफर खां था। इनके पिता वाजी-उल-मुल्क टांकी (त्यागी) श्रेणीके क्षत्रिय थे। जिस समय वह हिन्दू थे उनका नाम साधारण था। साधारणके भाई साधुने दिल्लीश्वर सुलतान महम्मद बिन तुगलकके भाई सुलतान अबुल मुजफ्फर फिरोजशाहको अपनी बहन ब्याह दी थी। उनके बादके सम्राटोंकी कृपासे इस वंशकी बड़ी उन्नति हुई थी।

१३४२ ई०में दिल्ली नगरमें मुजफ्फरका जन्म हुआ था। दिल्लीराजके एक साधारण कर्मचारी होते हुए भी वे अपने असाधारण प्रतिभा-बलसे अपने वंश-गौरवको बढ़ानेमें समर्थ हुए थे। गुजरातके राजा फर्हत-उल-मुल्कके राजद्रोही बन जानेके कारण मुजफ्फरशाहने उसे रणक्षेत्रमें पराजित कर मार डाला। उनकी सफलता पर पुरस्कार स्वरूप दिल्लीश्वर द्वितीय सुलतान महम्मद शाह तुगलकने उनको १३९१ ई०में गुजरातका शासनकर्त्ता नियुक्त किया।

इसके पांच वर्ष बाद १३९६ ई०में मुजफ्फर खांने मुजफ्फर शाह नामसे अपनेको गुजरातका स्वाधीन राजा कह कर घोषित किया तथा अपने नामसे सिक्का चलाया। इतिहासमें यह 'मुजफ्फर शाही' सिक्का नामसे विख्यात है। बीस वर्ष तक राज्य करनेके बाद ७१ वर्षकी अवस्थामें वे मर गये। पीछे उनके पौत्र तथा तातार खांके पुत्र अहम्मद शाह राजसिंहासन पर बैठे। इसवंशके राजाओंके नाम निम्नलिखित हैं—

१ मुजफ्फरशाह १म।

२ अहम्मदशाह।

३ महम्मदशाह करीम

४ कुतुबशाह।

५ दाउदशाह ।
६ मह्मूदशाह १म विगाडा ।
७ मुजफ्फरशाह २य ।
८ सिकन्दरशाह ।
६ मह्मूदशाह २य ।
१० बहादुरशाह ।
११ मोरन मह्मूदशाह फरुखि ।
१२ मह्मूदशाह ३य ।
१३ अहम्मदशाह २य ।
१४ मुजफ्फरशाह ३य ।

अन्तिम राजा मुजफ्फर शाह (३य)-को पराजित कर मुगल सम्राट् अकबर शाहने गुजरात प्रदेशको अपने साम्राज्यमें मिला लिया ।

मुजफ्फरशाह (२य)—गुजरातके एक राजा । पिता सुलतान मह्मूद शाह विगाडाके मरने पर ये गुर्जर-सिंहासन पर बैठे। इस समय इनकी उमर ४१ वर्षकी थी। १५ वर्ष निष्कण्टक राज्य करनेके बाद १५२६ ई०में इनका देहान्त हुआ। सर्कीचमें इनका मकबरा आज भी मौजूद है।

मुजफ्फर शाह (३य)—गुजरातके अन्तिम राजा। इनका प्रकृत नाम नाथू था। वे ३य महम्मद शाहके पुत्र कह कर जनसाधारणके निकट परिचित थे। किन्तु इनके जन्म-वृत्तान्तके सम्बन्धमें इतिहासकारोंमें मतभेद दिखाई देता है। १५६१ ई०में २य अह्मदकी मृत्यु होने पर प्रधान मन्त्री इतिमाद खांने इन्हें राजसिंहासन पर बैठाया। राजाके साथ मन्त्रीकी पटती नहीं थी इस कारण एतमाद् खाने अपने पक्षको समर्थन करनेके लिये राज्याधिकारका लोभ दे कर अकबर शाहको गुजरात प्रदेश बुलाया। अकबर शाहने ससैन्य गुजरात राजधानी पर चढ़ाई की (१५७२ ई०)। उसी समयसे गुजरात दिल्ली साम्राज्यके अधीन हो गया।

मुजफ्फर शाहने पितृ-सिंहासन परित्याग कर अपनेको मुगल सम्राट्के हाथ समर्पण किया तथा वे सम्मान पूर्वक आगरा लाये जाने पर कारागारमें रखे गये। नौ वर्षके बाद वे फिर यहांसे गुजरात भागे और सैन्यसंग्रह करने लगे पीछे उन्होंने वहांके मुगल-प्रतिनिधि कुतब उद्दीन खांको युद्धमें परास्त कर मार डाला। इस तरह कारावासमें नौ वर्ष रहनेके बाद वे पुनः गुजरातके राजसिंहासन पर बैठनेमें समर्थ हुए थे।

अनन्तर दो वर्ष तक स्वाधीनतापूर्वक राज्य करनेके बाद १५८३ ई०में अकबर शाहने गुजरात पर अधिकार जमानेकी इच्छासे वैरम खांके पुत्र खान्खाना मीर्जा खांको भेजा। एक छोटेसे युद्धमें पराजित हो कर मुजफ्फरशाह जूनागढ़की ओर भागा, किन्तु आजम खांको अपने पीछे आते हुए जान कर उन्होंने मुगलों द्वारा अपमानित होनेको अपेक्षा प्राणविसर्जनको श्रेय समझा और एक छूरेसे आत्महत्या कर डाली।

मुजफ्फरशाह पुरबी—बङ्गालके एक शासनकर्त्ता। यह एक हवशी गुलाम थे। इनका आदि नाम सिद्दी बदर था। अपने मालिक मह्मूद शाहको गुप्तभावसे मार कर ये बङ्गालके सिंहासन पर बैठे (१४६५ ई०)। तीन वर्ष राज्य-शासन करनेके बाद ये अपने मन्त्री सैयद सरीफके साथ युद्धमें मारे गये। सैयद सरीफने उसी साल २य अलाउद्दीन नाम धारण कर बङ्ग-सिंहासनको सुशोभित किया।

मुजम्मा (अ० पु०) १ चमड़े या रस्सीका एक फेरा। यह घोड़ेको आगे बढ़नेसे रोकनेके लिये उसकी गामची या दुमचीमें पिछाडीकी रस्सीके साथ लगा रहता है। (क्रि०) २ बांधना, लगाना।

मुजरा (अ० पु०) १ वह जो जारी किया गया हो। २ वह रकम जो किसी रकममेंसे काट ली गई हो। ३ अभिवादन, किसी बड़े या धनवान् आदिके सामने जा कर उसे सलाम करना। ४ वेश्याका वह गाना जो बैठ कर हो और जिसमें उसका नाच न हो।

मुजरंद (अ० वि०) १ अकेला, जिसके साथ और कोई न हो। २ जिसने संसारका त्याग कर दिया हो। ३ जिसका विवाह न हुआ हो, बिन-व्याहा।

मुजरंब (अ० वि०) परीक्षित, आजमाया हुआ।

मुजराई (हिं० पु०) १ वह जो मुजरा या सलाम करता हो, वह व्यक्ति जो केवल सलाम करनेके लिये वेतन पाता हो। ३ काटने या घटानेकी क्रिया। ४ वह जो मरसिया पढ़ता हो। ५ काटी या मुजराकी हुई रकम।

मुजराकंद (हिं० पु०) उत्तर भारतमें होनेवाला एक प्रकार का कन्द। इसे मुंजात भी कहते हैं। वैद्यकके अनुसार यह अत्यन्त स्वादिष्ट, वीर्यवर्द्धक तथा वात पित्त नाशक माना गया है।

मुजरिम (अ० पु०) जिस पर अभियोग लगाया गया हो, अभियुक्त।

मुजल्लद (अ० वि०) जिल्ददार, जिसकी जिल्द बंधी हो।

मुजस्सिम (अ० वि०) प्रत्यक्ष, सशरीर।

मुजारिया (अ० वि०) जो जारी किया या कराया गया हो।

मुजावर (अ० पु०) वह मुसलमान जो किसी पीर आदिकी दरगाह या रौजे पर रह कर वहांकी सेवाका कार्य करता हो और चढ़ावा आदि लेता हो।

मुजाहिद खां—नागोरके एक शासनकर्त्ता। इन्होंने फिरोज खांकी मृत्युके बाद अपने भ्रातृपुत्र (भतीजा) शामस खांको राज्यसे मार भगाया और राजसिंहासन पर अधिकार जमाया। शामस खांने राणा कुम्भका आश्रय लिया। अतः मुजाहिद्ने अपनेको आत्मरक्षामें असमर्थ जान सुलतान महम्मद खिलजीसे सहायता मांगी। इस प्रकार नागोर-किलेके लिये दोनों पक्षमें घोरतर संग्राम हुआ।

मुजाहिद खां—सुलतान महम्मद विगाड़ाका एक कर्मचारी, मालिक लादन खांके ज्येष्ठ पुत्र। अधिक मोटे होनेके कारण उन्होंने "वालीम" की उपाधि पाई थी। उक्त राजाके आदेशानुसार वे आदिल खांके सहकारी नियुक्त हुए। गुजरातके राजा सुलतान बहादुर शाहने उनके कार्यसे सन्तुष्ट हो कर उनके हाथ जूनागढ़का शासन-भार सौंपा। अनन्तर उन्होंने सुलतानके साथ अहम्मद नगरकी चढ़ाई की। वहांसे उन्होंने पहले ऊसा नगर और पीछे १५३३ ई०में गुजरातकी विजयवाहिनी ले कर रणस्तम्भ गढ़ पर अधिकार जमानेके लिये प्रस्थान किया।

सुलतान ३य महमूद शाहके राज्यकालमें उन्होंने डाहरके युद्धमें अपने भाई मुजाहिद-उल-मुल्कके साथ मिल कर सेनाओंके दक्षिण भागकी परिचालना की थी। सुलतान महमूद उच्छृङ्खल चरित्रके थे, इसीलिये प्रधान प्रधान राजकर्मचारियोंकी सलाह न माननेके कारण १५४३-४४ ई०में वे सेनाध्यक्ष अमीर-उल उमरा आलम खांके द्वारा नजर बन्दी हुए। इस समय मुजाहिद खांने उसको रक्षाका भार लिया। इस कारण आलम खांके भाई सुजा-उल-मुल्कने उसको बागी बना उसके वजीर तातार-उल मुल्कका विद्रोही बन कर सुजाके विरुद्ध सुलतानके साथ परामर्श किया।

मुज़िर (अ० वि०) हानिकारक, नुकसान पहुंचानेवाला।

मुझ (हिं० सर्व) 'मैं'का वह रूप जो उसे कर्त्ता और संबंध कारकको छोड कर शेष कारकोंमें विभक्ति लगनेसे पहले प्राप्त होता है।

मुझे (हिं० सर्व०) एक पुरुषवाचक सर्वनाम। यह उत्तम पुरुष, एकवचन और दोनों लिङ्ग है। यह वक्ता या उसके नामकी ओर सङ्केत करता है।

मुञ्चक (सं० पु०) मुच्-ण्वुल्। १ मुष्ककवृक्ष, मोखा नामका पेड़। २ वृषण, अंडकोष।

मुञ्चन (सं० क्ली०) १ मोचन, परित्याग करना। २ मलत्याग, पाखाना फिरना।

मुञ्ज—युक्तप्रदेशके इटावा जिलान्तर्गत एक बडा गांव। यहांकी प्राचीन कीर्त्तिका अवशिष्ट देख कर अनुमान होता है, कि यहां पहले एक समृद्धिशाली नगर था। यह अक्षा० २६° ५३' ४५" उ० तथा देशा० ७९° १२' पू० इटावासे ७ कोस उत्तर पूर्वमें स्थित है। यहां राजपूतोंका सुरक्षित एक दुर्भेद्य किला था। १०१७ ई०में सुल्तान महमूदने इस स्थानको अपने अधिकारमें ला कर एक किला निर्म्माण किया। स्थानीय किंवदन्ती है, कि इस स्थानमें कुरुक्षेत्र संग्राम हुआ था। मुञ्जराज तथा उनके दो पुत्र युधिष्ठिरकी ओरसे लडे थे। कुरुक्षेत्र-युद्ध-स्थलका प्रवेश-द्वार तथा दो बुर्जोंका भग्नावशेष आज भी दृष्टिगोचर होता है। अनेक स्थानोंमें बडे बडे पत्थरके कुएं भी सुशोभित हैं। ईंटका बना हुआ एक प्रकाण्ड स्तूप धरतीमें गडा हुआ है। यहांके लोग उन ईंटोंको बाहर निकाल कर गृहादि निर्म्माण

करते हैं। महाभारतमें शायद इस मुञ्ज गांवका उल्लेख आया होगा।

मुञ्ज (सं० पु०) मुञ्ज्यते मृज्यतेऽनेन मुञ्ज-करणे अच्। १ तृणविशेष, मूंज नामक घास। पर्याय—मौञ्जी-तृणाख्य, ब्राह्मण्य, तेजनाह्वय, वाणीरक, मुञ्जनक, शीरी, दर्भाह्वय, दूरमूल, दृढ़तृण, दृढ़मूल, बहुप्रज, रञ्जन, शतुभङ्ग।

इस घासमें डंठल या टहनियां नहीं होतीं, जड़से बहुत ही पतली दो दो हाथ लंबी चारों ओर निकली रहती हैं। ये पत्तियां बहुत घनी निकलती हैं जिससे बहुत-सा स्थान घेर लिया जाता है। पौधेके ठीक बीचमें एक सीधा कांड पतली छड़के आकारमें ऊपर निकलता है। उस छड़के सिरे पर मंजरीके रूपमें फूल फूलते हैं। सरकंडे और मूंजमें यही भेद है, कि इसमें गांठें नहीं होतीं, सरकंडेमें बहुत-सी गांठें होती हैं। मूंजकी छाल चमकीली और चिकनी, पर सरकंडेकी ऐसी नहीं होती। सींकेसे यह छाल उतार कर बहुत सुन्दर सुन्दर डालियां बुनी जाती हैं। मूंज बहुत पवित्र मानी जाती है। ब्राह्मणोंके उपनयन संस्कारके समय वटुको मुञ्ज-मेखला पहनाया जाता है। वैद्यकमें इसे मधुर, शीतल, कफ-पित्तज रोगनाशक माना है।

२ सामश्रावस गोत्रमें उत्पन्न एक व्यक्तिका नाम।
(षड्विंशब्रा० ४।१)

३ महाभारतोक्त एक ब्राह्मणका नाम।
(भारत वनपर्व)

४ धाराराज्यके एक राजा और कविका नाम।
वाक्पति देखो।

५ चम्पाराजके एक पुत्रका नाम।

मुञ्जक (सं० पु०) घोड़ोंकी आँखका एक रोग। कीड़ोंके कारण यह रोग नेत्रपटल पर होता है। जब यह बढ़ जाता है, तब मुञ्जालक कहलाता है। यह लाल, स्फटिकके जैसा सफेद और सरसोंके तेलके जैसा होता है। अन्तिम लक्षणवाला मुञ्जक असाध्य है।*

मुञ्जकेतु (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक राजाका नाम।

मुञ्जकेश (सं० पु०) १ मुञ्जके जैसा केशवाला। (पु०) २ शिव, महादेव। ३ विष्णु। ४ महाभारतके अनुसार एक राजाका नाम। ५ आचार्यभेद। ६ विजितासुरके एक शिष्यका नाम।

मुञ्जकेशवत् (सं० पु०) १ विष्णु। २ कृष्ण।

मुञ्जकेशिन् (सं० पु०) मुञ्जा इव केशाः सन्त्यस्य इनि। विष्णु।

मुञ्जग्राम (सं० पु०) एक प्राचीन नगरका नाम।
(महाभारत २।३१।१४)

मुञ्जजाल (सं० क्ली०) घोड़ोंकी आंखके मुञ्जक रोगका उस समयका नाम जब वह बहुत बढ़ जाता है। मुञ्जक देखो।

मुञ्जतृण (सं० क्ली०) मुञ्ज, मूंज।

मुञ्जनक (सं० पु०) मुञ्ज।

मुञ्जनेजन (सं० त्रि०) मुञ्जतृण द्वारा शोधित, तृण-रहित।

मुञ्जन्धय (सं० त्रि०) मुञ्जरस पानकारी, मूंजका रस पीनेवाला।

मुञ्जपृष्ठ (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक प्राचीन प्रदेशका नाम जो हिमालय पर्वतमें था।

मुञ्जमणि (सं० स्त्री०) पुष्परागमणि, पुखराज।

मुञ्जमय (सं० त्रि०) मूंज घाससे घिरा या बना हुआ।

मुञ्जमेखला (सं० स्त्री०) मूंजकी बनी हुई मेखला। यह यज्ञोपवीतके समय पहनी जाती है।

मुञ्जमेखलिन् (सं० पु०) १ विष्णु। २ शिव, महादेव।

मुञ्जर (सं० क्ली०) मुञ्ज्यते मुञ्ज-बाहुलकात् अरन्। १ कमलकी नाल, मृणाल। २ कमलकी जड़।

मुञ्जवट (सं० क्ली०) महाभारतके अनुसार एक प्राचीन तीर्थका नाम।

---

* "एकेन मुञ्जमाल्यात बहुभिर्मुञ्जजालकम्।
कृमिभिः पटलान्तःस्थैर्विद्यान्नेत्ररुजाद्वयम्॥
प्रथमं तैलवर्णाभं द्वितीयं स्फटिकप्रभम्।
रक्ताभञ्च तृतीयञ्च चतुर्थं तैलमुच्यते॥
प्रथमं पटलं साध्यं द्वितीयञ्च तथा भवेत्।
तृतीयं कृच्छ्रसाध्यं स्यात् चतुर्थं नैव सिध्यति॥"
(जयदत्त)

मुञ्जवत् (सं० त्रि०) मुञ्ज अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वः । १ मुञ्जविशिष्ट, मुञ्जयुक्त । (पु०) २ सोमलता भेद। ३ महाभारतके अनुसार कैलास पर्वतके पासके एक पर्वतका नाम ।

मुञ्जवासस् (सं० पु०) शिव, महादेव ।

मुञ्जात (सं० पु०) तृणविशेष ।

मुञ्जातक (सं० पु०) मुञ्ज अतति तत्सादृश्यं प्राप्नोतीति अत-अच्, ततः स्वार्थे कन् । १ पुष्पशाकविशेष, मुजरा कन्द । इसका गुण—स्वादु, वृष्य, पित्त और वायुनाशक । २ मुञ्ज, मूंज ।

मुञ्जातकफल (सं० क्लो०) मुञ्जातक बीज ।

मुञ्जादित्य (सं० पु०) एक कवि ।

मुञ्जाद्रि (सं० पु०) पुराणानुसार एक पर्वतका नाम ।

मुञ्जारा (सं० स्त्री०) एक प्रकारका कंद, मुजरा कन्द ।

मुञ्जाल (सं० पु०) एक प्राचीन ज्योतिर्विद् ।
(सिद्धान्तशिरो० ६।१८)

मुञ्जावट (सं० क्लो०) महाभारतके अनुसार एक तीर्थ का नाम ।

मुटकना (हिं० वि०) जो आकारमे छोटा, पर सुन्दर हो ।

मुटका (हिं० पु०) वङ्गालमे बननेवाला एक प्रकारका रेशमी कपड़ा । यह धोतीकी जगह पहननेके काममे आता है ।

मुटकी (हिं० स्त्री०) कुलथी ।

मुटमुरी (हिं० पु०) एक प्रकारका भदई धान ।

मुटाई (हिं० स्त्री०) १ स्थूलता, मोटापन । २ पुष्टि । ३ अहङ्कार, घमण्ड । ४ यथेष्ट भोजन वा धन प्राप्त होनेसे उत्पन्न अभिमान ।

मुटाना (हिं० क्रि०) १ स्थूलाङ्ग हो जाना, मोटा हो जाना । २ अहंमन्य हो जाना, अहंकारी हो जाना ।

मुटासा (हिं० वि०) वह जो खाने पीनेसे मजेमे हो जाने या कुछ धन कमा लेनेसे वेपरवा और घमंडी हो गया हो ।

मुटिया (हिं० पु०) मजदूर, वह जो बोझ ढोता हो ।

मुट्ठा (हिं० पु०) १ चंगुल भर वस्तु, उतनी वस्तु जितनी एक मुट्ठीमे आ सके । २ घास, फूस, तृण या डंठलका उतना पूला जितना हाथकी मुट्ठीमें आ सके । ३ औजार आदिका वह भाग जो उसके प्रयोगके समय मुट्ठीमें पकड़ा जाय, बेंट । ४ पुलिंदा बंधा हुआ समूह जो मुट्ठीमें आ सके । ५ कपड़ेकी गद्दी जिसे प्रायः पहलवान आदिकी बाँहों पर मोटाई दिखलाने या सुन्दरता बढ़ानेके लिये बांधते हैं । ६ धुनियोंका एक औजार । यह बेलनके जैसा होता और इससे रूई धुनते समय तांत पर आघात किया जाता है ।

मुट्ठामुहेर (हिं० स्त्री०) कहारकी बोलीमें जवान औरत ।

मुट्ठी (हिं० स्त्री०) १ बंधी हुई हथेली, हाथकी वह मुद्रा जो उंगलियोंको मोड़ कर हथेली पर दबा लेनेसे बनती है । २ उतनी वस्तु जितनी उपर्युक्त मुद्राके समय हाथमें आ सके । ३ बंधी हथेलीमें बराबरका विस्तार । ४ घोड़े-का वह भाग जो खुम और टखनेके बीच पड़ता है । ५ एक प्रकारकी छोटी पतली लकड़ी । इसके दोनों सिरे कुछ मोटे और गोल होते हैं । यह छोटे छोटे बच्चोंको खेलनेके लिये दी जाती है । ६ अंगोंकी मालिश, चंपी ।

मुठभेड़ (हिं० स्त्री०) १ लड़ाई, टक्कर । २ सामना, भेंट ।

मुठिका (हिं० स्त्री०) १ मुट्ठी । २ घूंसा, मुक्का ।

मुठिया (हिं० स्त्री०) १ दस्ता, बेंट । २ धुनियोंका एक औजार । इससे वे धुनकीको ताँत पर आघात करते हैं । ३ हाथमें रखी या लो जानेवाली वस्तुका वह भाग जो मुट्ठीमें पकड़ा जाता है ।

मुठुकी (हिं० स्त्री०) बच्चोंका एक खिलौना जो काठका बना होता है । इसके दोनों सिरो पर गोलियाँ-सी होती हैं और बीचमे पकड़नेकी मूठ होती है । गोलियोंमे कंकड़ भर भर कर हिलानेसे वह बजता है ।

मुड़क (हिं० स्त्री०) मुरक देखो ।

मुड़कना (हिं० क्रि०) मुरकना देखो ।

मुड़ना (हिं० क्रि०) १ दबाव या आघातसे लचना या झुक जाना, घुमाव लेना । २ वक्र हो कर भिन्न दिशा-में प्रवृत्त होना, लकीरकी तरह सीधे न जा कर घूम कर किसी ओर झुकना । ३ किसी धारदार किनारे या नोक-का इस प्रकार झुक जाना कि वह आगेको ओर न रहे

जाय। ४ घूम कर फिर पीछेकी ओर चल पडना, लौटना। ५ दाएँ अथवा वाएं घूम जाना, चलते चलते सामनेसे किसी दूसरी ओर फिर जाना। मुँडना देखो।

मुडला (हिं० वि०) मुण्डा, विना वालवाला।

मुडवाना (हिं० क्रि०) १ किसीको मूंडनेमें प्रवृत्त करना, उस्तरेसे वाल या रोएँ दूर करना। २ मुँडवाना देखो।

मुडवारी (हिं० क्रि०) १ अटारीको दीवारका सिरा, मुंड़ेरा। २ वह पार्श्व जिधर सिर हो, सिरहाना। ३ वह पार्श्व जिधर किसी पदार्थका सिरा अथवा ऊपरी भाग हो।

मुडविद्री—मान्द्राजप्रदेशके दक्षिण कनाडा जिलान्तर्गत एक विध्वस्त नगर। यह अक्षा० १३° ४′ १०″ उ० तथा देशा० ७५° २′ ३०″ पू०के मध्य अवस्थित है। प्राचीन कालमें यहां जैनोंका प्रभाव वढ़ा चढ़ा था। आज भी राजपथके भग्नावशेष और घासोंसे ढके हुए टूटे फूटे मकान देखनेसे मालूम होता है, कि एक समय यह समृद्धि शाली नगर था। आज भी यहां १८ जैनशैल (पगोडा) हैं जो अतीत कीर्त्तिका परिचय देते हैं। इन सब शैल-मन्दिरोंमें बहुतसे शिलालेख उत्कीर्ण हैं जो प्राचीन जैन-शिल्पके उज्ज्वल दृष्टान्त-स्वरूप हैं।

उपरोक्त देवमन्दिरके अलावा गुरु शङ्कर तीर्थका पञ्चस्तम्भमय देवचत्वर और पुरोहितोंका समाधि मंदिर देखने लायक हैं।

मुड़हर (हिं० पु०) १ स्त्रियोंकी साड़ी वा चादरका वह भाग जो ठीक सिर पर रहता है।

मुड़ाना (हिं० क्रि०) मुंडन करना, मुंडाना।

मुड़िया (हिं० पु०) १ वह जिसका सिर मुंडा हुआ हो। २ एक प्रकारकी मछली।

मुड़ेरा (हिं० पु०) मुँडेरा देखो।

मुण्ड (सं० पु०) मुण्डनं मुण्डः केशापनयनं मुड़ि खण्डने भावे घञ् ततः अर्श आदित्वादच्। १ वीजराजके सेनापति एक दैत्यका नाम। (हरिवंश भविष्यप० २३२।५)

२ शुम्भके सेनापति एक दैत्यका नाम। चण्ड और मुण्ड नामक शुम्भके दो सेनापति थे। दोनों ही प्रायः मिल कर लड़ा करते थे। जब भगवती दुर्गाके साथ युद्ध हुआ, तब धूम्रलोचन-वधके वाद शुम्भकी आज्ञासे ये दोनों देवी भगवतीके साथ लड़ने लगे। दोनों ही भगवतीके हाथोंसे मारे गये। चण्ड और मुण्ड-वध करनेके कारण ही भगवतीका चामुण्डा नाम पड़ा है। (चण्डी) ३ राहुग्रह। (मेदिनी)

मुण्डं मुण्डनं जीविकात्वेनास्त्यस्य अच्। ४ नापित, हज्जाम। मुण्डन करना ही इनकी जीविका है, इसीसे इनका मुण्ड नाम हुआ है।

मुण्डनं स्कन्धाचच्छेदे मुण्डनमस्त्यस्य अच्। ५ स्थाणुवृक्ष, वृक्षका ठूंठ। ६ गरदनके ऊपरका अङ्ग जिसमें केश, मस्तक, आंख, मुंह आदि होते हैं, सिर। ७ कटा हुआ सिर। ८ बोल नामक गन्धद्रव्य। ९ एक उपनिषद्का नाम। १० मण्डूर। ११ गायोंके समूहका मण्डल। १२ मूर्द्धा, मस्तक। (त्रि०) १३ मुण्डित, मुंड़ा हुआ। १४ अधम, नीच।

मुण्डक (सं० क्ली०) मुण्डमेवेति मुण्ड-स्वार्थे कन्। १ मस्तक, सिर। २ उपनिषद्विशेष, मुण्डकोप-निषद्। (पु०) मुण्डयतीति मुड़ि ण्वुल। ३ नापित, हज्जाम

मुण्डकिट्ट (सं० पु०) मुण्डलौहभेद, मंडूर।

मुण्डग्राम—नेपालके अन्तर्गत एक गांवका नाम।

मुण्डचणक (सं० पु०) मुण्डो मुण्डित इव चणकः। १ कलाय, उड़द। २ वृहच्चणक, वड़ा चना।

मुण्डधान्य (सं० क्ली०) धान्यविशेष। मुण्डशालि देखो।

मुण्डन (सं० क्ली०) मुण्ड-ल्युट्। १ केशच्छेदन, सिरको उस्तरेसे मूंडनेकी क्रिया। पर्याय—भद्रकरण, वपन, परिवापन, क्षौर।

"भ्रातुरस्य हित वाक्य शृणु धर्मज्ञ सत्तम।
दण्ड एव हि राजेन्द्र! क्षत्रधर्मो न मुण्डनम्॥"
(भारत० १२।२३।४६)

प्रयागमें मस्तक मुंड़ा कर जो मरता है उसे मुक्ति होती है।

प्रयागे मुण्डनं चैव पर निर्वाणकारणम्॥" (पद्मब्रा० २।७।१४)

२ द्विजातियोंके १६ संस्कारोंमेंसे एक। यह वाल्या-वस्थामें यज्ञोपवीतसे पहले होता है और इसमें वालकका सिर मूंड़ा जाता है।

मुण्डनक (सं० पु०) १ शालिधान्यभेद, वोरो धान। २ श्वेत वटवृक्ष, सफेद वरगदका पेड़।

मुण्डनिका (सं० स्त्री०) मुण्डशालि, वोरो धान।
मुण्डपृष्ठ (सं० क्ली०) एक प्राचीन जनपदका नाम।
मुण्डफल (सं० पु०) मुण्डवत् फलमस्य। नारिकेल वृक्ष, नारियलका पेड़।
मुण्डमण्डली (सं० पु०) १ मुण्डित मस्तकसमूह, मुंडे हुए मस्तकोंको ढेर। २ अशिक्षित सेनावृन्द, बिना सीखी हुई फौज।
मुण्डमाल (सं० पु०) मुण्डमाला देखो।
मुण्डमाला (सं० स्त्री०) मुण्डानां माला। १ कटे हुए सिरों या खोपड़ियोंकी माला जो शिव या काली देवीके गलेमें सुशोभित हैं। २ तन्त्रभेद। ३ बंगालमें वीरभूम और कांदीके पास प्रवाहित एक नदी।
मुण्डमालिनी (सं० स्त्री०) मुण्डमालास्यास्तीति इनि, स्त्रियां ङीप्। दुर्गा, काली। गलेमें मुण्डमाला है इसीसे इनका नाम मुण्डमालिनी हुआ है।
मुण्डमाली (सं० पु०) मुण्डकी माला धारण करनेवाला, शिव।
मुण्डलाना—पंजाब प्रदेशके रोहतक जिलान्तर्गत गोहान तहसीलका एक बड़ा गांव। यह गोहानसे पानीपत जानेके रास्ते पर अवस्थित है। यहां पोस्ट आफिस और स्कूल हैं, हिन्दू, मुसलमान और जैन आदि धर्मावलम्बियोंका यहां वास है।
मुण्डलौह (सं० क्ली०) लौहविशेष, मण्डूर। यह लौह मृदु, किट्ट और कठोरके भेदसे तीन प्रकारका है।
(राजनि०)
मुण्डवेदाङ्ग (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक नागासुरका नाम।
मुण्डशालि (सं० पु०) मुण्डो मुण्डित इव शालिः। शालि धान्यभेद, वोरो धान। पर्याय—मुण्डनक, निःशूक, अशूकक। इसका गुण त्रिदोषनाशक, मधुराम्ल, बलप्रद, रुचिकारक, दीपन, पथ्य, मुखजाड्य और रुजापह माना गया है। (राजनि०)
मुण्डा (सं० स्त्री०) मुण्ड स्त्रियां टाप्। १ महाश्रावणिका, गोरखमुंडी। २ मुण्डिता स्त्री, वह स्त्री जिसके सिरके वाल मुंड़े हुए हों।

सप्तदश भाग सम्पूर्ण।